श्रीमद्गर्गसंहिता

हिन्दी टीका सहित

टीकाकार पं. देवीसहाय शर्मा

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन बम्बई-४

श्रीमद्गर्गसंहिता

हिन्दी टीका सहित

टीकाकार : पं. देवीसहाय शर्मा

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन बम्बई-४

संस्करण : अप्रेल २०१८, संवत् २०७५

मूल्य :
पत्राकार : ५५० रुपये मात्र।
सजिल्द : ६०० रुपये मात्र।

मुद्रक एवं प्रकाशक:
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

Printers & Publisners :
Khemraj Shrikrishnadass,
Prop: Shri Venkateshwar Press,
Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi,
Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s. Khemraj Shrikrishnadass, Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai - 400 004,
at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate, Pune 411 013.

अथ गर्गसंहितामाहात्म्यं भाषाटीकासमेतं प्रारभ्यते

श्रीवेंकटेश्वराय नमः ॥

निवेदन

★

बालं नवीनशतपत्रविशालनेत्रम्बिम्बाधरं सजलमेघरुचिं मनोज्ञम् । मन्दस्मितंमधुरसुन्दरमन्दयानं श्रीनन्दनन्दनमहं मनसा स्मरामि ॥

कृष्ण द्वैपायन श्रीवेद व्यासजीने देवर्षि नारदजीकी प्रेरणासे परम श्रेष्ठ श्रीमद्भागवत पुराणकी रचना की । उन्हीं देवर्षि नारदजीकी प्रेरणासे महामुनि गर्गाचार्यजीने गर्गसंहिताकी रचना की है । जैसा कि गर्गसंहिता माहात्म्यके प्रथम अध्यायमें लिखा है, कि "मया तुभ्यं श्रावितं च यशः संक्षेपतो हरेः वैष्णवानां प्रियं गर्गत्वमेतद्विपुलं कुरु ॥३२॥ वचसा मम विप्रेन्द्र कृष्णद्वैपायनेन च । सर्वशास्त्रात्परं श्रेष्ठं श्रीमद्भागवतं कृतम् ॥२९॥ ब्रह्मन्यथा भागवतं गोपयिष्यामहं तथा । त्वत्कृतं श्रावयिस्यामि बहुलाश्वाय भूभृते" ॥२६॥ देवर्षि नारदके उक्त वचनोंसे इसकी महत्ता स्पष्टतया परिलक्षित है । महामुनि गर्गाचार्य भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजीके कुल पुरोहित थे, इन्होंने परिपूर्णतम साक्षात् पुरुषोत्तम असंख्यब्रह्माण्डपति आनन्दकन्द वृन्दावनविहारी भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रकी जो अलौकिक लीलाएं स्वयम् देखीं, और भगवान्का जो पावन चरित्र देवर्षि नारदजीके मुखसे सुना, उसीका सविस्तृत वर्णन अपनी इस गर्गसंहितामें किया, है । इसमें गोलोकके वैभववर्णन और अवतारग्रहण करनेके रहस्यसे लेकर पश्चिमावस्थातक के श्रीकृष्णचन्द्र व्रजनन्दन राधिकेशके ऐसे ऐसे मनोहारी चरित्रोंका चित्रण है, कि जिनके पठन व श्रवण करनेसे मनुष्योंके हृदय श्रीराधामाधवकी भक्तिसे परिपूर्ण होकर प्रेमसे पुलकित हो उठते हैं ।

दशखण्डात्मिका यह गर्गसंहिता अमृतसे भी मधुर बारह हजार श्लोकोंसे अलंकृत है । जो संस्कृतभाषा इस पवित्र आर्यभूमि भारतके जन-जनकी भाषा थी, दुर्भाग्यवश आज वह कुछ लोगोंतक ही सीमित रहगई है । संस्कृतभाषामें प्रवृत्ति न होनेके कारण अधिकांश जन अपने महान् ग्रन्थोंके रसास्वादनसे वञ्चित ही रहते रहे हैं । इस कारण धार्मिक ग्रन्थोंका स्वाध्याय भी कम होता जा रहा है, और हम अपनी गौरवमयी परम्पराओंको भूलतेसे जा रहे हैं । अतः अपने महान् ग्रन्थोंका आधुनिक हिन्दीभाषामें अनुवादित होकर प्रकाशित होना आजकी मुख्य आवश्यकता है, जिससे अधिकसे अधिक व्यक्तियों द्वारा इनका लाभ उठाया जा सके । श्रीवेंकटेश्वर स्टीम् प्रेस इस विषयमें एक लम्बी अवधिसे स्तुत्य प्रयास करता चला आ रहा है । इस संस्थाके संस्थापक वै० वा. धर्मरत्न सेठ श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदासजी कोटिशः"धन्यवादके पात्र हैं कि जिन्होंने अथक परिश्रमसे अनेक अलभ्य व दुरूह ग्रन्थोंके हिन्दी अनुवाद कराकर प्रकाशित किये ।

हर्षका विषय है कि संस्थाके वर्तमान अध्यक्ष महोदय श्रीमान् बाबू मुरलीधरजी बजाज महोदय भी अपने पूर्वजोंकी परम्परानुसार इस सत्कार्य में निष्ठापूर्वक संलग्न हैं।

प्रस्तुत "श्रीमद्गर्ग संहिता" जैसे महान् ग्रन्थकी हिन्दी टीका करनेके दुष्कर कार्यमें मुझ जैसे व्यक्तिका प्रयास "प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव वामनः" के अनुसार हास्यास्पद ही था, किन्तु भगवद्गुणानुवाद के द्वारा अन्तः शुद्धिके लोभका मैं संवरण नहीं कर सका, और इसी भावनासे अनुप्राणित होकर मैंने इसकी यह हिन्दी टीका लिखकर प्रेसाध्यक्ष महोदयके समक्ष उपस्थित की। जिसे सहर्ष मुद्रण कराकर मुझे प्रोत्साहित करने की जो महती अनुकम्पा प्रेसाध्यक्ष महोदयने की है, इसके लिये मैं हृदयसे आभारी हूँ। और कृष्णचरणाम्बुजपरायण कृपालु पाठकोंसे भी प्रार्थना करता हूँ, कि सावधानी पूर्वक कार्य करनेपर भी "गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः" के अनुसार कहीं त्रुटियां भी रह गई हों तो, कृपया हंसके समान गुणग्राही दृष्टिसे ही इसे ग्रहण करेंगे। जिन आत्मीय जनोंका मुझे इस कार्यमें सहयोग मिला है, उनका भी हार्दिक अभिनंदन है। मैंने "श्रीमद्गर्गसंहिता" की इस "देवी" नामकी हिन्दी टीकाका सर्वाधिकार प्रेसाध्यक्ष महोदयको स्वेच्छया समर्पित कर दिया है। शुभम्।

शरत्पूर्णिमा सं० २०१३

बम्बई प्रवास,

जन्म-स्थान—

मु०, पो०—दाँता रामगढ़

वाया—रेनवाल, (राजस्थान)

विनीत—

देवीसहाय शर्मा,

C/o "श्रीवेंकटेश्वर" प्रेस बम्बई नं० ४.

अथ सभाषाटीका गर्गसंहिताविषयानुक्रमणिका ।

अथ गिरिराजखंड ३.

अथ माधुर्य्यखंड ४.

अथ विश्वजित्खण्ड ७.

॥ इति सभाषाटीका गर्गसंहिताविषयाऽनुक्रमणिका ॥

श्रीकृष्णाय नमः ॥ श्रीनन्दकुमाराय नमः ॥ अब हम कवियोंके ईश्वर श्रीगर्गाचार्यको नमस्कार करके गर्गसंहिताका माहात्म्य वर्णन करते हैं। कैसे हैं श्रीगर्गाचार्यजी ? वृष्णि वंश और श्रीकृष्णके कुल पुरोहित हैं ॥ १ ॥ शौनक बोले–हे ब्रह्मन् ! आपके मुखसे कानोंसे सुख बढ़ानेवाले उत्तम उत्तम पुराणोंके माहात्म्य विस्तार पूर्वक सुने हैं ॥२॥ अब हे मुने ! गर्गसंहिताके सार रूप माहात्म्यको विचार करके हमारे सामने आप वर्णन करिये ॥३॥ हे मुने ! गर्गाचार्यकी रची हुई यह संहिता परम धन्य और भागवती है, इसमें राधा और माधवकी अत्यन्त महिमा वर्णन की गई है ॥४॥ सूतजी बोले–हे शौनक ! यह माहात्म्य मैंने नारदजीके मुखसे सुना है,और शिवजीने स्वयम् इसका उपदेश पार्वतीके लिये संमोहन तन्त्रमें दिया है ॥५॥ कैलाशके शुभ्र शिखर पर अक्षय वटके नीचे,अलक नन्दाके तटपर शिवजी नित्य प्रति विराजते हैं ॥६॥ एक दिन सर्व मंगल युक्ता पार्वतीने अत्यन्त प्रसन्न होकर

॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥ वृष्णीनांकृष्णदेवानामाचार्यायमहात्मने ॥ श्रीमद्गर्गकवीशायतस्मैनित्यंनमोनमः ॥ १ ॥ शौनकउवाच ॥ ॥ श्रुतंतवमुखाद्ब्रह्मन्पुराणानांचविस्तरात् ॥ श्रेष्ठंश्रेष्ठंचमाहात्म्यंकर्णयोःसुखवर्द्धनम् ॥ २ ॥ गर्गस्यचमुनेरद्यसंहितायाःप्रयत्नतः ॥ अस्माकंवदमाहात्म्यंसारूपंविचार्यच ॥ ३ ॥ अहोधन्याभागवतीमुनेगर्गस्यसंहिता ॥ राधामाधवयोर्यस्यांमहिमाबहुवर्णितः ॥ ४ ॥ सूतउवाच ॥ अहोशौनकमाहात्म्यंनारदाच्चमयाश्रुतम् ॥ उक्तेसंमोहनेतन्त्रेशिवायैचशिवेनवै ॥ ५ ॥ कैलासशिखरेशुभ्रेयत्राक्षयवटाजिरे ॥ तीरेचालकनंदायानित्यंसंराजतेहरः ॥ ६ ॥ शंकरंचैकदादेवंगिरिजासर्वमंगला ॥ सिद्धानांशृण्वतांतत्रपप्रच्छवांछितंमुदा ॥ ७ ॥ पार्वत्युवाच ॥ यदेवंध्यायसेनाथतस्यापिचरितंपरम् ॥ जन्मकर्मरहस्यंचकथयस्वममाग्रतः ॥८॥ पुरात्वन्मुखतःसाक्षाच्छ्रुतंनाम्नांसहस्रकम् ॥ श्रीमद्गोपालदेवस्यतत्कथांवदमेहर ॥ ९ ॥ महादेवउवाच ॥ कथागोपालकृष्णस्यराधेशस्यमहात्मनः ॥ गर्गस्यसंहितायांचश्रूयतेसर्वमंगले ॥१०॥ पार्वत्युवाच ॥ बहूनिचपुराणानिसंहितादीनिशंकर ॥ सर्वान्विहायगर्गस्यत्वंप्रशंससिसंहिताम् ॥ ११ ॥ यस्यांकाभगवल्लीलाविस्तरेणतदुच्यताम् ॥ कृतवान्संहितांगर्गःकेनसंप्रेरितःपुराः ॥ १२ ॥ किंपुण्यंकिंफलंचास्याःश्रवणेनापिलभ्यते ॥ पुराकैःकैर्जनैर्देवश्रुताममवदप्रभो ॥ १३ ॥

सिद्धोंके सुनते सुनते अपना जो वांछित है, उसको शिवजीसे पूछा ॥ ७ ॥ पार्वती बोली हे नाथ ! जिसका आप ध्यान करते हैं, उसका परम अद्भुत चरित्र और जन्म कर्मके गूढ़ आशयोंको मेरे आगे वर्णन करिये ॥८॥ हे हर ! पहिले मैंने साक्षात् आपके मुखसे श्रीमद्गोपाल देवका सहस्र नाम सुना है, अब उनकी कथा मुझको सुनाइये ॥ ९ ॥ महादेवजी बोले--हे सर्व मंगले ! राधिकापति श्रीगोपाल कृष्णका चरित्र गर्गसंहितामें वर्णन किया है ॥ १० ॥ यह सुनकर पार्वती बोली--हे शंकर ! संहितादिक बहुतसे पुराण हैं, उन सबको छोड़कर आप जो गर्गाचार्यकी संहिताकी प्रशंसा करते हैं ॥ ११ ॥ सो उसमें भगवान्की कौनसी लीला वर्णन की गई है, उसका विस्तार पूर्वक वर्णन करिये, किसकी प्रेरणासे गर्गजीने गर्गसंहिता रची है ॥ १२ ॥ इसके सुननेका क्या पुण्य और क्या फल है, और इसको पहिले किसने सुनी है, यह भी मेरे आगे वर्णन करिये ॥ १३ ॥

सूतजी बोले--अपनी प्रियाके वचनको सुनकर सब ऋषियोंके बीच बैठे हुये भगवान् महेश प्रसन्न चित्त होकर गर्गाचार्यकी रची हुई कथा विचार करके बोले ॥ १४ ॥ हे भवानी ! श्रीराधा माधव और गर्गसंहिताका माहात्म्य प्रसन्नता पूर्वक सुनिये, इसके सुननेसे पापोंका नाश होता है ॥१५॥ प्रथम ब्रह्माजीने भगवान्का चरित्र पूछा था, सो भूतलमें विचरते हुये हरि भगवान्ने राधासे कहा था ॥१६॥ फिर शेषजीने भगवान्से गोलोकमें पूछा था, सो उनके आगे प्रसन्न होकर भगवान्ने सब कथा वर्णन की थी॥१७॥ शेषजीने ब्रह्माको उपदेश दिया, ब्रह्माजीने धर्म को उपदेश किया, धर्मने यह कथामृत अपने दोनों पुत्रोंको पान कराया ॥१८॥ हे सर्व मंगले ! नर नारायणको एकान्तमें उपदेश दिया, नारायणने सेवा परायण नारदको उपदेश दिया ॥१९॥ जैसा धर्मके मुखसे सुना था, वैसाही कृष्ण चरित नारदजीने गर्गाचार्यको उपदेश दिया ॥२०॥ नारायणके मुखसे प्राप्त हुई सम्पूर्ण

॥ सूतउवाच ॥ इतिप्रियायावचनंनिशम्यप्रसन्नचित्तोभगवान्महेशः ॥ विचार्यगर्गस्यकृतांकथांचप्रत्याहवाक्यंसदसिस्थितःसः ॥ १४ ॥ ॥ महादेवउवाच ॥ शृणुदेविसविस्तारंमाहात्म्यंपापनाशनम् ॥ राधामाधवयोश्चापिसंहितायाःप्रयत्नतः ॥ १५ ॥ पूर्वंचरित्रंस्वस्यापि ब्रह्मणाप्रार्थितोयदि ॥ राधायैकथयामासप्रव्रजन्भूतलंहरिः ॥१६॥ ततःशेषेणभगवान्गोलोकेप्रार्थितःपुनः ॥ तस्याग्रेकथयामाससमस्तांस्वकथां मुदा ॥१७॥ शेषोददौब्रह्मणेचब्रह्माधर्मायसंहिताम् ॥ धर्मःसंप्रार्थितःप्राहस्वपुत्राभ्यांकथामृतम् ॥१८॥ नरनारायणाभ्यांचरहसिसर्वमंगले ॥ नारायणोनारदायसेवनेनिरतायच ॥ १९ ॥ जगादकृष्णचरितंयच्छ्रुतंधर्मवक्रतः ॥ ततश्चप्रार्थितःप्राहगर्गाचार्यायनारदः ॥२०॥ नारायण-मुखाल्लब्धांसर्वांश्रीकृष्णसंहिताम् ॥ इतिश्रुत्वापरंज्ञानंहरेर्भक्तिसमन्वितम् ॥ २१ ॥ चकारपूजनंगर्गोनारदस्यमहात्मनः ॥ उवाचनारदोगर्गंत्रि-कालज्ञंचपार्वति ॥ २२ ॥ नारदउवाच ॥ मयातुभ्यंश्रावितंचयशःसंक्षेपतोहरेः ॥ वैष्णवानांप्रियंगर्गत्वमेतद्विपुलंकुरु ॥ २३ ॥ सर्वेषांका-मदंशश्वत्कृष्णभक्तिविवर्द्धनम् ॥ ममप्रियंकुरुविभोशास्त्रंतुपरमाद्भुतम् ॥२४॥ वचसाममविप्रेंद्रकृष्णद्वैपायनेनच ॥ सर्वशास्त्रात्परंश्रेष्ठंश्रीमद्भा-गवतंकृतम् ॥ २५ ॥ ब्रह्मन्यथाभागवतंगोपयिष्याम्यहंतथा ॥ त्वत्कृतंश्रावयिष्यामिबहुलाश्वायभूभृते ॥२६॥ इति श्रीसम्मोहनतंत्रेपार्वतीहरसंवादेश्रीगर्गसंहितामाहात्म्येप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

श्रीकृष्ण संहिताको सुनकर हरि भगवान्की भक्तिसे मिले हुये ज्ञानको प्राप्त करके॥२१॥गर्गजीने महात्मा नारदका पूजन किया, हे पार्वती ! त्रिकालज्ञ गर्गजीसे नारदजी बोले॥२२॥ हे गर्गजी ? मैंने हरि भगवान्का यश संक्षेपसे आपको सुनाया है, तुम इसको वैष्णवोंकी प्रीतिके लिये विस्तार पूर्वक वर्णन करो ॥२३॥ निरंतर सम्पूर्ण कामनाओंको देनेवाले, श्रीकृष्णमें भक्ति बढ़ानेवाले, मेरी प्रसन्नताके लिये परम अद्भुत शास्त्रको रचिये ॥२४॥ हे विप्रेन्द्र ? मेरेही कहनेसे कृष्ण द्वैपायन व्यासने सम्पूर्ण शास्त्रोंसे परम उत्तम श्रीमद्भागवत बनाया है ॥२५॥ हे ब्रह्मन् ! जैसे भागवतको मैं छुपाऊँगा और तुम्हारे रचे हुये ग्रन्थको मैं बहुलाश्व राजाको सुनाऊँगा ॥२६॥ इति श्रीसम्मोहन तंत्रे पार्वतीहरसंवादे श्रीगर्गसंहितामाहात्म्ये भाषाटीकायां प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

महादेव बोले--देवर्षि नारदके वचनको सुनकर महामुनीश्वर गर्गाचार्यजी विनयपूर्वक नमस्कार करके हँसते हुये यह बोले ॥१॥ गर्गाचार्यजी बोले--जो बात आपने कही, वह सब ओरसे कठिन दिखती है, तो आप कृपा करेंगे, तो आपकी आज्ञाका पालन करूँगा ॥२॥ हे सर्वमंगले पार्वती ! भगवान् नारद यह कहकर अपनी वीणाको बजाते हुये, और हरि यश गाते हुये, प्रसन्न होकर ब्रह्मलोकको गये ॥३॥ गर्गजी महाराजने गर्गाचलमें महा अद्भुत शास्त्र बनाया, उसमें देवर्षि नारदजी और बहुलाश्व राजाका संवाद वर्णन किया है ॥ ४ ॥ श्रीकृष्णके अनेक प्रकारके विचित्र चरित्रोंका वर्णन किया है, यह महान् अद्भुत ग्रन्थ बारह हजार श्लोकोंसे अलंकृत है, ये श्लोक अमृतसे भी मधुर हैं ॥५॥ गर्गजीने जो कुछ गुरुओंके मुखसे सुना है, और अपने नेत्रोंसे कृष्ण महाराजके चरित्र देखे हैं, वे सब इस अपनी संहितामें वर्णन किये हैं ॥६॥ यह गर्गसंहिता नामक कृष्णकी कथा भक्ति देने

॥ महादेवउवाच ॥ श्रुत्वादेवर्षिवचनंगर्गाचार्योमहामुनिः ॥ विनयावनतोभूत्वाप्रहसन्निदमब्रवीत् ॥ १ ॥ गर्गउवाच ॥ त्वयाब्रह्मन्वचश्चो-क्तंकठिनंसर्वतःस्फुटम् ॥ तथापिचकरिष्यामित्वंकरोपिकृपांयदि ॥ २ ॥ इत्येवमुक्तोभगवान्नारदःसर्वमंगले ॥ स्ववीणांवादयन्गायन्ब्रह्मलो-कंययौमुदा ॥ ३ ॥ गर्गाचलेकविर्गर्गःशास्त्रंचक्रेमहाद्भुतम् ॥ निरूपितंचसंवादंदेवर्षिबहुलाश्वयोः ॥ ४ ॥ नानाकृष्णचरित्रैश्च विचित्रैःपरि-पूरितम् ॥ श्लोकैर्द्वादशसाहस्रैःसुधामिष्टैरलंकृतम् ॥ ५ ॥ यच्छ्रुतंगुरुवक्त्राच्चयद्दृष्टंश्रीहरेर्महत् ॥ तत्सर्वंचरितंगर्गःसंहितायांसमादधे ॥ ६ ॥ श्रीगर्गसंहितानाम्नाकथाभूत्कृष्णभक्तिदा ॥ यस्याःश्रवणमात्रेणसर्वकार्यंचसिध्यति ॥७॥ अत्रैवोदाहरंतीममितिहासंपुरातनम् ॥ यस्यश्रवण मात्रेणसर्वपापंप्रणश्यति ॥ ८ ॥ वज्रस्यापिसुतोराजाप्रतिबाहुर्नृपोह्यभूत् ॥ तस्यराज्ञःप्रियादेवीमालिनीनामवर्तते ॥ ९ ॥ मथुरायांकृष्णपुर्यां भार्ययासहितोनृपः ॥ संतानार्थंविधानेनबहून्यत्नांश्चकारह ॥ १० ॥ गावश्चबहवोदत्ताःसुपात्रेभ्यःसवत्सकाः ॥ तथातेनकृतायज्ञादक्षिणाभिः प्रयत्नतः॥ ११॥गुरवोब्राह्मणादेवाःपूजिताभोजनैर्धनैः ॥ पुत्रोनजातस्तदपिततश्चिंतातुरोऽभवत्॥ १२॥तावुभौदंपतीनित्यंचिंताशोकपरायणौ ॥ पितरोस्यजलंदत्तंकवोष्णमुपभुंजते ॥ १३ ॥ राज्ञःपश्चान्नपश्यामोयोस्माकंतर्पयिष्यति ॥ इत्येवंस्मरतस्तस्यदुःखिताःपितरोऽभवन् ॥ १४ ॥

वाली है, इसके श्रवणमात्रहीसे सम्पूर्ण कार्योंकी सिद्धि होती है ॥७॥ यहाँ एक प्राचीन इतिहास वर्णन करते हैं, जिसके श्रवणमात्रसे पापोंका नाश होता है ॥८॥ वज्रका पुत्र प्रति-बाहु नामका राजा हुआ है, उसकी एक रानी बड़ी प्यारी मालिनी देवी नामकी थी ॥९॥ श्रीकृष्णकी पुरी मथुरामें इस राजाने अपनी स्त्रीसहित सन्तानके लिये अनेक प्रकारके यत्न किये ॥१०॥ सुपात्रोंको बछड़ा बछियोंसहित बहुतसी गौऐं दानमें दीं, यज्ञ किये और दक्षिणा दी ॥११॥ धन और भोजनोंके द्वारा गुरु, ब्राह्मण और देवताओंकी विधिपूर्वक पूजा की, तबभी पुत्र न हुआ, तब राजाको बड़ी चिन्ता हुई ॥१२॥ अब वे दोनों राजा रानी नित्यमति शोक और चिन्तामें डूबे रहते, और इनके दिये हुये जलको पित्रीश्वर उष्णवत्पान करते ॥ १३ ॥ राजाके पीछे हमको कोई ऐसा नहीं दिखता है, जो हमें तर्पणादि द्वारा तृप्त करेगा, इस बातके स्मरण करनेसे राजाके पित्रीश्वर अत्यन्त दुःखित हुये ॥ १४ ॥

बंधु, मित्र, अमात्य, सुहृद, घोड़े, हाथी, प्यादे कुछ अच्छे नहीं लगते ॥ १५ ॥ उस राजाके मनमें नित्यप्रति निराशा बनी रहती, कि पुत्रहीन मनुष्यका जीवन निष्फल है ॥१६॥ बिना पुत्रके घर सूना रहता है, चित्त सदा दुःख और चिन्तामें डूबा रहता है, देवता, मनुष्य और पित्रीश्वरोंके ऋणसेभी मनुष्य बिना पुत्रके उऋण नहीं होता है ॥ १७ ॥ इससे जैसे भी हो वैसे बुद्धिमान् पुत्रको उत्पन्न करे, उनका इस लोकमें यश और परलोकमें गति होवेगी ॥१८॥ उन पुण्यकर्मा मनुष्योंके घरमें पुत्रका जन्म होता है, उन्हींके घरमें आयु आरोग्य, और सम्पत्तिकी प्रवृति होती है ॥१९॥ इस चिन्ताके कारण राजाको रातदिन चैन नहीं पड़ती, और शिरके बालोंको सफेद देखकर रातदिन शोक करता ॥२०॥ तब एक दिन ऐसा हुआ कि शांडिल्य ऋषि अपनी इच्छासे विचरते २ मधुपुरीमें राजा प्रतिबाहुसे मिलनेको चले आये ॥२१॥ शांडिल्य ऋषिको देखकर राजाने सहसा उठकर आसन दिया,

नबांधवानमित्राणिनामात्यसुहृदस्तथा ॥ शोचयंत्यस्यभूपस्यनगजाश्वाःपदातयः ॥ १५ ॥ नैराश्यंभूपतेस्तस्यनित्यंमनसिवर्तते ॥ जनस्य सुतहीनस्यनास्तिवैजन्मनःफलम् ॥ १६ ॥ गृहंशून्यंह्यपुत्रस्यदुःखितंचमनःसदा ॥ देवमानुषपितॄणांनानृणत्वंसुतंविना ॥१७॥ पुत्रमुत्पादयेत्प्राज्ञोतस्मात्सर्वप्रयत्नतः ॥ यशस्तेषांभूमिलोकेपरलाकेगतिर्भवेत् ॥१८॥ तेषांतुपुण्यकर्तॄणांपुत्रजन्मगृहेभवेत् ॥ आयुरारोग्यसंपत्तीतेषां गेहेप्रवर्धते ॥ १९ ॥ एवंविचिंत्यमनसानशर्मलभतेनृपः ॥ श्वेतान्स्वमूर्द्धजान्दृष्ट्वाचक्रेशोकमहर्निशम् ॥ २० ॥ तस्यैकदामधुपुरेशांडिल्योपिमुनीश्वरः ॥ स्वेच्छयासउपागच्छत्प्रतिबाहुंविलोकितुम् ॥ २१ ॥ तंदृष्ट्वासहसाराजाप्रत्युत्थानासनादिभिः ॥ निवेद्यमधुपर्कादींश्चकारपूजनंमुदा ॥ २२ ॥ उदासीनंनृपंदृष्ट्वाकृत्वाविस्मयमेवच ॥ ऋषिस्तमभिनंद्याथस्वस्तिवाचनपूर्वकम् ॥ २३ ॥ पप्रच्छकुशलंराज्येसप्तस्वंगेषु भूपते ॥ निवेदितुंस्वकुशलंप्रत्याहनृपसत्तमः ॥ २४ ॥ राजोवाच ॥ पूर्वदोषेणयद्दृष्टंस्वदुःखंकिंब्रवीम्यहम् ॥ ऋषयस्त्वादृशाब्रह्मन्किंनजानंतिसांप्रतम् ॥ २५ ॥ सौख्यंनराष्ट्रेनपुरेममनैवतुदृश्यते ॥ किंकरोमिक्वगच्छामिपुत्रप्राप्तिःकथंभवेत् ॥ २६ ॥ राज्ञःपश्चान्नपश्यामोयोस्माकंपालयिष्यति ॥ इत्येवंस्मरतःसर्वादुःखितामेभवन्प्रजाः ॥ २७ ॥ उपायंवदमेब्रह्मंस्त्वंसाक्षाद्दिव्यदर्शनः ॥ येनापिनिष्कलःपुत्रोवंशकर्त्ताभविष्यति ॥ २८ ॥

और मधुपर्कादि निवेदन करके बड़ी प्रसन्नतासे पूजन किया ॥२२॥ राजाको उदासीन देखकर अचम्भित होकर ऋषि स्वस्तिवाचन पूर्वक बोले ॥२३॥ हे राजन् ! तुम्हारे राज्यमें कुशल तो है ? सातों अंगोंमें कुशल तो है ? यह सुनकर नृप सत्तम अपनी कुशल कहने लगा ॥२४॥ राजा बोले--पूर्व जन्मार्जित दोषोंसे उत्पन्न हुआ अपना दुःख आपसे क्या कहूँ हे ब्रह्मन् ? आप जैसे ऋषीश्वर क्या नहीं जानते हैं ॥२५॥ मुझको अपने राज्यमें अथवा पुरमें कुछ सुख दिखाई नहीं देता है, पुत्रकी प्राप्तिके लिये मैं क्या करूँ और कहाँ जाऊँ ॥२६॥ हमारे राजाके पीछे हमारी कौन रक्षा करेगा इस दुःखको स्मरण कर करके मेरी प्रजा अत्यन्त दुःखी है ॥ २७ ॥ हे ब्रह्मन् ! इसका कुछ उपाय बताइये, आप साक्षात् दिव्य दर्शन हो, जिससे मेरे निष्फल पुत्रका जन्म हो, और जिससे मेरा वंश चले ॥ २८ ॥

महादेव बोले--हे देवि ! दुःखी राजाके इस वचनको सुनकर पापोंका नाश करते हुये शांडिल्य मुनि बोले ॥२९॥ इति श्रीसम्मोहनतंत्रे पार्वतीहरसंवादे गर्गसंहितामाहात्म्ये भाषाटीकायां द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ शांडिल्य बोले--हे राजन् ! उपाय तो तुम पहिले बहुतसे कर चुके हो, परन्तु उनसे एक भी कुलका दीपक पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ ॥ १ ॥ इस कारण अब तुम पवित्र मनसे रानीसहित गर्गसंहिताका श्रवण करो, इसके सुननसे धन, पुत्र और मुक्ति मिलती है ॥२॥ इस कलियुगमें इस छोटेसे उपायसे गर्गसंहिताकी कथा सुननेवाले मनुष्य को विष्णुभगवान् पुत्रसे आदि लेकर सब सुख सम्पति देते हैं ॥३॥ हे नरेन्द्र ! इस गर्गसंहिताके नौ दिवसके यज्ञसे मनुष्य पवित्र होकर इस संसारमें सुख भोगकर अन्तमें गोलोक धामको चले जाते हैं ॥४॥ इसके सुननेसे रोगी रोगसे, डरा हुआ डरसे बंधनवाला बंधनसे छूट जाता है, निर्धन धनवान् होता है,और मूर्ख पंडित हो जाता है ॥५॥ ब्राह्मण सुने तो

॥ महादेवउवाच ॥ इतिश्रुत्वावचोदेविदुःखितस्यनृपस्यच ॥ उवाचमुनिशांडिल्यःकश्मलंशमयन्निव ॥ २९ ॥ इतिश्रीसम्मोहनतंत्रेपार्वतीहरसंवादेगर्गसंहितामाहात्म्येद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ छ ॥ शांडिल्यउवाच ॥ उपायाश्चकृताराजन्बहवश्चपुरात्वया ॥ परंतुतैःसुतोह्येकोनजातःकुलदीपकः ॥ १ ॥ तस्माच्छृणुविधानेनभार्ययासहितःशुचिः ॥ धनदांपुत्रदांराजन्मुक्तिदांगर्गसंहिताम् ॥२॥ सर्वंददात्यसौविष्णुर्लघूपायेनवैकलौ ॥ पुत्रादिसुखसंपत्तिः संहिताश्रोतृणांनृणाम् ॥३॥ नरेंद्रशश्वन्मुनिसंहितायानवाहयज्ञेनजनाःपुनीताः ॥ इहैवसौख्यंपरमाप्नुवंतस्ततस्तुगोलोकपुरंव्रजंति ॥४॥ रोगीपुमान्रोगगणात्प्रमुच्यतेभीतोभयाद्बंधनगश्चबन्धनात् ॥ श्रुत्वाकथांनिर्धनएतिवैभवंमूर्खोभवेत्पण्डितएवसत्वरम् ॥ ५ ॥ विप्रोथविद्वान्विजयीनृपात्मजोवैश्योनिधीशोवृषलोपिनिर्मलः ॥ श्रुत्वाकथांप्राप्तमनोरथोभवेत्स्त्रीणांजनानामतिदुर्लभापिहि ॥ ६ ॥ निष्कारणोभक्तियुतःशृणोतिहिसर्वामिमांवैमुनिगर्गसंहिताम् ॥ विजित्यविघ्नान्प्रविजित्यनाकपान्गोलोकधामप्रवरंप्रयातिसः ॥७॥ प्रबन्धकल्पनागर्गसंहितायाश्चदुर्लभा ॥ सहस्रजन्मपुण्येनलभ्यतेभूतलेनृप ॥८॥ श्रीगर्गसंहितायाश्चदिनानांनियमोनहि ॥ सर्वदाश्रवणंचोक्तंभुक्तिमुक्तिकरंकलौ ॥ ९ ॥ नजानेसमयेनापिप्रभातेकिंभविष्यति ॥ प्रोक्तंतुसंहितायाश्चनवाहश्रवणंततः ॥ १० ॥ ज्ञानेनब्रह्मचर्येणचैकभुक्तेनभूपते ॥ एकान्नेनहविष्येणफलाहारेणवापुनः ॥ ११ ॥

विद्वान्,राजा सुने तो दिग्विजयी, वैश्य सुने तो साहूकार, और अधर्मी सुने तो निर्मल हो जाता है, इस कथाके सुननेसे स्त्री और पुरुषोंको अत्यन्त दुर्लभ वस्तुओंकी प्राप्ति होती है ॥६॥ जो निष्कारण भक्तियुक्त होकर इस सम्पूर्ण गर्गसंहिताका श्रवण करता है, वह सम्पूर्ण विघ्नोंको जीतकर देवताओंको पराजय करके गोलोकधामको चला जाता है ॥७॥ गर्ग संहिताकी दुर्लभ प्रबन्ध कल्पनाको हे राजा ! इस पृथ्वीपर हजारों जन्मके पुण्योंसे पाते हैं॥८॥इस गर्गसंहिताके दिनोंका कुछ नियम नहीं है। इसका सदा श्रवण करना कलियुग में जीतेजी भोग और मरनेपर मुक्ति देनेवाला है ॥ ९ ॥ न जाने कल क्या होगा, इससे गर्गसंहिता श्रवणका नौ दिनका विधान है ॥१०॥ जो कोई ज्ञानपूर्वक ब्रह्मचर्यव्रत धारण करके दिनमें एक समय भोजन करे, एक ही हविष्यान्नका भोजन करे, अथवा फलाहार करके रहे ॥ ११ ॥

गेहूँ अथवा जौकी पूरी और मिष्टान्न भोजन करे, सैंधानमक, कंद, दही, और दूधका विधानसे सेवन करे ॥१२॥ विष्णुभगवान्के प्रसादको हे नृपोत्तम ! सेवन करे, सब कामों को श्रद्धापूर्वक करे, और श्रद्धासे कथा सुने, तो सम्पूर्ण कामनाकी प्राप्ति होती है ॥१३॥ भूमिपर शयन करे, क्रोध और लोभको छोड़ दे, और गुरुओंके मुखसे कथा सुने तो सम्पूर्ण कामनाओंकी प्राप्ति होती है ॥१४॥ जो मनुष्य गुरुकी भक्तिसे रहित है नास्तिक है, पापी है, अवैष्णव है, दुष्ट है, उनको कथाका फल नहीं होता है ॥१५॥ मनुष्यको उचित है कि सुन्दर मुहूर्तमें अपने घर कथाको आरम्भ कराये अपने जान पहिचानके ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य सबको बुलाये ॥१६॥ भक्तिपूर्वक केलाका मंडप बनाये, आगे, जलसे भरा हुआ कलश पंचपल्लव समेत रखे ॥१७॥ प्रथम गणेशजीका पूजन करके फिर नवग्रहोंका पूजन करे फिर पुस्तकका पूजन करके वक्ताका पूजन करे ॥ १८ ॥ सुवर्णकी दक्षिणा देवे, यदि

मिष्टान्नंपूरिकांचैवगोधूमस्ययवस्यवा ॥ अश्नीयात्सैन्धवंकंदंदधिदुग्धंविधानतः ॥१२॥ विष्णुप्रसादंभुंजीतनाप्रसादंनृपोत्तम ॥ श्रद्धयातुप्रकुर्वीतश्रवणंसर्वकामदम् ॥ १३॥ भूमिशायीभवेत्प्राज्ञःक्रोधलोभविवर्जितः ॥ कथांगुरुमुखाच्छ्रुत्वासर्वकामफलंलभेत् ॥ १४ ॥ गुरुभक्तिविहीनानांनास्तिकानांचपापिनाम् ॥ अवैष्णवानांदुष्टानांकथायाश्चफलंनहि ॥ १५ ॥ सुमुहूर्तेकथारंभंस्वगृहेकारयेन्नरः ॥ ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्रान्समाहूयस्वकान्स्वकान् ॥ १६ ॥ मंडपंकदलीखण्डैःप्रकुर्य्याद्भक्तितःसुधीः ॥ अग्रेतुकलशंधृत्वाजलपूर्णंसपल्लवम् ॥ १७ ॥ पूर्वंविनायकंपूज्यततपश्चात्तुनवग्रहान् ॥ ततश्चपुस्तकंपूज्यवक्तारंपरिपूजयेत् ॥ १८ ॥ सुवर्णदक्षिणांदत्त्वाह्यशक्तोरजतस्यवा ॥ कलशेश्रीफलंधृत्वामिष्टान्नंतुनिवेदयेत् ॥ १९ ॥ प्रकुर्य्यादार्तिकंभक्त्यासंपूज्यतुलसीदलैः ॥ समाप्तिदिवसेराजन्प्रदक्षिणमुपाचरेत् ॥ २० ॥ परदाररतंधूर्तंवादिनंशिवनिन्दकम् ॥ अवैष्णवंक्रोधपरंवक्तारंतुनकल्पयेत् ॥ २१ ॥ वादीचनिंदकोमूर्खोगाथायांभंगमाचरेत् ॥ दुःखदाताचसर्वेषांसतुश्रोताहतःस्मृतः ॥ २२ ॥ गुरुशुश्रूषणेरक्तोविष्णुभक्तःकथार्थवित् ॥ गाथांश्रोतुंमनोयस्यसश्रोताश्रेष्ठउच्यते ॥ २३ ॥ शुद्धःसआचार्यकुलप्रजातःश्रीकृष्णभक्तोबहुशास्त्रवेत्ता ॥ कृपाकरःसर्वजनेषुनित्यंसंदेहहारीकथितःसवक्ता ॥ २४ ॥ वरणंब्राह्मणानांचयथाशक्त्याचकारयेत् ॥ कथाविघ्ननिवृत्त्यर्थं द्वादशाक्षरविद्यया ॥ २५ ॥

सामर्थ्य न होय, तो चांदीहीकी देवे, कलशमें श्रीफल रखकर मिष्टान्न निवेदन करे ॥१९॥ तुलसीदलसे पूजन करके भक्तिसे आरती उतारे, समाप्तिके दिन परिक्रमा देवे ॥ २० ॥ परस्त्री गामी, धूर्त, वादी, शिवनिंदक, अवैष्णव, ऐसे वक्ताके मुखसे कथा न सुने ॥२१॥ वादी, मूर्ख, निंदक, जो कथाके बीचमें बोल उठे और जो सबको दुःख देता है ऐसा श्रोता दुष्ट होता है ॥२२॥ जो श्रोता गुरुकी सेवामें परायण हो, विष्णुभक्ति रखे, कथाके अर्थको समझे, जिसका मन कथा सुननेमें लगे, वह श्रोता श्रेष्ठ होता है ॥२३॥ जो शुद्ध हो, श्रेष्ठ आचार्यके कुलमें उत्पन्न हो, श्रीकृष्णका भक्त हो सम्पूर्ण शास्त्रोंका जाननेवाला हो सम्पूर्ण मनुष्योंपर दया रखे, और संदेहोंको दूर करे, वह वक्ता श्रेष्ठ है ॥ २४ ॥ यथाशक्ति ब्राह्मणोंको वरण करावे, कथाकी समाप्तिके हेतु द्वादशाक्षर मन्त्रका जाप कराये ॥ २५ ॥

धीरे धीरे तीन पहरतक कथा बांचे, कथाका विश्राम दो समय कराये ॥२६॥ लघु शंकादि कृत्यसे निवृत्त होकर जलसे हाथ पांव धोकर, मुख धोवे ॥२७॥ हे राजन् ! पवित्र होकर नवें दिन विज्ञानखण्डमें कही हुई रीतिसे पुष्प, नैवेद्य, चन्दनसे पुस्तकका पूजन करे ॥२८॥ सोने,चांदी, हाथी, घोड़ा, आदिकी दक्षिणा देकर, वस्त्र, आभूषण, गंधादिकसे वक्ताका पूजन करे ॥२९॥ नौ सहस्र अथवा नौसौ अथवा नब्बे अथवा श्रद्धा न होय तो नौही ब्राह्मणोंको खीरका भोजन कराये, ॥३०॥ यथाशक्ति भोजन कराये, तो कथाका फल मिले. कथाके विश्रामपर हरिनाम संकीर्तन कराये ॥३१॥ विष्णु भक्तिपरायण स्त्रीजनोंके संग, पुरुषोंके संग, कांस्य पात्र, झांझ, शंख, मृदंग घंटा आदि जयजय करता हुआ बजाये ॥३२॥ गुरुके लिये गर्गसंहिताकी पुस्तक सोनेके सिंहासनपर रखकर देवे, फिर हरिके मंदिरको जाय ॥३३॥ हे राजन् ! यह गर्गसंहिताका माहात्म्य मैंने तुम्हारे आगे कहा, अब क्या सुनने की इच्छा करते हो, इस संहिताके श्रवणमात्रसे भुक्ति मुक्ति मिलती है ॥३४॥ इति श्रीसम्मोहनतंत्रे पार्वतीहरसंवादे श्रीगर्गसंहितामाहात्म्ये भाषाटीकायां श्रवणविधिवर्णनंनाम तृतीयोऽ

कथांतुधीरकंठेनवाचयेत्प्रहरत्रयम् ॥ कथायास्तत्रविश्रामोद्विवारंकारयेद्बुधः ॥२६॥ लघुशंकादिकंकृत्वाभूत्वानीरेणवैशुचिः ॥ प्रक्षाल्यपाणी पादौचमुखप्रक्षालनंचरेत् ॥२७॥ नवाहेपूजनंनोक्तंखण्डेविज्ञानकेनृप ॥ पुस्तकंपूजयित्वाचपुष्पनैवेद्यचंदनैः ॥२८॥ सुवर्णरजताद्यैश्चवाहनाद्यैः सदक्षिणैः ॥ वस्त्रभूषणगंधाद्यैर्वाचकंपूजयेत्सुधीः ॥२९॥ विप्रान्वानवसाहस्रांस्तथानवशतान्नृप॥तथानवनवंवापिपायसैर्वानवद्विजान् ॥३०॥ भोजयेत्तुयथाशक्त्याकथायाश्चफलंलभेत् ॥ कथायास्तत्रविश्रामेकीर्त्तनंकारयेद्बुधः ॥३१॥ स्त्रीजनैःपुरुषैसार्द्धंविष्णुभक्तिसमन्वितैः॥कांस्य शंखमृदंगाद्यैर्जयशब्दैरितस्ततः ॥ ३२ ॥ श्रीगर्गसंहितायांश्चपुस्तकंगुरवेजनः ॥ निधायस्वर्णसिंहेवैदद्यात्सोतेहरिंव्रजेत् ॥३३॥ इतितेकथितं राजन्किंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ संहिताश्रवणेनापिभुक्तिःप्रदृश्यते ॥ ३४ ॥ इतिश्रीसंमोहनंतन्त्रेपार्वतीहरसंवादेश्रीगर्गसंहितामाहात्म्यश्रव-णविधिवर्णनंनामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ महादेवउवाच ॥ इदं वचःश्रीमुनिशस्यश्रुत्वाप्रहस्यराजावनतस्तुसम्यक् ॥ कुरुत्वंसपुत्रंमुनेमां शरण्यंत्वरंश्रावयत्वंहरेःसंहितांच ॥१॥ श्रुत्वाभूपवचश्चकारसुखदंपारायणंमंडपंकृत्वाश्रीयमुनातटेमुनिवरः श्रुत्वाऽऽयमुर्माथुराः॥पूर्णेनाथदिने तथापरदिनेराजाथदानंत्वदाद्विप्रेभ्योवरभोजनंबहुधनश्रीयादवेंद्रोमहान्॥२॥ शांडिल्यायमुनीन्द्रायरथाश्चान्द्रविणंमहत् ॥ गोगजादीनिरत्ना-निसंपूज्यप्रददौनृपः ॥ ३ ॥ श्रीमद्गोपालकृष्णस्यममोक्तंसर्वमंगले ॥ सहस्रनामशांडिल्यःसर्वदोषहरंजगौ ॥ ४ ॥

ध्यायः ॥ ३ ॥ महादेवजी बोले मुनीश्वरके कथनको सुनकर प्रसन्न होकर राजा बड़ा नम्र हुआ और कहने लगा हे मुनीश ! मैं आपकी शरण आया हूँ, मुझको इस संहिताको जल्दी सुनाकर पुत्र दीजिये ॥ १ ॥ मुनिवरने--राजाके यह वचन सुनकर यमुनाजीके किनारेपर सुन्दर मण्डप बनवाकर कथाका पारायण किया, और यह खबर सुनकर सब मथुरा वासी आये, यादवोंके राजाने कथाके पूर्वादिक और समाप्तिके दिन ब्राह्मणोंको बहुत दान दिया, भोजन कराये और खूब धन दिया, शांडिल्यऋषिको बहुतसे रथ,घोड़े और बहुतसा धन दिया, सम्यक् प्रकार पूजन करके गौ, हाथी, और रत्न दिये ॥२॥३॥ हे सर्वमंगले ! फिर शांडिल्यऋषिने सम्पूर्ण दोषोंको नाश करनेवाले मेरे बनाये हुये श्रीगोपालसहस्रनाम का पाठ किया ॥ ४ ॥

शांडिल्यकी प्रेरणासे कथाके अन्तमें राजाने व्रजेश्वर श्रीमन्मदन मोहनका ध्यान किया ॥ ५ ॥ तब प्रियाजी और पार्षदों सहित श्रीकृष्णका प्रादुर्भाव हुआ, वंशी और बेत धारण करनेवाले, श्याम रूप कोटि कोटि कामदेवको मोहनेवाले हैं ॥६॥ दृष्टि पडतेही शांडिल्य ऋषि और राजा सम्पूर्ण श्रोताओं समेत शीघ्रही प्रणाम करके विधिपूर्वक स्तुति करने लगे ॥ ७ ॥ शांडिल्य बोले--हे प्रभो ! आप वैकुण्ठ लोककी लीलाको करनेवाले परम मनोहर हो, देवगणोंसे नमस्कार किये गये सबमें श्रेष्ठ हो, गोपाल लीला करने युक्त मैं आपका भजन करता हूँ, गोलोक नाथको शिरसे नमस्कार करता हूँ ॥ ८ ॥ प्रतिबाहु बोला--हे गोलोक नाथ ! हे गिरिराजपते ! हे परेश ! हे वृन्दावनेश ! आप नित्य प्रति लीला विहार के करनेवाले हो, आप राधाकेपति हो,व्रजवधूजन आपका गीतोंमें कीर्तन करती हैं,हे गोविन्द ! आप गोकुलके पति हैं, आपकी जय हो॥९॥ रानी बोली हे वृन्दावनेश! हे राधिकापते! हे पुरुषोत्तम ! हे माधव ! आप भक्तोंके सुखदेनेवाले हो, मैं आपकी शरण आई हूँ ॥१०॥सम्पूर्ण श्रोता बोले--हे श्रीनाथ ! हे जगन्नाथ ! आप हमारे अपराधको क्षमा करो आप

कथावसानेराजेंद्रःशांडिल्येनप्रणोदितः ॥ दध्यौभक्त्याव्रजपतिंश्रीमन्मदनमोहनम् ॥५॥ ततःप्रादुरभूत्कृष्णःप्रिययापार्षदैःसह ॥ वंशीवेत्र-
धरःश्यामः कोटिमन्मथमोहनः ॥ ६ ॥ दृष्ट्वागतंतंशांडिल्योराज्ञाचसर्वश्रोतृभिः ॥ प्रणामंतुचकाराशुस्तुतिंचक्रेविधानतः ॥ ७ ॥ शांडिल्य
उवाच ॥ वैकुण्ठलीलाप्रपरंमनोहरंनमस्कृतंदेवगणैःपरंवरम् ॥ गोपाललीलाभियुतंभजाम्यहंगोलोकनाथंशिरसानमाम्यहम् ॥ ८ ॥ प्रति-
बाहुरुवाच ॥ गोलोकनाथगिरिराजपतेपरेशवृंदावनेशकृतनित्यविहारलील ॥ राधापतेव्रजवधूजनगीतकीर्तेगोविंदगोकुलपतेकिलतेजयोस्तु
॥ ९ ॥ राज्ञ्युवाच ॥ वृंदावनेशराधेशपुरुषोत्तममाधव ॥ भक्तानांत्वंतुसुखदस्त्वामहंशरणंगता ॥ १० ॥ सर्वेश्रोतारऊचुः ॥ श्रीना-
थहेजगन्नाथह्यपराधंक्षमस्वनः ॥ सुपुत्रंदेहिभूपायाऽस्मभ्यंभक्तिंस्वपादयोः ॥ ११ ॥ महादेवउवाच ॥ इतिश्रुत्वास्तुतिंदेविभगवान्भक्तव-
त्सलः ॥ उवाचप्रणतान्सर्वान्मेघगंभीरयागिरा ॥ १२ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मुनीन्द्रशृणुमद्वाक्यंराज्ञासर्वजनैःसह ॥ वचनंयुष्मदादीनां
सफलंचभविष्यति ॥ १३ ॥ गर्गेणकथिताब्रह्मन्नाम्नेयंगर्गसंहिता ॥ सर्वदोषहरापुण्याचतुर्वर्गफलप्रदा ॥१४॥ येयेमनोरथंयंयंवांछंतिमनुजाः
कलौ ॥ तंतंदास्यतिसर्वेभ्यःश्रीमुनेर्गर्गसंहिता ॥ १५ ॥ शिवउवाच ॥ इत्युक्त्वाराधयासार्द्धंमाधवोऽतरधीयत ॥ मुनिभूपादयःसर्वेश्रोतार-
श्चमुदंययुः ॥ १६ ॥ शांडिल्यश्चमुनिर्द्रव्यंमाथुरान्ब्राह्मणान्पृथक् ॥ दत्त्वाराजानमाश्वास्यसोपिचांतर्दधेप्रिये ॥ १७ ॥

राजाको सुन्दर पुत्र दीजिये, और हमें अपने चरणोंकी भक्ति दीजिये॥११॥महादेव बोले--हे देवी ! इस प्रकार भक्तवत्सल भगवान् सबकी स्तुति सुनके मेघकीसी गम्भीर वाणीसे बोले॥१२॥श्री भगवान् बोले- हे मुनीन्द्र ! राजा और सम्पूर्ण प्रजा सहित मेरी बात सुनो,आप सबका वचन सफल होवेगा॥१३॥हे ब्रह्मन् ! यह गर्ग संहिता गर्गजीने कही है, सम्पूर्ण दोषोंको हरनेवाली,पुण्य तथा धर्म,अर्थ,काम मोक्ष चारों पदार्थोंको देनेवाली है॥१४॥कलियुगमें मनुष्य जो जो वस्तुकी इच्छा करेंगे,उनको यह गर्गसंहिता वही वही फल देगी ॥१५॥ शिवजी बोले--यह कहकर माधव राधा सहित अंतर्ध्यान होगये, ऋषि और राजासे आदि लेकर सम्पूर्ण श्रोता बहुत प्रसन्न हुये ॥ १६ ॥ शांडिल्य ऋषिभी मथुराके ब्राह्मणोंको पृथक् पृथक् दक्षिणा देकर और राजाको आश्वासन देकर स्वयम् अंतर्ध्यान हो गये ॥ १७ ॥

तब रानीने राजासे गर्भ धारण किया और प्रसव कालमें सुन्दर गुणोंसे युक्त पुत्रकी उत्पत्ति हुई ॥१८॥ राजाने प्रसन्न होकर पुत्रजन्मकी बधाईमें ब्राह्मणोंको गौ, पृथ्वी, सुवर्ण वस्त्र,
घोड़ा, हाथी, आदि दिये ॥१९॥ ज्योतिषियोंने पुत्रका नाम सुबाहु रखा, इससे राजा प्रतिबाहु कृतकृत्य हुआ ॥२०॥ इस गर्गसंहिताके श्रवणसे प्रतिबाहु राजा सब सुखोंको भोग
कर अंतकालमें योगियोंको दुर्लभ गोलोकमें चला गया ॥२१॥ यह श्रीमद्गर्गसंहिता स्त्री, पुत्र, धन, वाहन,यश, घर, राज्य, सौख्य, और मोक्ष सबही पदार्थोंकी देनेवाली है॥२२॥
ऐसे महादेवजी जब पार्वतीको सम्पूर्ण कथा सुना चुके तब सब मुनीश्वर चुप हो गये, परन्तु पार्वती फिर बोलीं ॥२३॥ हे प्रभो ! इस गर्गसंहिताकी कथाको मेरे आगे कहिये, इसमें
श्रीकृष्ण भगवान्के आगे अद्भुत २ चरित्र दिखते हैं ॥२४॥ यह सुनकर महादेवजीने प्रसन्न होकर सम्पूर्ण गर्गसंहिताकी कथा सुनाई ॥ २९ ॥ फिर साक्षात् शिवजी बोले--हे सर्व

ततोभूपतिनाराज्ञीगर्भमाधत्तशोभनम् ॥ सूतिकालेसुतोजातोगुणवान्पुण्यकर्मतः ॥१८॥ हृष्टोराजाब्राह्मणेभ्यःकुमारस्यजन्मनि ॥ गोभूसुवर्ण
वस्त्राणिगजाश्वादीनिदत्तवान् ॥ १९ ॥ दैवज्ञैश्चस्वपुत्रस्यसुबाहुंनामचाकरोत् ॥ प्रतिबाहुर्नृपश्रेष्ठःकृतकृत्योबभूवह ॥२०॥ श्रीगर्गसंहितांश्रु-
त्वाभुक्त्वासर्वसुखानिच ॥ प्रतिबाहुर्ययावंतेगोलोकंयोगिदुर्लभम् ॥ २१ ॥ स्त्रियंपुत्रंधनंवापिवाहनंचयशोगृहम् ॥ राज्यंसौख्यंचमोक्षंचदद्या-
च्छ्रीगर्गसंहिता ॥२२॥ इतिसर्वांकथांदेव्यैकथयित्वाचशंकरः ॥ तूष्णींबभूवमुनयःपुनस्तंप्राहपार्वती ॥२३॥ पार्वत्युवाच ॥ श्रीगर्गसंहिता-
याश्चकथांवदममाग्रतः ॥ अद्भुतंचरितंयस्यांश्रूयतेमाधवस्यहि ॥२४॥ इतिश्रुत्वाकथांसर्वांभवान्यैभगवान्भवः ॥ गर्गस्यसंहितायाश्चकथ-
यामासहर्षितः ॥ २९ ॥ पुनरूचेहरःसाक्षाच्छृणुत्वंसर्वमंगले ॥ बिल्वकेशवनेसिद्धपीठेगंगार्द्धयोजने ॥२६॥ श्रीमद्भागवतादीनिसंहितादीनि
वैकलौ ॥ गोकुलस्थैर्विष्णुजनैर्वारंवारंचश्रोष्यसि ॥ २७ ॥ सूतउवाच ॥ इतीतिहासंरुद्रस्यमुखाच्छ्रुत्वामहाद्भुतम् ॥ वैष्णवीभगवन्माया-
प्रसन्नाभूच्चशौनक ॥२८॥ सकृच्छ्रोतुंहरेर्गाथांबिल्वकेशवनेमुने ॥ स्वात्मानंप्रकटंकर्तुंकलेरादौमनोदधे ॥ २९ ॥ तस्माच्छ्रीरूपिणीतत्रनाम्नावै
सर्वमंगला ॥ गंगायादक्षिणतटेप्रादुर्भूताभविष्यति ॥ ३० ॥ श्रीगर्गसंहितायाश्चमहात्म्यंकथितंमुने ॥ शृणोतियश्चपठतिपापदुःखैःसमुच्यते
॥ ३१ ॥ इतिश्रीसंमोहनतन्त्रेपार्वतीहरसंवादेश्रीग० माहात्म्येचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ इति ग० मा० समाप्तम् ॥ छ ॥

मंगले ! तुम मेरी बात सुनो, बिल्वकेशवनमें गंगासे दो कोसपर सिद्धपीठके आश्रममें ॥२६॥ कलियुगके बीचमें श्रीमद्भागवतादिक संहिताओंको गोलोकवासी वैष्णवजनोंके मुख
से तुम बारंबार सुनोगी ॥ २७ ॥ सूतजी बोले--महादेवजीके मुखसे इस अद्भुत इतिहासको सुनकर वैष्णवी श्रीपार्वती बहुत प्रसन्न हुई ॥२८॥ हे मुने ! बिल्वकेशवनमें भगवान्की
सम्पूर्ण कथाओंको सुननेके लिये, कलियुगमें प्रकट होनेका मन किया ॥२९॥ इससे गंगाके दक्षिण किनारेपर श्रीरूपिणी सर्वमंगलाका प्रादुर्भाव हो गया ॥ ३० ॥ हे मुने ! यह गर्ग
संहिताका माहात्म्य मैंने तुमको सुनाया इसके सुननेसे अथवा पाठ करनेसे सम्पूर्ण पाप और दुखोंका नाश होता है ॥३१॥ इति श्रीसम्मोहनतंत्रे पार्वतीहरसंवादे गर्गसंहिता माहा-
त्म्ये भाषाटीकायां चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ इति गर्गसंहिता माहात्म्य भाषाटीका समाप्ता ॥

॥ इति गर्गसंहितामाहात्म्यं भाषाटीकासमेतं समाप्तम् ॥

अथ गर्गसंहितायां गोलोकखण्डं भाषाटीकासहितं प्रारभ्यते

(प्रथमखण्डम्)

श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ गोलोकखण्डभाषाटीका प्रारभ्यते ॥ वक्ताको उचित है, कि ग्रंथके आदिमें प्रथम नारायणको तथा नरोंमें उत्तम नर भगवान्‌को एवं देवी, सरस्वती और महामुनि वेदव्यासजीको नमस्कार करके संसारको जीतनेवाले पुराणका वर्णन करे ॥१॥ ग्रन्थकर्ता श्रीगर्गजी कहते हैं, कि मैं श्रीराधापति श्रीकृष्णके चरणकमलका ध्यान करता हूँ, कैसे चरणकमल हैं, कि शरद् ऋतुके विकसित कमलकी शोभाको अत्यन्त फीकी करनेवाले, भ्रमररूप मुनियोंसे सेवित, वज्र, अंकुश, यव, पद्म, इन चिह्नोंसे युक्त हैं, और चमकते बजते सुवर्णके नूपुरोंसे भक्तोंके अध्यात्म, अधिभूत, अधिदैव, तीनों तापोंको दूर करनेवाले हैं, और जहाँ जहाँ प्रभु चरणोंको धरते हैं, वहाँ वहाँ चरणकमलकी कान्तिसे पृथ्वी लाल होती जाती है, नख चन्द्रकी किरण छूटती जाती है, ऐसे चरणकमल द्वय हैं ॥ २ ॥ जिनके मुखकमलसे निकले हुए प्रथम कथारूपी अमृतको उत्तम पुरुष पान करते हैं, ऐसे बदरिकाश्रममें विचरनेवाले, सत्यवतीके कुमार, प्रणाम करनेवाले पुरुषोंके पापोंको हरनेवाले, शार्ङ्गधन्वाके अवतार श्रीवेदव्यासजी मेरी वाणीको शोभायमान करें ॥३॥ किसी समय

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐसरस्वत्यैनमः ॥ अथ गोलोकखण्डः प्रारभ्यते ॥ ॐ नारायणंनमस्कृत्यनरंचैवनरोत्तमम् ॥ देवींसरस्वतींव्यासं ततोजयमुदीरयेत् ॥ १ ॥ शरद्विकचपंकजश्रियमतीवविद्वेषकं मिलिन्दमुनिसेवितंकुलिशकञ्जचिह्नावृतम् ॥ स्फुरत्कनकनूपुरंदलितभक्ततापत्रयं चलद्द्युतिपदद्वयंहृदिदधामिराधापतेः ॥ २ ॥ वदनकमलनिर्य्यद्यस्यपीयूषमाद्यंपिबतिजनवरोयंपातुसोयंगिरंमे ॥ बदरवनविहारः सत्यवत्याःकुमारःप्रणतदुरितहारःशार्ङ्गधन्वावतारः ॥ ३ ॥ कदाचिन्नैमिषारण्येश्रीगर्गोज्ञानिनांवरः ॥ आययौ शौनकंद्रष्टुंतेजस्वीयोगभास्करः ॥ ४ ॥ तंदृष्ट्वासहसोत्थायशौनकोमुनिभिःसह ॥ पूजयामासपाद्याद्यैरुपचारैर्विधानतः ॥ ५ ॥ शौनकउवाच ॥ सतांपर्यटनंधन्यंगृहिणांशांतयेस्मृतम् ॥ नृणामन्तस्तमोहारीसाधुरेव न भास्करः ॥ ६ ॥ तस्मान्मेहृदिसंभूतंसंदेहंनाशय प्रभो ॥ कतिधा श्रीहरेर्विष्णोरवतारोभवत्यलम् ॥ ७ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ साधुपृष्टंत्वयाब्रह्मन्भगवद्गुणवर्णनम् ॥ शृण्वतांगदतांयद्वै पृच्छतां वितनोतिशम् ॥ ८ ॥ अत्रैवोदाहरंतीममितिहासंपुरातनम् ॥ यस्यश्रवणमात्रेणमहादोषः प्रशाम्यति ॥ ९ ॥

ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ, बड़े तेजस्वी योगके सूर्य श्रीगर्गाचार्यजी शौनक ऋषिको देखनेके लिए नैमिषारण्यमें आये ॥ ४ ॥ उन गर्गजीको आये हुए देखकर शौनकऋषि मुनियोंको साथ लेकर उठकर पाद्य, अर्घ्य आचमन, गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, आदि उपचारसे, वेदकी विधिसे पूजा करके ॥ ५ ॥ शौनकजी बोले--हे महाराज ! संतजनोंका भ्रमण करना गृहस्थियोंके आनन्दके लिये कहा है । क्योंकि मनुष्योंके अन्तःकरणके अंधकारको दूर करनेवाले साधु ही हैं, सूर्य नहीं ॥६॥ इससे हे प्रभो ! मेरे हृदयमें उठे हुये संदेहको दूर करिये, कि विष्णु भगवान्‌के सब कितने अवतार होते हैं ॥ ७ ॥ तब गर्गजी बोले कि हे ब्रह्मन् ! आपने अच्छी बात पूछी है, क्योंकि भगवान्‌के गुणोंका वर्णन; कहनेवाले, सुननेवाले और पूछनेवालेका कल्याण करनेवाला है ॥ ८ ॥ यहां यह एक पुराना इतिहास वर्णन करते हैं, जिसके सुननेसे बड़े बड़े पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ ९ ॥

पूर्व समयमें मिथिलानगरीमें बड़ा प्रतापी एक बहुलाश्व नामक राजा, बड़ा शान्तचित्तवाला, निरहंकारी और कृष्णका भक्त हुआ ॥१०॥ उसके घर एक समय नारदजी आकाश मार्गसे होकर आये। उनको देखकर राजा उनकी पूजाकर आसनपर बैठाकर बोला ॥११॥ जनक राजा बोले कि, जो अनादि आत्मा पुरुष भगवान् प्रकृतिसे परे है, वे अवतार क्यों लेते हैं, सो हे महाबुद्धिवाले मुझसे कहिये ॥ १२ ॥ तब नारदजी बोले कि हे राजन्, गौ, ब्राह्मण, साधु, देवता और वेद की रक्षाके लिये साक्षात् भगवान् हरि अपनी लीलासे अवतार धारण करते हैं ॥१३॥ जैसे नट अपनी लीलामें मोहित नहीं होता है, और देखनेवाले हो जाते हैं इसी तरह हरिकी मायाको देखकर दूसरे मोहित हो जाते हैं, आप हरि मोहित नहीं होते हैं ॥ १४ ॥ तब राजा जनक बोला कि भगवान् हरिके कितने प्रकारके अवतार साधुओंकी रक्षाके लिये होते हैं, उनको हे प्रभु ! कृपाकर मुझसे

मिथिलानगरेपूर्वंबहुलाश्वःप्रतापवान् ॥ श्रीकृष्णभक्तःशान्तात्माबभूवनिरहंकृतिः ॥ १० ॥ अंबरादागतंदृष्ट्वानारदंमुनिसत्तमम् ॥ संपूज्य चासनेस्थाप्यकृतांजलिरभाषत ॥ ११ ॥ श्रीजनकउवाच ॥ योनादिरात्मापुरुषोभगवान्प्रकृतेः परः ॥ कस्मात्तनुंसमाधत्तेतन्मे ब्रूहिमहामते ॥ १२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ गोसाधुदेवताविप्रवेदानांरक्षणायवै ॥ तनुंधत्तेहरिःसाक्षाद्भगवानात्मलीलया ॥ १३ ॥ यथानटःस्वलीलायांमोहितोनपरस्तथा ॥ अन्येदृष्ट्वाचतन्मायांमुमुहुस्तेनसंशयः ॥ १४ ॥ श्रीजनकउवाच ॥ कतिधाश्रीहरे-र्विष्णोरवतारोभवत्यलम् ॥ साधूनांरक्षणार्थंहिकृपयावदतांप्रभो ॥ १५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अंशांशोंशस्तथावेशःकलापूर्ण-प्रकथ्यते ॥ व्यासाद्यैश्चस्मृतःषष्ठःपरिपूर्णतमः स्वयम् ॥१६॥ अंशांशस्तुमरीच्यादिरंशाब्रह्मादयस्तथा ॥ कलाःकपिलकूर्माद्याआवेशाभार्ग-वादयः ॥ १७ ॥ पूर्णोनृसिंहोरामश्चश्वेतद्वीपाधिपोहरिः ॥ वैकुण्ठोपितथायज्ञोनरनारायणःस्मृतः ॥ १८ ॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णो भगवान्स्वयम् ॥ असंख्यब्रह्मांडपतिर्गोलोकेधाम्निराजते ॥ १९ ॥ कार्याधिकारंकुर्वन्तःसदंशास्तेप्रकीर्तिताः ॥ तत्कार्यभारंकुर्वन्तस्तेंऽशांशाविदिताःप्रभोः ॥ २० ॥

कहिये ॥ १५ ॥ तब नारदजी बोले कि हे राजन् ! भगवान्के कितनेही तो अंशावतार, कितनेही अंशांशावतार, कितनेही कलावतार और कितनेही पूर्ण अवतार, व्यासादिकने वर्णन किये हैं, पर श्रीकृष्ण तो स्वयम् परिपूर्णतम अवतार हैं ॥ १६ ॥ सो कहते हैं, मरीच्यादिक तो अंशके अंश हैं, और ब्रह्मा, विष्णु, महेश ये अंशावतार हैं, और कपिल कूर्मादिक कलावतार हैं और परशुरामादिक आवेशावतार हैं ॥ १७ ॥ नृसिंह, राम, श्वेतद्वीपके पति हरि, वैकुण्ठ, यज्ञ और नारायण ये पूर्णावतार हैं ॥१८॥ और परिपूर्णतम तो साक्षात् स्वयम् श्रीकृष्ण भगवान् ही हैं, सो अखिल ब्रह्माण्डके पति गोलोकमें विराजते हैं ॥ १९ ॥ जो (कतव्य) कर्मके अधिकार मात्रको ही (जैसे इन्द्र, राम,) करते हैं, वे तो ब्रह्माके अंश और हे राजन् ! जो इन इन्द्रादिकी आज्ञाको करते हैं, वे प्रभुके अंशके अंश कहलाते हैं ॥ २० ॥

और जिनके अन्दर बैठकर भगवान् करने योग्यको करके निकल जाते हैं, वे सब आवेशावतार कहलाते हैं ॥२१॥ और युग-युगके धर्मको जानकर फिर उन युग धर्मोंको अच्छी तरह प्रवृत्त करते युग समाप्ति पर्यंत वर्तमान रहकर जो अन्तर्ध्यान हो जाते हैं, वे भगवान्के कलावतार कहलाते हैं ॥२२॥ और जिस अवतारमें चतुर्व्यूह, वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न हों, और नौ रस दिखाई दे, और समग्र अलौकिक वीर्योंका प्राकट्य दिखाई दे, तो पूर्ण कहा जाता है ॥ २३ ॥ जिनके अपने तेजमें सम्पूर्ण तेज लीन हो जाते हैं, उनको स्वयम् साक्षात् परिपूर्णतम परे अवतार कहते हैं ॥ २४ ॥ और जहाँ परिपूर्णके सब लक्षण दिखाई दें, और जिनको जन पृथक्-पृथक् भावसे देखते हैं, वे ही परिपूर्णतम स्वयम् भगवान् कहलाते हैं ॥२५॥ वे साक्षात् परिपूर्णतम श्रीकृष्ण ही हैं, और कोई नहीं है। क्योंकि जिन्होंने एक कार्यके लिये आकर अनेकों कार्य

येषामन्तर्गतोविष्णुःकार्यं कृत्वाविनिर्गतः ॥ नानाऽवेशावतारांश्चविद्धिराजन्महामते ॥ २१ ॥ धर्मविज्ञायकृत्वायःपुनरंतरधीयत ॥ युगेयुगे वर्तमानःसोऽवतारःकलाहरेः ॥ २२ ॥ चतुर्व्यूहोभवेद्यत्रदृश्यन्तेचरसानव ॥ अतःपरंचवीर्याणिसतुपूर्णःप्रकथ्यते ॥ २३ ॥ यस्मिन्सर्वाणि तेजांसिविलीयन्तेस्वतेजसि ॥ तंवदन्तिपरंसाक्षात्परिपूर्णतमंस्वयम् ॥२४॥ पूर्णस्यलक्षणंयत्रयंपश्यन्तिपृथक्पृथक् ॥ भावेनापिजनाःसोऽयं परिपूर्णतमःस्वयम् ॥ २५ ॥ परिपूर्णतमः साक्षाच्छ्रीकृष्णोनाऽन्यएवहि ॥ एककार्यार्थमाऽऽगत्य कोटिकार्यंचकार ह ॥ २६ ॥ पूर्णः पुराणः पुरुषोत्तमोत्तमःपरात्परोयः पुरुषोपरेश्वरः ॥ स्वयंसदाऽऽनन्दमयंकृपाकरंगुणाकरंतंशरणंव्रजाम्यहम् ॥२७॥ श्रीगर्गउवाच ॥ तच्छ्रुत्वा हर्षितोराजारोमांचीप्रेमविह्वलः ॥ प्रामृश्यनेत्रेऽश्रुपूर्णेनारदंवाक्यमब्रवीत् ॥ २८ ॥ श्रीबहुलाश्वउवाच ॥ परिपूर्णतमः साक्षाच्छ्री-कृष्णः केनहेतुना ॥ आगतोभारतेखंडेद्वारावत्यांविराजते ॥ २९ ॥ तस्यगोलोकनाथस्यगोलोकंधामसुन्दरम् ॥ कर्माण्यपरिमयानिब्रूहि ब्रह्मन्बृहन्मुने ॥ ३० ॥ यदातीर्थाटनंकुर्वञ्छतजन्मतपःपरम् ॥ तदासत्संगमेत्याऽऽशुश्रीकृष्णंप्राप्नुयान्नरः ॥ ३१ ॥ श्रीकृष्णदासस्यचदास-दासः कदाभवेयंमनसार्द्रचित्तः ॥ योदुर्लभोदेववरैः परात्मासमेकथंगोचरआदिदेवः ॥ ३२ ॥

किये हैं ॥२६॥ पूर्ण, पुराण, अनादि, सिद्ध, पुरुषोत्तमोत्तम, परसे पर जो परमेश्वर पुरुष और स्वयं सदा आनन्दमय, कृपानिधि, गुणोंके निवास स्थान जो ईश्वर हैं, उनकी मैं शरणको प्राप्त हुआ हूँ ॥२७॥ श्रीगर्गजी कहते हैं, कि ऐसे नारदजीके वचन सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुये, और रोमांचित होकर प्रेममें विह्वल हुये, आंसुओंसे भरे नेत्रोंको साफ कर नारदजीसे वचन बोले ॥२८॥ कि हे ऋषे ! श्रीकृष्ण साक्षात् परिपूर्णतम किस कारणसे भरतखण्डमें आये और द्वारिकामें विराजते हैं ॥ २९ ॥ उस गोलोकनाथके सुन्दर गोलोक धामको, और हे ब्रह्मन् ! उन भगवान्के जो अपरिमित कर्म हैं, उनको हे महामुनिजी ! आप मुझसे कहिये ॥३०॥ जब यह प्राणी तीर्थाटन करे, और सौ जन्मतक बड़ा तप करे, तब सत्संगको प्राप्त होकर श्रीकृष्णको प्राप्त करता है ॥३१॥ आर्द्र चित्तवाला मैं अपने मनसे श्रीकृष्णके दासोंके दासका दास कब होऊँगा, और जो बड़े-बड़े देवताओंके

लिये भी दुर्लभ परात्मा आदि देव भगवान् कब मेरी आंखोंके सामने आयेंगे ॥३२॥ तब नारद बोले कि हे राजशार्दूल ! तुम धन्य हो, क्योंकि तुम श्रीकृष्णके इष्ट हो, हरिके प्रिय हो, इससे तुमको दर्शन देनेके लिये भक्तोंके स्वामी भगवान् यहाँ ही आयेंगे ॥३३॥ जिनके ब्राह्मण देवता हैं, ऐसे जनार्दन भगवान् तुमको और श्रुत देव ब्राह्मणको नित्य द्वारिकामें याद किया करते हैं, यह सन्तोंकाही अहोभाग्य है, कि जिनकी याद भगवान् भी करते हैं ॥३४॥ इति श्रीगर्ग संहितायां गोलोक खण्डे नारद बहुलाश्व संवादे श्रीकृष्ण माहात्म्य वर्णनं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥१॥ नारदजी कहते हैं, कि हे राजन् ! जो मनुष्य जीभ प्राप्त करके भी कीर्तन करने योग्य श्रीकृष्णका कीर्तन नहीं करता है, वह दुर्बुद्धि मुक्ति की सीढ़ी प्राप्त करके भी मुक्ति धाम तक नहीं चढ़ पाता है॥१॥हे राजन! अब यहांसे आगे मैं तुमको इस बाराह कल्पमें श्रीकृष्णका भूमिपर आगमन और जो कुछ वृत्तांत इस कल्पमें हुआ है, उसको कहता हूं, उसे तुम सुनो ॥ २ ॥ पहले दानव, दैत्य, मनुष्य और दुष्ट राजाओंके बहुत भारसे जब यह भूमि अत्यन्त दबने लगी तब यह पृथ्वी गौका रूप

श्रीनारदउवाच ॥ धन्यस्त्वंराजशार्दूलश्रीकृष्णेष्टोहरिप्रियः ॥ तुभ्यंचदर्शनंदातुंभक्तेशोऽआगमिष्यति ॥ ३३ ॥ त्वांनृपंश्रुतदेवंचद्विजदेवो
जनार्दनः ॥ स्मरत्यलंद्वारकायामहोभाग्यंसतामिह ॥ ३४ ॥ इति श्रीगर्गसंहितायांगोलोकखंडेनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीकृष्णमाहात्म्यवर्णनंना-
मप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ जिह्वांलब्ध्वापियःकृष्णंकीर्तनीयंनकीर्तयेत् ॥ लब्ध्वापिमोक्षनिश्रेणींसनारोहतिदुर्मतिः ॥ १ ॥
अथतेसंप्रवक्ष्यामिश्रीकृष्णागमनंभुवि ॥ अस्मिन्वाराहकल्पेवैयद्वृत्तंतच्छृणुप्रभो ॥ २ ॥ पुरादानवदैत्यानांनराणां खलभूभुजाम् ॥ भूरिभार
समाक्रांतापृथ्वीगोरूपधारिणी ॥ ३ ॥ अनाथवद्रुदंतीववेदयंतीनिजव्यथाम् ॥ कंपयतीनिजंगात्रंब्रह्माणंशरणंगता ॥ ४ ॥ ब्रह्माथाश्वास्यतां
सद्यः सर्वैर्देवगणैर्वृतः ॥ शंकरेणसमंप्रागाद्वैकुंठमंदिरंहरेः ॥ ५ ॥ नत्वाचतुर्भुजंविष्णुंस्वाभिप्रायंजगादह ॥ अथोद्विग्नंदेवगणं श्रीनाथः प्राह
तंविधिम् ॥ ६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ कृष्णंस्वयंविगणितांडपतिंपरेशं साक्षादखंडमतिदेवमतीवलीलम् ॥ कार्यंकदापिनभविष्यतियं
विनाहिगच्छाशुतस्यविशदंपदमव्ययंत्वम् ॥ ७ ॥ श्रीब्रह्मोवाच ॥ त्वत्तः परंनजानामिपरिपूर्णतमंस्वयम् ॥ यदियोन्यस्तत्स्यसाक्षाल्लोकंदर्श-
यनःप्रभो ॥ ८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्तोपिहरिः पूर्णः सर्वैर्देवगणैः सह ॥ पदवींदर्शयामासब्रह्मांडशिखरोपरि ॥ ९ ॥

धारण करके ॥३॥ अनाथकी तरह रोती हुई अपना दुःख प्रकट करती कांपते-कांपते ब्रह्माजीकी शरण गई ॥४॥ तब ब्रह्माजी तत्काल पृथ्वीको आश्वासन देकर सब देवताओंको साथ लेकर महादेवजीके साथ वैकुण्ठमें हरिके मंदिरको गये ॥५॥ चतुर्भुज भगवान्को प्रणाम करके अपना अभिप्राय कहा, तब उद्विग्न देवगणोंको देखकर लक्ष्मीके नाथ ब्रह्माजीसे बोले ॥६॥ कि श्रीकृष्ण स्वयम् अखिल ब्रह्माण्डके स्वामी परेश और साक्षात् अखण्ड ब्रह्म देवोंके देव अगणित लीलावाले हैं, उनके विना तुम्हारा कुछ काम नहीं होगा, सो तुम शीघ्रही विशद और अव्यय उनका स्थान है, वहां जाओ ॥७॥ तब ब्रह्माजी बोले कि हे प्रभो ! हम तो आपको छोड़कर दूसरे और किसी परिपूर्णतमको नहीं जानते हैं और यदि कोई दूसरा है, तो उसके साक्षात् लोकको हमें दिखाइये ॥ ८ ॥ नारदजी कहने लगे कि हे राजन् ! ऐसे जब ब्रह्माजीने कहा, तब पूर्ण भगवान्ने सब देवताओंके सहित ब्रह्माजीको ब्रह्माण्डके शिखरपर वर्तमान जो गोलोक है, उसका मार्ग दिखाया ॥ ९ ॥

वामनजीके बांये चरणके अंगूठेके नखसे फूटा हुआ ब्रह्माण्डका मस्तक जो ब्रह्म द्रवयुक्त है, उसी छेदमें लेकर चले ॥१०॥ जब जलके मार्गसे बाहर सब देवता निकले, तब यह ब्रह्माण्ड नीचे तरबूज के समान दिखाई दिया ॥११॥ और इन्द्रायनके फलके समान जलमें लुढकते हुये और अनेक ब्रह्माण्ड देखकर सब देवता बड़े आश्चर्यमें आकर चकितसे हो गये ॥१२॥ उसके करोड़ों योजन ऊपर दिव्य रत्नमय परकोटाओंसे युक्त और वृक्षोंके समूहसे मनको हरनेवाले आठ पुर देखे, और उनमें होकर देवता गये ॥१३॥ उसके ऊपर जाकर देवताओंने तरंगोंवाले क्षौम (रेशम) के समान सफेद और मणिमय सीढ़ियोंसे जगमगाते हुये, विरजाके शुभ तटको देखा ॥१४॥ उसको देखकर चलते चलते देवता उस उत्तम पुरको गये, जो असंख्य करोड़ सूर्य मंडलका बड़ा भारी तेजका पुंज है ॥ १९ ॥ उस तेजको देखकर उनके नेत्र झँप गये और उस तेजसे धर्षित होकर जहाँके तहाँ खड़े हो गये। फिर उस तेज पुंजको नमस्कार करके विष्णुकी आज्ञासे ब्रह्माजी ध्यान करने लगे ॥ १६ ॥ उस तेजके भीतर ही साकार धाम शान्ति स्वरूप दिखाई दिया, और

वामपादांगुष्ठनखभिन्नब्रह्मांडमस्तके ॥ श्रीवामनस्यविवरेब्रह्मद्रवसमाकुले ॥ १० ॥ जलयानेनमार्गेणबहिस्तेनिर्ययुःसुराः ॥ कलिंगबिंबवच्चेदं ब्रह्मांडदहशुस्त्वधः ॥ ११ ॥ इंद्रायनफलानीवलुठंत्यन्यानिवैजले ॥ विलोक्यविस्मिताःसर्वेबभूवुश्चकिता इव ॥ १२ ॥ कोटिशोयोजनोर्ध्वेवै पुराणामष्टकंगताः ॥ दिव्यप्राकाररत्नादिद्रुमवृन्दमनोहरम् ॥ १३ ॥ तदूर्ध्वंददृशुर्देवाविरजायास्तटंशुभम् ॥ तरंगितंक्षौमशुभ्रंसोपानैर्भास्वरं परम् ॥ १४ ॥ तंदृष्ट्वाप्रचलन्तस्तेतत्पुरंजग्मुरुत्तमम् ॥ असंख्यकोटिमार्तंडज्योतिषांमंडलंमहत् ॥ १५ ॥ दृष्ट्वाप्रताडिताक्षास्तेतेजसाधर्षिताः स्थिताः ॥ नमस्कृत्वाऽथतत्तेजोदध्यौविष्णवाज्ञयाविधिः ॥ १६ ॥ तज्ज्योतिर्मंडलेऽपश्यत्साकारंधामशान्तिमत् ॥ तस्मिन्महाद्भुतंदीर्घं मृणालधवलंपरम् ॥ सहस्रवदनंशेषंदृष्ट्वानेमुःसुरास्ततः ॥ १७ ॥ तस्योत्संगेमहालोकोगोलोकोलोकवंदितः ॥ यत्रकालःकलयतामीश्वरो धाममानिनाम् ॥ १८ ॥ राजन्नप्रभवेन्मायामनश्चित्तमतिर्ह्यहम् ॥ नविकारोविशत्येवनमहांश्चगुणाःकुतः ॥ १९ ॥ तत्रकंदर्पलावण्याःश्यामसु-न्दरविग्रहाः ॥ द्वारिगंतुंचाभ्युदितान्यषेधन्कृष्णपार्षदाः ॥ २० ॥ देवाऊचुः ॥ लोकपालावयंसर्वेब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ श्रीकृष्णदर्शना-र्थायशक्राद्याआगताइह ॥ २१ ॥

उस धामके अंदर कमल तन्तुके समान सफेद महाअद्भुत हजार मुखवाले शेषजीको देखकर सब देवता नमस्कार करने लगे ॥ १७ ॥ उनकी गोदीमें लोक वन्दित गोलोक देखा, जिस गोलोकमें मारनेवालेको मारनेवाला, इन्द्रादिक धाम मानियोंका ईश्वर जो काल है, वह भी अपना प्रभाव नहीं करता है ॥१८॥ और माया भी अपना प्रभाव नहीं करती है, जहाँ पर मन, चित्त, बुद्धि, अहंकार तथा षोडश विकार और महत्तत्व नहीं हैं, फिर तीनों गुण न हों, तो इसमें कहना ही क्या है ॥ १९ ॥ जब द्वारमें प्रवेश करने लगे तो श्याम सुन्दर शरीरवाले, कामदेवके समान श्रीकृष्णके सेवकोंने उनको रोका ॥२०॥ तब देवता बोले कि हम सब लोकपाल हैं, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्रादिक श्रीकृष्णके दर्श-नको यहाँ आये हैं ॥ २१ ॥

नारदजी कहते हैं, कि उनके अभिप्रायको सुनकर गोलोक नाथके द्वारपाल सखीजनोंने श्रीकृष्णसे भीतर जाकर निवेदन किया ॥ २२ ॥ तब एक शतचन्द्रानना नामकी गोपी, निकली, पीताम्बर पहिने हुये, बेंत जिसके हाथमें है, वह देवताओंसे उनका अभिप्राय पूछने लगी ॥२३॥ आप सब यहाँ आये हुये किस ब्रह्माण्डके स्वामी देवता हो, सो कहो, तब मैं भगवान्को जाकर प्रार्थना करूँगी ॥२४॥ तब देवता बोले-अहो ! बड़े आश्चर्य की बात है, कि और भी कोई ब्रह्माण्ड है, हमने तो कहीं नहीं देखे हैं, हे कल्याणि ! हम तो एक ही ब्रह्माण्डको जानते हैं, हे शुभे ! हम तो इससे दूसरेको नहीं जानते हैं ॥ २५ ॥ तब चन्द्रानना बोली-यहाँ करोड़ों ब्रह्माण्डोंके समूह लुढकते हैं, जैसे तुम एक ब्रह्माण्डमें रहते हो, वैसे ही अपने-अपने ब्रह्माण्डोंमें सब पृथक्-पृथक् रहते हैं ॥२६॥ अरे तुम अपने ब्रह्माण्डका नाम ग्राम भी नहीं जानते हो, यहाँ कभी भी नहीं आये हो, तुम जड बुद्धिसे ही प्रसन्न रहते हो, क्योंकि घरके बाहर कभी नहीं निकले हो ॥ २७ ॥ एक ही ब्रह्माडको जानते हो, जहाँ कि उत्पन्न हुए हो । जैसे फलके भीतर मशक (भुनगा)

॥ श्रीनारदउवाच ॥ तच्छ्रुत्वातदभिप्रायंश्रीकृष्णायसखीजनाः ॥ ऊचुर्दैवप्रतीहारागत्वाचांतःपुरंपरम् ॥ २२ ॥ तदाविनिर्गताकाचिच्छतचन्द्राननासखी ॥ पीतांबरावेत्रहस्तासाऽपृच्छद्वांछितंसुरान् ॥ २३ ॥ चन्द्राननोवाच ॥ कस्यांडस्याधिपादेवायूयंसर्वेसमागताः ॥ वदताशुगमिष्यामितस्मैभगवतेह्यहम् ॥ २४ ॥ देवाऊचुः ॥ अहोअंडान्युतान्यानिनास्माभिर्दर्शितानिच ॥ एकमंडंप्रजानीमोऽथोऽपरं नास्तिनःशुभे ॥ २५ ॥ श्रीचन्द्राननोवाच ॥ ब्रह्मदेवलुठंतीहकोटिशोह्यंडराशयः ॥ तेषुयूयंयथादेवास्तथांडेंऽडेपृथक्पृथक् ॥ २६ ॥ नामग्रामंनजानीथकदानात्रसमागताः ॥ जडबुद्ध्याप्रहृष्यध्वंगृहान्नापिविनिर्गताः ॥ २७ ॥ ब्रह्मांडमेकंजानंतियत्रजातास्तथाजनाः ॥ मशकाश्चयथांतस्थाऔदुम्बरफलेषुवै ॥ २८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ उपहास्यंगतादेवाइत्थंतूष्णींस्थिताः पुनः ॥ चकितानिवतान्दृष्ट्वा विष्णुर्वचनमब्रवीत ॥ २९ ॥ श्रीविष्णुरुवाच ॥ यस्मिन्नंडेपृश्निगर्भोऽवतारोऽभूत्सनातनः ॥ त्रिविक्रमनखोद्भिन्नेतस्मिन्नंडेस्थिता वयम् ॥ ३० ॥ श्रीनारद उवाच ॥ तच्छ्रुत्वातचसंश्लाघ्यशीघ्रमन्तःपुरंगता ॥ पुनरागत्यदेवेभ्योप्याज्ञांदत्त्वागतापुरम् ॥३१॥ अथदेवगणाः सर्वेगोलोकंददृशुः परम् ॥ तत्रगोवर्द्धनोनामगिरिराजोविराजते ॥ ३२ ॥ वसन्तमानिनीभिश्चगोपीभिर्गोगणैर्वृतः ॥ कल्पवृक्षलतासंघैरासमंडलमंडितः ॥ ३३ ॥

उस गूलरको ही ब्रह्माण्ड जानता है ॥ २८ ॥ नारदजी कहते हैं, इस तरह जब देवताओंकी हँसीकी, तब वे सब चुप होकर खड़े हो गये । तब चकित हुयेकी तरह उनको खड़े देखकर विष्णु बोले ॥२९॥ जिस अण्डमें पृश्नि गर्भ भगवान्का सनातन अवतार हुआ था और वामनजीके नखसे जो अण्ड फूट गया है उस अण्डमें हम रहते हैं ॥ ३० ॥ नारदजी कहते हैं, कि विष्णुके उस वचनको सुनकर वह चन्द्रानना उनकी बड़ाई करके जल्दीसे भीतर महलमें जाकर पूँछकर आई, और इनको आज्ञा देकर फिर चली गई ॥३१॥ तब वे सब देवता भीतर गये और उन्होंने उस गोलोकको देखा, जहाँ पर गोवर्धन पर्वत सुशोभित है ॥ ३२ ॥ जहाँ वसन्त मानिनी गोपियोंके और गौओंके गण हैं और कल्प वृक्षोंकी लताओंके समूहसे सुशोभित रास मंडल जहाँ है ॥ ३३ ॥

और जहाँ श्यामा कालिंदी नामकी नदी है, जो नदी एक करोड़ तोलिकाओं कोटोंसे भूषित है तथा जिसमें अनेक वैदूर्य मणिकी सीढियाँ हैं, और वह नदी अपनी इच्छा पूर्वक बहती है ॥ ३४ ॥ दिव्य वृक्ष लताओंसे सघन जहाँ वृन्दावन शोभायमान है, जिसमें चित्र विचित्र पक्षी तथा भ्रमरों की गुंजारसे विराजमान वंशीवट है ॥ ३५ ॥ जहाँ पुलिनमें शीतल मंद पवन सहस्र दलवाले कमलोंकी सुगंधि लिये मकरंदको विखेरता हुआ मंद मंद चलता है ॥ ३६ ॥ जहाँ बत्तीस वनोंके मध्यमें परिकोटा और खाईसे युक्त अक्षयवटवाला आंगन है, ऐसा निज निकुंज है ॥ ३७ ॥ सात प्रकारके पुखराज मणियोंके चौक तथा कुड्यभित्तियोंसे विभूषित है, और जहाँ चंद्र मण्डलके आकार चंदोहाओंके फूल बूंटाओंकी कान्ति छिटक रही है ॥ ३८ ॥ जिनपर ध्वजा, पताका फहरा रही है, ऐसे दिव्य फूलोंके निकुञ्ज मंदिरोंके मार्ग बने हैं, जिनमें भ्रमरोंकी झंकार तथा मत्त मयूर और

यत्रकृष्णानदीश्यामातोलिकाकोटिमंडिता ॥ वैदूर्यकृतसोपानास्वच्छन्दगतिरुत्तमा ॥ ३४ ॥ वृन्दावनंभ्राजमानंदिव्यद्रुमलताकुलम् ॥ चित्र-
पक्षिमधुव्रातैर्वंशीवटविराजितम् ॥३५॥ पुलिनेशीतलेवायुर्मन्दगामीवहत्यलम् ॥ सहस्रदलपद्मानांरजोविक्षेपयन्मुहुः ॥३६॥ मध्येनिकुञ्जकुं-
जोस्तिद्वात्रिंशद्वनसंयुतः ॥ प्राकारपरिखायुक्तोरुणाक्षयवटाजिरः ॥३७॥ सप्तधापद्मरागाग्राजिरकुड्यविभूषितः ॥ कोटींदुमंडलाकारैर्विता-
नैर्गुलिकाद्युतिः ॥३८॥ पतत्पताकैर्दिव्याभैःपुष्पमंदिरवर्त्मभिः ॥ जातभ्रमरसंगीतोमत्तबर्हिपिकस्वनः ॥ ३९ ॥ बालार्ककुंडलधराःशतचन्द्र-
प्रभाःस्त्रियः ॥ स्वच्छंदगतयोरत्नैः पश्यंत्यःसुन्दरंमुखम् ॥४०॥ रत्नाजिरेषुधावंत्योहारकेयूरभूषिताः ॥ क्वणन्नूपुरकिंकिण्यश्चूडामणिविरा-
जिताः ॥ ४१ ॥ कोटिशःकोटिशोगावोद्वारिद्वारिमनोहराः ॥ श्वेतपर्वत संकाशादिव्यभूषणभूषिताः ॥४२॥ पयस्विन्यस्तरुण्यश्चशीलरूप-
गुणैर्युताः ॥ सवत्साःपीतपुच्छाश्चव्रजंत्योभव्यमूर्तिकाः ॥ ४३ ॥ घण्टामंजीरसंरावाः किंकिणीजालमंडिताः ॥ हेमशृंग्योहेमतुल्यहारमाला
स्फुरत्प्रभाः ॥ ४४ ॥ पाटलाहरितास्ताम्राः पीताः श्यामाविचित्रिताः ॥ धूम्राः कोकिलवर्णाश्चयत्रगावस्त्वनेकधा ॥ ४५ ॥

पपीहोंके शब्द हो रहे हैं ॥ ३९ ॥ बाल सूर्यकेसे तेजवाले कुंडल पहिने, चन्द्रमाकीसी कान्तिवाली, स्वछन्द गतिवाली, स्त्रियाँ अपने मुखोंको देखती हैं ॥ ४० ॥ और जहाँ गोपीगण पाँयोंमें नूपुर, बजने, पदकहार, बाजूबंद, कंकण, छल्ला, अंगूठी और चूडामणि, इनसे भूषित हुई, रत्नजडित आंगनोंमें डोल रही हैं॥४१॥और करोड़ों गौ दरवाजे २ पर सफेद पर्वत सी दिव्य गहनोंसे भूषित, मनको हरनेवाली विराजती हैं ॥४२॥ बहुत दूध देनेवाली, तरुणी, शील रूप और गुणसे युक्त बछड़ा सहित, पीली जिनकी पूंछ हैं, ऐसी भव्य मूर्तिवाली विचरती हैं ॥ ४३ ॥ जिनके घंटी, नूपुर, पंसुरी, किंकिणी आदि बंधी हैं, जो सोनेके सींग, हार मालाओंसे शोभित हैं ॥ ४४ ॥ कोई लाल, कोई सफेद रंग की, कोई हरी, कोई पीली, कोई काली, कोई चितकबरी है, कोई धूमरी है, कोई कोई कोकिलवर्णी है, जहाँ ऐसी अनेक प्रकारकी गौऐं हैं ॥ ४५ ॥

समुद्रकी तरह बहुत दूध देनेवाली, तरुणियोंके करसे चिह्नित हैं, और हिरणकी तरह उछलनेवाले बछड़ोंसे युक्त हैं ॥ ४६ ॥ जहाँ इधर, उधर, चलते हुये विशाल कन्धोंवाले,
बड़े बड़े सींगोंवाले धर्मके धुरंधर बड़े बड़े वृषभ हैं, जो गौओंके समूहमें घूमते हैं ॥४७॥ और गोपाल बेंतोंको हाथमें लिये, श्यामसुन्दर वंशियोंको बजाते मदनमोहन नामक रागमें
श्रीकृष्णकी लीलाको गा रहे हैं ॥४८॥ ऐसे उस निज निकुंजको देख देवतालोग प्रणामकर जब मध्यमें गये तब ज्योतियोंके मंडल, सहस्र दलवाले एक कमलको देखा ॥ ४९ ॥
उसके ऊपर एक सोलह दलका कमल है, उसके ऊपर एक अष्टदलका कमल है, उसके ऊपर तीन सीढियोंसे सुशोभित, कौस्तुभमणियोंसे जड़ा हुआ एक दिव्य सिंहासन है, उस
सिंहासनपर बैठे हुये राधिकासहित श्रीकृष्णको देखा ॥ ५० ॥ ५१ ॥ जो मोहिनी आदि दिव्य, अष्टसखी और श्री दामादिक अष्टगोपालोंसे सेवित हैं ॥ ५२ ॥ हंसके समान
सफेद दिव्य पंखे, चमर, हिंडोला, और हीरोंकी दण्डी है, जिनमें ऐसे कोटि चन्द्रमाके समान करोड़ों छत्रोंसे शोभित हैं ॥ ५३ ॥ श्री राधिकासे शोभित है, बाईं भुजा जिनकी,

समुद्रवद्दुग्धदाश्वतरुणीकरचिह्निताः ॥ कुरंगवद्विलंघद्भिर्गोवत्सैर्मंडिताःशुभाः ॥ ४६ ॥ इतस्ततश्चलंतश्चगोगणेषुमहावृषाः ॥ दीर्घकन्धर
शृंगाढ्यायत्रधर्मधुरंधराः ॥४७॥ गोपालावेत्रहस्ताश्वश्यामावंशीधराःपराः ॥ कृष्णलीलांप्रगायंतोरागैर्मदनमोहनः ॥ ४८ ॥ इत्थंनिजनिकुं-
जंतंनत्वामध्येगताःसुराः ॥ ज्योतिषांमण्डलंपद्मसहस्रदलशोभितम् ॥४९॥ तदूर्ध्वंषोडशदलंततोऽष्टदलपंकजम् ॥ तस्योपरिस्फुरद्दीर्घसोपान-
त्रयमंडितम् ॥५०॥ सिंहासनंपरंदिव्यंकौस्तुभैःखचितंशुभः ॥ ददृशुर्देवता सर्वाः श्रीकृष्णंराधयायुतम् ॥५१॥ दिव्यैरष्टसखीसंघैर्मोहिन्या-
दिभिरन्वितम् ॥ श्रीदामाद्यैःसेव्यमानमष्टगोपालसेवितम् ॥५२॥ हंसाभैर्व्यजनांदोलचामरैर्वज्रमुष्टिभिः ॥ कोटिचन्द्रप्रतीकाशैः सेवितंछत्रको-
टिभिः ॥५३॥ श्रीराधिकालंकृतवामबाहुस्वच्छन्दवक्रीकृतदक्षिणांघ्रिम् ॥ वंशीधरंसुन्दरमन्दहासंभ्रूमंडलामोहितकामराशिम् ॥५४॥ घनप्रभं
पद्मदलायतेक्षणंप्रलंबबाहुंबहुपीतवाससम् ॥वृन्दावनोन्मत्तमिलिंदशब्दैर्विराजितंश्रीवनमालयाहरिम् ॥५५॥कांचीकलाकंकणनूपुरद्युतिलसन्म-
नोहारिमहोज्ज्वलस्मितम् ॥ श्रीवत्सरत्नोत्तमकुन्तलश्रियंकिरीटहारांगदकुंडलत्विषम् ॥ ५६ ॥ दृष्ट्वातमानन्दसमुद्रमग्नवत्प्रहर्षिताश्चाश्रुकला
कुलेक्षणाः ॥ ततःसुराःप्रांजलयोनताननानेमुर्मुरारिंपुरुषंपरायणम् ॥५७॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांगोलोकखंडे नारदबहुलाश्वसंवादेश्रीगोलोक-
धामवर्णनंनामद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

स्वाधीन स्वतः सिद्ध, टेढा किया है, दाहिना चरण जिन्होंने, वंशी लिये सुन्दर मन्द मुसकानसहित भृकुटी मंडलसे मोहित किया है, कामदेवकी राशि जिन्होंने ॥ ५४ ॥ घनकी सी
जिनकी कान्ति है कमलदलसे चौड़े नेत्र हैं, बडी भुजाओंवाले, पीताम्बर धारण किये, वृन्दावनके मतवाले भ्रमरोंके शब्दोंकी गुंजार से शोभित हैं, और वनमाला जिन्होंने धारण
कर रखी है ॥५५॥ कोंधनीके घूंघरू कंकण और नूपुरोंसे शोभित हैं, शोभायमान मनको हरनेवाली है, मन्द मुसकान जिनकी, श्री वत्सका चिह्न और उत्तमरत्नका किरीट, कुंडल
बाजू, तथा हार, इनसे शोभित हैं ॥५६॥ ऐसे श्रीकृष्णके रूपको देखकर आनन्दरूपी समुद्रमें डूबनेसे हर्षित हो गये, नेत्रोंमें आंसू झलक आये ऐसे सब देवताओंने हाथ जोडकर
शिर झुकाकर पुराणपुरुष मुरारि श्रीकृष्णको दण्डवत् किया॥५७॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां गोलोकखण्डे नारदबहुलाश्वसंवादे भाषाटीकायां गोलोकधामवर्णनं नामद्वितीयोऽध्यायः॥२॥

जनक राजा पूछते हैं, हे मुने! देवताओंने महात्मा, परमात्मा, श्रीकृष्णको देखकर आगे क्या किया, वह मुझसे कृपा करके कहिए? ॥ १ ॥ नारदजी बोले-उन सबके देखते हुये वैकुण्ठवासी साक्षात् हरि अष्ट भुजाधारी उठकर श्रीकृष्णके शरीरम लीन हो गये ॥ २ ॥ उसी समय उग्र पराक्रमवाले नृसिंहजी आये, और कोटि सूर्यकासा प्रकाश करते हुये, श्रीकृष्णके तेजमें लीन हो गये ॥ ३ ॥ लाख घोड़े जिसमें लगे हुये हैं, ऐसे शुभ्र रथमें बैठकर भूमा पुरुष श्वेतद्वीपवासी हजार भुजाओंसे शोभित ॥ ४ ॥ लक्ष्मी सहित, अपने शस्त्रोंसे सज्जित, सेवकोंसे सेवा किये जाते आये, और वे भी श्रीकृष्णके शरीरमें लीन हो गये ॥ ५ ॥ तभी कमललोचन-राम धनुषबाण धरे, सीता और भ्राताओंको साथ लिये ॥ ६ ॥ दशकोटि सूर्यकासा जिनका तेज है, चमर जिसपर झल रहे हैं, असंख्य बंदर जिसमें बैठे हुये हैं, ऐसे लाख चक्रोंके घनघोर शब्दवाले ॥७॥ एक लाख घोड़े जिसमें जुते

श्रीजनक उवाच ॥ मुनेदेवामहात्मानंकृष्णंदृष्ट्वापरात्परम् ॥ अग्रेकिंचक्रिरेतत्रतन्मेब्रूहिकृपांकुरु ॥ १ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ सर्वेषांपश्यतांतेषांवैकुंठोपिहरिस्ततः ॥ उत्थायाष्टभुजः साक्षाल्लीनोऽभूत्कृष्णविग्रहे ॥२॥ तदैवचागतःपूर्णोनृसिंहश्चंडविक्रमः ॥ कोटिसूर्यप्रतीकाशोलीनोभूत्कृष्णतेजसि ॥३॥ रथेलक्षहयेशुभ्रेस्थितश्चागतवांस्ततः ॥ श्वेतद्वीपाधिपोभूमासहस्रभुजमंडितः ॥४॥ श्रियायुक्तः स्वायुधाढ्याःपार्षदैः परिसेवितः ॥ सम्प्रलीनोबभूवाशुसोऽपिश्रीकृष्णविग्रहे॥५॥ तदैवचागतः साक्षाद्रामोराजीवलोचनः ॥ धनुर्बाणधरःसीताशोभितोभ्रातृभिर्वृतः ॥ ६ ॥ दशकोट्यर्कसंकाशेचामरैर्दोलितेरथे ॥ असंख्यवानरेंद्राढ्येलक्षचक्रघनस्वने ॥७॥ लक्षध्वजेलक्षहयेशातकौंभेस्थितस्ततः ॥ श्रीकृष्णविग्रहेपूर्णः संप्रलीनोबभूवह ॥ ८ ॥ तदैवचागतःसाक्षाद्यज्ञोनारायणोहरिः ॥ प्रस्फुरत्प्रलयाटोपज्वलदग्निशिखोपमः ॥९॥ रथेज्योतिर्मयेदृश्योदक्षिणाढ्यःसुरेश्वरः ॥ सोऽपिलीनोबभूवाशुश्रीकृष्णेश्यामविग्रहे ॥१०॥ तदाचागतवान्साक्षान्नरनारायणः प्रभुः ॥ चतुर्भुजोविशालाक्षोमुनिवेषोघनद्युतिः ॥ ११ ॥ तडित्कोटिजटाजूटः प्रस्फुरद्दीप्तिमंडलः ॥ मुनींद्रमंडलैर्दिव्यैर्मंडितोऽखंडितव्रतः ॥ १२ ॥ सर्वेषांपश्यतांतेषामाश्चर्यमनसानृप ॥ सोऽपिलीनोबभूवाशुश्रीकृष्णेश्यामसुंदरे ॥ १३ ॥

हुये हैं, एक लाख ध्वजा जिसमें फहरा रही है, ऐसे स्वर्णमय रथमें बैठे पूर्ण भगवान् श्रीराम आये, और वे भी श्रीकृष्णमें ही लीन हो गये ॥ ८ ॥ उसी समय यज्ञ साक्षात् नारायण हरि आये, जो देदीप्यमान प्रलयकी जलती आगकी ज्वालाके समान तेजवाले हैं ॥९॥ ज्योतिर्मय रथमें बैठे दक्षिणा नामकी पत्नीके सहित देवताओंके ईश्वर हैं, वे भी श्रीकृष्णके श्याम शरीरमें लीन हो गये ॥१०॥ उसी समय नर नारायण प्रभु चतुर्भुज घनकीसी कांति, विशाल नेत्र मुनिवेषधारी ॥ ११ ॥ कोटि विद्युत्सी जटाजूटकी चमकसे देदीप्यमान है मंडल जिनका, दिव्य मुनीन्द्रोंके मंडलसे शोभित अखंड है ब्रह्मचर्य जिनका ॥ १२ ॥ वे भी उन सभीके आश्चर्ययुक्त मनमे देखते-देखते श्याम सुन्दर श्रीकृष्णके

शरीरमें शीघ्रही लीन हो गये ॥ १३ ॥ तब सब देवता परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्णको स्वयं प्रभु जानकर बड़े आश्चर्यमें आकर स्तुति करने लगे ॥ १४ ॥ पूर्ण पुरुष, परसे पर यज्ञेश्वर, कारणके कारण, राधिकाके पति, परिपूर्णतम, जिनका गोलोकधाम निवासस्थान है, ऐसे पर पुरुष श्रीकृष्णको हमारे नमस्कार हैं ॥ १५ ॥ योगेश्वर तो आपको महत् पुरुष वर्णन करते हैं, भक्त आपको सगुणब्रह्म वर्णन करते हैं। हमने तो अद्वितीय बड़ोंके भी बड़े जाना है, इसलिए नमस्कार है ॥१६॥ बड़े-बड़े योगिराज भी व्यंग करके तथा लक्षण करके और स्फोट करके जिनको नहीं जान पाये हैं, और निर्देश्य भावसे रहित हैं, जो प्रकृतिसे परे हैं, ऐसे ब्रह्म निर्गुणकी हम शरणमें प्राप्त हुए हैं ॥ १७ ॥ जिनको कोई तो ब्रह्म कहते हैं, कोई काल कहते हैं, कोई प्रशान्तरूप, कोई कर्मरूप कहते हैं, और पहले मुनियोंने जिनको योगरूप कहा है, किसीने कर्ता कहा है, ऐसे बहुतसी वाणियोंसे

परिपूर्णतमंसाक्षाच्छ्रीकृष्णंचस्वयंप्रभुम् ॥ ज्ञात्वादेवाः स्तुतिंचक्रुः परंविस्मयमागताः ॥ १४ ॥ श्रीदेवाऊचुः ॥ कृष्णायपूर्णपुरुषाय परात्पराययज्ञेश्वरायपरकारणकारणाय ॥ राधावरायपरिपूर्णतमायसाक्षाद्गोलोकधामधिषणायनमः परस्मै ॥१५॥ योगेश्वराः किल वदन्ति महः परंत्वंतत्रैवसात्वतमनाःकृतविग्रहं च ॥ अस्माभिरद्यविदितंयददोऽद्वयंतेतस्मैनमोऽस्तुमहतांपतयेपरस्मै ॥१६॥ व्यंग्येनवाननहिलक्षणयाकदापिस्फोटेनयच्चकवयोनविशंतिमुख्याः ॥ निर्देश्यभावरहितंप्रकृतेः परंचत्वांब्रह्मनिर्गुणमलंशरणंव्रजामः ॥१७॥ त्वांब्रह्मकेचिदवयंतिपरेचकालंकेचित्प्रशांतमपरेभुविकर्मरूपम् ॥ पूर्वंचयोगमपरेकिलकर्तृभावमन्योक्तिभिर्नविदितंशरणंगताःस्मः ॥ १८ ॥ श्रेयस्करींभगवतस्तवपादसेवांहित्वाथतीर्थयजनादितपश्चरंति ॥ ज्ञानेनयेचविदिताबहुविघ्नसंघैः संताडिताः किलभवंतिनतेकृतार्थाः ॥१९॥ विज्ञाप्यमद्यकिमुदेव अशेषसाक्षीयः सर्वभूतहृदयेषुविराजमानः ॥ देवैर्नमद्भिरमलाशयमुक्तदेहैस्तस्मैनमोभगवतेपुरुषोत्तमाय ॥२०॥ योराधिकाहृदयसुन्दरचन्द्रहारःश्रीगोपिकानयनजीवनमूलहारः ॥ गोलोकधामधिषणध्वजआदिदेवः सत्वंविपत्सुविबुधान्परिपाहिपाहि ॥ २१ ॥ वृन्दावनेशगिरिराजपतेव्रजेशगोपालवेषकृतनित्यविहारलीला ॥ राधापतेश्रुतिधराधिपते धरांत्वंगोवर्द्धनोद्धरणउद्धरधर्मधाराम् ॥ २२ ॥

जो जाननेमें नहीं आते हैं, उनकी हम शरणमें प्राप्त हुए हैं॥१८॥ कल्याण करनेवाली तुम्हारी चरणसेवाको छोड़कर जो तीर्थ सेवन यज्ञादि तप करते हैं, और जो ज्ञानी हैं, वे ज्ञानसे विदित होते हैं, परन्तु वे बहुत विघ्नोंसे ताडित होते हैं, परन्तु कृतार्थ होते हैं ॥ १९ ॥ अब हम आपसे क्या प्रकट करें, क्योंकि आप सबके साक्षी और सबके हृदयमें विराजमान हो, जिनके अन्तःकरण निर्मल हैं, जिनकी देहवासना रहित हैं, उनसे स्तुति किये गये उन पुरुषोत्तम भगवान्को हमारा नमस्कार है॥२०॥ जो राधिकाके सुंदर हार जो गोपियोंके नयनोंके जीवनमूल और गोलोकधाम जिनका स्थान है ऐसे आदिदेव आप विपत्तिमें देवताओंकी रक्षा करिये।२१।हे वृन्दावनके ईश्वर! हे गिरिराजपति! हे गोपालवेश करके नित्यलीला विहारकरनेवाले

हे राधापते! हे श्रुतिधरपते! हे गोवर्द्धनोद्धरण! धर्मको धारण करनेवाली पृथ्वीका उद्धार करिये॥२२॥नारदजी कहते हैं, जब देवताओंने गोकुलेश्वर श्रीकृष्णकी स्तुति की तब गोकुलेश्वर श्रीकृष्ण प्रणाम करते हुए देवताओंसे मेघकी जैसी गम्भीर वाणीसे बोले ॥२३॥ हे ब्रह्माजी ! हे महादेव ! हे देवताओ ! तुम मेरा वचन सुनो, मेरी आज्ञासे अपने अंशोंसे स्त्रियों सहित तुम सब यादव कुलमें जाकर जन्म लो ॥ २४ ॥ मैं भी अवतार लूँगा, और पृथ्वीका भार उतारूँगा, यादवोंमें जन्म लेकर तुम्हारा कार्य करूँगा ॥ २५ ॥ वेद मेरा वचन है, ब्राह्मण मेरा मुख हैं, गौएं मेरा तन है, देवता तुम मेरे अंग हो और साधु मेरे प्राण हैं ॥२६॥ जब युग युगमें पाखंडी मनुष्योंसे धर्म, यज्ञ और दयाको बाधा होती है, तब तब मैं अपने साक्षात् रूपसे अवतार धारण करता हूँ ॥ २७ ॥ नारदजी कहते हैं, ऐसा कहते हुये, अपने पति जगदीश्वर हरिके वचन सुनकर राधा श्रीकृष्णके वियोगसे

श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्तोभगवान्साक्षाच्छ्रीकृष्णोगोकुलेश्वरः ॥ प्रत्याहप्रणतान्देवान्मेघगम्भीरयागिरा ॥ २३ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ हेसुरज्येष्ठहेशंभोदेवाःशृणुतमद्वचः ॥ यादवेषुचजन्यध्वमंशैःस्त्रीभिर्मदाज्ञया ॥ २४ ॥ अहंचावतरिष्यामिहरिष्यामिभुवोभरम् ॥ करिष्यामिचवःकार्यंभविष्यामियदोःकुले ॥ २५ ॥ वेदामेवचनंविप्रामुखंगावस्तनुर्मम ॥ अंगानिदेवतायूयंसाधवोह्यसवोहृदि ॥ २६ ॥ युगेयुगेचबाध्येतयदापाखंडिभिर्जनैः ॥ धर्म्मः क्रतुर्दयासाक्षात्तदात्मानंसृजाम्यहम् ॥ २७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्तवंतंजगदीश्वरं हरिंराधापतिंप्राणवियोगविह्वला ॥ दावाग्निनादुःखलतेवमूर्छिताऽश्रुकंपरोमांचितभावसंवृता ॥ २८ ॥ श्रीराधोवाच ॥ भवोभरंहर्तुम-लंव्रजेर्भुवंकृतंपरंमेशपथंशृणोत्वतः ॥ गतेत्वयिप्राणपतेचविग्रहंकदाचिदत्रैवनधारयाम्यहम् ॥ २९ ॥ यदात्वमेवंशपथंनमन्यसेद्वितीयवारं चवदामिवाक्पथम् ॥ प्राणोधरेगन्तुमतीवविह्वलः कर्पूरधूलेः कणवद्गमिष्यति ॥ ३० ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ त्वयासहगमिष्यामि माशोचंकुरुराधिके ॥ हरिष्यामिभुवोभारंकरिष्यामिवचस्तव ॥ ३१ ॥ श्रीराधिकोवाच ॥ यत्रवृन्दावनंनास्तियत्रनोयमुनानदी ॥ यत्रगोवर्द्धनोनास्तितत्रमेनमनःसुखम् ॥ ३२ ॥

विह्वल होकर दावानलकी मारी जैसे लता गिर पड़ती है, ऐसे मूर्छित होकर गिर पड़ीं, आंखोंमें आंसू आ गये और रोमावलि खड़ी हो गई॥२८॥ तब राधिकाजी बोलीं कि, हे प्राणनाथ ! आप तो पृथ्वीका भार उतारनेको जाते हो, पर मेरी प्रतिज्ञाको सुनिये, हे प्राणपति ! आपके गये पीछे मैं तो एक क्षण भर भी शरीर नहीं रखूँगी, अर्थात् नहीं जीऊँगी॥२९॥ जो मेरी इस शपथको नहीं मानेंगे, तो दूसरा वचन कहती हूँ उसे सुनिये, जो मुझको छोड़कर चले जायँगे, तो कपूरकी धूलकी तरह मेरी यह देह नष्ट हो जायगी ॥३०॥ तब श्रीकृष्ण बोले–हे राधिके ! शोच मत करो, मैं तुमको साथ लेकर चलूँगा, पृथ्वीका भार हरूँगा, और तुम्हारा कहा करूँगा ॥३१॥ तब राधिकाजी बोलीं कि, जहाँ वृन्दावन नहीं है, जहाँ यमुना नहीं है, और जहाँ गोवर्धन नहीं है, वहाँ मेरे मनको कैसे सुख होगा ? अर्थात् नहीं होगा ॥ ३२ ॥

अब नारदजी कहते हैं, कि तब श्रीकृष्णने अपने निज धामसे चौरासी कोस व्रजभूमि, गोवर्धन पर्वत और यमुना नदीको मनुष्य लोकमें भेजा ॥३३॥ तब तो ब्रह्माजी देवगणसहित पूर्णतम श्रीकृष्णको बार बार नमस्कार करके परिपूर्णोंमें परिपूर्ण साक्षात् श्रीकृष्णसे बोले ॥ ३४ ॥ कि हे प्रभो ! मैं कहाँ जन्म लूँगा, आप कहाँ जन्मेंगे और ये देवता कहाँ जाकर जन्म लें और इनके क्या क्या नाम होंगे ॥ ३५ ॥ तब भगवान् बोले-वसुदेवकी स्त्री देवकीमें तो स्वयं पर मैं जन्म लूँगा, और मेरी कला शेष रोहिणीमें जन्म लेंगे, इसमें सन्देह नहीं ॥३६॥ और साक्षात् लक्ष्मी भीष्मकी बेटी रुक्मिणी होगी, और शिवा जो पार्वती है, वह जाम्बवती होगी, तुलसी सत्या होगी, और वसुंधरा भूमि सत्यभामा होगी ॥ ३७ ॥ और दक्षिणा जो यज्ञ भगवान्‌की पत्नी है, वह लक्ष्मणा होगी, विरजा नामकी सखी कालिंदी होगी, लज्जादेवी भद्रा होगी, और पापकी नाशिनी जो

॥ श्रीनारदउवाच ॥ वेदनागक्रोशभूमिंस्वधाम्नः श्रीहरिःस्वयम् ॥ गोवर्द्धनंचयमुनांप्रेषयामासभूपरि ॥ ३३ ॥ तदाब्रह्मादेवगणैर्नत्वा नत्वापुनः पुनः ॥ परिपूर्णतमंसाक्षाच्छ्रीकृष्णंसमुवाचह ॥ ३४ ॥ श्रीब्रह्मोवाच ॥ अहंकुत्रभविष्यामिकुत्रत्वंचभविष्यसि ॥ एतेकुत्रभविष्यंतिकैर्गृहैः कैश्चनामभिः ॥ ३५ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ वसुदेवस्यदेवक्यांभविष्यामिपरः स्वयम् ॥ रोहिण्यांमत्कलाशेषोभविष्यतिनसंशयः ॥ ३६ ॥ श्रीःसाक्षाद्रुक्मिणीभैष्मीशिवाजांबवतीतथा ॥ सत्याचतुलसीभूमौसत्यभामावसुन्धरा ॥ ३७ ॥ दक्षिणालक्ष्मणा चैवकालिन्दीविरजातथा ॥ भद्राह्रीर्मित्रविंदाचजाह्नवीपापनाशिनी ॥ ३८ ॥ रुक्मिण्यांकामदेवश्चप्रद्युम्नइतिविश्रुतः ॥ भविष्यतिनसन्देहस्तस्यत्वंचभविष्यसि ॥ ३९ ॥ नन्दोद्रोणोवसुःसाक्षाद्यशोदासाधरास्मृता ॥ वृषभानुःसुचन्द्रश्चतस्यभार्याकलावती ॥ ४० ॥ भूमौकीर्तिरितिख्यातातस्यांराधाभविष्यति ॥ सदारासंकरिष्यामिगोपीभिर्व्रजमण्डले ॥ ४१ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांगोलोकखण्डेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादआगमनोद्योगवर्णनंनामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ नन्दोपनन्दभवनेश्रीदामासुबलःसखा ॥ स्तोककृष्णोर्जुनोंशुश्चनवनन्दगृहेविधे ॥ १ ॥ विशालर्षभतेजस्वीदेवप्रस्थवरूथपाः ॥ भविष्यंतिसखायोमेव्रजेषड्वृषभानुषु ॥ २ ॥

गङ्गा है, वह मित्रविंदा बनेगी ॥३८॥ रुक्मिणीसे कामदेवका अवतार प्रद्युम्न होगा, और हे ब्रह्माजी ! उस प्रद्युम्नसे तुम्हारा अवतार अनिरुद्ध होगा इसमें सन्देह नहीं है ॥ ३९ ॥ और यह द्रोण नाम वसु नन्द होगा, और वह धरा नाम द्रोणपत्नी यशोदा होगी ॥४०॥ सुचंद्र वृषभानु होगा, और उसकी कलावती जो स्त्री है, वह पृथ्वीमें कीर्ति नामसे प्रसिद्ध होगी, उसके तुम राधा होगी, तुम्हारे लिये व्रजमण्डलमें गोपियोंके संग मैं सदाही रास करूँगा ॥ ४१ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां गोलोक खण्डे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्व संवादे आगमनोद्योगो नाम तृतीयोध्यायः ॥३॥ नारदजी कहते हैं, फिर भगवान्‌ने कहा कि हे ब्रह्मन् ! नन्द, उपनन्दके घरमें श्रीदामा और सुबल मेरे सखा होंगे, और स्तोक, श्रीकृष्ण, अर्जुन, अंशु, जो मेरे सखा हैं, वे नौ नन्दोंके घरमें होंगे ॥१॥ विशाल, ऋषभ, तेजस्वी, देवप्रस्थ, वरूथप जो हैं वे जो छः वृषभानु हैं, उनके घरमें होंगे ॥ २ ॥

तब ब्रह्माजी बोले कि, किसकी नन्द पदवी है. और कौन वृषभानु कहलाते हैं, हे देवेश ! उपनंदका क्या लक्षण है, सो कहिये ॥ ३ ॥ श्रीभगवान् कहते हैं. कि जो गोप खिरकोंमें गौओंका और बैलोंका पालन करते हैं, और जिनकी गौएं ही जीविका होती हैं, वे गोपाल कहलाते हैं उनका लक्षण तुम सुनो ॥ ४ ॥ नौ लाख गौओं का पालन करनेवाला नन्द कहलाता है, और पांच लाख गौओंका जो पालन करता है. वह उपनन्द कहलाता है ॥५॥ और दश लाख गौओंका जो पालन करता है. वह वृषभानु कहलाता है और करोड़ गौओंका जो पालन करता है, वही नन्द राज होता है ॥ ६ ॥ और जो पचास लाख गौओंका पालन करे, वह गोप वृषभानु वर कहलाता है, ऐसे उक्त लक्षण वाले गोप व्रजमें दो ही हैं एक सुचन्द्र और दूसरा द्रोण ॥७॥ यही सर्व लक्षण सम्पन्न गोपराज होते हैं चन्द्रमाके समान मुखकी शोभावाली अति सुन्दरी सुकर वस्त्र धारण करनेवाली किशोर गोपियोंके मेरे व्रजमें शतयूथ होंगे ॥ ८ ॥ तब ब्रह्माजी बोले हे दीन बन्धु ! हे देव ! हे जगत्कारणके कारण ! हे परेश्वर ! यूथके सब लक्षण मुझसे कहिये ॥ ९ ॥

श्रीब्रह्मोवाच ॥ कस्यवैनन्दपदवीकस्यवैवृषभानुता ॥ वददेवपतेसाक्षादुपनन्दस्यलक्षणम् ॥ ३ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ गाःपालयन्ति घोषेषुसदागोवृत्तयोनिशम् ॥ तेगोपालामयाप्रोक्तास्तेषांत्वंलक्षणंशृणु॥४॥नन्दःप्रोक्तःसगोपालैर्नवलक्षगवांपतिः॥उपनन्दश्चकथितः पंचलक्षगवांपतिः ॥५॥ वृषभानुःसउक्तोयोदशलक्षगवांपतिः ॥ गवांकोटिर्गृहेयस्यनन्दराजः सएवहि॥६॥ कोटयर्धंचगवांयस्यवृषभानुवरस्तुसः॥ एतादृशौव्रजेद्वौतुसुचन्द्रोद्रोणएवहि॥७॥ सर्वलक्षणलक्ष्याढ्यौगोपराजौभविष्यतः॥शतचन्द्राननानांचसुन्दरीणांसुवाससाम्॥गोपीनांमद्व्रजेरम्येशतयूथोभविष्यति ॥ ८ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ हेदीनबन्धोहेदेवजगत्कारणकारण ॥ यूथस्यलक्षणंसर्वंतन्मेब्रूहिपरेश्वर ॥९॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॥ अर्बुदंदशकोटीनांमुनिभिःकथितंविधे ॥ दशार्बुदंयत्रभवेत्सोपियूथःप्रकथ्यते ॥ १० ॥ गोलोकवासिन्यःकाश्चिद्द्वारपालिकाः ॥ शृङ्गारप्रकराःकाश्चित्काश्चिच्छय्योपकारकाः ॥ ११ ॥ पार्षदाख्यास्तथाकाश्चिच्छ्रीवृन्दावनपालिकाः ॥ गोवर्द्धननिवासिन्यःकाश्चित्कुंजविधायकाः॥१२॥मेनिकुंजनिवासिन्योभविष्यंतिव्रजेमम॥एवंचयमुनायूथो जाह्नवीयूथ एवच॥१३॥रमायामधुमाधव्या विरजायास्तथैव च॥ ललितायाविशाखायामायायूथोभविष्यति ॥१४॥ एवंह्यष्टसखीनांचसखीनांकिलषोडश ॥ द्वात्रिंशच्चसखीनांचयूथा भाव्याव्रजेविधे ॥ १५ ॥

तब भगवान् बोले-हे ब्रह्मन् ! मुनिजनोंने कहा है, कि दश करोड़की संख्याका एक अर्बुद होता है और दश अर्बुदको यूथ कहते हैं ॥१०॥ कोई तो गोलोक वासिनी हैं, कोई द्वारपालिका हैं, कोई शृंगार करनेवाली हैं, और कोई शय्या करनेवाली हैं ॥ ११ ॥ कोई पास रहनेवाली पार्षद कहलाती हैं, कोई वृन्दावन पालिका हैं, कोई गोवर्धन वासिनी हैं, कोई निकुंज करनेवाली हैं ॥ १२ ॥ कोई निकुंज वासिनी हैं, वे सब व्रजमें होगीं, एक यमुनाजीका यूथ, एक जाह्नवीजीका यूथ ॥ १३ ॥ एक रमाका यूथ, एक मधुमाधवीका यूथ, एक विरजाका यूथ, एक ललिताका यूथ. एक विशाखाका यूथ, और एक मायाका यूथ, ये सब यूथ व्रजमें होंगे ॥ १४ ॥ ऐसे ही अष्ट सखीजनोंके यूथ सोलह सखियोंके यूथ, और बत्तीस सखियोंके यूथ व्रजमें जन्म लेंगे ॥ १५ ॥ और श्रुतिरूपा गोपी, मुनिरूपा गोपी, मिथिला पुर वासिनी गोपी, कोसल देश वासिनी गोपी, अयोध्या

वासिनी गोपी, यज्ञ सीतारूपी गोपी, पुलिंदी कन्या गोपी ॥ १६ ॥ और जिनको मैंने पहले-पहले युगोंमें वर दिया है, उन सब गोपियोंके यूथ मेरे शुभ व्रजमें होंगे ॥१७॥ तब ब्रह्माजी बोले कि, ये व्रजमें कैसे होंगी, इनका क्या पुण्य और तप है, इनको कौन-कौन वर मिले हैं, क्योंकि हे पुरुषोत्तम ! आपका पद तो योगियोंके लिये भी दुर्लभ है ॥१८॥ तब भगवान् बोले कि हे ब्रह्मन् ! श्वेत द्वीपमें पहले श्रुतियोंने भूमा पर पुरुषकी मनोहर वाणीसे स्तुति की, तब सहस्र चरण भगवान् प्रसन्न होकर श्रीहरि बोले ॥ १९ ॥ तुम्हारे मनमें जो हो वह वर तुम मांगो, जिसपर साक्षात् मैं प्रसन्न होऊँ उनसे क्या दुर्लभ है ! अर्थात् कुछ भी दुर्लभ नहीं है ॥२०॥ तब श्रुति बोलीं-मन वाणीके परे आप जाने नहीं जाते हो, आपको विद्वान् आनन्द मात्र वर्णन करते हैं ॥ २१ ॥ उस रूपको हमें दिखाइये, जो वर देना है, तो यही वर हमको दीजिये, ऐसे सुनकर प्रकृतिसे परे जो अपना लोक है,

श्रुतिरूपाऋषिरूपामैथिलाःकौशलास्तथा ॥ अयोध्यापुरवासिन्योयज्ञसीतापुलिंदकाः ॥ १६॥ यासांमयावरोदत्तोपूर्वैपूर्वैयुगे युगे ॥ तासां
यूथाभविष्यंतिगोपीनांमद्व्रजेशुभे ॥ १७ ॥ श्रीब्रह्मोवाच ॥ एताःकथंव्रजेभाव्याःकेनपुण्येनकैर्वरैः ॥ दुर्लभंहिपदंतुभ्यंयोगिभिःपुरुषोत्तम
॥ १८ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ श्वेतद्वीपेचभूमानंश्रुतयस्तुष्टुवुःपरम् ॥ उशतीभिर्गिराभिश्चप्रसन्नोभूत्सहस्रपात् ॥ १९ ॥ श्रीहरिरुवाच ॥
वरंवृणीतयूयंवैयन्मनोवाञ्छितंमहत् ॥ येषांप्रसन्नोहंसाक्षात्तेषांकिंदुर्लभंहितत् ॥ २० ॥ श्रीश्रुतयऊचुः ॥ वाङ्मनोगोचरातीतंततोनज्ञा-
यतेतुतत् ॥ आनन्दमात्रमितियद्वदंतीहपुराविदः ॥ २१ ॥ तद्रूपंदर्शयास्माकंयदिदेयोवरोहिनः ॥ श्रुत्वैतद्दर्शयामासस्वंलोकंप्रकृतेः परम्
॥ २२ ॥ केवलानुभवानंदमात्रमक्षरमव्ययम् ॥ यत्रवृंदावनंनामवनंकामदुघैर्द्रुमैः ॥ २३ ॥ मनोरमनिकुञ्जाढ्यंसर्वर्तुसुखसंयुतम् ॥
यत्रगोवर्द्धनोनामसुनिर्झरदरीयुतः ॥२४॥ रत्नधातुमयः श्रीमान्सुपक्षिगणसंवृतः ॥ यत्रनिर्मलपानीयाकालिन्दीसरितांवरा ॥ रत्नबद्धोभयत
टीहंसपद्मादिसंकुला ॥ २५ ॥ नानारासरसोन्मत्तंयत्रगोपीकदंबकम् ॥ तत्कदंबकमध्यस्थः किशोराकृतिरच्युतः ॥ २६ ॥ दर्शयित्वाचताः
प्राहब्रूतकिंकरवाणिवः ॥ दृष्टोमदीयोलोकोयंयतोनास्तिपरंवरम् ॥ २७ ॥

उसको दिखाया ॥ २२ ॥ जो केवल अनुभव आनन्द मात्र है, अक्षर और अव्यय है, जहाँ वृन्दावन नामक वन है, और जहाँ कल्प वृक्षोंका वन है ॥ २३ ॥ और जो मनोहर निकुंजोंसे युक्त है, सब ऋतुओंमें सुखदायी गोवर्धन पर्वत जहाँ है, जिसमेंसे झरना झरते हैं, और अनेक खोह 'गुफा' हैं ॥ २४ ॥ कैसा है गोवर्धन, रत्न धातु मय है, सुन्दर पक्षियोंके समूह जिसमें रहते हैं, और जहाँ रत्नोंसे जड़े हुये दोनों तट ऐसी निर्मल जल वाली, हंस और कमलोंसे युक्त, नदियोंमें मुख्य श्रीकालिंदी बहती है ॥ २५ ॥ अनेक रासोंके रससे उन्मत्त गोपियोंके समूह जहाँ हैं, उनके मध्यमें किशोर मूर्ति श्रीकृष्ण विराजमान हैं ॥ २६ ॥ ऐसे अपना लोक दिखा करके उनसे बोले कि जो चाहिये वह मांगो, मैं तुम्हारा क्या कार्य करूँ मेरा यह लोक तुमने देखा है, जिससे अधिक श्रेष्ठ और नहीं है ॥ २७ ॥

तब श्रुतियां बोलीं-करोड़ों कन्दर्पकी सुन्दरतावाले तुम्हारेरूपको देखकर हमारे मन कामदेवके वेगसे कामिनी भावको प्राप्त होकर कामदेव व्याप्त हो गये हैं ॥ २८ ॥ जैसे तुम्हारे लोककी बसनेवाली गोपी कामतत्त्वसे रमण आपको भजती हैं, वैसेही हमारी भी भजन करनेकी इच्छा हुई है ॥ २९ ॥ तब भगवान् बोले-हे श्रुतियो ! तुम्हारा मनोरथ तो दुर्लभ और दुर्घट है, परन्तु मैंने तुमको वर देनेको कहा है, वह तो सत्य ही होगा ॥३०॥ जब दूसरे समय ब्रह्माका सृष्टिके लिये उद्यम होगा, तब तुम सारस्वत कल्प व्यतीत हो जाने पर व्रजमें गोपी होगी ॥ ३१ ॥ पृथ्वीमें भरतखण्डमें मथुरानाम अपने मंडलमें वृन्दावनमें और रासमण्डलमें तुम्हारा अत्यन्त प्रिय होऊँगा ॥३२॥ तब जार भावसे सबसे अधिक अत्यन्त दृढ स्नेहको मेरे बीचमें प्राप्त होकर तुम सब कृतकृत्य हो जाओगी ॥ ३३ ॥ सो हे ब्रह्माजी ! वे तो पहले कल्पके वरसे गोपी होंगी और जो जो गोपी और भी होंगी

॥ श्रीश्रुतयऊचुः ॥ कन्दर्पकोटिलावण्येत्वयिदृष्टमनांसिनः ॥ कामिनीभावमासाद्य स्मरक्षिप्तान्यसंशयम् ॥ २८ ॥ यथात्वल्लोकवासिन्यःकामतत्त्वेनगोपिकाः ॥ भजंतिरमणंत्वाचचिकीर्षाऽजनिनस्तथा ॥ २९ ॥ श्रीहरिरुवाच ॥ दुर्लभोदुर्घटश्चैवयुष्माकंतुमनोरथः ॥ मयानुमोदितःसम्यक्सत्योभवितुमर्हति ॥ ३० ॥ आगामिनिविरिंचौतुजातेसृष्ट्यर्थमुद्यते ॥ कल्पेसारस्वतेऽतीतेव्रजेगोप्यो भविष्यथ ॥ ३१ ॥ पृथिव्यांभारतेक्षेत्रेमाथुरेमममंडले ॥ वृन्दावनेभविष्यामिप्रियान्वोरासमंडले ॥ ३२ ॥ जारधर्मेणसुस्नेहंसुदृढंसर्वतोधिकम् ॥ मयिसंप्राप्यसर्वाहिकृतकृत्याभविष्यथ ॥ ३३ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ताश्चगोप्योभविष्यंतिपूर्वकल्पवरान्मम ॥ अन्यासांचैवगोपीनांलक्षणंशृणुतद्विधे ॥ ३४ ॥ सुराणांरक्षणार्थायराक्षसानांवधाय च ॥ त्रेतायांरामचंद्रोभूद्वीरोदशरथात्मजः ॥ ३५ ॥ सीतास्वयंवरंगत्वाधनुर्भंगंचकारसः ॥ उवाहजानकींसीतांरामोराजीवलोचनः ॥ ३६ ॥ तंदृष्ट्वामैथिलाःसर्वाःपुरन्ध्र्योमुमुहुर्विधे ॥ रहस्यूचुर्महात्मानंभर्तानोभवहेरघो ॥ ३७ ॥ ता आह राघवेन्द्रस्तुमाशोकंकुरुतस्त्रियः ॥ द्वापरान्तेकरिष्यामिभवतीनांमनोरथम् ॥ ३८ ॥ तीर्थदानंतपःशौचंसमाचरततत्त्वतः ॥ श्रद्धयापरयाभक्त्याव्रजेगोप्योभविष्यथ ॥ ३९ ॥ इतिताभ्योवरंदत्त्वाश्रीरामःकरुणानिधिः ॥ कौशलान्प्रययौधन्वीतेजसाजितभार्गवः ॥ ४० ॥

उनका लक्षण सुनिये ॥३४॥ देवताओंकी रक्षाके लिये, और राक्षसोंको मारनेके लिये, त्रेतायुगमें दशरथके पुत्र श्रीरामचन्द्र वीर हुये हैं ॥ ३५ ॥ सीताके स्वयम्बरमें जाकर उन कमललोचन रामने धनुष तोड़ा और जानकी व्याही थी ॥ ३६ ॥ तब मिथिलापुर वासिनी सब स्त्रियाँ हे विधे ! रामचन्द्रको देखकर मोहित हो गईं, और महात्मा श्रीरामचन्द्रसे एकान्तमें बोलीं-हे रघुवर ! आप हमारे पति होइये ॥३७॥ तब उनसे रामचन्द्र बोले कि हे स्त्रियो ! तुम शोच मत करो, द्वापरके अंतमें मैं तुम्हारा मनोरथ पूर्ण करूँगा ॥ ३८ ॥ तब तक तीर्थ, दान, तप और शौचका परम श्रद्धा तथा भक्तिसे भली भाँति आचरण करो, तब तुम व्रजमें गोपी बनोगी ॥३९॥ ऐसे धनुषधारी, करुणानिधि श्रीरामचन्द्र उनको वर देकर परशुरामका गर्व हरण करके अयोध्या आये ॥ ४० ॥

तब मार्गमें कौसल देशवासिनी स्त्रियोंने कामदेवसे सुन्दर रामचन्द्रको देखकर काम मोहन रघुनाथको मनहीसे पति चुन लिया ॥ ४१ ॥ तब अशेषके देखनेवाले श्रीरामचन्द्रने भी मनहीसे उनको वर दिया कि तुम व्रजमें गोपी होगी, तब मैं तुम्हारा मनोरथ पूर्ण करूँगा ॥४२॥ विवाह करके सीतासहित सेनाको लिये रघुवरको आते हुये सुनकर अयोध्यापुरवासिनी स्त्रियाँ देखनेको आई ॥४३॥ वे स्त्रियाँ रामचन्द्रका रूप देखकर मोहको प्राप्त हो गईं, उन्होंने सरजूके तीरपर श्रीरामचन्द्रकी प्राप्तिके लिये व्रत धारण करके तप किया ॥४४॥ तब उनको आकाशवाणी हुई कि द्वापरके अंतमें कालिंदीके तीर वनमें तुम्हारा मनोरथ निस्सन्देह पूर्ण होगा ॥ ४५ ॥ फिर पिताके वचनसे जब राम दण्डकारण्यको गये वहाँ सीता और लक्ष्मणसहित धनुषधारी रघुनाथ विचरे हैं ॥४६॥ वहाँ गोपालजीके उपासक दंडकारण्यवासी मुनिराजके लिये ध्यानमें तत्पर हो, निरंतर मेरा ध्यान कहते हैं ॥४७॥ तब

मार्गेचकौसलानार्योरामंदृष्ट्वातिसुन्दरम् ॥ मनसावव्रिरेतंवैपतिंकन्दर्पमोहनम् ॥ ४१ ॥ मनसापिवरंरामोददौताभ्योह्यशेषवित् ॥ मनोरथं करिष्यामिव्रजेगोप्योभविष्यथ ॥ ४२ ॥ आगतंसीतयासार्द्धंसैनिकैःसहितंरघुम् ॥ अयोध्यापुरवासिन्यःश्रुत्वाद्रष्टुंसमाययुः ॥ ४३ ॥ वीक्ष्यतंमोहमापन्नामूर्च्छिताः प्रेमविह्वलाः ॥ तेपुस्तपस्ताःसरयूतीरेरामधृतव्रताः ॥ ४४ ॥ आकाशवागभूत्तासांद्वापरांतेमनोरथः ॥ भविष्यतिनसन्देहः कालिंदीतीरजेवने ॥४५॥ पितुर्वाक्यद्यदारामोदंडकारण्यंवनंगतः॥ चचारसीतयासार्धंलक्ष्मणेनधनुष्मता॥४६॥गोपालोपासकाःसर्वेदंडकारण्यवासिनः॥ध्यायन्तःसततंमांवैरासार्थध्यानतत्पराः॥४७॥येषामाश्रममासाद्यधनुर्बाणधरोयुवा॥तेषां ध्यानेगतोरामोजटामुकुटमंडितः ॥ ४८ ॥ अन्याकृतिंतेतंवीक्ष्यपरंविस्मितमानसाः ॥ ध्यानादुत्थायददृशुः कोटिकंदर्पसन्निभम्॥४९॥ऊचुस्तेयतुगोपालोवंशीवेत्रेविनाप्रभुः ॥ इत्थंविचार्यमनसानेमुश्चक्रुःस्तुतिम्मपराम् ॥५०॥ वरंवृणीतमुनयःश्रीरामस्तानुवाचह ॥ यथासीतातथासर्वैभूयास्मइतिवादिनः ॥ ५१ ॥ श्रीरामउवाच ॥ यथाहिलक्ष्मणेभ्रातातथाप्रार्थ्योवरोयदि ॥ अद्यैवसफलोभाव्योभवद्भिर्मत्प्रसंगतः ॥ ५२ ॥ सीतोपमेयवाक्येन दुर्घटोदुर्लभोवरः ॥ एकपत्नीव्रतोहंवैमर्यादापुरुषोत्तमः ॥ ५३ ॥

तरुण मूर्ति धनुषबाणधारी रामचन्द्र जटाकामुकुट बनाये, उनके हृदयमें प्राप्त हो गये ॥४८॥ तब तो वे और दूसरी आकृति देखकर बड़े विस्मित होकर ध्यानसे उठकर देखने लगे तो करोड़कामके समान सुन्दर रामको देखा ॥ ४९ ॥ तब वे बोले कि ये बेंत और वंशीके विना गोपालजी हैं, ऐसा विचारकरके उन्होंने मनसे दण्डवत्की फिर स्तुति करने लगे ॥ ५० ॥ तब रामचन्द्र बोले-हे मुनीश्वरो ! तुम वर मांगो, तब मुनीश्वर यह बोले कि जैसे आपकी सीता पत्नी हैं, वैसेही हम भी होवें ॥५१॥ इस वचनको सुनकर श्रीराम बोले कि हे ऋषियो ! यदि तुम यह वर मांगते कि जैसे लक्ष्मण हैं, वैसे हम हों, तो यह तुम्हारा मनोरथ भी मेरे संगसे सफल हो जाता ॥ ५२ ॥ परन्तु जो सीताकी उपमासे तुमने वर मांगा, यह बड़ा दुर्लभ और दुर्घट है, क्योंकि मैं एकपत्नी व्रत और मर्यादा पुरुषोत्तम हूँ ॥ ५३ ॥

इससे तुम मेरे वरसे द्वापरके अन्तमें जन्म लेवोगे, तब मैं तुम्हारा मनोरथ पूर्ण करूँगा ॥९४॥ इस तरह रामजी उनको वर देकर पंचवटीको चले गये, वहाँ पर्णशालामें बैठकर वनवास किया ॥९५॥ उन्हीं रामके दर्शनसे जिसको कामका रोग हो गया है. ऐसी भीलनी प्रेममें विह्वल होकर रामकी चरणरजको शिरपर धारण करके प्राण त्याग करनेको तैयार हो गई ॥ ९६ ॥ तबही ब्रह्मचारीका रूप धरके राम वहाँ आये, और बोले-हे स्त्रियो ! वृथा प्राणत्याग मत करो ॥ ९७ ॥ द्वापरके अन्तमें वृन्दावनमें तुम्हारा मनोरथ पूरा होगा ऐसा कहकर ब्रह्मचारी वहीं अंतर्ध्यान हो गये ॥९८॥ उसके बाद रामचन्द्र सुग्रीव आदि वानरेन्द्रको साथ लेकर रावणादिक राक्षसोंको जीतकर लंकामें जाकर सीताजीको पुष्पक विमानपर बैठाकर अयोध्याको आये ॥९९॥ फिर लोकनिन्दासे भी रामचन्द्रजीने सीताको वनमें दी । अहो ! देखो भूमिमें असंतोंका होना बड़ा दुखदाई है ॥ ६० ॥ जब-जब

तस्मात्तुमद्वरेणापिद्वापरांतेभविष्यथ ॥ मनोरथंकरिष्यामिभवतांवांछितंपरम् ॥९४॥ इतिदत्त्वावरंरामस्ततःपंचवटींगतः॥पर्णशालां समा-
साद्यवनवासंचकारह ॥ ९५ ॥ तद्दर्शनस्मररुजःपुलिंद्यःप्रेमविह्वलाः॥श्रीमत्पादरजोधृत्वाप्राणांस्त्यक्तुंसमुद्यताः ॥९६॥ ब्रह्मचारीवपुर्भूत्वा
रामस्तत्रसमागतः ॥ उवाचप्राणसंत्यागंमाकुर्वीतस्त्रियोवृथा ॥९७॥ वृन्दावनेद्वापरांतेभवितावोमनोरथः॥इत्युक्त्वाब्रह्मचारीतुतत्रैवांतरधीयत ॥
॥९८॥ अथरामोवानरेन्द्रैरावणादीन्निशाचरान् ॥ जित्वालङ्कामेत्यसीतांपुष्पकेणपुरींययौ ॥९९॥ सीतांतत्याजराजेन्द्रोवनेलोकापवादतः ॥
अहोसतामपिभुविभवनंभूरिदुःखदम् ॥ ६० ॥ यदायदाऽकरोद्यज्ञंरामोराजीवलोचनः ॥ तदातदास्वर्णमयींसीतांकृत्वाविधानतः ॥६१॥यज्ञ-
सीतासमूहोभून्मंदिरेराघवस्यच ॥ ताश्चैतन्यघनीभूत्वारंतुंरामंसमागताः ॥६२॥ ताआहराघवेशेन्द्रोनाहंगृह्णामिहेप्रियाः ॥ तदोचुस्ताःप्रेमपरा
रामंदशरथात्मजम् ॥ ६३ ॥ कथंचास्मान्नगृह्णासिभजन्तीर्मैथिलीःसतीः ॥ अर्धांगीर्यज्ञकालेषुसततंकार्यसाधिनीः ॥ ६४ ॥ धर्मिष्ठस्त्वंश्रुति-
धरोधर्मवद्भाषसेकथम् ॥ करंगृहीत्वात्यजसिततःपापमवाप्स्यसि ॥ ६५ ॥ श्रीराम उवाच ॥ समीचीनंवचःसत्योयुष्माभिर्गदितंचमे ॥
एकपत्नीव्रतोऽहंहिराजर्षिःसीतयैकया ॥ ६६ ॥

राजीव लोचन रामने यज्ञ किया तब-तब विधिवत् सोनेकी सीता बनवाकरके यज्ञ किये ॥६१॥ तब राघवके मंदिरमें बहुतसी यज्ञ सीताओंकी मूर्तियाँ इकठी हो गईं, वे चैतन्य घन होकर राममें रमण करनेके लिये प्राप्त हुईं ॥ ६२ ॥ उनसे रामचन्द्र बोले हे प्रियाओ ! मैं तुम्हें ग्रहण नहीं कर सकता हूँ तब वे प्रेममें तत्पर होकर दशरथके पुत्र रामचन्द्रसे बोलीं ॥६३॥ भजन करनेवाली जो हम हैं उनको कैसे ग्रहण नहीं करोगे, हम तो सीता हैं, सती हैं, आपको भजती हैं, अर्द्धांगी हैं, और यज्ञसमय कार्य सिद्ध करने-वाली हैं ॥ ६४ ॥ आप धर्मात्मा हो, वेदमार्गमें चलते हो, फिर अधर्मीकी तरह कैसे बोलते हो, हमारा हाथ पकड़कर हमको त्यागते हो तो आपको पाप लगेगा ॥ ६५ ॥ तब रामचन्द्र बोले कि जो तुम कहती हो वह बिल्कुल ठीक है, परन्तु इस अवतारमें तो मेरा एक पत्नी व्रत है, इससे तुम्हारे मनोरथको पूर्ण नहीं कर सकता हूँ ॥ ६६ ॥

इससे जब तुम वृन्दावनमें जन्म लेवोगी तब द्वापरके अंतमें तुम्हारा मनोरथ पूर्ण करूँगा ॥ ६७ ॥ श्रीकृष्ण बोले वे यज्ञ सीताऐं व्रजमें गोपी होंगी, और भी गोपियोंके लक्षण हैं, उन्हें हे ब्रह्माजी ! तुम सुनो ॥ ६८ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां गोलोकखण्डे भाषाटीकायां प्रश्नवर्णनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ और भगवान् कहते हैं, कि जो रमा वैकुण्ठवासिनी हैं, श्वेतद्वीपकी सखीजन हैं, ऊर्ध्व वैकुण्ठकी रहनेवाली हैं,वैसे ही अजित भगवानके पदकी आश्रिता हैं॥१॥और श्रीलोकाचलवासिनी हैं, समुद्रसे उत्पन्न हुई लक्ष्मीकी सखी हैं, वे सब लक्ष्मी पतिके वरसे व्रजमें गोपी होंगी ॥ २ ॥ कोई दिव्या है, कोई अदिव्या है कोई त्रिगुणवृत्तिवाली है, कोई नाना प्रकारके पुण्योंसे व्रजमें गोपी होंगी ॥३॥ और रुचिके बेटा यज्ञावतार भगवान् स्वर्गके पति हुये, उनके रूपको देखकर स्वर्गकी देवी, देव कन्या मोहित हो गई हैं ॥४॥ इसने देवल ऋषिकी आज्ञासे हिमालयमें तप किया। हे

तस्माद्यूयंद्वापरान्तेपुण्येवृंदावनेवने ॥ भविष्यथकरिष्यामियुष्माकंतुमनोरथम् ॥ ६७ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ तान्व्रजेपिभविष्यन्तियज्ञ-
सीताश्चगोपिकाः ॥ अन्यासांचैवगोपीनांलक्षणंशृणुतद्विधे ॥ ६८ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांगोलोकखंडेभगवद्ब्रह्मसंवादेउद्योगप्रश्नवर्णनंनाम
चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ रमावैकुंठवासिन्यः श्वेतदीपसखीजनाः ॥ ऊर्द्ध्ववैकुण्ठवासिन्यस्तथाजितपदाश्रिताः ॥ १ ॥
श्रीलोकाचलवासिन्यः श्रीसख्योऽपिसमुद्रजाः ॥ तागोप्योऽपिभविष्यंतिलक्ष्मीपतिवराव्रजे ॥२॥ कश्चिद्दिव्याअदिव्याश्चतथात्रिगुणवृत्तयः॥
भूमिगोप्योभविष्यंतिपुण्यैर्नानाविधैःकृतैः ॥ ३ ॥ यज्ञावतारंरुचिरंरुचिपुत्रंदिवस्पतिम् ॥मोहिताःप्रीतिभावेन वीक्ष्यदेवजनास्त्रियः ॥ ४ ॥
ताश्चदेवलवाक्येन तपस्तेपुर्हिमाचले ॥ भक्त्यापरमयातामेगोप्योभाव्योव्रजेविधे ॥५॥ अन्तर्हितेभगवतिदेवेधन्वंतरौभुवि ॥ औषध्योदुःख-
मापन्नानिष्फलाभारतेऽभवन् ॥ ६ ॥ सिद्धयर्थस्तास्तपस्तेपुः स्त्रियोभूत्वामनोहराः ॥चतुर्युगेव्यतीतेतुप्रसन्नोभूद्धरिःपरम् ॥ ७ ॥ वरंव्रणीतचे-
त्युक्तंश्रुत्वानार्योमहावने ॥ तंदृष्ट्वामोहमापन्नाऊचुर्भर्ताभवान्नः ॥८॥ श्रीहरिरुवाच ॥ वृन्दावने द्वापरान्तेलताभूत्वामनोहराः ॥ भविष्यथ-
स्त्रियोरासेकरिष्यामिवचश्चवः ॥ ९ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ भक्तिभावसमायुक्ताभूरिभाग्यावरांगनाः ॥ लतागोप्योभविष्यन्तिवृन्दा-
रण्येपितामह ॥ १० ॥

विधे ! बड़ी भक्तिके प्रतापसे वह भी व्रजमें गोपी होंगी ॥ ५ ॥ भगवान् धन्वन्तरि जब भूमिसे अन्तर्ध्यान हो गये तब सब औषधियाँ बड़ी दुखी हुई कि अब हम भरत खण्डमें निष्फल हो गई ॥६॥ तब तो अपनी सिद्धीके लिये मनोहर स्त्री बनकर तप करने लगीं, जब चार युग बीत गये, तब भगवान् उनसे प्रसन्न हुये ॥ ७ ॥ बोले कि, वर मांगो, इस वचनको सुन कर वे स्त्रियाँ उस सुन्दर रूपको देखकर मोहित हो गई तब वे बोलीं कि आप हमारे पति होइये ॥८॥ तब श्रीहरि बोले-द्वापरके अंतमें वृन्दावनमें तुम मनोहर लता होगी और रासके समय स्त्री बनोगी, तब तुम्हारे साथ रास मैं करूँगा ॥ ९ ॥ श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं, ये भक्तिभावसे युक्त, बड़ी भाग्यवती श्रेष्ठ स्त्रियाँ हे ब्रह्मन् ! वृन्दवनमें लतारूपमें गोपी होंगी ॥ १० ॥

जलंधर के पुरकी स्त्री वृन्दाके पति हरिको देखकर यह बोली कि यही साक्षात् हरि हमारे पति हों ॥ ११ ॥ तब उनको आकाशवाणी हुई कि, तुम सब जल्दी लक्ष्मीकान्तका भजन करो, तब तुम जैसे वृन्दा है, वैसे ही वृन्दावनमें होगी ॥ १२ ॥ और समुद्रकी कन्या मत्स्य भगवान्को देख मोहित हो गई, वह भी मत्स्य भगवान्के लिये व्रजमें गोपी होगी ॥ १३ ॥ पहले पृथु राजा मेरा साक्षात् अंश प्रचंड पराक्रमी राजाओंमें श्रेष्ठ हुआ है, उसने शत्रुओंको जीतकर पृथ्वीसे सब अभीष्ट वस्तुएं ऐसे दुही हैं, जैसे कोई गौओंको दुहता है ॥ १४ ॥ बर्हिष्मती पुरीकी रहनेवाली स्त्री पृथु राजाको देखकर मोहमें विह्वल होकर अत्रि ऋषिके समीप आईं ॥ १५ ॥ बोलीं कि, यह राज राजेन्द्र बड़ा पराक्रमी पृथु राजा हमारा वर कैसे हो, वह उपाय हो महामुने हमको बताइये ॥ १६ ॥ अत्रि मुनि कहने लगे कि तुम शीघ्रही गोदोहन करो, तब ये धारणामयी पृथ्वी दोहन करने पर

जालंधर्य्यश्चयानार्योवीक्ष्यवृन्दापतिंहरिम् ॥ ऊचुर्वाऽयंहरिःसाक्षादस्माकन्तुवरोभवेत् ॥ ११ ॥ आकाशवागभूत्तासांभजताशुरमापतिम् ॥ यथावृन्दातथायूयंवृन्दारण्येभविष्यथ ॥ १२ ॥ समुद्रकन्याःश्रीमत्स्यंहरिंदृष्ट्वाचमोहिताः ॥ ताहिगोप्योभविष्यंतिश्रीमत्स्यस्यवराद्व्रजे ॥ ॥ १३ ॥ आसीद्राजापृथुःसाक्षान्ममांशश्चंडविक्रमः ॥ जित्वाशत्रून्नृपश्रेष्ठोधरांकामान्दुदोहह ॥ १४ ॥ बर्हिष्मतीभवास्तत्रपृथुंदृष्ट्वापुर-स्त्रियः ॥ अत्रेःसमीपमागत्यताऊचुर्मोहविह्वलाः ॥ १५ ॥ अयंतुराजराजेन्द्रःपृथुःपृथुलविक्रमः ॥ कथंवरोभवेन्नोवैतद्वदत्वंमहामुने ॥ १६ ॥ ॥ अत्रिरुवाच ॥ गोदोहंकुरुताश्वद्यपृथ्वीयंधारणामयी ॥ सर्वदास्यतिवोदुर्गमनोरथमहार्णवम् ॥ १७ ॥ मनोरथंप्रदुदुहुर्मनः पात्रेणता-श्चगाम् ॥ तस्माद्गोप्योभविष्यंतिवृंदारण्येपितामह ॥ १८ ॥ कामसेनामोहनार्थंदिव्या अप्सरसोवराः ॥ नारायणस्यसहसाबभूवुर्गंधमा-दने ॥ १९ ॥ भर्तुकामाश्चताआहसिद्धोनारायणोमुनिः ॥ मनोरथोवोभविताव्रजेगोप्योभविष्यथ ॥ २० ॥ स्त्रियःसुतलवासिन्योवामनं वीक्ष्यमोहिताः ॥ तपस्तप्त्वाभविष्यन्तिगोप्योवृन्दावनेविधे ॥ २१ ॥ नागेन्द्रकन्यायाःशेषंभेजुर्भक्त्यावरेच्छया ॥ संकर्षणरासार्थंभवि-ष्यंतिव्रजेचताः ॥ २२ ॥

तुम्हें कठिनसे कठिन मनोरथ सागरसे पार करेगी ॥ १७ ॥ तब उसने भी मनरूपी पात्रमें भूमिसे अपना मनोरथ-दूध दुह लिया, हे पितामह ! वह भी वृन्दावनमें गोपी होगी ॥ १८ ॥ दिव्य कामकी सेना श्रेष्ठ अप्सरा नारायणको मोहित करनेके लिये गन्धमादन पर्वतमें आई थी ॥ १९ ॥ वह अप्सरा नारायणके रूपसे मोहित हो गई, इसीसे उसने यह चाहा कि हमारे भर्ता नाराण हों, तब उनको अत्रिने वरदान दिया कि तुम व्रजमें गोपी होगी ॥ २० ॥ ऐसे ही सुतललोककी रहनेवाली स्त्रियां वामनजीके रूपको देखकर मोहित होकर तप करेंगी वह भी हे विधे ! वृन्दावनमें गोपी होंगी ॥ २१ ॥ और जिन नागकन्याओंने पति होनेकी इच्छा करके भक्तिसे शेषजीको रासके लिये सेवन किया है, वे भी

व्रजमें जन्म लेकर गोपी होगी ॥ २२ ॥ कश्यपजी वसुदेव होगें, अदितिजी देवकी होंगी, प्राणनामक वसु शूर होगा, और ध्रुवनामक वसु देवक होगा ॥ २३ ॥ और वसु नामक जो वसु है, वह उद्धव होगा, दक्ष का अवतार अक्रूर होगा, कुबेरका अवतार हृदीक यादव होगा, वरुणका अवतार कृतवर्मा होगा ॥२४॥ प्राचीन बर्हिका अवतार गद, मरुतोंका अवतार उग्रसेन होगा, उस उग्रसेनको राज्य देकर मैं रक्षा करूँगा ॥२५॥ अम्बरीव राजा युयुधान यादव प्रह्लादका अवतार सात्यकि, क्षीरसमुद्रका अवतार शन्तनु राजा और द्रोणवसुके अवतार भीष्मजी होंगे ॥२६॥ दिवोदासका अवतार शल राजा, भगनाम सूर्यका अवतार धृतराष्ट्र, पूषा देवताका अवतार पाण्डु, धर्मका अवतार युधिष्ठिर होगा ॥२७॥ पवनका अवतार भीमसेन, स्वायम्भूमनुका अवतार अर्जुन, शतरूपा रानीका अवतार सुभद्राजी और सूर्यका अवतार कर्ण होगा ॥२८॥ अश्विनीकुमारका अवतार

कश्यपोवसुदेवश्चदेवकीचादितिःपरा॥शूरःप्राणोध्रुवःसोपिदेवकोवतरिष्यति॥२३॥ वसुश्चैवोद्धवःसाक्षाद्दक्षोऽक्रूरोदयापरः॥ हृदीकोधनदश्चैव
कृतवर्मात्वपांपतिः ॥ २४ ॥ गदःप्राचीनबर्हिश्चमरुतोह्युग्रसेनउत् ॥ तस्यरक्षांकरिष्यामिराज्यंदत्वाविधानतः ॥ २५ ॥ युयुधानश्चांब-
रीषः प्रह्लादःसात्यकिस्तथा ॥ क्षीराब्धिःशंतनुःसाक्षाद्भीष्मोद्रोणोवसूत्तमः ॥ २६ ॥ शलश्चैवदिवोदासोधृतराष्ट्रोभगोरविः ॥ पांडुःपूषास-
तांश्रेष्ठःधर्मराजोयुधिष्ठिरः ॥ २७ ॥ भीमोवायुर्बलिष्ठश्चमनुः स्वायंभुवोऽर्जुनः ॥ शतरूपासुभद्राचसविताकर्णएवहि ॥ २८ ॥ नकुलः
सहदेवश्चस्मृतौद्वावश्विनीसुतौ ॥ धाताबाह्लीकवीरश्चवह्निर्द्रोणःप्रतापवान् ॥ २९ ॥ दुर्योधनः कलेरंशोऽभिमन्युस्सोमएवच॥द्रौणिः साक्षा-
त्छिवस्यापिरूपंभूमौभविष्यति ॥ ३० ॥ इत्थंयदोः कौरवाणामन्येषांभूभुजांनृणाम् ॥ कुलेकुलेचभवतः स्वांशैःस्त्रीभिर्ममाज्ञया ॥ ३१ ॥
येयेऽवतारामेपूर्वंतेषांराज्ञ्योरमांशकाः ॥ भविष्याराजराज्ञीषुसहस्राणिचषोडश ॥ ३२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाश्रीहरिस्तत्रब्रह्माणं
कमलासनम् ॥ दिव्यरूपांभगवतींयोगमायामुवाचह ॥ ३३ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ देवक्याः सप्तमंगर्भंसंनिकृष्यमहामते ॥
वसुदेवस्यभार्यायांकंसत्रासभयात्पुनः ॥ ३४ ॥ नन्दव्रजेस्थितायांचरोहिण्यांसंनिवेशय ॥ नन्दपत्न्यांभवत्वंवैकृत्वेदंकर्मचाद्भुतम्॥ ३५ ॥

नकुल, सहदेव; धाताका अवतार वीर बाह्लीक, और अग्निके अवतार द्रोणाचार्य बड़े प्रतापी होंगे ॥२९॥ कलियुगका अंश दुर्योधन, चन्द्रमाका अंश अभिमन्यु साक्षात् शिवजी का अंश अश्वत्थामा भूमिमें होगा ॥३०॥ इस प्रकार यादव तथा कौरव तथा और राजा मनुष्योंके कुलकुलमें अपनी स्त्रियोंको साथ लेकर मेरी आज्ञासे जन्म लेंगे ॥ ३१ ॥ और जो जो मेरे अवतार पहले हुये, उनकी पत्नी सब लक्ष्मीकी अंश सोलह हजार होंगी ॥ ३२ ॥ नारदजी बोले कि ऐसे श्रीहरि कमलासन ब्रह्माजीसे कहकर दिव्यरूप जो भगवती योगमाया है, उससे बोले ॥३३॥ कि हे योगमाये ! तुम देवकीके सातवें गर्भको खींचकर हे महामते ! वसुदेवकी भार्या जो कंसके डरसे नंदके व्रजमें रहती है, उसके गर्भमें प्रवेश कर दो, फिर ये सब काम करके तुम नन्दकी पत्नीके गर्भमें जन्म लो ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

नारदजी कहते, कि ब्रह्माजी भगवद्वचनको सुनकर देवगणोंके सहित भूमिको आश्वासन देकर, अपने लोकको चले गये ॥३६॥ हे मैथिल ! आप श्रीकृष्णको परिपूर्णतम जानो, ये कंसादि दुष्टोंको मारनेके लिये भूमिमें आये हैं॥३७॥हे नृप ! यदि रोम संख्या समान जिह्वा हो, तब भी भगवान्के गुण कहनेमें नहीं आ सकते ॥३८॥ जैसे अपनी-अपनी उड़ानके अनुसार आकाशमें पक्षी उड़ते हैं, वैसेही विद्वान् लोग कृष्ण लीलाको जितनी जिसकी पहुँच हैं, उतनी कहते हैं ॥३९॥ इति गर्ग संहितायां गोलोकखण्डे भाषाटीकायां पंचमोऽध्यायः ॥५॥ बहुलाश्व राजा बोले कि हे महाराज ! यह कंसराजा पहले समयमें कौन था, इस कंसके जन्म और कर्मको, हे देवर्षिसत्तम मुझसे कहिये ॥ १ ॥ तब नारदजी बोले कि हे राजन् ! पहले समुद्र मंथनके समय कालनेमि नाम दैत्य विष्णुके साथ लड़ता था, विष्णुने कालनेमिको बलसे मारा ॥२॥ तब शुक्राचार्यने अपनी संजीवनी विद्यासे उसको

॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वाब्रह्मादेवगणैर्नत्वाकृष्णंपरात्परम् ॥ भूमिमाश्वास्यवाणीभिःस्वधामचसमाययौ ॥ ३६ ॥ परिपूर्णतमंसाक्षाच्छ्रीकृष्णंविद्धिमैथिल ॥ कंसादीनांवधार्थायप्राप्तोयंभूमिमंडले ॥३७॥ रोममात्र तन्नौजिह्वाभवतीत्थंयदानृप ॥ तदापिश्रीहरेस्तस्यवर्ण्यतेन गुणोमहान् ॥ ३८ ॥ नभःपतंतिविहगायथाह्यात्मसमंनृप ॥ तथाकृष्णगतिंदिव्यांवदंतीत्थंविपश्चितः ॥ ३९ ॥ इतिश्रीगर्गसंहितायांगोलोकखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेअवतारव्यवस्थानामपञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ श्रीबहुलाश्वउवाच ॥ कंसः कोयंपुरादैत्योमहाबलपराक्रमः ॥ तस्यजन्मानिकर्माणिब्रूहिदेवर्षिसत्तम ॥ १ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ समुद्रमथनेपूर्वंकालनेमिर्महासुरः ॥ युयुधेविष्णुनासार्द्धंयुद्धेतेन बलाद्धतः ॥ २ ॥ शुक्रेणजीवितस्तत्रसंजीविन्यास्वविद्यया ॥ पुनर्विष्णुंयोद्धुकामउद्योगंमनसाकरोत् ॥३॥ तपस्तेपेतदा दैत्योमन्दराचल सन्निधौ ॥ नित्यंदूर्वारसंपीत्वाभजन्देवंपितामहम् ॥ ४ ॥ दिव्येषुशतवर्षेषुव्यतीतेषुपितामहः ॥ अस्थिशेषंसवल्मीकंवरंब्रूहीत्युवाचतम् ॥ ५ ॥ कालनेमिरुवाच ॥ ब्रह्मांडेयेस्थितादेवाविष्णुमूलामहाबलाः ॥ तेषांहस्तैर्नमेमृत्युः पूर्णानामपिमाभवेत् ॥ ६ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ दुर्लभोयंवरोदैत्ययस्त्वयाप्रार्थितः परः ॥ कालांतरेतेप्राप्तःस्यान्मद्वाक्यंनमृषाभवेत् ॥ ७ ॥

जिला दिया, तब उसने विष्णुके साथ युद्ध करनेका मनसे उद्योग किया ॥ ३ ॥ कालनेमिने मंदराचलके समीप तप किया, केवल दूर्वाके रसको पीकर ब्रह्माजीका भजन किया ॥४॥ जप तप करते-करते देवताओंके सौ वर्ष बीत गये, और अस्थि मात्र बाकी रह गयी और जब इसके शरीर पर बाँमी चढ़ गई, तब ब्रह्माजीने कहा कि वर मांग ॥५॥ तब कालनेमिने कहा कि जितने इस ब्रह्माण्डमें बलवान् देवता हैं, उनकी जड़ विष्णु हैं, उनमें पूर्ण देवता हैं, उनके हाथसे मेरी मृत्यु न होवे ॥६॥ तब ब्रह्माजीने कहा कि, हे दैत्य ! जो वर तुमने मांगा, यह वर बड़ा कठिन और दुर्लभ है, यह वर तुमको कालांतरमें मिलेगा, मेरी बात झूठ नहीं होती है ॥ ७ ॥

नारदजी कहते हैं, वह कालनेमि असुर भूमिमें उग्रसेनकी पत्नीके फिर जन्मा, तब बालक पनमें भी महामल्लोंसे निरंतर युद्ध करता था ॥८॥ जरासंध मगध देशका राजा दिग्विजयके लिये निकला, यमुनाजीके किनारे पर उसका शिबिर इधर-उधर पड़ा ॥९॥ तब उसका कुवलयापीड नामक हाथी, जिसमें एक हजार हाथियोंका पराक्रम हैं, ऐसा मतवाला हाथी सांकलोंको तोड़कर शिबिरमेंसे भाग गया ॥१०॥ वह शिबिरको, घरको तथा पर्वतके खण्डोंको तोड़ता हुआ रंगभूमिमें चला आया, जहां कंस लड़ रहा था ॥११॥ जब सब मल्ल भाग गये तब कंसने आकर सूंड़ पकड़ कर उसको पृथ्वीमें दे मारा ॥१२॥ फिर उग्रसेनके पुत्र कंसने उस कुवलयापीड हाथीको दोनों हाथोंसे पकड़ घुमाकर जरासंधके शिबिरसे सौ योजन दूर फेंक दिया ॥१३॥ तब उस कंसके अद्‌भुत बलको देख जरासंध प्रसन्न हो गया, और अपनी अस्ति प्राप्ति दो कन्याओंका कंसके साथ विवाह कर दिया ॥१४॥ और दहेजमें दस करोड़ घोड़े, एक लाख हाथी और तीन लाख रथ व दश हजार दासियां दीं ॥१५॥ तदनन्तर द्वन्द युद्ध करनेवाला कंस भुजाओंके बलसे उद्धत हुआ

श्रीनारदउवाच ॥ कौमारेपिमहामल्लैः सततंसयुयोधह ॥ उग्रसेनस्यपत्न्यांकौजन्मलेभेऽसुरःपुनः ॥ ८ ॥ जरासंधोमागधेंद्रोदिग्जयाय विनिर्गतः ॥ यमुनानिकटेतस्यशिबिरोभूदितस्ततः ॥ ९ ॥ द्विपःकुवलयापीडःसहस्रद्विपसत्त्वभृत् ॥ बभञ्ज शृंखलासंघं दुद्रावशिबिरान्मदी ॥ १० ॥ निपातयन्सशिबिरान्गृहांश्चभूभृतांस्तटान् ॥ रंगभूम्यामाजगामयत्रकंसोप्ययुध्यत ॥ ११ ॥ पलायितेषुमल्लेषुकंसस्तंतुसमागतम् ॥ शुंडादंडेसंगृहीत्वापातयामासभूतले ॥ १२ ॥ पुनर्गृहीत्वाहस्ताभ्यांभ्रामयित्वोग्रसेनजः ॥ जरासंधस्यसेनायांचिक्षेपशतयोजनम् ॥ १३ ॥ तदद्भुतंबलंदृष्ट्वाप्रसन्नोमगधेश्वरः ॥ अस्तिप्राप्तीददौकन्ये तस्मैकंसायशंसिते ॥ १४ ॥ अश्वार्बुदंहस्तिलक्षंरथानांचत्रिलक्षकम् ॥ अयुतंचैवदासीनांपारिबर्हंजरासुतः ॥ १५ ॥ द्वंद्वयोधीततःकंसोभुजवीर्यमदोद्धतः ॥ माहिष्मतींययौवीरोचैकाकीचण्डविक्रमः ॥ १६ ॥ चाणूरोमुष्टिकःकूटःशलस्तोशलकस्तथा ॥ माहिष्मतीपतेःपुत्रामल्लायुद्धजयैषिणः ॥ १७ ॥ कंसस्तानाहसाम्नापिदीयध्वंरंगमेवमे ॥ अहंदासोभवेयंवोभवंतोजयिनोयदि ॥ १८ ॥ अहंजयीचेद्भवतोदासान्सर्वान्करोम्यहम् ॥ सर्वेषांपश्यतांतेषांनागराणांमहात्मनाम् ॥ १९ ॥ इतिप्रतिज्ञांकृत्वाथयुयुधेतैर्जयैषिभिः ॥ यदागतंसचाणूरंगृहीत्वायादवेश्वरः ॥ २० ॥ भूपृष्ठेपोथयामासशब्दमुच्चैस्समुच्चरन् ॥ तदायान्तंमुष्टिकाख्यंमुष्टिभिर्युधिनिर्गतम् ॥ २१ ॥ एकेनमुष्टिनातंवैपातयामासभूतले ॥ कूटंसमागतंकंसोगृहीत्वापादयोश्चतम् ॥ २२ ॥

अकेलाही चण्ड पराक्रम वह माहिष्मती पुरीको चला गया ॥१६॥ माहिष्मती पुरीके राजाके चाणूर, मुष्टिक, कूट, शल, तोशल, ये पांच पुत्र मल्ल युद्धमें जीतनेकी इच्छा करनेवाले हैं ॥१७॥ उनसे कंस बोला कि तुम हमसे कुश्ती लड़ो, यदि तुम मुझको पछाड़ दोगे तो मैं तुम्हारा दास हो जाऊँगा ॥ १८ ॥ यदि मैं जीतूँगा, तो तुम सबको अपना दास बना लूँगा, सब नगरके महात्मा लोगोंके सामने हमारी तुम्हारी कुश्ती होगी ॥१९॥ ऐसी प्रतिज्ञा करके उन जयकी इच्छा करनेवालोंसे कुश्ती लड़ा, जब चाणूर आया, तब कंसने उसको पकड़ करके ॥ २० ॥ पृथ्वीमें दे मारा, और गर्जने लगा, फिर मुक्का बांधकर आये मुष्टिकको ॥ २१ ॥ कंसने एकही घूंसेकी मारसे धरतीमें पटक दिया, फिर कूट आया, उसके दोनों पांव पकड़ करके मुष्टिककी तरह पटक दिया ॥ २२ ॥

फिर भुजा ठोककर शल भी आया, तब कंस उसको एकही हाथसे पकड़ नीचे गिराकर धरतीपर खींचने लगा ॥२३॥ फिर तोशल आया उसके दोनों हाथ जोरसे पकड़ पृथ्वीमें पटक फिर उठाकर चालीस कोसपर फेंक दिया ॥२४॥ तब उनको दास बनाकर अपने साथ लेकर वह यादवेश्वर कंस, नारदजी कहते हैं कि, मेरे कहनेसे प्रवर्षण पर्वतको शीघ्र ही चला गया ॥२५॥ वहाँ द्विविद बंदरसे अपना अभिप्राय कहा, तब द्विविदसे कंसका बीस दिन निरंतर विश्राम रहित युद्ध हुआ ॥२६॥ तब द्विविद बंदरने एक पर्वतको उखाड़कर कंसके शिरपर फेंका, तब कंसने पर्वतको पकड़कर द्विविदके ऊपर फेंक दिया ॥२७॥ तब द्विविद कंसके घूंसामार आकाशमें उछल, गया, कंसने उछलते हुये द्विविदको पकड़कर पृथ्वीमें पटक दिया ॥२८॥ उस प्रहारसे द्विविद मूर्छित होकर गिर पड़ा, उसका बल नष्ट हो गया, हाड़ कट गये, तब द्विविद भी कंसका दास हो गया ॥२९॥ फिर द्विविदको भी साथ लेकर

भुजमास्फोटच्यधावन्तंशलंनीत्वाभुजेनसः ॥ पातयित्वापुनर्नीत्वाभूमिंतंविचकर्षह ॥२३॥ अथतोशलकंकंसोगृहीत्वाभुजयोर्बलात् ॥ निपात्य भूमावुत्थाप्यचिक्षेपदशयोजनम् ॥२४॥ दासभावेचतान्कृत्वातैःसार्द्धंयादवेश्वरः ॥ मद्वाक्येनययावाशुप्रवर्षणगिरिंवरम् ॥२५॥ तस्मैनिवेद्या- भिप्रायंयुयुधेवानरेणसः ॥ द्विविदेनापिविंशत्यादिनैःकंसोह्यविश्रमम् ॥२६॥ द्विविदोगिरिमुत्पाट्यचिक्षेपतस्यमूर्द्धनि॥ कंसोगिरिंगृहीत्वाच तस्योपरिसमाक्षिपत् ॥२७॥ द्विविदोमुष्टिनाकंसंघातयित्वानभोगतः ॥ धावन्कंसश्चतंनीत्वापातयामासभूतले ॥२८॥ मूर्च्छितस्तत्प्रहारेण- परंकश्मलममाययौ ॥ क्षीणसत्त्वश्चूर्णितास्थिर्दासभावंगतस्तदा ॥ २९ ॥ तेनैवाथगतःकंसऋष्यमूकवनंततः ॥ तत्रकेशीमहादैत्योह्यरू- पोघनस्वनः ॥ ३० ॥ मुष्टिभिर्घातयित्वातंवशीकृत्वारुरोहतम् ॥ इत्थंकंसोमहावीर्योमहेंद्राख्यंगिरिंययौ ॥ ३१ ॥ शतवारं चोज्जहार गिरिमुत्पाट्यदैत्यराट् ॥ पुनस्तत्रस्थितंरामंक्रोधसंरक्तलोचनम् ॥ ३२ ॥ प्रलयार्कप्रभंदृष्ट्वाननामशिरसामुनिम् ॥ पुनःप्रदक्षिणीकृत्यत- दंघ्र्योर्निपपातह ॥ ३३ ॥ ततःशान्तोभार्गवोऽपिकंसंप्राहमहोग्रदृक् ॥ हेकीटमर्कटीडिंभतुच्छोऽसिमशकोयथा ॥ ३४ ॥ अद्यैवत्वांहन्मि दुष्टक्षत्रियंवीर्यमानिनम् ॥ मत्समीपेधनुर्दिव्यंलक्षभारसमंमहत् ॥ ३५ ॥ इदंचविष्णुनादत्तंशंभवेत्रैपुरेयुधि ॥ शम्भोःकरादिहप्राप्तं क्षत्रियाणांवधाय च ॥ ३६ ॥

ऋष्य मूक पर्वतके वनको गया, वहाँ बादलकी गर्जनाके समान हिन हिनानेवाला केशी दानव घोड़ेके रूपसे रहता था ॥३०॥ उस केशीको घूंसोंसे मार वशमें करके उसके ऊपर चढ़- कर महेन्द्र पर्वतको चला गया ॥३१॥ वहाँ जाकर शतवार उस पर्वतको उखाड़ उखाड़कर रख दिया। फिर वहाँ क्रोधसे लाल लाल जिनके नेत्र हैं, और प्रलयके सूर्यके समान जिनका तेज है, ऐसे परशुरामजीको देख शिरसे दण्डवत् कर, फिर परिक्रमा देकर उनके चरणोंमें गिर पड़ा ॥३२॥३३॥ तब उग्र दृष्टिवाले परशुरामजी शान्त होकर कंससे बोले-अरे कीड़े! बंदरियाके बच्चे, तुच्छ तू मच्छरके बराबर है ॥३४॥ हे दुष्ट! पराक्रमका अभिमान करनेवाले क्षत्रिय, तुमको अभी मारता हूँ, मेरे पास यह लाख भारका धनुष है ॥३५॥ यह धनुष विष्णुने त्रिपुरासुरकी लड़ाईमें महादेवको दिया था, और महादेवसे दुष्ट क्षत्रियोंके नाशके लिये यह मेरे पास आया है ॥ ३६ ॥

यदि तुम इस धनुषको चढ़ा लोगे, तब तो कुशल है, और यदि तुमसे नहीं चढ़ा तो तुम्हारे प्राण ले लूँगा ॥३७॥ कंसने ऐसे परशुरामके वचन सुनकर सात ताल लम्बे उस धनुषको उठाकर उनके देखते देखते ही उस धनुषको चढ़ा अनायास ही दिया ॥ ३८ ॥ और कानतक खैंचकर सौ बार टंकारकी, तब उसकी टंकारसे बिजलीके समान तड़तड़ाहट हुई ॥३९॥ उस शब्दसे सब ब्रह्माण्ड झंकार उठा, सातों लोक नीचेके तलों सहित झंकार उठे, दिग्गज विचलित हो गये, तारागण टूट-टूट कर पृथ्वीपर गिर पड़े ॥४०॥ कंस फिर धनुष रखकर बार-बार दण्डवत् करके परशुरामजीसे यह बोला-हे देव ! मैं क्षत्री नहीं हूँ, मैं तो दैत्य आपका सेवक हूँ ॥४१॥ आपके दासोंका दास हूँ, हे पुरुषोत्तम ! मेरी रक्षा करिये, तब प्रसन्न होकर परशुरामजीने वह धनुष कंसको दे दिया ॥ ४२ ॥ और कहने लगे कि जो इस धनुषको तोड़ेगा, वही परिपूर्णतम अवतार तुमको मारेगा,

यदिचेदंतनोषित्वंतदाचकुशलंभवेत् ॥ चेदस्यकर्षणंनस्याद्घातयिष्यामितेबलम् ॥३७॥ श्रुत्वावचस्तदादैत्यःकोदण्डंसप्ततालकम् ॥ गृहीत्वा पश्यतस्तस्यसज्यंकृत्वाथलीलया ॥ ३८ ॥ आकृष्यकर्णपर्यंतंशतवारंततानह ॥ प्रत्यंचास्फोटनेनैवटंकारोभूत्तडित्स्वनः॥ ३९ ॥ ननादतेन ब्रह्मांडंसप्तलोकैर्बिलैःसह ॥ विचेलुर्दिग्गजास्ताराह्यपतन्भूमिमंडलम् ॥ ४० ॥ धनुःसंस्थाप्यतत्कंसोनत्वानत्वाहभार्गवम् ॥ हेदेवक्षत्रियोनास्मिदैत्योऽहंतेचकिंकरः ॥ ४१ ॥ तवदासस्यदासोऽहंपाहिमांपुरुषोत्तम ॥ श्रुत्वाप्रसन्नःश्रीरामस्तस्मैप्रादाद्धनुश्चतत् ॥ ४२ ॥ श्रीजामदग्न्युवाच ॥ यत्कोदंडंवैष्णवंतद्येनभंगीभविष्यति ॥ परिपूर्णतमोनात्रसोपित्वांघातयिष्यति ॥ ४३ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ ॥ अथ नत्वामुनिंकंसोविचरन्समदोन्मदः ॥ नकेऽपियुयुधुस्तेनराजानश्चबलिंददुः ॥४४॥ समुद्रस्यतटेकंसोदैत्यंनाम्नाह्यघासुरम् ॥ सर्पाकारंचफूत्कारैर्लेलिहानंददर्शह ॥४५॥आगच्छन्तंदशन्तंचगृहीत्वातंनिपात्यसः॥चकारस्वगलेहारंनिर्भयोदैत्यराड्बली॥४६॥ प्राच्यांतुवंगदेशेषुदैत्योऽरिष्टोमहावृषः ॥ तेनसार्द्धंसयुयुधेगजेनापिगजोयथा ॥४७॥ शृंगाभ्यांपर्वतानुच्चांश्चिक्षेपकंसमूर्द्धनि ॥ कंसोगिरिंसंगृहीत्वाचाक्षिपत्तस्यमस्तके॥ ॥ ४८ ॥ जघानमुष्टिनारिष्टंकंसोवैदैत्यपुंगवः ॥ मूर्च्छितंतंविनिर्जित्यतेनोदीचींदिशंगतः ॥ ४९ ॥

इसमें संदेह नहीं है ॥ ४३ ॥ नारदजी बहुलाश्व राजासे कहने लगे कि तब कंस परशुरामजीको नमस्कार करके मतवाला विचरने लगा। तब फिर किसी राजाने इससे युद्ध नहीं किया, सब राजा आकर भेंट देने लगे ॥ ४४ ॥ तब कंसने समुद्रके किनारेपर फुंकार करते हुये, जीभको लप लपाते हुये अघासुरको देखा ॥ ४५ ॥ सामने आते और काटते अघासुरको हाथसे पकड़ करके धरतीमें मारकर, निर्भय होकर दैत्यराट् कंसने अपने गलेमें हारके समान पहन लिया ॥ ४६ ॥ पूर्वमें वंग देश में अरिष्टासुर नामक दैत्यबैलके रूपसे रहता था, उसके साथ युद्ध किया, जैसे हाथीसे हाथी लड़ता है ॥४७॥ उस अरिष्टासुरने सींगोंसे पर्वतको कंसके मुखपर फेंका, तब कंसने उन्हीं पर्वतोंको ले लेकर उसके ही मुँहपर फेंक दिया ॥ ४८ ॥ तब फिर कंस उस अरिष्टको घूंसोंसे मार मूर्छित कर उसे जीतकर उत्तर दिशाको चला गया ॥ ४९ ॥

वहां प्राग्ज्योतिषपुरके महाबली भौमासुर नामक राजासे बोला कि हे दैत्योंके राजा ! मैं कंस हूँ, युद्धके लिये आया हूँ, युद्ध करो ॥ ५० ॥ यदि तुम मुझे जीत लोगे, तो मैं तुम्हारा दास हो जाऊँगा, यदि मैं तुमको जीत लूँगा, तो मैं तुमको दास बना लूँगा ॥५१॥ नारदजी कहते हैं, पहले तो प्रलंबासुर महाबली कंससे लड़ा, जैसे पर्वतमें सिंहसे सिंह और उद्भटसे उद्भट लड़ते हैं ॥ ५२ ॥ मल्ल युद्धमें कंसने प्रलंबासुरको धरतीमें गिराकर, फिर दोनों पांव पकड़ फिराकर प्राग्ज्योतिषपुरके राजाको फेंक दिया ॥ ५३ ॥ फिर धेनुकासुर नामक दैत्य आया, वह बड़े क्रोधसे कंसको पकड़कर बड़े जोरसे बहुत दूर हटाकर ले गया ॥५४॥ फिर कंस धेनुकको सौ योजन तक हटाकर ले गया, और पृथ्वी पर गिराकर घूंसोंकी मारसे उसके अंगको चूर चूरकर दिया ॥५५॥ फिर भौमासुरके कहनेसे तृणावर्त कंसको पकड़कर आकाशमें ले गया, और वहीं लाख योजन ऊपर जाकर

प्राग्ज्योतिषेश्वरंभौमंनरकाख्यंमहाबलम् ॥ उवाचकंसोयुद्धार्थीयुद्धंमेदेहिदैत्यराट् ॥ ५० ॥ अहंदासोभवेयंवोभवन्तोजयिनोयदि ॥ अहं जयीचेद्भवतोदासान्सर्वान्करोम्यहम् ॥ ५१ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ पूर्वंप्रलंबोयुयुधेकंसेनापिमहाबलः ॥ मृगेन्द्रेण मृगेन्द्रोऽद्रावुद्भटेनयथोद्भटः ॥ ५२ ॥ मल्लयुद्धेगृहीत्वातंकंसोभूमौनिपात्यच ॥ पुनर्गृहीत्वाचिक्षेपप्राग्ज्योतिषपुरंदरे ॥ ५३ ॥ आगतोधेनुकोनाम्नाकंसंजग्राहरोषतः ॥ नोदयामासदूरेणबलंकृत्वाथदारुणम् ॥ ५४ ॥ कंसस्तन्नोदयामासधेनुकंशतयोजनम् ॥ निपात्यचूर्णयामासतदंगंमुष्टिभिर्दृढैः ॥ ५५ ॥ तृणावर्त्तोभौमवाक्यात्कंसंनीत्वानभोगतः ॥ तत्रैवयुयुधेदैत्यऊर्द्ध्वैलक्षयोजनम् ॥ ५६ ॥ कंसोऽनंतबलंकृत्वादैत्यंनीत्वातदांबरात् ॥ भूम्यां संपातयामासवमंतंरुधिरंमुखात् ॥ ५७ ॥ तुंडेनाथग्रसन्तंचबकंदैत्यंमहाबलम् ॥ कंसोनिपातयामासमुष्टिनावज्रघातिना ॥ ५८ ॥ उत्थायदैत्योबलवान्सितपक्षोघनस्वनः ॥ क्रोधयुक्तःसमुत्पत्यतीक्ष्णतुंडोग्रसच्चतम् ॥ ५९ ॥ निगीर्णोऽपिसवज्रांगोस्तद्गलेरोधकृच्चयः ॥ सद्यश्चच्छर्दतंकंसंक्षतकंठोमहाबकः ॥ ६० ॥ कंसोबकंसंगृहीत्वापातयित्वामहीतले ॥ कराभ्यांभ्रामयित्वाचयुद्धेतं विचकर्ष ह ॥ ६१ ॥ तत्स्वसारंपूतनाख्यांयोद्धुकामामवस्थिताम् ॥ तामाहकंसः प्रहसन्वाक्यंमेशृणुपूतने ॥ ६२ ॥ स्त्रियासार्द्धमहंयुद्धंनकरोमिकदाचन ॥ बकासुरः स्यान्मेभ्रातात्वंचमेभगिनीभव ॥ ६३ ॥

युद्ध किया ॥५६॥ तब कंसने बहुत बल करके मुखसे रुधिरका वमन (उलटी) करते हुये दैत्यको आकाशसे पृथ्वीपर गिरा दिया ॥ ५७ ॥ फिर आकर अपनी चोंचसे कंसको निगलते बकासुरको कंसने व्रजके समान एक घूंसा मारकर धरतीपर गिरा दिया ॥५८॥ तब बड़े बली, सफेद पंखवाले, मेघके समान गर्जनकरनेवाले बकासुरने चोंच फाड़कर कंसको निगल लिया ॥५९॥ निंगला हुआ भी वज्रके समान अंगवाला कंस बकासुरके गलेमें अटक गया, तब इसने कंसको जल्दी उगल दिया, और बकासुरके गलेमें घाव हो गये ॥६०॥ तब कंसने बकासुरको पकड़कर धरतीपर गिराकर युद्धमें घसीटा ॥६१॥ तब उसकी बहिन पूतना लड़नेको आई, उससे कंस हँसकर यह वचन बोला, हे पूतने ! तुम मेरा वचन सुनो ॥ ६२ ॥ मैं स्त्रीके साथ कभी भी युद्ध नहीं करूँगा, बकासुर मेरा भाई है, तुम मेरी बहिन हो जाओ ॥ ६३ ॥

तब कंसको अनंत बली जानकर भौमासुर भी पराभूत हो गया, और कंसको देवताओंसे संग्राममें सहायताके लिये मित्र बना लिया ॥६४॥ इति श्रीगर्गसंहितायां गोलोकखण्डे भाषाटीकायां नारदबहुलाश्वसंवादे कंसबलवर्णनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥६॥ नारदजी बोले-इसके बाद कंसने प्रलंबादिक दैत्य और पहले दैत्योंको साथ लेकर शंबरासुरके पुरमें जाकर अपना लड़नेका अभिप्राय बताया ॥१॥ शंबरभी बहुत बलवान् था, परंतु कंससे लड़ा नहीं, तब कंसने अति बलियोंके साथ मित्रता कर ली ॥२॥ फिर त्रिशृंग शिखिर पर्वतमें बड़ा बली व्योमासुर सोया था, महाबली कंसने उसको एक लात मारी, तब वह कंसकी लातकी मारसे जग पड़ा और क्रोधसे उसके नेत्र लाल हो गये ॥३॥ तब व्योमासुरने उठकर कंसको दृढ घूसोंसे मारा, फिर इन दोनोंका घूंसोंसे बड़ा युद्ध हुआ ॥४॥ तब कंसके घूंसोंकी मारसे भ्रमातुर होकर व्योमासुर भी बल रहित हो गया, तब कंस उसको अपना दास बनाकर चला, तब मार्गमें मुझसे मिला और यह बोला ॥५॥ हे महाराज ! मेरी युद्धकी इच्छा है, मैं कहाँ जाऊँ, मुझसे जल्दी कहिये, तब मैंने कहा कि तुम महाबली

ततोनन्तबलंकंसंवीक्ष्यभौमोपिधर्षितः ॥ चकारसौहृदंकंसेसहाय्यार्थंसुरान्प्रति ॥ ६४ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांगोलोकखंडेनारदबहुलाश्वसंवादेकंसबलवर्णनंनामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथकंसःप्रलंबाद्यैरन्यैःपूर्वजितैश्चतैः ॥ शम्बरस्यपुरंप्रागात्स्वाभिप्रायंन्यवेदयत् ॥ १ ॥ शम्बरोह्यतिवीर्योपिनयुयोधसतेनवै ॥ चकारसौहृदंकंसोसर्वैरतिबलैःसह ॥२॥ त्रिशृंगशिखरेशेतेव्योमोनामाऽसुरोबली ॥ कंसपादप्रबुद्धोभूत्क्रोधसंरक्तलोचनः ॥ ३ ॥ कंसंजघानचोत्थायप्रबलैर्दृढमुष्टिभिः ॥ तयोर्युद्धमभूद्घोरमितरेतरमुष्टिभिः ॥ ४ ॥ कंसस्यमुष्टिभिःसोपिनिःसत्त्वोभूद्भ्रमातुरः ॥ भृत्यंकृत्वाथतंकंसःप्राप्तंमांप्रणनामह ॥ ५ ॥ हेदेवयुद्धाकांक्षोऽस्मिक्वयामित्वंवदाशुमे ॥ प्रोवाचतंतदागच्छदैत्यंबाणंमहाबलम् ॥ ६ ॥ प्रेरितश्चेतिकंसाख्योमयायुद्धदिदृक्षुणा ॥ भुजवीर्यमदोन्नद्धः शोणिताख्यंपुरंययौ ॥ ७ ॥ बाणासुरस्तत्प्रतिज्ञांश्रुत्वाक्रुद्धोह्यभून्महान् ॥ तताडलत्तांभूमध्येजगर्जघनवद्बली ॥ ८ ॥ आजानुभूमिगांलत्तांपातालांतमुपागताम् ॥ कृत्वातमाहबाणस्तुपूर्वंचैनांसमुद्धर ॥ ९ ॥ श्रुत्वावचःकराभ्यांतामुज्जहारमदोत्कटः ॥ प्रचण्डविक्रमःकंसःखरदंडंगजोयथा ॥ १० ॥ तयाचोद्धृतयोत्खाताल्लोकाःसप्ततलादृढाः ॥ निपेतुर्गिरयोनेकाविचेलुर्दृढदिग्गजाः ॥ ११ ॥

बाणासुरसे जाकर लड़ो ॥६॥ मैंने युद्ध करनेकी इच्छासे प्रेरणाकी, तब भुजाओंके बलसे उद्धत कंस शोणित नाम पुरको गया ॥ ७ ॥ तब बाणासुर कंसकी प्रतिज्ञाको सुनकर बड़ा क्रोधित हुआ, और पृथ्वीमें एक लात मारी? और महाबलीने मेघके समान गर्जना की ॥८॥ बाणासुरकी वह लात जांघतक धरतीमें चली गई, और पातालकी जड़में पहुँची, तब वह बाण कंससे बोला कि पहले तुम मेरे पांवको तो उखाड़ लो ॥९॥ तब मदोद्धत और चंड विक्रमवाले कंसने उसके वचन सुनकर दोनों हाथों से पकड़ कर पांव ऐसे उखाड़ लिया, जैसे हाथी कमल दण्डको उखाड़ लेता है ॥ १० ॥ उस लातके उखाड़नेमें सातों पाताल उखड़ आये, और अनेक पर्वत गिर पड़े और स्थिर दृढ दिग्गज वे भी चलायमान हो गये ॥ ११ ॥

तब बाणासुरको युद्ध करनेके लिये तैयार देखकर महादेवजीने आकर सबको संबोधित कर बलिके पुत्र बाणासुरसे कहा ॥ १२ ॥ कि श्रीकृष्णके विना इसको भूमिमें कोई नहीं जीतेगा, क्योंकि परशुरामजीने इसको वर दिया है, और विष्णु भगवान्का दिया हुआ धनुष भी इसको दिया है ॥१३॥ नारदजी कहते हैं, कि ऐसे कहकर कंसकी और बाणासुरकी साक्षात् शिवने मित्रता करा दी ॥१४॥ फिर कंसने पश्चिम दिशामें वत्सासुरको सुना, तब वत्सरूपधारी उस दैत्यसे वह दैत्य कंस लड़ा ॥ १५ ॥ तब तो कंसने पूंछ पकड़कर वत्सासुरको पृथ्वीमें दे मारा ऐसे उस पर्वतको वशमें करके म्लेच्छ देशको कंस गया ॥ १६ ॥ नारदजी कहते हैं, कि तब मेरे मुखसे महाबली काल यवन दैत्य, कंसका आगमन सुनकर गदा हाथमें लेकर; जिसकी लाल लाल मूंछ हैं- ऐसा कालयवन युद्ध करनेके लिये सामने निकला ॥ १७ ॥ तब कंसने भी अपनी एक लक्ष भारबोझवाली गदाको

योद्धुमुद्यतंबाणंदृष्ट्वागत्यवृषध्वजः ॥ सर्वान्संबोधयामासप्रोवाचबलिनंदनम् ॥ १२ ॥ कृष्णंविनापरंचैतंभूमौकोपिनजष्यति ॥ भार्गवेणवरंदत्तंधनुरस्मैचवैष्णवम् ॥ १३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वासौहृदंदृढ्यंसद्योवैकंसबाणयोः ॥ चकारपरयाशांत्याशिवःसाक्षान्महेश्वरः ॥ १४ ॥ अथकंसोदिक्प्रतीच्यांश्रुत्वावत्संमहासुरम् ॥ तेनसार्द्धंसयुयुधेवत्सरूपेणदैत्यराट् ॥ १५॥ पुच्छेगृहीत्वातंवत्संपोथयामासभूतले ॥ वशेकृत्वाथतंशैलंम्लेच्छदेशांस्ततोययौ ॥ १६ ॥ सम्मुखात्कालयवनः श्रुत्वादैत्यंमहाबलम् ॥ निर्ययौसन्मुखेयोद्धुंरक्तश्मश्रुर्गदाधरः ॥ १७ ॥ कंसोगदांगृहीत्वास्वांलक्षभरविनिर्मिताम् ॥ प्राक्षिपद्यवनेन्द्रायसिंहनादमथाकरोत् ॥ १८॥ गदायुद्धमभूद्घोरंतत्ताहिंकंसकालयोः ॥ विस्फुलिंगान्क्षरंत्यौद्वेगदेचूर्णीबभूवतुः ॥ १९ ॥ कंसःकालंसंगृहीत्वापातयामासभूतले ॥ पुनर्गृहीत्वानिष्पात्यमृततुल्यंचकारह ॥ २० ॥ बाणवर्षंप्रकुर्वन्तींसेनांतांयवनस्यच ॥ गदयापोथयामासकंसोदैत्याधिपोबली ॥२१॥ गजांस्तुरंगान्सुरथान्वीरान्भूमौनिपात्यच ॥ जगर्जघनवद्वीरोगदायुद्धोमृधांगणे ॥ २२ ॥ ततश्चदुद्रुवुर्म्लेच्छास्त्यक्त्वास्वंस्वंरणंपरम् ॥ भीतान्पलायितान्म्लेच्छान्नजघानाथनीतिमान् ॥ २३ ॥ उच्चपादोदीर्घजानुः स्तम्भोरुर्लघिमाकटिः ॥ कपाटवक्षाः पीनांसः पुष्टःप्रांशुर्बृहद्भुजः ॥ २४ ॥

लेकर कालयवनके ऊपर फेंक कर सिंहनाद किया ॥१८॥ जब कंस और कालयवन दोनोंकी गदाएं, चूर्ण हो गईं ॥१९ तब कंसने कालयवनको पकड़कर पृथ्वीमें दे मारा, फिर उठा उठाकर ऐसा मारा कि मरे हुयेके समान कर दिया ॥२० और बाणोंकी वर्षा करते हुये बली कंसने कालयवनकी सेनाको गदाओंकी मारसे चूर्ण कर दिया ॥२१॥ हाथियोंको रथोंको, घोड़ोंको, वीरोंको भूमिमें डालकर फिर गदायुद्धमें कंस मेघके समान गर्जा ॥ २२ ॥ तब तो सब म्लेच्छ रणको छोड़कर भागे, भयभीत भागते हुये, म्लेच्छोंको, देखकर नीतिको जाननेवाले कंसने फिर नहीं मारा ॥ २३ ॥ फिर ऊँचे पांववाला, खंभके समान मोटी जांघवाला, पतली कमर, किवाड़ जैसी छाती, मोटेकन्धा, मोटी देह,

बड़ी भुजा ॥२४॥ कमलसे नेत्र हैं, बड़े-बड़े केश हैं, जिसका लालरंग है, काले वस्त्र धारण कर रखे हैं, किरीट, कुंडल, हार, पद्ममाला इत्यादिसे शोभित ॥२५॥ और ढाल, तलवार, धनुष, बाण, तर्कश, कवच, मुद्गरको बांधे मदोत्कट जो कंस है, वह देवताओंको जीतने के लिये अमरावती पुरीमें गया॥२६॥चाणूर, मुष्टिक, अरिष्ट, शल, तोशल,केशी, प्रलंब, बकासुर, द्विविद, बंदर ॥२७॥ तृणावर्त्त, अघासुर, कूट, भौमासुर, बाणासुर, शंबर, व्योमासुर; धेनुकासुर, वत्सासुर इनको साथ लेकर कंसने अमरावती पुरीको घेर लिया ॥२८॥ तब कंसादिकोंको आया देखकर देवताओंका राजा इन्द्र क्रोध करके सब देवताओंको साथ लेकर युद्ध करनेको बाहर निकला ॥२९॥ तब दिव्य शस्त्रोंके समूह बड़े प्रकाश करते बाणोंसे उन दोनोंका ऐसा भयंकर युद्ध हुआ ॥ जिसको देखकर रोमांच हो जाय ॥३०॥ जब शस्त्रोंका अंधकार हो गया, तब रथमें बैठकर इन्द्रने कंसको मारनेके लिये, बिजली

पद्मनेत्रोबृहत्केशोऽरुणवर्णोऽसितांबरः किरीटीकुण्डलीहारीपद्ममालीलयार्करुक् ॥ २५ ॥ खड्गीनिषंगीकवचीमुद्गराढ्योधनुर्धरः ॥ मदोत्कटो ययौजेतुंदेवान्कंसोऽमरावतीम् ॥२६॥ चाणूरमुष्टिकारिष्टशलतोशलकेशिभिः ॥ प्रलंबेनकेनापिद्विविदेनसमावृतः ॥२७॥ तृणावर्त्ताघकूटैश्च भौमबाणाख्यशंबरैः ॥ व्योमधेनुकवत्सैश्चरुरुधेसोमरावतीम् ॥ २८ ॥ कंसादीनागतान्दृष्ट्वाशक्रोदेवाधिपः स्वराट् ॥ सर्वैर्देवगणैःसार्द्धंयोद्धुं क्रुद्धोविनिर्ययौ ॥ २९ ॥ तयोर्युद्धमभूद्घोरंतुमुलंरोमहर्षणम् ॥ दिव्यश्चशस्त्रसंघातैर्बाणैस्तीक्ष्णः स्फुरत्प्रभैः ॥ ३० ॥ शस्त्रांधकारेसंजातेरथा-रूढोमहेश्वरः ॥ चिक्षेपवज्रंकंसायशतधारंतडिद्द्युति ॥३१॥ मुद्गरेणापितद्वज्रंतताडाशुमहासुरः ॥ पपातकुलिशंयुद्धेछिन्नधारंबभूवह ॥३२॥ त्यक्त्वावज्रंयदावज्रीखड्गंजग्राहरोषतः ॥ कंसंमूर्ध्नितताडाशुनादंकृत्वाथभैरवम् ॥ ३३ ॥ सक्षतोनाभत्कंसोमालाहतइवद्विपः ॥ गृहीत्वासगदां गुर्वीमष्टाधातुमयींदृढाम् ॥ ३४ ॥ लक्षभारसमांकंसश्चिक्षेपेन्द्रायदैत्यराट् ॥ तांसमापततींवीक्ष्यजग्राहाशुपुरंदरः ॥३५॥ ततश्चिक्षेपदत्याय वीरोनमुचिसूदनः ॥ चचारयुद्धेविदलन्नरीन्मातलिसारथिः ॥ ३६ ॥ कंसोगृहीत्वापरिघंतताडांऽसेसुरद्विवम् ॥ तत्प्रहारेणदेवेंद्रःक्षणंमूर्च्छा-मवापसः ॥ ३७ ॥ कंसंमरुद्गणाः सर्वेगृध्रपक्षैःस्फुरत्प्रभैः ॥ बाणौघैश्छादयामासुर्वर्षासूर्यमिवांबुदः ॥ ३८ ॥

कीसी कांति है जिसकी ऐसा सौधारवाला वज्र चलाया ॥३१॥ तब कंसने शीघ्रही मुद्गरसे वज्रसे मारा, उसी समय मुद्गरकी मारसे वज्रकी धार कट गई, और युद्धमें गिर पड़ा ॥३२॥ फिर वज्रधारी इन्द्रने वज्रको छोड़कर खड्ग लिया, और बड़े क्रोधसे एक खड्ग कंसके शिरमें मारा, और भयंकर नाद किया ॥ ३३ ॥ खड्गके प्रहारसे कंस बिलकुल भी घायल नहीं हुआ, जैसे फूलोंकी माला मारनेसे हाथी नहीं होता है, फिर कंसने अष्ट धातुकी बड़ी बोझल और दृढ ॥३४॥ जिसमें लाख भारका बोझा है, ऐसी गदा लेकर इन्द्रको मारने के लिये फेंकी इन्द्रने गदाको आती हुई देखकर शीघ्रतासे बीचमें पकड़ ली ॥ ३५ ॥ वही गदा बडे वीर नमुचिको मारनेवाले इन्द्रने फेंक कर कंसके मारी, युद्धमें शत्रुओंको मारता हुआ इन्द्र, मातली जिसका सारथी है, वह विचरने लगा ॥ ३६ ॥ तब कंसने एक लोह निर्मित गदा लेकर इन्द्रके कन्धेमें मारी, उस प्रहारसे एक क्षणभरके लिये इन्द्र मूर्च्छित हो गया ॥ ३७ ॥ तब तो मरुद्गणोंने गीधकेसे जिनके पंख हैं, ऐसे बड़े तीखेबाणोंसे कंसको

ऐसे ढंक दिया, जैसे वर्षाके बादल सूर्यको ढंक देते हैं ॥ ३८ ॥ तब से हजार भुजाओंवाले बाणासुरने हजार भुजाओंसे पांच सौ धनुषको टंकारते हुये बाणोंके समूहसे मरुद्गणोंको भगा दिया, और वे सब बाणोंके मारे दशों दिशाओंमें भाग गये ॥३९॥ उसके बाद आठों वसु, ग्यारह रुद्र, बारह सूर्य, ऋषि, देवता सब दिशाओंसे अनेक प्रकारके शस्त्रोंसे बाणासुरको मारने लगे ॥४०॥ इतनेमें ही प्रलंबादिकोंके साथ फिर भौमासुर गर्जता हुआ आया, उसकी गर्जनासे देवता मूर्च्छित होकर गिर पड़े ॥४१॥ तब तो इन्द्र शीघ्रही उठकर ऐरावत हाथीपर चढ़कर आया, और क्रोधसे जिसके नेत्र लाल हो गये हैं, ऐसे इन्द्रने मदोन्मत्त ऐरावत हाथीको कंसपर प्रेरित किया ॥ ४२ ॥ तब अंकुशको मारनेसे क्रोधित हुये, पैरोंसे शत्रुओंको सूंडकी फुंकारसे इधर उधर मारते ॥४३॥ मद बहाते, हिमालयके समान दुर्गम गर्जते, वारंवार सूंडको चलाते ॥ ४४ ॥ घंटा

दोःसहस्रयुतोवीरश्चापंटंकारयन्मुहुः ॥ तदातान्कालयामासबाणैर्बाणासुरोबली ॥ ३९ ॥ बाणंचवसवोरुद्राआदित्याऋषयःसुराः ॥ जघ्नुर्नानाविधैःशस्त्रैःसर्वतोद्रिसमागताः ॥ ४० ॥ ततोभौमासुरःप्राप्तःप्रलंबाद्यसुरैर्नदन् ॥ तेननादेनदेवास्तेनिपेतुर्मूर्च्छितारणे ॥ ४१ ॥ उत्थायाशुतदाशक्रोगजमारुह्यरक्तदृक् ॥ नोदयामासकंसायमत्तमैरावतंगजम् ॥ ४२ ॥ अंकुशास्फालनात्क्रुद्धंपातयंतंपदैर्द्विषः ॥शुंडादंडस्यफूत्कारैर्मर्दयन्तमितस्ततः ॥ ४३ ॥ स्रवन्मदंचतुर्दन्तंहिमाद्रिमिवदुर्गमम् ॥ नदन्तंशृंखलांशुंडांचालयंतंमुहुर्मुहुः ॥ ४४ ॥ घंटाढ्यकिंकिणीजालरत्नकंबलमंडितम् ॥ गोमूर्धचयसिन्दूरकस्तूरीपत्रभृन्मुखम् ॥ ४५ ॥ दृढेनमुष्टिनाकंसस्तंतताडमहागजम् ॥ द्वितीयमुष्टिनाशक्रंसंजघानरणांगणे ॥ ४६ ॥ तस्यमुष्टिप्रहारेणदूरेशक्रःपपातह ॥ जानुभ्यांधरणींस्पृष्ट्वागजोपिविह्वलोभवत् ॥ ४७ ॥ पुनरुत्थायनागेन्द्रोदन्तैश्चाहत्यदैत्यपम् ॥ शुंडादंडेनचोद्धृत्यचिक्षेपलक्षयोजनम् ॥ ४८ ॥ पतितोपिसवज्रांगःकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥ स्फुरदोष्ठोतिरुष्टांगोयुद्धभूमिंसमाययौ ॥ ४९ ॥ कंसोगृहीत्वानागेन्द्रंसंनिपात्यरणांगणे ॥ निष्पीड्यशुंडांतस्यापिदन्तांश्चूर्णीचकारह ॥ ॥ ५० ॥ अथचैरावतोनागोदुद्रावाशुरणांगणात् ॥ निपातयन्महावीरान्देवधानींपुरींगतः ॥ ५१ ॥ गृहीत्वावैष्णवंचापंसज्यंकृत्वाऽथदैत्यराट् ॥ देवान्विद्रावयामासबाणौघैश्चधनुःस्वनैः ॥ ५२ ॥

किंकणी बजाते, रत्नोंको पहने, कामदार झालरसे शोभित गोरोचन, कस्तूरी सिंदूरके चित्र विचित्र रचनायुक्त मुखवाले, उस इन्द्रके हाथीको॥४५॥आते हुये देख कंसने बड़े जोरसे एक घूंसा मारा और दूसरा घूंसा इन्द्रके मारा ॥४६॥ उसके घूंसेके प्रहारसे इन्द्र दूर गिर पड़ा और हाथी भी पृथ्वीमें घुटनोंके बल गिर पड़ा और विह्वल हो गया ॥ ४७ ॥ फिर ऐरावत हाथीने उठकर चारों दांतोंसे कंसको उठाकर सूंडसे पकड़कर, घुमाकर लाख योजनपर फेंक दिया ॥४८॥ गिरा हुआ भी वज्रके समान अंगवाला वह कुछ विह्वल हो गया, तब भी क्रोधसे होठोंको फड़काता अत्यन्त रोषमें मग्न हुआ, युद्ध भूमिमें फिर आया ॥४९॥ तब कंसने ऐरावतको पकड़ रणांगणमें पटक सूंडको मोड़कर दांतोंको चूर्ण कर दिया ॥ ५० ॥ इसके बाद हाथी रणांगणसे शीघ्रही भाग गया और बड़े-बड़े वीरोंको गिराता देवधानीपुरीको चला गया ॥ ५१ ॥ फिर कंसने विष्णुके दिये हुये धनुषको

चढाकर वाणोंके समूहसे तथा धनुषकी टंकारके शब्दसे देवताओंको भगा दिया ॥ ५२ ॥ तब कंसके मारे वे देवता दिशाओंमें भाग गये और सबकी लीन बुद्धि हो गई, कितने ही देवताओंने शिखा (चोटी) खोल दी, कितने ही दीनकी तरह कहने लगे हम भयभीत हैं ॥ ५३ ॥ कितने ही हाथ जोड़ते अति दीनकी तरह शस्त्र रखकर अपनी काछ खोल भागं गये, कितने ही कंसके सन्मुख ही नहीं हुये, मनोरथ जिनके भग्न हैं, अति विह्वल हो गये ॥५४॥ देवताओंको ऐसे हुआ देखकर कंस उनके छत्र और सिंहासनको लेकर सब दैत्योंके साथ अपनी राजधानी मथुरामें आ गया ॥ ५५ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायाम् गोलोकखण्डे भाषाटीकायां कंस दिग्विजय वर्णनंनामसप्तमोऽध्यायः ॥७॥ अब गर्गजी कहते हैं कि हे शौनक ! हरि भक्त मैथिल राजा, बड़े ज्ञानी देवर्षियोंमें श्रेष्ठ नारदको दण्डवत् करके यह अद्भुत वृत्तान्त सुनानेको बोला ॥१॥ हे महाराज ! आपने निर्मल यशसे मेरा

ततःसुरास्तेननिहन्यमानाविदुद्रुवुर्लीनधियोदिशान्ते ॥ केचिद्रणेमुक्तशिखाबभूवुर्भीताःस्मइत्थंयुधिवादिनस्ते ॥ ५३ ॥ केचित्तथाप्रांजल-
योतिदीनवत्संन्यस्तशस्त्रायुधमुक्तकच्छाः ॥ स्थातुंरणेकंसनृपदेवसंमुखेगतेप्सिताः केचिदतीवविह्वलाः ॥५४॥ इत्थंसदेवान्प्रगतान्निरीक्ष्यतः-
न्नीत्वाचसिंहासनमातपत्रवत् ॥ सर्वैस्तदादैत्यगणैर्जनाधिपःस्वराजधानींमथुरांसमाययौ ॥ ५५ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांगोलोकखंडे ॥
नारदबहुलाश्वसंवादेदिग्विजयवर्णनंनामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ श्रुत्वातदाशौनकभक्तियुक्तः श्रीमैथिलोज्ञानभृतांवरिष्ठम् ॥
नत्वापुनः प्राहमुनिर्महाद्भुतंदेवर्षिवर्यंहरिभक्तिनिष्ठः ॥ १ ॥ श्रीबहुलाश्वउवाच ॥ त्वयाकुलंकौविशदीकृतंमेस्वानंददोर्जद्यशसामलेन ॥
श्रीकृष्णभक्तक्षणसंगमेनजनोपिसत्स्याद्बहुनाकिमुस्वित् ॥२॥ श्रीराधयापूर्णतमस्तुसाक्षाद्भूत्वाव्रजेकिंचरितंचकार ॥ तद्ब्रूहिमेदेवऋषेऋषीश
त्रितापदुःखात्परिपाहिमांत्वम् ॥ ३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ धन्यंकुलंयन्निमिनानृपेणश्रीकृष्णभक्तेनपरात्परेण ॥ पूर्णीकृतंयत्रभवान्प्रजा
तोयुक्तोहिमुक्तोभवतोनचित्रम् ॥ ४ ॥ अथप्रभोस्तस्यपवित्रलीलांसुमंगलांसंशृणुतांपरस्य ॥ अभूत्सतांयोभुविरक्षणार्थंनकेवलंकंसवधाय
कृष्णः ॥ ५ ॥ अथैवराधांवृषभानुपत्न्यामावेश्यरूपंमहसःपराख्यम् ॥ कलिंदजाकूलनिकुंजदेशेसुमन्दिरेसावततारराजन् ॥ ६ ॥

कुल पृथ्वीमें निर्मल कर दिया हैं क्योंकि-श्रीकृष्ण भक्तोंके क्षणमात्र संगसे जनआत्माको आनन्द देनेवाला सत् (उत्तम) हो जाता है, इस विषयमें बहुत कहनेकी आवश्यकता नहीं है ॥२॥ श्रीराधिकाके साथ पूर्णतम भगवान्ने व्रजमें जन्म लेकर क्या-क्या चरित्र किये हैं, हे देवर्षि मेरे आगे कहिये, और हे ऋषीश ! तीनों तापोंसे दुःखसे मेरी रक्षा करिये ॥ ३ ॥ यह सुनकर नारदजी कहने लगे कि निमि राजाका यह कुल धन्य है, जो उत्तमोत्तम और श्रीकृष्णके भक्त तुमने कृष्ण भक्तिसे अपना कुल कृतार्थ कर दिया, जिसमें तुम्हारे जैसा भक्त पैदा हुआ। तुम जीवन्मुक्त हो, इसमें कुछ आश्चर्यकी बात नहीं है ॥ ४ ॥ तुम प्रभुकी मंगलकारी पवित्र लीला सुनो। जिस कृष्णने केवल संतोंकी रक्षाके लिये जन्म लिया है, कुछ कंसको मारनेके लिये ही लिया हो, ऐसा नहीं ॥५॥ इसके बाद अपना परसंज्ञक (नामक) जो तेज राधा है, उसको वृषभानुकी स्त्री

में प्रवेश करके आये हैं, उस राधाने यमुनाजीके तटपर निकुंज मंदिरमें अवतार लिया ॥६॥ भादों महिना शुक्ल पक्षमें अष्टमी सोमवारके मध्याह्नके समय जब आकाश मेघोंसे आच्छादित था तब जन्म लिया, देवताओंने नन्दनवनके पुष्पोंकी वर्षा की ॥ ७ ॥ उस समय श्रीराधाके अवतारसे नदी निर्मल हो गई, दिशायें प्रसन्न हो गई, शीतल कमलकी सुगन्ध लिये मंद-मंद पवन चलने लगी ॥ ८ ॥ चन्द्रमाकीसी कांति है जिसकी ऐसी अपनी बेटीको देखकर कीर्ति नामकी गोपी वृषभानुकी रानी बड़ी प्रसन्न हुई, तब रानीने शुभकृत्य कराकर अपनी बेटीके कल्याणके लिये शीघ्रही आनन्दकारी दो लाख गौएं ब्राह्मणोंको दीं ॥ ९ ॥ जिनका दर्शन देवताओंको और जो करोड़ों जन्मोंतक यज्ञ करें उनको भी दुर्लभ है, और बड़े-बड़े योगिजनोंको कोटि-कोटि जन्मोंके अभ्याससे कठिनतासे मिलता है, उस मूर्तिमती राधाको वृषभानुके मंदिरमें गोपियोंका प्यार करना सब देखते

घनावृतेव्योम्निदिनस्यमध्येभाद्रेसितेनागतिथौचसोमे ॥अवाकिरन्देवगणाःस्फुरद्भिस्तन्मंदिरेनन्दनजैः प्रसूनैः ॥७॥ राधावतारेणतदाबभूवुर्नद्योमलांभाश्चदिशः प्रसेदुः॥ववुश्चवाताअरविन्दरागैःसुशीतलाःसुन्दरमन्दयानैः ।८। सुतांशरच्चन्द्रशताभिरामांदृष्ट्वाथकीर्त्तिर्मुदमापगोपी॥शुभं विधायाशुददौद्विजेभ्योद्विलक्षमानंदकरंगवांच ॥ ९ ॥ यद्दर्शनंदेववरैःसुदुर्लभंतज्ज्ञैरवाप्तंजनजन्मकोटिभिः ॥ सविग्रहांतांवृषभानुमंदिरेलक्षन्तिलोकाललनाप्रलालनैः ॥ १० ॥ प्रेंखेखचिद्रत्नमयूखपूर्णेसुवर्णयुक्तेकृतचंदनांगे ॥ आंदोलितासाववृधेसखीजनैर्दिनेदिनेचंद्रकलेवभाभिः ॥ ११ ॥ श्रीरासरंगस्यविकासचंद्रिकादीपावलीभिर्वृषभानुमंदिरे ॥ गोलोकचूडामणिकण्ठभूषणांध्यात्वापरांतांभुविपर्यटाम्यहम् ॥ १२ ॥ ॥ श्रीबहुलाश्व उवाच ॥ वृषभानोरहोभाग्यंयस्यराधासुताभवत् ॥ कलावत्यासुचन्द्रेणकिंकृतंपूर्वजन्मनि ॥ १३ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ नृगपुत्रोमहाभागःसुचन्द्रोनृपतीश्वरः ॥ चक्रवर्तीहरेरंशोबभूवातीवसुन्दरः ॥ १४ ॥ पितॄणांमानसीकन्यास्तिस्रोभूवन्मनोहराः ॥ कलावतीरत्नमालामेनकानामनामतः ॥ १५ ॥ कलावतींसुचन्द्रायहरेरंशायधीमते ॥ वैदेहायरत्नमालांमेनकांचहिमाद्रये ॥ पारिबर्हेणविधिनास्वेच्छाभिःपितरोददुः ॥ १६ ॥

हैं ॥१०॥ स्वर्णके बने हुये रत्नजटित चन्दनसे लिपटे पालनेमें सखियोंसे झुलाई जाती हुई राधिका ऐसे बढ़ने लगी जैसे प्रकाशसे चन्द्रमाकी कला नित्य बढ़ती है ॥११॥श्री रासरंगके प्रकाश करनेवाली चन्द्रिकासे दीपावली करके वृषभानुके मंदिरमें प्रकाशकी गई गोलोक चूडामणि श्रीकृष्णकी कंठ भूषण राधिकाका ध्यान करता हुआ मैं पृथ्वीपर विचरता हूँ ॥१२॥ ऐसा सुनकर राजा बहुलाश्व नारदजीसे बोले कि वृषभानुका बड़ा भाग्य है, जिसके राधा जैसी बेटी हुई, सो कलावती और सुचन्द्रने पूर्व जन्ममें ऐसा क्या तप किया था, उसे कहिये ॥१३॥ नृगका बेटा महाभाग्यवान्, राजाओंका ईश्वर, चक्रवर्ती हरिका अंश, अति सुन्दर एक सुचन्द्र नामवाला राजा हुआ ॥१४॥ पितरोंके अति मनोहर तीन कन्याएं हुई, उनके नाम कलावती, रत्नमाला और मेनका थे ॥१५॥ इनमेंसे कलावती नामकी कन्या तो हरिके अंश जो बुद्धिमान सुचन्द्र हैं, उसको व्याही, रत्नमाला विदेह

को ब्याही, और मेनका हिमालयको विधिपूर्वक ब्याही गई ॥ १६ ॥ रत्नमालासे सीता और मेनकासे पार्वती उत्पन्न हुई, इन दोनोंके चरित्र हे महामते ! पुराणोंमें लिखे हुये हैं ॥१७॥ सुचन्द्र और कलावती दोनोंने गोमतीके तीर बारह वर्षतक ब्रह्माजीके नामसे तप किया ॥ १८ ॥ तब ब्रह्माजी आकर बोले कि तुम वर मांगो, तब सुचन्द्र दिव्य रूप धरकर वल्मीकमेंसे निकला ॥ १९ ॥ और दण्डवत् करके बोला-परेसे परे जो दिव्य मोक्ष है, वह मुझको मिले, इस बातको सुनकर बहुत दुःखी होकर साध्वी कलावती बोली ॥ २० ॥ हे ब्रह्मन् ! पति ही स्त्रियोंके परम देवता हैं, यदि ये मोक्षको प्राप्त हो गये, तो मेरी क्या गति होगी ॥ २१ ॥ यदि आप इनको मोक्ष देंगे तो मैं पतिके बिना नहीं जीऊँगी और पतिके वियोगमें विह्वल होकर मैं तुमको शाप दूँगी ॥ २२ ॥ यह सुनकर ब्रह्माजी कहने लगे कि हे देवि ! तुम्हारे शापसे ही मैं डरता हूँ, और मेरा वर भी

सीताभूद्रत्नमालायांमेनकायांचपार्वती ॥ द्वयोश्चरित्रंविदितंपुराणेषुमहामते॥१७॥सुचन्द्रोथकलावत्यागोमतीतीरजेवने॥ दिव्यैर्द्वादशभिर्वर्षै-स्ततापब्रह्मणस्तपः ॥१८॥ अथविधिस्तमागत्यवरंब्रूहीत्युवाचह ॥ श्रुत्वावल्मीकदेशाच्चनिर्ययौदिव्यरूपधृक् ॥१९॥ तन्नत्वोवाचमेभूयाद्दि-व्यमोक्षंपरात्परम् ॥ तच्छ्रुत्वादुःखितासाध्वीविधिंप्राहकलावती ॥ २० ॥ पतिरेवहिनारीणांदैवतंपरमंस्मृतम् ॥ यदिमोक्षमसौयातितदामेका गतिर्भवेत् ॥ २१ ॥ एनंविनानजीवामियदिमोक्षंप्रदास्यसि ॥ तुभ्यंशापंप्रदास्यामिपतिविक्षेपविह्वला ॥ २२ ॥ श्रीब्रह्मोवाच ॥ त्वच्छा-पाद्भयभीतोहंमेवरोपिमृषानहि ॥ तस्मात्त्वंप्राणपतिनासार्धंगच्छत्रिविष्टपम् ॥२३॥ भुक्त्वासुखानिकालेनयुवांभूमौभविष्यथः॥ गंगायमुनयो-र्मध्येद्वापरांतेचभारते ॥ २४ ॥ युवयोराधिकासाक्षात्परिपूर्णतमप्रिया ॥ भविष्यतियदापुत्रींतदामोक्षंगमिष्यथः ॥ २५ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ इत्थंब्रह्मावरेणाथदिव्येनामोघरूपिणा ॥ कलावतीसुचन्द्रोचभूमौतौद्वौबभूवतुः ॥ २६ ॥ कलावती कन्याकुब्जेभलंदननृपस्यच ॥ जातिस्मराह्यभूद्दिव्यायज्ञकुंडसमुद्भवा ॥ २७ ॥ सुचन्द्रोवृषभान्वाख्यः सुरभानुगृहेभवत् ॥ जातिस्मरोगोपवरःकामदेवइवापरः ॥ २८ ॥ सम्बन्धंयोजयामासनंदराजोमहामतिः ॥ तयोश्चजातिस्मरयोरिच्छतोरिच्छयाद्वयोः ॥ २९ ॥

झूठा नहीं है, इससे तुम प्राणपतिके साथ जाकर स्वर्गके भोगोंको भोगो ॥ २३ ॥ फिर कालान्तरमें तुम दोनों सुख भोगकर पृथ्वीमें जन्म लोगे, द्वापरके अंतमें भारतखण्डमें गंगा यमुनाके मध्यमें आकर जन्मोगे ॥२४॥ तब तुम दोनोंसे साक्षात् परिपूर्णतम श्रीकृष्णकी प्यारी श्री राधा पुत्री रूपमें जन्म लेगी, तब तुम्हारी मुक्ति होगी ॥ २५ ॥ नारद जी कहते हैं, ऐसे ब्रह्माजीके उस दिव्य अमोघ वरसे कलावती रानी हुई और सुचन्द्र वृषभानु हुये ॥ २६ ॥ तब कलावती तो कन्नौज देशमें भलंदन राजाकी बेटी यज्ञकुण्डमेंसे पूर्व जन्मकी स्मृति युक्ता हुई ॥ २७ ॥ सुचन्द्र सुरभानुके घरमें हुये, इनका नाम वृषभानु हुआ, ये गोपोंमें श्रेष्ठ कामदेवसे सुंदर, इनको भी पूर्वजन्मकी याद रही ॥२८॥ फिर महाबुद्धिमान् नंदजीने इनका सम्बन्ध करा दिया, इन दोनोंकी इच्छा थी, और दोनोंको ही पूर्वजन्मकी याद रही ॥२९॥

जो कोई इस वृषभानु और कलावतीके आख्यानको सुनें वह सब पापोंसे छूटकर कृष्णजीकी सायुज्य मुक्तिको प्राप्त होता है ॥ ३० ॥ इति श्रीगर्गसंहितायां गोलोक खण्डे भाषाटीकायां श्रीराधिका वर्णनं नामाष्टमोऽध्याय ॥ ८ ॥ नारदजी कहते हैं-जब मथुरा पुरीमें सब उत्तम यादवोंने शूरसेनजीकी इच्छासे गर्गजीको पुरोहित बनाया, तब बड़े प्रामाणिक हुये, एक दिन नंदजीके सुन्दर मंदिरमें आये ॥१॥ हीरोंके जड़े हुये सोनेके जिसमें किवाड़ हैं, और हाथियोंके कानोंसे ताडन किये भ्रमरोंकी गुंजनसे शब्दित है, और हाथियोंके गण्डस्थलमेंसे बहती मदके धारके झरनोंसे युक्त है. और अनेक मंडपोंके समूहसे सुशोभित है, मदकी धारासे सुगन्धित है ॥ २ ॥ और बड़े-बड़े वीर कवच पहिने धनुषधारी ढाल तलवार लिये चतुरंगिनी फौज लिये जिस महलकी रक्षाकर रहे हैं ॥ ३ ॥ उस मंदिरमें गर्गजीने अक्रूर, देवक और कंस इनसे सेवित राजाओंके राजा ऊँचे

वृषभानोःकलावत्याआख्यानंशृणुतेनरः ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तःकृष्णासायुज्यमाप्नुयात् ॥ ३० ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांगोलोकखण्डेनारद बहुलाश्वसंवादेश्रीराधिकाजन्मवर्णनंनामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तत्रैकदाश्रीमथुरापुरेवरेपुरोहितः सर्वयदूत्तमैः कृतः ॥ शूरेच्छयागर्गइतिप्रमाणिकः समाययौसुन्दरराजमन्दिरम् ॥ १ ॥ हीराखचिद्धेमलसत्कपाटकंद्विपेन्द्रकर्णाहतभृंगनादितम् ॥ इभस्रवन्निर्झरगंडधारयासमावृतंमंडपखंडमंडितम् ॥ २ ॥ महोद्भटैर्वीरजनैः सकंचुकैर्धनुर्धरैश्चर्मकृपाणपाणिभिः ॥ रथद्विपाश्वध्वजिनीबलादिभिःसुरक्षितंमंडलमंडलीभिः ॥ ३ ॥ ददर्शगर्गोनृपदेवमाहुकंश्वाफल्किनादेवककंससेवितम् ॥ श्रीशक्रसिंहासन उन्नतेपरेस्थितंवृतंछत्रवितानचारैः ॥ ४ ॥ दृष्ट्वामुनिंतंसहसासनाश्रयादुत्थायराजाप्रणनामयादवैः ॥ संस्थाप्यसंपूज्यसुभद्रपीठकेस्तुत्वापरिक्रम्यनतःस्थितोऽभवत् ॥ ५ ॥ दत्त्वाशिषंगर्गमुनिर्नृपायवैपप्रच्छसर्वंकुशलंनृपादिषु ॥ श्रीदेवकंप्राहमहामनाऋषिर्महौजसंनीतिविदंयदूत्तमम् ॥ ६ ॥ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ शौरिंविनाभुविनृपेषुवरस्तुनास्तिचिन्त्योमयाबहुदिनैःकिलयत्रतत्र ॥ तस्मान्नृदेववसुदेववरायदेहिश्रीदेवकींनिजसुतांविधिनोद्वहस्व ॥ ७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ कृत्वातदैवपुरिनिश्चयनागवल्लींश्रीदेवकः सकलधर्मभृतांवरिष्ठः ॥ गर्गेच्छयातुवसुदेववरायपुत्रींकृत्वाथमंगलमलंप्रददौविवाहे ॥ ८ ॥

इन्द्रासन पर बैठे छत्र चामर जिनके ढर रहे, दिव्य चन्दोहाओंसे युक्त ऐसे उग्रसेन राजाको देखा ॥४॥ गर्ग मुनिको देखकर राजा उग्रसेनने उसी समय सिंहासनससे उठकर यादवों सहित प्रणाम किया, सुन्दर पीठ सिंहासन पर बैठाकर विधिपूर्वक पूजन कर परिक्रमा देकर बड़ी नम्रतासे बैठ गये ॥ ५ ॥ तब गर्ग मुनि राजाको आशीर्वाद देकर सब राजाओं सहित कुशल पूछकर बड़े मनस्वी श्रीगर्गजी बड़े पराक्रमी नीति वेत्ता और यादवोंमें श्रेष्ठ जो देवक हैं, उससे बोले ॥६॥ बहुत दिनोंसे मैं यहाँ वहाँ इसी चिन्तामें रहा, परंतु इस समय इस पृथ्वीमें वसुदेवके अतिरिक्त मेरी दृष्टिमें नृपोंमें बड़भागी नहीं है, इससे हे देवक ! अपनी बेटी जो देवकी है, उसका वासुदेव वरसे विधि पूर्वक विवाह कर दो ॥७॥ उसी समय धर्म धारियोंमें मुख्य देवकने पुरीमें निश्चय कर सगाईका बीड़ा भेज दिया, फिर गर्गजीकी आज्ञासे वसुदेवको बेटी ब्याहकर परम मंगल किया ॥ ८ ॥

विवाह हो गया, तब वसुदेवजी बिदाके समय रत्न जटित अत्यन्त सुन्दर अश्व जिसमें जुते हुये हैं, ऐसे दिव्य रथमें गहनोंसे शोभित देवकीको बैठाकर आप भी उसी रथमें बैठे ॥९॥ तब तो कृपा स्नेहसे कंस बहिनको अत्यन्त प्यार करनेके लिये चलते घोड़ोंकी बागडोर पकड़ चतुरंगिनी सेनाको साथ ले आप ही हांकनेको बैठा ॥ १० ॥ तब देवकने बेटीको हजार दासी, दस हजार हाथी, दस लाख अश्व, एक लाख रथ और दो लाख गौ, दहेजमें दी ॥११॥ जिस समय यादव बिदा होकर चले तब मार्गमें मंगलकारक भेरी, मृदंग, सहनाई, गोमुख, बीणा, आनक, वेणु आदि अनेक बाजोंका और प्रयाण समयमें साथ जाने वाले यादवोंका बड़ा भारी अत्यन्त शब्द हुआ ॥१२॥ मार्गमें ही कंसको आकाशवाणी हुई कि रे अबुध ! तुम नहीं जानते हो, जिनके घोड़ोंकी बाग पकड़ तुम रथको हांक रहे हो, इन्हींका आठवाँ गर्भ तुम्हारा नाश करनेवाला होगा ॥१३॥ तब ही कुसंग निष्ठ कंस बहिनका जूडा हाथमें पकड़ करके सहसा तेज धारवाली तलवार लेकर निर्लज्ज उग्रकर्मा निर्दयी मारनेको तैयार हुआ ॥ १४ ॥ बाजे वाले सब बंद हो गये,

कृतोद्वहःशौरिरतीवसुन्दरंरथंप्रयाणेसमलंकृतंहयैः ॥सार्द्धंतयादेवकराज्यकन्ययासमारुहत्कांचनरत्नशोभया॥९॥ स्वसुः प्रियंकर्तुमतीवकंसो जग्राहरश्मींश्चलतांहयानाम् ॥उवाचवाहांश्चतुरंगिणीभिर्वृतःकृपास्नेहपरोथशौरौ॥१०॥दासीसहस्रंत्वयुतंगजानांसत्पारिबर्हंनियुतंहयानाम् लक्षं रथानांचगवांद्विलक्षंप्रादाद्दुहित्रेनृपदेवकोवै॥११॥भेरीमृदंगोद्धरगोमुखानांधुंधुर्जवीणानकवेणुकानाम्॥ महान्स्वनोभूच्चलतांयदूनांप्रयाणकालेप-थिमंगलंच ॥१२॥आकाशवागाहतदेवकंसंत्वामष्टमोहिप्रसवोंजसास्याः ॥ हन्तानजानासिचयांरथस्थांरश्मीन्गृहीत्वावहसेऽबुधस्त्वम् ॥१३॥ कुसंगनिष्ठोतिखलोहिकंसोहंतुंस्वसारंधिषणांचकार॥कचेगृहीत्वासितखड्गपाणिर्गतत्रपोनिर्दयउग्रकर्मा।१४।वादित्रकारारहिताबभूवुरग्रेस्थिताः स्युश्चकिताहिपश्चात् ॥ सर्वेषुवाश्वेतमुखेषुसत्सुशौरिस्तमाहाशुसतांवरिष्ठः ॥१५॥ श्रीवसुदेवउवाच॥ भोजेन्द्रभोजकुलकीर्तिकरस्त्वमेवभौमा-दिमागधबकासुरवत्सबाणैः ॥ श्लाघ्यागुणास्तवयुधिप्रतियोद्धुकामैःसत्वंकथंतुभगिनीमसिनात्रहन्याः ॥ १६ ॥ ज्ञात्वास्त्रियंकिलबकींप्रतियो-द्धुकामांयुद्धंकृतंनभवतानृपनीतिवृत्त्या।।सातुत्वयापिभगिनीवकृताप्रशांत्यैसाक्षादियंतुभगिनीकिमुतेविचारात् ॥ १७ ॥ उद्वाहपर्वणिगताचत-वानुजाचबालासुतेवकृपणाशुभदासदैषा ॥ योग्योसिनात्रमथुराधिपहंतुमेनांत्वंदीनदुःखहरणेकृतचित्तवृत्तिः ॥ १८ ॥

आगे वाले चौंक कर पीछेको देखने लगे, सबके काले मुँह निकल आये, तब सन्तोंमें श्रेष्ठ वसुदेवजी बड़े जल्दी बोले ॥१५॥ हे भोजेन्द्र ! तुम भोज वंशियोंकी कीर्ति बढ़ानेवाले हो, भौमासुर जरासंध, बकासुर, वत्सासुर, बाणासुर आदि जो तुम्हारे सामने लड़े हैं, वे तुम्हारे गुणोंकी बड़ाई करते हैं, ऐसे तुम बहिनको खड्गसे कैसे मारते हो ॥ १६ ॥ देखो ! पूतना तुमसे लड़नेको आई, पर राजनीतिसे आप उसको स्त्री समझकर लड़े नहीं और शान्त करके बहिनके तुल्य बना ली, फिर यह तो साक्षात् तुम्हारी बहिन ही है ॥१७॥ फिर भी यह विवाह पर्वमें गई, बालक है, तुमसे छोटी बहिन है, कृपणा 'गरीब' है, तुम्हारा सदा मंगल चाहनेवाली है, इस लिये हे मथुराके ईश्वर ! आप इसको मारने योग्य नहीं हो, आपके चित्तकी वृत्ति तो सदा दीन दुःखियोंके दुःख दूर करनेमें रहती है ॥ १८ ॥

नारदजी कहते हैं कि ऐसे अनेक प्रकारसे समझाया, तब भी कुसंग करनेवाले अतिदुष्टने नहीं माना, तब तो वसुदेवजी हरिकी काल गति जानकर शरण होकर फिर कंससे बोले ॥ १९ ॥ हे राजन् ! देव वाक्यसे तुमको इससे तो कुछ भय है ही नहीं, मेरी बात सुनो, जिन बेटाओंसे तुमको भय है, उन्हें मैं तुमको दे दूँगा, तुम व्यथा युक्त मत होओ ॥ २० ॥ नारदजी कहते हैं, कंस वसुदेवजीका वचन सुनकर मनसे निश्चय कर बड़ाई करके घरको चला गया, वसुदेव भी भयभीत होकर देवकीको साथ लेकर अपने घरको चले आये ॥२१॥ इति श्रीगर्ग संहितायां गोलोकखण्डे भाषाटीकायां वसुदेव विवाह वर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ नारदजी कहते हैं, तब कंसने विचार किया कि वसुदेव डरके मारे कहीं भाग न जाय, दश हजार योधा भेज दिये, उन शस्त्र धारियोंने वसुदेवका घर घेर लिया ॥ १ ॥ तब समय आनेपर वसुदेवने वर्ष २ पीछे देवकीमें आठ पुत्र पैदा किये, और एक सनातनी जो माया है, सो कन्या भी हुई ॥ २ ॥ पहलेही उत्पन्न हुये कीर्तिमान पुत्रको लेकर परार्थके ज्ञाता वसुदेवजीने कंसको दे दिया ॥ ३ ॥ सत्य वचन पर स्थित

॥ श्रीनारद उवाच ॥ नामन्यतेत्थंप्रतिबोधितोपिकुसंगनिष्ठोतिखलोहिकंसः ॥ तदाहरेःकालगतिंविचार्य्यशौरिःप्रपन्नःपुनराहकंसम् ॥ १९ ॥
॥ श्रीवसुदेव उवाच ॥ नास्यास्तुतेदेवभयंकदाचिद्यद्देववाक्यात्कथितंचतच्छृणु॥पुत्रान्ददामीतियतोभयंस्यान्मातेव्यथास्याः प्रसवप्रजातान्
॥ २० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वासनिश्चित्यवचोथशौरेःकंसःप्रशंस्याशुगृहंगतोभूत् ॥ शौरिस्तदादेवकराज्यपुत्र्याभयावृतःसन्गृहमाजगाम
॥२१॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांगोलोकखंडेवसुदेवविवाहवर्णनंनामनवमोऽध्यायः॥९॥श्रीनारदउवाच॥भीतः पलायितंवायंयोद्धारःकंसनोदिताः॥
अयुतंशस्त्रसंयुक्तारुरुधुःशौरिमंदिरम् ॥ १ ॥ शौरिःकालेनदेवक्यामष्टौपुत्रानजीजनत् ॥ अनुवर्षंचाथ कन्यामेकामायांसनातनीम् ॥ २ ॥
कीर्तिमंतंसुतंह्याद्यौजातमानकदुंदुभिः ॥ नीत्वाकंसमभ्येत्यददौतस्मैपरार्थवित् ॥ ३ ॥ सत्यवाक्येस्थितं शौरिंदृष्ट्वाकंसोघृणीह्यभूत् ॥
दुःखंसाधुस्तुसहतेसत्येकस्यक्षमानहि ॥ ४ ॥ कंस उवाच ॥ एषबालोयातुगृहमेतस्मान्नहिमेभयम् ॥ युवयोरष्टमंगर्भंहनिष्यामिनसंशयः
॥ ५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्तोवसुदेवस्तुसपुत्रोगृहमागतः ॥ सत्यंनामन्यतमनाग्वाक्यं तस्यदुरात्मनः ॥ ६ ॥ तदांबरादागतंमांनत्वा
पूज्योग्रसेनजः॥पप्रच्छदेवाभिप्रायंप्रावोचंतंनिबोधमे॥७॥ नंदाद्यावसवःसर्वेवृषभान्वादयः सुराः॥गोप्योवेदऋगाद्याश्चसंतिभूमौनृपेश्वर ॥८॥

वसुदेवको देखकर कंसको दया आ गई, साधुजन दुःखको सहजाते हैं, और सत्यके ऊपर दया किसको नहीं आती है ॥४॥ तब कंस बोला कि, इस बालकको अपने घर ले जाओ, इससे मुझको भय नहीं है तुम्हारे आठवें गर्भको मैं मारूँगा इसमें सन्देह नहीं है ॥५॥ नारदजी कहते हैं, ऐसा सुनकर वसुदेवजी बेटाको लेकर घर आ गये, किन्तु उस दुरात्माके वचनको कुछ भी सत्य नहीं माना ॥६॥ तबभी मैं आकाशसे आ गया, तब दण्डवत् कर पूजन करके उग्रसेनका पुत्र मुझसे पूछने लगा कि महाराज ! आप कैसे पधारे तब जो कुछ मैंने कंससे कहा, उसको तुम सुनो ॥ ७ ॥ हे राजन् ! पृथ्वीपर नंदादिक जो गोप हैं, वे तो आठ वसु हैं, वृषभानुसे लेकर सब देवता हैं, और हे नृपेश्वर ! इस भूमिमें गोपी हैं, वे सब वेदकी ऋचा हैं ॥ ८ ॥

और इस मथुरामें वसुदेवादिक जितने यादव हैं, वे सब देवता हैं, देवकीसे आदि लेकर सब जो स्त्रियाँ हैं, वे देवी हैं, यह निश्चय जानो ॥९॥ सात वारके गिननेसे सब आठवें होते हैं तेरे मारनेके लिये तो यही संख्या है, देवताओंकी गतिको मैं जानता हूँ ॥ १० ॥ ऐसे कहकर मैं चला गया, दैत्योंको मारनेका देवताओंका उद्यम है, यह सुन कंसको बड़ा क्रोध आया, और तभीसे यादवोंको मारनेका उद्यम किया ॥११॥ देवकी वसुदेवको बेड़ी डालकर कैद किया और देवकीके गर्भसे उत्पन्न उस बालकको शिला पर पटक दिया ॥१२॥ जब अपने पूर्व जन्मकी याद आ गई, तब इसने अपने दुष्टपनसे और विष्णुके भयसे भूमिपर हुये देवकीके पुत्रोंको विष्णु जानकर मारा ॥ १३ ॥ तब वसुदेवकी सहाय करनेवाले यादवेन्द्र उग्रसेनने कुपित होकर कंसको रोका ॥१४॥ और कंसका बुरा अभिप्राय जानकर उग्रसेनके अनुगामी बड़े-बड़े योद्धा उठे, उन्होंने खड्ग लेकर उग्रसेनकी रक्षा की ॥१५॥ उग्रसेनके योद्धाओंको देखकर कंसके योद्धा उठे, उन दोनोंका सभीके बीच मंडपमें बड़ा युद्ध हुआ ॥१६॥ और दरवाजे पर भी आपसमें वीरोंका परस्पर बड़ा युद्ध

वसुदेवादयोदेवामथुरायांचवृष्णयः ॥ देवक्याद्याःस्त्रियःसर्वादेवताःसन्तिनिश्चयम् ॥ ९ ॥ सप्तवारप्रसंख्यानामष्टमाः सर्वएवहि ॥तंहन्तुः संख्ययायंवादेवानांचमतोगतिः ॥ १० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वातंमयिगतेकृतदैत्यवधोद्यमे ॥ कंसःकोपावृतःसद्योयदून्हंतुंमनोदधे ॥ ११ वसुदेवंदेवकींचबद्धाचनिगडैर्दृढैः ॥ ममर्दतंशिलापृष्ठेदेवकीगर्भजंशिशुम् ॥ १२ ॥ जातिस्मरोविष्णुभायाज्जातंजातंजघानह ॥ इति दुष्टविभावाच्चभूमौभूतंह्यशंसयम् ॥ १३ ॥ उग्रसेनस्तदाक्रुद्धोयादवेन्द्रोनृपेश्वरः ॥ वारयामासकंसाख्यंवसुदेवसहायकृत् ॥१४॥कंसस्यदुरभिप्रायंदृष्ट्वोत्तस्थुर्महाभटाः ॥ उग्रसेनानुगारक्षांचक्रुस्तेखड्गपाणयः ॥ १५ ॥ उग्रसेनानुगान्दृष्ट्वाकंसवीराःसमुत्थिताः ॥ तैःसार्द्धमभवद्युद्धंसभामंडपमध्यतः ॥ १६ ॥ द्वारदेशेपिवीराणांयुद्धंजातंपरस्परम् ॥ खड्गप्रहारैरयुतंजनानांनिधनंगतम् ॥ १७ ॥ कंसोगृहीत्वाथगदांपितुः सेनांममर्दह ॥ कंसस्यगदयास्पृष्टाःकेचिच्छिन्नललाटकाः ॥१८॥ भिन्नपादाभिन्ननखाश्छिन्ननासाश्छिन्नबाहवः॥अधोमुखाऊर्ध्वमुखाः सशस्त्राः पतिताःक्षणात् ॥ १९ ॥ वमन्तोरुधिरंवीरामूर्च्छितानिधनंगताः ॥ सभामंडपमारक्तंदृश्यतेक्षतजस्रवात् ॥२०॥ इत्थंमदोत्कटःकंसस्संनिपात्योद्भटान्रिपून् ॥ क्रोधाढ्योराजराजेन्द्रजग्राहपितरंखलः ॥२१॥नृपासनात्संगृहीत्वाबद्धापाशैश्चतंखलः ॥ तन्मित्रैश्चनृपंसार्द्धंकारागारेरुरोधह ॥ २२ ॥ मधूनां शूरसेनानांदेशानांसर्वसंपदाम् ॥ सिंहासनेचोपविश्यस्वयंराज्यंचकारह ॥ २३ ॥

हुआ, उस युद्धमें तलवारोंके प्रहारसे दश हजार वीर मारे गये ॥ १७ ॥ तब कंसने गदा लेकर पिताकी सेनाको मारा, उस गदासे वीरोंके शिर कट गये ॥ १८ ॥ पांव टूट गये नाक कट गई, बाहु कट गई, ऊपर-नीचेको मुख किये शस्त्रों सहित क्षण भरमें योद्धा पृथ्वीपर गिर पड़े ॥ १९ ॥ बहुत वीर रुधिर वमन करते मूर्छित होकर मर गये, रुधिरके बहनेसे यह सभा मंडप लाल दिखाई दिया॥२०॥ऐसे बड़े खल मदोत्कट कंसने उद्भट शत्रुओंको मारकर क्रोधके मारे हे राजेन्द्र ! पिता उग्रसेनको पकड़ लिया॥२१॥ राज्यसिंहासन परसे उठाकर, बंधनोंसे बांधकर, उनको मित्रवर्ग सहित कैदकर कारावासमें डाल दिया॥२२॥मधुदेश शूरसेन देशोंकी सम्पदाओंका स्वामी होकर आपही राजगद्दी पर बैठ गया॥२३॥

तब समस्त यादव दुखी होकर संबंधके बहाने दूसरे देशोंमें चारों दिशाओंको भाग गये, क्योंकि वे जानते थे, कि जैसा समय हो, वैसाही करना चाहिये ॥२४॥ देवकीके सातवां गर्भ हर्ष शोकको बढ़ाने वाला हुआ उसको योग मायाने देवकीके पेटसे खींचकर व्रजमें जाकर रोहिणीके पेटमें रख दिया ॥ २५ ॥ तब मथुराके मनुष्य यह कहने लगे, अहो ! देवकीका गर्भ कहाँ गया, कहाँ जा पड़ा ॥ २६ ॥ भादोंके पांच दिन चले गये, तब शुक्ल पक्षकी षष्ठीके दिन बुधवार स्वाती नक्षत्र, मध्याह्नके समय, तुला लग्नमें बलदेवजी व्रजमें प्रगट हुये, इस लग्नमें पांच ग्रह उच्च हैं ॥ २७ ॥ कैसा समय है कि, मेघ छोटी-छोटी फुहारोंकी वर्षा कर रहे हैं, देवता फूलोंकी वर्षा कर रहे हैं, उसी समय वसुदेवकी स्त्री रोहिणीजीमें बलदेवजी अपनी कांतिसे नंदजीके घरको प्रकाशित करते उत्पन्न हुए ॥ २८ ॥ नंदजीने भी बालकका जात कर्म कर ब्राह्मणोंको दश लाख गौओंका दान दिया,

पीडितायादवाःसर्वेसंबंधस्यमिषैस्त्वरम् ॥ चतुर्दिशांतरंदेशान्विविशुःकालवेदिनः ॥ २४ ॥ देवक्याःसप्तमेगर्भेहर्षशोकविवर्द्धने ॥ व्रजं प्रणीतेरोहिण्यामनन्तेयोगमायया ॥ २५ ॥ अहोगर्भः क्वविगतइत्यूचुर्माथुराजनाः ॥ २६ ॥ अथव्रजेपंचदिनेषुभाद्रेस्वातौचषष्ठ्यांचसिते बुधेच ॥ उच्चैर्ग्रहैः पंचभिरावृतेचलग्नेतुलाख्येदिनमध्यदेशे ॥ २७ ॥ सुरेषुवर्षत्सुसुपुष्पवर्षंघनेषुमुंचत्सुचवारिबिन्दून् ॥ बभूवदेवोवसुदेव पत्न्यांविभासयन्नंदगृहंस्वभासा ॥ २८ ॥ नंदोपिकुर्वञ्शिशुजातकर्मददौद्विजेभ्योनियुतंगवांच ॥ गोपान्समाहूयसुगायकानांरावैर्महा- मंगलमातनोति ॥ २९ ॥ द्वैपायनोदेवलदेवरातवसिष्ठवाचस्पतिभिर्मयाच ॥ आगत्यतत्रैवसमस्थितोभूत्पाद्यादिभिर्नन्दकृतैः प्रसन्नः ॥ ॥ ३० ॥ नंदराजउवाच ॥ सुंदरोबालकः कोयंनदृश्योयत्समःक्वचित् ॥ कथंपंचदिनाज्जातस्तन्मेब्रूहिमहामुने ॥ ३१ ॥ ॥ श्रीव्यासउवाच ॥ अहोभाग्यन्तुतेनंदशिशुःशेषःसनातनः ॥ देवक्यांवसुदेवस्यजातोयंमथुरापुरे ॥ ३२ ॥ कृष्णेच्छयातदुदरा- त्प्रणीतोरोहिणींशुभाम् ॥ नंदराजत्वयादृश्योदुर्लभोयोगिनामपि ॥ ३३ ॥ तद्दर्शनार्थंप्राप्तोहंवेदव्यासोमहामुनिः ॥ तस्मात्त्वंदर्शयास्मा- कंशिशुरूपंपरात्परम् ॥ ३४ ॥

गोपोंको बुलाकर गायकों द्वारा बड़ा मंगलगान कराया॥२९॥वहाँ वेदव्यास, देवल, देवरात, वसिष्ठ, वाचस्पति आदि मेरे सहित सब आये, तब नन्दने सबका पाद्यादिसे पूजन किया और प्रसन्न होकर यह बोला॥३०॥ यह सुन्दर बालक कौन है, ऐसा सुन्दर तो कभी कहीं कोई देखा नहीं है और पांचही दिनमें इसका जन्म कैसे हो गया, यह बात हे महामुने ! मुझसे कहिये ॥ ३१ ॥ यह सुनकर वेदव्यासजी बोले-हे नन्दराज ! तुम्हारा बड़ा भाग्य है, ये साक्षात् शेषजी आये हैं, मथुरामें वसुदेवकी स्त्री देवकीके उदरमें इनका प्रादुर्भाव हुआ है ॥३२॥ श्रीकृष्णकी इच्छासे योगमायाने देवकीके गर्भमेंसे रोहिणीके गर्भमें रख दिये, हे नंद ! बड़ा मंगल हुआ, इनका दर्शन योगीश्वरोंको भी दुर्लभ है, सो इनका दर्शन करना तुमको उचित है ॥३३॥ मैं वेदव्यास महामुनि इन्हींके दर्शनके लिये यहाँ आया हूँ, इसलिये तुम हमको इनका दर्शन कराओ, यह बालक रूप परब्रह्म है ॥ ३४ ॥

नारदजी कहने लगे कि आश्चर्य करते हुए नंदजीने शेषरूप बालकको दिखाया तब वेदव्यासजी हिंडोलामें झूलते उस बालकको देखकर दण्डवत करके यह बोले ॥ ३५ ॥
हे देवाधिदेव ! भगवान् ! कामपाल ! आपके लिये नमस्कार है, आप अनन्त हो, शेष हो, साक्षात् राम हो, आपके लिये नमस्कार है ॥ ३६ ॥ परिपूर्ण हो, पृथ्वीको पालन करनेवाले हो, सीरपाणि हो, हजार शिरके संकर्षण हो, तुम्हारे लिये मेरा नित्य नमस्कार है ॥३७॥ हे रेवतीरमण ! बलदेव ! अच्युताग्रज ! हलायुध ! प्रलंबासुरको मारनेवाले ! पुरुषोत्तम ! मेरी रक्षा करिये ॥३८॥ बलहो, बलभद्र हो, ताल आपकी ध्वजामें हैं, गौरवर्ण नीलाम्बरधारी, रोहिणीके पुत्र हो, आपके लिये नमस्कार है ॥३९॥ आपही धेनुकारि हो, मुष्टिकारि हो, आपही कुम्भांडारी हो, आपही रुक्मी हो, कूपकर्ण और बल्वल इनके संहारकर्ता हो, आपके लिये नमस्कार है ॥ ४० ॥ आपही कालिंदीको खैंचनेवाले हो, तुम्हीं हस्तिनापुरके खैंचनेवाले हो, फिर द्विविदके शत्रु हो, यादवेंन्द्र हो, व्रजमंडलके भूषण हो, आपके लिये नमस्कार है ॥४१॥ कंसके भाइयोंको मारनेवाले हो, तीर्थ-

॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथनंदःशिशुंशेषंदर्शयामासविस्मितः ॥ दृष्ट्वाप्रेंखस्थितंप्राहनत्वासत्यवतीसुतः ॥ ३५ ॥ श्रीव्यास उवाच ॥ देवाधिदेवभगवन्कामपालनमोस्तुते ॥ नमोनंतायशेषायसाक्षाद्रामायते नमः ॥ ३६ ॥ धराधरायपूर्णायस्वधाम्नेसीरपाणये ॥ सहस्रशिरसे नित्यं नमःसंकर्षणायते ॥३७॥ रेवतीरमणत्वंवैबलदेवोच्युताग्रजः ॥ हलायुधःप्रलंबघ्नःपाहिमांपुरुषोत्तम ॥३८॥ बलायबलभद्रायतालांकायनमोनमः ॥ नीलांबरायगौरायरौहिणेयायतेनमः ॥३९॥ धनुकारिर्मुष्टिकारिःकुंभाण्डारिस्त्वमेवहि ॥ रुक्म्यरिःकूपकर्णारिःकूटारिर्बल्वलान्तकः ॥ ४० ॥ कालिन्दीभेदनोसित्वंहस्तिनापुरकर्षकः ॥ द्विविदारिर्यादवेंद्रोव्रजमंडलमण्डनः ॥ ४१ ॥ कंसभ्रातृप्रहंतासितीर्थयात्राकरःप्रभुः ॥ दुर्योधनगुरुः साक्षात्पाहिपाहिप्रभोजगत्॥४२॥जयजयाच्युतदेवपरात्परस्वयमनन्तदिगंतगतश्रुत ॥ सुरमुनीन्द्रफणीन्द्रवरायतेमुसलिनेबलिनेहलिनेनमः ॥४३॥ इहपठेत्सततंस्तवनंतुयःसतुहरेःपरमंपदमाव्रजेत् ॥ जगतिसर्वबलंत्वरिमर्दनंभवतितस्यजयःस्वधनंधनम् ॥ ॥ ४४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ बलंपरिक्रम्यशतंप्रणम्यतैद्वैपायनोदेवपराशरात्मजः ॥ विशालबुद्धिर्मुनिबादरायणःसरस्वतींसत्यवतीसुतो ययौ ॥ ४५ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांगोलोकखंडेश्रीनारदबहुलाश्वसम्वादेबलभद्रजन्मवर्णनंनामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ श्रीनारद उवाच ॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥ विवेशवसुदेवस्यमनः पूर्वपरात्परः ॥ १ ॥

यात्राको करनेवाले हो, दुर्योधनके गुरु हो, प्रभो, ! इस जगतकी रक्षा करिये ॥ ४२ ॥ हे अच्युत ! हे देव ! हे परात्पर ! हे अनन्त ! हे दिवंगत यशोगामिन् ! हे सुरेन्द्रवर ! हे मुनीन्द्रवर ! हे फणीन्द्रवर ! हे मुसलिन् ! हे बलिन् ! हे हलिन् ! आपके लिये नमस्कार है ॥ ४३ ॥ इस आपके स्तोत्रको जो कोई निरंतर पढ़ेगा, वह हरिके परम पदको प्राप्त होगा, जगतमें समस्त बल पावेगा, उसके शत्रुओंका नाश होगा, वह धनी होगा ॥४४॥ नारदजी कहते हैं, वेदव्यासजी पराशरके पुत्र बड़ी बुद्धिवाले सरस्वतीके सुत बदरिकाश्रमवासी बलदेवजीकी परिक्रमा देकर दण्डवत् करके बदरिकाश्रमको चले गये ॥४५॥ इति श्रीगर्गसंहितायां गोलोकखण्डे भाषाटीकायां बलदेव जन्मवर्णनं नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥
श्रीनारदजी कहते हैं, परिपूर्णतम साक्षात् स्वयम् श्रीकृष्ण भगवान् परेसे परे पहले वसुदेवजीके मनमें प्रवेश हुए ॥ १ ॥

तब महामना वसुदेवजी अत्यन्त तेजसे सूर्य, चन्द्रमा अग्निके समान तेजस्वी हो गये, मानों दूसरा (यज्ञ) इन्द्र ही है ॥२॥ सबको अभय देनेवाले कृष्ण जब देवकीके गर्भमें आये, तब उस तेजसे देवकी घरमें ऐसे लगने लगी जैसे बादलम बिजली चमकती है ॥ ३ ॥ तेजोवती देवकीको देखकर भयभीत होकर कंस बोला कि मेरा प्राण हरनेवाला हरि इसके पेटमें आ गया है, क्योंकि यह पहले ऐसी नहीं थी ॥ ४ ॥ जन्म लेते ही मारूँगा, ऐसे कहकर भयसे विह्वल हो सब जगह हरिको देखता अपने पहले शत्रुका चिंतन करने लगा ॥ ५ ॥ देखो वैरके अनुबंधसे असुरोंको सर्वत्र श्रीकृष्ण ही दीखते हैं, इसीलिये असुर श्रीकृष्णसे शत्रुता करते हैं ॥ ६ ॥ अब ब्रह्मादिक देवता हम जैसे मुनियोंको साथ लेकर वसुदेवके घरके ऊपर आकाशमें आकर श्रीकृष्णको प्रणाम करके स्तुति करने लगे ॥ ७ ॥ जो यह जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, अवस्थामें कारण और अकारण हैं, इसीके

सूर्येन्दुवह्निसंकाशोवसुदेवोमहामनाः ॥ बभूवात्यन्तमहसासाक्षाद्यज्ञइवापरः ॥ २ ॥ देवक्यामागतेकृष्णेसर्वेषामभयंकरे ॥ रराजतेनसागेहे घनेसौदामिनीयथा ॥३॥ तेजोवतींचतांवीक्ष्यकंसःप्राहभयातुरः ॥ प्राप्तोयंप्राणहन्तामेपूर्वमेषानचेदृशी ॥४॥ जातमात्रंहनिष्यामीत्युक्त्वास्ते भयविह्वलः ॥ पश्यन्सर्वत्रचहरिंपूर्वशत्रुंविचिंतयन् ॥५॥ अहोवैरानुबन्धेनसाक्षात्कृष्णोपिदृश्यते ॥ तस्माद्वैरंप्रकुर्वन्तिकृष्णेप्राप्त्यर्थमासुराः ॥ ६ ॥ अथ ब्रह्मादयोदेवामुनीन्द्रैरस्मदादिः ॥ शौरिगेहोपरिप्राप्ताःस्तवंचक्रुःप्रणम्यतम् ॥ ७ ॥ देवाऊचुः ॥ यज्जागरादिषु भवेषुपरंह्यहेतु-र्हेतुःस्विदस्यविचरन्तिगुणाश्रयेण ॥ नैतद्विशन्तिमहदिंद्रियदेवसंघास्तस्मैनमोग्निमिवविस्तृतविस्फुलिंगाः ॥ ८ ॥ नैवेशितुंप्रभुरयंबलिनाब-लीयान्मायानशब्दउतनोविषयीकसेति ॥ तद्ब्रह्मपूर्णममृतंपरमंप्रशान्तंशुद्धंपरात्परतरंशरणंगताःस्म ॥ ९ ॥ अंशांशकांशककलाद्यवतार-वृंदैरावेशपूर्णसहितैश्चपरस्ययस्य ॥ सर्गादयःकिलभवन्तितमेवकृष्णंपूर्णात्परन्तुपरिपूर्णतमन्नताःस्मः ॥ १० ॥ मन्वन्तरेषुचयुगेषुगतागतेषु कल्पेषुचांशकलयास्ववपुर्बिभर्षि ॥ अद्यैवधामपरिपूर्णतमंतनोषिधर्मविधायभुवि मंगलमातनोषि ॥ ११ ॥ यद्दुर्लभंविशदयोगिभिरप्यगम्यं गम्यंद्रवद्भिरमलाशयभक्तियोगैः ॥ आनंदकंदचरतस्तवमन्दयानपादारविन्दमकरन्दरजोदधामः ॥ १२ ॥

आश्रयसे गुण विचरते हैं, महदादिक देवताओंके गण इसमें प्रवेश नहीं हो सकते हैं, जैसे अग्निके पतंगे अग्निको प्रकाश नहीं कर सकते हैं ॥ ८ ॥ बलियोंका बली यह काल जिसको वश करनेको समर्थ नहीं होता है. और माया भी इसमें अपना प्रभाव नहीं कर सकती है, वेद भी जिसका विषय नहीं कर सकते हैं और वह परिपूर्ण परम शान्त शुद्ध अमृत समान परेसे परे जो श्रीकृष्ण हैं, हम उनकी शरणमें आये हैं ॥९॥ जिसपरके अंशावतार, अंशांशावतार, कलावतार, आवेशावतार, और पूर्ण अवतारों द्वारा इस जगत्की उत्पत्ति, पालन और संहार होता है, उस पूर्णसे परे परिपूर्णतम श्रीकृष्णको हम प्रणाम करते हैं ॥१०॥ तीनों कालोंके मन्वन्तर, युग और कल्प इनमें जो अपने अंश कला, आवेश, इन करके शरीर धारण करता है, अबही अपना तेजोरूप पूर्णस्वरूप धारण करता है, वह पृथ्वीमें धर्मका विधान करके मंगल फैलायेगा ॥११॥ जो विशद योगियोंको

भी अगम्य है, वही निर्मल प्रेमलक्षणा भक्तिसे गम्य है, हे, आनन्दकंद ! मंद-मंद जलनेवाले तुम्हारे चरणकमलकी रजको हम धारण करते हैं ॥१२॥ पहले मनोहर वपुधारी सैकड़ों करोड़ कन्दर्पकी सुन्दरताके मोहन गोलोकधामकी कान्तिको धारण करनेवाले राधाके पति अनोखे पृथ्वीके धर्मकी रक्षा करनेवाले धर्मके बोझरूप धनके धारण करनेवालेको मैं प्रणाम करता हूँ ॥१३॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे ब्रह्मादिक देवता मुनियोंसहित श्रीकृष्णकी स्तुति और नमस्कार करके गाते, बजाते, उनकी बड़ाई करते आनन्दपूर्वक अपने-अपने धामको चले गये ॥१४॥ तदनंतर हे मैथिली राजेन्द्र ! श्रीकृष्णके जन्म समय आकाश और दशों दिशायें निर्मल हो गईं॥१५॥तारागण निर्मल हो गये, पृथ्वीमंडल प्रसन्न हो गया, नद नदी, समुद्र, सरोवर, सब निर्मल जलसे पूर्ण हो गये ॥१६॥ सौ दलके और हजार दलके कमलोंकी रजकी सुगंधिसे युक्त पवन दशों दिशाओंमें फैल गई ॥१७॥ उनपर बहुतसे भ्रमर गुंजारकर रहे हैं, विचित्र पक्षी बोल रहे हैं वहाँ शीतल, मन्द, सुगन्ध पवन चलने लगी ॥१८॥ देशोंमें समृद्धि हो गई, नगरमें मंगल होने लगे, देवता, गौ, ब्राह्मण, सुखी हो गये

पूर्वन्तथात्रकमनीयवपुष्मयंत्वांकंदर्पकोटिशतमोहनमद्भुतंच ॥ गोलोकधामधिषणद्युतिमादधानंराधापतिंधरमधुर्यधनंदधानम् ॥ १३ ॥ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ नत्वाहरिंतदादेवाब्रह्माद्यामुनिभिःसह ॥ गायन्तस्तंप्रशंसन्तःस्वधामानिययुर्मुदा ॥ १४ ॥ अथमैथिलराजेन्द्र-जन्मकालेहरेःसति ॥ अंबरंनिर्मलंभूतंनिर्मलाश्चदिशोदश ॥ १५ ॥ उज्ज्वलास्तारकाजाताःप्रसन्नंभूमिमंडलम् ॥ नदानद्यःसमुद्राश्चप्रसन्नापः सरोवराः ॥ १६ ॥ सहस्रदलपद्मानिशतपत्राणिसर्वतः ॥ विकचानिमरुत्स्पर्शैःपतद्गन्धिरजांसिच ॥ १७ ॥ तेषुनेदुर्मधुकरानन्दतश्चित्र-पक्षिणः ॥ शीतलामन्दयानाश्चगंधाक्तावायवोववुः ॥१८॥ ऋद्धाजनपदाग्रामानगरामंगलायनाः ॥ देवाविप्रानगागावोबभूवुःसुखसंवृताः॥१९॥ देवदुन्दुभयोनेदुर्जयध्वनिसमाकुलाः।यत्रतत्रमहाराजसर्वेषांमंगलंपरम्२०विद्याधराश्चगन्धर्वाःसिद्धिकिन्नरचारणाः।जगुःसुनायकादेवास्तुष्टुवुः स्तुतिभिःपरम् ॥२१॥ ननृतुर्दिविगन्धर्वाविद्याधर्य्योमुदान्विताः ॥ पारिजातकमन्दरमालतीसुमनांसिच॥ २२ ॥ मुमुचुर्देवमुख्याश्चगर्जन्तश्च घनाजलम्॥भाद्रेबुधेकृष्णपक्षेधात्रर्क्षेहर्षणेवृषे ॥ कर्णेष्टम्यामर्द्धरात्रेनक्षत्रेशमहोदये॥२३॥अन्धकारावृतेकालेदेवक्यांशौरिमंदिरे ॥ आविरासी-द्धरिःसाक्षादरण्यामध्वरेग्निवत्।२४।स्फुरदक्षविचित्रहारिणंविलसत्कौस्तुभरत्नधारिणम्॥परिधिद्युतिनूपुरांगदधृतबालार्ककिरीटकुंडलम्।२५।

॥ १९ ॥ देवताओंकी दुन्दुभि बजने लगी, जयजय ध्वनि होने लगी, जहाँ तहाँ सब जगह मंगल होने लगे ॥ २० ॥ सिद्ध, विद्याधर, गंधर्व, किन्नर, चारण, देवताओंमें सुन्दर गवैया गाने लगे, स्तुति करने लगे ॥ २१ ॥ आकाशमें गन्धर्व विद्याधर, सिद्ध, किन्नर और चारण प्रसन्न होकर नाचने लगे और अपनी-अपनी नायिकाओं सहित देवता पारिजात, मन्दार और मालतीके पुष्पोंकी वृष्टि करने लगे ॥ २२ ॥ और गरजते मेघ मेह वर्षाने लगे, ऐसे समयमें भाद्रपद मासका कृष्ण पक्ष, बुधवार, रोहिणी नक्षत्र, हर्षण योग, अष्टमी तिथि और वृषलग्न, आधी रात, जिस समय चन्द्रमाका उदय भी हो गया है ॥ २३ ॥ और लोक अन्धकारसे आच्छादित था, तब वसुदेवके मंदिरमें देवकीके गर्भसे साक्षात् हरि भगवान्‌का प्रादुर्भाव हुआ, जैसे अरणीमें अग्नि प्रकट होती है ॥ २४ ॥ जगमगाते स्वच्छ विचित्र हारको धारण करे शोभायमान

कौस्तुभ मणियोंके हारको पहने, चन्द्र और सूर्यके मण्डलके समान उज्ज्वल नूपुर और बाजूबंद धारण किये, और प्रातः कालके सूर्यके समान चमकीले किरीट कुण्डल धारण किये ॥ २५ ॥ चंचल अग्निके समान प्रदीप्तकंकण, बिजलीके समान प्रकाशित कौंधनी धारण किये भ्रमरोंकी गुंजारयुक्त कमलोंकी मालाको धारण किये अग्नितप्त स्वर्णतुल्य दिव्य पीतांबरको धारण किये ॥२६॥ उस पीतांबरसे चमकती बिजली सहित सजल श्याम घटाके समान काली सटकाली घूंघरवाली, अलकावलिसे आवृत और अंधकार नाशक किरण-युक्त जिनका मुख सुन्दर, शुभ देनेवाले कमलके समान नेत्र॥२७॥और की हुई पत्ररचनासे शृंगार किये, निरन्तर सौ करोड़ कामदेवको मोहित करनेवाली कलध्वनि बांसुरीके बजानेमें तत्पर परिपूर्णोंमें परिपूर्ण परोंसे पर ॥ २८ ॥ उस स्वरूप को यदूत्तम श्रीवसुदेवजीने देखकर हरिके जन्मके उत्सवसे प्रसन्न नेत्र वाले मनसे ब्राह्मणोंको तत्काल प्रसन्न होकर

चलदद्भुतवह्निकंकणंतडिदूर्जितगुणमेखलार्चितम् ॥ मधुभृद्ध्वनिपद्ममालिनंनवजांबूनददिव्यवाससम् ॥२६॥ सतडिद्घनदिव्यसौभगंचलनीलालकवृन्दभृन्मुखम् ॥ चलदंशुतमोहरंपरंशुभसुन्दरमंबुजेक्षणम् ॥२७॥ कृतपत्रविचित्रमंडनंसततंकोटिमनोजमोहनम् ॥ परिपूर्णतमंपरात्परंकलवेणुध्वनिवाद्यतत्परम् ॥ २८ ॥ तमवेक्ष्यसुतंयदूत्तमोहरिजन्मोत्सवफुल्ललोचनः ॥ अथविप्रजनेषुआशुवैनियुतंसन्मनसागवांददौ ॥ २९ ॥ हरिमानकदुंदुभिःस्तवैस्तमनन्तंप्रणिपत्यविस्मितः ॥ अकरोदुदितप्रभूदयोगतभीः सूतिगृहेकृतांजलिः ॥ ३० ॥ श्रीवसुदेवउवाच ॥ एकोयः प्रकृतिगुणैरनेकधासिहर्तात्वंजनकउतास्यपालकस्त्वम् ॥ निर्लिप्तःस्फटिकइवाद्यदेहवर्णैस्तस्मैश्रीभुवनपतेनमामितुभ्यम् ॥३१॥ एधःसुत्वनलइवात्रवर्तमानोयोन्तरस्थोबहिरपिचाम्बरंयथाहि ॥ आधारोधरणिरिवास्यसर्वसाक्षीतस्मैतेनमइवसर्वगोनभस्वान् ॥३२॥ भूभारोद्धटहरणार्थमेव जातोगोदेवद्विजनिजवत्सपालकोसि ॥ गेहेमेभुविपुरुपोत्तमोत्तमस्त्वंकंसान्मांभुवनपतेप्रपाहिपापात् ॥ ३३ ॥ श्रीनारदउवाच परिपूर्णतमं साक्षाच्छ्रीकृष्णंश्यामसुन्दरम् ॥ ज्ञात्वानत्वाथतंप्राहदेवकीसर्वदेवता ॥ ३४ ॥

दश हजार गौएं दीं ॥२९॥ तब वसुदेवजीने उन अनन्त भगवान्‌को देखकर आश्चर्यमें आकर प्रभुको प्रणाम करके हाथ जोड़ निर्भय होकर उस प्रसूतिका घरमें अनेक स्तोत्रोंसे स्तुति की ॥ ३० ॥ वसुदेवजी बोले कि, वास्तवमें जो तुम एक हो, वह तुम मायाके गुणोंसे अनेक प्रकारके हो, तुमहीं इस जगत्‌की उत्पत्ति, पालन, संहार करते हो, किन्तु स्फटिक मणि कीसी देहके वर्णसे निर्लिप्त हो, त्रिभुवनके पति आपको मेरा नमस्कार है ॥ ३१ ॥ इस विश्वमें ईंधनमें अग्निकी तरह रहने वाले सबके बाहर भीतर आकाशकी तरह वर्तमान्, पृथ्वीकी तरह सबके आधार, पवनकी तरह सर्वत्र विद्यमान सबके साक्षी आपके लिये मेरा नमस्कार है ॥ ३२ ॥ पृथ्वीके भाररूप जो उद्धट हैं, उनको दूर करनेके लियेही आपने जन्म लिया है, गौब्राह्मण, देवता और अपने भक्तवत्सलोंके पालक हो, पुरुषोत्तमोत्तम आप मेरे घर आये हो सो हे भुवनपते ! तुम पापी कंससे मेरी रक्षा करो ॥३३॥ नारदजी कहते हैं कि, परिपूर्णतम साक्षात् श्यामसुन्दर श्रीकृष्णको सर्व देवता जानकर देवकी प्रणाम करके बोली ॥३४॥

हे कृष्ण ! अखिल ब्रह्माण्डके पति ! हे परेश ! हे गोलोकधामवासिन् ! आदि देव ! हे पूर्णेश ! पूर्ण ! परिपूर्णतम ! हे प्रभो हे परमेश्वर ! पाप कंससे मेरी रक्षा करो ॥ ३५ ॥ उस वचनको सुनकर स्वयम् परिपूर्णतम भगवान्, दुखोंको हरनेवाले मंद मुस्कराकर बोले ॥३६॥ यह तो पूर्व जन्ममें पतिव्रता पृश्नि थी और हे वसुदेव ! तुम सुतपा प्रजापति थे, पुत्रकी तुम्हारे इच्छा थी, तब तुमने ब्रह्माजीकी अज्ञासे अन्न जलविना बड़ा भारी तप किया ॥ ३७ ॥ जब मन्वन्तर व्यतीत हो गये, पुत्रके लिये तप करते, तब मैं प्रसन्न होकर बोला कि वर मांगो ॥ ३८ ॥ यह सुनकर तुमने यही वर मांगा कि हमारे तुम जैसाही बेटा हो, मैं तथास्तु कहकर चला गया । तब तुम दोनों अपने तपके प्रतापसे प्रजापति हुये ॥ ३९ ॥ मैंने अपने समान जगत्में जब कोई नहीं देखा, तो मैं स्वयम्ही तुम्हारे जन्म लिया, पहले जन्ममें पृश्निगर्भ मेरा नाम विख्यात हुआ, और दूसरे समय

॥श्रीदेवक्युवाच॥हेकृष्णहेविगणितांडपतेपरेशगोलोकधामधिषणध्वजआदिदेव॥पूर्णेशपूर्णपरिपूणतमप्रभोमांत्वंपाहिपाहिपरमेश्वरकंसपापात् ॥३५॥ श्रीनारदउवाच ॥ तच्छ्रुत्वाभगवान्कृष्णःपरिपूर्णतमः स्वयम् ॥ सस्मितोदेवकींशौरिंप्राहसवृजिनार्दनः ॥ ३६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ इयंचपृश्निःपतिदेवताचत्वंपूर्वसर्गेसुतपाः प्रजार्थी॥ब्रह्माज्ञयादिव्यतपोयुवाभ्यांकृतंपरंनिर्जलभोजनाभ्याम्॥३७॥कालेथमन्वन्तरकेव्यतीतेतपः परन्तत्तपसः प्रजार्थी ॥ तदाप्रसन्नोयुवयोरभूवंवरंपरंब्रूतमयातदोक्तम् ॥३८॥ श्रुत्वायुवाभ्यांकथितंतदैवभूयात्सुतस्त्वत्सदृशः किलावयोः ॥ तथास्तुचोक्त्वाथगतेमयिप्रजापतीह्यभूतंस्वकृतेनदम्पती॥३९॥नमत्समःकोपिसुतोजगत्यलंविचार्यतद्वामभवंपरेश्वरः॥श्रीपृश्निगर्भोभुविविश्रुतः पुनर्द्वितीयकालेहमुपेन्द्रवामनः ॥४०॥तथाभवंह्यद्यतनेपरात्परोनीत्वाथमांप्रापयनन्दमन्दिरम्॥अतोनभूयाद्भयमौग्रसेनतः सुतांसमादायसुखी भविष्यथः॥४१॥श्रीनारदउवाच ॥ तूष्णींभूत्वाहरिस्तत्रतद्द्वयःपश्यतोस्तयोः ॥ दृश्यंह्यप्रकटंकृत्वाबालोभूत्कौयथानटः॥४२॥ प्रेंखेधृत्वाथतं शौरिर्यावद्गंतुंसमुद्यतः ॥ तावद्व्रजेनन्दपत्न्यांयोगमायाजनिस्वतः ॥४३॥ तयाशयानेश्वस्मिन्नक्षकेषुस्वपत्सुच ॥ द्वारउद्घाटिताःसर्वाःप्रस्फुट-च्छृंखलार्गलाः ॥४४॥ निर्गतेवसुदेवेचमूर्ध्निश्रीकृष्णशोभिते ॥ सूर्योदयेयथासद्यस्तमोनाशोभवत्स्वतः॥४५॥ घनेषुव्योम्निवर्षत्सुसहस्रवदनः स्वराट् ॥ निवारयन्दीर्घफणैरासारंशौरिमन्वगात् ॥ ४६ ॥

वामन नाम हुआ ॥ ४० ॥ वैसेही परात्पर मैं अब हुआ हूं, अब मुझे नन्दजीके मंदिरमें पहुँचाओ । और नन्दजीकी कन्याको यहां ले आओ, सुखी होगे, फिर कंससे तुमको भय नहीं होगा ॥४१॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे कहकर हरि मौन हो गये, और वसुदेवके देखते-देखते दृश्य रूपको अदृश्य कर नरकी तरह तत्काल उत्पन्न हुये बालकके समान हो गये ॥४२॥ हिंडोलामें बैठाकर जब वसुदेव चलने लगे, उसी समय व्रजमें यशोदाजीके कन्या हुई ॥४३॥ जब वसुदेव लेकर चले, तो योगमायाके प्रतापसे द्वारपाल सो गये, और सब विश्व सो गया, दरवाजोंके सांकल, ताले, अर्गला सब खुल गये ॥४४॥ जब वसुदेवजी शिरपर श्रीकृष्णको धरकर चले तभी सब अंधकारका ऐसे नाश हो गया, जैसे सूर्योदयसे हो जाता है ॥ ४५ ॥ जब आकाशसे मेघ वर्षने लगे, तब शेषजी वसुदेवके पीछे-पीछे श्रीकृष्णजी पर छाया करते चले ॥ ४६ ॥

यमुनामें बड़े-बड़े भँवर पड़े हैं, सिंह सर्पादिकोंको बहा ले जानेवाली ऐसी भयंकर यमुना थी, परन्तु इस कालिंदीने वसुदेवजीको मार्ग दे दिया ॥४७॥ जब नन्दजीके व्रजमें गये तब सब सोते हुये मिले, बालकको यशोदाकी सेज पर सुला दिया, और कन्या देखी ॥४८॥ उस कन्याको लेकर फिर वसुदेव यमुनाको उतर कर पूर्ववत् अपने घरमें आ बैठे ॥ ४९ ॥ तब गोपी यशोदा पुत्र हुआ कि पुत्री हुई, कुछ हुआ है, यह जानकर हार गई थी, सो आनन्द निद्रामें अपने पलंग पर सो गई ॥ ५० ॥ यहाँ जब कन्या रोई, तब बाल ध्वनि सुनकर द्वारपाल उठे, राज मंदिरमें जाकर कंससे बोले कि महाराज ! देवकीके बालक हुआ है ॥५१॥ तब कंस बालकका जन्म सुनकर भयसे कायर होकर जल्दीही प्रसूतिका घरको चला आया, तब देवकी बहिन दीनसी रोती कंस भैयासे बोली ॥ ५२ ॥ कि हे भ्रातः ! बेटे तो मेरे सब मर गये, एक बेटी तो मुझे दो, यह बेटी है, तू दीन वत्सल है, यह मारनेके योग्य नहीं है ॥५३॥ मैं तेरी छोटी बहिन हूँ, बेटे मेरे मर गये हैं, बन्दी घरमें पड़ी हूँ, हे कल्याण ! कल्याण करनेवाली कन्याको मुझे दो ॥ ५४ ॥

ऊर्म्यावर्ताकुलावेगैःसिंहसर्पादिवाहिनी ॥ सद्योमार्गददौतस्मैकालिन्दीसरितांवरा ॥४७॥ नन्दव्रजंसमेत्यासौप्रसुप्तंसर्वतःपरम् ॥ शिशुंयशोदाशयनेनिधायाशुददर्शताम् ॥ ४८ ॥ तत्सुतांसमुपादायपुनर्गेहाञ्जगामसः ॥ तीर्त्वाश्रीयमुनांशौरिःस्वागारेपूर्ववत्स्थितः ॥४९॥ सुतंसुतांवाजातंचज्ञात्वागोपीशोमती ॥ परिश्रांतास्वशयनेसुष्वापानन्दनिद्रया ॥५०॥ अथबालध्वनिंश्रुत्वारक्षकःसमुपस्थिताः ॥ ऊचुः कंसायवीरायगत्वातद्राजमन्दिरम् ॥ ५१ ॥ सूतीगृहंत्वरंप्रागात्कंसोवैभयकातरः ॥ स्वसाथभ्रातरंप्राहरुदतीदीनवत्सती ॥ ५२ ॥ श्रीदेवक्युवाच ॥ सुतामेकांदेहिमेत्वंपुत्रेषुप्रमृतेषुच ॥ स्त्रियंहंतुंतनयोऽसिभ्रातस्त्वंदीनवत्सलः ॥ ५३ ॥ तेऽनुजाहंहतसुताकारागारेनिपातिता ॥ दातुमर्हसिकल्याणकल्याणींतनुजांचमे ॥५४॥ श्रीनारदउवाच ॥ अश्रुमुख्यामोहितयासमाच्छाद्यात्मजांबहु ॥ प्रार्थितोऽकाद्विनिर्भर्त्स्यतांसआचिच्छिदेखलः ॥ ५५ ॥ कुसंगनिरतःपापःखलोयदुकुलाधमः ॥ स्वसुःसुतांशिलापृष्ठेगृहीत्वांघ्र्योर्निपातयत् ॥५६॥ कंसहस्तात्समुत्पत्यसानंशाचांबरेगता ॥ शतपत्रेरथेदिव्येसहस्रहयसेविते ॥५७॥ चामरांदोलितेशुभ्रेस्थितादृश्यतदिव्यदृक् ॥ साप्युधाष्टभुजामायापार्षदैःपरिसेविता ॥ शतसूर्यप्रतीकाशाकंसमाहघनस्वना ॥ ५८ ॥ श्रीयोगमायोवाच ॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥ जातःक्कवातुतेहंतावृथादीनांदुनोषिवै ॥ ५९ ॥

नारदजी कहते हैं, आँसू आ रहे हैं, मनमें व्याप्त है, बेटीको छातीसे चिपटा रही है, याचना कर रही है, ऐसी बहिनके हाथमेंसे दुष्ट कंसने ललकार कन्याको छीन लिया ॥५५॥ कुसंगनिरत, पापी, दुष्ट, यदुकुलमें अधम, कंस बहिनकी बेटीके दोनों पांव पकड़कर शिलापर मारने लगा ॥५६॥ वैसेही वह देवी अनंशा कंसके हाथसे छूटकर आकाशमें उड़ गई, हजार घोड़ोंके कमलके रथमें बैठी दीखने लगी ॥५७॥ दिव्यरूपा, चमर जिस पर डुल रहे हैं, अष्ट भुजा देवी, पार्षदोंसे सेवित, आठ जिसकी भुजा, सौ सूर्यका सा जिसका तेज है, वह मेघकीसी गर्जनासे कंससे बोली ॥५८॥ परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण भगवान् तुम्हें मारनेवाले कहीं जन्म ले चुके हैं; तुम वृथा इस दीनको क्यों दुख देते हो ॥५९॥

नारदजी कहते हैं, ऐसे कंसस कह कर वह देवी विंध्याचलको चली गई, उस योग माया भगवतीके बहुतसे नाम हुये ॥ ६० ॥ मायाके वचन सुनकर कंस बड़ा विस्मित हुआ और देवकी, वसुदेवको बन्दी घरसे छोड़ दिया ॥६१॥ कंस बोला-मैं पापी हूँ, पापकर्मा, यादवोंम अधम हूँ । तुम्हारे पुत्र मैंने मारे हैं, मेरे अपराधको क्षमा करो ॥ ६२ ॥ हे बहिन ! हे जीजा ! सुनो सब कालका किया है, कालके चलाये सब हैं, ऐसेही मैं भी कालवश हूँ, वायु जैसे बादलोंको चलायमान कर देती है ॥६३॥ मैं तो देवताओंके वचनके विश्वासमें रहा, सो देवताओंकी बात भी झूठी होती हैं, मैं नहीं जानता हूँ, मेरा शत्रु कहां जन्म ले चुका, जो मायादेवीने कहा है ॥६४॥ नारदजी कहते हैं, कंस ऐसे कहकर देवकी और वसुदेवके चरणोंमें गिर पड़ा, आँसू मुखपर आ रहे हैं ऐसी परम सेवा करने लगा, उन दोनोंको परम सुहृदता दिखाने लगा ॥६५॥ अहो ! श्रीकृष्ण चन्द्र परिपूर्णतम प्रभुके

॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वातंततोदेवीगताविन्ध्याचलेगिरौ ॥ योगमायाभगवतीबहुनामाबभूवह ॥ ६० ॥ अथकंसोविस्मितोभूछुत्वामायावचःपरम् ॥ देवकींवसुदेवंचमोचयामासबन्धनात् ॥ ६१ ॥ कंसउवाच ॥ पापोऽहंपापकर्माहंखलोयदुकुलाधमः ॥ युष्मत्पुत्रप्रहन्तारं क्षमध्वंमेकृतंभुवि ॥६२॥ हेस्वसःशृणुमेशौरेमन्येकालकृतंत्विदम् ॥ येनानिश्चाल्यमानोवावायुनेवघनावलिः ॥६३॥ विश्वस्तोऽहंदेववाक्येदेवास्तेपिमृषागिरः ॥ नजानामिक्कमेशत्रुर्जातःकौकथितोऽनया ॥ ६४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंकंसस्तदंघ्र्योश्चपतितोऽश्रुमुखोरुदन् ॥ चकार सेवापरमांसौहृदंदर्शयंस्तयोः ॥६५॥ अहोश्रीकृष्णःचंद्रस्यपरिपूर्णतमप्रभोः ॥ दानदक्षैःकटाक्षैश्चकिन्नस्याद्भूमिमंडले ॥६६॥ प्रातःकालेतदा कंसःप्रलंबादीन्महासुरान् ॥ समाहूयखलस्तेभ्योऽवददुक्तंचमायया ॥६७॥ कंस उवाच ॥ जातोमेह्यंतकृद्भूमौकथितोयोगमायया ॥ अनिर्दशान्निर्दशांश्चशिशून्यूयंहनिष्यथ ॥ ६८ ॥ दैत्याऊचुः ॥ सज्जस्यधनुषोयुद्धेभवताद्वंद्वयोधिना ॥ टंकारेणोद्गतादेवामान्यसेतैःकथंभयम् ॥६९॥ गोविप्रसाधुश्रुतयोदेवाधर्मादयःपरे॥ विष्णोश्चतनवोह्येषांनाशेदैत्यबलंस्मृतम्॥७०॥ जातोयदिमहाविष्णुस्तेशत्रुर्योमहीतले॥ अयंचैतद्वधोपायोगवादीनांविहिंसनम्॥७१॥ श्रीनारदउवाच॥ इत्थमहोद्भटादुष्टादैतेयाःकंसनोदिताः॥ दुद्रुवुःखंगवादिभ्योजघ्नुर्जातांश्चबालकान्॥७२॥

दान दक्ष चतुर कटाक्षोंसे भूमिमें क्या नहीं होता है ॥६६॥ तब प्रातःकालही प्रलंबादिक असुरोंको इकटे करके योग मायाका वचन सुनाया ॥६७॥ मेरा मारनेवाला तो भूमिपर कहीं जन्म ले चुका, जो कि योग माया कह गई है, दस दिनके भीतर या दस दिनके आगे पीछे हुये बालकोंको तुम मार डालो ॥६८॥ तब दैत्य बोले, जब तुम द्वन्द्व युद्धमें धनुषको टंकारते हो, तब तुम्हारी धनुषकी टंकारसे ही देवता उखड़ जाते हैं, उनसे भय क्यों करते हो ॥ ६९ ॥ गौ, ब्राह्मण, साधु, श्रुति, देवता, धर्म, ये विष्णुके तन हैं, इनके नाश करनेको दैत्योंका ही बल है ॥ ७० ॥ जो विष्णु तुम्हारे शत्रु हैं, वह यदि भूमिमें जन्म ले चुका है, तो उसको मारनेका यही उपाय है, कि गौ, ब्राह्मणादिकोंका वध करना चाहिये ॥ ७१ ॥ ऐसे उद्भट दुष्ट दैत्य कंससे प्रेरित किये हुये आकाशमें उड़ने लगे, बालकोंको और युवाओंको मारने लगे ॥ ७२ ॥

समुद्र, पर्वत पृथ्वीतलके अन्दर कामरूपी राक्षस घर-घर- में ऐसे फिरने लगे, जैसे चूहे फिरते हैं ॥७३॥ उत्पथ मार्गमें चलनेवाले उद्भट और फिर भी कंसके प्रेरे हुये, एक तो बन्दर फिर भंग पी जाय, फिर विच्छू काट खाय, तो उसकी चंचलताका क्या ठिकाना है, इसी तरह वे भी भूतग्रस्तके समान हो गये ॥७४॥ हे वैदेह ! हे मैथिल ! हे नरेन्द्र ! हे उपेन्द्र भक्त ! हे धर्मिष्ठ मुख्य ! हे राजन् ! हे सुतप ! हे जनक ! हे प्रतापिन् ! हे बहुलाश्व ! पृथ्वीमें संतोंका जो अपराध है, वह धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, चारों पदार्थोंका नाश करता है ॥७५॥ इति ग० सं० गोलोकखंडे भाषाटीकायामेकादशोऽध्यायः ॥११॥ नारदजी कहते हैं, कि इसके बाद पुत्रके जन्मको नन्दजी सुनकर बड़े प्रातःकालही ब्राह्मणोंको बुलाकर मंगल कराने लगे ॥१॥ श्रीकृष्णके जन्मसे जिनका मन बड़ा हो गया है, ऐस नन्दराजने विधिसे जातकर्म कराकर ब्राह्मणोंको दक्षिणा सहित एक लाख गौएं दीं ॥२॥

आसमुद्राद्भूमितलेविशंतश्चगृहेगृहे ॥ कामरूपधरादैत्याश्चेरुःसर्पाखवोयथा॥७३॥उत्पथाउद्भटादैत्यास्तत्रापिकंसनोदिताः॥कपिःसुराप्यलिहतोभूतग्रस्तइवाभवन् ॥७४॥ वैदेहमैथिलनरेन्द्रउपेंद्रभक्तधर्मिष्ठमुख्यसुतपोजनकप्रतापिन्॥एतत्सतांचभुविहेलनमंगराजन्सर्वंछिनत्तिबहुलाश्वचतुष्पदार्थम् ॥ ७५ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांगोलोकखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीकृष्णजन्मवर्णनंनामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथपुत्रोत्सवंजातंश्रुत्वानन्दउपःक्षणे ॥ ब्राह्मणांश्चसमाहूयकारयामासमंगलम् ॥ १ ॥ सविधिंजातकंकृत्वानन्दराजोमहामनाः ॥ विप्रेभ्योदक्षिणाभिश्चमुदालक्षंगवांददौ ॥ २ ॥ क्रोशमात्रंरत्नसानून्सुवर्णशिखराग्गिरीन् ॥ सरसान्सप्तधान्यानिददौविप्रेभ्यआनतः ॥ ३ ॥ मृदंगवीणाशंखाद्यानेदुर्दुदुभयोमुहुः ॥ गायकाश्चजगुर्द्वारेननृतुर्वारयोषितः ॥ ४ ॥ पताकैर्हैमकलशैर्वितानैस्तोरणैः शुभैः ॥ अनेकवर्णैश्चित्रैश्चबभौश्रीनन्दमन्दिरम् ॥ ५ ॥ रथ्यावीथ्यश्चदेहल्योभित्तिप्रांगणवेदिकाः ॥ तोलिकामंडपसमारेजुर्गन्धिजलांबरैः ॥६॥ गावःसुवर्णशृंग्यश्चहेममालालसद्गलाः ॥ घंटामंजीरझंकारारक्तकंबलमंडिताः ॥७॥ पीतपुच्छाः सवत्साश्चतरुणीकरचिह्निताः॥हरिद्राकुंकुमायुक्ताश्चित्रधातुविचित्रिताः ॥ ८ ॥ बर्हपुष्पैर्गन्धजलैर्वृषाधर्मधुरंधराः ॥ इतस्ततोविरेजुःश्रीनन्दद्वारिमनोहराः ॥ ९ ॥

कोश भरके तिलके सात रत्नोंके पर्वत, शिखर जरीके वस्त्रोंसे ढंके हुये, और घी तेल सहित दिये, और सदा धान्यको भी ब्राह्मणोंको नम्र होकर दान किये ॥ ३ ॥ मृदंग, वीणा, शंख, दुंदुभि, आदि बाजे बजने लगे, गवैया गाने लगे, वरांगनाएं दरवाजे पर नाचने लगीं ॥ ४ ॥ अनेक रंगके ध्वजा, पताका सुवर्णके कलश, चंदोआ, और बंदनवारसे नन्द महलकी बड़ी शोभा हुई ॥५॥ और गली कूंचोंमें तिराहे चौराहे, देहरी, आंगन, चौक, चबूतरा, छत्री, मंडप ये सब सुगंधित जलोंसे छिड़क दिये, बिछौना बिछा दिये ॥ ६ ॥ सुनहरे सींग, गलेमें सोनेकी माला और घंटाओंके सुन्दर शब्द पीठपर बनाते, पूंछमें मोतियोंके गुच्छ जिनके हैं, ऐसी गौएं सजाईं ॥ ७ ॥ पीली पूंछवाली बछड़ों सहित, तरुण अवस्थावाली, हलदी, केशरसे लिप्त और गेरू, खड़िया, मन शिलादि धातुओंसे चित्रित की हुईं ॥ ८ ॥ मोर पंखकी झूमरी और पुष्पोंसे सजी हुई गौ,

और सुगंधिके जलसे नहाये, मोरपंखके मुकुट बांधे सजे हुये वृष, ये इधर-उधर नन्दके दरवाजेपर सुशोभित हुये हैं ॥९॥ बछिया, बछड़े सोनेकी माला, मोतियोंके हार पांवोंमें झांझन पहने श्वेत रंगवाले इधर-उधर उछलते फिरते हैं ॥१०॥ नंदके घरमें पुत्रोत्सव सुनकर वृषभानु वर कीर्ति रानीको साथ लेकर हाथीपर चढ़े भेंट लेकर आये ॥ ११ ॥ नौ नंद आये, नौ उपनंद आये, छः वृषभानु, अनेक तरहकी भेंट ले लेकर आये ॥१२॥ केशरिया रंगकी पागोंके ऊपर माला पहने और पीले रंगके जामे पहने मोरपंखोंसे जिनके केश बंधे हुये हैं, वनमाला पहने आये हैं ॥ १३ ॥ और केशरका तिलक लगाये, मोरपंखका परिकर (फेंट) बांधे, बेंत लिये वंशी बजाने अनेक गोपोंके झुंड ॥ १४ ॥ नाचने गाने, वस्त्रोंको फिराने, श्रृंगारकर मूंछोंको सम्हालने, अनेकों भेंट लेकर आये ॥ १५ ॥ मक्खन, दही, दूध, घृत, इनकी भेंट लेकर यष्टि (बहेंगी) लेकर बूढ़े गोप आज्ञा

गोवत्साहेममालाढ्यामुक्ताहारविराजताः ॥ इतस्ततोविलंघन्तोमंजीरचरणाःसिताः ॥१०॥ श्रुत्वापुत्रोत्सवंतस्यवृषभानुवरस्तथा ॥ कलाव-त्यागजारूढोनन्दमंदिरमाययौ ॥ ११ ॥ नन्दानवोपनन्दाश्चतथाषट्वृषभानवः ॥ नानोपायनसंयुक्ताःसर्वेतेऽपिसमाययुः ॥१२॥ उष्णीषोप-रिमालाढ्याःपीतकंचुकशोभिताः ॥बर्हगुंजाबद्धकेशावनमालाविभूषणाः ॥१३॥ वंशीधरावेत्रहस्ताःसुपत्रतिलकार्चिताः ॥ बद्धबर्हपरिकरगो-पास्तेऽपिसमाययुः॥१४॥नृत्यन्तःपरिगायंतोधुन्वन्तोवसनानिच ॥ नानोपायनसंयुक्ताःश्मश्रुलाःशिशवःपरे॥१५॥हैय्यंगवीनदुग्धानांदध्या-ज्यानांबलीन्बहून् ॥ नीत्वावृद्धायष्टिहस्तानन्दमंदिरमाययुः॥ १६ ॥ पुत्रोत्सवंव्रजेशस्यकथयन्तःपरस्परम् ॥ प्रेमविह्वलभावैःस्वैरानन्दाश्रु-समाकुलाः ॥ १७ ॥ जातेपुत्रोत्सवेनन्दःस्वानन्दाश्रुकुलेक्षणः ॥ पूजयामासतान्सर्वांस्तिलकाद्यैर्विधानतः ॥ १८ ॥ श्रीगोपाऊचुः ॥ हेव्रजे-श्वरहेनन्दजातोपुत्रोत्सवस्तथा ॥ अनपत्यस्यैच्छतोलमतःकिंमंगलंपरम् ॥१९॥ दैवेनदर्शितंचेदंदिनंवोबहुभिर्दिनै ॥ कृतकृत्याश्चभूयास्मदृष्ट्वा श्रीनन्दनन्दनम् ॥ २० ॥ हेमोहनेतिदूरात्तमंकंनीत्वागदिष्यसि ॥ यदालालनभावेनभवितानोतदासुखम् ॥ २१ ॥ श्रीनन्दउवाच ॥ भव-तामाशिषःपुण्याज्जातंसौख्यमिदंशुभम् ॥ आज्ञावर्तीह्यहंगोपगोपीनांव्रजवासिनाम् ॥ २२ ॥

लिये, नंदके महलको आये ॥ १६ ॥ व्रजेशके पुत्रोत्सवको परस्पर कहते, प्रेमके भावसे विह्वल हुये, आनंदके आंसुओंसे युक्त आये हैं ॥ १७ ॥ पुत्रोत्सवके होनेसे आनन्दके आंसुओंसे जिनके नेत्र आकुल हैं, ऐसे नन्दराजने गंध पुष्पादिसे उन सबका विधिपूर्वक पूजन किया ॥ १८ ॥ हे व्रजेश ! हे नन्द ! देखो तुम्हारे पुत्र नहीं था सो तुम्हारे पुत्र हुआ है, इससे अधिक और क्या मंगल होगा ॥ १९ ॥ आज ईश्वरने बहुत दिनों पर शुभ दिन दिखाया है, हम तो आज कृतकृत्य हैं, हे नन्द ! तुम्हारे नन्दन हुआ, उसके दर्शन पाये ॥ २० ॥ हे व्रजेश ! जब तुम पुत्रको गोदीमें लेकर प्यार करोगे, तब हमको सुख होगा ॥ २१ ॥ तब नन्दजी

बोले तुम्हारे आशीर्वाद सब सत्य हैं, इन्हींसे यह शुभ सुख मुझे प्राप्त हुआ है। और मैं तो तुम व्रजवासी गोपियोंका आज्ञावर्ती हूँ॥२२॥ नारदजी कहते हैं कि, हे राजन्! नंदजीके पुत्र होनेका अद्भुत उत्सव सुनकर आनंदसे जिनके मन और अंगभरे हैं, ऐसी गोपियाँ घरके सब कामकाजको छोड़कर बलि (भेंट) लेकर जल्दी ही आई॥२३॥ आनंद मंदिरके पुर अपने घरसे जाती हुई, इधर-उधर जल्दी चलनेसे जिनके वस्त्र भूषण और केश शिथिल हो गये हैं, और हे नरेन्द्र! मार्गकी भूमिमें मोतियोंको वर्षाती॥२४॥ झनक-झनक बजते नूपुर, नवीन बाजूबंद व सुनहरी वस्त्रोंको पहने, मंजीर, हार मणियोंके कुण्डल, कोंधनी, कंठसूत्र, भुजाओंमें कंकण, बेंदी बूंदोंसे पूर्णचन्द्र मण्डलके समान जिनके मुख हैं, ऐसी वे गोपियाँ उस समय बड़ी शोभाको प्राप्त हुई हैं॥ २५॥ राई, नमक, हलदी, गेहूँका आटा, सरसों इनको लालके मुखपर उतार-उतार कर, उन सबने आशीर्वाद दिये, और

श्रीनारदउवाच॥श्रीनन्दराजसुतसंभवमद्भुतंचश्रुत्वाविसृज्यगृहकर्मतदैवगोप्यः॥तूर्णंययुःसबलयोव्रजराजगेहानुद्यत्प्रमोदपरिपूरितहृन्मनोंगाः॥२३॥आनन्दमंदिरपुरात्स्वगृहाद्व्रजंत्यःसर्वाइतस्ततउतत्वरमाव्रजन्त्यः॥यानश्लथद्वसनभूषणकेशबन्धारेजुर्नरेंद्र पथिभूपरिमुक्तमुक्ताः॥२४॥ झंकारनूपुरनवांगदहेमचीरमंजीरहारमणिकुंडलमेखलाभिः॥ श्रीकंठसूत्रभुजकंकणबिंदुकाभिःपूर्णेन्दुमंडलनवद्युतिभिर्विरेजुः॥२५॥ श्रीराजिकालवणरात्रिविशेषचूर्णैर्गोधूमसर्षपयवैःकरलालनैश्च॥उत्तार्यबालकमुखोपरिचाशिषस्ताःसर्वाददुर्नृपजगुर्जगदुर्यशोदाम्॥२६॥श्रीगोप्यऊचुः॥ साधुसाधुयशोदेतेदिष्ट्यादिष्ट्याव्रजेश्वरि॥ धन्याधन्यापराकुक्षिर्ययायंजनितःसुतः॥२७॥ इच्छायुक्तंकृतंतेवैदेवेनबहुकालतः॥रक्षबालंपद्मनेत्रंसुस्मितंश्यामसुन्दरम्॥२८॥ श्रीयशोदोवाच॥ भवदीयदयाशीर्भिर्जातंसौख्यंदयाचमे॥ भवतीनामपिपरंदिष्ट्याभूयादतःपरम्॥२९॥ हेरोहिणिमहाबुद्धेपूजनंतुव्रजौकसाम्॥ आगतानां सत्कुलानांयथेष्टंहीप्सितंकुरु॥३०॥ श्रीनारदउवाच॥ रोहिणीराजकन्यापितत्करौदानशीलिनौ॥ तत्रापिनोदितादानेददावतिमहामनाः॥३१॥गौरवर्णादिव्यवासारत्नाभरणभूषिता॥व्यचरद्रोहिणीसाक्षात्पूजयंतीव्रजौकसाम्॥३२॥

यशोदाको बोली॥२६॥ हे यशोदे! साधु साधु आज सोनेकी घड़ी है, आज बड़ा मंगल हुआ, हे व्रजेश्वरि! धन्य है, धन्य है, तेरी कुक्षि (कोंख) को जिस कोंखने ऐसा पुत्र जन्मा॥२७॥ दैवने बहुत दिनोंमें तुम्हारा मनोरथ पूर्ण किया, श्यामसुन्दर कमललोचन और सुन्दर मुसकान हैं, जिसकी ऐसे बालककी रक्षा कर॥२८॥ तब यशोदाजी कहती हैं, कि अरी बहनो! तुम्हारी दया, तुम्हारे आशीर्वाद, इन्हींसे मुझे यह सुख मिला है। तुमको भी भगवान् ऐसा सुख देवें॥ २९॥ हे रोहिणी! हे महाबुद्धे! व्रजवासियोंका पूजन करो और जो सत्कुलकी गोपियाँ आई हैं, उसका मनोरथ पूर्ण करो॥ ३०॥ नारदजी कहते हैं कि, रोहिणी तो राजकन्या है, इससे इसके हाथ तो दानी हैं, और दान करनेकी प्रेरणा भी की है, तब तो बड़े मनवाली अत्यन्त दान देने लगी॥३१॥ जिसका गौरवर्ण है, दिव्यवस्त्र पहने, रत्नोंके आभूषणोंसे शोभित व्रजवासियोंका सत्कार करती

रोहिणी महलमें स्वयं विचरने लगी ॥३२॥ परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण जब व्रज लोकमें आये तब नरल्लोकके तासे बजने लगे जिनकी बड़ी ध्वनि हुई ॥३३॥ दही-दूध-घी और नवीन मक्खन गोप गोपी हर्षित होकर आपसमें छिड़कते हैं, और ऊँचे स्वरमें गाते हैं ॥३४॥ जब गोकुलमें बाहर भीतर सब जगह दूध-दहीका कीचड़ हो गया तो उस कीचड़में बूढ़े-बूढ़े मोटे-मोटे गोप रपट पड़े तब औरोंने बड़ी हँसी की॥३५॥सूत पौराणिक और वंशके कहनेवाले अमल बुद्धिवाले बंदीजन कहलाते ह, जो समयानुसार बात कहते हैं, ये अनेक प्रकारसे स्तुति करने लगे ॥ ३६ ॥ उन सबको एक एकको पृथक् हजार हजार गौ नन्दजीने दी और कपड़ा, आभूषण, घोड़े, हाथी, मोहर ये भी दी ॥ ३७ ॥ सूत, मागध, बंदीजन सभीपर नन्दराज व्रजेश्वरने धनकी ऐसी वर्षा की, जैसे मेघ बरसते हैं ॥ ३८ ॥ ऋद्धि, सिद्धि, निधि, वृद्धि, मुक्ति, भुक्ति, घर घरमें गली गलीमें लुढकती है, जिनकी किसीको इच्छा नहीं है॥३९॥वहाँ सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार, कपिल, शुक, व्यास, और हंस, दत्त, पुलस्त्य, इनको और मुझको साथ लेकर ब्रह्माजी

परिपूर्णतमेसाक्षाच्छ्रीकृष्णेव्रजमागते ॥ नदत्सुनरतूर्येषुजयध्वनिरभून्महान् ॥३३॥ दधिक्षीरघृतैर्गोपागोप्योहैयंगवैर्नवैः ॥ सिषिचुर्हर्षितास्तत्र जगुरुच्चैःपरस्परम्॥३४॥बहिरन्तः पुरेजातेसर्वतोदधिकर्दमे ॥ वृद्धाश्चस्थूलदेहाश्चपेतुर्हास्यंकृतंपरैः ॥३५॥ सूताः पौराणिकाःप्रोक्तामागधा वंशशंसकाः ॥ बंदिनस्त्वमलप्रज्ञाःप्रस्तावसदृशोक्तयः ॥३६॥ तेभ्योनंदोमहाराजसहस्रंगाःपृथक्पृथक् ॥ वासोलंकाररत्नानिहयेभानखिलान्ददौ ॥३७॥ बंदिभ्योमागधेभ्यश्चसर्वेभ्योबहुलंधनम् ॥ ववर्षघनवन्नोपोनंदराजोव्रजेश्वरः ॥३८॥ निधिःसिद्धिश्चवृद्धिश्चभुक्तिर्मुक्तिर्गृहेगृहे॥वीथ्यांवीथ्यांलुठंतीवतदिच्छाकस्यचिन्नहि॥३९॥सनत्कुमारकपिलशुकव्यासादिभिः सह ॥ हंसदत्तपुलस्त्याद्यैर्मयाब्रह्माजगामह॥४०॥ हंसारूढोहेमवर्णोमुकुटीकुंडलीस्फुरन् ॥ चतुर्मुखोवेदकर्ताद्योतयन्मंडलंदिशाम् ॥४१॥ तथातमनुभूताढ्योवृषारूढोमहेश्वरः॥रथारूढोरविःसाक्षाद्गजारूढः पुरंदरः ॥४२॥ वायुश्चखंजनारूढोयमोमहिषवाहनः ॥ धनदः पुष्पकारूढोमृगारूढः क्षपेश्वरः॥४३॥ अजारूढोवीतहोत्रोवरुणोमकरस्थितः॥ मयूरस्थःकार्तिकेयोभारतीहंसवाहिनी ॥ ४४ ॥ लक्ष्मीचगरुडारूढादुर्गाख्यासिंहवाहिनी ॥ गोरूपधारिणीपृथ्वीविमानस्थासमाययौ ॥४५॥ दोलारूढादिव्यवर्णामुख्याःषोडशमातृकाः ॥ षष्ठीचशिबिकारूढाखड्गारियष्टिधारिणी ॥ ४६ ॥

आये ॥४०॥ सोने जैसा वर्ण, जिनके चार मुख हैं, मुकुट, कुंडल पहने, हंसपर बैठे वेदके कर्ता ब्रह्मा दशों दिशाओंमें प्रकाश करते आये ॥४१॥ उनके पीछे भूतोंको साथ लिये महादेवजी नन्दीश्वरपर चढ़कर आये, रथमें बैठकर सूर्य आये और हाथीपर बैठकर इन्द्र आया ॥ ४२ ॥ खंजनपर चढ़कर पवन आये, भैंसेपर चढ़कर धर्मराज आये, पुष्पकमें बैठकर कुबेर आये, मृगपर चन्द्रमा आया ॥ ४३ ॥ बकरेपर चढ़कर अग्नि, मगरपर चढ़कर वरुण आये, मोरपर चढ़कर स्वामिकार्तिक, हंसपर चढ़कर सरस्वती आई ॥४४॥ गरुणपर चढ़कर लक्ष्मी आई, सिंहपर चढ़ी दुर्गा, गौके रूपसे विमानमें बैठकर पृथ्वी आई ॥४५॥ पालकीमें बैठकर दिव्यरूपा षोडश मातृका आई, खड्ग, चक्र और यष्टिकाको धरे पालकीमें चढ़ी षष्ठी आई ॥ ४६ ॥

बंदर पर चढ़कर मंगल, भास पर चढ़कर बुध, काले मृग पर बैठे बृहस्पति रोझपर बैठे शुक्र ॥४७॥ मगर पर बैठे शनिश्चर, ऊँट पर चढ़कर राहु, ऐसे नौओं ग्रह जिनका करोड़ बालकोंकासा तेज है, नन्दजीके महलमें आये ॥४८॥ जो नन्द राजका महल गोप गोपियोंके झुंडसे भर रहा था, उसमें ऐसा कोलाहल हो रहा था कि कानों कान जहाँ सुनाई नहीं देवे वहाँ क्षण भर ठहर कर सम्पूर्ण देवता चले गये ॥४९॥ परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्णके बाल रूपको देखकर नमस्कार करके सब स्तुति करने लगे ॥ ५० ॥ तब देवता ब्रह्मादिक श्रीकृष्णको देखकर ऋषियों सहित स्तुति करके प्रेममें विह्वल प्रणाम करके बड़े हर्षित हो, अपने-अपने स्थानको चले गये॥५१॥इति श्रीमद्गर्ग संहितायां गोलोक खण्डे भा०टी० द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ तब नारदजी कहने लगे कि वसुदेवकी कुशल पूछनेको कंसको कर देनेके लिये और पुत्रके होनेकी बधाई देनेको नन्दराज मथुराको चले गये ॥ १ ॥ तब कंसने बाल घातिनी दुष्टा पूतना भेजी कि पुरोंमें, गांवोंमें घर-घर शब्द करते विचरती ॥२॥ जब नन्दजीके गोकुलमें आई तब गोप गोपियोंके झुंड देखकर दिव्यरूप धारण करके

मंगलोवानरारूढोभासारूढोबुधःस्मृतः॥ गीष्पतिःकृष्णसारथ्यःशुक्रोगवयवाहनः॥४७॥ शनिश्चमकरारूढउष्ट्रस्थःसिंहिकासुतः॥ कोटिबालार्कसंकाशआययौनंदमंदिरम् ॥४८॥ कोलाहलसमायुक्तंगोपगोपीगणाकुलम् ॥ नंदमंदिरमभ्येत्यक्षणंस्थित्वाययुःसुराः ॥४९॥ परिपूर्णतमंसाक्षाच्छ्रीकृष्णंबालरूपिणम् ॥ नत्वाद्दष्ट्वातदादेवाश्चक्रुस्तस्यस्तुतिंपराम्॥५०॥वीक्ष्यकृष्णंतदादेवाब्रह्माद्याऋषिभिःसह॥स्वधामानिययुः सर्वेहर्षिताःप्रेमविह्वलाः॥५१॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांगोलोकखंडेनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीकृष्णदर्शनार्थंब्रह्माद्यागमनंनामद्वादशोऽध्यायः॥१२॥ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ शौर्यनामयपृच्छार्थंकरंदातुंनृपस्यच ॥ पुत्रोत्सवंकथयितुंनंदेश्रीमथुरांगते ॥१॥ कंसेनप्रेषितादुष्टापूतनाघातकारिणी ॥ पुरेषुग्रामघोषेषुचरंतीघर्घस्वना ॥ २ ॥ अथगोकुलमासाद्यगोपगोपीगणाकुलम् ॥ रूपंदधारसादिव्यंवपुःषोडशवार्षिकम् ॥३॥ नकेपिरुरुधुर्देवाःसुंदरींतांचगोपिकाः ॥ शचींवाणींरमांरंभांरतिंचक्षिपतीमिव॥४॥रोहिण्यांचयशोदायांधर्षितायांस्फुरत्कुचा॥ अंकमादायतंबालंलालयंती पुनःपुनः ॥५॥ ददौशिशोर्महाघोराकालकूटावृतस्तनम् ॥ प्राणैःसार्द्धंपपौदुग्धंकटुरोषावृतोहरिः ॥६॥ मुंचमुंचवदंतीत्थंधावंतीपीडितस्तना ॥ नीत्वाबहिर्गता तंवैगतमायाबभूवह ॥ ७ ॥ पतन्नेत्राश्वेतगात्रारुदंतीपतिताभुवि ॥ ननादतेनब्रह्मांडंसप्तलोकैर्बिलैःसह ॥ ८ ॥

सोलह वर्षकी दिव्य स्त्री हो गई ॥३॥ तब इसका सुन्दर रूप देखकर किसी गोपने नहीं रोका, ऐसी बनी मानो, इन्द्राणी, सरस्वती, लक्ष्मी, रम्भा, इनसे भी सुन्दर ॥४॥ उसको देखकर रोहिणी और यशोदा दोनों धर्षित हो गईं, जिसक कुचोंमें दूध भरा है, वह बालक श्रीकृष्णको गोदीमें लेकर पुनः २ प्यार करती हुयी ॥ ५ ॥ बालकके मुखमें विषका लिपटा हुआ स्तन दे दिया, तब श्रीकृष्णको रोष आ गया, सो इसका प्राणों सहित दूध पीने लगे ॥ ६ ॥ जब उसके स्तनोंमें पीड़ा होने लगी, तब तो छोड़ दे २ ऐसे पुकारती इधर उधर भागती अपनी मायाको भूल गई, और उस बालकको लेकर भागी ॥७॥ नेत्र पथरा गये, श्वेतांग हो गया, रोती हुई धरतीमें गिर पड़ी, तब इसके उस रोनेके शब्दसे सातों लोक, सातों पाताल झन्ना उठे ॥ ८ ॥

द्वीपों सहित पृथ्वी चलायमान् हो गई, यह एक बड़े अद्भुतकी तरह हुआ, छः कोशके वृक्ष उसकी पीठके नीचे आ गये ॥९॥ हे राजन् ! उन वृक्षोंको वज्रसे अंगोंसे चूर्णकर दिया, तब गोपोंके गण उसके घोर शरीरको देखकर बोले ॥ १० ॥ अरे ! जिसकी गोदीमें जाकर बालक कभी नहीं बचे, परन्तु उसके वक्षस्थलपर आनन्दसे खेलते हँसते बालकको ॥ ११ ॥ जो दूध पीकर जम्हाई ले रहा है, ऐसे श्रीकृष्णको देखकर सब गोपी हँसी, बालकको उठा लिया, यशोदाजी रोहिणीजी छातीसे लगा आश्चर्यमें आ गई ॥ १२ ॥ बालकको लेकर सब ओरसे रक्षा करने लगीं, कालिंदीका जल मृत्तिका, गौकी पूंछको फिराकर ॥ १३ ॥ गौकी रज, गोबर, गोमूत्रसे स्नान कराकर यह स्त्रोत पढ़ने लगीं ॥ १४ ॥ श्रीकृष्ण शिरकी रक्षा करें, वैकुंठ कंठकी रक्षा करें, श्वेतद्वीपके पति कानोंकी रक्षा करें, यज्ञ नासिकाकी रक्षा करे ॥ १५ ॥ नृसिंह तेरे नेत्रोंकी रक्षा करें,

चचालवसुधाद्वीपैस्तदद्भुतमिवाभवत् ॥ षट्कोशंसाद्दढान्दीर्घान्वृक्षान्पृष्ठतलेगतान् ॥९॥ चूर्णीचकारवपुषावज्रांगेणनृपेश्वर ॥ वदंतस्तेगोपगणा वीक्ष्यघोरंवपुर्महत् ॥१०॥ अस्याउत्संगगोबालोनजीवतिकदाचन ॥ तस्याउरसिसानंदंक्रीडंतंसुस्मितंशिशुम् ॥ ११ ॥ दुग्धंपीत्वाजृंभमाणं तंदृष्ट्वाजगृहुःस्त्रियः ॥ यशोदयाचरोहिण्यानिधायोरसिविस्मिताः ॥१२॥ सर्वतो बालकंनीत्वारक्षांचक्रुर्विधानतः ॥ कालिंदीपुण्यमृत्तोयगोपुच्छभ्रमणादिभिः ॥ १३ ॥ गोमूत्रगोरजोभिश्चस्नापयित्वात्विदंजगुः ॥ १४ ॥ श्रीगोप्यऊचुः ॥ श्रीकृष्णस्तेशिरःपातुवैकुंठःकण्ठमेवहि ॥ श्वेतद्वीपपतिःकर्णौनासिकांयज्ञरूपधृक् ॥१५॥ नृसिंहोनेत्रयुग्मंचजिह्वांदशरथात्मजः ॥ अधरावबतात्तेतुनरनारायणावृषी ॥१६॥ कपोलौपातु तेसाक्षात्सनकाद्याःकलाहरेः ॥ भालंतेश्वेतवाराहोनारदोभ्रूलतेवतु ॥१७॥ चिबुकंकपिलःपातुदत्तात्रेयउरोऽवतु ॥ स्कंधौद्वावृषभःपातुकरौमत्स्यः प्रपातुते ॥ १८ ॥ दोर्दंडंसततंरक्षेत्पृथुःपृथुलविक्रमः ॥ उदरंकमठःपातुनाभिंधन्वन्तरिश्चते ॥ १९ ॥ मोहिनीगुह्यदेशंचकटिंतेवामनोवतु ॥ पृष्ठंपरशुरामश्चतवोरूबादरायणः ॥२०॥ बलोजानुद्वयंपातुजंघेबुद्धःप्रपातुते ॥ पादौपातुसगुल्फौचकल्किर्धर्मपतिःप्रभुः ॥२१॥ सर्वरक्षाकरंदिव्यं श्रीकृष्णकवचंपरम् ॥ इदंभगवतादत्तंब्रह्मणेनाभिपंकजे ॥२२॥ ब्रह्मणाशंभवेदत्तंशंभुर्दुर्वाससेददौ ॥ दुर्वासाःश्रीयशोमत्यैप्रादाच्छ्रीनंदमंदिरे ॥२३॥

राम तेरी जीभकी रक्षा करें, ऋषि नारायण तेरे होठोंकी रक्षा करें ॥ १६ ॥ हरिकी कला सनकादिक तेरे कपोलोंकी रक्षा करें, श्वेत वाराह तेरे माथेकी रक्षा करें, नारदजी भ्रूमंडल की रक्षा करें ॥ १७ ॥ कपिलदेव तेरी ठोडीकी रक्षा करें, दत्तात्रेय वक्षस्थलकी रक्षा करें, ऋषभदेवजी कंधोंकी रक्षा करें, मत्स्य भगवान् हाथोंकी रक्षा करें ॥ १८ ॥ पृथुल पराक्रमी पृथुराजा बालकके भुजाकी रक्षा करो, कच्छपजी उदरकी रक्षा करो, धन्वन्तर नाभिकी रक्षा करो ॥१९॥ मोहिनी गुप्तदेशकी रक्षा करो, वामनजी कमरकी रक्षा करो, पीठकी परशुरामजी रक्षा करो, बादरायण ऊरूकी रक्षा करो ॥ २० ॥ बलदेव घुटनोंकी रक्षा करो, बुद्ध भगवान् जंघाओंकी रक्षा करो, कल्कि भगवान् पावोंकी और गुल्फोंकी रक्षा करो ॥ २१ ॥ यह सर्व रक्षा करनेवाला दिव्य कृष्ण कवच है, यह नारायणने नाभिकमलपर बैठ ब्रह्माजीको दिया है ॥२२॥ तब ब्रह्माने महादेवको दिया, महादेवने दुर्वासाको

दुर्वासाने यशोदाको नन्द मन्दिरमें दिया ॥२३॥ गोपियोंके साथ इस स्तोत्रसे यशोदाने रक्षा करके स्तनपान कराकर ब्राह्म गोंको अनेक दान दिये ॥ २४ ॥ तब नंदादिक गोप सब मथुरासे गोकुल पहुँचे, उस बड़ी घोरा मरी पड़ी हुई पूतना नामकी राक्षसीको देखकर भयसे विकल हो गये ॥ २५ ॥ तब सब गोपोंने उसके उस देहको टुकड़े २ काटकर यमुनाजीके तटपर अनेक चिता लगाकर जला दिया ॥२६॥ तब कृष्णके स्पर्शसे पवित्र हो उसके शरीर जलनेसे इलायची, लौंग, चंदन, तगर, अगरकीसी उत्तम सुगंधि निकली ॥ २७ ॥ कहो इस लोकमें कृष्णको छोड़कर और किसकी शरणमें जायें, जिस पतितपावनने पूतना जैसी पापिनीको सद्गति दे दी है ॥२८॥ यह वृत्तान्त सुनकर राजा बहुलाश्व बोले कि महाराज नारदजी ! यह बालकोंको मारनेवाली पूतना कौन थी ! महा दुष्टाभिप्रायवाली इस राक्षसीने स्तनमें जहर लगाकर दूध पिलाया, और फिर परम मोक्षको कैसे गई सो कहो ॥ २९ ॥ तब नारदजी बोले-हे राजन् ! बलि राजाकी रत्नमाला नामकी बेटीने वामनजीका रूप यज्ञमें देखा, तब इसने विचार किया कि ऐसा बेटा मेरे हो, ऐसे इसने

अनेनरक्षांकृत्वास्यगोपीभिःश्रीयशोमती ॥ पाययित्वास्तनंदानंविप्रेभ्यःप्रददौमहत् ॥ २४ ॥ तदानंदादयोगोपाआययुर्मथुरापुरात् ॥ दृष्ट्वा घोरांपूतनाख्यांबभूवुर्भयविह्वलाः ॥२५॥ छित्त्वाकुठारैस्तद्देहंगोपाःश्रीयमुनातटे ॥ अनेकाश्चचिताःकृत्वादाहयामासुरेवताम् ॥२६॥ एलालवंगश्रीखंडतगरागरुगन्धभृत् ॥ धूमोद्गधस्यदेहस्यपवित्रस्यसमुत्थितः ॥२७॥ अहोकृष्णमृतेकंवाव्रजामशरणंत्विह ॥ पूतनायैमोक्षगतिंददौपतितपावनः ॥२८॥श्रीबहुलाश्वउवाच॥केयंवाराक्षसीपूर्वंपूतनाबालघातिनी॥विषस्तनादुष्टभावापरंमोक्षंकथंगता ।२९।श्रीनारदउवाच॥बलियज्ञेवामनस्यदृष्ट्वारूपमतःपरम्॥बलिकन्यारत्नमालापुत्रस्नेहंचकारह ॥३०॥ एतादृशोयदिभवेद्बालस्तंहिशुचिस्मितम् ॥ पाययामिस्तनंतेनप्रसन्नंमेमनस्तदा ॥३१॥ बलेःपरमभक्तस्यसुतायैवामनोहरिः॥मनोरथस्तुतेभूयान्मनस्यपिवरंददौ ॥३२॥ साभवद्द्वापरांतेवैपूतनानामविश्रुता॥श्रीकृष्णस्पर्शसम्भूतापरंप्राप्तमनोरथा॥३३॥ यःपूतनामोक्षमिमंशृणोतिकृष्णस्यदेवस्यपरात्परस्य॥ भक्तिर्भवेत्प्रेमयुतापितस्यत्रिवर्गसिद्धिः किमुमैथिलेन्द्र ॥३४॥ इति गर्गसंहितायां गोलोकखण्डे नारदबहुलाश्वसंवादे पूतनामोक्षोनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥ श्रीगर्गउवाच ॥ इत्येवंकथितंदिव्यं श्रीकृष्णचरितंवरम् ॥ यःशृणोतिनरोभक्त्यासकृतार्थोनसंशयः ॥ १ ॥

पुत्रके स्नेहमय भावको विचारा ॥३०॥ जो मंद मुस्कराता हुआ, ऐसा मेरे बालक हो और उसको मैं अपने स्तनपान कराऊँ, तब मेरा चित्त प्रसन्न हो ॥ ३१ ॥ तब परम भक्त बलिराजाकी बेटीको आपने अपने मनमें ही यह वर दिया कि री रत्नमाला जा तेरा यह मनोरथ पूरा होगा ॥ ३२ ॥ वही रत्नमाला द्वापरके अंतमें पूतना नामसे विख्यात हुई, श्रीकृष्णचन्द्रके अंगका स्पर्श पाकर अपने मनोरथको अच्छी तरह प्राप्त हुई ॥ ३३ ॥ जो कोई परात्पर श्रीकृष्णके प्रकाशसे जो पूतनाका उद्धार हुआ, उसको सुनता है, वह मनुष्य प्रेमयुक्त भक्तिका पात्र होता है, फिर त्रिवर्ग (अर्थ, धर्म, काम) की सिद्धिको प्राप्त हो जाता है, तो आश्चर्य ही क्या है ॥ ३४ ॥ इति गर्गसंहितायां गोलोकखण्डे भाषाटीकायां पूतना मोक्षं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ श्रीगर्गजी कहते हैं-सर्वोत्कृष्ट श्रीकृष्णका चरित्र हमने कहा है, जो कोई मनुष्य इसको भक्तिसे सुनता है

वह निःसन्देह कृतार्थ हो जाता है ॥ १ ॥ तब शौनक प्रश्न करने लगे महाराजजी ! यह श्रीकृष्ण चरित्र सुधाखण्डसे भी परम मीठा हैं, उसे आपके मुखसे सुनकर हम कृतार्थ हुये इसमें सन्देह नहीं है ॥ २ ॥ उस श्रीकृष्णके भक्त, शान्त जिसकी आत्मा है, संतोंमें श्रेष्ठ राजा मैथिलने क्या पूछा हे तपोधन ! मेरे आगे कहो ॥ ३ ॥ गर्गजी कहते हैं, कि मैथिलेन्द्र राजा हर्षित हो प्रेममें विह्वल हो गये और धर्मात्मा परिपूर्णतम श्रीकृष्णका स्मरण करते नारदजीसे बोले ॥ ४ ॥ भूरिकर्मा तुमने हमको कृतार्थ कर दिया, इससे मैं धन्य हूँ, क्योंकि संसारमें भगवत भक्तोंका संग बड़ा दुर्लभ है, और दुर्घट है ॥५॥ श्रीकृष्ण जो साक्षात् बालक हैं, अद्भुत रूप भक्त वत्सल है, उन्होंने आगे क्या क्या अद्भुत चरित्र किये हैं हे मुने ! उसे कहिये ॥ ६ ॥ तब नारदजी बोले कि हे राजन् ! तुमने भली बात पूछी, तुम भगवद्धर्मी हो, साधुओंका संग सबका कल्याण करता है ॥ ७ ॥ एक

॥ श्रीशौनकउवाच॥सुधाखंडंपरंमिष्टंश्रीकृष्णचरितंशुभम्॥श्रुत्वात्वन्मुखतःसाक्षात्कृतार्थास्मवयंमुने ॥२॥ श्रीकृष्णभक्तःशतांत्मावहुलाश्वः सतांवरः ॥ अथोमुनिंकिंपप्रच्छतन्मेब्रूहितपोधन ॥३॥ श्रीगर्गउवाच ॥ अथराजामैथिलेन्द्रोहर्पितःप्रेमविह्वलः ॥ नारदंप्राहधर्मात्मापरिपूर्णतमं स्मरन् ॥४॥ श्रीबहुलाश्वउवाच ॥ धन्योहंचकृतार्थोहंभवताभूरिकर्मणा॥संगोभगवद्भक्तानांदुर्लभोदुर्घटोस्तिहि ॥५॥ श्रीकृष्णस्त्वर्भकःसाक्षा-दद्भुतोभक्तवत्सलः॥ अग्रेचकारकिंचित्रंचरित्रंवदमेमुने॥६॥श्रीनारदउवाच॥साधुपृष्टंत्वयाराजन्भवताकृष्णधर्मिणा ॥ संगमःखलुसाधूनां सर्वे-षांवितनोतिशम्॥७॥एकदाकृष्णजन्मर्क्षेयशोदानंदगेहिनी॥गोपीगोपान्समाहूयमंगलंचाकरोद्द्विजैः ॥८॥ रक्तांबरंकनकभूषणभूपितांगंबालंप्र-गृह्यकलितांजनपद्मनेत्रम्॥श्यामंस्फुरद्धरिनखावृतचन्द्रहारंदेवान्प्रणम्यसुधनंप्रददौद्विजेभ्यः॥९॥प्रेंखेनिधायनिजमात्मजमाशुगोपीसंपूज्यमंग-लदिनेप्रतिगोपिकास्ताः॥नैवाशृणोत्सुरुदितस्यसुतस्यशब्दंगोपेषुमंगलगृहेषुगतागतेषु ॥ १० ॥ तत्रैवकंसखलनोदितउत्कचाख्योदैत्यःप्रभंजन तनुःशकटंयएत्य॥ बालस्यमूर्ध्नियदिपातयितुंप्रवृत्तः कृष्णोपितंकिलतताडतुरोदनेन ॥११॥ चूर्णंगतेथशकटेपतितेचदैत्येत्यक्त्वाप्रभंजनतनुं विमलोबभूव ॥ नत्वाहरिंशतहयेनरथेनयुक्तोगोलोकधामनिजलोकमलंजगाम ॥ १२ ॥

दिन श्रीकृष्णके जन्मका नक्षत्र आया, तब नँदरानी यशोदाने गोप गोपियोंको बुलाकर और ब्राह्मणोंको बुलाकर मंगल कराया ॥८॥ फिर श्रीकृष्णका शृंगार किया, लाल जामा, लाल दुपट्टा, लाल टोपी, स्वर्णके गहनोंसे भूषित अंगकर, श्याम सुन्दर जिनके अंजन लगे कमलसे नेत्र हैं, उनको पन्ना, मोतियोंका वघनखासहित चंदहार आदि गहने पहनाकर, देवताओंको प्रणाम कराकर यशोदाजीने ब्राह्मणोंको स्वर्ण दान दिया ॥ ९ ॥ उस मंगल दिनमें गोपियोंका सत्कार करके अपने पुत्रको पालनेमें सुलाकर चली आई, सो श्रीकृष्णको भूल लगी, तब रोने लगे, वह बेटाके रोनेका शब्द गोप गोपियोंके मंगल निमित्तसे आने जानेमें यशोदाजीने नहीं सुना ॥१०॥ वहाँ पापी कंसका भेजा पवनका रूप धारणकर उत्कच नामक दैत्य आया,वह शकट (गाडा)पर बैठकर उसको श्रीकृष्णके माथेके ऊपर डालने लगा,तो श्रीकृष्णने रोते२एक लात मारी॥११॥ उस लातसे गाडाके टूक २

हो गये दैत्य मरकर नीचे आ गिरा, और पवन रूप छोड़ दिव्य देह हो गया, श्रीकृष्णको प्रणाम कर सौ घोड़ोंके रथपर बैठ वह दैत्य निजधाम गोलोकको चला गया ॥१२॥ इस शब्दको सुनकर नन्दादिक व्रजके लोग और गोपियाँ सब इकट्ठी होकर बालकोंसे बोली क्यों रे लड़को ! यह गाडा आपही कैसे आ गिरा, तुम जानते हो तो कहो ? तब बालक बोले॥१३॥पालनेमें पड़ा हुआ दूधके लिये रो रहा था सो रोते-रोते गाड़ामें लात मारी इससे गाड़ा गिर गया॥१४॥गोप गोपियोंने बालकोंकी बात सत्य नहीं मानी, आश्चर्य करते यह बोले कि कहाँ तो तीन महीनेका बालक और कहाँ इतने बोझसे भरा हुआ गाड़ा, कहो इसको कैसे पटक देगा ॥ १५ ॥ भूत प्रेतके डरसे यशोदाजीने बालकको गोदीमें लेकर ब्राह्मणोंको तृप्त करके विधिपूर्वक यज्ञ कराया ॥१६॥ राजा बहुलाश्व बोला-हे नारदजी ! यह उत्कच पूर्व जन्ममें कौन था, बड़ा आश्चर्य है कि जो श्रीकृष्णके चरणके स्पर्शसे मोक्षको प्राप्त हो गया ? ॥१७॥ नारदजी कहते हैं हे मैथिल ! यह हिरण्य कश्यपका बेटा उत्कच नामक दैत्य था, यह लोमश ऋषिके आश्रममें जाकर वृक्षोंको तोड़ा करता था

नंदादयोव्रजजनाव्रजगोपिकाश्चसर्वेसमेत्ययुगपत्पृथुकांस्तदाहुः।एषस्वयंचपतितःशकटःकथंहिजानीथहेव्रजसुताःसुगताश्चयूयम्१३बालाऊचुः। प्रेंखस्थोयंक्षिपन्पादौरुदन्दुग्धार्थमेवहि ॥ तताडपादंशकटेतेनेदंशकटंत्वनु ॥१४॥ श्रद्धांनचक्रुर्बालोक्तेगोपागोप्यश्चविस्मिताः ॥ त्रैमासिकः क्वबालोयंक्वचैतद्भारभृत्त्वनः ॥ १५ ॥ बालमंकेसंगृहीत्वायशोदाग्रहशंकिता ॥ कारयामासविधिवद्यज्ञंविप्रैःसुतर्पितैः ॥ १६ ॥ श्रीबहुलाश्व उवाच ॥ कोयंपूर्वंतु कुशलीदैत्यउत्कचनामभाक् ॥ अहोकृष्णपदस्पर्शाद्गतोमोक्षंमहामुने॥१७॥ श्रीनारदउवाच॥हिरण्याक्षसुतोदैत्यउत्कचो नाममैथिल ॥ लोमशस्याश्रमेगच्छन्वृक्षांश्चूर्णीचकारह ॥१८॥ तंदृष्ट्वास्थूलदेहाढ्यमुत्कचाख्यंमहाबलम्॥शशापरोषयुग्विप्रोविदेहोभवदुर्मते ॥१९॥ सर्प्पकंचुकवद्देहंपतन्कर्मविपाकतः ॥ सद्यस्तच्चरणोपांतेपतित्वाप्राहदैत्यराट्॥२०॥उत्कचउवाच॥हेमुनेहेकृपासिंधोकृपांकुरुममोपरि॥ तेप्रभावंनजानामिदेहमेदेहिहेप्रभो ॥ २१ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदाप्रसन्नःसमुनिर्दृष्टनयशतंविधेः ॥ सतांरोषोपिवरदोवरोमोक्षार्थदःकिमु ॥ २२ ॥ श्रीलोमशउवाच ॥ वातदेहस्तुतेभूयाद्व्यतीतेचाक्षुषांतरे ॥ वैवस्वतांतरेमुक्तिर्भविताचपदाहरेः ॥ २३ ॥

॥१८॥ इस महाबली उत्कचके मोटे शरीरको देख रोपके मारे लोमशजीने शाप दिया कि हे दुर्बुद्धे ! तुम विदेह हो जाओ, मर जाओ ॥१९॥ तब बुरे कर्मके फलसे गिरता-गिरता यह दैत्य सांपकी केचुलीकी तरह उस देहको छोड़कर दैत्योंका राजा उसी समय उनके चरणोंमें पड़कर बोला ॥ २० ॥ हे मुने ! हे कृपासिन्धो ! मेरे ऊपर कृपा करो, आपका प्रभाव मैंने नहीं जाना है, हे प्रभो ! मुझको देह देओ ॥२१॥ नारदजी कहते हैं, तब ऋषि प्रसन्न हो गये, ब्रह्मा की सौ नीति जिन्होंने देखी है, संतोंका रोप भी वरको देनेवाला है, फिर वर मोक्षदाता हो, तो कहना ही क्या है ॥ २२ ॥ तब लोमश ऋषि बोले-तेरी पवनकी देह हो जाये, और चाक्षुप मन्वन्तरके व्यतीत होनेपर वैवस्वत मन्वन्तरमें श्रीकृष्णके चरणसे तेरी मुक्ति होगी ॥ २३ ॥

नारदजी कहते हैं इसीसे वह उत्कच दैत्य लोमशके तेजसे मुक्त हो गया, जो वर और शापके देनेमें समर्थ संत हैं, उनके लिये मेरा नमस्कार है॥२४॥ एक दिन यशोदा श्रीकृष्णको गोदीमें लेकर बैठी थी, श्रीकृष्णने अपनी देहका बोझा बढ़ा दिया, तब खेलानेमें यशोदाजीसे पर्वत कासा बोझ सहा नहीं गया ॥२५॥ विचारने लगी कि अहो पर्वतके समान यह बालक कैसे हो गया, इस तरह आश्चर्यमें हो गई। तब श्रीकृष्णको तत्काल धरतीपर बैठा दिया, किन्तु किसीसे कहा नहीं॥२६॥उसी समय कंसका भेजा हुआ तृणावर्त दैत्य महाबली आया, और वायुके आवर्त (घेरा) से सुन्दर खेलते हुये बालकको उठाकर ले गया ॥२७॥ गोकुलमें बड़ी धूल उड़ने लगी, उससे अन्धकार हो गया और बड़ा शब्द भी हुआ। आंखोंमें धूल भर गई दो घड़ीतक यह गति हो गई ॥२८॥ तदनन्तर यशोदा आंगनमें पुत्रको नहीं देखकर मूर्च्छित हो घरोंके शिखरको देखती हुई रोने लगी ॥२९॥ जब कहीं पुत्रको नहीं देखा, तब मूर्च्छित होकर भूमिमें गिर पड़ी, करुणा उत्पन्न करते ऊँचे स्वरसे ऐसे रोने लगी, जैसे बछड़ाके मरनेसे गाय रोती है ॥३०॥ तब और भी गोपियाँ

॥ श्रीनारदउवाच ॥ तस्मादुत्कचदैत्यस्तुमुक्तोलोमशतेजसा ॥ सद्भ्योनमोस्तुयेनूनंसमर्थावरशापयोः ॥२४॥ उत्संगेक्रीडितंबालंलालयंत्येकदानृप ॥ गिरिभारंनसेहेतंवोढुंश्रीनंदगेहिनी ॥२५॥ अहोगिरिसमोबालःकथंस्यादितिविस्मिता ॥ भूमौनिधायतंसद्योनेदंकस्मैजगादह॥२६॥ कंसप्रणोदितोदैत्यस्तृणावर्तोमहाबलः॥जहारबालंक्रीडंतंवातावर्तेनसुन्दरम् ॥२७॥ रजोंधकारोभूत्तत्रघोरशब्दश्चगोकुले ॥ रजस्वलानिचक्षूंषिबभूवुर्घटिकाद्वयम् ॥२८॥ ततोयशोदानापश्यत्पुत्रंतंमंदिराजिरे ॥ मोहितारुदतीघोरान्पश्यंतीगृहशेखरान् ॥२९॥ अदृष्टेचयदापुत्रेपतिता भुविमूर्च्छिता॥उच्चैरुरोदकरुणंमृतवत्सायथाहिगौः॥३०॥रुरुदुश्चतदागोप्यःप्रेमस्नेहसमाकुलाः ॥ अश्रुमुख्योनंदसूनुंपश्यंत्यस्ताइतस्ततः ॥ ॥ ३१ ॥ तृणावर्तोनभःप्राप्तउर्ध्वंवैलक्षयोजनम् ॥ स्कंधेसुमेरुवद्बालंमन्यमानःप्रपीडितः ॥ ३२ ॥ अथकृष्णंपातयितुदैत्यस्तत्रसमुद्यतः ॥ गलंजग्राहतस्यापिपरिपूर्णतमःस्वयम् ॥३३॥ मुंचमुंचेतिगदितेदैत्येकृष्णोद्भुतोर्भकः ॥ गलग्राहेणमहताव्यसुंदैत्यंचकारह ॥३४॥ तज्ज्योतिः श्रीघनश्यामलीनंसौदामिनीयथा ॥ दैत्योंबरान्निपतितःशिलायांशिशुनासह ॥ ३५ ॥ विशीर्णावयवस्यापिपतितस्यस्वनेनवै ॥ विनेदुश्च दिशाःसर्वाःकंपितंभूमिमंडलम् ॥ ३६ ॥

स्नेहसे व्याकुल हो रोने लगी, रोते-रोते सभीके आंखोंमेंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी, नन्दके पुत्रको इधर-उधर देखने लगी ॥३१॥ तृणावर्त ऊपरको लाख योजन ऊँचा आकाशमें चढ़ गया, तब उसके गलेमें आप श्रीकृष्ण कंठीकी तरह लिपट गये, इतना बोझ बढ़ाया कि जिस बोझको तृणावर्त सुमेरु पर्वतकी बराबर मान बड़ा पीड़ित हुआ॥३२॥श्रीकृष्णको गिरानेका दैत्यने उद्यम किया कि इसे गिरा दूँ, तब परिपूर्णतम स्वयम् भगवान् इसके गलेसे लिपट गये ॥३३॥ तब छोड़ छोड़ ऐसे दैत्यके पुकारते अद्भुत बालक श्रीकृष्णने गलेको दबाकर इसको प्राणरहित कर दिया॥३४॥उसकी देहमेंसे एक ज्योति निकली, वह घनश्याम श्रीकृष्णमें समा गई, जैसे मेघमें बिजली लीन हो जाती है! तब यह दैत्य बालक समेत आकाशसे शिलापर पड़ा ॥३५॥ धरतीमें पड़नेसे अङ्ग अङ्ग इसके बिखर गये, जब यह गिरा, तब इसके शब्दसे दशों दिशाएं झंकार उठीं और भूमि हिलने लगी ॥ ३६ ॥

उसकी पीठपर चुप चाप स्थित ऐसे बालकको देखकर रोती हुई सब गोपियाँ दौड़ीं, और बालकको इसकी छाती परसे उठाकर माताकी गोदीमें बैठाकर बोलीं ॥ ३७ ॥ हे यशोदे ! तुम मूर्ख हो, तुम बालकको खेलानेके बिलकुल भी योग्य नहीं हो, कहनेसे तो तुम क्रोधित हो जाओगी, परन्तु तुम्हारे बिलकुल भी दया नहीं है ॥३८॥ अरी ! अंधेरेमें अपनी गोदसे कोई भी बालकको धरतीमें बैठालती होगी, निर्दय ! तुमने ऐसे समय इस बालकको धरतीमें बैठा दिया ॥३९॥ तब यशोदाजी बोली कि अरी बहनो ! मैं नहीं जानती हूँ, कि यह बालक पहाड़ जैसा भारी कैसे हो गया, जिससे मैंने उसे महा भयानक झंझावातमें बालकको धरतीमें बैठा दिया ॥४०॥ तब गोपियाँ बोलीं, ऐ कल्याणि ! ऐ यशोदे ! जिसकी व्यथा दूर हो गई है, तू झूठ मत बोल, दूधका, रूई कासाफोइया, फूल सा हलका है, उसको पहाड़ बताती है ॥ ४१ ॥ नारदजी कहते हैं, तब गोप गोपी नन्दा-

तत्पृष्ठस्थंशिशुंतूष्णींरुदंत्योगोपिकास्ततः ॥ दद्दशुर्युगपत्सर्वानीत्वामात्रेददुर्जगुः ॥३७॥ गोप्यऊचुः ॥ नयोग्यासियशोदेत्वंबालंलालयितुं मनाक् ॥ नघृणातेक्वचिद्दृष्टाक्रुद्धासिकथितेनवै॥३८॥प्रान्तेंधकारेस्वारोहात्कोपिबालंजहातिहि ॥ त्वयानिर्घृणयाभूमौधृतोबालोमहाभये॥३९॥ ॥ श्रीयशोदोवाच ॥ नजानामिकथंबालोभारीभूतोगिरींद्रवत् ॥ तस्मान्मयाकृतोभूमौचक्रवातेमहाभये ॥ ४० ॥ गोप्यऊचुः ॥ मामृषा वदकल्याणिहेयशोदेगतव्यथे ॥ अयंदुग्धमुखोबालोलघुःकुसुमतूलवत् ॥४१॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदागोप्यऽथगोपाश्चनंदाद्याआगतेशिशौ ॥ अतीवमोदंसंप्रापुर्वदंतःकुशलंजनैः ॥ ४२ ॥ यशोदाबालकंनीत्वापाययित्वास्तनंमुहुः ॥ आघ्रायोरसिवस्त्रेणरोहिणींप्राहमोहिता ॥ ४३ ॥ ॥ श्रीयशोदोवाच ॥ ऐकोदैवेनदत्तोयंनपुत्राबहवश्चमे ॥ तस्यापिबहवोरिष्टाआगच्छन्तिक्षणेनवै ॥ ४४ ॥ अद्यमृत्युमुखान्मुक्तोभविष्यत्किं-मतःपरम् ॥ किंकरोमिक्वगच्छामिकुत्रवासोभवेदतः ॥४५॥ धनंदेहोगृहंसौधोरत्नानि विविधानि च ॥ सर्वेषांतुह्यवश्यंवैभूयान्मेकुशलीशिशुः ॥ ४६ ॥ हरेरर्चादानमिष्टंपूर्तंदेवालयंशतम् ॥ करिष्यामितदाबालोरिष्टेभ्योविजयीयदा ॥ ४७ ॥ एकंबालेनमेसौख्यमंधयष्टिरिवप्रिये ॥ बालंनीत्वागमिष्यामिदेशेरोहिणिनिर्भये ॥ ४८ ॥

दिक आये, बालकको देखकर बड़े खुशी हुये, और आपसमें कुशल पूछने लगे ॥४२॥ यशोदा बालकको लेकर, स्तन पान करा कर, माथा सूंघ कर ओढ़नीसे ढककर मोहित होकर बोली ॥ ४३ ॥ देखो बहिन रोहिणी ! यह एक पुत्र दैवने जाने कैसे मुझे दिया है, बहुतसे तो मेरे हैं नहीं, तिस पर भी क्षण क्षणमें विघ्न आते हैं ॥ ४४ ॥ आज तो मृत्युके मुखसे निकलकर आया है, आगे जाने क्या होगा, क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, यहांसे जाकर कहाँ रहूँ ॥४५॥ महल, मंदिर, घर, बाहिर, धन, रत्न, देह भलेही यह सब चला जाय, किन्तु मेरा बालक तो खुशी रहे ॥४६॥ हरिकी पूजा, दान, धर्म, मंदिर, वापी, कूप, यह सब मैं सैकड़ों बनवाऊँगी, जो मेरा बालक खुशी रहेगा तो ॥४७॥ हे प्यारी ! एक इस बालकसे ही मुझको सुख है, जैसे अंधेकी लकड़ी, सो मैं तो इस बालकको लेकर वहां निकल जाऊँगी जहाँ निर्भय देश होगा ॥ ४८ ॥

नारदजी कहते हैं, उसी समय बड़े बड़े पंडित, ब्राह्मण, नारदजीके महलमें आये, तब नारद और यशोदाजीने पूजन करके आसन पर बैठाये ॥ ४९ ॥ वे ब्राह्मण नन्दजीसे बोले, हे नन्दराज ! हे नन्द रानी ! चिन्ता मत करो, हम इसकी रक्षा करेंगे, तुम्हारा बालक चिरंजीवी रहेगा ॥ ५० ॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे कहकर द्विजोंमें मुख्य वे ब्राह्मण कुशाओंके अग्र भागोंसे, नवीन पल्लवों (कोंपल) से, पवित्र कलशोंके जलसे चारों वेदोंके मन्त्रोंसे ॥५१॥ उत्तम स्वस्ति वाचक कराकर विधानसे यज्ञ कराकर अग्निकी पूजाकर, बालककी रक्षा करने लगे ॥५२॥ ब्राह्मण बोले कि, दामोदर तुम्हारे चरणोंकी रक्षा करें, विष्टर श्रवा घुटनोंकी रक्षा करें, हरि जंघाकी रक्षा करें, परिपूर्णतम नाभिकी रक्षा करें ॥ ५३ ॥ राधापति कमरकी रक्षा करे, पीताम्बरधारी तुम्हारे पेटकी रक्षा करें, पद्मनाभ हृदयकी रक्षा करें, गोवर्धनधारी भुजाओंकी रक्षा करें ॥५४॥ मथुरा नाथ मुखकी रक्षा करें, द्वारिकानाथ शिरकी रक्षा करें, असुर ध्वंसी पीठकी रक्षा करें, स्वयम् भगवान् सब ओरसे रक्षा करें ॥ ५५ ॥ यह तीन श्लोकोंका स्तोत्र है, जो कोई मनुष्य इसका नित्य पाठ

॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदैवविप्राविद्वांसआगतानंदमंदिरम् ॥ यशोदया च नंदेनपूजिताआसनस्थिताः ॥ ४९ ॥ श्रीब्राह्मणाऊचुः ॥ माशोचंकुरुहेनंदहेयशोदेव्रजेश्वरि ॥ करिष्यामः शिशोरक्षांचिरजीवीभवेदयम् ॥ ५० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वा द्विजमुख्यास्तेकुशाग्रैर्नवपल्लवैः ॥ पवित्रकलशैस्तोयैर्ऋग्यजुःसामजैःस्तवैः ॥५१॥ परैःस्वस्त्ययनैर्यज्ञंकारयित्वाविधानतः॥अग्निंसंपूज्यविधिवद्रक्षांविदधिरेशिशोः ॥ ५२ ॥ ब्राह्मणाऊचुः ॥ दामोदरः पातुपादौजानुनीविष्टरश्रवाः ॥ ऊरूपातुहरिर्नाभिंपरिपूर्णतमःस्वयम् ॥ ५३ ॥ कटिंराधापतिः पातुपीतवासास्तवोदरम् ॥ हृदयंपद्मनाभश्चभुजौगोवर्द्धनोद्धरः ॥५४॥ मुखंचमथुरानाथोद्वारकेशःशिरोऽवतु॥पृष्ठंपात्वसुरध्वंसीसर्वतोभगवान्स्वयम् ॥ ५५ ॥ श्लोकत्रयमिदंस्तोत्रं यःपठेन्मानवःसदा ॥ महासौख्यंभवेत्तस्यनभयंविद्यतेक्वचित् ॥ ५६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ नंदस्तेभ्योगवांलक्षंसुवर्णंदशलक्षकम् ॥ सहस्रंनवरत्नानांवस्त्रलक्षन्ददौपरम् ॥५७॥ गतेषुद्विजमुख्येषुनन्दोगोपान्नियम्यच ॥ भोजयामाससंपूज्य वस्त्रैर्भूषैर्मनोहरैः ॥ ५८ ॥ श्रीबहुलाश्वउवाच ॥ तृणावर्तःपूर्वकालेकोयंसुकृतकृन्नरः ॥ परिपूर्णतमेसाक्षाच्छ्रीकृष्णेलीनतांगतः ॥ ५९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ पांडुदेशोद्भवोराजासहस्राक्षः प्रतावान् ॥ हरिभक्तोधर्मनिष्ठोयज्ञकृद्दानतत्परः ॥ ६० ॥

करेगा, उसको किसीसे भय नहीं होगा और महासुखी होगा ॥५६॥ नारदजी कहते हैं, नारदजीने उनको एक लाख गौ, दश लाख मोहर दी, हजार रत्न दिये, एक लाख वस्त्र दिये, जहाँ साक्षात् हरि हैं, वहाँ क्या आश्चर्य है ॥५७॥ जब ब्राह्मण चले गये, तो नन्दजीने गोपोंको बुलाकर उन गोपोंको सुन्दर वस्त्र और मनोहर भूषण देकर, फिर उनको खूब अनेक प्रकारके पदार्थोंसे भोजन कराया ॥५८॥ तब बहुलाश्व राजाने नारदजीसे प्रश्न किया कि यह तृणावर्त पहले जन्ममें कौन था; और इसने कौनसा पुण्य किया था, जिससे परिपूर्णतम श्रीकृष्णमें लीन हो गया ॥ ५९ ॥ नारदजी बोले, पाण्डु देशका राजा सहस्राक्ष बड़ा प्रतापी हुआ, यह बड़ा हरि भक्त, धर्मनिष्ठ, यज्ञ करता और बड़ा दान करनेवाला हुआ ॥ ६० ॥

दिव्य लतावेत जिसमें है, ऐसे रेवानदीके किनारेपर हजार स्त्रियोंको साथ लेकर रमण करता विचरता था ॥६१॥ वहाँ साक्षात् दुर्वासा मुनि आये, उनको देखकर इसने दण्डवत् नहीं की, तब दुर्वासाने शाप दिया हे दुर्बुद्धे ! तू राक्षस होजा ॥६२॥ तब यह उनके चरणोंमें जा गिरा, तब प्रसन्न होकर दुर्वासाने इसको वर दिया कि हे राजन् ! श्रीकृष्णके अंगके स्पर्शसे तेरी मुक्ति होगी ॥ ६३ ॥ वही दुर्वासाके शापसे भूमिमें तृणावर्त हुआ, सो श्रीकृष्णके शरीरके स्पर्शसे मोक्षको प्राप्त किया ॥ ६४ ॥ इति श्रीगर्गसंहितायां गोलोकखण्डे भाषाटीकायां शकटासुरतृणावर्त मोक्षो नामचतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥ नारदजी कहते हैं एक समय श्रीकृष्ण रत्नोंके पालनेमें सो रहे, कैसे हैं कि श्यामसुन्दर बालक, जनोंके मनको हरनेवाले, मन्द मुसकानवाले, सबकी पीड़ाको हरनेवाले कमलसे नेत्रोंमें काजल जिनके लग रहा है,काजर दिठौना जिनके लग रहा है, उसको माताने पालनेमें से

रेवातटेमहादिव्येलतावेत्रसमाकुले ॥ नारीणांचसहस्त्रेणरममाणश्चचारह ॥६१॥ दुर्वाससंमुनिंसाक्षादागतंननुनामह ॥ तदाशुनिर्ददौशापं राक्षसोभवदुर्मते ॥ ६२ ॥ पुनस्तदंघ्र्योःपतितंनृपंप्रादाद्वरं मुनिः ॥ श्रीकृष्णविग्रहस्पर्शान्मुक्तिस्तेभवितानृप ॥ ६३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ सोपि दुर्वाससःशापात्तृणावर्तोऽभवद्भुवि ॥ श्रीकृष्णविग्रहस्पर्शात्परंमोक्षमवापह ॥ ६४ ॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांगोलोकखंडेनारदबहुलाश्वसंवादेशकटासुरतृणावर्त्तमोक्षोनामचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ प्रेंखेहरिंकनकरत्नमयेशयानंश्यामंशिशुंजनमनोहरमन्दहासम् ॥ हृष्टयार्तिहारिमपिबिंदुधरंयशोदास्वांकेचकारधृतकज्जलपद्मनेत्रम् ॥१॥ पादंपिबंतमतिचंचलमद्भुतांगंबक्रैर्विनीलनवकोमलकेशबंधैः ॥ श्रीपत्रके हरिनखस्फुरदर्द्धचंद्रंतंलालयन्त्यतिघृणामुदमापगोपी ॥२॥ बालस्यपीतपयसोनृपजंभितस्यतत्त्वावृतंचवदनेसकलंविराजम् ॥ मातासुराधिपमुखैःप्रयुतंचसर्वंदृष्ट्वापरंभयमवापनिमीलिताक्षी ॥ ३ ॥ राजन्परस्यपरिपूर्णतमस्यसाक्षात्कृष्णस्यविश्वमखिलंकपटेनसाहि ॥ नष्टस्मृतिःपुनरभूत्स्वसुतेघृणार्तांकिंवर्णयामिसुतपोबहुनंदपत्न्याः ॥४॥ श्रीबहुलाश्वउवाच ॥ नंदोयशोदयासार्द्धंकिंचकारतपोमहत् ॥ येनश्रीकृष्णचन्द्रोऽपिपुत्रीभूतोबभूवह ॥ ५ ॥

गोदीमें बैठा लिया ॥१॥ पाँवके अंगूठेको चूसते हुये, अति चंचल हैं, अद्भुत जिनका अंग, घुघराली नीली जिनकी अलकावली है, लक्ष्मीके चिह्नके ऊपर बघनखा और सोनेका चन्द्रमा कंठहारमें जिनके चमक रहा है, उनको प्यार करती गोपी यशोदा अतिदयासे गोदमें लेकर बड़े आनन्दको प्राप्त हुई ॥ २ ॥ दूध पीकर जब कृष्णने जम्हाई ली, तब मुखमें तत्वोंमें लिपटा हुआ ब्रह्माण्ड देखा, माता ब्रह्मादिक देवताओंसहित सब जगतको देखकर आँखें बंदकर भयको प्राप्त हुई ॥३॥ हे राजन् ! सबसे परेसे परे परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण कपटसे मनुष्य बालक बने, उनके मुखमें विश्वका दर्शन करके फिर उन्हींको पुत्र स्नेहमयी माता विश्वको देखनेकी स्मृति जिसकी भूल गई वह यशोदा फिर मोहमें आ गई, अहो ! नंदरानीके तपकी क्या बड़ाई करूँ ॥४॥ बहुलाश्व राजा बोला कि हे नारदजी ! महाराज नंदने यशोदाजीसहित कौनसा तप किया था, जिससे श्रीकृष्ण इनके

पुत्र हुये ॥५॥ अब नारदजी बोले-आठ वसु देवता हैं, उनमें मुख्य द्रोणनामक जो वसु था, उसकी यह धरानामकी स्त्री थी, इनके संतान नहीं थी, ये दोनों बड़े हरिभक्त, देवताओंके राजा हैं ॥ ६ ॥ एक दिन पुत्रकी अभिलाषासे ये दोनों ब्रह्माजीकी आज्ञासे मन्दराचल पर्वतपर तप करने चले गये ॥ ७ ॥ तब कंद, मूल, फलका आहार किया, फिर सूखे पत्ते खाये, फिर जल पीकर रहे, फिर निर्जल रहे, ऐसे इन्होंने निर्जन वनमें तप किया ॥ ८ ॥ तप करते-करते जब इनको दश करोड़ वर्ष व्यतीत हो गये, तब ब्रह्माजी प्रसन्न हो इनके पास आकर बोले-तुम वर मांगो ॥ ९ ॥ तब वल्मीकमेंसे दोनों निकलकर ब्रह्माजीको प्रणाम पूर्वक पूजनकर ब्रह्माजीसे बोले ॥ १० ॥ परिपूर्णतम जनार्दन श्रीकृष्ण हमारे पुत्र होवें, उन जनार्दनमें हे ब्रह्मन्! हमारी दोनोंकी निरंतर प्रेमलक्षणा भक्ति हो ॥११॥ जिस भक्तिसे हम दुस्तर संसार समुद्रसे सहजहीमें पार हो जायें;

श्रीनारदउवाच ॥ अष्टानांवैवसूनांचद्रोणोमुख्योधरापतिः ॥ अनपत्योविष्णुभक्तोदेवराज्यंचकारह ॥ ६ ॥ एकदापुत्रकांक्षीचब्रह्मणानोदितोनृप ॥ मंदराद्रिंगतस्तप्तुंधरयाभार्ययासह ॥ ७ ॥ कंदमूलफलाहारौतप्तपर्णाशनौतपः ॥ जलभक्षौततस्तौतुनिर्जलौनिर्जनेस्थितौ ॥ ८ ॥ वर्षाणामर्बुदेयातेतपस्तत्तपतोर्द्वयोः ॥ ब्रह्माप्रसन्नस्तावेत्यवरंब्रूहीत्युवाचह ॥९॥ वल्मीकान्निर्गतोद्रोणोधरयाभार्ययासह ॥ नत्वाविधिंचसंपूज्य हर्षितःप्राहतंप्रभुम् ॥ १० ॥ श्रीद्रोणउवाच ॥ परिपूर्णतमेकृष्णेपुत्रीभूतेजनार्दने ॥ भक्तिःस्यादावयोर्ब्रह्मन्सततंप्रेमलक्षणा ॥ ११ ॥ययांजसातरंतीहदुस्तरंभवसागरम् ॥ नान्यंवरंवांछितंस्यादावयोस्तपतोर्विधे ॥ १२ ॥ श्रीब्रह्मोवाच ॥ युवाभ्यांयाचितंयन्मेदुर्घटंदुर्लभंवरम् ॥ तथापिभूयात्सफलंयुवयोरन्यजन्मनि ॥ १३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ द्रोणोनंदोऽभवद्भूमौयशोदासाधरास्मृता ॥ कृष्णोब्रह्मवचःकर्तुंप्राप्तोघोषंपितुःपुरात् ॥१४॥ सुधाखण्डात्परंमिष्टंश्रीकृष्णचरितंशुभम् ॥ गंधमादन शृंगेवैनारायणमुखाच्छ्रुतम् ॥१५॥ कृपयाचकृतार्थोऽहंनरनारायणस्यच ॥ मयातुभ्यंचकथितंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥१६॥ श्रीबहुलाश्वउवाच ॥ नंदगेहेहरिःसाक्षाच्छिशुरूपःसनातनः ॥ किंचकारबलेनापितन्मेब्रूहिमहामुने ॥ १७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एकदाशिष्यसहितोगर्गाचार्योमहामुनिः ॥ शौरिणानोदितःसाक्षादाययौनंदमंदिरम् ॥ १८ ॥

हे विधे! हम यही वर मांगते हैं, इससे अन्य वर नहीं मांगते हैं ॥१२॥ तब ब्रह्माजी बोले कि जो तुमने मांगा, यह तो तुम्हारा वर बड़ा दुर्लभ और दुर्घट है, तो भी तुम्हारा यह वर जन्मांतरमें सफल होगा ॥ १३ ॥ नारदजी कहते हैं, वही द्रोण नंदराज हुये और धरा यशोदा हुई, श्रीकृष्ण ब्रह्माजीका वचन सत्य करने पिताके घरसे व्रजमें आ गये ॥ १४ ॥ अमृतसे भी मीठा यह श्रीकृष्णका शुभ चरित्र है, गन्धमादन पर्वतके शिखरपर नारायणके मुखसे मैंने यह सुना है॥ १५ ॥ नर नारायणकी कृपासे मैं कृतार्थ हुआ हूँ, वही चरित्र मैंने तुम्हें सुनाया, अब आगे क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥१६॥ बहुलाश्व राजा बोला-हे महामुने! साक्षात् सनातन हरिने बालकरूपसे बलदेवके संग क्या-क्या चरित्र किये हैं, वह मुझसे कहिये ॥ १७ ॥ तब नारदजी बोले, एक समय शिष्योंसहित गर्ग महामुनि साक्षात् वसुदेवके भेजे नंदजीके महलमें आये ॥ १८ ॥

तब नन्दरायने मुनि श्रेष्ठ गर्गका पाद्यादिकोंसे विधिपूर्वक पूजन करके परिक्रमा देकर साष्टाङ्ग प्रणाम किया फिर बोले ॥ १९ ॥ आज हमारे पितर, देवता और हमारी गार्हपत्य अग्निभी अति प्रसन्न हुये और आपके चरण कमलोंकी रेणुसे हमारा घर भी पवित्र हो गया ॥२०॥ हे महामुने ! मेरे पुत्रका नामकरण करिये, क्योंकि हे प्रभो ! अनेक पुण्य और तीर्थ सेवनसे भी आपका आगमन दुष्प्राप्य अर्थात् कठिन है॥२१॥ तब गर्गजी बोले, तुम्हारे पुत्रका नामकरण करूँगा इसमें सन्देह नहीं है पहली बात कहूँगा, अतः हे नन्द ! एकान्तमें चलो॥२२॥तब नन्दजीको साथ लेकर और कृष्ण बलदेवजी सहित यशोदाजीको सांथ लेकर गर्गजीने वहाँसे उठकर एकान्तमें गौओंके खिरकेमें जाकर नामकरण किया ॥२३॥ गणेशादिकोंका पूजनकर यत्नपूर्वक ग्रहोंको शोधकर महामुनि गर्ग प्रसन्न हो नन्दजीसे बोले ॥२४॥ पहले तो रोहिणीके पुत्रके नाम सुनो, जिसमें योगी रमण करे अथवा आप सर्वत्र रमे, यह तुम्हारा पुत्र राम होगा ॥२५॥ अथवा अपने गुणोंमें भक्तोंको रमावे, इससे एक नाम तो इसका राम है, और योगमायाने जो गर्भ खींचा, इससे दूसरा नाम

नंदः संपूज्यविधिंवत्पाद्यार्घैर्मुनिसत्तमम् ॥ ततः प्रदक्षिणीकृत्यसाष्टांगंप्रणनामह ॥ १९ ॥ श्रीनंदउवाच ॥ अद्यनःपितरोदेवाःसंतुष्टाअग्नयश्चनः ॥ पवित्रंमंदिरंजातंयुष्मच्चरणरेणुभिः ॥२०॥ मत्पुत्रनामकरणंकुरुद्विजमहामुने ॥ पुण्यैस्तीर्थैश्चदुष्प्राप्यंभवदागमनंप्रभो ॥ २१ ॥ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ तेपुत्रनामकरणंकरिष्यामिनसंशयः ॥ पूर्ववार्तांगदिष्यामिगच्छनंदरहस्यलम् ॥ २२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ उत्थाप्यगर्गोनन्देनबालाभ्यांचयशोदया॥एकांतेगोव्रजेगत्वातयोर्नामचकारह ॥२३॥ संपूज्यगणनाथादीन्ग्रहान्संशोध्ययत्नतः ॥ नंदंप्राहप्रसन्नांगो गर्गाचार्योमहामुनिः ॥ २४ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ रोहिणीनंदनस्यास्यनामोच्चारंशृणुष्वच ॥ रमन्तेयोगिनोह्यस्मिन्सर्वत्ररमतीतिवा ॥ २५ ॥ गुणैश्चरमयन्भक्तांस्तेनरामंविदुःपरे ॥ गर्भसंकर्षणादस्यसंकर्षणइतिस्मृतः ॥२६॥ सर्वावशेषाद्यंशेषंबलाधिक्याद्बलंविदुः ॥ स्वपुत्रस्यापिनामानिशृणुनंदह्यतंद्रितः ॥२७॥ सद्यःप्राणिपवित्राणिजगतांमंगलानिच ॥ ककारःकमलाकांतऋकारोरामइत्यपि ॥२८॥ षकारःषड्गुणपतिः श्वेतद्वीपनिवासकृत ॥ णकारोनारसिंहोयमकारोह्यक्षरोग्निभुक् ॥ २९ ॥ विसर्गौचतथाह्येतौनरनारायणावृषी ॥ संप्रलीनाश्चषट्पूर्णायस्मिञ्च्छब्देमहामुनौ ॥ ३० ॥ परिपूर्णतमेसाक्षात्तेनकृष्णःप्रकीर्तितः ॥ शुक्लोरक्तस्तथापीतोवर्णोस्यानुयुगंधृतः ॥ ३१ ॥

संकर्षण होगा ॥ २६ ॥ सबके पीछे शेष रहनेसे एक नाम शेष और बलमें अधिक होनेसे एक नाम बलदेव, हे नन्द ! अब तुम अपने पुत्रके नामोंको सावधान होकर सुनो ॥२७॥ तुम्हारे इस पुत्रके नाम तत्कालही प्राणियोंको पवित्र करनेवाले और जगत्का मंगल करनेवाले हैं, ककारका अर्थ तो कमलाकान्त है और ऋकारका अर्थ राम है ॥२८॥ षकारका अर्थ छः ऐश्वर्यपूर्ण श्वेतद्वीपपति है, णकारका अर्थ नरसिंह है और अकारका अर्थ अग्निभुक् है ॥२९॥ विसर्ग हैं, सो नर नारायण हैं, ये छः और जिस शब्दमें पूर्ण रूपसे वर्तमान हो ॥ ३० ॥ सो परिपूर्णतम साक्षात् कृष्ण नाम होगा और सफेद, लाल, पीले, ये तीन रंग इसने तीनों युगोंमें धारण किये हैं ॥ ३१ ॥

अब द्वापरके अंतमें कलियुगके आदिमें इसने कृष्णरूप धरा है, इससे यह नन्द नन्दन श्रीकृष्ण कहलायेगा ॥३२॥ दूसरा नाम इसका वसुदेव है, वसु नाम तो इन्द्रियोंका है और इन्द्रियोंके देवता और चित्त इनमें जो चेष्टा करे वह वासुदेव माना है ॥३३॥ वृषभानुकी पुत्री राधा, जो कीर्तिसे हुई उसका यह पति है, जिससे राधापति कहलायेगा ॥३४॥ ये साक्षात् पुरुषोत्तम परिपूर्णतम् अखिल ब्रह्माण्डके पति हैं, जो गोलोकमें विराजते हैं ॥ ३५ ॥ वही भूमिभार उतारनेके लिये, कंसादिकोंको मारनके लिये और भक्तोंकी रक्षाके लिये तुम्हारा पुत्र हुआ है ॥३६॥ हे नन्द! वेदमें गुह्य इनके अनन्त नाम हैं जो-जो लीला की हैं, उनके निमित्तसे होंगे, इससे इनके कर्मोंमें तुम कुछ आश्चर्य मत करना॥३७॥ हे नन्द! तुम्हारा अहोभाग्य है, जो साक्षात् पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण बालरूपमें तुम्हारे घरमें वर्तमान है जो परे से परे हैं ॥३८॥ नारदजी कहते हैं, ऐसा कहकर जब गर्गजी चले गये, तब महामति

द्वापरांतेकलेरादौ बालोयंकृष्णतांगतः॥ तस्मात्कृष्णइतिख्यातोनाम्नायंनन्दनन्दनः॥३२॥ वसवश्चेंद्रियाणीतितद्देवाश्चित्तमेवहि ॥ तस्मिन्य-श्चेष्टतेसोपिवासुदेवइतिस्मृतः ॥३३॥ वृषभानुसुताराधायाजाताकीर्तिमंदिरे ॥ तस्याःपतिरयंसाक्षात्तेनराधापतिःस्मृतः ॥३४॥ परिपूर्णतमः साक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥ असंख्यब्रह्मांडपतिर्गोलोकेधाम्निराजते ॥३५॥ सोयंतवशिशुर्जातोभारावतरणायच ॥ कंसादीनांवधार्थाय भक्तानांरक्षणायच ॥३६॥ अनंतान्यस्यनामानिवेदगुह्यानिभारत ॥ लीलाभिश्चभविष्यंतितत्कर्मसुनविस्मयः ॥ ३७ ॥ अहोभाग्यंतु तेनंद साक्षाच्छ्रीपुरुषोत्तमः ॥ त्वद्गृहेवर्तमानोयंशिशुरूपःपरात्परः ॥ ३८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाथगतेगर्गेस्वात्मानंपूर्णमाशिषम् ॥ मेनेप्रमुदितः पत्न्यानंदराजोमहामतिः ॥३९॥ अथगर्गोज्ञानिवरोज्ञानदोमुनिसत्तमः ॥ कालिंदीतीरशोभाढ्यांवृषभानुपुरंगतः ॥४०॥ छत्रेण शोभितंविप्रंद्वितीयमिववासवम् ॥ दंडेनराजितं साक्षाद्धर्मराजमिवस्थितम् ॥ ४१ ॥ तेजसाद्योतितदिशंसाक्षात्सूर्यमिवापरम् ॥ पुस्तकीमेख-लायुक्तंद्वितीयमिवपद्मजम् ॥ ४२ ॥ शोभितंशुक्लवासोभिर्देवंविष्णुमिवस्थितम् ॥ तंदृष्ट्वामुनिशार्दूलंसहसोत्थायसादरम् ॥ ४३ ॥ प्रणम्य शिरसा सद्यःसंमुखोभूत्कृतांजलिः ॥ मुनिंचपीठकेस्थाप्यपाद्याद्यैरुपचारवित् ॥ ४४ ॥

नन्दजीने अपनेको यशोदा सहित पूर्ण मनोरथ माना ॥३९॥ इसके बाद गर्गजी ज्ञानके देनेवाले, ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ कालिन्दीके किनारे अति सुशोभित वृषभानुके पुरमें गये, तब वृष-भानुने देखा, कैसे हैं गर्गजी उनका वर्णन करते हैं ॥४०॥ छत्र धारणकर रखा है, इससे तो दूसरे इन्द्र दिखते हैं, दण्डको हाथमें लेनेसे यमराजसे दिखते हैं ॥ ४१ ॥ तेजसे दशों दिशाओंमें प्रकाश हो गया, मानों दूसरे सूर्य हैं, पुस्तक लिये और मेखला पहने हैं, जिससे मानो दूसरे ब्रह्माही हैं ॥ ४२ ॥ सफेद वस्त्रोंसे विष्णुसे दीखते हैं, मुनियोंमें श्रेष्ठ ऐसे गर्गमुनिको देखकर आदरसे वृषभानु खड़े हो गये॥४३॥ जल्दी ही शिरसे प्रणामकर शीघ्रही सिंहासनपर बैठाकर पाद्यादिक सामग्रीसे पूजनकर हाथ जोड़कर सामने खड़े हुये॥४४॥

ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ गर्गजीका विधिसे पूजन कर परिक्रमा देकर वृषभानुवर बोले ॥ ४५ ॥ सन्तोंका पर्यटन शान्तिका देने वाला है, गृहस्थी जनोंकी बाधाको शान्त करता है, मनुष्योंके भीतरके अन्धकारको दूर करने वाले साधु ही हैं, सूर्य नहीं है ॥ ४६ ॥ हे प्रभो ! तुम्हारे दर्शनसे हम सब गोप पवित्र हो गये हैं, भूतलमें आप जैसे साधु तीर्थोंको भी पवित्र करते हैं ॥ ४७ ॥ सो हे मुने ! एक मेरे राधा नामकी मंगल रूपा कन्या है, उसे किस वरको देऊँ, यह आप निश्चय करके कहिये ॥ ४८ ॥ आप सूर्यकी तरह दिव्य दर्शन त्रिलोकीमें विचरते हो, सो इनके समान जो वर हो, उसको मैं देऊँ ॥ ४९ ॥ नारदजी कहते हैं कि तब गर्गजी वृषभानुका हाथ पकड़ कर यमुनाके किनारे पर निर्जन सुन्दर एक स्थलमें ले गये ॥ ५० ॥ जहाँ कालिंदीके जलकी लहरोंका कोलाहल है, वहाँ गोपराजको बैठाकर धर्मवेत्ता मुनि वृषभानुसे बोले ॥ ५१ ॥ हे गोप !

पूजयामासविधिवच्छ्रीगर्गंज्ञानिनांवरम् ॥ ततःप्रदक्षिणीकृत्यवृषभानुवरोमहान् ॥ ४५ ॥ श्रीवृषभानुरुवाच ॥ सतांपर्यटनंशांतंगृहिणांशांतयेस्मृतम् ॥ नृणामंतस्तमोहारीसाधुरेवनभाष्करः ॥ ४६ ॥ तीर्थीभूतावयंगोपाजातास्त्वद्दर्शनात्प्रभो॥तीर्थानितीर्थीकुर्वंतित्वादृशाःसाधवःक्षितौ ॥ ४७ ॥ हेमुनेराधिकानामकन्यामेमंगलायना ॥ कस्मैवरायदातव्यावदत्वंमेसुनिश्चितम्॥४८॥त्वंपर्य्यटन्नर्कइवत्रिलोकींदिव्यदर्शनः॥ वरोनयासमोयोवैतस्मैदास्यामिकन्यकाम् ॥ ४९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ हस्तंगृहीत्वाश्रीगर्गोवृषभानोर्महामुनिः ॥ जगामयमुनातीरंनिर्जनंसुंदरस्थलम् ॥ ५० ॥ कालिंदीजलकल्लोलकोलाहलसमाकुलम् ॥ तत्रोपवेश्यगोपेशंमुनींद्रःप्राहधर्मवित् ॥ ५१ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ ॥ हेगोपगुप्तमाख्यानंकथनीयंनचत्वया ॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥५२॥ असंख्यब्रह्मांडपतिर्गोलोकेशःपरात्परः॥तस्मात्परोवरोनास्तिजातोनंदगृहेपतिः ॥ ५३ ॥ श्रीवृषभानुरुवाच ॥ अहोभाग्यमहोभाग्यंनंदस्यापिमहामुने ॥ श्रीकृष्णस्यावतारस्यसर्वंत्वंवदकारणम् ॥ ५४ ॥ श्रीगर्गरुवाच ॥ भुवोभारावतारायकंसादीनांवधायच ॥ ब्रह्मणाप्रार्थितः कृष्णोबभूवजगतीतले ॥ ५५ ॥ श्रीकृष्णपट्टराज्ञीयागोलोकेराधिकाऽभिधा ॥ त्वद्गृहेसापिसंजातात्वंनजासितांपराम् ॥ ५६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदाप्रहर्षितोगोपोवृषभानुःसुविस्मितः ॥ कलावतींसमाहूयतयासार्द्धविचार्यच ॥ ५७ ॥

मैं एक शुभ बात कहता हूँ, इस बातको किसीसे कहना मत, परिपूर्णतम स्वयम् भगवान् साक्षात् श्रीकृष्ण हैं ॥ ५२ ॥ परेसे परे अखिल ब्राह्मण्डोंके पति गोलोकके ईश्वर यही श्रीकृष्ण हैं, उनसे दूसरा तुम्हारी राधाका और कोई वर नहीं है, जिन्होंने नन्दके घरमें जन्म लिया है ॥५३॥ तब वृषभानु बोले कि हे महामुने ! अहो भाग्य तो नन्दजीका ही है, हे महामुनीजी ! कृष्णके अवतारका सब कारण कहिये ॥५४॥ गर्गजी बोले कि पृथ्वीका भार उतारनेके लिये, कंसादिकोंको मारनेके लिये ब्रह्माजीकी प्रार्थनासे श्रीकृष्ण भगवान् भूमिपर आये हैं ॥५५॥ जो श्रीकृष्णकी पटरानी राधा गोलोकमें थी उसने तुम्हारे घरमें जन्म लिया है, तुम नहीं जानते हो ॥५६॥ नारदजी कहते हैं, तब तो वृषभानु गोप बड़े प्रसन्न हुये, आश्चर्य करने लगे, तब तो कलावतीको बुलाकर विचार करने लगे ॥ ५७ ॥

राधा, कृष्णके अनुभावको जानकर वृषभानु आनन्दके आंसू छोड़ते फिर गर्गजीसे बोले ॥५८॥ हे ब्रह्मन् ! मैं श्रीकृष्णको अपनी कमल नयनी राधाको दूँगा ॥ आपने ही मुझको मार्ग दिखाया है, सो आपकोही यह विवाह कराना चाहिये ॥५९॥ तब गर्गजी बोले-हे राजन् ! मैं विवाह नहीं कराऊँगा, इनका विवाह भाण्डीर वनमें कालिंदीके किनारे पर होगा ॥६०॥ वृन्दावनके समीपमें निर्जन सुन्दर स्थलमें इनका विवाह ब्रह्माजी आकर करायेंगे ॥६१॥ इससे हे गोपवर ! तुम राधाको श्रीकृष्णकी अर्द्धांगी जानो, इस लोकमें राजाओंके चूडामणि तुम हो और लोकोंका चूडामणि गोलोक मंदिर है ॥६२॥ तुम भी सब गोपाल गोलोकसे आये हो, सब गोपियाँ भी राधिकाकी इच्छासे आई हैं ॥६३॥ जिसका दर्शन दुर्लभ है, दुर्घट है, देवताओंको यज्ञ करनेसे भी नहीं मिलता है, यह मूर्तिमती राधिका तुम्हारे घरमें विराज रही है, उसको सब गोप गोपी देखते हैं ॥६४॥ नारदजी

राधाकृष्णानुभावंचज्ञात्वागोपवरःपरः ॥ आनंदाश्रुकलांमुंचन्पुनराहमहामुनिम् ॥ ५८ ॥ श्रीवृषभानुरुवाच ॥ तस्मैदास्यामिहेब्रह्मन्कन्यां कमललोचनाम् ॥ त्वयापंथादर्शितोमेत्वयाकार्योयमुद्वहः ॥ ५९ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ अहंनकारयिष्यामिविवाहमनयोर्नृप ॥ तयोर्विवाहो भविताभांडीरेयमुनातटे ॥६०॥ वृंदावनसमीपेचनिर्जने सुन्दरस्थले ॥ परमेष्ठीसमागत्यविवाहंकारयिष्यति ॥६१॥ तस्माद्राधांगोपवरवि- द्ध्यर्धांगींवरस्यच ॥ लोकेचूडामणिःसाक्षाद्राज्ञांगोलोकमंदिरम् ॥६२॥ यूयंसर्वेपिगोपालागोलोकादागताभुवि ॥ तथागोपीगणागोपागोलोके राधिकेच्छया ॥६३॥ यद्दर्शनंदुर्लभमेवदुर्घटंदेवैश्चयज्ञैर्नचजन्मभिःकिमु ॥ सविग्रहांतांतवमंदिराजिरेलक्ष्यंतिगुप्तांबहुगोपगोपिकाः ॥ ६४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदाचविस्मितौराजन्दंपतीहर्षितौपरम् ॥ राधाकृष्णप्रभावंचश्रुत्वाश्रीगर्गमूचतुः ॥ ६५ ॥ दंपतीऊचतुः ॥ राधाशब्द- स्यहेब्रह्मन्व्याख्यानंवदतत्त्वतः ॥ त्वत्तोनसंशयच्छेत्ताकोपिभूमौमहामुने ॥ ६६ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ सामवेदस्यभावार्थंगंधमादनपर्वते ॥ शिष्येणापिमयातत्रनारायणमुखाच्छ्रुतम् ॥६७॥ रमयातुरकारःस्यादाकारस्त्वादिगोपिका ॥ धकारोधरयाहिस्यादाकारोविरजानदी ॥६८॥ श्रीकृष्णस्यपरस्यापिचतुर्द्धातेजसोभवत् ॥ लीलाभूः श्रीश्चविरजाचतस्रःपत्न्यएवहि ॥६९॥ संप्रलीनाश्चताःसर्वाराधायांकुंजमंदिरे ॥ परि- पूर्णतमांराधांतस्मादाहुर्मनीषिणः ॥ ७० ॥ राधाकृष्णेतिहेगोपयेजपंतिपुनः पुनः ॥ चतुष्पदार्थंकिंतेषांसाक्षात्कृष्णोपिलभ्यते ॥ ७१ ॥

कहते हैं, तब तो दोनों स्त्री पुरुष बड़े प्रसन्न हुये, विस्मित हुये और राधा कृष्णके प्रभावको सुनकर गर्गजीसे बोले ॥६५॥ कि हे ब्रह्मन् ! राधा शब्दकी व्याख्याको तत्त्वसे कहिये, हे मुने ! आपसे अधिक इस संसारमें संशयको दूर करनेवाला और कोई नहीं है ॥६६॥ तब गर्गजी बोले कि, गन्ध मादन पर्वतमें सामवेदका भावार्थ जो मैंने नारायणके मुखसे सुना है, उसे सुनो ॥६७॥ रमाका अर्थ रकार, आदि गोपिकाका अर्थ आकार, धराका अर्थ धकार, और विरजा नदीका अर्थ आकार है ॥ ६८ ॥ श्रीकृष्णका जो परम तेज है, उसके चार रूप हुये, लीला, भू, विरजा और श्री ये चार स्त्रियाँ हुईं ॥ ६९ ॥ वे चारों स्त्रियाँ कुँज मंदिरमें राधामें लीन हो गईं, इससे जो बड़े बुद्धिमान् हैं, वे श्रीराधाजीको परिपूर्णतम कहते हैं ॥ ७० ॥ हे गोप ! राधाकृष्ण, राधाकृष्ण, जो कोई बारम्बार जपते हैं,

उनको धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष कुछ दुर्लभ नहीं है, किन्तु जो साक्षात् श्रीकृष्ण हैं, वे ही मिल जाते हैं ॥ ७१ ॥ नारदजी कहते हैं, तब वृषभानु स्त्रीसहित बड़े प्रसन्न हुये, विस्मित हो गये, और राधाकृष्णके प्रभावको जानकर आनन्दमय हो गये ॥७२॥ इस प्रकार ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ गर्गजीकी वृषभानुने जो पूजा की उसको स्वीकार कर, सर्ववेत्ता जो बड़े मुनि कवि श्रीगर्गजी हैं, वे अपने घरको चले गये ॥७३॥ इति श्रीगर्गसंहितायां गोलोकखण्डे भाषाटीकायां श्रीकृष्णनामकरणं नामपञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥ अब श्रीनारद जी कहते हैं,कि एक दिन गौ चराते-चराते नंदजी पुत्रको गोदीमें लेकर खेलाते-खेलाते पहले पास फिर दूर, कालिंदी तीर जहाँ मन्द-मन्द पवन चलती है,ऐसे भांडीरवनमें गये॥१॥वहाँ कृष्णकी इच्छासे बड़ी भारी आंधी आई, और बादलोंसे आकाश मलिन हो गया, कदम्बादि वृक्षोंसे पत्ते झरने लगे, भयंकर दृश्य हो गया ॥ २ ॥ उस बड़े भारी अंधकार

श्रीनारदउवाच ॥ तदातिविस्मितो राजन्वृषभानुःप्रियायुतः ॥ राधाकृष्णप्रभावंतंज्ञात्वाऽऽनंदमयोह्यभूत ॥ ७२ ॥ इत्थंगर्गोज्ञानिवरः पूजितोवृषभानुना॥जगामस्वगृहंसाक्षान्मुनींद्रःसर्ववित्कविः॥७३॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांगोलोकखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेनन्दपत्न्याविश्वरूप दर्शनश्रीकृष्णनामकरणंनामपंचदशोऽध्यायः ॥१५॥ श्रीनारदउवाच ॥ गाश्चारयन्नंदनमंकदेशेसंलालयन्दूरतमंसकाशात् ॥ कालिंदजातीर समीरकंपितंनंदोऽपिभांडीरवनंजगाम॥१॥कृष्णेच्छयावेगतरोऽथवातोघनैरभून्मेदुरमंबरंच॥तमालनीपद्रुमपल्लवैश्चपतद्भिरेजद्भिरतीवभीकैः।२। तदांधकारेमहतिप्रजातेबालेरुदत्यंकगतेऽतिभीते॥नन्दोभयंप्रापशिशुंसबिभ्रद्धरिंपरेशंशरणंजगाम३ततदैवकोटयर्कसमूहदीप्तिरागच्छतीवाचलती दिशासु॥बभूवतस्यांवृषभानुपुत्रींददर्शराधांनवनंदराजः॥४॥कोटींदुबिंबद्युतिमादधानांनीलांबरंसुन्दरमादिवर्णम्॥मंजीरधीरध्वनिनूपुराणामा- बिभ्रतींशब्दमतीवमंजुम् ॥ ५ ॥ कांचीकलाकंकणशब्दमिश्रांहारांगुलीयांगदविस्फुरंतीम् ॥ श्रीनासिकामौक्तिकहंसिकीभिःश्रीकण्ठचूडामणि- कुण्डलाढ्याम् ॥ ६ ॥ तत्तेजसाधर्षितआशुनंदोनत्वाथतामाहकृतांजलिःसन् ॥ अयंतुसाक्षात्पुरुषोत्तमस्त्वंप्रियासिमुख्यासिसदैवराधे ॥ ७ ॥ गुप्तंत्विदंगर्गमुखेनवेद्मिगृहाणराधेनिजनाथमंकात् ॥ एनंगृहंप्रापयमेघभीतंवदामिचेत्थंप्रकृतेर्गुणाढ्यम् ॥ ८ ॥

में गोदीके बालक श्रीकृष्ण रोने लगे, बालकको भयभीत देखकर बालकको लिये नन्दजीको भी भय लगा, तबही नन्दजी परेश भगवान्‌की शरण गये ॥ ३ ॥ उसी समय करोड़ सूर्यकेसे तेजकी जिसकी दीप्ति मानो दशों दिशाओंमें चली आती है, उस दीप्तिमें नौ नंदोंके राजाको राधाके दर्शन हुये ॥४॥ कैसी है राधा, कि करोड़ चन्द्रमाकीसी कान्तिको और अतिसुन्दर आदिवर्ण नीलाम्बरको व मधुर मंद-मंद नूपुरोंकी झंकारको धारण किये हैं ॥ ५ ॥ करधनीके घुँघरू बजते हैं, झांझ बज रही है, हार, कंकण, छल्ला, अंगूठी चमक रहे हैं, नासिकामें मोतियोंकी बेसर हंसिनी सी लटक रही है, श्रीकंठ, चूड़ामणि, कुंडल पहने हैं ॥६॥ ऐसे उनके रूपको देख धर्षित हुये नंदजी प्रणामकर हाथ जोड़कर बोले कि ये तो साक्षात् पुराण पुरुष हैं, और हे राधे ! तू इनकी सदाही प्राणप्यारी है ॥ ७ ॥ गर्गजीके कहनेसे गुप्त जो तुम्हारी महिमा है, उसको मैं जानती हूँ,इससे हे राधे !

मायासे मनुष्यकी लीला करनेवाले अपने नाथको मेरी गोदीमेंसे लेकर इसको घर पहुँचा दे यह मेहसे डरता है, मेरी यह प्रार्थना है ॥ ८ ॥ प्राणिमात्रके लिये अलभ्या जो तुम हो, तुम्हारे लिये नमस्कार करता हूँ, तुम मेरी रक्षा करो, और किसीकी सामर्थ्य नहीं है, तब राधिकाजी बोलीं-हे नन्द ! मैं तेरे भक्तिभावसे प्रसन्न हूँ, मेरा जो दर्शन है, वह अवश्य दुर्लभ ही है ॥९॥ तब नंदजी बोले-जो तुम मुझपर प्रसन्न हुई हो, तो तुम्हारे दोनोंके चरणकमलोंमें मेरी दृढ भक्ति हो, और युग युगमें तुम्हारे भक्तोंका संग हो ॥१०॥ नारदजी कहते हैं, तब राधिकाने तथास्तु अर्थात् ऐसा ही हो कहकर नन्दजीकी गोदमेंसे अपने नाथको ले लिया और प्रणाम करते हुये नन्दजीके चले जानेपर भाण्डीर वनको चली गईं ॥११॥ गोलोकसे जो भूमि आई थी, उसने अपना स्वरूप धारण कर लिया, पद्म, पराग, पुखराजमणि, जिनमें जड रहीं ऐसी सुवर्णकी सब भूमि हो गई ॥१२॥ कल्प वृक्षोंकेसहित वृन्दावनने दिव्य स्वरूप धर लिया, सुवर्णमय महल मंदिरोंसे युक्त, रत्नोंकी सीढियाँ जिसकी हैं, ऐसी यमुनाजी हो गईं ॥ १३ ॥ जिसकी रत्नोंकी शिला, सुवर्णके

नमामितुभ्यंभुविरक्षमांत्वंयथेप्सितंसर्वजनैर्दुरापम् ॥ श्रीराधोवाच ॥ अहंप्रसन्नातवभक्तिभावान्मद्दर्शनंदुर्लभमेवनंद ॥ ९ ॥ श्रीनंदउवाच ॥ यदिप्रसन्नासितदाभवेन्मेभक्तिर्दृढाकौयुवयोःपदाब्जे ॥ सतांचभक्तिस्तवभक्तिभाजांसंगःसदामेऽथयुगेयुगेच ॥ १० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तथास्तुचोक्त्वाथहरिंकराभ्यांजग्राहराधानिजनाथमंकात् ॥ गतेऽथनंदेप्रणतेव्रजेशेतदाहिभांडीरवनंजगाम॥११॥ गोलोकलोकाच्चपुरासमागता भूमिर्निजंस्वंवपुरादधाना ॥ यापद्मरागादिखचित्सुवर्णबभूवसातत्क्षणमेवसर्वम्॥१२॥वृन्दावनंदिव्यवपुर्दधानंवृक्षैःवरैः कामदुघैस्सहैव ॥ कलिंदपुत्रीचसुवर्णसौधैःश्रीरत्नसोपानमयीबभूव १३गोवर्द्धनोरत्नशिलामयोऽभूत्सुवर्णशृंगैःपरितःस्फुरद्भिः। मत्तालिभिर्निर्झरसुन्दरीभिर्दरीभिरुच्चांगकरीवराजन् ॥ १४ ॥ तदानिकुंजोऽपिनिजंवपुर्दधत्सभायुतंप्रांगणदिव्यमंडपम्॥वसन्तमाधुर्यधरंमधुव्रतैर्मयूरपारावतकोकिलध्वनिम् ॥१५॥ सुवर्णरत्नादिखचिद्धटैर्युतंपतत्पताकावलिभिर्विराजितम् ॥ सरःस्फुटद्भिर्भ्रमरावलीढितैर्विचर्चितं कांचनचारुपंकजैः ॥ १६ ॥ तदैवसाक्षात्पुरुषोत्तमोत्तमोबभूवकैशोरवपुर्घनप्रभः ॥ पीतांबरःकौस्तुभरत्नभूषणोवंशीधरोमन्मथराशिमोहनः ॥ १७ ॥

शिखर दूरसेही चमक रहे हैं, मतवाले भ्रमर गुञ्जार कर रहे हैं, झरना झर रहे हैं, सुन्दर जिसकी गुफाएँ हैं, उस गोवर्धनने ऐसा रूप धर लिया, जैसे सजा हुआ ऊँचे शरीरवाला हाथी होता है ॥१४॥ तब निकुञ्जने भी अपना रूप धर लिया, लताओंके ही सभा, कचेहरी, छत्री, बंगला, आंगन, चौक, दरवाजे बन गये, वसन्त ऋतु आ गई, भ्रमर मीठी-मीठी गुञ्जार करने लगे, मोर बोलने लगे, कोकिला बोलने लगी, पपीहा पुकारने लगे, कबूतर गुटकने लगे ॥ १५ ॥ कुञ्ज मंदिरोंमें सुवर्णके रत्न जडे महल मंदिर जिनपर ध्वजाओंकी पंक्ति फहरा रही है, दरवाजोंपर बड़े-बड़े योद्धा हैं, उनसे युक्त और मत्त भ्रमरोंने जिनके मकरंदका आस्वादन किया ऐसे हजारों खिले सुनहरे कमलसमूह युक्त दिव्य सुन्दर सरोवर हैं ॥ १६ ॥ उसी समय साक्षात् पुरुषोतमोत्तम किशोररूप धरे, श्यामसुन्दर, पीताम्बर धारण किये, कौस्तुभमणि पहने, वंशी धरे, कोटि (करोड) कामदेवसे सुन्दर मदनमोहन हो गये ॥ १७ ॥

हँसते-हँसते भुजासे प्रियाके गलमें गलपटियाँ डालकर विवाहक मण्डपमें चल गये, जिनम विवाहको सब सामग्री रखी है, चौक पूरे हैं, घट धरे हैं, पंचपल्लव, हरी डाभ, केलेके स्तम्भ वंदनवार बंध रही है, मोतियोंकी झालरके चन्दोआ टंग रहे हैं ॥१८॥ वहाँ ऊँचे रत्न सिंहासनपर परस्पर दोनों विराजमान मधुरवाणीसे आपसमें बातें करते, घनमें बिजलीकी तरह अत्यन्त सुशोभित हुये ॥१९॥ तभी आकाश में से देव मुख्य श्रीब्रह्माजी आये, दोनोंके चरणोंको नमस्कार करके उनके सामने बैठकर हाथ जोड़ श्रीचतुर्मुख अपने चारों मुखोंसे सुन्दर वाणियोंसे स्तुति करने लगे ॥२०॥ आपही अनादि और सबके आदि पुरुषोत्तमोत्तम और भक्त वत्सल हो, असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति, परे से परे, श्रीराधाके पति हो, आपकी मैं शरण प्राप्त हुआ हूँ ॥२१॥ हे गोलोकनाथ ! तुम्हारी अनेक लीलायें हैं और निजलोक (गोलोक) में अनेक लीला विहार करनेवाली यह श्रीराधा लीला पाती हैं और जब तुम वैकुण्ठनाथ होते हो, तब यह वृषभानुजा संगही लक्ष्मी होती है ॥२२॥ भूमिमें तुम रामचन्द्र होते हो तब यह जानकी होती है, जब हरि होते हो, तब यह कमलालया

भुजेनसंगृह्यहसन्प्रियांहरिर्जगाममध्ये सुविवाहमंडपम् ॥ विवाहसंभारयुतःसमेखलंसदर्भमृद्वारिघटादिमण्डितम् ॥ १८॥ तत्रैवसिंहासनउन्नतेवरे परस्परंसंमिलितौविरेजतुः ॥परंब्रुवंतौमधुरंचदंपतीस्फुरत्प्रभौखेचतडिद्घनाविव॥ १९॥तदांबराद्देववरोविधिःप्रभुःःसमागतस्तस्यपरस्यसंमुखे॥ नात्वातदंघ्रीउशतीगिराभिःकृतांजलिश्चारुचतुर्मुखोजगौ ॥ २० ॥ श्रीब्रह्मोवाच ॥ अनादिमाद्यंपुरुषोत्तमोत्तमंश्रीकृष्णचंद्रंनिजभक्तवत्सलम् ॥ स्वयंत्वसंख्यांडपतिंपरात्परंराधापतिंत्वांशरणंव्रजाम्यहम् ॥२१॥ गोलोकनाथस्त्वमतीवलीलोलीलावतीयंनिजलोकलीला ॥ वैकुण्ठनाथोसियदात्वमेवलक्ष्मीस्तदेयंवृषभानुजाहि ॥२२॥ त्वंरामचन्द्रोजनकात्मजेयंभूमौहरिस्त्वंकमलालयेयम्॥यज्ञावतारोसियदातदेयंश्रीदक्षिणास्त्रीपतिपत्निमुख्या ॥ २३ ॥ त्वंनारसिंहोसिरमाहृदीयंनारायणस्त्वंचनरेणयुक्तः ॥ तदात्वियंशांतिरतीवसाक्षाच्छायेवयाताचतवानुरूपा ॥ २४ ॥ त्वंब्रह्मचेयंप्रकृतिस्तटस्थाकालोयदेमांचविदुःप्रधानम् ॥ महान्यदात्वंजगदंकुरोसिराधातदेयंसगुणाचमाया ॥२५॥ यदांतरात्माविदितश्चतुर्भिस्तदात्वियंलक्षणरूपवृत्तिः ॥ यदाविराड्देहधरस्त्वमेवतदाऽखिलंवाभुविधारणेयम् ॥ २६ ॥

होती है, जब यज्ञावतार धरते हो, तब यही राधा पतिपत्नियोंमें मुख्य दक्षिणा हो जाती है ॥२३॥ तुम नरसिंह होते हो, तब यह रमाहृदी होती है, जब नारायण होते हो, तब यह शान्ति होती है। इस प्रकार यह सदा छायाकी तरह तुम्हारे अनुरूप रूप धारण कर सदा आपके ही संग रहती है ॥ २४ ॥ तुम जब ब्रह्मरूप होते हो, तब यह तटस्था होकर प्रकृति होती है, जब कालरूप होते हो, तब यह प्रधान होती है और जब तुम जगत्के अंकुर महान् रूप होते हो, तब यही राधा सगुणा माया बन जाती है ॥२५॥ और जब तुम मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, इन चारोंसे विदित अंतरात्मा होते हो तब यह लक्षण रूप और वृत्ति रूप होती है, और जब आप विराट् देह धरते हो अथवा अखिल रूपमें होते हो, तब यह पृथ्वीरूपा होती है ॥ २६ ॥

हे पुरुषोत्तमोत्तम ! जो गौर तेज और श्याम तेज जाना गया है, वह दोनों तुम्हारेही साक्षात्तेज हैं, और गोलोकधामके पति ब्रह्मादिकोंके ईश परेसे परे आपकी मैं शरण प्राप्त हुआ हूँ ॥२७॥ जो सर्वोत्कृष्ट इस युगल स्तोत्रको नित्य पढ़े वह सर्वोत्तम गोलोकधामको जाता है और लोकमें उसको स्वाभाविकी सम्पूर्ण समृद्धि होती है ॥ २८ ॥ यद्यपि आप प्रीतियुक्त दोनों स्त्री पुरुष हो, और दोनोंका दोनोंके अनुरूप रूप है, तो भी लोक व्यवहार संग्रहके लिये मै विवाहकी विधि कराता हूँ ॥२९॥ नारदजी कहते है तब ब्रह्माजी उठकर कुण्डमें अग्नि प्रज्वलित करके उनके सामनेही वेद विधिसे परस्पर प्राणिग्रहण कराकर बैठ गये ॥३०॥ तब ब्रह्माजीने श्रीराधाकृष्ण दोनोको अग्निकी सात परिक्रमा दिलाई, नमस्कार कराकर ब्रह्माजीने जो सात मन्त्र हैं, उन्हें पढाया ॥३१॥ उसके बाद हरिके हृदयपर राधिकाका हाथ धराकर फिर श्रीकृष्णका हाथ राधिकाजीकी पीठपर धराकर तत्कालीन जो

श्यामंचगौरंविदितंद्विधामहस्तवैवसाक्षात्पुरुषोत्तमोत्तम॥ गोलोकधामाधिपतिंपरेशंपरात्परंत्वांशरणंव्रजाम्यहम् ॥२७॥ सदापठेद्योयुगलस्तवंपरंगोलोकधामप्रवरंप्रयातिसः ॥ इहैवसौन्दर्यसमृद्धिसिद्धयोभवंतितस्यापिनिसर्गतःपुनः ॥२८॥ यदायुवांप्रीतियुतौचदंपतीपरात्परौतावनुरूपरूपितौ ॥ तथापिलोकव्यवहारसंग्रहाद्विधिंविवाहस्यतुकारयाम्यहम् ॥ २९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदासउत्थायविधिर्हुताशनंप्रज्वाल्यकुण्डेस्थितयोस्तयोःपुरः ॥ श्रुतेःकरग्राहविधिंविधानतोविधायधातासमवस्थितोभवत् ॥३०॥ सवाहयामासहरिंचराधिकांप्रदक्षिणंसप्तहिरण्यरेतसः ॥ ततश्चतौतेप्रणमय्यवेदवित्तौपाठयामासचसप्तमंत्रकम् ॥ ३१॥ ततोहरेर्वक्षसिराधिकायाःकरंचसंस्थाप्यहरेःकरंपुनः ॥ श्रीराधिकायाःकिलपृष्ठदेशकेसंस्थाप्यमंत्रांश्चविधिःप्रपाठयन् ॥३२॥ राधाकराभ्यांप्रददौचमालिकांकिंजल्किनींकृष्णगलेऽलिनादिनीम्॥हरेःकराभ्यांवृषभानुजागलेततश्चवह्निप्रणमय्यवेदवित् ॥३३॥ संवासयामाससुपीठयोश्चतौकृतांजलीमौनयुतौपितामहः ॥ तौपाठयामासतुपंचमंत्रकंसमर्प्यराधांचपितेवकन्यकाम् ॥३४॥ पुष्पाणिदेवाववृषुस्तदानृपविद्याधरीभिर्ननृतुःसुरांगनाः ॥ गन्धर्वविद्याधरचारणाःकलंसकिन्नराःकृष्णसुमंगलंजगुः ॥ ३५ ॥ मृदंगवीणामुरुयष्टिवेणवःशंखानकादुंदुभयःसतालकाः ॥ नेदुर्मुहुर्देववरैर्दिविस्थितैर्जयेत्यभून्मंगलशब्दमुच्चकैः ॥ ३६ ॥

विवाह पद्धत्युक्त मन्त्र हैं, उन्हें पढ़ाया ॥३२॥ राधिकाजीके हाथसे भ्रमर जिसमें गुंजार करे ऐसी मकरन्द युक्त कमलोंकी माला श्रीकृष्णको पहिनवाकर श्रीकृष्णके हाथसे राधिकाके गलेमें पहिनवाया ॥३३॥ फिर ब्रह्माजीने हाथ जोड़े मौन धरे उन राधाकृष्णको उत्तम सिंहासनपर बैठाया, और पिता जिस तरह कन्याको समर्पण करे उसी तरह राधाको समर्पण कर उन दोनोंको पांच मन्त्र पढ़ाये ॥३४॥ हे राजन् ! तब देवताओंने पुष्पोंकी वर्षा की और विद्याधरियोंके साथ देवांगनाएँ नाचने लगीं गन्धर्व, विद्याधर, चारण और किन्नर राधाकृष्णका मंगलाष्टक गाने लगे ॥ ३५ ॥ और आकाशमें खड़े देवता मृदंग, वीणा, मुहचंग, बांसुरी, शंख, नगाड़े, मजीरा बजाने लगे और उच्च स्वरसे जय जय शब्द करने लगे ॥ ३६ ॥

तब तो स्वयं हरिभगवान् ब्रह्माजीसे बोले-हे ब्रह्मन् ! तुम अपना वाञ्छित वर दक्षिणा मांगो, तब ब्रह्माजी बोले कि हे प्रभो ! आप मुझे अपने चरण कमलोंकी भक्ति दीजिये, यही दक्षिणा है ॥३७॥ तब ऐसाही हो हरिके यह कहने पर श्रीराधाके चरण कमलोंको बारंबार शिरसे प्रणाम करके बड़े प्रसन्न होकर ब्रह्माजी अपने लोकको चले गये ॥३८॥ तब तो निकुञ्जमें राधिकाजीके दिये भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चोष्य, चार प्रकारके सिद्धान्नोंका मन्द-मन्द हँसते परमात्मा श्रीकृष्णने भोजन किया, और श्रीकृष्णने राधिकाजीको चारों प्रकारके भोजन कराकर पान सुपारी खिलाई ॥ ३९ ॥ फिर अपने हाथसे प्रियाके हाथको पकड़कर वृन्दावनके लता वृक्षों, श्रीयमुनाजीकी शोभा और वृन्दावनकी शोभाको राधिकाजीको दिखाते यमुना किनारे विचरण करते मधुर-मधुर बातें करते निकुञ्जमें गये ॥४०॥ जब शोभा युक्त लताओंके कुञ्जमें जो निकुञ्ज है उसमें आकर छिप गये, तब शाखाके अन्तरमें छिपे और मन्द मुसकान कर रहे श्रीकृष्णको श्री राधिकाजी देखकर उनके पीताम्बरको पकड़ कर खड़ी हो गई ॥४१॥ फिर श्री राधिकाजी श्रीकृष्णसे हाथ छुड़ाकर

उवाचतत्रैवविधिंहरिःस्वयंयथेप्सितंत्वंवदविप्रदक्षिणाम ॥ तदाहरिंप्राहविधिःप्रभोमेदेहित्वदंघ्र्योर्निजभक्तिदक्षिणाम् ॥३७॥ तथास्तुवाक्यंवद-
तोविधिर्हरेःश्रीराधिकायाश्चपदद्वयंशुभम् ॥ नत्वाकराभ्यांशिरसापुनःपुनर्जगामगेहंप्रणतःप्रहर्षितः ॥ ३८ ॥ ततोनिकुंजेषुचतुर्विधान्नंदिव्यं-
मनोज्ञंप्रिययाप्रदत्तम् ॥ जघासकृष्णःप्रहसन्परात्माकृष्णेनदत्तंक्रमुकंचराधा ॥ ३९ ॥ ततःकरेणापिकरंप्रियायाहरिर्गृहीत्वाप्रचचालकुंजे ॥
जगामजल्पन्मधुरंप्रपश्यन्वृंदावनंश्रीयमुनालताश्च ॥४०॥ श्रीमल्लताकुंजनिकुंजमध्येनिलीयमानंप्रहसंतमेव ॥ विलोक्यशाखांतरितंचराधाज-
ग्राहपीतांबरमाव्रजंती ॥४१॥ दुद्रावराधाहरिहस्तपद्माझंकारमंघ्र्योःप्रतिकुर्वतीकौ ॥ निलीयमानायमुनानिकुंजेपुनर्व्रजंतीहरिहस्तमात्रात् ॥
॥४२॥ यथातमालःकलधौतवल्ल्याघनोयथाचंचलयाचकास्ति॥नीलोद्रिराजोनिकषाश्मखन्याश्रीराधयाद्यस्तुतथारमण्या ॥४३॥ श्रीरासरंगे
जनवर्जितेपरेरेमेहरीरासरसेनराधया ॥ वृंदावनेभृंगमयूरकूजल्लतेचरत्येवरतीश्वरःपरः ॥४४॥ श्रीराधयाकृष्णहरिःपरात्माननर्तगोवर्द्धनकंदरासु ॥
मत्तालिषुप्रस्रवणैःसरोभिर्विराजितासुद्युतिमल्लतासु ॥ ४५ ॥ चकारकृष्णोयमुनांसमेत्यवरंविहारंवृषभानुपुत्र्या ॥ राधाकराल्लक्षदलंसपद्मंधा-
वन्गृहीत्वायमुनाजलेषु ॥ ४६ ॥

नूपुरोंकी झंकार करती एक हाथके छोटे श्रीकृष्णके आगे २ यमुनाकी निकुंजमें छिपनेको गई हैं, तब दौड़कर पकड़ कर गलेमें राधिकाजी गल बहियाँ करती ॥४२॥ तब जैसे तमालसे लिपटी सुनहरी लता, जैसे घनमें लिपटी बिजली और कसौटीकी खानसे पन्नाका पहाड़ शोभित होता है, वैसे श्रीकृष्णके संग शोभित हुई ॥४३॥ जनवर्जित एकान्त स्थानमें राधाके संग रास रससे वृन्दावनमें रमे, जिस वृन्दावनमें मोर बोल रहे हैं, भ्रमर गुञ्जार रहे हैं, उसमें रतिके संग जैसे साक्षात् कामदेव रमण करे वैसे प्रियाके संग आप रमे हैं ॥४४॥ मतवाले भँवरे जिनमें गुञ्जार कर रहे, झरना और दिव्य सरोवरसे सुशोभित दिव्य स्वर्ण लता जिनमें विद्यमान ऐसी गोवर्द्धनकी कन्दराओंमें श्रीराधिकाजी सहित श्रीकृष्णने नृत्य किया ॥४५॥ फिर श्रीकृष्णने यमुनाजीपर आकर श्रीराधिकाजीके संग सुन्दर विहार किया, फिर श्रीराधिकाजीके हाथमेंसे लाख दलके कमलके फूलको छुड़ाकर यमुनाजलमें छिप गये ॥४६॥

तव श्रीराधाजी श्रीकृष्णकी बांसुरी, छड़ी और पीताम्बर लेकर हँसती-हँसती चली गई, जब श्रीकृष्णने बांसुरी छड़ी और पीताम्बर मांगे हैं, तव श्रीराधाजीने कहा कि हे महराज! आप हमें हमारा सहस्र दल कमल पुष्प दीजिये। पुष्प देवोगे तो मुरली पीताम्बर मिलेंगे, नहीं तो नहीं मिलेंगे ॥४७॥ जब श्रीकृष्णने कमलका फूल दे दिया, तब राधाजीने वंशी, वेत, पीताम्बर दिये, इस प्रकारकी यमुनातट पर अनेक लीला पुनः हुई ॥४८॥ उसके बाद श्री प्रभुने भाण्डीरवनमें प्यारीका अद्भुत मन मोहन शृंगार, मुखमें पत्र रचना, पगन में महावर, नेत्रोंमें कज्जल और दिव्य पुष्प तथा रत्नोंसे किया ॥४९॥ तव तो राधिकाजी भी श्रीकृष्णका शृंगार करनेको उद्यत हुई, तभी श्रीकृष्ण किशोर रूप छोड़कर बालक रूप हो गये ॥५०॥ जैंसे भयसे रोते भूमिमें लुढकते बालक रूप नन्दजीने राधिकाको दिये थे, वैसे ही बालक हो गये, उनको देखकर राधिकाजी रोने लगी और बोली कि हे हरे! मुझसे माया क्यों करते हैं ॥५१॥ ऐसे व्याकुल होकर रो रही श्रीराधाके प्रति आकाश वाणी हुई, हे राधे! तुम शोच मत करो तुम्हारा जो मनोरथ है, वह तुझे प्राप्त होगा ॥ ५२ ॥

राधाहरेःपीतपटंचवंशींवेत्रंगृहीत्वासहसाहसंती ॥ देहीतिवंशींवदतोहरेश्चजगादराधाकमलंनुदेहि॥४७॥तस्यैददौदेववरोथपद्मंराधाददौपीतपटंच वंशीम् ॥ वेत्रंचतस्मैहरयेतयोःपुनर्बभूवलीलांयमुनातटेषु॥४८॥ततश्चभांडीरवनेप्रियायाश्चकारशृंगारमलमनोज्ञम्॥ पत्रावलीयावककज्जलाद्यैः पुष्पैःसुरत्नैर्व्रजगोपरत्नः ॥ ४९ ॥ हरेश्चशृंगारमलंप्रकर्तुंसमुद्यतातत्रयदाहिराधा ॥ तदैवकृष्णस्तुबभूवबालोविहायकैशोरवपुःस्वयंहि ॥ ॥५०॥ नंदेनदत्तंशिशुमेवयादृशंभूमौलुठंतंप्ररुदंतमाभयात् ॥ हरिंविलोक्याशुरुरोदराधिकातनोषिमायांनुकथंहरेमयि ॥५१॥ इत्थंरुदंतींसहे-साविषण्णामाकाशवागाहतदैवराधाम् ॥ शोचंनुराधेइहमाकुरुत्वंमनोरथस्तेभविताहिपश्चात् ॥ ५२ ॥ श्रुत्वाथराधाहिहरिंगृहीत्वागताशुगेह-व्रजराजपत्न्याः ॥ दत्त्वाचबालंकिलनंदपत्न्याउवाचदत्तंपथितेचभर्त्रा ॥५३॥ उवाचराधांनृपनंदगेहिनीधन्यासिराधेवृषभानुकन्यके ॥ त्वया शिशुर्मेपरिरक्षितोभयान्मेघावृतेव्योम्निभयातुरोवने॥५४॥ संपूजितासद्गुणश्लाघितासासानंदितासावृषभानुपुत्री॥ यदाज्ञनुज्ञाप्ययशोमतीं-साशनैःस्वगेहंनिजगामराधा ॥ ५५ ॥ इत्थंहरेर्गुप्तकथाचवर्णिताराधाविवाहस्यसुमंगलावृता ॥ श्रुताचयैर्वापठिताचपाठितातान्पापवृंदानक-दास्पृशंति॥ ५६ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां गोलोकखंडे श्रीनारदबहुलाश्वसंवादे श्रीराधिकाविवाहवर्णनंनामषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

यह सुनकर श्री राधा कृष्णको लेकर बड़ी शीघ्रतासे व्रजरानीके घर गई, श्रीकृष्णको नन्दकी पत्नीको देकर बोली कि इनको मार्गमें व्रजराज मुझको दे गये हैं ॥ ५३ ॥ तव नन्द रानी राधिकासे बोली-हे वृषभानु नन्दिनी ! तुम धन्य हो, तुमने आज मेरे बालककी इस मेह बूंदके भयसे बड़ी रक्षा की, यह वनमें मेहसे बहुत डर गया है ॥ ५४ ॥ ऐसे यशोदाने सन्मान और उसके उत्तम गुणोंकी बड़ाई की, तब राधिकाजी प्रसन्न होकर यशोदाजीसे आज्ञा लेकर धीरे-धीरे अपने घरको चली गई ॥५५॥ इस प्रकार बड़ी गुप्त हरि और राधिकाजीके विवाहकी मंगल करनेवाली कथाका वर्णन किया है, इसको जो कोई सुनते हैं, सुनाते हैं, पढ़ते हैं, और पढ़ाते हैं, उनको पाप समूह कभी भी स्पर्श नहीं करते हैं ॥५६॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां गोलोकखण्डे भाषाटीकायां नारदबहुलाश्वसंवादे श्रीराधिकाविवाहवर्णनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

नारदजी कहते हैं, इसके बाद कृष्ण बलदेव दोनों बालक सुन्दर नंद मंदिरको अपनी बड़ी मनोहर लीलाओंसे अत्यन्त सुशोभित करने लगे ॥१॥ हे मैथिल ! घुटनोंसे रेंगते थोड़े ही दिनोंमें व्रजमें मीठी २ बोली बोलने लगे ॥२॥ यशोदाजी रोहिणीजीने लाड़ लड़ाये, पोषण किये, दोनों बालक कभी तो गोदीमेंसे निकल जाते हैं और कभी गोदीमें आ जाते हैं ॥ ३ ॥ झनझन झांझ और मञ्जीर (पायजेब) का शब्द करते वे दोनों अपनी मायासे बालक बने त्रिलोकीको मोहित करते व्रजमें बाललीला करने लगे ॥ ४ ॥ कभी व्रज बालकोंके साथ खेलते, आंगनमें लोट रहे उनके धूलसे धूसर अंगको साफकर यशोदाजी आदरसे स्नान कराती थी ॥५॥ फिर गोदीमेंसे उतर आंगनमें घुटनोंके बल चलने लगे फिर भागकर गोदीमें आ गये, जैसे केहरी नाहर निर्भय खेलते हैं, वैसेही दोनों रामकृष्ण बाल लीला करते हैं ॥ ६ ॥ सुवर्णके तार लगे झलमलाते पीताम्बर और पीला झगुला

श्रीनारदउवाच ॥ अथबालौकृष्णरामौगौरश्यामौमनोहरौ ॥ लीलयाचक्रतुरलंसुन्दरंनंदमंदिरम् ॥ १ ॥ रिंगमाणौचजानुभ्यांपाणिभ्यांसह मैथिल ॥ व्रजताल्पेनकालेनव्रवंतौमधुरंव्रजे ॥२॥ यशोदयाचरोहिण्यालालितौपोषितौशिशू ॥ कदाविनिर्गतावंकात्क्वचिदंकसमास्थितौ॥३॥ मंजीरकिंकिणीरावंकुर्वंतौतावितस्ततः ॥ त्रिलोकींमोहयंतौद्वौमायाबालकविग्रहौ ॥४॥ क्रीडंतमादायशिशुंयशोदाऽजिरेलुठंतंव्रजबालकैश्च ॥ तद्धूलिलेपावृतधूसरांगंचक्रेह्यलंप्रोक्षणमादरेण ॥५॥ जानुद्वयाभ्यांचसमंकराभ्यांपुनर्व्रजन्प्रांगणमेत्यकृष्णः ॥ मात्रंकदेशेपुनराव्रजन्सन्बभौ व्रजेकेसरिबाललीला ॥ ६ ॥ तंसर्वतोहैमनचित्रयुक्तंपीतांबरंकंचुकमादधानम् ॥ स्फुरत्प्रभंरत्नमयंचमौलिंदृष्ट्वासुतंप्रापमुदंयशोदा ॥७॥ बालं मुकुंदमतिसुन्दरबालकेलिंदृष्ट्वापरंमुदमवापुरतीवगोप्यः ॥ श्रीनंदराजव्रजमेत्यगृहंविहायसर्वास्तुविस्मृतगृहाःसुखविग्रहास्ताः ॥८॥ श्रीनंदराज गृहकृत्रिमसिंहरूपंदृष्ट्वाव्रजन्प्रतिरवन्नृपभीरुवद्यः ॥ नीत्वाचतन्निजसुतंगृहमाव्रजंतींगोप्योव्रजेसघृणयाह्यवदन्यशोदाम् ॥९॥ श्रीगोप्यऊचुः ॥ ॥ क्रीडार्थंचपलंह्येनंमाबहिष्कारयांगणात् ॥ बालकेलिंदुग्धमुखंकाकपक्षधरंशुभे ॥ १० ॥ ऊर्ध्वदंतद्वयंजातंपूर्वमातुलदोषदम् ॥ अस्यापिमा-तुलोनास्तितेसुतस्ययशोमति ॥ ११ ॥ तस्माद्दानंतुकर्तव्यंविघ्नानांनाशहेतवे ॥ गोविप्रसुरसाधूनांछंदसांपूजनंतथा ॥ १२ ॥

धारण करे, उसपर जिसकी कान्ति फैल रही है, ऐसे रत्नोंके मुकुटको पहने श्रीकृष्णको देख यशोदा बड़े आनन्दको प्राप्त हो गई ॥७॥ बालक मुक्तिके दाता अत्यन्त सुन्दर बाल लीलायें खेलें, उनको देख गोपियाँ अति आनन्दको प्राप्त हुई, वे सुखमें तन्मय होकर नन्दजीके व्रजमें आकर घरोंकी याद भूल जाती हैं, आनन्दमें मग्न हो जाती हैं ॥८॥ कभी नंद मंदिरमें पत्थरके बने नाहरको देखकर डरपोककी तरह अरे ! नाहर आया, ऐसे भाग उठते हैं, तब उस अपने पुत्रको लेकर घरको आती यशोदाजीसे बड़ी दया करती गोपी कहती हैं॥९॥अरी ! देखो तुम इस चपल बालकको घरसे बाहर मत निकाला करो, हे शुभे ! इसका अभी दूधका मुख है, इसके सिरपर जटुली है, काकपक्षको धारण किये हैं, कहीं किसीकी नजर न लग जाय ॥१०॥ ऊपरके दो दांत पहले निकले हैं, अतः मामाको दोषी हैं, सो हे यशोमति ! इस तेरे पुत्रके तो मामा पहलेही नहीं है॥११॥ फिर भी विघ्नोंको

दूर करनेके लिये तुमको दान और गौ, ब्राह्मण, देवता, साधु, वेद इनका पूजन करवाना चाहिये॥१२॥नारदजी कहते हैं, तब तो यशोदाजी रोहिणीजी पुत्रोंके कल्याणके लिये वस्त्र, गहने, मोहर, गौ और अन्न इनका नित्य दान करने लगी ॥ १३ ॥ फिर व्रजमें सिंहके बच्चेकीसी चितवन वाले ये दोनों बालक रामकृष्ण पांवों चलने लगे, और दिन प्रतिदिन बड़े होने लगे ॥१४॥ श्रीदामा, सुबल आदि जो बराबरके व्रजबालक हैं, उनके साथ यमुनाजीकी रेतीमें अनेक प्रकारके खेल करत लोटा करते हैं ॥ १५ ॥ फिर कालिंदीके किनारेके झाल, ताल, तमाल और कदम्बोंकी निकुञ्जोंकी शोभायुक्त बगीचोंमें जाकर रामकृष्ण विचरने लगे हैं ॥ १६॥ गोप गोपियोंको बाललीलासे आनन्द देते भगवान् बराबरके बालकोंके साथ मक्खन चुराने लगे ॥ १७ ॥ एक समय उपनन्दकी स्त्री प्रभावती नंदके घरमें आकर यशोदाजीसे बोली ॥ १८ ॥ हे यशोमति ! दही, दूध, मट्ठा, मक्खन, हमारा तुम्हारा सब एक है, और तुम्हारीही कृपासे हमारे हुआ है ॥१९॥ किन्तु मैं नहीं जानती हूँ, इसने चुराना कहाँसे सीखा है, तुम इस माखन चोर अपने

श्रीनारदउवाच ॥ तदायशोदारोहिण्यौसुतकल्याणहेतवे ॥ वस्त्ररत्ननवान्नानांदानंनित्यंचचक्रतुः ॥ १३ ॥ अथव्रजेरामकृष्णौबालसिंहाव-लोकनौ ॥ पद्भ्यांचलंतौघोषेषुवर्द्धमानौबभूवतुः ॥ १४ ॥ श्रीदामसुबलाद्यैश्चवयस्यैर्व्रजबालकैः ॥ यमुनासिकतेषुश्रेलुठंतौसकुतूहलौ॥१५॥ कालिंद्युपवनेश्यामैस्तमालैःसघनैर्वृते ॥ कदंबकुंजशोभाढ्येचेरतूरामकेशवौ ॥१६॥ जनयन्गोपगोपीनामानंदंबाललीलया ॥ वयस्यैश्चोरयामासनवनीतंघृतंहरिः ॥ १७ ॥ एकदाह्युपनंदस्यपत्नीनाम्नाप्रभावती ॥ श्रीनंदमंदिरंप्राप्तायशोदांप्राहगोपिका ॥ १८ ॥ प्रभावत्युवाच ॥ नवनीतंघृतंदुग्धंदधितक्रंयशोमति ॥ आवयोर्भेदरहितंत्वत्प्रसादाच्चमेभवत् ॥ १९ ॥ नाहंवदामिचानेनस्तेयंकुत्रापिशिक्षितम् ॥ शिक्षांकरोषिनसुतेनवनीतमुषिस्वतः ॥ २० ॥ यदामयाकृताशिक्षातदाधृष्टस्तवांगजः ॥ गालिप्रदानंदत्त्वायंद्रवतिप्रांगणान्मम ॥ २१ ॥ व्रजाधीशस्य पुत्रोयंभूत्वास्तेयंसमाचरेत् ॥ नमयाकथितंकिंचिद्यशोदेतवगौरवात् ॥ २२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वाप्रभावतीवाक्यंयशोदानंदगेहिनी ॥ बालंनिर्भर्त्स्यंतामाहसाम्नाप्रेमपरायणा ॥ २३ ॥ श्रीयशोदोवाच ॥ गवांकोटिर्गृहेमेस्तिगोरसैरार्द्रिताचला ॥ नजानेदधिमुड्बालंनात्तिसोत्रकदाचन ॥ २४ ॥ अनेनमुषितंगव्यंतत्समत्वंगृहाणमे ॥ तेशिशौमेशिशोर्भेदोनास्तिकिंचित्प्रभावति ॥ २५ ॥

पुत्रको शिक्षा नहीं देती हो, देखो यह अच्छी बात नहीं ॥२०॥ जब मैंने इसको शिक्षा दी, तो देख ढीठ यह तुम्हारा पुत्र गाली देकर मेरे आंगनमेंसे भाग आया है ॥ २१ ॥ देख व्रजाधीशका बेटा होकर चोरी करता है, तुम्हारे गौरवसे हे यशोदे ! मैंने कुछ नहीं कहा ॥२२॥ श्रीनारदजी कहते हैं, नन्दकी रानी यशोदा प्रभावतीका वचन सुनकर बालक को ताडना देकर बड़े प्रेमसे प्रभावतीसे बोली ॥ २३ ॥ सुन री प्रभावती ! मेरे घरमें एक करोड़ गौएं ऐसी हैं, कि जिनके दही, दूध, माखनसे, घरकी धरतीमें कीच रहती है, किन्तु मैं यह नहीं जानती हूँ कि, तुम्हारा ही दही, दूध, जाने कैसे चुरा लाता है. यहाँ तो बिलकुल भी कभी नहीं खाता है ॥ २४ ॥ सो इसने जितना तुम्हारा दही, मक्खन चुराया है, उतना तुम मुझसे ले जाओ और देखो, तुम्हारे और मेरे पुत्रमें भेद नहीं है ॥ २५ ॥

परन्तु देख जिस किसी दिन इसको माखन खाते हुये पकड़ लावेगी. उस दिन में जानूँगी, हे प्रभावती ! तभी इसको ताडना दूँगी और बाधूँगी ॥ २६ ॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे व्रजरानीके वचन सुनकर प्रभावती प्रसन्न होकर घर चली आई ॥ २७ ॥ फिर एक दिन श्रीकृष्ण अपने बराबरके बालकोंको साथ लेकर इसके घर चोरी करनेके लिये दीवारके नीचे खड़े हुये हाथसे हाथ पकड़कर धीरे-धीरे अन्दर गये ॥२८॥ तब छीकेपर रखा गोरस देखा, जहाँ हाथ न पहुँचे, तब ओखल रखा; उसपर पीढ़ा रखा, उसके ऊपर गोपोंको खड़ाकर उनके ऊपर आप चढ़ गये ॥२९॥ फिर भी ऊँचा रहा, छीकेपर हाथ नहीं पहुँचे, तब श्रीदामा सुबलने दण्डसे गोरसके बर्तनको फोड़ दिया, तब फुटे हुये पात्रमेंसे गोरस बह निकला ॥३०॥ धरतीपर गिरे गोरसको श्रीकृष्ण खाने लगे और बालकोंको बन्दरोंको भी खिलाने लगे ॥ ३१ ॥ बर्तन फूटनेकी आहट सुनकर प्रभावती चली आई तो और

नवनीतमुखंचैनमत्रत्वंह्यानयिष्यसि ॥ तदाशिक्षांकरिष्यामिभर्त्सनंबंधनंतथा ॥२६॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वावाक्यंतदागोपीप्रसन्नागृहमा- गता॥एकदादधिचौर्यार्थंकृष्णस्तस्यागृहंगतः॥२७॥वयस्यैर्बालकैः सार्द्धंपार्श्वंकुडचेगृहस्यच ॥ हस्ताद्धस्तंसंगृहीत्वाशनैःकृष्णोविवेशह॥२८॥ शिक्यस्थंगोरसंदृष्ट्वाहस्ताग्राह्यंहरिःस्वयम् ॥ उलूखलेपीठकेचगोपान्स्थाप्यारुरोहतम् ॥ २९ ॥ तदपिप्रांशुनालभ्यंगोरसंशिक्यसंस्थितम्॥ श्रीदाम्नासुबलेनापिदंडेनापितताडच ॥३०॥ भग्नभांडात्सर्वगव्यंवहद्भूमौमनोहरम् ॥ जघाससबलोमर्कैर्बालकैःसहमाधवः ॥३१॥ भग्नभांड स्वनंश्रुत्वाप्राप्तागोपिप्रभावती ॥ पलायितेषुबालेषुजग्राहश्रीकरंहरेः ॥३२॥ नीत्वामृषाश्रुंभीरुंचगच्छन्तीनन्दमंदिरम् ॥ अग्रनन्दंस्थितंदृष्ट्वा मुखेवस्त्रंचकारह ॥ ३३ ॥ हरिर्विचिंतयन्नित्थंमातादंडंप्रदास्यति ॥ दधारतद्बालरूपंस्वच्छन्दगतिरीश्वरः ॥ ३४ ॥ सायशोदांसमेत्याशुप्राह गोपीरुषान्विता ॥ भाण्डंभग्नीकृतंसर्वंमुषितंदध्यनेनवै ॥३५॥ यशोदातत्सुतंवीक्ष्यहसंतीप्राहगोपिकाम् ॥ वस्त्रांतंचमुखाद्गोपीदूरीकृत्यवदांहसः ॥३६॥ अपवादोयदादेयोनिर्वासंकुरुमेपुरात् ॥ युष्मत्पुत्रकृतंचौर्यमस्मत्पुत्रकृतंभवेत् ॥३७॥ जनलज्जासमायुक्तादूरीकृत्यमुखांबरम् ॥ सापि प्राहनिजंबालंवीक्ष्यविस्मितमानसा ॥ ३८ ॥

बालक भाग गये किन्तु श्रीकृष्णका हाथ पकड़ लिया ॥३२॥ श्रीकृष्ण झूंठेही रोने लगे, उनकी बांह पकड़कर वह गोपी नन्दमहलको ले चली, सामने नन्दजीको बैठा देख घूँघट निकाल लिया ॥३३॥ श्रीकृष्णने विचार किया कि माता देखेगी तो मारेगी, तब स्वच्छन्दगति श्रीकृष्णने उसके पुत्रका रूप धारण कर लिया ॥३४॥ वह गोपी यशोदाके पास आकर रोषपूर्वक बोली ॥३५॥ कि देखो मेरा सब दही खाया और चुराया है, और बर्तन भी फोड़ दिया है, तब यशोदा उसीके पुत्रको देखकर हँसकर गोपीसे बोली, जरा घूँघट तो दूर करो, उसके बाद दोषको कहना ॥ ३६ ॥ जो तुम व्यर्थमें हमारे पुत्रको दोष देती हो, तो मेरे गोकुलमेंसे निकल जाओ, अपने पुत्रकी की हुई चोरी हमारे पुत्रको लगाती हो ॥ ३७ ॥ तब लाजके मारे जो घूँघट खोलकर देखा तो अपनाही बालक है, उसको देखकर आश्चर्यमें आकर बोली ॥ ३८ ॥

अरे निगोडे तू कहँसे आ गया व्रजका सार तो मेरे हाथ था, ऐसे कहती हुई बालकको लेकर नन्द महलसे खिसियाकर चली आई ॥ ३९ ॥ यशोदा, रोहिणी, बलदेव, गोप, गोपी, हँसते-हँसते यह बोले-अरे भैया ! देखा व्रजमें यह बड़ा अन्याय है ॥४०॥ तब नन्द नन्दन भगवान् तो बाहर गलीमें आकर हँसते बड़े ढीठ चंचल नेत्रवाले उस प्रभावतीसे यह बोले ॥ ४१ ॥ हे गोपिके ! यदि तू मुझको फिर पकड़ेगी तो मैं तेरे पतिका रूप धारण कर लूँगा, इसमें संदेह मत समझना ॥ ४२ ॥ नारदजी कहते हैं कि, हे मैथिल इस बातको सुनकर वह गोपी विस्मित होकर अपने घरको चली गई ॥४३॥ इति श्रीगर्गसंहितायां गोलोकखण्डे भाषाटीकायां बालचरित्रे दधि स्तेयवर्णनं नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥ नारदजी कहते हैं-माखन चोर गोपियोंके घरोंमें विचरते श्याम सुन्दर मनोहर रूप नवकमलदल लोचन बाल चन्द्रमाके समान बढ़ते मनुष्योंके चित्तको हरते, व्रजमें शोभा करने

निष्पदस्त्वंकृतःप्राप्तोव्रजसारोस्तिमेकरे॥वदन्तीत्थंचतंनीत्वानिर्गतानन्दमन्दिरात्।३९।यशोदारोहिणीनंदोरामोगोपाश्चगोपिकाः॥जहसुःकथ-यंतस्तेदृश्योन्यायोव्रजेमहान्॥४०॥भगवांस्तुबहिर्वीथ्यांभूत्वाश्रीनन्दनन्दनः॥प्रहसन्गोपिकांप्राहधृष्टांगश्चंचलेक्षणः॥४१॥ श्रीभगवानुवाच ॥ पुनर्मांयदिगृह्णासिकदाचित्त्वंहिगोपिके ॥ तेभर्तृरूपस्तुतदाभविष्यामिनसंशयः ॥ ४२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वासाविस्मितागोपीगतागे-हेथमैथिल॥तदासर्वगृहेगोप्योनगृह्णन्तिहरिंह्रिया॥४३॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांगोलोकखण्डेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीकृष्णबालचरित्रेदधिस्तेय वर्णनंनामसप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ गोपीगृहेषुविचरन्नवनीतचौरःश्यामोमनोहरवपुर्नवकंजनेत्रः ॥ श्रीबालचन्द्रइववृद्धि-गतोनराणांचित्तंहरन्विचचकारव्रजेचशोभाम्॥१॥श्रीनंदनंदनमतीवचलंगृहीत्वागेहंनिधायमुमुहुर्नवनंदगोपाः॥सत्कंदुकैश्चसततंपरिपालयन्तेगा-यंतऊर्जितसुखानजगत्स्मरंतः ॥ २ ॥ राजोवाच ॥ नवोपनंदनामानिवददेवऋषेमम ॥ अहोभाग्यंतुयेषांवैतेपूर्वकेइहागताः ॥ ३ ॥ तथा षड्वृषभानूनांकर्माणिमंगलानिच ॥ श्रीनारदउवाच ॥ गयश्चविमलः श्रीशः श्रीधरोमंगलायनः ॥४॥ मंगलोरंगवल्लीशोरंगोजिर्देवनायकः ॥ नवनंदाश्चकथिताबभूवुर्गोकुलेव्रजे ॥५॥ वीतिहोत्रोग्निभुक्सांबः श्रीकरो गोपतिःश्रुतः ॥ व्रजेशःपावनःशांतउपनंदाःप्रकीर्तिताः ॥ ६ ॥

लगे ॥ १ ॥ अति चंचल श्रीनंदनन्दनको पकड़कर अपने घरमें बैठालकर नौओं नन्द अत्यन्त मोहित हो गये, सुन्दर गेंद बनाकर खेलाते हैं, गाते हैं, घरके सुख छोड़ दिये हैं; कृष्णके आनन्दमें किसीकी याद नहीं करते हैं ॥२॥ राजा प्रश्न करता है कि हे देवर्षे ! नौ नन्द और नौ उपनन्दोंके नाम मुझसे कहिये इनका बड़ा भाग्य है, ये पूर्व जन्मके कौन हैं ॥३॥ वैसेही यह छः वृषभानु पूर्व जन्मके कौन हैं, इनके मंगल रूप कर्मोंको कहिये, तब नारदजी बोले कि गय, विमल, श्रीश, श्रीधर, मंगलायतन ॥४॥ मंगल, रंगवलीश, रंगौजि, देवनायक, ये नौ नन्द हैं, ये व्रजमें जो गोकुल है उसमें हुये ॥५॥ और वीतिहोत्, अग्निभुक्, साम्ब, धोकट, गोपति, श्रुत, व्रजेश, पावन और शान्त, ये नौ उपनन्द कहे हैं॥ ६॥

और नीतिवित्, मार्गद, शुक्ल, पतंग, दिव्य वाहन, गोपेष्ट, ये छः व्रजमें वृषभानु हुये हैं ॥ ७ ॥ गोलोकमें निकुञ्जके द्वारोंपर रहनेवाले बेत लिये श्यामल अंग श्रीकृष्णके निकुञ्जके रखवाले नौ नन्द हैं ॥८॥ और निकुञ्जोंमें जो करोड़ों गौऐं हैं, उनके पालनेमें तत्पर मोर पंख धरे हैं, बांसुरी बजाते हैं, वे नौ उपनन्द हैं ॥९॥ और निकुञ्जरूप किलेकी रक्षाके लिये दण्ड, पाश, धारण किये छः दरवाजों पर जो रहते हैं, वे छः वृषभानु हैं ॥१०॥ ये श्रीकृष्णकी इच्छासे सब गोलोकसे भूमिमें आये हैं, उनके प्रभावको वर्णन करनेमें ब्रह्माजी समर्थ नहीं हैं ॥ ११ ॥ मैं उनके भाग्योंका महोदय क्या वर्णन करूँ, जिनकी गोदीमें बैठकर श्रीकृष्ण बाललीला करते हैं ॥ १२ ॥ एक दिन यमुना किनारे पर श्रीकृष्णने मिट्टी खा ली, तब बालकोंने यशोदाजीसे जाकर कहा कि तुम्हारा बेटा मिट्टी खाता है ॥१३॥ बलदेवजी भी कहने लगे तब नन्दरानी पुत्रका हाथ पकड़ कर, जिसके नेत्र भयभीत हैं, उस श्रीकृष्ण से बोली ॥ १४ ॥ अरे ! तुमने मिट्टी क्यों खाई, तू बड़ा नासमझ है, देख ये तेरे सखा कहते हैं और वही बात तेरा बड़ा भाई बलदेव

नीतिविन्मार्गदःशुक्लःपतंगोदिव्यवाहनः ॥ गोपेष्टश्चव्रजेराजञ्जाताःषड्वृषभानवः ॥ ७ ॥ गोलोकेकृष्णचन्द्रस्यनिकुञ्जद्वारमाश्रिताः॥वेत्रहस्ताःश्यामलांगानवनन्दाश्चतेस्मृताः ॥ ८ ॥ निकुंजेकोटिशोगावस्तासांपालनतत्पराः ॥ वंशीमयूरपक्षाढ्याउपनन्दाश्चतेस्मृताः ॥९॥ निकुंजदुर्गरक्षायांदंडपाशधराःस्थिताः ॥ षड्द्वारमास्थिताः षड्वैकथितावृषभानवः ॥१०॥ श्रीकृष्णस्येच्छयासर्वेगोलोकादागताभुवि॥तेषांप्रभावंवक्तुंहिनसमर्थश्चतुर्मुखः ॥११॥ अहंकिमुवदिष्यामितेषांभाग्यंमहोदयम् ॥ येषामारोहमास्थायबालकेलिर्बभौहरिः ॥१२॥ एकदायमुनातीरे मृत्कृष्णेनावलीढिता ॥ यशोदांबालकाःप्राहुरत्तिबालोमृदंतव ॥ १३ ॥ बलभद्रेचवदतितदासानंदगेहिनी ॥ करेगृहीत्वास्वसुतंभीरुनेत्रमुवाच ह ॥ १४ ॥ श्रीयशोदोवाच ॥ कस्मान्मृदंभक्षितवान्महाज्ञभवान्वयस्याश्चवदंतिसाक्षात् ॥ ज्यायान्बलोऽयंवदतिप्रसिद्धंमाएवमर्थंनजहाति नेष्टम् ॥ १५ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ सर्वेमृषावादरताव्रजार्भकामातर्मयाक्वापिनमृत्प्रभक्षिता ॥ यदासमीचीनमनेनवाक्यथंतदामुखंपश्यमदीयमंजसा ॥ १६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथगोपीबालकस्यपश्यंतीसुन्दरंमुखम् ॥ प्रसारितंचदद्दशेब्रह्मांडंरचितंगुणैः ॥ १७ ॥ सप्तद्वीपान्सप्तसिंधून्सखण्डान्सगिरीन्द्रढान् ॥ आब्रह्मलोकालोकांस्त्रीन्स्वात्मभिःसव्रजैःसह ॥ १८ ॥ दृष्ट्वानिमीलिताक्षीसाभूत्वाश्रीयमुनातटे ॥ बालोऽयंमेहरिःसाक्षादितिज्ञानमयीह्यभूत् ॥ १९ ॥

भी कहता है ॥१५॥ तब भगवान् बोले कि अरी मैया ! ये व्रजके बालक सब झूँठे हैं, मैंने कभी मिट्टी नहीं खाई है, जो तुमको विश्वास नहीं होता है, और इन्हींकी कही बातको सत्य मानती हो, तो मेरे मुखको देख लो ॥१६॥ नारदजी कहते हैं कि इतना कहकर भगवान्ने मुख खोला, तब गोपी यशोदा श्रीकृष्णके मुख देखने लगी, तो उनके मुखमें त्रिगुणसे रचा सब ब्रह्माण्ड दिखाई दिया ॥१७॥ सातों द्वीप, सातों समुद्र, सब खण्ड, पर्वत, नदी, पातालसे लेकर सत्य लोक तक तीनों लोक और आप समेत समग्र अपना व्रज पुत्रके मुखमें देखा ॥१८॥ देखकर भोली यशोदाने यमुनाके किनारे पर आंखें बन्द कर लीं, और बोली कि यह मेरा पुत्र साक्षात् भगवान् है, ऐसे ज्ञानमयी हो गई ॥१९॥

तब श्रीकृष्ण अपनी मायासे मोह कराते हँस दिये, तब जो वैभव यशोदाने देखा था, उसको भूल गई ॥ २० ॥ इति श्रीगर्ग संहितायां गोलोक खण्डे भाषाटीकायां ब्रह्माण्ड दर्शनं नामाष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥ नारदजी कहते हैं कि एक समय गोकुलमें गोपियाँ सब दही मथ रही थीं, तब घर घरमें परम मनोहर गोपालके चरित्र गा रही थीं ॥ १ ॥ सुन्दरी श्री यशोदा भी प्रातःकाल उठ करके नन्द महलमें पात्रमें रई डालकर दही मथ रही थी ॥२॥ तभी बालक नन्द नन्दन माखनके लिये रईके शब्दके कुतूहलसे झांझ बजाते हुये नाचने लगे ॥३॥ तब बालकेलि भगवान् मैयाकी परिक्रमा देते सुन्दर जिसमें शब्द ऐसी करधनीको बजाते माताके आगे नाचने लगे ॥४॥ मीठी-मीठी बोलीसे मातासे माखन मांगते हैं, उस बेटाके हाथको पकड़कर नन्द रानीने हटा दिया, और क्रोधके मारे माखन भी नहीं दिया तब श्रीकृष्णने दहीका पात्र फोड़ दिया और भागे ॥ ५ ॥ तब भागते पुत्रके पीछे यशोदाभी दौड़ी पर हाथमें न आये, एक हाथ दूर रहे, नारदजी कहते हैं कि हे राजन् ! जो योगीश्वरोंको भी ध्यानमें नहीं मिले, उसे यशोदा कैसे पकड़ सकती हैं

तदाजहासश्रीकृष्णोमोहयन्निवमायया ॥ यशोदावैभवंदृष्टंनसस्मारगतस्मृतिः ॥२०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांगोलोकखंडेनारदबहुलाश्वसंवादे ब्रह्मांडदर्शनंनामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एकदागोकुलेगोप्योममन्थुर्दधिसर्वतः ॥ गृहेगृहेप्रगायन्त्योगोपालचरितं परम् ॥ १ ॥ यशोदापिसमुत्थायप्रातःश्रीनंदमंदिरे ॥ भांडेरायंविनिक्षिप्यममंथदधिसुंदरी ॥ २ ॥ मंजीररावंसंकुर्वन्बालःश्रीनंदनंदनः ॥ ननर्त्तनवनीतार्थंरायशब्दकुतूहलात् ॥३॥ बालकेलिर्बभौनृत्यन्मातुःपार्श्वमनुभ्रमन् ॥ सुनादिकिंकिणीसंघझंकारंकारयन्मुहुः ॥ ४ ॥ हैयंगवीनंसततंनवीनंयाचन्समातुर्मधुरंब्रुवन्सः ॥ आदायहस्तेश्मसुतंरुषासुधीर्बिभेदकृष्णोदधिमंथपात्रम्॥५॥पलायमानंस्वसुतंयशोदाप्रधावतीप्रापनहस्तमात्रात् ॥ योगीश्वराणामपियोदुरापःकथंसमातुर्ग्रहणेप्रयाति ॥६॥ तथापिभक्तेषुचभक्तवश्यताप्रदर्शिताश्रीहरिणानृपेश्वर॥बालंगृहीत्वास्वसुतंयशोमतीबबन्धरज्ज्वाथरुषाह्युलूखले ॥७॥ आदाययद्यद्बहुदामतत्तत्स्वल्पंप्रभूतंस्वसुतेयशोदा॥ गुणैर्नबद्धःप्रकृतेःपरोयःकथंसबद्धो भवतीहदाम्ना ॥ ८ ॥ यदायशोदागतबन्धनेच्छाखिन्नानिषण्णानृपछिन्नमानसा॥आसीत्तदायंकृपयास्वबन्धेस्वच्छंदयानःस्ववशोऽपिकृष्णः॥ ॥ ९ ॥ एवंप्रसादोनहिवीतकर्मणांनज्ञानिनांकर्मधियांकुतःपुनः ॥ मातुर्यथाभून्नृपएषुतस्मान्मुक्तिंव्यधाद्भक्तिमलंनमाधवः ॥ १० ॥

॥ ६ ॥ हे नृपेश्वर तो भी हरिने भक्तोंमें अपनी भक्तवत्सलता दिखाई, आपही माताके हाथ आ गये, तब रोष-भरी माता बालकको पकड़कर ओखलसे बांधने लगी ॥ ७ ॥ तब वो रस्सी दो अंगुल कमती हुई, तब और रस्सी जोड़ी, वह रस्सी भी दो अंगुल कम हो गई, ऐसे जो जो रस्सी जोड़ती हैं, वे सब दो अंगुल कम रह जाती हैं, भला राजन् ! जो परमेश्वर प्रकृतिके गुणोंसे भी नहीं बन्धे हैं, सो रस्सीसे कैसे बन्ध सकते हैं ॥ ८ ॥ जब बड़ी दुःखी होकर यशोदा बांधते-बांधते थक कर बैठ गई तब भक्त वत्सल अपने वश भगवान् आपही कृपा करके यद्यपि श्रीकृष्ण स्ववश हैं, किन्तु तो भी बन्धनमें आ गये ॥ ९ ॥ ऐसा प्रसाद कभी बीत राग ज्ञानियोंने भी नहीं पाया, तब कर्मोंमें बुद्धि रखने वालोंको तो वे मिलही कैसे सकते हैं वह प्रसाद माताने

बाललीलामें पाया, इसीसे प्रसन्न होकर माधव मुक्ति तो दे देते हैं, पर कभी भक्ति नहीं देते हैं ॥ १० ॥ तभी सब गोपियाँ आ गईं, उन्होंने दहीका बर्तन तो फूटा देखा और बालकको ओखलसे बंधा डरा हुआ सा देखा, तब वे दया वश हो यशोदाजीसे बोलीं ॥११॥ कि हमारे घरोंमें जाकर चिकने-चिकने पात्रोंको यह नित्य फोड़ा करता है, हमने तो एक दिन भी करुणासे इसे कुछ न कहा, हे नन्दरानी ! तुमको कुछ भी दया नहीं आती है ॥ १२ ॥ हे व्रजेश्वरि ! हे यशोदे ! हे निर्दयिन ! देख तुमको पुत्रको बांधने और लाठीसे मारनेका कुछ भी दुःख नहीं है, कहीं बालकको तुम्हारी तरह मारते डाँटते हों, जो एकही पात्रके फोड़नेसे तुमने बांध दिया है, और लाठियोंसे मारा है ॥१३॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे सुन यशोदा तो घरके कामोंमें व्यग्र हो गई तब ओखल खींचते-खींचते बालकोंके साथ श्रीकृष्ण यमुनाजीको चले गये ॥१४॥ वहाँ किनारेपर दो

तदैवगोप्यस्तुसमागतास्त्वरंदृष्ट्वाथभग्नंदधिमंथभाजनम् ॥ उलूखलेबद्धमतीवदामभिर्भीतंशिशुंवीक्ष्यजगुर्घृणातुराः ॥ ११ ॥ गोप्यऊचुः ॥ अस्मद्गृहेषुपात्राणिभिनत्तिसततंशिशुः ॥ तदप्येनंनोवदामःकारुण्यान्नंदगेहिनि ॥ १२ ॥ गतव्यथेह्यकरुणेयशोदेहेव्रजेश्वरि ॥ यष्ट्यानिर्भर्त्सितोबालस्त्वयाबद्धोघटक्षयात् ॥ १३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्तायांयशोदायांव्यग्रायांगृहकर्मसु ॥ कर्षन्नुलूखलंकृष्णोबालैःश्रीयमुनां ययौ ॥ १४॥ तत्तटेचमहावृक्षौपुराणौयमलार्जुनौ ॥ तयोर्मध्येगतःकृष्णोहसन्दामोदरःप्रभुः ॥ १५ ॥ चकर्षसहसाकृष्णस्तिर्य्यग्गतमुलूखलम् ॥ कर्षणेनसमूलौद्वौपेततुर्भूमिमंडले ॥ १६ ॥ पातनेनापिशब्दोभूत्प्रचंडोवज्रपातवत् ॥ विनिर्गतौचवृक्षाभ्यांदेवौद्वावेधसोऽग्निवत् ॥१७॥ दामोदरंपरिक्रम्यपादौस्पृष्ट्वास्वमौलिना ॥ कृतांजलीहरिंनत्वानतौतत्संमुखेस्थितौ ॥१८॥ देवावूचतुः ॥ आवांमुक्तौब्रह्मदंडात्सद्यस्तेऽच्युत दर्शनात् ॥ माभूत्तेनिजभक्तानांहेलनंह्यावयोर्हरे ॥ १९ ॥ करुणानिधयेतुभ्यंजगन्मंगलशीलिने ॥ दामोदरायकृष्णायगोविंदायनमोनमः ॥ ॥ २० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिनत्वाहरिंतौद्वौउदीचींचदिशंगतौ ॥ तदैवह्यागताःसर्वेनंदाद्याभयकातराः ॥ २१ ॥ कथंवृक्षौप्रपतितौविनावातं व्रजार्भकाः ॥ वदताशुतदाबालाऊचुःसर्वेंव्रजौकसः ॥ २२ ॥

जुडवाँ वृक्ष बड़े पुराने यमलार्जुन नामके थे, उनके बीचमे होकर हँसते-हँसते दामोदर निकले ॥१५॥ उनके बीचमें टेढ़े हुये ओखलको श्रीकृष्णने खींचा, तब जड़से उखड़कर वे दोनों पेड़ गिर पड़े ॥१६॥ उनके गिरनेसे ऐसा शब्द हुआ, मानों कहीं वज्र गिरा, तब उनमेंसे दो देवता निकले, जैसे लकड़ीमेंसे अग्नि निकली हो ॥१७॥ वे दामोदरकी परिक्रमा देकर अपने मुकुटोंसे चरण छूकर हाथ जोड़ भगवान्के सामने खड़े हो गये ॥१८॥ और बोले–हे अच्युत ! हे हरे ! तुम्हारे दर्शनसे हम ब्रह्म शापसे छूट गये, अब यही प्रार्थना है, कि हम तुम्हारे भक्तोंका अपराध कभी न करें ॥१९॥ करुणानिधि जगत्के मंगलकर्ता दामोदर श्रीकृष्ण गौओंके इन्द्र, आपके लिये हमारा नमस्कार है ॥२०॥ नारदजी कहते हैं, इस प्रकार दोनों देवता हरिको प्रणाम करके जब उत्तर दिशाको चले गये, तब नन्दादिक गोप भयके मारे आये॥२१॥उन्होंने बालकोंसे पूछा कि हे व्रज बालको ! कहो

आंधी बिना ये दोनों पेड़ कैसे गिर पड़े यह बताओ ! ऐसे जब सब व्रजवासी पूछने लगे तब वे बालक बोले ॥२२॥ कि इस कृष्णने ही ये दोनों पेड़ गिराये हैं, उन पेड़ोंमेंसे दो चमकते पुरुष निकले, सो इसको प्रणाम करके अभी उत्तरको चले गये हैं ॥२३॥ नारदजी कहते हैं कि ऐसा उनका वचन सुनकर व्रजवासियोंने उनका कहना सत्य नहीं माना तब नंदजीने ओखलमें बंधे अपने बालकको खोल दिया ॥२४॥ और उस बालकका मस्तक सूंघकर अपनी गोदीमें खेलाने लगे, यशोदाजीको डांटकर ब्राह्मणोंको बुलाकर सौ गौओंका दान दिया ॥२५॥ बहुलाश्व राजा पूछते हैं, हे देवर्षे ! वे दोनों पुरुष कौन हैं ? कौनसे दोषसे वे वृक्ष हुये ॥२६॥ नारदजी कहते हैं कि ये नलकूबर और मणिग्रीव दोनों कुबेरके पुत्र हैं, एक दिन ये मंदाकिनीके किनारेपर नन्दनवनमें चले गये ॥२७॥ अप्सराएं तो गुण गा रहीं थीं, ये मदिरा पी नंगे विचरने लगे, कैसे हैं ये दोनों मदिरासे उन्मत्त युवावस्था

बालाऊचुः ॥ अनेनपातितौवृक्षौताभ्यांद्वौपुरुषौस्थितौ ॥ एनं नत्वागतावद्यताबुदीच्यांस्फुरत्प्रभौ ॥ २३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इति श्रुत्वावचस्तेषांनतेश्रद्दधिरेततः ॥ मुमोचनंदःस्वंबालंदाम्नाबद्धमुलूखले ॥ २४ ॥ संलालयन्स्वांकदेशेमाघ्रायशिशुंनृप ॥ निर्भर्त्स्यभामिनीं नंदोविप्रेभ्योगोशतंददौ ॥ २५ ॥ श्रीबहुलाश्वउवाच ॥ काविमौपुरुषौदिव्यौवददेवर्षिसत्तम ॥ केनदोषेणवृक्षत्वंप्रापितौयमलार्जुनौ ॥२६॥ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ नलकूबरमणिग्रीवौराजराजसुतौपरौ ॥ जग्मतुर्नंदनवनंमंदाकिन्यास्तटेस्थितौ ॥२७॥ अप्सरोभिर्गीयमानौचेरतुर्गतवाससौ ॥ वारुणीमदिरामत्तौयुवानौद्रव्यदर्पितौ ॥२८॥ कदाचिद्देवलोनाममुनींद्रोवेदपारगः ॥ नग्नौदृष्ट्वाचतावाहदुष्टशीलौगतस्मृती ॥ २९ ॥ देवलउवाच ॥ युवांवृक्षसमौधृष्टौनिर्लज्जौद्रव्यदर्पितौ ॥ तस्माद्वृक्षौतुभूयास्तांवर्षाणांशतकंभुवि ॥ ३० ॥ द्वापरांतेभारतेचमाथुरेव्रजमंडले ॥ कलिंदनंदिनीतीरेमहावनसमीपतः ॥३१॥ परिपूर्णतमं साक्षात्कृष्णंदामोदरंहरिम् ॥ गोलोकनाथंतंदृष्ट्वापूर्वरूपौभविष्यथः ॥ ३२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंदेवलशापेनवृक्षत्वंप्रापितौनृप ॥ नलकूबरमणिग्रीवौश्रीकृष्णेनविमोचितौ ॥ ३३ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां गोलोकखण्डे उलूखलबंधनयमलार्जुनमोचनंनामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एकदाकृष्णचन्द्रस्यदर्शनार्थंपरस्यच ॥ दुर्वासामुनिशार्दूलोव्रजमंडलमाययौ ॥ १ ॥

में भरपूर धनका जिनको बड़ा गर्व है ॥२८॥ वहाँ कोई देवल नामक ऋषि वेदके पारगामी चले आये, दुष्ट स्वभाव नंगे वेहोश उनको देखकर ऋषि बोले ॥२९॥ अरे तुम दोनों पेड़के समान जड़ बने ढीट हो, द्रव्यके गर्वसे निर्लज्ज हो, इससे तुम पृथ्वीमें जाकर सौ वर्षतक वृक्ष हो जाओ ॥३०॥ जब द्वापरके अंतमें भरतखण्डमें मथुरा व्रजमण्डलमें यमुनाके किनारेपर महावनके पास ॥३१॥ परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण दामोदर हरि गोलोकके नाथको देखोगे, तब पहले रूपको प्राप्त हो जाओगे ॥३२॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे देवलके शापसे ये वृक्ष हो गये थे, ये कुबेरके पुत्र नलकूबर मणिग्रीव हैं, जिनको श्रीकृष्णने छुड़ा दिया ॥ ३३ ॥ इति श्रीगर्ग संहितायां गोलोकखण्डे भाषाटीकायामेकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ एक समयपर श्रीकृष्णके दर्शनको मुनियोंमें मुख्य दुर्वासा मुनि व्रजमें आये ॥ १ ॥

उन्होंने कालिंदीके निकट अति पवित्र रमणीक रेतीमे महावनके पास दूरसे ही श्रीकृष्णका दर्शन किया ॥ २ ॥ कामके भी मोहित करनवाले अति सुन्दर बालकोंके साथ रेतीमें लोट रहे आपसमें बाल लीलासे कुस्ती लड़ रहे, अति मनोहर मूर्ति ॥ ३ ॥ धूलसे धूसर अंग, घुंघराले केश, वस्त्ररहित (नंगे) बालकोंके साथ भागते कृष्णको देख दुर्वासा आश्चर्यमें पड़ गये ॥४॥ दुर्वासा बोले-यह कैसा ईश्वर है, बालकोंके साथ धूलमें लोटता है, यह श्रीकृष्ण नंदकाही पुत्र है, परात्पर ब्रह्म नहीं है ॥ ५ ॥ नारदजी कहते हैं-ऐसे दुर्वासा मुनि मोहमें आये, तब श्रीकृष्ण आपही खेलते-खेलते उनकी गोदीमें आ गये ॥६॥ फिर थोड़ी देरमें गोदीसे निकल गये, बाल सिंहकीसी जिनकी चितवन है, हँसते-हँसते मीठी बोली बोलते फिर दुर्वासाके सन्मुख आकर खड़े हो गये ॥७॥ तब हँसते श्रीकृष्णके मुखमें श्वासके मार्गसे दुर्वासा चले गये, वहाँ पेटमें और ही महालोक देखा, वह बड़े भारीवन सहित है और निर्जन है ॥८॥ उस वनमें भ्रमण करते यह विचार किया कि, अरे मैं कहाँ आ गया हूँ, ऐसे कहते दुर्वासा मुनिको एक अजगर सर्पने ग्रास लिया ॥९॥ तब इन्होंने

कालिंदीनिकटेपुण्येसैकतेरमणस्थले ॥ महावनसमीपेचकृष्णमाराद्ददर्शह ॥२॥ श्रीमन्मदनगोपालंलुठंतंबालकैःसह ॥ परस्परंप्रयुद्धंचंतंबालकेलिमनोहरम् ॥ ३ ॥ धूलिधूसरसर्वांगंवक्रकेशंदिगंबरम् ॥ धावंतंबालकैःसार्द्धंहरिंवीक्ष्यसविस्मितः ॥ ४ ॥ श्रीमुनिरुवाच ॥ सईश्वरोऽयंभगवान्कथंबालैर्लुठन्भुवि ॥ अयंतुनंदपुत्रोऽस्तिनश्रीकृष्णःपरात्परः ॥ ५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंमोहंगतेतत्रदुर्वाससिमहामुनौ ॥ क्रीडन्कृष्णस्तत्समीपेतदंकेह्यागतःस्वयम् ॥ ६ ॥ पुनर्विनिर्गतोह्यंकाद्बालसिंहावलोकनः ॥ हसन्कलंब्रुवन्कृष्णःसंमुखःपुनरागतः ॥ ७ ॥ हसतस्तस्यचमुखेप्रविष्टःश्वसनैर्मुनिः ॥ ददर्शान्यंमहालोकंसारण्यंजनवर्जितम् ॥ ८ ॥ अरण्येषुभ्रमंस्तत्रकुतःआप्तइतिब्रुवन् ॥ तदैवाजगरेणापिनिगीर्णोऽभून्महामुनिः ॥९॥ ब्रह्मांडंतत्रददृशेसलोकंसबिलंपरम् ॥ भ्रमन्द्वीपेषुसमुनिःस्थितोऽभूत्पर्वतेसिते ॥१०॥ तपस्तताप वर्षाणांशतकोटिप्रभुंभजन् ॥ नैमित्तिकाख्येप्रलयेप्राप्तेविश्वभयंकरे ॥११॥ आगच्छंतःसमुद्रास्तेप्लावयंतोधरातलम् ॥ वहंस्तेषुचदुर्वासानप्रापांतंजलस्यच ॥१२॥ व्यतीतेयुगसाहस्रेमग्नोऽभूद्विगतस्मृतिः ॥ पुनर्जलेषुविचरन्नंडमन्यंददर्शह ॥ १३ ॥ तच्छिद्रेचप्रविष्टोऽसौदिव्यांसृष्टिंगतस्ततः ॥ तदंडमूर्ध्निलोकेषुविधेरायुः समंचरन्॥१४॥एवंछिद्रंतत्रवीक्ष्यप्राविशत्सहरिंस्मरन्॥बहिर्विनिर्गतोह्यंडाद्ददर्शाशुमहाजलम्॥१५॥

उस अजगरके पेटमें एक और ब्रह्माण्ड देखा, पातालसे सत्य लोकतक उसमें सातों द्वीपोंमें घूमते-घूमते श्वेत पर्वतपर आकर खड़े हुये ॥१०॥ वहाँ प्रभुका स्मरण करते-करते सौ करोड़ वर्ष तप किया, जब विश्वका भयंकर नैमित्तिक प्रलय आया ॥११॥ तब भूमिको डुबाते चारों ओरसे समुद्र आये, उनमें बहते दुर्वासाजीको जलका अंत नहीं मिला ॥१२॥ फिर जलमें विचरते-विचरते दुर्वासाको हजार युग बीते तब ये बेहोश हो गये, तब दुर्वासाने एक और ब्रह्माण्डको देखा ॥१३॥ ऐसे विचरते-विचरते एक छेदमें चले गये, वहाँ दिव्य सृष्टि देखी, वहाँ ऊपरके लोकोंमें रहे और ब्रह्माकी आयु भोगी ॥१४॥ ऐसे फिर छेदको देखकर हरिका स्मरण करते उसमें प्रविष्ट हो गये फिर अंडसे बाहर निकले, वहाँ बडा भारी जल देखा ॥ १५ ॥

उस जलमें करोड़ों ब्रह्माण्ड देखे, फिर जलको देखते विरजा नदी देखी ॥१६॥ उसके ऊपर जाकर मुनिने गोलोक देखा, उसके भीतर गये, उसमें वृन्दावन, गोवर्धन और यमुनाके पुलिन ये सब अति शुभ्र देखे ॥१७॥ दुर्वासा ये सब देखकर बड़े प्रसन्न हुये, फिर कुंजमें गये, वहाँ गोप-गोपियोंके गण और करोड़ों गौएं देखीं ॥१८॥ जिनमें असंख्य करोड़ सूर्यके प्रकाश मंडलमें लाख दलके कमलपर राधापतिको देखा ॥१९॥ परिपूर्णतम साक्षात् पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण असंख्य ब्रह्माण्डोंके पतिको व उनका अपना जो गोलोक है, उसे देखा ॥२०॥ फिर श्रीकृष्णको हंसी आई, तो मुनि श्रीकृष्णके मुखमें चले गये, फिर खांसीके साथ बाहर निकल पड़े, और वहाँ बालकरूप नंद नंदनको देखा ॥२१॥ वहाँ कालिंदीके किनारेपर पवित्र रमणीक रेतीमें बालकोंके साथ महावनमें विचर रहे कृष्णको देखकर ॥२२॥ दण्डवत् करके दुर्वासा मुनि श्रीकृष्णकोही परात्पर जानकर ये वही नंद नंदन हैं,सौ बार प्रणाम करके स्तुति करने लगे॥२३॥दुर्वासा मुनि कहते हैं कि नंद नंदन जो श्रीकृष्ण उनको मैं नमस्कार करता हूँ, कैसे श्रीकृष्ण हैं,कि श्यामसुन्दर बालक हैं,नवीन कमल दल-

तस्मिञ्जलेतुलक्ष्यंतेकोटिशोब्रह्मंडराशयः ॥ ततोमुनिर्जलंपश्यन्ददर्शविरजांनदीम् ॥१६॥ तत्पारंप्रगतःसाक्षाद्गोलोकंप्राविशन्मुनिः ॥वृन्दावनंगोवर्द्धनंयमुनापुलिनंशुभम् ॥१७॥ दृष्ट्वाप्रसन्नःसमुनिर्निकुंजंप्राविशत्तदा ॥ गोपगोपीगणवृतंगवांकोटिभिरन्वितम् ॥ १८ ॥ असंख्यकोटिमार्तंडज्योतिषांमंडलेततः ॥ दिव्येलक्षदलेपद्मेस्थितंराधापतिंहरिम्॥१९॥परिपूर्णतमंसाक्षाच्छ्रीकृष्णंपुरुषोत्तमम्॥ असंख्यब्रह्मांडपतिंगोलोकंस्वंददर्शह ॥२०॥ श्रीकृष्णस्यापिहसतःप्रविष्टस्तन्मुखेमुनिः ॥ पुनर्विनिर्गतोपश्यद्बालंश्रीनंदनंदनम् ॥२१॥ कालिंदीनिकटेपुण्येसैकतेरमणस्थले ॥ बालकैःसहितंकृष्णंविचरंतंमहावने ॥२२॥ तदामुनिश्चदुर्वासाज्ञात्वाकृष्णंपरात्परम् ॥ श्रीनंदनंदनंनत्वानत्वाप्राहकृतांजलिः ॥२३॥ श्रीमुनिरुवाच ॥ बालंनवीनशतपत्रविशालनेत्रंबिंबाधरंसजलमेघरुचिंमनोज्ञम् ॥ मंदस्मितंमधुरसुंदरमंदयानंश्रीनंदनंदनमहंमनसानमामि ॥ २४ ॥ मंजीरनूपुररणन्नवरत्नकांचीश्रीहारकेसरिनखप्रतियंत्रसंघम् ॥ दृष्ट्वार्तिहारिमषिबिंदुविराजमानंवंदेकलिंदतनुजातटबालकेलिम् ॥ ॥२५॥पूर्णेन्दुसुन्दरमुखोपरिकुंचिताग्राःकेशानवीनघननीलनिभाःस्फुरंतः॥राजंतआनतशिरःकुमुदस्ययस्यनंदात्मजायसबलायनमोनमस्ते ॥ ॥२६॥ श्रीनंदनन्दनस्तोत्रंप्रातरुत्थाययः पठेत् ॥ तन्नेत्रगोचरोयातिसानंदंनंदनंदनः ॥ २७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिप्रणम्यश्रीकृष्णंदुर्वासामुनिसत्तमः ॥ तंध्यायन्प्रजपन्प्रागाद्बदर्याश्रममुत्तमम् ॥ २८ ॥

कैसे जिनके नेत्र हैं, सजल श्याम घटाके समान मनोहर मंद मुसकान है जिनकी ललित मन्द२ चाल, लाल २ निम्बके समान हैं होठ जिनके, उनको मैं नमस्कार करता हूँ ॥२४॥ झांझन नूपुर बजनेके साथ बजती हैं करधनी जिनकी श्रीहार बघनखाका कण्ठहार, और पीडाहरनेवाली श्यामवेंदी लग रही है जिनके दृष्टि मात्रसेही दुखियोंकी पीड़ाको हरनेवाले, कालिंदीके तटपर बाललीला करके उनको मेरी दण्डवत है ॥२५॥ जिनका पूर्ण चन्द्रमा जैसा मुख उसपर घुंघराली श्याम घटाके समान नीली अलकावलि देदीप्यमान हो रही है, ऐसे नन्दके पुत्र श्रीकृष्ण बलदेवको मेरा नमस्कार है ॥ २६ ॥ यह नंदनंदनका स्तोत्र है, इसको प्रातःकाल उठकर जो कोई पढ़ेगा वह आनन्दसे श्रीकृष्णका साक्षात् दर्शन करेगा ॥ २७॥ नारदजी कहते हैं ऐसे दुर्वासा मुनि श्रीकृष्णको दण्डवत करके श्रीकृष्णकाही ध्यान करते उत्तर में वदरिकाश्रम है, वहाँ चले गये ॥ २८ ॥

गर्गजी बोले-इस प्रकार नारदजीने बहुलाश्व राजासे श्रीकृष्णका चरित्र वर्णन किया ॥ २९ ॥ गर्गजी बोले-हे शौनक ! मैंने तुमसे वही कृष्ण चरित्र कहा है जो कलिमलका नाश करने वाला है, चतुर्वर्गोंको देनेवाला है, आगे तुम क्या पूछना चाहते हो ? तब शौनकजी बोले ॥३०॥ मैथिल देशके इन्द्र बहुलाश्व राजाने बड़े शान्त और ज्ञानके दाता नारदजीसे फिर क्या पूछा ? सो हे तपोधन ! मुझसे कहिये ॥ ३१ ॥ गर्गजी बोले कि मनको देनेवाला बहुलाश्व राजा ज्ञान देनेवाले नारदजीको नमस्कार करके मंगलायतन श्रीकृष्णका आगेका चरित्र पूछने लगा ॥३२॥ बहुलाश्व बोला कि, साक्षात् परमानन्द स्वरूप श्रीकृष्णने आगे क्या-क्या विचित्र चरित्र किये हैं, सो कहिये ॥ ३३ ॥ पहले अवतारोंमें भी मंगलके स्थान चरित्र किये हैं, कृष्णावतारमें कौन-कौन से मंगल चरित्र किये, उनको कहो ॥३४॥ तब नारदजी बोले-हे राजन् ! तुमने बहुत अच्छा प्रश्न किया,

श्रीगर्गउवाच ॥ इत्थंदेवर्षिवर्येणनारदेनमहात्मना ॥ कथितंकृष्णचरितंबहुलाश्वायधीमते ॥ २९ ॥ मयातेकथितंब्रह्मन्यशःकलिमलापहम् ॥ चतुष्पदार्थदंदिव्यंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ ३० ॥ शौनकउवाच ॥ बहुलाश्वोमैथिलेन्द्रःकिंप्रपच्छमहामुनिम् ॥ नारदंज्ञानदंशांतंतन्मेब्रूहि तपोधन ॥ ३१ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ नारदंज्ञानदंनत्वामानदोमैथिलोनृपः ॥ पुनःप्रपच्छकृष्णस्यचरितंमंगलायनम् ॥ ३२ ॥ श्रीबहुलाश्वउवाच ॥ श्रीकृष्णोभगवान्साक्षात्परमानंदविग्रहः ॥ परंचकारकिंचित्रंचरित्रंवदमेप्रभो॥३३॥पूर्वावतारैश्चरितंकृतंवैमंगलायनम् ॥ अपरंकिंतुकृष्णस्यपवित्रंकिमतःपरम् ॥३४॥ श्रीनारदउवाच ॥ साधुसाधुत्वयापृष्टंचरित्रंमंगलंहरेः ॥ तत्तेहंसंप्रवक्ष्यामिवृंदारण्येचयद्यशः ॥ ३५ ॥ इदंगोलोकखण्डंचगुह्यंपरममद्भुतम् ॥ श्रीकृष्णेनप्रकथितंगोलोकेरासमण्डले॥३६॥निकुंजेराधिकायैचराधामह्यंददाविदम्॥मयातुभ्यंश्रावितंच दत्तंसर्वार्थदंपरम् ॥ ३७ ॥ इदंपठतिविप्रस्तुसर्वशास्त्रार्थगोभवेत् ॥ श्रुत्वेदंचक्रवर्तीस्यात्क्षत्रियश्चंडविक्रमः ॥३८॥ वैश्योनिधिपतिर्भूयाच्छूद्रोमुच्येतबंधनात् ॥ निष्फलोयोपिजगतिजीवन्मुक्तःसजायते ॥३९॥ योनित्यंपठतेसम्यग्भक्तिभावसमन्वितः ॥ सगच्छेत्कृष्णचन्द्रस्यगोलोकंप्रकृतेःपरम् ॥ ४० ॥ इति श्रीमद्ग॰ गो॰ खण्डेनारदबहु॰ संवादेभगवज्जन्मवर्णनंदुर्वाससोमायादर्शनं श्रीनंदनंदनस्तोत्रवर्णनंनाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ समाप्तश्चायं गोलोकखण्डः ॥ १ ॥

जो तुम मंगलकारी हरिके चरित्रको पूछते हो, सो वृन्दावनमें जो लीला की है, मैं तुम्हारे सामने कहूँगा ॥३५॥ यह गोलोक खण्ड बड़ा गुह्य और अद्भुत मैंने तुमसे कहा है, पहिले जो कृष्णने रास मंडलमें राधिकासे गोलोकके निकुंज मदिरमें कहा है ॥ ३६ ॥ राधिकाजीने मुझसे कहा, मैंने तुमको सुनाया, यह सब मनोरथको देनेवाला है ॥ ३७ ॥ यदि ब्राह्मण इसको पढ़े तो सर्व शास्त्रोंका जाननेवाला हो, और क्षत्री सुने तो बड़ा प्रतापी चक्रवर्ती राजा हो ॥३८॥ वैश्य सुने तो धनी हो, और शूद्र सुने तो बन्धनसे छूट जाय और जो कामना रहित है, वह जीवन्मुक्त हो जाता है ॥ ३९ ॥ जो इसका भक्ति भावसे नित्य पाठ करे, वह मनुष्य प्रकृतिसे परे श्रीकृष्णके गोलोकको प्राप्त होता है ॥ ४० ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां गोलोक खण्डे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्व संवादे दुर्वासोमायादर्शनं नाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ समाप्तोऽयं गोलोक खण्डः ॥ १ ॥

इति गर्गसंहितायां गोलोकखण्डं भाषाटीकासमेतं समाप्तम्

अथ गर्गसंहितायां वृन्दावनखण्डं भाषाटीकासहितं प्रारभ्यते

(द्वितीयखण्डम्)

श्रीगणेशायनमः ॥ अथ वृन्दावन खण्डम् ॥ ग्रन्थ कर्त्ता कहते हैं कि, कोकिला तथा क्रीडा शुक जिसमें बोल रहे, गुंजा (चिरमिटी) के पुंज तथा कल्प वृक्षके पुष्पोंका यमुनातट पर जी निकुञ्ज उसमें शंखकी सी ग्रीवा वाले परस्पर गल बहियाँ डाले विचर रहे जो श्रीराधा कृष्ण वे दोनों मेरा मंगल करनेवाले हों ॥ १ ॥ अज्ञान रूपी अन्धकारसे अन्धे मुझ अंधेकी आँखें जिन्होंने ज्ञानरूपी अंजनकी सलाईसे खोल दी उन गुरुको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ २ ॥ नारदजी कहते हैं, एक दिन श्रीनन्दराज, नौ उपनन्द, छः वृषभानु और श्रेष्ठ वृषभानु ॥३॥ और भी बूढ़े-बूढ़े सब गोपोंको बुलाकर सभाके बीचमें बोले-क्यों भाइयो ! अब क्या करना चाहिये, क्योंकि महावनमें बड़े २ उत्पात आते हैं ॥ ४ ॥ नारदजी कहते हैं, एक संनंद गोप सबमें बूढ़ा बड़ा विचारवान ज्ञानी था, वह सब गोपोंका वचन सुन कर कृष्ण बलदेवको गोदीमें वैठाकर नन्दराजसे बोला ॥ ५ ॥ संनन्द बोले-अब हमको तो यहाँसे सब परिकरों को साथ लेकर अन्य स्थानको चलना चाहिये, जहाँ कोई उत्पात न हो ॥ ६ ॥ तुम्हारा बालक प्राणसे प्यारा है, और सब व्रज

श्रीगणेशायनमः ॥ अथ वृन्दावनखण्डम् ॥ कृष्णातीरेकोकिलाकेलिकीरेगुञ्जापुंजेदेवपुष्पादिकुंजे॥कंबुग्रीवौक्षिप्तबाहूचलन्तीराधाकृष्णौमंगलं मे भवेताम् ॥ १ ॥ अज्ञानतिमिरान्धस्यज्ञानांजनशलाकया ॥ चक्षुरुन्मीलितंयेनतस्मैश्रीगुरवेनमः ॥ २ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एकदोपद्रवं वीक्ष्यनन्दोनन्दान्सहायकान् ॥ वृषभानूपनंदांश्चवृषभानुवरांस्तथा ॥३॥ समाहूयपरान्वृद्धान्सभायांतानुवाचह ॥ नंदउवाच ॥ किंकर्त्तव्यंतु वदतोत्पाताःसंतिमहावने ॥४॥ श्रीनारदउवाच ॥ तेषांश्रुत्वाथसन्नन्दोगोपोवृद्धोतिमन्त्रवित् ॥ अंकेनीत्वारामकृष्णौनन्दराजसुवाचह ॥५॥ सन्नंदउवाच ॥ उत्थातव्यमितोस्माभिःसर्वैःपरिकरैःसह ॥ गन्तव्यंचान्यदेशेषुयत्रोत्पातानसन्तिहि ॥ ६ ॥ बालस्तेप्राणवत्कृष्णोजीवनं व्रजवासिनाम् ॥ व्रजेधनंकुलेदीपोमोहनोबाललीलया ॥ ७ ॥ हाबक्याशकटेनापितृणावर्तेनबालकः ॥ मुक्तोयंद्रुमपातेनह्युत्पातंकिमतःपरम् ॥ ८ ॥ तस्माद्वृन्दावनंसर्वैर्गतव्यंबालकैःसह ॥ उत्पातेषुव्यतीतेषुपुनरागमनंकुरु ॥ ९ ॥ नन्दउवाच ॥ कतिक्रोशैर्विस्तृतंतद्वनंवृन्दावनं व्रजात् ॥ तल्लक्षणंतत्सुखंचवदबुद्धिमतांवर ॥ १० ॥ सन्नंदउवाच ॥ प्रागुदीच्यांबर्हिपदोदक्षिणस्यांयदोःपुरात् ॥ पश्चिमायांशोणपुरान्मा-थुरंमंडलंविदुः ॥ ११ ॥

वासियोंका जीवन है, व्रजका धन है, कुलका दीपक है, बाललीलासे सबको मोहित करनेवाला है ॥७॥ प्रथम तो पूतना आई, फिर शकटासुर गिरा, फिर तृणावर्त उड़ाकर ले गया, इसके बाद यमलार्जुन से भगवान्ने बचाया, इसके सिवाय और क्या उत्पात आयेगा ॥ ८ ॥ इससे सब लोग बालकोंको साथ लेकर वृन्दावनको चलो, जब यहाँके उत्पात समाप्त हो जांय, तब फिर आजाना ॥९॥ तब यह बात सुनकर नन्द राजा बोले-यहाँसे वृन्दावन कितने कोस है, उसके लक्षण कहो, वहाँ कौन कौनसा सुख है, सो तुम कहो, तुम बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ हो, इससे मैं पूछता हूँ ॥ १० ॥ तब संनन्द बोले-बर्हिपदसे तो पूर्वोत्तर ईशान कोण है और मथुरासे दक्षिण है, शोणपुरसे पश्चिममें है जिसको मथुरा मण्डल कहते हैं ॥ ११ ॥

जिसका चौरासी कोसका विस्तार है, इसको ज्ञानी पुरुष व्रज कहते हैं, वह मथुरामण्डलमें ही है ॥ १२ ॥ मथुरामें वसुदेवके घरमें गर्गाचार्यके मुखसे मैंने सुना है, यह मथुरा मण्डल प्रयाग राजने भी पूजा है ॥१३॥ उस मथुरा मण्डलमें सब बनोंसे वृन्दावन उत्तम है, परिपूर्णतम श्रीकृष्णकी लीलाका आंगन है और बड़ा मनोहर है ॥१४॥ वैकुण्ठसे अधिक कोई लोक उत्तम न हुआ और न होगा, परन्तु यह वृन्दावन वैकुण्ठसे भी परे से परे है॥१५॥ जहाँ गोवर्द्धन पर्वतोंका राजा विराजता है, जहाँ निकटही कालिन्दी बहती हैं और मंगलकारी जहाँ पुलिन हैं ॥१६॥ जहाँ बृहत्सानु पर्वत है, वहाँही नन्दीश्वर पर्वत है, जो पर्वत चौबीस कोसका है, और बड़े-बड़े वनोंसे घिरा हुआ है ॥१७॥ पशुओंका हितकारी है, और गोप गोपी, और गौओंको सेवन करने लायक है, और लताओंकी कुञ्जोंसे युक्त है, उसीका वृन्दावन नाम है॥१८॥ नन्दजी बोले कि सन्नन्दजी यह व्रज मंडल

विंशद्योजनविस्तीर्णंसार्द्धयद्योजनेनवै ॥ माथुरंमण्डलंदिव्यंव्रजमाहुर्मनीषिणः ॥१२॥ मथुरायांशौरिगृहेगर्गाचार्यमुखाच्छ्रुतम् ॥ माथुरंमण्डलं दिव्यंतीर्थराजेनपूजितम् ॥१३॥ वनेभ्यस्तत्रसर्वेभ्योवनंवृंदावनंवरम् ॥ परिपूर्णतमस्यापिलीलाक्रीडंमनोहरम्॥१४॥वैकुण्ठान्नापरोलोकोनभूतो नभविष्यति ॥ एकंवृंदावनंनामवैकुण्ठाच्चपरात्परम् ॥ १५ ॥ यत्रगोवर्द्धनोनामगिरिराजोविराजते ॥ कालिन्दीनिकटेयत्रपुलिनंमंगलायनम् ॥ १६ ॥ बृहत्सानुर्गिरिर्यत्रयत्रनन्दीश्वरोगिरिः ॥ क्रोशानांचचतुर्विंशद्भिस्तृतैःकाननैर्वृतम् ॥१७॥ पशव्यंगोपगोपीनांगवांसेव्यंमनोहरम् ॥ लताकुंजावृतंतद्वैवनंवृन्दावनंस्मृतम् ॥ १८ ॥ नन्दउवाच ॥ कदाव्रजोयंसन्नंदतीर्थराजेनपूजितः ॥ एतद्वेदितुमिच्छामिपरंकौतूहलंहिमे ॥ १९ ॥ सन्नंदउवाच ॥ शंखासुरोमहादैत्यःपुरानैमित्तिकेलये ॥ स्वपतोब्रह्मणःसोपिवेदधृग्दैत्यपुंगवः ॥ २० ॥ जित्वादेवान्ब्रह्मलोका-द्धृत्वावेदान्गतोर्णवे ॥ गतेषुयदिवेदेषुदेवानांचगतंबलम् ॥२१॥ तदासाक्षाद्धरिः पूर्णोधृत्वामात्स्यंवपुःपरम् ॥ नैमित्तिकलयांभोधौयुयुधेतेनयज्ञराट् ॥२२॥ शूलंचिक्षेपहरयेशंखोदैत्योमहाबलः ॥ स्वचक्रेणहरिःसाक्षात्तच्छूलंशतधाकरोत् ॥ २३ ॥ हरिंतताडशिरसाशंखोविष्णुमुरःस्थले ॥ तस्यमूर्द्धप्रहारेणनचचालपरात्परः ॥२४॥ तदागदांसमादायमत्स्यरूपधरोहरिः ॥ पृष्ठेजघानतंदैत्यंशंखरूपंमहाबलम् ॥ २५ ॥

प्रयाग राजने कब पूजा है ? इस बातको मैं जानना चाहता हूँ, मेरे मनमें बड़ा आश्चर्य है ॥१९॥ तब सन्नन्द बोले-पहले एक शंखासुर नामक दैत्य वेदोंका द्रोही दैत्य नैमित्तिक प्रलयके समय हुआ ॥२०॥ वह सब देवताओंको जीतकर ब्रह्माजीके लोकको गया, ब्रह्माजीको सोया हुआ देखकर उनके वेदोंको चुराकर समुद्रमें चला गया, तब वेदोंके जाने पर देवताओंका बल चला गया ॥ २१ ॥ तब साक्षात् हरि यज्ञोंके ईश्वर पूर्ण भगवान्‌ने मत्स्य रूप धारण कर उस नैमित्तिक प्रलयके समुद्रमें उस दैत्यसे युद्ध किया ॥ २२ ॥ उस महाबली दैत्यने भगवान् पर त्रिशूल चलाया, तब हरिने अपने चक्रसे त्रिशूलके सौ टुकड़े कर दिये ॥२३॥ फिर दैत्यने अपने शिरसे विष्णुकी छातीमें मारा, तब उसके शिरके प्रहारसे परात्पर भगवान् चलाय मान नहीं हुये ॥ २४ ॥ तब तो मत्स्यरूपी भगवान्‌ने गदा लेकर शंखरूपी महाबली दैत्यके पीठमें मारी ॥ २५ ॥

तब गदाके प्रहारसे व्यथा जिसके हुई, कुछ व्याकुल मन, उस दैत्यने फिर उठकर विष्णुके वक्षस्थलमें घूँसा मारा ॥२६॥ तब साक्षात् भगवान् कमललोचनने अपने चक्रसे शींग समेत उसके दृढ़ शिरको काट दिया ॥ २७ ॥ हे व्रजेश्वर ! शंखासुरको जीतकर देवताओंको साथ लेकर विष्णु भगवान् प्रयागमें आकर ब्रह्माजीको वेद दिये ॥ २८ ॥ और सब देवगणोंके साथ विधिसहित यज्ञ किया और प्रयागको बुलाकर सब तीर्थोंका राजा किया ॥२९॥ तब साक्षात् अक्षय वटको लीलाछत्रकी तरह बनाया और गंगा, यमुनाकी लहररूप चमर ढुलते हैं, उनसे प्रयागराज सुशोभित है ॥३०॥ तभी जम्बूद्वीपके सम्पूर्ण तीर्थ बलि (भेंट) ले लेकर बुद्धिमान् तीर्थराज प्रयागके पास आये ॥३१॥ सम्पूर्ण तीर्थोंने तीर्थराज प्रयागका पूजन किया, जब हरिसहित सब ब्रह्मादिक देवता अपने लोकको चले गये, तब सब तीर्थ भी अपने २ स्थानको चले आये ॥३२॥ तब हे नन्द ! वहाँ

गदाप्रहारव्यथितःकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥ पुनरुत्थायसवेंशंमुष्टिनासतताडह ॥२६॥ तदाविष्णुःस्वचक्रेणसशृंगंतच्छिरोदृढम् ॥ जहारकुपितःसाक्षाद्भगवान्कमलेक्षणः ॥२७॥ जित्वाशंखंदेववरैःसार्द्धविष्णुर्व्रजेश्वर ॥ प्रयागमेत्यसहरिर्वेदांस्तान्ब्रह्मणेददौ ॥२८॥ यज्ञंचकारविधिवत्सर्वैर्देवगणैःसह ॥ प्रयागंचसमाहूयतीर्थराजंचकारह॥२९॥ तत्साक्षादक्षयवटःकृतोलीलातपत्रवत् ॥ मुनिभानुसुतेयोर्मिचामरैस्तंविरेजतुः ॥३०॥ तदैवसर्वतीर्थानिजंबूद्वीपस्थितानिच ॥ नीत्वाबलिसमाजग्मुस्तीर्थराजायधीमते ॥३१॥ तीर्थराजंचसंपूज्यनत्वातीर्थानिसर्वतः ॥ स्वधामानियुर्नन्दहरौदेवैर्गतेसति ॥ ३२ ॥ तदैवनारदःप्राप्तोमुनीन्द्रःकलहप्रियः ॥ सिंहासनेभ्राजमानंतीर्थराजमुवाचह ॥ ३३ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ तीर्थैःप्रपूजितस्त्वंवैतीर्थराजमहातप ॥ तुभ्यंचसर्वतीर्थानिमुख्यानीहबलिंददुः ॥ ३४ ॥ व्रजादवृंदावनादीनिनागतानीहतेपुरः ॥ तीर्थानांराजराजस्त्वंप्रमत्तैस्तैस्तिरस्कृतः ॥३५॥ सन्नन्दउवाच ॥ इतिप्रभाष्य वै साक्षाद्गतेदेवर्षिसत्तमे ॥ तीर्थराजस्तदाक्रुद्धोहरिलोकंजगामह ॥ ३६ ॥ नत्वाहरिं परिक्रम्यपुरःस्थित्वाकृतांजलिः ॥ सर्वतीर्थैः परिवृतःश्रीनाथंप्राहतीर्थराट् ॥ ३७ ॥ तीर्थराजउवाच ॥ हेदेवदेवप्राप्तोहंतीर्थराजस्त्वयाकृतः ॥ बलिंददुर्मेतीर्थानिमथुरामंडलंविना ॥ ३८ ॥

कलहप्रिय नारदजी आये, सिंहासनपर बैठे तीर्थोंके राजा प्रयागको देखकर बोले॥३३॥हे महातप ! हे तीर्थोंके राजा ! सब मुख्य-मुख्य तीर्थोंने तुम्हारी पूजा की और बलि (भेंट) दी ॥३४॥परन्तु व्रजसे वृन्दावनादिक तीर्थ तुम्हारे सामने नहीं आये, तुम सब तीर्थोंके राजा हो, किन्तु प्रमादी व्रजके तीर्थोंने तुम्हारा तिरस्कार कर दिया, तो तुम किसलिये राजा हो॥३५॥ सन्नन्दजी कहते हैं कि ऐसे नारद कहकर जब चले गये, तब तीर्थराज प्रयागको बड़ा क्रोध आया और उसी समय हरिके लोकको चले गये ॥ ३६ ॥ हरिकी परिक्रमा देकर और प्रणाम करके, हाथ जोड़कर सामने खड़े होकर सब तीर्थोंको साथ लिये तीर्थोंका राजा श्रीभगवान्से बोला ॥३७॥ हे देव देव ! मैं आपके पास आया हूँ, मुझको आपने तीर्थोंका राजा किया, सब तीर्थोंने मुझको बलि (भेंट) दी. किन्तु एक मथुरा मण्डल नहीं आया ॥ ३८ ॥

बड़े मतवाले व्रजके तीर्थोंने मेरा तिरस्कार कर दिया, इसलिये आपको कहनेके लिये आपके मंदिरमें आया हूँ ॥३९॥ तब भगवान् तीर्थराज प्रयागसे बोले-अरे ! मैंने तुमको सब तीर्थोंका राजा बनाया हैं, किन्तु अपने घरका भी राजा नहीं बनाया है॥४०॥क्या तुम मेरे घरको भी लेना चाहते हो ? अरे मतवालेकी तरह कैसे बोलते हो, सो हे तीर्थोंके राजा अपने घरको चला जा, और जो मैं कहता हूँ, उसको भी सुन लो ॥४१॥ मथुरा मण्डल परात्पर साक्षात् मेरा घर है, तीनों लोकसे परे है, और प्रलयमें कभी नष्ट नहीं होता है ॥ ४२ ॥ सन्नन्द कहते हैं, ऐसा सुनकर तीर्थोंके राजा विस्मित हो गये, और सब गर्व चला गया, यहाँ आकर व्रजमें प्रणाम करके मथुरा मण्डलको पूजकर ॥ ४३ ॥ फिर परिक्रमा देकर, अपने धामको चले गये, ये सब बात धराके मान भंगके अर्थ पहले ही दिखा दी हैं, यह सब वृत्तान्त मैंने आपको कहा है, आगे कहो तुमको क्या सुननेकी इच्छा

प्रमत्तैर्व्रजतीर्थैश्चतैरहंतुतिरस्कृतः ॥ तस्मात्तुभ्यंचकथितंप्राप्तोऽहंतवमंदिरे ॥ ३९ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ धरायांसर्वतीर्थानांत्वंकृततीर्थरा-
णमया ॥ किंतुस्वस्यगृहस्यापिनकृतोराट्त्वमेवहि ॥ ४० ॥ किंत्वंमेमंदिरंलिप्सुर्मत्तवद्भाषसेकथम् ॥ तीर्थराजगृहंगच्छशृणुवाक्यंशुभंचमे ॥
॥४१॥मथुरामंडलंसाक्षान्मंदिरंमेपरात्परम् ॥ लोकत्रयात्परंदिव्यंप्रलयेपिनसंहृतम् ॥४२॥ सन्नन्दउवाच ॥ इतिश्रुत्वातीर्थराजोविस्मितो
भूद्गतस्मयः ॥ आगत्यनत्वासंपूज्यमाथुरंव्रजमंडलम् ॥४३॥ ततः प्रदक्षिणीकृत्यस्वधामगतवान्पुनः॥धरायामानभंगार्थंपूर्वमेतत्प्रदर्शितम् ॥
मयातवाग्रेकथितंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ ४४ ॥ नन्दउवाच ॥ धरायामानभंगार्थंकेनपूर्वंप्रदर्शितम् ॥ एतन्मेवदगोपेशमाथुरंव्रजमंडलम्
॥ ४५ ॥ सन्नन्दउवाच ॥ आदौवाराहकल्पेऽस्मिन्हरिर्वाराहरूपधृक् ॥ रसातलात्समुद्धृत्यगांबभौदंष्ट्रयाप्रभुः ॥४६॥ गच्छन्तंवारिवृन्देषु
भगवन्तंरमेश्वरम् ॥ दंष्ट्राग्रेशोभितापृथ्वीप्राहदेवंजनार्दनम् ॥ ४७ ॥ धरोवाच ॥ देवकुत्रस्थलेत्वंवैस्थापनांमेकरिष्यसि ॥ जलपूर्णंजगत्स-
र्वंदृश्यतेवदहेप्रभो ॥ ४८ ॥ वाराहउवाच ॥ यदावृक्षाःप्रदृष्टाहिभवन्त्युद्वेगताजले ॥ तदातेस्थापनाभूयात्पश्यंतीगच्छभूरुहान् ॥ ४९ ॥
॥ धरोवाच ॥ स्थावराणांतुरचनाममोपरिसमास्थिता ॥ अन्यास्तिकिंवाधरणीत्वहंहिधारणामयी ॥ ५० ॥

है॥४४॥तब नन्दराज बोले-कि हे गोपेश ! पृथ्वीके मान भंगके अर्थ यह मथुरा मण्डल किसने किसको दिखाया था, यह सब मेरे आगे कहो॥४५॥अब सन्नन्द गोप बोले कि पहले इस वाराह कल्पमें हरिने वाराहरूप धारण किया था, जब रसातलसे पृथ्वीको दंष्ट्रा (दाढ़) पर धरकर लाये, तब प्रभुकी बड़ी शोभा हुई ॥ ४६ ॥ जलोंके समूहमें चले आ रहे भगवान् लक्ष्मीनाथके दाढ़के अग्रभागपर बैठी पृथ्वी भगवान्से यह वचन बोली॥४७॥ हे देव ! आप मेरी कहाँ स्थापना करेंगे, सब जगत्में जलही जल भरा दीखता है,हे प्रभो मुझसे कहिये ॥४८॥ तब श्रीवाराहजी बोले-जहाँ वृक्ष दीखने लगेंगे और जलमें उद्वेगता होगी, वहींपर तुम्हारी स्थापना होगी, इससे तू वृक्षोंको देखते चल ॥ ४९॥ तब पृथ्वी बोली कि स्थावरकी रचना तो मेरे ही ऊपर है, कोई और भी पृथ्वी है क्या ? धारणमय धरती तो मैं एक ही हूँ ॥ ५० ॥

सन्नन्द कहते हैं कि पृथ्वी वाराहजीसे ऐसा कहने चली आती है कि जलके बीचमें बड़े मनोहर वृक्ष देखे, लता फूली फली देखीं, तब तो पृथ्वीका सब गर्व चला गया और पृथ्वी वाराहजीसे बोली ॥ ९१ ॥ हे देव ! ये सुन्दर सुन्दर वृक्ष, ये लताऐं कौनसी जगह हैं, यह मेरे मनमें बड़ा आश्चर्य है, हे यज्ञपते ! हे प्रभो ! सो आप कहिये ॥ ९२ ॥ तब वाराहजी बोले—हे नितम्बिनी ! यह सामने दिव्य मेरा मथुरा मण्डल दीखता है, यह गोलोककी भूमि हैं, यह.तो महाप्रलयमें भी नष्ट नहीं होती है ॥ ९३ ॥ सन्नन्द कहते हैं कि उसको सुनकर पृथ्वी आश्चर्य करने लगी, अभिमान सब चला गया, इससे हे नन्द ! हे महाबाहो ! यह व्रज सब तीर्थोंसे अधिक है ॥ ९४ ॥ इस व्रजके माहात्म्यको जो कोई मनुष्य सुनेगा, वह जीवन्मुक्त होगा, यह माथुर व्रज मण्डल है, सो एक तीर्थ राज प्रयाग क्या जितने ब्रह्माण्डमें तीर्थ हैं, उन सबसे श्रेष्ठ है ॥ ९९ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां श्री वृन्दावन खण्डे भाषाटीकायां नन्द सन्नन्द संवादे वृन्दावनागमनोद्योग वर्णनं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥१॥ नन्दजी अब सन्नन्द गोपसे पूछते हैं, हे सन्नन्द ! तुम सर्वज्ञ हो, हे महा

॥ सन्नन्दउवाच ॥ वदंतीत्थंददर्शाग्रेजलेवृक्षान्मनोहरान् ॥ वीक्ष्यपृथ्वीहरिंप्राहसर्वतोविगतस्मया ॥ ९१ ॥ धरोवाच ॥ देवकस्मिन्स्थले वृक्षाः सन्तिह्येतेसपल्लवाः ॥ इदंमनसिमेचित्रंवदयज्ञपतेप्रभो ॥ ९२ ॥ वाराहउवाच ॥ माथुरंमण्डलंदिव्यंदृश्यतेऽग्रेनितंबिनि ॥ गोलोकभूमिसंयुक्तंप्रलयेऽपिनसंहृतम् ॥ ९३ ॥ सन्नन्दउवाच ॥ तच्छ्रुत्वाविस्मितापृथ्वीगतमानाबभूवह ॥ तस्मान्नन्दमहाबाहोव्रजोऽयंसर्वतोधिकः ॥ ९४ ॥ श्रुत्वेदंव्रजमाहात्म्यंजीवन्मुक्तोभवेन्नरः ॥ तीर्थराजात्परंविद्धिमाथुरंव्रजमण्डलम् ॥ ९९ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीवृन्दावनखण्डेनन्दसन्नन्दसंवादेवृन्दावनागमनोद्योगवर्णनंनामप्रथमोऽध्यायः ॥१॥ नन्दउवाच ॥ हेसन्नन्दमहाप्राज्ञसर्वज्ञोसिबहुश्रुतः ॥ व्रजमण्डलमाहात्म्यंवदतस्तेमुखाच्छ्रुतम् ॥ १ ॥ गिरिर्गोवर्द्धनोनामतस्योत्पत्तिंचमेवद ॥ कस्मादेनंगिरिवरंगिरिराजंवदन्तिहि ॥२॥ यमुनेयंनदीसाक्षात्कस्माल्लोकात्समागता ॥ तन्माहात्म्यंचवदमेत्वमसिज्ञानिनांवरः ॥ ३ ॥ सन्नन्दउवाच ॥ एकदाहास्तिनपुरेभीष्मंधर्मभृतांवरम् ॥ पप्रच्छपांडुरित्थंतंजनानांचानुशृण्वताम् ॥ ४ ॥ परिपूर्णतमः साक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥ असंख्यब्रह्मांडपतिर्गोलोकाधिपतिःप्रभुः ॥९॥ भुवोभारावतारायगच्छन्देवोजनार्दनः ॥ राधांप्राहप्रियेभीरुगच्छत्वमपिभूतले ॥ ६ ॥

प्राज्ञ ! तुम बहुश्रुत हो, व्रज मण्डलका माहात्म्य मैंने तुम्हारे मुखसे ही सुना हैं ॥ १ ॥ सो जो यह गोवर्धन पर्वत है, उसकी उत्पत्ति मेरे सामने कहो, किस कारणसे इस गिरिराजको गिरिवर कहते हैं ॥ २ ॥ और यह जो साक्षात् यमुना नदी है, सो कौनसे लोकसे आई है ? इसका भी माहात्म्य मेरे सामने वर्णन करो, तुम ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ हो ॥ ३ ॥ अब सन्नन्द गोप बोले-एक समय हस्तिनापुरमें पांडु राजाने सबके सुनते सुनते धर्मधारियोंमें श्रेष्ठ भीष्म पितामहसे यही पूछा था ॥४॥ वह सुनो, परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण भगवान् आप असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति और गोलोकके पति प्रभु ॥ ९ ॥ पृथ्वीका भार उतारनेके लिये गमन करते जनार्दन राधिकाजीसे बोले--हे प्यारी ! हे भीरू ! तुम भी पृथ्वी तलपर चलो ॥ ६ ॥

तब राधिकाजी बोली कि, हे प्यारे ! जहाँ वृन्दावन नहीं, जहाँ यमुना नदी नहीं है और जहाँ गोवर्धन नहीं, वहाँ मेरे मनको सुख नहीं है ॥७॥ इस प्रकार नन्दजीसे सन्नन्द कहते हैं, कि श्रीकृष्णने राधिकाजीका यह वचन सुनकर अपने धामसे चौरासी कोस भूमिको पृथ्वीमें भेजा, और गोवर्धन पर्वतको और श्री यमुनाजीको भेजा ॥८॥ तब सब जिसको प्रणाम करें ऐसी चौरासी कोस भूमि चौबीस वनोंको साथ लेकर यहाँ आई ॥९॥ और भरत खण्डसे पश्चिम दिशामें शाल्मली द्वीपके बीचमें द्रोणाचल पर्वतकी स्त्रीमें जन्म लिया ॥१०॥ तब तो देवताओंने गोवर्धन पर्वत पर पुष्पोंकी वर्षा की और हिमालय सुमेरु आदि सब पर्वत आये ॥११॥ गोवर्धनको नमस्कार करके परिक्रमा देकर विधानसे पूजा करके सब बड़े-बड़े पर्वत गोवर्द्धनकी परम स्तुति करने लगे ॥१२॥ तुम साक्षात् परिपूर्णतम कृष्णचन्द्रके गोलोकमें विराजते हो, जिस गोलोकमें सब गोपाल और गौओंके गण तथा गोपी विराजती हैं ॥१३॥ तुमही इस समय हमारे सब पर्वतोंके राजा हो, और तुमही गोवर्धन नामसे वृन्दावनमें विराजते हो ॥१४॥ वृन्दावनकी गोदीमें रहनेवाले अथवा वृन्दावनके

॥ राधोवाच ॥ यत्रवृन्दावनंनास्तिनयत्रयमुनानदी ॥ यत्रगोर्द्धनोनास्तितत्रमेनमनःसुखम् ॥ ७ ॥ सन्नन्दउवाच ॥ वेदनागक्रोशभूमिंस्वधाम्नःश्रीहरिःस्वयम् ॥ गोवर्द्धनंचयमुनांप्रेषयामासभूपरि ॥८॥ वेदनागक्रोशभूमिःसापिचात्रसमागता ॥ चतुर्विंशद्वनैर्युक्तासर्वलोकैश्चवन्दिता ॥ ९ ॥ भारतात्पश्चिमदिशिशाल्मलीद्वीपमध्यतः ॥ गोवर्द्धनोजन्मलेभेपत्न्यांद्रोणाचलस्यच ॥ १० ॥ गोवर्द्धनोपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥ हिमालयसुमेर्वाद्याःशैलाःसर्वेसमागताः॥११॥ नत्वाप्रदक्षिणीकृत्यपूजांकृत्वाविधानतः॥ गोवर्द्धनस्यपरमांस्तुतिंचक्रुर्महाद्रयः ॥ १२ ॥ शैलाऊचुः ॥ त्वंसाक्षात्कृष्णचन्द्रस्य परिपूर्णतमस्यच ॥ गोलोकेगोगणैर्युक्तेगोपीगोपालसंयुते ॥ १३ ॥ त्वंहिगोवर्द्धनोनामवृन्दारण्येविराजसे ॥ त्वन्नोगिरीणांसर्वेषांगिरिराजोऽसिसांप्रतम् ॥१४॥ नमोवृन्दावनांकायतुभ्यंगोलोकमौलिने ॥ पूर्णब्रह्मातपत्रायनमोगोवर्द्धनायच ॥ १५ ॥ सन्नन्दउवाच ॥ इतिस्तुत्वाऽथगिरयोजग्मुःस्वंस्वं गृहं ततः ॥ शैलोगिरिवरःसाक्षाद्गिरिराजइतिस्मृतः ॥ १६ ॥ एकदातीर्थयायीचपुलस्त्योमुनिसत्तमः ॥ द्रोणाचलसुतंश्यामंगिरिगोवर्द्धनं वरम् ॥१७॥ माधवीलतिकापुष्पं फलभारसमन्वितम् ॥ निर्झरैर्नादितंशान्तंकंदरामंगलायनम् ॥ १८ ॥

चिह्न अर्थात् वृन्दावनमें कौन सा कि जिसमें गोवर्धन नाम पर्वत है, इससे वृन्दावनके तुम चिह्न हो, और गोलोकके मुकुट रूप पूर्ण ब्रह्माके छत्र अथवा पूर्ण ब्रह्म पुरुषोत्तम श्रीनन्द नन्दन हैं छत्रकी तरह रक्षक जिसके, ऐसा जो गोवर्धन उनको हमारा नमस्कार है ॥ १५ ॥ फिर सन्नन्द कहते हैं–ऐसे सम्पूर्ण पर्वत गोवर्धनकी स्तुति करके अपने-अपने घरको चले गये, सन्नन्द गोप नन्दजीसे कहते हैं, तबसे यह गोवर्धन पर्वत गिरिराज कहलाता है ॥१६॥ एक समय पुलस्त्य नाम मुनि तीर्थ यात्राको आये थे, तो द्रोणाचलके पुत्र श्याम रूप गोवर्द्धन पर्वतको देखा ॥ १७ ॥ जिसमें माधवीकी लता फूल रही है, फूल और फलोंसे लदा है, झरना जिसमें झर रहे हैं, जिनके शब्दसे युक्त जिसकी बड़ी मनोहर मंगलकारी गुफाएं हैं ॥ १८ ॥

तप करने लायक है, जिसके शत (सौ) शिखर हैं, गेरू, खड़िया, मनशिल, चित्र विचित्र धातुओंसे विचित्र जिसका अंग है और तोता, मैना, मोर, चकोर, जहाँ बोल रहे हैं ॥ १९ ॥ मृग और वंदर जिसमें घूम रहे हैं, मयूर ध्वनिसे शोभित है, फिर कैसा है, मुमुक्षुओंको मुक्ति देनेवाला है, उस गोवर्द्धनको पुलस्त्यजी देखने लगे ॥२०॥ मुनियोंमें शार्दूल, गोवर्धनको लेनेकी इच्छा है जिनके, वह पुलस्त्यजी द्रोणाचलके पास गये, तब द्रोणाचलने पुलस्त्यजीकी बड़ी पूजा की, तब पुलस्त्यजी द्रोणाचलसे बोले ॥ २१ ॥ हे द्रोण ! तू पर्वतोंका राजा है, सब देवताओंने तुमको पूजा है, तुझमें दिव्य औषधियाँ रहती हैं, नित्यही मनुष्योंको जीवनदान देनेवाला है ॥२२॥ मैं काशीका रहनेवाला अर्थी मुनि तुम्हारे पास आया हूँ, तुम अपने गोवर्द्धन पुत्रको मुझे दे दो, और मेरा यहाँ कुछ काम नहीं है ॥२३॥ विश्वेश्वर देवकी काशीपुरी है, जहाँ पापीभी मरनेपर तत्काल मुक्तिको प्राप्त हो जाता है

तपोयोग्यंरत्नमयंशतशृंगंमनोहरम् ॥ चित्रधातुविचित्रांगंसकटंकंपक्षिसंकुलम् ॥१९॥ मृगैःशाखामृगैर्व्याप्तंमयूरध्वनिमंडितम्॥मुक्तिप्रदंमुमुक्षूणांतंददर्शमहामुनिः ॥ २० ॥ तल्लिप्सुर्मुनिशार्दूलोद्रोणपार्श्वंसमागतः ॥ पूजितोद्रोणगिरिणापुलस्त्यःप्राहतंगिरिम् ॥ २१ ॥ पुलस्त्य उवाच ॥ हेद्रोणत्वंगिरीन्द्रोसिसर्वदेवैश्चपूजितः ॥ दिव्यौषधिसमायुक्तःसदाजीवनदोनृणाम् ॥ २२ ॥ अर्थीतवांतिकेप्राप्तःकाशिस्थोहंमहामुनिः ॥ गोवर्द्धनंसुतंदेहिनान्यैर्मेंत्रप्रयोजनम् ॥ २३ ॥ विश्वेश्वरस्यदेवस्यकाशीनाम्नीमहापुरी ॥ यत्रपापीमृतःसद्यःपरंमोक्षंप्रयातिहि ॥ २४ ॥ यत्रगंगागतासाक्षाद्विश्वनाथोपियत्रवै ॥ तत्रैवस्थापयिष्यामियत्रकोपिनपर्वतः ॥२५॥ गोवर्द्धनेतवसुतेलतावृक्षसमाकुले ॥ तस्मिंस्तपःकरिष्यामिजातोयंमेमनोरथः ॥ २६ ॥ सन्नंदउवाच ॥ पुलस्त्यवचनंश्रुत्वास्वसुतस्नेहविह्वलः ॥ अश्रुपूर्णोद्रोणगिरिस्तंमुनिंवाक्यमब्रवीत् ॥ २७ ॥ द्रोणउवाच ॥ पुत्रस्नेहाकुलोहंवैपुत्रोमेयमतिप्रियः ॥ तेशापभयभीतोहंवदाम्येनंमहामुने ॥ २८ ॥ हेपुत्रगच्छमुनिना भारतेकर्मकेशुभे ॥ त्रैवर्ग्यलभ्यतेयत्रनृभिर्मोक्षमपिक्षणात् ॥ २९ ॥ गोवर्द्धनउवाच ॥ मुनेकथंमांनयसिलंबितंयोजनाष्टकम् ॥ योजनद्वयमुच्चांगंपंचयोजनविस्तृतम् ॥ ३० ॥

॥ २४ ॥ जहाँ गंगाजी हैं, जहाँ साक्षात् विश्वेश्वर महादेव हैं, वहीं मैं इसकी स्थापना करूँगा, जहाँ कोई पर्वत नहीं है ॥२५॥ लता वृक्षोंसे युक्त तुम्हारे पुत्र गोवर्द्धनपर बैठकर मैं तपस्या करूँगा, मेरा यह मनोरथ हुआ है ॥२६॥ सन्नन्द नन्दजीसे कहते हैं कि, पुलस्त्य मुनिका ऐसा वचन सुनकर द्रोण पर्वत पुत्रके स्नेहसे विह्वल होकर आंखोंमें आँसूभर मुनिसे बोला ॥ २७ ॥ पुत्रके स्नेहसे मैं बड़ा आकुल हूँ मुझको यह पुत्र अत्यन्त प्यारा है, तो हे महामुने ! आपके शापके डरसे मैं इसको कहता हूँ ॥ २८ ॥ ऐसा कहकर पुत्रसे बोला, हे पुत्र ! मुनीश्वरके साथ तुम कर्मभूमि भरत खण्डमें जाओ, जिस भरतखण्डमें धर्म, अर्थ, काम तीनों मिलते हैं, और जहाँ मोक्षभी एक क्षणभरमें ही मिलता है ॥२९॥ तब गोवर्धन बोला हे मुने ! मुझको कैसे ले चलोगे, मैं तो आठ योजन लम्बा हूँ, पांच योजन चौड़ा हूँ और दो योजन ऊँचा हूँ ॥ ३० ॥

तब पुलस्त्यजी बोले-हे पुत्र ! मेरे हाथपर बैठकर सुखसे चले चलो, मैं तुमको जब तक काशीजी नहीं पहुँचोगे, तबतक एक हाथपर रखकर ले चलूंगा ॥३१॥ तब फिर गोवर्द्धन बोला-हे मुने ! तुम जहाँ कहीं मुझको धरतीमें रख दोगे, धरतीमें से फिर नहीं उठूँगा, यह मेरी प्रतिज्ञा है ॥३२॥ तब फिर पुलस्त्यजी बोले कि, मैं भी प्रतिज्ञा करता हूँ शाल्मली द्वीपसे लेकर कौशलदेश तक बीचमें तुझको कहीं नहीं रखूँगा ॥ ३३ ॥ सन्नन्द कहते हैं, हे नन्दराज ! तब गोवर्द्धन पर्वत द्रोणाचल पिताको प्रणाम करके पिताके वियोग जन्य दुःखसे आँखोंमें आँसू भर मुनीश्वरके हाथपर बैठ गया ॥३४॥ तब पुलस्त्य मुनि अपने दाहिने हाथपर गोवर्धन पर्वतको रखकर दुनियाँको अपना प्रभाव दिखाते धीरे-धीरे चलते हुये जब व्रज मण्डलमें आये ॥३५॥ तब गोवर्द्धनको अपनी पहली बात याद आई, तब मार्गमें विचार करता हुआ बोला कि परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण भगवान् स्वयम् ॥३६॥ असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति यहाँ अवतार लेंगे, गोपाल बालकोंके साथ बालक्रीडा और किशोर लीला करेंगे ॥३७॥ दानलीला, मानलीला करेंगे, इससे मुझको और जगह जाना

पुलस्त्यउवाच ॥ उपविश्यकरेमेत्वंगच्छपुत्रयथासुखम् ॥ वाहयामिकरेत्वांवैयावत्काशींसमागतः ॥ ३१ ॥ गोवर्द्धनउवाच ॥ मुनेयत्रस्थलेभूम्यांस्थापनांमेकरिष्यसि ॥ करिष्यामिनचोत्थानंतद्भूम्याःशपथोमम ॥ ३२ ॥ पुलस्त्यउवाच ॥ अहमाशाल्मलीद्वीपान्मर्यादीकृत्यकौशलम् ॥ नस्थापनांकरिष्यामिशपथस्तेपिमेपथि ॥ ३३ ॥ सन्नंदउवाच ॥ मुनेःकरतलेतस्मिन्नारुरोहमहाचलः ॥ प्रणम्यपितरं द्रोणमश्रुपूर्णाकुलेक्षणः॥३४॥मुनिस्तंदक्षिणकरेधृत्वागच्छञ्छनैःशनैः ॥ स्वतेजोदर्शयन्नॄणांप्राप्तोभूद्व्रजमण्डले॥३५॥जातिस्मरोगिरिस्तत्राप्राहेदंपथिचिंतयन्॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम्॥३६॥असंख्यब्रह्मांडपतिर्व्रजेऽत्रावतरिष्यति॥ बाललीलांचकैशोरींचेष्टांगोपालबालकैः॥३७॥दानलीलांमानलीलांहरिरत्रकरिष्यति॥तस्मान्मयानगन्तव्यंभूमिश्चेयंकलिन्दजा॥३८॥ गोलोकाद्राधयासार्द्धंश्रीकृष्णोत्रागमिष्यति ॥ कृतकृत्योभविष्यामिकृत्वातद्दर्शनंपरम् ॥३९॥ इतिविचार्यमनसाभूरिभारंददौकरे ॥ तदामुनिश्चश्रांतोभूद्भूतपूर्वंगतस्मृतिः ॥४०॥ करादुत्तार्यतंशैलंनिधायव्रजमण्डले ॥ लघुशंकाजयार्थंहिगतोभूद्भारपीड़ितः ॥४१॥ कृत्वाशौचंजलेस्नात्वापुलस्त्योमुनिसत्तमः ॥ उत्तिष्ठेति मुनिःप्राहगिरिंगोवर्द्धनंपरम् ॥४२॥ नोत्थितंभूरिभाराढ्यंकराभ्यांतंमहामुनिः ॥ स्वतेजसाबलेनापिगृहीतुमुपचक्रमे ॥ ४३ ॥

उचित नहीं है, यह चौरासी कोस भूमि गोलोकसे आई हैं और कलिंदी नन्दिनी श्रीयमुनाजीभी यहीं हैं ॥३८॥ गोलोकसे राधिकाके साथ श्रीकृष्ण यहाँ आयेंगे उनके दर्शन कर मैं कृतकृत्य होऊँगा, इससे मुझको यहाँसे जाना उचित नहीं है ॥३९॥ ऐसा विचार कर अपना बोझ मुनीश्वरके हाथके ऊपर बढ़ा दिया, तब तो पुलस्त्यजी हार गये, और यह जो प्रतिज्ञा की थी कि, मैं तुझको रखूँगा नहीं उस प्रतिज्ञाको भूल गये ॥४०॥ तब हाथसे उतारकर गोवर्द्धनको इस व्रज भूमिमें रख दिया, बोझके मारे लघुशंकाको चले गये ॥ ४१ ॥ फिर शौच करके जलमें स्नान करके पुलस्त्य मुनि गोवर्द्धनसे बोले कि पुत्र ! उठो ॥ ४२ ॥ तब तो बड़ा बोझा बढ़ गया, मुनिसे दोनों हाथोंसे भी नहीं उठा तब अपने तेजके बलसे उठाने लगे ॥ ४३ ॥

मुनिने बहुत जोरसे उठाया, फिर भी गिरिराज गिरिकी बोझलतासे द्रोणाचलका पुत्र एक अंगुल भी नहीं चला ॥४४॥ तब पुलस्त्य बोले, हे गिरियोंमें श्रेष्ठ! चलो चलो बोझ मत बढ़ाओ, मैंने जान लिया कि तुम रूठ गये हो, सो तुम अपना अभिप्राय जल्दी कहो ॥४५॥ तब गोवर्द्धन बोला-हे मुने! यहाँ मेरा दोष नहीं है, आपने मुझको रख दिया, अब मैं यहाँसे नहीं उठूँगा मैं आपसे इस बातकी शपथ खा चुका हूँ ॥४६॥ संनंद कहते हैं कि मुनियोंमें सिंह पुलस्त्य मुनिका जब कोई उपाय नहीं चला, तब क्रोधके मारे इन्द्रियाँ जिनकी चलायमान हो गई, ओठ फरकने लगे, हाथ पांव कांपने लगे, तब गोवर्द्धनको यह शाप दिया ॥४७॥ कि अरे पर्वत! तू तो बड़ा ढीठ निकला! तुमने मेरा मनोरथ नहीं किया, इससे तू एक-एक तिल नित्य क्षीण हो ॥४८॥ संनंद कहते हैं हे नंद! पुलस्त्य ऋषि तो काशीको चले गये, उसी दिनसे यह गोवर्धन एक एक तिलभर नित्य क्षीण होता

मुनिनासंगृहीतोपिगिरिराजोगिरार्द्रया ॥ नचचालांगुलिंकिंचित्तदपिद्रोणनन्दनः ॥ ४४ ॥ पुलस्त्यउवाच ॥ गच्छगच्छगिरिश्रेष्ठभारंमाकुरु माकुरु ॥ मयाज्ञातोसिरुष्टस्त्वमभिप्रायंवदाशुमे ॥ ४५ ॥ गोवर्द्धनउवाच ॥ मुनेत्रमेनदोषोस्तित्वयामेस्थापनाकृता ॥ करिष्यामिनचोत्थानंपूर्वंमेशपथःकृतः ॥ ४६ ॥ सन्नन्दउवाच ॥ पुलस्त्योमुनिशार्दूलःक्रोधात्प्रचलितेन्द्रियः ॥ स्फुरदोष्ठोद्रोणपुत्रंशशापविगतोद्यमः ॥ ४७ ॥ पुलस्त्यउवाच ॥ गिरेत्वयातिधृष्टेननकृतोमेमनोरथः ॥ तस्मात्तुतिलमात्रंहिनित्यंत्वंक्षीणतांव्रज ॥ ४८ ॥ सन्नन्दउवाच ॥ काशींगतेपुलस्त्यर्षौत्वयंगोवर्द्धनोगिरिः ॥ नित्यंसंक्षीयतेनन्दतिलमात्रंदिनेदिने ॥४९॥ यावद्भागीरथीगङ्गायावद्गोवर्द्धनोगिरिः ॥ तावत्कलेःप्रभावस्तुभविष्यतिनकर्हिचित् ॥५०॥ गोवर्द्धनस्यप्रकटंचरित्रंनृणांमहापापहरंपवित्रम् ॥ मयातवाग्रेकथितंविचित्रंसुमुक्तिदंकौरुचिरंनचित्रम् ॥ ५१ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीवृन्दावनखण्डेगिरिराजोत्पत्तिकथनंनामद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ सन्नन्दउवाच ॥ गोलोकेहरिणाज्ञप्ताकालिन्दीसरितांवरा ॥ कृष्णंप्रदक्षिणीकृत्यगन्तुमभ्युदिताभवत् ॥१॥ तदैवविरजासाक्षाद्गंगाब्रह्मद्रवोद्भवा ॥ द्वेनद्यौयमुनायांतुसंप्रलीनेबभूवतुः ॥ २ ॥ परिपूर्णतमांकृष्णांतस्मात्कृष्णस्यनन्दराट् ॥ परिपूर्णतमस्यापिपट्टराज्ञींविदुर्जनाः ॥ ३ ॥

है ॥४९॥ इस पृथ्वीपर जबतक भागीरथी गंगा है, और जब तक गोवर्द्धन पर्वत है, तबतक कलियुगका प्रभाव कभी भी नहीं होगा ॥५०॥ गोवर्द्धनका यह चरित्र मैंने तुम्हारे सामने वर्णन किया है, यह मनुष्योंके महापाप हरनेवाला है, मनोहर है, विचित्र है, पृथ्वीतलमें प्रकट है, मुक्ति दाता है, सो गोवर्द्धनका यह माहात्म्य चित्र नहीं है ॥ ५१ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां वृन्दावनखण्डे भाषाटीकायां गिरिराजोत्पत्ति कथनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ संनंद कहते हैं कि, गोलोकमें साक्षात् हरिने जब आज्ञा दी, तब श्रीकृष्णकी परिक्रमा देकर नदियोंमें श्रेष्ठ श्रीयमुनाजी व्रजमें आनेको उद्यत हुई ॥१॥ उसी समय विरजा नदी और ब्रह्मद्रवसे उत्पन्न हुई श्रीगंगा, दोनों नदी श्रीयमुनाजीमें आकर लीन हो गई ॥ २ ॥ इसीसे हे नन्दराज! परिपूर्णतम श्रीकृष्णकी परिपूर्णतमा श्रीयमुनाको पटरानी जानते हैं ॥ ३ ॥

तभी नदियोंमें उत्तम कालिंदीजी बड़े वेगसे विरजाके वेगको भेदकर निकुंजके द्वारमें होकर निकली हैं ॥ ४ ॥ असंख्य ब्रह्माण्डोंके समूहको स्पर्श करके श्रीगंगाजीमें मिली, फिर अपने वेगसे बड़े भारी गंगाके प्रवाहको भेदते चली ॥ ५ ॥ वामनजी बायें पांवके अंगूठेके नखसे फूटे ब्रह्माण्डके मस्तकपर गंगाजीमें मिलकर ॥६॥ अजित भगवान्का स्थान वैकुण्ठ जो ध्रुवलोक वहाँ आकर प्राप्त हुई ॥ ७ ॥ ब्रह्म मंडलमें हो नीचेको गिरती सैकड़ों देवताओंके लोकोंमें होती हुई ॥ ८ ॥ बड़े वेगसे सुमेरु पर्वतके माथेमें गिरी, फिर वहाँसे बहुतसे पर्वतोंके कूटोंको उल्लंघनकर बड़े २ शिला तटोंको फोड़ती ॥९॥ जब सुमेरुकी दक्षिण दिशामें चलनेको उद्यत हुई, तब साक्षात् श्रीयमुना गंगाजीमेंसे निकली ॥१०॥ फिर गंगाजी तो हिमालयको चली गई और महानदी श्रीयमुनाजी कालिंद पर्वतको चली आई ॥११॥ फिर जब कालिंद पर्वतसे निकली तभीसे यमुनाजीके कलिंद नन्दिनी,

ततोवेगेनमहताकालिन्दीसरितांवरा ॥ बिभेदबिरजावेगंनिकुञ्जद्वारनिर्गता ॥४॥ असंख्यब्रह्मांडचयंस्पृष्ट्वाब्रह्मद्रवंगता ॥ भिन्दन्तीतज्जलंदीर्घं स्ववेगेनमहानदी ॥ ५ ॥ वामपादांगुष्ठनखभिन्नब्रह्मांडमस्तके ॥ श्रीवामनस्यविवरेब्रह्मद्रवसमाकुले ॥६॥ तस्मिञ्छ्रीगङ्गयासार्द्धंप्रविष्टाभूत्स-रिद्वरा ॥ वैकुण्ठंचाजितपदंसंप्राप्यध्रुवमण्डले ॥७॥ ब्रह्मलोकमभिव्याप्यपतन्तीब्रह्ममण्डलात् ॥ ततःसुराणांशतशोलोकाल्लोकंजगामह॥८॥ ततःपपातवेगेनसुमेरुगिरिमूर्द्धनि ॥ गिरिकूटानतिक्रम्यभित्त्वागण्डशिलातटान्॥९॥ सुमेरोर्दक्षिणदिशांगन्तुमभ्युदिताऽभवत् ॥ ततःश्रीयमु-नासाक्षाच्छ्रीगङ्गायांविनिर्गता ॥१०॥ गङ्गातुप्रययौशैलंहिमवन्तंमहानदी ॥ कृष्णातुप्रययौशैलंकालिन्दंप्राप्यसायदा ॥११॥ कालिन्दीति समाख्याताकालिन्दप्रभवायदा ॥ कलिन्दगिरिसानूनांगण्डशैलतटान्दृढान् ॥ १२ ॥ भित्त्वालुठन्तीभूखण्डेकृष्णावेगवतीसती ॥ देशान्पुन-न्तीकालिन्दीप्राप्तावैखांडवेवने ॥१३॥ परिपूर्णतमंसाक्षाच्छ्रीकृष्णंवरमिच्छती ॥ धृत्वावपुःपरंदिव्यंतपस्तेपेकलिन्दजा ॥१४॥ पित्राविनिर्मिते गेहेजलेऽव्यापिसमाश्रिता॥ ततोवेगेनकालिंदीप्राप्ताभूद्व्रजमण्डले॥१५॥वृन्दावनसमीपेश्रीमथुरानिकटेशुभे॥ श्रीमहावनपार्श्वेचसैकतेरमणस्थले ॥ १६ ॥ श्रीगोकुलेचयमुनायूथीभूत्वातिसुंदरी ॥ श्रीकृष्णचंद्ररासार्थंनिजवासंचकारह ॥ १७ ॥ अथव्रजाद्व्रजंतीसाव्रजविक्षेपविह्वला ॥ प्रेमानंदाश्रुसंयुक्ताभूत्वापश्चिमवाहिनी ॥ १८ ॥

कालिंदी ये नाम हुये, फिर कलिंद पर्वतके शिखरोंके बड़े बड़े दृढ किनारोंको भेदकर ॥१२॥ बड़े वेगसे भूखंडमें डुढ़कती २ देशोंको पवित्र करती श्रीकालिंदी खाण्डववनमें प्राप्त हुई ॥१३॥ तब परिपूर्णतम श्रीकृष्णको वरण करनेकी इच्छा करती कलिंद पुत्रीने परम दिव्य रूप धारणकर तप किया ॥१४॥ उसी जलमें पिता सूर्यने जो महल बना दिया था उस महलमें निवास किया, उसके बाद श्रीकालिंदी वेगसे व्रजमंडलमें प्राप्त हुई ॥ १५ ॥ वृन्दावनके समीप, मथुराके निकट, महावनके पास रमणी रेतीमें ॥ १६ ॥ अति सुन्दरी श्री यमुनाने श्रीगोकुलमें अपना यूथ बनाकर श्रीकृष्णके रासके लिये अपना निवासका स्थान किया ॥१७॥ जब व्रजसे आगे चली, तब व्रजके वियोगमें विह्वल हो गई, प्रेमानंदके आंसू आ गये, वह पश्चिमको बहने लगी ॥ १८ ॥

उसके बाद व्रज मण्डलको तीन बार प्रणाम कर देशोंको पवित्र करती तीर्थ राज प्रयागको चली गईं ॥१९॥ फिर श्रीगंगाजीके साथ क्षीर समुद्रको गईं, तब देवताओंने आकाश से पुष्पोंकी वर्षा की और जय जय शब्द किये ॥२०॥ कृष्णा जो श्रीयमुना कालिंदी नदियोंमें श्रेष्ठ वह समुद्रमें जाकर गद्गद वाणीसे श्रीगंगाजीसे बोली ॥ २१ ॥ हे गंगे ! तू धन्य है, सम्पूर्ण ब्रह्माण्डको पवित्र करती है, श्रीकृष्णके चरण कमलसे तेरी उत्पत्ति हुई है, सब लोकके एक तू ही वंदना करने योग्य है ॥ २२ ॥ मैं तो अब ऊपरको हरिके लोकको जाती हूँ, हे शुभे ! तुम भी जाओ, तुम्हारे समान कोई तीर्थ हुआ न होगा ॥२३॥ हे गंगे ! तू सर्व तीर्थमयी है, इससे मैं तुमको नमस्कार करती हूँ, हे सुमंगले गंगे ! जो कुछ मैंने अनुचित कहा हो, उसे क्षमा करना ॥ २४ ॥ श्रीगंगाजी यमुनाजीसे बोली, हे कृष्णे ! तू धन्य है, सब ब्रह्माण्डको पवित्र करनेवाली है, श्रीकृष्णके वामांगसे तुम्हारा जन्म है, परमानन्द रूपिणी हो ॥२५॥ साक्षात् परिपूर्णतमा हो, और सब लोक तुमको वंदन करते हैं, परिपूर्णतम महात्मा श्रीकृष्णकी पटरानी हो ॥२६॥ सो कृष्णा ! मैं आपको

ततस्त्रिवारंवेगेननत्वाथोव्रजमंडले ॥ देशान्पुनंतीप्रययौप्रयागंतीर्थसत्तमम् ॥१९॥ पुनःश्रीगंगयासार्धंक्षीराब्धिंसाजगामह॥देवाःसुवर्षुपुष्पाणां चक्रुर्दिविजयध्वनिम् ॥ २० ॥ कृष्णाश्रीयमुनासाक्षात्कालिन्दीसरितांवरा ॥ समुद्रमेत्यश्रीगंगांप्राहगद्गदयागिरा ॥ २१ ॥ यमुनोवाच ॥ हेगंगेत्वंतुधन्यासिसर्वब्रह्मांडपावनी ॥ कृष्णपादाब्जसंभूतासर्वलोकैकवन्दिता ॥ २२ ॥ ऊर्ध्वंयामिहरेर्लोकंगच्छत्वमपिहेशुभे ॥ त्वत्समानं हिदिव्यंचनभूतंनभविष्यति ॥२३॥ सर्वतीर्थमयीगंगातस्मात्त्वांप्रणमाम्यहम् ॥ यत्किंचिद्वाप्रकथितंतत्क्षमस्वसुमंगले ॥ २४ ॥ गंगोवाच ॥ हेकृष्णेत्वंतुधन्यासिसर्वब्रह्माण्डपावनी ॥ कृष्णवामांगसंभूतापरमानन्दरूपिणी ॥ २५ ॥ परिपूर्णतमासाक्षात्सर्वलोकैकवन्दिता ॥ परिपूर्ण तमस्यापिश्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥२६॥ पट्टराज्ञींपरांकृष्णेकृष्णांत्वांप्रणमाम्यहम् ॥ तीर्थैर्देवैर्दुर्लभात्वंगोलोकेऽपिचदुर्घटा ॥ २७ ॥ अहंयास्यामिपातालंश्रीकृष्णस्याज्ञयाशुभम् ॥ त्वद्वियोगातुराहंवैयानंकर्तुंनचक्षमा ॥ २८ ॥ यूथीभूत्वाभविष्यामिश्रीव्रजेरासमंडले ॥ यत्किंचिन्मे प्रकथितंतत्क्षमस्वहरिप्रिये ॥ २९ ॥ सन्नन्दउवाच ॥ इत्थंपरस्परंनत्वाद्वेनद्यौययतुर्द्रुतम् ॥ लोकान्पवित्रीकुर्वन्तीपातालेस्वःसरिद्गता ॥ ३० ॥ सापिभोगवतीनाम्नाबभौभोगवतीवने ॥ यज्जलंसत्रिनयनःशेषोमूर्ध्नाबिभर्तिहि॥३१॥अथकृष्णास्ववेगेनभित्त्वासप्ताब्धिमंडलम् ॥ सप्तद्वीपमहीपृष्ठेलुठन्तीवेगवत्तरा ॥ ३२ ॥

नमस्कार करती हूँ, तुम सब तीर्थ और देवताओंको दुर्लभ हो और गोलोकमें भी दुर्घटा हो ॥२७॥ मैं भी श्रीकृष्णकी आज्ञासे पातालको जाती हूँ, परन्तु तुम्हारे वियोगसे चला नहीं जाता है ॥ २८ ॥ हम तुम यूथ होकर व्रजमें रासमण्डलमें प्राप्त होयेंगी, अब तो जाती हूँ, मैंने जो कुछ अयोग्य कहा हो, उसे क्षमा करना ॥ २९ ॥ सनंद कहते हैं-ऐसे परस्पर प्रणाम करके दोनों नदी गंगा और यमुना जल्दी चली गईं, लोकोंको पवित्र कर तब गंगा तो पातालमें गईं ॥३०॥ तब वह गंगा तो भोगवती पुरीके वनमें भोगवती नामसे विख्यात हुई, जिस गंगाके जलको महादेवजी सहित शेषजी शिरपर धारण करते हैं ॥ ३१ ॥ इसके बाद श्रीयमुनाजी सातों द्वीपोंको और सातों समुद्रोंको भेदकर बड़े वेगसे पृथ्वीपर लुढकती हुई चली गईं ॥ ३२ ॥

सोनेकी भूमिमें होकर लोकालोक पर्वतमें गई, फिर कालिंदी उसके शिखरोंको भेदती उसके शिरपर चढ गई ॥ ३३ ॥ फुहारे जैसी उछलती धारासे ऊपरको उठती देवताओंके स्वर्गको चली गई ॥३४॥ वहाँसे महर्लोक, जनलोक, तपलोक, सत्यलोकमें होकर सत्यलोकसे वैकुण्ठमें गई, वहाँसे ब्रह्माण्डके छेदमें होकर ब्रह्मद्रवमें मिलती हुई ॥३५॥गोलोकको चली गई, तब देवता पुष्पोंकी वर्षा करने लगे, नमस्कार करने लगे ॥ ३६ ॥ यह कालिंदगिरि नन्दिनीका नवचरित्र है, विचित्र है, जो कोई सुने अथवा कहे उसको पृथ्वीपर मंगल प्राप्त होवे, जो जन नित्यही इसका पाठ करे सो निज निकुंज लीला नित्य पदको प्राप्त होवे ॥३७॥ इति श्रीगर्ग संहितायां वृन्दावन खण्डे भाषा टीकायां नंदसंनंद संवादे कालिंद्यागमन वर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ नारदजी बहुलाश्व राजासे वर्णन करते हैं, नन्दराज संनंदगोपका ऐसा वचन सुनकर बडे प्रसन्न हुये, बड़ा है मन जिनका सब

गत्वास्वर्णमयींभूमिंलोकालोकाचलंगता ॥ तत्सानुगंडशैलानांतटंभित्वाकलिन्दजा ॥३३॥ तन्मूर्ध्निचोत्पतिताशुस्फुरावज्जलधारया ॥ उद्ग-
च्छन्तीतदूर्ध्वंसाययौस्वर्गंतुनाकिनाम् ॥ ३४ ॥ आब्रह्मलोकंलोकांस्तानभिव्याप्यहरेःपदम् ॥ ब्रह्मांडरंध्रंश्रीब्रह्मद्रवयुक्तंसमेत्यसा ॥ ३५ ॥
पुष्पवर्षंप्रवर्षत्सुदेवेषुप्रणतेषुच ॥ पुनः श्रीकृष्णगोलोकमारुरोहसरिद्वरा ॥३६॥ कलिन्दगिरिनन्दिनीनवचरित्रमेतच्छुभंश्रुतंचयदिपाठितंभुवि
तनोतिसन्मंगलम् ॥ जनोपियदिधारयेत्किलपठेच्चयोनित्यशःसयातिपरमंपदंनिजनिकुंजलीलावृतम् ॥३७॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीवृन्दा-
वनखण्डेनंदसन्नंदसंवादेकालिंद्यागमनवर्णनंनामतृतीयोऽध्याय ॥ ३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ संनन्दस्यवचःश्रुत्वागन्तुंनन्दःसमुद्यतः ॥ सर्वैं
र्गोपगणैःसार्द्धमुदितोभून्महामनाः ॥१॥ यशोदयाचरोहिण्यासर्वगोपीगणैःसह ॥ अश्वैरथैर्वीरजनैर्मंडितोविप्रमंडलैः ॥ २ ॥ गोभिश्चशक-
टैर्युक्तोवृद्धैर्बालैस्तथाऽनुगैः ॥ गायकैर्गीयमानश्चशंखदुंदुभिनिःस्वनैः ॥३॥ पुत्राभ्यांरामकृष्णाभ्यांनन्दराजोमहामतिः ॥ रथमारुह्यहेराजन्व-
नंवृन्दावनंययौ ॥४॥ वृषभानुवरोगोपोगजमारुह्यभार्यया ॥ अंकेनीत्वासुतांराधांगीयमानश्चगायकैः ॥५॥ मृदंगतालवीणानांवेणूनांकलनिः-
स्वनैः ॥ गोपालगोगणैःसार्द्धंवृन्दारण्यंजगामह ॥६॥ उपनन्दास्तथानन्दास्तथाषड्वृषभानवः ॥ सर्वैःपरिकरैःसार्द्धंजग्मुर्वृंदावनंवनम् ॥७॥

गोपोंको साथ लेकर चलनेको उद्यत हुये ॥१॥ गौओंको आगे करके, बालक और बूढोंको गाड़ियोंमें चढाकर, यशोदाजीको रोहिणीको रथोंपर चढाकर, गौओंको, ब्राह्मणोंको घोड़ोंपर चढाकर ॥२॥ गौ, गाड़ी, बालक, बूढे, और सेवकोंकों अपने साथ लेकर, गवैया गाते जाते हैं. शंख दुंदुभि बजती जाती हैं ॥ ३ ॥ दोनों पुत्र कृष्ण, बलदेवको साथ लेकर, रथमें चढकर, बड़े बुद्धिमान् नन्दजी वृन्दावन नामके वनको चले ॥४॥ ऐसे ही वृषभानुवर गोप अपनी पुत्री राधिकाको गोदीमें बैठाकर कीर्तिरानीको साथ लेकर, हाथीपर चढकर वृन्दावनको चले गये गवैया गाते चलते हैं ॥५॥ मृदंग, मँजीरा, बांसुरी, वीणा गोप बजाते जिनके साथ चलते हैं, उन मनोहर शब्दोंको सुनते, आनन्दसे गौ और गोपियोंके झुण्डोंको साथ लेकर वृन्दावनमें प्रवेश किया ॥ ६ ॥ उसी तरह नौ उपनन्द, छः वृषभानु, अपने साथ परिकरोंको साथ लेकर वृन्दावनको गये ॥ ७ ॥

सब गोप सेवकोंको साथ लेकर वृन्दावनमें प्रवेश करके अलग-अलग झोंपड़े बनाकर इधर-उधर रहने लगे ॥८॥ सोलह कोसके विस्तार वाला किला बनाया, जिसमें परिकोटा, खाई, सभा, कचहरी, और सात दरवाजे बनाये हैं ॥९॥ चारों ओर जिसके सरोवर, मनको हरनेवाले जिसमें बाजार और हजारों जिसमें कुञ्ज हैं, ऐसा वृषभानुजीने अपना पृथक् नगर बनाया ॥१०॥ तब श्रीकृष्णनन्दके नगरमें और वृषभानुके पुरमें गोपियोंकी प्रीति बढ़ाते बालकोंके साथ खेलने लगे ॥११॥ इसके बाद वृन्दावनमें मनोहर राम और कृष्ण दोनों भाई सम्पूर्ण गोपालोंके सम्मत बछड़ोंको पालन करनेवाले हुये ॥१२॥ बालकोंके साथ ग्रामकी सीमामें कालिंदीके पुण्य पुलिनमें राम, कृष्ण दोनों भाई बछड़े चराने लगे ॥१३॥ कभी कभी कुञ्ज निकुञ्जोंमें छुप जाते हैं, कभी कभी इधर उधर वनमें विचरते हैं ॥१४॥ पांवोंमें नूपुर बजते हैं, कमरमें करधनी बजती हैं हार, कुण्डल, केयूरोंसे सजे हुये,

वृन्दावनेसंप्रविश्यगोपाःसर्वैसहानुगाः ॥ घोषान्विधायवसतीर्वासंचक्रुरितस्ततः ॥८॥ सभामंडपसंयुक्तंसदुर्गंपरिखायुतम् ॥ चतुर्योजनविस्तीर्णसप्तद्वारसमन्वितम् ॥ ९ ॥ सरोवरैःपरिवृतंराजमार्गमनोहरम् ॥ सहस्रकुंजंचपुरंवृषभानुरचीक्लृपत् ॥१०॥ श्रीकृष्णोनन्दनगरेवृषभानुपुरेऽर्भकैः ॥ चचारक्रीडनपरोगोपीनांप्रीतिमावहन् ॥ ११ ॥ अथवृन्दावनेराजन्सर्वगोपालसंमतौ ॥ बभूवतुर्वत्सपालौरामकृष्णौमनोहरौ ॥ १२ ॥ चारयामासतुर्वत्सान्ग्रामसीम्न्यर्भकैःसह ॥ कालिन्दीनिकटेपुण्येपुलिनेरामकेशवौ ॥१३॥ निकुंजेषुचकुंजेषुसंप्रलीनावितस्ततः ॥ रिंगमाणौचकुत्रापिनन्दंतौचेरतुर्वने ॥ १४ ॥ किंकिणीजालसंयुक्तौशिंजन्मंजीरनूपुरौ॥नीलपीतांबरधरौहारकेयूरभूषितौ ॥ १५ ॥ क्षेपणैःक्षिपतौबालैर्वंशीवादनतत्परौ ॥ मुखेनकिंकिणीशब्दं कुर्वद्भिर्बालकैश्वृतौ ॥१६॥ धावन्तौपक्षिभिश्छायांरेजतूरामकेशवौ ॥ मयूरपक्षसंयुक्तौपुष्पपल्लवभूषितौ ॥ १७ ॥ एकदावत्सवृन्देषुप्राप्तंवत्सासुरंनृप ॥ कंसप्रणोदितंज्ञात्वाशनैस्तत्रजगामह ॥ १८ ॥ धावन्गोपेषुसर्वत्रलांगूलंचालयन्मुहुः ॥ दैत्यःपश्चिमपादाभ्यांहरिमंसेतताडह ॥ १९ ॥ पलायितेषुबालेषुकृष्णस्तंपादयोर्द्वयोः ॥ गृहीत्वाभ्रामयित्वाथपातयामासभूतले ॥२०॥पुनर्नीत्वाकराभ्यांतंकपित्थेप्राहिणोद्धरिः ॥ तदामृत्युंगतंदैत्येकपित्थोऽपिमहाद्रुमः ॥ २१ ॥

पीताम्बर, नीलाम्बर धारण किये विचरते हैं ॥ १५ ॥ किंकिणीके शब्द करनेवाले बालकोंके साथ बाल चेष्टासे क्षेपण (खिल्ली) उड़ाते मुखसे बंशी बजानेमें तत्पर ॥ १६ ॥ पक्षियोंकी छायाके नीचे भागते, मोर पंखोंको पहने लाल लाल नये पत्ते और पुष्पोंके शृंगार किये विचरते दोनों भाई कृष्ण बलदेवजी अति शोभित हुये ॥ १७ ॥ एक समय बछड़ोंके समूहमें कंसके भेजे वत्सासुरको आया जान धीरे-धीरे उसके पास गये॥१८॥गोपोंमें सब जगह भागते पूंछको चलाते-चलाते उस दैत्यने श्रीकृष्णके पास आकर पिछले पांवों से उनके कन्धेमें मारा ॥१९॥ जब सब बालक भाग गये तब श्रीकृष्णने उसके पिछले दोनों पांव पकड़के घुमाकर धरतीमें मारा ॥ २० ॥ फिर दोनों हाथोंसे पकड़कर घुमाकर कैथके पेड़में मारा, तब दैत्यके लगनेसे उस कैथके पेड़ने ॥ २१ ॥

और बहुतसे कैथके वृक्षोंको तोड़ दिया, यह बड़ा आश्चर्य हुआ, सब बालक आश्चर्यमें आगये, और बहुत अच्छा बहुत अच्छा एसे कहन लगे ॥२२॥ आकाशमें देवता जयजय शब्द करते पुष्पोंकी वर्षा करने लगे, तब उस दैत्यके शरीरमें से एक ज्योति निकली जो सबके देखते देखते श्रीकृष्णमें लीन होगई॥२३॥अब बहुलाश्व राजा बोला-हे मुने! अहो पहले जन्ममें पुण्य करने वाला यह वत्सासुर कौन था ? जो परिपूर्ण परसे पर श्रीकृष्णमें लीन होगया ॥२४॥ तब नारदजी बोले कि, पूर्व जन्ममें यह मुर दत्यका पुत्र देवताओंको जीतने वाला प्रमील नामक दैत्य था, वह वसिष्ठजीके आश्रममें गया, और वहाँ इसने नन्दिनी गौको देखा ॥२५॥ उस गौको लेनेकी इच्छासे ब्राह्मण बनकर मनोहर उस गौको वशिष्ठ जीसे मांगा, जब दिव्य दर्शन वसिष्ठजीने चुप होकर कुछ उत्तर नहीं दिया, तब वह गौ उस दैत्यसे बोली ॥ २६ ॥ हे दुर्बुद्धे ! जो तू मुनीश्वरोंकी गौको लेनेके लिये ब्राह्मण बन

कपित्थान्पातयायासतदद्भुतमिवाऽभवत् ॥ विस्मतेषुचबालेषुसाधुसाध्वितिवादिषु ॥२२॥ दिविदेवाजयारावैःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥ तद्दैत्यस्य महज्ज्योतिःकृष्णेलीनंबभूवह ॥ २३ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ अहोपूर्वकृतसुकृत्कोयंवत्सासुरोमुने ॥ श्रीकृष्णेलीनतांप्राप्तः श्रीप्रपूर्णेप-रात्परे ॥ २४ ॥ नारदउवाच ॥ मुरपुत्रोमहादैत्यःप्रमीलोनामदेवजित् ॥ वसिष्ठस्याश्रमेप्राप्तोनन्दिनींगांददर्शह ॥ २५ ॥ तल्लिप्सुर्ब्राह्म-णोभूत्वाययाचेगांमनोहराम् ॥ तूष्णींस्थितेगौरुवाचवसिष्ठेदिव्यदर्शने ॥ २६ ॥ नन्दिन्युवाच ॥ मुनीनांगांसमाहर्तुंभूत्वाविप्रः समागतः ॥ दैत्योसिमुरजस्तस्माद्गोवत्सोभवदुर्मते ॥ २७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदैववत्सरूपोभून्मुरपुत्रोमहासुरः ॥ वसिष्ठंगांपरिक्रम्य नत्वात्राहीत्युवाचह ॥ २८ ॥ गौरुवाच ॥ द्वापरान्तेमहादैत्यवृन्दारण्येयदातव ॥ गोवत्सेषुगतस्यापितदामुक्तिर्भविष्यति ॥ २९ ॥ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ परिपूर्णतमेसाक्षात्कृष्णेपतितपावने ॥ तस्माद्वत्सासुरोदैत्योलीनोभून्नहिविस्मयः ॥ ॥ ३० ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहि-तायां श्रीवृन्दावनखंडेवत्सासुरमोक्षोनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एकदाचारयन्वत्सान्सरामोबालकैर्हरिः ॥ यमुना निकटेप्राप्तंबकंदैत्यंददर्शह ॥ १ ॥

कर आया है, सो तू मुरका पुत्र दैत्य है, इससे तू गौका बछड़ा होजा ॥२७॥ नारदजी कहते हैं, उसी समय वह मुर दैत्यका पुत्र प्रमील नामक बछड़ा हो गया, तब वत्सरूपधारी दैत्य वसिष्ठजीकी और गौकी परिक्रमा देकर और प्रणाम करके बोला कि, "मां त्राहि ! त्राहि" मेरी रक्षा करो, तब नन्दिनी गौ बोली ॥२८॥ कि, द्वापरके अन्तमें वृन्दावनमें हे महादैत्य ! श्रीकृष्ण भगवान् बछड़े चरानेको आयेंगे, उन बछड़ोंमें तू जब जायगा, तब तेरी मुक्ति होगी ॥ २९ ॥ नारदजी कहते हैं कि, इससे जो यह परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्णमें लीन हो गया, सो कुछ आश्चर्य नहीं है, क्योंकि श्रीकृष्ण पतितपावन हैं इति श्रीमद्गर्गसंहितायां श्रीवृन्दावनखण्डे भाषाटीकायांवत्सासुरमोक्षणंनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ नारदजी कहते हैं-एक समय बलदेवजीके साथ गोप बालकोंको साथ लेकर बछड़ोंको चराते श्रीकृष्णने यमुनाजीके किनारे पर बकासुरको देखा ॥ १ ॥

श्वेत पर्वतके समान बड़ा, बड़े बड़े पांववाला, बोलनेमें बादलसा गर्जता है, उसको देखकर बालक भागने लगे, वज्रके समान चोंचवाला वह चोंच फाड़कर श्रीकृष्णको निगल गया ॥ २ ॥ तब सब बालक रोने लगे और मरेके समान हो गये, तब हाहाकार करते सब देवता आये ॥ ३ ॥ तब इन्द्रने उस बकके वज्र मारा, वज्रके प्रहारसे मूर्च्छा खाकर गिर पड़ा, किन्तु मरा नहीं, फिर उठकर खड़ा हो गया ॥ ४ ॥ उसके बाद ब्रह्माजीने क्रोध करके ब्रह्मदण्डसे मारा, तब उस प्रहारसे गिर गया, और दो घड़ी तक मूर्च्छित रहा ॥ ५ ॥ फिर वेगसे अपने शरीरको फड़फड़ाकर जम्हाई लेकर उठ खड़ा हुआ किन्तु मरा नहीं और महाबली मेघकी तरह गर्जने लगा ॥ ६ ॥ फिर महादेवने उस महासुरको त्रिशूल मारा, तब उसका एक पंख कट गया, किन्तु अति भयंकर वह दैत्य मरा नहीं ॥७॥ फिर वायु देवताने इसके वायव्यास्त्र मारा, तब वह थोड़ा चलायमान होकर फिर वहाँका

श्वेतपर्वतसंकाशोबृहत्पादोघनध्वनिः॥ पलायितेषुबालेषुवज्रतुंडोऽग्रसद्धरिम्॥२॥रुदन्तोबालकाःसर्वेंगतप्राणाइवाभवन्॥हाहाकारंतदाकृत्वा देवाःसर्वेसमागताः॥३॥ इन्द्रोवज्रंतदानीत्वातंतताडमहाबकम्॥ तेनघातेनपतितोनममारसमुत्थितः॥४॥ब्रह्मापिब्रह्मदंडेनतंतताडरुषान्वितः॥ तेनघातेनपतितोमूर्च्छितोघटिकाद्वयम्॥ ५ ॥ विधुन्वन्स्वतनुंवेगाज्जृंभितःपुनरुत्थितः॥ नममारतदादैत्योजगर्जघनवद्बली ॥६॥ त्रिलोचन स्त्रिशूलेनतंजघानमहासुरम्॥ छिन्नैकपक्षोदैत्योऽपिनमृतोऽतिभयंकरः॥७॥ वायव्यास्त्रेणवायुस्तंसंजघानबकंततः॥ उच्चचालबकस्तेनपुनस्तत्र स्थितोऽभवत्॥८॥ यमस्तंयमदंडेनताडयामासचाग्रतः॥ तेनदंडेननमृतोबकोवैचंडविक्रमः॥९॥ दंडोऽपिभग्नतांप्रागात्सक्षतोनाभवद्बकः॥ तदैवचाग्रतःप्राप्तश्चंडांशुश्चंडविक्रमः॥ १०॥ शतबाणैर्बकंदैत्यंसंजघानधनुर्धरः॥ तीक्ष्णैःपक्षगतैर्बाणैर्नममारबकस्ततः॥ ११ ॥ धनदस्तंच खड्गेनसुतीक्ष्णेनजघानह॥छिन्नद्वितीयपक्षोऽभून्नमृतोदैत्यपुंगवः॥१२॥ नीहारास्त्रेणतंसोमःसंजघानमहाबकम्॥ शीतार्त्तोमूर्च्छितोदैत्योनमृतः पुनरुत्थितः॥ १३ ॥ आग्नेयास्त्रेणतंह्यग्निःसंतताडमहाबकम्॥ भस्मरोमाभवद्दैत्योनममारमहाखलः॥१४॥ अपांपतिस्तंपाशेनबद्ध्वाकौविच- कर्षह॥ कर्षणात्समहापापश्छिन्नोभून्नमृतश्चवै॥ १५॥

वहीं स्थिर हो गया ॥ ८ ॥ फिर यमराजने सामने खड़े उसके कालदंड मारा, तबभी प्रचंड पराक्रमी बक नहीं मरा ॥ ९ ॥ और दंडभी टूट गया, किन्तु बकासुर घायल भी नहीं हुआ, तब उसके सामने चंडांशु सूर्य जिसका प्रचंड पराक्रम है, आया॥१०॥ तब धनुर्धर सूर्यने बड़े तीक्ष्ण सौ बाण मारे, वे बाण बकासुरके पंखोंमें लगे भी परन्तु बकासुर मरा नहीं ॥ ११ ॥ तब तो कुबेरने बड़े तीक्ष्ण खड्गसे उसको मारा, उससे बक दैत्यका दूसरा पंख कटकर गिर पड़ा, किन्तु मरा नहीं ॥ १२ ॥ फिर नीहारास्त्रसे चन्द्रमाने मारा, तब भी शीतसे पीड़ित हो मूर्च्छा खाकर गिर पड़ा, किन्तु मरा नहीं, फिर उठकर खड़ा हो गया ॥ १३ ॥ फिर उस बकको आग्नेयास्त्रसे अग्निने मारा, तब उसके रोंगटे तो जल गये, किन्तु महाबली दैत्य मरा नहीं ॥ १४ ॥ तब तो वरुणने पाशमें बांधकर धरतीमें बहुत खींचा, तब बड़ा पापी वह बक छिल तो गया, किन्तु मरा नहीं ॥ १५ ॥

तब तो भद्रकाली देवीने बड़े वेगसे गदा मारी, उसके प्रहारसे मूर्च्छित होकर गिर पड़ा और बड़ी वेदनाको प्राप्त हुआ ॥१६॥ शिर फट गया,फिर भी अपने शरीरको कम्पाता हुआ उठकर खड़ा हो गया और वह महादुष्ट बक दैत्य मेघके समान गर्जने लगा ॥१७॥ तब शक्तिको धारण करनेवाले स्वामी कार्तिकेयने शक्ति मारी, तब उसका एक पांव कट गया, तब भी पक्षियोंमें श्रेष्ठ मरा नहीं ॥१८॥ तब तो क्रोध करके बिजलीके समान शब्द करते हुये दैत्यने अपनी तीखी चोंचसे सब देवताओंको भगा दिया ॥१९॥ तब सामने आकाशमें भागते हुये देवताओंके पीछे भगा और सब दिशाओंके मंडलको शब्दायमान कर दिया ॥२०॥ फिर वह बक दैत्य उसी जगह आकर बैठा, तब सब देवर्षि, ब्रह्मर्षि और सब देवता तथा ब्राह्मण श्रीकृष्णको सफल आशीर्वाद देने लगे ॥२१॥ तब श्रीकृष्णने उसके गलेमें अपने शरीरको बढ़ाया, सो जल्दी ही उसने श्रीकृष्णको उगल दिया,

तताडगदयातंवैभद्रकालीतरस्विनी॥ मूर्च्छितस्तत्प्रहारेणपरंकश्मलतांययौ॥१६॥ क्षतमूर्द्धासमुत्थायविधुन्वन्स्वतनुंपुनः॥जगर्जघनवद्धीरोब-कोदैत्योमहाखलः।१७तदाशक्तिधरःशक्तितस्मैचिक्षेपसत्वरः।तयैकपादोभग्नोभून्नमृतःपक्षिणांवरः१८तदाक्रोधेनसहसाधावन्दैत्यस्तडित्स्वनः॥ देवान्विद्रावयामासस्वचंच्वातीक्ष्णतुण्डया॥१९॥अग्रेपलायितान्देवानन्वधावद्बकोऽम्बरे॥ पुनस्तत्रगतोदैत्योनादयन्मण्डलंदिशाम्॥२०॥ तदादेवर्षयःसर्वेसर्वेब्रह्मर्षयोद्विजाः॥श्रीनन्दनन्दनायाशुसफलांचाशिषंददुः॥२१॥ तदैवकृष्णस्तन्मध्येततानवपुरुज्ज्वलम्॥चच्छर्दकृष्णंसह-साक्षतकंठोमहाबकः॥२२॥पुनःकृष्णंसमाहर्तुंतीक्ष्णयातुंडयाऽऽगतम्॥ पुच्छेगृहीत्वातंकृष्णःपोथयामासभूतले॥२३॥ पुनरुत्थायतुण्डंस्वंप्र-सार्य्यावस्थितंबकम्॥ ददारतुंडेहस्ताभ्यांकृष्णः शाखांगजोयथा॥२४॥तदामृतस्यदैत्यस्यज्योतिःकृष्णेसमाविशत्॥ देवतावव्रुषुःपुष्पैर्जया रावैःसमन्विताः॥ २५ ॥ गोपालाविस्मिताःसर्वेकृष्णंसंश्लिष्यसर्वतः॥ ऊचुस्त्वंकुशलीभूतोमुक्तोमृत्युमुखात्सखे॥२६॥ एवंकृष्णोबकंहत्वा सबलोबालकैःसह॥ गोवत्सैर्हर्षितोगायन्नाययौराजमन्दिरे॥ २७ ॥ परिपूर्णतमस्यास्यश्रीकृष्णस्यमहात्मनः॥ जगुर्गृहेगताबालाः श्रुत्वेदंतेऽतिविस्मिताः॥ २८ ॥ बहुलाश्वउवाच॥ कोयंदैत्यःपूर्वकालेकस्मात्केनबकोऽभवत्॥ पूर्णब्रह्मणिसर्वेशेश्रीकृष्णेलीनतांगतः॥२९॥

और उसके गलेमें घाव हो गया ॥२२॥ फिर अपनी तीखी चोंचसे श्रीकृष्णको ग्रसनेके लिये आया, तब श्रीकृष्णने उसकी पूंछ पकड़कर धरतीमें दे मारा ॥२३॥ फिर उठकर अपनी चोंच फाड़कर बकासुर आया, तब उसकी दोनों चोंचोंको श्रीकृष्णने हाथोंसे पकड़कर चीर डाला, जैसे मस्त हाथी पेड़की शाखाको चीर डालता है॥२४॥ तब वह दैत्य मर गया, और उसकी ज्योति श्रीकृष्णमें समा गई, तब देवता जय जय शब्द करते हुये पुष्पोंकी वर्षा करने लगे ॥२५॥ सब गोपाल आश्चर्यमें आ गये और श्रीकृष्णसे मिलकर बोले, हे सखे ! तुम आज कुशलपूर्वक मृत्युके मुखसे छूटे हो ॥ २६ ॥ ऐसे श्रीकृष्ण बकासुरको मारकर बलदेवजीको, गोपोंको और बछड़ोंको सबको साथ लेकर हर्षित हुये गाते गाते राजमंदिरको आये॥२७॥परिपूर्णतम श्रीकृष्ण महात्माके चरित्रको बालकोंने अपने२घरमें जाकर कहा तब सब वृन्दावनवासी आश्चर्य करने लगे॥२८॥ अब बहुलाश्वराजा

नारदजीसे पूछने लगा, हे महाराज ! यह दैत्यपूर्वजन्ममें कौन था ? किस कारणसे यह बगुला हुआ, जो पूर्णब्रह्म सर्वेश्वर श्रीकृष्णमें लीन हो गया ॥२९॥ अब नारदजी बोले कि, हे नृप ! हयग्रीव दैत्यका पुत्र उत्कल नामक एक दैत्य था, जो बड़ा बली था, युद्धमें देवताओंको जीतकर इन्द्रका छत्र छीन लीया ॥३०॥ महाबलीने और भी मनुष्योंका तथा राजाओंका राज्य छीन लिया और सौ वर्षतक बड़ा सर्व समृद्धिमान राज्य किया ॥ ३१ ॥ वह दैत्य विचरते २ एक समय गंगासागरमें सिद्ध जाजलि मुनिकी पर्णशालके समीप गया ॥ ३२ ॥ वहाँ जलमें जाल डालकर मछलियोंको पकड़ने लगा, मुनीश्वरने निषेध किया, किन्तु दुर्बुद्धिने नहीं माना ॥ ३३ ॥ तब सिद्ध जाजलि मुनिने शाप दिया, कि अरे दुर्बुद्धे ! तू बगुलेकी तरह मछलियोंको खाता है, इससे तू बगुला हो जा ॥३४॥ उसी क्षण वह बगुला हो गया, गर्व जाता रहा, तेज नष्ट हो गया, तभी मुनीश्वरके चरणों

श्रीनारदउवाच ॥ हयग्रीवसुतोदैत्यउत्कलोनामहेनृप ॥ रणेऽमरान्विनिर्जित्यशक्रच्छत्रंजहारह ॥ ३० ॥ तथानृणांनृपाणांचराज्यंहृत्वामहाबलः ॥ चकारवर्षाणिशतंराज्यंसर्वविभूतिमत् ॥३१॥ एकदाविचरन्दैत्यः सिंधुसागरसंगमे॥ जाजलेर्मुनिसिद्धस्यपर्णशालासमीपतः ॥३२॥ जलेनिक्षिप्यबडिशंमीनानाकर्षयन्मुहुः ॥ निषेधितोऽपिमुनिनानामन्यतसदुर्मतिः ॥३३॥ तस्मैशापंददौसिद्धोजाजलिर्मुनिसत्तमः ॥ बकवत्त्वंझषानत्सित्वंबकोभवदुर्मते ॥ ३४ ॥ तत्क्षणाद्बकरूपोऽभूद्भ्रष्टतेजागतस्मयः ॥ पतितःपादयोस्तस्यनत्वाप्राहकृतांजलिः ॥ ३५ ॥ उत्कलउवाच ॥ नजानेतेतपश्चण्डंमुनेमांपाहिजाजले ॥ साधूनांभवतांसंगंमोक्षद्वारंपरंविदुः ॥ ३६ ॥ मित्रेशत्रौसमामानेऽपमानेहेमलोष्ठयोः ॥ सुखेदुःखेसमायेवैत्वादृशःसाधवश्चते ॥३७॥ किंकिंनजातंमहतांदर्शनात्कौमुनेनृणाम् ॥ पारमेष्ठ्यंचसाम्राज्यमैन्द्रंयोगपदंभवेत् ॥ ३८ ॥ जाजलेमुनिशार्दूलत्रैवर्ग्यंकिमभूज्जनैः ॥ साधूनांकृपयासाक्षात्पूर्णब्रह्मापिलभ्यते ॥ ३९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदाप्रसन्नःसमुनिर्जाजलिस्तमुवाचह ॥ वर्षषष्टिसहस्राणितपस्तप्तंचयेनवै ॥४०॥ जाजलिरुवाच ॥ वैवस्वतान्तरेप्राप्तेअष्टाविंशतिमेयुगे ॥ द्वापरान्तेभारतेपिमाथुरेव्रजमंडले ॥४१॥

में गिर पड़ा, प्रणाम करके हाथ जोड़कर बोला ॥ ३५ ॥ हे मुने ! तुम्हारा उग्र तेज मैंने नहीं जाना, हे जाजलि ! मेरी रक्षा करो, आप जैसे साधुओंके संगको तो मोक्षका दरवाजा वर्णन करते हैं ॥३६॥ मित्रमें शत्रुमें समान, मानमें अपमानमें, सुवर्णमें, और लोहमें, सुखमें और दुःखमें जो कोई आप जैसे समान रहते हैं, वे ही साधु कहलाते हैं ॥ ३७ ॥ महान् पुरुषोंके दर्शनसे पृथ्वीमें मनुष्योंको क्या क्या नहीं मिलता है, अर्थात् सब कुछ मिलता है, चक्रवर्ती राज्य, ब्रह्माका पद, इन्द्रका पद और योगकी सिद्ध ये सब मिल जाते हैं ॥३८॥ हे जाजले ! हे मुनियोंमें शार्दूल ! मनुष्योंको साधुओंकी कृपासे धर्म, अर्थ, काम, प्राप्त हो जाय तो क्या आश्चर्य है, यदि महापुरुषोंकी कृपा हो, तो साक्षात् पूर्णब्रह्मकी भी प्राप्ति हो जाती है॥३९॥नारदजी कहते हैं,जिन्होंने साठ हजार वर्ष तप किया वे जाजलि मुनि प्रसन्न होकर उत्कलसे बोले॥४०॥वैवस्वत मन्वन्तरके अट्ठाईसवें युगके द्वापरके अंतमें

भरतखडमें मथुरा व्रजमंडलमें ॥४१॥ परिपूर्णतम साक्षात् स्वयम् श्रीकृष्ण भगवान् वृन्दावनमें गौओंके बछड़ोंको चराते विचरेंगे ॥४२॥ तब तू श्रीकृष्णमें निःसन्देह तन्मयताको प्राप्त होगा, क्योंकि हिरण्याक्ष आदि जो बहुतसे जो दैत्य हुये हैं, वे केवल वैरभावसे भगवान्को प्राप्त हुये ॥ ४३ ॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे यह बकासुर दैत्य पूर्व जन्मका उत्कल नामक दैत्य था, वह जाजलि मुनिके वरसे कृष्णमें लीन हो गया, इसमें यह सिद्धान्त समझना कि, सत्संगसे कौन सा पदार्थ नहीं मिलता है, अर्थात् सब कुछ मिल जाता है ॥४४॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां वृन्दावनखंडे भाषाटीकायां बकासुर मोक्षो नाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ नारदजी कहते हैं-एक समय बालकोंके साथ गौओंके बछड़ोंको चराते२ बड़े रमणीय कालिन्दीके तीरपर श्रीकृष्ण बालक्रीडा करते थे॥१॥उसी समय अघासुर नामका बड़ा भारी दैत्य कोसभर लम्बे शरीरको धारण करके,मुख फाड़ आकर मार्ग

परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥ वृन्दावनेगवांवत्सांश्चारयन्विचरिष्यति ॥४२॥ तदातन्मयतांकृष्णेयास्यसित्वंनसंशयः ॥ हिरण्याक्षादयोदैत्यावैरेणापिपरंगताः ॥ ४३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंबकासुरोदैत्यउत्कलोजाजलेर्वरात् ॥ श्रीकृष्णेलीनतांप्राप्तःसत्संगात्किनजायते ॥ ४४ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांवृन्दावनखण्डे बकासुरमोक्षोनाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एकदा बालकैःसाकंगोवत्सांश्चारयन्हरिः ॥ कालन्दीनिकटेरम्येबालक्रीडांचकारह ॥१॥ अघासुरोनाममहान्दैत्यस्तत्रस्थितोऽभवत् ॥क्रोशदीर्घवपुः कृत्वाप्रसार्यमुखमंडलम् ॥ २ ॥ दूराद्यंपर्वताकारंवीक्ष्यवृन्दावनेवने ॥ गोपाजग्मुर्मुखेतस्यवत्सैःकृत्वांजलिध्वनिम् ॥३॥ तद्रक्षार्थंचसबलस्तन्मुखेप्राविशद्धरिः ॥ निगीर्णेषुसवत्सेषुबालेषुत्वहिरूपिणा ॥४॥हाशब्दोऽभूत्सुराणान्तुदैत्यानांहर्षएवहि ॥ कृष्णोवपुःस्वंवैराजंतताना घोदरेततः ॥ ५ ॥ तस्यसंरोधगाःप्राणाःशिरोभित्त्वाविनिर्गताः ॥ तन्मुखान्निर्गतःकृष्णोबालैर्वत्सैश्चमैथिल ॥६॥ सवत्सकाञ्छिशून्दृष्ट्वाजीवयामाससमाधवः ॥ तज्ज्योतिःश्रीघनश्यामेलीनंजाततडितद्यथा ॥ ७ ॥

में सो गया ॥२॥ दूरसे ही इसका पर्वतका आकार वृन्दावनमें पड़ा देखकर सब बालक बछड़ोंको सामने करके ताली बजाते उसके मुखमें चले गये ॥ ३ ॥ उनकी रक्षाके लिये बलदेवजी सहित श्रीकृष्ण और सब बालक बछड़ा सर्परूपी अघासुरके मुखमें चले गये, और अघासुर सबको निगल गया ॥४॥ तब देवताओंमें तो हाहाकार मच गया और दैत्योंको बड़ी खुशी हुई, तब श्रीकृष्णने अपना विराट् देह उस अघासुरके पेटमें बढ़ाया ॥५॥ तब रुके हुये उसके प्राण सिरको भेदकर निकल गये, उसके बाद बालक, बछड़ोंको साथ लेकर हे मैथिल ! श्रीकृष्णभी उसके मुखसे बाहर निकले ॥६॥ तब भीतर असुरकी जठराग्निसे मरे बालक और बछड़ोंको भगवान्ने अपनी कृपामृत भरी दृष्टिसे जिला दिये, तब अघासुरके शरीरमेंसे जो ज्योति निकली, वह श्रीकृष्णमें समा गई जैसे बिजली घनमें लीन हो जाती है ॥ ७ ॥

तभी देवताओंने पुष्पोंकी वर्षा की, ऐसा मुनिका वचन सुनकर राजा मैथिल पूछने लगा ॥८॥ हे महाराज ! वह दैत्य पूर्वजन्ममें कौन था ? जो श्रीकृष्णमें लीन हो गया, अहो ! आश्चर्य है कि यह दैत्य बैरसे हरिको प्राप्त हो गया ॥९॥ तब नारदजी बोले कि शंखासुरका पुत्र पहले अघासुर नामक एक महाबली दैत्य हुआ, वह युवावस्थामें ऐसा सुन्दर था, मानो दूसरा कामदेवही हो ॥१०॥ उसने मलयाचल पर्वतमें बड़े कुरूप अष्टावक्र ऋषिको जो आठ जगहसे टेढ़े हैं, देखा उन्हें देखकर यह पापी अघासुर बोला कि, देखो ! यह कैसा कुरूप है, ऐसा कहकर हंसा ॥११॥ तब अष्टावक्रने उस महादुष्टको शाप दिया, हे दुर्बुद्धे ! तू सर्प हो जा, क्योंकि इस पृथ्वी मंडलमें टेढ़ी चलने वाली अति कुरूपा जाति सर्पोंकी ही है ॥१२॥ तब तो मुनीश्वरके चरणोंमें गिरा, जिसका गर्व नष्ट हो गया अति दीन हुये इस दैत्यको देखकर मुनिने फिर यह वर दिया ॥ १३ ॥ कि करोड़ कामदेवसे

तदैववव्रृषुर्देवाः पुष्पवर्षाणिपार्थिव ॥ एवंश्रुत्वामुनेर्वाक्यंमैथिलोवाक्यमब्रवीत् ॥ ८ ॥ राजोवाच ॥ कोयंदैत्यःपूर्वकालेश्रीकृष्णेलीनतांगतः ॥ अहोवैरानुबंधेनशीघ्रंदैत्योहरिंगतः ॥ ९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ शंखासुरसुतोराजन्नघोनाममहाबलः ॥ युवाऽतिसुन्दरःसाक्षात्कामदेवइवापरः ॥ १० ॥ अष्टावक्रंमुनिंयांतंविरूपंमलयाचले ॥ दृष्ट्वाजहासतमघःकुरूपोयमितिब्रुवन् ॥ ११ ॥ तंशशापमहादुष्टंत्वंसर्पोभव दुर्मते ॥ कुरूपावक्रगाजातिःसर्पाणांभूमिमण्डले ॥ १२ ॥ तत्पादयोर्निपतितंदैत्यंदीनंगतस्मयम् ॥ दृष्ट्वाप्रसन्नःसमुनिर्वरंतस्मैददौपुनः ॥ १३ ॥ अष्टावक्रउवाच ॥ कोटिकन्दर्पलावण्यःश्रीकृष्णस्तुतवोदरे ॥ यदागच्छेत्सर्परूपात्तदामुक्तिर्भविष्यति ॥ १४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अष्टावक्रस्यशापेनसर्पोभूत्वाअघासुरः ॥ तद्वरात्परमंमोक्षंगतोदेवैश्चदुर्लभम् ॥१५॥ वत्साद्बकमुखान्मुक्तंततोमुक्तंह्यघासुरम् ॥ श्रुत्वा कतिदिनैःकृष्णंयशोदाभूद्भयातुरा ॥१६॥ कलावतींरोहिणींचगोपीगोपान्वयोऽधिकान् ॥ वृषभानुवरंगोपंनंदराजंव्रजेश्वरम् ॥ १७ ॥ नवोपनंदान्नंदांश्चवृषभानून्प्रजेश्वरान् ॥ समाहूयतदग्रेचवचःप्राहयशोमती ॥ १८ ॥ यशोदोवाच ॥ किंकरोमिक्वगच्छामिकल्याणंमेकथंभवेत् ॥ मत्सुतेबहवोऽरिष्टाआगच्छन्तिक्षणेक्षणे ॥ १९ ॥

सुन्दर श्रीकृष्ण जब तेरे उदरमें आयेंगे, तब तेरी इस सर्प देहसे मुक्ति हो जायगी॥१४॥नारदजी कहते हैं, ऐसे अष्टावक्रके शापसे यह अघासुर सर्प होकर फिर उन्हींके वरसे देवताओंको दुर्लभ जो मुक्ति है, उसको प्राप्त हो गया॥१५॥वत्सासुरसे और बकासुरके मुखसे फिर थोडे दिन बाद अघासुरके मुखसे छूटे श्रीकृष्णको सुनकर यशोदाजी बड़ी भयातुरा हुई॥१६॥ तब तो कलावती, रोहिणी और बूढ़े बूढ़े गोप गोपियोंको वृषभानु वरको व्रजेश्वर श्रीनन्दराजको नौ नन्द और नौ उपनन्द, छः वृषभानु इन सबको बुलाकर उनके सामने यशोदाजी बोलीं ॥१७॥ मैं क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, अब मेरा कल्याण कैसे हो, क्योंकि मेरे पुत्रपर क्षण क्षणमें नित्य नये अनेक अरिष्ट आते हैं ॥१८॥ पहले तो महावनको छोड़कर हम वृन्दावनमें आये, अब इस वृन्दावनको छोड़कर ऐसा निर्भय स्थान कौनसा है, जहाँ हम चले जायें, सो ऐसा निर्भय देश तुम्हें दीखे तो कहो ॥ १९ ॥

देखो एक तो यह मेरा बालक ही बडा चञ्चल है, दूसरे बड़ी दूर २ खेलनेको जाता है और तीसरे और बालक भी सब चञ्चल हैं मेरा कहना नहीं मानते हैं ॥२०॥ देखो पहले तो बकासुर तीखी चोंच वाला बडा बली, उसने मेरे बालकको निगल लिया फिर इससे छूटनेपर मेरे बालकको बछड़ों सहित अघासुर निगल गया ॥ २१ ॥ फिर इसी बालकको वत्सासुर मारनेको आया था, सो दैवने उस वत्सासुरको मार दिया, सो मैं तो अब बछडा चरानेको अपने बालकको कभी घरसे नहीं निकालूँगी ॥ २२ ॥ नारदजी कहते हैं, इस तरह यशोदा कहती जाती हैं, और रोती जाती हैं, उनको देखकर नन्दजी बोले, और गर्गजीके कहे वचनसे यशोदाजीको आश्वासन दिया, कैसे हैं नन्दजी कि धर्मधारियोंमें श्रेष्ठ हैं, और धर्म अर्थके वेत्ता हैं ॥२३॥ हे यशोमतीजी ! कहो तुम गर्गजीके कहे वचन भूल गई, देखो ब्राह्मणोंका कहा वचन सब सत्य होता है, वो कभी झूंठ नहीं होता है

पूर्वंमहावनंत्यक्त्वावृन्दारण्येगतावयम् ॥ एतत्त्यक्त्वाक्वयास्यामिदेशेवदतनिर्भये ॥ २० ॥ चंचलोऽयंबालकोमेक्रीडन्दूरेप्रयातिहि ॥ बालकाश्चंचलाःसर्वैनमन्यन्तेवचोमम ॥ २१ ॥ बकासुरश्चमेबालंतीक्ष्णतुंडोऽग्रसद्बली ॥ तस्मान्मुक्तन्तुजग्राहार्भकैर्दीनमघासुरः ॥ २२ ॥ वत्सासुरस्तज्जिघांसुःसोपिदैवेनमारितः ॥ वत्सार्थंस्वगृहाद्बालंनबहिःकारयाम्यहम् ॥ २३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंवदन्तींसततंरुदन्तींयशोमतीं वीक्ष्यजगादनन्दः ॥ आश्वासयामाससुगर्गवाक्यैर्धर्मार्थविद्धर्मभृतांवरिष्ठः ॥ २४ ॥ नन्दराजउवाच ॥ गर्गवाक्यंत्वयासर्वंविस्मृतंहेयशोमति ॥ ब्राह्मणानांवचःसत्यंनासत्यंभवतिक्वचित् ॥ २५ ॥ तस्माद्दानंप्रकर्तव्यंसर्वारिष्टनिवारणम् ॥ दानात्परंतुकल्याणंनभूतंनभविष्यति ॥ २६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदायशोदाविप्रेभ्योनवरत्नंमहाधनम् ॥ स्वालंकारांश्चबालस्यसबलस्यददौनृप ॥ २७ ॥ अयुतंवृषभानांचगवां लक्षंमनोहरम् ॥ द्विलक्षमन्नभाराणांनन्दोदानंददौततः ॥ २८ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांवृन्दावनखण्डेअघासुरमोक्षोनामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ गोपेच्छयारामकृष्णौगोपालौतौबभूवतुः ॥ गाश्चारयन्तौगोपालैर्वयस्यैश्चेरतुर्वने ॥ १ ॥ अग्रेपृष्ठेतदागावश्चरन्त्यःपार्श्वयोर्द्वयोः ॥ श्रीकृष्णस्यबलस्यापिपश्यन्त्यःसुन्दरंमुखम् ॥ २ ॥

॥ २४ ॥ इससे जो तुमसे होसके, उतना दान करो, जो दान सब अरिष्टोंका नाश करने वाला है, देखो दान देनेसे अधिक कल्याण तो न कोई हुआ और न कोई होगा ॥२५॥ नारदजी कहते हैं, तब यशोदाजीने ब्राह्मणोंको बहुमूल्य नौ रत्नोंके दान दिये, और अपने तथा कृष्ण बलदेवके गहने सब पुण्य करा दिये और नये पहना दिये॥२६॥और नन्दजीने दश हजार तो बैल, एक लाख मनोहर गौ और दो लाख भार अन्नका दान दिया॥२७॥२८॥ इति श्रीगर्ग संहितायां वृन्दावन खण्डे भाषाटीकायां अघासुर मोक्षो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥६॥ नारदजी कहते हैं कि उसके बाद गोपोंकी इच्छा करके राम, कृष्ण दोनों भाई गौओंका पालन करनेवाले हुये, बराबरके बालकोंको साथ लेकर वनमें गौओंको चराते विचरने लगे ॥ १ ॥ तब आगे, पीछे और दोनों बगल गौही गौ दीखती है, कैसी गौ हैं, छोटी छोटी घंटारि जिन्होंने गलेमें किंकिणीके जालको धारणकर रही, सोनेकी माला

१ शुक्लाष्टमी [illegible] कृष्णः पूर्वं तु वत्सलः ॥१॥ अर्थ-कार्तिक सुदी८बुधवारके दिनसों श्रीकृष्ण गऊ चरायवेगयेतबआर्यमेंहेंपहलेबछरानकोचरावते हैं ॥ १ ॥

गलेमें पहने, श्रीकृष्ण वसुदेवके सुन्दर मुखको देखती इधर उधरमें घूमती ॥२॥३॥ मोतियोंके गुच्छे और मोरपंखोंसे शोभित जिनकी पूंछ और उज्ज्वल जिनकी केसरी प्रकाश करते नौरत्नोंकी मालाओंसे विराजमान है ॥४॥ और हे राजन्! सींगोंके बीचमें जो शिरोमणि और स्वर्ण किरण बिखेरती हुई रस्सियोंसे बंध रहे हैं शृंग और पार्श्व प्रवेष्टन झूल जिनके ॥ ५ ॥ कोई तो लाल टीकेकी हैं, कोई पीली पूँछकी है, कोई लाल पांवकी है, कोई बहुत सफेद कैलास जैसी शील रूप और गुणोंसे युक्त हैं ॥ ६ ॥ और हे मैथिल! बछड़ों सहित थनोंके भारसे मन्दमन्द चलती हैं कुण्डसे जिनके थन हैं, कोई सफेद है, कोई लाल रंगकी कोई २ भव्यमूर्ति ॥७॥ कोई पीली, कोई श्याम, कोई हरी, कोई चितकबरी, कोई धूमरी, कोई मेघ जैसी श्यामा है, और घनश्याम श्रीकृष्णमें नेत्र जिनके लग रहे हैं ॥८॥ कोई छोटे सींगोंकी है, कोई बड़े सींगोंकी है, कोई ऊँचे सींगोंकी है, कोई हिरण केसे सींगोंकी है, कोई टेढ़े सींगोंकी है और कोई कपिला है, जो मंगल करनेवाली है ॥९॥ हरी हरी कोमल मनोहर हरित तृणमय भूमिको वनवनमें देखती करोड़ों गौएँ

घंटामंजीरझंकारंकुर्वन्त्यस्ताइतस्ततः ॥ किंकिणीजालसंयुक्ताहेममालालसद्गलाः ॥३॥ मुक्तागुच्छैर्बर्हिपिच्छैर्लसत्पुच्छाच्छकेसराः ॥ स्फुरत्तांनवरत्नानांमालाजालैर्विराजिताः ॥४॥ शृंगयोरन्तरेराजञ्छिरोमणिमनोहराः ॥ हेमरश्मिप्रभास्फूर्जच्छृंगपार्श्वप्रवेष्टनाः ॥५॥ आरक्ततिलकाःकाश्चित्पीतपुच्छारुणांघ्रयः ॥ कैलासगिरिसंकाशाशीलरूपामहागुणाः॥६॥ सवत्सामन्दगामिन्यऊधोभारेणमैथिल ॥ कुंडोघ्न्यःपाटलाःकाश्चिल्लक्षंत्योभव्यमूर्तयः ॥ ७ ॥ काश्चित्पीताविचित्राश्चश्यामाश्चहरितास्तथा ॥ ताम्राधूम्राघनश्यामाघनश्यामेगतक्षणाः ॥८॥ लघुशृंग्योदीर्घशृंग्यउच्चशृंग्योवृषैःसह।मृगशृंग्योवक्रशृंग्यःकपिलामंगलायनाः॥९॥शाद्वलंकोमलंकान्तंवीक्षन्त्योपिवनेवने।कोटिशःकोटिशोगावश्चरन्त्यःकृष्णपार्श्वयोः ॥ १० ॥ पुण्यंश्रीयमुनातीरंतमालैःश्यामलैर्वनम् ॥ नीपैर्निम्बैःकदंबैश्चप्रवालैःपनसैर्द्रुमैः॥११॥कदलैःकोविदाराम्रैर्जम्बुबिल्वैर्मनोहरैः॥अश्वत्थैश्चकपित्थैश्चमाधवीभिश्चमंडितम् ॥ १२ ॥ बभौवृन्दावनंदिव्यंवसन्ततुंमनोहरम् ॥ नंदनंसर्वतोभद्रंक्षिप्तचैत्ररथंवनम् ॥ १३ ॥ यत्रगोवर्द्धनोनामसनिर्झरदरीयुतः ॥ रत्नधातुमयःश्रीमान्मंदारवनसंकुलम् ॥१४॥श्रीखण्डबदरीरंभादेवदारुवटैर्वृतम् ॥ पलाशप्लक्षाशोकैश्चारिष्टार्जुनकदंबकैः ॥ १५ ॥

श्रीकृष्णके चारों ओर घास चरती हैं ॥ १० ॥ पवित्र यमुनाजीके तीरपर श्याम तमालोंका वन, जिसमें नीप (कदम्ब भेद) निंब, कदंब, मूगा, कटहर, बडहर ॥ ११ ॥ केला, कचनार, आम, जामुन, बेल, पीपल, कैथ और माधवीकी लताओंसे मंडित जो दिव्य वृन्दावन, वह बड़ा शोभित हुआ ॥१२॥ जो छः ऋतुओंके सुन्दर फलफूलोंसे मनोहर है और जो देवताओंके नन्दनवन और चैत्र रथवनकी शोभाको भी फीकी करता है ॥१३॥ जिसमें गोवर्द्धन नामक पर्वत है, जिसमें सुन्दर सुन्दर गुहा हैं, जिसमें झरना झर रहे हैं, रत्नोंसे और अनेक धातुओंसे युक्त हैं, और बड़ा श्रीमान् है और मन्दार नामके कल्पवृक्षोंके वनसे व्याप्त है ॥१४॥ जो गोवर्द्धन चन्दन, बेर, केला, देवदारु, वट, पलाश, पाकर, अशोक, बेहडा, अर्जुन और कदम्बके वृक्षोंसे आवृत्त है ॥ १५ ॥

पारिजात, पाढर और चम्पाके वृक्षोंसे शोभित है, करंजाके जालोंकी निकुञ्ज जिसमें बन रही है, और श्याम इन्द्र जौंके वृक्षोंसे घिर रहा है ॥ १६॥ मनोहर कण्ठकी कोकिला, पुंस्कोकिला बोल रही है, मोर कुहुक कुहुककर नाच रहे हैं, पपीहा झंकार रहे हैं, ऐसे गोवर्द्धन वनमें गौओंको चराते श्रीकृष्ण विचरने लगे ॥ १७ ॥ वृन्दावनमें, मधुवनमें तालवनके बगलमें, कुमुदवनमें, बहुलावनमें और कामवनमें ॥१८॥ बरसानेमें, नन्दगाममें, कोकिलावनमें जहाँ कोकिलोंकी झंकार हो रही है॥१९॥ मनोहर कुशवनमें जहाँ मनोहर लताओंके जाल लग रहे हैं, महा पवित्र भद्रवनमें, उपवन, भाण्डीर वनमें ॥२०॥ लोहार्गलमें, यमुनाके तीर वनवनमें पीताम्बर पहने, नटवर वेषका शृंगार करे ॥२१॥ बेंतको धारण करे, बंशी बजाते, मोरमुकुट धारे,वनमाला पहने, गोपियोंकी प्रीति बढाते विचरते श्रीकृष्ण अत्यन्त शोभाको प्राप्त हुये॥२२॥जब वनसे व्रजको आये हैं, तब कैसी शोभासे आये हैं, संध्या समय आगे तो गौओंका झुण्ड काली, पीली, लाल, सफेद, हरी, चूंदरी, पाटल, धूबरी चलती हैं, पीछे गोपोंके समूह उनके साथ आप हरि भगवान् बांसुरीमें अनेकों राग गाते

पारिजातैःपाटलैश्चचम्पकैःपरिशोभितम्॥ करंजजालकुंजाढचंश्यामैरिंद्रयवैर्वृतम् ॥१६॥ कलकण्ठैःकोकिलैश्चपुंस्कोकिलमयूरभृत् ॥ गाश्चारयंस्तत्रकृष्णोविचचारवनेवने ॥१७॥ वृन्दावनेमधुवनेपार्श्वेतालवनस्यच ॥ कुमुद्वनेबाहुलेचदिव्यकामवनेपरे ॥१८॥ बृहत्सानुगिरेःपार्श्वे गिरेर्नन्दीश्वरस्यच ॥ सुन्दरेकोकिलवनेकोकिलध्वनिसंकुले ॥१९॥ रम्येकुशवनेसौम्येलताजालसमन्विते॥महापुण्येभद्रवनेभांडीरोपवनेनृप॥ ॥२०॥ लोहार्गलेचयमुनातीरेतीरेवनेवने ॥ पीतवासःपरिकरोनटवेषोमनोहरः ॥२१॥ वेत्रभृद्वादयन्वंशींगोपीनांप्रीतिमावहन् ॥ मयूरपिच्छभृन्मौलीस्रग्वीकृष्णोबभौनृप ॥ २२॥ अग्रेकृत्वागवांवृन्दंसायंकालेहरिःस्वयम् ॥ रागैःसमीरयन्वंशींश्रीनंदव्रजमाविशत् ॥ २३ ॥ वेणुवंशीध्वनिकुलाश्रीवंशीवटमार्गतः ॥ गोरजोभिर्नभोव्याप्तंवीक्ष्यगेहाद्विनिर्गताः ॥२४॥ दूरीकर्तुंह्याधिबाधामाहर्त्तुंसुखमुत्तमम् ॥ विस्मर्तुंनसमर्थास्तंद्रष्टुंगोप्यःसमाययुः ॥ २५ ॥ संकोचवीथीषुनसंगृहीतःशनैश्चलन्गोगणसंकुलासु ॥ सिंहावलोकोगजबाललीलैर्बन्धूजनैःपंकजपत्रनेत्रः ॥ ॥२६॥ सुमंडितंमैथिलगोरजोभिर्नीलंपरंकुन्तलमादधानः ॥ हेमांगदीमौलिविराजमानआकर्णवक्रीकृतदृष्टिबाणः ॥ २७ ॥

नन्दग्रामको आये हैं ॥२३॥ कोई वेणु बजाते हैं, कोई वंशी बजाते हैं, वंशीवटपर होकर चले आते हैं, गौरजसे आकाश पूर्ण हो जाता है, दर्शनको जब गोपी अपने २ घरसे निकलती हैं ॥ २४ ॥ मनकी व्यथाको दूर करनेके लिये, उत्तम सुखको लेनेके लिये, दर्शनको गोपियाँ आती हैं, क्योंकि श्रीकृष्णको भूलनेको समर्थ नहीं हैं ॥ २५ ॥ सकरी गलियोंमें गौओंकी भीडमें देखनेमें नहीं आयें, तब फिर फिरके सिंहकी तरह, बालक हाथीकी तरह, झूमते चलते जो कमल लोचन कृष्ण हैं उनको गोपियाँ देखती हैं ॥२६॥ हे मैथिल ! गोरजसे सुशोभित घुंघराली नीली अलकावलिको धारण किये, रतनजड़े सुवर्णके किरीट, मुकुट, कुण्डल, बाजू, कंकण धारण किये, कानोंतक टेढे किये हैं, दृष्टिरूप बाण जिन्होंने ॥ २७ ॥

गोरजसे मंडित, कुन्दके हार हैं जिनके, कानोंमें लगाये हैं कर्णिकारके फूल जिन्होंने, पीताम्बर ओढे, वंशी बजाते, गोपियोंको आनन्द देते सन्ध्या समय, पृथ्वीके भार उतारनेवाले श्रीकृष्ण तुम्हारी रक्षा करें, ऐसे नारदजी कहते हैं ॥ २८ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां वृन्दावनखंडे भाषाटीकायां श्रीकृष्ण गोचारण वर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥७॥ नारदजी कहते हैं, एक सयय बलदेवजीके साथ गोपालोंसहित गौओंको चराते श्रीकृष्ण नवीन तालके वनको गये ॥१॥ धेनुकासुरके भयसे तालवनके भीतर कोई गोप नहीं गया तब श्रीकृष्ण भी नहीं गये, एक केवल बलदेवजी ही गये ॥ २ ॥ महाबली बलदेवजी नीलाम्बरको कमरसे बांधकर, पके हुये फलोंके लिये तालवनमें विचरने लगे ॥ ३ ॥ भुजाओंसे तालोंको हिलाते और फलोंके समूहको गिराते निर्भय होकर गर्जना करते अनन्त भगवान्, जिनका पराक्रम अनन्त है, उन्होंने तालवनमें प्रवेश किया ॥ ४ ॥ गिरते हुये फलोंके शब्दको

गोधूलिभिर्मंडितकुन्दहारःकर्णोपरिस्फूर्जितकर्णिकारः ॥ पीतांबरोवेणुनिनादकारःपातुप्रभुर्वोद्धतभूरिभारः ॥ २८ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां वृन्दावनखण्डेश्रीकृष्णगोचारवर्णनंनामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एकदासबलःकृष्णश्चारयन्गामनोहराः ॥ गोपालैःसहितःसर्वैर्ययौतालवनंनवम् ॥ १ ॥ धेनुकस्यभयाद्गोपानगतास्तेवनान्तरम् ॥ कृष्णोपिनगतस्तत्रबलएकोविवेशह ॥२॥ नीलांबरंकटौबद्ध्वाबलदेवो महाबलः ॥ परिपक्वफलार्थंहितद्वनेविचचारह॥३॥बाहुभ्यांकंपयंस्तालान्फलसंघंनिपातयन् ॥ गर्जंश्चनिर्भयःसाक्षादनन्तोनन्तविक्रमः॥४॥ फलानांपततांशब्दंश्रुत्वाक्रोधावृतःखरः ॥ मध्याह्नेस्वापकृद्दुष्टोभीमःकंससखोबली ॥५॥ आययौसंमुखेयोद्धुंबलदेवस्यधेनुकः ॥ बलंपश्चिम पादाभ्यांनिहत्योरसिसत्वरम् ॥६॥ चकारखरशब्दंस्वंपरिधावन्मुहुर्मुहुः ॥ गृहीत्वाधेनुकंशीघ्रंबलःपश्चिमपादयोः ॥७॥ चिक्षेपतालवृक्षेचहस्तेनैकेनलीलया ॥ तेनभग्नश्चतालोपितालान्पार्श्वेस्थितान्बहून् ॥८॥ पातयामासराजेन्द्रतदद्भुतमिवाभवत् ॥ पुनरुत्थायदैत्येंद्रोबलंजग्राह रोषतः ॥ ९ ॥ योजनंनोदयामासगजंप्रतिगजोयथा ॥ गृहीत्वातंबलःसद्योभ्रामयित्वाथधेनुकम् ॥ १० ॥

सुनकर गधारूप धेनुकासुर, मध्याह्नके समय सो रहा बड़ा दुष्ट भयंकर और कंसका सखा ॥ ५ ॥ बलदेवजीके सम्मुख युद्ध करनेको आया, सो वह बलदेवजीके छातीमें पिछले पैरोंसे बड़ी जल्दी मारकर रेंकने लगा ॥६॥ और सब तरफ भाग उसने बड़ा खर शब्द किया, तब तो जल्दीही बलदेवजीने इसके पिछले पांवोंको पकड़कर ॥ ७ ॥ एक हाथसेही सहजमें एक खेलसा करके इसको तालके वृक्षपर दे मारा, तब इस धेनुकके मारनेसे वह ताड भी टूट गया, और उसने और आसपासके तालोंको भी गिराकर ॥ ८ ॥ और भी बहुतसे तालोंको गिरा दिया, हे राजन्! यह बड़ा आश्चर्य हुआ, फिर धेनुकासुरने उठकर बडे क्रोधसे बलदेवजीको पकड़ लिया ॥ ९ ॥ और चार कोसतक जैसे हाथी हाथीको ले जाता है, उसी तरह पीछे ठेलते हुये ले गया, तब तो फिर बलदेवजीने पकड़कर धेनुकको फिराकर ॥ १० ॥

पृथ्वीमें दे मारा, तब मूर्च्छित हो गिर पड़ा,मस्तक फूट गया, एक क्षणमें ही क्रोधयुक्त हो फिर उठकर ॥११॥ मस्तकके चार सींगका भयंकर रूप धारणकर तीखे तीखे भयंकर सींगोंसे गोपोंको भगाने लगा ॥ १२ ॥ और आगे भागते हुये गोपोंके पीछे मदमें उत्कट वह दैत्य बड़े वेगसे भागने लगा, तब श्रीदामाने एक लट्ठ मारा, सुबलने एक घूँसा मारा ॥ १३ ॥ स्तोक नामक सखाने इस महाबलको फांसीसे, अर्जुन गोपने क्षेपणसे और अंशु नामक सखाने लातसे मारा ॥१४॥ विशालर्षभने आकर बडे जोरसे एक लात मारी, तेजस्वीने अर्द्धचन्द्र शस्त्रसे मारा, देवप्रस्थने चपेटोंसे मारा ॥१५॥ वरूथपने गेंदसे मारा, फिर उस महाखरको श्रीकृष्णने दोनों हाथोंसे पकडकर उठा लिया॥१६॥ और घुमाकर बडे वेगसे गोवर्द्धन पर्वतके ऊपर फेंक दिया,तब श्रीकृष्णके प्रहारसे दो घडीतक मूर्छा खाकर गिर पडा ॥१७॥ फिर उठकर अपने शरीरको फडफडाकर मुखको फाडकर

भूपृष्ठेपोथयामासमूर्च्छितोभग्नमस्तकः ॥ क्षणेनपुनरुत्थायक्रोधसंयुक्तविग्रहः ॥११॥ मूर्ध्निकृत्वाचतुःशृंगंधृत्वारूपंभयंकरम् ॥ गोपान्विद्राव-
यामासशृंगैस्तीक्ष्णैर्भयंकरैः ॥१२॥ अग्रेपलायितान्गोपान्दुद्रावाशुमदोत्कटः ॥ श्रीदामातंचदंडेनसुबलोमुष्टिनातथा ॥१३॥ स्तोकःपाशेन
तंदैत्यंसतताडमहाबलम् ॥ क्षेपणेनार्जुनोंशुश्चदैत्यंलत्तिकयाखरम् ॥१४॥ विशालर्षभएत्याशुपादेनस्वबलेनच ॥ तेजस्वीह्यर्द्धचन्द्रेणदेवप्रस्थ
श्चपेटकैः ॥१५॥ वरूथपःकंदुकेनसंतताडमहाखरम् ॥ अथकृष्णोपितंनीत्वाहस्ताभ्यांधेनुकासुरम् ॥१६॥ भ्रामयित्वाशुचिक्षेपगिरिगोवर्द्ध-
नोपरि ॥ श्रीकृष्णस्यप्रहारेणमूर्च्छितोघटिकाद्वयम् ॥ १७ ॥ पुनत्थायस्वतनुंविधुन्वन्दारयन्मुखम् ॥ शृङ्गाभ्यांश्रीहरिंनीत्वाधावन्दैत्योन
भोगतः ॥१८॥ चचारतेनखेयुद्धमूर्ध्ववैलक्षयोजनम् ॥ गृहीत्वाधेनुकंदैत्यंश्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥ १९ ॥ चिक्षेपाधोभूमिमध्येचूर्णितास्थिः
समूर्च्छितः ॥ पुनरुत्थायशृङ्गाभ्यांनादंकृत्वातिभैरवम् ॥२०॥ गोवर्धनंसमुत्पाटचश्रीकृष्णेप्राहिणोत्खरः ॥ गिरिंगृहीत्वाश्रीकृष्णःप्राक्षिपत्त
स्यमस्तके ॥२१॥ दैत्योगिरिंगृहीत्वाथश्रीकृष्णेप्राहिणोद्बली॥कृष्णोगोवर्धनंनीत्वापूर्वस्थानेसमाक्षिपत् ॥२२॥ पुनर्धावन्महादैत्यःशृङ्गाभ्यां
दारयन्भुवम्॥बलंपश्चिमपादाभ्यांताडयित्वाजगर्जह॥२३॥ननादतेनब्रह्मांडंप्रैजद्भूखण्डमण्डलम्॥हस्ताभ्यांसंगृहीत्वातंबलदेवोमहाबलः॥२४॥

सींगोंपर श्रीकृष्णको धरकर उडकर आकाशमें ले गया ॥ १८ ॥ लाख योजन ऊँचा लेगया, वहाँ जाकर युद्ध करने लगा, तब श्रीकृष्ण भगवान्ने धेनुकासुरको पकडकर ॥ १९ ॥ नीचे पृथ्वीमें गिरा दिया, तब चूर्णितास्थि होकर मूर्च्छित हो गया, फिर उठकर भयंकर शब्द करके उसने सींगोंसे गोवर्द्धन को ॥ २० ॥ उखाडकर श्रीकृष्ण के ऊपर फेंका, तब श्रीकृष्णने गोवर्द्धनको हाथसे पकडकर धेनुकासुरके मस्तकपर मारा ॥२१॥ तब फिर भी महाबली इस दैत्यने गोवर्द्धनको हाथसे पकडकर श्रीकृष्णके ऊपर फेंका तब श्रीकृष्णने गोवर्द्धनको लेकर जहाँ था वही रख दिया ॥२२॥ तब वह महादैत्य भागकर महाबली सींगोंसे धरतीको खोदते पिछले पावोंसे बलदेवजीको मारकर बड़ा गर्जा ॥ २३ ॥ उसकी गर्जनासे ब्रह्मांड झंकार उठा, पृथ्वी कांपने लगी, तब तो महाबली बलदेवजीने इसको दोनों हाथोंसे पकडकर ॥ २४ ॥

फिराकर पृथ्वीमें दे मारा, तब मूर्च्छित तथा मस्तक फटे उस दैत्यको कृष्णके बड़े भाई बलदेवजीने ऐसा एक घूसा मारा ॥ २५ ॥ कि उस घूसेके प्रहारसे वह दैत्य तत्काल मर गया, तब देवताओंने नन्दन वनके पुष्पोंकी वर्षा की ॥ २६ ॥ तब उसकी देहसे एक श्याम सुन्दर स्वरूप देव निकला, पीताम्बर ओढे, वन मालासे विभूषित ॥२७॥ लक्ष पार्षद जिसके साथ हैं, हजार पहिया जिसमें लग रहे, ध्वजा फहरा रहीं, दश हजार घोड़े जिसमें लग रहे ॥ २८ ॥ लाख चामरोंकी शोभासे युक्त, रत्न जटित, लाल जिसका वर्ण, एक योजनका जिसका विस्तार, मन कासा जिसका वेग, अति मनोहर ॥ २९ ॥ किंकिणियोंके जाल युक्त मनोहर शब्द वाले घंटा जिसमें बज रहे, ऐसे दिव्य रथमें बैठकर दिव्य रूपको धर श्रीकृष्ण बलदेवकी परिक्रमा करके ॥ ३० ॥ अपनी कांतिसे दिशाओंके मण्डलको प्रकाशित करता हुआ वह धेनुकासुर प्रकृतिसे परे जो गोलोक उसको चला गया ॥ ३१ ॥ श्रीकृष्ण बलदेवजीके साथ धेनुकासुरको मारकर अपने यशको गाते आरहे गोपोंको और गौओंको साथ लिये जब व्रजको चले, तब बड़ी शोभा हुई ॥ ३२ ॥

भूपृष्ठेपोथयामाससमूर्च्छितंभग्नमस्तकम् ॥ पुनस्तताडतंदैत्यंमुष्टिनाह्यच्युताग्रजः ॥२५॥ तेनमुष्टिप्रहारेणसद्योवैनिधनंगतः ॥ तदैवववृषुर्देवाः पुष्पैर्नन्दनसंभवैः ॥ २६ ॥ देहाद्विनिर्गतःसोऽपिश्यामसुन्दरविग्रहः ॥ स्रग्वीपीतांबरोदेवोवनमालाविभूषितः ॥२७॥ लक्षपार्षदसंयुक्तःसहस्र ध्वजशोभितः ॥ सहस्रचक्रध्वनिभृद्धयायुतसमन्वितः ॥ २८ ॥ लक्षचामरशोभाढ्योऽरुणवर्णोऽतिरत्नभृत् ॥ दिव्ययोजनविस्तीर्णोमनोयायी मनोहरः ॥२९॥ किंकिणीजालसंयुक्तोघंटामंजीरसंयुतः ॥ हरिंप्रदक्षिणीकृत्यसबलंदिव्यरूपधृक् ॥ ३० ॥ दिव्यंरथंसमारुह्यद्योतयन्मंडल-न्दिशाम् ॥ जगामदैत्योहेराजन्गोलोकंप्रकृतेःपरम् ॥ ३१ ॥ श्रीकृष्णोधेनुकंहत्वासबलोबालकैःसह ॥ तद्यशस्तुप्रगायद्भिर्वभौगोकुलगोगणैः ॥ ३२ ॥ राजोवाच ॥ मुनेमुक्तिकथंप्राप्तःपूर्वंकोधेनुकासुरः ॥ कथंखरत्वमापन्नएतन्मेब्रूहितत्त्वतः ॥ ३३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ वैरोचनेर्बलेःपुत्रोनाम्नासाहसिकोबली ॥ नारीणांदशसाहस्रैरेमेवैगन्धमादने ॥३४॥ वादित्राणांनूपुराणांशब्दोभूत्तद्वनेमहान् ॥ गुहायामास्थित-स्यापिश्रीकृष्णंस्मरतोमुनेः ॥ ३५ ॥ दुर्वाससोऽथतेनापिध्यानभंगोबभूवह ॥ निर्गतःपादुकारूढोदुर्वासाःकृशविग्रहः ॥ ३६ ॥ दीर्घश्मश्रुर्यष्टिधरःक्रोधपुंजोनलद्युतिः ॥ यस्यशापाद्विश्वमिदंकंपतेसजगादह ॥ ३७ ॥

यह कथा सुनकर राजा बहुलाश्वने नारदजीसे प्रश्न किया कि, हे मुने ! इस धेनुकासुरकी मुक्ति कैसे हो गई ? और पूर्व जन्मका यह कौन था और इस जन्ममें गधेकी योनि इसको कैसे मिली ? यह सब सत्य वृत्तान्त मुझे कहिये ? ॥ ३३ ॥ तब नारदजी बोले कि, विरोचनके पुत्र बलिका साहसिक नामक बलवान् एक पुत्र था, दश हजार स्त्रियोंको साथ लेकर गन्ध मादन पर्वतमें विहार कर रहा था ॥ ३४ ॥ वहाँ वाद्यों (बाजों) का और स्त्रियोंके नूपुरोंका उस वनमें बड़ा शब्द हुआ, वहीं गुफामें दुर्वासा मुनि कृष्णका ध्यान कर रहे थे ॥ ३५ ॥ सो उस शब्दसे दुर्वासा मुनिका ध्यान भंग हो गया, तब दुर्वासा मुनि पादुका पहने निकले, तपसे जिनका शरीर कृश हो गया है ॥ ३६ ॥ बड़ी जिनकी दाढी, मूंछ, जटा बढ़ रही, दंडको लिये, क्रोधके पुंज अग्निकीसी कान्ति वाले, जिनके शापसे सम्पूर्ण विश्व कांपता है, वह दुर्वासा बोले ॥ ३७ ॥

अरे गधेके आकारके ! तू उठ जा और हे दुर्बुद्धे ! तू गधा होगा, चार लाख वर्ष बीतने पर फिर भरत खण्डमें ॥३८॥ मथुरा मण्डलमें ताल वन नामक वनमें हे असुर ! बलदेवजी के हाथसे तुम्हारी मुक्ति होगी ॥३९॥ नारदजी कहते हैं--श्रीकृष्णने बलदेवजीके हाथसे धेनुकासुरको इस लिये मरवाया, क्योंकि पहले प्रह्लादको नृसिंहजीने यह वर दिया था कि तुम्हारे वंशजोंको मैं नहीं मारूँगा ॥४०॥ इति श्रीगर्ग संहितायां वृन्दावन खण्डे भाषाटीकायां धेनुकासुरवधो नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ नारदजी कहते हैं, एक दिन बलदेवके विनाही स्वयम् श्रीकृष्णने गोपोंको साथ लेकर गौओंको चराते कालिंदीके तटपर आकर विषके मिले जलको पी लिया ॥१॥ जो जल फणीन्द्र कालीने विषसे बिगाड़ रखा था, सो गौ और गोप उस विषके जलको को पीकर जलके किनारे पर मरकर गिर पड़े॥२॥तब श्रीकृष्णने अपनी अमृत वर्षिणी दृष्टिसे उनको जला दिया, ऐसेही दयावान् हरि हैं,दुःख

दुर्वासाउवाच ॥ उत्तिष्ठगर्दभाकारगर्दभोभवदुर्मते ॥ वर्षाणांतुचतुर्लक्षंव्यतीतेभारतेपुनः ॥ ३८ ॥ माथुरेमंडलेदिव्येपुण्येतालवनेवने ॥ बलदेवस्यहस्तेनमुक्तिस्तेभविताऽसुर ॥ ३९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तस्माद्बलस्यहस्तेनश्रीकृष्णस्तंजघानह ॥ प्रह्लादायवरोदत्तोनवध्योमेतवान्वयः ॥ ४० ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांवृन्दावनखण्डेधेनुकासुरमोक्षोनामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ बलंविनाथगोपालैश्चारयन्गाहरिःस्वयम् ॥ कालिन्दीकूलमागत्यपपौवारिविषावृतम् ॥१॥ कालियेनफणीन्द्रेणजलंयत्रविदूषितम् ॥ पीत्वानिपेतुर्व्यसवोगावोगोपाजलान्तिके ॥२॥ तदाताञ्जीवयामासदृष्ट्यापीयूषपूर्णया ॥ आर्द्रचित्तोहरिःसाक्षाद्भगवान्वृजिनार्दनः ॥३॥ कटौपीतपटंबद्ध्वानीपमारुह्यमाधवः ॥ पपातोत्तुंगविटपात्तत्तोयेविषदूषिते ॥४॥ उच्चचालजलंदुष्टंकृष्णसंपातघूर्णितम्॥तत्सर्पमन्दिरंनद्यांभृंगीभूतंबभूवह ॥५॥ तदैवकालियःक्रुद्धःफणीफणशतावृतः॥दशन्दन्तैश्चभुजयाचच्छादनृपमाधवम्॥६॥कृष्णोदीर्घवपुःकृत्वाबन्धनान्निर्गतश्चतम्॥ पुच्छेगृहीत्वासर्पेन्द्रंभ्रामयित्वात्वितस्ततः ॥ ७ ॥ जलेनिपात्यहस्ताभ्यांचिक्षेपाशुधनुःशतम् ॥ पुनरुत्थायसर्पेन्द्रोलेलिहानोभयंकरः ॥८॥ वामहस्तेहरिंसर्पोरुषाजग्राह माधवम् ॥ हरिर्दक्षिणहस्तेनगृहीत्वातंमहाखलम् ॥ ९ ॥

को दूर करने वाले हैं ॥३॥ तब फिर कमरमें पीताम्बर बाँधकर कदम्ब पर चढ़कर उस ऊँचे कदम्ब परसे उस विषके दूषित जलमें कूद पड़े ॥४॥ उस समय वह दुष्ट जल श्रीकृष्ण के कूदनेसे चारों तरफ घूमने लगा, उस समय काली नागका मंदिर भृंगीभूत अर्थात् जैसे भृंगी घूमती है, ऐसा हो गया ॥५॥ तभी काली नाग क्रोध करके सौ फणोंसे आवृत्त श्रीकृष्णको मर्म स्थलमें काटकर अपने शरीरसे माधवके पांवसे शिरतक लिपट गया ॥ ६ ॥ तब श्रीकृष्ण अपना शरीर बढ़ाकर बंधनसे निकल गये, फिर जलमें पटक कर उस सर्पकी हाथोंसे पूछको पकड़ कर इधर उधर घुमाकर ॥ ७ ॥ सौ धनुषकी दूरीपर फेंक दिया, फिर वह सर्पराज महाभयंकर जीभ लपलपाता हुआ फिर आया ॥ ८ ॥ और बड़े क्रोधसे बायें हाथमें हरिको पकड़ा, तबही श्रीकृष्णने दाहिने हाथसे उस महादुष्ट कालीको पकड़ कर ॥ ९ ॥

उसी जलमें पटक दिया, जैसे सामान्य कोई सर्पको गरुड मारता है, तब वह सर्प अपने सौ मुखोंको फैलाकर फिर आया ॥१०॥ फिर श्रीकृष्ण पूँछ पकड़कर उसको सौ धनुष तक खींच ले गये, फिर इस सर्पने श्रीकृष्णके हाथसे निकलकर फिर काट खाया ॥ ११ ॥ तब त्रिलोकीके बलको धरनेवाले श्रीकृष्णने सर्पके एक घूंसा मारा, श्रीकृष्णके घूंसेके प्रहारसे मूर्च्छित होकर बेहोश हो गया॥१२॥तब वह अपने सौ मुखोंको नीचा करके श्रीकृष्णके सन्मुख आकर खड़ा हो गया, तब इसके मणिधारी सौ शिरोंपर चढ़कर ॥१३॥ नटकी तरह मनोहर नटकासा जिनका रूप ऐसे श्रीकृष्णने सप्तस्वरोंके ताल सहित संगीत रागको गाते ताण्डव नृत्य किया, जैसे नटराज नाचते हैं ॥१४॥ उस ताण्डवमें देवताओंने पुष्पोंकी वर्षा की, आनन्दसे बीणा, नगाडे, वंशीको बजाते जाते हैं ॥१५॥ तालके साथ पांवोंको धरनेसे उसके उज्ज्वल फणोंको कुचलते हैं, श्वास लेते महात्मा कालीके सब फण तोड़ डाले ॥ १६ ॥ तब भयसे विकल हुई नाग पत्नियाँ श्रीकृष्णके चरण कमलोंको नमस्कार करके गद्गद वाणीसे स्तुति करने लगीं ॥ १७ ॥ श्रीकृष्ण चन्द्र तुम

तज्जलेपोथयामाससुपर्णइवपन्नगम् ॥ सर्पोमुखशतंदीर्घंप्रसार्यपुनरागतः ॥१०॥ पुच्छेगृहीत्वातंकृष्णश्चकर्षाशुधनुःशतम् ॥ कृष्णहस्ताद्विनिष्क्रम्यसर्पस्तंव्यदशत्पुनः ॥११॥ तताडमुनिनासर्पंत्रैलोक्यबलधारकः ॥ कृष्णमुष्टिप्रहारेणमूर्च्छितोविगतस्मृतिः ॥ १२ ॥ नतंकृत्वाऽऽननशतंस्थितोऽभूत्कृष्णसंमुखे ॥ आरुह्यतत्फणशतंमणिवृन्दमनोहरम् ॥१३॥ ननर्तनटवत्कृष्णोनटवेषोमनोहरः ॥ गायन्सप्तस्वरैरागंसंगीतंचसतालकम् ॥ १४ ॥ पुष्पैर्देवेषुवर्षत्सुतांडवेनटराजवत् ॥ वादयन्समुदावीणाऽऽनकदुंदुभिवेणुकान् ॥ १५ ॥ सतालंपदविन्यासैस्तत्फणान्सोज्ज्वलान्बहून् ॥ बभंजश्वसतःकृष्णःकालियस्यमहात्मनः॥१६॥तदैवनागपत्न्यस्ताआगताभयविह्वलाः॥नत्वाकृष्णपदंदेवमूचुर्गद्गदयागिरा ॥ १७ ॥ नागपत्न्यऊचुः ॥ नमःश्रीकृष्णचंद्रायगोलोकपतयेनमः ॥ असंख्यांडाधिपतयेपरिपूर्णतमायते ॥ १८ ॥ श्रीराधापतयेतुभ्यंव्रजाधीशायतेनमः ॥ नमःश्रीनंदपुत्राययशोदानंदनायते॥१९॥ पाहिपाहिपरदेवपन्नगंत्वत्परंनशरणंजगत्त्रये ॥ त्वंपरात्परतरोहरिःस्वयंलीलयाकिलतनोषिविग्रहम् ॥२०॥ श्रीनारदउवाच ॥ नागपत्नीस्तवान्तेतुकालियोनष्टगर्वकः ॥ भगवन्पूर्णकामेतिपाहिश्रीकृष्णमुक्तवान् ॥२१॥ पाहीतिप्रवदंतंतंकालियंभगवान्हरिः ॥ प्रणतंसंमुखेप्राप्तंप्राहदेवोजनार्दनः ॥ २२ ॥

गोलोकके पति, अखिल असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति परिपूर्णतम हो, आपके लिये नमस्कार है ॥१८॥ श्रीराधापति हो, व्रजके अधीश हो, नंदके पुत्र यशोदा नन्दन हो, आपके लिये नमस्कार है॥१९॥हे परदेव ! सर्पकी रक्षा करो रक्षा करो तीनों जगत्में तुमसे परे और कोई रक्षा करनेवाला नहीं है तुम परसे पर हो, हरि हो, अपनी इच्छासे शरीर धारण करते हो ॥२०॥ नारदजी कहते हैं, कि, ऐसे जब नाग पत्नियोंने श्रीकृष्णकी स्तुति की और कालियका गर्व नष्ट हो गया तब भगवान्से बोला कि हे प्रभो ! मैं शरण आया हूँ, मेरी रक्षा करो, तब साक्षात् परिपूर्णतम श्रीकृष्णने कालीको छोड़ दिया ॥२१॥ जब काली "पाहि पाहि" (रक्षा करो, रक्षा करो) कहता हुआ प्रणाम करके श्रीकृष्णके सन्मुख आया, तब जनार्दन भगवान् उससे बोले ॥ २२ ॥

कि हे कालीय ! तू अपने पुत्र, स्त्रीं, भाई, बन्धु, कुटुम्बको साथ लेकर रमणक द्वीपको चला जा, अब गरुड तुमको भक्षण नहीं करेगा, क्योंकि अब मेरे चरणका चिह्न तुम्हारे शिरपर हो गया, उससे ॥२३॥ नारदजी कहते हैं, कि काली सर्प श्रीकृष्णकी आज्ञा पाकर श्रीकृष्णको प्रणामकर पूजन करके परिक्रमा देकर स्त्रीपुत्रोंको साथ लेकर रमणीक द्वीपको चला गया ॥२४॥ जब नन्दादिक गोपोंने सुना कि श्रीकृष्णको कालीने ग्रस लिया, तब नंदादिक गोपगण, स्त्री, पुत्र सहित सब वहाँ ही आये ॥२५॥ जब श्रीकृष्ण जलसे निकले, तब देखकर बड़े प्रसन्न हुये और नन्दजी अपने पुत्रको आलिंगन करके परमानन्दको प्राप्त हुये॥२६॥ तब यशोदाजी अपने पुत्रको प्राप्त होकर पुत्रके कल्याणके लिये ब्राह्मणोंको दान देने लगी और स्नेह से स्तनोंमेंसे दूध चूने लगा॥२७॥ उस दिन गोपोंको जो परिश्रम बहुत हुआ, इससे वहीं यमुनाके किनारेपर सब गोपी गोपगण सहित रात्रिमें शयन किया॥२८॥ उस रातमें उस

श्रीभगवानुवाच ॥ द्वीपंरमणकंगच्छसकलत्रसुहृद्वृतः ॥ सुपर्णोद्यतनात्वांवैनोद्यान्मत्पादलांछितम् ॥२३॥ श्रीनारदउवाच ॥ सर्पःकृष्णंतुसंपूज्यपरिक्रम्यप्रणम्यतम् ॥ कलत्रपुत्रसहितोद्वीपंरमणकंययौ ॥२४॥ अथश्रुत्वाकालियेनसंग्रस्तंनंदनंदनम्॥तत्राजग्मुर्गोपगणानंदाद्याःसकला जनाः ॥२५॥ जलाद्विनिर्गतंकृष्णंदृष्ट्वामुमुदिरेजनाः ॥ आश्लिष्यस्वसुतंनंदःपरांमुदमवापह ॥२६॥ सुतंलब्ध्वायशोदासासुतकल्याणहेतवे॥ ददौदानंद्विजातिभ्यःस्नेहस्नुतपयोधरा ॥२७॥ तत्रैवशयनंचक्रुर्गोपाःसर्वैःपरिश्रमात् ॥ कालिंदीनिकटेराजन्गोपीगोपगणैःसह ॥ २८ ॥ वेणुसंघर्षणोद्भूतोदावाग्निःप्रलयाग्निवत्॥निशीथेसर्वतोगोपान्दग्धुमागतवान्स्फुरन्॥२९॥गोपावयस्याःश्रीकृष्णंसबलंशरणंगताः॥ नत्वाकृतांजलिं कृत्वातमूचुर्भयकातराः ॥ ३० ॥ गोपाऊचुः ॥ कृष्णकृष्णमहाबाहोशरणागतवत्सल ॥ पाहिपाहिवनेकष्टान्दावाग्नेःस्वजनान्प्रभो ॥ ३१ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ स्वलोचनानिमाभैष्टन्यमीलयतमाधवः ॥ इत्युक्त्वावह्निमपिबद्देवोयोगेश्वरेश्वरः ॥ ३२ ॥

वनमें बांसके घर्षणसे दावाग्नि प्रलय कीसी अर्द्ध रात्रिके समयमें गोपोंको जलानेके लिये चारों ओरसे फुंकारती हुई गोपोंको जलानेके लिये आई तब गोप, गोपी, गौ सब व्याकुल हो गये ॥२९॥ तब समान अवस्थावाले सब गोप श्रीकृष्ण बलदेवकी शरण आये, भयसे कायर हो रहे वे सब प्रणाम कर हाथ जोड़कर बोले ॥ ३० ॥ हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे बड़ी भुजावाले ! हे शरणागत वत्सल ! पाहि पाहि इस दावाग्निसे इस वनमें जले जाते हैं हमारी रक्षा करो, हे प्रभो ! हम तुम्हारे स्वजन हैं ॥३१॥ नारदजी कहते हैं–तब कृष्ण बोले-अरे गोप हो, तुम भय मत करो अपने अपने नेत्रोंको बन्द कर लो, भगवान् ऐसा कहकर जब उन्होंने आंखें बन्द कर लीं तब ही उस अग्निको पी गये इसमें आश्चर्य नहीं है क्योंकि जो चाहे सो कर सकते हैं फिर श्रीकृष्ण तो योगीश्वरोंके ईश्वर हैं ॥ ३२ ॥

प्रातःकाल जब हुआ तो विस्मित हुये सब गोपगणोंको और गौओंको साथ लेकर श्रीयुत व्रजमंडलको आये ॥३३॥ इति श्रीगर्ग संहितायां वृन्दावनखंडे भाषाटीकायां कालिय दमन दावाग्नि पानं नाम नवमोऽध्यायः ॥९॥ अब विदेह राजा प्रश्न करते हैं, जो श्रीकृष्णकी चरणकमल रज बहुत जन्मोंकी तपस्यासे भी इस लोकमें बड़े बड़े योगीश्वरोंको भी दुर्लभ है, वह चरणकमल साक्षात् कालीके मस्तकपर शोभायमान हुये ॥ १ ॥ यह काली सर्पोंमें श्रेष्ठ कौन था ? इसने कौनसा कुशल कर्म किया था ? मैं उसको जाननेकी इच्छा करता हूँ, सो हे देव ! ऋषियोंमें सत्तम मुझसे कहो ॥२॥ तब नारदजी बोले कि पहले स्वायम्भू मन्वन्तरमें विन्ध्याचल पर्वतमें एक वेदशिरा नाम मुनि भृगुवंशी तप कर रहे थे ॥३॥ उनके आश्रममें तप करनेको अश्वशिरा नाम मुनि आये, उनको देखकर लाल लाल नेत्र करके क्रोधसे वेदशिरा बोले ॥४॥ हे विप्र ! मेरे आश्रममें तप मत करो, यहाँका

प्रातर्गोपगणैःसार्द्धंविस्मितैर्नंदनन्दनः ॥ गोगणैःसहितःश्रीमद्व्रजमण्डलमाययौ ॥ ३३ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांवृन्दावनखण्डेकालियदमन दावाग्निपानंनामनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ वैदेहउवाच ॥ यद्रजोदुर्लभंलोकेयोगिनांबहुजन्मभिः ॥ तत्पादाब्जंहरेःसाक्षाद्बभौकालियमूर्द्धसु ॥ १ ॥ कोऽयंपूर्वंकुशलकृत्कालियोफणिनांवरः ॥ एनंवेदितुमिच्छामिब्रूहिदेवर्षिसत्तम ॥ २ ॥ नारदउवाच ॥ स्वायंभुवान्तरेपूर्वंनाश्रीम्नावेदशिरामुनिः ॥ विंध्याचलेतपोऽकार्षीद्भृगुवंशसमुद्भवः ॥ ३ ॥ तदाश्रमेतपःकर्तुंप्राप्तोह्यश्वशिरामुनिः ॥ तंवीक्ष्यरक्तनयनःप्राहवेदशिरारुषा ॥ ४ ॥ वेदशिरा उवाच ॥ ममाश्रमेतपोविप्रमाकुर्यास्सुखदंनहि ॥ अन्यत्रतेतपोयोग्याभूमिर्नास्तितपोधन ॥ ५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वाथवेदशिरसोवाक्यंह्यश्वशिरामुनिः ॥ क्रोधयुक्तोरक्तनेत्रःप्राहतंमुनिपुंगवम् ॥ ६ ॥ अश्वशिरा उवाच ॥ महाविष्णोरियंभूमिर्नतेमेमुनिसत्तम ॥ कतिभिर्मुनिभिश्चात्रनकृतंतपउत्तमम् ॥ ७ ॥ श्वसन्सर्पइवत्वंभोवृथाक्रोधंकरोषिहि ॥ सदासर्पोभवत्वंहिभूयात्तेगरुडाद्भयम् ॥ ८ ॥ वेदशिराउवाच ॥ त्वंमहादुरभिप्रायोलघुद्रोहेमहोद्यमः ॥ कार्यार्थीकाकइवकौत्वंकाकोभवदुर्मते ॥९॥ श्रीनारदउवाच ॥ आविरासीत्ततोविष्णुरित्थंचशपतोस्तयोः ॥ स्वस्वशापाद्दुःखितयोःसांत्वयामासतौगिरा ॥ १० ॥

तप तुमको सुखकारी नहीं होगा, हे तपोधन ! कहीं और तप करनेको धरती तुमको नहीं है ॥५॥ नारदजी कहते हैं-ऐसे वेदशिराका वचन सुनकर अश्वशिरा मुनि क्रोधसे लाल नेत्र करके उस मुनिश्रेष्ठसे बोले ॥ ६ ॥ हे मुनि सत्तम ! महाविष्णुकी यह भूमि है, न तेरी है, न मेरी है, न जाने कितने मुनि यहाँ तप कर गये, और कितने करेंगे ॥ ७ ॥ जो तू निरंतर सर्पकी तरह श्वास लेता वृथा क्रोध करता है, इससे तुम सर्प हो जाओ और तुमको गरुडसे भय होगा ॥ ८ ॥ तब वेदशिरा बोले कि तुम्हारा यह बड़ा बुरा अभिप्राय है, जो थोड़ेसे अपराधमें इतना क्रोध किया, इससे कामार्थी तू काककी तरह है, इससे हे दुर्बुद्धे ! तू काक (कौआ) हो जा ॥९॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे वे दोनों परस्पर शाप दे रहे थे, उसी समय विष्णु वहाँ प्रकट हुये, आपने अपने शापसे दुःखीको वाणीसे विष्णु भगवान्ने शांत किया ॥ १० ॥

हे मुनियो ! तुम दोनों मेरे समान भक्त हो, जैसे शरीरमें भुजाऐं, अपने वाक्यको तो झूठा करनेको मैं समर्थ हूँ ॥ ११ ॥ किन्तु भक्तके वाक्यको झूठा करनेमें मैं समर्थ नहीं हूँ, इस बातकी मेरी शपथ है, सो हे वेदशिरा ! जब तेरे शिरपर मेरे चरण रखे जायेंगे ॥१२॥ तब तुमको गरुड़से भय नहीं होगा, और हे अश्वशिरा ! मेरे वचनको सुनकर शोच मत करो ॥१३॥ काकरूपमें भी तुमको निश्चित ज्ञान होगा, और योग सिद्धियों सहित त्रैकालिक ज्ञान तुमको होगा ॥ १४ ॥ नारदजी कहते हैं-ऐसे कहकर विष्णु तो चले गये तब हे नृप ! वे अश्व शिरा नाम मुनीश्वर वडे योगीन्द्र नील पर्वतपर जाकर साक्षात् काकभुशुण्डि नामसे विख्यात काक हुये ॥१५॥ वे महातेजस्वी काकभुशुण्डि सम्पूर्ण शास्त्रोंके दीपक और श्रीरामके भक्त हुये; जिन काकभुशुण्डिने महात्मा गरुडके सामने श्रीरामायण गान की ॥१६॥ चाक्षुष मन्वन्तरमें प्रचेतानके पुत्र दक्ष प्रजापतिने कश्यपजीको बड़ी

श्रीभगवानुवाच ॥ युवांतुमेसमौभक्तौभुजाविवतनौमुनी ॥ स्ववाक्यंतुमृषाकर्तुंसमर्थोहंमुनीश्वरौ ॥ ११ ॥ भक्तवाक्यंमृषाकर्तुंनेच्छामि शपथोमम ॥ तेमूर्ध्निहेवेदशिरश्चरणौमेभविष्यतः ॥ १२ ॥ तदातेगरुडाद्भीतिर्नभविष्यतिकर्हिचित् ॥ शृणुमेऽश्वशिरोवाक्यंशोचंमाकुरु माकुरु ॥ १३ ॥ काकरूपेपिसुज्ञानंतेभविष्यतिनिश्चितम् ॥ परंत्रैकालिकंज्ञानंसंयुतंयोगसिद्धिभिः ॥ १४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वा- थगतेविष्णौमुनिरश्वशिरानृप ॥ साक्षात्काकभुशंडोऽभूद्योगींद्रोनीलपर्वते ॥१५॥ रामभक्तोमहातेजा-सर्वशास्त्रार्थदीपकः ॥ रामायणंजगौयो वैगरुडायमहात्मने ॥ १६ ॥ चाक्षुषेह्यन्तरेप्राप्तेदक्षःप्राचेतसोनृप ॥ कश्यपायददौकन्याएकादशमनोहराः ॥ १७ ॥ तासांकद्रूश्चयाश्रेष्ठा साद्यैवरोहिणीस्मृता ॥ वसुदेवप्रियायस्यांबलदेवोऽभवत्सुतः ॥ १८ ॥ साकद्रूश्चमहासर्पाञ्जनयामासकोटिशः ॥ महोद्भटान्विषबलानुग्रा- न्पंचशताननान् ॥१९॥ महामणिधरान्कांश्चिद्दुःसहांश्चशताननान् ॥ तेषांवेदशिरानामकालियोऽभून्महाफणी ॥ २० ॥ तेषामादौफणी- न्द्रोभूच्छेषोऽनंतःपरात्परः ॥ सोद्यैवबलदेवोऽस्तिरामोनंतोऽच्युताग्रजः ॥२१॥ एकदाश्रीहरिसाक्षाद्भगवान्प्रकृतेःपरः ॥ शेषंप्राहप्रसन्नात्मा मेघगम्भीरयागिरा ॥ २२ ॥

मनोहर ग्यारह कन्याएं विवाह दी ॥१७॥ उनमें श्रेष्ठ जो कद्रू नामकी थी वही अब आकर रोहिणी वसुदेवकी स्त्री हुई, उसके बलदेवजी पुत्र हुये ॥ १८ ॥ उस कद्रूने पांच पांच सौ मुखके, बड़े २ विषधारी विपकाही केवल जिनका बल है; बड़े २ उद्भट करोड़ों ऐसे नाग प्रकट किये ॥१९॥ जिनमें कितने ही महा मणिधारी, कितने ही दुःसह सौ सौ फणके नाग हुये उनमें वेदशिरा जो मुनीश्वर थे, वे काली नामके नाग हुये ॥२०॥ उन नागोंमें सबसे मुख्य परसे पर भगवान् शेषजी हुये, वे ही अब बलदेवजी हैं, जिनके राम और अच्युताग्रज नाम हुये ॥ २१ ॥ एक समय प्रकृतिसे पर भगवान् श्रीहरि प्रसन्न होकर मेघ गम्भीरवाणीसे शेपजीको बोले ॥ २२ ॥

इस भूमण्डलको धारण करनेकी किसीकी सामर्थ्य नहीं है, इससे इस भूमण्डलको अपने मस्तक पर तुम धारण करो ॥ २३ ॥ तुम्हारा अनन्त पराक्रम है, इससे तुम अनन्त कहलाते हो, प्राणियोंके कल्याणके निमित्त इस कार्यको तुम करनेके योग्य हो ॥ २४ ॥ तब शेषजी बोले कि हे महाराज ! मुझसे आप पृथ्वीको उठानेकी अवधि कर दीजिये कबतक मैं इस पृथ्वीको उठाये रहूँ, जबतक आज्ञा देवोगे, तबतक मैं आपकी आज्ञासे भूमिको धारण करूँगा ॥२५॥ तब भगवान् बोले--हे सर्पेन्द्र ! तुम्हारे हजार मुख हैं और दो हजार जीभ हैं, जिनसे मेरे गुण तथा नये नये नामोंका उच्चारण नित्य किया करो ॥ २६ ॥ जब मेरे दिव्य नामोंका अन्त आ जाय, पूरे हो जायं, तभी तुम पृथ्वीको उतार कर रख देना ॥२७॥ तब शेषजीने पूछा कि हे प्रभो ! पृथ्वीका आधार तो मैं होऊँगा, परन्तु मेरा आधार कौन होगा ! तब बताइये फिर निराधार मैं जलमें कैसे स्थित हो सकता

श्रीभगवानुवाच ॥ भूमंडलंसमाधातुंसामर्थ्यंकस्यचिन्नहि ॥ तस्मादेनंमहीगोलंमूर्ध्नित्वंहिसमुद्धर ॥ २३ ॥ अनंतविक्रमस्त्वंवैयतोनन्तइतिस्मृतः ॥ इदंकार्यंप्रकर्तव्यंजनकल्याणहेतवे ॥ २४ ॥ शेषउवाच ॥ अवधिंकुरुयावत्त्वंधरोद्धारस्यमेप्रभो ॥ भूभारंधारयिष्यामितावत्तेवचनादिह ॥ २५ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ नित्यंसहस्रवदनैरुच्चारंचपृथक्पृथक् ॥ मद्गुणस्फुरतांनाम्नांकुरुसर्पेन्द्रसर्वतः ॥ २६ ॥ मन्नामानिचदिव्यानियदायांत्यवसानताम् ॥ तदाभूभारमुत्तार्यफणिंस्त्वंसुसुखीभव ॥ २७ ॥ शेषउवाच ॥ आधारोहंभविष्यामिमदाधारश्चकोभवत् ॥ निराधारःकथंतोयेतिष्ठामिकथयप्रभो ॥ २८ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अहंचकमठोभूत्वाधारयिष्यामितेतनुम् ॥ महाभारमयींदीर्घांमाशोकंकुरुमत्सखे ॥ २९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदाशेषःसमुत्थायनत्वाश्रीगरुडध्वजम् ॥ जगामनृपपातालादधौवैलक्षयोजनम् ॥ ३० ॥ गृहीत्वास्वकरेणेदंगरिष्ठंभूमिमंडलम् ॥ दधारस्वफणेशेषोप्येकस्मिंश्चंडविक्रमः ॥ ३१ ॥ संकर्षणेऽथपातालेगतेऽनन्तेपरात्परे ॥ अन्येफणीन्द्रास्तमनुविविशुर्ब्रह्मणोदिताः ॥३२॥ अतलेवितलेकेचित्सुतलेचमहातले ॥ तलातलेतथाकेचित्संप्राप्तास्तेरसातले ॥ ३३ ॥ तेभ्यस्तुब्रह्मणादत्तंद्वीपंरमणकंभुवि ॥ कालीयप्रमुखास्तस्मिन्नवसन्सुखसंवृताः ॥ ३४ ॥

हूं ॥२८॥ तब भगवान् बोले कि मैं कच्छप रूप होकर तुमको और महा बोझवाले तुम्हारे शरीरको भी धारण करूँगा, हे मेरे मित्र, तुम इसका शोच मत करो ॥२९॥ नारदजी कहते हैं कि, तबही शेषजी उठकर श्री गरुड ध्वजको नमस्कार करके हे नृप ! पातालके लाख योजन नीचे चले गये ॥ ३० ॥ बड़े प्रचण्ड शक्तिवाले शेषजीने एक हाथसेही इस बड़े बोझवाले भूमण्डलको एक फण परही रख लिया ॥ ३१ ॥ जब अनन्त पराक्रमी परसे पर संकर्षण श्री शेषजी पातालको चले गये, तब और भी बड़े बड़े सर्प ब्रह्माजीकी आज्ञासे उनके पीछे पातालको चले गये ॥ ३२ ॥ कोई अतलमें, कोई सुतलमें, कोई वितलमें, कोई महातलमें, कोई पातालमें, कोई तलातलमें, कोई रसातलमें चले गये ॥ ३३ ॥ और पृथ्वीमें ब्रह्माजीने नागोंके लिये रमणक द्वीप दिया, उसमें काली आदि सब नाग सुख पूर्वक बस गये ॥ ३४ ॥

हे राजन् ! यह हमने तुम्हें कालीका कथानक सुनाया, यह भक्ति मुक्ति देने वाला सार है, अब तुम क्या सुननेकी इच्छा करते हो, वह कहो ॥ ३९ ॥ इति श्रीगर्गसंहितायां
वृन्दावनखण्डे भाषाटीकायां शेषोपाख्यानवर्णनं नामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ राजा बहुलाश्व प्रश्न करते हैं कि हे ब्रह्मन् ! रमणक द्वीपमें और सर्पोंके विना कालीही का क्या भय
हुआ, यह सब वृत्तान्त मुझसे कहिये ॥१॥ नारदजी कहते हैं कि उस रमणकमें नागोंका काल जो गरुड है,वह नित्य नागोंके झुण्डको मारा करता था, तब एक समय वे भयभीत
सब नाग निर्भय जो गरुड है, उससे बोले ॥२॥ हे गरुड ! तुमको हमारा प्रणाम है, तुम साक्षात् विष्णुके वाहन हो, जो तुम नित्य ऐसेही हमको खाओगे तो हमारा जीवन कैसे
होगा ॥३॥ इससे तुम महिने महिनेमें एक एक सर्पकी भेंट एक एक घरसे ले लिया करो, भेंट की रीतिसे एक पेड़के नीचे रख आया करेंगे और उस नागके साथ और अन्नादिक

इतितेकथितंराजन्कालियस्यकथानकम्॥भुक्तिदंमुक्तिदंसारंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि।३९।इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांवृन्दावनखण्डेशेषोपाख्यानवर्णनं
नामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ राजोवाच ॥ द्वीपेरमणकेब्रह्मन्सर्पानन्यान्विनाकथम् ॥ एतन्मेब्रूहिसकलंकालियस्याभवद्भयम् ॥ १ ॥
॥ श्रीनारदउवाच ॥ तत्रनागान्तकोनित्यंनागसंघंजघानह ॥ गतक्षुब्धंचैकदातेताक्ष्यंप्राहुर्भयातुराः ॥ २ ॥ नागाऊचुः॥ हेगरुत्मन्नमस्तुभ्यं
त्वंसाक्षाद्विष्णुवाहनः ॥ अस्मानत्सियदासर्पान्कथंनोजीवनंभवेत् ॥३॥ तस्माद्बलिंगृहाणाशुमासेमासेगृहात्पृथक् ॥ वनस्पतिसुधान्नानामुप-
चारैर्विधानतः ॥ ४ ॥ गरुडउवाच ॥ एकःसर्पस्तुमेदेयोभवद्भिर्वागृहात्पृथक् ॥ कथंपचामितमृतेबलिंवीटकवत्परम् ॥५॥ श्रीनारदउवाच ॥
तथास्तुचोक्तास्तेसर्वेगरुडायमहात्मने॥गोपीथायात्मनोराजन्नित्यंदिव्यंबलिंददुः ॥ ६ ॥ कालियस्यगृहस्यापिसमयोभूद्यदानृप ॥ तदाताक्ष्यं
बलिंसर्वंबुभुजेकालियोबलात् ॥७॥ तदागतःप्रकुपितोवेगतःकालियोपरि ॥ चकारपादविक्षेपंगरुडश्चंडविक्रमः॥८॥गरुडांघ्रिप्रहारेणकालियो
मूर्च्छितोभवत् ॥ पुनरुत्थायजिह्वाभिःप्रावलीढन्मुखंश्वसन् ॥ ९ ॥

भी हम तुमको दिया करेंगे॥४॥तब गरुडजी बोले कि तुम मुझको महिने महिने एक सर्प देनेकी कहते हो,सो महिने महिनेमें एक एक घरसे जो एकही नाग आयेगा उसको तो मैं
बीडीकी तरह खा लूँगा, फिर क्या महिने भर भूखा रहूँगा ॥५॥ नारदजी कहते हैं, तब सब नाग महात्मा गरुडसे अपनी रक्षाके लिये बोले कि, अच्छा महाराज ! एक नाग
हमारेसे नित्य प्रति ले लिया करो, यह कहकर नित्य बलि देने लगे ॥ ६ ॥ तब गरुडने यह बात स्वीकार की, तब वे सर्प सदा देने लगे, हे नृप ! जब कालीके घरका समय
हुआ, तो बल पूर्वक गरुडकी सब बलिको काली आपही खा गया ॥ ७ ॥ जब बड़े वेगसे गरुडजी आये, तब इस बातको सुनकर कालीके ऊपर बड़े कुपित हुये और परा-
क्रमी गरुडजीने कालीके एक पंजा मारा ॥ ८ ॥ गरुडके पञ्जेके प्रहारसे काली मूर्च्छित हो गया, फिर, उठा जीभोंसे मुखको चाटता, श्वास लेता ॥ ९ ॥

सर्पोंमें श्रेष्ठ वडा बली जो काली है,उसने सौ फणोंको फैलाकर विष भरे दांतोंसे गरुडजीको काटा ॥१०॥ तब विष्णु वाहन गरुडजीने कालीको अपनी चोंचसे पकड़कर धरतीमें दे मारा, और पंखोंसे मारने लगे ॥११॥ तब कालीने गरुडकी चोंचमेंसे निकलकर गरुडके पंख उखाड़ डाले, और पांवोंसे लिपट गया, और बार बार फुंकारने लगा ॥१२॥ तब गरुडजीके जो दो पंख गिर पड़े उनमेंसे एक पंखमेंसे मोर और एक पंखमेंसे नीलकण्ठ हुआ, जिनका दर्शन सदाही फलको देनेवाला है, किन्तु हे मैथिलेंद्र ! आश्विनकी शुक्ल पक्षकी दशमी (दशहरा) को नीलकंठका दर्शन अत्यन्त ही शुभका दाता है ॥१३॥ कुपित होकर गरुडजी चोंचसे कालीको पकड़कर धरतीमें मारकर उसको पकड़कर खींचने लगे ॥१४॥ तब तो काली गरुडकी चोंचमेंसे निकलकर भयसे विह्वल होकर भागा, तब पक्षियोंके राजा महाबली गरुड कालीके पीछे भगे ॥ १५ ॥ सातों द्वीपोंमें सातों खण्डों

प्रसार्य्यस्वंफणशतंकालियःफणिनांवरः ॥ व्यदशद्गरुडंवेगाद्द्रिर्विषमयैर्बली ॥१०॥ गृहीत्वातंचतुंडेनगरुडोदिव्यवाहनः ॥ भूपृष्ठेपोथयामास पक्षाभ्यांताडयन्मुहुः ॥ ११ ॥ तुंडाद्विनिर्गतःसर्पस्तत्पक्षान्विचकर्षह ॥ तत्पादौवेष्टयंस्तुद्यन्फूत्कारंव्यदधन्मुहुः ॥ तदातत्पक्षसम्भूतौनीलकण्ठमयूरकौ॥१२॥तेषांतुदर्शनंपुण्यंसर्वकामफलप्रदम्॥शुक्लपक्षेमैथिलेंद्रदशम्यामाश्विनस्यतत्॥१३॥ कुपितोगरुडस्तंवैनीत्वातुण्डेनकालियम् ॥ निपात्यभूम्यांसहसातत्तनुंविचकर्षह ॥१४॥ तदादुद्रावतत्तुण्डात्कालियोभयविह्वलः ॥ तमन्वधावत्सहसापक्षिराट्चण्डविक्रमः ॥१५॥ सप्तद्वीपान्सप्तखण्डान्सप्तसिंधूंस्ततःफणी ॥ यत्रयत्रगतस्ताक्ष्यंतत्रतत्रददर्शह ॥१६॥ भूर्लोकंचभुवर्लोकंस्वर्लोकंप्रगतःफणी ॥ महर्लोकंततोधावञ्जनलोकंजगामह ॥ १७ ॥ यत्रैवगरुडेप्राप्तेऽधोधोलोकंपुनर्गतः ॥ श्रीकृष्णस्यभयात्केपिरक्षांतस्यनसंदधुः ॥१८॥ कुत्रापिनसुखेजातेकालियोपिभयातुरः ॥ जगामदेवदेवस्यशेषस्यचरणांतिके ॥ १९ ॥ नत्वाप्रणम्यतंशेषंपरिक्रम्यकृतांजलिः ॥ दीनोभयातुरःप्राहदीर्घपृष्ठःप्रकंपितः ॥ २० ॥ कालियउवाच ॥ हेभूमिभर्तर्भुवनेशभूमन्भूभारहृत्त्वंस्वभिभूरिलीलः ॥ मांपाहिपाहिप्रभविष्णुपूर्णःपरात्परस्त्वंपुरुषःपुराणः ॥ २१ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ दीनंभयातुरंदृष्ट्वाकालियंश्रीफणीश्वरः ॥ वाचामधुरयाप्रीणन्प्राहदेवोजनार्दनः ॥ २२ ॥

में, सातों समुद्रोंमें भगा भगा फिरा किन्तु जहाँ जहाँ गया वहाँ वहाँ गरुडजीको देखा ॥१६॥ भूलोकमें, भुवर्लोकमें, स्वर्गलोकमें महर्लोकमें होकर जनलोकतक भागता रहा ॥१७॥ किन्तु जहाँ जहाँ गया वहाँ वहाँ इसने पीछे गरुडजीको देखा, तब नीचेके लोकोंमें गया, किन्तु श्रीकृष्णके भयसे किसीने इसकी रक्षा नहीं की ॥१८॥ कहीं सुख नहीं मिला, तब यह काली, भयके मारे देवताओंके देव श्रीशेषजीके चरणकमलमें जाकर शरणागत हुआ ॥१९॥ तब शेषजीके चरणोंमें प्रणाम करके हाथ जोड़ परिक्रमा कर महादीन भयातुर काँपता हुआ बोला ॥२०॥ हे भूमिधर ! हे भूमन् ! हे भुवनेश ! हे भूभारहृत् ! हे स्वामिन् ! हे भूरिलील ! हे प्रभाव करनेवाले ! हे परात्पर ! मेरी रक्षा करो, रक्षा करो, तुम पुराण पुरुष हो ॥२१॥ नारदजी कहते हैं कि नागोंके ईश्वर शेषजी भयातुर दीन हुये कालीको देखकर मीठी वाणीसे प्रसन्न करते जनार्दन देव बोले ॥ २२ ॥

हे कालिय ! हे महाबुद्धे ! मेरा परम वचन सुन, अब तेरी कहीं भी रक्षा नहीं होगी, इसमें सन्देह नहीं है ॥२३॥ देख पहले एक महामुनि बड़े सिद्ध सौभरि नामके थे, जिन्होंने वृन्दावनमें दश हजार वर्ष जलमें तपस्या की ॥२४॥ किन्तु मछलियोंका विहार देखकर उनको गृहस्थ होनेकी इच्छा हुई, तब उन महाबुद्धिने मांधाताकी सौ कन्याओंके साथ विवाह कर लिया ॥२५॥ तब श्रीकृष्णने उस सौभरि ऋषिको ऐसी ऐश्वर्यवाली लक्ष्मी दी, जिसको देखकर मांधाता राजा विस्मित हो गतस्मय हो गया ॥२६॥ अर्थात् राज्य लक्ष्मीका गर्व जाता रहा, यमुनाके भीतर जलमें सौभरिऋषि तो बड़ी तपस्या कर रहे थे कि सौभरि ऋषिके देखते देखते गरुड एक मगरको निगल गया ॥२७॥ दुःखोंको हरनेवाले सौभरि मछलियोंको बहुत दुःखी देखकर दीनवत्सल मुनि मुख्य ऋषिने क्रोध करके गरुडजीको शाप दिया ॥२८॥ कि आजसे लेकर यहाँ जो तुम मछलियोंको बलपूर्वक खाओगे, तो उसी समय मेरे शापसे तुम्हारे प्राण निकल जायेंगे ॥२९॥ शेषजीने कहा कि हे कालिय ! उस दिनसे गरुडजी शापके कारण घबराकर वहाँ नहीं जाते हैं, इससे हे कालिय ! तुम श्रीहरिके वृन्दा-

शेषउवाच ॥ हे कालियमहाबुद्धेश्शृणुमेपरमंवचः ॥ कुत्रापिनहितेरक्षाभविष्यतिनसंशयः ॥ २३ ॥ आसीत्पुरामुनिःसिद्धःसौभरिर्नाम्ना-
मतः ॥ वृंदारण्येतपस्तप्तोवर्षाणामयुतंजले॥२४॥ मीनराजविहारंयोवीक्ष्यगेहस्पृहोभवत् ॥ सउवाहमहाबुद्धिर्मांधातुस्तनुजाशतम्॥२५॥तस्मै
ददौहरिःसाक्षात्परांभागवतींश्रियम्॥ वीक्ष्यतांनृपमांधाताविस्मितोभूद्गतस्मयः॥२६ यमुनांतर्जलेदीर्घंसौभरेस्तपतस्तपः ॥ पश्यतस्तस्यगरु-
डोमीनराजंजघानह ॥२७॥ मीनान्सुदुःखितान्दृष्ट्वादुःखहादीनवत्सलः ॥ तस्मैशापंददौक्रुद्धःसौभरिर्मुनिसत्तमः ॥ २८ ॥ सौभरिरुवाच ॥
मीनानद्यतनादत्रयद्यत्सित्वंबलाद्विराट् ॥ तदैवप्राणनाशस्तेभूयान्मेशापतस्त्वरम् ॥ २९ ॥ शेषउवाच ॥ तद्दिनात्तत्रनायातिगरुडःशापवि-
ह्वलः॥तस्मात्कालियगच्छाशुवृन्दारण्येहरेर्वने ॥३०॥ कालिंद्यांचनिजंवासंकुरुमद्वाक्यनोदितः ॥ निर्भयस्तेभयंतार्क्ष्यान्नभविष्यतिकर्हिचित्
॥३१॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्तःकालियोभीतःसकलत्रःसपुत्रकः ॥ कालिंद्यांवासकृद्राजञ्छ्रीकृष्णेननिवासितः ॥३२॥ इति श्रीमद्गर्गसंहि-
तायांवृन्दावनखंडेकालियोपाख्यानवर्णनंनामैकादशोऽध्यायः॥११॥श्रीनारदउवाच ॥ इदंमयातेकथितंकालियस्यापिमर्दनम्॥ श्रीकृष्णचरितं
पुण्यंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि॥१॥बहुलाश्वउवाच॥श्रीकृष्णस्यकथांश्रुत्वाभक्तस्तृप्तिंनयातिहि॥यथाऽमरःसुधांपीत्वायथालिःपद्मकर्णिकाम् ।२। ॥६५॥

वनमें चले जाओ ॥३०॥ मेरे कहनेसे तुम कालिंदीमें निवास करो वहाँ निर्भय रहोगे, उस हरिके वनमें गरुडसे तुमको कभी भय नहीं होगा ॥३१॥ नारदजी बोले कि, ऐसे जब शेषजीने कहा, तब डरा हुआ काली अपने स्त्रीपुत्र सहित कालिंदीमें वास करता था, उसको अब श्रीकृष्णने निकाल दिया ॥ ३२ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां वृन्दावन खण्डे भाषाटीकायां कालियोपाख्यानं नामैकादशोऽध्यायः ॥११॥ नारदजी कहते हैं, कि यह मैंने कालीमर्दन कथा तुमको कही है, यह बड़ा पवित्र श्रीकृष्णका चरित्र है, अब बताओ तुम क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥ १ ॥ तब बहुलाश्व राजा बोला कि श्रीकृष्णकी कथा सुनते सुनते भक्तकी तृप्ति नहीं होती हैं, जैसे देवता अमृत पीते और भ्रमर कमल कर्णिका सूंघते सूंघते नहीं अघाते हैं ॥ २ ॥

बालकरूप श्रीकृष्ण महात्मा रास करनेको भांडीर वनमें गये, तब खिन्न मनवाली राधिकाको आकाशवाणी हुई ॥३॥ कि हे कल्याणि ! तुम शोच मत करो, मनोहर वृन्दावनमें श्रीकृष्ण महात्माके साथ तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा ॥४॥ ऐसे देववाणीका कहा हुआ राधिकाजीका मनोरथरूपी समुद्र सो हे भगवन् ! उस मनोहर् वृन्दावनमें कैसे पूर्ण हुआ ॥५॥ और परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्णने राधिकाके साथ वृन्दावनमें मनोहर रासलीला कैसे की ॥६॥ नारद कहते हैं-हे राजन् ! तुमने बहुत अच्छा भगवान्का चरित्र पूछा, जो देवताओंसे भी गुप्त मनोहर रासलीला है वह मैं तुमसे कहता हूँ ॥७॥ एक समयकी बात है कि, ललिता विशाखा दो मुख्य सखी थीं, वे वृषभानु गोपके घरमें जाकर एकान्त में राधिकाके पास पहुँची ॥८॥ और वे दोनों बोलीं-हे राधे ! जिसका तू नित्य चिंतन करती है और जिसके गुणोंको तू नित्य गाती है, वह तो बालकोंको साथ लेकर नित्य

रासंकर्तुंहरौजातेशिशुरूपेमहात्मनि ॥ भांडीरेदैववागाहश्रीराधांखिन्नमानसाम् ॥३॥ शोचंमाकुरुकल्याणिवृन्दारण्येमनोहरे॥मनोरथस्तेभवि-ताश्रीकृष्णेनमहात्मना ॥४॥ इत्थंदेवगिराप्रोक्तोमनोरथमहार्णवः ॥ कथंबभूवभगवान्वृन्दारण्येमनोहरे ॥ ५ ॥ कथंश्रीराधयासार्द्धंरासक्रीडां मनोहराम् ॥ चकारवृन्दकारण्येपरिपूर्णतमःस्वयम् ॥६॥ श्रीनारदउवाच ॥ साधुपुष्टंत्वयाराजन्भगवच्चरितंशुभम् ॥ गुप्तंवदामिदेवैश्चलीला ख्यानंमनोहरम् ॥ ७ ॥ एकदामुख्यसख्यौद्वेविशाखाललितेशुभे ॥ वृषभानोर्गृहंप्राप्यतांराधांजग्मतूरहः ॥ ८ ॥ सख्यावूचतुः ॥ यंचिंत-यसिराधेत्वंयद्गुणंवदसिस्वतः ॥ सोपिनित्यंसमायातिवृषभानुपुरेर्भकैः ॥९॥ प्रेक्षणीयस्त्वयाराधेदर्शनीयोतिसुन्दरः॥पश्चिमायांनिशीथिन्यां गोचारणविनिर्गतः ॥ १० ॥ राधोवाच ॥ लिखित्वातस्यचित्रंहिदर्शयाशुमनोहरम् ॥ तर्हितत्प्रेक्षणंपश्चात्करिष्यामिनसंशयः ॥ ११ ॥ नारदउवाच ॥ अथसख्यौव्यलिखितांचित्रंनंदशिशोःशुभम् ॥ नवयौवनमाधुर्यंराधायैददतुस्त्वरम् ॥१२॥ तद्दृष्ट्वाहर्षिताराधाकृष्णदर्शनला-लसा ॥ चित्रंकरेप्रपश्यंतीसुष्वापानंदसंकुला॥१३॥ ददर्शकृष्णंभवनेशयानाघनप्रभंपीतपटंदधानम्॥ भांडीरदेशेयमुनांसमेत्यनृत्यंतमाराद्वृ-षभानुपुत्री॥१४॥ तदैवराधाशयनात्समुत्थितापरस्यकृष्णस्यवियोगविह्वला ॥ संचिंतयंतीकमनीयरूपिणंमेनेत्रिलोकींतृणवद्विदेहराट् ॥१५॥

ही बरसानेमें आता है ॥९॥ उसे तुमको भी देखना चाहिये, वह देखने लायक अत्यन्त सुन्दर है, वह पिछली रातमें गौ चरानेको निकलता है ॥ १० ॥ तब राधिकाजी बोली कि, पहले तुम उसका चित्र लिखकर मुझे शीघ्र दिखाओ, तब उसके बादमें मैं उसका दर्शन करूँगी, इसमें सन्देह नहीं है ॥११॥ नारदजी कहते हैं-तब उन दोनों सखियोंने नंद नंदनका सुन्दर चित्र लिखा, नवीन जीवनकी सुन्दरता जिसमें झलक रही है, ऐसा चित्र लिखकर राधाजीको शीघ्रही दिया ॥१२॥ उस चित्रको देखकर राधिकाजी बड़ी प्रसन्न हुई, और कृष्ण दर्शनकी लालसा उठी, हाथमें चित्रको लिये ही लिये आनन्दभरी देखते देखते सो गई ॥१३॥ भवनमें सोती-सोती वृषभानु नन्दिनी श्रीराधाने स्वप्नमें श्रीकृष्णको देखा, श्यामसुन्दर पीताम्बर ओढ़े, भांडीरवनमें यमुनाजीके किनारेपर नृत्य कर रहे हैं ॥१४॥ तबही राधिकाजी शयनसे उठकर कृष्णके वियोगमें विह्वल हो, उसी मनोहर रूपवाले

का चिंतन करती, हे विदेहराज ! त्रिलोकीको तृणवत् मानने लगी ॥१५॥ तभी श्रीकृष्ण अपने भवनसे निकलकर जब बरसानेमें आये तब संकोच गलीमें होकर निकले, उसी समय सखियोंने झरोखेमेंसे श्रीकृष्णका दर्शन कराया, सुन्दरी राधिका देखकर मूर्च्छित होकर गिर पड़ी ॥ १६ ॥ और श्रीकृष्ण भी अनेक गुणवती अति सुरूपा, कुशलतावाली वृषभानु नन्दिनीको देखकर रमण करनेको मन करते लीला तनुधारी अपने भवनको चले गये ॥ १७ ॥ उसके बाद श्रीकृष्णके वियोगमें विह्वल हुई, अतिशय काम ज्वरसे खिन्न मनवाली वृषभानु नन्दिनीको देखकर ललिता सखी बोली ॥ १८ ॥ कि हे राधे ! तू कैसे विह्वल होकर अत्यन्त मूर्च्छित है और अति व्यथाको प्राप्त हो रही है, तुम हरिकी इच्छा करती हो, तो हे सुन्दर भृकुटीवाली राधिके ! श्रीकृष्णमें दृढ स्नेहको करो ॥१९॥ हे शुभे ! जो इस समय दुखाग्नि हरनेवाला सर्व प्रकारसे सुख है, वो ही सुख पांवसे ठुकराई कुम्भकाराग्निवत् दाह करता है ॥ २० ॥ ऐसे ललिताका ललित वचन सुनकर नेत्रोंको खोलकर व्रजेश्वरी राधा गद्गद वाणीसे बोली ॥ २१ ॥ हे प्यारी ललिता !

तर्ह्यांव्रजंतंभवनाद्व्रजेश्वरंसंकोचवीथ्यांवृषभानुपत्तने ॥ गवाक्षमेत्याशुसखीप्रदर्शितंदृष्ट्वातुमूर्च्छांसमवापसुन्दरी ॥१६॥ कृष्णोऽपिदृष्ट्वावृषभानुनंदिनींसुरूपकौशल्ययुतःगुणाश्रयाम् ॥ कुर्वन्मनोरंतुमतीवमाधवोलीलातनुःसम्प्रययौस्वमंदिरम् ॥१७॥ एवंततःकृष्णवियोगविह्वलांप्रभूतकामज्वरखिन्नमानसाम् ॥ संवीक्ष्यराधांवृषभानुनंदिनीमुवाचवाचंललितासखीवरा ॥ १८ ॥ ललितोवाच ॥ कथंत्वंविह्वलाराधेमूर्च्छितातिव्यथांगता ॥ यदीच्छसिहरिंसुभ्रुतस्मिन्स्नेहंदृढंकुरु ॥१९॥ लोकस्यापिसुखंसर्वमधिकृत्यास्तिसांप्रतम् ॥ दुःखाग्निहृत्प्रदहतिकुम्भकाराग्निवच्छुभे ॥ २० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ ललितायाश्चललितंवचःश्रुत्वाव्रजेश्वरी ॥ नेत्रेउन्मील्यललितांप्राहगद्गदयागिरा ॥ २१ ॥ राधोवाच ॥ व्रजालंकारचरणौनप्राप्तौयदिमेकिल ॥ कदाचिद्विग्रहंतर्हिनहिस्वंधारयाम्यहम् ॥ २२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वावचस्तस्याललिताभयविह्वला ॥ श्रीकृष्णपार्श्वंप्रययौकृष्णार्तारेमनोहरे ॥२३॥ माधवीजालसंयुक्तेमधुरध्वनिसंकुले ॥ कदंबमूलेरहसिप्राहचैकाकिनंहरिम् ॥ २४ ॥ ललितोवाच ॥ यस्मिन्दिनेचतेरूपंराधयादृष्टमद्भुतम् ॥ तद्दिनात्स्तंभितांप्राप्तापुत्तिकेवनवक्तिकिम् ॥ २५ ॥ अलंकारस्त्वर्चिरिववस्त्रंभर्जरजोयथा ॥सुगंधिःकटुवद्यस्यामंदिरंनिर्जनंवनम्॥२६॥पुष्पंबाणंचन्द्रबिंबंविषकन्दमवेहिभो॥तस्यैसंदर्शनंदेहिराधायैदुःखनाशनम् ॥२७॥

जो कहीं नंद नंदन व्रजभूषणके चरणकमल मुझको नहीं प्राप्त होंगे, तो मैं अपने प्राणोंको धारण नहीं करूँगी ॥ २२ ॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे राधिकाके वचन सुनकर ललिता विह्वल हो कालिंदीके मनोहर किनारेपर श्रीकृष्णके पास चली गई ॥ २३ ॥ जहाँ माधवी माधुरीकी लताएँ कुंजोंसे लिपट रही थीं, उनकी सुगन्धिसे मत्त भ्रमर गुंजार रहे, उस कदम्बके नीचे एकान्तमें स्थित श्रीकृष्णसे ललिता सखी बोली ॥ २४ ॥ हे प्यारे ! जिस दिनसे राधिकाने तुम्हारा रूप देखा है, उस दिनसे स्तम्भित होगई है, जैसे काठकी पुतली नहीं बोलती है, ऐसे कोई चेष्टा नहीं करती है ॥२५॥ आभूषण तो ज्वालासे लगते हैं, वस्त्र भाडकी भूभर (गर्म राख) से लगते हैं, सुगंधि कडवी लगती है, और महल उसको निर्जन वनसे लगते हैं ॥२६॥ फूल तीरसे लगते हैं, चन्द्रमाका बिम्ब विषसा लगता है, यह आप जानो,सो उस श्रीराधिकाको हे दुःखनाशन ! अपना दर्शन दीजिये ॥२७॥

तुम तो सबके साक्षी हो, तुम क्या नहीं जानते हो, जो धरती पर है, उसको तुम जानते हो, क्योंकि तुमही इस जगत्‌के उत्पत्ति, पालन, संहार, करनेवाले हो, यद्यपि तुम सब प्राणियोंमें समान हो, तो भी परमेश्वर तुम भक्तोंका भजन करते हो ॥२८॥ नारदजी कहते हैं, इस प्रकार ललिताका ललित वचन सुनकर मेघके समान गम्भीर मनोहर वाणीमें श्रीकृष्ण बोले ॥ २९ ॥ हे भामिनी ! परात्पर भगवान्‌के प्रति मनका एकाग्र भाव नहीं होता है, इससे मुझमें प्रेमही स्वतः कर्तव्य है. प्रेमके समान इस भूमिमें और कोई पदार्थ नहीं है ॥३०॥ जैसे भाण्डीर वनमें उसका मनोरथ हुआ था वैसेही अब होगा, सन्तोंने जिसका आश्रय लिया, वह प्रेम अहैतुक है, उसीको सन्तजन निर्गुण कहते हैं॥३१॥ जो कोई राधिकामें और मुझ केशवमें जैसे दूधमें और शुक्लता (धवलता) में भेद नहीं, ऐसेही भेद नहीं देखते हैं, और जिनमें निर्हेतुक भक्ति विद्यमान है, वे ही ब्रह्मपदको प्राप्त होते हैं ॥ ३२ ॥ और जो राधिकामें और केशवमें भेद देखते हैं, वे कुबुद्धि, हे रंभोरु ! एक कल्पतक अति दुःखित होते तथा जबतक सूर्य चन्द्र रहते हैं, तबतक कालसूत्र

तेसाक्षिणःकिंविदितंनभूतलेसृजत्यलंपासिहरस्यथोजगत् ॥ यदासमानोसिजनेषुसर्वतस्तथापिभक्तान्भजसेपरेश्वरः ॥२८॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वाहरिःसाक्षाल्ललितंललितावचः ॥ उवाचभगवान्देवोमेघगंभीरयागिरा ॥ २९ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ सर्वंहिभावंमनसःपरात्परंन ह्येकतोभामिनिजायतेततः ॥ प्रेमैवकर्तव्यमतोमयिस्वतःप्रेम्णासमानंभुविनास्तिकिंचित् ॥३०॥ यथाहिभांडीरवनेमनोरथोबभूवतस्याहितथा भविष्यति ॥ अहैतुकंप्रेमचसद्भिराश्रितंतच्चापिसन्तःकिलनिर्गुणंविदुः॥३१॥ येराधिकायांमयिकेशवेमनाग्भेदंनपश्यन्तिहिदुग्धशौक्ल्यवत् ॥ तएवमेब्रह्मपदंप्रयान्तितदहैतुकस्फूर्जितभक्तिलक्षणाः ॥ ३२ ॥ येराधिकायांमयिकेशवेहरौकुर्वन्तिभेदंकुधियोजनाभुवि ॥ तेकालसूत्रंप्रपतंति दुःखितारंभोरुयावत्किलचंद्रभास्करौ ॥ ३३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंश्रुत्वावचःकृत्स्नंनत्वातंललितासखी ॥ राधांसमेत्यरहसिप्राहप्रहसिताननना ॥ ३४ ॥ ललितोवाच ॥ त्वमिच्छसियथाकृष्णंतथात्वांमधुसूदनः ॥ युवयोर्भेदरहितंतेजस्त्वेकंद्विधाजनैः ॥ ३५ ॥ तथापिदेवि कृष्णायकर्मनिष्कारणंकुरु ॥ येनतेवांछितंभूयाद्भक्त्यापरमयासति ॥ ३६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वासखीवाक्यंराधारासेश्वरीनृप ॥ चंद्राननांप्राहसखींसर्वधर्मविदांवराम् ॥३७॥ राधोवाच॥श्रीकृष्णस्यप्रसन्नार्थंपरंसौभाग्यवर्द्धनम्॥महापुण्यंवांछितदंपूजनंवदकस्यचित् ॥३८॥

नरकमें पड़ते हैं ॥ ३३ ॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे श्रीकृष्णका वचन सुनकर ललिता सखी कृष्णको प्रणाम कर फिर एकान्तमें राधाजीके पास आकर हँसकर बोली ॥ ३४ ॥ हे राधे ! जैसे तुम श्रीकृष्णको चाहती हो, वैसेही श्रीकृष्ण तुमको चाहते हैं, तुम दोनोंमें भेद नहीं है, तेज तो एकही है, किन्तु भक्तजन दो रूपमें गाते हैं ॥३५॥ तो भी हे देवि ! तुम कृष्णके लिये निष्काम कर्म करो;हे सती!जिस कर्मसे परम भक्तिसे तुम्हारा वांछित फल तुम्हें प्राप्त होगा॥३६॥नारदजी कहते हैं, कि हे नृप ! ऐसे राधा रासेश्वरी सखीका वचन सुनकर सब धर्मवेत्ताओंमें उत्तमा जो चन्द्रानना नामकी सखी है, उससे बोली ॥ ३७ ॥ श्रीकृष्णकी परम प्रसन्नताके लिये, परम सौभाग्यको बढ़ानेवाला महापवित्र वांछित फलको देनेवाला किसीका पूजन बताओ ॥ ३८ ॥

हे भद्रे ! तुमने गर्गजीसे धर्मशास्त्र सुना है, इसलिये हे महामते ! मुझको व्रत अथवा कोई पूजन बताओ ॥३९॥ इति श्रीगर्गसंहितायां वृन्दावनखण्डे भाषाटीकायां राधाकृष्ण प्रेमोद्योगं नाम द्वादशोऽध्यायः॥१२॥नारदजी कहते हैं कि, हे राजन्! ऐसे राधिकाजीका वचन सुनकर सब सखियोंमें उत्तमा चन्द्रानना सखी एक क्षण भर अपने हृदयमें विचार करके बोली ॥ १ ॥ हे राधे ! परम सौभाग्यको देनेवाला तथा महापवित्र वरको देनेवाला तुलसीका सेवन मेरी समझमें आता है, यही श्रीकृष्णकी प्राप्तिके लिये करना चाहिये ॥२॥ जो स्पर्श की हुई, ध्यामकी हुई, नाम कीर्तनकी हुई, स्तुति की हुई, लगाई हुई, सींची हुई, और पूजनकी हुई तुलसी मनुष्यका कल्याण करनेवाली होती है, उस तुलसीकी ॥३॥ यह नौ प्रकारकी भक्ति है, इसको जो कोई मनुष्य नित्य करते हैं, वे मनुष्य हजार युगतक वैकुण्ठमें वास पाते हैं ॥ ४ ॥ जिन मनुष्योंसे लगाई हुई यह तुलसी जबतक

त्वयाभद्रेधर्मशास्त्रंगर्गाचार्यमुखाच्छ्रुतम् ॥ तस्माद्व्रतंपूजनंवाब्रूहिमह्यंमहामते ॥३९॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांवृंदावनखण्डेराधाकृष्णप्रेमोद्योगंनामद्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ राधावाक्यंततःश्रुत्वाराजन्सर्वसखीवरा ॥ चंद्राननाप्रत्युवाचसंविचार्यक्षणंहृदि ॥ १ ॥ चन्द्राननोवाच ॥ परंसौभाग्यदंराधेमहापुण्यंवरप्रदम् ॥ श्रीकृष्णस्यापिलब्ध्यर्थंतुलसीसेवनंमतम् ॥ २ ॥ यद्दास्पृष्टाथवाध्याताकीर्तितानामभिःस्तुता ॥ रोपितासिंचितानित्यंपूजितातुलसीदलैः ॥३॥ नवधातुलसीभक्तियेकुर्वंतिदिनेदिने ॥ युगकोटिसहस्राणितेयांतिसुकृतंशुभे ॥४॥ यावच्छाखाप्रशाखाभिर्बीजपुष्पदलैःशुभैः ॥ रोपितातुलसीमर्त्यैर्वर्धंतेवसुधातले ॥५॥ तेषांवंशेषुयेजातागतास्तेवैसुरालये ॥ आकल्पयुगसाहस्रंतेषांवासोहरेर्गृहे ॥ ६ ॥यत्फलंसर्वपत्रेषुसर्वपुष्पेषुराधिके ॥ तुलसीदलेनचैकेनसर्वदाप्राप्यतेतुतत् ॥ ७ ॥ तुलसीप्रभवैःपत्रैर्योनरःपूजयेद्धरिम् ॥ लिप्यतेनसपापेनपद्मपत्रमिवांभसा ॥ ८ ॥ सुवर्णभारशतकंरजतंयच्चतुर्गुणम् ॥ तत्फलंसमवाप्नोतितुलसीवनपालनात् ॥ ९ ॥ तुलसीकाननंराधेगृहेयस्यावतिष्ठति ॥ तद्गृहंतीर्थरूपंहिनयांतियमकिंकराः ॥ १० ॥ सर्वपापहरंपुण्यंकामदंतुलसीवनम् ॥ रोपयन्तिनराः श्रेष्ठास्तेनपश्यन्तिभास्करिम् ॥ ११ ॥

शाखा प्रशाखाओं और बीज पुष्पोंसे तथा दलोंसे पृथ्वीतलमें बढ़ती है ॥५॥ उनके वंशमें जो होते हैं, उनके सहित वे लगानेवाले मनुष्य हजार युगतक वैकुण्ठमें बसते हैं ॥६॥ हे राधिके ! जो फल सब पत्तोंके चढ़ानेसे और सब फूलोंके चढ़ानेसे होता है, वह फल केवल एक तुलसी दलके चढ़ानेमें होता है ॥ ७ ॥ तुलसीके पत्तोंसे जो मनुष्य हरिका पूजन करते हैं, उनको पाप स्पर्शभी नहीं करता है, जैसे सरोवरमें चाहे जितना जल बढ़ जाय परन्तु कमलके फूलको नहीं छूता है ॥८॥ जो फल सौ भार सुवर्ण और चार सौ भार चांदीके दान करनेसे मिलता है, वह फल तुलसीके वनको पालन करनेसे होता है ॥९॥ हे राधे ! जिसके घरमें तुलसीका वन है, उसके घरको तीर्थ रूप जानो, उस घरमें यमके दूत कभी नहीं आते हैं ॥१०॥ तुलसी वन सब इच्छाओंको देनेवाला है, सब पापोंको हरनेवाला है जो श्रेष्ठ मनुष्य तुलसीके वनको लगाते हैं, वे मनुष्य यमराजका दर्शन नहीं करते ॥११॥

लगानेसे, सींचनेसे, दर्शन करनेसे, स्पर्श करनेसे, तुलसी मनुष्योंके वाणी, मन और कायाके किये हुये तीनों प्रकारके पापोंको भस्म करती है ॥ १२ ॥ पुष्कर आदि जितने तीर्थ, गंगादिक सब नदी, विष्णु आदि सब देवता तुलसी दलमें निवास करते हैं ॥ १३ ॥ तुलसीकी मञ्जरी मुखमें लिये जो प्राणोंका त्याग करता है, उसने सैकड़ों पाप किये हों, तो भी यमराज उसको देख भी नहीं सकता है ॥१४॥ जो पुरुष तुलसीके काठका चन्दन लगाये, उससे पापभी हो जाय तो उसको नहीं लगता है ॥१५॥ हे शुभे ! तुलसीके वनकी छाया जहाँ-जहाँ हो वहाँ-वहाँ श्राद्ध करे, तो पितरोंकी अक्षयतृप्ति होती है ॥१६॥ हे सखि ! तुलसीके माहात्म्य कहनेकी तो ब्रह्माकी भी सामर्थ्य नहीं है, जैसे हरिके माहात्म्यको कहनेकी सामर्थ्य नहीं है वैसेही ॥१७॥ हे गोप कन्ये ! इसलिये तुम नित्य तुलसीका सेवन करो, जिसके सेवन करनेसे श्रीकृष्ण नित्यही वशवर्ती होते हैं ॥१८॥

रोपणात्पालनात्सेकाद्दर्शनात्स्पर्शनान्नृणाम् ॥ तुलसीदहतेपापंवाङ्मनःकायसंचितम् ॥ १२ ॥ पुष्कराद्यानितीर्थानिगंगाद्याःसरितस्तथा ॥ वासुदेवादयोदेवावसन्तितुलसीदले ॥ १३ ॥ तुलसीमंजरीयुक्तोयस्तुप्राणान्विमुंचति ॥ यमोपिनेक्षितुंशक्तोयुक्तंपापशतैरपि ॥ १४ ॥ तुलसीकाष्ठजंयस्तुचंदनंधारयेन्नरः ॥ तद्देहंनस्पृशेत्पापंक्रियमाणमपीहयत् ॥१५॥ तुलसीविपिनच्छायायत्रयत्रभवेच्छुभे ॥ तत्रश्राद्धंप्रकर्तव्यंपितॄणांदत्तमक्षयम् ॥१६॥ तुलस्याःसखिमाहात्म्यमादिदेवश्चतुर्मुखः ॥ नसमर्थोभवेद्वक्तुंयथादेवस्यशार्ङ्गिणः ॥१७॥ तुलसीसेवनंनित्यंकुरुत्वं गोपकन्यके ॥ श्रीकृष्णोवश्यतांयातियेनवासर्वदैवहि ॥ १८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंचन्द्राननावाक्यंश्रुत्वारासेश्वरीनृप ॥ तुलसीसेवनं साक्षादारेभेहरितोषणम् ॥ १९ ॥ केतकीवनमध्येचशतहस्तंसुवर्तुलम्॥उच्चैर्हैमखचिद्भित्तिपद्मरागतटंशुभम्॥२०॥ हरिद्धीरकमुक्तानांप्राकारेण महाल्लसत् ॥ सर्वतस्तोलकायुक्तंचिंतामणिसुमंडितम् ॥२१॥ हेमध्वजसमायुक्तमुत्तोरणविराजितम् ॥ हैमैर्वितानैःपरितोवैजयन्तमिवस्फुरत् ॥ ॥ २२ ॥ एतादृशंश्रीतुलसीमन्दिरंसुमनोहरम् ॥ तन्मध्येतुलसींस्थाप्यहरित्पल्लवशोभिताम् ॥२३॥ अभिजिन्नामनक्षत्रेतत्सेवांसाचकारह ॥ समाहूतेनगर्गेणदिष्टेनविधिनासती ॥ २४ ॥ श्रीकृष्णतोषणार्थायभक्त्यापरमयासती ॥ इषपूर्णांसमारभ्यचैत्रपूर्णावधिव्रतम् ॥ २५ ॥

नारदजी कहते हैं कि हे राजन् ! ऐसे चन्द्राननाका वचन सुनकर रासकी ईश्वरी राधाने साक्षात् हरिको प्रसन्न करनेवाला जो तुलसीका सेवन है, उसको प्रारम्भ किया ॥१९॥ केतकीके वनमें सौ हाथका गोल ऊँचा पुखराजके जडाऊ जिसके किनारे और जिसकी सुवर्णकी भीत है॥२०॥ हरिन्मणि तथा हीरा, पन्ना, मोतियोंका जिसका जडाऊ परकोटा, उससे शोभित, जिसमें चिन्ता मणिकी परिक्रमा लगी है॥२१॥ सुनहरी ध्वज पताकाओंसे युक्त मोतियोंकी बन्दनवार, सुनहरी चन्दोवाओंसे युक्त जयन्त मानो दूसरा इन्द्रका महलही है ॥२२॥ ऐसा तुलसीका मनोहर मन्दिर बनाया, उसके बीचमें हरे हरे पत्तोंकी तुलसीजीको स्थापित कर ॥२३॥ अभिजित् नक्षत्रमें तुलसीजीकी सेवाको प्रारम्भ किया, गर्गजीको बुलाकर विधिपूर्वक पूजा की ॥ २४ ॥ परम भक्तिसे सती श्रीराधिकाने श्रीकृष्णकी प्रीतिके लिये शरत्पूर्णिमासे प्रारम्भ कर चैत्रकी पूर्णिमातक तुलसीका व्रत किया ॥ २५ ॥

कार्तिकमें तो दूधसे सींची, मार्गशीर्षमें ईख(गन्ना)के रससे सींची, पौषमें द्राक्षा(दाख)के रससे सींची, माघमें आमके रससे सींची, फाल्गुनमें मिश्रीके रससे सींची ॥२६॥ और चैत्रमें पंचामृतसे तुलसी सींची, फिर वैशाखकी प्रतिपदाको उद्यापन किया॥२७॥गर्गजीकी बताई विधिसे हे नृप ! श्रीवृषभानु नन्दिनीने इस प्रकार व्रतोद्यापनकर फिर एक२अन्नकी छप्पन छप्पन सामग्रीसे दो लाख ब्राह्मणोंको भोजन कराया॥२८॥वस्त्रभूषादिसे ब्राह्मणोंको तृप्त करके दक्षिणा दी, और हे विदेहराट्! उस राधिकाने बड़ बड़े दिव्यमोती लाख भार दिये॥२९॥ करोड़ों भार सुवर्ण गर्गजीको दिया, तब आकाशमें दुन्दुभि बजने लगीं, अप्सराएं नाचने लगीं और देवताभी राधिकाजीके मंदिरके ऊपर फूलोंकी वर्षा करने लगे॥३०॥उसी समयही हरिकी प्यारी तुलसीजी प्रकट हुई, सुवर्णके सिंहासनपर बैठी हुई चार भुजावाली कमलसे नेत्र झलक रहे हैं, षोडश वर्षकी अवस्थावाली, सुवर्णके किरीट कुण्डलोंसे युक्त ॥३१॥ पीताम्बर ओढ़े, सर्पाकार वेणीमें वैजयन्ती माला पहने, गरुडपरसे उतर कर भुजाओंसे राधिकाजीसे मिलकर चुम्बन करती, राधासे बोली ॥ ३२ ॥ तुलसीजी बोली–हे

कृत्वान्यषिंचद्दुग्धेनतथाचेक्षुरसेनवै ॥ द्राक्षयाऽऽम्ररसेनापिसितयाबहुमिश्रया ॥२६॥ पंचामृतेनतुलसीमासेमासेपृथक्पृथक् ॥ उद्यापनसमारंभंवैशाखप्रतिपद्दिने ॥ २७ ॥ गर्गादिष्टेनविधिनावृषभानुसुतानृप ॥ षट्पंचाशत्तमैर्भोगैर्ब्राह्मणानांद्विलक्षकम् ॥२८॥ संतर्प्यवस्त्रभूषाद्यैर्दक्षिणांराधिकाददौ ॥ दिव्यानांस्थूलमुक्तानांलक्षभारंविदेहराट् ॥२९॥ कोटिभारंसुवर्णानांगर्गाचार्य्यायसाददौ ॥ देवदुंदुभयोनेदुर्ननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥ तन्मंदिरोपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥ ३० ॥ तदाविरासीत्तुलसीहरिप्रियासुवर्णपीठोपरिशोभितासना ॥ चतुर्भुजापद्मपलाशवीक्षणाश्यामास्फुरद्धेमकिरीटकुंडला॥३१॥पीतांबराच्छादितसर्पवेणीस्रजंदधानानववैजयंतीम् ॥ खगात्समुत्तीर्यचरंगवल्लीचुचुंबराधांपरिरभ्यबाहुभिः ॥ ३२ ॥ तुलस्युवाच ॥ अहंप्रसन्नास्मिकलावतीसुतेत्वद्भक्तिभावेनजितानिरन्तरम् ॥ कृतंचलोकव्यवहारसंग्रहात्त्वयाव्रतंभामिनिसर्वतोमुखम् ॥ ३३ ॥ मनोरथस्तेसफलोऽत्रभूयाद्बुद्धीन्द्रियैश्चित्तमनोभिरग्रतः ॥ सदानुकूलत्वमलंपतेःपरंसौभाग्यमेवंपरिकीर्तनीयम् ॥ ३४ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ एवंवदन्तींतुलसींहरिप्रियांनत्वाथराधावृषभानुनन्दिनी ॥ प्रत्याहगोविन्दपदारविन्दयोभक्तिर्भवेन्मेविदिताह्यहैतुकी ॥ ३५ ॥

कलावतीकी पुत्री ! मैं तुमपर प्रसन्न हूँ, तुम्हारी भक्तिने मुझको अत्यन्त वशमें कर लिया और, हे भामिनी ! तुमने लोकमें मेरी पूजा चलानेके लिये यह सर्वतोमुख व्रत किया है ॥ ३३ ॥ तुमने जिस मनोरथसे बुद्धि, इन्द्रिय, मनसे यह व्रत किया है, वह मनोरथ तुम्हारा पूर्ण हो तुम्हारे पति तुमपर सदाही अतिशय अनुकूल रहेंगे, बड़ाई करने लायक तुम्हारा सौभाग्य रहेगा ॥ ३४ ॥ नारदजी कहते हैं, इस प्रकार कहती हरिकी प्यारी तुलसीको वृषभानु नन्दिनी राधा नमस्कार करके बोली, हे देवि ! गोविन्दचरणारविन्दमें मेरी निरन्तर निष्काम भक्ति हो ॥ ३५ ॥

तथास्तु (ऐसाही होगा) कहकर हरिकी प्रिया तुलसीजी अन्तर्धान हो गईं, हे मैथिल राज ! तब राधिकाजी अपने नगरमें प्रसन्न चित्तसे गईं ॥ ३६ ॥ यह श्रीराधिकाजीका विचित्र चरित्र है, इसको जो मनुष्य इस भूमिमें भक्तिसे सुनता है, वह त्रिवर्गके फलको मनसे भोगकर परम गतिको पाता है ॥ ३७ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां वृन्दावन खण्डे भाषाटीकायां तुलसी पूजनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ बहुलाश्व राजा पूछता है, हे महामुनि ! राधा कृष्णका चरित्र सुन सुनकर मेरा मन तृप्त नहीं होता है, जैसे शरद् ऋतुके कमलको भ्रमर सूंघते-सूंघते तृप्त नहीं होता है ॥१॥ रासेश्वरी कृष्ण पत्नीका हे ब्रह्मन् ! हे तपोधन ! तुलसीका सेवन करनेके बाद जो कुछ हुआ हो, वह मुझसे कहिये॥२॥ नारदजी कहते हैं, राधिकाका तुलसी सेवनका तप जानकर श्रीकृष्ण राधिकाकी प्रीतिकी परीक्षा करनेके लिये वृषभानुपुर (बरसानेमें) आये ॥३॥ अद्भुत गोपीका रूप धरकर छल्ला, अँगूठी, करधनी पहनकर नूपुरोंकी झनकार करते चले ॥४॥ रत्नजटित कंकण, मोतियोंके हार, बालसूर्यसे चमकते कर्ण फूल पहनकर, सुन्दर केशोंका जूड़ा बांध, चोटी लटका

तथास्तुचोक्तातुलसीहरिप्रियाऽथांतर्दधेमैथिलराजसत्तम ॥ तदैवराधावृषभानुनन्दिनीप्रसन्नचित्तास्वपुरेबभूवह ॥३६॥ श्रीराधिकाख्यानमिदं विचित्रंशृणोतियोभक्तिपरःपृथिव्याम् ॥ त्रैवर्ग्यभावंमनसासमेत्यराजंस्ततोयातिनरःकृतार्थताम् ॥३७॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांवृन्दावनखण्डे-तुलसी पूजनंनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥ बहुलाश्वउवाच ॥ राधाकृष्णस्यचरितंशृण्वतोमेमनोमुने ॥ नतृप्तिंयातिशरदःपंकजेभ्रमरायथा ॥१॥ रासेश्वर्य्याकृष्णपत्न्यातुलसीसेवनेकृते ॥ यद्बभूवततोब्रह्मंस्तन्मेब्रूहितपोधन ॥२॥ श्रीनारदउवाच ॥ राधिकायाश्चविज्ञायतुलसीसेवनेतपः ॥ प्रीतिंपरीक्षञ्छ्रीकृष्णोवृषभानुपुरंययौ ॥३॥ अद्भुतंगोपिकारूपंचलज्झंकारनूपुरम् ॥ किंकिणीघंटिकाशब्दमंगुलीयकभूषितम् ॥४॥ रत्नकंकण केयूरमुक्ताहारविराजितम् ॥ बालार्कताटंकलसत्कबरीपाशकौशलम् ॥५॥ नासामौक्तिकदिव्याभंश्यामकुन्तलसन्निभम् ॥ धृत्वासौवृषभानोश्चम-न्दिरंसंददर्शह ॥६॥ प्राकारपरिखायुक्तंचतुर्द्वारसमन्वितम् ॥ करीन्द्रैःकज्जलाकारैर्द्वारिद्वारिमनोहरम् ॥७॥ वायुवेगैर्मनोवेगैश्चित्रवर्णैस्तुरंगमैः ॥ हारचामरसंयुक्तंप्रोल्लसन्मंडपाजिरम् ॥८॥ गवांगणैःसवत्सैश्चवृषैर्धर्मधुरंधरैः ॥ गोपालायत्रगायन्तेवंशीवेत्रधरानृप ॥९॥ मायायुवतिवेषो-सौततो ह्यन्तःपुरंययौ ॥ १० ॥ यत्रकोटिरविस्फूर्जत्कपाटस्तंभपंक्तयः ॥ रत्नाजिरेषुशोभन्तेललनारत्नसंयुताः ॥ ११ ॥

कर ॥५॥ मोतियोंकी नकबेसर पहन, घुंघराली अलकावली छिटकाकर, वृषभानुके महल पहुँचे ॥ ६ ॥ कैसा महल है, जिसके खाईपर कोटा बन रहे हैं, जिसके चार दरवाजे हैं, जिनपर काले काले मनको हरनेवाले काजलसे मतवाले हाथी झूम रहे हैं ॥ ७ ॥ मन और वायुके वेगवाले चित्र विचित्र रंगोंके घोड़े बंध रहे हैं, हार चामरसे युक्त सुशोभित मण्डप सहित चंदोवा आंगनमें तन रहे हैं ॥८॥ और हे नृप ! जहाँ बछड़ों सहित सुहावनी गौ और धर्म धुरन्धर बड़े २ वृष बँध रहे हैं, गोप गा रहे हैं, बेंत लिये रक्षाको खड़े हैं, मनोहर वंशियोंमें अनेक राग गा रहे हैं ॥९॥ कपटसे स्त्रीका वेश धरकर श्रीकृष्ण आप वृषभानुके महलके अन्तःपुर (रनिवास) में पहुँचे ॥१०॥ जहाँ अनेक रत्नजटित किवाड़ तथा खम्भ, शोभायमान आंगन हैं, उनमें सैकड़ों स्त्री रत्न बैठीं हैं ॥ ११ ॥

जो वीणा, मृदंग, मँजीराओंको बजा रहीं, ऐसी अति मनोहर फूलोंकी छड़ी हाथमें लेकर राधिकाके गुण गाती हैं ॥१२॥ उस रत्न मन्दिरमें एक सुन्दर उपवन लग रहा है, उस उपवनमें आम, अनार, कुन्द, मन्दार, अर्जुन, अशोक, आंवले, अनानास, अखरोट, नींबू, नारंगी, नारियल, केला, कदम्ब लग रहे हैं ॥ १३ ॥ और कुन्द, केतकी, केवड़ा, कनेर, कोयल, कमल, चम्पा, कठचम्पा, चमेली, बेला, वसन्त, माधवी, मालती, मोरसिरी, मोतिया, सेव, सेवती, सदा सुहागिन, सोनजुही, गेंदा, गुलमेंहदी, गुलाब, इन पुष्पोंसे शोभित उपवनमें श्रीराधिकाजीका निकुञ्ज है वहाँ कल्प वृक्षोंके फूलोंकी सुगन्धि आ रही है॥१४॥वहाँ सुगन्धिके मतवाले भ्रमर गुंजार रहे हैं और हे नृपेश्वर ! जहाँ सुगन्धि पवन शीतल मन्द मन्द चली आती हैं ॥१५॥ जिस पवनसे हजारों कमलोंकी रज उड़ी चली आती हैं, वहाँ मोर, कोयल, सारस तोता ॥१६॥ निकुंजके शिखरोंपर बैठे मधुरवाणी बोल रहे हैं, जहाँ हजारों फूलोंकी शय्या (सेज) और हजारों ही अनेकों छोटी-छोटी तलैया ॥ १७ ॥ और जहाँ मेघ मंदिर है, वहाँ सैकड़ों फुहारे छूट रहे हैं

वीणातालमृदंगादीन्वादयंत्योमनोहराः ॥ पुष्पयष्टिसमायुक्तागायंत्योराधिकागुणम् ॥१२॥ तस्मिन्नन्तःपुरेदिव्यंभ्राजच्चोपवनंमहत् ॥ दाडिमीकुन्दमन्दारनिंबून्नतद्रुमावृतम् ॥१३॥ केतकीमालतीवृंदैर्माधवीभिर्विराजितम् ॥ तत्रराधानिकुंजोस्तिकल्पवृक्षसुगन्धिभृत् ॥१४॥ पतन्ति यत्रभ्रमरामधुमत्तानृपेश्वर ॥ गन्धाक्तःशीतलोवायुर्मन्दगामीवहत्यलम् ॥१५॥ सहस्रदलपद्मानांरजोविक्षेपयन्मुहुः ॥ पुंस्कोकिलाकोकिलाश्चमयूराः सारसाशुकाः ॥ १६ ॥ कूजन्तेमधुरंनादंनिकुंजशिखरेषुच ॥ पुष्पशय्यासहस्राणिजलकुल्याःसहस्रशः ॥१७॥ प्रोच्छलन्तिस्फुरच्छारायत्रवैमेघमन्दिरे ॥ बालार्ककुंडलधराश्चित्रवस्त्रावराननाः ॥१८॥ वर्तन्तेकोटिशोयत्रसख्यस्तत्कर्मकौशलाः ॥ तन्मध्येराधिकाराज्ञीभ्रमन्तीराजमंदिरे ॥१९॥ काश्मीरपंक्तिसंयुक्तेसूक्ष्मवस्त्रविराजिते ॥ शिलाम्बुपुष्पक्षितिजदलैराशुल्फपूरके ॥२०॥ मालतीमकरंदानांक्षरद्बिन्दुभिर्वृते ॥ कोटि चन्द्रप्रतीकाशातन्वीकोमलविग्रहा ॥ शनैःशनैःपादपद्मंचालयन्तीचकोमलम् ॥ २१ ॥ समागतांतांमणिमन्दिराजिरेददर्शराधावृषभानुनन्दिनी ॥ यत्तेजसातच्छलनाहृततत्विषोजातास्त्वरंचन्द्रमसेवतारकः ॥ २२ ॥

और जहाँ चित्र विचित्र वस्त्रोंको धारण किये, प्रातःकालीन सूर्यकेसे कुण्डल पहने, चन्द्रसे मुख जिनके ऐसी करोड़ों राधिकाकी सखियाँ बैठी हैं, जो राधिकाजीके सेवाकर्ममें कुशल हैं, उनके बीचमें उस राजमंदिरमें राधिकाजी घूम रही हैं ॥ १८ ॥ १९ ॥ जहाँ केशरिया रंगसे रंग सूक्ष्म वस्त्रोंके बिछौने बिछ रहे हैं, और जहाँ अनेक प्रकारके पुष्पोंके टकुना डाले गद्दे बिछ रहे हैं ॥ २० ॥ जो मालतीके मकरंदकी झरती बूँदोंसे छिड़के हुये हैं, वहाँ करोड़ चन्द्रमाकासा जिनका प्रकाश है, अति कोमल बहुत पतले शरीरवाली श्रीराधिकाजी धीरे धीरे कोमल चरण कमलोंको चलाती बिचरती हैं ॥ २१ ॥ उस मणि मन्दिरमें आई कृष्ण रूप उस सखीको श्रीवृषभानु सुताने देखा, जिसके तेजसे सब सखियोंका तेज फीका पड़ गया, जैसे चन्द्रमाके उदय होनेसे तारागण फीके पड़ जाते हैं ॥ २२ ॥

उस सखीका बड़ा उत्तम गौरव जानकर राधिकाजी उठकर खड़ी हुई और दोनों भुजाओंसें प्यार कर मिलीं, फिर दिव्य सिंहासनपर बैठाकर लोकरीतिसे जलपानकरा बीडा आदिसें आदर करने लगी, इत्र लगाने लगी, फिर बोली ॥ २३ ॥ हे शुभे ! आपका स्वागत है, आपका नाम क्या है, सो कहिये, आप अपनी ओरसे कृपा करके जो आई हैं, यही हमारा आज बड़ा भाग्य है ॥ २४ ॥ आपके समान दिव्यरूप इस पृथ्वीमें तो किसीका नहीं दिखता है, जिस नगरमें आप विराजती हो, हे सुभ्रू ! वही नगर धन्य है ॥ २५ ॥ हे देवि ! अपने आनेका कारण विस्तारसे कहिये, मेरे योग्य जो कुछ आपका काम हो, तो आप कुछ भी संकोच मत करिये ॥२६॥ इस समय आप कटाक्षसे, गतिसे, सुन्दर दृष्टिसे, सुन्दर वचनसे, और आकृतिसे, मंद मुसकानसे, मुझको तो लक्ष्मीपति भगवानसी दीखती हो ॥२७॥ आप तो नित्य ही मुझसे मिलनेको आया करें, जो न आना हो तो अपना

विज्ञायतद्गौरवमुत्तमंमहदुत्थायदोर्भ्यांपरिरभ्यराधिका ॥ दिव्यासनेस्थाप्यसुलोकरीत्याजलादिकंचार्हणमारभच्छुभम् ॥ २३ ॥ राधोवाच ॥ स्वागतंतेसखिशुभेनामधेयंवदाशुमे ॥ भूरिभाग्यंममैवाद्यभवत्यागतयास्वतः ॥२४॥ त्वत्समानंदिव्यरूपंदृश्यतेनहिभूतले ॥ यत्रत्वंवर्तसेसुभ्रुपत्तनंधन्यमेवतत् ॥२५॥ वददेविसविस्तारंहेतुमागमनस्यच ॥ ममयोग्यंचयत्कार्य्यंवक्तव्यंतत्त्वयाखलु ॥२६॥ कटाक्षेणसुदीप्त्याचवचसासुस्मितेनवै ॥ गत्याकृत्याश्रीपतिवद्दृश्यतेसांप्रतंमया ॥२७॥ नित्यंशुभेमेमिलनार्थमाव्रजनचेत्स्वसंकेतमलंविधेहि॥येनैवसंगोविधिनाभवेद्धिविधिर्भवत्याससदाविधेयः ॥२८॥ अयित्वदात्मातिपरंप्रियोमेत्वदाकृतिःश्रीव्रजराजनन्दनः॥येनैवमेदेविहृतंतुचेतस्त्वयाननान्देववधूर्दधामि ॥ २९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंराधावचःश्रुत्वामायायुवतिवेषधृक् ॥ उवाचभगवान्कृष्णोराधांकमललोचनाम् ॥ ३० ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ रंभोरुनन्दनगरेनंदगेहस्यचोत्तरे ॥ गोकुलेवसतिर्मेस्तिनाम्नाऽहंगोपदेवता ॥ ३१ ॥ त्वद्रूपगुणमाधुर्यंश्रुतंमेललितामुखात् ॥ द्रष्टुंचंचलापांगित्वद्गृहेऽहंसमागता ॥ ३२ ॥ श्रीमल्लवंगलतिकास्फुटमोदनीनांगुंजानिकुंजमधुपध्वनिकंजपुंजम् ॥ दृष्टंश्रुतंनवनवंतवकंजनेत्रेदिव्यंपुरन्दरपुरोपिनयत्समानम् ॥ ३३ ॥

संकेत मुझको बता दीजिये और जिस जिस प्रकारसे मेरा और आपका नित्य मिलन हो सके वही विधि आपको सदा करनी उचित है ॥२८॥ हे प्यारी ! आप मुझको बड़ी प्यारी लगती हो, क्योंकि हे श्याम सखि ! आप जैसाही स्वरूप व्रजराज नन्दनका है, मुझको तो अब ऐसाही दिखता है, हे प्यारी ! मुझको तो अत्यन्त प्यारी हो, हे देवि ! जो आपने मेरा चित्त हर लिया है, उन आपको मैं हे वधू ! अपनी ननदकी तरह मानूँगी ॥ २९ ॥ ऐसे राधाका वचन सुनकर मायासे स्त्रीरूप बने, कमलसे नेत्र श्रीकृष्ण भगवान् हैं, उस राधिकासे बोले ॥ ३० ॥ हे रंभोरू ! नन्द नगरमें नन्द महलके उत्तरमें हमारा घर है, और गोपदेवी हमारा नाम है ॥ ३१ ॥ तुम्हारा रूप तथा गुण माधुर्य ललिताके मुखसे सुना था सो हे चंचल कटाक्षवाली ! उसको देखनेको मैं तुम्हारे घर चली आई हूँ ॥ ३२ ॥ शोभायमान लवंग (लौंग) की लताओंके फूलोंकी सुगन्धि है जिनमें ऐसी गुंजाओं

(चिर मिठियों) की निकुंज, और जिनमें भ्रमर गूंजते हैं, ऐसे कमलोंके पुञ्ज, जिनमें ऐसे ये नये तेरे घर इन्हें देखनेको हे कमललोचनी ! मैं आई हूँ, ऐसा तो इन्द्रके पुरमें भी आनन्द नहीं है ॥३३॥ नारदजी कहते हैं-हे मिथिलापुरीके ईश्वर ! ऐसे उनका मिलाप हुआ, परस्पर प्रीति करके उसी वनमें विचरने लगे, तब दोनोंकी अत्यन्त शोभा हुई ॥ ३४ ॥ आपसमें हँसते हैं, गाते हैं, फूलोंकी गेंदोंसे खेलते हैं, वनके वृक्षोंको देखते, हे बहुलाश्व ! वे दोनों वहाँ विचरने लगे ॥३५॥ कलाओंकी चतुराई जिसमें ऐसी कमलनयनी जो राधा है, उससे गोपदेवता जो श्रीकृष्ण, वह मीठी वाणीसे बोले॥३६॥ हे व्रजेश्वरी ! नन्द नगर तो यहाँसे दूर है, और सन्ध्या हो गई है, प्रातःकाल मैं तेरे नगरमें आऊँगी, इसमें कुछ संदेह नहीं है ॥३७॥ नारदजी कहते हैं-उस सखीका यह वचन सुनकर व्रज की ईश्वरीकी आँखोंमें आँसू भर आये, रोमावली उठ आई, हर्षके उद्गमसे भक्तिमें भर गई, और

श्रीनारदउवाच ॥ एवंतयोर्मेलनंतद्बभूवमिथिलेश्वर ॥ प्रीतिंपरस्परंकृत्वावनेतत्रविरेजतुः ॥ ३४ ॥ हसंतौतौचगायंतौपुष्पकन्दुकलीलया ॥ पश्यन्तौवनवृक्षांश्चेरतुर्मैथिलेश्वर ॥ ३५ ॥ कलाकौशलसंपन्नांराधांकमललोचनाम् ॥ गिरामधुरयाराजन्प्राहेदंगोपदेवता ॥३६॥ ॥ गोपदेवतोवाच ॥ दूरेवैनन्दनगरंसन्ध्याजाताव्रजेश्वरि ॥ प्रभातेचागमिष्यामित्वत्सकाशंनसंशयः ॥ ३७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वा वचस्तस्यतुतद्व्रजेश्वरीनिक्षिप्यसद्योनयनांबुसन्ततिम् ॥ रोमांचहर्षोद्गमभावसंवृतारंभेवभूमौपतितासमुद्धता ॥३८॥ शंकागतास्तत्रसखीगणास्त्वरंसुवीजयन्त्योव्यजनैर्व्यवस्थिताः ॥ श्रीखण्डपुष्पद्रवर्चार्चितांऽशुकांजगादराधांनृपगोपदेवता ॥ ३९ ॥ गोपदेवतोवाच ॥ प्रभातेआगमिष्यामिमाशोचंकुरुराधिके ॥ गोश्चभ्रातुर्गोरसस्यशपथोमेनचेदिदम् ॥ ४० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवमुक्त्वाहरीराधांसमाश्वास्यनृपेश्वर ॥ मायायुवतिवेषोसौययौश्रीनन्दगोकुलम् ॥ ४१ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांवृन्दावनखण्डेराधाकृष्णसंगमोनाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथरात्र्यांव्यतीतायांमायायोषिद्वपुर्हरिः ॥ राधादुःखप्रशान्त्यर्थंवृषभानोर्गृहंययौ ॥ १ ॥ राधातमागतंवीक्ष्यसमुत्थायातिहर्षिता ॥ दत्तासनाविधानेनपूजयामासमैथिल ॥ २ ॥

भावावेशमें आकर केलेके वृक्षकी तरह पृथ्वीपर गिर पड़ी ॥ ३८ ॥ उसी समय शंकाके कारण सखियोंके गण चले आये, खड़ी होकर पंखा झलने लगीं, चन्दनके फूलोंके इत्र छिड़कने लगीं, तब तो हे नृप ! ये गोपदेवता राधिकासे बोली ॥३९॥ हे राधिके ! शोच मत कर, मैं प्रातःकाल निश्चय आऊँगी, जो न आऊँ तो मुझको गौकी शपथ, भ्राताकी शपथ और गोरसकी शपथ है ॥४०॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे राधाको आश्वासन देकर जिन्होंने मायासे गोपी रूप धरा, वे नन्द नन्दन गोकुलको आ गये॥४१॥ इति श्रीगर्ग संहितायां वृन्दावनखण्डे भाषाटीकायां राधाकृष्ण संगमो नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ नारदजी कहते हैं-जब वह रात्रि व्यतीत हो गई, तब मायासे गोपीरूप धरे जो श्रीहरि वे राधाके दुःख दूर करनेको वृषभानुके घर गये ॥१॥ तब राधा गोपदेवताको आई देखकर हँसकर खड़ी हो गई, आसनपर बैठाकर हे मैथिल ! उसका विधि विधानसे बडा पूजन सत्कार किया॥२॥

और बोली–हे सखि ! तुम्हारे विना तो मैं रातको बड़ी दुःखी रही, तुम्हारे आनेसे ऐसी सुखी हुई हूँ, मानो कोई निधि मिली है, जैसे कुपथ्यसे पहले सुख बादमें दुख होता है, वैसेही सत्संगसे होता है ॥३॥ ऐसे राधिकाका वचन सुनकर वह गोप देवता उदास हो गई, राधिकासे कुछ नहीं बोली और दुःखिताकी तरह हो गई ॥ ४ ॥ राधिका गोप देवताको खेदित देखकर सखियोंके साथ विचार करके स्नेहमें तत्पर होकर बोली ॥५॥ हे भद्रे ! तुम उदास क्यों हो रही हो, हे गोप देवता ! तुम मुझसे कहो, माताने ननदने, पतिने तुमको फटकारा तो नहीं है ? अथवा सासने तो क्रोधसे तुमको नहीं फटकारा है ? ॥६॥ कोई सपत्नी (सौत) का किया दोष है ? या पतिका वियोग हो गया है ? अथवा कहीं और जगह तुम्हारा चित्त लग गया है ? हे मनको हरनेवाली ! अपने मनकी बात तो कहो ? ॥७॥ या मार्ग चलनेकी थकान हुई है ? अथवा तुम्हारे शरीरमें कुछ रोग है ? हे महाभागे !

राधोवाच ॥ त्वयाविनाहंनिशिदुःखिताऽऽसंत्वय्यागतायांसखिलब्धवस्तुवत् ॥ पूर्वंह्यपथ्यस्यसुखंयथाततोदुःखंतथाभामिनिसत्प्रसंगतः ॥ ३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वाथतद्वाक्यंविमनागोपदेवता ॥ नकिंचिदूचेश्रीराधांदुःखितेवव्यवस्थिता ॥ ४ ॥ विज्ञायखेदसंपन्नां राधिकागोपदेवताम् ॥ सखीभिःसंविचार्य्याथजगादस्नेहतत्परा ॥ ५ ॥ राधोवाच ॥ विमनास्त्वंकथंभद्रेवदमांगोपदेवते ॥ मात्राभर्त्रानन्नांद्रावाश्वश्र्वाक्रोधेनभर्त्सिता ॥६॥ सपत्नीकृतदोषेणस्वभर्तुर्विरहेणवा ॥ अन्यत्रलग्नचित्तेनविमनाःकिंमनोहरे ॥७॥ मार्गखेदेनवाकच्चिद्विह्वलाभूरुजाथवा ॥ शीघ्रंवदमहाभागेस्वस्यदुःखस्यकारणम् ॥८॥ कृष्णभक्तमृतेविप्रंयेनकेनापिकुत्सितम् ॥ कथितंतेऽथरंभोरुतच्चिकित्सांकरोम्यहम् ॥९॥ गजाश्वादीनिरत्नानिवस्त्राणिचधनानिच ॥ मन्दिराणिविचित्राणिगृहाणत्वंयदीच्छसि ॥१०॥ धनंदत्त्वातनुंरक्षेत्तनुंदत्त्वात्रपांव्यधात् ॥ धनंतनुंत्रपांदद्यान्मित्रकार्यार्थमेवहि ॥ धनंदत्त्वाचसततंरक्षेत्प्राणान्निरन्तरम् ॥११॥ योमित्रतांनिष्कपटंकरोतिनिष्कारणंधन्यतमः सएव ॥ विधायमैत्रंकपटंविदध्यात्तंलंपटंहेतुपटुंनटंधिक् ॥ १२ ॥ तस्याःप्रेमवचःश्रुत्वाभगवान्गोपदेवता ॥ प्रहसन्नाहराजेन्द्रश्रीराधांकीर्तिनन्दिनीम् ॥ १३ ॥

अपने दुःखका कारण जल्दी कहो ॥८॥ एक तो ब्राह्मण और दूसरा कृष्णका भक्त इन दोनों पर तो मेरा वश नहीं है, इनको छोड़कर जो और किसीने तुम्हारा अपराध किया हो, तो उसका मैं उपाय करूँ ॥९॥ हाथी, घोड़ा, रत्न, वस्त्र, धन, सोना और महल, मंदिर जो कुछ तुम्हें चाहिये सो लेलो ॥१०॥ धनको देकर मनकी रक्षा करे, तनको दकेर लाज रखे, और मित्रका काम पड़ने पर तो धनको, तनको, लाजको सबको देकर मित्रकी रक्षा करे, और किसीका ऐसा भी मत है, धनको देकर निरन्तर प्राणोंकी रक्षा करे ॥ ११ ॥ जो विना कारणके निष्कपट मित्रता करता है, वह तो धन्यतम है, और जो मित्रता करके फिर कपट करता है, वह स्वार्थी लंपट है, और अपनेही काममें चतुर है, उस नटकी तरह व्यवहार करने वालेको धिक्कार है ॥ १२ ॥ उस राधिका का प्रेमका वचन सुनकर गोप देवता प्रसन्न होकर कीर्तिनन्दिनी जो राधा है, उससे बोली ॥ १३ ॥

हे राधे ! गोवर्द्धन पर्वतकी संकोच गलीमें होकर दही बेचनेको मैं चली जाती थी, सो मार्गमें जाते समय नंदके पुत्रने मुझको रोक लिया ॥१४॥ वंशी और बेंतको लिये हंसते-हंसते निर्लज्जने आकर मेरा हाथ पकड़ लिया, वह रसीला बोला-कि अरी ! मेरा कर लगता है, वह देकर जा, इस तरह मुझसे कर मांगने लगा ॥ १९ ॥ तब मैंने कहा कि मैं तो गोरसके लंपट तुमको कर नहीं दूँगी; जब मैंने ऐसा कहा, तब उसने मेरी दहीकी भरी गगरी फोड़ डाली ॥१६॥ हंड़ियाको फोड़कर और दहीको पीकर, मेरी चादर लेकर चला गया,नन्द ग्रामके पर्वतकी खोहमें जाकर छुप गया,इससे हे प्यारी ! मेरा मन बिगड़ रहा है॥१७॥ जातिका गोप और काला जिसका वर्ण, न तो बडा धनी, न बड़ा वीर,न कुछ सुन्दर, न अच्छा स्वभाव, हे सुशीले ! ऐसे में तुमने क्या समझ कर निर्मोहीमें प्रेम लगाया है, इस श्रीकृष्णको छोड़ दे ॥१८॥ ऐसे वैरका भरा हुआ कठोर वचन वृषभानु नन्दिनी

॥ गोपदेवतोवाच ॥ राधेव्रजन्सानुगिरेस्तटीषुसंकोचवीथीषुमनोहरासु ॥ यान्तींस्वतोमांदधिविक्रयार्थंरुरोधमार्गेनवनन्दपुत्रः ॥ १४ ॥ वंशीधरोवेत्रकरःकरेमांत्वरंगृहीत्वाप्रहसन्विलज्जः ॥ मह्यंकरादायकरायदानंदेहीतिजल्पन्विपिनेरसज्ञः ॥ १९ ॥ तुभ्यंनदास्यामिकदापिदानं स्वयंभुवेगोरसलंपटाय ॥ एवंमयोक्तेवचनेऽथभाण्डंनीत्वाविशीर्णीकृतवान्सदध्नः ॥१६॥ भाण्डंसभित्त्वादधिकिंचपीत्वानीत्वोत्तरीयंममचेदु-रीयम् ॥ नन्दीश्वराद्रेर्विदिशंजगामतेनाहमाराद्विमनाःस्मजाता ॥१७॥ जात्यासगोपःकिलकृष्णवर्णोऽधनीनवीरोनहिशीलरूपः॥यस्मिंस्त्वया प्रेमकृतंसुशीलेत्यजाशुनिर्मोहनमद्यकृष्णम् ॥१८॥ इत्थंसवैरंपरुषंवचस्तच्छ्रुत्वाचराधावृषभानुनन्दिनी ॥ सुविस्मितावाक्यपदेसरस्वतीपदं स्मयन्तीनिजगादतांप्रति ॥ १९ ॥ राधोवाच ॥ यत्प्राप्तयेविधिहरप्रमुखास्तपन्तिवह्नौतपःपरमयानिजयोगरीत्या ॥ दत्तःशुकःकपिलआ-सुरिरंगिरायत्पादारविन्दमकरन्दरजःस्पृशन्ति ॥२०॥ तंकृष्णमादिपुरुषंपरिपूर्णदेवंलीलावतारमजमार्तिहरंजनानाम् ॥ भूभूरिभारहरणायस-तांशुभायजातंविनिन्दसिकथंसखिदुर्विनीते ॥२१॥ गाःपालयन्तिसततंरजसोगवांचगंगांस्पृशंतिचजपंतिगवांसुनाम्नाम् ॥ प्रेक्षन्त्यहर्निशमलं सुमुखंगवांचजातिःपरानविदिताभुविगोपजाते ॥ २२ ॥

सुनकर विस्मित हो गई, वाक्य पदमें सरस्वतीका स्थान स्मरण करती उस गोप देवतासे बोली ॥ १९ ॥ जिनकी प्राप्तिके लिये ब्रह्मा हर आदि अग्निमें तप करते हैं, परम निज योगकी रीतिसे दत्तात्रेय, शुकदेव, कपिलदेव, आसुरि, अंगिरा आदि जिनके चरण कमलकी रजको स्पर्श करते हैं॥२०॥वह श्रीकृष्ण, आदि पुरुष, परिपूर्ण देव, लीलावतार, अजन्मा जनोंकी पीड़ाको हरनेवाले भूमिका भार उतारनेको संतोंकी रक्षा करनेके लिये प्रकट हुये हैं, उनकी हे सखि ! हे दुर्विनीते ! तू निन्दा करती है ॥ २१ ॥ गोपोंकी जाति तो बड़ी उत्तम है, निरन्तर गौओंका पालन करते हैं, गोरजको स्पर्श करते हैं वेही मानसी गंगाको स्पर्श करते हैं, गौओंके नामोंको जपते हैं, रात दिन गौओंका मुख देखते हैं, सो बड़ी श्रेष्ठ गोपोंकी जाति है, उसको तू नहीं जानती है ॥ २२ ॥

देखो ! जिनकी श्यामरंगमें शोभित सुन्दर कलाको महादेवजी देखकर उन श्रीकृष्णमें लगे मनसे सुन्दर मुखको छोड़कर उन्मत्तकी तरह चलते हैं, भागते हैं, जटाजूट, विष, भस्म खोपडी, और काले सर्प धारण करते हैं ॥२३॥ स्वर्गलोक सिद्ध, मुनि, यक्ष, मरुद्गण, इनके नाथ और नर, किन्नर, यक्ष, राक्षस, नाग इनके नाथ हैं, वे भी सब भक्तिसे जिनके चरणारविन्दमें निरन्तर नमस्कार करके अनेक तरहकी लक्ष्मी पाते हैं, और श्रीकृष्णको बलि (भेंट) देते हैं, ॥ २४ ॥ जो श्रीकृष्ण अगणित ब्रह्माण्डोंको पैदा करते हैं, और नष्ट करते हैं, उन कृष्णका वत्सासुर, बकासुर, शटकासुर, तृणावर्त, पूतना, अघासुर, इनको मारना, यमलार्जुनको उखाड़ना, कालीका दमन करना,क्या यश है अर्थात् इनको मारना उनकी कुछ बड़ाई नहीं है ॥ २५ ॥ उन पुरुषोत्तमको भक्तसे प्यारा न तो ब्रह्मा है,न महादेव है,न लक्ष्मी है,और न बलदेवजी हैं, क्योंकि भक्तिसे बंधा है चित्त जिनका ऐसे सकलजनोंके चूडामणि श्रीकृष्ण अपने भक्तोंके पीछे-पीछे चलते हैं ॥२६॥ महान् है, आत्मा जिनका ऐसे भगवान् भक्तोंमें अपनी रुचिको दिखाते,अपने भक्तोंके पीछे-पीछे

तत्कृष्णवर्णविलसत्सुकलांसमीक्ष्यतस्मिन्विलग्नमनसासुमुखंविहाय॥उन्मत्तवद्व्रजतिधावतिनीलकण्ठोबिभ्रत्कपर्दविषभस्मकपालसर्पान्॥२३॥ स्वर्लोकसिद्धमुनियक्षमरुद्गणानांपालाःसमस्तनरकिन्नरनागनाथाः ॥ यत्पादपद्ममनिशंप्रणिपत्यभक्त्यालब्धश्रियःकिलबलिंप्रददुःस्मतस्मै ॥२४॥ वत्साद्यकालियबकार्जुनधेनुकानामाचक्रवातशकटासुरपूतनानाम् ॥ एषावधःकिमुततस्य यशोमुरारेर्यःकोटिशोंडनिचयोद्भवनाशहेतुः ॥२५॥भक्तात्प्रियोनविदितःपुरुषोत्तमस्यशंभुर्विधिर्नचरमानचरौहिणेयः॥ भक्तानुव्रजतिभक्तिनिबद्धचित्तश्चूडामणिःसकललोकजनस्यकृष्ण ॥२६॥ गच्छन्निजंजनमनुप्रपुनातिलोकानावेदयन्हरिजनेस्वरुचिंमहात्मा॥तस्मादतीवभजतांभगवान्मुकुन्दोमुक्तिंददातिनकदापिसुभक्तियोगम् ॥ २७ ॥ गोपदेवतोवाच ॥ राधेत्वदीयधिषणाधिषणंहसन्तीवाणींश्रुतिंप्रकुशलेनविडंबयन्ती ॥ अत्रागमिष्यतियदाथहरिःपरेशःसत्यंददा-तिवचनंतवदेविमन्ये ॥ २८ ॥ राधोवाच ॥ यद्यागमिष्यतियदाथहरिःपरेशःकिंकारयामिभवतींवदताहिसुभ्रु ॥ चेदागमोनहिभवेद्वनमालिनः स्वंसर्वधनंचभवनंचददामितुभ्यम् ॥ २९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथराधासमुत्थायनत्वाश्रीनंदनन्दनम् ॥ उपविश्यासनेदध्यौध्यानस्तिमित लोचना ॥ ३० ॥

चलते,भक्तोंके चरण कमलकी रजसे अपनी रोमावलीमें वर्तमान ब्रह्माण्डोंके जीवनको पवित्र करते हैं,इसीसे अपने भक्तोंको भगवान् मुक्ति तो दे देते हैं किन्तु भक्तियोग नहीं देते हैं,क्योंकि भक्तिसे वशमें होना पड़ता है ॥२७॥ तब गोपदेवता बोली हे राधे ! यह तुम्हारी बुद्धि बृहस्पतिकी और सरस्वतीकी भी हँसी करती है, और अपनी चतुराईसे वेदका अनुकरण करती है, परन्तु हे राधे ! यदि परेश श्रीकृष्ण तुम्हारी याद करनेसे अभी चला आवे तो मैं तुम्हारे वचनको सत्य मानूँ ॥ २८ ॥ तब राधिकाजी बोली-जो परेश हरि मेरे बुलानेसे अभी चले आवें तो फिर बताओ मैं तुम्हारा क्या करूँ और हे सुन्दर भृकुटीवाली ! मेरे बुलानेसे जो वनमाली, हे सखि ! न आये तो मैं सब अपना धन, महल तुमको दे देऊँगी ॥ २९ ॥ नारदजी कहते हैं, अब राधिकाजी उठकर नन्द नन्दनको प्रणाम करके आसनपर बैठ ध्यान करने लगी, ध्यानसे बन्द हैं लोचन जिसके ॥ ३० ॥

तब अत्यन्त उत्कंठित और प्रेमके आंसू जिसके बहते हैं तथा स्वेद (पसीना) जिसके आ गये और अपने रूपमें तन्मय हुई, ऐसी राधिकाको देखकर भगवान्ने उसी समय गोपीरूपको छोड़कर पुरुषरूप धर लिया ॥ ३१ ॥ और भक्तवत्सल भगवान् सखियोंके देखते-देखते प्रसन्न होकर मेघसी गम्भीरवाणीमें राधिकासे बोले ॥३२॥ हे रंभोरू ! हे चन्द्रवदने ! हे व्रजसुन्दरीशे ! हे राधे ! हे प्रिये ! हे नये यौवनके मदसे मान करनेवाली ! थोड़े नेत्र खोलो, मैं आयया हूँ देखो, तुमने मीठी वाणीस जो मुझको बुलाया तो मैं आ गया हूँ ॥३३॥ और हे प्रिये जो मैंने "हे श्रीकृष्ण! आप जल्दी आवो" ऐसा तेरा वचन सुना, तभी जल्दीही गौओंको और गोपोंको छोड़कर वंशीतटसे यमुनाके तटसे भाग कर हे ललने ! मैं तुम्हारे पास यहाँ आया हूँ ॥३४॥ जब मैं आया तभी एक सुन्दरसी सखी यहाँसे उठ गई, हे सखि ! वो कोई यक्षिणी थी कि देववधू कि आसुरी थी कि किंनरी थी कि नारी थी कि कोई मायावती थी जो तुम्हें छलनेको आई थी, देखो ऐसी बिना जानती किसी नागिनीका विश्वास नहीं करना चाहिये ॥३५॥ नारदजी कहते हैं हे

उत्कंठितांस्वेदयुक्तांबाष्पकंठींप्रियांहरिः ॥अश्रुपूर्णमुखींवीक्ष्यबिभ्रत्स्वांपौरुषींतनूम्॥३१॥पश्यन्तीनांसखीनांचसहसाभक्तवत्सलः॥राधांप्राह प्रसन्नात्मामेघगंभीरयागिरा ॥ ३२ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ रंभोरुचन्द्रवदनेव्रजसुन्दरीशेराधेप्रियेनवसुयौवनमानशीले ॥ उन्मील्यनेत्रमपिप-श्यसमागतंमांतूर्णंत्वयामधुरयाचगिरोपहूतम् ॥ ३३ ॥ आगच्छकृष्णइतिवाक्यमतःश्रुतंमेसद्योविसृज्यनिजगोकुलगोपवृंदम् ॥ वंशीवटाच्च यमुनानिकटात्प्रधावंस्त्वत्प्रीतयेऽथललनेत्रसमागतोस्मि॥३४॥मय्यागतेसतिगतासखिरूपिणीकायक्ष्यासुरीसुरवधूकिलकिन्नरीवा॥मायावती छलयितुंभवतीचतस्माद्विश्वासएवनविधेयउरंगपत्न्याम् ॥ ३५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथराधाहरिंदृष्ट्वानत्वातत्पादपंकजम् ॥ मुदमापपरंरा-जन्सद्यःपूर्णमनोरथा ॥ ३६ एवंश्रीकृष्णचन्द्रस्यचरितान्यद्भुतानिच ॥ यःशृणोतिनरोभक्त्यासकृतार्थोभवेन्नरः ॥ ३७ ॥ इति श्रीमद्गर्गसं-हितायांवृन्दावनखण्डेश्रीकृष्णचन्द्रदर्शनंनामपंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ राधायैदर्शनंदत्त्वाकृत्वाप्रेमपरीक्षणम् ॥ अग्रेचकारकांलीलांभगवानात्मलीलया ॥ १ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ माधवीमाधवेमासिमाधवीभिःसमाकुले ॥ वृन्दावनेसमारेभेरासंरासेश्वरः स्वयम् ॥ २ ॥ वैशाखमासिपंचम्यांजातेचन्द्रोदयेशुभे ॥ यमुनोपवनेरेमेरासेश्वर्यामनोहरः ॥ ३ ॥

राजन् ! ऐसे राधिकाजी श्रीकृष्णको देखकर उनके चरणकमलको प्रणाम करके परम आनन्दको प्राप्त हो गई और तत्काल ही सब मनोरथ पूर्ण हो गया ॥ ३६ ॥ इसीभांतिके श्रीकृष्णके अद्भुत चरित्र जो भक्तिसे सुने, वह मनुष्य कृतार्थ हो जाता है ॥३७॥ इतिश्रीमद्गर्ग संहितायां वृन्दावनखण्डे भाषाटीकायां श्रीकृष्णचन्द्रदर्शनं नाम पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ अब बहुलाश्व राजा बोला कि श्रीकृष्णने ऐसे राधिकाजीको दर्शन देखकर प्रेमकी परीक्षा करके, आगे अपनी इच्छासे क्या लीला की ? ॥१॥ नारद कहते हैं-माधव भगवानने माधवीकी लताओंसे शोभित ऐसे वैशाखके महीनेमें वृन्दावनमें रासके ईश्वर आपहीने रासका प्रारम्भ किया ॥२॥ वैशाख महीनेकी पंचमीके दिन जब सुन्दर चन्द्रमा उदय हुआ, तब रासेश्वरी राधाके साथ यमुनाजीके उपवनमें मनोहर श्री कृष्ण रास विहार करने लगे ॥ ३ ॥

हे मैथिल ! पहले गोलोकसे जो भूमि आई थी, वह समस्त भूमि सुवर्ण मयी और पुखराजसे जड़ी हुई हो गई ॥४॥ उस समय इस वृन्दावनने दिव्यरूप धारण कर लिया, और कल्प वृक्षोंके वन प्रकट हो गये, और माधवी मालतीकी लता प्रफुल्लित हो गई, तब इन्द्रके नन्दनवनको भी लज्जित करने लगा ॥५॥ रत्नोंकी सीढ़ियोंसे प्रकाश करती सोनेकी छत्री उनपर हंस, राजहंस, बगुला बैठे हैं, कमल जिसमें फूल रहे हैं, ऐसी श्रीयमुना जी शोभित हुई ॥६॥ रत्नमय गोवर्द्धन हीरा, पन्ना, मणि, माणिक, लाल, नील कणोंसे युक्त शिखरसे जगमगाने लगा, और सुन्दर-सुन्दर वृक्ष लताओंके पुष्पोंसे शोभित हो गया, जिसमें अनेक वनके जीव घूमते हैं, और तोता, मैना, मोर, चकोर, कोयल, कबूतर, पपीहा, बोल रहे हैं, उनसे मनका हरनेवाला होगया ॥७॥ जिनमें झरना झर रहे, भ्रमर भ्रमरी गुञ्जार कर रहे हैं, ऐसी कन्दराओंसे उस गोवर्द्धन पर्वतकी सजे हुये हाथीकीसी शोभा हो गई ॥८॥ और बांसके अनेकों कुञ्ज निकुञ्जोंके दिव्य रूप हो गये, कैसा हो गया कि, जिनमें रत्नमय खम्भे लगे हैं, ऐसी सभा बन गई, छत्री बन गई, बारह हारी, आंगन, चौक, गली

पुरामैथिलगोलोकाद्भूमिर्याकौसमागता ॥ सर्वाबभूवुःसौवर्णपद्मरागमयीत्वरम् ॥४॥ वृन्दावनंदिव्यवपुर्दधत्कामदुघैर्द्रुमैः ॥ माधवीभिर्लता-
भिश्चप्रक्षिपन्नन्दनन्दनम् ॥ ५ ॥ रत्नसोपानसंपन्नास्फुरत्सौवर्णतोलिका ॥ रराजयमुनाराजन्हंसपद्मादिसंकुला ॥६॥ रत्नधातुमयःश्रीमद्रत्न
शृंगस्फुरद्युतिः ॥ सपक्षिगणसंयुक्तोलतापुष्पमनोहरः ॥ ७ ॥ निर्झरैःसुन्दरीभिश्चदरीभिर्भ्रमरीवृतः ॥ रेजेगोवर्द्धनोनामगिरिराजःकरीन्द्रवत्
॥ ८ ॥ सर्वेनिकुंजाःपरितोरेजुर्दिव्यवपुर्धराः ॥ सभामण्डपवीथीभिःप्रांगणस्तंभपंक्तिभिः ॥ ९ ॥ पतत्पताकैर्दिव्याभैःसौवर्णैःकलशैर्नृप ॥
श्वेतारुणैःपुष्पदलैःपुष्पमन्दिरवर्त्तिभिः ॥ १० ॥ वसन्तमाधुर्यधराःकूजत्कोकिलसारसाः ॥ पारावतैर्मयूरैश्चयत्रयत्रनिकूजिताः ॥ ११ ॥
राधाकृष्णकथांपुण्यांगायमानैर्मधुव्रतैः ॥ पतद्भिर्मधुमत्तैश्चकुंजाःसर्वेविराजिताः ॥१२॥ पुलिनेशीतलोवायुर्मन्दगामीवहत्यलम् ॥ सहस्रदल
पद्मानांरजोविक्षेपयन्मुहुः ॥ १३ ॥ काश्चिद्गोलोकवासिन्यःकाश्चिच्छय्योपकारिकाः ॥ शृंगारप्रकराःकाश्चित्काश्चिद्द्वारपालिकाः ॥ १४ ॥
पार्षदाख्याःसख्यजनाश्छत्रचामरपाणयः ॥ पुष्पाभरणकारिण्यःश्रीवृन्दावनपालिकाः ॥ १५ ॥

इनसे शोभित हो गया, ॥९॥ जिन पर पत्र, फूलोंकी दिव्य ध्वजा पताका फहरा रही ऐसे सुनहरी कलशोंसे और काले, पीले, लाल, सफेद, सुनहरी फूलोंके अनेकों महल मंदिर उनसे ॥१०॥ और वसन्त ऋतुके माधुर्य युक्त कोकिल, सारस, मोर, कबूतर, पपीहा, तोता मैना, इनके शब्दोंसे कूजित ॥११॥ और भी अनेकों पक्षी कुञ्ज-कुञ्ज में राधा कृष्णकी पुण्य कथाको गाने वाले भ्रमरोंके गानेसे युक्त जहाँ अति सुशोभित कुञ्ज बन रही हैं ॥१२॥ पुलिनमें शीतल, मन्द, सुगंधित पवन चल रही है जो हजारों कमलके केशरोंकी रजको उड़ाती हैं ॥१३॥ उस समय चारों ओरसे गोपी गण श्रीकृष्णके पास आई हैं, उनमें कोई तो गोलोक वासिनी, कोई शृंगार करनेवाली, कोई सेज सजानेवाली, और कोई द्वार-पालिका है ॥ १४ ॥ कोई चामरवाली, कोई छत्रवाली कोई पंखेवाली, कोई फूलोंके हार माला, गुंजा तुर्रा, गहने बनानेवाली, कोई सख्य भाववाली, प्यारी प्यारी गोपी सब आई हैं, ये सब वृन्दावनकी रक्षा करनेवाली हैं ॥ १५ ॥

कोई गोवर्द्धन वासिनी, कोई निकुञ्ज बनानेवाली, कोई निकुञ्ज वासिनी, कोई नृत्य करनेवाली, कोई बाजे बजानेवाली हैं॥ १६॥ये सब चन्द्र वदना गोपियाँ किशोर जिनकी अवस्था है, इनके बारह यूथ श्रीकृष्णके पास आये ॥ १७ ॥ वैसेही यमुनाजी अपना यूथ बांध कर आई, नीलाम्बर, धरे श्याम कमलसे जिनके लोचन हैं ॥१८॥ वैसेही जाह्नवी गङ्गाजी अपना यूथ, बांधकर गौरवर्णा, श्वेत वस्त्र पहने मोतियोंके शृंगारसे सजी आई ॥१९॥ रमा (लक्ष्मी) लाल वस्त्र पहने, पद्मराग के गहने पहने, चन्द्रमा जैसा जिनका वर्ण, मन्द जिनका हास है, वे भी अपना यूथ बनाकर आई ॥ २० ॥ कृष्ण पत्नी मधु माधवी नामवाली, कमलके समान वर्णवाली फूलोंके गहने पहने, उत्तम वस्त्र वाली अपने यूथके साथ आई ॥ २१ ॥ तथा विरजा नामकी सखी अपना यूथ बांधकर हरे बस्त्रोंको पहने, पन्नोंके रत्नोंके भूषण और गौर वर्ण धारण किये आई हैं ॥ २२ ॥ फिर

गोवर्द्धननिवासिन्यःकाश्चित्कुंजविधायकाः ॥ तन्निकुंजनिवासिन्योनर्तक्योवाद्यतत्पराः ॥१६॥ सर्वांवैचन्द्रवदनाःकिशोरवयसोनृप॥ आसां द्वादशयूथाश्चाजग्मुःश्रीकृष्णसन्निधिम् ॥ १७ ॥ तथैवयमुनासाक्षाद्यूथीभूत्वासमाययौ ॥ नीलाम्बरारत्नभूषाश्यामाकमललोचना ॥१८॥ तथैवजाह्नवीगंगायूथीभूत्वासमाययौ ॥ श्वेताम्बराश्वेतवर्णामुक्ताभरणभूषिता ॥१९॥ तथाययौरमासाक्षाद्यूथीभूत्वारुणाम्बरा ॥ चन्द्रवर्णा मन्दहासापद्मरागविभूषिता ॥२०॥ तथाययौकृष्णपत्नीनाम्नायामधुमाधवी॥ पद्मवर्णापुष्पभूषायूथीभूत्वाशुभांबरा॥२१॥ तथैवविरजासाक्षा-द्यूथीभूत्वासमाययौ ॥ हरिद्वस्त्रागौरवर्णारत्नालंकारभूषिता ॥२२॥ ललितायाविशाखायामायायूथःसमाययौ ॥ एवंत्वष्टसखीनांचसखीनां किलषोडश ॥ २३ ॥ द्वात्रिंशच्चसखीनांचयूथाःसर्वेसमाययुः ॥ रराजभगवान्राजन्स्त्रीगणैरासमण्डले ॥२४॥ वृन्दावनेयथाकाशेचन्द्रस्तारा-गणैर्यथा ॥ पीतवासःपरिकरोनटवेषोमनोहरः ॥ २५ ॥ वेत्रभृद्वादयन्वंशींगोपीनांप्रीतिमावहन् ॥ मयूरपक्षभृन्मौलीस्रग्वीकुण्डलमण्डितः ॥२६॥राधयाशुशुभेरासेयथारत्यारतीश्वरः ॥ एवंगायन्हरिःसाक्षात्सुन्दरीरागसंवृतः ॥ २७ ॥ यमुनापुलिनंपुण्यमाययौराधयायुतः ॥ गृही-त्वाहस्तपद्मेनपद्माभंस्वप्रियाकरम् ॥२८॥निषसादहरिःकृष्णातीरेनीरमनोहरे ॥ पुनर्जल्पन्सुमधुरंपश्यन्वृन्दावनंप्रियम्॥२९॥चलन्हसद्राधि-कयाकुंजंकुंजंचचारह ॥ कुंजेनिलीयमानंतंत्वरंत्यच्चाप्रियाकरम् ॥ ३० ॥

ललिताजी, विशाखा, और माया, इनके तथा अष्ट सखियोंके और सोलह सखियोंके पृथक्-पृथक् यूथ आये हैं ॥ २३ ॥ बत्तीस सखियोंके सब यूथ आये, हे राजन्! उस समय श्रीकृष्ण भगवान् रास मण्डलमें गोपी गणोंसे बड़ी शोभाको प्राप्त हुये ॥२४॥ जैसे आकाशमें चन्द्रमाकी तारागणोंसे शोभा होती है, वैसेही वृन्दावनमें पीताम्बरको कमरसे बांधे नरकासा जिनका वेष मनको हरने वाले ॥ २५ ॥ बेन धरे, पीताम्बर ओढ़े मोर पंख का मुकुट पहने, वनमाला पहने, मकराकृत कुण्डल धारण किए वंशी बजाते श्रीकृष्ण ॥२६॥राधाके संग ऐसे शोभित हुये जैसे रतिके संग रतिराज कामदेव शोभित होते हैं॥२७॥ऐसे साक्षात् हरि सुन्दर रागको गाते राधिकाके साथ पवित्र यमुनाजीके पुलिनमे अपने हस्त कमलसे प्रियाजीके हस्त कमलको पकड़े हुये आये।२८।मनोहर जल जिसका उस कालिंदीके किनारे पर बैठ गये, मधुर वार्तालाप करते, प्यारे वृन्दावनको देखने लगे॥२९॥ हँसते-

हँसते राधिकाके साथ चलते चलते कुञ्ज कुञ्जमें विचरते विचरते प्यारीके हाथको छोड़कर लताओंमें छुप गये ॥ ३० ॥ तब राधिकाजीने वृक्षकी शाखाकी आड़में छुपे श्रीकृष्णको देखकर झपटकर जा पकड़ा, ऐसेही राधिका हाथ छोड़कर झनन-झनन नूपुर बजाती भाग उठी ॥ ३१ ॥ श्रीकृष्णके देखते निकुंजमें लीन हो गई, जबतक माधव गये तबतक अन्यत्र छुप गई ॥३२॥ कदम्बके नीचे एक हाथके अन्तरसे इधरसे उधर दौड़ती, हाथमें पकड़ने नहीं आये, उससे श्रीकृष्ण ऐसे शोभित हुये, जैसे सुनहरी बेलसे तमालका वृक्ष और बिजलीसे बादलकी काली घटा शोभित होती है ॥३३॥ और सुवर्ण खानसे जैसे नीलाद्रि, ऐसे विश्वमोहिनी राधाके साथ मदनमोहनकी शोभा हुई ॥३४॥ रासरंगमें श्रीकृष्ण नटकी तरह नाचते हुये उस वृन्दावनमें ऐसे मालूम पड़े जैसे रतिरानीके साथ मानो कामदेवही नाचते हैं, जितने रूप गोपियोंके थे उतनेही रूप श्रीकृष्णके हो गये ॥३५॥ रंगभूमिमें नटवर जैसे नाचते हैं, वैसेही रासरूप रंगमें कृष्णनट नाचने लगे, तब सभी मनोहर गोपी गाती और नाचती ॥३६॥

विलोक्यशाखान्तरितंराधाजग्राहमाधवम् ॥ राधादुद्रावतद्धस्ताज्झंकारंकुर्वतीपदे ॥३१॥ विलीयमानाकुंजेषुपश्यतोमाधवस्यच ॥ धावन्हरिर्गतोयावत्तावद्राधाततोगता ॥३२॥ वृक्षपार्श्वेहस्तमात्रादितश्चेतश्चधावती ॥ तमालोहेमवल्ल्येवघनश्चंचलयायथा ॥३३॥ हेमखन्येवनीलाद्रीरेजे राधिकयाहरिः ॥ राधयाविश्वमोहिन्याबभौमदनमोहनः ॥३४॥ वृन्दावनेरासरंगेरत्येवमदनोयथा ॥ धृत्वारूपाणितावन्तियावन्तिव्रजयोषितः ॥३५॥ ननर्तरासरंगेसौरंगभूम्यांनटोयथा ॥ गायन्त्यश्चापिनृत्यन्त्यःसर्वागोप्योमनोहराः ॥३६॥ विरेजुःकृष्णचन्द्रैश्चयथाशक्रैःसुरांगनाः ॥ वरंविहारंकृष्णायांचकारमधुसूदनः ॥ ३७ ॥ सर्वैर्गोपीगणैःसार्द्धंयक्षीभिर्यक्षराडिव ॥ कबरीकेशपाशाभ्यांप्रसूनैःप्रच्युतैःशुभैः ॥ चित्रवर्णैर्बभौकृष्णायथोष्णिङ्मुद्रितातथा ॥३८॥ मृदंगतालैर्मधुरध्वनिस्वनैर्जगुर्यशस्तामधुसूदनस्य ॥ प्रापुर्मुदंपूर्णमनोरथाश्चलत्प्रसूनहाराहरिणागतव्यथाः ॥३९॥ श्रीहस्तसंताडितवारिबिंदुभिःस्फारासमस्फूर्जितशीकरद्युभिः ॥ वृन्दावनेशोव्रजसुंदरीभीरेजेगजीभिर्गजराडिवस्वयम् ॥४०॥

श्रीकृष्णकी मूर्तियोंके साथ ऐसी शोभित हुई, जैसे इन्द्रके साथ देवांगनाओंकी शोभा होती है, यमुनाके किनारेपर मधुसूदनने ऐसा श्रेष्ठ विहार किया ॥३७॥ तब सब गोपीगणोंके साथ श्रीकृष्ण ऐसे शोभाको प्राप्त हुये, जैसे यक्षणियोंके साथ विहार करते कुबेर शोभित होते हैं, तब कबरी और केशपाशसे गिरे शुभ चित्रविचित्र फूल, उनसे यमुनाजीकी बंधी पगड़ीकी शोभा हुई, ॥३८॥ तब मृदंग, मंजीराओंकी मनोहर धुनके साथ वे गोपी मधुसूदनके यशको गाती हुईं, परम आनन्दको प्राप्त हुई,उनके मनोरथ पूर्ण हुये, फूलोंके हारोंको पहने वे गोपी श्रीकृष्णके साथ दूर हो गई हैं व्यथा जिनकी ऐसी हो गई ॥३९॥ महारासके परिश्रमको दूर करनेके लिये यमुनाजलमें क्रीडा करने लगे, शोभायमान राधिकाके ललितादिक गोपियोंके हाथोंसे फेंकी गई जलबिन्दु फुहारोंके समान बूंद जिनके मुखपर शोभित ऐसे श्रीकृष्ण व्रज सुन्दरियोंके साथ रमण करते शोभित हुये जैसे हथिनियोंके साथ हाथी शोभित होते हैं ॥ ४० ॥

विद्याधरी, देव, गन्धर्वोंकी पत्नियाँ विमानमें बैठी उस रासरंगको देख रही थीं अपने-अपने पतियोंके सहित फूलोंकी वर्षा करती मोहको प्राप्त हो गईं, नीली नाडे जिनके शिथिल हो गये, शरीरपरसे वस्त्र उतर पड़े ॥ ४१ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां वृन्दावन खण्डे भाषाटीकायां रासक्रीडा वर्णनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ नारदजी कहते हैं-इसके बाद श्रीकृष्ण जलविहार लीलाको करके सब गोपियोंके गणोंको साथ लेकर गोवर्द्धन पर्वतपर गये ॥ १ ॥ गोवर्द्धनकी कन्दरामें जहाँ रत्नमय भूमि है, वहाँ रासेश्वरी राधिकाके साथ स्वयम् आप नृत्य करने लगे ॥ २ ॥ फिर रास करके दोनों रत्न सिंहासनपर बैठे, तब सखीजनोंने शृंगार किया, तब पर्वतके ऊपर घनमें बिजलीकी तरह शोभा हुई ॥ ३ ॥ तब फिर स्वामिनीका शृंगार आनन्दसे सखीजनने चन्दन, केसर, कस्तूरी, इत्र, अरगजा, मेंहदी, महावर, अंजन, रोली, सिंदूरसे किया ॥ ४ ॥ फिर श्रीवृषभानु नन्दिनी पर विधिपूर्वक इत्र छिड़कर

विद्याधर्योगंधर्वपत्न्यःपश्यन्त्यस्तारासरंगंदिविस्थाः॥देवैसार्द्धंचक्रिरेपुष्पवर्षंमोहंप्राप्ताःप्रश्लथद्वस्त्रनीव्यः॥४१॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांवृन्दावनखण्डेरासक्रीडानामषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथकृष्णोहरिर्वारिलीलांकृत्वामनोहरः ॥ सर्वैर्गोपीगणैःसार्द्धंगिरिंगोवर्धनंययौ ॥ १ ॥ गोवर्धनेकन्दरायांरत्नभूम्यांहरिःस्वयम् ॥ रासंचराधयासार्द्धंरासेश्वर्याचकारह ॥२॥ तत्रसिंहासनेरम्येतस्थतुःपुष्पसंकुले ॥ तडिद्घनाविवगिरौराधाकृष्णौविरेजतुः ॥ ३ ॥ स्वामिन्यास्तत्रशृंगारंचक्रुःसख्योमुदान्विताः ॥ श्रीखण्डकुंकुमाद्यैश्चपावकागुरुकज्जलैः ॥ ४ ॥ मकरंन्दैःकीर्तिसुतांसमभ्यर्च्यविधानतः ॥ ददौश्रीयमुनासाक्षाद्राधायैनूपुराण्यलम् ॥ ५ ॥ मंजीरभूषणंदिव्यंश्रीगंगाजह्नुनन्दिनी ॥ श्रीरमाकिंकिणीजालंहारंश्रीमधुमाधवी ॥ ६ ॥ चन्द्रहारंचविरजाकोटिचन्द्रामलंशुभम् ॥ ललिताकंचुकमणिंविशाखाकण्ठभूषणम् ॥ ७ ॥ अंगुलीयकरत्नानिददौचन्द्राननातदा ॥ एकादशीराधिकायैरत्नाढ्यंकंकणद्वयम् ॥८॥ भुजकंकणरत्नानिशतचन्द्राननाददौ ॥ तस्यै मधुमतीसाक्षात्स्फुरद्रत्नांगदद्वयम् ॥ ९ ॥ताटंकयुगलंवंदीकुंडलेसुखदायिनी ॥ आनन्दीयासखीमुख्याराधायैभालतोरणम् ॥१०॥ पद्मासद्रालतिलकंबिन्दुंचन्द्रकलंददौ ॥ नासामौक्तिकमालोलंददौपद्मावतीसती ॥ ११ ॥

श्रीयमुनाजीने मणिमय नूपुर पहनाये ॥ ५ ॥ दिव्य विछिया भूषण जाह्नु नन्दिनी श्रीगंगाजीने पहनाये, रमाने करधनी पहनाया और मधुमाधवीने हार पहनाया ॥ ६ ॥ विरजाने चन्द्रहार दिया जिसमें करोड़ों चन्द्रमा झलकते हैं, ललिताजीने मणिजटित चोली दी, विशाखाने कण्ठभूषण दिये ॥७॥ छल्ला, आरसी, अंगूठी, मूँदरी ये चन्द्राननाने दिये, एकादशीने रत्नोंके जड़े दो कंकण दिये ॥ ८ ॥ भुजाओंके कंकण, पहुँची शतचन्द्राननाने दिये, मधुमतीने मणिमय दो बड़े बाजू दिये ॥ ९ ॥ सुख देनेवाली बंदीने दो ताटंक और दो कुण्डल दिये, आनन्दी जो मुख्य सखी थी उसने श्रीराधाजीको भालतोरण (माथेकी खौर) दिया ॥ १० ॥ पद्मासखीने चन्द्रकलाके समान मस्तककी शोभा करनेवाली बेंदी दी और पद्मावती सतीने बेसर दी ॥ ११ ॥

बालसूर्यकासा जिसमें तेज है, ऐसा शिरफूल अतिशोभायमान उत्तमा सखी चन्द्रकान्ताने दिया ॥१२॥ सुन्दरीने चूड़ामणि दी, महर्षिणीने रत्नवेणी दी, और चन्द्र, सूर्य नामके गहने करोड बिजलीसी जिनमें चमक ॥१३॥ ये आभूषण वृन्दावनेश्वरी वृन्दादेवीने राधिकाको दिये, ऐसे शृंगारसे राधाकृष्णके रूपकी झलमलाहटसे चकाचौंधके मारे रूप पर किसीकी दृष्टि नहीं ठहरती है,॥१४॥ तब गिरिराज गोवर्द्धनपर ऐसी शोभा हुई,जैसे दक्षिणा पत्नीसे यज्ञ नामके भगवान् शोभित होते हैं, ॥१५॥ उस दिनसे गोवर्द्धनमें वह शृंगार स्थल कहलाता है, तब फिर श्रीकृष्ण प्यारी गोपियोंको साथ लेकर चन्द्रसरोवरको चले गये ॥ १६ ॥ उस चन्द्र सरोवरमें जलक्रीडाकी, जैसे हथिनियोंसे हाथी करता है, वहाँ चन्द्रमाने आकर दो चन्द्रकान्त मणियाँ राधिकाजीको दी, ॥ १७ ॥ हजार दलके दो कमल एक राधाजी को एक श्रीकृष्णको चन्द्रमाने दिये, तब श्रीकृष्ण वृन्दावनकी शोभा देखते देखते ॥१८॥ बहुलावनमें गये, बड़े लताओंके जाल हैं,वहाँ सब सखियों को पसीना आ गया ॥१९॥ तब तो वंशीधर श्रीकृष्ण मेघ मल्लार राग गाने लगे तबही मेघ घिर

बालार्कद्युतिसंयुक्तंभालपुष्पंमनोहरम् ॥ श्रीराधायैददौराजंश्चंद्रकान्तासखीशुभा ॥१२॥ शिरोमणिंसुन्दरीचरत्नवेणींप्रहर्षिणी ॥ भूषणेचन्द्रसूर्याख्येविद्युत्कोटिसमप्रभे ॥ १३ ॥ राधिकायैददौदेवीवृन्दावृन्दावनेश्वरी ॥ एवंशृंगारसंस्फूर्जद्रूपयाराधयाहरिः ॥ १४ ॥ गिरिराजेबभौराजन्यज्ञोदक्षिणयायथा॥यत्रवैराधयारासेशृंगारोऽकारिमैथिल ॥१५॥ तत्रगोवर्द्धनेजातंस्थलंशृंगारमंडलम्॥ अथकृष्णःस्वप्रियाभिर्ययौचन्द्रसरोवरम् ॥ १६ ॥ चकारतज्जलेक्रीडांगजीभिर्गजराडिव ॥ तत्रचन्द्रःसमागत्यचन्द्रकान्तौमणीशुभौ ॥ १७ ॥ सहस्रदलपद्मेद्वेस्वामिन्यैहरयेददौ ॥ अथकृष्णोहरिःसाक्षात्पश्यन्वृन्दावनश्रियम् ॥१८॥ प्रययौबाहुलवनंलताजालसमन्वितम् ॥ तत्रस्वेदसमायुक्तंवीक्ष्यसर्वंसखीजनम् ॥ १९ ॥ रागंतुमेघमल्लारंजगौवंशीधरःस्वयम् ॥सद्यस्तत्रैववववृषुर्मेघाअंबुकणांस्तथा ॥२०॥ तदैवशीतलोवायुर्ववौगन्धमनोहरः ॥ तेनगोपीगणाःसर्वेसुखंप्राप्ताविदेहराट् ॥२१॥ जगुर्यशःश्रीमुरारेरुच्चैस्तत्रसमन्विताः ॥ तस्मात्तालवनंप्रागाच्छ्रीकृष्णोराधिकापतिः ॥२२॥ रासमंडलमारेभेगायन्व्रजवधूवृतः ॥ तत्रगोपीगणाःसर्वेस्वेदयुक्तास्तृषातुराः ॥ २३ ॥ ऊचूरासेश्वरंरासेकृतांजलिपुटाःशनैः ॥ गोप्यऊचुः ॥ दूरंवैयमुनादेवतृषाजातापरंहिनः ॥ २४ ॥ कर्तव्यंभवताऽत्रैवरासंदिव्यंमनोहरम् ॥ वारांविहारंपानंचकरिष्यामोहरेवयम् ॥ २५ ॥ जगत्कर्तापालकस्त्वंसंहारस्यापिनायकः ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तच्छ्रुत्वावेत्रदण्डेनकृष्णोभूमिंतताडह ॥ २६ ॥

आये, नन्ही फुहारें गिरने लगी ॥२०॥ उसी समय शीतल सुगन्धित मन्द-मन्द पवन चलने लगी, उससे हे विदेहराज ! सब सखीगण सुखी हो गये ॥२१॥ तब वे सब सखीजन वहाँ ऊँचे स्वरसे श्रीकृष्णका यश गाने लगीं, वहाँसे राधिका पति श्रीकृष्ण तालवनको गये ॥ २२ ॥ वहाँ फिर व्रजवधुओंके साथ गान करते श्रीकृष्णने रास करना आरम्भ किया, तब रास करते करते व्रजवधुओंके पसीना आ गया, और वे प्याससे आतुर हो गईं ॥ २३ ॥ तब रासमें रासेश्वर श्रीकृष्णसे हाथ जोडकर धीरे से बोलीं-हे देव ! यमुना तो दूर है, और हमें प्यास बहुत लग आई है ॥२४ ॥ इससे यहाँही आपको रासविहार करना चाहिये, मनोहर जलका विहार, जलका पान करना चाहिये, हम भी करेंगी ॥२५॥ जगत्के कर्ता जगत्के पालक, जगत्के संहारक भी आपही हो, नारदजी कहते हैं कि, हे मैथिल ! ऐसा सुनकर श्रीकृष्णने एक बेंत पृथ्वीमें मारा ॥ २६ ॥

वहींसे स्रोता निकला है, जिसका नाम वेत्रगङ्गा है, जिसके जलके स्पर्शसे ब्रह्महत्या नष्ट हो जाती है ॥ २७ ॥ उसमें स्नान करे, वह नर गोलोकको प्राप्त होता है, उसमें राधिकाके तथा गोपियोंके साथ॥२८॥ मदनमोहन जल विहार करने लगे, उसके बाद, लताओंके समूह जिसमें हैं, उस कुमुदवनमें आये॥२९॥ उस वनमें बड़ी फूलोंकी सुगन्धि वहाँ भ्रमरोंके झुण्डके झुण्ड गुंजार कर रहे हैं,वहाँ सखीजनके साथ रास किया, वहाँ राधिकाजीने श्रीकृष्णका शृंगार किया ॥३०॥ तब नाना प्रकारके दिव्यपुष्प और फल फूल, पत्ते, चिरमिटी, इनसे श्रीकृष्णने व्रजवासिनियोंके देखते उज्ज्वल फेट बनाई,सोनजुहीके सुन्दर सुनहरे बाजू बानये ॥३१॥ हजारों कमलके फूलकी बीचकी कली बीचमें लगाकर मोहनमाला और कुन्द, केतकी कनेरके हार श्रीकृष्णको पहनाये ॥३२॥ कदम्बके पुष्पोंके किरीट, मुकुट कुण्डल, कंकण, पहनाये, कल्पवृक्षोंके फूलका दुपट्टा, कमलके फूलोंकी

तदैवनिर्गतःस्रोतोवेत्रगंगेतिकथ्यते ॥ तज्जलस्पर्शमात्रेणब्रह्महत्याप्रमुच्यते ॥२७॥ तत्रस्नात्वानरःकोपिगोलोकंयातिमैथिल ॥ गोपीभीराधया सार्द्धंश्रीकृष्णोभगवान्हरिः ॥२८॥ वारांविहारंकृतवान्देवोमदनमोहनः ॥ ततःकुमुद्वनंप्राप्तोलतावृन्दमनोहरम् ॥ २९ ॥ भ्रमरध्वनिसंयुक्तंचक्रे रासंसखीजनैः ॥ राधातत्रैवशृंगारंश्रीकृष्णस्यचकारह ॥ ३० ॥ पुष्पैर्नानाविधैर्द्रव्यैःपश्यन्तीनांव्रजौकसाम् ॥ चम्पेकोद्यत्परिकरःस्वर्णयूथि-भुजांगदः ॥३१॥ सहस्रदलराजीवकर्णिकाविलसच्छुतिः ॥ मोहिनीमालिनीकुंदकेतकीहारभृद्धरिः ॥३२॥ कदम्बपुष्पविलसत्किरीटकटको-ज्ज्वलः ॥ मन्दारपुष्पोत्तरीयःपद्मयष्टिधरःप्रभुः ॥ ३३ ॥ तुलसीमंजरीयुक्तवनमालाविभूषितः ॥ एवंशृंगारतांप्राप्तःश्रीकृष्णःप्रिययास्वया ॥ ३४ ॥ बभौकुमुद्वनेराजन्वसन्तोहर्षितोयथा ॥ मृदंगवीणावंशीभिर्मुरुयष्टिसुकांस्यकैः ॥ ३५ ॥ तालशेषैस्तलैर्युक्ताजगुर्गोप्योमनोहरम् ॥ भैरवंमेघमल्लारंदीपकंमालकौशकम् ॥३६॥ श्रीरागंचापिहिन्दोलंरागमेवंपृथक्पृथक् ॥ अष्टतालैस्त्रिभिर्ग्रामैःस्वरैःसप्तभिरग्रतः ॥३७॥ नृत्यैर्नानाविधैरम्यैर्हावभावसमन्वितैः ॥ तोषयन्त्योहरिंराधांकटाक्षैर्व्रजगोपिकाः ॥३८॥ गायन्मधुवनंप्रागात्सुंदरीगणसंवृतः ॥ रासेश्वर्य्यारासलीलांचक्रेरासेश्वरःस्वयम् ॥ ३९ ॥

छड़ी ॥ ३३ ॥ तुलसीकी मंजरीकी वनमाला पहनाई, ऐसा शृंगार प्यारी राधिकाने श्रीकृष्णका किया ॥३४॥ हे राजन् ! तब कुमुदवनमें श्रीकृष्णकी बड़ी शोभा हुई जैसे हर्षित वसन्त ऋतु फुलती है, मृदंग बजने लगे, वीणा बजने लगी और वेण्ड, बांसुरी, मञ्जीरा, मोहचंग, झांझ बजने लगी ॥३५॥ गोपीताल बजाने लगी और मनोहर राग गाने लगी भैरव, मेघ, मल्लार, दीपकराग, मालकोश ॥ ३६ ॥ श्रीराग, हिंडोल, राग पृथक्-पृथक् गतिसे आठ ताल, तीनग्राम, सात स्वरोंसे गाते हैं ॥ ३७ ॥ मनोहर हावभावसे सुन्दर नृत्य करते हैं, श्रीकृष्णको और राधिकाजीको अपने कटाक्षोंसे प्रसन्न करते हैं ॥ ३८ ॥ फिर श्रीकृष्ण गान करते, सुन्दरियोंके गणोंको साथ लेकर मधुवनको आये, वहाँ रासेश्वरीके संग रासेश्वर श्रीकृष्ण रासलीला करने लगे ॥ ३९ ॥

वैशाखकी पूर्णमासीको जिस मधुवनमें मालतीकी सुगन्ध चली आती हैं, कमलके फूलोंकी केसरोंकी रज उड़ती हैं ॥४०॥ खिले हुये मालतीके समूह उनसे शोभित निर्जन मधुवनमें गोपी गणोंसे श्रीकृष्ण रमण करने लगे, जैसे नन्दन वनमें अप्सराओंसे इन्द्र रमता हैं, वैसे रमण करने लगे॥४१॥इति श्रीमद्गर्गसंहितायां वृन्दावनखण्डे भाषाटीकायां रासक्रीडा-वर्णनं नाम सप्तदशोऽध्यायः॥१७॥ नारदजी कहते हैं, इस प्रकार श्रीकृष्ण मनोहर कुन्दनमें, सुन्दर मालतीके वनमें, आमोंके वनमें, नारंगीके वनमें, निम्बुओंके वनमें ॥१॥ अनारके वनमें दाखोंके वनमें, बादामोंके वनमें, कदम्बोंके वनमें, नारियलोंके वनमें, कुटजाके वनमें,॥२॥वट वनमें, कटहरोंके वनमें, पीपलोंके वनमें, तुलसीके वनमें कचनारके वनमें, केतकीके वनमें, केलेके वनमें ॥३॥ करील वनमें, कुञ्ज वनमें, कल्पवृक्षोंके वनमें विचरते हुये व्रज वधुओंके साथ काम वनमें आये ॥४॥ वहाँ पर्वतके ऊपर श्रीकृष्णने मधुर मुरली बजाई उसके नादसे व्रजांगनाएं आनन्दमें विह्वल हो गईं ॥ ५ ॥ मूर्च्छित हो गईं, कामदेवके बाणोंसे पीड़ित देवांगनाएँ विमानोंमें बैठी मूर्च्छित हो गईं, इनके नाडे (नीवी) खुल

वैशाखचन्द्रकौमुद्यांमालतीगन्धवायुना ॥ स्फुरत्सौगन्धकह्लारपतद्रेणुकरेणवै ॥४०॥ विकचन्माधवीवृन्दैःशोभितेनिर्जनेवने ॥ रेमेगोपीगणैः कृष्णोनन्दनेवृत्रहायथा ॥४१॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांवृन्दावनखण्डेरासक्रीडानामसप्तदशोऽध्यायः॥१७॥ श्रीनारदउवाच॥इत्थंकुन्दवनेरम्ये मालतीनांवनेशुभे॥ आम्राणांनागरंगाणांनिंबूनांसघनेवने॥१॥ दाडिमीनांचद्राक्षाणांबदामानांवनेनृप ॥ कदम्बानांश्रीफलानांकुटजानांतथैवच ॥२॥ वटानांपनसानांचपिप्पलानांवनेशुभे ॥ तुलसीकोविदाराणांकेतकीकदलीवने॥३॥करिल्लकुंजबकुलमंदाराणांवनेहरिः ॥ चरन्कामवनंप्रा-गाद्राजन्व्रजवधूवृतः॥४॥ तत्रैवपर्वतेकृष्णोननादमुरलीकलम् ॥ मूर्च्छिताविह्वलाजातास्तन्नादेनव्रजांगनाः॥५॥मनोजबाणभिन्नांगाःश्लथन्नीव्यः सुरैःसह ॥ कश्मलंप्रययूराजन्विमानेष्वमरांगनाः ॥६॥ चतुर्विधाजीवसंघाःस्थावरैर्मोहमास्थिताः ॥ नद्योनदाःस्थिरीभूताःपर्वताद्रवतांगताः ॥७॥ तत्पादचिह्नसंयुक्तोगिरिःकामवनेभवत् ॥ तस्यदर्शनमात्रेणनरोयातिकृतार्थताम् ॥ ८ ॥ अथगोपीगणैःसाकंश्रीकृष्णोराधिकापतिः ॥ नंदीश्वरबृहत्सानुतटेरासंचकारह ॥९॥ तत्रगोप्योतिमानिन्योबभूवुर्मैथिलेश्वर ॥ तास्त्यक्त्वाराधयासार्धंतत्रैवान्तर्दधेहरिः ॥ १० ॥ गोप्यश्च-सर्वाविरहातुराभृशंकृष्णंविनामैथिलनिर्जनेवने ॥ ताबभ्रमुश्चाश्रुकलाकुलाक्ष्योयथाहरिण्यश्चकिताइतस्ततः ॥ ११ ॥

गये और विमानोंमें बैठे देवता भी मोहको प्राप्त हो गये ॥ ६ ॥ चार प्रकारके जीवके समूह स्थावर, जंगम मोहको प्राप्त हो गये, नदी, नद, स्थिर हो गये, पर्वत पिघलने लगे ॥ ७ ॥ काम वनभी श्रीकृष्णके चरणसे पर्वत चिह्नयुक्त हो गया, उससे उसको चरण पहाड़ी कहते हैं, उसके दर्शन मात्रसे ही मनुष्य कृतार्थ होता है ॥ ८ ॥ उसके बाद राधिकाके पति नन्द ग्रामके पर्वत पर गये, गोपी गणोंके साथ रास करने लगे ॥९॥ हे मैथिलेश्वर ! वहाँ गोपियाँ अति मानवती हो गईं,उनको छोड़कर राधिकाको साथ लेकर हरि भगवान् वहीं अन्तर्ध्यान हो गये ॥ १० ॥ तब तो सब गोपियाँ विरहमें आतुर होकर श्रीकृष्णके बिना उस निर्जन वनमें भ्रमित हो गईं, नेत्रोंमें आंसू आ गये, हिरणियोंकी तरह इधर उधर चौंकने लगीं ॥ ११ ॥

श्रीकृष्णको देखे विना, जैसे वनमें हाथीके विना हथिनियाँ, जैसे कुररके विना कुररी, उसी तरह सब व्रजांगनाएँ अत्यन्त विरहमें आतुर होकर रोने लगीं ॥१२॥ उन्मत्त की तरह सब पृथक्-पृथक् वन में झुण्डके झुण्ड, पेड़ोंसे, लताओंसे, नन्द नन्दनको पूछने लगीं कि, हे व्रजके वृक्षो! श्रीनन्दनन्दन कहाँ विराजे हैं, सो हमसे कहो॥१३॥श्रीकृष्ण-श्रीकृष्ण ऐसे पुकारती हैं, श्रीकृष्णके चरण कमलमें जिनका मन लग रहा है, हे राजन्! ऐसी वे गोपियाँ श्रीकृष्णमयी हो गईं, यह बात कुछ आश्चर्य की नहीं है, जैसे भृंगीका मूंदा कीडा भृंगी हो जाता है ॥१४॥ ऐसेही श्रीकृष्णकी पादुकाके नीचे रहनेवाली वे गोपियाँ श्रीकृष्णकी पादुकाकीही शरण प्राप्ति हो गईं ॥ १५ ॥ उसके बाद उन्हीं कृष्णके अनुग्रहसे उन्हींके चरण चिह्नके दर्शन पूजनसे उस समय वहाँ गोपियाँ श्रीकृष्णके चरणोंसे चिह्नित पृथ्वीको देखने लगीं ॥१६॥ बीचमें ही राजा पूछता है–हे प्रभो! राधाके ईश राधा सहित सब गोपियोंको छोड़कर कहाँ चले गये? फिर उन गोपियोंको उनका दर्शन कैसे हुआ? यह मुझसे कहिये ॥ १७ ॥ नारदजी कहते हैं–श्रीकृष्ण राधिकाको साथ लेकर संकेत वटको गये, वहाँ

कृष्णंह्यपश्यन्त्यइतिव्यथांगतायथाकरिण्यःकरिणंविनावने॥यथाकुरर्य्यःकुररंव्रजांगनाःसर्वारुदन्त्योविरहातुराभृशम्॥१२॥उन्मत्तवद्वृक्षलताकदम्बकंसर्वामिलित्वाचपृथग्वनेवने ॥ पप्रच्छुराजन्नृपनंदनंदनंकुत्रस्थितंतंवदताशुभूरुहाः ॥१३॥ श्रीकृष्णकृष्णेतिगिरावदन्त्यःश्रीकृष्णपादाम्बुजलग्नमानसाः॥श्रीकृष्णरूपास्तुबभूवुरंगनाश्चित्रंनपेशस्कृतमेत्यकीटवत् ॥१४॥ श्रीपादुकाधःस्थलगोपिगोप्यःश्रीपादुकाब्जंशरणंप्रपन्नाः ॥१५॥ ततस्तुतत्प्रसादेनतत्पादार्चनदर्शनात् ॥ ददृशुर्गांतदागोप्योभगवत्पादचिह्निताम् ॥ १६ ॥ बहुलाश्व उवाच ॥ राधेशोराधयासार्धंहित्वागोपीर्ययौक्वभोः ॥ तद्दर्शनं कथंजातंगोपीनांवदमेप्रभो ॥ १७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रीकृष्णोराधयासार्द्धंसंकेतवटमाविशत् ॥ प्रियायाःकबरीपुष्परचनांसचकारह॥१८॥श्रीकृष्णकुन्तलेनीलेवक्रत्वंराधिकाकरोत् ॥ चित्रपत्रावलीःकृष्णपूर्णेन्दुमुखमण्डले॥१९॥एवंकृष्णोभद्रवनंखदिराणांवनंमहत्॥बिल्वानांचवनंपश्यन्कोकिलाख्यंवनंगतः॥२०॥गोप्यःकृष्णंविचिन्वन्त्योददृसुस्तत्पदानिच॥यवचक्रध्वजच्छत्रैःस्वस्तिकांकुशबिन्दुभिः॥२१॥अष्टकोणेनवज्रेणपद्मेनाभियुतानिच॥नीलशंखघटैर्मत्स्यत्रिकोणेषूर्ध्वधारकैः ॥२२॥ धनुर्गोखुरचन्द्रार्द्धशोभितानिमहात्मनः।तत्पदान्यनुसारेणव्रजन्त्योगोपिकास्ततः।२३।तद्रजःसततंनीत्वाधृत्वामूर्ध्निव्रजांगनाः। पदान्यन्यानिददृशुरन्यचिह्नान्वितानिच।२४।

राधिकाजीकी वेणी फूलोंसे गूँथी ॥ १८ ॥ और राधिकाने श्रीकृष्णके केशोंको घुंघर वाले छल्लेदार बनाकर पूर्ण चन्द्रमासे मुख पर चित्र भृंगी रचना की ॥ १९ ॥ ऐसेही श्रीकृष्ण भद्रवन, खदिर वन, विल्ववन को देखते हुए कोकिलावनको गये ॥ २० ॥ श्रीकृष्णको ढूँढती, हुई गोपियोंने उनके चरण चिह्न फिर देखे, चक्र, जौ, ध्वजा, छत्र, स्वस्तिक और अंकुश, विन्दु, इन चिह्नोंसे युक्त चरण देखे ॥२१॥ अष्टकोण, वज्र, पद्म, नील, शंख, कुम्भ, मत्स्य, त्रिकोण, बाण, उर्ध्व रेखा, ॥२२॥ धनुष, गोखुर, अर्द्धचन्द्र ये श्रीकृष्णके चरण चिह्न, देखे इन चरण चिह्नोंको देखती हुई गोपियाँ आगे चलीं ॥ २३ ॥ गोपी जनोंने उन चरणोंकी रज उठाकर मस्तक पर चढ़ाली, आगे चलकर उन्हीं चरण चिह्नोंमें मिले, और भी चरण और ही जिनमें चिह्न वे देखे ॥ २४ ॥

॥७६॥

उनको कहते हैं, ध्वजा, कमल, छत्र, यव, उर्द्धरेखा, चक्र, चन्द्रार्द्ध और अंकुश, बिन्दु इनसे शोभित हैं ॥२९॥ लवंग (लौंग) की लता, गदा, मत्स्य, शंख, पर्वत, शक्ति ॥२६॥ सिंहासन, रथ, दो बिन्दु, ये उन्नीस चिह्न देखकर बोली कि, सुनो सखियो ! राधिकाके संग नन्दनन्दन गये ॥ २७ ॥ उन चरणोंको देखते २ कोकिला वनको गईं, गोपियोंका कोलाहल सुनकर श्रीकृष्ण राधिकासे बोले ॥ २८ ॥ हे कोटि चन्द्रप्रकाशे ! हे प्रिये ! हे राधे ! जल्दी चलो, सब गोपियाँ आती हैं, ये सब ओरसे घेरकर तुम्हें ले जायँगी॥२९॥ ऐसे सुन राधा भी मानवती होकर रमापतिसे बोली कैसी हैं, कि रूप यौवन, चतुराई, शील, गर्व, इनकी भरी हैं ॥३०॥ राधा बोली, मैं तो चलनेमें समर्थ नहीं हूँ, कभी घरसे बाहर भी नहीं निकली हूँ, सुकुमारी हूँ, पसीना आ रहे हैं, हे प्रिये ! मुझे कैसे ले चलोगे॥३१॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे राधिकाका वचन सुनकर श्रीकृष्ण दिव्य पीताम्बरसे हवा करने लगे ॥ ३२ ॥ हाथमें हाथ पकड़कर बोले हे प्रिये ! जैसे चला जाय वैसे चलो, कृष्णने कहा भी, किन्तु फिरभी उनके संग नहीं चली ॥ ३३ ॥ और श्रीकृष्णको पीठ देकर

केतुपद्मातपत्रैश्चयवेनाथोर्ध्वरेखया ॥ चक्रचन्द्रार्द्धांकुशैश्चबिन्दुभिःशोभितानिच ॥ २९ ॥ लवंगलतिकाभिश्चविचित्राणिविदेहराट् ॥ गदापाठीनशंखैश्चगिरिराजेनशक्तिभिः ॥२६॥ सिंहासनरथाभ्यांचबिन्दुद्वययुतानिच ॥ वीक्ष्मप्राहूराधिकयागतोसौनंदनंदनः ॥२७॥ पश्यन्त्यस्तत्पादपद्मंकोकिलाख्यंवनंगताः ॥ गोपीकोलाहलंश्रुत्वाराधिकांप्राहमाधवः ॥ २८ ॥ कोटिचंद्रप्रतीकाशेराधेसर्पत्वरंप्रिये ॥ आगतागोपिकाःसर्वास्त्वांनेष्यन्तिहिसर्वतः ॥ २९ ॥ तदामानवतीराधाभूत्वाप्राहरमापतिम् ॥ रूपयौवनकौशल्यशीलगर्वसमन्विता ॥ ३० ॥ राधोवाच ॥ चलितुंनसमर्थाहंमन्दिरान्नविनिर्गता ॥ सुकुमारीस्वेदयुक्ताकथंमांनयसिप्रिय ॥ ३१ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ इतिवाक्यंततःश्रुत्वाश्रीकृष्णोराधिकेश्वरः ॥ पीताम्बरेणदिव्येनवायुंतस्यैचकारह ॥ ३२ ॥ हस्तंगृहीत्वातामाहगच्छराधेयथासुखम् ॥ कृष्णेनापितदाप्रोक्तानययौतेनवैपुनः ॥ ३३ ॥ पृष्ठंदत्त्वाथहरयेतूष्णींभूतास्थितापुनः ॥ प्रियांमानवतींराधांप्राहकृष्णःसतांप्रियः ॥ ३४ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ विहायगोपीरिहकामयानाभजाम्यहंमानिनिचेतसात्वाम् ॥ यत्तेप्रियंतत्प्रकरोमिराधेमेस्कन्धमारुह्यसुखंव्रजाशु ॥ ३९ ॥ श्रीनारदउवाज ॥ एवंप्रियांप्रियतमःस्कन्धयानेप्सितांनृप ॥ विहायान्तर्दधेकृष्णोस्वच्छन्दगतिरीश्वरः ॥ ३६ ॥ गतमानाकीर्तिसुताभगवद्विरहातुरा ॥ उच्चैरुरोदराजेन्द्रकोकिलाख्येवनेपरे ॥३७॥ तदेवयूथाःसंप्राप्तागोपीनांमैथिलेश्वर ॥तद्रोदनंदुस्तरंश्रुत्वाजग्मुस्त्रपातुराः॥३८॥

फिर चुप होकर खड़ी हो गईं, तब प्रियाको मानवती देखकर संतोंके प्रिय भगवान् बोले ॥ ३४ ॥ कि हे मानिनि ! चाह करनेवाली सब गोपियोंको छोड़कर बड़े प्यारसे तुमको मैं अपने चित्तसे भजता हूँ, इसीसे ले आया हूँ, जो तुमको अच्छा लगे, वही करता हूँ, तुम मेरे कन्धेपर बैठकर सुखपूर्वक जल्दीसे चली चलो ॥ ३९ ॥ नारदजी कहते हैं ऐसे प्रियतम प्रियाको कहकर जब वह कंधेपर चढ़नेको उद्यत हुईं, तभी श्रीकृष्ण अन्तर्ध्यान हो गये, प्रभुकी इच्छारूप गति है, इसीसे ईश्वर हैं ॥३६॥ तब तो जिसका मन चला गया ऐसी कीर्ति सुता राधा भगवान्के विरहमें आतुर होगईं, हे राजेन्द्र ! उस कोकिलावनमें ऊँचे स्वरसे रोने लगी ॥ ३७ ॥ हे मैथिलेश्वर ! तभी सब गोपियोंके यूथ दयासे आतुर होकर वहीं चले आये, जब प्यारीका अत्यन्त रोदन सुना, तो अत्यन्त लज्जित हुईं ॥ ३८ ॥

कोई तो अपनी स्वामिनीको इत्रोंसे स्नान कराने लगी, कोई चन्दन, अगर, केशर, कस्तूरी, के घिसे अरगजाका लेप करने लगी और छींटे देने लगी॥३९॥ कोई चामर पंखाओंसे हवा करने लगी और विनय करनेमें चतुरा कोई वाणियोंसे समझाने लगी॥४०॥ और कोई गोपी अरी सखियों! मैंने उस कृष्ण महात्मासे मान किया, उसका यह फल पाया, इस बातको उसीके मुखसे सुनकर अति आश्चर्य करने लगी॥४१॥ इतिश्री गर्गसंहितायां वृन्दावन खण्डे भाषाटीकायां रासवर्णनं नामाष्टादशोध्यायः ॥१८॥ नारदजी कहते हैं अब सब सखियाँ मिलकर श्रीकृष्णके जो रम्य गुण हैं, उन्हें रम्य स्वर तालसे श्रीकृष्णके आनेके लिये गाने लगीं ॥ १ ॥ गोपियाँ बोली कि, हे लोकाभिराम ! हे जनभूषण ! हे विश्वदीपक ! हे मदन मोहन ! हे जगत्के आर्ति दुखोंको हरनेवाले ! हे आनन्द कन्द ! हे यदुनन्दन ! हे नन्दन सूनो ! स्वच्छन्द पद्ममकरन्द ! आपके लिये बारम्बार नमस्कार है ॥ २ ॥

काश्चितांमकरन्दैश्चस्नापयांचक्रुरीश्वरीम् ॥ चन्दनागुरुकस्तूरीकुंकुमद्रवसीकरैः॥३९॥वायुंचक्रुस्तदंगेषुव्यजनान्दोलचामरैः॥आश्वास्ववाग्भिः परमांनानाऽनुनयकोविदैः ॥४०॥ तन्मुखान्मानिनोमानंश्रुत्वाकृष्णस्यगोपिकाः॥मानवत्योमैथिलेन्द्रविस्मयंपरमंययुः॥४१॥ इति श्रीमद्गर्ग-संहितायांवृन्दावनखण्डेरासक्रीडानामाष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथकृष्णगुणान्रम्यान्समेताःसर्वयोषितः ॥ जगुस्तालस्वरै रम्यैःकृष्णागमनहेतवे ॥१॥ गोप्यऊचुः ॥ लोकाभिरामजनभूषणविश्वदीपकन्दर्पमोहनजगद्वृजिनार्तिहारिन् ॥ आनन्दकन्दयदुनन्दननन्द सूनोस्वच्छन्दपद्ममकरन्दनमोनमस्ते ॥ २ ॥ गोविप्रसाधुविजयध्वजदेववन्द्यकंसादिदैत्यवधहेतुकृतावतार ॥ श्रीनन्दराजकुलपद्मदिनेशदेव देवादिमुक्तजयदर्पणतेजयोऽस्तु।३। गोपालसिन्धुपरमौक्तिकरूपधारिन्गोपालवंशगिरिनीलमणेपरात्मन्॥ गोपालमण्डलसरोवरकंजमूर्तेगोपाल चन्दनवनेकलहंसमुख्य ॥४॥ श्रीराधिकावदनपंकजषट्पदस्त्वंश्रीराधिकावदनचन्द्रचकोररूपः ॥ श्रीराधिकाहृदयसुन्दरचन्द्रहारःश्रीराधिका मधुलताकुसुमाकरोसि ॥५॥ योरासरंगनिजवैभवभूरिलीलोयोगोपिकानयनजीवनमूलहारः ॥ मानंचकाररहसाकिलमानवत्यांसोयंहरिर्भवतु नोनयनाग्रगामी ॥ ६ ॥

जो ब्राह्मण, साधू, महात्माओंकी आप ध्वजा हैं; आप देवताओंके पूज्य हैं, कंसादि दैत्योंके वधकेलिये आपने अवतार धारण किया है, कन्दर्प मोहन ! हे नन्द राजकुल कमलके सूर्य ! हे देवादि मुक्तजनोंके दर्पण ! अपना उत्कर्ष करो ॥३॥ हे गोपाल समुद्रके उत्तम मोती ! हे गोपाल वंशरूपी पर्वतके नील मणि ! हे परात्मन् ! हे गोपाल मंडलरूप सरोवरके कमल रूप ! हे गोपालचन्दनवनके कल हंसोंमें मुख्य ! ॥ ४ ॥ आप श्रीराधिकाके मुखकमलके भ्रमर हो, श्री राधिकाके मुखचन्द्रके चकोर रूप हो, श्रीराधिकाके हृदयके सुन्दर चन्द्रहार हो, राधिकाही जो लता उसको वसन्त ऋतुकी तरह प्रफुल्लित करनेवाले हो ॥ ५ ॥ जो तुम रास रंग तथा अपने वैभव से अनेक लीलाके करनेवाले हो, जो गोपियोंके नेत्रोंके जीवनमूल हार हो, जो मानवती राधाका मान बढ़ाया वह हरि हमारे नेत्रोंके सन्मुख आओ ॥ ६ ॥

जिन्होंने सम्पूर्ण गोपियोंके यूथोंको शोभायमान किया, जिन्होंने अपने चरणकमलकी रजसे वृन्दावनकी शोभा बढ़ाई और गोवर्द्धनकी शोभा बढ़ाई, जो सब लोकके वैभव बढ़ानेको भूमिमें प्रकट हुये बहुत लीलाओंके करनेवाले और भुजगेन्द्रकीसी सुन्दर भुजावाले को हम भजते हैं ॥ ७ ॥ हे प्रिय ! तुम्हारे विना चन्द्रमा तो सूर्य और अग्निसा गर्म लगता है, महल मन्दिर, अग्निसे जलते दीखते हैं, सम्पूर्ण वन असिपत्र वनसा लगता है, शीतल, मन्द, सुगन्धित पवन बाणसी लगती है, एक तुम्हारे विना हम बड़ी दुःखी हैं ॥८॥ सौदास राजा वशिष्ठके शापसे ब्रह्मराक्षस हो गया, तब उसकी मदयन्ती रानीको जैसा अत्यन्त दुःख हुआ था, उससे हजार गुणा नलराजाकी दमयन्ती रानीको हुआ था उससे अनंत गुणा दुःख हे हरे ! हमको है ॥ ९ ॥ नारदजी कहते हैं—ऐसे जब गोपियाँ रोने लगीं, तब कमललोचन श्रीकृष्ण कृपा करके आपही प्रकट हुये हैं, जैसे अपना अर्थ आप ही आता है ॥१०॥ कैसे प्रकट हुये हैं, झलामला रहे किरीट, कुण्डल, बाजू जिनके चिकनी स्वच्छ और सुगंधित नील घुँघराली अलकावलि छिटक रही हैं ऐसे रूपसे आये ॥११॥

योगोपिकासकलयूथमलंचकारवृन्दावनंचनिजपादरजोभिरद्रिम्॥यःसर्वलोकविभवायबभूवभूमौतंभूरिनीलसुरगेन्द्रभुजंभजामः॥७॥ चंद्रप्रतप्तकिरणज्वलनंप्रसन्नंसर्ववनांतमसिपत्रवनप्रवेशम्॥ बाणंप्रभंजनमतीवसुमन्दयानंमन्यामहेकिलभवन्तमृतेन्यथार्ताः॥८॥ सौदासराजमहिषीविरहादतीवजातंसहस्रगुणितंनलपट्टराज्ञ्याः ॥ तस्मात्तुकोटिगुणितंजनकात्मजायास्तस्मादनन्तमतिदुःखमलंहरेनः ॥९॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थं राजन्रुदन्तीनांगोपीनांकमलेक्षणः॥ आविर्बभूवसहसास्वयमर्थमिवात्मनः ॥१०॥ स्फुरत्किरीटकेयूरकुंडलांगदभूषणम् ॥ स्निग्धामलसुगन्धाढ्यनीलकुंचितकुन्तलम् ॥११॥ आगतंवीक्ष्ययुगपत्समुत्तस्थुर्व्रजांगनाः ॥ तन्मात्रानिचयंदृष्ट्वायथाज्ञानेन्द्रियाणिच ॥ १२ ॥ हरिर्ननर्ततन्मध्येवंशीवादनतत्परः॥ राधयासहितोराजन्यथारत्यारतीश्वरः॥१३॥ यावतीर्गोपिकाःसर्वास्तावद्रूपधरोहरिः॥ गच्छंस्ताभिर्व्रजेरेमेस्वावस्थाभिर्मनोयथा ॥१४॥ वनोद्देशेस्थितंकृष्णंगतदुःखाव्रजांगनाः ॥ कृतांजलिपुटाऊचुर्गिरागद्गदयाहरिम् ॥१५॥ गोप्यऊचुः ॥ क्वगतस्त्वंवदहरेत्यक्त्वागोपीगणोमहान् ॥ सर्वंजत्तृणीकृत्यत्वत्पादेप्राप्तमानसः ॥ १६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ हे गोप्यःपुष्करद्वीपेहंसोनाममहामुनिः समुद्रेदधिमंडोदेततापान्तर्गतस्ततः ॥ १७ ॥

तब आये हुये श्रीकृष्णको देखकर सब व्रजगोपी एक साथ उठकर खड़ी हो गईं, जैसे जीव पड़नेपर सब शब्दादितन्मात्रा और ज्ञानेन्द्रियाँ चेष्टा करने लगती हैं ॥१२॥ तब श्रीकृष्ण उनके बीचमें प्रसन्न होकर वंशी बजाते राधाके सहित नृत्य करने लगे, जैसे रतिके संग कामदेव नाचते हैं ॥१३॥ जितनी गोपियाँ थीं, उतनेही श्रीकृष्णरूप हो गये, उनके संग व्रजमें चलते विहार करने लगे, जैसे अपनी अवस्थाओंके संग मन विहार करता है ॥१४॥ उस वनमें श्रीकृष्णको गद्दीपर बैठाकरके प्रसन्न हुई वे सब गोपियाँ हाथ जोड़कर गद्गद वाणीसे कृष्णसे बोलीं ॥ १५ ॥ क्यों प्रभो ! सब गोपीगणोंको छोड़कर आप कहाँ चले गये थे ? हमने सब जगत्को तृणके समान जान करके आपके चरणकमलोंमें मन लगाया ॥ १६ ॥ और तुम हमको छोड़कर चले गये, तब भगवान् बोले—हे गोपियो ! पुष्करद्वीपमें एक हंस नाम मुनीश्वर दधिमंडोद समुद्रमें तप करता था ॥ १७ ॥

वह निष्काम भक्तिसे मेरे ध्यानमें मग्न था सो उसे तप करते-करते हे गोपियो ! दो मन्वतर व्यतीत हो गये हैं ॥ १८ ॥ सो तब ऋषिको ! दो कोशके जितने शरीरवाला मगर (मत्स्य) निगल गया, उस मगरको पौंड्र नाम एक मत्स्यरूपी असुर निगल गया ॥१९॥ इस प्रकार हंस मुनि कष्टको प्राप्त हो गये, तब वहाँ जाकर मैंने दोनोंके शिर काटकर सुदर्शन चक्रसे मुनिको छुड़ाया ॥ २० ॥ हे व्रजांगनाओ ! फिर मुनिको छुड़ाकर मैं श्वेतद्वीपको चला गया, तब मैं क्षीर समुद्रमें शय्यापर सो गया ॥२१॥ फिर तुमको दुखी जानकर हे प्यारियो ! नींदको त्यागकर यहाँ चला आया हूँ, क्योंकि मैं भक्त वत्सल हूँ, अकस्मात् फिर वहाँ आ गया हूँ ॥२२॥ जो इन्द्रियोंका दमन करनेवाले अपेक्षारहित महान्त समदर्शी संत हैं, वे मुझको जानते हैं, और वे ही महात्मा निरपेक्ष मेरे नैरपेक्ष्य सुखको जानते हैं, जैसे ज्ञानेन्द्रियां रसको जानती हैं ॥२३॥ गोपियाँ बोली कि हे प्रभो ! क्षीर

चकाराहैतुकीभक्तिममध्यानपरायणः ॥ व्यतीतंतस्यतपतोगोप्योमन्वन्तरद्वयम् ॥१८॥ तमद्यैवाग्रसन्मत्स्योयोजनार्द्धवपुर्द्धरः॥तन्निर्जगारपौं-
ड्रस्तुमत्स्यरूपधरोऽसुरः ॥१९॥ एवंसंप्राप्तकष्टस्यहंसस्यापिमुनेरहम् ॥ गत्वाथशीघ्रेणतयोःशिरश्छित्त्वारिणामुनिम्॥२०॥ मोचयित्वाथगत-
वान्श्वेतद्वीपेव्रजांगनाः ॥ क्षीराब्धौशेषपर्यंकेशयनंतुमयाकृतम् ॥२१॥ दुखिताभवतीर्ज्ञात्वानिद्रांत्यक्त्वाततःप्रियः॥ सहसाभक्तवश्योहंपुनरा-
गतवानिह ॥२२॥ जानन्तिसन्तःसमदर्शिनोयेदान्तामहान्तःकिलनैरपेक्ष्याः ॥ तेनैरपेक्ष्यंपरमंसुखंमेज्ञानेन्द्रियादीनियथारसादीन् ॥ २३ ॥
गोप्यऊचुः ॥ क्षीराब्धौशेषपर्यंकेयद्रूपंचत्वयाधृतम् ॥ तद्रूपदर्शनंदेहियदिप्रीतोसिमाधव ॥ २४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तथास्तुचोक्त्वाभ-
गवान्गोपीव्यूहस्यपश्यतः ॥ दधाराष्टभुजंरूपंश्रीराधारूपमेवच ॥२५॥ तत्रक्षीरसमुद्रोभूल्लोलकल्लोलमंडितः ॥ दिव्यानिरत्नसौधानिबभूवुर्मं-
गलानिच ॥२६॥ तत्रशेषोबिसश्वेतःकुण्डलीभूतसंस्थितः॥ बालार्कमौलिसाहस्रफणाछत्रविराजितः ॥२७॥ तस्मिन्वैशेषपर्यंकेसुखंसुष्वापमा-
धवः ॥ यस्यश्रीरूपिणीराधापादसेवांचकारह ॥२८॥ तद्रूपसुन्दरंदृष्ट्वाकोटिमार्तंडसन्निभम् ॥ नत्वागोपीगणाः सर्वेविस्मयंपरमंगताः ॥२९॥
गोपीभ्योदर्शनंदत्तंयत्रकृष्णेनमैथिल ॥ तत्रक्षेत्रंमहापुण्यंजातंपापप्रणाशनम् ॥ ३० ॥

समुद्रमें शेष शय्यापर जो रूप आपने धारण किया था, वह रूप हमको दिखलाइये, यदि आप प्रसन्न हैं तो ॥ २४ ॥ ऐसे जब गोपियोंने श्रीकृष्णसे कहा तब सब गोकियोंके देखते-देखते अष्टभुजी रूप धारण कर लिया और श्रीराधाजी लक्ष्मीरूपा हो गईं ॥ २५ ॥ वहीं क्षीर समुद्र हो गया, जिसमें चंचल लहरें उठने लगीं, दिव्य रत्नोंके महल बन गये, अनेक मंगल होने लगे ॥ २६ ॥ वहाँ कमलनालके समान श्वेतवर्ण जिनका ऐसे कुंडली बनाये बैठे शेषजी प्रकट हो आये, वालसूर्यसा तेज जिनका ऐसे हजार फणोंके छत्रसे शोभित हुये ॥२७॥ उस शेष शय्यापर सुखसे लक्ष्मीपति सोये, जिनकी राधिका लक्ष्मीजी होकर चरण सेवा कर रही हैं ॥ २८ ॥ करोड़ सूर्यकासा जिसका तेज ऐसे अति सुन्दररूपको देखकर सब गोपियोंके गण नमस्कार करके आश्चर्यमें आ गये ॥२९॥ हे मैथिल ! जहाँ श्रीकृष्णने गोपियोंको दर्शन दिया, वह पापका नाश करनेवाला पवित्र क्षेत्र हो गया ॥३०॥

फिर गोपीगणोंको साथ लेकर श्रीकृष्ण यमुना पर आये, कालिंदीके जलकी धारामें क्रीडा करने लगे ॥ ३१ ॥ तब राधाजीके हाथमेंसे एक लाख दलके कमलको और वस्त्रको लेकर श्रीकृष्ण हँसते भगे, सो भागते २ जलमें चले गये ॥ ३२ ॥ तब राधाजी श्रीकृष्णके हाथमेंसे वंशी, बेंत, और पीताम्बरको लेकर हँसते २ यमुना जलमें प्रविष्ट हो गई ॥ ३३ ॥ जब श्रीकृष्णने कहा कि, हे राधिके ! हमारी बेंत, मुरली और पीताम्बर दे, तब राधाजी कहने लगी कि, आप कमल वस्त्र दीजिये ॥ ३४ ॥ तब श्रीकृष्णने तो राधिकाजीको लक्षदल कमल और नीलाम्बर दे दिया, और राधाजीने मुरली, बेंत और पीताम्बर दे दिया ॥ ३५ ॥ इसके बाद श्रीकृष्ण घुटने तक लटकती वैजयन्ती मालाको धारण किये मनोहर गान करते भाण्डीर वनको चले आये ॥ ३६ ॥ वहाँ आकर चतुरोंके ईश्वर श्रीकृष्णने राधाजीका शृंगार किया, पत्रावलीकी रचनासे मेंहदी, महावर अंजन, काजल, केसर, फल, फूलोंके आभूषण (गहने) पहनाये ॥ ३७ ॥ तब चन्दन, अगर, केसर, कस्तूरी, इनसे श्रीराधिकाजीने पत्र भंगी रचना अनेक रंगोंसे मुख कपोलादिको चित्रित कर, उससे श्रीकृष्णका

अथोगोपीगणैःसार्द्धंयमुनामेत्यमाधवः॥ कालिन्दीजलवेगेषुकलांकेलिंचकारह ॥३१॥ राधाकराल्लक्षदलंपद्मंनीत्वांबरंतथा॥धावञ्जलेषुगतवान्प्रहसन्माधवःस्वयम् ॥ ३२ ॥ राधाहरेःपीतपटंवंशीवेत्रस्फुरत्प्रभम् ॥ गृहीत्वाप्रहसन्तीसागच्छन्तीयमुनाजले ॥३३॥ वंशींदेहीतिवदतः श्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥ राधाजगादकमलंवासोदेहीतिमाधव॥३४॥ कृष्णोददौराधिकायैपद्मंमंबरमेवच ॥ राधाददौपीतपटंवेत्रंवंशींमहात्मने ॥३५॥अथकृष्णःकलंगायन्मालामाजानुलंबिताम् ॥ वैजयन्तीमादधानःश्रीभांडीरंजगामह॥ ३६ ॥ प्रियायास्तत्रशृंगारंचकारकुशलेश्वरः ॥ पत्रावलीयावकाग्रैःपुष्पैःकज्जलकुंकुमैः ॥ ३७ ॥ चन्दनागुरुकस्तूरीकेसराद्यैर्हरेर्मुखे ॥ पत्रंचकारशृंगारेमनोज्ञंकीर्तिनन्दिनी ॥ ३८ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांवृंदावनखण्डेरासक्रीडानामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथकृष्णोगोपिकाभिर्लोहजंघवनंययौ ॥ वसन्तमाधवीभिश्चलताभिःसंकुलंनृप ॥१॥ तत्पुष्पदामनिचयैःस्फुरत्सौगंधिशालिभिः ॥ सर्वासांहरिणातत्रकबर्योगुंफितास्ततः ॥२॥ भ्रमरध्वनिसंयुक्तेसुगन्धानिलवासिते ॥ कालिन्दीनिकटेकृष्णोविचचारप्रियान्वितः ॥३॥ करिल्लैःपीलुभिःश्यामैस्तालैश्चसंकुलद्रुमैः ॥ महापुण्यवनंकृष्णोययौरासेश्वरोहरिः ॥ ४ ॥

शृंगार किया ॥ ३८ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां वृन्दावनखण्डे भाषाटीकायां रासक्रीडा वर्णनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ नारदजी कहते हैं इसके बाद श्रीकृष्ण गोपियोंको साथ लेकर लोह जंघ वनमें आये, जो वन वसंत माधवीकी लताओंसे सघन हो रहा है, उस वनमें ॥१॥ श्रीकृष्णने जिन फूलोंकी सुगन्धिसे वह सुगन्धवती थीं, उन फूलोंसे सब गोपियोंकी काकुल (पटिया) गूंथी ॥ २ ॥ उस वनमें मतवाले भ्रमरोंकी गुंजारसे वन झंकार रहा था, चारों ओरसे फूलोंकी बड़ी भारी सुगन्धिसे सुगन्धित, कालिंदीके निकट उस वनमें प्रियाका हाथ पकड़े श्रीकृष्ण विचरने लगे ॥ ३ ॥ जो वन शाल, ताल, तमाल केला, कदंब पीलू, करील कचनार, इत्यादिक वृक्षोंसे व्याप्त है, रासके ईश्वर हरि उस महापुण्य वनमें आये ॥ ४ ॥

वहाँ रासेश्वरी राधिकाके संग रास करने लगे, उनके यशको गोपियाँ गाती हैं, जैसे इन्द्रके यशको अप्सरायें गाती हैं ॥५॥ वहाँ एक बड़ा आश्चर्य हुआ, उसको तुम मेरे मुखसे सुनो, एक शंख चूड नामक यक्ष कुबेरका सेवक, महाबली ॥६॥ पृथ्वीमें जिसके समान कोई बली नहीं है, गदा युद्धमें बड़ा प्रवीण, मेरे मुखसे महदुत्कट कंसका बल सुनकर ॥७॥ एक लाख भारकी अष्टधातुकी गदाको लेकर कंसकी सभामें आकर कंसको प्रणाम करके महायक्ष शंख चूड प्रचण्ड पराक्रमी मदसे उद्धत ॥८॥ सभामें बैठे कंससे बोला, कि हे कंस ! तुम मुझसे गदा युद्ध करो, तुमने त्रिलोकीको जीता है ॥९॥ यदि तुम जीत जाओगे तो मैं तुम्हारा दास हो जाऊँगा, और यदि मैं जीत जाऊँ तो तुम मेरे दास हो जाना ॥१०॥ उसके गदा युद्धको स्वीकृत करके हे विदेह राज ! कंस बड़ी भारी गदा लेकर रंग भूमिमें शंख चूडके साथ लड़ा ॥११॥ तब दोनोंका बड़ा घोर युद्ध हुआ, उनके शरीरमें पड़ी, प्रहारकी हुई गदाओंका ऐसा चटचटा शब्द हुआ, जैसे प्रलयके मेघ गर्जते हैं या जैसे बिजली तड़ तड़ाकर गिरती है ॥ १२ ॥ उन दोनोंकी रंग भूमिमें कैसी शोभा हुई

तत्ररासंसमारेभेरासेश्वर्यासमन्वितः ॥ गीयमानश्चगोपीभिरप्सरोभिःस्वराडिव ॥५॥ तत्रचित्रमभूद्राजञ्शृणुत्वंतन्मुखान्मम ॥ शंखचूडोनाम यक्षोधनदानुचरोबली ॥६॥ भूतलेतत्समोनास्तिगदायुद्धविशारदः ॥ मन्मुखादौग्रसेनेश्चबलंश्रुत्वामहोत्कटम् ॥ ७ ॥ लक्षभारमयींगुर्वींगदा-मादाययक्षराट् ॥ स्वसकाशान्मधुपुरीमाययौचण्डविक्रमः ॥८॥ सभायामास्थितंप्राहकंसंनत्वामदोद्धतः ॥ गदायुद्धंदेहिमह्यंत्रैलोक्यविजयी भवान् ॥९॥ अहंदासोभवेयंवैभवांश्चविजयीयदि ॥ अहंजयीचेद्भवंतंदासंशीघ्रंकरोम्यहम् ॥१०॥ तथास्तुचोक्त्वाकंसस्तुगृहीत्वामहतींगदाम् ॥ शंखचूडेनयुयुधेरंगभूमौविदेहराट् ॥११॥ तयोश्चगदयायुद्धंघोररूपंबभूवह ॥ ताडनाच्चट्चटाशब्दंकालमेघतडिद्ध्वनिः ॥१२॥ शुशुभातेरंग मध्येमल्लौनाटचनटाविव ॥ इभेन्द्राविवदीर्घांगौमृगेन्द्राविवचोद्भटौ ॥१३॥ द्वयोश्चयुध्यतोराजन्परस्परजिगीषया ॥ विस्फुलिंगान्क्षरन्त्योद्वेग देचूर्णीबभूवतुः ॥ १४ ॥ कंसःप्रकुपितंयक्षंमुष्टिनाऽभिजघानह ॥ शंखचूडोपितंकंसंमुष्टिनासंतताडच ॥ १५ ॥ मुष्टामुष्टितयोरासीद्दिनानांसप्त विंशतिः ॥ द्वयोरक्षीणबलयोर्विस्मयंगतयोस्ततः ॥ १६ ॥ शंखचूडंसंगृहीत्वाकंसोदैत्याधिपोबली ॥ बलाच्चिक्षेपसहसाव्योम्निंतंशतयोजनम् ॥ १७ ॥ शंखचूडःप्रपतितःकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥ कंसंगृहीत्वानभसिचिक्षेपायुतयोजनम् ॥ १८ ॥

जैसे दो मल्ल अथवा नाचते दो नट, अथवा पुष्ट अंग वाले दो हाथी, अथवा जैसे उद्भट दो सिंह लड़ते हैं ॥१३॥ हे राजन् ! परस्पर जीतनेकी इच्छासे दोनोंके लड़ते २ गदाओंमें से पतंगा छट छट करके दोनोंकी गदा चूर्ण हो गई ॥१४॥ कंसने कुपित हुये शंख चूडके एक घूसा मारा, तब शंख चूडने भी कंसके घूंसा मारा ॥१५॥ इस प्रकार उन दोनोंकी घूंसा घूँसी सत्ताईस दिनतक हुई, परन्तु बल किसीका भी नहीं घटा दोनों आश्चर्य करने लगे ॥१६॥ तब कंसने शंख चूडको पकड़ कर बड़े जोरसे आकाशमें सौ योजन ऊँचा फेंक दिया ॥१७॥ तब व्याकुल हो शंख चूड पृथ्वीमें जा गिरा, फिर उसने कंसको पकड़कर फिराकर आकाशमें फेंक दिया, तब कंस आकाशमें दश हजार.योजन ऊँचा चला गया ॥ १८ ॥

फिर कंस आकाशसे धरतीपर आ गिरा, कुछ व्याकुल मन हो गया, फिर कंसने शंखचूड को धरती पर गिरा दिया ॥ १९ ॥ फिर शंखचूडने उठाकर कंसको धरती पर गिरा दिया, ऐसे जब दोनोंका युद्ध हुआ, तब भूमण्डल काँपने लगा ॥ २० ॥ तब सर्वज्ञ मुनि साक्षात् गर्गाचार्य आये उन्हें दोनोंने प्रणाम किया तो गर्गजी बड़ी गम्भीर वाणीमें कंससे बोले ॥ २१ ॥ हे राजेन्द्र ! तुम युद्ध मत करो, इसमें कुछ फल नहीं है, यह शंखचूड भी तुम्हारेही समान महाबली है ॥ २२ ॥ पहले तुम्हारे घूँसेके प्रहारसे ऐरावत हाथी मूर्छित होकर घुटनोंसे धरतीमें गिर पड़ा था और बड़े खेदको प्राप्त हुआ था ॥२३॥ और भी बड़े २ दैत्य तुम्हारे घूसेके प्रहारसे मर गये, परन्तु शंखचूड नहीं मरा इसमें कुछ संदेह की बात नहीं है, उसे तुम सुनो ॥२४॥ जो परिपूर्णतम भगवान् तुमको मारेंगे, वे ही इसको मारेंगे, यद्यपि महादेवके वरसे उर्जित है, तो भी

आकाशात्पतितः कंसः किंचिद्व्याकुलमानसः ॥ यक्षंगृहीत्वासहसापातयामासभूतले ॥१९॥ शंखचूडस्तंगृहीत्वापोथयामासभूतले ॥ एवंयुद्धेसं-प्रवृत्तेचकंपेभूमिमंडलम् ॥२०॥ मुनीन्द्रः सर्ववित्साक्षाद्गर्गाचार्यः समागतः॥ रंगेषुवन्दितस्ताभ्यांकंसंप्राहोर्जयागिरा ॥ २१ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ युद्धंमाकुरुराजेंद्रविफलोयंरणोऽत्रवै ॥ त्वत्समानोह्ययंवीरः शंखचूडोमहाबलः॥२२॥ तवमुष्टिप्रहारेणमृशमैरावतोगजः ॥ जानुभ्यांधरणींस्पृष्ट्वा कश्मलंपरमंययौ ॥२३॥ अन्येपिबलिनोदैत्यामुष्टिनातेमृतिंगताः ॥ शंखचूडोनपतितः संदेहोनास्तितच्छृणु ॥२४॥ परिपूर्णतमोयोवैसोपित्वां घातयिष्यति ॥ यथैनंशंखचूडाख्यंशिवस्यापिवरोर्जितम्॥२५॥ तस्मात्प्रेमप्रकर्तव्यंशंखचूडेयदूद्वह ॥ यक्षराट्चत्वयाकंसेकर्तव्यंप्रेमनिश्चितम् ॥२६॥ श्रीनारदउवाच ॥ गर्गेणोक्तौतदातौद्वौमिलित्वाथपरस्परम् ॥ परमांचक्रतुः प्रीतिंशंखचूडयदूद्वहौ ॥२७॥ अथकंसमनुज्ञाप्ययगृहंगन्तुंस-मुद्यतः ॥ गच्छन्मार्गेऽश्रृणोद्रात्रौरासगानंमनोहरम् ॥२८॥ तालशब्दानुसारेणसंप्राप्तेरासमण्डले॥ रासेश्वर्यासमंरासेपश्यद्रासेश्वरंहरिम् ॥२९॥ श्रीराधयालंकृतवामबाहुंस्वच्छन्दवक्रीकृतदक्षिणांघ्रिम् ॥ वंशीधरंसुन्दरमंदहासंभ्रू मंडलैर्मोहितकामराशिम्॥३०॥ व्रजांगनायूथपतिंव्रजेश्वरं-सुसेवितंचामरछत्रकोटिभिः ॥ विज्ञायकृष्णंह्यतिकोमलंशिशुंगोपींसमाहर्तुमलंमनोकरोत् ॥ ३१ ॥

मारेंगे ॥२५॥ इससे यदुराजा तुम शंखचूडसे प्रीति कर लो, हे शंखचूड ! तुमभी कंससे प्रीति कर लो ॥२६॥ नारदजी कहते हैं-ऐसे गर्गजीके वचनसे शंखचूड तथा कंस दोनोंने आपसमें मिलकर परम प्रीति कर ली ॥२७॥ तब यह शंखचूड कंससे आज्ञा मांगकर घर जानेको उद्यत हुआ, तब उसने मार्गमें चलनेसे रात्रिमें मनोहर उस रासमें गान सुना ॥२८॥ और ताल शब्दके अनुसार रचा जो रासमण्डल उसमें रासेश्वरी राधिकाजीके सहित रासेश्वर कृष्णको देखा ॥२९॥ राधासे अलंकृत है बाई भुजा जिनकी और अपनी इच्छासे टेढ़ा किया है दाहिना चरण जिन्होंने बंशीको धारण करनेवाले सुन्दर मन्द हास है जिनका, भृकुटि मंगलसे मोहित की है, काम राशि जिन्होंने ॥ ३० ॥ व्रजकी अंगनाओंके यूथोंके पति, जिनपर करोड़ों चमर छत्र फिर रहे हैं, उन श्रीकृष्णको अति कोमल बालक जानकर गोपीको हरनेका मन किया ॥ ३१ ॥

बहुलाश्व राजा पूछते हैं-हे विप्रेन्द्र ! जब वह शंखचूड रासमें गया; तब क्या हुआ, वह मुझसे कहिये ? आप भविष्यको जाननेवाले हो ॥ ३२ ॥ नारदजी कहते हैं, व्याघ्रकासा जिसका मुख है, काला जिसका वर्ण, दशताल लम्बी भयंकर जीभ जिसकी लपलपा रही हैं, ऐसे उस शंखचूडके रूपको देखकर गोपियाँ बहुत डरीं ॥३३॥ चारों ओरसे भगने लगीं, बडा कोलाहल मचा, हाहाकार शब्द हुआ, जिस समय शंखचूड पहुँचा ॥ ३४ ॥ वह बड़ा दुष्ट शंखचूड शतचन्द्रानना गोपीको लेकर उत्तर दिशाको चला, कामसे पीड़ित था और बड़ा निःशंक था ॥३५॥ जो रोती जाती थी, कृष्ण २ ऐसे कहती जाती थी, भयके मारे विह्वल थी, उस शतचन्द्राननाको देखकर श्रीकृष्ण बड़े क्रोधसे शालवृक्षको उखाड़ कर हाथमें लेकर इसके पीछे दौड़े ॥३६॥ यक्ष श्रीकृष्णको कालरूपके समान आया जानकर गोपीको छोड़कर जीनेकी इच्छा कर भागा, भयसे विह्वल हो गया ॥३७॥ जहाँ जहाँ दुष्ट यक्ष भागता है वहीं वहीं श्रीकृष्ण शालका लट्ठा लिये बडे क्रोधसे आते दीखते हैं ॥३८॥ तब यह हिमालय पर्वतके नीचे पहुँचा, वहाँ शालके वृक्षको उखाड़कर विशेष

बहुलाश्वउवाच ॥ किंबभूवततोरासेशंखचूडेसमागते ॥ एतन्मेब्रूहिविप्रेंद्रत्वंपरावरवित्तमः ॥ ३२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ व्याघ्राननंकृष्ण वर्णतालवृक्षदशोच्छ्रितम् ॥ भयंकरंललज्जिह्वंदृष्ट्वागोप्योतितत्रसुः ॥३३॥ दुद्रुवुःसर्वतोगोप्योमहान्कोलाहलोऽभवत् ॥हाहाकारस्तदैवासीच्छं-खचूडेसमागते ॥३४॥ शतचंद्राननांगोपींगृहीत्वायक्षराट्खलः ॥ दुद्रावाशूत्तरामाशांनिःशंकःकामपीडितः ॥३५॥ रुदतींकृष्णकृष्णेतिक्रोशन्तीं भयविह्वलाम् ॥ तमन्वधावच्छ्रीकृष्णःशालहस्तोरुषाभृशम् ॥ ३६ ॥ यक्षोवीक्ष्यतमायान्तमिवदुर्जयम् ॥ गोपींत्यक्त्वाजीवितेच्छुःप्राद्रवद्भ-यविह्वलः ॥३७॥ यत्रयत्रगतोधावञ्शंखचूडोमहाखलः ॥तत्रतत्रगतःकृष्णःशालहस्तोभृशंरुषा ॥३८॥ हिमाचलतटंप्राप्तःशालमुद्यम्ययक्षराट् ॥ तस्थौतत्संमुखेराजन्युद्धकामोविशेषतः ॥३९॥ तस्मैचिक्षेपभगवाञ्शालवृक्षंमुजौजसा ॥तेनघातेनपतितोवृक्षोवातहतोयथा ॥४०॥ पुनरुत्थाय ॥ वैकुंठंमुष्टिनातंजघानह ॥ जगर्ज्जसहसादुष्टोनादयन्मण्डलंदिशाम् ॥४१॥ गृहीत्वातंहरिर्दोर्भ्यांभ्रामयित्वाभुजौजसा ॥ पातयामासभूपृष्ठेवातः पद्ममिवोद्धृतम् ॥४२॥ शंखचूडस्तंगृहीत्वापोथयामासभूतले ॥एवंयुद्धेसंप्रवृत्तेचकम्पेभूमिमण्डलम् ॥४३॥ मुष्टिनातच्छिरश्छित्त्वातस्माच्चू-डामणिंहरिः ॥ जग्राहमाधवःसाक्षात्सुकृतीशेवधिंयथा ॥ ४४ ॥

करके युद्ध करनेकी इच्छासे श्रीकृष्णके सन्मुख खड़ा हो गया ॥३९॥ तब श्रीकृष्णने बड़े जोरसे शालका लट्ठा मारा, उस चोटके मारे धरतीमें गिरपडा, जैसे आंधीसे मारा पेड़ पड़ता है ॥४०॥ फिर उठकर श्रीकृष्णके एक घूंसा मारा, और ऐसे गर्जा, जिस शब्दसे दिशाऐं झंकारने लगी ॥४१॥ फिर श्रीकृष्णने दोनों हाथोंसे पकड़कर फिराकर इसको धरतीमें दे मारा जैसे खिले हुये कमलको आंधी गिरा देती है ॥४२॥ शंखचूडने भी श्रीकृष्णको पकड़कर धरतीमें दे मारा, ऐसे जब दोनोंका युद्ध होने लगा, तब पृथ्वीमण्डल कांपने लगा ॥ ४३ ॥ फिर श्रीकृष्णने उसके मस्तकमें एक घूंसा मारा, उसकी मारसे इसका शिर धड़से अलग हो धरतीमें गिर पड़ा, तब इसके शिरमें जो दिव्यमणि थी, वह निकालकर श्रीकृष्णने ले ली, सुकृति पुरुष जैसे शेवधि नामकी निधीको लेते हैं ॥ ४४ ॥

उसकी देहमेंसे बड़ी भारी ज्योति निकली, दिशाओंको प्रकाशित करती हुई वह ज्योति श्रीकृष्णके सखा श्रीदामामें हे राजन् ! समा गई ॥४५॥ ऐसे मधुसूदन भगवान् शंखचूड को मारकर मणिको हाथमें लिये, बहुत जल्दी रासमण्डलमें आये ॥४६॥ तब दीनवत्सल हरि उस मणिको चन्द्रानना गोपीको देकर फिर गोपीगणोंको साथ लेकर रास करने लगे ॥४७॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां वृन्दावनखण्डे भाषाटीकायां रासक्रीडायां शंखचूड वधोनाम विंशोऽध्यायः ॥२०॥ नारदजी कहते हैं, इसके बाद गोपीगणोंके साथ यमुनाजीके तटको देखते देखते विहार करनेको अति मनोहर जो वृन्दावन है, उस वृन्दावनमें आये ॥१॥ जो औषधियाँ नष्ट हो गई थीं, वे सब श्रीकृष्णके वरसे स्त्रियाँ हो, यूथ बनाकर आईं ॥२॥ चित्र विचित्र रंग जिनका ऐसी लतारूपा गोपियोंके साथ वृन्दावनके ईश्वर उस वृन्दावनमें रमण करते बड़ी शोभाको प्राप्त हुये ॥ ३ ॥ कलिंद नन्दिनीके तीरपर कदम्बों

तज्ज्योतिर्निर्गतंदीर्घंद्योतयन्मंडलंदिशाम् ॥ श्रीदाम्निश्रीकृष्णसखेलीनंजातंव्रजेनृप ॥४५॥ एवंहत्वाशंखचूडंभगवान्मधुसूदनः ॥ मणिपाणिः
पुनःशीघ्रमाययौरासमंडलम् ॥४६॥ चन्द्राननायैचमणिंदत्त्वातंदीनवत्सलः ॥ पुनर्गोपीगणैःसार्द्धंरासंचक्रेहरिःस्वयम् ॥४७॥ इतिश्रीमद्गर्ग-
संहितायांवृन्दावनखंडेरासक्रीडायांशंखचूडवधोनामविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथगोपीगणैःसार्द्धंपश्यञ्छ्रीयमुनातटम् ॥
विहर्तुमाययौकृष्णोवृन्दारण्यंमनोहरम् ॥१॥ वृन्दावनेचौषधयोलीनाजाताहरेर्वरात् ॥ ताः सर्वाश्चांगनाभूत्वायूथीभूत्वासमाययुः ॥२॥ लता
गोपीसमूहेनचित्रवर्णेनमैथिल ॥ रेमेवृन्दावनेराजन्हरिर्वृंदावनेश्वरः ॥३॥ कलिन्दनन्दिनीतीरेकदम्बाच्छादितेशुभे ॥ त्रिविधेनसमीरेणसर्वतः
सुरभीकृते ॥ ४ ॥ विलसत्पुलिनेरम्येवंशीवटविराजते ॥ स्थितोभूद्राधयासार्धंरासश्रमसमन्वितः ॥ ५ ॥ वीणातालमृदंगादिमुरुयष्टिथु-
तानिच ॥ वादित्राण्यंबरेनेदुःसुरैर्गोपीगणैःसह ॥ ६ ॥ देवेषुपुष्पं वर्षत्सुजयध्वनियुतेषुच ॥ तोषयन्त्योहरिंगोप्योजगुस्तद्यशउत्तमम् ॥७॥
काश्चिद्वैमेघमल्लारंदीपकंचतथापराः ॥ मालकोशंभैरवंचश्रीरागंचतथैवच ॥८॥ हिंदोलंचजगुःकाश्चिद्राजन्सप्तस्वरैःसह ॥ काश्चित्तासांप्रमुग्धा-
श्चकाश्चिन्मुग्धाःस्त्रियोनृप ॥ ९ ॥ काश्चित्प्रौढाःप्रेमपराःश्रीकृष्णेलग्नमानसाः ॥ जारधर्मेणगोविन्दंकाश्चिद्गोप्योभजन्तिहि ॥ १० ॥

की छायामें जहाँ सब ओरसे शीतल मन्द मन्द सुगंधित पवन चली आती है ॥४॥ जो सुशोभित पुलिन अति रमणीक और वंशीवटसे विराजित है, वहाँ रासके श्रमसे श्रमित हो राधाके सहित श्रीकृष्ण बैठे॥५॥तब आकाशमें वीणा, मृदंग, मंजीरा, मोहचंग, आदि देवताओंके बाजे गोपीगणोंके बाजोंके साथ बजे ॥६॥ देवता पुष्पोंकी वर्षा कर रहे हैं, जयजय शब्द कर रहे हैं, उस समय गोपियाँ श्रीकृष्णको प्रसन्न करनेके लिये श्रीकृष्णका यश गाने लगीं ॥७॥ कोई मेघ मल्लार राग गाती हैं, कोई दीपक राग गाती हैं, कोई मालकोश, कोई भैरवी, कोई श्रीराग गाती हैं ॥ ८ ॥ कोई सप्त स्वरोंसे हिंडोल राग गाती हैं, उनमें कोई मुग्धा है कोई प्रमुग्धा है ॥ ९ ॥ और प्रेममें परायणा कोई प्रौढा है, कोई प्रगल्भा है, गोविन्दमें जिनका मन है और कोई गोपी जारधर्मसे गोविन्दका भजन करती हैं ॥ १० ॥

कोई श्रीकृष्णके साथ गेंदसे खेलती हैं, कोई फूलोंसे श्रीकृष्णके साथ खेलती हैं ॥११॥ कोई आपसमें खेलती हैं, कोई लताओंमें नूपुर बजाती घूमती हैं, कोई बलपूर्वक श्रीकृष्णका अधरामृत पीती हैं ॥१२॥ कोई भुजाओंमें भरकर हँसकर श्रीकृष्णका आलिंगन करती हैं, जो योगीश्वरोंको भी दुर्लभ हैं ॥१३॥ गोपियोंके मनोहर यदुराज भगवान् हरि वृन्दा-वनके ईश्वर वृन्दावनमें रमण करने लगे ॥१४॥ कोई श्रीकृष्णकी वंशीके साथ वीणा बजाती हैं, कोई मृदंग बजाकर श्रीकृष्णके गुण गाती हैं ॥ १९ ॥ श्रीकृष्णके सन्मुख कोई मधुर ताल बजाती हैं और कोई माधवी लताके नीचे श्रीकृष्णके साथ मोहचंग बजाती हैं ॥१६॥ कोई पृथ्वीमें स्थिर बैठकर हे राजन् ! जगतके सुखको भूलकर श्रीकृष्णके गुणों को गाती हैं, कोई लताओंमें श्रीकृष्णको भुजाओंसे लपेटे आलिंगन करके ॥ १७ ॥ कोई इधर उधरमें वृन्दावनकी शोभाको देखती रमण करती हैं, तब तालोंके जालसे उलझे गोपियोंके हारोंके समुदायको ॥१८॥ श्रीगोविन्द गोपियोंके उरस्थलको स्पर्श करते उनके हारोंको सुलझाकर पृथक् करते हैं, इस प्रकार श्रीनन्द नन्दन गोपियोंकी नकबेसरको और

काश्चिच्छ्रीकृष्णसहिताःकन्दुकक्रीडनेरताः।काश्चित्पुष्पैश्चहरिणाक्रीडांचक्रुःपरस्परम्।११।काश्चित्परस्परंगोप्यः क्रीडन्त्योधृतनूपुराः॥नूपुरध्व निसंयुक्तापिबंत्योह्यधरामृतम् ॥१२॥ काश्चिद्भुजाभ्यांश्रीकृष्णंयोगिनामपिदुर्लभम् ॥ संगृहीत्वाप्रहस्याराचक्रुरालिंगनंमहत् ॥१३॥ मनोज्ञो यदुराजाचगोपीनांभगवान्हरिः ॥ काश्मीरमुद्रितोरेमेवनेवृंदावनेश्वरः ॥१४॥काश्चिद्वीणांवादयन्त्यःसमंवंशीधरेणवै ॥ काश्चिन्मृदंगंवादयं-त्योगायन्त्योभगवद्गुणम् ॥१५॥ काश्चिद्वैमधुरंतालंताडयन्त्योहरेःपुरः ॥ मुरयष्टिंसंगृहीत्वाहरिणामाधवीतले ॥ १६ ॥ गायन्त्यःसुस्थिरा भूमौविस्मृत्यजगतःसुखम् ॥ काश्चिल्लतासुश्रीकृष्णंभुजेबाहुंनिधायच॥१७॥वृंदावनस्यपश्यन्तिशोभांराजन्नितस्ततः ॥ तालजालैःसंवलितं गोपीनांहारसंचयम्॥१८॥पृथक्चकारगोविन्दःस्पृष्ट्वातासामुरःस्थलम्॥गोपीनांनासिकामुक्तावलितत्कुंतलंस्वयम्॥१९॥शनैःशनैःशोभनंतच्च-क्रेश्रीनंदनन्दनः॥ताम्बूलंचर्वितंह्यर्द्धंनीत्वासद्योथगोपिकाः।२०। चर्वयन्त्यःसुगन्धाढ्यमहोतासांतपोमहत्॥काश्चिच्छ्यामकपोलेषुद्व्यंगुलेन शनैःशनैः।२१।हसन्त्यस्ताडयन्त्यस्ताःकदम्बेषुबलात्पृथक्॥पुंवेषनायकाःकाश्चिन्मौलिकुंडलमंडिता।२२।नृत्यन्त्यःकृष्णपुरतःश्रीकृष्णइव मैथिल॥राधावेषधरागोप्यःशतचन्द्राननप्रभाः२३तोषयन्त्यश्चराधांतांतथाराधापतिंजगुः॥काश्चित्ताःसात्त्विकैर्भावैःसंयुक्ताःप्रेमविह्वलाः२४

अलकावलिको आप सम्हालते हैं ॥१९॥ इस प्रकार उनकी शोभाको बढ़ाते हैं, और हे राजन् ! वे गोपियाँ श्रीकृष्णके चबाये सुगन्धित ताम्बूलको ॥ २० ॥ मुखसे मुखमें ग्रहण करके चबाती हैं उनके उस बड़े भारी तपको कौन कह सकता है, इससे वे धन्य हैं, कोई उनके कपोलोंको अपनी दो-दो अंगुलियोंसे स्पर्श करती हैं ॥२१॥ कोई हँसती-हँसती धीरे-धीरे ताडना करती हैं, कदम्बोंमें कोई पुरुषरूप होकर मुकुट कुण्डल पहन अलकावलि छिटकाती हैं ॥ २२ ॥ कोई कृष्णके सामने नाचती हैं, कोई कृष्ण बनी घूमती हैं, कोई राधा बनी घूमती हैं, कोई शतचन्द्रकीसी जिनके मुखकी कांति है ॥२३॥ राधाको और राधापतिको तुष्ट करती गाती हैं और दोनोंको रिझाती हैं, और कोई सात्विक भावनासे उनको प्रेममें विह्वल होकर ॥ २४ ॥

लताओंमें, वृक्षोंमें, दिशाओंमें, विदिशाओंमें, योगीकी तरह परमानन्दमें पूर्ण होकर भूमिमें बैठी हैं ॥२५॥ कोई लक्ष्मीके पति श्रीकृष्णको अपने हृदयमें देखती चुप होकर बैठी हैं, ऐसे रासमें सब गोपवधू पूर्ण मनोरथ हो गईं ॥२६॥ ऐसे सब गोपी गोविन्दमयी हो गईं, सर्वेश भक्तवत्सल श्रीकृष्णको प्राप्त होकर हे महाबुद्धे ! श्रीकृष्णका प्रसाद गोपियोंको प्राप्त हुआ ॥२७॥ जो ज्ञानियोंको भी नहीं हुआ, फिर कर्मियोंको तो कहां, वह राधा पतिका प्रसाद गोपियोंको प्राप्त हुआ ॥२८॥ हे महामते ! जो रासमें एक आश्चर्य हुआ, सुनो, एक आसुरि नामके मुनीश्वर श्रीकृष्णके इष्ट थे बड़े तपस्वी थे ॥२९॥ उन्होंने नारद नाम पर्वतपर ध्यान परायण होकर बड़ा तप किया, हृदय कमलमें ज्योतिके मण्डलमें श्रीकृष्णका ध्यान किया करते थे ॥३०॥ राधा सहित श्रीकृष्णको नित्यही देखा करते थे, एक समय रात्रिमें ध्यानमें नहीं आये ॥३१॥ मुनिने बार बार ध्यान किया, खिन्नमन हो गये फिर

योगीवदास्थिताभूमौपरमानन्दसंप्लुताः ॥ काश्चिल्लतासुवृक्षेषुभूम्यांवैविदिशासुच ॥२५॥ पश्यन्त्यःश्रीपतिंदेवंस्वस्मिन्वामौनमास्थिताः॥ एवंरासेगोपवध्वःसर्वाःपूर्णमनोरथाः ॥२६॥ बभूवुरेत्यगोविन्दंसर्वेशंभक्तवत्सलम् ॥ यत्प्रसादस्तुगोपीनांप्राप्तोराजन्महामते ॥२७॥ ज्ञानिनामपिनास्त्येवकर्मिणांतुकुतश्चसः ॥ एवंश्रीकृष्णचन्द्रस्यहरेराधापतेःप्रभो ॥२८॥ रासेचित्रंयद्बभूवतच्छृणुष्वमहामते॥मुनीन्द्रआसुरिर्नामश्रीकृष्णेष्टोमहातपाः ॥२९॥ नारदाद्रौतपस्तेपेहरौध्यानपरायणः ॥ हृत्पुंडरीकेश्रीकृष्णंज्योतिर्मण्डलमास्थितम् ॥३०॥ मनोज्ञंराधयासार्द्धंनित्यंध्यानेददर्शह॥ एकदाध्यानमध्येतुरात्रौकृष्णोनचागतः ॥३१॥ वारंवारंकृतंध्यानंखिन्नोजातोमहामुनिः ॥ ध्यानादुत्थायसमुनिःकृष्णदर्शनलालसः ॥ ३२॥ नारायणाश्रमंप्रागाद्बदरीखण्डमंडितम् ॥ नददर्शहरिंदेवंनरनारायणंमुनिः ॥ ३३ ॥ तदातिविस्मितोविप्रोलोकालोकगिरिंययौ ॥ सहस्रशिरसंदेवंनददर्शसतत्रवै ॥३४॥ पप्रच्छपार्षदांस्तत्रक्वगतोभगवानितः ॥ नविद्मोभोवयंचोक्तोमुनिःखिन्नमनास्तदा ॥३५॥ श्वेतद्वीपंययौदिव्यंक्षीरसागरशोभितम् ॥ तत्रापिशेषपर्यंकेनददर्शहरिंपुनः ॥३६॥ तदामुनिःखिन्नमनाःप्रेम्णापुलकिताननः ॥ पप्रच्छपार्षदांस्तत्रक्वगतोभगवानितः ॥ ३७ ॥ नविद्मोभोवयंचोक्तोमुनिश्चिन्तापरायणः ॥ किंकरोमिक्वगच्छामिदर्शनंतत्कथंभवेत् ॥ ३८ ॥

भी ध्यानमें नहीं आये, तब ध्यानसे उठ खड़े हुये, और कृष्ण दर्शनकी लालसासे ॥ ३२ ॥ बेरोंके समुदायसे मंडित बदरिकाश्रमको नारायणके आश्रममें गये, वहाँ भी नरनारायण के दर्शन न हुये ॥३३॥ तब तो बड़े आश्चर्यमें आकर ऋषि लोकालोक पर्वतको गये, वहाँ भी सहस्र शीर्षा भगवान्‌को नहीं देखा ॥३४॥ वहाँ पार्षदोंसे पूछने लगे भगवान् कहाँ गये हैं, तब पार्षदोंने कहा कि, हम नहीं जानते हैं, तब तो और भी खिन्नमन हो गये ॥३५॥ तब दिव्य श्वेतद्वीपको गये, जो क्षीर समुद्रसे शोभित है, वहाँ शेष शय्यापर भी नहीं देखे ॥३६॥ तब तो मुनीश्वर अति दुखित हुये प्रेमसे रोमावली खड़ी हो आई, ऐसा पार्षदोंसे पूछने लगे कि, भगवान् कहाँ गये हैं ॥३७॥ तब पार्षद बोले कि, हम नहीं जानते हैं, तब तो मुनि चिंता परायण होकर यह बोले मैं अब क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, कैसे मुझको भगवान्‌के दर्शन हों ॥ ३८ ॥

ऐसे कहते मनके समान वेगवाले वे ऋषि वैकुण्ठको चले गये, तब इन्होंने रमा वैकुण्ठमें रहनेवाले भगवान्‌को भी नहीं देखा ॥३९॥ ऐसे भक्त मुनि आसुरिने जब कहीं भी भगवान् नहीं देखे, तब योगियोंमें इन्द्र जो ऋषि आसुरि गोलोकको गये ॥४०॥ वहाँ भी वृन्दावनके निकुञ्जमें श्रीकृष्णके दर्शन नहीं हुये, तब बड़ेही दुःखी हुये, विरहमें आतुर हो गये ॥४१॥ वहाँ पार्षदोंसे पूछा कि, भगवान् यहाँसे कहाँ गये तब पार्षद बोले, वामनजीके मनोहर अण्डमें हैं ॥ ४२ ॥ जहाँ पृश्नि गर्भ भगवान्‌ने जन्म लिया था, स्वयम् भगवान् वहीं हैं, ऐसे सुन आसुरि मुनि उस ब्रह्माण्डमें आये ॥४३॥ हरिको नहीं देखकर फिर कैलास पर्वतमें आये वहाँ कृष्णके ध्यानमें परायण महादेवको देखा ॥ ४४ ॥ खिन्नचेता मुनि वहाँ शिवजीको प्रणाम करके रात्रिको महादेवसे बोले कि हे भगवन् ! शिव ! इधर उधर सब ब्रह्माण्ड मैंने देखा ॥ ४५ ॥ वैकुण्ठसे लेकर गोलोकतक श्रीकृष्णको देखनेकी इच्छा से मैं गया, परन्तु मुझको कहीं भी देव देवके दर्शन नहीं हुये ॥ ४६ ॥ हे सर्व वेत्ताओंमें श्रेष्ठ ! अब भगवान् कहाँ हैं ? तब महादेवजी बोले-आसुरि मुनि तुम धन्य हो, तुम

एवंब्रुवन्मनोयायीवैकुंठंप्राप्तवांस्ततः ॥ नापश्यत्तत्रदेवेशंरमावैकुंठवासिनम् ॥३९॥ नदृष्टस्तत्रभक्तेषुमुनिनाऽसुरिणानृप ॥ ततोमुनीन्द्रोयोगी-
न्द्रोगोलोकंसजगामह ॥ ४० ॥ वृन्दावनेनिकुंजेपिनददर्शपरात्परम् ॥ तदामुनिःखिन्नमनाःश्रीकृष्णविरहातुरः ॥४१॥ पप्रच्छपार्षदांस्तत्रक्व
गतोभगवानितः ॥ ऊचुस्तंपार्षदागोपावामनाण्डेमनोहरे ॥४२॥ पृश्निगर्भोयत्रजातस्तत्रैवभगवान्स्वयम् ॥ इत्युक्तआसुरिस्तस्मादस्मिन्नण्डे
समागतः ॥४३॥ हरिंह्यपश्यन्प्रचलन्कैलासंप्राप्तवान्मुनिः ॥ तत्रस्थितंमहादेवंकृष्णध्यानपरायणम् ॥ ४४ ॥ नत्वापप्रच्छतद्रात्रौखिन्नचेता
महामुनिः ॥ आसुरिरुवाच ॥ भगवन्सर्वब्रह्मांडंमयादृष्टमितस्ततः ॥ ४५ ॥ आवैकुण्ठाच्चगोलोकाद्भ्रमतातदिदृक्षुणा ॥ कुत्रापिदेवदेवस्य
दर्शनंनबभूवमे ॥ ४६ ॥ कुत्रास्तेभगवानद्यवदसर्वविदांवर ॥ श्रीमहादेवउवाच ॥ धन्यस्त्वमासुरेब्रह्मन्कृष्णभक्तोस्यहैतुकः ॥ दिदृक्षुणा
त्वयाऽऽयासंकृतंवेद्मिमहामुने॥४७॥ कर्मेन्द्रियाणीहयथारसादींस्तथासकामामुनयःसुखंयत् ॥मनाङ्जानन्तिजनैरपेक्ष्यंगूढंपरंनिर्गुणलक्षणंतत्
॥४८॥ हंसंमुनिंदुःखगतंमहोदधौयः सर्वतोमोचयितुंगतस्त्वरम् ॥ सोद्यैववृंदाविपिनेसखीजनैःकरोतिरासंरसिकेश्वरःस्वयम् ॥ ४९ ॥ षाण्मा-
सिकीचाद्यकृतानिशीथिनीस्वमाययादेववरेणभोमुने ॥ अहंगमिष्यामिनदेवद्रष्टुंत्वमेवगच्छाशुमनोरथंयथा ॥५०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां-
वृन्दा वनखण्डेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादेरासक्रीडायामासुर्य्युपाख्यानंनामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

निष्काम भगवान्‌के भक्त हो, दर्शनकी इच्छासे तुमने इतना श्रम किया, हे मुने ! इस बातको मैं जानता हूँ ॥ ४७ ॥ जैसे कर्मेन्द्रियाँ रसादिक विषयोंको नहीं जानती हैं वैसेही निष्काम मुनीश्वर मनुष्योंके वांछित जो सुख हैं, उनको नहीं जानते हैं, जो गूढ परम निर्गुण सुख है ॥४८॥ जो भगवान् दुखको प्राप्त हुये हंस मुनिको सब ओरसे छुड़ानेके लिये समुद्रमें जल्दीसे गये हैं, वे अब वृन्दावनमें सखी जनके साथ रसिक जनोंके ईश्वर आप रास करते हैं ॥४९॥ हे मुने ! उन्हीं भगवान्‌ने आज छः महिनेकी रात्रि देववरने अपनी मायासे की है, सो मैं भी उनको देखनेको वहीं जाऊँगा, वैसेही तुम्हारा मनोरथ है, तो तुम भी जल्दी वहाँ जाओ ॥५०॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां वृन्दावनखण्डे भाषाटीकायां श्रीनारद बहुलाश्व संवादे रासक्रीडायां आसुरिमुन्युपाख्यानं नामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

नारदजी कहते हैं ऐसे मनसे विचार करके महादेवजी आसुरि मुनिको साथ लेकर दोनों कृष्णके दर्शनको व्रजमण्डलमें आये ॥१॥ वहाँ दिव्य वृक्षलता कुंजकी छत्रियोंके समूहसे शोभित दिव्य भूमिको देखते कालिंदीके निकट आये ॥ २ ॥ तब गोलोकवासिनी महाबलवती स्त्रीहार पालिकाऐं बेंत लिये अपने पराक्रमसे रोकने लगीं ॥ ३ ॥ तब दोनों उनसे बोले, हमारे कृष्णदर्शनकी लालसा है, तब तो हे राजासिंह ! मार्गमें खडी जो द्वारपालिकाऐं हैं ये दोनोंसे बोलीं ॥४॥ हे द्विजौ ! श्रीकृष्णकी आज्ञासे सब ओरसे इस वृन्दावनमें करोड़ों हम गोपियाँ रासकी रक्षा करती हैं ॥५॥ यहाँ एकही पुरुष श्रीकृष्ण इस निर्जन रासमण्डलमें है, और कोई इस एकान्तमें गोपी यूथके बिना नहीं आता है ॥६॥ तुम कृष्णको देखनेकी इच्छावाले कौन हो, जो उनको देखना चाहते हो, तुम इस मानसरोवरमें स्नान करो, तब तुम्हारा गोपीरूप होजायगा हे मुनिवरौ ! तब तुम भीतर चले जाना ॥ ७ ॥

श्रीनारदउवाच ॥ एवंविचिन्त्यमनसाशिवोथासुरिणासह ॥ तौकृष्णदर्शनार्थायजग्मतुर्व्रजमण्डलम् ॥ १ ॥ दिव्यद्रुमलताकुंजतोलिकापुंजशोभिताम् ॥ पश्यन्तौतौदिव्यभूमिंकालिन्दीनिकटे गतौ॥२॥गोलोकवासिन्योनार्य्योवेत्रहस्तामहाबलाः ॥ चक्रुर्बलात्तन्निषेधंमार्गस्थाद्वारपालिकाः ॥३॥ तावूचतुश्चागतौताःकृष्णदर्शनलालसौ ॥ तावाहुर्नृपशार्दूलमार्गस्थाद्वारपालिकाः ॥ ४ ॥ द्वारपालिकाऊचुः ॥ सर्वतोवृन्दकारण्यंकोटिशःकोटिशोवयम् ॥ रासरक्षांसदाकुर्मोन्यस्ताःकृष्णेनभोद्विजौ॥५॥एकोस्तिपुरुषःकृष्णोनिर्जनेरासमण्डले॥अन्योनयातिरहसिगोपीयूथंविनाक्वचित् ॥६॥ चेद्दिदृक्षूयुवांतस्यस्नानंमानसरोवरे ॥ कुरुतंतत्रगोपीत्वंप्राप्याशुव्रजतंमुनी॥७॥श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्तौतौमुनिशिवौस्नात्वामानसरोवरे॥गोपीत्वंप्राप्यसहसाजग्मतूरासमण्डले॥८॥ सौवर्णप्रखचित्पद्मरागभूमिमनोहरे॥ माधवीलतिकावृन्दकदम्बाच्छादिते शुभे ॥९॥ वसन्तचन्द्रकौमुद्याप्रदीप्तेसर्वकौशले ॥ यमुनारत्नसोपानतोलिकाभिर्विराजिते ॥१०॥ मयूरहंसदात्यूहकोकिलैःकूजितेपरे॥यमुनानिलनीलैजत्तरुपल्लवशोभिते ॥११॥ सभामण्डपवीथीभिःप्रांगणस्तम्भपंक्तिभिः ॥ पतत्पताकैर्दिव्याभैःसौवर्णैःकलशैर्वृते ॥१२॥ श्वेतारुणैःपुष्पसंघैःपुष्पमंदिरवर्त्मभिः ॥ अलिकोलाहलैर्व्याप्तेवादित्रमधुरस्वनैः ॥ १३ ॥

नारदजी कहते हैं ऐसे जब कहा तब शिवजी और आसुरि मुनि दोनोंने मानसरोवरमें स्नान किया, तब गोपीरूपको प्राप्त होकर रासमण्डलमें भीतर गये ॥८॥ जो रासमण्डल कैसा है, कि जहाँ पुखराजके जडावकी सुवर्ण भूमि है, और मालती माधवीकी लताओंके समूहसे ढके कदम्ब वृक्षोंसे आच्छादित है ॥९॥ वसंत ऋतुके चन्द्रमाकी चांदनीसे उज्ज्वल, सब शोभा जिनमे, ऐसे रत्नोंकी सीढी और छत्री उनसे विराजित है ॥१०॥ मोर, हंस, पपीहा, कोयल, कपोत, तोता, मैना, जहां बोल रहे ऐसी यमुनाजीकी शीतल सुगंधित पवनसे हिलते वृक्षोंके पत्र उनसे शोभित हैं ॥ ११ ॥ सभामंडप, गली, आंगना चौक, इनकी पंक्ति जिसमें, ध्वजा, पताका, जिनपर फहरा रहीं, ऐसे सुनहरी कलशा जहाँ झलक रहे हैं ॥ १२ ॥ काले, पीले, लाल, सफेद, सुनहरी पुष्पोंके मन्दिर उनके मार्गोंसे और भ्रमरोंके कोलाहलसे व्याप्त है, और मनोहर बाजे जहाँ बज रहे हैं ॥ १३ ॥

हजार २ दल के कमलोंकी मन्द चलती शीतल सुगंधित पवनसे चारों ओरसे सुगन्धित हो रहा है ॥१४॥ निकुञ्जमें कोटि चन्द्रमा कीसी कान्तिवाली, हंस की सी जिसकी चाल है ऐसी पद्मिनी नायिका राधासे अत्यन्त शोभित श्रीकृष्ण भगवान्‌को देखा ॥ १५ ॥ स्त्री सभी रत्नोंसे आवृत रासमण्डलके बीचमें वर्तमान श्यामसुन्दर, करोड़ कामदेवसे मनोहर, पीताम्बर पहने ॥१६॥ वंशी बजाते, वेंत लिये, मनोहर श्रीवत्सका चिह्न और कौस्तुभ मणि धारण किये, वनमालासे भूषित, विराजित हैं ॥१७॥ नूपुरोंके घुघंरू जिनके बज रहे हैं, मेखला, बाजू, इनसे शोभित, रत्नोंके हार, कंकण, सूर्यसे कानोंमें कुण्डल, भूषित हैं ॥ १८ ॥ कोटि चन्द्रके समान कान्तिवाले मुकुटको धारण किये, देनेमें चतुर अपने जो कटाक्ष उनसे गोपियोंके मनको हरनेवाले ॥१९॥ ऐसे कृष्णको दूरसेही देखकर आसुरि मुनि और महादेवजी सब गोपियोंके देखते हुये हे राजन् ! हाथ जोड़ ॥२०॥ हर्षसे विह्वल

सहस्रदलपद्मानांवायुनामन्दगामिना ॥ शीतलेनसुपुण्येनसर्वतःसुरभीकृते ॥१४॥ तस्मिन्निकुंजेश्रीकृष्णंकोटिचन्द्रप्रकाशया ॥ पद्मिन्याहंसगामिन्याराधयासमलंकृतम् ॥१५॥ स्त्रीरत्नैरावृतंशश्वद्रासमण्डलमध्यगम् ॥ कोटिमन्मथलावण्यंश्यामसुंदरविग्रहम् ॥१६॥ वंशीधरंपीतपटंवेत्रपाणिंमनोहरम् ॥ श्रीवत्सांकंकौस्तुभिनंवनमालाविराजितम् ॥१७॥ क्वणन्नूपुरमंजीरंकांचीकेयूरभूषितम् ॥ हारकंकणबालार्ककुण्डलद्वयमंडितम्॥१८॥कोटिचंद्रप्रतीकाशंमौलिनंनन्दनन्दनम् ॥ दानदक्षैकटाक्षैश्चहरन्तंयोषितांमनः ॥१९॥ दूरादपश्यतांराजन्नासुरीशौकृतांजली ॥ गोपीजनानांसर्वेषांपश्यतांनृपसत्तम ॥ २० ॥ नत्वाश्रीकृष्णपादाब्जमूचतुर्हर्षविह्वलौ ॥ द्वावूचतुः ॥ कृष्णकृष्णमहायोगिन्देवदेवजगत्पते ॥२१॥ पुण्डरीकाक्षगोविंदगरुडध्वजतेनमः ॥ जनार्दनजगन्नाथपद्मनाभत्रिविक्रम॥दामोदरहृषीकेशवासुदेवनमोस्तुते॥२२॥अद्यैवदेवपरिपूर्णतमस्तुसाक्षाद्भूभूरिभारहरणायसतांशुभाय॥प्राप्तोऽसिनन्दभवनेपरतः परस्त्वंकृत्वाहिसर्वनिजलोकमशेषशून्यम् ॥२३॥अंशांशकांशककलाभिरुताभिराममावेशपूर्णनिचयाभिरतीवयुक्तः ॥विश्वंबिभर्षिरसरासमलंकरोषिवृंदावनंचपरिपूर्णतमःस्वयंत्वम्॥२४॥गोलोकनाथगिरिराजपतेपरेशवृन्दावनेशकृतनित्यविहारलील ॥ राधापतेव्रजवधूजनगीतकीर्तेगोविन्दगोकुलपतेकिलतेजयोऽस्तु ॥ २५ ॥

हो श्रीकृष्णके चरणकमलोंको प्रणाम करके बोले, हे कृष्ण ! हे महायोगिन् हे देवदेव ! हे जगत्पते ! ॥ २१ ॥ हे पुण्डरीकाक्ष ! हे गोविन्द ! हे गरुध्वज ! आपके लिये नमस्कार है, हे जनार्दन ! हे जगन्नाथ ! हे पद्मनाभ ! हे त्रिविक्रम ! हे दामोदर ! हे हृषीकेश ! हे वासुदेव ! आपके लिये नमस्कार है ॥ २२ ॥ हे देव परिपूर्णतम ! आप साक्षात् पृथ्वी का भार उतारनेको संतोंके कल्याणके लिये परसे पर अपने सब वैकुण्ठ लोकोंको खाली करके नन्दभवनमें आये हो ॥ २३ ॥ अंश-अंशके अंश, कला, आवेश, पूर्ण इनसे युक्त विश्वका पालन करते हो और परिपूर्ण आप वृन्दावनकी शोभा बढ़ाते रास रसको पुष्ट करते हो ॥२४॥ हे गोलोकनाथ ! हे गिरिराजपते ! हे परेश ! हे वृन्दावनेश, ! की है नित्य विहारलीला जिन्होंने, हे राधापते ! हे व्रजवधूजन गीतकीर्ते ! हे गोविन्द ! हे गोकुलपते ! आपकी जय हो ॥ २५ ॥

शोभायमान निकुंज लताओंको प्रफुल्लित करनेवाले आप वसन्त ऋतु हो, श्रीराधिकाके हृदय कंठके भूषण आपही हो, रासमण्डलके पति, व्रजमण्डलके पति, ब्रह्माण्डमण्डलके पति पृथ्वीके पालक आपही हो ॥ २६ ॥ नारदजी कहते हैं कि तब राधाके सहित भगवान् कृष्ण प्रसन्न होकर मंद मुसकान करते गंभीरवाणीसे बोले ॥२७॥ तुम दोनोंने सब ओरसे निरपेक्ष होकर साठ हजार वर्ष तप किया है, इससे तुमको मेरा दर्शन हुआ है ॥२८॥ जो निष्किंचन है, शान्त है, किसीसे वैर नहीं करता है, वह मेरा मित्र है इससे तुम दोनों जो इच्छा हो वह वर मांगो ॥२९॥ तब आसुरि मुनि और महादेवजी बोले, हे भूमन्! आपको नमस्कार है, हमारा आपके चरणकमलोंमें सदाही वृन्दावनमें वास हो, आपके चरणकमल विना और वर हम नहीं चाहते हैं, तुम्हें, राधाकृष्णके लिये हमारा नमस्कार है ॥ ३० ॥ नारदजी कहते हैं, तथास्तु अर्थात् ऐसा ही हो, यह कहकर भगवान् रास

श्रीमन्निकुंजलतिकाकुसुमाकरस्त्वंश्रीराधिकाहृदयकण्ठविभूषणस्त्वम् ॥ श्रीरासमण्डलपतिर्व्रजमण्डलेशोब्रह्मांडमंडलमहीपरिपालकोसि ॥२६॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदाप्रसन्नोभगवान्राधयासहितोहरिः ॥ मन्दस्मितोमुनिंप्राहमेघगंभीरयागिरा ॥२७॥ श्रीभगवानुवाच ॥ षष्टिवर्ष सहस्राणियुवयोस्तपतोस्तपः ॥ मद्दर्शनंतेनजातंसर्वतोनैरपेक्षयोः ॥२८॥ निष्किंचनोयःशान्तश्चाजातशत्रुःसमत्सखा॥तस्माद्युवाभ्यांमनसा-व्रियतामीप्सितोवरः ॥ २९ ॥ शिवासुरीऊचतुः ॥ नमोस्तुभूमन्युवयोःपदाब्जेसदैववृन्दावनमध्यवासः ॥ नरोचतेन्योन्यमतस्त्वदंघ्रेर्न-मोयुवाभ्यांहरिराधिकाभ्याम् ॥ ३० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तथास्तुचोक्त्वाभगवान्वृन्दारण्येमनोहरे ॥ कालिन्दीनिकटेराजन्रासमण्डल मण्डिते ॥ ३१ ॥ निकुंजपार्श्वेपुलिनेवंशीवटसमीपतः ॥ शिवोपिचासुरिमुनिर्नित्यंवासंचकारह ॥ ३२ ॥ अथकृष्णोरासलीलांचक्रेपद्माकरे वने ॥ पतत्सुगन्धिरजसिगोपीभिर्भ्रमराकुले ॥३३॥ एवंषाण्मासिकीरात्रिःकृताकृष्णेनमैथिल ॥ गोपीनांरासलीलायांव्यतीताक्षणवत्सुखैः ॥ ३४ ॥ अरुणोदयवेलायांस्वगृहान्व्रजयोषितः ॥ यूथीभूत्वाययूराजन्सर्वाःपूर्णमनोरथाः ॥३५॥ श्रीनन्दमन्दिरंसाक्षात्प्रययौनन्दनन्दनः ॥ वृषभानुपुरंप्रागाद्वृषभानुसुतात्वरम् ॥ ३६ ॥ एवंश्रीकृष्णचन्द्रस्यरासाख्यानंमनोहरम् ॥ सर्वपापहरंपुण्यंकामदंमंगलायनम् ॥ ३७ ॥

मण्डलसे शोभित कालिंदीके निकट ॥३१॥ निकुंजके पास वंशीवटके सन्मुख नित्य निवास करने लगे, आसुरि मुनि और महादेवजी भी, वहाँही वास करने लगे ॥३२॥ इसके बाद जिसमें सुगंधित कमलके फूलोंकी रज उड़ रही है, भ्रमर गुंजार रहे हैं, उस पद्माकर वनमें गोपियोंको साथ लेकर श्रीकृष्ण रास करने लगे ॥ ३३ ॥ हे मैथिल! ऐसे श्रीकृष्णने छः महीनेकी रात्रि गोपियोंकी रास लीलामें कर दी, तो भी गोपियोंको उस सुखमें एक क्षणसी मालूम पड़ी ॥३४॥ अब अरुणोदय हुआ, तब व्रजसुन्दरियाँ अपने-अपने यूथ बनाकर अपने-अपने घरोंको गईं, क्योंकि उन सबके मनोरथ पूर्ण हो गये हैं ॥ ३५ ॥ साक्षात् नंद नन्दन श्रीनंद महलको चले गये और वृषभानुसुता बरसानेको चली गईं ॥ ३६ ॥ यह श्रीकृष्णचन्द्रके मनोहर रासका आख्यान वर्णन किया, यह सब पापोंका हरनेवाला परम पवित्र कामका देनेवाला और मंगल करनेवाला है ॥ ३७ ॥

धर्म, अर्थ ; कामको देनेवाला और मुमुक्षुजनोंको मुक्ति देनेवाला, वह मैंने तुमसे कहा, तुम अब क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥ ३८ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां वृन्दावनखण्डे भाषाटीकायां रासक्रीडा वर्णनंनाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥ तब बहुलाश्व राजा बोला कि अघासुर आदि दैत्योंकी ज्योति तो श्रीकृष्णमें लीन हुई और शंखचूड यक्षकी ज्योति श्रीदामामें कैसे लीन हुई, सो कहिये ॥ १ ॥ हे महाबुद्धे ! आप पर और अपरके वेत्ता हो, सो यह कहिये ? अहो ! श्रीकृष्णका परम अद्भुत चरित्र है ॥ २ ॥ नारदजी कहते हैं, कि पहला गोलोकका वृत्तान्त है, नारायणके मुखसे मैंने सुना है, यह सब पापोंको हरनेवाला है, उसको हे राजन् ! महामने ! तुम सुनो ॥ ३ ॥ राधा, श्रीविजया और भू ये तीन पत्नियाँ भगवान् कृष्णकी थीं, जिनमें राधाजी श्रीकृष्ण महात्माकी अत्यन्त प्यारी थी ॥४॥॥ कोटि चन्द्रमाकासा प्रकाश जिसका और राधाकी अवस्थामें बराबर

त्रिवर्ग्यदंजनानांतुमुमुक्षूणांसुमुक्तिदम् ॥ मयातवाग्रेकथितंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥३८॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांवृन्दावनखण्डेरासक्रीडावर्णनं
नामद्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ अघासुरादिदैत्यानांज्योतिःकृष्णेसमाविशत् ॥ श्रीदाम्निशंखचूडस्यकस्माल्लीनंबभूवह
॥ १ ॥ एतद्वदमहाबुद्धेत्वंपरावरवित्तम ॥ अहोश्रीकृष्णचन्द्रस्यचरितंपरमाद्भुतम् ॥ २ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ पुरागोलोकवृत्तान्तंनाराय-
णमुखाच्छ्रुतम्॥सर्वपापहरंपुण्यंशृणुराजन्महामते॥३॥ राधाश्रीर्विजयाभूश्चतिस्रःपत्न्योऽभवन्हरेः॥तासांराधाप्रियातीवश्रीकृष्णस्यमहात्मनः
॥ ४ ॥ राधिकासवयाराजन्कोटिचन्द्रप्रकाशया ॥ कुंजेविरजयारेमेएकान्तेचैकदाप्रभुः ॥५॥ सपत्नीसहितंकृष्णंराधाश्रुत्वासखीमुखात् ॥
अतीवविमनाजातासपत्नीसौख्यदुःखिता ॥ ६ ॥ शतयोजनविस्तारंशतयोजनमूर्ध्वगम् ॥ कोट्यश्विनीसमायुक्तंकोटिसूर्यसमप्रभम् ॥७॥
विचित्ररत्नसौवर्णमुक्तादामविलम्बितम् ॥ पताकाहेमकलशैःकोटिभिर्मण्डितंरथम्॥८॥समारुह्यसखीनांसावेत्रहस्तैर्दशार्बुदैः ॥ हरिंद्रष्टुंजगा-
माशुश्रीराधाभगवत्प्रिया ॥९॥ तन्निकुंजेद्वारपालंश्रीदामानंमहाबलम् ॥ हरिन्यस्तंसमालोक्यतन्निर्भर्त्स्यसखीजनैः ॥१०॥ वेत्रैःसन्ताड्यस-
हसाद्वारिगन्तुंसमुद्यता ॥ सखीकोलाहलंश्रुत्वाहरिरंतरधीयत ॥ ११ ॥

विरजा नामकी एक सखी थी, उसके साथ एक समय श्रीकृष्णने एकान्तमें विहार किया ॥५॥ तब श्रीराधाजी सौतके साथ श्रीकृष्णको विहार करते सखीके मुखसे सुनकर अत्यन्त उदास होकर सौतके सुखसे दुःखी हुई ॥६॥ तब सौ योजन चौड़ा, सौ योजन ऊँचा, करोड़ घोड़ियां जिसमें लगी हैं, करोड़ सूर्यकासा जिसका तेज ॥७॥ चित्र विचित्र रत्न जिसमें लग रहे, ऐसा सुवर्णका रथ, मोतियोंकी झालर जिसमें लग रही, करोड़ों पताका और करोड़ों कलशोंसे भूषित ॥८॥ उस रथमें बैठकर दश अरब वेंतधारी सखियोंको साथ लेकर श्रीकृष्णको देखनेको हरिकी प्रिया राधा आई ॥९॥ उस निकुंजके द्वारका द्वारपाल श्रीदामा नामक महाबली गोप था, उसको राधिकाजी देखकर फटकारकर सखीजनोंके हाथ ॥१०॥ वेंतोंसे मारकर भीतर जानेको उद्यत हुई, तब सखियोंका कोलाहल सुनकर हरि भीतर विरजाके पास अन्तर्धान हो गये ॥ ११ ॥

और राधाके भयसे विरंजा सखी नदी होकर बह गइ, गोलोकमें करोड़ योजन चौड़ी हो गई ॥१२॥ अकस्मात् कुण्डली बांधकर जैसे पृथ्वीपर समुद्र और रत्न पुष्पोंसे गुथी हुई उष्णिग् जैसे, वैसेही वह नदी गोलोकके चारों तरफ सुशोभित हुई ॥ १३ ॥ तब हरिको अन्तर्ध्यान हुये और विरजाको नदी हो गई देखकर राधिका अपने कुञ्जमें चली आई ॥१४॥ उसके बाद हे नृपेश्वर ! श्रीकृष्णने नदी हुई विरजाको निर्मल वस्त्र धारण करनेवाली अपना वर देकर सदेह कर दी ॥१५॥ फिर विरजाके तटपर वनमें विरजाके साथ रास करने लगे, फिर वृन्दावनकी निकुञ्जमें रास किया ॥ १६ ॥ विरजाके सात पुत्र हुये, कृष्णके तेजसे वे अपनी बाल लीलासे निकुञ्जको शोभित करने लगे ॥१७॥ एक दिन उन सातों पुत्रोंमें लड़ाई हो गई, बड़ोंने छोटे पुत्रको मारा, तब वह छोटा पुत्र डरकर माताकी गोदीमें गया ॥१८॥ तब माता उसको आश्वासन देकर प्यार करने लगी, भगवान् वहीं

राधाभयाच्चविरजानदीभूत्वाऽवहत्तदा ॥ कोटियोजनमायामेगोलोकंसहसानदी ॥१२॥ सहसाकुण्डलीकृत्वाशुशुभेब्धिरिवावनिम्॥रत्नपुष्पै-
र्विचित्रांगायथोविष्णङ्सुद्रितातथा ॥१३ ॥ हरिंगतंतंविज्ञायनदीभूतांचतांतथा॥आलोक्यतन्निकुंजंचस्वकुंजंराधिकाययौ॥१४॥ अथकृष्णो-
नदीभूतांविरजांविरजांबराम्॥सविग्रहांचकाराशुस्ववरेणनृपेश्वर ॥१५॥पुनर्विरजयासार्द्धंविरजातीरजेवने॥ निकुंजवृन्दकारण्येचक्रेरासंहरिःस्व-
यम् ॥१६॥ विरजायांसप्तसुताबभूवुःकृष्णतेजसा॥निकुंजंतेह्यलंचक्रुःशिशवोबाललीलया॥१७॥एकदातैःकलिरभूल्लघुर्ज्येष्ठैश्चताडितः ॥ पला-
यमानोभयभृन्मातुः क्रोडेजगामह॥१८॥तल्लालनंसमारेभेसमाश्वास्यसुतंसती॥तदावैभगवान्साक्षात्तत्रैवान्तरधीयत ॥१९॥ रुषासुतंशशापेयं
श्रीकृष्णविरहातुरा ॥ त्वंजलंभवदुर्बुद्धेकृष्णविच्छेदकारकः ॥२०॥ कदापित्वज्जलंमर्त्यानपिबंतुकदाचन ॥ ज्येष्ठान्शशापव्रजतमेदिनींकलि-
कारकाः ॥ २१ ॥ जलरूपाःपृथग्यानानसमेताभविष्यथ ॥ नैमित्तिकंचभवतांमेलनंस्यात्सदालये ॥२२॥ श्रीनारदउवाच॥इत्थंतेमातृशापेन
धरणींवैसमागताः ॥ प्रियव्रतरथांगानांपरिखासुसमास्थिताः ॥ २३॥ लवणेक्षुसुरासर्पिर्दधिदुग्धजलार्णवः ॥ बभूवुःसप्ततेराजन्नक्षोभ्याश्चदुर-
त्ययाः ॥ २४ ॥ दुर्विगाह्याश्चगंभीराआयामंलक्षयोजनात् ॥ द्विगुणंद्विगुणंजातंद्वीपेद्वीपेपृथक्पृथक् ॥ २५ ॥

अन्तर्ध्यान हो गये ॥१९॥ तब विरजाने क्रोध करके श्रीकृष्णके विरहसे उस पुत्रको शाप दिया, हे दुर्बुद्धे ! तू जल हो जा, तुमने श्रीकृष्णका वियोग करा दिया है ॥२०॥ तेरे जलको कभी कोई मनुष्य नहीं पीयेगा, बड़ोंको यह शाप दिया, हे क्लेश करनेवालो ! तुम पृथ्वीमें जाओ॥२१॥जलरूप पृथक्-पृथक् रहोगे मिलोगे नहीं, तुम्हारा नैमित्तिक प्रलयमें मिलन होगा ॥ २२ ॥ नारद कहते हैं, ऐसे जो माताके शापसे पृथ्वीमें आये थे, वे प्रिय व्रतके रथकी की हुई खाईमें आकर स्थित हो समुद्र हो गये ॥२३॥ खारा समुद्र, ईखके रसका मदिराका, घृतका, दहीका, दूधका, मीठे जलका, ये सात समुद्र बड़े अक्षोभ्य तथा दुरात्यय हुये ॥ २४ ॥ बड़े दुर्विगाह्य और गहरे लाख योजनसे लेकर दूने-दूने एक लाख, दो लाख, चार लाख, आठ लाख, सोलह लाख, बत्तीस लाख, चौसठ लाख, द्वीप-द्वीप में पृथक्-पृथक् हुये ॥ २५ ॥

ऐसे जब पुत्र चले गये तब पुत्र स्नेहसे अति विह्वल हुई अपनी प्यारी विरहिणी विरजाको श्रीकृष्णने समीप आकर वर दिया ॥२६॥ हे भीरू ! हमारा तुम्हारा कभी वियोग नहीं होगा, अपने तेजसे अपने पुत्रोंकी सदाही रक्षा करोगी ॥ २७ ॥ इसके बाद राधिकाको विरहिणी जानकर श्रीदामाको साथ लिये हे वैदेह ! श्रीकृष्ण राधिकाके निकुञ्जको गये ॥ २८ ॥ सखाके साथ निकुञ्जके दरवाजे पर आये अपने प्राणवल्लभको देखकर मानवती होकर श्री राधाजी बोली ॥ २९ ॥ हे हरे ! जहाँ आपका नया स्नेह जुडा है, वहीं जाओ, वह नदी हो गई है, आप नद हो जाओ, और उसी निकुञ्जमें निवास करो, मुझसे आपका क्या प्रयोजन है ॥ ३० ॥ नारदजी कहते हैं कि, भगवान् यह सुनकर उसी निकुञ्जमें चले गये ॥ ३१ ॥ तब श्रीकृष्णका मित्र श्रीदामा क्रोधसे राधाजी से यह बोला कि परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण स्वयम् भगवान् ॥ ३२ ॥ गोलोकके पति,

अथपुत्रेषुयातेषुपुत्रस्नेहातिविह्वला ॥ स्वप्रियांतांविरहिणीमेत्यकृष्णोवरंददौ ॥२६॥ कदानतेमेविच्छेदोमयिभीरुभविष्यति ॥ स्वतेजसास्वपुत्राणांसदारक्षांकरिष्यसि ॥२७॥ अथराधांविरहिणींज्ञात्वाकृष्णोहरिःस्वयम् ॥ श्रीदाम्नासहवैदेहतन्निकुंजसमाययौ॥२८॥निकुंजद्वारिसंप्राप्तंससखंप्राणवल्लभम् ॥ वीक्ष्यमानवतीभूत्वाराधाप्राहहरिंवचः ॥ २९ ॥ राधोवाच ॥ तत्रैवगच्छयत्राभूत्स्नेहस्तेनूतनोहरे ॥ नदीभूताहिविरजानदोभवितुमर्हसि ॥ कुरुवासंतन्निकुंजेमयातेकिंप्रयोजनम् ॥३०॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वाथभगवांस्तन्निकुंजंजगामह ॥३१॥ श्रीकृष्णमित्रंश्रीदामाराधाम्प्राहरुषावचः ॥ श्रीदामोवाच ॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥ ३२ ॥ असंख्यब्रह्माण्डपतिर्गोलोकेशोविराजते ॥ त्वादृशीःकोटिशःशक्तीःकर्तुंशक्तःपरात्परः ॥ ३३ ॥ तंविनिन्दसिराधेत्वंमानंमाकुरुमाकुरु ॥ राधोवाच ॥ हेमूढपितरंस्तुत्वामातरंमांविनिन्दसि ॥ ३४ ॥ राक्षसोभवदुर्बुद्धेगोलोकाच्चबहिर्भव ॥ श्रीदामोवाच ॥ अनुकूलेनकृष्णेनजातंमानंशुभेतव ॥ ३५ ॥ तस्माद्भुविपरात्कृष्णात्परिपूर्णतमात्प्रभोः ॥ शतवर्षंतेवियोगोभविष्यतिनसंशयः ॥३६॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंपरस्परंशापात्स्वकृताद्भयभीतयोः ॥ अतीवचिंतांगतयोराविरासीत्स्वयंप्रभुः॥३७॥श्रीभगवानुवाच॥वचनंवैस्वनिगमंदूरीकर्तुंक्षमोस्म्यहम्॥भक्तानांवचनंराधेदूरीकर्तुंनचक्षमः॥३८॥

असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति, विराजते हैं, परसे पर हैं, तुम्हारे जैसी करोड़ों शक्तियोंको उत्पन्न करनेमें समर्थ हैं ॥३३॥ हे राधे ! उनकी तुम निन्दा करती हो, इससे मान मत करो, मान मत करो, तब राधिका बोली—हे मूढ ! पिताकी स्तुति करता माताकी (मेरी) निन्दा करता है ॥ ३४ ॥ हे दुर्बुद्धे ! इससे तू राक्षस होजा, गोलोकसे बाहर निकल जाओ, श्रीदामा बोला—हे शुभे ! श्रीकृष्ण तो तुम्हारे अनुकूल हैं फिर भी तुमने मान किया ॥ ३५ ॥ इससे परिपूर्णतम श्रीकृष्ण प्रभुसे पृथ्वीमें जाकर सौ वर्षका तुम्हारा वियोग होगा, इसमें कुछ संन्देह नहीं है ॥३६॥ ऐसे अपने दिये परस्पर शापसे भयभीत हुये और दोनोंको चिंता हुई तब हरि प्रगट हुये ॥३७॥ और बोले कि

हे राधे ! अपना वचन तो चाहे मैं दूर कर दूं, किन्तु भक्तोंका वचन दूर करनेकी मेरी सामर्थ्य नहीं है ॥३८॥ हे कल्याणी ! तुम शोच मत करो, मेरे वरको सुनो, महीने महीनेमें तुमको मेरे वियोगके अन्तमें दर्शन हुआ करेगा ॥३९॥ वाराह कल्पमें पृथ्वीका भार उतारनेके लिये भक्तोंको दर्शन देनेके लिये, तुम्हारे सहित मैं जाऊँगा ॥४०॥ हे श्रीदामन् ! तुम मेरा वचन सुनो, तुम अंशसे राक्षस हो जावो, वैवस्वत मन्वन्तरमें तुम रासमें मेरा अपराध करोगे ॥४१॥ तब मेरे हाथसे तुम्हारी मृत्यु होगी, फिर मेरे वरसे अपने स्वरूपको प्राप्त हो जाओगे इसमें संदेह नहीं है ॥४२॥ नारदजी कहते हैं-हे राजन् ! इस शापसे श्रीदामाने पहले यक्षोंमें सुधन नामके यक्षके घरमें जन्म लिया ॥४३॥ इससे शंखचूड, इस

माशोचंकुरुकल्याणिवरंमेशृणुराधिके ॥ मासंमासंवियोगांतेदर्शनंमेभविष्यति ॥३९॥ भुवोभारावतारायकल्पेवाराहसंज्ञके॥भक्तानांदर्शनंदातुं गमिष्यामित्वयासह ॥४०॥ श्रीदामञ्छृणुमेवाक्यमंशेनत्वसुरोभव ॥ वैवस्वतान्तरेरासेहेलनंमेकरिष्यसि ॥ ४१ ॥ मद्धस्तेनचतेमृत्युर्भविष्यतिनसंशयः ॥ पुनःस्वविग्रहम्पूर्वम्प्राप्स्यसित्वंवरान्मम ॥४२॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंशापेनश्रीदामापुरापुण्यजनालये॥सुधनस्यगृहेजन्म लेभेराजन्महातपाः ॥४३॥ शंखचूडइतिख्यातोधनदानुचरोऽभवत् ॥ तस्माछ्रीदाम्नितज्ज्योतिर्लीनंजातंविदेहराट् ॥४४॥ स्वात्मारामोलीलयासर्वंकार्यंस्वस्मिन्धाम्निह्यद्वितीयःकरोति ॥ यःसर्वेशःसर्वरूपोमहात्माचित्रंनेदंनौमिकृष्णायतस्मै ॥४५॥ इदंमयातेकथितंमनोहरंवैदेहवृन्दावनखण्डमग्रतः ॥ शृणोतिचैतच्चरितंनरोवरःपरम्पदम्पुण्यतमम्प्रयातिसः ॥ ४६ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांवृंदावनखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादे शंखचूडोपाख्याननामत्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ समाप्तश्चवृन्दावनखण्डः ॥ २ ॥

नामसे प्रसिद्ध कुबेरका अनुचर हुआ, इससे हे राजन् ! उसकी ज्योति श्रीदामामें लीन हुई, श्रीकृष्णमें नहीं हुई ॥४४॥ आत्माराम भगवान् अपनी ही लीलासे सब कार्योंको करते हैं, अद्वितीय सर्वेश्वर सर्व रूप महात्मा हैं, सो ऐसी लीला करनेका कुछ आश्चर्य नहीं है, उन श्रीकृष्णके लिये मेरा नमस्कार है ॥ ४५ ॥ हे वैदेह ! यह मनोहर चरित्र वृन्दावन खण्ड मैंने तुम्हारे सामने कहा, जो नरोत्तम इस चरित्रको सुनता है, वह मनुष्य अति पवित्र परम पदको प्राप्त होता है ॥४६॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां वृन्दावनखण्डे भाषाटीकायां शंखचूडोपाख्यानं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ समाप्तोयं वृन्दावनखण्डः ॥ २ ॥

इदं पुस्तकं मुम्बय्यां श्रीकृष्णदासात्मजेन खेमराजेन स्वकीये
“श्रीवेङ्कटेश्वर” मुद्रणयन्त्रालयेऽङ्कयित्वा प्रकाशितम् ।
संवत् २०३०, शकाब्दाः १८९५.

इति गर्गसंहितायां वृन्दावनखण्डं भाषाटीकासमेतं समाप्तम्

अथ गर्गसंहितायां गिरिराजखण्डं भाषाटीकासहितं प्रारभ्यते

(तृतीयखण्डम्)

श्रीगणेशायनमः ॥ अथ गिरिराजखण्डः ॥ बहुलाश्व राजा नारदजीसे पूछता है कि भगवान् श्रीकृष्णने गोवर्द्धन पर्वतको सहजमें ही एक हाथपर कैसे धारण कर लिया, जैसे बालक छतोनाको उठा लेता है ॥ १ ॥ हे मुनिसत्तम ! परिपूर्णतम साक्षात् महात्मा श्रीकृष्णका जो दिव्य यह अद्भुत चरित्र है, उसको सुनाइये ॥ २ ॥ ऐसे राजाका वचन सुनकर नारदजी बोले कि, सब गोप और किसान लोग जैसे कंसको वार्षिक कर देते थे, ऐसे ही वर्षाके अंतमें इन्द्रको भी बलि दिया करते थे ॥३॥ सो इन्द्रके यज्ञकी सामग्री इकट्ठी करते उन गोपोंको देखकर एक दिन सभामें सब गोपोंके सुनते सुनते श्रीकृष्ण नंदजीसे बोले ॥४॥ इस इन्द्रके पूजनसे क्या फल है, यह इसी लोकका काम है, अथवा यह परलोकका भी सहायक है, यह मुझसे कहिये ॥ ५ ॥ तब नंदजी बोले, यह इन्द्रका पूजन है इस लोकमें सर्वोत्तम भुक्ति (भोग) को देनेवाला है, और परलोकमें मुक्तिका दाता है, इसके पूजन विना मनुष्य पृथ्वीमें कभी सुखी नहीं होता है। नंदजीका यह वचन सुनकर भगवान् बोले ॥६॥ इन्द्रादिक सब देवता अपने २ कर्मोंसे स्वर्गके सुखको भोगते

श्रीगणेशायनमः ॥ श्रीसरस्वत्यैःनमः ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ कथंदधारभगवान्गिरिंगोवर्द्धनंवरम् ॥ उच्छिलींध्रंयथाबालोहस्तेनैकेनलीलया ॥ १ ॥ परिपूर्णतमस्यास्यश्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥ तदेवचरितंदिव्यमद्भुतंमुनिसत्तम ॥ २ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ वार्षिकंहिकरंराज्ञेयथाशक्रायवैतथा ॥ बलिन्ददुःप्रावृडंतेगोपाःसर्वेकृषीवलाः॥३॥महेन्द्रयागसंभारचयंदृष्टैकदाहरिः॥ नन्दंपप्रच्छसदसिवल्लभानांचशृण्वताम् ॥ ॥ ४ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ शक्रस्यपूजनंह्येतत्किम्फलंचास्यविद्यते ॥ लौकिकंवावदन्त्येतदथवापारलौकिकम् ॥ ५ ॥ श्रीनन्दउवाच ॥ शक्रस्यपूजनंह्येतद्भुक्तिमुक्तिकरम्परम् ॥ एतद्विनानरोभूमौजायतेनसुखीक्वचित् ॥ ६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ शक्रादयोदेवगणाश्चसर्वतोभुञ्जन्तियेस्वर्गसुखंस्वकर्मभिः ॥ विशन्तितेमर्त्यपदंशुभक्षयेतत्सेवनंविद्धिनमुक्तिकारणम् ॥ ७ ॥ भयंभवेद्दैपरमेष्ठिनेयतोवार्तातु काकौकिलतत्कृतात्मनाम् ॥ तस्मात्परंकालमनंतमेवहिसर्वबलिष्ठंसुबुधाविदुःपरे ॥ ८ ॥ ततस्तमाश्रित्यसुकर्मभिःपरंभजेद्धरिंयज्ञपतिंसुरेश्वरम् ॥ विसृज्यसर्वंमनसाकृतेःफलंव्रजेत्परंमोक्षमसौनचान्यथा ॥ ९ ॥ गोविप्रसाध्वग्निसुराःश्रुतिस्तथाधर्मश्चवज्ञाधिपतोर्विभूतयः ॥ धिष्ण्येषुचैतेषुहरिम्भजन्तियेसदात्विहामुत्रसुखंव्रजन्तिते ॥ १० ॥

हैं, जब उनका पुण्य क्षीण हो जाता है, तब फिर मनुष्यलोकमें आकर जन्म लेते हैं, इससे उनका सेवन मुक्तिका कारण नहीं है, ऐसा आप समझिये ॥७॥ जिस परमेश्वरसे ब्रह्माको भी भय होता है, फिर उस ब्रह्माके बनाये जो देव मनुष्य उनकी भूमिमें क्या गिनती है, इससे जो सुबुद्धि हैं, वे एक केवल कालकोही अनंतरूप और महाबली जानते हैं ॥८॥ इससे उसका आश्रय लेकर और सबको छोड़कर मन लगाकर कर्मोंके फलरूप उसी परमेश्वरका जो यज्ञपति है, देवताओंका ईश्वर और सबसे परे है, भजन सेवन करते हैं तो परम फल मोक्षको पाते हैं, और तरहसे मोक्ष मिलता है ॥ ९ ॥ उस भगवान्‌की ये विभूतियाँ हैं, गौ, ब्राह्मण, साधु, अग्नि, देवता, वेद और धर्म ये सब उसके निवास स्थान हैं, इससे इनकाही जो पूजन करते हैं, वेही इस लोक और परलोकके सुखोंको भोगते हैं ॥ १० ॥

यह गोवर्द्धन पर्वत उस भगवान्के वक्षःस्थलसे पैदा हुआ है, यह सब पर्वतोंका राजा है और पुलस्त्य ऋषिके तेजसे यहाँ आया है, इस गोवर्द्धनके दर्शन करनेसे मनुष्यका
इस संसारमें फिर जन्म नहीं होता ॥ ११ ॥ इससे तुम गौ, ब्राह्मण और देवता इनका पूजन करके अभी श्रीगिरिराजकोही केवल बलि (भेंट) धरो, यह यज्ञ तो मुझको प्रिय
है, सर्वोत्तम यज्ञ तो यही है, आगे तुम्हारी जैसी इच्छा हो सो करो ॥१२॥ नारदजी कहते हैं तब एक सन्नंद नामका गोप वृद्ध था, नीतिका वेत्ता था, सो अत्यन्त प्रसन्न होकर नंद
जीके सुनते २ श्रीकृष्णसे बोला ॥१३॥ हे नंद सूनो ! हे तात ! तुम साक्षात् ज्ञानकी निधि हो, कौनसी विधिसे गोवर्द्धनकी पूजा करनी चाहिये, सो तत्त्वसे कहो ॥ १४ ॥ तब
भगवान् बोले-इसका पूजन करना हो तो इस विधिसे करे कि पहले तो गिरिराजकी नीचे की धरतीको गोबरसे लेपन करे, फिर जितेन्द्रिय होकर सब सामग्री तैयार कर

समुत्थितोसौहरिवक्षसोगिरिर्गोवर्धनोनामगिरीन्द्रराजराट् ॥ समागतोह्यत्रपुलस्त्यतेजसायद्दर्शनाज्जन्मपुनर्नविद्यते॥११॥सम्पूज्यगोविप्रसुरा
न्महाद्रयेदातव्यमद्यैवपरंह्युपायनम् ॥ एषप्रियोमेमखराजएवहिनचेद्यथेच्छास्तितथाकुरुव्रज ॥ १२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तेषांमध्येऽथसन्नंदो
गोपोवृद्धोऽतिनीतिवित् ॥ अतिप्रसन्नःश्रीकृष्णमाहनन्दस्यशृण्वतः ॥ १३ ॥ संनन्दउवाच ॥ हेनन्दसूनोहेतातत्वंसाक्षाज्ज्ञानशेवधिः ॥
कर्तव्याकेनविधिनापूजाऽद्रेर्वदतत्त्वतः ॥ १४ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ आलिप्यगोमयेनापिगीरिराजभुवंह्यधः ॥ धृत्वाथसर्वसम्भारम्भक्तियुक्तो
जितेन्द्रियः ॥१५॥ सहस्रशीर्षामंत्रेणाद्रयेस्नानंचकारयेत् ॥ गंगाजलेनयमुनाजलेनापिद्विजैःसह॥१६॥शुक्लगोदुग्धधाराभिस्ततःपंचामृतैर्गि-
रिम् ॥ स्नापयित्वागन्धपुष्पैःपुनःकृष्णाजलेनवै॥१७॥वस्त्रंदिव्यंचनैवेद्यमासनंसर्वतोधिकम् ॥ मालालंकारनिचयंदत्त्वादीपावलिम्पराम् ॥
॥ १८ ॥ ततःप्रदक्षिणांकुर्यान्नमस्कुर्यात्ततःपरम् ॥ कृतांजलिपुटोभूत्वात्विदमेवमुदीरयेत् ॥१९॥ नमोवृन्दावनांकायतुभ्यंगोलोकमौलिने ॥
पूर्णब्रह्मातपत्रायनमोगोवर्द्धनायच ॥२०॥ पुष्पांजलिंततःकुर्यान्नीराजनमतःपरम् ॥ घंटाकांस्यमृदंगाद्यैर्वादित्रैर्मधुरस्वनैः ॥२१॥ वेदाहमेतं-
मंत्रेणवर्षाल्लाजैःसमाचरेत् ॥ तत्समीपेचान्नकूटंकुर्याच्छ्रद्धासमन्वितः ॥ २२ ॥

धरे ॥१५॥ फिर सहस्रशीर्षा मन्त्रसे ब्राह्मणोंको साथ लेकर गंगाजल और यमुनाजलसे स्नान कराये ॥१६॥ फिर सफेद गौके दूधकी धाराओंसे फिर पञ्चामृतसे और फिर यमुना
जलसे स्नान कराये, फिर केशर, कस्तूरी, कपूर, चंदन, लगावे ॥१७॥ फिर सुगंधित धूप दे, वस्त्र पहनाये, आभूषण चढाये और दीपदान करे ॥१८॥ फिर नमस्कार करके प्रद-
क्षिणा करे फिर हाथ जोड़कर यह स्तुति करे कि ॥१९॥ हे गिरिराज ! तुम वृन्दावनकी गोदीमें बैठे हो, तुमही गोलोकके मुकुट हो, तुमही पूर्णब्रह्म श्रीकृष्णके छत्र हो, ऐसे
गोवर्द्धनरूप तुम हो, उनके लिये हमारा नमस्कार है ॥ २० ॥ फिर पुष्पाञ्जलि कर आरती करे, तब झांझ, घंटा, मृदंगादि सुन्दर बाजे बजाये ॥ २१ ॥ फिर (वेदाहमेतं
पुरुषं महान्तमादित्य वर्णं तमसः परस्तात् । तमेव विदित्वाऽति मृत्युमेति नान्यः पंथाविद्यतेयनाय) इस मंत्रसे खील वर्षावे, फिर श्रद्धासे गिरिराजका अन्नकूट करे ॥ २२ ॥

फिर चौसठ कटोराओंकी पांच पंक्ति लगाकर उनको गंगाजल, यमुना जलसे भरकर उनमें तुलसीदल डालकर सामने रखे ॥२३॥ फिर एक-एक अन्नकी छप्पन छप्पन सामग्री करके भोगोंको लगाकर सावधान होकर सेवा करे, फिर होम करे और अग्नि, ब्राह्मण, देवताओंकी पुष्प गन्धादिकसे पूजन करे ॥२४॥ फिर उत्तम ब्राह्मणोंको सुगन्धित मीठे २ भोजन कराकर और भी जो कोई यहाँ गरीब लोग शूद्रादिक चाण्डाल पर्यंत आये उनको उत्तम भोजन दे ॥२५॥ फिर गोपी, गोपाल इनके द्वारा गौओंको नृत्य करावे, फिर मंगल वाणियोंसे जय जय शब्द करे, इस तरह गोवर्द्धनके इस उत्सवको करे ॥ २६ ॥ अब जहाँ गोवर्द्धन न हो, वहाँकी विधि कहते हैं सो सुनो, पहले तो गोवर्द्धनके आकार का एक गोबरका ऊँचा गोवर्द्धन जैसा पर्वत बनाये ॥२७॥ उसमें बहुतसी सींकोंको लगाकर लताओंकी कल्पना कर, फूलोंसे ढके, ऐसे पृथ्वीमें मनुष्योंको सदाही गोवर्द्धन पूजना चाहिये ॥२८॥ और जो गोवर्द्धनको लावे तो शिलाके समान सोना रखकर शिलाको ले जाय और बिना सोना रखे तो कोई गोवर्द्धनकी शिलाको लावे तो वह रौरव नरकको जाता

कचौलानांचतुःषष्टिपंचपंक्तिसमन्वितम् ॥ तुलसीदलमिश्रैश्चश्रीगंगायमुनाजलैः ॥२३॥ षट्पंचाशत्तमैर्भोगैःकुर्यात्सेवांसमाहितः ॥ ततोग्नीन्ब्राह्मणान्पूज्यगाःसुरान्गन्धपुष्पकैः ॥ २४ ॥ भोजयित्वाद्विजवरान्सौगंधैर्मिष्टभोजनैः ॥ अन्येभ्यश्चश्वपाकेभ्योदद्याद्भोजनमुत्तमम् ॥२५॥ गोपीगोपालवृन्दैश्चगवांनृत्यंचकारयेत् ॥ मंगलैर्जयशब्दैश्चकुर्याद्गोवर्द्धनोत्सवम् ॥२६॥ यत्रगोवर्द्धनाभावस्तत्रपूजाविधिंशृणु ॥ गोमयैर्वर्द्धनः कुर्यात्तदाकारःपरोन्नतः ॥२७॥ पुष्पव्यूहैर्लताजालैरीषिकाभिःसमन्वितः ॥ पूजनीयःसदामर्त्यैर्गिरिर्गोवर्द्धनोभुवि ॥२८॥ शिलासमानम्पुरटंक्षिस्वाऽद्रौतच्छिलांनयेत्॥गृह्णीयाद्योविनास्वर्णसमहारौरवंव्रजेत् ॥ २९ ॥ शालग्रामस्यदेवस्यसेवनंकारयेत्सदा ॥ पातकंनस्पृशेत्तंवैपद्मपत्रंयथा जलम् ॥ ३० ॥ गिरिराजशिलासेवांयःकरोतिद्विजोत्तमः ॥ सप्तद्वीपमहीतीर्थावगाहफलमेतिसः ॥ ३१ ॥ गिरिराजमहापूजा करोतियः ॥ इहसर्वंसुखंभुक्त्वाऽमुत्रमोक्षंप्रयातिसः ॥३२॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीगिरिराजखण्डेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीगिराजपूजांवर्षेवर्षे विधिवर्णनंनामप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वावचोनन्दसुतस्यसाक्षाच्छ्रीनन्दसन्नन्दवराव्रजेशाः ॥ सुविस्मिताःपूर्वकृतं विहायप्रचक्रिरेश्रीगिरिराजपूजाम् ॥ १ ॥

है ॥२९॥ शालग्रामका जो नित्य पूजन करता है उसको पाप कभी स्पर्श नहीं करता है, जैसे कमलके फूलको जल स्पर्श नहीं करता है, वैसेही ॥ ३० ॥ कोई द्विजोत्तम गिरिराज शिलाकी सेवा पूजन करता है उस पुरुषको भी पाप स्पर्श नही करता है, उसको सातों द्वीपोंके साढ़े तीन करोड़ तीर्थ स्नान करनेका फल प्राप्त होता है ॥३१॥ जो मनुष्य प्रति वर्ष गोवर्द्धनकी पूजा करता है, वह यहाँ ही सब सुखोंको भोगकर अंतमें मोक्षको प्राप्त होता है ॥ ३२ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां गिरिराज खण्डे भाषाटीकायां गिरिराज पूजावर्णनं नामप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ नारदजी कहते हैं कि इस प्रकार नंदसंनन्दादिक सब व्रजके स्वामी जो गोप हैं वे नंद सुतका वचन सुनकर आश्चर्यमें आगये, तब वे सब पहले किये इन्द्रके यज्ञको छोड़कर श्रीगिरिराजकी पूजा करने लगे ॥ १ ॥

हे मैथिल ! तब नन्दराज बली (भेटोंको) और दोनों पुत्रोंको और यशोदाजीको साथ लेकर गर्गजीको साथ लेकर बड़ी प्रसन्नतासे गिरिराजकी पूजा करनेको उद्यत हुये ॥२॥
तब बड़ा ऊँचा विचित्र जिसका वर्ण, सोनेकी सांकल जिसके बंधी है, ऐसे हाथीपर बैठकर गोवर्द्धनकी पूजाके लिये गौओंको साथ लेकर गोवर्द्धनके समीप आये, तब कैसी शोभा
हुई है, मानो इन्द्राणीको साथ लेकर शरदके सफेद बादलोंके साथ ऐरावतपर चढ़ा इन्द्रही आता है॥३॥नौ नन्द, नौ उपनन्द, छः वृषभानु और सब गोप अपने अपने पुत्र पुत्री,
पौत्र, नाती, स्त्री, सबके साथ गिरिराजके पास सब यज्ञ सामग्रीको लेकर आये ॥ ४ ॥ हजारों बाल सूर्यकासा तेज जिसका ऐसी पालकीमें चढ़कर सब सखीजनोंको साथ
लेकर दिव्य, भूषण, वस्त्रोंको पहनकर इन्द्राणीसी सजकर श्रीराधिकाजी वहाँ ऐसे आई हैं, जैसे चकोरी भ्रमरियोंके झुण्डको साथ लेकर आती है ॥५॥ और करोड़ सखी अलंकृत
होकर जिनके साथ हैं, उन सखियोंके बीचमें शृंगार किये चन्द्रमाकेसे जिनके मुख चमरको फिराती ऐसी ललिता विशाखा नामकी दोनों सखी जिनके साथमें हैं, इस शोभासे

नीत्वाबलीन्मैथिलनन्दराजःसुतौसमानीयचरामकृष्णौ ॥ यशोदयाश्रीगिरिपूजनार्थंसमुत्सुकोगर्गयुतःप्रसन्नः ॥२॥ त्वरंसमारुह्यमनोन्नतंगजं
विचित्रवर्णंधृतहेमशृंखलम्॥गोवर्द्धनान्तंप्रययौगवांगणैःशरद्घनैःशक्रइवप्रियायुतः।३।नन्दोपनन्दावृषभानवश्चपुत्रैश्चपौत्रैश्चसहांगनाभिः॥समा-
ययुःश्रीगिरिराजपार्श्वंसर्वंसमानीयचयज्ञभारम् ॥४॥ सहस्रबालार्कपरिस्फुरद्युतिमारुह्यराधाशिबिकांसखीगणैः ॥शचीवदिव्याम्बररत्नभूषणा
बभौचकारीभ्रमरीसमाकुला ॥५॥समागतेपार्श्वगतेस्वलंकृतेराजन्सखीकोटिसमावृतेपरे ॥ सख्यौविभातेललिताविशाखेचन्द्राननेचालितचारु
चामरे ॥ ६ ॥ एवंरमावैविरजाचमाधवीमायाचकृष्णानृपजह्नुनंदिनी ॥ द्वात्रिंशदष्टौचतथाहिषोडशसख्यश्चतासांकिलयूथआगतः ॥ ७ ॥
श्रीमैथिलानांकिलकोशलानांतथाश्रुतीनामृषिरूपकाणाम् ॥ तथात्वयोध्यापुरवासिनीनांश्रीयज्ञसीतावनवासिनीनाम्॥८॥रमादिवैकुण्ठनिवा-
सिनीनांतथोर्ध्ववैकुण्ठनिवासिनीनाम्।महोज्ज्वलद्वीपनिवासिनीनांध्रुवादिलोकाचलवासिनीनाम्।९।समुद्रजादिव्यगुणत्रयाणामदिव्यवैमानिक
जौषधीनाम् ॥ जालंधरीणांचसमुद्रकन्याबर्हिष्मतीजासुतलस्थितानाम्॥१०॥तथाप्सरःसर्वफणीन्द्रजानामासांचयूथाव्रजवासिनीनाम्॥समा-
ययुःश्रीगिरिराजपार्श्वंस्वलंकृताःपाणिबलिप्रदीपाः ॥ ११ ॥

श्रीराधिकाजी वहाँ झूमती हुई आई हैं ॥६॥ ऐसेही रमा, विरजा, माधवी, माया, कालिंदी गंगा आदि आठ सखी, सोलह सखी और बत्तीस सखियोंके यूथ आये हैं ॥७॥ मैथिल
देशवासिनियोंके,कोशल देशवासिनियोंके, अयोध्यावासिनियोंके, श्रुति रूपाओंके, मुनिरूपाओंके, वनवासिनियोंके और यज्ञ सीताओंके यूथ आये हैं॥८॥रमा आदि वैकुण्ठवासि-
नियोंके और ऊर्ध्व वैकुण्ठ निवासिनियोंके तथा श्वेत द्वीप वैकुण्ठ निवासिनियोंके, ध्रुवलोकवासिनियोंके, और लोकालोकाचलवासिनी सखियोंके यूथ आये ॥९॥ वैसाही जलन्धर
नगरवासिनियोंके, बर्हिष्मती नगरीकी रहनेवाली सुतलवासिनियोंके, समुद्रकी दिव्य औषधियोंके अदिव्य औषधियोंके देवांगना रूपाओंके दिव्य तीनों गुणके स्वभाव वालियोंके
यूथ आये ॥१०॥ वैसेही नाग कन्याओंके, अप्सराओंके, और व्रजवासिनी सखियोंके यूथ शृंगार करके भेंट लेकर गोवर्द्धनके पास आये ॥ ११ ॥

बूढ़े-बूढ़े गोप, युवा गोप, बालक गोप, पीताम्बर धरे पाग बांधे मोर पंखके जूडा धारण किये श्रीहरि गुंजाओंकी वनमाला नई-नई छड़ी और बांसुरियोंको लिये आये हैं ॥१२॥ ऐसे गिरिराजका उत्सव सुनकर जटाजूट धारण किये, भस्म लगाये, रुंडोंकी माला पहने, सर्पोंके गहने लिपटाये ॥१३॥ भांग, धत्तूरा, विष इनके पानसे विह्वल, पार्वतीको साथ लेकर गणोंके साथ नन्दीश्वर पर बैठकर शिवजी गिरिराजके पास आये हैं ॥ १४ ॥ राजर्षि, ब्रह्मर्षि, देवर्षि, सिद्धोंके ईश, हंसादिक भोगेश्वर, श्री गिरिराजके दर्शनको हजारों ब्राह्मण झुण्डके झुण्ड आये हैं ॥१५॥ उस समय गोवर्द्धन रत्न शिलामय हो गया, सुनहरी शिखर चारों ओर चमकने लगे और मतवाले भ्रमर जिनमें गुंजार कर रहे, झरना जिनमें झर रहे, ऐसी गुफाओंसे श्रीगोवर्द्धनकी सजे हुये हाथींकी सी शोभा हुई॥१६॥उसी समय मूर्तिमान् सब हिमाचलादिक पर्वत भेंट ले लेकर मंगल वस्तुओंको लिये

गोपाश्चवृद्धाःशिशवोयुवानःपीताम्बरोष्णीषकवर्हमंडिताः ॥ श्रीहारगुंजावनमालिकाभीरेजुःसमेतानवयष्टिवेणुभिः॥१२॥ श्रुत्वोत्सवंशैलवरस्य संमुखाद्गंगाधरोबद्धकपर्दमंडलः ॥ कपालभृन्नस्थिजभस्मरूषितःसर्पालिमालावलयैर्विभूषितः॥१३॥धत्तूरभृङ्गाविषपानविह्वलोहिमाद्रिपुत्रीसहितोगणावृतः॥आरुह्यनन्दीश्वरमादिवाहनंसमाययौश्रीगिरिराजमण्डलम् ॥१४॥ राजर्षिविप्रर्षिसुरर्षयश्चसिद्धेशयोगेश्वरहंसमुख्याः ॥ आजग्मुराराद्गिरिदर्शनार्थंसहस्रशोविप्रगणाःसमेताः॥१५॥गोवर्द्धनोरत्नशिलामयोभूत्सुवर्णशृंगैःपरितःस्फुरद्भिः॥ मत्तालिभिर्निर्झरसुंदरीभिर्दरीभिरुच्चांगकरीवराजन् ॥१६॥ तदैवशैलाःकिलमूर्तिमंतःसोपायनामेरुहिमाचलाद्याः ॥ नेमुर्गिरिंमंगलपाणयस्तंगोवर्द्धनंरूपधरंगिरीन्द्राः ॥१७॥ द्विजैश्चगोवर्द्धनदेवपूजनंकृत्वाऽच्युतोक्तंद्विजवह्निगोधनम्॥सम्पूज्यधृत्वासुधनंमहाधनंबलिंददौश्रीगिरियेव्रजेश्वरः ॥१८॥ नन्दोपनन्दैर्वृषभानुभिश्चगोपीगणैर्गोपगणैः प्रहर्षितैः ॥ गायद्भिरानर्तनवाद्यतत्परैश्चकारकृष्णोद्रिवरप्रदक्षिणाम् ॥ १९॥ देवेषुवर्षत्सुचपुष्पवर्षंजनेषुवर्षत्सुचलाजसंघम् ॥ रेजेमहाराजइवाध्वरेजनैर्गोवर्धनोनामगिरीन्द्रराजराट् ॥२०॥ कृष्णोपिसाक्षाद्व्रजशैलमध्याद्धृत्वातिदीर्घंकिलचान्यरूपम् ॥ शैलोस्मिलोकानितिभाषयन्सन्नघाससर्वंकृतमन्नकूटम् ॥ २१ ॥ गोपालगोपीगणवृन्दमुख्याऊचुःस्वयंवीक्ष्यगिरेःप्रभावम् ॥ दातुंवरंतत्रसमुद्यतंतंसुविस्मिताहर्षितमानसास्ते ॥ २२ ॥

मूर्तिमान् गिरिराजके दर्शन करके नमस्कार करने लगे ॥१७॥ तब नन्दजीने श्रीकृष्णकी कही हुई वेद विधिसे ब्राह्मणोंके द्वारा गोवर्द्धनकी पूजा कराकर और ब्राह्मण देवता और गौओंकी पूजाकर, इनको बड़ी बड़ी बलि (भेंट) देकर, ब्राह्मणोंको धन देकर अन्न कूट किया॥१८॥नन्द, उपनन्द, वृषभानु,गोपियोंके गोप, गण, इनके साथ हर्षित श्रीकृष्णने गोवर्द्धनकी परिक्रमा दी, गोप, गोपी बाजे बजाते जात हैं, गाते जाते हैं और नाचते जाते हैं ॥१९॥ देवता फूल बरसाते हैं, मनुष्य खील वर्षाते हैं उस यज्ञमें जैसे कोई राजाधिराज शोभित हो ऐसेही गोवर्द्धनजीकी शोभाको प्राप्त हुये ॥ २० ॥ तब श्रीकृष्णहीने गोवर्द्धनमेंसे निकलकर गोवर्द्धनपर बैठ बड़ा भारी एक और रूप धर लिया, अरे! मैं गोवर्द्धन हूँ ऐसा कहते सब अन्नकूटका भोग लगा गये ॥२१॥ तब गोप, गोपी, सब गोवर्द्धनका प्रभाव देख और वर देनेको उद्यत उसको देख आश्चर्यमें आ गये और प्रसन्न होकर बोले ॥२२॥

गोपोंने आज गिरिराज देवको जान लिया, नन्दके पुत्रने साक्षात् दिखा दिया, हम यही मांगते हैं कि हमारा गोधन और हमारा बन्धुवर्ग इस व्रज भूमिमें दिन दिन बढ़े॥२३॥ दिव्य वपुधारी गोवर्द्धन, किरीट, मुकुट, जिन्होंने धारण कर रखा है, वे "तथास्तु" (ऐसाही हो) ऐसा कहकर क्षण भरमें अन्तर्धान हो गये ॥२४॥ तब नन्द, उप नन्द, वृषभानु राजा बल, सुचन्द्र, नन्दराज, श्रीकृष्ण, गोप, गोपी, अपने-अपने गोधनोंको लेकर व्रजको आये ॥२५॥ सम्पूर्ण द्विज, योगेश्वर, सिद्धोंके समूह, शिवादिक और भी सब मनुष्य नमस्कार करके गोवर्द्धनका पूजन करके प्रसन्न हो होकर अपने-अपने घरको चले गये, परन्तु अन्तःकरणमें उनकी जानेकी इच्छा नहीं थी॥२६॥ यह श्रीकृष्ण चन्द्रका परमोत्तम चरित्र है, सो मैंने तुम्हारे सामने वर्णन किया है, पवित्र है, मनुष्योंके पापको हरने वाला है॥२७॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां गिरिराजखण्डे भाषाटीकायां गिरिराज महोत्सव वर्णनं नाम द्वितीयो

ज्ञातोसिगोपैर्गिरिराजदेवःप्रदर्शितोनन्दसुतेनसाक्षात् ॥ नोगोधनंवाकिलबन्धुवर्गोवृद्धिंसमायातुदिनेदिनेकौ॥२३॥ तथास्तुचोक्त्वागिरिराजराजोगोवर्द्धनोदिव्यवपुर्दधानः ॥ किरीटकेयूरमनोहरांगःक्षणेनतत्रान्तरधीयतारात् ॥२४॥ नन्दोपनन्दावृषभानवश्चबलःसुचन्द्रोवृषभानुराजः ॥ श्रीनन्दराजश्चहरिश्चगोपागोप्यश्चसर्वानिजगोधनैश्च॥२५॥द्विजाश्चयोगेश्वरसिद्धसंघाःशिवादयश्चान्यजनाश्चसर्वे ॥ नत्वाथसम्पूज्यगिरिम्प्रसन्नाःस्वंस्वंगृहंजग्मुरनिच्छयाच ॥२६॥ श्रीकृष्णचन्द्रस्यपरंचरित्रंगिरीन्द्रराजस्यमहोत्सवंच ॥ मयातवाग्रेकथितंविचित्रंनृणांमहापापहरम्पवित्रम् ॥२७॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीगिरिराजखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेगिरिराजमहोत्सववर्णनंनामद्वितीयोऽध्यायः ॥२॥ श्रीनारद उवाच ॥ अथमन्मुखतःश्रुत्वास्वात्मयागस्यनाशनम् ॥ गोवर्द्धनोत्सवंजातंकोपंचक्रेपुरन्दरः ॥ १ ॥ सांवर्तकंनामगणंप्रलयेमुक्तबंधनम् ॥ इन्द्रोव्रजविनाशायप्रेषयामाससत्वरम्॥२॥अथमेघगणाःक्रुद्धाध्वनंतश्चित्रवर्णिनः ॥ कृष्णाभाःपीतभाःकेचित्केचिच्चहरितप्रभाः ॥३॥ इन्द्रगोपनिभाःकेचित्केचित्कर्पूरवत्प्रभाः ॥ नानाविधाश्चयेमेघानीलपंकजसुप्रभाः॥४॥हस्तितुल्यान्वारिबिन्दून्ववृषुस्तेमदोद्धताः ॥ हस्तिशुंडासमाभिश्च धाराभिश्चंचलाश्चये ॥५॥ निपेतुःकोटिशश्चाद्रिकूटतुल्योपलाभृशम् ॥ वातावबुःप्रचण्डाश्चक्षेपयंतस्तरून्गृहान् ॥ ६ ॥

ऽध्यायः ॥२॥ श्री नारदजी कहते हैं, इसके बाद इन्द्रने मेरे मुखसे अपने यज्ञका नाश सुनकर और गोवर्द्धनका उत्सव सुनकर बड़ा क्रोध किया ॥१॥ मेघोंका सांवर्तक नामक गण जो प्रलयमें छूटता है, उस मेघोंके गणको व्रजका नाश करनेके लिये इन्द्रने व्रजके ऊपर भेजा ॥२॥ अब मेघोंके गण गर्जते, क्रोध करते, चित्र विचित्र जिनके वर्ण, कोई काले, पीले, कोई लाल, सफेद, और हरे ॥३॥ कोई वीर बहूटीके समान अति लाल, कोई चितकबरे अनेक रंगके कोई कपूरके वर्णवाले कोई नील कमलके समान हैं ॥४॥ वे अति चञ्चल मदोद्धत मेघ हाथीकी सूँडके समान जलकी धाराओंसे हाथीके समान जल विन्दुओंको वर्षाने लगे ॥ ५ ॥ और पर्वतके शिखरके समान करोड़ों ओले पढ़ने लगे और अत्यन्त प्रचण्ड हवा पेड़ोंको उखाड़ती घरोंको पटकती चली ॥ ६ ॥

मेघोंमेंसे प्रचण्ड वज्रपात हुआ जिनसे नाशका दृश्य बन गया, हे मैथिलेन्द्र! पृथ्वीमें ऐसा बड़ा भारी भयंकर शब्द हुआ॥७॥ जिससे सातों द्वीप सातों पाताल हिलने लगे पृथ्वी हिलने लगी, ब्राह्माण्ड गूँज उठा, दिग्गज चलायमान हो गये, तारागण टूट टूटकर गिरने लगे ॥८॥ सब गोप भयभीत होकर जीनेकी इच्छासे कुटुम्बसहित अपने २ बालकोंको सामने करके नंदजीके महलको आये ॥९॥ श्रीकृष्णको बलदेवजीसहित नमस्कार करके सब व्रजवासी भयभीत होकर बोले कि, हे महाराज! हम आपकी शरण आये हैं॥१०॥ हे राम! हे राम! हे बड़ी भुजाओंवाले! हे कृष्ण! व्रजके ईश्वर! पाहि पाहि। इन्द्रके दिये हुये कष्टसे अपने जनोंकी रक्षा करो ॥ ११ ॥ इन्द्रके यज्ञको छोड़कर आपके वचनसे गोवर्द्धनका यज्ञ किया इसलिए इन्द्रने बड़ा कोप किया है अब हम क्या करें, यह हमें बताइये ॥१२॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे गोपोंको, गोकुलको, बछड़ा बछिया बालक

प्रचण्डवज्रपातानांमेघानामंतकारिणाम् ॥ महाशब्दोभवद्भूमौमैथिलेन्द्रभयंकरः ॥७॥ ननादतेनब्रह्माण्डंसप्तलोकैर्बिलैःसह ॥ विचेलुर्दिग्गजा स्ताराह्यपतन्भूमिमण्डलम् ॥ ८ ॥ भयभीतागोपमुख्याःसकुटुंबाजिगीषवः ॥ शिशून्स्वान्स्वान्पुरस्कृत्यनन्दमन्दिरमाययुः ॥९॥ श्रीनन्द नन्दनंनत्वासबलम्परमेश्वरम् ॥ ऊचुर्व्रजौकसःसर्वेभयार्ताःशरणंगताः ॥ १० ॥ गोपाऊचुः ॥ रामराममहाबाहोकृष्णकृष्णव्रजेश्वर ॥ पाहि पाहिमहाकष्टादिन्द्रदत्तान्निजाञ्जनान् ॥ ११ ॥ हित्वेन्द्रयागंत्वद्वाक्यात्कृतोगोवर्द्धनोत्सवः ॥ अद्यशक्रेप्रकुपितेकर्तव्यंकिंवदाशुनः ॥ १२ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ व्याकुलंगोकुलंवीक्ष्यगोपीगोपालसंकुलम् ॥ सवत्सकंगोकुलंचगोपानाहनिराकुलः ॥ १३ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ माभैष्टयातादि्रतटंसर्वैःपरिकरैःसह ॥ वःपूजाग्रहतायेनसरक्षांसंविधास्यति ॥ १४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वास्वजनैःसार्द्धमेत्यगोवर्द्धनं हरिः ॥ समुत्पाटयदधाराद्रिंहस्तेनैकेनलीलया ॥ १५ ॥ यथोच्छिलींध्रंशिशुरश्रमोगजःस्वपुष्करेणैवचपुष्करंगिरिम् ॥ धृत्वाबभौश्रीव्रजराज नन्दनःकृपाकरोसौकरुणामयःप्रभुः ॥१६॥ अथाहगोपान्विशताद्रिगर्तंहेतातमातर्व्रजवल्लभेशाः ॥ सोपस्करैःसर्वधनैश्चगोभिरत्रैवशक्रस्यभयंन किंचित् ॥ १७ ॥ इत्थंहरेर्वचःश्रुत्वागोपागोधनसंयुताः ॥ सकुटुंबोपस्करैश्चविविशुः श्रीगिरेस्तलम् ॥ १८ ॥

इनको व्याकुल देखकर निराकुल भगवान् श्रीकृष्ण गोपोंसे बोले ॥१३॥ हे व्रजवासियो! भय मत करो, तुम अपना सब परिवार लेकर गिरिराज पर्वतके किनारेपर चलो, जिसने तुम्हारी पूजा ग्रहणकी है, वही तुम्हारी रक्षा करेगा ॥१४॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे कहकर स्वजनोंको साथ लेकर सहजमेंही गोवर्द्धनके पास आकर गिरिराजको उखाड़कर एक हाथपर धर लिया ॥१५॥ जैसे बालक छतौनाको और जैसे हाथी कमलको उठा ले, वैसे ही गोवर्द्धनको उठाकर श्रीकरुणामय नंद नंदन शोभाको प्राप्त हुये हैं ॥१६॥ अब गोपोंसे बोले हे तात! हे मात! हे व्रजवल्लभेशो! अपनी गौ, वृषभ, बछडा, बछिया, बर्तन, वस्त्र, पलंग, पिटारे, सब लेकर गोवर्द्धनके नीचे चले आओ, यहाँ इन्द्रका कुछ भय नहीं है ॥ १७ ॥ ऐसे श्रीकृष्णका वचन सुनकर कुटुम्ब सहित घरकी सब सामग्री लेकर अपनी-अपनी गौओंको लेकर सब गोवर्द्धनके नीचे आये ॥ १८ ॥

बलदेव सहित सब बराबरके बालकोंने कृष्णके कहनेसे अपनी-अपनी लाठियोंको ले लेकर गोवर्द्धनको रोकनेके लिये खम्भेकी तरह लगा दी ॥१९॥ जब भगवान्‌ने जलसमूहको गोवर्द्धनके नीचे आते देखा, तब मनसेही सुदर्शनको और शेषको आज्ञा दी ॥ २० ॥ और करोड़ सूर्योंकासा तेज धरकर सुदर्शन चक्र गोवर्द्धनके ऊपर जा बैठा, सो ऊपरकी सब वर्षाको सुदर्शन चक्र पी गया, जैसे अगस्त्यजी समुद्रको पी गये हैं ॥ २१ ॥ नीचे गोवर्द्धनके चारों ओर कुण्डली मारकर शेषजी बैठ गये, सो नीचेका सब जल उन्होंने रोक लिया, जैसे समुद्रका तट समुद्रको रोक लेता है ॥२२॥ गोवर्द्धनको धारण करनेवाले हरि सात दिनतक स्थिर होकर जैसेके तैसे खड़े रहे, थोड़ा भी चलायमान नहीं हुये और सब गोप गोपी श्रीकृष्णको ऐसे देखते रहे, जैसे चन्द्रमाको रातदिन चकोर देखा करता है ॥ २३ ॥ और उस समय इन्द्र क्रोधित हुआ मत्त ऐरावत हाथीपर बैठकर सब सेनाको साथ लेकर व्रजमण्डलको आया ॥ २४ ॥ और नंदजीके व्रजको नष्ट करनेकी इच्छासे फेंकर वज्र मारने लगा, तभी श्रीकृष्णने वज्र सहित इन्द्रका हाथ जकड़

वयस्याबालकाःसर्वेकृष्णोक्ताःसबलानृप ॥ स्वान्स्वांश्चलगुडानद्रेरवष्टंभान्प्रचक्रिरे॥१९॥जलौघमागतंवीक्ष्यभगवांस्तद्गिरेरधः ॥ सुदर्शनंतथा शेषंमनसाऽऽज्ञांचकारह ॥२०॥ कोटिसूर्यप्रभंचाद्रेरूर्ध्वंचक्रंसुदर्शनम् ॥ धारासंपातमपिबदगस्त्यइवमैथिल ॥२१॥ अधोधस्तंगिरिंशेषःकुण्डलीभूतआस्थितः ॥ रुरोधतज्जलंदीर्घंयथावेलामहोदधिम् ॥२२॥ सप्ताहंसुस्थिरस्तस्थौगोवर्द्धनधरोहरिः ॥ श्रीकृष्णचंद्रंपश्यंतःचकोराइवते स्थिताः ॥२३॥ मत्तमैरावतंनागंसमारुह्यपुरन्दरः॥ससैन्यःक्रोधसंयुक्तोव्रजमण्डलमाययौ॥२४॥दूराच्चिक्षेपवज्रंस्वंनंदगोष्ठजिघांसया ॥ स्तंभयामासशक्रस्यसवज्रंमाधवोभुजम् ॥२५॥ भयभीतस्तदाशक्रःसांवर्तकगणैःसह॥दुद्रावसहसादेवैर्यथेभःसिंहताडितः॥२६॥ तदैवार्कोदयोजातो गतामेघाइतस्ततः ॥ वाताउपरताःसद्योनद्यःस्वल्पजलानृप॥२७॥ विपंकंभूतलंजातंनिर्मलंखंबभूवह ॥ चतुष्पदाःपक्षिणश्चसुखमापुस्ततस्ततः ॥२८॥ हरिणोक्तास्तदागोपानिर्ययुर्गिरिगर्ततः ॥ स्वंस्वंधनंगोधनंचसमादायशनैःशनैः ॥२९॥निर्यातेतिवयस्यांश्चप्राहगोवर्द्धनोद्धरः॥तेतमाहुश्चनिर्गच्छधारयामोऽद्रिमोजसा ॥३०॥ इतिवादपरान्गोपान्गोवर्द्धनधरोहरिः ॥ तदर्द्धंचगिरेर्भारंप्रादात्तेभ्योमहामनाः ॥ ३१ ॥

दिया ॥२५॥ तब तो इन्द्र भयभीत होकर सांवर्तक गणोंको लेकर देवताओंको साथ लेकर ऐसे भग गया, जैसे सिंहके भय से हाथीका बच्चा भग जाता है ॥ २६ ॥ तभी सूर्य उदय हो आया, बादल सब इधर उधर चले गये, हवा बन्द हो गई, नदियोंके जल प्रमाणसे बढ़ने लगे ॥२७॥ पृथ्वीका कीचड़ सूख गया, आकाश निर्मल हो गया, जीवजंतु पशु पक्षी सुखी हो गये ॥ २८ ॥ हरिकी आज्ञासे गोप पर्वतके नीचे से अपने-अपने धनको गौओंको धीरे-धीरे निकालकर बाहर आ गये ॥ २९ ॥ तब भगवान् गोवर्द्धनधारी बराबरके सब ग्वालोंसे बोले कि, तुम भी निकलो, तब सखा श्रीकृष्णसे बोले कि भैया पहिले तुम निकल जाओ, हम इस गोवर्द्धनको अपने पराक्रमसे धारण कर लेंगे ॥ ३० ॥ ऐसे कहते जो गोप उनके ऊपर गोवर्द्धनधारी कृष्णने आधाके लगभग बोझ धर दिया ॥ ३१ ॥

उस बोझके मारे निर्बल होकर सब गोपबालक पृथ्वीमे गिर पड़े ॥३२॥ तब एक हाथसे सबको उठाकर श्रीकृष्णने सबके देखते-देखते पहिलेकी तरह पर्वतको यथा स्थान रख दिया ॥३३॥ तभी सब गोप और गोपियोंने परब्रह्म श्रीकृष्णको जानकर गन्ध, अक्षत, फूल, माला, दीप, दही दूधसे श्रीकृष्णका पूजन कर नमस्कार किया ॥३४॥ तभी नन्द, उपनन्द यशोदा, रोहिणी, बलदेव, सनन्द आदि बूढ़े बूढ़े गोप दयासे आविर्भूत होकर श्रीकृष्णको आलिंगनकर धन और आशीर्वाद देने लगे ॥ ३५ ॥ गाने बजानेवाले उस कृष्णकी बड़ाई करके गाने बजाने लगे, नाचने लगे दूरसेही श्रीकृष्णको आगे करके सब व्रजवासी अपने-अपने घरोंको आये सबके मनोरथ पूर्ण हो गये ॥ ३६ ॥ तभी देवता प्रसन्न होकर नन्दनवनके पुष्पोंकी वर्षा करने लगे और प्रसन्न हुये गन्धर्व और सिद्धोंके समूह गिरिधारीका यश स्वर्गमें गाने लगे ॥३७॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां गिरिराज खण्डे भाषा

पतितास्तेनभारेणगोपबालाश्चनिर्बलाः ॥३२॥ करेणतान्समुत्थाप्यस्वस्थानेपूर्ववद्गिरिम् ॥ सर्वेषांपश्यतांकृष्णःस्थापयामासलीलया॥३३॥
तदैवगोपीगणगोपमुख्याःसम्पूज्यकृष्णंनृपनन्दसूनुम् ॥ गन्धाक्षताद्यैर्दधिदुग्धभोगैर्ज्ञात्त्वापरंनेमुरतीवसर्वे।३४।नन्दोयशोदानृपरोहिणीचबल-
श्चसनन्दमुखाश्चवृद्धाः॥ आलिंग्यकृष्णंप्रददुर्धनानिशुभाशिषासंयुयुजुर्घृणार्ताः॥३५॥संश्लाघ्यतंगायनवाद्यतत्परानृत्यन्तआरान्नृपनन्दनन्द-
नम् ॥ आजग्मुरेवस्वगृहान्व्रजौकसोहरिंपुरस्कृत्यमनोरथंगताः।३६।तदैवदेवाववृषुःप्रहर्षिताःपुष्पैःशुभैःसुन्दरनन्दनोद्भवैःजगुर्यशः॥श्रीगिरिरा-
जधारिणोगन्धर्वमुख्यादिविसिद्धसंघाः ॥ ३७ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीगिरिराजखण्डेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादेगोवर्द्धनोद्धारणंनामतृतीयो
ऽध्यायः ॥ ३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथदेवगणैःसार्द्धंशक्रस्तत्रसमागताः ॥ गतमानोगिरौकृष्णंरहसिप्रणनामह ॥ १ ॥ इन्द्रउवाच ॥
त्वंदेवदेवःपरमेश्वरःप्रभुःपूर्णःपुराणःपुरुषोत्तमोत्तमः॥परात्परस्त्वंप्रकृतेःपरोहरिर्मांपाहिपाहिद्युपतेजगत्पते ॥२॥ दशावतारोभगवांस्त्वमेवरिर-
क्षयाधर्मगवांश्रुतेश्च ॥ अद्यैवजातःपरिपूर्णदेवःकंसादिदैत्येन्द्रविनाशनाय॥३॥त्वन्माययामोहितचित्तवृत्तिमदोद्धतंहेलनभाजनंमाम्॥पितेवपु-
त्रंद्युपतेक्षमस्वप्रसीददेवेशजगन्निवास ॥ ४ ॥

टीकायां नारद बहुलाश्व संवादे गोवर्द्धनोद्धारणं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥ नारदजी कहते हैं, इसके बाद देवगणोंको साथ लेकर गोवर्द्धनपर एकान्तमें मान जिसका भंग हो गया वह इंद्र श्रीकृष्णको प्रणाम करके बोला ॥१॥ आप देवताओंके देवता हो, परमेश्वर हो, समर्थ हो, पूर्ण हो, पुराण पुरुष हो, पुरुषोत्तम हो, परसे पर मायासे पर हरि आपही हो, हे स्वर्गके पति ! हे जगत्के पति ! मेरी रक्षा कीजिये ॥ २ ॥ हे भगवन् ! दशावतार आपही हो, धर्म, गौ, वेद इनकी रक्षाके लिये अभी आपने जन्म लिया है, हे परिपूर्ण देव ! कंसादिक दैत्येन्द्रोंका नाश करनेके लिये आपका प्रादुर्भाव हुआ है ॥३॥ आपकी मायासे मोहित हुई चित्तकी वृत्ति जिसकी "मैं इन्द्र हूँ" इस अभिमानसे उद्धत आपके अपराधको करनेवाले मुझको जैसे पिता पुत्रके अपराधको क्षमा करता है उसी तरह क्षमा करिये, हे देवेश ! हे स्वर्गपते ! हे जगन्निवास ! मुझपर प्रसन्न होइये ॥ ४ ॥

गोवर्द्धनको उठानेवाले आपको नमस्कार है, आप गोविन्द हो, गौओंके इन्द्र हो, गोकुलमें निवास करनेवाले, गौओंका पालन करनेवाले, गौओंके पति हो, आपके लिये नमस्कार है गोपीजनोंके भर्ता हो, गिरिराजके उद्धर्ता हो, करुणानिधि हो, जगत्के विधान करनेवाले हो, आपके लिये नमस्कार है, जगत्को मंगलकारी हो. जगत्के निवास हो, जगत्के मोह करनेवाले हो, करोड़ों कामदेवोंका मन मन्थनेवाले हो, वृषभानुकी पुत्रीके वर हो, नन्दराजके कुलके दीपकके समान प्रकाश करनेवाले हो, श्रीकृष्ण हो, आपके लिये नमस्कार है परिपूर्णतम हो, असंख्य ब्रह्मांडोंके पति हो, गोलोकधामके पति हो स्वयम् भगवान् हो, आपको बलदेव सहित नमस्कार है, नमस्कार है, नमस्कार है ॥५॥ नारदजी कहते हैं इस इन्द्रके किये हुये स्तोत्रको जो प्रातःकाल उठकर पढ़ेगा, उसे सब सिद्धि होगी, और वह अनेक संकटोंके भयसे छूट जायगा ॥६॥ ऐसे इन्द्र सब देवगणोंके साथ स्तुतिकर दोनों हाथ

ॐनमोगोवर्द्धनोद्धरणायगोविन्दायगोकुलनिवासायगोपालायगोपालपतयेगोपीजनभर्त्रेगिरिजोद्धर्त्रेकरुणानिधयेजगद्विधयेजगन्मङ्गलायजगन्निवासायजगन्मोहनायकोटिमन्मथमन्मथायवृषभानुसुतावरायश्रीनन्दराजकुलप्रदीपायश्रीकृष्णायपरिपूर्णतमायत्वसंख्यब्रह्मांडपतयेगोलोकधामधिषणाधिपतयेस्वयम्भगवतेसबलायनमस्तेनमस्तेनमस्ते॥५॥श्रीनारदउवाच ॥ इतिशक्रकृतंस्तोत्रंप्रातरुत्थाय यःपठेत् ॥ सर्वसिद्धिर्भवेत्तस्यसंकटान्नभयम्भवेत् ॥६॥ इतिस्तुत्वाहरिंदेवंसर्वैर्देवगणैःसह ॥ कृतांजलिपुटोभूत्वाप्रणनामपुरन्दरः ॥ ७ ॥ अथगोवर्द्धनेरम्येसुरभिर्गौःसमुद्रजा ॥ स्नापयामासगोपेशंदुग्धधाराभिरात्मनः ॥८॥ शुंडादण्डैश्चतुर्भिश्चद्युगंगाजलपूरितैः॥ श्रीकृष्णंस्नापयामासमत्तऐरावतोगजः॥९॥ ऋषिभिःश्रुतिभिःसर्वैर्देवगन्धर्वकिन्नराः॥ तुष्टुवुस्तेहरिंराजन्हर्षिताःपुष्पवर्षिणः॥१०॥ कृष्णाभिषेकेसंजातेगिरिर्गोवर्द्धनोमहान्॥द्रवीभूतोऽवहद्राजन्हर्षानन्दादितस्ततः ॥११॥ प्रसन्नोभगवांस्तस्मिन्कृतवान्हस्तपंकजम् ॥ तद्धस्तचिह्नमद्यापिदृश्यतेतद्गिरौनृप ॥१२॥ तत्तीर्थंचपरम्भूतंनराणाम्पापनाशनम् ॥ तदेवपादचिह्नंस्यात्तत्तीर्थंविद्धिमैथिल ॥ १३ ॥

जोड़कर प्रणाम करने लगा॥७॥उसके बाद क्षीरसमुद्रसे उत्पन्न हुई जो सुरभि गौ है,मनोहर गोवर्द्धनपर आई और अपने दूधकी धाराओंसे श्रीकृष्णको स्नान कराने लगी ॥८॥ फिर इन्द्रका ऐरावत हाथी अपनी चार शुण्डदण्डोंसे मंदाकिनी स्वर्गकी गंगाके जलसे श्रीकृष्णको स्नान कराने लगा॥९॥देव, गन्धर्व, किन्नर, ऋषीश्वर सब देवकी श्रुतियोंसे भगवान्की स्तुति करने लगे और हर्षित होकर पुष्पोंकी वर्षा करने लगे ॥१०॥ जब श्रीकृष्णका गोविन्दाभिषेक हुआ, तब गोवर्द्धन पर्वत हर्षके आनन्दसे इधरसे उधर द्रवीभूत होकर वहने लगा ॥११॥ तब भगवान्ने प्रसन्न होकर गोवर्द्धनके ऊपर अपना हाथ रख दिया, उसका चिह्न उस गोवर्द्धन पर्वतमें हे नृप ! अबतक दीखता है ॥ १२ ॥ वही मनुष्योंके पापोंको दूर करनेवाला तीर्थ हो गया । जहाँ भगवान्ने पांव रखा था, वहाँ चरणका चिन्ह हुआ है, हे मैथिल ! उसीको तीर्थ समझो ॥ १३ ॥

और जहाँ भगवान्के चरणका चिह्न हुआ था, वहाँही सुरभीके चरणोंके चिह्न हुये हैं ॥ १४ ॥ और जो उस समय आकाश गंगाका जल गोवर्द्धनमें गिरा, उस स्वर्गकी गंगामें कृष्णके स्नानसे वह मानसी गंगा पापोंका नाश करनेवाली प्रगट हुई है ॥१५॥ और जो भी सुरभीके दूधकी धराओंसे गोविन्दने स्नान किया उससे गोवर्द्धन परगोविन्द कुण्ड उत्पन्न हुआ है, जो महापापोंको स्नान पान करनेसे दूर करता है ॥१६॥ कभी-कभी उस जलमें दूध जैसा स्वाद आता है, जो इस गोविंद कुण्डमें स्नान करे, वह मनुष्य साक्षात् गोविन्दके पदको प्राप्त होता है ॥ १७ ॥ गोवर्द्धनकी परिक्रमा देकर हरिको नमस्कार करके सब इन्द्रादिक देवता बलि (भेंट) देकर जय जय ध्वनि करके पुष्पोंकी वर्षा करते सुखी होकर स्वर्गको चले गये ॥ १८ ॥ जो कोई श्रीकृष्णकी इस गोविन्दाभिषेक कथाको सुनता है, वह दश अश्वमेध यज्ञके फलसे अधिक फलको प्राप्त होता है और परलोकमें ब्रह्म लोकसे भी ऊपर जो परम पद है, उसको प्राप्त होता है ॥ १९ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां गिरिराजखण्डे भाषाटीकायां कृष्णाभिषेको नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ नारदजी कहते हैं, एक

एतावत्तस्यतत्रैवपादचिह्नंबभूवह॥सुरभेःपादचिह्नानिबभूवुस्तत्रमैथिल ॥१४॥ द्युगंगाजलपातेनकृष्णस्नानेनमैथिल ॥ तत्रवैमानसीगंगागिरौ जाताऽघनाशिनी॥१५॥सुरभेर्दुग्धधाराभिर्गोविन्दस्नानतोनृप॥जातोगोविन्दकुण्डोद्रौमहापापहरःपरः॥१६॥ कदाचित्तस्मिन्दुग्धस्यस्वादुत्वं-प्रतिपद्यते॥तत्रस्नात्वानरःसाक्षाद्गोविन्दपदमाप्नुयात्॥१७॥प्रदक्षिणीकृत्यहरिंप्रणम्यवैदत्त्वाबलीस्तत्रपुरन्दरादयः॥ जयध्वनिंकृत्यसुपुष्पव-र्षिणोययुःसुराःसौख्ययुतास्त्रिविष्टपम्॥१८॥कृष्णाभिषेकस्यकथांशृणोतियोदशाश्वमेधावभृथाधिकंफलम्॥प्राप्नोतिराजेन्द्रसएवभूयसःपरम्प-दंयातिपरस्यवेधसः ॥ १९ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीगिरिराजखंडेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीकृष्णाभिषेकोनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

॥ श्रीनारदउवाच ॥ एकदासर्वगोपालागोप्योनन्दसुतस्यतत् ॥ अद्भुतंचरितंदृष्ट्वानन्दमाहुर्यशोदयम् ॥ १ ॥ गोपाऊचुः ॥ हेगोपराजत्व-द्वंशेकोपिजातोनचाद्रिधृक् ॥ नक्षमस्त्वंशिलाधर्त्तुंसप्ताहंहेयशोमय ॥२॥ क्वसप्तहायनोबालःक्वाद्रिराजस्यधारणम्॥तेननोजायतेशंकातवपुत्रे महाबले ॥ ३ ॥ अयंबिभ्रद्गिरिवरंकमलंगजराडिव ॥ उच्छिलींध्रंयथाबालोहस्तेनैकेनलीलया ॥४॥ गौरवर्णायशोदेत्वंनन्दत्वंगौरवर्णधृक् ॥ अयंजातःकृष्णवर्णएतत्कुलविलक्षणम् ॥ ५ ॥

समयकी बात है, कि, सब गोपी और गोप नन्दके पुत्रके उस अद्भुत चरित्रको देखकर नन्दजीसे यशको उदय करनेवाला वचन बोले ॥१॥ हे गोपालराज ! तुम्हारे वंशमें आज तक कोई ऐसा नहीं हुआ, जिसने पर्वत उठाया हो और हमारी तुम्हारी तो यह भी सामर्थ्य नहीं है, कि सात दिन तक एक हाथ पर एक शिलाको तो उठाकर धारण कर रखें ॥ २ ॥ कहाँ तो सात वर्षका बालक और कहाँ सात दिन तक पर्वत राजको धारण करना, इससे महाबली तुम्हारे इस पुत्रमें हमको शंका होती है ॥३॥ जिसने गिरिराजको एकही हाथसे सहजमें ऐसे उठा लिया जैसे हाथी कमलके फूलको और बालक छतौनाको उठा लेता है ॥४॥ हे यशोदे ! तुम भी गौर वर्णा हो, और नन्दजीभी गौरवर्णके हैं, यह पुत्र तुम्हारा किस कारणसे काला है, यही कुलमें एक विलक्षण बात है ॥ ५ ॥

क्षत्रियोंका बालक तो ऐसा होता हैं कि, जैसे बलदेव गौर वर्णका है, तो इसमें कुछ दोष नहीं है, क्योंकि यह चन्द्र वंशमें हुआ है, इससे ॥ ६ ॥ जो तुम सत्य ना कहोगे तो हम तुम्हें जातिसे पृथक्क कर देंगे, इसलिये यातो इसकी उत्पत्ति कहो, और यदि इसकी उत्पत्ति नहीं कहोगे, तो गोपोंमें बड़ी लड़ाई होगी ॥७॥ नारदजी कहते हैं, गोपोंका वचन सुन कर यशोदा भय विह्वल हो गई, और कुपित हुये जो गोप हैं, उनसे नन्दराज बोले ॥८॥ हे गोप गणो ! मैं सावधान होकर गर्गजीका वचन कहता हूँ, जिस वचनके सुननेसे तुम्हारा अभी सब सन्देह मिट जायगा ॥९॥ पहिले इसके नामका अर्थ तुम सुनो, ककारका अर्थ तो कमला (लक्ष्मी) के पति है, ऋका अर्थ राम है, षकारका अर्थ छः गुणके पति श्वेत द्वीप वासी है ॥ १० ॥ णकारका अर्थ नृसिंह है, अकारका अर्थ अक्षर जो सबके पहिले भोक्ता है, विसर्गका अर्थ नर नारायण है ॥ ११ ॥ इस प्रकार ये छः पूर्ण भगवान् अवतार जिस शब्दमें प्रविष्ट हों, वह परिपूर्णतम कृष्ण कहलाता है ॥१२॥ इसका सतयुगमें श्वेत रूप था, त्रेतामें लाल, द्वारपरमें पीला, अब द्वापरके अन्तमें और कलियुगके

यद्वाऽस्तुक्षत्रियाणांतुबालएतादृशोयथा ॥ बलभद्रेनदोषःस्याच्चन्द्रवंशसमुद्भवे॥६॥जातेस्त्यागंकरिष्यामोयदिसत्यंनभाषसे॥ गोपेषुचास्यवो-
त्पत्तिंवदचेन्नकलिर्भवेत् ॥ ७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वागोपालवचनंयशोदाभयविह्वला ॥ नन्दराजस्तदाप्राहगोपान्क्रोधप्रपूरितान् ॥ ८ ॥
॥ श्रीनंदउवाच ॥ गर्गस्यवाक्यंहेगोपावदिष्यामिसमाहितः॥येनगोपगणायूयंभवताऽऽशुगतव्यथाः ॥९॥ ककारःकमलाकांतोऋकारोरामइ-
त्यपि ॥ षकारःषड्गुणपति श्वेतद्वीपनिवासकृत् ॥१०॥ णकारोनारसिंहोयमकारोह्यक्षरोग्निभुक्॥ विसर्गौचतथाह्येतौनरनारायणावृषी॥११॥
सम्प्रलीनाश्चषट्पूर्णायस्मिञ्च्छब्देमहात्मनि ॥ परिपूर्णतमेसाक्षात्तेनकृष्णःप्रकीर्तितः॥१२॥शुक्लोरक्तस्तथापीतोवर्णोस्यानुयुगंधृतः॥द्वापरां-
तेकलेरादौबालोयंकृष्णतांगतः ॥१३॥ तस्मात्कृष्णइतिख्यातोनाम्नायंनंदनन्दनः॥वसवश्चेंद्रियाणीतितद्देवाचित्तएवहि॥१४॥ तस्मिन्यश्चेष्ट-
तेसोपिवासुदेवइतिस्मृतः ॥१५॥ वृषभानुसुताराधायाजाताकीर्तिमंदिरे ॥ तस्याःपतिरयंसाक्षात्तेनाराधापतिःस्मृतः॥१६॥परिपूर्णतमःसाक्षा-
च्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥ असंख्यब्रह्मांडपतिर्गोलोकेधाम्निराजते ॥१७॥ सोऽयंतवशिशुजातोभारावतरणायच॥कंसादीनांवधार्थायभक्ता-
नांपालनायच ॥ १८ ॥ अनंतान्यस्यनामानिवेदगुह्यानिभारत ॥ लीलाभिश्चभविष्यंतितत्कर्मसुनविस्मयः ॥ १९ ॥

आदिमें इसने कृष्णरूप धारण किया है ॥१३॥ इससे यह कृष्ण इस नामसे विख्यात हुआ है, नाम तो इसका नन्द नन्दन है, और वसु नाम इन्द्रियोंका और इन्द्रियोंके देवता चित्तका है ॥१४॥ उनमें जो चेष्टा करे वही वासुदेव कहलाता है ॥ १५ ॥ और जो वृषभानुकी पुत्री राधा कीर्ति रानीके मंदिरमें प्रगट हुई है, उसके यह साक्षात् पति हैं, इससे इसका नाम राधापति है ॥१६॥ परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण स्वयं भगवान् हैं, जो असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति गोलोक धाममें विराजते हैं ॥ १७ ॥ यह तुम्हारा पुत्र पृथ्वीका भार उतारनेके लिए कंसादिक दैत्योंको मारनेके लिए और भक्तोंका पालन करनेके लिये हुआ है ॥ १८ ॥ इसके अनंत नाम हैं, जो वेदमें भी गुप्त हैं, इसके नाम लीला करनेसे प्रगट होंगे, इसलिये इसके कर्मोंमें तुम आश्चर्य मत करना, ऐसे गर्गजी मुझको कह गये हैं ॥ १९ ॥

सो हे गोपगणो ! ऐसे गर्गजीके कथनको सुनकर मैं अपने पुत्रमें संदेह नहीं करता हूँ, इस धरतीपर दो ही प्रमाण हैं, या तो वेदका वचन, अथवा ब्राह्मणका वचन ॥२०॥ तब गोप बोले-हे नंदराज ! जब तुम्हारे घर गर्ग मुनि आये, और तुमने पुत्रका नामकरण कराया, तब उस नामकरणमें तुमने हमको नहीं बुलाया ॥ २१ ॥ अपने घरमें आप ही आप अपना नाम रख लिया, तुम्हारी अच्छी रीति है, जो सब काम गुप्तरूपसें तुम अपने घरमें ही कर लिया करते हो ॥२२॥ नारदजी कहते हैं-ऐसे कहतेर गोप नंदमहलसे निकल कर क्रोधमें भरे हुये सब वृषभानुके पास गये ॥ २३ ॥ क्योंकि वृषभानुजी नंदजीके सहायक हैं, सो जातिके मदमें भरे ये सब जाकर वृषभानुसे बोले ॥ २४ ॥ कि देखो, हे वृषभानु वर ! तुम जातिमें मुख्य हो, और ऊँचे मनके हो, सो हे गोपोंके ईश्वर ! तुम हमारे राजा हो, नंदराजको जातिसे पृथक् कर देओ ॥२५॥ तब वृषभानुवर बोले-नंदराजका क्या दोष है जो हम जातिसे अलग कर देवें, सब गोपोंका प्यारा जातिका मुकुट नंदराज मेरा प्यारा है, तब फिर गोप बोले ॥ २६ ॥ यदि तुम उनको नहीं छोड़ोगे, तो हम

इतिश्रुत्वात्मजेगोपाःसंदेहंनकरोम्यहम् ॥ वेदवाक्यंब्रह्मवचःप्रमाणंहिमहीतले ॥२०॥ गोपाऊचुः ॥ यद्यागतस्तवगृहेगर्गाचार्योमहामुनिः ॥ तत्क्षणेनामकरणेनाहूताज्ञातयस्त्वया ॥२१॥ स्वगृहेनामकरणंभवताचकृतंशिशोः ॥ तवचैतादृशीरीतिर्गुप्तंसर्वंगृहेपियत् ॥ २२ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ एवंवदंतस्तेगोपानिर्गतानंदमंदिरात् ॥ वृषभानुवरंजग्मुःक्रोधपूरितविग्रहाः ॥२३॥ वृषभानुवरंसाक्षान्नंदराजसहायकम् ॥ प्राहुर्गोपगणाःसर्वेज्ञातेर्मदसमन्विताः ॥२४॥ गोपाऊचुः ॥ वृषभानुवरत्वंवैज्ञातिमुख्योमहामनाः ॥ नंदराजंत्यजज्ञातेर्हेगोपेश्वरभूपते ॥ २५ ॥ वृषभानुवरउवाच ॥ कोदोषोनंदराजस्यज्ञातेस्तंसंत्यजाम्यहम् ॥ गोपेष्टोज्ञातिमुकुटोनंदराजोममप्रियः ॥ २६ ॥ गोपाऊचुः ॥ नचेत्त्यजसितं राजंस्त्यजामस्त्वांव्रजौकसः॥ त्वद्गृहेवर्धिताकन्योद्वाहयोग्यामहामते॥२७॥ भवताज्ञातिमुख्येनसंपदुन्मदशालिना ॥ नदत्तावरमुख्यायकलुषंतवविद्यते ॥२८॥ अद्यत्वांज्ञातिसंभ्रष्टंपृथङ्मन्यामहेनृप ॥ नचेच्छीघ्रंनंदराजंत्यजत्यजमहामते ॥ २९ ॥ वृषभानुवरउवाच ॥ गर्गस्यवाक्यंहेगोपावदिष्यामिसमाहितः ॥ येनगोपगणायूयंभवताशुगतव्यथाः ॥ ३० ॥ असंख्यब्रह्माण्डपतिर्गोलोकेशःपरात्परः ॥ तस्मात्परोवरोनास्तिजातोनंदगृहेशिशुः ॥ ३१ ॥ भुवोभारावतारायकंसादीनांवधायच ॥ ब्रह्मणाप्रार्थितःकृष्णोबभूवजगतीतले ॥ ३२ ॥

व्रजवासी तुमको भी त्याग देंग, क्योंकि तुम्हारी कन्या विवाहके योग्य हो गई है, और तुम उसका विवाहही नहीं करते हो ॥२७॥ तुम जातिमें मुख्य हो, धनके मदमें चूर हो, अच्छा वर देखकर तुमने कन्या नहीं दी, यह तुम्हारा दोष है ॥ २८ ॥ हे राजन् ! हमने तो आजहींसे तुमको जातिसे पृथक् कर दिया, ऐसा हमने माना है, नहीं तो हे महामते ! तुम नंदराजको त्याग दो ॥२९॥ तब वृषभानु बोले-मैं सावधान होकर गर्गजीका वचन कहूँगा, इस वचनको सुनकर हे गोप गणो ! तुम्हारा संदेह जाता रहेगा ॥३०॥ यह असंख्य ब्रह्माण्डके पति परसे पर गोलोकके नाथ हैं, उनसे उत्तम और कोई वर नहीं है जो यह नंदका पुत्र हुआ है ॥ ३१ ॥ पृथ्वीका भार उतारनेके लिये कंसादिकोंको मारनेके लिये ब्रह्माजीकी प्रार्थनासे श्रीकृष्णने पृथ्वीमें जन्म लिया ॥ ३२ ॥

गोलोकमें जो श्रीकृष्णकी पटरानी राधिका हैं, वह तुम्हारे घरमें जन्मी है, उसको तुम नहीं जानते हो ॥३३॥ मैं इनका विवाह नहीं कराऊँगा, इनका विवाह तो भांडीरवनमें यमुनाके किनारेपर होगा ॥३४॥ वृन्दावनके समीप निर्जन सुन्दर स्थलमें ब्रह्माजी आकर इनका विवाह करायेंगे ॥ ३५ ॥ इससे हे गोपवर ! राधाको तुम भगवान् श्रीकृष्णकी अर्द्धांगी जानो, गोलोकके चूडामणि श्रीकृष्णकी गोलोक मंदिरकी रानी है ॥३६॥ तुमभी सब गोपाल गोलोकसे भूमिपर आये हो, वैसेही गोपी और गौ सब राधिकाकी इच्छासे यहाँ गोकुलमें आये हैं ॥३७॥ ऐसा कहकर जिस दिनसे गर्गाचार्य गये उस दिनसे मैं राधिकाजीमें संदेह नहीं करता हूँ ॥ ३८ ॥ वेद वचन तथा ब्रह्मवाक्य सदाही सत्य है, भूमिमें प्रमाण हैं यह मैंने तुम्हारे सामने कहा है, अब क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥३९॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां गिरिराजखण्डे भाषाटीकायां गोपविवादो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

श्रीकृष्णपट्टराज्ञीयागोलोकेराधिकाभिधा ॥ त्वद्गेहेसापिसंजातात्वंनजानासिताम्पराम् ॥३३॥ अहंनकारयिष्यामिविवाहमनयोर्नृप ॥तयो-
र्विवाहोभविताभाण्डीरेयमुनातटे॥३४॥वृंदावनसमीपेचनिर्जनेसुन्दरेस्थले॥ परमेष्ठीसमागत्यविवाहंकारयिष्यति॥३५॥तस्माद्राधांगोपवरवि-
द्ध्यर्द्धांगींपरस्यच ॥ लोकचूडामणेःसाक्षाद्राज्ञींगोलोकमंदिरे॥३६॥यूयंसर्वेपिगोपालागोलोकादागताभुवि॥तथागोपीगणागावोगोकुलेराधि-
केच्छया ॥३७॥ एवमुक्त्वागतेसाक्षाद्गर्गाचार्येमहामुनौ ॥ तद्दिनादथराधायांसन्देहंनकरोम्यहम् ॥३८॥ वेदवाक्यंब्रह्मवचःप्रमाणंहिमहीतले ॥
इतिवःकथितंगोपाःकिम्भूयःश्रोतुमिच्छथ ॥३९॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीगिरिराजखण्डेगोपविवादोनाम पंचमोऽध्यायः ॥५ ॥ श्रीनारद
उवाच ॥ वृषभानुवरस्येदंवचःश्रुत्वाव्रजौकसः ॥ ऊचुःपुनःशान्तिगताविस्मितामुक्तसंशयाः ॥ १ ॥ गोपाऊचुः ॥ समीचीनंवचोराजन्राधे-
यंतुहरिप्रिया ॥ तत्प्रभावेणतेदीर्घंवैभवंदृश्यतेभुवि ॥२॥ सहस्रशोगजामत्ताःकोटिशोश्वाश्चचंचलाः॥ रथाश्चदेवधिष्ण्याभाःशिबिकाःकोटिशः
शुभाः ॥३॥ कोटिशःकोटिशोगावोहेमरत्नमनोहराः॥ मन्दिराणिविचित्राणिरत्नानिविविधानिच॥४॥सर्वंसौख्यंभोजनादिदृश्यतेसांप्रतंतव॥
कंसोपिधर्षितोजातोदृष्ट्वातेबलमद्भुतम् ॥ ५ ॥ कान्यकुब्जपतेःसाक्षाद्भलंदननृपस्यच ॥ जामातात्वंमहावीरकुबेरइवकोशवान् ॥ ६ ॥

नारदजी कहते हैं, ऐसे वृषभानुका यह वचन सुनकर सब व्रजवासी गोप शान्त हो गये, सबका संदेह दूर हो गया, और आश्चर्यमें आकर बोले ॥ १ ॥ तुम्हारा वचन सत्य है, यह राधिका हरिकी प्रिया है, इसीके प्रभावसे पृथ्वीमें तुम्हारा बड़ा वैभव बढ़ा है ॥२॥ तुम्हारे सैकड़ों हजारों तो मतवाले हाथी हैं, करोड़ों चंचल घोड़े हैं, करोड़ों स्वर्गके विमानों जैसे रथ हैं, करोड़ोंही शुभ पालकी हैं ३॥ सुवर्णकी माला पहिने करोड़ों गौ मनोहर हैं, विचित्र महल मंदिर हैं, अनेक प्रकारके रत्न हैं ॥ ४ ॥ भोजनादिक सब सुख तुम्हारे घरमें इस समय दिखाई देते हैं, तुम्हारे अद्भुत बलको देखकर कंसभी धर्षित हो गया है ॥ ५ ॥ और हे महावीर ! कन्नौजके पति भलंदन नामक राजाके तुम जामाता (जमाई) हो, तुम्हारा कुबेरकासा वैभव है ॥ ६ ॥

तुम्हारे बराबर वैभव तो नन्दराजके भी नहीं है, नंदराज तो किसान और गौओंके पति गरीब हैं ॥ ७ ॥ जो नन्दका पुत्र परिपूर्णतम साक्षात् हरि है, हे प्रभो ! हम सबको हमारे दखते २ उसकी परीक्षा करके दिखा देओ ॥ ८ ॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे वृषभानु वर उनका वचन सुनकर नंदराजके वैभवकी परीक्षा कराने लगे ॥ ९ ॥ हे मैथिलेश्वर ! करोड़ों मालाऐं बड़े बड़े मोतियोंकी हैं जिनमें एक-एक मोती एकएक करोड़का पिरोया हुआ, जिनकी कान्ति फैल रही हैं॥१०॥ उनको सोनेके थालोंमें धरकर बड़े कुशल जनोंके हाथों सबके देखते २ नंदजीके घर वृषभानुने राधिकाजीकी सगाई करनेके लिये भेजा ॥११॥ बड़े चतुर उन थाल ले जानेवाले बंदीजनोंने नन्दजीकी सभामें जाकर मोतियोंके थाल रख दिये और प्रणाम कर नन्दजीसे हाथ जोड़कर बोले ॥ १२ ॥ कि वृषभानुवर बरसानेके राजाने विवाहके योग्य अपनी करोड़ चन्द्रमाकीसी कान्ति है जिसकी, कमलसे नेत्रवाली राधा कन्याको देखकर श्रेष्ठ वरका विचार करते हुये बहुत कुछ विचार कर ॥१३॥ हे व्रजपति ! तुम्हारे पुत्रको दिव्य कामको भी मोहकरनेवाला, गोवर्द्धनको उठानेवाला, महा-

त्वत्समंवैभवंनास्तिनन्दराजगृहेक्वचित् ॥ कृपीवलोनन्दराजोगोपतिर्दीनमानसः ॥ ७ ॥ यदिनन्दसुतःसाक्षात्परिपूर्णतमोहरिः॥सर्वेषाम्पश्य-
तांनस्तत्परीक्षांकारयप्रभो ॥८॥ श्रीनारदउवाच ॥ तेषांवाक्यंततःश्रुत्वावृषभानुवरोमहान् ॥ चकारनन्दराजस्यवैभवस्यपरीक्षणम् ॥ ९ ॥
कोटिदामानिमुक्तानांस्थूलानांमैथिलेश्वर ॥ एकैकायेषुमुक्ताश्चकोटिमौल्याःस्फुरत्प्रभाः॥१०॥निधायतानिपात्रेषुवृणानैःकुशलैर्जनैः ॥ प्रेषया-
मासनन्दायसर्वेषांपश्यतांनृप ॥११॥ नन्दराजसभांगत्वावृणानाःकुशलाभृशम् ॥ निधायदामपात्राणिनन्दमाहुःप्रणम्यतम् ॥१२॥ वृणाना
ऊचुः ॥ विवाहयोग्यांनवकंजनेत्रांकोटीन्दुबिम्बद्युतिमादधानाम् ॥ विज्ञायराधांवृषभानुमुख्यश्चक्रेविचारंसुवरंविचिन्वन् ॥१३॥ तवांगजंदि-
व्यमनंगमोहनंगोवर्द्धनोद्धारणदोःसमुद्भटम्॥संवीक्ष्यचास्मान्वृषभानुवंदितःसंप्रेषयामासविशाम्पतेप्रभो॥१४॥ वरस्यचांकेभरणायपूर्वंमुक्ताफ-
लानांनिचयंगृहाण ॥ इतश्चकन्यार्थमलंप्रदेहिसैषाहिचास्मत्कुलजाप्रसिद्धिः ॥ १५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ दृष्ट्वाद्रव्यंपरोनंदोविस्मितोपिविचा-
रयन् ॥ प्रष्टुंयशोदांतत्तुल्यंनीत्वाचान्तःपुरंययौ॥१६॥ चिरंदध्यौतदानन्दोयशोदाचयशस्विनी॥एतन्मुक्तासमानंतुद्रव्यंनास्तिगृहेमम॥१७॥
लोकेलज्जागतासर्वाहासःस्याच्चद्धनोद्धृतम् ॥ किंकर्तव्यंतत्प्रतियच्छ्रीकृष्णोद्वाहकर्मणि ॥ १८ ॥

बली विचार कर हे विशांपते ! हे प्रभो ! हम जो बंदीजन भाट हैं, उनको सगाईके लिये भेजा है ॥ १४ ॥ सो वरकी गोद भरनेके लिये यह मोतियोंकी माला भेजी है, उनको ग्रहण कीजिये और आप अपनी ओरसे कन्याकी गोद भरनके लिये कुछ दीजिये, हमारे कुलकी यही रीति है ॥ १५ ॥ तब नंदजी उस द्रव्यको देखकर आश्चर्यमें पड गये, और विचार करते उसको लेकर पूछनेके लिये रनिवासमें चले गये, यशोदाजीको पूछनेके लिये कि, ऐसी अद्भुत चीज देनेको कुछ हमारे भी है ? ॥१६ ॥ तब नंदजी और यशोदाजीने बड़ी देर तक विचार किया, और फिर कहा कि ऐसी चीज तो हमारे घरमें कुछ नहीं है ॥ १७ ॥ आज गोपोंमें हमारी लजा नहीं रहेगी और हमारी हंसी होगी, अब हम क्या करें, इसके बदलेमें क्या दें, श्रीकृष्णका विवाह कैसे होगा ॥ १८ ॥

इस लिये गोदका जो योग्य सगुनका लेना चाहिये, वह ले लो, पीछे कार्य विचार कर करना चाहिये, सो धनके आनेपर करेंगे, ऐसे नन्दजी और यशोदाजी विचार कर रहे हैं, इतनेहीमें ॥१९॥ भगवान् दुखहर्ता अलक्ष्य छुपकर आ गये, उनमेंसे सौ मोती लेकर बाहर खेतोंमें गये ॥ २० ॥ जैसे किसान खेतोंमें बीज डालता है, वैसे एक २ मोती अपने हाथोंसे अपने खेतोंमें बिखेर दिये ॥ २१ ॥ बादमें नन्दजी जब गिनने लगे, तब तो उनमें सौ मोती कम हो गये, तब तो बड़ा संदेह करने लगे और बोले ॥ २२ ॥ अभी तो हमारे पहिले ही इसकी बराबर कुछ चीज नहीं थी, फिर इनमें भी सौ मोती कम हो गये, अहो ! यह तो कलंक हमारा सब जातिमें होगा ॥ २३ ॥ अथवा कहीं श्रीकृष्ण अथवा बलदेव खेलनेको तो ले गये तो सहजमें पूछूँगा ॥ २४ ॥ नारदजी कहते हैं कि ऐसे विचार कर नन्दजी बड़े आदरसे श्रीकृष्णसे पूछने लगे,

ततोयोग्यंतद्ग्रहणंपश्चात्कार्यंधनागते ॥ एवंचिन्तयतस्तस्यनन्दस्यैवयशोदया ॥१९॥ अलक्ष्यआगतस्तत्रभगवान्वृजिनार्दनः ॥ नीत्वादाम
शतंतेषुबहिःक्षेत्रेषुसर्वतः ॥२०॥ मुक्ताफलानिचैकैकम्प्राक्षिपत्स्वकरेणवै ॥ यथाबीजानिचान्नानांस्वक्षेत्रेषुकृषीवलः ॥२१॥ अथनन्दोपिगण-
यन्कलिकानिचयम्पुनः ॥ शतंन्यूनंचतद्दृष्ट्वासंदेहंसजगामह ॥ २२ ॥ श्रीनन्दउवाच ॥ नास्तिपूर्वंयत्समानंतत्रापिन्यूनतांगतम् ॥
अहोकलंकोभविताज्ञातिषुस्वेषुसर्वतः ॥ २३ ॥ अथवाक्रीडनार्थंहिकृष्णोयदिगृहीतवान् ॥ बलदेवोथवाबालस्तौपृच्छेदीनमानसः ॥ २४ ॥
॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंविचार्यनंदोपिकृष्णम्पप्रच्छसादरम् ॥ प्रहसन्भगवान्नंदंप्राहगोवर्द्धनोद्धरः ॥ २५ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ कृषी-
वलावयंगोपाःसर्वबीजप्ररोहकाः ॥ क्षेत्रेमुक्ताप्रबीजानिविकीर्णीकृतवानहम् ॥ २६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वाथस्वात्मजेनोक्तंतंनिर्भर्त्स्यव्रजे-
श्वरः ॥ तानिनेतुंतत्सहितस्तत्क्षेत्राणिजगामह ॥ २७ ॥ तत्रमुक्ताफलानांतुशाखिनःशतशःशुभाः ॥ दृश्यंतेदीर्घवपुषोहरित्पल्लवशोभिताः ॥
॥२८॥ मुक्तानांस्तबकानांतुकोटिशःकोटिशोनृप ॥ संघाविलंबितारेजुर्ज्योतींषीवनभःस्थले ॥ २९ ॥ तदातिहर्षितोनन्दोज्ञात्वाकृष्णम्परेश्व-
रम् ॥ मुक्ताफलानिदिव्यानिपूर्वस्थूलसमानिच ॥ ३० ॥

तब गोवर्द्धनधारी भगवान् हँसते हुये नंदजीसे बोले ॥ २५ ॥ बाबा ! हम तो किसान हैं सब बीजोंको बोनेवाले गोप हैं, सो हम तो जाकर, उन सब मोतियोंको बीजकी तरह खेतोंमें बिखेर आये हैं ॥ २६ ॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे पुत्रका वचन सुनकर पुत्रको फटकार कर व्रजराज उन्हें साथ लेकर उन्हीं खेतोंपर मोतियोंको लेनेके लिये चले आये ॥२७॥ वहाँ देखा तो मोतीके सैंकड़ों सुन्दर हरे हरे पत्तोंके बड़े बड़े पेड़ोंमें गुच्छे लग रहे हैं ॥ २८ ॥ मोतियोंके करोड़ों गुच्छोंके गुच्छे, झुण्ड के झुण्ड, झुकझुक झूम झूम कर धरतीको चूम रहे हैं, उनकी सोनेकी शाखा, पन्नोंके, पत्ते, मोतियोंके फल, पोखराजके फूल, जैसे अम्बरमें तारागण खिलते हैं ऐसे खेत देखे ॥२९॥ तब तो श्रीकृष्णको परमात्मा ईश्वर जान और उनका ऐश्वर्य जानकर नन्दजी अत्यन्त प्रसन्न हुये, दिव्य मोती पहले (वृषभानुके घरसे आये हुये) मोतियोंसे भी मोटे उज्ज्वल ॥ ३० ॥

उन मोतियोंके श्रीव्रजेश्वर नन्द राजने उन बन्दी जनोंको एक करोड़ भार छकड़ोंमें भरकर राधिकाकी गोद भरनेके लिये दिये ॥ ३१ ॥ तब वे सगाई करनेवाले मोतियोंके छकड़े लेकर वृषभानुके पास बरसानेमें आये, हे राजन् ! सभीके सुनते २ नन्दजीका ऐश्वर्य वर्णन करने लगे ॥३२॥ तब सब व्रजवासी विस्मित हो गये, नन्दजीके पुत्रको साक्षात् हरि जानकर वृषभानुको प्रणाम कर सब सन्देह रहित हो गये ॥३३॥ हरिकी प्रिया राधा है, और राधाके प्रिय हरि हैं, ऐसा जानकर हे मैथिलेश्वर ! उसी दिनसे सब व्रजवासी इनको जान गये ॥ ३४ ॥ हे मैथिल ! जहाँ हरिने मोतियोंका खेत किया था, वहाँ मुक्ता सरोवर हो गया, वह तीर्थोंका राजा है ॥३५॥ जो कोई उस तीर्थमें जाकर एक मोतीका दान करे, तो लाख मोतियोंके दानका फल होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥३६॥ ऐसे मैंने तुम्हारे सामने गिरिराजका महोत्सव वर्णन किया है, इस लोकमें मुक्ति (भोग) को देनेवाला

तेषांतुकोटिभाराणिनिधायशकटेषुच ॥ददौतेभ्योवृणानेभ्योनन्दराजोव्रजेश्वरः ॥३१॥ तेगृहीत्वाथतत्सर्वंवृषभानुवरंगताः॥ सर्वेषांशृण्वतांनन्दवैभवंप्रजगुर्नृप ॥३२॥ तदातिविस्मिताः सर्वेज्ञात्वानन्दसुतंहरिम् ॥ वृषभानुवरंनेमुर्निःसन्देहाव्रजौकसः॥३३॥ राधाहरेःप्रियाज्ञाताराधायाश्चप्रियोहरिः ॥ ज्ञातोव्रजजनैःसर्वैस्तद्दिनान्मैथिलेश्वर ॥३४॥मुक्ताक्षेपःकृतोयत्रहरिणानन्दसूनुना॥मुक्तासरोवरस्तत्रजातोमैथिलतीर्थराट्॥३५॥ एकंमुक्ताफलस्यापिदानंतत्रकरोतियः॥लक्षमुक्तादानफलंसमाप्नोतिनसंशयः॥३६॥ एवंतेकथितोराजन्गिरिराजमहोत्सवः ॥ भुक्तिमुक्तिप्रदोनॄणांकिम्भूयःश्रोतुमिच्छसि ॥३७॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीगिरिराजखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेहरिपरीक्षणंनामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ कतिमुख्यानितीर्थानिगिरिराजेमहात्मनि ॥ एतद्ब्रूहिमहायोगिन्साक्षात्त्वंदिव्यदर्शनः ॥ १ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ राजन्गोवर्द्धनःसर्वःसर्वतीर्थवरःस्मृतः ॥ वृन्दावनंचगोलोकंमुकुटोद्रिःप्रपूजितः॥२॥ गोपगोपीगवांरक्षाप्रदःकृष्णप्रियोमहान्॥पूर्णब्रह्मातपत्रंयस्तस्मात्तीर्थवरस्तुकः ॥३॥ इन्द्रयागंविनिर्भर्त्स्यसर्वैर्निजजनैःसह॥यत्पूजनंसमारेभेभगवान्भुवनेश्वरः॥४॥परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम्॥ असंख्यब्रह्माण्डपतिर्गोलोकेशःपरात्परः ॥ ५ ॥

और परलोकमें मुक्तिको देनेवाला है, अब और क्या सुनना चाहते हो, वह कहो ॥३७॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां गिरिराजखण्डे भाषाटीकायां हरिपरीक्षणं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥६॥ बहुलाश्व राजा पूछता है, हे महाराज ! इस महात्मा गिरिराजमें कितने तीर्थ हैं, सो मुझसे कहिये ? आप साक्षात् दिव्यदर्शी हो ॥१॥ नारदजी कहते हैं कि हे राजन् ! गोवर्द्धन तो सम्पूर्ण ही सब तीर्थोंसे श्रेष्ठ हैं, और वृन्दावनभी सर्व तीर्थमय है और यह गिरिराज गोलोकका मुकुट है, जिसको कृष्णने पूजा है ॥ २ ॥ गोप, गोपी, गौ इनका रक्षक है, कृष्णका प्रिय है, पूर्ण ब्रह्मका छत्र है, सब तीर्थोंमें श्रेष्ठ है, गिरिराजसे बड़ा तीर्थ कौनसा है ? अर्थात् कोई नहीं है ॥ ३ ॥ इन्द्र यज्ञका तिरस्कार करके सब अपने जनों सहित जिसका पूजन भुवनके ईश्वर भगवान्ने किया ॥ ४ ॥ परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण स्वयं भगवान् असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति गोलोकके ईश्वर परसे पर हैं ॥ ५ ॥

वे जिस गोवर्द्धनपर बैठकर बालकोंके साथ क्रीडा करते हैं, उसका माहात्म्य हे मैथिल ! चार मुखोंसे ब्रह्माजीभी नहीं कह सकते हैं ॥ ६ ॥ जहाँ मानसी गंगा महा पापका नाश करनेवाली है, जहाँ विशद गोविन्द कुण्ड है, जहाँ शुभचन्द्र सरोवर है ॥ ७ ॥ जहाँ राधाकुण्ड कृष्णकुण्ड, ललिताकुण्ड, गोपाल कुण्ड और कुसुम सरोवर है ॥ ८ ॥ और जहाँ श्रीकृष्णके मुकुटके स्पर्शसे मुकुट शिला है, उसके दर्शन मात्रसे देवताओंके मुकुटकी मणि होता है ॥९॥ और जिस शिलापर श्रीकृष्णने चित्र लिख हैं, वह आजतक बड़ी विचित्र चित्र शिला कहलाती है ॥१०॥ और जिस शिलाको बालकोंके साथ बजाया करते थे, वह व्रज शिला बाजनी शिला कहलाती है, यह महा पापका नाश करनेवाली है ॥ ११ ॥ और जहाँ हे मैथिल ! श्रीकृष्णने बालकोंके साथ क्रीडा की है, वह कंदुक क्षेत्र है ॥ १२ ॥ जहाँ श्रीकृष्णके पास इन्द्र आया था, वह शाक्रपद है, वही ब्रह्मपद है, जिसकी रजमें लौटे, तो मनुष्य साक्षात् विष्णु पदको प्राप्त होता है ॥१३॥ जहाँ श्रीकृष्णने बालकोंकी पाग चुरायी थी वह पर्वत औष्णीश तीर्थ कहलाता है, वह महा पापका हरनेवाला है

यस्मिन्स्थितःसदाक्रीडामर्भकैःसहमैथिल ॥ करोतितस्यमाहात्म्यंवक्तुंनालंचतुर्मुखः ॥६॥ यत्रवैमानसीगंगामहापापौघनाशिनी॥ गोविन्दकुण्डंविशदंशुभंचन्द्रसरोवरम् ॥७॥ राधाकुण्डःकृष्णकुण्डोललिताकुण्डएवच ॥ गोपालकुण्डस्तत्रैवकुसुमाकरएवच ॥८॥ श्रीकृष्णमौलिसंस्पर्शान्मौलिचिह्नशिलाऽभवत् ॥ तस्यादर्शनमात्रेणदेवमौलिर्भवेज्जनः ॥९॥ यस्यांशिलायांकृष्णेनचित्राणिलिखितानिच ॥ अद्यापिचित्रितापुण्यानाम्नाचित्रशिलागिरौ ॥१०॥ यांशिलामर्भकैःकृष्णोवादयन्क्रीडनेरतः॥ वादनीसाशिलाजातामहापापौघनाशिनी॥११॥ यत्रश्रीकृष्णचन्द्रेणगोपालैःसहमैथिल ॥ कृतावैकंदुकक्रीडातत्क्षेत्रंकंदुकंस्मृतम् ॥१२॥ दृष्ट्वाशक्रपदंयातिनत्वाब्रह्मपदंचतत्॥ विलुठन्यस्यरजसांसाक्षाद्विष्णुपदंव्रजेत्॥१३॥गोपानामुष्णिषाण्यत्रचोरयामाससमाधवः ॥ औष्णिषंनामतत्तीर्थंमहापापहरंगिरौ॥१४॥ तत्रैकदावैदधिविक्रयार्थविनिर्गतोगोपवधूसमूहः ॥ श्रुत्वाक्वणन्नूपुरशब्दमाराद्रुरोधतन्मार्गमनंगमोही॥१५॥ वंशीधरोवेत्रबरेणगोपैः पुरश्चतासांविनिधायपादम्॥मह्यंकरादानधनायदानंदेहीतिगोपीर्निजगादमार्गे ॥ १६ ॥ गोप्यऊचुः ॥ वक्रस्त्वमेवासिसमास्थितःपथिगोपार्भकैर्गोरसलम्पटोभृशम् ॥ मात्राचपित्रासहकारयामोबलाद्भवंतंकिलकंसबन्धने ॥ १७ ॥ श्रीभगवानुवाच कंसंहनिष्यामिमहोग्रदण्डंसबांधवंमेशपथोगवांच ॥ एवंकरिष्यामियदोःपुरेबलान्नेष्येसदाहंगिरिराजभूमेः ॥ १८ ॥

॥१४॥ वहाँ एक समय दही बेचनेके लिये गोपियोंका झुण्ड निकला, उनके नूपुरोंका शब्द सुनकर कामके मोह करनेवाले कृष्णने उनका मार्ग रोक लिया ॥१५॥ बंशी बजाते बेंत लिये गोपोंके साथ उनके सामने पांव जा धरा और बोले-हे प्रियाओ ! हमारा कुछ कर लगता है, सो दे दीजिये, यह वाक्य मार्गमें चलती हुई गोपियोंको आपने कहा ॥ १६ ॥ तब गोपियाँ बोलीं-तुम बड़े हो, जो गोप बालकोंको साथ लेकर मार्ग रोककर खड़े हो, गोरसके लोभी हो, हम तुमको तुम्हारे मां बाप सहित कंसके बन्धनमें करवा देंगी ॥१७॥ यह सुनकर भगवान् बोले-तुम कंसका डर मत दिखाओ कंसको बान्धवों सहित मैं मार डालूँगा, यह मुझको गौओंकी शपथ है, और मैं चुटिया पकड़ कर कंसको गिरिराजमें खींच लाऊँगा ॥ १८ ॥

अब नारदजी कहते हैं, ऐसा कहकर गोपियोंसे दहीके बर्तन पृथक् २ सबसे लेलिये, फिर बड़े आनन्दसे नंद नंदनने वे सब बर्तन पृथ्वीमें पटक दिये ॥ १९ ॥ तब गोपियाँ कहने लगीं अहो देखो री ! यह तो बड़ा ढीठ है, नंदका पुत्र कैसा निडर है, किसीका कहना ही नहीं मानता है, और बोलना कैसा सीख गया, पुरमें तो गरीबसा बोलता है, और वनमें कैसा बलवान् बन जाता है॥२०॥ क्या डर है हम अभी व्रजरानीसे और नंदराजसे कहेंगी, तब मालूम पड़ेगा, ऐसे कहती वे सब गोपियाँ हँसती हुई अपने २ घरों को चली आईं ॥ २१ ॥ तब श्रीकृष्ण कदम्बके ढाकके पत्तोंके दोना बनाकर चिकने दहीको उनमें धर धरके बालकोंके साथ खाने लगे ॥२२॥ तबसे वहाँ दोनोंके आकारके पत्ते अबतक उपजते हैं, सब वृक्षोंके दोनाकार पत्ते हो गये, हे नृपेश्वर ! वह महापवित्र द्रोण क्षेत्र हो गया ॥२३॥ वहाँ जाकर जो कोई मनुष्य दहीका दान करता है, उन पत्तोंमें दहीको रखकर खाये तो गोलोकमें नित्य उसकी स्थिति रहे, उसको सब मनुष्य नमस्कार करें, उसकी गोलोकसे कभी च्युति नहीं होती है ॥ २४ ॥ जहाँ श्रीकृष्णने आँख मिचौनीकी

॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वादधिपात्राणिबालैर्नीत्वापृथक्पृथक् ॥ भूपृष्ठेपोथयामाससानन्दंनन्दनन्दनः ॥१९॥ अहोएषपरंधृष्टोनिर्भयोनन्दनन्दनः ॥ निरंकुशोऽभाषणीयोवनेवीरःपुरेऽबलः ॥२०॥ ब्रुवामहेयशोदायैनन्दायचकिलाद्यवै ॥ एवंवदंत्यस्तागोप्यःसस्मिताःप्रययुर्गृहान् ॥ ॥२१॥ नीपपालाशपत्राणांकृत्वाद्रोणानिमाधवः ॥ जघासबालकैःसार्द्धंपिच्छिलानिदधीनिच ॥ २२ ॥ द्रोणाकाराणिपत्राणिबभूवुःशाखिनां तदा ॥ तत्क्षेत्रंचमहापुण्यंद्रोणंनामनृपेश्वर ॥२३॥ दधिदानंतत्रकृत्वापीत्वापत्रधृतंदधि ॥ नमस्कुर्यान्नरस्तस्यगोलोकान्नच्युतिर्भवेत् ॥२४॥ नेत्रेआच्छाद्ययत्रैवलीनोभून्माधवोर्भकैः ॥ तत्रतीर्थंलौकिकंचजातंपापप्रणाशनम् ॥२५॥ कदम्बखण्डतीर्थंचलीलायुक्तंहरेःसदा ॥ तस्यदर्शनमात्रेणनरोनारायणोभवेत् ॥ २६ ॥ यत्रवैराधयारासेशृङ्गारोकारिमैथिल ॥ तत्रगोवर्द्धनेजातंस्थलंशृङ्गारमण्डलम् ॥ २७ ॥ येनरूपेणकृष्णेन धृतोगोवर्द्धनोगिरिः ॥ तद्रूपंविद्यतेतत्रनृपशृङ्गारमण्डलम् ॥२८॥ अब्दाश्चतुःसहस्राणितथाचाष्टौशतानिच ॥ गतास्तत्रकलेरादौक्षेत्रेशृङ्गारमण्डले ॥ २९॥ गिरिराजगुहामध्यात्सर्वेषाम्पश्यतांनृप ॥ स्वतःसिद्धंचतद्रूपंहरेःप्रादुर्भविष्यति ॥३०॥ श्रीनाथंदेवदमनंतंवदिष्यंतिसज्जनाः ॥ गोवर्द्धनेगिरौराजन्सदालीलांकरोतियः ॥ ३१ ॥

लीला की है, वहाँ लौकिक नामक तीर्थ महापापका नाश करनेवाला हो गया है ॥२५॥ एक कदम्ब खण्डी तीर्थ है यह श्रीकृष्णकी लीलायुक्त तीथ है, उसके दर्शनमात्रसेही मनुष्य नारायणका रूप हो जाता है ॥२६॥ हे मैथिल ! जहाँ राधाका रासमें शृंगार किया है, वही स्थल गोवर्द्धनमें शृंगार मण्डल कहलाता है ॥२७॥ जिस रूपसे श्रीकृष्णने गोवर्द्धन पर्वतको धारण किया है, हे नृप ! वही रूप शृंगार मण्डलमें विराजता है ॥ २८ ॥ उसी शृंगार मण्डल क्षेत्रमें कलियुगके आदिमें चार हजार आठ सौ वर्ष पीछे ॥२९॥ गिरिराज की गुफाके मध्यसे सभीके देखते-देखते भगवान्का एक स्वरूप स्वतःसिद्ध प्रकट होगा ॥ ३० ॥ उस रूपको श्रीनाथ देव दमन सब श्रेष्ठ जन वर्णन करेंगे, जो गोवर्द्धन पर्वतमें सदाही लीला करता है ॥ ३१ ॥

जो पुरुष नेत्रोंसे श्रीनाथजीके दर्शन करेंगे, वे पुरुष हे मैथिलेन्द्र ! कलियुगमें कृतार्थ होंगे ॥३२॥ जगन्नाथ, रंगनाथ, द्वारिकानाथ और बद्रीनाथ ऐसे जो ये चार नाथ भरतखण्ड के चारों कानोंपर विद्यमान हैं ॥३३॥ गोवर्द्धनके बीचमें सदा ही ये नाथजी विद्यमान हैं, इस पवित्र भरतखंडमें पांच नाथ हैं, देवोंके देव हैं ॥ ३४ ॥ सद्धर्मके मण्डपके ये पांचों नाथ स्तम्भ हैं, दुखियोंकी रक्षा करनेवाले हैं, उनके दर्शनहीसे यह मनुष्य नारायणके रूपको प्राप्त हो जाता है ॥ ३५ ॥ जगन्नाथ, बद्रीनाथ, द्वारिकानाथ और रंगनाथ, इन चारोंकी यात्रा करके यदि देव दमनके श्रीनाथजीके दर्शन नहीं करे, तो उस मनुष्यको यात्राका फल नहीं होता है ॥३६॥ और यदि देव दमन और श्रीनाथजीके गोवर्द्धन पर्वतमें दर्शन कर ले तो उसको चारों नाथोंकी यात्राका फल प्राप्त हो जाता है ॥३७॥ जहाँ ऐरावत हाथीका और सुरभिगौका चरण चिह्न है, उनके दर्शन कर प्रणाम करे तो पापी पुरुष

येकरिष्यंतिनेत्राभ्यांतस्यरूपस्यदर्शनम् ॥ तेकृतार्थाभविष्यंतिमैथिलेन्द्रकलौजनाः ॥३२॥ जगन्नाथोरंगनाथोद्वारकानाथएवच॥बद्रिनाथश्च-
तुष्कोणेभारतस्यापिवर्तते॥३३॥मध्येगोवर्द्धनस्यापिनाथोयंवर्ततेनृप ॥ पवित्रेभारतेवर्षेपंचनाथाःसुरेश्वराः॥३४॥ सद्धर्ममण्डपस्तंभाआर्तत्रा-
णपरायणाः ॥ तेषांतुदर्शनंकृत्वानरोनारायणोभवेत्॥३५॥चतुर्णांभुविनाथानांकृत्वायात्रांनरःसुधीः॥नपश्येद्देवदमनंसनयात्राफलंलभेत्॥३६॥
श्रीनाथंदेवदमनंपश्येद्गोवर्द्धनेगिरौ ॥ चतुर्णांभुविनाथानांयात्रायाःफलमाप्नुयात्॥३७॥ऐरावतस्यसुरभेःपादचिह्नानियत्रवै॥तत्रनत्वानरःपापी
वैकुण्ठंयातिमैथिल ॥३८॥ हस्तचिह्नंपादचिह्नंश्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥ दृष्ट्वानत्वानरःकश्चित्साक्षात्कृष्णपदंव्रजेत्॥३९॥एतानिनृपतीर्थानिकुं-
डाद्यायतनानिच ॥ अंगानिगिरिराजस्यकिम्भूयःश्रोतुमिच्छसि ॥४०॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीगिरिराजखण्डेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादेश्री
गिरिराजतीर्थवर्णनंनामसप्तमोऽध्यायः ॥७॥ बहुलाश्वउवाच ॥ केषुकेषुतदंगेषुकिंकितीर्थसमाश्रितम् ॥ वददेवमहाभागत्वम्परावरवित्तमः ॥
॥ १ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ यत्रयस्यप्रसिद्धिःस्यात्तदंगम्परमंविदुः ॥ क्रमतोनास्त्यंगचयोगिरिराजस्यमैथिल ॥ २ ॥ यथासर्वगतंब्रह्मस-
र्वांगानिचतस्यवै ॥ विभूतेर्भावतःशश्वत्तथावक्ष्यामिमानद ॥ ३ ॥

वैकुण्ठको प्राप्त होता है ॥ ३८ ॥ महात्मा श्रीकृष्णके हाथका और चरणके चिह्न का जो कोई दर्शन करके नमस्कार करे तो वह पुरुष साक्षात् कृष्णके पदको प्राप्त होता है ॥३९॥ हे राजन् ! ये चिह्न गिरिराजमें हैं, जो सरोवर और स्थल हैं, वे मैंने तुम्हारे सामने वर्णन किये हैं, अब आगे क्या सुननेकी इच्छा है ? ॥४०॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां गिरिराजखंण्डे भाषाटीकायां गिरिराजतीर्थ वर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥७॥ बहुलाश्व राजा प्रश्न करता है, कि कौन-कौनसे अंगमें कौन-कौनसे तीर्थ हैं, उनको कहिये, हे नारदजी ! आप पर और अपरके वेत्ता हो ॥१॥ यह सुनकर नारदजी बोले कि, जहाँ जिसकी प्रसिद्धि है, उसीको परम अंग कहते हैं, हे मैथिल ! क्रमसे गिरिराजके अंगोंकी गिनती नहीं है ॥२॥ जैसे ब्रह्म सर्वगत है, और उसीके सब अंग हैं, वैसेही गोवर्द्धनके भी अंग सब जगह हैं ॥ ३ ॥

शृंगार मण्डलके नीचे तो गोवर्द्धनका मुख है जहाँ भगवान्ने व्रजवासियोंके साथ अन्न कूट किया है, यह भगवान्की विभूति है ॥४॥ मानसी गंगा नेत्र हैं, चन्द्रसरोवर नासिका हैं, गोविन्द कुण्ड होठ है ॥ ५ ॥ राधा-कुण्ड जीभ है, ललिता कुण्ड दोनों कपोल हैं, गोपाल कुण्ड कान हैं, कुसुम सरोवर कनपटी हैं, ॥ ६ ॥ और हे मैथिल मुकुट चिन्हकी शिला ललाट है, चित्र शिला शिर है और वादिनी शिला ग्रीवा (गर्दन) है ॥ ७ ॥ कंदुक तीर्थ पसलियाँ हैं, उष्णीष तीर्थ कमर है, द्रोण तीर्थ पीठ है, लौकिक तीर्थ पेट है ॥ ८ ॥ कदंब खण्डी वक्षस्थल है, शृंगार मण्डल गोवर्द्धनजीका जीव है, श्रीकृष्णका चरण चिह्न इस महात्मा गोवर्द्धनका मन है ॥ ९ ॥ हस्त चिह्न बुद्धि है, ऐरावतका चिह्न पांव है, सुरभिके पाद चिह्न पंख हैं ॥ १० ॥ पुच्छकुंड पूँछ है, वत्सकुंड बल है रुद्रकुंड क्रोध और इन्द्रसरोवर काम है ॥ ११ ॥ कुबेर तीर्थ उद्योग है ब्रह्मतीर्थ प्रसन्नता है यमतीर्थ

शृंगारमण्डलस्याधोमुखंगोवर्द्धनस्यच ॥ यत्रान्नकूटंकृतवान्भगवान्व्रजवासिभिः ॥४॥ नेत्रेवैमानसीगंगानासाचन्द्रसरोवरः ॥ गोविन्दकुण्डो ह्यधरश्चिबुकंकृष्णकुण्डकः ॥ ५ ॥ राधाकुण्डंतस्यजिह्वाकपोलौललितासरः ॥ गोपालकुंडःकर्णश्चकर्णांतःकुसुमाकरः ॥६॥ मौलिचिन्हाशिलातस्यललाटंविद्धिमैथिल ॥ शिरश्चित्रशिलातस्यग्रीवावैवादिनीशिला ॥७॥ कांदुकम्पार्श्वदेशांश्चऔष्णिषंकटिरुच्यते ॥ द्रोणतीर्थम्पृष्ठदेशे लौकिकंचोदरेस्मृतम् ॥ ८ ॥ कदम्बखण्डमुरसिजीवःशृंगारमण्डलम् ॥ श्रीकृष्णपादचिन्हंतुमनस्तस्यमहात्मनः ॥९॥ हस्तचिन्हंतथाबुद्धिरैरावतपदंपदम् ॥ सुरभेःपादचिन्हेषुपक्षौतस्यमहात्मनः ॥१०॥ पुच्छकुण्डेतथापुच्छंवत्सकुंडेबलंस्मृतम् ॥ रुद्रकुंडेतथाक्रोधंकामंशक्रसरोवरे ॥११॥ कुबेरतीर्थंचोद्योगंब्रह्मतीर्थंप्रसन्नताम् ॥ यमतीर्थेह्यहंकारंवदन्तीत्थंपुराविदः ॥१२॥ एवमंगानिसर्वत्रगिरिराजस्यमैथिल ॥ कथितानिमयातुभ्यं सर्वपापहराणिच ॥१३॥ गिरिराजविभूतिं च यःशृणोतिनरोत्तमः ॥ सगच्छेद्धामपरमंगोलोकंयोगिदुर्लभम् ॥१४॥ समुत्थितोसौहरिवक्षसो गिरिर्गोवर्द्धनोनामगिरीन्द्रराजराट् ॥ समागतोह्यत्रपुलस्त्यतेजसायद्दर्शनाज्जन्मपुनर्नविद्यते ॥ १५ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीगिरिराजखण्डे नारदबहुलाश्वसंवादेगिरिराजविभूतिवर्णनंनामाऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ अहोगोवर्द्धनःसाक्षाद्गिरिराजोहरिप्रियः ॥ तत्समाननतीर्थंहिविद्यतेभूतलेदिवि ॥ १ ॥

अहंकार है, जो पूर्वाचार्य गिरिराजके रूपको जानते हैं, वे इस प्रकारसे गोवर्द्धनका रूप बताते हैं ॥ १२ ॥ हे मैथिल ! ऐसे गिरिराजके सब अंग हैं, जो सब पापको हरनेवाले हैं, वे मैंने तुमको कहे हैं ॥ १३ ॥ जो कोई मनुष्य गिरिराज की विभूतिको सुनता है, वह योगियोंको भी दुर्लभ जो परम धाम है, उसको प्राप्त होता है ॥ १४ ॥ यह गिरिराज हरिके वक्षस्थलसे उत्पन्न हुआ है, गोवर्द्धन पर्वतोंके राजाओंका राजा है, पुलस्त्यके तेजसे यहाँ आया है, जो कोई इसका दर्शन करे, उसका फिर जन्म नहीं होता है ॥ १५ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां गिरिराज खंडे भाषाटीकायां गिरिराज विभूतिवर्णनं नामाष्टमोऽध्यायः ॥८॥ बहुलाश्व राजा कहता है-अहो ! गोवर्द्धन तो साक्षात् पर्वतोंका राजा हरिका प्रिय है, उसके समान कोई तीर्थ पृथ्वी और स्वर्ग में नहीं है ॥ १ ॥

सो कब यह श्रीकृष्णके वक्षस्थलसे उत्पन्न हुआ है? यह मुझसे कहिये, हे महाबुद्धे! आप साक्षात् भगवान्के मन हो ॥ २ ॥ तब नारदजी कहते हैं कि, हे राजन्! हे बुद्धिवाले! यह गोलोककी उत्पत्तिका वृत्तान्त है, उसे तुम सुनो, यह मनुष्योंको चारों पदार्थका देनेवाला है जिसमें आदि लीलावर्णनकी है ॥ ३ ॥ जो अनादि आत्मा पुरुष निर्गुण मायासे परे परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण भगवान् प्रभु ॥४॥ प्रत्यग्धामा स्वयंज्योति जहाँ निरन्तर रमण करते हैं, जहाँ सबको चलानेवालोंको भी चलाने वाला कालभी प्रभु नहीं है ॥५॥ हे राजन्! जहाँ न माया है, न महत्तत्त्व है, न तीनों गुण न मन बुद्धि है, और न चित्त अहंकार है, और न जिसमें बुद्धि प्रवेश करती है ॥६॥ उन्होंने अपने स्वरूपमें साकार ब्रह्मकी इच्छा की, तब प्रथम शेषजी हुये, जो कमल तन्तुके समान सफेद हैं, और बड़ा जिनका शरीर है ॥७॥ उनकी गोदीमें लोक वंदित सब लोक वंदित सब लोकोंमें मुख्य

कदाबभूवश्रीकृष्णवक्षसोऽयंगिरीश्वरः ॥ एतद्वदमहाबुद्धेत्वंसाक्षाद्धरिमानसः ॥२॥ श्रीनारदउवाच ॥ गोलोकोत्पत्तिवृत्तान्तंशृणुराजन्महा-
मते ॥ चतुष्पदार्थदंनृणामाद्यलीलासमन्वितम् ॥ ३ ॥ अनादिरात्मापुरुषोनिर्गुणःप्रकृतेःपरः ॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्प्रभुः ॥
॥ ४ ॥ प्रत्यग्धामास्वयंज्योतीरममाणोनिरन्तरम् ॥ यत्रकालःकलयतामीश्वरोधाममानिनाम् ॥५॥ राजन्नप्रभवेन्मायानमहांश्चगुणःकुतः ॥
नविशंतिक्वचिद्राजन्मनश्चित्तोमतिर्ह्यहम् ॥ ६ ॥ स्वधाम्निब्रह्मसाकारमिच्छयाचव्यचीकरत् ॥ प्रथमंचाभवच्छेसोबिसश्वेतोबृहद्वपुः ॥ ७ ॥
तदुत्संगेमहालोकोगोलोकोलोकवन्दितः ॥यंप्राप्यभक्तिसंयुक्तःपुनरावर्ततेनहि ॥८॥ असंख्यब्रह्माण्डपतेर्गोलोकाधिपतेःप्रभोः ॥ पुनःपादाब्ज
संभूतागंगात्रिपथगामिनी ॥ ९ ॥ पुनर्वामांसतस्तस्यकृष्णाभूत्सरितांवरा ॥ रेजेशृंगारकुसुमैर्यथोष्णिङ्मुद्रितानृप ॥ १० ॥ श्रीरासमण्डलं
दिव्यंहेमरत्नसमन्वितम् ॥ नानाशृंगारपटलंगुल्फाभ्यांश्रीहरेःप्रभोः ॥ ११ ॥सभाप्रांगणवीथीभिर्मंडपैःपरिवेष्टितः ॥ वसन्तमाधुर्यधरःकूज-
त्कोकिलसंकुलः ॥१२॥ मयूरैःषट्पदैर्व्याप्तःसरोभिःपरिसेवितः ॥ जातोनिकुंजोजंघाभ्यांश्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥१३॥ वृन्दावनंचजानुभ्यां-
राजन्सर्ववनोत्तमम् ॥ लीलासरोवरःसाक्षादूरुभ्यांपरमात्मनः ॥ १४ ॥

गोलोक हुआ, जिसमें गया हुआ हरिभक्त इस लोकमें आकर फिर जन्म नहीं लेता है ॥८॥ फिर उन असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति गोलोकके नाथके चरणकमलसे तीन मार्गसे संगमन करनेवाली श्रीगंगाजी प्रगट हुई ॥९॥ फिर श्रीकृष्णके बांये अंगसे नदियोंमें मुख्य कालिंदी प्रगट हुई, वह शृंगारके पुष्पोंसे ऐसी शोभित हुई जैसे बंधी हुई उष्णीष (पगड़ी) ॥ १० ॥ फिर भगवान्के टकनोंसे श्री राम मण्डल प्रगट हुआ जो रत्नजटित स्वर्णके नाना शृंगारोंका समूह है ॥११॥ जो सभा, आंगन, चौक छत्री, इनसे युक्त है, वसन्तकी माधुर्यको धारण किये है, जिसमें कोकिला, सारस, कुहुक रहे हैं, जिसमें सुन्दर सरोवर हैं ॥१२॥ जहाँ मोर नाच रहे हैं, भ्रमर गुंजार कर रहे हैं फिर कृष्ण महात्माकी जंघासे निकुञ्ज पदा हुआ ॥१३॥ फिर भगवान्के घुटनोंसे हे राजन्! वनोंमें उत्तम वृन्दावन प्रगट हुआ, और जंघाओंसे लीला सरोवर हुआ ॥ १४ ॥

भगवान्‌की कमरसे दिव्य रत्नमयी सुनहरी भूमि हुई, उदरसे और रोमावलिसे माधवकी माधुरीकी लता हुई ॥ १५ ॥ अनेक पक्षियोंकी ध्वनिसे भूषित हो रही है, फूल और फलोंके भारसे नीचेको झुकी हुई हैं, जैसे गुण पाकर सत्कुलमें उत्पन्न हुये पुरुष झुक जाते हैं ॥१६॥ और भगवान्‌के नाभि कमलसे अनेक प्रकारके हजारों कमल उत्पन्न हुये, जो सरोवर में खिले हैं ॥१७॥ भगवान्‌की त्रिवलीसे अति शीतल मन्द सुगन्ध पवन हुई, भगवान्‌की हंसुलियोंसे मथुरा द्वारिका दोनों पुरी हुईं ॥१८॥ भगवान्‌की भुजाओंसे श्रीदामादिक आठ पार्षद हुये, पहुँचोंसे नौ नन्द हुये, हाथके अग्र भागसे नौ उप नन्द हुये ॥१९॥ हे नृप ! श्रीकृष्णकी भुजाओंकी जड़मेंसे सम्पूर्ण वृषभानु हुये, और श्रीकृष्णकी रोमावलि सब गोपोंके गण हुये ॥२०॥ श्रीकृष्णके मनसे गौ और धर्मके धुर उठानेवाले बैल हुये, हे मैथिलेश्वर ! बुद्धिमेंसे घास और गुल्मलता हुई ॥ २१ ॥ उन्हीं श्रीकृष्णके बायें अंगसे

कटिदेशात्स्वर्णभूमिर्दिव्यरत्नखचित्प्रभा ॥ उदरेरोमराजिश्चमाधव्योविस्तृतालताः ॥१५॥ नानापक्षिगणैर्व्याप्ताध्वनद्भ्रमरभूषिताः ॥ सुपुष्प फलभारैश्चनताःसत्कुलजाइव ॥ १६ ॥ श्रीनाभिपंकजात्तस्यपंकजानिसहस्रशः ॥ सरःसुहरिलोकस्यतानिरेजुरितस्ततः ॥१७॥ त्रिवलिप्रांत- तोवायुर्मन्दगाम्यतिशीतलः ॥ जत्रुदेशाच्छुभाजातामथुराद्वारकापुरी ॥१८॥ भुजाभ्यांश्रीहरेर्जाताःश्रीदामाद्यष्टपार्षदाः ॥ नन्दाश्चमणिबंधा भ्यामुपनन्दाःकराग्रतः॥१९॥ श्रीकृष्णबाहुमूलाभ्यांसर्वेवैवृषभानवः॥ कृष्णरोमसमुद्भूताःसर्वेगोपगणानृप॥२०॥श्रीकृष्णमनसोगावोवृषाध- र्मधुरन्धराः॥ बुद्धेर्यवसगुल्मानिबभूवुर्मैथिलेश्वर ॥२१॥ तद्वामांसात्समुद्भूतंगौरंतेजःस्फुरत्प्रभम् ॥ लीलाश्रीर्भूश्चविरजातस्माज्जाताहरेःप्रियाः ॥२२॥ लीलावतीप्रियातस्यतांराधांतुविदुःपरे ॥ श्रीराधायाभुजाभ्यांतुविशाखाललितासखी ॥२३॥ सहचर्यस्तथागोप्योराधारोमोद्भवानृप॥ एवंगोलोकरचनांचकारमधुसूदनः॥२४॥विधायसर्वंनिजलोकमित्थंश्रीराधयातत्रराजराजन्॥ असंख्यलोकाण्डपतिःपरात्मापरःपरेशःपरिपू- र्णदेवः ॥ २५ ॥ तत्रैकदासुन्दररासमण्डलेस्फुरत्क्वणन्नूपुरशब्दसंकुले ॥ सुच्छत्रमुक्ताफलदामजामृतस्रवद्बृहद्बिन्दुविराजितांगणे ॥ २६ ॥

देदीप्यमान गौर तेज पुञ्ज उत्पन्न हुआ, उस तेज पुञ्जसे लीला, श्री, भू, विरजा ये चार देवियाँ उत्पन्न हुईं, जो हरिकी प्रिया हैं ॥२२॥ लीलावती श्रीकृष्णकी प्रिया हैं, कोई २ तो लीलावती कहते हैं, कोई उसीको राधा कहते हैं, उस राधिकाकी भुजाओंसे ललिता और विशाखा दो सखियाँ उत्पन्न हुईं ॥२३॥ और जो सहचरी गोपियाँ हैं, वे राधिकाजीकी रोमावलिसे उत्पन्न हुईं, हे नृप ! श्रीकृष्णने ऐसे गोलोककी रचना की ॥२४॥ ऐसे सब अपना लोक रचकर राधा सहित हे राजन् ! श्रीकृष्ण वहाँ सुशोभित हुये, जो असंख्य लोक ब्रह्माण्डोंके पति परात्मा परिपूर्ण देव हैं॥२५॥वहाँ एक समय रास मण्डलमें जिसमें बजते नूपुरोंके झनकार शब्द हो रहे, थे वहाँ सुन्दर छत्रोंके मोतियोंमेंसे अमृतकी बून्द झर रही हैं, उनसे आंगन अत्यन्त शोभाको प्राप्त हो रहे हैं ॥ २६ ॥

वहाँ मालतीके चन्दोबाओंके जालसे स्वतः सिद्ध झरना झर रहे हैं उनके मकरन्दसे सुगन्ध उठ रही है, और मृदंग, ताल, वेणु, इनके शब्द हो रहे हैं, सुन्दर कण्ठसे गान विद्या जिसमें हो रही, उनसे अति मनोहर हैं ॥२७॥ श्री सुन्दरियोंके रासके रससे मनोहर है, उसके बीचमें विराजमान कोटि कामदेवको मोहनेवाले श्रीकृष्ण भगवान्से राधिकाजी कटाक्ष रस देनेकी चतुराईसे प्रसन्न करती अति मनोहर वाणीसे बोली ॥ २८ ॥ कि हे प्रिय ! आप मुझपर रासमें मेरे प्रेमसे प्रसन्न हुये हो, तो हे जगत्के पति ! मेरे मनमें आपसे प्रार्थना करनेकी इच्छा है, सो मैं करती हूँ ॥२९॥ तब श्रीकृष्ण बोले–हे सुन्दर ऊरूवाली ! जो तुम्हारी इच्छा हो,वह मांगो, जो न देनेकी वस्तु होगी, वह भी हे प्रिया ! मैं तुम्हारे प्रेमसे दे दूंगा ॥३०॥ तब राधिकाजी बोली–हे देवदेव ! मेरे लिये वृन्दावनमें दिव्य निकुञ्जके पास यमुनाजीके किनारे पर कोई रास रसके योग्य सुन्दर एक एकान्त मनको हरनेवाला स्थल रचिये, हे देवदेव ! मेरे इस मनोरथको पूर्ण करिये॥३१॥ नारदजी कहते हैं–''ऐसाही होगा'' ऐसे भगवान् कहकर एकान्त और योग्य स्थलका विचार करते अपने नेत्रोंसे अपना

श्रीमालतीनांसुवितानजालतःस्रवत्सन्मकरन्दगन्धिते ॥ मृदंगतालध्वनिवेणुनादितेसुकण्ठगीतादिमनोहरेपरे ॥२७॥ श्रीसुन्दरीरासरसेमनो-
रमेमध्यस्थितंकोटिमनोजमोहनम् ॥ जगादराधापतिमूर्जयागिराकृत्वाकटाक्षंरसदानकौशलम् ॥ २८ ॥ श्रीराधोवाच ॥ यदिरासेप्रसन्नोसि
ममप्रेम्णाजगत्पते ॥ तदहंप्रार्थनांत्वांतुकरोमिमनसिस्थिताम् ॥ २९ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ इच्छांवरयवामोरुयातेमनसिवर्त्तते ॥ नदेयंयदि
यद्वस्तुप्रेमम्णादास्यामितत्प्रिये ॥३०॥ श्रीराधोवाच ॥ वृन्दावनेदिव्यनिकुंजपार्श्वेकृष्णातटेरासरसाययोग्यम् ॥ रहःस्थलंत्वंकुरुतन्मनोज्ञंम-
नोरथोयंममदेवदेव ॥३१॥ श्रीनारदउवाच ॥ तथास्तुचोक्काभगवान्रहोयोग्यंविचिन्तयन् ॥ स्वंनेत्रपंकजाभ्यांतुहृदयंसंददर्शह ॥३२॥ तदैव-
कृष्णहृदयाद्गोपीव्यूहस्यपश्यतः ॥ निर्गतंसजलंतेजोऽनुरागस्येवचांकुरम् ॥३३॥ पतितंरासभूमौतद्ववृधेपर्वताकृति ॥ रत्नधातुमयंदिव्यंसुनिर्झ-
रदरीवृतम् ॥३४॥ कदंबबकुलाशोकलताजालमनोहरम् ॥ मन्दारकुन्दवृन्दाढ्यंसुपक्षिगणसंकुलम् ॥३५॥ क्षणमात्रेणवैदेहलक्षयोजनविस्तृ-
तम् ॥ शतकोटियोजनानांलंबितंशेषवत्पुनः ॥३६॥ ऊर्ध्वंसमुन्नतंजातंपंचाशत्कोटियोजनम् ॥ करीन्द्रवत्स्थितंशश्वत्पंचाशत्कोटिविस्तृतम्
॥ ३७ ॥ कोटियोजनदीर्घांगैःशृंगानांशतकैःस्फुरत् ॥ उच्चकैःस्वर्णकलशैःप्रासादमिवमैथिल ॥ ३८ ॥

हृदय देखने लगे ॥ ३२ ॥ उसी समय गोपियोंके देखते श्रीकृष्णके हृदयसे एक सजल तेज निकला, मानो स्नेहका अंकुर ही है ॥ ३३ ॥ सो वह रास भूमिमें गिरा, फिर पर्वतके आकार सा बढ़ने लगा, दिव्य रत्नमय धातुमय हो गया, झरना जिनमें झर रहे ऐसी गुफाएं बन गईं ॥३४॥ कदम्ब, मौलश्री, अशोक इनकी लताओंके जालसे मनोहर है, मन्दार कुन्दके वृक्षोंके झुण्डसे भरा और सुन्दर पक्षियोंके समूहसे सेवित है ॥ ३५ ॥ फिर हे वैदेह एक-ही क्षणमें लाख योजन विस्तृत हो गया, और सौ करोड़ योजन शेषजीकी तरह लम्बा हो गया ॥ ३६ ॥ और पचास करोड़ योजन ऊँचा और हाथीकी तरह पचास योजन मोटा, ऐसा खड़ा हो गया ॥३७॥ जिसमें करोड़ करोड़ योजनके सौ शिखर दीखने लगे और हे मैथिल ! ऊँचे ऊँचे सोनेके कलशोंसे युक्त वे शिखर महलसे दीखने लगे ॥ ३८ ॥

कोई इसको गोवर्द्धन कहते हैं और कोई इसको शतशृंग कहते हैं, इस प्रकार जैसे मन बढ़ता है, वैसे बढ़ने लगा ॥ ३९ ॥ तब बड़ा कोलाहल हुआ, गोलोक भयसे विह्वल हो गया, तब तो हरि देखकर उठे और उसको एक हाथसे थप्पड़ मारा ॥ ४० ॥ और बोले कि, अरे ! क्यों बढ़ताही चला जाता है; लोकमें गुप्त होकर रह, अरे ! ये सब विश्वके जीव कहाँ बसेंगे ॥ ४१ ॥ तब उस गिरिवरको देखकर भगवान्की प्रिया राधा बडी प्रसन्न हुई. उस गोवर्द्धनमें एकान्त स्थलमें हे राजन् ! हरिके संग विशेष शोभित हुई ॥४२॥ यह गिरिवर है, यह साक्षात् श्रीकृष्णने उदय किया है, सब तीर्थमय है, घनकी तरह श्याम देवताओंको प्रिय है ॥ ४३ ॥ भरतखण्डमें पश्चिम दिशामें शाल्मली द्वीपके बीचमें द्रोणाचलकी स्त्रीसे इसने जन्म लिया है ॥ ४४ ॥ तब अगस्त्यजी भरतखडमें व्रजमंडलमें लाकर रखा है, हे वैदेह ! जिसका आगमन मैंने पहिले ही तुमको सुना दिया

गोवर्धनाख्यंतच्चाहुःशतशृंगंतथापरे ॥ एवंभूतंतुतदपिवर्द्धितमनसोत्सुकम् ॥३९॥ कोलाहलेतदाजातेगोलोकेभयविह्वले ॥ वीक्ष्योत्थायहरिः साक्षाद्धस्तेनाशुतताडतम् ॥ ४० ॥ किंवर्द्धसेभोप्रच्छन्नंलोकमाच्छाद्यतिष्ठसि ॥ किंवानचैतेवसितुंतच्छान्तिमकरोद्धरिः ॥ ४१ ॥ संवीक्ष्यतं गिरिवरंप्रसन्नाभगवत्प्रिया ॥ तस्मिन्रहःस्थलेराजन्रराजहरिणासह ॥४२॥ सोयंगिरिवरःसाक्षाच्छ्रीकृष्णेनप्रणोदितः ॥ सर्वतीर्थमयः श्यामो घनश्यामोसुरप्रियः ॥ ४३ ॥ भारतात्पश्चिमदिशिशाल्मलिद्वीपमध्यतः ॥ गोवर्द्धनोजन्मलेभेपत्न्यांद्रोणाचलस्यच ॥४४॥ पुलस्त्येनसमानीतोभारतेव्रजमण्डले ॥ वैदेहस्यागमनंमयातुभ्यंपुरोदितम् ॥ ४५ ॥ यथापुरावर्द्धितुमुत्सुकोयंतथापिधानंभविताभुवोवा ॥ विचिन्त्यशापं मुनिनापरेशोद्द्रोणात्मजायेतिददौक्षयार्थम् ॥४६॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीगिरिराजखंडेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीगिरिराजोत्पत्तिवर्णनंनाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अत्रैवोदाहरंतीममितिहासम्पुरातनम् ॥ यस्यश्रवणमात्रेणमहापापम्प्रणश्यति ॥ १ ॥ विजयो ब्राह्मणःकश्चिद्गौतमीतीरवासकृत् ॥ आययौस्वमृणंनेतुंमथुराम्पापनाशिनीम् ॥२॥ कृत्वाकार्यंगृहंगच्छन्गोवर्द्धनतटींगतः ॥ वर्तुलंतत्रपाषाणं चैकंजग्राहमैथिल ॥ ३ ॥ शनैःशनैर्वनोद्देशेनिर्गतोव्रजमंडलात् ॥ अग्रेददर्शचायांतंराक्षसंघोररूपिणम् ॥४॥ हृदयेचमुखंयस्यत्रयःपादाभुजाश्चषट् ॥ हस्तत्रयंचस्थूलोष्ठोनासाहस्तसमुन्नता ॥ ५ ॥

॥४५॥ जैसे पहले गोलोकमें बढ़ा है, वैसेही अब यह बढ़कर पृथ्वीका ढकना होगा, पुलस्त्य मुनिने ऐसा विचार करके गोवर्द्धनके क्षयके लिये शाप दिया है ॥४६॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां गिरिराजखंडे भाषाटीकायां गोवर्द्धनोत्पत्ति वर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ॥९॥ नारदजी कहते हैं कि, यहाँ एक पहिला इतिहास वर्णन करते हैं, जिसके सुननेहीसे महापाप नष्ट हो जाते हैं ॥१॥ एक विजय नामक ब्राह्मण था, वह गोमती नदीके तीरपर रहता था, वह ऋषि अपना ऋण लेनेके लिये पापनाशिनी मथुरापुरीमें आया ॥२॥ हे मैथिल ! अपना काम करके घरको जाते समय गोवर्द्धनकी तलहटीमें आया, गोवर्द्धनका एक गोल पत्थर उसने ले लिया ॥३॥ वह धीरे २ निकलकर एक वनमें आया, सामने देखा तो एक घोररूप राक्षस चला आता है ॥४॥ हृदयमें तो उसका मुख है, तीन पांव हैं, और छः भुजाएं हैं, तीन हाथ मोटे जिसके होठ हैं, और एक ऊँची नासिका (नाक) है ॥५॥

सात हाथ जिसकी जीभ लपलपा रही है, कांटेसे काले जिसके रोगटे हैं, लाल २ आंखे हैं, और बड़े लम्बे भयंकर जिसके दांत हैं ॥ ६ ॥ घुर्र घुर्र शब्द करता है बड़ा भूखा है वह राक्षस उस बैठे हुये ब्राह्मणके सामने आया ॥७॥ तब ब्राह्मणने उसको गिरिराजका पत्थर मारा, तब गिरिराजके स्पर्शसे उस राक्षसकी देह छूट गई, और दैवी देह मिल गई ॥८॥ कमलसे नेत्र, श्याम सुन्दर रूप, वनमाला पहिने, पीताम्बर ओढ़े, मुकुट, कुण्डल धारण करे ॥ ९ ॥ वंशीधारण करे, बेंत लिये, दूसरा कामदेवसा हाथ जोड़ ब्राह्मण को वारवार प्रणाम करने लगा ॥ १० ॥ तब यह सिद्ध बोला-हे ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ ! तुम धन्य हो, दूसरोंकी रक्षा करनेवाले हे महाबुद्धे ! तुमने मेरी राक्षसी देह छुड़ादी ॥ ११ ॥ पत्थरके स्पर्शसे मेरा कल्याण हो गया, तुम्हारे विना और किसीकी सामर्थ्य मुझको छुड़ानेकी नहीं थी ॥१२॥ तब ब्राह्मण बोला-तुम्हारे वचन सुनकर मुझको आश्चर्य होता है,

सप्तहस्ताललज्जिह्वाकंटकाभास्तनूरुहाः ॥ अरुणेअक्षिणीदीर्घेदंतावक्राभयंकराः ॥६॥ राक्षसोघुर्घुरंशब्दंकृत्वाचापिबुभुक्षितः ॥ आययौसंमुखे राजन्ब्राह्मणस्यस्थितस्यच॥७॥गिरिराजोद्भरेनासौपाषाणेनजघानतम् ॥ गिरिराजशिलास्पर्शात्त्यक्त्वासौराक्षसींतनुम् ॥८॥ पद्मपत्रविशालाक्षः श्यामसुन्दरविग्रहः ॥ वनमालीपीतवासामुकुटीकुंडलान्वितः ॥९ ॥ वंशीधरोवेत्रहस्तःकामदेवइवाऽपरः ॥ भूत्वाकृतांजलिर्विप्रंप्रणनाममुहु-र्मुहुः ॥ १० ॥ सिद्धउवाच ॥ धन्यस्त्वंब्रह्मश्रेष्ठपरत्राणपरायणः ॥ त्वयाविमोचितोहंवैराक्षसत्वान्महामते ॥ ११ ॥ पाषाणस्पर्श-मात्रेणकल्याणंमेबभूवह ॥ नकोपिमांमोचयितुंसमर्थोहित्वयाविना ॥ १२ ॥ ब्राह्मणउवाच ॥ विस्मितस्तववाक्येऽहंनत्वामोचयितुंक्षमः ॥ पाषाणस्पर्शनफलंनजानेवदसुव्रत ॥ १३ ॥ सिद्धउवाच ॥ गिरिराजोहरेरूपंश्रीमान्गोवर्द्धनोगिरिः ॥ तस्यदर्शनमात्रेणनरोयातिकृतार्थ-ताम् ॥ १४ ॥ गन्धमादनयात्रायांयत्फलंलभतेनरः ॥ तस्माकोटिगुणंपुण्यंगिरिराजस्यदर्शने ॥१५॥ पंचवर्षसहस्राणिकेदारेयत्तपःफलम् ॥ तच्चगोवर्द्धनेविप्रक्षणेनलभतेनरः ॥ १६ ॥ मलयाद्रौस्वर्णभारदानस्यापिचयत्फलम् ॥ तस्मात्कोटिगुणंपुण्यंगिरिराजेहिमासिकम् ॥ १७ ॥ पर्वतेमंगलप्रस्थेयोदद्याद्धेमदक्षिणाम् ॥ सयातिविष्णुसारूप्यंयुक्तःपापशतैरपि ॥ १८ ॥ तत्पदंहिनरोयातिगिरिराजस्यदर्शनात् ॥ गिरि-राजसमं पुण्यमन्यत्तीर्थंनविद्यते ॥ १९ ॥

मेरी सामर्थ्य तो तुमको छुड़ाने लायक नहीं थी पत्थरके स्पर्शका फल मैं नहीं जानता हूँ, हे सुव्रत ! तुम कहो ॥१३॥ तब सिद्ध बोला-यह गिरिराज हरिका रूप है, उस गोवर्द्धन के स्पर्शमात्रसे नर कृतार्थ हो जाता है ॥ १४ ॥ गन्धमादन पर्वतकी मात्रामें जो फल मनुष्यको होता है, उससे करोड़ गुना पुण्य गिरिराजके दर्शनमें है ॥ १५ ॥ हे विप्र ! पांच हजार वर्षतक जो केदारमें तप करनेसे पुण्य होता है, वह गिरिराजमें एक क्षणमें ही प्राप्त होता है ॥ १६ ॥ मलयाचलमें एक भार सोना दान करनेका जो फल होता, उससे करोड़ गुणा गिरिराजमें माशा भर सोनेका होता है ॥ १७ ॥ जो गिरिराजमें मंगली शिलापर स्वर्णकी दक्षिणा दे, वह विष्णुकी सायुज्य मुक्तिको प्राप्त होता है, जो सैकड़ों पाप किये हों, तो भी ऐसाही फल मिलता है ॥१८॥ और जो मनुष्य श्रीगिरिराजके दर्शन करे, वह भगवान्केही पदको प्राप्त होता है, गिरिराजके समान पुण्य और तीर्थ नहीं है ॥१९॥

ऋषभ पर्वतमें, कूटक पर्वतमें, कोलक पर्वतमें जो मनुष्य सोनेकी सींगोंकी करोड़ गौ दे ॥२०॥ भक्तिसे ब्राह्मणोंको पूजकर जो महाफल प्राप्त हो, उससे लाख गुणा पुण्य गोवर्द्धनमें मिलता है ॥२१॥ ऋष्यमूक पर्वतकी यात्रा करनेसे, सह्याचल पर्वतकी यात्रा करनेसे और सम्पूर्ण पृथ्वीकी यात्रा करनेसे ॥२२॥ जो फल होता है, उससे करोड़ गुणा गिरिराजकी यात्रासे फल होता है, गिरिराजके समान कोई तीर्थ न हुआ न होगा॥२३॥श्रीशैलमें दश वर्ष रहे और विद्याधर कुण्डमें स्नान करे, वह सुकृति पुरुष सौ यज्ञ करनेके फलको प्राप्त होता है ॥२४॥ गोवर्द्धनमें पूंछपर अप्सरा कुण्डलमें एकही दिन स्नान करे, तो वह मनुष्य करोड़ यज्ञ करनेके फलको प्राप्त होता है, इसमें संदेह नहीं है ॥२५॥ वेंकट पर्वतमें, वारिधार पर्वतमें, महेन्द्र पर्वतमें और विन्ध्याचलमें जो अश्वमेध यज्ञको करे तो वह मनुष्य स्वर्गको प्राप्त होता है ॥२६॥ जो मनुष्य इस गोवर्द्धनमें यज्ञ करे और ब्राह्मणोंको उत्तम दक्षिणा दे, वह मनुष्य स्वर्गका राज्य करके विष्णुके पदको प्राप्त होता है.॥२७॥ रामनवमीके दिन चित्रकूट पर्वतमें पयस्विनी नदीमें जो स्नान करे और वैशाखमें अक्षयतृतीयाके दिन पारियात्र

ऋषभाद्रौकूटकाद्रौकोलकाद्रौतथानरः ॥ सुवर्णशृंगयुक्तानांगवांकोटीर्ददातियः ॥२०॥ महापुण्यंलभेत्सोपिविप्रान्संपूज्ययत्नतः ॥ तस्माल्लक्षगुणंपुण्यंगिरौगोवर्द्धनेद्विज ॥२१॥ ऋष्यमूकस्यसह्यस्यतथादेवगिरेःपुनः॥ यात्रायांलभतेपुण्यंसमस्तायाभुवःफलम् ॥२२॥ गिरिराजस्ययात्रायांतस्मात्कोटिगुणम्फलम् ॥ गिरिराजसमंतीर्थंनभूतंनभविष्यति ॥२३॥ श्रीशैलेदशवर्षाणिकुण्डेविद्याधरेनरः॥ स्नानंकरोतिसुकृतीशतयज्ञफलंलभेत् ॥२४॥ गोवर्द्धनेपुच्छकुण्डेदिनैकंस्नानकृन्नरः ॥कोटियज्ञफलंसाक्षात्पुण्यमेतिनसंशय॥२५॥ वेंकटाद्रौवारिधारेमहेन्द्रेविन्ध्यपर्वते॥ यज्ञंकृत्वाह्यश्वमेधंनरोनाकपतिर्भवेत् ॥ २६ ॥ गोवर्द्धनेस्मिन्योयज्ञंकृत्वादत्त्वासुदक्षिणाम् ॥ नाकेपदंसंविधायसविष्णोःपदमाव्रजेत् ॥२७॥ चित्रकूटेपयस्विन्यांश्रीरामनवमीदिने ॥ पारियात्रेतृतीयायांवैशाखस्यद्विजोत्तमः॥२८॥कुकुराद्रौचपूर्णायांनीलाद्रौद्वादशीदिने ॥ इन्द्रकीलेच सप्तम्यांस्नानंदानंतपः क्रियाः॥२९॥ तत्सर्वंकोटिगुणितंभवतीत्थंहिभारते॥ गोवर्द्धनेतुतत्सर्वमनन्तंजायतेद्विज॥३०॥गोदावर्यांगुरौसिंहेमायापुर्य्यांतुकुंभके ॥पुष्करेपुष्यनक्षत्रेकुरुक्षेत्रेरविग्रहे॥३१॥चन्द्रग्रहेतुकाश्यांवैफाल्गुनेनैमिषेतथा ॥ एकादश्यांशूकरेचकार्तिक्यांगणमुक्तिदे ॥३२॥ जन्माष्टम्यांमधोःपुर्यांखाण्डवेद्वादशीदिने ॥ कार्तिक्याम्पूर्णिमायांतुवटेश्वरमहावटे ॥ ३३ ॥

पर्वतमें जाये ॥२८॥ पूर्णमासीको कुकुर पर्वतमें जाये, द्वादशीको नील पर्वतमें जाये, और सप्तमीको इन्द्रनील पर्वतमें स्नान, दान, तप, करे ॥२९॥ तो वह सब करोड़गुणा होता है, ऐसेही भरत खण्डमें गोवर्द्धनमें जाकर गोवर्द्धनका दर्शन कर मानसी गंगामें स्नान करो तो अनन्त गुणा फल होता है ॥३०॥ सिंहकी बृहस्पतिमें गोदावरीमें स्नान, दान तप करे, कुम्भकी बृहस्पतिमें हरिद्वारमें स्नान दान तप करे, पुष्य नक्षत्रमें पुष्करमें और सूर्यग्रहणमें कुरुक्षेत्रमें ॥ ३१ ॥ चन्द्रग्रहणमें काशीमें, फाल्गुनमें नैमिषारण्यमें; एकादशीको सोरोंमें, कार्तिककी पूर्णमासीको गढ़ मुक्तेश्वरमें यज्ञ, दान, तप, स्नानादिक करनेका जो पुण्य हो ॥३२॥ जन्माष्टमीको मधुपुरीमें, द्वादशीको खांडववनमें और कार्तिककी पूर्णमासीको वटेश्वरमें ॥ ३३ ॥

मकरके सूर्यमें माघके महीनेमें प्रयागमें और वेधृत्तिमें बर्हिष्मती पुरीमें, रामनवमीको अयोध्यामें सरयूके तीर ॥३४॥ ऐसेही शिवचतुर्दशीको वैजनाथकी झाडीमें, सोमवतीको गंगा सागरमें ॥३५॥ दशमीको सेतुबन्ध रामेश्वरमें, सप्तमीको रंगजीमे, इनमें जो पुरुष कुछ स्नान, दान, जप, यज्ञ, तप, देवब्राह्मण पूजन करे, ॥ ३६ ॥ हे द्विजोत्तम ! उन सबके बराबर पुण्यका जो फल हो, उससे करोड़ गुणा पुण्य गोवर्द्धन पर्वतमें प्राप्त होता है॥३७॥ श्रीकृष्णमें मन लगाकर जो कोई गोविन्द कुण्डमें स्नान करे, सो श्रीकृष्णकी सारूप्य मुक्तिको प्राप्त हो, इसमें संदेह नहीं है ॥ ३८ ॥ हजार अश्वमेध यज्ञ करनेका जो फल, सौ राजसूय यज्ञ करनेका जो फल हो, एक बारही मानसी गंगामें स्नान करनेसे फल होता है ॥ ३९ ॥ हे ब्राह्मण ! तुमने साक्षात् गिरिराजका दर्शन किया है, स्पर्श किया है और स्नान किया है, इससे तुम्हारे बराबर पृथ्वीपर कोई नहीं है, तुम सबसे बड़े हो

मकरार्केप्रयागेतुबर्हिष्मत्यांहिवैधृतौ ॥ अयोध्यासरयूतीरेश्रीरामनवमीदिने ॥ ३४ ॥ एवंशिवचतुर्दश्यांवैजनाथशुभेवने ॥ तथादर्शेसोमवारे गंगासागरसंगमे॥३५॥ दशम्यांसेतुबन्धेचश्रीरंगेसप्तमीदिने ॥ एषुदानंतपःस्नानंजपोदेवद्विजार्चनम् ॥३६॥ तत्सर्वंकोटिगुणितंभवतीहद्विजोत्तम॥ तत्तुल्यम्पुण्यमाप्नोतिगिरौगोवर्द्धनेपिहि॥३७॥ गोविन्दकुण्डेविशदेयःस्नातिकृष्णमानसः ॥ प्राप्नोतिकृष्णसारूप्यंमैथिलेन्द्रनसंशयः ॥ ३८ ॥ अश्वमेधसहस्राणिराजसूयशतानिच ॥ मानसीगंगयातुल्यानभवंत्यत्रनोगिरौ ॥ ३९ ॥ त्वयाविप्रकृतंसाक्षाद्गिरिराजस्यदर्शनम् ॥ स्पर्शनंचततःस्नानंनत्वत्तोप्यधिकोभुवि ॥ ४० ॥ नमन्यसेचेन्मांपश्यमहापातकिनम्परम् ॥ गोवर्द्धनशिलास्पर्शात्कृष्णसारूप्यतांगतम् ॥ ४१ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीगिरिराजखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीगिरिराजमाहात्म्यंनामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ श्रीनारद उवाच ॥ इति श्रुत्वासिद्धवाक्यंब्राह्मणोविस्मयंगतः ॥ पुनःपप्रच्छतंराजन्गिरिराजप्रभाववित् ॥ १ ॥ ब्राह्मणउवाच ॥ पुराजन्मनि कस्त्वंभोस्त्वयाकिंकलुषंकृतम् ॥ सर्ववदमहाभागत्वंसाक्षाद्दिव्यदर्शनः ॥ २ ॥ सिद्धउवाच ॥ पुराजन्मनिवैश्योहंधनीवैश्यसुतोमहान् ॥ आबाल्याद्द्यूतनिरतोविटगोष्ठीविशारदः ॥ ३ ॥

॥४०॥ न मानो तो तुम मुझको देख लो, अरे ! मुझसे महापापीको गोवर्द्धनकी शिलाके स्पर्शसे राक्षसी देह छूटकर कृष्णकासा रूप मिल गया ॥ ४१ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां गिरिराज खण्डे भाषाटीकायां गिरिराज माहात्म्यं नाम दशमोऽध्यायः॥१०॥ नारदजी कहते हैं-हे राजन् ! ऐसे सिद्धका वचन सुनकर वह ब्राह्मण बड़े आश्चर्यमें आ गया गिरिराजके प्रभावको जानकर फिर उससे पूछने लगा ॥१॥ ब्राह्मण बोला कि, पहिले जन्ममें तुम कौन थे, तुमने ऐसा क्या पाप किया, हे महाभाग ! तुम साक्षात् दिव्य दर्शन हो, सो मुझको तुम अपना सब वृत्तान्त कहो ॥ २ ॥ तब सिद्ध बोला--पहिले जन्ममें मैं वैश्य था, बड़ा धनी था; बालकपनहीसे जुआ खेला करता था, और वैश्या गामियोंकी गोष्ठीमें बड़ा मैं चतुर कहलाता था ॥ ३ ॥

वेश्यामें रत था, कुमार्गी था, मदिराके मद्में विह्वल रहता था, माँ, बाप, स्त्री इन सबसे सदा फटकारा जाता था ॥४॥ हे ब्राह्मण ! एक समय मैंने विष देकर अपने माता पिताको मार दिया और मार्गमें अपनी स्त्रीको खड्गसे मार डाला था ॥५॥ उनके सब धनको लेकर वेश्याके संग दुष्ट मैं दक्षिण दिशाको चला गया, मेरे दया नहीं थी, मैं चोरी किया करता था ॥ ६ ॥ एक समय वेश्याने मुझको अँधेरे कूप (कुआ) में डाल दिया, हे विप्र ! मैंने सैकड़ों मनुष्योंको फांसी देकर मार डाले ॥ ७ ॥ धनके लोभसे सौ ब्रह्महत्या मैंने की, और क्षत्री, वैश्य, शूद्रोंकी हजारों हत्याऐं कीं ॥८॥ एक समय मांस लेनेको मृगोंको मारनेके लिये वनमें गया, सो सांपपर मेरा पांव पड़ गया, तब सांपने काट खाया मैं मर गया ॥९॥ तभी यमके दूत आये, सो जो दुष्ट मैं हूँ, मुझको मुद्गरोंसे मारकर बांधकर मुझ महादुष्ट पापीको नरकमें ले गये, मैंने बड़े दुःख भोगे ॥१०॥ एक मन्वन्तर तो महा उग्र कुम्भीपाकमें पड़ा रहा, महादुःखी एक कल्प तप्तऊर्मीमें पड़ा रहा ॥११॥ चौरासी लाख नरकोंमें एक २ वर्षतक रह रहकर यहाँ आया, यमराजकी इच्छासे ॥१२॥ फिर

वेश्यारतःकुमार्गोहंमदिरामदविह्वलः॥ मात्रापित्राभार्ययाहिभर्त्सितोहंसदाद्विज ॥४॥ एकदातुमयाविप्रपितरौगरदानतः ॥ मारितौचतथाभार्यांखड्गेनपथिमारिता ॥५॥ गृहीत्वातद्धनंसर्वंवेश्ययासहितःखलः॥दक्षिणाशांचगतवान्दस्युकर्मातिनिर्दयः ॥६॥ एकदातुमयावेश्यानिःक्षिप्ताह्यंधकूपके ॥ दस्युनाहिमयापाशैर्मारिताः शतशोनराः॥७॥ धनलोभेनभोविप्रब्रह्महत्याशतंकृतम् ॥ क्षत्रहत्यावैश्यहत्याःशूद्रहत्याः सहस्रशः ॥८॥एकदामांसमानेतुंमृगान्हंतुंवनेगतम्॥ सर्पोऽदशत्पदास्पृष्टोदुष्टंमांनिधनंगतम् ॥९॥ संताडयमुद्गरैर्घोरैर्यमदूताभयंकराः॥ बद्ध्वाचनकंनिन्युर्महापातकिनंखलम् ॥१०॥ मन्वन्तरंतुपतितःकुंभीपाकेमहाखले॥कल्पैकंतप्तसूर्मौचमहादुःखंगतःखलः ॥११॥ चतुरशीतिलक्षाणांनरकाणाम्पृथक्पृथक्॥ वर्षंवर्षंनिपतितोनिर्गतोहंयमेच्छया ॥१२॥ ततस्तुभारतेवर्षेप्राप्तोहंकर्मवासनाम्॥ दशवारंसूकरोहंव्याघ्रोहंशतजन्मसु ॥१३॥ उष्ट्रोहंजन्मशतकंमहिषःशतजन्मसु ॥ सर्पोहंजन्मसाहस्रंमारितोदुष्टमानवैः ॥१४॥ एवंवर्षायुतांतेतुनिर्जलेविपिनेद्विज ॥ राक्षसश्चेद्दृशोजातोविकरालोमहाखलः ॥१५॥ कस्यशूद्रस्यदेहंवैसमारुह्यव्रजंगतः॥ वृन्दावनस्यनिकटेयमुनानिकटाच्छुभात्॥१६॥ समुत्थितायष्टिहस्ताःश्यामलाकृष्णपार्षदाः॥तैस्ताडितोधर्षितोहंव्रजभूमौपलायितः ॥१७॥ बुभुक्षितोबहुदिनैस्त्वांखादितुमिहागतः ॥ तावत्त्वयाताडितोहंगिरिराजाश्मनामुने ॥ श्रीकृष्णकृपयासाक्षात्कल्याणंमेबभूवह ॥ १८ ॥

यहाँ भरतखण्डमें अपने कर्मोंके फलसे दशवार तो सूकर हुआ, फिर सौ जन्मतक व्याघ्र हुआ ॥१३॥ सौ जन्म ऊँट हुआ, सौ जन्म भैंसा हुआ, हजार जन्मतक सर्प हुआ, तब दुष्ट मनुष्योंने मुझको मार डाला ॥ १४ ॥ इस प्रकार दश हजारवर्ष पापको भोगकर फिर दश हजारवर्ष पीछे मैं हे द्विज ! निर्जल वनमें ऐसा विकराल महादुष्ट राक्षस हुआ ॥१५॥ फिर किसी पथिक शूद्रकी देहपर बैठकर व्रजमें आया, तब वृन्दावनमें यमुनाके किनारेपर ॥१६॥ श्रीकृष्णके पार्षद, श्याम रूपवाले, लाठिया ले लेकर मुझको मारने लगे, ललकारने लगे, तब मैं भाग आया ॥ १७ ॥ बहुत दिनोंका भूखा मैं यहाँ तुमको खानेको आया था, तब तक हे मुने ! तुमने मेरे गिरिराजका पत्थर मारा, साक्षात् श्रीकृष्णकी कृपासे मेरा कल्याण हो गया ॥ १८ ॥

नारदजी कहते हैं, ऐसा कह रहा था कि गोलोकसे हजार सूर्यकासा जिसका तेज, दश हजार घोडे जिसमें, लग रहे, ऐसा एक रथ ॥१९॥ हजार पहियोंकी ध्वनि जिसमें, लाख पार्षद जिसमें बैठे, मंजीरा, किंकिणीका जाल जिसमें, ऐसा अति मनोहर ॥२०॥२१॥ उस ब्राह्मणके देखते २ उस सिद्धको लेने आया, तब उन दोनोंने उस रथको प्रणाम किया ॥२२॥ तदनन्तर उस रथमें बैठकर वह सिद्ध अपने तेजसे दिशाओंमें उजाला करता हे मैथिल ! परेसे परे श्रीकृष्णके लोकको चला गया, जिसमें मनोहर निकुंज लीला है ॥२३॥ फिर वहाँसे वह ब्राह्मण सब पर्वतोंके देवता गोवर्द्धनको चला आया, फिर गोवर्द्धनकी परिक्रमा देकर प्रमाण करके अपने घरको चला आया, हे मैथिल ! गोवर्द्धनके प्रभावको वह जान गया ॥२४॥ यह मोक्षको देनेवाला विचित्र गोवर्द्धनखंड मैंने तुम्हारे सामने वर्णन किया, इसको जो मनुष्य सुने, वह प्रचंड पापी हो, तो भी यमराजके उग्रदण्डको कभी स्वप्न

॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंप्रवदतस्तस्यगोलोकाच्चमहारथः ॥१९॥ सहस्रादित्यसंकाशोहयायुतसमन्वितः ॥ २० ॥ सहस्रचक्रध्वनिभृल्लक्षपा-
र्षदमण्डितः ॥ मंजीरकिंकिणीजालीमनोहरतरोनृप॥२१॥ पश्यतस्तस्यविप्रस्यतमानेतुंसमागतः ॥ तमागतंरथं दिव्यंनेमतुर्विप्रनिर्जरौ ॥२२॥
ततःसमारुह्यरथंससिद्धोविरंजयन्मैथिलमण्डलंदिशाम् ॥ श्रीकृष्णलोकंप्रययौपरात्परंनिकुंजलीलाललितंमनोहरम्॥२३॥विप्रोपितस्मात्पुनरा-
गतोगिरिंगोवर्द्धनंसर्वगिरीन्द्रदैवतम् ॥ प्रदक्षिणीकृत्यपुनःप्रणम्यतंययौगृहंमैथिलतत्प्रभाववित् ॥२४॥ इदंमयातेकथितंप्रचण्डंसुमुक्तिदंश्रीगिरि-
राजखण्डम् ॥ श्रुत्वाजनःपाप्यपिनप्रचण्डंस्वप्नेपिपश्येद्यमसुग्रदण्डम्॥२५॥यःशृणोतिगिरिराजयशस्यंगोपराजनवकेलिरहस्यम् ॥ देवराजइव
राजतिलोकेसोत्रसमेतिनन्दराजइवशान्तिममुत्र ॥२६॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांगिरिराजखंडे श्रीनारदबहुलाश्वसंवादे श्रीगिरिराजप्रभावप्रस्तावर्णनेसिद्ध
मोक्षोनामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ इति श्रीगिरिराजखण्डःसमाप्तः ॥ ३ ॥ श्रीराधाकृष्णार्पणमस्तु ॥

में भी नहीं देखता है ॥२५॥ जो मनुष्य यशकी वृद्धि करनेवाली, श्रीगिरिराजकी इन गुप्त कथाओंको सुनता है, कैसी यह अद्भुत कथा है कि जिनमें गोपराज जो श्रीकृष्ण उनको नवीन गुप्त विहारोंको वर्णन किया गया है, इन कथाओंको सुननेवाला मनुष्य देवराज इन्द्रकी तरह राज्य करता है और श्रीव्रजेश्वर नन्दराजकी तरह परम शान्तिको प्राप्त करके इस संसार में अनन्त सुख भोगता है, और परलोकमें योगियोंको भी दुर्लभ जो मुक्ति पदार्थ उसको प्राप्त करता है, यह बड़ाही अद्भुत चरित्र है ॥ २६ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां गिरिराजखंडे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्वसंवादे गोवर्द्धन माहात्म्यं नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ इति श्रीगिरिराजखण्डः समाप्तः ॥ ३ ॥

अथ गर्गसंहितायां माधुर्य्यखण्डं भाषाटीकासहितं प्रारभ्यते

(चतुर्थखण्डम्)

श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ माधुर्य्य खण्डः प्रारभ्यते-वह वनमाली श्रीकृष्ण जिसकी अलसीके फूलकीसी कान्ति है, यमुनाके किनारे पर कदम्ब वृक्षोंके बीचमें विचरने वाला, नई नई गोप वधुओंमें विलास करनेका स्वभाव है जिसका, हमारे लिये मंगल करै ॥१॥ पीताम्बरकी फेंट बांधे, मोर मुकुटसे झुकी ग्रीवावाले बांईं ओर वेणु बजानेके लिये झुकाई है, ग्रीवा जिन्होंने, लकुट व बंशीको धारण करनेवाले चञ्चल जिनके कुण्डल हैं, शृंगार धारण किये व अति चतुर कृष्णका हम भजन करते हैं ॥२॥ बहुलाश्व राजा नारदजीसे पूछता है-कि, हे मुने ! श्रुति रूपादिक गोपियोंका पहिले प्राप्त हुये वरसे श्रीकृष्णके साथ कैसे कैसे मनोरथ पूर्ण हुआ ॥३॥ यह गोपाल कृष्णका परम अद्भुत चरित्र है, परम पवित्र है, हे महा-बुद्धे ! उसको कहिये, आप परावरके जानने वाले हो ॥ ४ ॥ तब नारदजी कहने लगे कि श्रुतिरूपा गोपियोंने व्रजमें गोपोंके सुन्दर कुलमें शेषशायी भगवान्‌के वरसे हे वैदेह !

श्रीगणेशायनमः॥श्रीसरस्वत्यैनमः॥अतसीकुसुमोपमेयकांतिर्यमुनाकूलकदम्बमध्यवर्ती॥ नवगोपवधूविलासशालीवनमालीवितनोतुमंगलानि ॥ १ ॥ परिकरीकृतपीतपटंहरिंशिखिकिरीटनतीकृतकंधरम् ॥ लकुटवेणुकरंचलकुण्डलंपटुतरंनटवेषधरंभजे ॥ २ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ श्रुतिरूपादयोगोप्योभूतपूर्वावरान्मुने ॥ कथंश्रीकृष्णचन्द्रेणजाताःपूर्णमनोरथाः ॥३॥ गोपालकृष्णचरितंपवित्रंपरमाद्भुतम् ॥ एतद्वदमहाबुद्धे त्वम्परावरवित्तमः ॥ ४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुतिरूपाश्चयागोप्योगोपानांसुकुलेव्रजे ॥ लेभिरेजन्मवैदेहशेषशायिवराच्छ्रुतात् ॥ ५ ॥ कमनीयंनन्दसूनुंवीक्ष्यवृन्दावनेचताः ॥ वृन्दावनेश्वरींवृन्दांभेजिरेतद्वरेच्छया ॥६॥ वृन्दादत्ताद्वरादाशुप्रसन्नोभगवान्हरिः ॥ नित्यंतासांगृहे यातिरासार्थंभक्तवत्सलः ॥७॥ एकदातुनिशीथिन्याव्यतीतेप्रहरद्वये॥रासार्थंभगवान्कृष्णःप्राप्तवांस्तद्गृहेनृप ॥८॥ तदाउत्कंठितागोप्यःकृत्वा तत्पूजनम्परम् ॥ पप्रच्छुःपरयाभक्त्यागिरामधुरयाप्रभुम् ॥ ९ ॥ गोप्यऊचुः ॥ कथंनचागतःशीघ्रंनोगृहान्वृजिनार्दन ॥ उत्कंठितानांगोपी-नांत्वयिचन्द्रेचकोरवत् ॥ १० ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ योयस्यचित्तेवसतिनसदूरेकदाचन ॥ खेसूर्यंकमलंभूमौदृष्ट्वंदंस्फुरतिप्रिया: ॥ ११ ॥

आकर जन्म लिया ॥५॥ मनोहर नन्दके पुत्रको देखकर वृन्दावनमें वे कृष्णकी प्राप्ति होनेके वरकी इच्छासे वृन्दावनकी ईश्वरी वृन्दा देवीकी आराधना करने लगी ॥६॥ वृन्दाके दिये वरसे जल्दी भगवान् प्रसन्न हो गये, तब भक्त वत्सल कृष्ण रास करनेके लिये नित्यही उनके घर जाया करते थे ॥७॥ एक दिन आधी रातके समय हे नृप ! भगवान् श्रीकृष्ण रास करनेके लिये उनके घरमें गये ॥ ८ ॥ तब उत्कण्ठित हुईं गोपियाँ पूजन करके परम भक्तिसे मीठी वाणीसे भगवान् से यह बोलीं ॥ ९ ॥ हे वृजिनार्दन ! आप जल्दी कैसे नहीं आये, उत्कण्ठित जो गोपियाँ हैं, वे आपकी इच्छा कैसे करती हैं-जैसे चकोर चन्द्रमाको देखा करते हैं ॥१०॥ तब भगवान् बोले--जो जिसके चित्तमें बसता है, वह उससे कभी दूर नहीं होता है, देखो सूर्य तो आकाशमें रहता है, और कमल सरोवरमें रहता है, किन्तु हे प्यारियो ! सूर्यको देखकर कमल खिलता है ॥ ११ ॥

भाण्डीर वनमें हमारे गुरु साक्षात् दुर्वासा मुनि आये हैं उनकी सेवा करनेके लिये में चला गया था, सो हे प्यारियो ! मैं अब आया हूँ ॥१२॥ गुरुही ब्रह्मा है, गुरुही विष्णु है, गुरुही महेश्वर है, गुरुही साक्षात् परब्रह्म है, उन श्रीगुरुके लिये नमस्कार है ॥१३॥ अज्ञान रूपी अन्धकारसे दृष्टि अन्धी हो रही थी उसको जिन गुरुने ज्ञानरूपी काजलकी सलाईसे खोल दी उस गुरुके लिये नमस्कार है ॥१४॥ अपने गुरुको भगवान्ही जाने, मनुष्यको चाहिये कभी अपमान न करे और मनुष्य बुद्धिसे उनका सेवन न करे, क्योंकि गुरुके शरीरमें सम्पूर्ण देवता रहते हैं ॥१५॥ इससे उनका पू न करके उनके चरणोंको प्रणाम करके हे प्यारियो ! आया हूँ, इस कारणसे म्हारे घर आनेमें मुझे देर लग गई है ॥१६॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे श्रीकृष्णका वचन सुनकर गोपियाँ विस्मित हो गईं, गर्दन झुकाकर हाथ जोड़ श्रीकृष्णसे बोलीं॥१७॥आप परिपूर्णतम भगवान् हैं, जो, आपके भी

भाण्डीरेमेगुरुःसाक्षाद्दुर्वासाभगवान्मुनिः ॥ आगतोद्यप्रियास्तस्यसेवार्थंगतवानहम्॥१२॥गुरुर्ब्रह्मागुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवोमहेश्वरः॥ गुरुःसाक्षात्पर-
ब्रह्मतस्मैश्रीगुरवेनमः ॥ १३ ॥ अज्ञानतिमिरांधस्यज्ञानांजनशलाकया ॥ चक्षुरुन्मीलितंयेनतस्मैश्रीगुरवेनमः ॥१४॥ स्वगुरुंमांविजानीया-
न्नावमन्येतकर्हिचित् ॥ नमर्त्यबुद्ध्यासेवेतसर्वदेवमयोगुरुः ॥१५॥ तस्मात्तत्पूजनंकृत्वानत्वातत्पादपंकजम्॥ आगतोहंविलंबेनभवतीनांगृहा-
न्प्रियाः ॥ १६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वातत्परमंवाक्यंगोप्यःसर्वास्तुविस्मिताः ॥ कृतांजलिपुटाऊचुःश्रीकृष्णंनम्रकंधराः ॥ १७ ॥
॥ गोप्यऊचुः ॥ परिपूर्णतमस्यापिदुर्वासास्तेगुरुस्मृतः ॥ अहोतद्दर्शनंकर्तुमनोनश्चोद्यतंप्रभो ॥ १८॥ अद्यदेवनिशीथिन्याव्यतीतेप्रहरद्वये ॥
कथंतद्दर्शनंभूयादस्माकम्परमेश्वर ॥१९॥ तथामध्येदीर्घनदीयमुनाप्रतिबन्धिका ॥ कथंतत्तरणंनावमृतेदेवभविष्यति ॥ २० ॥ श्रीभगवानु-
वाच ॥ अवश्यमेवगंतव्यंभवतीभिर्यदाप्रियाः ॥ यमुनामेत्यचैतद्वैवक्तव्यंमार्गहेतवे ॥२१॥ यदिकृष्णोबालयतिःसर्वदोषविवर्जितः ॥ तर्हिनो
देहिमार्गवैकालिन्दिसरितांवरे ॥ २२ ॥ इत्युक्तेवचनेकृष्णामार्गवोदास्यतिस्वतः ॥ सुखेनतेनव्रजतयूयंसर्वाव्रजांगनाः ॥ २३ ॥ श्रीनारद-
उवाच ॥ इतिश्रुत्वाथतद्वाक्यंपात्रैर्दीर्घैर्व्रजांगनाः ॥ षट्पंचाशत्तमान्भोगान्नीत्वासर्वाःपृथक्पृथक् ॥ २४ ॥

दुर्वासा गुरु हैं, तो उनका दर्शन हमको कराइये, हमारा भी मन उनके दर्शन करनेको उद्यत है ॥१८॥ हे देव ! आज कैसे रात व्यतीत हो, कैसे दो प्रहर निकले, हे परमेश्वर ! रात बीतने पर कैसे हमको दर्शन हों ॥१९॥ हे परमेश्वर ! बीचमें तो बड़ी भारी यमुना नदी पड़ती है, सो वह प्रतिबन्ध है, यह यमुना कहिये नाव बिना कैसे पार की जायगी ॥२०॥ तब भगवान् बोले—हे प्यारियो ! यदि अवश्यही तुमको जाना है, तो यमुनाजीको जाकर मार्गके लिये यह कहो ॥२१॥ कि हे यमुने ! नदियोंमें श्रेष्ठ ! जो श्रीकृष्ण सब दोष रहित बाल ब्रह्मचारी हैं तो, हे कालिंदी ! हमको रास्ता देदो ॥ २२ ॥ ऐसे जब तुम कहोगी तब अपने आप यमुनाजी तुमको मार्ग दे देंगी, तब सुखसे तुम सब व्रज सुन्दरी चली जाना ॥ २३ ॥ नारदजी कहते हैं कि, इस प्रकार उनका वाक्य सुनकर पृथक् पृथक् बड़े बड़े पात्रोंमे छप्पन भोगकी पृथक् पृथक्

सामग्रीको हाथमे लेकर यमुनाजीके पास पहुँची ॥ २४ ॥ यमुनाजीपर जाकर प्रणाम करके जैसा श्रीकृष्णने कहा था, वैसेही कहा, हे मैथिलेश्वर ! उसी
समय यमुनाजीने गोपियोंको मार्ग दे दिया ॥ २५ ॥ उस मार्गसे होकर सब गोपियाँ विस्मित होकर भाण्डीर वनमें पहुँची, वहाँ उन सबने दुर्वासाकी परिक्रमा
देकर ॥२६॥ नमस्कार करके ऋषिका दर्शन किया, फिर वे छप्पन भोगकी सामग्रीको मुनिके सामने रखकर बोलीं कि, हे मुने ! पहले मेरे इस अपूर्व अन्नका भोजन करो ऐसेही
सब गोपियाँ कहने लगीं ॥ २७ ॥ जब ऐसे सब गोपियाँ विवाद करने लगीं, उनकी भक्ति जानकर मुनि शार्दूल दुर्वासाने निर्मल वचन बोले कि ॥ २८ ॥ हे गोपियो ! मैं परम
हंस हूँ, निष्क्रिय हूँ, कर्म कुछ नहीं करता हूँ, क्योंकि मैं कृतकृत्य हूँ, इससे तुम्हीं अपने हाथोंसे अपने २ पदार्थोंको मेरे मुखमें डाल दो ॥२९॥ ऐसे कहकर जब दुर्वासाने मुख फाड़ा,
तब अति हर्षित होकर सब गोपियाँ अपने २ छप्पन भोगोंको दुर्वासाके मुखमें डालने लगीं ॥३०॥ सब गोपियाँ देखती जाती हैं, और डालती जाती हैं, करोड़ों भार सब भोगोंको

यमुनामेत्यहर्युक्तंजगुरानतकंधरा ॥ सद्यःकृष्णाददौमार्गंगोपीभ्योमैथिलेश्वर ॥२५॥ तेनगोप्योगताःसर्वाभाण्डीरंचातिविस्मिताः ॥ ततःप्रद-
क्षिणी कृत्यमुनिंदुर्वाससंचताः ॥२६॥ नत्वातद्दर्शनंचक्रुःपुरोधृत्वाऽशनम्बहु॥मेपूर्वंचापिमेपूर्वमन्नंभोज्यंत्वयामुने॥२७॥ एवंविवदमानानांगो-
पीनांभक्तिलक्षणम् ॥ विज्ञायमुनिशार्दूलःप्रोवाचविमलंवचः ॥२८॥ मुनिरुवाच ॥ गोप्यःपरमहंसोहंकृतकृत्योहिनिष्क्रियः ॥ तस्मान्मुखेमे
दातव्यंस्वंस्वंचाप्यशनंकरैः ॥ २९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंविदारितेतेनमुखेगोप्योतिहर्षिताः ॥ षट्पंचाशत्तमान्भोगान्स्वान्स्वान्सर्वाः-
समाक्षिपन्॥३०॥क्षिपंतीनांचगोपीनांपश्यंतीनांमुनीश्वरः॥जघासकोटिशोभारान्भोगान्सर्वान्क्षुधातुरः॥३१॥ विस्मितानांचगोपीनांपश्यंतीना
म्परस्परम् ॥ इत्थंशून्यानिपात्राणिबभूवुर्नृपसत्तम ॥३२॥ अथगोप्योमुनिंशांतंनत्वातम्भक्तवत्सलम्॥ विस्मिताःप्रणताःप्राहुःसर्वाःपूर्णमनो-
रथाः ॥३३॥ गोप्यऊचुः ॥ मुनेरागमनात्पूर्वंकृष्णोक्तवचसानदीम् ॥ तीर्त्वागतास्त्वत्समीपंदर्शनार्थंशुभेच्छया ॥३४॥ इतःकथं गमिष्यामः
सन्देहोयंमहानभूत् ॥ तद्विधेहिनमस्तुभ्यंयेनपंथालघुर्भवेत् ॥३५॥ मुनिरुवाच॥सुखेनातःप्रगन्तव्यंभवतीभिर्यदास्वतः ॥ यमुनामेत्यचैतद्वैन-
क्तव्यंमार्गहेतवे ॥ ३६ ॥ यदिदूर्वारसंपीत्वादुर्वासाः केवलंक्षितौ ॥ व्रतीनिरन्नोनिर्वारिर्वर्ततेपृथिवीतले ॥ ३७ ॥

भूखसे पीड़ित दुर्वासा मुनि खा गये ॥३१॥ विस्मित होकर परस्पर देखती हुई उन गोपियोंके वे सब पात्र खाली हो गये, हे नृपसत्तम ! ॥३२॥ इसके बाद पूर्ण हो गये हैं मनोरथ
जिनके ऐसी वे गोपियाँ विस्मित होकर भक्त वत्सल शान्त वृत्तिवाले मुनिको प्रणाम कर बोलीं ॥३३॥ कि हे महाराज ! अब हम यहाँसे कैसे जायें, क्योंकि पहिले तो हम कृष्णके
वचनसे नदीको पारकर आपके पास आपके दर्शनके लिये शुभकी इच्छासे आगई ॥३४॥ अब यहाँसे कैसे जायेंगी, यह हमको बड़ा संदेह है, इसका उपाय बताइये, हम आपको
प्रणाम करती हैं, जिससे सहजमें पहुँच जायें, यह मार्ग हमको हलका हो जाय ॥३५॥ तब मुनि बोले कि तुम सुखपूर्वक यहाँसे चली जाओ, यमुनाके पास जाकर मार्गके लिये
यह कहना ॥ ३६ ॥ कि जो दुर्वासा मुनि केवल दूबका रस पीकर व्रत करते हैं, और निराहार निर्जल पृथ्वी तलपर रहते हैं ॥ ३७ ॥

तो हे नदियोंमें श्रेष्ठ ! हे कालिंदी ! हमको तुम रास्ता दे दो, ऐसे जब तुम कहोगी तब अपने आप कालिंदी नदी तुमको रास्ता दे देगी ॥३८॥ नारदजी कहते हैं-मुनिका वचन सुनकर प्रणाम करके यमुनाजीपर आकर मुनिका वचन कहकर कालिंदीमें होकर अपने घरोंको चली आई ॥३९॥ तब आश्चर्यमें डूबी वे मंगल रूपा गोपियाँ श्रीकृष्णके पास आईं ॥४०॥ फिर रासमें सब गोप वधू मनमें उठे संदेहको एकान्तमें हरिको देखकर पूछने लगीं,कैसी हैं गोपियाँ कि पूर्ण हो गये हैं मनोरथ जिनके॥४१॥कि हे प्रभो ! दुर्वासाका दर्शन हमने किया, आप दोनोंके वचनसे हमको बड़ा संदेह हुआ है, उसको आप दूर करिये ॥ ४२ ॥ जैसे गुरु वैसेही शिष्य दोनों मिथ्यावादी हो, इसमें संदेह नहीं है, आप तो गोपियोंके जार हो, और बालकपनसेही रसिक हो ॥ ४३ ॥ फिर आप ब्रह्मचारी कैसे हो और हे दुःखको दूर करनेवाले ! जो मुनि बहुत खानेवाले हैं, वे दुर्वासा दूबकाही रस

तर्हिनोदेहिमार्गंवैकालिंदिसरितांवरे ॥ इत्युक्तेवचनेकृष्णामार्गंवोदास्यतिस्वतः ॥ ३८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वावचोगोप्योनत्वातं मुनिपुंगवम् ॥ यमुनामेत्यमुन्युक्तंचोक्त्वातीर्त्वानदींनृप ॥३९॥श्रीकृष्णपार्श्वमाजग्मुर्विस्मितामंगलायनाः॥४०॥ अथरासेगोपवध्वःसन्देहंमन-सोत्थितम् ॥ पप्रच्छुःश्रीहरिंवीक्ष्यरहःपूर्णमनोरथाः ॥ ४१ ॥ गोप्यऊचुः ॥ दुर्वाससोदर्शनंभोःकृतमस्माभिरग्रतः ॥ युवयोर्वाक्यतश्चात्रस-न्देहोयंप्रजायते ॥४२॥ यथागुरुस्तथाशिष्योमृषावादीनसंशयः॥जारस्त्वमसिगोपीनांरसिकोबाल्यतःप्रभो ॥४३॥ कथंबालयतिस्त्वंवैवदतद्-वृजिनार्दन ॥ कथंदूर्वारसंपीत्वादुर्वासाबहुभुङ्मुनिः ॥ ४४ ॥ नोजातएषसन्देहःपश्यतीनांव्रजेश्वर ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ निर्ममोनिरहंकारः समानःसर्वगःपरः ॥ सदावैषम्यरहितोनिर्गुणोहंनसंशयः ॥४५॥ तथापिभक्तान्भजतोभजेहंवैयथायथा ॥ तथैवसाधुर्ज्ञानीवैवैपम्यरहितःसदा ॥ ४६ ॥ नबुद्धिभेदंजनयेदज्ञानांकर्मसंगिनाम् ॥ जोषयेत्सर्वकर्माणिविद्वान्युक्तःसमाचरेत् ॥४७॥ यस्यसर्वेसमारंभाःकामसंकल्पवर्जिताः॥ ज्ञानाग्निदग्धकर्माणंतमाहुःपंडितंबुधाः ॥ ४८ ॥ निराशीर्यतचित्तात्मात्यक्तसर्वपरिग्रहः ॥ शारीरंकेवलंकर्मकुर्वन्नाप्नोतिकिल्बिषम् ॥ ४९ ॥

पीकर कैसे बैठे हैं ॥४४॥ हे व्रजेश्वर ! हमारे देखते देखते यह संदेह उठ खड़ा हुआ है, तब भगवान् बोले कि मेरे ममता नहीं है, अहंकार नहीं है, मैं समान हूँ, सब जगह हूँ, सबसे परे हूँ, सदाही विषमतासे रहित हूँ निर्गुण हूँ, इसमें संदेह नहीं है ॥४५॥ तो भी मैं भजन करनेवाले जो भक्त हैं उनको भजता हूँ, वैसे साधु जो ज्ञानी हैं, सदाही विषमतासे रहित हैं ॥४६॥ इसीसे जो कोई संसारमें कर्मोंमें आसक्त हो रहे हैं, उनकी बुद्धिमें भेद नहीं डाले, उनको कर्मकाही सेवन कराये, और जो ज्ञानी आप विद्वान् हो, सब कर्मोंका आचरण करता हुआ सब प्राणियोंको कर्महीका सेवन कराये ॥ ४७ ॥ जिसके सब आरम्भ कामनाके संकल्पसे वर्जित हों और जिसने ज्ञानकी अग्निसे सब कर्म जला दिये हों, उसीको बुधजन पंडित कहते हैं ॥ ४८ ॥ जो कभी मनोरथ नहीं करता है, रोकी है, बुद्धि और चित्त जिसने और संग्रह कुछ नहीं करता है,

जो केवल शरीर निर्वाहके लिये ही केवल कर्म करता है तो वह कर्मोंको करनेवाला है, किसी शुभाशुभके फल पुण्य अथवा पापको प्राप्त नहीं होता है ॥४९॥ इस लोकमें ज्ञानके बराबर और कोई पवित्र कर्म नहीं है सो योगके अभ्यासको करते-करते अपने आत्माहीमें ज्ञानको प्राप्त हो जाता है ॥५०॥ आसक्तिको छोड़कर ब्रह्मके अर्पण कर जो कर्मोंको करता है, वह किये कर्मके पापसे लिप्त नहीं होता है, जैसे कमलका फूल जलसे लिप्त नहीं होता है॥५१॥इससे दुर्वासा ऋषि तो तुम्हारा हित करनेके लिये, बहुत खानेवाले हो गये उनकी भोजनकी कुछ इच्छा नहीं है, दूबकाही रस पीते हैं, वह भी प्रमाणसे॥५२॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे श्रीकृष्णका वचन सुनकर वे श्रुतिरूपा गोपियाँ संदेहरहित हो गईं और हे मैथिलेश्वर ! वे ज्ञानमयी हो गईं ॥५३॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्यखंडे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्व संवादे श्रुति रूपोपाख्यानं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ नारदजी कहते

नहिज्ञानेनसदृशंपवित्रमिहविद्यते ॥ तत्स्वयंयोगसंसिद्धःकालेनात्मनिविन्दति॥५०॥ब्रह्मण्याधायकर्माणिसंगंत्यक्त्वाकरोतियः॥लिप्यतेनसपापेनपद्मपत्रमिवांभसा ॥५१॥ तस्मान्मुनिस्तुदुर्वासाबहुभुक्त्वद्धितेरतः ॥ नतस्यभोजनेच्छास्याद्दूर्वारसमिताशनः ॥५२॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वावचोगोप्यःसर्वास्ताश्छिन्नसंशयाः॥ श्रुतिरूपाज्ञानमय्योबभूवुर्मैथिलेश्वर ॥५३॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांमाधुर्यखण्डेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादेश्रुतिरूपोपाख्यानंनामप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ गोपीनामृषिरूपाणामाख्यानंशृणुमैथिल ॥ सर्वपापहरम्पुण्यंकृष्णभक्तिविवर्धनम् ॥१॥ वंगेषुमंगलोनामगोपआसीन्महामनाः ॥ लक्ष्मीवाञ्छ्रुतसम्पन्नोनवलक्षगवाम्पतिः ॥२॥ भार्याःपंचसहस्राणिबभूवुस्तस्यमैथिल ॥ कदाचिद्दैवयोगेनधनंसर्वंक्षयंगतम् ॥ ३ ॥ चौरैर्नीतास्तस्यगावःकाश्चिद्राज्ञाहृताबलात् ॥ एवंदैन्येचसंप्राप्तेदुःखितोमंगलोऽभवत् ॥ ४ ॥ तदाश्रीरामस्यवराद्दण्डकारण्यवासिनः ॥ ऋषयःस्त्रीत्वमापन्नाबभूवुस्तस्यकन्यकाः ॥ ५ ॥ दृष्ट्वाकन्यासमूहंसदुःखीगोपोथमंगलः ॥ उवाचचैतद्दुःखाढ्यआधिव्याधिसमाकुलः ॥ ६ ॥ मंगलउवाच ॥ किंकरोमिक्वगच्छामिकोमेदुःखंव्यपोहति ॥ श्रीर्नभूतिर्नाभिजनंनबलंमेस्तिसाम्प्रतम् ॥ ७ ॥

हैं--हे राजन् ! श्रुति रूपा जो गोपियाँ हैं, उनका आख्यान सुनना सब पापोंको हरनेवाला और कृष्णकी भक्तिको बढ़ानेवाला है ॥१॥ एक वंगदेशमें मंगल नामका गोप हुआ है, वह लक्ष्मीवान् था, श्रुति सम्पन्न था और नौ लाख गौओंका स्वामी था॥२॥ हे मैथिल ! उसके पांच हजार स्त्रियाँ थीं, उसका किसी समय दैवयोगसे सब धन नष्ट हो गया ॥३॥ उसकी गौओंको कुछ तो चोर ले गये, कुछ राजाने बल पूर्वक हर ली, ऐसे, वह मंगल दीनताको प्राप्त होनेसे दुःखी हो गया ॥४॥ तब रामचन्द्रके वरसे दंडकारण्यवासी मुनि स्त्री भाव को प्राप्त हो गये थे, वे मंगल गोपकी कन्याऐं हुईं ॥५॥ कन्याओंके समूहको देखकर मंगल गोप दुःखी हो गया, और उन्हीं कन्याओंके दुःखकी आधि व्याधिसे ग्रस्त होकर यह बोला ॥६॥ तब मंगल बोला कि मैं क्या करूँ कहाँ जाऊँ मेरे दुःखको कौन दूर करे, न तो मेरे पास माया(लक्ष्मी)है, न मेरे वैभव है, न मेरे भाईबन्धु हैं न मेरे बल है ॥७॥

धन विना हा ! इन कन्याओंका विवाह कैसे होगा, देखो जहाँ भोजनमें भी संदेह रहता है, वहाँ धनकी आशा कैसी ॥८॥ देखो इस दीनतामें काक तालीय न्याय होगया जैसे एक तालका फल पककर गिर ही रहा था, इतनेहीमें एक कौआ उसकेनीचे होकर निकला, उसी समय वह फल उसके ऊपर गिर पड़ा, जैसें वह कौआ मर गया, ऐसेही मेरें दरिद्र तो आनेवाला था ही किन्तु इन कन्याओंके शिर पड़ा, अब मैं किसी राजाको जो धनी बली होगा ॥९॥ उसको ये अपनी कन्याऐं दे दूंगा, तो कन्याओंको तो सुख होगा, नारदजी कहते हैं कि, ऐसे उन कन्याओंकी निन्दा करके स्थिर हो गया, तभी मथुरासे एक गोप आया ॥१०॥ वह तीर्थयात्राको जानेवालो बड़ा वृद्ध महा बुद्धिमान् जय नामका गोप था, उसके मुखसे नन्दराजका अद्भुत वैभव सुना ॥११॥ दीनतासे पीड़ित उस मंगलने नन्दराजके महलोंमें सुन्दर नेत्रवाली वे कन्याऐं सब भेज दीं ॥१२॥ वे कन्याऐं नंदराजके घरमें रत्नोंके गहनोंसे भूषित, गौओंका गोबर लानेवाली हुईं ॥१३॥ पूर्वजन्मका स्मरण जिनको ऐसी वे सुन्दर श्रीकृष्णको देखकर कामदेवके वश हुईं, तब तो श्रीकृष्णकी

धनंविनाकथंचासांविवाहोहाभविष्यति ॥ भोजनेयत्रसंदेहोधनाशातत्रकीदृशी ॥८॥ सतिदैन्येकन्यकाःस्युःकाकतालीयवद्गृहे ॥ तस्मात्कस्यापिराज्ञस्तुधनिनोबलिनस्त्वहम् ॥ ९ ॥ दास्याम्येताःकन्यकाश्चकन्यानांसौख्यहेतवे ॥ श्रीनारदउवाच ॥ कदर्थीकृत्यताः कन्याएवंबुद्धयास्थितोतोभवत् ॥ तदैवमाथुराद्देशाद्गोपश्चैकःसमागतः ॥१०॥ तीर्थयायीजयोनामवृद्धोबुद्धिमतांवरः ॥ तन्मुखान्नन्दराजस्यश्रुतंवैभवमद्भुतम् ॥११॥ नन्दराजस्यवलयेमंगलोदैन्यपीडितः ॥ विचिन्त्यप्रेषयामासकन्यकाश्चारुलोचनाः ॥१२॥ तानन्दराजस्यगृहेकन्यकारत्नभूषिताः गवांगोमयहारिण्योबभूवुर्गोव्रजेषुच॥१३॥ श्रीकृष्णंसुन्दरंदृष्ट्वाकन्याजातिस्मराश्चताः ॥ कालिन्दीसेवनंचक्रुर्नित्यंश्रीकृष्णहेतवे ॥१४॥ अथैकदाश्यामलांगीकालिन्दीदीर्घलोचना ॥ ताभ्यःस्वदर्शनंदत्त्वावरंदातुंसमुद्यता ॥ १५ ॥ तावन्निरेव्रजेशस्यपुत्रोभूयात्पतिश्चनः ॥ तथास्तुचोक्त्वाकालिन्दीतत्रैवांतरधीयत ॥ १६ ॥ ताःप्राप्तावृन्दकारण्येकार्तिक्यांरासमण्डले ॥ ताभिःसार्द्धंहरीरेमेसुरीभिःसुराडिव ॥१७॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखण्डे श्रीनारदबहुलाश्वसंवादे ऋषिरूपोपाख्यानं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ मैथिलीनांगोपिकानामाख्यानं शृणुमैथिल ॥ दशाश्वमेधतीर्थस्यफलदंभक्तिवर्धनम् ॥ १ ॥

प्राप्तिके लिये कालिंदीका नित्य सेवन करने लगीं॥१४॥ इसके बाद एक दिन कमलसे नेत्र जिसके ऐसी श्याम सुन्दरी बड़े नेत्रोंवाली कालिंदीने उनको दर्शन दिया, और वर देनेको उद्यत हुई ॥१५॥ तब उन गोपियोंने यही वर मांगा कि, नंदराजके पुत्र श्रीकृष्ण हमारे पति हों,तब कालिंदीजी बोलीं "ऐसाही होगा" जैसा तुम चाहती हो, ऐसे कहकर अन्तर्धान हो गईं ॥१६॥ वे गोपियाँ वृन्दावनके रासमण्डलमें कार्तिककी पूर्णमासीको प्राप्त हुईं,उनके संग भगवान्‌ने रमण किया, जैसे अप्सराओंके साथ इन्द्र रमण करता है ॥१७॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां माधुर्यखंडे भाषाटीकायामृषिरूपोपाख्यानं नामद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ नारदजी कहते हैं, हे मैथिल ! अब तुम मैथिल देशवासिनी जो गोपियाँ हुईं हैं, इनका उपाख्यान सुनो, इसके सुननेसे दश अश्वमेध तीर्थका फल होता है, और भक्ति बढ़ती हैं ॥ १ ॥

(१) काकागमनमिव तालपतनमिव काकतालं काकतालमिव काकतालीयम्-समासाच्च तद्विषयादिति छः प्रत्ययः तेन काकतालीयमिति सिद्धम् ॥

श्रीरामजीके वरसे जो नौ नन्दोंके घरोंमें हुईं, वे मनोहर नन्द सुतको देखकर मोहित हो गईं॥२॥उन्होंने मार्गशीर्षके महीनेमें कात्यायनी देवीका व्रत किया और उसीकी मृतिकाकी प्रतिमा बनाकर षोडशोपचारसे पूजा करने लगीं ॥३॥ अरुणोदय वेलामें नित्य उठकर यमुना जलमें स्नान कर करके इकट्ठी होकर भगवान्‌के गुण गाती नित्य यमुनाजी पर आती थीं ॥४॥ एक समय वे सब व्रजांगनाऐं तीर पर अपने वस्त्रोंको रखकर यमुनामें हाथोंसे जलको आपसमें सींचती विहार करने लगीं ॥५॥ तब प्रातःकालके समय भगवान् श्रीकृष्ण आ गये, उनके वस्त्रोंको लेकर कदम्ब पर चढ़ गये और चोरकी तरह चुप होकर बैठ गये ॥६॥ वे गोप कन्याऐं अपने वस्त्रोंको नहीं देखकर विस्मित हो गईं, वस्त्र लिये कदम्ब पर चढ़े श्रीकृष्णको देखकर हँसने लगीं और लज्जित हो गईं ॥७॥ तब वृक्षपर बैठे श्रीकृष्ण उन गोपियोंसे बोले कि यदि तुम वस्त्रोंको लेना चाहती हो, तो तुम यहाँ कदम्बके नीचे

श्रीरामस्यवराज्जातानवनन्दगृहेषुयाः ॥ कमनीयंनन्दसूनुंदृष्ट्वातामोहमास्थिताः ॥२॥ मार्गशीर्षेशुभेमासिचक्रुःकात्यायनीव्रतम् ॥ उपचारैः षोडषभिःकृत्वादेवींमहीमयीम् ॥३॥ अरुणोदयवेलायांस्नाताःश्रीयमुनाजले ॥ नित्यंसमेताआजग्मुर्गायन्त्योभगवद्गुणान् ॥४॥ एकदाताः स्ववस्त्राणितीरेन्यस्यव्रजांगनाः ॥ विजह्रुर्यमुनातोयेकराभ्यांसिंचतीर्मिथः ॥५॥ तासांवासांसिसंनीत्वाभगवान्प्रातरागतः ॥ त्वरंकदम्बमारुह्य चौरवन्मौनमास्थितः ॥ ६ ॥ तानवीक्ष्यस्ववासांसिविस्मितागोपकन्यकाः ॥ नीपस्थितंविलोक्याथसलज्जाजहसुर्नृप ॥ ७ ॥ प्रतीच्छंत्यःस्व वासांसिसर्वाआगत्यचात्रवै ॥ अन्यथानहिदास्यामिवृक्षात्कृष्णउवाचह ॥८॥ राजंत्यस्ताःशीतजलेहसंत्यः प्राहुरानताः ॥९॥ गोप्यऊचुः॥ हेनंदनंदनमनोहरगोपरत्नगोपालवंशनवहंसमहार्तिहारिन्॥ श्रीश्यामसुन्दरतवोदितमद्यवाक्यंकुर्मःकथंविवसनाःकिलतेपिदास्यः ॥१०॥ गोपांगनावसनमुण्नवनीतहारीजातोव्रजेऽतिरसिकःकिलनिर्भयोसि ॥ वासांसिदेहिनहिचेन्मथुराधिपायवक्ष्यामहेऽनयमतीवकृतंत्वयात्र ॥ ११ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ दास्योममैवयदिसुन्दरमन्दहासाइत्थंतुवैत्यकिलचात्रकदम्बमूले ॥ नोचेत्समस्तवसनानिनयामिगेहांस्तस्मात्करिष्यथ ममैववचोविलंबात् ॥ १२ ॥

आकर अपने अपने वस्त्रोंको ले जाओ और तरह नहीं दूँगा ॥ ८ ॥ तब वे शीतल जलमें खड़ी हँसकर हाथ जोड़कर बोलीं ॥ ९ ॥ हे नन्द नन्दन ! हे मनोहर ! हे गोपरत्न ! हे गोपाल वंशके नवीन हंस ! हे बड़ी पीड़ाको हरनेवाले ! हे श्याम सुन्दर ! हे प्रभो ! हम आपकी दासियाँ हैं, जो आप कहोगे वही करेंगी, पर नंगी हम जलमेंसे कैसे निकलें ॥१०॥ हे गोपियोंके वस्त्रोंको हरनेवाले ! हे माखनके चुरानेवाले ! हे व्रजके अति रसिक ! तुम बड़े निर्भय हो, हमारे वस्त्र देदो, यदि नहीं दोगे, तो हम कंससे जाकर कह देंगी, तुमतो अब बड़ाही अन्याय करते हो ॥११॥ तब तो भगवान् बोले-हे सुन्दर मन्द हँसनेवालियो ! यदि तुम मेरी दासी हो, तो इस कदम्बके नीचे आकर अपने-अपने वस्त्रोंको लेजाओ, यदि तुम देर लगाओगी तो तुम्हारे वस्त्रोंको लेकर मैं घर चला जाऊँगा इससे तुम कहनेको जल्दी करो ॥ १२ ॥

नारदजी कहते हैं-तब बहुत कांपती हुई गोपियाँ लज्जाके कारण अति नीची होकर दोनों हाथोंसे अपनी-अपनी योनिको ढंककर बाहिर निकलीं॥१३॥तब श्रीकृष्णने वस्त्र दे दिये, उनको पहिन कर व्रजांगनाऐं मोहित होकर खड़ी रहीं, श्रीकृष्णमें लजाई हुई चितवनसे देखने लगीं ॥१४॥ तब परम प्रेमका लक्षण उनका अभिप्राय जानकर सब ओर देखते मन्द मुस्कान करते भगवान् बोले ॥ १५ ॥ श्रीकृष्ण बोले-तुमने मार्गशीर्षके महीनेमें कात्यायनीका व्रत किया है, वह मेरे लिये किया है, सो सफल होगा, इसमें सन्देह नहीं है ॥१६॥ परसोंके दिन कालिंदीके तीर पर मनोहर स्थानमें तुम्हारे संगमें रास करूँगा, इस रासमें तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा ॥ १७ ॥ ऐसा कहकर परिपूर्णतम हरि चले गये तब सब गोपियाँ प्रसन्न होकर मन्द-मन्द हँसती अपने-अपने घरको चली गईं ॥१८॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांमाधुर्यखण्डे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्व संवादे मैथिल्युपाख्यानं नाम

॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदातानिर्गताःसर्वाजलाद्व्रोप्योतिवेपिताः ॥ आनतायोनिमाच्छाद्यपाणिभ्यांशीतकर्शिताः ॥ १३ ॥ कृष्णदत्तानि वासांसिदधुःसर्वाव्रजांगनाः ॥ मोहितास्थितास्तत्रकृष्णेलज्जायितेक्षणाः ॥१४॥ ज्ञात्वातासामभिप्रायंपरमप्रेमलक्षणम् ॥ आहमन्दस्मितः कृष्णःसमंताद्वीक्ष्यतावचः ॥ १५ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ भवतीभिर्मार्गशीर्षैकृतंकात्यायनीव्रतम् ॥ मदर्थंतच्चसफलंभविष्यतिनसंशयः ॥ १६ ॥ परश्वोहनिचाटव्यांकृष्णातीरेमनोहरे ॥ युष्माभिश्चकरिष्यामिरासंपूर्णमनोरथम् ॥ १७ ॥ इत्युक्त्वाथगतेकृष्णेपरिपूर्णतमेहरौ ॥ प्राप्तानन्दामंदहासागोप्यःसर्वागृहान्ययुः ॥ १८ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेमैथिल्युपाख्यानंनामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ कौशलानांगोपिकानांवर्णनंशृणुमैथिल ॥ सर्वपापहरम्पुण्यंश्रीकृष्णचरितामृतम् ॥ १ ॥ नवोपनन्दगेहेषुजातारामवराद्व्रजे ॥ परिणीतागोपजनैरत्नभूषणभूषिताः ॥२॥ पूर्णचन्द्रप्रतीकाशानवयौवनसंयुताः ॥ पद्मिन्योहंसगमनाःपद्मपत्रविलोचनाः ॥ ३ ॥ जारधर्मेणसुस्नेहंसुदृढंसर्वतोधिकम् ॥ चक्रुःकृष्णेनन्दसुतेकमनीयेमहात्मनि ॥४॥ ताभिःसार्द्धंसदाहास्यंव्रजवीथीषुमाधवः ॥ स्मितैःपीतपटादानैःकर्षणैःसचकारह ॥ ५ ॥

तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ नारदजी कहते हैं , अब कौशल देश वासिनी गोपियोंका वर्णन है, हे मैथिल ! तुम सुनो, यह श्रीकृष्णका चरितामृत मनुष्योंके सब पापोंको हरनेवाला पवित्र है ॥१॥ कौशल देशकी रहनेवाली स्त्रियाँ थीं वे सब श्रीरामके वरसे नो उपनन्दोंके घरोंमें उत्पन्न हुई, वे रत्नोंके गहनोंसे भूषित थीं, उनके साथ गोप जनोंने विवाह कर लिये ॥ २ ॥ पूर्ण चन्द्रमाका सा जिनका तेज, नया जिनका यौवन, पद्मिनी नायिकाओं जैसे लक्षणवाली, कमलसे नेत्र, हंसिनीकीसी जिनकी चाल, वे सब व्रजमें विवाह दी गई ॥३॥ उन्होंने जार धर्मसे नन्दके पुत्र श्रीकृष्णमें दृढ़ स्नेह किया, जो अति मनोहर और महात्मा थे ॥ ४ ॥ उनके संग व्रजकी गलियोंमें सदाही श्रीकृष्ण हँसी किया करते थे, मन्द मुस्कान पीताम्बरको उतार लेना और परस्पर खींचा तानी हुआ करती थी ॥ ५ ॥

जब ये दही बेचनेको जाती तब दही लो, दही लो यह तो भूल जाती और कृष्ण लो कृष्ण लो ऐसे कहतीं, श्रीकृष्णमें जिनका प्रेम ऐसी ये गोपियां कुञ्जमंडलमें घूमा करतीं ॥६॥ आकाशमें, पवनमें जलमें, पृथ्वीमें, तेजमें, दिशाओंमें, वृक्षोंमें और जनोंके समूहमें इनको श्रीकृष्णही दीखते हैं ॥७॥ प्रेमलक्षणसे संयुक्त हुई, श्रीकृष्णने हरा है मन जिनका ऐसी वे गोपियाँ सात्विक भावोंसे युक्त हो गई ॥८॥ प्रेमसे परम हंसोंकी पदवीको प्राप्त हो गई हैं, कृष्णका आनन्द है जिनको प्रकाशवाली व्रजकी गालियोंमें ॥९॥ जड़ अजड़को नहीं जानती उन्मत्त पिशाच लगेकी तरह कभी बोलती हैं, कभी नहीं बोलती हैं, गई है लाज और व्यथा जिनकी ऐसी होकर रहती थीं ॥१०॥ ऐसे कृतार्थताको प्राप्त हुई, तन्मय हुई ये गोपियाँ बलपूर्वक पकड़कर श्रीकृष्णके मुखका चुम्बन करती थीं ॥११॥ हे राजन्! उनके तपका मैं क्या वर्णन करूँ, जो इन्द्रियादिकसे लोकके व्यवहार लोकके मार्ग सबको छोड़कर परिपूर्ण ब्रह्म वासुदेवमें प्रेम करने लगीं ॥ १२ ॥ जो रासके रंगमें श्रीकृष्णके कंधोंपर अपनी भुजा धरकर प्रेमसे खिन्न हैं चित्त जिनका ऐसी उन गोपियोंने श्रीकृष्णको अत्यन्तवशमें कर

दधिविक्रयार्थयान्त्यस्ताःकृष्णकृष्णेतिचाब्रुवन्॥कृष्णेहिप्रेमसंसक्ताभ्रमंत्यःकुंजमंडले॥६॥ खेवायौचाग्निजलयोर्मह्यांज्योतिर्दिशासुच॥ द्रुमेषु जनवृन्देषुतासांकृष्णोहिलक्ष्यते ॥७॥ प्रेमलक्षणसंयुक्ताःश्रीकृष्णहृतमानसाः ॥ अष्टभिःसात्त्विकैर्भावैःसम्पन्नास्ताश्चयोषितः ॥८॥ प्रेम्णा परमहंसानांपदवींसमुपागताः॥कृष्णानन्दाःप्रभावन्त्योव्रजवीथीषुतानृप॥९॥ जडाजडंनजानंत्योजडोन्मत्तपिशाचवत्॥ अब्रुवंत्योब्रुवंत्योवा गतलज्जागतव्यथाः ॥१०॥ एवंकृतार्थतांप्राप्तास्तन्मयायाश्चगोपिकाः ॥ बलादाकृष्यकृष्णस्यचुचुंबुर्मुखपंकजम्॥११॥तासांतपःकिंकथयामि राजन्पूर्णेपरेब्रह्मणिवासुदेवे ॥ याश्चक्रिरेप्रेमहृदिंद्रियाद्यैर्विसृज्यलोकव्यवहारमार्गम् ॥ १२ ॥ यारासरंगेविनिधायबाहुंकृष्णांसयोःप्रेमविभिन्नचित्ताः॥चक्रुर्वशेकृष्णमलंतपस्तद्वक्तुंनशक्तोवदनैःफणीन्द्रः॥१३॥योगेनसांख्येनशुभेनकर्मणान्यायादिवैशेषिकतत्त्ववित्तमैः ॥ यत्प्राप्यतेतच्च पदंविदेहराट्संप्राप्यतेकेवलभक्तिभावतः ॥ १४ ॥ भक्त्यैववश्योहरिरादिदेवःसदाप्रमाणंकिलचात्रगोप्यः ॥ सांख्यंचयोगंनकृतंकदापिप्रेम्णैव यस्यप्रकृतिंगताःस्युः ॥१५॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखण्डेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादकौशलोपाख्याननामचतुर्थोऽध्यायः॥४॥ श्रीनारदउवाच ॥ अयोध्यावासिनीनांतुगोपीनांवर्णनंशृणु ॥ चतुष्पदार्थदंसाक्षात्कृष्णप्राप्तिकरंपरम् ॥ १॥ सिन्धुदेशेषुनगरीचंपकानाममैथिल ॥ बभूवतस्यांविमलोराजाधर्मपरायणः ॥ २ ॥

लिया, इनका तप हजार मुखसे शेषजीभी वर्णन नहीं कर सकते हैं ॥१३॥ योगसांख्यसे और शुभकर्मसे, न्यायसे आदि जो वैशेषिक तत्त्वके वेत्ता हैं, उनसे जो पद प्राप्त किया जाता है, हे विदेह राज ! वह पद केवल भक्तिभावसे प्राप्त होता है ॥१४॥ आदि देव हरि तो भक्तिहीसे वशीभूत होते हैं, इनमें गोपियाँही सदा प्रमाण हैं, जिन्होंने न कभी सांख्य पढ़ा, न जिन्होंने योगका अभ्यास किया, ऐसी ये गोपियाँ देखो एक केवल भक्तिहीसे उसके रूपको प्राप्त हो गई ॥१५॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्य्य खण्डे भाषाटीकायां कौशलोपाख्यानं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥ नारदजी कहते हैं-अब अयोध्यावासियोंका वर्णन सुनो, जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्षको देनेवाला और श्रीकृष्णकी प्राप्तिको करानेवाला है ॥१॥ सिन्धु देशमें एक चम्पक नामकी नगरी थी, हे मैथिल ! उसमें बड़ा धर्मात्मा विमल नामका राजा था, जो अपने धर्ममें तत्पर था ॥ २ ॥

कुबेरका सा तो उसके कोष (खजाना) था, सिंहकासा बड़ा मन था, विष्णुका भक्त था, साक्षात् प्रह्लादके समान था और शांत जिसका चित्त था ॥३॥ उस राजाके छः हजार स्त्रियाँ थीं, वे रूपवती और कमलसे नेत्र जिनके ऐसी थीं, किन्तु वे सब वन्ध्या थीं ॥४॥ कौनसे पुण्यसे मेरे शुभ पुत्र हो, हे नृप ! इस चिन्ताको करते करते राजाको बहुत वर्ष व्यतीत हो गये ॥५॥ एक समय उसके घर याज्ञवल्क्य मुनींद्र चले आये, उनका पूजन करके प्रणाम कर राजा उनके सामने बैठ गया ॥६॥ चिन्तामें व्याकुल राजाको देखकर सर्वज्ञ महामुनि याज्ञवल्क्य बड़े शान्त, उत्तम, उस राजासे बोले ॥ ७ ॥ राजा तुम कैसे दुर्बल हो रहे हो ? कौनसी चिन्ता तुम्हारे चित्तमें है ? तुम्हारे सातों अंगोंमें तो इस समय कुशल दीखता है ॥८॥ तब राजा विमल बोला-हे ब्रह्मन् ! आप अपने तपोबल और दिव्य चक्षुसे सब कुछ जानते हो, तो भी मैं आपके वाक्यके गौरवसे कहता

कुबेरइवकोशाढ्योमनस्वीमृगराडिव ॥ विष्णुभक्तःप्रशांतात्माप्रह्लादइवमूर्तिमान् ॥३॥ भार्याणांषट्सहस्राणिबभूवुस्तस्यभूपतेः ॥ रूपवत्यः कंजनेत्रावंध्यात्वंताःसमागताः ॥४॥ अपत्यंकेनपुण्येनभूयान्मेत्रशुभंनृप ॥ एवंचिन्तयतस्तस्यबह्वोवत्सरागताः ॥५॥ एकदायाज्ञवल्क्यस्तु मुनीन्द्रस्तमुपागतः ॥ तंनत्वाभ्यर्च्यविधिवन्नृपस्तत्संमुखेस्थितः ॥६॥ चिंताकुलंनृपंवीक्ष्ययाज्ञवल्क्योमहामुनिः ॥सर्वज्ञःसर्वविच्छांतःप्रत्यु-वाचनृपोत्तमम् ॥ ७ ॥ याज्ञवल्क्यउवाच ॥ राजन्कृशोसिकस्मात्त्वंकाचिंतातेहृदिस्थिता ॥ सप्तस्वंगेषुकुशलंदृश्यतेसांप्रतंतव ॥ ८ ॥ विमलउवाच ॥ ब्रह्मंस्त्वंकिंनजानासितपसादिव्यचक्षुषा ॥ तथाप्यहंवदिष्यामिभवतोवाक्यगौरवात् ॥ ९ ॥ अनपत्येनदुःखेनव्याप्तोऽहंमु-निसत्तम ॥ किंकरोमितपोदानंवदयेनभवेत्प्रजा ॥ १० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वायाज्ञवल्क्योध्यानस्तिमितलोचनः ॥ दीर्घंदध्यौमुनि-श्रेष्ठोभूतंभव्यंविचिंतयन् ॥ ११ ॥ याज्ञवल्क्यउवाच ॥ अस्मिञ्जन्मनिराजेन्द्रपुत्रोनैवचनैवच ॥ पुत्र्यस्तवभविष्यंतिकोटिशोनृपसत्तम ॥ ॥ १२ ॥ राजोवाच ॥ पुत्रंविनापूर्वऋणान्नकोपिप्रमुच्यतेभूमितलेमुनीन्द्र ॥ सदाह्यपुत्रस्यगृहव्यथास्यात्परंत्विहामुत्रसुखंनकिंचित् ॥ १३ ॥ याज्ञवल्क्यउवाच ॥ माखेदंकुरुराजेन्द्रपुत्र्योदेयास्त्वयाखलु ॥ श्रीकृष्णायभविष्यायपरंदायादिकैःसह ॥१४॥ तेनैवकर्मणात्वंवैदेवर्षिपितृ-णामृणात् ॥ विमुक्तोनृपशार्दूलपरंमोक्षमवाप्स्यसि ॥ १५ ॥

हूँ ॥ ९ ॥ मेरे पुत्र नहीं है इससे हे मुनिसत्तम ! मुझको दुःख है, सो मैं क्या करूँ, ऐसा तप, दान; जप, यज्ञ, कुछ बतलाओ, जिससे मेरे संतान हो, वह करूँ ॥ १० ॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे याज्ञवल्क्य सुनकर ध्यान करने लगे, नेत्र बंदकर बहुत देर तक मुनीश्वर भूतभविष्यको सोचने लगे फिर राजासे बोले ॥११॥ हे राजन् ! पुत्र तो तुम्हारे इस जन्ममें नहीं होगा, नहीं होगा, परन्तु हे नृपसत्तम ! पुत्रियाँ तुम्हारे करोड़ों होंगी ॥१२॥ तब राजा बोला कि, हे मुनींद्र ! पुत्रके विना तो कोई पृथ्वीपर पितरोंके ऋणसे छूटता नहीं है बिन पुत्रवालेके घरमें तो सदाही दुःख रहता है और परलोकमें भी कुछ सुख नहीं ॥१३॥ तब फिर याज्ञवल्क्य बोले-राजा तुम शोच मत करो, तुम सब पुत्रियोंको आगे होनेवाले श्रीकृष्णके लिये बहुतसे दहेजके साथ दे देना ॥१४॥ उसी कर्मसे तुम देव ऋषि और पितरोंके ऋणसे छूट जाओगे, और हे नृप शार्दूल ! इसीसे तुम्हारी मुक्ति हो जायगी ॥१५॥

नारदजी कहते हैं, ऐसे याज्ञवल्क्य मुनिका वचन सुनकर राजा बड़ा प्रसन्न हुआ, फिर अपने मनका संदेह महामुनि याज्ञवल्क्यसे पूछने लगा ॥१६॥ कि मुनिजी कौनसे कुलमें कौनसे देशमें श्रीहरि स्वयम् जन्म लेंगे, उनका कैसा रूप होगा, कैसा वर्ण होगा, और कितने वर्षोंमें जन्म होगा ॥१७॥ तब याज्ञवल्क्य बोले कि, हे महाभुज ! इस द्वापरके जब तुम्हारे राज्यसे एक सौ पन्द्रह वर्ष बाकी रहेंगे ॥१८॥ उसी वर्षमें यदुकुलमें मथुरापुरी यदुपुरमें भाद्रपद कृष्ण अष्टमी बुधवारको रोहिणी नक्षत्र, हर्षण नामक योग, ववकरणमें ॥१९॥ अँधेरी आधी रातमें चन्द्रमाके उदय होनेपर ये वसुदेवकी स्त्री देवकीमें वसुदेवके घरमें ॥ २० ॥ साक्षात् हरि "यज्ञकी अरणीमें अग्निकी तरह" प्रकट होंगे, वे घनसे श्याम सुन्दर वनमालाको धारण करे लक्ष्मीके चिह्न सहित ॥ २१ ॥ पीताम्बर ओढ़े कमलसे नेत्रवाले और चतुर्भुज होंगे, उनको तुम अपनी कन्या देना, अभी तुम्हारी आयु बहुत है,

श्रीनारदउवाच ॥ तदातिहर्षितोराजाश्रुत्वावाक्यंमहामुनेः ॥ पुनःपप्रच्छसंदेहंयाज्ञवल्क्यंमहामुनिम् ॥ १६ ॥ राजोवाच ॥ कस्मिन्कुलेकुत्रदेशेभविताश्रीहरिःस्वयम् ॥ कीदृग्रूपश्चकिंवर्णोवर्षैश्चकतिभिर्गतैः ॥ १७ ॥ याज्ञवल्क्यउवाच ॥ द्वापरस्ययुगस्यास्य तवराज्यान्महाभुज ॥ अवशेषेवर्षशतेतथापंचदशेनृप ॥१८॥ तस्मिन्वर्षेयदुकुलेमथुरायांयदोःपुरे ॥ भाद्रेबुधेकृष्णपक्षेधात्रर्क्षेहर्षणेवृषे॥१९॥ ववेऽष्टम्यामर्द्धरात्रेनक्षत्रेशमहोदये ॥ अंधकारावृतेकालेदेवक्यांशौरिमन्दिरे ॥२०॥ भविष्यतिहरिःसाक्षादरण्यामध्वरेऽग्निवत् ॥ श्रीवत्सांको घनश्यामोवनमाल्यतिसुन्दरः ॥ २१ ॥ पीतांबरःपद्मनेत्रोभविष्यतिचतुर्भुजः ॥ तस्मैदेयात्वयाकन्याआयुस्तेस्तिनसंशयः ॥ २२ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेऽयोध्यापुरवासिन्युपाख्यानंनामपंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवमुक्त्वा गतेसाक्षाद्याज्ञवल्क्येमहामुनौ ॥ अतीवहर्षमापन्नोविमलश्चंपकापतिः॥ १॥अयोध्यापुरवासिन्यःश्रीरामस्यवराच्चयाः॥बभूवुस्तस्यभार्यासु ताः सर्वाःकन्यकाःशुभाः ॥ २ ॥ विवाहयोग्यास्ताहष्ट्वाचिन्तयंश्चंपकापतिः ॥ याज्ञवल्क्यवचःस्मृत्वादूतमाहनृपेश्वरः ॥ ३ ॥ विमलउवाच ॥ ॥ मथुरांगच्छदूतत्वंगत्वाशौरिगृहंशुभम् ॥ दर्शनीयस्त्वयापुत्रोवसुदेवस्यसुन्दरः ॥४॥ श्रीवत्सांकोघनश्यामोवनमालीचतुर्भुजः ॥ यदिस्यात्तर्हिदास्यामितस्मैसर्वाःसुकन्यकाः ॥ ५ ॥

इसमें संदेह नहीं है ॥ २२ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्य्यखंडे भाषाटीकायामयोध्यावासिन्युपाख्यानं नाम पञ्चमोध्यायः ॥ ५ ॥ नारदजी कहते हैं, ऐसा कहकर महामुनि याज्ञवल्क्य जब चले गये, तब चम्पकापुरीका स्वामी विमल राजा बड़े हर्षको प्राप्त हुआ॥१॥ अयोध्यापुरवासिनी जो स्त्रियाँ थीं, वे सब रामके वरसे उस विमल नामके राजाकी स्त्रियोंमें उत्पन्न हुईं ॥२॥ विमल राजाने जब विवाहके योग्य उन कन्याओंको देखा, तब याज्ञवल्क्यके वचनको स्मरण करके चम्पका नगरीका पति राजा राजदूतसे यह बोला ॥ ३ ॥ हे दूत ! तुम मथुरापुरीमें शुभ जो वसुदेवका घर है वहाँ जाओ और वहाँ जाकर वसुदेवके सुन्दर पुत्रको देखना ॥ ४ ॥ श्रीवत्सका चिह्न हो, घनकी तरह श्याम सुन्दर वनमाला पहिने जो चतुर्भुज हों, तो उनको मैं अपनी सब कन्याएं दूँगा ॥ ५ ॥

नारदजी कहते हैं-ऐसे राजाका वचन सुनकर दूत मथुरामें आया, मथुरामें आकर मथुरावासी महाजनोंसे सब अभिप्राय पूछने लगा ॥६॥ उस दूतका वचन सुनकर कंसके डरके मारे सुबुद्धि पुरुष एकान्तमें जाकर उस दूतसे कानमें बड़े धीरेसे बोले ॥ ७ ॥ कि, वसुदेवके जो जो पुत्र हुये, वे सब कंसने मार डाले, एक कन्या बची थी, वह भी स्वर्गको चली गई ॥ ८ ॥ वसुदेव तो दीन मन अपुत्र है, यहाँ मथुरामें है, किन्तु यह बात तुम किसीसे मत कहना, क्योंकि नगरमें कंसका डर है ॥ ९ ॥ वसुदेवकी संतानकी जो कोई बात मथुरामें पूछते हैं, उनको कंस दंड देता है, क्योंकि वसुदेवका जो अष्टम पुत्र है, वह कंसका शत्रु अर्थात् मारनेवाला है ॥ १० ॥ नारदजी कहते हैं-लोगोंका वचन सुनकर वह दूत चम्पकापुरीको चला गया, वहाँ जाकर राजासे वह अद्भुत कारण सब कहा॥११॥दूत बोला कि, महाराज ! मथुरामें वसुदेव तो रहता है परन्तु उसके तो पुत्र नहीं

॥ श्री नारदउवाच ॥ इतिवाक्यंततःश्रुत्वादूतोसौमथुरांगतः ॥ पप्रच्छसर्वाभिप्रायंमाथुरांश्चमहाजनान्॥६॥तद्वाक्यंमाथुराःश्रुत्वाकंसभीताः सुबुद्धयः ॥ तंदूतंरहसिप्राहुः कर्णांतेमंदवाग्यथा ॥ ७ ॥ माथुराऊचुः ॥ वसुदेवस्ययेपुत्राः कंसेनबहवोहताः ॥ एकावशिष्टावरजाकन्यासापिदिवंगता ॥८॥ वसुदेवोस्ति चात्रैवह्यपुत्रोदीनमानसः ॥ इदंनकथनीयंहित्वयाकंसभयंपुरे ॥ ९ ॥ शौरिसंतानवार्तायोवक्तिचेन्मथुरापुरे ॥ तंदंडयतिकंसोसौशौर्यष्टमशिशोरिपुः ॥ १० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ जनवाक्यंततःश्रुत्वादूतोवैचम्पकापुरीम् ॥ गत्वाथकथयामासराज्ञेकारणमद्भुतम् ॥ ११ ॥ दूतउवाच ॥ मथुरायामस्तिशौरिरनपत्योऽतिदीनवत् ॥ तत्पुत्रास्तु पुराजाताः कंसेननिहिताः श्रुतम् ॥ १२ ॥ एकावशिष्टाकन्यापिखंगताकंसहस्ततः ॥ एवंश्रुत्वायदुपुरान्निर्गतोहंशनैःशनैः ॥ १३॥ चरन्वृंदावनेरम्येकालिन्दीनिकटेशुभे ॥ अकस्माल्लतिकावृन्देदृष्टःकश्चिच्छिशुर्मया ॥ १४ ॥ तल्लक्षणसमोराजन्नोगोपगणमध्यतः ॥ श्रीवत्सांकोघनश्यामोवनमाल्यतिसुन्दरः ॥१५॥ द्विभुजोगोपसूनुश्चपरंत्वेतद्विलक्षणम् ॥ त्वयाचतुर्भुजश्चोक्तोवसुदेवात्मजोहरिः ॥ १६ ॥ किंकर्त्तव्यंवदनृपमुनिवाक्यंमृषानहि ॥ यत्रयत्रयथेच्छातेतत्रमांप्रेषयप्रभो ॥ १७ ॥

है, अति दीनकी तरह है, उसके पुत्र तो पहिले हुये थे, किन्तु कंसने मार डाले मैंने यह सुना है ॥ १२ ॥ एक कन्या बची थी, वह भी आकाशको उड़ गई, ऐसे मथुरापुरीमें सुनकर मैं धीरे-धीरे चला आया हूँ ॥ १३ ॥ किन्तु मनोहर वृन्दावनमें विचरते हुये मैंने कालिंदीके निकट अकस्मात् लताओंके समूहमें एक बालक देखा है ॥१४॥ हे राजन् ! उसके लक्षणके समान कोई गोप नहीं है, जो घनकी तरह श्याम सुन्दर श्रीवत्सका जिसके चिह्न, वनमालाको पहिने अति सुन्दर ॥१५॥ दो भुजाओंवाला गोपका पुत्र था, किन्तु एक यह विलक्षणता थी कि, तुमने चतुर्भुज वसुदेवका पुत्र बताया था, किन्तु उसके तो भुजाऐं दो ही थीं ॥ १६ ॥ हे राजन् ! यह कहिये, अब क्या करना चाहिये, क्योंकि ऋषिका वचन तो झूंठा होता नहीं, सो हे प्रभो ! जहाँ जहाँ आपकी इच्छा हो, वहाँ वहाँ मुझको भेजिये ॥ १७ ॥

नारदजी कहते हैं, बड़ा विचित्र है चित्त जिसका ऐसे उस राजाके इस तरह विचार करते हुये हस्तिनापुरसे सिन्धु देशके राजाओंको जीतनेके लिये भीष्मजी आये॥१८॥उनको देखकर विमल राजा भीष्मजीसे बोला कि, हे महाराज! याज्ञवल्क्यने यह कहा था कि, मथुरामें स्वयम् भगवान् वसुदेवकी स्त्री देवकीमें जन्म लेंगे, इसमें सन्देह नहीं है ॥१९॥ सो वे पर भगवान् वसुदेवके घर नहीं हुये, ऋषिका वचन तो झूँठा हो नहीं सकता, कहिये अब मैं इन कन्याओंको किसको दूँ ॥२०॥ हे भीष्म ! आप महा भागवत हो और भूत भविष्यको जाननेवालोंमें मुख्य हो, बाल्यावस्थासे ही अपने इन्द्रियाँ जीती हैं, वीर हो धनुर्धारी हो, वसुओंमें उत्तम हो, सो आप कहो कि, अब मुझे क्या करना चाहिये ॥२१॥ नारदजी कहते हैं, विमल राजाका वचन सुनकर गंगाके पुत्र, महाभागवत, ज्ञानी, दिव्य दृष्टि धर्मके तत्वको जाननेवाले, श्रीकृष्ण भगवान्के प्रभावको जाननेवाले भीष्मजी राजासे बोले ॥ २२ ॥ हे राजन् ! एक गुप्त आख्यान है, वेदव्यासजीके मुखसे मैंने सुना है, हर्षको बढ़ानेवाला है, उसको तुम सुनो ॥२३॥ देवताओंकी रक्षाके लिये, दैत्योंको मारनेके लिये

॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिचिन्तयतस्तस्यविस्मितस्यनृपस्यच ॥ गजाह्वयात्सिन्धुदेशाञ्जेतुंभीष्मःसमागतः ॥ १८ ॥ विमलउवाच ॥ याज्ञवल्क्येनपूर्वोक्तोमथुरायांहरिःस्वयम्॥वसुदेवस्यदेवक्यांभविष्यतिनसंशयः॥१९॥नजातोवसुदेवस्यसकाशेद्यहरिःपरः ॥ ऋषिवाक्यंमृषा नस्यात्कस्मैदास्यामिकन्यकाः ॥२०॥ महाभागवतःसाक्षात्त्वंपरावरवित्तमः ॥ जितेन्द्रियोबाल्यभावाद्वीरोधन्वीवसूत्तमः ॥ एतद्वदमहाबुद्धे किंकर्त्तव्यंमयात्रवै ॥२१॥ श्रीनारदउवाच ॥ विमलम्प्राहगांगेयोमहाभागवतःकविः ॥ दिव्यदृग्धर्मतत्त्वज्ञः श्रीकृष्णस्यप्रभाववित् ॥२२॥ भीष्मउवाच ॥ हे राजन्गुप्तमाख्यानंवेदव्यासमुखाच्छ्रुतम् ॥ सर्वपापहरंपुण्यंशृणुहर्षविवर्द्धनम् ॥ २३ ॥ देवानांरक्षणार्थायदैत्यानांहिवधा-यच ॥ वसुदेवगृहेजातःपरिपूर्णतमोहरिः ॥२४॥ अर्धरात्रेकंसभयान्नीत्वाशौरिश्वतंत्वरम् ॥ गत्वाचगोकुलेपुत्रंनिधायशयनेनृप॥२५॥ यशोदा नन्दयोःपुत्रींमायांनीत्वापुरंययौ ॥ ववृधेगोकुलेकृष्णोगुप्तोज्ञातोनकैर्नृभिः ॥२६॥ सोद्यैवंवृन्दकारण्येहरिर्गोपालवेषधृक् ॥ एकादशसमास्तत्र गूढोवासंकरिष्यति ॥ दैत्यंकंसंघातयित्वाप्रकटःसभविष्यति ॥२७॥ अयोध्यापुरवासिन्यःश्रीरामस्यवराज्ञया ॥ ताःसर्वास्तवभार्यासुबभूवुः कन्यकाःशुभाः ॥ २८ ॥ गूढायदेवदेवायदेयाःकन्यास्त्वयाखलु ॥ नविलम्बःक्वचित्कार्योदेहःकालवशोह्ययम् ॥ २९ ॥

परिपूर्णतम भगवान् हरिने वसुदेवके घरमें जन्म ले लिया है ॥२४॥ उनको वसुदेव आधीरातके समय कंसके भयसे बालकको लेकर नन्दके गोकुलमें ॥ २५ ॥ जाकर यशोदाकी सेजपर सुलाकर नन्द यशोदाकी कन्या मायाको लेकर मथुरापुरीको चले आये, इसके बाद वह बालक नन्दके गोकुलमेंही बढ़ा, यह बात किसीने नहीं जानी ॥२६॥ सो वे हरि इस तरह वृन्दावनमें गोपाल रूप धरे ग्यारह वर्ष व्रजमें गुप्त वास करेंगे, फिर कंस दैत्यको मारकर प्रकट होंगे, वे वृन्दावनमें हैं ॥२७॥ हे राजन् ! जो अयोध्यावासिनी स्त्रियाँ थीं, उन्होंने रामचन्द्रके वरसे तुम्हारी स्त्रियोंमें कन्या रूपसे जन्म लिया है ॥ २८ ॥ सो वे देवताओंके देवता भगवान् गूढ बसते हैं, उनके लिये तुमको अपनी कन्यायें देनी चाहिये, निश्चय ही तुम देर मत करो, क्योंकि यह देह कालके वशमें है ॥ २९ ॥

ऐसा कहकर सर्वज्ञ भीष्मजी जब हस्तिनापुरको चले गये, तब विमल राजाने श्रीकृष्णके पास अपना दूत भेजा ॥३०॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्यखण्डे भाषाटीकायामयोध्या-
पुरवासिन्युपाख्यानं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥६॥ नारदजी कहते हैं, वह राजाका भेजा दूत सिंधु देशसे फिर मथुरामें आया तब उसको वृन्दावनमें विचरते हुयेको एक दिन कालिंदीके
तीरपर श्रीकृष्णका दर्शन हुआ ॥१॥ तब उसने हाथ जोड़कर श्रीकृष्णको प्रणाम किया और परिक्रमा देकर धीरे २ विमल राजाकी प्रार्थना की ॥२॥ कि, आप तो स्वयम् ब्रह्म
परम परमेश्वर हो, ब्रह्मादिकोंके ईश्वर हो, सबसे परे हो, सबको अदृश्य हो, परिपूर्ण हो, जो पुण्यके समूह उनसे सदा दूर रहते हो, सज्जनोंको सदा दर्शन देते हो, उनको मेरा प्रणाम
है ॥३॥ गौ, ब्राह्मण, देवता, वेद, साधु, धर्म इनकी रक्षाके लिये, अजन्मा आपने यदु कुलमें कंसादिकोंके वधके लिये जन्म लिया है, उन अनन्त गुणके समुद्रके लिये मेरा नमस्कार

इत्युक्त्वाथगतेभीष्मेसर्वज्ञेहस्तिनापुरम् ॥ दूतंस्वंप्रेषयामासविमलोनन्दसूनवे ॥ ३० ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांमाधुर्यखण्डेऽयोध्यापुरवासिन्यु-
पाख्यानंनामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथदूतःसिन्धुदेशान्माथुरान्पुनरागतः ॥ चरन्वृन्दावनेकृष्णातीरेकृष्णंददर्शह ॥ १ ॥
कृष्णंप्रणम्यरहसिकृतांजलिपुटःशनैः ॥ प्रदक्षिणीकृत्यदूतोविमलोक्तमुवाचसः ॥ २ ॥ दूतउवाच ॥ स्वयम्परंब्रह्मपरःपरेशःपरैरदृश्यःपरि-
पूर्णदेवः ॥ यःपुण्यसंघैःसततंहिदूरस्तस्मैनमःसज्जनगोचराय॥३॥ गोविप्रदेवश्रुतिसाधुधर्मरक्षार्थमद्यैवयदोःकुलेऽजः ॥जातोसिकंसादिवधा-
ययोसौतस्मैनमोऽनंतगुणार्णवाय ॥४॥ अहोपरंभाग्यमलंव्रजौकसांधन्यंकुलंनन्दवरस्यतेपितुः॥ धन्योव्रजोधन्यमरण्यमेतद्यत्रैवसाक्षात्प्रकटः
परोहरिः ॥५॥ यद्राधिकासुन्दरकण्ठरत्नंकस्तूरिकामोदइवप्रसिद्धः ॥ यशश्चतेनिर्मलमाशुशुक्लीकरोतिसर्वत्रगतंत्रिलोकीम् ॥ ६ ॥ जानासि
सर्वंजनचैत्यभावंक्षेत्रज्ञआत्माकृतवृन्दसाक्षी ॥ तथापिवक्ष्येनृपवाक्यमुक्तंपरंरहस्यंरहसिस्वधर्मम् ॥ ७ ॥ यांसिन्धुदेशेषुपुरीप्रसिद्धाश्रीचम्प-
कानाम शुभायथैन्द्री ॥ तत्पालकोसौविमलोयथेन्द्रस्त्वत्पादपद्मेकृतचित्तवृत्तिः ॥ ८ ॥ सदाकृतंयज्ञसतंत्वदर्थंदानंतपोब्राह्मणसेवनंच ॥
तीर्थंजपंयेनसुसाधनेनतस्मैपरंदर्शनमेवदेहि ॥ ९ ॥

है ॥४॥ अहो ! व्रजवासियोंका अत्यन्त बड़ा भाग्य है, आपके पिता नन्दरायजीका कुल धन्य है, यह व्रज धन्य है, यह वृन्दावन धन्य है, जहाँ साक्षात् हरि आप प्रकट हुये हो
॥ ५ ॥ जो राधिकाके सुन्दर कण्ठके आभूषण हो, कस्तूरीकी सुगंधिकी तरह सर्वत्र प्रसिद्ध हो, आपका यह निर्मल यश सर्वत्र वर्तमान है, जिस यशसे त्रिलोकी उज्ज्वल हो
रही है ॥६॥ आप सब जनोंके चित्तके भाव (अभिप्राय) को जानते हो, क्षेत्रज्ञ हो, सब जीवोंके किये कर्मोंके साक्षी हो, तो भी राजाने जो धर्मका वचन कहा है, उसको एकान्त
में सुनिये ॥ ७ ॥ जो सिन्धु देशमें चम्पापुरी नामसे प्रसिद्ध है, वह इन्द्रकीसी पुरी है, उसका राजा विमल इन्द्रके समान है, उसने तुम्हारे चरण कमलोंमे चित्तकी वृत्ति धरी है
॥ ८ ॥ आपके लिये सौ यज्ञ किये हैं, और दान, तप ब्राह्मणोंका सेवन, तीर्थ, जप, तप, साधन आपके लिये किये हैं, उसके लिये आप दर्शन दीजिये ॥ ९ ॥

उसकी कन्याएं हैं, कमलसे जिनके नेत्र हैं, वे पूर्ण जो आप हो, उनको पतिकी इच्छा करती हैं, आपके लिये नियम व्रतमें स्थित हैं और आपके चरण कमलकी सेवासे निर्मल किये हैं अंग जिन्होंने ऐसी हैं ॥१०॥ सो हे व्रजदेव ! आप उनका पाणिग्रहण करिये, आप उनको अपने उत्तम दर्शन दीजिये, सिंधुदेशको चलिये, ये सब आपको करनाही है, सो विचार करके जो विशद हो, सो करिये ॥११॥ नारदजी कहते हैं दूतके ये वचन सुनकर भगवान् हरि प्रसन्न हो गये, सो दूतको साथ लेकर एकही क्षणमें चंपकापुरीमें आये॥१२॥ वेदकी ध्वनिसे आकुल जो विमल राजाका यज्ञ उसमें भगवान् श्रीकृष्ण दूतको साथ लेकर आकाशसे उतरकर आये ॥१३॥ श्रीवत्सांक हैं, वनमालाको धारण किये हैं, पीताम्बर ओढे और कमलसे जिनके नेत्र हैं, सो आप यज्ञपाटमें आये ॥१४॥ ऐसे श्रीकृष्णको देखकर विमल उठकर खड़ा हुआ, प्रेममें विह्वल हो गया, हाथ जोड़ चरणोंमें गिर पड़ा और

तत्कन्यकाःपद्मविशालनेत्रापूर्णपतिंत्वांमृगयंत्यआरात् ॥ सदात्वदर्थंनियमव्रतस्थास्त्वत्पादसेवाविमलीकृतांगाः ॥१०॥ गृहाणतासांव्रजदेव पाणीन्दत्त्वापरंदर्शनमद्भुतंस्वम् ॥ गच्छाशुसिन्धून्विशदीकुरुत्वंविमृश्यकर्तव्यमिदंत्वयाहि ॥११॥ श्रीनारदउवाच ॥ दूतवाक्यंचतच्छ्रुत्वा प्रसन्नोभगवान्हरिः ॥ क्षणमात्रेणगतवान्सदूतश्चंपकांपुरीम् ॥१२॥ विमलस्यमहायज्ञेवेदध्वनिसमाकुले ॥ सदूतःकृष्णआकाशात्सहसाऽवत- तारह ॥१३॥ श्रीवत्सांकंघनश्यामंसुन्दरंवनमालिनम् ॥ पीतांबरंपद्मनेत्रंयज्ञवाटागतंहरिम् ॥१४॥ तंदृष्ट्वासहसोत्थायविमलःप्रेमविह्वलः ॥ पपातचरणोपांतेरोमांचीसकृतांजलिः ॥१५॥ संस्थाप्यपीठकेदिव्येरत्नहेमखचित्पदे ॥ स्तुत्वासम्पूज्यविधिवद्राजातत्संमुखेस्थितः ॥ १६ ॥ गवाक्षेभ्यःप्रपश्यंतीःसुन्दरीर्वीक्ष्यमाधवः ॥ उवाचविमलंकृष्णोमेघगंभीरयागिरा ॥ १७ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ महामतेवरंब्रूहियत्तेमनसि वर्त्तते ॥ याज्ञवल्क्यस्यवचसाजातंमद्दर्शनंतव ॥ १८ ॥ विमलउवाच ॥ मनोमेभ्रमरीभूतंसदात्वत्पादपंकजे ॥ वासं कुर्याद्देवदेवनान्ये- च्छामेकदाचन ॥ १९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाविमलोराजासर्वकोशधनंमहत् ॥ द्विपवाजिरथैःसार्द्धंचक्रआत्मनिवेदनम् ॥ २० ॥ समर्प्यविधिनासर्वाःकन्यकाहरयेनृप ॥ नमश्चकारकृष्णायविमलोभक्तिविह्वलः ॥ २१ ॥

रोंगटे अंगमें खड़े हो गये ॥१५॥ स्वर्णके रत्नजडित दिव्य सिंहासनपर बैठाकर विधिपूर्वक पूजन करके स्तुति करके फिर सामने बैठ गया ॥१६॥ झरोखोंमेंसे देख रहीं ऐसी सुन्द- रियोंको देखकर भगवान् मेघकीसी गम्भीर वाणीसे विमल राजासे बोले ॥१७॥ हे महामति ! जो तुम्हारे मनमें हो, सो वर मांगो, याज्ञवल्क्यके वचनसे तुमको मेरा दर्शन हुआ है ॥१८॥ तब राजा विमल बोला कि मेरा, मन भ्रमरकी तरह तुम्हारे चरण कमलोंमें सदाही रमा करे, हे देव देव ! आपसे मैं यही वर मांगता हूँ, और मेरी कुछ इच्छा नहीं है ॥१९॥ ऐसा कहकर विमल राजाने सब कोष (खजाना), घोड़े, हाथी, रथसहित और अपना आत्मा ये सब श्रीकृष्णको अर्पण कर दिये ॥२०॥ और विधिपूर्वक सब कन्याएं भगवान्को समर्पण करके भक्तिमें विह्वल हुये विमल राजाने श्रीकृष्णको साष्टांग दण्डवत की ॥ २१ ॥

तब तो मनुष्योंके समूहमें जय-जय शब्द हुआ और स्वर्गके देवता आकाशमें खड़े होकर पुष्पोंकी वर्षा करने लगे॥२२॥ उसी समय विमल राजा कामदेवके समान दिव्यांगद्युति होकर श्रीकृष्णकी सारूप्यताको प्राप्त हो गया, तब इसका सौ सूर्यका सा तेज झिलमिला उठा, दिशाओंमें उजाला हो गया॥२३॥ गरुडपर चढ़कर सब मनुष्योंके देखते २ गरुड ध्वजको नमस्कार करके अपनी स्त्रियों सहित विमल राजा वैकुण्ठको चला गया ॥ २४ ॥ तब श्रीकृष्ण भगवान् स्वयम् राजाको मुक्ति देकर उसकी सुन्दर पुत्रियों को विवाह कर व्रजमण्डलमें आ गये ॥२५॥ वहाँ मनोहर जो कामवन है, जो दिव्य मंदिरसे युक्त है, उसमें गेंदोंसे खेलती वे कृष्णकी प्यारी सौभाग्यवती स्त्रियाँ रहने लगीं ॥२६॥ सब जितनी भगवान्‌की मुख्य प्यारी स्त्रियाँ थीं उतनेही रूप अपने धारण करके उनके मनको प्रसन्न करते श्रीव्रजराज रासमें उन सबके मनका रंजन करते आप शोभित हुये॥२७॥ रासमें जो विमल राजाकी पुत्रियोंके आनन्दके स्वेदजलकी बूंदें गिरीं, उनसे विमलकुण्ड नामक तीर्थोंमें उत्तम तीर्थ हुआ ॥२८॥ जो मनुष्य विमल कुण्डमें स्नान करे, दर्शन करे, जल पीवे अथवा उसका पूजन करे, तो हे नृपेश्वर ! वह मनुष्य सुमेरूकी बराबरभी पाप हों, उनको काटकर गोलोकको प्राप्त होताहै ॥२९॥ जो नर अयोध्यावासिनी जो गोपियाँ उनकी कथाको सुने, वह योगियोंको दुर्लभ जो गोलोक धाम उसको प्राप्त होता है ॥ ३० ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांमाधुर्य खण्डे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्व संवादे अयोध्यावासिन्युपाख्यानं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥७॥ नारदजी कहते हैं-हे मैथिल ! जो रामचन्द्रजीने यज्ञोंमें सीताजी जब पृथ्वीमें समा गईं थीं तब बादमें जो यज्ञ किये उनमें सोनेकी सीता बना बनाकर बैठाई थीं, उनमें सीताका अंश आ गया था, वे भी व्रजमें गोपियाँ हुईं, उनका उपाख्यान सुनो, पापको हरनेवाला कामदाता और मंगलकर्ता हैं ॥ १ ॥ दक्षिणमें एक उशीनर नामका देश था, उसमें एक समय एक वर्षतक वर्षा नहीं हुई ॥ २ ॥

तदाजयजयारावोबभूवजनमण्डले ॥ ववृषुःपुष्पवर्षाणिदेवतागगनस्थिताः॥२२॥तदैवकृष्णसारूप्यंप्राप्तोनंगस्फुरद्द्युतिः॥ शतसूर्यप्रतीकाशो द्योतयन्मंडलंदिशाम् ॥ २३ ॥ वैनतेयंसमारुह्यनत्वाश्रीगरुडध्वजम् ॥ सभार्यःपश्यतांनृणांवैकुण्ठंविमलोययौ ॥ २४ ॥ दत्त्वामुक्तिंनृपतये श्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥ तत्सुताःसुन्दरीर्नीत्वाव्रजमंडलमाययौ ॥२५॥ तत्रकामवनेरम्येदिव्यमन्दिरसंयुते ॥ क्रीडन्त्यःकंदुकैःसर्वास्तस्थुः कृष्णप्रियाःशुभाः ॥ २६ ॥ यावतीश्चप्रियासख्यस्तावद्रूपधरोहरिः ॥ रराजरासेव्रजराड्रंजयंस्तन्मनःशुभः ॥२७॥ रासेविमलपुत्रीणामानन्द जलबिन्दुभिः ॥ च्युतैर्विमलकुण्डोऽभूत्तीर्थानांतीर्थमुत्तमम् ॥२८॥ दृष्ट्वापीत्वाचतंस्नात्वापूजयित्वानृपेश्वर ॥ छित्त्वामेरुसमंपापंगोलोकंया- तिमानवः ॥२९॥ अयोध्यावासिनीनांतुकथांयःशृणुयान्नरः ॥ सव्रजेद्धामपरमंगोलोकंयोगिदुर्लभम् ॥३०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधु- र्यखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेऽयोध्यापुरवासिन्युपाख्याननामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ गोपीनांयज्ञसीतानामाख्यानंशृणु मैथिल ॥ सर्वपापहरंपुण्यंकामदंमंगलायनम् ॥१॥ उशीनरोनामदेशोदक्षिणस्यांदिशिस्थितः ॥ एकदायत्रपर्जन्योनववर्षसमादश ॥ २ ॥

वहाँके बहुतसे धनी जो गौओंवाले गोप थे, वे सब अपने-अपने कुटुम्ब समेत गौओंको लेकर व्रजमण्डलमें आ गये ॥३॥ वे पवित्र वृन्दावनमें रमणीय कालिंदीके निकट नंदराजकी सहायतासे हे नृप ! वे सब गोप निवास करने लगे ॥४॥ उनके घरोंमें यज्ञकी जो सीता थीं वे गोपी रूप होकर जन्मीं, उनका रामके वरसे दिव्य ही तो रूप हुआ और दिव्यही उनका यौवन हुआ ॥५॥ हे राजन् ! वे श्रीकृष्णको सुन्दर देखकर मोहित होगईं, तब वे कृष्णकी प्रसन्नताके लिये व्रत पूछनेके लिये राधिकाजीके पास आईं ॥६॥ और बोलीं-हे वृषभानु सुते ! हे दिव्ये ! हे राधे ! हे कञ्जलोचने ! आप श्री कृष्णकी प्रसन्नताके लिये हमें शुभ व्रत बताओ ॥७॥ देवताओंको भी दुर्लभ जो नन्दका पुत्र है, वह तुम्हारे वशीभूत है, हे राधे ! तुम जगत्को मोहनेवाली हो और सम्पूर्ण शास्त्रोंकी पारगामिनी हो ॥८॥ तब राधिकाजी बोलीं कि, बहिनो ! तुम श्रीकृष्णकी प्रीतिके लिये एकादशीका व्रत करो, इस व्रतसे साक्षात्

धंनवंतस्तत्रगोपाअनावृष्टिभयातुराः॥सकुटुम्बागोधनैश्चव्रजमण्डलमाययुः॥३॥पुण्येवृन्दावनेरम्येकालिन्दीनिकटेशुभे॥ नन्दराजसहायेनवासं तेचक्रिरेनृप ॥४॥ तेषांगृहेषुसंजातायज्ञसीताश्चगोपिकाः ॥ श्रीरामस्यवराद्दिव्यादिव्ययौवनभूषिताः ॥ ५ ॥ श्रीकृष्णंसुन्दरंदृष्ट्वामोहितास्ता नृपेश्वर ॥ व्रतंकृष्णप्रसादार्थंप्रष्टुंराधांसमाययुः ॥ ६ ॥ गोप्यऊचुः ॥ वृषभानुसुतेदिव्येहेराधेकंजलोचने ॥ श्रीकृष्णस्यप्रसादार्थंवदकिंचि-द्व्रतंशुभम् ॥७॥ तववश्योनन्दसूनुर्देवैरपिसुदुर्गमः ॥ त्वंजगन्मोहिनीराधेसर्वशास्त्रार्थपारगा ॥ ८ ॥ श्रीराधोवाच ॥ श्रीकृष्णस्यप्रसादार्थंकु-रुतैकादशीव्रतम् ॥ तेनवश्योहरिःसाक्षाद्भविष्यतिनसंशयः ॥ ९ ॥ गोप्यऊचुः ॥ संवत्सरस्यद्वादश्यानामानिवदराधिके ॥ मासेमासेव्रतंत-स्याःकर्तव्यंकेनभावतः ॥ १० ॥ राधोराच ॥ मार्गशीर्षेकृष्णपक्षेउत्पन्नाविष्णुदेहतः ॥ मुखेसुरवधार्थायतिथिरेकादशीवरा ॥ ११ ॥ मासे मासेपृथग्भूतासैवसर्वव्रतोत्तमा॥तस्याःषड्विंशतिंनाम्नांवक्ष्यामिहितकाम्यया॥१२॥उत्पत्तिश्चतथामोक्षासफलाचततःपरम् ॥ पुत्रदाषट्तिला चैवजयाचविजयातथा ॥ १३ ॥ आमलकीततःपश्चान्नाम्नावैपापमोचनी ॥ कामदाचततः पश्चात्कथितावैवरूथिनी ॥ १४ ॥

हरि प्रसन्न होंगे, तुम्हारे वशमें होंगे, इसमें संदेह नहीं है ॥ ९ ॥ तब गोपियाँ बोलीं कि हे राधिके ! संवत्सरकी एकादशियोंके नाम हमें बताओ, महीने-महीने कौनसी विधिसे उनका व्रत करना चाहिये ॥१०॥ राधिकाजी बोलीं कि, सुनो सखियो ! मार्गशीर्षके कृष्ण पक्षकी एकादशी विष्णुकी देहसे मुखमेंसे उत्पन्न हुई है असुरके वधके लिये इसीसे यह एकादशी सब तिथियोंमें उत्तमा हुई है ॥ ११ ॥ वह महीने महीनेमें पृथक् २ है वही सब व्रतोंमें उत्तम व्रत है, उस एकादशीके छब्बीस नाम हैं, उनको मैं हितकी इच्छासे कहता हूँ ॥१२॥ उत्पन्ना १, मोक्षा २, सफला ३, पुत्रदा ४, षट्तिला ५, जया ६, विजया ७ ॥ १३ ॥ आमलकी ८, पापमोचनी ९, कामदा १०, वरूथिनी ११, ॥ १४ ॥

---

(१) धनं गोधनवित्तयोः इत्यमरः ।

मोहिनी १२, अपरा १३, निर्जला १४, योगिनी १५, देवशयनी १६, कामिनी १७, ॥ १५ ॥ पवित्रा १८, अजा १९, पद्मा २०, इन्दिरा २१, पाशांकुशा २२, रमा २३, प्रबोधिनी २४, ॥१६॥-दो मलमासकी हैं, उन दोनोंका सर्व सम्पत्प्रदा नाम है, वे सर्व सम्पत्तिकी देनेवाली हैं, जो एकादशियोंके इन छब्बीसोंके नाम लेता है, वह भी वर्षकी एकादशीके व्रतोंके फलको प्राप्त होता है ॥ १७ ॥ हे व्रजांगनाओ अब तुम एकादशियोंके नियम सुनो-दशमीको एक समय भोजन करे, धरतीमें सोये, जितेन्द्रिय रहे ॥ १८ ॥ एक समय जल पीवे, धुले वस्त्र पहिने, अति निर्मल रहे, एकादशीको हरिको प्रणाम करे, ब्राह्ममुहूर्तमें उठे ॥१९॥ एकादशीके व्रत करनेवालेको कुएंका स्नान तो अधम है, बावलीका मध्यम, तालाबका उत्तम, नदीका उत्तमोत्तम है ॥ २० ॥ ऐसे क्रोध, लोभको छोड़कर स्नान करे और उस दिन नीचजनोंसे पाखंडियोंसे सम्भाषण न करे ॥ २१ ॥ झूंठ बोलनेवालोंसे, ब्राह्मणोंके निंदकोंसे, अगम्यागमनियोंसे या दुराचारियोंसे और भी जो दुराचारी हैं उनसे बात न करे ॥२२॥ दूसरेका द्रव्य, दूसरेकी स्त्री, इनको हरनेवाले परस्त्रीगामियोंसे,

मोहिनीचापराप्रोक्तानिर्जलाकथिताततः ॥ योगिनीदेवशयनीकामिनीचततःपरम् ॥१५॥ पवित्राचाप्यजापद्माइंदिराचततःपरम् ॥ पाशांकुशा
रमाचैवततःपश्चात्प्रबोधिनी॥१६॥ सर्वसंपत्प्रदाचैवद्वेप्रोक्तेमलमासजे॥ एवंषट्विंशतिंनाम्नामेकादश्याः पठेच्चयः ॥१७॥ संवत्सरद्वादशीनांफल-
माप्नोतिसोपिहि ॥ एकादश्याश्चनियमंशृणुताथव्रजांगनाः॥भूमिशायीदशम्यांतुचैकभुक्तोजितेन्द्रियः ॥१८॥ एकवारंजलंपीत्वाधौतवस्त्रोति
निर्मलः ॥ब्राह्मेमुहूर्तउत्थायचैकादश्यांहरिंनतः॥१९॥ अधमंकूपिकास्नानंवाप्यांस्नानंतुमध्यमम् ॥ तडागेचोत्तमंस्नानंनद्याः स्नानंततःपरम्॥
॥२०॥एवंस्नात्वानरवरःक्रोधलोभविवर्जितः ॥ नालपेत्तद्दिनेनीचांस्तथापाखंडिनोनरान् ॥२१॥ मिथ्यावादरतांश्चैवतथाब्राह्मणनिन्दकान् ॥
अन्यांश्चैवदुराचारानगम्यागमनेरतान्॥२२॥ परद्रव्यापहारांश्चपरदाराभिगामिनः ॥ दुर्वृत्तान्भिन्नमर्यादान्नालपेत्सव्रतीनरः ॥२३॥ केशवंपूज-
यित्वातुनैवेद्यंतत्रकारयेत् ॥ दीपंदद्याद्गृहेतत्रभक्तियुक्तेनचेतसा॥२४॥ कथांश्रुत्वाब्राह्मणेभ्योदद्यात्सदक्षिणांपुनः॥ रात्रौजागरणंकुर्याद्गायन्कृ-
ष्णपदानिच ॥२५॥ कांस्यंमांसंमसूरांश्चकोद्रवंचणकंतथा ॥ शाकंमधुपरान्नंचपुनर्भोजनमैथुने॥२६॥ विष्णुव्रतेचकर्तव्येदशम्यांदशवर्जयेत् ॥
द्यूतक्रीडांचनिद्रांचताम्बूलंदन्तधावनम् ॥२७॥ परापवादपैशुन्यंस्तेयंहिंसांतथारतिम् ॥ क्रोधाढ्यंह्यनृतंवाक्यमेकादश्यांविवर्जयेत् ॥ २८ ॥

बुरी जीविका करनेवालोंसे भिन्न मर्यादावालोंसे व्रती मनुष्य बोले नहीं ॥२३॥ केशवका पूजन करके नैवेद्य रखे, दीपक जलाये, भोग धरे, भक्तियुक्त चित्तसे ॥ २४ ॥ एकादशी माहात्म्यकी कथा सुने, ब्राह्मणोंको दक्षिणा दे, रात्रिको जागरण करे, हरिके पदोंका गान करे ॥२५॥ दशमीके दिन दश काम न करे, कांसेके पात्रमें भोजन १, उड़द २, मसूर ३ कोदों ४, चना ५, साग ६, शहद ७, दूसरेका अन्न ८, दूसरे समय भोजन ९, स्त्रीसंग १०, इन दश चीजोंका त्याग करे ॥२६॥ विष्णुके व्रतको करनेवाला दशमीक दिन ये दश काम न करे, एकादशीको जुआ खेलना १, निद्रा २, पान ३, दन्तधावन ४, ॥ २७ ॥ परनिन्दा ५, चुगली ६, चोरी ७, हिंसा ८, रति ९, क्रोध १०, झूंठ ११, एकादशीको ये ग्यारह बात न करे ॥ २८ ॥

कांसापात्र १, उड़द २, शहद ३, तेल ४, मसूर ५, पिष्ठी ६, सांठी चावल ७, काम ८, क्रोध ९, झूंठ १०, दूसरेका अन्न ११, मैथुन १२, द्वादशीको ये बारह वर्जित किये हैं ॥२९॥ इस विधिसे एकादशीका उत्तम व्रत करे, ॥३०॥ तब गोपी पूछती हैं कि, एकादशी व्रतके समयका निर्णय बताओ और इसका फल क्या है और माहात्म्य क्या है, यह कहो ॥३१॥ अब राधिकाजी कहती हैं कि, जो दशमी पचपन घडी हो तो, एकादशीको छोड़कर द्वादशीका व्रत करे ॥३२॥ दशमीको एक पलकाभी वेध हो, तो एकादशीको छोड़कर द्वादशीको व्रत करे, जैसे गंगा जलका भरा कलशा है, उसमें एकभी बूंद मदिराकी गिर पड़े तो उसको छोड़ देते हैं ॥३३॥ जो एकादशी दो होकर द्वादशी बढ़ जाय, तो भी अगली द्वादशीमें व्रत करे, पहिलीमें न करे ॥३४॥ हे व्रजांगनाओ! इस एकादशीके व्रतका फल कहती हूँ, जिनके सुननेहीसे वाजपेय यज्ञका फल होता है ॥३५॥ जो कोई अट्ठासी हजार ब्राह्मण

कांस्यंमांसंचक्षौद्रंचतैलंवितथभोजनम् ॥ पिष्टिषष्टिमसूरांश्चद्वादश्यांपरिवर्जयेत् ॥ २९ ॥ अनेनविधिनाकुर्याद्वादशीव्रतमुत्तमम् ॥ ३० ॥ गोप्यऊचुः ॥ एकादशीव्रतस्यास्यकालंवदमहामते ॥ किंफलंवदतस्यास्तुमाहात्म्यंवदतत्त्वतः ॥ ३१ ॥ श्रीराधोवाच ॥ दशमी पंचपंचाशद्धटिकाचेत्प्रदृश्यते ॥ तर्हिचैकादशीत्याज्याद्वादशींसमुपोषयेत् ॥३२॥ दशमीपलमात्रेणत्याज्याचैकादशीतिथिः॥ मदिराबिंदुपातेनत्याज्योगंगाघटोयथा ॥३३॥ एकादशीयदावृद्धिद्वादशीचयदागता ॥ तदापराह्युपोष्यास्यान्नपूर्वाद्वादशीव्रते ॥३४॥ एकादशीव्रतस्यास्यफलंवक्ष्येव्रजांगनाः॥ यस्यश्रवणमात्रेणवाजपेयफलंलभेत् ॥३५॥ अष्टाशीतिसहस्राणिद्विजान्भोजयतेतुयः ॥ तत्कृतंफलमाप्नोतिद्वादशीव्रतकृन्नरः ॥३६॥ ससागरवनोपेतांयोददातिवसुन्धराम् ॥ तत्सहस्रगुणंपुण्यमेकादश्यामहाव्रते ॥३७॥ येसंसारार्णवेमग्नाः पापपंकसमाकुले ॥ तेषामुद्धरणार्थायद्वादशीव्रतमुत्तमम् ॥ ३८ ॥ रात्रौजागरणंकृत्वैकादशीव्रतकृन्नरः॥ नपश्यतियमंरौद्रंयुक्तःपापशतैरपि ॥ ३९ ॥ पूजयेद्योहरिं भक्त्याद्वादश्यांतुलसीदलैः ॥ लिप्यतेनसपापेनपद्मपत्रमिवांभसा ॥ ४० ॥ अश्वमेधसहस्राणिराजसूयशतानिच ॥ एकादश्युपवासस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥४१॥ दशवैमातृकेपक्षेतथावैदशपैतृके ॥ प्रियायादशपक्षेतुपुरुषानुद्धरेन्नरः ॥ ४२ ॥

भोजन कराये उसका जो फल मिले, यह फल एकादशी व्रत करनेवालेको प्राप्त होता है ॥३६॥ सातों समुद्र सहित जो इस पृथ्वीका दान करे, उससे हजार गुना पुण्य एकादशीके व्रतसे होता है ॥३७॥ पापरूपी कीचड़ जिसमें ऐसे संसाररूपी समुद्रमें जो फंस रहे हैं, उनके उद्धारके लिये तो एकादशीका व्रत उत्तम है ॥३८॥ जो एकादशीका व्रत करके जागरण करे, तो कैसाभी पापी हो, तोभी वह भयंकर जो यमराज है, उसका दर्शन नहीं करता है, ॥३९॥ जो द्वादशीके दिन तुलसी दलसे भगवान्का पूजन करे, तो पाप उसको स्पर्श नहीं करे, कमलके पत्तेको जैसे जल स्पर्श नहीं करता है ॥४०॥ हजार अश्वमेध यज्ञ करे और सौ राजसूय यज्ञ करे तो भी एकादशीके उपवासकी सोलहवीं कलाकोभी नहीं प्राप्त होता है ॥४१॥ जो एकादशीका व्रत करता है, वह दश पीढ़ी तो पिताके पक्षकी और दश पीढ़ी माताके पक्षकी, दश पीढ़ी स्त्रीके पक्षकी, इनका उद्धार करता है ॥ ४२ ॥

जैसी कृष्ण पक्षकी एकादशी वैसेही शुक्लपक्षकी, दोनोंका बराबर फल है, जैसे काली गौ और श्वेत (सफेद) गौ इन दोनोंका दूध एकसाही होता है ॥ ४३ ॥ हे गोपियो ! मेरू मंदिरके समान भी जो सौ जन्मके पाप हों उनको भी एकही एकादशी सबको भस्म कर देती है, कैसे जैसे रूईके ढेरकों जरासी अग्निकी चिनगारी भस्म कर देती है ॥४४॥ विधिसे अथवा विना विधिसे जो द्वादशीको थोडासाभी दान पुण्य करे, तो हे गोपियो ! सुमेरूकी तुल्य होता है ॥४५॥ एकादशीके दिन जो कोई हरिकी कथा सुने तो उसको सप्त द्वीपवती पृथ्वीको दान करनेका फल होता है ॥४६॥ जो मनुष्य शंखोद्धार तीर्थमें स्नान करे और गदाधरके दर्शन करे, तो भी एकादशीकी सोलहवों कलाको भी प्राप्त नहीं होता है॥४७॥ प्रभासमें, कुरुक्षेत्रमें, केदारनाथमें बदरिकाश्रममें, काशीमें, सोरोंमें सूर्यचन्द्रमाके ग्रहणमें ॥४८॥ और चार लाख संक्रांतियोंमें जो दान करे तो भी एकादशीकी सोलहवीं कलाको

यथाशुक्लातथाकृष्णाद्वयोश्चसदृशंफलम् ॥ धेनुःश्वेतातथाकृष्णाउभयोःसदृशंपयः ॥४३॥ मेरुमन्दरमात्राणिपापानिशतजन्मसु ॥ एकाचैका-
दशीगोप्योदहतेतूलराशिवत् ॥४४॥ विधिवद्विधिहीनंवाद्वादश्यांदानमेवच ॥ स्वल्पंवासुकृतंगोप्योमेरुतुल्यंभवेच्चतत् ॥४५॥ एकादशीदिने
विष्णोःशृणुतेयोहरेः कथाम् ॥ सप्तद्वीपवतीदानेयत्फलंलभतेचसः ॥४६॥ शंखोद्धारेनरःस्नात्वादृष्ट्वादेवंगदाधरम् ॥ एकादश्युपवासस्यकलां
नार्हतिषोडशीम् ॥ ४७ ॥ प्रभासेचकुरुक्षेत्रेकेदारेबद्रिकाश्रमे ॥ काश्यांचशूकरक्षेत्रेग्रहणेचन्द्रसूर्ययोः ॥४८॥ संक्रांतीनांचतुर्लक्षंदानंदत्तंचय-
न्नरैः ॥ एकादश्युपवासस्यकलांनार्हतिषोडशीम् ॥४९॥ नागानांचयथाशेषःपक्षिणांगरुडोयथा ॥ देवानांचयथाविष्णुर्वर्णानांब्राह्मणोयथा ॥
॥ ५० ॥ वृक्षाणांचयथाऽश्वत्थःपत्राणांतुलसीयथा ॥ व्रतानांचतथागोप्योवराचैकादशीतिथिः ॥५१॥ दशवर्षसहस्राणितपस्तप्यतियोनरः ॥
तत्तुल्यंफलमाप्नोतिद्वादशीव्रतकृन्नरः ॥ ५२ ॥ इत्थमेकादशीनांचफलमुक्तंव्रजांगनाः ॥ कुरुताशुव्रतंयूयंकिंभूयः श्रोतुमिच्छथ ॥५३॥ इति
श्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखण्डेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादेयज्ञसीतोपाख्यानएकादशीमाहात्म्यंनामाष्टमोध्यायः ॥८॥ गोप्यऊचुः ॥ वृषभानु-
सुतेसुभ्रुसर्वशास्त्रार्थपारगे ॥ विडंबयंतीत्वंवाचावाचंवाचस्पतेर्मुनेः ॥ १ ॥

प्राप्त नहीं होता है ॥४९॥ नागोंमें शेष, जैसे पक्षियोंमें गरुड़, देवताओंमें जैसे विष्णु, वर्णोंमें जैसे ब्राह्मण ॥५०॥ वृक्षोंमें जैसे पीपल, पत्रोंमें जैसे तुलसी वैसेही हे गोपियो ! व्रतोंमें एकादशीका व्रत श्रेष्ठ है ॥५१॥ इससे तुम एकादशीके व्रतको करो, जो दश हजार वर्ष तपस्या करे, उसके बराबर एकादशीके व्रतका फल है ॥५२॥ हे व्रजांगनाओ ! यह मैंने एकादशियोंके व्रतोंका फल वर्णन किया है, इससे तुम जल्दी एकादशीका व्रत करो, आगे क्या सुननेकी इच्छा करती हो ॥५३॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्यखण्डे भाषाटीकायां यज्ञसीतोपाख्यान एकादशी व्रतमाहात्म्यं नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ अब गोपियाँ बोलीं--हे वृषभानु सुते ! हे सुभ्रु ! हे सर्व शास्त्रार्थ पारगे ! तुम अपनी वाणीसे बृहस्पति मुनिकी वाणीकीभी हँसी करते हो, अर्थात् कहनेमें आपके सामने बृहस्पतिका कहना बराबर नहीं हो सकता है ॥ १ ॥

हे राधे ! एकादशीका व्रत पहिले किस किसने किया है, यह तुम विशेष रूपसे कहो, तुम साक्षात् ज्ञानकी निधि हो, ॥ २ ॥ तब राधिकाजी बोली-प्रथम देवताओंने एकादशीका व्रत किया है, भ्रष्ट हुये राज्यके लाभके लिये और दैत्योंके नाशके लिये ॥ ३ ॥ वैशंत राजाने पहिले अपने पिताके यमलोकसे उद्धारके लिये यह एकादशीका व्रत किया है क्योंकि उसका पिता अपने कर्मोंसे यमलोकमें गया था ॥४॥ और जातिके लोगोंने जिसको त्याग दिया ऐसे लुंपकने भी अकस्मात् एकादशीका व्रत किया था, जिस व्रतके करनेपर उस लुम्पकको राज्य मिला था ॥५॥ ऐसेही भद्रावती पुरीमें केतुमान् राजाने एकादशीका व्रत किया था, तब सन्तोंके वाक्यसे पुत्रहीन राजा केतुमानको पुत्र प्राप्त हुआ था ॥ ६ ॥ ब्राह्मणीको देवताओंकी स्त्रियोंने एकादशी व्रत दिया था, उससे उस मानुषीको स्वर्गका सुख और धनधान्य मिला था ॥७॥ माल्यवान् गन्धर्व और पुष्पदन्ती अप्सरा दोनों इन्द्रके

एकादशीव्रतंराधेकेनकेनपुराकृतम् ॥ तद्ब्रूहिनोविशेषेणत्वंसाक्षाज्ज्ञानशेवधिः ॥ २ ॥ श्रीराधोवाच ॥ आदौदेवैःकृतंगोप्योवरमेकादशी व्रतम् ॥ भ्रष्टराज्यस्यलाभार्थंदैत्यानांनाशनायच ॥३॥ वैशंतेनपुराराज्ञाकृतमेकादशीव्रतम् ॥ स्वपितुस्तारणार्थाययमलोकगतस्य च ॥४॥ अकस्माल्लुंपकेनापिज्ञातित्यक्तेनपापिना ॥ एकादशीकृतायेनराज्यंलेभेसलुंपकः॥५॥ भद्रावत्यांकेतुमताकृतमेकादशीव्रतम् ॥ पुत्रहीनेनसद्वा-क्यात्पुत्रंलेभेसमानवः ॥६॥ ब्राह्मण्यैदेवपत्नीभिर्दत्तमेकादशीव्रतम् ॥ तेनलेभेस्वर्गसौख्यंधनधान्यंचमानुषी ॥७॥ पुष्पदंतीमाल्यवंतौशक्रशा-पात्पिशाचताम्॥ प्राप्तौकृतंव्रतंताभ्यांपुनर्गन्धर्वतांगतौ ॥८॥ पुराश्रीरामचन्द्रेणकृतमेकादशीव्रतम् ॥ समुद्रेसेतुबंधार्थंरावणस्यवधायच ॥९॥ लयांतेचसमुत्पन्नधातृवृक्षतलेसुराः॥ एकादशीव्रतंचक्रुःसर्वकल्याणहेतवे ॥१०॥ व्रतंचकारमेधावीद्वादश्याःपितृवाक्यतः॥ अप्सरःस्पर्शदोषेण मुक्तोभून्निर्मलद्युतिः ॥ ११ ॥ गंधर्वोललितःपत्न्यागतःशापात्सरक्षताम् ॥ एकादशीव्रतेनापिपुनर्गंधर्वतांगतः ॥ १२॥ एकादशीव्रतेनापिमां-धातास्वर्गतिंगतः ॥ सगरश्चककुत्स्थश्चमुचकुन्दोमहामतिः ॥ १३ ॥

शापसे पिशाच हो गये थे, एकादशीके व्रतसे वे दोनों फिरसे गन्धर्वताको प्राप्त हो गये ॥८॥ और पहिले रामचन्द्रने समुद्रके सेतु (पुल) बांधनेके लिये और रावणको मारनेके लिये एकादशीका व्रत किया था ॥९॥ और प्रलयके अन्तमें उत्पन्न हुये धातृवृक्षके नीचे बैठकर देवताओंने कल्याणके लिये एकादशीका व्रत किया था ॥१०॥ ऐसेही पिताके वचनसे मेधावी ऋषिने एकादशीका व्रत किया, तब वह अप्सराके स्पर्शके दोषसे छूट गया और निर्मल द्युतिमान् हो गया था ॥११॥ और ललित नामक गन्धर्व शापसे स्त्रीसहित राक्षस हो गया था, सो एकादशीके व्रतके प्रभावसे फिरसे गन्धर्वताको प्राप्त हो गया ॥१२॥ और एकादशीहीके व्रतसे मांधाता राजाभी स्वर्गको गया और सगर, ककुत्स्थ, महामति मुचकुन्द, ये भी स्वर्गको गये ॥ १३ ॥

---

१ निधिना शवधिर्भेदाइत्यमरः।

वैसेही धुन्धुमार आदि बहुतसे राजा स्वर्गको गये और एकादशीके प्रभावसे महादेव भी ब्रह्म कपालसे छूटे ॥ १४ ॥ दुष्ट बुद्धि वैश्यका पुत्र महादुष्ट जिसको जातिने त्याग
दिया था, एकादशीका व्रत करके वैकुण्ठको चला गया ॥१५॥ राजा रुक्मांगदने भी एकादशीका व्रत किया था वह इस लोकके सुखको भोगकर अपन पुर समेत वैकुण्ठको चला
गया ॥१६॥ अम्बरीष राजाने भी एकादशीका व्रत किया था, जिसको दुर्वासाकी शापरूप कृत्याभी स्पर्श नहीं कर सकी, जो ब्राह्मणका शाप आजतकभी नष्ट नहीं हुआ ॥१७॥
हेममाली यक्ष कुबेरके शापसे कुष्टी (कोढ़ी) हो गया था, वह एकादशीके व्रतको करके चन्द्रमा सा हो गया ॥१८॥ महीजित राजाने भी एकादशीका व्रत किया, सो सुन्दर पुत्रको
प्राप्तकर वैकुण्ठको चला गया ॥१९॥ और हरिश्चन्द्र राजाने भी किया, जिसको पृथ्वी मिली, राज्य मिला और अंतमें वह वैकुण्ठको प्राप्त हुआ ॥२०॥ पहिले सतयुगमें मुच-
कुन्दका जामाता (जमाई) शोभन नामका था, वह एकादशीके व्रतको इस भरतखण्डमें उपवास करके उसके प्रभावसे देवताओं सहित मंदराचलको प्राप्त हुआ ॥ २१ ॥ वह शोभन

धुंधुमारादयश्चान्येराजानोबहवस्तथा ॥ ब्रह्मकपालनिर्मुक्तोबभूवभगवान्भवः ॥१४॥ धृष्टबुद्धिर्वैश्यपुत्रोज्ञातित्यक्तोमहाखलः ॥ एकादशीव्रतंकृ-
त्वावैकुण्ठंसंजगामह ॥१५॥ राज्ञारुक्मांगदेनापिकृतमेकादशीव्रतम् ॥ तेनभूमण्डलंभुक्त्वावैकुंठंसपुरोययौ ॥१६॥ अंबरीषेणराज्ञापिकृतमेकाद-
शीव्रतम् ॥ नास्पृशद्ब्रह्मशापोपियोनप्रतिहतःक्वचित् ॥१७॥ हेममालीनामयक्षःकुष्टीधनदशापतः ॥ एकादशीव्रतंकृत्वाचन्द्रतुल्योबभूवह ॥
॥१८॥ महीजितानृपेणापिकृतमेकादशीव्रतम् ॥ तेनपुत्रंशुभंलब्ध्वावैकुंठंसजगामह ॥१९॥ हरिश्चन्द्रेणराज्ञापिकृतमेकादशीव्रतम् ॥ तेनलब्ध्वा
महीराज्यंवैकुण्ठंसपुरोययौ ॥२०॥ श्रीशोभनोनामपुराकृतेयुगेजामातृकोभून्मुचकुन्दभूभृतः ॥एकादशीं यःसमुपोष्यभारतेप्राप्तःसदेवैःकिलमंद-
राचले ॥२१॥ अद्यापिराज्यंकुरुतेकुबेरवद्राज्ञ्यायुतोसौकिलचन्द्रभागया ॥ एकादशीसर्वतिथीश्वरींपरांजानीथगोप्योनहितत्समान्या ॥२२॥
श्रीनारदउवाच ॥ इतिराधामुखाच्छ्रुत्वायज्ञसीताश्चगोपिकाः ॥ एकादशीव्रतंचक्रुर्विधिवत्कृष्णलालसाः ॥ २३ ॥ एकादशीदिनेनापिप्रसन्नः
श्रीहरिःस्वयम् ॥ मार्गशीर्षेपूर्णिमायांरासंताभिश्चकारह ॥२४॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेयज्ञसीतोपाख्यानएका-
दशीमाहात्म्यंनामनवमोऽध्यायः ॥९॥ नारदउवाच ॥ पुलिंदकानांगोपीनांकरिष्येवर्णनंह्यतः ॥ सर्वपापहरंपुण्यमद्भुतंभक्तिवर्द्धनम् ॥ १ ॥

चन्द्रभागा स्त्रीसहित अवतक मन्दराचल कुवेकी तरह राज्य करता है, सो एकादशी सब तिथियोंकी ईश्वरी है, हे गोपियों ! इसके बराबर कोई तिथि नहीं है ऐसा तुम जानो ॥२२॥
नारदजी कहते हैं-ऐसे राधिकाजीके मुखसे यज्ञ सीता गोपियोंने सुनकर विधिपूर्वक एकादशीका व्रत किया, श्रीकृष्णकी है लालसा जिनके ॥२३॥ एकादशीके दिनसे भगवान् आपही
प्रसन्न होकर मार्गशीर्षकी पूर्णमासीको उनके संग रास करने लगे ॥२४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां माधुर्य खण्डे भाषाटीकायां यज्ञसीतोपाख्यानं एकादशी माहात्मनाम नवमोऽध्यायः
॥ ९ ॥ नारदजी कहते हैं–अब यहाँसे आगे पुलिंदजा गोपियोंका वर्णन करूँगा, हे राजन् ! उसको तुम सुनो, जो सब पापोंको हरनेवाला अद्भुत पुण्यरूप और
भक्तिको बढ़ानेवाला है ॥ १ ॥

कई विंध्याचलवासी पुलिंद बड़े उद्भट थे, वे राजाके धनको लूटा करते थे, किन्तु गरीबोंको नहीं सताते थे ॥२॥ तब विन्ध्यदेशका बलवान राजा उनपर क्रोध करके दो अक्षौहिणी सेना लेकर उनके ऊपर चढ़ आया, उस बलीने उन सब पुलिंदोंको रोक लिया ॥३॥ तब उन पुलिंदोंने भी उस राजाके साथ, खड्ग, भाला, कुन्त, त्रिशूल फरसा, बरछी, पोलादी, भुशुंडी, तीरोंसे कई दिनतक युद्ध किया ॥४॥ तब उन भीलोंने यदुराज कंसको पत्र भेजा, कंसका भेजा हुआ बली प्रलंबासुर आया, वह कैसा था कि ॥ ५ ॥ आठ कोस ऊँचा काली घटा जैसा जिसका अंग था, किरीट कुण्डल पहिने, सर्पोंके हार धारण किये ॥६॥ पांवोंमें सोनेकी शृंखला (सांकडा) हाथमें गदा लिये, कालके समान जीभको लपलपाता हुआ भयंकर रूप, वृक्षों, पर्वतोंको उखाड़ता हुआ आया ॥ ७ ॥ अपने वेगसे धरतीको कम्पाता हुआ, दुष्ट, मतवाला ऐसा चला आता था, जिसको देखकर राजा हतप्रभ हो गया ॥८॥ तब वह राजा सेनासहित रणको छोड़कर भाग गया, जैसे सिंहको देखकर हाथी भाग जाता है, तब वह प्रलम्बासुर उन पुलिंदोंको साथ लेकर मथुरामें

पुलिंदाउद्भटाःकेचिद्विंध्याद्रिवनवासिनः॥ विलुंपंतोराजवसुदीनानांनकदाचन॥२॥कुपितस्तेषुबलवान्विन्ध्यदेशाधिपोबली॥अक्षौहिणीभ्यांतान्सर्वान्पुलिंदान्सरुरोधह ॥ ३ ॥ युयुधुस्तेपिखड्गैश्चकुन्तैःशूलैःपरश्वधैः ॥ शक्त्यृष्टिभिर्भुशुंडीभिःशरैःकतिदिनानि च ॥४॥ पत्रंतेप्रेषयामासुःकंसाययदुभूभृते ॥ कंसप्रणोदितोदैत्यःप्रलंबोबलवांस्तदा ॥५॥ योजनद्वयमुच्चांगंकालमेघसमद्युतिम् ॥ किरीटकुंडलधरंसर्पहारविभूषितम् ॥६॥ पादयोःशृंखलायुक्तंगदापाणिकृतांतवत् ॥ ललज्जिह्वंघोररूपंपातयन्तंगिरीन्द्रुमान् ॥७॥ कंपयंतंभुवंवेगात्प्रलंबंयुद्धदुर्मदम् ॥ दृष्ट्वा प्रधर्षितोराजासंसैन्योरणमंडलम् ॥ ८ ॥ त्यक्त्वादुद्रावसहसासिंहंवीक्ष्यगजोयथा ॥ प्रलंबस्तान्समानीयमथुरामाययौपुनः ॥९॥ पुलिन्दास्तेपिकंसस्यभृत्यत्वंसमुपागताः॥सकुटुंबा कामगिरौवासंचक्रुर्नृपेश्वर ॥१०॥ तेषांगृहेषुसंजाताःश्रीरामस्यवरात्परात् ॥ पुलिंद्यःकन्यकादिव्यारूपिण्यःश्रीरिवार्चिताः॥११॥ तद्दर्शनस्मररुजःपुलिंद्यःप्रेमविह्वलाः॥श्रीमत्पादरजोधृत्वाध्यायंत्यस्तमहर्निशम्॥१२॥ ताश्चापिरासेसंप्राप्ताः श्रीकृष्णंपरमेश्वरम्॥परिपूर्णतमंसाक्षाद्गोलोकाधिपतिंप्रभुम्१३श्रीकृष्णचरणांभोजरजोदेवैःसुदुर्लभम्॥अहो भाग्यंपुलिंदीनांतासांप्राप्तंविशेषतः ॥१४॥यःपारमेष्ठ्यमखिलंनमहेन्द्रधिष्ण्यंनोसार्वभौममनिशंनरसाधिपत्यम्॥नोयोगसिद्धिमभितोनपुनर्भवंवावांछत्यलंपरमपादरजःसुभक्तः १५

आया ॥९॥ वे पुलिंद मथुरामें आकर सकुटुम्ब कंसके सेवक हो गये, और हे नृपेश्वर ! कामवनमें वास करन लगे ॥१०॥ उनके घरमें श्रीरामके वरसे वे पुलिंदी आकर कन्या हुई, उनके दिव्य रूप थे, लक्ष्मीकी तरह वे सुन्दर हुईं ॥११॥ उन पुलिंद कन्याओंको श्रीकृष्णके दर्शनसे कामका रोग उठा, और वे प्रेममें विह्वल हो गईं, उनके चरणकमलकी रज धारण करती रातदिन ध्यान करने लगीं ॥१२॥ वे भी रासमें परिपूर्णतम साक्षात् गोलोकके पति श्रीकृष्णको प्राप्त हुईं ॥१३॥ श्रीकृष्णके चरणकमलकी रज देवताओंको भी दुर्लभ है, अहो भाग्य पुलिन्द कन्याओंका है, जिनको विशेष करके वह रज प्राप्त हुई ॥ १४ ॥ जो भगवान्‌की चरणरजको प्राप्त हो गये ऐसे जो भक्त हैं, वे कभी भी किसीकी इच्छा नहीं करते हैं, न चक्रवर्ती राज्य, न स्वर्गका, राज्य, न रसातलका राज्य, न ब्रह्माकी पदवी, न योगकी न अणिमादिक सिद्धि, न मुक्तिकी इच्छा करते हैं ॥ १५ ॥

जो निष्किंचन सुकृत अपने किये कर्मके फलसे विरक्त हैं, वे उस पदका सेवन करते हैं, जिस पदका हरिजन महात्मा मुनि हरिपद रजकी सेवा करनेवाले भक्त सेवन करते हैं, उसीको निरपेक्ष सुख कहते हैं जो और हैं, वे नैरपक्ष्यको सुख नहीं बताते हैं ॥ १६ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्यखंडे भाषाटीकायां पुलिन्द्युपाख्यानं नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ नारदजी कहते हैं, और भी गोपियोंका जो उपाख्यान है, उसको तुम सुनो, जो सब पापोंको हरनेवाला और हरिकी भक्तिको बढ़ानेवाला है ॥१॥ नीतिके वेत्ता, मार्गके दाता, गौरवर्ण, सूर्यके तुल्य, दिव्य सवारी ये तो जिनके गुण, अब नाम कहते हैं, नीतिविद् १, मार्गद २, शुक्ल ३, पतंग ४, दिव्यवाहन ५, गोपेष्ट ६, ये छः वृषभानु व्रजमें हुये ॥२॥ उनके घरोंमें लक्ष्मीपतिके वरसेही जो पुत्रियाँ हुईं, वे कोई रमा वैकुण्ठवासिनी लक्ष्मीकी सखियाँ समुद्रसे हैं जिनका जन्म ॥ ३ ॥ और ऊर्ध्व वैकुण्ठवासिनी और अजित पदवासिनी

निष्किंचनाःस्वकृतकर्मफलैर्विरागायत्तत्पदंहरिजनामुनयोमहांतः ॥ भक्ताजुषंतिहरिपादरजःप्रसक्ताअन्येविदंतिनसुखंकिलनैरपेक्ष्यम् ॥ १६ ॥
इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखंडेनारदबहुलाश्वसंवादेपुलिंद्युपाख्याननामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अन्यासांचैवगो-
पीनांवर्णनं शृणुमैथिल॥सर्वपापहरंपुण्यंहरिभक्तिविवर्द्धनम् ॥१॥ नीतिविन्मार्गदःशुक्लःपतंगोदिव्यवाहनः ॥ गोपेष्टश्चव्रजेराजञ्जाताषड्वृष-
भानवः ॥२॥ तेषांगृहेषुसंजातालक्ष्मीपतिवरात्प्रजाः ॥ रमावैकुंठवासिन्यःश्रीसख्योपिसमुद्रजाः ॥ ३ ॥ ऊर्ध्ववैकुंठवासिन्यस्तदाजनपदा-
श्रिताः ॥ श्रीलोकाचलवासिन्यःश्रीसख्योपिसमुद्रजाः ॥ ४ ॥ चिन्तयन्त्यःसदाश्रीमद्गोविन्दचरणांबुजम् ॥ श्रीकृष्णस्यप्रसादार्थंताभिर्माघ
व्रतंकृतम् ॥ ५ ॥ माघस्यशुक्लपंचम्यांवसन्तादौहरिःस्वयम् ॥ तासांप्रेमपरीक्षार्थंकृष्णोवैतद्गृहान्गतः ॥६॥ व्याघ्रचर्मांबरंबिभ्रञ्जटामुकुट
मंडितः ॥ विभूतिधूसरोवेणुंवादयन्मोहयञ्जगत् ॥ ७ ॥ तासांवीथीषुसंप्राप्तिंवीक्ष्यगोप्योपिसर्वतः ॥ आययुर्दर्शनंकर्तुंमोहिताः प्रेमविह्वलाः
॥ ८ ॥ अतीवसुंदरंदृष्ट्वायोगिनंगोपकन्यकाः ॥ ऊचुःपरस्परंसर्वाःप्रेमानन्दसमाकुलाः ॥ ९ ॥ गोप्यऊचुः ॥ कोयंशिशुर्नंदसुताकृतिर्वा
कस्यापिपुत्रोधनिनोनृपस्य ॥ नारीकुवाग्बाणविभिन्नमर्माजातोविरक्तोगतकृत्यकर्मा ॥ १० ॥

लोकाचलवासिनी सब हुईं॥४॥ये सदा ही गोविन्दके चरणकमलका चिन्तन करती थीं, श्रीकृष्णकी प्रसन्नताके लिये उन्होंने सभी माघ महीनेका व्रत किया था ॥५॥ माघके शुक्ल पक्षकी पंचमीके दिन वसन्त ऋतुके आदिमें उनके प्रेमकी परीक्षाके लिये आप श्रीकृष्ण उनके घरोंमें योगीरूप धारण करके गये ॥६॥ भस्म रमाकर बाघम्बर ओढ़कर जटाका मुकुट बांधकर वेणु बजाते जगत्को मोहित करते गये ॥७॥ उनकी गलियोंमें प्राप्त हुये उस योगीको गोपियाँ देखकर चारों ओरसे दर्शन करनेके लिये आईं प्रेममें मोहित हुईं, विह्वल हो रही थीं ॥८॥ और गोप कन्याऐं भी अति सुन्दर उस योगीको देखकर प्रेमके आनंदमें व्याकुल हुईं आपसमें बोलीं ॥ ९ ॥ यह बालक कौन है, यह तो नंदके पुत्रकी सदृश है किसी बड़े धनाढ्यका अथवा राजाका पुत्र है, किसी दुष्टा स्त्रीके कुवाक्यरूपी बाणोंसे आहत होकर विरक्त हो गया है, सब कृत्यकर्म छोड़ दिये हैं ॥ १० ॥

अतिही मनोहर है, कैसी सुकुमार देह है, कामदेव सा सुन्दर है, विश्वके मनको हरनेवाला है, अहो ! इसके बिना इसकी माता कैसे जीवित होगी, इसका पिता इसकी स्त्री, इसकी बहिन, ये सब इसके बिना कैसे जीवित होंगे ॥११॥ इस तरह चारों ओरसे झुण्डके झुण्ड आ गये, व्रजकी स्त्रियाँ आश्चर्य चकित हो गईं, प्रेममें विह्वल हुई वे सब उस योगीसे पूछने लगीं ॥१२॥ हे योगीजी ! तुम कौन हो ? तुम्हारा क्या नाम है ? तुम्हारा स्थान कहाँ है ? तुम्हारी जीविका क्या है ? हे मुने ! तुमको कौनसी सिद्धि है ? हे वक्ताओंमें श्रेष्ठ ! हमसे कहिये ॥१३॥ तब सिद्धि बोले-हम योगेश्वर हैं, हमारा निवास सदा मान सरोवरमें है, स्वयं प्रकाश हमारा नाम है, अपने पराक्रमसे कभी अन्न नहीं खाते हैं, सदा निरन्न हैं ॥१४॥ हे व्रजांगनाओ ! हम अपने स्वार्थमें परम हँस हैं, हम दिव्यदर्शी हैं, भूत, भविष्य, वर्तमानको जानते हैं ॥ १५ ॥ मन्त्र विद्याभी हम जानते हैं, मारण, द्वेषण, उच्चाटन, मोहन, वशीकरण, स्तम्भन, ये सब जानते हैं ॥१६॥ तब गोपियाँ बोलीं-हे योगिन् ! जो तुम सब विद्याको जानते हो, तो हे महामते ! बताओ हमारे मनमें क्या है ॥१७॥ तब

अतीवरम्यःसुकुमारदेहोमनोजवद्विश्वमनोहरोयम्॥अहोकथंजीवतिचास्यमातापिताचभार्याभगिनीविनैनम्॥११॥ एवंताः सर्वतोयूथीभूत्वासर्वाव्रजांगनाः ॥ पप्रच्छुस्तंयोगिवरंविस्मिताःप्रेमविह्वलाः ॥ १२ ॥ गोप्यऊचुः ॥ कस्त्वंयोगिन्नामकिंतेकुत्रवासस्तुतेमुने ॥ कावृत्तिस्तवकासिद्धिर्वदनोवदतांवरः ॥ १३ ॥ सिद्धउवाच ॥ योगेश्वरोहंमेवासःसदामानसरोवरे ॥ नाम्नास्वयंप्रकाशोऽहंनिरन्नःस्वबलात्सदा ॥ १४ ॥ स्वार्थेपरमहंसानांयाम्यहंहेव्रजांगना॥भूतंभव्यंवर्तमानंवेद्म्यहंदिव्यदर्शनः॥१५॥उच्चाटनंमारणंचमोहनंस्तंभनंतथा॥जानामिमंत्रविद्याभिर्वशीकरणमेवच ॥ १६ ॥ गोप्यऊचुः ॥ यदिजानासियोगिंस्त्वंवार्तां कालत्रयोद्भवाम् ॥ किंवर्ततेनोमनसिवदतर्हिमहामते ॥ १७ ॥ सिद्धउवाच ॥ भवतीनांचकर्णांतेकथनीयमिदंवचः ॥ युष्मदाज्ञयावावक्ष्येसर्वेषांशृण्वतामिह ॥ १८ ॥ गोप्यऊचुः ॥ सत्यंयोगेश्वरोसित्वंत्रिकालज्ञोनसंशयः॥ वशीकरणमंत्रेणसद्यःपठनमात्रतः॥१९॥ यदिसांत्रैवचायातिचिंतितोयोस्तिवैमुने ॥ तदामन्यामहेत्वांवैमंत्रिणांप्रवरंपरम् ॥ ॥ २० ॥ सिद्धउवाच ॥ दुर्लभोदुर्घटोभावोयुष्माभिर्गदितः स्त्रियः ॥ तथाप्यहंकरिष्यामिवाक्यंनचलतेसताम् ॥ २१ ॥ निमीलयतनेत्राणिमाशोचंकुरुतस्त्रियः ॥ भविष्यतिनसंदेहोयुष्माकंकार्यमेवच ॥ २२ ॥

सिद्धजी बोले कि, यह बात तो तुम्हारे कानमें कहने लायक है और यदि तुम्हारी इच्छा हो, तो सबके सुनते २ कह दूँ ॥ १८ ॥ तब गोपियाँ बोलीं-तुम सचमुचही योगेश्वर हो और निःसन्देह तुम त्रिकालज्ञ हो, किन्तु सच्चा मन्त्र शास्त्री हम तो तुमको तब जानें जबकि तुम्हारे वशीकरण मन्त्रके पढ़तेही ॥१९॥ जिसका हम चिंतन करें, वह यहाँ तत्कालही आ जाय, तभी हम हे मुनिजी ! तुमको मन्त्र शास्त्रियोंमें श्रेष्ठ जानें ॥२०॥ तब सिद्धजी बोले कि, हे स्त्रियो ! यह तो तुमने बड़ी दुर्लभ बड़ी दुर्घट बात कही है तो भी मैं तुमको करके दिखाऊँगा, क्योंकि सत्पुरुषोंका वचन झूंठा नहीं पड़ता है ॥ २१ ॥ हे स्त्रियो ! अब तुम नेत्रोंको बन्दकर लो, कुछ चिंता मत करो, तुम्हारा काम निःसन्देह हो जायगा इसमें कुछ विलम्ब नहीं है ॥ २२ ॥

नारदजी कहते हैं कि, "बहुत ठीक" ऐसा कहकर जैसेही गोपियोंने आंखें बन्द की, वैसे ही भगवान् योगीका रूप छोड़कर जल्दीही नन्द नन्दन हो गये ॥२३॥ जब आंखें खोल कर गोपियोंने देखा, तो आनन्द पूर्वक नन्द नन्दनको देखा, उस योगीके प्रभावको जानकर विस्मित हो गईं और हर्षित होकर मोहको प्राप्त हो गईं ॥ २४ ॥ तब माघ मासमें महारासके अन्दर उस पवित्र वृन्दावनमें उनके साथ हरि भगवान् कृष्णने विहार किया, जैसे इन्द्र अप्सराओंके साथ विहार करते हैं ॥२५॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्यखण्डे भाषाटीकायां रमावैकुण्ठाजितपद श्रीलोकाचलवासिनी नामुपाख्यानं नामैकादशोऽध्यायः ॥११॥ नारदजी कहते हैं, यह मैंने गोपियोंका शुभ चरित्र तुम्हारेको कहा है, अब हे मैथिल ! और भी गोपियोंके चरित्र हैं, उनको मैं तुम्हारे सामने कहता हूँ, सो तुम सुनो ॥ १ ॥ वीति होत्र १, अग्नि भुक्‌ २, साम्बु ३, श्रीकर ४, गोपति ५, श्रुत ६, व्रजेश ७, पवन ८,

श्रीनारदउवाच ॥ तथेतिमीलिताक्षीषुगोपीषुभगवान्हरिः ॥ विहायतद्योगिरूपंबभौश्रीनन्दनन्दनः ॥ २३ ॥ नेत्राण्युन्मील्यददृशुः सान-
न्दंनन्दनन्दनम् ॥ विस्मितास्तत्प्रभावज्ञाहर्षितामोहमागताः ॥२४॥ माघमासेमहारासेपुण्येवृन्दावनेवने ॥ ताभिःसार्द्धंहरीरेमेसुरीभिसुरराडिव
॥ २५ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेरमावैकुण्ठश्वेतद्वीपोर्ध्ववैकुठाजितपदश्रीलोकाचलवासिनीश्रीसखीनामुपा-
ख्याननंनामैकादशोऽध्यायः ॥११॥ श्रीनारदउवाच ॥ इदंमयातेकथितंगोपीनांचरितंशुभम् ॥ अन्यासांचैवगोपीनांवर्णनंशृणुमैथिल ॥१॥ वीतिहो-
त्राग्निभुक्सांबुःश्रीकरोगोपतिःश्रुतः ॥व्रजेशःपावनःशांतउपनन्दाव्रजेभवाः ॥२॥ धनवंतोरूपवंतःपुत्रवंतोबहुश्रुताः ॥ शीलादिगुणसंपन्नाःसर्वेदा-
नपरायणाः ॥३॥ तेषांगृहेषुसंजाताःकन्यकादेववाक्यतः ॥काश्चिद्दिव्याअदिव्याश्चतथात्रिगुणवृत्तयः ॥४॥ भूमिगोप्यश्चसंजाताःपुण्यैर्नानावि-
धैःकृतै ॥ ताराधिकासहचर्यःसख्योऽभूवन्विदेहराट् ॥५॥ एकदामानिनींराधांताःसर्वाव्रजगोपिकाः ॥ ऊचुर्वीक्ष्यहरिंप्राप्तंहोलिकायामहोत्सवे
॥ ६ ॥ गोप्यऊचुः ॥ रंभोरुचन्द्रवदनेमधुमानिनीशेराधेवचःसुललितललनेशृणुत्वम् ॥ श्रीहोलिकोत्सवविहारमलंविधातुमायातिते
पुरवनेव्रजभूषणोयम् ॥ ७ ॥ श्रीयौवनोन्मदविघूर्णितलोचनोसौनीलालकालिककलितांसकपोलगोलः ॥ सत्पीतकंचुकघनांतमशेषमारादाचाल
यन्ध्वनिमतास्वपदारुणेन ॥ ८ ॥

शांत ९, ये नौ उपनन्द व्रजमें हुये हैं ॥२॥ ये सब बड़े धनवाले, रूपवाले, पुत्रवाले, बहुत प्रसिद्ध, शीलादिगुण सम्पन्न और सभी दानी हुये ॥३॥ उनके घरोंमे देवताओंके वचनसे जो पुत्रियाँ हुईं वे सब कोई दिव्या, कोई अदिव्या और कोई त्रिगुण वृत्ति की हुई हैं ॥४॥ ये भूमिकी गोपियाँ अनेक प्रकारके पुण्योंके प्रभावसे हुई हैं, हे विदेह ! वे सब राधिकाकी सखियाँ हुईं ॥५॥ एक समय राधिकाजी मानिनी हुईं, तब होलीके उत्सवमें भगवान्‌को आये देखकर वे सब व्रजकी स्त्रियाँ राधिकाजी बोलीं ॥६॥ कि हे रम्भोरु ! हे चन्द्रवदने ! हे व्रज सुन्दरीशे ! हे राधे ! हे ललने ! हमारा सुन्दर मनोहर वचन तुम सुनो कि होलीके उत्सवका विहार करनेके लिये ये व्रजके भूषण हरि आपके नगरमें आये हैं ॥७॥ शोभाय-
मान यौवनके मदसे जिनके नेत्र घूम रहे हैं नीली अलकावलिसे शोभित हैं कन्धे और गोल कपोल जिनके, पीला जामा पहिने हैं, दूरसेही जिनके चरण कमलोंके नूपुर बजते आ रहे हैं ॥८॥

बालसूर्यकी सी कान्ति जिसकी ऐसे मुकुटको धारण किये उज्ज्वल बाजू कंकण धारण किये, बिजलीकी चमकको फीकी करनेवाले हैं कानोंमें कुण्डल जिनके पीताम्बरसे जीत ली है बिजलीकी कान्ति जिन्होंने पीताम्बरसे ऐसी शोभा हो रही है, मानो बिजलीमें लिपटी इन्द्रधनुष सहित नवीन घटाही बरस रही है ॥९॥ अबीर व कुंकुमके रससे छिप रही है देह जिनकी नवीन रंगकी भरी पिचकारी जिनके हाथमें है, दूसरेही तुम्हारी निकुञ्जपर चला रहे, तुम्हारे रास रंगके खेलमें स्थित हो रहे हैं, तुम्हारे निकलनेकी प्रतीक्षा कर रहे हैं ॥१०॥ सो तुम फाल्गुनके बहानेसे निकलो, मानको छोड़कर आज इस होलीको यश देना चाहिये, अब तो आपको अपना मंदिर रंगके जल और अत्तर, चन्दन, चोवा, अबीर, केशर, गुलाल, कुंकुमकी कीचसे सुगन्धित करना चाहिये ॥११॥ सो हे प्यारीजी ! उठिये और अपनी मण्डलीको साथ लेकर जहाँ वे हैं, वहाँ निकलिये, श्रीकृष्णके पास जल्दी चलिये, हे महामते ! ऐसा समय कभी फिर नहीं मिलेगा, बहती नदीमें हाथ धोलेओ ॥१२॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसा सुनकर मानवती राधा मान छोड़कर उठकर सखियोंको

बालार्कमौलिविमलांगदहारसुद्यद्विद्युत्क्षिपन्मकरकुंडलमादधानः ॥ पीतांबरेणजयतिद्युतिमण्डलोसौभूमण्डलेसधनुषेवघनोदिविस्थः ॥ ९ ॥ आबीरकुंकुमरसैश्चविलिप्तदेहोहस्तेगृहीतनवसेचनयंत्रआरात् ॥ प्रेक्षंस्तवाशुसखिवाटमतीवराधेत्वद्रासरंगरसकेलिरतः स्थितःसः ॥१०॥ निर्गच्छफाल्गुनमिषेणविहायमानंदातव्यमद्यचयशःकिलहोलिकायै ॥ कर्तव्यमाशुनिजमन्दिररंगवारिपाटीरपंकमकरन्दचयंचतूर्णम् ॥११॥ उत्तिष्ठगच्छसहसानिजमण्डलीभिर्यत्रास्तिसोपिकिलतत्रमहामतेत्वम् ॥ एतादृशोपिसमयोनकदापिलभ्यःप्रक्षालितंकरतलंविदितंप्रवाहे ॥ १२ ॥ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथमानवतीराधामानंत्यक्त्वासमुत्थिता ॥ सखीसंघैपरिवृताप्रकर्तुंहोलिकोत्सवम् ॥ १३ ॥ श्रीखंडागुरुकस्तूरीहरिद्राकुंकुमद्रुमैः ॥ पूरिताभिर्दृतीभिश्चसंयुक्तास्ताव्रजांगनाः ॥१४॥ रक्तहस्ताःपीतवस्त्राःकूजन्नूपुरमेखलाः ॥ गायंत्योहोलिकागीतीर्गालीभिर्हास्यसंधिभिः॥१५॥आबीरारुणचूर्णानांमुष्टिभिस्ताडितस्ततः॥ कुर्वंत्यश्चारुणंभूमिंदिगंतंचांबरंतथा॥ १६॥ कोटिशःकोटिशस्तत्रस्फुरंत्याबीरमुष्टयः॥ सुगंधारुणचूर्णानांकोटिशःकोटिशस्तथा ॥१७॥ सर्वतोजगृहुःकृष्णं कराभ्यांव्रजगोपिकाः॥ यथामेघंचदामिन्यःसंध्यायांश्रावणस्यच ॥१८॥ तन्मुखंचविलिंपंत्योऽथाबीरारुणवृष्टिभिः ॥ कुंकुमाक्तदृतीभिस्तमार्द्रीचक्रुर्विधानतः ॥ १९ ॥

साथ लेकर होलीका उत्सव करनेके लिये चलीं ॥१३॥ चन्दन, अगर, कस्तूरी, हलदी, केसर, इनके रंगसे भरी पिचकारी और गुलालसे भरी पोटलियोंको हाथमें लिये वे सखी इनके साथमें हैं ॥ १४ ॥ लाल जिनके हाथ हैं, पीले जिनके वस्त्र, जिनके नूपुर और करधनी बजती हैं कोकिल कैसे कण्ठसे होलीके गीत व हँसकी गालियोंको गातीं ॥ १५ ॥ अबीर गुलालकी मुट्ठी फेंकती, धरती, आकाश और दिशाओंको लाल करती ॥१६॥ अबीर और सुगंधित लाल गुलालकी करोड़ों मुट्ठियाँ चलाती चलीं आईं गोपियोंने ॥१७॥ चारों ओरसे श्रीकृष्णको घेर लिया, जैसे श्रावणकी सन्ध्यामें बिजली श्याम घटासे लिपट जाती है ॥१८॥ श्रीकृष्णके मुखको लेपती, अबीर गुलालकी वर्षा करती कुंकुम और रंगकी भरी पिचकारियोंसे उन गोपियोंने श्रीकृष्णको लालरंगमें विधिपूर्वक खूब भिगो दिया ॥ १९ ॥

भगवान् भी वहाँ जितनी गोपियाँ थीं, उतनेही अपने रूप धारण करके हे नृपेश्वर.! विहार करने लगे ॥२०॥ उस होलीके उत्सवमें राधा सहित श्रीकृष्णकी बड़ी शोभा हुई, जैसे बिजलीसे श्यामघटाकी शोभा होती है ॥२१॥ तब राधिकाके हस्तकमलसे अंजनसे अंजे हैं नेत्र कमल जिनके ऐसे श्रीकृष्णभी अपने नवीन पीताम्बर रूप अपना स्मृतिचिह्न गोपियोंके लिये देकर देवताओंके पुष्पोंकी वर्षा करते आप नन्द महलको गये हैं ॥२२॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां माधुर्य खण्डे भाषाटीकायां होलिकोत्सवे दिव्य त्रिगुणवृत्ति भूमिगोप्युपाख्यानं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ नारदजी कहते हैं, अब देवताओंकी कन्या जो गोपियाँ हुई हैं उनका उपाख्यान है, उसको सुनो जो मनुष्योंके लिये धर्म, अर्थ, काम, मोक्षको देनेवाला है और भक्तिको बढ़ानेवाला है ॥१॥ मालव देशमें एक दिवस्पति नामसे विख्यात गोप हुआ, जिसके हजार स्त्रियाँ थीं, बड़ा धनी और अत्यन्त नीतिमान् ॥२॥

भगवानपितत्रैवयावतीर्व्रजयोषितः ॥ धृत्त्वारूपाणितावंतिविजहारनृपेश्वर॥२०॥राधयाशुशुभेतत्रहोलिकायामहोत्सवे ॥ वर्षासंध्याक्षणेकृष्णः
सौदामिन्याघनोयथा॥२१॥कृष्णोपितद्धस्तकृताक्तनेत्रोदत्त्वास्वकीयंनवमुत्तरीयम् ॥ ताभ्योययौनन्दगृहंपरेशोदेवेषुवर्षत्सुचपुष्पवर्षम् ॥२२॥
इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखण्डे नारदबहुलाश्वसंवादे होलिकोत्सवेदिव्यात्रिगुणवृत्तिभूमिगोप्युपाख्यानंनामद्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥
श्रीनारदउवाच ॥ अथदेवांगनानांचगोपीनांवर्णनंशृणु ॥ चतुष्पदार्थदंनृणांभक्तिवर्धनमुत्तमम् ॥१॥ बभूवमालवेदेशेगोपोनन्दोदिवस्पतिः ॥
भार्यासहस्रसंयुक्तोधनवान्नीतिमान्परः ॥२॥ तीर्थयात्राप्रसंगेनमथुरायांसमागतः ॥ नन्दराजंव्रजाधीशंश्रुत्वाश्रीगोकुलंययौ॥३॥मिलित्वागोपराजंसंदृष्ट्वावृन्दावनश्रियम् ॥ नन्दराजाज्ञयातत्रवासंचक्रेमहामनाः ॥४॥ योजनद्वयमाश्रित्यघोषंचक्रेगवांपुनः ॥ मुदंप्रापव्रजेराजञ्ज्ञातिभिः
सदिवस्पतिः ॥५॥ तस्यदेवलवाक्येनसर्वादेव ननस्त्रियः ॥ जाताःकन्यामहादिव्याज्वलदग्निशिखोपमाः ॥६॥ श्रीकृष्णंसुन्दरंदृष्ट्वामोहिताःकन्यकाश्चताः ॥ दामोदरस्यप्राप्त्यर्थंचक्रुर्माघव्रतंपरत् ॥७॥ अर्धोदयेकैयमुनांनित्यंस्नात्वाव्रजांगनाः ॥ उच्चैर्जगुःकृष्णलीलांप्रेमास्पदसमाकुलाः॥
॥ ८ ॥ तासांप्रसन्नःश्रीकृष्णोवरंब्रूहीत्युवाचह ॥ ताऊचुस्तंपरंनत्वाकृतांजलिपुटाःशनैः ॥ ९ ॥

वह तीर्थयात्राके प्रसंगसे मथुरामें आया, तब व्रजके राजा नंदरायको सुनकर गोकुलमें आया ॥३॥ नंदरायसे मिलकर वृन्दावनकी शोभाको देखकर नन्दरायकी आज्ञासे बड़े उदार मनवाला वह दिवस्पति व्रजमही निवास करने लगा ॥४॥ उसने दो योजनमें अपनी गौओंका घोष बनाया, जातिमें बड़े आनन्दसे रहा जैसे स्वर्गमें इन्द्र रहता है ॥ ५ ॥ उसके देवल ऋषीके वचनसे उसकी स्त्रियोंके गर्भमें देवताओंकी स्त्रियाँ जलती अग्निके समान जिनके तेज ऐसी दिव्य देवांगना कन्याएँ हुईं ॥६॥ सुन्दर श्रीकृष्णको देखकर वे कन्याएँ मोहित हो गईं, तब वे दामोदर (भगवान् कृष्ण) की प्राप्तिके लिये माघ महीनेका स्नानव्रत करने लगीं ॥७॥ अब सूर्य आधा उदय हो, तब यमुनाजीपर स्नान करनेके लिये अति प्रेममें आकुल ऊंचे स्वरसे श्रीकृष्णकी लीलाको गाया करती थीं ॥८॥ उनपर प्रसन्न होकर श्रीकृष्ण बोले "मैं प्रसन्न हुआ हूँ" तुम वर मांगो तब हाथ जोड़कर धीरेसे वे बोलीं ॥९॥

हे प्रभो ! आप तो योगीश्वरोंको भी दुर्लभ हो, सर्वेश्वर हो, कारणके भी कारण हो, वंशीधर हो, हमारी आँखोंके सामने सदाही रहो, कामदेवके मनको भी मथनेवाले आपके अंग हैं ॥१०॥ "तथास्तु" अर्थात् वैसाही हो ऐसा कहकर आदिदेव हरिने उनको दर्शन दिया, नारदजी कहते हैं कि, हे राजन् ! वह ही भगवान् सदाही तुम्हारे नेत्रगोचर होवें, और जब स्मरण करे तबही बुलाये हुयेकी तरह चित्तमें आजायें ॥११॥ परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्णही हैं, और कोई अवतार परिपूर्ण नहीं है, कैसे कि जो आप एक कार्यके लिये आये, और करोड़ों कार्य किये ॥ १२ ॥ बांधी है पीताम्बरकी फेट जिन्होंने मोर चन्द्रिकाका मुकुट धारण करनेसे झुकी है गर्दन जिनकी, लकुट और वंशी हैं हाथमें जिनके हिल रहे हैं मकराकृत कुण्डल जिनके, नटवर वेषको धारण करनेवाले अति चतुर शिरोमणि श्रीकृष्णको मैं भजता हूँ ॥१३॥ आदिदेव भगवान् भक्तिहीसे वशमें होते हैं, यहाँ गोपियाँ ही प्रमाण हैं, जिन गोपियोंने न तो सांख्य पढा, और न जिन्होंने योगाभ्यास किया, किन्तु प्रेमहीसे उन भगवान्के रूपको प्राप्त हो गईं ॥१४॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्यखण्डे भाषाटीकायां

॥ गोप्यऊचुः ॥ योगीश्वराणांकिलदुर्लभस्त्वंसर्वेश्वरःकारणकारणोसि ॥ त्वंनेत्रगामीभवतात्सदानोवंशीधरोमन्मथमन्मथांगः ॥ १० ॥
तथास्तुचोक्त्वाहरिरादिदेवस्तासांतुयोदर्शनमाततान ॥ भूयात्सदातेहृदिनेत्रमार्गेतथासआहूतइवाशुचित्ते ॥ ११ ॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृ-
ष्णोनान्यएवहि ॥ एककार्यार्थमागत्यकोटिकार्यंचकारह ॥१२॥ परिकरीकृतपीतपटंहरिंशिखिकिरीटनतीकृतकंधरम् ॥ लकुटवेणुकरंचलकुं-
डलंपटुतरंनटवेषधरंभजे ॥१३॥ भक्त्यैववश्योहरिरादिदेवःसदाप्रमाणंकिलचात्रगोप्यः ॥ सांख्यंचयोगंनकृतंकदापिप्रेम्णैवयस्यप्रकृतिंगताः
स्युः ॥ १४ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांमाधुर्यखण्डेदेवजनस्त्र्युपाख्यानंनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ जालंधरीणांगोपी-
नांजन्मानिशृणुमैथिल ॥ कर्माणिचमहाराजपापघ्नानिनृणांसदा ॥ १॥ राजन्त्सप्तनदीतीरेरंगपत्तनमुत्तमम् ॥ सर्वसंपद्युतं दीर्घयोजनद्वयवर्तु-
लम् ॥२॥ रंगोजिस्तत्रगोपालः पुराधीशोमहाबलः ॥ पुत्रपौत्रसमायुक्तोधनधान्यसमृद्धिमान् ॥३॥ हस्तिनापुरनाथायधृतराष्ट्रायभूभृते ॥
हैमानामर्बुदशतंवार्षिकंसददौसदा ॥४॥ एकदातत्रवर्षांतेव्यतीतेकिलमैथिल ॥ वार्षिकंतुकरंराज्ञेनददौसमदोत्कटः ॥५॥ मेलनार्थंनचायाते-
रंगोजौगोपनायके ॥ वीरादशसहस्राणिधृतराष्ट्रप्रणोदिताः ॥ ६ ॥

देवजनस्त्र्युपाख्यानं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥ नारदजी कहते हैं जालंधरी जो गोपियाँ हुईं उनके जन्मको तुम सुनो और मनुष्योंके पाप दूर करनेवाले उनके जो कर्म हैं, उनको सुनो ॥१॥ हे राजन् ! सप्तनदीके तीरपर एक अत्युत्तम रंगपत्तन नामक नगर था, सब सम्पत्तियाँ जिसमें थीं, बहुत लम्बा व आठ कोसमें गोल था ॥२॥ रंगोजी नामक गोपाल वहाँ था, पुरका मालिक था, महाबली था, पुत्र, पौत्र, और धनधान्यकी सब समृद्धिसे युक्त था ॥३॥ वह रंगोजी हस्तिनापुरके स्वामी धृतराष्ट्रको सौ करोड़ मोहरें वार्षिक कर को दिया करता था ॥ ४ ॥ हे मैथिल ! एक समय उस मदोत्कटने वर्ष व्यतीत हो जानेपर भी राजाको कर नहीं दिया ॥५॥ और रंगोजी गोप नामक जब मिलनेको भी नहीं आया, तब धृतराष्ट्रने दश हजार योद्धा भेजे ॥ ६ ॥

वे योद्धा रंगोजीको बांधकर हस्तिनापुरको ले गये, तब रंगोजी कितने वर्षोंतक कारागार (बंदीखाना) में रहा ॥ ७ ॥ रुका भी रहा, मारा भी गया, तो भी महालोभी रंगोजी डरा नहीं और धृतराष्ट्रको कुछ नहीं दिया ॥८॥ फिर किसी समय महा भयंकर जो बंदीखाना था, उससे यह निकल गया, फिर भागकर रातमें रंगपुरको चला आया ॥९॥ फिर उसको पकड़नेके लिये धृतराष्ट्रने तीन अक्षौहिणी सेना भेजी, जो बल-वाहनोंसे समर्थ थी ॥१०॥ रंगोजी गोपका उन सेनाओंसे चमकते तीखे बाणोंसे युद्ध हुआ, कवच पहिनकर बारम्बार रंगोजी लड़ा, बार बार धनुषका टंकार किया ॥११॥ शत्रुओंने जब कवच काट डाला, धनुष तोड़ डाला, सेना मार डाली, फिर कई दिनतक पुरमें आकर लड़ा ॥१२॥ फिर जब यह अनाथ हो गया, तब शरण ढूँढ़ने लगा, तब भयसे पीड़ित हो, कंस राजाके पास दूत भेजा ॥ १३ ॥ वह दूत मथुरामें आकर कंसकी सभामें गया, नीची गर्दन करके कंसको प्रणाम करके दया उत्पन्न करता हुआ बोला ॥१४॥ हे नृप ! रंगनगरमें एक रंगोजी नामका गोप है, नीतिधारियोंमें श्रेष्ठ है, पुरका स्वामी है, सो शत्रुओं

बद्धातंदामभिर्गोपमाजग्मुस्तेगजाह्वयम् ॥ कतिवर्षाणिरंगोजिःकारागारेस्थितोऽभवत् ॥७॥ सन्निरुद्धस्ताडितोपिलोभीभीरुर्नचाभवत् ॥ नद-
दौसधनंकिंचिद्धृतराष्ट्रायभूभृते ॥८॥ कारागारान्महाभीमात्कदाचित्सपलायितः ॥ रात्रौरंगपुरंप्रागाद्रंगोजिर्गोपनायकः ॥९॥ पुनस्तंहिस-
माहर्तुंधृतराष्ट्रप्रणोदितम् ॥ अक्षौहिणीत्रयंराजन्समर्थबलवाहनम् ॥१०॥ तेनसार्द्धंसबाणौघैस्तीक्ष्णधारैः स्फुरत्प्रभैः ॥युयुधेदंशितोयुद्धेधनुष्टं-
कारयन्मुहुः ॥ ११ ॥ शत्रुभिश्छिन्नकवचश्छिन्नधन्वाहतस्वकः ॥ पुरमेत्यभृशंचक्रेरंगोजिः कतिभिर्दिनैः ॥१२॥ अनाथःशरणंचेच्छन्कंसाय
यदुभूभृते ॥ दूतंस्वंप्रेषयामासरंगोजिर्भयपीडितः॥१३॥ दूतस्तुमथुरामेत्यसभांगत्वानताननः ॥ कृतांजलिश्चौग्रसेनिंनत्वाप्राहगिरार्द्रया ॥१४॥
रंगोजिनामानृपरंगपत्तनेगोपोस्तिनीतिज्ञवरःपुराधिपः ॥ स्वशत्रुसंरुद्धपुरोमहाधिभृदलब्धनाथः शरणंगतस्तव ॥१५॥ त्वंदीनदुःखार्तिहरोमही-
तलेभौमादिसंगीतगुणोमहाबलः ॥ सुरासुरानुद्भटभूमिपालकान्विजित्ययुद्धेसुरराडिवस्थितः ॥१६॥ चन्द्रंचकोरश्चरविंकुशेशयंयथाशरच्छीकर-
मेवचातकः ॥ क्षुधातुरोन्नंचजलंतृषातुरःस्मरत्यसौशत्रुभयेतथातव ॥ १७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थं श्रुत्वावचस्तस्यकंसोवैदीनवत्सलः ॥
दैत्यकोटिसमायुक्तोमनोगंतुंसमादधे ॥ १८ ॥ गोमूत्रचयसिन्दूरकस्तूरीपत्रभृन्मुखम् ॥ विंध्याद्रिसदृशंश्याममंमदनिर्झरसंयुतम् ॥ १९ ॥

ने उसका पुर घेर लिया है, वह महादुःखी है, कोई नाथ उसका नहीं है, सो हे महाराज ! वह आपकी शरणमें आया है ॥१५॥ और पृथ्वीतलमें दीनके दुःख हरनेवाले तो आपही हो, भौमादिक आपके गुण गाते है, महाबली हो, जो जो सुर असुर उद्भट हुये, उनको युद्धमें जीतकर इन्द्रकी तरह विराज रहे हो ॥१६॥ चकोर जैसे चन्द्रमाको देखता है, कमल जैसे सूर्यको देखता है, चातक जैसे शरदऋतुकी बूंदको, भूखा जैसे अन्नको, प्यासा जैसे जलको, ऐसेही शत्रुके भयसे रंगोजी आपको देखता है ॥ १७ ॥ नारदजी कहते हैं कि, कंसराजने ऐसे दूतका वचन सुनकर दीनवत्सल हो करोड़ दैत्योंको साथ लेकर चलनेके लिये विचार किया ॥ १८ ॥ गोमूत्र, सिंदूर और कस्तूरी इनसे हुई है, मुखकी रचना जिसकी विन्ध्याचलसा ऊँचा और काला मद जिसके झरे ॥ १९ ॥

पांवमें सोनेकी सांकल जिसके, घनके समान गर्जनेवाले ऐसे कुवलयापीड हाथीपर चढ़कर मदमें उत्कट ॥२०॥ चाणूर, मुष्टिक, केशी व्योमासुर और वृषासुर इनको साथ लेकर कंस कवच पहन कर रंग पत्तनमें आया ॥२१॥ तब यादवोंका और कौरवोंका परस्पर बाणोंसे, खड्गोंसे और त्रिशूलोंसे बड़ा घोर युद्ध हुआ,॥२२॥ जब बाणोंका बड़ा अन्धकार हुआ, तब कंस एक बड़ी भारी गदा लेकर कौरव सेनामें चला; ऐसे नाश करने लगा, जैसे वनमें दावानल करती है ॥२३॥ किन्हीं किन्हीं वीरोंको तो वज्र तुल्य गदासे कवच सहित मारकर पृथ्वीपर ऐसे गिरा, जैसे इन्द्र वज्रसे पर्वतको गिराता है ॥ २४ ॥ पांवोंसे तो रथ तोड़ डाले और एडियोंकी मारसे घोड़ोंको हाथियोंसे हाथियोंको मार डाला, और कितनेही हाथियोंको उनके पांव पकड़कर उछाल दिया ॥२५॥ और कितनेही हाथियोंको तो उनके कंधोंमें और बगलमें छत्री अम्यारी सहित पकड़कर बड़े जोरसे घुमाकर

पादेचशृंखलाजालंनदंतंघनवद्भृशम् ॥ द्विपंकुवलयापीडंसमारुह्यमदोत्कटः ॥२०॥ चाणूरमुष्टिकाद्यैश्चकेशीव्योमवृषासुरैः ॥ सहसादंशितः कंसःप्रययौरंगपत्तने॥२१॥ यदूनांचकुरूणांचवलयोस्तुपरस्परम् ॥ बाणैःखड्गैस्त्रिशूलैश्चघोरंयुद्धंबभूवह ॥२२॥ बाणांधकारेसंजातेकंसोनीत्वा महागदाम् ॥ विवेशकुरुसेनासुवनेवैश्वानरोयथा ॥ २३ ॥ कांश्चिद्वीरान्सकवचान्गदयावज्रकल्पया ॥ पातयामासभूपृष्ठेवज्रेणेंद्रोयथागिरिम् ॥२४॥ रथान्ममर्दपादाभ्यांपार्ष्णिघातेनघोटकान् ॥ गजेगजंताडयित्वागजान्प्रोन्नीयचांघ्रिषु ॥२५॥ स्कन्धयोःकक्षयोर्धृत्वासनीडान्रत्नकंब-लान् ॥ कांश्चिद्बलाद्भ्रामयित्वाचिक्षेपगगनेबली ॥२६॥ गजान्शुंडासुचोन्नीयलोलघंटासमावृतान् ॥ चिक्षेपसंमुखेराजन्नृधेव्योमासुरोबली ॥२७॥ रथान्गृहीत्वासाश्वांश्चशृंगाभ्यांभ्रामयन्मुहुः॥ चिक्षेपदिक्षुबलवान्दैत्योदुष्टोवृषासुरः॥२८॥ बलात्पश्चिमपादाभ्यांवीरानश्वानितस्ततः॥ पातयामासराजेंद्रकेशीदैत्याधिपोबली ॥२९॥ एवंभयंकरंयुद्धंदृष्ट्वावैकुरुसैनिकाः॥ शेषाभयातुरावीराजग्मुस्तेपिदिशोदश॥३०॥ रंगोजिसकुटुं-बंतंनीत्वाकंसोथदैत्यराट्॥ मथुरांप्रययौवीरोनादयन्दुंदुभीन्शनैः॥३१॥ श्रुत्वापराजयंस्वस्यकौरवाःक्रोधमूर्च्छिताः ॥ दैत्यानांसमयंदृष्ट्वासर्वे वैमौनमास्थिताः ॥ ३२ ॥ पुरंबर्हिषदंनामव्रजसीम्निमनोहरम् ॥ रंगोजयेददौकंसोदैत्यानामधिपोबली ॥ ३३ ॥

महाबली कंसने आकाशमें फेंक दिया ॥२६॥ और कितनेही हाथियोंकी सूंड़ पकड़कर चञ्चल घण्टा जिनमें बज रहे, उनको व्योमासुर बलीने हे राजन् ! सेनामें ही सामने फेंक दिया ॥२७॥ और दुष्ट वृषासुर सींगोंपर घोड़ों सहित रथोंको उठाकर घुमा घुमाकर दशों दिशाओंमें फेंकने लगा ॥२८॥ और केशी दानव जोरसे पिछली दुलत्तीसे पकड़ पकड़ कर घोड़ोंको और वीरोंको इधर उधर गिराने लगा ॥२९॥ तब ऐसे भयंकर युद्धको देखकर कौरव सेनाके जो बचे बचाये वीर थे, वे भयके मारे दशों दिशाओंमें भाग गये ॥३०॥ ऐसे कंस राजा जीतकर नगाडे बजाता, कुटुम्ब सहित रंगोजी गोपको मथुरामें ले आया ॥३१॥ उसके बाद कौरव अपनी हार सुनकर क्रोधमें मूर्च्छित हो गये, दैत्योंका समय अच्छा जानकर चुप होकर बैठ गये ॥३२॥ तब दैत्योंका स्वामी बली जो कंस है,उसने व्रजकी सीमामें एक बड़ा मनोहर बर्हिषद नामक नगर था, वह नगर रंगोजी गोपको दे दिया ॥३३॥

तब रंगोजी गोप नायक वहाँ रहने लगा, उसकी स्त्रियोंमें जालन्धरी गोपी भगवान्‌के वरसे हुईं ॥३४॥ उत्तम गोप जनोंके साथ उनके विवाह हुये, वे रूप यौवनसे भूषित थीं, जार धर्मसे श्रीकृष्णमें उन्होंने स्नेह किया ॥३५॥ चैत्रके महीनेमें वृन्दावनके ईश्वर स्वयम् श्रीकृष्णने वृन्दावनमें उनके साथ विहार किया ॥३६॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्य्यखण्डे भाषाटीकायां जालंधर्युपाख्यानं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥ नारदजी कहते हैं कि, व्रजमें शोण पुरका स्वामी एक नन्द नामक गोप हुआ, वह महाधनी था, हे मैथिल ! उसके पांच हजार स्त्रियाँ थीं ॥१॥ उनके हे नृप ! मत्स्यावतारके वरसे समुद्रकी कन्या तथा और भी गोपी हुईं, वैसेही आज भी पृथ्वीके दोहनेमें जो अनेक विचित्र औषधियाँ हुईं वे ॥२॥ और बर्हिष्मती पुरीकी जो स्त्रियाँ थीं, वे पृथुके वरसे और वैसेही नर नारायणके वरसे अप्सराएं ॥३॥ और सुतलवासिनी वामनजीके वरसे तथा नागेन्द्र कन्याएं शेषजीके

वासंचकारतत्रैवरंगोजिर्गोपनायकः ॥ बभूवुस्तस्यभार्यासुजालंधर्योहरेर्वरात् ॥ ३४ ॥ परिणीतागोपजनैरूपयौवनभूषिताः ॥ जारधर्मेणसुस्नेहं
श्रीकृष्णेताःप्रचक्रिरे ॥ ३५ ॥ चैत्रमासेमहारासेताभिःसाकंहरिःस्वयम् ॥ पुण्येवृन्दावनेरम्येरेमेवृन्दावनेश्वरः ॥ ३६ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहिता-
यांमाधुर्यखण्डेजालंधर्युपाख्याननामचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ व्रजेशोणपुराधीशोगोपोनन्दोधनीमहान् ॥ भार्यापंच
सहस्राणिबभूवुस्तस्यमैथिल ॥१॥ जातामत्स्यवरात्तास्तुसमुद्रेगोपकन्यकाः ॥ तथान्याश्चविचित्रापृथिव्यादोहनान्नृप ॥ २ ॥ बर्हिष्मतीपुरं-
ध्र्योयाजाताजातिस्मराःपराः॥ तथान्याप्सरसोऽभूवन्वरान्नारायणस्यच ॥३॥ तथासुतलवासिन्योवामनस्यवरात्स्त्रियः ॥ तथानागेन्द्रकन्या-
श्चजाताःशेषवरात्परात् ॥ ४ ॥ ताभ्योदुर्वाससादत्तंकृष्णापंचांगमद्भुतम् ॥ तेनसंपूज्ययमुनांववि्रेश्रीपतिंवरम् ॥५॥ एकदाश्रीहरिस्ताभि-
र्वृन्दारण्येमनोहरे ॥ यमुनानिकटेदिव्येपुंस्कोकिलतरुव्रजे ॥ ६ ॥ मधुपध्वनिसंयुक्तेकूजत्कोकिलसारसे ॥ मधुमासेमन्दवायौवसन्तलतिका
वृते ॥ ७ ॥ दोलोत्सवंसमारेभेहरिर्मदनमोहनः ॥ कदम्बवृक्षेरहसिकल्पवृक्षमनोहरे ॥ ८ ॥ कालिन्दीजलकल्लोलकोलाहलसमाकुले ॥
तद्दोला खेलनंचक्रुस्तागोप्यःप्रेमविह्वलाः ॥ ९ ॥

वरसे, ये सब शोणपुराधीश जो नन्द नामक गोप था उसकी पांच हजार जो स्त्रियाँ थीं, उनके गर्भोंसे उत्पन्न हुईं ॥४॥ उन गोपियोंको दुर्वासा मुनिने कालिंदीका पंचांग दिया, उससे यमुनाजीको पूजकर उन गोपियोंने श्रीकृष्णको वर लिया॥५॥एक समय श्रीधर भगवानने उन गोपियोंके साथ उस मनोहर वृन्दावनमें जहाँ वृक्षोंपर यमुनाके निकट पुंस्कोकिलाओंके समूह और सारस बोल रहे हैं ॥६॥ भ्रमर जिनमें गुञ्जार कर रहे, ऐसी वसन्तकी लीलाओंसे आवृत मन्द मन्द पवन जहाँ चल रही है, उस वृन्दावनमें चैत्रके महीनेमें ॥७॥ वहाँ मदन मोहनने कल्प वृक्षके समान जो कदम्बके वृक्ष उनके नीचे एकान्तमें हिंडोलाके उत्सवको प्रारम्भ किया ॥ ८ ॥ कालिंदीके जलकी चञ्चल लहरोंका कोलाहल जिसमें, वहाँ प्रेममें विह्वल हुईं सब गोपियोंने हिंडोलके उत्सवको प्रारम्भ किया ॥ ९ ॥

करोड़ों चन्द्रमाकी सी कान्ति जिसकी ऐसी जो कीर्त्ति नन्दिनी राधा है, उसके साथ वृन्दावनम श्रीकृष्ण ऐसे रमण किये जैसे रतिके साथ कामदेव रमण करते हैं ॥ १० ॥ इस प्रकार सब गोपियाँ परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्णको प्राप्त हुईं, उनके तपका कोई वर्णन कर सकता है क्या ? अर्थात् नहीं ॥११॥ और जो नागेन्द्र कन्याएं थीं, उन सबने भी चैत्रके महीनेमें मनोहर कालिंदीके तीरपर बलभद्रके साथ विहार किया ॥ १२ ॥ यह मैंने तुम्हारे सामने गोपियोंका शुभचरित्र वर्णन किया है, यह सब पापोंको हरनेवाला और अत्यन्त पवित्र है, अब तुम आगे क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥१३॥ तब बहुलाश्व राजा बोला कि, जो दुर्वासाने कालिंदीका पंचांग गोपियोंको दिया था, जिससे उनको श्रीकृष्णकी प्राप्ति हुई, वह मुझसे कहिये ॥१४॥ तब नारदजी कहते हैं कि हे राजन् ! यहाँ एक बहुत पुराना इतिहास वर्णन करते हैं, जिसके स्मरण करनेसे ही पापोंकी हानि होती है ॥१५॥

राधयाकीर्तिसुतयाचन्द्रकोटिप्रकाशया ॥ रेजेवृन्दावनेकृष्णोयथारत्यारतीश्वरः ॥१०॥ एवंप्राप्ताश्चयासर्वाः श्रीकृष्णंनंदनन्दनम् ॥ परिपूर्णतमंसाक्षात्तासांकिंवर्ण्यतेतपः ॥११॥ नागेन्द्रकन्यायाः सर्वाश्चैत्रमासेमनोहरे ॥ बलभद्रंहरिं प्राप्ताःकृष्णातीरेतुताःशुभाः ॥ १२॥ इदंमयाते कथितंगोपीनांचरितंशुभम् ॥ सर्वपापहरंपुण्यंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ १३ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ यमुनायाश्चपंचांगंदत्तंदुर्वाससामुने ॥ गोपीभ्योयेनगोविन्दःप्राप्तस्तद्ब्रूहिमांप्रभो ॥१४॥ श्रीनारदउवाच ॥ अत्रैवोदाहरंतीममितिहासंपुरातनम् ॥ यस्यश्रवणमात्रेणपापहानिः पराभवेत्॥१५॥ अयोध्याधिपतिः श्रीमान्मांधाताराजसत्तमः॥ मृगयांविचरन्प्राप्तःसौभरेराश्रमंशुभम् ॥१६॥ वृन्दावनेस्थितंसाक्षात्कृष्णातीरेमनोहरे ॥ नत्वाजामातरंराजासौभरिंप्राहमानदः ॥ १७ ॥ मांधातोवाच ॥ भगवन्सर्ववित्साक्षात्त्वंपरावरवित्तमः ॥ लोकानांतमसोंधानांदिव्यसूर्यइवापरः ॥ १८ ॥ इहलोकेभवेद्राज्यं सर्वसिद्धिसमन्वितम् ॥ अमुत्रकृष्णसारूप्यंयेनस्यात्तद्वदाशुमे ॥१९॥ सौभरिरुवाच ॥ यमुनायाश्चपंचांगंवदिष्यामितवाग्रतः ॥ सर्वसिद्धिकरंशश्वत्कृष्णसारूप्यकारणम् ॥ २० ॥ यावत्सूर्यउदेतिस्मयावच्चप्रतितिष्ठति ॥ तावद्राज्यप्रदंचात्रश्रीकृष्णवशकारकरम् ॥ २१ ॥

पहिले एक अयोध्याका पति बड़ा लक्ष्मीवान् मांधाता राजा था, वह शिकार खेलते २ सौभरि ऋषिके शुभ आश्रममें पहुँचा ॥१६॥ तब वह राजा वृन्दावनमें मनोहर कालिंदीके तीरपर साक्षात् विराजमान् जो जमाई सौभरि ऋषि हैं उनको नमस्कार करके राजा अपने जमाई सौभरि ऋषिसे बोला ॥ १७ ॥ तुम सर्वज्ञ हो, साक्षात् भूत भविष्यके ज्ञाता हो अज्ञानसे अंधे जो लोक हैं, उनको ज्ञान देनेके लिये तुम दूसरे सूर्य हो ॥ १८ ॥ हे भगवन् ! इस लोकमें सर्व सिद्धिका दाता राज्य और परलोकमें श्रीकृष्णका सारूप्य जिस तरह मिले, वह मुझसे कहो ॥१९॥ तब सौभरि ऋषि बोले- हे राजन् ! मैं यमुनाजीका पंचांग तुम्हारे सामने कहूँगा, जो सर्वसिद्धिको करनेवाला और कृष्णके सारूप्यका कारण है ॥ २० ॥ सूर्योदयसे सूर्यास्त तकके राज्यको देनेवाला और श्रीकृष्णको वश करनेवाला है ॥ २१ ॥

पटल १, पद्धति २, कवच ३, स्तोत्र ४, और सहस्रनाम ५, हे सूर्य वंशेन्द्र ! पंडित इसको पंचांग कहते हैं ॥२२॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां माधुर्य खण्डे सौभरि मान्धाता संवादे भाषाटीकायां बर्हिष्मती पुरंध्यप्सरः सुतलवासिनी नागेन्द्रकन्यानामुपाख्याने पंचदशोध्यायः ॥१५॥ मान्धाता राजा कहता है, कि श्रीकृष्णकी जो पटरानी श्रीयमुनाजी उनका निर्मल जो कवच है, हे महाभाग ! मुझको दीजिये मैं सदा धारण करूँगा ॥ १ ॥ तब सौभरि मुनि बोले-यमुनाजीका कवच सबकी रक्षण करनेवाला है, मनुष्योंको धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, चारों पदार्थोंको देनेवाला है, हे राजन् ! हे महामते ! उसको तुम सुनो ॥२॥ श्यामसुन्दर जिसका रूप कमलसे नेत्र, चतुर्भुजी सुन्दरी रथमें बैठी ऐसी श्रीयमुनाजी का ध्यान करके कवचको धारण करे ॥ ३ ॥ पहिले स्नान करके मौन होकर पूर्व मुख हो कुशके आसनपर बैठ करके संध्योपासन करके कुशोंसे शिखर (चोटी) बांधकर फिर ब्राह्मण कवचको पढ़े ॥४॥ यमुना सदा मेरे शिरकी रक्षा करे, कृष्णा दोनों नेत्रोंकी रक्षा करे, श्यामा मेरी भ्रुकुटियोंकी रक्षा करे, स्वर्गवासिनी मेरी नाककी रक्षा करे ॥ ५ ॥

कवचंचस्तवंनाम्नांसहस्रपटलंतथा ॥ पद्धतिंसूर्यवंशेन्द्रपंचांगानिविदुर्बुधाः ॥ २२ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखंडेनारदबहुलाश्वसंवादे श्रीसौभरिमांधातृसंवादेबर्हिष्मतीपुरंध्यप्सरःसुतलवासिनीनागेंद्रकन्योपाख्यानंनामपंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ मांधातोवाच ॥ यमुनायाः कृष्णराज्ञ्याःकवचंसर्वतोऽमलम् ॥ देहिमह्यंमहाभागधारयिष्याम्यहंसदा ॥ १ ॥ सौभरिरुवाच ॥ यमुनायाश्चकवचंसर्वरक्षाकरंनृणाम् ॥ चतुष्पदार्थदंसाक्षाच्छृणुराजन्महामते ॥ २ ॥ कृष्णांचतुर्भुजांश्यामांपुंडरीकदलेक्षणाम् ॥ रथस्थांसुन्दरींध्यात्वाधारयेत्कवचंततः ॥ ३ ॥ स्नातःपूर्वमुखोमौनी कृतसंध्यःकुशासने ॥ कुशैर्बद्धशिखोविप्रःपठेद्वैस्वस्तिकासनः ॥४॥ यमुनामेशिरःपातुकृष्णानेत्रद्वयं सदा ॥ श्यामाभ्रूभंगदेशंचनासिकांनाकवासिनी ॥ ५ ॥ कपोलौपातुमेसाक्षात्परमानन्दरूपिणी ॥ कृष्णवामांससंभूतापातुकर्णद्वयंमम ॥ ६ ॥ अधरौपातुकालिन्दीचिबुकंसूर्यकन्यका ॥ यमस्वसाकन्धरांचहृदयंमेमहानदी ॥७॥ कृष्णप्रियापातुपृष्ठंतटिनीमेभुजद्वयम् ॥ श्रोणीतटंचसुश्रोणीकटिंमेचारुदर्शना ॥८॥ ऊरुद्वयंतुरंभोरूर्जानुनीत्वंघ्रिभेदिनी ॥ गुल्फौरासेश्वरीपातुपादौपापापहारिणी ॥९॥ अंतर्बहिरधश्चोर्ध्वंदिशासुविदिशासुच ॥ समंतात्पातुजगतःपरिपूर्णतमप्रिया ॥ १० ॥ इदंश्रीयमुनायाश्चकवचंपरमाद्भुतम् ॥ दशवारंपठेद्भक्त्यानिर्धनोधनवान्भवेत् ॥ ११ ॥

साक्षात् परमानन्द रूपिणी मेरे कपोलोंकी रक्षा करे, कृष्णवामांससम्भूता मेरे दोनों कानोंकी रक्षा करे, ॥६॥ कालिंदी मेरे होठोंकी रक्षा करे, सूर्य कन्या मेरे चिबुक(ठोड़ी)की रक्षा करे, यमकी बहिन मेरी कमरकी रक्षा करे महानदी मेरे हृदयकी रक्षा करे ॥ ७ ॥ कृष्णप्रिया मेरी पीठकी रक्षा करे, तटिनी मेरी दोनों भुजाओंकी रक्षा करे सुश्रोणी मेरी श्रोणीकी रक्षा करे चारुदर्शना मेरी कमरकी रक्षा करे ॥८॥ रंभोरू मेरी दोनों जांघोंकी रक्षा करे अंघ्रिभेदिनी मेरी घुटनोंकी रक्षा करे रासेश्वरी मेरे गुल्फ (टकनोंकी) रक्षा करे, पापापहारिणी मेरे पांवोंकी रक्षा करे, ॥ ९ ॥ बाहिर, भीतर, ऊपर, नीचे, दिशा, विदिशाओंमें और चारों ओरसे जगत्के परिपूर्ण तमकी प्रिया रक्षा करो ॥ १० ॥ यह श्रीयमुनाजीका परम अद्भुत कवच है, जो दश समय निर्धन पढ़े तो धनवान् हो जाय ॥ ११ ॥

जो कोई बुद्धिमान् मनुष्य ब्रह्मचर्यसे तीन महीनेतक पाठ करे, लघु भोजन करे, तो निःसन्देह चक्रवर्ती राज्य मिले ॥१२॥ जो एकसौ दशहार नित्य तीन महीनेतक भक्तिसे पाठ करे और सावधान रहे तो उसको क्या क्या नहीं, अर्थात् उसको सभी वस्तुएं प्राप्त होती हैं॥१३॥जो प्रातःकाल उठकर नित्य पाठ करे, उसे सब तीर्थोंके स्नान करनेका फल प्राप्त होता है और अन्तमें योगियोंको भी दुर्लभ जो पर गोलोकधाम है, उसको प्राप्त होता है, ॥१४॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्यखण्डे भाषाटीकायां सौभरिमांधातृसंवादे यमुना कवचं नाम षोडशोध्यायः ॥१६॥ मान्धाता पूछता है, कि हे मुनिशार्दूल ! हे वक्ताओंमें श्रेष्ठ ! यमुनाजीका जो दिव्यस्तव है, जो सर्व सिद्धिको करनेवाला है, उसको हे सौभरे ! कृपा करके मुझसे कहिये ॥१॥ सौभरि ऋषि बोले-हे महामते ! तुम सूर्यकी कन्याका जो स्तव है उसको सुनो, जो सब सिद्धिका करनेवाला है और भूमिमें धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का दाता है ॥२॥ कृष्णके वामाङ्गसे हुई हो, हे कृष्णे ! कृष्ण रूपिणी हो, आपके लिये मेरा नमस्कार है ॥३॥ जो पापकी कीचके जलके कलंकसे कुत्सित है, कामी है, कुबुद्धि है,

त्रिभिर्मासैःपठेद्धीमान्ब्रह्मचारीमिताशनः ॥ सर्वराज्याधिपत्यत्वंप्राप्यतेनात्रसंशयः ॥१२॥ दशोत्तरशतंनित्यंत्रिमासावधिभक्तितः॥ यःपठेत्प्रयतोभूत्वातस्यकिंकिंनजायते ॥ १३ ॥ यःपठेत्प्रातरुत्थायसर्वतीर्थफलंलभेत् ॥ अंतेव्रजेत्परंधामगोलोकंयोगिदुर्लभम् ॥१४॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखंडेश्रीसौभरिमांधातृसंवादेश्रीयमुनाकवचंनामषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ मान्धातोवाच ॥ यमुनायाःस्तवंदिव्यंसर्वसिद्धिकरंपरम् ॥ सौभरेमुनिशार्दूलवदमांकृपयात्वरम् ॥ १ ॥ श्रीसौभरिरुवाच ॥ मार्तंडकन्यकायास्तुस्तवंशृणुमहामते ॥ सर्वसिद्धिकरंभूमौचातुर्वर्ग्यफलप्रदम् ॥२॥ कृष्णवामांसभूतायैकृष्णायैसततंनमः ॥ नमःश्रीकृष्णरूपिण्यैकृष्णेतुभ्यंनमोनमः ॥३॥ यःपापपंकांबुकलंककुत्सितःकामीकुधीःसत्सुकलिंकरोतिहि ॥ वृन्दावनंधामददातितस्मैनदन्मिलिन्दादिकलिन्दनन्दिनी ॥४॥ कृष्णेसाक्षात्कृष्णरूपात्वमेव वेगावर्तैंवर्ततेमत्स्यरूपी॥ऊर्मौवूर्मौकूर्मरूपीसदातेबिंदौबिंदौभातिगोविन्ददेवः॥५॥ वन्देलीलावतींत्वांसघनघननिभांकृष्णवामांसभूतांवेगंवैवैरजाख्यंसकलजलचयंखंडयंतींबलात्स्वात्।छित्त्वाब्रह्मांडमारात्सुरनगरनगान्गंडशैलादिदुर्गान्भित्त्वाभूखंडमध्येतटिनिधृतवतीमूर्मिमालांप्रयांतीम्

संतोंको क्लेश देता है, ऐसा पापी है, वह इस स्तोत्रका पाठ करे तो कलिंद नन्दिनी उसको निज वृन्दावनधाम देती है, जिसमें सुगंधिमें मतवाले भ्रमर गुञ्जार करते हैं ॥४॥ हे कृष्णे ! साक्षात् कृष्ण रूपा आपही हो, आपही प्रलयके आवर्तमें मत्स्यरूप धारण करती हो, ऊर्मीमें कूर्मरूपा आपही हो, आपकी बूँद २ में गोविन्दरूप प्रकाश करता है ॥ ५ ॥ लीलावती जो आप हो, आपको मैं प्रणाम करता हूँ सघन मेघके तुल्य हो, श्रीकृष्णके बांये अंगसे उत्पन्न हुई हो, सम्पूर्ण जलका समूह जिसमें ऐसा जो विरजाका वेग उसका अपने वेगसे खंडन करती हुई दूरसे ही ब्रह्माण्डको छेदकर और देवताओंके नगर, पर्वतोंके शिखर दुर्ग, उनको भेदकर हे तटिनि ! भूमिखण्ड मंडलमें लहरोंकी मालाको धारण करती जाती हो, तुम्हें हमारा नमस्कार है ॥ ६ ॥

पृथ्वीमें दिव्य जो यमुना आपका नाम है, वह सुनने अथवा कहनेसे पापोंके समूहको खंडित करता है, वह आपका नाम मेरी वाणीरूप मण्डलमें निवास करे जो वाणीसे यमुना
नामको लेते हैं और तुम्हारे भाई (यमराज) के दण्डयोग्य जो पापी हैं, उनको अदंड्य करती हो, इसलिये अपनी पुरीमें यमराजने भी आपका प्रचण्डा नाम रखा है ॥ ७ ॥
जो विषय रूपी अंधकूपमें पड़े हैं, उनको चढ़नेकी रस्सी हो, पापरूप मूषकोंको मार्जार (बिलाव) हो, विराट् पुरुषके शिरपर वेणीरूप माला हो, जहाँ २ तुम विराजती हो, उन
पुरुषोंका धन्य भाग्य है, तुम आदिकर्ताकी प्यारी हो, गोलोकमें भी दुर्लभ ऐसी तुम अति सुभगा अद्वितीया नदी हो ॥८॥ गोकुल और गोप, गोपी इनके खेलसे शोभित हे
कालिंदी ! हे कृष्ण प्रभे ! तुम्हारे किनारेपर जलकी चंचल जो गोल लहरी उनकी कल्लोलोंका कोलाहल है, तुम्हारा वृन्दावनमें जो खेल, उसमें जो भ्रमरोंकी गुञ्जार और मयूरोंकी
वाणी, और तोता, मैना, कोयल, पपीहाओंकी झंकारोंसे व्याप्त, व्रज लताओंके अलंकार धारण करनेवाली तुम हो, सो मेरी रक्षा करो ॥९॥ जितने शरीरमें रोम हैं, उतनी जो जीभ

दिव्यंकौनामधेयंश्रुतमथयमुनेदंडयत्यद्रितुल्यंपापव्यूहंत्वखंडंवसतुममगिरामंडलेतुक्षणंतत् ॥ दंडचांश्चाकार्यदंडचान्सकृदपिवचसाखंडितंय-
द्गृहीतंभ्रातुर्मार्तंडसूनोरटतिपुरिहढस्तंप्रचण्डेतिदंडः ॥७॥ रज्जुर्वाविषयांधकूपतरणेपापाखुदर्वीकरीवेण्युष्णिक्चविराजमूर्तिशिरसोमालास्ति-
त्रासुन्दरी॥धन्यंभाग्यमतःपरंभुविनृणांयत्रादिकृद्वल्लभागोलोकेप्यतिदुर्लभातिसुभगाभात्यद्वितीयानदी॥८॥गोपीगोकुलगोपकेलिकलितेकालि-
न्दिकृष्णप्रभेत्वत्कूलेजललोलगोलविचलत्कल्लोलकोलाहलः॥त्वत्कांतारकुतूहलालिकुलकृज्झंकारकेकाकुलःकूजत्कोकिलसंकुलोव्रजलताल-
कारभृत्पातुमाम् ॥९॥ भवंतिजिह्वास्तनुरोमतुल्यागिरोयदाभूसिकताइवासु ॥ तदप्यलंयातिनतेगुणांतंसंतोमहांतःकिलशेषतुल्याः ॥ १० ॥
कलिन्दगिरिनन्दिनीस्तवउषस्ययंवापरःश्रुतश्चयदिपाठितोभुवितनोतिसन्मंगलम् ॥ जनोपियदिधारयेत्किलपठेच्चयोनित्यशःसयातिपरमंपदं-
निजनिकुंजलीलावृतम् ॥ ११ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखण्डे श्रीसौभरिमांधातृसंवादेश्रीयमुनास्तवोनामसप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥
मान्धातोवाच ॥ कृष्णायाःपटलंपुण्यंकामदंपद्धतिंयथा ॥ वदमांमुनिशार्दूलत्वंसाक्षाज्ज्ञानशेवधिः॥१॥ सौभरिरुवाच ॥ पटलंपद्धतिंवक्ष्ये-
यमुनायामहामते ॥ कृत्वाश्रुत्वाथजप्त्वावाजीवन्मुक्तोभवेन्नरः ॥ २ ॥

हों और जितने धरतीमें रेणुके कण हैं उतनी वाणी हों, और जितने सन्त महन्त हैं, वे शेषके तुल्य हों, तो भी तुम्हारे गुणोंका अन्त नहीं पा सकते हैं ॥ १० ॥ कालिंद गिरि
नन्दिनीका यह स्तोत्र है,इसका जो कोई प्रातःकाल पाठ करे अथवा सुने तो पृथ्वीमें उत्तम मंगल करता है और जो जन नित्य पाठ करे अथवा इस स्तवको मन्त्रमें धरकर कण्ठमें
धारण करे तो निकुञ्ज लीलासे आवृत ऐसा जो गोलोकधाम है,उसको प्राप्त होता है॥११॥इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्यखण्डे भाषाटीकायां सौभरिमांधातृ संवादे कालिंदी स्तवो
नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥ मान्धाता पूछता है, कि यमुनाजीका जो पटल अति पवित्र और काम दाता है, उसी तरह पद्धति है, सो उनको कहिये, हे मुनि शार्दूल ! तुम साक्षात्
ज्ञानकी निधि हो ॥१॥ सौभरि मुनि बोले–हे महामते ! मैं यमुनाजीका पटल और पद्धति इनको कहूँगा, इनके कहने सुनने और जपनेसे मनुष्य जीवन्मुक्त हो जाता है ॥ २ ॥

पहले ओंकार कहे, फिर ह्रीं कहे, फिर श्रीं कहे, फिर क्लीं कहे ॥३॥ फिर कालिंद्यै कहे, फिर देव्यै कहे, फिर नमः कहे, ऐसे मन्त्र जपे ॥४॥ ओं ह्रीं श्रीं क्लीं कालिंद्यै देव्यै नमः। ग्यारह लक्ष जप करनेसे भूमिमें इस मन्त्रकी सिद्धि होती है, फिर मनुष्य जो कामना करे सब उसे प्राप्त होती है ॥ ५ ॥ सिंहासन पर सोलह दलका कमल लिखे, फिर उस कमलकी कर्णिका (मकरन्द) अर्थात् मध्य भागमें कलीपर तो श्रीकृष्ण सहित कालिंदी लिखे ॥६॥ फिर उस कमलके दलोंमें ये सोलह नदी लिखे—जाह्नवी १, विरजा २, कृष्णा ३, चन्द्रभागा ४, सरस्वती ५, गोमती ६, कौशिकी ७, वेणी ८, सिन्धु ९, गोदावरी १०, वेद स्मृती ११, वेत्रवती १२, शतद्रु १३, सरयू १४, ऋषिकुल्या १५, ककुद्मिनी १६, इनका ॥ ७ ॥ ८ ॥ पृथक्-पृथक् नामोंसे विधिपूर्वक पूजन करे, फिर चार दिशाओंमें वृन्दावन १, गोवर्द्धन २, वृन्दादेवी ३ और तुलसी ४, इनको पूर्वादिक चारों दिशाओंमें स्थापित

प्रणवंपूर्वमुद्धृत्यमायाबीजंततःपरम् ॥ रमाबीजंततःकृत्वाकामबीजंविधानतः ॥३॥ कालिन्दीतिचतुर्थ्यंतेदेवीपदमतःपरम् ॥ नमःपश्चात्संविधार्यजपेन्मंत्रमिमंनरः ॥ ४ ॥ जप्त्वैकादशलक्षाणिमंत्रसिद्धिर्भवेद्भुवि ॥ जनैःप्रार्थ्याश्चयेकामाःसर्वैंप्राप्याःस्वतश्चते ॥ ५ ॥ विधायषोडशदलं पद्मंसिंहासनेशुभे ॥ कर्णिकायांचकालिंदींन्यसेच्छ्रीकृष्णसंयुताम् ॥६॥ जाह्नवींविरजांकृष्णांचन्द्रभागांसरस्वतीम् ॥ गोमतींकौशिकींवेणीं सिंधुंगोदावरींतथा ॥ ७ ॥ वेदस्मृतिंवेत्रवतींशतद्रुंसरयूंतथा ॥ पूजयेन्मानवश्रेष्ठऋषिकुल्यांककुद्मिनीम् ॥८॥ पृथक्पृथक्तद्दलेषुनामोच्चार्य्य विधानतः॥वृन्दावनंगोवर्द्धनंवृंदांचतुलसींतथा॥चतुर्दिक्षुविधायाशुपूजयेन्नामभिःपृथक्॥९॥ ॐनमोभगवत्यैकलिन्दनन्दिन्यैसूर्यकन्यकायैयम भगिन्यैश्रीकृष्णप्रियायैयूथीभूतायैस्वाहा ॥ अनेनमंत्रेणावाहनादिषोडशोपचारान्समाहितउपाहरेत् ॥ १० ॥ इत्येवंपटलंविद्धितुभ्यंवक्ष्यामि पद्धतिम् ॥ यावत्संपूर्णतःयातिपुरश्चरणमेवहि ॥ ११ ॥ तावद्भवेद्ब्रह्मचारीजपेन्मौनव्रतोद्विज ॥ यवभोजीभूमिशायीपत्रभुग्जितमानसः ॥ ॥१२॥ कामंक्रोधंतथालोभंमोहंद्वेषंविसृज्यसः॥ भक्त्यापरमयाराजन्वर्त्तमानस्तुदेशिकः ॥१३॥ ब्राह्ममुहूर्तउत्थायध्यात्वादेवींकलिंदजाम् ॥ अरुणोदयवेलायांनद्यांस्नानंसमाचरेत् ॥१४॥ मध्याह्नेचापिसंध्यायांसंध्यावन्दनतत्परः ॥ समाप्तेनियमेराजन्कालिंदीतीरमास्थितः ॥१५॥ दशलक्षंब्राह्मणानांसपुत्राणांमहात्मनाम् ॥ पूजयित्वागंधपुष्पैर्दत्त्वातेभ्यःसुभोजनम् ॥ १६ ॥

कर इन इनके नाम मन्त्रोंसे पूजन करे ॥ ९ ॥ ॐ नमो भगवत्यै कलिंदनंदिन्यै सूर्य कन्यकायै यमभगिन्यै कृष्ण प्रियायै यूथी भूतायै स्वाहा इस मन्त्रसे आवाहन आदि षोडशोपचारसे पूजा करे, ॥ १० ॥ यह पटल तो मैंने तुम्हारे सामने कहा, अब पद्धति कहता हूँ, उसको सुनो, जबतक यह पुरश्चरण सम्पूर्ण हो ॥ ११ ॥ तबतक ब्रह्मचारी रहे, मौन रहकर मन्त्र जपे, जौका भोजन करे, पृथ्वीमें सोवे, पत्तलमें भोजन करे, मनको जीते रहे ॥१२॥ काम, क्रोध, लोभ, मोह, द्वेष न करे, मन्त्रका जप करनेवाला परम भक्तिसे वर्तमान रहे ॥१३॥ ब्राह्म मुहूर्तमें उठकर, यमुनाजीका ध्यान कर, अरुणोदयके समय यमुनाजीमें स्नान करे ॥१४॥ मध्याह्नमें मध्याह्न सन्ध्या करे, जब नियम समाप्त हो, तब कालिंदीके तीर पर बैठकर ॥ १५ ॥ पुत्रों सहित दश लाख ब्राह्मणोंका, महात्माओंका पूजन करे, फिर उनको भोजन करावे ॥ १६ ॥

यह पद्धति मैंने तुम्हारे सामने कही, इसको नियम पूर्वक तुम करो
वस्त्र, भूषण, और उज्ज्वल सोनेके पात्र व शुभ दक्षिणा दें, तब निश्चय सिद्धि हो ॥१७॥ हे राजन्! हे महामते! यह पद्धति मैंने तुम्हारे सामने कही, इसको नियम पूर्वक तुम करो
अब और क्या सुनना चाहते हो ॥ १८ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्यखण्डे भाषाटीकायां पटल पद्धतिवर्णनं नामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ तब राजा बोला कि, सर्व सिद्धिको
करनेवाले यमुनाजीके सहस्र नामका वर्णन करिये, हे मुनि शार्दूल! तुम सर्वज्ञ हो और निरामय हो ॥१॥ यह सुनकर सौभरि बोले–हे मान्धातः! अब मैं सर्व सिद्धिको करनेवाले
यमुनाजीके सहस्र नामका तुम्हारे सामने वर्णन करता हूं, जो श्रीकृष्णको वशमें करनेवाला और सब सिद्धिको करने वाला है ॥२॥ ॐ अस्य श्री कालिंदी सहस्र नाम स्तोत्र मंत्रस्य
सौभरि ऋषिः श्री यमुनादेवता अनुष्टुप छन्दः माया बीजम इति कीलकं रमाबीजमिति शक्तिःश्री कालिंद नन्दिनी प्रसाद सिद्धयर्थे जपे विनियोगः॥यह विनियोग है, हाथमें जल लेकर
अस्य श्री यहाँसे लेकर जपे विनियोगः तक पढ़कर जलको छोड़ दें ॥ यह संकल्प करके फिर यह ध्यान करें। श्याम घनसी जिसकी मूर्ति अथवा सोलह वर्षकी अवस्थावाली, सुन्दर

इतितेपद्धतिःप्रोक्तामयाराजन्महामते ॥ कुरुत्वंनियमं
वस्त्रभूषणसौवर्णपात्राणिप्रस्फुरन्तिच ॥ दक्षिणाश्चशुभादद्यात्ततःसिद्धिर्भवेत्खलु ॥१७॥ इतितेपद्धतिःप्रोक्तामयाराजन्महामते ॥ कुरुत्वंनियमं
सर्वंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ १८ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांमाधुर्यखंडेपटलपद्धतिवर्णनंनामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ मांधातोवाच ॥
नाम्नांसहस्रंकालिंद्यामांधातस्ते नाम्नांसहस्रंकृष्णायाःसर्वसिद्धिकरंपरम् ॥ वदमांमुनिशार्दूलत्वंसर्वज्ञोनिरामयः ॥ १ ॥ सौभरिरुवाच ॥ नाम्नांसहस्रंकालिंद्यामांधातस्ते
वदाम्यहम् ॥ सर्वसिद्धिकरंदिव्यंश्रीकृष्णवशकारकम् ॥२॥ ॐ अस्यश्रीकालिंदीसहस्रनामस्तोत्रमन्त्रस्य ॥ सौभरिऋषिः ॥ श्रीयमुनादेवता ॥
अनुष्टुप्छंदः ॥ मायाबीजमितिकीलकम् ॥ रमाबीजमितिशक्तिः ॥ श्रीकलिंदनन्दिनीप्रसादसिद्ध्यर्थेजपेविनियोगः ॥ अथध्यानम् ॥ श्यामाम-
भोजनेत्रांसघनघनरुचिंरत्नमंजीरकूजत्कांचीकेयूरयुक्तांकनकमणिमयेबिभ्रतींकुंडलेद्वे ॥ भ्राजच्छ्रीनीलवस्त्रस्फुरदिभजचलद्धारभारांमनोज्ञांध्याये-
मार्तंडपुत्रींतनुकिरणचयोद्दीप्तदीपाभिरामाम् ॥३॥ इतिध्यानम् ॐ कालिन्दीयमुनाकृष्णाकृष्णरूपासनातनी ॥ कृष्णवामांससंभूतापरमानन्द
रूपिणी ॥४॥ गोलोकवासिनीश्यामावृन्दावनविनोदिनी ॥ राधासखीरासलीलारासमंडलमंडिनी ॥५॥ निकुंजवासिनोवल्लीरंगवल्लीमनोहरा ॥
श्रीरासमंडलीभूतायूथीभूताहरिप्रिया ॥ ६ ॥ गोलोकतटिनीदिव्यानिकुंजतलवासिनी ॥ दीर्घोर्मिवेगगंभीरापुष्पपल्लववाहिनी ॥ ७ ॥

जगमगाते गज मोतियोंके
कमलसे जिसके नेत्र, बजते हुये नूपुर, करधनी, इनको पहिने हैं, सुवर्णके बाजू व मणिमय कुण्डल धारण किये हैं, देदीप्यमान नीलाम्बरको धारण किये हैं, जगमगाते गज मोतियोंके
हारोंके भारसे युक्त मनको हरनेवाली, शरीरकी किरणोंकी दीप्तिसे दीपावतीके समान प्रकाशवाली, अतएव सुन्दर, ऐसी सूर्यकी पुत्रीका मैं ध्यान करता हूँ ॥३॥ अब नाम वर्णन
करते हैं, कालिंदी, यमुना, कृष्णा, कृष्णरूपा, सनातनी, कृष्णवामांस संभूता, परमानन्द रूपिणी, ॥४॥ गोलोक वासिनी, श्यामा, वृन्दावन विनोदिनी, राधासखी, रासलीला,
रासमण्डल मण्डिनी ॥५॥ निकुंज वासिनी, वल्ली, रंगवल्ली, मनोहरा, श्रीरास मण्डलीभूता, यूथीभूता, हरिप्रिया, ॥ ६ ॥ गोलोक वासिनी, दिव्या, निकुंज तल वासिनी, दीर्घोर्मि
बेगगम्भीरा, पुष्प पल्लव वाहिनी ॥ ७ ॥

घनश्यामा, मेघमाला, बलाका, पद्ममालिनी, परिपूर्णतमा, पूर्णा, पूर्णब्रह्मप्रिया, परा ॥८॥ महावेगवती, साक्षान्निकुंज द्वार निर्गता, महानदी, मन्दगतिः विरजावेग भेदनी ॥ ९ ॥ अनेक ब्रह्माण्ड गता, ब्रह्मद्रव समाकुला, गंगामिश्रा, निर्जलाभा, निर्मला, सरितांवरा ॥ १० ॥ रत्नबद्धोभयतटी, हंस पद्मादि संकुला, नदी निर्मल पानीया, सर्व ब्रह्माण्ड पावनी ॥११॥ वैकुण्ठ परिखी भूता, परिखा, पापहारिणी, ब्रह्मलोकगता, ब्राह्मी, स्वर्गा, स्वर्ग निवासिनी ॥१२॥ उल्लसंती, प्रोत्पतंती मेरुमाला, महोज्ज्वला, श्रीगंगाभः शिखरिणी, गंड-शैल विभेदिनी, ॥ १३ ॥ देशान्पुनन्ती, गच्छंती, वंहती, भूमिमध्यगा, मार्त्तंड तनुजा, पुण्या, कलिंदगिरि नंदिनी ॥१४॥ यमस्वसा, मंदहासा, सुद्विजा, रचिताम्बरा, नीलाम्बरा, पद्ममुखी, चरन्ती, चारुदर्शना॥१५॥रंभोरू, पद्मनयना, माधवी, प्रमदोत्तमा, तपश्चरन्ती सुश्रोणी, कूजन्नूपुर मेखला॥१६॥ जलस्थिता, श्यामलांगी, खांडवाभा विहारिणी, गांडीविभा-

घनश्यामामेघमालाबलाकापद्ममालिनी॥परिपूर्णतमापूर्णापूर्णब्रह्मप्रियापरा॥८॥ महावेगवतीसाक्षान्निकुंजद्वारनिर्गता ॥ महानदीमंदगतिर्विर-
जावेगभेदिनी॥९॥ अनेकब्रह्मांडगताब्रह्मद्रवसमाकुला ॥ गंगामिश्रानिर्जलाभानिर्मलासरितांवरा ॥१०॥ रत्नबद्धोभयतटीहंसपद्मादिसंकुला॥
नदीनिर्मलपानीयासर्वब्रह्मांडपावनी॥११॥ वैकुंठपरिखीभूतापरिखापापहारिणी ॥ ब्रह्मलोकगताब्राह्मीस्वर्गास्वर्गनिवासिनी ॥१२॥ उल्लसन्ती
प्रोत्पतंतीमेरुमालामहोज्ज्वला ॥ श्रीगंगांभःशिखरिणीगंडशैलविभेदिनी॥१३ ॥देशान्पुनन्तीगच्छन्तीवहंतीभूमिमध्यगा ॥ मार्तण्डतनुजापु-
ण्याकलिन्दगिरिनन्दिनी ॥१४॥ यमस्वसामन्दहासासुद्विजारचिताम्बरा ॥ नीलांबरापद्ममुखीचरंतीचारुदर्शना॥१५॥रंभोरूःपद्मनयनामाध-
वीप्रमदोत्तमा ॥ तपश्चरंतीसुश्रोणीकूजन्नूपुरमेखला॥१६॥जलस्थिताश्यामलांगीखांडवाभाविहारिणी॥ गांडीविभीषिणीवन्याश्रीकृष्णंवर-
मिच्छती ॥१७॥ द्वारकागमनाराज्ञीपट्टराज्ञीपरंगता ॥ महाराज्ञीरत्नभूषागोमतीतीरचारिणी ॥१८॥ स्वकीयाचसुखास्वार्थास्वभक्तकार्यसा-
धिनी ॥ नवलांगाबलामुग्धावरांगावामलोचना ॥१९॥अज्ञातयौवनादीनाप्रभाकान्तिर्द्युतिश्छविः ॥ सुशोभापरमाकीर्तिःकुशलाज्ञातयौवना
॥२०॥नवोढामध्यगामध्याप्रौढिःप्रोढाप्रगल्भका॥धीराऽधीराधैर्य्यधराज्येष्ठाश्रेष्ठाकुलांगना॥२१॥क्षणप्रभाचंचलार्चाविद्युत्सौदामिनीतडित्॥
स्वाधीनपतिकालक्ष्मीःपुष्टास्वाधीनभर्तृका॥२२॥ कलहांतरिताभीरुरिच्छाप्रोत्कंठिताकुला॥कशिपुस्थादिव्यशय्यागोविंदहृतमानसा॥२३॥

षिणी, वन्या, श्रीकृष्णं वरमिच्छती, ॥१७॥ द्वारकागमना, राज्ञी, पट्टराज्ञी, परंगता, महाराज्ञी, रत्नभूषा, गोमती तीरचारिणी, ॥१८॥स्वकीया, सुखा स्वार्था, स्वभक्तकार्य साधिनी नवलांगा, अबला, मुग्धा, वरांगा, वामलोचना, ॥१९॥ अजात यौवना, दीना प्रभा, कान्तिः द्युतिः छविः, सुशोभा, परमा, कीर्तिः कुशला, अज्ञात यौवना ॥२०॥ नवोढा, मध्यगा मध्या, प्रौढी, प्रौढा, प्रगल्भिका, धीरा, अधीरा, धैर्यधरा, ज्येष्ठा, श्रेष्ठा, कुलांगना ॥ २१ ॥ क्षणप्रभा, चंचलार्चा, विद्युत, सौदामिनी, तडित, स्वाधीन पतिका, लक्ष्मी, पुष्टा, स्वाधीन भर्तृका ॥ २२ ॥ कलहांतरिता, भीरू, इच्छा, प्रोत्कंठिता, आकुला, कशिपुस्था, दिव्यशय्या, गोविंदहृतमानसा ॥ २३ ॥

खंडिता, अखंड शोभाढ्या, विप्रलम्बा, अभिसारिका, विरहार्ता, विरहिणी, नारी, प्रोषित भर्तृका ॥२४॥ मानिनी, मानदा, प्राज्ञा, मंदारवनवासिनी, झंकारिणी, झंणत्कारी, रणन्मंजीरनूपुरा ॥२५॥ मेखला, अमेखला, कांची, कांचनी, कांचनामयी, कंचुकी, कंचुकमणिः, श्रीकंठाढ्या, महामणिः ॥२६॥ श्रीहारिणी, पद्महारा, मुक्तामुक्तफलार्चिता, रत्नकंकण केयूरा, स्फुरदंगुलि भूषणा ॥२७॥ दर्पणा, दर्पणीभूता, दुष्टदर्पविनाशिनी, कंबुग्रीवा, कंबुधरा, ग्रैवेयकविराजिता ॥२८॥ ताटंकिनी, दंतधरा, हेमकुंडल मंडिता, शिखाभूषा, भालपुष्पा, नासामौक्तिक शोभिता ॥२९॥ मणिभूमिगता, देवी, रेवताद्रिविहारिणी, वृन्दावनगता, वृन्दा वृन्दारण्यनिवासिनी ॥ ३० ॥ वृन्दावनलता, माध्वी, वृन्दारण्य विभूषणा, सौंदर्यलहरी,

खंडिताखण्डशोभाढ्याविप्रलब्धाभिसारिका ॥ विरहार्ताविरहिणीनारीप्रोषितभर्तृका॥२४॥ मानिनीमानदाप्राज्ञामन्दारवनवासिनी॥झंकारिणीझणत्कारीरणन्मंजीरनूपुरा ॥२५॥ मेखलामेखलाकांच्यकांचनीकांचनामयी ॥ कंचुकीकंचुकमणिःश्रीकण्ठाढ्यामहामणिः॥२६॥ श्रीहारिणीपद्महारामुक्तामुक्तफलार्चिता ॥ रत्नकंकणकेयूरास्फुरदंगुलिभूषणा॥२७॥ दर्पणादर्पणीभूतादुष्टदर्पविनाशिनी ॥ कंबुग्रीवाकंबुधराग्रैवेयकविराजिता ॥२८॥ ताटंकिनीदंतधराहेमकुंडलमण्डिता ॥ शिखाभूषाभालपुष्पानासामौक्तिकशोभिता ॥२९॥ मणिभूमिगतादेवीरेवताद्रिविहारिणी ॥ वृन्दावन गतावृन्दावृन्दारण्यनिवासिनी ॥३०॥ वृन्दावनलतामाध्वीवृन्दारण्यविभूषणा ॥ सौंदर्यलहरीलक्ष्मीर्मथुरातीर्थवासिनी ॥ ॥३१॥ विश्रांतवासिनीकाम्यारम्यागोकुलवासिनी ॥ रमणस्थलशोभाढ्यामहावनमहानदी ॥ ३२ ॥ प्रणताप्रोन्नतापुष्टाभारतीभरतार्चिता ॥ तीर्थराजगतिर्गोत्रागंगासागरसंगमा ॥३३॥ सप्ताब्धिभेदिनीलोलासप्तद्वीपगताबलात् ॥ लुठंतीशैलभिद्यंतीस्फुरंतीवेगवत्तरा ॥ ३४ ॥ कांचनीकांचनीभूमिःकांचनीभूमिभाविता॥लोकदृष्टिर्लोकलीलालोकालोकाचलार्चिता॥३५॥ शैलोद्गतास्वर्गगतास्वर्गार्चास्वर्गपूजिता॥वृन्दावनीवनाध्यक्षारक्षाकक्षातटीपटी॥३६॥ असिकुण्डगताकच्छास्वच्छन्दोच्छलितादिजा॥ कुहरस्थारथप्रस्थाप्रस्थाशांतितरातुरा ॥३७॥ अंबच्छटाशीकराभादर्दुरादार्दुरीधरा ॥ पापांकुशापापसिंहीपापद्रुमकुठारिणी ॥ ३८ ॥

लक्ष्मी, मथुरातीर्थवासिनी ॥३१॥ विश्रान्तवासिनी, काम्या रम्या, गोकुलवासिनी, रमणस्थलशोभाढ्या, महावनमहानदी ॥३२॥ प्रणता, प्रोन्नता, पुष्टा, भारती, भरतार्चिता, तीर्थ, राजगतिः, गोत्रा, गंगासागरसंगमा ॥३३॥ सप्ताब्धिभेदनी लोला सप्तद्वीपगताबलात् लुठंती शैलभिद्यंती, स्फुरंती, वेगवत्तरा ॥३४॥ कांचनी, कांचनीभूमिः कांचनीभूमिभाविता, लोकदृष्टिः, लोकलीला, लोकालोकाचलार्चिता ॥३५॥ शैलोद्गता, स्वर्गगता, स्वर्गार्चा, स्वर्गपूजिता, वृन्दावनी, वनाध्यक्षा, रक्षा, कक्षा, तटी, पटी ॥३६॥ असिकुंडगता, कच्छा, स्वच्छा स्वच्छंदा उच्छलिता, आदिजा, कुहरस्था, रथप्रस्था, प्रस्था, शान्ततरा, आतुरा ॥ ३७ ॥ अंबुच्छटा, शीकराभा, दर्दुरी, दार्दुरी, धरा, पापांकुशा पापसिंही

पापद्रुमकुठारिणी ॥ ३८ ॥ पुण्यसंघा पुण्यकीर्ति पुण्यदा पुण्यवर्द्धिनी, मधोर्वननदी मुख्या तुला तालवनस्थिता ॥ ३९ ॥ कुमुद्वननदी कुब्जा कुमुदांभोजवर्द्धिनी प्लवरूपा वेगवती सिंहसर्पादिवाहिनी ॥ ४० ॥ बहुली बहुला वल्ली बहुला वनवंदिता राधाकुंडकला आराध्या कृष्णकुंडजलाश्रिता ॥ ४१ ॥ ललिताकुंडगा घंटा विशाखाकुण्ड मंडिता गोविन्दकुंडनिलया गोपकुंडतरंगिणी ॥ ४२ ॥ श्रीगंगा मानसीगंगा कुसुमाम्बरभाविनी गोवर्द्धनी गोधनाढ्या मयूरवरवर्णिनी ॥ ४३ ॥ सारसी नीलकंठाभा कूजत्कोकिल पोतकी गिरिराजप्रसू भूरि आतपत्रा आतपत्रिणी ॥४४॥ गोवर्द्धनांका गोदंती दिव्यौषधिनिधि सृती पारदी पारदमयी नारदी सारदी भृती ॥ ४५ ॥ श्रीकृष्णचरणांकस्था कामा

पुण्यसंघापुण्यकीर्तिःपुण्यदापुण्यवर्द्धिनी॥ मधोर्वननदीमुख्यातुलातालवनस्थिता॥३९॥ कुमुद्वननदीकुब्जाकुमुदांभोजवर्द्धिनी ॥ प्लवरूपावेगवतीसिंहसर्पादिवाहिनी ॥ ४० ॥ बहुलीबहुदावल्लीबहुलावनवन्दिता ॥ राधाकुण्डकलाराध्याकृष्णकुण्डजलाश्रिता ॥४१॥ ललिताकुण्डगाघंटाविशाखाकुण्डमंडिता ॥ गोविन्दकुण्डनिलयागोपकुण्डतरंगिणी ॥४२॥ श्रीगंगामानसीगंगाकुसुमांबरभाविनी॥ गोवर्धिनीगोधनाढ्यामयूरीवरवर्णिनी ॥४३॥ सारसीनीलकंठाभाकूजत्कोकिलपोतकी ॥ गिरिराजप्रसूर्भूरिरातपत्रातपत्रिणी ॥ ४४ ॥ गोवर्द्धनांकागोदंतीदिव्यौषधिनिधिःसृतिः ॥ पारदीपारदमयीनारदीशारदीभृतिः ॥४५॥ श्रीकृष्णचरणांकस्थाकामाकामवनांचिता ॥ कामाटवीनन्दिनीचनन्दग्राममहीधरा ॥ ४६ ॥ बृहत्सानुद्युतिःप्रोतानन्दीश्वरसमन्विता ॥ काकलीकोकिलमयीभांडीरकुशकौशला ॥४७॥ लोहार्गलप्रदाकाराकाश्मीरवसनावृता ॥ बर्हिपदीशोणपुरीशूरक्षेत्रपुराधिका ॥४८॥ नानाभरणशोभाढ्यानानावर्णसमन्विता ॥ नानानारीकदंबाढ्यारंगारंगमहीरुहा ॥४९॥ नानालोकगतावर्चिर्नानाजलसमन्विता ॥ स्त्रीरत्नंरत्ननिलयाललनारत्नरंजिनी ॥५०॥ रंगिणीरंगभूमाढ्यारंगारंगमहीरुहा॥ राजविद्याराजगुह्याजगत्कीर्तिर्घनाघना ॥ ५१ ॥ विलोलघंटाकृष्णांगाकृष्णदेहसमुद्भवा ॥ नीलपंकजवर्णाभानीलपंकजहारिणी ॥५२॥ नीलाभानीलपद्माढ्यानीलांभोरुहवासिनी ॥ नागवल्लीनागपुरीनागवल्लीदलार्चिता ॥५३॥ तांबूलचर्चिताचर्चामकरन्दमनोहरा ॥ सकेसराकेसरिणीकेशपाशाभिशोभिता ॥ ५४ ॥

कामवनांचिता कामाटवी नंदिनी नंदग्राममहीधरा ॥ ४६ ॥ बृहत्सानुद्युतिः, प्रोता, नंदीश्वरसमन्विता काकली कोकिलमयी भांडीरकुशकौशला ॥ ४७ ॥ लोहार्गलप्रदाकारा काश्मीरवसनावृता बर्हिपदी शोणपुरी शूरक्षेत्रपुराधिका ॥ ४८ ॥ नानाभरणशोभाढ्या नानावर्णसमन्विता नानानारीकदंबाढ्या नानारंगमहीरुहा ॥ ४९ ॥ नानालोकगता वर्चि नानाजलसमन्विता स्त्रीरत्न रत्ननिलया ललना रत्नरंजिनी ॥५०॥ रंगिनी रंगभूमाढ्या रंगा रंगमहीरुहा राजविद्या राजमुख्या जगत्कीर्ति घनाघना ॥५१॥ विलोलघंटा कृष्णांगा कृष्णदेहसमुद्भवा नीलपंकजवर्णाभा नीलपंकजहारिणी ॥५२॥ नीलाभा नीलपद्माढ्या नीलांभोरुहवासिनी नागवल्ली नागपुरी नागवल्लीदलार्चिता ॥ ५३ ॥ तांबूलचर्चिता चर्चा मकरन्दम-

नोहरा सकेशरा केशरिणी केशपाशाभिशोभिता ॥ ५४ ॥ कज्जलाभा कज्जलाक्ता कज्जली कलितांजना अलक्तचरणा ताम्रा लाला ताम्रीकृतांबरा ॥५५॥ सिन्दूरिता लिप्तवर्णी सुश्री श्रीखंडमंडिता पाटीरपंकवसना जटामांसी रुगंबरा ॥५६॥ आगरी अगरुगंधाक्ता तगराश्रितमारुता सुगंधतैलरुचिरा कुंतलालिः सकुंतला ॥५७॥ शकुंतला पांसुला पातिव्रतपरायणा सूर्य्यप्रभा सूर्यकन्या सूर्य्यदेहसमुद्भवा ॥५८॥ कोटिसूर्य्यप्रतीकाशा सूर्य्यजा सूर्य्यनंदिनी संज्ञा संज्ञासुता स्वेच्छा संज्ञामोदप्रदायिनी ॥५९॥ संज्ञापुत्री स्फुरच्छाया तपती तापकारिणी सावर्ण्यानुभवा देवी वाडवा सौख्यदायिनी ॥६०॥ शनैश्चरानुजा कीला चंद्रवंशविवर्द्धिनी चंद्रवंशवधू चंद्रा चद्रावलिसहायिनी ॥ ६१ ॥ चंद्रावती चंद्रलेखा चन्द्रकान्ताऽनुगा अंशुका भैरवी पिङ्गला शंकी लीलावती आगरीमयी ॥६२॥ धनश्री देवगान्धारी स्वर्मणि गुणवर्द्धिनी व्रजमल्ला बंधकारी विचित्राजयकारिणी ॥६३॥ गान्धारी मञ्जरी टोडी गुर्जरी आशावरी

कज्जलाभाकज्जलाक्ताकज्जलीकलितांजना ॥ अलक्तचरणाताम्रालालाताम्रीकृतांबरा ॥५५॥ सिन्दूरितालिप्तवाणीसुश्रीखंडमंडिता ॥ पाटीरपं-
कवसनाजटामांसीरुगम्बरा ॥ ५६ ॥ आगर्य्यगुरुगन्धाक्तातगराश्रितमारुता ॥ सुगन्धितैलरुचिराकुंतलालिःसकुंतला ॥५७॥ शकुंतलाऽपां-
सुलाचपातिव्रत्यपरायणा ॥ सूर्य्यप्रभासूर्यकन्यासूर्यदेहसमुद्भवा ॥ ५८ ॥ कोटिसूर्य्यप्रतीकाशासूर्यजासूर्यनंदनी ॥ संज्ञासंज्ञासुतास्वेच्छा
संज्ञामोदप्रदायिनी ॥ ५९ ॥ संज्ञापुत्रीस्फुरच्छायातपतीतापकारिणी ॥ सावर्ण्यानुभवावेदीवडवासौख्यदायिनी ॥६०॥ शनैश्चरानुजाकीला
चन्द्रवंशविवर्द्धिनी ॥ चन्द्रवंशवधूश्चन्द्राचन्द्रावलिसहायिनी ॥६१॥चन्द्रावतीचन्द्रलेखाचन्द्रकांतानुगांशुका ॥ भैरवीपिंगलाशंकीलीलाव-
त्यागरी मयी ॥६२॥ धनश्रीदेवगान्धारीस्वर्मणिर्गुणवर्द्धिनी ॥ व्रजमल्लार्यंधकारीविचित्राजयकारिणी ॥६३॥ गान्धारीमंजरीटोडीगुर्ज्जर्य्या-
शावरी जया ॥ कर्णाटीरागिणीगौरीवैराटीगौरवाटिका ॥६४॥ चतुश्चन्द्राकलाहेरीतैलंगीविजयावती ॥ तालीतलस्वरागानाक्रियामात्रप्रकाशिनी
॥६५॥ वैशाखीचंचलाचारुर्माचारीघूघटीघटा ॥ वैरागरीसोरटीशाकैदारीजलधारिका ॥६६॥ कामाकरश्रीकल्याणीगौडकल्याणमिश्रिता ॥
रामसञ्जीविनीहेलामन्दारीकामरूपिणी ॥ ६७ ॥ सारंगीमारुतीहोढासागरीकामवादिनी ॥ वैभासीमंगलाचान्द्रीरासमंडलमंडना ॥ ६८ ॥
कामधेनुःकामलताकामदाकमनीयका ॥ कल्पवृक्षस्थलीस्थूलाक्षुधासौधनिवासिनी ॥६९॥ गोलोकवासिनीसुभ्रूर्यष्टिभृद्द्वारपालिका ॥ शृंगार
प्रकराशृंगास्वच्छाशय्योपकारिका ॥ ७० ॥

जया कर्णाटी रागिणी गौरी वैराटी गौरवाटिका ॥६४॥ चतुश्चंद्रा कलाहेरी तैलंगी विजयावती ताली तालस्वरा गाना क्रियामात्रप्रकाशिनी ॥६५॥ वैशाखी चंचला चारु माचारी घूघटी घटा वैरागरी सोरटीशा कैदारी जलधारिका ॥६६॥ कामाकरश्रीकल्याणी गाड कल्याणमिश्रिता रामसंजीविनी मंदारी हेला कामरूपिणी॥६७॥सारंगी मारुती होढा सागरी कामवादिनी वैभासी मंगला चांद्री रासमंडलमंडना ॥ ६८ ॥ कामधेनुः कामलता कामदा कामनीयका कल्पवृक्षस्थली स्थूला क्षुधासौधनिवासिनी ॥ ६९ ॥ गोलोकवासिनी सुभ्रू यष्टिभृत् द्वारपालिका शृंगारप्रकरा शृंगारस्वच्छा शय्योपकारिका ॥ ७० ॥

पार्षदा सुसखीसेव्या श्रीवृन्दावनपालिका निकुंजभृत् कुंजपुंजा गुंजाभरणभूषिता ॥७१॥ निकुंजवासिनी प्रोष्या गोवर्द्धनतटीभवा विशाखा ललिता रामा नीरुजा मधुमाधवी ॥ ७२ ॥ एकानैकसखीशुक्ला सखीमध्या महामनाः श्रुतिरूपा ऋषिरूपा मैथिलाः कौशलाः स्त्रियः ॥ ७३ ॥ अयोध्यापुरवासिन्यः यज्ञसीताः पुलिंदकाः रमावैकुण्ठवासिन्यः श्वेतद्वीपसखी जनाः ॥७४॥ ऊर्ध्ववैकुण्ठवासिन्यः दिव्याऽजितपदाश्रिताः श्रीलोकाचलवासिन्यः श्रीसख्यः सागरोद्भवा ॥ ७५ ॥ दिव्याः अदिव्याः दिव्यांगाः व्याप्ताः त्रिगुणवृत्तयः भूमिगोप्य दिव्यनार्यः लताः औषधिवीरुधः ॥ ७६ ॥ जालंधर्यः सिंधुसुताः पृथुबर्हिष्मतीभवाः दिव्यांबराः अप्सरसः सौतलाः नागकन्यकाः ॥ ७७ ॥ परंधाम परब्रह्म पौरुषा प्रकृतिः परा

पार्षदासुसखीसेव्याश्रीवृन्दावनपालिका ॥ निकुंजभृत्कुंजपुंजागुंजाभरणभूषिता ॥७१॥ निकुंजवासिनोप्रोष्यागोवर्द्धनतटीभवा ॥ विशाखा ललितारामानीरुजामधुमाधवी ॥ ७२ ॥ एकानैकसखीशुक्लासखीमध्यामहामनाः ॥ श्रुतिरूपाऋषिरूपामैथिलाःकौशलाःस्त्रियः ॥७३॥ अयोध्यापुरवासिन्योयज्ञसीताःपुलिंदकाः ॥ रमावैकुंठवासिन्यःश्वेतद्वीपसखीजनाः ॥७४॥ ऊर्ध्ववैकुंठवासिन्योदिव्याजितपदाश्रिताः ॥ श्री लोकाचलवासिन्यःश्रीसख्यःसागरोद्भवाः ॥७५॥ दिव्याअदिव्यादिव्यांगाव्याप्तास्त्रिगुणवृत्तयः ॥ भूमिगोप्योदेवनार्योलताऔषधिवीरुधः ॥ ॥७६॥ जालंधर्य्यःसिन्धुसुताःपृथुबर्हिष्मतीभवाः ॥ दिव्यांबराअप्सरसःसौतलानागकन्यकाः ॥७७॥ परंधामपरंब्रह्मपौरुषाप्रकृतिःपरा ॥ तट-स्थागुणभूर्गीतागुणागुणमयीगुणा ॥७८॥ चिद्घनासदसन्मालादृष्टिर्दृश्यागुणाकरी ॥ महत्तत्त्वमहंकारोमनोबुद्धि-प्रचेतना ॥७९॥ चेतोवृत्तिःस्वां-तरात्माचतुर्थीचतुरक्षरा ॥ चतुर्व्यूहाचतुर्मूर्तिर्व्योमवायुरदोजलम् ॥८०॥ महीशब्दोरसोगन्धःस्पर्शोरूपमनेकधा ॥ कर्मेंद्रियंकर्ममयीज्ञानंज्ञानें-द्रियंद्विधा ॥८१॥ त्रिधाधिभूतमध्यात्ममधिदैवमधिस्थितम् ॥ ज्ञानशक्तिःक्रियाशक्तिःसर्वदेवाधिदेवता ॥८२॥ तत्त्वसंघाविराण्मूर्तिर्धारणा धारणामयी ॥ श्रुतिःस्मृतिर्वेदमूर्तिःसंहितागर्गसंहिता ॥ ८३ ॥ पाराशरीसैवसृष्टिःपारहंसीविधातृका ॥ याज्ञवल्कीभागवतीश्रीमद्भागवता-र्चिता ॥८४॥ रामायणमयीरम्यापुराणपुरुषप्रिया ॥ पुराणमूर्त्तिःपुण्यांगाशास्त्रमूर्तिर्महोन्नता ॥ ८५ ॥ मनीषाधिषणाबुद्धिर्वाणीधीःशेमुषी-मतिः ॥ गायत्रीवेदसावित्रीब्राह्मणीब्रह्मलक्षणा ॥ ८६ ॥

तटस्था गुणभू गीता गुणाऽगुणमयी गुणा ॥७८॥ चिद्घना सदसन्म दृष्टिः दृश्या गुणाकरी महत्तत्त्वम अहंकारः मनः बुद्धिः प्रचेतना ॥ ७९ ॥ चेतोवृत्तिः स्वांतरात्मा चतुर्थी चतुरक्षरा चतुर्व्यूहा चतुर्मूर्तिः व्योम वायुः अदः जलम् ॥८०॥ मही दः रसः गन्धः स्पर्शः रूपं अनेकधा कर्मेंद्रियं कर्ममयी ज्ञानं ज्ञानेंद्रियं द्विधा ॥८१॥ त्रिधा अधिभूतम अध्यात्मम अधिदैवं ज्ञानशक्तिः क्रियाशक्तिः सर्वदेवाधिदेवता ॥ ८२ ॥ तत्त्वसंघा विराड्मूर्ति धारणा धारणामयी श्रुतिः स्मृतिः वेदमूर्तिः संहिता गर्गसंहिता ॥ ८३ ॥ पाराशरी सृष्टिः पारहंसी विधातृका याज्ञवल्की भागवती श्रीमद्भागवतार्चिता ॥ ८४ ॥ रामायणमयी रम्या पुराणपुरुषप्रिया पुराणमूर्ति पुण्यांगा शास्त्रमूर्ति महोन्नता ॥ ८५ ॥ मनीषा धिषणा बुद्धिः

वाणी धीः शेमुषी मतिः गायत्री वेदसावित्री ब्रह्माणी ब्रह्मलक्षणा ॥ ८६ ॥ दुर्गा अपर्णा सती सत्या पार्वती चंडिका अंबिका आर्या दाक्षायणी दाक्षी दक्षयज्ञविघातिनी ॥ ८७ ॥ पुलोमजा शची इन्द्राणी देवी देववरार्पिता वायुना धारिणी धन्या वायवी वायुवेगगा॥८८॥यमानुजा संयमनी संज्ञा छाया स्फुरद्द्युतिः रत्नदेवी रत्नवृन्दा तारा तरणमण्डला॥८९॥रुचिः शांतिःक्षमा शोभा दया दक्षा द्युतिःत्रपा तलतुष्टिः विभो पुष्टिःसंपुष्टिःपुष्ट भावना॥९०॥चतुर्भुजा चारुनेत्रा द्विभुजा अष्टभुजा अबला शंखहस्ता पद्महस्ता चक्रहस्ता गदाधरा॥९१॥निषंगधारिणीचर्मखड्गपाणिः धनुर्द्धरा धनुष्टंकारिणी योध्री दैत्योद्भटविनाशिनी॥९२॥रथस्था गरुडारूढा श्रीकृष्णहृदयस्थिता वंशीधरा कृष्णवेषा स्रग्विणी वनमालिनी॥९३॥किरीटधारिणीयाना

दुर्गापर्णासतीसत्यापार्वतीचंडिकांबिका ॥ आर्यादाक्षायणीदाक्षीदक्षयज्ञविघातिनी॥८७॥पुलोमजा शचीन्द्राणीदेवीदेववरार्पिता॥वायुनाधा-
रिणीधन्यावायवीवायुवेगगा ॥८८॥ यमानुजासंयमनीसंज्ञाच्छायास्फुरद्द्युतिः॥ रत्नदेवीरत्नवृन्दातारातरणिमण्डला॥८९॥रुचिःशान्तिःक्ष-
माशोभादयादक्षाद्युतिस्त्रपा ॥ तलतुष्टिर्विभापुष्टिःसन्तुष्टिःपुष्टभावना॥९०॥चतुर्भुजाचारुनेत्राद्विभुजाष्टभुजाबला॥शंखहस्तापद्महस्ताचक्र-
हस्तागदाधरा ॥९१॥ निषंगधारिणीचर्मखड्गपाणिर्धनुर्द्धरा॥धनुष्टंकारिणीयोध्रीदैत्योद्भटविनाशिनी ॥९२॥ रथस्थागरुडारूढाश्रीकृष्णहृदय
स्थिता ॥ वंशीधराकृष्णवेषास्रग्विणीवनमालिनी ॥९३॥ किरीटधारिणीयानामन्दमन्दगतिर्गतिः॥ चन्द्रकोटिप्रतीकाशातन्वीकोमलविग्रहा
॥९४॥ भैष्मीभीष्मसुताभीमारुक्मिणीरुक्मरूपिणी ॥ सत्यभामाजांबवतीसत्याभद्रासुदक्षिणा ॥९५॥ मित्रवृन्दासखीवृन्दावृन्दारण्यध्वजो
र्ध्वगा ॥ शृंगारकारिणीशृंगाशृंगभूःशृंगदाखगा ॥९६॥ तितिक्षेक्षास्मृतिःस्पर्धास्पृहाश्रद्धास्वनिर्वृतिः॥ईशातृष्णाभिदाप्रीतिर्हिंसायाच्ञाक्लमा
कृषिः॥९७॥आशानिद्रायोगनिद्रायोगिनीयोगदायुगा॥निष्ठाप्रतिष्ठाशमितिः सत्त्वप्रकृतिरुत्तमा॥९८॥ तमःप्रकृतिदुर्मर्षीरजःप्रकृतिरानतिः ॥
क्रियाऽक्रियाकृतिर्ग्लानिःसात्त्विक्याध्यात्मिकीवृषा ॥९९॥ सेवाशिखामणिर्वृद्धिराहूतिःपिंगलोद्भवा ॥ नागभाषानागभूषानागरीनगरीनगा
॥ १०० ॥ नौर्नौकाभवनौर्भाव्याभवसागरसेतुका ॥ मनोमयीदारुमयीसैकतीसिकतामयी ॥ १०१ ॥

मंदमंदगतिर्गतिः चन्द्रकोशप्रतीकाशा तन्वी कोमलविग्रहा ॥ ९४ ॥ भैष्मी भीष्मसुता भीमा रुक्मिणी रुक्मरूपिणी सत्यभामा जांबवती सत्या भद्रा सुदक्षिणा ॥ ९५ ॥ मित्रवृंदा सखीवृंदा वृन्दारण्यध्वजोर्द्ध्वगा शृंगारकारिणी शृंगा शृंगभूः शृंगदा खगा ॥९६॥ तितिक्षा ईक्षा स्मृतिः स्पर्द्धा स्पृहा श्रद्धा स्वनिर्वृतिः ईशा तृष्णा भिदा प्रीतिः हिंसा याञ्चा क्लमा कृषिः ॥९७॥ आशा निद्रा योगनिद्रा योगिनी योगदा युगा निष्ठा प्रतिष्ठा शमितिः सत्वप्रकृतिः उत्तमा ॥ ९८ ॥ तमःप्रकृति दुर्मर्षी रजः प्रकृतिः आनतिः क्रिया अक्रियाऽऽकृतिः ग्लानिः सात्त्विकी अध्यात्मिकी वृषा ॥९९॥ सेवा शिखामणिः वृद्धिः आहूतिः पिंगलोद्भवा नागभाषा नागभूषा नागरी नगरी नगा ॥ १०० ॥ नौः नौका भवनौः भाव्या भवसा-

गरसेतुका मनोमयी मणिमयी सैकती सिकतामयी ॥ १ ॥ लेख्या लेप्या मणिमयी प्रतिहेमविनिर्मिता शैली शैलभवा शीला शीकराभा चला अचला ॥२॥ अस्थिता स्वस्थिता तूली वैदिकी तांत्रिकी विधिःसन्ध्या सन्ध्याभ्रवसना वेदसंधिः सुधामयी ॥३॥ सायंतनी शिखा वेध्या सूक्ष्मा, जीवकलाकृतिः आत्मभूता भविता अण्वी प्रह्वी कमलकर्णिका ॥४॥ नीराजनमहाविद्या कदली कार्यसाधनी पूजा प्रतिष्ठा विपुला पुनंती पारलौकिकी ॥ ५ ॥ शुक्लशुक्तिः मौक्तिका प्रतीतिः परमेश्वरी विरजा उष्णिक् विराट् वेणी वेणुका वेणुनादिनी ॥ ६ ॥ आवर्तिनी वार्तिकदा वार्ता वृत्तिः विमानगा रासाढ्या रासिनी रासी रासमण्डलवर्तिनी ॥ ७ ॥ गोपगोपीश्वरी गोपी गोपी गोपालवंदिता गोचारिणी गोपनदी गोपानन्द

लेख्यालेप्यामणिमयीप्रतिहेमविनिर्मिता ॥ शैलीशैलभवाशीलाशीकराभाचलाचला ॥ १०२ ॥ अस्थितास्वस्थितातूलीवैदिकीतांत्रिकी विधिः ॥ संध्यासंध्याभ्रवसनावेदसंधिःसुधामयी ॥१०३॥ सायंतनीशिखावेध्यासूक्ष्माजीवकलाकृतिः ॥ आत्मभूताभाविताऽण्वीप्रह्वीकमल कर्णिका ॥१०४॥ नीराजनीमहाविद्याकंदलीकार्यसाधनी ॥ पूजाप्रतिष्ठाविपुलापुनंतीपारलौकिकी ॥ १०५ ॥ शुक्लशुक्तिमौक्तिकाचप्रतीतिः परमेश्वरी॥ विराजोष्णिक्विराड्वेणीवेणुकावेणुनादिनी॥१०६॥आवर्तिनीवार्तिकदावार्त्तावृत्तिर्विमानगा॥रासाढ्यारासिनीरासीरासमण्डलवर्तिनी ॥१०७॥ गोपगोपीश्वरीगोपीगोपीगोपालवन्दिता॥ गोचारिणीगोपनदीगोपानन्दप्रदायिनी ॥ १०८ ॥ पशव्यदागोपसेव्याकोटिशोगोगणावृता ॥ गोपानुगागोपवतीगोविन्दपदपादुका ॥१०९॥ वृषभानुसुताराधाश्रीकृष्णवशकारिणी॥ कृष्णप्राणाधिकाशश्वद्रसिकारसिकेश्वरी ॥ ११० ॥ अवटोदाताम्रपर्णीकृतमालाविहायसी ॥ कृष्णावेणाभीमरथीतापीरेवामहापगा ॥ ११ ॥ वैयासकीचकावेरीतुंगभद्रासरस्वती ॥ चन्द्रभागावेत्रवतीऋषिकुल्याककुद्मिनी ॥ १२ ॥ गौतमीकौशिकीसिन्धुर्बाणगंगातिसिद्धिदा ॥ गोदावरीरत्नमालागंगामन्दाकिनीबला ॥ १३ ॥ स्वर्णदीजाह्नवीवेलावैष्णवीमंगलालया ॥ बालाविष्णुपदीप्रोक्तासिन्धुसागरसंगता॥१४॥गंगासागरशोभाढ्यासामुद्रीरत्नदाधुनी॥ भागीरथीस्वर्धुनीभूःश्रीवामनपदच्युता ॥ १५ ॥ लक्ष्मीरमारामणीयाभार्गवीविष्णुवल्लभा ॥ सीतार्चिर्जानकीमाताकलंकरहिताकला ॥१६॥

प्रदायिनी ॥ ८ ॥ पशव्यदा गोपसेव्या कोटिशो गोगणावृता गोपानुगगा गोपवती गोविंदपदपादुका ॥ ९ ॥ वृषभानुसुता राधा श्रीकृष्णवशकारिणी कृष्णप्राणाधिका शश्वद्रसिका रसिकेश्वरी ॥ ११० ॥ अवटोदा ताम्रपर्णी कृतमाला विहायसी कृष्णा वेणा भीमरथी तापी रेवा महापगा ॥ ११ ॥ वैयासकी कावेरी तुंगभद्रा सरस्वती चंद्रभागा वेत्रवती ऋषिकुल्या ककुद्मिनी ॥ १२ ॥ गौतमी कौशिकी सिंधुः बाणगंगा अतिसिद्धिदा गोदावरी रत्नमाला गंगा मंदाकिनी ॥ १३ ॥ स्वर्णदी जाह्नवी वेला वैष्णवी मंगलालया बाला विष्णुपदी प्रोक्ता सिंधुसागरसंगता ॥ १४ ॥ गङ्गासागरशोभाढ्या सामुद्री रत्नदा धुनी भागीरथी स्वर्धुनी भूः श्रीवामनपदच्युता ॥ १५ ॥ लक्ष्मीः रमा रामणीया भार्गवी

विष्णुवल्लभा सीता अर्चिः जानकी माता कलंकरहिता कला ॥ १६ ॥ कृष्णपादाब्जसंभूता सर्वा त्रिपथगामिनी धरा विश्वंभरा अनंता भूमिः धात्री क्षमामयी ॥ १७ ॥ स्थिरा धरित्री धरिणी उर्वी शेषफणास्थिता अयोध्या राघवपुरी कौशिकी रघुवंशजा ॥ १८ ॥ मथुरा माथुरी पंथा यादवी ध्रुवपूजिता मयायुः विल्वनीलाद्धा गंगाद्धा विनिर्गता ॥ १९ ॥ कुशावर्तमयी ध्रौव्या ध्रुवमंडलमध्यगा काशी शिवपुरी शेषा विंध्या वाराणसी शिवा ॥ १२० ॥ अवंतिका देवपुरी प्रोज्ज्वला उज्जयिनी जिता द्वारावती द्वारकामा कुशभूता कुशस्थली ॥ २१ ॥ महापुरी सप्तपुरी नंदिग्रामस्थलस्थिता शालग्रामंशिला आदित्या शंभलग्राममध्यगा ॥ २२ ॥ वंशगोपालिनी क्षिप्ता हरिमंदिरवर्तिनी बर्हिष्मती हस्तिपुरी शक्रप्रस्थनिवासिनी ॥ २३ ॥ दाडिमी सैंधवी जंबूः पौष्करी पुष्करप्रसूः उत्पला आवर्तगमना नैमिषि अनिमिपादता ॥२४॥ कुरुजाङ्गलभूः काली हैमवती आर्बुदी बुधा शूकरक्षेत्रविदिता श्वेतवाराहधारिता ॥२५॥

कृष्णपादाब्जसंभूतासर्वात्रिपथगामिनी ॥ धराविश्वंभरानंताभूमिर्धात्रीक्षमामयी ॥१७॥ स्थिराधरित्रीधरणीउर्वीशेषफणास्थिता ॥ अयोध्या
राघवपुरीकौशकीरघुवंशजा ॥१८॥ मथुरामाथुरीपंथायादवीध्रुवपूजिता ॥ मयायुर्बिल्वनीलाद्धागंगाद्धारविनिर्गता ॥ १९ ॥ कुशावर्तमयी
ध्रौव्याध्रुवमण्डलमध्यगा ॥ काशीशिवपुरीशेषाविंध्यावाराणसीशिवा ॥१२०॥ अवंतिकादेवपुरीप्रोज्ज्वलोज्जयिनीजिता ॥ द्वारावतीद्वारका
माकुशभूताकुशस्थली ॥२१॥ महापुरीसप्तपुरीनन्दिग्रामस्थलस्थिता ॥ शालग्रामशिलादित्याशंभलग्राममध्यगा ॥ २२ ॥ वंशगोपालिनी
क्षिप्ताहरिमन्दिरवर्तिनी ॥ बर्हिष्मतीहस्तिपुरीशक्रप्रस्थनिवासिनी ॥ २३ ॥ दाडिमीसैंधवीजंबूःपौष्करीपुष्करप्रसूः ॥ उत्पलावर्तगमना-
नैमिष्यनिमिषादता ॥२४॥ कुरुजांगलभूःकालीहैमवत्यार्बुदीबुधा ॥ शूकरक्षेत्रविदिताश्वेतवाराहधारिता ॥२५॥ सर्वतीर्थमयीतीर्थातीर्थानां-
तीर्थकारिणी ॥ हारिणीसर्वदोषाणांदायिनीसर्वसम्पदाम् ॥२६॥ वर्द्धिनीतेजसांसाक्षाद्गर्भवासनिकृन्तिनी ॥ गोलोकधामधनिनीनिकुंजनिज-
मंजरी ॥२७॥ सर्वोत्तमासर्वपुण्यासर्वसौंदर्य्यशृंखला ॥ सर्वतीर्थोपरिगतासर्वतीर्थाधिदेवता ॥२८॥ नाम्नांसहस्रंकालिंद्याःकीर्तिदंकामदंपरम् ॥
महापापहरम्पुण्यमायुर्वर्द्धनमुत्तमम् ॥ २९ ॥ एकवारंपठेद्रात्रौचौरेभ्योनभयंभवेत् ॥ द्विवारंप्रपठेन्मार्गेदस्युभ्योनभयंक्वचित् ॥ १३० ॥
द्वितीयांतुसमारभ्यपठेत्पूर्णावधिंद्विजः ॥ दशवारमिदंभक्त्याध्यात्वादेवींकलिंदजाम् ॥ ३१ ॥

सर्वतीर्थमयी तीर्था तीर्थानांतीर्थकारिणी ॥ हारिणी सर्वदोषाणां दायनी सर्वसंपदाम् ॥२६॥ वर्द्धिनी तेजसां साक्षात् गर्भवासनिकृंतिनी गोलोकधामधनिनी निकुंजनिजमंजरी ॥ २७ ॥ सर्वोत्तमा सर्वपुण्या सर्वसौंदर्यशृंखला सर्वतीर्थोपरिगता सर्वतीर्थाधिदेवता १००० ॥ २८ ॥ नाम्नां सहस्रं कालिंद्याः—ये कालिंदीके हजार नाम मैंने कहे हैं ये कीर्तिको देनेवाले हैं, परम कामनाके देनेवाले हैं, महापापके हरनेवाले हैं पवित्र हैं आयुको बढानेवाले हैं और अत्युत्तम हैं ॥ २९ ॥ एक बार जो इन हजार नामोंको रात्रिमें पढ़े तो चोरोंका भय नहीं होवे, यदि दो बार पढ़े तो मार्गमें चोरोंका भय कभी नहीं होवे ॥ १३० ॥ और जो द्वितीयासे लेकर

पूर्णमासीतक प्रतिदिन भक्तिसे दश पाठ करे और कालिन्दीका ध्यान करे ॥३१॥ तो रोगी रोगसे छूट जाये, बंधनमें बंधा हुआ बंधनसे छूट जाये, गर्भिणीके पुत्र हो, विद्यार्थी पढ़े तो पंडित हो ॥३२॥ मोहन, स्तम्भन, वशीकरण, उच्चाटन, मारण, शोषण, दीपन ॥ ३३ ॥ उन्मादन, तापन, गुप्त धनका दीखना, जो जो चित्तमें इच्छा करे, वह सभी मनुष्यको प्राप्त होती है ॥३४॥ ब्राह्मण पाठ करे तो ब्रह्मतेज बढ़े, राजा करे तो पृथ्वीका पति होवे, वैश्य करे तो निधिका पति हो, और शूद्र सुने तो निर्मल हो ॥ ३५ ॥ पूजाकालमें जो भक्ति भावसे नित्य पाठ करे तो पापसे लिप्त नहीं होवे, जैसे कमलका फूल जलमें लिप्त नहीं होता है ॥३६॥ जो एक वर्षतक पटल, पद्धति, स्तोत्र और कवच सहित नित्य एकसौ पाठ करे ॥ ३७ ॥ तो निःसन्देह उसको सातों द्वीपोंका राज्य मिले ॥ ३८ ॥ जो यमुनाजीकी भक्तिसे युक्त निष्काम होकर पढ़े तो धर्म, अर्थ, काम, इनको प्राप्तकर जीवन्मुक्त हो जावे ॥३९॥ जो इसको पढ़े, सुने और सुनाये वह गोलोकको प्राप्त करता है, कैसा गोलोक है, निकुंजकी लीलासे ललित है, मनोहर है, और जो कालिन्दीके किनारेके लतायुक्त

रोगीरोगात्प्रमुच्येतबद्धोमुच्येतबन्धनात् ॥ गुर्विणीजनयेत्पुत्रंविद्यार्थीपंडितोभवेत् ॥३२॥ मोहनंस्तंभनंशश्वद्वशीकरणमेवच ॥ उच्चाटनंघातनं चशोषणंदीपनंतथा ॥३३॥ उन्मादनंतापनंचनिधिदर्शनमेवच ॥ यद्यद्वाञ्छतिचित्तेनतत्तत्प्राप्नोतिमानवः ॥३४॥ ब्राह्मणोब्रह्मवर्चस्वीराजन्योजगतीपतिः ॥ वैश्योनिधिपतिर्भूयाच्छूद्रःश्रुत्वातुनिर्मलः ॥३५॥ पूजाकालेतुयोनित्यंपठतेभक्तिभावतः ॥ लिप्यतेनसपापेनपद्मपत्रमिवांभसा ॥ ॥३६॥ शतवारंपठेन्नित्यंवर्षावधिततःपरम् ॥ पटलंपद्धतिंकृत्वास्तवंचकवचंतथा ॥३७॥ सप्तद्वीपमहीराज्यंप्राप्नुयान्नात्रसंशयः ॥३८॥ निष्कारणंपठेद्यस्तुयमुनाभक्तिसंयुतः ॥ त्रैवर्ग्यमेत्यसुकृतीजीवन्मुक्तोभवेदिह ॥३९॥ निजकुंजलीलाललितंमनोहरंकलिंदजाकूललताकदम्बकम् ॥ वृन्दावनोन्मत्तमिलिंदशब्दितंव्रजेत्सगोलोकमिदंपठेच्चयः ॥४०॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखण्डेश्रीसौभरिमान्धातृसंवादेयमुनासहस्रनामकथनंनामैकोनविंशोऽध्यायः ॥१९॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिकृष्णास्तवंश्रुत्वामान्धातानृपसत्तमः ॥ अयोध्यांप्रययौवीरोनत्वाश्रीसौभरिंमुनिम् ॥ ॥ १ ॥ इदंमयातेकथितंगोपीनांचरितंशुभम् ॥ महापापहरम्पुण्यंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥२॥ बहुलाश्वउवाच ॥ श्रुतंत्वन्मुखाद्ब्रह्मन्गोपीनांवर्णनंपरम् ॥ यमुनायाश्चपंचांगंमहापातकनाशनम् ॥३॥ श्रीकृष्णःसबलःसाक्षाद्गोलोकाधिपतिःप्रभुः ॥ अग्रेचकारकांलीलांललितांव्रजमंडले ॥४॥

कदम्बोंसे युक्त है और जो गोलोक वृन्दावनसे बंधी उन्मत्त भ्रमरोंकी गुञ्जारसे युक्त है, उस गोलोकको प्राप्त हो ॥४०॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्यखंडे भाषाटीकायां यमुना सहस्रनाम कथनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥१९॥ नारदजी कहते हैं, इस प्रकार यमुनाजीका पञ्चांग सुनकर राजाओंमें श्रेष्ठ मान्धाता राजा सौभरि ऋषिको प्रणाम करके अयोध्या को चला गया ॥१॥ यह मैंने तुम्हारे सामने जो गोपियोंका शुभ चरित्र वर्णन किया, यह अति पवित्र और महापापोंको हरनेवाला है, अब तुम और क्या सुनना चाहते हो ॥२॥ तब बहुलाश्व राजा बोला कि, हे ब्रह्मन् ! आपके मुखसे यह गोपियोंका चरित्र मैंने सुना और महापापको दूर करनेवाला यमुनापंचांग भी सुना ॥३॥ अब साक्षात् गोलोकके पति श्रीकृष्ण प्रभुने व्रज मण्डलमें आगे कौनसी मनोहर लीला की, उसको कहिये ॥ ४ ॥

तब नारदजी बोले कि एक दिन श्रीकृष्ण बलदेवजीके साथ बालकोंको लेकर अपनी गौऐं चराते हुये भांडीरवनमें बाललीला करने लगे ॥५॥ बालकोंसे चढ़ी चढ़ाका खेल कराते मनोहर जो गौएं हैं, उन गौओंको दिखाते आप वनमें विहार करने लगे ॥६॥ वहाँ कंसका भेजा हुआ प्रलम्बासुर गोप बालकका रूप धरकर आया, तब बालकोंने तो उसको पहिचाना नहीं, परन्तु श्रीकृष्णने पहिचान लिया ॥७॥ खेलमें जीतनेवाले बलरामजीको कोई बालक अपनी पीठपर बैठाकर ले चलनेको नहीं मानता था, सो प्रलम्बासुरने कहा कि, बलरामजीको मैं ले चलूँगा, सो प्रलम्बासुर उनको चढ़ाकर भाण्डीरवनसे यमुना तटतक ले चला ॥८॥ जब यह दैत्य उतरनेके स्थानसे मथुराको ले चलनेके लिये उद्यत हुआ, तब इसने अपना काला-काला पर्वतके समान रूप धर लिया ॥९॥ उस दैत्यके ऊपर सुन्दर बलदेवजी जिनके कुण्डल हिल रहे हैं, ऐसे सुशोभित हुये, जैसे बिजली सहित श्याम घटामें आकाश स्थित पूर्ण चन्द्रमा ॥ १० ॥ तब उस भयंकर दैत्यको देखकर महाबली बलदेवने क्रोधसे दैत्यके शिरमें एक घूँसा मारा, जैसे इन्द्र वज्रसे पर्वतको फोड़ता है ॥११॥ तब

श्रीनारदउवाच ॥ एकदाचारयन्गाःस्वाःसबलोगोपबालकैः ॥ भाण्डीरेयमुनातीरेबाललीलांचकारह ॥ ५ ॥ विहारंकारयन्बालैर्वाह्यवाहक लक्षणम् ॥ विजहारवनेकृष्णोदर्शयन्गामनोहराः ॥६॥ तत्रागतोगोपरूपीप्रलंबःकंसनोदितः ॥ नज्ञातोबालकैःसोपिहरिणाविदितोऽभवत् ॥७॥ विहारविजयंरामंनेतुंकोपिनमन्यते ॥ उवाहतंप्रलंबोसौभाण्डीराद्यमुनातटम् ॥८॥ अवरोहणतोदैत्योमथुरांगंतुमुद्यतः ॥ दधारघनवद्रूपंगिरी- न्द्रइवदुर्गमः ॥९॥ बभौबलोदैत्यपृष्ठेसुन्दरोलोलकुण्डलः ॥ आकाशस्थःपूर्णचन्द्रःसतडिज्जलदोयथा ॥ १० ॥ दैत्यंभयंकरंवीक्ष्यबलदेवो महाबलः॥रुषाहनन्मुष्टिनातंशिरस्यद्रियथाद्रिभित् ॥११॥ विशीर्णमस्तकोदैत्योयथावज्रहतोगिरिः॥ पपातभूमौसहसाचालयन्वसुधातलम् ॥ ॥१२॥ तज्ज्योतिर्निर्गतंदीर्घंबलेलीनंबभूवह ॥ तदैववद्वृषुर्देवाःपुष्पैर्नन्दनसंभवैः॥१३॥ अभूज्जयजयारावोदिविभूमौनृपेश्वर ॥ एवंश्रीबलदेव- स्यचरितंपरमाद्भुतम् ॥ १४ ॥ मयातेकथितंराजन्किंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ कोयंदैत्यःपूर्वकालेप्रलंबोरणदुर्मदः ॥ बल- देवस्यहस्तेनमुक्तिंप्रापकथंमुने ॥ १५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ शिवस्यपूजनार्थंहियक्षराट्स्ववनेशुभे ॥ कारयामासपुष्पाणांरक्षांयक्षैरित- स्ततः ॥१६॥ तदप्यस्यातिजगृहुःपुष्पाणिप्रस्फुरंतिच॥ततःक्रुद्धोददौशापंयक्षराड्धनदोबली ॥१७॥ येगृह्णंत्यस्यपुष्पाणियेचान्येसुरमानवाः॥ भवितारोऽसुराःसर्वेमच्छापात्सहसाभुवि ॥ १८ ॥

शिर जिसका फट गया वह दैत्य पृथ्वीको कम्पाता हुआ मरकर भूमिमें गिर पड़ा जैसे वज्रका मारा हुआ पर्वत गिर पड़ता है ॥ १२ ॥ उस समय उसकी देहमेंसे ज्योति निकली वह बलदेवजीमें लीन हो गई, तब तो देवता नन्दनवनके पुष्पोंकी वर्षा करने लगे ॥१३॥ जय जय शब्द होने लगा, स्वर्गमें और भूमिमें, इस प्रकार बलदेवजीका अद्भुत चरित्र है ॥ १४ ॥ हे राजन्! यह मैंने तुम्हारे सामने कहा, अब और क्या सुनना चाहते हो, तब बहुलाश्व राजा बोला कि हे महाराज! यह दैत्य पहले जन्ममें कौन था, रणमें दुर्मद जो यह बलदेवजी के हाथ से मुक्ति को प्राप्त हुआ ॥ १५ ॥ नारदजी बोले कि, शिवके पूजनके लिये कुबेर अपने शुभ वनमें यक्षोंसे चारों ओरसे पुष्पोंकी रक्षा कराता था ॥१६॥ तो भी, उस वनके खिले हुये सब फूल किसीने तोड़ लिये, तब कुबेरबलीने क्रोधसे यह शाप दिया ॥ १७ ॥ कि जो कोई देवता

मनुष्य, यक्ष, मेरे इस वनके पुष्पोंको तोड़ेगा, वह मेरे शापसे चाहे कोई क्यों न हो राक्षस हो जायगा ॥ १८ ॥ सो हू हू गन्धर्वका विजय नामक एक पुत्र था, वह तीर्थ भूमिमें विचरण करता मार्गमें विष्णु भगवान्के गुणोंको गाता हुआ चैत्र रथ वनमें आया ॥१९॥ वीणा हाथमें लिये था, उसने बिना जाने फूल तोड़ लिये, सो वह गन्धर्वत्वको छोड़कर राक्षस हो गया ॥२०॥ तब वह महात्मा कुबेरकी शरण गया और हाथ जोड़ प्रणाम कर उसने कुबेर से प्रार्थना की ॥ २१ ॥ तब हे राजेन्द्र ! कुबेरने उसके ऊपर प्रसन्न होकर वर दिया कि तू विष्णुका भक्त है, शान्तात्मा है, हे मानके दाता ! तू शोच मत कर ॥२२॥ द्वापरके अन्तमें बलदेवजीके हाथसे भाण्डीर वनमें यमुनाके किनारे पर तुम्हारी इस शाप से मुक्ति हो जायगी, इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥२३॥ नारदजी कहते हैं कि, हे राजन् ! वह हू हू गन्धर्वका पुत्र प्रलम्बासुर हुआ था, जो कुबेरके वरसे मोक्षको प्राप्त हो गया ॥२४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां माधुर्य्यखण्डे भाषाटीकायां प्रलम्बवधो नाम विंशोऽध्यायः ॥२०॥ नारदजी कहते हैं कि, वे सब बालक जब बलदेवजी सहित खेलमें लग गये थे, तब तृण

हूहूसुतोथविजयोविचरन्तीर्थभूमिषु ॥ वनंचैत्ररथंप्राप्तोगायन्विष्णुगुणान्पथि ॥१९॥ वीणापाणिरजानन्वैगन्धर्वःसुमनांसिच ॥ गृहीत्वासोऽसुरोजातोगन्धर्वत्वंविहायतत् ॥ २० ॥ तदैवशरणंप्राप्तःकुबेरस्यमहात्मनः ॥ नत्वातत्प्रार्थनांचक्रेकृतांजलिपुटःशनैः ॥२१॥ तस्मैप्रसन्नोराजेन्द्रकुबेरोपिवरंददौ ॥ त्वंविष्णुभक्तःशांतात्मामाशोचंकुरुमानद ॥२२॥ द्वापरांतेचतेमुक्तिर्बलदेवस्यहस्ततः ॥ भविष्यतिनसन्देहोभाण्डीरेयमुनातटे ॥ २३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ हूहूसुतःसगन्धर्वःप्रलंबोभून्महासुरः ॥ कुबेरस्यवराद्राजन्परंमोक्षंजगामह ॥ २४ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेप्रलंबबधोनामविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथक्रीडाप्रसक्तेषुगोपेषुसबलेषुच ॥ तृणलोभेनविवशुर्गावःसर्वामहद्वनम् ॥ १ ॥ ताआनेतुंगोपबालाःप्राप्तामुंजाटवींपराम् ॥ संभूतस्तत्रदावाग्निःप्रलयाग्निसमोमहान् ॥२॥ गोभिर्गोपाःसमेतास्तेश्रीकृष्णंसबलंहरिम् ॥ वदन्तःपाहिपाहीतिभयार्ताःशरणंगताः ॥३॥ वीक्ष्यवह्निभयंस्वानांकृष्णोयोगेश्वरेश्वरः ॥ न्यमीलयतमाभैष्टलोचनानीत्यभाषत ॥४॥ तथाभूतेषुगोपेषुतमग्निंभयकारकम् ॥ अपिबद्भगवान्देवोदेवानांपश्यतांनृप ॥५॥ एवंपीत्वामहावह्निंनीत्वागोपालगोगणम् ॥ प्राप्तोभूद्यमुनापारेशुभाशोकवनेहरिः ॥६॥ तत्रक्षुत्पीडितागोपाःश्रीकृष्णंसबलंहरिम् ॥ कृतांजलिपुटाऊचुःक्षुधार्ताःस्मोवयंप्रभो ॥७॥

(घास) के लोभसे सब गौएं बड़ा भारी जो मूंजका वन था, उसमें चली गई ॥१॥ उन गौओंको लेनेके लिये गोप बालकभी मूंजके वनमें चले गये, उस वनमें प्रलयकी अग्नि के समान दावानल लगी ॥ २ ॥ तब सब गौ और गोप रक्षा करिये, रक्षा करिये ऐसा कहते हुये भयसे दुखी होकर बलदेव सहित श्रीकृष्णकी शरणमें गये ॥३॥ तब अपने गोपोंको अग्निका भय देखकर योगेश्वरोंके ईश्वर श्रीकृष्ण बोले—हे गोपो ! आँखें बन्द कर लो और भय मत करो ॥४॥ जब उन्होंने आँखें बन्द कर लीं, तो सब देवताओंके देखते-देखते श्रीकृष्ण भगवान् उस भयकारी अग्निको पी गये ॥ ५ ॥ इस प्रकार उस दावाग्निको पीकर गौ और गोपोंको साथ लेकर यमुनाके पार शुभ अशोक वनमें गये ॥६॥ वहां भूखके मारे सब गोप श्रीकृष्ण और बलदेवके पास आकर हाथ जोड़कर बोले हे प्रभो ! हम भूखे हैं ॥ ७ ॥

तब भगवान्ने उन गोपोंको मथुराके ब्राह्मण जहाँ आंगिरस यज्ञ कर रहे थे, वहाँ भेजा, तब वे सब वहाँ जाकर यज्ञको और ब्राह्मणोंको प्रणाम करके निर्मल वचन बोले ॥ ८ ॥ कि हे विप्रो ! आज सब गोप बालकोंको साथ लेकर बलदेव सहित श्रीकृष्ण गौएं चराते हुये व्रजराज नन्दन आये हैं, और भूखे हैं, सो उन कामको मोहने वाले गण सहित श्रीकृष्ण को अन्न दीजिये ॥९॥ नारदजी कहते हैं कि, "हे नृप ! ऐसे गोपोंका वचन सुनकर वे सब ब्राह्मण कुछ नहीं बोले, निराश होकर आकर बलदेव सहित श्रीकृष्णसे बोले ॥१०॥ गोप बोले कि, तुम तो इस व्रज मण्डलके अधीश हो, बली हो और श्री गोकुलमें नन्दजीके आगे दण्ड दाता तुमहीं हो, प्रचण्ड सूर्यका सा तेज तुम्हारा मधुपुरीमें नहीं वर्तता है ॥११॥ नारदजी कहते हैं कि, तब भगवान्ने उन गोपोंको उन ब्राह्मणोंकी स्त्रियोंके पास भेजा, तब बालक फिर यज्ञवाटमें जाकर हाथ जोड़ ब्राह्मणियोंको प्रणाम करके कृष्णके भेजे,

तदातान्प्रेषयामासयज्ञआंगिरसेहरिः ॥ तेगत्वातंयज्ञवरंनत्वोचुर्विमलंवचः ॥ ८ ॥ गोपाऊचुः ॥ गोपालबालैःसबलःसमागतोगाश्चारय-
न्श्रीव्रजराजनन्दनः ॥ क्षुत्संयुतोऽस्मैसगणायभूसुराःप्रयच्छताश्वन्नमनंगमोहिने ॥ ९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ नकिंचिदूचुस्तेसर्वेवचः
श्रुत्वाद्विजानृप ॥ गोपानिराशाआगत्यइत्यूचुःसबलंहरिम् ॥ १० ॥ गोपाऊचुः ॥ त्वमस्यधीशोव्रजमंडलेबलीश्रीगोकुलेनंदपुरोग्रदण्ड
धृक् ॥ नवर्ततेदण्डमलंमधोःपुरिप्रचंडचंडांशुमहस्तवस्फुरत् ॥ ११ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ पुनस्तान्प्रेषयामासतत्पत्नीभ्योहरिःस्वयम् ॥
यज्ञवाटंपुनर्गत्वानत्वाविप्रप्रियास्तदा ॥ कृतांजलिपुटाऊचुर्गोपाःकृष्णप्रणोदिताः ॥ १२ ॥ गोपाऊचुः ॥ गोपालबालैःसबलःसमागतोगा-
श्चारयन्श्रीव्रजराजनन्दनः ॥ क्षुत्संयुतोऽस्मैसगणायचांगनाः प्रयच्छताश्वन्नमनंगमोहिने ॥ १३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ कृष्णंसमागतंश्रुत्वा
कृष्णदर्शनलालसाः ॥ चक्रुस्तथान्नपात्रेषुनीत्वासर्वद्विजांगनाः ॥१४॥ त्यक्त्वासद्योलोकलज्जांकृष्णपार्श्वंसमाययुः ॥ अशोकानांवनेरम्येकृष्णा
तीरेमनोहरे ॥ १५ ॥ यथाश्रुतं तथादृष्टंश्रीहरेरूपमद्भुतम् ॥ प्राप्यानंदंगताःसर्वास्तुरीयंयोगिनोयथा ॥ १६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ धन्या
यूयंदर्शनार्थमागताहेद्विजांगनाः ॥ प्रतियातगृहाञ्छीघ्रंनिःशंकाभूमिदेवताः ॥ १७ ॥ युष्माकंतुप्रभावेणपतयोवोद्विजातयः ॥ सद्योयज्ञफ-
लंप्राप्ययुष्माभिःसहनिर्मलाः ॥ १८ ॥

हुये बोले ॥१२॥ कि हे अंगनाओ ! गोपों सहित बलदेवके साथ गौओंको चराते व्रजराज नन्दन कामके मोहने वाले आये हैं, सो गोपों सहित भूखे हैं, उनको बहुत शीघ्र भोजन दीजिये ॥ १३ ॥ नारदजी कहते हैं कि, कृष्णके दर्शनकी लालसा जिनके ऐसी वे ब्राह्मणियाँ कृष्णको आया सुनकर पात्रोंमें चार प्रकारके अन्न भरकर ॥ १४ ॥ जल्दीही लोक लज्जाको छोड़कर कृष्णके पास आई, अशोकोंके वनमें कालिंदीके मनोहर तीरपर ॥१५॥ श्री हरिका अद्भुत रूप जैसा सुना था, वैसाही देखा, तब वे सब आनन्दको प्राप्त हो गई, जैसे योगी जन तुरीय ब्रह्मको प्राप्त होकर आनन्दको प्राप्त हो जाते हैं ॥ १६ ॥ तब भगवान् बोले—हे द्विजांगनाओ ! तुम धन्य हो, जो मेरे दर्शनको आई हो, हे भूमि देवियो ! अब जल्दी ही निःशंक अपने घर जाओ ॥ १७ ॥ तुम्हारे प्रभावसे तुम्हारे पति शीघ्रही यज्ञके फलको प्राप्त होकर तुम्हारे सहित निर्मल होकर ॥ १८ ॥

प्रकृतिसे परे जो गोलोकधाम है, उसको प्राप्त होंगे, नारदजी कहते हैं कि, उसके बाद श्रीकृष्णकी आज्ञासे वे सब श्रीकृष्णको प्रणाम करके यज्ञवाटको आईं ॥ १९ ॥ तब उन स्त्रियोंको सब ब्राह्मण आई देखकर अपनेको धिक्कारने लगे, एक बार श्रीकृष्णको देखनेकी इच्छा भी हुई, किन्तु कंसके भयसे नहीं आये ॥ २० ॥ तब श्रीकृष्ण बलदेव गोपों-सहित अन्नका भोजन करके हे मैथिल ! गौओंका पालन करते मनोहर वृन्दावनको आये ॥२१॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां माधुर्य खण्डे भाषाटीकायां दावानल पान विप्रपत्नी दर्शनं नामैकविंशोऽध्यायः ॥२१॥ नारदजी कहते हैं कि, एक दिन नंदराज एकादशीका व्रत करके द्वादशीके दिन यमुना स्नान करनेके लिये हे मैथिल ! गोपोंको साथ लेकर जलमें प्रविष्ट हुये ॥ १ ॥ वहाँ एक वरुणका सेवक नन्दजीको पकड़कर वरुण लोकको ले गया, तब तो हे राजन् ! गोपोंमें बड़ा कोलाहल हुआ ॥ २ ॥ तब भगवान् सबको आश्वासन देकर वरुणकी पुरीको चले गये और सहजमेंही आप हरि भगवान्ने वरुणकी पुरीको और दुर्गको भस्म कर दिया ॥३॥ करोड़ सूर्यका सा जिनका तेज ऐसे हरिको कुपित देखकर

गमिष्यंतिपरंधामगोलोकंप्रकृतेःपरम् ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथनत्वाहरिंसर्वाआजग्मुर्यज्ञमण्डले ॥ १९ ॥ तादृष्ट्वाब्राह्मणाःसर्वेस्वात्मानंधि-क्प्रचक्रिरे ॥ दिदृक्षवस्तेश्रीकृष्णंकंसाद्भीतानचागताः ॥२०॥ भुक्त्वान्नंसबलःकृष्णोगोपालैःसहमैथिलः ॥ गाःपालयन्नाजगामवृंदारण्यंमनोहरम् ॥ ॥२१॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेदावाग्निमोक्षविप्रपत्नीदर्शनंनामैकविंशोध्यायः ॥ २१ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एकदानंदराजोसौकृत्वाचैकादशीव्रतम् ॥ द्वादश्यांयमुनांस्नातुंगोपालैर्जलमाविशत् ॥१॥ तंगृहीत्वापाशिभृत्यःपाशिलोकंजगामह ॥ तदाको-लाहलेजातेगोपानांमैथिलेश्वर ॥२॥ आश्वास्यसर्वान्भगवान्गतवान्वारुणींपुरीम् ॥ भस्मीचकारसहसापुरींदुर्गंहरिःस्वयम् ॥३॥ कोटिमार्तंडसं-काशंदृष्ट्वाप्रकुपितंहरिम् ॥ नत्वाकृतांजलिःपाशीपरिक्रम्याहधर्षितः ॥ ४ ॥ वरुणउवाच ॥ नमःश्रीकृष्णचंद्रायपरिपूर्णतमायच ॥ असंख्य ब्रह्मांडभृतेगोलोकपतयेनमः ॥५॥ चतुर्व्यूहायमहसेनमस्तेसर्वतेजसे ॥ नमस्तेसर्वभावायपरस्मैब्रह्मणेनमः ॥६॥ केनापिमूढेनममानुगेनकृतंपरंहेलन माद्यमेव ॥ तत्क्षम्यतांभोःशरणंगतंमांपरेशभूमन्परिपाहिपाहि ॥७॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिप्रसन्नोभगवान्नंदंनीत्वासुजीवितम् ॥ सौख्यंप्रकाशय न्बंधून्व्रजमंडलमाययौ ॥८॥ नन्दराजमुखाच्छ्रुत्वाप्रभावंश्रीहरेस्तुतम् ॥ गोपीगोपगणाऊचुःश्रीकृष्णंनंदनंदनम् ॥ ९ ॥ यदित्वंभगवान्साक्षा-ल्लोकपालैःसुपूजितः ॥ दर्शयाशुपरंलोकंवैकुण्ठंतर्हिनः प्रभो ॥ १० ॥

हाथ जोड़ प्रणाम करके वरुण हर्षित होकर बोला ॥४॥ हे श्रीकृष्णचन्द्र ! आप परिपूर्णतम हो, आपके लिये नमस्कार है, असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति और गोलोक धामके पति हो, आपको नमस्कार है ॥ ५ ॥ चतुर्व्यूह हो, तेज रूप हो, सर्वतेजा हो, सर्व स्वरूप हो, परब्रह्म हो, आपके लिये नमस्कार है ॥ ६ ॥ किसी मूर्ख मेरे चाकरने आपका प्रथम अपराध किया है, उसको अब आप क्षमा करो हे परेश ! हे भूमन् ! शरणागत जो मैं हूँ, उसकी रक्षा करिये, रक्षा करिये ॥ ७ ॥ नारदजी कहते हैं, तब भगवान् प्रसन्न होकर जीवित नन्दजीको लेकर अपने बन्धुओंको सुखका प्रकाश करते व्रजमण्डलको आये ॥८॥ नन्दजीके मुखसे हरिका प्रभाव सुनकर गोपगोपियोंके गण नन्दनन्दन श्रीकृष्णसे बोले ॥ ९ ॥ कि हे प्रभो ! लोकपालोंसे जो आप पूजित हो, सो आप साक्षात् भगवान् हो तो हे प्रभो ! हमको अपना वैकुण्ठलोक दिखाइये ॥ १० ॥

तब तो श्रीकृष्ण सबको वैकुण्ठमें ले गये फिर ज्योतिर्मण्डलके भीतर वर्तमान जो अपना रूप है, वह दिखाया ॥११॥ जो रूप हजार भुजाओंसे युक्त किरीट कंकणसे उज्ज्वल शंखचक्र गदा, पद्म, और वनमालासे शोभित ॥१२॥ असंख्य कोटि सूर्यका सा प्रकाश, शेषपर विराजमान, चमर जिनपर ढुल रहे हैं, दिव्य जिसकी कान्ति और ब्रह्मादिक जिसकी सेवाकर रहे हैं ॥१३॥ वहाँ उन गोपगणोंको गदाधारी पार्षद सीधे करके दण्डवत कराकर यत्नसे उनको दूर बैठाकर ॥१४॥ चकित उन गोपोंको देखकर पार्षद बोले कि, चुप रहो, चुप रहो, हे वनचरो ! व्यर्थ प्रलाप मत करो ॥ १५ ॥ बोलो मत, क्या तुमने कभी हरिकी सभा नहीं देखी-यहाँ तो साक्षात् देव भगवान्के सामने बैठनेपर वेदही बोलते हैं, यहाँ और कोई नहीं बोलते हैं ॥१६॥ ऐसी शिक्षा दी, तब सब गोप हर्षित होकर चुप हो गये और मनही मनमें बोले कि, जो यह ऊँचे सिंहासनपर बैठा है, यह तो श्रीकृष्णही है ॥१७॥ हमको दूरसे नीचे बैठाकर मुखसे बोलता भी नहीं है, इससे भाइयो ! हमारी समझमें तो व्रजसे परे और कोई लोक श्रेष्ठ नहीं है और न सुखकारी है ॥१८॥ जिस व्रजमें हमारी

नीत्वासर्वांस्ततःकृष्णएत्यवैकुण्ठमंदिरम्॥दर्शयामासरूपंस्वंज्योतिर्मंडलमध्यगम्॥११॥ सहस्रभुजसंयुक्तंकिरीटकटकोज्ज्वलम्॥ शंखचक्रगदापद्मवनमालाविराजितम्॥१२॥ असंख्यकोटिमार्तंडसंकाशंशेषसंस्थितम्॥चामरांदोलदिव्याभंब्रह्माद्यैःपरिसेवितम्॥१३॥ तदैवतान्गोपगणान्पार्षदास्तेगदाधरा॥ ऋजुंकृत्वानतिंधृत्वादूरेस्थाप्यप्रयत्नतः ॥१४॥ चकितानिवतान्वीक्ष्यप्रोचुस्तेपार्षदागिरा॥ रेरेतूष्णींप्रभवतमावक्तृत्वं वनेचराः ॥१५॥ भाषणंमाप्रकुरुतनदृष्टाकिंसभाहरेः॥वेदावदंतिचात्रैवसाक्षाद्देवेस्थितेप्रभौ ॥१६॥ इतिशिक्षांगतागोपाहर्षितामौनमास्थिताः॥ मनस्यूचुरयंकृष्णउच्चसिंहासनेस्थितः ॥१७॥ अस्मानाराद्धःकृत्वास्माभिर्वक्तिनकर्हिचित्॥ तस्माद्व्रजाद्वरंनास्तिकोपिलोकोनसौख्यदः॥१८॥यत्रानेनस्वभ्रात्रापिवार्त्तास्याद्धिपरस्परम्॥इतिप्रवदतस्तान्वैनीत्वाश्रीभगवान्हरिः॥व्रजमागतवान्राजन्परिपूर्णतमःप्रभुः॥१९॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांमाधुर्यखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेनन्दादिवैकुंठदर्शनंनामद्वाविंशोऽध्यायः॥ २२ ॥ श्रीनारदउवाच॥ एकदानृपगोपालाःशकटैरत्नपूरितैः॥ वृषभानूपनन्दाद्याआजग्मुश्चांबिकावनम्॥ १॥ भद्रकालींपशुपतिंपूजयित्वाविधानतः॥ ददुर्दानंद्विजातिभ्यःसुप्तास्तत्रसरित्तटे ॥२॥ तत्रैकोनिर्गतोरात्रौसर्पोनन्दंपदेग्रहीत्॥ कृष्णकृष्णेतिचुक्रोशनन्दोतिभयविह्वलः ॥३॥ तदोल्मुकैर्गोपबालास्तोदुराजगरंनृप॥ पदं सोपिनतत्याजसर्पोर्थंस्वमणिंयथा॥ ४॥

अपने इस भाईसे परस्पर बात तो होती थी, ऐसे कहते उन व्रजवासियोंको साथ लेकर श्रीकृष्ण व्रजमें आ गये ॥१९॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां माधुर्य खण्डे भाषाटीकायां नन्दादि गोपवैकुण्ठ दर्शनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥ नारदजी कहते हैं कि, हे राजन् ! एक समय सब गोप छकड़ोंमें रत्नभरकर नन्द, उपनन्द, वृषभानु, आदिक सब अम्बिका महाविद्याके वनको आये ॥१॥ वहाँ भद्रकाली जो महाविद्या उसका पूजन किया और पशुपति जो भूतेश्वर उनका पूजन किया, ब्राह्मणोंको दान दिया, फिर वहीं सरस्वतीके किनारे सो रहे थे ॥ २ ॥ कि वहाँ रात्रिमें एक सर्प अजगरने निकलकर नन्दजीका पाँव पकड़ लिया, तब भयसे विह्वल होकर नंदजी हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! ऐसे पुकारने लगे ॥ ३ ॥ वहाँ गोप बालक जलती लकड़ी ले लेकर मारने लगे, तो भी उसने नन्दजीके पाँवको छोड़ा नहीं, जैसे सर्प मणिको छोड़ता नहीं है ॥ ४ ॥

तब तो लोक पावन श्रीकृष्णने बाँये पांवकी एक ठोकर मारी, तब वह सर्प देहको छोड़कर विद्याधर हो गया,फिर श्रीकृष्णकी परिक्रमा देकर प्रणाम कर स्तुति करने लगा॥५॥हे प्रभो ! मैं सुदर्शन विद्याधर सब विद्याधरोंमें श्रेष्ठ हूँ, मैं महाबली हूँ, अष्टावक्र मुनिको देखकर मैं हँसा था ॥ ६ ॥ तब अष्टावक्रने मुझको यह शाप दिया कि हे दुष्ट ! तू सर्प होजा, सो हे माधव!उनके शापसे अब मैं आपकी कृपासे छूट गया॥७॥आपके चरण कमल मकरंदके रजके कणके स्पर्शसे मैं सहजमेंही दिव्य पदवीको प्राप्त होगया,उन भुवनेश्वर भगवान् को मेरा नमस्कार है, जिन्होंने बड़ा भार उतारनेके लिये भूमिमें अवतार लिया है ॥ ८ ॥ नारदजी कहते हैं—ऐसे यह विद्याधर श्रीकृष्णको प्रणाम करके जिसमें कोई उपद्रव नहीं ऐसे वैकुण्ठ लोकको चला गया ॥ ९ ॥ नन्दादिक सब गोप विस्मित होगये, श्रीकृष्णको परमेश्वर जानकर फिर अम्बिकाके बनसे जल्दीही व्रज मण्डलको चले आये ॥१०॥ यह मैंने तुम्हारे सामने पवित्र श्री कृष्णका चरित्र वर्णन किया, जो सब पापोंको हरने वाला और परम पवित्र है, अब आगे क्या सुननेकी इच्छा करते हो॥११॥ राजा कहता है कि,

तताडस्वपदासर्पंभगवाँल्लोकपावनः ॥ त्यक्त्वातदैवसर्पत्वंभूत्वाविद्याधरःकृती॥५॥नत्वाकृष्णंपरिक्रम्यकृतांजलिपुटोवदत् ॥ सुदर्शनउवाच ॥ अहंसुदर्शनोनामविद्याधरवरःप्रभो ॥ अष्टावक्रंमुनिंदृष्ट्वाहसितोस्मिमहाबलः ॥६॥ मह्यंशापंददौसोपित्वंसर्पोभवदुर्मते ॥ तच्छापादद्यमुक्तोहं कृपयातवमाधव ॥७॥ त्वत्पादपद्ममकरंदरजःकणानांस्पर्शेनदिव्यपदवींसहसागतोस्मि॥तस्मैनमोभगवतेभुवनेश्वराययोभूरिभारहरणायभुवोवतारः ॥८॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिनत्वाहरिंकृष्णंराजन्विद्याधरस्तुसः ॥ जगामवैष्णवंलोकंसर्वोपद्रववर्जितम् ॥ ९ ॥ नंदाद्याविस्मिताःसर्वे ज्ञात्वाकृष्णंपरेश्वरम् ॥ अंबिकावनतःशीघ्रमाययुर्व्रजमंडलम् ॥१०॥ इदंमयातेकथितंश्रीकृष्णचरितंशुभम्॥सर्वपापहरम्पुण्यंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ ११ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ अहोश्रीकृष्णचंद्रस्यचरितंपरमाद्भुतम् ॥ श्रुत्वामनोमेतच्छ्रोतुंसंप्राप्तेपुनरिच्छति ॥ १२ ॥ अग्रेचकारकांलीलांलीलयात्रजमंडले॥हरिर्व्रजेशःपरमोवददेवर्षिसत्तम॥१३॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमाधुर्यखण्डेसुदर्शनोपाख्यानंनामत्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥ श्रीनारदउवाच ॥ एकदाशैलदेशेषुसबलोभगवान्हरिः ॥ कृत्वाविलायनंक्रीडांचोरपालकलक्षणाम् ॥ १ ॥ तत्रव्योमासुरोदैत्योबालान्मेषायितान्बहून्॥नीत्वानीत्वाद्रिदर्यांचविनिक्षिप्यपुनःपुनः॥२॥शिलयापिदधेद्वारंमयपुत्रोमहाबलः॥ सत्यचोरंचतंज्ञात्वाभगवान्मधुसूदन ॥३॥गृहीत्वापातयामासभुजाभ्यांभूमिमंडले ॥४॥ तदामृत्युंगतोदैत्यस्तज्ज्योतिर्निर्गतंस्फुरत्॥दशदिक्षुभ्रमद्राजन्श्रीकृष्णेलीनतांगतम्॥५॥

अहो ! श्रीकृष्णका जो बड़ा अद्भुत चरित्र है, जिसको सुनकर मेरा मन फिर सुननेकी इच्छा करता है,वहांसे आकर फिर ॥१२॥ आगे व्रज मण्डलमें नित्य नवीन खेलोंसे व्रजके ईश्वरने क्या लीला की,उसको हे देवर्षि सत्तम ! कहिये॥१३॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्यखण्डे भाषाटीकायां सुदर्शनोपाख्यानं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥ नारदजी कहते हैं कि, एक समय गोवर्द्धनके पास कृष्ण बलदेव आँख मिचौनीकी क्रीडा करते थे,जिसमें कोई चोर और कोई जिसमें साहु बनता है ॥१॥ वहां मयका पुत्र महाबली व्योमासुर दैत्य गोपरूप धरकर आया, वह भेड बने जो बालक हैं, उनको चुराकर बारम्बार कामवनकी गुफामें मूंदकर ॥२॥ शिलासे ढक आया, तब मधुसूदन भगवान् श्रीकृष्णने उसको सच्चा चोर जानकर ॥ ३ ॥ दोनों भुजाओंसे पकड़कर पृथ्वीमें दे मारा ॥ ४ ॥ तभी वह दैत्य मृत्युको प्राप्त होगया, उसी समय उसकी देहमेंसे एक ज्योतिसी चमचमाती

निकली,वह दशों दिशाओंमें उजाला करती श्रीकृष्णमें लीन होगई॥५॥तबही भूमिमें और स्वर्गमें जयजय शब्द होने लगा, देवता परम आनन्दको प्राप्त होकर फूलोंकी वर्षा करने लगे ॥६॥ यह सुनकर राजा बहुलाश्व बोला–हे महाराज ! यह व्योमासुर पूर्व जन्मका कौन था और इसने उत्तम कर्म किया था,इससे श्रीकृष्णरूप घनश्याममें बिजलीसी लीन हो गया॥७॥ नारदजी कहते हैं कि, काशीपुरीमें एक भीमरथ नामक राजा हुआ,वह यज्ञको करनेवाला,मानको देनेवाला, धनुषधारी और विष्णुमें परायण हुआ॥८॥पुत्रको राज्य देकर मलयाचलको चला गया, वहाँ सात लाख वर्षतक तप किया ॥९॥ इसके आश्रममें एक दिन पुलस्त्यजी शिष्यों सहित चले गये,उनको देखकर यह बड़ा अभिमानी राजर्षि भीमरथ न तो उठा और न प्रणाम किया॥१०॥ तब पुलस्त्यजीने शाप दिया कि हे महाराज ! तू दैत्य होजा, तब वह उनके चरणोंमें गिर पड़ा, तब शरणागत हुयेको देखकर ॥११॥ दीनवत्सल मुनिशार्दूल पुलस्त्यजी यह बोले कि,द्वापरके अन्तमें अति पुनीत श्रीमाथुर व्रजमण्डलमें॥१२॥यदुवंशके पति साक्षात् श्रीकृष्णकी भुजाओंके पराक्रमसे योगियोंको

तदाजयजयारावोदिविभूमौबभूवह ॥ पुष्पाणिववृषुर्देवाःपरमानंदसंवृत्ताः॥६॥ बहुलाश्वउवाच ॥ कोऽयंपूर्वंकुशलकृद्व्योमोनामाथतद्वद॥येन कृष्णेघनश्यामेलीनोभूद्दामिनीयथा॥७॥श्रीनारदउवाच ॥ आसीत्काश्यांभीमरथोराजादानपरायणः ॥ यज्ञकृन्मानदोधन्वीविष्णुभक्तिपरायणः॥८॥राज्येपुत्रंसन्निवेश्यजगाममलयाचलम् ॥ तपस्तत्रसमारेभेवर्षाणांलक्षमेवहि ॥९॥ तस्याश्रमेपुलस्त्योसौशिष्यवृन्दैःसमागतः ॥तंदृष्ट्वानोत्थितोमानीराजर्षिर्ननतोऽभवत्॥१०॥शापंददौपुलस्त्योपिदैत्योभवमहाखल॥ततस्तच्चरणोपांतेपतितंशरणागतम्॥११॥ उवाच मुनिशार्दूलःपुलस्त्योदीनवत्सलः॥ द्वापरान्तेमाथुरेचपुण्येश्रीव्रजमण्डले ॥१२॥ यदुवंशपतेःसाक्षाच्छ्रीकृष्णस्यभुजौजसा॥ ईप्सितायोगिभिर्मुक्तिर्भविष्यतिनसंशयः॥१३॥ श्रीनारदउवाच ॥ सोयंभीमरथोराजामयदैत्यसुतोभवत् ॥ श्रीकृष्णभुजवेगेनमुक्तिंप्रापविदेहराट् ॥१४॥ एकदागोपबालेषुदैत्योऽरिष्टोमहाबलः॥आगतोनादयन्खंगांतटाञ्छृंगैर्विदारयन्॥१५॥गोप्योगोपागोगणाश्चवीक्ष्यतंदुद्रुवुर्भयात्॥भगवान्दैत्यहादेवोमाभैष्टेत्यभयंददौ॥१६॥गृहीत्वातंतुशृंगेषुनोदयामाससमाधवः ॥ सोपितंनोदयामासश्रीकृष्णंयोजनद्वयम्॥१७॥ पुच्छेगृहीत्वातंकृष्णोभ्रामयित्वा भुजौजसा ॥ भूपृष्ठेपोथयामासकमण्डलुमिवार्भकः॥१८॥अरिष्टःपुनरुत्थायक्रोधसंरक्तलोचनः॥शृंगैश्चरोहितंशैलंसमुत्पाट्यमहाखलः॥१९॥

वाञ्छित ऐसी तुम्हारी मुक्ति होगी,इसमें सन्देह नहीं है ॥१३॥ वही भीमरथ राजा मय दैत्यका पुत्र हुआ, हे विदेह राज ! श्रीकृष्णकी भुजाके वेगसे मुक्तिको प्राप्त हो गया॥१४॥ एक समय गोप बालकोंमें महाबली अरिष्टासुर आया,पृथ्वीको और आकाशको शब्द युक्त करता और सींगोंसे तटोंको फोडने लगा॥१५॥गौ, गोप, गोपी,उसको देखकर भयके मारे भागने लगे तब भगवान् दैत्योंको मारनेवालेने उनको अभयदान दिया कि डरो मत ॥ १६ ॥ फिर भगवान् उसके दोनों सींग पकड़ कर पीछेको हटाते ले गये, तब वह भी भगवान् को दो योजन पीछेको हटाताले गया॥१७॥ फिर श्रीकृष्णने उसकी पूंछ पकड़ कर अपने भुजबलसे घुमाघुमाकर पृथ्वीमें देमारा, जैसे बालक कमण्डलको दे मारता है ॥ १८ ॥ फिर अरिष्टासुर उठा- क्रोध करके, लाल नेत्र हो आये सींगोंसे रोहित जो पर्वत है उसको उखाड़कर महादुष्टने ॥ १९ ॥

धनके समान गर्जना करते हुये श्रीकृष्णके ऊपर फेंक दिया, श्रीकृष्णने उस पर्वतको पकड़कर उसीके ऊपर फेंक दिया ॥ २० ॥ तब पर्वतके प्रहारके मारे कुछ व्याकुल मन होगया सींगोंसे पृथ्वीको खोदने लगा, सींगोंके मारनेसे पृथ्वीमें जल निकल आया ॥ २१ ॥ फिर श्रीकृष्णने उसके सींग पकड़कर घुमा घुमाकर धरतीमें दे मारा, जैसे कमलको पवन पटकती है ॥२२॥ उसी समय बैलके रूपको छोड़कर वह ब्राह्मण हो गया, श्रीकृष्णके चरण कमलोंमें दण्डवत्कर गद्गद वाणीसे बोला ॥२३॥ हे महाराज ! मैं बृहस्पतिका शिष्य हूँ, वरतन्तु मेरा नाम है, सो मैं बृहस्पतिजीके पास पढ़नेको गया था ॥२४॥ मैं उनकी ओर पांव फैलाकर उनके सामने बैठ गया, तब रोषसे मुनि बोले अरे ! जो तू बैलकी तरह मेरे आगे बैठा है, ॥२५॥ और गुरुकी अवज्ञा करता है, इससे तू दुर्बुद्धि बैल होजा, ऐसे उनके शापसे हे माधव ! मैं वंगदेशमें जाकर बैल हो गया ॥२६॥ असुरोंके प्रसंगसे

गर्जयन्घनवद्वीरःकृष्णोपरिसमाक्षिपत् ॥ कृष्णःशैलंसंगृहीत्वातस्योपरिसमाक्षिपत् ॥२०॥ शैलस्यापिप्रहारेणकिंचिद्व्याकुलमानसः॥भूमौ तताडशृंगाग्रानिर्गतैर्जलंभुवः ॥२१॥ श्रीकृष्णस्तंचशृंगेषुगृहीत्वाभ्रामयन्मुहुः ॥ भूपृष्ठेपोथयामासवातःपद्ममिवोद्धतम् ॥ २२ ॥ तदैववृष रूपत्वंत्यक्त्वाविप्रवपुर्द्धरः ॥ नत्वाश्रीकृष्णपादाब्जम्प्राहगद्गदयागिरा ॥ २३ ॥ द्विजउवाच ॥ बृहस्पतेश्चशिष्योहंवरतंतुर्द्विजोत्तमः ॥ बृहस्पतिसमीपेचपठितुंगतवाहनम् ॥२४॥ पादौकृत्वास्थितोऽभूवंपश्यतस्तस्यसंमुखे ॥ तदारुषाहसमुनिर्वृषवत्त्वंस्थितःपुरः ॥२५॥ गुरुहेल-नकृत्तस्मात्त्वंवृषोभवदुर्मते॥तेनशापाद्वृषोऽभूवंवंगदेशेषुमाधव ॥२६॥ असुराणांप्रसंगेनासुरस्त्वंगतवानहम् ॥ त्वत्प्रसादाद्विमुक्तोहंशापतोऽ-सुरभावतः ॥ २७ ॥ श्रीकृष्णायनमस्तुभ्यंवासुदेवायतेनमः ॥ प्रणतक्लेशनाशायगोविंदायनमोनमः ॥ २८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्यु-क्त्वाश्रीहरिंनत्वासाक्षाच्छिष्योबृहस्पतेः ॥ द्योतयन्भुवनंराजन्विमानेनदिवंययौ ॥ २९ ॥ इदंमयातेकथितंखण्डंमाधुर्य्यमद्भुतम् ॥ सर्वपापहरं पुण्यंकृष्णप्राप्तिकरंपरम् ॥ ३० ॥ कामदंपठतांशश्वत्किंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ ३१ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांमाधुर्य्यखण्डेनारदबहुलाश्वसं-वादेव्योमासुरारिष्टासुरवधोनामचतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥ शुभं भवतु ॥

मैं असुर होगया, अब आपकी कृपासे शापसे छूटा और असुरभावसे भी छूटा ॥ २७ ॥ आप श्रीकृष्ण हो, आपके लिये मेरा नमस्कार है, वासुदेव हो, शरणागत आये मनुष्यों के क्लेशोंका नाश करनेवाले हो, गोविन्द हो, उनके लिये नमस्कार है ॥२८॥ नारदजी कहते हैं ऐसे कहकर श्रीकृष्णको प्रणाम करके साक्षात् बृहस्पतिका शिष्य जगतमें प्रकाश करता विमानमें बैठकर स्वर्गको चला गया ॥२९॥ यह मैंने तुम्हारे सामने अद्भुत माधुर्यखंडका वर्णन किया है यह पवित्र है, सब पापोंको हरनेवाला है, और केवल श्रीकृष्णकी प्राप्ति करनेवाला है ॥३०॥ पाठ करनेवालेको सब कामनाका देनेवाला है, अब तुम क्या सुननेकी इच्छा करते हो ? ॥ ३१ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्यखण्डे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्व संवादे व्योमासुरारिष्टासुर वधो नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ इतिश्रीमद्गर्ग संहितायां माधुर्यखण्डः समाप्तः ॥

इति गर्गसंहितायां माधुर्य्यखण्डं भाषाटीकासमेतं समाप्तम्

अथ गर्गसंहितायां मथुराखण्डं भाषाटीकासहितं प्रारभ्यते

(पंचमखण्डम्)

श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ मथुराखण्डः ॥ गर्गजी मंगलाचरण करते हैं कि, वसुदेवके पुत्र, कंस और चाणूरका मर्दन करनेवाले, देवकीको परम आनन्द देनेवाले श्रीकृष्ण को मैं प्रणाम करता हूँ ॥ १ ॥ बहुलाश्व राजा नारदजीसे पूछता है कि, हे मुने ! मथुरामें भगवान्ने क्या क्या चरित्र किया कंसको कैसे मारा उसको मुझे तत्वसे कहिये ॥ २ ॥ तब नारदजी बोले कि हे राजन् ! एक दिन मैं उत्तम मथुरापुरी को देखनेके लिये चला गया, साक्षात् हरिके मनसे प्रेरित हुआ दैत्योंको मारनेका उपाय करनेको ही गया था ॥ ३ ॥ जो इन्द्रके पाससे सिंहासन लाया था उसपर बैठा, इन्द्रके ही चमर छत्र जिसपर हो रहे, सर्पके समान दुःसह ऐसे कंसके पास गया, तब उसने मेरा सत्कार किया, पूजन किया, तब मैं यह बोला-उसको तुम सुनो ॥४॥ अरे कंस ! यशोदाके तो पुत्री हुई थी, जो तुम्हारे हाथोंमेंसे छूटकर स्वर्गको चली गई और देवकीसे कृष्णका जन्म हुआ है और रोहिणीसे बलदेवका जन्म हुआ है ॥ ५ ॥ नन्दराजकी और वसुदेवकी मित्रता थी सो वसुदेवने तुम्हारे डरके मारे अपने मित्र नन्दको अपने दोनों पुत्र सौंप दिये हैं, हे

श्रीगणेशायनमः ॥ अथमथुराखण्डः ॥ वसुदेवसुतंदेवंकंसचाणूरमर्दनम् ॥ देवकीपरमानंदंकृष्णंवन्देजगद्गुरुम् ॥ १ ॥ बहुलाश्व उवाच ॥ मथुरायांकिंचरित्रंकृतवान्भगवान्मुने ॥ कथंजघानकंसाख्यमेतन्मेब्रूहितत्त्वतः ॥२॥ श्रीनारद उवाच ॥ अथैकदाहंमथुरांपुरींपरांविलोकितुंचा-गतवान्नृपेश्वर ॥ कर्तुंपरंदैत्यवधोद्यमंहरेःपरस्यसाक्षान्मनसाप्रणोदितः ॥३॥ सिंहासनेचप्रहृतेपुरंदरात्सितातपत्रेचलचारुचामरे ॥ स्थितंनृपंकंसमुरंगदुःसहंप्रावोचमेवंशृणुतत्प्रपूजितः ॥ ४ ॥ यशोदायाःसुताजातायात्वद्धस्ताद्दिवंगता ॥ देवक्यांकृष्णउत्पन्नोरोहिणीनंदनोबलः ॥५॥ स्वमित्रेनंदराजेचन्यस्तौपुत्रौभवद्भयात् ॥ तवारीरामकृष्णौद्वौवसुदेवेनदैत्यराट् ॥ ६ ॥ पूतनाद्याह्यरिष्टान्तादैत्यायेत्वद्बलोत्कटाः ॥ याभ्यांहतावनोदेशेतेमृत्यूतौस्मृतौकिल ॥७॥ एवमुक्तोभोजपतिःक्रोधाच्चलितविग्रहः ॥ जग्राहनिशितंखड्गंशौरिंहंतुंसभातले ॥८॥ मयानिवा-रितःसोपिविस्तृतैर्निगडैर्दृढैः ॥ बद्धातंभार्ययासार्द्धंकारागारंरुरोधह ॥ ९ ॥ इत्युक्त्वातंमयिगतेकेशिनंदैत्यपुंगवम् ॥ रामकृष्णवधार्थायप्रेष-यामासदैत्यराट् ॥ १० ॥ चाणूरादीन्समाहूयमहामात्रंद्विपस्यच ॥ कार्यभारकरांल्लोकान्प्राहेदंभोजराड्बली ॥ ११ ॥ कंसउवाच ॥ हेकूट-हेतोशलकहेचाणूरमहाबल ॥ रामकृष्णौचमेमृत्यूदर्शितौनारदेनतु ॥ १२ ॥

दैत्यों के राजा ! वे दोनों तेरे वैरी हैं ॥ ६ ॥ और पूतनासे लेकर वृषभासुर तक जो तेरे बली दैत्य थे, वे सब कृष्ण, बलदेवनेही मारे हैं, वे ही तेरी मौत हैं ॥ ७ ॥ ऐसे जब मैंने कहा, तब तो कंसका क्रोधके मारे शरीर काँपने लगा, और सभामेंही वसुदेवको मारनेके लिये तीक्ष्ण (तीखा) खड्ग लिया ॥ ८ ॥ तब मारनेसे तो मैंने बंदकर दिया, तो उनके बड़ी मजबूत बेडी डालकर स्त्री समेत बंदीखानेमें दे दिये ॥ ९ ॥ ऐसा कहकर मैं तो चला आया, मेरे आये पीछे कंसने केशी दानवको बुलाकर कृष्ण बलदेवको मारनेके लिये भेज दिया ॥१०॥ फिर चाणूरादिक मल्लोंको बुलाया, और कुवलयापीड हाथीके महावतको बुलाया, और जिनपर कार्यका बोझ था, उनको बुलाकर भोजराज बली कंस बोला ॥ ११ ॥ हे कूट ! हे तोशल ! हे चाणूर ! तुम महाबली हो, सो देखो भाइयो ! रामकृष्ण मेरी मौत हैं, यह बात मुझको नारदजी बता गये हैं ॥ १२ ॥

यहाँ आवें तब तुम मल्लीलामें उनको मार डालना, सो तुम बहुत जल्दी अब कुस्तीके लिये सुन्दर-सुन्दर अखाड़े तैयार करो ॥१३॥ और अरे ओ महावत भाई ! तुम रंगभूमिके दरवाजेपर कुवलयापीड मस्त हाथीको ले आना, आतेही मेरे वैरी दोनों भाई कृष्ण और बलदेवको हाथीसे मरवा डालना ॥ १४ ॥ और हे लोको ! तुम चतुर्दशीके दिन तो शांतिके लिये धनुर्यज्ञको करो और अमावस्याके दिन मल्लयुद्ध हो, उसको देखो ॥१५॥ नारदजी कहते हैं ऐसे कंसने अपने स्वजनोंसे कहकर जल्दीसे अक्रूरजीको बुलाया, फिर एकांतमें ले गया वहाँ हे राजेंद्र ! मंत्रीजनों से प्रिय मत करने लगा ॥ १६ ॥ हे दानपते ! हे मन्त्रिन् ! तुम मेरा वचन सुनो, तुमः प्रातःकाल नन्दके व्रजको चले जाओ, मेरा एक काम है, उसको कर लाना, क्योंकि तुम बड़े बुद्धिमान् हो अर्थात् तुम्हारे बिना उस कामको कोई नहीं कर सकता है ॥ १७ ॥ वहाँ मेरे दो वैरी हैं, जो वसुदेवके पुत्र कृष्ण बलदेव हैं, देवर्षि नारदजीने अच्छी तरह समझाकर बताये हैं ॥ १८ ॥ सो तुम नंदराज आदि सब गोपोंके संग भेंट सहित मथुराको दिखानेके बहानेसे कृष्ण बलदेवको

भवद्भिरिहसंप्राप्तौहन्येतांमल्ललीलया ॥ मल्लभूमिंचसंयुक्तांकुरुताशुशुभावहाम् ॥१३॥ द्विपंकुवलयापीडंरंगद्वारिमदोत्कटम्॥प्रस्थाप्यतेनहंतव्यौमहामात्रममाऽहितौ ॥१४॥ चतुर्दश्यांतुकर्तव्योधनुर्यागःप्रशान्तये ॥ अमावास्यादिनेलोकामल्लयुद्धंभवेदिह ॥ १५॥ श्रीनारदउवाच॥ ॥ इत्युक्त्वास्वजनान्कंसोऽक्रूरमाहूयसत्वरम् ॥ रहसिप्राहराजेंद्रमंत्रंमंत्रिजनप्रियम् ॥ १६ ॥ कंसउवाच ॥ भोभोदानपतेमंत्रिञ्छृणुमेपरमंवचः ॥ गच्छनंदव्रजंप्रातःकुरुकार्यंमहामते ॥ १७ ॥ आसातेतत्रमेशत्रूवसुदेवसुतौकिल ॥ दर्शितौनारदेनापिदेवदेवर्षिणाभृशम् ॥१८॥ सोपायनैर्गोपगणैर्नन्दराजादिभिःसह॥मथुरादर्शनमिषाद्रथेनानयमाचिरम् ॥ १९ ॥ द्विपेनवामहामल्लैर्घातयिष्यामितौशिशू॥तत्पश्चान्नंदराजंचवसुदेवसहायकम् ॥२०॥ वृषभानुवरंपश्चान्नवनन्दोपनन्दकान् ॥ पश्चाच्छौरिंहनिष्यामिदेवकंतत्सहायकम् ॥२१॥ उग्रसेनंचपितरंवृद्धंराज्यसमुत्सुकम् ॥ तत्पश्चाद्यादवान्सर्वान्हनिष्यामिनसंशयः ॥२२॥ एतेदेवगणाःसर्वेजातामंत्रिन्महीतले ॥ शकुनिर्मेमहामित्रंबलीचन्द्रावतीपतिः ॥२३॥ भूतसंतापनोहृष्टोवृकःसंकरएवच ॥ कालनाभोमहानाभोहरिश्मश्रुस्तथैवच ॥ २४ ॥ एतेमित्राणिमेसंतिमदर्थप्राणदाबलात् ॥ श्वशुरोपिजरासंधोद्विविदोमेसखास्मृतः ॥ २५ ॥

रथमें बैठाकर ले आओ, देर मत करो ॥ १९ ॥ तब मैं कुवलयापीड हाथीसे अथवा महामल्लोंसे उन दोनों बालकोंको मरवाऊँगा, उनको मरवानेके बादमें वसुदेवके सहायक नंद को मरवाऊँगा, और उसके पीछे ॥२०॥ वृषभानुको, नौ नंद, नौ उपनन्दको, फिर वसुदेवको देवकीको और उनके सहायकोंको भी मरवा डालूँगा॥२१॥उग्रसेन पिताको जिस वृद्धको भी राज्यकी चाहना है, उसके और उसके बादमें सब यादवोंको मारूँगा, इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥२२॥ हे मंत्रिन् ! पृथ्वीमें ये सब देवताओंके गण उत्पन्न हुये हैं, बड़ा बली शकुनि चन्द्रावतीका पति मेरा महामित्र है ॥२३॥ भूत संतापन, हृष्ट, वृक, संकर, कालनाभ, महानाभ और हरिश्मश्रु ॥ २४ ॥ इतने मेरे मित्र हैं, ये मेरे लिये प्राण देने वाले हैं, और मेरा श्वशुर जरासंध भी व द्विविद बंदर मेरा सखा है ॥ २५ ॥

वाणासुर नरकासुर भी मेरे परम सुहृद हैं,सो हम सब पृथ्वीको जीतकर इन्द्रसहित देवताओंको और धनाधिप कुबेरको बांधकर॥२६॥सुमेरूकी गुफामें डाल देंगे,फिर त्रिलोकीका राज्य सदा करेंगे इसमें संदेह नहीं है ॥२७॥ ज्ञानियोंमें तो तुम शुक्रके समान हो, वक्ताओंमें तुम बृहस्पतिके सदृश हो, सो हे दानपते ! यह कार्य तुमको जल्दीही करना चाहिये ॥२८॥ अब अक्रूरजी बोले कि, हे यादवोंके पति ! तुमने महामनोरथरूप समुद्र किया है,सो यह तुम्हारा मनोरथ दैवकी इच्छासे या तो गोखुरवत् होगा,नहीं तो समुद्र है ही,इससे गुप्त रखो, जबतक न होय, किसीसे कहो मत ॥ २९ ॥ तब कंस बोला कि, बली पुरुष तो भाग्यके भरोसे नहीं रहते हैं और जो निर्बल हैं वे भाग्यकोही देखा करते हैं, और जो कर्मको मुख्य माननेवाला कर्मयोगी है, वह तो कालरूप आत्मा नित्य है, ऐसा मानकर कर्मको करता हुआ कभी आकुल नहीं होता है॥३०॥नारदजी कहते हैं कि, ऐसे श्रेष्ठ मन्त्री अक्रूरसे कहकर कंस सभास्थलसे उठकर कुछ कुपित होकर निवासको चला गया ॥ ३१ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां नारदबहुलाश्व संवादे कंसमंत्रोनाम

बाणासुरश्चनरकोमय्येवकृतसौहृदः ॥ एतेसर्वांमहींजित्वाबद्ध्वादेवान्सवासवान्॥२६॥क्षिप्त्वामेरुगुहादुर्गेकुबेरंद्रव्यनायकम्॥त्रैलोक्यराज्यंतु सदाकरिष्यंतिनसंशयः ॥ २७ ॥ कवीनांत्वंकविरिवगिरांगीष्पतिवद्भुवि ॥ एतत्कार्यंचकर्त्तव्यंत्वयादानपतेत्वरम् ॥ २८ ॥ अक्रूरउवाच ॥ ॥ त्वयाकृतोयदुपतेमनोरथमहार्णवः ॥ दैवेच्छयाऽयंभवतिगोष्पदंतद्विनार्णवम् ॥ २९ ॥ कंसउवाच ॥ विसृज्यदैवंकुरुतेबलिष्ठोदैवंसमाश्रि-त्यहिनिर्बलश्च ॥ कालात्मनोनित्यहरिप्रभावान्निराकुलस्तिष्ठतुकर्मयोगी ॥३०॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवमुक्त्वामंत्रिवरंसमुत्थायसभास्थलात् ॥ किंचित्प्रकुपितःकंसःशनैरंतःपुरंययौ ॥३१॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेकंसमंत्रोनामप्रथमोऽध्यायः॥१॥ श्री नारदउवाच ॥ अथकेशीमहादैत्योहयरूपीमदोत्कटः ॥ राजन्वृन्दावनंरम्यंजगर्ज्जघनवद्बली ॥ १ ॥ यस्यपादप्रताडेननिपेतुःशाखिनो दृढाः ॥ पुच्छघातेनगगनेखंडखंडंययुर्घनाः ॥२॥ तंवीक्ष्यदुःसहजवंगोपगोपीगणाभृशम् ॥ भयातुरमैथिलेन्द्रश्रीकृष्णंशरणंययुः॥३॥माभैष्टे त्यभयंदत्त्वाभगवान्वृजिनार्दनः ॥ कटौपीतांबरंबद्ध्वाहंतुंदैत्यंप्रचक्रमे ॥४॥ हरिंपश्चिमपादाभ्यांसतताडमहासुरः ॥ चालयन्पृथिवींराजन्नादय न्व्योममंडलम् ॥५॥ गृहीत्वापादयोर्दैत्यंभ्रमयित्वाभुजनखे ॥ चिक्षेपयोजनंकृष्णोवातःपद्ममिवोद्धृतम् ॥ ६ ॥

प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ नारदजी कहते हैं, इसके बाद केशी महादैत्य घोड़ारूपी बड़ा मदोन्कट हे राजन् ! मनोहर जो वृन्दावन है, उसमें जाकर बली बादलके समान गर्जना किया ॥१॥ जिसकी टापके मारे बड़े-बड़े मजबूत वृक्ष जडसे उखड़ पड़े और जिसकी पूंछकी फटकारसे बादलोंके खण्ड-खण्ड हो गये॥२॥उसको देखकर गोपगोपियोंके गण अत्यन्त भय-भीत होकर,हे राजन् ! श्रीकृष्णकी शरणमें गये, उसका वेग नहीं सहागया ॥३॥ तब भगवान् दुखको दूर करनेवाले "भय मत करो" ऐसे अभयदान देकर पीताम्बर ले कमर बांध केशीको मारनेका उद्यम करने लगे ॥ ४ ॥ तब भूमिको कम्पाते और आकाश मण्डलको शब्दसे भरते उस केशी महादैत्यने भगवान् पर पीछेकी दुलत्तीसे प्रहार किया ॥ ५ ॥ तब दैत्यके दोनों पिछले पांव पकड करके आकाशमें फिराकर श्रीकृष्णने उसको चार कोसपर फेंक दिया, जैसे ऊंचे उठें कमलको आंधी पटक देती है ॥ ६ ॥

तब फिर क्रोध करके केशी आया, एक पूंछ फिराकर व्रजके आंगनमें खड़े श्रीकृष्णके मारी ॥ ७ ॥ फिर श्रीकृष्णने उसकी पूंछको पकड़कर अपने भुजबलसे आकाशमें घुमाकर सौ योजनपर फेंक दिया ॥ ८ ॥ आकाशसे पड़ा कुछ व्याकुल मन हुआ वह बड़ा बली दैत्य उठकर फिर मेघके समान गर्जने लगा ॥ ९ ॥ अपनी सटा (अयाल) और रोमोंको बार बार हिलाता हुआ फड़फड़ाकर बारम्बार पावोंसे धरतीको खोदता कृष्णके सामने उछलकर आया ॥ १० ॥ तभी मधुसूदन श्रीकृष्णने उसके एक घूंसा मारा, उस घूंसेकी मारसे दोघड़ी तक मूर्च्छा खाकर गिर पडा ॥ ११ ॥ फिर वह दैत्य अपने मस्तकसे श्रीकृष्णको गर्दनपर धरकर पृथ्वी मण्डलसे लाख योजन ऊँचा ले उड़ा ॥१२॥ वहाँ दोनोंका दोप्रहर तक आकाशमें बड़ा भारी दुलत्तियोंसे खुरोंसे सटाओं (अयालों) से पूंछसे और दांतोंसे युद्ध हुआ ॥ १३ ॥ तब श्रीकृष्णने दोनों भुजाओंसे उसको पकड़कर इधर उधर घुमाकर आकाशमें से नीचे पटक दिया, जैसे बालक कमंडलको पटक देता है ॥ १४ ॥ फिर मुख फाड़कर भगवान्के सामने आया, तब श्रीकृष्णने उसके मुखमें अपनी

पुनरागतवान्सोपिक्रोधपूरितविग्रहः ॥ पुच्छेनश्रीहरिंदेवंसंतताडव्रजांगणे ॥७॥ पुच्छेगृहीत्वातंकृष्णोभ्रामयित्वाभुजौजसा ॥ योजनानांशतंराजन्क्षिक्षेपगगनेबलात् ॥८॥ आकाशात्पतितःसोपिकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥ समुत्थायपुनर्दैत्योजगर्जघनवद्बली ॥९॥ सटाविधुन्वन्रोमाणिबालंखेचालयन्मुहुः ॥ महींविदारयन्पादैरुत्पपातहरेःपुरः ॥१०॥ तताडमुष्टिनातंवैभगवान्मधुसूदनः ॥ तस्यमुष्टिप्रहारेणमूर्च्छितोघटिकाद्वयम् ॥११॥ मस्तकेनगलोद्देशेसमुद्धृत्यहरिंहयः ॥ भूमंडलादुत्पपातगगनेलक्षयोजनम् ॥१२॥ तयोर्युद्धमभूद्घोरंगगनेप्रहरद्वयम् ॥ पादैर्दद्भिःसटाभिश्चपुच्छतीक्ष्णखुरैर्नृप ॥१३॥ गृहीत्वातंहरिर्दोर्भ्यांभ्रामयित्वात्वितस्ततः ॥ आकाशात्पातयामासकमंडलुमिवार्भकः ॥१४॥ भुजंप्रवेशयामासतन्मुखेभगवान्हरिः ॥ तस्योदरेगतोबाहुर्ववृधेरोगवद्भृशम् ॥१५॥ तदातुलेंडंकृतवान्रुद्धवायुर्महासुरः ॥ खंडीभूतोदरःसद्योममारहयरूपधृक् ॥१६॥ देहाद्विनिर्गतःसद्योसुकुटीकुंडलान्वितः ॥ दिव्यरूपधरकृष्णंप्रांजलिःप्रणनामह ॥ १७ ॥ कुमुदउवाच ॥ शक्रस्यानुचरोहंवैकुमुदोनाममाधव ॥ तेजस्वीरूपवान्वीरोजिष्णुंच्छत्रभ्रमिंदधन् ॥१८॥ वृत्रासुरवधेपूर्वंब्रह्महत्याप्रशांतये ॥ यज्ञंचकारनाकेशोवाजिमेधंक्रतूत्तमम् ॥१९॥ अश्वमेधहयंशुभ्रंश्यामकर्णंमनोजवम् ॥ तमारुरुक्षुर्हृष्टोहंचोरयित्वातलंगतः ॥ २० ॥

भुजा प्रवेश करदी जब चबाने लगे तो दाँत गिरपडे और वह भगवान्की भुजा उसके मुखमें उपेक्षा किये रोगकी तरह बढ़ने लगी ॥ १५ ॥ तब उसकी लेंड (लीद) निकल पड़ी, वायु रुक गई, पेट फटगया, तत्काल ही वह केशी दैत्य मरगया ॥१६॥ तभी उसके देहसे एक दिव्य रूप पुरुष, किरीट, कुण्डल पहिने, दिव्य देह धरे निकला, श्रीकृष्णको हाथ जोड़ प्रणाम करके कहने लगा ॥ १७ ॥ कुमुद देवता बोला कि हे माधव ! मैं कुमुद नाम देवता इन्द्रका अनुचर हूँ, इन्द्रपर छत्र लगाया करता था, तेजस्वी था, रूपवान् था, बड़ा वीर था ॥ १८ ॥ पहिले वृत्रासुरके वधमें ब्रह्महत्याकी शान्तिके लिये इन्द्रने अश्वमेध यज्ञ किया ॥ १९ ॥ सफेद अश्वमेधका घोडा श्यामकर्ण, मनकासा जिसका वेग, उसको देखकर मैं प्रसन्न हो, उसपर चढ़नेकी इच्छासे उसको चुराकर तल लोकको चला गया ॥ २० ॥

तब मरुद्गण मुझ दुष्टको पाशसे बांधकर ले आये, तब इन्द्रने मुझको शाप दिया कि हे दुर्बुद्धे ! तू राक्षस होजा ॥ २१ ॥ दो मन्वन्तर तक तू घोडा होगा, सो हे प्रभो ! उस शापसे मैं अब आपके स्पर्श करनेसे छूटा हूँ ॥ २२ ॥ मेरा मन आपके चरणोंमें लगा है, इसलिये आप अपना चाकर कर लीजिये, आप सब लोकके साक्षी हो, भगवान् हो, आपको नमस्कार है ॥२३॥ नारदजी कहते हैं, ऐसा कहकर हरिकी परिक्रमा करके उज्ज्वल विमानमें बैठ दिशाओंमें उजाला करता वह कुमुद वैकुण्ठको चला गया ॥२४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्वसंवादे केशिवधोनाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥ नारदजी कहते हैं, अक्रूरजी रथमें बैठकर राजा कंसका कार्य करनेके लिये हे मैथिलेन्द्र ! हर्षित होकर नन्द गोकुलको गये ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण पुरुषोत्तममें परम भक्ति जिनको प्राप्त होगई महाबुद्धि मार्गमें चलते चलते विचार करने लगे ॥२॥ कि, मैंने इस भरत

ततोमरुद्गणैर्नीतंपाशबद्धंमहाखलम् ॥ शशापमांबलारातिस्त्वंरक्षोभवदुर्मते॥२१॥ हयाकृतिस्तेसंभूयाद्भूमौमन्वंतरद्वयम्॥तच्छापादद्यमुक्तोहं सद्यस्त्वत्स्पर्शनात्प्रभो ॥२२॥ किंकरंकुरुमांदेवत्वदंघ्रौलग्नमानसम् ॥ नमस्तुभ्यंभगवतेसर्वलोकैकसाक्षिणे ॥ २३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ प्रदक्षिणीकृत्यहरिंपरेश्वरंविमानमारुह्यमहोज्ज्वलंपरम् ॥ वैकुण्ठलोकंकुमुदोययौत्वरंविराजयन्मैथिलमंडलंदिशाम्॥२४॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेकेशिवधोनामद्वितीयोध्यायः ॥ २ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अक्रूरोरथमारुह्यकर्तुंकार्यंनृपस्यवै ॥ प्रहर्षितो मैथिलेन्द्रप्रययौनंदगोकुलम् ॥ १ ॥ परांभक्तिंह्युपगतःश्रीकृष्णेपुरुषोत्तमे ॥ एवंविचारयन्बुद्ध्यापथिगच्छन्महामतिः ॥२॥ अक्रूरउवाच ॥ किंभारतेवासुकृतंकृतंमयानिष्कारणंदानमलंकृतूत्तमम् ॥तीर्थाटनंवाद्विजसेवनंशुभंयेनाद्यद्रक्ष्यामिहरिंपरेश्वरम् ॥३॥ तपःसुतप्तंकिमलंपुराकृतं सत्सेवनंभक्तियुतंमयाकृतम्॥ येनैवमेदर्शनमद्यदुर्लभंश्रीकृष्णदेवस्यपुरोभविष्यति॥४॥तेषांभवोवैसफलोमहीतलेयन्नेत्रगामीभगवान्सुरेश्वरः॥ कृत्वाथतद्दर्शनमद्यदुर्लभंसद्यःकृतार्थोभवितास्मिसर्वतः ॥५॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंसंचिंतयन्कृष्णंपश्यञ्छकुनमुत्तमम् ॥ संध्यायांगोकुलं प्राप्तोरथस्थोगांदिनीसुतः ॥ ६ ॥ कृष्णपादाब्जचिह्नानियवांकुशयुतानिच ॥ तद्रागयुक्परागाणिरजांसिसददर्शको ॥ ७ ॥

खण्डमें क्या सुकृत किया है, क्या कोई निष्काम दान किया है ? अथवा कोई उत्तम यज्ञ किया है ? या कोई उत्तम तीर्थाटन किया है ? अथवा ब्राह्मणोंकी सेवा की है ? जिसके प्रभावसे आज मैं परमेश्वर श्रीकृष्णके दर्शन करूँगा ॥३॥ क्या कोई अत्यन्त तप किया है ? अथवा पहिले भक्ति सहित सत्सेवन किया है ? जिससे दुर्लभ श्रीकृष्णका दर्शन मुझको होगा ॥४॥ उन्हींका जन्म सफल है, जिनके नेत्रोंके सामने भगवान् सुरेश्वर आते हैं, आज मैं दुर्लभ श्रीकृष्णका दर्शन करके सब ओरसे कृतार्थ हो जाऊँगा॥५॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे श्रीकृष्णका चिंतन करते उत्तम शकुन देखते-देखते रथमें बैठे-बैठे गांदिनीके पुत्र सन्ध्या समयमें गोकुलमें पहुँचे ॥ ६ ॥ यव अंकुश वज्र, कमलादिक, चिह्न जिनमें ऐसे श्रीकृष्णके चरण चिह्न पृथ्वीकी रजमें देखे ॥ ७ ॥

उनके दर्शनकी उत्कंठासे भक्ति भावके आनन्दसे युक्त अक्रूर रथसे उतरकर उस रजमें लोटने लगे और उनके आँसू बहने लगे ॥ ८ ॥ हे मैथिल ! जिनके हृदयमें श्रीकृष्णकी
भक्ति है, उनको ब्रह्म लोक पर्यंतका सुख सब जगत्का सुख तृणके समान है ॥९॥ रथमें चढ़े अक्रूरजी थोड़ीही देरके बाद नन्दपुरमें गये, तब व्रजमें वनसे आये बलदेवजी सहित
श्रीकृष्णको देखा ॥ १० ॥ कैसे हैं, पुराण पुरुष हैं, ब्रह्मादिकोंके ईश हैं, एक श्याम हैं, एक गौर हैं, कमलसे नेत्र हैं, जैसे नील पर्वत और हीरा पर्वत सोनेमें जड़े हुये हैं ॥ ११ ॥
सूर्यकासा तेज ऐसे मुकुटको पहिने हुये हैं, बिजलीसा पीताम्बर और नील मणिसा नीलाम्बर धारण किये हैं,देखते ही रथसे उतरकर भक्तिसे चरणोंमें गिर पड़े ॥१२॥ तब आँसू
जिसमें बह रहे रोमांचित अक्रूरके मुखको देखकर परेश जो श्रीकृष्ण सो दोनों भुजाओंसे उनको उठाकर आलिंगन करने लगे, भक्तवत्सल प्रेमके आँसू बहाने लगे ॥ १३ ॥ ऐसे

तद्दर्शनौत्सुक्यभक्तिभावानन्दसमाकुलः॥रथात्समुत्पत्त्यतेषुलुठंश्चाश्रुमुमोचसः ॥ ८ ॥ येषांश्रीकृष्णदेवस्यभक्तिःस्याद्धृदिमैथिल ॥ तेषा-
माब्रह्मणःसर्वंतृणवज्जगतःसुखम् ॥ ९ ॥ रथारूढस्ततोक्रूरःक्षणान्नन्दपुरंगतः ॥ घोषेषुसबलंकृष्णमागच्छंतंददर्शह ॥१०॥ देवौपुराणौपुरुषौ
परेशौपद्मेक्षणौश्यामलगौरवर्णौ ॥ यथेंद्रनीलध्वजवज्रशैलौसमाश्रितौतौपथिरामकृष्णौ ॥ ११ ॥ बालार्कमौलीवसनंतडिद्युवर्षांशरन्मेघरुचं
दधानौ ॥ दृष्ट्वासतूर्णंस्वरथाद्गतोधस्तयोर्नतोभक्तियुतःपपात॥१२॥ तदाननंबाष्पकलाकुलेक्षणंरोमांचितंवीक्ष्यहरिःपरेश्वरः ॥ दोर्भ्यांसमुत्था-
प्यघृणातुरोश्रुमुमोचभक्तंपरिरभ्यमाधवः ॥ १३ ॥ एवंमिलित्वासबलश्चतंहरिःसद्यःसमानीयवरासनंददौ ॥ निवेद्यगांचातिथयेषुभोजनंरसावृ-
तंप्रेमयुतोह्युपाहरत् ॥ १४ ॥ तमाहनंदःपरिरभ्यदोर्भ्यांमहोकथंजीवसिकंसराज्ये ॥ गतत्रपोयोनिजघानबालान्स्वसुःकथंसोन्यजनेषुमोही
॥ १५ ॥ गृहंगतेनंदवरेहरिस्तंपप्रच्छसर्वंकुशलंस्वपित्रोः ॥ तथायदूनांकिलबांधवानांकंसस्यसर्वांविपरीतबुद्धिम् ॥१६॥ अक्रूरउवाच ॥
परश्वोहनिहेदेवहंतुंशौरिंसमुद्यतः ॥ खड्गपाणिर्भोजराजोनारदेननिवारितः ॥ १७ ॥ दुःखिताबांधवाःसर्वेयादवाभयविह्वलाः ॥ सकुटुंबाः
कंसभयाद्गमन्देशांतरंगताः ॥ १८ ॥

कृष्ण बलदेव दोनों भाई मिलकर अक्रूरजीको घर ले जाकर उत्तम आसन दिया, फिर अक्रूरको गौ निवेदन करके प्रेम युक्त हरिने रसीला सुन्दर भोजन कराया ॥ १४ ॥ तब
नन्दजीने दोनों भुजाओंसे आलिंगन किया, फिर मिलकर बोले, क्यों भाई ! कंसके राज्यमें कैसे जीते हो, देखो जो निर्लज्ज है, जिसने अपनी बहिनके पुत्रही मारडाले वह और
किससे मोह करेगा ॥१५॥ जब नन्दजी भीतर घरमें चले गये, तब श्रीकृष्णने अपने माता- पिताकी कुशल पूछी, और वैसेही यादव बांधवोंकी और कंसकी विपरीत बुद्धिकी बात
पूछी ॥१६॥ तब अक्रूरजी बोले कि,परसोंके दिन हे देव ! कंस खड्ग लेकर वसुदेवको मारने लगा था,तब नारदजीने बचा दिया ॥१७॥ समस्त बांधव दुखी हैं, और यादव भय-
भीत हो रहे हैं और यादव तो कुटुम्ब सहित कंसके डरसे देशान्तरमें चले गये हैं ॥ १८ ॥

आजही यादवोंको मारनेके लिये और देवताओंको जीतनेके लिये उद्यत हुआ है और भी कुछ पृथ्वीपर बली कंस राजा करनेकी इच्छा करता है ॥ १९ ॥ इससे आपको योग्य है, वहाँ चलकर सबको अव्यय कुशल करिये, क्योंकि आपके विना तो संतोंका कार्य कुछ भी नहीं होगा ॥ २० ॥ नारदजी कहते हैं कि, अक्रूरका वचन सुनकर बलदेव सहित श्रीहरि नन्दजीसे सलाह करके कार्यके करनेवाले गोपोंसे बोले ॥२१॥ नन्दराजभी बलदेव सहित बूढ़े गोपोंको साथ लेकर और नौ नन्द, नौ उपनन्द, छः वृषभानुओंको साथ ले ॥ २२ ॥ प्रातःकाल उठकर सब गोप मथुराको जायेंगे, सब ही यहाँसे गोरस, दही, दूध और घृत ॥२३॥ इकट्ठा करके सब ले चलो और भेंट सब ले चलो, रथ, छकड़ा, तैयार कर चलो जल्दी करो ॥ २४ ॥ नारदजी कहते हैं-ऐसे सुनकर वे कार्य करनेवाले गोप घरघरमें कह आये, तब सब गोपियोंने यह बात सुनी ॥ २५ ॥ जब गोपियोंसे कृष्णके

अद्यैवयादवान्हंतुंदेवाञ्जेतुंसमुद्यतः ॥ अन्यत्किमपिकौकर्तुमिच्छतेदैत्यराड्बली ॥ १९ ॥ तस्माद्भवद्भ्यांगंतव्यंकुशलंकर्तुमव्ययम् ॥ भवंतौ हिविनाकार्यंकिंचिन्नस्यात्सतांप्रभू ॥ २० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथतस्यवचःश्रुत्वासबलोभगवान्हरिः ॥ नन्दराजमतेनाहगोपान्कार्यकरानिदम् ॥२१॥ श्रीभगवानुवाच ॥ नंदराजोपिसबलोवृद्धैर्गोपगणैरहम् ॥ नन्दानवोपनन्दाश्चतथाषड्वृषभानवः ॥२२॥ मथुरांतुगमिष्यंतिसर्वे प्रातःसमुत्थिताः ॥ सर्वंतुगोरसंतस्माद्दधिदुग्धघृतादिकम् ॥२३॥ गृहीत्वैकत्रकर्त्तव्यंसोपायनमतःपरम् ॥ रथांश्चशकटैःसार्द्धंसमर्थान्कुरुताशुवै ॥ २४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वाकार्यकरागोपासर्वेगृहेगृहे ॥ शृण्वंतीनांगोपिकानामूचुःसर्वंयथोदितम् ॥ २५ ॥ तच्छ्रुत्वोद्विग्नहृदयागोप्योविरहविह्वलाः ॥ परस्परंवाक्यमूचुःसर्वास्ताहिगृहेगृहे ॥२६॥ प्रस्थानस्यचवार्तैयंश्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥ वृषभानुवरस्यापिगृहे प्राप्तानृपेश्वर ॥ २७ ॥ गमिष्यतोभर्त्तुरतीवदुःखिताश्रुत्वाथवार्तांसदसिह्यकस्मात् ॥ संप्राप्यमूर्च्छांवृषभानुनंदिनीरंभेवभूमौपतितामरुद्धता ॥२८॥ काश्चित्परिम्लानमुखश्रियोभवन्प्रकंकणीभूतकरांगुलीयकाः ॥ सद्यःश्लथद्भूषणःकेशबंधनाश्चित्रार्पितारंभइवावतस्थिरे ॥२९॥ श्रीकृष्णगोविंदहरेमुरारेकाश्चिद्वदन्त्यःस्वगृहेऽतिविह्वलाः ॥ विसृज्यकर्माणिगृहस्यसर्वतोयोगीवचानन्दगतानृपेश्वर ॥ ३० ॥

जानेका वृत्तान्त कहा, तब उस बातको सुनकर गोपियोंका मन उद्विग्न हो गया, विरहमें विह्वल हो गई, घरघरमें आपसमें कहने लगीं ॥२६॥ ऐसे श्रीकृष्ण महात्माके प्रस्थानकी बात घर घर होने लगी, तब श्रीकृष्णके प्रयाणकी चर्चा वृषभानु वरके घरमें भी पहुँची ॥ २७ ॥ तब भर्ताके गमनकी बात वृषभानु नन्दिनी श्रीराधा सुनकर सभामें अकस्मात् मूर्च्छा खाकर भूमिमें गिर पडी, जैसे आंधीका मारा केलेका वृक्ष जा पडता है ॥ २८ ॥ और किन्हीं २ गोपियोंके तो मुख मैले हो गये, और अंगुलियोंकी पहिननेकी अँगूठियाँ हाथके पहिननेके कड़े हो गये, ढीले हो गये हैं भूषण और केशबन्धन जिनके वे गोपियाँ चित्रकी लिखीसी रह गईं ॥ २९ ॥ कोई कोई हे श्रीकृष्ण ! हे गोविन्द ! हे मुरारे ! ऐसे अपने अपने घरमें कहती-कहती अति विह्वल हो गईं, घरके कार्य सब छोड़कर हे नृपेश्वर ! योगीकी तरह आनन्दको प्राप्त हो गईं ॥ ३० ॥

और जो गोपियाँ समर्थ रहीं वे सब हे राजन् ! आपसमें इकट्ठी होकर एकसाथ बोलीं वाणी गद्गद हो गई, कण्ठ रुक गये और आँसू गिरने लगे ॥ ३१ ॥ गोपियाँ बोलीं—
अहो ! निर्मोही जनका चरित्र बड़ा विचित्र होता है, वह कुछ कहा नहीं जाता है, जिनके हृदयमें और है, और मुखमें कुछ और है, उनके अभिप्रायको देवता भी नहीं जानते
हैं, फिर मनुष्य कहाँसे जानेगा ॥ ३२ ॥ देखो बहिनो ! इसने रासमें भी जो जो कुछ कहा था, उसको छोड़कर अब चलनेकी तैयारी करता हैं, जब प्राणपति मधुपुरी (मथुरा)
को चले जायँगे, तब न जाने क्या क्या कष्ट हमको होगा ॥ ३३ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्व संवादेऽक्रूरागमनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥
॥ ३ ॥ ऐसे कहती गोपियोंको परम विरहिणी जानकर श्रीकृष्ण बहुत शीघ्र उनके घर आये ॥ १ ॥ हे राजन् ! जितनी गोपियाँ थीं, उतनेही अपने रूप धरकर पृथक् पृथक्
घरोंमें जाकर सबको आप मीठी वाणीसे समझाने लगे ॥ २ ॥ फिर राधिकाके महलमें गये, वहाँ राधिकाको मूर्च्छित हुई सखियोंके बीचमें पड़ी देखकर तब आपने मधुर मुरली

काश्चित्समर्थास्तुपरस्परंवचःसमेत्यराजन्युगपत्सखीजनम् ॥ ऊचुःस्खलद्गद्गदकंठवाचःस्वतःस्रवद्बाष्पकलावहद्दृशः ॥ ३१ ॥ गोप्यऊचुः ॥
अहोतिनिर्मोहिजनस्यचित्रंपरंचरित्रंगदितुंनयोग्यम् ॥ मुखेनचान्यंहृदभाव्यमन्यद्देवोनजानातिकुतोमनुष्यः ॥३२॥ रासेपियद्यद्गदितंतुतत्त-
द्विहायगंतुंसमवस्थितोयम् ॥ गतेपुरींप्राणपतावहोस्मिन्किंकिंनकष्टंबतनोभविष्यत् ॥३३॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांमथुराखण्डेनारदबहुलाश्व
संवादेऽक्रूरागमनंनामतृतीयोध्यायः ॥ ३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ राजन्नेवंवदंतीनांगोपीनांविरहंपरम् ॥ विज्ञायभगवान्देवःशीघ्रंतासांगृहा-
न्ययौ ॥१॥ यावंत्योयोषितोराजंस्तावद्रूपधरोहरिः ॥ स्वयंसंबोधयामासवाग्भिःसर्वाःपृथक्पृथक् ॥ २॥ श्रीराधामंदिरंगत्वादृष्ट्वाराधांचमू-
र्च्छिताम् ॥ रहःस्थितांसखीसंघेननादमुरलीकलम् ॥३॥ श्रुत्वावंशीध्वनिंराधासहसोत्थायचातुरा ॥ नेत्रउन्मील्यददृशेश्रीगोविंदंसमागतम् ॥
॥ ४ ॥ पद्मिनीवगतानन्दंपद्मिनीपद्मिनीपतिम् ॥ वीक्ष्योत्थायागतायस्मैसादरेणासनंददौ ॥५॥ अश्रुपूर्णमुखींदीनांराधांकमललोचनाम् ॥
शोचंतींभगवानाहमेघगंभीरयागिरा ॥ ६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ विमनास्त्वंकथंभद्रेमाशोचंकुरुराधिके ॥ अथवागंतुकामंमांश्रुत्वासि
विरहातुरा ॥ ७ ॥ भुवोभारावतारायकंसादीनांवधायच ॥ ब्रह्मणाप्रार्थितःसाक्षाज्जातोहंवैत्वयासह ॥ ८ ॥

बजाई ॥ ३ ॥ तब श्रीराधाजी मुरलीकी ध्वनि सुनकर सहसा उठ बैठी और बड़ी आतुर हुई आखें खोलकर आये हुये श्रीकृष्णको आगे बैठे देखा ॥ ४ ॥ पद्मिनी नायिका जो
श्रीराधा है, सो कमलिनी जैसे चन्द्रमाको देखकर प्रफुल्लित होती हैं, वैसे श्रीकृष्णचन्द्रको देख प्रफुल्लित होकर उठी और श्रीकृष्णको आसन दिया ॥ ५ ॥ तब आंसू जिसके
आरहे, कमलसे जिसके नेत्र, शोचकर रही, ऐसी जो राधा है, उससे मेघसी गम्भीर वाणीसे भगवान् बोले ॥ ६ ॥ ॥ हे भद्रे ! तुम उदास क्यों हो रही हो, हे राधिके ? तुम
शोच मत करो, अथवा हे प्रिये ! तुम मेरे जानेकी सुनकर उसके विरहमें आतुर होकर शोच करती हो ॥ ७ ॥ पृथ्वीका भार उतारनेके लिये और कंसादिक राक्षसोंको मारनेके
लिये ब्रह्माकी प्रार्थनासे तुम्हारे सहित मैंने जन्म लिया है ॥ ८ ॥

सो मैं मथुरा जाऊँगा और पृथ्वीका भार उतारूँगा, फिर जल्दीही मैं यहाँ आऊँगा और तुम्हारा कल्याण करूँगा ॥९॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे कहते जो जगदीश्वर हरि अपने पति हैं उनके वियोगसे विह्वल जो राधा है—उसके रोंगटे खड़े हो आये और कांप कांपकर मूर्च्छा खाकर गिर पड़ी, दावानलसे वनकी लता जैसी हो जाती है,वैसी होकर, फिर बड़ी देरमें उठकर बोली ॥१०॥ हे प्यारे ! पृथ्वीका भार उतारनेके लिये भलेही मथुरा जाईये, किन्तु मेरी प्रतिज्ञा सुनिये, हे प्राणपतिजी ! यदि आप यहाँसे चले जायेंगे, तो मैं अपने शरीरको कैसे भी नहीं रखूँगी ॥११॥ यदि मेरी शपथको नहीं मानोगे, तो दूसरा वचन सुनिये, यदि प्राणोंको नहीं छोडूँगी, तो यह आपके विरहसे विह्वल कपूरकी धूलकी तरह बिखर जायगी ॥१२॥ अब श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे राधे ! अपनी प्रतिज्ञा तो मैं चाहे झूंठी कर भी दूं, किन्तु अपने भक्तोंका वचन झूंठा नहीं कर सकता हूँ॥१३॥ श्रीदामाके

मथुरांहिगमिष्यामिहरिष्यामिभुवोभरम् ॥ शीघ्रमत्रागमिष्यामिकरिष्यामिशुभंतव ॥९॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्तवंतंजगदीश्वरंहरिंराधापतिंप्राहवियोगविह्वला ॥ दावाग्निनादावलतेवमूर्च्छितासुकंपरोमांचितभावसंवृता ॥ १० ॥ राधोवाच ॥ भुवोभरंहर्तुमलंपुरींव्रजकृतंपरंमेशपथंशृणुत्वतः ॥ गतेत्वयिप्राणपतेचविग्रहंकदाचिदत्रैवनधारयाम्यहम् ॥ ११ ॥ यदात्थमेत्वंशपथंनमन्यसेद्धितीयवारंवदयामिवाक्पथम् ॥ प्राणोधरेगंतुमतीवविह्वलःकर्पूरधूलेःकणवद्गमिष्यति ॥ १२ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ वचनंवैस्वनिगमंदूरीकर्तुंक्षमोस्म्यहम् ॥ भक्तानांवचनंराधेदूरीकर्तुंनचक्षमः ॥ १३ ॥ श्रीदामशापात्पूर्वस्माद्गोलोकेकलहान्मम ॥ शतवर्षंतेवियोगोभविष्यतिनसंशयः ॥१४॥ माशोचंकुरुकल्याणिवरंमेस्मरराधिके ॥ मासंमासंवियोगांतेदर्शनंमेभविष्यति ॥ १५ ॥ राधोवाच ॥ मासंप्रतिवियोगंमेदांतुंस्वंदर्शनंहरे ॥ चेन्नागमिष्यसितदाऽसून्दुःखात्संत्यजाम्यहम् ॥१६॥ लोकाभिरामजनभूषणविश्वदीपकंदर्पमोहनजगद्वृजिनार्तिहारिन् ॥ आनन्दकन्दयदुनन्दननन्दसूनोअद्यागमस्यशपथंकुरुमेपुरस्त्वम् ॥ १७ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ रंभोरुमासंप्रतितेवियोगंचेन्नागमिष्येशपथंगवांमे ॥ निःसंशयंनिष्कपटंवचस्त्वमवेहिराधेकथितंमयायत् ॥ १८ ॥

शापसे तुमको मेरा "गोलोकमें जो तुम्हारी और श्रीदामा नामक मेरे सखाकी लड़ाई हुई थी, सो जो पहिले श्रीदामाने तुमको शाप दिया था उससे" सौवर्षका वियोग होगा ॥ १४ ॥ हे कल्याणि ! तुम शोच मत करो, हे राधिके ! मेरे वरका स्मरण करो, हर महीनेके अंतमें तुमको मेरा दर्शन होगा ॥ १५ ॥ तब राधिकाजी बोलीं कि, महीने के अंतमें यदि आप मुझको आकर दर्शन नहीं देओगे, तो मैं प्राणोंको त्याग दूंगी ॥ १६ ॥ हे लोकाभिराम ! हे जन भूषण ! हे विश्वदीप ! हे कंदर्प मोहन ! हे जगद्वृजिनार्तिहारिन् ! हे आनन्दकन्द ! हे यदुनन्दन ! हे नन्द सूनो ! आज मेरे सामने आप प्रतिज्ञा करिये कि, आप जल्दी आओगे ॥ १७ ॥ तब भगवान् बोले कि, हे रंभोरु ! जो महीनेमें वियोग हो जाय, मैं न आऊँ, तो मुझको गौओंकी शपथ है, हे राधे ! यह मेरा वचन निःसंशय निष्कपट है, जो मैंने कहा है, उसको ऐसे तुम समझो ॥ १८ ॥

जो मित्रताको निष्कपट करे और निष्कारण करे, वह ही धन्यतम है और जो मित्रता करके कपट करे वह लोभी और हेतुपट महा लंपट नर है, उसको धिक्कार है॥१९॥ कर्मेन्द्रिय जैसे शब्द, रस, रूप, गन्ध, स्पर्श, को नहीं जानती है, वैसे ही सकामी जो मुनि हैं, वे निरपेक्ष निर्गुण जो सुख है,उसको कुछ भी नहीं जानते हैं ॥२०॥ समदर्शी ब्रह्मदर्शी जो संत निरपेक्ष हैं, वे निरपेक्षियोंका जो मेरा सुख है, उसको जानते हैं, जैसे ज्ञानेन्द्रिय जीभ स्वादको, नेत्र रूपको, कान शब्दको, नाक सुगन्धको, त्वचा गर्म ठंड स्पर्शको जानती हैं, वैसे वे जानते हैं ॥ २१ ॥ सबके भावको आपसमें सब जानते हैं, प्रीति दोनों ओरसे होती है, एक ओरसे नहीं होती है, इसलिये अपनी ओरसे मुझमें प्रेम करना चाहिये, प्रेमके समान पृथ्वीपर और कुछ नहीं है ॥२२॥ सो हे राधे ! जैसे तुम्हारा मनोरथ भाण्डीरवनमें हुआ था,वैसे ही अब होगा, निष्काम जो प्रेम है,उसीका संतोंने आश्रय लिया है,उसी सुखको संत निर्गुण सुख जानते हैं ॥ २३ ॥ जो मनुष्य तुझ राधिकामें और मुझ केशवमें भेद नहीं देखते हैं, जैसे दूध और श्वेततामें भेद नहीं" वैसे मुझमें तुझमें भेद नहीं देखते

योमित्रतांनिष्कपटंकरोतिनिष्कारणोधन्यतमःसएव॥ विधायमैत्रींकपटंविदध्यात्तंलंपटंहेतुपटंनटंधिक्॥१९॥ कर्मेन्द्रियाणीहयथारसादींस्तथा सकामामुनयःसुखंयत्॥ मनाङ्नजानंतिहिनैरपेक्ष्यंगूढंपरंनिर्गुणलक्षणंतत्॥२०॥ जानंतिसंतःसमदर्शिनोयेदांतामहांतःकिलनैरपेक्षाः ॥ तेनैरपेक्ष्यंपरमंसुखंमेज्ञानेंद्रियादीनियथारसादीन् ॥२१॥ सर्वंहिभावंमनसःपरस्परंनह्येकतोभामिनिजायतेततः॥ प्रेमैवकर्तव्यमतोमयिस्वतःप्रेम्णासमानंभुविनास्तिकिंचित् ॥२२॥ यथाहिभांडीरवनेमनोरथोबभूवराधेहितथाभविष्यति ॥ अहैतुकंप्रेमचसद्भिराश्रितंतत्रापिसंतःकिलनिर्गुणंविदुः ॥२३॥ येराधिकायांत्वयिकेशवेमयिभेदंनकुर्वंतिहिदुग्धशौक्ल्यवत् ॥ तएवमेब्रह्मपदंप्रयांतितदहैतुकस्फूर्जितभक्तिलक्षणाः ॥ २४ ॥ हेराधिकायांत्वयिकेशवेमयिपश्यंतिभेदंकुधियोनराभुवि॥ तेकालसूत्रंप्रपतंतिदुःखितारंभोरुयावत्किलचंद्रभास्करौ ॥ २५॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवमाश्वास्यतांराधांसर्वगोपीगणंतथा ॥ आययौनंदभवनंभगवान्नयकोविदः॥२६॥ अथसूर्योदयेजातेनंदाद्याःशकटैर्बलिम्॥ नीत्वारथान्समारुह्यसर्वेश्रीमथुरांययुः ॥२७॥ आरुह्यरामकृष्णाभ्यांस्वरथंगांदिनीसुतः॥ प्रयाणमकरोद्राजन्मथुरांद्रष्टुमुद्यतः ॥२८॥ कोटिशःकोटिशोगोप्योमार्गेमार्गेसमास्थिताः ॥ पश्यंत्यस्तन्निर्गमनंक्रोधाढ्यामोहविह्वलाः ॥ २९ ॥

हैं, वही मनुष्य ब्रह्मपदको प्राप्त होते हैं वे कैसे है कि, निरपेक्षतासे ददीप्यमान हैं, भक्ति लक्षण धर्म जिनका ॥ २४ ॥ और जो कुबुद्धि मनुष्य मुझमें और तुझमें उस पृथ्वीपर भेद देखते हैं वे मनुष्य महादुखी होकर कालसूत्र नरकमें गिरते हैं—हे रंभोरु ! जबतक सूर्य चन्द्रमा रहते हैं, तबतक ॥२५॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे उन राधिकाजीको समझा बुझाकर नीतिमें चतुर भगवान् नंदके भवनको चले आये ॥ २६ ॥ उसके बादमें सूर्यके उदय होनेपर नन्दादिक सब गोप बलि (भेंट) लेकर रथोंमें बैठकर मथुरा आये ॥ २७ ॥ तब अक्रूरजीने रामकृष्णको साथ लेकर रथमें बैठ प्रस्थान किया, मथुराको देखनेको उद्यत हुये ॥ २८ ॥ उस समय जो करोड़ों गोपियोंके झुंड मार्गमें खड़े थे, वे सब श्रीकृष्णके निकलनेको देख रहीं थीं, वे क्रोधमें भरी और मोहमें विह्वल हुईं ॥ २९ ॥

अरे क्रूर २ ऐसे अक्रूरसे कठोर वचन कहती उन्होंने सब ओरसे रथको घेर लिया, जैसे रथ सहित सूर्यको बादल घेर लेते हैं ॥३०॥ नारदजी कहते हैं कि, हे मैथिल ! उस समय जब अक्रूर कृष्णको लेकर चले तब कृष्ण विरहमें आतुर जो गोपियाँ थीं, उन्होंने अक्रूरके रथको, रथके घोड़ोंको और सारथीको बड़ी २ लाठियोंसे खूब मारा ॥३१॥ मारे हुये वे घोड़े इधर उधर गिर पड़े और गोपियोंने दोही अंगुलियोंकी मारसे सारथीको भी रथमेंसे गिरा दिया ॥ ३२ ॥ लोककी लाजको छोड़कर बलपूर्वक अक्रूरको रथसे खींचकर रामकृष्णके देखते २ अक्रूरको कंकणोंकी मारसे विह्वल कर दिया ॥३३॥ गोपियोंके यूथका बल देखकर बलदेव सहित भगवान् अक्रूरकी रक्षा करके गोपियोंको समझाने लगे ॥३४॥ हे अंगनाओ ! तुम शोच मत करो, मैं सन्ध्याहीको वापस आऊँगा, जैसे इसके देखते व्रजवासी मेरी हँसी न करें, सो तुम करो ॥ ३५ ॥ ऐसा कहकर बलदेवजी सहित

क्रूरक्रूरेतिचाक्रूरंवदन्त्यःपरुषंवचः ॥ रुरुधुःसर्वतोयानंयथार्कंसरथंघनाः॥ ३० ॥ अक्रूरस्यरथंराजन्निजघ्नुर्यष्टिभिर्भृशम् ॥ अश्वांस्तथासारथिंचभगवद्विरहातुराः ॥ ३१ ॥ अश्वास्तत्रसमुत्पेतुस्ताडितास्तइतस्ततः ॥ गोपीद्व्यंगुलघातेनसारथिःपतितोरथात् ॥ ३२ ॥ विहायलज्जांलोकस्यसमाकृष्यरथाद्बलात् ॥ कंकणैस्तेडुरक्रूरंपश्यतोःकृष्णरामयोः ॥ ३३ ॥ गोपीयूथबलंदृष्ट्वासबलोभगवान्हरिः ॥ गोपीःसंबोधयामासरक्षित्वागांदिनीसुतम् ॥३४॥ संध्यायामागमिष्यामिमाशोचंकुरुतांगनाः ॥ पश्यतश्चास्यमद्दास्यंमाकुर्यास्तद्व्रजौकसः ॥ ३५ ॥ इत्येवमुक्त्वासरथःसमागतोक्रूरेणकृष्णोबलदेवसंयुतः॥ तुरंगमैर्वेगमयैर्मनोहरैर्ययौपुरींयादववृन्दमंडिताम् ॥३६॥ यावद्रथःकेतुरुताश्वरेणुरालक्ष्यतेतावदतीवमोहात् ॥ स्थिताह्यभूवन्पथिचित्रवत्ताःस्मृत्वाहरेर्वाक्यमुतागताशाः ॥ ३७॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीमथुरार्थप्रयाणंनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ हरिरक्रूररामाभ्यांमथुरोपवनंगतः ॥ यमुनानिकटंस्थित्वावारिपीत्वारथंययौ ॥ १॥ अक्रूरस्तावनुज्ञाप्यस्नातुंश्रीयमुनांगतः ॥ नित्यनैमित्तिकंकर्तुंविवेशविमलेजले ॥ २ ॥ जलेचागाधगंभीरेमहावर्तसमाकुले ॥ ददर्शरामकृष्णौतौवदंतौगांदिनीसुतः ॥ ३ ॥

भगवान् अक्रूरको साथ लेकर मनके समान वेग वाले घोड़ोंसे यादवोंके समूहसे मण्डित मथुरापुरीमें आये ॥ ३६ ॥ जबतक रथ केतु दिखाई दी और रथके घोड़ोंकी रेणु उड़ती देखी तबतक तो अति मोहित हुई गोपियाँ चित्रकीसी लिखी खड़ी रहीं, क्योंकि हरिके वचनको याद करती श्रीकृष्णके आनेकी आशासे फिर सब वापस गई ॥३७॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां मथुरागमनं नामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ नारदजी कहते हैं कि, अक्रूर और राम सहित श्रीकृष्ण मथुराके उपवनमें आकर ठहरे, तब कृष्ण बलराम तो यमुनाके निकट ठहर कर जलपीकर रथमें जा बैठे ॥१॥ और अक्रूर श्रीकृष्ण बलदेवसे आज्ञा मांगकर यमुना पर स्नान करने गये, नित्य नैमित्तिक कर्म करनेके लिये जलमें प्रवेश किया ॥२॥ तब अक्रूरजीने उस अथाह गम्भीर जलमें जिसमें भँवर पड़ रहे थे, उस जलमें श्रीकृष्ण बलदेवको बात करते देखा ॥ ३ ॥

तब विस्मित होकर अक्रूरजीने रथमें देखा तो रथमें भी बैठे दिखाई दिये फिर जलमें देखा तो जलमें भी दिखाई दिये, फिर जो देखा तो कुण्डली मारे शेषजी बैठे हैं ॥४॥ उनकी गोदीमें लोक जिसको प्रणाम करे, ऐसा गोलोक देखा, गोवर्द्धन देखा और मनोहर वृन्दावन देखा ॥ ५ ॥ उसमें असंख्य करोड़ सूर्य मंडलकासा तेज जिनका ऐसे परिपूर्णतम पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण देखे ॥६॥ करोड़ कामदेवसे सुन्दर रासमण्डलके बीचमें राधा सहित श्रीकृष्णको अक्रूरजीने देखा ॥ ७ ॥ तब श्रीकृष्णको परब्रह्म जानकर बारबार प्रणाम करके प्रसन्न होकर हाथ जोड़ जोड़ बड़े हर्षित हो स्तुति करने लगे॥८॥आप परिपूर्णतम श्रीकृष्ण हो,आपके लिये नमस्कार है, असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति गोलोक पति हो, आपको मेरा नमस्कार है॥९॥ श्री राधाके पति व्रजके अधीश नन्दके पुत्र, यशोदा नन्दन के लिये मेरा नमस्कार है॥१०॥आप देवकीके सुत वासुदेव जगत्के पति हो, हे यदूत्तम जगन्नाथ !

विस्मितस्तौरथेपश्यत्पुनर्वारिस्थितौनृप ॥ ददर्शतत्रसर्पेन्द्रंकुंडलीभूतमास्थितम् ॥ ४ ॥ तस्योत्संगेमहालोकंगोलोकंलोकवन्दितम् ॥ गोवर्द्धनाद्रिंयमुनांवृन्दारण्यंमनोहरम् ॥५॥ असंख्यकोटिमार्तंडज्योतिषांमंडलंप्रभुम् ॥ परिपूर्णतमंसाक्षाच्छ्रीकृष्णंपुरुषोत्तमम् ॥६॥ कोटिमन्मथलावण्यंरासमंडलमध्यगम् ॥ राधयासहितंदेवंतत्राक्रूरोददर्शह ॥ ७ ॥ ज्ञात्वाकृष्णंपरंब्रह्मनत्वानत्वापुनःपुनः ॥ कृतांजलिपुटोक्रूरःस्तुतिंचक्रेतिहर्षितः ॥ ८ ॥ अक्रूरउवाच ॥ नमःश्रीकृष्णचंद्रायपरिपूर्णतमायच ॥ असंख्यांडाधिपतयेगोलोकपतयेनमः ॥ ९ ॥ श्रीराधापतयेतुभ्यंव्रजाधीशायतेनमः ॥ नमःश्रीनंदपुत्रायययशोदानंदनायच ॥ १० ॥ देवकीसुतगोविंदवासुदेवजत्पते ॥ यदूत्तमजगन्नाथपहिमांपुरुषोत्तम ॥ ११ ॥ वाणीसदातेगुणवर्णनेस्यात्कर्णौकथायांममदोश्चकर्मणि ॥ मनःसदात्वच्चरणारविंदयोर्दृशौस्फुरद्धामविशेषदर्शने ॥ १२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंसंस्तुवतस्तस्यपश्यतोविस्मितस्यच ॥ तत्रैवांतर्दधेकृष्णःसलोकोभगवान्प्रभुः ॥ १३ ॥ नत्वातंचतदाक्रूरःकृत्वानैमित्तिकंविधिम् ॥ ज्ञात्वाकृष्णम्परंब्रह्मविस्मितोरथमाययौ ॥१४॥ दिनात्ययेरामकृष्णावनयद्गांदिनीसुतः ॥ रथेवायुवेगेनस्निग्धगंभीरनादिना ॥ ॥ १५ ॥ पुरस्योपवनेतत्रवीक्ष्यनंदंयदूत्तमः ॥ अक्रूरंप्राहविहसन्मेघगंभीरयागिरा ॥ १६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मथुरायांहिगंतव्यंभवतास्वरथेनवै ॥ गोपालैःसहितःपश्चादागमिष्यामिमानद ॥ १७ ॥

हे पुरुषोत्तम ! मेरी रक्षा करिये ॥११॥ वाणी मेरी सदाही आपका वर्णन करें, मेरे हाथ आपकेही कर्म करे, मेरा मन आपके चरण कमलोंमें लगे, मेरे नेत्र आपके दर्शन किया करें ॥१२॥ नारदजी कहते हैं कि ऐसी स्तुति करही रहे थे, अक्रूरजी विस्मित होकर देख रहे थे कि तभी भगवान् गोलोक समेत वहाँही अन्तर्धान हो गये ॥१३॥ उनको प्रणाम करके नित्य नैमित्तिक कर्म करके श्रीकृष्णको परब्रह्म जानकर विस्मित होकर अक्रूरजी फिर रथमें आ बैठे ॥ १४ ॥ दिनके तीसरे प्रहरके समय अक्रूर मीठी गम्भीर आवाजजिसमें पवनकासा जिसका वेग ऐसे रथमें कृष्ण बलदेवको बैठाकर मथुरामें ले आये ॥ १५ ॥ तब पुरके पासके उपवनमें नन्दजीको देखकर श्रीकृष्ण मेघके समान गम्भीर वाणीसे हंसकर अक्रूरजीसे बोले ॥१६॥ तुम अपने रथको लेकर मथुराको जाओ, हम गोपोंको साथ लेकर पीछे आवेंगे ॥ १७ ॥

तब अक्रूरजी बोले-हे देवदेव ! हे जगन्नाथ ! हे गोविन्द ! हे पुरुषोत्तम ! आप गोपों सहित बड़े भ्राताजीको साथ लेकर हे प्रभो ! मेरे घर चलिये ॥१८॥ अपने चरण कमलकी रजसे
मेरे घरको पवित्र करिये, हे जगत्के पति ! आपके बिना मैं अपने घर नहीं जाऊँगा ॥ १९ ॥ तब भगवान् बोले कि मैं तुम्हारे घर तब ही जाऊँगा जब यादवोंके वैरी कंसको मार
लूँगा और बलदेव सहित तथा गोपोंसहित तुम्हारा प्रिय करूँगा ॥२०॥ नारदजी कहते हैं कि, श्रीकृष्ण तो नन्दजीके ही पास रहे और अक्रूरजी मथुराको चले गये, तब कंसको
कह गये कि श्रीकृष्ण, बलदेव और नन्दादिक सब गोप आ गये, यह कहकर अपने घरको चले गये ॥२१॥ उसके बाद बलदेवजी सहित गोपोंको साथ लेकर मथुरापुरीको देखने
के लिये उत्कंठित श्रीकृष्णको देखकर नन्दजी बोले ॥ २२ ॥ कि सीधी तरहसे पुरीको देखकर चले आना, यह गोकुल नहीं है, इसमें भयंकर कंसका राज्य है ॥ २३ ॥ तब
भगवान्ने कहा कि ऐसाही करेंगे, यह कहकर फिर नंदने जिनको आज्ञा दी ऐसे बूढे बूढे गोपोंको और बालकोंको साथ लेकर बलदेवजीको साथ लेकर मथुरापुरीको देखनेके लिये

अक्रूरउवाच ॥ देवदेवजगन्नाथगोविंदपुरुषोत्तम ॥ सहाग्रजःसगोपालोगच्छमेमंदिरंप्रभो ॥ १८ ॥ पादारविंदरजसापवित्रीकुरुमद्गृहम् ॥
त्वांविनानगमिष्यामिमंदिरंस्वंजगत्पते ॥ १९ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ गृहंतवागमिष्यामिहत्वावैयादवाहितम् ॥ सबलोबांधवैःसार्द्धंकरिष्या-
मितवप्रियम् ॥ २० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथतत्रस्थितेकृष्णेसोऽक्रूरोमथुरांगतः ॥ निवेद्यचेदंकंसायततःस्वभवनंययौ ॥२१॥ अथापराह्णेस-
बलंगोविन्दंबालकैःपुरीम् ॥ द्रष्टुमभ्युदितंवीक्ष्यनंदोवाक्यमथाब्रवीत्॥२२॥ आर्जवेनपुरींवीक्ष्यागंतव्यंभवताकिल ॥ नगोकुलंविद्धिचैनांकंस
राज्येमहाभये ॥२३॥ तथास्तुचोक्त्वाभगवान्वृद्धैर्नन्दप्रणोदितैः॥गोपालैर्बालकैःसार्द्धंसबलोगतवान्पुरीम् ॥ २४ ॥ प्रासादैर्गगनस्पर्शैर्हैमरत्न
खचिद्गृहैः ॥ शोभितांदुर्गसंयुक्तांदेवधानीमिवस्थिताम् ॥२५॥कालिंदींरत्नसोपानैश्चलदूर्मिकुतूहलैः॥ अलकामिवशोभाढ्यांदिव्यनारीनरैर्यु-
ताम् ॥२६॥प्रेक्षञ्छ्रीमथुरांकृष्णोधनिनांमंदिराणिच ॥ पश्यन्गोपालकैःसार्द्धंराजमार्गंविवेशह॥२७॥ श्रुत्वाऽऽगतंतंवसुदेवनंदनंबहुश्रुतावैमथु-
रापुरीगताः ॥ त्यक्त्वाथकर्माणिविसृज्यताःशिशून्द्रष्टुंव्यधावन्नुदधिंयथापगाः ॥२८॥ काश्चित्तुहर्म्यात्किलजालदेशात्कुड्याततुकाश्चित्पट-
तोगवाक्षात् ॥ विनिर्गताद्द्वारकपाटदेशात्तच्चत्वरात्तंददृशुःपुरंध्र्यः ॥ २९ ॥

गये॥ २४ ॥ आकाशको स्पर्श करनेवाले, बड़े-बड़े ऊँचे रत्नोंसे जड़े सुनहरी रूपहली महलोंसे किलेसे मथुरापुरी ऐसी लगती है, मानो मूर्तिमान् इन्द्रकी देवधानी नाम पुरी ही
है ॥ २५ ॥ और कालिंदीकी रत्नोंकी सीढी, लहरदार तरंग उनसे कैसी शोभित है, जैसे कुबेरकी अलकापुरी ही है, दिव्य हैं स्त्री पुरुष जिसमें ॥ २६ ॥ ऐसी श्रीमथुरापुरीको
देखते हुये धनियोंके महलोंको देखते गोपोंके संग बाजारमें आये ॥ २७ ॥ बहुत दिनोंसे सुनती जो मथुरापुरीकी रहनेवाली थीं उन्होंने जब वसुदेव नन्दनको आये सुने तब
अपने-अपने कार्योंको छोड़कर और बालकोंको छोड़कर कृष्णके दर्शनके लिये आईं, जैसे समुद्रमें नदी उमड़कर आती है ॥ २८ ॥ तब कोई स्त्री तो महलपरसे, कोई जारी
झरोखासे कोई दिवाल की आडसे कोई परदेसे कोई अपने द्वारपरसे श्रीकृष्ण और बलदेवको देखने लगीं ॥ २९ ॥

जिन श्रीकृष्णके मुखपर चलायमान अलकावली आगे वालोंके मनको हरती हैं और पीछेके मुकुटके नीचेकी अलकावली पीछेवालोंके मनको हरती है ॥ ३० ॥ आधे पीताम्बरसे कमर बंधी है, आधा कंधेपर पडा है, जैसे श्याम घटामें बिजली, हाथमें कमलको लिये, कण्ठमें वैजयन्ती माला पहिने वसुदेव नन्दनको देखा ॥ ३१ ॥ चंचल है मकराकृत कुण्डल जिनके, बालसूर्यकासा तेज जिनमें, ऐसे बाजुओंसे शोभित हैं भुजदण्ड जिनके अखिल ब्रह्माण्डोंके पति ऐसे श्रीकृष्णको देखकर मथुरावासिनी सब मोहको प्राप्त होगईं ॥ ३२ ॥ तब ये बोली अहो ! वृन्दावन बड़ा रमणीय है, जिसमें श्रीकृष्ण विराजते हैं, और गोप गोपी धन्य हैं जो नित्य इन श्रीकृष्णको देखती हैं, जो मनको हरनेवाले हैं ॥ ३३ ॥ वे गोपोंकी रमणियाँ धन्य हैं, उन्होंने ऐसा क्या सुकृत किया है, जो गोपियाँ रासरंगमें बारम्बार इनका अधरामृत पीती हैं ॥ ३४ ॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे आप श्रीकृष्ण चले आते हैं कि

एकंचलत्कुंतलमानने स्वेकिमग्रगानांतुमनांसिहर्तुम् ॥ पश्चात्कृतंमौलितलेदधानंकिंपृष्ठगानांहरणंद्वितीयम् ॥ ३० ॥ पीतांबरार्द्धंवलिनंस्फुरत्कटा-
वर्द्धतदंसेजलदेयथातडित् ॥ पद्मंकरेस्वांहृदिवैजयंतींस्रजंदधानंवसुदेवनन्दनम् ॥ ३१ ॥ विलोक्यसर्वामुमुहुः पुरस्त्रियोविलोलपाठीननवीनकुंड-
लम् ॥ बालार्कहैमांगदबाहुमंडलंराजन्नसंख्यांडपतिंपरात्परम् ॥ ३२ ॥ पुरंध्र्यऊचुः ॥ अहोवृंदावनंरम्यंयत्रसन्निहितोह्ययम् ॥ धन्यागो-
पगणाःसर्वेपश्यंत्येनंमनोहरम् ॥ ३३ ॥ धन्यागोपरमण्यस्तास्ताभिःकिंसुकृतंकृतम् ॥ पिबंतियारासरंगेमुहुश्चास्याधरामृतम् ॥ ३४ ॥ श्रीनारद
उवाच ॥ राजमार्गेरंगकारंरजकंयांतमुन्मुदम् ॥ गोपालानुमतेनैवप्राहतंमधुसूदनः ॥ ३५ ॥ देहिनोमित्रवासांसिरुचिराणिमहामते ॥ दातु
स्तेहिपरंश्रेयोभविष्यतिनसंशयः ॥ ३६ ॥ प्रज्वलन्कृष्णवाक्येनघृतेनाग्निर्यथाभृशम् ॥ कंसभृत्योमहादुष्टःप्राहेदंपथिमाधवम् ॥ ३७ ॥ रजक
उवाच ॥ ईदृशान्येववस्त्राणिपितृभिर्वःपितामहैः ॥ धारितानिकिमुद्वृत्तास्तेनकौपीनधारकाः ॥ ३८ ॥ याताशुवन्यानगरात्सर्वेवैजीविते-
च्छया ॥ कारागारेकारयामियुष्मान्वस्त्रहरानहम् ॥ ३९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंप्रवदतस्तस्यरजकस्ययदूत्तमः ॥ जहारमस्तकंसद्यः
कराग्रेणैवलीलया ॥ ४० ॥

सामनेसे आता आपने बाजारमें एक धोबी देखा वह रँगरेज भी था, उसको देखकर गोपोंकी इच्छासे मधुदैत्यके मारनेवाले अब बोले ॥ ३५ ॥ अरे मित्र हे महामते ! तुम्हारे पास तो बड़े बड़े सुन्दर कपड़े हैं, इनमेंसे हमको भी दो, तो देनेवाले तुम्हारा निश्चय बड़ा कल्याण होगा ॥ ३६ ॥ तब वह धोबी श्रीकृष्णका वचन सुनकर एकसाथ भभक उठा, घीसे अग्नि जैसे क्योंकि, कंसका चाकर है, महादुष्ट है, वह बाजारमें श्रीकृष्णसे बोला ॥ ३७ ॥ ऐसे वस्त्र तुम्हारे पिता पितामहने भी कभी पहिने हैं, क्यों इतरा चले हो, अरे ! कौपीन धारण करनेवाले हो, बहुत इतराओ मत ॥ ३८ ॥ अरे मूर्ख वनवासियो ! जल्दी शहरमेंसे निकल जाओ, यदि जीना चाहते हो, नहीं तो कपड़ोंके चोरोंको तुमको मैं अभी बंदीगृह दिला दूँगा ॥ ३९ ॥ नारदजी कहते हैं ऐसे प्रलाप करते हुये उस धोबीके श्रीकृष्णने एक तमाचा मारा, जिससे उसका शिर टूटकर अलग जा पड़ा ॥ ४० ॥

हे विदेहराज ! उसके शरीरसे एक ज्योति निकली वह कृष्णमें लीन हो गई, तबही सब उस धोबीके चाकर वस्त्रोंकी गठड़ियोंको छोड़कर॥४१॥ चारों ओर भग गये, शरद् ऋतुमें बादल जैसे भगजाते हैं, तब कृष्ण बलरामने उनके सुन्दर २ वस्त्र लिये, और बालककोंने भी ले लिये और मार्गमें जानेवालोंने भी ले लिये ॥४२॥ किन्तु उनको पहिनना नहीं जानते, श्रीकृष्णके देखते अस्तव्यस्त वस्त्र पहिनने लगे ॥ ४३ ॥ तब एक दरजीने श्रीकृष्ण बलदेवका विचित्र रंग के वस्त्रोंसे विचित्र वेष बनाया और जब बालकोंको भी विचित्र वस्त्र पहिनाये ॥४४॥ फिर गोपियोंको और श्रीकृष्णको उन्हीं वस्त्रोंसे यथायोग्य शृंगार करके कृष्णका दर्शन किया ॥ ४५ ॥ तब भगवान्ने उसपर प्रसन्न होकर अपनी सारूप्य मुक्ति उसको दी, बलदेवजीने भी बल, लक्ष्मी, ऐश्वर्य दिया ॥४६॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां श्रीकृष्ण मथुरा प्रवेशनं नाम पंचमोऽध्यायः ॥५॥ नारदजी कहते हैं कि, बलदेव सहित और गोपोंसहित श्रीकृष्ण सुदामा मालीके घर गये ॥ १ ॥ सुदामा माली दोनोंको देखतेही उठकर खड़ा हो गया, फूलोंके सिंहासनपर बैठाकर हाथ जोड़

तज्ज्योतिःश्रीघनश्यामेलीनंजातंविदेहाराट् ॥ सद्यस्तदनुगाःसर्वेवासःकोशान्विसृज्यवै ॥४१॥ दुद्रुवुःसर्वतोराजञ्शरत्कालेयथाघनाः॥गृही-त्वात्मप्रियेवस्त्रेस्थितयोरामकृष्णयोः ॥ ४२ ॥ जगृहुर्गोपबालास्तेराजमार्गजनाअपि ॥ तद्धारणाविदोबालावासांसिरुचिराणिच॥अस्तव्यस्तं परिदधुःश्रीकृष्णस्यप्रपश्यतः ॥४३॥ वीक्ष्यतौबालकःकश्चिच्छ्रीकृष्णबलदेवयोः ॥ विचित्रवर्णैर्वासोभिर्दिव्यंवेषंचकारह ॥४४॥ तथान्येषांशिशूनांचयथायोग्यंविधायसः ॥ राजन्परमयाभक्त्यापुनःकृष्णंददर्शह ॥४५॥ प्रसन्नोभगवांस्तस्मैप्रादात्सारूप्यमात्मनः ॥ बलंश्रियंतथैश्वर्यं बलदेवोददौपुनः ॥ ४६ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमथुराखण्डेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीकृष्णमथुराप्रवेशोनामपंचमोध्यायः ॥५ ॥श्रीनारद उवाच ॥ अथगोपालकैःसार्द्धंश्रीकृष्णोनन्दनन्दनः ॥ गृहंजगामसबलःसुदाम्नोदाममालिनः ॥१॥ दृष्ट्वातौचसमुत्थायनमस्कृत्यकृतांजलिः ॥ पुष्पसिंहासनेस्थाप्यप्राहगद्गदयागिरा ॥ २ ॥ सुदामोवाच ॥ धन्यंकुलंमेभवनंचजन्मत्वय्यागतेदेवकुलानिसप्त॥ मातुःपितुःसप्ततथा प्रियायावैकुंठलोकंगतवंतिमन्ये ॥३॥ भूभारमाहर्तुमलंयदोःकुलेजातौयुवांपूर्णतमौपरेश्वरौ ॥ नमोयुवाभ्यांममदीनदीनंगृहंगताभ्यांजगदीश्वरौ परौ ॥ ४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वापुष्परचनालंकारंमधुपध्वनीन् ॥ निवेद्यमकरंदांश्चमालाकारोननामह ॥५॥ धृत्वातत्पुष्पनिचयं सबलोभगवान्हरिः ॥ दत्त्वागोपेभ्यआरात्तंप्राहप्रहसिताननः ॥ ६ ॥

प्रणाम करके गद्गद वाणीसे बोला ॥ २ ॥ आज मेरा कुल, जन्म धन्य हुआ, आज मेरा भवन पवित्र हुआ, आपके आनेसे मेरी सात पीढी पवित्र हुई, मेरे पिताके कुलकी माताके कुलकी, स्त्रीके कुलकी सात पीढी वैकुण्ठको गई ॥ ३ ॥ पृथ्वीका भार उतारनेके लिये पूर्ण पुरुष परमेश्वर तुम दोनों यदुकुलमें प्रगट हुये हो, सो जगत्के प्रभु मेरे घर आये, मैं तो दीनसे दीन हूँ, नीच हूँ, मेरा दोनों पुरुषोंको नमस्कार है ॥४॥ नारदजी कहते हैं, कि ऐसे कहकर फूलोंकी माला गुंजाहार, फूलोंके गहने पहनाये, जिनपर सुगंधिके मारे भ्रमर गुंजार कर रहे हैं, अनेक फूलोंके इत्र निवेदन करके प्रणाम किया ॥५॥ उसके फूलोंके गहने, माला हार इनको बलदेवजीसहित भगवान् हरि पहिन कर और गोपोंको देकर हँसते हँसते मालीसे बोले ॥ ६ ॥

मेरे चरण कमलोंमें तेरी उत्कट भक्ति सदा होगी और मेरे भक्तोंका साथ होगा और इसी लोकमें तुमको मेरी सारूप्य मुक्ति प्राप्त होगी ॥ ७ ॥ और बलदेवजीने इस मालीको अन्वयवर्द्धिनी लक्ष्मी दी, फिर वहाँसे दोनों भाई उठकर दूसरी गलीमें चले गये ॥८॥ वहाँ एक कमल नयनी तरुण स्त्री चन्दन लिये कुब्जा मार्गमें देखी आती हुई इससे लक्ष्मीके पति श्रीकृष्ण पूछने लगे ॥ ९ ॥ तुम कौन हो, किसकी पुत्री हो, किसकी प्रिया हो, यह चन्दन किसके लिये ले जारही हो, हमको इस चन्दनको दो, तो तुम्हारा कल्याण हो जायगा ॥१०॥ तब वह कुब्जा बोली, हे सुन्दर वर ! हे महामते ! मैं दासी हूँ, मेरा नाम कुब्जा है, यह मेरा घिसा चन्दन कंसको अच्छा लगता है ॥११॥ अब तक तो मैं कंसकी दासी थी, अब हाथीकी सूंडके समान तुम्हारे सुडौल भुजदण्ड देखकर मैं आपकी दासी हूँ ॥१२॥ आप दोनों विना और कौन चन्दन लगाने योग्य है ? आपके समान रूप त्रिलोकीमें

गरीयसीमत्पदाब्जेभक्तिर्भूयात्सदातव ॥ मद्भक्तानांतुसंगःस्यान्मत्स्वरूपमिहैवहि ॥७॥ बलदेवोददौतस्मैश्रियंचान्वयवर्द्धिनीम् ॥ उत्थायतौ ततोराजनन्यांवीथींप्रजग्मतुः ॥८॥ यांतींस्त्रियंपद्मनेत्रांपाटीरालेपभाजनम् ॥ बिभ्रतींयुवतींकुब्जांपथिपप्रच्छमाधवः ॥ ९ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ कात्वंकस्यप्रियासुभ्रूकस्यार्थंचंदनंत्विदम् ॥ देह्यावयोर्येनतवाचिरंश्रेयोभविष्यति ॥ १० ॥ सैरंध्र्युवाच ॥ दास्यस्मिसुन्दर वरकुब्जानाममहामते ॥ मद्धस्तोत्थंचपाटीरंजातंभोजपतेःप्रियम् ॥ ११ ॥ अद्यापिकंसदास्यस्मिसांप्रतंतवचाग्रतः ॥ हस्तिशुंडादण्डसमेभुज दण्डेस्तिमेमनः ॥ १२ ॥ युवांविनाकोन्यतमोऽनुलेपंकर्तुमर्हति ॥ युवयोस्तुसमंरूपंत्रैलोक्येनहिविद्यते ॥ १३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ उभाभ्यांसाददौसांद्रंहर्षिताह्यनुलेपनम् ॥ अथतावंगरागेणरामकृष्णौविरेजतुः ॥ १४ ॥ जगृहुश्चन्दनंदिव्यंकिंचित्किंचिद्व्रजार्भकाः ॥ त्रिवक्रामथतांकृष्णोऋज्वींकर्तुमनोदधे॥१५॥आक्रम्यपद्भ्यांप्रपदेंगुलिद्वयंप्रोत्तानहस्तेनविभुःपरेश्वरः॥प्रगृह्यनृणांचुबुकेप्रपश्यतांवक्रांतनुंतामुदनीनमद्धरिः ॥१६॥ तदैवसायष्टिसमानविग्रहादीप्त्याचरंभांक्षिपतीवरूपिणी॥ भूत्वागृहीत्वाहहरिंतुवाससिशुचिस्मिताजातमनोजविह्वला ॥१७॥ ॥ सैरन्ध्र्युवाच ॥ गच्छाशुहेसुन्दरवर्यमद्गृहंत्यक्तुंभवंतंकिलनोत्सहेहम् ॥ प्रसीदसर्वज्ञरसज्ञमानद त्वयाभृशंप्रोन्मथितंमनोमम ॥ १८ ॥

किसीका नहीं है, आपहीमें मेरा मन लगगया है ॥ १३ ॥ ऐसे प्रसन्न होकर उसने दोनोंको सुन्दर चन्दन दिया, तब उस चन्दनसे श्रीकृष्ण बलदेवकी बडी शोभा हुई ॥१४॥ तब थोड़ा २ वह दिव्य चन्दन गोपोंने भी लगाया, तब भगवान्ने तीन जगहसे टेढी उस कुब्जाको सीधी करनेका विचार किया ॥१५॥ विभु परमेश्वर हरिने अपने पांवसे उसके दोनों पांवोंके अग्रभागको दाबकर एक हाथ कमरमें देकर दाहिने हाथकी दोनों अंगुलियोंसे उसकी ठोड़ी पकडकर एक झटका ऊपरको दिया ॥१६॥ उसी समय वह सीधी छड़ीकी तरह समान शरीरवाली सुन्दर रूपा हो गई,अपने लावण्यसे मानो साक्षात् रम्भाकोभी मात करती है, तब श्रीकृष्णको पीताम्बर पकडकर मुस्कान करती यह बोली,काममें विह्वल होगई ॥१७॥ हे सुन्दर वर्य ! मेरे घर चलिये, मैं आपको छोड़ूँगी नहीं, हे सर्वज्ञ ! हे रसज्ञ ! हे मानद ! आपने मेरा मन मथ डाला काम चढ़ा दिया अत्यन्त मन वशमें कर लिया ॥१८॥

नारदजी कहते हैं कि, उसी समय सब गोप ताली बजा बजा कर हँसी करने लगे कि यह क्या हुआ, बलदेवको देखते देखते कुब्जाने याचना की, तब तो भगवान् बोले ॥१९॥ अहो ! यह मधुपुरी अति धन्य है, इसमें ऐसे ऐसे भले मनुष्य बसते हैं, जो आदमी मार्ग भी न जाने, उसको भी अपने घरको ले जाते हैं, हे प्रिये ! तुम्हारे घर तो निश्चयही आयेंगे किन्तु मथुरापुरीको देखकर आयेंगे॥२०॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसी मीठी वाणी कहकर उसके हाथमेंसे अपना पीताम्बर खैंचकर बाजारमें चलते चलते श्रीभगवान् बड़े बड़े साहूकार जो धनी वैश्य थे, उनको देखने लगे ॥२१॥ तब मथुराके उन साहूकार वैश्योंने गन्ध, पुष्प, फल, ताम्बूल, दूध इनसे हरिकी पूजाकर आसन पर बैठाकर उनको नमस्कार किया, क्योंकि वे उत्तम बुद्धि वाले थे ॥२२॥ फिर वैश्य बोले–हे महाराज! जब आपका राज्य हो, तो हमें स्मरण रखियेगा, हे देव ! हम आपकी प्रजा हैं, किन्तु राजा होनेपर कौन स्मरण रखता है ॥२३॥ तब मन्द मुसकान करते भगवान् उन वैश्योंसे धनुपका स्थान पूछने लगे, सो धनुपको तोड़नेके डरसे नहीं बताते थे ॥२४॥ उन श्रीकृष्णके रूप, गुण, माधुर्यसे

॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदैवगोपाजहसुःपरस्परमहोकिमेतत्करतालनिःस्वनैः ॥ प्रहस्यरामस्यहरिःप्रपश्यतस्तद्याच्यमानोह्यवदत्परंवचः ॥ ॥ १९ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अहोतिधन्यामथुरापुरीयंवसंतियत्रैवजनास्तुसौम्याः ॥ येऽज्ञातपंथान्स्वगृहंनयंतिदृष्ट्वापुरींवामतवागमिष्ये ॥२०॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवमुक्त्वोत्तरीयांतंसमाकृष्यगिरार्द्रया ॥ राजमार्गंव्रजन्कृष्णोवैश्यानाढ्यान्ददर्शह ॥ २१ ॥ पुष्पताम्बूलगंधाढ्यैःफलैर्दुग्धफलैर्हरिम् ॥ सम्पूज्यस्वासनेस्थाप्यनेमुरग्र्यधियोविशः ॥ २२ ॥ वैश्याऊचुः ॥ भवेच्चेदत्रतेराज्यंतावकान्स्मरतात्सदा ॥ वयंतवप्रजादेवराज्येप्राप्तेनकःस्मरेत् ॥ २३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ पप्रच्छसुस्मितोवैश्यान्कोदंडस्थानमच्युतः ॥ नतेतमूचुःसुधियःकोदंडेभंगशंकया ॥२४॥ तद्रूपगुणमाधुर्य्यमोहितायेचमाथुराः ॥ कुमारपश्यैहिधनुरित्यूचुस्तद्दिदृक्षवः ॥२५॥ तैर्दृष्टेनपथाकृष्णःप्रविष्टोधनुषःस्थलम्॥ मैत्रींकुर्वन्वयस्यैश्चमाथुरैःपुरबालकैः ॥२६॥ यथैंद्रंहेमचित्राढ्यंकोदंडंसप्ततालकम् ॥ पुरुषैःपंचसाहस्रैर्नेतुंयोग्यंबृहद्भरम् ॥२७॥ अष्टधातुमयंक्लिष्टंलक्षभारसमंपरम् ॥ चतुर्दश्यांपौरजनैरर्चितंयज्ञमंडले ॥२८॥ भार्गवेणपुरादत्तंयदुराजायमाधवः ॥ ददर्शकुण्डलीभूतंसाक्षाच्छेषमिवस्थितम् ॥२९॥ वार्य्यमाणोनृभिःकृष्णःप्रसह्यधनुराददे ॥ पश्यतांतत्रपौराणांसज्यंकृत्वाथलीलया ॥ ३० ॥

मोहित हुये जो मथुरावासी थे, वे बोले कि, हे कुमार ! देखो हम आपको धनुप दिखा आवें, ऐसा कहकर ले गये॥२५॥ उनके बताये मार्गसे भगवान् धनुपके स्थानमें पहुँच गये, अपनी बराबरकी अवस्थावाले मथुराके बालकोंसे मित्रता करते जा पहुँचे॥२६॥ इन्द्रकासा धनुप सुनहरी बेल बूटा चित्र जिसमें, सात ताल वृक्षोंके बराबर लम्बा, पाँच हजार मनुष्योंसे उठाने योग्य भारवाला ॥ २७ ॥ अष्टधातुका एक लाख भारका और चतुर्दशीको नगर निवासियोंसे पूजा हुआ यज्ञ मंडपमें धरा था ॥२८॥ परशुरामने यदुराजको दिया था, उसको श्रीकृष्णने देखा, मानो कुण्डली मारे शेष नागही बैठे हों ॥२९॥ मनुष्य तो मना करतेही रहे, किन्तु श्रीकृष्णने जाते जाते बलपूर्वक धनुप उठा लिया और सब पुरवासियोंके देखते-देखते सहजमेंही खेल करके चढा लिया ॥ ३० ॥

फिर दोनों भुजाओंसे कानतक खींचकर बीचमेंसे मोड़ डाला, जैसे ईखके दण्डको हाथी सरलतासे तोड़ डालता है॥३१॥जब धनुष टूटा,तब उसकी टंकार ऐसी हुई मानो कडकडा कर बिजली गिरी, सात लोक और सातों बिलों सहित सब ब्रह्माण्ड गूंज उठे ॥३२॥ दिग्गज विचलित हो गये, तारे टूटने लगे, पृथ्वी मण्डल कांपने लगा, उसी समय पृथ्वीपर सब जन मण्डली बहरीसी हो गई ॥३३॥ कंसका हृदय दो घड़ी तक कांपता रहा, उसके रक्षक आततायी लडनेको खडे हो गये ॥३४॥ श्रीकृष्णको पकडनेकी इच्छा वाले पकड़ लेओ, बांध लेओ, ऐसा कहने लगे फिर शस्त्र ले लेकर वे आये, उन्होंने कृष्ण और बलदेव दोनोंको देखा ॥३५॥ धनुषके दोनों टुकड़ोंको लेकर दुर्मद जो वीर उनको अत्यन्त मारने लगे तब धनुषके टुकड़ोंकी मारसे कितनेही तो मूर्च्छा खाकर गिर पडे ॥३६॥ टूटे हैं कन्धा, भुजा, नख और पांव जिनके ऐसे पांच हजार वीर भूमण्डल पर मरकर गिर पडे ॥३७॥ जो मथुरावासी उसको देखने वाले थे, सब भाग गये, पुरीमें बड़ा कोलाहल हुआ, मनुष्योंको बड़ा भय हुआ ॥३८॥ भोजराज कंसका छत्र अकस्मात् गिर पड़ा, मथुरापुरीमें कोलाहल

आकृष्यकर्णपर्यंतंदोर्दंडाभ्यांहरिर्धनुः ॥ बभंजमध्यतोराजन्निक्षुदंडंगजोयथा ॥३१॥ भज्यमानस्यधनुषष्टंकारोभूत्तडित्स्वनः॥ननादतेनब्रह्मां-डंसप्तलोकैर्बिलैःसह॥३२॥ विचेलुर्दिग्गजास्ताराएजद्भूखण्डमंडलम्॥ तदैवबधिरीभूतापृथिव्यांजनमंडली॥३३॥ कंसस्यहृदयेशङ्कोविददार घटीद्वयम् ॥ तद्रक्षिणःप्रकुपिताउत्थिताआततायिनः ॥३४॥ गृहीतुकामाःश्रीकृष्णंप्रत्यूचुर्बध्यतामिति॥ अथतानागतान्वीक्ष्यसशस्त्रान्बलके-शवौ ॥३५॥ कोदंडशकलेनीत्वाजघ्नतुर्दुर्मदान्भृशम्॥शकलातिप्रहारेणकेचिद्वीरास्तुमूर्च्छिताः॥३६॥ भिन्नपादाभिन्ननखाःकेचिच्छिन्नांसबा-हवः ॥ वीराःपंचसहस्राणिनिपेतुर्भूमिमण्डले ॥३७॥ विचेलुर्माथुराःसर्वेदुद्रुवुस्तद्दिदृक्षवः ॥पुर्यांकोलाहलेजातेनृणांजातंमहद्भयम् ॥ भोजराज सभाछत्रमकस्मान्निपपातह ॥३८॥ गोपालैसबलःकृष्णोधावश्चापस्थलान्नृप॥ आययौनंदनिकटंसन्ध्याकालेऽतिभीतवत्॥३९॥ निरीक्ष्यगो-विंदसुरूपमद्भुतंविमोहितावैमथुरापुरांगनाः ॥ विस्रस्तवासःकबराःस्मराधयःपरस्परंप्राहुरिदंसखीजनम् ॥ ४० ॥ पुरंध्र्यऊचुः ॥ कंदर्पकोटि द्युतिमाहरंस्त्वरंस्वैरंचरन्वैमथुरापुरेहरिः ॥ निरीक्ष्यतेकाभिरतीवसाक्षादंगेषुसर्वेष्वपिनःसमादिशत् ॥ ४१ ॥ कुशलाऊचुः ॥ क्रूराःस्त्रियःकिं नहिसंतिपत्तनेनिरीक्ष्यतेयाभिरनंगमोहनः ॥ अंगेषुसर्वेष्वपिसर्वसुन्दरोनास्माभिरानन्दमयोनिरीक्ष्यते ॥ ४२ ॥

मच गया और कई मनुष्य भयभीत होकर गिर पड़े और गोपोंके सहित बलदेवजीको साथ लेकर श्रीकृष्ण धनुषके स्थानसे सन्ध्या समय अति भयभीतसे भागकर नन्दजीके पास आये ॥३९॥ उस समय गोविन्दका वह अद्भुत स्वरूप देखकर मथुरावासिनी सब स्त्रियाँ मोहित होगईं, शिथिल हुये हैं वस्त्र, भूषण, केश बन्ध, जिनके, कामदेवकी जिनको पीडा उत्पन्न हुई, ऐसी वे आपसमें बोलीं ॥४०॥ हे सखियो ! देखो करोड़ काम देवकी कान्तिको हरने वाला श्रीकृष्ण इच्छा पूर्वक मथुरापुरीमें विचरता जिन स्त्रियोंने देखा उन स्त्रियोंके और हमारे सबके अंगोंमें कामरूप होकर प्रवेश होगया॥४१॥तब जो बड़ी कुशल स्त्रियाँ थी वे बोलीं कि, री बहिनो ! क्रूर स्त्रियाँ क्या नगरमें नहीं हैं, किन्तु इन्होंने भी कामको मोह करनेवाला श्रीकृष्ण देख लिया, वेभी मोहित हो गई क्योंकि कोई स्त्री पुरुष एकही एक अंगसे नेत्र, नासिका, मुख, कपोल, हाथ, पांव, बोल चाल इनमेंसे सुन्दर होवे, तो जब एकही अंगसे सब

मोहित हो जाते हैं, फिर कहो जिसके सभी अंग सुन्दर हैं, सो कैसे देखनेमें आये और उस सर्वांग सुन्दर को देखकर कैसे चित्त स्थिर रहे क्योंकि जिसके मुखको, नेत्रको या नाक को, या कपोलको अथवा होठको देखे, उसीमें चित्त गड़ जाता है ॥४२॥ जैसे कोई चोर चोरी करने गया, सब कुछ छोड़ रुपया बांधे, जब मोहरें देखी तो रुपया छोड़कर मोहरें बांधी, फिर मोती देखे, तब मोहरें छोड़ मोती बांधे,फिर देखे हीरा पन्ना, तब हीरा पन्ना बांधे,मोती छोड़ दिये, जब देखी मणि तब हीरा पन्ना भी छोड़ दिये, ऐसे ही हम इनके कौन २ से अंगकी बड़ाई करें, जिस २ अंगको देखती हैं, उसी-२ में मन अटक जाता है, त्रिलोकीमें और कोई इस कृष्णके विना सुन्दर है ही नहीं, जिसे कोई देखे ॥ ४३ ॥ अंग अंगमें सुन्दर नन्दकुमार है, जिस अंगको देखे, वही सुन्दरताका समुद्र है, उसमें नेत्र डूब जाते हैं, उसमेंसे निकलते नहीं हैं, तो कैसे दूसरे अंगको देखें ॥४४॥ जिस मथुरा निवासिनीने दिनमें व्रजराज नंदन देखा उसने स्वप्नमें भी वही देखा फिर हे मैथिल ! जिन गोपियोंने जिसके संग रासमंडल किया वे उसको कैसे न स्मरण करेंगी ॥ ४५ ॥ इति

कस्यैकदेशेमधुरत्वमीक्ष्यतेतत्रास्तिनेत्रंप्रपतत्पतंगवत् ॥ यस्त्वेवसर्वांगमनोहरःसखिसएवनेत्रेणकथंसमीक्ष्यते ॥४३॥ अंगेह्यंगेसुन्दरेनंदसूनोः प्राप्तंप्राप्तंयत्रयत्रापिनेत्रम् ॥ तस्मात्तस्मान्नामवल्लब्धसौख्यंलावण्याब्धौमग्नवल्लग्नचित्तम् ॥४४॥ दृष्ट्वादिनेयंव्रजराजनन्दनंस्वप्नेपितद्वद्ददृशुःपुरस्त्रियः ॥ गोप्यःकथंतंमधुरंनसस्मरुर्याभिःकृतंमैथिलरासमण्डलम् ॥ ४५ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेमथुरादर्शनंनामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ रजकस्यशिरश्छेदंकंसोवैरक्षिणांवधम् ॥ धनुर्भंगंततःश्रुत्वापरंत्रासमुपागमत् ॥ १ ॥ तत्क्षणाद्दुर्निमित्तानिवामांगस्फुरणानिच ॥ प्रपश्यन्नंगभंगानिननिद्रांप्रापदैत्यराट् ॥२॥ स्वप्नेप्रेतैःसमायुक्तस्तैलाभ्यक्तोदिगंबरः ॥ जपास्रङ्महिषारूढोदक्षिणाशांजगामसः ॥३॥ प्रातःकालेसमुत्थायकार्यभारकराञ्जनान् ॥ आहूयकारयामाससमल्लक्रीडामहोत्सवम् ॥४॥ विशालाजिरसंयुक्तेहेमस्तंभसमन्विते ॥ सभामण्डपदेशाग्रेरंगभूमिर्बभूवह ॥ ५ ॥ वितानैर्हैमसंकाशैर्मुक्तादामविलंबिभिः ॥ सोपानैर्हैमसंचैश्चरंगभूमिर्बभौनृप ॥ ६ ॥ राजमंचेरत्नमयेमकरन्दाचितेशुभे ॥ शक्रसिंहासनंतत्रसोपबर्हणमंडलम् ॥ ७ ॥

श्रीमद्गर्ग संहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां मथुरादर्शनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥६॥ नारदजी कहते हैं कि, धोबीका शिर कटा सुनकर और धनुषका टूटना और रक्षक पांच हजार वीरोंका वध सुनकर कंसको बडा भय हुआ ॥१॥ उसी समयसे कंस बुरे निमित्तके अपशकुन देखने लगा, बायें, अंग फड़कने लगे, रातमें निद्रा नहीं आई और अपने अंग भंग देखे ॥२॥ स्वप्नमें तेल लगाय, दुपहरियाके फूलोंकी माला पहिन नंग धडंग भैंसापर चढ खोपडीमें खानेको विष लेकर प्रेतोंके संग दक्षिण दिशाको जा रहा है, ऐसे स्वप्नमें देखा ॥३॥ प्रातःकाल कंस उठकर अपने काम करनेवालोंको बुलाकर मल्लक्रीडाका उत्सव कराने लगा ॥ ४ ॥ बड़ा जिसमें चौक सुवर्णके जिसमें खम्भे ऐसे सभाके मण्डपके सामने रंगभूमि करवाई ॥५॥ सुनहरी चँदोवा जिनमें मोतियोंकी झालर लगीं, सोपानसहित सुनहरी मंचोंसे उस रंगभूमिकी बड़ी शोभा हुई ॥६॥ राजाका रत्नमय मंच इत्रसे छिडका वह बडा शुभ उसपर इन्द्रासन है, जिसपर चँदोवा झालर लग रही है तकिया गेंदुआ ॥ ७ ॥

चन्द्र मण्डलसा दिव्य छत्र हंससे सफेद चमर पंखा जिनकी हीरोंकी दंडी ॥ ८ ॥ दश हाथ ऊंचा विश्वकर्माका बनाया, उसपर कंसकी कैसी शोभा हुई, जैसे पर्वतपर सिंह बैठा है ॥९॥ वहाँ गवैया गाने लगे, वेश्याएं नाचने लगीं, मृदंग, ढोल, भेरी, नगाड़े, मजीरा आदि बाजे बजने लगे ॥ १० ॥ मण्डलेश राजा पुरवासी और देशवासी ये सब मंचपर बैठे देश २ के मनुष्य उस मल्लयुद्धको देखनेके लिये बैठे हैं ॥११॥ वहाँ चाणूर, मुष्टिक, कूट, शल, तोशल, ये सब दण्ड करने लगे, मुद्गर चलाने लगे और आपसमें कुश्ती करने लगे ॥१२॥ नन्द राजादिक समस्त गोप बली कंसको भेंट देकर नीची गर्दन किये एक मंचपर जाकर बैठे ॥ १३ ॥ बाणासुर, नरकासुर, जरासंध, इनके यहाँसे और भी बड़े बड़े शंबरासुर आदि राजाओंके यहाँसे कंस राजाको भेंट आई ॥१४॥ उसके बाद मायासे बालरूपधारी कृष्ण और बलदेव दोनों भाई रंगभूमिमें ॥ १५ ॥ मल्ललीला देखनेके

आतपत्रेणदिव्येनचंद्रमंडलचारुणा ॥ हंसाभैर्व्यजनैर्युक्तैश्चामरैर्वज्रमुष्टिभिः ॥८॥ दशहस्तोच्छ्रितंशश्वद्विश्वकर्मविनिर्मितम् ॥ तदारुह्यबभौ कंसोऽद्रिशृंगंमृगराडिव ॥९॥ गायकाःप्रजगुस्तत्रननृतुर्वारयोषितः ॥ नेदुर्मृदंगपटहतालभेर्य्यानकादयः ॥ १० ॥ राजानोमण्डलेशाश्चपौरा जानपदानृप ॥ ददृशुर्मल्लयुद्धंतेमंचेमंचेसमास्थिताः ॥ ११ ॥ चाणूरोमुष्टिकःकूटःशलस्तोशलएवच ॥ व्यायाममुद्गरैर्युक्ताशुयुधुस्तेपरस्परम् ॥१२॥ नन्दराजादयोगोपाःकंसाहूतानताननाः ॥ दत्त्वाबलिंपरंतस्माएकस्मिन्मंचमाश्रिताः ॥ १३ ॥ बाणासुरजरासंधनरकाणांपुरान्नृप ॥ अन्येषांशंबरादीनांसकाशाद्भुभुजांतथा ॥१४॥ बलयश्चाययूराजन्यदुराजायतत्रवै ॥ ॥ अथतौरामकृष्णौद्वौमायाबालकविग्रहौ ॥१५॥ मल्ल लीलादर्शनार्थंययतूरंगमण्डलम् ॥ गोमूत्रचयसिंदूरकस्तूरीपत्रभृन्मुखम् ॥ स्रवन्मदंमहामत्तंरत्नकुंडलमण्डितम् ॥१६॥ गजंकुवलयापीडंरंग द्वारमवस्थितम् ॥ वीक्ष्यकृष्णोमहामात्रंप्राहगंभीरयागिरा ॥१७॥ आकर्षयांगनागेन्द्रंमार्गंकुरुममेच्छया ॥ नचेत्त्वांपातयिष्यामिसनागंभूमि मण्डले ॥१८॥ महामात्रस्तदाक्रुद्धोनोदयामासतंगजम् ॥ चीत्कारमुत्कटंदिक्षुकुर्वंतंनन्दसूनवे ॥१९॥ गृहीत्वातंहरिंसद्यःशुंडादंडेननागराट् ॥ उज्जहारततस्तस्मान्निर्गतोभारभृद्धरिः ॥ २० ॥

लिये आये, सो दरवाजेपर देखा तो कुवलयापीड हाथी खड़ा है, कैसा है, गोमूत्र, पेवरी, सिन्दूरसे पत्रभंगी रचना जिसके माथेपर हो रही है, जिसके मद चू रहा है, महामत्त है, रत्नों के कुण्डलोंसे शोभित है ॥१६॥ कुवलयापीड जिसका नाम है, वह हाथी रंगके द्वारपर खड़ा है, उसको देख श्रीकृष्ण मेघकीसी गम्भीर वाणीसे महावतको बोले ॥ १७ ॥ हे महावत ! इस नागेन्द्रको खींच लो, मेरी इच्छानुसार मार्ग कर दो नहीं तो तुमको इस हाथी सहित धरतीमें दे मारूँगा ॥ १८ ॥ यह सुन महावत बड़े क्रोधमें भर गया और ऊपर हाथीको प्रेरित किया, दिशाओंमें चीत्कार करता उत्कट कुवलयापीड श्रीकृष्णके ऊपर आया ॥१९॥ उसने जल्दीही सूंडसे श्रीकृष्णको पकड़कर उठा लिया, तभी उसकी सूड़मेंसे हरि शीघ्रतासे निकल गये ॥ २० ॥

उसके पांवोंमें घुस गये, इधर उधर घुमने लगे, जैसे वृन्दावनकी निकुंजमें घुमते हैं ॥२१॥ फिर हाथीने सूंडसे भगवान्‌के हाथ पकड़ लिये, तब श्रीकृष्णने उसकी सूंडको हाथोंसे मरोड़कर पीछेको चले गये ॥२२॥ तब हाथी टेढ़ा होकर श्रीकृष्णको पकड़ने लगा, तब उसके घूंसा मारकर आप आगेको भगे ॥२३॥ तब वह हाथी श्रीकृष्णके पीछे भगा, तब हे विदेहराट ! मथुरामें बड़ा कोलाहल मचा, तब भगवान् हाथीके दूसरी ओर हो गये ॥२४॥ तब महाबली बलदेव हाथीकी पूंछ पकड़कर पीछेको खींचने लगे, दोनों हाथोंसे ऐसे खींचने लगे जैसे सर्पको गरुड़ खींचता है ॥२५॥ तब हंसकर भगवान् श्रीकृष्ण उसकी सूंड पकड़कर खींचने लगे, जैसे कूप (कुआँ) मेंसे रस्सीको खींचते हैं ॥२६॥ जब दोनों ओरसे हाथी खिंचने लगा तब घबराकर विह्वल होगया, तब बड़े बलसे सात महावत उस हाथी पर चढ़े ॥ २७ ॥ फिर और महावतोंने तीनसौ हाथी कुवलयापीडकी सहायताके लिये श्रीकृष्णके ऊपर प्रेरित किये ॥२८॥ अंकुशके स्पर्श करानेसे क्रोधित हुआ मत्त वह हाथी श्रीकृष्णके ऊपर फिर आया, तब श्रीकृष्ण भगवान्‌ने बलदेवके देखते देखते ॥२९॥ उस

तत्पादेषुविलीनोभूत्प्रभ्रमन्सन्नितस्ततः ॥ वृन्दावननिकुंजेषुवृक्षेषुचयथाहरिः ॥२१॥ करेजग्राहतन्नागःशुंडादण्डेनचांघ्रिषु॥निष्पीड्यशुंडांहस्ताभ्यांहरिःपश्चाद्विनिर्गतः॥२२॥ तिर्यग्भूतश्चतंनागोगृहीतुमुपचक्रमे ॥ मुष्टिनातंघातयित्वापुरोदुद्रावमाधवः॥२३॥तमन्वधावन्नागेन्द्रोमथुरायांविदेहराट् ॥ कोलाहलेतदाजातेहरिस्तस्मादितोययौ ॥२४॥ पुच्छेगृहीत्वातन्नागंबलदेवोमहाबलः॥चकर्षभुजदंडाभ्यांफणिनंगरुडोयथा॥ ॥२५॥ प्रहसन्भगवान्कृष्णोगृहीत्वातंकरेबलात् ॥ चकर्षभुजदंडाभ्यांकूपरज्जुंयथानरः॥२६॥ द्वयोराकर्षणान्नागोविह्वलोभून्नृपेश्वर॥ महामात्रास्तदासप्तरुरुहुस्तंगजंबलात् ॥२७॥ नीतागजास्तथाचान्यैःकृष्णंहंतुंशतत्रयम् ॥ अंकुशास्फालनात्क्रुद्धंमत्तंमंपुनरागतम् ॥२८॥श्रीकृष्णोभंगवान्साक्षाद्बलदेवस्यपश्यतः ॥२९॥ शुंडादंडेसंगृहीत्वाभ्रामयित्वात्वितस्ततः॥पातयामासभूपृष्ठेकमंडलुमिवार्भकः॥३०॥ दूरेप्रपतितास्तस्य महामात्राइतस्ततः ॥ सतांप्रपश्यतांनागःसद्योवैनिधनंगतः ॥३१॥ तज्ज्योतिःश्रीघनश्यामेलीनंजातंविदेहराट् ॥ दंतावुत्पाट्यचतस्यापिरामकृष्णौमहाबलौ ॥ निजघ्नतुर्महामात्रान्मृगान्केशरिणौयथा ॥३२॥ द्विपेहतेपियेचान्येमहात्राइतस्ततः ॥ विदुद्रुवुर्यथामेघावर्षाकालेगतेसति ॥ ॥३३॥ एवंहत्वाद्विपंगोपैःशेषैस्तैःप्रेक्षणोत्सुकैः ॥ जयारावैरामकृष्णौश्रमवारिमदांकितौ ॥ ३४ ॥

हाथीकी सूंड पकड़कर घुमाकर धरतीमें दे मारा, जैसे बालक कमण्डलुको मारता है ॥ ३० ॥ और सातों महावत दूर जा पड़े, इस प्रकार संतोंके देखते-देखते वह कुवलयापीड मर कर गिर पड़ा ॥ ३१ ॥ उसके दोनों दाँत उखाड करके कृष्ण और बलराम दोनों भाइयोंने उन्हीं दाँतोंसे सब महावत मार डाले, जैसे मृगोंको सिंह मारता है, उस हाथीकी देहमें से जो ज्योति निकली वह श्रीकृष्णमें लीन हो गई ॥३२॥ जब हाथी मर गया तब जितने महावत थे वे सब डरकर इधर उधर भाग गये, शरद् ऋतुके आ जानेपर मेघ जैसे भग जाते हैं ॥ ३३ ॥ ऐसे गोपोंके साथ हाथीको मारकर खेल देखनेवालोंके जयजय शब्द करते, परिश्रमके पसीने, कुछ मदके कुछ हाथीको मारनेसे छोटी-छोटी रुधिरकी बूंदोंसे शोभित मुखकमल जिनका ऐसे कृष्ण बलराम हैं ॥ ३४ ॥

परिश्रमसे लाल जिनके मुख हाथीके दाँतोंको कंधापर धरे इस शोभासे रंगभूमिमें पहुँचे जैसे अग्निके साथ आँधी ॥ ३५ ॥ इस प्रकार उस रंगभूमिमें जब दोनों भाई गये तब कृष्णके अंगको देखकर मल्लोंने तो मल्ल जाने, नरोंने नरेन्द्र जाने, स्त्रियोंने कामदेव जाने, गोपोंने व्रजेश जाने, पिताने पुत्र जाने, असंतोंने यमराज जाने, कंसने मृत्यु जाने, देवताओंने विराट् पुरुष जाने ॥३६॥ योगियोंने परम तत्वपुरुष जाने, इस प्रकार अपनी २ भावनासे पृथक् २ रूप परिपूर्ण देवकी देखने लगे ॥३७॥ यद्यपि कंस बडा धीरजधारी था, तो भी कुवलयापीडको मरा जानकर और दोनोंको महाबली जानकर चित्तमें बहुत डरा, मंचोंपर बैठे जो नगरवासी थे वे बडे प्रसन्न हुये, सुखी हुये, जैसे चकोर चन्द्रमाको देखे, वैसे देखने लगे॥३८॥ अब नगरवासी कानकानमें यह बात करने लगे कि, ये दोनों तो परमेश्वरही वसुदेवके हुये हैं ॥३९॥ अहो ! व्रजमण्डल बड़ा मनोहर है, वहीं साक्षात् भगवान् विचरते हैं, जिनके

परिश्रमारुणमुखौरंगंविविशतुस्त्वरम् ॥ दंतपाणीमहावेगौयथाशामनिलानलौ ॥ ३५ ॥ मल्लाश्चमल्लंचनरानरेंद्रंस्त्रियःस्मरंगोपगणाव्रजेशम् ॥ पितासुतंदंडधरंह्यसंतोमृत्युंचकंसोविबुधाविराजम् ॥३६॥ तत्त्वंपरंयोगिवराश्चभोगादेवंतदारंगगतंबलेन॥ पृथक्पृथग्भावनयाह्यपश्यन्सर्वेजनास्तंपरिपूर्णदेवम् ॥३७॥ हतंद्विपंवीक्ष्यचतौमहाबलौकंसोमनस्वीभयमापचेतसि॥ मंचस्थिताहर्षितमानसाश्चयौचंद्रंचकोराइवतेसुखंययुः॥३८॥ कर्णेचकर्णंविनिधायनागरामहोत्सुकास्तेह्यवदन्परस्परम् ॥ एतौहिसाक्षात्परमेश्वरौपरौबभूवतुर्वैवसुदेवनंदनौ ॥३९॥ अहोतिरम्यंव्रजमंडलंपरंयत्रैषसाक्षाद्विचचारमाधवः ॥ कृत्वाहियद्दर्शनमद्यदुर्लभंवयंकृतार्थास्तुभवेमसर्वतः ॥४०॥ श्रीनारदउवाच॥ वदत्सुपौरलोकेषुनदत्तूर्येषुमैथिल ॥ चाणूरस्तावुपव्रज्यरामकृष्णावुवाचह ॥ ४१ ॥ चाणूरउवाच ॥ हेरामहेकृष्णयुवांमहाबलौराज्ञःपुरोवैकुरुतंमृधंबलात् ॥ प्रहर्षितेराजनिचेद्यदुत्तमेकिंकिंनभद्रंभवतीहवश्चनः ॥ ४२ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ पुरैवभद्रंनृपतेःप्रसादतोबालावयंतुल्यबलैश्चबालकैः ॥ भूयान्मृधोनोबलवान्यथोचितमधर्मयुद्धंकिलमाभवेदिह ॥ ४३ ॥ चाणूउवाच ॥ भवान्नबालोनचवाकिशोरोबलश्चसाक्षाद्बलिनांबलीयान् ॥ सहस्रमत्तेभबलंदधानोद्विपोभवद्भ्यांनिहतःसलीलम् ॥ ४४ ॥

दुर्लभ दर्शन करके आज हमभी कृतार्थ हो गये हैं ॥ ४० ॥ पुरवासी ऐसे कह रहे थे, और नगाड़े बज रहे थे कि, नारदजी कहते हैं कि हे मैथिल ! चाणूर आकर रामकृष्णसे बोला ॥ ४१ ॥ हे राम ! हे कृष्ण ! तुम महाबली हो, इससे राजाके सामने अपने बलसे युद्ध करो, यदुराज राजाके प्रसन्न होनेपर हमको और तुमको न जाने क्या क्या लाभ नहीं होता ? ४२ ॥ तब भगवान् बोले कि, राजाकी श्रीकृपासे हमारा तो पहलेहीसे भला हो रहा है किन्तु हम बालक हैं, बराबरके बालकोंसे लड़ेंगे, बलात् युद्ध मत करो, जैसा युद्ध उचित हो, वैसा करो, राजाकी सभामें अधर्मसे युद्ध करना उचित नहीं ॥४३॥ तब चाणूर बोला—तुम न तो बालक हो, न किशोर हो, न बलदेव बालक हैं, तुम तो बलियोंमें भी बली हो, सौ हजार हाथियोंका बल जिसमें यह कुवलयापीड हाथी तुमने खेलते-खेलते ही मारडाला फिर तुम बालक कैसे हो ॥ ४४ ॥

नारदजी कहते हैं कि, ऐसे चाणूरका वचन सुनकर भगवान् दुःखके हर्ता चाणूरसे लड़ने लगे, बलदेवजी मुष्टिकसे लड़ने लगे ॥४५॥ भुजाओंसे भुज दण्डोंको खींचना, इत्यादिक दाँव, पेच करने लगे, सबके देखते २ हाथी जैसे लड़ता है, ऐसे जीतनेकी इच्छासे लड़ने लगे ॥ ४६ ॥ श्रीकृष्ण चाणूरको उठाकर इसकी देहका बोझ तोलने लगे, जैसे पुण्यके भारको ब्रह्मा तोलता है ॥ ४७ ॥ फिर चाणूरने भी श्रीकृष्णको एकही हाथसे उठा लिया, जैसे शेषजीने भूमण्डल उठाया है ॥४८॥ श्रीकृष्णने चाणूरकी गर्दन दबाकर भुजासे उसकी कमर पकड़ कर धरतीमें दे मारा ॥ ४९ ॥ हाथोंसे, घुटनोंसे, पांवोंसे, भुजाओंसे अंगुलियोंसे, और घूंसोंसे कृष्ण चाणूर प्रहार करने लगे, और ऐसेही बलदेव और मुष्टिक प्रहार करने लगे ॥ ५० ॥ जब कृष्ण बलदेवके परिश्रमसे पसीना आ गये, तब जारी झरोखोंमें बैठी राजाओंकी रानियाँ इनके खेद युक्त मुखोंको देखकर दयासे यह बोलीं ॥ ५१ ॥ देखो

श्रीनारदउवाच ॥ एवंतस्यवचःश्रुत्वाभगवान्वृजिनार्दनः ॥ चाणूरेणापियुयुधेमुष्टिकेनबलोबली ॥ ४५ ॥ आकर्षणंनोदनंचभुजाभ्यां भुजदंडयोः॥ चक्रतुःपश्यतांनृणांगजाविवजिगीषया॥४६॥ हस्ताभ्यांवपुरुत्थाप्यचाणूरस्यहरिःस्वयम्॥ अतोलयद्देहभारंपुण्यभारंयथाविधिः ॥४७॥ चाणूरस्तंहरिंदेवंकरेणैकेनलीलया ॥ उज्जहारमहावीरोभूखंडंनागराडिव ॥ ४८ ॥ ग्रीवायांकिलचाणूरंभुजवेगेनमाधवः ॥ कट्यांचो-द्धृत्यसहसापातयामासभूतले॥४९॥ हस्तैश्चजानुभिःपादैर्भुजोरोंगुलिमुष्टिभिः ॥जघ्नतुःकृष्णचाणूरौतथैवबलमुष्टिकौ ॥५०॥ श्रमवारिश्रुतेदृष्ट्वा श्रीमुखेरामकृष्णयोः ॥ सानुकंपास्तदाप्राहुर्गवाक्षस्थानृपस्त्रियः ॥ ५१ ॥ स्त्रियऊचुः ॥ अहोअधर्मःसुमहत्सभायांजातःपुरोराजनिव र्तमाने ॥ क्ववज्रतुल्यांगवृतौहिमल्लौक्वपुष्पतुल्यौबतरामकृष्णौ ॥५२॥ अहोअभाग्यंहिपुरौकसांनोयुद्धेतयोर्दर्शनमद्यजातम् ॥ अहोतिधन्यं बतभूरिभाग्यंवनौकसांरासरसेनजातम् ॥५३॥ अहोस्थितेराजनिदुष्टचित्तेनकोपिवक्तुंक्षमएवसख्यः ॥तस्माद्दिनःपुण्यबलेनचेतौत्वरंमृधेवैज यतामरीन्स्वान् ॥ ५४ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमथुराखण्डेमल्लयुद्धवर्णनंनामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ आर्द्रचित्तंनंदराजं वनितानांमनोरथम् ॥ स्मृत्वाशत्रून्हन्तुकामश्चक्रेयुद्धंबलाद्धरिः ॥ १ ॥

राजाकी सभामें तो राजाके सामने ही बड़ा अधर्म होने लगा, कहाँ तो वज्रसे अंगवाले मल्ल और कहाँ ये फूलसे बालक हैं ॥ ५२ ॥ अहो ! इस सभामें पुरवासियोंका हमारा बडाही अभाग्य है, जो लड़ते कृष्ण, बलदेवका दर्शन हुआ है, और अहो ! व्रजवासियोंकाही बड़ा भाग्य है, जो रास रसमें उनको कृष्ण बलदेवके दर्शनसे आनन्द हुआ है ॥ ५३ ॥ देखो सखियो ! यह राजा कंस बडा दुष्ट है, और इसके सामने कोई बोल सकता है नहीं, इससे हम अपना पुण्य देते हैं, हमारे पुण्यसे कृष्ण बलदेवजीकी जय होवे, ये दोनों भाई शीघ्रही अपने शत्रुओंको मारकर विजय करें ॥ ५४ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ नारदजी कहते हैं कि, तब श्रीहरि (कृष्ण) स्त्रियोंके वचनसे दुखित चित्त नन्दराजको देखकर और स्त्रियोंके मनोरथको जानकर शत्रुको मारनेके लिये जोरसे युद्ध करने लगे ॥ १ ॥

तब श्रीकृष्णने भुजाओंसे चाणूरको पकड़कर बड़े जोरसे आकाशमें फेंक दिया सहजमेंही पवन जैसें कमलको तोड़कर फेंक देता है ॥ २ ॥ तब वह चाणूर आकाशमेंसे औंधे मुख आकर पड़ा जैसे तारा टूटता है, फिर उठकर उसने बड़े जोरसे श्रीकृष्णके एक घूंसा मारा ॥ ३ ॥ श्रीकृष्ण तो परात्पर हैं, उसके घूंसोंसे कुछ विचलित नहीं हुये, फिर जल्दीसे चाणूरको पकडकर धरतीमें दे मारा ॥ ४ ॥ तब चाणूरके दाँत टूट गये, तो भी बड़े मदमत्त उसने क्रोधयुक्त हो, उछल कर दोनों मुष्टियोंसे घूंसा श्रीकृष्णके मारे ॥ ५ ॥ जो मारनेको आया देखा, तत्काल श्रीकृष्णने उसके दोनों हाथ पकडकर घुमाकर सभीके देखते देखते कंसके आगे धरतीमें दे मारा ॥ ६ ॥ ऐसे मारा जैसे कमण्डलुको बालक मारता है, श्रीकृष्णके प्रहार से चाणूरका मस्तक फट गया ॥ ७ ॥ ॥ मुखसे रुधिर वमन करता तभी मरकर गिर पड़ा, वैसेही मुष्टि युद्धमें दुर्गम मुष्टिकको ॥८॥ महाबली बल-

गृहीत्वाभुजदण्डाभ्यांचाणूरंगगनेबलात् ॥ चिक्षेपसहसाकृष्णोवातःपद्ममिवोद्धृतम् ॥२॥ आकाशात्पतितःसोपितारकेवह्यधोमुखः ॥ उत्था यमुष्टिनाकृष्णंताडयामासवेगतः ॥ ३ ॥ तस्यमुष्टिप्रहारेणनचचालपरात्परः ॥ सद्योगृहीत्वाचाणूरंपातयामासभूतले ॥४॥ भिन्नदंतस्तुचाणू-रःक्रोधयुक्तोमदोत्कटः ॥ मुष्टिद्वयेनश्रीकृष्णंतताडहृदिमैथिल ॥५॥ गृहीत्वाकरयोस्तंवैकराभ्यांभगवान्स्वयम् ॥ कंसस्याग्रेभ्रामयित्वासर्वेषां पश्यतांनृप ॥ ६ ॥ पातयामासभूपृष्ठेकमण्डलुमिवार्भकः ॥ श्रीकृष्णस्यप्रहारेणचाणूरोभिन्नमस्तकः ॥ ७ ॥ उद्वमन्रुधिरंराजन्सद्योवैनिधनं गतः ॥ तथैवमुष्टिकंमल्लंमुष्टिभिर्युधिदुर्गमम् ॥८॥ धृत्वांघ्रौभ्रामयित्वाखेबलदेवोमहाबलः ॥ पातयामासभूपृष्ठेफणिनंगरुडोयथा ॥ मुष्टिको निधनंप्रापप्रोद्वमन्रुधिरंमुखात् ॥९॥ कूटंसमागतंवीक्ष्यबलदेवोमहाबलः ॥ मुष्टिनापातयामासवज्रेणेन्द्रोयथागिरिम् ॥१०॥प्राप्तंशलंनंदसूनुर्लत्त यातंतताडह ॥ तीक्ष्णयातुंडयाराजन्कद्रुजंगरुडोयथा ॥११॥ गृहीत्वातोशलंकृष्णोमध्यतःसंविदार्य्यच ॥ प्राक्षिपत्कंसमंचाग्रेबिटपंसिन्धुरो यथा ॥१२॥ एतेनिपातितारंगेसद्योवैनिधनंगताः ॥तेषांज्योतींषिवैकुंठेविविशुः पश्यतांसताम् ॥१३॥एवंश्रीरामकृष्णाभ्यांमल्लेषुनिहतेषुच॥ शेषाःप्रदुद्रुवुर्मल्लाभयार्ताजीवनेच्छया ॥ १४ ॥

देवजीने भी उसके पांव पकड़ कर घुमाकर धरतीमें देमारा जैसे गरुड सर्पको मारता है, तब मुष्टिक भी मुखसे रुधिर वमन करता हुआ मरकर गिर पड़ा ॥ ९ ॥ फिर कूटको आया देखकर महाबली बलदेवजीने घूंसा मारकर पटक दिया, जैसे इन्द्र वज्रसे पर्वतको पटकता है ॥१०॥ फिर आये हुये शलको भी श्रीकृष्णने लात मारकर गिरा दिया, तीक्ष्ण चोंचसे जैसे गरुड सर्पको मारता है ॥ ११ ॥ फिर तोशल आया, उसको पकड़कर श्रीकृष्णने बीचमेंसे तोड़कर कंसके सामने फेंक दिया जैसे हाथी पेड़को चीरकर शाखाको फेंकता है ॥ १२ ॥ ॥ इतने जो मल्ल थे उनको जब इस प्रकार पटके तो वे सब तभी मर गये, उन सभीकी ज्योति सन्तोंके देखते-देखते श्रीकृष्णमें समा गई ॥ १३ ॥ ऐसे कृष्ण बल-देवने जब सब मल्ल मार डाले, तब और भी जो बच रहे थे वे सब भयभीत होकर जीनेकी इच्छासे भग गये ॥ १४ ॥

तब श्रीकृष्ण श्रीदामादिक जो अपनी बराबरके गोप थे, उनको खींचकर उनके साथ सभीके देखते-देखते कुश्ती लड़ने लग गये ॥ १५ ॥ तब किरीट कुण्डल पहिने बराबरके बालकों के संग रंगभूमिमें विहार करते दोनों भाई कृष्ण और बलदेवको देखकर सब मथुरावासी स्त्रीपुरुष विस्मयको प्राप्त हो गये ॥ १६ ॥ तब तो एक केवल कंसके बिना सबके मुखमें से जय जय शब्द और "साधु साधु" शब्द निकले, और आकाशमें नगाड़े बजे ॥ १७ ॥ तब कंस अपनी अजय देखकर बड़ा क्रोधित हुआ, तब जो नगाड़े बजते थे, उनको बंद करवाकर होठ जिसके फड़कते जाते हैं, वह बोला ॥ १८ ॥ अरे ! जो वसुदेवके पुत्र हैं वे बड़े दुर्बुद्धि हैं, सो इनको जल्दीही मेरे सामनेसे बलपूर्वक बाहर निकाल दो, सब व्रजवासियोंका धन लूट लो, इस दुर्बुद्धि नन्दको जल्दी मार डालो ॥१९॥ और अभी इस दुर्बुद्धि मेरे पिता उग्रसेनका तथा वसुदेवका शिर काट डालो, और जितने ये यादव

श्रीदामादीन्वयस्यांश्चगोपानाकृष्यमाधवः ॥ तैःसार्द्धंयुद्धमारेभेसर्वेषांपश्यतांसताम् ॥१५॥ किरीटकुण्डलधरौरामकृष्णौसहार्भकैः ॥ विहरंतौ वीक्ष्यरंगेविस्मियुःपुरवासिनः ॥१६॥ कंसंविनासर्वमुखाज्जयशब्दोविनिर्गतः ॥ साधुसाध्वितिवादोभून्नेदुर्दुंदुभयस्ततः ॥१७॥ स्वस्याऽजयंवी-क्ष्यकंसोमहाक्रोधसमाकुलः ॥ वर्जयित्वातूर्यघोषंप्राहप्रस्फुरिताधरः ॥१८॥ कंसउवाच ॥ दुर्बुद्धियुक्तौवसुदेवनन्दनौप्रसह्यनिःसारयताशुम-त्पुरात् ॥ हरंतुसर्वंव्रजवासिनांधनंबघ्नीतनंदंसहसादिदुर्मतिम् ॥१९॥ अद्योग्रसेनस्यपितुःकुबुद्धेःशौरेःशिरश्चाशुहिछिंधिछिंधि ॥ कौयत्रतत्रापि तथात्रवृष्णिजातान्सुरांशान्किलसूदयध्वम् ॥२०॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंविकत्थमानस्यकंसस्ययदुनंदनः ॥ सहसोत्पत्यतंमंचमारुहत्क्रोध पूरितः ॥२१॥ मृत्युंसमागतंवीक्ष्यमंचादुत्थायसत्वरम् ॥ मदोद्धतोभर्त्सयंस्तंजगृहेखड्गचर्मणी ॥२२॥ अग्रहीत्सहसाकंसंदोर्भ्यांचर्मासिसंयु-तम् ॥ यथातुंडविभागाभ्यांसविषंफणिनंविराट् ॥२३॥ पतत्खड्गश्चलच्चर्माभुजबंधाद्बलाद्बली ॥ विनिर्ययौताक्ष्यतुंडात्पुंडरीकोयथाफणी ॥२४॥ मंचेतौबलिनौवेगान्मर्दयंतौपरस्परम् ॥ शैलशृंगेयथासिंहौशुशुभातेयथातथम् ॥ २५ ॥ उत्पतंतंबलात्कंसंशतहस्तंमहांबरे ॥ अग्रहीच्चोत्प-तन्कृष्णःश्येनंश्येनोयथांबरे ॥ २६ ॥

देवताओंके अंश हैं, इनमेंसे जो कोई धरतीपर जहाँ मिले, उन सभीको वहाँही मार डालो ॥२०॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे जब कंस प्रलाप करने लगा, तब श्रीकृष्ण सहजही क्रोधमें पूरित हो, उछलकर कंसके मंचपर चढ़ गये ॥२१॥ तब कंस अपनी मृत्यु आई देख जल्दीही उठकर खड़ा हो गया, मदमें उद्धतने ललकारकर ढाल तलवार हाथमें ले ली ॥२२॥ तब तो श्रीकृष्णने कंसको दोनों भुजाओंसे ढाल तलवार लिये हुयेको ऐसे पकड़ लिया जैसे विषधारी सर्पको चोंचके दोनों भागोंसे गरुड़ पकड़ लेता है ॥२३॥ ढाल तलवार तो गिर पड़ी फनफनाकर श्रीकृष्णकी भुजाओंमेंसे निकल गया, जैसे गरुडकी चोंचसे पुण्डरीक नामका नाग निकल जाता है ॥२४॥ उस समय उस मंचपर ये दोनों आपसमें ऐसे लड़ने लगे, जैसे पहाड़के ऊपर दो सिंह लड़ते हों ॥२५॥ तब बलसे आकाशमें सौ सौ हाथ उछलते कंसको उछलकर श्रीकृष्णने ऐसे पकड़ लिया, बाज जैसे बाजको झपटता है ॥२६॥

तब प्रचण्ड जो ये दैत्य पुंगव है उसको भुजदण्डोंसे पकड़कर त्रैलोक्यके बलको धारण करनेवाले कृष्णने इधर उधर घुमाकर ॥ २७ ॥ बड़े क्रोधसे आकाशसे मंचपर दे मारा, जिससे मंचके दण्ड टूट गये, जैसे बिजलीसे वृक्ष टूट जाते हैं ॥२८॥ धरतीमें गिरपड़ा वह वज्रांग कंस कुछ व्याकुल मन हुआ वह सहसा उठक फिर श्रीकृष्ण महात्मासे लड़ने लगा ॥२९॥ फिर भुजाओंसे कंसको पकड़कर मंचपर दे मारा, फिर उसकी छातीपर चढ़कर मुकुट उतार लिया ॥३०॥ फिर श्रीकृष्णने उसके बाल पकड़कर मंचपरसे रंगभूमिमें पटक दिया, पर्वतपरसे शिलाखण्डको जैसे पटकते हैं ॥३१॥ उसके ऊपर त्रिलोकीका बोझ लेकर आप जापड़े, अनन्त भगवान् उतना जिनका पराक्रम ॥३२॥ ऐसे दोनोंके पड़नेसे पृथ्वी नीचेको धँस गई, थालीकी तरह दो घड़ीतक काँपती रही ॥३३॥ मरे हुये भोजराज कंसको सभी देखते देखते जैसे सिंह हाथीको घसीटे, वैसेही श्रीकृष्ण पृथ्वीमें खींचने लगे

गृहीत्वाभुजदण्डाभ्यांप्रचण्डंदैत्यपुंगवम् ॥ त्रैलोक्यबलधृग्देवोभ्रामयित्वात्वितस्ततः॥२७॥ आकाशात्पातयामासमंचोपरिरुषान्वितः॥भग्न दंडोभवन्मंचस्तडित्पातेयथाद्रुमः ॥२८॥ पतितोपिसवज्रांगःकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥ सहसोत्थाययुयुधेश्रीकृष्णेनमहात्मना॥२९॥नीत्वातं भुजदण्डाभ्यांमंचेक्षिप्त्वापुनःप्रभुः ॥ आरुह्यहृदयंतस्यमौलिंजग्राहमाधवः॥३०॥सद्यःप्रगृह्यकेशेषुरंगोपरिहरिःस्वयम् ॥ मंचात्तंपातयामास शैलाद्गंडशिलामिव॥३१॥तस्योपरिष्टाच्छ्रीकृष्णःसर्वाधारःसनातनः ॥ निपपातस्वयंवेगादनंतोनंतविक्रमः ॥ ३२ ॥ इत्थंद्वयोर्निपातेननिम्नं भूखण्डमंडलम् ॥ स्थालीवसहसाराजश्चकंपेघटिकाद्वयम् ॥ ३३ ॥ संपरेतंभोजराजंभूमितंविचकर्षह ॥ यथामृगेन्द्रोनागेन्द्रंसर्वेषांपश्यतांनृप ॥३४॥ हाहाकारस्तदैवासीद्धावतांभूभुजांनृप॥ वैरभावेनदेवेशंभजन्कंसोमहाबलः ॥३५॥ जगामतस्यसारूप्यंभृंगिणःकीटकोयथा॥ कंसंप्रप- तितंदृष्ट्वाभ्रातरोष्टौमहाबलाः॥ सुनामसृष्टिन्यग्रोधतुष्टिमद्राष्ट्रपालकाः ॥ ३६ ॥ सुनामाकंकशंकुभ्यांक्रोधप्रस्फुरिताधराः ॥ खड्गचर्मधरा- योद्धुंकृष्णोपरिसमाययुः ॥ ३७ ॥ वीक्ष्यतान्मुद्गरंनीत्वारोहिणीनन्दनोबलः ॥ आराच्चकारहुंकारंयथासिंहोमृगान्प्रति ॥ ३८ ॥ हुंकारेणैव शस्त्राणितेषांहस्तेभ्यआभयात् ॥ पेतुराम्रफलानीवदंडघातैश्चमैथिल ॥ ३९ ॥ निःशस्त्रास्तेमहावीरामुष्टिभिःसर्वतोबलम् ॥ तेडुःशैलंयथाना- गाशुंडादंडैरितस्ततः ॥ ४० ॥

॥३४॥ तब हाहाकार होने लगा, राजा भागने लगे, महाबली उस कंसने जो वैरभावसे भगवान्‌को भजा था ॥ ३५ ॥ वह कंस उनकी सारूप्यताको प्राप्त होगया, झींगुर जैसे भृंगीके रूपको प्राप्त हो जाता है, ॥ ३६ ॥ कंसको पडा देखकर उसके आठ भाई महाबली ढालतलवार लेकर युद्ध करनेके लिये श्रीकृष्णके ऊपर आये ॥ ३७ ॥ उनको देखकर रोहिणीके पुत्र बलदेवजीने एकही ऐसी ललकार मारी, जैसे सिंहगर्जना करे, ये कौन कौनसे हैं, उन आठोंके नाम कहते हैं, सुनाम १, सृष्टि २, न्यग्रोध ३, तुष्टिमान ४, राष्ट्रपालक ५, सुनामा ६, कंक ७, शंकु ८, ॥ ३८ ॥ बलदेवजीकी उस हुंकारसेही डरके मारे उनके हाथोंमें शस्त्रसे गिरपडे जैसे पके आम आपही दण्डप्रहारसे गिर पड़ते हैं ॥ ३९ ॥ तब निःशस्त्रसे आठोंजने चारों ओरसे घूंसोंसे बलदेवजीको ऐसे मारने लगे, जैसे पर्वतको हाथी सूंडोंसे मारे ॥ ४० ॥

सुनामाको और सृष्टिको मुद्गरसे मारे, न्यग्रोधको भुजाके वेगसे, कंकको बांये हाथसे ॥ ४१ ॥ शंकुसुहु तुष्टिमान इनको बांये पांवसे, राष्ट्रपालको दाहिने पांवसे मारकर बलदेवने पटक दिये ॥ ४२ ॥ सहजमेंही आठों गिर पड़े, जैसे पवनके मारे वृक्ष गिर पड़ते हैं, हे विदेहराज ! उनकी ज्योति भगवान्में लीन होगई ॥ ४३ ॥ उस समय देवताओंकी दुंदुभी बजने लगी, जय जय शब्द होने लगा, देवता नन्दनवनके पुष्पोंकी वर्षा करने लगे ॥४४॥ विद्याधरी और गन्धर्वी हर्षमें विह्वल होकर नाचने लगीं, विद्याधर, गन्धर्व, किन्नर ये सब भगवान्का यश गाने लगे ॥ ४५ ॥ ब्रह्मादिक देवता मुनि सिद्ध ये सब विमानोंमें बैठकर भगवान्के दर्शनको आये, वेदमें परायण वेदवाणीसे भगवान् रामकृष्णकी स्तुति करने लगे ॥४६॥ उसके बाद अस्ति, प्राप्ति, से लेकर जो कंसकी रानियाँ थीं वे हाथोंसे अपनी छाती पीटती हुई महलोंमेंसे निकल करके वैधव्यके दुःखसे रोने लगीं ॥ ४७ ॥ कंसकी

सृष्टिंतथासुनामानंमुद्गरेणबलोहनत् ॥ न्यग्रोधंभुजवेगेनकंकंवामकरेणवै ॥ ४१ ॥ शंकुंसुहुंतुष्टिमंतंवामपादेनमाधवः ॥ राष्ट्रपालंदक्षिणेनपादेनाभिजघानह ॥ ४२ ॥ अष्टौनिपेतुःसहसावृक्षावातहताइव ॥ तेषांज्योतिर्भगवतिलीनंजातंविदेहराट् ॥ ४३ ॥ देवदुंदुभयोनेदुर्जयध्वनिरभूत्तदा ॥ सद्योवैववृषुर्देवाःपुष्पैर्नंदनसंभवैः ॥ ४४ ॥ विद्याधर्यश्चगंधर्व्योननृतुर्हर्षविह्वलाः ॥ विद्याधराश्चगंधर्वाःकिन्नरास्तद्यशोजगुः ॥४५॥ ब्रह्माद्यामुनयःसिद्धाविमानैर्द्रष्टुमागताः ॥ तुष्टुवूरामकृष्णौतौवाग्भिःश्रुतिपरायणाः ॥४६॥ ताडयंत्यउरोहस्तैरस्तिप्राप्त्यादयस्त्रियः ॥ विनिर्गतास्तारुरुदुर्जातवैधव्यदुःखिताः ॥ ४७ ॥ ॥ स्त्रियऊचुः ॥ हानाथहेयुद्धपतेक्वगतोसिमहाबल ॥ त्रैलोक्यविजयीसाक्षाद्देवानामपिदुर्जयः ॥४८॥ जातमात्राःस्वसुःपुत्रानिर्घृणेनत्वयाहताः ॥ आनिर्दशानिर्दशाश्चाऽपरेपिनिहताबलात् ॥४९॥ तेनपापेनघोरेणदशामेतादृशींगतः ॥ ५० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवमश्रुमुखीर्दीनाआश्वास्यनृपयोषितः ॥ विधाययमुनातीरेचिताःश्रीखंडसंयुताः ॥ ५१ ॥ हतानांकारयित्वासौक्रियांवैपारलौकिकीम् ॥ सर्वान्संबोधयामासभगवाँल्लोकभावनः ॥ ५२ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांमथुराखंडेनारदबहुलाश्वसंवादेकंसवधोनामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

स्त्रियाँ कहने लगीं हा नाथ ! हे युद्धपते ! हे महाबली ! तुम कहाँ गये, त्रिलोकीको जीतनेवाले साक्षात् देवताओंको भी दुर्जय ॥ ४८ ॥ जो हालके हुये बहिनके पुत्र तुम निर्दयीने मार डाले, और जो दश दिनके थे, और जो दश दिनके भी नहीं थे, वे बहुतसे बालक तुमने औरोंके भी मार डाले ॥४९॥ उसी घोर पापसे तुम्हारी यह गति हुई है ॥ ५० ॥ नारदजी कहते हैं कि, भगवान् श्रीकृष्णने रोती हुई बडी दीन कंसकी रानियोंको समझाकर सावधान करके यमुनाजीके तीरपर चन्दनकी चिता बनवाई ॥५१॥ मरे हुये कंसादिकोंकी परलोककी क्रिया करवाकर सबको समझाकर सावधान किया, क्योंकि आप तो त्रिलोकीके पालक हैं ॥ ५२ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां कंसवधो नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अब नारदजी राजा बहुलाश्वसे बोले कि, उसके बाद राम और कृष्ण दोनों देव यादवोंको साथ लेकर देवकी वसुदेवके पास गये ॥ १ ॥ इनके देखते ही देवकी वसुदेव के बंधन
आपही शिथिल होकर गिर पड़े, जैसे गरुडको देखकर नागपाश खुल जाते हैं ॥ २ ॥ तब अपने प्रभावको जान गये ऐसे माता पिता उनको देखकर उनके ऊपर बलदेवजी
सहित श्रीकृष्णने अपनी जगन्मोहिनी मायाको डाल दिया ॥ ३ ॥ तब मोहमें आकुल हो गये, देवकी वसुदेव दोनों मोहमें मग्न हो उठकर कृष्ण बलदेवको पुत्र जानकर मिले,
और उनके आनन्दके आंसू बहने लगे ॥४॥ भगवान् श्रीकृष्ण उनको आश्वस्त करके सब यादवोंको साथ लेकर नाना उग्रसेनके पास गये, उनको समझाकर राज्य गद्दी पर बैठा
कर मथुराके स्वामी किये ॥५॥ फिर कंसके भयसे जो देशान्तरोंमें भाग गये हैं, उन सब यादवोंको कुटुम्बसहित प्रेमसे फिर बुला बुलाकर मथुरामें बसाने लगे ॥६॥ उसके बाद
गोपगणों सहित व्रजको जाना चाहते हैं, ऐसे नन्दराजके पास बलभद्र सहित भगवान् श्रीकृष्ण गये, मायासे मोहित करते प्रणाम करके बोले ॥७॥ कि, हे पिताजी ! आप मधु-

श्रीनारदउवाच ॥ अथदेवौरामकृष्णौदेवकीवसुदेवयोः ॥ समीपंजग्मतुःसाक्षाद्वृष्णिभिःपरिवारितौ ॥ १ ॥ स्वतस्तयोर्वंधनानिययुःशिथिल-
तांनृप ॥ तौवीक्ष्यगरुडंप्राप्तंनागपाशगुणायथा ॥ २ ॥ स्वप्रभावविदौवीक्ष्यपितरौसबलोहरिः ॥ सद्यस्ततानस्वांमायांजगन्मोहकरींबलात्
॥३॥ रामकृष्णौसुतौज्ञात्वाशौरिर्मोहसमाकुलः ॥ देवक्यासहसोत्थायसस्वजेचाश्रुपूरितः ॥४॥ तावाश्वास्यहरिःसद्योवृष्णिभिःपरिवारितः ॥
मातामहंतूग्रसेनंचकारमथुराधिपम् ॥५॥ आहूययादवान्कंसभयाद्देशांतरंगतान् ॥ प्रेम्णानिवासयामाससकुटुंबान्यदोःपुरि ॥६॥ नन्दराजं
गोपगणैःस्वगृहान्गतुमुद्यतम् ॥ नत्वातंसबलःप्राहमोहयन्निवमायया ॥७॥ अत्रैववासंकुरुतातपुर्य्यांगंतुंयदीच्छामनसोत्थितास्यात् ॥ पश्चाद
हंवैसबलोयदून्वाविधायपार्श्वंतवचागमिष्ये ॥ ८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंश्रीरामकृष्णाभ्यांनन्दराजःप्रपूजितः ॥ आलिंग्यशौरिंगोपालै
र्ययौप्रेमातुरोव्रजम् ॥ ९ ॥ दत्तंश्रीकृष्णजन्मर्क्षेधेनूनांनियुतंपुरा ॥ ब्राह्मणेभ्योददौशौरिर्वस्त्रमालास्वलंकृतम् ॥ १० ॥ शौरिर्गर्गंसमाहूयश्री
कृष्णबलदेवयोः ॥ यज्ञोपवीतंविधिवत्कारयामासधर्मवित् ॥११॥ रामकृष्णौसर्वविद्याध्ययनंकर्तुमुद्यतौ ॥ गुरोःसांदीपनेःपार्श्वंजग्मतुर्जनव-
त्परौ ॥ १२ ॥ कृत्वापरांगुरोःसेवांलघुकालेनमाधवौ ॥ सर्वविद्यांजगृहतुःसर्वविद्याविदांवरौ ॥ १३ ॥

पुरीमेंही रहिये, यदि जानेकी इच्छा मनमें उठी हो, तो जाइये, मैं भी यादवोंकी सब व्यवस्था करके बलदेवको साथ लेकर आपके पास आऊँगा ॥८॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे
रामकृष्णने बड़ा सत्कार जिनका किया ऐसे नन्दराज प्रेममें आतुर वसुदेवसे मिलकर गोपोंको साथ लेकर व्रजको आये॥९॥ तब श्रीकृष्णके जन्म समय वसुदेवजीने जो दश हजार
गौओंका संकल्प किया था, उनका दान ब्राह्मणोंको वस्त्र मालासे अलंकृत करके दिया ॥ १० ॥ फिर धर्मज्ञ वसुदेवजीने गर्गाचार्यको बुलाकर श्रीकृष्ण बलदेवको विधिपूर्वक यज्ञो-
पवीत कराया ॥११॥ तब रामकृष्ण सब विद्या पढ़नेको उद्यत हुये, तथा सामान्य जनोंकी तरह सांदीपन गुरुके पास विद्या पढ़नेको गये ॥१२॥ वहँ गुरुकी परम सेवा करके थोड़े
ही समयमें सब विद्या पढ़ ली तो आप सब विद्याके वेत्ताओंमें श्रेष्ठ किन्तु मनुष्य लीला करते हैं ॥ १३ ॥

फिर हाथ जोड़कर जब गुरुके सामने खड़े हुये कि, हे गुरुजी ! आपको जो चाहिये सो दक्षिणा मांगो, तब गुरुने समुद्रमें जो पुत्र मर गया था, वह मांगा॥१४॥ तभी सुन्दर रथमें बैठकर महा पराक्रमी दोनों भाई प्रभास क्षेत्रमें समुद्रके पास आये॥१५॥तब समुद्र कांपकर रत्नोंकी भेंट लेकर चरणोंमें आ गिरा,हाथ जोड़कर खड़ा हो गया॥१६॥ तब भगवान्ने कहा कि, हे समुद्र ! जो तुमने अपनी प्रचण्ड हिलोरोंसे हमारा गुरुपुत्र मारा है, उसको शीघ्रही लाकर मुझको दो ॥१७॥ तब समुद्र बोला कि, हे भगवन् ! हे देव देवेश ! मैंने बालक नहीं मारा है, पंचजन दैत्य मेरे भीतर बसते हैं, उन्होंने मारा है॥१८॥मेरे उदरमें सदा बसता है,बली दैत्य पुंगव है,वह आपके मारने योग्य है, वह देवताओंको भयकारी है ॥ १९ ॥ नारदजी कहते हैं जब समुद्रने भगवान्से यह कहा, तबही भगवान् पीताम्बरसे कमर बांध भयंकर गजर्ना है जिसकी ऐसे समुद्रमें कूद पड़े ॥२०॥ श्रीकृष्णके कूदनेसे

गुरवेदक्षिणांदातुमुद्यतौतौकृतांजली ॥ मृतंपुत्रंदक्षिणायांताभ्यांवव्रेगुरुर्द्विजः ॥१४॥रथमारुह्यतौदांतौशातकुंभपरिच्छदम्॥प्रभासेचाब्धिनिकटंजग्मतुर्भीमविक्रमौ ॥१५॥ सद्यःप्रकंपितःसिन्धूरत्नोपायनमुत्तमम्॥नीत्वातच्चरणोपांतेनिपपातकृतांजलिः॥१६॥तमाहभगवान्शीघ्रंपुत्रंदेहि गुरोर्मम ॥ प्रचण्डोर्मिघटाटोपैस्त्वयातद्ग्रहणंकृतम् ॥ १७ ॥ समुद्रउवाच ॥ भगवन्देवदेवेशनमयाबालकोहृतः ॥ हृतःपंचजनेनासौशंखरूपासुरेणवै ॥१८॥ वसन्सदामदुदरेबलिष्ठोदैत्यपुंगवः ॥ जेतुंयोग्यस्त्वयादेवदेवानांभयकारकः॥१९॥ श्रीनारदउवाच ॥ तेनोक्तोभगवान्कृष्णोवासोबद्ध्वाकटौदृढम् ॥ निपपातमहावेगात्समुद्रेभीमनादिनि ॥२०॥ श्रीकृष्णस्यनिपातेनत्रिलोकीभारधारिणः॥चकंपेब्धिर्भृशंवज्रकूटेनेव विदेहराट् ॥२१॥ ततःपंचजनोदैत्योयोद्धुंश्रीकृष्णसंमुखे ॥ आगतःसहसावीरःशूलंचिक्षेपमाधवे॥२२॥ हस्तेगृहीत्वातच्छूलंतेनैवाभिजघान तम् ॥ तद्घातेनप्रपतितोमूर्च्छितोवारिमण्डले॥२३॥ सहसोत्थायदेवेशंकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥ मूर्ध्नाताताडपक्षीन्द्रंस्वफणेनफणीयथा ॥२४॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्हरिः॥क्रुद्धोमूर्द्धनिवेगेनमुष्टिनातंतताडह॥२५॥कृष्णमुष्टिप्रहारेणसद्योवैनिधनंगतः ॥ तज्ज्योतिःश्रीघनश्यामेलीनंजातंविदेहराट् ॥ २६ ॥ एवंहत्वापंचजनंशंखंनीत्वातदंगजम् ॥ महार्णवान्निर्गतोसौसहसारथमागमत् ॥ २७ ॥

समुद्र अत्यन्त कांपा, त्रिलोकीके बोझको धारण करने वाले श्रीकृष्णका बोझ पर्वतका सा होगया हे विदेहराट् ! ॥२१॥ उसके बाद पञ्चजन दैत्य युद्ध करनेके लिये श्रीकृष्णके सामने आया और सहसा उस वीरने श्रीकृष्णके ऊपर त्रिशूल फेंका ॥२२॥ श्रीकृष्णने उसी त्रिशूलको पकड़ कर शंखासुरको मारा, उसकी मारसे वह दैत्य मूर्च्छित होकर जल मंडलमें जा पड़ा, कुछ व्याकुल मन हो गया ॥२३॥ फिर अकस्मात् उठकर अपने शिरसे श्रीकृष्णके ताडना की, जैसे सर्प गरुडको ताडना करता है॥२४॥ तब परिपूर्णतम साक्षात् श्रीहरि भगवान् श्रीकृष्णने क्रोध करके शंखके शिरमें एक घूंसा मारा ॥ २५ ॥ हे विदेहराट् ! श्रीकृष्णके मुष्टि प्रहारसे तत्कालही मरकर गिर पड़ा, उसके शरीरमेंसे ज्योति निकली वह श्रीकृष्णमें लीन हो गई ॥ २६ ॥ ऐसे पञ्चजनको मारकर उसके पेटमेंसे निकले शंखको लेकर समुद्रमेंसे निकलकर रथमें आये ॥ २७ ॥

फिर पवनकासा जिसका वेग ऐसे उस रथमें बैठकर यमकी संयमनी पुरीमें गये॥२७॥ वहाँ जाकर पाञ्चजन्य शंख बजाया, जिसकी मेघकी गर्जना की सी बड़ी प्रचण्ड ध्वनि सुनकर त्रिलोकी पूर्ण हो गई, उस ध्वनिसे सभा सहित यमराज कांपने लगे॥२९॥वहाँ चौरासी लक्ष नरकोंमें पड़े जो जीव उनमेंसे जितनोंने शंखकी ध्वनि सुनी, वे वे पापी दुःखसे छूटकर मोक्षको प्राप्त हो गये॥३०॥यमराजभी शीघ्रही भेंट लेकर डरता हुआ हाथ जोड़कर कृष्ण बलदेवके चरणोंमें आ पड़ा॥३१॥यमराज बोला-हेहरे ! हे कृपा सिन्धो ! हे राम राम ! हे महाबली ! आप असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति परिपूर्णतम दोनों हो ॥ ३२ ॥ आप पुराण पुरुष हो, सर्वेश्वर हो, जगज्जनोंके ईश हो, सबके ऊपर वर्तमान हो, ब्रह्मादिकोंके ईश हो, सो मुझको अब कुछ आज्ञा करिये ॥३३॥ तब भगवान् बोले कि, हे लोकपाल ! हे महामते ! तुम हमारे गुरुके पुत्रको, ले आओ, यथान्यायसे राज्य करो, मेरी आज्ञाका पालन करो॥३४॥ नारदजी

वायुवेगेनयानेनरामकृष्णौमनोहरौ॥जग्मतुःशमनस्यापिदीर्घांसंयमनींपुरीम् ॥२८॥ पांचजन्यध्वनिर्लोकंप्रचण्डोमेघघोषवत् ॥ पूरयामासतं-
श्रुत्वाचकंपेससभोयमः ॥२९॥चतुरशीतिलक्षेषुनरकेषुनिपातिताः ॥ येयेश्रुताध्वनिंतेतेजग्मुर्मोक्षंतुपापिनः॥३०॥ यमःसद्योबलिंनीत्वाश्रीकृष्ण
बलदेवयोः ॥ पपातचरणोपांतेधर्षितःसन्कृतांजलिः ॥ ३१ ॥ यमउवाच ॥ हेहरेहेकृपासिंधोरामराममहाबल॥असंख्यब्रह्मांडपतीपरिपूर्ण
तमौयुवाम् ॥३२॥ देवौपुराणौपुरुषौमहांतौसर्वेश्वरौसर्वजगज्जनेशौ ॥ अद्यैवसर्वोपरिवर्तमानौगिरानिजाज्ञांवदतंपरेशौ॥ ३३ ॥श्रीभगवानु-
वाच ॥ गुरुपुत्रंलोकपालआनयस्वमहामते ॥ राज्यंकुरुयथान्यायंमदुक्तंमानयन्क्वचित् ॥ ३४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदैवतेनोपानीतंगुरु
पुत्रंहरिःस्वयम् ॥ गृहीत्वावंतिकामेत्यददौश्रीगुरवेशिशुम्॥३५॥गुर्वाशिषासंयुतौतौनत्वातंहिकृतांजली ॥ रथमारुह्यमथुरामागतौयदुपूजितौ
॥३६॥ एकदासबलःकृष्णःसर्वकारणकारकः॥पांडवान्संस्मरन्भक्तानक्रूरभवनंययौ॥३७॥ अक्रूरःसहसोत्थायपरिरभ्यमुदान्वितः ॥ उपचा-
रैःषोडशभिःपूजयित्वाथतौनृप॥३८॥कृतांजलिःपुरः स्थित्वाजातपूर्णमनोरथः ॥ उवाचानंदजनितांमुंचन्बाष्पकलांनृप॥३९॥अक्रूरउवाच ॥
युवाभ्यांरामकृष्णाभ्यांताभ्यांनित्यंनमोनमः ॥ याभ्यांमार्गेयदुक्तंमेपूर्णंतच्चकृतंप्रभू ॥ ४० ॥ लोकाभिरामौजनभूषणोत्तमौचांतर्बहिःसर्वज-
गत्प्रदीपकौ ॥ गोविप्रसाधुश्रुतिधर्मदेवतारक्षार्थमद्यैवयदोःकुलेगतौ ॥ ४१ ॥

कहते हैं, उसी समय भगवान् श्रीकृष्णने यमराजके लाये गुरु पुत्रको लेकर अवंतिका पुरीमें आकर उस पुत्रको गुरुको दे दिया ॥३५॥ गुरुका आशीर्वाद लेकर हाथ जोड़ गुरुको प्रणाम कर यदु पूजित श्रीकृष्ण और बलदेवजी रथमें बैठ मथुराको आये ॥३६॥ एक समय बलदेवको साथ लेकर सब कारणोंके कारण भगवान् पाण्डवोंकी याद करके अक्रूरके भवनको गये ॥३७॥ तब अक्रूरजी उसी क्षण उठकर प्रसन्न होकर मिले, षोडशोपचारसे पूजाकी, हे नृप ! ॥३८॥ हाथ जोड़ सामने खड़े होकर मनोरथ पूर्ण हो गये, सो आनंदके आंसू छोड़ते बोले ॥ ३९ ॥ अक्रूरजी कहते हैं कि, रामकृष्णके लिये मेरा नमस्कार है, जो आपने मार्गमें मुझसे कहा था, वही सब किया ॥ ४० ॥ लोकाभिराम हो, जनभूषण हो, सबमें उत्तम हो, बाहिर भीतरसे जगत्के दीपक हो, आपने गौ ब्राह्मण, साधु, वेद, धर्म, देवता इनके रक्षाके लिये यदुकुलमें जन्म लिया है ॥ ४१ ॥

कंसादिक दैत्योंके वधके लिये गोलोकसे परिपूर्ण तेजवाले आप इस भारत भूमिमण्डलमें आये हो, परेश जो आप हो, आपके लिये नमस्कार है॥४२॥ तब भगवान् बोले, आप आर्य वृद्ध हो, धृतिमान् हो, मैं तो आपके सामने बालक हूँ, हे महामते ! संतजन कभी अपनी बड़ाई नहीं करते हैं॥४३॥ पांडवों की कुशल देखनेके लिये आप हस्तिनापुरको जाओ और हे दानपते ! उन सबको देखकर जल्दी आ जाओ ॥४४॥ नारदजी कहते हैं, कि ऐसे भक्तवत्सल भगवान् अक्रूरसे कहकर सब कार्यके करनेवाले बलदेव सहित अपने भवनको चले आये ॥४५॥ अक्रूर हस्तिनापुरमें गये, वहाँ सबसे मिले, सबके मनका अभिप्राय लेकर पाण्डवोंको देखकर, फिर मथुरामें आकर हस्तिनापुरका सब वृत्तान्त श्रीकृष्णसे कहा॥४६॥ अक्रूर बोले कि हे प्रभो ! आप दोनोंके विना कौरवोंके दिये दुखोंको भोग रहे जो पांडव हैं, उनका और कोई नहीं है, पाण्डुके मरनेके बाद कुन्तीके पुत्र आपकाही आश्रय देख रहे

कंसादिदैत्येन्द्रविनाशहेतवेगोलोकलोकात्परिपूर्णतेजसौ ॥ समागतौभारतभूमिमंडलेयुवांपरेशौसततंनतोस्म्यहम् ॥४२॥ श्रीभगवानुवाच ॥
त्वमार्य्यवृद्धोधृतिमानहंतवपुरःशिशुः॥ संतोनस्वात्मनःश्लाघ्यंकुर्वंतिहिमहामते॥४३॥पांडवानांहिकुशलंद्रष्टुंगच्छगजाह्वयम् ॥ शीघ्रमागच्छ
तान्दृष्ट्वासर्वान्दानपतेभवान् ॥४४॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवमुक्त्वातदाक्रूरंभगवान्भक्तवत्सलः ॥ सबलःशौरिभवनमाययौसर्वकार्यकृत् ॥४५॥
कौरवेन्द्रपुरंगत्वाक्रूरोदृष्ट्वाथपांडवान् ॥ पुनरागत्यकृष्णायवार्तांसर्वामवर्णयत् ॥ ४६ ॥ अक्रूरउवाच ॥ विनायुवांकोपिनपांडवानांसहायकृ-
त्कौरवदुःखभोगिनाम् ॥ मृतेचपांडौभवतोःपदांबुजेविलग्नचित्ताहिपृथात्मजाये ॥ ४७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वाक्रूरमुखाच्छ्रीकृष्णो
भगवान्हरिः ॥ अर्द्धराज्यंपांडवेभ्यःकौरवाणांबलाद्ददौ ॥४८॥ अथोक्तंवचनंस्मृत्वातदोद्धवसमन्वितः॥ महामंगलसंयुक्तंकुब्जायाभवनंययौ
॥ ४९ ॥ दृष्ट्वाराच्छ्रीहरिंप्राप्तंकुब्जारूपवतीत्वरम्॥ भक्त्यासमर्हयामासपाद्याद्यैःप्राणवल्लभम् ॥५०॥ हेमरत्नखचित्कुड्येकुब्जायाभवनोत्तमे ॥
बभौहरीरूपवत्यावैकुण्ठेरमयायथा ॥५१॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥यस्याःपतिरभूद्राजन्नहोतस्यास्तपोमहत् ॥५२॥ तत्र
स्थित्वाहरिर्देवोदिनान्यष्टौविदेहराट् ॥ आययौशौरिभवनंलीलामानुषविग्रहः ॥ ५३ ॥

हैं, रात दिन आपके चरणोंका ध्यान करते हैं ॥४७॥ नारदजी कहते हैं कि, इस प्रकार अक्रूरके मुखसे सुनकर श्रीकृष्ण भगवान्ने आधा राज्य, कौरवोंके पाससे अपने पराक्रमसे पाण्डवोंको बलपूर्वक दिला दिया ॥ ४८ ॥ उसके बाद कहे हुये वचनको स्मरण करके उद्धवको साथ लेकर महा मांगलिक जो कुब्जाका घर है, वहां श्रीकृष्ण गये ॥ ४९ ॥ कुब्जा हरिको आते देखकर बहुत जल्दी दूरसेही रूपवतीने अर्घ्य पाद्यादिकसे प्राणवल्लभ जो श्रीकृष्ण उनका सत्कार किया ॥५०॥ रत्नोंसे जड़ी जिसमें सुवर्णकी भित्ति (भीत) ऐसे कुब्जाके भवनमें कुब्जाके साथ श्रीकृष्णकी ऐसी शोभा हुई, जैसे वैकुण्ठमें लक्ष्मीसे नारायणकी शोभा होती है ॥५१॥ परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण स्वयं भगवान् एकान्तमें जिस कुब्जाके पति हुये, हे राजन् ! उस कुब्जाका बड़ा भारी तप है॥५२॥ हरि भगवान् आठ दिन उसके घरमें रहकर हे विदेहराट् ! लीलासे मनुष्य देहधारी भगवान् श्रीकृष्ण अपने घर आये॥५३॥

इस प्रकार मथुरामें यह कृष्णका चरित्र वर्णन किया है, यह सब पापोंको हरनेवाला, परम पुण्य और आयुको बढ़ानेवाला है ॥५४॥ मनुष्योंको चारों पदार्थका देनेवाला, श्रीकृष्णको वश करनेवाला यह चरित्र मैंने तुम्हारे सामने कहा, अब तुम क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥५५॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां यदुसौख्यं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ बहुलाश्व राजा बोला कि श्रीकृष्णका पवित्र चरित्र मैंने आपके मुखसे सुना और फिर सुननेकी इच्छा करता हूँ जैसे प्यासा जलकी इच्छा करता है ॥१॥ कंसके जन्म कर्म आपने कहे सो सुने, और केश्यादिकोंके पूर्व जन्मके कर्म भी सुने ॥ २ ॥ अब कहिये, यह धोबी कौन था, जिसको भगवान्‌ने अपने हाथसे मारा और आश्चर्य है, कि जिसकी बड़ी ज्योति श्रीकृष्णमें लीन हो गई ॥३॥ नारदजी कहते हैं हे विदेहराज! त्रेतायुगमें अयोध्यामें रामके राज्यमें गुप्त चरोंके सुनते २ एक धोबीने सीताजीकी निन्दाका वचन कहा था ॥४॥ उस धोबीकी स्त्री लड़कर दिनमें चली गई, रातमें आई, तब उसको धोबीने कहा कि मैं क्या राम हूँ ? जिन्होंने रावणके घरमें रह आई उस सीताको घरमें रख लिया, वह स्त्रीका

इतिश्रीकृष्णचरितंमथुरायांविदेहराट् ॥ सर्वपापहरंपुण्यमायुर्वर्द्धनमुत्तमम् ॥५४॥ चतुष्पदार्थदंनॄणांश्रीकृष्णवशकारकम् ॥ मयातेकथितंपृष्टं किंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥५५॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेयदुसौख्यंनामनवमोध्यायः ॥ ९ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ श्रीकृष्णचरितंपुण्यंमयातवमुखाच्छ्रुतम् ॥ पुनःश्रोतुंमनश्चाद्यतृषितोवाजलंगतः ॥१॥ कंसस्यजन्मकर्माणित्वयोक्तानिश्रुतानिमे ॥ केश्यादिदै-त्यवर्याणांपूर्वजन्मकृतंश्रुतम् ॥२॥ कोयंतुरजकःपूर्वमवधीद्यंहरिःकथम् ॥ अहोयस्यमहज्ज्योतिःकृष्णेलीनंबभूवह ॥ ३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ त्रेतायुगेत्वयोध्यायांरामराज्येविदेहराट् ॥ चाराणांशृण्वतांकश्चिद्रजकोह्यवदत्प्रियाम् ॥४॥ नाहंबिभर्मित्वांदुष्टामुशतींपरवेश्मगाम् ॥ स्त्रीलोभी बिभृयात्सीतांरामोनाहंभजेपुनः ॥५॥ इतिलोकाद्बहुमुखाद्वाक्यंश्रुत्वाथराघवः ॥ सीतांतत्याजसहसावनेलोकापवादतः ॥६॥ तस्मैदण्डंदातुमि-च्छांनचक्रेराघवोत्तमः ॥ मथुरायांद्वापरांतेरजकःसबभूवह ॥७॥ कुवाक्यदोषशांत्यर्थंतंजघानहरिःस्वयम् ॥ तदपिप्रददौमोक्षंतस्मैश्रीकरुणा-निधिः ॥ ८ ॥ दयालोःकृष्णचन्द्रस्यचरित्रंपरमाद्भुतम् ॥ एतत्तेकथितंराजन्किंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ ९ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ पुरावैवायकः कोयंनितरांमुनिसत्तम ॥ यस्मैददौचसारूप्यंश्रीकृष्णोभगवान्हरिः ॥ १० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ मिथिलानगरेपूर्ववायकोहरिभक्तिकृत् ॥ श्रीरामोद्वाहसमयेसीरध्वजनृपाज्ञया ॥ ११ ॥

लोभी राम में नहीं हूँ॥५॥ ऐसे बहुत लोगोंके मुखसे सुनकर रामचन्द्रने लोकके अपवादसे सीताको त्याग दिया ॥६॥ उसको दण्ड देनेकी इच्छा थी, किन्तु दण्ड नहीं दिया, सो द्वापरके अन्तमें मथुरामें वह धोबी हुआ ॥ ७ ॥ कुवाक्य दोष शान्तिके लिये भगवान्‌ने अपने हाथसे मारा, तो भी करुणा निधिने उसको मोक्ष देदी ॥ ८ ॥ दयालु कृष्णचन्द्रका चरित्र परम अद्भुत है, यह मैंने तुम्हारे सामने कहा, हे राजन्! अब तुम क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥ ९ ॥ तब बहुलाश्व राजा बोला-हे मुनि सत्तम ! पूर्व जन्ममें यह दरजी कौन था जिसको श्रीकृष्ण भगवान्‌ने सारूप्य मुक्ति दी ॥ १० ॥ नारदजी कहते हैं कि, पहिले मिथिला नगरीमें एक दरजी हरिभक्त रहता था, श्रीरामके विवाह समयमें सीरध्वज राजा उसकी आज्ञासे ॥ ११ ॥

राम लक्ष्मणके पहिननेके वस्त्र सी रहा था, महीन डोरेसें वस्त्र सीनेमें बड़ा चतुर था ॥ १२ ॥ करोड़ कामदेवके समान शोभावाले राम लक्ष्मणको देखकर महात्मा दरजी अपने मनमें मोहित हो गया ॥ १३ ॥ तब यह मनोरथ किया कि मैं अपने हाथोंसे राम लक्ष्मणको वस्त्र पहिनाऊँ ॥ १४ ॥ तब सबके मनकी जाननेवाले श्रीरामने मनसे वर दिया कि द्वापरके अंतमें भरतखण्डमें तुम्हारा मनोरथ पूरा होगा ॥ १५ ॥ श्रीरामचन्द्रके वरसे मथुरामें वह दरजी उत्पन्न हुआ, उन दोनोंके वस्त्र सम्हालकर पहिनाकर, उन्हीं भगवान्के सारूप्यको प्राप्त हो गया ॥१६॥ बहुलाश्व राजा फिर पूछता है कि, इस सुदामा मालीने क्या सुकृत किया था, सो कहिये, जिसके घर मनोहर कृष्ण बलराम दोनों भाई गये ॥१७॥ नारदजी कहते हैं कि, कुबेरका चैत्ररथ नामका एक वन था, उसमें फूलोंको लगानेवाला हेममाली नामका माली था ॥१८॥ वह विष्णु भक्त था, शान्त था, दानी था,

रामलक्ष्मणवेषार्थंवासांसिरचयन्किल॥लघुसूत्रैःपरिचयन्कुशलोवस्त्रकर्मसु ॥१२॥ कोटिकन्दर्पलावण्यौसुन्दरौरामलक्ष्मणौ ॥ तौवीक्ष्यवाय-
कोराजन्मोहितोभून्महामनाः ॥१३॥ अहंस्वहस्तैर्वस्त्राणितयोरंगेषुसर्वतः ॥ परिधानंकारयामिचक्रेचेत्थंमनोरथम् ॥ १४ ॥ मनसापिवरंरामो
ददौतस्मादशेषवित् ॥ द्वापरांतेभारतेचभविष्यतिमनोरथः ॥१५॥ श्रीरामस्यवरात्सोयंमथुरायांबभूवह ॥ तयोर्वैपंकारयित्वातत्सारूप्यंजगा-
मह ॥ १६ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ सुदाम्नामालिनाब्रह्मन्किंकृतंसुकृतंवद ॥ यद्गृहंजग्मतुःसाक्षाद्रामकृष्णौमनोहरौ ॥ १७ ॥ श्रीनारद-
उवाच ॥ राजराजवनंरम्यंनाम्नाचैत्ररथंशुभम् ॥ तस्यवैपुष्पवटुकोहेममालीतिनामभाक् ॥ १८ ॥ विष्णुभक्तिरतःशान्तोदानीसत्संगकृन्म-
हान् ॥ श्रीकृष्णदेवप्राप्त्यर्थंदेवपूजांचकारह ॥१९॥ समाःपंचसहस्राणिपद्मानांचशतत्रयम् ॥ नित्यंनीत्वाधूर्जटयेपुरोधृत्वाननामह ॥२०॥
एकदातिप्रसन्नोभूत्र्यंबकःकरुणानिधिः ॥ मालाकारमहाबुद्धेवरंब्रूहीत्युवाचह ॥२१॥ हेममालीतदादेवंनमस्कृत्यकृतांजलिः ॥ प्रदक्षिणीकृत्य
पुरःस्थित्वाप्राहनताननः ॥ २२ ॥ हेममाल्युवाच ॥ परिपूर्णतमंकृष्णंकचिन्नोगृहमागतम् ॥ पश्यामिदृग्भ्यांतंसाक्षात्त्वद्वरेणभवेदिदम्
॥ २३ ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ द्वापरांतेभारतेचमथुरायांमहामते ॥ मनोरथस्तेसफलो भविष्यतिनसंशयः ॥ २४ ॥

सत्संग करनेवाला था, महत् पुरुष था, उसने श्रीकृष्णकी प्राप्तिके लिये महादेवकी पूजा की थी ॥१९॥ वह तीन सौ कमलके फूल नित्य महादेवजीके सामने धरकर दण्डवत् किया करता था, ऐसे पूजा करते करते उसे पांच हजार वर्ष व्यतीत हो गये ॥२०॥ एक समय त्रिनेत्र महादेवजी करुणानिधि अति प्रसन्न होकर बोले कि हे मालाकार ! हे महाबुद्धे ! तुमको जो चाहिये सो वर मांग लो ॥ २१ ॥ तब हेममाली महादेवको दण्डवत् करके प्रदक्षिणा देकर आगे खड़ा होकर मुख नीचा करके बोला ॥ २२ ॥ कि कभी परिपूर्णतम श्रीकृष्ण मेरे घरमें आवें, उनको मैं अपनी आंखोंसे साक्षात् देखूँ, आपके वरसे यही इच्छा करता हूँ ॥२३॥ तब महादेवजी बोले हे महामते ! द्वापरके अन्तमें भरतखण्डमें मथुरा-पुरीमें तुम्हारा यह मनोरथ पूर्ण होगा, इसमें संदेह नहीं है ॥ २४ ॥

नारदजी कहते हैं, वह महामना हेममाली द्वापरके अन्तमें सुदामा नामका माली हुआ ॥२५॥ इससे रामकृष्ण दोनों सुदामा मालीके घर गये, ये शिवके वाक्यको सत्य करनेके लिये गये, हे राजन् ! अब तुम क्या सुननेकी इच्छा करते हो, वह कहो ॥ २६ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां मथुराखण्डे रजक वायक सुदामोपाख्याने दशमोऽध्यायः ॥१०॥ अब बहुलाश्व राजा प्रश्न करता है कि, इस कुब्जाने ऐसा कौनसा दुर्घट तप किया था, जिससे भगवान् श्रीकृष्ण प्रसन्न हुये, जो देवताओंको भी दुर्लभ है ॥ १ ॥ नारदजी कहते हैं करोड कामदेवसे सुन्दर रामचन्द्र पंचवटीमें विराजते थे, वहाँ रावणकी बहिन शूर्पणखा देखकर अत्यन्त मोहित हो गई ॥२॥ एक स्त्रीका व्रत जिनके ऐसे मोहे नहीं जायँ उनको राम जानकर शूर्पणखा सीताको खानेको दौड़ी ॥३॥ तब रामके छोटे भाई लक्ष्मणने क्रोध करके तीक्ष्ण खड्गसे उसके नाक कान काट लिये ॥४॥ जब नाक कटगई तब रावणके

श्रीनारदउवाच ॥ महेश्वरवरेणासौहेममालीमहामनाः ॥ मालाकारोद्वापरांतेसुदामासंबभूवह ॥ २५ ॥ तस्मादस्यगृहंसाक्षाज्जग्मतूरामके-
शवौ॥ शिववाक्यामृतंकर्तुंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥२६॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेरजकवायकसुदामोपाख्या-
ननामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ श्रीबहुलाश्वउवाच ॥ सैरन्ध्र्याकिंकृतंपूर्वंतपःपरमदुर्घटम् ॥ येनप्रसन्नःश्रीकृष्णोदेवैरपिसुदुर्लभः ॥ १ ॥
॥ श्रीनारदउवाच ॥ पंचवट्यांस्थितंरामंकोटिकन्दर्पसन्निभम् ॥ वीक्ष्यशूर्पणखानामराक्षसीमोहिताभृशम् ॥ २ ॥ निर्मोहंराघवंदृष्ट्वाऽथैक
पत्नीव्रतस्थितम् ॥ क्रोधात्सीतांभक्षयितुंधावतीरावणस्वसा ॥ ३ ॥ खड्गेनशितधारेणलक्ष्मणोराघवानुजः॥ जहारतस्याःकर्णौचनासांसद्योरु-
षान्वितः ॥४॥ छिन्ननासागतालंकांरावणायनिवेद्यतत् ॥ भूयःपुष्करतीर्थेसाजगामविमनाभृशम् ॥५॥ तपश्चक्रेशुर्पणखावर्षाणामयुतंजले ॥
ध्यायंतीत्र्यंबकंदेवंश्रीरामंवरमिच्छती ॥ ६ ॥ ततःप्रसन्नोभगवान्देवदेवउमापतिः ॥ एत्यततपुष्करंतीर्थंवरंब्रूहीत्युवाचह ॥ ७ ॥ शूर्पणखो-
वाच ॥ श्रीरामोमेवरोभूयाद्वरंदेहिसतांप्रियः ॥ त्वंदेवदेवपरमसर्वासामाशिषांप्रभुः ॥ ८ ॥ शिवउवाच ॥ अद्यैवसफलोनस्याद्वरस्तेशृ-
णुराक्षसि ॥ द्वापरांतेमाथुरेचभविष्यतिनसंशयः ॥ ९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ सैवशूर्पणखानामराक्षसीकामरूपिणी ॥ अभूच्छ्रीमथुरायांतुकु-
ब्जानाममहामते ॥ १० ॥ महादेववरेणापिश्रीकृष्णस्यप्रियाभवत् ॥ इदंमयातेकथितंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ ११ ॥

पास जाकर रोई, फिर मन जिसका बिगड़ गया, वह पुष्कर तीर्थको चली गई ॥ ५ ॥ तब उसने पुष्करके जलमें दश हजार वर्षतक तप किया, त्र्यंबक महादेवका ध्यान किया और रामचन्द्र मेरे पति हों, यह इच्छा की ॥ ६ ॥ तब भगवान् पार्वती पति प्रसन्न हुये, देव देव पुष्कर तीर्थमें आकर प्रभु बोले हे राक्षसी ! तू वर मांग ॥ ७ ॥ तब शूर्पणखा बोली कि, संतोंके पति श्रीराम मेरे पति होवें, आप देवताओंके भी परम देवता हो, सब मनोरथोंके प्रभु हो ॥८॥ तब महादेवजी बोले कि, अभी तो हे राक्षसी ! तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा नहीं, द्वापरके अन्तमें मथुरामें होगा, निश्चय इसमें संदेह नहीं ॥९॥ नारदजी कहते हैं कि, वही शूर्पणखा राक्षसी कामरूपिणी मथुरामें आकर कुब्जा हुई ॥१०॥ महादेवके वरसे श्रीकृष्णकी प्रिया, हुई, यह चरित्र मैंने तुम्हारे सामने कहा, अब फिर क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥ ११ ॥

अब बहुलाश्व राजा बोला, हे नारदजी ! यह कुवलयापीड हाथी पूर्व जन्ममें कौन था, कैसे हाथी हुआ, कैसे भगवान्में लीन हुआ, वह कहिये ॥ १२ ॥ नारदजी कहते हैं कि, बलि राजाका पुत्र महाकाम, मंदगति नामका बड़ाबली सर्व शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ एक लाख हाथियोंका बल जिसमें ऐसा हुआ ॥ १३ ॥ वह एक समय रंगयात्राके दिन मनुष्योंमें निकला, सो मतवाले हाथीकीसी भुजाओंसे जनोंको मर्दन करता चला ॥१४॥ उसकी भुजाके वेगसे त्रित नामक बूढ़े मुनीश्वर मार्गमें गिर पड़े, तब क्रोधित होकर उन्होंने बलिके पुत्रको शाप दिया ॥१५॥ कि अरे, जो तू हाथीकी तरह मदोन्मत्त रंगयात्रामें जनोंको मर्दन करता चलता है, इससे हे दुर्बुद्धी ! तू हाथी होजा ॥ १६ ॥ ऐसे मुनिने जब शाप दिया, तब कंचुककी (कांचुली) की तरह देह जा पड़ी, तेज भ्रष्ट हो गया ॥ १७ ॥ जल्दीही मुनिके प्रभावको जाननेवाला दैत्य हाथ जोड़ परिक्रमा कर, दण्डवत करके त्रित

॥ बहुलाश्वउवाच ॥ कोयंकुवलयापीडःपूर्वजन्मनिनारद ॥ कथंगजत्वमापन्नःश्रीकृष्णेलीनतांगतः ॥ १२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ बलिपुत्रो महाकायोनाम्नामन्दगतिर्बली ॥ सर्वशस्त्रभृतांश्रेष्ठोलक्षनागसमोबली ॥१३॥ एकदानिर्गतःसोपिरंगयात्रांजनेषुच॥मत्तेभवज्जनान्वेगाद्भुजाभ्यां परिमर्दयन् ॥ १४ ॥ तद्बाहुवेगात्पतितःपथिवृद्धस्त्रितोमुनिः ॥ क्रुद्धःशशापतंमत्तंबलिष्ठंबलिनन्दम् ॥ १५ ॥ त्रितउवाच ॥ गजवत्त्वंमदोन्मत्तोभूजनान्परिमर्दयन् ॥ विचरन्रंगयात्रायांत्वंगजोभवदुर्मते ॥१६॥ एवंशप्तस्तदादैत्योनाम्नामन्दगतिर्बली ॥ पतत्कंचुकवद्देहोभ्रष्टतेजा बभूवह ॥१७॥ मुनेःप्रभाववित्सद्योदैत्योभूत्वाकृतांजलिः ॥ नत्वाप्रदक्षिणीकृत्यत्रितंमुनिमुवाचह ॥ १८ ॥ मन्दगतिरुवाच ॥ हेमुनेहेकृपासिन्धोत्वंयोगीन्द्रोद्विजोत्तमः ॥ गजत्वान्मेकदामुक्तिर्भविष्यतिवदाशुमाम्॥ १९॥त्वादृशानांसतांमाभूद्धेलनंमेक्वचिन्मुने॥ त्वादृशामुनयोब्रह्मन्समर्थावरशापयोः ॥ २० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंप्रसादितस्तेनत्रितोनाममहामुनिः ॥ गतक्रोधोब्रवीद्दैत्यंकृपालुर्ब्राह्मणोत्तमः ॥ २१ ॥ त्रितउवाच ॥ वचनंमेमृषानस्यात्त्वद्भक्त्याहर्षितोस्म्यहम् ॥ तेदास्यामिवरंदिव्यंदेवानापिदुर्लभम् ॥ २२ ॥ माशोचंकुरुदैत्येन्द्रमथुरायां हरेः पुरि ॥ श्रीकृष्णहस्तात्तेमुक्तिर्भविष्यतिनसंशयः ॥ २३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ सोयंमन्दगतिर्दैत्योगजोभूद्विंध्यपर्वते ॥ नाम्नाकुवलयापीडोनागायुतसमोबले ॥ २४ ॥

मुनिसे बोला ॥१८॥ हे मुने ! हे कृपासिन्धो ! आप योगीन्द्र हो, द्विजोंमें श्रेष्ठ हो, गजदेहसे मेरी कब मुक्ति होगी, यह कहिये ॥१९॥ हे मुने ! कृपासिन्धो ! आप जैसे संतोंका अपराध मुझसे कभी न हो, आप जैसे मुनिवर शाप देनेमें समर्थ हैं ॥ २० ॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे त्रित नाम महामुनिको जब उसने प्रसन्न किया, तब मुनिका क्रोध जाता रहा, तब दयालु ब्राह्मणोत्तम बोले ॥ २१ ॥ मेरा वचन असत्य नहीं, किन्तु तेरी भक्तिसे मैं प्रसन्न हुआ तुमको देवताओंको भी दुर्लभ ऐसा दिव्य वर देता हूँ ॥२२॥ हे दैत्येन्द्र ! शोच मत कर, हरिकी पुरी मथुरामें श्रीकृष्णके हाथसे तुम्हारी मुक्ति होगी, इसमें सन्देह नहीं है ॥ २३ ॥ अब नारदजी कहते हैं, वही मन्दगति दैत्य विन्ध्याचल पर्वतमें कुवलयापीड-नाम का हाथी हुआ, जिस कुवलयापीडमें दश हजार हाथियोंका बल हुआ ॥ २४ ॥

उस कुवलयापीडको जरासंधने बलपूर्वक लाख हाथियोंसे पकड़ा और उस हाथीको जरासंधने कंसको दहेजमें दिया, हे विदेह राट् ! ॥२५॥ त्रित ऋपिके वाक्यसे उसका तेज श्री
कृष्णमें लीन हो गया, यह मैंने तुम्हारे सामने कहा, अब क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥ २६ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां कुब्जा कुवलयापीड वर्णनं
नामैकादशोध्यायः ॥११॥ बहुलाश्व राजा पूछता है कि, चाणूरादिक जो मल्ल थे, वे पूर्व जन्ममें कौन थे, जो यहाँ आये, और जिनका श्रीकृष्णचन्द्रसे युद्ध हुआ ॥१॥ तब नारदजी
कहते हैं कि, हे राजन् ! पहले अमरावती पुरीमें उतथ्य नामके महामुनि बृहस्पतिजीके भाई थे, उनके पांच पुत्र हुये, जिनकी कामदेवके समान प्रभा थी ॥ २ ॥ उन्होंने पढी हुई
विद्या भी छोडदी, और पढना भी छोड़ दिया और जपभी छोड़ दिया, और वे मदोद्धत बलिके यहाँ जाकर मल्लयुद्ध सीखने लगे ॥ ३ ॥ ब्रह्मकर्मसे परिभ्रष्ट हुये, वेदके अभ्यासमे

गृहीतोमागधेन्द्रेणबलाल्लक्षगजैर्वने ॥ सोयंदत्तस्तुकंसायपारिबर्हेविदेहराट् ॥ २५॥ त्रितवाक्यात्तस्यधामश्रीकृष्णेलीनतांगतम् ॥ इदंमयाते
कथितंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ २६ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेकुब्जाकुवलयापीडवर्णनंनामैकादशोऽध्यायः
॥ ११ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ चाणूराद्याश्चयेमल्लास्तेकेपूर्वमिहागताः ॥ अहोश्रीकृष्णचन्द्रेणयेषांयुद्धंबभूवह ॥ १ ॥ श्रीनारदउवाच ॥
राजन्पुरामरावत्यामुतथ्योस्तिमहामुनिः ॥ तस्याभवन्पंचपुत्राःकामदेवसमप्रभाः ॥ २ ॥ हित्वाविद्यांचाध्ययनंजपंतेनसहैवते ॥
गत्वाबलेर्मल्लयुद्धंसदाशिक्षन्मदोद्धताः ॥ ३ ॥ ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टान्वेदाध्ययनवर्जितान् ॥ रुषाप्राहसुतान्मत्तानुतथ्योमुनिसत्तमः ॥ ४ ॥
उतथ्यउवाच ॥ शमोदमस्तपःशौचंक्षांतिरार्जवमेवच ॥ ज्ञानंविज्ञानमास्तिक्यंवैश्यकर्मस्वभावजम् ॥ ५ ॥ शौर्यंतेजोधृतिर्दाक्ष्यंयुद्धेचाप्यप-
लायनम् ॥ दानमीश्वरभावश्चक्षात्रंकर्मस्वभावजम् ॥ ६ ॥ कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यंवैश्यकर्मस्वभावजम् ॥ परिचर्यात्मकंकर्मशूद्रस्यापिस्वभाव-
जम् ॥ ७ ॥ ब्रह्मकर्मपरित्यक्ताभवंतोब्रह्मणःसुताः ॥ मल्लयुद्धंक्षात्रयुद्धंकथंकुरुतदुर्जनाः ॥ ८ ॥ तस्माद्भवंतोभूयासुर्मल्लावैभारताजिरे॥असुरा-
णांप्रसंगेनदुर्जनाभवताशुहि ॥९॥ श्रीनारदउवाच ॥ उतथ्यस्यसुतास्तेवैजातामल्लामहीतले ॥ श्रीकृष्णांग स्पर्शमात्रात्परंमोक्षंययुर्नृप॥१०॥

परिभ्रष्ट हुये, उनको मुनिसत्तम उतथ्य बोले ॥४॥ शम, दम, तप, शौच, शान्ति, आर्जव, ज्ञान, विज्ञान, आस्तिक्य, ये ब्राह्मणके स्वाभाविक कर्म हैं ॥ ५ ॥ शूरता, तेज, धैर्य
चतुराई, युद्धमें नहीं भागना, दान, ईश्वरकी भक्ति, तेज, ये क्षत्रीके स्वाभाविक कर्म हैं ॥६॥ खेती, व्यापार, गौओंकी रक्षा, ये वैश्योंके स्वाभाविक कर्म, धर्म हैं, सेवा करना यह
शूद्रका स्वाभाविक कर्म है ॥ ७ ॥ तुम ब्राह्मणके पुत्र हो, ब्रह्म कर्मका परित्याग करके क्षत्रीके कर्मको तुम कैसे करते हो ॥८॥ इससे तुम भरतखण्डमें मल्ल होओ, असुरोंके संगसे
जल्दी दुर्जन होओगे ॥ ९ ॥ नारदजी कहते हैं, वे उतथ्यके पुत्र मल्ल हुये, हे नृप ! श्रीकृष्णके अंग स्पर्शसे मोक्षको प्राप्त हो गये ॥ १० ॥

चाणूर, मुष्टिक, कूट, शल, तोशल, इनका चरित्र तो कहा, अब क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥११॥ फिर बहुलाश्व पूछता है, कंसके छोटे भाई आठ कंक न्यग्रोधादिक पूर्व जन्ममें कौन थे, हे मुनि ! सो कहिये ॥१२॥ नारदजी कहते हैं कि, अलकापुरीमें देव यक्ष नामका एक यक्ष था, वह बड़ा ज्ञानी ज्ञानमें तत्पर था, शिवकी भक्तिसे उसकी बड़ी कान्ति थी ॥१३॥ उसके आठ पुत्र हुये, देव कूट, महागिरि, गंड, दंड, प्रचंड, खंड, अखंड और पृथु ॥१४॥ एक समय महादेवके पूजनके लिये पिताने भेजें कि, तुम अरुणोदय पर हजार कमल लाओ ॥१५॥ तब ये मान सरोवरसे फूल लाये, वे बडे सुगन्धित थे, भ्रमर जिनपर गुञ्जार करते थे, उनको सुगन्धिके लोभसे सूंघकर बादमें इन्होंने पिताको दिये ॥१६॥ जूठे करनेके दोषसे शिव पूजाके तिरस्कारसे तीन जन्म-असुर योनिको प्राप्त हुये ॥१७॥ सो वे कल्याण करनेवाले बलदेवजीके हाथोंसे मोक्षको प्राप्त हो गये, हे विदेह राज ! ॥ १८ ॥ हे

चाणूरोमुष्टिकःकूटःशलस्तोशलएवच ॥ एषांचरित्रंकथितंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ ११ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ कंसानुजाभ्रातरोऽष्टौ कंकन्यग्रोधकादयः ॥ तेकेपूर्वंवदमुनेयेपिमोक्षंपरंगताः ॥ १२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अलकायांपुरायक्षोदेवयक्षइतिस्मृतः ॥ ज्ञानीज्ञान परोमान्यःशिवभक्त्यामहाद्युतिः ॥ १३ ॥ तस्यचाष्टौसुताजातादेवकूटोमहागिरिः ॥ गण्डोदण्डःप्रचण्डश्चखण्डोऽखण्डःपृथुस्तथा ॥ १४ ॥ एकदाशिवपूजायांदेवयक्षेणनोदिताः ॥ सहस्रंपुंडरीकाणिचाहर्तुमरुणोदये ॥ १५ ॥ पुष्पाणिमानसान्नीत्वाशब्दितानिमधुव्रतैः ॥ आघ्रा- यगंधलोभेनददुस्तेजनकायवै ॥ १६ ॥ उच्छिष्टीकृतदोषेणशिवपूजातिरस्कृताः ॥ आसुरींयोनिमापन्नामूढास्तेजन्मभिस्त्रिभिः ॥ १७ ॥ हस्ताभ्यांशंकराभ्यांचबलदेवस्यमैथिल ॥ परंमोक्षंगतास्तेवैदोषान्मुक्ताविदेहराट् ॥ १८ ॥ कंसानुजानांव्याख्यानंपूर्वजन्मभवंनृप ॥ इदं मयातेकथितंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ १९ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ कोयंपुरापंचजनोदैत्यःशंखवपुर्द्धरः ॥ तस्यशंखोबभौब्रह्मञ्छ्रीकृष्णकर पंकजे ॥ २० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ पुरैवैतान्युपांगानिचक्रादीनिविदेहराट् ॥ त्रैलोक्यनाथस्यहरेर्बभूवुस्तेजसाहताः ॥ २१ ॥ तेषांशंखः पांचजन्यःप्राप्तोराजन्महत्पदम् ॥ पपौतन्मुखलग्नोसौकृष्णस्याधरामृतम् ॥ २२ ॥ अकरोच्चैकदामानंमनसिप्राहशंखराट् ॥ गृहीतोहंहि हरिणाराजहंससमद्युतिः ॥ २३ ॥

राजन् ! कंसके भाइयोंका पूर्वजन्मका व्याख्यान तुम्हारे सामने वर्णन किया, अब तुम क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥१९॥ तब बहुलाश्व राजाने पूछा कि यह पंच दैत्य शंख शरीर-धारी पूर्व जन्ममें कौन था, जिसका शंख श्रीकृष्णके हस्त कमलमें शोभित होता है ॥२०॥ तब नारदजी बोले कि हे विदेह राट् ! पहिले जो चक्रादिक भगवान्के उपांग थे, त्रिलोकी के नाथ जो हरि उनके तेजसे ताडित थे ॥ २१ ॥ उनके बीचमें हे राजन् ! यह पांच जन्य शंख महत् पदको प्राप्त होगया, क्योंकि यह शंख भगवान्के मुखमें लगकर भगवान्का अधरामृत पीने लगा ॥ २२ ॥ एक समय उस शंखने अपने मनमें बड़ा मान किया, मनमें बोला कि, मैं शंखोंका राजा हूं, मुझको हरिने ग्रहण किया है, राजहंसके बराबर मेरी कान्ति है ॥ २३ ॥

दक्षिणावर्त जो मैं हूँ, मुझे श्रीकृष्ण विजयके समय बजाते हैं, और जो लक्ष्मीजीको दुर्लभ है, वह अधरामृत मैं पीता हूँ ॥२४॥ इसीसे मैं सबमें मुख्य हूँ, रात दिन अधरामृत पीता
हूँ, हे विदेह राट् ! ऐसे पांच जन्यको अभिमान हुआ ॥२५॥ तब लक्ष्मीजीने उसको क्रोधसे शाप दिया कि, हे दुर्बुद्धे ! तू दैत्य हो जा, ऐसे वह पांच जन्य शंख समुद्रमें पंच जंन
नामक दैत्य हुआ॥२६॥ सो वैर भावसे फिर देवेशको प्राप्त हुआ शंखोंका ईश्वर, जिसकी ज्योति भगवान्में लीन हुई, फिर करमें शोभित हुआ, हे राजन् ! उस शंखका तुम अहो-
भाग्य जानो, अब तुम क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥ २७ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां चाणूरादिकंस भ्रातृपंचजन पूर्वाख्यानं नामद्वादशोऽध्यायः ॥१२॥
बहुलाश्व राजा बोला—हे मुनि सत्तम! आगे यदूत्तम श्रीकृष्णने अपनी जातिके यादवोंको बसाकर मथुरामें क्या लीला की, सो कहिये ॥१॥ नारदजी कहते हैं कि, परिपूर्णतम भगवान्

श्रीकृष्णोदक्षिणावर्तंदध्मौमांविजयेसति ॥ यद्दुर्लभंचाब्धिपुत्र्याःश्रीकृष्णस्याधरामृतम्॥२४॥तत्तस्मात्तत्सर्वंमुख्योस्मिपिबाम्यहमहर्निशम् ॥
इतिमानयुतंशंखंपांचजन्यंविदेहराट् ॥२५॥ शशापलक्ष्मीस्तंक्रोधात्त्वंदैत्योभवदुर्मते ॥ सोयंपंचजनोनामदैत्योभूत्सरितांपतौ ॥ २६ ॥ वैर
भावेनदेवेशंपुनःप्राप्तोदरेश्वरः ॥ ज्योतिर्लीनंतुदेवेशेवपुर्यस्यकरेबभौ॥अहोभाग्यंविद्धितस्यकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि॥२७॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां
श्रीमथुराखण्डेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादेचाणूरादिकंसभ्रातृपञ्चजनपूर्वाख्यानंनामद्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ अग्रेचकार
किंकार्यंमथुरायांयदूत्तमः ॥ निवासयित्वास्वज्ञातीन्वदैतन्मुनिसत्तम ॥ १ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ परिपूर्णतमःसाक्षाद्भगवान्भक्तवत्सलः ॥
सस्मारगोकुलंदीनंगोपीगोपालसंकुलम् ॥ २ ॥ एकदाहूयरहसिसखायंभक्तमुद्धवम् ॥ उवाचभगवान्देवःप्रेमगद्गदयागिरा ॥ ३ ॥ श्रीभग-
वानुवाच ॥ गच्छशीघ्रंव्रजंहेसखेसुन्दरंश्रीलताकुंजपुंजादिभिर्मंडितम् ॥ शैलकृष्णप्रभाचारुवृंदावनंगोपगोपीगणैर्गोकुलंसंकुलम् ॥४॥ एक-
पत्रंतुनंदायवैदीयतांवाद्वितीयंयशोदाकरेएवभोः ॥ वातृतीयंत्विदंराधिकायैसखेतत्रगत्वाहितन्मंदिरंसुंदरम् ॥५॥ वाचतुर्थंसखिभ्यःशिशुभ्यः
शुभंकौशलंदीयतांपत्रमेवंपृथक्च ॥ गोपिकानांशतेभ्यश्चयूथेभ्यउन्मोहितानांचदेयानिपत्राणिच ॥६॥ मेपितानंदराजोघृणीमन्मनामेचमाता
यशोदास्मरत्याशुमाम् ॥ वाक्यवृन्दैःशुभैर्नीतिवित्त्वंतयोर्मेपरांप्रीतिमाराद्वयोरावह ॥ ७ ॥

साक्षात् भक्त वत्सलने गोप गोपियों सहित दीन जो गोकुल है, उसको स्मरण किया ॥२॥ एक दिन सखा परम भक्त उद्धवको बुलाकर भगवान् प्रेमसे गद्गदवाणी बोले ॥३॥ हे
सखे ! तुम व्रजको जाओ, कैसा व्रज है, जो व्रजलता कुञ्ज निकुञ्जके पुञ्जसे आवृत हैं, श्रीयमुनाजी और गोवर्द्धनकी प्रभासे मनोहर वृन्दावन है, गोप गोपियोंके गणोंसे आवृत गोकुल
है ॥४॥ एक पत्र तो नन्दजीको देना, दूसरा यशोदाजीको देना और तीसरा राधिकाजीको उनके सुन्दर महलमें जाकर देना ॥५॥ वाणीकी चतुराईसे गोपियोंसे, गोपोंसे, माता
पितासे कुशल पूछकर सबको चौथा पत्र देना, अत्यन्त मोहित जो गोपियोंके शत यूथ उनको पत्र देना ॥६॥ मेरे पिता नन्दराज मुझको अति स्नेह करते हैं, मुझमें उनका मन है,
मेरी माता यशोदा रात दिन मेरा ही स्मरण करती है, नीतिके सुन्दर वचनोंसे उनको मेरी परम प्रीति धारण कराना, क्योंकि तुम नीतिको जाननेवाले हो ॥ ७ ॥

मेरी प्रिया राधिका मेरे वियोगमें आतुर मेरे विना सम्पूर्ण जगत्को सूना मानती है, मेरे वियोगके दुखको मेरे वचनोंसे छुड़ाना, तुम कहनेमें बड़े चतुर हो ॥८॥ व्रजमें सुदामादिक गोपबालक मेरे सखा मेरे विना प्रेमातुर हो रहे हैं, उनको मित्रकी तरह सुख देना, थोड़े ही दिनोंमें मैं व्रजमें आऊँगा ॥९॥ गोपियाँ मेरे वियोगमें आतुर हैं, जिनके मुझमें ही मन, देह, और प्राण हैं, मेरे लिये लोक व्यवहार त्याग दिये हैं जिन्होंने, उनको मैं कैसे नहीं धारण करूँ ॥१०॥ वे अब प्राणोंको त्याग करनेके लिये उद्यत हैं, हे उद्धव ! उन्होंने बड़े कष्टसे आजतक प्राण धारण किये हैं, उनको मेरे वियोगकी मानसी व्यथा है, उस व्यथाको मेरे कहे हुये वाक्योंसे दूर करना, तुम वाणियोंको कहनेमें बड़े चतुर हो ॥ ११ ॥ जिस रथमें बैठकर मैं व्रजसे आया था, उसी रथमें बैठकर वे ही घोड़े, वे ही सारथी वे ही घंटा, मेरा सा ही रूप, मेरा ही पीताम्बर, मेरी ही वैजयन्ती माला, मेरा ही हजार दलका कमल लेकर तुम जाओ ॥१२॥ दिव्य रत्नोंकी प्रभासे मण्डित मेरे मकराकृत कुण्डल पहिन जाओ, करोड़ बाल सूर्य कासा जिसका तेज ऐसी कौस्तुभ मणिको पहिन जाओ, मेरी

मत्प्रियाराधिकामद्वियोगातुरामन्यतेमांविनाखंजगन्मोहतः ॥ मद्वियोगाधिमासांमदुक्तैःपदैर्मोचयत्वंभवान्दक्षिणोवाक्पथे ॥ ८ ॥ गोपबालाःसुदामादयोमत्प्रियामांसखायंविनातेपिमोहातुराः ॥ देहितेषांसुखंमित्रवच्छ्रीव्रजेस्वल्पकालेनतत्रागमिष्याम्यहम् ॥ ९ ॥ गोपिकामद्वियोगाधिवेगातुरामन्मनस्काश्चमत्प्राप्तदेहासवः ॥ यामदर्थेचसंत्यक्तलोकाबलास्ताःकथंनात्रमंत्रिन्बिभर्मिस्वतः ॥ १० ॥ ताअसून्त्यक्तुमत्रोद्यताउद्धवयाभिरद्यापिकृच्छ्रैर्धृताश्चासवः ॥ मद्वियोगाधिमासांमदुक्तैःपदैर्मोचयत्वंभवान्दक्षिणोवाक्पथे ॥ ११ ॥ येनपूर्वंव्रजादागतोहंसतंत्वंरथंसाश्वसूतंरणद्घंटिकंवै ॥ मेचसारूप्यमद्यैवपीतांबरंवैजयंतीसहस्रच्छदंपंकजम् ॥ १२ ॥ कुंडलेदिव्यरत्नप्रभामंडितेकोटिबालार्कदीप्तंमणिंकौस्तुभम् ॥ मेमहानादिनींचारुवंशींशुभांपुष्पयुक्तांचयष्टिजगन्मोहिनीम् ॥ १३ ॥ चंदनंसुंदरंदिव्यगंधावृतंबर्हमच्छादिवेषंक्कणन्नूपुरम् ॥ मौलिमेवंगृहाणांगदेउद्धवगच्छगच्छाशुचाद्यैवमद्वाक्यतः ॥ १४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्तउद्धवःशीघ्रंनमस्कृत्यकृतांजलिः ॥ कृष्णंप्रदक्षिणीकृत्यरथारूढोव्रजंययौ ॥१५॥ कोटिशःकोटिशोगावोयत्रयत्रमनोहराः ॥ श्वेतपर्वतसंकाशादिव्यभूषणभूषिताः ॥१६॥ पयस्विन्यस्तरुण्यश्चशीलरूपगुणैर्युताः ॥ सवत्साःपीतपुच्छाश्चव्रजंत्योभव्यमूर्तिकाः ॥१७॥ घंटामंजीरझंकाराःकिंकिणीजालमंडिताः ॥ हेमतुल्याहेमशृंग्योहारमालाःस्फुरत्प्रभाः ॥ १८ ॥

ही सुन्दर वंशीको ले जाओ, जो वंशी मनोहर नाद वाली है, मेरी ही फूलोंकी जगन्मोहिनी छड़ीको ले जाओ ॥१३॥ मेरा ही सुगन्धित चन्दन लगा जाओ, जिस चन्दनमें दिव्य गन्ध है, मेरे ही बजने नूपुर पहिन जाओ, मेरा मोरमुकुट ले जाओ, मेरे ही बाजूबंद, लें लो, हे उद्धव ! मेरे कहनेसे जल्दी जाओ ॥१४॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे जब कहा तभी उद्धवजी जल्दी ही हाथ जोड़ नमस्कार करके श्रीकृष्णकी परिक्रमा करके रथमें बैठकर व्रजमें आये ॥१५॥ करोड़ों मनोहर गौएं जहाँ घूमती हैं, जो श्वेत पर्वत सी हैं, दिव्य गहनोंसे भूषित हैं ॥१६॥ बहुत दूधवाली तरुणी शील रूप गुणोंसे युक्त, बछड़े जिनके साथमें हैं, भव्य मूर्ति पीली जिनकी पूंछ है ॥ १७ ॥ घंटा मजीरोंके झंकारसे झंकृत हैं, किंकिणियोंके जालोंसे मंडित हैं, सोनके रंगकी स्वर्णके सींग जिनके कोई सुवर्णसी है, हार माला पहिने जिनकी कान्तिकिरण छूट रही हैं ॥ १८ ॥

कोई २ श्वेत लाल रंगकी मिली हुई है, कोई हरी है, कोई ताम्रके रंगसी है, कोई पीली है, कोई श्याम है, कोई चितकबरी है, कोई धूमरी कोई कोयलवर्णी जहाँ अनेक प्रकारकी गौएं विचरती हैं ॥ १९ ॥ अथाह जिनमें दूध हैं अर्थात् दूधकी समुद्र, तरुणियोंके करोंसे चिह्नित हैं, हिरणकी तरह कूदते हुये बछड़ोंसे शोभित बड़ी शुभ हैं ॥ २० ॥ इधर उधर, गौओंके समूहमें जहाँ वृषभ डोलते हैं, बड़ी मोटी गर्दन वाले, बड़े सींगों वाले धर्म धुरन्धर हैं ॥२१॥ बेंत लिये गोप घूमते हैं, वे श्याम सुन्दर हैं, वंशी बजाते मदनमोहन नामके रागोंसे श्रीकृष्ण लीलाको गाते हैं ॥ २२ ॥ दूरसे आय उद्धवको श्रीकृष्ण आये ऐसा जानकर व्रजके बालक कृष्णदर्शनकी लालसासे परस्पर बोले ॥ २३ ॥ निश्चय नंदकुमार आया है, जो हमारा सखा है, मेघसा श्याम, पीताम्बर धारण किये, वनमाला पहिने, मकराकृत कुण्डल पहिने हैं ॥ २४ ॥ कौस्तुभ मणि धारण किये, हजार दलका कमल लिये,

पाटलाहरितास्ताम्राःपीताःश्यामविचित्रिताः ॥ धूम्राःकोकिलवर्णाश्चयत्रगावस्त्वनेकधा ॥ १९ ॥ समुद्रवद्दुग्धदाश्चतरुणीकरचिह्निताः ॥ कुरंगवद्विलंघद्भिर्गोवत्सैर्मंडिताःशुभाः ॥२०॥ इतस्ततश्चलंतश्चगोगणेषुमहावृषाः ॥ दीर्घकन्धरशृंगाढ्यायत्रधर्मधुरंधराः ॥ २१ ॥ गोपा-लावेत्रहस्ताश्चश्यामावंशीधरापराः ॥ कृष्णलीलाःप्रगायंतोरागैर्मदनमोहनैः ॥ २२ ॥ दूरात्तमागतंवीक्ष्यज्ञात्वाकृष्णंव्रजार्भकाः ॥ ऊचुःपर-स्परंतेवैकृष्णदर्शनलालसाः ॥ २३ ॥ गोपाऊचुः ॥ नंदसूनुःकिलायातिसखायोयंनसंशयः ॥ मेघश्यामःपीतवासाःस्रग्वी कुंडलमंडितः ॥२४॥ कौस्तुभीमण्डलीबिभ्रत्सहस्रदलपंकजम् ॥ तदेवमुकुटंबिभ्रत्कोटिमार्तंडसन्निभम् ॥२५॥ तएवाश्वारथःसोयंकिंकिणीजालमंडितः ॥ बलोनास्तिरथेचास्मिन्नेकाकीनंदनंदनः ॥ २६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंवदंतोगोपालाःश्रीदामाद्याविदेहराट् ॥ कृष्णाकृतिकृष्णसखमा-ययुःसर्वतोरथम् ॥ २७ ॥ कृष्णोनास्तीतिवदतःकोयंसाक्षात्तदाकृतिः ॥ तान्नमस्कृत्यौपगविःपरिरभ्यावदत्पतिम् ॥ २८ ॥ उद्धवउवाच ॥ गृहाणपत्रंश्रीदामन्कृष्णदत्तंनसंशयः ॥ शोचंमाकुरुगोपालैःकुशल्यास्तेहरिःस्वयम् ॥ २९ ॥ यादवानांमहत्कार्य्यंकृत्वाथसबलः प्रभुः ॥ स्वल्पकालेनचात्रापिभगवानागमिष्यति ॥ ३० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ पठित्वातद्धस्तपत्रंश्रीदामाद्याव्रजार्भकाः ॥ भृशमश्रूणिमुंचंतः प्राहुर्गद्गदयागिरा ॥ ३१ ॥

और देखो वही मुकुट है, जिसमें करोड़ सूर्य कासा तेज है ॥ २५ ॥ वही रथ, वही सारथी, वही घोड़े हैं, बलदेव तो इस रथमें है नहीं, केवल अकेला श्रीकृष्ण ही है ॥ २६ ॥ नारदजी कहते, हैं, ऐसे कहते हुये श्रीदामादिक गोपाल कृष्णकी सी आकृति वाले कृष्णके सखा उद्धवके रथके पास चारों ओरसे आये ॥२७॥ कृष्ण तो नहीं है, यह कृष्णकी आकृति वाला कौन है, ऐसा कहते हुये उनको उद्धवजी नमस्कार करके उनसे प्यारकर कृष्णकी वार्ता करने लगे ॥२८॥ उद्धवजी बोले, हे श्रीदामाजी ! यह अपने मित्रका दिया हुआ पत्र लेओ, यह श्रीकृष्णने दिया है, गोपों सहित तुम शोच मत करो, श्रीकृष्ण बहुत प्रसन्न हैं ॥ २९ ॥ बलदेवके साथ यादवोंका महत्कार्य करके जल्दी ही बलदेवजी सहित श्रीकृष्ण यहाँ आयेंगे ॥३०॥ नारदजी कहते हैं, श्रीदामादिक व्रजके बालक श्रीकृष्णके हाथके पत्रको पढ़कर आसुओंको छोड़ते गद्गदवाणीसे बोले ॥ ३१ ॥

हे पांथ ! हे बटोही ! हमने निर्मोही नन्दके पुत्रमें तन, मन, धन, बल, वैभव, बुद्धि धारण की थी, उस श्रीकृष्णके विना यह व्रज सब सूना हो गया और एक व्रजही क्या, सब जगतही सूना हो गया है ॥ ३२ ॥ हे महामते ! हमको कृष्णके विना एक क्षण एक युगके बराबर, एक घटी एक मन्वन्तरके बराबर, एक पहर कल्पके बराबर और दिन दो परार्द्धके बराबर दुःखसे बीतते हैं ॥ ३३ ॥ रातदिन हम उसको भूलते नहीं हैं, न जाने वह कौनसी दुष्ट घड़ी थी, जिस घड़ीमें वह यहाँसे गया, सदाही हम तो उसका अपराधही किया करते हैं, तो भी वह अपनी मित्रताके नाते हम व्रजवासियोंका मन हरता है ॥ ३४ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां उद्धवागमनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ कृष्णके विरहमें आतुर प्रेममें भरे गोपों से उद्धव जी प्रेमसे बोले ॥ १ ॥ मैं श्रीकृष्णका दास हूँ, उनका प्यारा हूँ, एकान्ती हूँ, अर्थात् सदा उनके गुप्त कामोंको करनेवाला हूँ, तुम्हारी कुशल देखनेके लिये हरिने भेजा है ॥ २ ॥ मथुरापुरीमें जाकर तुम्हारा विरह बताकर उनके चरणोंमें शिर धरकर नेत्रोंके आंसूओंसे उनके चरणोंको

॥ गोपाऊचुः ॥ पांथेतिनिर्मोहिनिनन्दसूनौतनुर्विभूतिश्वधनंबलंच ॥ सर्वांधियःकृष्णमृतेव्रजोनःशून्यंप्रजातंहिजगत्समस्तम् ॥ ३२ ॥
क्षणोयुगत्वंचघटीमहामतेप्रयातिमन्वन्तरतांव्रजौकसाम् ॥ यामश्चकल्पंचदिनंविनाहरिंवियोगदुःखैर्द्विपरार्द्धतांगतम् ॥३३॥ अहर्निशंतंनहिवि-
स्मरामहेदुष्टाघटीसाप्रययौययाहियः ॥ मनोहरन्नुद्धवनोवनौकसांवयस्यभावेनसाकृतदागसाम् ॥३४॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमथुराखण्डे
नारदबहुलाश्वसंवादउद्धवागमनंनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंप्रेमभरान्गोपाञ्छ्रीकृष्णविरहातुरान् ॥ उवाच
प्रेमसंयुक्तउद्धवोगतविस्मयः ॥१॥ उद्धवउवाच ॥ अहंश्रीकृष्णदासोस्मितत्प्रियस्तद्रहस्करः ॥ भवतांकुशलंद्रष्टुंप्रेषितोहरिणात्वरम् ॥ २ ॥
पुरींगत्वाथहरयेनिवेद्यविरहंतुवः ॥ तंप्रसन्नंकरिष्यामितदंघ्रौनेत्रवारिभिः ॥ ३ ॥ नीत्वाहरिंहिभवतांसमीपंहेव्रजौकसः ॥ आगमिष्याम्य-
हंशीघ्रंशपथोनमृषामम ॥४॥ यूयंप्रसन्नाभवतमाशोकंकुरुताथवै ॥ अस्मिन्व्रजेपिगोपालाद्रक्ष्यथश्रीपतिंहरिम् ॥५॥ श्रीनारदउवाच ॥ एव-
माश्वास्यगोपालान्रथस्थोयदुनंदनः ॥ श्रीदामाद्यैश्चगोपालैःसहितोहर्षपूरितः ॥६॥ विवेशनन्दनगरंसूर्येसिन्धुगतेसति ॥ आगतंह्युद्धवंश्रुत्वान-
न्दराजोमहामतिः ॥ परिरभ्यमुदाशीघ्रंपूजयामासहर्षितः॥७॥कशिपुस्थंस्थितंशांतमुद्धवंकृतभोजनम् ॥ कशिपुस्थोनंदराजःप्राहगद्गदयागिरा
॥ ८ ॥ नंदउवाच ॥ कच्चित्सखामेपुरिशूरसेनआस्तेस्वपुत्रैकुशलीमहामते ॥ कंसेमृतेयादवपुंगवानांजातंसखेसौख्यमतःपरंभुवि ॥ ९ ॥

धोकर श्रीकृष्णको प्रसन्न करूँगा ॥ ३ ॥ हे व्रजवासियो ! भगवान्को लेकर जल्दीही तुम्हारे पास आऊँगा, मेरी यह प्रतिज्ञा झूंठी नहीं है ॥ ४ ॥ तुम प्रसन्न रहो शोच मत करो, इसी व्रजमें तुम समस्त गोप उन श्रीपति श्रीकृष्णको देखोगे ॥ ५ ॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे रथमें बैठेही बैठे उद्धव गोपोंको समझाकर श्रीदामादिक गोपोंको साथ लेकर हर्षमें पूर्ण हो नन्दनगरमें आये ॥६॥ सूर्यास्त होनेपर संध्याके समय नन्दनगरमें आये, उद्धवको आया सुनकर महाबुद्धिको नन्दराज प्रसन्न होकर मिले, उनका सत्कार किया ॥७॥ उद्धवजीको भोजन कराकर शान्त होकर शय्यापर बैठाये, नन्दराजभी भोजन करके शय्यापर बैठे, तब गद्गद वाणीसे नन्दजी बोले ॥ ८ ॥ कहो उद्धवजी ! हमारे सखा वसुदेवजी अपने पुत्रोंसहित प्रसन्न हैं ? कंसके मरणोपरांत श्रेष्ठ यादवोंको अब भविष्य में पृथ्वीपर सुख होगा ॥ ९ ॥

मैं यह पूछता हूँ कि, बलदेवसहित श्रीकृष्ण अपनी माता यशोदाकी भी कभी याद करते हैं, गोपोंकी, गोवर्द्धनकी, गौओंके गणकी, व्रजकी, वृन्दावनकी, पुलिन्दोंकी, यमुनाकी कभी याद करते हैं, या नहीं ॥ १० ॥ फिर बोले कि हाय दैव ! मैं श्यामसुन्दर कमलदल लोचन, बिम्बके सदृश होठवाले बलदेवसहित बालकोंके साथ इस महलके आंगनमें अथवा चौराहेमें खेलते अपने पुत्रको कब देखूँगा ॥ ११ ॥ ये कुंज, ये निकुञ्ज, यह यमुना नदी, यह गोवर्द्धन, यह वृन्दावन, ये वन, ये नदी, ये महल, ये लता, ये वृक्ष, ये गौओंके गण, एक मुकुन्द विना सब विषसे दीखते हैं ॥ १२ ॥ कमल लोचन, श्रीकृष्ण विना मेरा जीवन व्यर्थ है, भोजन करना और सोना भी धिक्कार है, चन्द्र विना भूमिमें चकोर जैसे ऐसे उनके विना हम जीते हैं, सो उनके आनेकी आशासे हम जीते हैं ॥ १३ ॥ हे महामते ! पृथ्वीका भार उतारनेके लिये देवताओंकी प्रार्थनासे संतोंकी रक्षाके लिये प्रभुने जन्म

कच्चित्कदाचित्सबलोहिमाधवःस्मरत्यसौवाजननींयशोमतीम् ॥ गोपालगोवर्द्धनगोगणान्व्रजंवृन्दावनंवापुलिनंतरंगिणीम्॥ १०॥हादैवकस्मि-
न्समयेस्वनन्दनंबिंबाधरंसुंदरमंबुजेक्षणम् ॥ द्रक्ष्याम्यहंमन्दिरचत्वराजिरेऽर्भकैर्लुठंतंसबलंमुहुर्मुहुः ॥११॥ कुंजोनिकुंजोयमुनामहानदीगोवर्द्ध-
नोरण्यमिदंवनानि ॥ गृहैर्लतावृक्षगवांगणैःसहविनामुकुंदंविषवन्निदंजगत् ॥ १२ ॥ धिग्जीवनंमेशयनंचभोजनंकृष्णंविनापद्मदलायतेक्षणम्॥
चन्द्रंविनाभूमितलेचकोरवज्जीवामितस्यागमनाशयाभृशम् ॥ १३ ॥ हर्तुंभुवोभारमतीवदैवतैःसंप्रार्थितंपूर्णतमंमहामते ॥ जातंसतांरक्षणतत्परं
स्वयंमन्येहिकृष्णंसबलंपरात्परम् ॥१४॥ श्रीनारदउवाच ॥ संस्मृत्यसंस्मृत्यहरिंपरेशंबभूवतूष्णींनवनन्दराजः॥ शिरोनिधायाप्युपबर्हणेस्वेह्यु-
त्कंठरोमांचितविह्वलांगः॥१५॥ श्रीनन्दनेत्रांबुजवारिसंततीराजन्तदाकृष्णसखस्यपश्यतः ॥ शय्यांसवस्त्रामुपबर्हणांतांकृत्वार्द्रतांप्रांगणआच-
चाल ॥ १६ ॥ श्रुत्वोद्धवंश्रीमथुरापुरागतंकपाटमेत्याशुयशोमतीसती ॥ शृण्वंत्यलंस्वस्यसुतस्यवर्णनंस्नेहस्रवत्सुस्तननेत्रपंकजा ॥१७॥ विहाय
लज्जांघृणयासुतस्यसापप्रच्छसर्वंकुशलंतदोद्धवम् ॥ प्रापोच्छ्यवस्त्रेणदृगश्रुसंततिंस्थितेचनन्देहरिभावविह्वले ॥ १८ ॥ श्रीयशोदोवाच ॥
कच्चित्स्मरतिमांकृष्णोनन्दराजमथापिवा ॥ भ्रातरंनंदराजस्यसन्नन्दंदर्शनोत्सुकम् ॥ १९ ॥

लिया है, मैं तो यह जानता हूँ ॥१४॥ नारदजी कहते हैं ऐसे परेश भगवान्को नन्दराज बारबार याद करके चुप हो गये, अपना शिर तकियापर धरकर उत्कण्ठासे रोमांचित हो गये और अंग विह्वल हो गया ॥१५॥ नन्दराजके नेत्रोंकी धाराप्रवाह उस समय उद्धवके देखते २ गद्दी, तकिया और बिछौनेको भिगोकर आंगनको चली ॥१६॥ मथुरासे आये उद्धवजीसे यशोदा रानी कपाटों (किवाड़ों) के पास खड़ी हुई, प्रिय पुत्रकी सब बात सुनीं, तभी नेत्रोंसे जल और स्तनोंसे दूध चूने लगा ॥ १७ ॥ तब लज्जा छोड़ पुत्रके स्नेहसे यशोदाजी उद्धवजीसे पुत्रकी कुशल पूछने लगी, उस समय नन्दजी भी विह्वल बैठे थे, उनके आगे बहुत बहते आंखोंसे आसुओंकी धारको ओढनीसे ये पोछती हुई बोलीं ॥१८॥ कि हे उद्धव! श्रीकृष्ण कभी मेरी भी याद करता है? अथवा कभी व्रजराजकी भी याद करता है, कभी सनन्दजीके भाई, उनको दर्शनकी उत्कण्ठा है, उनको भी याद करता है॥१९॥

नौ नन्द, नौ उपनन्द, छः वृषभानु, इनकी भी याद करता है, जिनकी गोदीमें बैठ वन वनमें बाल लीला की थी ॥२०॥ जिन गोपोंके साथ गेंद खेला करता था, अत्यन्त स्नेह करने वाले उन गोपों की भी कभी याद करता है॥२१॥ देखो उद्धव ! एकही पुत्र यह मुझको प्राप्त हुआ था बहुतसे नहीं वह भी दीन माताको छोड़कर देशान्तरको चला गया ॥२२॥ हे महामते ! स्नेह वाओंके कष्टको कोई दूर नहीं कर सकता है, हे मानके देनेवाले ! पुत्र विना क्या करूँ, मैं कैसे जीऊँ ॥२३॥ हे माता ! मुझको दही दे, माखन दे, ऐसे कहकर जो सदा घरमें हठ किया करता था ॥२४॥ सो मध्याह्नमें भोजन कैसे होगा, मेरा आत्मज (पुत्र) श्रीकृष्ण व्रजवासियोंका जीवन है, व्रजका तो वह धन है, और कुलका दीपक है और बाल लीलासे सबको मनोहर है ॥ २५ ॥ उसका लालन पालन करनमें सब दिन मेरा क्षणकी बराबर व्यतीत होजाता, सो दिन मेरा नन्द नन्दनके विना कल्पके समान होगया

नंदान्नवोपनन्दाश्चवृषभानून्व्रजेषुषट् ॥ येषामारोहमास्थायबालकेलिर्वनेवने॥२०॥ कंदुकक्रीडयारेमेसानन्दंनन्दनन्दनः॥ तान्गोपान्स्नेहसंयुक्तान्कदाचित्स्मरतिस्वतः ॥ २१ ॥ एकोयंमेसुतःप्राप्तोनसुताबहवश्चमे ॥ सोपिमांजननींदीनांययौत्यक्त्वादिगंतरम् ॥ २२ ॥ अहोकष्टं स्नेहवतांदुर्निवारंमहामते ॥ किंकरोमिविनापुत्रंकथंजीवामिमानद ॥ २३ ॥ मातर्मह्यंदेहिदधिमातर्हैयंगवंनवम् ॥ एवंवदन्समधुरंहठंचक्रे सदागृहे ॥ २४ ॥ मध्याह्नेसकथंकृष्णोभोजनंकर्तुमर्हति ॥ ममात्मजोयंश्रीकृष्णोजीवनंव्रजवासिनाम् ॥ व्रजेधनंकुलेदीपोमोहनोबाललीलया ॥२५॥ लालनैःपालनैस्तस्यदिनंमेक्षणवद्गतम् ॥ तद्दिनकल्पवज्जातंविनाहोनन्दनन्दनम्॥२६॥ वत्साश्चारयितुंकृष्णोग्रामसीम्निनदीतटे॥नकारितोर्भकैःसार्द्धंसचाहोमथुरांतः ॥२७॥ हेमोहनेतिदूरात्तमंकंनीत्वाथलालनम् ॥ चकारनंदराजोयंतंविनाखिन्नतांगतः॥२८॥ अहोदाम्नामया बद्धोनिर्मोहिन्यैकदाशिशुः ॥ भांडेभग्नेकृतेदध्नःशोचामिचरितंचतत् ॥२९॥ तत्प्रांगणंसर्वसभाचमन्दिरंसरश्चवीथीव्रजहर्म्यपृष्ठयः ॥ शून्यंसमस्तंममजीवनंधिग्विनामुकुंदंविषवत्त्विदंजगत्॥३०॥श्रीनारदउवाच ॥ यशोदानन्दनयोर्वीक्ष्यपरमंप्रेमलक्षणम् ॥ उद्धवोनितरांराजन्विस्मितोभूद्गतस्मयः ॥ ३१ ॥ उद्धवउवाच ॥ रोममात्रममतनौजिह्वाचजायतेत्वहो ॥ युवयोस्तदपिश्लाघांकर्तुंनालंमहाप्रभू ॥ ३२ ॥

॥२६॥ बछड़ोंको चरानेके लिये भी जिस श्रीकृष्णको यमुनाजीके किनारे पर भी गाँवकी सीमामेंभी मैं नहीं भेजती थी, वह कृष्ण देखो मथुराको चला गया है ॥ २७ ॥ नन्दराज जिसको हे मोहन ! ऐसे कहकर दूरसेही गोदीमें लेकर प्यार करते थे, वे नन्दराज उस श्रीकृष्णके विना खिन्न मन हो रहे हैं ॥२८॥ हाय ! मैंने एक दिन निर्मोहिनीने रस्सीसे बालक बांध दिया था, उसने दहीका पात्र फोड़ डाला था, उस चरित्र पर शोक करती हूँ ॥२९॥ वही आंगन, समस्त सभा, समस्त महल, सरोवर व्रजकी गली और महलोंकी छत और सम्पूर्ण जगत् श्रीकृष्णके विना मुझको विषके तुल्य दीखता है ॥३०॥ नारदजी कहते हैं कि, नन्द यशोदाका परम प्रेमका लक्षण देखकर उद्धव अत्यन्त आश्चर्यमें आगये और कहने लगे ॥ ३१ ॥ उद्धवजी बोले, कि जितने मेरे शरीरमें रोंये हैं, उतनी जीभें हो जायं, तो भी हे महाप्रभू ! आप दोनोंकी बडाई करनेमें समर्थ नहीं हूँ ॥ ३२ ॥

परिपूर्णतम साक्षात् पुरुषोत्तम श्रीकृष्णमें आपकी प्रेम लक्षणा भक्ति ऐसी है ॥ ३३॥ तीर्थाटन, तप, दान सांख्य, योग, इन सबसे जो दुर्लभ प्रेम भक्ति है, वह प्रेम लक्षणा भक्ति आपको निरन्तर प्राप्त हुई हैं ॥३४॥ हे नन्दराज ! हे यशोदे ! व्रजेश्वरी तुम शोच मत करो, आप माता पिताको दो पत्र श्रीकृष्णने दिये हैं, उनको लेओ ॥३५॥ बड़े भाई सहित आपका पुत्र मथुरामें प्रसन्न है, बलदेवके संग यादवोंका बड़ा काम करके ॥३६॥ थोड़ेही दिनोंमें यहाँ आयेंगे, तुम्हारा पुत्र श्रीकृष्ण साक्षात् परिपूर्ण परब्रह्म हैं, कंसादि दैत्योंको मारनेके लिये और सन्तोंकी रक्षाके लिये ॥ ३७ ॥ ब्रह्माजीकी प्रार्थनासे आपके घरमें जन्म लिया है, जन्म लेतेही बलदेवजीके संग जिन्होंने अद्भुत लीला की ॥ ३८ ॥ पूतनाके प्राण हरण किये, शकटासुरको मारा, तृणावर्तको आकाशसे गिराया, यमलार्जुन वृक्ष उखाड़े ॥३९॥ माताको अपने मुखमें सम्पूर्ण विश्व दिखाया, जिन्होंने वृन्दावनमें गौ बछड़ा

परिपूर्णतमेसाक्षाच्छ्रीकृष्णेपुरुषोत्तमे ॥ ईदृशीचकृताभक्तियुवाभ्यांप्रेमलक्षणा ॥३३॥ तीर्थाटनतपोदानसांख्ययोगैश्चदुर्लभा॥ शाश्वतीयुवयोः प्राप्तायाभक्तिःप्रेमलक्षणा ॥ ३४ ॥ माशोचंकुरुहेनन्दहेयशोदेव्रजेश्वरि ॥ पत्रद्वयंगृहाणाशुकृष्णदत्तंनसंशयः ॥३५॥ सहाग्रजोनन्दसूनुःकुशल्यास्तेयदोःपुरि ॥ यादवानांमहत्कार्यंकृत्वाथसबलःशुभः ॥३६॥ स्वल्पकालेनचात्राधिभगवानागमिष्यति॥ परिपूर्णतमंविद्धिश्रीकृष्णंनन्दनन्दनम् ॥ कंसादीनांवधार्थायभक्तानांरक्षणायच ॥३७॥ ब्रह्मणाप्रार्थितःकृष्णोवततारगृहेतव ॥ जातमात्रोऽद्भुतांलीलांचकारसबलोहरिः ॥३८॥पूतनाप्राणहरणंशकटस्यनिपातनम् ॥ तृणावर्त्तनिपातश्चयमलार्जुनभंजनम् ॥३९॥ स्वमुखेचयशोदायैविश्वरूपस्यदर्शनम्॥ वृन्दावने चभगवान्गोत्वसांश्चारयन्प्रभुः॥४०॥वधंचकारगोपानांपश्यतांबकवत्सयो॥ अघासुरस्यचवधोधेनुकस्यविमर्दनम्॥४१॥मर्दनंचकालियस्यापि वह्निपानंचकारह॥प्रलंबस्यवधंपश्चाद्बलदेवश्चकारह॥४२॥गोवर्द्धनंसमुत्पाटयहस्तेनैकेनलीलया॥युष्माकंपश्यतांबिभ्रत्पुष्करंगजराडिव॥४३॥ चूडामणिंशंखचूडाज्जहारजगतांपतिः॥अरिष्टस्य वधंकृत्वाकेशिनंनिजघानह॥४४॥व्योमासुरंमहादैत्यंमुष्टिनातंममर्दह॥तथावैमथुरायांतुचक्रेचित्रंमहामते॥४५॥ विकथ्यमानंरजकंकरेणाभिजघानतम् ॥ प्रचण्डंकंसकोदंडमध्यतस्तद्बभंजह॥ इक्षुदण्डंयथानागःसर्वेषांपश्यतांनृणाम् ॥४६॥

चराये ॥४०॥ गोपोंके देखते वत्सासुर, बकासुर मारे, अघासुरको मारा, धेनुकासुरको मारा ॥४१॥ काली नागका मर्दन किया, दावानलका पान किया, पीछे बलदेवने प्रलम्बासुरको मारा ॥४२॥ गोवर्द्धन उखाड़कर सात दिन तक एक हाथमें धारण किया आपके देखते २ जैसे मतवाला हाथी कमलके फूलको उठा लेता है ॥४३॥ शंख चूडको चूडामणि लेकर उसको मार डाला, अरिष्टासुरको मारा, केशीको मारा ॥४४॥ व्योमासुर महा दैत्यको घूंसाहीसे मारा, वैसेही मथुरामें हे महामते ! कैसा आश्चर्य किया ॥ ४५ ॥ बकवाद करते धोबीको जिन्होंने हाथसेही मारा और सभीके देखते-देखते प्रचण्ड कोदण्ड (धनुष) को गन्नेकी तरह जिन्होंने तोड डाला ॥ ४६ ॥

दश हजार हाथियोंके समान बलवाले कुवलयापीड हाथीका सूंड पकड़कर दे मारा ॥४७॥ मल्लयुद्धमें चाणूर, मुष्टिक, शल, तोशल, इन सभीको माधवने मल्लयुद्ध (कुस्ती) में मारकर धरतीमें डाल दिये ॥४८॥ लाख हाथियोंके समान बलवाले मदमें उत्कट कंसको मंचपरसे चोटी पकड़ करके अपनी भुजाओंके बलसे घुमाकरके ॥४९॥ धरतीमें दे मारा जैसे बालक कमण्डलको दे मारता है, फिर आपभी उसके ऊपर जा गिरे, जैसे हाथीके ऊपर सिंह ॥ ५० ॥ ऐसे ही कंसादिक कंसके आठ भाइयोंको महावली बलदेवने मुद्गरसे पीस डाले, जैसे मृगराज ॥ ५१ ॥ गुरुको दक्षिणा देनेके लिये शंखरूपी पंचजन दैत्यको समुद्रमें कूदकर स्वयम् भगवान्ने मारा ॥ ५२ ॥ हे महानन्द ! ये अद्भुत चरित्र हरि के विना कहो कौन करे, उन हरिके लिये मेरा नमस्कार है ॥ ५३ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायामुद्धव मेलनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ नारदजी कहते

द्विपंकुवलयापीडनागायुतसमंबले ॥ शुंडादण्डेसंगृहीत्वापातयामासभूतले ॥ ४७ ॥ चाणूरंमुष्टिकंकूटंशलंतोशलमेवच ॥ पातयामासभूपृष्ठे मल्लयुद्धेनमाधवः ॥ ४८ ॥ कंसंमदोत्कटंदैत्यंनागलक्षसमंबले ॥ मंचाद्गृहीत्वातंकृष्णोभ्रामयित्वाभुजौजसा ॥४९॥ पातयामासभूपृष्ठेकमंडलुमिवार्भकः ॥ इभोपरियथासिंहस्तस्योपरिपपातह ॥ ५० ॥ कंसानुजांश्चकंकादीन्बलदेवोमहाबलः ॥ ममर्दमुद्गरेणाशुमृगान्वैमृगराडिव ॥ ५१ ॥ गुरवेदक्षिणांदातुंसमुत्पत्यमहार्णवे ॥ शंखरूपंपंचजनंनिजघानहरिःस्वयम् ॥ ५२ ॥ अद्भुतानिचरित्राणिचैतानिश्रीहरिंविना ॥ कःकरोतिमहानंदतस्मैश्रीहरयेनमः ॥ ५३ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेनंदराजोद्धवमेलनंनामचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंहिनंदोद्धवयोहरेःकथयतोःकथाम् ॥ व्यतीताक्षणवद्राजन्क्षणदाहर्षवर्द्धिनी ॥ १ ॥ ब्राह्ममुहूर्तेचोत्थायगोप्यः सर्वागृहेगृहे ॥ देहल्यंगणमालिप्यदीपांस्तत्रनिरूप्यच ॥२॥ प्रक्षाल्यहस्तपादौचमथन्यांनेत्रंनिधायच ॥ ममंथुःसर्वतोयुक्ताः पिच्छिलानिदधीनिताः ॥ ३ ॥ नेत्राकर्षचलद्धारभुजकंकणकंकणाः॥ वेणीभ्योविगलत्पुष्पाःस्फुरत्कुंडलमंडिताः ॥४॥ चंद्रमुख्यःकंज नेत्राश्चित्रवर्णैर्मनोहराः मंगलानिचरित्राणिश्रीकृष्णबलदेवयोः ॥ ५ ॥ गायंत्यःप्रेमसंयुक्तायत्रयत्रगृहेगृहे ॥ घोषेघोषेशुभागावोरंभमाणा इतस्ततः॥६॥ सर्वत्रगोपिकागीतंदधिशब्देनमिश्रितम् ॥ वीथ्यांवीथ्यांततःशृण्वन्विस्मितश्चोद्धवोब्रवीत् ॥ ७ ॥

हैं, ऐसे नन्दजीको और उद्धवजीको बातें करते २ हर्षमें सम्पूर्ण रात्रि एक क्षणकी तरह व्यतीत हो गई ॥१॥ अब ब्राह्म मुहूर्तमें गोपियां अपने २ घरोंमें उठकर देहली, आंगन इनको लीपकर वहाँपर दीपक जोड़ जोड़के रखकर ॥२॥ हाथ, पांव धोकर, दातून कर स्नान करके मथनियोंमें रई धरकर चीकने दहीको मथने लगी ॥३॥ नेनीके खेंचनेमें चलायमान जो भुजदण्ड, उनमें बजती हैं, कंकण कंकनिया, पछेली, चूडी जिनकी, और वेणियोंसे फूल झडते जाते हैं, और झलमलाते कुण्डलोंसे मण्डित हैं मुखचन्द्र जिनके ॥ ४ ॥ वे चन्द्रमुखी कमलनयनी चित्रविचित्र मनोहर चूंदरी ओढकर श्रीकृष्ण बलदेवके मंगल चरित्रोंको गाती ॥ ५ ॥ जहाँ तहाँ घर घरमें प्रेमभरी कृष्णलीला गाती हैं, खिरकोंमें गौएं रम्हाय रही हैं, इधर उधरमें ॥ ६ ॥ सब जगह गोपियोंके गीत दधिमंथनके शब्दसे मिला गली गलीमें सुनकर विस्मित हो उद्धवजी बोले ॥ ७ ॥

अहो ! बड़े आश्चर्यकी बात है कि, इस नन्द नगरमें तो भक्तिरानी सब जगह नृत्य करती हैं, ऐसे कहते नगरके बाहर निकल यमुनाजीपर स्नान करनेको गये ॥८॥ तब रथको देख-कर गोपियां बोलीं कि,यह रथ किसका आया है,कहीं वह क्रूर अक्रूर ही तो फिर नहीं आया है, जो कमललोचन नन्दनन्दनको मथुराको ले गया था॥९॥ कौनसे कुसमयमें माताने स्नेही जो सत्पुरुष उनके ताप देनेके लिये उत्पन्न किया था, जैसे कद्रूने विषधर नागोंके समुदायको व्यर्थ लोकजनोंको मारनेके लिये उत्पन्न किया है ॥१०॥ सो कंसका मतलब करनेवाला कंसका सखा निर्दयी वह अक्रूर तो कहीं व्रजमण्डलमें नहीं आया है, हमारे प्राणोंसे कहीं अपने स्वामी कंसकी परलोककी क्रिया तो नहीं करेगा ॥११॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे कहती गोपवधू सोते हुये गत बुद्धि बड़े आर्त सारथीको दो अंगुलियोंसे हिलाकर पूछने लगीं, अरे ! यह किसका रथ है, जल्दी बोलो ॥१२॥ इतनेमें उद्धवजी स्नानकर

अहोवैनंदनगरेभक्तिर्नृत्यतियत्रच ॥ एवंवदन्बहिर्ग्रामाद्ययौस्नातुंनदीजले ॥ ८ ॥ गोप्यउचुः ॥ कस्यायमद्यात्ररथः समागतोक्रूरोथवाक्रू-
रउतागतः पुनः ॥ येनैवनीतोमथुरांमहापुरींश्रीनंदसूनुर्नवकंजलोचनः ॥९॥ कस्मिन्कुकालेजननीससर्जयंदातुंसतांस्नेहवतांप्रतापनम्॥कद्रूर्य-
थानागचयंविषावृतंहंतुंवृथालोकजनानितस्ततः ॥ १० ॥ कंसार्थकृत्कंससखोतिनिर्घृणोसोयंपुनःकिंव्रजमंडलंगतः ॥ भर्तुर्मृतस्यापिहिपारलौ-
किकीमस्माभिरद्यैवकरिष्यतिक्रियाम् ॥ ११ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंवदंत्योव्रजगोपवध्वःसंताडचसूतंचसुखेंगुलिभ्याम् ॥ पप्रच्छुरारादृत
बुद्धिमार्तंत्वरंवदैतत्किलकस्ययानम् ॥१२॥ घनप्रभंपद्मदलायतेक्षणंकृष्णाकृतिंकोटिमनोजमोहनम् ॥ पीतांबरंषट्पदसंबसंकुलांमालांदधानं
नववैजयंतीम् ॥ १३ ॥ स्फुरत्सहस्रच्छदपद्मपाणिंवंशीधरंवेत्रकरंमनोहरम् ॥ बालार्ककोटिद्युतिमौलिमंडनंमहामणिकुंडलमंडितानम् ॥१४॥
गत्याकृतिश्रीतनुहाससुस्वरैःश्रीकृष्णसारूप्यधरंतमुद्धवम् ॥ विलोक्यसर्वानृपविस्मितास्ततोविज्ञायगोविंदसखंययुः पुरः ॥ १५ ॥ ज्ञात्वाथ
सन्देशहरंहरेःप्रभाःसुवाक्यनीत्यापरमादरेणतम् ॥ गुप्तंहिप्रष्टुंकुशलंसतांपतेर्नीत्वोद्धवंताःकदलीवनंगताः ॥१६॥ यत्रैवराधावृषभानुनन्दिनी
कृष्णातटेचारुनिकुंजमन्दिरे ॥ समास्थितातद्विरहातुराभृशंखंमन्यतेसातुजगद्धरिंविना ॥ १७ ॥

चले आये कैसे हैं उद्धवजी, घनसे श्यामसुन्दर, कमलसे लोचनवाले, श्रीकृष्णकी आकृतिवाले, करोड़ कामदेवके मोहन, मुकुट, पीताम्बर ओढे, वैजयन्ती माला फूलोंकी माला पहिने जिनपर भ्रमर गुंजार कर रहे हैं ॥१३॥ हजार दल कमल जिनके हाथमें वंशी लिये, बेंत धरे, बाल सूर्यसे किरीट मुकुट पहिने, मणिवर, कुण्डलोंसे मंडित मुख जिनका मनोहर ॥ ॥१४॥ चालसे, आकृतिसे, शोभासे, शरीरसे, हँसीसे, बोलीसे,श्रीकृष्णके समान ही मालूम पडते हैं उनको देखकर हे नृप ! समस्त गोपियाँ विस्मित होकर श्रीकृष्णका सखाजान सामने आगई ॥ १५ ॥ हरिका संदेशहर जानकर सुन्दर नीतियुक्त वाणीसे बड़े आदरसे संतोंके पतिकी कुशल पूछनेके लिये समस्त गोपियाँ उद्धवजीको गुप्त कदली वनमें ले गईं॥१६॥जहाँ वृषभानुनन्दिनी श्रीराधिकाजी कालिंदीके किनारेपर निकुंज मंदिरमें श्रीकृष्णके विरहमें अत्यन्त व्याकुल कृष्णके बिना सम्पूर्ण जगत्को शून्य मानती विराज रही थीं१७॥

केलेके पत्तोंसे, चन्दनकी कीचसे, पहले वह मेघ मंदिर अत्यन्त शीतल था, और यमुनाजीकी लहरोंकी बूंदोंसे और चन्द्रमाकी किरणोंसे बहते अमृतसे अत्यन्त सुगन्धित शीतल था ॥१८॥ ऐसा जो कदलीवन था वह राधाके वियोगकी अग्निसे सम्पूर्ण अत्यन्त भस्म हो गया, एक कृष्णागमनकी आशासे शरीरको रख रही है ॥ १९ ॥ कृष्णके सखा उद्धवको आया सुनकर अपनी सखियोंसे अर्घ्य, पाद्य, आसन, जल, मधुपर्क, भोजन, पान, इलायची, इत्र, माला, गुंजा और भी मंगल वस्तुओंसे सत्कार कराती हुई श्रीकृष्ण२ऐसा बार-बार कहती ॥२०॥ जैसे चन्द्रमाकी कलाके विना अमावश्याकी रात्रि खिन्न होती है, ऐसी गोविन्दकी विरहसे विरहिनी व्याकुलताके मारे झुक गये हैं, कन्धा जिसके और अत्यन्त कृश हो गई है, ऐसी राधासे हाथ जोड़ परिक्रमाकर प्रसन्न होकर बोले ॥२१॥ तब उद्धवजी बोले कि, परिपूर्ण देव श्रीकृष्ण तो सदाही विराजते हैं, परिपूर्ण देवी राधिका आपभी सदाही

रंभादलैश्चंदनपंकसंचयंपुरास्फुरच्छीतलमेघमंदिरम् ॥ कृष्णाचलच्चारुतरंगसीकरंस्रवतःसुधारश्मिगलत्सुधाचयम्॥१८॥एतादृशंयत्कदलीवनं चतद्राधावियोगानलवर्चसाभृशम् ॥ बभूवसर्वंसततंहिभस्मसात्कृष्णागमाशातमतनुंहिरक्षति॥१९॥श्रुत्वोद्धवंकृष्णसखंसमागतंचकारराधास्व सखीभिरादरम् ॥ जलाशनाद्यैर्मधुपर्कमंगलैःश्रीकृष्णकृष्णेतिमुहुर्वदंत्यलम्॥२०॥राधांहिगोविन्दवियोगखिन्नांकुह्वांयथाचन्द्रकलांतदोद्धवः नतांकृशांगींकृतहस्तसम्पुटःप्रदक्षिणीकृत्यजगादहर्षितः ॥ २१ ॥ उद्धवउवाच ॥ सदास्तिकृष्णःपरिपूर्णदेवोराधेसदात्वंपरिपर्णदेवी ॥ श्रीकृष्णचन्द्रःकृतनित्यलीलोलीलावतीत्वंकृतनित्यलीला ॥२२॥ कृष्णोस्तिभूमात्वमसींदिरासदाब्रह्मास्तिकृष्णस्त्वमसिस्वरासदा ॥ कृष्णः शिवस्त्वंचशिवाशिवार्थाविष्णुःप्रभुस्त्वंकिलवैष्णवीपरा॥२३॥कौमारसर्गेहरिरादिदेवतात्वमेवहिज्ञानमयीस्मृतिःशुभा ॥ लयांभसाक्रीडनत-त्परोहरिर्यज्ञोवराहोवसुधात्वमेवहि ॥ २४ ॥ देवर्षिवर्योमनसाहरिःस्वयंत्वंतत्रसाक्षान्निजहस्तवल्लकी ॥ नारायणोधर्मसुतोनरेणहिशांतिस्त्व-दात्वंजनशांतिकारिणी ॥ २५ ॥ कृष्णस्तुसाक्षात्कपिलोमहाप्रभुःसिद्धिस्त्वमेवासिचसिद्धसेविता ॥ दत्तस्तुकृष्णोस्तिमहामुनीश्वरोराधेस-दाज्ञानमयीत्वमेवहि ॥ २६ ॥

विराजती हो, श्रीकृष्णचन्द्र नित्य ही लीला करते हैं, आपभी लीलावती नित्य लीला करती हो ॥२२॥ जब कृष्ण भूमा होते हैं, तब आप लक्ष्मी हो जाती हो, जब कृष्ण ब्रह्मा बनते हैं, तब आप स्वरा होती हो, जब श्रीकृष्ण शिव होते हैं, तब आप पार्वती बनती हो और श्रीकृष्ण विष्णु होते हैं, तब आप वैष्णवी होती हो ॥२३॥ जब श्रीकृष्ण सनक, सनंदन सनातन, सनतकुमार बनते हैं, तब आप आदि देवता बनती हो, ज्ञानमयी स्मृति होती हो, जब जलक्रीडामें तत्पर श्रीकृष्ण यज्ञ वाराह बनते हैं, तब आप पृथ्वी बनती हो ॥२४॥ जब मनसे श्रीकृष्ण नारद बनते हैं, तब आप वीणा बनती हो, जब श्रीकृष्ण धर्मके पुत्र नर नारायण होते हैं, तब आप मनुष्यकी शान्ति करनेवाली शान्ती होती हो ॥२५॥ जब महा प्रभु श्रीकृष्ण कपिल होते हैं, तब आप सिद्धाकी सेवन करी सिद्धि होती हो, जब श्रीकृष्ण महामुनि दत्तात्रेय होते हैं, तब आप ज्ञानमयी सिद्धि होती हो ॥ २६ ॥

जब श्रीकृष्ण यज्ञ होते हैं, तब आप दक्षिणा होती हो, जब हरि उरु क्रम वामन होते हैं, तब आप जयन्ती होती हो, जब श्रीकृष्ण सर्व नृपेश्वर पृथु बनते हैं, तब आप अर्चि नृप पटरानी होती हो ॥२७॥ जब श्रीकृष्ण शंखासुरको मारनेके लिये मत्स्यावतार धारण करते हैं, तब आप श्रुतिरूप धारण करती हो, जब हरि समुद्रके मन्थनमें कछुवेका रूप धरते हैं, तब आप सर्वरूपी नेती बनती हो ॥२८॥ जब श्रीकृष्ण पीड़ाके हरनेवाले धन्वन्तरि बनते हैं, तब हे शुभे ! आप संजीवनी औषधि बनती हो, जब श्रीकृष्ण मोहिनी रूप धरते हैं, तब जगत् मोहिनी आपही होती हो ॥२९॥ नृसिंह लीलासे जब श्रीकृष्ण नृसिंह बनते हैं तब आप भक्त वत्सला लीला रूपा होती हो, जब वामन बनते हैं, तब आप कीर्ति बनती हो, जो अपने लोकमें कीर्तन करती हो॥३०॥हरि जब परशुराम होते हैं, तब कुठारकी धारा आपही होती हो,जब श्रीकृष्ण रघुवंश चन्द्रमा होते हैं, तब आप जानकी होती हो

यज्ञोहरिस्त्वंकिलदक्षिणाहरिरुरुक्रमस्त्वंहिसदाजयंत्यतः ॥ पृथुर्यदासर्वनृपेश्वरोहरिरर्चिस्तदात्वंनृपपट्टकामिनी ॥ २७ ॥ शंखासुरंहंतुमभूद्ध-रिर्यदामत्स्यावतारस्त्वमसिश्रुतिस्तदा ॥ कूर्मोहरिर्मंदरसिन्धुमंथनेनेत्रीकृतात्वंशुभदाहिवासुकौ ॥ २८ ॥ धन्वंतरिश्चार्तिहरोहरिःपरस्त्वमौ-षधीदिव्यसुधामयीशुभे ॥ श्रीकृष्णचन्द्रस्तुबभूवमोहिनीतत्रजगद्धिमोहनी ॥ २९ ॥ हरिर्नृसिंहस्तुनृपसिंहलीलयालीलातदात्वंनि-जभक्तवत्सला ॥ बभूवकृष्णस्तुयदाहियामनःकीर्तिस्तदात्वंनिजलोककीर्तिता ॥ ३० ॥ हरिर्यदाभार्गवरूपधृक्पुमान्धाराकुठारास्यतदात्वमे-वहि ॥ श्रीकृष्णचन्द्रोरघुवंशचंद्रमायदातदात्वंजनकस्यनंदिनी ॥ ३१ ॥ श्रीशार्ङ्गधन्वामुनिबादरायणोवेदांतकृत्त्वंकिलदेवलक्षणा ॥ संक-र्षणोमाधववृष्णिरेवत्वंरेवतीब्रह्मभवासमास्थिता ॥ ३२ ॥ बुद्धोयदाकौणपमोहकारकोबुद्धिस्तदात्वंजनमोहकारिणी ॥ कल्कीयदाधर्मपतिर्भ-विष्यतिहरिस्तदात्वंतुकृतिर्भविष्यसि ॥३३॥ श्रीकृष्णचंद्रोस्तिहिचंन्द्रमंडलेराधेसदाचन्द्रमुखींतिचन्द्रिका॥श्रीकृष्णसूर्योदिविसूर्यमंडलेसूर्य्य-प्रभात्वंपरिधिःप्रतिष्ठिता ॥३४॥ इंद्रःसदास्तेकिलयादवेन्द्रस्तत्रैवराधेतुशचीशचीश्वरी॥हिरण्यरेताहिहरिःपरेश्वरोहेतिःसदात्वंहिहिरण्मयीषरा ॥३५॥ श्रीराजराजोहिविराजतेहरिर्विराजतेत्वंतुनिधौनिधीश्वरी ॥ क्षीराब्धिरूपीतुहरिस्त्वमेवहिततरंगितक्षौमसितारंगिणी ॥३६॥ बिभ्रद्वपुः सर्वपतिर्यदायदातदातदात्वंविदितानुरूपिणी ॥ जगन्मयोब्रह्ममयोहरिःस्वयंजगन्मयीब्रह्ममयीत्वमेवहि ॥ ३७ ॥

॥३१॥ जब शार्ङ्गधन्वा हरि बादरायण बास होतं हैं, तब आप वेदान्त वाणी होती हो, जब संघर्ष होते हैं, तब रेवती होती हो ॥ ३२ ॥ जब श्रीकृष्ण राजसनको मोह करनेको बुद्ध होतं हैं, तब जगन्मोहिनी बुद्धि होती हो, जब भगवान् कल्कि होंगे, धर्मके पति, तब आप कृति होवेंगी ॥३३॥ श्रीकृष्ण जब चंद्रमण्डल होंगे, तब हे चन्द्रमुखि ! हे राधे ! तुम चांदनी होगी, जब श्रीकृष्ण सूर्य मण्डल होंगे, तब तुम सूर्यकी प्रभा धूप होवोगी ॥३४॥ जब ये इन्द्र होकर विराजते हैं, तब तुम सची होती हो, जब हिरण्यरेता हरि होते हैं, तब तुम हिरण्मयी होती हो ॥ ३५ ॥ जब हरि कुबेर होते हैं, तब तुम निधि होती हो, जब क्षीर समुद्र हरि होते हैं, तब तुम सफेद सूक्ष्म तरंग होती हो ॥ ३६ ॥ वे ही प्रभु अब व्रजराज नंदन हुये हैं, तब तुम वृषभानुनंदिनी राधा हुई हो, इस प्रकार जब २ सर्वपति भगवान् जैसा २ रूप धारण करते हैं, तब तुम तदनुसार रूप धारण करती हो, जगन्मय ब्रह्ममय

हरि हैं, और जगन्मयी ब्रह्ममयी तुम्ही हो, तुम दोनोंने सबकी शान्तिके लिये सत्यमयी लीला चरित्रोंसे मनोहर सतोगुणी लीला की है ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ श्रीकृष्ण तो स्वयम् ब्रह्म परब्रह्म हैं, पुराण पुरुष हैं, तुम उन श्रीकृष्णकी इच्छारूप प्रकृतिरूप लीला शक्ति हो, तुम दोनोंका परस्पर शरीर मिला हुआ है, ऐसे जो तुम श्रीकृष्ण राधिका हो तुम्हें मेरा नमस्कार है ॥ ३९ ॥ अब इस पत्रको लीजिये, आपके नाथने दिया है, "हे राधिके ! तुम शोच मत करो, थोड़ही दिनोंमें वहाँका कार्य करके आयेंगे, यह बात मुझसे हरिने कही है ॥ ४० ॥ और भी श्रीकृष्णने सैकड़ों पत्र दिये हैं, उनको लीजिये और कृष्णकी प्यारी व्रज सुन्दरियोंके शत यूथ हैं उनको दीजिये ॥ ४१ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां नारदबहुलाश्वसंवादे श्रीराधादर्शनं नामपचदशोऽध्यायः ॥१५॥ नारदजी कहते हैं, तब राधाने श्रीकृष्णके पत्रको हाथमें लेकर मस्तकसे, नेत्रोंसे, हृदयसे

अद्यैवसोयंव्रजराजनंदनोजातासिराधेवृषभानुनंदिनी ॥ याभ्यांकृतासत्त्वमयीप्रशांतयेलीलाचरित्रैर्ललितादिलीलया ॥३८॥ कृष्णःस्वयंब्रह्म परंपुराणोलीलात्वदिच्छाप्रकृतिस्त्वमेव॥परस्परंसंधितविग्रहाभ्यांनमोयुवाभ्यांहरिराधिकाभ्याम् ॥३९॥गृहाणपत्रंनिजनाथदत्तंशोकंपरंमाकुरु राधिकेत्वम्॥ह्रस्वेनकालेनविधायकार्यंतत्रागमिष्यामितदुक्तवाक्यम्॥४०॥गृह्णीध्वमद्यैवशतानिकृष्णदत्तानिपत्राणिसुमंगलानि॥प्रत्यर्पितंयूथ शतंचगोप्यःकृष्णप्रियाणांव्रजसुन्दरीणाम् ॥४१॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीराधादर्शनंनामपंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ राधापत्रंसंगृहीत्वाशिरोनेत्रंतथाचहृत् ॥ निधायवाचयित्वातत्स्मृत्वातत्पादपंकजम् ॥ १ ॥ अतिप्रेमातुरा राजन्मोचयित्वाश्रुसंततिम् ॥ मूर्च्छामापपरांराधायादवस्यप्रपश्यतः ॥२॥ कुंकुमागरुपाटीरद्रवैःपुष्परसैश्वसा॥अर्चिताचामरांदोलैःपुनश्चैत-न्यतांगता ॥३॥ वियोगसिन्धुसंमग्नांराधांकमललोचनाम् ॥ वीक्ष्योद्धवस्तथागोप्योमुमुचुश्चाश्रुसंततिम् ॥४॥ तासामश्रुप्रवाहेणराजन्वृन्दा-वनेवने ॥ सद्यःकह्लारसंयुक्तोजातोलीलासरोवरः ॥ ५ ॥ दृष्ट्वापीत्वाचसुस्नात्वाश्रुत्वाचेमांकथांनरः ॥ कर्मबंधविनिर्मुक्तःश्रीकृष्णंप्राप्नु-यान्नृप ॥ ६ ॥ अथोद्धवमुखाच्छ्रुत्वाश्रीकृष्णागमनम्पुनः ॥ पप्रच्छुःकुशलंसर्वंश्रीकृणस्यमहात्मनः ॥ ७ ॥

लगाकर बांचकर रख लिया, फिर कृष्णके चरण कमलका स्मरण करने लगी ॥१॥ हे राजन् ! अति प्रेममें आतुर आँखोंमेंसे आँसू गिराती हुई उद्धवजीके देखते-देखते राधा मूर्च्छित हो गई ॥२॥ केशर, कपूर, अगर, चन्दन, इत्र, गुलाब, चमेली, सेवती, केवडे इनके जल छिड़कनेपर और पंखा झलनेपर राधिका चैतन्यताको प्राप्त हुई ॥ ३ ॥ जब राधिका कमल नयनी कृष्ण वियोगके समुद्रमें डूब गई, तब तो गोपियाँ भी रोने लगीं और उद्धवजीभी रोने लगे ॥४॥ हे राजन् ! उनके आंसुओंके प्रवाहसे तत्कालही वृन्दावनमें एक लीला सरोवर भर गया, लाल-लाल कमल जिसमें ॥५॥ उस सरोवरको देखे, उसका जल पीवे, उसमें स्नान करे और इस कथाको सुने तो हे नृप ! कर्म बन्धनसे छूटकर श्रीकृष्णको प्राप्त हो ॥ ६ ॥ जब उद्धवजीके मुखसे श्रीकृष्णका फिर आगमन सुना, तब फिरसे महात्मा श्रीकृष्णकी कुशल पूछने लगी ॥ ७ ॥

राधा बोली-आनन्दके दाता श्री व्रजराज नन्दन श्याम सुन्दरको घनके लिए मयूरीकी तरह अत्यन्त उत्कण्ठिता और चन्द्रमाको देखनेके लिये चकोरीकी तरह उत्कण्ठिता मैं कब देखूँगी ॥८॥ कौनसे कुसमयमें मेरा श्रीकृष्णसे वियोग हुआ, जिस वियोगसे मुझको क्षण क्षण एक-एक कल्पके बराबर बीतता है और यह रात्रि मुझको गोविन्दके पदद्वयके विना द्विपरार्ध कालकी हाँसी करती है, विकलता होती है ॥९॥ मैं यह पूछती हूँ, कभी श्रीकृष्ण व्रजमें आयें भी तो आकर क्या करेंगे यह कहो, क्योंकि अबतक तो बड़े प्रयत्नसे प्राण रखे हैं, किन्तु अब आयेंगे इन झूंठी वाणियोंसे आतुर होकर ये मेरे प्राण बलपूर्वक निकल जायेंगे ॥१०॥ हे उद्धव ! तुमको देखकर क्षण भर मेरा हृदय शीतल हुआ है, तुम्हारे आनेसे मैं ऐसी प्रसन्न हुई हूँ, जैसे पहिले हनुमान्के लंकापुरीमें आनेसे जानकी प्रसन्न हुई थी ॥ ११ ॥ आशा देकर अपने मोहरूपी धनको छोड़कर अपने वचनको भूलकर जो मथुराको चले गये, उनका लिखा जो पत्र है, उसको कल्याणकर्ता सत्य नहीं मानती हूँ, हे मन्त्रियोंमें श्रेष्ठ ! तुम उनको ले आओ ॥ १२ ॥ तब उद्धवजी बोले-मथुरामें जाकर आपका परम

॥ राधोवाच ॥ आनंददंश्रीव्रजराजनंदनंद्रक्ष्यामिकस्मिन्समयेघनप्रभम् ॥ घनंमयूरीवसमुत्सुकाभृशंचंद्रंचकोरीवतदक्षिणोत्सुका ॥ ८ ॥ कस्मिन्कुकालेविरहोबभूवमेयेनैवकौकल्पसमःक्षणःक्षणः ॥ निशीथिनीयंद्रिपरार्द्धहेलनंकरोतिगोविंदपदद्वयंविना ॥९॥ कच्चित्कदाचिद्व्रजमागमिष्यतिकरोतिकिंतत्रहरिर्वदाशुमे॥ अद्यैवयत्नेनधृताःकिलासवःप्रसह्यनिर्य्यांतिमृषागिरातुराः॥१०॥ दृष्ट्वाक्षणंत्वांममहृच्चशीतलंजातंप्रसन्नास्मिसमागतेत्वयि ॥यथाप्रसन्नाजनकात्मजापुरालंकापुरंवायुसुतेसमागते॥११॥ आशांविधायनिजमोहधनंविसृज्यविस्मृत्यवाक्यगदितंमथुरांगतोयः ॥ तस्यापिपत्रलिखितंशमृतंनमन्येतंचानयस्वकिलमंत्रविदांवरिष्ठ ॥ १२ ॥ उद्धवउवाच ॥ गत्वापुरींतवपरंविरहंनिवेद्याथार्घं विधायनिजनेत्रजलेनराधे ॥ नीत्वाहरिंतवपुरःपुनरागतोस्मिमाशोकमद्यकुरुमेशपथस्त्वदंघ्रेः ॥ १३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथप्रसन्नाश्रीराधाचन्द्रकांतौमणीशुभौ ॥ रासरंगेचन्द्रदत्तौउद्धवायददौनृप ॥ १४ ॥ सहस्रदलपद्मेद्वेदत्तेचंद्रमसापुरा ॥ उद्धवायददौराधाप्रसन्नाभक्तवत्सला ॥ १५ ॥ छत्रंसिंहासनंदिव्यंचामरेद्वेमनोहरे ॥ श्रीकृष्णमनसोद्भूतेददौतस्मैहरिप्रिया ॥ १६ ॥ ऐश्वर्यज्ञानसंपन्नंसर्वदेशिकदेशिकम् ॥ कृष्णसंयोगकर्तृत्वंसदातवभविष्यति ॥ १७ ॥ भक्तिनिर्गुणभावाढ्यांप्रेमलक्षणसंयुताम् ॥ ज्ञानंविज्ञानसहितंवैराग्यंसाददौपुनः ॥ १८ ॥

विरह निवेदन करके और अपने नेत्रोंके पानीसे उनको अर्घ्य देकर उन श्रीकृष्णको साथ लेकर आपके पास आऊँगा, हे राधिके ! अब शोक मत करो, मुझको आपके चरणोंकी शपथ है ॥ १३ ॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे उद्धवके वचन सुनकर राधिकाजी प्रसन्न हो गई और महारासमें चन्द्रमाकी दी हुई दोनों चन्द्रकान्त मणि उद्धवको दे दीं ॥ १४ ॥ और पहिले चन्द्रमाने हजार दलके जो दो कमल दिये थे, ये भी प्रसन्न होकर राधिकाने उद्धवको दे दिये, क्योंकि वे भक्त वत्सला हैं ॥१५॥ और छत्र, सिंहासन, दो मनोहर चमर, जो श्रीकृष्णके मनसे उत्पन्न हुये थे, वे श्रीकृष्णकी प्यारी राधिकाने उद्धवको दे दिये ॥ १६ ॥ फिर यह वर दिया कि, उपदेश करनेवालोंकाभी उपदेशक और कृष्णके संयोगको करनेवाला ज्ञान, ऐश्वर्य तुमको सदा होगा ॥१७॥ और निर्गुण भाववाली प्रेमा भक्ति दी और ज्ञान, विज्ञान, सहित वैराग्य दिया ॥ १८ ॥

शंखचूडसे भगवान् कृष्णने जो चूडामणि ली थी, हे विदेहराट् ! वह चूडामणि चन्द्रानना गोपीने उद्धवको दी ॥१९॥ वैसे ही सब गोपीगणोंने भूषणोंका समूह प्रसन्न होकर उद्धव महात्माको दिया ॥२०॥ नारदजी बोले कि, उद्धवजीका शुभ वचन सुनकर राधिकाजी प्रसन्न हो गईं, तब पास आकर गोपियाँ सभामें बैठे उद्धवजीसे पृथक्-पृथक् बोलीं ॥ २१ ॥ गोपियाँ बोलीं जिसको जो जो श्रीकृष्णने अद्भुत लिखा है, सो तुम जल्दी कहो, तुम आगे पीछेके जाननेवालोंमें उत्तम हो, श्रीकृष्णके बड़े सखा हो और कृष्णकीसी तुम्हारी आकृति है ॥ २२ ॥ तब उद्धवजी बोले-जैसे तुम श्रीकृष्णका स्मरण करती हो, वैसे ही श्रीकृष्ण तुम्हारा स्मरण करते हैं, हे गोप वधुओ ! प्रत्येक समय मेरे देखते, इसमें संदेह नहीं है ॥२३॥ एक समय मुझको बुलाकर एकान्तमें तुमको स्मरण करके जो उनके चित्तमें संदेश था, सो नन्द नन्दनने मुझसे कहा, उसको सुनो ॥ २४ ॥ श्रीभगवान् बोले कि जो इस चित्तको विषयोंमें लगाये तो संसारमें बन्धन होता है और जो इस चित्तको भगवान्में लगाये तो संसारसे मुक्ति हो जाती है, यह मनही बंधन और मोक्षका कारण

शंखचूडाच्चहरिणानीतंचूडामणिंशुभम् ॥ चन्द्राननाददौतस्माउद्धवायविदेहराट् ॥ १९ ॥ तथागोपीगणाःसर्वेभूषणानांचयंशुभम्॥ददुःप्रसन्ना हेराजन्नुद्धवायमहात्मने ॥ २० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वावचश्चोपगवेःशुभार्थंसुखंगतायांकिलराधिकायाम् ॥ ऊचुस्तमाराद्व्रजगोप वध्वःसदःस्थितंकृष्णसखंपृथक्ताः ॥ २१ ॥ गोप्यऊचुः ॥ यत्रयत्रलिखितंवदाशुनःकिंतुतच्चहरिणोक्तमद्भुतम् ॥ त्वंपरावरविदांहरेः सखामंत्रवित्तमतदाकृतिर्महान् ॥ २२ ॥ उद्धवउवाच ॥ यथास्मरथदेवेशंतथायुष्मान्स्मरत्यसौ ॥ अनुवेलं गोपवध्वःपश्यतोमेन संशयः ॥ २३ ॥ एकदामांसमाहूयस्मृत्वायुष्मान्रहस्करः ॥ कथयामाससंदेशंचित्तस्थंनंदनंदनः ॥ २४ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ गुणेषु सक्तंकिलबन्धनायरक्तंमनःपुंसिचमुक्तयेस्यात् ॥ मनोद्वयोःकारणमाहुराराज्जित्वाथतत्कौविचरेदसंगः ॥२५॥ यदास्वयंब्रह्मपरात्परंमामध्यात्म योगेनविशारदेन ॥ जानातिसर्वत्रगतंविवेकीतदाविजह्यान्मनसःकषायम् ॥ यावद्घनोमध्यगतस्तदुत्थितः स्वकर्मरूपंनहिदृक्प्रपश्यति॥२६॥ स्थूलाच्चदूरोस्मिनतत्त्वतोंगनास्तस्माद्वियोगंकुरुतात्रसाधनम् ॥ यत्सांख्यभावैःकिलगम्यतेपदंतद्योगभावैरपिगम्यतेस्वतः ॥२७॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेराधागोप्याश्वासनंनामषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वाश्रीकृष्णसंदेशं प्रसन्नागोपवल्लभाः ॥ अश्रुमुख्योवाष्पकंठचऊचुर्गोपगर्विनृप ॥ १ ॥

है, इसलिये इस मनको जीतकर निष्काम पृथ्वीमें विचरना चाहिये ॥ २५ ॥ अब परात्पर ब्रह्म जो सर्वत्र गमन करनेवाले गुणको विशारद अध्यात्म योगसे विवेकी सर्वगत जान लेता है, तब वह ज्ञानी मनके मलको त्यागता है, जब तक नेत्रके और सूर्यके बीचमें सूर्यसे ही उत्पन्न हुआ घन रहे, तब तक सूर्यको दृष्टि नहीं देखती है ॥२६॥ इस स्थूल शरीरसे हे अंगनाओ ! मैं दूर हूँ, किन्तु तत्त्वसे देखो तो मैं दूर नहीं हूँ, इससे यहाँ वियोग ही मिलनेका साधन है, जो सांख्य भावसे पद मिलता है, वह योगमें भी आपही से मिलता है ॥ २७॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां राधागोप्याश्वासनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ नारदजी कहते हैं, श्रीकृष्णका संदेश सुनकर सब गोपवधू प्रसन्न हो गईं, हे नृप ! जिनकी आँखोंमें आंसू आ रहे ऐसी वे गद्गद कण्ठ होकर उद्धवजीसे बोलीं ॥ १ ॥

पहिले गोलोक वासिनी बोलीं, देखो ! पहिले प्रियजनोंको छोड़कर श्रीकृष्ण परदेशको चले गये, ऊपरसे योग लिखे हैं, अहो ! निर्मोहताका बल देखो ॥२॥ अब द्वारपालिका बोलीं देखो चन्द्रमा तो चकोरसे प्रीति नहीं करता है, सूर्य कमलसे प्रीति नहीं करता है, कमल भ्रमरोंसे प्रीति नहीं करता है, घन चातकसे प्रीति नहीं करता है, चाहे वे मर ही क्यों न जायं ॥ ३ ॥ शृंगार करनेवाली गोपियाँ बोलीं चन्द्रमाका मित्र चकोर है, यदि चन्द्रमा ही की किरण अग्नि जैसी हो जायें, तो चकोर क्या करे, जो विधाताने लिखा है, वह कम भी नहीं होता है ॥४॥ शय्या रचनेवाली बोली कि, बधिक भी मृगोंको मारकर जल्दी उनकी सुधि लेता है और श्रीकृष्ण अपने कटाक्षोंसे अपन प्रियजनोंको मारकर निर्मोही स्मरण भी नहीं करते हैं ॥ ५ ॥ पास रहनेवाली बोलीं कि, विरहके दुःखको विरही जानता है, जैसे कांटेके दुःखको वह ही जानता है, जिसके कांटा लगा हो ॥ ६ ॥ वृन्दावन पालिका बोलीं, निष्काम प्रेमके सुखको निष्काम प्रेमी ही जानते हैं,और सकामी नहीं जानते हैं, जैसे खट्टा,मीठा, गर्म, ठण्ढा,काला, पीला इनको नेत्र और जीभ ही जानते हैं, हाथ पांव

॥ गोलोकवासिन्यऊचुः ॥ विदेशंगतवान्कृष्णस्त्यक्त्वापूर्वंप्रियाञ्जनान् ॥ तदुपर्यऽलिखद्योगमहोनिर्मोहताबलम् ॥ २ ॥ द्वारपालिका ऊचुः ॥ चकोरेग्लौःपंकजेर्कोभ्रमरेपंकजंयथा ॥ चातकेचघनःप्रीतिंनकरोतिकदाचन ॥ ३ ॥ शृंगारप्रकारिकाऊचुः ॥ चंद्रमित्रंचकोरोऽतिसख्योवह्निकरंसदा ॥ विधात्रायद्विलिखितंतन्न्यूनंनभवेदिह ॥ ४ ॥ शय्योपकारिकाऊचुः ॥ व्याधोपिहत्वाहिमृगान्स्मरतित्वरमातुरः ॥ कटाक्षैःस्वप्रियान्हत्वानिर्मोहीनस्मरेदहो ॥ ५ ॥ पार्षदाख्याऊचुः ॥ जातंविरहजंदुःखंनान्योवेत्तिकदाचन ॥ यथाकंटकविद्धांगोविद्वान्वाविद्धकंटकः ॥ ६ ॥ वृन्दावनपालिकाऊचुः ॥ अनिमित्तंप्रेमसौख्यमनिमित्तोहिवेत्तितत् ॥ सनिमित्तोनजानातिरसंकर्मेंद्रियंयथा ॥ ७ ॥ गोवर्द्धनवासिन्यऊचुः ॥ पुरंध्रीप्रेमकृद्योवैसरंध्रीनायकोभवत् ॥ शैलोकोभिस्तुकिंतस्यबहुनाकथितेनकिम् ॥ ८ ॥ कुंजविधायिकाःऊचुः ॥ ह्यमाधवीकुंजपुंजेगुंजन्मत्तमधुव्रते ॥ स्वदृग्लक्षीकृतोयोवैतस्येयंश्रूयतेकथा ॥ ९ ॥ निकुंजवासिन्यऊचुः ॥ वृंदावनेमत्तमिलिंदपुंजेकलिन्दजातीरकदंबकुंजे ॥ शनैश्चलंतंसबलंसगोपंसगोधनंनंदसुतंभजामः ॥ १० ॥ यमुनायूथाऊचुः ॥ कदातथास्मत्समयोभविष्यतियथापुरंध्रीसमयःप्रदृश्यते ॥ शोकंपरंमाकुरुतव्रजांगनाःसदानकस्यापिजयःपराजयः ॥ ११ ॥

नहीं जानते हैं ॥ ७ ॥ गोवर्द्धनवासिनी बोलीं, जो कोई पुरंध्रियोंसे प्रेम करता है वह पुरंध्री नायक कहलाता है, वह पुरंध्री नायक आज आश्चर्य है कि सैरंध्री नायक कहलाता है, उसको पर्वतवासिनियोंसे क्या मतलब है, अब बहुत कहनेसे क्या है ॥८॥ कुंज बनानेवाली बोलीं, जो माधवीकी कुंजके पुंजमें मतवाले भ्रमर जिसमें गूंज रहे उसमें अपनी आँखों से देखा था, उसकी आज यह कथा सुननेमें आती है ॥९॥ निकुंजवासिनी बोलीं, मतवाले भ्रमरोंके पुंज जिसमें कालिंदीके तीर कदंबकी कुंज जिसमें,उस वृन्दावनमें धीरे धीरे बलदेवजीके साथ गोपोंको लिये गौ चराने नन्दनन्दनको हम भजती हैं ॥१०॥ यमुनायूथ बोलीं, कभी तो हमारा भाग्य वैसा होगा, जैसा आजदिन कुब्जाका भाग्य चेत रहा है, हे व्रजांगनाओ ! शोच मत करो, न तो सदा किसीकी जीत रहती है, और न सदा किसीकी हार रहती है ॥ ११ ॥

विधाताके कुछ भी दया नहीं जो कभी तो प्रियजनोंका संयोग कराता है और कभी वियोग कराता है, बालक जैसे कभी खिलौनें इकट्ठे करता है, कभी पृथक् करता है ॥ १२ ॥ कुब्जा पहिले कंसकी दासी थी, और टेढी थी, अब कूबड निकल गई और कुलीन हो गई, कुरूपिणी थी सो रूपवती हो गई, वह भी अपनी चार दिन विजयकी दुन्दुभि बजा ले ॥ १३ ॥ विरजाके यूथकी गोपियाँ बोलीं कि, सदा न किसीकी भुजा प्रियके गलेमें रहती और न सदा वसन्त रहता है, न सदा युवावस्था रहती, न इन्द्रका राज्यही सदा है, यह तो चार दिनकी चांदनी है, सो चार दिनके लिये भलेंही मान कर लेओ ॥ १४ ॥ ललिताके यूथकी गोपियाँ बोलीं-अयोध्यापुरीमें पहिले रामचन्द्रको राज्यगद्दी होनेवाली थी, मन्थरा दासीके कहनेसे कैकेयीने विघ्न कर दिया, वह ही मन्थरा आज दिन कुब्जा बनकर मथुरापुरीमें आयी है, सो हे गोपियो ! अब कुब्जा क्या क्या न करेगी ॥ १५ ॥ विशाखाके यूथकी सखियाँ बोलीं-गौ चरानेको गोपोंके संग वनमें चराकर व्रजको आते हुये वंशीकी ध्वनिसे अपने व्रजको जगाते मत्त हाथीकीसी चालसे चलते नंदकुमारको हम

विधातुर्नदयाकिंचिद्युनक्तिवियुनक्तियः ॥ भूतानिसकलान्येवक्रीड़नानियथार्भकः ॥१२॥ कुब्जापुरावक्रर्जुसमानविग्रहादासीत्त्विदानींतुकुलीन-तांगता ॥ कुरूपिणीरूपवतीबभावहोचतुर्दिनेर्दुदुभिनादकारिणी ॥ १३ ॥ विरजायूथाऊचुः ॥ सदानकस्यापिभुजाप्रियांसेसदावसंतोन सदायुवास्यात् ॥ इन्द्रोनराज्यंकुरुतेसदायंचतुर्दिनैर्मानमलंकरोतु ॥ १४ ॥ ललितायूथउवाच ॥ रामाभिषेकेविनिवार्य्यमंथराचकार विघ्नंकिलकोसलेपुरे ॥ कुब्जैवसेयंमथुरापुरेगताकुब्जैवकिंकिंनकरोतिगोपिकाः ॥ १५ ॥ विशाखायूथउवाच ॥ गोचारणायानुचरैर्व्रजंतंप्र-बोधयंतंस्वपुरंविरावैः ॥ मत्तेभयानंहिविडबयंतंश्रीनन्दसूनुंनहिविस्मरामः ॥ १६ ॥ मायायूथाऊचुः ॥ संकोचवीथीषुपटेप्रगृह्यप्रसह्यदो-र्भ्यांहृदयेनिधाय ॥ अन्योन्यमाकर्षणहर्षभीतिगृंहान्हरिंतंहिकदानयामः ॥ १७ ॥ अष्टसख्यऊचुः ॥ वीक्ष्यनन्दसुतमंगसुन्दरंनेत्रमद्य नजगद्विपश्यति ॥ नन्दराजतनयेपुरींस्थितेकिंभविष्यतिवदाशुनस्त्वरम् ॥ १८ ॥ षोडशसख्यऊचुः ॥ वेणुनादमधुरध्वनिंवनेसंनिशम्य कुसुमेषुवर्द्धनम् ॥ श्रोत्रयुग्ममिहनःशृणोतिनोविश्वगीतमुतवायसःपरम् ॥ १९ ॥ द्वात्रिंशत्सख्यऊचुः ॥ प्रीत्यास्वमित्रंहिरिपुंनयेनलुब्धं धनैश्चद्विजमादरेण ॥ गुरुंप्रणामैररसिकंरसेननिर्मोहनंकेनवशीकरोति ॥ २० ॥

नहीं भूलती हैं ॥ १६ ॥ माया यूथकी गोपियाँ बोलीं कि, सकरी गलीमें पीताम्बर पकड़कर बलपूर्वक भुजाओंमें भरकर आपसकी खींचातनी सुखपूर्वक खींचकर हम उस श्याम को कब अपने घरको ले जायेंगी ॥१७॥ अष्टसखी बोलीं कि, अंग २ सुन्दर जिसके उस नन्दके पुत्रको देखकर हमारे नेत्र क्या अब जगत्को देखेंगे ! अर्थात् नहीं, सो नन्दसुत मथुरापुरीमें बैठा है, अब क्या होगा, सो तो जल्दी कहो ॥१८॥ शोडश सखी बोलीं कि, जो कान वनमें श्रीकृष्णकी वंशीकी ध्वनि कामकी बढ़ानेवालीको सुनते थे, वे कान उस ध्वनिमें चले गये, अब उन कानोंसे क्या लोकके गीत सुने जाते हैं ? जैसे तोता मैना, हंस, कोयलकी वाणी सुनकर कौआकी काँव २ क्या अच्छी लगती है ? अर्थात् नहीं ॥१९॥ बत्तीस सखी बोलीं कि, प्रीतिसे मित्रको राजी करे, नीतिसे शत्रुको राजी करे, लोभीको धनसे राजी करे, ब्राह्मणको भोजनसे आदरसे राजी करे, गुरुको प्रणामसे राजी करे रसिक को रसिकतासे राजी करे, परन्तु निर्मोहीको कैसे राजी करे ॥ २० ॥

श्रुतिरूपा गोपियाँ बोलीं-जो जागरादि अवस्थाओंके विषय कारण नहीं है और जो इस जगत्का हेतु है और जिसकी प्रेरणासे ये तीनों गुण विचरते हैं और ये महत्त्वादिक इंद्रिय तथा देवता जिसमें प्रवेश नहीं होते हैं, विस्फुलिंग अग्निमें जैसे, उस भगवान्को हमारा नमस्कार है ॥ २१ ॥ ऋषि रूपा गोपियाँ बोलीं–जिसको यह बलियोंका बली काल वश करनेमें समर्थ नहीं होता है, माया और वेदभी जिसको अपना विषय नहीं बना सके हैं, सो यह पूर्ण ब्रह्म अमृतरूप परम प्रशान्त शुद्ध परसे पर श्रीकृष्ण हैं,उनकी हम शरण प्राप्त हुई हैं ॥२२॥ देवांगना गोपियाँ बोलीं–जिस परके चार अंश–अंशांश, कला आवेश और पूर्ण ये अवतारोंके भेद हैं, जिनसे इस जगत्के उत्पत्ति, पालन, संहार, ये सब होते हैं, उन श्रीकृष्णकी शरण प्राप्त हुई हैं ॥२३॥ यज्ञ सीता गोपियाँ बोलीं–कि, जो श्रीमान् शोभायमान् निकुंजकी जो लता उनको प्रफुल्लित करनेवाला वसंत है और श्रीराधिकाके हृदय कंठका भूषण हैं, रासमण्डलका पति है, व्रज मण्डलका ईश्वर है, ब्रह्माण्ड मण्डलकी पृथ्वीका परिपालक है, वह कृष्ण हैं ॥२४॥ रमा वैकुण्ठवासिनी बोलीं-जिसने गोपियोंके

॥ श्रुतिरूपाऊचुः ॥ यज्जागरादिषुपरंह्यहेतुर्हेतुस्विदस्यविचरंतिगुणाश्रयेन ॥ नैतद्विशंतिमहदिंद्रियदेवसंघास्तस्मैनमोग्निमिवविस्तृत
विस्फुलिंगाः ॥ २१ ॥ ऋषिरूपाऊचुः ॥ नैवेशितुंप्रभुरयंबलिनांबलियान्मायानशब्दउतनोविपयीकरोति ॥ तद्ब्रह्मपूर्णममृतंपरमंप्रशांतं
शुद्धंपरात्परतरंशरणंगताःस्मः ॥ २२ ॥ देवांगनाऊचुः ॥ अंशांशकांशककलाद्यवतारवृन्दैरावेशपूर्णसहिताश्चपरस्ययस्य ॥ सर्गादयः
किलभवंतितमेवकृष्णंपूर्णात्परंतुपरिपूर्णतमंनतास्मः ॥ २३ ॥ यज्ञसीताऊचुः ॥ श्रीमन्निकुंजलतिकाकुसुमाकरोयंश्रीराधिकाहृदयकंठ
विभूषणोयम् ॥ श्रीरासमंडलपतिर्व्रजमंडलेशोब्रह्मांडमंडलमहीपरिपालकोयम् ॥ २४ ॥ रमावैकुंठवासिन्यऊचुः ॥ योगोपिकासकलयूथ-
मलंचकारवृन्दावनंचनिजपादरजोभिरद्रिम् ॥ यः सर्वलोकविभवायबभूवभूमौतंभूरिलीलमुरगेन्द्रभुजंभजामः ॥ २५ ॥ श्वेतद्वीपसखीजना
ऊचुः ॥ यथाशिलींध्रंशिशुरश्रमोगजःस्वपुष्करेणैवचपुष्करंगिरिम् ॥ धृत्वाबभौश्रीव्रजराजनन्दनःकृपाकरोसौनहिविस्मृतःक्वचित् ॥ २६ ॥
ऊर्द्ध्ववैकुंठवासिन्यऊचुः ॥ श्यामवर्णमयेनेत्रेजगच्छ्यामंविपश्यतः ॥ नद्वैतंदृश्यतेयासांताभिःकिंयोगसेवनम् ॥ २७ ॥ लोकाचल
वासिन्यऊचुः ॥ स्नेहपाशोदृढोच्छिन्नोनच्छिन्मोहरिणाविना ॥ छित्त्वातुमथुरांप्रागान्नागपाशंयथाखगः ॥ २८ ॥

सकल यूथ शोभायमान किये, अपनी चरण रजसे वृन्दावनको और गोवर्द्धनको शोभायमान किया, जिसने सब लोकके वैभवके लिये भूमिमें जन्म लिया, बहुत है लीला जिसकी, सुडौल हैं, भुजदण्ड जिसके, उस श्रीकृष्णको हम स्मरण करती हैं ॥२५॥ श्वेतद्वीपकी सखियाँ बोलीं-जैसे बालक बिना श्रम छत्तेको उठा ले, जैसे मतवाला हाथी कमलको उठा लेता है, वैसेही जिस व्रजराज नंदनने गिरिराजको उठा लिया, वह कृपाको करनेवाला श्रीकृष्ण हमसे भूला नहीं जाता है ॥२६॥ उर्द्ध वैकुण्ठवासिनी बोलीं कि, हमारे तो नेत्र श्याम वर्णमय हैं, सम्पूर्ण जगत् हमको तो श्याम ही दीखता है, इन नेत्रोंको द्वैत सो दीखताही नहीं है, उन हमको योग सेवनसे क्या है ॥२७॥ लोकाचलवासिनी बोलीं–स्नेहका पास बड़ा दृढ़ है, यह हरि विना किसीसे नहीं कटा है, उस मोहके पाशको काटकर जो मथुराको चले गये, जैसे गरुड़ नागपाशको काटता है ॥ २८ ॥

अजित पद्वासिनी बोलीं कि, नेत्र तो दोनों हमारे देखो कृष्णमें लग गये, वे दशों दिशाओंमें दौड़ते हैं, किन्तु कहीं नहीं लगते हैं, जैसे कमलपर बैठा भ्रमर और जगह नहीं बैठता है ॥२९॥ श्रीजीकी सखियाँ बोलीं--लोभसे तो यशका नाश होता है और क्रोधसे गुणका नाश होता है, बुरे व्यसनोंसे धनका नाश होता है, कपटसे मित्रताका नाश होता है ॥३०॥ मैथिली बोलीं--धन देकर तनकी रक्षा करे, तन देकर लाज रखे, धन, तन, लाज, इन तीनोंको देकर मित्रका काम करे ॥३१॥ कौशला बोलीं--कोई वियोगकी दशाको नहीं जानता है, वह वियोगजीव विना कहा नहीं जाता है, तीरसे कलेजा फटना तो अच्छा, किन्तु प्रियका वियोग होना अति कठिन है, सो वह वियोग परमेश्वर करे तो किसीको न होवे, वह सबसे बुरा है ॥३२॥ अयोध्यावासिनी बोलीं कि, पहिले निराशा करके फिर आशा लगाकर आप मथुराकी दिशाको चला गया, उसके ऊपर हमको योग लिखा है, हाय ! निर्मोही जनोंका

अजितपदाश्रिताऊचुः ॥ कृष्णलग्नंनेत्रयुग्मंधावद्दशदिशांतरम् ॥ अहोनलग्नंकुत्रापिपद्मलग्नोयथाह्यलिः ॥ २९ ॥ श्रीसख्य ऊचुः ॥ कार्पण्येनयशोहंतिक्रोधाद्गुणगणोदयम् ॥ धनानिव्यसनैर्लोकःकपटेनतुमित्रताम् ॥ ३० ॥ मैथिलाऊचुः ॥ धनंदत्त्वातनुं रक्षेत्तनुंदत्त्वात्रपांचवै ॥ धनंतनुंत्रपांदद्यान्मित्रकार्यार्थमेवहि ॥ ३१ ॥ कौशलाऊचुः ॥ नकोपिजानातिवियोगजांदशांजीवंविनावक्तुमलंन सोहि ॥ भूयादुरोबाणविभिन्नमारान्माभूत्कदापिप्रियविप्रयोजनम् ॥३२॥ अयोध्यापुरवासिन्यऊचुः ॥ कृत्वानिराशांविनिधायचाशांजगाम चाशांमथुरापुरस्य ॥ योगंचतस्योपरिचालिखन्नोनिर्मोहिनांचित्रमहोविचित्रम् ॥ ३३ ॥ पुलिंदिकाऊचुः ॥ एनंवरंकर्तुमतीवविह्वलांसमागतां शूर्पणखांपुरावने ॥ यःकारयामासविरूपिणींबलात्सौमित्रिणातेनतुवःकृपाकथम् ॥ ३४ ॥ सुतलवासिन्यऊचुः ॥ भक्तंबलिसत्यपरं चभूरिदंनीत्वाबलिंयःकुपितोबबन्धह ॥ अहोकथंतस्यकरोतिसेवनंमायाबटोर्वामनरूपधारिणः ॥ ३५ ॥ जालंधर्य्यऊचुः ॥ पुरातिकष्टंप्रग- तेऽसुरोत्तमेकायाधवेभक्तवरेततोह्ययम् ॥ भूत्वानृसिंहःकृतवान्सहायमहोपरानिष्ठुरताप्रदृश्यते ॥ ३६ ॥

कैसा विचित्र चरित्र है ॥ ३३ ॥ पुलिंदिनी गोपियाँ बोलीं कि, जिसको वरनेके लिये वनमें पहिले शूर्पणखा राक्षसी, आई अति विह्वल हो गई थी, जिसने लक्ष्मणके हाथों उसके बल पूर्वक नाक कान कटवाकर कुरूपा करदी, भला उसको हमारी दया कैसे आवेगी ॥३४॥ सुतलवासिनी गोपियाँ बोलीं-- भक्त बलिराजा बड़ा दाता बड़ा सत्यवादी उससे यह भूमि बलि (भेंट) लेकर फिर क्रोध करके उसको जिसने बांध लिया, उसका सेवन कौन करेगा, जो कपटका ब्रह्मचारी बौना बन गया ॥३५॥ जलंधरपुर वासिनी गोपियाँ बोलीं-देखो पहिले भक्तवर प्रह्लाद असुरोंमें उत्तम उसकी कैसी-कैसी कुगति कराई, बादमें जब सब निंदा करने लगे, तब नृसिंह बनकर उनकी सहायता की, जिसमें कठोरता तो प्रत्यक्षही दीखती है ॥ ३६ ॥

भूमि गोपी बोलीं कि,जिसके मुखमें कुछ और ऐसे निर्मोही जनका चरित्र विचित्र है,कुछ कहने योग्य नहीं है, उसको देवता तो जानतेही नहीं हैं,मनुष्य कहाँसे जानेगा॥३७॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां श्रीकृष्णस्मरणे गोपिकावाक्यं नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥ बर्हिष्मती नगरीकी रहनेवाली गोपियाँ बोलीं, अहो ! प्रलयके समुद्रमें जो कृपा करके वाराह रूप धरकर पृथ्वीको उठाकर लाया था, उसीने आदि राजा दयालु पृथु होकर पृथ्वीका पालन किया ॥ १ ॥ लता रूपी गोपियाँ बोलीं कि–धन्वंतरि भगवान् अमृत लेकर समुद्रमेंसे निकले, किन्तु विश्वके वैद्य महात्माने अपने हाथसे अमृत नहीं बांटा, फिर जिन्होंने वैर बांधा ऐसे दैत्य देवता रोये तब स्त्री बनकर देवताओंको पिला दिया, दूसरेका रोना अच्छा लगता है ॥२॥ नागेन्द्र कन्या गोपी बोलीं कि, जो वरनेकी इच्छासे वनमें आपहीसे आई उस शूर्पणखाको जिसने कुरूपिणी करदी, कुछ भी दया नहीं आई,

भूमिगोप्यऊचुः ॥ अहोतिनिर्मोहजनस्यचित्रंपरंचरित्रंगदितुंनयोग्यम् ॥ मुखेनचान्यद्धृदिभाव्यमन्यद्देवोनजानातिकुतोमनुष्यः ॥ ॥ ३७ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीकृष्णस्मरणेगोपीवाक्यंनामसप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ बर्हिष्मतीभवा ऊचुः ॥ अहोलयाब्धौकृपयाहरिर्यामुद्धृत्यवाराहतनुर्महात्मा ॥ तामन्वधावद्धृतमंजनीश्वरोभूत्वादयालुःपृथुरादिराजः ॥ १ ॥ लता गोप्यऊचुः ॥ स्वयंसुधांवानविभज्यपूर्वंधन्वंतरिर्विश्वभिषङ्महात्मा ॥ तद्वद्धवैरेषुसुरासुरेषुभूत्वाथयोषित्प्रददौकलिप्रिय ॥ २ ॥ नागेंद्रकन्याऊचुः ॥ अथेच्छतीमेनमहोवरंहरिःसमागतांशूर्पणखांमहावने ॥ चकारसौमित्रिसखःकुरूपिणीमहोकृतंतस्यतयाकिमप्रियम् ॥ ३ ॥ समुद्रकन्याऊचुः ॥ नित्यंगृहशतंयांतीदात्रीदुखंसुखंजनान् ॥ स्वीयाकथंसुशीलाचचंचलास्मिन्कथंस्थिता ॥ ४ ॥ अप्सरसऊचुः ॥ अस्यप्रीत्याकर्णनासेगतेवैरावणस्वसुः ॥ त्यजंतुवार्तांतेनापिभवतीनांकृपाकृता ॥ ५ ॥ दिव्याऊचुः ॥ सर्वेश्वरोबलिनीत्वाबलिंबद्ध्वा दयापरः ॥ अधोक्षिपन्मुक्तिनाथश्चित्रंतत्कथयाभवत् ॥ ६ ॥ अदिव्याऊचुः ॥ शतरूपायुतंशांततपस्यंतंमनुंपुरा ॥ दैत्यैर्बाधांगतंपश्चाद्रक्षासौदयानिधिः ॥ ७ ॥

उस लक्ष्मणके मित्रके अप्रिय कहाँ है ॥३॥ समुद्र कन्या गोपी बोलीं कि–नित्यही सौ घर घूमे किसीको सुख दे किसीको दुख दे सो जिसकी स्त्री बड़ी चञ्चला लक्ष्मी वह जाने उसके पास कैसे ठहरी ॥४॥ अप्सरा गोपी बोलीं–जिसकी प्रीतिसे रावणकी बहिनके नाक कान गये, अब उसकी बात मत करो, तुम्हारे ऊपर उसने बड़ी कृपा की, जो तुम्हारे उसने नाक कान छोड़ दिये हैं ॥५॥ दिव्या गोपी बोलीं कि, सबका ईश्वर होकर जिसने पहिले बलि (भेंट) लेकर और दयालु होकर देखो बलिको बांधा, और मुक्ति देनेवाला होकर बलि राजाको रसातलमें पटका, यह सब उसकी आश्चर्यकी कथा है ॥६॥ अदिव्या गोपी बोलीं कि, शतरूपा रानीको साथ लेकर शान्त होकर जब स्वायंभु मनु सुनंदा नदीपर तप करते थे, जब उनको यक्ष राक्षस खाने लगे, तब भद्रा रूपधारी जिन श्रीकृष्णने मनुकी रक्षा की थी, सो कभी तो वे दयानिधि इस विरह दुखसे हमकोभी बचायेंगे ॥ ७ ॥

सतोगुणी गोपियाँ बोलीं कि, पहले तो वड़ा कष्ट प्रह्लाद और ध्रुवने पाया, बादमें कृपा करके उनकी रक्षा की, दीनवत्सल हैं, किन्तु पहिले रक्षा नहीं की, ऐसे ही हमको भी पहिले दुःख देकर बादमें रक्षा करेंगे ॥८॥ रजोवृत्तिवालीं गोपी बोलीं, रुक्मांगद, हरिश्चन्द्र, अम्बरीष, इनकी पहिले सत्यकी परीक्षा कर ली, तब भागवती गति दी, ऐसे ही हमारी परीक्षा करते हैं ॥९॥ तमोवृत्तिवाली बोलीं-वृन्दा जालन्धरकी स्त्रीको छला, फिर बलिराजाको छला, कुब्जाने इनको भी ठग लिया, जैसा किया वैसा पाया ॥१०॥ देखो तलवार एक जगहसे ही टेढ़ी बहुत जनोंको मारती है फिर उसको टेढ़ी चलावे तब देखो कैसा कौशल दिखावे, यहाँ कुब्जा भी तीन जगहसे टेढी फिर त्रिभंगी श्रीकृष्ण मिल गये, अब जो चाहें सो करें ॥ ॥ ११ ॥ श्रीकृष्णका मार्ग देखते २ नेत्र दुखने लगे, "अभी मैं आऊँ" इस अवधिका पार ही नहीं मिलता है, वह कृष्णके आनेकी जो अवधि है, सो तो वामनजीका पाद विक्षेप हो गया, फिर कहो उसका अन्त कैसे मिले, अर्थात् जैसे वामनजीके पदका अन्त नहीं आया, वैसे ही इस कृष्णके आनेकी अवधिका अन्त नहीं मिलता है ॥ १२ ॥ हे. माधवे !

॥ सत्त्ववृत्तयऊचुः ॥ पूर्वंकष्टगतंभक्तंध्रुवंकायाधवंचवै ॥ पश्चाद्ररक्षकृपयानपूर्वंदीनवत्सलः ॥ ८ ॥ रजोवृत्तयऊचुः ॥ रुक्मांगदहरिश्चन्द्रांबरीषाणांसतांहरिः ॥ सत्यंपरीक्षन्प्रददौपुनर्भागवतींश्रियम् ॥ ९ ॥ तमोवृत्तयऊचुः ॥ वृन्दायेनच्छलंप्राप्ताछलिना बलिनापुरा ॥ छलमय्याबलिन्याद्यकुब्जयाछलितोह्ययम् ॥१०॥ कृपाणीह्येकतोवक्राघातयंतीजनान्बहून् ॥ किमुकुब्जात्रिवक्राच श्रीकृष्णे नत्रिभंगिना ॥११॥ पश्यंतीनांकृष्णमार्गंनेत्रेदुःखंगतेभृशम् ॥ अवधिःपादविक्षेपंवामनस्यकरोतिहि ॥१२॥ पीतत्वंत्वग्गता ॥ पादौशैथिल्यं प्रगतौचनः ॥ मनोविभ्रमतामुग्रांमाधवेमाधवंविना ॥१३॥ सपत्नीहारचिह्नाढ्यमागतन्तमुषःक्षणे ॥ हादैवकस्मिन्समयेद्रक्ष्यामोनन्दनन्दनम् ॥ १४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिकृष्णंचितयंत्योगोपिकाःप्रेमविह्वलाः ॥ उत्कंठितास्तारुरुदुर्मूर्च्छिताधरणींगताः ॥ १५ ॥ पृथक्पृथक्समाश्वास्यवचोभिर्नयनैर्गुणैः ॥ संबोध्यगोपिकाःसर्वाःप्राहराधांतदोद्धवः ॥ १६ ॥ उद्धवउवाच ॥ परिपूर्णतमेकृष्णेवृषभानुवरात्मजे ॥ गंतुमाज्ञांदेहिमह्यंनमस्तुभ्यंव्रजेश्वरि ॥ १७ ॥ प्रतिपत्रंदेहिशुभेश्रीकृष्णायमहात्मने ॥ तेनतंचप्रणम्याशु ॥ समानेष्येतवांतिकम् ॥ १८ ॥

माधवके बिना मार्ग देखते २ पीली तो त्वचा (खाक) हो गई, हमारे पांव शिथिल हो गये, मन बावला हो गया, किन्तु प्यारेको खोज नहीं है ॥१३॥ सौतके हारके चिह्न जिसके गलेमें प्रातःकालमें आये हाय दैव ! ऐसे नन्दनन्दनको हम कब देखेंगी, हा नाथ ! हा रमण ! हा महाबाहो ! कहाँ हो कहाँ हो ॥१४॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे कृष्णका चिन्तन करती गोपियाँ प्रेममें विह्वल हो गईं, उत्कण्ठित होकर रोने लगीं, फिर मूर्च्छा खाकर धरतीमें गिर पड़ीं ॥१५॥ तब उद्धवजी पृथक् २ गोपियोंको अनेकों नीतिके वचनोंसे समझा कर सब गोपियोंको सम्बोधन देकर उद्धवजी राधिकाजीसे बोले ॥१६॥ हे परिपूर्णतमे ! हे कृष्णे ! हे वृषभानुवरात्मजे ! मुझको आज्ञा दीजिये, मैं जाऊँ हे व्रजेश्वरी ! आपके लिये मेरा नमस्कार है ॥१७॥ हे शुभे ! पृथक् गोपियोंके पत्र और आप अपने हाथका पत्र श्रीकृष्ण महात्माके लिये दीजिये; जिससे मैं उनको प्रणाम करके आपके पास ले आऊँ॥१८॥

नारदजी कहते हैं, तब राधिकाजी कागज, कलम, दावात, मंगाकर समाचार विचारने लगीं, तभी आँसू बहने लगे ॥१९॥ तब राधाने जो जो पत्र लिखनेको लिया, वह सब आसुओं से भीगकर गीला हो गया ॥२०॥ आँसुओंके प्रवाहको छोड़ती, कृष्णके दर्शनकी लालसा हैं जिसको, उस कमलनयनी राधासे आश्चर्य करते उद्धवजी बोले ॥ २१ ॥ हे राधिके आप क्यों लिखती हो, क्यों दुख करती हो, आपकेलिखे विना ही मैं कृष्णसे आपकी सब व्यथाको कहूँगा ॥२२॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे उद्धवजीके वचन सुनकर जिस राधा की बाधा सब चली गई उस राधाने और सब गोपियोंने उद्धवजीका पूजन किया ॥२३॥ तब उद्धवजी प्रणाम करके रासेश्वरी राधिकाकी परिक्रमा देकर गोपी गणोंसे आज्ञा मांग कर बार बार प्रणाम करके ॥२४॥ रत्नों भूषणोंसे भूषित दिव्य कान्तिवाले रथपर चढ़कर गया है अतिमान जिसका ऐसे उद्धव संध्याके समय नन्दजीके पास आये ॥ २५ ॥ जब

श्रीनारदउवाच ॥ अथराधालेखनींचनीत्वापात्रमपेस्त्वरम् ॥ समाचारंचिंतयंतीतावदश्रूणिसुस्रुवुः ॥ १९ ॥ यद्यत्पत्रं समानीतं राधयालेखनीयुतम् ॥ तत्तदार्द्रीकृतंजातंनयनांबुजवारिभिः ॥२०॥ अश्रुप्रवाहंमुंचंतींकृष्णदर्शनलालसाम् ॥ उद्धवोविस्मयन्प्राहराधांकमल लोचनाम् ॥ २१ ॥ उद्धवउवाच ॥ कथंलिखसिराधेत्वंकथंदुःखंकरोषिहि ॥ सर्वंतस्मैवदिष्यामित्व्यथांत्वल्लेखनंविना ॥ २२ ॥ श्रीनारदउवाच इतिश्रुत्वावचस्तस्यराधयागतबाधया ॥ सर्वाभिर्गोपिकाभिश्चपूजितोभूत्तदोद्धवः ॥ २३ ॥ नत्वाप्रदक्षिणीकृत्यराधां रासेश्वरींपराम् ॥ गोपीगणमनुज्ञाप्यनत्वानत्वापुनःपुनः ॥२४॥ रथमारुह्यदिव्याभंरत्नभूषणभूषितम् ॥ गतमत्यतिमानोसौसंध्यायांनंदमा ययौ ॥ २५ ॥ मार्तंडउदयंप्राप्तेनत्वागोपींयशोमतीम् ॥ नन्दराजमनुज्ञाप्यनवनंदांस्तदोद्धवः ॥२६॥ वृषभानूपनंदाश्चांसमनुज्ञाप्यलोकतः॥ तथाकृष्णसखान्सर्वान्रथमारुह्यनिर्गतः ॥ २७ ॥ दूरंतमनुगाःसर्वेगोपागोपीगणास्तथा ॥ सन्निवृत्त्याथतान्स्नेहादुद्धवोमथुरांययौ ॥ २८ ॥ एकांतेचाक्षयवटेकृष्णार्तीरेमनोहरे ॥ नत्वाकृष्णंपरिक्रम्यप्रेमगद्गदयागिरा ॥ प्राहस्रवन्नेत्रपद्मउद्धवोबुद्धिसत्तमः ॥ २९ ॥ उद्धवउवाच ॥ किंदेवकथनीयंमेभवतोशेषसाक्षिणः ॥ विधत्स्वशंराधिकायागोपीनांदेहिदर्शनम् ॥ ३० ॥ श्रीकृष्णंदेवदेवेशंसमानेष्येतवांतिकम् ॥ इत्थंवा-क्यंचमेभूतंरक्षरक्षकृपानिधे ॥ ३१ ॥

सूर्योदय हुआ, तब यशोदाजीसे आज्ञा लेकर प्रणाम करके नन्दराजसे आज्ञा मांगी, वैसे ही नौ नन्दोंसे ॥२६॥ छः वृषभानु, नौ उपनन्द; कृष्णके सखा इन सबसे आज्ञा लेकर रथमें बैठकर चले ॥२७॥ तब मोहवश दूरतक गोप गोपीगण पहुँचाने आये उनको लौटाकर उद्धव मथुराको आये ॥ २८ ॥ एकान्तमें अक्षयवटपर मनोहर यमुनाजीके किनारेपर बैठे श्रीकृष्णको प्रणाम करके परिक्रमा देकर आँखोंमेंसे आँसू बहाते प्रेमकी गद्गदवाणी बुद्धिमान् उद्धव बोले ॥ २९ ॥ हे देव ! मैं क्या कहूं, आप सबके साक्षी हो, हे नाथ ! आप राधाका कल्याण कीजिये और गोपियोंको दर्शन दीजिये ॥ ३० ॥ हे देवदेव ! "श्रीकृष्णको मैं तुम्हारे पास ले आऊँगा" ऐसे कह आया हूँ, सो मेरी रक्षा करिये, मेरी प्रतिज्ञा रखिये ॥ ३१ ॥

जैसे प्रह्लाद, रुक्मांगद, बलि, खट्वांग, अम्बरीष, इनकी प्रतिज्ञा रखी, हे नाथ ! हे भक्तेश्वर ! वैसेही मेरी प्रतिज्ञाकी रक्षा करिये ॥३२॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां मथुराखण्डे भाषा टीकायां गोपीवाक्य उद्धवागमनं नामाष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥ नारदजी कहते हैं कि ऐसे भक्तवत्सल भगवान्ने भक्त उद्धवका वचन सुनकर अपने कहे हुये वचनका स्मरण करके चलनेका मन किया ॥ १ ॥ राज्यादिकके कार्य भारपर बलदेवजीको स्थापित करके सुनहरी रथ जिसमें किंकिड़ी बंध रही, चंचल जिसमें घोड़े जुते ॥ २ ॥ ऐसे सूर्यकी कान्तिवाले रथमें बैठ उद्धवको साथ लेकर भक्तोंको दर्शन देनेके लिये भगवान् नन्दग्रामको आये ॥३॥ गोवर्द्धन, गोकुल, वृन्दावनको देखते मनोहर यमुनाके तीर पुलिनमें आये ॥४॥ करोड़ों गौएं व्रजके पति श्रीकृष्णको देखकर चारों ओरसे भगीं, स्नेहसे दूध जिनके बहता जाय सब ओरसे कृष्णके पास आईं ॥५॥ रम्भाती हुई, कान और पूंछ उठाकर बछड़ोंसहित

प्रह्लादरुक्मांगदयोःप्रतिज्ञांबलेश्चखट्वांगनृपस्यसाक्षात् ॥ यथांबरीषध्रुवयोस्तथामेकृताचभक्तेश्वररक्षरक्ष ॥ ३२ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्री मथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेगोपीवाक्यउद्धवागमनंनामाऽष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंनिशम्यभक्तस्यवचनंभक्त वत्सलः ॥ स्मृत्वाक्यंस्वकथितंगंतुंचक्रेऽच्युतोमतिम् ॥१॥ बलदेवंस्थापयित्वाकार्यभारेषुसर्वतः ॥ हेमाढ्यंकिंकिणीजालंचंचलांश्वनियोजितम् ॥ २ ॥ रथमारुह्यसूर्याभमुद्धवेनसमन्वितः ॥ भक्तानांदर्शनंदातुंप्रययौनंदगोकुलम् ॥३॥ गोवर्द्धनंगोकुलंचपश्यन्वृन्दावनंवनम् ॥ प्राप्तोभूत्पुलिनेकृष्णःकृष्णातीरेमनोहरे ॥४॥ कोटिशःकोटिशोगावोदृष्ट्वाकृष्णंव्रजाधिपम् ॥ आधावंत्यःसर्वतस्तंस्नेहस्नुतपयोधराः ॥ ५ ॥ उदास्यकर्णवालाश्चरंभमाणाःसवत्सकाः ॥ मुखेकवलसंयुक्ताअश्रुमुख्योगतव्यथाः ॥६॥सरथंसारुणंसाश्वंशरदर्कंयथाघनाः॥रुरुधुस्तंरथंराजन्नुद्धवस्यप्रपश्यतः ॥७॥ श्रीगोपालोहरिस्तासांवदन्नामपृथक्पृथक् ॥ श्रीहस्तेनतदंगानिस्पृशन्हर्षंजगामह ॥ ८ ॥ तत्समीपेगवांवृन्दंगतंवीक्ष्य व्रजार्भकाः ॥ श्रीदामाद्याविस्मिताश्चदूरादूचुःपरस्परम् ॥ ९ ॥ गोपाऊचुः ॥ रथंसकुंभध्वजवायुवेगंसुकांस्यपत्रध्वनिनिःस्वनंतम् ॥ शताश्वयुक्तंशतसूर्यशोभंगावःकथंवारुरुधुःसखायः ॥ १० ॥ अन्योनचास्मिन्हिगवांप्रहर्षणैरायातिकिंतुव्रजराजनंदनः ॥ स्फुरंतिचांगानिहिदक्षिणानिनःश्रीनीलकण्ठःप्रतनोतितोरणम् ॥ ११ ॥

प्रेमके आंसू बहाती मुखमें ग्रास लिये व्यथा जिनकी चली गई ॥६॥ उन गौओंने घोड़ों समेत उद्धवके देखते-देखते रथ आ घेरा, शरद ऋतुके सूर्यको जैसे घन आ घेरते हैं ॥७॥ तब श्रीगोपाल उन गौओंके पृथक् २ नाम ले लेकर सबके ऊपर हाथ फेर गौओंको हर्ष देते आप हर्षको प्राप्त हुये ॥८॥ श्रीकृष्णके समीप गौओंका समूह आया देखकर व्रजके बालक श्रीदामादिक विस्मित होकर आपसमें कहने लगे ॥ ९ ॥ हे सखाओ ! यह कुम्भकी ध्वजा है, जिसमें पवनकासा वेग, कांसेकी झांझ जिसमें बज रही है, सौ घोड़े जिसमें लग रहे हैं, सौ सूर्यकासा तेज है, इस रथको गौएं क्यों घेर रही हैं ॥ १० ॥ और तो कोई गौओंको हर्षका दाता है नहीं, कहीं व्रजराजनन्दन तो नहीं आया है, हमारे दाहिने अंग फडकते हैं, नीलकण्ठ बंदन वारसी करता है, यानी हमारे चारों तरफ तोरणकी तरह परिक्रमा देते घूम रहा है ॥ ११ ॥

नारदजी कहते हैं ऐसे मनसे विचार कर समस्त गोप श्रीकृष्णको देखनेको आये, गई वस्तुको देखनेको जन जैसे आते हैं ॥१२॥ तब तो स्वयं परिपूर्णतम श्रीकृष्ण रथमेंसे उतर पड़े स्वयं भगवान् सबको आगे करके भुजाएं फैलाकर सबसे मिले, और प्रेममें विह्वल हो गये ॥१३॥ नेत्रोंमें आंसू बहाते श्रीकृष्ण पृथक् २ सबसे मिले, अहो ! उस भक्तिका माहात्म्य पृथ्वीमें कौन कह सकता है ॥१४॥ तब सब गोप आंखोंमेंसे आंसू छोड़ते रोने लगे, तब हे मैथिल ! कुछ कहनेकी सामर्थ्य नहीं हुई, श्रीकृष्णक विक्षेपसे विह्वल हो गये ॥१५॥ तब परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्णने प्रेमानन्द भरे उन गोपोंको मीठी वाणीसे आश्वस्त किया ॥१६॥ फिर श्रीकृष्णने उद्धवजीको बालकोंके साथ नन्दभवनको भेजा, तब नन्दजीसे उद्धवजी बोले-हे व्रजनाथ ! आपके पुत्र श्रीकृष्ण आये हैं ॥१७॥ श्रीकृष्ण नन्दकुमार गोप वल्लभको आये सुनकर जिनके परिपूर्ण मनोरथ हो गये, ऐसे नन्दादिक गोप बड़ी प्रीतिसे कृष्णको

श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंविचार्य्यमनसागोपाःसर्वेसमागताः ॥ ददृशुर्माधवंमित्रंगतंवस्तुयथाजनाः ॥ १२ ॥ अवप्लुत्यरथात्कृष्णःपरिपूर्णतमःस्वयम् ॥ पुरोनिधायतान्सर्वान्दोर्भ्यांतत्प्रेमविह्वलः ॥१३॥ मुंचन्नेत्राब्जवारीणिपरिरेभेपृथक्पृथक्॥अहोभक्तेश्चमाहात्म्यंवक्तुंकोस्ति महीतले ॥ १४ ॥ तेसर्वेरुरुदुर्गोपामुंचंतोश्रूणिमैथिल ॥ प्रवक्तुंनसमर्थास्तेकृष्णविक्षेपविह्वलाः ॥१५॥ परिपूर्णतमःसाक्षाद्देवोमधुरयागिरा॥ आश्वासयामासचतान्प्रेमानन्दसमाकुलान् ॥ १६ ॥ उद्धवःप्रेषितोवक्तुंश्रीकृष्णेनार्भकैःसह ॥ आगतंकथयामासश्रीकृष्णंनंदपत्तने ॥१७॥ श्रुत्वागतंनंदसूनुंश्रीकृष्णंगोपवल्लभम्॥ आनेतुंनिर्गताःसर्वेपरिपूर्णमनोरथाः ॥१८॥ भेरीमृदंगैःपटहैःकलस्वनैरापूर्णकुंभैर्द्विजवेदघोषणैः॥ गधाक्षतैर्मंगललाजमिश्रितैःश्रीनंदराजोभिययौयशोदया ॥ १९॥ ततःपुरस्कृत्यमदोन्नतंगजंसिन्दूर शुंडाधृतहेमशृंखलम् ॥ समाययौश्रीवृषभानुमुख्योभान्वाकृतिस्तत्रकलावतीयुतः ॥२०॥ नंदोपनन्दावृषभानवश्चगोपाश्चवृद्धास्तरुणार्भकाश्च ॥ स्रग्वेणुगुञ्जापरिपिच्छयुक्ताविनिर्गताःपूर्णमनोरथास्ते ॥ २१ ॥ गायंतआरान्नृपनन्दनंदनंनृत्यंतआचालितपीतवाससः ॥ वंशीधरावेत्रविषाणपाणयःप्रहर्षितादर्शनलालसाभृशम् ॥ २२ ॥ सखीमुखेभ्योहरिमागतंपरंनिशम्यराधाशयनात्समुत्थिता ॥ ताभ्यःस्वभूषाःप्रददौप्रहर्षिताप्रीतास्वगन्धिनवपद्मिनीयथा ॥ २३ ॥

लिवानके लिये निकले ॥ १८ ॥ मनोहर जिनके शब्द ऐसे भेरी, नगाड़े, ढोल बजते जाते हैं, जलके भरे कलश लिये ब्राण्ह्मण वेद ध्वनि करते जाते हैं, गन्ध, अक्षत, राई, मंगल वस्तुओंको लेकर यशोदा सहित नन्दराज आये ॥१९॥ सिन्दूरसे सूंड जिसकी रंग रही है, सोनेकी सांकल बंधी है, ऐसे सजे हुये हाथीको आगे करके, ऐसेही शोभा कलावतीको संग लेकर सूर्यकासा जिनका तेज ऐसे वृषभानुवर आये॥२०॥ऐसेही छः वृषभानु, नौ उपनन्द, बालक, तरुण और बूढ़े-बूढ़े, सब आये, मालापहिने, बेंतलिये, मुरली बजाते, गुञ्जा(चिरमिठियों)के मोरपंखोंके शृंगार किये, परिपूर्णमनोरथ निकले॥२१॥श्रीकृष्णके समीपगाते, नाचते, पीलेवस्त्र फिराते वेणु, बेंत, शृंग जिनके हाथोंमें दर्शनकी लालसासे हर्षित चले आतेहैं॥२२॥सखियोंके मुखसे

कृष्णका आगमन सुनकर शय्यापरसे उठकर उन सखियोंको भूषण देकर प्रसन्न हुई, नवीन कमलिनी जैसे सुगन्धि देती है ॥२३॥ बत्तीस, सोलह, आठ और द्वियूथको साथ लेकर मनोहर पालकीमें बैठकर राधा श्रीधरके दर्शनको आई ॥२४॥ वैसेही करोड़ों गोपियाँ अपने २ घरके काम काज सब छोड़कर अस्त व्यस्त गहने वस्त्र जिनके प्रेमसे चलायमान आईं ॥२५॥ वृक्षलता, गौ, मृग, पक्षी सहित प्रेममें आतुर हो रहे आये सब व्रजको देखकर पिता नन्दराज और माता यशोदाकों कृष्णने हाथ जोड़ कर माथेपर धर प्रणाम किया ॥२६॥ श्रीनन्दराज बहुत दिनोंसे आये अपने पुत्रको दोनों भुजा फैलाकर हृदयसे लगाकर मिले, यशोदा सहित नन्दने आनन्दके आँसुओंसे कृष्णको स्नान करा दिया ॥२७॥ नन्द, उपनन्द, वृषभानु सबको प्रणाम किया, उन्होंने आशीर्वाद दिया, वैसेही बराबरके गोपोंको हाथमें हाथ पकड़ छोटे बड़ोंसे यथा योग्य मिले ॥२८॥ फिर आप रथमें बैठे नन्द यशोदाजीको

द्वात्रिंशदष्टौकिलषोडशद्वेयूथैर्युतामैथिलगोपिकानाम् ॥ आरुह्यराधाशिबिकांमनोज्ञांसमाययौश्रीधरदर्शनार्थम् ॥ २४ ॥ तथाहिगोप्यःकिल कोटिशश्चत्यक्त्वाथसर्वस्वगृहस्यकृत्यम् ॥ व्यत्यस्तवस्त्राभरणानृपेशसमाययुःप्रेमचलन्मनोंगाः ॥२५॥ सर्वंव्रजंपादपगोमृगद्विजंप्रेमातुरंवीक्ष्य समागतंकिमु ॥ श्रीनंदराजंपितरंचमातरंननामकृष्णःकृतमस्तकांजलिः ॥ २६ ॥ श्रीनन्दराजस्तनयंचिरागतंप्रगृह्यदोर्भ्यांहृदयेनिधायतम् ॥ संस्नापयामाससुनेत्रजैर्जलैर्यशोदयाप्राप्तमनोरथश्चिरात् ॥२७॥ नन्दोपनन्दान्वृषभानुवृद्धान्सर्वान्नमस्कृत्यचतत्कृताशीः ॥ तथावयस्यैश्चपर स्परंबालघूंश्चहस्तग्रहणैःस्थितोऽभूत ।२८। ततःसमारुह्यरथंहरिःस्वयंनिधायनंधायनंदंचगजेयशोदया॥नंदोपनंदैःसहितोगवांगणैःश्रीनंदराजस्य पुरंविवेशसः ॥ २९ ॥ तदैवदेवाःकिलपुष्पवर्षामाचारलाजान्पुरगोपिकाश्च ॥ प्रचक्रिरेतत्रजयेतिमंगलंशब्दंचगोपागृहमागतेहरौ ॥ ३० ॥ धन्यः सखातेपरमुद्धवोयमनेनसाक्षात्किलदर्शितोत्र ॥ त्वंजीवनंगोपजनस्यगोपाऊचुर्गिरागद्गदयेदमार्ताः ॥३१॥ इदंमयातेकथितंनृपेशपुनर्व्रजेह्यागमनंहरेश्च॥ किमिच्छसिश्रोतुमथोसुरासुरैःपरंचरित्रंशुभदंविचित्रम् ॥३२॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीकृष्णगमनोत्सवंनामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ अग्रेचकारकिंसाक्षाद्भगवान्व्रजमण्डले ॥ राधायैगोपिकाभ्यश्च कथंस्विद्दर्शनंददौ ॥ १ ॥

हाथीपर बैठाकर नन्द, उपनन्द, सबको लेकर गौओंको लेकर नन्द नगरमें आये ॥२९॥ जब देवता पुष्पोंकी वर्षा करने लगे, गोपीं खील वर्षाने लगीं, जब महलमें आये, तब सब जय, जय, शब्द करने लगीं ॥३०॥ तब तो सब गोप कहने लगे-हे कृष्ण ! यह तुम्हारा सखा उद्धव धन्य है, जिसने तुमको दिखा दिया, तुम गोपजनोंके जीवन हो, इस प्रकार आर्त-वचन बोले ॥ ३१ ॥ नारदजी कहते हैं, हे नृपेश ! यह तुम्हारे सामने फिरसे हरिके व्रजमें आनेको कथा कही, हरिका यह चरित्र विचित्र है, सुर असुर सबको शुभ देने वाला है, अब और क्या सुनना चाहते हो ? ॥ ३२ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां श्रीकृष्णागमनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ बहुलाश्व नारदजीसे पूछता है कि, साक्षात भगवान्ने व्रजमण्डलमें आगे क्या लीला की और गोपियोंको कैसे दर्शन दिया ॥ १ ॥

गोपियोंका मनोरथ करके फिर मथुरामें कैसे आये, हे विप्रेन्द्र ! यह मुझसे कहिये, आप भूत, भविष्यत् के वेत्ता हो ॥२॥ नारदजी कहते हैं, सन्ध्या समय राधिकाजीने बुलाये तब श्रीकृष्ण भगवान् एकान्त-शीतल कदली वन में गये ॥३॥ फुहार जिसमें चल रहे, ऐसा जो चन्दनसे छिड़का हुआ मेघ महल उसमें गये, जहाँ कालिंदीकी फुहार चली आरही है, चन्द्र मण्डलमेंसे जहाँ अमृत झर रहा है ॥४॥ ऐसा वन सो राधाके वियोगकी अग्निसे भस्म हुआ जाता था, केवल श्रीकृष्णके आगमनकी आशाही उस वनकी रक्षा कर रही थी ॥५॥ वहाँही गोपियोंके सौ यूथ थे, वे सबप्रियाजीसे श्रीकृष्णका आगमन कहनेको आये ॥६॥ श्रीकृष्णको आया देख अकस्मात् उठकर खड़ी हुई वृषभानुवरकी पुत्री राधिका सब सखियोंको साथ लेकर श्रीकृष्णको लिवालानेको आई ॥७॥ तब आसन, अर्घ्य, पाद्य, सुन्दर २ उपचार दिये, आदरसे मीठी २ वाणीसे कुशल पूछने लगी, कुशल पूछनेमें

गोपीमनोरथंकृत्वामथुरामाजगामह ॥ एतन्मेब्रूहिविप्रेंद्रत्वंपरावरवित्तमः ॥ २ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ सन्ध्यायांराधयाहूतःश्रीकृष्णोभग-
वान्स्वयम् ॥ एकांतेशीतलंशश्वज्जगामकदलीवनम् ॥३॥ स्फारास्फुरन्मेघगृहंरंभाचन्दनचर्चितम् ॥ कृष्णामरुत्सीकरंचसुधारश्मिगलत्सुधम्
॥ ४ ॥ एतादृशंवनंराधावियोगानलवर्चसा ॥ भस्मीभूतंहिसततंकृष्णाशातांहिरक्षति ॥५॥ तत्रैवसर्वैगोपीनांशतयूथाःसमागताः॥ तस्यैनिवे-
दनंचक्रुर्माधवागमनस्यहि ॥ ६ ॥ उत्थायसहसासाक्षाद्वृषभानुवरात्मजा ॥ आनेतुमाययौकृष्णंसखीभिःपरिवारिता ॥७॥ ददावासनपाद्या
र्घानुपचारान्मनोहरान् ॥ वदंतीसादरंवाक्यंकुशलंकुशलाधिका ॥८॥ युवकंदर्पकोटीनांमाधुर्य्यंहारिणंहरिम् ॥ दृष्ट्वाराधाजहौदुःखंब्रह्मज्ञात्वा
गुणंयथा ॥ ९ ॥ प्रसन्नातत्रश्रृंगारमकरोत्कीर्तिनन्दिनी ॥ तयानोकारिश्रृंगारःपांथेकृष्णेगतेसति ॥ १० ॥ नचन्दनंचतांबूलंभोजनंचसुधास
मम् ॥ नकृतंदिव्यशयनंहास्यंवानकृतंक्वचित् ॥ ११ ॥ परिपूर्णतमंकृष्णंपरिपूर्णतमप्रिया ॥ आनन्दाश्रूणिमुंचंतीप्राहगद्गदयागिरा ॥१२॥
राधोवाच ॥ कियद्दूरेयदुपुरीनागतंकिंकरोषिहि ॥ किंवदेहंरहोदुःखंभवतोऽशेषसाक्षिणः ॥ १३ ॥ सौदासराजमहिषीदमयंतीचमैथिली ॥
नास्त्यत्रकांपुरस्कृत्यवदेहंविरहंरिपुम् ॥ १४ ॥

अति चतुर हैं ॥८॥ तरुण करोड़ों काम देवके धैर्यको हरनेवाले हरिको देख श्रीराधिकाने अपने दुःखको त्याग दिया ब्रह्मको प्राप्त होकर गुणोंको जैसे त्याग देता है ॥ ९ ॥ तब श्रीकीर्ति नंदिनी प्रसन्न होकर अपने श्रृंगार करने लगीं, जबतक श्रीकृष्ण मथुरामें रहे तबतक श्रृंगार नहीं किया ॥१०॥ न चन्दन लगाया, न ताम्बूल खाया, न अमृतसा भोजन किया, न दिव्य सेज बनाई, कभी हास्यभी नहीं किया ॥११॥ पूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्णसे परिपूर्णतम प्यारी राधिका आनन्दके आँसुओंको छोड़ती गद्गद वाणीसे बोली, ॥१२॥ राधा बोली, मधुपुरी कितनी दूर हैं, जो आप नहीं आये, वहाँ क्या किया करते हो, एकांतका दुख मैं आपसे क्या कहूँ,आप तो सबके साक्षी हो ॥१३॥ सौदास राजाकी रानी मदयन्ती, नलकी रानी दमयंती, रामचन्द्रकी रानी सीता, इन तीनोंमेंसे मेरे पास वैरी विरहके दुखको जाननेवाली यहाँ कोई नहीं है, मैं अब किसके सामने कहूँ ॥ १४ ॥

मेरे समान है आश्रम जिनका ऐसी गोपियाँ भी कहनेको समर्थ नहीं हैं, वे तो शरदऋतुके चन्द्रमाको चकोरी, जल भरे बादलको मयूरी जैसे देखती है ॥१५॥ ऐसे ही श्रीवृन्दावन के चन्द्रमा जो घनश्याम तुम हो, तुम्हें देखनेको हम उत्कण्ठित रहती हैं, आपका सखा उद्धव ही धन्य है, जिसने आपके दर्शन कराये और कोई व्रजमें ऐसा नहीं है, जिसके प्रेम से तुम आये हो ॥१६॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे कहती जा रही और रोती जा रही परमालक्ष्मी श्रीराधिकाको देखकर दयासे आतुर अंग जिनके, कमलसे नेत्रोंमेंसे अश्रुपात होरहा है जिनके, ऐसे श्रीकृष्ण दोनों भुजाओंसे पकड़कर नीतिके वचनसे. आश्वासन देते हुये बोले ॥ १७ ॥ भगवान् बोले हे राधे ! तुम शोच मत करो, मैं तुम्हारीही प्रीतिसे आया हूँ, हमारेमें कुछ भेद नहीं है, एकही तेज है किन्तु जनोंने दो मान रखे हैं ॥ १८ ॥ जैसे दूधमें सफेदी पृथक्क् नहीं होती है, वैसे ही हमारा तुम्हारा संयोग है जहाँ मैं हूँ, वहाँ ही सदा तू है, जहाँ तू है, वहाँ मैं हूँ, हमारा तुम्हारा कभी वियोग है ही नहीं ॥१९॥ परिपूर्ण ब्रह्म मैं हूँ, जगत्की प्रसूति करनेवाली तटस्थ तू है, हमारा तुम्हारा जो पृथक्क् मानना

मत्समानाश्रयागोप्योगदितुंनक्षमाःक्कचित ॥ शरच्चन्द्रचकोरीवमयूरीवघनंनवम् ॥१५॥ श्रीवृन्दावनचंद्रंत्वांघनश्यामंसमुत्सहे ॥ तवसख्योद्ध-
वेनाशुधन्येनत्त्वंप्रदर्शितः ॥ अन्यःकोपिव्रजेनास्तियस्यप्रेम्णात्वमागतः ॥ १६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंवदंतींसततंरुदंतींपरांश्रियंवी
क्ष्यघृणातुरांगः ॥ आश्वासयामासनयेनसद्यःप्रगृह्यदोर्भ्यांस्रवदंबुनेत्रः ॥ १७ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ माशोकंकुरुराधेत्वंत्वत्प्रीत्याहं
समागतः ॥ आवयोर्भेदरहितंतेजश्चैकंद्विधाजनैः ॥ १८ ॥ यथाहिदुग्धधावल्येतथावांसर्वदाशुभे ॥ यत्राहंत्वंसदातत्रविश्लेषोनहिचावयोः
॥१९॥ पूर्णब्रह्मपरंचाहंतटस्थात्वंजगत्प्रसूः ॥ विश्लेषआवयोर्मध्येमृषाज्ञानेनपश्यतत् ॥२०॥ यथाकाशस्थितोनित्यंवायुःसर्वत्रगोमहान् ॥
तथाजलंसूक्ष्मरूपंतेजोव्याप्तंयथैधसि ॥ २१ ॥ अंतर्बहिर्यथापृथ्वीपृथग्भूतावरानने ॥ तथाविकाररहितोजलवत्त्रिगुणैरहम् ॥ २२ ॥ तथात्वं
पश्यमद्भावंसदानन्दोभवेत्ततः ॥ अहंममेतिभावेनद्वितीयोस्तिवरानने ॥ २३ ॥ यावद्घनेमध्यगतस्तदुत्थितःस्वंरूपमर्कंनहिदृक्प्रपश्यति ॥
तावत्परात्मानमसौप्रधानजैर्गुणैस्तथातेषुगतेषुपश्यति ॥२४॥ गुणेषुसक्तंकिलबन्धनायरक्तंमनःपुंसिचमुक्तयेस्यात् ॥ मनोद्वयोःकारणमाहुरा-
राज्जित्वाथतत्कौविचरेदसंग ॥ २५ ॥

है सो विश्लेष अज्ञानसे देखा है ॥२०॥ जैसे आकाश नित्य रूप सर्वत्र व्याप्त होकर स्थित है और जैसे महान् वायु सर्वत्र नित्य है, जैसे सूक्ष्म रूपसे जल सर्वत्र रहता है, जैसे काठ में अग्नि रहती है ॥२१॥ जैसे देहके बाहर भीतर पृथ्वी है और पृथक्क् भी है, वैसे ही त्रिगुण विकारसे मैं रहित हूं, तो भी जलकी तरह त्रिगुणसे मैं मैला दीखता हूँ ॥ २२ ॥ वैसे ही तू सदानन्दमय मेरे स्वरूपको देख, हे वरानने ! अहं भाव और ममतासे मैं दूसरा हूं ॥२३॥ सूर्यसे उत्पन्न हुई जो दृष्टि है, सों मध्यगत अपना स्वरूप जो सूर्य है, उसको जब तक नहीं देखती है, तब तक तीनों गुणोंमें गया जो अपना आत्मा है उसको नहीं देखती है ॥२४॥ जो यह मन जब विषयोंमें लगा होवे तो बन्धन करनेवाला हो जाता है, और जो परमेश्वरमें लगा हो तो मुक्तिका कारण हो जाता है बंधन और मोक्षका कारण यह मनही है, इसलिये मनको जीतकर अनासक्त होकर पृथ्वीमें विचरना चाहिये ॥ २५ ॥

इस मनकी परस्पर दोनों ओरसे ही प्रीति होती है, एक ओरसे नहीं होती है, इससे मुझमें प्रेम ही कर्तव्य है, प्रेमके समान पृथ्वीमें और कोई उपाय नहीं है ॥२६॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे हरिके वचन सुनकर कीर्तिनन्दिनीने प्रसन्न होकर गोपियोंके साथ श्रीकृष्णका पूजन किया ॥२७॥ उसके बाद कार्तिककी पूर्णमासीको रात्रिके समय गोपियोंको और राधाको संग लेकर श्रीकृष्णने रासमंडलमें मुरली बजाई ॥२८॥ यमुनाके निकट राधाके संग राधाके पति रमण करनेवाली जो सुन्दरी गोपी उनके साथमें सुशोभित हुये ॥२९॥ जितनी रासमें गोपियां थीं, उतनेही अपने रूप धारण कर लिये, उन गोपियोंके साथ वृन्दावनके ईश्वर वृन्दावनमें रमण करने लगे ॥ ३० ॥ बजते हैं नूपुर और घूंघुरु जिनके, वनमाला पहिने, पीताम्बर ओढ़, कमलको लिये, सूर्यका तेज जिसमें ऐसे मुकुटको पहिने ॥३१॥ कौस्तुभ मणिको पहिने, चलायमान घुंघराली अलक जिनकी, विजलीसे प्रकाशमान सोनेके

सर्वेहिभावंमनसःपरस्परंनह्येकतोभामिनिजायतेततः ॥ प्रेमैवकर्तव्यमतोमयिस्वतःप्रेम्णासमानंभुविनास्तिकिंचित् ॥२६॥ श्रीनारदउवाच ॥
इतिवाक्यंहरेःश्रुत्वाप्रसन्नाकीर्तिनंदिनी ॥ गोपिकाभिःसमंकृष्णंपूजयामासमाधवम् ॥ २७ ॥ अथरात्र्यांहरिःसाक्षात्कार्तिक्यां रासमंडले ॥
गत्वाननादमुरलींगोपीभीराधयासह ॥ २८ ॥ यमुनानिकटेराजन्राधयाराधिकापतिः ॥ रामाभिःसुन्दरीभिश्चरासरंगेरराजह ॥२९॥यावती-
र्गोपिकारासेतावद्रूपधरोहरिः ॥ रेमेवृंदावनेदिव्येहरिर्वृन्दावनेश्वरः ॥३०॥ क्वणन्नूपुरमंजीरोवनमालाविराजितः ॥ पीतांबरःपद्मधारीप्रभातार्क
किरीटधृक् ॥३१॥ विद्युतछ्टतास्फुरत्प्रोद्यद्धेमकुंडलमंडितः ॥ वेत्रभृद्वादयन्वंशींनटवेषोघनद्युतिः ॥३२॥ स्फुरत्कौस्तुभरत्नाढ्यःप्रचलत्स्नि-
ग्धकुंडलः ॥ रराजराधयारासेयथारत्यारतीश्वरः ॥ ३३ ॥ शच्याशक्रोयथास्वर्गेघनश्चंचलयायथा ॥ वृन्दयावृन्दकारण्येतथावृन्दावनेश्वरः
॥ ३४ ॥ वृन्दावनंचपुलिनंवनान्युपवनानिच ॥ पश्यन्गोपीगणैःसार्द्धंगिरिंगोवर्द्धनंययौ ॥ ३५ ॥ गोपीनांशतयूथानांमानंवीक्ष्यव्रजेश्वरः ॥
भगवान्राधयासाकंतत्रैवांतरधीयत ॥ ३६ ॥ अथगोवर्द्धनाद्दूरेसुंदरंयोजनत्रयम् ॥ श्रीखण्डगन्धसंयुक्तंसययौरोहिताचलम् ॥३७॥लताकुंज
निकुंजाश्चपश्यन्जल्पंस्तयासह ॥ विचचारगिरौरम्येकांचनीलतिकालये ॥ ३८ ॥ तत्रदेवसरोरम्यंबद्रीनाथेननिर्मितम् ॥ पाठीनकूर्मनक्रादिहं-
ससारससंकुलम् ॥ ३९ ॥

चंचल हैं कुण्डल जिनके, बेत लिये वंशी बजाते, नटवर श्रृंगार किये, श्याम सुन्दर राधा सहित रासमें ऐसे शोभित हुये, जैसे रतिके संग कामदेव शोभित होता है ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ स्वर्गमें इन्द्राणीसे इन्द्रकी जैसे, विजलीसे घन जैसे वैसे वृन्दावनमें वृन्दासे वृन्दावनके ईश्वरकी शोभा हुई ॥ ३४ ॥ वृन्दावनको, यमुनाके पुलिनको, वन उपवनको, देखते २ गोपी गणोंके संग गोवर्द्धनको आये ॥ ३५ ॥ सौयूथ वाली गोपियोंको मान हुआ देखकर व्रजेश्वर भगवान राधासहित वहां ही अन्तर्धान हो गये ॥ ३६ ॥ उसके बाद गोवर्द्धनसे बारह कोस दूर जहां चन्दनका वन है, उस रोहिताचल नामक पर्वतपर चले गये ॥ ३७॥ लता, कुंज, निकुंजोंको देखते हुये राधिकासे बातचीत करते हुये, सुनहरी लताओंका है स्थान जिसमें उस पर्वतमें विचरने लगे ॥३८॥ वहां एक देव सरोवर बद्रीनाथका रचा हुआ है, जो बड़े-बड़े मगर, नक्र, हंस सारस इनसे भरा हुआ है ॥ ३९ ॥

हजार दलके कमल जिसमें फूल रहे हैं, उनसे सब ओरसे शोभित, भ्रमरोंकी ध्वनि और कोकिला जिसमें बोल रहीं ॥ ४० ॥ फूले हुये कमलोंकी सुगन्धि से युक्त शीतल, मन्द सुगन्धित पवन जिसके किनारेपर चल रहा, वहाँ रमण करनेवाली राधाजीके साथ माधव भगवान् रमण करने लगे ॥ ४१ ॥ उसके किनारेपर एक ऋभु नामक मुनीश्वर एक पांवसे खड़ा तप कर रहा था, और निरन्तर श्रीकृष्णके ध्यानमें तत्पर था, ॥४२॥ छासठ (६६) हजार वर्षतक जिसने निरन्न व्रत किया था, उस ऋषिको श्रीकृष्णने देखा ॥४३॥ हँसती हुई राधाने उस मुनिको देखकर पूछा, तब उससे श्रीकृष्ण बोले कि, इसका तुम माहात्म्य कहो, और इस महामुनिकी भक्तिको देखो ॥ ४४ ॥ हे ऋभो ! ऐसे श्रीकृष्णने ऊंचे स्वरसे पुकारा, किन्तु मुनिने सुना नहीं, क्योंकि उनकी उस समय समाधि लग रही थी ॥४५॥ तब हरि उनके हृदयसे निकल आये, जब ध्यानमें नहीं दीखे तब तो विस्मित होकर मुनीन्द्रने नेत्र खोल दिये ॥४६॥ तब नेत्र खोल राधासहित श्रीकृष्णको देखा, जैसे बिजली सहित बादल हो, अपने तेजसे दशों दिशाओंको रंग रहे हैं ॥४७॥ तब उठकर

सहस्रदलपद्मैश्चमंडितंतदितस्ततः ॥ भ्रमरध्वनिसंयुक्तंपुंस्कोकिलरुतवृतम् ॥४०॥ विकसत्पद्मगन्धाढ्यंतत्तीरंमन्दमारुतम् ॥ रमयाराधयासार्द्धंमाधवोनिषसादह ॥४१॥ तत्तीरेप्रतपस्यंतंऋभुंनाममहामुनिम् ॥ पदैकेनस्थितंशश्वच्छ्रीकृष्णध्यानतत्परम् ॥ ४२ ॥ षष्टिवर्षसहस्राणिषट्त्रिवर्षशतानिच ॥ निरन्ननिर्जलंशांतंश्रीकृष्णस्तंददर्शह ॥ ४३ ॥ पप्रच्छवीक्ष्यतंराधाहसंतीप्राहमाधवः ॥ माहात्म्यंकुरुभक्तोयंपश्यभक्तिमहामुनेः ॥ ४४ ॥हेऋभोइतिकृष्णेनप्रोक्तमुच्चैर्वचःशुभम् ॥ नश्रुतंतेनकिंचिद्वाचरमंप्रापितेनवै ॥ ४५ ॥ हरिस्तदातद्धृदयाद्बभूवाशुतिरोहितः ॥ ध्यानाद्गतंहरिंवीक्ष्यमुनींद्रश्चातिविस्मितः ॥ ४६ ॥ नेत्रउन्मील्यददृशेश्रीकृष्णंराधयागतम् ॥ घनंचंचलयेवाद्यंरंजयंतंदिशोदश॥४७॥उत्थायसद्योहरिभक्तितत्परःप्रदक्षिणीकृत्यहरिंसराधिकम् ॥ प्रणम्यमूर्ध्नानिपपातपादयोरुवाचकृष्णंबहुगद्गदाक्षरः ॥ ४८ ॥ श्रीऋभुरुवाच ॥ नमःकृष्णायकृष्णायैराधायैमाधवायच ॥ परिपूर्णतमायैचपरिपूर्णतमायच ॥ ४९ ॥ घनश्यामायदेवायश्यामायैसततंनमः ॥ रासेश्वरायसततंरासेश्वर्य्यैनमोनमः ॥ ५० ॥ गोलोकातिलीलायलीलावत्यैनमोनमः ॥ असंख्यांडाधिदेव्यैचासंख्यांडनिधयेनमः॥५१॥ भूभारहारायभुवंगताभ्यांमच्छान्तयेचात्रसमागताभ्याम् ॥ परस्परंसंधितविग्रहाभ्यांनमोयुवाभ्यांहरिराधिकाभ्याम् ॥ ५२ ॥

हरिकी भक्तिमें तत्पर राधासहित हरिकी परिक्रमा देकर शिरसे प्रणाम कर चरणोंमें गिर पड़े, गद्गद वाणीसे स्तुति करने लगे ॥४८॥ ऋभु ऋषि बोले–श्रीकृष्णके लिये और श्रीकृष्णाके लिये मेरा नमस्कार है, परिपूर्णतमा राधाके लिये मेरा नमस्कार है, परिपूर्णतममाधवके लिये मेरा नमस्कार है ॥ ४९ ॥ घन श्यामदेव और घनश्यामादेवी के लिये, रासेश्वर आप और रासेश्वरी प्रिया राधिकाजीके लिये निरन्तर नमस्कार है ॥ ५० ॥ गोलोकमें अतिलीला जिनकी उनके लिये और लीलावतीके लिये नमस्कार है, असंख्य ब्रह्माण्डोंकी अधिदेवी और असंख्य ब्रह्माण्डोंके निधिको नमस्कार है ॥ ५१ ॥ पृथ्वीका भार उतारनेके लिये पृथ्वीमें आये, मेरे उद्धारके लिये यहाँ आये, परस्पर मिल रहा है विग्रह जिनका ऐसे राधाकृष्ण आपके लिये नमस्कार है ॥ ५२ ॥

नारदजी कहते हैं, कृष्णके चरणोंको आंसुओंसे धोते प्रेमानन्दसे युक्त उस मुनिने प्राणोंको त्याग दिया ॥५३॥ तभी उसकी देहमेंसे ज्योति निकली, दश सूर्यकासा तेज जिसका, दशों दिशाओंमें घूमती हुई श्रीकृष्णमें लीन हो गई ॥ ५४ ॥ तब श्रीकृष्णने उस भक्तकी प्रेम लक्षणा भक्ति देखकर आनन्दके आंसुओंको छोड़ते प्रेमसे उसको बुलाया ॥५५॥ फिर श्रीकृष्णके चरण कमलसे कृष्णरूप होकर निकला, करोड़ कामदेवसा सुन्दर अत्यन्त झुका है मुख जिसका ॥ ५६ ॥ तब कृपाके करनेवाले भगवान्ने ऋषिको अपने हृदयसे लगाकर आश्वासन देकर कल्याणकारी अपना हस्त कमल उसके मस्तकपर रखा ॥५७॥ तब हे मैथिल ! राधा और कृष्णकी परिक्रमा देकर प्रणाम करके मनोहर रथमें चढ़कर दिशाओंमें प्रकाश करते ऋभु मुनि गोलोकको चले गये ॥५८॥ राधिकाजी ऋभु मुनिकी परम मुक्ति देखकर अत्यन्त आश्चर्य करती आनंदके आंसू छोड़ती श्रीकृष्णसे बोली ॥५९॥

॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाकृष्णपादाब्जेप्रक्षरद्बाष्पलोचनः ॥ प्रेमानंदसमायुक्तोजहौप्राणान्महामुनिः ॥ ५३ ॥ तदैवनिर्गतंज्योतिर्दश
सूर्यसमप्रभम् ॥ परिभ्रमद्दशदिशःश्रीकृष्णेलीनतांगतम् ॥ ५४ ॥ भक्तस्यभक्तिंश्रीकृष्णोवीक्ष्यवैप्रेमलक्षणाम् ॥ आनन्दाश्रुकलांमुंचन्प्रेम्णातं
चाजुहावह ॥ ५५ ॥ पुनःश्रीकृष्णपादाब्जात्कृष्णसारूप्यवान्मुनिः ॥ निर्गतःकोटिकंदर्पसन्निभोतिनताननः ॥५६॥ दोर्भ्यांप्रगृह्यहृदयेतंनि-
धायकृपाकरः ॥ आश्वास्यकल्याणकरंकरंदिव्यंदधारह ॥ ५७ ॥ प्रदक्षिणीकृत्यहरिंचराधिकांप्रणम्यचारुह्यरथंमनोहरम् ॥ गोलोकलोकंप्रय-
यावृभुर्मुनिर्विरंजयन्मैथिलमंडलंदिशाम् ॥५८॥ श्रीराधिकाविस्मयमागताभृशंदृष्ट्वापरांमुक्तिमृभोर्महामुनेः ॥ आनंदवारीणिविमुंचतीचिरंज-
गादकृष्णंवृषभानुनंदिनी ॥ ५९ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेरासोत्सवेऋभुमोक्षोनामविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥
राधोवाच ॥ धन्योयंमुनिनिशार्दूलस्त्वद्भक्तःप्रेमवान्महान् ॥ त्वत्सारूप्यंजगामासौत्वमप्यश्रुमुखोयतः ॥ १ ॥ अस्यदेहक्रियांकर्त्तुंयोग्यो-
सिवृजिनार्दन ॥ तपसाचास्यदेहोयंप्रस्फुरत्यमलाकृतिः ॥ २ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ वदंत्यांतत्रराधायांतद्देहोप्यभवत्सरित् ॥ वहंतीपापहंत्री
चदृश्यतेरोहितेगिरौ ॥ ३ ॥ तद्देहस्यापिसरितंवीक्ष्यराधातिविस्मिता ॥ नन्दराजात्मजंप्राहवृषभानुवरात्मजा ॥ ४ ॥

इति श्रीमद्गर्ग संहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां रासोत्सव ऋभुमोक्षो नाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ राधिकाजी बोली कि, यह मुनियोंमें श्रेष्ठ ऋभु मुनि धन्य है, आपका भक्त और आपका बड़ा प्रेमी सो आपकी सारूप्य मुक्तिको प्राप्त हुआ, जिसके प्रेमसे आपके भी आंसू आ गये ॥ १ ॥ हे दुःखनाशन ! इसकी देह क्रिया करनेके लिये आप योग्य हो तपस्यासे इसकी देह फड़कती है ॥ २ ॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे राधिकाजी कह रही थी, तभी मुनिकी देह नदी होकर बहने लगी, जो पापोंका नाश करनेवाली नदी रोहित गिरी पर बह रही है ॥ ३ ॥ ऋषिके देहकी नदीको देखकर राधा अत्यन्त विस्मयको प्राप्त हो गई और वृषभानुकी पुत्री नन्द नन्दनसे यह बोली ॥ ४ ॥

राधिकाजी बोलीं—कैसे इस महामुनिका शरीर जल हो गया, यह मेरे बड़ा सन्देह है, हे देव ! मेरे इस संशयको आप दूर करिये ॥५॥ भगवान् बोले कि, प्रेम लक्षणा भक्तिसे यह मुनि युक्त था हे रंभोरु ! इससे इसकी देह द्रव होगई॥६॥हे राधे ! तेरे संग जो वरका दाता जो मैं हूँ, उसको देखकर हर्षित हुआ महामुनि जलरूप होकर बह गया, जैसे मैं पहिले जलरूप होगया था ॥७॥ तब राधाजी पूछने लगी कि हे देवदेव ! हे दयानिधे ! आप द्रवताको कैसे प्राप्त हुये थे, यह मुझको बड़ा आश्चर्य है, सो आप विस्तारपूर्वक मुझको कहिये ॥८॥ भगवान् बोले-यहाँ एक पुराना इतिहास वर्णन करते हैं, इसके सुननेहीसे पापकी परम हानि होती है ॥ ९ ॥ जिसकी नाभि कमलसे प्रजापति ब्रह्मा हुआ, जो निरन्तर इस सृष्टिको रचने लगा, तपसे मेरे वरसे बड़ा प्रभु था ॥१०॥ जब ब्रह्मा रचने लगा, तब ब्रह्माकी गोदीमेंसे नारद हुआ, जो भक्तिसे उन्मत्त मेरे पदोंको गाता हुआ पृथ्वीमें विचरता है ॥११॥

॥ राधोवाच ॥ कथंजलत्वमापन्नोदेहोयंवैमहामुनेः ॥ एतन्मेसंशयंदेवछेत्तुमर्हस्यशेषतः ॥ ५ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ प्रेम लक्षणयाभक्त्या-संयुतोयंमुनीश्वरः ॥ तस्मादस्यतुदेहोयंरंभोरुद्रवतांगतः ॥ ६ ॥ दृष्ट्वात्वयामांवरदंहर्षितोभून्महामुनिः ॥ जलत्वंप्रापतद्देहोयथाहंद्रवतांपुरा ॥ ७ ॥ श्रीराधोवाच ॥ द्रवतांत्वंकथंप्राप्तोदेवदेवदयानिधे ॥ एतच्चित्रंहिमेजातंसर्वंत्वंवदविस्तरात् ॥ ८ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अत्रैवो-दाहरंतीममितिहासंपुरातनम् ॥ यस्यश्रवणमात्रेणपापहानिःपरंभवेत् ॥ ९ ॥ यन्नाभिपंकजाज्जातःपुराब्रह्माप्रजापतिः ॥ असृजत्प्रकृतं-शश्वत्तपसामद्वरोर्जितः ॥ १० ॥ उत्संगान्नारदोजज्ञेब्रह्मणःसृजतःशुभः ॥ भक्त्युन्मत्तोमत्पदानिनिजगौपर्य्यटन्महीम् ॥ ११ ॥ एकदा-नारदंप्राहदेवोब्रह्माप्रजापतिः ॥ प्रजासृजमहाबुद्धेवृथाचंक्रमणंत्यज ॥ १२ ॥ नारदस्तद्वचःश्रुत्वाप्राहेदंज्ञानतत्परः ॥ नसृजामिपितः सृष्टिंशोकमोहादिकारिणीम् ॥ १३ ॥ करिष्यामिहरेर्भक्तिंतत्कीर्त्तनसमन्विताम् ॥ त्वमपिसृष्टिरचनांत्यजदुःखातुरोभृशम् ॥१४॥ क्रुद्धःश-शापतंब्रह्माप्राहप्रस्फुरिताधरः ॥ सदागानपरःकल्पंगन्धर्वोभवदुर्मते ॥१५॥ एवंतच्छापतोराधेगन्धर्वउपबर्हणः ॥ बभूवगन्धर्वपतिःकल्पमा-त्रंसुरालये ॥ १६ ॥ एकदाब्रह्मगोलोकेस्त्रीभिःपरिवृतोगतः ॥ सुन्दरीषुमनःकृत्वाजगौतालविवर्जितम् ॥ १७ ॥ पुनर्ब्रह्मातंशशापत्वंशूद्रो-भवदुर्मते ॥ अथासौब्रह्मशापेनदासीपुत्रोबभूवह ॥ १८ ॥

एक समय प्रजापति ब्रह्मा नारदसे बोले हे महाबुद्ध ! तुम आज सर्जन करो, व्यर्थ घूमना छोड़ो॥१२॥तब ज्ञानमें तत्पर नारद ब्रह्माका वचन सुनकर बोले, हे पितः ! मैं प्रजाका सर्जन नहीं करूँगा, क्योंकि यह सृष्टि शोक, मोहादि कारिणी है ॥ १३ ॥ मैं तो भगवान् हरिकी कीर्तन सहित भक्ति करूँगा, आपभी सृष्टिकी रचना छोड़ दीजिये, इससे आप बड़े दुखी रहते हो ॥१४॥ तब तो ब्रह्माको क्रोध आ गया, ओठ फड़कने लगे और यह शाप दिया कि, हे दुर्बुद्धे जा तू एक कल्प तक सदाही गानमें तत्पर गन्धर्व होजा ॥१५॥ हे राधे ! ऐसे ब्रह्माके शापसे गन्धर्वोंका पति स्वर्गमें एक कल्पतक उपबर्हण नामक गन्धर्व बन गया ॥ १६ ॥ एक समय ब्रह्माके लोकमें स्त्रियों सहित गया, सुन्दरियोंमें मन करके गान किया, सो ताल चूक गया ॥१७॥ तब फिर ब्रह्माने शाप दिया कि, हे दुर्बुद्धे ! तू शूद्र होजा तब ब्रह्माके शापसे दासी पुत्र हुआ ॥ १८ ॥

सो सत्संगसे फिर ब्रह्माका पुत्र हुआ, भक्तिसे उन्मत्त मेरे पद गाता पृथ्वीमें विचरने लगा ॥१९॥ फिर मुनियोंमें इन्द्र वैष्णवोंमें श्रेष्ठ मेरा प्यारा ज्ञानका सूर्य परम भागवत मेरा मन हो गया ॥२०॥ एक समय नारद लोकोंमें विचरता गानमें तत्पर सब जगह जिसकी गति, सो इलावृत खण्डमें गया ॥२१॥ जहाँ श्यामा जम्बूनदी जम्बुफल (जामुन) के रसकी नदी हो गई, जहाँ जाम्बूनद सुवर्ण होता है, हे प्रिये ! ॥२२॥ उस देशमें एक वेद नामक नगर रत्नोंके महल जिसमें और दिव्य नर नारियोंसे युक्त था, उस नगरको नारदने देखा ॥२३॥ वहाँ पर कोई तो पांव रहित है, किसीके गुल्फ (टकुन) नहीं हैं, किसीके घुटना नहीं है, किसीके जंघा नहीं है, किसीके उरु नहीं हैं, किसीके कमर नहीं है और कोई कुबड़े हैं ॥२४॥ किसीके दांत हिलते हैं, किसीके कन्धा ऊँचे किसीके नीचे हैं, किसीके गर्दन नहीं है, इस प्रकार स्त्री और पुरुषोंको अंग भंग हुये देखा ॥२५॥ सब जनोंको देखकर मुनि बोले कि

सत्संगेनपुराराधेप्राप्तोभूद्ब्रह्मपुत्रताम् ॥ भक्त्युन्मत्तोमत्पदानिनिजगौपर्यटन्महीम् ॥ १९ ॥ मुनीन्द्रोवैष्णवश्रेष्ठोमत्प्रियोज्ञानभास्करः ॥ परं भागवतःसाक्षान्नारदोमन्मनाःसदा ॥ २० ॥ एकदानारदोलोकान्पश्यन्वैगानतत्परः ॥ इलावृतंनामखंडंगतवान्सर्वतोगतिः ॥ २१ ॥ यत्र जंबूनदीश्यामाजंबूफलरसोद्भवा ॥ तथाजांबूनदंनामसुवर्णंभवतिप्रिये ॥ २२ ॥ तद्देशेवेदनगरंरत्नप्रासादनिर्मितम् ॥ ददर्शनारदोयोगीदिव्यनारीनरैर्वृतम् ॥ २३ ॥ कांश्चिद्वैपादरहितान्विगुल्फाञ्जानुवर्जितान् ॥ विजंघाञ्जघनव्यंगान्कृशोरून्कुब्जमध्यकान् ॥२४॥ श्लथदंतोन्नतस्कंधान्नताननविकंधरान् ॥ स्त्रीजनान्पुरुषांश्चासावंगभंगान्ददर्शह ॥ २५ ॥ अहोकिमेतच्चित्रंहिसर्वान्दृष्ट्वावदन्मुनिः ॥ सर्वेयूयंपद्ममुखादिव्यदेहाःशुभांबराः ॥ २६ ॥ किंदेवाउपदेवावायूयंकिंऋषिसत्तमाः ॥ वादित्रसहिताःसर्वेरम्यगानपरायणाः ॥२७॥ अंगभंगाःकथंयूयंवदताशुममैवहि ॥ इत्युक्तास्तेनतेसर्वेप्रत्यूचुर्दीनमानसाः ॥ २८ ॥ रागाऊचुः ॥ महादुखंमुनेजातमस्माकंतनुषुस्वतः ॥ तस्याग्रेकथनीयंवैदूरीकर्त्तुंचयःक्षमः ॥ २९ ॥ रागावयंवेदपुरेवसामःसर्वदामुने ॥ अंगभंगावयंजाताःकारणंशृणुमानद ॥३०॥ जातोहिरण्यगर्भस्यपुत्रोनारदनामभाक् ॥ प्रेमोन्मत्तोविकालेनगायन्ध्रुवपदानिच ॥ ३१ ॥ विचचारमहीमेतांस्वेच्छयासमहामुनिः ॥ विकालेतस्यगानैश्चविस्वरैस्तालवर्जितैः ॥ ३२ ॥ विगानैश्चवयंसर्वेअंगभंगाबभूविम ॥ इतिश्रुत्वाथतद्वाक्यंनारदोविस्मितोऽभवत् ॥ उवाचगतमानोसौरागान्परिहसन्निव ॥ ३३ ॥

यह क्या आश्चर्य है कि, तुम समस्त कमलमुख हो, दिव्य देह और दिव्य वस्त्रवाले हो ॥२६॥ तुम देवता हो कि, गन्धर्व हो, अथवा ऋषि हो, सब वाद्यों (बाजों) सहित हो, मनोहर गान करते हो ॥२७॥ किन्तु तुम अङ्ग भङ्ग कैसे हो, यह जल्दीसे मुझसे कहो, ऐसे जब उन्होंने पूछा, तब वे दीन मनसे बोले ॥२८॥ कि हे मुने ! हमारे शरीरमें बड़ा दुख है, किसके सामने कहें, कोई दूर तो नहीं कर सकता है ॥२९॥ हे मुने ! हम सब राग हैं, सो वेद पुरमें सदा बसते हैं, हम अङ्ग भङ्ग हो गये हैं, हे मानद ! उसका कारण सुनो॥३०॥ हिरण्यगर्भ ब्रह्माके एक नारद नामक पुत्र हुआ है, वह प्रमोन्मत्त होकर असामयिक ध्रुव पदोंको गाता है ॥ ३१ ॥ अपनी इच्छा पूर्वक पृथ्वीमें बिचरता है, उसके असामयिक गानेसे, बेसुरेसे, बितालेसे, ॥३२॥ विगानसे हम सब अंग भंग हो गये हैं, ऐसे सुनकर नारदजी बड़े आश्चर्यमें आगये, मान चला गया, हंस करके सब रागोंसे बोले ॥ ३३ ॥

किस प्रकारसे रागोंका समय, ताल, स्वर, जाना जाय, वह बताओ ताल, स्वरसे समय समय पर राग गानेमें आवे, वह बात मुझको बताओ ॥३४॥ तब राग बोले कि, वैकुण्ठ नाथकी प्यारी स्त्री मुख्या सरस्वती हैं, वह जिसको सिखाये, उसको सब ज्ञान होवे ॥३५॥ उनके वचनको सुनकर दीनदयाल नारदजी सरस्वतीको प्रसन्न करनेके लिये जल्दी ही शुभ्र पर्वतको चले गये ॥३६॥ वहां दिव्य सौ वर्षतक, हे व्रजेश्वरी ! नारदने उग्र तप, किया, निराहार निर्जल रह कर सरस्वतीका ध्यान करते तप किया ॥ ३७ ॥ तब शुभ्र नाम को छोड़कर नारदके तपसे पवित्र हुआ, जो पर्वत था, वह नारद नामका पर्वत हो गया ॥३८॥ तब तपके अंतमें आई दिव्यवर्णी विष्णुकी प्यारी साक्षात् वाग्देवी श्रीसरस्वतीको नारदने देखा ॥३९॥ तब तत्काल उठकर उसको नमस्कार कर नीचा मुख करके मुनीश्वर दिव्यवर्णा सरस्वतीके रूप, गुण, माधुर्य, की स्तुति करने लगे ॥४०॥ नारद बोले नवीन

॥ मुनिरुवाच ॥ तस्यकेनप्रकारेणज्ञानंवैकालतालयोः ॥ भवेदिहस्वरैर्युक्तंवदताशुममैवहि ॥ ३४ ॥ रागाऊचुः ॥ वैकुंठस्य पतेःसाक्षात्प्रियामुख्यासरस्वती ॥ कुर्याच्छिक्षांयदातस्मैतदास्यात्कालविन्मुनिः ॥ ३५ ॥ तेषांवाक्यंततःश्रुत्वानारदोदीनवत्सलः ॥ सरस्वत्याः प्रसादार्थंत्वरंशुभ्रंगिरिंययौ ॥ ३६ ॥ दिव्यवर्षशतंशश्वत्तपस्तेपेसुदुष्करम् ॥ निरन्ननिर्जलंवाणीध्यानयुक्तंव्रजेश्वरि ॥३७॥ शुभंनामविसृज्याथपवित्रीकृतभूधरम् ॥ नारदोनामशैलोभूत्तपसानारदस्यच ॥ ३८ ॥ तपोंतआगतांसाक्षाद्वाग्देवींश्रीसरस्वतीम् ॥ विष्णोःप्रियांदिव्यवर्णामपश्यन्नारदोमुनिः ॥ ३९ ॥ सहसोत्थायतांनत्वापरिक्रम्यनताननः ॥ तद्रूपगुणमाधुर्यंस्तुतिंचक्रेमुनीश्वरः ॥ ४० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ नवार्कबिंबद्युतिमुद्गलद्धलत्ताटंककेयूरकिरीटकंकणाम् ॥ स्फुरत्क्वणन्नूपुररावरंजितांनमामिकोटींदुमुखींसरस्वतीम् ॥ ४१ ॥ वंदेसदाहंकलहंसउद्धते चलत्पदेचंचलचंचुसंपुटे ॥ निर्धौतमुक्ताफलहारसंचसंधारयंतींसुभगांसरस्वतीम् ॥ ४२ ॥ वराभयंपुस्तकवल्लकींयुतंपरंदधानांविमलेकरद्वये ॥ नमाम्यहंत्वांशुभदांसरस्वतींजगन्मयींब्रह्ममयींमनोहराम् ॥४३॥ तरंगितक्षौमसितांबरेपरेदेहिस्वरज्ञानमतीवमंगले ॥ येनाद्वितीयोहिभवेयमक्षरेसर्वोपरिस्यांपररासमण्डले ॥ ४४ ॥

सूर्यकी कान्तिको उगलने और हिलते जो कर्णफूल, झुमके, किरीट, कंकण उनको धारण करती हो, चमकने, बजने, नूपुरोंके शब्दसे रंगीली, करोड़ चन्द्रमा सा मुख जिनका, उनको मैं नमस्कार करता हूँ ॥४१॥ नारदजी बोले-हे कल हंसकी गतिवाली ! मैं आपको सदा ही प्रणाम करता हूँ, चलायमान चरणोंमें बजते हैं नूपुरोंके घुंघरु जिनके, अति उज्ज्वल मोतियोंके हारोंका समूह जिन्होंने धारण किया है, ऐसी सौभाग्यवती सरस्वतीको मैं नमस्कार करता हूँ ॥४२॥ निर्मल हाथोंमें वर, अभय, पुस्तक, वीणा, इनको धारण करती हो, जगन्मयी ब्रह्ममयी मनोहर सौभाग्यमयी शुभकी दाता सरस्वतीको मैं नमस्कार करता हूं ॥ ४३ ॥ तरंग जिनमें उठें ऐसे अति महीन श्वेत वस्त्रोंको धारण करने वाली हे अत्यन्त मंगले ! मुझे स्वरका ज्ञान दीजिये, इससे मैं सबके ऊपर अद्वितीय होऊँ, हे अक्षरे ! रासमण्डलमें गाऊँ ॥ ४४ ॥

भगवान् कहते हैं, यह जडता हरनेवाला स्तोत्र है, नारदका बनाया हुआ, इसका जो कोई प्रातःकाल उठकर पाठ करे, वह इस लोकमें विद्यावान् होता है ॥ ४५ ॥ उसके बाद वाग्वाणीने प्रसन्न होकर मेरा दिया हुआ स्वर और ब्रह्मभूषिता वीणा नारदको दी ॥ ४६ ॥ राग, रागिनी, उनके पुत्र, समय ज्ञान, देश, ज्ञान, स्वर, ताल, मान, दिये ॥४७॥ छप्पन करोड़ जिनके भेद हैं और अन्तर्भेद जिनके असंख्य हैं, उनको और उनके ग्राम, नृत्य बाजे, मूर्च्छना, ये सब नारदजीको दिये ॥ ४८ ॥ साक्षात् वैकुण्ठनाथकी प्रिया सरस्वती ने जिनसे स्वर जान पड़े ऐसे सिद्धपद नारदको पढाये ॥४९॥ रासमण्डलमें अद्वितीय रागकर्ता नारदको करके विष्णुकी प्यारी वाग्देवी वैकुण्ठको चली गई ॥ ५० ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां नारदोपाख्यानं नामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ भगवान् कहते हैं कि, यह गुप्त रागका रूप मनोहर किसको देने योग्य है; ऐसे नित्य

॥ श्रीभगवानुवाच ॥ स्तोत्रंजाड्यापहंदिव्यंप्रातरुत्थाययःपठेत् ॥ नारदोक्तंसरस्वत्याःसविद्यावान्भवेदिह ॥ ४५ ॥ ततःप्रसन्नावाग्देवी नारदायमहात्मने ॥ देवदत्तांददौवीणांस्वरब्रह्मविभूषिताम् ॥ ४६ ॥ रागैश्वरागिणीभिश्चतत्पुत्रैश्चतथैवच ॥ देशकालादिभेदैश्चतालमानस्वरैः सह ॥ ४७ ॥ षट्पंचाशत्कोटिभेदैरंतर्भेदैरसंख्यकैः ॥ ग्रामैर्नृत्यैःसवादित्रैर्मूर्च्छनासहितैःशुभैः ॥४८॥ वैकुण्ठस्यपतेःसाक्षात्प्रियामुख्यासरस्वती ॥ स्वरगम्यैःपदैःसिद्धैःपाठयामासनारदम् ॥४९॥ अद्वितीयंरागकरंकृत्वातंरासमण्डले ॥ वैकुण्ठंप्रययौराधेवाग्देवीविष्णुवल्लभा॥५०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेनारदोपाख्यानंनामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ कस्मैदेयमिदंगुह्यं रागरूपंमनोहरम् ॥ बुद्ध्याविचारयन्नित्यंगंधर्वनगरंययौ॥१॥तुंबुरुंनामगन्धर्वंकृत्वाशिष्यंसनारदः॥ कलंजगौमद्गुणांश्चवीणावाद्यपरायणः॥ ॥२॥ केषामग्रेगेयमिदंरागरूपंमनोहरम् ॥ श्रोतुंपात्रंविचिन्वन्सनारदःशक्रमाययौ ॥३॥ अनिर्वृतंचतंदृष्ट्वानारदोमुनिसत्तमः ॥सख्यातुंबुरुणा सार्द्धंसूर्यलोकंजगामह ॥ ४ ॥ रथेनतंप्रधावंतंसूर्यंवीक्ष्यमहामुनिः ॥ शिवपार्श्वंजगामाशुततोदेवर्षिसत्तमः ॥५॥ भूतेशंज्ञानतत्त्वज्ञंध्यानस्तिमितलोचनम् ॥ वीक्ष्यतंनारदोराधेब्रह्मलोकंजगामह ॥६॥ सृजंतं सृष्टिरचानाव्यग्रंवीक्ष्यविधिंमुनिः ॥ वैकुण्ठंप्रययौविष्णोःसर्वलोकनमस्कृतम् ॥ ७ ॥ भक्तार्थंकुत्रगच्छतंभक्तेशंभक्तवत्सलम् ॥ वीक्ष्यतुंबुरुणासार्द्धंयोगीन्द्रःप्रययौततः ॥ ८ ॥

बुद्धिसे विचार करते गन्धर्व नगरको नारद चले गये॥१॥तब तुंबुरु नाम गन्धर्व को शिष्य करके नारद वीणा बजाते मेरे गुण गाते मनोहर गान करने लगे॥२॥ यह मनोहर रागरूप किसके सामने गाने योग्य है, यह मनोहर रागसुनने योग्य पात्र कौन है, उसको ढूंढ नारदजी इन्द्रके पास गये ॥३॥ जब नारदने इन्द्रको बताने योग्य नहीं देखा, तब मित्र तुंबुरू गन्धर्व को लेकर सूर्यलोकको चले गये ॥४॥ फिर सूर्यको देखा कि, रथमें बैठे भागे चले जाते हैं, तब देवर्षियोंमें श्रेष्ठ नारद मुनि शिवके पास चले गये ॥ ५ ॥ भूतोंके ईश, ज्ञान तत्त्वके जाननेवाले, उनके ध्यानसे बंद नेत्र देखकर नारद ब्रह्मलोकको चले गये ॥६॥ वहां सृष्टिकी रचनामें व्यग्र हो रहे ब्रह्माको देखकर नारद वैकुण्ठलोकको चले गये, जिसको सब लोक प्रणाम करते हैं ॥ ७ ॥ भक्तवत्सल भक्तोंके ईश, भक्तोंके लिये रक्षा करने घूम रहे, उनको देख तुंबुरूको साथ लेकर वहांसे लौट आये ॥ ८ ॥

योगीश्वर जो संत हैं, उनकी त्रिलोकीके बाहिर गति और भीतरभी गति है, हे राधे ! कर्मठियोंको वह गति नहीं मिलती है ॥ ९ ॥ तब नारद योगी करोड़ों ब्राह्मणोंको उल्लंघन करके मायासे परे गोलोक परमधामको गये ॥ १० ॥ बड़ी बड़ी लहरें जिसमें ऐसी विरजा नदीको तैरकर मनोहर वृन्दावनमें पहुँचे, जहाँ भ्रमर गुंजार रहे हैं ॥ ११ ॥ जहाँ सदा वसन्त ऋतु रहता है और पवनसे चंचल है कुञ्जलता जिसमें ऐसे गोवर्द्धनको देखकर निकुंजमें आया ॥ १२ ॥ तब सखियोंने पूछा तुम कौन हो, कहाँसे आये हो, तुम्हारा अभिप्राय क्या है, सो हमसे कहो, ऐसे सखियोंने जब पूछा तब नारद और तुम्बुरू गन्धर्व दोनों बोले ॥ १३ ॥ हे रामाओ ! हम गायक हैं, गानमें बड़े चतुर हैं, हमारी वीणाकी बड़ी मनोहर ध्वनि है, सो परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण राधिकाके पति ॥ १४ ॥ उनको सुनानेके लिये आये हैं, बंदीजनोंमें श्रेष्ठ हैं, यह बात हमारी श्रीकृष्ण महात्मासे कहो ॥ १५ ॥

योगीश्वराणांहिसतांत्रैलोक्यामंतरंबहिः॥गतिमाहुर्नाप्नुवंतिकर्मभिर्वृषभानुजे॥९॥कोटिशोब्रह्मांडनिचयान्समुल्लंघ्यमुनीश्वरः ॥ गोलोकंपरमंधाम प्रययौप्रकृतेःपरम् ॥१०॥ समुत्तीर्यांशुविरजांनदींकल्लोलशालिनीम् ॥ ययौवृन्दावनंरम्यंभ्रमरध्वनिसंकुलम् ॥ ११ ॥ सदावसंततुंयुतंमरुदंजच्छतागृहम् ॥ दृष्ट्वागोवर्द्धनंशैलमन्निकुंजंसमाययौ ॥१२॥ कौयुवांकुतआयातौकिंकार्यंवदतंचनः ॥ इत्थंसखीभिःसंपृष्टावूचतुर्मुनितुंबुरू॥१३॥ गायकौकुशलौरामाआवांवीणाकलध्वनिम् ॥ परिपूर्णतमंसाक्षाच्छ्रीकृष्णंराधिकापतिम् ॥ १४ ॥ कूलंपरेश्रावयितुमागतौवंदिनांवरौ ॥ कथनीयमिदंवाक्यंश्रीकृष्णायमहात्मने ॥ १५ ॥ श्रुत्वासख्यस्तथामह्यंनिवेद्याथमदाज्ञया ॥ आगत्याज्ञांददुर्यांतुंवंदिभ्यांश्लक्ष्णयागिरा ॥१६॥ मन्निकुञ्जांगणेभ्राजत्कोटयर्कज्योतिराकुले॥ खचित्कौस्तुभरत्नाढयेप्रचलच्चारुचामरे॥१७॥ लोलन्मुक्ताफलच्छत्रेसखीकोटिसमन्विते॥ महापद्मस्थितंसाक्षात्त्वयामांतावपश्यताम्॥१८॥ नत्वाप्रदक्षिणीकृत्यतत्रस्थित्वामदाज्ञया॥स्तुत्वामांमद्गुणान्वक्तुंतेनासातुपचक्रमे॥१९॥ आतोद्यंवितुदन्वीणांदेवदत्तांस्वरामृतम् ॥ कलांजगामाद्वितीयांनारदःसहतुंबुरुः ॥२०॥ संतुष्टोहंशिरोधुन्वंस्तेनश्लाघ्यंचतत्स्वरम् ॥ दत्त्वात्मानंप्रेमपरोजलत्वंगतवानहम् ॥ २१ ॥ यज्जलंमद्वपुर्जाततद्बैब्रह्मद्रवंविदुः ॥ कोटिशःकोटिशोंडानांराशयःसंलुठंतिहि ॥ २२ ॥

इस वचनको सखी सुनकर मुझको पूछकर मेरी इच्छासे सखियोंने मेरे पास आनेकी सरल वाणीसे आज्ञा दी ॥१६॥ तब मेरे निकुञ्जके आंगनमें, कैसा है आंगन, करोड़ सूर्यकासा जिसमें तेज है, कौस्तुभमणि जिसमें जड़ रही है, चमर ढुल रहे हैं ॥१७॥ मोती जिममें लटक रहे ऐसा छत्र है, करोड़ सखी हैं जिसमें महापद्मपर बैठे हम तुम दोनोंको उन दोनोंने देखा ॥१८॥ तब हम दोनोंको नमस्कार करके परिक्रमा करके हमारी आज्ञासे बैठे, हम दोनोंसे मेरे गुण कहने प्रारम्भ किये ॥ १९ ॥ देवकी दी हुई वीणाको चढ़ाकर तुम्बुरूके साथ नारद अद्वितीय कला गाने लगे ॥ २० ॥ मैं प्रसन्न हुआ, मेरा शिर हिलने लगा, प्रशंसा करने योग्य स्वरको सुनकर प्रेममें तत्पर होकर आत्माको देकर मैं जल हो गया ॥ २१ ॥ वह मेरा शरीर जल होगया, उसको ब्रह्मद्रव कहते हैं, जिसमें करोड़ों ब्रह्माण्ड लुढकते फिरते हैं ॥ २२ ॥

उन्नतजलमें इन्द्रायण फलकी तरह यह मेरा ब्रह्माण्ड पृश्निगर्भ नामसे विख्यात है ॥२३॥ उस इस ब्रह्माण्डको भेदकर हे शुभे ! वह ब्रह्मद्रव जल जो आया, उसका इस मन्वन्तरमें पापहारिणी गंगा स्वर्धुनी ऐसे कहते हैं ॥२४॥ जिसका स्वर्गमें तो मन्दाकिनी, पृथ्वीमें भागीरथी और पातालमें भोगवती नाम हैं, इन तीन मार्गोंमें चलनेवाली होनेसे त्रिपथगा हुई है ॥ २५ ॥ जिसमें स्नान करनेके लिये जो जाये, उसको एक-एक पैरमें राजसूय, अश्वमेध यज्ञका फल प्राप्त होता है ॥ २६ ॥ जो कोई इस गंगासे चारसौ कोसपर भी बैठा होकर "गंगा-गंगा" ऐसे कहे, तो भी सब पापोंसे छूटकर विष्णुलोकको जाता है ॥ २७ ॥ इस कलियुगमें गंगाजलको पीवे तो, दोसौ जन्मका पाप नष्ट होता है, दर्शन करनेसे सौ जन्मका पाप नष्ट होता है, स्नान करनेसे हजार जन्मका पाप नष्ट होता है ॥२८॥ उनकाही जन्म सफल है, जो गंगाके दर्शन करते हैं, जो गंगाका दर्शन नहीं करते हैं, उनका

इंद्रायणफलानीवोन्नतेतस्मिञ्जलेशुभे॥ पृश्निगर्भमिदंराधेब्रह्मांडंमत्पदंस्फुटम् ॥२३॥ भित्त्वातच्चागतंसाक्षादस्मिन्मन्वंतरेशुभे॥ तत्स्वर्धुनींविदुः पूर्वेश्रींगंगांपापहारिणीम् ॥२४॥ दिविमंदाकिनीप्रोक्तागंगाभागीरथीक्षितौ ॥ अधोभोगवतीप्रोक्तात्रिधात्रिपथगामिनी॥२५॥ यत्स्नातुंगच्छतः पुंसःप्रणतस्यपदेपदे ॥ राजसूयाश्वमेधानांफलमस्तिनदुर्लभम् ॥ २६ ॥ गंगागंगेतियोब्रूयाद्योजनानांशतैरपि ॥ मुच्यतेसर्वपापेभ्योविष्णुलोकंसगच्छति ॥ २७ ॥ दृष्ट्वाजन्मशतंपापंपीत्वाजन्मशतद्वयम् ॥ स्नात्वाजन्मसहस्रेणहंतिगंगाकलौयुगे ॥२८॥ सफलंजन्मवैतेषांयेपश्यंति हिजाह्नवीम् ॥ वृथाजन्मगतंतेषांयेनपश्यंतिजाह्नवीम् ॥२९॥ यथाहिद्रवतांप्राप्तीविरजात्[illegible]यायथा ॥ प्रापुर्द्रवत्वंरंभोरुविरजायाःसुतायथा ॥ ३० ॥ यथाकृष्णानदीविष्णुर्वेणीदेवःशिवोयथा ॥ ब्रह्माककुद्मिनींगंगागंडकीचयथाप्सराः॥३१॥ तथाद्रवत्वंसंप्राप्तऋभुर्नामाप्ययंमुनिः॥ प्रेमलक्षणयाभक्त्याऋभोर्वानात्रसंशयः॥३२॥यःशृणोतिकथामेतांपवित्रांपापहारिणीम्॥उल्लंघ्यसर्वलोकांश्चमल्लोकंयातिमानवः।३३॥ श्रीनारद उवाच ॥ एवमुक्त्वाप्रियांराधामृभोराश्रमतोहरिः ॥ राधयासहितोराजन्नाययौमालतीवनम् ॥३४॥ गोपीनांविरहंज्ञात्वाभगवान्भक्तवत्सलः ॥ राधयाप्रययौकृष्णःपुलिनंमंगलायनम् ॥ ३५ ॥ तदागोपीगणाःसर्वेगतमानागतव्यथाः ॥ जगृहुस्तंघनश्यामंसौदामिन्योघनंयथा ॥३६॥

जन्म निष्फल है ॥ २९ ॥ जैसे विरजा तुम्हारे भयसे द्रव हो गई, ऐसेही हे रंभोरु ! विरजाके पुत्रभी द्रवके रूप होकर वे भी समुद्र हो गये ॥३०॥ जैसे विष्णु तो कृष्णा नदी हो गये, शिव वेणी हो गये, ब्रह्मा ककुद्मिनी गंगा हो गये, और अप्सरा गंडकी नदी हो गई ॥३१॥ वैसेही ऋभु नाम मुनि प्रेम लक्षणा भक्तिसे द्रव रूप होकर नदी हो गया ॥३२॥ जो कोई मनुष्य पापहारिणी पवित्र इस कथाको सुनेगा, वह सब लोकोंको उल्लंघन करके मेरे लोकको जायगा ॥ ३३ ॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे प्यारी राधासे कहकर ऋभु ऋषिके आश्रमसे श्रीकृष्ण राधाको संग लेकर मालती वनको चले गये ॥३४॥ भक्त वत्सल भगवान् गोपियोंका विरह जानकर राधासहित मंगलायन पुलिनको चले आये ॥ ३५ ॥ तब सब गोपी गणोंका मानभी जाता रहा और दुख भी जाता रहा, श्रीकृष्णसे लिपट गई, जैसे घनसे बिजली लिपट जाती है ॥ ३६ ॥

तव श्रीकृष्णने वृन्दावनमें मन हरनेवाले यमुनाके तटपर वंशीमें मनोहर राग गाया, कैसे हैं श्रीकृष्ण कि वंशीके बजानेमें तत्पर हैं ॥३७॥ उससे सब गोपियां मूर्च्छित हो गई, नदियाँ थकित हो गई, पक्षी अचल हो गये ॥३८॥ सब देवताओंकी देवी चुप होगई, देवता स्तम्भित होगये, वृक्षोंसे मद बहने लगा और सब जगतको निद्रा आ गई ॥ ३९ ॥ रास करके गोपियोंका और राधिकाका मनोरथ पूरा करके ब्राह्ममुहूर्तमें भगवान् नन्द महलमें आ गये॥४०॥तव राधिकाजी गोपियों सहित आनन्द मनोरथको प्राप्त होकर वृपभानु वरके सुन्दर महलको आई ॥४१॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां नारदोपाख्यानं नामद्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ नारदजी कहते हैं कि, श्रीकृष्ण भगवान् कई दिन तक व्रजमें रहकर अपने दर्शन देकर मथुराको गमन करनेके लिये उद्यत हुये ॥१॥ नौ नन्द, नौ उपनन्द, छः वृषभानु, वृषभानु वर, नन्दराज व्रजके ईश्वर इनसे॥२॥ और कलावती, यशोदाजी,

वृंदांवनेहरिःसाक्षात्कृष्णार्तारेमनोहरे ॥ जगौकलंगोपिकाभिर्वंशीवादनतत्परः ॥ ३७ ॥ भगवत्कलरागेणमूर्च्छितागोपकन्यकाः॥नद्योवेगत्वरहिताअचरत्वंहिपक्षिणः ॥ ३८ ॥ मौनत्वंदेवताःसर्वास्तंभत्वंदेवनायकाः ॥ सजलत्वंचतरवोनिद्रात्वंप्रगतंजगत् ॥ ३९ ॥ कृत्वारासंराधिकायागोपीनांचमनोरथम् ॥ ब्राह्मेमुहूर्तेभगवानाययौनन्दमन्दिरम् ॥ ४० ॥ राधिकागोपिकाभिश्चप्राप्तानन्दमनोरथा ॥ वृषभानुवरस्यापि सुन्दरंमंदिरंययौ ॥ ४१ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेनारदोपाख्यानंनामविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रीकृष्णोभगवान्साक्षाद्व्रजेकतिदिनानिच ॥ स्थित्वास्वदर्शनंदत्त्वामथुरांगंतुमुद्यतः ॥ १ ॥ नन्दान्नवोपनन्दांश्चवृषभानून्व्रजेषुषट् ॥ वृषभानुवरंचैवनन्दराजंव्रजेश्वरम् ॥ २ ॥ कलावतींयशोदांचगोपीगोपान्गवांगणान् ॥ मिलित्वाश्वास्यज्ञानंचदत्त्वानुज्ञाप्यमाधवः ॥ ३ ॥ रथमारुह्यदिव्याभंचचलाश्वनियोजितम् ॥ मथुरांगंतुकामोसौनिर्गतोनन्दगोकुलात् ॥४॥ दूरंतमनुगाःसर्वेमोहिताव्रजवासिनः ॥ नसेहिरेकष्टतरंविरहंमाधवस्यहि ॥ ५ ॥ युगपद्दर्शनंविष्णोर्दुःसहंभूमिमण्डले ॥ येषांनित्यंहिभवतितेषांतुकिंसुवर्णनम् ॥६॥ वीक्षंतःश्रीधरमुखंनेत्रैरनिमिपैर्नृप ॥ सर्वेवैस्नेहसंबन्धात्तमूचुःप्रेमविह्वलाः ॥ ७ ॥ गोपाऊचुः ॥ शीघ्रमागच्छहेकृष्णसर्वान्नोव्रजवासिनः ॥ पाहिसंदर्शनंदेहिदेवेभ्योह्यमृतंयथा ॥ ८ ॥ त्वमेवसर्वदादेवयशोदानन्ददायकः ॥ श्रीनन्दनन्दनस्त्वंवैजीवनंव्रजवासिनाम् ॥ ९ ॥

गोप, गोपी, गौओंके गण इनसे श्रीकृष्ण मिलकर ज्ञान देकर आज्ञा मांगकर ॥ ३ ॥ जिसमें चञ्चल घोड़े लगे ऐसे दिव्य रथमें बैठकर मथुराको जानेके लिये नन्द गोकुलसे निकले ॥ ४ ॥ उनके पीछे सब गौएं और मोहित हुये व्रजवासी दूर तक पहुँचानेके लिये आये, वे माधवके विरहको नहीं सह सके ॥ ५ ॥ एक साथ विष्णुका दर्शन भूमिमें बड़ा दुर्लभ है, जिनको नित्य होता है, उनकी महिमाका क्या पार है,॥ ६ ॥ जो अनिमिप नेत्रोंसे नित्य श्रीधरका मुख देखते हैं, हे नृप ! स्नेहके सम्बन्धसे प्रेममें विह्वल होकर वे बोले ॥ ७ ॥ हे कृष्ण ! तुम जल्दी आना, हम सब व्रजवासियोंकी रक्षा करो, और दर्शन दिया करो, जैसे देवताओंको अमृत दिया था वैसे ॥ ८ ॥ तुमही सब कालमें यशोदाके आनंद दाता हो तुमही श्रीनन्द नन्दन हो, सब व्रजवासियोंके जीवन हो ॥ ९ ॥

व्रजके धन हो, कुलके दीपक हो, महत्पुरुषोंके मोह करनेवाले हो, जैसे गरमीके मारेको शीतल जल॥१०॥शीतके मारेको अग्नि,ज्वरसे पीड़ितको औषधि, मरे मनुष्योंको जैसे अमृत वैसेही तुम हमको हो ॥११॥ वैसेही सब व्रजको तुम्हारा दर्शनही जीवन हैं, इससे आप यहाँ ही अपनी स्थिति रखो,बहुत कहनेसे क्या है ॥ १२ ॥ जो कुछ हमारा सुकृत हो, इस जन्मका अथवा और जन्मका उसके फलसे हमारा चित सदाही आपके चरण कमलोंमेंही रहे ॥१३॥ जिनका चित्त आपके चरण कमलोंमें रहता है, वे आपके भक्त आपको प्यारे हैं, सदाही भक्तोंके लिये सगुण होते हो, स्वतः सिद्ध निर्गुण और प्रकृतिसे परे हो ॥१४॥ आपको भक्तसे प्यारा कोई नहीं है, न शिव हैं, न ब्रह्मा है,न लक्ष्मी है,इसीसे निष्काम भक्त ब्रह्मादिकोंको छोड़कर आपका भजन करते हैं, नैरपेक्ष सुखको वे ही जानते हैं, और युक्त चित्त हैं ॥१५॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे कहकर सब प्रेममें विह्वल होकर रोने लगे श्रीकृष्णके देखते देखते उनके आनन्दके आँसू टपकने लगे॥१६॥आँसुओंसे भरा है मुख जिनका ऐसे प्रसन्नात्मा भगवान् नम्र हो रहे विरहमें विह्वल जो गोप हैं उनसे बोले ॥ १७ ॥

व्रजेधनंकुलेदीपोमोहनोमहतामपि ॥ यथानिदाघदग्धस्यप्राप्तंवैशीतलंजलम् ॥१०॥ शीतार्तस्ययथावह्निर्ज्वरार्त्तस्ययथौषधम्॥मृतस्यमानवः स्यापिपीयूषंमंगलंयथा ॥ ११ ॥ तथाव्रजस्यसर्वस्यजीवनंतवदर्शनम् ॥ तस्मादत्रस्थितिंकुर्यांद्बहुनाकथितेनकिम् ॥ १२ ॥ यन्नोस्तिकिंचित्सुकृतमस्मिन्वापूर्वजन्मनि ॥ तत्फलेनसदाचेतोभूयात्त्वत्पादपंकजे ॥ १३ ॥ येषांचेतस्त्वत्पदाब्जेतेभक्तास्त्वत्प्रियाःसदा ॥ भक्तार्थंसगुणोसित्वंनिर्गुणःप्रकृतेःपरः ॥ १४ ॥ तवभक्तात्प्रियोनास्तिशिवोब्रह्मानचेंदिरा ॥ विसृज्यपारमेष्ठ्यादिनिष्कामास्त्वांभजंतिये ॥ नैरपेक्ष्यंसुखंशांतंतेविदुर्युक्तचेतसः ॥ १५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवमुक्त्वाथतेसर्वेरुरुदुःप्रेमविह्वलाः ॥ आनन्दाश्रूणिमुंचंतःश्रीकृष्णस्यप्रपश्यतः ॥ १६ ॥ अश्रुपूर्णमुखःकृष्णोभगवान्भक्तवत्सलः ॥ गोपानाहप्रसन्नात्मानतान्विरहविह्वलान् ॥ १७ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मत्प्राणामत्प्रियायूयंसर्वेवैव्रजवासिनः ॥ हृदयंमेस्तियुष्मासुदेहोन्यत्रविलक्ष्यते॥१८॥मासंप्रत्यागमिष्यामियुष्मान्द्रष्टुंवचोऽस्म ॥ मनसानहिदूरोस्मिमनःसर्वस्यकारणम् ॥१९॥ हेगोपायदुभिर्युद्धमागतोहिजरासुतः ॥ यदूनांतुसहायार्थंयामिमाभूच्छुचश्चवः ॥२०॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवमाश्वास्यतांदेवः संनिवृत्यपुनःपुनः ॥ रथेद्वितीयेसंस्थाप्यनन्दराजंयशोदया ॥२१॥ श्रीदामादीन्सखीन्नीत्वाभगवान्रथमास्थितः ॥ सोद्धवोमथुरांप्रागात्सर्वकारणकारणः ॥२२॥ यावद्रथश्चाश्वशतंसुवेगंकेतुस्त्रिवर्णःप्रचलत्पताकः ॥आलक्ष्यतेवीररजश्चतावत्स्थित्वाऽन्यआजग्मुरतःसकाशम्॥२३॥

तुम मेरे प्राण हो, मेरे प्यारे हो, समस्त व्रजवासियोंमें मेरा हृदय तो तुम्हारेमेंही रहता है, शरीर और जगह दीखता है ॥ १८ ॥ महिने महिनेमें देखनेके लिये मैं व्रजमें आऊँगा, यह मेरा वचन है, मैं मनसे दूर नहीं हूँ, मनही सबका कारण है ॥ १९ ॥ हे गोपो ! यादवोंसे युद्ध करनेके लिये जरासन्ध आया है, उनकी सहायता करनेके लिये जाता हूँ, तुम शोक मत करो ॥ २० ॥ भगवान् ऐसे उनको समझाकर बारबार फिर लौटकर नन्द यशोदाको दूसरे रथमें बैठाकर ॥ २१ ॥ श्रीदामादिक सखाओंको लेकर उद्धवको लेकर रथमें बैठ मथुराको आये, जो आप सब कारणके भी कारण हैं ॥ २२ ॥ जबतक बड़े वेगवाला वह रथ और रथके सौ घोड़े, पताका रजकी रज, दीखती रही तवतक व्रजवासी खड़े रहे, जब सब दीखनेसे बन्द हो गये तब वे अपने अपने घरको चले गये ॥ २३ ॥

यह श्रीकृष्णचन्द्रका चरित्र है, विचित्र है, मनुष्योंके पापोंको हरनेवाला है, जो मनुष्य भूमिमें इसको सुनेगा वह गोलोकधामको जायगा ॥ २४ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुरा खण्डे भाषाटीकायां श्रीकृष्णस्य व्रजयात्रामथुरागमनं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ बहुलाश्व राजा पूछता है कि, गोपियोंको और गोपोंको भगवान् दर्शन देकर जब चले आये फिर भगवान् श्रीकृष्ण और बलदेवजीने मथुरामें क्या चरित्र किया वह कहिये ॥१॥ श्री कृष्ण बलदेवका चरित्र बड़ा मीठा है, सब पापोंको हरनेवाला है, बड़ा पवित्र और धर्म अर्थ काम, मोक्षको देनेवाला है ॥२॥ नारदजी कहते हैं कि, श्रीकृष्ण और बलदेवका और चरित्र सुनो, सब पापोंको हरनेवाला और चतुर्वर्ग दाता है ॥ ३ ॥ एक कोल नामका दैत्य था, उसने प्रजाको बड़ा दुख दिया, तब हे नृप ! कौशारवि नामके पुरसे सब ब्राह्मण मथुरामें आये दीन हैं मन जिनका ॥ ४ ॥ तब जल्दी चलनेवाले घोड़ेपर बलदेवजी चढकर थोड़ेसे ही चाकरोंको साथ लेकर शिकारके लिये निकले ॥ ५ ॥ तब उनको प्रणाम करके विधिपूर्वक पूजन करके हाथ जोड़ चरणोंमें गिर पड़े गद्गदवाणीसे वे

श्रीकृष्णचन्द्रस्यपरंचरित्रंनृणांमहापापहरंविचित्रम् ॥ शृणोतियोभक्तवरःपृथिव्यांगोलोकलोकंसचयातिसम्यक् ॥२४॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेव्रजयात्रायांश्रीकृष्णागमनंनामत्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥ बहुलाश्वउवाच ॥ गोपीनांचैवगोपानांदत्त्वासंदर्शनं परम् ॥ मथुरायांकिंचकारश्रीकृष्णोरामएवच ॥ १ ॥ चरित्रंपरमंमिष्टंश्रीकृष्णबलदेवयोः ॥ सर्वपापहरंपुण्यंचतुर्वर्गफलप्रदम् ॥ २ ॥ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अन्यच्चरित्रंशृणुताच्छ्रीकृष्णबलदेवयोः ॥ सर्वपापहरंपुण्यंचतुर्वर्गफलप्रदम् ॥ ३ ॥ कोलेनपीडितालोकाःकौशारविपुरा न्नृप ॥ मथुरामाययुःसर्वेसद्विजादीनमानसाः ॥४॥ अश्वमाशुसमारुह्यरोहिणीनन्दनोबलः ॥ स्वल्पैःपुरःसरैःसार्द्धंमृगयार्थीविनिर्गतः ॥५॥ तंनत्वाभ्यर्च्यविधिवत्तदंघ्र्योःपतिताःपथि ॥ कृतांजलिपुटाऊचुर्हर्षगद्गदयागिरा ॥ ६ ॥ प्रजाऊचुः ॥ रामरामहाबाहोदेवदेवमहाबल ॥ कोलेनपीडिताःसर्वेआगताःशरणंवयम् ॥ ७ ॥ दैत्यःकंससखःकोलोजित्वाकौशारविंनृपम् ॥ कौशारवेःपुरेराज्यंकरोतिसमहाबलः ॥ ८ ॥ कौशारविस्तद्भयाद्धिगंगातीरंगतोनृपः ॥ राज्यार्थंत्वत्पदांभोजंभजतेसुजितेंद्रियः ॥ ९ ॥ तत्सहायंकुरुविभोवयंयस्यप्रजाःशुभाः ॥ पुत्रव- त्पालितास्तेनमहासौख्यसमन्विताः ॥ १० ॥ कोलेनाद्यैवदुष्टेनपीडिताःसततंप्रभो ॥ त्रैलोक्यविजयीवीरःकंसोपिनिहतस्त्वया ॥ ११ ॥ कोलोजीवतिदेवेंद्रकंसोपिनमृतःस्मृतः ॥ रक्षार्थंसगुणोसित्वंभक्तानांप्रकृतेःपरः ॥ १२ ॥

बोले ॥ ६ ॥ हे राम ! हे राम ! हे बड़ी भुजाओं वाले ! हे देव देव ! हे महाबल ! कौल नामके दैत्यसे पीडित हम आपकी शरणमें आये हैं, ॥ ७ ॥ कंसका सखा एक कौल नामाका दैत्य है, वह बड़ा बली है, सो कौशारवि राजाको जीतकर कौशारवीपुरमें राज्य करता है ॥ ८ ॥ उसके भयसे कौशारवीराजा गंगाके तीरपर जाकर जितेन्द्रिय होकर राज्यकी प्राप्तिके लिये आपके चरणकमलका भजन करता है ॥९॥ हे विभो ! उसकी आप सहायता करिये, हम उसकी प्रजा हैं, उसने पुत्रकी तरह हमारा पालन किया है ॥१०॥ हमको बड़ा सुख दिया है, अब वह कोल दुष्ट निरंतर दुःख दे रहा है, त्रिलोकीको जीतनेवाला कंस भी आपने मारा है ॥ ११ ॥ जब तक यह कोल जीता है, तबतक कंस नहीं मरा है, आप मायासे परे हो, किन्तु भक्तोंके लिये सगुण हुये हो, रक्षा करिये ॥ १२ ॥

नारदजी कहते हैं कि भक्तवत्सल बलदेवजी ऐसे उनका वचन सुनकर गंगा यमुनाके बीच कौशाम्बी पुरी में आये ॥ १३ ॥ कोलदैत्यसे युद्ध करनेके लिये बलदेवजी आये इस बातको सुनकर दश अक्षौहिणी सेना लेकर चण्ड पराक्रमी कोल भी निकला ॥ १४ ॥ चंचल घोड़ोंकी तरंगोंसे युक्त रथ, हाथी, जिसमें मगर, नदीसी सेना चली आती है, प्रलयके समुद्रसी गर्जती आती है ॥१५॥ बड़े बड़े वीर वे ही जिसमें भँवर हैं महाबली बलदेवजी उस नदीका सेतु बांधकर हलाग्रसे खींच करके मूसलसे मारने लगे ॥ १६ ॥ एक साथही उसके प्रहारसे बड़े बड़े वीर, घोड़ा, हाथी, रथ, चारों ओरसे करोड़ों मरकर गिर पड़े और करोड़ों फलकी तरह रणमें पिस गये ॥१७॥ बाकीके वीर भयके कारण रण से भाग गये, अकेला कोल ही शस्त्र धरे बलरामजीसे लड़ता रहा ॥१८॥ गोमूत्र, सिन्दूर, कस्तूरीसे पत्रभंगी रचना जिसने अपने मुखमें कर रखी है सोनेकी सांकल जिसके बंधी है जड़ाऊ कमरबन्द जिसने बांधा है ॥ १९ ॥ चार दांतवाला, मद जिसके बह रहा, घंटाके बजनेसे भयंकर दिग्गज सा, ऊँचे प्रलयके घनसा गर्जना ॥ २० ॥ उस हाथीपर

॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वावचस्तेषांश्रीरामोभक्तवत्सलः ॥ गंगायमुनयोर्मध्येकौशांबींनगरींययौ ॥ १३ ॥ योद्‌धुंसमागतंरामंश्रुत्वा कोलोपिनिर्गतः ॥ अक्षोहिणीभिर्दशभिर्मंडितश्चंडविक्रमः ॥ १४ ॥ चंचलाश्वतरंगाढ्यांरथेभाश्वतिमिंगिलाम् ॥ नदीमिवागतांसेनांप्रलयार्ण-वनादिनीम् ॥ १५ ॥ वीरावर्तांचतांवीक्ष्यबद्ध्वासेतुंहलंबलः ॥ आकृष्यतांतदग्रेणमुसलेनाहनद्दृढम् ॥ १६ ॥ युगपत्तत्प्रहारेणवीराअश्वारथा गजाः ॥ सर्वतःकोटिशःपेतुःपेषिताःफलवद्रणे ॥ १७ ॥ शेषाःप्रदुद्रुवुर्वीराभयार्तारणमण्डलात् ॥ एकाकीयुयुधेदैत्यःकोलोरामेणशस्त्रभृत् ॥ १८ ॥ गोमूत्रचयसिंदूरकस्तूरीपत्रभृन्मुखम् ॥ सुवर्णशृंखलायुक्तंप्रखचित्कटिबंधनम् ॥१९॥ स्रवन्मदंचतुर्दंतंघण्टाटङ्कारभीषणम् ॥ प्रोन्नतं दिग्गजमिवनदत्कालघनप्रभम् ॥ २० ॥ शितमंकुशमादायकोलआरुह्यकर्णतः ॥ स्वगजंनोदयामासबलदेवायदैत्यराट् ॥२१॥ आगतंवीक्ष्य तंनागंमत्तंकोलेननोदितम् ॥ तताडमुसलेनासौवज्रेणेन्द्रोयथागिरिम् ॥ २२ ॥ मुसलस्यप्रहारेणविशीर्णोभून्महागजः ॥ मृद्घटोनैकवैवाशुदण्ड घातेनमैथिल ॥ २३ ॥ कोलःक्रोडमुखोदैत्योरक्ताक्षःपतितोगजात् ॥शूलंचिक्षेपनिशितंमाधवायमहात्मने ॥२४॥ मुसलेनतदारामस्तच्छूलं शतधाच्छिनत् ॥ काचपात्रंयथाबालोदण्डेनचविदेहराट् ॥२५॥ सहस्रभारसंयुक्तांगदांगुर्वींप्रगृह्यच ॥बलंतताडहृदयेजगर्जघनवत्खलः ॥२६॥

बैठकर कोलदैत्यने तीक्ष्ण अंकुश लेकर मारकर बलदेवजीके ऊपर हाथीको प्रेरित किया ॥ २१ ॥ उस कोलसे प्रेरित किये मत्त हाथीको देखकर बलदेवजीने एक मूसल मारा, जैसे इन्द्र वज्र से पर्वतको मारता है ॥ २२ ॥ मूसलका मारा वह हाथी विशीर्ण हो गया, हे मैथिल ! जैसे लाठीके मारनेसे मिट्टीका घड़ा विशीर्ण (बिखर जाना) हो जाता है ॥२३॥ तब कोल दैत्य शूकरका सा मुख जिसका लाल लाल नेत्र जिसके, वह उस हाथीपरसे गिर पडा, फिर बडा तीक्ष्ण त्रिशूल लेकर महात्मा बलदेवजीके ऊपर चलाया ॥ २४ ॥ उसी समय बलदेवजीने उस शूलके मूसलसे सौ टुकडे कर डाले, हे विदेहराज ! कांचके वर्तनोंको जैसे बालक दण्डसे फोडता है ॥ २५ ॥ फिर दैत्यने हजार मनकी गदा लेकर बलदेव जीके हृदय में मारी, फिर दुष्ट घनके समान गर्जा ॥ २६ ॥

फिर महाबली बलदेवजीने उसकी गदाके प्रहारको खाकर काजलकासा जिसका शरीर उसके माथेमें एक मूसल मारा ॥ २७ ॥ मूसलके मारे शिर फट गया और रण मण्डलमें जा पड़ा फिर उठकर दैत्यने बलदेवजीके एक घूंसा मारा, फिर वह दैत्य अन्तर्धान हो गया ॥ २८ ॥ उस मायावीने दैतेयी मायाकी, जो अति भयंकर की, प्रलयकेसे मेघ महा पवनके चलाये हुये आये ॥ २९ ॥ अंधकार करनेवाले मेघोंसे सब आकाश आच्छादित हो गया ॥ ३० ॥ जवा कुसुम (दुपहरियाका फूल) के बराबर रुधिरकी बूंदें निरंतर पड़ने लगीं और बड़े गहरे उन घनोंमेंसे विष्ठा, मूत्र की घिनौनी वर्षा होने लगी ॥ ३१ ॥ रुधिर, पूय (मवाद), विष्ठा, मेदा मदिरा, मांस इनकी वर्षासे हाहाकार होने लगा ॥ ३२ ॥ महा प्रभु बलदेवजीने उस असुरकी की हुई मायाको जानकर शत्रुकी सेनाको विदीर्ण करनेवाला मूसल फेंका ॥ ३३ ॥ सब अस्त्रोंको घात करनेवाला स्वच्छ अष्टधातुका दृढ़ सौ योजनका लम्बा, प्रलयकी अग्निके समान प्रभा जिसकी ॥३४॥ वह बलदेवका अस्त्र दिशाओंमें फिरता दिखाई दिया, वह आकाशमें मायाके मेघोंको विदीर्ण करने लगा जैसे कुहरे

तद्गदायाःप्रहारेणकोलंकज्जलवत्तनुम् ॥ मुसलेनाहनन्मूर्ध्निबलदेवोमहाबलः ॥ २७ ॥ मुसलाहतमूर्द्धापिपपातितोरणमण्डले॥मुष्टिघातंघातयित्वा तत्रैवांतरधीयत ॥२८॥ चकारमायांमायावीदैतेयीमतिभीषणाम् ॥ प्रलयप्रभवैर्मेघैर्महावातप्रणोदितैः ॥२९॥ अंधकारंप्रकुर्वद्भिरभूदाच्छदितं नभः॥३०॥जपापुष्पसमान्विदूनजस्रंरुधिरस्यच ॥ मोचयित्वाथबीभत्सवर्षाश्चक्रुर्घनाघनाः ॥३१॥ पूयमेदोतिविण्मूत्रसुरामांससमन्विताः॥ दृष्ट्वाताभिश्ववर्षाभिर्हाहाकारोबभूवह ॥ ३२ ॥ ज्ञात्वाथतत्कृतांमायांबलदेवोमहाप्रभुः ॥ चिक्षेपमुसलंदीर्घंपरसैन्यविदारणम् ॥३३॥सर्वास्त्रघातकंस्वच्छमष्टधातुमयंदृढम् ॥ शतयोजनविस्तीर्णंप्रलयाग्निसमप्रभम् ॥३४॥ बलास्त्रंमुसलंरेजेभ्रमद्दशदिगंतरे ॥ विदारयद्घनान्व्योम्निनीहारंचयथारविः ॥ ३५ ॥ तद्वचोम्निप्रगतंदृष्ट्वाहलास्त्रंचस्वतःप्रभुः ॥ सभूत्याकृष्यचबलान्मध्येतान्विददारह ॥ ३६ ॥ नाशंगतायांमायायां बलदेवोमहाबलः ॥ गृहीत्वाभुजदण्डाभ्यांभुजदण्डेमदोत्कटे ॥३७॥ भ्रामयन्बालइवतंप्रतूलंसइतस्ततः॥पातयामासभूपृष्ठेकमण्डलुमिवार्भकः ॥३८॥ तस्यदैत्यस्यपातेनसाब्धिशैलवनैःसह ॥ चकंपेनाडिकामात्रंसर्वंभूखंडमण्डलम्॥३९॥ भग्नदंतश्चलन्नेत्रोमूर्च्छितोनिधनंययौ ॥ कोलोनाममहादैत्योवृत्रोवज्रहतोयथा ॥ ४० ॥ तदाजयजयारावोदिवि्भूमौबभूवह ॥ देवदुंदुभयोनेदुःपुष्पवर्षाःसुरैःकृताः॥४१॥इत्थंकोलंघातयित्वाबलदेवोच्युताग्रजः ॥ दत्त्वाथकौशाखयेकौशांबींचपुरींततः ॥ ४२ ॥

को सूर्य दूर करता है ॥३५॥ अपने उस मूसलको देख फिर हलसे खींचकर उस दैत्यकी मायाको अपने वैभवसे विदीर्ण करने लगे ॥३६॥ जब माया नष्ट हो गई, तब महाबली बलदेवजीने अपने भुजदण्डोंसे असुरकी दोनों भुजा पकड़कर ॥३७॥ इधर उधर घुमा घुमाकर पृथ्वीमें दे मारा, बालक जैसे रुईके गोलेको घुमाता है ऐसे फिराकर धरतीमें मारा, जैसे बालक कमण्डलको मारता है ॥३८॥ उसकी देहके गिरनेसे समुद्रोंसहित समस्त पृथ्वीमण्डल एक घड़ीतक कांपता रहा ॥ ३९ ॥ दांत टूट गये, नेत्र फूट गये, मूर्च्छित हो मरकर गिर पड़ा, कोल नामक महादैत्य, वज्रके मारे वृत्रासुरकी तरह ॥४०॥ तब तो स्वर्ग और पृथ्वीमें जयजय शब्द हुआ, दुंदुभी बजने लगीं, देवता पुष्पोंकी वर्षा करने लगे ॥४१॥ ऐसे कोल दैत्यको मारकर श्रीकृष्णके बड़े भाई बलदेवजी कौशाम्बी राजाको कौशांबीपुरीका राज्य देकर ॥ ४२ ॥

भागीरथी गंगाको चले आये, स्नान करनेके लिये, गर्गादिक मुनियोंको साथ लेकर लोकको दिखानेके, सब दोष दूर करनेके लिये ॥ ४३ ॥ तब बलदेवजीको विधिसे मंगलकारी वेदके मन्त्रोंसे गर्गादिक मुनीश्वरोंने गंगा स्नान कराया ॥ ४४ ॥ हे विदेह ! एक लाख हाथी, दो लाख रथ, एक करोड़ घोड़ा, दस अरब गौ ॥ ४५ ॥ सुवर्ण युक्त सौ अरब रत्नोंके भार ब्राह्मणोंको दान करके बलदेवजी मथुरापुरीको आये ॥ ४६ ॥ हे विदेह ! बलदेवजीने जहाँ गंगामें स्नान किया है, वहाँ रामतीर्थ नामका बड़े पुण्य फलको देनेवाला तीर्थ हो गया ॥ ४७ ॥ कार्तिक महीनेमें कार्तिककी पूर्णिमाको जो कोई मनुष्य रामतीर्थमें गंगा स्नान करता है,उसको निश्चयही हरिद्वारसे सौ गुणा पुण्य होता है ॥ ४८ ॥ बहुलाश्व राजा पूछता है कि, हे महामुने! कौशाम्बी नगरीसे कितनी दूर और कौनसे स्थल विशेषमें यह महापुण्य रामतीर्थ है, यह आप मुझको कहिये॥४९॥ नारदजी बोले कौशाम्बी

स्नातुंभागीरथींप्रागाद्गर्गाचार्यादिभिर्वृतः॥ लोकानांसंग्रहंकर्तुंसर्वदोषक्षयायच ॥४३॥ स्नापयांचक्रुरार्यास्तेगंगायांमाधवंबलम् ॥ वेदमंत्रैर्मंगलैश्चगर्गाचार्यादयोद्विजाः ॥ ४४ लक्षंगजानांवैदेहस्यंदनानांद्विलक्षकम् ॥ हयानांचतथाकोटिंधेनूनामर्बुदंदश ॥ ४५ ॥ शतार्बुदंच रत्नानांभारंजांबूनदावृतम् ॥ रामोदत्त्वाब्राह्मणेभ्यःप्रययौमथुरांपुरीम् ॥४६॥ यत्ररामेणगंगायांकृतंस्नानंविदेहराट् ॥ तत्रतीर्थंमहापुण्यंराम तीर्थंविदुर्बुधाः ॥ ४७ ॥ कार्तिक्यांकार्तिकेस्नात्वारामतीर्थेतुजाह्नवीम् ॥ हरिद्वाराच्छतगुणंपुण्यंवैलभतेजनः ॥ ४८ ॥ बहुलाश्व उवाच ॥ कौशांबेश्चकियद्दूरंस्थलेकस्मिन्महामुने ॥ रामतीर्थंमहापुण्यंमह्यंवक्तुंत्वमर्हसि ॥ ४९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ कौशांबेश्चतदीशान्यांचतुर्योजनमेवच ॥ वायव्यांसूकरक्षेत्राच्चतुर्योजनमेवच ॥५०॥ कर्णक्षेत्राच्चषट्क्रोशैर्नलक्षेत्राच्चपंचभिः ॥ आग्नेय्यांदिशिराजेंद्ररामतीर्थंवदंतिहि ॥ ५१ ॥ वृद्धकेशीसिद्धिपीठाद्बिल्वकेशवनात्पुनः ॥ पूर्वस्यांचत्रिभिःक्रोशैरामतीर्थंविदुर्बुधाः ॥५२॥ दृढाश्वोवंगराजोभूत्कुरूपंलोमशंमुनिम् ॥ दृष्ट्वाजहासससततंशशापमहामुनिः॥५३॥ विकरालःक्रोडमुखोऽसुरोभवमहाखल॥ इत्थंसमुनिशापेनकोलःक्रोडमुखोभवत्॥५४॥ बलदेवप्रहारेणत्यक्त्वामासुरींतनुम् ॥ कोलोनाममहादैत्यःपरंमोक्षंजगामह ॥ ५५ ॥ ततोरामोमंत्रिभिश्चउद्धवादिभिरन्वितः ॥ जह्नुतीर्थंजगामाशुयत्र दक्षश्रुतेरभूत् ॥ ५६ ॥

नगरीसे ईशान दिशामें चार योजनपर और सूकर क्षेत्रसे वायव्य दिशामें चार योजनपर है ॥५०॥ कर्ण क्षेत्रसे छः कोसपर, नलक्षेत्रसे पांच कोसपर आग्नेय दिशामें हे राजेन्द्र ! यह रामतीर्थ है ॥५१॥ वृद्धिकेशी सिद्धपीठसे और विल्वकेश वनसे पूर्व दिशामें तीन कोसपर यह रामतीर्थ है, ऐसा बुद्धिमान् मनुष्य जानते हैं ॥ ५२ ॥ यहाँ दृढाश्व नामक एक वंग राज्य हुआ, सो लोमश ऋषिको महा कुरूप देखकर हँस पड़ा, तब मुनीश्वर उसको यह शाप दिया ॥ ५३ ॥ हे महाखल ! तू विकराल असुर हो जा, तेरा मुख सूअरकासा हो जायगा, इस प्रकार उस शापसे राजाका मुख सूअरकासा हो गया ॥ ५४ ॥ सो वह बलदेवजीके प्रहारसे कोल नामका दैत्य आसुरी देहको छोड़कर परममोक्षको प्राप्त हो गया ॥५५॥ तब राम उद्धवादिक मंत्रियोंको लेकर जह्नुतीर्थको चले गये, जहाँ ब्राह्मण मुख्यके दक्षिण कर्णसे गंगाजी प्रकट हुई, जिस कारणसे गंगाका ॥ ५६ ॥

जाह्नवी नाम हुआ, वहाँ ब्राह्मणोंको दान देकर जनों सहित रात्रिको रहे ॥५७॥ उसके बाद उससे पश्चिम भागमें आहार स्थान नामक स्थान है, जो पाण्डवोंका अति प्यारा है, वहाँ रात्रिको रहे ॥५८॥ वहाँ ब्राह्मणोंको दान देकर सुन्दर गुण युक्त भोजन देकर उससे चार कोसपर मांडूक नामके एक देव है ॥५९॥ वहाँ जिसने देवकी कृपाके लिये बड़ा तप किया है, उसके दर्शनके लिये अपने समाजको लेकर बलदेवजी वहाँ गये ॥६०॥ एक पांवसे खड़ा, ऊपरको मुख जिसका, ध्यानसे नेत्र बन्द हो रहे, अपना भक्त है, अपना हृदयमें ध्यान करता है, अपनी मूर्तिकी देखनेकी जिसकी लालसा है ॥६१॥ तब आपने उसके भीतरसे अपनी मूर्ति खींच ली, तब उसने उसी मूर्तिका बाहर दर्शन किया, तब यह सुन्दर अनन्त देवके रूपको देखने लगा ॥६२॥ कैसे हैं, माला पहिरे हैं एक कानमें कुण्डल है, गौर वर्ण हैं तालकी ध्वजावाले रथसे बैठे हैं उनको देखकर चरणोंमें गिर पड़ा और परम भक्तिसे स्तुति करने लगा ॥ ६३ ॥ तब उसके मस्तक पर हाथ धरकर बोले कि जो चाहिये सो वर मांग, ॥ ६४ ॥ तब वह बोला कि, हे स्वामिन् ! आप यदि मुझपर प्रसन्न हुये हो और यदि

गंगाब्राह्मणमुख्यस्यजाह्नवीयेनकथ्यते ॥ दत्त्वादानंद्विजातिभ्यऊषूरात्रौजनैःसह ॥ ५७ ॥ ततस्तत्पश्चिमेभागेपांडवानामतिप्रियम्॥ आहारस्थानकंप्राप्यरात्रौवासंचकारह॥ ५८ ॥ ॥ तत्रदानंद्विजातिभ्योदत्त्वासद्गुणभोजनम् ॥ ततोयोजनमेकंचदेवंमांडूकसंज्ञकम् ॥५९॥ तपस्तप्तं महत्तेनचांतदेवकृपाप्तये॥ तदर्थंस्वसमाजेनबलदेवोजगामह ॥६०॥ ऊर्ध्वास्यमेकपादस्थंध्यानस्तिमितलोचनम् ॥ स्वभक्तंहृदयस्थंस्वंमूर्तिदर्शनलोलुपम् ॥६१॥ तांजहारतदानंतस्ततोबाह्येददर्शह ॥ सदृष्ट्वानंतदेवस्यरूपंपरमसुन्दरम् ॥६२॥ स्रग्व्येककुण्डलंगौरंतालांकरथसंयुतम् ॥ स्तुत्वापरमयाभक्त्यापपातचरणौपुनः ॥६३॥ तस्यशीर्ष्णिकरंदत्त्वावरंब्रूहीत्युवाचह ॥ यदिप्रसन्नोभगवाननुग्राह्योस्मिवायदि ॥६४॥ सर्वोत्तमांभागवतींसंहितांशुकवक्त्रतः ॥ निर्गतांदेहिमेस्वामिन्कलिदोषहरांपराम् ॥ ६५ ॥ बलदेवउवाच ॥ उद्धवद्वारतःप्राप्तिर्भविष्यतितवानघ ॥ श्रीमद्भागवतीकीर्तिरधिकायाकलौयुगे ॥ ६६ ॥ मांडूकउवाच ॥ कथंभगवतादत्तामुख्यातस्याधिकारिता ॥ कदायोगोममस्वामिन्कुरुसंदेहभंजनम् ॥ ६७ ॥ बलदेवउवाच ॥ कथयामिपरंगोप्यंरहस्यंपरमाद्भुतम् ॥ अद्यापिममसामीप्यउद्धवोयंविराजते ॥ ६८ ॥ तद्दर्शनंकुरुपरंपारमार्थप्रदायकम् ॥ अद्यतीर्थस्ययात्रायामुपदेशोनतेभवेत् ॥ ६९ ॥ यथोपदेष्टाभवतितेनतेकथयाम्यहम् ॥ उद्धवःस्थापितः श्रीमदाचार्यःसंहितामयः ॥ ७० ॥

मुझको अनुग्रह करने योग्य आप जानते हो, तो सर्वोत्तमा शुक देवके मुखसे निकली जो भागवती संहिता है, उसको दीजिये, जो कलियुगके दोषकी हरनेवाली है ॥६५॥ तब बलदेवजी बोले कि, हे निष्पाप ! वह भागवती संहिता तुमको उद्धवके मुखसे प्राप्त होगी, जो भागवती कीर्ति कलियुगमें अधिक है ॥६६॥ तब वे मांडूक बोले कि, उद्धवजीको उसकी मुख्य अधिकारता कैसे भगवान्ने दी, और मेरा मिलाप उद्धवजीसे कब होगा, हे स्वामिन् ! इस मेरे सन्देहको दूर करिये ॥ ६७ ॥ बलदेवजी बोले–मैं तुमसे कहता हूँ, वह परम गोप्य अद्भुत रहस्य इतिहास है, अभी भी मेरे समीप यह उद्धव शोभित है ॥६८॥ इस उद्धवका तू दर्शन कर, परम अर्थको देनेवाला है, तीर्थयात्रामें तुमको उपदेश नहीं होगा ॥६९॥ जैसे वह उपदेश करनेवाला होगा, वह बात मैं तुमको कहता हूँ, मैंने उद्धवही आचार्य स्थापित किया है, क्योंकि यह संहितामय है ॥ ७० ॥

नन्दादिक व्रजवासियोंकी और गोपोंकी प्रीतिके लिये किया है, अपने स्वरूपका जो कुछ परिकर है, सो सब भगवान् ॥७१॥ कृष्ण परमात्माने अपनासा स्वभाव, गुण, कर्मवाला आत्मा उद्धवकोही किया है, उद्धवको और अपने आत्माको एक रूप करकेही आचरण किया है ॥७२॥ साक्षात् कार किया है, श्रीकृष्णमें और उद्धवमें कुछ भी अन्तर नहीं है, तब उन्होंने उद्धवको श्रीकृष्णही समझ कर आदरसे पूजा है ॥७३॥ उद्धवको वसन्तऋतु और ग्रीष्मऋतुमें व्रजमें रहकर राधाका शोक और उद्धव कुण्डके पास रहनेवालोंका शोक जिसने दूर किया है ॥७४॥ व्रजके अनुगामियोंके संग सब भूमण्डलपर विचरता है, गौओं और नन्दादिक गोपोंके दुःखको हरनेवाला है ॥७५॥ मन्त्रीके अधिकारमें कुशल है, सब परिकरमें अग्रणी है, जब भगवान् अन्तर्धान होंगे, तब धर्मकी रक्षा करनेवाले॥७६॥ भगवान् अपना अद्भुत तेज उद्धवको देंगे, सब जगह मुद्राधिकार देंगे, उद्धव सदैवही विराजता है ॥७७॥

स्वस्वरूपंपरिकरंयत्किंचिद्भगवत्तमम् ॥७१॥ सर्वस्वभावगुणकंकृष्णेनपरमात्मना ॥ उद्धवंचैवस्वात्मानमेकएवाचरद्विभुः ॥७२॥ साक्षात्कारंचकारादौनस्वीयमंतरंक्वचित् ॥ श्रीकृष्णमेवतेज्ञात्वापूजयामासुरादरात् ॥७३॥ वसन्तर्तुश्चग्रीष्मोपिसचचारव्रजात्मकौ ॥ शमयामासराधायाःशोकंतत्कुण्डपार्श्वजाः ॥७४॥ सर्वभूमण्डलंतत्रविचचारव्रजानुगैः ॥वियोगार्तिहरःप्रोक्तोगवांनंदादिगोपिनाम् ॥ ७५ ॥ मंत्राधिकारकुशलःसर्वपरिकराग्रणीः ॥ अथांतर्धानवेलायांभगवान्धर्मगुप्तनुः॥ ७६ ॥तस्मैस्वतेजसमपिदास्यतेपरमाद्भुतम् ॥ मुद्राधिकारंसर्वत्रसर्वदैवविराजते ॥७७॥ अंतर्धानेतुस्वस्थानेदत्तातस्याधिकारिता॥बदरीस्थंसपरिकरंधर्मजंबोधयिष्यति॥७८॥ श्रीकृष्णस्यैवपौत्रेषुमहाराज्ञीगणेषुच ॥ वियोगार्तिहरश्चैवस्थाप्यतेश्रीहरिःस्वयम् ॥ ८० ॥ कौरवाणांकुलेराजापरिक्षिदितिविश्रुतः ॥ तस्यपुत्रोतितेजस्वीविख्यातोजनमेजयः ॥८१॥ पितुःशत्रुहणंयज्ञंकरिष्यतिनसंशयः ॥ तस्यापिसर्वसामग्रीउद्धवद्वारतोभवेत् ॥८२॥ श्रीमद्भागवतंदिव्यंपुराणंवाचनंतदा॥गौरान्वयस्यसंप्राप्तिर्भविष्यतिनसंशयः ॥ ८३ ॥ श्रीमत्प्रसादाद्विप्रर्षेर्महाभागवतोत्तमात् ॥ तद्वारसर्पयज्ञस्यनिवृत्तिःसंभविष्यति ॥ ८४ ॥ यज्ञसंस्कारकर्तॄणांब्राह्मणानांच पूजनम् ॥ सदास्यतिमहाराजाग्रामाणांशतकंतथा ॥ ८५ ॥

अर्जुनादिवियोगार्तिहारीसैवभविष्यति ॥ वज्रनाभोयादवानांमाथुरेसंभविष्यति ॥७९॥

अन्तर्धान होनेके समयमें अपने स्थानको जानेके समय उद्धवको ही अधिकार देंगे, और जब आप चले जायँगे तब उद्धव बदरिकाश्रममें बैठकर धर्मसे हुआ जो परिकर है, उसकी स्थापना कर ज्ञान देगा ॥७८॥ श्रीकृष्णके नाती और रानियोंके गण उनके वियोग जनित दुख हरनेके लिये श्रीहरि उद्धवकोही स्थापित करेंगे ॥७९॥ अर्जुनादिकोंकी वियोग पीड़ाको उद्धव ही हरेगा, यादवोंमें वज्रनाभि मथुरामें होगा ॥८०॥ कौरवोंके कुलमें राजापरीक्षित होगा, उसका पुत्र तेजस्वी जनमेजय विख्यात होगा ॥८१॥ वह पिताके शत्रु सर्पोंको मारनेवाला यज्ञ करेगा, निश्चय उसको भी सब सामग्री, उद्धवकेही द्वारा मिलेगी, इसमें सन्देह नहीं है ॥८२॥ श्रीमद्भागवत पुराणका वाचन और निसन्देह गौर वंशोत्पन्न चैतन्य वंशको प्राप्त होगा ॥८३॥ महा भागवत ब्रह्मऋषि बृहस्पतिके अनुग्रहसे सर्प यज्ञको निवृत्ति होगी ॥८४॥ यज्ञ संस्कार कर्ता ब्राह्मणोंको राजा पूजन करके ग्राम देगा, एक एकको सौ सौ ग्राम दगा ॥८५॥

उसके बाद आचार्योंमें श्रेष्ठ जो श्रीप्रसाद उनकी आज्ञासे सोरोंमें जाकर एक महीना रहेगा ॥८६॥ वहां हाथी, घोड़ा, गौ, रथ, वस्त्र, भोजन इनके दान इच्छानुसार ब्राह्मणोंको देकर ॥८७॥ उस स्थलसे लौटकर गुरुके संग गंगातीरके स्थलमें आयेगा संतों सहित ॥८८॥ अनुचरों सहित शयान नगरमें स्थिति करेगा, वहां गुरुकी आज्ञासे सामग्रीकी साधना करेगा ॥ ८९ ॥ उसके बाद वह अश्वमेध नामक यज्ञ करेगा, तब सब भूमिको जीतनेवाला होगा, फिर एक छत्र राज्य करनेवाला होकर भी गुरुकी शरण प्राप्त होगा ॥९०॥ फिर मनोहर गंगातटपर पूर्वको पांचकोसपर परम एकान्त रूप करके साधना करेगा ॥९१॥ वहां भागवतकी बात संसारके रोगोंकी नाश करनेवाली बड़े आनन्दसे सुधर्मियोंकी सभामें होगी ॥९२॥ उनके पूर्ण समाजमें तू भागवत सुनेगा और निर्मल पदको पायेगा ॥ ९३ ॥ तुमने मेरे लिये बडा तप किया है, इससे मैंने तेरे सामने प्रगट किया है, इस प्रकारसे

ततस्त्वाचार्य्यवर्यस्यश्रीप्रसादस्यचाज्ञया ॥ सगंतासूकरक्षेत्रंमासमेकंस्थितोभवेत् ॥ ८६ ॥ दत्त्वादानान्यनेकानिगोमहागजवाजिनः ॥ रत्नं वासोब्राह्मणेभ्योभोजनंचयदृच्छया॥८७॥तत्तस्मात्तत्स्थलात्सोपिनिवर्त्यगुरुणासह॥गंगातीरस्थलान्पश्यन्नागमिष्यतिसद्वृतः॥८८॥एकच्छत्र शयाननगरेसंस्थांकरिष्यतिसहानुगः ॥ श्रीगुरोराज्ञयातत्रसामग्रींसाधनैःसह ॥ ८९ ॥ अश्वमेधंकरोतिस्मसर्वजेताभविष्यति ॥ एकच्छत्र धरोभूत्वाश्रीगुरोःशरणंगतः ॥ ९० ॥ ततोगंगातटेरम्येपूर्वस्यांक्रोशपंचके ॥ परमैकांतरूपेणसेवनंतत्करिष्यति ॥ ९१ ॥ तत्रभागवतीवार्ता भवरोगविनाशिनी ॥ भविष्यतिमुदायुक्तासमाजेषुधर्मिणाम् ॥९२॥ तत्रपूर्णसमाजेषुतेषांमध्येभवानपि॥शृणोषिभागवतंगंताश्रीनिर्मलंपदम् ॥ ९३ ॥ तपस्तप्तंमदर्थंततस्मादतत्प्रकाशितम् ॥ एवंदत्त्ववरंदत्त्वागतोरामःसहानुगः ॥९४॥ शयाननगराच्छुद्धादीशान्यांदिशिसंस्थितम् ॥ स्थानंगंगातटेम्यंकंटकादुत्तरेभवत् ॥ ९५ ॥ पुष्पवत्यादक्षिणेतुक्रोशैकंविस्तरेणच ॥ तत्रसंकर्षणोदेवःस्थित्वादानपरोभवत् ॥ ९६ ॥ घोटकं दशसाहस्रंरथानांशतकंतथा ॥ द्विपसहस्रंगाश्चैवदक्सहस्रंददौमुदा ॥९७॥ तत्रसंकर्षणंदेवंपूजयामासुरादरात् ॥ देवाःसमाययुःसर्वेऋषयश्चत-पोधनाः ॥ ९८ ॥ नमःकोलेशघातायखरासुरविघातिने ॥ हलायुधनमस्तेस्तुमुसलास्त्रायतेनमः ॥ नमःसौंदर्यरूपायतालांकायनमोनमः ॥ ९९ ॥ इतिश्रुत्वास्तुतिंतेषांसंकर्षणउवाचह ॥ वरंब्रुवंतुमांसर्वेभवतांयदभीप्सितम् ॥ १०० ॥ द्विजदेवाऊचुः ॥ यदायदापदयुक्ताःस्मरामो भवतःपदम् ॥ सर्वबाधाविनिर्मुक्ताभवामश्चतवाज्ञया ॥ १ ॥

बलदेवजी वर देकर अपने भृत्य वर्गोंको ॥९४॥ शुद्ध शयान नगरसे ईशानमें गंगाके किनारेपर कंटक तीर्थसे उत्तर दिशामें उस मनोहर स्थानपर चले गये ॥९५॥ पुष्पवती नदीके दक्षिण दिशामें एक कोसका विस्तार है, वहां देव संकर्षण रहकर दान करने लगे ॥९६॥ दश हजार घोड़ा, सौ रथ, हजार हाथी, दश हजार गौ, ये सब आनन्दसे दिये ॥ ९७ ॥ वहां देवता और तपोधन ऋषीश्वरोंने आकर बड़े आदरसे बलदेवजीका पूजन किया ॥ ९८ ॥ फिर स्तुति करने लगे, कोलेशके मारनेवाले, खरके मारनेवाले, मूसलके धारण करने वाले सुन्दर रूप वाले, तालके चिह्नकी ध्वजा वाले, आपके लिये नमस्कार है ॥ ९९ ॥ ऐसे उनकी स्तुति सुनकर संकर्षण बोले–तुम सब मुझसे जो तुम्हारे मनमें हो वर वह मांगो ॥ १०० ॥ तब वे बोले--हे प्रभो ! जब जब हमारे ऊपर आपत्ति आवे, जब आपका स्मरण करें तब ही हमारी सहायता करो, और हम सब बाधासे निर्मुक्त हों ॥ १०१ ॥

इस स्थलमें तुमने वर पाया है, और मुनिश्रेष्ठोंने मेरा पूजन किया है, सो इससे कलियुगमें यह संकर्षणका स्थान कहलायेगा ॥१०३॥ जो इस जगहमें स्नान करेंगे, देवपूजन करेंगे, अनेक प्रकारके दान देंगे ब्राह्मणोंको भोजन करायेंगे, और विष्णुका पूजन करेंगे, उनका जन्म सफल होगा, वे स्वर्गमें जायेंगे और जो कामना करेंगे उनके मनोरथ पूरे होंगे ॥१०४॥ १०५ ॥ उसके बाद सबको साथ लेकर संकर्षण मथुराको चले गये, कोल राक्षसको मार, गंगामें स्नान करके ॥१०६॥ जो कोई मनुष्य राम बलदेवकी कथाको सुने, वह सब पापोंसे छूटकर परमगति को प्राप्त होता है, ॥ १०७ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां कोलदैत्यवधो नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥ बहुलाश्वराजा कहता है कि, जहां अकस्मात् बलदेव

तब संकर्षणजी बोले कि, जब जब तुम मेरा स्मरण करोगे, तब तब मैं तुम शरणागतोंकी रक्षा करूँगा, कलियुगमें यह मेरा वचन सत्य है ॥ १०२ ॥

॥ रामउवाच ॥ यदायदामांस्मरथतदाहंशरणागतान् ॥ रक्षितास्यांकलौनूनमितिसत्यंवचोमम ॥ २ ॥ अत्रस्थलेवरंप्राप्तंपूजितंमुनिपुंगवैः ॥ अतःसंकर्षणस्थानंभविष्यतिकलौयुगे ॥ ३ ॥ येऽस्मिन्स्नास्यंतिगंगायांदेवान्संपूजयंतिये ॥ दास्यंतिदानंविप्रेभ्योभोजनंकारयंतिये ॥ ४ ॥ विष्णुंसंपूजयंतिस्मसफलंजीवितंक्षितौ ॥ तेयान्तिदैवतस्थानंकामीप्राप्नोतिकामनाम् ॥ ५ ॥ ततःपरिवृतोरामःस्वांपुरींसंजगामह ॥ कोलर-क्षोवधंकृत्वास्नात्वाविष्णुपदीजले ॥६॥ रामस्यबलदेवस्यकथांयःशृणुयान्नरः ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तःसयातिपरमांगतिम् ॥१०७॥ इतिश्रीमद्गर्ग संहितायांमथुराखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेकोलदैत्यवधोनामचतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ अकस्मादागतेरामेतत्र तीर्थमिदंश्रुतम् ॥ अहोमधुपुरीधन्यायत्रसन्निहितश्वसः ॥१॥ मथुरायास्तुकोदेवःकःक्षत्ताकश्चरक्षति ॥ कश्चारःकोमंत्रिवरःकैर्भूमिस्तत्रसेविता ॥ २ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्हरिः ॥ स्वयंहिमथुरानाथःकेशवःक्लेशनाशनः ॥ ३ ॥ साक्षाद्भगवताप्राप्तः कपिलायद्विजायच ॥ कपिलःप्रददौयंवैप्रसन्नःशतमन्यवे ॥४॥ जित्वादेवान्राक्षसेंद्रोरावणोलोकरावणः ॥ यंस्तुत्वापुष्पकेस्थाप्यलंकायांतम पूजयत् ॥ ५ ॥ जित्वालंकांराघवेंद्रस्तमानीयप्रयत्नतः ॥ अयोध्यायांचवाराहमर्चयामासमैथिल ॥ ६ ॥ स्तुत्वारामंचशत्रुघ्नोयमानीय-प्रयत्नतः ॥ मथुरायांमहापुर्यांस्थापयित्वाननामह ॥ ७ ॥

जी चले आये वहां तीर्थ ऐसे सुननेमें आया, परन्तु जहां रातदिन रहे, सो मधुपुरी तो बड़ी धन्य है ॥१॥ इस मथुराका कौन देवता है, कौन क्षत्ता है, कौन रक्षक है, कौन चारू है कौन मंत्री है, कौन सेवन करता है ॥ २ ॥ तब नारदजी बोले–परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण भगवान् तो हरिकेशवदेव क्लेशके नाश करनेवाले मथुराके नाथ हैं ॥३॥ जिनको वाराहदेव कहते हैं, जो केशव देवजीकी मूर्ति पहले तो साक्षात् भगवान् कपिलदेव ब्राह्मणको दी, फिर जो मूर्ति कपिलदेवने प्रसन्न होकर इन्द्रको दी ॥ ४ ॥ फिर उसी मूर्तिको लोकको रुलानेवाला रावण देवताओंको जीतकर ले आया, उस रावणने पुष्पक विमानमें बैठाकर लंकामें लाकर स्थापना करके उस मूर्तिका पूजन किया ॥५॥ फिर रावणको मार लंकाको जीतकर रामचन्द्रजीने उसी मूर्तिको अयोध्यामें लाकर पूजी, हे मैथिल ॥ ६ ॥ रामकी स्तुति करके शत्रुघ्नजी उसी श्रीकेशव भगवान् वाराहजीकी मूर्तिको लाये,

उन्होंने मथुरामें स्थापना कर नमस्कार की॥७॥जो सबके वर दाता हैं, उन वाराहकी सब मथुरावासिनियोंने पूजाकी, वे ही साक्षात् कपिल वाराह इस मथुराके श्रेष्ठ मंत्री हैं॥८॥मथुराजीके क्षेत्रपाल भूतेश्वर शिव हैं जो, पापियोंको दण्ड देते हैं, भक्तोंको मन्त्र देते हैं ॥९॥ महाविद्या चण्डिका देवी दुख नासिनी सिंह पर चढ़ी सदा मथुराकी रक्षा करती है, ॥१०॥ और मथुराका हलकारा मैं हूँ, इधर उधर लोकोंको देखकर सब वृत्तान्त महात्मा श्रीकृष्णसे जाकर कहता हूँ ॥११॥ बीचमें शुभकी दाता मथुरा देवी है, जो करुणामयी है, हे राजन् ! सब भूखोंको अन्न देती है ॥१२॥ मथुरामें श्याम सुन्दर चतुर्भुज भगवान्के पार्षद घूमा करते हैं, जो मरता है, उसको विमानमें बैठाकर स्वर्गको ले जाते हैं ॥१३॥ भगवान्के अंगसे यह मथुरापुरी हुई है, इसके दर्शनसेही मनुष्य कृतार्थ होते हैं ॥१४॥ पहिले ब्रह्माजीने मथुरामें आकर अन्न छोड़कर दिव्य सौवर्पतक तप किया, हरिको भजनेसे ब्रह्मा पर होकर तब

सेवितोमाथुरैःसर्वैःसर्वेषांचवरप्रदः ॥ साक्षात्कपिलवाराहःसोयंमंत्रिवरःस्मृतः ॥८॥ क्षत्ताश्रीमथुरायाश्चनाम्नाभूतेश्वरःशिवः ॥ दत्त्वादण्डंपातकिनेभक्तयर्थान्मंत्रतांव्रजत् ॥ ९ ॥ चंडिकातुमहाविद्यादेवीदुर्गार्तिनाशिनी ॥ सिंहारूढासदारक्षांमथुरायाःकरोतिहि ॥ १० ॥ चारोहंमथुरायाश्चपश्यँल्लोकानितस्ततः ॥ वदामिवार्तांसर्वेषांश्रीकृष्णायमहात्मने ॥ ११ ॥ मध्येवैमथुरादेवीशुभदाकरुणामयी ॥ बुभुक्षितेभ्यःसर्वेभ्योददात्यन्नंविदेहराट् ॥ १२ ॥ चतुर्भुजाश्यामलांगाव्रजंतिप्राव्रजंतिच ॥ मथुरायांमृतंनेतुंविमानैःकृष्णपार्षदाः ॥ १३ ॥ श्रीकृष्णस्यांगसंभूतामथुरावैमहापुरी ॥ यस्यादर्शनमात्रेणनरोयातिकृतार्थताम् ॥१४॥ पुराविधिःश्रीमथुरामुपेत्यतप्त्वातपोवर्षशतंनिरन्नः ॥ जपन्हरिंब्रह्मपरंस्वयंभूःस्वायंभुवंप्रापसुतंप्रवीणम् ॥ १५ ॥ भूतेश्वरोदेववरःसतीपतीस्तप्त्वातपोदिव्यशरन्मधोर्वने ॥ कृष्णप्रसादान्नृपराजसत्वरंतस्याःपुरे माथुरमंडलस्य ॥ १६ ॥ कृष्णप्रसादादहमेवचारोभ्रमन्सदामाथुरमंडलस्य ॥ तथाहिदुर्गामथुरांप्रयातिश्रीकृष्णदास्यंप्रकरोतिनूनम् ॥ १७ ॥ तप्त्वातपःशक्रपदंचशक्रःसूर्योमनुंनित्यनिधिंकुबेरः ॥ पाशीचपाशंसमवाप्यसम्यङ्मधोर्वनेविष्णुपदंध्रुवश्च ॥ १८ ॥ तथांबरीषःसमवापमुक्तिंरामो क्षयंवालवणाज्जयंच ॥ रघुश्चसिद्धिंकिलचित्रकेतुस्तप्त्वातपोत्रैवमधोर्वनेच ॥ १९ ॥ तप्त्वातपोत्रैवमधोर्वनेशुभेभूत्वाबलिष्ठश्चमधुर्महासुरः ॥ श्रीमाधवेमासिचमाधवेनयुयोधयुद्धेमधुसूदनेनसः ॥ २० ॥

स्वायंभू मनुपुत्र हुआ ॥१५॥ भूतेश्वर देवताओंसे श्रेष्ठ सतीके पति मधुवनमें दिव्य सौवर्पतक तप करके कृष्णके प्रसादसे हे नृपराज सत्तम जल्दीही मथुरा मण्डलके क्षेत्रपाल हुये ॥१६॥ श्रीकृष्णकेही प्रसादसे मैं हलकारा हुआ, सदा श्रीमथुरा मण्डलमें भ्रमर करता हूँ, वैसेही दुर्गा मथुरामें आकर श्रीकृष्णका दासीपना करती है ॥१७॥ इसी मथुरामें इन्द्र तप करके इन्द्र पदवीको प्राप्त हुआ, सूर्यको मनुपुत्र मिला, कुबेरको निधि मिली, वरुणको पाश तथा जलपतित्व मिला और इसी मथुराके प्रतापसे ध्रुवको ध्रुवपदवी मिली ॥१८॥ अम्बरीषको मुक्ति मिली, रामको लवणासुरके मारनेकी जय मिली और रघुराजको सिद्धि मिली, और चित्र केतुको इसी मथुरामें तप करनेसे सिद्धि हो गई ॥१९॥ यहाँही तप करके महासुर मधु दैत्य महाबली हुआ, वैशाखमें जिसने मधुसूदनसे युद्ध किया ॥ २० ॥

सप्त ऋषिभी मथुरामें तप करके योगकी सिद्धिको प्राप्त हुये, और गोकर्ण नामका वैश्यभी निधिको प्राप्त हुआ ॥ २१ ॥ पहिले रावणभी यहाँ तप करके स्वर्गके देवताओंको जीतकर
लंका बनाकर, राक्षसोंको रख शोभित हुआ ॥२२॥ इसी मधुवनमें तप करके हस्तिनापुरके राजा शान्तनुने तत्वार्थ सागरका मल्लाह अति उत्तम भीष्म पुत्र पाया ॥२३॥ अब राजा
बहुलाश्व बोला कि, हे देवर्षियोंमें श्रेष्ठ ! अब मथुराका माहात्म्य कहो कि, मथुरामें वास करनेमें मनुष्यको क्या फल होता है ॥२४॥ तब नारदजी बोले कि पहिले वाराहजीने बड़ी
लहरोंकी शंका जिससे दूर हुई उस समुद्रमें डूबी पृथ्वीको डाढपर धर निकाल कर जब लाये, जैसे हाथी कमलको निकालता हैं, तब भूमिसे वाराहजीने मथुराका माहात्म्य
कहा था ॥२५॥ मथुराका नाम लेवे, तो हरि नाम लिये का फल मिले और मथुरा नामके सुननेसे श्रीकृष्णकी कथाके सुननेका फल प्राप्त हो, स्पर्श करनेसे सन्तोंके स्पर्शका फल

सप्तर्षयःश्रीमथुरांसमेत्यतप्त्वातपोत्रैवचयोगसिद्धिम् ॥ प्रापुःपुरावैमुनयःसमंताद्गोकर्णवैश्योपिमहानिधिंच ॥२१॥ तप्त्वातपोत्रैवमधोर्वनेशु
भेविजित्यदेवान्दिविलोकरावणः ॥ निधायरक्षांसिविधायमंदिरमास्थायलंकांविरराजरावणः ॥२२॥ तप्त्वातपोत्रैवमधोर्वनेशुभेगजाह्वयेशो
मिथिलेशशंतनुः ॥ लेभेसुतंभीष्ममतीवसत्तमंतत्त्वार्थवारांनिधिकर्णधारम् ॥ २३ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ मथुरायाश्चमाहात्म्यंवददेव-
र्षिसत्तम निवासेकिंफलंप्रोक्तंमथुरायाःसतांनृणाम् ॥ २४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ आदौवराहोधरणींनिमग्नांमहाजलेप्रोज्झितवीचिशंके ॥
स्वदंष्ट्रयोद्धृत्यकरीवपद्मंकरेणमाहात्म्यमिदंजगाद ॥ २५ ॥ ब्रुवञ्जनोनामफलंहरेर्लभेच्छृण्वँल्लभेत्कृष्णकथाफलंनरः ॥ स्पृशन्सतांस्पर्श
नजंमधोःपुरिजिघ्रंस्तुलस्यादलगंधजंफलम् ॥ २६ ॥ पश्यन्हरेर्दर्शनजंफलंस्वतोभक्षश्चनैवैद्यभवंरमापतेः ॥ कुर्वन्भुजाभ्यांहरिसेवयाफलंग-
च्छंल्लभेत्तीर्थफलंपदेपदे ॥ २७ ॥ राजेंद्रहंतानिजगोत्रघातकीत्रैलोक्यहंतापिचकोटिजन्मसु ॥ राजन्शृणुत्वंमथुरानिवासतोयोगीश्वराणां
गतिमाप्नुयान्नरः ॥ २८ ॥ पादौचधिग्यौनगतौमधोर्वनंदृशौचधिग्येनकदापिपश्यतः ॥ कर्णौचधिग्यौशृणुतोनमैथिलवाचंचधिग्यानकरोत्य-
लंमनाक् ॥ २९ ॥ द्विसप्तकोटिनिवनानियत्रतीर्थानिवैदेहसमास्थितानितु ॥ एकैकमेतेषुविमुक्तिदानिवदामिसाक्षान्मथुरांनमामि ॥ ३० ॥
गोलोकनाथःपरिपूर्णदेवः साक्षादसंख्यांडपतिः स्वयंहि ॥ श्रीकृष्णचन्द्रोवततारयस्यांतस्यैनमोन्यासुपुरीषुकिंवा ॥ ३१ ॥

मिले, सूंघनेमें तुलसीदलके सूंघनेका फल मिलता है ॥२६॥ मथुराके दर्शन करनेसें हरिदर्शनका फल मिले, यहाँ भोजन करे, तो हरिके नैवेद्यके भोजनका फल मिले, काम करनेसे हरि
सेवाका फल मिले, मथुरामें घूमे तो पैर पैरमें तीर्थ यात्राका फल मिले॥२७॥ राजाको मारनेवाला, अपने गोत्रको मारनेवाला, तीनों लोकोंको मारनेवाला, हे राजन्! ऐसाभी पापी
हो, किन्तु करोड़ जन्मतक योगीश्वरोंकी गतिको प्राप्त होता है ॥ २८ ॥ उन पावोंको धिक्कार है, जो पांव मधुवनमें न गये, जिन नेत्रोंसे मथुरा नहीं देखी उन नेत्रोंको
धिक्कार है, और उस वाणीको धिक्कार है, जिसने कभी मथुरा नाम नहीं कहा ॥ २९ ॥ हे विदेह ! जिस मथुरामें चौदह करोड़ वनमें चौदह
करोड़ तीर्थ हैं, एक एक तीर्थ मुक्ति का दाता है, उस मथुराको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ३० ॥ गोलोकके नाथ, परिपूर्ण, साक्षात् असंख्य

ब्रह्मांडोंके पति श्रीकृष्णने जहाँ अवतार लिया है, उस मथुराको नमस्कार है, मुझको दूसरी पुरियोंसे क्या है ॥३१॥ इस मथुराका नाम तत्क्षण ही पापोंको दूर करता है, जिसके नाम लेनेसे मुक्ति होती है, जिसकी गली गलीमें मुक्ति घूमती है, इसीसे इस मथुराको ज्ञानी श्रेष्ठ कहते हैं ॥ ३२ ॥ यद्यपि लोकमें काशी आदि औरं भी पुरी हैं, किन्तु उनमें तो मथुरा ही धन्य है, क्योंकि मथुरा चार प्रकारसे मुक्ति देती है, मथुरामें जन्म हो, या यज्ञोपवीत संस्कार हो, मृत्यु हो अथवा दाह संस्कार हो, इनमें एक भी बात हो तो प्राणीकी मुक्ति हो जाती है ॥ ३३ ॥ जो मधुवनमें कृष्णकी पुरी है, यह पुरियोंकी ईश्वरी, व्रजकी ईश्वरी, तीर्थोंकी ईश्वरी, यज्ञ और तपोनिधिकी ईश्वरी, मोक्षकी देनेवाली, धर्मके धुर (भार) को धारण करनेवाली मथुराको मेरा नमस्कार है ॥३४॥ जो कोई कृष्णमें चित्त लगाकर मथुराके माहात्म्यको सुनते हैं, वे मनुष्य पृथ्वीकी परिक्रमाके फलको प्राप्त होते हैं, हे विदेह राजा इसमें सन्देह नहीं है ॥३५॥ जो इस मथुराखण्डको सुनते हैं, गाते हैं, या पढ़ते हैं, उनको इसी लोकमें अपने आप सब समृद्धि और सिद्धि मिलेंगी ॥३६॥ जो

यन्नामपापंविनिहंतितत्क्षणंभवत्यलंयांगृणतोपिमुक्तयः॥वीथीषुवीथीषुचमुक्तिरस्यास्तस्मादिमांश्रेष्ठतमांविदुर्बुधाः।३२।काश्यादिपुर्योयदिसंति लोकेतासांतुमध्येमथुरैवधन्या ॥ याजन्ममौंजीव्रतमृत्युदाहैर्नृणांचतुर्धाविदधातिमुक्तिम् ॥३३॥ पुरीश्वरींकृष्णपुरींव्रजेश्वरींतीर्थेश्वरींयज्ञतपोनिधीश्वरीम् ॥ मोक्षप्रदांधर्मधुरंधरांपरांमधोर्वनेश्रीमथुरांनमाम्यहम् ॥ ३४ ॥ शृण्वंतिमाहात्म्यमिदंमधोःपुरःकृष्णैकचित्तानियताश्चयत्रये ॥ व्रजंतितेतत्रपरिक्रमात्फलंवैदेहराजेंद्रनचात्रसंशयः ॥३५॥ खण्डंत्विदंश्रीमथुरापुरस्ययेशृण्वंतिगायंतिपठंतिसर्वतः ॥ इहैवतेषांहिसमृद्धिसिद्धयोभवंतिवैदेहनिसर्गतःसदा ॥३६॥ त्रिःसप्तकृत्वोबहुवैभवार्थिनःशृण्वंतिचैनंनियताश्चयेभृशम् ॥ तेषांगृहद्वारमलंकरोतिभृंगावलीकुञ्जरकर्णताडिता ॥ ३७ ॥ विप्रोथविद्वान्विजयीनृपात्मजोवैश्योनिधीशोवृषलोपिनिर्मलः ॥ श्रुत्वेदमाराच्चमनोरथोभवेत्स्त्रीणांजनानामतिदुर्लभोपिहि ॥ ॥ ३८ ॥ निष्कारणोभक्तियुतोमहीतलेशृणोतिचेदंहरिलग्नमानसः ॥ विजित्यविघ्नान्प्रविजित्यनाकपान्गोलोकधामंसचवैप्रयाति ॥ ३९ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीमथुराखण्डेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीमथुरामाहात्म्यंनामपंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

॥ श्रीराधाकृष्णार्पणमस्तु ॥ शुभंभवतु ॥ इतिमथुराखण्डः ॥ समाप्तः ॥

बड़े वैभवकी चाह करनेवाले मनुष्य इस मथुराके माहात्म्यको कृष्णमें मन लगाकर एकाग्र चित्त होकर इक्कीस बार सुनेंगे, उनके दरवाजेपर मतवाले हाथी झूमेंगे, जिनपर भ्रमर गुंजार करें ॥ ३७ ॥ परम पवित्र इस कथाको मन लगाकर जो ब्राह्मण श्रवण करेगा, सो निश्चय पंडित हो जायगा और जो क्षत्रिय सुने तो संग्रामके बीच विजयको प्राप्त हो, और वैश्य जो मन लगाकर श्रवण करे, तो सब प्रकारके धनसे युक्त हो, ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, इन तीनों वर्णोंसे भिन्न शूद्र श्रवण करे, तो उसकी बुद्धि निर्मल हो जावे, और सब स्त्री पुरुषोंके जो अति दुर्लभ मनोरथ हैं वे भी इस कथाके श्रवण करनेसे पूर्ण हो जाते हैं ॥३८॥ और जो मनुष्य सम्पूर्ण कामनाओंको त्याग करके भक्ति भावसे श्रीभगवान्में अपना मन लगाकर इस मथुराजीके माहात्म्यको सुनेगा वह सम्पूर्ण विघ्नोंको और देवताओंको जीतकर श्रीकृष्णके परम धाम साक्षात् गोलोकधामको चला जायगा ॥३९॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां मथुराखण्डे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्वसंवादे मथुरामाहात्म्य वर्णनं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

इति गर्गसंहितायां मथुराखण्डं भाषाटीकासमेतं समाप्तम्

अथ गर्गसंहितायां द्वारकाखण्डं भाषाटीकासहितं प्रारभ्यते

(षष्ठखण्डम्)

श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ द्वारकाखण्डः प्रारभ्यते ॥ श्रीकृष्ण वासुदेव देवकीनन्दन नन्दगोपके कुमार जो गोविन्द हैं, उनके लिये नमस्कार है ॥१॥ बहुलाश्व राजाने नारदजीसे पूछा कि, आपके मुखसे मैंने अद्भुत मथुरा खण्ड सुना, अब श्रीकृष्णका चरितामृत जो द्वारकाखण्ड है उसको मेरे आगे कहिये ॥ २ ॥ रमापतिके कितने विवाह हुये, कितने पुत्र, कितने नाती हुये और द्वारकामें बसनेका क्या कारण है, सो कहिये ॥३॥ तब नारदजी बोले कि, जब महाबली कंस मर गया, तब अस्ति, प्राप्ति, दो कंसकी स्त्रियां जरासंध की पुत्रियाँ थीं, वे महादुःखके कारण हे मैथिलेश्वर ! जरासंधके घर चली गईं ॥४॥ उनके मुखसे कंसका मरण सुनकर जरासंध महाबलीने अत्यन्त कोप किया, और पृथ्वीको यादवोंसे रहित करनेके लिये उद्यत हुआ ॥ ५ ॥ तब तेईस अक्षौहिणी सेना लेकर वह बली मनोहर मथुरापुरीपर चढ़कर आया ॥६॥ भगवान् मथुरापुरीको भयातुर देखकर और समुद्रसी गर्जती उसकी सेनाको देखकर सभामें बैठे बलदेवजीसे बोले॥७॥ हे राम ! इसकी सम्पूर्ण सेनाको तो निश्चय ही मार देना चाहिये, परन्तु जरासंधको नहीं मारना चाहिये

श्रीगणेशायनमः ॥ अथद्वारकाखण्डः ॥ कृष्णायवासुदेवायदेवकीनन्दनायच ॥ नन्दगोपकुमारायगोविंदायनमोनमः ॥१॥ बहुलाश्वउवाच॥
श्रुतंतवमुखाद्ब्रह्मन्मथुराखण्डमद्भुतम् ॥ वदमांद्वारकाखण्डंश्रीकृष्णचरितामृतम् ॥ २ ॥ विवाहाःकतिपुत्राश्चकतिपौत्रारमापतेः ॥ सर्ववद
महाबुद्धेद्वारकावासकारणम् ॥ ३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अस्तिप्राप्तीमहिष्यौद्वेमृतेकंसेमहाबले ॥ जरासन्धगृहंदुःखाजग्मतुर्मैथिलेश्वर
॥ ४ ॥ तन्मुखात्कंसमरणंश्रुत्वाक्रुद्धोजरासुतः ॥ अयादवींमहींकर्तुमुद्यतोभून्महाबलः ॥ ५ ॥ अक्षौहिणीभिर्विंशत्यातिसृभिश्चापिसंवृतः ॥
रम्यां मधुपुरींराजन्नाययौबलवान्नृपः ॥६॥ भयातुरांपुरींवीक्ष्यतत्सेनांसिंधुनादिनीम् ॥ सभायांभगवान्साक्षाद्बलदेवमुवाचह ॥७॥ सर्वंचा-
स्यबलं रामहंतव्यंवैनसंशयः ॥ मागधस्तुनहंतव्योभूयःकर्ताबलोद्यमम् ॥८॥ जरासंधनिमित्तेनभारंवैभूभुजांभुवः ॥ सर्वंचात्रहरिष्यामिकरि-
ष्यामिप्रियं सताम् ॥९॥ एवंवदतिकृष्णेवैवैकुण्ठाच्चरथौशुभौ ॥ अभूतामागतौराजन्सर्वेषांपश्यतांवतौ ॥१०॥ समारुह्यरथौसद्योरामकृष्णौ-
महाबलौ ॥ यादवानांबलैःसूक्ष्मैस्त्वरंनिर्जग्मतुःपुरात् ॥ ११ ॥ यादवानांमागधानांपश्यद्भिर्दिविजैर्दिवि ॥ बभूवतुमुलंयुद्धमद्भुतंरोमहर्षणम्
॥ १२ ॥ अक्षौहिणीभिर्दशभीरथारूढोमहाबलः ॥ श्रीकृष्णस्यपुरःपूर्वंयुयुधेमागधेश्वरः ॥१३॥ पंचभिश्चाक्षौहिणीभिर्धार्तराष्ट्रःसुयोधनः ॥
युयोधयादवैः सार्द्धंजरासंधसहायकृत् ॥ १४ ॥ पंचभिश्चतथाराजन्विंध्यदेशाधिपोबली ॥ तिसृभिश्चमहायुद्धेवंगनाथोमहाबलः ॥ १५ ॥

क्योंकि यह बच जायगा, तो फिर सेना एकत्रित करनेका उद्योग करेगा ॥८॥ जरासंधके निमित्तसे पृथ्वीके राजारूपी सब भारको यहां ही उतारूँगा, और सन्तोंका प्रिय करूँगा ॥९॥ ऐसे श्रीकृष्ण कह रहे थे कि, तभी वैकुण्ठ लोकसे बड़े शुभ दो रथ सभीके देखते देखते आये ॥१०॥ तब अति बली राम और कृष्ण दोनों भाई उन रथोंपर चढ़ थोडीसी यादवोंकी सेना लेकर जल्दीसे पुरके बाहर निकले ॥ ११ ॥ स्वर्गमेंसे देवताओंके देखते-देखते मागधोंका और यादवोंका ऐसा भयंकर अद्भुत युद्ध हुआ, जिसको देखकर रोंगटे खड़े हो जायें ॥१२॥ तब महाबली मगध देशका राजा जरासंध रथपर चढ़कर दश अक्षौहिणी सेना लेकर प्रथम श्रीकृष्णके सन्मुख युद्ध करने लगा ॥१३॥ और पांच अक्षौहिणी सेनाको संग लेकर धृतराष्ट्रका पुत्र दुर्योधन जरासंधकी सहायताके लिये यादवोंसे युद्ध करने लगा ॥ १४ ॥ और पांच अक्षौहिणी सेनाको संग लेकर विन्ध्य देशका राजा बली युद्ध करने लगा और तीन अक्षौहिणीको संग लेकर वंगदेशका राजा महाबली आया ॥ १५ ॥

हे मैथिल ! ऐसे और भी राजा जरासंधके वशवर्ती अपने प्राणोंसे जरासंधकी सहायता करनेके लिये आये ॥१६॥ शत्रुसेनासे समाकुल बाणोंका अंधकार होनेपर शार्ङ्गधन्वा भगवान् ने शार्ङ्ग धनुषकी टंकार की ॥१७॥ तब तो सातों लोक नीचेके और सातों लोक ऊपरके, इनके सहित ब्रह्मांड झंकार उठा, सातों पाताल झंकार उठे, तब दिग्गज विचलित हो गये तारे चल गये, पृथ्वी मंडल कांपने लगा ॥१८॥ तब शत्रुओंकी सेना बहरी हो गई, घोड़े युद्धमेंसे भागने लगे, हाथी मुख फेरकर भागने लगे ॥१९॥ धनुषकी टंकारसे विह्वल हो कर दो कोसपर सेना उलटी भाग गई, फिर आकर खड़ी हुई ॥२०॥ ऐसे बिजलीके समान पीले, बिजलीसी चमक वाले, शार्ङ्ग धनुषको चढ़ाकर टंकार कर बाणोंसे जरासंधकी सब सेना को ढक दिया ॥२१॥ शार्ङ्ग धनुषके बाणोंसे पहिया जिनके टूट गये, घोड़ा मर गये, सारथी जिनके मर गये, रथी मर गये ऐसे रथ धरतीमें गिर पड़े ॥ २२ ॥ बाणोंके

एवमन्येपिराजानोजरासन्धवशानुगाः ॥ प्राणैःसाहाय्यंकुर्वंतोजरासंधस्यमैथिल ॥ १६॥ बाणांधकारेसंजातेशत्रुसेनासमाकुले ॥ टंकारंशार्ङ्गधनुषःशार्ङ्गधन्वाचकारह ॥ १७ ॥ ननादतेनब्रह्मांडसप्तलोकैर्बिलैःसह ॥ विचेलुर्दिग्गजास्ताराराजद्भूखण्डमण्डलम् ॥ १८॥ तदैवबधिरीभूतंशत्रूणांसैन्यमण्डलम् ॥ उत्पतंतोहयायुद्धाद्गजास्तुविमुखास्ततः ॥१९॥ दुद्रावतद्बलंसर्वंटंकाराद्भयविह्वलम् ॥ प्रतीपमेत्यगव्यूतिःपुनस्तत्राजगामह ॥ २० ॥ एवंशार्ङ्गंसमुच्चार्यंतडित्पिंगस्फुरत्प्रभम् ॥ बाणौघैश्छादयामासजरासंधबलंहरिः ॥ २१ ॥ चूर्णीभूतारथाराजन्बाणौघैःशार्ङ्गधन्वनः ॥ चूर्णचक्रानिपेतुःकौहतसूताश्वनायकाः ॥ २२ ॥ द्विधाभूतागजाबाणैश्चलितागजिभिःसह ॥ साश्ववाहास्तथाश्वाश्चबाणैःसंच्छिन्नकंधराः ॥ २३ ॥ तथावीरामहायुद्धेभिन्नोरश्छिन्नमस्तकाः ॥ विशीर्णकवचाःपेतुर्बाणौघैश्छिन्नसंशयाः ॥२४॥अधोमुखाऊर्ध्वमुखाश्छिन्नदेहानृपात्मजाः ॥ रेजूरणांगणेगजन्भांडव्यूहाइवाहताः॥ २५ ॥ क्षणमात्रेणतद्युद्धेशतक्रोशविलंबिता ॥ आपगाभून्महादुर्गारुधिरस्रावसंभवा ॥ २६ ॥ द्विपग्राहाचोष्ट्रखरकबन्धाश्वादिकच्छपा ॥ शिशुमाररथाकेशशैवालाभुजसर्पिणी ॥ २७ ॥ करमीनामौलिरत्नहारकुण्डलशर्करा ॥ शस्त्रशुक्तिश्छत्रशंखाचामरध्वजसैकता ॥ २८ ॥

समूहसे हथिनी सहित हाथी चलायमान हुये बीचमेंसे दो दो टूक हो गये, सवारोंके घोड़ोंके शिर कट गये, सवार मर गये ॥ २३ ॥ वैसे ही उस युद्धमें कट गये हैं अस्त्र, भुजा, मस्तक, कवच जिनके और कटा है संदेह जीनेका जिनका ऐसे वीर भूमिमें गिर पड़े ॥ २४ ॥ ऊपरको मुख नीचेको मुख, कटी है देह जिनकी, ऐसे राजा, राजकुमार, युद्ध भूमिमें शोभित हुये, जैसे लुटे घरके फूटे बर्तन होते हैं ॥२५॥ एक क्षणमें समस्त सेनाको मार सौ कोसकी बड़ी भयंकर रुधिरकी नदी बहा दी ॥ २६ ॥ जिसमें हाथी तो ग्राहसे दीखते हैं ऊँट गधाके शव जिसमें कछुवा हैं, रथ जिसमें शिशुमार हैं, केश जिसमें शिवाल हैं, भुजा सर्प हैं, ॥२७॥ हाथ जिसमें मछली हैं बहुमूल्य गहने जिसमें कंकर पत्थर हैं, शस्त्र जिसमें सीप हैं, छत्र जिसमें शंख हैं, चमर, ध्वजा जिसमें बालू हैं ॥ २८ ॥

रथके पहिये जिसमें भ्रमर हैं, दोनों सेना जिसमें नदीके तट हैं, ऐसी सौ योजन लम्बी रुधिरकी नदी वैतरणीसी बहने लगी ॥२९॥ प्रमथ भैरव, भूत, बेताल, योगिनियोंके गण गाते
अट्टहास करते हैं, रण मण्डलमें नाचते हैं ॥३०॥ हे नृपेश्वर ! खोपड़ीमें भर भरके रुधिर पीते हैं, महादेवकी मुंडमालाके लिये वीरोंके शिरको चुनते हैं, ॥३१॥ सैकड़ों डाकिनी जिसके
संगमें ऐसीभद्रकाली गर्म गर्म रुधिरको पीती अट्टहास करती हैं ॥३२॥ स्वर्गकी विद्याधरी, गन्धर्वी, अप्सरा, क्षात्र धर्ममें स्थित जो देवरूपी वीर हैं, उनको वरण करने लगी ॥३३॥
उनमें आपसमें झगड़ा होने लगा, यह तो मेरे रूप हैं, इसको तो मैंही वरूँगी, दूसरी कहती हैं, मैंही वरूँगी॥३४॥कोई कोई वीर रणरंगसे धर्मात्मा चलायमान नहीं हुये, ये सूर्य
मण्डलको भेदकर विष्णु लोकको चले गये ॥३५॥ त्रिलोकीका बल जिनमें ऐसे बलदेवजी बाकी सेनाको हलसे खींचकर मूसलसे मारने लगे ॥३६॥ ऐसे जरासंधकी सब सेनाका

रथांगावर्तसंयुक्तासेनाद्वयतटावृता ॥ शतयोजनविस्तीर्णाबभौवैतरणीयथा ॥ २९ ॥ प्रमथाभैरवाभूतावेतालायोगिनीगणाः ॥ अट्टहासंप्र-
कुर्वतोनृत्यंतोरणमण्डले ॥ ३० ॥ पिबंतोरुधिरंशश्वत्कपालेननृपेश्वर ॥ हरस्यमुण्डमालार्थंजगृहुस्तेशिरांसिच ॥३१॥ सिंहारूढाभद्रकाली
डाकिनीशतसंवृता ॥ पिबंतीरुधिरंचोष्णंसाट्टहासंचकारह ॥ ३२ ॥ विद्याधर्यश्चस्वर्गस्थागन्धर्व्योप्सरसस्तथा ॥ क्षात्रधर्मेस्थितान्वीरान्व-
व्रिरेदेवरूपिणः ॥ ३३ ॥ गृहीत्वातान्कलिरभूत्तासांपत्यर्थमंबरे ॥ ममानुरूपानेमेचइतितद्गतचेतसाम् ॥ ३४ ॥ केचिद्वीराधर्मपरारणरंगान्न
चालिताः ॥ ययुर्विष्णुपदंदिव्यंभित्त्वामार्तंडमण्डलम् ॥ ३५ ॥ शेषंबलंसमाकृष्यबलदेवोहलेनवै ॥ मुशलेनाहनत्क्रुद्धस्त्रैलोक्यबलधारकः
॥ ३६ ॥ एवंसैन्येक्षयंजातेजरासंधस्यसर्वतः ॥ सुयोधनोविंध्यनाथोवंगनाथस्तथैवच ॥३७॥ सर्वेविदुद्रुवुर्युद्धाद्भयभीताइतस्ततः ॥ जरास-
न्धोमहावीर्योनागायुतसमोबले ॥३८॥ रथेनागतवान्राजन्बलदेवस्यसंमुखे ॥ समाकृष्यहलाग्रेणजरासंधरथंशुभम् ॥३९॥ चूर्णयामाससहसा
मुशलेनयदूत्तमः ॥ जरासंधोपिविरथोहताश्वोहतसारथिः ॥ ४० ॥ जग्राहबलिनन्दोर्भ्यांसंत्यक्तशस्त्रसंहतिः ॥ तयोर्युद्धमभूद्घोरंबाहुभ्यांरण
मण्डले ॥४१॥ पश्यतांदिवदेवानांनराणांभुविमैथिल ॥ उरसाशिरसाचैवबाहुभ्यांपादयोःपृथक् ॥४२॥ युयुधातेमल्लयुद्धेसिंहाविवमहाबलौ॥
तयोश्चयुद्ध्यतोःसर्वक्षुण्णंभूखण्डमंडलम् ॥ ४३ ॥

जब नाश हो गया, और चारों ओरसे सुयोधन, विंध्यनाथ, बंगनाथ, ये सब ॥३७॥ डरकर जब युद्धसे भाग गये, तब जरासंध दश हजार हाथियोंका बल जिसमें महापराक्रमी
॥३८॥ रथमें बैठ बलदेवजीके सामने लड़नेके लिये आया, तब बलदेवजीने जरासंधके रथको हलसे खींचा ॥३९॥ यदूत्तम बलदेवजीने मूसलसे चूर्ण कर डाला, तब विरथ हो गया
घोड़े मर गये, सारथी जिसका मर गया ॥४०॥ ऐसे जरासंधने सब शस्त्रोंको छोड़ बलदेवजीको दोनों भुजाओंसे पकड़ लिया, उन दोनोंका रणमण्डलमें भुजाओंसे बड़ा घोर युद्ध
हुआ ॥४१॥ हे मैथिल ! ऊपरसे देवताओंके देखते-देखते और नीचेसे मनुष्योंके देखते-देखते ऊरुसे, शिरसे और भुजाओंसे ॥४२॥ मल्ल युद्ध होने लगा, महाबली दो सिंहोंकी
तरह लड़ने लगे, उन दोनोंके युद्धसे पृथ्वी खुद गई ॥ ४३ ॥

और थालीकी तरह दोघड़ी तक कांपने लगी, तब बलदेवजीने जरासंधको पकड़कर ॥४४॥ फिराकर धरतीमें दे मारा, जैसे बालक कमण्डलको दे मारता है, फिर उसको मारने के लिये उसकी छातीपर चढ़कर ॥४५॥ क्रोधमें शरीर जिनका भर गया ऐसे देवने, जब मारनेको मूसल लिया, तभी परिपूर्णतम श्रीकृष्णने रोक दिये ॥४६॥ तब बलदेवजीने उसको छोड़ दिया, तब जरासंध लज्जित होकर तप करनेको चला ॥४७॥ तभी मन्त्रियोंने मना किया, तब वह जरासंध अपने मगध देशको चला गया, ऐसे मधुसूदन माधव जरासंधको जीतकर ॥४८॥ रणका सब धन लेकर यादवोंको आगे करके बलदेवको साथ लेकर मथुराको आये ॥४९॥ सूत मागध, बन्दीजन यश गाते आते हैं, ब्राह्मण वेद ध्वनि कर रहे हैं, शंख दुंदुभि, आदि बाजे बजते बड़े मंगल होते आते हैं ॥५०॥ ऐसे परिपूर्ण भगवान् मथुरामें आये ॥५१॥ अपनी-अपनी अटारियोंपर चढ़े नर नारी पुष्पोंकी खीलोंकी वर्षा करते

स्थालीवसहसाराजंश्चकंपेघटिकाद्वयम् ॥ गृहीत्वाभुजदण्डाभ्यांजरासंधंयदूत्तमः ॥ ४४ ॥ भूपृष्ठेपातयामासकमंडलुमिवार्भकः ॥ रामस्तदु-
परिस्थित्वाहंतुंशत्रुंजरासुतम् ॥ ४५ ॥ जग्राहमुसलंघोरंक्रोधपूरितविग्रहः ॥ परिपूर्णतमेनाथश्रीकृष्णेनमहात्मना ॥४६॥ निवारितस्तदैवाशु
तंमुमोचयदूत्तमः ॥ तपसेकृतसंकल्पोव्रीडितोपिजरासुतः ॥४७॥ निवारितोमंत्रिमुख्यैर्मागधान्मागधोययौ ॥ इत्थंजित्वाजरासंधंमाधवोमधु-
सूदनः ॥४८॥ आयोधनगतंवित्तंसर्वंनीत्वासुखावहम् ॥यादवानग्रतःकृत्वाबलदेवसमन्वितः ॥४९॥ उपगीयमानविजयःसूतमागधवंदिभिः॥
शंखदुंदुभिनादेनब्रह्मघोषेणभूयसा ॥ ५० ॥ विवेशमथुरांसाक्षात्परिपूर्णतमःस्वयम् ॥ ५१ ॥ समर्चितोमंगललाजपुष्पैःपश्यन्पुरींमंगलकुंभ
युक्ताम् ॥ पीतांबरःश्यामतनुःशुभांगःस्फुरत्किरीटांगदकुण्डलप्रभः ॥ ५२ ॥ शार्ङ्गादिशस्त्रास्त्रधरोहसन्मुखस्तालांकयुक्तोगरुडध्वजस्स्वयम्॥
उद्यद्विलोलाश्वरथःसुरार्चितः समेत्यराजानमसौबलिंददौ॥५३॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेजरासन्धपराजयो
नामप्रथमोध्यायः ॥ १ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ पुनस्तत्रजरासंधस्तावत्यक्षौहिणीबलः ॥ युयुधेयदुभिःशीघ्रंपुनःकृष्णपराजितः ॥ १ ॥
श्रीकृष्णतेजसासर्वेयादवावृद्धिमागताः ॥ धनुर्गजादिभिःशश्वत्प्राप्तलुंठनसाहसाः ॥२॥ प्राप्तेचसाहसेराजन्विनायुद्धंपुरैवहि ॥ अर्भकाजलहा-
रिण्यश्चक्रुःशत्रपहारणम् ॥ ३ ॥ शत्रुद्रव्यंचसंहर्तुवीक्षतःक्रीतवाससः ॥ नागरामाथुराःसर्वेपरंहर्षमुपागताः ॥ ४ ॥

हैं, मंगल कलश धरे जिसमें उस मथुराकी शोभा देखते २ श्याम सुन्दर पीताम्बर पहिने, झलक रहे हैं किरीट, कुडल, बाजू, जिनके ॥५२॥ शार्ङ्गादि शस्त्रधारी, प्रसन्न मुख, मंद-मंद हँसते, गरुडध्वज तालकी ध्वजाके रथमें चढ़े जिसमें चञ्चल घोड़ा लगे, देवता जिनका पूजन करें, उन श्रीकृष्णने संग्रामका धन उग्रसेनको भेंट किया ॥५३॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां जरासंध पराजयो नामप्रथमोध्यायः ॥१॥ नारदजी कहते हैं—फिरभी जरासंध उतनीही अक्षौहिणी सेना लेकर जल्दी यादवोंसे लड़नेके लिये आगया, तब फिरसे कृष्णने जीत लिया ॥१॥ श्रीकृष्णके तेजसे यादवोंकी बड़ी वृद्धि हुई, धनोंसे गजोंसे प्राप्त हुआ है, लूटनेका साहस जिनको ॥२॥ जब साहस हो गया तब हे राजन्! बालक पनिहारी, शत्रुका अपहरण करने लगे बिनाही युद्ध करे ॥३॥ शत्रुका द्रव्य हरनेके लिये कोरीभी सेनाको लूटने लगे, तब मथुरा नगरवासी सब परम हर्षको प्राप्त हो गये ॥४॥

ऐसे जरासंध सत्रह बार आकर हार हारकार चला गया, अट्ठारहवीं बार फिर आनेकी उसने इच्छा किया ॥५॥ तब मेरे प्रेरित किये कालयवन महाबलीने तीन करोड़ म्लेच्छोंको साथ लेकर मथुराको आ घेरा ॥६॥ म्लेच्छोंकी सेनाका बल देखकर, भयविह्वल अपने पुरको देखकर, तब दोनों ओरसे भय देखकर बलदेवके साथ श्रीकृष्ण मनमें विचार करने लगे ॥७॥ अपनी जातिके बंधु सुहृद, उनकी रक्षाके लिये कृष्णने भयंकर लहरें जिसमें उस समुद्रमें एक रातमें ही द्वारका दुर्ग बनाया ॥८॥ जहां आठों लोकपालोंकी सिद्धि विश्वकर्माने रच दी, जहां मोक्ष चाहनेवालोंकी समस्त वैकुण्ठकी सम्पत्ति दीखती है ॥ ९ ॥ हरि भगवान् योगबलसे रात-रातमें ही द्वारकामें सबको बैठाकर बलदेवजीसे आज्ञा मांग शस्त्र विनाही काल यवनसे लड़नेके लिये बाहर निकले ॥१०॥ तब कालयवन निहत्ते कृष्णको मेरे कहे लक्षणोंसे जानकर आप भी निरायुध होकर कृष्णसे युद्ध करनेको पैदल ही

एवंसप्तदशकृत्वार्क्षीणसैन्योजरासुतः ॥ अष्टादशमेसंग्रामआगंतुंचमनोऽकरोत् ॥५॥ मयाप्रणोदितःकालयवनोवैमहाबलः ॥ रुरोधमथुरांक्रुद्धोम्लेच्छकोटिसमावृतः ॥६॥ म्लेच्छानांचबलंवीक्ष्यस्वपुरंभयविह्वलम् ॥ भयंचोभयतःप्राप्तंरामेणाचिंतयद्धरिः ॥७॥ स्वज्ञातिबंधुरक्षार्थं समुद्रेभीमनादिनि ॥ चकारद्वारकादुर्गमेकरात्रेणमाधवः ॥८॥ यत्राष्टदिक्पालसिद्धिर्विश्वकर्मविनिर्मिता ॥ सर्वावैकुण्ठसंपत्तिर्दृश्यंतेमोक्षकांक्षिभिः ॥ ९ ॥ हरिःसर्वंजनंतत्रनीत्वायोगेनमैथिल ॥ पुराद्रामममनुज्ञाप्यनिर्गतोभून्निरायुधः ॥१०॥ निरायुधंहरिंज्ञात्वामयोक्तैर्लक्षणैःखलः ॥ निरायुधःसतंयोद्धुंपदातिःस्वयमागतः ॥ ११ ॥ पराङ्मुखंप्राद्रवंतंदुरापंयोगिनामपि ॥ जिघृक्षुस्तंचान्वधावत्सैनिकानांप्रपश्यताम् ॥१२॥ हस्तप्राप्तंवपुस्तस्मैदर्शयन्निवमाधवः ॥ दूरंगतःश्यामलाद्रेःप्राविशत्कंदरंत्वरम् ॥ १३ ॥ मुचुकुंदोयत्रचास्तेमांधातृतनयोमहान् ॥असुरेभ्यःपुरारक्षांदेवानांयश्चकारह ॥ १४ ॥ अहर्निशंनसुष्वापदेवसेनापरोनृप ॥ तमूचुर्देवताःसर्वेप्रसन्नाराजसत्तमम् ॥ १५ ॥ वरंवरयभोराजन्यत्तेमनसिवर्त्तते॥नत्वातान्प्राहराजेंद्रःकरोमिशयनंपरम् ॥१६॥ शयनांतेहरेःसाक्षाद्दर्शनंमेभवत्वलम् ॥ योमध्येबोधयेन्मांवैशयनस्याप्यचेतनः ॥ १७ ॥ समयादृष्टमात्रस्तुभस्मीभवतुतत्क्षणात् ॥ तथासचोक्तःसुष्वापराजाकृतयुगेपुरा ॥ १८ ॥

श्रीकृष्णके पीछे भागा ॥११॥ पीठ फेर कर भगे जाते हैं, जो योगियोंसे भी नहीं पकड़े जायं, उनके पीछे पकड़नेको सब सेनाके देखते २ कालयवन भागा ॥१२॥ एक हाथपर ही पकड़ लिये जायेंगे ऐसे अपने रूपको दिखाते-दिखाते दूर जाकर एक श्यामल नामक पर्वतकी गुफामें जल्दी घुस गये ॥१३॥ वहां मांधाताका पुत्र मुचुकुन्द सो रहा था, जिसने पहिले असुरोंसे देवताओंकी रक्षा की थी ॥१४॥ पहले देवसेनाकी रक्षा करनेमें तत्पर बहुत दिन तक रातदिन सोया नहीं था, तब देवता प्रसन्न होकर श्रेष्ठ जो राजा है उससे बोले ॥१५॥ हे राजन्! तुम्हारे मनमें हो सो वर मांगो, तब उनको प्रणामकर राजा यह बोला कि मैं तो सोऊँगा ॥ १६ ॥ सोनेके अन्तमें मुझको भगवान्का दर्शन हो जो कोई अचेतन मनुष्य मुझ सोतेको आकर जगावे ॥१७॥ वह मेरी दृष्टि मात्रसे ही उसी क्षण भस्म हो जाय, ऐसे वर मांगकर सतयुगमें पहिले सोया था ॥ १८ ॥

वहां ही कालयवन गया, सो पीताम्बर ओढ़े मुचुकुन्दको श्रीकृष्ण जानकर महादुष्ट इस कालयवनने लात मारी ॥१९॥ मुचुकुन्दने उठकर आंखें खोल दिशाओंको देखते पास खड़े कालयवनको देखा ॥२०॥ क्रोधसे जो मुचुकुन्दने देखा, त्योंही उसकी देहसे निकली अग्निसे उसी क्षण कालयवन भस्म हो गया ॥२१॥ म्लेच्छके भस्म होते ही परिपूर्ण श्रीकृष्ण ने मुचुकुन्द बुद्धिमान्को दर्शन दिया ॥२२॥ करोड़ सूर्यकासा तेजका मण्डल उसमें खड़े, झलक रहे हैं, किरीट, कुण्डल, कंकण, नूपुर, बाजू, किंकिणी जिनके ॥२३॥ चतुर्भुज श्रीवत्स का जिनके चिह्न, वनमाला पहिने, कमलसे नेत्र, करोड़ कामसे सुन्दर, मलयके सघन घटासे श्याम ॥२४॥ राजा उनको देख हर्षित हो गया, हाथ जोड़ खड़ा हो गया पूर्णब्रह्मको जान प्रणाम कर स्तुति करने लगा ॥२५॥ तुम कृष्ण हो, वासुदेव हो, देवकीनन्दन हो, नन्दगोपके कुमार गोविंद हो, उनके लिये मेरा बारम्बार नमस्कार है ॥२६॥ कमल तुम्हारी

तत्रप्रविष्टोयवनोमत्त्वापीताबरंच्युतम् ॥ तताडयवनःक्रुद्धःपादेनाशुमहाखलः ॥ १९ ॥ मुचुकुंदः समुत्थायशनैरुन्मील्यसोक्षिणी ॥ आशाः प्रपश्यंस्तंपार्श्वेस्थितंकालंददर्श ॥ २० ॥ सतावत्तस्यरुष्टस्यदृष्टिपातेनमैथिल ॥ देहजेनाग्निनादग्धोभस्मसादभवत्क्षणात् ॥ २१ ॥ भस्मीभूतेचयवनेपरिपूर्णतमःस्वयम् ॥ स्वरूपंदर्शयामासमुचुकुंदायधीमते ॥ २२ ॥ कोटिसूर्यप्रतीकाशेज्योतिषांमण्डलेप्रभुम् ॥ स्थितंस्फुरत्किरीटार्ककुंडलांगदनूपुरम् ॥२३॥ श्रीवत्सांकंचतुर्बाहुंपद्माक्षंवनमालिनम् ॥ कोटिकंदर्पलावण्यंकालमेघसमप्रभम् ॥२४॥ दृष्ट्वाराजाहर्षितोपि समुत्थायकृतांजलिः ॥ परिपूर्णतमंज्ञात्वाभक्त्यातंप्रणनामह ॥ २५ ॥ मुचुकुन्दउवाच ॥ कृष्णायवासुदेवायदेवकीनन्दनायच ॥ नंदगोपकुमारायगोविंदायनमोनमः ॥ २६ ॥ नमःपंकजनाभायनमःपंकजमालिने ॥ नमःपंकजनेत्रायनमस्तेपंकजांघ्रये ॥ २७ ॥ नमःकृष्णाय शुद्धायब्रह्मणेपरमात्मने ॥ प्रणतक्लेशनाशायगोविंदायनमोनमः ॥ २८ ॥ नमोस्त्वनंतायसहस्रमूर्तयेसहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे ॥ सहस्रनाम्नेपुरुषायशाश्वतेसहस्रकोटीयुगधारिणेनमः ॥ २९ ॥ हरेमत्समःपातकीनास्तिभूमौतथात्वत्समोनास्तिपापापहारी ॥ इतित्वंचमत्त्वाजगन्नाथ देवयथेच्छाभवेत्तेतथामांकुरुत्वम् ॥ ३० ॥

नाभिमें, कमलकी माला धारण करते हो, प्रणयोंके क्लेशके नाश करनेवाले, कमल नेत्र, कमलेसे चरण जिनके, उनको मेरी नमस्कार है ॥२७॥ कृष्ण हो, शुद्ध परमात्मा परब्रह्म नम्रोंके क्लेशके नाश कर्ता गोविन्दके लिये नमस्कार है ॥ २८ ॥ अनन्त हो अनन्त मूर्ति हो, हजारों हाथ, पांव, नेत्र, नासिका, कर्ण, कटि, ऊरू, उर, भुजा, जिनके, हजारों नाम जिनके हजारों करोड़ों युगके धारण करनेवाले, आपके लिये मेरा नमस्कार है ॥ २९ ॥ इस पृथ्वीपर मेरे समान कोई पापी नहीं है, आपके समान कोई पापहारी नहीं है ऐसा मानकर आप मेरे ऊपर दया करो आप जैसी इच्छा हो वैसा करो ॥ ३० ॥

नारदजी कहते हैं, जब परमानन्द स्वरूप भगवान्‌की ऐसे स्तुति की, तब उसको अपना निर्गुण भक्त जानकर गम्भीर वाणीसे भगवान् बोले॥३१॥हे राजशार्दूल! तू धन्य है, धन्य तेरी निर्मल मति है जो निरपेक्ष दिव्य भक्तिभावसे भरी है ॥३२॥ अबही तू बदरिकाश्रम जो मेरा धाम उसको जा, मेरा आश्रय लेकर तपकर, तब तू उत्तम ब्राह्मण होगा ॥ ३३ ॥ फिर प्रेम लक्षणा भक्तिसे प्रकृतिसे परे जो मेरा धाम उसको हे महाराज ! तू प्राप्त होगा, जहाँका गया फिर नहीं लौटता है ॥३४॥ नारदजी कहते हैं-ऐसे मुचुकुन्द स्तुति करके नमस्कार करके, परिक्रमा करके, कृष्णके प्रेममें विह्वल हो, दुर्ग गुहामेंसे निकला ॥ ३५ ॥ द्वापरके छोटे-छोटे मनुष्य सौताल ऊँचे उस मुचुकुन्दको देख भयभीत होकर इधर उधर भागने लगे ॥ ॥३६॥ तुम भय मत करो, ऐसे कहकर मुचुकुन्द राजा उत्तर दिशाको चला गया, ऐसे भगवान्‌ने उस बुद्धिमान् राजा मुचुकुन्दको वर देकर ॥ ३७ ॥ फिर म्लेच्छ

श्रीनारदउवाच ॥ एवंस्तुतोहरिःसाक्षात्परमानन्दविग्रहः ॥ ज्ञात्वातंनिर्गुणंभक्तंप्राहगंभीरयागिरा ॥ ३१ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ धन्यस्त्वंराजशार्दूलधन्यातेविमलामतिः ॥ नैरपेक्षेणदिव्येनभक्तिभावेनपूरिता ॥ ३२ ॥ अद्यैवगच्छमद्धामबदर्याख्यंमदाश्रमम् ॥ तत्रैवतु तपस्तप्त्वाभूत्वाब्राह्मणपुंगवः ॥ ३३ ॥ प्रेमलक्षणयाभक्त्यामद्धामप्रकृतेःपरम् ॥ प्राप्स्यसित्वंमहाराजयतोनावर्ततेगतः ॥ ३४ ॥ नारदउवाच ॥ इत्थंस्तुत्वाहरिंनत्वापरिक्रम्यनताननः ॥ निश्चक्रामगुहादुर्गाच्छ्रीकृष्णप्रेमविह्वलः॥३५॥ द्वापरेक्षुल्लकामर्त्यातालवृक्षशतोच्छ्रितम् ॥ दृष्ट्वातंदुद्रुवुर्मार्गेभयभीताइतस्ततः ॥ ३६ ॥ माभैष्टेत्यभयंयच्छञ्जगामदिशमुत्तराम् ॥ एवंदत्त्वावरंतस्मैमुचुकुंदायधीमते ॥३७॥ भगवान्पुनराव्रज्यमथुरांम्लेच्छवेष्टिताम् ॥ हत्वाम्लेच्छबलंसर्वंतद्धनान्यच्छिनद्बलात् ॥३८॥ अथराजाजरासंधोयोद्धुमभ्युदितःपुनः॥ आहूयमागधान्विप्रान्मुहूर्तादेशकारिणः ॥ ३९ ॥ प्राहेदंवासुदेवाख्यंजित्वायद्यागतोह्यहम् ॥ सर्वान्संपूजयिष्यामिसदायुष्मत्पदाश्रये ॥४०॥ कारागारेषुयावद्वैस्थिताभवतभोद्विजाः ॥ पराजितोहंवायुष्मान्हनिष्यामिनसंशयः ॥४१॥ एवमुक्त्वाद्विजान्राजाजरासंधोमहाबलः ॥ आजगामाशुमथुरांत्रयोविंशत्यनीकपः ॥४२॥ ब्रह्मवाक्यमृतकर्तुंस्वप्रतिज्ञांविहायच ॥ मनुष्यचेष्टामापन्नौस्वपुराद्भीतभीतवत् ॥४३॥ रामकृष्णौपरौदेवौपद्भ्यांदुद्रुवतुर्द्रुतम् ॥ पलायमानौतौवीक्ष्यमागधःप्रहसन्भृशम् ॥ ४४ ॥

जिसके चारों ओर ऐसी मथुरामें आकर इसकी समस्त सेनाको मारकर कालयवनका सब धन ले लिया ॥३८॥ फिरसे राजा जरासंध लड़नेके लिये उद्यत हुआ, तब मुहूर्तके देने वाले मगधदेशके ब्राह्मणोंको बुलाकर ॥ ३९ ॥ यह वचन बोला-यदि इस बार तुम्हारे चरणोंके आश्रयसे वासुदेवको जीतकर मैं आऊँगा तो तुम्हारा पूजन सदा करूँगा ॥ ४० ॥ हे ब्राह्मणो ! जबतक मैं आऊँ, तबतक तुम बंदीखानेमें रहो, यदि मैं हार गया तो मैं तुमको आते ही मार डालूँगा, इसमें सन्देह नहीं है ॥४१॥ ऐसे जरासंध महाबली ब्राह्मणोंसे कहकर बड़ी शीघ्र तेईस अक्षौहिणी सेना लेकर मथुराको आया ॥ ४२ ॥ इसीसे भगवान् ब्राह्मणोंका वचन सत्य करनेके लिये अपनी प्रतिज्ञा छोड़कर मनुष्योंकीसी चेष्टा करते अपने पुरसे डरे हुयेकी तरह; डरे हुयेसे होकर ॥ ४३ ॥ रामकृष्ण दोनों भाई पैदलही भगे, तब इनको पैदलही भगते देखकर जरासंध बहुत हँसा ॥ ४४ ॥

जरासंध ब्रह्मवाक्यको स्मरण करता रथोंकी सेना लेकर उनके पीछे दक्षिण दिशाको भगा, सो भागते हुये प्रवर्षण गिरिपर दोनों भाई चढ़ गये ॥४५॥ उस पर्वतमें गुप्त हुये दोनों भाइयों को जानकर चारों ओरसे ईंधन लगाकर अग्नि लगा दी, जब वन भस्म हो गया और पर्वत जलने लगा ॥४६॥ तब ईश्वरोंके ईश्वर ग्यारह योजन ऊँचे पर्वतके एक शिखरपरसे दोनों भाई ऐसे कूदे कि, शत्रुओंसे अलक्ष्य होकर द्वारिकाके बीचमें जाकर कूदे ॥४७॥ तब यह मगध देशका इन्द्र ऐसा मानकर कि, कृष्ण बलदेव दोनों जल गये होंगे, नगाड़े बजाता सब सेनाको खींच मगध देशको चला गया ॥४८॥ वहाँ जाकर बड़ी भक्तिसे उन ब्राह्मणोंका पूजन किया, जिसके ब्राह्मण सहायक हैं, उसकी पराजय कैसे होगी ॥ ४९ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां द्वारकावास कथनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥ नारदजी कहते हैं, यह मैंने तुम्हारे सामने द्वारिका वासका कारण कहा, अब उन परेश

अन्वधावद्रथानीकैर्ब्रह्मवाक्यमनुस्मरन् ॥ दक्षिणाशांगतावित्थंप्रवर्षणगिरौहरी ॥ ४५ ॥ तस्मिन्निलीनोज्ञात्वातावेधोभिस्तंददाहह ॥ भस्मीभूतेवनेजातेदह्यमानतटाद्रिरिः ॥ ४६ ॥ दशैकयोजनोतुंगात्समुत्पत्यसुरेश्वरौ ॥ अलक्ष्यमाणावरिभिर्द्वारकायांनिपेततुः ॥४७॥ सोपिदग्धौ चतौमत्वामागधेंद्रोमहाबलः॥ मागधान्प्रययौवीरोवादयञ्जयदुंदुभीन् ॥४८॥ ब्राह्मणान्पूजयामासभक्त्यापरमयानृप ॥ यस्यविप्राःसहायोस्ति कुतस्तस्यपराजयः ॥ ४९ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेद्वारकावासकथनंनामद्वितीयोध्यायः ॥२॥ श्रीनारद उवाच ॥ इत्थंमयातेकथितंद्वारकावासकारणम् ॥ विवाहादिकथाःसर्वावदिष्यामिपरेशयोः ॥ १ ॥ पूर्वंश्रीबलदेवस्यविवाहंशृणुमैथिल ॥ सर्वपापहरंपुण्यमायुर्वर्द्धनमुत्तमम् ॥ २ ॥ आनर्त्तोनामराजाभूत्सूर्यवंशेमहामनाः ॥यन्नाम्नानर्तदेशःस्यात्समुद्रेभीमनादिनि ॥ ३ ॥ रैवतोनाम तत्पुत्रश्चक्रवर्तीगुणाकरः॥ राज्यंचकारसपुरींविनिर्मायकुशस्थलीम् ॥ ४ ॥ तस्यपुत्रशतंचासीद्रेवतीनामकन्यका ॥ सर्वोत्तमंचिरंजीवंसुन्दरंवरमिच्छती ॥५॥ एकदारथमास्थायहेमरत्नविभूषितम् ॥ आरोप्यस्वांदुहितरंरैवतःपर्यटन्भुवम् ॥६॥ प्राप्तोयोगबलेनापिब्रह्मलोकंशुभावहम् ॥ कन्यावरंपरिप्रष्टुंब्रह्माणंप्रणनामह ॥ ७ ॥

भगवान्की विवाहादिक कथाका वर्णन करता हूँ ॥ १ ॥ हे मैथिल ! अब तुम पहले बलदेवजीका विवाह सुनो, जो सब पापोंको हरनेवाला और आयुको बढ़ानेवाला अत्युत्तम है ॥ २ ॥ एक आनर्त नामका राजा सूर्यवंशमें उदार हृदयवाला था, भयंकर गर्जनावाले समुद्रमें उस राजाके नामका आनर्त देश हुआ ॥ ३ ॥ रैवत नामका उसका पुत्र गुणोंकी खान चक्रवर्ती राजा हुआ, वह समुद्रमें द्वारिकापुरी बनाकर राज्य करने लगा ॥४॥ उसके सौ तो पुत्र हुये, और सर्वोत्तम चिरंजीवी सुन्दर वरको चाहनेवाली रेवती नामकी एक कन्या हुई ॥५॥ एक समय सुनहरी रत्नोंसे भूषित रथमें बैठकर कन्याको साथ लेकर पृथ्वीमें विचरता रैवत ॥६॥ योगबलसे कन्यासहित शुभ देनेवाले ब्रह्मलोकको गया, कन्या के वरको पूछनेके लिये, जाकर ब्रह्माजीको प्रणाम किया और अपना अभिप्राय निवेदन किया ॥ ७ ॥

वहाँ पूर्व चित्ती अप्सरा गा रही थी, एक क्षण पीछे ब्रह्माजीको स्वस्थचित जानकर फिर अपना अभिप्राय कहा ॥८॥ रैवत राजा बोला—पहिले पुराण पुरुष पूर्ण परमात्मा परमेश्वर जगत्के अंकुर हो, तुमही पारमेष्ठ्य धाममें स्थित हो, जगत्की उत्पत्ति, पालन संहार करते हो ॥ ९ ॥ वेद आपका मुख है, धर्म हृदय है, अधर्म पीठ है, मनुराजा बुद्धि है, देवता अंग हैं, असुर पांव हैं, सब सृष्टि आपका तनु है ॥१०॥ तुमही हस्तामलककी तरह सब विश्वको करते हो, विषयोंमें तुमही प्रवृत्ति करनेको सारथीकी तरह समर्थ हो, मकडीकी तरह जाल बिछाकर विश्वको ग्रसते हो ॥ ११ ॥ यह इन्द्र पदभी आपके वशमें है,फिर चक्रवर्ती राज्य, योगकी सिद्धि ये सब आपके वशमें हैं, यह तो आश्चर्यही क्या है,क्योंकि आपही परमेष्ठी पदपर बैठे हो, अनन्त गुणवाले भूमा पुरुष आपही हो, आपके लिये मेरा नमस्कार है ॥१२॥ आपही स्वयंभू जगत्के पितामह हो, देवताओंके पूज्य आपही हो, ऐसा आपका

गायंत्यांपूर्वचित्त्यांचस्थितोलब्धक्षणःक्षणम् ॥ एकचित्तंविधिंज्ञात्वास्वाभिप्रायंन्यवेदयत् ॥ ८॥ रैवतउवाच ॥ परःपुराणोजगदंकुरोभूःपूर्णः
परात्मापरमेश्वरोसि । स्थितःसदाधामनिपारमेष्ठ्येसृजस्यलंपासिचहिंससीदम् ॥ ९ ॥ वेदामुखंधर्मउरस्तथैवपृष्ठंह्यधर्मश्चमनुर्मनीषा ॥
अंगानिदेवाअसुराश्चपादाःसर्वासृतिर्दैवतनुस्तवस्यात् ॥ १० ॥ करोषिहस्तामलकंचविश्वंनेतुंप्रभुः सारथिवद्गुणेषु ॥ एकस्त्वमेकंचवि-
धायजालंग्रसिष्यसेसर्वमिवोर्णनाभिः ॥११॥ महेंद्रधिष्ण्यंतववश्यमस्तिकिंसार्वभौमंकिमुयोगसिद्धिः ॥ यः पारमेष्ठ्यंचसदास्थितोसितस्मैन-
मोनंतगुणाय भूम्ने ॥ १२ ॥ भवान्स्वयंभूर्जगतांपितामहोविधेसुरज्येष्ठइतिप्रभावतः ॥ अस्यावरंसर्वगुणंचिरायुषंवदाशुमांदिव्यमशेषदर्शनः
॥ १३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एतच्छ्रुत्वाततोब्रह्मास्वयंभूःसर्वदर्शनः ॥ रैवतंप्राहराजानंप्रहसन्निवमैथिल ॥ १४ ॥ श्रीब्रह्मोवाच ॥ अत्रक्षणे-
नहेराजन्भुविकालोमहाबली ॥ त्वरंव्यतीतस्त्रिनवचतुर्युगविकल्पितः ॥१५॥ नसंतिमर्त्यलोकेत्वत्पुत्राःपौत्राःसबांधवाः ॥ तत्पुत्रपौत्रनप्तॄणां-
गोत्राणिचनश्रृण्महे ॥ १६ ॥ तद्गच्छसर्वमुख्यायनररत्नायशाश्वते ॥ कन्यारत्नमिदंराजन्बलदेवायदेहिभोः ॥ १७ ॥ परिपूर्णतमोसाक्षाद्गो-
लोकाधिपतीप्रभू ॥ भुवोभारावतारायावतीर्णौबलकेशवौ ॥ १८ ॥

यह प्रभाव है, हे विधे ! तुमही सम्पूर्ण विश्वके दर्शन अर्थात् द्रष्टा हो, सो इस मेरी कन्याके लिये सब गुण जिसमें हों ऐसा चिरंजीवी सुन्दर दिव्य वर बताइये, आपको सब दीखते हैं ॥ १३ ॥ नारदजी कहते हैं कि, हे मैथिल ! इस बातको सर्व दर्शन स्वयंभू ब्रह्माजी सुनकर हँसतेसे रैवत राजासे बोले ॥१४॥ हे राजन् ! यहाँ तो एकही क्षण हुआ है, किन्तु भूमिमें तो बली कालके चारों युग सताईस बार व्यतीत हो गये हैं ॥१५॥ मर्त्यलोकमें तेरे पुत्र, नाती, बांधव, कोई नहीं रहा है, उनके पुत्र, पौत्र, नाती, इनके गोत्रभी नहीं रहे हैं ॥१६॥ इससे तुम जल्दी जाओ, आज दिन सबमें मुख्य, नरोंमें रत्न चिरंजीवी बलदेव हैं, उनको इस कन्या रत्नोंको देदो ॥१७॥ परिपूर्णतम साक्षात् गोलोकके पति प्रभु पृथ्वीका भार उतारनेके लिये कृष्ण बलदेवने अवतार लिया है ॥ १८ ॥

वसुदेवके पुत्र हुये हैं, वे असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति हैं, वे यादवोंके संग भक्तवत्सल द्वारिकामें विराजते हैं ॥१९॥ नारदजी कहते हैं कि, रैवत राजा ब्रह्माजीका वचन सुनकर ब्रह्माजी को प्रणाम करके, फिर समृद्धियोंसे भरी द्वारिकापुरीको आया ॥२०॥ तव रेवती कन्याका विवाह बलदेवजीके साथ कर दिया, दहेजमें विश्वकर्माका बनाया हुआ, हजार घोड़ोंसे युक्त चार कोसके विस्तार वाला, दिव्य रथ दिया ॥ २१ ॥ हे मथिल ! दिव्य वस्त्र और ब्रह्माके दिये रत्न देकर शुभ देनेवाला तप करनेके लिये बदरिकाश्रमको चला गया ॥२२॥ जिस समय रेवतीके संग बलदेवजी विराजे तब यदुपुरीमें घर घरमें बड़ा उत्सव हुआ ॥२३॥ यह बलदेवजीके विवाहकी कथा जो नर सुनता है वह सब पापोंसे छूटकर परम सिद्धिको प्राप्त होता है ॥२४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां नारदबहुलाश्वसंवादे बलदेवविवाहोत्सवो नामतृतीयोध्यायः ॥ ३ ॥ नारदजी कहते हैं कि, हे राजन् ! अब तुम

असंख्यब्रह्मांडपतीवसुदेवात्मजौहरी ॥ द्वारकायांविराजेतेयदुभिर्भक्तवत्सलौ ॥ १९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथश्रुत्वाविधिंनत्वारैवतोनृपसत्तमः ॥ आययौद्वारकांभूयःसमृद्धांतांसमृद्धिभिः ॥ २० ॥ पारिबर्हैरथंदत्त्वाविश्वकर्मविनिर्मितम् ॥ सहस्रहयसंयुक्तंदिव्यंयोजनविस्तृतम् ॥ २१ ॥ दिव्यांबराणिरत्नानिब्रह्मदत्तानिमैथिल ॥ दत्त्वाययौतपस्तप्तुंबदर्याख्यंशुभावहम् ॥ २२ ॥तदामहोत्सवश्चासीद्यदुपुर्यांगृहेगृहे ॥ संकर्षणोथभगवान्रेवत्याविरराजह ॥ २३ ॥ बलदेवविवाहस्यकथांयःशृणुयान्नरः ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तःपरांसिद्धिमवाप्नुयात् ॥ २४ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेबलदेवविवाहोत्सवोनामतृतीयोऽध्यायः॥ ३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथश्रीकृष्णदेवस्यविवाहंशृणुमैथिल॥ सर्वपापहरंपुण्यंचतुर्वर्गफलप्रदम् ॥१॥ भीष्मकोनामराजाभूद्विदर्भेषुप्रतापवान् ॥ कुंडिनाधिपतिःश्रीमान्सर्वधर्मविदांवरः ॥ २ ॥ रुक्मिणीतत्सुताजाताश्रियोमात्रातिसुन्दरी ॥ कोटिचन्द्रप्रतीकाशागुणभूषणभूषिता ॥ ३ ॥ श्रुत्वैकदापुरासावैमन्मुखाच्छ्रीहरेर्गुणान् ॥ परिपूर्णतमंतंवैसामेनेसदृशंपतिम् ॥ ४ ॥ तद्रूपंसगुणंश्रुत्वामन्मुखात्प्रीतिवर्द्धनात् ॥ सदृशींश्रीहरिस्तांवैसमुद्वोढुंमनोदधे ॥५॥ कृष्णभावविदाराज्ञासर्वधर्मविदाभृशम् ॥ भीष्मकेणैवकृष्णायदातुंतांनिश्चयःकृतः ॥ ६ ॥ युवराजस्ततोरुक्मीतंनिवार्य्यप्रयत्नतः ॥ कृष्णशत्रुर्महावीरंशिशुपालममन्यत ॥ ७ ॥

श्रीकृष्णका विवाह सुनो, जो पापोंको हरनेवाला, धर्म, अर्थ, काम, मोक्षको देनेवाला है ॥१॥ एक विदर्भ देशमें भीष्मक नामका बड़ा प्रतापी कुण्डिन पुरमें रहनेवाला, सब धर्मके वेत्ताओंमें श्रेष्ठ राजा था ॥२॥ रुक्मिणी नामकी लक्ष्मीके अंशसे जिसके एक पुत्री हुई, वह अति सुन्दरी थी, करोड़ चन्द्रमाकीसी जिसकी कान्ति गुणोंके भूषणसे शोभित थी ॥ ३ ॥ वह पहिले एक समय मेरे मुखसे श्रीकृष्णके गुण सुनकर परिपूर्णतम श्रीकृष्णको अपने समान पति मानने लगी ॥४॥ ऐसेही मेरे मुखसे रुक्मिणीके गुण, रूप प्रीतिके बढ़ानेवाले उनको सुनकर श्रीकृष्णनेभी उसको अपने समान स्त्री जानकर विवाह करनेका मन किया ॥५॥ श्रीकृष्णके भावको जाननेवाले, सब धर्मको जाननेवाले, राजा भीष्मकनेभी रुक्मिणीको श्रीकृष्णकोही देनेका निश्चय किया ॥६॥ तब कृष्णके शत्रु भीष्मकके बड़े पुत्र युवराज रुक्मीने यत्नसे निवारण करके शिशुपालको विवाह देनेका विचार किया ॥ ७ ॥

हे मैथिलेश्वर ! तब तो रुक्मिणीका मन बिगड़ गया और श्रीकृष्णके पास अपना एक ब्राह्मण दूत भेजा॥८॥जब वह दूत दिव्य द्वारिकापुरीमें गया, तब श्रीकृष्णने बड़ा सत्कार किया, हरिके मंदिरमें बैठकर उसने विश्राम लेकर भोजन किया ॥९॥ श्रीकृष्णने सब कुशल पूछी, तब उनकी आज्ञासे उस ब्राह्मणने सब वृत्तान्त वर्णन किया ॥ १० ॥ रुक्मिणी जीका पत्र बांचने लगा, स्वस्ति श्रीद्वारका शुभस्थान श्री श्री श्री श्री श्री नित्यानंद समुद्र दिव्य गुण परिपूर्ण वसुदेव नन्दन श्रीकृष्ण योग लिखी कुण्डिन पुरसे भीष्मक पुत्री रुक्मिणीकी करोड़ों प्रणाम स्वीकृत हो ॥११॥ "अत्र कुशलं तत्रास्तु" आपका पत्र आया नारदजीके वचनसे ज्ञात हुआ कि, आप प्रकृतिसे परे हो ॥१२॥ हे सर्वज्ञ ! आप सब कुछ जानते हो, तो भी एकान्तकी बात कहती हूँ, मुझको वीरका भाग जानो, इससे आप मुझको ग्रहण करो ॥१३॥ शिशुपाल मुझको कहीं न ले जाय, आप सिंह हो, आपका

ततःखिन्नमनाभैष्मीश्रीकृष्णायमहात्मने ॥ दूतंस्वंप्रेषयामासब्राह्मणंमिथिलेश्वर॥८॥सद्वारकांगतोदिव्यांश्रीकृष्णेनप्रपूजितः॥भुक्तवांस्तत्रचासीनोविश्रांतोमंदिरंहरेः ॥ ९ ॥ पृच्छतेकुशलंसर्वंश्रीकृष्णायमहात्मने ॥ ब्राह्मणस्तदनुज्ञातस्तस्मैसर्वमवर्णयत् ॥१०॥स्वस्तिश्रीकारपंचाढचे नित्यानंदमहोदधौ ॥ श्रीमद्दिव्यगुणैःपूर्णंकोटिशोनतयोमम ॥११॥ शमत्रास्तिचतत्रास्तुततस्त्वत्पत्रमागतम्॥नारदोक्तेनवचसाज्ञातोसिप्रकृतेःपरः ॥१२॥ सर्वंजानासिसर्वज्ञस्तथावक्ष्येवचोरहः ॥ वीरभागंतुमांविद्धित्वंगृहाणमहामते ॥ १३ ॥ मांचैद्यःप्रतिगृह्णीयाद्यथासिंहबलिंमृगः ॥ कथंत्वामुद्वहेदुर्गेस्थितामितिचतच्छृणु ॥ १४ ॥ पूर्वेद्युःकुलदेव्यास्तुयात्रास्तिमहतीहरे ॥ आगमिष्याम्यहंयत्रतत्रमांत्वंगृहाणभोः ॥ १५ ॥ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ रुक्मिण्यास्तमभिप्रायंश्रुत्वाब्राह्मणभाषितम् ॥ रथःसंयुज्यतामाशुदारुकंप्राहमानदः ॥१६॥ पश्चिमायांतदारात्रौवैकुण्ठप्रभवंपरम् ॥ किंकिणीजालसंयुक्तंहेमरत्नखचित्प्रभम् ॥ १७ ॥ सदश्वैःशैब्यसुग्रीवमेघपुष्पबलाहकैः ॥ नियोजितैर्दारुकेणचंचलैश्चारुचामरैः ॥ १८ ॥ युक्तंमहारथंदिव्यंसहस्रादित्यवर्चसम् ॥ आरुह्यसारथेःपृष्ठेधृत्वाश्रीपादपंकजम् ॥ १९ ॥ स्वहस्तेनद्विजंतस्मिन्समारोप्यरमापतिः ॥ विदर्भान्प्रययौराजन्श्रीकृष्णोभगवान्हरिः ॥ २० ॥

भाग शिशुपाल गीदड़ न ले जाये, यदि आप यह कहो कि, तुमको किलेके महलमें बैठी हुई को कैसे हरूँ, उसका उपाय बताती हूँ ॥१४॥ विवाहके एक दिन पहिले ही हमारे एक कुलदेवीकी यात्रा होती है, वहां मैं आऊँगी, वहीं मुझको आप ग्रहण कर लेना ॥ १५ ॥ नारदजी कहते हैं कि ऐसे रुक्मिणीका अभिप्राय ब्राह्मणके मुखसे सुनकर मानके दाता भगवान् दारुक सारथि से बोले कि, तुम रथको जल्दी तय्यार करो ॥ १६ ॥ पिछली रातमें वैकुण्ठका बना जो रथ, रत्नजटित सुनहरी, किंकिणी, झांझा, मंजीरा, जिसमें बंधे ॥१७॥ उसमें शैब्य, सुग्रीव, मेघपुष्प, बलाहक घोड़ोंको जोड़, चञ्चल सुन्दर चवर ॥१८॥ दिव्य रथ, हजार सूर्यका सा तेज जिसमें उसरथपर दारुककी पीठपर पांव धरकर चढ़े ॥ १९ ॥ फिर लक्ष्मीके पति उस ब्राह्मणके हाथ पकड़ चढ़ाकर विदर्भ देशको आये ॥ २० ॥

राजाओंके मण्डपमेंसे कन्याको हरनेके लिये अकेले श्रीकृष्ण गये हैं, यह सुनकर युद्धसे शंकित बलदेवजी भाईकी सहायता करनेवाले ॥२१॥ समर्थ यादवोंकी सेनाको लेकर शत्रु
राजाओंको जीतनेके लिये पीछेसे आये ॥२२॥ श्रीकृष्ण कुण्डिन पुरके उपवनमें ब्राह्मणके साथ घोड़ोंकी झूल बिछाकर इमलीके वृक्षके नीचे बैठ गये ॥२३॥ उस स्थानसे दूरसे
ही कुण्डिन पुर दीखता है, बड़ा भारी जिसमें किला सात योजनका गोल ॥२४॥ जिसकी खाई जलसे भरी, सौ धनुष चौड़ी चतुर्मासमें नदी जसी वहती है ॥२५॥ पचास हाथ
का ऊँचा परकोटा जिसके, भीतर मनोहर महल, जिनके सुनहरी शिखर ॥२६॥ सोनेके कलश ध्वजा, पताका, दरवाजे, छज्जे, उनपर मोर, कबूतर बैठ रहे हैं ॥२७॥ शिशुपालके
लिये अपनी कन्या देनेको भीष्मक राजाने विवाहकी सामग्री रत्नमण्डपमें इकट्ठी की॥२८॥ जिसमें स्त्रियाँ मंगलगीत गा रहीं ऐसे उत्तम भवनमें रुक्मिणीजीकी बड़ी शोभा हुई, जैसे

कृष्णंचैकंगतंहर्तुंकन्यांतुनृपमण्डलात् ॥ कलिप्रशंकितोरामःश्रुत्वाभ्रातृसहायकृत् ॥२१॥नीत्वायदुबलंसर्वंसमर्थबलवाहनम् ॥ विपक्षीयान्नृ-
पाञ्जेतुंबलःपश्चाद्ययौत्वरम् ॥ २२ ॥ कुण्डिनोपवनंप्रातः सद्विजःसरथोहरिः ॥ संतस्थौतिंतिणीवृक्षेआस्तीर्याश्वपरिच्छदम् ॥ २३ ॥ दूरा-
त्संदृश्यतेतस्मात्कुण्डिनन्तुपुरम्परम् ॥ दीर्घदुर्गसमायुक्तंसप्तयोजनवर्तुलम् ॥२४॥ दुर्लंघ्यादुर्गमायत्रपरिखाजलपूरिता ॥ धनुःशतंविस्तृता
स्तिचातुर्मास्यनदीवसा ॥२५॥ पंचाशद्धस्तमानेनदुर्गभित्तिस्तथोर्ध्वगा ॥ यत्ररम्याणिहर्म्याणिस्फुरद्धेमशिखानिच ॥ २६ ॥ हेमकुम्भध्वज
स्फूर्जत्तोलकानिविरेजिरे ॥ पारावतामयूराश्चयत्रतत्र पतंतिच ॥ २७ ॥ शिशुपालायस्वांकन्यांदास्यन्राजातुभीष्मकः ॥ चक्रेविवाहसंभारसं-
चयंरत्नमण्डपे ॥ २८ ॥ गीतमंगलसंयुक्तेनारीभिर्भवनोत्तमे ॥ रराजरुक्मिणीराजन्सिद्धिभिर्भूर्यथाभुवि ॥२९॥ अथर्वविद्द्विजाभैष्मींसुस्नातां
रत्नवाससम् ॥ चक्रुर्मंत्रैस्तथारक्षांबध्वाशांतिंविधायच ॥ ३० ॥ हैमानांभारलक्षंचमुक्तानांद्विगुणंतथा ॥ सहस्रभारंवस्त्राणांधेनूनामर्बुदानिषट्
॥ ३१ ॥ गदायुतंरथानांचदशलक्षंमनोहरम् ॥ दशकोटिहयानांचगुडादितिलपर्वतान् ॥३२॥ सहस्रस्वर्णपात्राणांभूषणानांतथायुतम् ॥ विप्रे
भ्यःप्रददौराजाभीष्मकोतिमहामनाः ॥३३॥तथावैदमघोषस्यशिशुपालायवैद्विजाः ॥ चक्रुःशांतिपरांपूर्वंरक्षाबंधनरूपिणीम् ॥३४॥ ब्राह्मणै-
र्मंगलस्नातंपीतकंचुकशोभितम् ॥ मुकुटोपरिविभ्राजत्पुष्पंमौलिधरंशुभम् ॥ ३५ ॥

सिद्धियोंसे भूमिकी शोभा होती है ॥२९॥ अथर्वण वेदके वेत्ता ब्राह्मणोंने शान्ति पाठ करके रुक्मिणीको सुन्दर गहन वस्त्र पहिनकर मन्त्रोंसे रक्षा की ॥३०॥ लाख भार तो सुवर्ण,
दो लाख भार मोती और हजारों भार वस्त्र साठ करोड़ गौ ॥३१॥ दश हजार हाथी, दश लाख मनोहर रथ, दश करोड़ घोड़ा, गुड़ तिलोंके पर्वत ॥ ३२ ॥ हजार पात्र सोनेके,
दश हजार गहने, इतना दान उदार हृदय राजा भीष्मकने ब्राह्मणोंको दिया ॥ ३३ ॥ वैसे ही दमघोषके पुत्र शिशुपालके लिये ब्राह्मणोंने पहिले रक्षाबन्धनरूपिणी शान्ति कराई
॥ ३४ ॥ ब्राह्मणोंसे मंगल स्नान कराये हुये पीले जामेसे शोभित मुकुटके ऊपर शोभित शुभ फूलोंका सेहरा धारण किये ॥ ३५ ॥

हार, कंकण, केयूर, किंकणी, चूडामणि, इनसे विभूषित, मंगलके गीत, बाजे, गन्ध, और अक्षतोंसे पूजित ॥ ३६ ॥ आचारकी लाँजा (खीलोंसे) शिशुपालको श्रेष्ठ वर बनाकर और उसको हथिनीपर चढ़ाकर दमघोप निकला ॥ ३७ ॥ जरासंध, शाल्वराजा, दन्तवक्र, विदूरथ, पौण्ड्रक, पुष्पारिया, इनके साथ ॥ ३८ ॥ बड़ी सेनाको लेकर दुन्दुभियोंको बजाता महाबली दमघोप कुण्डिनपुरको आया ॥ ३९ ॥ आगेसे श्रीकृष्णका उद्योग सुनकर और भी हजारों राजा, राजा शिशुपालकी सहायताके लिये आये ॥ ४० ॥ भीष्मक राजाने आगेसे जाकर विधिपूर्वक पूजा की, कश्मीरा, बनात और लालोंसे ॥ ४१ ॥ मोतियोंकी मालासे भूषित सब हुये, अतरसे सुगन्धित सब राज्य तथा देश हुआ ॥ ४२ ॥ वेश्याओंके नृत्य सामने होते जाते हैं, मृदंग बजते जाते हैं, ऐसे विदर्भराजने पुरमें प्रवेश कराये ॥ ४३ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां कुण्डिनपुरयानं नाम

हारकंकणकेयूरशिखामणिविभूषितम् ॥ मंगलैर्गीतवादित्रैर्गन्धाक्षतविचर्चितम् ॥३६॥ आचारलाजैःसुवरंशिशुपालंविधायच ॥ आरोप्यकरिणंप्रोच्चंदमघोषोविनिर्ययौ ॥३७॥ जरासंधेनशाल्वेनदंतवक्रेणधीमता ॥ विदूरथेनपौंड्रेणपार्ष्णिग्राहेणमैथिल ॥ ३८ ॥ विकर्षन्महतींसेनांदमघोषोमहाबलः ॥ दुंदुभीन्नादयन्दीर्घानाययौकुण्डिनंपुरम् ॥३९॥ संमुखाद्यदुदेवस्यश्रुत्वोद्योगंनृपाःपरे॥ सहस्रशःसमाजग्मुःशिशुपालसहायिनः ॥ ४० ॥ भीष्मकोह्यग्रतोगत्वासंपूज्यविधिवन्नृपम् ॥ काश्मीरकंबलैर्दिव्यारुणैःसामुद्रसंभवैः ॥४१॥ मंडितेषुचसर्वेषुमुक्तादामविलंबिषु ॥ सौगंधिकैःपुष्परसैराष्ट्रेषुशिबिरेषुच ॥ ४२ ॥ वारांगनानृत्यलसन्मृदंगेषुध्वनत्सुच ॥ निवेशयामासनृपौर्विदर्भाधिपतिर्महान् ॥४३॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेकुण्डिनपुरयानंनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ ध्यायंतीकृष्णपादाब्जंभैष्मीकमललोचना ॥ मोघंवामनुतेवाहमेवश्याममचिंतयत् ॥ १ ॥ रुक्मिण्युवाच ॥ अहोत्रियामांतरितोविवाहोममैवनागच्छतिकृष्णचन्द्रः॥ नवेद्मिकिंकारणमत्रधातर्नावर्ततेऽद्यापिचभूमिदेवः॥२॥यदूत्तमोदेववरोममैषदृष्ट्वाहिकिंचित्कलुषंविधातः ॥ कृतोद्यमोनूनमतीवहस्तग्राहेणचागच्छतिकिंकरोमि ॥३॥ हादुर्भगायाश्चनमेविधातानसानुकूलःकिलचन्द्रमौलिः॥नचैकदंतोविमुखाचगौरीगावोहिविप्राश्चनसानुकूलाः ॥ ४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंविचिंतयंतीसाभैष्मीगेहाट्टभूमिषु ॥ परिभ्रमंतीश्रीकृष्णंपश्यंतीगृहशेखरात् ॥ ५ ॥

चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ नारदजी कहते हैं कि, कमल नयनी रुक्मिणी श्रीकृष्णके चरणकमलका ध्यान करती सबको निष्फल मानती श्यामका चिन्तन करती बोली ॥ १ ॥ अहो ! मेरे विवाहकी एक रात्रि रह गई है, कृष्णचन्द्र नहीं आये, हे विधातः ! न जाने क्या कारण है, वह ब्राह्मणभी अभी नहीं आया है ॥ २ ॥ यदूत्तम वर मुझमें कोई दोप देखकर उद्यम कम करके बैठे रहे और शिशुपाल तो आ भी गया है ॥ ३ ॥ हाय ! मुझ अभागीके विधाता अनुकूल नहीं है, न चन्द्रमौलि शिव, न गणेश अनुकूल हैं, गौरी भी विमुख है, और गौ, ब्राह्मण भी अनुकूल नहीं है ॥४॥ ऐसे विचार करती हुई रुक्मिणी अट्टाकी भूमिपर बहुत ऊँची चढ़कर शिखरपरसे श्रीकृष्णको देखती भ्रमण करती थी ॥५॥

उसी समय रुक्मिणीका बायाँ अंग फड़कने लगा उत्तर देने लगा कि आये, उससे कालकी जाननेवाली सर्व मंगल रूपिणी रुक्मिणी प्रसन्न हो गई ॥ ६ ॥ उसी समय कृष्णका भेजा हुआ ब्राह्मण आगया, श्रीकृष्णके आनेका धीरेसे वर्णन किया ॥७॥ तब तो भैष्मी प्रसन्न हो गई, उस ब्राह्मणके चरणोंमें प्रणाम करके बोली कि हे ब्राह्मण ! तेरे वंशमेंसे मैं कभी नहीं जाऊँगी ॥ ८ ॥ रामकृष्ण मेरी पुत्रीका विवाह देखनेके लियें आयें हैं, ऐसे सुनकर भीष्मक राजा श्रीकृष्णके प्रभावको जाननेवाला ब्राह्मणोंको साथ लेकर स्वागत करनेको आया ॥९॥ अत्यन्त मंगल पात्रोंमें गंध, अक्षत धरें, जौ, रवीर, वस्त्र, रत्न, इनको धरकर गाजे बाजेके मंगलसे आया ॥ १०॥ करोड़ों मधुपर्कके घड़े साथ लेकर विधिसे रामकृष्णको परमेश्वर जानकर पूजन किया ॥ ११ ॥ अहो ! मैंने श्रीकृष्णको अपनी कन्या नहीं दी, ऐसें जिसका मन खिन्न है, आनन्द वनमें श्रीकृष्णको ठहराकर प्रणामकर अपने घरको चला आया ॥१२॥ वसुदेव नन्दन श्रीकृष्ण त्रिलोकीकी सुन्दरताकी निधि परमेश्वरको आया सुनकर पुरवासी नरनारी आकर नेत्रोंसे केवल उनके मुखकमलके सौंदर्य्य

तदैवतस्यावामांगमस्फुरत्प्रतिभाषणम् ॥तेनप्रसन्नार्श्रीभैष्मीकालज्ञासर्वमंगला ॥६॥ कृष्णप्रणोदितोविप्रःसद्यश्चागतवांस्तदा॥ श्रीकृष्णागमनं तस्यैशनैःसर्वंशशंसह ॥ ७ ॥ ततःप्रसन्नाश्रीभैष्मीतदंघ्र्योःप्रणिपत्यसा ॥ प्राहत्वद्वंशतोविप्रनयास्यामिवचोमम ॥८॥ श्रुत्वागतौरामकृष्णौ विवाहप्रेक्षणोत्सुकौ ॥ भीष्मकोनिर्गतोनेतुंब्राह्मणैस्तत्प्रभावित् ॥ ९ ॥ भृशंमंगलपात्रेषुगंधाक्षतयुतेषुच ॥ वासोरत्नचयंधृत्वागीतवादित्र मंगलैः ॥१०॥ कोटिशोमधुपर्काणांकुम्भव्यूहान्विधायच ॥ पूजयित्वाथविधिवद्रामकृष्णौपरेश्वरौ॥११॥ अहोचास्मैनदत्तेयमितिखिन्नमनाः परम् ॥ आनंदनवनेस्थाप्यनत्वास्वगृहमाययौ ॥१२॥ श्रुत्वागतंश्रीवसुदेवनंदनंत्रैलोक्यलावण्यनिधिंपरेश्वरम् ॥ आगत्यनेत्रांजलिभिःपुरौकसःपपुःपरंतन्मुखपंकजामृतम् ॥१३॥ अस्यैवभार्याभवितुंहिरुक्मिणीयोग्यास्तिनान्येत्यवदन्पुरौकसः ॥ दत्त्वास्त्रपुण्यानिविवाहहेतवेश्रीकृष्णलावण्यकलानिबंधकाः ॥१४॥ कदापिमाक्षाच्छ्वशुरस्यमंदिरंसंप्रागतंचैवमहोवयंजनाः ॥ द्रक्ष्यामआरात्कृतकृत्यतांतदाव्रजेमलोकेबहुजीवितेनकिम् ॥ १५ ॥ वदत्सुलोकेषुचभीष्मकन्यकाद्रिकन्यकापूजनहेतवेनृप ॥ अंतःपुरात्सर्वसखीसमन्वितावितिनिर्ययौकृष्णगृहीतमानसा ॥ १६ ॥ भेरीमृदंगैर्बहुदुंदुभिस्वनैःसुगायकैर्बंदिजनैश्चमागधैः ॥ वारांगनानृत्यमनोज्ञभावैर्जयेत्यभून्मंगलशब्दउच्चकैः ॥ १७ ॥

अमृतको पीने लगे ॥ १३ ॥ पुरके निवासी बोले कि, रुक्मिणी इन श्रीकृष्णकीही स्त्री होनेके योग्य है, और कोई नहीं, जो हमारा कुछ पूर्वजन्मका पुण्य है, उसका फल हम ब्रह्मासे यही मांगते हैं कि, रुक्मिणीका पाणिग्रहण कृष्णही करें ॥१४॥ कभी साक्षात् श्वसुरके घर जब आयेंगे, तब श्रीकृष्णको आया देखेंगे, तब हे मनुष्यो ! हम कृतार्थ हो जायेंगे, लोकमें बहुत जीनेसे क्या है ॥१५॥ हे नृप ! ऐसे पुरवासी कहही रहे थे कि, इतनेमेंही रुक्मिणी पार्वतीका पूजन करनेके लिये सखियोंको साथ लेकर रनिवाससे निकली, कृष्णने ग्रहण किया है, मन जिसका ॥१६॥ तब भेरी, मृदंग, बहुतसी दुन्दुभिके शब्द, उनसे गायक जो मागध बंदीजन गाते चले आते हैं, वेश्याऐं नृत्य करती चली आती हैं, उनका बड़े उच्च स्वरसे जय हो, जय हो, ऐसा मंगलका शब्द हुआ ॥ १७ ॥

करोड़ चन्द्रमाकी कान्तिको धारण कर रही, बाल सूर्यसे कुण्डलोंको पहिने हैं उस रुक्मिणीके ऊपर श्वेतचमर, छत्र और पंखोंसे पासके गण जिसकी सेवा करते हैं ॥१८॥ म्यान से निकाले नंगी तलवारवाले पैदल और बड़े वीर जन दोनों ओर उनके पीछे सवार, सवारोंके पीछे रथी, रथियोंके पीछे हाथी, ऐसे दोनों ओरसे बराबर रनिवाससे लेकर गौरीके मंदिर तक खड़े अपने-अपने शस्त्रोंको उठाये रक्षा करने लगे ॥ १९ ॥ देवीके मठको प्राप्त होकर चौराहेमें खड़ी, हाथ पांव धोकर शुद्ध होकर मौन लिये हाथ जोड़ संसारका भय हरनेवाली भवानी का पूजन किया और यह प्रार्थना करने लगी कि ॥ २० ॥ हे दुर्गे ! हे शुभे ! हे शिवे ! हे भवानि ! मैं गणेश पुत्र सहित आपको निरन्तर नमस्कार करती हूँ, परमेश्वर भगवान मायासे परे जो स्वयम् श्रीकृष्ण हैं, वे मेरे पति होवें ॥ २१ ॥ तब सखी बोली कि, हे शुभे ! ऐसे मत कहो, शिशुपाल मेरा पति हो, ऐसा कहो, इस प्रकार

कोटींदुबिंबद्युतिमादधानांबालार्कताटंकधरांश्रियंताम्॥ सीतातपत्रव्यजनैःस्फुरद्भिःसुचामरैःपार्श्वगणःसिषेवे॥१८॥ कोशाद्विनिष्कृष्यसितामिलक्षंपदातयोवीरजनाइतस्ततः ॥ तथाश्वगोभीरथिनोगजस्थिताःसमुद्यतास्त्राजुगुपुर्विदूरतः ॥ १९ ॥ देवीमठंप्राप्यसुचत्वरेस्थिताशांताशुचिर्धौतकरांघ्रिपंकजा॥गत्वासमीपंयतवाक्कृतांजलिर्भेजेभवानींभवभीतिहारिणीम् ॥ २० ॥ दुर्गेस्वसंतानयुतेशिवेशुभेनमामि तुभ्यंसततंभवानिते ॥ भूयात्पतिर्मेभगवान्परेश्वरःश्रीकृष्णचन्द्रःप्रकृतेःपरःस्वयम् ॥२१॥ एवंशुभेमावदकृष्णनामचैद्यंसमुद्दिश्यवरंगृहाण ॥ इत्थंवदंतीषुसखीषुभैष्मी भूयोभवानीभवनेजगाद ॥ २२ ॥ अजानतीयंतवचांबबालातथावदंतीषुसखीषुभैष्मी ॥ गंधाक्षतैर्धूपविभूषणाद्यैः स्रङ्माल्यदीपावलिभोगवस्त्रैः ॥ २३ ॥ अपूपतांबूलफलेक्षुभिश्चभेजेभवानींपरयाचभक्त्या ॥ नत्वाथतांवाबहुभूषणाद्यैः संपूज्यसौभाग्यवतीर्ननाम ॥ २४ ॥ सर्वाःस्त्रियस्ताः प्रददुर्वराणिसुमंगलाशीर्वचनानितस्यै ॥ रूपंसदातेशतरूपयासमंशीलंसदाशैलसुतासमंप्रभो ॥ २५ ॥ शुश्रूषणंभर्त्तुररुंधतीसमंक्षमाहिभूयाज्जनकात्मजासमा ॥ सौभाग्यमेवंतवदक्षिणासमंसुवैभवंभीष्मसुतेशचीसमम् ॥ सरस्वतीतेचसरस्वतीसमाभक्तिःपतौस्याच्चसतांहरौयथा ॥ २६ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेरुक्मिणीनिर्गमनंनामपंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

सखियोंके कहते हुये रुक्मिणी भवानीके भवनमें फिर बोली ॥२२॥ हे अंब ! यह बाला कुछ जानती नहीं है, सखी तो, ऐसा कह रही हैं, रुक्मिणीजीने गन्ध, अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य, वस्त्र, भूषण, पुष्प, माला, बलि, ॥२३॥ पूआ, ताम्बूल, फल, गन्ना, इन सामग्रियोंसे और भूषण रत्नोंसे देवीको पूजकर नमस्कार कर फिर सब सौभाग्यवती स्त्रियोंको नमस्कार किया॥२४॥ तब उन सब स्त्रियोंने वर दिये, और उसको मंगलके आशीर्वादभी दिये कि, तुम्हारा रूप शतरूपारानीकासा हो, शील तुम्हारा पार्वतीकासा हो और हे भीष्म सुते ! ॥२५॥ अरुन्धतीकी तरह पतिकी सेवा करने वाली पतिव्रता होओ, तुम सीताकी सी क्षमा शील हो, तुम्हारा सौभाग्य दक्षिणाकासा हो, तुम्हारे इन्द्राणीकासा वैभव हो, तुम्हारी सरस्वतीकीसी सरस्वती हो, सन्तोंकी जैसी हरिमें भक्ति है, वैसी तेरी पतिमें भक्ति हो॥२६॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां रुक्मिणीनिर्गमनं नामपंचमोऽध्यायः ॥५॥

नारदजी कहते हैं कि, ऐसे ब्राह्मणियोंके उत्तम, सच्चे, आशीर्वादोंसे अभिनन्दनकी हुइ रुक्मिणीने देवीको और ब्राह्मणियोंको बारबार प्रणाम किया ॥१॥ अब रुक्मिणी मौन छोड़कर गौरीके मंदिरसे निकली धीरे २ सखियोंके संग चली ॥२॥ करोड़ चन्द्रमाकीसी जिसकी कान्ति, कमलसे जिसके नेत्र, ऐसी रुक्मिणीको अकस्मात् वीर राजा देखने लगे, धन रहित जैसे निधिको देखते हैं पैदल, सवार, रथी, हाथीके सवार, गोरक्षक सब वहाँ इकट्ठे खड़े हैं, वे रुक्मिणीको देखकर मोहित हो गये ॥४॥ उसके कटाक्षके मारे और मंद मुसकान रूप कामके बाणोंके मारे उनके शस्त्र हाथोंमेंसे गिर पड़े रथोंपरसे, हाथियोंपरसे, घोड़ोंपरसे, मूर्च्छा खाखाकर वे सेनाके मनुष्य धरतीमें आ गिरे ॥५॥ तब पवनकासा जिसका वेग घण्टा, मञ्जीरके मनोहर शब्दसे युक्त, नैश्रेयस वैकुण्ठके वनके जिसमें घोड़ा जुते, गरुडकी जिसमें ध्वजा ॥६॥ उस रथमें बैठकर अपनी सेनाके संघटसे शत्रुकी सेनाको विदीर्ण करते आंधी जैसे कमलोंको उखाड़े, वैसे दारुक जिनका सारथि ऐसे भगवान् ॥७॥ स्त्रियोंके झुण्डमें आकर शत्रुओंके देखते-देखते रुक्मिणीको रथमें बैठाकर रथके वेगसे सेनाको लुढकाते

॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंविप्रवधूनांसदाशीर्भिरभिनंदिता ॥ देवींपुनर्विप्रवधूःप्रणनाममुहुर्मुहुः ॥१॥ त्यक्त्वामुनिव्रतंभैष्मीगिरिजागृहतस्ततः ॥ सहालिभिःसखीभिश्चनिश्चक्रामशनैः शनैः ॥२॥ कोटिचन्द्रप्रतीकाशां भैष्मींकमललोचनाम् ॥ अकस्माद्ददृशुर्वीराः सुनिर्धिनिर्धनायथा ॥३॥ अश्वारूढाश्चरथिनोगजिनश्चपदातयः ॥ समागतारक्षितास्तेमुमुहुर्वीक्ष्यरुक्मिणीम् ॥ ४ ॥ तदपांगस्मितैस्तीक्ष्णैर्बाणैःकामधनुश्च्युतैः ॥ उज्झितास्त्रानिपेतुःकार्वर्दिताःसैनिकास्तदा ॥ ५ ॥ रथंनवायुवेगेनघंटामंजीरनादिना ॥ नैश्रेयसंभवैरश्वैर्युतेनातिपताकिना ॥ ६ ॥ शीघ्रंस्वसैन्यसंघट्टात्तत्सैन्यंसंविदारयत् ॥ वायुर्यथापद्मवनंहरिर्दारुकसारथिः ॥ ७ ॥ स्त्रीकदंबकमेत्याशुपश्यतांद्विषतांप्रभुः ॥ समारोप्य-रथंभैष्मींतार्क्ष्यपुत्रःसुधामिव ॥८॥ देवानांपश्यतांराजन्राजकन्यांजहारह ॥ दिव्यंशस्त्रोत्तमंशार्ङ्गंधनुष्टंकारयन्मुहुः ॥ ९ ॥ ततोवेगेनमहता-स्वसैन्यंचागतेहरौ ॥ देवदुंदुभयोनेदुर्यदुदुंदुभयस्तदा ॥ १० ॥ सिद्धाश्चसिद्धकन्याश्चश्रीकृष्णस्यरथोपरि ॥ हर्षितावववृषुर्देवाःपुष्पैःनंदन-संभवैः ॥ ११ ॥ ततोययौजयारावैःशनैरामयुतोहरिः ॥ शृगालसंघमध्याच्चकेसरीभागहृद्यथा ॥ १२ ॥ तदाकोलाहलेजातेरुक्मिणीहरणे-सति ॥ बभूवरक्षकाणांचशस्त्राशस्त्रिपरस्परम् ॥ १३ ॥ जरासंधवशाःसर्वेमानिनोनृपसत्तमाः ॥ नसेहिरेस्वामिभवंपरंजातंयशःक्षयम् ॥१४॥

ले गये, जैसे गरुड अमृत कलशको उठाकर ले गया ॥८॥ हे राजन् ! शार्ङ्ग धनुषकी बारबार टंकार करते देवता और दैत्य राजाओंके देखते २ राजकन्याको हर ले गये ॥९॥ उनके बाद पवन वेगके रथसे जब भगवान् अपनी सेनामें आ गये, तब देवताओंकी और यादवोंकी दुन्दुभि बजी ॥१०॥ सिद्ध और सिद्धोंकी कन्या श्रीकृष्णके रथके ऊपर नन्दन वनके पुष्पोंकी वर्षा करने लगीं ॥११॥ तब जयजय शब्दके संग राम सहित सेनाको लेकर श्रीकृष्ण धीरे २ रुक्मिणीको लेकर गये, जैसे शृंगालों (गीदड़ों) के बीचमें सिंह अपने भागको लेजाता है ॥ १२ ॥ जब रुक्मिणीका हरण हो गया और कोलाहल मचा, तब आपसमेंही शस्त्राशस्त्री युद्ध हुआ ॥ १३ ॥ तब जरासंधके वशवर्ती सब मानी राजा अपने तिरस्कारको और यशके नाशको न सह सके, तब यह बोले ॥ १४ ॥

अरे ! हमको धिक्कार है, जो हमारा धनुषधारियोंका यश गोपोंने हर लिया, जैसे सिंहके यशको गीदड़ हर ले, कहो इससे अधिक और क्या हार होगी ॥१५॥ ऐसे कहकर क्रोध मारे शस्त्र लेकर चौपड़ आदि खेल छोड़कर कवच पहिन सेना लेकर युद्ध करनेको तैय्यार हुये ॥ १६ ॥ दो अक्षौहिणी तो क्रोधसे भरे पौण्ड्रकने ली, तीन अक्षौहिणी महावीर विदूरथने ली॥१७॥ पांच अक्षौहिणी अति दारुण दन्त वक्रने ली, तीन अक्षौहिणी राजपुरके राजा शल्वने ली ॥१८॥ और दश अक्षौहिणी जरासंध महाबलीने ली, ऐसे ये सब मिल कर महात्मा यादवोंके साथ युद्ध करनेको आये ॥१९॥ और भी शिशुपालके पक्षके हजारों राजा धनुष टंकारसे यादवोंके साथ युद्ध करनेको श्रीकृष्णके सामने आये ॥२०॥ तब प्रलयके समुद्रके समान उस सेनाको यदूत्तम देखकर श्रीकृष्ण ही हैं जहाजके मल्लाह जिनके ऐसे वे यादव सैनिक समुद्रको तरनेको आये ॥२१॥ उन दोनों सेनाओंका बड़ा भयं-

अहोधिगस्मान्स्वयशोहृतंगोपैश्चधन्विनाम् ॥ शृगालैरिवसिंहानामतःकिंस्यात्पराजयः॥१५॥ एवमुक्ताःक्रोधपराजगृहुःशस्त्रसंहतिम् ॥ विसृज्यक्रीडनाक्षादीन्दंशिताःसैन्यसंयुताः ॥ १६ ॥ अक्षौहिणीद्वयेनापिपौंड्रकःक्रोधपूरितः ॥ अक्षौहिणीत्रयेणापिमहावीरोविदूरथः ॥ १७ ॥ अक्षौहिणीपंचयुतोदंतवक्रोतिदारुणः ॥ अक्षौहिणीत्रयेणाशुशाल्वोराजपुरेश्वरः॥१८॥ अक्षौहिणीभिर्दशभिर्जरासंधोमहाबलः ॥ आययौसंमुखेयोद्धुंयादवानांमहात्मनाम् ॥ १९ ॥ अन्येपिचैद्यपक्षीयायोद्धुंश्रीकृष्णसंमुखे ॥ धनुष्टंकारयंतस्तेसमाजग्मुःसहस्रशः॥२०॥ प्रलयाब्धिसमंसैन्यंसमालोक्ययदूत्तमाः ॥ तर्तुमाजग्मुरारात्तेकृष्णकैवर्त्तपोतकाः॥२१॥ बभूवतुमुलंयुद्धमद्भुतंरोमहर्षणम् ॥ सैन्ययोश्चस्वपरयोर्देवदानवयोर्यथा ॥ २२ ॥ रथिनोरथिभिस्तत्रपत्तिभिःसहपत्तयः ॥ गजागजैर्युयुधिरेतुरगाश्चतुरंगमैः ॥२३॥ शस्त्रांधकारेसंजातेरुक्मिणींभयविह्वलाम् ॥ विलोक्यभगवान्देवोमाभैष्टेत्यभयंददौ ॥२४॥ बलदेवानुजोवीरोगदोधुन्वन्महद्धनुः॥विवेशशत्रुसंघट्टंवनंवह्निरिवप्रभुः ॥ २५ ॥ गदबाणविभिन्नांगारथिनश्छिन्नकंचुकाः ॥ हताश्वाहतसूताश्चनिपेतुर्भूमिमंडले ॥२६॥ पदातयश्छिन्नपादागदबाणागतव्यथाः ॥ निपेतुर्भूतलेराजन्वृक्षावातहताइव ॥ २७ ॥ अश्वारूढाःकेपिवीरागदबाणैर्विदारिताः ॥ पेतूरणांगणेसाश्वाबृहतीफलवन्नृप ॥ २८ ॥

कर रोंगटे खड़े कर देनेवाला युद्ध हुआ, जैसे पहिले देव और दानवोंका युद्ध हुआ था ॥२२॥ रथियोंसे रथी, पैदलोंसे पैदल, सवारोंसे सवार, हाथियोंसे हाथी ॥२३॥ बाणोंका अंधकार देखकर रुक्मिणीको भय विह्वल देखकर भगवान् बोले कि, हे प्रिय ! तुम भय मत करो, ऐसे अभय दिया ॥२४॥ तब बलदेवजीका छोटा भाई गद धनुषको टंकारता बड़ा वीर, शत्रुओंके समूहमें ऐसे प्रवेश कर गया, वनको देखकर जैसे दावाग्नि घँस पड़े वैसे धँस पड़ा ॥२५॥ तब बाणोंके मारे रथियोंके कवच टूट गये, घोड़ा मर गये, सारथी मर गये आप मरकर भूमिमें गिर पड़े ॥ २६ ॥ पैदल सैनिकोंके पांव कट गये, गदके बाणोंसे मरकर धरतीमें गिर पड़े, पवनके मारे वृक्ष जैसे गिर पड़ते हैं ॥ २७ ॥ गदके बाणोंसे अश्वारोही (सवार) गिर पड़े जैसे कंटेरीके फल गिर पड़ते हैं ॥ २८ ॥

गदके बाणोंसे हाथी कटकर दो टूक होकर ऐसे भूमिमें गिर पड़े, जैसे कूष्माण्ड (कोंहडा) के टूक होकर गिर पड़ें ॥२९॥ तब तो सेनाको भगी देखकर गदायुद्धमें चतुर महाबली शाल्व आया, उसने एक गदा मारी ॥३०॥ गदाका मारा, गदा युद्धके प्रभावको जाननेवाला, गद उसी समय मनसे धनुष युद्धको छोड़कर ॥३१॥ अत्यन्त व्यथाको प्राप्त हुआ, मूर्च्छित होकर भी फिर उठा, बलदेवकी दी हुई गदाको लेकर युद्धमें खड़ा हुआ ॥३२॥ लाख मनकी भारी, बड़ी दृढ़, कौमोदिकी गदा गदने शाल्वको मारी जैसे इन्द्रने पर्वत के वज्र मारा था ॥३३॥ उस गदाके प्रभावसे मंथित हुआ शाल्व जब भूमिमें गिर पड़ा, तब पौंड्रक, जरासंध, दन्तवक्र और विदूरथ ॥३४॥ ये चारों रोष करके गदके ऊपर दौड़े और महावीर पौंड्रकने गदके रथकी ध्वजाको ॥३५॥ दश बाणोंसे काट दिया, जैसे कुवाक्योंसे मित्रता नष्ट हो जाती है, तब दन्तवक्रने गदासे गदका रथ तोड़ दिया, दण्डसे मिट्टीके

गदाबाणैर्भिन्नकुंभामध्येमध्येविदारिताः ॥ विरेजुःपतिताभूमौकूष्मांडशकलाइव॥२९॥ततःपलायितंसैन्यंदृष्ट्वाशाल्वोमहाबलः॥ गदंतताडगद-
यागदायुद्धविशारदः ॥ ३० ॥ गदाविद्धोगदोधन्वीगदायुद्धप्रभाववित् ॥ धनुर्युद्धंतुसंत्यज्यतत्कालान्मनसात्वरम्॥३१॥ पराव्यथांगतोयुद्धे
पातितोपिसमुत्थितः॥ तदाग्रजनयादत्तातांगदांतुगदोग्रहीत्॥३२॥ लक्षभारमयींगुर्वींदृढाकौमोदकींयथा॥तयागदोहनच्छाल्वंवज्रेणेंद्रोयथा-
गिरिम् ॥ ३३ ॥ गदाप्रहारमथितेशाल्वेनिपतितेभुवि ॥ पौंड्रकोथजरासंधोदंतवक्रोविदूरथः ॥३४॥ चत्वारआययुस्तत्रगदोपरिरुषान्विताः॥
पौंड्रकोपिमहावीरोगदस्यरथगंध्वजम् ॥३५॥ चिच्छेददशभिर्बाणैःकुवाक्यैर्मित्रतामिव ॥ दंतवक्रस्तुगदयागदस्यापिरथंशुभम् ॥ चूर्णयामास
राजेंद्रदंडेनेवसुमृद्घटम् ॥ ३६ ॥ तथाश्वांश्चजरासंधःसारथिंचविदूरथः ॥ पातयामासभूपृष्ठेशितैर्बाणैर्विदेहराट् ॥३७॥ततोमुसलमादायबल-
देवस्त्वरन्बली ॥ विकरालेमुखेभीमेदंतवक्रमताडयत् ॥ ३८ ॥ ततोमुसलघातेनदंतवक्रस्ययुध्यतः ॥ मुखेवक्रोपियोदंतःसतुभूमौपपातह
॥३९॥ तदाहसतिदैत्यारौरुक्मिणीसहितेहरौ ॥ पौंड्रकंचजरासंधंतथादुष्टंविदूरथम् ॥ ४० ॥ जघानमुसलेनाशुबलदेवोरुषान्वितः ॥ त्रयोपि
पतितायुद्धेमूर्च्छिताश्चसृगाप्लुताः ॥ ४१ ॥ सेनांसमागतांसर्वांसमाकृष्यहलेनवै ॥ मुसलेनाहनत्क्रुद्धोबलदेवोमहाबलः ॥ ४२ ॥ दशयोजन
पर्यंतंरथेभाश्वपदातयः ॥ पेशिताश्चूर्णिताभूमौशयानाधरणींगताः ॥ ४३ ॥

घड़ेकी तरह उसका चूर्ण कर दिया ॥३६॥ वैसे ही गदके घोड़े जरासंधने मारे, हे विदेहराज ! विदूरथने सारथीको तीखे तीखे बाणोंसे मार डाला ॥३७॥ तब तो बड़े बलवान् बलदेवजीने मूसलको लेकर विकराल भयंकर मुख जिसका उस सेनामें दन्तवक्रको मारा ॥३८॥ तब युद्ध करते २ दन्तवक्रका मूसलकी मारसे मुखका जो टेढा दाँत था, वह भूमिमें जा पड़ा ॥३९॥ तब तो रुक्मिणीसहित श्रीकृष्ण हँसे, तब ही बलदेवजी पौंड्रकको, जरासंधको दुष्ट विदूरथको ॥४०॥ शीघ्रही मूसलसे क्रोध करके मारने लगे, मूसलकी मारसे रुधिर से लथपथ वे तीनों ही मूर्च्छित होकर पृथ्वीमें गिर पड़े, उनके घाव आ गये ॥ ४१ ॥ फिर हल लेव हलसे आई हुई सब सेनाओंको खींचकर क्रोधित हुये महाबली बलदेवजी मारने लगे ॥ ४२ ॥ चालीस कोस तक सेनाके पैदल, अश्व, रथ, हाथी सब चूर्णित होकर पृथ्वीमें गिर पड़े ॥ ४३ ॥

जरासंधादिक जो मृत्युसे बचे राजा थे, वे सब भाग गये, अत्यन्त नष्ट हुआ है उत्सव जिसका, उस शिशुपालके पास पहुँचे और बोले ॥ ४४ ॥ हे पुरुषोंमें शार्दूल ! मन मैला मत करो, इस एक विवाहसे क्या है, तुम्हारे सौ विवाह होंगे ॥ ४५ ॥ जरासंध बोला कि, अभी मैं द्वारिकाको जाऊँगा, और कृष्ण बलदेवको बांध लाऊँगा, सप्तद्वीपवती सागर मेखलावाली इस पृथ्वीको यादवोंसे रहित कर दूंगा ॥४६॥ ऐसे सब मित्रोंसे समझाया हुआ शिशुपाल चन्द्रिकापुर (चंदेली) को चला गया और बचे कुछ राजा भी अपने-अपने पुरको चले गये ॥ ४७ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां रुक्मिणी हरणे यदुविजयो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥६॥ नारदजी कहते हैं कि, रुक्मिणीका हरण सुनकर और मित्रोंका मरण तिरस्कार सुनकर सब राजाओंके सुनते-सुनते रुक्मिणीने यह प्रतिज्ञा की॥१॥कि यदि संग्राममें श्रीकृष्णको मारकर और रुक्मिणीको लौटाकर नहीं लाऊँ तो मैं

जरासन्धादयःसर्वेमृत्युशेषानृपाःपरे ॥ पलायिताश्चैद्यमेत्यप्रोचुर्नष्टोत्सवंभृशम् ॥ ४४ ॥ भोभोःपुरुषशार्दूलदौर्मनस्यमिदंत्यज ॥ किमेके-नविवाहेनभवितातेशतंभुवि ॥ ४५ ॥ अद्यैवद्वारकांगत्वाबध्वारामंसमाधवम् ॥ अयादवींकरिष्यामःपृथ्वींसागरमेखलाम् ॥ ४६ ॥ एवं-संबोधितोमित्रैश्चैद्योगाच्चंद्रिकापुरम् ॥ ययुःस्वंस्वंपुरंसर्वेहतशेषानृपास्ततः ॥ ४७ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसं-वादेरुक्मिणीहरणेयदुविजयोनामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ रुक्मिण्याहरणंश्रुत्वामित्राणांचपराभवम् ॥ प्रतिज्ञामकरोद्रुक्मी-शृण्वतांसर्वभूभुजाम् ॥ १ ॥ अहत्वासमरे कृष्णमप्रत्यूह्यचरुक्मिणीम् ॥ कुंडिनंनप्रवेक्ष्यामिसत्यमेतद्ब्रवीमिवः ॥ २ ॥ इत्युक्त्वाकवचं-दिव्यंघनमम्बुदनिर्मितम् ॥ शिरस्त्राणंसिंधुजंचसदधारमहोद्भटः ॥ ३ ॥ सौवीरस्यधनुःशालिलाटजंचेषुधिद्वयम् ॥ आदायम्लेच्छदेशस्य-खड्गंचर्मचकौटजम् ॥ ४ ॥ येठरंस्यमहाशक्तिंगुर्जराटभवांगदाम् ॥ परिघंवंगजंधृत्वाहस्तत्राणंचकौंकणम् ॥ ५ ॥ बद्धगोधांगुलित्राणःकिरी-टीरत्नकुण्डलः ॥ रुक्मांगदस्तदारुक्मीयुद्धंकर्तुमनोदधे ॥ ६ ॥ जैत्रंरथंसमारुह्यचंचलाश्वनियोजितम् ॥ पृष्ठतोन्वगमत्कृष्णंकर्षन्नक्षौहिणी-द्वयम् ॥ ७ ॥ पुनःसमागतांदृष्ट्वासेनांरामोमहाबलः ॥ तयायुयोधसमरेयदुसेनासमन्वितः ॥ ८ ॥

कुण्डिनपुरमें प्रवेश नहीं करूँगा, यह मैं तुमसे सत्य कहता हूँ ॥ २ ॥ ऐसे कहकर महोद्भट रुक्मीने दिव्य कवच पहिन, अम्बुदसे निर्मित सिन्धु देशका शिरस्त्राण धारण किया ॥ ३ ॥ सौवीर देशका धनुष लिया, शालिलाट देशके दो तर्कस लिये, मलेच्छ देशका खड्ग लिया, और कुटज देशकी ढाल ली ॥४॥ येठर देशकी महाशक्ति ली, गुर्जराटकी गदा ली, वंग-देशका परिघ, कौंकण देशका हस्तत्राण ॥ ५ ॥ बांधे हैं, गोधाके अंगुलि त्राण, किरीट, रत्नोंके कुंडल सुवर्णके बाजू पहिनकर रुक्मीने युद्ध करनेका मन किया ॥ ६ ॥ चंचल घोड़े जिसमें लगे हैं, ऐसे जैत्र रथमें बैठकर दो अक्षौहिणी सेना लेकर कृष्णके पीछे आया ॥ ७ ॥ तब महाबली बलराम फिर आई हुई सेनाको देखकर यादवोंकी सेनाको लेकर उनसे युद्ध करने लगे ॥ ८ ॥

खडा रह कर ऐसे कठोर वचन कहता रुक्मी वार-वार धनुषको टंकारता सामने आया॥९॥ यदि जीना चाहते हो, तो जल्दी मरी बहिनको छोड़ दो, यदि नहीं छोड़ेंगे, तो मैं सेना सहित तुमको अभी यमलोकको पहुँचा दूँगा ॥ १० ॥ तुम ययाति राजाके शापसे भ्रष्ट हो गये थे और तुम गोपोंकी जूठन खानेवाले हो और तुम जरासंधके भयसे समुद्रमें छिपे हो और कालयवनके भयसे भागते फिरते हो ॥ ११ ॥ ऐसे कहकर तर्कससे तीर निकालकर धनुषमें लगाकर कानतक खींचकर हरिके हृदयमें मारा ॥१२॥ बाण लगे भी भगवान् श्रीकृष्णने बाणसे उसकी वजनी प्रत्यंचा काट डाली, जैसे गरुड सांपको काट डालता है ॥१३॥ फिर रुक्मीने सुवर्णमयी दूसरी प्रत्यंचा धनुषपर चढ़ाकर संग्राममें दश बाण श्रीकृष्णके मारे ॥ १४ ॥ तब हरि भगवान्ने एकही बाणसे प्रत्यंचा सहित उसके धनुषको काट डाला, जैसे ज्ञानसे गुणमय संसार कटता है ॥ १५ ॥ तब श्रीकृष्णने अमोघ बाणसे

तिष्ठतिष्ठेतिदेवेशंविसृजन्परुषंवचः॥ संप्राप्रोतिरथंरुक्मीधनुष्टंकारयन्मुहुः ॥९॥ त्वरंमुंचस्वसारंमेयदिजीवितुमिच्छसि ॥ नचेत्त्वांसबलंसद्यो नयामियमसादनम् ॥ १० ॥ ययातिशापसंमृष्टोगोपालोच्छिष्टभुग्भवान् ॥ जरासंधभयाद्भीतोयवनाग्रात्पलायितः ॥११॥ इत्युक्त्वेषुधितः कृष्णबाणंचापेनिधायसः ॥ नियम्यकर्णपर्यंतंनिचखानहरेर्हृदि ॥१२॥ संताडितोपिभगवानन्धनुर्ज्यांतस्यनादिनीम्॥चिच्छेदसायकेनाशुग-रुडःपन्नगींयथा ॥ १३ ॥ निधायशीघ्रंकोदंडशिंजिनींस्वर्णभूषिताम् ॥ रुक्मीतुदशभिर्बाणैःसंजघानहरिंरणे ॥१४॥ हरिरेकेनबाणेनशिंजिनी सहितंधनुः ॥ चिच्छेदरुक्मिणःसद्योज्ञानेनेवाग्गुणामयम् ॥ १५॥ कृष्णोमोघेनबाणेनमंध्यतस्तांद्विधाकरोत् ॥ रुक्मिणंतुःशतैर्बाणैःसंतताड मृधेहरिः ॥ १६ ॥ छिन्नधन्वाथवैदर्भोमहाशक्तिस्फुरत्प्रभाम् ॥ प्राहरद्धरयेशक्तिविज्ञानाययथामुनिः ॥१७॥ तताडगदयातांवैगदायारीगदा-ग्रजः ॥ द्विधाभूतामहाशक्तिरुक्मेःसूतंजघानह ॥ १८ ॥ कौमोदकीगदागुर्वीपतंतीवेगधारिणी ॥ तद्रथंचूर्णयामाससाश्वंशैलंयथापविः ॥ ॥ १९ ॥ प्राहरद्धरयेसोपिगदांस्वांभीष्मकात्मजः ॥ चक्रेणचूर्णयामासभगवानपितांपुनः ॥२०॥ परिघंवंगजंनीत्वारुक्मीरुक्मांगदोबली ॥ जघान श्रीहरिंस्कंधेजगर्जघनवन्मृधे ॥ २१ ॥ सन्ताडितोपिभगवान्मालाहतइवद्विपः ॥ तेनैवपरिघेणापितंजघानरणांगणे ॥ २२ ॥

बीचमेंसे दो टूक करके फिर संग्राममें सैकड़ों बाणोंसे रुक्मीको मारा ॥ १६ ॥ रुक्मीका जब धनुष कट गया तब उसने चमकती शक्ति श्रीकृष्णपर चलाई विज्ञानके लिये मुनि जैसे अपनी शक्तिको चलाते हैं ॥१७॥ तब गदाधारी गदाग्रज भगवान्ने गदासे उस शक्तिके दो टूक करके उसके सारथीको मार दिया ॥१८॥ कौमोदकी बड़ी भारी गदा जो बड़े वेगसे पड़ी, सो उस भगवान्की गदासे इसके घोड़ोंसहित रथका चूर्ण हो गया, जैसे वज्रसे पर्वतका चूर्ण हो जाता है ॥१९॥ फिर रुक्मीने गदा लेकर श्रीकृष्णके ऊपर चलाई, वह गदाभी चक्रसे हरिने चूर्ण कर डाली ॥ २० ॥ तब स्वर्णके बाजू बंदवाले रुक्मीने बंगदेशके परिघको लेकर श्रीकृष्णके कंधामें मारकर बड़ी गर्जना की ॥ २१ ॥ उस परिघसे ताडित भी हरि कांपे नहीं, जैसे मालाके मारनेसे हाथी नहीं कांपता है, फिर भगवान्ने उसी परिघसे रणभूमिमें रुक्मीको मारा ॥ २२ ॥

परिघका मारा रुक्मि कुछ व्याकुल होकर फिर ढाल तलवार लेकर भगवान्‌का तिरस्कार करता ललकारता हुआ आया॥२३॥ उसकी ढाल सहित तलवारको श्रीकृष्णने अपने खड्गसे काटकर उसी अपने खड्गके अग्र भागसे रुक्मीका कवच और शिरस्त्राण (किरीट) दोनों काट डाले ॥२४॥ और इसके हस्त त्राण (दस्ताने) भी साथमें छेदन कर दिये, तब मुट्ठीमें खड्ग लिये पासमें आय रुक्मिको देखकर ॥२५॥ भगवान् श्रीकृष्णने दोनों हाथोंसे उसको पकड कर धरतीमें दे मारा, और उसके ऊपर चढ बैठे, जैसे सिंह मृगके ऊपर चढे, फिर क्रोधसे अपना तेज धारवाला नन्दक खड्ग निकाल कर ग्रहण किया ॥२६॥ ऐसे जब भाईको मारनेको उद्यत भगवान्‌को देखकर भय विह्वल रुक्मिणी भर्ताके चरणोंमें गिर पडी और सती बडी करुणासे यह बोली ॥२७॥ हे अनन्त ! हे देवेश ! हे जगन्निवास ! हे योगेश्वर ! हे अचिन्त्य ! हे जगत्पते ! हे करुणासमुद्र! शालकीसी लम्बी भुजा-वाले मेरे भाईको आप मारनेके योग्य नहीं हो, यह आपका साला है ॥२८॥ नारदजी कहते हैं कि, इस प्रकार परित्राससे विलाप कर रही, दुखसे मुख जिसका सूख गया, कण्ठ

परिघाभिहतोरुक्मीकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥ भर्त्सयन्माधवंह्याजौजग्राहखड्गचर्मणी ॥२३॥ तत्खड्गंचर्मणाछित्त्वास्वखड्गेनहरद्धरिः ॥ खड्गाग्रेणशिरस्त्राणंकंचुकंचिच्छिदेमहत् ॥ २४ ॥ हस्तत्राणेपियुगपदेतेछिन्नीकृतेमृधे ॥ खड्गमुष्टिकरंदृष्ट्वारुक्मिणंसमुपस्थितम् ॥ २५ ॥ गृहीत्वा भुजदण्डाभ्यांपातयित्वामहीतले ॥ तस्योपरिहरिः स्थित्वायथासिंहोमृगोपरि ॥ शितधारंनन्दकाख्यंखड्गंजग्राहरोषतः ॥ २६ ॥ दृष्ट्वाभ्रातृवधोद्युक्तंरुक्मिणीभयविह्वला ॥ पतित्वापादयोर्भर्तुरुवाचकरुणंसती ॥ २७ ॥ श्रीरुक्मिण्युवाच ॥ अनन्तदेवेशजगन्निवासयोगेश्वराचिंत्यजगत्पतेत्वम् ॥ हंतुंनयोग्यःकरुणासमुद्रमद्भ्रातरंशालभुजम्महाभुजम् ॥ २८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ परित्रासैर्विलपतींदुःखशुष्यन्मुखींप्रियाम् ॥ रुद्धकण्ठींसतींवीक्ष्यन्यवर्त्ततहरिःस्वयम् ॥२९॥ बद्ध्वातंकटिबंधेनखड्गेनशितधारिणा ॥ वपनंश्मश्रुकेशानांचकारार्द्धमुखे हरिः ॥ ३० ॥ अक्षौहिणीद्वयंजित्वारामःप्राप्तःससैनिकः ॥ बद्धंविरूपिणंदीनंरुक्मिणन्तुददर्शह ॥ ३१ ॥ विमुच्यबद्धंसदयःप्राहनिर्भर्त्सयन्हरिम् ॥ असाध्विदंत्वयाकृष्णकृतंलोकजुगुप्सितम् ॥३२॥ हास्यंवैशालिभद्राणांनहिचैतादृशं भवेत् ॥ यस्याः सहोदरेमुख्येविरूपेचत्वयाकृते ॥ ३३ ॥ किंवदिष्यतिसापित्वांभ्रातुर्वैरूप्यचिंतया ॥ माशोकंकुरुकल्याणिस्वस्थाभवशुचिस्मिते ॥ ३४ ॥

जिसका रुक गया, ऐसी सती प्रियाको देखकर आप हरि निवृत्त हो गये ॥२९॥ और उसीके कमर बन्धसे उसको बांधकर तीक्ष्ण धारके खड्गसे उसकी एक तरफकी दाढी मूंछ और आधे शिरके बाल काट लिये ॥३०॥ इतनेमें दो अक्षौहिणी उसकी सेनाको जीतकर बलरामजी अपनी सेनाको साथ लेकर वहाँही आगये, उन्होंने बन्धे हुये विरूप हुये अति दीन रुक्मीको देखा ॥३१॥ तब बलदेवजीको दया आगई, सो बन्धनसे उसको छुडाकर श्रीकृष्णको फटकारते हुये यह बोले, हे कृष्ण ! तुमने यह लोक निंदित बडा बुरा कर्म किया है ॥ ३२ ॥ शाला लोगोंसे ऐसी हँसी नहीं करनी चाहिये, जिसके सहोदर भाईको तुमने ऐसा विरूप किया ॥ ३३ ॥ वह रुक्मिणी बहू तुम्हारी क्या बडाई करेगी, फिर रुक्मिणीसे बोले कि, हे कल्याणी ! हे शुचिस्मिते ! तू शोच मत कर, स्वस्थ हो ॥ ३४ ॥

हे आर्य पुत्रि ! हे महाबुद्धे ! शोच मत करो, मनको मत बिगाडो, प्रिय और अप्रिय ये सब मैं कालका किया हुआ मानता हूँ ॥३५॥ जिस कालके वशमें यह जगत् रहे है, जैसे मेघ पंक्ति वायुके वशमें रहती है, उस कालको ही तुम विष्णु ईश्वर जानो, वह जितने चलायमान करनेवाले हैं, उनका प्रभू है ॥३६॥ यह अहंता ममताका जो भाव है, वही बन्धन का कारण है, उन दोनोंसे रहित जो भाव है, वोही निःसन्देह मुक्तिका कारण है ॥३७॥ सुख दुखको देनेवाला और कोई नहीं है, यह अपनेही मनका भ्रम है, यह मित्र है, यह उदासीन है, यह शत्रु है यही जो संसार है यह अज्ञानका किया होता है ॥ ३८ ॥ ऐसे देव श्रीरामसे ज्ञान दिये जो रुक्मी और रुक्मिणी हैं, वे वैमनस्यको छोडकर प्रसन्न हो गये ॥३९॥ उन दोनोंने जब रुक्मीको छोड़ दिया,तब व्यर्थ होगया है मनका मनोरथ जिसका, ऐसा वह रुक्मी अपने विरूप करनेका स्मरण करता, तप करनेके लिये मन करने लगा ॥४०॥ तब उसके मन्त्रियोंने उसका निवारण किया, तब फिर वह कुण्डिन पुरको नहीं गया, अपने रहनेको उसने भोजकर नामका एक और ही पुर बसाया ॥४१॥ इस प्रकार प्रभु

आर्यपुत्रिमहाबुद्धेमाशोकंकुरुदुर्मनाः ॥ सर्वंकालकृतंमन्येप्रियमप्रियमेववा ॥ ३५ ॥ वायोर्घनावलिरिववशेस्यादखिलंजगत् ॥ तंकालभीश्व-
रंविद्धिविष्णुंकलयतांप्रभुम् ॥ ३६ ॥ अहंममेतिभावोयंजगतोबंधकारणम् ॥ ताभ्यांविरहितोभावोमोक्षएवनसंशयः ॥३७॥ सुखदुःखप्रदोना-
न्यःपुरुषस्यात्मविभ्रमः ॥ मित्रोदासीनरिपवःसंसारतमसाकृताः ॥३८॥ एवंरामेणदेवेनबोधितोभीष्मकात्मजः ॥ वैमनस्यंपरित्यज्यरुक्मि-
णीचययौमुदम् ॥ ३९ ॥ रुक्मीतुताभ्यामुत्सृष्टोवितथात्ममनोरथः ॥ स्मरन्विरूपकरणंतपसेसमनोदधत् ॥४०॥वारितोमंत्रिमुख्यैश्चकुंडिनं
नगतःपुनः ॥ चक्रेभोजकटंनामनिवासायपुरंपरम् ॥४१॥ रुक्मिण्यासहगोविंदःसरामोयदुभिर्वृतः ॥ द्वारकांप्रययौराजन्नादयञ्जयदुंदुभीन् ॥
॥ ४२ ॥ जातेमहोत्सवेपुर्य्यांरुक्मिणींरुचिराननाम् ॥ उपयेमेविधानेनमार्गशीर्षेहरिःस्वयम् ॥४३॥ हरेर्विवाहेसतिरुक्मिणीपतेःश्रीरुक्मिणी
भूषितरुक्ममंदिरा ॥ पुरंदरस्यापियथामरावतीद्वारावतीपुण्यवतीतथाबभौ ॥ ४४ ॥ भैष्मीविवाहस्यकथांविचित्रांशृणोतियःश्रावयतेचभ-
क्त्या ॥ इहैवभक्तोविभवेनयुक्तःसएवमुक्तिंप्रतियातिमुक्तः॥ ४५ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीरुक्मिणीवि-
वाहोनामसप्तमोध्यायः ॥ ७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अन्यासांकृष्णपत्नीनांमंगलंशृणुमैथिल ॥ सर्वपापहरंपुण्यमायुर्वर्द्धनमुत्तमम् ॥ १ ॥

द्वारकेश रुक्मिणी सहित राम और यादवोंको साथ लेकर जीतके नगाडे बजाते द्वारकाको गये ॥ ४२ ॥ तब पुरीमें बडा उत्सव हुआ, मनोहर मुखवाली रुक्मिणीको मार्गशीर्षमें विधिसे विवाह लिया ॥ ४३ ॥ जब हरिका विवाह रुक्मिणीके साथ हुआ, तब रुक्मिणीसे सुवर्णके महल सब शोभित होगये, जैसी इन्द्रकी अमरावती है, वैसेही पुण्यवती द्वारका शोभित हुई ॥ ४४ ॥ यह रुक्मिणीके विवाहकी विचित्र कथा है, इसको जो कोई भक्तिसे सुने अथवा सुनावे, वे दोनों भक्त इस लोकके वैभवोंके भोगोंको भोगकर मुक्ति पदवीको प्राप्त होता है ॥४५॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां रुक्मिणी विवाहवर्णनं नामसप्तमोऽध्यायः ॥७॥ नारदजी कहते हैं कि हे मैथिल ! और भी जो श्रीकृष्णकी पत्नियोंके मंगलको तुम सुनो, जो सब पापोंको हरनेवाला और अत्युत्तम है, तथा आयुको बढानेवाला है ॥ १ ॥

सत्राजित् यादवको साक्षात् सूर्यने स्यमंतक मणि दी थी, वह मणि उग्रसेनके लिये किसी समय उससे श्रीकृष्णने मांगी ॥२॥ हे मैथिल ! वह मणि द्रव्यके लोभसे सत्राजितने नहीं दी, जो मणि प्रतिदिन आठ मण सोना उगलती थी ॥३॥ एक दिन सत्राजितको भाई प्रसेन कंठमें मणिको पहिनकर सिंधुदेशके घोड़ेपर चढ़कर आखेट (शिकार) के लिये वनमें गया था ॥४॥ तो उसको सिंहने मार डाला, उस सिंहको जाम्बवान्ने मार डाला और उस मणिको लेकर जाम्बवान् शीघ्र ही अपने घरको गुफामें चला गया ॥५॥ सत्राजित सभामें आकर यह बोला कि मेरा भाई तो कृष्णने मार डाला, वह मणि पहिनकर वनमें गया था, सो आया नहीं है ॥ ६ ॥ हे महामते ! भगवान्को जब झूंठा कलंक लगाया, तब भगवान् उस झूंठे कलंकको धोनेके लिये सब द्वारिकावासियोंको साथ लेकर वनको गये, वहाँ प्रसेनको घोड़को और सिंहको मरा देखकर ॥ ७ ॥ रीछके बिलमें मणि लेनेको श्रीकृष्णने जाकर वहाँ अट्ठाईस दिन युद्ध कर रीछराजको जीता ॥८॥ उसने सुन्दर शुभ कन्या जाम्बवती हरिको मणि सहित दी, जाम्बवतीको लेकर और मणिको लेकर भगवान्

सत्राजितायसूर्येणदत्तःसाक्षात्स्यमंतकः ॥ उग्रसेनायसमणिःश्रीकृष्णेनाभियाचितः ॥२॥ सत्राजितस्तंनददौद्रव्यलोभेनमैथिल ॥ दिनेदिने स्वर्णभारानष्टौयःसृजतिस्वतः ॥ ३ ॥ अथप्रसेनस्तद्भ्रातामणिंकण्ठेनिधायसः ॥ सैंधवंहयमारुह्यमृगयांव्यचरद्वने ॥४॥ सिंहेनमारितःसोपि सिंहोजांबवताहतः ॥ गृहीत्वातंमणिंसद्योजांबवान्स्वगुहांगतः ॥५॥ कृष्णेननिहतोभ्रातामणिग्रीवोवनंगतः ॥ नायातःस्वसभामध्येइतिसत्राजितोब्रवीत् ॥ ६ ॥ भगवान्दुर्यशोलिप्तोनागरैस्तुवनंगतः ॥ प्रसेनमश्वंसिंहंचहतंप्रेक्ष्यमहामते ॥७॥ ऋक्षराजबिलंगत्वामणिंहर्तुंस्वयंहरिः ॥ युद्धंकृत्वाष्टविंशाहमजयदृक्षनायकम् ॥८॥ तेनदत्ताजांबवतीहरयेकन्यकाशुभा ॥ मणिनासहराजेंद्रद्वारकामाययौहरिः ॥ ९ ॥ सत्राजिताय प्रददौमणिंनिर्लांछनःप्रभुः ॥ व्रीडितोवाङ्मुखोभीतोराजासत्राजितोमणिम् ॥ १० ॥ गृहीत्वापिपुनस्तस्मैश्रीकृष्णायमहात्मने॥ सत्यभामां सुतांप्रादाच्छांत्यर्थंमैथिलेश्वर ॥ ११ ॥ पांडवानांसहायार्थमिंद्रप्रस्थंगतोहरिः ॥ तत्रवैवार्षिकान्मासान्न्यवात्सीद्बंधुवत्सलः ॥१२॥ एकदा रथमारुह्यहरिर्गांडीविनासह ॥ सुनीरेयमुनातीरेमृगयार्थीविनिर्ययौ ॥ १३ ॥ तपश्चरंतीकालिंदीश्रीकृष्णंवरमिच्छतीं ॥ दर्शितापांडवेनापितां गृहीत्वाजगामह ॥ १४ ॥ द्वारकामेत्यकालिंदींसूर्यकन्यांमनोहराम् ॥ उपयेमेविधानेनवितन्वनमंगलंपरम् ॥ १५ ॥

द्वारिकामें आये ॥९॥ सत्राजितको सभामें बुलाकर मणि दे दी तब निर्लाञ्छन हुये, मणि तो ले ली, किन्तु लज्जा बहुत आई, नीचेको मुख हो गया, अब यह सत्राजित भगवान्से डरा ॥१०॥ तब हे मैथिल ! वह मणिको लेकर फिर महात्मा श्रीकृष्णकी शान्तिके लिये अपनी पुत्री सत्यभामा श्रीकृष्णको दे दी ॥ ११ ॥ फिर श्रीकृष्ण तो पाण्डवोंकी सहायता के लिये इन्द्रप्रस्थको गये, वहाँ बन्धु वत्सल भगवान् वर्षा वर्षा चार महीना रहे ॥१२॥ एक दिन श्रीकृष्ण रथमें बैठकर अर्जुनको साथ लेकर दिव्य जल युक्त श्रीयमुनाजीके तीर पर आखेट (शिकार) को गये ॥ १३ ॥ वहाँ तप कर रही जो कालिंदी जिसके श्रीकृष्णको वरनेकी चाहना है, वह अर्जुनने कृष्णको दिखाई, उसको लेकर भगवान् चले आये ॥ १४ ॥ द्वारिकामें आकर सूर्यकी मनोहर कन्याका वेदविधिसे मंगलका विस्तार करते पाणिग्रहण किया ॥ १५ ॥

अवंतीके राजाकी पुत्री मनोहरा मित्रविंदाको मनोहर स्वयम्बरमेंसे कृष्ण हर लाये, जैसे रुक्मिणीको लाये थे॥१६॥और नग्नजित् राजाकी कन्या सत्या(नाग्नजिती)को आप भगवान् सब लोकोंके देखते देखते सात बैलोंका दमनकर विवाह लाये ॥१७॥ ऐसे ही कैकेय देशके राजाकी पुत्री भद्रासे भगवान्ने कालिंदीकी तरह विवाह कर लिया ॥ १८ ॥ बृहत्सेन राजाकी पुत्री लक्ष्मणा जो सब शुभ लक्षणोंसे युक्त थी, उसको स्वयम्बरमें मत्स्यको वेधकर शत्रुओंको जीतकर भगवान्ने ग्रहण कर लिया॥१९॥ वैसे ही सुन्दर है दर्शन जिनका ऐसी सोलह हजार एकसौ राजाओंकी कन्याओंको भौमासुरको मारकर ले आये ॥२०॥ उनका अपनी मायासे एक ही समयमें पृथक् २ महलोंमें पृथक् २ रूप धरकर विधिपूर्वक पाणिग्रहण किया ॥२१॥ उन समस्त श्रीकृष्णकी स्त्रियोंने, पिताकेसे जिनमें सब गुण ऐसे दश दश पुत्र, एक एकने उत्पन्न किये ॥२२॥ रुक्मिणी जो भीष्मक राजाकी पुत्री थी, उसका पहिला पुत्र प्रद्युम्न हुआ, वह कामदेवका अवतार था, पिता श्रीकृष्णकेसे समस्त गुण जिसमें हुये ॥ २३ ॥ तब निर्दयी शम्बरासुर उस बालकको दश दिनोंके भीतर ही चुरा

आवंत्यराजतनुजांमित्रविन्दांमनोहराम् ॥ स्वयंवरेतांजहारभगवान्रुक्मिणींयथा ॥१६॥ नग्नजित्कन्यकांसत्यांदमित्वासप्तगोवृषान् ॥ पश्य तांसर्वलोकानामुपयेमेहरिःस्वयम् ॥ १७ ॥ कैकेयराजतनुजांभद्रांतुभगवान्हरिः ॥ कालिंदीमिवतांशश्वदुपयेमेविधानतः ॥ १८ ॥ बृहत्सेन सुतांगजन्लक्ष्मणांलक्षणैर्युताम् ॥ छित्त्वामत्स्यमरीञ्जित्वाजग्राहभगवन्हरिः॥१९॥ तथापोडशसाहस्रंशतंचनृपकन्यकाः ॥ भौमंहत्वातन्निरोधादाहृताश्चारुदर्शनाः ॥ २० ॥ तासांमुहूर्तएकस्मिन्नानागारेषुयोपिताम् ॥ सविधंजगृहेपाणीन्नानारूपःस्वमायया ॥ २१ ॥ एकैकशस्ताः कृष्णस्यपुत्रान्दशदशाबलाः ॥ अजीजनन्ननवमान्पितुःसर्वात्मसंपदा॥२२॥रुक्मिण्यांभीमकन्यायांप्रद्युम्नःप्रथमोभवत् ॥ कामदेवावतारोयं पितृवत्सर्वलक्षणः ॥ २३ ॥ शंबरोनिर्दयस्तोकंहत्वाब्धौतंसमाक्षिपत् ॥ मत्स्योदरेगतःसोपिनममारहरेःसुतः ॥ २४ ॥ मत्स्योदरान्निर्गतोसौ भार्ययापरिपालितः ॥ ज्ञात्वाशत्रुकृतांवार्तांसकार्ष्णीरूढयौवनः ॥२५॥ हत्वातंशंबरंशत्रुंभार्ययावरयायुतः॥ द्वारकामाययौराजंश्चित्रंकर्मचतस्यतत् ॥२६॥ सरुक्मिणोदुहितरंहृत्वाभोजकटात्पुरात् ॥ स्वयंवरस्थलाद्राजन्नुपयेमेमहारथः ॥२७॥ तस्मात्सुतोनिरुद्धोभून्नागायुतबलान्वितः ॥ सुरज्येष्ठावतारोयंशारदेंदीवरप्रभः ॥ २८ ॥ चतुर्व्यूहावतारस्यपरिपूर्णतमस्यहि ॥ एवंविचित्रंचरितंविवाहानांसुमंगलम् ॥ २९ ॥

कर समुद्रमें फेंक आया, उसको एक मछली निगल गई, किन्तु वे मछलीके पेटमें गया हुआ भी मरा नहीं ॥२४॥ फिर मत्स्यके पेटमेंसे निकला, भार्या मायावतीने उसका पोषण किया, तब वह अपने शत्रुके कियेको जानकर जब तरुण हुआ ॥ २५ ॥ तब वह अपने शत्रु शम्बरासुरको मारकर आकाशमें विचरनेवाली अपनी भार्याको साथ लेकर द्वारिकामें आया, यह उसने विचित्र कर्म किया ॥ २६ ॥ उस कृष्णके पुत्र प्रद्युम्नने रुक्मीकी कन्याका स्वयम्बरमेंसे भोजकटपुरमेंसे हरणकर उसके साथ विवाह कर लिया ॥ २७ ॥ उसके शरद ऋतुके नील कमल सी शोभा जिसकी, दश हजार हाथियोंका बल जिसमें, ऐसा ब्रह्माका अवतार अनिरुद्ध नामका पुत्र हुआ ॥ २८ ॥ परिपूर्ण भगवान्का इस प्रकार यह चतुर्व्यूहावतार है, यह विचित्र चरित्र विवाहोंका मंगल रूप है ॥ २९ ॥

सब पापोंको हरनेवाला है पवित्रोंमें पवित्र है, आयुको बढानेवाला अत्युत्तम है, वह मैंने तुम्हारे सामने वर्णन किया, अब तुम क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥३०॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां द्वारिकाखण्डे भाषाटीकायां सर्व महिष्युद्वाह वर्णनं नामाष्टमोऽध्यायः ॥८॥ बहुलाश्व राजाने पूछा कि तीनों लोकोंमें विख्यात यह द्वारिकापुरी धन्य है, परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण यहाँ बसे हैं ॥१॥ श्रीकृष्णके अंगसे द्वारिकापुरी उत्पन्न हुई यह हमने सुना है, सो यहाँ कैसे आई ? कौनसे कालमें आई ! हे ब्रह्मन् ! यह मुझसे कहो ॥ २ ॥ नारदजी बोले, तुमने अच्छी बात पूछी, द्वारिकाके आनेका जो कारण है, उसको सुनकर लोकका घाती पापी भी पवित्र हो जाता है ॥ ३ ॥ पहिले एक मनुका पुत्र शर्याति नामका राजा चक्रवर्ती हुआ था, जिसने धर्मसे पृथ्वीपर दश हजार वर्ष राज्य किया ॥४॥ उस शर्यातिके तीन पुत्र हुये, उत्तान बर्हि, आनर्त और भूरिषेण, ये सब धर्मधारियोंमें श्रेष्ठ थे ॥ ५ ॥

सर्वपापहरंपुण्यमायुर्वर्द्धनमुत्तमम् ॥ मयातेकथितंराजन्किंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥३०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेसर्वमहिष्युद्वाहोनामाष्टमोध्यायः ॥ ८ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ त्रिषुलोकेषुविख्याताधन्यावैद्वारकापुरी ॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोयत्रवासकृत् ॥ १ ॥ श्रीकृष्णस्यांगसंभूतापुरीद्वारावतीश्रुता ॥ कस्मादिहागतात्रह्मन्कस्मिन्कालेवदप्रभो ॥ २ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ ॥ साधुसाधुत्वयापृष्टंद्वारकागमकारणम् ॥ यच्छ्रुत्वाशुद्धतांयातिलोकघात्यपिपातकी ॥३॥ शर्यातिर्नामराजाभूच्चक्रवर्तीमनोःसुतः ॥चकार राज्यंधर्मेणवर्षाणामयुतंभुवि ॥४॥ उत्तानबर्हिरानर्तोभूरिषेणइतित्रयः ॥ शर्यातेरभवन्पुत्राःसर्वधर्मभृतांवराः ॥५॥ उत्तानबर्हिषेपूर्वांभूरिषेणायदक्षिणाम् ॥ पश्चिमांचदिशंसर्वामानर्तायददौनृपः ॥ ६ ॥ ममेयंहिमहीकृत्स्नामयाधर्मेणपालिता ॥ बलार्जिताबलिष्ठेनयूयंतांपालयिष्यथ ॥ ७ ॥ पितुर्वचःसमाकर्ण्यआनर्त्तोमध्यमःसुतः ॥ ज्ञानीज्ञानमयंवाक्यमुवाचप्रहसन्निव ॥ ८ ॥ आनर्तउवाच ॥ तवेयंनमहीकृत्स्नात्वयापालिताक्वचित् ॥ नत्वद्बलार्जिताराजन्वलिष्ठोभगवान्विभुः ॥९॥ महीश्रीकृष्णदेवस्यतेनैवपरिपालिता ॥ तत्तेजसाजिताकृत्स्नाबलिष्ठोन हरेःसमः ॥ १० ॥ सएवविश्वंस्वकृतंसृजत्यत्तिचपातिच ॥ सएवब्रह्मपरमंकालःकलयतांप्रभुः ॥ ११ ॥

तब शर्यातिने पूर्व दिशा तो उत्तानबर्हिको दी, दक्षिण दिशा भूरिषेणको दी, और पश्चिम दिशा समस्त अनार्तको दी ॥ ६ ॥ राजा शर्याति आनर्तसे बोला कि, यह समस्त पृथ्वी मेरी है, मैंनेही धर्मसे पाली है, मैंने बलसे जीतकर सम्पादनकी है, अब तुम इसका पालन करोगे ॥ ७ ॥ तब आनर्त नामका मध्यम सुत (मझला पुत्र) पिताका वचन सुनकर बडा ज्ञानी वह हँसकर ज्ञानमय वाक्य पितासे बोला ॥ ८ ॥ कि देखिये पिताजी ! यह पृथ्वी समस्त आपकी नहीं है न कभी आपने पालनकी है, न आप बली हो, न बलसे आपने जीती है, बली तो भगवान् हरि हैं ॥९॥ यह समस्त पृथ्वी श्रीकृष्ण देवकी है, उन्हींने पालन की है, उन्हींके तेजसे आपने यह सब भूमि जीती है, उन हरिकी बराबर कोई बली नहीं है ॥१०॥ वही भगवान् स्वकृत अर्थात् अपने बनाये विश्वकी उत्पत्ति, पालन, संहार करता है, वही परब्रह्म है, और चलानेवालेका प्रभू कालरूप साक्षात् वही है ॥ ११ ॥

जो प्राणियोंके भीतर प्रविष्ट होकर सबका आश्रय है, वही विश्वरूप अधियज्ञ स्वरूप स्वयम् परिपूर्ण है ॥१२॥ जिसके भयसे रात दिन पवन चला करता है, जिसके भयसे सूर्य तपता है, जिसके भयसे इन्द्र वर्षा करता है, जिसके भयसे मृत्यु सबको मारती है ॥१३॥ हे राजन् ! उस परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण परमेश्वरको अहंकार छोडकर सर्वात्मासे भजो ॥१४॥ नारदजी कहते हैं कि, ज्ञानको प्राप्त हुआ भी शर्याति राजा पुत्रके वाणीरूप तीरोंसे छिदा, क्रोधसे जिसके ओठ फड़क रहे, ऐसा राजा शर्याति अपने पुत्र आनर्तसे बोला ॥१५॥ कि हे असद्बुद्धे ! दूर चले जाओ, गुरुकी तरह मुझको तुम शिक्षा क्या देते हो, जहाँ तक मेरा राज्य है, उसमें तुम मत रहो ॥१६॥ जिस कृष्णका तुमने आराधन किया है, वही सब बातकी सहायता करेगा, वोही भगवान् तुमको नई पृथ्वी दे देगा॥१७॥ नारदजी कहते हैं कि, मानको दाता आनर्त पिताके कहेको सुनकर यह बोला कि, जहाँ तक आपकी पृथ्वी

योंतःप्रविश्यभूतानिभूतैरप्यखिलाश्रयः ॥ सविश्वाख्योधियज्ञोसौपरिपूर्णतमःस्वयम् ॥१२॥ यद्भयाद्वातिवातोयंसूर्य्यस्तपतियद्भयात् ॥ यद्भ-
याद्वर्षतेदेवोमृत्युश्चरतियद्भयात् ॥ १३ ॥ परिपूर्णतमंसाक्षाछ्रीकृष्णंपरमेश्वरम् ॥ भजसर्वात्मनाराजन्नहंकारविवर्जितः ॥ १४ ॥ नारद
उवाच ॥ ज्ञानंप्राप्तोपिशर्य्यातिराक्षिप्तःपुत्रवाक्छरैः ॥ आनर्त्तंस्वसुतंप्राहरुषाप्रस्फुरिताधरः ॥ १५ ॥ शर्य्यातिरुवाच ॥ दूरंगच्छअसद्बुद्धे
गुरुवद्भाषसेकथम् ॥ यावद्भूतंतुमेराज्यंतावत्त्वंमामहींवस ॥१६॥ यस्त्वयाराधितःकृष्णःसोपिसर्वसहायकृत् ॥ नवीनांकिंमहींतेवैभगवानेवदा-
स्यति ॥ १७ ॥ नारदउवाच ॥ इत्युक्तस्तुतदानर्तोराजानंप्राहमानदः ॥ यत्रतेचमहीराज्यंतत्रवासोनमेभवेत् ॥ १८ ॥ पित्रानिःसारितोरा-
ज्ञाप्यानर्तोब्धितटंगतः ॥ वेलामेत्यतपस्तेपेवर्षाणामयुतंजले ॥१९॥ प्रेमलक्षणयाभक्त्यासंतुष्टोभगवान्हरिः ॥ तस्मैस्वंदर्शनंदत्त्वावरंब्रूहीत्यु-
वाचह ॥ २० ॥ कृतांजलिपुटोभूत्वाऽऽनर्तउत्थायशीघ्रतः ॥ ननामकृष्णपादाब्जंरोमांचीप्रेमविह्वलः ॥ २१ ॥ आनर्त्तउवाच ॥ नम-
स्तेवासुदेवायनमःसंकर्षणायच ॥ प्रद्युम्नायानिरुद्धायसात्वतांपतयेनमः ॥२२॥ पित्रानिष्कासितोदेवत्वामहंशरणागतः ॥ देहिमह्यंभूमिमन्यां
यत्रवासोहिमेभवेत् ॥ २३ ॥ ध्रुवोपियत्प्रसादेनययौसर्वोत्तमंपदम् ॥ तस्मैनमोभगवतेप्रणतक्लेशहारिणे ॥ २४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ आन-
र्तमानतंदीनंभगवान्दीनवत्सलः ॥ प्रसन्नःश्रीमुखेनाहमेघगंभीरयागिरा ॥ २५ ॥

है, और राज्य है, उसमें मेरा वास नहीं होगा ॥१८॥ ऐसे जब आनर्तको पिताने देशसे निकाल दिया, तव उसने समुद्रके किनारे पर जाकर जलमें दश हजार वर्षतक तप किया ॥१९॥ तब उसकी प्रेम लक्षणा भक्तिसे भगवान् प्रसन्न होकर उसको दर्शन देकर यह बोले कि "तू मुझसे वर मांग" ॥२०॥ तब हाथ जोडकर आनर्त खडा होगया, श्रीकृष्णके चरण कमलोंमें गिर पडा, रोमांच हो आये, प्रेममें विह्वल होगया, स्तुति करने लगा ॥२१॥ आप वसुदेव हो, संकर्षण हो, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध हो, सात्वतोंके पति हो, उनके लिये मेरा नमस्कार है ॥२२॥ पिताने मुझको निकाल दिया है, आपकी शरण आया हूँ मुझको पृथक् भूमि दीजिये, जिसमें मैं रहूँ ॥२३॥ ध्रुवभी आपके प्रसादसे सर्वोत्तम पदको प्राप्त हुआ, उन भगवान्के लिये मेरा नमस्कार है, जो प्रणतोंके क्लेशको दूर करते हैं ॥२४॥ नारदजी कहते हैं, दीन जो उसपर भक्तवत्सल प्रसन्न होकर मेघसी गम्भीर वाणीसे श्रीमुखसे यह बोले॥२५॥

हे नृप ! धरती तो दूसरी नहीं है, अब हमको क्या करना चाहिये, किन्तु तेरा वचन मैं सत्य करूँगा, तेरी भक्तिसे मैं प्रसन्न हूँ॥२६॥उसीसे देवलोक वैकुण्ठसे मैं सौ योजन पृथ्वी विमल शुभ दूँगा॥२७॥ नारदजी कहते हैं-ऐसे आनर्तसे कहकर सौ योजन पृथ्वी वैकुण्ठमेंसे उखाड़कर दी और सुदर्शन दिया ॥२८॥ भयंकर जिसमें लहरोंके शब्द उस समुद्रमें सुदर्शन चक्रको धरकर भगवान्ने हे विदेह राजा ! उसके ऊपर भूमिकी स्थापना की ॥२९॥ वहाँ आनर्त राजाने पुत्र पौत्रोंसे सहित वैकुण्ठकी सम्पत्ति भोगते एक लाख वर्षतक राज्य किया ॥३०॥ यह बात सुनकर आनर्तका पिता शर्याति बड़े आश्चर्यमें आगया, वह आनर्तके प्रसादसे आनर्त नामका देश हुआ ॥३१॥ रैवत नामका उसके पुत्र हुआ, जिस रैवतने श्रीशैलके पुत्र पर्वतको अपने हाथोंसे उखाड़कर आनर्त देशमें स्थापित किया ॥ ३२ ॥ सो रैवतके लानेसे वह पर्वत रैवत नामसे प्रसिद्ध हुआ, द्वारिकापुरी बनाकर रैवत राज्य किया ॥ ३३ ॥

॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अन्यानमेदिनीलोकेकिंकर्तव्यंमयानृप ॥ स्ववचस्तद्दतंकर्तुंत्वद्भक्त्यापरितोषितः ॥ २६ ॥ तस्माद्दैवस्यलोकस्यवै-कुण्ठस्यपरंतप ॥ भूखण्डंयोजनशतंददामिविलंशुभम् ॥ २७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वानर्तंनृपतिंभगवान्भक्तवत्सलः ॥ वैकुण्ठाच्चस-मुत्पाट्यभूखण्डंशतयोजनम् ॥२८॥ चक्रंसुदर्शनंधृत्वासमुद्रेभीमनादिनि ॥ दधारभगवान्देवस्तस्योपरिविदेहराट् ॥२९॥ आनर्तोलक्षवर्षांतं तत्रराज्यंचकारह ॥ पुत्रपौत्रसमायुक्तोराजन्वैकुण्ठसंपदम् ॥३०॥ इदंश्रुत्वाथशर्यातिःपितावैविस्मतोऽभवत् ॥ आनर्तोनामदेशोभूदानर्तस्य प्रसादतः॥३१॥रेवतस्तस्यपुत्रोभूच्छ्रीशैलस्यगिरेःसुतम्॥समुत्पाट्यस्वहस्ताभ्यामानर्तेषुन्यपातयत्।३२।सोभूद्रेवतनाम्नापिरैवतोनामपर्वतः॥ कुशस्थलींविनिर्मायराज्यंकृत्वाथरैवतः ॥३३॥ समादायस्वकांकन्यांब्रह्मलोकंजगामह॥बलदेवविवाहेपितत्कथाकथितामया ॥३४॥ तस्मा-द्वारावतींपुण्यांमोक्षद्वारंविदुःसुराः॥३५॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेद्वारकागमनकारणंनामनवमोऽध्यायः॥९॥

॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंमयातेकथितंद्वारकागमनकारणम् ॥ सर्वपापहरंपुण्यंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ १ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ सर्वं तीर्थमयीभूमिर्द्वारकानगरीशुभा ॥ तत्रमुख्यानितीर्थानिवदमांमुनिसत्तम ॥ २ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ आप्रभासात्तीर्थमयीमर्यादीकृत्ययज्ञि-याम् ॥ भूमिर्मोक्षप्रदाराजन्द्वारकायोजनैःशतम् ॥ ३ ॥

वह रैवत अपनी कन्याको साथ लेकर ब्रह्मलोकको गया, सो कथा बलदेवजीके विवाह समयमें मैंने तुमसे कही है ॥३४॥ इसीसे देवता इस द्वारिकापुरीको मोक्षका द्वार बताते हैं ॥३५॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां द्वारकाखण्डे द्वारकागमनकारणं नामनवमोऽध्यायः ॥९॥ नारदजी बोले कि, यह मैंने तुम्हारे सामने द्वारिकाके आगमनका कारण कहा, यह पवित्र और पापों हरनेवाला है, अब तुम और क्या सुनना चाहते हो ॥१॥ तब बहुलाश्व राजा बोला कि, यह द्वारिकाकी सब तीर्थमयी भूमि है, हे मुनिश्रेष्ठ ! वहाँके मुख्य तीर्थ मुझको सब कहिये ॥ २ ॥ तब नारदजी बोले कि, हे राजन् ! प्रभास क्षेत्रसे लेकर समस्त सौ योजनकी द्वारका भूमि करनेकी और मोक्षकी देनेवाली है ॥ ३ ॥

द्वारिका नगरीके दर्शन करके नर (मनुष्य) नारायण हो जाता है, द्वारकामें मरा हुआ गधाभी चतुर्भुज होजाता है॥४॥ द्वारिकाकी कथा सुननेसे द्वारिकाके देखनेसे और द्वारिका २ ऐसे कहता जो मनुष्य तृणभी देकर मृत्युको प्राप्त होवे,वह भी परम गतिको प्राप्त है,॥५॥एक समय प्रेमानन्दमें समाकुल रैवत भक्तको देखकर उसको अपना दर्शन देकर श्रीकृष्णके नेत्रमेंसे आंसू गिरा ॥६॥ उस नेत्रकी बूंदसे गोमती नामकी नदी हुई, जिसके दर्शन मात्रसेही ब्रह्महत्या छूट जाती है ॥७॥ गोमतीके तीरकी मृत्तिका जो गोपीचन्दन उसको जो धारण करता है, वह सौ जन्मके किये पापोंसे छूट जाता है इसमें सन्देह नहीं है ॥८॥ और स्नान कालमें यदि मनुष्य गोमतीका नामभी ले लेवे, तो निसंदेह उसको गोमतीके स्नानका फल मिल जाता है ॥ ९ ॥ मकरके सूर्यमें माघके महीनेमें जो प्रयागमें स्नान करे तो हे विदेह ! सौ अश्वमेध यज्ञका फल प्राप्त होवे ॥१०॥ उससे हजार गुना पुण्य मकरके सूर्यमें

द्वारकांनगरींदृष्ट्वानरोनारायणोभवेत् ॥ द्वारकायांमृतःकोपिगर्दभोपिचतुर्भुजः ॥४॥ पश्यञ्छृण्वन्कथांतस्याद्वारकेतिवदन्क्वचित् ॥ दृष्टादद्यात्तृणं मृत्युंगतोयातिपरांगतिम् ॥ ५ ॥ एकदारैवतंभक्तंप्रेमानन्दसमाकुलम् ॥ प्रेक्ष्यस्वंदर्शनंदत्त्वाहरिरश्रुमुखोभवत् ॥६॥ तन्नेत्रबिंदुसंभूतागोमती सामहानदी ॥यस्यादर्शनमात्रेणब्रह्महत्याप्रमुच्यते ॥७॥ गोमतीतीरजंपुण्यंरजोयोधारयेन्नरः ॥ शतजन्मकृतात्पापान्मुच्यतेनात्रसंशयः ॥८॥ स्नानकालेगोमतीतिवदत्यपिनरःक्वचित् ॥ गोमत्यांस्नानजंपुण्यंलभतेवैनसंशयः ॥९॥ मकरस्थेरवौमाघेप्रयागेस्नानमाचरेत् ॥ शताश्वमेधजं पुण्यंसंप्राप्नोतिविदेहराट् ॥ १० ॥ तत्सहस्रगुणंपुण्यंगोमत्यांमकरेरवौ ॥ गोमत्याश्चैवमाहात्म्यंवक्तुंनालंचतुर्मुखः ॥ ११ ॥ गोमत्यां चक्रतीर्थेषुपाषाणनिचयाश्चये ॥ तेसर्वेचक्रतांयांतिपूजनीयाःप्रयत्नतः॥१२॥चक्रचिह्नेचक्रतीर्थेद्वादश्यांस्नानमाचरेत् ॥ चक्रपाणिपदंयातिपा- पानांभाजनोपिहि ॥ १३ ॥ कोटिजन्मकृतैःपापैःपतितोयोपिपातकी ॥ चक्रतीर्थस्यसोपानमेत्यमुक्तिंसमारुहेत ॥ १४ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ गोमत्यांहिमहानद्यांचक्रतीर्थंशुभार्थदम् ॥ कथंजातंबहुमतंतन्मेब्रूहिमहामते ॥ १५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अत्रैवोदाहरंतीममितिहासंपुरात नम् ॥ यस्यश्रवणमात्रेणपापहानिःपरंभवेत् ॥ १६ ॥ अलकेशोराजराजोनिधीशोधर्मभृत्प्रभुः ॥ वैष्णवंयज्ञमारेभेकैलासोत्तरभूमिषु ॥१७॥

गोमती स्नानका है, मकरके सूर्यमें गोमतीके माहात्म्यको तो ब्रह्माजीभी नहीं कह सकते हैं॥११॥गोमतीमें चक्र तीर्थमें जो पाषाण हैं, वे सब चक्ररूप हो जाते हैं, वे पूजन करने योग्य हैं ॥१२॥ चक्रके चिह्न हैं जिसमें ऐसे चक्र तीर्थमें जो द्वादशीके दिन स्नान करे, तो कैसाभी पापी होवे, तोभी चक्रपाणिके पदको प्राप्त होता है ॥१३॥ जो करोड जन्मोंके पातकोंसे पापी पतित भी होवे, तोभी चक्रतीर्थकी सीढीपर पांव धरनेसे मुक्ति पदवीको आरोहण करता है ॥१४॥ बहुलाश्वने पूछा कि, गोमती महानदीमें यह चक्रतीर्थ शुभ अर्थको देनेवाला कैसे हुआ, सो हे महामते ! यह आप मुझसे कहिये ॥ १५ ॥ तब नारदजी बोले कि, यही एक बड़ा पुराना इतिहास वर्णन करते हैं, जिसके सुननेहीसे अतिशय पापकी हानि होती है ॥१६॥ एक समय अलकापुरीके स्वामी नौ निधियोंके स्वामी बड़े धर्मात्मा कुबेरने कैलाशकी उत्तर दिशाकी भूमिमें वैष्णव यज्ञको आरम्भ किया ॥ १७ ॥

उसके यज्ञमें विष्णु भगवान् अपने धाम वैकुण्ठसे आये, और उनके साथ ब्रह्मा, शिव, इन्द्र, जलका पति वरुण ॥ १८ ॥ वायु, यम, सूर्य, चन्द्रमा, सर्वजनेश्वरी पृथ्वी, गन्धर्व अप्सरा, सिद्ध ये सब वहाँ आये ॥ १९ ॥ देवर्षि और ब्रह्मर्षि, आये, तब वहाँ कुबेरका पुत्र नलकूबर तो धनाध्यक्ष हुआ ॥ २० ॥ यज्ञकी रक्षाके लिये बीरभद्र खडा हुआ सेवामें गणेशजी रहे, और मरुद्गण परिवेषणकारी (परोसनेवाले) रहे ॥ २१ ॥ और धर्ममें तत्पर स्वामीकार्तिकेयजी सभाकी पूजामें तत्पर रहे, ऐसेही घण्टानाद और पार्श्व मौलि सब शास्त्र वेत्ताओंमें श्रेष्ठ ये दोनों कुबेरके मन्त्री दानाध्यक्ष हुये, ऐसे यज्ञ विधिपूर्वक और परमोत्सवसे हुआ ॥२२॥२३॥ जब महामना कुबेरने यज्ञान्त स्नान किया, तब परमभाग देवताओंको दिया, और ब्राह्मणोंको दक्षिणा दी ॥२४॥ ऐसे जब यज्ञ पूर्ण हुआ, सब देव ऋषि प्रसन्न हुये, वहाँ दुर्वासा नाम ऋषि दण्ड लिये, छत्री लगाये, जटाधारी ॥ २५ ॥

तस्ययज्ञेस्वयंविष्णुरागतोवैस्वधामतः ॥ ब्रह्माशिवोजंभभेदीवरुणोयादसांपतिः ॥१८॥ वायुर्यमोरविःसोमःक्षितिःसर्वजनेश्वरी॥ गन्धर्वाप्सरसःसिद्धाःसर्वेतत्रसमाययुः ॥१९॥ देवर्षयःसमाजग्मुस्तथाब्रह्मर्षयोनृप ॥ धनाध्यक्षोभवत्तस्यपुत्रस्तुनलकूबरः॥२०॥ रक्षायांवीरभद्रोभूत्सत्सेवायांगजाननः ॥ यथामरुद्गणाःसर्वेपरिवेषणकारिणः ॥२१॥ बाहुलेयः सभापूजामकरोद्धर्मतत्परः ॥ घण्टानादःपार्श्वमौलिःकुबेरस्यतु मंत्रिणौ ॥२२॥ सर्वशास्त्रविदांश्रेष्ठौदानाध्यक्षौबभूवतुः॥एवंहिविधिवद्यज्ञोबभूवपरमोत्सवः ॥२३॥ अध्वरावभृथस्नातोराजराजोमहामनाः॥ परंभागंचदेवेभ्योविप्रेभ्योदक्षिणामदात् ॥२४॥ एवंपूर्णेध्वरेमुख्येतुष्टेदेवर्षिसत्तमे ॥ आजगामाथदुर्वासादण्डीछत्रीजटाधरः ॥ २५ ॥ क्रोधी कृशःपादुकांघ्रिर्दीर्घश्मश्रुःकृशोदरः दर्भासनसमित्पात्रमृगचर्मधरःपरः ॥२६॥ तमागतंसमागम्यपूजयित्वाविधानतः ॥ भयभीतःपरिक्रम्य कुबेरःप्रणनामह ॥ २७ ॥ अद्यमेसफलंजन्मसफलंमंदिरंचमे ॥ अद्यमेसफलोयज्ञोब्रह्मंस्त्वय्यागतेसति ॥२८॥ इत्थंसंतोषितस्तेनदुर्वासाभगवान्मुनिः ॥ देवंमनुष्यधर्माणंप्राहप्रहसिताननः ॥ २९ ॥ त्वंराजराजोधर्मात्मादानीविप्रपरायणः ॥ कृतस्तेवैष्णवोयज्ञोविष्णुसंतोषकारणः॥ ॥ ३० ॥ नयाचितोमयात्वंवैक्वापिवैश्रवणप्रभो ॥ अद्यैवयाचनांकुर्वेज्ञात्वात्वांदानिसत्तमम् ॥ ३१ ॥

क्रोधकी मूर्ति, खडाऊ पहिने, बडी २ दाढी लटकाय, कृशोदर, दर्भा (कुशा) का आसन, कमण्डलु समिधा लिये, मृगचर्म ओढे आये ॥२६॥ उनको आया देखकर कुबेर उठकर आये, विधिपूर्वक पूजा करके भयभीत हो, परिक्रमा देकर प्रणाम करके यह बोले कि, ॥ २७ ॥ आज मेरा जन्म सफल हुआ, मेरा मन्दिर सफल हुआ, मेरा यज्ञ सफल हुआ, हे ब्रह्मन् ! जो आप मेरे घर आये हैं, इससे ॥ २८ ॥ ऐसे कुबेरसे प्रसन्न किये भगवान् दुर्वासा मुनि हँसते २ मनुष्य धर्मा कुबेरसे यह बोले ॥ २९ ॥ कि, हे राज राज ! तुम बडे धर्मात्मा हो, दानी हो, ब्रह्म भक्त हो, तुमने विष्णुको प्रसन्न करनेवाला यह विष्णु यज्ञ किया है ॥ ३० ॥ मैंने आजतक तुमसे कभी याचना नहीं की है, हे वैश्रवण प्रभो ! तुमको दानियोंमें श्रेष्ठ जानकर आज तुमसे मैं याचना करता हूँ ॥ ३१ ॥

सो मेरी इस याचनाको यदि तुम सफल करोगे, तो मैं तुमको वर दूँगा, अन्यथा अति भयंकर शापसे तुमको भस्म कर दूँगा ॥३२॥ आज तेरे घरमें तीनों लोकोंकी जो निधि हैं, वे सब नौ निधि हैं, उनको मुझे देदे, तेरा कल्याण हो, उनके लिये मैं आया हूँ ॥ ३३ ॥ नारदजी कहते हैं–ऐसे सुनकर राज राज उदार बुद्धि कुबेर बोला–अच्छा मैं आपको दूँगा, आप लीजिये यह बात कुबेरने कही ॥ ३४ ॥ ऐसे निधियोंको देनेके लिये उद्यत हुये कुबेरको निधियोंके स्वामी घंटानाद और पार्श्वमौलि ये दोनों दानाध्यक्ष लोभमें मोहित होकर बोले ॥३५॥ यह ब्राह्मण तो अकेला है, और लोभी है, निधियोंका क्या करेगा, एक दिव्य लक्ष इसको दे देओ, बाकीसे अपनी जीविकाकी रक्षा करो ॥३६॥ नारदजी कहते हैं कि उनके कठोर वचन सुनकर दुर्वासाको क्रोध आगया, भौंहे चढ गईं और नेत्र लाल २ हो आये ॥३७॥ तब थाली (स्थाली) की तरह दो क्षणतक ब्रह्माण्ड हिलने लगा, तब

मद्याञ्चांसफलीकुर्यास्तुभ्यंदास्यामिसद्वरम् ॥ नोचेत्त्वांभस्मसात्कुर्वेशापेनातिभयेनवै ॥ ३२ ॥ वर्ततेत्वद्गृहेसर्वेत्रैलोक्यनिधयोनव ॥ तान्मे प्रयच्छभद्रंतेतदर्थंगतवानहम् ॥ ३३ ॥ नारदउवाच ॥ एतच्छुत्वाराजराजोदानशीलउदारधीः ॥ ओमितिप्रतिगृह्णीष्वप्राहतंगुह्यकेश्वरः ॥ ३४ ॥ एवंनिधीन्प्रदास्यंतंदानाध्यक्षोनिधीश्वरम् ॥ घण्टानादःपार्श्वमौलिरूचतुर्लोभमोहितौ ॥ ३५ ॥ द्वावूचतुः ॥ एकोयंब्राह्मणो लोभीनिधिभिःकिंकरिष्यति ॥ लक्षंदिव्यंदेहिचास्मैवृत्तिंरक्षतथोत्तराम् ॥ ३६ ॥ नारदउवाच ॥ तद्वचःपरुषंश्रुत्वादुर्वासाःक्रोधविग्रहः ॥ भ्रूभंगकुटिलीभूतेरक्तनेत्रेचकारह ॥ ३७ ॥ स्थालीवसर्वंब्रह्मांडंचचालनिमिषद्वयम् ॥ प्रणतंधनदंवीक्ष्यताभ्यांशापंददौमुनिः ॥ ३८ ॥ मुनिरुवाच ॥ घण्टानादमहादुष्टपापबुद्धेतिलुब्धक ॥ ग्राहवत्त्वंधनग्राहीग्राहोभवमहाखल ॥ ३९ ॥ पार्श्वमौलेपापबुद्धेधनलोभमदान्वितः ॥ गजवत्प्रेरणांकुर्वंस्त्वंगजोभवदुर्मते ॥ ४० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ ताभ्यांशापंमुनिर्दत्त्वानिधिंनीत्वाकुबेरतः ॥ वरंददौपुनस्तस्मैदुर्वासादुर्लभं परम् ॥ ४१ ॥ अस्माद्दानाच्चद्विगुणाभवंतुनिधयोनव ॥ इत्युक्त्वासनिधिःप्रागादहोतेजीयसांबलम् ॥४२॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेगोमत्युपाख्यानेचक्रतीर्थमाहात्म्यंनामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ नारदउवाच ॥ कुबेरमन्त्रिणौदीनौविप्रशाप विमोहितौ ॥ तत्रसाक्षात्स्वयंविष्णुःप्राहतौशरणंगतौ ॥ १ ॥

कुबेरने प्रणाम किया, तब कुबेरको प्रणाम करते देख दुर्वासाने उन दोनों मन्त्रियोंको शाप दिया ॥ ३८ ॥ कि यह घण्टानाद महादुष्ट पापी लोभी ग्राहकी तरह धनग्राही है उससे यह ग्राह हो जायगा ॥ ३९ ॥ और हे पार्श्वमौले ! पापबुद्धि ! धनलोभी ! मतवाले गजकी तरह प्रेरणा करता है, जिससे तू हाथी होजा ॥४०॥ नारदजी कहते हैं कि उन दोनोंको शाप देकर कुबेरसे निधि लेकर परम दुर्लभ कुबेरको वर दिया ॥ ४१ ॥ कि इस दानसे दुगुनी निधि तुम्हारे हो जायगी ऐसा कहकर कुबेरकी दी हुई नौ निधियोंको दुर्वासा ले आये, अहो ! देखो तेजस्वियोंका बल ऐसा है ॥ ४२ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां गोमत्युपाख्याने चक्रतीर्थ माहात्म्यं नामदशमोऽध्यायः॥१०॥ नारदजी कहते हैं–अब वे दोनों कुबेरके मन्त्री ब्राह्मणके शापसे दीन हो गये, मोहको प्राप्त हुये, विष्णुकी शरण गये ॥ १ ॥

तब साक्षात् स्वयम् विष्णु भगवान् शरण आये उन दोनोंसे बोले कि, मेरी पूजा युक्त यज्ञमें व्यर्थमें तुम दोनों दुखी होगये, देखो ब्राह्मणका वचन दूर करनेको मैं भी समर्थ नहीं हूँ ॥२॥ जब तुम ग्राह और हाथी होओगे, फिर जब आपसमें तुम्हारा युद्ध होगा, तब तुम मेरी कृपासे फिर ऐसेही हो जाओगे ॥३॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे जब भगवान्ने कहा तब वे दोनों कुंवरके मन्त्री ग्राह और हाथी तो हो गये, किन्तु उनके अपने पूर्व जन्मकी स्मृति बनी रही ॥४॥ घण्टानाद तो गोमतीमें ग्राह बना सौ वर्षतक, और पार्श्व मौलि बड़ा विकराल भयंकर शरीर जिसका ऐसा हाथी हुआ ॥५॥ रैवत पर्वतके वनमें जिसके चार दाँतका जलसा काला, सौ धनुष ऊँची पीठ जिसकी ऐसा गजेन्द्र हुआ ॥६॥ कैसा वन है, जिसमें वंजुलके, कुडाके, कुन्दके, बेर, बेंत, बांश केरा भोज पत्र, वट, कचनार, विजैसार अर्जुन ॥७॥ कल्प वृक्ष, वकाइन, अशोक, आम, चम्पा, चन्दन, कटहर, गूलर, पीपल,

॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मदर्चासंयुतेयज्ञेभवंतौदुःखसंयुतौ ॥ ब्राह्मणानांवचोहंवैदूरीकर्तुंनचक्षमः ॥ २ ॥ भवतंग्राहमातंगौयुद्धंहियुवयोर्यदा ॥ तदावैमत्प्रसादेनप्रकृतिंस्वांगमिष्यथः ॥ ३ ॥ नारदउवाच ॥ इत्युक्तौहरिणातौद्वौराजराजस्यमंत्रिणौ ॥ बभूवतुर्ग्राहगजौजातिस्मरणसंयुतौ ॥ ४ ॥ घण्टानादोभवद्ग्राहोगोमत्त्यांचशतंसमाः ॥ विकरालोमहाभीमःशश्वद्गोद्रवपुर्द्धरः ॥५॥ पार्श्वमौलिर्गजेंद्रोभूद्रैवतस्य गिरेर्वने ॥ चतुर्दतःकज्जलाभःपृष्ठप्रोच्चोधनुःशतम् ॥ ६ ॥ वंजुलैःकुरबैःकुन्दैर्बदरैर्वैत्रवेणुभिः ॥ रंभाभूर्जवटैर्युक्तेकोविदा रासनार्जुनैः ॥७॥ मन्दारपाटलाशोकचूतचंपकचन्दनैः ॥ पनसोदुम्बराश्वत्थखर्जूरैर्बीजपूरकैः ॥८॥ प्रियालाम्रातकाम्रैश्चक्रमुकैः परिमंडिते ॥ रैवतस्यवनेदीर्घे विचचारमहागजः ॥९॥ एकदामाधवेमासिगजेंद्रोगिरिगह्वरात् ॥ स्नातुंतांगोमतींगंगामाययौसगणोनदन् ॥१०॥ चिरंसमवगाह्याप्सुशुण्डादंडैरितस्ततः ॥ करेणकलभान्सर्वान्स्नापयामासनागराट् ॥ ११ ॥ महान्ग्राहोपितत्रस्थोबलीयान्दैवनोदितः ॥ अग्रहीच्चरणेनागंक्रोधपूरितविग्रहः ॥ १२ ॥ तेनैवतद्गृहेनीतोगजेंद्रोबलदर्पितः ॥ समाकृष्यबहिःप्राप्तंपुनस्तेनविकर्षितः ॥१३॥ करेणवश्चकलभास्तंसंतारयितुमक्षमाः ॥ एवंतयोर्युध्यतोश्चकर्षतोर्हिबहिर्मिथः ॥ १४ ॥

खजूर, बिजौरे ॥८॥ चिरौंजी, लोटन, आम, सहतूत और सुपारी इनसे मण्डित जो रैवत पर्वतका बडा दीर्घ वन उसमें वह हाथी विचरता था ॥९॥ एक दिन वैसाखके महिनेमें वह गजेन्द्र उस गिरिगह्वर वनमेंसे गोमती गंगा स्नान करनेको गण सहित बड़ा शब्द करता हुआ आया॥१०॥पहिले बहुत देरतक आप स्नान करके, फिर सूंडसे बहुत देरतक पानी उछालता इधर उधरसे हथिनियोंको और अपने छोटे छोटे बच्चोंको स्नान कराने लगा ॥११॥ इतनेहीमें जो एक बड़ा बली ग्राह वहाँ रहता था सो, दैवका प्रेरित किया, क्रोधसे भरा आया, और उसने हाथीका पांव पकड़ लिया ॥ १२॥ और बलके गर्वीले उस हाथीको घसीटकर अपने घरको ले गया, फिर गजेन्द्र उस मगरको बाहिर खैंचकरके आया, फिर वह उसको खैंचकर भीतर ले गया ॥ १३ ॥ हथिनियोंकी और बच्चोंकी सामर्थ उसके बचानेकी नहीं हुई, ऐसे बाहिर भीतर खैंचातानीमें ॥ १४ ॥

जब सभीके देखते २ उनको पचपन वर्ष व्यतीत हो गये, तब गजको बड़ा कष्ट हुआ, पूर्वजन्मकी स्मृति आगई ॥१५॥ सो प्रेम लक्षणा भक्तिसे भगवान्के चरणका आश्रय जिसका मृत्युकी फांसीमें पडा गजराज हरिका स्मरण करने लगा ॥ १६ ॥ गजेन्द्र बोला–हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे सखे ! हे श्रीकृष्ण वपुर्धारी ! हे सुरेश ! हे विष्णो ! हे पूर्ण प्रभो ! हे परम पावन ! हे पुण्यकीर्ते ! हे परमेश्वर ! आपके लिये मेरा नमस्कार है, इस पापकी फांसीसे मेरी रक्षा करो, रक्षा करो ॥ १७ ॥ नारदजी कहते हैं–ऐसे ग्राहने पकड़ा है अंग जिसका, और हरिका स्मरण करता है, ऐसे गजको जानकर दीन वत्सल भगवान् गरुडपर चढकर बड़े वेगसे दौड़े ॥१८॥ फिर आपही गरुडपरसे उतरकर दौड़कर सुदर्शन चक्र चलाया, चक्रके लगनेके पहिलेही ग्राहका वह अद्भुत शिर देहसे पृथक् होगया, जैसे दीनताके आनेके पहिलेही धन चला जाता है ॥१९॥ शिरके पृथक् हो जानेपर गोमतीमें जो शब्द करता चक्र गिरा, उसने सब पाषाणोंकोचक्राकार कर दिया॥२०॥ उस चक्रकी धारके घिसनेसे शुभदाता चक्र तीर्थ होगया, उस चक्रके दर्शनसेही ब्रह्महत्याका नाश हो

पंचाशत्पंचवर्षाणिव्यतीयुःपश्यतांसताम् ॥ एवंकश्मलमापन्नोगजोजातिस्मरोमहान् ॥१५॥ प्रेमलक्षणयाभक्त्याहरिपादकृताश्रयः ॥ सस्मार श्रीहरिंदेवंमृत्युपाशवशंगतः ॥ १६ ॥ गजेंद्रउवाच ॥ श्रीकृष्णकृष्णसखकृष्णवपुर्दधानकृष्णायतेप्रणतिरस्तुसुरेशविष्णो ॥ पूर्णप्रभो परमपावनपुण्यकीर्तेमांपाहिपाहिपरमेश्वरपापपाशात् ॥ १७ ॥ नारदउवाच ॥ एवंग्राहगृहीतांगंस्मरंतंचहरिंहरिः ॥ ज्ञात्वारुह्यखगंवेगादधावद्दीनवत्सलः ॥ १८ ॥ स्वयंखगात्समुत्तीर्य्यधावश्चक्रंसमाक्षिपत् ॥ चक्रेप्राप्तेपूर्वमेवग्राहस्यापिशिरोद्भुतम्॥१९॥ दैन्यंप्राप्तेधनमिवदेहाद्भिन्नंबभूवह ॥ पश्चात्प्रपतितंचक्रंगोमत्यांचह्रदेनदत् ॥ पाषाणनिचयान्सर्वांश्चक्राकारांश्चकारह॥२०॥ तन्नेमिसंघर्षभवंचक्रतीर्थंशुभावहम्॥ तच्चक्रदर्शनाद्राजन्ब्रह्महत्याप्रमुच्यते ॥ २१ ॥ ग्राहश्छिन्नशिरोभूत्वापूर्वरूपंदधारह ॥ श्रीकृष्णानुग्रहाद्धस्तीदिव्यरूपोबभूवसः॥२२॥ परिक्रम्यहरिंनत्वास्तुत्वादेवंकृतांजली ॥ कुबेरमंत्रिणौतौद्वौजग्मतुःस्वपदंपुनः ॥२३॥ देवेषुपुष्पंवर्षत्सुजयध्वनिंनदत्सुच ॥ जगामभगवान्साक्षात्स्वंधामप्रकृतेःपरम् ॥ २४ ॥ चक्रतीर्थकथामेनांयःशृणोतिनरोत्तमः ॥ चक्रतीर्थस्नानफलंसंप्राप्नोतिनसंशयः ॥२५॥ गजग्राहकथांपुण्यांयःशृणोतिसमाहितः ॥ दुःस्वप्नंनश्यतेतस्यसुस्वप्नंभवतिध्रुवम् ॥ २६ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेचक्रतीर्थोत्पत्तौ गजग्राहमोक्षोनामैकादशोध्यायः ॥ ११ ॥

जाता है ॥ २१ ॥ ग्राहका शिर जब कट गया, तब उसका वही पहिला रूप होगया श्रीकृष्णके अनुग्रहसे उस हाथीका भी दिव्य रूप हो गया ॥२२॥ तब दोनों कुबेरके मंत्री भगवान्को प्रणाम कर हाथ जोड़ हरिकी स्तुति करके अपने धामको चले गये ॥ २३ ॥ देवता हरिके ऊपर पुष्पोंकी वर्षा करने लगे, जय शब्द करने लगे, तब भगवान् भी मायासे परे जो अपना धाम है, उसको चले गये ॥२४॥ जो कोई नरोत्तम चक्रतीर्थकी इस कथाको सुने, वह चक्रतीर्थके स्नानके फलको प्राप्त होवे, इसमें संदेह नहीं है ॥२५॥ इस गज और ग्राहकी कथाको जो कोई सावधान होरकर सुने उसके दुस्वप्नका नष्ट होकर, वह उसको सुस्वप्न हो जाये ॥२६॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां द्वारकाखंडे भाषाटीकायां चक्र तीर्थोत्पत्तौ गज ग्राह मोक्षणं नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

नारदजी कहते हैं कि, तीर्थोंमें मुख्य शंखोद्धारमें जो स्वर्णका दान करे, वह सब उपद्रवोंसे वर्जित जो विष्णुलोक है, उसको प्राप्त होता है ॥१॥ श्रीकृष्णका भक्त शान्तात्मा त्रित नामक महामुनि तीर्थ यात्राके प्रसंगसे आनर्त देशमें आया ॥ २ ॥ सुन्दर सरोवर देखकर उसने स्नान किया, हरिकी पूजा की, उसकी पूजामें एक बहुत सुन्दर शुभ लक्षणोंसे युक्त शंख था ॥ ३ ॥ उस शंखको उनके एक कक्षीवान् नामके शिष्यने अति लोभसे चुरा लिया, पूजाका शंख जब चला गया तो त्रित मुनि क्रोधित होकर यह बोले ॥४॥जिसने हमारा पूजाका शंख लिया हो, वह निश्चय शंख हो जाओ, उसी समय कक्षीवान् शापका मारा शंख हो गया ॥५॥ तब गुरुके चरणोंमें गिर पड़ा और बोला कि हे प्रभो ! मेरी रक्षा करिये, तब शीघ्र ही शान्त चित्त होकर बोले कि, रे दुर्बुद्धी ! यह तुमने क्या किया ? चोरीके दोषसे तू पापको भोग, मेरा वचन झूँठा नहीं होगा ॥६॥ तू श्रीकृष्णके चरणकमलका भजन

श्रीनारदउवाच ॥ शंखोद्धारेतीर्थमुख्येस्वर्णदानंददातियः ॥ सगच्छेद्वैष्णवंलोकंसर्वोपद्रववर्जितम् ॥ १ ॥ श्रीकृष्णभक्तःशांतात्मात्रितो नाममहामुनिः ॥ तीर्थयात्राप्रसंगेनप्राप्तआनर्तभूमिषु ॥ २ ॥ दृष्ट्वाशुभंसरःस्नात्वाहरेःपूजांचकारह ॥ तत्पूजायांमहाशंखंसुन्दरैर्लक्षणैर्वृतम् ॥ ३ ॥ चोरयामासकक्षीवांस्तस्यशिष्योतिलोभतः ॥ पूजाशंखंगतवीक्ष्यक्रुद्धःप्राहत्रितोमुनिः ॥ ४ ॥येननीतस्तुमेशंखःसशंखोभवतुध्रुवम्॥ तदेवशंखरूपोभूत्कक्षीवाञ्छापपीडितः ॥५॥ उत्पादयोर्निपतितःपाहिमामित्युवाचह ॥ शीघ्रंशांतस्त्रितःप्राहदुर्मतेकिंकृतंत्वया ॥ स्तेयदोषाद्भुं- क्ष्वपापंमद्वचोनोमृषाभवेत् ॥ ६ ॥ भजश्रीकृष्णपादाब्जंसतेमोक्षंकरिष्यति ॥ इत्युक्त्वाथगतेराजन्त्रितेदेवेमहामुनौ ॥७॥ सरोवरेनिपतितःकक्षी- वाञ्छंखरूपधृक् ॥ प्रवदन्कृष्णकृष्णेतिशतवर्षस्थितोभवत् ॥८॥ परिपूर्णतमःसाक्षाद्भगवान्भक्तवत्सलः ॥ आगत्यसरसस्तीरंमाभैष्टेत्यभयं ददौ ॥ ९ ॥ तांमेघनादगंभीरांगिरंश्रुत्वाजलेचरः ॥ चुक्रोशपाहिपाहीतिदेवदेवजगत्पते ॥ १० ॥ भुजगेंद्रभोगरुचाभुजेनभगवान्प्रभुः॥शंखं भक्तंगजमिवप्रोज्जहारदयापरः ॥ ११ ॥ तदैवदिव्यरूपोभूच्छंखरूपंविहायसः ॥ कृतांजलिर्हरिंनत्वास्तुतिंचक्रेयदाचसः॥१२ ॥ कक्षीवानु- वाच ॥ वासुदेवनमस्तेस्तुगोविंदपुरुषोत्तम ॥ दीनवत्सलदीनेशद्वारकेशपरेश्वर ॥ १३ ॥ ध्रुवेध्रुवपदंदात्रेप्रह्लादस्यार्तिहारिणे ॥ गजस्योद्धा- रिणेतुभ्यंबलेर्बलिविदेनमः ॥ १४ ॥

कर, तेरी मोक्ष हो जायेगी, हे राजन् ! ऐसा कहकर जब त्रित वहाँसे चले गये ॥७॥ तब कक्षीवान् शंख रूप होकर सरोवरमें जा पड़ा, कृष्ण कृष्ण ऐसे कहते सौ वर्ष व्यतीत हो गये ॥८॥ परिपूर्णतम भक्त वत्सल भगवान्ने सरोवरके तीरपर आकर यह कहा कि तुम भय मत करो,ऐसे अभय दिया ॥९॥ तब उस शंखने मेघकी गर्जनाके समान गम्भीर वाणीको सुनकर पुकारा,हे देव ! हे जगत्पते ! रक्षा करिये रक्षा करिये ॥१०॥ तब सर्पसी सुडौल अपनी भुजाओंसे दयालु प्रभुने गजराजकी तरह भक्त शंखका उद्धार किया ॥११॥ उसी समय वह शंखको छोडकर दिव्य रूप हो गया,फिर प्रणाम कर हाथ जोड भगवान्की स्तुति करने लगा ॥ १२ ॥ कक्षीवान् बोला–हे वासुदेव ! आपके लिये नमस्कार है, हे गोविन्द ! हे पुरुषोत्तम ! हे दीनवत्सल ! हे दिनेश ! हे द्वारिकेश ! हे परेश्वर ! ॥१३॥ ध्रुवको पद देनेवाले, प्रह्लादकी पीडा हरनेवाले, गजका उद्धार करनेवाले,बलिकी बलि (भेंट) को जाननेवाले

आपको नमस्कार है ॥१४॥ द्रौपदीके चीरके बढानेवाले विष, अग्नि और वनवाससे पाण्डवोंकी रक्षा करनेवाले, आपके लिये नमस्कार है ॥ १५ ॥ यादवोंकी रक्षा करनेवाले, इन्द्रसे गोपोंकी रक्षा करनेवाले, गुरु माता, ब्राह्मण, इनको पुत्र देनेवाले, आपके लिये नमस्कार है ॥१६॥ जरासंधके रोकनेसे आर्त राजाओंके मोक्ष करने वाले, नृग राजाका उद्धार करने वाले, सुदामाकी दीनता हरनेवाले, आपके लिये नमस्कार है ॥१७॥ वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, इस चतुर्व्यूहके लिये नमस्कार है ॥१८॥ तुम ही माता हो, तुम ही पिता हो, तुम ही बन्धु सखा हो, तुम ही विद्या हो, तुम ही द्रव्य हो, हे देवदेव ! तुम ही मेरे सब हो ॥१९॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे भगवान्‌की स्तुति करके प्रेमसे पूर्ण हुआ वह कक्षीवान् विमान में बैठकर यादवोंके देखते २ वैकुण्ठको गया ॥ २० ॥ दशों दिशाओंमें प्रकाश करता, सौ सूर्यकासा जिसका तेज, ऐसा वह निरुपद्रव जो विष्णु लोक उसको गया ॥ २१ ॥ हे

द्रौपदीचीरसंत्राणकारिणेहरयेनमः ॥ गराग्निवनवासेभ्यःपांडवानांसहायिने ॥१५॥ यादवत्राणकर्त्रेचशक्रादाभीररक्षिणे ॥ गुरुमातृद्विजानांच पुत्रदात्रेनमोनमः ॥१६॥ जरासंधनिरोधार्तनृपाणांमोक्षकारिणे ॥ नृगस्योद्धारिणेसाक्षात्सुदाम्नोदैन्यहारिणे ॥१७॥ वासुदेवायकृष्णायनमः संकर्षणायच ॥ प्रद्युम्नायानिरुद्धायचतुर्व्यूहायतेनमः ॥१८॥ त्वमेवमाताचपितात्वमेवत्वमेवबन्धुश्चसखात्वमेव ॥ त्वमेवविद्याद्रविणंत्वमेव त्वमेवसर्वंममदेवदेव ॥१९॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंस्तुत्वाहरिंराजन्कक्षीवान्प्रेमपूरितः ॥ विमानवरमास्थाययादवानांचपश्यताम् ॥ २० ॥ विभ्राजयन्दशदिशःशतसूर्यसमप्रभः ॥ जगामवैष्णवंलोकंसर्वोपद्रववर्जितम् ॥२१॥ शंखोद्धारःकृतोयस्मिन्हरिणामैथिलेश्वर ॥ तस्मात्तीर्थं-महापुण्यंशंखोद्धारप्रथांगतम् ॥ २२ ॥ शंखोद्धारकथामेतां यःशृणोतिनरोत्तमः ॥ शंखोद्धारस्नानफलंलभतेवैनसंशयः ॥ २३ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेशंखोद्धारमाहात्म्यंनामद्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ प्रभासस्यापि-माहात्म्यं शृणुराजन्महामते ॥ सर्वपापहरंपुण्यंतेजसांवर्द्धनंपरम् ॥ १ ॥ गोदावर्यांगुरौसिंहेहरक्षेत्रेचकुंभगे ॥ रविग्रहेकुरुक्षेत्रेकाश्यांचन्द्र-ग्रहेतथा ॥ २ ॥ यत्पुण्यंलभतेराजन्स्नानतोदानतोनरः ॥ तस्माच्छतगुणंपुण्यंप्रभासेचदिनेदिने ॥ ३ ॥

मैथिलेश्वर ! हरिने जो इस तीर्थमें शंखका उद्धार किया, इससे बडे पवित्र इस तीर्थका नाम शंखोद्धार तीर्थ हुआ ॥ २२ ॥ शंखोद्धार तीर्थकी इस कथाको जो मनुष्य सुनता है वह निस्सन्देह शंखोद्धारके स्नानके फलको प्राप्त होता है ॥२३॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां शंखोद्धार वर्णननाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ नारदजी बोले कि हे राजन् ! अब प्रभासका माहात्म्य सुनो, हे महामते ! जो सब पापोंको हरनेवाला और तेज बढानेवाला है ॥ १ ॥ गोदावरीमें तो सिंहकी बृहस्पतिमें, हरिद्वारमें कुम्भकी बृहस्पतिमें, और सूर्यग्रहणमें कुरुक्षेत्रमें, काशीमें चन्द्रग्रहणमें ॥२॥ इनमें स्नान, दान करनेसे जो कुछ पुण्य होता है, उनसे सौगुना पुण्य प्रभास क्षेत्रमें दिन दिनमें होता है ॥ ३ ॥

इसी प्रभास तीर्थमें स्नान करके दक्षके शापसे क्षयरोगसे पीडित चन्द्रमा शापसे छूट गया और उसकी नष्ट हुई कला फिर प्राप्त होगई ॥४॥ जिस प्रभासतीर्थमें महापुण्य तथा पश्चिम वाहिनी सरस्वती है, जिसमें पापीभी स्नान करे, तो ब्रह्ममय हो जाता है ॥५॥ उसके तीरपर एक बोधि पीपल है, जहाँ श्रीकृष्णने उद्धवको भागवत दान किया हैं ॥६॥ वहाँ स्नान कर विधिसे पूजन कर बोधि पीपलको स्पर्शकर वेदके तुल्य भागवत पुराणको जो सुने ॥७॥ एक श्लोक आधी अथवा चौथाई मनको जीतकर मौन होकर सुने तो वैष्णवपद उसके हाथमें हो ॥ ८ ॥ इसी प्रभासमें भाद्रपद मासकी पूर्णमासीको स्वर्णके सिंहासन पर धरकर जो मनुष्य भागवतका दान करे, वह परम गतिको प्राप्त होता है ॥ ९ ॥ जिन्होंने अपने कानोंसे श्रीमद्भागवत नहीं सुनी, उन मनुष्योंका भूमिमें जन्म वृथाही गया ॥१०॥ जिन्होंने भागवत पुराण नहीं सुना, न पुराण पुरुषका आराधन किया, और ब्राह्मणोंका विधिपूर्वक

यत्रस्नात्वादक्षशापाद्गृहीतोयक्ष्मणोडुराट् ॥ विमुक्तःकिल्बिषात्सद्योभेजेभूयःकलोदयम् ॥४॥ महापुण्यतमाराजन्यत्रप्रत्यक्सरस्वती ॥ तस्यां स्नात्वानरःपापीसाक्षाद्ब्रह्ममयोभवेत् ॥५॥ तत्तीरेवर्ततेराजन्नाम्नावैबोधपिप्पलम् ॥ कृष्णेनयत्रोद्धवायदत्तंभागवतंशुभम् ॥६॥ तंनत्वाभ्यर्च्यविधिवत्स्पृष्ट्वाश्रीबोधपिप्पलम् ॥ शृणोतियोभागवतंपुराणंब्रह्मसंमितम् ॥७॥ श्लोकार्धंश्लोकपादंवामौनीनियतमानसः ॥ तस्यपाणौ भवेद्राजन्वैष्णवंपरमंपदम् ॥ ८ ॥ प्रौष्ठपद्यांपूर्णिमायांहेमसिंहसमन्वितम् ॥ ददातियभागवतंसयातिपरमांगतिम् ॥९॥ पुराणं नश्रुतंयैस्तु श्रीमद्भागवतं क्वचित् ॥ तेषांवृथाजन्मगतंनराणांभूमिवासिनाम् ॥१०॥ यैर्नश्रुतंभागवतंपुराणंनाराधितोयैःपुरुषःपुराणः ॥ हुतंमुखेनैवधरामराणांतेषांवृथाजन्म गतंनराणाम् ॥ ११ ॥ द्वारावत्यांतीर्थराजंगोमतीसिंधुसंगमम् ॥ यत्रस्नात्वानरोयातिवैकुण्ठंविमलंपदम् ॥१२॥ शताश्वमेधजंपुण्यंगंगासागर संगमे ॥ तस्मात्सहस्रगुणितंगोमतीसिंधुसंगमे ॥ १३ ॥ अत्रैवोदाहरंतीममितिहासंपुरातनम् ॥ यस्यश्रवणमात्रेणपापतापात्प्रमुच्यते ॥१४॥ आसीद्गजाह्वयेवैश्योराजमार्गपतिःपरः ॥ महागौरवसंयुक्तोनिधीशोधनदोयथा ॥१५॥ वेश्याप्रसंगनिरतोविटगोष्ठीविशारदः ॥ द्यूतक्रीडनकासक्तोलोभमोहमदान्वितः ॥१६॥ मृषावादीमहादुष्टःकुकर्मनिरतःसदा ॥ ब्राह्मणेभ्योनपितृभ्योनदेवेभ्योधनंददौ ॥१७॥ हरेःकथांप्रेक्ष्यदूराद्दूरं वैनिर्ययौत्वरम् ॥ पित्रोःसेवापिनकृतानपुत्रेभ्योधनंददौ ॥ १८ ॥

जिन्होंने भोजन सत्कार नहीं किया, उन मनुष्योंका जन्म वृथाही गया ॥ ११ ॥ द्वारिकामें तीर्थराज गोमती सिन्धु संगम है, जहां स्नान करके मनुष्य निर्मल वैकुण्ठ पदको जाता है ॥१२॥ सौ अश्वमेध यज्ञका फल तो गङ्गा सागरके स्नानसे होता है, उसीसे भी हजार गुणा फल गोमती सागर संगममें होता है ॥१३॥ यहां एक पुराना इतिहास वर्णन करते हैं, जिसके श्रवण मात्रहीसे सब पापोंका ताप नष्ट होजाता है ॥१४॥ पहिले हस्तिनापुरमें एक वैश्य चौधरी था, उसका बडा गौरव था, और कुबेरके समान धनवान था ॥ १५ ॥ वह वेश्याओंके प्रसंगमें निरत था, विट (भडुआ) गोष्ठीमें बडा प्रवीण था, जुआका खेल करता था, लोभ मोह, मदसे युक्त था ॥१६॥ झूठ बोलने वाला, महादुष्ट, सदाही कुकर्ममें निरत उसने ब्राह्मण, पितर और देवताओंके लिये धन कभी नहीं दिया ॥१७॥ भगवान्‌की कथाको देख दूरही दूर होजाता, उसने कभी माता पिताकी सेवा नहीं की, न कभी पुत्रोंको धन दिया ॥१८॥

धनाढ्य, दुर्बुद्धि, दुष्ट यह स्त्रीको छोडकर पृथक् होगया, वेश्याके प्रसंगसे उसका आधा धन नष्ट होगया ॥१९॥ और आधा धन चोर लेगये और कुछ पृथ्वीमेंही अपने आप नष्ट होगया, क्योंकि पुण्यसे तो लक्ष्मी बढती है पापसे नष्ट होजाती है ॥२०॥ ऐसे वह निर्धन होगया, वेश्यामें आसक्त बडा दुष्ट वह हस्तिनपुरमें चोरी करने लगा ॥ २१ ॥ जब चोरी करने लगा, तब शांतनु राजाने रस्सियोंसे बांधकर देशसे निकाल दिया ॥२२॥ वनमें रहते भी वनके जीवोंकी हिंसा करने लगा, जब वहाँ बारह हजार वर्षतक मेह नहीं बरसा ॥२३॥ तब तो वह वैश्य अकालसे पीडित होकर पश्चिम दिशाको चला गया, तब वनमें ही उस वैश्यको सिंहने थाप देकर मार डाला ॥२४॥ तभी यमराजके दूत पाशमें बांध कोडोंसे मारते नीचे मुख कराकर यम मार्गको ले चले ॥२५॥ इतनेमें कोई एक गृध्र उसकी भुजाका मांस लेकर आकाशमें उठ गया, चोंचसे खाने लगा ॥२६॥ तब अन्य पक्षी मांस नहीं खाने

त्यक्त्वाभार्यांसभिन्नोभूद्धनाढ्योदुर्मतिःखलः ॥ वेश्याप्रसंगात्तस्यापिधनार्द्धंप्रक्षयंगतम् ॥ १९॥ अर्धंतुतस्करैर्नीतंकिंचित्पृथ्व्यांगतंस्वतः ॥ पुण्ये-
नवर्द्धतेलक्ष्मीःपापेनक्षीयतेध्रुवम् ॥२०॥ एवंसनिर्धनोजातोवेश्यासक्तोमहाखलः ॥ तस्मिन्गजाह्वयेरम्येचौर्यंकर्मचकारह ॥ २१ ॥ चौर्यकर्म
प्रकुर्वंतंबद्ध्वातंदामभिर्नृपः ॥ देशान्निःसारयामासशंतनुर्नृपतीश्वरः ॥२२॥ वनेपिनिवसन्सोपिजीवहिंसांचकारह॥समाद्वादश साहस्रंनववर्षय-
दावनः ॥ २३ ॥ पश्चिमांतुदिशंप्रागाद्वैश्योदुर्भिक्षपीडितः ॥ वनेवैमारितःसोपिसिंहेनतलघाततः ॥२४॥ तदैवयमदूतास्तं बद्ध्वापाशैरधो-
मुखम् ॥ कशाघातैस्ताडयंतोनिन्युर्मार्गेयमस्यच ॥२५॥ अथकश्चिन्महान्गृध्रोमांसंतस्यभुजस्यच ॥ गृहीत्वाखंगतःसद्यः खादंश्चंचुपुटेनतम्
॥२६॥ निरामिषाःखगाश्चान्येस्वामिषंजग्मुरातुराः ॥ एवंकोलाहलेजातेशंखचिल्लादिभिःकृते ॥२७॥ नजहौमुखतोमांसंपश्चिमाशांजगामह ॥
तत्समेनापिगृध्रेणतीक्ष्णतुंडेनताडितात् ॥ २८ ॥ तन्मुखात्प्रपतन्मांसंगोमतीसिंधुसंगमे ॥ तीर्थप्लुतेतस्यमांसे वैश्योयंपातकीमहान् ॥२९॥
तेषांपाशान्स्वयंछित्त्वाभूत्वादेवश्चतुर्भुजः ॥ पश्यतांयमदूतानांविमानमधिरुह्यसः ॥ ३० ॥ विराजयन्दिशः सर्वाःपरंधामहरेर्ययौ ॥ ३१ ॥
गोमतीसिंधुसंगस्यमाहात्म्यंशृणुतेनरः ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तोविष्णुलोकंप्रयातिसः ॥३२॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्व
संवादेप्रभाससरस्वतीबोधपिप्पलगोमतीसिंधुसंगममाहात्म्यंनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

वाले आतुर आकर चिल्लाने लगे, ऐसा कोलाहल शंख चील्होंने जब किया ॥२७॥ तो भी उसने अपने मुखमेंसे मांस नहीं छोडा और पश्चिम दिशाको चला, तब उसकी बराबरके बडी तीक्ष्ण चोंचवाले गीधने उसको मारा ॥२८॥ तब उसके मुखसे वह मांस गोमती सिन्धुके संगममें गिर पडा, उसके तीर्थमें पडतेही, वह महापातकी वैश्य ॥२९॥ यमदूतोंके पाशको स्वयम्ही काटकर चतुर्भुज होकर उन सब यमदूतोंके देखते २ विमानपर चढकर ॥ ३० ॥ दशों दिशाओंमें प्रकाश करता हरिके परम धामको चला गया ॥ ३१ ॥ गोमती सिंधु संगमके इस माहात्म्यको सुने तो, सब पापोंसे छूटकर वह विष्णु लोकको जाता है ॥३२॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां प्रभा० गोमती सिन्धु संगम माहात्म्यं नामत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

नारदजी कहते हैं कि, हे राजन् ! अब हम द्वारावती और समुद्रका माहात्म्य वर्णन करते है उसको हे मानद ! तुम सुनो, जो सब पापोंको हरनेवाला और स्नानके फलको देनेवाला है ॥१॥ जो मनुष्य चैत्रकी पूर्णमासीको व्रती होकर स्नान करके समुद्रका पूजनकर प्रणाम करके रत्नोंका दान करे ॥२॥ उसकी देहमें ब्रह्मा, विष्णु, महेश, तीनों देवता निवास करते हैं, और उसके दर्शनहीसे मनुष्य कृतार्थ हो जाता है ॥ ३ ॥ और उसकी देहके स्पर्शसेही ब्रह्महत्या तत्काल छूट जाती है, और जहाँ २ वह जाता है,वहाँ २ पृथ्वी शुभ होती है ॥ ४ ॥ उसको देखकर जगद्वधकारी भी पापी होवे, तो भी पापोंके पटल छूटकर मोक्ष हो जाती है ॥ ५ ॥ हे मानके दाता ! अब रैवत पर्वतका माहात्म्य सुनो, जो सब पापोंका नाश करने वाला और भुक्ति मुक्तिका देनेवाला है ॥६॥ गौतमका पुत्र मेधावी नामका एक विष्णु भक्त था, उसने विन्ध्याचल पर्वतपर लाख वर्षतक तप किया ॥७॥ उसको देखने

॥ श्रीनारदउवाच ॥ द्वारावत्यासमुद्रस्यमाहात्म्यंशृणुमानद ॥ सर्वपापहरंपुण्यंतत्स्नानफलदंस्मृतम् ॥ १ ॥ माधव्यांपूर्णमास्यांयो व्रतीस्नात्वानदीपतिम् ॥ नत्वासम्पूज्यविधिवद्रत्नदानंकरोतियः ॥ २ ॥ तस्यदेहेत्रयोदेवानिवसंतिमहीपते ॥ यस्यदर्शनमात्रेणनरोयातिकृतार्थताम् ॥ ३ ॥ तद्देहस्पर्शनात्सद्योब्रह्महत्याप्रमुच्यते ॥ यत्रयत्रगतःसोपितत्रतत्रचभूःशुभा ॥४॥ दृष्ट्वातंचमृतःपापीजगद्वधकरोपिहि ॥ छिनत्तिपापपटलंपरंमोक्षंप्रयातिहि ॥५॥ रैवतस्याथशैलस्यमाहात्म्यंशृणुमानद ॥ सर्वपापहरंपुण्यंभुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥ ६ ॥ गौतमस्यसुतोधीमान्मेधावीनामवैष्णवः॥ विंध्याचलेतपस्तेपेवर्षाणामयुतंशतम् ॥७॥ तंद्रष्टुमागतःसाक्षादपांतरतमोमुनिः ॥ नोच्चचालासनात्सोपिमेधावीतपसोत्कटः ॥ ८ ॥ अपांतरतमस्तंवैशशापक्रोधपूरितः ॥ सतामभक्तपापात्मंस्तपोबलविगर्वितः ॥ ९ ॥ शैलवत्तेस्थितिश्चात्रत्वंशैलोभवदुर्मते ॥ इत्युक्त्वाथगतेसाक्षादपांतरतमेमुनौ ॥ १० ॥ मेधावीशैलतांप्राप्तःश्रीशैलस्यसुतोऽभवत् ॥ जातिस्मरोमहाबुद्धिर्विष्णुभक्तेःप्रभावतः ॥ ११ ॥ एकदामन्मुखाच्छ्रुत्वामाहात्म्यंद्वारकापुरः ॥ प्रोवाचसोपिराजानंरैवतंगच्छसत्वरम् ॥१२॥ वदमत्प्रार्थनामुक्तांत्वंमहादीनवत्सलः॥ सोयं महाबलोराजाप्रसन्नोयदिवाभवेत् ॥ १३ ॥

के लिये अपांतरतम मुनीश्वर आये, तब वह तपोत्कट मेधावी उनको देखकर उठा नहीं ॥ ८ ॥ तब अपांतरतमको क्रोध आगया, तभी ऋषि अपांतरतमने शाप दिया कि,हे संतोंके अभक्त ! पापी तुमको तपका ऐसा गर्व आगया है ॥९॥ और पर्वतसा बैठा रहा, इससे हे दुर्बुद्धी ! तू पर्वतही होजा, ऐसे कहकर अपांतरतम मुनि चले गये ॥१०॥ तब मेधावी ऋषि शैलताको प्राप्त होकर श्रीशैलका पुत्र हुआ, किन्तु विष्णुकी भक्तिके प्रभावसे उस महाबुद्धिको अपने पूर्वजन्मकी स्मृति बनी रही ॥ ११ ॥ नारदजी कहते हैं कि, एक समय द्वारकापुरका माहात्म्य मेरे मुखसे सुनकर वह श्रीशैलका पुत्र मुझसे बोला कि, हे महाराज ! तुम रैवत राजाके पास जल्दी जाओ ॥ १२ ॥ आप दीन वत्सल हो, मेरी कही प्रार्थना को उसको जाकर कहो, यदि वह महाबली राजा मुझपर प्रसन्न होवे तो ॥ १३ ॥

यदि वह रैवत राजा मुझको ले जायगा, तो मेरा द्वारकामें वास होगा, तब नारदजी कहते हैं कि,विष्णु भक्तोंकी शान्ति करनेवाले मैंने ॥ १४ ॥ यह सुनकर रैवत राजासे आकर श्रीशैलके पुत्रका कहा हुआ वचन कहा, तब रैवत राजा प्रसन्न होकर मुझसे यह बोला कि, ठीक है, यहाँ कोई पर्वतभी नहीं है॥१५॥ सो मैं उस पर्वतको अपनी भुजाओंके बलसे उखाड़कर यहाँ लाकर द्वारिकामें उसकी स्थापना करूँगा, यह प्रतिज्ञा रैवत राजाने की,॥१६॥फिर रैवत राजा उस पर्वतको चुरानेके लिये गया, उससे पहलेही मैं श्रीशैलके पास गया ॥१७॥ युद्ध देखनेके लिये मैंने श्रीशैलसे चोरीका सब वृत्तान्त कह दिया कि, हे श्रीशैल ! रैवत नामका राजा यहाँ आता है, वह तेरे पुत्रको यहाँसे चुराकर ले जायगा, तुम सावधान रहना ॥१८॥ तब श्रीशैल पर्वत पुत्रके स्नेहके मारे अरे ! तू कहाँ जायगा ? ऐसे पुत्रको फटकारकर हिमाचल और सुमेरु इन दोनोंकी शरणमें गया ॥ १९ ॥ और धर्मात्मा श्रीशैल पर्वत पुत्र स्नेहमें आतुर हो दोनोंसे यह बोला कि, हे पर्वत राजाओ ! यह एकही पुत्र दैवने मुझको दिया है, मेरे बहुतसे तो हैं ही नहीं ॥ २० ॥ उसको लेनेके लिये

तेननीतस्यमेवासोभविष्यतिहरेःपुरि॥इतिश्रुत्वामयाविष्णुभक्तानांशांतिकारिणा॥१४॥ रैवतायाशुकथितंतथोक्तंपरमंवचः॥सप्रसन्नःप्राहराजन्नत्रकोपिनपर्वतः ॥ १५ ॥ तत्स्थापनांकरिष्यामिसमुत्पाट्यभुजाबलात् ॥ समुन्नीयद्वारकायांप्रतिज्ञामकरोदिमाम् ॥१६॥ एतस्मिंस्तंचोरयितुंप्रयातेनृपसत्तमे ॥ तत्पूर्वस्मादहंप्राप्तःश्रीशैलस्यपुरेनृप ॥ १७ ॥ कलिप्रियेणापिमयाश्रीशैलायमहात्मने ॥ कथितःसर्ववृत्तांतोनृपचौर्यसमन्वितः ॥ १८ ॥ श्रीशैलःपुत्रमोहेननिर्भर्त्स्यैतिक्वयासिहि ॥ सुमेरुंगिरिराजंचहिमवंतंनगेश्वरम् ॥ १९ ॥ श्रीशैलःप्राहधर्मात्मापुत्रस्नेहसमाकुलः ॥ एकोदैवेनदत्तोयंनपुत्राबहवश्चमे ॥ २० ॥ तंहर्तुमागतेराज्ञिरैवतेवैमहाबले ॥ विदेशंयातिपुत्रोमेतेनराज्ञामहात्मना ॥ २१ ॥ पुत्रस्नेहाभिभूतोहं युवयोःशरणंगतः ॥ जित्वातंरैवतंशीघ्रंपुत्रंमांदातुमर्हथ ॥ २२ ॥ जातेश्चकारणात्तौद्वौसुमेरुश्चहिमाचलः ॥ शैललक्षैःपरिवृतौयोद्धुमाजग्मतुर्द्रुतम् ॥ २३ ॥ ततोभुजाभ्यामुत्पाट्यहनुमानिवतंगिरिम् ॥ ऊर्ध्वंकृत्वाबलाद्राजायदागंतुंमनोदधे ॥ २४ ॥ तदैवचागतान्वीक्ष्यगिरीञ्छस्त्रास्त्रधारिणः ॥ अट्टहासंचकारोच्चैस्तडित्पातमिवात्मनः ॥ २५॥ ननादतेनब्रह्मांडंसप्तलोकैर्बिलैःसह ॥ तदैवतेषांशस्त्राणिहस्तेभ्योन्यपतन्स्वतः ॥ २६ ॥ निःशस्त्रास्तेयदाशैलाःकुर्वंतःप्रध्वनिंमुहुः ॥ गच्छंतंसगिरिंजघ्नुर्मुष्टिभिर्जानुभिःपथि ॥ २७ ॥

रैवत राजा आया है, वह महाबली हैं, सो महात्मा वह राजा मेरे पुत्रको विदेशको लिये जाता है, पुत्र मेरा जानेको तैयार है,सो ॥२१॥ पुत्र स्नेहमें अभिभूत मैं तुम दोनोंकी शरण प्राप्त हुआ हूँ, सो तुम दोनों उस रैवतको जीतकर मेरे पुत्रको छुडाओ ॥२२॥ तब जातिके कारणसे वे दोनों हजारों लाखों पर्वतोंको साथ लेकर रैवत राजासे युद्ध करनेके लिये आये ॥२३॥ तबतक राजा रैवतने भुजाओंसे उखाडकर उस पर्वतको बडे बलसे हनुमानकी तरह ऊपरको उठाकर चलनेको मन किया ॥२४॥ तबही लडनेको आये शस्त्रास्त्रधारी पर्वतोंको देखकर राजा रैवतने अट्टहास किया, जैसे बिजली गिरती है ॥ २५ ॥ उससे सातों बिल सातोंलोकोंसमेत ब्रह्माण्ड झंकार उठा, उसी समय उन पर्वतोंके हाथोंमेंसे अपने आप सब अस्त्र शस्त्र गिर पडे ॥ २६ ॥ जब वे पर्वत निःशस्त्र हो गये, तब बारम्बार शब्द करते पर्वत ले जाते राजासे घूंसोंसे, घुटनोंसे, पत्थरोंसे लडने लगे ॥ २७ ॥

जैसे पहिले हनुमान् महाबलीके पीछे ताडना करते द्रोणके रखवाले आये थे, तो भी राजाने पर्वतको अपने हाथसे नहीं छोडा ॥ २८ ॥ तब मेरे मुखसे श्रीहरिने पर्वतोंके इस उद्योग को सुनकर जल्दी भक्तकी सहायताके लिये भक्त वत्सलने ॥२९॥ आकाश मार्गसे आकर अपना तेज दिया, और तुम भय मत करो, ऐसे अभय देकर अन्तर्धान हो गये, ॥३०॥ जब भगवान् चले गये, तब भगवान्के तेजसे युक्त हुये राजा रैवतने एक हाथमें तो पर्वत ले लिया और दूसरे हाथकी मुट्ठी बांध वज्रसे घूंसेसे ॥३१॥ इन्द्रकी तरह सुमेरुको मारा, उस राजाके घूंसेके मारे सुमेरु विह्वल हो गया ॥३२॥ फिर हिमाचलको भुजाके वेगसे मारकर धरतीमें गिराकर अन्य विन्ध्यादिक पर्वतोंको पांवोंसे मसल डाला॥३३॥ तब विंध्यादिक समस्त पर्वत पांवोंसे मर्दित हुये भयभीत होकर रणको छोडकर दशों दिशाओंमें भाग गये ॥ ३४ ॥ ऐसे पर्वतोंके संघको जीतकर पर्वतोंके समान वह राजा पर्वतको ले आया,

यथापुराहनूमंतमनुयातामहाबलम् ॥ तैस्ताडितोपिनजहौगिरिंराजाकराग्रतः ॥ २८ ॥ मन्मुखाच्छ्रीहरिःश्रुत्वाशैलोद्योगंनृपोपरि ॥ सद्यो भक्तसहायार्थंभगवान्भक्तवत्सलः ॥२९॥ आगत्याकाशमार्गेपिदत्त्वातेजःस्वकंपरम् ॥ माभैष्टेत्यभयंदत्त्वात्वरमन्तरधीयत ॥ ३० ॥ गतेहरौ भगवतिभगवत्तेजसान्वितः ॥ एकहस्तेगिरिंधृत्वामुष्टिनावज्रघातिना ॥ ३१ ॥ सुमेरुंसंतताडाशुवज्रीवबलवत्तरः ॥ तस्यमुष्टिप्रहारेणमेरुर्विह्वल तांगतः ॥ ३२ ॥ हिमवंतंबाहुवेगात्पातयित्वामहीतले ॥ ममर्दपद्भ्यांचान्यांश्चविंध्यादीन्रणदुर्मदः ॥ ३३ ॥ विंध्यादयश्चतेसर्वेपादघातेनमर्दिताः ॥ भयभीतारणंत्यक्त्वादुद्रुवुस्तेदिशोदश ॥३४॥ एवंजित्वाशैलसंघंतंशैलंशैलसन्निभः ॥ रैवतोविजयारावैरानर्तेषुन्यपातयत् ॥३५॥ सोभूद्रैवतनामापिराजन्रैवतकोचलः ॥ हरिभक्तःशैलमुख्योद्वारावत्यांविराजते ॥३६॥ तस्यदर्शनमात्रेणब्रह्महत्याप्रमुच्यते ॥ स्पर्शनाच्छतयज्ञानांफलमाप्नोतिमानवः ॥ ३७ ॥ यात्रांकृत्वाचयस्यापिपरिक्रम्यनताननः ॥ भोजनंब्राह्मणेदत्त्वायातिविष्णोःपरंपदम्॥३८॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेरत्नाकररैवतकाचलमाहात्म्यंनामचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तस्मिन्गिरौयज्ञतीर्थंरैवतेनकृतंपुरा ॥ यत्रकृत्वायज्ञमेकंकोटियज्ञफलंलभेत् ॥१॥ कपिटंकंनामतीर्थंकपिपातसमुद्भवम्॥ गिरौरैवतकेराजन्सर्वपापप्रणाशनम् ॥ २ ॥ भौमासुरसखोदुष्टोद्विविदोनामवानरः ॥ मारितोयत्ररामेणमुष्टिनावज्रपातिना ॥ ३ ॥

जय जय शब्दके साथ आनर्त देशमें लाकर स्थापित कर दिया ॥ ३५ ॥ सो वह रैवत राजाका पर्वत रैवत नामका हुआ, पर्वतोंमें मुख्य भगवान्का भक्त पर्वत अबतक द्वारावतीमें विराजता है ॥३६॥ उसके दर्शन मात्रासे ब्रह्महत्या नष्ट हो जाती हैं, और स्पर्श करनेसे सौ यज्ञोंका फल मिलता है ॥३७॥ उसकी यात्रा करे, परिक्रमा देवे, प्रणाम करे, ब्राह्मणोंको भोजन कराये तो वह मनुष्य विष्णुके परमपदको जाता है ॥३८॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां रत्नाकर रैवताचल माहात्म्यं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥ नारद जी कहते हैं कि, उस पर्वतमें रैवत राजाने पहिले यज्ञतीर्थ किया है, उसमें जो एक यज्ञ करे, उसको करोड यज्ञका फल होवे ॥१॥ वहां ही कपिटंक एक तीर्थ है वानरके गिरनेसे हुआ है, वह रैवत गिरिमें ही है, वो हे राजन् ! सब पापोंका नाश करने वाला है ॥२॥ भौमासुरका सखा द्विविद नामका बन्दर था, सो रामने जहां घूंसेसे मारा था, तब वह उस वज्रसे

घूंसेके मारे संतोंकी अवज्ञा करनेवाला भी तत्काल ही मुक्तिको प्राप्त हो गया, जिसमें स्नान करनेको देवता आया करते हैं ॥३॥ ४ ॥ कलविंककी यात्रामें करोड गोदानका फल होता है, उससे चौगुना फल दण्डकारण्डमें होता है ॥५॥ उससे चौगुना फल सैंधववनमें होता है, उससे पांच गुना फल जम्बू मार्गमें मनुष्यको प्राप्त होता है ॥ ६ ॥ उससे दश गुना पुण्य पुष्करवनमें माना है, उससे दशगुना पुण्य उत्पलावर्तकी यात्रामें है॥७॥उससे नैमिषारण्यमें दशगुना पुण्य है, उससे सौगुना पुण्य है राजन्! कपिटकमें है ॥८॥ द्वारिकामें नृग कूप है तीर्थोंमें उत्तम तीर्थ है, जिसके दर्शनसे ही ब्रह्महत्या छूटती है॥९॥जहां अज्ञानसे नृगने किसी ब्राह्मणकी गौ दूसरे किसी ब्राह्मणको दे दी थी, जिससे वह नृग राजा गिरगिट हो गया था ॥१०॥ जिस कूपमें दानियोंमें श्रेष्ठ राजा नृग भी चार युग तक पडा रहा, जिसकी संतोंके देखते २ श्रीकृष्णने उद्धार किया ॥ ११ ॥ उस दिनसे वह नृगकूप

सद्योमुक्तिंगतःसोपिसतांहेलनवानपि ॥ तत्रस्नातुंसदादेवाआगच्छंतिनरेश्वर ॥४॥ कलविंकस्ययात्रायांकोटिगोदानजंफलम् ॥ एतच्चद्विगुणंपुण्यं दण्डकाख्येवनेशुभे॥५॥ तस्माच्चतुर्गुणंपुण्यंसैंधवाख्येमहावने ॥ जंबुमार्गेपंचगुणंपुण्यंप्राप्नोतिमानवः ॥ ६ ॥ तस्माद्दशगुणंपुण्यंपुष्कराख्ये वनेस्मृतम् ॥ तस्माद्दशगुणंपुण्यमुत्पलावर्तयात्रया ॥ ७ ॥ तस्माच्चनैमिषारण्येपुण्यंदशगुणंस्मृतम् ॥ तस्माच्छतगुणंपुण्यंकपिटंके विदेहराट् ॥८॥ नृगकूपंद्वारकायांतीर्थानांतीर्थमुत्तमम् ॥ यस्यदर्शनमात्रेणविप्रघातात्प्रमुच्यते ॥९॥ अज्ञानाद्ब्राह्मणस्यापिगांददौब्राह्मणायसः ॥ तेन पापेनकूपेवैकृकलासवपुर्द्धरः ॥१०॥ नृगोपिदानिनांश्रेष्ठःपतितोथचतुर्युगम्॥श्रीकृष्णेनतदुद्धारःकृतोवैपश्यतांसताम् ॥ ११ ॥ तद्दिनान्नृगकूपंतुतीर्थीभूतंमहीपते ॥ कार्तिकेपूर्णिमायांतुतस्मिन्स्नानंसमाचरेत् ॥१२॥ कोटिजन्मकृतात्पापान्मुच्यतेनात्रसंशयः॥ एकंयत्रापिगोदानंकरोतिविधिवन्नरः ॥ १३ ॥ कोटिगोदानजंपुण्यंलभतेवैनसंशयः॥ गोपीभूमेश्चमाहात्म्यंशृणुपापहरंपरम् ॥१४॥ यस्यश्रवणमात्रेणकर्मबंधात्प्रमुच्यते ॥ गोपीनांयत्रवासोभूत्तेनगोपीभुवःस्मृताः॥१५॥गोप्यंगरागसंभूतंगोपीचन्दनमुत्तमम् ॥ गोपीचन्दनलिप्तांगोगंगास्नानफलंलभेत्॥१६॥ महानदीनांस्नानस्यपुण्यंतस्यदिनेदिने ॥ गोपीचन्दनमुद्राभिर्मुद्रितोयः सदाभवेत् ॥१७॥ अश्वमेधसहस्राणिराजसूयशतानिच ॥ सर्वाणितीर्थदानानिव्रतानिचतथैवच ॥ कृतानितेननित्यंवैसकृतार्थोनसंशयः ॥ १८ ॥

तीर्थरूप हो गया, हे महीपते! कार्तिककी पूर्णमासीको उसमें स्नान करे तो ॥१२॥ करोड जन्मोंके पापसे वह निःसन्देह छूट जाता है, उसमें यदि मनुष्य एक भी गोदान करे तो उसको ॥१३॥ निस्सन्देह कोटि गोदानका फल होवे, अब गोपी भूमिका माहात्म्य सुनो जो पापको हरनेवाला है ॥१४॥ जिसके श्रवण मात्रसे ही मनुष्य कर्मोंके बन्धनसे छूट जाता है, वहां गोपियोंका वास हुआ था, इसीसे उसका गोपीभुव नाम हुआ, वहाँ गोपियोंके अंगरागसे गोपी चन्दन हुआ है, जिस गोपीचन्दनके लगानेसे गंगा स्नानका फल होता है ॥ १५ ॥ १६ ॥ महानदियोंके स्नानका फल उसके दिन दिनमें होता है, जो नित्य गोपीचन्दन लगाया करे, तो नित्य गंगा स्नानका फल होवे ॥१७॥ हजार अश्वमेध यज्ञ करने और सौ राजसूय यज्ञ करनेका, सब तीर्थ, दान, व्रत करनेका जो फल होता है, वह गोपीचन्दन लगानेवालेको निसंदेह होता है और वह पुरुष नित्य कृतार्थ गिना जाता है ॥१८॥

गंगाकी रजसे तो चित्रकूटकी रजका दुगुना फल है, उससे पंचवटीकी रजका दशगुना फल है ॥१९॥ उससे सौगुना गोपीचन्दनका फल है, गोपीचन्दनका और वृन्दावनकी रजका बराबर फल है ॥२०॥ गोपीचन्दनसे लिया है अंग जिसका, वह सैकडों पापोंसे युक्त भी हो, तो भी उसको ले जानेकी यमराजको भी सामर्थ्य नहीं है, यमदूतोंकी तो बात ही क्या है ॥ २१ ॥ यद्यपि पापी भी होवे, और जो नित्य गोपीचन्दनको धारण करे तो वह नर प्रकृतिसे परे भगवान्‌का जो गोलोक धाम है, उसको जाता है ॥२२॥ पहिले सिन्धु देशमें एक दीर्घबाहु नामका राजा हुआ है वह अन्यायवर्ती दुष्टात्मा सदा वेश्याओंके संगमें लगा रहता था ॥२३॥ उसने भरतखण्डमें सौ ब्रह्महत्यायें की थीं, और उस दुष्टने दश गर्भवती हत्याएँ की थीं ॥२४॥ आखेट (शिकार) के लिये सिन्धु देशके घोडे पर चढकर गया था, तब उसने आखेट (शिकार) में एक कपिला गौ मारी थी ॥ २५ ॥ एक समय उस

गंगामृद्द्विगुणंपुण्यंचित्रकूटरजःस्मृतम् ॥ तस्माद्दशगुणंपुण्यंरजःपंचवटीभवम् ॥१९॥ तस्माच्छतगुणंपुण्यंगोपीचन्दनकंरजः ॥ गोपीचन्दनकंविद्धिवृन्दावनरजःसमम् ॥ २० ॥ गोपीचन्दनलिप्तांगंयदिपापशतैर्युतम् ॥ तंनेतुंनयमःशक्योयमदूतःकुतःपुनः ॥२१॥ नित्यंकरोतियःपापीगोपीचन्दनधारणम् ॥ सप्रयातिहरेर्धामगोलोकंप्रकृतेःपरम् ॥ २२ ॥ सिंधुदेशस्यराजाभूद्दीर्घबाहुरितिश्रुतः ॥ अन्यायवर्त्तीदुष्टात्मावेश्या संगरतःसदा ॥२३॥ तेनवैभारतेवर्षेब्रह्महत्याशतंकृतम् ॥ दशगर्भवतीहत्याःकृतास्तेनदुरात्मना ॥२४॥ मृगयायांतुबाणौघैःकपिलागोवधः कृतः॥सैंधवंहयमारुह्यमृगयार्थीगतोभवत्॥२५॥एकदाराज्यलोभेनमंत्रीक्रुद्धोमहाखलम्॥जघानारण्यदेशेतंतीक्ष्णधारेणचासिना॥२६॥ भूतलेपतितंमृत्युंगतंवीक्ष्ययमानुगाः ॥ बध्वायमपुरींनिन्युर्हर्षयंतःपरस्परम्॥२७॥संमुखेवस्थितंवीक्ष्यपापिनंयमराड्बली ॥ चित्रगुप्तंप्राहतूर्णंकायोग्ययातनास्यवै ॥ २८ ॥ चित्रगुप्तउवाच ॥ चतुराशीतिलक्षेषुनरकेषुनिपात्यतम् ॥ निःसंदेहंमहाराजयावच्चंद्रदिवाकरौ ॥ २९ ॥ अनेनभारतेवर्षेक्षणंनसुकृतंकृतम् ॥ दशगर्भवतीघातःकपिलागोवधःकृतः ॥ ३० ॥ तथावनमृगाणांचकृत्वाहत्याःसहस्रशः ॥ तस्मादयंमहापापीदेवताद्विजनिंदकः ॥ ३१ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदायमाज्ञयादूतानीत्वातंपापरूपिणम् ॥ सहस्रयोजनायामेतप्ततैलमहाखले ॥ ३२ ॥ स्फुरदत्युच्छलत्फेनेकुंभीपाकेन्यपातयन् ॥ प्रलयाग्निसमोवह्निःसद्यःशीतलतांगतः ॥ ३३ ॥

दुष्ट राजाको क्रुद्ध हुये मन्त्रीने राज्यके लोभसे वनमें तीक्ष्ण धारवाले खड्गसे मार डाला ॥२६॥ मरकर जब वह धरतीमें गिर पडा तब उसको मरा हुआ देखकर यमके दूत बांधकर आपसमें हर्ष करते यमपुरीको ले चले ॥२७॥ सामने आये उस पापीको यमराज देखकर चित्रगुप्त यमराजसे बोला इसको कौन कौन सी यातना देनी चाहिये ॥२८॥ तब चित्रगुप्त बोला कि, चौरासी लाख नरकोंमें इसको डालो, हे महाराज ! निस्सन्देह जब तक सूर्य चन्द्रमा रहें ॥२९॥ इसने भरतखण्डमें एक क्षण भी सुकृत नहीं किया है, दश गर्भवती मारी है, और कपिला गौ मारी है ॥३०॥ वैसे ही वनमें वनके जीवोंकी हजारों हत्यायें की हैं, उससे यह महापापी है, द्विज और देवोंका निंदक है ॥३१॥ नारदजी कहते हैं—तब यमराज की आज्ञासे दूत उस महापापीको लेकर चले, हजार योजनका कुम्भी पाक नरक, गर्म तेल जिसमें उबल रहा ॥३२॥ जिसमें फेन उठ रहे, उस कुम्भी पाकमें डाल दिया तब तत्काल

ही प्रलयकी अग्निके समान कुम्भीपाककी अग्नि सब शीतल हो गई॥३३॥उसके पडतेही ऐसी हो गई जैसे प्रह्लादके पडनेसे हो गई थी, उस आश्चर्यको देखकर दूत यमराजसे बोले ॥३४॥ कि महाराज ! इसने पुण्य तो भूमिमें कुछ भी नहीं किया है, ऐसे यमराज चित्रगुप्तके साथ विचार करने लगे ॥३५॥ हे राजन् ! तब ही सभामें व्यासजी आये, उनका महा मति धर्मराज विधिपूर्वक पूजन कर और नमस्कार कर यह पूछने लगे॥३६॥यमराज बोले–हे महाराज ! इस पापीने पहले कभी कोई सत्कर्म नहीं किया,सो जिसमें तेलके फेन उठ रहे उस कुम्भीपाकमें इसको डालनेसे वह शीतल हो गया, इसी संदेहसे मेरे मनको खेद है, इसमें संदेह नहीं है ॥३७॥३८॥ तब व्यासजी बोले–हे धर्मराज ! पापपुण्यकी बडी सूक्ष्म गति है, जैसे ब्रह्मकी गति शास्त्रज्ञ बुद्धिमन्तोंने कही है ॥३९॥ दैवयोगसे इसको अपने आप अर्थवत् दृश्य पुण्य प्राप्त हुआ है, जिस पुण्यसे यह शुद्ध हो गया है, सो हे महामते ! उसको

वैदेहतन्निपतनात्प्रह्लादक्षेपणाद्यथा ॥ तदैवचित्रमाचख्युर्यमदूतामहात्मने ॥३४॥ अनेनसुकृतंभूमौक्षणवन्नकृतंक्वचित् ॥ चित्रगुप्तेनतसतंधर्म-
राजोऽव्यचिंतयत् ॥ ३५ ॥ सभायामागतंव्यासंसंपूज्यविधिवन्नृप ॥ नत्वापप्रच्छधर्मात्माधर्मराजोमहामतिः ॥ ३६ ॥ यमउवाच ॥
अनेनपापिनापूर्वंनकृतंसुकृतंक्वचित् ॥ स्फुरदत्युच्छलत्फेनेकुंभीपाकेमहाखले ॥ ३७ ॥ अस्यक्षेपणतोवह्निःसद्यःशीतलतांगतः ॥ इतिसन्देह
तश्चेतःखिद्यतेमेनसंशयः ॥ ३८ ॥ श्रीव्यासउवाच ॥ सूक्ष्मागतिर्महाराजविदितापापपुण्ययोः ॥ अथब्रह्मगतिःप्राज्ञैःसर्वशास्त्रविदांवरैः
॥ ३९ ॥ दैवयोगाद्दृश्यपुण्यंप्राप्तंवैस्वयमर्थवत् ॥ येनपुण्येनशुद्धोसौतच्छृणुत्वंमहामते ॥ ४० ॥ कस्यापिहस्ततोयत्रपतिताद्वारकामृदः ॥
तत्रैवायंमृतःपापीशुद्धोभूत्तत्प्रभावतः ॥ ४१ ॥ गोपीचन्दनलिप्तांगोनरोनारायणोभवेत् ॥ एतस्यदर्शनात्सद्योब्रह्महत्याप्रमुच्यते ॥ ४२ ॥
श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वाधर्मराजस्तमानीयविशेषतः ॥ विमानेकामगेस्थाप्यवैकुण्ठंप्रकृतेःपरम् ॥ ४३ ॥ प्रेषयामाससहसागोपीचन्दन
कीर्तिवित् ॥ एवंतेकथितंराजन्गोपीचन्दनकंयशः ॥४४॥ गोपीचन्दनमाहात्म्यंयःशृणोतिनरोत्तमः ॥ सयातिपरमंधामश्रीकृष्णस्यमहात्मनः
॥ ४५ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां श्रीद्वारकाखण्डे कपिटंकनृगकूपगोपीभूमिमाहात्म्यंनामपंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

तुम सुनो ॥४०॥ किसीके हाथसे जहां गोपीचन्दनकी मृत्तिका गिर पडी थी, वहां ही यह पापी मरते समय उसके ऊपर ही मरा था, सो उसकेप्रभावसे शुद्ध हो गया ॥४१॥ गोपीचन्दनसे लिपा अंग जिसका होवे, वह नरनारायण हो जाता है, जिसके गोपीचन्दन लगा हो, उसके दर्शनसे ही ब्रह्महत्या नष्ट हो जाती है ॥४२॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे सुनकर धर्मराजने उसको कामग विमानमें बैठाकर प्रकृतिसे परे वैकुण्ठको भेज दिया ॥ ४३ ॥ क्योंकि यमराजगोपीचन्दनकी कीर्तिको जाननेवाला है, यह तुम्हारे सामने हे राजन् ! गोपीचन्दनका माहात्म्य वर्णन किया ॥ ४४ ॥ गोपीचन्दनके माहात्म्यको जो कोई नरोत्तम सुने, वह श्रीकृष्ण महात्माके परम धामको प्राप्त होता है ॥ ४५ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां श्रीद्वारकाखण्डे भाषाटीकायां कपिटंक नृगकूप गोपीभूमिमाहात्म्य वर्णनंनाम पंचदशोऽध्यायः ॥१५॥

नारदजी कहते हैं कि, हे महामते ! हे राजन् ! अब सिद्धाश्रमका माहात्म्य तुम सुनो, जिसके स्मरणमात्रसे पापोंसे छूट जाता है ॥ १ ॥ जिसके स्पर्शसे हरिका वियोग कभी नहीं होता है, उसको पुरातन मुनि सिद्धाश्रम वर्णन करते हैं ॥२॥ जिसके दर्शनसे सालोक्य मुक्ति मिलती है, स्पर्शसे सामीप्य मुक्ति मिलती है, स्नानसे सारूप्य मुक्ति मिलती है, और जहाँके रहनेसे सायुज्य मुक्ति मिलती है ॥३॥ उस सिद्धाश्रम तीर्थके माहात्म्यको चन्द्राननाके मुखसे सुनकर कृष्णके वियोगसे विह्वल हुई श्रीराधाजीने उसमें स्नान करनेका मन किया ॥ ४ ॥ तब श्रीराधाजीने चैत्रके सूर्य पर्वमें सिद्धाश्रममें यात्रा करनेके लिये कदलीवनसे उठकर चलनेका निश्चय किया ॥५॥ सौ यूथ गोपियोंके साथ लेकर और सब गोपगणोंको साथ लेकर श्रीदामाके शापके कारणसे जब सौ वर्ष व्यतीत हो गये तब ॥६॥ सती श्रीराधिका पालकीमें बैठकर चमर जिसपर होते जायं, ऐसी आनर्त देशोंमें महातीर्थ जो सिद्धाश्रम है, उसको गई॥७॥ हे नृप ! वहाँ ही साक्षात् भगवान् कृष्ण भी यादवोंके गणसे मण्डित, सोलह हजार स्त्रियोंको साथ लेकर यात्रा करनेके लिये आप भी आये ॥ ८ ॥

श्रीनारदउवाच ॥ सिद्धाश्रमस्यमाहात्म्यंशृणुराजन्महामते ॥ यस्यस्मरणमात्रेणसर्वपापैःप्रमुच्यते ॥ १ ॥ यत्स्पर्शनाद्धरेःसाक्षान्नवियोगो भवेत्क्वचित् ॥ तंचसिद्धाश्रमंनामवदंतीहपुराविदः ॥२॥ दर्शनाद्यस्यसालोक्यंसामीप्यंस्पर्शनात्तथा॥ सारूप्यंस्नानतोयातिसायुज्यंतन्निवासतः ॥ ३ ॥ तत्तीर्थस्यापिमाहात्म्यंश्रुत्वाचंद्राननामुखात् ॥ राधास्नातुंमनश्चक्रेकृष्णविक्षेपविह्वला ॥४॥ श्रीसिद्धाश्रमयात्रायांसूर्यपर्वणिमाधवे॥ राधागंतुंमनश्चक्रउत्थायकदलीवनात्॥५॥ गोपीनांशतयूथेनसर्वगोपगणैःसह॥ शतवर्षेव्यतीतेतुश्रीदाम्नःशापकारणात्॥६॥ श्रीराधाशिबिकारूढाछत्रचामरवीजिता ॥ आनर्तेषुमहातीर्थंययौसिद्धाश्रमंसती ॥७॥ तत्रैवभगवान्साक्षाद्यादवैःपरिमंडितः॥ स्त्रीणांषोडशसाहस्रैर्यात्रार्थंचाययौ नृप ॥८॥ बलिष्ठायेचगोपालाकोटिशःशस्त्रपाणयः॥ सिद्धाश्रमंतेजुगुपुःसर्वतोराधिकाज्ञया ॥९॥ शतयूथास्तथागोप्योवेत्रहस्तामहाबलाः ॥ सिद्धाश्रमेचविधिवत्स्नातींराधांसिषेविरे ॥ १० ॥ द्वारकावासिनांतेषांस्थितानांस्नानमिच्छताम् ॥ शस्त्रवेत्रैस्ताडितानांविविशुर्भगवत्स्त्रियः ॥ ११ ॥ केयंस्नातीतिपप्रच्छुर्यस्यावैभवमद्भुतम् ॥ यद्गौरवात्रसन्तीहसर्वेयादवपुंगवाः ॥ १२ ॥ अहोकस्यप्रियाचेयंकानाम्नाकुत्रवासिनी ॥ त्वंसर्वज्ञोहिभगवान्वदनोदेवकीसुत ॥ १३ ॥

उस समय बडे २ बली करोडों गोपाल शस्त्रोंको हाथोंमें लिये श्रीराधिकाजीकी आज्ञासे चारों ओरसे सिद्धाश्रमकी रक्षा करने लगे ॥ ९ ॥ और बली जो गोपियोंके सौ यूथ हैं, वे वेत्रधारी होकर सिद्धाश्रममें विधिवत् स्नान करती श्रीराधाकी सेवा करने लगे ॥१०॥ स्नान करनेके लिये आये जो द्वारिकावासी वे शस्त्र बेंतोंसे ताडित वहाँ स्थित हैं, अर्थात् उन द्वारिकावासियोंको जहाँ कोई शस्त्र और बेंतोंसे मार मारकर आदमी रोक रहे हैं, उनके बीचमें भगवान्की स्त्रियाँ भी स्नान करनेको आई हैं॥११॥ तब ये सब रानियाँ श्रीभगवान्से पूछने लगीं कि, हे प्रभो ! यह कौन स्नान कर रही है ? जिसका यह अद्भुत वैभव है, जिसके गौरवसे समस्त यादव जहाँके तहाँ खडे डर रहे हैं ॥ १२ ॥ अहो ! यह किसीकी प्रिया है, इसका क्या नाम है, यह कहाँ रहती है, हे देवकी सुत ! आप सर्वज्ञ हो, भगवान् हो, सो आप कहो ॥ १३ ॥

ऐसे जब रानियोंने पूछी,तब भगवान् बोले–हे वृषभानु गोपकी पुत्री कीर्तिनन्दिनी साक्षात् राधा है, यह व्रजकी ईश्वरी है, सब गोपियोंमें श्रेष्ठ और मेरी प्रिया है॥१४॥ सिद्धाश्रममें स्नान करनेके लिये व्रजसे सब गोपीगणोंको साथ लेकर आयी है, जिसके गौरवसे सब यादव डरे हुयेसे खडे हैं, उसका ऐसाही अद्भुत वैभव है ॥१५॥ श्रीकृष्णका ऐसा वचन सुन कर सब रानियोंमें रूपकी और यौवनकी गर्वीली मानिनी सत्यभामा सब रानियोंके बीचमें धीरे धीरे यह बोली ॥ १६ ॥ क्या एक यह राधाही रूपवती है, मैं सुन्दरी नहीं हूँ ? जो मैं पहिले रूप,उदारता और गुण इनसे अर्चित थी,उसी हेतुसे मेरी पहिले बहुतोंने याचना की थी ॥ १७ ॥ और हे सखियो ! देखो इसी मेरे रूपके कारणसे शतधन्वा मारा गया, और उसी मेरे कारणसे पहिले अक्रूर और कृतवर्मा द्वारिकासे भाग गये ॥१८॥ और जो प्रतिदिन आठ भार स्वर्ण उगलती हैं, और अकाल, मारी, सर्प, रोग, आदि कोई उपद्रव वहाँ

॥ श्रीभगवानुवाच ॥ वृषभानुसुतासाक्षाद्राधेयंकीर्तिनंदिनी ॥ व्रजेश्वरीमदयितागोपिकाधीश्वरीवरा ॥ १४ ॥ स्नातुंसिद्धाश्रमंप्राप्तात्रजाद्गो-
पीगणैःसह ॥ यद्गौरवात्रसंत्येतेवस्यावैभवमद्भुतम् ॥१५॥ श्रीकृष्णस्यवचःश्रुत्वासत्यभामाथभामिनी॥शनैःप्राहसपत्नीनांरूपयौवनगर्विता
॥१६॥ किन्नुराधारूपवतीनाहंरूपवतीकिमु ॥ बहुभिर्याचितापूर्वंरूपौदार्यगुणार्चिता ॥१७॥ मद्रूपकारणात्सख्यःशतधन्वामृतोभवत्॥अक्रूरः
कृतवर्माचपुरात्तौद्वौपलायितौ ॥१८॥ दिनेदिनेस्वर्णभारानष्टौससृजतिस्वतः ॥ दुर्भिक्षमार्यरिष्टानिसर्पाधिव्याधयोऽशुभाः॥१९॥ नसंतिमा-
यिनस्तत्रयत्रास्तेभ्यर्चितोमणिः ॥ मत्पित्रापारिबर्हेपिदत्तःसाक्षात्स्यमंतकः॥२०॥ तेनजातंमद्गृहेपिसर्ववैभवमद्भुतम् ॥ प्रेम्णापरेणश्रीकृष्णं
गरुडोपरिगामिनी ॥ २१ ॥ भौमासुरमहायुद्धंदृष्टंप्राग्ज्योतिषपुरम् ॥ ममापिकृपयायूयंतत्पुराच्चसमागताः ॥२२॥ प्राप्ताःश्रीकृष्णपत्नीत्वं
समाएवनसंशयः ॥ मद्गौरवाच्चशक्रायछत्रंदत्तमनेनवै ॥ २३ ॥ कुण्डलेदेवमात्रेचदत्तेवैमत्प्रियेच्छया ॥ ऐरावतभवानागाभौमासुरसमृद्धयः
॥ २४ ॥ मदिच्छयासमानीताः श्रीकृष्णेनमहात्मना ॥ मत्कारणान्महावैरंशक्रेपिकृतवान्हरिः॥२५॥ मद्वारेवर्ततेनित्यंवृक्षेंद्रःपारिजातकः॥
पातिव्रत्येनैवमयाश्रीकृष्णोऽयंवशीकृतः ॥ २६ ॥

नहीं रहता है, जहाँ इस मणिकी पूजा होती हैं ॥ १९ ॥ वहाँ कोई अशुभ नहीं होता और मायावियोंकी माया नहीं चलती है, वह स्यमन्तक मणि मेरे पिताने दहेजमें दी है ॥ २० ॥ उससे मेरे घरमेंभी समस्त अद्भुत वैभव है,और परम प्रेमसे श्रीकृष्णके साथ गरुड पर चलती हूँ॥२१॥भौमासुरका बडा युद्ध मैंने प्राग्ज्योति पुरमें श्रीकृष्णकी कृपासे सब देखा और मेरीही कृपासे तुमभी सब यहाँ वहींसे आई हो ॥२२॥ श्रीकृष्णकी पत्नी हो, सो तुम भी सब बराबरही हुई हो, मेरेही गौरवसे इन्द्रको इन्होंने छत्र दिया है ॥ २३ ॥ और मेरेही प्यारके लिये इन्होंने इन्द्रकी माताको कुण्डल दिये हैं, और ऐरावत कुलके हाथी और भी भौमासुरकी समृद्धि ॥ २४ ॥ मेरीही इच्छासे महात्मा श्रीकृष्ण ले आये हैं, मेरेही कारण हरिने इन्द्रसे महावैर किया ॥ २५ ॥ मेरे द्वारपर वृक्षोंमें इन्द्र कल्पवृक्ष विराजता है, और मैंने अपने पातिव्रत्य धर्मसेही श्रीकृष्णको वशीभूत किया है ॥ २६ ॥

और मैंने श्रीकृष्णको सब सामग्री सहित नारदजीको दान कर दिये, सो मेरे समान न तो किसीका गौरव है, न वैभव है ॥२७॥ और न किसीका मेरासा रूप है, न उदारता है, फिर मेरे सामने राधाकी क्या चर्चा है जिस तेरे लिये शिशुपालादिकोंसे इनका ऐसा युद्ध हुआ ॥ २८ ॥ सो सुभ्रू ! हे रुक्मिणी ! क्या तुम रूपवती नहीं हो, और हे सखियो ! राधा तो गोप कन्या है, तुम राजकुमारियाँ हो, तथा धन्य हो, मान्य हो, मानवतियोंमें सदा श्रेष्ठ हो ॥ २९ ॥ हे मैथिल ! ऐसे सत्यभामाके कहते २ रुक्मिणीसे आदि लेकर सब श्रेष्ठ स्त्रियाँ मानवती होगईं ॥ ३० ॥ कुल, चतुराई, शील, अर्थ, रूप, यौवनसे गर्वीली होकर मानके दाता श्रीकृष्णसे आठों पटरानियाँ यह बोलीं ॥३१॥ कि, हे प्रभो ! पहिले हमने आपके मुखसे राधिकाका परम उत्तम रूप सुना था, जिसमें आप नित्य ही रँगे रहते थे, और आपमें वह नित्यही रँगी रहती थी ॥३२॥ जो आपकी प्यारी व्रजवासिनी है, जो

सर्वोपस्करसंयुक्तोनारदायसमर्पितः ॥ मत्समानंनकस्यास्तुगौरवंवैभवंतथा॥२७॥रूपौदार्य्यंनकस्यास्तुराधायाःकिमुवर्णनम् ॥ यद्रूपोपरिचै- द्याद्याअनेनयुयुधुर्युधि ॥२८॥ हेसुभ्रुरुक्मिणीसात्वंकथंरूपवंतीनहि ॥ सागोपकन्यकासख्योयूयंवैराजकन्यकाः ॥ धन्यामान्याश्चसर्वावैयूयं मानवतीवराः ॥२९॥ एवंतुसत्यभामायांवदंत्यांमैथिलेश्वर ॥ भूत्वामानवतीसर्वारुक्मिण्याद्यास्त्रियोवराः ॥ ३० ॥ कुलकौशलशीलार्थरूप- यौवनगर्विताः ॥ श्रीकृष्णंमानदंप्राहुरष्टपट्टमहास्त्रियः ॥ ३१ ॥ राज्ञ्यऊचुः ॥ श्रुतंतवमुखात्पूर्वंराधारूपंपरंस्मृतम् ॥ यस्यांरक्तःसदात्वं वैत्वयिरक्ताचयासदा ॥३२॥ तांराधांद्रष्टुमिच्छामस्त्वत्प्रियांव्रजवासिनीम् ॥ त्वद्वियोगेनसंखिन्नांस्नातुंचात्रसमागताम् ॥ ३३ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ तथास्तुचोक्त्वाश्रीकृष्णःपट्टस्त्रीपरिवेष्टितः ॥ षोडशस्त्रीसहस्राढ्योद्रष्टुंराधांजगामह ॥ ३४ ॥ श्रीहेमशिबिरेरम्येपताकाध्वजमंडिते ॥ चन्द्रमंडलशोभाढ्यवितानततितेशुभे ॥ ३५ ॥ मुक्ताजवनिकायत्रवस्त्रैरास्तरणंशुभम् ॥ मालतीमकरंदाढ्यंसर्वतोगंधिसंकुलम् ॥ ३६ ॥ तेनभृंगावलीचक्रेकलंकोलाहलंपरम् ॥ तत्रराधापट्टराज्ञीश्रीकृष्णहृतमानसा ॥३७॥ हंसाभैर्व्यजनैर्दिव्यैर्वीज्यमानासखीजनैः ॥ छत्रदोलाधरै स्तत्रव्रजद्भिस्तामितस्ततः ॥ ३८ बालार्ककुण्डलधराविद्युद्दाममनोहरा ॥ कोटिचन्द्रप्रतीकाशातन्वीकोमलविग्रहा ॥ ३९ ॥

आपके वियोगसे खिन्न हुई यहाँ स्नान करनेके लिये आई है, उस राधाको हम देखनेकी इच्छा करती हैं ॥३३॥ नारदजी कहते हैं कि, "वैसा ही हो" ऐसे कहकर आठों पटरानियों और सोलह हज़ार रानियोंको साथ लेकर श्रीकृष्ण राधिकाको देखनेके लिये गये ॥ ३४ ॥ ध्वजा पताकाओंसे शोभित सुनहरी शिविर जिसमें चन्द्रमण्डलकी शोभावाले चन्दोहा तन रहे हैं ॥ ३५ ॥ मोतियोंके पर्दे लग रहे हैं, सफेद बिछौने बिछ रहे हैं, चमेलीके इत्रसे युक्त, चारों ओरसे सुगन्धि उठ रही हैं ॥ ३६ ॥ सुगन्धिसे भ्रमर मनोहर गुञ्जार रहे हैं, वहाँ श्रीकृष्णने हर लिया है मन जिसका वह राधा पटरानी ॥३७॥ जिनपर सखियाँ हंसकीसी कान्ति जिनकी ऐसे दिव्य, छत्र, चमर, ढुला रही हैं, छत्र, चमर लिये सखियाँ इधर उधर घूम रही हैं ॥३८॥ बालार्कसे बिजलीकीसी झलक जिनमें ऐसे कुंडल पहिने हैं, करोड़ों चन्द्रमाकीसी जिसकी अंगकांति है, अति कोमल जिसका शरीर है ॥ ३९ ॥

पांवोंकी अंगुलियोंके सुन्दर अग्रभागोंसे फूलोंकी भूमिमें धीरे २ कोमल चरणको रखती चलती हैं ॥४०॥ ऐसी उस राधाको दूरसेही देखकर श्रीकृष्णकी हजारों रानियाँ उसके रूपसे मोहित होकर मूर्च्छित होगई ॥४१॥ उसके तेजसे सबकी कान्ति फीकी पडगई, सूर्योदयपर तारागण जैसे फीके पड जाते हैं, सबका रूपवतीका अभिमान जाता रहा, तब वे आपसमें कहने लगीं ॥ ४२ ॥ अहो ! ऐसा अद्भुत रूप तो त्रिलोकीमें किसीका नहीं है, जैसा सुना था, वैसाही अद्वितीय मनोहर रूप देखा ॥४३॥ ऐसे कहते २ श्रीकृष्णके सामने आईं, तब गोपियोंके और रानियोंके नेत्रोंसे नेत्र मिले ॥ ४४ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां द्वारकाखंडे भाषाटीकायां सिद्धाश्रमे राधारूपदर्शनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥१६॥ नारदजी कहते हैं कि, पटरानियोंसहित श्रीकृष्णको आया देखकर उस समय सब गोपियाँ अति हर्षित होकर जयजय शब्द करने लगीं ॥१॥ तब श्रीराधिका अकस्मात् उठकर श्रीकृष्णकी

अंगुल्यग्रैःशोभनैःस्वैःपुष्पभूमिंमनोहराम् ॥ शनैःशनैःपादपद्मंधारयंत्यतिकोमलम् ॥४०॥ दूरात्तांराधिकांप्रेक्ष्यकृष्णपत्न्यःसहस्रशः॥जग्मु-
र्मूर्च्छांमहाराजतद्रूपेणातिमोहिताः ॥४१॥ तत्तेजसांहतरुचःसूर्यात्तारागणायथा ॥ गतरूपाभिमानास्ताऊचुःसर्वाःपरस्परम् ॥ ४२ ॥ अहो
एतादृशंरूपंत्रिलोक्यांनहिचाद्भुतम् ॥ श्रुतंयथातथादृष्टमद्वितीयंमनोहरम्॥४३॥एवंवदंत्यस्तांप्राप्ताःश्रीकृष्णस्यपुरःसराः॥ गोपीनांराजपुत्री-
णांनेत्राणिपरिरेभिरे ॥ ४४ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेसिद्धाश्रममाहात्म्येराधारूपदर्शनंनामषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ श्रीना-
रदउवाच ॥ श्रीकृष्णमागतंवीक्ष्यपट्टराज्ञीसमन्वितम् ॥ तदाजयजयारावंचक्रुर्गोप्योतिहर्षिताः ॥ १ ॥ सहसाश्रीहरिंराधापरिक्रम्यकृतां-
जलिः॥पद्माभाभ्यांतुनेत्राभ्यामानन्दाश्रूणिमुंचती ॥२॥ स्यमन्तकखचितपादंचिंतामणिखचित्तटम् ॥ पद्मरागलसन्मध्यचन्द्रमण्डलवर्तुलम्
॥ ३ ॥ कौस्तुभैःप्रखचित्प्रौष्ठंकुण्डमण्डलमंडितम् ॥ पारिजातकपुष्पाढ्यंपीयूषस्राविछत्रमत्॥४॥ दत्त्वासिंहासनंतस्मैप्राहप्रहसितानना ॥
अद्यमेसफलंजन्मअद्यमेसफलंतपः ॥५॥ अद्यमेसफलोधर्मोहरेत्वय्यागतेसति ॥ धन्यंसिद्धाश्रमस्नानंसफलीभूतमद्भुतम् ॥मयापिनकृताभक्ति
स्तवभक्तसहायिनः ॥ ६ ॥ बहवश्वसहायान्मेत्वयादेवहताभुवि ॥ कंसोपिलोकविजयीयेनभीतोबभूवह ॥ ७ ॥

परिक्रमा देकर प्रणाम कर विधिपूर्वक पूजन करके हाथ जोड कमलसे नेत्रोंमेंसे आनन्दके आंसुओंको बहाती ॥ २ ॥ स्यमन्तकमणिके तो जिसके पाये जडे हुये चिन्तामणिके किनारे जडे हुये, बीचमें पद्मरागमणि जडी हुई, चन्द्रमाके मंडलके समान गोल ॥ ३ ॥ कौस्तुभमणिकी किनारी जिसकी, कुण्डलमण्डलसे मण्डित पारिजातके पुष्पोंका जिसमें आधिक्य, अमृत जिसमें झरे ऐसा जिसपर छत्र, और कल्पवृक्षके फूल जिसपर बिछ रहे ॥४॥ ऐसे सिंहासनपर श्रीकृष्णको बैठाकर हँसते मुखसे यह बोली कि, आज मेरा जंन्म सफल हुआ, आज मेरा तप सफल हुआ ॥ ५ ॥ हे हरे ! आपके आनेसे आज मेरा धर्म सफल हुआ, यह सफल हुआ अद्भुत सिद्धाश्रमका स्नान धन्य है, भक्तोंके सहायक आपकी मैंने भक्ति भी नहीं की ॥६॥ मेरी सहायताके लिये बहुत असुर आपने मार डाले, त्रिलोकीको जीतनेवाला कंस भी जिन आपसे भयभीत होगया ॥ ७ ॥

वह भी मेरे कहनेसे आपने मारा और शंखचूड भी आपने मारा, मेरे प्रेमसे व्रजमें वैभव भी दिखाया ॥ ८ ॥ और हे देव ! आपने बलपूर्वक इन्द्रका मान भंग किया, मेरे कारणसे व्रजकी रक्षा करते हुये गोवर्द्धन पर्वतको धारण किया ॥९॥ इच्छानुसार रासमें आलिंगन करके गोपियोंने आपको वशमें किया, यह आपका चरित्र नरलोककी विडम्बना (उपहास) करता है ॥१०॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे कहती राधिकाने चन्द्रानना गोपीकी आज्ञासे श्रीकृष्णकी पत्नियोंको आदर पूर्वक बडप्पन दिया॥११॥रुक्मिणीसे, जाम्ब वतीसे, सत्यभामासे, नाग्निजितीसे, भद्रासे, लक्ष्मणासे, कालिंदीसे, मित्रविंदासे श्रीराधिका आपसमें सबसे मिलकर॥१२॥रोहिणी आदि सोलह हजार रानियोंसे भी प्रेमानन्दमयी श्रीराधा सबसे भुजा पसारकर मिली॥१३॥ तब तो श्रीराधिकाजी यह वचन बोली--जैसे चन्द्रमा तो एक है, चकोर बहुत हैं, सूर्य तो एक है, नेत्र बहुत हैं,ऐसे श्रीकृष्णचन्द्र भग-

समारितोमद्वचनाच्छंखचूडस्त्वयाहरे ॥ मत्प्रेम्णापित्वयादेववैभवंदर्शितंव्रजे ॥८॥ शक्रस्यमानभंगोपिकृतोदेवत्वयाबलात् ॥ मत्कारणाद्व्रजंरक्षन्धृत्वागोवर्द्धनाचलम् ॥ ९ ॥ यथेच्छालिंगितोरासेगोपीभिस्त्वंवशीकृतः ॥ इदंतेचरितंदेवनरलोकविडंबनम् ॥ १० ॥ श्रीनारदउवाच ॥
एवंवदंतीसाराधात्वरंचन्द्राननाज्ञया॥सादरेणहरेःपत्नीर्वीक्ष्यतागौरवंददौ॥११॥ भैष्मींजांबवतींभामांसत्यांभद्रांचलक्ष्मणाम्॥ कालिंदींमित्रविंदांचमिलित्वासापरस्परम् ॥ १२ ॥ षोडशस्त्रीसहस्रंचरोहिणीमुखमेवच ॥ प्रेमानन्दमयीदोर्भ्यांपरिरेभेमुदान्विता ॥ १३ ॥ राधोवाच ॥
चन्द्रोयथैकोबहवश्चकोराःसूर्योयथैकोबहवोदृशःस्युः ॥ श्रीकृष्णचन्द्रोभगवांस्तथैकोभक्ताभगिन्योबहवोवयंच ॥ १४ ॥ पद्मप्रभावंमधुपोयथाहिरत्नप्रभावंकिलतत्परीक्षित् ॥ विद्याप्रभावंचयथाहिविद्वान्काव्यप्रभावंचयथाकवींद्रः ॥१५॥ यथासहस्रेषुजनेषुसत्सुरसप्रभावंरसिकस्तथाहि ॥ जानातितत्त्वेननरेंद्रपुत्र्यःकृष्णप्रभावंभुविकृष्णभक्तः ॥ १६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ राधावाक्यंतदाश्रुत्वारुक्मिणीभीष्मनंदिनी ॥
सपत्नीसहिताप्राहराधांकमललोचनाम् ॥ १७ ॥ रुक्मिण्युवाच ॥ धन्यासिराधेवृषभानुपुत्रित्वद्भक्तिभावेनवशीकृतोयम् ॥ वदत्यलंयस्यकथांत्रिलोकीसएववार्तांवदतित्वदीयाम् ॥ १८ ॥

वान् तो एक हैं, और बहिनो ! उनकी भक्त हम तुम बहुत सी हैं ॥ १४ ॥ कमलका प्रभाव जैसे भ्रमर ही जानता है, रत्नका प्रभाव जैसे उसकी परीक्षा करनेवाला ही जानता है, विद्याका प्रभाव जैसे विद्वान् ही जानता है, काव्यका प्रभाव जसे कवींद्र ही जानता है ॥१५॥ और जैसे हजारोंमे रसका प्रभाव तो कोई रसिक ही जानता है, हे राजकुमारियो ! वैसे ही श्रीकृष्णका प्रभाव तो इस पृथ्वीपर कोई कृष्णका भक्त ही जानता है॥१६॥ नारदजी कहते हैं, राधाके वचनको सुनकर सब रानियों सहित भीष्म नन्दिनी रुक्मिणी कमल नयना राधासे यह वचन बोली ॥ १७ ॥ हे वृषभानु कुमारी ! हे राधे ! तुम धन्य हो, श्रीकृष्ण तुम्हारे ही भक्तिभावसे वशीभूत हुये हैं, सब त्रिलोकी तो जिन श्रीकृष्णकी कथा कहती हैं, वे श्रीकृष्ण तुम्हारी कथा रात दिन कहा करते हैं ॥ १८ ॥

तुम्हारा जैसा हरिमें भावका लक्षण सुना था, वैसा ही देखा, सो कुछ आश्चर्य नहीं है, अब आप हमारे शिविरमें चलिये जहांसे हम आपको लिवा लेनेको आई हैं ॥१९॥ ऐसें कह कर रुक्मिणी राधिकाको बडे आदरसे अपने शिविरमें लिवा लाई ॥२०॥ कैसा शिविर है कि, सर्वतोभद्र जिसका नाम है, कमलोंकी जिसमें सुगन्धि है, जिसमें सुनहरी पलंगपर शिरीषके फूलसे कोमल गद्दी, तकिया, जिसपर धरे हैं ॥२१॥ यहाँ बैठकर फूल, माला, चन्दन, वस्त्र, आभूषण, लक्ष्य भोज्यसे बहुत सत्कारसे रात्रिको निवास कराया ॥२२॥ गोपियों के जो सौ यूथ उनका पृथक् २ सत्कार करके रुक्मिणी बहुत प्रकारका वार्तालाप करके राधिकाजीको सुलाकर तब फिर रुक्मिणी आदि सब रानियाँ अपने २ शिविरको चली गईं ॥२३॥ जब रुक्मिणी श्रीकृष्णके पास गई, श्रीकृष्णको जागते हुये देखकर रुक्मिणी श्रीकृष्णसे बोली कि, हे स्वामी ! आप सोये क्यों नहीं हैं ? ॥२४॥ तब भगवान् बोले कि हे सुभ्रू !

श्रुतंयथातेहरिभावलक्षणंतथाहिदृष्टंनहिचित्रमेवहि ॥ गच्छाशु चास्मच्छिबिराणियत्रहित्वांनेतुमत्रागतवत्यआदृताः ॥ १९ ॥ नारदउवाच ॥ एवमुक्त्वाभीष्मसुताराधांकीर्तिसुतांतदा ॥ समानीयस्वशिबिरेसादरेणमहात्मना ॥ २० ॥ शिबिरेसर्वतोभद्रेपद्मकिंजल्कवासिते ॥ हैमेशिरीष मृदुलेपर्यंकेसोपबर्हणे ॥ २१ ॥ सुखंनिवासयामासवासःस्रङ्मंडनादिभिः ॥ संपूज्यविधिवद्रात्रौसपत्नीसहितासती ॥२२॥ गोपीनांशतयूथंच संपूज्यचपृथक्पृथक् ॥ वार्तालापान्बहुविधान्कृत्वाकृष्णप्रियास्ततः ॥२३॥ स्वापयित्वाथतांजग्मुःस्वंस्वंवैशिबिरंमुदा ॥ कृष्णपार्श्वंगताभै- ष्मीदृष्ट्वाजाग्रदुपस्थितम् ॥ कथंनशेषेभोस्वामिन्नितिकृष्णमुवाचह ॥ २४ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ प्रत्युद्गमप्रश्रवणैराश्वासेनव्रजेश्वरी ॥ अर्चिताहित्वयासुभ्रुप्रसन्नासाभवत्परम् ॥२५॥ साचनित्यंहिपिबतिशयनादौपयःशुभम् ॥ पयःपानंतुनकृतमद्यसुभ्रुतयाकिल ॥ २६ ॥ तेन निद्रानयनयोर्नजातास्यामहामते ॥ तस्मान्ममापिप्रस्वापोनजातोभीष्मकन्यके ॥ २७ ॥ नारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वापरंभैष्मीसपत्नीभिः समन्विता ॥ नीत्वादुग्धंतत्समीपंप्रययौपरमादरात् ॥ २८॥ उष्णंदुग्धंसितायुक्तंकचोलेहैमनेकृते ॥ अपाययत्परंप्रीत्याराधांभीष्मकनंदिनी ॥२९॥ एवमभ्यर्च्यविधिवद्दत्त्वातांबूलवीटकम् ॥ सत्यभामादिभिःशश्वत्सपत्नीभिःसमन्विता ॥ ३० ॥ आगत्यकृष्णसामीप्यंवदंतीस्वकृतं शुभा ॥ भेजेश्रीरुक्मिणीसाक्षाच्छ्रीकृष्णपदपंकजम् ॥ ३१ ॥

तुमने प्रत्युद्गम और प्रश्रवणसे व्रजेश्वरीका आश्वासन और सत्कार बडा किया इससे वह परम प्रसन्न हुई ॥२५॥ परन्तु वह नित्य शयनसे पहिले दूध पीती है, सो आज उसने दूध नहीं पिया, हे सुभ्रू ! इसीसे उसको आज अब तक निश्चय नींद नहीं आई ॥२६॥ उससे मेरे नेत्रोंमें भी नींद नहीं आई, हे महामते ! हे भीष्म कन्ये ! उससे मैं सोया नहीं हूँ ॥२७॥ नारदजी बोले कि, तब तो श्रीकृष्णका यह वचन ऐसे सुनकर सपत्नियों सहित बडे आदरसे रुक्मिणी दूध लेकर राधाके समीप गई ॥२८॥ गरम २ दूध मिश्री डालकर स्वर्णके कटोरामें परम प्रीतिसे जाकर रुक्मिणीजीने राधाको पिलाया ॥ २९ ॥ ऐसे श्रीराधिकाजी विधिपूर्वक सत्कार करके पानका बीडा देकर सत्यभामादिक अपनी सपत्नियोंके साथ ॥ ३० ॥ श्रीकृष्णके पास आकर अपना किया हुआ सब कहा, फिर श्रीकृष्णके चरण कमल दबाने लगी ॥ ३१ ॥

तब अपने कोमल कर पल्लवोंसे चरण दबा रही थी सो श्रीकृष्णके चरण कमलमें छाले पडे देखकर बडे आश्चर्यमें आगई ॥३२॥ और यह बोली कि, हे प्रभो ! आपके चरणमें छाले कैसे पड गये हैं, अभी हुये हैं, इनका कारण मैं नहीं जानती हूँ ॥३३॥ नारदजी कहते हैं कि, भगवान् तब सोलह हजार स्त्रियोंके सुनते २ आप हरि राधाकी भक्तिके प्रकाशके लिये प्रसन्न होकर रुक्मिणीसे यह बोले ॥३४॥ कि श्री राधिकाके हृदय कमलमें मेरे चरण कमल रहते हैं, रात दिन स्नेहकी रस्सीमें बन्धे एकक्षण अथवा आधभी क्षण चलायमान नहीं होते हैं॥३५॥सो आज गर्म दूध पीनेसे मेरे पांवोंमें छाले पड गये हैं, तुमने इसको थोडा गर्म नहीं दिया, ज्यादा-ज्यादा गर्म दूध पिला दिया॥३६॥नारदजी कहते हैं कि श्रीकृष्ण का यह वचन सुनकर रुक्मिणी आदि जो श्रेष्ठ स्त्रियाँ थीं, वे चरणोंको छोडकर हे नृप ! सब ओरसे अत्यन्त विस्मित होगईं ॥३७॥ और यह कहने लगीं कि श्रीराधिकाकी परम

संलालयंतीसततंकोमलैःकरपल्लवैः॥ कृष्णपादतलेच्छालान्वीक्ष्यसाविस्मिताभवत् ॥३२॥ उच्छालकाःकथंजातास्तवपादतलेप्रभो ॥ अद्यै-वभूताभगवन्नवेद्म्यत्रहिकारणम् ॥ ३३ ॥ षोडशस्त्रीसहस्राणांशृण्वतीनांहरिःस्वयम् ॥ राधाभक्तिप्रकाशार्थंप्रसन्नःप्राहरुक्मिणीम् ॥ ३४ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ श्रीराधिकायाहृदयारविंदेपादारविंदंहिविराजतेमे ॥ अहर्निशंप्रश्रयपाशबद्धंलवंलवार्द्धंनचलत्यतीव ॥ ३५ ॥ अद्यो-ष्णदुग्धप्रतिपानतोऽस्याउच्छालकास्तेममप्रोच्छलंति ॥ मन्दोष्णमेवंहिनदत्तमस्यैयुष्माभिरुष्णंतुपयःप्रदत्तम् ॥ ३६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रीकृष्णस्यवचःश्रुत्वारुक्मिण्याद्यास्त्रियोवराः ॥ प्रेम्णापादंविमृज्याथविसिस्मुःसर्वतोनृप ॥ ३७ ॥ श्रीराधायाःपराप्रीतिर्माधवेमधुसूदने ॥ तत्समानानचैकैषाअद्वितीयामहीतले ॥३८॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेसिद्धाश्रमेश्रीराधाकृष्णसमागमेराधा प्रेमप्रकाशोनामसप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रीराधायाःपरांप्रीतिंज्ञात्वागोपीगणस्यच ॥ ऊचुर्हरिंराजपुत्र्यस्तद्रासप्रे-क्षकोत्सुकाः ॥ १ ॥ पट्टराज्यऊचुः ॥ धन्यागोप्यस्तुतेभक्त्याप्रेमलक्षणसंयुताः ॥ याःप्राप्तारासरंगेवैतासांकिंवर्ण्यतेतपः ॥ २ ॥ वृन्दावनेकृतोरासोविधिनायेनमाधव ॥ तंविधिंद्रष्टुमिच्छामोयदित्वंमन्यसेप्रभो ॥३॥ त्वंचात्रैवतथाराधागोप्यःसर्वा व्रजांगनाः ॥ वयंचात्रै-वदेवेशरासोयोग्योभवेदिह ॥ ४ ॥

प्रीति माधव मधुसूदनमें है, उसके समान हमारी किसीकीभी ऐसी एक अद्वितीय प्रीति नहीं है ॥३८॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां सिद्धाश्रमे राधा प्रेम प्रकाशो नामसप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥ श्रीनारदजी बहुलाश्वसे कहते हैं कि, श्रीराधिकाकी श्रीकृष्णमें परम प्रीति देखकर और वैसीही गोपियोंकी कृष्णमें अद्वितीय भक्ति देखकर सब राजकुमारी हरिसे बोलीं, वे सब कैसी हैं कि, रास देखनेके लिये उत्कण्ठिता हैं ॥१॥ पटरानियाँ बोलीं-गोपियां धन्य हैं, जो आपकी प्रेम लक्षण भक्तिमें भरी थे रासरंगमें प्राप्त हुई हैं, उनके तपका क्या वर्णन करें ॥२॥ हे माधव ! वृन्दावनमें जिस विधिसे आपने रास किया था, इस विधिको हम देखनेकी इच्छा करती हैं, यदि आपकी इच्छा हो तो॥३॥ आपभी यहीं हो, श्रीराधि-काजी यहीं हैं, गोपियाँ भी सब यही हैं, उससे यह रास यहीं होने योग्य है ॥ ४ ॥

हे जगत्के नाथ ! यह हमारा मनोरथ आप पूर्ण कीजिये, हे मनोहर ! और हमारा कुछ मनोरथ नहीं है ॥५॥ ऐसा उनका वचन सुनकर भगवान् हँसतेसे उनसे प्रेम भरी अपनी वाणीसे मोहसा करते यह बोले॥६॥रासकी ईश्वरी राधा है,सो यहाँ तो तब रास होवे, जब उसकी इच्छा होवे, इसलिये उससे तुम पूछ देखो॥७॥ऐसे रुक्मिणी आदि सब रानियाँ इस वचनको सुनकर परम प्रेमसे राधाके पास जाकर हँसते हँसते यह बोलीं ॥८॥ रानियाँ बोलीं-हे रम्भोरू ! हे चन्द्रवदने ! हे व्रज सुन्दरी ! हे रासेश्वरी ! हे सखि ! हे शीलरूपे, हे राधे ! हे सुकीर्ति कुल कीर्ति करे ! हे शुभांगे ! आपको पूछनेके लिये हम सब आई हैं॥९॥ रसके दाता यहाँ रासेश्वर भी हैं, रासेश्वरी आपभी हो, और गोप श्रेष्ठोंकी अंगनाएं भी यहाँही हैं, रसके लिये सर्व विधिमें हमभी हैं, इससे आप रास करिये, रास हमको बडा प्यारा है ॥१०॥ तब राधिकाजी बोली कि, रासके ईश्वर सबसे परे सन्तोंपर कृपा करनेवाले

पूर्णीकुरुजगन्नाथअस्माकंतुमनोरथम् ॥ कृतोमनोरथोन्योनरासक्रीडांमनोहर ॥५॥ इतितासांवचःश्रुत्वाभगवान्प्रहसन्निव ॥ प्राहताःप्रेमसंयुक्तोगीर्भिःसंमोहयन्निव ॥ ६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ रासेश्वर्यास्तुराधायामनश्चेद्रंतुमंगनाः ॥ तदारासोभवेदत्रभवतीभिस्तुपृच्छताम् ॥ ७ ॥ इतिश्रुत्वावचस्तस्यरुक्मिण्याद्यानृपात्मजाः ॥ राधामेत्यपरंप्रेम्णाप्राहुःप्रहसिताननाः ॥ ८ ॥ श्रीराज्ञ्यऊचुः ॥ रंभोरुचन्द्रवदनेव्रजसुन्दरीशेरासेश्वरिप्रियतमेसखिशीलरूपे॥ रासेसुकीर्तिकुलकीर्तिकरेशुभांगेत्वांप्रष्टुमागतवतीःसकलावयंस्म॥९॥रासेश्वरोपिकिलचात्ररसप्रदायीरासेश्वरीत्वमपिगोपवरांगनाश्च ॥ एवंवयंस्मइतिसर्वविधौरसार्थैरासंकुरुप्रियतमेचतथाप्रियंनः ॥ १० ॥ श्रीराधोवाच ॥ रासेश्वरस्यपरमस्यसतांकृपालोरंतुंमनोयदिभवेत्तुतदात्ररासः ॥ शुश्रूषयापरमयापरयाचभक्त्यासंपूज्यतंकिलवशीकुरुतप्रियेष्टाः ॥ ११ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ राधायावचनंश्रुत्वाश्रीकृष्णोक्तंतथावदन् ॥ तथास्तुचोक्त्वासाराधाप्रसन्नाभून्महामनाः ॥ १२ ॥ माधवेपूर्णिमायांतुपुण्येसिद्धाश्रमेशुभे ॥ प्रदोषकालेचन्द्राभेरासारंभोबभूवह ॥१३॥रासेश्वरस्यरासार्थैरासेश्वर्यासमन्वितः ॥ रराजरासेरसिकोयथारत्यारतीश्वरः ॥ १४ ॥ यावतीर्गोपिकाःसर्वायावतीराजकन्यकाः ॥ तावद्रूपधरोरेजेएकःकृष्णोद्वयोर्द्वयोः ॥१५॥ तालवेणुमृदंगानांकलकण्ठैःसखीजनैः ॥ वल्गुनूपुरकांचीनांमिश्रशब्दोमहानभूत् ॥ १६ ॥

श्रीकृष्ण यदि रमण करनेकी इच्छा करें, तो यहाँ रास होवे, सो परमशुश्रूषा करके और परम भक्तिसे उन्हें पूजकर हे प्यारियो ! वशमें करो ॥११॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसा राधाका वचन सुनकर श्रीकृष्णका "कथन कहा, तब तथास्तु" ऐसे कहकर बडे मनवाली राधिकाजी प्रसन्न हुई, ॥१२॥ तब वैशाखकी पूर्णमासीको शुभ पवित्र उस सिद्धाश्रममें प्रदोष कालमें चन्द्रोदयके समय रासका प्रारम्भ हुआ ॥१३॥ रासेश्वरीके साथ रसिक रासेश्वरकी बडी शोभा हुई, जैसे रतिके संग कामदेवकी होती है ॥१४॥ तब जितनी गोपी और जितनीही राजकन्या उतनेही रूप एक श्रीकृष्णके होगये, तब दो दोके बीचमें एक एक कृष्ण दीखे ॥१५॥ मृदंग, मञ्जीरा, वीणा इनके शब्द, और मनोहर कण्ठी सखी जनोंके शब्द मनोहर नूपुर करधनियोंके मिले हुये मनोहर शब्द हुये ॥ १६ ॥

कोटि कन्दर्पसे सुन्दर, वन माला पहिने, मकराकृत कुण्डल धारण किये, पीताम्बर (धारी), किरीट, कंकण, बाजूबन्द, ऐसा शृंगार किये ॥१७॥ रासेश्वरीके साथ रासेश्वरकी बड़ी शोभा हुई, तारागणोंसे चन्द्रमाकी जैसी शोभा होती है ॥ १८ ॥ ऐसे समस्त रात्रि एक क्षणकी बराबर रासमण्डलमें व्यतीत होगई, वह रात्रि महाआनन्द मयी हुई ॥ १९ ॥ तब रुक्मिणी आदिक उत्तम स्त्रियाँ श्रीरास मण्डलको देखकर परम आनन्दको प्राप्त होगई, और सभीके पूर्ण मनोरथ हो गये ॥२०॥ परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण पुरुषोत्तमसे रासके अंतमें रुक्मिणीसे आदि लेकर सब रानी पटरानी प्रेममें परायण होकर यह बोलीं ॥२१॥ कि हे नाथ ! इस मनोहर रासरंगमें आपके अति सुन्दर रूपको देखकर हमारा मन परमानन्दको प्राप्त होगया है, जैसे मुनि ब्रह्मानन्दको प्राप्त होजाता है ॥२२॥ ऐसा रास न कभी हुआ, और न होगा, हे माधव ! जो इस रासमें गोपियोंके सौ यूथ हैं ॥२३॥ और हम सखियों सहित

कोटिकंदर्पलावण्यःस्रग्वीकुण्डलमंडितः ॥ पीतांबरधरोराजन्किरीटकटकांगदः॥१७॥ रासेश्वर्यासमंगायत्रासेरासेश्वरःस्वयम् ॥ स्त्रीगणैःसहितोराजंश्चंद्रस्तारागणैर्यथा ॥१८॥ एवंसर्वानिशाराजन्क्षणवद्रासमण्डले ॥ व्यतीताभून्महाराजमहानंदमयीःशुभाः ॥१९॥ श्रीरासमण्डलंदृष्ट्वारुक्मिण्याद्यास्त्रियोवराः ॥ जग्मुस्ताःपरमानंदंसर्वाःपूर्णमनोरथाः ॥२०॥ परिपूर्णतमंसाक्षाच्छ्रीकृष्णंपुरुषोत्तमम् ॥ रासांतेरूक्मिणीमुख्याःप्राहुःप्रेमपरायणाः ॥ २१ ॥ राज्यऊचुः ॥ दृष्ट्वात्वद्रूपमाधुर्य्यंरासरंगेमनोहरे ॥ गतंमनोनःस्वानंदंब्रह्मानंदंयथामुनिः ॥ २२ ॥ एतादृशोपिरासोन्योनभूतोनभविष्यति ॥ शतयूथस्तुगोपीनामत्रमाधववर्तते ॥२३॥ पत्न्यःषोडशसाहस्रंसखीभिःसहितावयम् ॥ सखिकोटियुताश्चात्रअष्टपट्टमहास्त्रियः ॥ २४ ॥ वृन्दावनेपिनैतादृग्भूतोवामाधवेश्वर ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंकृताभिमानानांराज्ञीनांप्रहसन्हरिः ॥ प्राहेदंपृच्छताराधाभवतीभिःपरात्परम् ॥ २५ ॥ सत्यभामादिकाःसर्वाःपृच्छंतितांमनोहराम् ॥ किंचिद्धसंतीमनसिप्राहराधापरंवचः॥२६॥ श्रीराधोवाच ॥ ननुरासःपरंचात्रबहुस्त्रीगणसंकुलः ॥ पूर्वरासमोनस्याद्यस्तुवृन्दावनेभवत् ॥ २७ ॥ क्वचात्रवृन्दारण्यंहिदिव्यद्रुमलताकुलम् ॥ प्रेमभारानतलतंमधुमत्तमधुव्रतम् ॥ २८ ॥

सोलह हजार रानियाँ और करोड़ सखियों सहित जहाँ आठ पटरानियाँ हैं ॥२४॥ हे माधव ! हे ईश्वर ! ऐसा चाहे वृन्दावनमें भी नहीं हुआ होगा, नारदजी कहते हैं कि, ऐसा किया है, अभिमान जिन्होंने उन रानियोंसे हँसते २ भगवान् बोले कि, यह बात तो तुमको राधाजीसे पूछनी चाहिये ॥२५॥ तब तो सत्यभामादिक रानियाँ मनोहर श्रीराधासे पूछने लगीं तब मनमें हँसती हुई राधा यह बोली ॥ २६ ॥ कि बहुतसी स्त्री गणोंका समूह जिसमें ऐसा यह रास यहाँ भी सुन्दर हुआ, किन्तु पहिले रासकी बराबर यह नहीं हुआ जो कि वृन्दावनमें हुआ था ॥२७॥ वह वृन्दावन यहाँ कहाँ, जिसमें दिव्य वृक्षलताओंसे आकुल प्रेमके भारसे जिनकी लता झुक रहीं हैं, सुगन्धिसे मत्त भ्रमरोंकी गुञ्जार जिसमें ॥ २८ ॥

पुष्प भारको बहाती हुई हंस और कमलोंसे संयुक्त रत्नोंसे भरी सिन्दूरकी जैसी यमुना यहाँ कहाँ ? ॥ २९ ॥ पुष्प भारसे झुक रही, ऐसी माधवी लता कहाँ, वे वृन्दावनके प्रेमी पक्षी, जो मधुर ध्वनि गाते हैं, वे कहाँ ॥३०॥ चंचल भ्रमर जिनमें गुंजार करे, ऐसी कुञ्ज निकुञ्जके दिव्य मन्दिर कहाँ, उन निकुञ्जोंमें चलता वह शीतल मन्द कमलरजसे सुगंधित पवन कहाँ ॥३१॥ मनोहर ऊँचे शिखर जिसमें, फल फूलोंसे भरी है गुफा जिसकी, वह गोवर्द्धन कहाँ ॥३२॥ कालिंदीके मनोहर पुलिनमें चमकती रेतीमें बेत लिये, वंशी बजाते, मोरपंखसे बांधी जो मल्लकीसी फेंट उससे शोभित श्याम कहाँ ॥३३॥ वनमालासे भूषित श्रीकृष्णका वह श्रृंगार यहाँ कहाँ, श्यामसुन्दर, सचिक्कन, जो घुंघराले अलकोंकी सुगन्धि जिसमें, चिरमिटियोंसे पुष्पोंका कृष्णका श्रृंगार कहाँ ॥३४॥ श्रीकृष्णके मुख कमलपर हिलते चलते जो परस्पर बिजुलीसे कुण्डलोंकी शोभा सो कहाँ ॥ ३५ ॥ पत्रावलीकी

पुष्पव्यूहान्वहंतीयायथोष्णिङ्मुद्रिताशुभा ॥ हंसपद्मसमाकीर्णाक्वचात्रयमुनानदी ॥२९॥ माधव्यस्तुलताःक्वात्रपुष्पभारनताःपराः॥क्वपक्षिणःप्रेमपरागायंतिमधुरास्वनम् ॥ ३० ॥ लोलालिपुंजाःकुञ्जाःक्वनिकुञ्जादिव्यमन्दिराः ॥ क्ववायुःशीतलोमन्दोवातिपद्मरजोहरन् ॥ ३१ ॥ शृंगैर्मनोहरैरुच्चैर्गिरिर्गोवर्द्धनोचलः ॥ सर्वत्रफलपुष्पाढ्योदरीभिःक्वकरीवसः ॥ ३२ ॥ कालिंदीपुलिनेरम्येवायुनाचितसैकते ॥ वंशीवेत्रधरोमल्लपरिबर्हविराजितः ॥ ३३ ॥ क्वचात्रकृष्णशृंगारोवनमालाविभूषितः ॥श्यामानामलकानांचवक्राणांगन्धवारिणाम्॥३४॥ वलितंहरितंक्वात्रकुण्डलाभ्यांपरस्परम् ॥ श्रीमुखेकृष्णचन्द्रस्यगण्डस्थलमनोहरे ॥ ३५ ॥ पत्रावलीगन्धलोभाद्भ्रमद्भृंगावलीयुते ॥ क्वप्रेम्णादर्शनंचैव स्पर्शनंहर्षणंतथा ॥ ३६ ॥ कामेषुतिग्मकोणैश्चनेत्रैःक्वापांगजोरसः ॥ आकर्षणंक्वहस्ताभ्यांहस्ताद्धस्तविसर्जनम्॥ ३७ ॥ विलीनत्वंनिकुञ्जेषुसंमुखेनतुदर्शनम् ॥ ग्रहणंक्वात्रचीराणांहरणंवेणुवेत्रयोः ॥ ३८ ॥ क्वप्रेम्णाचात्रबाहुभ्यांकर्षणंचपरस्परम् ॥ पुनःपुनस्तद्ग्रहणंभुजेचन्दनचर्चितम् ॥ ३९ ॥ यत्रयत्रचयालीलातत्रतत्रैवशोभते ॥ यत्रवृन्दावनंनास्तितत्रमेनमनःसुखम् ॥ ४० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ राधावाक्यंततःश्रुत्वासर्वाःपट्टमहास्त्रियः ॥ जहुर्मानंस्वरासस्यविस्मिताहर्षिताश्चताः ॥ ४१ ॥ एवंसिद्धाश्रमेरासंकृत्वाश्रीराधिकेश्वरः ॥ नीत्वागोपीगणान्सर्वान्राधयासहितोहरिः ॥ ४२ ॥

सुगन्धिके लोभसे भ्रमते जो भृंगावली जिसमें ऐसा कृष्णका दर्शन कहाँ, तब स्पर्शन, हर्षण कहाँ ॥ ३६ ॥ कामके तीक्ष्ण बाण ऐसे जो कटाक्ष उनका रस कहाँ, हाथोंसे खेंचकर हाथसे हाथ छुड़ाना कहाँ ॥ ३७ ॥ उन निकुञ्जोंमें छुपना, ढूंढना, वह चीरहरण, वह बेत और वंशीका चुराना कहाँ ॥३८॥ प्रेमसे आपसमें भुजाओंसे खेंचना कहाँ बार बार भुजाओंसे चन्दन लगाना कहाँ ॥३९॥ जहाँ जहाँ जो जो लीला है, उसकी वहाँही वहाँ शोभा है, जहाँ वृन्दावन नहीं है, वहाँ मेरे मनको सुख नहीं है ॥४०॥ नारदजी कहते हैं ऐसे सब पटरानियोंने राधाका वाक्य सुनकर अपने रासका मान त्याग दिया, और विस्मित होकर हर्षित हुई ॥ ४१ ॥ ऐसे सिद्धाश्रममें राधिकेश्वर रास करके सब गोपीगणोंसहित राधिकाको, रानी पटरानियोंको साथ लेकर द्वारिकामें प्रवेश हुये ॥ ४२ ॥

स्त्रियों सहित जब द्वारकामें आये, तब राधिकाके लिये और पृथक्क् मंदिर बनवाये ॥ ४३ ॥ उनमें सब व्रज सुन्दरियोंको बसाया, यह सिद्धाश्रमकी कथा मैंने तुम्हारे सामने कही, हे नृप ! ॥ ४४ ॥ सो सब पापोंकी हरनेवाली सबको मोक्ष देनेवाली है ॥ ४५ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां सिद्धाश्रममाहात्म्ये रासोत्सवोनामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ नारदजी कहते हैं कि, द्वारावतीका मण्डल चार सौ कोशका है, उसकी चार सौही कोशकीही परिक्रमा है ॥१॥ उसके बीचमें कृष्णका रचा हुआ बारह योजनका किला है, दूसरा बाहरका किला नब्बे कोशका है, श्रीकृष्ण महात्माने बनवाया है ॥ २ ॥ तीसरा किला एक सौ अट्ठासी कोशका है, इसमें रत्नोंके महल मंदिर हैं ॥ ३ ॥ उनके भीतर श्रीकृष्णका दुर्ग है, उसमें नौ लाख विचित्र मंदिर बने हैं, ॥ ४ ॥ वहाँ राधाका मंदिर है, उसके द्वारपर लीला सरोवर है, सब तीर्थोंमें उत्तम है, गोलोकसे आया है ॥५॥ जिसमें यदि कोई पापी

सभार्य्योभगवान्साक्षाद्द्वारिकांप्रविवेशह॥कारयामासराधायैमन्दिराणिपराणिच॥४३॥निवासयित्वासुसुखंसर्वास्ताश्चव्रजौकसः॥ इत्थंसिद्धा-
श्रमकथामयातेकथितानृप ॥ ४४ ॥ सर्वपापहरापुण्यासर्वेषांचैवमोक्षदा ॥ ४५ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां श्रीद्वारकाखण्डेबहुलाश्वसंवादे
सिद्धाश्रममाहात्म्येरासोत्सवोनामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ द्वारावतीमण्डलंतुशतयोजनविस्तृतम् ॥ तस्यप्रदक्षिणा
सर्वायोजनानांचतुःशतम् ॥१॥ तन्मध्येकृष्णरचितंदुर्गंद्वादशयोजनम्॥द्वितीयंचबहिर्दुर्गंनवतिंचदुरुत्तरम् ॥ क्रोशैः संघट्टितंराजञ्छ्रीकृष्णेन
महात्मना ॥२॥ तृतीयंचतथादुर्गंयूनैश्चद्विशतैर्नृप ॥ क्रोशैःसंघट्टितंराजन्रत्नप्रासादसंयुतम् ॥ ३ ॥ तेषामंतरदुर्गेपिश्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥
मंदिराणिविचित्राणिनवलक्षाणिसंतिहि ॥४॥ तत्रराधामंदिरस्यद्वारेलीलासरोवरम् ॥ सर्वतीर्थोत्तमंराजन्गोलोकाच्चसमागतम् ॥ ५ ॥ यस्मि-
न्स्नात्वानरःपापीव्रतीभूत्वासमाहितः ॥ अष्टम्यांहेमदानंचदत्त्वानत्वाविधानतः ॥६॥ कोटिजन्मकृतैःपापैर्मुच्यतेनात्रसंशयः ॥ प्राणांतेतत्ररं
नेतुंगोलोकाच्चमहारथः ॥७॥ सहस्रादित्यसंकाशआगच्छतिनसंशयः ॥ दशकंदर्पलावण्योरत्नकुण्डलमंडितः ॥ ८ ॥ स्रग्वीपीतांबरःश्यामः
सहस्रार्कस्फुरद्द्युतिः ॥ सहस्रपार्षदैर्युक्तश्चामरांदोलराजितः ॥९॥ जयध्वनिसमायुक्तोवेणुदुंदुभिनादितः ॥ भूत्वैवंरथमास्थायगोलोकंयात्य-
संशयम् ॥ १० ॥ अथतीर्थानिचान्यानिश्शृणुराजन्महामते ॥ शतोत्तराणितत्रैवसहस्राणिचषोडश ॥११॥ अष्टभिःसहितान्येवपत्नीनांभव-
नानिच ॥ तानिप्रदक्षिणीकृत्यनत्वानत्वापृथक्पृथक् ॥ १२ ॥

नरभी स्नान करे, सावधान होकर व्रती होकर अष्टमीको विधानसे सुवर्ण दान करे और प्रणाम करे ॥ ६ ॥ तो कोटि जन्मके पापसे छूट जांय, और मरने पर उस मनुष्यको लेने के लिये गोलोकसे रथ आय ॥ ७ ॥ जिसका हजार सूर्यकासा तेज इसमें सन्देह नहीं और दश कन्दर्पसा सुन्दर होकर रत्न कुण्डलसे मंडित ॥ ८ ॥ माला पहिने पीताम्बरधारी श्यामरूप हजार सूर्यकासा जिसका रूप हजार पार्षदोंसे युक्त, चमर ढुलनेसे सुशोभित ॥ ९ ॥ वेणु, दुन्दुभि बजती जायँ जयजयकी ध्वनि स्मृति वह गोलोकको जाता है, इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥ १० ॥ हे राजन् ! हे महामते ! अब इस द्वारकामें जो और भी तीर्थ हैं, उनको सुनो, सोलह हजार और एक सौ आठ तीर्थ हैं ॥ ११ ॥ पटरानियों सहित उनके महल हैं, उनको पृथक्क् २ प्रणाम करके परिक्रमा करे ॥ १२ ॥

जो ज्ञान तीर्थमें स्नान करके कल्पवृक्षका स्पर्श करे, उसको ज्ञान, वैराग्य,भक्ति, तीनों बातें साक्षात् प्राप्त होती हैं ॥ १३ ॥ और प्रसन्न होकर श्रीकृष्ण उसके हृदयमें सदा निवास
करते हैं,और समृद्धि सिद्धि सब उसको आपही प्राप्त होती हैं ॥ १४ ॥ जो मनुष्य हरिमंदिरका दर्शन करे, वह जीवन्मुक्त होकर कृतार्थ होता है, उसके समान कोई वैष्णव नहीं है
और उसके समान कोई तीर्थ भी नहीं है ॥ १५ ॥ पांच योजनपर भगवान्के मन्दिरसे सौ धनुषपर एक कृष्ण कुण्ड है, वह कृष्णके तेजसे उत्पन्न हुआ है ॥ १६ ॥ जिसमें स्नान
करके साम्ब जाम्बवतीका पुत्र कुष्ठ (कोढ) से मुक्त होगया,उसके दर्शनमात्रसेही सब पापोंसे छूट जाता है ॥१७॥ हे मैथिल ! उससे अठारह कदमपर पूर्व दिशामें सब तीर्थोंमें
उत्तम बडा पुण्य एक बलभद्र सरोवर है ॥ १८ ॥ जहाँ पृथ्वीकी प्रदक्षिणा करके बलदेव महाबली यज्ञ रचकर रेवती सहित सुशोभित हुये ॥१९॥ वहाँ स्नान करे तो सब पापोंसे

ज्ञानतीर्थसमाप्लुत्यस्पृशेद्यःपारिजातकम् ॥ तस्यज्ञानंचवैराग्यंभक्तिर्भवतितत्क्षणात् ॥ १३॥ श्रीकृष्णोहृदयेतस्यवसेद्धृष्टमनाःसदा ॥ समृ-
द्धिसिद्धयःसर्वास्तंभजंतिनिसर्गतः ॥ १४ ॥ समुक्तःसकृतार्थःस्याद्यःपश्येद्धरिमंदिरम् ॥ तत्समोवैष्णवोनास्तितीर्थंचतत्समंनहि ॥ १५ ॥
पंचयोजनविस्तीर्णाद्भगवन्मंदिरात्ततः ॥ धनुःशतेकृष्णकुण्डःकृष्णतेजःसमुद्भवः ॥१६॥ यंस्नात्वाकुष्ठतोमुक्तःसांबोजांबवतीसुतः॥तस्यदर्शन
मात्रेणसर्वपापैःप्रमुच्यते ॥१७॥ तस्मादष्टादशपदेपूर्वस्यांदिशिमैथिल ॥ सर्वतीर्थोत्तमंपुण्यंबलभद्रसरोमहत् ॥ १८ ॥ पृथ्वीप्रदक्षिणांकृत्वा
बलदेवोमहाबलः॥ यज्ञंयत्रविनिर्मायरेवत्याविरराजह ॥१९॥ तत्रस्नात्वानरःसद्योमुच्यतेसर्वपातकात् ॥ पृथ्वीप्रदक्षिणायाश्चफलंतस्यनदुर्ल-
भम् ॥ २० ॥ भगवन्मंदिराद्राजन्सहस्रंधनुरग्रतः ॥ दक्षिणस्यांमहातीर्थंगणनाथस्यवर्तते ॥२१॥ अनिर्दशेगतेराजन्प्रद्युम्नस्वसुतेतदा ॥ गणे-
शपूजनंयत्रपूजयामासरुक्मिणी ॥२२॥ तत्रस्नात्वाहेमदानंयोददातिनृपेश्वर ॥ पुत्रप्राप्तिर्भवेत्तस्यवंशस्तस्यविवर्द्धते ॥ २३ ॥ भगवन्मंदिरा
द्राजन्दिग्विभागेचपश्चिमे ॥ धनुषिद्विशतेचास्तेदानतीर्थंपरंशुभम् ॥२४॥ यत्रश्रीकृष्णचन्द्रस्यनित्यंदानंकरोतियः ॥ तत्रस्नात्वानरोराजन्द्वि-
पलंकांचनंतथा ॥ २५ ॥ चतुर्गुणंतुरजतंपट्टांबरशतंतथा ॥ तथासहस्रमौल्यानिनवरत्नानियानिच ॥ २६ ॥ योददातिनरश्रेष्ठस्तस्यपुण्यफलं
शृणु ॥ अश्वमेधसहस्राणिराजसूयशतानिच ॥ २७ ॥

छूट जायें, और पृथ्वीकी परिक्रमाका फल उसको दुर्लभ नहीं है ॥ २० ॥ हे राजन् ! भगवान्के मन्दिरके हजार धनुषपर आगे एक दक्षिणं दिशामें गणनाथ तीर्थ है ॥२१॥ जब
पहले दश दिनोंके भीतर प्रद्युम्न अपना पुत्र जाता रहा, तब गणेशका पूजन रुक्मिणीने किया ॥ २२ ॥ वहाँ स्नान करके हे नृपेश्वर ! जो स्वर्णदान करे तो उसको पुत्रकी प्राप्ति
होवे और वंशकी वृद्धि होवे ॥ २३ ॥ और भगवान्के मंदिरसे पश्चिम दिशामें दो सौ धनुषपर एक अतिशुभ दानतीर्थ है ॥ २४ ॥ जहाँ श्रीकृष्ण नित्य दान किया करते हैं, जहाँ
स्नान करके दो पल (टका) भर स्वर्णदान करे और ॥ २५ ॥ उससे चौगुनी चांदीका दान करे और सौ रेशमी वस्त्रका दान करे, हजार मोहर तथा नौ रत्नोंका दान करे
॥ २६ ॥ जो इतना दान देवे, उसका पुण्यफल सुनो, हजार अश्वमेध और सौ राजसूययज्ञ ॥ २७ ॥

ये दान तीर्थके पुण्यकी सोलहवीं कलाको नहीं प्राप्त होते हैं, बदरिकाश्रमकी यात्रामें मनुष्यको जो फल प्राप्त होता है ॥२८॥ और सैंधवारण्यकी यात्रामें मेषके सूर्यमें जो फल प्राप्त होवे॥२९॥और उत्पलावर्तकी यात्रामें वृषके सूर्यमें जो फल प्राप्त होवे, उनसे लक्षगुण फल यहाँ स्नान दान करनेसे होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥ ३० ॥ हे विदेहराट् ! उससे करोड गुना पुण्य दान तीर्थमें होता है, जो एक महिने दान तीर्थमें स्नान करे ॥३१॥ तो उसको इतना पुण्य होता है, जिसको चित्र गुप्तभी नहीं जानता है, उस तीर्थके माहात्म्यको ब्रह्माभी नहीं वर्णन कर सकते हैं ॥ ३२ ॥ सब दानोंमें अश्वदान बडा है, उससे गजदान गजदानसे रथदान बडा है ॥ ३३ ॥ रथदानसे भूमिदान विशेष है, हे राजन् ! भूमिदानसे अन्नदान बडा उत्तम है ॥३४॥ अन्न दानके समान कोई दान न हुआ न होगा, क्योंकि देव, ऋषि, पितर, भूत, सबकी अन्नदानसे तृप्ति होती है ॥ ३५ ॥ जो दान तीर्थमें अन्नदान

दानतीर्थस्यपुण्यस्यकलांनार्हतिषोडशीम् ॥ बद्रिकाश्रमयात्रायांयत्फलंलभतेनरः ॥ २८ ॥ सैंधवारण्ययात्रायांमेषस्थेचदिवाकरे ॥ २९ ॥ उत्पलावर्तयात्रायांवृषस्थेभास्करेसति ॥ स्नानंदानंलक्षगुणंभवतीहनसंशयः ॥ ३० ॥ तस्मात्कोटिगुणंपुण्यंदानतीर्थेविदेहराट् ॥ मासमेकं चयत्स्नानंदानतीर्थेकरोतिह ॥ ३१ ॥ तस्यजातंचयत्पुण्यंचित्रगुप्तोनवेत्तितत् ॥ तस्यतीर्थस्यमाहात्म्यंवक्तुंनालंचतुर्मुखः ॥३२॥ सर्वेषांचै-वदानानामश्वदानंपरंस्मृतम् ॥ अश्वदानाद्गजस्यापिगजदानाद्रथस्यच ॥३३॥ रथदानात्परंराजन्भूमिदानंविशिष्यते ॥ भूमिदानादन्नदानंमहा-दानंप्रकथ्यते ॥ ३४ ॥ अन्नदानसमंदानंनभूतंनभविष्यति ॥ देवर्षिपितृभूतानांतृप्तिरन्नेनजायते ॥ ३५ ॥ दानतीर्थेह्यन्नदानंयःकरोतिमहा-मनाः ॥ ऋणत्रयंविमुच्याथयातिविष्णोःपरंपदम् ॥ ३६ ॥ दशैवमातृकेपक्षेराजेंद्रदशपैतृके ॥ प्रियायादशपक्षेतुपुरुषानुद्धरेन्नरः ॥ ३७ ॥ चतुर्भुजादिव्यरूपानागारिकृतकेतनाः ॥ स्रग्विणःपीतवस्त्रास्तेप्रयांतिहरिमंदिरम् ॥ ३८ ॥ भगवन्मंदिराद्राजन्नुत्तरस्यांदिशिश्रुतम् ॥ क्रोशार्द्धेनृपशार्दूलमायातीर्थमनोहरम् ॥ ३९ ॥ विराजतेयत्रनित्यंदुर्गादुर्गतिनाशिनी ॥ सिंहारूढाभद्रकालीचंडमुण्डविनाशिनी ॥ ४० ॥ स्यमंतकंसमाहर्तुमृक्षराजबिलंगते ॥ पुत्रेचदेवकीदेवींपूजयामाससत्फलैः ॥४१॥ तदाजगामप्रिययासमणिर्भगवान्हरिः ॥ तद्दिनात्तत्प्रसिद्धं स्यान्मायातीर्थंफलप्रदम् ॥ ४२ ॥

करे तो तीनों ऋणको छुडा करके विष्णुके परम पदको प्राप्त होवे ॥३६॥ दश तो माताके पक्षके,दश पिताके पक्षके दश स्त्रीके पक्षके, पुरुषोंका उद्धार करे ॥३७॥ वे चतुर्भुज दिव्य रूप होकर पीताम्बर धारी मालाधारी गरुडपर बैठकर विष्णु लोकको जाते हैं ॥३८॥ भगवान्के मंदिरसे उत्तर दिशामें आधा कोशपर मायातीर्थ है, वह बडा मनोरथ है ॥३९॥ जहाँ दुर्गति नाशिनी दुर्गा सादाही विराजती है, सिंहपर चढी, भद्रकाली, चंडमुंडकी नाश करनेवाली ॥४०॥ जब स्यमन्तक मणिको लेनेके लिये ऋक्षराज जाम्बवान्की गुफामें श्रीकृष्ण गये थे, तब देवकीने श्रेष्ठ फलोंसे देवीकी पूजा की थी ॥ ४१ ॥ तब भगवान् मणि लेकर स्त्री सहित उस गुफासे आगये, उस दिनसे वह मायातीर्थ फलको देनेवाला प्रसिद्ध हुआ ॥ ४२ ॥

माया तीर्थमें स्नान करके मायाका पूजन करे, तो उसके सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण होजायें ॥४३॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां प्र० दुर्गेद्वारकातीर्थ माहात्म्यवर्णनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥१९॥ नारदजी कहते हैं, हे विदेहराज ! दुर्गके पूर्वके दूसरे द्वारपर बडा पवित्र एक इन्द्रतीर्थ है, वह कामताको देनेवाला, सिद्धिको देनेवाला है ॥१॥ वहाँ स्नान करे तो इन्द्र लोकको जावे, इसी लोकमें चन्द्रमाके गमान वैभव होजावे ॥ २ ॥ वहाँही दक्षिणके द्वारपर सूर्य कुण्ड है, जहाँ सत्राजितने स्यमंतक मणिके लिये सूर्यका पूजन किया है ॥३॥ वहाँ स्नान करके पद्मराग मणि, पुखराज देवे, तो सूर्यसे विमानमें बैठकर सूर्य लोकको जावे ॥४॥ वहाँही पश्चिमके द्वारपर ब्रह्मतीर्थ है, जहाँ स्नान करके स्वर्णके पात्रमें खीरका दान करे ॥५॥ तो उसका जो फल होवे, सो सुनो, ब्राह्मणको मारनेवाला होवे, पितृहन्ता होवे, मातृहन्ता, गो हन्ता, गुरुहन्ता, कैसा भी पापी होवे, वहभी पवित्र होजावे॥६॥

मायातीर्थेचयःस्नात्वामायांसंपूज्यमानवः।सर्वांमनोरथप्राप्तिंप्राप्नुयान्नात्रसंशयः॥४३॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसं-
वादेप्रथमदुर्गेलीलासरोवरहरिमंदिरज्ञानतीर्थकृष्णकुण्डबलभद्रसरोगणेशतीर्थमाहात्म्यंनामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥
द्वितीयस्यापिदुर्गस्यपूर्वद्वारेविदेहराट् ॥ इन्द्रतीर्थंमहापुण्यंकामदंसिद्धिदायकम् ॥ १ ॥ तत्रस्नात्वानरोराजन्निंद्रलोकंप्रयातिहि ॥ इहैवचन्द्र
सादृश्यंवैभवंप्राप्यतेनरः ॥२॥ तथावैदक्षिणेद्वारेसूर्यकुण्डोभिधीयते॥ यत्रसत्राजितेनापिपूजितोभूत्स्यमंतकः ॥ ३ ॥ तत्रस्नात्वापद्मरागंयोद-
दातिनृपेश्वर ॥ सूर्यप्रभविमानेनसूर्यलोकंप्रयातिहि ॥४॥ तथावैपश्चिमेद्वारेब्रह्मतीर्थंविशिष्यते ॥ तत्रस्नात्वानरोराजन्स्वर्णपात्रेचपायसम् ॥
॥५॥ योददातिमहाबुद्धिस्तस्यपुण्यफलंशृणु ॥ ब्रह्महापितृहागोघ्नोमातृहाचार्यहाघवान् ॥६॥ इन्द्रलोकेपदंधृत्वाबिभ्रद्ब्रह्ममयंवपुः॥ चन्द्रा-
भेनविमानेनयातिब्रह्मपदंसच ॥७॥ तथावैउत्तरेद्वारेक्षेत्रंस्यान्नैललोहितम् ॥ यत्रसाक्षान्महादेवोराजतेनीललोहितः ॥८॥ देवताम्नुनयःसर्वेतथा
सप्तर्षयःपरे ॥ वसंतियत्रवैदेहतथासर्वेमरुद्गणाः ॥ ९ ॥ नीललोहितलिंगंतुयत्रसंपूज्ययत्नतः ॥ ऐश्वर्यमतुलंलेभेरावणोलोकरावणः ॥ १० ॥
कैलासस्यापियात्रायांयत्फलंलभतेनृप ॥ तस्माच्छतगुणंपुण्यंनीललोहितदर्शनात् ॥११॥ नीललोहितकुण्डेवैस्नातियस्त्रिदिनंनरः ॥ सयाति
शिवलोकाख्यंपापायुतयुतोपिहि ॥ १२ ॥ सप्तसामुद्रकंनामतीर्थंयत्रविराजते ॥ तत्रस्नात्वानरःपापीपापसंघैःप्रमुच्यते ॥ १३ ॥

प्रथम इन्द्र लोकमें अपना पद धारण करके ब्रह्ममय देहको धारण करके चन्द्र तुल्य विमानमें बैठकर ब्रह्मपदको प्राप्त होता है ॥७॥ वहाँ उत्तरके द्वारपर नील लोहित तीर्थ है जहाँ साक्षात् नील लोहित नाम महादेव विराजते हैं ॥ ८ ॥ वहाँ सब देवता मुनि, सब सप्तऋषि, बसते हैं, वैसेही समस्त मरुद्गण बसते हैं ॥९॥ वहाँ नील लोहित लिंगका पूजन करके लोक रावण रावण ऐश्वर्यको प्राप्त होगया ॥१०॥ कैलासकी यात्रामें जो फल प्राप्त होवे, उससे सौगुना फल नील लोहितके दर्शनसे प्राप्त होता है ॥ ११ ॥ वहाँ नील लोहित कुण्ड में जो मनुष्य तीन दिन स्नान करे तो, दश हजार भी पापोंका कर्ता होवे, तो भी शिवलोकमें निश्चय जाता है ॥ १२ ॥ वहाँही सप्त सामुद्र तीर्थ है, पापी वहाँ स्नान करे तो सब पापोंसे छूट जाये ॥ १३ ॥

और बहुत शीघ्रही सातों समुद्रोंके स्नानका फल उसको मिले, और विष्णु, ब्रह्मा, महादेव, इन्द्र, वायु, यमराज, सूर्य ॥१४॥ पर्जन्य, कुवेर, चन्द्रमा, पृथ्वी, अग्नि, वरुण, इतने देवता हे मनुजेश्वर ! उसके पासही रहते हैं ॥१५॥ इस ब्रह्माण्डमें सात करोड़ तीर्थ हैं, वे समस्त इस सप्त सामुद्रिक तीर्थमें बसते हैं ॥१६॥ वहाँ स्नान करके फिर परिक्रमा करे तो द्वारिकापुरीकी यात्राका सब फल मिले ॥१७॥ सप्त सामुद्रिकके विना यात्राका फल नहीं मिलता है, सप्त सामुद्रिक तीर्थको देवता विष्णुका रूप वर्णन करते हैं ॥१८॥ इतिश्री मद्गर्ग संहितायां द्वारकाखण्डे भाषाटीकायां द्वि० दुर्गे० इ० सप्त समुद्र माहात्म्यं नामविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ हे राजन् ! तीसरे दुर्गके द्वारपर रातदिन अंजनी सुत हनूमान रक्षा करते हैं ॥ १ ॥ उन भगवान्के भक्त हनूमानका दर्शन करे तो वह भगवान्का भक्त होवे, जैसे कि हनूमान हैं ॥ २ ॥ वैसेही दक्षिणके द्वारपर सुदर्शन चक्र विराजता है, श्रीकृष्ण

समानंचसप्तसमुद्राणांस्नानपुण्यंलभेत्त्वरम् ॥ विष्णुर्विरिंच्योगिरिशइन्द्रोवायुर्यमोरविः ॥१४॥ पर्जन्योधनदःसोमःक्षितिरग्निरपांपतिः॥तत्पार्श्वे षुसदाह्येतेतिष्ठंतिमनुजेश्वर ॥१५॥ सप्तकोटीनितीर्थानिब्रह्माडेयानिकानिच ॥ सर्वाणितत्रतिष्ठंतिसप्तसामुद्रकेनृप ॥१६॥ तत्रस्नात्वानरःपश्चा-त्कृत्वासर्वपरिक्रमम् ॥ प्राप्नोतिद्वारकायाश्चयात्रायाःसफलंफलम् ॥ १७ ॥ सप्तसामुद्रकमृतेनयात्राफलदास्मृता ॥ सप्तसामुद्रकंतीर्थंविष्णु-रूपंविदुःसुराः ॥ १८ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेद्वितीयदुर्गेइन्द्रतीर्थब्रह्मतीर्थसूर्यकुण्डनैललोहितसप्तसमुद्र माहात्म्यंनामविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तृतीयस्यापिदुर्गस्यपूर्वद्वारेमहाबलः ॥ रक्षत्यहर्निशंराजन्हनूमानंजनीसुतः॥ १ ॥ तंप्रेक्ष्यभगवद्भक्तंहनूमंतंमहाबलम् ॥ जायतेभगवद्भक्तोहनूमानिवमानवः॥२॥तथावैदक्षिणद्वारंचक्रंनामसुदर्शनम्॥रक्षत्यहर्निशंराजञ्छ्रीकृष्ण गतमानसम् ॥ ३ ॥ तस्यदर्शनमात्रेणभवेद्भक्तोहरेःपरः ॥ भक्तस्यापिसदारक्षांकरोतिहिसुदर्शनम् ॥४॥ तथावैपश्चिमंद्वारंजांबवानृक्षराड्बली रक्षत्यहर्निशंराजन्भगवद्भक्तिसंयुतः ॥५॥ तंप्रेक्ष्यभगवद्भक्तंजांबवंतंमहाबलम् ॥ चिरंजीवीहरेर्भक्तोभवतीहचमानवः ॥ ६ ॥ तथावैचोत्तरंद्वारं विष्वक्सेनोमहाबलः ॥ रक्षत्यहर्निशंराजञ्छ्रीकृष्णहृदयोमहान् ॥७॥ तस्यदर्शनमात्रेणनरोयातिकृतार्थताम् ॥ शृणुराजन्बहिर्दुर्गात्तीर्थंपिंडार-कंस्मृतम् ॥८॥ पिंडारकस्यमाहात्म्यंशृणुताद्राजसत्तम ॥ यस्यस्मरणमात्रेणमहापापात्प्रमुच्यते ॥९॥ अर्थसिद्धेरिवद्वाररैवताद्रिसमुद्रयोः॥ मध्येपिंडारकक्षेत्रंतीर्थानांतीर्थमुत्तमम् ॥ १० ॥ क्रतुराजंराजसूयंयदुराजोमहाबलः ॥ चकारयत्रवैदेहपरिपूर्णतमाज्ञया ॥ ११ ॥

में है मन जिसका वह रातदिन रक्षा करता है ॥३॥ उसके दर्शनसेही श्रीकृष्णका परम भक्त होता हैं, जो भगवान्के भक्तकी भी सुदर्शन सदाही रक्षा करता है ॥४॥ वहाँ पश्चिम के द्वारपर जाम्बवान् रीछोंका राजा बड़ा बली भगवद्भक्तिसे युक्त रातदिन रक्षा करता है ॥५॥ उस भगवान्के भक्त महाबली जाम्बवानके दर्शन करे तो, वह मनुष्य भगवान्का भक्त होवे, और चिरंजीवी होवे ॥६॥ हे राजन् ! वैसेही उत्तरके द्वारपर विष्वक्सेन महाबली रातदिन रक्षा करता है, वह श्रीकृष्णका हृदय है ॥७॥ उसके दर्शनमात्रसेही नर कृतार्थ हो जाता है, अब हे राजन् ! अब तुम सुनो, दुर्गके बाहर जो पिण्डारक तीर्थ है, उसका वर्णन करता हूँ ॥८॥ हे राजसत्तम ! पिण्डारक तीर्थका माहात्म्य सुनो जिसके स्मरणमात्र सेही महापाप छूट जाता है॥९॥(अर्थसिद्धेरिवद्वारम्) अर्थकी सिद्धिका मानों द्वार है,ऐसे रैवत पर्वत और समुद्र इनके बीचमें पिंडारक नामका तीर्थ है, वह तीर्थोंमें उत्तम है॥१०॥हे विदेह !

जहाँ भगवान्की आज्ञासे यदुराज उग्रसेनने यज्ञोंका राजा राजसूययज्ञ किया है॥११॥वहाँ सब ओरसे बुलाये गये समस्त तीर्थोंने उग्रसेनकी प्रीतिसे उग्रसेनके उत्तम यज्ञमें आकर निवास किया॥१२॥सब तीर्थोंका पिण्ड अर्थात् एकत्रित होना उससे यह पिण्डारकनाम हुआ,वहाँ स्नान करनेसे मनुष्यको तत्काल राजसूययज्ञका फल होता है॥१३॥ वहाँ तीन दिन स्नान करके जितेंद्रियव्रत करके रहे,सावधान हो ब्राह्मणोंको स्वर्णका दान देकर प्रणाम करे ॥१४॥ तो यहाँ मनुष्यलोकमेंही वह मनुष्य राजा होवे, और नित्यही बंदीजनोंसे अपना यश सुना करे ॥१५॥ और सुवर्ण रत्नोंके भूषण, सुन्दरवस्त्रकी धारण करनेवाली चन्द्रवदनी मृगनयनी ऐसी बहुतसी स्त्रियाँ जिसका नित्य सेवन करें ऐसा होवे और महाबली सब तरह हृष्टपुष्ट रहनेवाला वह होवे ॥१६॥ रातदिन जिसके द्वारपर नगाड़े बजा करें, हाथी चिंग्घाड़ा करें, घोड़े हिनहिनाया करें, ऐसा होता है॥१७॥और राजाओंके समूहसे शोभित होवे, और रत्नों के महलोंके समूह जिनपर बड़ी ध्वजा उनसे युक्त जिसके आंगन उनको देखनेवाला वह होवे ॥१८॥ मतवाले हाथियोंके कानोंकी भारी भ्रमरोंकी मंडली, मंडलेश्वर राजाओंकी मंडली

सर्वाणियत्रतीर्थानिसमाहूतानिसर्वतः ॥ निवासंचक्रिरेराजन्नुग्रसेनक्रतूत्तमे ॥१२॥ तेनपिंडारकंनामसर्वतीर्थस्यपिंडतः ॥ तत्रस्नात्वानरःसद्यो राजसूयफलंलभेत् ॥१३॥ यत्रैवत्रिदिनंस्नात्वाव्रतीभूत्वासमाहितः ॥ ब्राह्मणेभ्यःस्वर्णदानंदत्त्वायःप्रणतोभवेत् ॥ १४ ॥ इहैवनरदेवःस्यात्स- महात्मानसंशयः ॥ नित्यंशृणोतिसततंबन्दिवद्भिर्यशःस्वयम् ॥१५॥ सुवर्णरत्नवस्त्राढ्यैःसुचन्द्रवदनैःपरैः ॥ स्त्रीसंघैःसेवितोनित्यंहृष्टपुष्टोमहा- बलः ॥ १६ ॥ अहोरात्रंप्रताड्यतेद्वारिदुन्दुभयोघनाः॥ करींद्राणांचचीत्कारैरश्वहेषैस्समन्वितम् ॥१७॥ विराजतेराजसंघैःप्रेक्षयन्प्रांगणाजि- रम् ॥ रत्नप्रासादनिचयंध्वजमण्डलमंडितम्॥१८॥मत्तकुञ्जरकर्णाभ्यांताडिताभृंगमण्डली ॥ अलंकरोतितद्द्वारंमंडितंमंडलेश्वरैः ॥ १९ ॥ पिंडारकस्नानमृतेकथंराज्यंभवेदिह ॥ अन्तेमोक्षंकथंयातिनरःपापयुतोपिहि ॥२०॥ पिंडारकस्नानमृतेनशर्मपिंडारकस्नानमृतेनकर्म॥पिंडारक स्नानमृतेनधर्मःपिंडारकस्नानमृतेनवर्म ॥ २१ ॥ पिंडारकस्नानमृतेवियोगीपिंडारकस्नानकरोवियोगी ॥ पिंडारकस्नाकरः सुभोगीपिंडारक स्नानकरोनरोगी ॥२२॥ द्वारावतींमाधवमासमध्येप्रदक्षिणीकृत्यनमस्करोति ॥ सर्वाइहामुत्रचसिद्धयोपिवैदेहतत्पाणितले भवन्ति ॥ २३ ॥ तीर्थाप्लुतोधःशयनःशुचिश्चमौनीव्रतीवायवभोजनेन ॥ आरभ्यचैत्रीकिलपौर्णमासींयोमाधवीमेत्यकरोतियात्राम् ॥२४॥ तत्पुण्यसंख्यांगदितुं नशक्यश्चतुर्मुखोवेदमयोविधाता ॥ योमेघधारांगणयेत्कदाचित्कालेनपुण्यांनिनकृष्णपुर्याः ॥ २५ ॥

से शोभित उसके द्वारको अलंकृत करती है॥१९॥पिण्डारकतीर्थके स्नान किये बिना कैसे तो यहाँ पृथ्वीपर राज्य मिलेगा और कैसे पापी नर अन्तमें मोक्षको जायँगे॥२०॥पिंडारकके स्नानके बिना न तो सुख मिले और न पिंडारकके स्नान बिना कर्म होवे, न धर्म होवे, और न पिंडारकके स्नान बिना मनुष्यकी रक्षा होवे ॥२१॥ पिंडारकके स्नान करनेके बिना मनुष्य वियोगी अर्थात् वियोगसे युक्त होता है, जो पिंडारकमें स्नान करे इसके स्नान करनेसे मनुष्य योगी होता है,अर्थात् वह कभी वियोगी नहीं होता है,और इस पिंडारकके स्नानसे नर भोगी होता है,और पिंडारकके स्नानसे मनुष्य रोगी नहीं होताहै॥२२॥वैशाखके महीनेमें द्वारिकाकी परिक्रमा देकर नमस्कार करे तो हे वैदेह!इस लोककी सिद्धि और परलोककी सिद्धि सब पुरुषके हाथमें आ जाती है॥२३॥तीर्थमें तो स्नान करे,पृथ्वीमें सोवे,पवित्र रहे, मौन रहे, व्रत करे, जो खाकर रहे तो केवल चैत्रकी पूर्णमासीसे तो यात्रा उठावे और वैशाखकी पूर्ण- मासीको पूरी करे ॥२४॥ तो उसके पुण्यकी संख्याको चतुर्मुख जो वेदमय विधाता है, वह भी वर्णन नहीं कर सकता है, जो कालसे मेहकी बूंदोंको गिनना चाहे तो गिन लेवे, किन्तु

कृष्णपुरीके पुण्यको नहीं गिन सकता है ॥ २५ ॥ जैसे तिथियोंमें एकादशी उत्तम है, फणियोंमें शेष उत्तम है, पक्षियोंमें गरुड ॥ २६ ॥ पुराणोंमें भारत जैसे देवताओंके देवता यदुदेवोंके देव श्रीवासुदेव श्रेष्ठ हैं, वैसेही सब क्षेत्रोंमें तथा पुरियोंमें द्वारावती नामकी पुरी श्रेष्ठ है ॥ २७ ॥ अहो ! इस भूमिमें द्वारका अति धन्य है, जिसमें यादवोंकी मंडली विराजती है, जो वैकुण्ठ भगवान्‌की लीलाकी अधिकारिणी है, जैसे बिजलीसहित घनावली सोहती है, वैसेही द्वारावतीपुरी सुशोभित है ॥ २८ ॥ जहाँ साक्षात् परमेश्वर परमपुरुष चतुर्व्यूह रूप धारणकर शोभित हैं, जिन्होंने उग्रसेनको राज्य दिया, उन भगवान् कृष्ण हरिको नमस्कार है, ॥ २९ ॥ जब अपने लोकको भगवान् गमन करेंगे, तबही समुद्र इस द्वारकापुरीको डुबा देगा, हे वैदेह ! एक केवल दिव्य हरिमंदिरके विना, उसी मंदिरमें भगवान् निवास करेंगे ॥३०॥ अबतक कलियुगमें भी जहाँ जलमें यह ध्वनि हुआ करती है,

यथातिथीनांहरिवासरंचयथाहिशेषोफणिनांफणीन्द्रः ॥ यथागरुत्मान्दिविपक्षिणांचयथापुराणेषुचभारतंच ॥२६॥ यथाहिदेवेषुचदेवदेवःश्रीवासुदेवोयदुदेवदेवः ॥ तथापुरीक्षेत्रसमस्तमध्येद्वारावतीपुण्यवतीप्रशस्ता ॥ २७ ॥ अहोतिधन्यायदुमंडलीभिर्विराजतेभूमितलेमनोहरा ॥ वैकुण्ठलीलाधिकृताकुशस्थलीयथातडिद्भिर्जलदावलिर्दिवि ॥२८॥ यत्रवसाक्षात्पुरुषःपरेश्वरोधृत्वाचतुर्व्यूहमलंविराजते॥ यस्तूग्रसेनायददौनृपेशतांकृष्णायतस्मैहरयेनमोनमः ॥२९॥ यदास्वलोकंभगवान्गमिष्यतिसंप्लावयिष्यत्यथतांतदार्णवे ॥ वैदेहदिव्यंहरिमंदिरंविनातस्मिन्निवासंभगवान्करिष्यति ॥३०॥ शृण्वंतितत्रैवकलौजलध्वनिंकृष्णोक्तमित्थंससतंदिनेदिने ॥ भवेदविद्योयदिवासविद्योयोब्राह्मणोवैसतुमामकीतनुः ॥ ३१ ॥ भूत्वाथविप्रोऽब्धितटादगाधंगत्वागृहीत्वाप्रतिमांपरस्य॥कृत्वाप्रतिष्ठांचविधायसौधंकरिष्यतेस्थापनमर्कएषः ॥३२॥श्रीद्वारकानाथमितिस्वरूपंपश्यंतियेभक्तजनाःकलौयुगे॥गच्छंतितेविष्णुपदंनृदेवयोगीश्वराणामपिदुर्लभंयत् ॥ ३३ ॥ इदंमयातेकथितंनृदेवमाहात्म्यमेतत्किलकृष्णपुर्याः ॥ शृणोतियःश्रावयतेचभक्त्याश्रीद्वारकावासफलंलभेत्सः ॥३४॥ श्रीद्वारकायानृपखण्डमेतन्मयातवाग्रेकथितंसुपुण्यम्॥ कीर्तिंकुलंभक्तिमतीवमुक्तिंददातिराज्यंचसदैवशृण्वताम् ॥३५॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीद्वारकाखण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेतृतीयदुर्गेपिंडारकमाहात्म्यंनामैकविंशोऽध्यायः ॥ इतिश्रीद्वारकाखंडःसमाप्तः ॥

वह ध्वनि सबको सुनाई पडती है कि, सविद्य हो चाहे अविद्य हो, ब्राह्मण मेरा शरीर है॥३१॥ ब्राह्मण होकर समुद्रके अगाध तटसे परमेश्वरकी प्रतिमा लाकर प्रतिष्ठा करे महल बनावे, उसको सूर्य जनो ॥ ३२ ॥ जो जन कलियुगमें द्वारकानाथका दर्शन करेंगे, हे, नृदेव ! वे योगीश्वरोंको भी दुर्लभ जो विष्णुपद है, उसको जायेंगे ॥३३॥ हे नृदेव ! यह कृष्णपुरी द्वारकाका माहात्म्य मैंने तुम्हारे सामने वर्णन किया है, जो कोई भक्तिसे इस माहात्म्यको सुने अथवा सुनावे तो वह मनुष्य द्वारकाके वासका फल पाता है ॥३४॥ हे नृदेव ! यह पवित्र करनेवाला द्वारकाखंड मैंने तुम्हारे सामने वर्णन किया, यह भक्तिका मुक्तिका दाता है, और कुलकीर्तिको बढानेवाला है, सुननेवालोंको सदाही राज्य देनेवाला है ॥३५॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां द्वारकाखंडे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्व संवादे तृतीयदुर्गे पिंडारक माहात्म्यं नामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ इतिद्वारकाखंडः समाप्तः ॥

इति गर्गसंहितायां द्वारकाखण्डं भाषाटीकासमेतं समाप्तम्

अथ गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डं भाषाटीकासहितं प्रारभ्यते

(सप्तमखण्डम्)

श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ विश्वजित्खंडः प्रारभ्यते ॥ भगवान् आपके लिये नमस्कार है, आप वासुदेव हो, साक्षी हो, संकर्षण हो, प्रद्युम्न हो, अनिरुद्ध हो, उनके लिये नमस्कार है ॥१॥ अज्ञानरूपी अन्धकारसे अन्धेकी मेरी आंखें ज्ञानरूपी अञ्जन शलाकासे खोली हैं जिन्होंने, उन गुरुके लिये मेरा नमस्कार है ॥२॥ अब शौनकादिक ऋषियोंसे गर्गजी बोले हे मुने ! इस प्रकार श्रीकृष्णका चरित्र मैंने तुम्हारे सामने कहा, जो मनुष्योंको धर्म, अर्थ, काम, और मोक्षको देनेवाला है, अब आगे तुम क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥३॥ तब शौनक ऋषि बोले-हे तपोधन ! मैथिल देशके इन्द्र, श्रीकृष्णके इष्टी, हरिके प्रिय, बहुलाश्व राजाने आगे नारदजीसे क्या पूछा, यह मुझको कहिये ॥४॥ तब श्रीगर्गजी कहते हैं कि, हे मुने ! उग्रसेनको यादवोंका इन्द्र श्रीकृष्णने किया, इसको सुनकर बड़ा विस्मित हुआ बहुलाश्व राजा नारदजीसे पूछने लगा ॥५॥ बहुलाश्व राजा बोला-यह मरुत राजा कौन था, कौनसे पुण्यसे भूतलमें यादवोंका इन्द्र महाबुद्धि उग्रसेन हुआ ॥६॥ जिसके श्रीकृष्ण चन्द्र हरि स्वयम् सहायक हुये, उसकी महिमा हे देवर्षि सत्तम ! मेरे सामने कहिये ॥७॥ तब श्रीनारदजी

श्रीगणेशायनमः ॥ अथविश्वजित्खडःप्रारभ्यते ॥ नमोभगवतेतुभ्यंवासुदेवायसाक्षिणे ॥ प्रद्युम्नायानिरुद्धायनमःसंकर्षणायच ॥१॥ अज्ञानतिमिरांधस्यज्ञानांजनशलाकया ॥ चक्षुरुन्मीलितंयेनतस्मैश्रीगुरवेनमः ॥ २ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ इत्थंश्रीकृष्णचरितंमयातेकथितंमुने ॥ चतुष्पदार्थदंनृणांकिंभूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ ३ ॥ शौनकउवाच ॥ बहुलाश्वोमैथिलेंद्रःश्रीकृष्णेष्टोहरिप्रियः ॥ किंपप्रच्छाथदेवर्षितन्मेब्रूहितपोधन ॥ ४ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ उग्रसेनंयादवेंद्रंश्रीकृष्णेनकृतंमुने ॥ श्रुत्वातिविस्मितोराजानारदंप्राहमैथिल ॥ ५ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ कोवायंमरुतोराजाकेनपुण्येनभूतले ॥ यादवेंद्रोमहाबुद्धिरुग्रसेनोबभूवह ॥ ६ ॥ यस्यश्रीकृष्णचन्द्रोपिसहायोभूद्धरिःस्वयम् ॥ तस्याहोमहिमानंमेब्रूहिदेवर्षिसत्तम ॥ ७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ सूर्यवंशोद्भवोराजाचक्रवर्तीकृतेयुगे ॥ यज्ञंचकारविधिवन्मरुतोयोजगज्जितम् ॥ ८ ॥ महासंभृतसंभारैर्हिमाद्रेःपार्श्वउत्तरे॥ संवर्तंमुनिशार्दूलंगुरुंकृत्वाहिदीक्षितः ॥ ९ ॥ पञ्चयोजनविस्तीर्णंकुण्डंभूद्यस्यचाध्वरे ॥ योजनंब्रह्मकुण्डस्तुगव्यूतिःपञ्चकुण्डकाः ॥१०॥ मेखलागर्तविस्तारवेदिभिर्निर्मितादश ॥ सहस्रहस्तमुच्चांगोयज्ञस्तंभोबभौमहान् ॥११॥ विंशद्योजनविस्तीर्णःसौवर्णोयज्ञमण्डपः ॥ वितानतोरणैरेजेकदलीखंडमण्डितः॥१२॥ब्रह्मरुद्रादयोदेवाःसगणास्तत्रचागताः ॥ ऋषयोमुनयःसर्वेतस्ययज्ञंसमाययुः ॥ १३ ॥

बोले कि, सतयुगमें एक सूर्यवंशी राजा चक्रवर्ती हुआ, उसका नाम मरुत था, जिसने विधिपूर्वक विश्वजित् नामक यज्ञ किया था ॥ ८ ॥ हिमालय पर्वतके उत्तरकी बगलमें बड़े संभार इकट्ठे किये, मुनियोंमें शार्दूल संवर्त मुनिको गुरु करके उनसे यज्ञकी दीक्षा ली॥९॥इसके यज्ञमें बीस कोशका विस्तीर्ण तो कुण्ड बना था, और चार कोशका ब्रह्म कुण्ड था, और दो दो कोशमें पांच कुंडिका बनी थीं ॥१०॥ मेखलागर्तका विस्तार जिसमें वेदियोंसे दशगुणा बना था, और हजार हाथ ऊँचा जिसमें यज्ञस्तम्भ बना था ॥११॥ और जिसका अस्सी कोशमें यज्ञ मण्डप सुनहरी बना था, जो चँदोवा, बन्दनवार, केलेके स्तम्भोंसे मंडित था ॥ १२ ॥ उस यज्ञमें ब्रह्मा, रुद्रादिक सब देवताओंके गण अपने २ गण समेत आये, और ऋषि मुनि सब उस यज्ञमें आये ॥ १३ ॥

दश लाख तो होता हुये, दश लाख दिक्षित हुये, पांच लाख अध्वरी हुये, और उद्गाता जिसमें पृथक् पृथक् हुये ॥१४॥ बड़े २ पंडित चारों वेदोंके वक्ता सब शास्त्रोंके जानने वाले बुलाये गये, तथा और भी करोड़ों ब्राह्मण जिसमें पूजे गये ॥१५॥ और हे मैथिल ! हाथीकी सूंडसी मोटी घृतकी धारा जिस यज्ञमें अग्निने पीई सो हे मैथिल ! यह कुछ आश्चर्य नहीं हैं, जो अग्निको अजीर्ण हो गया, ऐसा तुम जानो ॥१६॥ विश्वे देवा सभासद् ये जिन जिनके लिये भाग वताते हैं, उनकेही लिये भाग दिये गये, वेही सब परिवेष्टा हुये हैं ॥१७॥ जीव मात्र कोई भी त्रिलोकीमें भूखा नहीं रहा, सब देवताओंको सोमसे अजीर्ण होगया ॥१८॥ इस यज्ञमें संवर्त मुनिको जम्बूद्वीपका राज्य दे दिया, और चौदह लाख हाथी, चौदह लाख भार स्वर्ण यज्ञके अन्तमें यज्ञ कराने वाले महात्मा गुरुको इतनी दक्षिणा दी और सौ अरब घोड़े और बहुमूल्य करोड़ों रत्न दिये ॥१९॥२०॥ और पांच हजार घोड़े, सौ हाथी,

होतारोदशलक्षाणिदशलक्षाणिदीक्षिताः॥अध्वर्यवःपञ्चलक्षमुद्गातारस्तथापरे।१४।आहूतास्तत्रविद्वांसश्चतुर्वेदविदोद्विजाः॥सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञाः कोटिशोऽन्येप्रपूजिताः ॥१५॥ हस्तिशुण्डासमांधारांभुक्त्वाज्यस्यहुताशनः ॥ अजीर्णंप्रापतद्यज्ञेनचित्रंविद्धिमैथिल ॥१६॥ येभ्योभागंवदंती हविश्वेदेवाःसभासदः ॥ तेभ्यस्तेभ्योददुर्वाताःपरिवेष्टारएवते ॥१७॥ केपिजीवास्त्रिलोक्यांतुनबभूवुर्बुभुक्षिताः॥ सर्वेदेवास्तुसोमेनह्यजीर्णत्व-मुपागताः ॥१८॥ संवर्तायददौराज्यंजंबूद्वीपस्यचाध्वरे॥ गजानांहेमभाराणांनियुतानिचतुर्दश ॥१९॥ शतार्बुदंहयानांतुयज्ञांतेदक्षिणांनृप ॥ कोटिशोनवरत्नानांमहार्हाणांमहात्मने ॥२०॥ हयानांपञ्चसाहस्रंगजानांशतमेवच ॥ शतभारंसुवर्णानांब्राह्मणेब्राह्मणेददौ ॥२१॥ जलभोजन-पात्राणिहैमानिप्रस्फुरंतिच ॥ भुक्त्वातानिविसृज्याशुगतातुष्टाद्विजातयः ॥२२॥ विप्रत्यक्तैःस्वर्णपात्रैरुच्छिष्टैर्नृपवर्जितैः ॥ हिमाद्रिपार्श्वेशैलो भूदद्यापिशतयोजनम् ॥ २३ ॥ मरुतस्ययथायज्ञोनतथान्यस्यकर्हिचित् ॥ त्रिलोक्यांश‍ृणुराजेंद्रनभूतोनभविष्यति॥२४॥ यज्ञकुण्डाद्विनि-र्गत्यपरिपूर्णतमःस्वयम् ॥ आत्मानंदर्शयामासमरुतायमहात्मने ॥२५॥ तमालोक्यहरिंनत्वाकृतांजलिपुटोनृपः॥ गदितुंनसमर्थोभूद्रोमांची प्रेमविह्वल ॥ २६ ॥ तंप्रेमपूरितंदृष्ट्वापतितंपादयोर्नतम् ॥ उवाचभगवान्साक्षान्मेघगंभीरयागिरा ॥ २७ ॥

सौ भार स्वर्ण ये एक एक ब्राह्मणको इतनी-इतनी दक्षिणा दी ॥२१॥ इस यज्ञमें जलके और भोजनके पात्र सब सुवर्णकेही थे,उनमें भोजनकर करके प्रसन्न होकर ब्राह्मण चले गये, उन जूठे पात्रोंको वहीं छोड गये ॥२२॥ ब्राह्मणोंके त्यागे जो सोनेके जूठे पात्र जिनको राजा दे चुका था, उनका हिमालयके पास सौ योजनका पर्वत अद्यापि (आज भी) होगा, ॥२३॥ जैसा मरुत राजाका यज्ञ हुआ, ऐसा यज्ञ किसीका नहीं हुआ, और हे राजेन्द्र ! न त्रिलोकीमें ऐसा यज्ञ किसीका होगा ॥२४॥ इसके यज्ञमें अग्नि कुण्डमेंसे निकलकर साक्षात् परिपूर्णतम स्वयम् भगवान्ने मरुत राजाको अपना दर्शन दिया ॥२५॥ उनको देखकर हरिको नमस्कार करके हाथ जोड़ स्तुति करनेके लिये खड़ा हुआ, फिर प्रेमसे विह्वल, रोमांचित हुआ, राजा स्तुति करनेको समर्थ नहीं हुआ ॥२६॥ तब चरणोंमें पड़े प्रेममें भरे हुये मरुतको देखकर साक्षात् भगवान् मेघसी गम्भीर वाणीसे यह बोले ॥२७॥

हे राजन् ! तुमने मुझको नम्रतासे वशमें कर लिया, और निष्काम यज्ञ किया उससे मेरा पूजन किया, सो हे महामते ! तुम परम वर मांगो, देवताओंके लिये भी दुर्लभ वर मैं तुमको दूँगा ॥२८॥ तब नारदजी कहते हैं कि, मरुत राजा ऐसे सुनकर हाथ जोड वडी भक्तिसे विशद उपचारोंसे पूजन कर साष्टाङ्ग प्रणाम करके प्रदक्षिणा देकर गद्गद वाणीसे परमेश्वर श्रीहरिसे यह बोला ॥२९॥ मरुत राजा बोला—हे पुरुषोत्तमोत्तम ! आपके चरण कमलसे दूसरा मैं और वर नहीं जानता हूँ, जैसे गंगाजीको प्राप्त होकर प्यासा नर पशु अत्यन्त दुर्बुद्धि कूप (कुआ) को खोदता है ॥३०॥ तो भी मैं आपके वाक्यके गौरवसे वर मांगता हूँ, हे व्रजके ईश्वर ! मेरे हृदय कमलसे आपके चरण कमल कभी दूर मत होवें, कैसे आपके चरण कमल हैं, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, और सब संपदाओंके मूल हैं, ॥३१॥ तब भगवान् बोले—हे राजन् ! तुम धन्य हो तुम्हारी बुद्धि वडी निर्मल है, वरोंसे लुभाई हुई भी

श्रीभगवानुवाच ॥ राजंस्त्वयाहंविनयेनतोषितोनिष्कारणैर्यज्ञपरैःसमर्चितः ॥ वरंपरंब्रूहिमहामतेवरंदास्यामिदेवैरपिदुर्लभंदिवि ॥ २८ ॥
॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वातुराजामरुतः कृतांजलिःप्रदक्षिणीकृत्यहरिंपरेश्वरम् ॥ संपूज्यभक्त्याविशदोपचारकैर्नत्वाभृशंगद्गदयागिराब्रवीत्
॥ २९ ॥ मरुतउवाच ॥ नवेद्म्यहंत्वच्चरणारविंदतोवरंपरंश्रीपुरुषोत्तमोत्तम ॥ समेत्यगंगांतृषितातिदुर्धियःखनंतिकूपंहियथानरेतराः ॥
॥ ३० ॥ तथापियाचेतववाक्यगौरवात्पादारविन्दंहृदयारविंदात् ॥ कदापिमेमाव्रजतुव्रजेश्वरमूलंचतुर्णांविदुरर्थसंपदाम् ॥ ३१ ॥ श्रीभग-
वानुवाच ॥ धन्यास्तिराजंस्तवनिर्मलामतिः ॥ प्रलोभितस्यापिवरैर्नकामभृत् ॥ तथापिमत्तोवरयेप्सितंपरंविनाफलंभक्तसुखान्नमेसुखम् ॥३२॥
मरुतउवाच ॥ देयंयदामेवरमीप्सितंप्रभोवैकुण्ठलोकंकुरुताद्धरातले ॥ रक्षस्थितंमांनिजभक्तवत्सलतस्मिन्पुरेभक्तजनैःपरैःसह ॥ ३३ ॥
॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अस्मिन्मनौदैवमनोरथाब्धिंगतेषुविंशेषुयुगेषुचाष्टौ ॥ गत्वाथनाकंधरणींसमेत्यमयाहिगोवत्सपदंकरिष्यति ॥ ३४ ॥
॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाभगवान्साक्षात्तत्रैवांतरधीयत ॥ सोऽयंतुमरुतोराजाउग्रसेनोबभूवह ॥ ३५ ॥ तंयज्ञंकारयामासराजसूयंहरिः
स्वयम् ॥ किंदुर्लभंत्रिलोक्यांतुभक्तानांमैथिलेश्वरः ॥ ३६ ॥

चलायमान नहीं हुई, तो भी मुझसे कुछ उत्तम वर मांगो, मेरे भक्तको फल दिये बिना मुझको कुछ सुख नहीं होता है ॥३२॥ तब मरुत राजा बोला--हे प्रभो ! यदि मुझको वर देना ही है, तो यह वर दीजिये कि, वैकुण्ठ लोकको धरतीमें कर दीजिये, हे भक्त वत्सल ! मैं वहां आपके भक्तों सहित निवास करूँ, उसकी आप रक्षा करो ॥३३॥ तब भगवान् बोले कि इस मन्वन्तरमें अट्ठाईस युग जब बीत जायँगे, तब तुम पहिले स्वर्गके सुख भोग पृथ्वीमें आकर मेरे संगको प्राप्त होकर इस मनोरथ समुद्रको गौके खुरके समान करके सहजमें तर जाओगे ॥ ३४ ॥ नारदजी कहते हैं कि ऐसे कहकर साक्षात् भगवान् वहीं अन्तर्धान हो गये, वही यह मरुत राजा उग्रसेन हुआ ॥ ३५ ॥ उसको राजसूय यज्ञ भगवान्ने कराया, हे मैथिलेश्वर ! भगवान्के भक्तोंको त्रिलोकीमें कुछ दुर्लभ नहीं है ॥ ३६ ॥

इस मारुतके चरित्रको जो कोई नरोत्तम सुनेगा,उसको वैराग्य सहित भक्तियुक्त ज्ञान प्राप्त होगा ॥ ३७ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्व संवादे मारुतोपाख्यानं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥१॥ बहुलाश्वराजा पूछता है कि हे मुने ! राजा उग्रसेनने कैसा राजसूय यज्ञ किया, श्रीकृष्णकी सहायतासे, इसको विस्तार पूर्वक कहिये॥१॥ नारदजी कहते हैं कि, एक समय उग्रसेन सुधर्मा सभामें श्रीकृष्णका पूजन करके प्रसन्न होकर हाथ जोड प्रणाम करके यह बोला ॥ २ ॥ हे भगवन् ! नारदजीके मुखसे मैंने जिसका बडा फल सुना है, यदि आप आज्ञा देवें तो मैं वह राजसूय यज्ञ करूँ ॥३॥ हे पुरुषोत्तम ! प्राचीन समयमें पहिले बहुतसे राजा आपकी चरण सेवामें निर्भय होकर जगत्को तृणवत् मानकर अपने मनोरथके समुद्रको तर गये ॥४॥ तब भगवान् बोले कि, हे राजन् ! हे यादवोंके ईश्वर ! तुमने अच्छा विचार किया, यज्ञसे तुम्हारी जगत्कीर्ति त्रिलोकीमें होयेगी ॥५॥

मरुतस्यापिचरितंयःशृणोतिनृपोत्तम ॥ तस्यज्ञानंसवैराग्यंभक्तियुक्तंप्रजायते ॥ ३७ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्व संवादेश्रीमरुतोपाख्यानंनामप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ कथंचकारविधिवद्राजसूयाध्वरंनृपः ॥ श्रीकृष्णेनसहायेनवदैत तन्नितराम्मुने ॥१॥ श्रीनारदउवाच ॥ उग्रसेनःसुधर्मायांकृष्णंसंपूज्यचैकदा ॥ नत्वाप्राहप्रसन्नात्माकृतांजलिपुटःशनैः ॥२॥ उग्रसेनउवाच॥ भगवन्नारदमुखाच्छ्रुतंयस्यमहत्फलम् ॥ तंयज्ञंराजसूयाख्यंकरिष्यामितवाज्ञया ॥ ३ ॥ त्वत्पादसेवयापूर्वेमनोरथमहार्णवे ॥ तेरुर्जगत्तृणी कृत्यनिर्भयाःपुरुषोत्तम ॥ ४ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ सम्यग्व्यवसितंराजन्भवतायादवेश्वर ॥ यज्ञेनतेजगत्कीर्तिस्त्रिलोक्यांसंभविष्यति ॥५॥ आहूययादवान्साक्षात्सभांकृत्वाथसर्वतः ॥ तांबूलवीटिकांधृत्वाप्रतिज्ञांकारयप्रभो ॥ ६ ॥ ममांशायादवाःसर्वेलोकद्वयजिगीषवः ॥ जित्वारीनागमिष्यंतिहरिष्यंतिबलिंदिशाम् ॥ ७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथांधकादीनाहूयशक्रसिंहासनेस्थितः॥ सुधर्मायांप्राहनृपोधृत्वातां- बूलवीटिकाम् ॥८॥ उग्रसेनउवाच योजयेत्समरेसर्वांजंबूद्वीपस्थितान्नृपान्॥ मनस्वीशक्रकोदंडीसोत्तितांबूलवींटिकाम् ॥९॥ श्रीनारदउवाच ॥ नृपेषुतूष्णींप्रगतेषुसत्सुश्रीरुक्मिणीनन्दनएवमग्रात् ॥ जग्राहतांबूलचयंमहात्मानत्वानृपंमैथिलशंबरारिः ॥ १० ॥

सब यादवोंको बुलाकर सभीकी सभाकरके पानका बीडा धरकर हे प्रभो ! यादवोंकी प्रतिज्ञा करा लेओ ॥ ६ ॥ समस्त यादव मेरे अंश हैं, दोनों लोकोंकी जिनकी जीतनेकी इच्छा है वे सब शत्रुओंको जीतकर आयेंगे, दिशाओंमेंसे बलि (भेंट) लायेंगे, उनमें जिसकी सामर्थ्य हो वह बीडाको उठाये ॥ ७ ॥ नारदजी कहते हैं कि, तब राजा उग्रसेन अंधकादिक समस्त यादवोंको बुलाकर इन्द्र सिंहासनपर बैठा सुधर्मा सभामें पानका बीडा धरकर यह वचन बोला ॥ ८ ॥ उग्रसेनने कहा कि, हे वीरो ! जो संग्राममें जम्बूद्वीपके राजाओंको जीते, बडे मनका होवे, इन्द्रकासा धनुष जिसका, वह इस पानके बीडाको खाये ॥ ९ ॥ नारदजी कहते हैं कि ऐसे सुनकर सब राजा और यादव चुप हो गये, तब शम्बरके मारनेवाले रुक्मिणीके पुत्र प्रद्युम्नने उठकर सबके सामने उग्रसेन राजाको प्रणाम करके हे मैथिल ! बीड़ा उठा लिया ॥ १० ॥

तब प्रद्युम्न यह बोला कि, सुनो, मैं संग्राममें समस्त जम्बूद्वीपके राजाओंको जीतकर उनसे बलि (भेंट) लेकर अपने पराक्रमसे मैं आऊँगा ॥११॥ यदि मैं इतना कर्म करके नहीं दिखाऊँ, तो अगम्यासे गमन करे, उसको जो पाप होवे, कपिला गौके मारेका जो पाप होवे, ब्राह्मणके मारेका, गुरुके मारेका, गर्भहत्याका जो पाप होवे, सो मुझको होवे, यदि मैं दिग्विजय करके नहीं आऊं ॥ १२ ॥ नारदजी कहते हैं--ऐसे शम्बरके शत्रु प्रद्युम्नका वचन सुनकर ''साधु साधु'' अच्छा, बहुत अच्छा, ऐसे सब यूथपति बोले, तब उन सभीके देखते २ प्रद्युम्नने वह बीड़ा उठा लिया ॥ १३ ॥ फिर अपने कुलाचार्य गर्गजीसे यत्नसे मुहूर्त पूछकर फिर मुनियोंके द्वारा वेदोंकी सूक्तिसे प्रद्युम्नको स्नान कराया ॥ १४ ॥ फिर उग्रसेनने प्रद्युम्नके तिलक किया, और बलि देकर सब यादवोंने नमस्कार की ॥१५॥ प्रद्युम्न महात्माको उग्रसेनने तो खड्ग दिया, महाबली साक्षात् बलदेवने कवच दिया ॥ १६ ॥ और अपने तरकसमेंसे निकालकर दो अक्षय तरकस और शार्ङ्गधनुषमेंसे निकालकर धनुष ये श्रीकृष्णने दिये ॥१७॥ और दिव्य किरीट, कुंडल मनोहर पीताम्बर और चमर छत्र

॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ विजित्यसमरेसर्वाञ्जंबूद्वीपस्थितान्नृपान् ॥ गृहीत्वाचबलिंतेभ्यआगमिष्याम्यहंबलात् ॥ ११ ॥ अगम्यागमनं बभ्रोर्ब्राह्मणस्यगुरोस्तथा ॥ हत्याभ्रूणस्यमेभूयान्नकुर्यांकर्मचेदिदम् ॥ १२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वावचःशंबरारेःसाधुसाध्वितियूथपाः ॥ ऊचुस्तेषांपश्यतांचतंजग्राहयदूत्तमः ॥ १३ ॥ गर्गाद्यदुकुलाचार्यान्मुहूर्तंबोध्ययत्नतः ॥ तत्स्नानंकारयामासमुनिभिर्वेद सूक्तिभिः ॥ १४ ॥ उग्रसेनोऽथतिलकंप्रद्युम्नस्यचकारह ॥ बलिंदत्त्वानमश्चक्रुःसर्वेयादवयूथपाः॥१५॥ उग्रसेनोददौखड्गंप्रद्युम्नायमहात्मने॥ कवचंप्रददौसाक्षाद्बलदेवोमहाबलः ॥१६॥ स्वतूर्णाभ्यांविनिष्कृष्यतूर्णावक्षयसायकौ ॥ धनुश्चशार्ङ्गधनुषःसमुत्पाद्यददौहरिः ॥१७॥ किरीटकुण्डलेदिव्येपीतंवासोमनोहरम् ॥ छत्रंचचामरेसाक्षाच्छूरोवृद्धोददौपुनः॥१८॥ शतचन्द्रंददौतस्मैवसुदेवोमहामनाः॥उद्धवःप्रददौसाक्षान्मालांकिंजल्किनींशुभाम् ॥ १९ ॥ अक्रूरोदक्षिणावर्त्तशङ्खंविजयदंददौ ॥ श्रीकृष्णकवचंयंत्रंगर्गाचार्योददौमुनिः ॥२०॥ तदैवह्यागतःशक्रोलोकपालैःसकौतुकः ॥ आजग्मतुर्ब्रह्मशिवौदेवर्षिगणसंवृतौ ॥ २१ ॥ प्रद्युम्नायददौशूलीत्रिशूलंज्वलनप्रभम् ॥ ब्रह्माददौमहाराज पद्मरागंशिरोमणिम् ॥ २२ ॥ पाशीपाशंशक्तिधरःशक्तिंशत्रुविमर्दिनीम् ॥ वायुश्चव्यजनेदिव्येयमोदंडंददौपुनः ॥ २३॥ रविर्गदांमहागुर्वींकुबेरोरत्नमालिकाम् ॥ चंद्रकांतमणिंचन्द्रःपरिघंचतनूनपात् ॥ २४ ॥

ये वृद्ध सूरसेनने दिये ॥ १८ ॥ और महामना वसुदेवने शतचन्द्र नामकी ढाल दी, उद्धवने किंजल्किनी शुभमाला दी ॥ १९ ॥ अक्रूरने विजयको देनेवाला दक्षिणावर्त शंख दिया, और श्रीकृष्ण कवच और यन्त्र यह मुनि गर्गाचार्यने दिया ॥ २० ॥ इतनेमेंही सब लोकपालोंके साथ इन्द्र आगया, कौतुकके लिये, और ऋषिगणोंको साथ लेकर ब्रह्माजी तथा महादेवजी आगये ॥२१॥ तब रुद्रने तो देदीप्यमान अग्निके समान कान्तिवाला त्रिशूल दिया, ब्रह्माजीने पद्मरागमणिकी शिरोमणि (शिरपेचकी मणि) दी ॥ २२ ॥ वरुणने पाश दिया, स्वामिकार्तिकेयने शत्रुओंकी मर्दन करनेवाली शक्ति दी, पवनने दो पंखे और यमने कालदंड दिया ॥ २३ ॥ सूर्यने बड़ी बोझवाली गदा दी, कुबेरने रत्नोंकी मालादी, चन्द्रमाने चन्द्रकान्त मणि दी, अग्निने परिघ दिया ॥ २४ ॥

पृथ्वीने योगमयी दिव्य पादुकाएं दीं, और तरस्विनी भद्रकालीने भाला दिया ॥२५॥ इन्द्रने प्रद्युम्न महात्माको रथ दिया, कैसा रथ है कि, सुनहरा ऊँचा जिसका शिखर है, जिसमें हजार घोड़े जुते हैं, विश्वकर्माका रचा हुआ, ब्रह्मांडके बाहर भीतर है गति जिसकी ॥२६॥ हजार हैं पहिये जिसके, मनकासा जिसका वेग, मेघकासा जिसका शब्द, मंजीरा, घंटा, घंटियोंके जालोंका जिसका भूषण है ॥ २७ ॥ महादिव्य, हजार ध्वजाओंसे शोभित, विजयका दाता, रत्नमय ऐसा रथ इन्द्रने दिया ॥ २८ ॥ जब प्रद्युम्न चले तब शंख, दुन्दुभी, मृदंग, मंजीरा, मोहचंग, वीणा, बैन, बांसुरी, बजने लगीं, जयजय शब्द होने लगे ॥२९॥ वेद ध्वनि होने लगी, खील, फूल मोती प्रद्युम्नपर वर्षने लगे, देवता पुष्पोंकी वर्षा करने लगे ॥३०॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां प्रद्युम्न विजयाभिषेको नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥ नारदजी कहते हैं, तब प्रद्युम्न श्रीकृष्णको बलदेवजीको, उग्रसेन

क्षितिश्चपादुकेप्रादाद्दिव्येयोगमयेपरे॥प्रद्युम्नायददौकुंतंभद्रकालीतरस्विनी ॥२५॥ हेमाढ्यमुच्चशिखरंसहस्रहयसंयुतम् ॥ विश्वकर्मकृतंसाक्षा-
द्ब्रह्मांडांतर्बहिर्गतम् ॥ २६ ॥ सहस्रचक्रसंयुक्तंमनोवेगंघनस्वनम् ॥ मञ्जीरकिंकिणीजालंघंटाटंकारभूषणम् ॥ २७ ॥ रथंददौमहादिव्यं सहस्र
ध्वजशोभितम् ॥ जैत्रंरत्नमयंशक्रःप्रद्युम्नायमहात्मने ॥ २८ ॥ शंखदुंदुभयोनेदुस्तालवीणादयस्तदा ॥ मृदंगवेणुसन्नादैर्जयध्वनिसमाकुलैः
॥२९॥ वेदघोषैर्लाजपुष्पैर्मुक्तावर्षसमन्वितैः ॥ प्रद्युम्नस्योपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥३०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खंडेनारदबहुला-
श्वसंवादेप्रद्युम्नविजयाभिषेकोनामद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथनत्वाहरिंकार्ष्णिरुग्रसेनंबलंगुरुम् ॥ नीत्वाज्ञांरथमा-
रुह्यकुशस्थल्याविनिर्ययौ ॥१॥ तथातमनुगाःसर्वेयादवाउद्धवादयः ॥ भोजवृष्ण्यंधकमधुशूरसेनदशार्हकाः ॥२॥तथास्वभ्रातरःसर्वेगदाद्याः
कृष्णमोदिताः ॥ सपुत्राःसबलाःसर्वेसांबाद्याश्चमहारथाः॥३॥ किरीटिनःकुंडलिनोलोहकंचुकमंडिताः ॥ चतुरंगबलोपेताःकोटिशस्तेविनि-
र्ययुः ॥ ४ ॥ कलापिहंसगरुडमीनतालध्वजैरथैः ॥ सूर्यमण्डलसंकाशैश्चंचलाश्वनियोजितैः ॥ ५ ॥ हेमकुम्भैःसशिखरैर्मुक्तातोरणराजितैः ॥
विडंबयद्भिर्नितरांवायुवेगमतःपरम् ॥ ६ ॥ चामरांदोलितैर्दिव्यैर्वीरमंडलमंडितैः ॥ सौवर्णैर्देवधिष्ण्याभैरंजुर्वीरासनोहराः ॥ ७ ॥

को, गर्ग गुरुको, नमस्कार करके, आज्ञा मांग रथमें बैठकर द्वारकासे बाहर निकला ॥ १ ॥ उसके पीछे उद्धवादिक यादव सब गोत्रके चले, भोज वृष्णि, अंधक, मधु, शूरसेन, दशार्ह ये सब चले ॥ २ ॥ वैसेही गदादिक समस्त भाई कृष्णके भेजे हुये पुत्र, बल, वाहनसहित साम्बादिक महाबली सब चले ॥ ३ ॥ किरीट, कुण्डलधारी, लोहेकी जंजीरकी करधनी पहिने, चतुरंगिणी सेना लेकर करोड़ों निकले ॥४॥ मोर, हंस, मगर, गरुड, तालकी ध्वजावाले रथोंमें, जिनमें चंचल घोड़े जुत रहे, सूर्यकासा तेज जिनका, उन रथोंमें बैठ बैठकर निकले ॥ ५ ॥ सोनेके कलश जिनपर सुन्दर शिखर, मोतियोंकी झालर वे पवनके वेगकी नकल करनेवाले ॥ ६ ॥ चमर जिनमें ढुल रहे, दिव्य वीरोंके मंडलसे मंडित, सुनहरी वीरोंके मनके हरनेवाले देवताओंकेसे ऐसे रथ शोभित हुये ॥ ७ ॥

हाथी उस सेनामें कैसे चले हैं, मद जिनके चू रहा है, चित्र विचित्र मुखपर रचना जिनके सोनेकी सांकल पडी हैं, बडे उद्भट ऊँचे लाल बनात जिनपर पडी हैं, और घंटा जिनके बजते जाते हैं॥८॥ पर्वतकेसे शिखर दिग्गजोंकी नकल करनेवाले राजाकी सेनामें ऐसे हाथी दिखाई देते हैं ॥ ९ ॥ कोई भद्रमृग हैं, कोई विन्ध्याचलके हैं, कोई काश्मीरके हैं ॥१०॥ कोई मलयाचलके हैं, कोई हिमालयके हैं, कोई मौरंगके उत्पन्न हुये हैं, कोई कैलास पर्वतके हैं ॥११॥ कोई ऐरावतके कुलके हैं, कोई कोई चार चार दांतके कलापी हैं, कोई तीन तीन सूंडोंके ऊर्ध्वभागी जो पृथ्वीमें चलते हैं, और आकाशमें उडते हैं ॥ १२ ॥ ऐसे करोड हाथी तो ध्वजाधारी हैं, करोड दुन्दुभि धारण किये हैं, करोड हाथी सेना रत्नोंके मण्डलसे शोभित चलते हैं॥१३॥ गर्जना करती घटासे उठे चले आते हैं, अंबरमें शोभित इधर उधरमें शोभित हो रहे हैं, सेनारूपी समुद्रमें मगरसे घूम रहे हैं, ॥ १४ ॥ सूंडसे गुल्मोंको उखाड उखाड करके सूर्य मण्डलको फेंक रहे हैं, पावोंसे भूमिको चला रहे हैं, मदसे पृथ्वीको भिगो रहे हैं ॥ १५ ॥ दुर्ग स्थान पर्वतोंकी शिला और शिखरोंकी मस्तकोंसे फेंकते चले हैं

मदच्युताश्चित्रमुखाहेमजालसमन्विताः ॥ महोद्भटागजाउच्चारणद्वंटारुणांबराः ॥८॥ गिरीन्द्रशिखराभद्राद्विपेंद्रान्दिग्विभावितान्॥ विडंबयं-तोदृश्यंतेराजसैन्येद्विपानृप ॥ ९ ॥ केचिद्भद्रास्तुकथिताःकेचिभद्रमृगाःपरे ॥ विंध्याचलभवाःकेचित्केचित्काश्मीरसंभवाः॥१०॥ मलयप्र-भवाःकेचिद्धिमाद्रिप्रभवाःपरे ॥ मौरंगप्रभवाःकेचित्कैलासवनसंभवाः॥११॥ऐरावतकुलेभाश्चचतुर्दंताःकलापिनः॥त्रिशुंडाऊर्द्ध्वभागाश्चगच्छं-तिभुविचांबरे ॥ १२ ॥ ध्वजायुक्ताःकोटिगजाःकोटिदुंदुभिसंयुताः ॥ कोटिसैन्यामहामात्यैरत्नमण्डलमंडिताः ॥ १३ ॥ गर्जयंतोघन-श्यामानीलाम्बरविराजिताः॥इतस्ततोविरेजुस्तेबलाब्धौमकराइव।१४।कैर्गुल्मान्समुत्पाट्यक्षेपयंतोर्कमण्डलम्॥कंपयंतोभुवंपादैर्मदैरार्द्रीकृता चलाः ॥ १५ ॥ दुर्गाद्रिगंडशैलादीन्पातयंतःशिरःस्थलैः ॥ खंडयंतश्चशत्रूणांबलमेतादृशागजाः ॥१६॥ तुरंगानिर्गताराजन्केचिन्मात्स्याः कलिंदजाः ॥ औशीनराःकौशलाश्चवैदर्भाःकुरुजांगलाः ॥१७॥ कांबोजजाःसृंजयजाःकैकेयाःकुंतिसंभवाः ॥दारदाःकेरलाआंगावांगाविकट संभवाः ॥ १८ ॥ कौंकणाःकौटकाःकेचित्कार्णाटागौर्जराहयाः॥ सौवीराःसैंधवाःकेचित्पांचालाअर्बुदाःपरे॥१९॥ काच्छाश्चकेचिदानर्तागां-धारामालवादयः ॥ महाराष्ट्रभवःकेचित्तैलंगाजलसंभवाः ॥२०॥ परिपूर्णतमस्यापिश्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥ वाजिशालासुवर्त्तन्तेतेपिसर्वेवि-निर्गताः ॥ २१ ॥ श्वेतद्वीपाश्चवैकुण्ठात्तथाजितपदानृप ॥ रमावैकुण्ठलोकाच्चप्राप्तायेतेपिनिर्गताः ॥ २२ ॥

शत्रुओंकी सेनाको खण्डन करनेवाले ऐसे हाथी चले हैं ॥ १६ ॥ घोडे कैसे निकले हैं, कोई मत्स्य देशके हैं, कोई उशीनरके हैं, कोई कौशल देशके हैं, कोई विदर्भके हैं, कोई कुरुजांगलके हैं, ॥ १७ ॥ कोई कांबोज देशके, सृजयके, कैकय देशी, कुन्तदेशी, दारददेशी, केरल देशके, अंग देशके, बंग देशके, विकट देशके ॥ १८ ॥ कोंकण, कोटक, कर्णाटक, गुर्जर देशके, सौवीर, सिन्धु, पांचाल, अर्बुद, इन देशोंके हैं ॥ १९ ॥ कच्छ देशके, आनर्त देशके, गांधार देशके, मालव देशके, महाराष्ट्र देशके, तैलंग देशके, जलमें हुये हैं, इतने देशोंके पैदा हुये घोडे ॥२०॥ परिपूर्णतम श्रीकृष्ण महात्माकी वाजिशालाके सब प्रकारके घोडे निकले ॥ २१ ॥ श्वेतद्वीपसे, वैकुण्ठसे, अजित पदसे, रमा वैकुण्ठसे, जो घोडे आये वे भी सब निकले ॥ २२ ॥

स्वर्णके हारसे युक्त, मोतियोंकी मालासे मनोहर, शिखामार्गसे जिनके बड़े प्रकाश और कलंगी, तुर्रा, चामरोंसे शोभित हैं ॥२३॥ पूंछ, खुर, मुख, पाद, इनकी प्रभासे शृंगार किये हुये यादवोंके घोड़े ऐसे निकले ॥२४॥ वायुकेसे और मनकेसे वेगवाले, खुरोंसे मानो धरतीको स्पर्शही नहीं करते हैं, कच्चे सूतपर और पानीके बुद्बुदोंपर चलनेवाले हैं ॥२५॥ और हे मैथिल ! पारेकेसे चञ्चल मकड़ीके जालेपर और जलकी फुहारोंपर निराधार चलनेवाले बड़े हलके खुर जिनके पड़ते हैं ॥२६॥ शिखर, शिला, गढ़, नदी, दुर्ग, और महल, इनको उलाँघते हुये बड़े चञ्चल चपलासे तुरंगम चले हैं ॥२७॥ हे मैथिल ! मोरकीचाल, तीतरकीचाल, खञ्जनकीचाल, क्रौंचकीचाल, हंसकीचाल, दिखाते धरतीपर नांचते इधर उधरमें चले जाते हैं ॥२८॥ कोई तो पंखवाले हैं, दिव्य जिनके अंग हैं, कोई श्यामकर्ण ऐसे मनोहर हैं, कोई पीली पूंछवाले चन्द्रमासे हैं, वे अश्वशालासे निकले हैं ॥२९॥ उच्चैःश्रवाके कुलके हुये, सूर्यके घोड़ोंसे हुये, कोई अश्विनी कुमारकी विद्यासे युक्त वरुणके भेजे हुये हैं ॥३०॥ कोई कल्पवृक्ष कीसी कान्तिवाले, कोई चित्र विचित्र कान्तिवाले, मनोहर अश्विनीके पुष्प

हेमहारसमायुक्तामुक्तामालामनोहराः॥ शिखामणिमहारश्मिसेविताःसुपरिच्छदाः॥२३॥ चामरैर्मंडिताःपुच्छमुखपादस्फुरत्प्रभाः ॥ यादवानां महासैन्येदृश्यतेचेदृशाहयाः ॥ २४ ॥ वायुवेगामनोवेगानस्पृशंतःपदैर्भुवम् ॥ अपक्वसूत्रेष्वतिगाबुद्बुदेष्वपिमैथिल॥२५॥ व्रजंतःपारदमनुजालेषूर्णाभवेषुच ॥ दृश्यंतेपिनिराधाराःस्फारावारिषुमैथिल ॥२६॥ गण्डशैलनदीदुर्गगर्तप्रासादसंचयान् ॥ बिलंघयंतःसततंचंचलास्तेतुरंगमाः ॥२७ ॥मायूरींतैत्तिरींक्रौंचींहंसींयेखांजनींगतिम् ॥कुर्वंतोभुविनृत्यंतोमैथिलेन्द्रइतस्ततः ॥२८॥ केचित्सपक्षादिव्यांगाःश्यामकर्णामनोहराः ॥ पीतपुच्छाश्चंद्रवर्णावाजिशालाविनिर्गताः ॥२९॥ उच्चैःश्रवःकुलेजाताःसूर्यवाजिभवाःपरे ॥ अश्विनीसुतविद्याढ्यावरुणेनप्रयोजिताः ॥३०॥ केचिन्मंदारभाःकेचिच्चित्रवर्णामनोहराः ॥ अश्विनीपुष्पसंकाशाःस्वर्णाभाहरितप्रभाः॥३१॥पद्मरागप्रभाःकेचित्सर्वलक्षणलक्षिताः ॥ कोटिशःकोटिशोराजन्नन्येपिनिर्गताहयाः ॥ ३२ ॥ धनुर्भृतोभटाःसैन्येसंग्रामेलब्धकीर्त्तयः ॥ शक्तित्रिशूलासिगदाधर्मपाशधराःपरे ॥३३॥ वर्षंतःशस्त्रधाराभिःप्रलयाब्धिसमानृप ॥ दिग्गजाइवदृश्यंतेमर्दयंतोह्यरीन्मृधे ॥ ३४ ॥ एवंविनिर्गतंराजन्यदूनांविपुलंबलम् ॥ दृष्ट्वासुरासुराः सर्वेविसिष्मुःपरमाद्भुतम् ॥ ३५ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेयादवसैन्यगमनंनामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥
॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंसेनावृतंवीरंप्रद्युम्नंधन्विनांवरम् ॥ श्रीकृष्णबलदेवाभ्यामुग्रसेनउवाचह ॥ १ ॥

कीसी है कान्ति जिनकी कोई सोनेकीसी कान्तिवाले हैं, कोई हरे हैं ॥३१॥ कोई पद्मरागकीसी प्रभावाले, समस्त लक्षणोंसे युक्त ऐसे करोड़ों घोड़े और भी चले हैं ॥३२॥ उनपर धनुर्धारी योद्धा सेनामें संग्राममें प्राप्त की है कीर्ति जिन्होंने शक्ति, त्रिशूल, तलवार, गदा, वर्म, पाशके धारण करनेवाले ॥३३॥ शस्त्रकी धारासे वर्षनेवाले, प्रलयके समुद्रके समान दिग्गजसे दीखते हैं, संग्राममें शत्रुओंके मारनेवाले दीखते हैं ॥३४॥ हे राजन् ! इस प्रकार यादवोंकी विपुल सेना परम अद्भुत निकली, उसको देखकर सुर, असुर, सब आश्चर्य करने लगे ॥३५॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजितखंडे भाषाटीकायां सैन्यगमनं नामतृतीयोऽध्यायः॥३॥ नारदजी कहते हैं, इस प्रकारकी सेनासे आवृत धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ प्रद्युम्न वीरसे रामकृष्ण सहित उग्रसेन बोला ॥ १ ॥

हे प्रद्युम्न महाप्राज्ञ! श्रीकृष्णकी कृपासे तुम जल्दी ही सब राजाओंको जीतकर द्वारिकाको आ जाओगे॥२॥मत्तको, प्रमत्तको, उन्मत्तको सुप्तको, बालकको, जडको, स्त्रीको, शरणागतको, विरथको, डरे हुयेको, ऐसे शत्रुको धर्मके वेत्ता नहीं मारते हैं ॥३॥ राजाओंका धर्म है कि, दुखियोंके दुखोंको दूर करना, विपरीत मार्ग चलनेवालोंको मारना, और ऐसेही आतताई मारने योग्य हैं॥४॥ पुरुष हो, स्त्री हो, अथवा नपुंसक हो, जो अधम आप तो अपनी इन्द्रियोंको सुख देवे, दूसरोंकी दया नहीं करे, उनको मारना राजाओंका दोष नहीं है, उस पापीको मारना वध नहीं होता है ॥५॥ प्रजाके भर्ता राजाको युद्धमें शत्रुओंको मारना धर्म है, पाप नहीं है, ऐसे पहिले राजाओंसे स्वायम्भू मनुने कहा है॥६॥ जो रणमें आगे पांव धरे, निर्भय होकर वह रणमें मर जाये तो सूर्यमण्डलको भेदकर परम पदको प्राप्त होता है ॥७॥ जो क्षत्री भय करके युद्धसे उपरामको प्राप्त हो जाये, और पतिको छोड़कर चला आये, वह रौरव नरकमें पड़ता है ॥८॥ राजाका धर्म तो यह है कि सेनाकी रक्षा करे, सेनाका धर्म यह है कि, राजाकी रक्षा करे, सारथीको कष्ट पड़े तो रथी रक्षा करे, रथी

॥ उग्रसेनउवाच ॥ हेप्रद्युम्नमहाप्राज्ञश्रीकृष्णकृपयात्वरम् ॥ विजित्यनृपतीन्सर्वान्द्वारकामागमिष्यसि ॥ २ ॥ मत्तंप्रमत्तमुन्मत्तंसुप्तंबालंजडंस्त्रियम् ॥ प्रपन्नंविरथंभीतंमारिपुंहंतिधर्मवित् ॥ ३ ॥ राज्ञोहिपरमोधर्मआर्तानामार्तिविग्रहः ॥ उत्पथानांवधश्चेत्थमाततायीवधार्हणः ॥ ४ ॥ पुमान्योषिदुतक्लीबआत्मसंभावितोधमः ॥ भूतेषुनिरनुक्रोशोनृपाणांतद्वधोवधः ॥५॥ नैनोराज्ञःप्रजाभर्तुर्धर्मथुद्धेवधोद्विषाम् ॥आदिराजोनृपान्पूर्वंप्राहस्वायंभुवोमनुः ॥६॥ योरणेनिर्भयोभूत्वाकृत्वांघ्रिप्रागतोव्यसुः॥ सगच्छेद्धामपरमंभित्त्वामार्तंडमण्डलम् ॥७॥ भयाद्रणादुपरतस्त्यक्त्वायुद्धेपतिंचयः ॥ व्रजेद्यःक्षत्रियोभूत्वासमहारौरवंव्रजेत् ॥८॥ सेनांरक्षेत्तुराजाहिसेनाराजानमेवहि॥ सूतःकृच्छ्रगतंरक्षेद्रथिनंसारथिरथी ॥९॥ यूयंचयादवाःसर्वेंसमर्थबलवाहनाः ॥ कार्ष्णिमेवाभिरक्षंतुकार्ष्णिर्वःपरिरक्षतु ॥१०॥ गावोविप्राःसुराधर्मश्छंदांसिभुविसाधवः ॥ पूजनीयाःसदासर्वैर्मनुष्यैर्मोक्षकांक्षिभिः ॥११॥ वेदाविष्णुवचोविप्रामुखंगावस्तनुर्हरेः ॥ अंगानिदेवताःसाक्षात्साधवोह्यसवःस्मृताः ॥१२॥ श्रीकृष्णोऽयंहरिःसाक्षात्परिपूर्णतमप्रभुः ॥ येषांचित्तेस्थितोभक्त्यातेषांतुविजयःसदा ॥ १३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ शिरसाजगृहुःसाक्षादुग्रसेनस्यशासनम् ॥ प्रणेमुर्यादवाःसर्वेंकृतांजलिपुटानृप॥१४॥उग्रसेनंनृपंशूरंवसुदेवंबलंहरिम् ॥ ननामकार्ष्णिःशिरसागर्गाचार्यंमहामुनिम् ॥१५॥

को कष्ट पड़े तो सारथी रक्षा करे ॥९॥ तुम सब यादव सेना वाहनसे समर्थ हो, सो प्रद्युम्नकी रक्षा करो, और प्रद्युम्न तुम्हारी रक्षा करेगा ॥१०॥ गौ, ब्राह्मण, देवता, धर्म, साधु ये पृथ्वीमें मनुष्योंको सदाही पूजने योग्य हैं, जो मुक्तिकी इच्छा करे तो ॥११॥ वेद तो विष्णुका वचन है, ब्राह्मण मुख है, गौएं शरीर हैं, देवता अंग हैं, साधु प्राण हैं ॥ १२ ॥ यह श्रीकृष्ण साक्षात् परिपूर्ण तम हरि हैं, और समर्थ हैं, ये जिनके चित्तमें विराजते हैं, उनकी सदा ही विजय है ॥१३॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे उग्रसेनकी आज्ञा सब यादवोंने माथेपर धारण की, और हाथ जोड़ सब यादवोंने हे नृप ! उग्रसेनको प्रणाम किया ॥ १४ ॥ तब प्रद्युम्नने उग्रसेन राजाको, शूरसेनको, वसुदेवको, बलदेवको, श्रीकृष्णको और गर्गमुनि को शिरसे प्रणाम किया ॥ १५ ॥

जब श्रीकृष्ण और बलदेवजी पुरीको चले गये तब श्रीकृष्णका पुत्र प्रद्युम्न यादवों सहित दिग्विजयको निकला॥१६॥ चार योजन लम्बी सेना सुनहरी शिविरोंसे शोभित हुई ॥१७॥ आगे तो सेनाके साथमें कृतवर्मा है, पीछे महाबली अक्रूरजी हैं ॥१८॥ उनके पीछे मन्त्री पांच प्रतिमा सहित उद्धवजी, उनके पीछे कृष्णचन्द्रके अठारह पुत्र हैं ॥१९॥ हे राजन् ! जो महारथी हैं वे अक्षौहिणी सेना लेकर चले हैं, वे कौनसे अठारह महारथी हैं, प्रद्युम्न १, अनिरुद्ध २, दीप्तिमान् ३, भानु ४, ॥२०॥ साम्ब ५, मधु ६, बृहद्भानु ७, चित्रभानु ८, वृक ९, अरुण १०, पुष्कर ११, देवबाहु १२, श्रुतदेव १३, सुनन्दन १४, ॥२१॥ चित्रभानु १५, विरूप १६, कवि १७, न्यग्रोध १८, उनके पीछे गदसे आदि लेकर कृष्णके भेजे और भी चले हैं ॥२२॥ भोज, वृष्णि, अंधक, मधु, शूरसेन, दशार्ह, ऐसे सब छप्पन करोड यादव चले हैं, उनकी सैन्यसंख्याको हे नृप ! भूमिमें कौन कर सकता है ॥२३॥

श्रीकृष्णबलदेवाभ्यांपुरींयातेनृपेश्वर ॥ दिग्जयार्थीहरेःपुत्रःप्रययौयादवैःसह ॥ १६ ॥ चतुर्योजनलंबीत्थंराजमार्गोपियस्यवै ॥ बभौहेममयैः सर्वैःशिबिरैर्मैथिलेश्वर ॥ १७ ॥ अग्रतोवाहिनीयुक्तःकृतवर्मामहाबलः ॥ ध्वजिनीसहितः पश्चादक्रूरोधन्विनांवरः ॥१८॥ तत्पश्चादुद्धवोमंत्री प्रतिमापंचसंयुतः ॥ तत्पश्चात्कृष्णचंद्रस्यसुतास्त्वष्टादशस्मृताः॥१९॥ ययुर्महारथाराजन्येशताक्षौहिणीयुताः ॥ प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्चदीप्तिमा-न्भानुरेवच ॥२०॥ सांबोमधुर्बृहद्भानुश्चित्रभानुर्वृकोरुणः ॥ पुष्करोवेदबाहुश्चश्रुतदेवःसुनन्दनः॥२१॥ चित्रभानुर्विरूपश्चकविर्न्यग्रोधएवच ॥ तत्पश्चात्प्रययुः सर्वेगदाद्याःकृष्णनोदिताः ॥२२॥ भोजवृष्ण्यंधकमधुशूरसेनदशार्हकाः ॥ ऋतुबाणकोटिसंख्यायादवानांप्रकथ्यते॥तत्सैन्य संख्यानृपतेकः करिष्यतिभूमिषु ॥२३॥ इत्थंयदूनांचलतांनृपाणांविकर्षतांतांमहतींचसेनाम् ॥ कोदंडटंकारयुतोभवत्कोधुंकारआताडितदुं-दुभीनाम् ॥२४॥ इभेंद्रचीत्कारहयेंद्रहेषणैर्नदद्भुशुण्डीदृढवीरगर्जनैः ॥ ढक्कानिनादैर्यदवस्तडित्स्वनैःप्रचण्डमेघाइवतेनिडिडिरे॥२५॥राजद्भुवो मण्डलमेवदिग्गजामहत्स्वनैस्तेबधिरीकृताइव ॥ सद्योथदुर्गैरिपवोविदुद्रुवुर्निःसाहसाःकौचलतांमहात्मनाम् ॥ २६ ॥ कूर्मास्तुकिंकाविति-केवदंतःकुतःक्वगच्छामइतिद्रवंतः ॥ उपद्रवोह्येषविधेक्वयातिचचालभूर्लोकैःसहिताचलेति ॥ २७ ॥

ऐसे जब यादवराजकी सेना चली, बड़ी सेनाको खेंचते राजा चले तब धनुषकी टंकार और दुन्दुभियोंके बड़ी भारी धुंधुकार हुई॥२४॥ हाथियोंकी चिक्कार, घोड़ोंकी हिनहिनाहट, तोपोंकी गर्जना, दृढवीरोंकी गर्जना, ढोलोंका बजना, उन शब्दोंसे जब यादवोंकी सेना चली आई है, तब भूमि मेघसी गर्जने लगी ॥२५॥ भूमण्डल शोभित हुआ, उस शब्दसे दिग्गज बहरे हो गये, जिस समयमें महात्मा यादव चले, तब शत्रु दुर्गोंको छोड़कर भग गये ॥२६॥ कछुवा किरिं २ करके भागे डोलते हैं, कहाँ जायँ कैसा करें बड़ा उपद्रव हुआ, हे विधातः ! उपद्रव कहाँ जाता है, लोकों सहित पृथ्वी चलायमान हो गई है ॥ २७ ॥

जो यज्ञके बहानेसे परेश्वर भगवान् पृथ्वीका भार उतारेंगे, जो चतुर्व्यूह, वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध रूपसे हे मैथिलेश ! यादवोंमें आये हैं, उन अनन्त गुण भूभृतको नमस्कार है ॥२८॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां प्रद्युम्न दिग्विजय गमनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥ उसके बाद बहुलाश्व राजा पूछता है कि हे देवर्षि सत्तम ! भगवान्का पुत्र प्रद्युम्न क्रमसे कौन २ से देशोंको जीतनेके लिये गया, उसके उदार कर्मोंको मेरे सामने कहिये ॥१॥ अहो ! देखो भक्तोंके प्रति श्रीकृष्णचन्द्रकी ऐसी कृपा है, जो वक्ता श्रोता तथा पापीजनोंको कुलसहित पवित्र करती है ॥२॥ यह सुनकर नारदजी बोले कि धन्य है तुमको, तुमने बड़ा उत्तम प्रश्न किया है, धन्य है तेरी निर्मल बुद्धिको जो कृष्ण भक्तोंका चरित्र त्रिलोकीको पवित्र करनेवाला है ॥३॥ उस समय कोई कवि मेघकी धारा, रेतके कणोंको गिन भी सकता है, परन्तु श्रीमान् हरिके गुणोंको नहीं गिन सकता है ॥ ४ ॥ चार योजनतक जिसकी छाया पडे ऐसे श्वेत छत्रके नीचे रुक्मिणीका पुत्र शोभित हुआ ॥ ५ ॥ सो इन्द्रके दिये रथमें बैठ सेनासमेत कच्छ देशोंके जीतनेके लिये गया,

छलेनयज्ञस्यहरिःपरेश्वरोभारंविदेहेशभुवोवतारयन् ॥ योऽभूच्चतुर्व्यूहधरोयदोःकुलेतस्मैनमोऽनंतगुणायभूभृते ॥ २८ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेप्रद्युम्नदिग्विजयार्थगमनंनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ श्रीबहुलाश्वउवाच ॥ कान्कान्देशान्ययौजेतुंक्रमतः श्रीहरेःसुतः ॥ तस्यकर्माण्युदाराणिब्रूहिदेवर्षिसत्तम ॥१॥ अहो श्रीकृष्णचन्द्रस्यकृपाभक्तेषुचेदृशी ॥ पुनातिप्रश्रुताध्यातापापिनंसकुलंजनम् ॥ २ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ साधुसाधुत्वयापृष्टंसाधुतेविमलामतिः ॥ चरितंकृष्णभक्तानांपुनातिभुवनत्रयम् ॥ ३ ॥ तत्कालेमेघधाराश्च भूमेःसर्वेरजांसिच ॥ कविश्चेद्गणयेद्राजन्नहरेःश्रीमतोगुणान् ॥ ४ ॥चतुर्योजनमात्रंहिच्छायायस्यप्रदृश्यते ॥ तेनश्वेतातपत्रेणशोभितोरुक्मिणी सुतः ॥ ५ ॥ रथेनशक्रदत्तेनस्वसैन्यपरिवारितः ॥ कच्छदेशान्ययौजेतुंत्रिपुरान्गिरिशोयथा॥६॥ कच्छदेशाधिपःशुभ्रोमृगयार्थीविनिर्गतः ॥ सेनांसमागतांज्ञात्वापुरींहालांसमाययौ ॥७॥ प्रद्युम्नस्यागतासेनागजपादप्रताडनैः ॥ चूर्णयंतीतरून्देशान्पातयंतीचमैथिल ॥८॥ उत्थितैस्त-द्रजोवृन्दैरंधीभूतंनभोऽभवत् ॥ भयंप्रापुर्जनाःसर्वेकच्छदेशनिवासिनः ॥९॥ तदातिहर्षितःशुभ्रोगजानांहेममालिनाम् ॥ नीत्वापञ्चशतंसद्योह-यानामयुतंतथा ॥ १० ॥ विंशद्भारंसुवर्णानामागतस्तस्यसंमुखे ॥ दत्त्वाबलिंननामाशुस्रजाबद्ध्वाकरद्वयम् ॥११॥ तस्मैतुष्टःशंबरारिःप्रददौ रत्नमालिकाम् ॥ संस्थाप्यराज्येतंराजंस्तेषांहिप्रकृतिःसताम् ॥ १२ ॥

त्रिपुरके जीतनेको महादेवजी जैसे चले हैं ॥ ६ ॥ कच्छ देशका अधिप शुभ्र नामका राजा शिकार (आखेट) को निकला था, सेनाको आई देखकर हाला नामकी पुरीको चला गया ॥७॥ आई जो प्रद्युम्नकी सेना उसकी हाथियोंके पावोंसे देशोंके वृक्ष गिर पड़े, चूर्ण होगये, हे मैथिल ! ॥ ८ ॥ उठे हुये रजके समूहसे आकाश अंधकारमय होगया, और कच्छ देशवासी सब भयभीत होगये ॥ ९ ॥ तब शुभ्रराजा अति हर्षित हुआ सुवर्ण मालाधारी पांचसौ हाथी और दश हजार घोडे लेकर ॥१०॥ बीस भार स्वर्ण लेकर प्रद्युम्नके सामने भेंट देने आया, और मालासे दोनों हाथ बांधकर शीघ्रही शुभ्रराजाने नमस्कार किया ॥ ११ ॥ तब प्रद्युम्नने प्रसन्न होकर शुभ्रको रत्नोंकी मालादी, और राज्यपर बैठाकर प्रसन्न हुआ, संतोंकी ऐसी ही प्रकृति है ॥ १२ ॥

फिर कच्छ देशसे बडा बली रुक्मिणी नन्दन कालिंग देशको जीतनेको चला, ध्वजा पताका जिसमें फहरा रही, ऐसी सेना लेकर, जैसे मेघोंकी सेनामें इन्द्रकी शोभा होती है ॥१३॥ तब तो कालिंग देशका राजा अपने हाथी, घोडे, योद्धा लेकर प्रद्युम्नके सामने युद्ध करनेको निकला ॥ १४ ॥ कलिंगं राजाको आया देखकर धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ अनिरुद्ध अकेला रथमें बैठ सेनाको साथ लेकर यादवोंके आगे युद्ध करने लगा ॥ १५ ॥ सौ बाण तो कलिंग राजाके मारे और दश २ बाण रथियोंके, और हाथियोंके सवारोंके मारे, फिर धनुप की प्रत्यंचाको फटकारते यह पराक्रम किया ॥ १६ ॥ तब अपनी सेनाके लोगोंने और शत्रुओंने भी सबने "साधु साधु" (अच्छा वहुत अच्छा) ऐसे कहा तब प्रद्युम्नके देखते २ अनिरुद्ध युद्ध करने लगा, उस समय ॥ १७ ॥ अनिरुद्धके बाणोंके समूहसे कोई कोई तो दो टूक होगये, हाथियोंके शिर कटकर जा पडे, घोडोंके पांव कटकर जा पडे ॥ १८ ॥ रथोंके पहिये चूर्ण होगये, घोडे मर गये, सारथी मर गये, और भी रथी, सारथी, ऐसे गिर पडे जैसे पवनके वेगसे वृक्ष गिर पडते हैं ॥ १९ ॥ भगी हुई सेनाको देखकर कलिंगका

कलिंगान्प्रययौजेतुंरुक्मिणीनंदनोबली ॥ पतत्पताकैःसत्सैन्यैर्मेघैरिंद्रइवव्रजन् ॥ १३ ॥ कलिंगराजःस्वबलैःसमर्थद्विपवाहनैः॥ निर्ययौसंमुखंयोद्धुंप्रद्युम्नस्यमहात्मनः ॥ १४ ॥ कलिंगमागतंवीक्ष्यानिरुद्धोधन्विनांवरः ॥ रथेनैकेनतत्सैन्यैर्युयुधेयादवाग्रतः॥१५॥शतबाणैश्चकालिंगंदशभिर्दशभीरथान् ॥ अताडयद्गजान्वीरश्चापंटंकारयन्मुहुः॥१६॥स्वशत्रवश्चस्वेसर्वेसाधुसाध्वितिवादिनः॥ अनिरुद्धःप्रयुयुधेप्रद्युम्नस्यप्रपश्यतः ॥ १७ ॥ अनिरुद्धस्यबाणौघैःकेचिद्वीराद्विधाकृताः ॥ गजाश्वभिन्नशिरसःपादभिन्नाहयानृप ॥१८॥ रथाश्वचूर्णचरणाहताश्वाहतनायकाः ॥ रथिसारथयोवातैर्निपेतुःपादपाइव ॥ १९ ॥ पलायमानांतांसेनांकालिंगोवीक्ष्यमैथिल ॥ आजगामगजारूढोविच्छिन्नकवचोरुषा ॥ २० ॥ द्विसप्ततिभारयुतांगदांचिक्षेपसत्वरम् ॥ गजेनपातयन्वीराञ्जगर्जघनवद्बली॥२१॥ गदाप्रहारपतितंकिंचिद्व्याकुलमानसम् ॥ अनिरुद्धंमृधेवीक्ष्ययादवाःक्रोधपूरिताः ॥२२॥ तदैवतेङुःकालिंगंबाणैस्तीक्ष्णैःस्फुरत्प्रभैः ॥ समांसमुद्गटंश्येनंकुरराश्चंचुभिर्यथा ॥२३॥ कालिंगोपितदाक्रुद्धःसज्जंकृत्वाधनुःस्वयम् ॥ टंकारयन्मुहुर्बाणैर्बाणांश्चूर्णीचकारह ॥२४॥ गदोगदांसमादायबलदेवानुजोबली ॥ तद्गजंताडयामास वामहस्तेनमैथिल ॥ २५ ॥ अर्धचन्द्रप्रहारेणविशीर्णोऽभूद्गजस्तथा ॥ इंद्रवज्रप्रहारेणगंडशैलोयथानृप ॥ २६ ॥

राजा हाथीपर चढ़कर कवच पहिने बडे क्रोधमे आया ॥२०॥ तब एकसौ चालीस मनकी गदा लेकर अनिरुद्धके ऊपर उसने फेंकी, और हाथीसे वीरोंको मारता बडाबली मेघकी तरह गर्जा ॥ २१ ॥ उस गदाके प्रहारसे अनिरुद्ध गिर पडा, कुछ व्याकुल मन होगया, ऐसे संग्राममें अनिरुद्धको देखकर यादव क्रोध पूरित होगये॥२२॥ तब तो चमकते तीखे २ बाणोंसे कलिङ्ग राजाको छेदने लगे, जैसे कुरर पक्षी मांसवाले शिकारको चोंचसे छेदते हैं ॥२३॥ तब कलिङ्ग राजाभी क्रोधित होकर धनुष चढाकर टंकारता हुआ बाणोंसे बाणों को चूर्ण करने लगा ॥ २४ ॥ तब तो बलदेवके छोटे भाई महाबली गदने गदाको बांये हाथमें लेकर कलिङ्ग राजाके हाथीको मारा ॥ २५ ॥ फिर गदने अर्द्धचन्द्र बाण मारा उससे हाथी बिखर गया इन्द्रके वज्रके प्रहारसे पर्वतका शिखर जैसे बिखर जाये ॥ २६ ॥

कलिंगराजभी धरतीमें गिर पडा, फिर गदा लेकर गदको मारा,और गदने कलिंगराजको मारा ॥२७॥ ऐसे कलिंग राजका और गदका युद्ध हुआ,तब अग्निके पतंगे छोडती छाडती दोनो गदाएं चूर्ण होगईं ॥२८॥ फिर गद कलिंग राजको पटक कर युद्ध भूमिमें अपने हाथसे खेंचने लगा, जैसे गरुड सर्पको खेंचता है ॥ २९ ॥ जब गदाके प्रहारसे दुखी हुआ, जिसकी हड्डियाँ चूर्ण होगईं ऐसा कलिंग राज तब महात्मा प्रद्युम्नकी शरणमें आया ॥३०॥ तब वह कलिंग राज प्रद्युम्नको भेंट देकर यह वचन बोला, आप तो देवोंके देव परमेश्वर हो, इस पृथ्वीपर ऐसा कौन है, जो क्रोधित हुये आपको सह सके,जैसे क्रोधित हुये यमराजको मनुष्य नहीं सह सके, उन भगवान् आपको नमस्कार है ॥ ३१ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डे भाषाटीकायां कच्छकलिंगदेशविजयो नामपंचमोऽध्यायः ॥५॥ नारदजी कहते हैं–ऐसे यादवोंका ईश्वर कलिंग राजको जीतकर मरुभूमि (मारवाड) को गया,

कलिंगःपतितोभूत्वागृहीत्वामहतींगदाम् ॥ गदंचताडयामासकालिंगंचगदस्तदा ॥२७॥ कालिंगगदयोस्तत्रघोरंयुद्धंबभूवह ॥ विस्फुलिंगान्क्षरंत्यौद्वेगदेचूर्णीबभूवतुः ॥२८॥ गदोगृहीत्वाकालिंगंपातयित्वारणांगणे ॥ चकर्षस्वकरेणाशुफणिनंगरुडोयथा ॥२९॥ गदाप्रहारव्यथितश्चूर्णितास्थिःकलिंगराट् ॥ आययौशरणंसोपिप्रद्युम्नस्यमहात्मनः ॥३०॥ दत्त्वाबलिंप्राहकलिंगराजस्त्वंदेवदेवःपरमेश्वरोऽसि ॥ कःक्रोधवन्तंप्रसहेतकौत्वांजनोयथादंडधरंनमस्ते॥३१॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेकच्छकलिंगदेशविजयोनामपञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंजित्वाथकालिंगंप्रद्युम्नोयादवेश्वरः ॥ जगाममरुधन्वानंजलंवैश्वानरोयथा ॥ १ ॥ गिरिदुर्गसमायुक्तंधन्वदेशाधिपंगयम् ॥ उद्धवंप्रेषयामासज्ञात्वातंयादवेश्वरः ॥ २ ॥ गिरिदुर्गंगतःसाक्षादुद्धवोबुद्धिसत्तमः ॥ सभामेत्यगयंप्राहशृणुराजन्महामते ॥३॥ उग्रसेनोयादवेन्द्रोराजराजेश्वरोमहान् ॥ जंबूद्वीपनृपाञ्जित्वाराजसूयंकरिष्यति ॥४॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम्॥ असंख्यब्रह्मांडपतिर्मंत्रीतस्याभवद्धरिः ॥ ५ ॥ तेनवैप्रेषितःसाक्षात्प्रद्युम्नोधन्विनांवरः ॥ शीघ्रंतस्मैबलिंनीत्वाकुलकौशलहेतवे ॥ ६ ॥श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वाकिंचित्प्रकुपितोवीर्यशौर्यमदोद्धतः ॥ उद्धवंप्राहनृपतिर्गयोनाममहाबलः ॥ ७ ॥ गयउवाच ॥ बलिंतस्मैनदास्यामिविनायुद्धंमहामते ॥ अल्पकालेनयदवोगतावृद्धिंभवादृशाः ॥ ८ ॥

जैसे अग्नि जलमें जाती है ॥१॥ पर्वतका किला जिसका ऐसा धन्य देशका राजा गय उसको जानकर यादवेश्वर प्रद्युम्नने उसके पास उद्धवको भेजा ॥ २ ॥ साक्षात् बुद्धिमान् उद्धव उस पर्वतके दुर्गमें गया और सभामें जाकर गय राजासे बोला कि,हे महामते ! हे राजन् तुम सुनो ॥ ३ ॥ यादवोंमें इन्द्र राज राजेश्वर उग्रसेन महाराज जम्बू द्वीपके राजाओंको जीतकर राजसूय यज्ञ करेगा ॥४॥ परिपूर्णतम साक्षात् स्वयम् भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र अखिल ब्रह्माण्डोंके पति स्वयम् भगवान् हरि उसके मन्त्री हुये हैं ॥५॥ उन्होंने धनुष धारियोंमें श्रेष्ठ प्रद्युम्नको भेजा है, साक्षात् उसको अपने कुलकी कुशलके लिये जल्दी भेंट लेकर चले ॥६॥ नारदजी कहते हैं–ऐसे सुनकर बल, वीर्य,मदसे उद्धत गय राजा कुछ क्रोधित होकर महाबली उद्धवसे यह बोला ॥ ७ ॥ गयराजा बोला कि हे महामते ! युद्ध किये बिना भेंट तो मैं नहीं दूंगा, आप जैसे यादवोंकी अब थोडे दिनोंसे वृद्धि हुई है ॥ ८ ॥

ऐसे सुनकर उद्धवने प्रद्युम्नके पास आकर सब यादवोंके सुनते गय राजाके कहे हुये वचन कहे॥९॥उसी समय रुक्मिणीका पुत्र गिरि दुर्गमें गया, तब गय राजाकी सेनाका यादवों की सेनाके साथ घोर युद्ध हुआ ॥ १० ॥ तब हाथियोंके पांवोंसे वृक्षोंका और नगर वासियोंका चूर्ण करता गय राजा दो अक्षौहिणी सेना लेकर युद्ध करनेको आया ॥ ११ ॥ तब रथियोंसे रथी, हाथींके सवारोंसे हाथीवाले,पैदल सैनिकोंसे पैदल और घुड सवारोंसे घुडसवार लडने लगे ॥ १२ ॥ तीखे २ बाणोंसे, ढाल, तलवार, पोलादी,गदा,पटा, फरसा, बर्च्छी, तोप इनसे लगे ॥ १३ ॥ यादवोंके मारे हुये गय राजाके योद्धा भयभीत होगये, अपने २ रथोंको छोडकर दशों दिशाओंमें भग गये ॥ १४ ॥ तब महाबली गय अपनी सेनाके भग जानेपर अकेलाही वारवार धनुषको टंकारता हुआ युद्ध करनेको आया॥१५॥तब दीप्तिमान् नामके श्रीकृष्णके पुत्रने चार बाणोंसे तो उसके घोडोंको और एक बाणसे

इत्युक्तउद्धवोराजन्च्छंबरारिंसमेत्यसः ॥ सर्वेषांयादवानांचशृण्वतांप्रशशंसह ॥ ९॥ तदैवरुक्मिणीपुत्रोगिरिदुर्गंसमाययौ ॥ तत्सैन्यैर्यादवैः सार्द्धंघोरंयुद्धंबभूवह ॥१०॥ चूर्णयन्गजपादैश्चनागरान्भूजनान्द्रुमान् ॥ अक्षौहिणीभ्यांसंयुक्तोगयोयोद्धुंविनिर्ययौ ॥११॥ रथिनोरथिभिस्तत्र गजवाहागजैःसह ॥ अश्ववाहैरश्ववाहावीरावीरैःपरस्परम् ॥१२॥ युयुधुस्तीक्ष्णबाणौघैश्चर्मखड्गगदर्ष्टिभिः॥ पाशैःपरश्वधैराजन्छतघ्नीभिर्भुशुंडिभिः ॥ १३ ॥ मन्यमानाश्चयदुभिर्गयवीराभयातुराः ॥ सर्वेस्वंस्वंरथंत्यक्त्वादुद्रुवुस्तेदिशोदश ॥ १४ ॥ पलायमानेस्वबलेगयोनाममहाबलः ॥ एकाकीप्रययौयोद्धुंधनुष्टंकारयन्मुहुः॥ १५ ॥ दीप्तिमान्कृष्णपुत्रस्तुधनुर्बाणैरिपोर्हयान् ॥ एकेनसारथिंजघ्नेद्वाभ्यांकेतुंसमुच्छ्रितम् ॥ १६ ॥ रथंचबाणविंशत्याकवचंपंचभिः पुनः ॥ धनुस्तस्यापिचिच्छेदशतबाणैर्महाबलः ॥ १७ ॥ गयोन्यद्धनुरादायदीप्तिमंतंहरेःसुतम् ॥ जघानबाणविंशत्याजगर्जघनवद्बली ॥ १८ ॥ तत्प्रहारेणसमरेकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥ दीप्तिमानथजग्राहशक्तिंज्योतिर्मयींदृढाम् ॥ १९ ॥ चिक्षेपभ्रामयित्वातांगयाख्यायमहात्मने ॥ सापितद्धृदयंभित्त्वापपौचरुधिरंमहत् ॥ २० ॥ गयोपिपतितोराजन्मूर्च्छितोऽभूद्रणांगणे ॥ दीप्तिमांश्चधनुष्कोटयाकर्षयंस्तद्गलेरिपुम् ॥२१॥ प्रद्युम्नस्यपुरःप्रागात्कद्रुजंगरुडोयथा ॥ नरदुंदुभयोनेदुर्देवदुंदुभयस्तदा ॥ आकाशाद्ववृषुर्देवाःपुष्पवर्षाणिपार्थिवाः ॥ २२ ॥

सारथिको मार दिया, और दो बाणोंसे उसकी ऊँची ध्वजाको काट दिया ॥१६॥ पच्चीस बाणोंसे रथको, पांच बाणोंसे कवचको और सौ बाणोंसे धनुषको काटकर डाल दिया ॥१७॥ तब गय राजाने दूसरा धनुष लेकर बीस बाणोंसे भगवान्के पुत्र दीप्तिमान्को मारा,फिर मेघसा गर्जने लगा ॥ १८ ॥ उन बाणोंसे कुछ व्याकुल मन होकर दीप्तिमान्ने तेजोमयी दृढ शक्तिको हाथमें लिया ॥१९॥ घुमाकर वह शक्ति गयके मारी, उस शक्तिने उसके हृदयको फाडकर बहुत रुधिर पान किया ॥२०॥ गय राजा उस शक्तिके प्रहारसे मूर्च्छित होकर युद्ध भूमिमें गिर पडा, तब दीप्तिमान् अपने धनुषकी नोंक गलेमें डाल खेंचता हुआ ॥ २१ ॥ प्रद्युम्नके सामने ले गया, जैसे सर्पको गरुड लेजाता है, तब तो नर दुन्दुभियाँ बजने लगीं और देव दुन्दुभियाँभी बजने लगीं, आकाशमेंसे देवता पृथ्वीमेंसे पार्थिव पुष्पोंकी वर्षा करने लगे ॥ २२ ॥

जब गय राजा सचेत हुआ तो उसने आकर प्रद्युम्नके चरणोंका पूजन किया, भेंट दी, फिर श्रीकृष्णका पुत्र शंबरासुरको मारनेवाला प्रद्युम्न अवन्तिकापुरीको चला गया, जैसे सुनहरी कलीपर भ्रमर जाता है ॥२३॥ वहाँके मालवेके राजा जयसेनने प्रद्युम्नको आया सुनकर पूजा की, और प्रद्युम्नके प्रभावको जाननेवाले मालवदेशके राजाने वृद्धजनोंको साथ लेकर भेंट दी ॥२४॥ कृष्णका पुत्र महात्मा अपने पितामहकी बहिन राजाधिदेवीको नमस्कार करके, उसके पुत्र विन्द और अनुविन्दसे मिलकर, और जो मालवेके मनुष्य हैं, उनसे मिलकर शोभित हुआ ॥२५॥ फिर धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ प्रद्युम्न माहिष्मतीपुरीको गया, उसने अपनी सेना जो यादव उनको साथ लेकर नर्मदा नदीको देखा ॥२६॥ जो नर्मदा जलकी लहरोंसे शोभित हो रही है, शृंगार तिलककी तरह, और पुष्पोंके समूहको बहा रही है, बंधी हुई उष्णिग् (पगडी) की तरह ॥२७॥ बेंतके, बांसके, वृक्षोंसे माधवी

तदैवतेनापिसमर्चितांघ्रिःश्रीकृष्णपुत्रोनृपशंबरारिः॥ अवंतिकांसप्रययोमहात्माश्रीकर्णिकांस्वर्णमयीमिवालिः ॥ २३ ॥ श्रुत्वागतंतंजयसेन
राजः समर्चयामाससमालवाधिपः ॥आनीयवृद्धान्सुबलिंमहात्मनेप्रधर्षितोमैथिलतत्प्रभाववित् ॥२४॥ राजाधिदेवींस्वपितुःपितुःस्वसांप्रण-
म्यतांकृष्णसुतोमहामनाः ॥ विंदानुविंदौपरिरभ्यतत्सुतौबभौवृतोमालवदेशसंभवैः ॥२५॥ प्रद्युम्नोधन्विनांश्रेष्ठःपुरींमाहिष्मतींययौ॥यादवैः
स्वबलैःसार्द्धंनर्मदांसददर्शह॥ २६ ॥ राजितामंबुकल्लोलैः शृंगारतिलकामिव ॥ वहंतींपुष्पनिचयमुष्णिहंमुद्रिकामिव ॥२७॥ वेतसीवेणुतरु-
भिःपुष्पितैर्माधवैर्वृतैः ॥ स्फुरद्भिर्मूर्तिमद्भिश्चदेवैःस्वर्गनदीमिव ॥ २८ ॥ तत्तीरेशिबिरैर्युक्तःप्रद्युम्नोयादवेश्वरः॥ स्थितोभूद्यादवैःसाकंदेवैरिंद्र-
इवप्रभुः ॥२९॥ इंद्रनीलोमहाराजज्ज्ञानीमाहिष्मतीपतिः॥स्वदूतंप्रेषयामासप्रद्युम्नायमहात्मने॥३०॥प्रद्युम्नाराज शिबिरंदूतोनत्वाकृतांजलिः॥
उवाचवचनंतत्रसर्वेषांशृण्वतांनृप ॥ ३१ ॥ दूतउवाच ॥ हस्तिनापुरनाथेनधार्तराष्ट्रेणधीमता ॥ स्थापितोऽतिबलोवीरोबलिंकस्मैनदास्यति
॥ ३२ ॥ सुयोधनायचेच्छाभिर्द्रव्यंयच्छतिमाबलात् ॥ योद्धव्यंचभवद्भिश्चविफलोहिरणोऽत्रवै ॥ ३३ ॥ श्रीप्रद्युम्नउवाच ॥ यथागयोदूत-
कलिंगराड्यथातथाभिभूतोपिबलिंप्रदास्यति ॥ नृपंनजानातिमहोग्रसेनकंमाहिष्मतीशोऽयमतीवराजराट् ॥ ३४ ॥

के प्रफुल्लित वृक्षोंसे अत्यन्त शोभित है, जैसे देवताओंसे मन्दाकिनी शोभाको प्राप्त होती है ॥२८॥ उसके तीरपर यादवेश्वर प्रद्युम्नने यादवोंके साथ शिविर कर दिये, जैसे देवताओं के प्रभु इन्द्र शिविर कर देते हैं ॥ २९ ॥ तब इन्द्रनील नामके महाराज ! बड़े ज्ञानी माहिष्मतीके पतिने प्रद्युम्न महात्माके पास अपने दूतको भेजा ॥ ३० ॥ तब वह दूत प्रद्युम्नके शिविरमें आकर हाथ जोड़ प्रणाम करके सभीके सुनते हे नृप ! यह वचन बोला ॥३१॥ कि हस्तिनापुरके स्वामी बुद्धिमान् धृतराष्ट्रने अति बली वीर बैठाया है, सो किसीको भेंट नहीं देता है ॥३२॥ सुयोधनको अपनी इच्छासे भेंट देता है, कुछ बलपूर्वक नहीं देता है, तुम युद्ध करो, किन्तु तुम्हारा यह रण यहाँ विफल है ॥ ३३ ॥ तब प्रद्युम्न बोले कि, हे दूत ! कलिङ्ग राजाकी तरह अपना तिरस्कार कराकर भेंट देगा, उग्रसेन राजाको नहीं जानता है वह माहिष्मतीका राजा राजाओंका भी राजा है ॥ ३४ ॥

नारदजी कहते हैं कि ऐसे दूत सुनकर सभामें आकर माहिष्मतींके पति प्रद्युम्नका कहा वचन बोला ॥३५॥ फिर यादवोंकी उद्भट सेनाको देखकर माहिष्मतीका पति पांच हजार हाथी, दश लाख घोड़े, जीतनेवाले दशहजार रथ लेकर निकला ॥३६॥ फिर प्रद्युम्नके निकट आकर महात्मा प्रद्युम्नको भेंट दी॥३७॥इति श्रीम० सं० विश्वजित्खंडे भा०टी०माहिष्मती विजयंत नाम षष्ठोध्यायः॥६॥नारदजी कहते हैं कि प्रद्युम्न महावीर्य माहिष्मतीके पतिको जीतनेके बाद बड़ी सेनाको खेंचता गुजरातके राजाके यहाँ आया॥१॥गुर्जरदेशका महावली ऋपय नाम का राजा था, उसको सेनासे चारों ओरसे घेर लिया, जैसे गरुड चोंचसे सर्पको घेरलेता है॥२॥जल्दीही उससे भेंट लेकर यादवेंद्र महावली बड़ी सेनाको लिये चेदिदेशको आया॥३॥वहाँ दमघोष चँदेलीका राजा वासुदेवका बहनोई था, उसका पुत्र शिशुपाल कृष्णका शत्रु विख्यात है॥४॥तव महाबुद्धि उद्धव बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ दमघोषके पास आकर प्रणामकर बोले॥५॥उद्धव

॥ श्रीनारदउवाच ॥ उक्तोदूतस्तदैवाशुगत्वामाहिष्मतीपतिम् ॥ सभायांकथयामासप्रद्युम्नकथितंवचः ॥ ३५ ॥ यदूनामुद्भटंसैन्यंवीक्ष्य माहिष्मतीपतिः॥ गजानांपंचसाहस्रंहयानांनियुतंशुभम् ॥ ३६ ॥ रथानामयुतंजैत्रंनीत्वाराजाविनिर्गतः ॥ बलिंददौसमेत्याशुप्रद्युम्नायमहात्मने ॥ ३७ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेमाहिष्मतीविजयोनामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ प्रद्युम्नोथमहावीर्योजित्वामाहिष्मतीपतिम् ॥ विकर्षन्महतींसेनांगुर्जरराजंसमाययौ ॥१॥ गुर्जरस्याधिपंवीरमृष्यंनाममहाबलम्॥ जग्राहसेनयाकार्ष्णिस्तुंडेनाहिंयथाविराट् ॥ २ ॥ सद्यस्तस्माद्बलिंनीत्वायादवेंद्रोमहाबलः ॥ विकर्षन्महतींसेनांचेदिदेशांस्ततोययौ ॥३॥ दमघोषश्चेदिराजोवसुदेवस्वसुःपतिः ॥ शिशुपालस्तस्यपुत्रःकृष्णशत्रुःप्रकीर्तितः ॥ ४ ॥ अभीयायमहाबुद्धिर्दमघोषंमहाबलम् ॥ नत्वाप्राहमहाबुद्धिरुद्धवोबुद्धिसत्तमः ॥ ५ ॥ उद्धवउवाच ॥ राजन्देहिबलिंतस्माउग्रसेनायभूभृते ॥ विजित्यनृपतीन्योऽसौराजसूयंकरिष्यति ॥ ६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंनिशम्यवचनंदमघोषसुतःखलः ॥ स्फुरदोष्ठोमन्युपरःप्राहेदंसदसित्वरम् ॥ ७ ॥ शिशुपालउवाच ॥ दुरत्ययाकालगतिरहोचित्रमिदंजगत् ॥ विधेःकालात्मकस्यापिप्राजापत्येभवेत्कलिः॥८॥ क्वराजहंसःकाकःक्वकमूर्खःक्वचपण्डितः ॥ भृत्याविजेष्यंतिनृपंचक्रवर्तिनमीश्वरम् ॥ ९ ॥ ययातिशापाद्यदवोभ्रष्टराज्यपदाःस्मृताः ॥ राज्यंस्वल्पंजलंप्राप्यप्रोच्छलंत्यापगाइव ॥ १०॥ अवंशसंभवोराजामूर्खपुत्रोहिपंडितः ॥ निर्धनश्चधनंप्राप्यतृणवन्मन्यतेजगत् ॥ ११ ॥

बोले कि, हे राजन्! उग्रसेनराजाको भेंट दीजिये, जो सब राजाओंको जीतकर राजसूययज्ञ करेगा ॥६॥ नारदजी कहते हैं–ऐसे सुनकर दमघोपका पुत्र बड़ा दुष्ट क्रोधमें भर आया, ओठ फड़कने लगे, क्रोधमें मग्न होकर सभामें जल्दीसे यह बोला ॥७॥ शिशुपाल बोला, अहो ! कालकी गति बड़ी दुरत्यय है, यह जगत् बड़े आश्चर्यका है, जो कालात्मा ब्रह्मासे कुम्भकार (कुम्हार) झगड़ता है कि प्रजापति मैं हूँ, अथवा तू है ॥ ८ ॥ कहाँ हंस कहाँ कौआ, कहाँ मूर्ख कहाँ पण्डित, देखो चक्रवर्ती राजाओंको आज चाकर (भृत्य) जीतना चाहते हैं ॥९॥ ययाति राजाके शापसे यादवोंका राज्य भ्रष्ट हो गया है, सो थोड़ासा राज्य पाकर ऐसे उछले हैं, जैसे थोड़ेसे जलको पाकर तुच्छ नदी उछलती है ॥१०॥ अवंशमें उत्पन्न हुआ राजा और मूर्खका पुत्र पण्डित और दरिद्री धन पाकर ये तीनों जगत्को तिनकाके समान समझते हैं ॥ ११ ॥

उग्रसेन कितने दिनका राजा है,जिसका श्रीकृष्ण मन्त्री वना है,सो कृष्णनेही बलपूर्वक उसको राजा बना दिया है ॥१२॥ जिसका मन्त्री वासुदेव है,जो जरासंधके भयके मारे अपनी मथुरापुरीको छोडकर समुद्रमें जा छिपा है ॥१३॥ जिसको नन्द नामके अहीरके पुत्र कहा करते हैं, और वसुदेव जिसको अपनाही पुत्र मानता है, जिसको कुछभी लज्जा नहीं आती है ॥१४॥ और वसुदेव तो गौरवर्ण है, यह काला कहाँसे आया, और इसका पितामहभी गौरवर्ण है,सो देखो यह एक दुख एक हँसी है ॥१५॥ मैं उसके पुत्र प्रद्युम्नको यादवोंको और उसकी सेनाको जीतकर यादवोंसे रहित पृथ्वी करनेके लिये द्वारिकाको जाऊँगा ॥ १६ ॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे कहकर धनुष लेकर अक्षय वाणोंके तरकस लेकर चलनेको जब उद्यत हुआ, तब दम घोष पुत्रसे बोला कि ॥१७॥ मैं कहता हूँ उसको तुम सुनो, क्रोध मत करो, मत करो, जो अकस्मात् कोई काम करता है, उसका वह काम सिद्ध नहीं होता

उग्रसेनःकतिदिनैराजत्वंसमुपागतः ॥ मंत्रिणावासुदेवेनपूजितःसबलान्नृपः ॥१२॥ तस्यमंत्रीवासुदेवोजरासंधभयाद्द्रुतः॥ मथुरांस्वपुरींत्यक्त्वा समुद्रंशरणंगतः ॥ आभीरस्यापिनन्दस्यपूर्वपुत्रःप्रकीर्तितः ॥ वसुदेवोमन्यतेतंमत्पुत्रोयंगतत्रपः ॥ १४ ॥ वसुदेवाद्गौरवर्णादयंश्यामः कुतोऽभवत् ॥ पितामहोऽपिगौरश्चदुःखहास्यमिदंवचः ॥ १५ ॥ प्रद्युम्नंतत्सुतंजित्वासबलंयादवैःसह ॥ कुशस्थलींगमिष्यामिमहींकर्तुमयादवीम् ॥ १६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाधनुरादायतूणौचाक्षयसायकौ ॥ गंतुमभ्युद्यतंवीक्ष्यचेदिराजस्तमब्रवीत् ॥ १७ ॥ ॥ दमघोषउवाच ॥ शृणुपुत्रप्रवक्ष्यामिक्रोधंमाकुरुमाकुरु ॥ अकस्मादाचरेत्कार्यंनसिद्धिंविंदतेह्यसौ ॥ १८ ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणां साधनंनक्षमासमम् ॥ तस्मात्सामप्रकर्तव्यंसाम्नोनसदृशंसुखम्॥१९॥दानेनराजतेसामदानंसत्क्रिययापुनः ॥ सत्क्रियापियथायोग्यं गुणंसंप्रेक्ष्यराजते ॥ २० ॥ यादवाश्चेदिपाश्चैवज्ञातिसंबंधिनःस्मृताः ॥ चेदिपानांचवृष्णीनांकलिंनेच्छामितत्त्वतः ॥ २१ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ शिशुपालोबोधितोपिदमघोषेणधीमता ॥ नोवाचकिंचिद्विमनास्तूष्णींभूतोमहाखलः ॥ २२ ॥ श्रुतिश्रवाश्चेदिपराजराज्ञीस्वसाशुभाशूरसुतस्यराजन् ॥ समेत्यपुत्रंशिशुपालसंज्ञंप्रत्याहसम्यग्विनयान्वितासा ॥२३॥ श्रुतिश्रवाउवाच ॥ मापुत्रखेदंकुरुतात्कदाचिन्माभूत्कलिश्चेदिपयादवानाम् ॥ तेमातुलोयंकिलशूरसूनुर्भ्राताचतेतत्सुतएवकृष्णः ॥ २४ ॥

है ॥१८॥ धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, सबका साधन क्षमाकी बराबर दूसरा नहीं है,इससे शान्तिही करनी योग्य है,शान्तिके समान अन्य सुख नहीं है ॥ १९ ॥ दानसे सामकी शोभा होती है, श्रेष्ठ क्रियासे दानकी शोभा है,उस सत्क्रियाकीभी यथायोग्य गुणोंसेही शोभा होती है ॥ २० ॥ यादव और चेदिप जो हैं वे सब जातिके सम्बन्धी हैं, इससे यादवोंकी और चैद्योंकी मैं वास्तवमें क्लेशकी इच्छा नहीं करता हूँ ॥२१॥ नारदजी कहते हैं कि,शिशुपालको दमघोप बुद्धिमान्ने ज्ञानभी कराया, तो चुप होगया, महादुष्ट उदास होकर कुछ नहीं बोला ॥ २२ ॥ तब श्रुतिश्रवा चन्देलीके राजाकी रानी वसुदेवकी बहिन वह हे राजन्! अपने पुत्र शिशुपालके निकट आकर बडी नम्रतासे यह वचन बोली ॥२३॥ श्रुतिश्रवा बोली कि हे पुत्र! तुम खेद मत करो, देखो कभी चेदियोंमें और यादवोंमें क्लेश नहीं होवे, और देखो यह वसुदेव तुम्हारा मामा है, और उसका पुत्र जो श्रीकृष्ण है, वह तेरा भाई है ॥ २४ ॥

उस कृष्णके पुत्र प्रद्युम्नसे आदि लेकर जो यहाँ बडे बडे सैकडों वीर आये हैं वे सब मुझसे और तुमसे सब सत्कार करने और प्यार करनेकेही योग्य हैं, लडनेके योग्य नहीं हैं ॥२५॥ मेरा स्नेह है,मैं आये हुये उनको तेरे साथ लेनेको जाऊँगी क्योंकि,बहुत दिनोंसे मेरी उनको देखनेकी उत्कठा है,सो उत्सवसे लाऊँगी, ऐसा समय फिर नहीं मिलेगा ॥ २६ ॥ तब शिशुपाल यह बोला कि,रामकृष्ण मेरे शत्रु हैं, और यादवभी मेरे शत्रु हैं, उन सबको मारूँगा, जिन्होंने मेरा तिरस्कार किया है॥२७॥पहिले कुण्डिन पुरमें इन्होंने मेरा अपराध किया है, मेरा विवाह बन्द कर दिया,इससे रामकृष्ण मेरे शत्रु हैं ॥२८॥ यदि तुम दोनों यादवोंकी पक्ष करोगे तो, तुमको और पिताको बेडी डालकर बन्दीखानेमें दे दूँगा ॥२९॥ जैसे कंसने अपने मां बापको दे दिये थे, अथवा तुमको मार डालूँगा, मेरी शपथ बहुत बुरी है, कभी झूंठी नहीं होती है ॥ ३० ॥ नारदजी कहते हैं कि ऐसे उसका कठोर वचन सुन

तस्यात्मजायेऽत्रसमागतास्तेप्रद्युम्नमुख्याःशतशोमहांतः ॥ सम्पूजनीयाश्चमयाभवद्भिःसंलालनीयानहियुद्धयोग्याः ॥२५॥ अहंगमिष्यामिसहार्द्रचित्तानेतुंत्वयातातसमागतांस्तान् ॥ द्रष्टुंचिरोत्कण्ठमनामहोत्सवैर्नैताद्दशोयंसमयकदाचित् ॥ २६ ॥ शिशुपालउवाच ॥ ममशत्रू रामकृष्णौयदवःशत्रवश्चमे ॥ घातयिष्यामितान्सर्वान्यैरहंतुतिरस्कृतः ॥२७॥ पुरावैकुंडिनपुरेयाभ्यांमेहेलनंकृतम् ॥ विवाहोवारितोमेवैरामकृष्णावरीमम ॥२८॥ यदितेषांयादवानांयुवांपक्षंकरिष्यथः ॥ तदात्वांसहपित्राचनिगृह्यनिगडैर्द्दढैः ॥२९॥ कारागारेकारयामिकंसःस्वपितरौयथा ॥ अन्यथाचेद्वधिष्यामिशपथोमेतुदुर्घटः ॥ ३० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तद्वचःपरुषंश्रुत्वातूष्णींयातेऽथचेदिपे ॥ तद्वचःस्वबलंप्राप्यप्राहसर्वंयथोदितम् ॥ ३१ ॥ वाहिनीध्वजिनींचैवपृतनाक्षौहिणीयुता ॥ चतुर्धाशिशुपालस्यसेनायुक्ताबभूवह ॥ ३२ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ वाहिन्याद्याश्चयासेनास्तत्संख्यांवदमेप्रभो ॥ ऋषयोहिप्रजानंतिभूतंभव्यंभवत्परम् ॥ ३३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ शतंद्विपानांरथिनांसहस्रंशतसंयुतम् ॥ अयुतंतुरगाणांचपत्तीनांलक्षमेवच ॥३४॥ सेनायालक्षणंस्वल्पद्विगुणंचतुरंगिणी ॥ चतुःशतंद्विपानांचरथानामयुतंतथा ॥ ३५ ॥चतुर्लक्षंहयानांचपत्तीनामेककोटयः ॥ लोहकंचुकसंयुक्ताःसमर्थबलवाहनाः ॥३६॥ शस्त्रास्त्रज्ञायत्रशूरावाहिनीसाबुधैःस्मृता ॥ वाहिन्याद्विगुणीभूताध्वजिनीसाप्रकीर्तिता ॥ ३७ ॥

जब दोनों चुप होरहे,तब उस वचनको सुनकर उद्धवने अपनी सेनामें आकर सब ज्योंका त्यों वृत्तान्त कहा ॥३१॥ वाहिनी और ध्वजिनी, पृतना और अक्षौहिणी, ये चार प्रकार की शिशुपालकी सेना सजी ॥३२॥ बहुलाश्व राजा पूछता है कि हे प्रभो ! जो वाहिनी आदि चार इन चारोंकी संख्या कहिये,ऋषिश्वर भूत, भविष्य,वर्तमान तीनों कालको जानते हैं ॥३३॥ नारदजी कहते हैं–सौ हाथी,ग्यारह सौ रथ,दश हजार घोडे, एक लाख पैदल ॥३४॥ यह तो सेना है, इससे दूनी अर्थात् दो सौ हाथी, बाईस सौ रथ,बीस हजार घोडे दो लाख पैदल,यह चतुरंगिनी है, चार सौ हाथी, दश हजार रथ ॥ ३५ ॥ चार लाख घोडे करोड पैदल, लोहेकी जञ्जीरके कवच वाले समर्थ जिसमें बल वाहन ॥ ३६ ॥ शस्त्र और अस्त्रोंके जानने वाले जिसमें शूर, उसको बुद्धिमान् वाहिनी कहते हैं, वाहिनीसे द्विगुणी ध्वजिनी कहलाती है ॥ ३७ ॥

ध्वजिनीसे द्विगुणी पृतना कहलाती है, और पृतनासे द्विगुणी अक्षौहिणी कही जाती है, और जो साहसी होता है, शूर कहलाता है, और सौ शूरोंसे लड़ता है, वह सामन्त होता है ॥३८॥ और जो सौ सामन्तोंको धारण करे वह संग्राममें गजी कहलाता है, सारथीकी, रथकी घोड़ोंकी संग्राममें रक्षा करे वह रथी होता है ॥३९॥ और जो सेनाकी बाणोंसे रक्षा करे, और शत्रुओंको रणमें मारता जाये, वह महारथी ॥४०॥ और जो अकेला ही एक अक्षौहिणीके साथ युद्ध करे और अपनी सेनाकी रक्षा करे वह अतिरथी माना है ॥ ४१ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां गुजरात चेदिदेशगमनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥७॥ नारदजी कहते हैं कि, वह शिशुपाल ऐसे माता पिताका तिरस्कार करके चंद्रिका पुरसे निकला, दुर्जनोंका ऐसाही स्वभाव होता है ॥ १ ॥ वाहिनी और ध्वजिनीको लेकर द्युमत् और शक्त ये दोनों निकले, पृतना और अक्षौहिणीको लेकर तब रंग, पिंड इनके

ध्वजिन्याद्विगुणीज्ञेयाकविभिःकथितापुरा ॥ ससाहसोपिशूरःस्यात्सामंतःशतशूरभृत् ॥ ३८ ॥ सामंतानांशतंबिभ्रत्सगजीकथितोमृधे ॥ समरेसारथिंचाश्वान्रथंरक्षेद्रथीचयः ॥ ३९ ॥ सेनांरक्षतियोबाणैःकथ्यतेसमहारथी ॥ स्वसेनांरक्षयञ्छत्रून्सूदयन्रणमण्डले॥४०॥योक्षौहिण्या समंयुद्धंचेत्सदासोऽतिरथीस्मृतः ॥४१॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादेगुर्जरचेदिदेशगमनंनामसप्तमोऽध्यायः ॥७॥ श्रीनारदउवाच ॥ निर्गतःशिशुपालोऽसौसबलश्चंद्रिकापुरात् ॥ पितरौतौतिरस्कृत्यस्वभावोह्यसतामयम् ॥ १ ॥ वाहिनीध्वजिनीभ्यां चद्युमच्छक्तौ॥विनिर्गतौपृतनाक्षौहिणीभ्यांतौरंगपिंगौचमंत्रिणौ ॥ २ ॥ शिशुपालमहासैन्यंप्रलयाब्धिसमंनृप ॥ संवीक्ष्ययदवस्तर्तुंचाजग्मुः कृष्णपोतकाः ॥३॥ वाहिनीसहितःपश्चाद्द्युमान्नामामहाबलः॥ युयुधेयादवैःसार्द्धंशिशुपालप्रणोदितः ॥४॥ द्वयोश्चसैन्ययोर्बाणैरंधकारोऽभवद्रणे ॥ हयपादरजोवृन्दैः प्रोत्थितैश्छादयन्नभः ॥५॥ हयाश्चनृपधावंतःप्रोत्पतंतोद्विपान्प्रति ॥ द्विपाश्चसक्षतायुद्धेपातयंतःपदैर्द्विपः ॥६॥ शुण्डादण्डस्यफूत्कारैर्मर्दयंतइतस्ततः ॥ कस्तूरीपत्रसिंदूररक्तकंबलमंडिताः ॥ ७ ॥ बाणैर्गदाभिःपरिघैःखड्गैःशूलैश्चशक्तिभिः ॥ छिन्नांगाः पतयः पेतुश्छिन्नबाह्वंघ्रिजानवः ॥ ८ ॥ कश्चित्तीक्ष्णासिनाराजन्हयान्युद्धेद्विधाकरोत् ॥ केचिद्दंतान्संगृहीत्वाकुंभेषुकरिणांगताः ॥ ९ ॥

साथमें दोनों मन्त्री चले ॥ २ ॥ तब शिशुपालकी प्रलयके समुद्र जैसी बड़ी सेनाको देखकर, श्रीकृष्णही है जहाज जिनका ऐसे यादव उसको तरनेके लिये आये ॥ ३ ॥ शिशुपाल प्रेरित किया हुआ वाहिनीसहित द्युमान् नामका महाबली यादवोंके साथ युद्ध करने लगा ॥४॥ दोनोंकी सेनाओंके बाणोंसे युद्धमें अंधकार हो गया, घोड़ोंके खुरोंकी रज समूहसे आकाश छा गया ॥५॥ हे नृप ! दौड़ते हुये घोड़े हाथियोंपर पड़ते हैं, और घायल हुये हाथी पांवोंसे युद्धमें शत्रुओंको पटकते भागते हैं ॥६॥ सूंडकी फुंकारोंसे इधर उधर मर्दन करते हैं, वे हाथी कस्तूरीकी पत्रभंगी रचना सिन्दूर और लाल बनातसे मण्डित हैं ॥७॥ बाण, गदा, परिघ, खड्ग, त्रिशूल, बरछी, इनसे कटी हैं भुजा, चरण, जानु, अंग जिनके ऐसे पैदल सैनिक गिर पड़े हैं ॥८॥ किसीने तीक्ष्ण धारवाली तलवारसे घोड़ोंके दो दो टूक कर दिये, और कोई दांत पकड़कर हाथियोंपर चढ़ गये ॥ ९ ॥

कोई २ महावत समेत सिंहकी तरह हाथी हाथीके सवारोंको मारता है, कोई २ महावली हाथियोंके झुंडको फाँद फाँदकर प्रहार करते हैं ॥ १० ॥ शत्रुकी सेनापर खड्गके प्रहार करते हैं, कोई २ घोड़ोंकी पीठसे स्पर्श हुये नहीं दिखाई देते हैं, नटसे दीखते हैं ॥११॥ तब शत्रुकी सेनाका वेग देखकर अक्रूरजी आये, उन्होंने बाणोंसे आकाश ढक दिया, तब बाणोंके समूहसे शत्रुओंने अक्रूरको ढक दिया, जैसे वर्षा सूर्यको ढक देती है ॥१२॥तब गांदिनीके पुत्र अक्रूरने तलवारसे बाणोंके पटलको काटकर क्रोधसे मूर्छित हुये उस द्युमान्‌को शक्ति (बरछी) से मारा ॥१३॥ उस प्रहारसे घायल होकर दो घडीतक द्युमान् मूर्छा खाकर गिर पड़ा, फिर वह शिशुपालका सखा उठकर युद्ध करने लगा ॥ १४ ॥ तब द्युमान् ने एक लाख भारकी गदा लेकर अक्रूरके हृदयमें मारी, फिर घनसा गर्जने लगा ॥ १५ ॥ इस चोटके मारे जब अक्रूरको कुछ व्याकुल मन देखा, तब युयुधान (सात्यकि) धनुप

आमात्यंहस्तिवाहंचमर्दयंतोमृगेंद्रवत् ॥ उल्लंघयंतःसहयागजवृन्दंमहाबलाः ॥१०॥ खड्गप्रहारंकुर्वंतोविदार्यपरसैनिकान् ॥ हयस्पृष्टानदृश्यंते दृश्यंतेतेनटाइव ॥११॥ सैन्यवेगंचशत्रूणांदृष्ट्वाक्रूरःसमाययौ ॥ चकारदुर्दिनंबाणौर्बाणौघैश्चापिनिर्गतैः ॥ छादयामासचाक्रूरंवर्षासूर्यमिवांबुदः ॥१२॥ जित्वातद्बाणपटलमसिनागांदिनीसुतः ॥ शक्त्याताताडतंवीरंद्युमंतंक्रोधमूर्च्छितम् ॥१३॥ तत्प्रहारेणभिन्नांगोमूर्च्छितोघटिकाद्वयम्॥ पुनरुत्थाययुयुधेशिशुपालसखाबली ॥ १४ ॥ गृहीत्वाथगदांगुर्वींलक्षभारविनिर्मिताम् ॥ तताडंहृदिचाक्रूरंजगर्जघनवद्द्युमान्॥१५॥ अक्रूरेतत्प्रहारेणकिंचिद्व्याकुलमानसे ॥ युयुधानस्तदाप्रागाज्ज्याशब्दंकारयन्मुहुः॥१६॥ शिरस्तस्याशुचिच्छेदबाणेनैकेनलीलया ॥ पतितेद्युमतिद्याजौवीरास्तस्यविदुद्रुवुः ॥ १७ ॥ तदैवशक्तःसंप्राप्तोदृष्ट्वासेनांपलायिताम् ॥ शूलंचिक्षेपसहसायुयुधानायधीमते ॥१८॥ युयुधानश्चबाणौघैस्तच्छूलंशतधाकरोत्॥शक्तोगृहीत्वापरिघंयुयुधानंतताडह॥१९॥युयुधानोऽर्जुनसखःक्षणंमूर्च्छामवापह ॥ तदैववीरःसंप्राप्तःकृतवर्मामहाबलः ॥२०॥ शक्तस्यापिरथंसाश्वंबाणैश्चूर्णीचकारह ॥ क्षक्तोऽपिचूर्णयामासगदयातद्रथंपरम्॥२१॥ कृतवर्मारथंत्यक्त्वाशक्तंजग्राहरोषतः ॥ पातयित्वाभुजाभ्यांतंचिक्षेपनृपयोजनम् ॥२२॥ शक्तेचपतितेयुद्धेशिशुपालप्रणोदितौ ॥ रंगपिंगौमंत्रिणौतौपृतनाक्षौहिणीयुतौ ॥ २३ ॥

टंकारता चला आया ॥ १६ ॥ सो एकही बाणसे युयुधानने द्युमान्‌का शिर काटकर डाल दिया, द्युमान्‌के मरनेपर उसके सब वीर भाग गये ॥१७॥ तभी सेनाको भगी देखकर शक्त आया, आकर उसने युयुधानके एक त्रिशूल मारा ॥ १८ ॥ उस त्रिशूलके युयुधानने सौ टुकड़े कर दिये, तब उस शक्तने परिघ लेकर युयुधानको मारा ॥ १९ ॥ तब यह युयुधान अर्जुनका सखा एक क्षणके लिये मूर्छा खा गया, तभी कृतवर्मा महाबली आया ॥ २० ॥ तब कृतवर्माने शक्तके रथका घोड़ोंसमेत चूर्ण कर दिया, तब शक्तने भी कृतवर्माके रथका गदासे चूर्ण कर डाला ॥२१॥ तब कृतवर्माने रथको छोड़कर क्रोधसे शक्तको पकड़ लिया, और पकड़कर भुजाओंसे हे नृप ! कृतवर्माने शक्तको चार कोसपर फेंक दिया ॥२२॥ जब शक्त युद्धमें गिर पड़ा, तब शिशुपालके प्रेरित किये हुये रंग और पिंग दोनों मन्त्री पृतना और अक्षौहिणी सेना लेकर आये ॥ २३ ॥

बाणोंकी वर्षा करते शत्रुओंका मर्दन करते वे संग्राममें आये,हे मैथिलेन्द्र ! जैसे अग्नि और आंधी आती हैं ॥ २४ ॥ तब उद्भट सेनाको देखकर कृष्णके समान पराक्रमी यादवेन्द्र
प्रद्युम्न सभामें धनुष लेकर वचन बोला ॥२५॥ कि हे जनो ! आगे युद्धमें मैं चलता हूँ, क्योंकि ये दोनों रंग पिंग महाबली देखते हैं ॥२६॥ श्रीनारदजी कहते हैं कि,ऐसे सुनकर
बडी भुजाओं वाला, नीतिको जानने वाला, बडा बली कृष्णका पुत्र भानु सबके आगे होकर बडे भाईसे बोला॥२७॥ भानु बोला कि,यदि आपके सामने त्रैलोक्य आया दीखे
तो भी हे प्रभो ! तुम्हारे धनुषकी टंकार होगी, इसमें सन्देह नहीं है॥२८॥ मैं केवल एक इस खड्गसेही जैसे तरबूजको काटते हैं ऐसेही इन दोनों रंग और पिंगके शिरोंको काटकर
आऊँगा ॥२९॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डे भाषाटीकायां द्युमच्छक्तवधो नामाष्टमोऽध्यायः॥८॥नारदजी कहते हैं, ऐसे कहकर शत्रुहंता भानु ढाल,तलवार लेकर सेनामें
पैदलही चला, जैसे वनमें वनका हाथी चलता है॥१॥ तब भानुने उस खड्गसे शत्रुओंकी भुजाऐं काट डालीं, हाथियोंको घोड़ोंको जो जो सामने आये उनको और पास वालोंको

बाणवर्षप्रकुर्वंतौमर्दयंतावरीन्मृधे ॥ आजग्मतुर्मैथिलेंद्रयथावातहुताशनौ ॥२४॥ उद्भटंतद्बलंवीक्ष्ययादवेंद्रपितुःसमः ॥ आदायचापंसदसि
प्रद्युम्नोवाक्यमब्रवीत् ॥२५॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ अहंगमिष्यामिपुरोरंगपिंगमृधेजनाः ॥ रंगपिंगौचदृश्येतेमहाबलपराक्रमौ ॥२६॥ श्रीनारद-
उवाच ॥ एतच्छ्रुत्वामहाबाहुर्भानुःकृष्णसुतोबली ॥ सर्वेषामग्रतोभूत्वाभ्रातरंप्राहनीतिवित् ॥ २७ ॥ भानुरुवाच ॥ त्रैलोक्यंदृश्यतेप्राप्तं-
यदातेसंमुखेप्रभो ॥ तदातेचापटंकारोभविष्यतिनसंशयः ॥ २८ ॥ केवलेनापिखड्गेनशिरसीरंगपिंगयोः ॥ छित्त्वाचात्रप्रवेक्ष्यामिकलिंगश-
कलाविव ॥ २९ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेद्युमच्छक्तवधोनामाष्टमोऽध्यायः॥ ८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥
इत्युक्त्वाशत्रुहाभानुर्गृहीत्वाखड्गचर्मणी ॥ पदातिःप्रययौसैन्येवनेवन्यकरीवसः॥१॥भानुखड्गेनशत्रूंस्ताञ्छिन्नबाहूंश्चकारह ॥ द्विपान्हयान्सं-
मुखस्थान्पार्श्वस्थांश्चद्विधाकरोत् ॥२॥ खड्गद्वितीयोह्येकाकीरेजेछिंदन्नरीमृधे ॥ नीहारमेघपटलैर्भानुर्भानुरिवस्फुरन्॥३॥ हस्तिनांछिन्नकुंभा-
नांभानुखड्गेनमैथिल ॥ मुक्तानिपेतुश्चयथातारकाःक्षीणकर्मणाम्॥४॥ लक्षमात्रेण तत्सैन्यंपातयित्वारणांगणे ॥ रंगपिंगोपरिप्रागाद्भानुर्वीरो-
महाबलः ॥५॥ कृष्णदत्तेनखड्गेनरथौतौरंगपिंगयोः ॥ छित्त्वाहयान्सनेतृंश्चभानुर्युद्धेद्विधाकरोत् ॥ ६ ॥ खड्गौनीत्वारंगपिंगौतेडतुस्तमहो-
द्भटौ ॥ भानुचर्मगतौखड्गौभंगीभूतौबभूवतुः ॥ ७ ॥ भानुखड्गप्रहारेणशिरसीरंगपिंगयोः ॥ युगपत्पेततुर्युद्धेतदद्भुतमिवाभवत् ॥ ८ ॥

दो दो टूककर दिये ॥ २ ॥ खड्गही है दूसरा जिसके ऐसा भानु अकेलाही युद्धमें शत्रुओंको काटता हुआ ऐसे शोभित हुआ, जैसे कुहरेको दूर करके सूर्य सुशोभित होता है ॥३॥
भानुके खड्गसे कटे जो हाथियोंके माथे उनमेंसे गिरे मोतियोंके समूहसे जो क्षीण पुण्यवाले तारागण होवें वैसी शोभा हुई ॥ ४ ॥ क्षण मात्रमेंही रणके आंगनमें उस सेनाको पटक
कर फिर महाबली भानु रंग पिंगके ऊपर आया ॥५॥ कृष्णके दिये हुये खड्गसे रंग पिंगके घोड़ों सारथी समेत रथके दो दो टूककर दिये ॥६॥ तब उद्भट रंग पिंग दोनोंने खड्ग
लेकर भानुके मारा, तब महोत्कट भानुकी ढालमें आकर दोनोंके खड्ग खिल गये॥७॥ फिर जो भानुने खड्ग मारा, उसके प्रहारसे रंगपिंग दोनोंके शिर एक साथ काटकर जा पडे,
यह उस युद्धमें बडा आश्चर्य हुआ ॥ ८ ॥

तब भानु उन दोनोंके शिरोंको लेकर प्रद्युम्नके सामने विजय करके आया, तब सेनाके नायक इस वीर भानुकी बड़ी प्रशंसा करने लगे॥९॥ आकाशमें और पृथ्वीमें दुन्दुभी बजने लगीं, जयजय शब्दसे सत्कार किया, देवताओंकी की हुई पुष्पोंकी वर्षा होने लगी ॥१०॥ रंगपिंगको मारा सुनकर शिशुपालको बडा क्रोध आया, तब वह विजयके रथमें बैठकर शिशुपाल यादवोंके सन्मुख आया॥११॥ मद जिनके चूरहा है, रत्नोंसे और बनातोंसे मंडित सुनहरी अम्बारीसे युक्त, चञ्चल घण्टोंके शब्द करते जो हाथी ॥१२॥ और जिनमें वायुके समान वेगवाले घोडे लग रहे, ऐसे विमानसे रथ, विद्याधरोंके समान वीर उनके नादसे पृथ्वीको शब्दित करता आया ॥ १३ ॥ तब शिशुपालकी सेनाको देखकर इन्द्रके दिये रथपर बैठकर धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ प्रद्युम्न सबके आगे गया ॥ १४ ॥ हरिके पुत्रने दिशाओंको आकाशको शब्दायमान करते शंख बजाया, हे मानद ! उस नादसे शत्रुओंके हृदयमें बडा

भानुस्तयोश्चशिरसीनीत्वाप्रद्युम्नसंमुखे ॥ आययौविजयीवीरः श्लाघितःसैन्यनायकैः ॥९॥ दिविदुंदुभयोनेदुर्नरदुंदुभिभिःसमम्॥अभूज्जयजयारवःपुष्पवर्षाःसुरैःकृताः ॥ १० ॥ रंगपिंगौमृतौश्रुत्वाशिशुपालोरुषान्वितः॥ जैत्रंरथंसमारुह्ययदूनांसंमुखंययौ॥११॥ मदच्युद्भिर्गजैर्दीर्घैरत्नकंबलमंडितैः ॥ स्वर्णनीडसमायुक्तैर्लोलघंटाक्वणत्स्वनैः ॥ १२ ॥ रथैश्चदेवधिष्ण्याभैर्वायुवेगैस्तुरंगमैः ॥ विद्याधरसमैर्वीरैर्नादयन्वसुधातलम् ॥१३॥ शिशुपालबलंदृष्ट्वाशक्रदत्तेरथेततः ॥ सर्वेषामग्रतःकार्ष्णिः प्रययौधन्विनांवर ॥१४॥ शंखंदध्मौहरेःपुत्रोदिशःखंनादयन्नृप॥ तेननादेनशत्रूणांकंपोऽभूद्धृदिमानद ॥१५॥ शिशुपालमहासैन्येप्रासादइवदुर्गमे ॥ चक्रेनाराचसोपानंसहसारुक्मिणीसुतः ॥१६॥ दमघोषसुतोधीमान्धनुष्टंकारयन्मुहुः ॥ ब्रह्मास्त्रंसंदधेयद्वैदत्तात्रेयेणशिक्षितम् ॥ १७ ॥ प्रचंडसर्वतस्तेजोदृष्ट्वाश्रीरुक्मिणीसुतः॥ ब्रह्मास्त्रेणापितद्धृद्धंसंजहारसलीलया ॥ १८ ॥ शिशुपालोमहाधीमानंगारास्त्रंसमादधे ॥ जामदग्न्येनयद्दत्तंमहेंद्रेपर्वतेनृप॥१९॥ तस्मादंगारवर्षाभिः कार्ष्णिसेनातिविह्वला ॥ पर्जन्यास्त्रंमहादिव्यंतदाकार्ष्णिःसमादधे॥२०॥ स्थूलाभिर्मेघधाराभिरंगाराःशांतिमाययुः॥ शिशुपालस्तदाक्रुद्धोगजास्त्रंतंसमादधे ॥ २१ ॥ यदगस्त्येनमुनिनाशिक्षितंमलयाचले ॥ महोद्भटागजादीर्घाःकोटिशस्तद्विनिर्गताः ॥ २२ ॥

कम्प हुआ॥१५॥शिशुपालकी उस महलसी दुर्गम महा सेनामें बाणोंकी सोपान(सीढी)बनाकर रुक्मिणीका पुत्र प्रद्युम्न चढ गया॥१६॥तब दमघोषके पुत्र बडे बुद्धिमान् शिशुपालने बारबार धनुषको टंकारते ब्रह्मास्त्र चलाया,जो ब्रह्मास्त्र उसने दत्तात्रेयसे सीखा था॥१७॥तब सब ओरसे प्रचण्ड तेज देखकर रुक्मिणीनन्दने अपने ब्रह्मास्त्रसे सहजमेंही उतार लिया ॥१८॥ तब बुद्धिमान् शिशुपालने जो परशुरामने महेन्द्र पर्वतमें दिया था, वह अङ्गारास्त्र चलाया ॥ १९ ॥ तब अंगारोंकी वर्षासे प्रद्युम्नकी सेना अति विह्वल होगई, तब प्रद्युम्नने पर्जन्यास्त्र चला दिया ॥२०॥ तब मोटी जो मेघकी धारा, उससे अंगारे शांत होगये, तो शिशुपालने क्रोधित होकर गजास्त्र ॥ २१ ॥ जो अगस्त्य मुनिने मलयाचल पर सिखाया था, उसमेंसे बडे २ अद्भुत करोडों हाथी निकले ॥ २२ ॥

वे प्रद्युम्न महात्माकी सेनाको मारने लगे, यादवोंकी सेनामें बड़ा हाहाकार शब्द हुआ ॥ २३ ॥ तब रणमें प्रशंसा करने योग्य प्रद्युम्नने नृसिंहास्त्र चलाया, उस अस्त्रमेंसे पृथ्वीको झंकारते नृसिंह निकले ॥ २४ ॥ कैसे हैं वे कि, दीप्यमान है शिखा जिनकी, लम्बे जिनके बाल, नखोंसे भयंकर, हुंकार शब्दोंसे नाद करते उन हाथियोंको भक्षण करते हुंकारने लगे ॥२५॥ उछलते २ गज कुंभोंको चीरकर हाथियोंके समूहको मर्दन कर वहीं अन्तर्धान हो गये ॥२६॥ तब शिशुपाल महाबलीने परिघ चलाया, उसको भी यमदण्डसे प्रद्युम्नने काट डाला ॥२७॥ उसके बाद रोषमें भरा शिशुपाल खड्ग और ढाल लेकर प्रद्युम्नके ऊपर दौड़ा, पतंगा जैसे अग्निमें दौड़ता है ॥२८॥ तब प्रद्युम्नने कालदण्डसे उस खड्ग और ढाल दोनोंका चूर्ण कर डाला ॥२९॥ फिर प्रद्युम्नने वरुणके दिये हुये पाशसे दमघोषके पुत्रको बांधकर रणभूमिमें खेंचने लगा ॥३०॥ फिर क्रोध करके शिशुपालको मारने

तेसैन्यंपातयामासुःप्रद्युम्नस्यमहात्मनः ॥ हाहाकारोमहानासीद्यदूनांवाहिनीषुच ॥२३॥ प्रद्युम्नोथरणश्लाघीनृसिंहास्त्रंसमादधे ॥ नृसिंहोनिर्गतस्तस्मान्नादयन्वसुधातलम् ॥२४॥ स्फुरत्सटोदीर्घबालोनखलांगलभीषणः ॥ ननादहुंकृतैःशब्दैर्भक्षयंस्तान्गजाव्रणे ॥२५॥ विदार्यगजकुंभांतमुत्पतन्भगवान्हरिः ॥ गजवृंदंमर्दयित्वातत्रैवांतरधीयत ॥२६॥ चिक्षेपपरिघंरोषाच्छिशुपालोमहाबलः ॥ चिच्छेदपरिघंतद्वैयमदंडेनमाधवः ॥ २७ ॥ ततश्चैद्योरुषाविष्टोगृहीत्वाखड्गचर्मणी ॥ प्रद्युम्नंतमुपाधावत्पतंगइवपावकम् ॥ २८ ॥ कार्ष्णिस्तत्ताडतंखड्गंयमदंडेनवेगतः ॥ चूर्णीबभूवतेनापिनिस्त्रिंशश्चर्मणासह ॥ २९ ॥ पाशिदत्तेनपाशेनसहसायादवेश्वरः ॥ दमघोषसुतंबद्ध्वाविचकर्षरणांगणे ॥३०॥ शिशुपालंघातयितुंखड्गंजग्राहरोषतः ॥ तदैवतत्करौसाक्षाद्गदोजग्राहवेगतः ॥ ३१ ॥ गदउवाच ॥ परिपूर्णतमेनापिश्रीकृष्णेनमहात्मना ॥ वध्योयंदेववचनंवचनंमावृथाकुरु ॥ ३२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदाकोलाहलेजातेशिशुपालस्यबंधने ॥ दमघोषोबलिंनीत्वाप्रागात्प्रद्युम्नसंमुखे ॥ ३३ ॥ कार्ष्णिस्तमागतंदृष्ट्वात्यक्त्वाशस्त्राणिशीघ्रतः ॥ अग्रतश्चैदिपंशश्वन्ननामशिरसाभुवि ॥३४॥ मिलित्वाचाशिषंदत्त्वाप्रद्युम्नायमहात्मने ॥ दमघोषोमहाराजः प्राहगद्गदयागिरा ॥ ३५ ॥ दमघोषउवाच ॥ प्रद्युम्नत्वंतुधन्योऽसिश्रीयदूनांशिरोमणे ॥ तत्पुत्रेणकृतंयद्वैतत्क्षमस्वदयानिधे ॥ ३६ ॥ श्रीप्रद्युम्नउवाच ॥ ममदोषोनतेचायंनतेपुत्रस्यहेप्रभो ॥ सर्वंकालकृतंमन्येप्रियमप्रियमेववा ॥ ३७ ॥

के लिये खड्ग लिया, तबही गदने आकर प्रद्युम्नके दोनों हाथ पकड़ लिये ॥३१॥ और गद बोला कि परिपूर्णतम महात्मा श्रीकृष्णके हाथसे इसकी मुक्ति लिखी है, सो यह देवताओंका वचन है, उस वचनको तुम झूंठा मत करो ॥३२॥ जब शिशुपाल बंध गया, तब बड़ा कोलाहल मचा, तब दमघोप भेंट लेकर प्रद्युम्नके सन्मुख आया ॥ ३३ ॥ तब प्रद्युम्नने दमघोषको सन्मुख आया देखकर सब शस्त्रोंको रखकर आगे जाकर पृथ्वीमें लोटकर दमघोपको प्रणाम किया ॥ ३४ ॥ तब तो दमघोप महाराज प्रद्युम्नसे मिलकर आशीर्वाद देकर गद्गदवाणीसे प्रद्युम्नसे यह बोला ॥ ३५ ॥ दमघोप बोला कि, पुत्र प्रद्युम्न तुम धन्यहो, हे श्रीयादवोंमें शिरोमणि ! हे दयानिधे ! जो कुछ मेरे पुत्रने किया है उसको क्षमा करो ॥३६॥ तब प्रद्युम्न बोला कि, देखिये न तो मेरा दोष है, न आपका दोप है, और हे प्रभो ! न शिशुपालका दोष है, प्रिय और अप्रिय ये सब मैं कालका किया

हुआ ही मानता हूँ ॥३७॥ नारदजी कहते हैं–ऐसे कहकर दमघोष प्रद्युम्नके वश हुये शिशुपालको छुड़ाकर चन्द्रिकापुरीको आया ॥३८॥ श्रीकृष्णकासा तेज जिसमें ऐसे प्रद्युम्नका बल सुनकर फिर कोई राजा प्रद्युम्नसे नहीं लड़ा, सब राजाओंने भेंट दे दी ॥३९॥ इति श्रीम० सं० विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां शिशुपाल युद्धे चेदिदेश विजयोनाम नवमोऽध्यायः ॥९॥ नारदजी कहते हैं–उसके बाद मनुतीर्थमें स्नान करके प्रद्युम्न यादवोंसहित फिर नगाड़े बजाता कौंकणपुरको चला गया ॥१॥ कौंकणदेशका राजा मेधावी गदायुद्धमें प्रवीण वह मल्लयुद्धसे परीक्षाके लिये अकेला ही चला आया॥२॥सेना सहित प्रद्युम्नसे वचन बोला कि, हे यादवेश्वर ! मेरे कहेको सुनो, तुम गदायुद्ध मुझको दो, हे प्रभो ! मेरे बलका नाश करो ॥३॥ तब प्रद्युम्न बोला कि देखो एकसे अधिक एक बलवान् वीर होता है, पृथ्वीतलमें, उससे हे मल्ल ! तुम मान मत करो, विष्णुकी माया अति दुर्गम है ॥४॥ हमतो

॥ श्री नारदउवाच ॥ इत्युक्तोदमघोषोऽपिप्रद्युम्नेनप्रयंत्रितः ॥ शिशुपालंमोचयित्वानीत्वागाचंद्रिकांपुरीम् ॥३८॥ प्रद्युम्नस्यबलंश्रुत्वासाक्षाच्छ्रीकृष्णतेजसः ॥ नकेऽपियुयुधुस्तेनराजानश्चबलिंददुः ॥३९॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खंडे नारदबहुलाश्वसंवादेरंगपिंगवधेशिशुपालयुद्धेचेदिदेशविजयोनामनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ मनुतीर्थेततःस्नात्वाप्रद्युम्नोयदुभिःसह ॥ प्रययौकौंकणान्देशान्दुंदुभीन्नादयन्मुहुः ॥ १ ॥ कौंकणस्थोऽथमेधावीगदायुद्धविशारदः ॥ एकाकीमल्लयुद्धेनपरीक्षन्नाययौबलम् ॥२॥ प्रद्युम्नंसबलंप्राहश्रृणुमेयादवेश्वर ॥ गदायुद्धंदेहिमह्यंमद्बलंनाशयप्रभो ॥ ३ ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ एकतोह्येकतोवीराबलवंतोमहीतले ॥ मानंमाकुरुहेमल्लविष्णुमायातिदुर्गमा ॥ ४ ॥ वयंतुबहवोवीरास्त्वमेकाकीसमागतः ॥ अधर्मोऽयंमहामल्लदृश्यतेयाहिसांप्रतम् ॥ ५ ॥ मल्लउवाच ॥ यदायुद्धंनकुरुत भवंतोबलशालिनः ॥ मत्पादोधोऽत्रनिर्यातुतदायास्यामिसांप्रतम् ॥ ६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंवदतिमल्लेवेसर्वेयादवपुंगवाः ॥ बभूवुः क्रोधसंयुक्ताः पश्यतस्तस्यमैथिल ॥७॥ गदोगदांसमादायबलदेवानुजोबली॥तस्थौसोऽपिगदांनीत्वासर्वेषांपश्यतांनृप ॥८॥गदांवरिष्ठांचिक्षेपगदायसमहाबलः ॥ गदोपरिगदांनीत्वास्वगदांप्राक्षिपद्गदः ॥९॥ गदस्यगदयासोऽपिताडितःपतितोभुवि ॥ मृधेच्छांनचकाराशुउद्वमन्रुधिरं मुखात् ॥ १० ॥ कौंकणस्थोऽथमेधावीनत्वाप्राहहरेःसुतम् ॥ परीक्षार्थंचभवतामेतत्कार्यंमयाकृतम् ॥ ११ ॥

बहुतसे वीर हैं, तुम अकेलेही आये हो, सो हे महामल्ल ! यह अधर्म दीखता है, इससे चले जाओ, हम नहीं लड़ते हैं ॥५॥ तब मल्ल बोला, यदि तुम बली होकर युद्ध नहीं करते हो, तो मेरी टांगके नीचे होकर निकल जाओ, तो मैं अभी चला जाऊँगा ॥ ६ ॥ नारदजी कहते हैं–ऐसे जब मल्ल कहने लगा,तब तो सब यादवोंको क्रोध आ गया, हे मैथिल ! उसके देखते २ ॥७॥ उस समय बलदेवका भाई गद गदा लेकर सबके देखते २ आगे आकर खड़ा हो गया ॥ ८ ॥ तब उस मल्लने महाबली गदके ऊपर बड़ी उत्तम गदा फेंकी, तब गदने गदाके ऊपर गदा रोककर अपनी गदा मल्लके मारी ॥ ९ ॥ तब गदकी गदाका मारा मल्ल पृथ्वीमें गिर पड़ा, मुखसे रुधिर वमन करता, फिर उसने युद्धकी इच्छा नहीं की ॥ १० ॥ तब कौंकणदेशका राजा मेधावी हरिके पुत्र प्रद्युम्नको नमस्कार करके यह बोला, तुम्हारी परीक्षाके लिये मैंने यह काम किया है ॥ ११ ॥

तुम साक्षात् भगवान् कहां, और मैं प्रकृत मनुष्य कहां, मेरे अपराधको क्षमा करिये, मैं आपकी शरणमें आया हूँ, ॥१२॥ तब नारदजी बोले ऐसे कहकर भेंट देकर प्रद्युम्नको नमस्कार करके क्षत्रियोंमें उत्तम मेधावी अपनी पुरीको गया, ॥१३॥ फिर कुटक देशका अधिपति मौलि नामका शिकारको निकला था, उसको साम्ब जाम्बवतीका पुत्र पकड लाया ॥ १४ ॥ तब प्रद्युम्न उसके पाससे भेंट लेकर दण्डक वनको चले गये, अपनी सेनाको लिये हुये, मुनियोंके आश्रमोंको देखते ॥१५॥ तब प्रद्युम्न निर्विंध्या, पयोष्णी तापी इनमें स्नान करते शूर्पारक क्षेत्रको गये, फिर द्वैपायनी आर्या देवीको गये ॥१६॥ फिर ऋष्यमूकको देखते प्रवर्षण पर्वतको गये, जहां पर्जन्य भगवान् नित्य ही वर्षा किया करते हैं ॥१७॥ फिर गोकर्ण नामके शिवक्षेत्र पर गये सेना समेत, फिर उस शिवक्षेत्रसे त्रिगर्त केरल देशके जीतनेके लिये चले गये॥१८॥ करलदेशका राजा अंबष्ठने मेरे मुखसे बात सुनकर शीघ्र

त्वमेवभगवान्साक्षात्कुतोहंप्राकृतोजनः ॥ क्षमस्वमेपराधंभोस्त्वामहंशरणंगतः॥ १२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाथबलिंदत्त्वानमस्कृत्यहरेः सुतम् ॥ कौंकणस्थःपुरींप्रागान्मेधावीक्षत्रियोत्तमः ॥१३॥ कुटकाधिपतिंमौलिंमृगयायांविनिर्गतम् ॥ जग्राहसमहाबाहुःसांबोजांबवतीसुतः ॥१४॥ कार्ष्णिस्तस्माद्बलिंनीत्वादंडकाख्यंवनंययौ॥मुनीनामाश्रमान्पश्यन्स्वसैन्यपरिवारितः॥१५॥ निर्विंध्यांचपयोष्णींचतापींस्नात्वाहरेः॥ सुतः शूर्पारकंमहाक्षेत्रमार्यांद्वैपायनींततः ॥ १६ ॥ ऋष्यमूकंततःपश्यन्प्रवर्षणगिरिंगतः ॥ पर्जन्योभगवान्साक्षान्नित्यदायत्रवर्षति ॥ १७॥ गोकर्णाख्यंशिवक्षेत्रंदृष्ट्वाकार्ष्णिःस्वसैन्यकैः ॥ त्रिगर्तान्केरलान्देशान्ययौजेतुंमहाबलः ॥१८॥ अंबष्ठःकेरलाधीशःश्रुत्वावार्तांतुमन्मुखात् ॥ ददौतस्मैबलिंशीघ्रंप्रद्युम्नायमहात्मने ॥१९॥ कृष्णांवेणींतदोत्तीर्यतैलंगान्विषयान्ययौ ॥ सैन्यपादरजोवृंदैर्धीकुर्वन्नभःस्थलम् ॥२०॥ तैलंगस्याधिपोराजाविशालाक्षःप्रकीर्तितः ॥ पुरस्योपवनेरेमेसुंदरीगणसंवृतः ॥ २१ ॥ मृदंगाद्यैश्चवादित्रैर्मधुरध्वनिसंकुलैः ॥ परैरप्सरसांरागैर्गीयमानोडुराडिव ॥२२॥ तंप्राहसुन्दरीरामाराज्ञीमंदारमालिनी ॥ रजोव्याप्तंनभोवीक्ष्यशुष्यद्बिंबाधरापरा ॥२३॥ मंदारमालिन्युवाच ॥ राजन्नजानासिसदाविहारादहर्निशंकामविशाललोलः ॥ अहंनजानामिकदापिदुःखंत्वन्मुखालकालिभ्रमरास्तवेषा ॥ २४ ॥

ही प्रद्युम्न महात्माको भेंट दी ॥१९॥ फिर कृष्णावेणी नदीको उतरकर तैलंगी देशको सेनाके पावोंकी रजके समूहसे आकाशको धुन्धला करते चले गये ॥ २० ॥ तैलंग देशका राजा विशालाक्ष अपने बागमें स्त्रियोंके गणको संग लिये विहार कर रहा था ॥२१॥ मधुर जिनकी ध्वनि ऐसे जो मृदंगादिक बाजे, उनके शब्द सहित जो परम अप्सराओंके राग उनसे गाई है इन्द्रकी सी कीर्ति जिसकी ॥२२॥ उसकी एक मंदारमालिनी नामकी रानी थी, रजसे व्याप्त आकाशको देखकर सूख गये हैं बिम्बसे अधर जिसके वह राजासे बोली ॥२३॥ मंदारमालिनी बोली--हे राजन् ! सदा विहारके निमित्तसे और कुछ नहीं जानते हो रात दिन काममें ही अत्यन्त चंचल रहते हो आज तक मैं भी यह नहीं जानती हूँ कि, दुख क्या होता है, मैं केवल तुम्हारे मुखकी अलकावलिकी भ्रमरी हूँ ॥ २४ ॥

द्वारावतीके राजा उग्रसेनके राजसूय यज्ञका बीडा उठाकर सब राजाओंको जीतनेके लिये दशों दिशाओंको जीतनेके लिये शिशुपालादिकोंको जीतकर प्रद्युम्न आया है ॥२५॥ यह देखो नगाडोंका धुंधुकार शब्द सुनो, हाथियोंकी चिक्कार फुंकार सुनो यह शत्रुओंकी धनुषकी टंकारका प्रलाप कासा नाद हो रहा है॥२६॥शम्बर दैत्यके शत्रुको जल्दी भेंट भिजवाओ, देखो यह राजाओंकी रानियाँ भयभीत होकर भाग रही हैं, उनको देखकर जिनके पसीना बह रहे हैं, और मांगमें से फूल झरते हैं, वनके प्रवेशसे नहीं दिखते हैं केशोंके शृंगार जिनके, ये सब दौडती फिरती हैं ॥२७॥ पत्नीका वचन सुनकर विशालाक्ष अति हर्षित होकर, भेंट लेकर प्रद्युम्नके सन्मुख आया ॥२८॥ धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ प्रद्युम्नका उसने बहुत स्वागत सत्कार किया, फिर प्रद्युम्न पम्पा सरोवरमें स्नान करके महाराष्ट्र देशको गया ॥२९॥ महाराष्ट्रका विमल राजा वैष्णव था, उसने परम भक्तिसे प्रद्युम्नका पूजन किया ॥३०॥ तब प्रद्युम्न वैसे ही कर्णाटकके पति सहस्रजित् राजाने आपहीसे प्रद्युम्नको बुलाकर भेंट देकर, अपने शुभके लिये जगत्के प्रभु प्रद्युम्नका वडा पूजन किया ।३१॥ हे मैथिल!

द्वारावतीशाध्वरनागवल्लीचयंसमुत्थाप्यदिशोजयार्थम् ॥ विजित्यसर्वान्नृपचेदिपान्सस्मागतोऽसौयदुराजराजः ॥ २५ ॥ धुंकारशब्दंशृणु दुंदुभीनांचीत्कारफूत्कारयुतंद्विपानाम्॥ कोदंडटंकारमयंपराणांकल्पांतसारस्वतनादकारम् ॥२६॥ त्वरंबलिंप्रेषयशंबरारयेप्रधावतीःपश्यनरेंद्र सुन्दरीः ॥ च्युतप्रसूनाःश्रमवारिवर्षिणीर्वनप्रवेशास्फुटकेशमंडनाः॥२७॥ पत्नीवाक्यंततःश्रुत्वाविशालाक्षोऽतिहर्षितः॥ प्रद्युम्न संमुखेसोपि बलिंनीत्वासमाययौ ॥ २८ ॥ तेनसंपूजितःसाक्षात्प्रद्युम्नोधन्विनांवरः ॥ स्नात्वापंपासरस्तीर्थंमहाराष्ट्रंततोययौ॥२९॥महाराष्ट्राधिपोराजाविमलोनामवैष्णवः ॥ भक्त्यापरमयाकार्ष्णिंपूजयामाससर्वतः॥३०॥ तथाहिकर्णाटपतिःसहस्रजित्स्वतःसमानीयबलिंमहात्मने॥ सम्पूजयामासशुभार्थहेतवेश्रीशंबरारिंजगतःप्रभुंपरम् ॥३१॥ प्रद्युम्नोभगवान्साक्षाद्यादवैःसहमैथिल ॥ करूषान्विषयान्प्रागाज्जेतुंयोगीवदेहजान् ॥३२॥ महारंगपुरेतत्रवृद्धशर्मामहामतिः ॥ भर्ताथश्रुतदेवायावसुदेवस्वसुर्नृप ॥ ३३ ॥ तस्यपुत्रोदंतवक्रःकृष्णशत्रुःप्रकीर्तितः ॥ शिशुपाल इवक्रुद्धोयोद्धुंचक्रेमनःस्वयम् ॥ ३४ ॥ मात्रापित्रावारितोपिदैत्योदैत्याननुव्रतः ॥ यादवान्घातयिष्यामिकोपमित्थंचकारह ॥३५॥ आदाय सगदांगुर्वींलक्षभारविनिर्मिताम् ॥ एकाकीप्रययौयोद्धुंप्रद्युम्नबलसंमुखे ॥३६॥ दंतवक्रंकृष्णवर्णंकज्जलाद्रिसमप्रभम्॥ ललज्जिह्वं घोररूपंताल वृक्षदशोच्छ्रितम् ॥ ३७ ॥ किरीटकुण्डलधरंहेमवर्मविभूषितम् ॥ किंकिणीजालसंयुक्तंचलच्चरणनूपुरम् ॥ ३८ ॥

तब प्रद्युम्न भगवान् साक्षात् यादवोंके साथ कामरू देशोंको जीतनेके लिये गये, जैसे योगी देहज विकारोंको ॥३२॥ वहां महारंग पुरमें वृद्धशर्मा राजा महामति वसुदेवकी वहिन श्रुतिदेवाका पति था ॥३३॥ उसका पुत्र दन्तवक्र कृष्णका शत्रु था उसने शिशुपालकी तरह क्रोध करके युद्धका मन किया ॥ ३४ ॥ दन्तवक्र दैत्योंका अनुवृत्त माता पितासे मना किया हुआ भी बोला, मैं यादवोंको मार डालूँगा ऐसे क्रोध किया ॥३५॥ वह दन्तवक्र वड़ी भारी लाख भारकी गदाको लेकर अकेला ही प्रद्युम्नकी सेनाके सामने आया॥३६॥ कैसा दन्तवक्र है, कि कज्जल गिरिके समान जिसका काला वर्ण है, जीभ लपलपा रही है, घोररूप दश तालकी बराबर ऊँचा ॥३७॥ किरीट कुण्डल पहिने, सुनहरी कवच पहिने झांझ पहिने, वजने नूपुर पहिने ॥ ३८ ॥

अपने वेगसे पृथ्वीको कम्पाते हुये, पर्वतोंको और वृक्षोंको गिराते हुये, अपनी गदासे दुर्जनोंको यमराजकी तरह मारते हुये चले आते ॥३९॥ उसको युद्ध भूमिमें देखकर सब यादव भयको प्राप्त होगये, उस समय दन्त वक्रके आनेपर बड़ा कोलाहल मचा ॥४०॥ तब वारवार धनुषको टंकारते हुये प्रद्युम्नने उसके ऊपर अट्ठारह अक्षौहिणी सेनाको भेजा ॥४१॥ हे राजन् ! बाणोंसे, फरसोंसे, तोपोंसे, बन्दूकोंसे, यादव उसको मारने लगे, सब ओरसे, जैसे पर्वतपर मेघ बरसता है ॥४२॥ तब दन्तवक्रने अपनी गदासे उत्कट जो हाथी थे, उनके कुम्भस्थल फाडकर संग्राममें पटक दिये ॥ ४३ ॥ कितनोंको किंकिणी जाल जिनके बज रहे, सांकल लटक रहीं, बड़े २ घण्टे बजा रहे, उन हाथियोंको अम्बारी समेत पांवोंसे उछाल २ कर ॥४४॥ आकाशमें चार चार कोश ऊँचे फेंक दिये, किसी किसीकी सूंड पकड़कर जैसे पवन रूईको ॥४५॥ वैसे फिरा २ कर दशों दिशाओंमें हाथियोंको फेंकने लगा,

कंपयंतंभुवंवेगात्पातयंतंगिरीन्द्रुमान् ॥ घातयंतंस्वगदयाकृतांतमिवदुर्जनान् ॥३९॥ तंदृष्ट्वायादवाःसर्वेभयंप्रापुर्मृधांगणे॥ आगतेदंतवक्रेचम-हान्कोलाहलोह्यभूत् ॥४०॥ प्रद्युम्नःप्रेषयामासतस्योपरिमहद्बलम् ॥ अष्टादशाक्षौहिणीनांधनुष्टंकारयन्मुहुः ॥४१॥ बाणैःपरश्वधैराजञ्च्छ-तघ्नीभिर्भुशुंडिभिः ॥ तंतेडुर्यादवाःसर्वेसर्वतोद्रियथागजाः ॥४२॥ दंतवक्रःस्वगदयाकरींद्रानुत्कटान्बहून्॥ पातयामासराजेंद्रभिन्नकुम्भस्थ-लान्मृधे ॥ ४३ ॥ कांश्चित्पादेषुचोन्नीयकिंकिणीजालनादितान् ॥ सशृंखलान्सनीडांस्तांल्लोलघंटारणत्स्वरान् ॥४४॥ वातस्तूलमिवाकाशे चिक्षेपशतयोजनम् ॥ शुंडादण्डेषुकांश्चिद्वैगृहीत्वादैत्यपुंगवः॥४५॥ भ्रामयित्वागजान्दिक्षुनदन्तःप्राक्षिपद्रुषा॥ कांश्चिद्गजान्वंशयोश्चकक्षयो रुभयोरपि॥४६॥पद्भ्यामाक्रम्यशुशुभेदैत्यःकालाग्निरुद्रवत् ॥ रथान्ससूतान्साश्वांश्चसध्वजान्समहारथान् ॥ चिक्षेपगगनेवीरःपद्मानीवप्रभं-जनः ॥४७॥ तुरगांश्चपदातींश्चप्राक्षिपद्गगनेबलात् ॥ अधोमुखाऊर्ध्वमुखाराजपुत्रामहाबलाः ॥ ४८॥ सशस्त्रारत्नकेयूरसंयुक्तास्तारकाइव ॥ आकाशात्प्रपतंतस्तेवमतोरुधिरंमुखात् ॥ ४९ ॥ बलंविलोडयामासगदयादैत्यपुंगवः ॥ दंष्ट्रयाप्रलयाब्धिंश्रीवराहइवमैथिल ॥ ५० ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादे कौंकणकुंटकत्रिगर्तकेरलतैलंगमहाराष्ट्रकर्णाटविजयकारूषदेशगमनंनामदश-मोऽध्यायः ॥ १० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदाश्रीकृष्णपुत्राणामष्टादशमहारथाः ॥ सक्षतंकारयामासुर्दंतवक्रंमहाबलम् ॥ १ ॥

किन्हींको पीठके बांशोंमें, किन्हींको दोनों कोंखमें पकड २ करके फेंकने लगा ॥४६॥ पांवोंसे दबाकर दैत्य कालकी अग्निसे रुद्रसा शोभित हुआ, घोड़े, सारथी, सवार सहित रथोंको आकाशमें फेंकने लगा, जैसे कमलोंको पवन फेंकती है, और ऐसेही घोड़ोंको, पैदलोंको, बलपूर्वक आकाशमें फेंकने लगा, तब नीचेको तथा ऊपरको मुख जिनके ऐसे बड़े बलवान् राजकुमार शस्त्र सहित, रत्नोंके केयूर पहिने, रुधिरकी उलटी करते आकाशसे तारागण जैसे गिरते हैं, वैसेही गिरने लगे ॥४७॥४८॥४९॥ हे मैथिल ! जैसे वाराहने डाढसे प्रलयके समुद्रको मथा था, उसी तरह दैत्य पुंगवने गदासे सेनाको मथ डाला ॥५०॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां कौंकणकुटकत्रिगर्तकेरल तैलंग महाराष्ट्र कर्णाटक करूष देशविजयो नामदशमोऽध्यायः ॥१०॥ श्रीनारदजी कहते हैं-तब श्रीकृष्णके महारथी अट्ठारह पुत्रोंने महाबली दन्तवक्रको घायल कर दिया ॥ १ ॥

तब दन्तवक्र घावोंके रुधिरकी धारासे प्रहारकी कुछ भी चिन्ता न करता हुआ, दन्तवक्र लाखकी धारासे महलकी तरह शोभित हुआ ॥२॥ तब कृतवर्माने बाणोंके समूहसे दन्तवक्रको संग्राममें मारा, युयुधानने खड्गसे और अक्रूरने बरछीसे प्रहार किया ॥ ३ ॥ सारणने कुठारसे, रोहिणीसुतने हलसे प्रहार किया, तब दन्तवक्रने गदासे युयुधानको मारा ॥४॥ हाथसे कृतवर्माको, लातसे अक्रूरको, भुज वेगसे सारणको, रणमें बड़े दुर्मद दन्तवक्रने मारा ॥५॥ अक्रूर, कृतवर्मा, युयुधान, सारण, ये सब मूर्च्छित होकर ऐसे गिर पड़े, जैसे पवनके मारे पेड़ गिर पड़ते हैं ॥ ६ ॥ तब तो गदा लेकर जाम्बवतीका पुत्र साम्ब गदाके ऊपर गदा लेकर गदासे दन्तवक्रको मारने लगा ॥ ७ ॥ तब दन्तवक्रने गदाको छोड़कर साम्बको पकड कर भुजाओंसे भूमिमें डाल दिया ॥ ८ ॥ तब साम्बने भी उठकर पांव पकड कर दन्तवक्रको पृथ्वीमें पछाड़ दिया, तब यह बड़ा आश्चर्य सा हुआ ॥ ९ ॥ फिर दन्तवक्र उठकर बड़ा गर्जा, उसने बड़ा अट्टहास किया, उसके अट्टहाससे सातों लोक, सातों पाताल समेत ब्रह्माण्ड हिल उठा ॥ १० ॥ तब दिव्य जिसमें पताका,

दंतवक्रोतिशुशुभेसक्षतोरक्तधारया ॥ लाक्षयेवयथासौधंप्रहारंनानुचिंतयन् ॥२॥ कृतवर्माचबाणौघैस्तंजघानरणांगणे ॥ युयुधानश्चखड्गेनश-
क्त्याक्रूरोमहाबलम् ॥ ३ ॥ सारणस्तंकुठारेणाहनत्तंरोहिणीसुतः ॥ दन्तवक्रोपिगदयायुयुधानंतताडह ॥४॥ करेकृतवर्माणमक्रूरंस्वघ्रिणाऽह-
नत् ॥ सारणंभुजवेगेनकारूषोरणदुर्मदः ॥५॥ अक्रूरःकृतवर्माचयुयुधानोऽथसारणः ॥ निपेतुर्मूर्च्छिताभूमौमरुतापादपाइव ॥६॥ ततोगदांसमादा-
यसांबोजांबवतीसुतः ॥ गदोपरिगदांनीत्वागदयांततताडह ॥७॥ दंतवक्रोगदांत्यक्त्वासांबंजांबवतीसुतम् ॥ गृहीत्वापातयामासभुजाभ्यांरणमण्डले
॥८॥ सांबस्तदासमुत्थायगृहीत्वापादयोश्चतम् ॥ अपोथयद्भूमिपृष्ठेतदद्भुतमिवाभवत् ॥९॥ दंतवक्रःसमुत्थायसाट्टहासंतदाकरोत् ॥ ननादतेनब्र-
ह्मांडंसप्तलोकैर्बिलैःसह ॥ १० ॥ पताकाढ्येनदिव्येनसहस्रादित्यवर्चसा ॥ सहस्रहययुक्तेनप्रद्युम्नंधन्विनांवरम् ॥ दन्तवक्रोपितंवीक्ष्यप्राहेदंपरुषंवचः
॥ ११ ॥ दंतवक्रउवाच ॥ यूयंचयादवाःसर्वेवृष्णयोह्यंधकादयः ॥ अल्पसत्त्वजनास्तुच्छाविद्रुतायुद्धभीरवः ॥१२॥ ययातिशापसंभ्रष्टाभ्रष्ट-
राज्यागतत्रपाः ॥ एकोऽहंबहवोयूयंयुष्माभिश्चकृतंमृधम् ॥ १३ ॥ अधर्मवर्तिभिस्तुच्छैर्धर्मशास्त्रविलोपिभिः ॥ पूर्वंपितातेश्रीकृष्णोनन्दस्यपशुर-
क्षकः ॥ १४ ॥ गोपालोच्छिष्टभोजीचसोद्यैवयादवेश्वरः ॥ हैय्यंगवीनदध्याज्यदुग्धतक्रादिकंरसम् ॥ १५ ॥ चोरयामासगोपीनांरसिकोरासमण्डले ॥
जरासंधभयात्सोपिसमुद्रंशरणंगतः ॥ १६ ॥ सोऽद्यैवयदुनाथोऽभूद्योभीरुःकालसंमुखे ॥ तेनदत्तंस्वल्पराज्यमुग्रसेनःसमेत्यसः ॥ १७ ॥

हजार सूर्यकासा तेज जिसका, हजार घोडे जिसमें लगे, उस रथमें बैठा प्रद्युम्न आया, उसको देखकर दन्तवक्र उसको कठोर वचन बोला ॥११॥ दन्तवक्र कहने लगा, अरे ! समस्त यादव, वृष्णि, अन्धक, बड़े तुच्छ, बड़े निर्बल, बड़े डरपोक, बडे भगोडे हो ॥१२॥ ययातिके शापसे भ्रष्ट हो गये हो, भ्रष्ट राज्य हो, निर्लज्ज हो, अरे ! मैं एक हूँ, तुम बहुत हो, सब मुझको मारते हो ॥१३॥ अधर्मवर्ती हो, तुच्छ हो, धर्मशास्त्र जिन तुमने लोप कर दिया है, पहिले तुम्हारे पिताको भी देखा था जो नन्द गोपकी गौओंका रखवाला था ॥ १४ ॥ गोपोंकी जूठन खाता था, दही दूध, माखन, चुराता २ यादवोंका राजा बन बैठा है ॥१५॥ पहिले चोरी की, फिर रास मंडल गोपियोंका रसिक बना, जरासंधके डरका मारा समुद्र की शरणमें जा पड़ा ॥१६॥ वह अब यदुराज हो गया है, अरे कल तो कालयवनके मारे लुकता छुपताही फिरता था, उसने थोडासा राज्य दे दिया, उसपर उग्रसेन कूद बैठा ॥१७॥

अब वे राजसूययज्ञ करने लगे, कालकी गति बडी दुरत्यय है, यह जगत् बडे आश्चर्यका है, देखो अति दुर्बल शृंगाल सिंह शार्दूलसे लडनेको तैयार है ॥१८॥ तब प्रद्युम्न बोला कि पहले कुण्डिनपुरमें यादवोंका ऊर्जित बल तुमने नहीं देखा, अरे निन्दक निर्लज्ज ! ले अब मेरा बल देख ले ॥१९॥ अरे करूपप ! हम तुमको सम्बन्धी जानकर सम्बन्धके मारे युद्धकी इच्छा नहीं करते हैं, किन्तु बलसे तुमने युद्ध किया है, सो यह धर्म शास्त्रही तो किया है ॥ २० ॥ नन्दराज साक्षात् द्रोण नामक वसु हैं, जिन्होंने गोप कुलमें जन्म लिया, गोकुलमें जितने गोप हैं, वे सब भगवान्‌के रोमसे हुये हैं, वे गोलोकवासी हैं ॥२१॥ और राधाकी रोमावलिसे सब गोपियाँ हुई हैं, वे सब यहाँ आई हैं, कोई २ पूर्व तपसे श्रीकृष्णके वरसे श्रीकृष्णको प्राप्त हुई हैं ॥२२॥ परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण भगवान् हैं, अखिल ब्रह्माण्डपति मायासे परे हैं ॥२३॥ जिनके तेजमें सब तेज लीन होते हैं, उनको ब्रह्मादिक साक्षात्

करिष्यत्यल्पसारार्थैराजसूयंक्रतूत्तमम् ॥ दुरत्ययाकालगतिर्जातंचित्रमहोजगत् ॥ अध्यास्तेसिंहशार्दूलंशृगालोह्यतिदुर्बलः ॥ १८ ॥ श्रीप्रद्युम्नउवाच ॥ पुरावैकुंडिनपुरेयदूनांबलमूर्जितम् ॥ त्वयादृष्टंनकिंत्वत्रपश्याद्यैवविनिंदक ॥ १९ ॥ युष्मान्संबंधिनोज्ञात्वानेच्छेद्युद्धंकरूषप ॥ बलात्त्वंयुद्धमाकार्षीर्धर्मशास्त्रंत्वयाकृतम् ॥२०॥ नन्दोद्रोणोवसुःसाक्षाज्जातोगोपकुलेपिसः ॥ गोपालायेचगोलोकेकृष्णरोमसमुद्भवाः ॥२१॥ राधारोमोद्भवागोप्यस्ताश्चसर्वाइहागताः ॥ काश्चित्पुण्यैःकृतैःपूर्वैःप्राप्ताःकृष्णंवरैःपरैः ॥२२॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥ असंख्यब्रह्मांडपतिर्गोलोकेशःपरात्परः ॥२३॥ यस्मिन्सर्वाणितेजांसिविलीयंतेस्वतेजसि ॥ तंवदंतिपरेसाक्षात्परिपूर्णतमःस्वयम् ॥ २४ ॥ उग्रसेनोऽथराजेंद्रोमरुत्तोनामयःपुरा ॥ श्रीकृष्णस्यवरेणासौयादवेंद्रोबभूवह ॥२५॥ निरंकुशोमहामूर्खोविनिंदसिमहद्गुणम्॥सनःप्रार्थयतेकिंचिद्यथासिंहःशिवारुतम् ॥ २६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंवचस्तदाश्रुत्वादंतवक्रोमदोत्कटः ॥ गदांगुर्वींसमादायप्राद्रवत्तद्रथोपरि ॥ २७ ॥ गदयापातयामाससहस्रंघोटकान्नदन् ॥ घोटकादुद्रुवुःसर्वेदृष्ट्वारूपंभयंकरम् ॥ २८ ॥ प्रद्युम्नोपिगदांनीत्वातंताडहृढंहृदि ॥ तत्प्रहारेणदैत्येंद्रःकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥२९॥ तयोश्चगदयायुद्धंघोररूपंबभूवह ॥ गदाभ्यांप्रहरंतौद्वौमर्दयंतौपरस्परम् ॥ नदंतौसंगरेराजन्गिरौकेसरिणौयथा ॥ ३० ॥

परिपूर्णतम कहते हैं॥२४॥ उग्रसेन राजाओंका इन्द्र है, जो पहले मरुत राजा हुआ था, सो वह श्रीकृष्णके वरसे यादवेन्द्र हुआ है ॥२५॥ तू निरंकुश महामूर्ख है, महद्गुणोंकी निन्दा करता है, सो हम तेरी बातको ध्यानमें नहीं करते हैं, जैसे सिंह गीदडोंके रोनेको ॥२६॥ नारदजी कहते हैं-ऐसे प्रद्युम्नका वचन सुनकर दन्तवक्र लाख मणकी गदा लेकर प्रद्युम्न के रथके ऊपर दौड़ा ॥२७॥ गदाके मारे हजार घोड़े पटक दिये, फिर गर्जा, भयंकर रूपको देखकर घोड़े भाग गये ॥ २८ ॥ प्रद्युम्नने भी गदा लेकर बड़ी कठोर हृदयमें मारी, उस प्रहारसे दन्तवक्र कुछ व्याकुल हो गया ॥ २९ ॥ फिर दोनोंका घोररूप गदायुद्ध हुआ, गदाओंसे दोनों परस्पर प्रहार करने लगे, नारदजी बोले हे राजन् ! जैसे पर्वत पर दो केसरी लडते हैं ॥ ३० ॥

दन्तवक्रने भुजाओंसे प्रद्युम्नको पकडकर पृथ्वीपें पटक दिया, सिंह जैसे सिंहको बडे जोरसे पटकता है ॥३१॥ प्रद्युम्नने भी उठकर बड़े बलसे दन्तवक्रको पकडकर घुमाकर पृथ्वी में देमारा ॥३२॥ प्रद्युम्नके प्रहारके मारे मुखसे रुधिर वमन करता मूर्छित हो, हड्डियोंका चूर २ होकर गिर पडा, विह्वल होगया ॥ ३३ ॥ जैसे इन्द्रका मारा पर्वत गिरता है, ऐसे कारूषदेशका पति उसी समय पृथ्वीमें गिर पड़ा, उसके गिरनेसे समुद्रसमेत वसुधा चलायमान हो गई॥३४॥ दिग्गज चलायमान हो गये, तारागण चलायमान होगये, समुद्र कपां गये, गिरनेके शब्दसे त्रिलोकी बहरी होगई ॥ ३५ ॥ उसी समय कारूपदेशका अधिपति सुन्दर मिलाप करनेवाला महात्मा वृद्धशर्मा श्रुतदेवा रानीको साथ लेकर महारंगपुरसे यादवोंके संग्राममें आया ॥३६॥ हे मैथिल ! शम्बरारि प्रद्युम्नको भेंट देकर आगेसे सन्धि करके पुत्रको लेकर यादवोंसे सत्कार किया हुआ वह महात्मा वृद्धशर्मा रंगपुरको चला

दंतवक्रोभुजाभ्यांतंगृहीत्वाश्रीहरेःसुतम् ॥ भूमौनिपातयामाससिंहःसिंहमिवौजसा ॥३१॥ प्रद्युम्नोपिसमुत्थायगृहीत्वाभुजयोर्बलात् ॥ भ्राम-
यित्वाभुजाभ्यांतंपातयामासभूतले॥३२॥ प्रद्युम्नस्यप्रहारेणसोपतद्रुधिरंवमन् ॥ चूर्णितास्थिःखिन्नगात्रोमूर्च्छितोविह्वलाकृतिः ॥३३॥ गिरीं-
द्रइवभूपृष्ठेरेजेशक्रायुधाहतः ॥ तत्प्रहारेणवसुधाचचालसजलाभवत् ॥३४॥विचेलुर्दिग्गजास्ताराःसमुद्राश्चचकंपिरे ॥ पातशब्देनराजेंद्रत्रिलो-
कीबधिरीकृता ॥ ३५ ॥ तदैवकारूषपतिर्महात्माश्रीवृद्धशर्मासुतदेवयाच ॥ राज्ञामहारंगपुराद्यदूनांसमाययौसुन्दरसंधिकारी ॥ ३६ ॥
दत्त्वाबलिंमैथिलशंबरारयेसुतंगृहीत्वाकृतसंधिरग्रतः॥ तथायदूनांप्रवरैःप्रपूजितःपुनर्महारंगपुरंसमाययौ ॥३७॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजि-
त्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेदंतवक्रयुद्धेकरूषदेशविजयोनामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अर्णवेदक्षिणेस्नात्वाप्रद्युम्नोया-
दवाधिपः ॥ उशीनरांस्ततोजेतुमाजगामबलैःसह ॥ १ ॥ कोटिशःकोटिशोगावोयत्रदेशेचरंतिहि ॥ गोपालमण्डलैर्युक्ताव्रजंत्योभव्यमूर्तयः
॥ २ ॥ औशीनराःक्षीरपानागौरवर्णमनोहराः ॥ हैयंगवीनमादायतेययुःकार्ष्णिसन्मुखे ॥ ३ ॥ तैःपूजितःशंबरारिर्ददौतेभ्योमहाधनम् ॥
गजान्रथान्हयान्रत्नवस्त्रभूषादिहर्षितः ॥ ४ ॥ चम्पावतीनामपुरीमणिरत्नसमन्विता ॥ विराजतेयत्रनृपैःसर्पैर्भोगवतीयथा ॥ ५ ॥

आया ॥३७॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां दन्तवक्रयुद्धे कारूषविजयो नामैकादशोऽध्यायः ॥११॥ नारदजी कहते हैं कि यादवोंका अधिप प्रद्युम्न दक्षिणके समुद्रमें स्नान करके उशीनर देशोंको जीतनेके लिये सेनासहित गया ॥ १ ॥ करोड २ गौ जिस देशमें चरती हैं, गोपोंके मण्डलसे युक्त विचरती हैं, भव्य जिनकी मूर्ति हैं ॥२॥ उशीनरके मनुष्य दूधही पीते हैं, गौरवर्ण हैं, वे मक्खन लेकर प्रद्युम्नके सन्मुख आये ॥ ३ ॥ उन्होंने प्रद्युम्नका पूजन किया, प्रद्युम्नने उनको बहुत धन दिया, हाथी, घोडे, रथ, रत्न, भूषण, ये सब प्रसन्न होकर दिये ॥४॥ जहाँ मणि रत्नोंसे शोभित चम्पावती पुरी राजाओंसे ऐसी विराजती है, जैसे सर्पोंसे भोगवतीपुरी ॥ ५ ॥

चम्पावतीका राजा हेमांगद भेंट लेकर आया, उसने प्रद्युम्नको प्रणाम किया ॥६॥ उसपर प्रसन्न होकर प्रद्युम्नने किंजल्किनी माला दी और सहस्र दलका शोभायुक्त कमल दिया ॥ ७ ॥ इसके बाद महाबाहु कृष्णका पुत्र धनुर्धारी प्रद्युम्न अपनी सेना सहित नगाडे बजाता विदर्भ देशको गया॥८॥कुण्डिन पुरके राजा भीष्मकने रुक्मिणीके पुत्र प्रद्युम्नको आया सुनकर सेना सहित उसको अपने घर बुलाकर बहुतसे धनसे उसका पूजन किया ॥९॥ तब बली रुक्मिणी सुत प्रद्युम्न नाना भीष्मकको नमस्कार करके कुन्त देश और दरद देशोंको गया ॥ १० ॥ मलयाचलके चंदनकी पवनसे सेवित, चन्दन केतकीके पुष्पगन्धसे लिपटा जो मलयाचल ॥ ११ ॥ उसपर अगस्त्यजीको देखा, जो मुनियोंमें शार्दूल समुद्रको पी गये थे, उनको नमस्कार करके आश्रममें खडा हुआ तब अगस्त्यजीने आशीर्वादसे प्रसन्न किया ॥१२॥ तब प्रद्युम्न बोला कि, यह जो जगत् है, सो दृश्य पदार्थ है,

चम्पावतीपतिर्वीरोनाम्नाहेमांगदोनृपः ॥ नीत्वाबलिंसमेत्याशुश्रीकार्ष्णिप्रणनामह ॥६॥ तस्मैतुष्टःशंबरारिर्मालांकिंजल्किनींददौ॥सहस्रदल शोभाढ्यंपद्मंदिव्यंददौपुनः॥७॥ अथकार्ष्णिर्महाबाहुः स्वसैन्यपरिवारितः ॥ विदर्भान्प्रययौधन्वीदुंदुभीन्नादयन्मुहुः॥८॥भीष्मकःकुण्डिनपतिरागतंरुक्मिणीसुतम् ॥ आनीयपूजयामाससैन्यंबहुभिर्धनैः ॥ ९ ॥ मातामहंततोनत्वारुक्मिणीनन्दनोबली ॥ कुंतदेशांश्चदरदान्प्रययौ यादवेश्वरः ॥ १० ॥ मलयाचलपाटीरवायुभिःपरिसेवितः ॥ श्रीखण्डकेतकीपुष्पगंधाक्तेमलयाचले ॥११॥ अगस्त्यंमुनिशार्दूलंपीताब्धिंस ददर्शह ॥ कृतांजलिपुटःकार्ष्णिर्नमस्कृत्यमहामुनिम् ॥ स्थितोभूदुटजेसाक्षादाशीर्भिरभिनंदितः ॥ १२ ॥ श्रीप्रद्युम्नउवाच ॥ दृश्यंपदार्थंतुजगत्सत्यवद्वर्ततेकथम् ॥ मुक्तोब्रह्मांशकोभूत्वाबद्ध्यतेयंकथंगुणैः ॥१३॥ एतत्प्रश्नंममब्रूहिनितरांमुनिसत्तम॥ त्वंसर्ववित्दिव्यचक्षुःसर्वब्रह्मविदांवरः ॥ १४ ॥ अगस्त्यउवाच ॥ त्वंसाक्षात्कृष्णचन्द्रस्यपरिपूर्णतमस्यच ॥ पुत्रोसिपृच्छसेमांवालीलामात्रमिदंवचः ॥ १५ ॥ लोकसंग्रहमेवार्थंकुर्वन्देवोहरिर्यथा ॥ तथानृणांचकल्याणंकुर्वन्विचरसिप्रभो ॥ १६ ॥ यथासत्यस्यसूर्यस्यबिंबंवारिषुसत्यवत्॥ दृश्यतेसत्यवद्दृश्यंप्रधानपरयोस्तथा ॥ १७ ॥ काचेमुखंगुणेसर्पःसैकतेजीवनंयथा ॥ तथायंसन्देहगुणैर्बध्यतेप्रेक्षतात्स्वयम् ॥ १८ ॥

सो सत्यकी तरह कैसे वर्तता है ? यह जो जीव है, सो ब्रह्मका अंश है, और मुक्त है, सो गुणोंसे कैसे बंधता है ? ॥ १३ ॥ हे मुनिसत्तम ! इस मेरे प्रश्नको विस्तारपूर्वक कहिये, आप सर्वज्ञ हो, दिव्यचक्षु हो, और सब ब्रह्मवेत्ताओंमें श्रेष्ठ हो ॥ १४ ॥ तब अगस्त्यजी बोले--तुम साक्षात् परिपूर्णतम कृष्णचन्द्रके पुत्र हो, सो तुम मुझसे पूछते हो, यह लीला मात्र तुम्हारा वचन है ॥ १५ ॥ लोक संग्रहके लिये तुम करते हो, हे प्रभो ! जैसे हरि वैसे ही तुम मनुष्योंके कल्याणके लिये विचरते हो ॥ १६ ॥ जैसे सत्य सूर्यका बिम्ब जलमें सत्यसा दीखता है वैसे ही प्रधान पुरुषका यह जगत् सत्यसा दीखता है ॥१७॥ जैसे दर्पणमें मुख सत्यसा दीखता है, जैसे रस्सीमें सर्प सत्यसा दीखता है, जैसे सिकता (बालूमें) में सूर्यकी चमकसे जल सत्यसा दीखता है, वैसे ही मिथ्या जगत सत्यसा दीखता है, वैसे ही यह जीव देहमें अहं बुद्धिसे देहके गुणोंसे बंधता है, ॥ १८ ॥

फिर प्रद्युम्नने पूछा कि, यह देहधारी जीव जिस उपायसे बंधनको प्राप्त न होवे वह उपाय कहिये? हे ब्रह्म विदांवर ! कि, दृढ वैराग्यसे नहीं बंधता है, सो कहिये ॥१९॥ तब अगस्त्यजी बोले--जो विवेकको आश्रय करके जगत्को मनोमय जानकर सनातन ब्रह्मको भजता है वह परम पदको प्राप्त होता है ॥२०॥ जन्म, मृत्यु, जरा, बाल, युवा, शोक, मोह, अहंता, ममता, मद, रोग, भय, सुख, दुःख, भूख, प्यास, रति, आधि, ये आत्माको नहीं होते हैं ॥२१॥ हे राजन् ! आत्मा निरीह है, चेष्टा नहीं करता है, जिसके शरीर नहीं है सर्वत्र है, अहंकार रहित है, शुद्ध है, गुणोंका आश्रय है, साक्षात् मायासे परे है, निष्कल है, आत्मद्रष्टा है, उसको कभी भी आधि, भय, नहीं होता है ॥२२॥ ज्ञानरूप है सदा ही पूर्ण है, मुनीश्वरोंसे जाना जाता है, उस ब्रह्म परमात्माको ऐसा जानकर सुख पूर्वक विचरे ॥ २३ ॥ जब यह जगत् सोता है, तब जो पुरुष जानता है, और देखता है, पर देखता जो पुरुष है, उसको यह जगत् नहीं देखता है, और नहीं जानता है ॥ २४ ॥ जैसे आकाश तो कोठेमें नहीं बंधता है, अग्नि काठमें नहीं बंधती है, और पवन रेणुसे नहीं

॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ कथंनबद्ध्यतेदेहीयेनोपायेनतद्वद ॥ वैराग्येणदृढेनापिब्रूहिब्रह्मविदांवर ॥१९॥ अगस्त्यउवाच ॥ विवेकंयःसमाश्रित्यभजेद्ब्रह्मसनातनम् ॥ मनोमयंजगन्मत्त्वासव्रजेत्परमंपदम् ॥ २० ॥ जन्ममृत्यूशोकमोहौजराबालयुवादयः ॥ अहंमदोव्याधिभयंसुखंशोकःक्षुधारतिः ॥ २१ ॥ आधिर्भयंतस्यराजन्नभवंतिकदाचन ॥ आत्मानिरीहोह्यतनुःसर्वतश्चानहंकृतिः ॥शुद्धोगुणाश्रयःसाक्षात्परोनिष्कलआत्मदृक् ॥ २२ ॥ ज्ञानात्मकःसदापूर्णोविदितोयोमुनीश्वरैः ॥ तंब्रह्मपरमात्मानंज्ञात्वायंविचरेत्सुखी ॥ २३ ॥ अस्मिञ्छयानेजागर्तिसर्वंपश्यतियःपुमान् ॥ नायंतंवेत्तिपश्यंतंनपश्यंतिकदाचन ॥ २४ ॥ नभोग्निपवनाःकोष्ठकाष्ठप्रोद्गतरेणुभिः ॥ नसज्जंतेगुणैर्ब्रह्मवर्णैश्चस्फटिकोयथा ॥२५॥ लक्षणाभिर्ध्वनिव्यंग्यैर्ज्ञायतेनकदाचन ॥ कुतस्तुलौकिकैर्वाक्यैस्तस्मैश्रीब्रह्मणेनमः ॥ २६ ॥ केचित्कर्मवदंत्येनंकेचित्कालंतथापरे ॥ कर्तारंयोगमपरेसांख्यंब्रह्मवदंतिके ॥२७॥ केचित्तंपरमात्मानंवासुदेवंवदंतिके ॥ प्रत्यक्षेणानुमानेननिगमेनात्मसंविदा ॥२८॥ विचार्यतद्ब्रह्मपरंनिःसंगोविचरेदिह ॥ यथांभसाप्रचलतातरवोपिचलाइव ॥ २९ ॥ चक्षुषाभ्राम्यमाणेनदृश्यतेचलतीवभूः ॥ तथागुणानांभ्रमणैर्भ्रमतामनसायतः ॥ ३० ॥

बंधता है, और जैसे रंगोंसे स्फटिक मणि लिप्त नहीं होती है, ऐसे ही आत्मा गुणोंसे नहीं बंधता है ॥२५॥ और जो लक्षण, ध्वनि, व्यंग, इनसे कभी नहीं जान पडता है, फिर कहो, लौकिक वाक्योंसे कैसे जाना जा सकता है, उस ब्रह्मके लिये हमारा नमस्कार है ॥ २६ ॥ कोई इसको कर्म कहते हैं, कोई काल कहते हैं, कोई कर्ता कहते हैं, कोई योग कहते हैं, कोई ज्ञान कहते हैं, कोई ब्रह्म कहते हैं ॥२७॥ कोई परमात्मा कहते हैं, कोई वासुदेव कहते हैं, कोई प्रत्यक्ष प्रमाणसे कहते हैं, अनुमानसे, कोई वेदसे, कोई आत्मज्ञानसे कहते हैं ॥२८॥ घटमें मठमें जैसे बाहिर, भीतर, आकाश रहता है ऐसे उसपर ब्रह्मको विचार करके निःसंग विचरण करे, जैसे बहते पानीसे वृक्षभी चलते मालूम पडते हैं ॥२९॥ जैसे नेत्रोंके फिरनेसे पृथ्वी फिरती दिखाई देती है, वैसे ही गुणोंसे भ्रमित किये मनसे आत्मामें जन्म मरणादि दुःख प्रतीत होते हैं ॥ ३० ॥

जैसे हाथसे घुमाई जलती बनेटी घूमती है, यह कर चुका, यह करता हूँ, यह करूँगा, यह मेरा है, यह तेरा है, ऐसे बोलता तू, मैं सुखी हूँ, दुखी हूँ, ऐसे अज्ञानमें मोहित हुआ घूमता है ॥ ३१ ॥सत्व गण, रजोगुण, तमोगुण, ये तीन मायाके गुण हैं, उन्हींसे जगत् व्याप्त हो रहा है, जैसे सूतसे कपड़ा ॥ ३२ ॥ जो सत्व गुणमें स्थित रहते हैं, वे तो ऊपर स्वर्गादि लोकोंमें जाते हैं, रजोगुणी बीचमें मनुष्यलोकमें रहते हैं, और तमोगुणी नरकादि लोकमें जाते हैं ॥३३॥ हे कृष्ण नन्दन ! अन्धकारमें रस्सीमें सर्पकी भ्रान्ति होती है, दूरसे बालूमें जलकी भ्रान्ति होती है,वैसेही झूंठे जगत्में सत्यकी भ्रान्ति होती है॥३४॥यह सुख आता है और जाता रहता है, जैसे छोटे राजाओंका राज्य वैसेही मनुष्योंका सुख दुख आता है, और जाता है, ऐसेही नरकवासियोंका जैसे बादलकी पंक्ति, देहके गुण, और दिन रात स्थिर नहीं है ॥३५॥ ऐसेही देहादिकोंको समझना, जैसे मार्गका संग सदा नहीं रहता है वैसेही यह जगत् है, जैसे पंख होनेपर घोसलेसे क्या प्रयोजन रहता है, पार होनेपर नावसे क्या प्रयोजन रहता है॥३६॥वैसेही ज्ञान प्राप्त होनेपर संसारसे क्या प्रयोजन रहता है, वैसेही समदृष्टामुनि

भ्राम्यमाणाःसदाराजन्करेणालातचक्रवत् ॥ करिष्यामिकरोमीतिममेदंतवचाब्रुवन् ॥ त्वमहंचसुखीदुःखीसदाज्ञानविमोहितः ॥३१॥ सत्त्वंरज
स्तमइतिप्रकृतेर्नात्मनोगुणाः ॥ तैरिदंजगदाव्याप्तमोतप्रोतपटंयथा ॥३२॥ ऊर्ध्वंगच्छंतिसत्त्वस्थामध्येतिष्ठंतिराजसाः ॥ जघन्यगुणवृत्तिस्था
अधोगच्छंतितामसाः ॥ ३३ ॥ अंधकारेगुणात्कार्ष्णेसर्पबुद्धिर्भवेद्यथा ॥ आरान्मरीचिकावारितथेदंमन्यतेजगत् ॥३४॥ गतागतंसुखंविद्धि
यथामण्डलवर्तिनाम् ॥ तथानृणाञ्चतद्दुःखंयथानरकवासिनाम् ॥ घनावलिर्देहगुणाअहोरात्रमृतेर्यथा॥३५॥यथासार्थंतथादृश्यंनकिंचित्सर्वदै-
वहि ॥ पक्षेजातेयथानीडात्पारेयातेयथोडुपात् ॥ ३६ ॥ ज्ञानेप्राप्तेतथालोकादर्पणात्किंप्रयोजनम् ॥ तथामार्गंनिधायाशुविचरेत्समदृङ्मुनिः
॥३७॥ यथैंदुरुदपात्रेषुयथाग्निःकाष्ठसंचये ॥ तथैकोभगवान्साक्षात्परमात्माव्यवस्थितः ॥३८॥ घटेमठेयथाकाशोवर्ततेतर्बहिर्महान् ॥ तथा
परात्मानिर्लिप्तोदेहिषुस्वकृतेषुच ॥ ३९ ॥ यःकृष्णभक्तःशांतात्माज्ञाननिष्ठोविरागवान् ॥ तंनस्पृशंत्येवगुणाःकानीवबिसिनीदलम् ॥४०॥
ज्ञानीसदानंदमयोबालवद्विचरेत्तनुम् ॥ नपश्यतिधृतंवासोमदिरामदमत्तवत् ॥४१॥ सूर्योदयेयथावस्तुगृहेराजन्प्रदृश्यते ॥ दूरीकृत्यतथाज्ञानं
साक्षात्तत्त्वंततोबृहत् ॥ ४२ ॥ यथेंद्रियैःपृथग्द्वारैरर्थोबहुगुणाश्रयः ॥ नानेयतेतथाब्रह्मवाचिभिःशास्त्रवर्त्मभिः ॥ ४३ ॥

अपने मार्गका विचार करके विचरण करे ॥३७॥ जैसे जलके पात्रोंमें चन्द्रमा जैसे काष्ठ समूहमें अग्नि वैसेही एक भगवान् परमात्मा सब जगत्में स्थित है ॥३८॥ घटमें और मठमें जैसे बाहिर भीतर आकाश रहता है,किन्तु लिप्त नहीं होता है,वैसेही परमात्मा अपनी बनाई हुई देहोंमें रहता है,परन्तु लिप्त नहीं होता है॥३९॥जो कृष्ण भक्त हैं,शान्तात्मा हैं,ज्ञान निष्ठ हैं,वैराग्य-वान् हैं,उनको ये गुण स्पर्श नहीं करते हैं,जैसे कमलके पत्तेको जल स्पर्श नहीं कर सकता है॥४०॥जो ज्ञानी है,वह सदानन्द मय है,बालककी तरह विचरण करे,वह तनु(शरीर)को नहीं देखता है,जैसे मदिरामत्त धोतीकी खबर नहीं रखता है॥४१॥सूर्योदयपर जैसे घरकी वस्तु दिखाई देती है,वैसेही ज्ञान होनेपर सब तत्व दिखाई देता है॥४२॥ जैसे पृथक् २ इन्द्रियोंसे एक वस्तु अनेक प्रकारकी वर्णन की जाती है, वैसेही एक ब्रह्म अनेक रूपसे शास्त्रकी रीतिसे वर्णन किया जाता है, जैसे दूध है, उसको नेत्र तो सफेद बताते हैं, अंगुलियाँ गर्म, ठंडा बताती हैं, जीभ मीठा, फीका बताती है, नाक सुगन्ध, दुर्गन्ध बताता है, बुद्धि पथ्य, कुपथ्य बताती है कान शब्द करता हुआ बताते हैं ॥ ४३ ॥

हे नृप ! कोई तो इसको परम पद कहते हैं, कोई वैष्णव धाम कहते हैं, कोई व्याप्त कहते हैं, कोई वैकुण्ठ, कोई शान्त ॥४४॥ कोई कैवल्य, कोई ब्रह्म, कोई परम धाम, कोई अव्यय, कोई अक्षर, कोई पराकाष्ठा कोई गोलोक, और कोई प्रकृतिसे परे कहते हैं ॥४५॥ कोई पुराने वेत्ता विशद कोई निकुञ्ज कहते हैं; वह पदज्ञान वैराग्य भक्तिसे प्राप्त होता है, और तरह नहीं प्राप्त होता है ॥४६॥ श्रीकृष्णका भक्त परसे परे कैवल्यके नाथ पुरुषोत्तम श्रीकृष्णचन्द्रके पदको प्राप्त होकर फिर नहीं लौटता है ॥४७॥ नारदजी कहते हैं, इस भागवत ज्ञानको सुनकर प्रद्युम्नने अगस्त्यजीको भक्तिसे नमस्कार करके उनका पूजन किया॥४८॥इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायामगस्त्यज्ञानप्रस्तावो नामद्वादशोऽध्यायः ॥१२॥नारदजी कहते हैं—उसके बाद प्रद्युम्न कृत माला ताम्रपर्णीमें स्नान करके सैनिक जो यदु हैं, उन यादवोंके साथ राजपुरको गया ॥१॥ तब राजपुरका अधीश शाल्व यादवोंको

परंपदंवदंत्येतत्केचिद्वैष्णवंनृप ॥ केचिद्व्याप्यंवैकुण्ठंशांतंकेपिततःपरम् ॥४४॥ कैवल्यंतद्ब्रह्मकेचित्परमंधामचाव्ययम् ॥ अक्षरंचपराकाष्ठांगोलोकंप्रकृतेःपरम् ॥४५॥ केचिन्निकुञ्जंविशदंवदंतीहपुराविदः ॥ ज्ञानवैराग्यभक्तिभ्यःप्राप्नोतीहनचान्यतः ॥४६॥ श्रीकृष्णचन्द्रस्यहरेःपरस्यकैवल्यनाथस्यपरात्परस्य ॥ व्रजेत्पदंश्रीपुरुषोत्तमस्ययत्प्राप्यभक्तोननिवर्ततेथ ॥ ४७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिभागवतंज्ञानंश्रुत्वाकार्ष्णिर्महामुनिम् ॥ अगस्त्यंपूजयामासभक्त्यानत्वाकृतांजलिः ॥४८॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेउशीनरविदर्भकुन्तदरददेशविजयेअगस्त्यकार्ष्णिज्ञानप्रस्तावोनामद्वादशोऽध्यायः ॥१२॥ श्रीनारदउवाच ॥ कृतमालांताम्रपर्णींस्नात्वाश्रीयादवेश्वरः ॥ यदुभिःसैनिकैःसार्द्धंराजन्राजपुरंययौ ॥ १ ॥ शाल्वोराजपुराधीशःश्रुत्वामन्मुखतोयदून् ॥ आगतान्सययौशीघ्रंद्विविदंवानराधिपम् ॥२॥ द्विविदोद्यतिसंक्रुद्धोवीरोमित्रसहायकृत् ॥ शंबरारिबलंप्रागाच्चालयन्वसुधातलम् ॥ ३॥ विददारनखैर्दन्तैःपताकाध्वजपट्टकान् ॥ काश्मीरकंबलैर्युक्तान्समुद्रान्स्वर्णभूषितान् ॥४॥ रथानुत्पातयामासगजानारुह्यवेगतः ॥ अश्वान्विद्रावयामासभ्रूभंगैर्वानरस्वनैः ॥ ५ ॥ इत्थंकोलाहलेजातेप्रद्युम्नोधन्विनांवरः ॥ आजगामरथेनासौधनुष्टंकारयन्मुहुः ॥ ६ ॥ द्विविदस्तद्रथस्यारादुच्चक्राममदोत्कटः ॥छत्रंध्वजंस्वपुच्छेनकंपयन्सहयंरथम् ॥ ७ ॥ प्रद्युम्नःस्वधनुष्कोट्याधृत्वाकण्ठेचकर्षह ॥ कपिस्तदातिकुपितोमुष्टिनातंतताडह ॥ ८ ॥

सन्मुख आया सुनकर वंदरोंके अधिप द्विविदके पास गया ॥२॥ तब क्रोधित हुआ द्विविद बंदर मित्रकी सहायता करता क्रोधसे पृथ्वीको चलायमान करता प्रद्युम्नकी सेनामें आया ॥३॥ द्विविद वंदर सेनामें जाकर नखोंसे दांतोंसे काश्मीरी शालोंसे युक्त, मुद्रा सहित, सुवर्णसे भूषित, ध्वजा पताकाओंकी पट्टियोंको चीरने लगा ॥४॥ भौंहोंके चढानेसे और बंदरोंके किलकार शब्दोंसे हाथियोंपर चढ चढकर रथोंको फेंकने लगा और घोड़ोंको भगाने लगा ॥ ५ ॥ ऐसे जब सेनामें कोलाहल हुआ, तब धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ प्रद्युम्न रथमें बैठकर धनुष टंकारता हुआ आया ॥ ६ ॥ तब मदोत्कट द्विविदभी उछलकर दूरसेही रथपर जा चढ़ा, और पूंछसे ध्वजा, छत्र, रथको कंपाने लगा ॥ ७ ॥ प्रद्युम्नने उसके कंठमें धनुप डालकर खेंच लिया, तब अति कुपित द्विविदने प्रद्युम्नके एक घूंसा मारा ॥ ८ ॥

प्रद्युम्नने भी विधिसे धनुषको चढाकर कानतक खेंच द्विविदके एक विशिख (बाण) मारा ॥ ९ ॥ उस विशिख (बाण) ने आकाशमें चार घडीतक घुमा घुमाकर आधे प्रहरमें सौ योजनपर द्विविदको लंकामें फेंक दिया ॥ १० ॥ तब फिर वहाँ इसका राक्षसोंसे दो घडी युद्ध हुआ, उसने बहुतसे राक्षसोंको मार दिया, इतनेमें यदूत्तम प्रद्युम्न ॥११॥ जीत कर भेंट लेकर नगाडे बजाता दक्षिण मथुराको देखकर त्रिकूटाचलपर चढगया॥१२॥ तब द्विविद फिर त्रिकूटाचलसे मैनाकपर चढ गया, फिर मैनाकपरसे सिंहलदेशमें होकर यह द्विविद भरतखडमें आ गया ॥१३॥ फिर धीरे २ बन्दरोंका इन्द्र हिमालयमें आया, फिर हिमालयके शिखरसे प्राग्ज्योतिषपुरमें आया ॥ १४ ॥ तब प्रद्युम्न मत्सार देशके राजापर होकर रामकृष्ण क्षेत्रपर होकर सेतुबन्धनपर आया ॥१५॥ मगरोंके घर, सौ योजनके समुद्रको देखकर प्रद्युम्न उसके किनारेपर ठहर गया ॥१६॥ वहाँ साम्ब, अक्रूर, उद्धवादिक

प्रद्युम्नोधनुरादायसज्यंकृत्वाविधानतः॥ आकृष्यकर्णपर्यंतंविशिखेनतताडतम् ॥९॥ विशिखीभ्रामयित्वातंगगनेशतयोजनम्॥प्रहरार्द्धेनराजेंद्रलङ्कायांसंन्यपातयत् ॥१०॥ रक्षोभिःसहतद्युद्धंबभूवघटिकाद्वयम् ॥ न्यपातयत्सरक्षांसिप्रद्युम्नोथयदूत्तमः॥ ११ ॥ नादयन्दुन्दुभिराजन्विजित्यजगृहेबलिम्॥दक्षिणांमथुरांदृष्ट्वात्रिकूटंचारुरोहह ॥१२॥ प्रोच्चक्रामत्रिकूटात्समैनाकशिखरोपरि॥ मैनाकात्सिंहलंचैत्यभारतंचाययौपुनः ॥१३॥ शनैःशनैर्वानरेंद्रोहिमाचलगिरिंगतः ॥ हिमाचलस्यशिखरात्प्राग्ज्योतिषपुरंययौ ॥ १४ ॥ मत्सारदेशाधिपतिंप्रद्युम्नोयादवेश्वरः ॥ महाक्षेत्रंरामकृष्णंप्रययौसेतुबन्धनम् ॥ १५ ॥ शतयोजनविस्तीर्णसमुद्रंमकरालयम् ॥ वीक्ष्यकार्ष्णिर्महावीरस्तस्थौवेलांसमेत्यसः ॥ १६ ॥ सांबादीन्ससमाहूयाक्रूराद्यान्यादवान्स्वकान् ॥ सभायामुद्धवंप्राहकार्ष्णिर्योगेश्वरेश्वरः ॥ १७ ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ विभीषणो द्वीपपतिर्महोज्ज्वलोलंकापतिःकौणपवृन्दमुख्यः ॥ वदाथकिंभोजवरात्रमंत्रिन्नचेद्बलिंयच्छतिमेतदाशु ॥ १८ ॥ उद्धवउवाच ॥ त्वंदेवदेवः पुरुषोत्तमोत्तमःश्रीकृष्णचन्द्रःपरमंत्वमेवहि ॥ त्वंपृच्छसेलोकइवप्रभोमांमायापिते योगिवरैर्दुरत्यया ॥ १९ ॥ ब्रह्मादयोयस्यपरानुशासनं वहंतिमूर्ध्नासततंप्रधर्षिताः ॥ सएवसाक्षात्पुरुषोसिभूमन्दासानुदासोस्मिवदामिकिंते ॥ २० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्तःपश्यतांतेषां प्रद्युम्नोभगवान्हरिः ॥ पत्रंगृहीत्वाव्यलिखत्संदेशंमैथिलेश्वर ॥ २१ ॥

अपने यादवोंको बुलाकर योगेश्वर प्रद्युम्न उद्धवसे यह बोला ॥१७॥ देखो उद्धवजी ! विभीषण इस द्वीपका पति है, वह लंकाका पति राक्षसोंके समूहमें मुख्य है, सो हे मन्त्रिन् ! कहो, यह मुझको भेंट जल्दी नहीं देगा ? ॥१८॥ तब उद्धवजी बोले--आप देवदेव पुरुषोत्तम श्रीकृष्णही हो, सो आप मनुष्यकी तरह मुझसे पूछते हो, और आपकी माया बडे बडे योगियोंको भी दुरत्यय है ॥१९॥ ब्रह्मादिक धर्षित होकर आपकी आज्ञाको अपने शिरपर धारण करते हैं, सो आप साक्षात् पुरुषहो, मैं तो आपका दासानुदास हूँ, मैं आपके सामने क्या कहूँ ॥ २० ॥ नारदजी कहते हैं--ऐसे उद्धवने कहा, तब सबके देखते हे मैथिल ! प्रद्युम्नने विभीषणको पत्रमें संदेश लिखा ॥ २१ ॥

हे विभीषण ! श्रीभोजराज उग्रसेनको बलि (भेंट) देओ, यदि हठ करके भेंट नहीं दोगे, तो धनुपसे निकले बाणोंसे समुद्रका सेतु बांधकर सेनाके समूहसहित मैं आता हूँ,॥२२॥ ऐसे पत्र लिखकर चण्ड पराक्रम जिसका उस प्रद्युम्नने धनुष लेकर बाणपर पत्रको रखकर कानतक खेंचकर छोड दिया ॥२३॥ उस धनुपकी प्रकट टंकारसे बिजलीकासा शब्द हुआ, उस शब्दसे सातों लोकों तथा सातों पातालोंसहित ब्रह्माण्ड झंकार उठा ॥२४॥ धनुपसे छूटा बाण दशों दिशाओंमें उजाला करता विभीषणकी सभामें बिजलीसा तडतडाकर जा गिरा ॥२५॥ तबही सब राक्षस चौंक उठे, कवच पहनकर बडे वेगसे दुष्टोंने शस्त्र ले लिये ॥ २६ ॥ महाबली राक्षसोंका इन्द्र विभीषण सभाके बीचमें पत्रको पढकर विस्मित हो गया ॥ २७ ॥ उसी समय सभामें शुक्राचार्य आ गये, उनका अर्घ, पाद्यादिकोंसे पूजन करके नमस्कार कर हाथ जोडकर यह बोला ॥ २८ ॥ हे भगवन् ! यह किसका बाण

श्रीभोजराजायबलिंप्रयच्छबलान्नचेन्मेवचनंशृणुत्वम् ॥ कोदंडमुक्तैर्विशिखैश्वसेतुंबध्वागमिष्यामिससैन्यसंघः॥२२॥ लिखित्वेदंसमादायको-
दंडंचण्डविक्रमः॥बाणेपत्रंसमाधायकर्णांतंततंततानह॥२३॥ प्रस्फुटंस्फोटतेनैवटंकारोभूत्तडित्स्वनः॥ ननादतेनब्रह्मांडंसप्तलोकैर्बिलैःसह ॥२४॥
कोदंडमुक्तोविशिखोद्योतयन्मण्डलंदिशाम् ॥ विभीषणसभामध्येसंपपाततडित्स्वनः ॥ २५ ॥ तदैवराक्षसाःसर्वेप्रोत्थिताश्चकिताइव ॥
सकंचुकानिशस्त्राणिजगृहुर्वेगतःखलाः ॥२६॥ पत्रंबाणात्समाकृष्यपठित्वाथविभीषणः ॥ विस्मितोभूत्सभामध्येराक्षसेंद्रोमहाबलः ॥२७॥
प्राप्तंतदैवसदसिशुक्राचार्य्यंविभीषणः ॥ पूजयामासपाद्याद्यैर्नत्वाप्राहकृतांजलिः ॥ २८ ॥ विभीषणउवाच ॥ भगवन्कस्यबाणोयंभो
जराजस्तुकःक्षितौ ॥ किंबलंतस्यमेब्रूहित्वसाक्षाद्दिव्यदर्शनः ॥ २९ ॥ श्रीशुक्रउवाच ॥ अत्रैवोदाहरंतीममितिहासंपुरातनम् ॥ यस्य
श्रवणमात्रेणराजन्पापंप्रशाम्यति ॥ ३० ॥ पुराहिब्रह्मणःपुत्राःसनकाद्यादिवंगताः॥ विष्णोर्लोकंययुर्दिव्यंचरंतोभुवनत्रयम् ॥३१॥ दिगंबरा-
ञ्छिशून्मत्वाजयोविजयएवतान् ॥ द्वारपालोरुरुधतुर्वेत्रेणांतःपुरस्थितौ ॥३२॥ अशपंस्तौचतेक्रुद्धाःकृष्णदर्शनलालसाः॥ भूयास्तमसुरौदु-
ष्टौशुद्धौहिजन्मभिस्त्रिभिः ॥ ३३ ॥ एवंशप्तौस्वभवनात्पततौभूमिमंडले ॥ जज्ञातेतोदितेःपुत्रौदैत्यदानवपूजितौ ॥३४॥ हिरण्यकशिपुर्ज्येष्ठो
हिरण्याक्षोनुजस्तथा ॥ भगवान्यज्ञवाराहोभूत्वाक्ष्मामुद्धरञ्जलात् ॥ ३५ ॥

है, इस पृथ्वीपर भोजराज कौन है ? उसका क्या बल है, सो आप मुझसे कहिये ? आप साक्षात् दिव्यदर्शन हो ॥ २९ ॥ तब शुक्राचार्य बोले कि, हे राजन् ! यहाँ एक पुराना इतिहास वर्णन करते है, जिसके श्रवणमात्रसेही पापका नाश होता है ॥३०॥ पहिले ब्रह्माजीके पुत्र सनकादिक सत्यलोकमें रहनेवाले वे तीनों लोकोंमें विचरण करते हुये वैकुण्ठको गये ॥ ३१ ॥ दिगम्बर उनको बालक जानकर अन्तःपुर स्थित द्वारपाल जय और विजय पार्षदोंने बेंतसे रोक दिया ॥३२॥ उनको श्रीकृष्णदर्शनकी लालसा थी, क्रोधित होकर उन्होंने शाप दिया कि तुम असुर हो जाओ, हे दुष्टो ! तीन जन्ममें शुद्ध होवोगे ॥ ३३ ॥ इस प्रकार शाप दिये हुये अपने भवनसे गिरे, तब दितिके पुत्र हुये, दैत्य दानवोंसे वंदित हुये ॥ ३४ ॥ बडा हिरण्याक्ष हुआ, छोटा हिरण्यकशिपु हुआ तब भगवान्ने यज्ञ वाराह होकर जलसे पृथ्वीका उद्धार किया ॥ ३५ ॥

महाबली हिरण्याक्षको घूंसेसे मारा, फिर चण्ड विक्रम नृसिंह हुये ॥३६॥ प्रह्लादके सहायकर्ता उन्होंने उदर चीरकर हिरण्य कशिपुको मार डाला, वे दोनों भाई फिर कोशिनीमें, विश्रवाके पुत्र हुये ॥३७॥ रावण और कुम्भकर्ण, सब लोकको ताप देनेवाले वे भगवान् रामके बाणोंसे युद्धमें जा पड़े ॥३८॥ राक्षसोंमें इन्द्र सेना सहित वे तुम्हारे देखते २ तीसरे इस जन्ममें क्षत्रियके कुलमें फिर हुये हैं ॥३९॥ शिशुपाल और दन्तवक्र महाबली अब वर्तमान हैं, परिपूर्णतम भगवान् श्रीकृष्ण साक्षात् ॥४०॥ असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति गोलोकेश परात्पर उनके मारनेके लिये यदुवंशमें हुये हैं ॥४१॥ बहुत है लीला जिनकी वे यादवेन्द्र द्वारकामें विराजते हैं, युधिष्ठिरके महायज्ञमें और शाल्वके युद्धमें माधव ॥४२॥ शिशुपाल और दन्वक्रको मारेंगे, इसमें संशय नहीं है, उनका पुत्र शम्बर दैत्यका शत्रु प्रद्युम्न दिग्विजयको निकला है ॥४३॥ वह जम्बू द्वीपके सब राजाओंको जीतेगा, जब सब राजा

जघानमुष्टिनादैत्यंहिरण्याक्षंमहाबलम् ॥ हिरण्यकशिपुंसाक्षान्नृसिंहश्चण्डविक्रमः ॥३६॥ ददारजठरेतंवैकायाधवसहायकृत् ॥ भ्रातरौतौपुनर्जातौकेशिन्यांविश्रवःसुतौ ॥३७॥ रावणःकुंभकर्णश्चसर्वलोकैकतापनौ ॥ सायकैराघवस्यापिपेततुर्युद्धमण्डले ॥ ३८ ॥ राक्षसेंद्रौमहावेगौससैन्यौपश्यतस्तव ॥ तृतीयेस्मिन्भवेजातौक्षत्रियाणांकुलेकिल ॥३९॥ शिशुपालोदंतवक्रोवर्तमानौमहाबलौ ॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥ ४० ॥ असंख्यब्रह्मांडपतिर्गोलोकेशःपरात्परः ॥ जातस्तयोर्वधार्थाययदुवंशेहरिःस्वयम्॥ ४१ ॥ यादवेंद्रोभूरिलीलोद्वारकायांविराजते ॥ युधिष्ठिरमहायज्ञेयुद्धेशाल्वस्यमाधवः ॥४२॥ शिशुपालंदंतवक्रंहनिष्यतिनसंशयः ॥तस्यपुत्रःशंबरारिर्दिग्जयार्थंविनिर्गतः ॥ ४३ ॥ विजेष्यतिनृपान्सर्वाञ्जंबुद्वीपस्थितान्नृपान् ॥ जितेषुसत्सुदेवेषुद्वारकायांयदूत्तमः ॥ उग्रसेनोभोजराजोराजसूयंकरिष्यति ॥४४॥ तस्यापिकोदंडविनिर्गतोबलात्प्रचण्डवेगोपिशिखस्त्विहागतः ॥ तन्नामचिह्नोतितडित्स्वनोबभौप्रद्योतयन्राक्षसमण्डलंदिशाम् ॥ ४५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रीरामभक्तोथविभीषणोसौविज्ञायकृष्णंनृपरामचन्द्रम् ॥ नीत्वाबलिंकौणपवृंदमुख्यःसमाययौसुन्दरशत्रुसेनाम् ॥ ४६ ॥ तदावतीर्याशु महांबरात्स्फुरद्घनद्युतिदीर्घवपुर्जयेक्षणः ॥ प्रदक्षिणीकृत्यहरेःसुतंपुनःकृतांजलिःसंमुखआस्थितोभूत् ॥४७॥ विभीषणउवाच ॥ नमोभगवतेतुभ्यंवासुदेवायवेधसे ॥ प्रद्युम्नायानिरुद्धायनमःसंकर्षणायच ॥ ४८ ॥ नमोमत्स्यायकूर्मायवराहायनमोनमः ॥ नमःश्रीरामचन्द्रायभार्गवायनमोनमः ॥ ४९ ॥

जीत लिये जायेंगे, तब भोजराज उग्रसेन राजसूय यज्ञ करेगा ॥४४॥ उस प्रद्युम्नके धनुषसे निकला बड़े जोरसे प्रचण्ड वेगवाला बाण यहां आया है, उसके नामका चिह्न जिसमें, सो विजयी दिशाओंमें राक्षस मण्डलमें उजाला करता हुआ आया ॥४५॥ नारदजी कहते हैं, श्रीरामभक्त विभीषण श्रीकृष्णको रामचन्द्र जानकर, राक्षसवृन्दमें मुख्य भेट लेकर प्रद्युम्न की सेनामें आया ॥४६॥ फिर आकाशमेंसे घनसा उतरकर प्रद्युम्नकी परिक्रमा देकर हाथ जोड सन्मुख खडा हुआ ॥ ४७ ॥ फिर स्तुति करने लगा—आप भगवान् वासुदेव वेधा हो, आपको मैं प्रणाम करता हूँ, आप संकर्षण हो, प्रद्युम्न हो, अनिरुद्ध हो आपको मैं प्रणाम करता हूँ ॥४८॥ आप मत्स्य हो, कूर्म हो, वाराह हो, रामचन्द्र हो, परशुराम हो, आपको मेरा नमस्कार है ॥ ४९ ॥

आप वामन हो, नृसिंह हो, शुद्ध बुद्धहो, कल्कि भगवान् हो आपको मेरा नमस्कार है॥५०॥ऐसे कहकर मानदाता विभीषणने षोडशोपचार पूर्वक परम भक्तिसे पूजन किया॥५१॥ उसपर प्रसन्न होकर शंबरारिने ज्ञान वैराग्य दिया, शान्ति दी, प्रेमलक्षणा भक्ति दी ॥५२॥ ब्रह्माकी दी हुई दिव्य शिरोमणि पद्म राग मणि और पौलस्त्यकी दी हुई चमकती हुई रत्नमाला दी ॥५३॥ फिर चन्द्रमाकी दी हुई चन्द्रकान्त मणि भी दी, और साक्षात् प्रभु प्रद्युम्नने पीताम्बर दिया ॥५४॥ प्रद्युम्नको भेंट देकर नमस्कार करके राक्षसेन्द्र महाबली विभीषण गणोंको साथ लेकर लंकापुरीको गया ॥ ५५ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्व संवादे शाल्वमल्लार लंकाविजयोनाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥ नारदजी कहते हैं-फिर प्रद्युम्न ऋषभाद्रि पर्वतको देखकर श्रीरंगजीको कांचीको, प्राची सरस्वतीको देखकर ॥ १ ॥ कावेरीको उतरकर सह्याचलके देशको यादवोंके साथ

वामनायनमस्तुभ्यंनृसिंहायनमोनमः ॥ नमोबुद्धायशुद्धायकल्कयेचार्तिहारिणे ॥ ५० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाश्रीहरेःपुत्रंपूजयामास मानदः ॥ उपचारैःषोडशभिर्भक्त्यापरमयार्द्रवाक् ॥५१॥ तस्मैतुष्टःशंबरारिर्ददौज्ञानंविरक्तिमत् ॥भक्तिंशांतिकरींसाक्षाद्यांतिदुष्प्रेमलक्षणाम् ॥ ५२ ॥ ब्रह्मदत्तंमहादिव्यंपद्मरागंशिरोमणिम् ॥ पौलस्त्येनपुरादत्तांरत्नमालांस्फुरत्प्रभाम् ॥५३॥ चंद्रकांतमणितस्मैचन्द्रदत्तंददौपुनः ॥ पीतांबरंपरंसाक्षात्प्रद्युम्नःपरमःप्रभुः ॥ ५४ ॥ विभीषणोथप्रद्युम्नंनत्वादत्त्वाबलिंततः ॥ जगामलंकांसगणोराक्षसेंद्रोमहाबलः ॥ ५५ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेशाल्वमल्लारलंकाविजयोनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ ऋषभाद्रिंततोदृष्ट्वा श्रीरंगाख्यंहरेःसुतः ॥ कामःकार्ष्णिःपुरींकांचींनदींप्राचींसरिद्वराम् ॥१॥ कावेरींचतदोत्तीर्यसह्याद्रिविषयंययौ ॥ यादवैः सहितःसाक्षात्प्रद्युम्नोभगवान्हरिः ॥ २ ॥ शिबिरेषुसमायांतंमुक्तकेशंदिगंबरम् ॥ अवधूतंप्रधावंतंपुष्टांगंरजसावृत्तम् ॥३॥ बालास्तमनुधावंत स्तलशब्दैरितस्ततः ॥ कोलाहलंप्रकुर्वंतोहसंतोमैथिलेश्वर ॥ ४ ॥ तंदृष्ट्वाचोद्धवंप्राहकार्ष्णिर्बुद्धिमतांवरः ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ कोयंपुष्टव- पुर्धावन्बालोन्मत्तपिशाचवत् ॥ ५ ॥ तिरस्कृतोपिहसतिजनैरानंदवान्महान् ॥ ६ ॥ उद्धवउवाच ॥ अयंपरमहंसाख्योवधूतोवाहरेःकला ॥ सदानंदमयःसाक्षाद्दत्तात्रेयोमहामुनिः ॥ ७ ॥ यस्यप्रसादात्परमांसिद्धिंप्रापुःपरेनृपाः ॥ सहस्रार्जुनमुख्यायेयदुकायाधवादयः ॥८॥ नारद उवाच ॥ इतिश्रुत्वाशंबरारिर्नत्वासंपूज्यतंमुनिम् ॥ संस्थाप्यचासनेदिव्येपप्रच्छेदंयदूत्तमः ॥ ९ ॥

भगवान् हरि प्रद्युम्न आये ॥२॥ तब शिविरोंमें आते एक अवधूत, दिगम्बर, खुले केश, पुष्ट अंग, धूलमें लिपटे भागते हुये ॥ ३ ॥ हे मैथिलेश्वर ! जिसके पीछे ताली बजाते कोलाहल करते, हँसते, बालक भगे जाते हैं ॥४॥ उसको देखकर कृष्णका पुत्र, बड़ा बुद्धिमान् प्रद्युम्न उद्धवजीसे बोला कि यह पुष्ट शरीर बालककी तरह उन्मत्त पिशाच सा कौन भगा जाता है ! ॥५॥ देखो मनुष्योंने तिरस्कार भी किया, तो भी हँसता, बडा आनन्द भरा यह कौन है? ॥६॥ उद्धवजी बोले ये परमहंस अवधूत हरिकी कला सदा आनन्दरूप दत्तात्रेय महामुनि हैं ॥७॥ इनके प्रसादसे सहस्रार्जुन, यदु, प्रह्लादादिक बहुतसे राजा सिद्धिको प्राप्त हो गये ॥८॥ नारदजी कहते हैं-ऐसे सुनकर कृष्ण पुत्र उनको प्रणाम कर पूजन करके सिंहासन पर बैठाकर यह वचन बोला ॥ ९ ॥

हे भगवन् ! मेरे हृदयमें स्थित एक सन्देह है, उसका नाश करिये, जगत्को, ब्रह्मके मार्गको, और तत्व जो हैं, उनको कहिये॥१०॥ तब तत्तात्रेय बोले--जबतक वस्तु दिखाई नहीं दे, तबतकही उल्कासे प्रयोजन है, महा आनन्द प्राप्त होनेपर उल्कासे क्या प्रयोजन है ॥११॥ तबतक जगत् है, जबतक तत्व नहीं जाने, परब्रह्मको जाननेके बाद जगत्से क्या प्रयोजन है ॥१२॥ मुखका प्रतिबिम्ब है नहीं किन्तु दर्पणमें दिखाई देता है, और शरीर नहीं दीखता है, ऐसेही प्रधानार्थमें जीवको जानो, ज्ञानसे यह परात्पर है ॥१३॥ जैसे सूर्योदय होनेपर सब वस्तु आँखोंसे दीखती है, वैसेही ज्ञान सूर्यके उदय होनेपर जीवसे ब्रह्म तत्व दीखता है, चारों ओर नहीं दीखता है ॥१४॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे यादवेश्वर प्रद्युम्न सुनकर उनको नमस्कार करके द्रविड देशोंमें वैकुण्ठ पर्वतको चले गये ॥१५॥ सत्यवाणी जिसकी ऐसा सत्यवाक् नामका राजा धर्म तत्वको जाननेवाला राजर्षि द्रविड देशका ईश्वर,

॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ भगवन्मेहृदिस्थंवैसन्देहंनाशयप्रभो ॥ जगतोब्रह्ममार्गाश्चहेत्वंतंब्रूहितत्त्वतः ॥ १० ॥ दत्तात्रेयउवाच ॥ दृश्यतेनवसुर्या-वत्तावदुल्काप्रयोजनम् ॥ प्राप्तेवशेमहानंदेथोल्कायाःकिंप्रयोजनम् ॥ ११ ॥ तावदास्तेजगत्साधोयावत्तत्त्वंनवेद्यते ॥ परस्मिन्ब्रह्मणिप्राप्ते-जगतःकिंप्रयोजनम् ॥ १२ ॥ आस्यबिंबोयथादर्शेपश्यतेनपरंवपुः ॥ प्रधानार्थैतथाजीवोज्ञानेनासौपरात्परम् ॥ १३ ॥ यथासूर्योदयेसर्व वस्तुनेत्रेणदृश्यते ॥ तथाज्ञानोदयेब्रह्मतत्त्वंर्जीवेनसर्वतः ॥१४॥श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वाथतंनत्वाप्रद्युम्नोयादवेश्वरः ॥ वैकुण्ठाद्रिंद्राविडेषु ययौसेनासमन्वितः ॥ १५ ॥ सत्यवाग्धर्मतत्त्वज्ञोराजर्षिर्द्राविडेश्वरः ॥ प्रद्युम्नंपूजयामासभक्त्यापरमयायुतः ॥ १६ ॥ श्रीशैलदर्शनंकृत्वा गिरिशालयमद्भुतम् ॥ स्कंदंवीक्ष्यततोराजन्ययौपंपासरोवरे ॥ १७ ॥ गोदावरींभीमरथींगतःश्रीद्वारकेश्वरः ॥ प्रदर्शयन्हरेस्तीर्थंमहेंद्राद्रिं ततोययौ ॥ १८ ॥ महेंद्राद्रिस्थितंरामंभार्गवंक्षत्रियांतकम् ॥ नत्वाप्रदक्षिणीकृत्यतत्रतस्थौहरेःसुतः ॥ १९ ॥ रामस्तस्याशिषंदत्त्वायादवानां बलायवै ॥ चतुरंगायराजेंद्रयोगेनार्हणमाचरत् ॥ २० ॥ भक्तसूपःप्रलेहश्चरुदिकादधिशाकजाः ॥ शिखरिण्यवलेहश्चबालकाचक्षुखेरिणी ॥२१॥ त्रिकोणशर्करायुक्तोपटकोमधुशीर्षकः ॥ फेणिकाचोपरिष्टश्चशतपत्रःसछिद्रकः ॥२२॥ चक्राभचिह्नकाचेत्थंसुधा कुंडलिकाःस्मृताः ॥ घृतपूरोवायुपूरस्तथाचन्द्रकलाःस्मृताः ॥ २३ ॥

उसने परम भक्तिसे प्रद्युम्नका पूजन किया ॥१६॥ फिर महादेवके आलय श्रीशैल नामके पर्वतका दर्शन करके, वहाँ स्वामि कार्तिकका दर्शन करके पम्पा सरोवरको चल गये॥१७॥ फिर प्रद्युम्न गोदावरी भीमरथीपर गये, फिर द्वारकानाथका दर्शन करते महेन्द्राचलपर आये ॥ १८ ॥ उस पर्वतपर स्थित क्षत्रियोंके काल भृगुवंशी परशुरामको प्रणामकर प्रदक्षिणा करके उनके सन्मुख प्रद्युम्न बैठे ॥१९॥ परशुरामजीने प्रद्युम्नको आशीर्वाद देकर यादवोंकी चतुरंगिणी सेनाके लिये अपने योग बलसे भोजन प्रगट किये ॥२०॥ भात दाल, चटनी दहीकी सामग्री, अनेक शाक, सिखरन, शरबत, मुरब्बा ॥ २१ ॥ त्रिकोण, गुझिया, घेवर, खाजा, फेनी, पूआ, माल पूआ, शतपत्र, ॥ २२ ॥ रामचक्रचिह्निका, अमृतकुण्डली, घृतपूर, वायुपूर, बडा, चन्द्रकला ॥ २३ ॥

दधि स्थूली, कर्पूरनाडी, खुरमा, गोधूमपरिखा, सुफलाढ्या ॥२४॥ दधिरूप, मोदक, शाक, अचार, मासे, खडी, मांडे, मलाई, खीर, दही, मक्खन ॥२५॥ घृत, मन्दूरी, कूपिका,
पापड, लसिका, सुवृत् संधाय ॥२६॥ अचार मुरब्बा अनक फल, मोहन भोग, लवणकी सामग्री ॥२७॥ कसैले, मीठे, फीके, चटपटे, खट्टे, कडुओ अनेक प्रकारके ये छप्पन भोग प्रगट
किये ॥२८॥ अपने योग बलसे इन सभीके पर्वतकेसे ढेर लगा दिये उनसे सब सेनाको भोजन कराया, कोई वस्तु कमती नहीं हुई ॥२९॥ परशुरामजीका वैभव देखकर सब विस्मय
करने लगे, यादवों सहित प्रद्युम्न नमस्कार करके ॥ ३० ॥ सभीके सुनते २ यह पूछने लगे कि, हे भगवन्! आपने सबको परम उत्तम भोजन दिया ॥३१॥ जितनी समृद्धि और
सिद्धि हैं, वे सब आपके चरणोंमें बसती हैं हे, प्रभो ! सब हरिके भक्तोंमें हरिका प्यारा भक्त कौनसा है, यह मुझको कहिये, हे विप्रेन्द्र आप परावर वित्तम हो ॥३२॥ तब परशुरामजी

दधिस्थूलीश्चकर्पूरनाडीस्थंखण्डमण्डलम् ॥ गोधूमपरिखाश्चैवसुफलाढ्यास्तथैवच॥२४॥दधिरूपोमोदकश्चशाकसौधानएवच ॥ मण्डकापा-
यसंयुक्तंदधिगोघृतमेवच ॥ २५ ॥ हैयंगववीनमंडूरीकूपिकापर्पटस्तथा ॥ शक्तिकालसिकाचैवसुवृत्तसंधायएवहि ॥२६॥ सुफलैश्चसितायुक्तैः
फलानिविविधानिच ॥ यथामोहनभोगैश्चलवणंचतथैवच॥२७॥ कषायौमधुरस्तिक्तःकटुरम्लस्त्वनेकधा ॥ षट्पंचाशत्तमश्चैवह्येतेभोगाःप्रकी-
र्तिताः॥२८॥एतेषांभार्गवःशैलानकार्षीद्योगमास्थितः॥ सैन्येसंभोजितेतत्रहस्तन्यूनानतेभवन्॥२९॥वैभवंभार्गवस्यापिदृष्ट्वासर्वेतिविस्मिताः॥
प्रद्युम्नस्तंनमस्कृत्ययादवैःसहितस्तदा ॥ ३० ॥ सर्वेषांशृण्वतांराजन्पप्रच्छेदंहरेःसुतः ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ भगवन्भवतादत्तंसर्वेभ्योभोजनं
परम् ॥ ३१ ॥ समृद्धयःसिद्धयश्चत्वदंघ्रावास्थिताःप्रभो ॥ सर्वेषांहरिभक्तानांप्रियोभक्तस्तुकोहरेः ॥ एतन्मेब्रूहिविप्रेंद्रत्वंपरावरवित्तमः
॥३२॥ परशुरामउवाच ॥ त्वंप्रभोकिंनजानासिलोकवत्पृच्छसेथमाम् ॥ लोकसंग्रहमेवारात्कुर्वन्विचरसिक्षितौ ॥३३॥ निष्किंचनोहरिपदा-
ब्जपरागलुब्धःश्रीमत्कथाश्रवणकीर्तनतत्परोयः ॥ तद्रूपसिंधुलहरीविनिमग्नचित्तःश्रीकृष्णचन्द्रदयितःकथितःसभक्तः ॥ ३४ ॥ दांतोमहा-
नखिलजंगमवत्सलोयंशांतस्तितिक्षुरतिकारुणिकःसुहृत्सत् ॥ लोकंपुनातिनिजपादरजोभिराराच्छ्रीकृष्णचन्द्रदयितःकथितःपरेश ॥ ३५ ॥
यःपारमेष्ठ्यमखिलंनमहेंद्रधिष्ण्यंनोसार्वभौममनिशंनरसाधिपत्यम् ॥ नोयोगसिद्धिमभितोनपुनर्भवंवावांछत्यलंपरमपादरजःसभक्तः ॥३६॥

बोले हे प्रभो ! आप क्या नहीं जानते हो, सो मनुष्यकी तरह मुझसे पूछते हो, मनुष्योंको सिखानेके लिये ही संग्रह करते पृथ्वीमें विचरते हो ॥३३॥ जो निष्किंचन होवे, हरिचरण
कमलका भ्रमर होवे, कथाके श्रवण और कीर्तनमें तत्पर होवे, भगवान् हरिके रूप समुद्रकी लहरीमें डूबा जिसका चित्त होवे, वह हरिका प्यारा है ॥ ३४ ॥ इन्द्रियोंका दमन करने
वाले होवे, महत्पुरुष होवे, सब जीवोंपर प्यार करे, शांत, तितिक्षु (सहनशील) करुणावान्, अतिकरुणावान्, सुहृत् वह अपने चरण कमलकी रजसे भुवनको पवित्र करता है वह,
हरिका प्यारा है ॥३५॥ जो ब्रह्माके पदकी, चक्रवर्ती राज्यकी, रसातलके अधिपत्यकी इन्द्र पदवीकी, योग सिद्धिकी, मुक्तिकी, किसीकी कामना नहीं करता है, जो उनके चरण
रजको प्राप्त हुआ है, वह भक्त हरिका प्यारा है ॥ ३६ ॥

जो निष्किंचन कर्मफलकी इच्छा नहीं करते हैं, वे हरिजन मुनीश्वर महत्पुरुप हरिके चरणरजको प्राप्त होते हैं, वे ही इस पदरजको भोगते हैं, और उस नैरपेक्ष सुखको जानते हैं, उनसे अन्य उस सुखको नहीं जानते हैं ॥३७॥ भक्तसे प्रिय पुरुषोत्तमके कोई नहीं है, न ब्रह्माजी, न शिवजी, न लक्ष्मीजी न संकर्षणजी, हैं, भक्तोंसे बंधा है, चित्त जिनका, सकल लोक जनके चूडामणि, श्रीकृष्ण भक्तोंके पीछे २ चलते हैं ॥३८॥ अपने भक्तोंके पीछे चलते लोकोंको पवित्र करते हैं, हरि भगवान् अपने भक्तोंमें अपनी रुचिको दिखाते विचरते हैं, इसी से अत्यन्त भजन करनेवालोंको मुक्ति तो दे देते हैं, भक्तियोग नहीं देते हैं॥३९॥नारदजी कहते हैं, इस प्रकार सुनकर प्रद्युम्न परशुरामको नमस्कार करके पूर्व दिशामें गंगासागर संगमको चले गये ॥४०॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां नारदबहुलाश्वसंवादे भाषाटीकायां द्रविडदेश विजयो नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ नारदजी कहते हैं कि इस प्रकार दिग्विजयके बहानेसे बारम्बार पृथ्वीका भार उतारते प्रद्युम्न भगवान् उसके बाद अंगदेशको चले गये ॥ १ ॥ यादवोंने अंगदेशके अधीशको वनमें पकड लिया,

निष्किंचनाः स्वकृतकर्मफलैर्विरागायत्तत्पदंहरिजनामुनयोमहांतः ॥ भक्ताजुपंतिहरिपादरजःप्रसक्ताअन्येविदंतिनसुखंकिलनैरपेक्ष्यम् ॥३७॥
भक्तात्प्रियोनविदितःपुरुषोत्तमस्यशंभुर्विधिर्नंचरमानचरौहिणेयः॥भक्तानुव्रजतिभक्तनिबद्धचित्तचूणामणिःसकललोकजनस्यकृष्णः ॥३८॥
गच्छन्निजंजनमनुप्रपुनातिलोकानावेदयन्हरिजनेस्वरुचिंमहात्मा॥तस्मादतीवभजतांभगवान्मुकुंदोमुक्तिंददातिनकदापिसुभक्तियोगम् ॥३९॥
श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वायादवेंद्रोनत्वाश्रीभार्गवोत्तमम् ॥ प्राच्यांदिशिययौराजन्गंगासागरसंगमम् ॥४०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांवि-
श्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेद्राविडदेशविजयोनामचतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥ श्रीनारदउवाच ॥ दिग्जयस्यमिषेणासौभूभारंहारयन्मुहुः ॥
प्रद्युम्नोभगवान्साक्षादंगदेशंततोययौ ॥ १ ॥ अंगेशोंतःपुराधीशोगृहीतोयादवैर्वने ॥ सोपितस्मैबलिंप्रादात्प्रद्युम्नायमहात्मने ॥२॥ उड्डीश
डामराधीशोबृहद्बाहुर्महाबलः ॥ नददौसबलिंतस्मैप्रद्युम्नायमदोत्कटः ॥३॥ प्रद्युम्नप्रेषितोवीरः सांबोजांबवतीसुतः ॥ एकाकीप्रययौधन्वीरथे-
नादित्यवर्चसा ॥४॥ छादयामासबाणौघैर्डामरंनगरंनृप ॥ गिरिंतुपारपटलैर्जीमूतइवसर्वतः॥५॥ तदातु डमराधीशोधर्षितःसन्कृतांजलिः ॥
बलिंददौनमस्कृत्यप्रद्युम्नायमहात्मने ॥६॥ वङ्गदेशाधिपोवीरोवीरधन्वामदोत्कटः ॥ आययौसंमुखेयोद्धुमक्षौहिण्यावृतोबली ॥७॥ चन्द्र-
भानुर्हरेःपुत्रःप्रद्युम्नस्यप्रपश्यतः ॥ बिभेदतद्बलंबाणैःकुवाक्यैर्मित्रतामिव ॥ ८ ॥

जिसने आकर प्रद्युम्नको भेंट दी ॥ २ ॥ उड्डीश डामर (उडीसा) देशके स्वामी महाबली मदोत्कट बृहद्बाहुने प्रद्युम्नको भेंट नहीं दी ॥३॥ तब प्रद्युम्नका भेजा हुआ जाम्बवती का पुत्र धनुषधारी साम्ब अकेलाही सूर्यकेसे तेजवाले रथमें बैठकर गया ॥४॥ सो हे नृप ! उसने अपने बाणोंके समूहसे डामरनगरको ढक दिया, जैसे घन तुषार पटलसे चारों ओरसे पर्वतको ढक देता है ॥५॥ तबही डामराधीशने धर्षित होकर हाथ जोड प्रद्युम्नको भेंट देकर प्रणाम किया ॥ ६ ॥ फिर वंगदेशका मदोत्कट बड़ा बली राजा वीर धन्वा एक अक्षौहिणी सेना लेकर सन्मुख होकर युद्धको आया ॥७॥ तब हरिके पुत्र चन्द्रभानुने प्रद्युम्नके देखते २ अपने बाणोंसे उसकी सेनाको बेध दिया, जैसे कुवाक्योंसे मित्रताको बेधते हैं ॥८॥

बाणोंसे कटे हाथियोंसे मस्तकोंसे गिरे हुये झलकते हुये मोती भूमिमें पडे लगे जैसे रात्रिमें खिले हुये तारागण लगते हैं ॥ ९ ॥ अनेक रथी, अनेक घोडे, अनेक हाथी, अनेक पैदल सैनिक, उनके शिर बाणोंके प्रहारसे कोंहडके टुकडोंकी तरह गिरने लगे॥ १०॥क्षणमात्रमेंही सेनाके घावोंके निकले रुधिरकी नदी बहने लगी, जो मनुस्वियोंको हर्ष करी और कायरोंको भयकरी है ॥ ११॥ उठे दौडते कबन्धोंसे, मुण्डोंसे, हार, केयूर, कुण्डलोंसे किरीट, कुंडल, शस्त्रोंसे महामारीसी पृथ्वी शोभित हुई ॥१२॥ वहाँ कूष्माड, उन्माद, वेताल भैरव, ब्रह्मराक्षस, ये सब महादेवजीकी रुण्डमाला बनानेके लिये बडे २ वीरोंके मुण्डोंको लेने लगे ॥१३॥ ऐसे जब सब सेना मारी गई, तब वीर धन्वा आया, तब उसने शीघ्रही वज्रके तुल्य गदा लेकर चन्द्रभानुके मारी ॥१४॥ गदाके प्रहारके मारे चन्द्रभानु कुछभी चलायमान नहीं हुआ, फिर चन्द्रभानुने गदा लेकर वीर धन्वाको भुजान्तरमें मारा ॥१५॥

करिणांबाणभिन्नानांशिरसोमौक्तिकानिच ॥ प्रस्फुरंतिनिपेतुःकौरात्रौतारागणाइव ॥ ९ ॥ निपेतूरथिनोनेकागजाश्वाश्वपदातयः॥ तद्बाणैश्छिन्नशिरसःकूष्मांडशकलाइव ॥ १० ॥ क्षणमात्रेणतत्सैन्यक्षतजानांनदीह्यभूव ॥ मनस्विनांहर्षकरीत्रस्तानांभयकारिणी ॥ ११ ॥ मुण्डैःकबन्धैर्धावद्भिर्हारकेयूरकुंडलैः ॥ किरीटैःकङ्कणैःशस्त्रैर्महामारीवभूर्बभौ ॥१२॥ कूष्मांडोन्मादवेतालभैरवाब्रह्मराक्षसाः ॥ शिरांसिजगृहुर्वैगाद्धरमालार्थहेतवे ॥ १३ ॥ इत्थंनिपातितेसैन्येवीरधन्वासमागतः ॥ चन्द्रभानुंतताडाशुगदयावज्रकल्पया ॥१४॥ तद्गदातिप्रहारेणनचचालहरेः सुतः ॥ चन्द्रभानुर्गदांनीत्वातंतताडभुजांतरे ॥ १५ ॥ गदाप्रहारव्यथितोमूर्च्छितोधरणीतले ॥ पपातपादपइवप्रोद्वमन्रुधिरंमुखात्॥ १६ ॥ लब्धसंज्ञोमुहूर्तेनवंगदेशाधिपोनृपः ॥ प्रययौशरणंसोपिप्रद्युम्नस्यमहात्मनः ॥१७॥ यातेदत्तबलौराजन्नगरंवीरधन्वनि ॥ ब्रह्मपुत्रंसमुत्तीर्यप्रद्युम्नोमितविक्रमः ॥१८॥ आशीमाधिपतिंबिम्बंगृहीत्वायादवेश्वरः ॥ बलिमादाययदुभिःकामरूपंसमाययौ ॥१९॥ कामरूपेश्वरःपुंड्रऐंद्रजालविशारदः ॥ निर्गतःसेनयासार्द्धंयोद्धुंप्रद्युम्नसंमुखे ॥ २० ॥ आशीमानांयदूनांचघोरंयुद्धंबभूवह ॥ बाणैःकुठारैःपरिघैःशूलैःखड्गर्ष्टिशक्तिभिः ॥ २१ ॥ पुण्ड्रोविद्याश्वकाराशुपैशाचोरगराक्षसीः ॥ ततोगुह्यकगंधर्वासर्वतोमैथिलेश्वर ॥२२॥ प्रधावंतोरणेराजन्पिशाचाःपिशिताशनाः ॥ कोटिशः कोटिशोंगारान्क्षेपयंतोमुहुर्मुहुः ॥ २३ ॥

तब वीर धन्वा चन्द्रभानुकी गदाके प्रहारसे मूर्च्छित होकर मुखसे रुधिर वमन करता पेड़सा गिर पडा ॥१६॥ जब एक मुहूर्तमें उसकी संज्ञा लौटी, तब वह वंगदेशका राजा भी प्रद्युम्नकी शरण आया ॥ १७ ॥ जब भेंट देकर वीर धन्वा अपने नगरको चला गया तब ब्रह्मपुत्र नामके नदको उतरकर अमित पराक्रमी प्रद्युम्न ॥ १८ ॥ फिर आशीमके राजा बिम्बको पकडकर उससे भेंट लेकर यदुपति यादवोंसहित कामरूप देशको चला गया ॥१९॥ इन्द्रजालमें चतुर कामरूप देशका राजा पुण्ड्र सेना लेकर प्रद्युम्नके सन्मुख युद्ध करने के लिये आया ॥ २० ॥ तब बाण, कुठार, बडे त्रिशूल, खड्ग, पोलादी, बर्छी इनसे आशीमों और यादवोंका बडा युद्ध हुआ ॥ २१ ॥ तब पौंड्रराजाने पिशाची, सार्पी, राक्षसी बड़ी २ मायाकी, तब तो हे मैथिलेश्वर ! गुह्यक गन्धर्व सब ओरसे ॥ २२ ॥ निकल २ कर आने लगे, मांसके खानेवाले करोडों पिशाच बारम्बार अंगार फेंकने लगे ॥ २३ ॥

एकही क्षणमें सब सेना विषका वमन करने लगी, फुंकार मारते हुये सर्प आगये ॥२४॥ फिर गधोंपर चढे, टेढे दाँतोंवाले, जीभ जिनकी लटक रहीं, ऐसे बडे भयंकर युद्धमें मनुष्योंको चबाते हुये, इधर उधरमें दौडते राक्षस आये ॥२५॥ सिंहके मुखके यक्ष आये, कोई घोडाके मुखके, त्रिशूल लिये छेद लो, भेद लो, ऐसे गर्जते आये ॥२६॥ एकही क्षणमें मेघोंसे आकाश भर गया, पवनसे उडी रजसे आकाशमें अन्धकार होगया ॥२७॥ भोज, वृष्णि, अन्धक मधु, शूरसेन, दशार्हक, ये सब यादवोंमें उत्तम भयभीत होगये, उन्होंने शस्त्र डाल दिये ॥२८॥ तब कृष्णका दिया धनुष लेकर प्रद्युम्न प्रतिकार करने लगा, हे मैथिल ! वैष्णवी सत्वात्मिका नामकी जो माया है, उसको बाणोंमें जोडकर चलाई ॥२९॥ बाणोंसे पिशाचोंको, सर्पोंको, यक्षोंको, राक्षसोंको, गन्धर्वोंको, अन्धकारको दिव्य प्रभाववाले बाणोंसे नष्टकर दिया, जैसे किरणोंसे सूर्य कुहरेंके मेघोंको नष्ट करता है ॥३०॥ बाणोंसे पुण्ड्र

क्षणमात्रेणतत्सैन्यंवमंतोगरलंमुखात् ॥ फूत्कारमपिकुर्वंतोदंतशूकाःसमागताः ॥२४॥ खरारूढादंतवक्रालललज्जिह्वाभयंकराः ॥ चर्वयंतोनरान्यु-द्धेधावंतोराक्षसास्ततः ॥२५॥ यक्षाश्चसिंहवदनातुरंगवदनानृप ॥ छिंधिभिंधीतिगर्जंतःशूलहस्ताइतस्ततः ॥ २६ ॥ क्षणमात्रेणमेघानांसमूहै-श्छादितंनभः ॥ अन्धकारोह्यभूद्राजन्रजसावातवेगतः ॥२७॥ भोजवृष्ण्यंधकमधुशूरसेनदशार्हकाः ॥ भयंप्रापुर्महायुद्धेन्यस्तशस्त्रायदूत्तमाः ॥ २८ ॥ कृष्णदत्तंधनुःकार्ष्णिरादायप्रतिकारवित् ॥ सत्त्वात्मिकांमहाविद्यांबाणैःप्रायुंक्तमैथिल ॥२९॥ बाणैःपिशाचानुरगान्सयक्षात्रक्षांसि गन्धर्वघनांधकारान् ॥ बिभेददिव्यैःप्रभवैर्यथाहिनीहारमेघान्किरणैर्विवस्वान् ॥ ३० ॥ बाणैश्चपुण्ड्रसरथंसवाहनंतंभ्रामयित्वाघटिकाद्वयंखे ॥ निपातयामासरणेसपत्नंपद्मंपृथिव्यामिवमारुतःकिल ॥ ३१ ॥ बुद्धस्तदातंशरणंसमेत्यप्रधर्षितःसद्यउपायनानि ॥ लक्षैर्हयानामयुतैर्गजानां युतानिदत्त्वाप्रणनामकार्ष्णिम् ॥ ३२ ॥ विपाशांसतदोत्तीर्यसैन्यैःशोणनदंनृप ॥ कैकयानाययौधन्वीप्रद्युम्नोयदुनन्दनः ॥३३॥ कैकयस्या-धिपोराजाधृतकेतुर्महाबलः ॥ वसुदेवस्वसुःसाक्षाच्छ्रुतकीर्तेःपतिर्महान् ॥ ३४ ॥ प्रद्युम्नमर्हयामासधृतकेतुःसयादवम् ॥ भक्त्यापरमयाराज-ञ्छ्रीकृष्णस्यप्रभाववित् ॥ ३५ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेकैकयविजयोनामपञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

श्रीनारदउवाच ॥ दुंदुभीन्नादयंस्तस्मात्प्रद्युम्नोयदुनन्दनः ॥ मैथिलानाययौराजंस्तवदेशान्सुखावृतान् ॥ १ ॥

राजाको रथ घोडों समेत दो घडी घुमाकर रणमें पटक दिया, जैसे पवन कमलके फूलको पटकता है ॥३१॥ जब प्रबोध हुआ, तब आकर भेंट दी, लाख घोडे, दश हजार हाथी देकर पुण्ड्र राजाने प्रद्युम्नको नमस्कार किया ॥३२॥ फिर विपाशा नदीको, सौन भद्रनदको सेना सहित पार करके यदुनन्दन प्रद्युम्न कैकय देशको चला गया ॥३३॥ कैकय देशका राजा धृष्टकेतु महाबली श्रुतकीर्ति वसुदेवकी बहिनका पति ॥ ३४ ॥ श्रीकृष्णके प्रभावको जाननेवाला था, उसने सेना सहित प्रद्युम्नका बडा सत्कार किया ॥ ३५॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डे भाषाटीकायां कैकय विजयो नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ वहाँसे नगाडे बजाता यदुनन्दन प्रद्युम्न जो तुम्हारे सुखावृत मैथिल देश हैं, उन देशोंमें आया ॥ १ ॥

बडे ऊँचे कलशदार सुवर्णके महलोंसे शोभित मिथिलापुरीको देखकर प्रद्युम्न उद्धवसे बोले॥२॥ प्रद्युम्न बोले--हे मंत्रिन् ! यह मेरे सामने किसकी पुरी दीखती है, जो बहुत महलोंसे शोभित है, जैसी भोगवती नागोंकी पुरी होवे ॥३॥ तब उद्धवजी बोले कि, हे मानद ! जनक राजाकी मिथिलापुरी है, धृति नामका इस पुरीका राजा है, यह महा भागवत है, ज्ञानी है, सो विराजता है ॥४॥ सर्व धर्म धारियोंमें श्रेष्ठ है, श्रीकृष्णका इष्टी हरिका प्यारा है, उसका पुत्र बहुलाश्व है, जो बालकपनसे हरिका भक्त है ॥५॥ उसको अपना दर्शन देनेके लिये भगवान् आप आयेंगे, राजपुत्र बहुलाश्वको और श्रुत देव ब्राह्मणको ॥ ६ ॥ द्वारकामें श्रीकृष्ण भगवान् इनकी अत्यन्त याद किया करते हैं, देवेन्द्रभी उसको जीत नहीं सकता है, मनुष्योंकी तो क्या बात है ॥ ७ ॥ यह धृतिराजा परम भक्तिसे श्रीकृष्णको वश करनेवाला है, नारदजी कहते हैं-उसको सुनकर भगवान् प्रद्युम्न उद्धवको साथ लेकर अपना शिष्य

सुवर्णसौधैरत्युच्चैःसघटैराजितांपुरीम्॥मिथिलांवीक्ष्यतामाराद्उद्धवंप्राहमाधवः ॥२॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ कस्यैषानगरीमंत्रिन्दृश्यतेसांप्रतंमया ॥ राजतेबहुसौधैश्चपुरीभोगवतीयथा ॥ ३ ॥ उद्धवउवाच ॥ जनकस्यपुरीह्येषामिथिलानाममानद ॥ मिथिलेंद्रोधृतिस्तस्यांमहाभागवतःकविः ॥ ४ ॥ सर्वधर्मभृतांश्रेष्ठःश्रीकृष्णेष्टोहरिप्रियः ॥ बहुलाश्वस्तस्यसुतआबाल्याद्भक्तिकृद्धरेः ॥ ५ ॥ तस्मैस्वदर्शनंदातुंभगवानागमिष्यति ॥ बहुलाश्वंराजपुत्रंश्रुतदेवंद्विजंतथा ॥ ६ ॥ स्मरत्यलंद्वारकायांश्रीकृष्णोभगवान्हरिः ॥ जेतुंनशक्योदेवेंद्रैर्मनुजैश्चकुतःप्रभो ॥ ७ ॥ धृतिः परमयाभक्त्याश्रीकृष्णवशकारकः ॥ श्रीनारदउवाच॥ तच्छ्रुत्वाभगवान्कार्ष्णिरुद्धवेनसमन्वितः ॥ स्वशिष्यमुद्धवंकृत्वाधृतिंद्रष्टुंसमाययौ ॥ ८ ॥ भक्तेरेवपरीक्षार्हिकर्तुंतस्यनृपस्यच ॥ ददर्शमिथिलांकार्ष्णिरुद्धवेनसमन्वितः ॥ ९ ॥ चर्मशस्त्रधृतावीरामालातिलकशोभिताः ॥ जपंतःकृष्णनामानिसर्वेवैयत्रमालया ॥ १० ॥ लिखितानिचनामानिद्वारिद्वारिहरेर्नृणाम्॥ तथाश्रीकृष्णचित्राणिलिखितानिशुभानिच॥११॥ कुड्येकुड्येगृहाणांचगदापद्मानिमानद ॥ दशावतारचित्राणिशंखचक्राणियत्रवै॥१२॥ तुलसीमंदिराणीत्थंप्रांगणेचगृहेगृहे॥एवंपश्यन्ससौधानिमिथिलायांजनान्बहून् ॥ १३ ॥ मालातिलकसंयुक्तान्सर्वाभक्तान्ददर्शह ॥ तिलकैर्द्वादशाख्यैश्चयुक्तैःकुंकुमजैर्वृतान् ॥ १४ ॥ गोपीचंदनमुद्राभिश्चर्चिताञ्शांतविग्रहान् ॥ ऊर्ध्वपुंड्रधरान्विप्रान्हरिमंदिरचित्रितान् ॥ १५ ॥

बनाकर धृतिराजाको देखनेके लिये आये ॥८॥ उस राजाकी परीक्षा करनेके लिये उद्धव सहित प्रद्युम्न मिथिलापुरीको देखने लगे, उद्धवको शिष्य बनाया आप ब्रह्मचारी बने॥९॥ जिसके निवासी सब वीर चर्मके शस्त्रोंको बांधे हैं, और माला तिलक धारण किये हुये हैं, सभी यहाँ माला लिये कृष्णके नाम जपते हैं ॥१०॥ और जिसके द्वार द्वारपर हरिके नाम लिखे हैं, और वैसेही श्रीकृष्णके शुभ चित्र लिखे हैं ॥११॥ घरोंकी भीत भीतपर गदा, पद्म, शंख, चक्र, और दशावतारोंके चित्र लिखे हैं॥१२॥ आंगन २ और घर घरमें तुलसीके मंदिर बने हैं, उन महलोंके बहुतसे मनुष्योंको देखते २ मिथिलामें गये ॥ १३ ॥ जो माला तिलक धरे सब भक्त हैं, जिनके केसरके बारह २ तिलक लगे हैं ॥१४॥ गोपीचन्दनकी मुद्राओं (छापों) से चर्चित शान्तिस्वरूप उर्ध्व पुण्ड्रधारी ब्राह्मण हरि मंदिरोंसे चित्रित हुये ॥ १५ ॥

उधर्वपुंड्र गदाकी मुद्राको जो ललाटमें धारण किये हैं, और हरिके नाम शंख, चक्र, पद्म, मत्स्य, कूर्म दोनों भुजाओंपर धारण किये हैं ॥१६॥ कोई धनुप वाणको शिरपर और हृदयमें नन्दक, हल, मूसल हैं, उनको प्रद्युम्न देखने लगा ॥ १७ ॥ कोई गलीमें भागवत सुनते हैं, कोई महाभारत इतिहास, हरिवंश सुनते हैं ॥ १८ ॥ कई सनत्कुमार संहिता, वशिष्ठ संहिता, याज्ञवल्क्य संहिता, पराशर संहिता, गर्गसंहिता, पुलस्त्यसंहिता, धर्मसंहिता पढते हैं, सुनते हैं ॥१९॥ कहीं ब्रह्मपुराण १, पद्मपुराण, २ विष्णुपुराण ३, शिवपुराण४ लिंगपुराण ५, गरुडपुराण ६, नारदपुराण ७, भागवतपुराण ८, अग्निपुराण ९, स्कन्दपुराण १०, ॥ २० ॥ भविष्यपुराण ११, ब्रह्मवैवर्त पुराण १२, मार्कण्डेयपुराण १३, वामन पुराण १४, वाराहपुराण १५, मत्स्यपुराण १६, कूर्मपुराण १७, और ब्रह्माण्डपुराण १८, इन अठारह पुराणोंको मनुष्य सुनते हैं ॥२१॥ गली गलीमें घर घरमें वाल्मीकीय रामायण

गदांमुद्रांललाटेचऊर्ध्ववाहरिनामतः ॥ चक्रंशंखंचकमलकूर्ममत्स्यंभुजद्वये ॥ १६ ॥ दधतश्चधनुर्बाणंमूर्ध्निश्रीनन्दकंहृदि॥मुसलंचहलंराज-न्नाथकार्ष्णिर्ददर्शह ॥१७॥ तस्यां वीथ्यांभागवतंकेचिच्छृण्वन्तिमानवाः ॥ इतिहासंभारतंचहरिवंशंतथापरे ॥१८॥ सनत्कुमारवासिष्ठया-ज्ञवल्क्यपराशराः ॥ गर्गपौलस्त्यधर्मादिसंहिताःकेपठंतिवै ॥१९॥ ब्राह्मंपाद्मंवैष्णवंचशैवंलैंगंसगारुडम् ॥ नारदीयंभागवतमाग्नेयंस्कंदसंज्ञि-तम् ॥ २० ॥ भविष्यब्रह्मवैवर्तमार्कण्डेयंसवामनम् ॥ वाराहमात्स्यकौर्माणिब्रह्मांडाख्यंतथैवच ॥२१॥ वीथ्यांवीथ्यांस्मशृण्वंतिजनाः सर्वे गृहेगृहे ॥ वाल्मीकिकाव्यंकेचिद्वैश्रीरामचरितामृतम् ॥ २२ ॥ स्मृतीःपठंतिकेचिद्वैकेचिद्वेदत्रयींद्विजाः ॥ केचित्कुर्वंतियज्ञंवैवैष्णवंमंगला-यनम् ॥ २३ ॥ राधाकृष्णेतिकृष्णेतिकेवदंतिमुहुर्मुहुः ॥केचिन्नृत्यंतिगायंतिहरिकीर्तनतत्पराः॥२४॥मृदंगतालवादित्रैः॥ कांस्यवीणामनो-हरैः ॥ मंदिरेमंदिरेविष्णोःकीर्तनंश्रूयतेजनैः ॥ २५ ॥ नवलक्षणसंयुक्तांभक्तियांप्रेमलक्षणाम् ॥ कुर्वंतिमैथिलाराजन्मिथिलायांगृहेगृहे ॥२६॥ एवंतुनगरींदृष्ट्वाप्रद्युम्नोभगवान्हरिः ॥ राजद्वारंसमेत्याशुमैथिलेशंददर्शह॥२७॥मैथिलेशसभायांतुवेदव्यासःशुकोमुनिः॥याज्ञवल्क्योवसिष्ठ-श्चगौतमोहंबृहस्पतिः ॥२८॥ अन्येचमुनयस्तत्रवेदमूर्तिधराइव ॥ दृश्यंतेधर्मवक्तारोहरिनिष्ठाइतस्ततः ॥२९॥ मैथिलेंद्रधृतिस्तत्रभक्तिभावन तानन:॥ बलस्यपादुकापूजांकुरुतेविधिवन्नृप ॥ ३० ॥

रामचरित्रोंको सभी मनुष्य पढते हैं, सुनते हैं ॥२२॥ कोई द्विज स्मृति पढते हैं, कोई वेदत्रयी पढते हैं, कोई मंगलायन वैष्णव यज्ञ करते हैं ॥२३॥ कोई राधाकृष्ण राधाकृष्ण इस मन्त्रको वारम्वार जपते हैं, कोई गाते हैं, कोई नाचते हैं, और कोई हरिकीर्तनमें तत्पर ॥२४॥ मृदंग, झांझ, मंजीरा, वीणा, सितार, मनोहर बाजे बजाकर मन्दिरमें हरिका कीर्तन कर रहे हैं ॥ २५ ॥ नवलक्षणा भक्तिसहित, प्रेमलक्षणा भक्तिको मैथिल जन मिथिलापुरीमें घर २ में करते हैं ॥२६॥ इस प्रकारको नगरीको प्रद्युम्न भगवान्‌ने देखकर राजद्वारपर जाकर मिथिलेशको देखा ॥२७॥ मिथिलेशकी सभामें वेदव्यास, शुकदेव, याज्ञवल्क्य, वशिष्ठ, गौतम, नारद, बृहस्पति ये बैठे हैं ॥२८॥ और भी मुनीश्वर वेदमूर्तिके धारण करने-वाले धर्मके वक्ता हरिनिष्ठ इधर उधर दीखते हैं ॥२९॥ हे मैथिलेन्द्र ! वहाँ धृति नामका राजा भक्तिभावनामें तत्पर बलदेवजीकी पादुकाका विधिपूर्वक पूजन कर रहा है ॥ ३० ॥

मुक्तिके करनेवाले कृष्ण बलदेवके नामको जपता हुआ शिष्य सहित ब्रह्मचारीको आया देखकर उठकर खडा हुआ, और नमस्कार किया ॥३१॥ हे मैथिलेश्वर ! पाद्य अर्घादिकों से उनका पूजन करके हाथ जोड खडा हुआ, तब ब्रह्मचारीसे राजा यह वचन बोला ॥३२॥ कि आज मेरा जन्म सफल हुआ, आज मेरा मन्दिर विशद हुआ, देव, ऋषि, पितर, सब आपके आनेसे प्रसन्न हुये ॥३३॥ निर्विकल्प समदृष्टी आप जैसे साधु पृथ्वीपर हम जैसे गृहस्थी दीनोंपर कृपा करनेके लिये ही विचरते हैं ॥ ३४ ॥ तब ब्रह्मचारी बोले कि, हे नृप शार्दूल ! तुम धन्य हो, तुम्हारी मिथिलापुरी धन्य है,तुम्हारी प्रजा सब धन्य है,जिस तुम्हारी प्रजाके ऐसी विष्णुकी भक्ति है॥३५॥ तब जनक बोले-यह नगरी मेरी नहीं है न मेरी प्रजा है, न घर है, स्त्री पुत्र पौत्रादिक सब कुछ श्रीकृष्णका ही है, मेरा इनमें कुछ भी नहीं है ॥३६॥ परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण स्वयम् भगवान् हैं, असंख्य ब्रह्माण्ड

जपन्मुक्तिकरंनामश्रीकृष्णबलदेवयोः ॥ दृष्ट्वोत्थायनमश्चक्रेसशिष्यंब्रह्मचारिणम् ॥ ३१ ॥ तंपूजयित्वाविधिवत्पाद्याद्यैर्मैथिलेश्वरः कृतांज
लिपुटोराजातदग्रेचास्थितोभवत् ॥ ३२ ॥ जनकउवाच ॥ अद्यमेसफलंजन्ममंदिरंविशदीकृतम् ॥ देवर्षिपितरःसर्वेसंतुष्टा आगते
त्वयि ॥ ३३ ॥ निर्विकल्पाःसमदृशस्त्वादृशाःसाधवःक्षितौ ॥ निःश्रेयसायभगवन्दीनानांविचरंतिहि ॥ ३४ ॥ ब्रह्मचार्य्युवाच ॥ धन्यो-
सिराजशार्दूलधन्यातेमिथिलापुरी ॥ धन्याःप्रजाश्चतेसर्वाविष्णुभक्तिसमन्विताः ॥ ३५ ॥ जनकउवाच ॥ ममेयंनगरीनास्तिनप्रजा
नगृहंधनम् ॥ कलत्रपुत्रपौत्रादिसर्वंकृष्णस्यचैवहि ॥३६॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥ असंख्य ब्रह्मांडपतिर्गोलोकेधाम्नि
राजते ॥३७॥ वासुदेवःसंकर्षणःप्रद्युम्नःपुरुषःस्वयम् ॥ अनिरुद्धस्तथाचैकश्चतुर्व्यूहोभवत्क्षितौ ॥३८॥ कायेनमनसावाचाबुद्ध्यावाचेंद्रियैः
कृतम् ॥ तस्मैसमर्पितंशौक्ल्यंमयाब्रह्मन्महामुने ॥ ३९ ॥ श्रीब्रह्मचार्य्युवाच ॥ हेवैदेहमहाभागविष्णुभक्तिमतांवर ॥ त्वद्भक्त्यातो-
षितःकृष्णस्तवैकत्वंप्रदास्यति ॥ ४० ॥ जनकउवाच ॥ दासोहंकृष्णभक्तानांत्वादृशानांमहात्मनाम् ॥ मुक्तिंनेच्छामिहेब्रह्मन्नेकतां
हेतुवर्जितः ॥ ४१ ॥ ब्रह्मचार्युवाच ॥ करोष्यहैतुकींभक्तिंराजंस्त्वंहेतुवर्जितः ॥ निर्गुणैर्भक्तिभावैश्चप्रेमलक्षणसंयुतः ॥ ४२ ॥

पति गोलोकमें विराजते हैं ॥ ३७ ॥ जो वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न अनिरुद्ध यह चतुर्व्यूह पृथ्वीमें हुये हैं ॥ ३८ ॥ कायासे, मनसे, वाणीसे बुद्धिसे, इन्द्रियोंसे, जो कुछ किया है, उसका मोल मैंने हे ब्रह्मन् ! सब श्रीकृष्णको अर्पण किया है ॥ ३९ ॥ तब ब्रह्मचारी बोले-हे वैदेह ! हे महाभाग ! हे विष्णुभक्तोंमें श्रेष्ठ ! तेरी भक्तिसे प्रसन्न श्रीकृष्ण तुमको अपने रूपमें मिलायेंगे॥४०॥ जनक बोले कि, आप जैसे कृष्णभक्त महात्माओंका मैं दास हूँ, मैं मुक्ति और ऐक्यताकी भी इच्छा नहीं करता हूँ ॥४१॥ तब ब्रह्मचारी बोले-हे राजन् ! तुम अहैतुकी भक्ति करते हो, निर्मल भक्तिके भावोंसे प्रेमलक्षण युक्त हो ॥ ४२ ॥

साक्षात् भगवान् प्रद्युम्न दिग्विजयके लिये निकले हैं, वे तुम्हारे घरमें नहीं आये हैं, सो यह बडा संदेह है ॥ ४३ ॥ तब जनक बोले कि, प्रद्युम्न भगवान् साक्षात् अन्तर्यामी हैं, सर्वत्र रहते हैं, सब कुछ जानते हैं, सो हे प्रभो ! क्या वे यहाँ नहीं हैं ॥४४॥ तब ब्रह्मचारी बोले कि, यदि ज्ञानदृष्टिसे प्रद्युम्नको सर्वत्र निरन्तर मानते हो, तो प्रह्लादकी तरह हमें प्रत्यक्ष दिखा दो ॥ ४५ ॥ नारदजी कहते हैं, इस बातको सुनकर महा भागवत राजा धृति अश्रुपूर्ण मुख होकर गद्गद वाणीसे बोला ॥ ४६ ॥ यदि मैंने निष्काम हरिकी भक्ति की है, तो प्रद्युम्न भगवान् मेरे सामने साक्षात् प्रकट होवें ॥ ४७ ॥ यदि मैं श्रीकृष्णके भक्तोंका दास हूँ, और यदि मुझपर हरिकी कृपा है, सर्वत्र मेरा भाव है, तो मेरा मनोरथ होवे ॥ ४८ ॥ नारदजी कहते हैं तब वर्ण रूपको छोडकर सबजनोंके देखते २ कृष्णके पुत्र प्रकट हुये, तब हरि भक्तिनिष्ठ शिष्य सगद्गद होगया ॥ ४९ ॥ श्याम, सुन्दर, कमलसे नेत्र, बडी

प्रद्युम्नोभगवान्साक्षाद्दिग्जयार्थंविनिर्गतः ॥ नायातस्तवगेहेषुसंदेहोमेमहानभूत् ॥४३॥ जनकउवाच ॥ प्रद्युम्नोभगवान्साक्षादंतर्यामीहरिः स्वयम् ॥ सर्वगःसर्वविच्छश्वदत्रनास्तिचकिंप्रभो ॥ ४४ ॥ ब्रह्मचार्युवाच ॥ ज्ञानदृष्ट्यापिचेत्कार्ष्णिमन्यसेत्रनिरंतरम् ॥ तर्हिदर्शयतंदेवं प्रह्लादइवदिव्यदृक् ॥ ४५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एतच्छ्रुत्वातदाराजामहाभागवतोधृतिः ॥ अश्रुपूर्णमुखोभूत्वाप्राहगद्गदयागिरा ॥ ४६ ॥ जनकउवाच ॥ यदिमेश्रीहरेर्भक्तिरनिमित्ताकृताभुवि ॥ तर्हिकार्ष्णिर्हरेपुत्रःप्रादुर्भूयान्ममाग्रतः ॥ ४७ ॥ यदिश्रीकृष्णभक्तानांदासोहंयदितत्कृपा ॥ सर्वत्रयदितद्भावस्तर्हिभूयान्मनोरथः ॥४८॥ श्रीनारदउवाच ॥ प्रादुर्बभूवाशुतदैवकार्ष्णिर्विसृज्यसद्यःकिलवर्णरूपम् ॥ पश्यत्सुसर्वेषुजनेषुशिष्यःसगद्गदोभूद्धरिभक्तिनिष्ठः ॥४९॥ घनप्रभंपद्मदलायतेक्षणंप्रलंबबाहुंजगतांमनोहरम् ॥ पीतांबरंनीलगुडालकालिभिःस्वलंकृतंश्रीमुखपद्ममंडलम् ॥ ५० ॥ शीततुंबालार्ककिरीटकुंडलंकांच्यंगदस्फूर्जितदिव्यविग्रहम् ॥ विलोक्यतंकृष्णसुतंकृतांजलिर्ननामसाष्टांगमलंधृतिर्नृपः ॥ ५१ ॥ जनकउवाच ॥ अहोतिधन्यंममभूरिभाग्यंदत्तंत्वयामेनिजदर्शनंहि ॥ जातोद्यकायाधवतुल्यआरादहंकृतार्थोस्मिकुलेनभूमन् ॥ ५२ ॥ श्रीप्रद्युम्नउवाच ॥ धन्यस्त्वंनृपशार्दूलभक्तस्त्वंमत्प्रभाववित् ॥ भक्तिभावपरीक्षार्थंप्राप्तोहंतवसांप्रतम् ॥ ५३ ॥ अद्यैवममसारूप्यंभूयात्तेमैथिलेश्वर ॥ बलमायुर्यशःकीर्तिरिहलोकेभवत्वलम् ॥ ५४ ॥

भुजा, जगत्को मनोहर पीताम्बर धरे, नीली अलकावलीसे शोभायमान मुखकमल जिनका ॥५०॥ शीत ऋतुके बाल सूर्य जैसा है किरीट कुण्डल जिनके, करधनी, बाजू, नूपुर, इनसे देदीप्यमान विग्रह जिनका, उनको देखकर हाथ जोड साष्टांग नमस्कार करते राजा यह बोले ॥५१॥ अहो ! मेरा अति धन्य भाग है, जो आपने मुझको दर्शन दिया, आज आपने मुझको प्रह्लादके तुल्य कर दिया, हे भूमन् ! इस कुलसे कृतार्थ होगया ॥ ५२ ॥ तब प्रद्युम्न बोले—हे नृप शार्दूल ! तुम धन्य हो, तुम्हारे भक्तिभावकी परीक्षाके लिये मैं आया हूँ ॥ ५३ ॥ अभी मेरी सारूप्यता तुमको होवे, और हे मैथिलेश्वर ! इस लोकमें बल, आयु, कीर्ति, अतिशय यश होवे ॥ ५४ ॥

नारदजी कहते हैं, हे राजन्! तुम्हारे पिता धृतिसे पूजित भक्त वत्सल प्रद्युम्न सभीके देखते २ अपने शिविरोंको चले गये ॥ ५५ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां जनकोपाख्यानं नाम षोडशोऽध्यायः ॥१६॥ नारदजी कहते हैं कि, फिर इसके बाद मीनध्वज प्रद्युम्न मगध देशको जीतनेके लिये सेना लेकर गिरिव्रजको गये ॥ १ ॥ "श्रीकृष्णका पुत्र दिग्विजयको आया है, यह सुनकर जरासंधने बडा क्रोध किया ॥ २ ॥ जरासंध बोला—जो यादव बडे तुच्छ हैं, युद्धमें विक्लव चित्त हैं, वे निर्बुद्धी पृथ्वीको जीतनेके लिये निकले हैं॥३॥जिसका पिता दुरात्मा वह माधव मेरे डरके मारे मथुराको छोडकर समुद्रमें जाकर छिपा है॥४॥मैंने अपने बलसे प्रवर्षण पर्वतमें कृष्ण बलदेव दोनोंको भस्म कर दिये, छलसे दुबककर निकल आये द्वारकामें चले गये ॥५॥ मैं इन दोनोंको और उग्रसेनको बांधकर द्वारकासे ले आऊँगा, फिर सब पृथ्वीको समुद्र पर्य्यन्त अयादवी (यादवोंसे रहित) कर दूँगा ॥ ६ ॥ नारदजी कहते हैं कि, हे राजन्! ऐसे कहकर बडा बली जरासंध तेईस अक्षौहिणी सेना लेकर गिरिव्रजपुरसे बाहर निकला ॥ ७ ॥ गोमूत्र, पेवडी, सिन्दूर, कस्तूरी इनसे माथेपर चित्रभंगी रचना जिनके, जिनके मद चू रहा, चार चार दांतके ऐरावतके कुलके उत्पन्न हुये ॥८॥ सूंडसे फुंकारते वृक्षोंको पटकते जायँ, ऐसे हाथियोंको लेकर जरासंध शोभित हुआ, मेघोंसे इन्द्र जैसे शोभित होता है ॥९॥ देवताओंके विमान जैसे सुन्दर, रथ, जिनपर ध्वजाऐं फहरा रही हैं, दिव्य घोडे और सारथियुक्त, चमर जिनपर ढुलते हैं, और सुन्दर शब्द होते चलते हैं ॥ १० ॥ वायुकेसे वेगवाले, अनेकों रंगके घोडे बडे मदोत्कट सुनहरी पट्टे, चमरोंके गजगाहसहित एक कलंगी धरे ॥ ११ ॥ कवच बख्तर पहिने, ढाल तलवार लिये बडे २ वीर जिनके सवार, विद्याधरोंके समान जिनके रूप उनको लेकर महाबली जरासंध निकला ॥१२॥

॥ श्रीनारदउवाच ॥ तवपित्राचधृतिनापूजितःपश्यतांसताम् ॥ प्रययौशिबिरात्राजन्प्रद्युम्नोभक्तवत्सलः ॥५५॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेजनकोपाख्यानंनामषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथातोमागधाञ्जेतुंप्रद्युम्नोमीनकेतनः ॥ गिरिव्रजंजगामाशुस्वसैन्यैःपरिवारितः ॥ १ ॥ श्रुत्वागतंहरेःपुत्रंदिग्जयार्थविशेषतः ॥ जरासंधोमागधेंद्रोमहाकोपंचकारह ॥ २ ॥ जरासंधउवाच ॥ तुच्छायेयादवाःसर्वेयुधिविक्लवचेतसः ॥ तेद्यवैजगतींजेतुंनिर्गतागतबुद्धयः ॥ ३ ॥ मथुरांस्वपुरींत्यक्त्वामद्भयान्माधवोपिहि ॥ समुद्रंशरणंप्रागात्पिताचास्यदुरात्मनः ॥४॥ प्रवर्षणेरामकृष्णौमयाभस्मीकृतौबलात् ॥ छलाद्दुद्रुवतुस्तौहिद्वारकायांसमाश्रितौ ॥५॥ बध्वातौचानयिष्यामिसोग्रसेनौकुशस्थलीम् ॥ अयादवींकरिष्यामिपृथ्वींसागरमेखलाम्॥६॥नारदउवाच॥ इत्युक्त्वानिर्गतोराजागिरिव्रजपुराद्बहिः ॥ अक्षौहिणीभिर्विंशत्यातिसृभिःसंयुतोबली ॥ ७ ॥ गोमूत्रचयसिंदूरकस्तूरीपत्रभृन्मुखे ॥ स्रवन्मदैश्चतुर्दंतैरैरावतकुलोद्भवैः ॥ ८ ॥ शुंडादंडस्यफूत्कारैःक्षेपयद्भिस्तरूनबहून् ॥ बभौगजैर्मागधेंद्रोमेघैरिंद्रइवप्रभुः ॥९॥ रथैश्चदेवधिष्ण्याभैःसध्वजैरश्वनेतृभिः॥चामरैर्दोलितैराजल्लोलचक्रध्वनिद्युतिः ॥१०॥ तुरंगमैर्वायुवेगैश्चित्रवर्णैर्मदोत्कटैः ॥ सौवर्णपट्टहाराद्यैःशिखारश्म्यूर्द्ध्वचामरैः ॥११॥ सकंचुकैर्वीरजनैःखड्गचर्मधनुर्धरैः ॥ विद्याधरसमैःप्रागान्मागधेंद्रोमहाबलः ॥ १२ ॥

दुन्दुभियोंकी धुंकारसे, धनुषोंकी टंकारसे दिशाएं झंकार उठीं, पृथ्वी हिलने लगी, रजसे आकाश छागया॥१३॥प्रलयके समुद्रकी तरह महा भयंकर जरासंधकी उस सेनाको देखकर हे मैथिल ! सब यादव आश्चर्यमें आ गये ॥१४॥ तब प्रद्युम्न भगवान्‌ने जरासंधकी प्रलयके समुद्रसी सेनाको देखकर "डरो मत" ऐसे अभयदान देते हुये दक्षिणावर्त शंख बजाया ॥१५॥ तब तो बडी भुजाओंवाला साम्ब प्रद्युम्नके देखते दश अक्षौहिणी सेना लेकर जरासंधसे लडने लगा ॥१६॥ हे मैथिलेश्वर ! रथियोंसे रथी, हाथियोंसे हाथी, घुडसवारोंसे घुडसवार और पैदलोंसे पैदल लडने लगे ॥१७॥ मागधों और यादवोंका बडा भयंकर रोमहर्षण युद्ध हुआ, जैसे दैत्योंका देवताओंसे होता है वैसा हुआ ॥१८॥ बर्छी लिये कोई वीर घोडेपर चढे हैं, कोई हाथियोंपर चढे भाला लिये इधर उधर फेंकते मर्दन करते घूमते हैं ॥१९॥ कोई वीर बिजलीसी चमकती शक्ति लेकर बडे बलसे शत्रुओंके शरीरमें मारने लगे, वे शक्तियाँ

धुंकारैर्दुंदुभीनांचदिशोनेदुर्धनुःस्वनैः ॥ चचालवसुधासैन्यैरजोभिश्छादितंनभः ॥१३॥ जरासंधस्यतत्सैन्यंप्रलयाब्धिमिवोल्बणम् ॥ विस्मि-
तायादवाःसर्वेबभूवुर्वीक्ष्यमैथिल ॥ १४ ॥ प्रद्युम्नोभगवान्वीक्ष्यमागधेंद्रबलार्णवम् ॥ शंखंदध्मौदक्षिणाख्यंमाभैष्टेत्यभयंददत् ॥१५॥ततः
सांबोमहाबाहुःप्रद्युम्नस्यप्रपश्यतः ॥ अक्षौहिणीनांदशभिर्युयुधेमागधेनसः ॥१६॥ गजागजैर्युयुधिरेरथिभीरथिनोमृधे ॥ हयाहयैःपत्तयश्चप-
त्तिभिर्मैथिलेश्वर ॥ १७ ॥ बभूवतुमुलंयुद्धमद्भुतंरोमहर्षणम् ॥ मागधानांयदूनांचसुराणांनिर्जरैर्यथा ॥१८॥ अश्वारूढाःकेपिवीराभल्लहस्ताइ-
तस्ततः ॥ मर्दयंतोगजारूढाःकरिकुंभगताश्चये ॥१९॥ केचिच्छक्तीस्तडिद्वर्णागृहीत्वाचिक्षिपुर्बलात् ॥ ताःशक्तयस्त्वरीन्भित्त्वादंशितान्धर-
णीगताः ॥ २० ॥ केचिद्वीरानदंतःकौरथांगानिचचिक्षिपुः ॥ चिच्छिदुर्वीरपटलंनीहारंरवयोयथा ॥ २१ ॥ भिंदिपालैर्मुद्गरैश्चकुठारैरसिप-
ट्टिशैः ॥अच्छूरिकार्ष्टिभिस्तीक्ष्णैर्निस्त्रिंशैर्युयुधुश्चके ॥२२॥ तोमरैश्चगदाभिश्चबाणैश्छिन्नानिभूतले ॥ निपेतुर्वीरकरिणामश्वानांचशिरांसिच
॥ २३ ॥ कबंधास्तत्रचोत्पेतुःपातयंतोहयान्नरान् ॥ खड्गहस्ताःप्रधावंतःसंग्रामेषुभयंकराः ॥ २४ ॥ वीरोपरिगतावीरानिपेतुश्छिन्नबाहवः ॥
हयोपरिहयाःकेचिद्बाणैःसंच्छिन्नकंधराः ॥२५॥ विद्याधर्यश्चगंधर्व्योवव्रिरेह्यंबरेगतान् ॥ वीरान्पतीन्समिच्छंत्यस्तासांचाभूत्कलिर्महान् ॥२६॥
क्षत्रधर्मपराःकेचिद्युद्धदत्तासवोनृप ॥ नचलंतःपदंपृष्ठेसदासंग्रामशालिनः ॥ २७ ॥

कवच समेत शत्रुओंके शरीरको भेदकर धरतीमें समा गईं ॥२०॥ कोई वीर नाद करते पृथ्वीमें खडे चक्रोंको फेंकते हैं, वे वीरोंके समूहको ऐसे छेदने लगे, जैसे सूर्यमण्डल कुहरेको ॥२१॥ भिंदिपालोंसे, मुद्गरोंसे, कुठारोंसे तलवारोंसे, पट्टोंसे ढाल, पोलादी, तीखे-तीखे भालोंसे युद्ध करने लगे॥२२॥तोमर गदा, बाण इनसे कटे हुये वीरोंके हाथियोंके घोडोंके, पैदलोंके शिर गिरने लगे ॥२३॥ वीरोंके धड उछलते हैं खड्ग हाथोंमें लिये संग्राममें महा भयंकर वे घोडोंको, पैदलोंको गिराते हुये घूमते हैं ॥२४॥ वीरोंके ऊपर वीर पडे हैं कट गई हैं भुजा जिनकी, और बाणोंसे कट गई हैं, गर्दन जिनकी ऐसे घोडोंके ऊपर घोडे पडे हैं ॥२५॥ विद्याधरी गन्धर्वी अम्बरमें गये वीरोंको वरने लगीं, वीरोंको पति करनेकी इच्छा जिनकी वे आपसमें लडने लगीं ॥२६॥ कितनेही क्षात्र धर्ममें तत्पर युद्धमें दिये हैं प्राण जिन्होंने सदाही संग्रामशील पीछेको पांव नहीं रखते हैं ॥ २७ ॥

वे सूर्य मण्डलको भेदकर परम पदको गये, वे शिशुमार चक्रमें नाचते हैं, मण्डलमें जैसे नट ॥ २८ ॥ ऐसे साम्बादिक महावीरोंने जरासंधकी सेनाका बडा मर्दन किया, तब उनके देखते देखते सेना भागने लगी, जैसे कृष्णकी भक्तिसे अमंगल भागता है, ॥२९॥ कोई कोई कटे हैं कवच, धनुष जिनके, छोडे हैं, खड्ग, ऋष्टि जिन्होंने, वे भागे हुये चले जाते हैं ॥३०॥ इस प्रकार जरासंध अपनी सेनाको भगती हुई देखकर अरे ! ''मत डरो'' ऐसे कहता धनुषको टंकारता आया ॥ ३१ ॥ तब जरासंध अपनी सेनाको धनुषकी प्रत्यंचासे प्रेरित किया, जैसे महावत अंकुशसे हाथीको प्रेरणा करता है ॥ ३२ ॥ तब साम्बने धनुषसे निकले दश बाणोंसे संग्राममें जरासंध महाबलीको बेध दिया ॥३३॥ और दश बाणोंसे समुद्रकी लहरकासा शब्द जिसमें, उस धनुषकी प्रत्यंचाको काट दिया ॥३४॥ तब जरासंध महाबलीने दूसरा धनुष लेकर दश बाणोंसे साम्बके धनुषको आगेसे काट दिया ॥३५॥

जग्मुः परपदं ते वै भित्त्वा मार्तंडमंडलम् ॥ ननृतुः शिशुमारे वै मंडले च नटा इव ॥ २८ ॥ एवं सांबमहावीरैर्मर्दितं मागधं बलम् ॥ दुद्राव पश्यतां तेषां कृष्णभक्त्या यथाशुभम् ॥ २९ ॥ केचिद्विवृक्णवर्माणश्छिन्नचापास्तथापरे ॥ पलायमाना धावंतस्त्यक्तखड्गर्ष्टिपाणयः ॥३०॥ पलायमानं स्वबलं वीक्ष्य तन्मागधेश्वरः ॥ धनुष्टंकारयन्प्राप्तो माभैष्टेत्यभयं ददौ ॥३१॥ स्वबलं नोदयामास जरासंधो धनुर्ज्यया ॥ महामात्यः प्रेरयति ह्यंकुशेन गजं यथा ॥ ३२ ॥ सांबस्तदैव संप्राप्तो दशभिश्चापनिर्गतैः ॥ बाणैर्विव्याध समरे मागधेंद्रं महाबलम् ॥३३॥ धनुर्ज्यामब्धिकल्लोलभीमसंघर्षनादिनीम् ॥ चिच्छेद दशभिर्बाणैः सांबो जांबवतीसुतः ॥ ३४ ॥ धनुरन्यत्समादाय जरासंधो महाबलः ॥ धनुः सांबस्य चिच्छेद बाणैर्दशभिरग्रतः ॥ ३५ ॥ चतुर्भिश्चतुरो वाहान्द्वाभ्यां केतुं रथं त्रिभिः ॥ एकेन सारथिं जघ्ने मागधेंद्रो जरासुतः ॥ ३६ ॥ सच्छिन्नधन्वा विरथो हताश्वो हतसारथिः ॥ पुनरन्यं समास्थाय रथं सांबो महाबलः ॥ ३७ ॥ गृहीत्वा चापमत्युग्रं सज्यं कृत्वा विधानतः ॥ तद्रथं चूर्णयामास सांबो बाणशतैरपि ॥३८॥ रथं त्यक्त्वा जरासंधो गजमारुह्य वेगतः ॥ बभौ गजे मागधेंद्र इन्द्र ऐरावते यथा ॥३९॥ चित्रपत्रविचित्रांगं कालांतकयमोपमम् ॥ सांबाय नोदयामास मत्तेभं क्रुद्धमानसः ॥ ४० ॥ गृहीत्वा स रथं सांबं शुण्डादण्डेन नागराट् ॥ कुर्वञ्छीत्कारविकलश्चिक्षेप नवयोजनम् ॥ ४१ ॥

तब मागधेन्द्र जराके पुत्रने चार बाणोंसे चार घोड़ा मारे, दो बाणोंसे ध्वजा तीन बाणोंसे रथ और एक बाणसे सारथिको काट डाले॥३६॥जब रथ टूट गया, धनुष टूट गया, घोडे मर गये, सारथी मर गया, तब बली साम्ब दूसरे रथमें चढ़ा ॥३७॥ फिर साम्बने अति उग्र धनुष लेकर विधानसे चढ़ाकर सौ बाणोंसे जरासंधके रथको चूर्ण कर दिया ॥ ३८ ॥ तब रथको छोड जरासंध वेगसे हाथीपर चढ़कर शोभित हुआ, मानों ऐरावत पर इन्द्रही चढ़ा है ॥३९॥ पत्र भंगी रचनासे विचित्र अंग जिसका, कालान्तक यमके समान उस हाथीको क्रोधित हुये जरासंधने साम्बके ऊपर प्रेरित किया ॥४०॥ चिक्कारते हुये उस हाथीने हे मानद ! सूंडसे विकल होकर रथ समेत साम्बको नौ योजन पर फेंक दिया ॥ ४१ ॥

हे मैथिल ! तब तो साम्बकी सेनामें बडा कोलाहल हुआ, उसी समय प्रद्युम्नके पाससे गद सेनामें आया ॥ ४२ ॥ जैसे सूर्य उदयाचल पर उदय होकर सब अन्धकारको दूर करता है वैसे ही आकर गदने जरासंधके हाथीको घूंसेसे मारा ॥ ४३ ॥ जैसे इन्द्रके वज्रका मारा ऊँचा पर्वत गिरता है, वैसे ही घूंसाके मारा वह हाथी विह्वल होकर पृथ्वीपर गिर पडा ॥४४॥ हे राजन् ! गदके घूंसेका मारा वह हाथी मर गया, तब बडा आश्चर्य हुआ, जरासंधने उठकर गदा लेकर बडे वेगसे ॥ ४५ ॥ गदको मारा, फिर घनकी तरह गर्जा, उस गदाके मारा गद रणमेंसे थोडा भी चलायमान् नहीं हुआ ॥४६॥ फिर गदने लाख भारकी गदा लेकर जरासंधके गदा मारी और सिंहसा गर्जा ॥४७॥ उस गदाके प्रहार से जरासंध बली बृहद्रथके पुत्रने व्यथित होकर फिर उठकर गदासहित गदको पकडकर फेंक दिया ॥४८॥ बडे क्रोधसे सौ योजन ऊँचा आकाशमें फेंक दिया, तब महाबली गद

तदाकोलाहलेजातेसांबसेनासुमैथिल ॥ प्रद्युम्नपार्श्वाच्चगदःप्राप्तोभूद्वेगतोबलम् ॥४२॥ विनाशयन्नंधकारंयथार्कउदयाचलात् ॥ जरासंधस्यापि गजंमुष्टिनावसुदेवजः ॥ ४३ ॥ जघानशक्रोवज्रेणयथाप्रोच्चंदरीभृतम् ॥ गजोमुष्टिप्रहारेणविह्वलोधरणींगतः ॥४४॥ जगामपंचतांराजंस्तदद्भुत मिवाभवत् ॥ जरासन्धःसमुत्थायगदामादायवेगतः ॥४५॥ गदंतताडसहसाजगर्जघनवद्बली ॥ तत्प्रहारेणसगदोनचचालरणांगणात् ॥४६॥ त्वरं गदांसमादायलक्षभारविनिर्मिताम् ॥ अताडयज्जरासन्धंसिंहनादमथाकरोत् ॥४७॥ तत्प्रहारेणव्यथितोबृहद्रथसुतोबली ॥ जरासंधःसमुत्थाय गृहीत्वासगदंगदम् ॥ ४८ ॥ चिक्षेपरोषतोराजन्नाकाशेशतयोजनम् ॥ गदोपिमागधंनीत्वाभ्रामयित्वामहाबलः ॥४९॥ चिक्षेपगगनेतंवैयोज नानांसहस्रकम् ॥ आकाशात्पतितोराजामागधोविंध्यपर्वते ॥ ५० ॥ उत्थाययुयुधेतेनगदेनापिमहाबलः ॥ तदैवसांबःसंप्राप्तोगृहीत्वामागधे- श्वर ॥ ५१ ॥ भूपृष्ठेपोथयामाससिंहःसिंहमिवौजसा ॥ एकेनमुष्टिनासांबंद्वितीयेनगदंतथा ॥ ५२ ॥ तताडमागधोराजाजगर्जाशुरणांगणे ॥ मुष्टिप्रहारव्यथितौगदःसांबश्चमूर्च्छितो ॥५३॥ हाहाकारोमहानासीत्तदैवाशुरणांगणे ॥ रथेनातिपताकेनप्रद्युम्नोयादवेश्वरः ॥ ५४ ॥ अक्षौहि- णीयुतःप्राप्तोमाभैष्टेत्यभयंददौ ॥ जरासंधोगदांनीत्वालक्षभारविनिर्मिताम् ॥ ५५ ॥

ने भी जरासंधको पकडकर फिराकर ॥ ४९ ॥ आकाशमें हजार योजन ऊँचा फेंक दिया, तब आकाशसे जरासंध विंध्याचल पर्वतपर आकर पडा ॥५०॥ फिर उठकर महाबली, जरासंध गदसे युद्ध करने लगा, तब ही साम्बने आकर जरासंधको पकडकर धरतीमें दे मारा, सिंहको सिंह जैसे ॥५१॥ फिर जरासंधने उठकर एक घूंसा तो साम्बके मारा और एक गदके मारा ॥५२॥ मारकर रणभूमिमें गर्जा, घूंसाके मारे गद और साम्ब दोनों मूर्च्छित होकर जा पडे ॥५३॥ तब तो रणांगणमें बडा हाहाकार मचा, तब बडी ध्वजा जिसमें उस रथमें बैठकर प्रद्युम्न आया ॥५४॥ एक अक्षौहिणी सेना लेकर "मत डरो" ऐसे अभयदान दिया, जरासंध भी एक लाख भारकी गदा लेकर ॥ ५५ ॥

यदु सेनामें घुसा, वनमें जैसे अग्नि घुसती है, तब बहुतसे हाथियोंको, घोड़ोंको रथोंको पटक दिया ॥५६॥ हे राजन् ! हाथी जैसे कमलोंको तोडता है, और जरासंधकी सेना भी सब आ गई ॥५७॥ तब जरासंध तीखे २ बाणोंसे यादवोंकी सेनाको मारने लगा, तब यादवोंके ईश्वर प्रद्युम्नने निर्भय होकर युद्ध किया ॥५८॥ धनुषको टंकारते हुये शत्रुओंको मारते हुये उसी समय यदुपुरीसे श्री बलदेवजी आ गये॥५९॥ सभीके देखते २ प्रगट हो गये, तब ही हलके अग्र भागसे महाबली जरासंधको ॥६०॥ खेंच लिया और क्रोध करके एक मूसल मारा, और चार सौ कोश तक रथ, हाथी, घोड़े, पैदल ॥६१॥ सभीके शिर कट कटकर मरकर गिर पड़े, तब देवताओंकी और मनुष्योंकी दुंदुभियाँ बजने लगीं ॥६२॥ बलदेवजीके ऊपर देवता पुष्पोंकी वर्षाकी करने लगे, यादवोंकी फौजमें जय जय शब्द हुआ॥६३॥ प्रद्युम्नादिक सब सुखी होकर बलदेवजीको प्रणाम करने लगे, ऐसे महाबली बलदेव

जरासंधस्स्यया विवेशयदुसेनायामरण्येग्निरिवप्रभु ॥ रथान्गजान्सवीरांश्चतुरंगान्सैंधवान्बहून् ॥५६॥ पातयामासराजेंद्रपद्मानीवमहागजः॥ जरासंधबलंसर्वंसेनासापिसर्वासमागता ॥५७॥ जघाननिशितैर्बाणैर्यदूनांसर्वतोबलम् ॥ प्रद्युम्नोयुयुधेयुद्धेनिर्भयोयादवेश्वरः ॥५८॥ निपातयन्नरीन्बाणैर्धनुष्टंकारयन्मुहुः ॥ तदैवयदुपुर्यास्तुबलदेवःसमागतः ॥५९॥ प्रादुर्बभूवतत्रापिसर्वेषांपश्यतांसताम् ॥ समाकृष्यहलाग्रेणमागधेंद्रमहाबलम् ॥ ६० ॥ मुसलेनाहनत्क्रुद्धोबलदेवोमहाबलः ॥ शतयोजनपर्यंतंरथाश्वगजपत्तयः ॥६१॥ पतिताभिन्नशिरसःसर्वेवैनिधनंगताः ॥ देवदुन्दुभयोनेदुर्नरदुन्दुभयस्तदा ॥६२॥ बलदेवोपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥ तदाजयजयारावोयदूनांस्वबलेमहान्॥६३॥ प्रद्युम्नाद्यास्ततोनेमुःकामपालंगतव्यथाः ॥ इत्थंजित्वामागधेन्द्रंबलदेवोमहाबलः॥६४॥प्रययौद्वारकांराजन्भगवान्भक्तवत्सलः॥जरासन्धसुतोधीमान्सहदेवउपायनम् ॥ ६५ ॥ नीत्वापुरःशंबरारेर्गिरिदुर्गाद्विनिर्गतः ॥ अश्वार्बुदंरथानांचद्विलक्षंहस्तिनांतथा ॥ ६६ ॥ ददौषष्टिसहस्राणिनत्वाकार्ष्णिप्रभाववित् ॥ ६७ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेमागधविजयोनामसप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ ॥ अथकार्ष्णिर्गयामेत्यफल्गुंस्नात्वाससैनिकः ॥ अन्यान्देशांस्ततोजेतुंप्रस्थानमकरोत्पुनः ॥ १ ॥ श्रुत्वाजितंजरासन्धंतदातंकान्नृपाःपरे॥ उपायनंददुस्तेवैभयार्ताःशरणंगताः ॥२॥ गौतमींसरयूंपुण्यामनुस्रोतंततोऽगमत् ॥ ततोभागीरथीतीरेकाशीमभिजगामह ॥३॥ पार्ष्णिग्राहःकाशिराजोगृहीतोमृगयांगतः ॥ सोपितस्मैबलिंप्रादाच्छ्रुत्वातस्यबलंमहत् ॥ ४ ॥

जी जरासंधको जीतकर ॥६४॥ वे भगवान् भक्तवत्सल बलदेव द्वारिकाको गये, तब जरासंधका पुत्र सहदेव बडा बुद्धिमान्॥६५॥ बलदेवजीको भेंट लेकर निकला, दश करोड घोडे, दोलाख हाथी, और साठ हजार दिव्य रथ॥६६॥कृष्णके प्रभावको जाननेवाले सहदेवने श्रीप्रद्युम्नको दिये॥६७॥इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां मागध विजयोनाम सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥नारदजी कहते हैं कि, फिर प्रद्युम्न गयामें जाकर फल्गु नदीमें स्नान करके सेना सहित और देशोंको जीतनेके लिये गये॥१॥ जब और राजाओंने यह सुना कि जरासंधको जीत लिया, तब वे सब भयके मारे शरणमें आकर भेंट देने लगे ॥२॥ उसके बाद गोमती, पवित्र सरयूके अनुस्रोत और भागीरथीके तीर काशीमें आये ॥३॥ पार्ष्णिग्राही

काशीका राजा शिकार खेलनेके लिये गया था, उसको पकड लिया, उसने भी बडा बली सुनकर प्रद्युम्नको भेंट दी ॥ ४ ॥ फिर प्रद्युम्न सेना सहित कौशल देशको गये, सो अयोध्याके निकट नन्दीग्राममें ठहरे ॥ ५ ॥ तब कौशलके राजा नग्नजितने हाथी घोडे, रथ, और बहुत धनसे चतुरंगिणी सेनासे प्रद्युम्नका पूजन किया ॥ ६ ॥ उत्तरके राजा दीपतम, नैपालके राजा गज, विशालाके राजा बर्हिण, इन तीनों राजाओंने प्रद्युम्नको भेंट दी ॥७॥ नैमिषके राजा हरिभक्त कृष्णके प्रभावको जाननेवालेने हाथ जोडकर भेंट दी ॥ ८ ॥ फिर कृष्णका पुत्र प्रद्युम्न प्रयागमें गया, पापनाशिनी त्रिवेणीमें स्नान करके महादान दिया, क्योंकि वह तीर्थराजके प्रभावको जानता था ॥ ९ ॥ बीस हजार हाथी, दश लाख घोडे, चार लाख रथ, दश अर्बुद गौऐं दीं ॥१०॥ सोनेकी माला और सुनहरी वस्त्रोंसहित दश भार स्वर्ण और एक लाख मोती दिये ॥११॥ दो लाख नवरत्न, दश लाख

प्रद्युम्नः सैनिकैः सार्द्धं कौशलान्प्रगतो बली ॥ अयोध्यानिकटे राजन्नंदिग्रामे स्थितोभवत् ॥५॥ कोशलेंद्रो नग्नजिच्चतुरंगैश्वगजैरथैः ॥ महाधनैः शंबरारिमर्हयामास तत्त्ववित् ॥ ६ ॥ उत्तरेशो दीपतमो नयपालाधिपो गजः ॥ विशालेशो बर्हिणश्च एते वैतं बलिं ददुः ॥७॥ नैमिषेशो हरेर्भक्तः श्रीकृष्णस्य प्रभाववित् ॥ कृतांजलिपुटो भूत्वा ददौ तस्मै बलिं नृपः ॥८॥ प्रयागं गतवान्कार्ष्णिस्त्रिवेणीं पापनाशिनीम् ॥ स्नात्वा ददौ महादानं तीर्थराजप्रभाववित् ॥ ९ ॥ गजाविंशतिसहस्रमश्वानां दशलक्षकम् ॥ रथानां च चतुर्लक्षं गवां तत्र दशार्बुदम् ॥१०॥ हेममालासमायुक्तं हेमांवरसमन्वितम् ॥ दशभारं सुवर्णानां मुक्तानां लक्षमेव हि ॥ ११ ॥ द्विलक्षं नवरत्नानां वस्त्राणां दशलक्षकम् ॥ काश्मीरकंबलानां च द्विलक्षं नवकंबलम् ॥१२॥ ब्राह्मणेभ्यो ददौ कार्ष्णिस्तीर्थराजे हरिप्रिये ॥ कारूषाधिपतिस्तत्र पौंड्रको नाम मैथिल ॥ १३ ॥ कृष्णशत्रुः सोपि कार्ष्णिं पूजयामास शंकितः ॥ प्रद्युम्नं चागतं वीक्ष्य पांचाले कान्यकुब्जके ॥१४॥ भयं प्रापुर्नृपाः सर्वे दुर्गं दुर्गे कृतार्गलाः ॥ विचेलुर्यादवात्सर्वे भयार्ता दुर्गमाश्रिताः ॥१५॥ बिंदुदेशाधिपो राजा दीर्घबाहुर्महाबलः ॥ शंबरारेः परं संधिं कर्तुं सैन्ये समाययौ ॥ १६ ॥ दीर्घबाहुरुवाच ॥ यूयं सर्वे यादवेंद्रा आगता जयिनो दिशाम् ॥ मनोरथं मे कुरुतां भवेयं तुष्टमानसः ॥ १७ ॥ सजलस्यापि काचस्य पात्रस्य शरवेधतः ॥ नक्षरेद्बिंदुरेकोपि बाणस्तदधितिष्ठति ॥१८॥ न पात्रं शकलीभूतं तन्मध्ये हस्तलाघवम् ॥ ये कुर्वंति प्रतिज्ञां मे तेभ्यो दास्यामि कन्यकाः ॥ १९ ॥

वस्त्र, कश्मीरी बनात, दो लाख नव कम्बल ॥१२॥ हे मैथिल ! ये सब प्रयागमें ब्राह्मणोंको प्रद्युम्नने दिये, जो हरिका प्यारा तीर्थ है, उसी तीर्थमें कारूप देशका अधिपति पौंड्रक था ॥ १३ ॥ नारदजी कहते हैं कि, हे मैथिल ! वह कृष्णका शत्रु था, उसने भी प्रद्युम्नका पूजन किया, पांचाल देशमें और कन्नौजमें प्रद्युम्नको आया देखकर ॥ १४ ॥ सब राजा किलेमें भयभीत होगये, वे सब प्रद्युम्नके भयसे किलोंमें छिप गये, कोई भाग गये ॥ १५ ॥ बिन्दुदेशका राजा महाबली दीर्घबाहु वह प्रद्युम्नसे मिलाप करनेके लिये सेनामें आया ॥१६॥ दीर्घबाहु राजा बोला कि, तुम सबही यादवोंमें इन्द्र हो, दिशाओंके जीतनेवाले आये हो, प्रसन्न होओ, मेरा मनोरथ करोगे, तब मैं तुष्ट मन होऊँगा, ॥१७॥ जलके भरे कांचके पात्रमें तीर गाड देवे, और एक भी बूंद पानी नहीं गिरा, और बाण वहाँ गड़ा रहे ॥१८॥ और पात्र भी फूटे नहीं, बीचमें बाण खडा रहे, यह हाथका हलकापन जिनकाहोवे

और जो मेरी इस प्रतिज्ञाको पूरी कर देवें, उनको मैं अपनी कन्याएँ दे देऊँ ॥१९॥ तुम समस्त यादव धनुर्विद्यामें विशारद हो, मैंने भी नारदके मुखसे महाबली सुने हैं ॥ २०॥ नारदजी कहते हैं-जब सब आश्चर्यमें आगये, तब धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ प्रद्युम्नने बिन्दु देशके राजाको स्वीकार वचन कहा ॥ २१ ॥ एक बड़े बांसको धरतीमें गाडकर उसमें डोरी बांधकर डोरीमें कांचका बर्तन बांधा, जल भरकर सबके देखते २ ॥ २२ ॥ तब प्रद्युम्नने धनुषमें बाण लेकर जोडा, कांच पात्रको वेधकर बाण बीचमें आधा निकला हुआ स्थित रहा ॥२३॥ मुख (अग्रभाग) से और पूंछसे किरणें जिसमें छूट रही—ऐसा बाण शोभित हुआ, बादलमें सूर्य जैसे, तब बडा आश्चर्य हुआ ॥ २४ ॥ न तो पात्र फूटा, न चला, न हिला, न बूंद पडी, त्रिकुशका फल जैसे होता है ॥ २५ ॥ प्रद्युम्नने फिर बाण लेकर मारा, वह बाण पहिलेबाणको छोडकर वैसे ही स्थित होगया ॥ २६ ॥ फिर साम्बने भी पांच

यूयंसर्वेयादवेंद्राधनुर्वेदविशारदाः ॥ मयापिनारदमुखाच्छ्रुताःपूर्वंमहाबलाः ॥ २० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ सर्वेषांविस्मितानांचप्रद्युम्नोधन्विनांवरः ॥ तथेत्युवाचसदसिबिंदुदेशाधिपंनृपम् ॥ २१ ॥ दीर्घवंशंभुविस्थाप्यगुणंबध्वातदंतरे ॥ गुणेबध्वाकाचकुंभंसजलंपश्यतांसताम् ॥ २२ ॥ धनुर्गृहीत्वातद्वीक्ष्यबाणंकार्ष्णिःसमादधे ॥ काचपात्रंशरोभित्वातस्थौमध्येर्द्धनिःसृतः॥ २३ ॥ एकतोमुखपुंखाभ्यांरविरश्मिरिवांबुदे ॥ काचपात्रेबभौबाणस्तदद्भुतमिवाभवत् ॥ २४ ॥ नपात्रंशकलीभूतंत्रिकुशस्यफलंयथा ॥ नचालनंकंपनंचबिंदुस्रावोपिनाभवत् ॥ २५ ॥ प्रद्युम्नोभगवान्बाणंद्वितीयंसंदधेपुनः ॥ सोपिपूर्वंसमुत्सृज्यतत्रतस्थौविदेहराट् ॥ २६ ॥ सांबोपिधनुरादायबाणान्पंचसमाददे॥ काचपात्रंचतेभित्त्वातस्थुस्तत्रार्धनिःसृताः ॥ २७ ॥ युयुधानोधनुर्नीत्वाबाणमेकंसमाक्षिपत् ॥ सर्वेषांपश्यतांतेषांपात्रंचूर्णीबभूवह ॥ २८ ॥ उच्चकैर्जहसुःसर्वेयादवाःपरसैनिकाः ॥ त्वंमहान्बाणधारीहकार्तवीर्यार्जुनोयथा ॥२९॥ अर्जुनोभारतोरामस्त्रिपुरघ्नोहिवाभवान् ॥ द्रोणोभीष्मोथवाकर्णोजामदग्न्यइवाभवत् ॥ ३० ॥ अन्यत्पात्रंसमाधायानिरुद्धोधन्विनांवरः ॥ अधोगत्वाथतद्दृष्ट्वाबाणंचिक्षेपलाघवात् ॥ ३१ ॥ सोपिपात्रतलंभित्त्वातस्थौतत्रार्धनिःसृतः ॥ तत्पात्राद्धस्तपंचोर्ध्वंबध्वापाषाणमंबरे ॥ ३२ ॥ दीप्तिमान्धनुरादायबाणमेकंसमादधे ॥ सोपिपात्रतलंभित्त्वाबाणमुत्सृज्यचाग्रतः ॥ ३३ ॥

बाण मारे, वे बाण भी उस कांचके पात्रको भेदकर आधे २ निकले स्थित रहे ॥ २७ ॥ तब युयुधानने धनुष लेकर सभीके देखते एक बाण मारा, सो उस बाणके मारे पात्र फूट गया ॥२८॥ तब ऊँचे स्वरसे सब सेनाके यादव हँस पडे, तुम बडे बाणधारी हो, जैसे कि कार्तवीर्यार्जुन ॥२९॥ अर्जुन, भरत, परशुराम, त्रिपुरहंता रुद्र, द्रोण, भीष्म, कर्ण, रामचन्द्र जो बडे धनुषधारी हैं कि, वे तुम हो ॥ ३० ॥ तब और पात्र रखा, तब धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ अनिरुद्धने नीचे जाकर उसको देखकर हलके हाथसे बाण मारा ॥ ३१ ॥ वह बाणभी पात्रको नीचेसे छेदकर आधा निकला स्थित रहा, उस पात्रसे पांच हाथ ऊँचा आकाशमें एक पत्थर (लटका) दिया ॥ ३२ ॥ तब दीप्तिमान्ने धनुष लेकर एक बाण मारा, वह भी पात्रतलको भेदकर उस बाणके आगेसे ॥ ३३ ॥

पत्थरको मारकर पात्रमेंही आगया किन्तु जलकी एक भी बूंद नहीं गिरी ॥३४॥ जब बाणके आने जानेमें एकभी बूंद नहीं गिरी, तब समस्त वीर "साधु" "साधु" ऐसे कहने लगे ॥ ३५ ॥ तब कृष्णके पुत्र भानुने धनुष लेकर देखकर आखें बंद करके दूरसेही सभीके देखते २ एक बाण मारा ॥३६॥ वहभी पात्रको छेदकर उलट करके फिर सीधा करके बाण पात्रमेंही ठहरा रहा, किन्तु जलकी बूंद एकभी नहीं गिरी ॥ ३७ ॥ बाणके वेगसे न बूंद गिरी, न पात्र फूटा, तब सभीको बडा आश्चर्य हुआ ॥ ३८ ॥ ऐसे श्रीकृष्णके जो अट्ठारह पुत्र हैं, उन सभी महारथियोंने पात्रको छेदा, किन्तु जलकी एक बूंदभी नहीं गिरी ॥३९॥ तब बिन्दु देशके अधिप राजा दीर्घ बाहुने विस्मित होकर सुन्दर नेत्रोंवाली अपनी अट्ठारह कन्याऐं श्रीकृष्णके उन अट्ठारह पुत्रोंके लिये दे दीं ॥४०॥ उनके विवाहके समयमें शंख, भेरी, नगाडे, ढोल, बजने लगे, गन्धर्व गाने लगे, अप्सराएँ नाचने लगीं ॥४१॥

ताडयित्वाचपाषाणंपुनस्तत्रसमाश्रितः ॥ बाणवेगेनतदपिबिंदुस्रावोपिनाभवत् ॥३४॥ गतागतेनयावद्वैबिन्दुस्रावोपिनाभवत् ॥ तदावीराश्चते सर्वेसाधुसाध्वितिवादिनः ॥ ३५ ॥ भानुर्धनुःसंगृहीत्वावीक्ष्यमीलितलोचनः ॥ आराच्चिक्षेपनाराचंसर्वेषांपश्यतांसताम् ॥३६॥ सोपिपात्रंत-दाभित्त्वापात्रंकृत्वाह्यधोमुखम् ॥ पुनरूद्र्ध्वमुखंकृत्वातस्थौतत्रार्द्धनिःसृतः ॥३७॥ बाणवेगेनतदपिबिन्दुस्रावोपिनाभवत् ॥ नपात्रंशकलीभूतंत-दद्भुतमिवाभवत् ॥३८॥ एवंश्रीकृष्णपुत्रायेअष्टादशमहारथाः ॥ सर्वेतेबिभिदुःपात्रंजलस्रावोपिनाभवत् ॥३९॥ बिन्दुदेशाधिपोराजादीर्घ-बाहुःसुविस्मितः ॥ तेभ्योदात्कन्यकाःसृष्टाअष्टादशसुलोचनाः ॥४०॥ तेषांविवाहसमयेशंखभेर्यानकादयः ॥ नेदुर्जगुश्चगन्धर्वाननृतुश्चाप्स-रोगणाः ॥ ४१ ॥ तेषामुपरिदेवास्तेजयध्वनिसमाकुलाः ॥ ववृषुःपुष्पवर्षाणिचक्रुः श्लाघांदिविस्थिताः ॥४२॥ गजान्षष्टिसहस्राणिहयानामर्बु-दंतथा ॥ दशलक्षंरथानांचदासीनांलक्षमेवच ॥४३॥ शिबिकानांचतुर्लक्षंपारिबर्हंददौनृपः ॥ ताः प्राहिणोद्द्वारवतींबभौकार्ष्णिर्यदूत्तमः ॥४४॥ दीर्घबाहुमनुप्राप्यनिषधान्प्रययौततः ॥ निषधाधिपतिर्वीरःसेनजिन्नाममैथिल ॥४५॥ उपायनंददौसोपिप्रद्युम्नायमहात्मने ॥ तथाहिभद्राधिपतिः श्रीकृष्णेष्टोहरिप्रियः ॥४६॥ पूजयामाससबलंबृहत्सेनोहरेः सुतम् ॥ माथुराञ्छूरसेनांश्चमधून्प्राप्तःससैनिकः ॥४७॥ स्वागतैःपूजितःकार्ष्णि र्मथुरायांययौपुनः ॥ ततःप्रदक्षिणीकृत्यमथुरांसवनांकिल ॥ ४८ ॥

उनके ऊपर देवता पुष्पोंकी वर्षा करने लगे, और स्वर्गस्थित सब जय जय शब्द करने लगे सबने प्रशंसा की ॥४२॥ फिर राजाने दहेज दिया, सात हजार हाथी दिये, दश करोड घोडे दिये, दश लाख रथ दिये, एक लाख दासियाँ दीं ॥४३॥ चार लाख पालकी, पीनस, डोला, चंडोला दिये, इतना दहेज लेकर प्रद्युम्नने द्वारकाको भेज दिया ॥४४॥ ऐसे दीर्घ-बाहुको जीतकर फिर सलाह करके प्रद्युम्न निषध देशको चले गये, हे मैथिल ! हे वीर ! निषध देशका राजा जिसका सेनजित् नाम था ॥४५॥ उस राजानेभी प्रद्युम्नको भेंट दी, वैसेही भद्र देशके राजा, श्रीकृष्णके इष्टी, हरिके प्रिय ॥४६॥ बृहत्सेन राजाने सेना सहित हरिके पुत्रका पूजन किया, फिर प्रातःकालके समयही सेना सहित प्रद्युम्न माथुर शूरसेन देशको आये ॥ ४७ ॥ जब मथुरामें गये, तब स्वागत सत्कारसे पूजे गये, उसके बाद प्रद्युम्न वनों सहित मथुराकी परिक्रमा करके ॥ ४८ ॥

गोकुलमें आये, वहाँ गोप गोपियोंसे मिले, वहाँ नन्दराजको, यशोदाजीको, वृषभानु, नन्द, उपनन्द, उनको प्रणाम करके प्रद्युम्न सुशोभित हुये ॥ ४९ ॥ नन्द राजको भेंट दे देकर वारंवार नमस्कार करने लगे, नन्द राजाने बडा सत्कार किया वहाँ प्रद्युम्न कई दिन नन्दके गोकुलमें रहे ॥५०॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डे भाषाटीकायां शूरसेन देश विजयोनामाष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥ नारदजी कहते हैं कि, इसके बाद बडी भुजाओं वाला, बडे वेगवाला, कृष्णका पुत्र प्रद्युम्न सेनाको साथ लेकर नगाडे बजाता कुरु देशमें गया ॥ १ ॥ बीस योजनके बीचमें जिसकी सेनाका विस्तार है, दश योजनमें झण्डे लगे हैं, ॥२॥ पांच योजनमें बाजार लगा है, जहाँ बडे बडे साहूकारोंकी हजारों दुकानें लग रही हैं ॥३॥ वहाँ जौहरियोंकी तथा बजाजोंकी दुकानें लग रही हैं, काच बनानेवाले, दर्जी, रंगरेज और कुह्मार ॥४॥ कंदार, खटीक, कडेरे, कोरी, टंकीवाले चितेरे, पत्रवाले, नाई ॥ ५ ॥

गोपान्गोपीर्यशोदांचनंदराजंव्रजेश्वरम् ॥ वृषभानूपनन्दांश्चनत्वाकार्ष्णिर्बभौनृप ॥४९॥ बलिंचनन्दराजायदत्त्वादत्त्वापुनःपुनः ॥ तैःपूजितःकति दिनैःस्थितोभून्नंदगोकुले ॥५०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेमाथुरशूरसेनदेशविजयोनामाष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथकार्ष्णिर्महाबाहुर्ध्वजिनीभिःसमन्वितः ॥ नादयन्दुंदुभीन्दीर्घान्दीर्घवेगःकुरून्ययौ ॥ १ ॥ विंशतियोंजनानांचमर्यादीकृततद्बले ॥ तस्थौतच्छिबिराणांचविस्तारोदशयोजनम् ॥२॥ पञ्चयोजनमाश्रित्यतद्बलेराजपद्धतिः ॥ धनाढ्यानांचवैश्यानामापणानिसहस्रशः ॥३॥ तथारत्नपरीक्षाणांवस्त्रव्यापारकारिणाम् ॥ काचकारावायकाश्चरंगकाराःकुलालकाः ॥ ४ ॥ कन्दकारास्तूलकाराःपटकारास्तथैवच ॥ टङ्ककाराश्चित्रकाराःपत्रकाराश्चनापिताः ॥५॥ पट्टकाराहेतिकाराःपर्णकाराश्चशिल्पिनः ॥लाक्षाकारामालिनश्चरजकास्तैलिनस्तथा ॥६॥ तांबूलशोधिनस्तत्रचित्रपाषाणकर्मकाः ॥ अन्नभर्जकरास्तत्रकाचभेदिनएवहि ॥७॥ मुक्तादीनांचरत्नानांसूक्ष्माणांरत्नवेधिनः ॥ एतेकारुजनाः सर्वेदृश्यंतेराजपद्धतौ ॥८॥ क्वचिद्भानुमतीलीलाऐंद्रजालविधायकाः ॥ क्वचिन्नटाश्चनृत्यंतेयुद्धंभल्लूकयोः क्वचित् ॥९॥ क्वचित्तुवानरीलीलाडमरूवाद्यसंयुताः ॥ गायंतिकुत्रचिद्राजन्सूतमागधबन्दिनः ॥१०॥ वारांगनाश्चनृत्यंतिभूषैर्द्वादशभिर्युताः ॥ दिव्यैःषोडशशृंगारैर्हरंत्यप्सरसांमनः ॥ ११ ॥ बन्धूनामपिसेनानांमहातंकागजाह्वये ॥ चालनसंभ्रमोपेतंविह्वलैश्चजनैरभूत् ॥ १२ ॥

पटवा, वारी, संगतरास, लखेरे माली, धोबी, तेली ॥६॥ तमोली, चितेरे, कसेरे, भडभूंजे, काच भेदनेवाले ॥७॥ मोतियों और रत्नोंमें छेद करने वाले, इनसे आदि लेकर जितने कारवाले दुकानदार हैं, वे सब कारीगर उस बाजारमें हैं ॥ ८ ॥ कहीं बाजीगर, कहीं इन्द्र जालवाले, कहीं नट नाच रहे हैं, कहीं रीछोंका युद्ध होता है ॥९॥ कहीं डमरू बजाकर बन्दरोंकी लीला, कहीं सूत, मागध, बन्दीजन गाते हैं ॥ १० ॥ और कहीं बारह प्रकारके भूषणों सहित अनेक भावोंसे वेश्यायें राजाओंके आगे नाचती हैं जो सोलह शृंगारोंसे अप्सराओंकाभी मन हरती हैं ॥ ११ ॥ तब हस्तिनापुरमें निज बन्धुओंकी सेनाओंका बडा आतंक हुआ, और विह्वल हुये जन चोंकनेसे चलने लगे ॥ १२ ॥

कोई २ भागकर अपने दरवाजोंमें सांकल (वेवडा) लगाकर भाग गये, और घर घरमें जन २ में वडा कोलाहल हुआ ॥१३॥ वीर्य, शूरता, बल जिनमें चक्रवर्ती कौरव, समुद्र
तक जिनका राज्य, वे भी शंकित हो गये ॥ १४ ॥ तब प्रद्युम्नके भेजे हुये बडे बुद्धिमान् उद्धवजीने हस्तिनापुरमें जाकर धृतराष्ट्रको देखा ॥ १५॥ मद जिनके चू रहा, कस्तूरी,
केशर और सिंदूरसे मण्डित गण्डस्थल जिनके ऐसे हाथियोंकी सिंदूरसे चिती सूंडपर बैठे कानोंसे ताडे भ्रमरोंसे मंडित है मन्दिरका आंगन जिसका उस धृतराष्ट्रके पास गये ॥१६॥
भीष्म, कर्ण, द्रोणाचार्य, शल्य, कृपाचार्य, भूरिश्रवा, वाह्लीक, धौम्यऋषि, शकुनि, संजय, दुश्शासन, विदुर, लक्ष्मण दुर्योधन, अश्वत्थामा सोमदत्त ॥ १७ ॥ और यज्ञकेतु इनके
सहित, छत्र जिसपर लग रहा है, चमर हो रहे हैं, सोनेके सिंहासनपर विराजमान् हस्तिनापुरके स्वामी धृतराष्ट्रको प्रणाम करके हाथ जोड उद्धवजी बोले ॥१८॥ हे राजेन्द्रसत्तम !

विदुद्रुवुर्जनाःसर्वेगृहेष्वापातितार्गलाः ॥ कोलाहलोमहानासीद्गेहेगेहेजनेजने ॥१३॥ वीर्य्यशौर्य्यबलोपेताःकौरवाश्चक्रवर्तिनः ॥ आसमुद्राः
क्षितीशेंद्राजातास्तदपिशंकिताः॥१४॥प्रद्युम्नप्रेषितःसाक्षादुद्धवोबुद्धिसत्तमः ॥ कौरवेंद्रपुरंप्राप्तोधृतराष्ट्रंददर्शह॥१५॥ मदच्युतामस्यनृपस्यदं-
तिनांकस्तूरिकाकुंकुमगण्डशालिनाम् ॥ सिन्दूरशुण्डास्पदकर्णताडितैःषडंघ्रिभिर्मंडितमंदिराजिरम् ॥१६॥ यंभीष्मकर्णगुरुशल्यकृपैश्चभूरि
बाह्लीकधौम्यशकुनैःसहसञ्जयेन ॥ दुःशासनेनविदुरेणचलक्ष्मणेनदुर्योधनेनचकृपीसुतसोमदत्तैः ॥ १७ ॥ श्रीयज्ञकेतुसहितैःसहितंनृपेंद्रंली-
लातपत्रसितचामरहेमपीठैः ॥ संसेवितंपरिसमेत्यगजाह्वयेशंनत्वोद्धवःप्रणतआहकृतांजलिस्तम् ॥ १८ ॥ उद्धवउवाच ॥ प्रद्युम्नेन
प्रकथितंशृणुराजेंद्रसत्तम ॥ उग्रसेनःक्षितीशेंद्रोयादवेंद्रोमहाबलः ॥ १९ ॥ विजित्यनृपतीन्सर्वान्राजसूयंकरिष्यति ॥ प्रेषितस्तेनसेनाभिः
प्रद्युम्नोरुक्मिणीसुतः॥२०॥ जेतुंमहोद्भटान्वीराञ्जंबूद्वीपस्थितान्नृपान् ॥ चैद्यशाल्वजरासन्धदंतवक्रादिभूपतीन् ॥ २१ ॥ विजित्यचागतःका
र्ष्णिस्तस्मैयच्छबलिंबहु ॥ उपायनंचदातव्यंबंधूनामैक्यकाम्यया ॥ २२ ॥ माभूत्कुरूणांवृष्णीनांकलिर्नोचेद्भविष्यति ॥ तेनोदितंमेकथितं
तत्क्षमस्वनृपेश्वर ॥ २३ ॥ दूतस्यहीनदोषस्यत्वयोक्तंयद्ददामितत् ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तच्छ्रुत्वाकौरवाः सर्वेराजन्संजातमन्यवः ॥
वीर्य्यशौर्य्यमदोन्नद्धाऊचुःप्रस्फुरिताधराः ॥ २४ ॥

प्रद्युम्नने जो कुछ कहा है, उसको सुनियें, उग्रसेन, पृथ्वीका ईश, यादवोंमें इन्द्र, महाबली है ॥१९॥ वह समस्त पृथ्वीके राजाओंको जीतकर राजसूय यज्ञ करेगा, उसने सेना देकर
रुक्मिणीके पुत्र प्रद्युम्नको भेजा है ॥२०॥ उद्भट जो वीर जम्बू द्वीपके राजा उनको जीतनेके लिये प्रद्युम्नको भेजा है। शिशुपाल, जरासंध, शाल्व, दंतवक्रादिक जो भूपति हैं ॥२१॥
उनको कृष्णका पुत्र प्रद्युम्न जीतकर भेंट लेकर आया है,उसके लिये आप भी बहुतसी भेंट दीजिये, और भेंट तो आपको देनी चाहिये,क्योंकि इससे बन्धुओंमें एकता बनी रहेगी
॥२२॥ यदि भेंट नहीं देओगे, तो कौरवों और यादवोंमें युद्ध होगा, जो प्रद्युम्नने कहा, वह मैंने आपसे कह दिया है, मेरा अपराध तो क्षमा करिये, इसमें दूतका कुछ दोष नहीं है,
आप कहें सो उनसे जाकर कह दूँ ॥२३॥नारदजी कहते हैं-हे राजन् ! इस बातको सुनकर समस्त कौरव क्रोधसे भर गये, वीर्य, शूरता, इनके मदसे उन्मत्त, क्रोधसे जिनके ओठ

फडफडाने लगे, ऐसे वे कौरव बोले ॥२४॥ कालकी गति बडी दुरत्यय है, अहो ! यह जगत् बडे आश्चर्यका है, देखो ये दुर्बल शृंगाल (सियार) वनमें सिंहके ऊपर चढे आते हैं॥२५॥ जिनको हमारे सम्बन्धसे, हमारी दयासे हमारा दिया राज्य सिंहासन है, वे हमसे ही प्रतिकूल हो गये हैं, इनको देना ऐसा हुआ, जैसा सांपको दूध पिलाना॥२६॥ यादव सब कायर हैं युद्धमें घबडा जात हैं, फिर भी निर्लज्ज शासन करनेको खडे हो गये हैं ॥२७॥ थोडासा पराक्रमी उग्रसेन जम्बूद्वीपके राजाओंको जीतकर भट लेकर राजसूय यज्ञ करना चाहता है देखो बडे आश्चर्यकी बात है ॥२८॥ जहाँ भीष्म, कर्ण, द्रोणाचार्य और दुर्योधन विराज रहे हैं, वहाँ कुबुद्धि प्रद्युम्नने तुमको मन्त्री बनाकर भेजा है॥२९॥इससे यदि कुछ दिन जीना चाहते हो, तो द्वारकाको चले जाओ, यदि नहीं मानोगे तो सबको मारकर हम यमराजके घर पहुँचा देंगे ॥३०॥ ऐसे श्रीकृष्णसे विमुख जो कौरव वे बकने लगे, उसको उद्धवजी सुन

॥ कौरवाऊचुः ॥ दुरत्ययाकालगतिरहोचित्रमिदंजगत् ॥ सिंहोपरिप्रधावंतिशृगालादुर्बलावने ॥ २५ ॥ अस्मत्सकाशात्संबन्धाअस्मद्दत्तनृपासनाः ॥ दातॄणांप्रतिकूलास्तेदातॄणांफणिनोयथा ॥ २६ ॥ वृष्णयोभीरवःसर्वेयुधिविक्लवचेतसः ॥ तथैवशासनंकर्तुंप्रवृत्ताहिगतह्रियः ॥२७॥ उग्रसेनोल्पवीर्यश्चजंबूद्वीपस्थितान्नृपान् ॥ विजित्याहोबलिंनीत्वाराजसूयंकरिष्यति॥२८॥यत्र भीष्मश्चकर्णश्चद्रोणोदुर्योधनादयः ॥ तत्रत्वंप्रेषितोमन्त्रीप्रद्युम्नेनकुबुद्धिना ॥ २९ ॥ तस्माद्यातपुरीमध्येयूयंचेज्जीवनेच्छया ॥ नचेद्यास्यथवः सर्वान्नयामोयमसादनम् ॥ ३० ॥ ॥ नारदउवाच ॥ इत्थंश्रीकृष्णविमुखैःकौरवैःपरिभाषितम् ॥ श्रुत्वोद्धवःशंबरारिमेत्यसर्वमुवाचह ॥ ३१ ॥ कौरवोक्तंवचः श्रुत्वाप्रद्युम्नोधन्विनांवरः ॥ प्रतिशार्ङ्गंसंगृहीत्वारोषात्प्रस्फुरिताधरः ॥ ३२ ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ कौरवान्घातयिष्यामिबन्धूनपिमदोद्धतान् ॥ बाणैस्तीक्ष्णैर्यथायोगीनियमैर्देहजारुजः ॥ ३३ ॥ यदूनांसैन्यचक्रेषुबलिंयोनप्रदास्यति ॥ कौरवेभ्योपिसपुमान्पितुर्मातुर्नचौरसः॥ ३४ ॥ नारदउवाच ॥ तदैवयादवाःसर्वेभोजवृष्ण्यंधकादयः ॥ गजाह्वयंययुः सैन्यैराजन्संजातमन्यवः॥ ३५ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेकौरवेभ्योदूतप्रेषणंनामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तदैवकौरवाःसर्वेनिर्गतादीप्तमन्यवः ॥ स्वैःस्वैर्बलैःसमायुक्तायोद्धुंप्रद्युम्नसंमुखे ॥ १ ॥

कर चले आये और प्रद्युम्नके आगे सब कह दिया ॥३१॥ कौरवोंके कहे वचन सुनकर धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ प्रद्युम्नके क्रोधसे ओठ फडकने लगे और शार्ङ्गधनुषको उठाकर यह बोले ॥३२॥ प्रद्युम्न बोले–हैं तो हमारे बन्धु, किन्तु बडे मतवाले हो गये हैं, सो अब मैं इन कौरवोंको तीखे तीखे बाणोंसे मारूँगा, जैसे योगी नियमोंसे देहके रोगोंको मारते हैं ॥ ३३ ॥ यादवोंकी सेनामें जो कोई कौरवोंसे भेंट नहीं लेवे, वह अपने माता पितासे उत्पन्न नहीं है ॥३४॥ नारदजी कहते हैं, तभी समस्त यादव, भोज, वृष्णि, अंधक, सब सेनाको लेकर क्रोध करके हस्तिनापुरको चले ॥ ३५ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्वसंवादे कौरवेभ्यो दूतप्रेषणंनामैकोनविंशोऽध्यायः ॥१९॥ नारदजी कहते हैं–उसी समय कौरव भी क्रोधके मारे सब निकले, अपनी अपनी सेना लेकर युद्ध करनेके लिये प्रद्युम्नके सामने आये ॥ १ ॥

रत्नोंके गहने पहिने, दुशाले ओढे, विजयकी ध्वजाओंसे भूषित जिनके पांवोंमें सोनेकी सांकल बंधी है, ऐसे साठ, हजार हाथी पहिलेही निकले ॥ २ ॥ प्रलयके समुद्रकीसी ध्वनि जिनकी ऐसी बंब जिनपर बजती आवं, ऐसे साठ हजार हाथी निकले ॥३॥ हाथी, बैल, और बडे मल्ल लोहेकी जंजीर पहिने, शिरस्त्राण मुकुट पहिने, दो लाख निकले ॥४॥ फिर सुनहरी कडे, बाजू, किरीट, कुण्डल पहिने, सुनहरी कुरते पहिने, हाथियोंपर चढे दो लाख वीर निकले ॥ ५ ॥ पीले कुरते पहिने, टेढे उष्णीश (साफा) धारण किये, बडे २ प्रसिद्ध वीर हाथियोंपर चढे दो लाख निकले ॥ ६ ॥ कई लाख वस्त्र धारण किये, लालोंके गहने पहिने, लाल बनातोंकी जिनकी झूल, ऐसे बडे ऊँचे हाथियोंपर बैठे निकले ॥ ७ ॥ कोई काले वस्त्र पहिने, कोई हरे वस्त्र पहिने, कोई सफेद वस्त्र पहिने, कोई कुछ लाल, कुछ सफेद वस्त्र पहिने, निकले॥८॥ विमानसे रथोंमें बैठकर सिंहकी ध्वजा और बडी ऊँची पताका-

विजयध्वजसंयुक्तारत्नकंबलमण्डिताः ॥ गजाःषष्टिसहस्राणिनिर्ययुःस्वर्णशृंखलाः ॥ २ ॥ प्रलयाब्धिमहावर्तसंघर्षध्वनिकारिणाम् ॥ गजा-
षष्टिसहस्राणिदुंदुभीनांविनिर्गताः ॥३॥ गजागावोबृहन्मल्लालोहकंचुकमण्डिताः ॥ शिरस्त्रमौलिसंयुक्ताद्विलक्षाणिविनिर्ययुः ॥४॥ हेमकंकण
केयूरकिरीटवरकुण्डलाः ॥ गजस्थाश्चद्विलक्षाणिनिर्ययुःस्वर्णकंचुकाः ॥५॥ पीतकंचुकसंयुक्तास्तिर्यगुष्णीपशालिनः ॥ गजस्थाश्चद्विलक्षाणि
संग्रामेलब्धकीर्तयः ॥ ६ ॥ रक्तांबरधराःकेचिद्रक्तभूषणभूषिताः ॥ रक्तकम्बलसंयुक्तैर्गजैरुच्चैर्विनिर्गताः ॥७॥ कृष्णांबरधरानागैर्हरिद्वस्त्रसमा-
वृताः ॥ केचिच्छुक्लांबराकेचिन्निर्ययुः पाटलांबराः ॥८॥ रथैश्चदेवधिष्ण्याभैर्मृगेंद्रध्वजशोभितैः ॥ पतत्पताकैरत्युच्चैर्निर्ययुःकोटिशोनृपाः ॥
॥ ९ ॥ अंगैर्वंगैःसैंधवैश्चचंचलैस्तुरगैर्नृपाः ॥ मनोजवैःस्वर्णभूषैर्निर्ययुःशस्त्रसंवृताः॥१०॥समंतान्निर्ययुर्वीरालोहकंचुकमंडिताः॥विद्याधर-
समाराजन्संकुलायुद्धशालिनः ॥ ११ ॥ जगुर्यशःकौरवाणांसूतमागधबंदिनः ॥ भेरीमृदंगपटहैरानकैर्युद्धनिःस्वनैः ॥१२॥ मृगेंद्रध्वजसंयुक्तैः
शुक्लवाहनियोजितैः ॥ व्यजनैर्वज्रदंडैश्चचामरांदोलिराजितैः ॥१३॥ चतुर्योजनमात्रेणचंद्रमंडलचारुणा ॥ छत्रेणमंडितेराजभिर्दत्तेनमनोहरे
॥ १४ ॥ दुर्योधनोबभौसैन्येमहतिस्यंदनेस्थितः ॥ तथान्येधार्तराष्ट्राश्चस्यंदनेस्यंदनेस्थिताः ॥ १५ ॥ चतुर्योजनमात्रैश्चछत्रैर्मुक्ताविलं-
बिभिः ॥ सुरथेनातिभीष्मेणकृपेणगुरुणासह ॥ १६ ॥

ओंसे शोभित ऐसे करोडों वीर निकले ॥९॥ अंग, बंग, सिन्धु, इन देशोंके चंचल मनकेसे वेगवाले, सुनहरी जिनपर साज चढे हुये, हे नृप! ऐसे घोडोंपर शस्त्र लिये वीर निकले ॥१०॥ चारों ओरसे लोहेके कवच पहिने, विद्याधरोंके समान युद्ध करनेवाले वीर निकले ॥११॥ सूत, मागध, बंदीजन कौरवोंका यश गाते चल रहे हैं, भेरी, ढोल, मृदंग नगाडे, युद्धके बाजे बजते चल रहे हैं ॥१२॥ सिंहकी ध्वजा जिनमें, श्वेत घोडे जिनमें जुडे, हीरेकी डंडीके चमर, छत्र, जिनपर होते आवें, पंखे होते आवें ॥१३॥ चार योजनका चन्द्रमा कासा जिसका मण्डल ऐसे राजाओंसे दिये हुये छत्रसे शोभित मण्डलमें ॥ १४ ॥ उस सेनामें बडे रथमें बैठा दुर्योधन बडा शोभित हुआ, और भी धृतराष्ट्रके पुत्र अपने २ रथोंमें बैठे आये ॥ १५ ॥ सोलह कोसतक मोती जिनमें लटक रहे ऐसे छत्रोंकी छायामें बैठा सुरथ, कृपाचार्य, द्रोण, भीष्मके साथ दुर्योधन आया ॥ १६ ॥

और भी बाह्लीक, कर्ण, शल्य, बुद्धिमान् सोमदत्त, अश्वत्थामा, कर्ण, धौम्य, धनुषधारी लक्ष्मणकुमार ॥१७॥ वीर शकुनि मामा, दुःशासन संजय, भूरि, यक्षकेतु, भूरिश्रवा ॥ १८ ॥ इनके संग दुर्योधन ऐसे शोभित हुआ, जैसे मरुद्गणोंसे इन्द्र शोभित होता है, इन्द्रप्रस्थसे पाण्डवोंकी भेजी हुई दो पृतना सेना ॥१९॥ तभी कौरवोंकी सहायता करनेके लिये आई, तब सोलह अक्षौहिणी सेनाको संग लिये कौरवोंके चलनेसे ॥ २० ॥ पृथ्वी हिलने लगी दिशाएं गूजने लगीं, रजसे आकाश भर गया, हाथी, घोडे, इनकी रेणुसे तारेकी बराबर सूर्य दीखने लगा ॥२१॥ भूमिमें अन्धकार होगया, देवताभी सब शंकित होगये, जहाँ तहाँ हाथियोंके मारे वृक्ष गिर पड़े ॥२२॥ घोडोंसहित वीरोंके वेगसे भूमण्डल खुद गया, तब कौरवोंकी और यादवोंकी सेना परस्पर ॥२३॥ तीखे २ शस्त्रोंसे जैसे सातों समुद्र अपनी तरंगोंसे प्रलयमें लडते हैं, वैसे लडने लगे, घुडसवारोंसे घुडसवार, रथियोंसे रथी, हाथियोंसे

बाह्लीककर्णशल्यैश्चसोमदत्तेनधीमता॥ अश्वत्थाम्नाचधौम्येनलक्ष्मणेनधनुष्मता ॥१७॥ शकुनिनाचवीरेणतथादुःशासनेनच ॥ संजयेनतथा साक्षाद्भूरिणायक्षकेतुना ॥१८॥ सुयोधनोनृपोरेजेयथाशक्रोमरुद्गणैः॥ इंद्रप्रस्थात्पांडुपुत्रैःप्रेषितंपृतनाद्वयम्॥१९॥तदैवचागतंराजन्कौरवाणां सहायकृत्॥अक्षौहिणीभिःषोडशभिःकुरूणांचलतांतदा॥२०॥ चचालभूर्दिशोनेदूरजोव्याप्तंनभोभवत् ॥ तारकेवबभौसूर्योगजाश्वरथरेणुभिः ॥ २१ ॥ अंधकारोभवद्भूमौदेवाःसर्वेपिशंकिताः ॥ यत्रतत्रगजानांचचोदनाभिश्चभूरुहाः ॥२२॥ निपेतुस्तुरगैर्वीरैःक्षुण्णभूखंडमंडलम्॥सेना कुरूणांवृष्णीनांयुयुधुश्चपरस्परम् ॥२३॥ तीक्ष्णैःशस्त्रैर्यथासप्तसमुद्रास्तरलैर्लये ॥ हयाहयैरिभाश्चेभैरथिनोरथिभिःसह ॥२४॥ श्येनैःश्येना इवक्रव्येपत्तयःपत्तिभिर्मृधे ॥ महामात्यैर्महामात्याःसूताःसूतैर्नृपैर्नृपाः ॥२५॥ युयुधुःक्रोधसंयुक्ताःसिंहैःसिंहइवौजसा ॥ खड्गैःकुंतैःशक्तिभि श्चभल्लैःपट्टिशमुद्गरैः॥२६॥गदाभिर्मुसलैश्चक्रैस्तोमरैर्भिंडिपालकैः ॥ शतघ्नीभिर्भुशुंडीभिःकुठारैश्चस्फुरत्प्रभैः ॥२७॥ चिच्छिदुर्बाणपटलैः शिरांसिक्रोधमूर्च्छिताः॥ बाणांधकारेसंजातेप्रद्युम्नोधन्विनांवरः ॥२८॥ दुर्योधनेनयुयुधेधनुष्टंकारयन्मुहुः ॥अनिरुद्धश्चभीष्मेणदीप्तिमांश्च कृपेणवै ॥ २९ ॥ भानुर्द्रोणेनसांबस्तुबाह्लीकेननृपेश्वर ॥ मधुःकर्णेनचायुध्यद्बृहद्भानुःशलेनवै ॥ ३० ॥

हाथी ॥२४॥ और पैदलोंसे पैदल लडने लगे, जैसे मांसके लिये बाजोंसे बाज लडते हैं, वैसेही महावतोंसे महावत, सारथियोंसे सारथी, रथियोंसे रथी, और राजाओंसे राजा ॥२५॥ क्रोधके भरे हुये वडे जोरसे जैसे सिंहोंसे सिंह लडते हैं, वैसेही लडने लगे, खड्गोंसे बर्छियोंसे, भालोंसे पट्टोंसे, मुद्गरोंसे ॥२६॥ गदाओंसे, मूसलोंसे, चक्रोंसे, तोमरोंसे, भिंदिपालोंसे तोपोंसे, बन्दूकोंसे, कुठारोंसे, चमकते शस्त्रोंसे लडने लगे ॥ २७ ॥ क्रोधमें मूर्च्छित हुये बाणोंके झुण्डोंसे शिर काट काटकर गिराने लगे, जब बाणोंका बडा अंधकार हुआ, तब धनुषधारियोंमें मुख्य प्रद्युम्न ॥२८॥ धनुषकी वारंवार टंकार करता दुर्योधनसे युद्ध करने लगा, अनिरुद्ध भीष्मसे, दीप्तिमान् कृपाचार्यसे ॥२९॥ भानु द्रोणाचार्यसे, साम्ब बाह्लीकसे, मधु कर्णसे, और हे नृपेश्वर ! बृहद्भानु शलसे युद्ध करने लगा, ऐसेही ॥ ३० ॥

हरिका पुत्र चित्रभानु बुद्धिमान् सोमदत्तसे, वृक अश्वत्थामा, अरुण धौम्यसे, लडने लगा ॥३१॥ पुष्कर दुर्योधनके पुत्र लक्ष्मणसे, कृष्णका, पुत्र वेदबाहु शकुनिसे ॥३२॥ हरिका पुत्र श्रुतदेव दुःशासनसे, वैसेही सुनन्दन संजयसे लडने लगा ॥३३॥ विदुरसे साक्षात् गद, भूरिश्रवासे कृतवर्मा, युद्धकेतुसे अक्रूर युद्ध करने लगा ॥ ३४ ॥ ऐसे परस्पर बडा भारी घोर युद्ध हुआ, तब प्रद्युम्नने देखा कि, दुर्योधनकी बडी सेना है॥३५॥तब जैसे वाराह भगवान्ने प्रलयके समुद्रको डाढोंसे मथा वैसेही सेनाको प्रद्युम्न बाणोंके समूहसे मथने लगा, बाणोंके मारे हाथियोंके कुम्भ स्थल आकाशमेंसे कटकट कर गिरने लगे ॥३६॥ उन कुम्भ स्थलोंसे पृथ्वीमें गिरे मोती ऐसे सुशोभित हुये, जैसे, आकाशमें तारागण शोभित होते हैं बाणोंसे रथियोंको, सारथियोंको, रथोंको ऐसे पटक दिये जैसे ॥३७॥ उस महा संग्राममें वायु अपने वेगसे वृक्षोंको पटकती हैं, उस समय बारबार धनुषको टंकारता दुर्योधन आया

चित्रभानुर्हरेःपुत्रःसोमदत्तेनधीमता ॥ अश्वत्थाम्नावृकश्चैवारुणोधौम्येनमैथिल ॥३१॥ पुष्करोलक्ष्मणेनाशुदुर्योधनसुतेनवै ॥ वेदबाहुःकृष्णसुतःशकुनेनमहामृधे ॥३२॥ दुःशासनेनसमरेश्रुतदेवोहरेःसुतः ॥ तथाहियुयुधेयुद्धेसंजयेनसुनंदनः॥ ३३ ॥ विदुरेणगदःसाक्षात्कृतवर्माचभूरिणा ॥ अक्रूरोयुयुधेराजन्नाहवेयक्षकेतुना ॥ ३४ ॥ एवंपरस्परंयुद्धंबभूवतुमुलंमहत् ॥ कार्ष्णिर्विलोकयामासदुर्योधनबलंमहत् ॥३५॥ बाणसंघेनवाराहोदंष्ट्र्याचयथार्णवम् ॥ बाणसंभिन्नकुंभानांकरिणांप्रपतंतिखात् ॥३६॥ मुक्ताफलानिरेजुःकौरात्रौतारागणाइव ॥ बाणैःसंपातयामासरथिनःसारथींत्रथान् ॥३७॥ महामृधेमैथिलेंद्रवेगैर्वातोयथातरून् ॥ दुर्योधनस्तदाप्राप्तोधनुष्टंकारयन्मुहुः॥ ३८ ॥ प्रद्युम्नंताडयामाससायकैर्दशभिर्मृधे॥तान्प्रचिच्छेदभगवान्प्रद्युम्नोयादवेश्वरः ॥३९॥दुर्योधनःपुनस्तस्यकवचेसायकान्दश॥ निचखानस्वर्णपुंखान्भित्त्वावर्मतनौगताः ॥ ४० ॥ सहस्रैर्बाणपटलैःसहस्राश्वाञ्जघानह ॥ चिच्छेदबाणशतकैःकोदंडंसगुणंपरम् ॥ ४१ ॥ शंबरारेर्महावीरोधृतराष्ट्रसुतोबली ॥ प्रद्युम्नस्तंरथंत्यक्त्वाथान्यमारुह्यसत्वरम् ॥४२॥ कृष्णदत्तंधनुर्नीत्वासज्यंकृत्वाविधानतः॥ एकंबाणंसमाधायकर्णांतंतच्चकर्षह॥४३॥ भुजदंडस्यवेगेनतद्रथेनिचकर्षह ॥ गृहीत्वातद्रथंबाणोभ्रामयित्वाघटीद्वयम् ॥ ४४ ॥ आकाशात्पातयामासकमंडलुमिवार्भकः॥ पतनेनरथःसद्यश्चूर्णीभूतोबभूवह ॥ ४५ ॥ ससूताश्वहयाःसर्वेपंचतांप्रापुरग्रतः ॥ अन्यंरथंसमास्थायधार्तराष्ट्रोमहाबलः ॥ ४६ ॥

॥ ३८ ॥ आतेही उसने उस संग्राममें दश बाण प्रद्युम्नके मारे, वे बाण भगवान् प्रद्युम्नने काट डाले ॥३९॥ फिर दुर्योधनने दश बाण प्रद्युम्नके कवचमें मारे वे बाण कवचको छेदकर प्रद्युम्नके शरीरमें घुस गये ॥४०॥ फिर हजार बाणोंके समूहसे दुर्योधनने हजारों घोडे मार डाले, और सौ बाणोंसे॥४१॥शम्बरारि प्रद्युम्नका महाबली धृतराष्ट्रके पुत्रने धनुष काट डाला, तब प्रद्युम्नने उस रथको छोड़कर दूसरेमें चढ़कर, ॥४२॥कृष्णके दिये धनुषको लेकर, विधानसे चढ़ाकर, कान तक खेंचकर एक बाण मारा ॥ ४३ ॥ भुज दण्डके वेगसे वह बाण दुर्योधनके रथमें जागडा, सो उस रथको लेकर आकाशमें दो घडीतक घुमाकर ॥ ४४ ॥ आकाशसे धरतीमें डाल दिया, जैसे कमण्डलुको बालक डाल देता है डालतेही रथका तो शीघ्रही चूर्ण होगया ॥४५॥ सारथि सहित सब घोडेभी मर गये, तब बड़ा बली धृतराष्ट्रका पुत्र दुर्योधन दूसरे रथमें बैठा ॥ ४६ ॥

फिर दश बाण इसने प्रद्युम्नके मारे, वे बाण ऐसे लगे, जैसे हाथीके कोई भाला मारता है ॥ ४७ ॥ फिर प्रद्युम्नन कृष्णके दिये धनुषमें एक बाण चढ़ाकर छोडा, वह बाण जबतक दुर्योधनके रथको लेकर आकाशमें उडा ॥४८॥ कि तबतक दूसरा बाण मारा, वह उस रथको और ऊँचा लेगया, फिर तीसरा बाण मारा, उसने रथको लेकर दुर्योधनके महलके आंगनमें ॥४९॥ धृतराष्ट्रके आगे रथ समेत, सारथी समेत दुर्योधनको आकाशमेंसे गिरा दिया, जैसे पवन कमलके फूलको गिरावे ॥५०॥ ऐसे वह दुर्योधनको गिराकर संग्राममें फिर प्रद्युम्नके पास आगया॥५१॥गिरनेसे रथका चूर्ण होगया, जैसे अंगार बिखर जाता है, और दुर्योधन रुधिर वमन करता हुआ, मूर्च्छित होकर गिर पडा ॥५२॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां कौरवयुद्धवर्णनं नामविंशोध्यायः ॥२०॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे जब संग्राममेंसे दुर्योधन चला गया, तब कौरवोंकी सेनामें बडा हाहाकार मचा,

प्रद्युम्नंताडयामासदशभिःसायकैर्मृधे ॥ तैस्ताडितोहरेःपुत्रोमालाहतइवद्विपः ॥ ४७ ॥ कृष्णदत्तेचकोदंडेतथैकंबाणमादधे ॥ बाणस्तंसरथं नीत्वायावत्प्रागान्महांबरे ॥४८॥ तावद्बाणोद्वितीयोपितंगृहीत्वाययौत्वरम् ॥ तावत्तृतीयःसंप्राप्तोनीत्वातंमंदिराजिरे॥४९॥ धृतराष्ट्रसमीपे चसरथंसाश्वसारथिम् ॥ आकाशात्पातयामासपद्मकोशमिवानिलः॥ ५० ॥ बाणस्तंपातयित्वातुरणेकार्ष्णिसमाययौ ॥५१॥ पतनेनविशीर्णोभूदंगारइवतद्रथः ॥ सुयोधनोमूर्च्छितोभूदुद्वमन्रुधिरंमुखात्॥५२॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खंडेनारदबहुलाश्वसंवादेकौरवयुद्धवर्णनंनामविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ नारदउवाच ॥ दुर्योधनेगतेतत्रहाहाकारोमहानभूत् ॥ तदादेवव्रतोभीष्मोगांगेयः प्रययौत्वरम् ॥ १ ॥ यदूनांपश्यतांतेषांधनुष्टंकारयन्मुहुः॥भस्मीकर्तुंयदुबलंवनंवह्निरिवज्वलन् ॥२॥ सर्वधर्मभृतांश्रेष्ठोमहाभागवतः कविः ॥ वीरयूथाग्रणीर्येनरामोपियुधितोषितः ॥ ३ ॥ शिरस्त्रीमुकुटीगौरःसितश्मश्रुःपितामहः ॥ यथाषोडशवर्षीयोयुद्धांतंविचरन्बलात् ॥ ४ ॥ बाणैर्निपातयामासानिरुद्धस्यबलंमहत् ॥ करिणश्छिन्नशिरसोहयास्तेभिन्नकन्धराः ॥५॥ खड्गहस्ताभिन्नबाणैःपत्तयोपिद्विधाभवन् ॥ रथाञ्चूर्णीकृतायेनहतसूताश्वनायकाः ॥ ६ ॥ अधोमुखाऊर्ध्वमुखाश्छिन्नपादानृपात्मजा ॥ खड्गहस्ताधनुर्हस्ताःपतिताश्छिन्नबाहवः ॥ ७ ॥ केचिद्विच्छिन्नकवचानिपेतुर्भूमिमण्डले ॥ अश्वैर्वीरै रथैर्नागैःपतितैःस्वर्णभूषितैः ॥ ८ ॥

उस समय देवव्रत भीष्म गंगापुत्र जल्दी आये ॥१॥ तब उन यादवोंके देखते २ वारबार धनुषको टंकारते यादवोंकी सेनाको भस्म किया चाहते हैं, जैसे अग्नि वनको ॥२॥ सब धर्म धारियोंमें श्रेष्ठ महा भागवत बडे ज्ञानी और वीरोंके यूथाग्रणी परशुरामको जिन्होंने युद्धमें प्रसन्न किया ॥३॥ शिरस्त्राण (मुकुट पहिने, गौर जिनका वर्ण, श्वेत दाढी मूंछ वाले, सोलह वर्षके युवाकी तरह बलसे युद्धमें विचरते ॥४॥ ऐसे भीष्मजी बाणोंसे अनिरुद्धकी बडी सेनाको गिराने लगे, मस्तक कटे हाथी, ग्रीवा कटे घोडे, गिर पडे ॥५॥ खड्ग हाथमें लिये, बाणोंसे छिदे दो दो टूट होकर पैदल गिर पडे, रथी, सारथी, घोडे जिनके पड़ गये, ऐसे रथ चूर्ण हो गये ॥ ६ ॥ ऊँचेको मुख किये, पांव कटे, खड्ग लिये, धनुप लिये, भुजा कटे, बहुतसे राजा कटकर गिर पडे ॥७॥ कितनेही कटे हैं कवच जिनके ऐसे भूमिमें गिर पडे, और सुवर्णसे शृंगार किये घोडे, हाथी, रथ, रथी गिर पडे ॥ ८ ॥

तब युद्ध मण्डलकी बडी शोभा हुई जैसे गिरे हुये फल युक्त वृक्षोंसे वनकी शोभा होती है ॥९॥ शस्त्र ही हैं दांत जिसके, ध्वजा हैं वस्त्र जिसके, हाथी हैं स्तन जिसके, रथोंके पहिये हैं कर्णफूल जिसके, ऐसी जो भूमि है, वह मूर्तिमती महामारीकी तरह शोभित हुई, फिर रुधिरकी नदी बही, नदीमें रथ घोडे मनुष्य बह चले ॥१०॥ बडी भयंकर नदी बही जैसे वैतरणी नदी होती है, उसके तटपर कूष्माण्ड, उन्माद, बेताल, भैरव गर्जने लगे, भयंकर शब्द बोलने लगे ॥ ११ ॥ महादेवकी मालाके लिये वीरोंके शिर ग्रहण करने लगे, यह देखकर बडी पताकाके रथमें बैठकर अनिरुद्ध आया ॥१२॥ सो धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ अपनी सेनाको पडी देखकर रणमें भीष्मके सामने गया, प्रलयके समुद्रके समान गर्जती चली आयी शत्रु की सेनाको देखकर ॥१३॥ अनिरुद्धने एक ही बाणसे भीष्मके धनुपकी प्रत्यंचा (डोरी) काट डाली, चोंचसे गरुड जैसे सर्पिणीको काटता है ॥१४॥ तब भीष्मने दूसरा धनुष लेकर

युद्धमण्डलमारेजेवनंवृक्षैर्हृतैर्यथा ॥ शस्त्रदंताबाणकेशाध्वजवस्त्राकरिस्तना ॥९॥ रथांगकुशलाराजन्महामारीवभूर्बभौ ॥ क्षतजस्रावसंभूतारथा श्वनरवाहिनी ॥१०॥ आपगाभून्महादुर्गानरैर्वैतरणीयथा ॥ कूष्मांडोन्मादवेतालानदंतोभैरवंस्वनम् ॥११॥ हरमालार्थमागत्यजगृहुर्नृशिरां-सिच ॥ रथेनातिपताकेनानिरुद्धोधन्विनांवरः ॥१२॥ स्वबलंपतितंदृष्ट्वाप्रागाद्भीष्मंमृधेमहान् ॥ प्रलयाब्धिमहावर्तभीमसंघर्षनादिनीम् ॥१३॥ धनुर्ज्यांतस्यचिच्छेदवाणेनैकेनकार्ष्णिजः ॥ तुण्डयातीक्ष्णयाराजन्गरुडःसर्पिणींयथा ॥१४॥ भीष्मोन्यद्धनुरादायसज्यंकृत्वातदात्मवान्॥ सर्वेषांपश्यतांतत्रब्रह्मास्त्रंसंदधेमृधे ॥१५॥ ततःप्रादुष्कृतंतेजःप्रचण्डंवीक्ष्यमाधवः॥ स्वबलस्यापिरक्षार्थंब्रह्मास्त्रंसन्दधेस्वयम् ॥१६॥ द्वादशा-दित्यसङ्काशेयुयुधातेपरस्परम् ॥ त्रींल्लोकान्दहतीदृष्ट्वाऽनिरुद्धस्तंजहारह ॥१७॥ गांगेयस्यापिकोदण्डंतडिद्वर्णंयदूत्तमः॥ चिच्छेदसायकैः सूर्यो नीहारमिवरश्मिभिः ॥१८॥ भीष्मोगृहीत्वाथगदांलक्षभारमयींदृढाम् ॥ प्राहिणोदनिरुद्धायसिंहनादंतदाकरोत् ॥१९॥ गृहीत्वावामहस्तेनगरु-त्मानिवपन्नगीम् ॥ प्रद्युम्नोभगवान्साक्षात्प्राहिणोत्स्वगदांहृदि ॥ २० ॥ गदाप्रहारव्यथितोमूर्च्छितःपतितोरथात् ॥ बभौसूर्योयथाकाशा-द्गांगेयोमृधमण्डले ॥ २१ ॥

उसपर प्रत्यंचा चढाकर सभीके देखते २ अपनी सेनाकी रक्षाके लिये ब्रह्मास्त्र चलाया ॥ १५ ॥ तब उसमेंसे निकले प्रचण्ड तेजको देखकर अनिरुद्धने भी अपनी सेनाकी रक्षाके लिये ब्रह्मास्त्र चलाया ॥१६॥ तब बारह सूर्योंका सा जिनका तेज ऐसे वे दोनों अस्त्र आपसमें लडने लगे, तब त्रिलोकीको ही जलती देखकर अनिरुद्धने वे दोनों अस्त्र खेंच लिये ॥१७॥ फिर भीष्मके बिजलीके समान धनुपको अनिरुद्धने बाणोंसे काट डाला, जैसे सूर्य किरणसे कुहरेको काटता है ॥१८॥ तब भीष्मने भी एक लाख भारकी दृढ गदाको अनि-रुद्धपर चलाकर सिंहनाद किया ॥१९॥ अनिरुद्ध भगवान्‌ने बायें हाथसे उस गदाको ऐसे पकड ली, जैसे गरुड सर्पिणीको पकडता है, और फिर अपनी गदा भीष्मके हृदयमें मारी ॥२०॥ भीष्म गदाके प्रहारसे दुःखी होकर मूर्च्छित हो रथमेंसे नीचे जा पडे, जैसे आकाशमेंसे सूर्य, वैसे ही रणमें भीष्म गिर पडे ॥ २१ ॥

तब क्रोधसे ओठ जिनके फडक रहे हैं, उन कृपाचार्यने अनिरुद्ध महात्माके ऊपर बर्छी लेकर चलाई ॥२२॥ तब दीप्तिमान् कृष्णके पुत्रने उस बर्छीको तीखे खड्गसे बीचमें ही काट डाला, जैसे कुवाक्योंसे मित्रता कोई काटे ॥२३॥ तब बडी भुजाओंवाले द्रोणाचार्यने भानुके ऊपर क्रोध करके पर्वतास्त्र फेंका, और धनुपको बार २ टंकारने लगे ॥२४॥ तब हे राजेन्द्र ! पर्वतास्त्रसे आकाशसे पर्वत गिरे, वे शत्रुकी सेनाको पीसने लगे, उन पर्वतोंके गिरनेसे सेनामें बडा हाहाकार हुआ ॥२५॥ तब हरिके पुत्र भानुने वायव्यास्त्र फेंका, उस पवन से पर्वत सब रणमेंसे उड गये ॥२६॥ तब बाह्लीकने क्रोध करके अग्निका अस्त्र चलाया, तब सेना भस्म होने लगी, जैसे बडा वन अग्निसे भस्म होता है ॥२७॥ तब जाम्बवतीके पुत्र साम्बने पर्जन्यास्त्र चलाया, उससे अग्नि सब शान्त हो गई, जैसे ज्ञानसे अहंकार शान्त होता है ॥२८॥ तब कर्ण मधुको छोडकर साम्बके ऊपर दौडा, सो साम्बके बीस बाण मार

कृपाचार्योपितत्रैवानिरुद्धायमहात्मने ॥ शक्तिंचिक्षेपसहसारुषाप्रस्फुरिताधरः ॥२२॥ दीप्तिमान्कृष्णपुत्रस्तुपथिचिच्छेदतांनृप॥खड्गेनशित धारेणकुवाक्येनेवमित्रताम् ॥ २३ ॥ द्रोणाचार्योमहाबाहुर्भानूपरिरुषान्वितः ॥ चिक्षेपपार्वतंचास्त्रंधनुष्टंकारयन्मुहुः ॥२४॥ पतंतःपर्वताव्यो म्नश्चूर्णयंतोद्विषद्बलम् ॥ तेषांपातेनराजेन्द्रहाहाकारोमहानभूत्॥२५॥तदाहरेःसुतोभानुर्वायव्यास्त्रंसमाददे॥ तदातेनाद्रयःसर्वेउड्डीताह्यभवन्र- णात् ॥२६॥ बाह्लीकस्तुतदाक्रुद्धोवह्न्यस्त्रंसंदधेततः ॥ भस्मीभूतंबलंजातंवह्निनेवमहद्वनम् ॥ २७ ॥ पार्जन्यमाददेतत्रसांबोजांबवतीसुतः ॥ तेन शांतिंगतोवह्निर्ज्ञानेनेवत्वहंकृतिः॥२८॥ कर्णस्ततोमधुंहित्वासांबोपरिरुषान्वितः ॥ जघानबाणविंशत्याजगर्जघनवद्बली ॥२९॥ तद्बाणैः सरथःसांबोबभ्रामघटिकाद्वयम् ॥ क्रोशंपुनःप्रपतितःकिञ्चिद्व्याकुलमानसः ॥३०॥ पुनर्गदांसमादायरथंत्यक्त्वासमेत्यस ॥ तताडगदयाकर्णं सांबोजांबवतीसुतः ॥ ३१ ॥ तदाप्रहारव्यथितःपतितोधरणीतले ॥ मूर्च्छांप्रापरणेराजन्कर्णोवीरोमहाबलः ॥३२॥ सांबोपिस्वधनुर्नीत्वारथ- मारुह्यवेगतः ॥ शूलंजघानविंशत्यासोमदत्तंचपञ्चभिः ॥ ३३ ॥ द्रौणिंचदशभिर्बाणैर्धौम्यंषोडशभिस्तथा ॥ लक्ष्मणंदशभिस्तत्रशकुनिं- पञ्चभिस्तथा ॥ ३४ ॥ दुःशासनंचविंशत्याविंशत्यासञ्जयंपृथक् ॥ भूरिंबाणशतैराजन्यक्षकेतुंशतैःशितैः ॥ ३५ ॥

कर बली कर्ण मेघके समान गर्जने लगा ॥२९॥ उन बाणोंसे रथसहित साम्ब कोसभर पर जाकर गिरा, और दो घडीतक भ्रमित हो गया, कुछ व्याकुल मन हो गया ॥३०॥ फिर रथको छोड गदा लेकर जाम्बवतीके पुत्र साम्बने आकर कर्णके गदा मारी ॥ ३१ ॥ तब गदाके प्रहारसे महाबली कर्ण मूर्च्छित होकर हे राजन् पृथ्वीमें जा पडा ॥ ३२ ॥ तब साम्बने भी धनुष लेकर बडे वेगसे रथमें बैठकर बीस बाण शूलके मारे, और पांच बाण सोमदत्तके मारे ॥३३॥ दश बाण अश्वत्थामाके मारे, धौम्यके सोलह बाण, दश लक्ष्मणके और पांच बाण शकुनीके मारे ॥३४॥ बीस दुःशानके बीस संजयके, सौ भूरिश्रवाके, और सौ बाण तीखे यक्षकेतुके मारे ॥ ३५ ॥

दश २ बाण सारथियोंके, एक एक बाण हाथी घोडोंके, और पांच २ बाण सब वीरोंके साम्बने मारे ॥३६॥ तब साम्बकी इस हस्त लाघवता (हाथकी सफाई) को देखकर अपनी और शत्रुकी सेनाके सब वीर प्रशंसा करने लगे ॥३७॥ और बड़े विस्मयको प्राप्त हुये, तब भीष्मजीने उठकर उत्तम धनुषको लेकर ॥३८॥ दश बाणोंसे साम्बके धनुषको काट डाला फिर भीष्म और महाबली द्रोणाचार्य भी बाणोंसे ॥३९॥ और हे मानद ! कर्ण ये सब यादवोंकी सेनाको मारने लगे, जैसे विषयादि गुण ज्ञानको मारते हैं, दुर्योधन फिर रथमें बैठ कर ॥४०॥ दश अक्षौहिणी सेना लेकर नाद करता हुआ युद्ध करनेको आया ॥४१॥ हे मैथिल ! उसी समय रामकृष्ण दोनों पुराण पुरुष प्रकट हुये, गरुडकी ध्वजा और तालकी ध्वजाके रथोंमें बैठे हुये, दिशाओंमें प्रकाश करते प्रकट हुये ॥४२॥ तब जयजय शब्द होने लगा, देवता पुष्पोंकी वर्षा करने लगे, गन्धर्वोंमें जो मुख्य हैं वे मनोहर गान गाने लगे और देवस्त्रियाँ खील और पुष्पोंकी वर्षा करने लगीं, देवताओंके नगाडे बजने लगे ॥४३॥ तब परमेश्वर कृष्ण बलदेवको आये देखकर सब यादव नमस्कार करने लगे, और दुर्यो-

बाणैर्जघानसमरेजगर्जघनवद्बली॥ दशभिर्दशभिर्नैतॄनेकैकेनगजान्हयान् ॥ ३६ ॥ पंचभिःपंचभिर्वीरान्बाणैःसांबस्तताडह ॥ वीक्ष्यजांबवती सूनोःसांबस्यकरलाघवम् ॥ ३७ ॥ स्वेपरेसैनिकाःसर्वेविस्मयंपरमंगताः ॥ तदाभीष्मःसमुत्थायगृहीत्वाधनुरुत्तमम् ॥३८॥ चिच्छेददशभि-र्बाणैःसांबकोदंडमुत्तमम् ॥ भीष्मोमहाबलोवीरोद्रोणाचार्यश्चसायकैः ॥ ३९ ॥ कर्णःसद्योयदुबलंजघ्नुर्ज्ञानंयथागुणाः ॥ दुर्योधनःपुनर्योद्धुं रथमारुह्यमानद ॥ ४० ॥ अक्षौहिणीभिर्दशभिर्नादयन्नाययौमृधे॥ ४१ ॥ देवौपुराणौपुरुषौतदाविर्बभूवतुर्मैथिलरामकृष्णौ ॥ सुपर्णतालध्व-जशालियानौप्रद्योतयंतौपरितोदिशस्तौ ॥४२॥ तदाजयारावसमाकुलाःसुरागंधर्वमुख्याश्चजगुर्मनोहरम् ॥ सुरानकादुंदुभयोविनेदुःश्रीलाज-पुष्पैर्ववृषुःसुरस्त्रियः ॥ ४३ ॥ तदैवनेमुर्यदवपरेश्वरौदुर्योधनाद्याःकुरवस्तुसर्वतः ॥ निधायशस्त्राणिददुर्बलिंपरंसर्वेप्रसन्नाःकृतहस्तसंपुटाः ॥ ॥ ४४ ॥ प्रद्युम्नमुख्यान्स्वसुतान्मदोद्धतान्निर्भर्त्स्यवाग्भिःपरमेश्वरोहरिः ॥ प्रणम्यदेवव्रतमुख्यकौरवान्समेत्यदुर्योधनमूचतुःपरौ ॥ ४५ ॥ ॥ श्रीरामकृष्णावूचतुः ॥ राजन्यदेभिःकिलबालबुद्धिभिस्तत्क्षम्यतांमाभवदुर्मनाःस्वतः ॥ यदातुकिंचित्परुषंप्रकीर्तितंप्रकीर्ततांनौभवतांनृपे श्वर ॥ ४६ ॥ माभूत्कुरूणांभुवियादवानांकदापिकिंचित्कलिरेवराजन् ॥ संबंधिनोज्ञातयएवसर्वेनिचोलवस्त्रांतरवत्प्रियार्थाः ॥ ४७ ॥

धनादिक सब कौरव भी चारों ओरसे अपने २ अस्त्रोंको धरतीमें रखकर नमस्कार करने लगे, और सभीने हाथ जोड लिये॥४४॥तब अपने प्रद्युम्नादिक मदोद्धत पुत्रोंको वाणीसे फटकार कर, और भीष्मादिक वृद्ध कौरवोंको नमस्कार करके श्रीरामकृष्ण दुर्योधनसे बोले ॥४५॥ हे राजन् ! जो इन बाल बुद्धियोंने किया है, उसको क्षमा करिये, और हे नृपेश्वर ! और अपना मन मत बिगाड़िये, और आपसे इन्होंने जो कुछ कठोर वचन कहे हों, उनको क्षमा करिये, और जो आपके मनमें आवे, वे दुर्वाक्य आप हम दोनोंसे कह लीजिये ॥४६॥ और हे राजन् ! कौरवोंमें और यादवोंमें कभी भी थोडा भी युद्ध मत होवे, आप और हम एक जातिके और सम्बन्धी ही तो हैं, और अन्तर वस्त्रकी तरह जो हमारा तुम्हारा प्रियार्थ है, वह चोली दामनका संग है ॥ ४७ ॥

नारदजी कहते हैं कि, हे मैथिल ! उस समय निरन्तर कौरवोंने रामकृष्णकी पूजाकी, प्रद्युम्नादिक यादवोंसे रामकृष्णकी बडी शोभा हुई ॥४८॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां विश्वजित् खण्डे भाषाटीकायां कौरव मेलापनं नामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ नारदजी कहते हैं कि, फिर कृष्ण बलराम दोनों जने ऐसे दुर्योधनको शान्त करके छोटे भाइयोंको और कौरवों को साथ लेकर पांडवोंको देखनेके लिये इन्द्रप्रस्थको चले गये ॥१॥ तब भाइयोंसहित अजातशत्रु राजा युधिष्ठिर इन्द्रप्रस्थसे अपने जनोंको साथ लेकर श्रीकृष्णका स्वागत करने के लिये आये ॥२॥ शंख, दुन्दुभि बजाते, वेद ध्वनि कराते, वेणु बजाते, इन्द्रप्रस्थ निवासियोंसे पुष्पोंकी वर्षा करते हुये, इस प्रकार चले आते राजा युधिष्ठिर श्रीरामकृष्णसे बाहु फैलाकर मिले ॥ ३ ॥ कृष्णसे मिलकर योगीकी तरह परम आनन्दको प्राप्त हुये, और प्रद्युम्नादिक हरिपुत्र राजा युधिष्ठिरको प्रणाम करने लगे ॥ ४ ॥ तब युधिष्ठिरने उनको

॥ श्रीनारदउवाच ॥ पूजितौकुरुभिःशश्वद्रामकृष्णौसुरेश्वरौ ॥ प्रद्युम्नाद्यैःसयदुभीरेजतुर्मैथिलेश्वर ॥ ४८ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खंडेनारदबहुलाश्वसंवादेकौरवमेलापनंनामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ दुर्योधनंशांतयित्वासानुजैःकुरुभिःसह ॥ जग्मतुःपांडवान्द्रष्टुमिंद्रप्रस्थंयदूत्तमौ ॥ १ ॥ इंद्रप्रस्थात्ततोराजाजातशत्रुर्युधिष्ठिरः ॥ भ्रातृभिःस्वजनैःसार्द्धंनेतुंकृष्णंसमाययौ ॥२॥ शंखदुंदुभिनादेनब्रह्मघोषेणवेणुभिः ॥ पुष्पवर्षंप्रकुर्वद्भिरिंद्रप्रस्थनिवासिभिः ॥ रामकृष्णौपरिष्वज्यदोर्भ्यांराजायुधिष्ठिरः ॥ ३ ॥ परमांनिर्वृतिंलेभेयोगीवानंदसंवृतः ॥ प्रद्युम्नाद्याहरिसुताःप्रणेमुःश्रीयुधिष्ठिरम् ॥ ४ ॥ युधिष्ठिरोनिजग्राहकराभ्यांतान्कृताशिषः ॥ अर्जुनंभीमसेनंचपरिरभ्यहरिःस्वयम् ॥ ५ ॥ प्रपच्छकुशलंतेषांयमाभ्यांचाभिवंदितः ॥ परिपूर्णतमौसाक्षाच्छ्रीकृष्णौचस्वयंहरी ॥ ६ ॥ असंख्यब्रह्मांडपतीहरीदासेनपूजितौ ॥ प्रस्थाप्ययदुमुख्यांश्चप्रद्युम्नादीन्ससैनिकान् ॥७॥ समग्रांजगतींजेतुंचाज्ञांदत्त्वाविधानतः ॥ मिलित्वासानुजंधर्मंसर्वेशौभक्तवत्सलौ ॥८॥ द्वारकांजग्मतूराजन्गौरश्यामौमनोहरौ ॥ इत्थंश्रीकृष्णचरितंमयातेकथितंनृप ॥९॥ चतुष्पदार्थदंनॄणांकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥
॥ बहुलाश्वउवाच ॥ कुशस्थलींगतेकृष्णेसबलेपुरुषोत्तमे ॥ १० ॥

आशीर्वाद देकर हाथसे पकड लिये, फिर आप भगवान् अर्जुन भीमसेनसे मिले ॥ ५ ॥ उनकी कुशल पूछी, फिर नकुल सहदेवने श्रीकृष्णको प्रणाम किया, जो परिपूर्णतम श्री रामकृष्ण स्वयं हरि हैं ॥ ६ ॥ असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति हरिके दाससे पूजित वे प्रद्युम्नादिकोंको सेनासहित ॥ ७ ॥ सम्पूर्ण पृथ्वीके जीतनेको विधानसे आज्ञा देकर छोटे भाइयों सहित धर्मराज युधिष्ठिरसे मिलकर सर्वेश भक्त वत्सल ॥ ८ ॥ गौर वर्ण श्यामवर्ण मनोहर दोनों भाई द्वारकाको आये, हे नृप ! इस प्रकार कृष्णचरित्र मैंने तुम्हारे सामने कहा ॥९॥ यह मनुष्योंको चारों पदार्थ देनेवाला है,अब तुम क्या सुनना चाहते हो, तब बहुलाश्व राजा बोला कि, जब पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण बलदेव सहित द्वारकाको चले गये॥१०॥

तब भगवान् प्रद्युम्नने क्या किया, यह प्रद्युम्न भगवान्का चरित्र अद्भुत है, सुनने योग्य मनोहर है ॥११॥ जब मुक्त जनोंको भी अर्थ देनेवाला है, तो फिर जिज्ञासु भक्तोंको अर्थ देनेवाला होवे, तो क्या आश्चर्य है, यह अर्थ चाहनेवालोंको भी अर्थका देनेवाला है, और दुखियोंके दुखका नाश करने वाला है ॥१२॥ चार प्रकारके सब जीवोंके पापोंका नाश करनेवाला है, उसको मुझसे कहिये, कि दिग्विजयकी इच्छावाले प्रद्युम्न आगे जाकर फिर कैसे दिग्विजय करके ॥१३॥ फिर सेनासहित कैसे आये, सो मेरे सामने यथार्थ हो वह कहिये, हे देवर्षि जी ! आप ब्रह्माजीके पुत्र हो, सर्वदर्शी हो, श्रीकृष्णके मन हो, हरिकी मूर्ति हो, उन आपको मैं प्रणाम करता हूँ ॥१४॥ तब नारदजी बोले कि, हे राजन् ! तुमने अच्छी बात पूछी, तुम धन्य हो, श्रीकृष्णके प्रभावको जाननेवाले हो, इस पृथ्वीमें कृष्ण चरित्रोंके सुननेवाले पात्र तुम ही हो ॥१५॥ श्रीकृष्ण जब द्वारिकाको चले गये तब राजा युधिष्ठिरने शत्रुओंसे शंकित होकर प्रद्युम्नकी रक्षाके लिये जल्दी ही अर्जुनको भेजा ॥१६॥ इसके बाद कृष्णका पुत्र प्रद्युम्न अर्जुनके संग बडी सेनाको खेंचता त्रिगर्त देशोंको

ततश्चकारकिंसाक्षात्प्रद्युम्नोभगवान्हरिः ॥ अद्भुतंतस्यचरितंश्रवणीयंमनोहरम् ॥११॥ मुक्तानामपिभक्तानांजिज्ञासूनां पुनःकिमु ॥ अर्थार्थिना- मर्थदंसदार्तानामार्तिनाशनम् ॥ १२ ॥ चतुर्विधानांजीवानांसर्वेषांपापनाशनम् ॥ कथंदिग्विजयंकृत्वादिग्जियार्थीहरेःसुतः ॥ १३ ॥ आज- गामपुनःसैन्यैरेतन्मेवदतत्त्वतः ॥ देवर्षेत्वंब्रह्मसुतोभगवान्सर्वदर्शनः ॥ श्रीकृष्णस्यनमःपूर्वंतस्मैतेहरयेनमः ॥ १४ ॥ नारदउवाच ॥ साधु पृष्टंत्वयाराजन्धन्यस्त्वंतत्प्रभाववित् ॥ श्रीकृष्णचरितंश्रोतुंपात्रंत्वमसिभूतले ॥१५॥ कृष्णेयातेजातशत्रूरक्षार्थंस्नेहतोनृप॥ शत्रुभ्यःशंकितः कार्ष्णिप्रायुंक्ताशुकिरीटनम् ॥१६॥ अथकार्ष्णिर्यदुश्रेष्ठःफाल्गुनेनसमंनृप ॥ विकर्षन्महतींसेनांत्रिगर्तान्प्रययौत्वरम् ॥ १७ ॥ त्रिगर्ताधीश्वरो धन्वासुशर्मातेनशंकितः ॥ उपायनन्ददौतस्मैप्रद्युम्नायमहात्मने॥ १८॥ विराटेनतथाराज्ञापूजितोयादवेश्वरः॥ सरस्वतींनदींस्नात्वाकुरुक्षेत्रंददर्शह ॥ १९ ॥ पृथूदकंबिंदुसरस्त्रितंकूपंसुदर्शनम् ॥ स्नात्वासरस्वतींप्रागाद्दत्वादानान्यनेकशः ॥ २० ॥ सारस्वताधिपोराजाकुशांबोनददौबलिम् ॥ कौशांबीनगरामेत्यदुर्योधनवशानुगः ॥ २१ ॥ चारुदेष्णःसुदेष्णश्चचारुदेहश्चवीर्यवान् ॥ सुचारुश्चारुगुप्तश्चभद्रचारुस्तथापरः ॥२२॥ चारुच- न्द्रोविचारुश्चचारुश्चदशमस्तथा ॥ रुक्मिणीनन्दनाह्येतेप्रद्युम्नेनप्रणोदिताः ॥ २३ ॥ सिन्धुदेशहयारूढाःसर्वेषांपश्यतांगताः ॥ कौशांबीं नगरीमेत्यरुरुधुःसर्वतस्तदा ॥ २४ ॥

जल्दी ही गया ॥ १७ ॥ तब त्रिगर्त देशके अधिपति सुशर्मा नामके राजाने शंकित होकर प्रद्युम्न महात्माको भेंट दी ॥१८॥ वैसे ही विराट् राजाने प्रद्युम्नका पूजन किया फिर, सरस्वती नदीको पारकर प्रद्युम्नने कुरुक्षेत्रके दर्शन किये ॥१९॥ पृथूदक, बिंदुसर, त्रितकूप, सुदर्शन, इन क्षेत्रोंमें स्नानकर सरस्वतीमें स्नान करके अनेकों दान देकर आगे गया तब ॥२०॥ सारस्वत देशके राजा कुशाम्बने भेंट नहीं दी, कौशाम्बी नगरीमें आया वह दुर्योधनका वशवर्ती राजा था ॥२१॥ तब चारुदेष्ण, सुदेष्ण, चारुदेह, वीर्यवान्, सुचारु, चारु गुप्त, भद्रचारु ॥२२॥ चारुचन्द्र, विचारु, चारु, रुक्मिणीके पुत्र ये दश प्रद्युम्नके प्रेरित किये हुये, जिन्होंने कौशाम्बी नगरीको चारों ओरसे घेर लिया ॥२३॥ सिन्धु देशके घोडों पर चढकर सभीके देखते २ गये कौशाम्बी नगरीको जाकर घेर लिया ॥ २४ ॥

बाणोंसे महलोंके शिखर, ध्वजा, कलश, तोलिका, चूर्ण होकर गिर पडे, जैसे लंकाके अट्टालक वन्दरोंने पटके हैं ॥२५॥ जब रुक्मिणीके पुत्रोंने बाणोंका अन्धकार किया, तब भेंट लेकर कुशांब राजा नगरसे भेंट लेकर निकला ॥२६॥ हाथ जोडकर शम्बरारिको बहुतसा भेंट देकर भयार्त भयसे विह्वल हुये उसने ॥२७॥ अपनी गरीकी रक्षा की, तभी सौवीर देशका पति सुदेव और आभीर देशका पति विचित्र नामका राजा और सिन्धुदेशका पति चित्रांगद, महौजा नामका काश्मीर देशका राजा, और जांगलदेशका स्वामी सुमेरु ॥२८॥ लाक्ष देशका पति धर्मपति नामका राजा, गान्धारका राजा बिडौजा, इन समस्त दुर्योधनके वशवर्ती राजाओंने भी डरकर प्रद्युम्नको भेंट देकर प्रणाम किया ॥ २९ ॥ फिर आजानु (घुटनोंतक) भुजाओं वाला श्रीकृष्ण पुत्र प्रद्युम्न समर्थ अपनी सेना सहित अर्बुद देशोंको और म्लेच्छ देशोंको जीतनेके लिये कल्कि भगवानसा बडा उद्भट गया ॥३०॥ तब

बाणैःप्रासादशिखराध्वजकुंभादितोलिकाः ॥ चूर्णीभूतानिपेतुस्तेलंकाट्टालायथामृगैः ॥२५॥ बाणांधकारेचकृतेरुक्मिणीनन्दनैर्यदा ॥ तदोपायनपाणिःसन्कुशांबोनिर्गतःपुरात् ॥२६॥ कृतांजलिःशंबरारिंदत्त्वानत्वाबलिंबहु ॥ जुगोपनगरींराजाभयार्तोभयविह्वलः ॥ २७ ॥ तदैवसौवीरपतिःसुदेवआभीरनाथोपिविचित्रनामा ॥ चित्रांगदःसिंधुपतिर्महौजाःकाश्मीरपोजांगलपःसुमेरुः ॥२८॥ लाक्षेश्वरोधर्मपतिर्बिडौजागांधारमुख्योपिसुयोधनस्य ॥ वशेस्थितास्तेपिभयात्किलैतेदत्त्वाबलिंनेमुरतीवकार्ष्णिम् ॥२९॥ ययौकार्ष्णिर्महाबाहुःस्वसैन्यपरिवारितः ॥ अर्बुदान्म्लेच्छदेशांश्चजेतुंकल्किरिवोद्भटः ॥ ३० ॥ कालस्यापिसुतश्चंडोयवनेंद्रोमहाबलः ॥ कार्ष्णिसमागतंश्रुत्वासंमुखात्कोपपूरितः ॥ ३१ ॥ पितृहंतुःसुतंहत्वायास्याम्यपचितिंपितुः ॥ इत्थंविचार्य्यमनसाम्लेच्छानांदशकोटिभिः ॥३२॥ मदच्युतंप्रोन्नदन्तंगजमारुह्यरक्तदृक् ॥ निर्ययौसंमुखेयोद्धुंप्रद्युम्नस्यमहात्मनः ॥ ३३ ॥ आगतांमहतींसेनांशितबाणप्रवर्षिणीम् ॥ चण्डप्रणोदितांदृष्ट्वाप्रद्युम्नोवाक्यमब्रवीत् ॥ ३४ ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ सेनांहत्वापियश्चंडशिरस्त्रसहितंशिरः ॥ आनेष्यतेतंस्वबलेकरिष्येध्वजिनीपतिम् ॥ ३५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंकार्ष्णौवदत्यारात्फाल्गुनोवानरध्वजः ॥ एकोविवेशगांडीवीधनुष्टंकारयन्मुहुः ॥ ३६ ॥

कालयवनका पुत्र चण्ड नामका महाबली प्रद्युम्नको आया सुनकर बडे क्रोधसे भर गया ॥ ३१ ॥ और पिताको मारने वालेके पुत्रको यदि मार लूँगा, तो पिताऋणसे उऋण हो जाऊँगा, ऐसे मनमें विचार कर दश करोड म्लेच्छोंको संग लेकर ॥३२॥ मद जिनके चू रहा, और ऊँचे जिसके दाँत, ऐसे हाथीपर चढकर, लाल नेत्रवाला चण्ड राजा महात्मा प्रद्युम्नके सामने युद्ध करनेके लिये आया ॥ ३३ ॥ बडे तीखे बाणोंकी वर्षा करनेवाली, चण्डकी प्रेरित की सेनाको आती देखकर प्रद्युम्न यह वाक्य बोला ॥३४॥ कि, जो कोई इसकी सेनाको मारकर, और इस चण्डको मारकर, शिरस्त्राण सहित इसके शिरको काटकर यहाँ लायगा, उसको मैं अपनी सेनाका पति करूँगा ॥ ३५ ॥ नारदजी कहते हैं—ऐसे प्रद्युम्न कह रहा था, उसी समय वानर जिसकी ध्वजामें ऐसा अर्जुन अकेला ही गांडीव धनुपको बारम्वार टंकारता हुआ म्लेच्छोंकी सेनामें घुस गया ॥ ३६ ॥

तब रणमें दुर्मद गाण्डीवधारी अर्जुनने गाण्डीव धनुषके छूटे बाणोंसे जो जो सन्मुख आये वीर, रथी, सवार, पैदल, घोडे, और हाथी, उनको दो दो टुकडे करके डाल दिये ॥३७॥ कोई कटी भुजाओंके, कोई खड्ग लिये, कोई बरछी लिये, कोई पोलादी लिये, कोई पांव कटे, कोई नख कटे, कोई वीर कवच पहिने मर मर कर गिर पडे ॥ ३८ ॥ युद्धमें जब हाथी घायल हो गये, अम्बारी (हौदा) जिनकी खिसक गई, घण्टे टूट पडे, कक्षा टूट गई, वे हाथी सूंडोंसे हाथियोको पटकते भाग गये ॥ ३९ ॥ अर्जुनके बाणोंसे दो २ टुकडे जिनके हो गये ऐसे हाथी,घोडे और मनुष्योंसे रणभूमिका क्षेत्र शोभित हुआ, जैसे सरोंत कटे कोंहडेके टुकडे पडे होंय ॥४०॥ उसी समय अपने-अपने रणके आंगन को छोडकर सब म्लेच्छ भाग गये, सूर्यकी किरणोंसे जैसे आकाशका कुहरा जाता रहता है ॥ ४१ ॥ तब हाथीपर चढे हुये म्लेच्छ पति चण्डने बर्छी घुमाकर अर्जुनपर चलाई, फिर सिंहकी तरह गर्जना की, ॥४२॥ बिजली सी चमकती जब वह बर्छी आई, तब कृष्ण सखा अर्जुनने सहजमें ही गाण्डीवके छूटे बाणोंसे उसके सौ टुकडे कर डाले ॥ ४३ ॥

वीरान्रथान्गजानश्वान्संमुखस्थान्द्विधाकरोत् ॥ गांडीवमुक्तैर्विशिखैर्गांडीवीरणदुर्मदः ॥ ३७ ॥ केचिच्छिन्नभुजाःपेतुःशक्तिखड्गर्ष्टिपाणयः ॥ भिन्नपादाभिन्ननखाःकेचिद्वीराःसकंचुकाः ॥ ३८ ॥ दुद्रुवुःकरिणोयुद्धेभिन्नकक्षाश्वसक्षता ॥ गतघण्टाःश्लथन्नीडाःपातयंतःकरैर्गजान् ॥ ३९॥ जिष्णुबाणैर्द्विधाभूतैर्गजैरश्वैरणांगणम् ॥ बभौक्षेत्रंशंकुलयाकूष्मांडशकलैरिव ॥ ४० ॥ तदैवदुद्रुवुर्म्लेच्छास्त्यक्त्वास्वंरणांगणम् ॥ नभोर्कर-शिमसंभिन्नानीहारपटलाइव ॥४१॥ गजारूढोम्लेच्छपतिःशक्तिंचिक्षेपजिष्णवे ॥ भ्रामयित्वामैथिलेंद्रसिंहनादमथाकरोत् ॥ ४२ ॥ विद्युल्ल-तामिवायांतींबाणैःकृष्णसखोबली ॥ गांडीवमुक्तैराजेंद्रलीलयाशतधाच्छिनत् ॥४३॥ यावच्चण्डोमहाम्लेच्छोधनुर्जग्राहरोषतः॥ तावच्चिच्छेद गांडीवीबाणेनैकेनलीलया॥४४॥ द्वितीयंधनुरादायसचण्डश्चण्डविक्रमः॥प्रलयाब्धिमहावर्तभीमसंघर्षनादिनीम् ॥४५॥ चिच्छेदशिंजिनींजि-ष्णोर्गरुत्मानिवपन्नगीम् ॥ बीभत्सुःस्वमसिंनीत्वास्फुरंतंचर्मणासह ॥४६॥ जघानतद्गजंकुंभेशैलामिंद्रोयथापविः ॥ अग्निदत्तेनखड्गेनभिन्नकुं-भोगजोनदन् ॥४७॥ जानुभ्यांधरणींस्पृष्ट्वाकश्मलंपरमंययौ ॥ चण्डःखड्गंगृहीत्वाथप्राहत्यपांडुनन्दनम् ॥४८॥ तत्खड्गंचर्मणोन्नीयप्राहिणोत्तं कुरूद्वहः ॥ सशिरस्त्रंशिरस्तस्यदेहाद्भिन्नंबभूवह ॥ ४९ ॥

जबतक म्लेच्छपति धनुषको लेने लगा, तबतक अर्जुनने एक ही बाणसे सहजमें ही उसका धनुष काट डाला ॥ ४४ ॥ चण्ड पराक्रमी चण्डने जब दूसरा धनुष लिया, तब अर्जुन ने प्रलयके समुद्र कीसी गर्जना जिसकी ऐसी उसके धनुषकी प्रत्यंचा काट डाली ॥४५॥ जैसे गरुड सर्पिणीको काट डालता है, तब अर्जुनने अपनी ढाल, तलवार लेकर ॥४६॥ उसके हाथीके कुम्भमें जैसे इन्द्र वज्र मारता है, वैसे मारी, तब उस अग्निकी दी हुई तलवारसे कुम्भ स्थल फट गया, और हाथी चिक्कार उठा ॥ ४७ ॥ फिर घुटनोंसे धरतीमें गिर पडा, मूर्छित हो गया, तब चण्डने अपना खड्ग लेकर अर्जुनके मारा ॥ ४८ ॥ तब अर्जुनने उसके खड्गको अपनी ढालपर लेकर अपना खड्ग मारा, उससे शिरस्त्राण सहित उसका शिर कटकर देहसे अलग हो गया ॥ ४९ ॥

फिर अर्जुनने धनुषको चढाकर बाणके ऊपर उस चण्डके शिरको रखकर वाणको धनुषमें खेंचकर बाण सहित उसके शिरको प्रद्युम्नकी सेनामें फेंक दिया ॥ ५० ॥ तभी नगाडे
वजने लगे, जय जय शब्द होने लगा, और सब देवता अर्जुनके ऊपर पुष्पोंकी वर्षा करने लगे ॥ ५१ ॥ तब ही श्रीकृष्णके पुत्र प्रद्युम्नने अर्जुनको सब सेनाका पति किया, तब
मुख्य यादव अर्जुनके ऊपर चमर छत्र करने लगे ॥ ५२ ॥ तब अर्बुद देशका अधिप वेगवान् नामका राजा प्रद्युम्नकी शरण आया, डरकर हाथ जोडकर प्रणाम किया, और भेंट
दी ॥ ५३ ॥ मौरंग देशके राजा मंदहासने दश लाख घोडे भेंट देकर भयभीत होकर महात्मा प्रद्युम्नको नमस्कार किया ॥ ५४ ॥ इस प्रकार सब भरतखंडको जीतकर श्रीकृष्ण
का पुत्र, यादवोंमें उत्तम प्रद्युम्न हिमालयकी परिक्रमा देकर ईशान दिशाको चला गया ॥ ५५ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्व संवादे
दिग्विजयो नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ नारदजी कहते हैं–नद, नदी, और समुद्र सबने हे नृप ! प्रद्युम्नके तेजसे धर्षित होकर महात्मा प्रद्युम्नके रथको मार्ग दिया ॥ १ ॥

सज्यंकृत्वाधनुर्जिष्णुर्निधायविशिखेचतत् ॥ आकृष्यपातयामासप्रद्युम्नस्यबलेमहत्॥५०॥तदादुन्दुभिनादोभूज्जयारावसमाकुलः॥अर्जुनस्यो
परिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥ ५१ ॥ तदैवकार्ष्णिःसबलस्यजिष्णुंचकारनाथंविजयध्वजस्य ॥ संवीज्यमानंसितचामराद्यैःकपिध्वजंयादववृन्द
मुख्यैः ॥५२॥ वेगवानर्बुदाधीशःप्रद्युम्नंशरणंगतः ॥ उपायनंददौभीरुर्नमस्कृत्यकृतांजलिः ॥ ५३ ॥ मौरंगेशोमंदहासोहयानांदशलक्षकम् ॥
दत्त्वाभीरुर्नमश्चक्रेप्रद्युम्नायमहात्मने ॥५४॥ इत्थंखण्डंभारताख्यंजित्वाकार्ष्णिर्यदूत्तमः ॥ हिमाद्रिंदक्षिणीकृत्यप्रागुदाचींदिशंययौ ॥५५॥
इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेबहुदिग्विजयोनामद्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ नदानद्यःसमुद्राश्च
रथवीथिंददुर्नृप ॥ धर्षितास्तेजसातस्मैससैन्यायमहात्मने ॥१॥ कैलासगिरिपार्श्वेचवरवीरश्चमानुषः ॥ बाणस्यशोणितपुरंप्रययौयादवेश्वरः
॥ २ ॥ बाणासुरोतिसंक्रुद्धोयदून्वीक्ष्यागतान्पुनः ॥ अक्षौहिणीभिर्द्वादशभिर्युद्धंकर्तुमनोदधे ॥३॥ तदैवसाक्षात्पुरुषःपुराणोमहेश्वरोनंदिवृष
स्थितोसौ ॥ हिमाद्रिपुत्रीसहितस्त्रिशूलीसमेत्यबाणंनृपमाहदेवः ॥ ४ ॥ शिवउवाच ॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥ असं-
ख्यब्रह्मांडपतिर्गोलोकेशःपरात्परः ॥ ५ ॥ त्रयोवयंतत्कलाहिब्रह्मविष्णुशिवादयः ॥ मूर्ध्न्याज्ञांयस्यबिभ्रतित्वादृशानांचकाकथा ॥६॥तस्य
पौत्रस्त्वयाबद्धोनिरुद्धोमेनतेजसा ॥ छिन्नाभुजानजानासिसंग्रामेतंहरिःस्वयम् ॥ ७ ॥

कैलाश पर्वतके पास यह वरवीर यादवेश्वर प्रद्युम्न बाणासुरके शोणित पुरको गया॥२॥तब यादवोंको आया देख बाणासुर बहुत क्रोधित हुआ, बारह अक्षौहिणी सेना साथ लेकर
यादवोंसे युद्ध करनेका विचार करने लगा ॥ ३ ॥ उसी समय साक्षात् पुराण पुरुष, महेश्वर नन्दीश्वरपर चढकर पार्वती सहित त्रिशूलधारी भगवान् शिव बाणासुरके पास आकर
बोले ॥ ४ ॥ कि रे ! देख, परिपूर्णतम साक्षात् स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण पुराण पुरुष, असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति गोलोकके ईश्वर परात्पर हैं ॥ ५ ॥ हम तीनों ब्रह्मा, विष्णु, महेश,
उनकी कला हैं, उनकी आज्ञाको शिर पर धारण करते हैं, फिर तेरे जैसों की तो बात ही क्या है ॥ ६ ॥ जिनका पौत्र अनिरुद्ध तुमने बांध लिया था, उसीसे जिन्होंने संग्राममें
तुम्हारी भुजा काट डाली थीं, वे ही हरि हैं, तू नहीं जानता है क्या ? ॥ ७ ॥

इससे तुम दानवोंको सदा ही हरिके पुत्र पूजनीय हैं, और अनिरुद्ध तुम्हारा जामाता (जमाई) है सो तो सदा ही पूजनीय है, इसमें सन्देह नहीं है ॥८॥ हे असुर पुंगव ! इससे मैं तुमको युद्ध करनेकी आज्ञा नहीं करता हूँ, यदि तुम बलपूर्वक युद्ध करोगे, तो व्यर्थ ही है ॥९॥ नारदजी कहते हैं—ऐसे जब शिवजीने आज्ञा की, समझाया, तब धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ अनिरुद्धको बुलाकर बाणासुरने पूजन सत्कार किया, और जमाईको दहेज दिया ॥ १० ॥ सेनासहित बन्धुकी तरह प्रद्युम्नका पूजन करके दश हजार हाथी पांच लाख रथ और एक करोड घोडे ॥ ११ ॥ समर्थ बाणासुरने महात्मा प्रद्युम्नको दिये, फिर अपनी सेना यादवोंके साथ ॥ १२ ॥ वह धनुषधारी प्रद्युम्न यक्षोंसे शोभित मनोहर अलकापुरीको गया, जिसके चारों ओर नंदा, अलकनन्दा, ये दोनों गंगा बह रही हैं ॥१३॥ रत्नोंकी सीढी (सोपान) जिनकी, उन दोनों नदियोंसे और यक्षिणी, विद्याधरी, किन्नरियोंसे चारों तरफसे अति शोभित ॥ १४ ॥ दिव्य नागकन्याओंसे भोगवती जैसी अलकापुरीमें गया, हे नृप ! तब कुबेरने प्रद्युम्नको भेंट नहीं दी ॥१५॥ यह हरिके प्रभावको जानता भी था,

तस्मात्तेषांदानवानांपूजनीयाहरेःसुता ॥ अनिरुद्धः पूजनीयोजामातातेनसंशयः ॥८॥ नददामित्वनुज्ञांतेयुद्धायासुरपुंगव ॥ नचेद्युद्धंकुरुबलाद्वृथादृष्टंमनस्तव ॥ ९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ शिवप्रबोधितोबाणोऽनिरुद्धंधन्विनांवरम् ॥ समाहूयचसंपूज्यपारिबर्हंददौपुनः ॥ १० ॥ ससैन्यंसादरेणापिप्रद्युम्नंपूज्यबंधुवत् ॥ गजायुतंचाश्वकोटिंहयानांपंचलक्षकम् ॥११॥ ददौबाणोमहाबाहुःप्रद्युम्नायमहात्मने॥अथकार्ष्णिर्महाराजस्वसैन्यैर्यदुभिःसह ॥१२॥ अलकांप्रययौधन्वीपुरींगुह्यकमंडिताम् ॥ श्रीनंदालकनंदाभ्यांगंगाभ्यांपरिखीकृता ॥ १३ ॥ रत्नसोपानयुक्ताभ्यांयक्षीभिःपरिशोभिताम् ॥ विद्याधरीभिःपरितःकिन्नरीभिर्मनोहराम् ॥१४॥ दिव्याभिर्नागकन्याभिःपुरींभोगवतीमिव ॥धनदोनददौतस्मैप्रद्युम्नायबलिंनृप ॥ १५ ॥ हरेःप्रभावविदपिविष्णोर्मायाबलंत्वहो ॥ लोकपालोस्म्यहंनित्यमित्यज्ञानविमोहितः॥१६ ॥ नोदितोवलिभिर्यक्षैर्युद्धंकर्तुंमनोदधे ॥ निर्धनोहिधनंप्राप्यतृणवन्मन्यतेजगत् ॥१७॥ नवानांतुनिधीनांकोपतीनांकिमुवर्णनम् ॥ तदैवहेममुकुटोदूतोधनदनोदितः ॥ १८ ॥ कार्ष्णिमेत्यसभामध्येनत्वेदंप्राहमानदः ॥ हेममुकुटउवाच ॥ धनेश्वरोराजराजोलोकपालोलकेश्वरः ॥ तेनयत्कथितंराजञ्छृणुत्वंतद्यदूत्तम ॥ १९ ॥ देवराजोयथाशक्रःमृतोदिवियथाप्रभुः ॥ तथैकोराजराजोहंकथितोभूतलेमहान् ॥२०॥ मनुष्यधर्मोराजेंद्रैःपूजितोहंसदाभुवि ॥ उग्रसेनेनदातव्यंमहांसोपायनंपरम् ॥ २१ ॥

किन्तु देखो अहो ! विष्णुकी मायाका बल बडा भारी है, मैं नित्य ही लोकका पालन करनेवाला हूँ, कुबेर इस अज्ञानसे मोहित हो गया ॥१६॥ बली यक्षोंसे प्रेरित किया युद्ध करनेका विचार करने लगा, नारदजी कहते हैं कि, निर्धनोंको धन मिले तो जगत्को तृणकी तरह समझता है ॥ १७ ॥ फिर जो नव निधिका स्वामी हो जाये तो, उसका कहना ही क्या है, तभी हेम मुकुट दूत कुबेरका भेजा आया ॥१८॥ वह प्रद्युम्नके पास आकर बोला कि, धनके ईश्वर, राजाओंके राजा, लोकपाल, लोकके ईश्वर, कुबेरने हे राजन् ! जो कुछ कहा है, उसको तुम सुनो ॥१९॥ देवताओंका राजा जैसे स्वर्गमें इन्द्र है, वैसे ही पृथ्वीमें मैं राजाओंका भी बडा राजा हूँ इसीसे मेरा राजराज नाम है ॥ २० ॥ मनुष्य का सा मेरा धर्म है, पृथ्वीमें सब राजाओंने मुझको पूजा है, इससे मैं उग्रसेनको भेंट नहीं दूँगा ॥ २१ ॥

यादवोंके राजाको मैं कुछ भी भेंट नहीं दूँगा, और यदि नहीं मानोगे, तो मैं निःसन्देह संग्राम करूँगा ॥ २२ ॥ नारदजी कहते हैं कि प्रद्युम्न भगवान्ने ऐसे दूतका वचन सुनकर बडा क्रोध किया, क्रोधसे ओठ फडकने लगे, नेत्र लाल हो गये ॥२३॥ तब प्रद्युम्नने कहा कि, यादवोंके इन्द्र, राजाओंके राजा, इन्द्रादिक देवताओंके मुकुटोंसे सेवित हैं चरण कमल जिसके उस उग्रसेनको कुबेर नहीं जानता है ॥२४॥ सुधर्मा सभा और कल्पवृक्ष जिसके भयसे इन्द्र दे गया, और श्यामकर्ण घोडोंको देकर वरुणने जिसको प्रणाम किया ॥ २५ ॥ और इसी डरपोक राजराजने नौ निधि भेजी है, सो यह कुबेर उस उग्रसेनके बलको नहीं जानता है ॥२६॥ उसकी सभाके बीचमें परिपूर्णतम हरि असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति श्रीकृष्ण आप विराजते हैं ॥२७॥ और जिनके हजार शिरोंके मध्यमें एक शिरपर समस्त भूमण्डल तिलक सा दीखता है, वे शेष भगवान् उग्रसेनकी सभामें नित्य विराजते हैं

षराक्तस्मैनदास्यामियदुराजायभूभृते ॥ नमन्यसेचेत्संग्राममंकरिष्यामिनसंशयः ॥ २२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवंदूतवचःश्रुत्वाप्रद्युम्नोभगवान्हरिः ॥ चकारकोपंरक्ताक्षोरुषाप्रस्फुरिताधरः ॥ २३ ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ वृष्णींद्रराजराजेंद्रंराजराजोनवेत्तितम् ॥ शक्रादीनांतुयःसाक्षान्मुकुटैर्घृष्टपादुकः ॥२४॥ सुधर्मांपारिजातंचतस्माइंद्रोददौभयात् ॥ श्यामवर्णान्हयान्पाशीतस्मैदत्त्वाननामह ॥२५॥ अनेनराजराजेनभीरुणानिधयोनव ॥ प्राप्तास्तंहिनजानातिराजाराजोमहाबलम् ॥२६॥ वर्ततेतत्सभामध्येपरिपूर्णतमोहरिः ॥ असंख्यब्रह्मांडपतिःश्रीकृष्णोभगवान्स्वयम् ॥२७॥ यस्यैकमूर्ध्नितिलकंदृश्यतेमंडलंभुवः ॥ उग्रसेनसभामध्येसोपिनित्यंविराजते ॥ २८ ॥ उग्रसेनप्रेषितोहंकुबेरायमहात्मने ॥ नाराचानांबलिंदातुंतत्करिष्यामिसांप्रतम् ॥ २९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ एवमुक्त्वागृहीत्वास्वंकोदंडंचंडविक्रमः ॥ चकारभुजदंडाभ्यांटंकारंवादयन्गुणम् ॥ ३० ॥ प्रत्यंचास्फोटनेनैवमंडितोभूत्तडित्स्वनः ॥ ननादतेनब्रह्मांडंसप्तलोकैर्बिलैःसह ॥ ३१ ॥ विचेलुर्दिग्गजास्ताराराजन्भूखंडमंडलम् ॥ निषंगाच्छरमाकृष्यप्रद्युम्नोधन्विनांवरः ॥३२॥ प्रतिसज्यस्वधनुषिबाणमेकंसमादधे ॥ द्वादशादित्यसंकाशेद्योतयन्मंडलंदिशाम् ॥ ३३ ॥ चिच्छेदगुह्यकेशस्यबाणंछत्रंचचामरे ॥ तदाक्रुद्धोराजराजोदृष्ट्वाचित्रमिदंमहत् ॥३४॥ आरुह्यपुष्पकेसैन्यैर्युद्धकामोविनिर्ययौ ॥ घंटानादेनयक्षेणमंत्रिणापार्श्वमौलिना ॥ ३५ ॥

॥ २८ ॥ उसी उग्रसेनका भेजा हुआ मैं आया हूँ, सो मैं महात्मा कुबेरको बाणोंकी भेंट देऊँगा ॥ २९ ॥ नारदजी कहते-ऐसे कहकर चण्ड पराक्रमी प्रद्युम्न अपना धनुष लेकर टंकारकर धनुष बजाने लगा ॥३०॥ प्रत्यंचा ही के बजानेसे बिजली सी गिरने लगी, उससे चौदह लोकों समेत समस्त ब्रह्माण्ड झंकारने लगा ॥ ३१ ॥ समस्त भूमण्डल, आठों दिग्गज, तारागण, सब चलायमान हो गये, तब धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ प्रद्युम्नने अपने तरकससे बाण निकाला ॥३२॥ अपने धनुष पर रखकर एक बाण छोडा, द्वादश सूर्यके समान दशों दिशाओंको प्रकाशित करनेवाले ॥ ३३ ॥ उस बाणसे कुबेरके बाण, छत्र, चमर, सब काट डाले, इस आश्चर्यको देखकर कुबेर बडा क्रोधित हुआ ॥ ३४ ॥ तब पुष्पक विमानमें बैठकर, घण्टानाद और पार्श्वमौलि मन्त्रियोंको लेकर सेनासहित युद्ध करनेके लिये निकला ॥ ३५ ॥

नलकूबर और मणिग्रीव दोनों पुत्र ध्वजाके आगेसे शोभित हुये, और घोडेकेसे मुखवाले, सिंहकेसे मुखवाले यक्ष, किन्नर, निकले ॥३६॥ भेडियाकेसे मुखवाले मगरकेसे मुखवाले आधे पीले, आधे काले, ऊँचे केशवाले, बडे उत्कट ॥३७॥ टेढे दांत, लटकती जीभवाले, महाबली, बडी २ डाढोंवाले, भयंकर मुखवाले, कवच पहिने, ढाल तलवार लिये ॥३८॥ वर्छीवाले, पोलादीवाले, तोप लिये, धनुप बाण लिये, फरसा लिये, यक्ष निकले ॥ ३९ ॥ हाथियोंपर चढे, रथोंपर चढे, घोडोंपर चढे, यक्षोंके हजारों मंडल निकले, जिनकी शोभा हुई ॥ ४० ॥ शंख, नगाडे बजते हैं, सूत, मागध, वंदीजन यश गाते हैं, कुवेरके वीर पृथ्वीमें बडे शोभित हुये, जैसे विजलीसे बादल ॥ ४१ ॥ इस प्रकार बडे मतवाले करोडों वे यक्ष दिव्य योगमय सिद्धक्षेत्रसे निकले, हे विदेहराज ! ॥४२ ॥ कुबेरकी सहायताके लिये प्रमथोंकी बडी भारी सेना आई, भूत, प्रथम, भयंकर मुखवाले बडे मदोत्कट

नलकूबरमणिग्रीवौशुशुभातेध्वजाग्रतः ॥ तुरंगवदनाःकेचिन्मृगेंद्रवदनाःपरे ॥३६॥ शिशुमारमुखाःकेचित्केचिन्नक्रमुखाइव ॥ अर्धपिंगाअर्द्ध कृष्णाऊर्ध्वकेशामदोत्कटाः ॥ ३७ ॥ वक्रदंताललज्जिह्वाबृहद्दंष्ट्रमहाबलाः ॥ करालास्याःसकवचाःखड्गचर्मधराःपराः ॥३८॥ शक्तिहस्ताऋष्टिहस्ताभुशुंडिपरिघायुधाः ॥ धनुर्बाणधरायक्षाःकेचित्परशुपाणयः ॥ ३९ ॥ यक्षाणांहस्तिवाहानांरथिनामश्विनांतथा ॥ विरेजुर्निर्गतानांच मंडलानिसहस्रशः ॥ ४० ॥ शंखदुंदुभिनादैश्चसूतमागधवंदिभिः ॥ रेजिरेश्रीदवीराः कौमेघाइवतडित्स्वनैः ॥४१॥ एवंयक्षेषु मत्तेषुकोटिशो निर्गतेषुच ॥ दिव्यान्महायोगमयात्सिद्धक्षेत्राद्विदेहराट् ॥४२॥ आययौतत्सहायार्थंप्रमथानांबलंमहत् ॥ भूताश्चप्रमथाःकेचित्करालास्यामदोत्कटाः ॥४३॥ डाकिन्योयातुधानाश्चवेतालाःसविनायकाः ॥ कूष्मांडोन्मादसंयुक्ताःप्रेतामातृगणाःपरे ॥४४॥ निशाचरपिशाचाश्चब्रह्मराक्षसभैरवाः ॥ नदंतोभैरवंनादंछिंधिभिंधीतिवादिनः ॥४५॥ इत्थंतुभूतावलयःकोटिशश्चाययुस्तदा ॥ रोदस्याच्छादितेभूतांमेघैःसांवर्तकैरिव ॥४६॥ मयूरस्थःकार्त्तिकेयोमूषकस्थोगणेश्वरः ॥ प्रमथैर्गीयमानौतौढक्कावादित्रनिःस्वनैः ॥४७॥ सर्वेषामग्रतःप्राप्तौवीरभद्रेणसंयुतौ ॥ इत्थंपुण्यजनानांतुगणानांयदुभिःसह ॥ ४८ ॥ बभूवतुमुलंयुद्धमद्भुतंरोमहर्षणम् ॥ रथिनोरथिभिस्तत्रपत्तिभिःसहपत्तयः ॥४९॥ हयाहयैरिभाश्चेभैर्युयुधुस्तेपरस्परम् ॥ रथेभाश्वपदातीनांचरणैरुत्थितंरजः ॥ ५० ॥

॥ ४३ ॥ डाकिनी, राक्षस, बेताल, विनायक, कूष्माण्ड, उन्माद युक्त मातृगण ! प्रेत और भी बहुतसे ॥४४॥ निशाचर, पिशाच, ब्रह्मराक्षस, भैरव, भयंकर नाद करते छेद डालो, भेद डालो, ऐसे कहते चले आये ॥४५॥ इस प्रकार भूतोंकी करोड़ों पंक्तियाँ चली आती हैं, उनसे धरती और आकाश आच्छादित हो गया, जैसे प्रलयके मेघ चले आते हैं ॥४६॥ मोरपर बैठे कार्तिकेय, मूषकपर बैठे गणेश, जिनका प्रमथ यश गाते आते हैं, ढोल बजाते चले आते हैं ॥ ४७ ॥ सबके आगे वीरभद्रको साथ लेकर ये दोनों आये, ऐसे पुण्यजनोंके गणका और यादवोंका युद्ध हुआ ॥ ४८ ॥ बड़ा भारी अद्भुत रोंगटे खड़े कर देनेवाला युद्ध हुआ, रथियोंसे रथी, पैदलसे पैदल ॥ ४९ ॥ घोडोंसे घोडे, हाथियोंसे हाथी इनका आपसमें बड़ा भारी संग्राम हुआ, तब रथ, हाथी, घोडे, और पैदलोंके पांवोंकी बडी रज (धूल) उठी ॥ ५० ॥

उससे सब आकाश मण्डल और सूर्य ढक गया ॥५१॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां यक्ष देशगमनं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ नारदजी कहते हैं कि, शस्त्रोंका अंधकार हो जानेपर महाबली मणिग्रीव बाणोंसे प्रद्युम्नकी सेनाको बेधने लगा, जैसे कुवाक्योंसे मित्रताको बेधते हैं ॥१॥ मणिग्रीवके बाणोंके समूहसे हाथी, घोडे, रथ, पैदल, घायल होकर, भूमिमें गिर पडे, जैसे पवनके जोरसे वृक्ष गिर पडते हैं ॥२॥ तब सत्यभामामें उत्पन्न हरिके पुत्र बली चन्द्रभानुने पांच बाणोंसे मणिग्रीवका धनुष काट डाला ॥ ३ ॥ और दश बाणोंसे उसके रथको छेदकर मेघकी तरह गर्जा, फिर मणिग्रीवने चन्द्रभानुके ऊपर बर्छी चलाई ॥ ४ ॥ वह बर्छी दशों दिशाओंमें प्रकाश करती हुई बिजलीसी चली आई, तब चन्द्रभानुने बायें हाथमें वह सहजमेंही पकड ली ॥५॥ वही बर्छी महाबली चन्द्रभानु बली मणिग्रीवको मारकर गर्जा ॥६॥ उस बर्छीके प्रहारसे मूर्च्छित होकर गिर

छादयामासराजेंद्रससूर्यंव्योममंडलम् ॥५१॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खंडेनारदबहुलाश्वसंवादेयक्षदेशप्रयाणंनामत्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ शस्त्रांधकारेसंजातेमणिग्रीवोमहाबलः ॥ बिभेदारिबलंबाणैःकुवाक्यैर्मित्रतामिव ॥ १ ॥ मणिग्रीवस्य बाणौघैर्गजाश्वरथपत्तयः ॥ निपेतुःसक्षताभूमौवृक्षावातहताइव ॥२॥ चंद्रभानुर्हरेःपुत्रःसत्यभामात्मजोबली ॥ मणिग्रीवस्यकोदंडंपंचबाणैस्त-दाच्छिनत् ॥ ३ ॥ दशभिस्तद्रथंछित्त्वाजगर्जघनवद्बली ॥ मणिग्रीवोपिचिक्षेपशक्तिंस्वांचंद्रभानवे ॥४॥ भासयंतींदिशःशश्वन्महोल्कामिवमैथिल ॥ अग्रहीच्चंद्रभानुस्तांवामहस्तेनलीलया ॥ ५ ॥ तयाजघानसमरेमणिग्रीवंमहाबलम् ॥ पुनर्जगर्जसमरेचंद्रभानुर्महाबलः ॥ ६ ॥ तत्प्रहारेणपतितेमणिग्रीवेप्रमूर्च्छिते ॥ चंद्रभानुंबाणजालैर्नलकूबरनोदिताः ॥७॥ छादयामासुरसुरावर्षादित्यंयथांबुदाः ॥ दीप्तिमान्कृष्णपुत्रस्तुखड्गमुद्यम्यवेगवान् ॥ ८ ॥ विवेशयक्षसेनासुनीहारेषुयथारविः ॥ तस्यखड्गप्रहारेणकेचिद्यक्षाद्विधाभवन् ॥९॥ केचिद्वैच्छिन्नशिरसश्छिन्नपादांसबाहवः ॥ भिन्नहस्ताश्छिन्नकर्णाश्छिन्नोष्ठाःपेतुराहवे ॥१०॥ तेषांशिरोभिर्बीभत्सैःसकिरीटैःसकुंडलैः ॥ सशिरस्त्रैःस्रवद्रक्तैर्महामारीव भूर्बभौ ॥ ११ ॥ शेषाविदुद्रुवुर्यक्षाःसक्षताभयविह्वलाः ॥ हाहाकारस्तदाजातोयक्षसेनासुमैथिल ॥ १२ ॥ धनुष्टंकारयन्प्राप्तोदंशितोनलकूबरः ॥ रथेनातिपताकेनमाभैष्टेत्यभयंददौ ॥ १३ ॥

पडा, तब नलकूबरसे प्रेरित किये हुये असुरोंने ॥७॥ चन्द्रभानुको ढक लिया, जैसे वर्षामें सूर्यको मेघ ढक लेते हैं, तब कृष्णका पुत्र दीप्तिमान् खड्ग लेकर ॥ ८ ॥ कुहरेमें सूर्यकी तरह यक्षोंकी सेनामें घुस गया, उसके खड्गके प्रहारसे कितनेही यक्षोंके दो दो टुकडे होकर जा पडे ॥९॥ कोई शिर कटे, कोई बाहु कटे, पांव कटे, ओंठ कटे, हाथ कटे और कान कटे भूमिमें जा पडे ॥ १० ॥ किरीट, कुंडल और शिरस्त्राणयुक्त उनके (रुधिर) बहाते भयानक सिरोंसे महामारीकी तरह भूमिकी शोभा हुई ॥ ११ ॥ बाकी घायल हुये सब यक्ष भयसे विह्वल होकर भाग गये, हे मैथिल ! यक्षोंकी सेनामें बडा हाहाकार मचा ॥ १२ ॥ तब नलकूबर कवच पहिने बडी पताकावाले रथमें बैठकर धनुषको टंकारता सेनाको अभय देता हुआ आया ॥ १३ ॥

तब नलकूबरने पांच बाण तो कृतवर्माके दश अर्जुनके, और बीस बाण दीप्तिमान्के मारे ॥१४॥ तब महाबाहु कृतवर्माने दशों दिशाओंको झंकृत करते हुये पांच बाण नलकूबरको मारे ॥१५॥ वे बाण कवचको भेदकर सभीके देखते २ पृथ्वीमें प्रविष्ट हो गये, जैसे बल्मीक (बाम्बी) में सर्प प्रविष्ट होता है ॥१६॥ जब कृतवर्माके बाणोंसे नलकूबर मूर्च्छित हो गया तब हेममाली सारथी नलकूबरको युद्धमेंसे एकान्तमें ले गया ॥१७॥ तब घंटानाद और पार्श्वमौलि कुबेरके वे दोनों मन्त्री बाणोंके समूहसे उद्भट यादवोंकी सेनाको मारने लगे ॥१८॥ जिनके स्वर्णके पुंख ऐसे तीक्ष्ण मुख और गृध्र पक्ष मनके समान वेग वाले बाणोंसे जैसे सूर्य किरणोंसे प्रकाश करता है, वैसे दशों दिशाओंमें प्रकाश करते वे दोनों कुबेरके मन्त्री यादवोंकी सेनाको मारने लगे ॥१९॥ तब महावीर अर्जुनने बाणोंके सामने बाण फेंके, तब बाणोंके संघर्षसे युद्धमें हजारों विस्फुलिंग (पतंगे) उठने लगे ॥ २० ॥ हे नृप

पंचभिर्विशिखैः पंचभिःकृतवर्माणमर्जुनंदशभिःशरैः ॥ दीप्तिमंतंचविंशत्याततादनलकूबरः ॥ १४ ॥ कृतवर्मामहाबाहुर्जघाननलकूबरम् ॥ पंचभिर्विशिखै राजन्नादयन्मंडलंदिशाम् ॥१५॥ तेबाणाःकवचंभित्त्वातनुंभित्त्वाधरातलम् ॥ विविशुःपश्यतांतेषांवल्मीकेफणिनोयथा ॥१६॥ वीक्ष्यतद्बाणभिन्नांगंमूर्च्छितंनलकूबरम् ॥ अपोवाहरणात्सूतोहेममालीतिनामभाक् ॥१७॥ घंटानादःपार्श्वमौलिःकुबेरस्यचमन्त्रिणौ ॥ जघ्नतुर्बाणपटलैर्यदूनासुद्भटंबलम् ॥१८॥ स्वर्णपुंखैस्तीक्ष्णमुखैर्गृध्रपक्षैर्मनोजवैः॥ द्योतयद्भिर्दिशःसर्वामार्तंडकिरणैरिव ॥१९॥ ततोर्जुनोमहावीरःप्रतिबाणान्समादधे ॥ बाणसंघर्षजायुद्धेविस्फुलिंगाःसहस्रशः ॥२०॥ विरेजुर्नृपखद्योतचंचलालातचक्रवत्॥सर्वंतद्बाणपटलंक्षणमात्रेणाचाच्छिनत् ॥२१॥ गांडीवमुक्तविशिखैर्गांडीवीरणदुर्मदः ॥ योजनद्वयमात्रेणतद्रथौसध्वजौबलात्॥२२॥ अर्जुनोबाणपटलैश्चकारशरपंजरे ॥ हताविमावितिज्ञात्वासर्वेपुण्यजनास्त्वरम् ॥ २३ ॥ दुद्रुवुःस्वंरणंत्यक्त्वापरंहाहेतिवादिनः ॥ तदातुभूतावलयःकोटिशश्चाययुर्मृधे ॥ २४ ॥ डाकिन्यःकोटिशो राजंश्चिक्षिपुर्वारणान्मृधे॥भक्षयंत्योनरानश्वांश्चर्वयंत्योरथान्पृथक् ॥२५॥ नरेनरेपृथग्भूताधावंतोदशभिर्दश ॥ प्रमथाःपातयामासुःखट्वांगेनजनान्मुहुः॥२६॥ यातुधान्यश्चर्वयंतःशिरांसिरणमंडले॥ वेतालश्चकपालैर्नापिबंतोरुधिरंबहु ॥२७॥ विनायकाश्चनृत्यंतःप्रेतागायंतएवहि ॥ कूष्मांडाश्चतथोन्मादाःशिरांसिजगृहुर्मृधे ॥ २८ ॥

वे खद्योतों (जुगनों) की तरह शोभित हुये, बिजली जैसे उन बाणोंसे अर्जुनने उन कुबेरके मन्त्रियोंके बाणोंके समूहको काट डाला ॥ २१ ॥ फिर गाण्डीवधारी अर्जुनने गाण्डीवसे छोडे बाणोंसे आठ कोसपर उन दोनोंके ध्वजा सहित रथ बलपूर्वक हटा दिये ॥२२॥ अर्जुनने अपने बाणोंके समूहसे बाणोंके पिंजड़ेमें कर दिये उनको मारे गये ऐसे जानकर सब यक्ष जल्दी ॥२३॥ रणको छोडकर हाय हाय करते भाग गये, तब फिर भूतोंकी करोड़ों पंक्तियाँ संग्राममें आई ॥ २४ ॥ करोड़ों डाकिनी हाथियोंको फेंकती मनुष्य, घोडे, हाथी, रथोंको भक्षण करती हुई पृथक् पृथक् आई ॥२५॥ एक एक आदमीके पीछे एक २ और दशोंके पीछे दश दौडते खट्वाङ्गसे मनुष्योंको प्रमथ मारने लगे॥२६॥ और राक्षसियाँ रणमें सिरोंको चबाने लगीं, और वेताल खोपडियोंमें रुधिर पीने लगे ॥ २७ ॥ विनायक नाचते हैं, प्रेत गाते हैं उन्माद कूष्माण्ड संग्राममें सिरोंको ग्रहण करते हैं ॥ २८ ॥

शिवकी मुण्डमालाके लिये स्वर्गवासी वीरोंके सिरोंको ग्रहण करते हैं, और मातृगण, ब्रह्म राक्षस, बडे भैरव ॥ २९ ॥ बारम्बार सिरोंको गेंदकी तरह उछालते हैं, बड़े बड़े अट्टहास करते हैं, हँसते हैं, फिर खिलखिलाकर हँसते हैं ॥ ३० ॥ भयंकर मुखवाले पिशाच कुरीतसे कूदते हैं, पिशाचिनियाँ अपने बालकोंको गरम गरम रुधिर पिलाती हैं ॥ ३१ ॥ " रोओ मत बेटा तुमको और नेत्र दूँगी " ऐसे कहती पिशाचिनियाँ उन बच्चोंको रुधिर पिलाती हैं, इस प्रकार गणका बल देखकर बलदेवका छोटा भाई गद ॥ ३२ ॥ गदा लेकर मेघकी तरह गर्जने लगा, लाख भारकी गदा लेकर उसकी सेनाको मारने लगा ॥ ३३ ॥ गद ऐसे मारने लगा, जैसे इन्द्र पर्वतोंको मारता है, कूष्माण्ड, उन्माद, वेताल, पिशाच, ब्रह्मराक्षस ॥३४॥ उसकी गदाके मारे छिन्न हो गये हैं मस्तक जिनके, वे और टूट गये हैं दाँत जिनके ऐसी डाकिनी तथा भिन्न हो गये हैं कन्धे जिनके ऐसे प्रमथ मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिर पड़े ॥३५॥ उस गदने युद्धमें राक्षसोंके कट गये हैं मुख जिनके ऐसे कर दिया, और गदासे मारे हुये प्रेत दशों दिशाओंकी

शिवस्यमुण्डमालार्थंवीराणांस्वर्गगामिनाम् ॥ तथामातृगणाब्रह्मराक्षसाभैरवामृधे ॥ २९ ॥ शिरांसिकंदुकानीवक्षेपयंतोमुहुर्मुहुः ॥हसंतःप्रहसन्तश्चसाट्टहासंसमाकुलाः ॥ ३० ॥ पिशाचाविकलास्याश्चकूर्दंतःकेपिकुत्सितम् ॥ पिशाच्यःक्षतजंतूष्णंपाययंत्यःशिशून्मृधे ॥३१॥ मारोदीरितिवादिन्योनेत्राण्यपिददामउत ॥ इत्थंगणबलंदृष्ट्वाबलदेवानुजोबली ॥३२॥ गदोगदांसमादायजगर्जघनवद्बली ॥ लक्षभारभृतामौर्व्या गदयातद्बलंमहत् ॥३३॥ पोथयामासहिगदोवज्रेणेंद्रोयथागिरीन्॥ कूष्मांडोन्मादवेतालाःपिशाचाब्रह्मराक्षसाः॥३४॥निपेतुर्मूर्च्छिताभूमौतद्गदाभिन्नमस्तकाः ॥ डाकिनीभिन्नदंताश्चप्रमथाभिन्नकन्धराः ॥३५॥ यातुधानांश्छिन्नमुखांश्चकारसमरेगदः ॥ गदयामर्दिताःप्रेताडुद्रुवुस्तेदिशोदश ॥३६॥ वाराहदंष्ट्र्याभग्नालयेदैत्यायथानृप ॥ पलायितेभूतगणेवीरभद्रःसमागतः ॥ ३७ ॥ गदंतताडगदयाबलदेवानुजंबली॥ गदोपरिगदांनीत्वागदःस्वांप्राहिणोद्गदाम् ॥ ३८ ॥ तयोर्युद्धमभूद्घोरंगदाभ्यांमैथिलेश्वर ॥ विस्फुलिंगान्क्षरंत्यौद्वेगदेचूर्णीबभूवतुः ॥३९॥ मल्लयुद्धंतयोरासीन्नोदयंतंपरस्परम् ॥ भुजैश्चजानुभिःपादैःपातयंतोगिरीन्बहून्॥४०॥ करवीरंसमुत्पाटचवीरभद्रोगिरिंबलात्॥ अट्टहासंतदाकुर्वन्गदोपरिसमाक्षिपत् ॥ ४१ ॥ गदोगिरिंसंगृहीत्वातस्योपरिसमाक्षिपत् ॥ गृहीत्वाथगदंवीरंवीरभद्रोवलाद्बली ॥ ४२ ॥

ओर भग गये ॥३६॥ वाराहकी दाडसे जैसे दैत्य भाग गये, ऐसे सब भूतगण जब भाग गये, तब वीरभद्र लडनेको आया ॥३७॥ उस बलीने बलदेवजीके छोटे भाई गदके एक गदा मारी उस समय गदने अपनी गदापर गदाको रोककर अपनी गदा वीरभद्रके मारी ॥३८॥ हे मैथिलेश्वर! तब दोनोंका घोर गदायुद्ध हुआ, दोनों गदाओंमेंसे अग्निकी चिनगारियाँ छूटते २ दोनों गदाओंका चूर्ण हो गया ॥३९॥ फिर गदाका और वीरभद्रका दोनोंका आपसमें प्रेरणा करते हुये मल्लयुद्ध हुआ, भुजाओंसे, पांवोंसे, वे दोनों पर्वतोंको गिराने लडने लगे ॥ ४० ॥ तब करवीर पर्वतको वीरभद्रने उखाडकर गदके ऊपर फेंका, और अट्टहास किया ॥ ४१ ॥ तब गदने उस पर्वतको पकडकर भीरभद्रके ही ऊपर फेंक दिया, महाबली वीरभद्रने गदको पकडकर अपने बलसे आकाशमें लाख योजन ऊँचा फेंक दिया ॥ ४२ ॥

जब गद भूमिमें आकर गिरा तब कुछ व्याकुल मन हो गया ॥४३॥ तब महाबली गदने उठकर वीरभद्रको उठाकर घुमाकर पराक्रमसे लाख योजन ऊँचा फेंक दिया ॥ ४४ ॥ तब वीरभद्र कैलाशके शिखरपर जाकर पडा, गदाके प्रहारोंका मारा व्यथित होकर दो घडीतक मूर्च्छित हो गया ॥ ४५ ॥ तब तो बर्छी उठाकर स्वामि कार्तिकेय आये, उन्होंने अनिरुद्धके ऊपर बर्छी फेंकी ॥ ४६ ॥ तब वह बर्छी अनिरुद्धके रथको तोडकर साम्बको और साम्बके रथको तोडकर हजार हाथी और हजार रथोंको और लाख मनुष्योंको ॥४७॥ भेदकर छेदकर शब्द करती बिजलीसी चमकती दशों दिशाओंमें प्रकाश करती सर्पिणीसी फुंकारती हुई पृथ्वीमें समा गई ॥ ४८ ॥ तब तो बडी भुजाओंवाले जाम्बवती सुत साम्बने अपने धनुषको टंकार कर एक बाण क्रोधसे लगाया ॥ ४९ ॥ एकही वह बाण तरकससे निकलकर दशगुना होगया, फिर धनुषपर रखा, तब सौगुना होगया, खेंचने पर हजारगुना होगया ॥ ५० ॥ छोडनेपर लाख गुना और पड़नेपर करोड़ गुना होगया, अनेकरूपी उस बाणने मोरको और स्वामि कार्तिकेयको छेदकर करोडों २ वीरोंको छेद

चिक्षेपचौजसाराजन्नाकाशेलक्षयोजनम् ॥ गदोपिपतितोभूमौकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥४३॥ गृहीत्वावीरभद्राख्यंभ्रामयित्वामहाबलः॥ ओजसाप्राक्षिपच्छीघ्रमाकाशेलक्षयोजनम् ॥ ४४ ॥ वीरभद्रस्तुपतितःकैलासशिखरोपरि ॥ गदाप्रहारव्यथितोमूर्च्छितोघटिकाद्वयम्॥४५॥कार्तिकेयस्तदाप्राप्तःशक्तिमुद्यम्यवेगवान् ॥ अनिरुद्धायसांबायशक्तिंचिक्षेपतत्वरम्॥ ४६ ॥ अनिरुद्धरथंभित्त्वासांबंसांबरथंपुनः ॥ गजान्रथान्सहस्रंचवीरलक्षंमृधांगणे ॥ ४७ ॥ भित्त्वानदंतीस्फूर्जतीचपलेवदिशोदश ॥ विवेशभूमौफूत्कारंकुर्वतीपन्नगीवसा ॥ ४८ ॥ तदाक्रुद्धोमहाबाहुः सांबोजांबवतीसुतः ॥ कृत्वाथशिंजिनीघोषंनिषंगाद्बाणमाददे॥४९॥एकोपिसद्बहिस्तूणाद्दशरूपीबभूवह ॥ चापेशतंकर्षणेचसहस्ररूपमादधे ॥५०॥ मोक्षणेलक्षरूपाणिकोटिरूपाणिकोटिषु॥अनेकरूपीविशिखःशिखिनंशिखिवाहनम्॥५१॥भित्त्वाबिभेदवीराणांकोटिशःकोटिशोरणे॥ कार्तिकेचभिन्नांगेकिंचिद्व्याकुलमानसे॥गणेश्वरस्तदाप्राप्तोमूषकस्थोगजाननः ॥५२॥ गोमूत्रपत्रमृगनाभिविचित्रकुंभंश्रीकुंकुमाकलितसुन्दरवक्रतुण्डम् ॥ सिन्दूरपूरितकपोलमनोहराभंकर्पूरधूलिधवलीकृतकर्णवर्णम् ॥५३॥ व्यालोलकर्णहतमत्तमधुव्रतैस्तैःश्रीगण्डजातमदिरामदविह्वलांगैः ॥ संगीततालकुसुमाकरगीतरागैःसंसेवितङ्गणपतिंकृतभालचन्द्रम् ॥५४॥ बालार्कवर्णममलांगदहेमहारग्रैवेयमौलिकरणैःपरितःस्फुरंतम् ॥ आखुस्थमेकदशनंगजभव्यमूर्तिंपाशांकुशांबुजकुठारचयंदधानम् ॥ ५५ ॥

डाला ॥५१॥ स्वामि कार्तिकेयका अंग छिद गया, मन व्याकुल हो गया, तब गजानन गणेशजी मूसक (चूहा) पर बैठकर युद्ध करनेको आये ॥ ५२ ॥ गोमूत्र, पत्र और कस्तूरी से चित्रित है, कुम्भस्थल जिनका, और केशरसे रंगा है, सुन्दर मुख जिनका, और सिन्दूर पूरित जो कपोल उससे अति मनोहर है कान्ति जिनकी, और कपूरके चूर्णसे किया है, कानों का सुन्दर वर्ण जिनका ॥५३॥ चंचल कानोंसे मारे जो मतवाले भ्रमर तथा कपोलोंकी मदिराके मदसे विह्वल हैं अंग जिनके, संगीत, ताल और वासन्ती रागसे सेवित, जिनके माथे में है चन्द्रमा, ऐसे गणेशजी दिखाई दिये ॥ ५४ ॥ उदय होते हुये सूर्यकासा वर्ण जिनका, और निर्मल जो स्वर्णके हार, बाजू, कंकण, किरीट, मुकुट, उनकी चारों ओर फैली किरणोंसे चारों ओरसे देदीप्यमान, एक दाँतवाले, मूषकपर, सवार गजकीसी मूर्ति और पाश, अंकुश, कमल, और कुठारोंके समूहको धारण किये हैं ॥ ५५ ॥

ऊँचा स्वरूप, चतुर्भुज, संग्राममें आये गणेशजी किसीको सूंडमें पकडकर अंकुशसे मर्दन करते हैं, किसीको फरसासे परशुरामकी तरह सब शस्त्रधारियोंको मारते हैं ॥५६॥ वीरोंको, हाथियोंको, रथोंको, घोडोंको, सब सेनाको गिराकर रथ समेत साम्बको पकडकर फेंकते हुये उनको देखकर गण सहित प्रद्युम्न आश्चर्यमें अगया तब विचारकर सुबुद्धि जो अनिरुद्ध है, उससे बोला ॥५७॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां यक्ष युद्धवर्णनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥ प्रद्युम्नजीने अनिरुद्धसे कहा कि, ये गणेश तो श्रीकृष्णकी साक्षात् कला हैं, महाबली हैं, इनको देवता भी नहीं जान सकते फिर इस भूमिमें मनुष्योंकी तो बात ही क्या है ॥१॥ जहाँ ये निकट रहते हैं, वहाँ पराजय नहीं होती है, क्योंकि शंकरके मंदिरमें कैलासमें श्रीकृष्णने इनको वर दिया है ॥ २ ॥ यदि ये यहाँ खडे भी रहेंगे सो हमारी विजय नहीं होगी, श्रीकृष्णके वरसे उर्जित हैं, ये शत्रुके पक्षपर खडे हैं ॥३॥ इससे तुम प्रचंड बिलाव (मार्जार) बन जाओ, महायुद्धमें बलसे युद्ध कर रहे इन गणेशजीके मूषकको भगा दो, अपनी फुंकारोंसे दशों दिशाओंमें भगाये

प्रांशुंचतुर्भुजमतीवमृधेप्रवृत्तंकांश्चित्प्रगृह्यचकरेणधृतांकुशेन ॥ संमर्दयंतमुरुधारपरश्वधेनश्रीभार्गवेंद्रमिवशस्त्रभृतःसमस्तान्॥५६॥ वीरेभवाजिरथसंघबलनिपात्यसांबंप्रगृह्यसरथंप्रधनात्क्षिपंतम्॥तंवीक्ष्यविस्मितमनाःसगणोथकार्ष्णिःपुत्रंसुबुद्धिमनिरुद्धमुवाचसम्यक्॥५७॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेयक्षयुद्धवर्णनंनामचतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ श्रीकृष्णस्यकलासाक्षाद्गणेशोयंमहाबलः ॥ जेतुंनशक्योदिविजैर्मनुष्यैस्तुकुतोभुवि ॥१॥ वर्ततेयत्रनिकटेतत्रनास्तिपराजयः ॥ श्रीकृष्णेनवरोदत्तोपुरास्मैशंकरालये ॥ २ ॥ यद्ययंवर्ततेचात्रतदानस्याज्जयश्चनः ॥ शत्रुपक्षगतोयंवैश्रीकृष्णस्यवरोर्जितः॥३॥ तस्मात्त्वंचंडमार्जारोभूत्वासंयुद्धतोबलात्॥ विद्रावयमहायुद्धेफूत्कारैश्चदिशोदश ॥ ४ ॥ यावद्बलंविजेष्यामितावद्विद्रावयत्वरम् ॥ नारदउवाच ॥ अथानिरुद्धोभगवांश्चंडमार्जाररूपधृक् ॥५॥ अलक्षितोगणेशेननज्ञातोविष्णुमायया॥ फूत्कारमुत्कटंकुर्वन्संपपाताखुसंमुखे॥६॥विदारयन्मुखंराजन्सततंनखरैःपरैः॥ विशेषेणसहैवाखुर्दृष्ट्वाशुभयविह्वलः ॥७॥ दुद्रावत्वरितंराजन्कंपितोरणमंडलात् ॥ तमन्वगच्छन्कुपितोमार्जारःस्थूलरूपधृक् ॥८॥ मूषकंस्वमपोवाहगणेशोपिमुहुर्मुहुः ॥ नाययौस्वंरणंचाखुश्चंडमार्जारपीडितः ॥ ९ ॥ सप्तद्वीपान्सप्तसिंधून्दिशासुविदिशासुच ॥ धावन्वैसप्तलोकेषुनलेभेशर्ममैथिल ॥ १० ॥

रहो ॥४॥ जबतक मैं इस सेनाको जीत लूँ तबतक भगाते रहो, नारदजी कहते हैं, तब अनिरुद्ध भगवान्ने चंड मार्जारका रूप धारण किया ॥५॥ गणेशजीने देखा नहीं, विष्णुकी मायासे जाना नहीं, उत्कट फुंकार करता वह मूषकके सामने गिरा ॥६॥ मुखको फाड फाडकर तीक्ष्ण नखोंसे मारने लगा, उसको देखकर मूषक विशेषरूपसे भय विह्वल होगया ॥ ७ ॥ और हे राजन् ! तुरन्त रणमेंसे कांपता हुआ भागा, उसके पीछे स्थूल आकृतिवाला क्रोधित मार्जार भी भागने लगा ॥८॥ मूषकको गणेशजीने बारबार लौटाया, किन्तु चंड मार्जारसे पीडित हुआ मूषक अपने रणमें नहीं आया ॥ ९ ॥ हे मैथिल ! सातों द्वीपोंमें सातों समुद्रोंमें, दिशाओंमें, विदिशाओंमें, सातों लोकोंमें भागा २ फिरा, किन्तु सुख कहीं नहीं पाया, हे मैथिल ! ॥ १० ॥

जहाँ जहाँ गणेशको लेकर मूषक पहुँचा, हे राजन् ! वहाँ वहाँ चण्डपराक्रमी मार्जार पहुँचा ॥११॥ ऐसे गणेशका मूषक जब भग गया, विदिशोतर गणेशको ले गया, तब तो सब गण प्रमथ अपने पक्षके सभी आश्चर्य करने लगे ॥ १२ ॥ तब पुष्पक विमानमें बैठ कुबेरने यक्षोंकी माया की, अपना धनुप लेकर महेश्वरको नमस्कार करके ॥ १३ ॥ मन्त्रोंसे कवचको पहिनकर मन्त्र पढकर बाण छोडा, उसी समय प्रलयकेसे मेघ चले आये, उनसे आकाश छा गया ॥ १४ ॥ बिजलीके शब्द युक्त बडे भयंकर मेघोंसे अन्धकार छा गया उनमेंसे हाथीकी सूंड जैसी बूंदें ओलों समेत संग्राममें गिरने लगीं ॥ १५ ॥ और अति घोर धाराओंसे बादल वर्पने लगे, एक क्षणमें सातों समुद्र इकट्ठे होकर पृथ्वीको डुवाने लगे ॥१६॥ जीव सहित पर्वत रणमण्डलमें दीखने लगे, प्राकृत मनुष्य प्रलय जानने लगे, और यादव भयविह्वल हो गये ॥ १७ ॥ तब सब यादव शस्त्रोंको छोड छोडकर बार बार श्री

यत्रयत्रगतश्चाखुर्गणेशेनसमन्वितः॥ तत्रतत्रगतोराजन्मार्जारश्चण्डविक्रमः॥११॥एवंसमूपकेयातेगणेशोविदिशोत्तरम्॥विस्मितेषुसपक्षेषुगणेषु
प्रमथेषुच ॥१२॥ पुष्पकस्थःकुबेरोसौमायांचक्रेथगौह्यकीम् ॥ गृहीत्वास्वंधनुर्दिव्यंनमस्कृत्यमहेश्वरम् ॥ १३ ॥ समन्त्रंकवचंधृत्वाबाणसं-
घंसमादधे ॥ तदैवच्छादितंव्योममेघःसांवर्तकैरिव ॥१४॥ तडित्स्वनैर्महाभीमैस्तमोभूत्स्तनयित्नुभिः ॥ बिन्दवोदस्तिसदृशानिपेतुःसोपला
मृधे ॥ १५ ॥ धाराभिरतिघोराभिर्ववृषुर्वारिदास्ततः ॥ क्षणेनसिंधवःसर्वेप्लावयंतोधरातलम् ॥ १६ ॥ पर्वतेर्जीवसहितैर्दृश्यंतेरणमण्डले ॥
प्राकृताःप्रलयंमत्वायादवाभयविह्वलाः ॥१७॥ त्यक्त्वाशस्त्राणितेऽथोचुःश्रीकृष्णेतिमुहुर्मुहुः॥ज्ञात्वातांगौह्यकींमायांप्रद्युम्नोभगवान्हरिः॥१८॥
सत्त्वात्मिकांचस्वांविद्यांसर्वमायोपमर्दिनीम् ॥ जप्त्वाकृत्वाकामबीजंबाणमध्येनिधायतत् ॥ १९ ॥ मुखेचप्रणवंधृत्वामुखेश्रीबीजमेवच ॥
आकृष्यकर्णपर्यंतंकृष्णंस्मृत्वाचतुर्भुजम् ॥२०॥ चिक्षेपविशिखंचापाद्दोर्दंडाभ्यांतडित्स्वनात् ॥ कोदण्डमुक्तोविशिखोद्योतयन्मण्डलंदिशाम्
॥२१॥ जघानगौह्यकींमायामंधकारंयथारविः ॥ भयभीतोराजराजोपुष्पकस्थोरणांगणात् ॥ २२ ॥ पलायमानोयक्षैश्चकंपितःस्वपुरींययौ ॥
प्रद्युम्नस्योपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥ २३ ॥ जहसुर्यादवाःसर्वेजयारावसमाकुलाः ॥ तदातिहर्षितोराजन्राजराजःकृतांजलिः ॥ २४ ॥

कृष्ण श्रीकृष्ण कहने लगे, प्रद्युम्न भगवान् हरिने गुह्यकोंकी मायाको जानकर ॥ १८ ॥ कामबीजका जप करके बाणके बीचमें लिखकर सब मायाओंको मर्दन करने वाली अपनी सतोगुणी मायाको छोडा ॥ १९ ॥ उसके मुखमें ॐ श्री लिखकर चतुर्भुज श्रीकृष्णका ध्यान करके कानतक बाण खेंचकर ॥ २० ॥ बिजलीकासा जिसमें शब्द उस धनुपसे दोनों भुजाओंसे बाण छोडा, तब धनुपसे निकले बाणने ॥ २१ ॥ दिशाओंके मण्डलको प्रकाशित करते हुये गौह्यकी गुह्यक माया नष्ट कर दी, जैसे सूर्य अन्धकारको नष्ट करता है, तब तो पुष्पक विमानमें बैठा कुबेर भयभीत हो गया, और युद्ध भूमिसे भगा ॥ २२ ॥ यक्षों सहित कांपकर अपनी पुरीको चला गया, तब प्रद्युम्नके ऊपर देवता पुष्पोंकी वर्षा करने लगे ॥ २३ ॥ सब यादव प्रसन्न हो गये, हँसने लगे, और जय जय शब्द करने लगे तब अत्यन्त हर्पित होकर राजराज कुबेर हाथ जोडकर आया ॥ २४ ॥

शीघ्र ही भेंट लेकर प्रद्युम्नके सन्मुख आया, दो सूंडके दो लाख तो हाथी लाया ॥ २५ ॥ चार चार जिनके दांत, मद जिनके चू रहा, ऐसे पर्वत जैसे दो लाख हाथी और जिनमें मोतियोंकी बंदनवार झालर बंधी, ऐसे दश लाख रथ दिये ॥ २६ ॥ सौ सौ जिनमें घोडे लगे सुवर्णके बने सूर्यका सा जिनका तेज, ऐसे रथ दिये, और चन्द्रमा जैसा वर्ण जिनका ऐसे दश अरब घोडे दिये ॥ २७ ॥ और मणियोंकी जडी चार लाख पालकियाँ दीं, पिंजडेमें बैठे दो लाख सिंह दिये ॥ २८ ॥ हे विदेहराज ! एक करोड चीते, एक करोड मृग, एक करोड रोंज, एक करोड शिकारी कुत्ते दिये ॥२९॥ पिंजडेमें बैठे मनोहर कण्ठोंसे बोलने वाले एक लाख तोते, एक लाख मैना,एक लाख सुनहरी हंस दिये, और भी पिंजडेमें स्थित अनेक प्रकारके लाख लाख पक्षी दिये, फिर विष्णुसे दिया हुआ विमान, जिसमें मोतियोंकी झालर चन्दोहा लटक रहे हैं ॥ ३० ॥३१॥ बत्तीस कोस ऊँचा, छत्तीस कोस

बलिंनीत्वाययौशीघ्रंप्रद्युम्नस्यापिसंमुखे॥गजेंद्राणांद्विलक्षंचद्विशुण्डादण्डशालिनाम्॥२५॥दद्भिश्चतुर्भिर्युक्तानामद्रीन्त्स्पर्धयतांमदैः॥ दशलक्षं-
रथानांचमुक्तातोरणशालिनाम्॥२६॥ शताश्वयोजितानांचरौक्माणांसूर्यवर्चसाम्॥दशार्बुदन्तथाराजन्हयानांचन्द्रवर्चसाम्॥२७॥ शिबिकानां
चतुर्लक्षंमाणिक्यैरग्रवर्चसाम्॥पञ्जरस्थायिनांराजञ्शार्दूलानांद्विलक्षकम्॥२८॥चित्रकाणांमृगाणांचगवयानांतथैवच॥मृगयासारमेयानांकोटि
कोटीर्विदेहराट् ॥२९॥ शुकानांसारिकाणांचकलकण्ठप्रवादिनाम् ॥ हंसानांस्वर्णवर्णानामन्येषांचित्रपक्षिणाम् ॥ ३० ॥ पञ्जरस्थायिनांराजँ-
ल्लक्षंलक्षंनृपेश्वरम् ॥ विमानंविष्णुदत्ताख्यंमुक्तादामविलंबितम् ॥३१॥ अष्टयोजनमुच्चांगंनवयोजनविस्तृतम्॥लक्षकुम्भध्वजोपेतंनिर्मितंविश्व
कर्मणा॥३२॥कामगंस्वर्णशिखरंसहस्रादित्यसुप्रभम् ॥ सहस्रंकुलवृक्षाणांकामधेनुशतंतथा॥३३॥ चिन्तामणीनांचशतंशतंदिव्याश्मनांतथा ॥
यत्स्पर्शेनापिलोहस्तुहेमत्वंयातिमैथिल ॥ ३४॥ छत्राणांचामराणांचहैमसिंहासनंशतम्॥ तथाहिदिव्यपद्मानांमालांकिंजल्किनींशुभाम्॥३५॥
शतंद्रोणंपीयूषस्यफलानिविविधानिच ॥ खचिद्रत्नसुवर्णानांभूषणानांतुवाससाम् ॥ ३६ ॥ दिव्यानांकंबलानांचकोटिशःपात्रसञ्चयम् ॥
अमोघानांचशस्त्राणांकोटिसौवर्णशालिनाम् ॥ ३७ ॥

लम्बा, जिसमें लाख ध्वजा, और लाख सुनहरी कलश लग रहे, हैं, विश्वकर्माका बनाया ॥३२॥ जिसके स्वर्णके शिखर, हजार सूर्यका सा जिसका तेज इच्छानुसार गमन करने वाला, हजार जातिके जिसमें वृक्ष, जिसमें सौ कामधेनु गौ॥३३॥ जिसमें सौ चिन्तामणि, सौ जिसमें पारस पत्थर हे मैथिल ! जिसके स्पर्श करानेसे लोहा स्वर्ण हो जाता है॥३४॥ छत्र चमर, समेत सौ सुनहरे सिंहासन, वैसे ही दिव्य कमलोंकी किंजल्किनी माला जो कभी कुम्हलाती नहीं है ॥३५॥ अमृतके सौ घट, ये सब दिये, अनेक प्रकारके फल दिये, जडाऊ सोनेके करोड गहने और वस्त्र ॥ ३६ ॥ करोडों सुन्दर कम्बल, करोडों पात्र अमोघ शस्त्र, करोड मोहरोंके थाल दिये ॥ ३७ ॥

बोझा ढोनेवाले मनुष्योंसे हाथियोंपर रखवाकर नौ निधि दी, प्रद्युम्न महात्माको इतनी भेंट दी ॥३८॥ फिर प्रद्युम्नको प्रणाम करके प्रदक्षिणा, देकर आनन्दमें भरा कुबेर यह बोला कि, आप भगवान् पुरुष महात्मा हो, आपको मैं प्रणाम करता हूँ ॥३९॥ आप अनादि हो, सबके जाननेवाले हो निर्गुण हो, महात्मा हो, प्रधान पुरुषके ईश हो, प्रत्यग्धामा हो, उनको मैं प्रणाम करता हूँ ॥४०॥ स्वयं ज्योतिः स्वरूप श्यामल अंग जिनका ऐसे जो वासुदेव संकर्षण हो, उन आपके लिये मेरा नमस्कार है ॥४१॥ आप प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, और सात्वतोंके पति हो, आपके लिये नमस्कार है, आप मदन हो, मार हो, कन्दर्प हो, आपको मेरा नमस्कार है ॥४२॥ आप दर्पक हो, काम हो, पञ्च बाण हो, अनंग हो, शम्बर दैत्यके शत्रु हो, आपके लिये नमस्कार है ॥४३॥ हे मन्मथ ! आपको नमस्कार है, आप मीन केतन, मनोभव, कुसुमशर हो, आपके लिये नमस्कार है ॥४४॥ आप अनन्यज हो, रतिके भर्ता हो, पुष्पधन्वा हो, मकरध्वज हो, आपको नमस्कार है ॥४५॥ आप स्मर हो, प्रभु हो, नित्यही जगत्की विजय करनेवाले हो, रुक्मवतीके भर्ता हो, सुन्दरी पति हो, उनको

गजैर्नरैर्भारवाहैः प्रेरितानिधयोनव ॥ दत्त्वाबलिंराजराजः प्रद्युम्नायमहात्मने ॥ ३८ ॥ दक्षिणीकृत्यतंनत्वाप्राहेदंहर्षपूरितः ॥ कुबेरउवाच ॥ नमस्तुभ्यंभगवतेपुरुषायमहात्मने ॥३९॥ अनादयेसर्वविदेनिर्गुणायमहात्मने ॥ प्रधानपुरुषेशायप्रत्यग्धाम्नेनमोनमः ॥४०॥ स्वयंज्योतिःस्वरूपायश्यामलांगायतेनमः ॥ नमस्तेवासुदेवायनमःसंकर्षणायच ॥४१॥ प्रद्युम्नायानिरुद्धायसात्वतांपतयेनमः ॥ मदनाय चमारायकंदर्पायनमोनमः ॥ ४२ ॥ दर्पकायचकामायपञ्चबाणायतेनमः ॥ अनङ्गायनमस्तुभ्यंनमस्तेशंबरारये ॥४३॥ हेमन्मथनमस्तुभ्यंनमस्तेमीनकेतन ॥ मनोभवायदेवायनमस्तेकुसुमेषवे ॥४४॥ अनन्यजनमस्तुभ्यंरतिभर्त्रेनमोनमः ॥ नमस्तेपुष्पधनुषेमकरध्वजतेनमः ॥४५॥ स्मरायप्रभवेनित्यंजगद्विजयकारिणे ॥ नमोरुक्मवतीभर्त्रेसुन्दरीपतयेनमः ॥४६॥ इदंकरिष्यामिकरोमिभूमन्ममेदमस्त्वीतितवेदमाब्रुवन् ॥ अहंसुखीदुःखयुतःसुहृज्जनोलोकोह्यहंकारविमोहितोऽखिलः ॥४७॥ प्रधानकालाशयदेहजैर्गुणैःकुर्वन्विकर्माणिजनोनिबद्ध्यते ॥ काचेर्भकंसैकतएवजीवनंगुणेचसर्पप्रतनोतिसोक्षिभिः ॥४८॥ कृतंमयाहेलनमद्यमौढ्यतस्त्वन्माययामोहितचेतसाप्रभो ॥ नमन्यसेबालकृतंपितेवहिमाभूत्पुनर्मेमतिरीदृशीमनाक् ॥ ४९ ॥ सदाभवेत्वच्चरणारविंदयोर्भक्तिपरायांचविदुर्गरीयसीम् ॥ ज्ञानंचवैराग्ययुतंशिवास्पदंदेहिप्रशस्तंनिजसाधुसङ्गमम् ॥ ५० ॥

नमस्कार है ॥४६॥ यह करूँगा, इसको करता हूँ, हे भूमन् ! यह मेरा है, यह तुम्हारा है, ऐसा कहता मैं सुखी, मैं दुखी, मेरे सुहृज्जन इस प्रकार ये सब लोक अहंकारसे मोहित हैं ॥४७॥ माया काल, प्रकृति काल, और अन्तःकरण देह, इससे हुई जो विषय कर्म इन्द्रियाँ उनसे कुकर्मको करता यह जन वन्धता है जैसे काचपर बालक, बालुकामें जल, और रस्सीमें सर्प देखते हैं ॥४८॥ मैंने मूर्खतासे आपका बडा अपराध किया, हे प्रभो ! आपकी मायासे चित्त मोहित होगया, किन्तु आप अपराधको क्षमा करते हो, पिता जैसे पुत्रके अपराधको क्षमा करता है, फिर मेरी ऐसी बुद्धि कभी मत हो ॥४९॥ आपके चरण कमलोंमें मेरी पराभक्ति हो, वैराग्य सहित कल्याण करनेवाला ज्ञान हो, और अपना उत्तम साधु संग यह मुझको दीजिये ॥ ५० ॥

नारदजी कहते हैं, यह प्रद्युम्नका शुभ स्तोत्र है, इसको जो कोई संकटमें प्रातःकाल उठकर पढे, उसके हरि आप सहायक होते हैं ॥५१॥ इस तरह कहते हुये यक्षोंके पति कुवेरको प्रद्युम्न भगवान्ने ''तथास्तु'' वैसाही हो, ऐसे स्वीकार वचन कहकर पद्मराग माणिक शिरोमणि दी ॥ ५२ ॥''भय मत करो'' ऐसे अभय दान देकर लीला छत्र, सुनहरी मणि जटिल सिंहासन, ये सब यादवेश्वरने कुवेरको दिये ॥५३॥ तब तो राजराज कुवेर कृष्णके पुत्रकी परिक्रमा देकर चले गये, तब महात्मा प्रद्युम्नसे कुवेरको विजित सुनकर ॥५४॥ किसी राजाने युद्ध नहीं किया, सबने भेंट दी, तब तो प्रद्युम्न नगाडे बजाते ॥ ५५ ॥ सब सेनाको लेकर प्राग्ज्योतिष पुरको गये, वहाँ भौमासुरका पुत्र नील था सो प्रद्युम्नके तेजसे धर्षित होगया ॥ ५६ ॥ तब जल्दीही प्रद्युम्नको भेंट दी, फिर उसी प्राग्ज्योतिष पुरके दरवाजे पर द्विविद बंदर था ॥५७॥ वह महाबली पहिले प्रद्युम्नके बाणसे ताडित हुआ

॥ श्रीनारदउवाच ॥ प्रद्युम्नस्यशुभंस्तोत्रंप्रातरुत्थाययःपठेत् ॥ संकटेतस्यसततंसहायःस्याद्धरिःस्वयम् ॥ ५१ ॥ इत्युक्तवंतंयक्षेशं प्रद्युम्नोभगवान्हरिः ॥ तथेत्युक्त्वाददौराजन्पद्मरागशिरोमणिम् ॥ ५२ ॥ माभैष्टेत्यभयंदत्त्वालीलाछत्रंसचामरम्॥ सिंहासनंमणिमयंप्रादाच्छ्रीयादवेश्वरः ॥५३॥ कार्ष्णिंप्रदक्षिणीकृत्यराजराजोधनेश्वरः ॥ जितंश्रुत्वाराजराजंप्रद्युम्नेनमहात्मनाः ॥ ५४ ॥ नकेपियुयुधुस्तेनराजानश्चबलिंददुः ॥ अथकार्ष्णिर्महाबाहुर्नादयन्दुंदुभीन्बहून् ॥ ५५ ॥ समस्तवाहिनीयुक्तःप्राग्ज्योतिषपुरंययौ ॥ भौमासुरसुतोनीलोधर्षितस्तस्यतेजसा ॥ ५६ ॥ सद्यस्तस्मैबलिंप्रादात्प्रद्युम्नायमहात्मने ॥ प्राग्ज्योतिषपुरद्वारिद्विविदोनामवानरः ॥ ५७ ॥ पुराप्रद्युम्नबाणेनताडितोयोमहाबलः ॥ समुत्थायरुषाविष्टोदशनैर्नखरैःखरैः ॥ ५८ ॥ विदार्यवीरानश्वांश्चभ्रूभंगैःप्रजगर्जह ॥ लांगूलेनरथान्बद्ध्वाप्राक्षिपल्लवणांभसि ॥ ५९ ॥ गृहीत्वासगजान्दोर्भ्यांविचिक्षेपांबरेबलात् ॥ शत्रुंज्ञात्वाकपिंकार्ष्णिःप्रतिशार्ङ्गेशरंदधे ॥ ६० ॥ नीत्वाशरस्तंसहसाभ्रामयित्वांबरेबलात् ॥ पूर्ववत्पातयामासकिष्किंधायांमहाकपिम् ॥ ६१ ॥ पुनरागतवान्बाणःप्रद्युम्नस्येषुधौस्फुरन् ॥ ६२ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेयक्षदेशविजयोनामपंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथकार्ष्णिःपरान्देशान्दिव्यद्रुमलताकुलान् ॥ सहस्रपत्रवद्भिश्चसरोभिःशोभितान्ययौ ॥ १ ॥

था, सो क्रोधित हुआ वह उठकर दांतोंसे और तीखे नखोंसे ॥५८॥ वीरोंको, घोडोंको चीर चीरकर फेंकने लगा, और पूछमें रथोंको लपेटकर खारे समुद्रमें फेंकने लगा, फिर बडी गर्जना की ॥ ५९ ॥ हाथियोंको भुजाओंसे पकडकर आकाशमें फेंकने लगा, तब प्रद्युम्नने बन्दरको शत्रु जानकर शार्ङ्ग धनुष पर बाण रखा ॥ ६० ॥ उस बाणने द्विविद बंदरको उठाकर आकाशमें घुमा घुमाकर बलपूर्वक किष्किंधामें फेंक दिया ॥६१॥ फिर वह बाण प्रकाश करता प्रद्युम्नके तरकसमें आगया ॥ ६२ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डे भाषाटीकायां यक्षदेशविजयो नामपंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥ श्रीनारदजी कहते हैं कि, फिर कृष्णके पुत्र प्रद्युम्न दिव्य वृक्ष और लताएं हैं जिनमें हजार दलके कमल जिनमें फूले हैं, ऐसे सरोवरोंसे शोभित दूसरे देशोंको गये ॥ १ ॥

सौ अक्षौहिणी सेनाको लेकर चंड पराक्रमी प्रद्युम्न यक्षोंसे बताए हुये मार्गसे किंपुरुषखंडको गये ॥ २ ॥ हेमकूट पर्वतके नीचे जहाँ रंगवल्ली नामका पुर है, वहाँ किंपुरुष प्रद्युम्न का आगमन सुनकर ये वचन बोले ॥३॥ अहो ! मथुरापुरी अति धन्य है, बडी श्रेष्ठ है, जिसमें हरि भगवान्का जन्म हुआ है, अहो ! निरन्तर यादवोंका कुल धन्य है, जिस कुलमें अखिल ब्रह्मांड नायक पालक हुये हैं ॥ ४ ॥ और वसुदेवका मंदिर धन्य है, जिसे गोलोकनाथने मनोहर किया है, और माथुर मंडलभी धन्य है, जो देवताओंको दुर्लभ है, जहाँ लक्ष्मीपति विचरते हैं ॥५॥ और महावन तो अति धन्य है, और मनोहर है, जहाँ पिताके घरसे बालक कृष्ण बलदेवजी सहित गये, गोप बालकोंके संग खेले, यशोदासे दूध पिला-कर लालन किये गये ॥६॥ देखो, वृन्दावन उससे भी धन्य है, जो परात्पर श्रीकृष्णके चरण कमलकी रेणुसे शोभायमान है, जहाँ गोप बालकोंके साथ स्वयं बलदेव सहित भगवान्

अक्षौहिणीशतयुतःप्रद्युम्नश्चंडविक्रमः॥ यक्षैर्दिष्टेनमार्गेणखंडंकिंपुरुषंययौ ॥ २ ॥ रंगवल्लीपुरंयत्रहेमकूटगिरेरधः ॥ तस्यकिंपुरुषाऊचुःशंबरारे-श्रशृण्वतः ॥ ३ ॥ किंपुरुषाऊचुः ॥ अहोतिधन्यामथुरापुरीवराबभूवयस्यांपरमेश्वरोहरिः ॥ अहोतिधन्यंसततंयदोःकुलंजातोहियस्मि-न्नखिलांडपालकः॥ ४ ॥ धन्यंचतच्छूरसुतस्यमंदिरंगोलोकनाथेनमनोहरंकृतम् ॥ धन्यंपरंमाथुरमंडलंसुरैःसुदुर्लभंयत्रचचारमाधवः ॥ ५ ॥ महावनंधन्यतमंमनोहरंपितुर्गृहाद्यत्रगतोहरिःशिशुः ॥ चचारकृष्णःशिशुनाबलेनहियशोदयादुग्धमुखःसुलालितः ॥ ६ ॥ वृंदावनं पुण्यतमंपरात्परश्रीकृष्णपादांबुजरेणुराजितम् ॥ गाःपालयन्यत्रचचारबालोगोपालबालैःसबलःस्वयंहरिः ॥ ७ ॥ योदानलीलांकिलमा-नलीलांश्रीरासलीलांव्रजसुंदरीभिः ॥ वृन्दावनेयत्रचचारकृष्णोयस्यापिगायंतियशस्त्रिलोकाः ॥ ८ ॥ अहोतिधन्यावृषभानुनंदिनीलीला-वतीसानिजलोकशालिनी ॥ चचारकृष्णेनकलिंदनंदिनीतटेमिलिंदध्वनिसंकुलेवने ॥ ९ ॥ अहोतिधन्यास्तिकलिंदनंदिनीश्रीकृष्णवामांससमुद्भवाया ॥ तटेमिलिंदध्वनिसंकुलेवटेतत्स्पर्शनाद्यातिनरःकृतार्थताम् ॥ १० ॥ समुद्भवोयोहरिवक्षसोगिरिर्गोवर्द्धनोनामगिरींद्र राजराट् ॥ विराजतेसव्रजमण्डलेपरोयद्दर्शनाज्जन्मपुनर्नविद्यते ॥ ११ ॥ अहोतिधन्यायदुमण्डलीभिर्विराजतेभूमितलेमनोहरा ॥ वैकुण्ठ लीलाधिकृताकुशस्थलीयथातडिद्भिर्जलदावलिर्दिवि ॥ १२ ॥

कृष्ण गौओंका पालन करते हुये विचरे ॥७॥ जिन कृष्णने श्रीवृन्दावनमें व्रज सुन्दरियोंके साथ दान लीला, मान लीला, रास लीला, इनको किया, जिनके यशको तीनों लोक गाते हैं ॥८॥ अहो ! वृषभानु नन्दिनी धन्य हैं, लीलावती जो निज लोककी रहनेवाली है, जिसने कृष्णके साथ भ्रमरोंकी ध्वनिसे झंकृत वनमें कालिंदीके तीरपर विहार किया ॥ ९ ॥ अहो ! कालिंदी बडी धन्य है, जो कृष्णके बाएं अंगसे उत्पन्न हुई है, वहाँ भ्रमरोंकी ध्वनियुक्त वंशीवट है, जिसके स्पर्श मात्रसे ही मनुष्य कृतार्थको प्राप्त होता है ॥ १० ॥ जो पर्वत हरि भगवान्के वक्षस्थलसे उत्पन्न हुआ है, वह गोवर्द्धन पर्वत पर्वतोंके राजाओंका राजा है, जो व्रजमंडलमें विराजता है, जिसके दर्शन करनेसे फिर जन्म नहीं होता है ॥११॥ अहो ! बडी मनोहर वैकुंठ लीलासे अधिकृत अति धन्या द्वारिकापुरी भूमितलमें यादवोंकी मंडलीसे ऐसे शोभित होती है, जैसे मेघपंक्ति बिजलीसे आकाशमें शोभाको प्राप्त होती है॥१२॥

जहाँ साक्षात् परमेश्वर पुरुष चतुर्व्यूह रूप धारण करके अत्यन्त शोभित होते हैं, जिन्होंने उग्रसेनको चक्रवर्ती राज्य दिया, उन हरि भगवान्‌को हमारा नमस्कार है, नमस्कार है ॥१३॥ उस बुद्धिमान् राजाने जगत्‌को जीतनेके लिये महान् मकरध्वज प्रद्युम्नको प्रेरित किया है, जिसके दुर्लभ दर्शनको करके हम आज सब ओरसे कृतार्थ हुये हैं ॥ १४ ॥ नारदजी कहते हैं कि, हे नृप ! ऐसे प्रद्युम्न अपने यशसे उज्ज्वल चरित्रोंसे उदय होते हुये उज्ज्वल इस त्रिलोकको और भी उज्ज्वल करने लगे, जैसे पूर्ण चन्द्रकी किरणोंसे मिली हुई प्रकाश करती उठती तरंगोंसे निर्मल समुद्रका दुग्ध और भी श्वेत किया जाता है ॥ १५ ॥ ऐसे अपने निर्मल यशको सुनकर हर्षित हुये शम्बरारि प्रद्युम्नने उसको बहुत धन दिया, हार बाजू, नवरत्न, मनोहर किरीट, मणियोंके कुंडल, और कंकण दिये ॥ १६ ॥ फिर रंगवल्ली पुरके राजा चन्द्रवंशी सुबाहुने महात्मा प्रद्युम्नको नमस्कार करके भेंट दी ॥ १७ ॥

यत्रैवसाक्षात्पुरुषःपरेश्वरोधृत्वाचतुर्व्यूहमलंविराजते ॥ यस्तूग्रसेनायददौनृपेशतांकृष्णायतस्मैहरयेनमोनमः॥ १३ ॥ प्रणोदितस्तेननृपेणधी-
मताजगद्विजेतुंमकरध्वजोमहान् ॥ कृत्वाथतद्दर्शनमद्यदुर्लभंवयंकृतार्थाहिभवेमसर्वतः ॥ १४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंहरिर्नृपयशो
विशदैश्चरित्रैरुद्यत्रिलोकममलंविशदीचकार॥ पूर्णेंदुरश्मिमिलितैस्तरलैःस्फुरद्भिःप्रोद्यद्भिरुद्गजइवामलसिंधुदुग्धम् ॥ १५ ॥ इत्थंयशःस्वम-
मलंनृपशंबरारिःश्रुत्वातिहर्षिततनुःप्रददौधनानि ॥ केयूरहारनवरत्नमनोहराणितेभ्यःकिरीटमणिकुण्डलकंकणानि ॥१६॥ रंगवल्लीपुराधीशः
सुबाहुश्चन्द्रवंशजः ॥ नत्वाबलिंददौसोपिप्रद्युम्नायमहात्मने ॥ १७ ॥ तस्मैप्रसन्नोभगवान्प्रद्युम्नोमीनकेतनः ॥ दत्त्वाचूडामणिंदिव्यंपप्रच्छे-
दंमहामनाः ॥ १८ ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ रंगवल्लीपुरस्यापिनामकेनप्रकाशितम् ॥ एतद्ब्रूहिसुबाहोमेश्रुतंपूर्वंत्वयाकिल ॥१९॥ सुबाहुरुवाच ॥
देवासुरैःपुराराजन्मथितःक्षीरसागरः ॥ विनिर्गतानिमथनाद्रत्नानिचचतुर्दश ॥ २० ॥ निस्सृतंकलशंतस्मात्सुधापूर्णमनोहरम् ॥ तंददर्श
हरिःसाक्षान्नेत्राभ्यांपुष्करेक्षणः ॥२१ ॥ तन्नेत्रहर्षबिन्दुश्चकलशेनिपपातह ॥ तस्माद्वृक्षःसमुद्भूतस्तुलसीतिप्रकथ्यते ॥२२॥ रंगवल्लीतितन्नाम
चकारमधुसूदनः॥अत्रकिंपुरुषेखण्डेहेमकूटगिरेरधः॥२३॥तस्याश्चरंगवल्याःकौस्थापनांसचकारह॥ रंगवल्लीमहावृक्षःसदाऽत्रैवविराजते॥२४॥

उसके ऊपर प्रसन्न हुये प्रद्युम्न भगवान् दिव्य चूडामणि देकर यह पूछने लगे ॥ १८ ॥ प्रद्युम्नजीने कहा कि, रंगवल्ली पुर यह नाम किसने प्रसिद्ध किया, हे सुबाहु ! यह मुझसे कहो, तुमने तो पहिले निश्चय सुना होगा ॥ १९ ॥ तब सुबाहु बोला कि, हे राजन् ! पहिले देवताओंने और असुरोंने क्षीर सागर मथा था, तब उसमें चौदह रत्न निकले ॥ २० ॥ फिर उसमेंसे अमृतका पूर्ण भरा मनोहर कलश निकला, तब पुष्करेक्षण हरि भगवान्‌ने उसको देखा ॥ २१ ॥ उनके नेत्रसे एक हर्षकी बूंद उस अमृतके कलशमें गिरी, उससे एक वृक्ष उत्पन्न हुआ, उसको तुलसी कहते हैं॥२२॥ तब मधुसूदन भगवान्‌ने उसका नाम रंगवल्ली रखा, सो यहाँ किंपुरुषखंडमें हेमकूटके नीचे ॥२३॥ उस रंगवल्लीको प्रभुने

भूमिमें स्थापित किया है, रंगवल्ली वडा भारी वृक्ष है, वह सदा यहीं विराजता है ॥ २४ ॥ उसीके नामसे यह रंगवल्लीपुर प्रसिद्ध हुआ, यहाँ नित्य ही हनुमान्जी आर्ष्टिसेन गन्धर्व सहित ॥ २५ ॥ महात्मा राम पूजक दर्शनार्थ आते हैं, नारदजी कहते हैं कि इस प्रकार शम्बरारि प्रद्युम्न मनोहर रंगवल्लीको सुनकर ॥ २६ ॥ दर्शनके लिये आये, उसको देख कर पूजन प्रदक्षिणा करके दूसरे देशोंको गये तब हेमकूटकी तटीमें एक भयंकर वन देखा ॥ २७ ॥ जिसमें झिल्लियोंकी बडी झंकार हो रही है, सिंह चीते जिसमें नाद कर रहे हैं, वनके हाथी घूम रहे हैं, गीदड और उल्लू जिसमें रुदन करते हैं ॥ २८ ॥ और जो सछिद्र बांस, पीपल, बकायन, वट (वरगद) भोजपत्र, छोटी हरीतकी(हरें)की बेल, बेर, मोथा, इनसे सघन वन है ॥२९॥ उस वनमेंसे चालिस कोस लम्वा एक बड़ा सर्प निकला, बार बार ढुंकार मारता हुआ वह हाथियोंको निगलने लगा ॥ ३० ॥ हे मैथिलेश्वर ! तब तो सेनामें हाहाकार मचा, प्रचण्ड विषकी पवनसे दिशान्तर भस्म होने लगे ॥ ३१ ॥ तब तो भानु, सुभानु, स्वर्भानु, प्रभानु, भानुमान्, चन्द्रभानु, बृहद्भानु, अतिभानु ॥३२॥ श्रीभानु

तन्नाम्नाप्रसिद्धमभूद्रंगवल्लीपुरंत्विदम् ॥ अत्रनित्यंहिहनुमानार्ष्टिषेणेनरागिणा ॥ २५ ॥ दर्शनार्थंसमायातिमहात्मारामपूजकः ॥ नारदउ-
वाच ॥ इतिश्रुत्वाशंबरारीरंगवल्लीमनोहराम् ॥ २६ ॥ दृष्ट्वाप्रदक्षिणीकृत्यदेशानन्याञ्जगामह ॥ हेमकूटतटीभूतंवनंप्राप्तंभयंकरम् ॥ २७ ॥
झिल्लीझंकारसंयुक्तंसिंहचित्रकनादितम् ॥ वन्यैःकरीन्द्रैःसंयुक्तंशिवोलूकरुतावृतम् ॥ २८ ॥ कीचकाश्वत्थमन्दारवटभूजसमाकुलम् ॥ कृष्णाह
रीतकीवल्लीबदरैःसघनंवनम् ॥२९॥ तस्माद्विनिर्गतःसर्पोदशयोजनलंबितः ॥ अग्रसद्गजवृन्दानिफूत्कारंकारयन्मुहुः ॥३०॥ हाहाकारेतदाजाते
सेनायांमैथिलेश्वर॥प्रचण्डगरलैर्वातैर्भस्मीभूतेदिशांतरे॥३१॥भानुःसुभानुःस्वर्भानुःप्रभानुर्भानुमांस्तथा॥चन्द्रभानुर्बृहद्भानुरतिभानुस्तथाष्टमः
॥३२॥श्रीभानुःप्रतिभानुश्चसत्यभामात्मजादश॥एतेजघ्नुःशरैस्तीक्ष्णैःसर्पंरौद्रंमदोत्कटम्॥३३॥बाणैःसंभिन्नसर्वांगःपतितोधरणीतले॥सर्परू-
पंविहायाशुगंधर्वोभूत्स्फुरद्द्युतिः ॥ ३४ ॥ नत्वाश्रीकृष्णपुत्रांस्तान्द्योतयन्मण्डलंदिशाम् ॥ पुष्पैर्वर्षत्सुदेवेषुविमानेनदिवंययौ ॥ ३५ ॥
बहुलाश्वउवाच ॥ गंधर्वोयंतुकःपूर्वकेनपापेनसर्पताम् ॥ प्राप्तःकथंवदमुनेत्वंपरावरवित्तमः ॥ ३६ ॥ नारदउवाच ॥ आर्ष्टिषेणस्ययोभ्राता
सुमतिर्नामसुंदरः॥रामायणंहनुमतापठितुंससमागतः॥३७॥हेमकूटेहनुमतःकुर्वंतोरामसेवनम् ॥ प्रातःकालात्समारभ्यघटिकाश्चचतुर्दश॥३८॥

प्रतिभानु, ये दश सत्यभामाके पुत्र मदोत्कट उस भयंकर सर्पको देखकर तीखे २ बाणोंसे मारने लगे ॥ ३३ ॥ तब बाणोंसे छिन्न भिन्न हुआ है अंग जिसका वह सर्प पृथ्वीमें गिर पडा सर्परूप देहको छोडकर कान्तिमान् गन्धर्व होगया॥ ३४ ॥श्रीकृष्णके उन पुत्रोंको प्रणाम करके दशों दिशाओंमें प्रकाश करता वह देवताओंसे पुष्पवर्षा करते हुये उस समय विमानमें बैठकर स्वर्गको चला गया ॥३५॥ तब बहुलाश्च राजा पूछने लगा कि, गन्धर्व पहले जन्मका कौन था ? और किस पापसे इसको सर्पकी देह मिली थी ? हे मुने! आप तो भूत, भविष्यके जाननेवाले हो, सो कहो ॥ ३६ ॥ तब नारदजी बोले–आर्ष्टिसेन गन्धर्वका भाई एक सुमति था, बडा सुन्दर था, वह रामायण पढनेके लिये हनुमान्जीके पास आया ॥ ३७ ॥ और हेमकूट पर्वतपर हनुमान्जी प्रातःकालसे लेकर दोपहर तक रामका सेवन करते हैं ॥ ३८ ॥

लक्ष्मण सहित जानकी पति रामचन्द्रजीका ध्यान करते हैं, सो सुमति गन्धर्वने सांपकी तरह फुंकार लेकर उनका ध्यान भंग कर दिया ॥३९॥ तब महावीर वानरेश्वर हनुमान्‌जीने क्रोधित होकर सुमतिको शाप दिया कि, हे दुर्बुद्धे ! तू सर्प हो जा ॥ ४० ॥ उसी समय उनके चरणोंमें गिर पडा, और हाथजोडकर यह बोला--हे देव ! 'रक्षा करिये, रक्षा करिये' मैं दीन हूँ, आपकी शरण आया हूँ ॥ ४१ ॥ तब तो धर्मात्मा भगवान् प्रसन्न होकर सुमतिसे बोले--द्वापरके अन्तमें हरिके पुत्रोंके धनुषमेंसे छूटे तीखे २ बाणोंसे तुम्हारी देह कट कटकर गिर पडेगी, तब तुमको निःसन्देह गन्धर्व देह मिल जायेगी ॥ ४२ ॥ हे विदेहराज ! ऐसे सुमति गन्धर्व शापसे छूट गया, सन्तोंका शाप भी जब वरके तुल्य है, तब फिर वह वर मुक्तिके तुल्य हो, तो क्या आश्चर्य है ॥४३॥ फिर प्रद्युम्न चैत्र देशोंको गये, जो वसन्त और मालतीके वृक्षोंसे शोभित हैं ॥४४॥ भ्रमर जिनपर गुञ्जार करे ऐसे हजार दलके

सलक्ष्मणंरामचन्द्रंध्यायताजानकीपतिम् ॥ फूत्कारैःसर्पवत्तस्यध्यानभंगंचकारह ॥ ३९ ॥ तदाक्रुद्धोमहावीरोहनूमान्वानरेश्वरः ॥ शापंददौ सुमतयेत्वंसर्पोभवदुर्मते ॥ ४० ॥ तदैवतस्यचरणौनत्वाप्राहकृताञ्जलिः ॥ हेदेवपाहिपाहीतिदीनंमांशरणंगतम् ॥४१॥ अथप्रसन्नोभगवान्सु- मतिंप्राहधर्मवित् ॥ द्वापरांतेशरैस्तीक्ष्णैर्हरिपुत्रधनुश्च्युतैः ॥ भिन्नदेहःस्वांप्रकृतिंयास्यसित्वंनसंशयः ॥ ४२ ॥ गंधर्वसुमतिर्नामविमुक्तोभूद्वि- देहराट् ॥ सतांशापोपिवरवद्वरोमोक्षार्थदःकिमु ॥४३॥ अथकार्ष्णिर्महाबाहुश्चैत्रदेशान्मनोहरान् ॥ वसन्तमाधवीवृन्दैःशोभितान्सजगामह ॥४४॥ सहस्रदलपद्मानांषट्पदध्वनिशालिनाम् ॥ पतंतिरेणवोयत्रसरःस्वाबीरचूर्णवत् ॥४५॥ एलालवंगलतिकाःक्षुण्णाःसैन्यांघ्रिभिःपथि॥ तेनभृंगावलीरेजेकरिकर्णप्रताडिता ॥ ४६ ॥ यत्रवैपुरुषाराजन्नागायुतसमाबले ॥ वलीपलितदौर्गंध्यस्वेदक्लमविवर्जिताः ॥ ४७ ॥त्रेतायुग समःकालोवर्ततेयत्रनित्यशः॥ आयुश्चायुतवर्षाणांदिव्यौषधिनदीगुणैः ॥४८॥ पीयूषतुल्यंतोयंचहेमभूमिर्विराजते॥ मुक्ताविद्रुमवैडूर्य्यरत्नोत्प- त्तिश्चयत्रवै ॥ ४९ ॥ सुन्दर्यःप्रमदारामानित्ययौवनभूषिताः ॥ स्फुरंत्युपवनेष्वारात्सौदामिन्योघनेष्विव ॥ ५० ॥ यत्रवैवनगरीरम्यावसंत- तिलकाः शुभा ॥ शृंगारतिलकोनामराजायत्रमहाबलः ॥ ५१ ॥

कमलोंकी रज सरोंवरोंमें अबीरचूर्णकी तरह वर्षती हैं ॥ ४५ ॥ इलायची और लवंग (लौंग)की लतायें सेनाके पांवोंसे खुद गईं और हाथियोंके कानोंसे ताडित भ्रमरोंकी पंक्ति शोभित हुई ॥ ४६ ॥ हे राजन् ! जहाँके पुरुषोंमें दश दश हजार हाथियोंका बल है, और उनके सफेद बाल नहीं आते हैं, शरीरमें गली गुजलट नहीं पड़ते हैं, और पसीना, खेद ये नहीं होते हैं॥ ४७ ॥ जहाँ नित्य ही त्रेतायुग रहता है, वहाँके मनुष्योंकी दिव्यौषधी और नदियोंके गुणसे दश दश हजार वर्षकी वायु होती है ॥ ४८ ॥ जहाँ अमृतके तुल्य जल होता है, और सुवर्णकी भूमि है, मोती, मूँगा और वैदूर्य मणिकी जहाँ खान हैं ॥ ४९ ॥ जहाँकी स्त्रियाँ अति सुन्दरी हैं, नित्य है यौवन जिनका वे शृंगार किये बाग बगीचोंमें बादलोंमें बिजलीकी तरह शोभित होती हैं ॥ ५० ॥ जहाँ मनोहर वसन्त तिलका नामकी नगरी है, जहाँ शृंगार तिलक नामका महाबली राजा है ॥ ५१ ॥

जीतनेवाले वीरोंको बुलाकर कवच पहिन हाथीपर चढकर प्रद्युम्नके सामने युद्ध करनेको आया ॥५२॥ वहाँ साम्ब, सुमित्र, पुरुजित्, शतजित, सहस्रजित, विजय, चित्रकेतु, वसुमान्, द्रविण, क्रतु ॥ ५३ ॥ ये सब जाम्बवतीके पुत्र बाणोंसे दुर्दिन करने लगे, हे मैथिल ! इनके बाणोंके मारे घायल होकर शत्रु सेनाके सब सैनिक भाग गये ॥ ५४ ॥ और बाणोंके मारे जब अन्धकार होगया, तब बडा कोलाहल हुआ, तब हाथीपर बैठे बडे बलवान् राजा शृंगार तिलकने ॥ ५५ ॥ बडे क्रोधसे त्रिशूल लेकर साम्बके हृदयमें मारा, बाकी और जो जाम्बवतीके पुत्र थे उनको धनुषमेंसे निकले बाणोंसे मारकर पृथ्वीमें गिरा दिया ॥ ५६ ॥ और अकेलाही युद्धमें ऐसे विचरने लगा, जैसे वनमें अग्नि विचरे, तब गदने आकर उसके मदमत्त हाथीको ॥५७॥ शुण्डादण्डमें पकड कर धरतीमें गिरा दिया, तब दूर जाकर गिरा राजा शृंगार तिलक ॥५८॥ भयभीत होकर बहुत शीघ्रतासे युद्धमें

जैत्रान्वीरान्समाहूयगजमारुह्यदंशिनः ॥ योद्धुंविनिर्ययौयच्चप्रद्युम्नस्यापिसंमुखे ॥५२॥ सांबःसुमित्रःपुरुजिच्छतजिच्चसहस्रजित् ॥ विजयश्चित्रकेतुश्चवसुमान्द्रविडःक्रतुः ॥५३॥ जांबवत्याःसुताह्येतेचक्रुर्नाराचदुर्दिनम् ॥ पलायितेषुचैतेषुबाणैर्भिन्नेषुमैथिल ॥५४॥ बाणान्धकारेसंजातेमहान्कोलाहलोह्यभूत् ॥ तदाशृंगारतिलकोगजारूढोमहाबलः ॥ ५५ ॥ त्रिशूलेनतदासाम्बंहृदिविव्याधरोषतः ॥ अन्यान्संपातयामास शरैःकोदंडनिर्गतैः ॥ ५६ ॥ एकाकीविचरन्युद्धेबलेवैश्वानरोयथा ॥ तदागदःसमागत्यतद्गजंसुमदोत्कटम् ॥ ५७ ॥ शुंडादण्डेसंगृहीत्वा पातयामासभूतले ॥ दूरेप्रपतितःशीघ्रंशृंगारतिलकोनृपः ॥ ५८ ॥ सद्योभयातुरोभूत्वायुद्धेबद्धांजलिःस्वतः ॥ तुरंगाणामर्बुदंचरथानां लक्षमेवच ॥ ५९ ॥ गजानामयुतंराजाप्रद्युम्नायबलिंददौ ॥ ६० ॥ इत्थंकिंपुरुषंखण्डंजित्वाकार्ष्णिर्महाबलः ॥ निषाददर्शितैर्मार्गैर्हरिवर्षंतोययौ ॥ ६१ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेकिंपुरुषखण्डविजयोनामषड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

॥ श्रीनारदउवाच ॥ हरिवर्षंनामखण्डंसर्वसंपत्तिसंयुतम् ॥ तस्यसीमागिरिःसाक्षान्निषधोनाममैथिल॥ १॥ वीरकोदण्डटंकारघोषैर्व्याप्तवनांतरात् ॥ उड्डितास्तुमहागृध्राःक्रोशमात्रवपुर्धराः ॥२॥ तीक्ष्णतुंडासगरुडाःसर्वेदीर्घायुषोनृप ॥ अग्रसन्सैनिकान्नागान्हयांस्तेपिबुभुक्षिताः ॥ ३ ॥

हाथ जोडकर प्रद्युम्नके सामने आकर खडा होगया, और दश करोडके घोडे, एक लाख रथ ॥ ५९ ॥ और दश हजार हाथी, ये सब प्रद्युम्नको भेंट किये ॥६०॥ इस प्रकार बडे बलवान् कृष्णके पुत्र प्रद्युम्न किंपुरुषखंडको जीतकर निषादोंके बताये हुये मार्गसे हरिवर्ष नामके खंडको जीतनेके लिये चले गये ॥ ६१ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्वसंवादे किंपुरुषखंड विजयो नाम षड्विंशोऽध्यायः ॥२६॥ तब नारदजी बोले कि, हे मैथिल ! सब सम्पत्ति युक्त हरिवर्ष नामके खंडकी मर्यादा (सीमा) का निषेध नामका पर्वत था ॥ १ ॥ वहाँ वीर पुरुषोंके धनुषोंकी टंकारोंके शब्दोंसे व्याप्त वन प्रदेशमेंसे एक २ कोसके जिनके शरीर ऐसे गीध पक्षी उडने लगे ॥ २ ॥ हे नृप ! तीखी चोंचवाले गरुडके समान बडी २ आयुके बडे भूखे वे सेनाके हाथियोंको और घोडोंको निगलने लगे ॥ ३ ॥

जब आकाश पक्षियोंसे भर गया और उनके पंखोंका पवन जो निकला, तब सेनामें उस अंधकारके मारे बडा हाहाकार हुआ ॥ ४ ॥ तब घुटनोंतक भुजावाले प्रद्युम्नने गरुडास्त्र हाथमें लिया, उस बाणमेंसे साक्षात् विनताके पुत्र गरुडजी निकले ॥ ५ ॥ जब वह सेना अंधकारसे भाग गई थी, तब कितनोंको तो चोंचके प्रहारसे और कितनोंको देदीप्यमान पंखोंसे गरुडजीने ॥६॥ जितने वे गीध कुलंगादिक पक्षी आकाशमें छा रहे थे, उनको पृथ्वीपर गिरा दिया, तब दर्प जिनके नष्ट होगये, और पंख जिनके कट गये, घायल हुये वे पक्षी ॥ ७ ॥ भयातुर होकर दशों दिशाओंमें भाग गये, उसके बाद महाबाहु प्रद्युम्न उनको छोडकर दशार्ण दशोंको चले गये ॥ ८ ॥ तब सूर्यवंशमें उत्पन्न, दशार्ण देशका राजा शुभांग, दश हजार हाथियोंका, जिसका पराक्रम, निष्कौशाम्बी नगरीका पति ॥९॥ वह वेद व्यासजीके मुखसे चण्ड पराक्रमी प्रद्युम्नको जानकर विशाल दशार्ण नदीको पारकर

आकाशेपक्षिभिर्व्याप्तेजातेपक्षप्रभंजने ॥ सेनायामंधकारेणहाहाकारोमहानभूत् ॥ ४ ॥ तदाकार्ष्णिर्महाबाहुस्ताक्ष्यर्मस्त्रंसमाददे ॥ तद्बा-
णान्निर्गतःसाक्षाद्वैनतेयःखगेश्वरः ॥ ५ ॥ सेनायामंधकारेणव्याप्तायांपतगेश्वरः ॥ कांश्चित्तुण्डप्रहारेणकांश्चित्पक्षैःस्फुरत्प्रभैः ॥ ६ ॥ गृध्रा-
न्कुलिंगान्गरुडान्पातयामासभूतले ॥ भग्नदर्प्पाश्छिन्नपक्षास्सक्षताःपक्षिणश्चते ॥ ७ ॥ भयातुरादुद्रुवुस्तेतांक्ष्यैणापिदिशोदश ॥ ततःका-
र्ष्णिर्महाबाहुर्दशार्णान्विषयान्ययौ ॥ ८ ॥ दशार्णदेशाधिपतिःशुभांगःसूर्यवंशजः ॥ नागायुतसमोयुद्धेनिष्कौशाम्बीपुरीपतिः ॥ ९ ॥
वेदव्यासमुखाच्छ्रुत्वाप्रद्युम्नंचण्डपौरुषम् ॥ दशार्णांतांनदींदीर्घांसमुत्तीर्यसमाययौ ॥ १० ॥ कृतांजलिःशुभांगोसौकिरीटेननताननः ॥ ददौ
बलिंसुरत्ननांप्रद्युम्नायमहात्मने ॥ ११ ॥ प्रद्युम्नोभगवान्साक्षात्सर्वगःसर्वदर्शनः ॥ पप्रच्छेदंशुभांगंतंलोकसंग्रहकाम्यया ॥ १२ ॥
॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ दशार्णोयंकथंदेशःकेननाम्नाबभूवह ॥ एतन्मेब्रूहिहेराजन्निष्कौशांबिपुरीपते ॥ १३ ॥ शुभांगउवाच ॥ हिरण्यकशिपुंहत्वा-
नृसिंहोभगवान्पुरा ॥ प्रह्लादेनत्विहागत्यहरिवर्षस्थितोभवत् ॥ १४ ॥ प्रह्लादंभगवान्प्राहनृसिंहोभक्तवत्सलः ॥ नृसिंहउवाच ॥ शांतस्य-
तवभक्तस्यमयापुत्रपिताहतः ॥ तस्मान्नघातयिष्यामिवंशंतेहिमहामते ॥ १५ ॥ शुभांगउवाच ॥ इतिप्रवदतोक्षिभ्यामानंदजलबिंदवः ॥
पतिताःक्षौचतैराजन्सरोभून्मंगलायनम् ॥ १६ ॥

आया ॥१०॥ तब शुभांग राजाने हाथ जोड अपना किरीट झुकाकर, सुन्दर रत्नोंकी भेंट महात्मा प्रद्युम्नको दी ॥११॥ तब सर्वत्र है गति जिनकी, सर्वदर्शी महात्मा प्रद्युम्न लोक संग्रहके लिये शुभांग राजासे यह पूछने लगे॥१२॥प्रद्युम्न बोले कि, इस देशका नाम दशार्ण कैसे हुआ, किस नामसे हुआ, हे निष्कौशांबीपुरीके पति शुभांग ! यह तुम मेरे सामने कहो ? ॥ १३ ॥ तब शुभांग राजा बोला कि, नृसिंह भगवान् पहिले हिरण्यकशिपुको मारकर प्रह्लादको लेकर हरिवर्ष खंडमें आकर विराजे, तब भक्त वत्सल नृसिंहजी प्रह्लादसे यह बोले ॥१४॥ हे पुत्र ! शांत जो तुम मेरे भक्त, उसके पिताको मैंने स्वयं मारा है, उससे हे महामते ! अब तुम्हारे वंशको मैं नहीं मारूँगा ॥१५॥ ऐसे कहते भगवान् नृपसिंहजी, की आंखोंमेंसे आनन्दके आंसुओंकी बूंदें गिरीं, उनके बूंदोंसे पृथ्वीमें एक मंगलायन सरोवर होगया ॥ १६ ॥

जब प्रह्लादको वर मिला, तब प्रह्लाद प्रसन्न होकर हाथ जोड प्रणाम करके नृसिंहजीसे यह बोला ॥१७॥ कि हे भक्तोंके पति भगवन् ! मैंने माता पिताकी कुछ सेवा नहीं की, सो हे परमेश्वर ! उनके ऋणसे मैं कैसे छूटूं. यह मुझको कहिये ॥१८॥ तब नृसिंहजी बोले–मेरे नेत्रोंके जलसे जो यह मंगलायतन तीर्थ हुआ है, इसमें तू स्नान कर, तब हे महाभाग ! तू दशों ऋणोंसे छूट जायगा ॥ १९ ॥ माताका ऋण, पिताका ऋण, स्त्रीऋण, पुत्र ऋण, गुरु ऋण, देव ऋण, ब्राह्मण ऋण, ऋषि ऋण, पितृ ऋण, शरणागतोंका ऋण, इन दशों ऋणोंसे, जो सबकी अवज्ञा करनेवाला भी हो, और इस महातीर्थमें आकर स्नान करे, वहभी निःसन्देह छूट जाता है ॥२०॥२१॥ शुभांग कहता है कि, दशार्ण मोचन तीर्थमें प्रह्लाद स्नान करके उऋण होगया, वह अबतक भी इस निषध पर्वतमें स्नान करनेको आता है॥२२॥ दशार्ण मोचन तीर्थसे इस देशका नाम दशार्ण हो गया, उसके स्रोतोंसे यह

तदाप्राप्तवरोराजन्प्रह्लादोहर्षविह्वलः ॥ नृसिंहंप्राहधर्मात्मानत्वाभूत्वाकृतांजलिः ॥ १७ ॥ प्रह्लादउवाच ॥ मातुःपितुर्मयासेवानकृतासा-
त्वतांपते ॥ ऋणात्तयोःकथंमुच्येवदैतत्परमेश्वर ॥ १८ ॥ नृसिंहउवाच ॥ मन्नेत्रजलसंभूतेतीर्थेवैमंगलायने ॥ स्नानंकुरुमहाभागमुच्यसेदश-
भिर्ऋणैः ॥ १९ ॥ मातुःपितुश्चभार्यायाःसुतानांगुरुदेवयोः ॥ विप्राणांचप्रपन्नानामृषीणांपितॄणामृणम् ॥२०॥ यःस्नास्यतिमहातीर्थेसर्वहेलन
तत्परः ॥ ऋणैश्चदशभिःसोपिमुच्यतेनात्रसंशयः ॥ २१ ॥ शुभांगउवाच ॥ दशार्णमोचनेतीर्थेस्नात्वाकायाधवोनृणी ॥ भूत्वाद्यापिसमाया-
तिस्नातुंतन्निषधाद्रिरेः ॥ २२ ॥ दशार्णमोचनेतीर्थेदशार्णोदेशउच्यते ॥ तत्स्रोतःसुसमुद्भूतादशार्णेयंनदीस्मृता ॥ २३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥
तच्छ्रुत्वाभगवान्कार्ष्णिःसर्वैःपरिचरैःसह ॥ दशार्णमोचनेतीर्थेदानंस्नानंचकारह ॥२४॥ दशार्णमोचनस्यापिकथां यःशृणुयान्नृप ॥ ऋणैश्च
दशभिःसोपिमुच्यतेमुक्तिभाग्भवेत् ॥ २५ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेदशार्णदेशविजयोनामसप्तविंशोध्यायः
॥२७॥श्रीनारदउवाच ॥ अथकार्ष्णिर्महाबाहुःसुमेरोरुत्तरान्कुरून्॥ययौशृंगवतःपार्श्वेविचित्रानृद्धिसंवृतान् ॥१॥ भद्रांगंगांततःस्नात्वावाराहीं
नगरीं ययौ ॥ कुरुखण्डाधिपस्तस्यांचक्रवर्तीगुणाकरः ॥२॥ महासंभृतसंभारोदेवर्षिगणसंवृतः ॥ अश्वमेधंसमारेभेदशमंसगुणाकरः ॥ ३ ॥

नदी चलती है, इससे इसका नाम दशार्णा है ॥२३॥ नारदजी कहते हैं, उसको सुनकर परिजन सहित प्रद्युम्नने दशार्ण तीर्थमें स्नान दान, किया ॥ २४ ॥ हे नृप ! जो पुरुष इस दशार्णकी कथाकोभी सुनेगा, वहभी दश ऋणोंसे छूटकर मुक्तिका भागी होगा ॥२५॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डे भाषाटीकायां दशार्णदेशविजयो नामसप्तविंशोध्यायः ॥२७॥ नारदजी कहते हैं, फिर प्रद्युम्न सुमेरुसे उत्तरमें उत्तर कुरु देशोंमें शृंगवान् पर्वतके पास विचित्र ऋद्धियुक्त देशोंमें गये ॥१॥ फिर भद्रागंगा नदीमें स्नान करके वाराही नगरीको चले गये, वहाँ कुरुखण्डका राजा चक्रवर्ती गुणाकर नामका था ॥ २ ॥ बडी सामग्री जिसके, देवर्षियोंके गण जिसके, उसने दशम अश्वमेध यज्ञका प्रारम्भ किया था ॥ ३ ॥

उसने श्यामकर्ण श्वेत घोडा छोडा, जिसकी रक्षाके लिये उसका पुत्र वीरधन्वा निकला था ॥४॥ चण्ड पराक्रमी महावीर वह घोडेको देखता पृथ्वीमें विचरता था ॥५॥ वीर, चन्द्र, अश्वसेन, चित्रगुरु, वेगवान्, आम, शंकु, वसु, श्रीमान् कुन्ती इन नाग्निजितीके पुत्रोंने ॥ ६ ॥ घोडेको चारों ओरसे घेरकर पकड लिया और यह घोडा किसने छोडा है, ऐसे कहते कहते अपनी सेनामें चले आये ॥७॥ तब प्रद्युम्न उसके मस्तकके पत्रको पढकर बड़े आश्चर्यमें आगये, सब आश्चर्यमें आगये; और अपने अस्त्र शस्त्र सम्हालने लगे ॥८॥ उसी समय घोडेको ढूँढती हुई सब सेना चली आई, और यादवोंकी सेनाकी रज उडती देखकर आश्चर्य करती खडी रही ॥ ९ ॥ चण्डविक्रम राजाके राज्य कुरुखंडमें कोई चोरी नहीं कर सकता है, गौओंके लौटनेका समय भी नहीं है, चक्रवातक (बभूला) भी नहीं उठता है, फिर यह रज कहाँसे आई, जिसने सूर्य मंडलको ढक लिया है ॥ १० ॥ ऐसे दूसरी सेनावाले कर रहे थे, इतनेमेंही धनुषकी टंकार होने लगी, हाथी चिक्कारने लगे, घोडे हिन हिनाने लगे, और बाजोंके शब्द सुनाई देने

तेनोत्सृष्टंहयंश्वेतंश्यामकर्णमनोहरम् ॥ तस्यपुत्रोवीरधन्वारक्षितुंनिर्गतोभवत् ॥४॥ अक्षौहिणीभिर्दशभिर्मंडितश्चंडविक्रमः ॥ विचचारमहा-
वीरोवीक्ष्यमाणस्तुरंगमम् ॥५॥वीरश्चंद्रश्चश्वसेनश्चचित्रगुर्वेगवान्नृपः॥आमःशंकुर्वसुःश्रीमान्कुंतीनाग्नजितेःसुताः॥६॥सर्वतस्तंहयंशुभ्रंग्रहीत्वाहर्ष
पूरिताः ॥ कस्योत्सृष्टंवदंतस्तेकार्ष्णिसैन्यंसमाययुः ॥ ७ ॥ प्रद्युम्नस्तद्भालपत्रंपठित्वाविस्मितोभवत् ॥ सर्वेविसिस्मुर्यदवोगृहीतपरमायुधाः
॥ ८ ॥ तदैवसेनासंप्राप्ताविचिन्वंतीहयंनृप ॥ दृष्ट्वारजोयदुबलाद्दूरेतस्थौसुविस्मिता ॥९॥ गुणाकरेराजनिचण्डविक्रमेनदस्यवःस्युःकुरुखण्ड
मण्डले ॥ गवांनकालोनहिचक्रवातकःकुतोरजःप्राप्तमहोर्कमण्डलम् ॥१०॥ एवंवदंतीपरवाहिनीस्वतःकोदंडघोषंदरदस्वनंपरम्॥करींद्रचीत्कार
तुरंगहेषणंवादित्रमिश्रंसमुपाशृणोत्ततः ॥११॥ तदोद्धवःकृष्णसुतप्रणोदितोबलंसमेत्याशुसवीरधन्वनः ॥ प्रणम्यतंप्राहरथास्थितंनृपंगुणाकर-
स्यौरसमर्कतेजसम् ॥ १२ ॥ उग्रसेनःक्षितीशेंद्रोद्वारकेशोयदूत्तमः ॥ जंबूद्वीपनृपाञ्जित्वाराजसूयंकरिष्यति ॥ १३ ॥ तेनप्रणोदितोवीरःप्रद्यु-
म्नोधन्विनांवरः ॥ जित्वातंभारतंखण्डंतथाकिंपुरुषंनृपः ॥१४॥ हरिवर्षंततोजित्वाकुरुखण्डंसमागतः ॥ प्रदास्यतिबलिंसोपिप्रद्युम्नायमहा-
त्मने ॥ १५ ॥ अक्षौहिणींदशयुतोधनदेनापिपूजितः ॥ उपायनंत्वयादेयंप्रद्युम्नायमहात्मने ॥ १६ ॥ तेननीतंयज्ञपशुमाहर्तुंकःक्षमःक्षितौ ॥
श्रीकृष्णचन्द्रोभगवान्सहायस्तस्यविद्यते ॥ १७ ॥

लगे ॥११॥ तब तो प्रद्युम्नके भेजे उद्धवजी वीर धन्वकी सेनामें जाकर रथमें बैठे, सूर्यके समान तेजस्वी गुणाकरके पुत्र वीर धन्वाको प्रणाम कर यह बोले ॥ १२ ॥ उग्रसेन राजा द्वारिकाका स्वामी है, यादवोंमें उत्तम है, वह जम्बू द्वीपके राजाओंको जीतकर राजसूय यज्ञ करेगा ॥१३॥ उसका भेजा हुआ धनुष धारियोंमें श्रेष्ठ प्रद्युम्न भरत खंडको जीतकर, वैसेही किं पुरुष खंडको जीतकर ॥१४॥ फिर हरिवर्ष खंडको जीतकर कुरुखंडमें आया है,सो भेंट की इच्छा करता है, उस महात्मा प्रद्युम्नको वहभी भेंट देगा ॥ १५ ॥ क्योंकि वह दश अक्षौहिणीसे युक्त है, और कुबेरनेभी इसका सत्कार किया है, इसीलिये महात्मा प्रद्युम्नको भेंट तुमकोभी देनी चाहिये ॥ १६ ॥ वह प्रद्युम्न जिस यज्ञके घोडेको लाया है, उस यज्ञके पशुको पकडनेकी पृथ्वीमें किसकी सामर्थ्य है, क्योंकि उसके सहायक स्वयम् श्रीकृष्ण चन्द्र भगवान् हैं ॥ १७ ॥

दान सन्मान करनेसे आपका भला होगा, और यदि तुम इनका सत्कार नहीं करोगे, तो युद्ध होगा, तब वीरधन्वा बोला कि, जो गुणाकर राजा है, वह तो इन्द्रसे भी पूजा गया है ॥ १८ ॥ वह भी प्रद्युम्न महात्माको भेंट नहीं देगा, शृंगवान् पर्वतपर भगवान् वाराहके रूपसे विराजते हैं ॥ १९ ॥ जिनकी सेवा भूमि सदैव करती है, बडे आदरसे उनके क्षेत्रमें गुणाकर राजाने देवका ध्यान करके तप किया है॥२०॥ जब दश हजार वर्ष व्यतीत होगये, तब वाराह रूपसे भगवान् प्रगट हुये, प्रसन्न होकर भक्तसे बोले कि,तू वर मांग ॥२१॥ तब राजा रोमांचित और प्रेमविह्वल होकर बोला कि, हे भगवन् ! एक आपके विना नर हो,अथवा देवता हो,॥२२॥ पृथ्वीपर कोई मुझको नहीं जीत सके मेरी यही इच्छा है, तब "तथास्तु" (वैसाही हो) ऐसे कहकर भगवान् अन्तर्धान होगये ॥ २३ ॥ इस लिये इस राजाका घोड़ा तुमको जल्दीही छोड देना उचित है, यदि नहीं छोडोगे, तो युद्ध करूँगा

शुभंस्याद्दानमानाभ्यांनचेद्युद्धंभविष्यति ॥ वीरधन्वोवाच ॥ गुणाकरोनृपेशोयःशक्रेणापिप्रपूजितः ॥ १८ ॥ नदास्यतिबलिंसोपिप्रद्युम्नाय महात्मने ॥ शृंगवत्पर्वतेरम्येवाराहोविद्यतेहरिः ॥ १९ ॥ यस्यसेवांसदाभूमिःकरोतिपरमादरात् ॥ यस्यक्षेत्रेतपस्तेपेध्यात्वादेवंगुणाकरः ॥ २० ॥ वर्षाणामयुतेपूर्णेहरिर्वाराहरूपधृक् ॥ सन्तुष्टोनृपतिंभक्तंवरंब्रूहीत्युवाचह ॥ २१ ॥ राजोवाचहरिंनत्वारोमांचप्रेमविह्वलः ॥ भगवंस्त्वामृतेदेवोसुरोन्योपिनरोथवा ॥ २२ ॥ मांजेतानभवेद्भूमावीप्सितोयंवरोमया ॥ तथास्तुचोक्त्वाभगवांस्तत्रैवांतरधीयत ॥ २३ ॥ तस्मात्तस्ययशःशीघ्रंकर्तव्यंमोचनंस्वतः ॥ नचेद्भवद्भिश्चकलिंकरिष्यामिनसंशयः ॥ २४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्तउद्धवस्तस्मात्स्वांसेनामेत्यभूपते ॥ शशंससर्वंयद्भूतंयदूनांसदसित्वरम् ॥ २५ ॥ श्रुतकर्मावृषोवीरःसुबाहुर्भद्रएकलः ॥ शांतिर्दर्शःपूर्णमासःसोमकोवरएवच ॥ २६ ॥ कालिन्दीनंदनाह्येतेप्रद्युम्नस्यप्रपश्यतः ॥ अक्षौहिणीभिर्दशभिर्वृतायोद्धुंसमागताः ॥ २७ ॥ उत्तरेकुरुभिःसार्द्धंयदूनांचंडविक्रमैः ॥ बभूवतुमुलंयुद्धमब्धीनामब्धिभिर्यथा ॥ २८ ॥ स्फुरद्भिर्निशितैःशस्त्रैरेजिरेवीरपुंगवाः ॥ क्षणमात्रेणरुधिरप्रभवारौद्ररूपिणी ॥ २९ ॥ नदीबभूवराजेंद्रशतयोजनविस्तृता ॥ विदुद्रुवुस्तदाशेषाउत्तराःकुरवोजनाः ॥ ३० ॥ शरत्कालेयथाप्राप्तेमेघसंघाइतस्ततः ॥ पूर्णमासोमहावीरःकालिंदीनंदनोबली ॥ ३१ ॥

॥ २४ ॥ हे भूपते ! यह सुनकर उद्धवने अपनी सेनामें आकर सब यादवोंकी सभामें सुनते २ समस्त वृत्तान्त कहा ॥ २५ ॥ तब सुनकर श्रुतकर्मा, वृष, वीर,सुबाहु, भद्र, एकल, शान्ति, दर्श, पूर्णमास और छोटा सोमक ॥ २६ ॥ ये दशकालिंदीके पुत्र दश अक्षौहिणी सेना लेकर प्रद्युम्नके देखते युद्ध करनेके लिये आये ॥ २७ ॥ तब चण्ड पराक्रमी उत्तर कुरुवासियोंका और यादवोंका भयंकर युद्ध हुआ, जैसे समुद्रसे समुद्र लडते हों ॥२८॥ देदीप्यमान तीखे शस्त्रोंसे युद्ध हुआ, तब उन वीरोंकी बडी शोभा हुई, एक क्षणमात्रमें ही रुधिरकी महाघोर ॥ २९ ॥ सौयोजनकी विस्तृत नदी बहने लगी, तब सब कुरुजन भाग गये ॥ ३० ॥ जैसे शरद ऋतु आनेपर मेघ वैसेही इधर उधर भाग गये, तब कालिंदी का पुत्र महाबली पूर्णमासने ॥ ३१ ॥

बाणोंके समूहसे वीरधन्वाका रथ तोड़कर गिरा दिया, विरथ (रथरहित) हुये वीरधन्वाने भी बारबार धनुषका टंकार करते ॥ ३२ ॥ वीस बाण पूर्णमासके मारे, तब पूर्णमासने अपने बाणोंसे उन बाणोंके दो दो टुकडे कर दिये ॥ ३३ ॥ फिर वीरधन्वाने एकही बाणसे उनकी नादिनी प्रत्यंचा काट डाली, जैसे कुवाक्यसे मित्रताको काटते हैं॥३४॥ तब महाबली पूर्णमासने जल्दीही लाख भारकी गदा लेकर वीरधन्वाको मारी ॥ ३५ ॥ तब गदा खाकरभी मदमत्त वीरधन्वाने महाबली पूर्णमासको परिघसे मारा ॥ ३६ ॥ तब हरिका पुत्र पूर्णमास पवन नामके उस पर्वतको उठाकर हाथोंसे उखाडकर खडा हुआ ॥ ३७ ॥ फिर घुमाकर उस पर्वतको वाराहीपुरीमें फेंक दिया, वीरधन्वाभी पर्वतपरसे गुणाकरके यज्ञ-स्थलमें जा गिरा ॥ ३८ ॥ भग्न होगया वेग जिसका ऐसा वह वीर धन्वा मुखसे रुधिर वमन करता हुआ मूर्च्छित होगया ॥ ३९ ॥ तब तो वाराही पुरीमें बडा हाहाकर मचा, तब

चूर्णयामासबाणौघैःस्यंदनंवीरधन्वनः ॥ वीरधन्वापिविरथोधनुष्टंकारयन्मुहुः ॥ ३२ ॥ जघानबाणविंशत्यापूर्णमासंमहाबलम् ॥ पूर्णमासःस्वबाणेनमध्यतस्तान्द्विधाऽकरोत् ॥३३॥ वीरधन्वाथचिच्छेदधनुर्ज्यांतस्यनादिनीम्॥ बाणेनैकेनराजेंद्रकुवाक्येनेवमित्रताम् ॥३४॥ लक्षभारमयींगुर्वींगदामादायसत्वरम् ॥ जघानवीरधन्वानंपूर्णमासोमहाबलः ॥३५॥ गदाप्रहारव्यथितोवीरधन्वामदोत्कटः ॥ परिघेणजघाना शुपूर्णमासंहरेसुतः ॥३६॥ पूर्णमासःसमुत्थायपवनंनामपर्वतम् ॥ समुत्पाट्यस्थितोभूत्वाहस्ताभ्यांश्रीहरेसुतः ॥३७॥भ्रामयित्वाथचिक्षेपवारा-ह्यांपुरिवेगतः ॥३८॥ वीरधन्वाप्रपतितोगुणाकरक्रतुस्थले ॥ मूर्च्छितोभग्नवेगोभूदुद्वमन्रुधिरंमुखात् ॥ ३९ ॥ हाहाकारोमहानासीद्वाराह्यांपुरि-वेगतः ॥ देवदुंदुभयोनेदुर्नरदुंदुभयस्तदा ॥४०॥ पूर्णमासोपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे॥ यज्ञादुत्थायनृपतिःपुत्रंदृष्ट्वाचमूर्च्छितम् ॥ ४१॥ गृही-त्वादिव्यकोदंडंयुद्धंकर्तुंमनोदधे ॥ होताधर्मविदांश्रेष्ठोमुनींद्रःसर्ववित्कविः ॥ गंतुमभ्युत्थितंवीक्ष्यवामदेवस्तमब्रवीत् ॥ ४२ ॥ वामदेव उवाच ॥ राजंस्त्वंहिनजानासिपरिपूर्णतमंहरिम् ॥ सुराणांमहदर्थायजातंयदुकुलेस्वयम् ॥ भुवोभारावतारायभक्तानांरक्षणायच ॥ ४३ ॥ भूत्वायदुकुलेसाक्षाद्द्वारकायांविराजते ॥ तेनकृष्णेनपुत्रोयंप्रद्युम्नोयादवेश्वरः ॥ उग्रसेनमखार्थायजगज्जेतुंप्रणोदितः ॥ ४४ ॥ गुणाकर उवाच ॥ परिपूर्णतमस्यापिश्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥ लक्षणंवदमेब्रह्मंस्त्वंपरावरवित्तमः ॥ ४५ ॥

मनुष्योंके और देवताओंके यादवोंकी सेनामें नगाडे बजने लगे ॥ ४० ॥ पूर्णमासके ऊपर देवता फूलोंकी वर्षा करने लगे, तब गुणाकर राजाने पुत्रको मूर्च्छित देखकर ॥४१॥ यज्ञमेंसे उठकर धनुष लेकर युद्ध करनेके लिये मन किया,राजाको उठा देखकर धर्मोंके जाननेवालोंमें श्रेष्ठ, सबके जाननेवाले, बडे पंडित, होता वामदेव ऋषि राजाको जानेके लिये तैयार हुआ देखकर राजासे बोले ॥४२॥ हे राजन्! तुम इस बातको नहीं जानते हो कि, परिपूर्णतम हरि देवताओंके बडे अभिप्रायके लिये यदुकुलमें स्वयम् उत्पन्न हुये हैं! पृथ्वी-का भार उतारनेके लिये और भक्तोंकी रक्षाके लिये ॥ ४३ ॥ साक्षात् यदुकुलमें जन्म लेकर द्वारकामें विराजते हैं, उन कृष्णने अपने पुत्र प्रद्युम्नको यादवेश्वर उग्रसेनके यज्ञके लिये जगत्के जीतनेके लिये भेजा है ॥ ४४ ॥ तब राजा बोला कि, परिपूर्णतम महात्मा श्रीकृष्णका लक्षण मेरे आगे कहिये, आप भूतभविष्यके जाननेवाले हैं॥ ४५ ॥

तब वामदेव बोले कि, जिसके तेजमें सब तेज समा जायें, उसको परिपूर्णतम हरि कहते हैं ॥ ४६ ॥ कोई तो अंश है, कोई अंशांश है, कोई आवेश है, कोई कला है, कोई पूर्णावतार है, और छठवाँ स्वयम् परिपूर्णतम है, व्यासादिकोंने ये कहे हैं ॥ ४७ ॥ सो परिपूर्णतम तो साक्षात् श्रीकृष्ण ही हैं, और कोई अवतार नहीं है, एक कामके लिये आये हैं, और करोडों काम करते हैं ॥ ४८ ॥ श्रीकृष्णका माहात्म्य सुनकर गुणाकर राजा वैर छोडकर भेंट लेकर प्रद्युम्नके दर्शन करनेके लिये आया ॥ ४९ ॥ प्रद्युम्नकी परिक्रमा देकर प्रणाम कर भेंट देकर आंसुओंसे मुख भरकर गद्गद वाणीसे यह बोला ॥ ५० ॥ आज मेरा जन्म सफल हुआ, मेरा कुल पवित्र हुआ, आपके दर्शनसे यज्ञ सफल हुआ, और क्रिया सफल हुई ॥५१॥ प्रेम लक्षणा आपकी भक्ति मुझको आपके भक्तोंके संगसे प्राप्त हो, हे परेश ! आप साक्षात् निज भक्त वत्सल हैं सो हे भगवन् ! रक्षा करिये रक्षा करिये ॥५२॥

॥ वामदेवउवाच ॥ यस्मिन्सर्वाणितेजांसिविलीयंतेस्वतेजसि ॥ तंवदंतिपरंसाक्षात्परिपूर्णतमंहरिम् ॥ ४६ ॥ अंशांशोंशस्तथावेशःकलापूर्णःप्रकथ्यते ॥ व्यासाद्यैश्चस्मृतः षष्ठःपरिपूर्णतमःस्वयम् ॥४७॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोनान्यएवहि ॥ एककार्यार्थमागत्यकोटिकार्यंचकारह ॥ ४८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ श्रुत्वाकृष्णस्यमाहात्म्यंबलिंनीत्वागुणाकरः ॥ वैरंविसृज्यप्रद्युम्नदर्शनार्थंसमाययौ ॥ ४९ ॥ कार्ष्णिंप्रदक्षिणीकृत्यनत्वादत्त्वाबलिंततः ॥ अश्रुपूर्णमुखोभूत्वाप्राहगद्गदयागिरा ॥ ५० ॥ गुणाकरउवाच ॥ अद्यमेसफलंजन्मकुलंमेद्यदिनेशुभम् ॥ अद्यक्रतुक्रियाःसर्वाःसफलास्तवदर्शनात् ॥५१॥ त्वदंघ्रिभक्तिःपरमार्थलक्षणासदाभवेत्सज्जनसंगमात्परा ॥ त्वमेवसाक्षान्निजभक्तवत्सलःपरेशभूमन्परिपाहिपाहि ॥ ५२ ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ ज्ञानवैराग्यसंयुक्ताभक्तिस्तेप्रेमलक्षणा ॥ मद्भक्तसंगमोभूयाच्छ्रीःस्याद्भागवतांत्विह ॥ ॥५३॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाभगवान्कार्ष्णिःप्रसन्नोभक्तवत्सलः ॥ ददौतस्मैनृपतयेहयमेधतुरंगमम् ॥ ५४ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खंडेनारदबहुलाश्वसंवादउत्तरकुरुखंडविजयोनामाष्टाविंशोध्यायः ॥ २८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ प्रद्युम्नोथमहाबाहुर्जित्वाराडुत्तरान्कुरून् ॥ हिरण्मयंनामखंडंजेतुंकार्ष्णिर्जगामह ॥ १ ॥ यत्रसीमागिरिर्दीर्घःस्रोतोनामस्फुरद्द्युतिः ॥ तत्रकूर्मोहरिःसाक्षादर्यमायस्यदेशिकः ॥ २ ॥ पुष्पमालानदीतीरेनाम्नाचित्रवनंमहत् ॥ सपुष्पफलभाराढ्यंकंदमूलनिधिःस्वतः ॥ ३ ॥

तब प्रद्युम्न बोले, ज्ञान वैराग्य सहित तुम्हारे होगी, मेरे भक्तोंका संग होगा, और मेरे भागवतोंमें तुम्हारी शोभा होगी ॥५३॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे भक्त वत्सल प्रद्युम्नने कह कर उस राजाको यज्ञका घोडा दे दिया ॥ ५४ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्यखंडे भाषाटीकायामुत्तरकुरुखंडविजयो नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८॥ नारदजी कहते हैं कि, महाबाहु प्रद्युम्न ऐसे उत्तरकुरुखंडको जीतकर हिरण्मयखंडोंके जीतनेके लिये गये ॥ १ ॥ उसमें स्रोत नामका सीमाका पर्वत हैं, जो बडा प्रकाशवाला है, वहाँ कूर्म भगवान् विराजते हैं, वहाँ अर्यमा नाम पितर पुजारी हैं ॥ २ ॥ और पुष्पमाला नदीके तीरपर एक बडा चित्रवन है, पुष्प और फलोंके भारसे युक्त है, और कन्द मूलोंकी जो स्वतः निधि है ॥ ३ ॥

वे उस सैन्य घोषको सुनकर युद्ध करनेके लिये बाहर निकले; भौंहें टेढी कर
वहाँ नल नीलके वंशके बंदर बहुत हैं, हे मैथिलेश्वर ! जो त्रेतामें रामचन्द्रजीने रख दिये हैं ॥४॥ वे उस सैन्य घोषको सुनकर युद्ध करनेके लिये बाहर निकले; भौंहें टेढी कर
अत्यन्त क्रोधित हुये प्रद्युम्नकी सेनापर उछल २ कर गिरने लगे ॥ ५ ॥ हे नृप ! नखोंसे, दांतोंसे, पूंछोंसे, घोडे, हाथी, और मनुष्योंको और पूंछोंसे, रथोंको बांध बांधकर बल
पूर्वक आकाशमें फेंकने लगे ॥ ६ ॥ विजय ध्वजके नाथका और अर्जुनका रथ लेकर पूंछमें लपेट कोई आकाशमें उड गये ॥ ७ ॥ अर्जुनकी ध्वजामें साक्षात् हनुमान्जी विराजते हैं,
समर्थ हैं, वे क्रोधमें भर आये, और चारों दिशाओंमेंसे सब बंदरोंको ॥ ८ ॥ पूंछमें लपेटकर उन्होंने पृथ्वीमें फेंक दिये, तब तो वे रामके किंकर हनुमान्जीको जान गये, सब
इकट्ठे होकर ॥ ९ ॥ हाथोंको जोड हनुमान्जीको प्रणाम करने लगे, कोई मिलने लगे, कोई पराक्रमसे उछलने लगे,॥१०॥ कोई पूंछ चूमने लगे,कोई पांव चूमने लगे तब महा-

सैन्यघोषंचतंश्रुत्वायुद्धकामाविनिर्गताः॥प्रद्युम्नसैन्ये
वानराःसंतितत्रापिवंशजानलनीलयोः॥न्यस्ताःश्रीरामचंद्रेणत्रेतायांमैथिलेश्वर ॥४॥ विजयध्वजनाथस्य
चोत्पेतुर्भ्रूभंगैःक्रोधमूर्च्छिताः ॥५॥ नखैर्दंतैश्चलांगूलैर्गजानश्वान्नरान्नृप॥लांगूलैश्चरथान्बध्वाचिक्षिपुश्चांबरेबलात् ॥६॥ क्रोधाढ्यःफाल्गुनसखःसमर्थःसर्वतोदि-
विजयश्चार्जुनस्यच॥रथंबद्ध्वाथलांगूलेकेचिदुत्पेतुरंबरे॥७॥कपिध्वजध्वजेसाक्षात्कपींद्रोभगवान्प्रभुः॥ नेमुस्तंसर्वतोराजन्कृतांजलिपुटाःशनैः ॥
शम् ॥८॥ लांगूलेनचतान्बद्ध्वापातयामासभूतले ॥ तदाप्रहर्षिताःसर्वेज्ञात्वाश्रीरामकिंकराः ॥९॥ तानालिंग्यमहावीराःस्पृष्ट्वासत्पाणिनापुनः॥११॥
केचिदालिंगनंचक्रुःकेचिदुत्पेतुरोजसा ॥१०॥ केचिच्चुचुम्बुर्लांगूलंकेचित्पादंचवानराः ॥ मकराख्यात्ततो
दत्त्वाशिषंतत्कुशलंपप्रच्छाथांजनीसुतः ॥ नत्वातंवानराःसर्वेजग्मुश्चित्रवनंनृप ॥१२॥ हनुमानर्जुनस्यापिध्वजेह्यंतरधीयत ॥ मधुभक्ष्याम-
देशात्प्रद्युम्नोमीनकेतनः ॥१३॥ ययौवृष्णिवरैःसार्द्धंदुंदुभीन्वादयन्मुहुः ॥ मकरस्यगिरेःपार्श्वेदुंदुभिध्वनिभिस्ततः ॥१४॥ तद्वाततताडिताराजन्ग-
धुकराःकोटिशःप्रोत्थिताःकिल ॥ तैर्दंशितंबलंसर्वंहस्तिचीत्कारसंयुतम् ॥१५॥तदाकार्ष्णिर्महाबाहुःपवनास्त्रंसमादधे॥ एवंदेशांस्ततःपश्यंस्त्रि-
तास्तेपिदिशोदश ॥ १६ ॥ तत्रदेशेजनाराजन्सर्वेवैमकराननाः ॥ ततस्तुडिंडिभोदेशस्तत्रहस्तिमुखाजनाः ॥ १७ ॥
शृंगविषयान्गतः ॥ कार्ष्णिर्ददर्शतत्रापिमनुष्याःशृंगधारिणः ॥ १८ ॥

वीर उनको आलिंगन करके हाथ पकड कर कुशल पूछने लगे ॥ ११ ॥ उनकी कुशल पूछ आशीर्वाद दिया, तब हनुमान्जीको नमस्कार करके सब बंदर चित्रवनको चले गये
॥ १२ ॥ हनुमान् अर्जुनकी ध्वजामें अन्तर्धान हो गये, तब मकर देशसे मकरध्वज प्रद्युम्न ॥१३॥ यदुवरोंको साथ लेकर बारबार नगाडे बजाते मकर पर्वतके पार्श्व भाग(बगल)
में पहुँचे, वहाँ नगाडोंके शब्दोंसे ॥ १४ ॥ वहाँ मधु खानेवाले करोडों भ्रमर उठ खडे हुये, उन्होंने सब सेना काट खाई, तब हाथी चिक्कारने लगे ॥१५॥ हे राजन् ! तब समर्थ
प्रद्युम्नने पवनास्त्रका प्रयोग किया, उस पवनके ताडे हुये दशों दिशाओंमें चले गये ॥१६॥ हे राजन् ! उस देशके मनुष्य सब मगरके मुखके हैं, वहाँसे फिर डिंडिम देशमें गये,
वहाँ हाथीके मुखके मनुष्य हैं ॥ १७ ॥ ऐसे देशोंको देखते त्रिशृंग नामके पर्वतके देशोंमें गये, वहाँ प्रद्युम्नने सींगधारी मनुष्य देखे ॥ १८ ॥

त्रिशृंग पर्वतके पास एक सोनेके महलोंवाली और रत्नोंके परकोटासे शोभित स्वर्ण चर्चिका नगरी देखी ॥ १९ ॥ चन्द्रकान्ता नदीके तीरपर स्थित, मंगलकी निवास भूमि उस नगरीमें प्रद्युम्न गये, जैसे इन्द्र अमरावतीमें जाता है ॥२०॥ स्वर्ण जैसी कान्तिवाले पुरुषोंसे और बिजली जैसी कान्तिवाली स्त्रियोंसे वह पुरी ऐसी लगती है, जैसे नागोंसे और नागकन्याओंसे भोगवती पुरी लगती है ॥२१॥ वहाँका राजा महावीर देवसखा नामका बडा बली वह मेरे मुखसे पुरीमें सेना आई सुनकर स्वर्णमय भेंट लेकर प्रद्युम्नके सामने आया ॥ २२ ॥ परम भक्तिसे उसने प्रद्युम्नका पूजन किया, तब महाबाहु प्रद्युम्न राजासे यह पूछने लगे ॥ २३ ॥ प्रद्युम्न बोले—तुम्हारी सब लोगोंकी चन्द्रमा जैसी शोभा कैसे है, यह तुम जल्दीसे मुझसे कहो, तब देवसखा बोला कि, पितरोंके पति अर्यमाने कूर्म भगवान्के ॥२४॥ चरण बहुत जलसे धोये हैं, उस जलसे एक बडी भारी नदी हो गई, वह श्वेत पर्वतके शिखरसे उतरी है ॥२५॥ हे यदूत्तम ! पहले प्रमेधा नामका एक मनुका पुत्र था, जिसको गुरुने गौओंको पालनेपर रख दिया था, एक समय रात्रिमें गौओंमें सिंह आ गया

त्रिशृंगस्यगिरेःपार्श्वेनगरींस्वर्णचर्चिकाम् ॥ हेमसौधमयींदिव्यांरत्नप्राकारमंडिताम् ॥ १९ ॥ चन्द्रकांतानदीतीरेशोभितांमंगलालयाम् ॥ कार्ष्णिःसमाययौराजन्यथाशक्रोमरावतीम् ॥ २० ॥ हिरण्यवर्णैःपुरुषैःस्त्रीजनैश्चतडिद्द्युभिः ॥ नागैश्चनागकन्याभिःपुरींभोगवतीमिव ॥२१॥ तत्रराजामहावीरोनाम्नादेवसखोबली ॥ समन्मुखाद्बलंश्रुत्वाबलिंनीत्वाहिरण्मयम् ॥ २२॥ प्रद्युम्नंपूजयामासभक्त्यापरमयापुनः ॥ तंपप्रच्छमहाबाहुःप्रद्युम्नोभगवान्हरिः ॥ २३ ॥ चन्द्रवत्तेकथंशोभासर्वेषांचवदाशुमे ॥ देवसखउवाच ॥ अर्यम्णापितृपतिनाकूर्मरूपस्य-मापतेः ॥ २४ ॥ अंघ्रीप्रक्षालितौतेनवारिणाभून्महानदी ॥ श्वेतपर्वतशृंगाच्चावतरंतीयदूत्तम ॥२५॥ प्रमेधाख्योमनुसुतोगोपालोगुरुणाकृतः ॥ जघानकपिलांरात्रावसिनासिंहशंकया ॥ २६ ॥ वसिष्ठेनतदाशप्तःशूद्रत्वंसमुपागतः ॥ कुष्ठेनपीडिततनुःपर्यटंस्तीर्थमाचरन् ॥ २७ ॥ अस्यांनद्यांयदस्नातोगलत्कुष्ठान्मनोःसुतः ॥ मुक्तोभूच्चन्द्रवत्तस्यदहशोभाबभूवह ॥ २८ ॥ चन्द्रकांतानदीचेयंप्रसिद्धाभूद्धिरण्मये ॥ तस्यामुक्तोयतःस्नात्वागलत्कुष्ठान्मनोःसुतः ॥ २९ ॥ ततःस्नानंचकर्तारोवयंसर्वेनृपोत्तम ॥ रूपेणचन्द्रतुल्याःकौभवामोत्रनसंशयः ॥ ३० ॥ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वामहाबाहुःप्रद्युम्नोयादवैःसह ॥ चन्द्रकांतांनदींस्नात्वाददौदानान्यनेकशः ॥ ३१ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेहिरण्मयखण्डविजयोनामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

जिससे गौएँ रम्भाईं, तब खड्ग लेकर सिंहको मारनेके लिये गया, सो रात्रिमें सिंह तो दीखा नहीं, और धोखेसे उससे कपिला गौ मारी गई ॥ २६ ॥ तब वसिष्ठजीने शाप दिया, उससे वह शूद्र हो गया, और कोढी हो गया, तब तीर्थोंमें विचरने लगा ॥२७॥ जब उस मनुके पुत्रने इस नदीमें स्नान किया, तब शापसे छूटकर चन्द्रमा जैसा हो गया ॥२८॥ तबसे यह नदी चन्द्रकान्ता नामसे हिरण्मय खण्डमें प्रसिद्ध हुई इसमें स्नान करनेसे मनुका पुत्र गलत्कुष्ठसे छूट गया ॥ २९ ॥ हम सब इसमें स्नान करते हैं, इससे हमारा रूप चन्द्रमाके तुल्य है, इसमें सन्देह नहीं है ॥३०॥ नारदजी कहते हैं—ऐसे सुनकर प्रद्युम्नने यादवों सहित चन्द्रकान्ता नदीमें स्नान करके बहुतसे दान दिये ॥ ३१ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजितखंडे भाषाटीकायां नारदबहुलाश्वसंवाद हिरण्मय खण्ड विजयोनामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

नारदजी कहते हैं कि, महाबली प्रद्युम्न हिरण्मय खण्डको जीतकर स्वर्गकी तरह देदीप्यमान् रम्यक खण्डको चले गये ॥ १ ॥ उसकी सीमाका पर्वत साक्षात् नील नामका पर्वत-
राज है, उसके उत्तरकी ओर भीम नादिनी नामकी नगरी है ॥ २ ॥ वहाँ कालनेमिका पुत्र कलंक नामका राक्षस था, त्रेतायुगमें रामचन्द्रके भयसे युद्धमें भाग आया था ॥ ३ ॥
वह लंकासे राक्षसों सहित यहाँ आकर बस गया, उसने दश हजार राक्षसोंको साथ लेकर युद्धका निश्चय किया ॥ ४ ॥ गधेपर चढ़ा, काले वर्णका वह राक्षस यादवोंकी सेनामें
आया, तब यादवोंका और राक्षसोंका घोर युद्ध हुआ, ॥५॥ वहाँ प्रघोष, गात्रवान्, सिंह, बल, प्रबल, ऊर्ध्वग, सह, ओज, महाशक्ति अपराजित ॥६॥ ये लक्ष्मणाके कुमार श्री
कृष्णके पुत्र तीखे २ तेजस्वी बाणोंको लेकर सबके आगे आये ॥७॥ और राक्षसोंकी सेनाको मारने लगे, पवन जैसे बादलको उडाता है, रणमें दुर्मद राक्षसोंके अंग बाणोंसे छिन्न

श्रीनारदउवाच ॥ एवंहिरण्मयंखण्डंजित्वाकार्ष्णिर्महाबलः ॥ जगामरम्यकंखंडंदेवलोकमिवस्फुरन् ॥ १ ॥ तस्यसीमागिरिःसाक्षान्नीलोनामनगा-
धिराट् ॥ तत्रोत्तरेकालदेशेनगरीभीमनादिनी ॥ २ ॥ कालनेमिसुतस्तत्रकलंकोनामराक्षसः ॥ त्रेतायुगेरामचन्द्राद्भ्रांतोयुद्धपलायितः ॥ ३ ॥
लंकापुर्य्याइहागत्यवासकृद्राक्षसैःसह ॥ रक्षसामयुतेनासौयुद्धायकृतनिश्चयः ॥ ४ ॥ खगारूढःकृष्णवर्णोयदूनांबलमाययौ ॥ यदूनांराक्षसा-
नांचघोरंयुद्धंबभूवह ॥ ५ ॥ प्रघोषोगात्रवान्सिंहोबलःप्रबलऊर्ध्वगः ॥ सहओजोमहाशक्तिरपराजितएवच ॥ ६ ॥ लक्ष्मणानंदनाह्येतेश्रीकृष्णस्य
सुताःशुभाः ॥ सर्वेषांमग्रतःप्राप्ताबाणैस्तीक्ष्णैःस्फुरत्प्रभैः ॥ ७ ॥ राक्षसानांबलंजघ्नुर्वायुर्वेगैर्यथाघनम् ॥ बाणौघैश्छिन्नभिन्नांगाराक्षसारण
दुर्मदाः ॥ ८ ॥ त्रिशूलानांमुद्गराणांवर्षंचक्रुर्मदोत्कटाः ॥ कलंकस्तुतदाप्राप्तश्चर्वयन्वारणान्रथान् ॥ ९ ॥ हयान्नरान्सशस्त्रास्त्रान्मुखेचिक्षेपसत्वरम् ॥
गजान्पादेषुचोन्नीयसनीडान्रत्नकंबलान् ॥ १० ॥ घण्टानादसमायुक्तान्प्राक्षिपच्चांबरेबलात् ॥ प्रघोषःश्रीहरेःपुत्रःकपींद्रास्त्रंसमादधे ॥ ११ ॥
तद्बाणनिर्गतःसाक्षाद्वायुपुत्रोमहाबलः ॥ वातस्तूलमिवाकाशेचिक्षेपशतयोजनम् ॥ १२ ॥ हनुमन्तंतदाज्ञात्वाकलंकोराक्षसेश्वरः ॥ लक्षभारम-
यींगुर्वींगदांचिक्षेपनादयन् ॥ १३ ॥ उत्पपातकपिर्वेगाद्गदाभूमौपपातह ॥ उत्पतन्वानराधीशोभ्रूभंगंकारयन्मुहुः ॥ १४ ॥ मुष्टिनाघातयित्वातं
किरीटंतस्यचाददे ॥ कलंकोपितदातस्मैत्रिशूलंस्वंसमाददे ॥ १५ ॥

भिन्न हो गये ॥ ८ ॥ तब तो मदमें उत्कट त्रिशूलोंकी और मुद्गरोंकी वर्षा करने लगे, उसी समय राक्षसोंका राजा कलंक हाथियोंको और रथोंको चबाता हुआ आया ॥९॥ घोडोंको
मनुष्योंको, अस्त्र शस्त्र समेत जल्दीही मुखमें डाल लिया, और हाथियोंके पांवोंको पकडकर घंटा, रत्न, कम्बल, इनके सहित आकाशमें फेंकने लगा, तब हरिके पुत्र प्रघोषने उसका
कर्म देखकर कपीन्द्रास्त्र चलाया ॥१०॥११॥ उस बाणमेंसे वायुपुत्र महाबली हनुमान् प्रगट हुये, उन्होंने उसको पकडकर सौ योजनपर फेंक दिया, जैसे पवन रुईको फेंक देता है
॥१२॥ राक्षसोंके स्वामी कलंकने हनुमान्जीको जानकर लाख भारकी गदा फेंककर मारी और फिर गर्जन लगा॥१३॥ तब हनुमान् बडे वेगसे उछल गये, गदा पृथ्वीमें जा गिरी,
तब बार बार भ्रुकुटी चलाते ॥१४॥ हनुमान्ने उसके एक घूंसा मारकर उसका मुकुट उतार लिया, फिर कलंक अपना त्रिशूल लेकर आया ॥ १५ ॥

तब हनुमान् उछल कर उसकी पीठपर चढ गये, भुजाओंसे पकड कर धरतीमें देमारा ॥१६॥ फिर वैदूर्य पर्वतको लाकर उसके ऊपर डाल दिया, उसके मारे शरीरका चूर्ण होगया और वह कलंक मृत्युको प्राप्त होगया ॥१७॥ तब तो जय जय शब्द होने लगा, शंख बजने लगे, तब भगवान् हनुमान् वहीं अन्तर्धान होगये ॥१८॥ प्रद्युम्नके ऊपर देवता पुष्पोंकी वर्षा करने लगे, तब कृष्णके पुत्र बडी भुजाओंवाले प्रद्युम्न अपनी सेना समेत मनुराजकी पुरीको गये ॥१९॥ जो पुरी मनोहरा और स्वर्णकी है, जहाँ नैश्रेयस नामका वन है जो कल्प वृक्षकी लताओंसे आवृत है ॥२०॥ हरि चन्दन, मंदार, पारिजात, सन्तानादि कल्प वृक्षकी जातिके वृक्षोंकी मिश्रित वायुसे सुगन्धित और शोभित है ॥२१॥ केतकी, चम्पा और कुटज इनसे शोभित फली फूली माधवीकी लताओंके जालोंसे व्याप्त है॥२२॥ जिसमें नाद करते पक्षी और भ्रमर कुलोंसे वैकुंठ जैसा सुन्दर पांच सौ योजन लम्बा अरुधि पर्वत है

उत्पतन्सकपिर्वेगात्पृष्ठदेशंपपातह ॥ हनुमांस्तंतदादोर्भ्यांपातयित्वामहीतले॥ १६ ॥ वैदूर्यपर्वतंनीत्वातस्योपरिसमाक्षिपत् ॥ गिरिपातेनचूर्णीगोमर्दितःपञ्चतांययौ ॥१७॥ तदाजयजयारावःशंखध्वनियुतोभवत् ॥ हनूमान्भगवान्साक्षात्तत्रैवांतरधीयत ॥१८॥ प्रद्युम्नस्योपरिसुराः पुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥ अथकार्ष्णिर्महाबाहुःस्वसैन्यपरिवारितः ॥१९॥ मनोहरांस्वर्णमयींमानवींनगरींययौ ॥ नैःश्रेयसवनंतत्रकल्पवृक्षलतावृतम् ॥ २० ॥ हरिचन्दनमन्दारपारिजातोपशोभितम् ॥ सन्तानामोदसंमिश्रवायुभिःसुरभीकृतम्॥२१॥ केतकीचंपकलताकुटजैःपरिसेवितम् ॥ माधवीनांलताजालैःपुष्पितैःसफलैर्वृतम् ॥२२॥ नदद्विहंगालिकुलैर्वैकुंठमिवसुन्दरम् ॥ योजनानांपञ्चशतंलंबितंचारुधिगिरिम् ॥२३॥ अधोधःशोभितंराजन्शतयोजनविस्तृतम् ॥ पुंस्कोकिलैःकोकिलैश्चमयूरैःसारसैःशुकैः ॥२४॥ चक्रवाकैश्चकोरैश्चहंसैर्दात्यूहकूजितम् ॥ सर्वर्तुपुष्पशोभाढ्यमाक्षिपन्नन्दनंवनम् ॥ २५ ॥ मृगशावारमंतेत्रैशार्दूलैःसहमैथिल ॥ नकुलाःफणिभिःसार्द्धंयत्रवैरविवर्जिताः ॥२६॥ अयुतंसरसांयत्रभ्रमरध्वनिसंयुतम् ॥ सहस्रपत्रैःकमलैःशतपत्रैःस्फुरत्प्रभैः ॥२७॥ इतस्ततोवर्तमानमानन्दमिवमूर्तिमत् ॥ तद्वनंसुन्दरंदृष्ट्वानिर्गतान्नगरीजनान् ॥ २८ ॥ पप्रच्छवांच्छितंसाक्षात्प्रद्युम्नःसर्ववित्कविः ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ कस्येयंनगरीरम्याकस्येदंवनमद्भुतम् ॥ वदताशुसविस्तारंहेलोकाःपुण्यशासनाः ॥ २९ ॥

॥२३॥ हे राजन् ! नीचे २ सौ योजन चौडा है, पुंस्कोकिल, कोकिल (कोयल) और सारस, शुक, (तोता) मोर ॥२४॥ चकोर, चकवा, चकई, हंस, पपीहा जिसमें बोलते हैं, वह सब ऋतुओंके फल फूलोंकी शोभासे भरपूर इन्द्रके नन्दन वनकी शोभाको फीकी करता है, ऐसा सुन्दर है ॥२५॥ और हे मैथिल ! जहाँ मृगके बच्चे सिंहोंके साथ खेलते हैं, और नेवले सर्पोंके साथ खेलते हैं, बैर नहीं करते हैं ॥२६॥ जिसमें दश हजार सरोवर हैं, उनपर भ्रमर गुंजार कर रहे हैं जिनमें सौ सौ दलके हजार हजार दलके कमल खिल रहे हैं॥२७॥ इधर उधर मूर्तिमान् आनन्दकी तरह उस वनको देखकर नगरीमेंसे निकले मनुष्योंको ॥ २८ ॥ सर्ववित्, ज्ञानी प्रद्युम्न वांछित प्रश्न पूछने लगे, यह मनोहर नगरी किसकी है, यह अद्भुत वन किसका है, हे पवित्र मनुष्यो ! विस्तार पूर्वक कहो ॥ २९ ॥

तब वे जन बोले कि, वैवस्वत मनु नामके राजा हैं, जो मानव पर्वतके ऊपर मत्स्य भगवान्का पूजन करते हैं ॥३०॥ सदाही वर्तमान भगवान्को नमस्कार करके तप करते हैं, उनकी यह नगरी है, और उनकाही यह नैश्रेयसं वन है ॥३१॥ यह भूमि वैकुंठसे लाई गई है, और यह पर्वतभी वैकुंठसे लाया गया है, तुम समस्त राजा सूर्य वंशी और चन्द्रवंशी पृथ्वी पर जितने हो, सब उसीके वंशके हो ॥३२॥ नारदजी कहते हैं कि, सब क्षत्रियोंके परदादे वृद्ध श्राद्धदेव मनुको जानकर श्रीकृष्णके पुत्र प्रद्युम्न विस्मित होगये ॥३३॥ वचन सुन कर भाईयोंको और यादवोंको साथ लेकर मानव पर्वत पर चढकर श्राद्धदेव मनुका दर्शन किया ॥३४॥ शत (सौ) सूर्यके समान कान्तिसे दशों दिशाओंको प्रकाश मान करते, महा योगमय, साक्षात् राजेन्द्र शान्तरूपी ॥३५॥ वेदव्यास, शुकदेव, वसिष्ठ, बृहस्पति, इनके साथ आपसमें हे महाराज ! हरिका यश सुनते ॥३६॥ उनको यादवों सहित प्रद्युम्नने

॥ जनाऊचुः ॥ वैवस्वतोमनुर्नामयोह्येवंवर्ततेनृप ॥ मानवेचगिरौरम्येमत्स्यंनारायणंहरिम् ॥ ३० ॥ वर्तमानंसदानत्वाकरोतिविपुलंतपः ॥ तस्येयंनगरीरम्यातस्यनैःश्रेयसंवनम् ॥३१॥ वैकुण्ठाच्चसमानीताभूमिश्चायंगिरिस्तथा ॥ यूयंसर्वेपिराजानस्तस्यवंशभवाःक्षितौ॥सूर्यवंशांतरे राजंश्चंद्रवंशांतरेहिभोः ॥ ३२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ क्षत्रियाणांचसर्वेषांवृद्धंतंप्रपितामहम् ॥ श्राद्धदेवंमनुंज्ञात्वाविस्मितोभूद्धरेःसुतः ॥३३॥ श्रुत्वावचस्तदासद्योभ्रातृभिर्यदुभिर्वृतः ॥ मानवाद्रिंसमारुह्यश्राद्धदेवंददर्शह॥३४॥ शतसूर्यप्रभंकांत्याद्योतयंतंदिशोदश ॥ महायोगमयंसाक्षाद्राजेंद्रंशांतरूपिणम् ॥ ३५ ॥वेदव्यासशुकाद्यैश्चवसिष्ठधिषणादिभिः ॥ परस्परंमहाराजशृण्वंतःश्रीहरेर्यशः ॥३६॥ननामकार्ष्णिर्यदुभिःसहैवतंकृतांजलिस्तत्रसमास्थितोभवत् ॥ मनुःसमुत्थायहरेःप्रभावविद्दत्त्वासनंगद्गदयागिराब्रवीत् ॥ ३७ ॥ मनुरुवाच ॥ नमस्ते वासुदेवायनमःसंकर्षणायच॥प्रद्युम्नायानिरुद्धायसात्त्वतांपतयेनमः ॥ ३८ ॥ अनादिरात्मापुरुषस्त्वमेवत्वंनिर्गुणोसिप्रकृतेःपरस्त्वम् ॥ सदा वशीकृत्यबलात्प्रधानंगुणैःसृजस्यत्सिचपासिविश्वम् ॥३९॥ ततोविवेकंसविहायसर्वतोमत्वाखिलंचात्रमनोमयंजगत् ॥ मायापरंनिर्गुणमादिपूरुषंसर्वज्ञमाद्यंपुरुषंसनातनम् ॥ ४० ॥ जागर्तियोस्मिन्शयनंगतेसतिनायंजनोवेदसतःपरंतम् ॥ पश्यंतमाद्यम्पुरुषंहियज्जनोनपश्यतिस्वच्छमलंचतंभजे ॥ ४१ ॥

जाकर हाथ जोडकर प्रणाम किया, और सामने बैठ गये, तब हरिके प्रभावको जाननेवाले मनु राजा उठकर आसन देकर गद्गद वाणीसे बोले ॥३७॥ आप वासुदेव हो, संकर्पण हो, प्रद्युम्न हो, अनिरुद्ध हो, भक्तोंके पति हो उनके लिये हमारा नमस्कार है ॥३८॥ आप अनादि आत्मा हो, पुरुष हो, निर्गुण हो, मायासे परे हो, अपने बलसे मायाको वशमें करके गुणोंसे जगत्की उत्पत्ति, पालन, संहार करते हो ॥ ३९ ॥ उससे अविवेकी यह जगत् सम्पूर्ण मनोमय उसको छोडकर मायासे परे निर्गुण आदि पुरुष सर्वज्ञ आद्य सनातन उनको मैं भजता हूँ ॥ ४० ॥ जब यह विश्व सोता है, तब आप जागते हो, यह जन (लोक) आपको नहीं जानता है, इससे परे हो, इसको देखते हो, यह जगत् आपको नहीं देखता है, स्वच्छ निर्मल जो आप हो उनको मैं भजता हूँ ॥ ४१ ॥

जैसे आकाश तो घटसे, रजसे, पवन और काष्ठसे, अग्निसे लिप्त नहीं होता है, वैसेही निर्मल आप गुणोंसे विषयोंसे लिप्त नहीं होते हो, जैसे स्फटिकमें रंग लिप्त नहीं होता है ॥४२॥ व्यंगसे, लक्षणासे, वाणीकी चतुराईसे, स्फोट परायण मनुष्योंसे परमार्थपद नहीं जाना जाता है, सद्वाच्यसे उत्तम धनीसे जो ब्रह्म नहीं जाना है, सो कहो लौकिक वाक्योंसे ब्रह्म कैसे जाना जाय ॥ ४३ ॥ कोई तो पृथ्वीमें कर्मको कहते हैं, कोई कर्ताको कहते हैं, कोई कालको कहते हैं, कोई योगको कहते हैं, कोई विचारको ब्रह्म बनाते हैं, उसीको वेदान्ती ब्रह्म कहते हैं, ॥ ४४ ॥ जिसको कालके गुण स्पर्श नहीं कर सकते हैं, और ज्ञानेन्द्रिय, चित्त, मन, बुद्धि, अहंकार, महत्तत्व नहीं जानते हैं, जिसको वेद कहते हैं, फिर सब उसीमें अग्निमें विस्फुलिंगकी तरह प्रवेश होते हैं ॥ ४५ ॥ संत जिसको हिरण्यगर्भ आत्म, तत्त्व, वासुदेव ऐसे कहते हैं, ऐसे जो आप पुरुषोत्तम हो, उनको जानकर मैं असंग होकर

यथानभोग्निःपवनोनसज्जतेघटेनकाष्ठेनरजोभिरावृतैः ॥ तथाभवान्सर्वगुणैश्चनिर्मलोवर्णैर्यथास्यात्स्फटिकोमहोज्ज्वलः ॥४२॥ व्यंग्येनवालक्षणयाचवाक्पथैरर्थंपदंस्फोटपरायणैःपरम् ॥ नज्ञायतेयद्धनिनोत्तमेनसद्वाच्येनतद्ब्रह्मकुतस्तुलौकिकैः ॥४३॥ वदंतिकेचिद्भुविकर्मकर्तृयत्कालंच केचित्परयोगमेवतत् ॥ केचिद्विचारंप्रवदंतियच्चतद्ब्रह्मेतिवेदांतविदोवदंति ॥४४॥ यंनस्पृशंतीहगुणानकालजाज्ञानेंद्रियंचित्तमनोनबुद्धयः ॥ महान्नवेदोवदतीतितत्परंविशंतिसर्वेह्यनलेस्फुलिंगवत् ॥४५॥ हिरण्यगर्भंपरमात्मतत्त्वंयद्वासुदेवंप्रवदंतिसंतः ॥ एवंविधंत्वांपुरुषोत्तमोत्तमंमत्वासदाहंविचराम्यसंगः ॥४६॥ श्रीनारदउवाच ॥ मनोर्वाक्यंतदाश्रुत्वाप्रद्युम्नोभगवान्हरिः ॥ मन्दस्मितोमनुंप्राहगीर्भिःसंमोहयन्निव ॥ ४७ ॥ ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ त्वन्नोगुरुःक्षत्रियाणामादिराजःपितामहः ॥ मत्पूजनीयोवृद्धोसिश्लाघ्योधर्मधुरंधरः ॥ ४८ ॥ वःप्रजाश्चवयंराजन्रक्ष्याः पाल्याश्चसर्वतः ॥ भवतातप्यतेदिव्यंतपस्तेनजगत्सुखम् ॥४९॥ मृग्यस्त्वत्सदृशःसाधुःपरमात्माहरिःस्वयम् ॥ नृणामंतस्यमोहारीसाधुरेवन भास्करः ॥ ५० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाभगवान्कार्ष्णिर्मनुज्ञाप्यप्रणम्यतम् ॥ परिक्रम्यमनुंराजन्स्वयंभूमौजगामह ॥ ५१ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खंडेनारदबहुलाश्वसंवादेमानवदेशविजयोनामत्रिंशोध्यायः ॥ ३० ॥

विचरता हूँ ॥ ४६ ॥ नारदजी कहते हैं–मनु राजाके वचनको सुनकर भगवान् हरि प्रद्युम्न मन्द मुसकराकर वाणियोंसे मोह करते बोले ॥४७॥ आप तो क्षत्रियोंके गुरु हो, आदि राजा हो, सबके पितामह हो, मेरे लिये पूजनीय हो, वृद्ध हो, बड़ाई करने योग्य हो, धर्मके उठानेवाले हो॥४८॥हे राजन् ! हम तो आपकी सन्तान हैं, हम सब आपके पालने योग्य और रक्षा करने योग्य हैं, आप जो तप करते हो, उससे सब जगत्को सुख है ॥ ४९ ॥ आप जैसे साधु तो ढूंढने योग्य हैं, आप तो परमात्मा हरि स्वयम्ही हो, मनुष्योंके भीतरके अन्धकारको आपही हरते हो, सूर्य नहीं हरता है ॥५०॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे कहकर आज्ञा मांग, परिक्रमा देकर प्रणाम करके प्रद्युम्न पर्वत परसे भूमिमें आये ॥ ५१ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डे भाषाटीकायां नारदबहुलाश्वसंवादे मानवदेशविजयो नामत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

नारदजी कहते हैं-ऐसे रम्यक खण्डको जीतकर महाबली प्रद्युम्न सुमेरुके पूर्व दिशामें केतुमाल खण्डमें गये ॥ १ ॥ हे मैथिल ! उसका सीमाका पर्वत माल्यवान् नामका पर्वत है,
जहाँ महापातक नाशिनी चतुर्नाम्नी गंगा बहती है॥२॥माल्यवान्के पास मन्मथ शालिनी पुरी है,रत्नोंका जिसका परकोटा है, और मणियोंकेही जिसमें महल बने हैं, देवधानी जैसी
जिसकी शोभा है ॥३॥ जहाँ पुरुष कामदेव जैसे सुन्दर हैं शरद ऋतुके नील कमल जैसे जिनके श्यामवर्णके अंग हैं,और पद्मदल जैसे जिनके नेत्र हैं ॥४॥ जहाँ पीताम्बर धारिणी
नारियाँ हैं,मनोहर पुष्पोंके हार पहने नये यौवनवाली वे गेंदसे खेलती हैं॥५॥जिनके देहकी सुगन्धिसे मत्त हुये भ्रमर गुञ्जार करते हैं,वह सुगंधि चार सौ कोसतक फैलती है, ॥६॥
उस पुरीके रहनेवाले लोग निकले, प्रद्युम्नके सुनते २ हरिका यश गाने लगे॥७॥केतु मालखण्डके निवासी बोले, शेषशायी भगवान् देवताओंकी प्रार्थनासे जगत्की आर्ति(पीडा)
हरनेवाले साक्षात् प्रधान पुरुष ईश्वर आदि देव हो, और जो देवताओंकी प्रार्थनासे भुवनकी रक्षाके लिये प्रगट हुये,उन पुरुषोत्तम भगवान्के लिये हमारा नमस्कार है ॥ ८ ॥ जो

॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंतुरम्यकंखंडंजित्वाकार्ष्णिर्महाबलः ॥ सुमेरोःपूर्वदिग्भागेकेतुमालंजगामह ॥१॥ तस्यसीमागिरिःसाक्षान्माल्यवा-
न्नाममैथिल ॥ चतुर्नाम्नीयत्रगंगामहापातकनाशिनी ॥ २ ॥ गिरेर्माल्यवतःपार्श्वेपुरीमन्मथशालिनी ॥ रत्नप्राकारसौधैश्चदेवधानीवशोभिता
॥३॥ यत्रवैपुरुषाराजन्कामदेवसमप्रभाः ॥ शारदेंदीवरश्यामाःपद्मपत्रनिभेक्षणाः ॥४॥ पीतांबरधरानार्य्यःपुष्पहारमनोहराः ॥ क्रीडंतिकन्दु-
कैर्यत्रकामिन्योनवयौवनाः ॥५॥ यद्देहामोदपवनोमत्तालिकुलनादितः ॥ गंधीकरोतिभूभागंसमंताच्छतयोजनम् ॥६॥ तत्पुरीवासिनोलोका
निर्गतास्तेबहुश्रुताः ॥ जगुर्यशःश्रीमुरारेःप्रद्युम्नस्यापिशृण्वतः ॥ ७ ॥ केतुमालवासिनऊचुः ॥ आसीत्तुशेषशयनोजगदार्तिहारीसाक्षा-
त्प्रधानपुरुषेश्वरआदिदेवः ॥ यःप्रार्थितःसुरवरैर्भुवनावनायतस्मैनमोभगवतेपुरुषोत्तमाय॥८॥जातोगतःपितृगृहात्पितरौविमोक्ष्यनंदालयंशि-
शुतनुःसतुनंदपत्न्या ॥ संलालितःसघृणयाबहुमंगलश्रीःप्राणप्रहारमकरोत्किलपूतनायाः ॥९॥ बालोबभंजशकटंशयनंप्रकुर्वन्दैत्यंनिपात्यमह
दद्भुतकंचपृष्ठे॥ मात्रेप्रदर्श्यनिजरूपमलंकृतोभूद्गर्गेणसंकथितसुंदरभाग्यलक्ष्मीः ॥१०॥ संलालितोव्रजजनैर्नवनीतचौरःश्यामोमनोहरवपुर्मृदुलः
सबालः ॥ भित्त्वाजघासदधिपात्रमर्तीवदध्नोवृक्षौबभंजजननीलघुदामबद्धः ॥११॥ वृंदावनेसविचरन्सहवत्सगोपैर्वत्सासुरंचविनिपात्यकपि-
त्थवृक्षैः ॥ सद्योविगृह्यखरतुंडपुटेचदोर्भ्यांदैत्यंददारसबकंतृणवत्तटिन्याम् ॥ १२ ॥

आप माता पिताको बन्धनसे छुडाकर पिताके घरसे नंदके घरको गये, सो बालरूप बडी प्रीतिसे नन्दरानीसे लालन किये गये और जो बडे मंगल तथा बडी शोभाके देनेवाले हैं, ॥२५७॥
वहाँ जिन्होंने पूतनाके प्राण हरे ॥९॥ फिर बालकनेही सोते २ शकट तोड डाला अद्भुत तृणावर्तकी पीठपर चढकर उसको मार डाला, और माताको अपना निजरूप दिखाकर
अलंकृत हुये, गर्गजीने जिनकी सुन्दर भाग्यलक्ष्मी कही ॥१०॥ मक्खनके चुरानेवालेको व्रज वासियोंने बहुत लाड लडाये, अर्थात् प्यार किये, श्याम सुन्दर मनोहर अति कोमल
बालरूपधारी, दहीके पात्रोंको फोडकर दही खागये, तब माताने ओखलसे बाँध दिये,तब यमलार्जुन वृक्ष उखाडे ॥ ११ ॥ बछडों और गोप बालकोंके साथ वृन्दावनमें विचरते
वे वत्सासुरको मारकर उसी धत्सासुरेस कैथके वृक्षोंकों उखाडा फिर यमुनाके किनारेपर तीखी चोंचके बकासुरको तृण (तिनका) की तरह चीर डाला ॥ १२ ॥

बालकोंके संग बछडोंको घेरते और वंशी बजाते कामको मोहनेवाला स्वरूप धारण किया, अघासुरके मुखमें गये बालकोंकी रक्षा की, फिर गोप बालकोंको और बछडोंको ब्रह्माजी ले गये तब जो सर्वरूप बने ॥ १३ ॥ जो क्षेत्रज्ञ हैं, आत्मा पुरुष हैं, भगवान् हैं, अनन्त हैं, पूर्ण हैं, प्रधान पुरुषके ईश्वर हैं, वे अजन्मा भगवान् शरीर धारण करके ब्रह्मा सहित सबको मोह करते श्रीकृष्ण व्रजके बालकोंमें विचरे ॥१४॥ फिर बली धेनुकासुरको तालके वृक्षपर मारा, फिर कालीनागको दण्ड देकर उसके फण फणपर नृत्य किया, फिर दावानल पान किया, फिर बलदेव सहित दृढ मुष्टिका (घूंसा) से प्रलम्बासुरको मारा ॥ १५ ॥ फिर गौ चराते वनमें व्रजवधुओंको मोहनेवाली वंशी बजाई, व्रजवधुओंने जिनकी कीर्ति गाई, फिर गोपवधुओंके वस्त्र चुराये, ब्राह्मणियोंका भात भोजन किया ॥१६॥ जब इन्द्रने बडी भारी वर्षा की, तब कृपा करके पशुओंकी रक्षा करनेके लिये प्राकृत बालककी तरह गोवर्धन पर्वतको छतौनाकी तरह उठा लिया, हाथी जैसे कमलको वैसे ही जिन्होने सात दिनतक एक हाथसे गिरिराज उठाया, तब इन्द्रने आकर जिनकी स्तुति की ॥१७॥ नन्दजी

संधारयंश्चशिशुभिर्बहुवत्ससंवान्वेणुंक्कणन्मदनमोहनवेषभृद्यः ॥ गोपानघासुरमुखेप्रहिताञ्जुगोपगोगोपवत्सपवपुःसचकारसद्यः ॥१३॥ क्षेत्रज्ञ आत्मपुरुषोभगवाननंतःपूर्णःप्रधानपुरुषेश्वरआदिदेवः॥धृत्वावपुःसविहरन्व्रजबालकेषुसंमोहयन्विधिमजोविचचारकृष्णः ॥१४॥ चिक्षेपधेनुकमसौबलिनंबलेनतालान्प्रगृह्यसहसाफणिकालियाख्यम् ॥ बभ्रामवह्निमपिबद्नुजंप्रलंबंसद्योजघानसबलोदृढमुष्टिनाच ॥१५॥ संचारयन्व्रजवधूर्मधुरंक्कणन्योवेणुवनेव्रजवधूनिजगीतकीर्तिः ॥ दिव्यांबराणिसजहारवरांगनानांविप्रांगनाभिरभितःकृतःभक्तभोजः॥१६॥देवेषुवर्षतिपशून्कृपयारिरक्षुर्गोवर्धनंप्रकृतबालइवोच्छिलींध्रम् ॥ बिभ्रद्गिरिंसगजराडिवकंजमेकहस्तेशचीपतिवचोभिरतस्तुतोभूत् ॥ १७॥ नन्दंजुगोपवरुणात्स्वजनायलोकंदिव्यंपरंचतमसोदिविदर्शयित्वा॥ श्रीरासमण्डलगतोव्रजसुन्दरीणांरेमेपुलिन्दतटिनीपुलिनेंगनाभिः ॥१८॥ मानंहरन्मदनयौवनमानिनीनामंतर्दधेव्रजवधूनिजगीतकीर्तिः॥स्रग्वीमनोहरवपुर्विरहातुराणांसाक्षाद्धरिर्मदनमोहनआविरासीत् ॥ १९ ॥ वृन्दावनेशबरराजवरांगनाभिर्विष्णुर्विभूतिभिरिवोद्धभिरादिदेवः ॥ रेमेस्तुतःसुरवरैःसचरासरंगेकेयूरकुण्डलकिरीटविटंकवेषः ॥२०॥ नन्दंविमोक्ष्यफणिनेप्रददौचमोक्षंदिव्यंमणिंसचजहारहशंखचूडात् ॥ गोपैस्तुतोवृषभरूपधरंह्यरिष्टंभूमौनिपात्यनिजघानकरेणशृंगे ॥ २१ ॥

की वरुणकी फाँसीसे रक्षा करके व्रजवासियोंको मायासे परे वैकुण्ठ दिखाया, फिर यमुना किनारेपर यमुनाजीके पुलिनमें रास मण्डलमें व्रज सुन्दरियोंके साथ रमण किया ॥१८॥ कामदेवके जोरसे यौवनका व्रजसुन्दरियोंको हुआ जो मान उसको हरते अन्तर्धान हो गये, तब व्रज सुन्दरियोंने गोपीगीत गाया, जब वे अत्यन्त विरहातुर हुई, तब मनोहर स्वरूप धारण करके वनमाला पहिने जो प्रगट हुये ॥१९॥ वृन्दावनमें शबरराजकीजो श्रेष्ठ अंगनाओंके साथ जैसे अपनी विभूतियोंके साथ आदिदेव विष्णु रमे वैसे जिन्होंने रमण किया, देवता जिनकी स्तुति करें उन भगवान्ने रासरंगमें केयूर, कुण्डल, किरीट, इनसे मनोहर शृंगार धारण करके रमण किया ॥ २० ॥ नन्दको सर्पसे छुडाकर सर्पको मोक्ष दी, फिर शंखचूड से दिव्यमणि हर ली, गोपोंने जिनकी स्तुति की, बैलरूप धारी अरिष्टासुरको सींगसे पकड करके धरतीमें मारा ॥ २१ ॥

कंसने जिन भगवान्से अत्यन्त भयभीत होकर सघन मेघ जैसा शरीर जिसका ऐसे प्रचण्ड केशीको भेजा, उसको छोडकर बडे वेगसे पडा जो केशी उसके मुखमें भुजा प्रवेश कर मार दिया ॥२२॥ नारदजीने वर्णन किया है, बहु पराक्रम और भाग्यलक्ष्मी जिनकी उन्होंने व्योमासुरको मार दिया और अक्रूरने वर्णन किया है महोदय जिनका, विरहातुर गोपीजनके चितचोर उन आदि देवने ॥२३॥ हित करनेवाले अक्रूरके लिय जलमें स्वरूप दिखाकर अन्तर्धान कर लिया, वे मथुरेश मथुराके बागमें आकर बलदेव सहित गोपोंको साथ लेकर मथुराको देखने लगे॥२४॥वहाँ इच्छापूर्वक विचरते धोबीको मारकर दरजीको वर दिया,सुदामा मालीपर दया करके कुब्जाको सीधी की,सहजमें ही धनुषको उठाकर तोड डाला ॥२५॥ हे नरेन्द्र ! फिर द्वारपर कुवलया पीड हाथीको मारकर कंसके मल्लोंको मारकर कंसको पकडकर रंगभूमिमें दे मारा, ऊपरसे आप जा पडे, फिर माता पिताको बंधनसे छुडाकर

कंसःपरंभयमवापचतेनकेशीसंप्रेषितःसघनमेघवपुःप्रचण्डः॥उत्सृज्यतंचतररसापुनरापतंतंश्रीबाहुनासुखगतेनजघानकृष्णः ॥ २२ ॥ योनारदे-
नबहुवर्णितभाग्यलक्ष्मीर्व्योमासुरोव्यसुरकारिपरेणयेन ॥ अक्रूरवर्णितमहोदयआदिदेवोगोपीजनातिविरहातुरचित्तचौरः ॥ २३ ॥ श्वाफल्कये
हितकरायनिजंस्वरूपमंतर्दधेजलचयेसचदर्शयित्वा ॥ संप्रापतत्रमथुरोपवनंपरेशोगोपालकैश्चसबलोमथुरांददर्श ॥२४॥ स्वैरंचरन्मधुपुरेरजकं
निकृत्यकृष्णःप्रदायचवरानथवायकाय॥ मालाकृतंसमनुकंप्यचकारकुब्जामृर्ज्वींधनुश्चसहसानमयन्बभञ्ज॥२५॥द्वारिद्विपश्चविनिहत्यनरेंद्रम-
ल्लोहत्वाप्रगृह्यविनिपात्यसरंगभूमौ ॥ कंसंहरिस्तुपितरावथमोचयित्वाबंधान्नृपंपुरिचकारमहोग्रसेनम् ॥२६॥ नन्दंप्रसाद्यबहुदानकरोयदुस्ता-
नाहूयतर्प्यसुधनैश्चनिवेदयित्वा ॥ विद्यामधीत्यददौप्रमृतंह्यपत्यंकृत्वावधंदनुजपञ्चजनस्यकृष्णः॥ २७ ॥गोपीजनान्समनुगृह्यसचोद्धवेनाक्रूरे
णहास्तिनपुरोत्वथपांडुपुत्रान् ॥ कृष्णोविजित्यबलिनंचजरासुतंचभस्मीचकारमुचुकुंददृशात्मकालम्॥ २८ ॥ निर्मायचाद्भुतपुरंस्थितयेत्रकृ-
ष्णोनिन्येचकुंडिनपुरात्किलभीष्मकन्याम् ॥ पुत्रेणशंबरमरिंनिजघानचादाद्राज्ञेमणिंयुधिविजित्यसऋक्षराजम् ॥२९॥ भामापतिःसचशिरः
शतधन्वनस्तुहत्वाह्युवाहसवितुश्चसुतांपरेशः ॥ आवंत्यराजतनुजांसजहारकृष्णःसत्यांस्वयंवरगृहेवृषभान्दमित्वा ॥ ३० ॥

उग्रसेनको राज्य दिया ॥२६॥ नन्दजीको बहुत दान देकर यादवोंको मथुरामें बुलाकर धन देकर बसाया, गुरुसे विद्या पढकर पंचजन दैत्यको मारकर, मरा हुआ पुत्र गुरुको वापस लाकर दिया ॥२७॥ फिर उद्धवको भेजकर गोपीजनपर कृपाकी, अक्रूरको हस्तिनापुरमें भेजकर पाण्डु पुत्रोंको राजीकर बली जरासंधको जीतकर मुचुकुंदकी दृष्टिसे कालयवनको जलाया ॥ २८ ॥ फिर समुद्रमें अद्भुत पुरको रचकर स्थितिके लिये वहाँ कुण्डिनपुरसे भीष्मककी कन्याको लाकर पुत्रसे शम्बरासुर शत्रुको मरवाया, फिर युद्धमें रीछोंके राजा जाम्बवान्को जीतकर उसकी पुत्री जाम्बवतीसे विवाह कर स्यमन्तक मणि लाकर उग्रसेनको दी ॥२९॥ फिर सत्यभामाके पति परेश श्रीकृष्णने शतधन्वाका शिर काटकर सूर्यसुता कालिन्दीसे विवाह किया, फिर अवन्त्य राजकी पुत्री सत्याको सात बैलोंको जीतकर हर लाये ॥ ३० ॥

कैकयराजकी पुत्री भद्राको और अखिल भद्रकी पुत्री लक्ष्मणाको हर लाये, फिर संग्राममें सेनासहित भौमासुरको शस्त्रोंसे जीतकर सोलह हजार कन्याऐं विवाह लीं ॥ ३१ ॥ फिर सत्यभामाकी इच्छासे स्वर्गमेंसे कल्पवृक्षको और सुधर्मा सभाको जीतकर लाये, जिन्होंने गोष्ठीमें बलदेवसे रुक्मीको मरवाया, और बाणासुरकी हजार भुजाओंके सौ सौ टुकडे कर दिये ॥ ३२ ॥ उन कृष्णने उग्रसेनके यज्ञके लिये जगत्को जीतनेके लिये अपने पुत्र शम्बरारि प्रद्युम्नको भेजा है, सो पृथ्वीके राजाओंको जीतकर केतुमालमें आया है उसके लिये हमारा नमस्कार है ॥ ३३ ॥ नारदजी कहते हैं–तब तो कृष्ण पुत्र प्रद्युम्नने उनके ऊपर प्रसन्न होकर कुण्डल, कडे, हीरा, मणि, मोती, घोडे, हाथी, उनको दिये ॥ ३४ ॥ वहाँ मन्मथशालिनीपुरीमें प्रद्युम्नको महान् संवत्सर (वर्ष) व्यतीत होगया, प्रजापतिने प्रद्युम्नको नमस्कार करके भेंट दी ॥ ३५ ॥ उसके बाद महाबाहु प्रद्युम्न दिव्य कामवनमें गये,

कैकेयराजतनुजांसजहारभद्रांश्रीलक्ष्मणामखिलभद्रपतेःसुतांच ॥ भौमंविजित्यसबलंयुधिशस्त्रसंघैर्निन्येचषोडशसहस्रवरांगनाश्च ॥३१॥ भामेक्षयासुरतरुंचसभांसुधर्मांशक्रंविजित्यसजहारकलत्रमित्रः ॥ योरुक्मिणंचनिजघानबलेनगोष्ठ्यांबाणस्यबाहुनिचयंशतधाच्छिनत्सः ॥ ३२ ॥ तेनोग्रसेनक्रतवेथजगद्विजेतुंसंप्रेषितोनिजसुतःकिलशंबरारिः ॥ योत्रागतोभुविविजित्यनृपान्समस्तान्छ्रीकेतुमालपतयेचनमोस्तुतस्मै ॥३३॥ श्रीनारदउवाच ॥ प्रसन्नःश्रीहरिःकार्ष्णिःकुण्डलेकटकानिच ॥ हीरान्मणीन्गजानश्वान्ददौतेभ्योमहामनाः ॥ ३४ ॥ पुर्य्यांमन्मथशालिन्यांव्यतिसंवत्सरोमहान् ॥ प्रद्युम्नायबलिंप्रादान्नमस्कृत्यप्रजापतिः ॥३५॥ अथकार्ष्णिर्महाबाहुर्दिव्यंकामवनंययौ ॥ जनैरगम्यंगम्यंचप्रजापतिदुहितृभिः ॥३६॥ सुन्दरंमन्मथाक्रीडंवृतंकामास्त्रतेजसा ॥ नारीणांयत्रपततिव्यसुर्गर्भोनवत्सरम् ॥३७॥ तदापरात्कामवनाद्विनिर्गतःश्रीपुष्पधन्वानृपपञ्चसायकः ॥ पीतांबरःश्यामतनुर्मनोहरस्ततानकोदण्डगुणध्वनिंस्मरः ॥३८॥ यद्बाणतोयादवपुंगवाःस्वतःससैनिकाःसाश्वगजाःपदातिभिः ॥ निपेतुरारात्किलकामविह्वलास्तद्बाणवेगस्यनवर्णनंभवेत् ॥ ३९ ॥ अथाशुकार्ष्णिर्जगदीश्वरेश्वरःप्रलीनतांप्रापजलेजलंयथा ॥ सद्योविसिस्मुर्यदवःससैनिकाविज्ञायपूर्णंनृपरुक्मिणीसुतम् ॥ ४० ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डे नारदबहुलाश्वसंवादेमन्मथदेशविजयोनामैकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥

जो काम्यवन प्रजापतिकी पुत्रियोंके लिये तो गम्य है, अन्य जनोंके लिये अगम्य है ॥३६॥ सुन्दर मन्मथाक्रीडन कामास्त्रोंके तेजसे भरा है, वहाँ स्त्रियोंका गर्भ गिर पडता है, वर्षभर नहीं रहता है ॥३७॥ वहाँ कामवनमेंसे निकले पुष्पोंका है धनुप जिसके, ऐसे पञ्चसायक, श्यामसुन्दर पीताम्बरधारी मनोहर कामदेवने अपने धनुषकी टंकार की ॥ ३८ ॥ जिसके बाणके मारे सब यादव श्रेष्ठ घोडे, हाथी, और पैदल सैनिकोंसहित भूमिमें गिर पडे, काममें विह्वल हो गये, उसके बाणके वेगका वर्णन नहीं हो सकता है ॥ ३९ ॥ फिर जगदीश्वर प्रद्युम्न कामदेवमें लीन होगये, जैसे जलमें जल मिल जाता है, तब समस्त यादव प्रद्युम्नको पूर्ण जानकर विस्मित होगये ॥ ४० ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां नारदबहुलाश्वसंवादे मन्मथ देश विजयो नामैकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥

जिसकी सीमाका पर्वत गन्धमादन विराजता है, जहाँ पापनाशिनी नारदजी कहते हैं–उसके बाद प्रद्युम्न केतुमाल खंडको जीतकर योगकी समृद्धियुक्त भद्राश्वखण्डमें गये ॥ १ ॥ जिसकी सीमाका पर्वत गन्धमादन विराजता है, जहाँ पापनाशिनी गंगा बहती है ॥ २ ॥ सब पापोंका छुडानेवाला वहाँ वेद क्षेत्र है, जहाँ महाबाहु हयग्रीव नित्य विराजते हैं ॥ ३ ॥ धर्मका पुत्र भद्रश्रवा उनकी सेवा करता है, गंगातीरके पुलिनमें प्रद्युम्न महात्माके सुनहरी वस्त्रोंके शिविर लगे ॥ ४ ॥ भद्राश्व देशके स्वामी, धर्मके पुत्र बडे पराक्रमी महात्मा भद्रश्रवाने प्रद्युम्नकी परिक्रमा देकर नमस्कार करके भेंट दी, फिर यह बोला ॥५॥ भद्रश्रवा बोला कि, तुम साक्षात् परिपूर्णतम भगवान् हो, साधुओंकी रक्षाके लिये जगत्को जीतनेके लिये निकले हो ॥६॥ हे भगवन् ! शम्बर नामके जिस दैत्य को आपने पहले मारा था, उसका छोटा भाई महादुष्ट उत्कच नामका है ॥ ७ ॥ गोकुलमें कृष्णचन्द्रसे मारे हुये शकटासुरका बडा भाई शकुनी महादुष्ट बडाबली है, हे देव ! आप

श्रीनारदउवाच ॥ अथकार्ष्णिर्महाबाहुःकेतुमालंविजित्यसः ॥ भद्राश्वंप्रययौधन्वीखंडंयोगसमृद्धिमत् ॥ १ ॥ यस्यसीमागिरिःसाक्षाद्राजतेगन्धमादनः ॥ सीतानाम्नीयत्रगंगाबहंतीपापनाशिनी ॥ २ ॥ वेदक्षेत्रेमहातीर्थेसर्वपापप्रमोचने ॥ हयग्रीवोमहाबाहुर्यत्रसंन्निहितोहरिः ॥३॥ भद्रश्रवाधर्मसुतस्तस्यसेवांकरोतिहि ॥ गंगातीरस्यपुलिनेप्रद्युम्नस्यमहात्मनः ॥ बभूवुःशिबिरव्यूहाहेमांबरमनोहराः ॥४॥ भद्रश्रवाधर्मसुतो महात्माभद्राश्वदेशाधिपतिर्महौजाः ॥ प्रदक्षिणीकृत्यननामभक्त्यादत्त्वाबलिंकृष्णसुतायचाह ॥५॥ भद्रश्रवाउवाच ॥ त्वंसाक्षाद्भगवान्पूर्णः परिपूर्णतमःस्वयम् ॥ साधूनांरक्षणार्थायजगज्जेतुंविनिर्गतः ॥६॥ भगवञ्छंबरोनामदैत्यःपूर्वंजितस्त्वया॥ तस्यभ्रातामहादुष्टःकनीयानुत्कचःस्मृतः ॥७॥ गोकुलेकृष्णचन्द्रेणमारितःशकटस्थितः ॥ तस्यभ्रातामहादुष्टोज्येष्ठोस्तिशकुनिर्बली ॥८॥ जेतुंयोग्यस्त्वयादेवनान्यैर्रपिकदाचन ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ कस्यवंशेसमुद्भूतःशकुनिर्नामदैत्यराट् ॥ ९ ॥ कस्मिनपुरेस्थितिस्तस्यबलंकिंवदधर्मज ॥ भद्रश्रवाउवाच ॥ कस्यपश्यमुनेर्दित्यामादिदैत्यौबभूवतुः ॥१०॥ हिरण्यकशिपुर्ज्येष्ठोहिरण्याक्षोनुजस्तथा॥हिरण्याक्षस्यतस्यापिबभूवुर्नवपुत्रकाः ॥११॥ शकुनिःशंबरोहृष्टोभूतसंतापनोवृकः ॥ कालनाभोमहानाभोहरिश्मश्रुस्तथोत्कचः ॥१२॥ देवकूटाद्दक्षिणाहिजठरस्यगिरेरधः॥ पुरीचन्द्रावतीनामदैत्यानांदुर्गमंडिता ॥ १३ ॥ शकुनिस्तत्रवसतिभ्रातृभिःषड्भिरावृतः ॥ यदायदाहिमुनयोयज्ञारंभंप्रकुर्वते ॥ १४ ॥

उसको जीत सकते हो, और कोई नहीं जीत सकता है ॥ ८ ॥ तब प्रद्युम्न बोले–दैत्योंका राजा शकुनि किसके वंशमें उत्पन्न हुआ है ॥ ९ ॥ कौनसे पुरमें रहता है, उसका कैसा बल है, हे धर्मके पुत्र ! तुम कहो, तब भद्रश्रवा बोला कि, कश्यपजीकी स्त्री दितिमें दो आदि दैत्य हुये ॥१०॥ उनमें बडा तो हिरण्यकशिपु और छोटा हिरण्याक्ष था, उस हिरण्याक्ष के नौ पुत्र हुये ॥ ११ ॥ शकुनि १, शंबर २, हृष्ट ३, भूतसंतापन ४, वृक ५, कालनाभि ६, महानाभ ७, हरिश्मश्रु ८, उत्कच ९, ये उनके नाम हैं ॥ १२ ॥ देवकूटके दाहिनी ओर जठर पर्वतके नीचे चन्द्रावती नामकी दैत्योंकी पुरी है, जिसके चारों ओर दुर्ग (किला) है ॥ १३ ॥ वहाँ वह शकुनि छः भाईयोंके साथ रहता है, जब जब मुनीश्वर यज्ञ का आरम्भ करते हैं ॥ १४ ॥

हे यदूत्तम ! हे सत्वतांपते । तब तब वह भंग कर देता है, और जिससे इन्द्रादिक दवताभी उद्विग्न हैं, ॥१५॥ हे देव ! देवताओंके शत्रु उस दैत्यको आपको जीतना चाहिये,आपने तो भक्तोंकी शान्तिके लिये सब जगत्‌को जीता है ॥१६॥ तुम प्रद्युम्न चतुर्व्यूह हो, गौ विप्र, साधु और वेद इनके पति हो, आपको नमस्कार है ॥१७॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे भद्रश्रवाने जब प्रार्थनाकी, तब साक्षात् प्रद्युम्न भगवान्‌ने भद्रश्रवा देवको "तुम भय मत करो" ऐसे अभयदान दिया ॥ १८ ॥ तब समर्थ प्रद्युम्न भगवान्‌ने सेना सहित चन्द्रावती पुरीको प्रस्थान किया ॥१९॥ तभी मेरे मुखसे "प्रद्युम्न आता है" ऐसे सुनकर वह शकुनि दैत्योंकी सभामें शूल उठाकर यह बोला ॥ २० ॥ बडा अच्छा हुआ,मेरा शत्रु प्रद्युम्न यहीं आगया है,हे दैत्यो ! मुझे उसको जीतना चाहिये,मेरे ऊपर भाईका ऋण चढ रहा है॥२१॥मेरे भाई शम्बरको पहले इसने मारा है,इस कारणसे सब यादवों सहित प्रद्युम्नको

तदातदाहितेनापिभंगोकारियदूत्तम ॥ यस्माच्चसंतिशक्राद्याउद्विग्नाःसात्त्वतांपते ॥१५॥ जेतुंयोग्यस्त्वयादेवदेवध्रुग्दैत्यपुङ्गवः ॥ त्वयाजितंजगत्सर्वंभक्तानांशांतिकारणात् ॥१६॥ प्रद्युम्नायनमस्तुभ्यंचतुर्व्यूहायतेनमः ॥ गोविप्रसुरसाधूनांछन्दसांपतयेनमः ॥१७॥ श्रीनारदउवाच ॥ ॥ एवंसंप्रार्थितःसाक्षात्प्रद्युम्नोभगवान्हरिः ॥ देवायभद्रश्रवसेमाभैष्टेत्यभयंददौ ॥ १८ ॥ अथकार्ष्णिर्महाबाहुःस्वसैन्यपरिवारितः ॥ पुरींचन्द्रावतींगन्तुंप्रस्थानमकरोत्तदा ॥ १९ ॥ मन्मुखाच्छकुनिःश्रुत्वाप्रागच्छंतंयदूत्तमम् ॥ दैत्यानांसदसिप्राहशूलमुद्यम्यदैत्यराट् ॥ २० ॥ ॥ शकुनिरुवाच ॥ दिष्ट्यादिष्ट्याहिशत्रुर्मेप्रद्युम्नोत्रसमागतः ॥ जेतुंयोग्योमयादैत्याभ्रातुर्मय्यस्तिप्राग्गृणम् ॥ २१ ॥ भ्रातामेशंबरोनामयेनपूर्वंचमारितः ॥ तस्मात्तंघातयिष्यामिप्रद्युम्नंयदुभिःसह ॥२२॥ तस्माद्यातबलंतस्यविध्वस्तंकुरुतासुराः ॥ पश्चात्पुरंदराधीशंघातयिष्यामिनिर्जरान् ॥ २३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिश्रुत्वावचस्तस्यदैत्योहृष्टोमहाबलः ॥ आययौसंमुखेयोद्धुंदैत्यकोटिसमावृतः ॥ २४ ॥ प्रद्युम्नोभगवान्साक्षाल्लीलामानुषविग्रहः ॥ महत्यास्सर्वसेनायागृध्रव्यूहंचकारह ॥२५॥ गृध्रचंचौवर्तमानोनिरुद्धोधन्विनांवरः ॥ ग्रीवायामर्जुनःपृष्ठेसांबोजांबवतीसुतः ॥ २६ ॥ पादयोरुभयोराजन्नास्थितौदीप्तिमद्गदौ ॥ पार्ष्णिःसाक्षात्तदुदरेपुच्छेभानुर्हरेःसुतः ॥ २७ ॥ बभूवतुमुलंयुद्धंसीतागंगातटेनृप ॥ दैत्यानांयदुभिःसार्धमब्धीनामब्धिभिर्यथा ॥ २८ ॥

मैं मारूँगा ॥२२॥ इससे तुम जाओ,उनकी सेनाका विध्वंस करो,मैं इन्द्रको और देवताओंको मारूँगा ॥ २३ ॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे उसके वचन सुनकर बडा बलवान् हृष्ट नामका दैत्य एक करोड दैत्योंको साथ लेकर सन्मुख युद्ध करनके लिये आया ॥२४॥तब प्रद्युम्न भगवान् जिन्होंने लीलासे मनुष्य देह धारण किया है. उन्होंने अपनी बडी भारी सेनाका गृध्रव्यूह बनाया ॥२५॥ उस गीधकी चोंचकी जगह तो धनुर्धारियोंमें मुख्य अनिरुद्धजी स्थित हुये; ग्रीवाके स्थानमें अर्जुन स्थित हुये, और पीठके स्थानमें जाम्ववतीके पुत्र साम्ब खडे हुये ॥२६॥ हे राजन् ! दोनों पांवोंकी जगह दीप्तिमान् और गदस्थित हुये, और उस गीधकी पेटकी जगह प्रद्युम्न आपही खडे हुये,और गीधकी पूँछकी जगह कृष्णके पुत्र भानु खडे हुये ॥ २७ ॥ तब हे नृप ! सीता नामकी गंगाके तटपर दैत्योंका और यादवोंका घोर संग्राम हुआ, जैसे समुद्रोंका परस्पर तरंगोंसे संग्राम होता है ॥ २८ ॥

बाण, त्रिशूल, मुसल, मुद्गर, तोमर और पोलादी आदि शस्त्रोंकी इस प्रकार संग्राममें वर्षा होने लगी, जैसे बादलोंमेंसे बूँद बरसती हों ॥२९॥ तब सेनाके पावोंकी रजसे सूर्य और आकाश दोनों ढक गये, हे राजन् ! जैसे वर्षाके बादल सूर्यको और आकाशको ढक लेते हैं॥३०॥ वृक, हर्ष, अनिल, गृध्र, वर्धन, उन्नाद,महाश, पावन,वह्नि,और क्षुदि ॥३१॥ ये मित्रविंदाके दश पुत्र दैत्योंसे लडे, जब बाणोंका अन्धकार मचा, तब हरिका पुत्र वृक ॥३२॥ सबके आगे आकर धनुष टंकारता हुआ बाणोंसे दैत्योंको छेदने लगा, जैसे कुवाक्योंसे मित्रताको ॥३३॥ हाथियोंको, रथियोंको, घोडोंको, वीरोंको पृथ्वीमें गिराने लगा, कटे हैं कवच, धनुष जिनके ऐसे वे वीर रणभूमिमें गिर पडे ॥३४॥ वृकके बाणोंसे कटे हैं पांव और भुजा जिनकी ऐसे वीर नीचेको मुख किये, ऊपरको मुख किये, गिर पडे, जैसे जडके कटनेसे वृक्ष ॥३५॥ रणके आंगनमें फूटे भांड समूहकी तरह पडे हुये आहत (घायल) शोभित

बाणौस्त्रिशूलैर्मुसलैर्मुद्गरैस्तोमरर्ष्टिभिः ॥ ववृषुर्दानवाःसर्वेधाराभिरिववारिदाः ॥२९॥ रुरोधसूर्यंचाकाशंसैन्यपादरजोभृशम्॥राजन्स्वबाणंच यथावारिदाप्रावृडुद्भवाः ॥३०॥ वृकोहर्षोनिलोगृध्रोवर्धनोन्नादएवच ॥ महाशःपावनोवह्निःक्षुदिश्चदशमःस्मृतः॥३१॥ मित्रविंदात्मजाह्येतेयुयुधुर्दानवैःसह॥बाणांधकारेसंजातेवृकोनामहरेःसुतः ॥ ३२ ॥ सर्वेषामग्रतःप्राप्तोधनुष्टंकारयन्मुहुः ॥ दैत्यान्बिभेदबाणौघैःकुवाक्यैर्मित्रतामिव ॥३३॥ गजान्रथान्हयान्वीरान्पातयामासभूतले॥निपेतुश्छिन्नकवचाश्छिन्नचापारणांगणे॥३४॥ वृकबाणैर्भिन्नपादावृक्षावातहताइव॥अधोमुखा ऊर्ध्वमुखाबाणौघैश्छिन्नबाहवः ॥ ३५ ॥ रेजूरणांगणेराजन्भांडव्यूहाइवाहताः ॥ द्विधाभूतागजाबाणैःपतितारणमंडले॥ ३६ ॥ विरेजूच्छुरिकाविद्धाःकूष्मांडशकलाइव ॥ तदैवहृष्टःसंप्राप्तःसिंहारूढोमहाबलः ॥३७॥ बिभेदकवचंतस्यशिंजिनींदशभिःशरैः ॥ चतुर्भिश्चतुरोवाहान्द्वाभ्यांसूतंध्वजंतथा ॥ ३८ ॥ त्रिभीरथंचबाणानांविंशत्यादनुजाधिपः॥ छिन्नधन्वावृकोभूत्वाहताश्वोहतसारथि॥३९॥ अन्यंरथंसमारूढोधनुर्जग्राहरोषतः॥तावत्तस्यधनुर्हृष्टश्चिच्छेदसमरेसुरः ॥४०॥ तदागदांसमादायवृकोयादवपुंगवः॥तताडमूर्ध्निपंचास्यंदैत्यंपृष्ठास्थितंपुनः॥४१॥

हुये, रण भूमिमें बाणोंसे दो दो टुकडे हुये पडे हाथी ॥३६॥ छुरीसे कटे कोंहडेके खंडोंकी तरह दिखाई देने लगे, तभी हृष्ट नामका दैत्य सिंहपर चढकर आया ॥३७॥ उसने दश बाणोंसे तो वृककी प्रत्यंचा और कवच, चार बाणोंसे चारों घोडे, दो बाणोंसे सारथी और तीन बाणोंसे ध्वजा काट डाली ॥३८॥ बीस बाणोंसे रथ काट डाला, तब वृकके धनुष, बाण, रथ, घोडे, कवच, सारथी सब कट गये, विरथ रथके विना, होगया ॥ ३९ ॥ तब वृक दूसरे रथपर बैठकर क्रोधसे धनुष लेकर खडा हुआ, तब वह धनुष हृष्टने काट डाला ॥ ४० ॥ तब यादवोंमें श्रेष्ठ वृकने गदा लेकर पीछे खडे पांच मुखके हृष्ट दैत्यके मारी ॥ ४१ ॥

तब हृष्टका सिंह क्रोधसे उछल २ कर नखोंसे, दांतोंसे, पंजोंसे, अनेकोंको गिराने लगा ॥४२॥ भीषण हुंकार करके जीभ लपलपाते, सर हिलाते हुये सिंहने वृकको आकर गिरा दिया, केलेके दण्डको हाथी जैसे गिराता है ॥४३॥ तब वृकने सिंहको पकडकर पृथ्वीमें गिरा दिया, और उसके ऊपर गर्जना कर चढ बैठा, मल्लके ऊपर मल्ल जैसे चढता है॥४४॥ फिर बलसे उछलकर बलपूर्वक शरीरको चबाते उस सिंहको देखकर बली मित्रविन्दाके पुत्र वृकने उस सिंहके घूंसा मारा ॥ ४५ ॥ उस घूंसेके प्रहारसे सिंह मर गया, तब तो हृष्ट दैत्यने क्रोधके मारे त्रिशूल फेंका ॥४६॥ बिजली जैसे चमकते आ रहे त्रिशूलको वृकने तेजधारवाली तलवारसे काट दिया, जैसे सर्पको गरुड काट डालता है ॥४७॥ तब हृष्ट दैत्यने भी अपनी तलवार लेकर पृथ्वीको कम्पाते हुये महाबली वृकके सिरमें मारी ॥४८॥ तब बली वृकने अपनी तलवारकी म्यान पर दैत्यकी तलवारको रोककर तेजधार वाले खड्गको

मृगेंद्रः क्रोधसंपूर्णः समुत्पत्यरणांगणे॥ अनेकान्पातयामासनखैर्दंतैः करैरपि ॥४२॥ हुंकारभीषणंकृत्वाललज्जिह्वः स्फुरत्सटः॥ वृकंसंपातयामा-
सरंभादंडंगजोयथा ॥४३॥ गृहीत्वातुवृकोदोर्भ्यांपातयित्वामहीतले ॥ तस्योपरिनदंस्तस्थौमल्लोमल्लंयथानृप ॥ ४४ ॥ उत्पतंतंपुनःसिंहंचर्व-
यंतंतनुंबलात् ॥ तताडमुष्टिनातंवैमित्रविंदात्मजोबली ॥ ४५ ॥ तस्यमुष्टिप्रहारेणकेसरीपंचतांगतः ॥ तदाक्रुद्धोहृष्टदैत्यःशूलंचिक्षेपसत्त्वरम्
॥ ४६ ॥ शूलंस्फुरन्महोल्काभंचिच्छेदत्वसिनावृकः ॥ तीक्ष्णयातुंडयाराजन्फणिनंगरुडोयथा ॥४७॥ हृष्टोपिस्वमसिंनीत्वानादयन्स्वंमहा-
बलम् ॥ जघानतंवृकंमूर्ध्निकंपयन्वसुधातलम् ॥४८॥ खड्गकोशेततःखड्गमुपधार्यवृकोबली ॥ कंधरेस्वेनखड्गेनतंततताडस्फुरच्छुचम् ॥४९॥
खड्गच्छिन्नंशिरस्तस्यदैत्यस्यपतितंभुवि ॥ रेजेकमंडलुमिवसकिरीटंसकुंडलम् ॥५०॥ हृष्टेमृतेतदादैत्याःशेषाः सर्वेपलायिताः ॥ भयातुरामहा-
राजययुश्चन्द्रावतींपुरीम् ॥ ५१ ॥ देवदुंदुभयोनेदुर्नरदुंदुभयस्तदा ॥ श्रीवृकस्योपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥५२॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांवि-
श्वजित्खंडेनारदबहुलाश्वसंवादेहृष्टदैत्यवधोनामद्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ हृष्टंनिपतितंश्रुत्वाशकुनिः क्रोधमूर्च्छितः ॥
भ्रातॄन्संप्रेषयामासदेवानांभयकारकान् ॥१॥ भूतसंतापनंनामगजमारुह्यनिर्गतः ॥ वृकःखरंसमारुह्यकालनाभोथसूकरम् ॥२॥ महानाभोम-
त्तपुष्टं हरिश्मश्रुस्तिमिंगिलम् ॥ वैजयंतंरथंजैत्रंमयदैत्यविनिर्मितम् ॥ ३ ॥

हृष्टदैत्यकी गर्दनमें मारा ॥४९॥ तभी खड्गसे कटकर दैत्यका सिर पृथ्वीमें आ पडा, किरीट, कुण्डल सहित वह शिर कमण्डलु जैसा शोभित हुआ ॥ ५० ॥ हे महाराज ! हृष्टके मर जानेपर बाकीके सब दैत्य भयके मारे भागकर चन्द्रावतीपुरीमें चले गये ॥५१॥ तब देवताओंके और मनुष्योंके नगाडे बजने लगे और वृकके ऊपर देवता पुष्पोंकी वर्षा करने लगे ॥ ५२ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां हृष्टदैत्यवधो नाम द्वात्रिंशोध्यायः ॥ ३२ ॥ नारदजी कहते हैं हृष्टको मरा हुआ सुनकर अत्यन्त क्रोधित हुये शकुनिने देवताओंको भय करनेवाले भाइयोंको भेजा ॥१॥ तब भूत संतापन नामका दैत्य हाथीपर चढकर निकला, वृकदैत्य गधापर चढकर और कालनाभ दैत्य सूअरपर चढकर निकला ॥ २ ॥ महानाभ नामका दैत्य मत्त पुष्ट हाथीपर बैठकर निकला और हरिश्मश्रु दैत्य मगरपर, वैजयंत दैत्य मयदैत्यके बनाये हुये रथपर चढकर आये ॥ ३ ॥

हजार घोडे जिसमें लगे, पांच योजनका जिसका विस्तार, सौ पताकायें जिसमें लगीं, जो मायामय है, इच्छापूर्वक चलता है ॥४॥ हजार कलश जिसमें, मोतियोंकी मालासे शोभित, रत्नोंके भूषणोंसे शोभित चन्द्रमा जैसा उज्ज्वल ॥५॥ जिसमें हजार पहिये लगे; बहुतसे घंटा जिसमें, ऐसे रथपर चढकर शकुनि लडनेकी इच्छासे पीछेसे आया ॥६॥ हे मैथिलेश्वर ! दैत्योंकी बारह अक्षौहिणी सेना लेकर आया, धनुषकी टंकार, वीरोंके घोष, घोडोंकी हिनहिनाहट, रथोंके खनखनाहटके शब्दोंसे ॥७॥ हाथियोंकी चीत्कारोंसे दिशायें झंकारने लगीं, ऐसे दैत्योंकी सेनाके प्रयाणसे भूमण्डल कांपने लगा ॥८॥ अनेक पर्वत गिर पडे, समुद्र चलायमान हो गये, और हे नृप ! देवताओंने अमरावतीपुरीमें बेवडे डाल दिये ॥९॥ उस भयंकर सेनाको देखकर धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ, बडे बली, धर्मधारी, प्रद्युम्न मुख्य यादवोंसे यह बोले ॥१०॥ यह शरीर पंचभूतका बना है, जलके फेनके समान है, कर्म और गुणादिक

पंचयोजनविस्तीर्णंसहस्राश्वनियोजितम् ॥ मायामयंकामगंचपताकाशतसंवृतम् ॥४॥ सहस्रकलशाढ्यंचमुक्तादामविलंबितम् ॥ रत्नभूषणभूषाढ्यंशतचंद्रसमुज्ज्वलम् ॥ ५ ॥ सहस्रचक्रसंयुक्तंघटाकारविभूषणम् ॥ आरुह्यशकुनिःपश्चाद्योद्धुकामोविनिर्ययौ ॥ ६ ॥ अक्षौहिणीभिर्द्वादशभिर्दैत्यानांमैथिलेश्वर ॥ धनुःस्वनैर्वीरशब्दैरश्वहेषारथस्वनैः ॥७॥ चीत्कारैर्हस्तिनामाशांमंडलंतुजगर्जह ॥ दैत्यसेनाप्रयाणेनचकंपेमंडलंभुवः ॥८॥ निपेतुर्गिरयोनेकाविचेलुःसिंधवोनृप ॥ निपातितार्गलादेवैर्बभूवाश्वमरावती ॥९॥ तत्सैन्यंभीषणंदृष्ट्वाप्रद्युम्नोधन्विनांवरः ॥ बलीधैर्यकरःकार्ष्णिःप्राहेदंयदुपुंगवान् ॥ १० ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ इदंशरीरभुविपांचभौतिकंफेनोपमंकर्मगुणादिनिर्मितम् ॥ गतागतंकालवशंकदापिहिबुधानशोचंतियथार्भकैःकृतम् ॥११॥ गच्छंतिचोर्द्ध्वंकिलसात्त्विकाजनामध्येचतिष्ठंतिहिराजसानराः ॥ अधःप्रगच्छंतिहितामसाःपरेमुहुर्मुहुस्तेविचरंतिकर्मभिः ॥ १२ ॥ बिभेत्ययंवाकिलसर्वतोयथानेत्रभ्रमेणाचलतीवभूर्यथा ॥ तथाचसर्वंमनसाकृतंजगत्काचेभर्कंह्यर्भकआवृतोयथा ॥ १३ ॥ यथासुखंमण्डलवर्तिनांचलंतथास्तिपातालनिवासिनामपि ॥ तथामराणांक्रतुभिः कृतंस्मरेत्सर्वंत्यजेत्तत्तृणवत्परोजनः ॥१४॥ ऋतोर्गुणादेहगुणाःस्वभावाअहर्दिनंयांतियथातथाजनाः ॥ दृश्यंचयद्यन्नहिकिंचिदस्तितद्यथाव्रजेगच्छतिपांथसंगमम् ॥ १५ ॥

से निर्मित है, कालके वश है, इससे आना जाना है, यह जगत् बालकके खेल जैसा है, इसीसे बुद्धिमान् मनुष्य शोच नहीं करते हैं ॥११॥ सत्त्वगुणी तो स्वर्गको जाते हैं, रजोगुणी बीचमें रहते हैं, तमोगुणी पातालको जाते हैं, ऐसे बारंबार कर्मोंसे विचरते हैं ॥१२॥ जैसे नेत्रके घूमनेसे धरती घूमती दीखती है, वैसे ही यह सब जगत् मनका किया हुआ है, और सब ओरसे इसको भय है, सो यह भयभीत रहता है, किन्तु करता है, जैसे बालक काचमें अपने ही रूपसे भ्रमित हो जाता है ॥१३॥ जैसे मण्डलवर्ती राजाओंका सुख चलायमान है वैसे ही पातालवासियोंका है, वैसे ही यज्ञादिकका किया स्वर्गका सुख स्वर्गवासियोंका है उसको परम जन तृणकी तरह त्याग देते हैं ॥१४॥ जैसे ऋतुके गुण और देहके गुण अमित हैं, नित्य आते जाते हैं, वैसे ही जन आते जाते हैं, मार्गके साथ जैसा है, जितना कुछ दृश्य है, वह सब है नहीं, वास्तवमें सब मिथ्या ही है ॥ १५ ॥

जो वस्तु दीखती है, वह सब विजलीकी तरह क्षणिक है, और पर भगवान् प्राप्त हो जानेपर तो दोनों लोकोंसे क्या प्रयोजन है, अर्थात् कुछ भी नहीं कल्याणके मार्गको बनाकर, सर्वत्र हरिको देखते हुये विचरण करो ॥१६॥ जैसे बहुतसे जलके घडोंमें एकही चन्द्रमा अनेक रूपसे दीखता है, वैसेही अपनी बनाई हुई देहोंमें एक भगवान्, अनेक रूप दिखाई देते हैं, जैसे एक अग्नि सौ ऊपलों (कण्डों) में सौ रूपसे दीखती है, ऐसेही परमात्मा भगवान् अपने बनाये देहधारियोंमें एक रूप हैं किन्तु अनेक रूपसे सबके बाहर भीतर दीखते हैं ॥ १७ ॥ जो ज्ञाननिष्ठ हो, वैराग्ययुक्त हो, कृष्णका भक्त हो, और जिसको कामना नहीं हो, वह चाहे तपोवनमें हो,अथवा वनही घर जिसके हो, उसको तीनों गुण स्पर्श नहीं करते हैं ॥१८॥ इससे संन्यासी परात्पर ब्रह्मको प्राप्त होता है, सदा आनन्दमय सुखरूप बालककी तरह रहता है, सब कारणको देहसे देखता भी है, किन्तु मदिरासे मदान्धकी तरह उसको अपनी देहकी सुधि (खबर) नहीं रहती है, जैसे मत्त मनुष्यको अपने वस्त्रकी सुधि नहीं होती है ॥ १९ ॥ सूर्योदय होनेपर जैसे अंधकार दूर हो जाता है, और घरकी वस्तु

दृष्टंयथावस्तुयदोल्कयातथापरेगतोकिंह्युभयप्रयोजने॥ विधायमार्गंविचरेच्छिवस्यतंपश्यन्हिसर्वत्रहरिंपरेश्वरम् ॥१६॥ यथैंदुरेकोजलपात्रवृन्द
गोयथाग्निरेकोविदितःसमिच्चये॥ तथापरात्माभगवाननेकवत्सोंतर्बहिःस्यात्सुकृतेषुदेहिषु ॥१७॥ योज्ञाननिष्ठोतिविरागमाश्रितः श्रीकृष्णभक्त-
स्त्वनपेक्षकोपियः ॥ तपोवनंवापिगृहंगृहंवनंस्पृशंतितंतेत्रिगुणानसर्वतः ॥१८॥ ततोयतिस्त्वध्यगमत्परात्परं सुखीसदानन्दमयस्तुबालवत् ॥
देहेनपश्यत्युतसर्वकारणंधृतंचवासोमदिरामदांधवत् ॥१९॥ सूर्योदयेसर्वतमोविलीयतेप्रदृश्यतेवस्तुगृहेयथाजनैः ॥ ज्ञानोदयेऽज्ञानतमःपलायते
संभ्राजतेब्रह्मपरंतनौतथा ॥२०॥ यथेंद्रियाणांचपृथक्चवर्त्मभिर्नानीयतेर्थस्त्रिगुणाश्रयःपरः॥ एकंह्यनंतस्यपरस्यधामतत्तथामुनीनांकिलशास्त्रव-
र्त्मभिः ॥ २१ ॥ परंपदंकेपिवदंतिवैष्णवंकेवापिवैकुण्ठपरंपरेशम् ॥ शांतिंचयत्केपितमः परंबृहत्कैवल्यमेकेप्रवदन्तिधामके ॥ २२ ॥
यदक्षरंकेपिदिशंवदंतिकेगोलोकमाद्यंप्रवदंत्यथापरे ॥ केचिन्निकुंजंनिजलीलयावृतंप्राप्नोतिकृष्णस्यपदंचतन्मुनिः ॥२३॥ श्रीनारदउवाच ॥
इतिकार्ष्णेर्वचः श्रुत्वासर्वेयादवपुंगवाः ॥ शस्त्राणिजगृहुर्हृष्टातज्ज्ञानेधैर्यवर्द्धने ॥ २४ ॥

सब जनोंको दिखाई देती है, वैसेही ज्ञान उदय होनेपर अज्ञान रूपी अंधकार दूर हो जाता है, और ब्रह्मका प्रकाश होता है ॥२०॥ जैसे इन्द्रियोंके पृथक् २ ज्ञानसे त्रिगुणाश्रय जो अर्थ है, वह पृथक् २ दीखता है, हाथसे गरम ठण्डा, जीभसे खट्टा मीठा, नेत्रसे काला पीला, नाकसे सुगन्ध दुर्गन्ध, वैसेही मुनियोंके मार्गसे एक ब्रह्म अनेक तरहसे कहा जाता है ॥२१॥ कोई तो वैष्णव परमपद कहते हैं, कोई वैकुण्ठ कहते हैं, कोई शान्त स्वरूप कहते हैं, कोई मायासे परे ब्रह्म कहते हैं, कोई कैवल्यधाम कहते हैं ॥२२॥ कोई अक्षर, कोई आद्य, कोई निकुञ्ज लीलावृत गोलोकवासी, कोई कृष्ण कहते हैं, उसी पदको मुनि प्राप्त होते हैं ॥ २३ ॥ नारदजी कहते हैं--ऐसे कृष्णके पुत्र प्रद्युम्नका वचन सुनकर, धैर्यको बढानेवाला ज्ञान सुनकर, समस्त यादव श्रेष्ठोंने प्रसन्न होकर शस्त्र ग्रहण कर लिये ॥ २४ ॥

तब दैत्योंका और यादवोंका सीता गंगाके किनारेपर भयंकर युद्ध हुआ, जैसाकि वन्दरोंका और राक्षसोंका समुद्रके तटपर लंकामें युद्ध हुआ था ॥२५॥ वहाँ रथियोंसे रथी, घुडसवारोंसे घुडसवार, पैदलोंसे पैदल, हाथियोंसे हाथी युद्ध करने लगे ॥२६॥ कोई उन्मत्त हाथी महावतोंके प्रेरित किये हुये, मेघडम्बरसे छूटे पर्वतोंकी तरह दीखने लगे ॥ २७ ॥ सूंडोंसे पकडकर फुंकारोंसे, चिक्कारोंसे सांकलोंसे, रथ, घोडे, और वीरोंको रणमें गिराने लगे ॥ २८ ॥ सूंडोंसे रथोंको घोडोंको, और रथियोंको पकडकर पृथ्वीमें मारकर फिर बलसे उनको उठा करके आकाशमें फेंकने लगे ॥२९॥ और हे राजन् ! घायल होगये बहुतसे हाथी रणभूमिमें भागते कोई कोईको सूंडोंसे चीरकर पांवोंसे हाथी, रथ, और घोडोंको मर्दन करने लगे ॥ ३० ॥ और हे राजन् ! उडनेवाले घोडे सवारोंके प्रेरित किये हुये, रथोंको उल्लंघित कर हाथियोंके माथेपर चढते हैं ॥३१॥ कोई कोई घोडोंके सवार बर्छी

बभूवतुमुलंयुद्धंदैत्यानांयदुभिः सह ॥ सीतागंगातटेचाब्धौरक्षसांकपिभिर्यथा ॥२५॥ रथिनोरथिभिस्तत्रपत्तिभिःपत्तयोनृप ॥ अश्ववाहैरश्ववाहायुयुधुश्चगजागजैः ॥२६॥ केचित्करींद्राउन्मत्तामहामात्यैःप्रणोदिताः ॥ गिरींद्राइवदृश्यंतेमुक्तानांमेघडंबरैः ॥२७॥ शुण्डादण्डैश्च फूत्कारैः सचीत्कारैःसश्रृंखलैः ॥ पातयंतोरथानश्वान्वीरान्राजन्नृणांगणे ॥२८॥ शुण्डादण्डैःसंगृहीत्वारथान्साश्वान्ससारथीन् ॥ निपात्यभूमावुत्थाप्यचिक्षिपुश्चांबरेबलात् ॥२९॥ कांश्चिन्ममर्दुःपादाभ्यांसंविदार्यकरैर्दृढैः ॥ सक्षताश्चगजाराजन्प्रधावंतोरणांगणे ॥ ३० ॥ सपक्षास्तुरगाराजन्नश्ववाहप्रणोदिताः ॥ उल्लंघयन्तोऽथरथान्गजकुंभांतरेगताः ॥३१॥ केचिदश्वैर्महावीराःशक्तिहस्तामदोत्कटः ॥ जघ्नुर्गजस्थान्नृपतीन्मृगेन्द्रानथयूथपान् ॥ ३२ ॥ अश्वारूढाकेपिसेनांसंविदार्य्यविनिर्गताः ॥ खड्गवेगैःपद्मवनंलीलाभिर्वायवोयथा ॥ ३३ ॥ केचित्परस्परंसाश्वैरुत्पतंतोरणांगणे॥खड्गैर्जघ्नुर्यथाक्रव्येचंचुभिःपक्षिणोंबरे ॥३४॥ केचिच्चत्खड्गैःपरशुभिःकेचिच्चक्रैःपदातयः ॥ चिच्छिदुर्निशितैर्भल्लैः फलानीव शिरांसिच ॥ ३५ ॥ संग्रामजिद्बृहत्सेनः शूरप्रहरणोविजित् ॥ जयःसुभद्रोवामश्चसत्यकोश्वयुरेवहि ॥ ३६ ॥ भद्रायाश्चसुताह्येतेश्रीकृष्णस्यौरसाःशुभाः ॥ सर्वेषामग्रतःप्राप्तायुयुधुर्दैत्यपुंगवैः ॥ ३७॥ भूतसंतापनोनामगजारूढोमहासुरः ॥ यदुसैन्येमहाराजचक्रेनाराचदुर्दिनम् ॥ ३८॥ बाणांधकारेचकृतेभूतसंतापनेनवै ॥ संग्रामजित्तदाप्राप्तः श्रीकृष्णस्यसुतोबली ॥ ३९ ॥

धारी मदसे उत्कट महावीर हाथियोंपर बैठे राजाओंको मारने लगे, जैसे सिंह हिरणोंको और हाथियोंको मारता है ॥३२॥ घुडसवार खड्गके वेगसे सेनाको काटते २ वाहर निकल आते हैं, जैसे पवन कमलवनको ॥ ३३ ॥ कोई आपसमें घोडोंसहित उछल २ कर खड्गोंसे उस रणभूमिमें मारते हैं, मांसको आकाशमें चञ्चुओंसे पक्षी जैसे ॥ ३४ ॥ कोई कोई पैदल खड्गोंसे, फरसोंसे चक्रोंसे, तीखे भालोंसे, फलकी तरह शिरोंको काटते हैं ॥३५॥ फिर संग्रामजित् बृहत्सेन, शूर, प्रहरण, विजित्, जय, सुभद्र, वाम, सत्यक, अश्वयु ये दश श्रीकृष्णके और सुभद्राके पुत्र सबसे आगे दैत्योंसे लडनके लिये आये, और बडे बडे दैत्योंसे लडने लगे ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ तब भूतसंतापन नामका दैत्य हाथीपर चढकर आया, सो उसने हे महाराज ! महाबली यादवोंकी सेनामें बाणोंसे दुर्दिनकर दिया ॥३८॥ ऐसे जब भूतसंतापनने बाणोंका अंधकार कर दिया, तब श्रीकृष्णका पुत्र बली संग्रामजित् आया॥३९॥

तब रणमें संग्रामजित्ने सौ बाण भूत संतापनके मारे, तब प्रलयके समुद्रकी गर्जनाके समान शब्दवाली॥४०॥ उसके धनुषकी प्रत्यंचा बली भूत संतापनने काट डाली तब संग्रामजित्ने बिजलीके समान प्रभावाला दूसरा धनुष लेकर ॥ ४१ ॥ विधान पूर्वक उसको चढाकर सौ बाण छोडे, वे बाण उसकी प्रत्यंचा और लोहमय कवचको ॥४२॥ भेदकर छेदकर तथा हाथीको भेदकर और भूत संतापनके शरीरको छेदकर पृथ्वीमें चले गये, बाणोंके प्रहारसे कुछ ब्याकुल हुये ॥४३॥ भूत संतापनने अपना हाथी पेला (प्रेरित किया), कालांतकके समान हाथीको देखकर बली संग्रामजितने ॥४४॥ रण भूमिमें अपनी तेज धारवाली तलवार मारी, उस खड्गके प्रहारसे हाथीकी सूंडके दो टुकडे होगये ॥४५॥ तब उत्कट चीत्कार करता, मस्तकसे मद गिराता, भूत संतापनको छोडकर भुवनको कँपाता हुआ वह हाथी ॥४६॥ बडे २ वीरोंको गिराता, घंटानादोंसे शब्द करता हुआ, दैत्योंने बहुत रोकाभी किन्तु

विव्याधबाणशतकैर्भूतसंतापनंरणे ॥ प्रलयार्णवसंघोषभीमसंघट्टनादिनीम् ॥४०॥ धनुर्ज्यांतस्यचिच्छेदभूतसंतापनोबली ॥ संग्रामजिद्धनुश्चा-न्यद्गृहीत्वास्वंतडित्प्रभम् ॥ ४१ ॥ सज्यंकृत्वाविधानेनशतंबाणान्समादधे ॥ तेबाणास्तद्धनुर्ज्यांचकवचंलोहनिर्मितम् ॥४२॥ भित्त्वाछि-त्त्वातनुंतस्यगजंभित्त्वावनिंगताः ॥ बाणप्रहारव्यथितःकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥४३॥ गजंस्वंनोदयामासभूतसंतापनोबली ॥ कालांतकसमं नागंदृष्ट्वासंग्रामजिद्बली ॥४४॥ गृहीत्वास्वमसिंदिव्यंसंजघानरणांगणे ॥ तस्यखड्गप्रहारेणशुंडादंडोद्विधाभवत् ॥४५॥ चीत्कारमुत्कटंकुर्व-न्मदंसंस्रावयन्कटात्॥ भूतसंतापनंत्यक्त्वाभुवनंकंपयन्गजः ॥४६॥ निपातयन्महावीरान्घंटानादैर्नदन्मुहुः॥ नबलात्स्तंभितोदैत्यः पुरींचंद्रा-वतीं ययौ ॥४७॥ कोलाहलोमहानासीद्गजन्नेवंगजेच्युते ॥ भूतसंतापनश्चक्रंश्रीकृष्णस्यसुतायवै ॥ ४८ ॥ चिक्षेपनिशितंशीघ्रंग्रीष्ममार्तंडव-त्स्फुरत् ॥ तदागतंभ्रमद्दृष्ट्वाचक्रंभद्रात्मजोबली ॥४९॥ स्वचक्रेणमहाराजलीलयाशतधाच्छिनत् ॥ जठरस्यगिरेः शृंगंसमुत्पाटचमहासुरः ॥ ॥५०॥ चिक्षेपकृष्णपुत्रायनादयन्व्योममंडलम् ॥ संग्रामजित्तच्छृंगंगृहीत्वाभुजयोर्बलात् ॥५१॥ तताडतेनराजेंद्रभूतसंतापनंरणे ॥ भूतसं-तापनोदैत्यःसंपूर्णजठरंगिरिम् ॥ ५२ ॥ गृहीत्वासंगरेतस्थावुद्भटोदैत्यपुंगवः ॥ अनेनघातयिस्यामित्वांरणेप्रवदन्मुखात् ॥ ५३ ॥

रुका नहीं और चन्द्रावती पुरीको चला गया ॥४७॥ जब हाथी छूटा तो बड़ा कोलाहल हुआ, तब भूत संतापनने कृष्णके पुत्रके ऊपर बड़ा तीखा चक्र फेंका ॥ ४८ ॥ उस बडे तीखे, ग्रीष्म ऋतुके सूर्यके समान चमकते, घूमते हुये आये चक्रको देखकर भद्राके पुत्रने ॥४९॥ अपने चक्रसे सहजमेंही सौ टुकडे करके गिरा दिया, तब उस महा असुरने जठर पर्वतके शिखरको उखाड कर ॥ ५० ॥ आकाश मण्डलको शब्दायमान करते हुये, संग्रामजित्के ऊपर फेंका, संग्रामजित्ने दोनों भुजाओंसे पकड करके ॥ ५१ ॥ युद्धमें वही पर्वत भूत संतापनके मारा, तब भूत संतापन सम्पूर्ण जठर पर्वतको उखाडकर ॥ ५२ ॥ संग्राममें खडा हुआ, और यह बोला—इस रणमें मैं तुमको इस पर्वतसे मार डालूँगा ॥ ५३ ॥

तब बली संग्रामजित् देवकूट पर्वतको उखाडकर यह बोला कि, इससे मैं तुमको मार डालूँगा, यह कहकर ॥५४॥ उसके सामने खडा हुआ, तब बडा आश्चर्य हुआ, जब भूत संतापन पर्वत फेंकने लगा ॥५५॥ तभी संग्रामजित्ने अपना पर्वत फेंका, तब जठर और देवकूट दोनों पर्वत दैत्यके मस्तक पर गिरे ॥ ५६ ॥ दोनों पर्वत बडे बोझसे बिजलीके समान तड तडाकर गिरे ॥५७॥ हे विदेह राज ! उन दोनों पर्वतोंके मारे भूत सन्तापन मरकर गिर पडा, हे विदेह राज ! उसकी ज्योति संग्राम जित्में लीन होगई ॥५८॥ तब संग्रामजित्की सेनामें नगाडे बजने लगे, भद्राके पुत्रके ऊपर देवता पुष्पोंकी वर्षा करने लगे॥५९॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां भूतसंतापन दैत्यवधो नामत्रयस्त्रिंशोऽध्यायः॥३३॥ नारदजी कहते हैं—हे मैथिल ! संग्रामजित्के युद्धमें जब भूत सन्तापन मर गया, तब हे मैथिलेश ! दैत्य सेनामें बडा हाहाकार मचा ॥ १ ॥ फिर शकुनि वृक, कालनाभ महानाभ

देवकूटंसमुत्पाट्यगिरिंचश्रीहरेःसुतः ॥ अनेनघातयिष्यामित्वांरणेप्रवदन्मुखात् ॥ ५४ ॥ तस्थौतत्संमुखेराजंस्तदद्भुतमिवाभवत्॥क्षिपंतंपर्वतंदैत्यंभूतसंतापनंनृपः ॥ ५५ ॥ तताडगिरिणास्वेनरणेसंग्रामजिद्बली ॥ जठरोदेवकूटश्चद्वौगिरीदैत्यमस्तके ॥ ५६ ॥पतितौभूरिभाराढ्यौवज्रसंघर्षनादिनौ ॥५७॥ भूतसंतापनस्ताभ्यांपतितःपंचतांगतः ॥ तज्ज्योतिःसंग्रामजितिलीनंजातंविदेहराट् ॥५८॥ श्रीसंग्रामजितःसैन्येनेदुर्दुंदुभयस्तदा ॥ भद्रात्मजोपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥५९॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खंडेनारदबहुलाश्वसंवादेभूतसन्तापनदैत्यवधो नामत्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ संग्रामजिन्महायुद्धेभूतसंतापनेमृते ॥ हाहाकारोमहानासीद्दैत्यसेनासुमैथिल ॥ १ ॥ शकुनिर्वृकःकालनाभोमहानाभस्तथैवच ॥ हरिश्मश्रुश्चपंचैतेसंप्राप्तारणमंडले ॥ २ ॥ कार्ष्णिःशकुनिनायुद्धंचदनिरुद्धोवृकेणवै ॥ कालनाभेनसांबस्तुमहानाभेनदीप्तिमान् ॥ ३ ॥ हरिश्मश्रुसुरेणापिभानुःकृष्णसुतोबली ॥ सर्वेषामग्रतःप्राप्तोऽनिरुद्धोधन्विनांवरः ॥४॥ विभेदबाणैर्दैत्यांश्चवज्रेणेंद्रोयथागिरीन् ॥ अनिरुद्धशरैर्दैत्याश्छिन्नपादांसजानवः ॥ ५ ॥ निपेतुर्मूर्च्छिताभूमौवृक्षावातहताइव ॥ अनिरुद्धशरैस्तीक्ष्णैःसंच्छिन्नामेघडंबराः ॥ ६ ॥ छिन्नकुंभाभिन्नशुंडाःपतितारणमंडले ॥ रुग्णदंताश्छिन्नकक्षाःशैलावज्रहताइव ॥ ७ ॥

और हरिश्मश्रुये पांचों रण मण्डलमें आये ॥२॥ तब प्रद्युम्नका और शकुनिका, वृकका और अनिरुद्धका युद्ध हुआ, कालनाभका और साम्बका महानाभका और दीप्तिमान्का द्वन्द युद्ध हुआ ॥३॥ ऐसेही हरिश्मश्रु और भानुका युद्ध हुआ, सबसे पहले धनुष धारियोंमें श्रेष्ठ अनिरुद्ध आये ॥४॥ बाणोंसे दैत्योंको भेदने लगे, वज्रसे इन्द्र जैसे पर्वतोंको भेदता है, तब अनिरुद्धके बाणोंसे कटे हैं, पांव, कंधा, जानु जिनके ऐसे दैत्य होगये ॥५॥ मूर्च्छित होकर पृथ्वीमें गिर पडे, पवनके मारे वृक्ष जैसे गिर पडते हैं, अनिरुद्धके बाणोंसे मेघ जैसे वे हाथी ॥६॥ छिन्न होगये हैं कुम्भ, सूंड जिनके, टूट गये हैं दांत जिनके, कट गई हैं अम्बारी (हौदा) जिनकी, ऐसे वे हाथी वज्रके मारे पर्वतोंकी तरह गिर पडे ॥ ७ ॥

जिनकी बनात झलक रही है, ऐसे वे हाथी दो दो टुकडे होकर गिर पडे, उनके कटे हुये कुम्भोंमेंसे बिखरे हुये मोती ऐसे झलकने लगे ॥८॥ उस बाणोंके अन्धकारमें, जैसे रात्रि में आकाशमें तारे चमकते हों, कितनेही वीर अनिरुद्धके बाणोंसे धर्षित होगये ॥ ९ ॥ मूर्च्छित होकर गिर पडे, तब बडा आश्चर्य हुआ, कितनेही रथी धरतीमें गिर गये, उनके सूने रथ ऐसे रह गये ॥१०॥ जैसे हाथीके पेटमें गये कैथके फल, हे राजेन्द्र ! तब एक क्षणमात्रमेंही दैत्योंकी सेनामें ॥ ११ ॥ संग्राममें रुधिरकी बडी भयंकर नदी बहने लगी, हाथी तो जिसमें ग्राह हैं ऊँट, गधे, धडमुख, कबन्धादि जिसमें कछुए हैं ॥१२॥ रथ जिसमें शिशुमार, केश जिसमें सिवार, और भुजाऐं हैं सर्प जिसमें, कटे हाथ हैं मीन (मछली) जिसमें, मुकुट हार, कुण्डल, वे ही हैं कंकण, पत्थर जिसमें ॥१३॥ शस्त्र शक्ति, छत्र शंख, चमर, ध्वजा वही हैं बालू जिसमें, रथोंके पहिये ही हैं भ्रमर जिसमें, दोनों सेनाही हैं तट

द्विधाभूतागजाःपेतुःस्फुरत्काश्मीरकंबलाः ॥ करीणांभिन्नकुंभानांमुक्तारेजुःस्फुरत्प्रभाः ॥८॥ बाणांधकारेराजेंद्ररात्रौतारागणाइव ॥ प्रधर्षिताः केपिवीराअनिरुद्धशरान्विताः ॥ ९ ॥ निपेतुर्मूर्च्छिताभूमौतदद्भुतमिवाभवत् ॥ केचित्कौरथिनःपेतुस्तेषांशून्यारथाःस्थिताः ॥ १० ॥ कपित्थस्यफलानीवहस्तिकोष्ठगतानिच॥क्षणमात्रेणराजेंद्रदैत्यानांवाहिनीषुच॥११॥नदीबभूवसंग्रामेभीषणाक्षतजस्रवात् ॥ द्विपग्राहोचोष्ट्रख-रकबंधास्यादिकच्छपा ॥१२॥ शिशुमाररथाकेशशैवालाभुजसर्पिणी ॥ करमीनामौलिरत्नहारकुंडलशर्करा ॥ १३ ॥ शस्त्रशक्तिच्छत्रशंख चामरध्वजसैकता ॥ रथांगावर्तसंयुक्तासेनाद्वयतटावृता॥१४॥शतयोजनविस्तीर्णाबभौवैतरणीयथा ॥ प्रमथाभैरवाभूतावेतालायोगिनीगणाः ॥ १५ ॥ अट्टहासंप्रकुर्वंतोनृत्यंतोरणमंडले ॥ पिबंतोरुधिरंशश्वत्कपालेननृपेश्वर ॥ १६ ॥ हरस्यमुंडमालार्थंजगृहुस्तेशिरांसिच ॥ सिंहारूढाभद्रकालीडाकिनीशतसंवृता ॥ १७ ॥ भक्षयंतीरणेदैत्यानट्टहासंचकारह ॥ विद्याधर्य्योविमानस्थागंधर्व्योप्सरसस्तथा ॥ १८ ॥ क्षत्रधर्मस्थितान्वीरान्वव्रिरेदेवरूपिणः ॥ परस्परंकलिर्भूत्वातासांपत्यर्थमंबरे ॥ १९ ॥ ममानुरूपो नायंवइतिविह्वलचेतसाम् ॥ केचिद्वीरा-धर्मपरारणरंगान्नचालिताः ॥ २० ॥ ययुर्विष्णुप्रदंदिव्यंभित्त्वामार्तंडमंडलम् ॥ अनिरुद्धंरिपुंदृष्ट्वाकेचिद्दैत्याः पलायिताः ॥ २१ ॥

जिसमें, ऐसी वह संग्राम नदी ॥ १४ ॥ सौ योजनकी लम्बी, वैतरणी नदीकी तरह शोभित हुई, प्रमथ, भैरव, भूत, बेताल, योगिनियोंके गण ॥१५॥ वे अट्टहास करते, नाचते, रण मण्डलमें निरन्तर रुधिरको खोपडियोंमें भरकर पीते हुये, हे नृपेश्वर ! ॥ १६ ॥ शिवकी मुण्डमालाके लिये सिरोंको ग्रहण करने लगे; सैंकडों डाकिनी जिसके साथ ऐसी सिंह पर चढी भद्रकाली ॥ १७ ॥ रण मण्डलमें दैत्योंको भक्षण करती हुई अट्टहास करने लगीं, और विमानोंपर बैठी हुई विद्याधरी, गन्धर्वी, और अप्सराऐं ॥१८॥ क्षत्रियोंके धर्ममें स्थित देवरूप हुये जो वीर हैं उनको वरने लगीं और वरनेके लिये आपसमें कलह करने लगीं ॥१९॥ कि यह तो मेरे अनुरूप नहीं है, मेरे अनुरूप है, उनके चित्त कलहसे विह्वल होने लगे, कोई २ धर्मपरायण वीर जो रणसे चलायमान नहीं हुये॥२०॥वे दिव्य सूर्यमंडलको भेदकर विष्णुपदको प्राप्त होगये, अनिरुद्धको देखकर कितनेही दैत्य युद्धसे भाग गये ॥२१॥

कई अपने युद्धको छोडकर दशों दिशाओंमें भाग गये, तब भयंकर वृक नामक महादैत्य गधेपर चढा गर्जता हुआ आया ॥२२॥ युद्धमें धनुषको बारम्बार टंकारते हुये, अनिरुद्धके प्रत्यंचासहित धनुषको ॥ २३ ॥ रणमें दुर्मद वृकने दश बाणोंसे काट दिया, जब अनिरुद्धका धनुष कट गया, तब उसने दूसरा धनुष लिया ॥२४॥ फिर महाबली अनिरुद्धने दश बाणोंसे वृकके धनुषको काट दिया, क्रोधसे फडक रहे हैं ओंठ जिसके ऐसा वह वृक त्रिशूलको उठाकर खडा हुआ ॥ २५ ॥ जीभको लपलपाता हुआ वह धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ अनिरुद्धसे बोला कि स्वस्थ विक्रम क्षत्रिय तुमको मैं अभी मारूँगा, तुमने मेरी सेनाको मारा है, अब मेरा पराक्रम देखो ॥२६॥ तब अनिरुद्ध बोले–जो मुखसे कहते हैं, वे कुछ नहीं करते हैं, अभी मैं तुमको मारूँगा, मेरा पराक्रम देखो ॥२७॥ यदि मैं तुमको नहीं मारूँ, तो मेरी यह प्रतिज्ञा है, उसको सुनो, ब्राह्मण, गौ, बालक गर्भ, इनकी हत्या मुझको

केचित्स्वंस्वंरणंत्यक्त्वादुद्रुवुस्तेदिशोदश ॥ तदावृकोमहादैत्यःखरारूढोभयंकरः॥ २२ ॥ आजगामनदन्युद्धेधनुष्टंकारयन्मुहुः॥ अनिरुद्ध-
स्यापिचार्यंशिंजिनीसहितंधनुः ॥ २३ ॥ चिच्छेददशभिर्बाणैर्वृकोपिरणदुर्मदः ॥ छिन्नधन्वानिरुद्धस्तुद्वितीयंधनुराददे ॥२४॥ चिच्छेददश-
भिर्बाणैर्वृकचापंमहाबलः ॥ वृकस्त्रिशूलमुद्यम्यरुषाप्रस्फुरिताधरः ॥ २५ ॥ ललज्जिह्वःप्रत्युवाचानिरुद्धंधन्विनांवरम् ॥ दैत्यउवाच ॥
अद्यैवत्वांहनिष्यामिक्षत्रियंस्वस्थविक्रमम् ॥ त्वयासेनाहतामेद्यपश्यविक्रममद्भुतम् ॥ २६ ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ येवदंतिमुखेनेहते
कुर्वंतिनकिंचन ॥ अद्यैवत्वांहनिष्यामिपश्यमेविक्रमंपरम् ॥ २७ ॥ नचेत्वांघातयिष्यामिशृणुताच्छपथंमम् ॥ विप्रगोभ्रूबालानांहत्यामेस्या
त्सदैवहि ॥ २८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ वृकोपिशपथंकृत्वाखरारूढोमहाबलः ॥ जघानतंत्रिशूलेनानिरुद्धंधन्विनांवरम् ॥ २९ ॥ तच्छू-
लंवामहस्तेनगृहीत्वाकार्ष्णिनंदनः ॥ तताडसहसाराजन्वृकंदैत्यंमहाबलम् ॥३०॥ तदासुरःकोपपूर्णोमुक्त्वाथमहतींगदाम् ॥ चूर्णयामाससह-
सानिरुद्धस्यरथंबलात् ॥ ३१ ॥ प्राद्युम्निःशितधारेणखड्गेनारिभुजद्वयम् ॥ चिच्छेदभिदुरेणाशुशैलपक्षौयथावृषा ॥ ३२ ॥ तदाभिन्नभुजो
दैत्यःपद्भ्यामाकंपयन्भुवम् ॥ ३३ ॥ विस्तीर्णवदनंकृत्वाललज्जिह्वंभयंकरम् ॥ करालदंष्ट्रःप्रपिबन्नाकाशंदैत्यपुङ्गवः ॥ ३४ ॥

लग, यदि तुमको नहीं मारूँ तो ॥ २८ ॥ नारदजी कहते हैं, तब वृकने भी प्रतिज्ञा करके गधेपर चढे महादुष्टने धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ अनिरुद्धके त्रिशूल मारा ॥ २९ ॥ सो उसके त्रिशूलको अनिरुद्धने बायें हाथमें पकड करके उसी त्रिशूलसे महाबली वृकको मारा ॥३०॥ तब क्रोधित हुये असुरने बडी गदा लेकर उस गदासे अनिरुद्धके रथको चूर्ण कर दिया ॥३१॥ तब अनिरुद्धने तेजधारकी तलवारसे वृकासुरकी दोनों भुजाऐं काट डाला, जैसे इन्द्र वज्रसे पर्वतके पंखोंको काटता है ॥ ३२ ॥ तब कटी है भुजा जिसकी ऐसा वह दैत्य पांवोंसे धरतीको कम्पाता हुआ ॥ ३३ ॥ बडा मुख फाडकर महा भयंकर जीभ निकाल कर भयंकर दाढें जिसकी मानों आकाशको पी जायगा, ऐसा दैत्योंमें पुंगव ॥ ३४ ॥

तिमिंगल जैसे मकरको ऐसे अनिरुद्धको निगल गया, तब दैत्यके पेटमें गया श्रीकृष्णका पौत्र श्रीकृष्णकी कृपासे ॥३५॥ हे महाराज ! मरा नहीं, जैसे प्रद्युम्न मगरके उदरमें नहीं मरा था, और जैसे अघके उदरमें गोप और श्रीकृष्ण मरे नहीं थे ॥ ३६ ॥ बकके उदरमें जैसे श्रीकृष्ण, वृत्रासुरके उदरमें जैसे इन्द्र, नहीं मरे थे, ऐसेही हे विदेह राज ! वृकके पेटमें अनिरुद्ध नहीं मरा, तब यादवोंकी सेनामें बडा हाहाकार मचा ॥३७॥ तब बलदेवजीके छोटे भाई गदने गदा लेकर महाबली वृकासुरके मस्तकमें मारी ॥३८॥ तब उसका मस्तक फूट गया, और वह दैत्य रक्तकी बूंदोंसे बडा शोभित हुआ, जैसे गेरूकी जल धारासे विंध्याचल शोभायमान होता है ॥३९॥ फिर अर्जुनने सहजहीमें अपनी तलवारसे उसके पांव काट डाले, जब पांव कट गये, तब वह पृथ्वीमें गिर पडा जैसे कटे हुये पंखका पर्वत गिर पडता है ॥ ४० ॥ फिर अनिरुद्ध उसके उदरको फाडकर निकला; और उसका सिर काट

तिमिंतिमिंगिलइवप्राग्रसत्कार्ष्णिनंदनम् ॥ दैत्योदरेकृष्णपौत्रःश्रीकृष्णस्यानुकंपया ॥३५॥ नममारमहाराजकार्ष्णिर्मीनोदरेयथा॥ वृकोदरे यथाकृष्णोयथागोपाह्यघोदरे ॥ ३६ ॥ बकोदरेयथाकृष्णोयथावृत्रोदरेवृषा ॥ हाहाकारेतदाजातेयदुसैन्येविदेहराट् ॥३७॥ गदोगदांसमादा-यबलदेवानुजोबली ॥ तताडमस्तकेदैत्यंवृकंनाममहाबलम् ॥ ३८ ॥ तदाहतशिरादैत्योरेजेक्षतजबिंदुभिः॥ गैरिकैर्जलधाराभिर्यथाविंध्याच-लोनृप ॥३९॥ फाल्गुनःस्वमसिंनीत्वातत्पादौचांजसाहरत् ॥ छिन्नांघ्रिःसपपातोर्व्यांछिन्नपक्षोयथागिरिः ॥ ४० ॥ अनिरुद्धस्तदुदरंभित्वा खड्गेननिर्गतः ॥ जहारतच्छिरश्चायंयथावज्रेणवृत्रहा ॥ ४१ ॥ तदाजयजयारावोयदुसैन्येबभूवह ॥ देवदुंदुभयोनेदुर्नरदुंदुभयस्तथा ॥४२॥ अनिरुद्धोपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥ कथितंह्यद्भुतंचैतत्किंभूयःश्रोतुमिच्छसि॥४३॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवा-देवृकदैत्यवधोनामचतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ अहोअत्यद्भुतंयुद्धंमुनेप्राद्युम्निनाकृतम् ॥ वृकेहतेमहादैत्येकिंबभूवरणे पुनः ॥ १ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ वृकदैत्यंहतंवीक्ष्यकालनाभोमहासुरः ॥ क्रोडारूढोरणंप्रागाद्धनुष्टंकारयन्मुहुः ॥ २ ॥ अक्रूरंबाणविंशत्या गदंचदशभिःशरैः ॥ अर्जुनंदशभिर्बाणैर्युयुधानंचपंचभिः ॥ ३ ॥

डाला, जैसे वज्रसे इन्द्र काटता है ॥४१॥ तब तो यादवोंकी सेनामें जयजय शब्द होने लगा,देवता और मनुष्योंकी दुन्दुभियाँ बजने लगीं ॥४२॥ देवता अनिरुद्धके ऊपर फूलोंकी वर्षा करने लगे, हे मैथिल ! यह अद्भुत चरित्र मैंने तुमसे कहा, अब तुम और क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥४३॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां वृकदैत्यवधो नामचतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥ तब बहुलाश्व राजा पूछने लगा कि, हे महाराज ! प्रद्युम्नके पुत्र अनिरुद्धने बडा अद्भुत युद्ध किया, महादैत्य वृकके मर जानेपर युद्धमें क्या हुआ, सो मेरे सामने कहिये ॥ १ ॥ तब नारदजी बोले कि, वृकको मरा हुआ सुनकर महादैत्य कालनाभ गधेपर चढकर धनुषको टंकारता हुआ युद्धमें आया ॥ २ ॥ उसने बीस बाण तो अक्रूरके मारे, दश बाण गदके मारे, दश बाण अर्जुनके मारे, और पांच बाण युयुधानके मारे ॥ ३ ॥

दश बाण कृतवर्माके मारे, सौ बाण प्रद्युम्नके, बीस बाण अनिरुद्धके और पांच बाण दीप्तिमान्‌ने मारे ॥४॥ सौ बाण साम्बके संग्राममें उस असुरने मारे, उसके बाणोंसे सब वीर दो घडीतक विह्वल होगये ॥५॥ घोडे मर गये, रथ चूर्ण हो गये, उसकी हस्त लाघवता देखकर प्रसन्न हुये रुक्मिणीके पुत्र प्रद्युम्नने ॥६॥ संग्राममें उत्तम वाक्य पदोंसे कालनाभकी बडी प्रशंसा की,फिर प्रद्युम्नने अपना धनुष लेकर उसमें एक बाण चढाया॥७॥ धनुषसे छूटा वह बाण दीर्घरूपी उसके गधेको उठाकर घुमा घुमाकर लाख योजन ऊँचा ले गया ॥८॥ फिर आकाशमेंसे उसके उस गधेको भयंकर गर्जनावाले समुद्रमें डाल दिया, प्रद्युम्न भगवान्‌ने फिर दूसरा बाण लिया ॥ ९ ॥ उस बाणने भी बली कालनाभको उठाकर घुमा घुमाकर बल पूर्वक चन्द्रावती पुरीमें फेंक दिया ॥१०॥ तब कालनाभ पृथ्वीमें जा पडा, कुछ व्याकुल होगया, फिर लाख भारकी गदा लेकर ॥११॥ रणमें आकर यादवोंकी सेनामें

दशभिःकृतवर्माणंकार्ष्णिंबाणशतेनवै ॥ अनिरुद्धंचविंशत्यादीप्तिमंतंचपंचभिः ॥ ४ ॥सांबंचशतबाणैश्चविव्याधसमरेसुरः ॥ तद्बाणैर्व्याकुला
वीराबभूवुर्घटिकाद्वयम् ॥ ५ ॥ हयाश्चपञ्चतांप्राप्ताश्चूर्णीभूतारणांगणे ॥ तद्धस्तलाघवंदृष्ट्वाप्रसन्नोरुक्मिणीसुतः ॥६॥ कालनाभंसाधुपदैःपूज-
यामाससंगरे ॥ प्रद्युम्नःस्वंधनुर्नीत्वाबाणमेकंसमादधे ॥७॥ कोदण्डमुक्तोविशिखस्तत्कोडंदीर्घरूपिणम् ॥ समुन्नीय भ्रामयित्वास्वर्लोकेलक्ष-
योजनम् ॥ ८ ॥ आकाशात्पातयामाससमुद्रेभीमनादिनि ॥ प्रद्युम्नोभगवान्साक्षाद्द्वितीयंबाणमादधे ॥९॥ सोपिबाणःसमुन्नीयकालनाभंमहा-
बलम् ॥ भ्रामयन्पातयामासचन्द्रावत्यांबलात्पुरि ॥१०॥कालनाभःप्रपतितःकिंचिद्व्याकुलमानसः॥गृहीत्वाथगदांगुर्वींलक्षभारविनिर्मिताम्
॥ ११ ॥ रणंप्राप्तोयदुबलंपोथयामासदैत्यराट् ॥ गजान्रथान्हयान्वीरान्गदयावज्रकल्पया ॥ १२ ॥ पातयामासवेगेनमहावातोयथातरून् ॥
कांश्चित्कराभ्यांप्रोन्नीयचिक्षेपगगनेबलात् ॥ १३ ॥ अंबरात्तेनिपेतुःकौराजन्वर्षोपलाइव ॥ तदागदांसामादायसांबोजांबवतीसुतः ॥ १४ ॥
तताडमूर्ध्नितंदैत्यंकालनाभंमहासुरम् ॥ तयोर्युद्धमभूद्धोरंगदाभ्यांरणमण्डले॥१५॥ विस्फुलिंगान्क्षरंत्यौद्वेगदेचूर्णीबभूवतुः॥अन्येगदेसमादाय
तस्थतुःसंगरेचतौ ॥१६॥ कालनाभस्तदाप्राहसांबंजांबवतीसुतम् ॥ एकेनापिप्रहारेणहन्मित्वांनात्रसंशयः ॥ १७ ॥ पूर्वंप्रहारंकुरुमेइतिसांबो
ब्रवीद्रणे ॥ कालनाभोथगदयासांबंमूर्ध्निततडह ॥ १८ ॥

युद्ध करने लगा, वज्र जैसी उस गदासे पैदल सैनिकोंको, घोडोंको, हाथियोंको, मार मारकर ॥१२॥ पृथ्वीमें गिराने लगा, जैसे बडी पवन वृक्षोंको गिराती है, किसी किसीको हाथोंसे उठाकर आकाशमें फेंकने लगा ॥ १३ ॥ तब वे आकाशमेंसे वर्षाके ओलोंकी तरह बरसने लगे, तब गदा लेकर जाम्बवतीका पुत्र साम्ब आया ॥ १४ ॥ उसने आकर एक गदा कालनाभके मस्तकमें मारी, तब उन दोनोंका रणमें गदाओंसे घोर युद्ध हुआ ॥१५॥ अन्तमें चिनगारियाँ छोडतीं छोड़तीं वे दोनों गदाएं चूर्ण होकर जा पडीं,फिर दूसरी गदाएं लेकर दोनों संग्राममें खडे हुये ॥ १६ ॥ तब कालनाभ जाम्बवतीके पुत्र साम्बसे यह बोला, मैं एकही प्रहारसे तुमको मार डालूँगा, इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥ १७ ॥ तब साम्ब बोला, पहिले तू मेरे ऊपर प्रहार करले, तब कालनाभने साम्बके सिरमें गदा मारी ॥ १८ ॥

तब साम्बने गदाके ऊपर गदाको लेकर कालनाभकी छातीमें गदा मारी ॥ १९ ॥ तभी गदासे उसका हृदय फट गया, और मुखसे रुधिर वमन करता हुआ वह कालनाभ मरकर
धरतीपर गिर पडा, जैसे वज्रका मारा हुआ पर्वत गिर पडता है ॥२०॥ तब तो हे नृप ! सन्तोंमें जयजय शब्द और धन्य धन्य शब्द होने लगे, देवताओंकी और मनुष्योंकी दुन्दु-
भियाँ बजने लगीं ॥२१॥ देवता साम्बकी सेनाके ऊपर फूलोंकी वर्षा करने लगे, अप्सराऐं नृत्य करने लगीं, और आनन्दसे गन्धर्व गाने लगे ॥२२॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित
खंडे भाषाटीकायां कालनाभवधोनामपञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥३५॥ नारदजी कहते हैं, कालनाभके मरनेपर बडा कोलाहल हुआ, तब महानाभ दैत्य ऊंटपर चढकर युद्धमें आया ॥१॥
वह मायावी दैत्य पुंगवमुखसे अग्नि निकालता हुआ आया, उस अग्निसे भूमिके वृक्ष और दशों दिशाऐं जलने लगीं ॥२॥ वीरोंके कुरते, साफे, दुपट्टे, और अंगरखे, मूंजके फूल और रूई

गदोपरिगदांनीत्वासांबोजांबवतीसुतः ॥ जघानगदयादैत्यंकालनाभमुरस्थले ॥१९॥ गदयाभिन्नहृदयउद्वमन्रुधिरंमुखात् ॥ व्यसुःपपातभूपृष्ठे
वज्राहतइवाचलः ॥२०॥ अभूज्जयजयारावःसाधुवादःसतांनृप॥ देवदुन्दुभयोनेदुर्नरदुन्दुभयस्तथा॥२१॥सांबसेनोपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे॥
विद्याधर्यश्चगंधर्वाननृतुश्चजगुर्मुदा॥२२॥इतिश्रीमद्गर्गसं॰विश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेकालनाभदैत्यवधोनामपञ्चत्रिंशोऽध्यायः॥३५॥
॥ नारदउवाच ॥ कालनाभेथपतितेमहान्कोलाहलोभवत् ॥ उष्ट्रारूढोमहानाभोदैत्यःप्राप्तोरणांगणे ॥ १ ॥ मुखादग्निंसमसृजन्मायावीदैत्य
पुंगवः ॥ तेनाग्निनाभूमिवृक्षाजज्वलुश्चदिशोदश ॥२॥ वीगणां कंचुकोष्णीषकटिबंधांगरक्षकाः ॥ प्रजज्वलुर्महाराजमुञ्जपुष्पप्रतूलवत्॥ ३ ॥
समुद्रपट्टनभवैःपीतारुणसितासितैः ॥ हरितैश्चित्रवर्णैश्चसूक्ष्मैःकाश्मीरजैरपि ॥४॥ हेमरत्नखचद्भिश्चकंबलैः सहितागजाः॥प्रजज्वलुर्मृधेराज-
न्वृक्षैःशैलाइवाग्निना॥५॥ शिखारत्नैश्चामरैश्चहारैर्हैमैःपरिच्छदैः ॥ उत्पतंतेहयायुद्धेमृगाइवदवाग्निना॥६॥सैन्यंभयातुरंदृष्ट्वादीप्तिमान्कृष्णन-
न्दनः ॥ मायावह्निप्रशांत्यर्थंपर्जन्यास्त्रंसमादधे ॥ ७ ॥ बाणाद्विनिर्गतामेघासांवर्त्तकगणाइव ॥ ववृषुर्जलधाराभिर्नदंतोभैरवंरवम् ॥ ८ ॥
आसारेणमहाराजप्रावृट्कालोभवत्क्षितौ ॥ पुंस्कोकिलाःकोकिलाश्चमयूराःसारसादयः ॥९॥ मण्डूकाःप्रजगुर्गीर्भिरिंद्रगोपाश्चरेजिरे ॥ इन्द्र॥
चापेनदामिन्यामैथिलेन्द्रबभौनभः ॥ १० ॥ इत्थंशांतिंगतेवह्नौमहानाभोमहासुरः ॥ प्राहिणोत्त्रिशितंशूलंरुषादीप्तिमतेत्वरम् ॥ ११ ॥

की तरह जलने लगे ॥३॥ और समुद्रके पट्टनोंके हुये रेशमी, पीली, लाल, सफद और हरे, काश्मीरके कम्बल ॥४॥ सुनहरी रत्नजडित बनातसहित हाथी संग्राममें जलने लगे, जैसे
वृक्षोंसहित पर्वत अग्निसे जलते हैं ॥५॥ रत्नोंकी कलंगी, चामर, सुनहरी हार और परिच्छद (जीन) सहित घोडे उछलने लगे जैसे दावानलके मारे मृग उछलते हैं ॥६॥ उस समय
कृष्णके पुत्र दीप्तिमान्ने सेनाको भयसे पीडित देखकर मायाकी अग्निकी शान्तिके लिये मेघका अस्त्र छोडा ॥७॥ उस बाणमेंसे जो मेघ निकले वे सांवर्त्तकके गण जैसे भयंकर नाद
करते हुये जलधाराओंसे बरसने लगे ॥८॥ जलधाराके गिरनेसे पृथ्वीमें वर्षाऋतु होगई, कोयल बोलने लगीं, पपीहा झंकारने लगे, मोर कुहूकने लगे, सारस बोलने लगे ॥९॥ मेंढक
टर्राने लगे, गुडियाँ डोलने लगीं, इन्द्रधनुष और बिजलीसे आकाश शोभित होगया ॥१०॥ ऐसे जब अग्नि शान्त होगई, तब महानाभअसुरने दीप्तिमान्पर तीक्ष्ण (पैना) त्रिशूल चलाया ॥११॥

सर्पकी तरह आते हुये शूलको देखकर रोहिणीके पुत्र दीप्तिमान्ने अपने खड्गसे उस शूलको काट डाला, जैसे गरुड सर्पको काटता है ॥१२॥ और मुखसे काटते हुये महानामके वाहन उद्भटनामके ऊँटको दीप्तिमान्ने अपने खड्गसे मारा ॥१३॥ तब ऊँटके दो टुकडे होकर पृथ्वीमें गिर पडे, खड्गसे गर्दन कट गई, और महानाभके देखते २ मरगया ॥१४॥ तब महादैत्य महानाभ हाथीपर चढकर त्रिशूल लेकर नादसे आकाशको झंकारता हुआ फिर आया ॥१५॥ तब दीप्तिमान् सिन्धुदेशके चंचल काले घोडेपर चढकर बिजलीके समान चमकते खड्गसे बडी शोभाको प्राप्त हुआ ॥१६॥ तब दीप्तिमान् घोडेको एडीसे आकाशमें उडाकर हाथीके कुम्भस्थलपर चढ गया, जैसे सिंह पर्वतके ऊपर चढ जाता है ॥१७॥ तब कृष्णके पुत्र दीप्तिमान्ने तेज धारवाले खड्गसे महानाभ असुरका सिर काटकर कायासे पृथक् फेंक दिया ॥१८॥ और उस दुरात्माकी बाणोंकी वर्षा करती हुई सेनाको दीप्तिमान् खड्गसे

दीप्तिमा-
शूलंसर्पमिवायांतंदीप्तिमान्रोहिणीसुतः ॥ चिच्छेदत्वासिनायुद्धेफणिनंगरुडोयथा ॥१२ ॥ दशंतंचोद्भटंचोष्ट्रंमहानाभस्यवाहनम् ॥ दीप्तिमान्स्वेनखड्गेनसञ्जघानरणांगणे ॥ १३ ॥ द्विधाभूतःपपातोर्व्यांखड्गसंच्छिन्नकंधरः ॥ जगामपञ्चतामुष्ट्रोमहानाभस्यपश्यतः ॥ १४ ॥ महानाभोमहादैत्योगजमारुह्यवेगतः ॥ शूलहस्तःपुनःप्रादान्नादयन्व्योममण्डलम् ॥१५॥ दीप्तिमानश्वमारुह्यसैंधवंचंचलासितम्॥ तडित्प्रभेणखड्गेन बभौश्रीकृष्णनन्दनः ॥ १६ ॥ तुरगंपार्ष्णिघातेनप्रोत्पतन्धरणीतलात् ॥ आरूढोगजकुभांतंगिरिशृंगंयथाहरिः ॥ १७ ॥ खड्गेनशितधारेण दीप्तिमान्कृष्णनंदनः ॥ महानाभस्यसहसाशिरःकायादपाहरत् ॥ १८ ॥ बाणवर्षंप्रकुर्वंतींसेनांतस्यदुरात्मनः ॥ जघानदीप्तिमान्सिंहोगजयूथंयथासिना ॥ १९ ॥ केचित्खड्गेनाभिहताःशेषादैत्याःपलायिताः ॥ देवादीप्तिमतोमूर्ध्निपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥ २० ॥ जगुःकिन्नरगन्धर्वाननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥ ऋषयोमुनयोदेवास्तुष्टुवुःश्रीहरेःसुतः ॥२१॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खडेनारदबहुलाश्वसंवादेमहानाभवधोनामषट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥ नारदउवाच ॥ महानाभंमृतंश्रुत्वासेनांवीक्ष्यपलायिताम् ॥ दैत्यस्तिमिंगिलारूढोहरिश्मश्रुःसमाययौ ॥ १ ॥ हरिश्मश्रुस्तदादैत्योरुषाप्रस्फुरिताधरः ॥ उवाचपरुषंवाक्यंयादवानांचशृण्वताम् ॥ २ ॥ हरिश्मश्रुरुवाच ॥ यूयंसर्वेपिमेशक्त्यामनुष्याःस्वल्पविक्रमाः ॥ शस्त्रैर्जयंतोदीनावैपौरुषंकिंभवादृशे ॥३॥ भवतांबलवान्कोपिविनाशस्त्रंमयासह ॥ करोतिमल्लयुद्धंवैपौरषंयेनदृश्यते ॥ ४ ॥

ऐसे मारने लगा, जैसे सिंह हाथियोंके यूथको मारता है ॥१९॥ कितनेही खड्गसे मारे गये, बाकीके दैत्य भाग गये, तब देवता दीप्तिमान्के ऊपर फूलोंकी वर्षा करने लगे ॥२०॥ किन्नर गन्धर्व, गाने लगे, अप्सराएँ नाचने लगीं, ऋषि, मुनि, देवता कृष्णके पुत्रकी स्तुति करने लगे ॥२१॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खंडे भाषाटीकायां महानाभवधो नामषट्त्रिंशोऽध्यायः॥ ३६॥ नारदजी कहते हैं कि, महानाभको मरा हुआ सुनकर और सेनाको भगी हुई सुनकर हरिश्मश्रु नामक दैत्य तिमिंगलपर बैठा हुआ आया ॥१॥ क्रोधसे ओंठ जिसके कांप रहे हैं, ऐसा वह हरिश्मश्रु दैत्य यादवोंके सुनते २ कठोर वचन बोला ॥२॥ हरिश्मश्रु बोला कि, तुम सब मेरे सामने तुच्छ पराक्रमी हो, दीन हो, तुम शस्त्रोंसे जीतते हो, तुम जैसोंमें क्या पराक्रम है ॥३॥ तुम्हारेमें कोई ऐसा बली है, जो शस्त्रके बिना मुझसे मल्लयुद्ध करे, जिससे तुम्हारा पुरुषार्थ दिखाई दे ! ॥ ४ ॥

नारदजी कहते हैं–ऐसे दैत्यका वचन सुनकर और उसके उद्भट शरीरको देखकर आपसमें बडाई करते सब चुप हो गये ॥५॥ तब सभीके देखते २ सत्यभामाका पुत्र बड़ा वली भानु शस्त्रोंको त्यागकर श्रीकृष्णका स्मरण करता हुआ युद्धमें खडा हो गया ॥ ६ ॥ तब महावली हरिश्मश्रु तिमिंगलसे उतरकर खम्भ फटकार सामने आया ॥७॥ भुजाओंसे भुजाएँ जोडकर भानु लडने लगा, दातोंसे हाथी जैसे लडते हैं,वैसे दोनों प्रहार करने लगे ॥ ८ ॥ तब वह दैत्य भानुको सौ योजन तक ढकेलता हुआ ले गया, हे राजराजेन्द्र ! जैसे सिंह को सिंह पराक्रमसे ढकेलता हुआ ले जाता है ॥९॥ तब भानु अपने पराक्रमसे हरिश्मश्रु दैत्यको हजार योजन तक ढकेलता ले गया, ॥ १० ॥ तब दैत्यराजने गर्दन पर हाथ रख कर कमर पकड, जानु (घुटने) पकडकर भानुको धरतीमें गिरा दिया ॥ ११ ॥ तब भानुने उसके पीछे जाकर पीठपर चढकर जानु (घुटने) पकड़कर दैत्यको पृथ्वीपर दे मारा

॥ नारदउवाच ॥ इत्थंदैत्यवचःश्रुत्वाहष्ट्वातत्प्रोद्भटंवपुः ॥ सर्वेबभूवुस्तेतूष्णींप्रशंसंतःपरस्परम् ॥ ५ ॥ सर्वेषांपश्यतांभानुःसत्यभामा-
त्मजोबली ॥ त्यक्त्वाशस्त्राणिसहसातस्थौकृष्णंस्मरन्रणे ॥ ६ ॥ तिमिंगिलात्समुत्तीर्यहरिश्मश्रुर्महाबलः ॥ तस्थौतत्संमुखेराजन्भुजमास्फो-
टयत्ततः ॥७॥ भुजाभ्यांचभुजौबध्वानोदनांचक्रतुर्बलात् ॥ दंतैर्गजाविववनेप्रहरंतौपरस्परम् ॥८॥ नोदयामासतंभानुंसदैत्यःशतयोजनम् ॥
भुजाभ्यांराजराजेंद्रसिंहःसिंहमिवौजसा ॥९॥ ततःपुनःकृष्णसुतोहरिश्मश्रुमहासुरम् ॥ नोदयामाससहसासहस्रंयोजनं बलात् ॥१०॥ कंध-
रेस्वभुजांकृत्वाकटौचविनिधायतम् ॥ भानुंजानौसंगृहीत्वापातयामासदैत्यराट् ॥११॥ भानुस्तंपृष्ठदेशेपिसंनिधायभुजौजसा ॥ गृहीत्वाजंघ-
योर्दैत्यंपातयामासभूतले ॥ १२ ॥ अथतौपुनरुत्थायभुजावास्फोटचतस्थतुः ॥ त्वरंतौबलिनौराजन्सुपर्णफणिनाविव ॥१३॥ दैत्योभुजौज-
सानीत्वाभानुंश्रीकृष्णनंदनम् ॥ चिक्षेपधृत्वाचरणावाकाशेलक्षयोजनम् ॥१४॥ आकाशात्पतितोभानुःकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥ प्रह्लादइवशै-
लांगाद्रक्षितःकृपयाहरेः ॥१५॥ हरिश्मश्रुंसंगृहीत्वादीर्घश्मश्रौहरेःसुतः ॥ भ्रामयित्वाथचिक्षेपव्योम्नितंलक्षयोजनम् ॥१६॥ आकाशात्पतितः
सोपिकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥ मुखेकृत्वास्वकंकूर्चंमुष्टिनातंतताडह ॥ १७ ॥ मुष्टामुष्टिरणंराजन्बभूवघटिकाद्वयम् ॥ निष्पिष्टांगोहरिश्म-
श्रुर्ग्रावाणंभानुमूर्द्धनि ॥ १८ ॥

॥ १२ ॥ फिर दोनों उठ खडे हुये, खम्भ फटकारकर वली दोनों फिर लडने लगे, जैसे सर्प और गरुड लडते हैं ॥ १३ ॥ तब उस दैत्यने दोनों भुजाओंसे कृष्णनन्दन भानुके दोनों पांव पकडकर आकाशमें लाख योजनपर फेंक दिया ॥ १४ ॥ जब भानु आकाशसे गिरा, तब कुछ व्याकुल हो गया किन्तु प्रह्लादकी तरह पर्वतके अंगसे भगवान्‌ने भानुकी रक्षा की ॥१५॥ तब हरिके पुत्र भानुने हरिश्मश्रुकी बडी २ मूंछोंको पकडकर आकाशमें घुमाघुमाकर उसको लाख योजन पर फेंक दिया ॥१६॥ फिर आकाशसे जब गिरा, तब हरिश्मश्रु कुछ व्याकुल नेत्र विमन होगया, सो फिर मूंछोंको सम्हालकर उसने भानुके एक घूंसा मारा ॥ १७ ॥ तब दोनोंका दो घडीतक मुष्टामुष्टि युद्ध हुआ, हरिश्मश्रुके अंग पिस गये, तब उसने भानुके सिरमें बडे वेगसे एक पत्थर मारा ॥ १८ ॥

और लाल नेत्र जिसके ऐसा क्रोधसे मूर्छित हो गया, तब भानुने एक वृक्षको उखाडकर दैत्यके मस्तकमें मारा ॥ १९ ॥ तब दैत्यने भी वृक्ष लेकर भानुके सिरमें मारा फिर लाल नेत्रोंवाले क्रोधमें मूर्छित होकर ॥ २० ॥ उस दैत्यने हाथीकी सूंड पकडकर हाथीको भानुके ऊपर डाल दिया, तब भानुनेभी एक दूसरे हाथीको लेकर उसकी सूंड पकडकर दैत्य को मारा ॥ २१ ॥ जब हरिश्मश्रुको हाथीसे मारा, तब हाथी चिक्कार उठा, चिक्कारते हुये हाथीके दांत उखाड कर ॥२२॥ उन्हीं दांतोंसे हरिश्मश्रुने भानुको मारा, तब भानुसे आकाशवाणी बोली कि, इसकी मृत्यु मूंछोंमें ही है ॥२३॥ महादेवके वरसे यह दैत्य बडा प्रबल है, यह सुनकर भानु क्रोधमें भर गया ॥२४॥ और उस दैत्यको दोनों भुजाओं से खेंचकर दोनों पांव पकडकर, घुमाघुमाकर सभीके देखते २ हे महाराज ! ॥२५॥ पृथ्वीपर दे मारा, जैसे बालक कमण्डलुको दे मारे, फिर उसके मुखपरसे मूंछे पकडकर अपने

हरिश्मश्रुर्म-क्रोधमूर्च्छितः ॥ भानुर्द्रुमंसंगृहीत्वाप्राक्षिपत्तस्यमस्तके॥१९॥ सोपिद्रुमंसंगृहीत्वाप्राहिणोद्भानुमूर्द्धनि ॥ हरिश्मश्रुर्म-चिक्षेपचमहावेगाद्रक्ताक्षः क्रोधमूर्च्छितः ॥२०॥ गजंगृहीत्वाशुंडायांतेनभानुंतताडह ॥ भानुश्चान्यगजंनीत्वागृहीत्वातद्गजंकरे ॥२१॥ हरिश्मश्रुंमहादैत्यंगजेनाभ्यहनद्दृढम् ॥ चीत्कारमथकुर्वंतंगजंनीत्वानिपात्यतम् ॥२२॥ तस्यदंतौसमुत्पाटचताभ्यांभानुंतताडह ॥ भानुमाकाशवागाहकूर्चे मृत्युःकिलास्यच ॥ २३ ॥ वरेणशिवदत्तेनप्रोज्झितोयंमहासुरः ॥ इतिश्रुत्वावचोभानुर्धावन्क्रोधप्रपूरितः ॥ २४ ॥ संगृहीत्वाभुजाभ्यांतंपादयोःप्रणदन्मुहुः ॥ भ्रामयित्वामहाराजसर्वेषांपश्यतांसताम् ॥२५॥ पातयामासभूपृष्ठेकमण्डलुमिवार्भकः॥मुखात्कूर्चंसमुन्नीयसमुत्पाटचकरौजसा ॥२६॥ तताडमुष्टिनामूर्ध्निहरिश्मश्रुंमहासुरम् ॥ गदामृत्युंगतेदैत्येहरिश्मश्रौनृपेश्वर ॥२७॥ देवदुंदुभयोनेदुर्नरदुंदुभयस्तथा ॥ अभूज्जयजयारावोननृतुर्देवनायकाः ॥२८॥ प्रसन्नादिविजाराजन्पुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥ इत्थंश्रीकृष्णपुत्राणांविक्रमःपरमाद्भुतः ॥२९॥ मयातेकथितःपुण्यःकिं भूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ ३० ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेहरिश्मश्रुदैत्यवधोनामसप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ हरिश्मश्र्वादिकान्भ्रातॄन्मृतान्ज्ञात्वामहासुरः ॥ शकुनिःकिंचकाराग्रेवदतन्मुनिसत्तम ॥ १ ॥ नारदउवाच ॥ हरिश्मश्रौहतेराजञ्शकुनिःक्रोधमूर्च्छितः ॥ रणांगणेप्राहदैत्यान्भ्रातृशोकपरिप्लुतः ॥ २ ॥

पराक्रमसे उखाड लीं, और एक घुंसा दैत्यके सिरमें मारा, हे नृपेश्वर ! तब हरिश्मश्रु दैत्य मरकर गिर पडा ॥२६॥ तब देवताओंकी दुन्दुभियाँ बजने लगीं, जय जय शब्द होने लगे, देवनायक नाचने लगे ॥२७॥ प्रसन्न होकर देवता पुष्पोंकी वर्षा करने लगे, इस प्रकार श्रीकृष्णके पुत्रोंका अद्भुत पराक्रम है ॥ २८ ॥ सो मैंने तुम्हारे सामने वर्णन किया, अब आगे क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥२९॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजितखंडे भाषाटीकायां हरिश्मश्रु दैत्य वधोनाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥३७॥ बहुलाश्वराजा बोला कि, हरिश्मश्रु आदि सब भाइयोंको मरे हुये जानकर महादैत्य शकुनिने आगे क्या किया, सो हे मुनिसत्तम ! आप कहिये ॥१॥ तब नारदजी बोले कि, हरिश्मश्रु जब मर गया तब शकुनिको बड़ा क्रोध आया, भाइयोंके शोकमें डूबा हुआ युद्धभूमिमें दैत्योंसे यह बोला ॥ २ ॥

हे पोलोमो ! हे कालकेयो ! सब लोग मेरा वचन सुनो, अहो ! दैवका बल बड़ा भारी है, दैव क्या नहीं कर सकता है ॥३॥ जिस मेरे भाई कालनाभने समुद्र मथनमें पहिले यमराजको जीत लिया था, उस कालनाभको मनुष्यने मार डाला ॥ ४ ॥ सूर्यको जीतनेवाले शम्बरको बालक प्रद्युम्नने जीत लिया,और इन्द्रको जीतनेवाले, बड़े तेजस्वी, महाबली उत्कचको ॥५॥ बालक कृष्णने मार डाला, यह मैंने नारदसे सुना है, समुद्र मथनमें देवताओंके देखते देखते ॥६॥ जिस हृष्टने अग्निको जीत लिया था, वह भी मार डाला गया और युद्धमें जिसके सामनेसे वरुण भयभीत होकर भाग गया था ॥ ७ ॥ उस भूतसंतापनको तुच्छ पराक्रमियोंने मार डाला, और जिसने पहिले अपने पराक्रमोंसे महायुद्धमें महादेवको प्रसन्न कर दिया था ॥८॥ उस वृकको तुच्छ यादवोंने संग्राममें मार डाला, और जिस मेरे भाई महानाभने स्वर्गमें पवनको जीत लिया था ॥ ९ ॥ मनुष्य यादवोंने उसको

हेपौलोमाःकालकेयासर्वेश्शृणुतमद्वचः ॥ अहोदैवबलंयेनकिन्नभूयाद्विपर्ययः ॥ ३ ॥ कालनाभेनमेभ्रात्रासमुद्रमथनेयमः ॥जितःपूर्वंसोपिदैवान्मनुष्यैरिहमारितः ॥ ४ ॥ शंबरःसूर्यजित्साक्षात्कार्ष्णिनाशिशुनाजितः ॥ उत्कचःशक्रजेतापिमहाबलमहाबलः ॥ ५ ॥सोपिबालेनकृष्णेन मारितोनारदाच्छ्रुतम् ॥ समुद्रमथनेपूर्वमसुराणांचपश्यताम् ॥६॥ वह्निर्जितोहियेनापिहृष्टःसोपिनिपातितः॥यस्याग्रेवरुणःपूर्वंयुद्धभीतःपलायितः ॥ ७ ॥ भूतसंतापनःसोपिमारितस्तुच्छविक्रमैः ॥ येनपूर्वंमहायुद्धेविक्रमैस्तोषितःशिवः॥८॥ सवृकोवृष्णिभिस्तुच्छैर्मारितःसंगरेऽत्रवै॥ ॥ महानाभेनमेभ्रात्रादिविवायुर्विनिर्जितः ॥ ९ ॥ मानुषैर्यादवैरत्रमारितःसोपिसांप्रतम् ॥ हादैवयेनस्वर्ल्लोकेजितःशक्रसुतोबली ॥१०॥निपातितःसोपिचात्रहरिश्मश्रुश्चमानवैः ॥ तस्मादयादवींपृथ्वींकरिष्येशपथोमम ॥११॥ जरासंधेनशाल्वेनदंतवक्रेणधीमता ॥ शिशुपालेनमित्रेण युष्माभिःसहितोह्यहम् ॥१२॥ सुतलाच्चसमाहूतैर्दानवैश्चंडविक्रमैः ॥ देवाञ्जेतुंगमिष्यामिबाणासुरसमन्वितः॥१३॥कार्ष्ण्यादीनुद्धटान्सर्वान्वृष्णीञ्जित्वादुरात्मनः ॥ सस्त्रीकानमरान्बध्वाक्षिपेमेरुगुहामुखे ॥१४॥ गोविप्रसुरसाधूंश्चछंदांसिचतपस्विनः॥ यज्ञंश्राद्धंतितिक्षूंश्चनानातीर्थकरान्पुनः ॥ १५ ॥ हनिष्यामिनसंदेहश्चरिष्यामिसुखंततः ॥ धन्यःकंसोमहावीर्योदेवानांविजयीबली ॥ १६ ॥

भी अभी मार डाला, हाय दैव हाय ! जिसने स्वर्गमें इन्द्रके पुत्रको जीत लिया था ॥१०॥ उस हरिश्मश्रुको भी यहाँ मनुष्योंने मार डाला, इससे मैं पृथ्वीको अयादवी (यादवों से रहित) करूँगा, यह मेरी प्रतिज्ञा है ॥११॥ जरासंध, शाल्व, बुद्धिमान् दन्तवक्र, मित्र शिशुपाल और तुम सबको ॥१२॥ और सुतलसे मैंने प्रचण्ड पराक्रमी दानव बुलाये हैं, उनको और बाणासुरको साथ लेकर मैं देवताओंको जीतनेके लिये जाऊँगा ॥१३॥ प्रद्युम्नादि जो उद्भट हैं, और दुरात्मा जो यादव हैं, उनको जीतकर और स्त्रियोंसहित सब देवताओं को बांधकर सुमेरुकी गुफामें डाल दूँगा ॥१४॥ फिर गौ, ब्राह्मण, देवता, साधु, वेद, तपस्वी, यज्ञ, श्राद्ध, तितिक्षु, अनेक तीर्थ करनेवालोंको ॥१५॥ मारूँगा, इसमें संदेह नहीं है, फिर सुखसे विचरूँगा, कंस धन्य था, देवताओंका विजयी था, बली था ॥ १६ ॥

ऐसा मेरा प्रिय मित्र पृथ्वीपर और कोई नहीं हैं, नारदजी कहते हैं—ऐसे कहकर दानवेन्द्र महाबली शकुनि ॥ १७ ॥ प्रद्युम्नके सन्मुख सहसा चला आया, लाख भारके कठोर धनुष
को लेकर ॥ १८ ॥ मयदैत्यने जिसकी प्रत्यंचा बनाई थी, उसको टंकारा, जिसकी टंकारसे दिग्गज बधिर (बहरे) हो गये ॥ १९ ॥ कितनेही पर्वत गिर पडे, समुद्र विचलित हो
गये, ब्रह्माण्ड झंकार उठा, और पृथ्वीमण्डल कांपने लगा ॥२०॥ उस शकुनिके धनुषकी टंकारसे वीरोंके ऊपर वीर गिरने लगे, प्रत्यंचाके शब्दसे विह्वल हुये हाथी युद्धमेंसे भाग गये,
घोडे संग्राममें उछलने लगे ॥ २१ ॥ ऐसे अकस्मात् सब भाग उठे, भयसे विह्वल होगये, तब गदादिक वीर रथमें बैठकर आये ॥ २२ ॥ महाबली पराक्रमी शकुनिने तब धनुषको
टंकारते हुये संग्राममें दश बाणोंसे अर्जुनको मारा ॥ २३ ॥ तब रथसहित अर्जुन चार कोसपर जाकर गिरा, फिर रणमें दुर्मद शकुनिने बीस बाण गदके मारे ॥ २४ ॥ और आकाश

नविद्यतेभूमितलेमित्रंमेपरमःसुहृत् ॥ नारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाशकुनिर्युद्धेदानवेंद्रोमहाबलः ॥ १७ ॥ आययौसहसादैत्यःप्रद्युम्नस्या-
पिसंमुखे ॥ महाधनुःसमादायलक्षभारसमंदृढम् ॥१८॥ मयेननिर्मितंतज्ज्याटंकारंसचकारह ॥ धनुष्टंकारशब्देनदिग्गजाबधिरीकृताः॥१९॥
निपेतुर्गिरयोनेकाविचेलुःसिंधवोनृप ॥ ननादसर्वंब्रह्मांडंचकंपेमंडलंभुवः ॥२०॥ वीरोपरिगतावीराज्याघोषेणातिविह्वलाः ॥ रणाद्विदुद्रुवुर्नागा
उत्पतंतोहयामृधे ॥२१॥ एवं पलायिताःसर्वेअकस्माद्भयविह्वलाः ॥ तदागदादयोवीराआजग्मुःस्यंदनेस्थिताः ॥२२॥ धनुष्टंकारयंतस्तेमहा-
बलपराक्रमाः ॥ शकुनिर्दशभिर्बाणैर्विव्याधार्जुनमाहवे ॥२३॥ गांडीवीसरथस्तस्माच्चतुष्क्रोशेपपातह ॥ गदंचबाणविंशत्याशकुनिर्युद्धदुर्म-
दः ॥२४॥ चिक्षेपसरथंराजन्नादयन्व्योममंडलम् ॥ चत्वारिंशच्छरैर्वीरोनिरुद्धंधन्विनांवरम् ॥२५॥ विव्याधसरथंराजन्नादयन्व्योममंडलम्
॥ साश्वोरथोनिरुद्धस्यषोडशक्रोशमास्थितः ॥ २६ ॥ सांबंचशितबाणैश्चतताडशकुनिर्मृधे ॥ सांबोपिसरथोराजन्नंबरेसमरांगणात् ॥ २७ ॥
द्वात्रिंशद्योजनंमार्गंनिपपातविदेहराट् ॥ कार्ष्णिंसमागतंदृष्ट्वाशकुनिःक्रोधपूरितः ॥२८॥ सहसाबाणपटलैःसंजघानरणांगणे ॥ प्रद्युम्नस्यरथो
राजन्संभ्रमन्घटिकाद्वयम् ॥२९॥ शतक्रोशेपपातोर्व्यांकमंडलुरिवाहतः ॥ सर्वेविसिस्मुःशकुनेर्बलंदृष्ट्वाथयादवाः ॥ ३० ॥ जघ्नुर्नानाविधैः
शस्त्रैर्दैत्यमद्रिंयथागजाः ॥ गदोर्जुनोनिरुद्धस्तुसांबोजांबवतीसुतः ॥ ३१ ॥

मण्डलको शब्दायमान करते हुये, रथके सहित उसको आकाशमें फेंक दिया, चालीस बाणोंसे धनुषधारी अनिरुद्धको ॥ २५ ॥ मारा और रथसहित अनिरुद्धको सोलह कोसपर
डाल दिया ॥ २६ ॥ फिर शकुनिने तीखे २ बाणोंसे संग्राममें साम्बको मारा, हे राजन् ! तब साम्बभी रथसहित रणभूमिमेंसे आकाशमें ॥२७॥ बत्तीस योजनपर जा पडा, फिर
प्रद्युम्नको आया देखकर शकुनि क्रोधमें भर गया ॥ २८ ॥ और सहसा बाणोंके समूहसे प्रद्युम्नको मारने लगा, हे राजन् ! तब प्रद्युम्नका रथ दो घडीतक आकाशमें घूमता
हुआ ॥ २९ ॥ सौ योजनपर पृथ्वीमें गिरा, तब शकुनिका बल देखकर सब यादव चकित हो गये ॥ ३० ॥ सभी यादव अनेक प्रकारके शस्त्रोंसे उस दैत्यको मारने लगे, जैसे
पर्वत के ऊपर हाथी प्रहार करते हैं, गद, अर्जुन, साम्ब, अनिरुद्ध ॥ ३१ ॥

ये सब धनुषको टंकारते हुये फिर युद्धमें आये, फिर प्रद्युम्न पवनके समान वेगवाले रथमें बैठकर ॥ ३२ ॥ धनुपको टंकारते हुये रणमंडलमें आये, प्रलयके समुद्र जैसी गर्जना जिसकी ॥ ३३ ॥ ऐसी शकुनिकी प्रत्यंचाको प्रद्युम्नने दश बाणोंसे काट डाला, हजार बाणोंसे हजार घोडे मार दिये और सौ बाणोंसे,रथको तोड दिया ॥३४॥ बीस बाणोंसे सारथिको मारकर पृथ्वीमें गिरा दिया, तब दूसरे रथमें दूसरे घोडे लगाकर ॥३५॥ दूसरे सारथीको रथमें करके दैत्योंके राजाने उसमें बैठकर चण्डविक्रम धनुपमें प्रत्यंचा चढाई ॥३६॥ पीछेसे तर्कसमेंसे सौ बाण निकालकर धनुपपर रखकर कानतक खेंचकर प्रद्युम्नसे बोला ॥ ३७ ॥ सभीमें मुख्य शत्रु जो तुम हो, सो तुमको पहिले मारूँगा, पीछे अपने तेजसे यादवोंकी सेनाको मारूँगा ॥३८॥ तब प्रद्युम्न बोले कि, सदा ही यह अवस्था कालके बलसे सुखमें छायाकी तरह जाती है, जैसे वायुके बलसे आकाशमें मेघ पंक्ति आती

धनुष्टंकारयंतस्तेपुनर्युद्धंसमागताः ॥ अथकार्ष्णिर्महाबाहुर्वायुवेगरथेस्थितः ॥ ३२ ॥ धनुष्टंकारयन्राजन्प्राप्तोभूद्रणमंडले ॥ प्रलयार्णवसंघट्टभीमसंघर्षनादिनीम् ॥ ३३ ॥ धनुर्ज्यांशकुनेःकार्ष्णिश्चिच्छेददशभिःशरैः ॥ सहस्रैश्चसहस्राश्वान्रथंचविशिखैःशतैः ॥ ३४ ॥ सारथिंबाणविंशत्यापातयामासभूतले ॥ ततोरथंसमुत्थाप्यहयैरन्यैर्नियोजितम् ॥३५॥ अन्यंसूतंरथेकृत्वारथमारुह्यदैत्यराट् ॥ संदधेशिंजिनींराजन्कोदंडेचंडविक्रमे ॥ ३६ ॥ शतंबाणान्तसमाकृष्यनिषंगात्पृष्ठतोगतान् ॥ चापेनिधायकर्णांतमाकृष्यप्राहमन्मथम् ॥ ३७ ॥ शकुनिरुवाच ॥ सर्वेषांघातयिष्यामिशत्रुमुख्यंमदोत्कटम् ॥ पश्चात्सेनांहनिष्यामियदूनांस्वस्थतेजसाम् ॥ ३८ ॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ सदावयःकालबलेनदेहिनांप्रयातिछायेवसुखेमुहुर्मुहुः॥तथाचदुःखंचसुखंगतागतंघनावलिर्वायुबलेनखेयथा ॥३९॥ कृतांकृषिंसिंचतियांहिसर्वतश्छिनत्तिदात्रेणयथाकृषीवलः ॥ तथाहिकालःस्वकृतांजनावलींदुरत्ययःपातिगुणैर्विलुम्पति ॥ ४० ॥ इदंकरिष्यामिकरोमिभूयोममेदमस्तीतितदेवमाब्रुवन् ॥ अहंसुखीदुःखयुतःसुहृज्जनोलोकस्त्वहंकारविमोहितोसुरः ॥ ४१ ॥ धन्यस्त्वंराजशार्दूलमुनीन्वाग्भिर्विडंबयन् ॥ स्वभावोदुस्त्यजोनृणांपृथग्भूतस्त्रिभिर्गुणैः ॥ ४२ ॥ नारदउवाच ॥ एवंश्रुत्वाणावन्योन्यंप्रद्युम्नशकुनीमृधे ॥ युयुधातेमैथिलेंद्रशक्रवृत्राविवस्थितौ ॥ ४३ ॥ इतितौधनुषोमुक्तान्विशिखान्सूर्यरश्मिवत् ॥ चिच्छेदकार्ष्णिर्बाणेनकुवाक्येनेवमित्रताम् ॥ ४४ ॥

है और जाती है, वैसे ही यह काल अपने बनाये हुये जनोंके सुख दुखको गतागत करता है, रक्षा करता है, फिर नाश करता है ॥ ३९ ॥ जैसे किसान खेती करके चारों ओरसे सींचता है, पकनेके बादमें हँसियासे काटता है, वैसे ही यह काल अपन तीन गुणोंसे बनाये हुये जनोंको बढाकर फिर नाश करता है ॥ ४० ॥ यह करूँगा, यह करता हूँ, फिर मेरे यह है, यह होगा, ऐसा कहते मैं सुखी, मैं दुखी, यह मित्र है, यह शत्रु है, रे असुर ! इस प्रकार यह लोक अहंकारसे मोहित है ॥४१॥ तब शकुनि बोला–हे राजशार्दूल ! तू धन्य है, वाणियोंसे मुनियोंकी नकल करता है, परन्तु मनुष्योंका स्वभाव दुस्त्यज (कठिनतासे छोडा जानेवाला) है, जो तीनों गुणोंसे पृथक् है ॥४२॥ नारदजी कहते हैं–ऐसे प्रद्युम्न और शकुनि आपसमें कहते हुये युद्ध करने लग गये, जैसे इन्द्र और वृत्रासुर ॥४३॥ इस प्रकार धनुपसे छूटे हुये सूर्यकी किरण जैसे बाणोंको अपने बाणोंसे प्रद्युम्न काटने लगे जैसे

कुवाक्यसे मित्रता को ॥ ४४ ॥ तब तो युद्धमें दुर्मद शकुनिने लाख भारकी गदा लेकर प्रद्युम्नके सिरमें मारी ॥४५॥ प्रद्युम्न भगवान्‌ने अपनी वज्र जैसी गदासे उस गदाके काच
के पात्रकी तरह सौ टुकडे कर डाले ॥४६॥ फिर दैत्यने क्रोधमें भरकर चमकता त्रिशूल प्रद्युम्नके सिरमें मारा, फिर बहुत गर्जा ॥ ४७ ॥ तब प्रद्युम्नने त्रिशूलसे त्रिशूलकेसौ
टुकडे कर दिये, फिर एक भाला खेंचकर प्रद्युम्नने शकुनिके मारा ॥४८॥ भालेसे उसका हृदय फट गया, कुछ व्याकुल मन होकर शकुनिने परिघ (बेवडा) से कृष्णके पुत्र प्रद्युम्न
को मारा ॥४९॥ तब तो यमदण्डको लेकर बली रुक्मिणीनन्दनने दैत्यके परिघको चूर्ण कर दिया ॥५०॥ उस यमदण्डसे ही उसके चंचल घोडोंको सारथीको दिव्य रथको सबको चूर्ण
कर दिया ॥५१॥ हे राजन् ! घोडों सहित सारथीके मर जानेपर, रथ और परिघके टूट जानेपर उस दैत्यने क्रोधसे खड्ग ग्रहण किया ॥५२॥ तब महावीर प्रद्युम्नने यमदण्डसे उसके

सुवाक्यैर्मित्रतां... ॥४४॥ (continued:) काचपात्रंयथादंड-

लक्षभारमयींगुर्वींगृहीत्वामहतींगदाम्॥जघानमूर्ध्निप्रद्युम्नंशकुनिर्युद्धदुर्मदः ॥४५॥ प्रद्युम्नोभगवान्साक्षाद्गदयावज्रकल्पया॥काचपात्रंयथादंड-
स्तद्गदांशतधाकरोत् ॥४६॥ अथदैत्योरुषाविष्टस्त्रिशूलंचस्फुरद्रुचा॥ प्रद्युम्नस्याहनन्मूर्ध्निशब्दमुच्चैःसमुच्चरन्॥४७॥ त्रिशूलेनहरेःपुत्रस्त्रिशूलं
शतधाच्छिनत् ॥ कुन्तंतीक्ष्णंशकुनयेप्राहिणोद्रुक्मिणीसुतः ॥४८॥ कुन्तेनविद्धहृदयःकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥ परिघेणहरेःपुत्रंसंतताडरणां-
गणे ॥४९॥ यमदण्डंततोनीत्वारुक्मिणीनन्दनोबली ॥ चूर्णीचकारदैत्यस्यपरिघंपरमाद्भुतम् ॥५०॥ चचालाश्वांश्वसहसायमदण्डेनवेगतः ॥
सारथिंस्यंदनंदिव्यंपातयामासभूतले ॥५१॥ सूतेमृत्युंगतेसाश्वेचूर्णीभूतेरथेनृप ॥ परिघेचमहादैत्यःखड्गंजग्राहरोषतः ॥५२॥ प्रद्युम्नोपिमहा-
वीरोयमदण्डेनमैथिल ॥ द्विधाचकारतत्खड्गंपन्नगंगरुडोयथा ॥५३॥ यमदण्डेनतंदैत्यंस्कंधेकार्ष्णिस्तताडह॥तस्यघातेनशकुनिःसद्योमूर्च्छा-
मवापह ॥ ५४ ॥ दैत्यसेनांविवेशाशुश्रीकृष्णःक्रोधमूर्च्छितः ॥ निपातयन्महावीरान्वनंवैश्वानरोयथा ॥५५॥ गजांस्तुरंगांश्चरथान्दैत्यांस्ता-
नाततायिनः ॥ पातयामासयमवद्यमदण्डेनमाधवः ॥५६॥ छिन्नपादाश्छिन्नमुखाश्छिन्नांगाश्छिन्नबाहवः ॥ दैतेयादनुजास्तेनमूर्च्छितानिधनं
गताः ॥ ५७ ॥ यमरूपधरंदृष्ट्वाप्रद्युम्नंभीमविक्रमम् ॥ त्यक्त्वास्वंस्वंरणंकेचिद्दुद्रुवुस्तेदिशोदश ॥५८॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डे
नारदबहुलाश्वसंवादेशकुनियुद्धवर्णनंनामाष्टात्रिंशोऽध्यायः॥ ३८ ॥

खड्गके दो टुकडे कर दिये,जैसे गरुड सर्पके टुकडे कर देता है ॥५३॥ और प्रद्युम्नने यमदण्ड शकुनिके कंधेमें मारा, उसकी चोटसे शकुनि उसी समय मूर्च्छित होकर गिर पडा ॥५४॥
उस समय क्रोधित हुये अन्तर्यामी श्रीकृष्ण दैत्य सेनामें प्रविष्ट होकर बडे बडे वीरोंको गिराने लगे, जैसे अग्नि वनको गिराती है ॥५५॥ तब माधव (श्रीकृष्ण) हाथियोंको, घोडोंको
रथोंको और आततायी उन दैत्योंको यमदण्डसे यमराजकी तरह गिराने लगे ॥५६॥ उसके मारे पांव कटे, हाथ कटे, शिर कटे, भुजा कटे,दैतेय दनुज मूर्च्छित होकर मरकर गिर
पडे ॥५७॥ यमरूपधारी भीम पराक्रमी प्रद्युम्नको देखकर कोई २ अपने २ रणको छोडकर दशों दिशाओंमें भाग गये ॥५८॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजितखण्डे भाषाटीकायां
शकुनि युद्धवर्णनं नामाष्टात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥

नारदजी कहते हैं कि, अपनी सेनाको मरी हुई देखकर शकुनिने लाख भारके धनुषको उठाया ॥ १ ॥ प्रचण्ड धनुषमें तीखा बाण लगाकर दैत्योंका राजा शकुनि प्रद्युम्नसे बोला ॥ २ ॥ जगत्में कर्महो प्रधान है, कर्महो साक्षात् गुरु ईश्वर प्रभु है, कर्महीसे ऊँचे नीचे पदको प्राप्त होता है, और हे राजन् ! कर्महीसे जीत और हार होती है ॥३॥ जैसे हजार गौओंमें जिस गौका जो बछडा होता है, वह सबके देखते अपनी माताकोही प्राप्त होता है (उसीके थनसे जा लगता है) वैसेही जिसने जो शुभाशुभ कर्म किया है, अन्य हजारों मनुष्योंके होते हुये वह कर्म उसीको प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ सो मैंने प्रतिज्ञाकी है कि, हे प्रद्युम्न ! मैं अपने दृढ कर्मसे शत्रु प्रद्युम्नको जीतूँगा, उसका तुम वह उपाय करो, जिससे तुम्हारी भूमिमें हार न हो ॥५॥ तब प्रद्युम्नने कहा कि, यदि तू कर्महीको प्रधान मानता है, तो देख कर्मका फल तो समयपरही होता है, कर्तव्य करनेपर भी यदि विघ्न आ जाये तो कालहीको कई आचार्य बलवान् कहते हैं ॥ ६ ॥ फलके समयपर तो फल होता है, किन्तु कर्ताके बिना नहीं होता है, इससे बहुतसे कर्ताहीकी प्रशंसा करते हैं अर्थात् कर्ताही

॥ श्रीनारदउवाच ॥ शकुनिःपुनरुत्थायस्वबलंवीक्ष्यपोथितम् ॥ जग्राहसमहाराजलक्षभारसमंधनुः ॥ १ ॥ निधायबाणंनिशितंकोदण्डेचण्डविक्रमे ॥ कार्ष्णिप्राहरणेराजञ्शकुनिर्दैत्यराड्बली ॥ २ ॥ शकुनिरुवाच ॥ कर्मप्रधानंजगतीतलेमहत्कर्मैव साक्षाद्गुरुरीश्वरः प्रभुः॥ उच्चावचत्वंभवतीहकर्मणातेनैवराजन्विजयःपराजयः ॥३॥ गवांसहस्रेषुयथाहिवत्सकःस्वमातरंविन्दतिपश्यतांसताम् ।तथाहियेनापिकृतंशुभाशुभंनरेषु तिष्ठत्सुतमेवगच्छति ॥४॥ ततोविजेष्यामिदृढेनकर्मणारिपुंभवन्तंशपथःकृतोमया॥सद्यःकुरुत्वंप्रतिकारमेवतद्येनापिनस्याद्भुवितेपराजयः॥५॥ प्रद्युम्नउवाच ॥ कर्मप्रधानंयदिमन्यसेभवान्कालंविनातर्हिफलंनविद्यते ॥ कृतेचपाकेयदिविघ्नताक्वचित्सदाबलिष्ठंसमयंविदुःपरे ॥ ६ ॥ पाकप्रकारेसतिपाकसाधनंकदापिकर्तारमृतेनजायते॥वदंतिकर्तारमतःपरंपरेनकर्मकालंशृणुदैत्यपुंगव॥७॥योगंविदुःकेपियदाह्ययोगतःकथंभवेत्कौकिलपाकसाधनम्॥सर्वंहिवायोगमृतेवृथाभवेत्कालेतथाकर्मणिभर्तरिस्थिते॥८॥योगंतथाकर्मणि कर्तरिस्थितेकालेविधिंसांख्यमृतेवृथा भवत्॥ पाकप्रकाराद्यविचारकृद्यदानतर्हिपाकस्ययथाप्रसाधनम्॥९॥ योगकर्मविधिकारकसांख्यैर्ब्रह्मपूरुषमृतेनहिकिंचित् ॥ तन्नमामिपरिपूर्णतमांशंयेन विश्वमखिलंविदितंखलु ॥ १० ॥ शकुनिरुवाच ॥ हेप्रद्युम्नमहाबाहोत्वंसाक्षाज्ज्ञानशेवधिः ॥ तवदर्शनमात्रेणनरोयातिकृतार्थताम् ॥ ११ ॥

को मुख्य मानते हैं, और हे दैत्य पुंगव ! कालको तथा कर्मको मुख्य नहीं मानते हैं ॥७॥ कई उपायको कहते हैं कि, उपायके बिना पृथ्वीमें कोई कार्य नहीं होता है, काल कर्मके वशमें है, किन्तु उद्योगके बिना फल सिद्ध नहीं होता है ॥ ८ ॥ देखो कर्म, कर्ता और काल इनके विद्यमान होते हुये भी विधि और सांख्यके बिना कुछ उपाय नहीं होता है, जैसे फलके प्रकारका विचार करनेवालेके बिना फलकी सिद्धि नहीं होती है ॥ ९ ॥ ऐसेही योग, कर्म, विधि, कारक और सांख्य इनके समूहसेही ब्रह्म पुरुषके बिना कुछ नहीं होता है, उन परिपूर्णतम भगवान्को नमस्कार है, जिनसे सब विश्व रचा गया है ॥ १० ॥ तब शकुनि बोला—हे प्रद्युम्न ! हे महाबाहो ! तुम साक्षात् ज्ञानकी निधि हो, तुम्हारे दर्शन ही से नर कृतार्थ होते हैं ॥ ११ ॥

जो तुम्हारे साथमें नित्य वार्ता करते हैं, उनकी महिमाको कहनेकी ब्रह्माकी भी सामर्थ्य नहीं है, ॥१२॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे कहकर मायावी दैत्यराज शकुनिने मयदैत्यसे सीखे हुये रौरवास्त्रको चलाया ॥१३॥ उसी समय बड़े भयंकर रौद्ररूप वाले करोडों बडे २ सर्प, दंदशूक और बडे विषैले बिच्छू निकले ॥१४॥ उनसे डसी हुई सब सेना उनकी फुंकारों से मतवाली हो गई, उसको देखकर महाबुद्धि प्रद्युम्नने गरुडास्त्र चलाया ॥ १५ ॥ उसके देखते हुये बाणमेंसे करोडों गरुड, मोर, नीलकंठ, और भी दूसरे भयंकर पक्षी निकले ॥१६॥ वे सर्पोंको, दंशशूकोंको, और बिच्छुओंको निगल गये और बडी बडी चोंच वाले, बडे २ पंखोंवाले वे पक्षी क्षणभरमें अदृश्य हो गये ॥१७॥ फिर वह रणमें दुर्मद दैत्य भी पिशाचोंकी गन्धर्वोंकी, गुह्यकोंकी और राक्षसोंकी मायाको छोडने लगा ॥ १८ ॥ उसके बाणमेंसे वैसेंही प्रेत और करोडों भूत निकले, बडे काले काले भयंकर वे अंगारोंको

येत्वत्संगंसमासाद्यवार्ताकुर्वन्तिनित्यशः ॥ तेषांतुमहिमानंहिवक्तुंनालंचतुर्मुखः ॥ १२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाशकुनिर्दैत्यो मायावीदैत्यराड्बली ॥ शिक्षितंमयदैत्येनरौरवास्त्रंसमादधे ॥ १३ ॥ महोरगादंदशूकावृश्चिकाश्चविषोत्कटाः ॥ कोटिशोनिर्गताराजन्करालारौद्ररूपिणः ॥१४॥ तैर्दंशितंबलंसर्वंफूत्कारैर्मत्ततांगतम् ॥ वीक्ष्यकार्ष्णिर्महाबुद्धिर्गरुडास्त्रंसमादधे ॥१५॥ कोटिशोगरुडाबाणान्नीलकण्ठाःकलापिनः ॥ अन्येचपक्षिणोभीमानिर्गतास्तस्यपश्यतः ॥१६॥ अग्रसन्नुरगान्युद्धेदंदशूकान्सवृश्चिकान् ॥ तीक्ष्णतुण्डाबृहत्पक्षाः क्षणात्तेऽदृश्यतांगताः ॥ १७ ॥ दैत्योपिराक्षसींमायांगांधर्वींगौह्यकींपुनः ॥ पैशाचींसंदधेराजञ्शकुनिर्युद्धदुर्मदः ॥ १८ ॥तद्बाणनिर्गताभूतास्तथाप्रेताश्चकोटिशः ॥ अंगारान्मुमुचुस्तेवैकरालाःकृष्णरूपिणः ॥१९॥ ज्ञात्वाथतामसींमायांपैशाचींमीनकेतनः ॥ सत्त्वास्त्रंसंदधेबाणेयुद्धाकांक्षीहरेःसुतः ॥ २० ॥ तस्माद्विनिर्गताराजन्कोटिशोविष्णुपार्षदाः ॥ जघ्नुःपिशाचींतांमायांपन्नगींगरुडोयथा ॥२१॥ मायांदैत्योपिमायावीगौह्यकींसंदधेपुनः ॥ संभूताकोटिशोमेघागर्जंतोभीमरूपिणः ॥२२॥ विष्ठामूत्रंचरुधिरंमेदोमज्जास्थिवर्षिणः ॥ ज्ञात्वाथगौह्यकींमायांप्रद्युम्नोभगवान्हरिः ॥ २३ ॥ तन्नाशार्थंमहाराजकोलास्त्रंसंदधेत्विषौ ॥ तद्बाणाद्यज्ञवाराहोनिर्गतोघर्घरस्वनः ॥ २४ ॥ सटाविधूयवेगेनदंष्ट्र्यातीक्ष्णयाघनान् ॥ विदारयन्रणेरेजेवेणून्मत्तगजोयथा ॥ २५ ॥ दैत्योथमायांगांधर्वींचकाररणमण्डले ॥ युद्धंनदृश्यतेतद्धेमसौधानिकोटिशः ॥ २६ ॥

उछालने लगे ॥१९॥ तब उस तामसी पिशाची मायाको देखकर हरिके पुत्र युद्धाकांक्षी प्रद्युम्नने सत्त्वास्त्र चलाया ॥२०॥ उसमेंसे करोडों विष्णुके पार्षद निकले, वे उस पिशाची मायाका नाश करने लगे, जैसे गरुड सर्पिणीका करता है ॥ २१ ॥ मायावी दैत्यने फिर गुह्यकोंकी माया की, उसमेंसे करोडों बडे भयंकर रूप वाले, गर्जना करते हुये मेघ निकले ॥२२॥ वे विष्ठा, मूत्र, मेद, रुधिर और मांसकी वर्षा करने लगे, तब गुह्यकोंकी मायाको जानकर प्रद्युम्न भगवान्ने ॥ २३ ॥ उसके नाशके लिये शूकरास्त्रको चलाया, उस बाणसे घर्घर शब्द करते यज्ञवाराह निकले ॥ २४ ॥ अपनी सटा (गर्दनके बाल) बिखेर कर मेघोंको विदीर्ण करते हुये, जैसे वेणुओंको विदीर्ण करता मत्तगज शोभित होता है ॥ २५ ॥ फिर उस दैत्यने गन्धर्वी मायाकी जिससे युद्ध अदृश्य हो गया, और करोडों स्वर्णके महल ॥ २६ ॥

वस्त्र और अलंकारोंसे युक्त सभीके देखते देखते होगये, विद्याधरी अप्सराएं नृत्य करने लगीं, गन्धर्व गाने लगे ॥२७॥ मृदंग, ताल, बाजे, मोहन रागों सहित बजने लगे, हाव, भाव, कटाक्षोंसे जनोंको तुष्ट करती देखने लगीं ॥२८॥ मोहिनी सुन्दरी रामा श्यामा कमल लोचना, उनके लावण्य रागोंसे जब सब यादव मोहित होगये ॥२९॥ तब उस गान्धर्वी मोहिनी मायाको जानकर महाबली प्रद्युम्नने उसके प्रहारके लिये रण मण्डलमें ज्ञानास्त्रका प्रयोग किया ॥३०॥ हे नृपेश्वर ! तब ज्ञानके उदय होनेपर मोहका नाश होगया, जब माया नष्ट होगई, तब शकुनि अत्यन्त क्रोधित होगया ॥३१॥ तब उस मायावी दैत्य पुंगवने राक्षसी मायाकी, हे राजन् ! उस समय पंखों सहित पर्वतोंसे आकाश छागया ॥३२॥ पृथ्वीमें बडा अन्धकार होगया, तब जले हुये वृक्ष, कबंध, रुधिर, शिला और हड्डियाँ, इनकी वर्षा होने लगी ॥३३॥ हे विदेहराज ! गदा, परिघ, निस्त्रंश, मूसल, ये सब ओरसे

वस्त्रालंकारयुक्तानिबभूवुःपश्यतांसताम् ॥ विद्याधर्य्यश्चगन्धर्वागायंतोनृत्यतत्पराः ॥२७॥ मृदंगतालवादित्रैर्मोहनैरागमिश्रितैः ॥हावभावकटाक्षैश्चतोपयंत्योजनान्नृप ॥ २८ ॥ मोहिन्यःसुंदरीरामाश्यामाःःकमललोचनाः ॥ तासांलावण्यरागाभ्यांमोहंयातेषुवृष्णिषु ॥२९॥ गांधर्वींमोहिनींमायांज्ञात्वाकार्ष्णिर्महाबलः ॥ संदधेतत्प्रहारार्थंज्ञानास्त्रंरणमंडले ॥३०॥ ज्ञानोदयेतदाजातेमोहनाशोनृपेश्वर ॥ नाशंगतायांमायायांशकुनिःक्रोधमूर्च्छितः ॥३१॥ राक्षसींसंदधेमायांमायावीदैत्यपुंगवः ॥ सपक्षैःपर्वतैराजन्क्षणात्तच्छादितंनभः ॥३२॥ महांधकारोऽभूत्पृथ्व्यांपरार्द्धचयनैरिव ॥ दग्धवृक्षशिलास्थीनिकबंधरुधिराणिच ॥३३॥ गदापरिघनिस्त्रिंशमुसलादीनिसर्वतः ॥ अंबराद्भ्रंशुःशैलामेघाइवविदेहराट् ॥ ३४ ॥ रक्षोगणाःशूलहस्ताछिंधिभिंधीतिवादिनः ॥ यातुधानाश्वशतशोभक्षयंतोद्विपान्हयान् ॥ ३५ ॥ सिंहव्याघ्रवराहाश्चदृश्यंतेरणमंडले ॥ मर्दयंतोनखैर्नागांश्चर्वयंतोवपूंषिवै ॥३६॥ पलायमानंस्वबलंदृष्ट्वाकार्ष्णिर्महाबलः ॥ जेतुंतांराक्षसींमायांनृसिंहास्त्रंसमादधे ॥३७॥ आविर्भूतो हरिःसाक्षान्नृसिंहोरौद्ररूपधृक् ॥ स्फुरत्सटोललज्जिह्वोनखलांगूलभूषितः ॥३८॥ चलद्वालोभीषणास्योहुंकारेणातिभीषणः॥सिंहनादंचकुर्वन्वैसंस्थितोरणमंडले ॥ ३९ ॥ ननादतेनब्रह्मांडंसप्तलोकैर्बिलैःसह ॥ विचेलुर्दिग्गजास्ताराएजद्भूखंडमंडलम् ॥ ४० ॥

गिरने लगे, और आकाशमें पर्वत मेघोंकी तरह घूमने लगे ॥३४॥ और राक्षसोंके गण सैकडों यातुधान हाथोंमें त्रिशूल लिये, छेद लो, भेद लो, ऐसे कहते घोडे और हाथियोंको खाने लगे ॥३५॥ सिंह,व्याघ्र, और वराह, रणमण्डलमें दीखने लगे, नखोंसे हाथियोंको नोंचने लगे, वीरोंके शरीरोंको चबाने लगे ॥३६॥ तब रणमेंसे पलायमान अपनी सेनाको देखकर महाबली प्रद्युम्नने उस राक्षसी मायाको जीतनेके लिये नृसिंहास्त्रका प्रयोग किया ॥३७॥ तब साक्षात् नृसिंहजी भयंकर रूपको धरे प्रगट हुये, जिनके गर्दनके बाल बिखर रहे हैं, जीभ निकल रही है, और जो नख, पूंछ, इनसे शोभित हैं ॥ ३८ ॥ चलायमान है पूंछ जिनकी, भयंकर मुखवाले, हुंकारसे अति भयंकर सिंहनाद करते रणमण्डलमें स्थित होगये ॥३९॥ और उन्होंने गर्जना की, उससे सातों स्वर्ग, सातों पातालों सहित ब्रह्माण्डझंकार उठा, दिग्गज चलायमान होगये, तारे चले गये, भूखण्डमण्डल चलायमान होगया ॥४०॥

वे नृसिंह दैत्योंके देखते २ वृक्षोंसहित पर्वतोंको तीक्ष्ण नखोंसे पृथ्वीमें फेंकने लगे ॥ ४१ ॥ राक्षसोंके गणोंको पकडकर बडे वेगसे पांवोंसे वे नृसिंह राक्षसोंका मर्दन करने लगे ॥४२॥ सिंह, व्याघ्र, और सूअरोंको तीक्ष्ण नखोंसे चीर चीरकर आकाशमें फेंक दिया, फिर अन्तर्धान हो गये ॥४३॥ जब राक्षसी मायाका नाश होगया, तब प्रद्युम्नने युद्ध भूमिमें विजयके देनेवाले मौलेन्द्र शंखको बजाया ॥४४॥ चारों ओरसे जयजय शब्द होने लगे, दुन्दुभियाँ बजने लगीं, देवता प्रद्युम्नके ऊपर फूलोंकी वर्षा करने लगे ॥ ४५ ॥ जब अपनी माया निकल गई, तब दैत्योंका राजा शकुनि अपने रथसहित और सेनासहित अन्तर्धान होगया ॥ ४६ ॥ फिर दैत्यने दैत्यकी, बनाई हुई मायाकी, हाथीकी सूंड जैसी मोटी धाराको बर्षाते हुये, बिजली चमकाते हुये ॥४७॥ सांवर्तकगण नामके मेघ आगये, सब सत्पुरुषोंके देखते २ एकक्षणमें सब समुद्र चण्ड पवनके प्रेरित किये हुये घिर गये ॥४८॥ क्षोभको प्राप्त होगये, पृथ्वीके सब वृक्ष डूब गये, अपनेसहित समस्त भूमण्डल डूब गया ॥ ४९ ॥ इस बातको यादव देखकर सब भयभीत होगये, रामकृष्ण, राम

गृहीत्वाद्यम्बरेशैलान्सवृक्षान्नखरैःखरैः ॥ पातयामासभूपृष्ठेदैत्यानांचप्रपश्यताम् ॥४१॥ रक्षोगणान्संगृहीत्वापाटयामासवेगतः ॥ यातुधानगणान्पद्भ्यांसममर्दहरिर्मृधे ॥४२॥ सिंहान्व्याघ्रान्वराहांश्चसंविदार्यनखैःखरैः ॥ चिक्षेपगगनेविष्णुस्तत्रैवांतर्दधेपुनः ॥ ४३ ॥ नाशंगतायांमायायांराक्षस्यांरुक्मिणीसुतः ॥ शंखंदध्मौविजयदंमौलेंद्रंचरणांगणे ॥४४॥ अभूज्जयजयारावोदुंदुभिध्वनिमिश्रितः ॥प्रद्युम्नस्योपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥४५॥ स्वमायायांनिर्गतायांशकुनिर्दैत्यपुंगवः ॥ सरथःसैनिकैःसार्द्धंतत्रैवांतर्हितोभवत् ॥४६॥ मायांचकारदैतेयीमयदैत्यप्रदर्शिताम् ॥ हस्तिशुण्डासमांधारांवर्षंतोतितडित्स्वनाः ॥४७॥ सांवर्त्तकगणामेघाआजग्मुःपश्यतांसताम् ॥ क्षणात्सर्वेंसमुद्रास्तेचंडवातेनवेपिताः ॥४८॥ क्षुभितारुक्मिसंघर्षावर्तैःप्लावितभूरुहाः ॥ भूमंडलंसपदितत्प्लावितंचात्मभिःसमम् ॥४९॥ दृष्ट्वाथयादवाःसर्वेप्रापुस्तत्रभयंबहु ॥ वदंतोरामकृष्णेतिविस्मृतस्वपराक्रमाः ॥५०॥ क्षणमात्रेणराजेंद्रतूष्णींभूताःपराजिताः ॥ तदाकार्ष्णिर्महाबाहुःकोदंडेचंडविक्रमे ॥ बाणंनिधायसहसाश्रीकृष्णास्त्रंसमादधे ॥ ५१ ॥ नवार्ककोटिद्युतिमन्महन्महोवीरंजयन्मैथिलवैदिशोदश ॥ समागतंतत्रकुशस्थलीपुरःस्वयंपरंस्वार्थमिवात्मवांछितम् ॥५२॥ तस्मिन्परेतेजसिनूतनांबुदच्छविंसुवर्णांबुजरेणुवाससम् ॥भृङ्गावलीकूजितकुंतलावलिंस्रजंदधानंनववैजयंतीम् ॥५३॥ श्रीवत्सरत्नोत्तमचारुवक्षसंचतुर्भुजंपद्मविशालवीक्षणम् ॥ स्फुरत्किरीटंवरहारनूपुरंलसन्नवार्कद्युतिहेमकुण्डलम् ॥ ५४ ॥

कृष्ण कहते अपना पराक्रम भूल गये ॥ ५० ॥ हे राजेन्द्र ! एकक्षण सब चुप होगये, हार गये, तब महाबाहु प्रद्युम्नने अपने प्रचण्ड धनुषपर बाण चढाकर श्रीकृष्णास्त्रका प्रयोग किया ॥५१॥ हे मैथिल ! नवीन करोड सूर्य जैसी कान्तिवाला, दशों दिशाओंके वीरोंको जीतनेवाला, अपने वांछित अर्थकी तरह वहाँ कुशस्थली (द्वारका) दिशाका तेज आगया ॥५२॥ उस तेजमें नवीन मेघके जैसी छविवाले,सुवर्णकमलके मकरन्दके रंगका पीताम्बर ओढे, भ्रमरोंके पंक्तिसे गुंजारती हुई अलकावलिको धारण किये, देदीप्यमान किरीट, कुंडल हार और नूपुरोंकी कान्तिसे देदीप्यमान वैजन्ती मालाको धारण किये ॥५३॥ वक्षस्थलमें श्रीवत्सका चिह्न है, जिनके चार भुजाधारी,कमल जैसे विशाल नेत्र और अति सुशोभित नवीन सूर्यके जैसी कान्तिवाले हैं स्वर्ण कुण्डल जिनके, ऐसे ॥ ५४ ॥

श्रीकृष्णको देखकर सब यादव अत्यन्त हर्षित होगये, हाथ जोड नमस्कार कर पुष्पोंकी वर्षा करने लगे, चारों ओरसे जय २ शब्द करने लगे ॥५५॥ उसी समय आकर श्रीकृष्णने शाङ्ग धनुपके एकही बाणसे शकुनिके धनुपको सहजमेंही काट डाला ॥५६॥ उसी समय कट गया है धनुष जिसका, ऐसा वह शकुनि डरकर युद्धको छोडकर शस्त्रोंका समूह लेनेके लिये चन्द्रावती पुरीको चला गया ॥५७॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खंडे भापाटीकायां श्रीकृष्णागमनं नामैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥३९॥ नारदजी कहते हैं,जब शकुनि दैत्य चला गया, तब कमल लोचन भगवान् प्रद्युम्नादिक सब यादवोंको बुलाकर यह बोले ॥१॥ भगवान् बोले कि, पहिले इस दैत्य शकुनिने सुमेरुके उत्तर पार्श्वमें चार युगतक अन्नको छोडकर तप करके महादेवको प्रसन्न किया ॥ २ ॥ जब चार युग बीत गये तब प्रसन्न हुये साक्षात् महेश्वर देवने दर्शन देकर कहा कि, वर मांग ॥३॥ तब आंसू जिसके आगये,

विलोक्यदेवंयदवोतिहर्षिताःपरंप्रणेमुःकृतहस्तसंपुटाः ॥ प्रचक्रिरेमैथिलपुष्पवर्षिणोमराजयारावमतीवसर्वतः ॥५५॥ तदैत्यशकुनेःसज्यंको दण्डंप्राच्छिनद्गुपा ॥ शार्ङ्गमुक्तेनतच्छार्ङ्गीबाणेनैकेनलीलया ॥५६॥ सच्छिन्नधन्वाशकुनिस्त्यक्त्वायुद्धंप्रधर्षितः ॥ हेतिसंहतिमानेतुंययौचन्द्रा- वतींपुरीम् ॥ ५७ ॥ इति श्री मद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीकृष्णागमनंनामैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥ नार- दउवाच ॥ दैत्येगतेथशकुनौभगवान्कमलेक्षणः ॥ काष्ण्यादियादवान्सर्वानाहूयेत्थमुवाचह ॥ १ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ दैत्योयंशकुनिः पूर्वंसुमेरोः ॥ पार्श्वउत्तरे ॥ चतुर्युगंवर्जितान्नस्तपसातोपयच्छिवम्॥२॥चतुर्युगेव्यतीतेतुसाक्षाद्देवोमहेश्वरः॥ प्रसन्नोदर्शनंदत्त्वावरंब्रूहीत्युवाचह ॥३॥ नत्वाथशकुनिर्दैत्यःकृतांजलिपुटःशनैः ॥ हृष्टरोमाश्रुपूर्णाक्षः प्राहगद्गदयागिरा ॥ ४ ॥ मृतःसन्भूमिसंस्पर्शाद्भूयात्संजीवितःप्रभो ॥ आकाशेमेमृतिर्देवमाभूयाद्घटिकाद्वयम् ॥५॥ दैत्येनोक्तोहरःसाक्षाद्दत्त्वातस्मैवरद्वयम् ॥ पंजरस्थंशुकंदत्त्वाप्राहदैत्यंनताननम् ॥ ६ ॥ जीव- कल्पंशुकंचैनंरक्षदैत्यसदानघ ॥ अस्मिन्मृतेचज्ञातव्यंनिधनंस्वंत्वयासुर ॥७॥ इति दत्त्वा वरंतस्मैरुद्रश्चांतरधीयत ॥ तस्मात्तस्यवधोदुर्गेभ- विष्यतिशुकेमृते ॥ ८ ॥ श्रीनारउदवाच ॥ इत्युक्त्वावीरसदसिभगवान्देवकीसुतः ॥ सुपर्णंशीघ्रमाहूयप्राहप्रहसिताननः ॥ ९ ॥

रोमांच हो आयें,ऐसे शकुनि दैत्यने हाथ जोड नमस्कार करके गद्गद वाणीसे कहा कि ॥४॥ मैं मर जाऊँ तो भी भूमिके स्पर्शसे फिर जीवित हो उठूँ,और आकाशमेंभी दो घडीतक मेरी मृत्यु न हो ॥५॥ दैत्यका वचन सुनकर महा देवजीने ये दोनों वर दे दिये, और पिंजडेमें एक तोता देकर शकुनि दैत्यसे बोले ॥६॥ हे दैत्य ! जीवके तुल्य इस तोतकी रक्षा कर, इसके मरने पर तू अपना मरना जान लेना ॥ ७ ॥ ऐसे वर देकर रुद्र अन्तर्धान होगये, इससे दुर्गमें तोतोंके मरनेपर वह शकुनि मरेगा ॥ ८ ॥ नारदजी कहते हैं, ऐसे देवकी नन्दन भगवान् वीर सभामें कहकर बडी जल्दी गरुडको बुलाकर हँसकर यह वचन बोले ॥ ९ ॥

हे गरुड ! महाबुद्धे ! तू चन्द्रावती पुरीको चला जा, जो पुरी दैत्य सेनासे घिरी हुई सौ योजनकी है ॥१०॥ बडे २ ऊँचे आकाशके स्पर्श करनेवाले स्वर्णके मनोहर महल जिसमें हैं, विचित्र बाग बगीचोंसे और दैत्य पुंगवोंसे जो शोभित है ॥ ११ ॥ किले किले पर श्रेष्ठ दैत्य रक्षा कर रहे हैं, उसको देखनेके लिये गरुडजीने सूक्ष्मरूप धर लिया ॥१२॥ जैसे दैत्य न देखें वैसे महलोंको देखते उनमें उडते २ गरुड शकुनिके महलमें गये ॥१३॥ दैत्यके जीव तोतेको देखते २ एक क्षणतक ठहर गये, युद्धके लिये रहे शकुनिको देखा ॥१४॥ अनेक शस्त्रोंको धारण किये, बडे वीर, क्रोधमें भरे उसको उसकी मदालसा नामकी स्त्री गोदमें बैठाकर समझा रही थी, यह कह रही थी ॥ १५ ॥ हे राजन् ! सब सुहृद तुम्हारे अनुकूल तुम्हारे भाई बडे बडे उद्भट दैत्य पुंगव युद्धमें मारे गये ॥१६॥ अब तुम यादवोंसे युद्ध करनेके लिये मत जाओ, अब वहाँ भगवान् हरि आगये हैं, उनको जल्दी भेंट दो

॥ श्रीभगवानुवाच ॥ शृणुतार्क्ष्यमहाबुद्धेगच्छचन्द्रावतींपुरीम् ॥ शतयोजनविस्तीर्णांदैत्यसेनासमाकुलाम् ॥१०॥ प्रासादैर्गगनस्पर्शैर्हैमरत्न-मनोहरैः ॥ विचित्रोपवनारामैःशोभितांदैत्यपुंगवैः ॥ ११ ॥ दुर्गैदुर्गैद्राग्देशेरक्षितांदैत्यपुंगवैः ॥ तांद्रष्टुंगरुडोराजन्सूक्ष्मरूपंदधारह ॥१२॥ अलक्षितोदैत्यवृंदैःपश्यन्प्रासादतोलिकाः ॥ तेषूत्पतन्नुत्पतंश्चशकुनेर्मंदिरेगतः॥१३॥प्रेक्षञ्शुकंदैत्यजीवंक्षणंतत्रस्थितोभवत् ॥ युद्धार्थंददर्शि-तंतत्रशकुनिंदैत्यपुंगवम् ॥ १४ ॥ नानाशस्त्रधरंवीरंक्रोधपूरितमानसम् ॥ गृहीत्वातंपरिकरेप्राहराजन्मदालसा ॥ १५ ॥ मदालसोवाच ॥ राजन्सर्वेपिसुहृदोनुकूलाभ्रातरस्तव ॥ मारिताःसंगरेमर्त्तःप्रोद्भटादैत्यपुंगवाः ॥ १६ ॥ मायाहियोद्धुंयदुभिरागतोभगवान्हरिः ॥ देहितस्मै बलिंसद्योयेनश्रेयोह्यवाप्स्यसि ॥ १७ ॥ शकुनिरुवाच ॥ हनिष्यामियदून्सैन्यैर्मेहताभ्रातरोबलात् ॥ मृत्युर्मेनास्तिभूमध्येशिवस्यापिवरे-णमे ॥१८॥ उपद्वीपेचन्द्रनाम्निपतंगेपर्वतेशुभे ॥ मेजीवरूपीतुशुकोवर्ततेसांप्रतंप्रिये ॥ १९ ॥ शंखचूडेनसर्पेणरक्षितोहर्निशंशुकः ॥ एतत्को-पिनजानातिकथंमृत्युश्चमेभवेत् ॥ २० ॥ नारदउवाच ॥ शुकवार्तांततःश्रुत्वागरुडोदिव्यवाहनः ॥ उपद्वीपंतु चन्द्राख्यंगंतुंतस्मान्मनोदधे ॥ २१ ॥ उत्पतन्गरुडोवेगात्समुद्रस्यतटेगतः ॥ द्वीपंविचिन्वंश्चंद्राख्यमाकाशेविचरन्खगः ॥ २२ ॥

जिससे आपका कल्याण होगा ॥१७॥ तब शकुनि बोला, मैं सेना सहित यादवोंको मारूँगा, क्योंकि बलपूर्वक उन्होंने मेरे भाई मारे हैं, भूमिमें मेरी मृत्यु नहीं है, मुझको महादेवका वर है ॥१८॥ हे प्रिये ! एक चन्द्र नामका उपद्वीप है, वहाँ मतँग पर्वत है, उसपर मेरा जीवरूपी तोता रहता है ॥ १९॥ वहाँ शंखचूड सर्प उसकी रात दिन रक्षा किया करता है, इस बातको कोई नहीं जानता है, मेरी मृत्यु कैसे होगी ॥ २० ॥ नारदजी कहते हैं–तोतेकी बात सुनकर दिव्य वाहन गरुडजीने चन्द्र नामके उपद्वीपको जानेके लिये मन किया ॥ २१ ॥ वहाँसे बडे वेगसे उठकर समुद्रके किनारे पर गये, चन्द्र द्वीपको देखनेके लिये आकाशमें उडने लगे ॥ २२ ॥

भयंकर गर्जना कर रहे सौ योजनके चौडे समुद्रमें देखते २ वह लताओंके समूहसे मनोहर सिंहलद्वीपमें पहुँचे ॥ २३ ॥ वहाँ लोगोंसे गरुडजी पूछने लगे, इसका क्या नाम है ? तब लोगोंने कहा कि सिंहल है ऐसे सुनकर वहाँसे उडे ॥ २४ ॥ तब महावगसे लंकामें आये, त्रिकूटाचलके शिखरपर लंकासे फिर पांच जन्यद्वीपमें गये ॥ २५ ॥ पांच जन्यके निकट भूख लगी, तब तीक्ष्ण चोंचसे मछलियोंको बलपूर्वक खाने लगे॥२६॥वहाँ एक दो योजन लम्बा बडा मगर गरुडके पांवोंको पकडकर जलमें खींचने लगा ॥२७॥तब गरुड बल से किनारेपर खेंचने लगे, हे राजन् ! उनकी दो घडीतक खेंचाखेंची हुई ॥२८॥ प्रचण्ड वेगवाले गरुडजीने पैनी चोंचसे पीठमें मारा,जैसे दण्डसे यमराज मारता है ॥२९॥ तभी मगररूपको छोडकर वह विद्याधर होगया,गरुडजीको नमस्कार करके हँसते २ यह बोला ॥ ३० ॥ हे गरुडजी ! मैं पहिले हेमकुण्डल नामका विद्याधर था,सो मैं स्वर्गमें आकाश

शतयोजनविस्तीर्णेसमुद्रेभीमनादिनि ॥ पक्षिराट्सिंहलंप्रापलतावृन्दमनोहरम् ॥ २३ ॥ तत्र पप्रच्छगरुडःकिंनामास्यजनान्प्रति ॥ सिंहलो यमितिश्रुत्वागरुडःप्रोत्पतन्खगः ॥ २४ ॥ लंकांप्राप्तोमहावेगात्त्रिकूटशिखरेनृप ॥ लंकांप्राप्यततोवेगात्पांचजन्यंजगामह ॥ २५ ॥ पांचजन्याब्धिनिकटेक्षुधितःपक्षिराड्बली ॥ प्रसह्यमीनाञ्जग्राहतीक्ष्णयातुंडयाभृशम्॥ २६ ॥ तत्रैकोमहानक्रोलंबितोयोजनद्वयम् ॥ पादेगृहीत्वागरुडंविचकर्षजलांतरे ॥ २७ ॥ बलेनगरुडस्तस्यचकाराकर्षणंतटे ॥ तयोराकर्षणंराजन्मिथोभूद्घटिकाद्वयम् ॥२८॥ प्रचण्डवेगोगरुडस्तीक्ष्णयातुंडयाचतम् ॥ तताडपृष्ठेधृष्टांगंदंडेनयमराडचथा ॥२९॥ नक्ररूपंविहायाशुसोभूद्विद्याधरोमहान् ॥ नत्वाश्रीगरुडंसाक्षात्प्राहप्रहसिताननः ॥ ३० ॥ विद्याधरउवाच ॥ अहंविद्याधरःपूर्वंनाम्नावैहेमकुण्डलः ॥ आकाशगंगायांस्नातुंगतोदिविजमण्डले ॥ ३१ ॥ तत्र स्नानंप्रकुर्वन्तंककुत्स्थंमुनिसत्तमम् ॥ पादेगृहीत्वाहास्येनजलांतर्गतवानहम् ॥ ३२ ॥ मांशशापककुत्स्थोपित्वंनक्रोभवदुर्मते ॥ मयाप्रसादितः शीघ्रंप्रसन्नःसन्वरंददौ ॥ ३३ ॥ तार्क्ष्यतुण्डप्रहारेणनक्रत्वात्त्वंविमुच्यसे ॥ तस्यशापादद्यमुक्तःकृपयातवसुव्रत ॥ ३४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाचगतेस्वर्गंविद्याध्रेहेमकुंडले ॥उड्डितोगरुडस्तस्मात्पक्षाभ्यांव्योममण्डले॥३५॥ हरिणाख्यंचोपद्वीपंप्राप्तवान्वेगतःखगः॥अपांतरतमास्तत्रकरोतिविपुलंतपः ॥ ३६ ॥ तस्याश्रमेखगेशस्यपक्षमेकंपपातह ॥ तंदृष्ट्वाप्राहगरुडमपांतरतमोमुनिः ॥ ३७ ॥

गंगापर स्नान करनेक लिये गया था ॥ ३१ ॥ वहाँ ककुत्स्थ मुनि स्नान कर रहे थे, हंसीमें मैं उनके पांव पकडकर जलमें लेगया ॥ ३२ ॥ तब उन्होंने मुझको शाप दिया कि हे दुर्बुद्धे ! तू मगर होजा,तब मैंने शीघ्र उनको प्रसन्न किया,तब उन्होंने मुझको यह वर दिया कि ॥३३॥जब गरुडकी चोंच तेरी पीठसे लगेगी,तब तेरी मगरकी योनि छूट जायगी, सो हे सुव्रत ! आज मैं उनके शापसे आपके अनुग्रहसे छूट गया ॥३४॥ नारदजी कहते हैं–ऐसे कहकर हेमकुण्डल विद्याधर स्वर्गको चला गया,तब गरुडजी आकाशमें उडे ॥३५॥ तब फिर गरुडजी हरिणाख्य द्वीपमें गये, वहाँ अपान्तरतमा नामके मुनि तप करते हैं ॥ ३६ ॥ उनके आश्रममें गरुडका एक पंख गिर पडा, उस पंखको देखकर अपान्तरतमा मुनि गरुडसे यह बोले ॥ ३७ ॥

हे पक्षिन् ! मेरे सिरपर पंखरख कर तुम सुखसे चलो जाओ, तब गरुड उनके सिरपर पंख रखकर चले गये ॥ ३८ ॥ तब वहाँ वैसेही बहुतसे चन्द्रके समान अनेक पंखोंको देखकर गरुडजी वहुत आश्चर्यमें आ गये, तब अति विस्मित हुये गरुडजीसे अपान्तरतमा मुनि बोले ॥ ३९ ॥ कि हे खग ! जब जब श्रीकृष्णका अवतार होता है, तब तब गरुडका एक पंख सदा गिरता है ॥ ४० ॥ कल्प २ में श्रीकृष्णका अवतार होता है, तबही तब मेर सिरपर एक एक पंख गिरता है, सो अनन्त पंख मेरे सिरपर पडे हैं, सो हे पक्षिन् ! उन कृष्णको सिरसे मेरी नमस्कार है ॥ ४१ ॥ नारदजी कहते हैं, इस बातको सुनकर विस्मित होकर गरुडजी मुनिको नमस्कार करके आकाशमें उडते रमणकद्वीपमें चले गये॥४२॥ वहाँ सर्पोंसे भेंट लेकर अवर्तकद्वीपको चले गये- वहाँ दिव्य सुधाकुण्डमें सुधा पीकर बडे बलवान् गरुड ॥ ४३ ॥ शुक्लद्वीपमें आये, वहाँ चन्द्रद्वीपको पूछने लगे, तब मेरे कहनेसे

पक्षंनिधायमेमूर्ध्निगच्छपक्षिन्यथासुखम्॥ पक्षंनीत्वागतस्तार्क्ष्योधृत्वातन्मस्तकेचतम् ॥३८॥ तत्समानान्पक्षचन्द्राननेकान्सददर्शह॥ प्राहातिविस्मितंतार्क्ष्यमपांतरतमोमुनिः ॥३९॥ यदायदाहिश्रीकृष्णावतारोभूत्तदातदा ॥ पक्षोपिगरुडस्यात्रपतत्येकःसदाखग॥४०॥कल्पेकल्पेकृष्णचन्द्रावतारःपक्षःपक्षोमूर्ध्निमेसोपिसोपि ॥ आनंत्याद्वाद्यंतवंतंवदंतिपक्षिन्मूर्ध्नानौमिकृष्णायतस्मै॥४१॥नारदउवाच॥ तच्छ्रुत्वाविस्मितस्तार्क्ष्योनत्वातंमुनिपुङ्गवम् ॥ द्वीपंरमणकंप्रागादुत्पतन्व्योममण्डलात् ॥४२॥ सर्पेभ्योपिबलिंनीत्वाद्वीपमावर्तकंगतः ॥ तत्रदिव्येसुधाकुण्डे सुधांपीत्वाविराड्बली ॥ ४३ ॥ शुक्लद्वीपंतुसंप्राप्तोपप्रच्छद्वीपचन्द्रभाक् ॥ मयाप्रणोदितःपक्षीप्रययावुत्तरांदिशम्॥४४॥ चन्द्रद्वीपन्तुसंप्राप्तः पर्वतेपतगेश्वरः ॥ जलदुर्गंवह्निदुर्गंवैनतेयाददर्शह ॥४५॥ जदुर्गंचंचुपुटेसर्वंकृत्वाविराड्बली ॥ वह्निदुर्गंचतेनापिसांत्वयामासमैथिल ॥४६॥ दरीमुखेशयानायेदैत्यालक्षंसमुत्थिताः ॥ तैःसार्द्धंसमभूद्युद्धंतार्क्ष्यस्यघटिकाद्वयम् ॥ ४७ ॥ कांश्चित्पादनखैर्युद्धेविददारखगेश्वरः ॥ कांश्चिद्दैत्यान्स्वपक्षाभ्यांपातयामासभूतले ॥४८॥ कांश्चिचंचुपुटेनापिगृहीत्वापक्षिराड्बली ॥ पातयित्वागिरेःपृष्ठेचिक्षेपगगनेबलात् ॥४९॥ केचिन्मृतास्तथाशेषादुद्रुवुस्तेदिशोदश ॥ इत्थंदैत्यवधंकृत्वादरीमध्येगतःखगः ॥५०॥चकारपादविक्षेपंशंखचूडोपरिस्फुरत्॥शंखचूडोपिगरुडं दृष्ट्वा सोतिप्रधर्षितः ॥५१॥ शुकंजलेपञ्जरस्थंशीघ्रंत्यक्त्वापलायितः ॥ चंचुदेशेनतंनीत्वाशुकंसद्यःसपञ्जरम् ॥ ५२ ॥

उत्तर दिशाको चले गये ॥ ४४ ॥ तब उस द्वीपमें पर्वत देखा, फिर जलका किला, अग्निका किला गरुडने देखा ॥४५॥ हे मैथिल ! तब उस जलके किलेको तो चोंचमें कर लिया फिर उस चोंचके ही जलसे अग्निके किलेको शान्त किया ॥४६॥ उसकी गुफाके मुखपर एक लाख दैत्य सो रहे थे. सो वे उठे, उनके साथ गरुडका दो घडीतक युद्ध हुआ॥४७॥ उनमेंसे कितनेही दैत्योंको तो चरणसे,नखसे और कितनेही दैत्योंको पंखोंसे भूमिपर गिरा दिया ॥४८॥ और कितनेही दैत्योंको चोचमें पकडकर बलवान् पक्षिराजने पर्वतके ऊपर बलपूर्वक आकाशमें फेंक दिया ॥४९॥ कितनेही मर गये,कितनेही जो बचे, वे दशों दिशाओंमें भाग गये,ऐसे दैत्योंको मारकर गुफामें घुस गये॥५०॥ वहाँ शंखचूडके ऊपर पाद विक्षेप किये, तब शंखचूड गरुडको देखकर अत्यन्त डर गया ॥ ५१ ॥ पिंजडेके तोतेको जलमें छोडकर भाग गया, तब गरुडने पिंजडेसहित तोतेको चोंचमें ले लिया॥ ५२ ॥

और आकाशमें उठकर युद्ध भूमिमें आनेका मन किया, तब भागे हुये दैत्योंका बडा कोलाहल हुआ ॥५३॥ तोता ले गया, तोता ले गया, यह शब्द दैत्योंकी सेनामें और दिशाओं
में हुआ, इससे सुननेवालोंका शब्द जाता रहा ॥५४॥ वह शब्द स्वर्गमें, भूमिमें ब्रह्माण्डमें भर गया, तब तोतेको ले गया, ऐसे देवताओंसे सुनकर शकुनिको बडी शंका हुई॥५५॥
तब वह त्रिशूल लेकर चन्द्रावतीमें उठा, गरुडने तोता ले लिया, यह सुना तब क्रोध करके पीछेसे आया ॥५६॥ सो त्रिशूल गरुडके मारा भी किन्तु गरुडने मुखमेंसे तोतेको नहीं
छोडा, फिर सातों द्वीप और सातों समुद्रोंको देखते २ गरुड गया ॥५७॥ तब गरुडके पीछे पीछे सब दिशाओंमें आकाशमें शकुनि दौडा, करोड योजन तक गरुड घूमे ॥ ५८ ॥
दैत्यके त्रिशूलसे घायल भी हो गये, किन्तु तोतेको नहीं छोडा, आकाशमें पिंजड सहित तोतेको लिये लाख योजन ऊंचे घूमते आकाशमें चढ गये ॥ ५९ ॥ फिर वेगसे पत्थरकी

प्रोत्पतन्नंबरेराजन्युद्धेगन्तुंमनोदधे ॥ पलायितानांदैत्यानांतावत्कोलाहलोमहान् ॥५३॥ शुकोनीतःशुकोनीतोवदतामंबरेनृप ॥ तच्छब्दोदि-
क्षुसैन्यानांगतःशब्दस्तुशृण्वताम् ॥ ५४ ॥ दिविभूमौसर्वतोपिब्रह्मांडेपिप्रपूरितः ॥ शुकोनीतइतिश्रुत्वाशकुनिःशंकितोसुरैः ॥ ५५ ॥ शूलं
धृत्वाततःसद्यश्चन्द्रावत्यांसमुत्थितः ॥ गरुडेनशुकोनीतःश्रुत्वाक्रुद्धःसमन्वयात् ॥५६॥ तच्छूलताडितस्ताक्ष्योंनजहौमुखतःशुकम् ॥ सप्तद्वी-
पान्सप्तसिन्धूनिरीक्षन्सगतःखगः ॥५७॥ तमन्वधावद्दैत्येंद्रोदिक्षुदिक्षुनभोंतरे॥ भ्रमन्नागांतकोराजन्नाकाशे कोटियोजनम् ॥५८॥ दैत्यत्रि-
शूलक्षतभृन्नजहौमुखतःशुकम् ॥ सपञ्जरःशुकोराजन्नाकाशेलक्षयोजनम् ॥ ५९॥ पपातोपलवद्वेगात्सुमेरोर्गिरिमूर्द्धनि ॥ पञ्जरोगात्खगस्तत्र
व्यशीर्णोभूद्व्यसुःशुकः ॥६०॥ गरुडोथमहायुद्धेकृष्णपार्श्वेसमागतः ॥ दैत्यःखिन्नमनाराजन्पुरींचन्द्रावतीं ययौ ॥६१॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहि-
तायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादे गरुडागमनोनामचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥ नारदउवाच ॥ दैत्यान्शेषान्समानीयनानायुद्ध
धरोबली ॥ उच्चैःश्रवसमाहूयहयंदिव्यंमनोहरम् ॥ १ ॥ धनुष्टंकारयन्वीरःशकुनिःक्रोधमूर्च्छितः ॥ आययौसंमुखेयोद्धुंश्रीकृष्णस्यापिसंमुखे
॥ २ ॥ पुनःप्राप्तंदैत्यसैन्यंशकुनियुद्धदुर्मदम् ॥ तंवीक्ष्यवृष्णयःसर्वे जगृहुःस्वायुधानि च ॥ ३ ॥

तरह सुमेरु पर्वतके शिखरपर गिरे, पिंजडा तो टूट गया, और तोतेके प्राण निकल गये ॥६०॥ गरुडजी तो युद्धमें श्रीकृष्णके पास आ गये, और दैत्य दुखीमन होकर चन्द्रावती
पुरीको चला गया ॥६१॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां गरुडागमो नाम चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥ नारदजी कहते हैं कि, फिर बाकी रहे दैत्योंको लेकर
अनेक प्रकारके शस्त्रोंको धारण करनेवाला बली शकुनि दैत्य दिव्य मनोहर उच्चैःश्रवा घोडेको मंगाकर ॥१॥ उसपर चढकर क्रोधसे मूर्छित शकुनि धनुषको टंकारता हुआ युद्ध
करनेके लिये श्रीकृष्णहीके सामने आया ॥२॥ फिर दैत्य सेना आई, युद्धमें दुर्मद शकुनि आया, उनको देखकर सब यादवोंने अपने २ शस्त्र ग्रहण कर लिये ॥ ३ ॥

तब दैत्योंका यादवोंके साथ घोर युद्ध हुआ, तब उस युद्धमें वीरोंसे वीर युद्ध करने लगे, जैसे सिंहोंसे सिंह लडते हैं ॥४॥ तब सबके आगे धनुषको टंकारता हुआ, मेघके समान गर्जता हुआ शकुनि आया, आतेही उसने बाणोंसे आकाशमें अंधकार कर दिया ॥५॥ जब बाणोंका अंधकार हो गया, तब भगवान् गरुडध्वज शार्ङ्गधनुर्धारी शार्ङ्ग धनुषसे इन्द्र सहित मेघकी तरह लगने लगे ॥ ६ ॥ तब श्रीकृष्ण भगवान्ने शकुनिके बाणोंके समूहको एक ही बाणसे अनायास ही छेदन कर दिया ॥ ७ ॥ हे मैथिल ! तब शकुनिने कानतक धनुषको खेंचकर युद्धमें दश बाण श्रीकृष्णके हृदयमें मारे ॥८॥ तब प्रलयके समुद्रकी हिलोर जैसी भयंकर गर्जनावाली शकुनिके धनुषकी प्रत्यंचाको दश बाणोंसे श्रीकृष्णने काट डाला ॥ ९ ॥ तब मायावी शकुनि सौ रूप हो गया, और सभीके देखते २ सौ शकुनि लडने लगे ॥ १० ॥ तब साक्षात् भगवान् हजार रूप धरकर उन दैत्योंसे लडने लगे, तब

दैत्यानांयदुभिःसार्द्धंघोरंयुद्धंबभूवह ॥ वीरैः संयुयुधुर्वीराःसिंहासिंहैरिवाहवे ॥ ४ ॥ सर्वेषामग्रतःप्राप्तःकोदंडंनादयन्मुहुः ॥ शकुनिर्मेघवद्गा-
जंश्चक्रेनाराचदुर्दिनम् ॥५॥ बाणांधकारेसंजातेभगवान्गरुडध्वजः ॥ शांर्ङ्गीशार्ङ्गेणधनुषायथेंद्रेणघनोबभौ ॥६॥ श्रीकृष्णोभगवान्साक्षाच्छ-
कुनेरसुरस्यच ॥ चिच्छेदबाणपटलंबाणेनैकेनलीलया ॥७॥ आकृष्यकर्णपर्यंतंकोदण्डंशकुनिर्मृधे ॥ तताडदशभिर्बाणैःश्रीकृष्णंहृदिमैथिल
॥८॥ प्रलयाब्धिमहावर्तभीमसंघर्षनादिनीम् ॥ धनुर्ज्यांशकुनेःशौरिश्चिच्छेददशभिःशरैः ॥९॥ मायावीशकुनिर्दैत्यःशतरूपीबभूवह ॥ युयो-
धहरिणायुद्धेसर्वेषांपश्यतांनृप ॥ १० ॥ सहस्राणिस्वरूपाणिधृत्वासाक्षाद्धरिःस्वयम् ॥ युयुधेतेनदैत्येनतदद्भुतमिवाभवत् ॥११॥ मयदैत्येन
रचितंत्रिशूलंज्वलनप्रभम् ॥ भ्रामयित्वाथहरयेप्राहिणोदैत्यराड्बली ॥१२॥ ततःक्रुद्धोमहाबाहुःपरिपूर्णतमोहरिः॥चिच्छेदतंतीक्ष्णतुण्डंपन्न-
गंगरुडोयथा ॥१३॥ ततःक्रुद्धोमहाबाहुःगंदांचिक्षेपमूर्द्धनि ॥ हयात्तंपातयामासगदयावज्रकल्पया ॥१४॥ गदाप्रहारव्यथितःक्षणंमूर्च्छांगतो
सुरः ॥ गृहीत्वास्वांगदांयुद्धेयुयुधेमाधवेनवै ॥ १५ ॥ तयोर्युद्धमभूद्घोरंगदाभ्यांरणमण्डले ॥ अभूच्चटचटारावोवज्रनिष्पेषवत्किल ॥ १६ ॥
श्रीकृष्णगदयातस्यचूर्णीभूतागदाभुवि ॥ विरेजेंगारवत्तत्रसर्वेषांपश्यतांमृधे ॥ १७ ॥

बड़ा आचर्श्व सा हुआ ॥ ११ ॥ मयदैत्यके रचे हुये देदीप्यमान् त्रिशूलको घुमाघुमाकर दैत्योंके राजा बलवान् शकुनिने श्रीकृष्णके ऊपर फेंका ॥१२॥ तब परिपूर्णतम महाबाहु हरिने अति तीखे उस त्रिशूलको काट डाला, जैसे गरुड तीक्ष्ण मुखवाले सर्पको काट डालता है ॥१३॥ फिर क्रोधित होकर महाबाहु श्रीकृष्णने वज्रके तुल्य गदा शकुनिके सिरमें मारी, और उसको घोडेपरसे नीचे गिरा दिया ॥ १४ ॥ तब वह असुर गदाके प्रहारसे क्षणभर मूर्छित होकर फिर अपनी गदा लेकर माधवसे युद्ध करने लगा ॥ १५ ॥ फिर उन दोनोंका गदाओंसे बडा घोर युद्ध हुआ, जिनका वज्रपातके समान चट चट शब्द होने लगा॥१६॥श्रीकृष्णकी गदासे चूर्ण हुई उसकी गदा पृथ्वीमें जा पड़ी, तब उस संग्राममें सभीके देखते वह कटी हुई दैत्यकी गदा अंगारकी तरह दहकने लगी ॥ १७ ॥

पर्वतकी गुफामें जैसे दो सिंह और वनमें जैसे मत्त दो हाथी लडते हैं, वैसे रणके मध्यमें दोनों आपसमें लडने लगे ॥१८॥ तब शकुनि दैत्य श्रीकृष्णको सौ योजन तक पीछेको हटाकर ले गया,तब श्रीकृष्ण उसको हजार योजन तक हटाकर ले गये ॥ १९ ॥ तब भगवान्ने उसकी दोनों जंघाओंको पकडकर घुमा घुमाकर धरतीमें दे मारा, कमण्डलुको बालक जैसे फिराते हैं ॥२०॥ तब कुछ व्याकुल होकर युद्धमें दुर्मद बडे दुराचारी शकुनि दैत्यने जारुधि पर्वतको हाथोंसे उठाकर श्रीकृष्णके ऊपर फेंका॥२१॥ आये हुये पर्वतको देखकर कमललोचन श्रीकृष्ण भगवान्ने उस पर्वतको उसीके ऊपर फेंक दिया,ऐसे आपसमें पर्वतको फेंकते हुये जय जय शब्द करते लडने लगे॥२२॥हे राजन् ! वैसे ही चन्द्रावती पुरीका भी चूर्ण हो गया, तब वह दैत्य अत्यन्त क्रोधित होकर ढाल तलवार लेकर कृष्णके सामने आया ॥२३॥ तब शार्ङ्गी भगवान् कृष्णने शार्ङ्ग धनुषको लेकर अर्द्ध चन्द्राकार बाण चलाया, जो बाण ग्रीष्म ऋतुके सूर्यके समान था ॥२४॥ वह शार्ङ्ग धनुषसे छूटा हुआ बाण दिशाओंमें उजाला (प्रकाश) करता हुआ ॥२५॥ शकुनिके मस्तकको काटकर

गिरिदर्यायथासिंहौवनेमत्तौगजावुभौ ॥ रणमध्येतथातौद्वौयुयुधातेपरस्परम् ॥१८॥ श्रीकृष्णंनोदयामासशकुनिःशतयोजनम् ॥ हरिस्तंप्रेषया मासमहस्रंयोजनंभुवि ॥ १९ ॥ गृहीत्वाभुजयोस्तंवैजंघाभ्यांभुवनेश्वरः ॥ पातयामासभूपृष्ठेकमंडलुपिवार्भकः ॥२०॥ किंचिद्व्यथांगतोदैत्यो गृहीत्वाजारुधिंगिरिम् ॥ प्राहिणोच्चदुराचारःशकुनिर्युद्धदुर्मदः ॥२१॥ समागतंगिरिंवीक्ष्यभगवान्कमलेक्षणः॥जयशब्दंप्रकुर्वंतावन्योन्यंता- डयन्गिरिम् ॥२२॥ चूर्णयामासतूराजंस्तथाचंद्रावतींपुरीम् ॥ तदादैत्योतिसंक्रुद्धोगृहीत्वाखड्गचर्मणी ॥२३॥ आययौसंमुखेराजञ्छ्रीकृष्ण- स्यमहात्मनः ॥ शार्ङ्गीशार्ङ्गंसंगृहीत्वाथार्द्धचंद्रमुखंशरम् ॥२४॥ संदधेसहसायुद्धेग्रीष्ममार्तंडसन्निभम्॥ शार्ङ्गमुक्तोदिव्यबाणोद्योतयन्मंडलं दिशाम् ॥२५॥ शकुनेर्मस्तकंछित्त्वाभूमिंभित्त्वातलंगतः ॥ व्यसुर्भूत्वातदादैत्यःपतितोरणमंडले ॥ २६ ॥ भूमिस्पर्शात्सजीवोभूत्क्षणमात्रेण मैथिल ॥ करेणादायमुंडंस्वंस्वकबंधेनिधायसः ॥ २७ ॥ युद्धंकर्तुंमुत्तस्थौतदद्भुतमिवाभवत् ॥ इत्थंकृष्णेननिहतःसप्तवारंमहासुरः॥२८॥ भूमिस्पर्शात्सजीवोभूद्राहुवत्पुनरुत्थितः ॥ एकाकीयादवकुलंसंहारंकर्तुमुद्यतः ॥२९॥ विवेशाशुमहादैत्योवनेवह्निरिवप्रभुः॥सतुरंगान्महावी- रान्सशस्त्रानुत्कटान्गजान् ॥ ३० ॥ संगृहीत्वाभुजाभ्यांखंप्राक्षिपल्लक्षयोजनम् ॥ कांश्चिद्गजान्मुखेधृत्वास्कंधयोरुभयोरपि ॥३१॥ कक्षयोरु भयोर्दैत्योबभौकालाग्निरुद्रवत् ॥ पद्भ्यांकराभ्यांदैत्यस्यत्रासंयातमहामृधे ॥ ३२ ॥

भूमिको भेदकर तल लोकको चला गया,और दैत्य निष्प्राण होकर युद्ध भूमिमें गिर पडा ॥२६॥ भूमिके स्पर्शसे क्षणमात्रमें ही फिर जीवित हो उठा, और हे मैथिल ! अपने हाथ से अपने सिरको अपने धडपर रखकर ॥२७॥ फिर युद्धमें लडनेके लिये आ गया, तब यह बडा आश्चर्य हुआ, ऐसे श्रीकृष्णने उस असुरको सात बार मार मारकर गिरा दिया ॥२८॥ किन्तु भूमिके स्पर्शसे राहुकी तरह फिर जीवित हो उठा, तब अकेला ही यादव कुलका संहार करनेको उद्यत हुआ॥२९॥ महादैत्य शकुनि वनमें अग्निकी तरह सेनामें प्रवेश हो गया, और उसने घोडोंको, शस्त्र सहित वीरोंको, और बडे २ उत्कट हाथियोंको॥३०॥भुजाओंसे पकड २ कर लाख लाख योजन फेंक दिया,और कितनेही हाथियों को मुख में और कितनेही हाथियोंके दोनों कन्धाओंको पकड पकडकर ॥३१॥ दोनों कांखोंमें दबाकर वह दैत्य कालाग्नि रुद्रकी तरह शोभित हुआ, दैत्यके पांवोंसे हाथोंसे जब युद्धमें बडा

त्रास हुआ,॥३२॥तब महात्मा श्रीकृष्णकी सेनामें बडा हाहाकार मचा,तभी विश्वके रक्षक साक्षात् भगवान् श्रीकृष्णने साधुओंकी रक्षाके लिये सुदर्शनास्त्रका प्रयोग किया ॥३३॥
श्रीकृष्णके हाथसे छूटे हुये मलयके करोडों सूर्यके समान देदीप्यमान कान्तिवाले तीक्ष्ण सुदर्शन चक्रने शकुनिके दृढ सिरको काट डाला, जैसे वृत्रासुरका सिर युद्धमें वज्रने काट
डाला था ॥३४॥ तब उस महायुद्धमें श्रीकृष्णचन्द्र भगवान् मरे हुये उस शकुनिको बलसे आकाशमें फेंककर यादवोंसे बोले कि, बाणोंसे इसको ऊपरको ही फेंको यह भूमिमें न
गिरने पावे ॥३५॥ नारदजी कहते हैं कि, ऐसे हरिका वचन सुनकर सब यादव आकाशमेंसे गिरते उसको बाणोंसे छेदने लगे ॥ ३६ ॥ तब वह दैत्य चमकते बाणोंसे छिदा हुआ
आकाशमें सौ योजनपर गया लोकके देखते २ गेंदकी तरह शोभित हुआ ॥३७॥ तब साम्बके बाणसे दैत्य हजार योजनपर गया, फिर आकाशमेंसे गिरते हुयेके अर्जुनने बाण मार

हाहाकारोमहानासीच्छ्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥ तदैवभगवान्साक्षाच्छ्रीकृष्णोविश्वरक्षकः॥सुदर्शनास्त्रंप्रायुंक्तसाधूनांरक्षणायवै॥३३॥तद्धस्तमुक्तं
निशितंसुदर्शनंलयार्ककोटिद्युतिमज्ज्वलत्प्रभम् ॥ जहारसद्यःशकुनेर्दृढंशिरोयथाचवृत्रस्यपविर्महामृधे ॥३४॥ तावद्गृहीत्वाशकुनिंमहामृधे
चिक्षेपसद्योमृतमंबरेबलात् ॥ उत्क्षेपणंभोःकुरुतेषुभिर्दिवियदून्गिराश्रीपतिरित्युवाच ॥ ३५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्थंहरेर्वचःश्रुत्वासर्वेयाद-
वपुंगवाः ॥ अंबरात्प्रपतंतंतेतेडुर्बाणैःस्फुरत्प्रभैः ॥ ३६ ॥ दैत्योदीप्तिमतोबाणैरंबरेशतयोजनम् ॥ गतःकंदुकवद्राजन्नूर्ध्वलोकस्यपश्यतः
॥ ३७ ॥ सांबस्यापिसबाणेनसहस्रंयोजनंगतः ॥ पुनस्तमापतंतंखाज्जघानत्विषुणार्जुनः ॥३८॥तेनबाणेनदैत्येंद्रोयोजनंचायुतंगतः ॥ आनि-
रुद्धस्यबाणेनलक्षयोजनमास्थितः ॥ ३९ ॥ प्रद्युम्नस्यापिबाणेननियुतंयोजनंगतः ॥ पुनस्तमापतंतंखाद्वीक्ष्ययोगेश्वरेश्वरः ॥४०॥ बाणंसमा-
दधेतेनगतःखेकोटियोजनम् ॥ एवंखेसंस्थितेदैत्येव्यतीतेप्रहरद्वये ॥४१॥ द्वितीयेनापिबाणेनतंजघानहरिःस्वयम् ॥सबाणस्तंभ्रामयित्वादिक्षुवै
कोटियोजनम् ॥ ४२ ॥ समुद्रेपातयामासवातःपद्ममिवप्रभुः ॥ एवंमृतेतदादैत्येतज्ज्योतिर्निर्गतंस्फुरत् ॥४३॥ सर्वतोपिभ्रमद्राजञ्छ्रीकृष्णे
लीनतांगतम् ॥ तदाजयजयारावोदिविभूमाववर्तत ॥ ४४ ॥ विद्याधर्यश्चगंधर्व्योननृतुःखेसुखान्विताः ॥जगुःकिन्नरगंधर्वास्तुष्टुवुःसिद्धचा-
रणाः ॥ ४५ ॥ ऋषयोमुनयःसर्वेप्रशशंसुर्हरिंपरम् ॥ ब्रह्मरुद्रेंद्रसूर्याद्याःसर्वेतत्रसमागताः ॥ ४६ ॥

॥३८॥ उस बाणसे दश हजार योजन ऊँचा चला गया, फिर अनिरुद्धके बाणसे लाख योजन ऊँचा चला गया ॥३९॥ प्रद्युम्नके बाणसे भी दश लाख योजन ऊँचा चला गया फिर
आकाशसे गिरते हुये उसको देखकर योगीश्वरोंके ईश्वर ॥४०॥ श्रीकृष्णने बाण मारा, उससे आकाशमें करोड योजन ऊँचा चला गया, ऐसे उसको आकाशमें दो प्रहर बीत गये
॥ ४१ ॥ तब दूसरे बाणसे हरिने उसको मारा, उस बाणने उसको आकाशमें करोड योजन घुमाकर ॥४२॥ समुद्रमें डाल दिया, जैसे पवन कमलको, ऐसे जब वह दैत्य मरा तब
उसमेंसे देदीप्यमान ज्योति निकली ॥४३॥ वह चारों ओर घूमती २ श्रीकृष्णमें लीन हो गई, तब स्वर्गमें और पृथ्वीमें जय जय शब्द होने लगा ॥४४॥ विद्याधरी और गन्धर्वी
आकाशमें बड़े आनन्दसे नाचने लगीं कि नगरगन्धर्व गानेलगे, सिद्धचारण स्तुति करने लगे॥४५॥ऋषि,मुनि भगवान्‌की प्रशंसा करते हुये ब्रह्मा,रुद्र,सूर्य, सब देवता वहाँ आये॥४६॥

श्रीकृष्णके ऊपर पुष्पोंकी वर्षा करने लगे ॥४७॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डे भाषाटीकायां शकुनि दैत्यवधोनामैकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४१॥ नारदजी कहते हैं कि, जब दैत्य रणमण्डलसे भाग गये, तब वीणा, वेणु, मृदंगादिक दुन्दुभियोंको बजाते ॥१॥ सूत, मागध, वन्दी जनोंसे गान किये श्रीभगवान् कृष्ण यादवों और अपने पुत्रों सहित तथा अपनी सेना सहित ॥२॥ शंख, चक्र, गदा, पद्म, शार्ङ्गधनुष, इनसे विराजमान देवताओं सहित प्रभु चन्द्रावती पुरीमें प्रविष्ट हुये ॥३॥ पतिके मरनेसे दुखार्ता, करुणा उत्पन्न करती रोती हुई शकुनिके पुत्रको गोदमें लेकर मदालसा रानी ॥४॥ बहुत शीघ्रतासे श्रीकृष्णके चरणोंमें बालकको रखकर हाथ जोडकर आंसू भरकर बडी दीनतासे हरिको प्रणाम करके यह बोली ॥५॥ कि हे प्रभो ! भार उतारनेके लिये भूमिमें आपने यादवोंके कुलमें जन्म लिया है, हे आदिदेव ! आप इस जगत्को उत्पन्न करके ग्रसते हो, किन्तु गुणोंसे लिप्त नहीं होते हो,

श्रीकृष्णस्योपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे॥४७॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेशकुनिदैत्यवधोनामैकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥ नारदउवाच ॥ पलायितेषुशेषेषुदैत्येषुरणमण्डलात् ॥ वीणावेणुमृदंगाद्यान्नादयन्दुंदुभीन्हरिः ॥ १ ॥ गीयमानोयादवेंद्रःसूतमागधवंदिभिः ॥ स्वपुत्रैर्यादवैःसार्द्धंस्वसैन्यपरिवारितः ॥२॥ शंखचक्रगदापद्मशार्ङ्गचापविराजितः ॥ प्रविवेशसुरैःसार्द्धंपुरींचद्रावतींप्रभुः ॥ ३ ॥ दुःखार्ताभर्तरिमृतेरुदंतीकरुणंबहु ॥ अंकेगृहीत्वाशकुनेःसुतंराज्ञीमदालसा ॥ ४ ॥ श्रीकृष्णचरणेबालंनिधायाशुकृतांजलिः ॥अश्रुपूर्णमुखीदीनाहरिंनत्वाजगादह ॥ ५ ॥ मदालसोवाच ॥ भारावतारायभुविप्रभोत्वंजातोयदूनांकुलआदिदेव ॥ ग्रसिष्यसेयानिभवंनिधायगुणैर्नलिप्तोसिनमामितुभ्यम् ॥६॥ मदात्मजंपालयभीतभीतमुष्यहस्तंकुरुशीर्ष्णिदेव ॥ भर्त्राकृतंमेकिलतेपराधंक्षमस्वदेवेशजगन्निवास ॥ ७ ॥ नारदउवाच ॥ इत्युक्तोभगवांस्तस्यमूर्ध्निकृत्वाकरद्वयम् ॥ सर्वंचन्द्रावतीराज्यंददौतस्मैमहामुनिः ॥ ८ ॥ दत्त्वाकल्पांतमायुष्यंभक्तिज्ञानंविरक्तिमत् ॥ शकुनेःशिशवेकृष्णःस्वामालांप्रददौशुभाम् ॥९॥ उच्चैःश्रवोहयोरत्नकामधेनुसुरद्रुमाः॥आहृतायेशकुनिनापुरायुद्धेपुरंदरात् ॥ १० ॥ पुरंदरायतान्प्रादात्प्रयत्नाच्छ्रीजनार्दनः ॥ गोविप्रसुरसाधूनांछंदसांपालकःस्वयम् ॥ ११ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ केर्मीदैत्याःपूर्वकालेशकुन्याद्यामहाबलाः ॥ देवर्षेमेपरंचित्रंकस्मान्मोक्षमुपागताः ॥ १२ ॥

आपके लिये मेरी नमस्कार है ॥६॥ हे देव ! मेरे भयभीत पुत्रका पालन करिये, हे देवेश ! हे जगन्निवास ! इसके शिरपर अपना हाथ रखिये, मेरे पतिने आपका अपराध किया है उसको क्षमा करिये ॥७॥ नारदजी कहते हैं—ऐसे जब मदालसाने कहा, तब भगवान्ने बालकके शिरपर दोनों हाथ रखकर उसको समस्त चन्द्रावती नगरीका राज्य दे दिया ॥८॥ कल्पान्त आयु तथा भक्ति, ज्ञान और वैराग्य देकर फिर शकुनिके पुत्रको श्रीकृष्ण भगवान्ने अपनी शुभ माला दी ॥९॥ हयरत्न उच्चैःश्रवा घोडा, कामधेनु गौ, कल्पवृक्ष, जिनको शकुनि इन्द्रसे पहिले युद्धमें हर लाया था ॥१०॥ उनको गौ, ब्राह्मण, वेद, देवता, और साधुओंके रक्षक स्वयम् भगवान् जनार्दनने बडे प्रयत्नसे इन्द्रके लिये दे दिया ॥११॥ बहुलाश्व राजा पूछता है, हे देवर्षे ! शकुनि आदि दैत्य पूर्व जन्ममें महाबली कौन थे, मुझको बडा आश्चर्य है, कि ये मोक्षको कैसे प्राप्त होगये ॥ १२ ॥

तब नारदजी कहते हैं कि, हे राजन् ! ब्रह्मकल्पमें वसु नामका गन्धर्वोंका राजा था उसके बडे शुभ नौ पुत्र हुये ॥ १३ ॥ कामदेवके समान सुन्दर दिव्य गहनोंसे भूषित, गाने बजानेमें चतुर वे ब्रह्मलोकमें गानेके लिये जाया करते थे ॥१४॥ मन्दार १, मन्दर २, मन्द ३, मन्दहास ४, महाबल ५, सुदेव ६, सुधन ७, सौध ८, श्रीभानु ९, ये उनके नाम हुये ॥१५॥ एक समय ब्रह्माजीकी पुत्री सरस्वतीको देखकर वे वसुके पुत्र अपने मनमें हँसे ॥१६॥ वे ब्रह्माजीके अपराधसे आसुरी योनिको प्राप्त हुये, वाराहकल्पमें हिरण्याक्षकी स्त्रीमें वे नौओं जन्मे ॥ १७ ॥ शकुनि १, शम्बर २, हृष्ट ३, भूतसंतापन ४, वृक ५, कालनाभ ६, महानाभ ७, हरिश्मश्रु ८, और उत्कच ९ ये उनके नाम हुये ॥१८॥ एक दिन अपांतरतमा मुनि आये, उनको नमस्कार करके विधिपूर्वक पूजकर परम आदरसे वे नौओं पूछने लगे ॥१९॥ दैत्य बोले–हे ब्रह्मन् ! सुनिये, अपने मुखसे आप कहते हो, कि मुक्ति

॥ श्रीनारदउवाच ॥ ब्रह्मकल्पेपुराराजन्गन्धर्वेशःपुरावसुः ॥ आसीत्तस्यशुभाःपुत्राबभूवुर्नवचौरसाः ॥ १३ ॥ कंदर्पसमलावण्यादिव्य-भूषणभूषिताः ॥ नित्यंजगुर्ब्रह्मलोकेगीतवाद्यविशारदाः ॥१४॥ मंदारोमंदरोमंदोमन्दहासोमहाबलः ॥ सुदेवःसुधनःसौधःश्रीभानुरितिविश्रुताः ॥ १५ ॥ एकदामोहतःपुत्रींवाग्देवींवीक्ष्यवेधसः ॥ जहसुस्तेस्वमनसिपुरावसुसुताश्चये ॥ १६ ॥ सुरज्येष्ठापराधेनगतायोनिंचतामसीम् ॥ वाराहेथहिरण्याक्षपत्न्यांतेजज्ञिरेनव ॥ १७ ॥ शकुनिःशंबरोहृष्टोभूतसंतापनोवृकः ॥ कालनाभोमहानाभोहरिश्मश्रुस्तथोत्कचः ॥१८॥ एकदागृहमायांतमपांतरतमंमुनिम् ॥ नत्वासंपूज्यविधिवत्पप्रच्छुरिदमादरात् ॥ १९ ॥ दैत्याऊचुः ॥ शृणुत्वंस्वमुखाद्ब्रह्मन्कैवल्येशोहरिःस्वयम् ॥ ददातिमोक्षंभगवान्भक्तानांभक्तवत्सलः ॥२०॥ अस्माभिर्नकृताभक्तिरासुरींयोनिमास्थितैः ॥ दुःसंगनिरतैर्दुष्टैःकथंमोक्षोभवेदिह ॥ २१ ॥ उपायंवदनोब्रह्मन्कल्याणस्यपरस्यच ॥ कल्याणार्थंविचरसिदीनानांजगतिप्रभो ॥ २२ ॥ अपांतरतमाउवाच ॥ गुणानामपृथग्भावैर्येभजंतिहरिंपरम् ॥ तेतेप्रापुःपरंदैत्यानिर्गुणंमोक्षनायकम् ॥२३॥ ऐक्यंचसौहृदंस्नेहंभयंक्रोधंस्मयंतथा ॥ विधायपूर्वंसततंश्रीकृष्णेलीनतांगताः ॥२४॥ पृश्निगर्भस्यसंबंधात्प्रजानांपतयोयथा ॥ कायाधवःसौहृदाच्चस्नेहाच्चसुतपामुनिः ॥२५॥ भयाद्धिरण्यकशिपुःक्रोधाद्धश्वपितासुरः ॥ स्मयाच्चश्रुतयः प्रापुर्योगिनांदुर्लभंपरम् ॥ २६ ॥

के दाता केवल हरि हैं, सो वेही भक्तवत्सल भगवान् अपने भक्तोंको मोक्ष देते हैं ॥२०॥ सो हमने भक्ति नहीं की है, क्योंकि हम असुर योनिमें हुये हैं, और हम बडे दुष्ट कुसंगमें निरत हैं, कहिये हमारी मुक्ति कैसे होगी ॥ २१ ॥ सो हे ब्रह्मन् ! हमको परम कल्याणका उपाय बताइये, हे प्रभो ! जगत्में दीनोंके कल्याणके लिये आप विचरते हो ॥२२॥ तब अपांतरतमा मुनि बोले कि गुणोंके पृथक् २ भावोंको छोडकर जो हरिको भजते हैं, हे दैत्यो ! वे परम निर्गुण मोक्षके दायक हरिको प्राप्त होते हैं ॥२३॥ ऐक्यसे, सौहृदसे, स्नेहसे, भक्तिसे, क्रोधसे, गर्वसे, श्रीकृष्णमें जिन्होंने मन लगाया, वे उसीको प्राप्त होगये ॥२४॥ पृश्निगर्भके सम्बन्धसे जैसे प्रजापति, और सौहृदसे प्रह्लाद, स्नेहसे सुतपा मुनि ॥ २५ ॥ भयसे हिरण्यकशिपु, क्रोधसे तुम्हारा पिता हिरण्याक्ष, और स्मयसे श्रुतियाँ प्राप्त होगई, जो योगियोंको भी दुर्लभ है ॥ २६ ॥

जिस किसी भावसे श्रीकृष्णमें ही मन धारण करना चाहिये, जो भक्ति योगसेही देवता उसके धामको प्राप्त होते हैं ॥२७॥ ऐसे कहकर अपांतरतमा मुनि अन्तर्धान होगये, इसीसे शकुन्यादिक असुरोंने परिपूर्णतम श्रीकृष्णसे वैर किया ॥२८॥ इसीसे वे वैर भावसे श्रीकृष्ण परमेश्वरको प्राप्त हुये, हे राजेन्द्र ! जैसे भृंगीके भयसे भृंगी होता है, इसलिये इसमें कुछ आश्चर्य नहीं है ॥२९॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजितखण्डे भाषाटीकायां शकुनिवधो नामद्विचात्वारिंशोऽध्यायः ॥४२॥ नारदजी कहते हैं-ऐसे यादवोंके ईश्वर भगवान् भद्राश्व खण्डको जीतकर सेनाके यादवों सहित इलावृत खंडमें आये ॥१॥ जिस इलावृत खंडमें हे मैथिल ! भूगोलरूपी कमलकी कर्णिकाकी तरह, देदीप्यमान, स्वर्णमय देवताओंका स्थान रत्नोंके शिखर वाला, पर्वतोंका राजा सुमेरु पर्वत विराजता है ॥२॥ जो चारों ओरसे मंदर, मेरुमन्दर, सुन्दर सुपार्श्व और कुमुद इन पर्वतोंसे शोभित है, चारों पदार्थोंसे मनोरथ

येनकेनापिभावेनश्रीकृष्णेधारयेन्मनः ॥ भक्तियोगेनतद्धामयदेभिःप्राप्यतेसुरैः ॥२७॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वांतर्हितेराजन्नपांतरतमेमुनौ॥ चक्रुर्वैरंशकुन्याद्याःपरिपूर्णतमेहरौ ॥२८॥ तेप्रापुर्वैरभावेनश्रीकृष्णंपरमेश्वरम् ॥ नचित्रंविद्धिराजेंद्रकीटःपेशस्कृतंयथा ॥२९॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेशकुनिवधोनामद्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४२ ॥ नारदउवाच ॥ इत्थंखण्डंतुभद्राश्वंजित्वा श्रीयादवेश्वरः ॥ यदुभिःसैनिकैःसार्द्धमिलावृतमथाययौ ॥ १ ॥ विभातियत्रैवगिरींद्रराजोभूपद्मगोलस्यचकर्णिकेव ॥ स्फुरद्द्युतिःस्वर्णमयःसुमेरुःसुरालयोमैथिलरत्नसानुः॥२॥ तंसर्वतोमन्दरमेरुमन्दरौसुपार्श्वएवंकुमुदश्चतुर्थकः॥विभातिसैकोगिरिभिर्नगेश्वरश्चतुष्पदार्थैश्चमनोरथाइव ॥ ३ ॥ जांबूनदंजंबुभवंहियत्रयतःस्वतःसिद्धिभवंसुवर्णम् ॥यत्रारुणोदाख्यनदीचजातायद्वारिपानाद्धुविनामयित्वम् ॥४॥ कदंबजामधुधाराश्चपञ्चयासांतुपानेननृणांकदापि ॥ शीतोष्णवैवर्ण्यपरिश्रमाद्यादौर्गन्ध्यभावानभवंतिराजन् ॥ ५ ॥ यदुद्भवाःकामदुघानदाश्चरत्नान्नवासःशुभभूषणानि ॥ शय्यासनादीनिफलानियानिदिव्यानितानित्वथचार्पयंति ॥ ६ ॥ एवंचयत्रोर्ध्ववनंप्रसिद्धंसंकर्षणोयत्रविराजतेऽथ ॥ शिवःसदासौरमतेप्रियाभिस्त्रीभावतांयांतिजनास्तुतत्र॥७॥हेमांबुजैःशीतवसंतवायुभिःकाश्मीरवृक्षैश्चलवंगजालैः ॥ देवद्रुमामोदमदांधषट्पदैरिलावृतंखंडमतीवरेजे ॥ ८ ॥

जैसे ॥३॥ जहाँ जामुनके पेडसे जाम्बूनद सुवर्ण स्वतः सिद्ध होता है, जहाँ अरुणोदा नामकी नदी, है, जिसका जलपीनेसे निरोगिता पैदा होती है ॥४॥ जहाँ कदम्बसे पांच मधु धाराएं गिरती हैं, जिनके पानसे कभी मनुष्योंको सर्दी, गर्मी, देहका विवर्ण, परिश्रम और दुर्गन्धके भाव नहीं होते हैं ॥५॥ इनसे कामके दुहने वाले नद हुये हैं, वे अन्न, वास, शुभ, भूषण सेज, आसनादिक दिव्य फलोंको देते हैं ॥ ६ ॥ ऐसेही जहाँ प्रसिद्ध ऊर्ध्व वन है, जहाँ संकर्षण भगवान् विराजते हैं, जहाँ शिवजी सदाही प्रियाओंसे रमते हैं, और जहाँ गये मनुष्य स्त्री हो जाते हैं ॥ ७ ॥ जहाँ सुनहरे कमलोंसे, ठंडी वसन्त ऋतुकी पवनसे, केशरके वृक्षोंसे, लवंग (लौंग) की लताओंसे, कल्पवृक्षोंकी सुगन्धिसे मदान्ध भ्रमरोंसे, जो इलावृत खंड अत्यन्त शोभायमान है ॥ ८ ॥

वैडूर्य रत्नोंके अंकुरोंके समूहसे चित्रित,स्वर्णमयी भूमिको देखते हुये, अलंकृत देवताओंसे पूर्ण इलावृत खंडोंको जीतकर भगवान्ने भेंट ली ॥९॥ पहिले मुचुकुन्द नामके राजाका जामाता (जमाई) शोभन नामका था,जिसने भरत खंडमें एकादशीका व्रत करके देवताओंके संग मंदरा चलपर वास पाया॥१०॥वह राजा शोभन आज भी कुबेरकी तरह चन्द्र-भागाके संग हे मैथिल ! राज्य करता है,वह परम सुन्दर भेंट लेकर हे मैथिल ! भगवान्के सामने आया ॥११॥ वह शोभन राजा यदूत्तम हरिकी परिक्रमा करके चरण कमलमें गिरकर भक्तिसे फिर प्रणाम कर भेंट देकर मंदरा चलको चला गया ॥ १२ ॥ बहुलाश्व राजा बोला कि, हे देवर्षि सत्तम ! जब शोभन नृप चला गया, तब भगवान् मधुसूदनने क्या किया, सो कहिये ॥ १३ ॥ तब नारदजी बोले कि, उस मन्दराचलपर परम दिव्य सरोवर देखकर और सुनहरे कमल देखकर अर्जुन भगवान्से बोला ॥१४॥कि, हे देवकी पुत्र ! सुनहरी

पश्यन्भुवंस्वर्णमयींमनोहरांवैडूर्यरत्नांकुरवृन्दचित्रिताम् ॥ इलावृतंपूर्णमलंकृतैःसुरैर्विजित्यखण्डंजगृहेबलिंहरिः ॥ ९ ॥ श्रीशोभनोनामपुरा
कृतेनजामातृकोभून्मुचुकुंदभूभृतः ॥ एकादशीं यःसमुपोष्यभारतेप्राप्तःसदेवैःकिलमन्दराचले ॥१०॥ अद्यापिराज्यंकुरुतेकुबेरवद्राज्ञःसुतोसौ
किलचन्द्रभागया ॥ नीत्वाबलिंदेववरस्यसंमुखेसमाययौमैथिलसुन्दरःपरः ॥ ११ ॥ प्रदक्षिणीकृत्यहरिंयदूत्तमंपादारविंदेपतितोथशोभनः ॥
भक्त्याप्रणम्याशुबलिंमहात्मनेदत्त्वाययौमैथिलमन्दराचलम् ॥ १२ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ शोभनेचनृपेयातेभगवान्मधुसूदनः अग्रेच
कारकिंदेवोवददेवर्षिसत्तम ॥ १३ ॥ नारदउवाच ॥ सरोवरंपरंदिव्यंतस्मिन्मंदरसानुनि ॥ सौवर्णपंकजंवीक्ष्यकिरीटीप्राहमाधवम् ॥ १४ ॥
॥ अर्जुनउवाच ॥ कांचनीभिर्लताभिश्चसौवर्णैःपंकजैर्वृतम् ॥ वदमांदेवकीपुत्रकस्येदंकुण्डमद्भुतम् ॥ १५ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ पृथुः पूर्वो-
राजराजःस्वायंभुवकुलोद्भवः ॥ ततापसतपोदिव्यंतस्येदंकुण्डमद्भुतम् ॥१६॥ अस्यपीत्वाजलंसद्यःसर्वपापैःप्रमुच्यते ॥ स्नात्वातद्धामपरमं
यातिपार्थनरेतरः ॥१७॥ श्रीनारदउवाच ॥ अत्रैवभगवान्साक्षात्तपोभूमिंजगामह ॥ सरूपास्तत्रनृत्यंतिसर्वास्ताह्यष्टसिद्धयः ॥१८॥ तावी-
क्ष्यचोद्धवःप्राहभगवंतंसनातनम् ॥ उद्धवउवाच ॥ कस्येयंसुतपोभूमिर्मंदराचलसन्निधौ ॥ मूर्तिमत्योविराजंत्यःकाःस्त्रियोवदहेप्रभो ॥१९॥

लताओं और सुनहरे कमलोंसे व्याप्त यह अद्भुत कुंड किसका है ? यह मुझसे कहिये ॥ १५ ॥ तब भगवान् बोले कि,पहिले स्वायंभू मनुके कुलमें उत्पन्न हुये पृथु राजाने दिव्य तप किया था, उसका यह अद्भुत कुंड है ॥ १६ ॥ इसका जल पीनेसे मनुष्य तत्कालही पापोंसे छूट जाता है, जो कोई इसमें स्नान करे तो हे पार्थ ! वह परम धामको प्राप्त होता है ॥ १७ ॥ नारदजी कहते हैं कि,वहाँही साक्षात् भगवान् तपो भूमिको प्राप्त हुये थे,मूर्तिमती आठों सिद्धियाँ वहाँ नाचती हैं ॥ १८ ॥ उनको देखकर उद्धवजी भगवान्से बोले कि, मन्दराचलके निकट यह तपोभूमि किसकी है ? मूर्तिमती ये स्त्रियाँ कौन हैं ? सो हे प्रभो ! मुझसे कहिये ॥ १९ ॥

तब भगवान् बोले कि स्वायंभू मनुने पहिले तप किया था, उसकी यह तपोभूमि है, यह भूमि परम कल्याणकारिणी है ॥ २० ॥ यहाँ सदाही स्त्रीरूपसे आठों सिद्धियाँ रहा करती हैं, यहाँ जो कोई आता है, उसको वे अष्ट सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं ॥ २१ ॥ यहाँ क्षणभरकेही तपसे मनुष्य देवता होजाता है, इस तपोभूमिके माहात्म्यको कहनेकी ब्रह्माकीभी सामर्थ्य नहीं है ॥ २२ ॥ नारदजी कहते हैं-ऐसे कहकर भगवान् श्रीकृष्ण अपनी सेनाको साथ लेकर बार बार दुन्दुभियाँ बजाते प्रोत्कट देशोंको चले गये ॥ २३ ॥ जहाँ हिरण्यकशिपुने पहिले तप किया था,वहाँ लीलावती नामकी एक सोनेकी पुरी है॥२४॥लीलावतीका स्वामी वीतिहोत्र नामका अग्निदेव मूर्तिमान भूमिमें सुन्दर व्रतवाला वहाँ राज्य करता है॥२५॥ उसने भी श्रीकृष्णचन्द्र परमातमाको भेंट देकर निरन्तर स्तुति की ॥२६॥ इस प्रकार समस्त इलावृतखंडको देखते देवदेव भगवान् श्रीकृष्ण जम्बूद्वीप मनोहर वेद नगरको गये ॥२७॥

॥ श्रीभगवानुवाच ॥ स्वायंभुवेनमनुनातपश्चात्रकृतंपुरा ॥ तस्येयंसुतपोभूमिरद्यापिश्रेयसीबहु ॥ २० ॥ सदात्रैवहिवर्ततेनारीरूपाष्टसि-
द्धयः ॥ अत्रप्राप्तस्यकस्यापिततस्ताश्चभवंतिहि ॥ २१ ॥ अत्रक्षणेनतपसादेवत्वंयातिमानवः ॥ तपोभूमेश्चमाहात्म्यंवक्तुंनालंचतुर्मुखः
॥ २२ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाभगवान्कृष्णःस्वसैन्यपरिवारितः ॥ जगामप्रोत्कटान्देशान्दुंदुभीन्नादयन्मुहुः ॥ २३ ॥ हिरण्यकशिपु-
दैत्योयत्रतेपेतपःपुरा ॥ यत्रलीलावतीनामवर्ततेकांचनापुरी ॥२४॥ लीलावतीश्वरः साक्षाद्वीतिहोत्रोहुताशनः ॥ नित्यंराज्यंप्रकुरुते मूर्तिमा-
न्भुविसुव्रतः ॥ २५ ॥ सोपिश्रीकृष्णचन्द्रायपुरुषायमहात्मने ॥ बलिंदत्त्वापरांशश्वत्स्तुतिंचक्रेधनंजयः ॥२६॥ इत्थंपश्यन्देवदेवः सर्ववर्ष-
मिलावृतम् ॥ जगामवेदनगरंजंबूद्वीपंमनोरमम् ॥२७॥ मूर्तिमान्यत्रनिगमोदृश्यतेसर्वदैवहि ॥ तत्सभायांसदावाणीवीणापुस्तकधारिणी ॥२८॥
गायंतीकृष्णचरितंसुभगंमंगलायनम्॥उर्वशीपूर्वचित्याद्यानृत्यंत्योप्सरसोनृप॥२९॥हावभावकटाक्षैश्चतोषयंत्यःश्रुतीश्वरम्॥अहंविश्वावसुश्चैव
तुंबुरुश्चसुदर्शनः ॥३०॥ तथाचित्ररथोह्येतेवादित्राणिमुहुर्मुहुः ॥ वेणुवीणामृदंगानिमुरुयष्टियुतानिच॥३१॥तालदुंदुभिभिःसार्द्धंवादयंतियथा-
विधि॥ह्रस्वदीर्घप्लुतोदात्तानुदात्तस्वरितानृप ॥३२॥ सानुनासिकभेदश्चतथानिरनुनासिकः॥एतैरष्टादशैर्भेदैर्गीयंतेश्रुतयःपरैः॥३३॥मूर्तिमंतो
विराजंतेतत्रवेदपुरेनृप॥अष्टतालाःस्वरासप्ततथाग्रामत्रयंनृप॥३४॥वसंतिवेदनगरेमूर्तिमंतपसदैवहि॥भैरवोमेघमल्लारोदीपकोमालकोशकः॥३५॥

जहाँ मूर्तिमान वेद रहते हैं, जिसकी सभामें साक्षात् वाणी वीणा पुस्तकधारिणी रहती है ॥ २८ ॥ वहाँ उर्वशी, पूर्वचित्ती, इत्यादिक अप्सराएँ श्रीकृष्णके मंगलायन चरित्रको गाती नृत्य करती हैं ॥२९॥ हाव, भाव, कटाक्षोंसे वेदोंके ईश्वर ब्रह्माको प्रसन्न करती हैं, विश्वावसु, तुम्बुरु, सुदर्शन ॥३०॥ और चित्ररथ ये बारंबार गाते हैं, और वीणा, वेणु, मृदंग, मोहचंग ॥३१॥ मंजीरे और दुन्दुभियोंके सहित यथाविधि ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत, उदात्त, अनुदात्त, स्वरितपूर्वक स्वरोंसे बाजे बजाते हैं ॥३२॥ सानुनासिक, निरनुनासिक, इन अठारह भेदोंसे श्रुतियोंको गाते हैं ॥ ३३ ॥ हे नृप ! वहाँ वेदपुरमें आठों ताल, तीनों ग्राम, तथा सातों स्वर, मूर्तिमान विराजते हैं ॥ ३४ ॥ उस वेदनगरमें सदाही मूर्तिमान् सब राग रहते हैं, भैरव, मेघ मल्लार, दीपक, मालकोश ॥ ३५ ॥

श्रीराग और हिंडोल, ये छः राग,और पांच २ इनकी स्त्रियाँ,आठ आठ इनके पृथक् २ पुत्र ॥ ३६ ॥ मूर्तिमान् जहाँ विचरते हैं, हे नरेश्वर ! भैरवका तो नेवले जैसा वर्ण है, मालकोशका तोता जैसा हरा वर्ण है ॥ ३७ ॥ मेघ मल्लारका मोर जैसा है, दीपकका स्वर्ण जैसा है,श्रीरागका लालवर्ण है ॥ ३८ ॥ हिंडोल रागका हंस जैसा वर्ण है,हे मिथिलेश्वर ! वे ऐसे शोभित होते हैं, तब बहुलाश्व राजा बोला कि, हे मुनि सत्तम ! तालोंके, स्वरोंके, ग्रामोंके और नृत्योंके कितने नाम भेद हैं, उनको कहिये ॥ ३९ ॥ तब नारदजी बोले कि, रूपक, चंचरीक, परमठ, विराट, कमठ, मल्लक, झटि और जुटा ये तो आठ ताल हैं॥४०॥ निषाद, ऋषभ, गांधार, षड्ज, मध्यम, धैवत और पंचम,हे राजन् ! ये सात स्वर कहे गये हैं ॥४१॥ माधुर्य, गांधार और ध्रौव्य ये तीन ग्राम हैं, रास, ताण्डव, नाट्य, गान्धर्व, कैन्नर ॥४२॥ वैद्याधर, गौह्यक, आक्रूरस, हाव, भाव और अनुभव इन दश भेदोंसे

श्रीरागश्चापिहिंडोलोरागाः षट्संप्रकीर्तिताः ॥ पंचभिश्चप्रियाभिश्चतनुजैरष्टभिःपृथक् ॥ ३६ ॥ मूर्तिमंतस्तुतेतत्रविचरंतिनरेश्वर ॥ भैरवो बभ्रुवर्णश्चमालकंसःशुकद्युतिः ॥ ३७ ॥ मयूरद्युतिसंयुक्तोमेघमल्लारएवहि ॥ सुवर्णाभोदीपकश्चश्रीरागोरुणवर्णभृत् ॥३८॥ हिंडोलो दिव्यहंसाभोराजतेमिथिलेश्वर ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ तालानांचस्वराणांचग्रामाणांमुनिसत्तम ॥ नृत्यानांकतिभेदायेनामभिः सहितान्वद ॥३९॥ नारदउवाच ॥ रूपकश्चंचरीकश्चतालःपरमठःस्मृतः ॥ विराडकमठश्चैवमल्लकश्चझटिर्जुटा ॥ ४० ॥ निषादर्षभगांधारषड्जमध्यमधैवताः ॥ पंचमश्चेत्यमीराजन्स्वराःसप्तप्रकीर्तिताः ॥ ४१ ॥ माधुर्यमथगांधारध्रौव्यंग्रामत्रयंस्मृतम् ॥ रासंचतांडवं नाट्यंगांधर्वंकैन्नरंतथा॥४२॥वैद्याधरंगौह्यकंचनृत्यमाक्रूरसंनृप ॥ हावभावानुभावैश्चदशभिश्चाष्टभेदवत् ॥ ४३ ॥ सारेगमपधनीतिस्वरगम्यंपदंस्मृतम् ॥ एतत्तेकथितंराजन्किंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ ४४ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेवेदनगरवर्णनंनामत्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४३॥बहुलाश्वउवाच ॥ रागिणीनांचनामानिवददेवऋषेमम ॥ तथावैरागपुत्राणांत्वंपरावरवित्तमः॥१॥श्रीनारदउवाच॥ कालेनदेशभेदेनक्रिययास्वरमिश्रया॥भेदाबुधैःषट्पंचाशत्कोट्योगीतस्यकीर्तिताः॥२॥अंतर्भेदाअनन्ताहितेषांसंतिनृपेश्वर ॥ विद्ध्येनंरागमानंदंशब्दब्रह्ममयंहरिम्॥३॥

आठ प्रकारका नृत्य है ॥ ४३ ॥ सा रे ग म प ध नी ये सात निषाद, ऋषभ, गांधार षड्ज, मध्यम, धैवत पंचम इन सातों रागोंसे प्राप्य आश्रय कहे गये हैं, हे राजन् ! ये सब तुमको कहा, अब क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥४४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां वेदनगरवर्णनं नामत्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४३॥ तब बहुलाश्व राजाने पूछा कि, हे देव ऋषे ! रागिनियोंके नाम और रागोंके पुत्रोंके नाम मुझको कहिये आप आगे पीछेकी जाननेवालोंमें श्रेष्ठ हो ॥ १ ॥ तब नारदजी बोले कि, कालभेदसे देशभेदसे, और स्वरमें मिली हुई क्रियासे,ज्ञानियोंने गीतके छप्पन करोड भेद वर्णन किये हैं॥२॥हे नृपेश्वर ! और इनके अन्तर्भेद अनन्त हैं,रागका रूप तो एक केवल आनंदब्रह्म हरि हैं ॥३॥

इससे मुख्य भेद तुम्हारे सामने वर्णन करता हूँ, कि भैरवी १, पिंगला २, शंकी ३, लीलावती ४, और अगरी ५, ॥ ४ ॥ भैरव रागकी ये पांच रागिनियाँ हैं, और महर्षि १, समृद्ध २, पिंगल ३, मागध ४, ॥५॥ विलावल ५, वैशाख ६, ललित ७, पंचम ८, ये आठ भैरव रागके पृथक् पृथक् पुत्र गाये जाते हैं ॥ ६ ॥ और चित्रा १,जयजयावंती २, विचित्रा ३, वृजल्ला ४ ध्यंधकाकारी ५, ये पांच मनोहर रागनियाँ ॥७॥ मेघ मल्लारकी स्त्रियाँ हैं, और श्यामकार १, सोरठ २, नट३,उडायन ४,॥८॥हे मैथिलेन्द्र ! केदार ५,व्रजरंहस्य ६, जलधार ७ और विहाग ८, ये मेघमल्लार रागके आठ पुत्र हैं॥९॥ तथा कंचुकी १,मंजरी २,टोडी ३,गूजरी ४,शावरी ५.॥१०॥ ये दीपक रागकी पाँच स्त्रियाँ हैं,तथा कल्याण १, शुभकाम २. गौडकल्याण ३,॥११॥ कामरूप ४, कान्हरा ५. रामसंजीवन ६, सुखनामा ७, और मन्दहास ८, हे विदेहराज ! ये आठ पुत्र॥१२॥रागपण्डितोंने दीपक रागके कहे

तस्मान्मुख्याश्चभेदाःकौवदिष्यामितवाग्रतः॥ भैरवीपिंगलाशंकीलीलावत्यगरीतथा॥४॥भैरवस्याऽपिरागस्यरागिण्यःपंचकीर्तिताः॥ महर्षिश्च समृद्धश्चपिंगलोमागधस्तथा ॥५॥ बिलावलश्चवैशाखोललितःपंचमस्तथा ॥ भैरवस्याष्टपुत्रायेगीयंतेचपृथक्पृथक् ॥६॥ चित्राजयजयावंती विचित्राकथितापुनः ॥ वृजल्लाध्यंधकाकारीरागिण्योपिमनोहराः ॥७॥ मेघमल्लाररागस्यकथिताःपंचमैथिल॥ श्यामकारःसोरठश्चनटोडायन एवच ॥८॥ केदारोव्रजरंहस्योजलधारस्तथैवच॥ विहागश्चेत्यष्टपुत्राःकथिताःपूर्वसूरिभिः ॥९॥ कंचुकीमंजरीटोडीगुर्जरीशाबरीतथा॥१०॥ दीपकस्यापिरागस्यरागिण्यःपंचविश्रुताः ॥ कल्याणःशुभकामश्चगौडकल्याणएवच ॥ ११ ॥ कामरूपःकान्हरेतिरामसंजीवनस्तथा॥सुख-नामामन्दहासःपुत्राःश्चाष्टौविदेहराट् ॥ १२ ॥ रागस्यदीपकस्यापिकथितारागपण्डितैः ॥ गांधारीवेदगांधारीधनाश्रीःस्वर्मणिरतथा ॥१३॥ गुणागरीतिरागिण्यःपंचैतामैथिलेश्वर ॥ मालकोशस्यरागस्यकथितारागमण्डले॥१४॥मेघश्चमचलोमारुमाचारःकौशिकस्तथा ॥ चन्द्रहारो घुंघुटश्चविहारोनंदएवच ॥ १५ ॥ मालकोशस्यरागस्यचाष्टपुत्राःप्रकीर्तिताः॥ वैराटीचैककर्णाटीगोरीगोरावर्टीतथा ॥१६॥ चतुश्चंद्रकला चैवरागिण्यः पञ्चविश्रुताः ॥ श्रीरागस्यापिराजेंद्रकथिताःपूर्वसूरिभिः॥१७॥ सारंगःसागरोगौरोमरुत्पंचशरस्तथा। गोविंदश्चहमीरश्चगी-र्भीरश्चतथैवच ॥१८॥ श्रीरागस्यापिराजेंद्रअष्टौपुत्रामनोहराः ॥ वसंतीऐरजाहेरीतैलंगीसुंदरीतथा ॥ १९ ॥

हैं, तथा गान्धारी १,वेदगांधारी २,धनाश्री ३,स्वर्मणी ४, ॥१३॥ और गुणागरी ५,हे मैथिलेश्वर ! ये पांच रानियाँ मालकोश रागकी कहीं हैं ॥१४॥ तथा मेघ १, मचल २, मारुमाचार ३.कौशिक ४,चन्द्रहार ५,घुंघुट ६,विहार ७, नन्द ८, ॥१५॥ ये मालकोश रागके आठ पुत्र कहे हैं, तथा वैराटी १, कर्णाटी २, गोरी ३, और गोरावटी ४, ॥१६॥ चार चन्द्रकला ५, ये पांच स्त्रियां श्रीरागकी पण्डितोंने कही हैं ॥ १७॥ सारंग १, सागर २, गौर ३, मरुत ४, पंचशर ५, गोविन्द ६, हमीर ७, और गीर्भीर ८. ॥ १८ ॥ श्रीरागके ये मनोहर आठ पुत्र कहे हैं, तथा वसंती १, ऐरजा २, हेरी ३, तैलंगी ४, और सुन्दरी ५, ॥ १९ ॥

हिंडोलकी ये पांच स्त्रियाँ हैं, तथा मंगल १, वसन्त २, विनोद ३, कुमुद ४,॥२०॥विभास ५, स्वरमण्डल ६, इत्यादि नामोंसे ये विख्यात आठ पुत्र हैं, हे राजेन्द्र ! वे विचक्षणोंने वर्णन किये हैं ॥२१॥ तब बहुलाश्व राजाने पूछा कि, शब्द ब्रह्म वेद महात्माके, साक्षात् राजमण्डलरूप हिण्डोल रागके पृथक्क् पृथक्क् ॥२२॥ अंगोंका वर्णन करिये कि वेदके अंग पृथ्वीपर कौन कौनसे हैं सो कहिये ॥२३॥ तब नारदजी बोले कि वेदका मुख तो व्याकरण है, पिंगल चरण हैं, मीमांसा शास्त्र हाथ हैं, ज्योतिष नेत्र हैं ॥२४॥ आयुर्वेद (वैद्यक) पीठ है, धनुर्वेद वक्षस्थल है, गान्धर्व वेद जीभ है. वैशेषिक शास्त्र मन है ॥ २५ ॥ सांख्य (तत्त्वज्ञान) बुद्धि है, न्यायवाद अहंकार है, और महात्मा वेदका वेदान्त चित्त है ॥२६॥ राग है सो विहार है, हे राजन् ! हे मैथिल ! यह मैंने तुम्हारे आगे वर्णन किया. अब तुम क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥ २७ ॥ तब बहुलाश्व राजा बोला कि, उस रम्य वेदपुरमें

हिंडोलस्यापिरागस्यरागिण्यःपंचविश्रुताः ॥ मंगलश्चवसंतश्चविनोदःकुमुदस्तथा ॥२०॥ एवंचविहितंनामविभासःस्वरमण्डलः ॥ पुत्राश्चाष्टौसमाख्यातामैथिलेंद्रविचक्षणैः !! २१ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ शब्दब्रह्महरेःसाक्षान्निगमस्यमहात्मनः ॥ रासमण्डलइत्येवंहिण्डोलस्य पृथक्पृथक् ॥ २२ ॥ अंगानिवदमेदेवकानिकानिमहीतले ॥ २३ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ मुखंव्याकरणंप्रोक्तंपिंगलःपादउच्यते ॥ मीमांसशास्त्रंहस्तौचज्योतिर्नेत्रंप्रकीर्तितः ॥ २४ ॥ आयुर्वेदःपृष्ठदेशोधनुर्वेदउरस्थलम् ॥ गांधर्वंरसनंविद्धिमनोवैशेषिकंस्मृतम् ॥२५॥ सांख्यंबुद्धिरहंकारोन्यायवादःप्रकीर्तितः ॥ वेदांततस्यचित्तंहिवेदस्यापिमहात्मनः ॥२६॥ रागरूपमिमंराजन्विहारंविद्धिमैथिल ॥ एतत्तेकथितंराजन्किंभूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ २७ ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ तमिन्वेदपुरेरम्येकिंचकारहरिःस्वयम् ॥ एतन्मेवददेवर्षेत्वंसाक्षाद्दिव्यदर्शनः ॥ २८ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ आयांतंवेदनगरंश्रीकृष्णंयादवेश्वरम् ॥ निगमोपिबलिंनीत्वासरस्वत्यातयासह ॥ २९ ॥ गन्धर्वैरप्सरोभिश्चग्रामतालैः स्वरैः सह ॥ रागैःसभेदैःसहितःप्रणनामकृतांजलिः ॥३०॥ प्रसन्नोभगवान्साक्षाद्देवदेवोजनार्दनः ॥ वेदंप्राहयदूनांचसर्वेषां शृण्वतांसताम् ॥ ॥ ३१ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ निगमत्वंवरंब्रूहियत्तेमनसिवर्तते ॥ दुर्लभंकिंत्रिलोकेषुभक्तानांहर्षितेमयि ॥ ३२ ॥

हरि भगवान्‌ने क्या किया, हे देवऋषे ! यह आप मुझसे कहिये, आप दिव्य दर्शन हो ॥ २८ ॥ नारदजी बोले–जब वेदनगरमें श्रीकृष्ण आये, उनको देखकर वेदने भी उस सरस्वती को साथ लेकर ॥ २९ ॥ गन्धर्व और अप्सराओंको साथ लेकर ग्राम, ताल, स्वर,राग और रागोंके भेदों सहित सामने जाकर हाथ जोडकर प्रणाम किया ॥३०॥तब साक्षात् भगवान् देव देव जनार्दन प्रसन्न होकर वेदसे सब यादवोंके सुनते २ यह वचन बोले ॥३१॥ कि हे निगम ! जो तुम्हारे मनमें हो, सो वर मांगो, जब मैं अपने भक्तपर प्रसन्न होता हूँ, तब कोई बात उसको दुर्लभ नहीं होती है ॥ ३२ ॥

तब वेद बोला कि, हे देव ! यदि आप प्रसन्न हैं, तो मेरे सब पार्षद हैं, उनको अपने निजरूपका दर्शन दीजिये ॥३३॥ जो आपका तेजःपुञ्ज रूप अपने धाम गोलोकमें और वृंन्दावनमें रास मंडलमें था, हम उसके दर्शनाकांक्षी हैं ॥३४॥ तब नारदजी कहते हैं कि, ऐसे श्री परिपूर्णतम स्वयं श्रीकृष्णने वेदका वचन सुनकर राधिका सहित अपना रूप दिखाया ॥३५॥ उस सुन्दर रूपको देखकर सब मूर्च्छित होगये, सात्त्विक भावनामें परिपूर्ण होकर अपना सुख और अपना तन सब भूल गये ॥३६॥ तब अत्यन्त हर्षित होकर मधुर ध्वनिसे बाजे बजाकर श्रीकृष्णके आगे सब वेद गाने लगे और नृत्य करने लगे ॥ ३७ ॥ अद्भुत माधुर्य रूप जैसा सुना था वैसेही देखा, हे मैथिलेश्वर ! वैसाही अद्भुत वर्णनभी वेदादिकोंने किया उसको सुनो ॥ ३८ ॥ वेद बोला कि, हे ब्रह्मन् ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ, आप सत् हो, ज्ञान मात्र हो, कार्य कारणसे परे हो, बडे हो, निरन्तर हो, प्रशान्त हो, विभु हो, अज हो, सम हो, महत् हो, पर हो, दुर्गम हो, धन हो, अपने तेजसे दूर किया है छल जिन्होंने, उनको मेरी नमस्कार है ॥३९॥ फिर सरस्वती बोली–आपको योगीश्वर तेजसे

॥ वेदउवाच ॥ यदिदेवप्रसन्नोसिसर्वेयेमेसुपार्षदाः॥ तेषांदेवनिजंरूपंदर्शयात्रपरेश्वर ॥३३॥ यद्रूपंतेचगोलोकेस्वधाम्निप्रस्फुरद्द्युतौ ॥ वृन्दावनेचतद्रासेतस्यदर्शनकांक्षिणः॥३४॥ नारदउवाच ॥ श्रुत्वावेदवचःकृष्णःपरिपूर्णतमःस्वयम् ॥ स्वरूपंदर्शयामासराधयासहितंपरम् ॥३५॥ तद्रूपंसुंदरंदृष्ट्वासर्वेवैमूर्च्छनांगताः ॥ पूरिताःसात्त्विकैर्भावैर्विस्मृत्यस्वतनुंसुखम् ॥३६॥ तदापिहर्षिताःसर्वेवादित्रैर्मधुरस्वनैः ॥ जगुस्तत्पुरतो राजन्ननृतुःपश्यतांसताम् ॥ ३७ ॥ यथाश्रुतंतथादृष्टंमाधुर्यरूपमद्भुतम् ॥ तथैवचक्रुर्वेदाद्यावर्णनंमैथिलेश्वर ॥ ३८ ॥ वेदउवाच ॥ सज्ज्ञानमात्रंसदसत्परंबृहच्छश्वत्प्रशांतंविभवंसमंमहत् ॥ त्वांब्रह्मवंदेवसुदुर्गमंपरंसदास्वधाम्नापरिमूकैततवम् ॥ ३९ ॥ सरस्वत्युवाच॥महः परंत्वांकिलयोगिनोविदुःसविग्रहंतत्रवदंतिसात्त्वताः ॥ दृष्टंतुयत्तेपदयोर्द्वयंमेक्षेमस्यभूयान्महसामधीश्वरम् ॥ ४० ॥ गन्धर्वाऊचुः ॥ ॥ श्यामंचगौरंविदितंस्वधाम्नाकृतंत्वयांधामनिजेच्छयाहि ॥ विराजसेनित्यमलंचताभ्यांघनोयथामेचकदामिनीभ्याम् ॥ ४१ ॥ अप्सरस ऊचुः ॥ यथातमालःकलधौतवल्लयाघनोयथाचंचलयाचकास्ति ॥ नीलोद्रिराजोनिकषाश्मखन्याश्रीराधयात्वस्तुतथारमण्या ॥ ४२ ॥ ॥ ग्रामाऊचुः ॥ यस्यपदस्यपरागंशंभुमारमाकविदेवैः ॥ इच्छतिचेतसिराधातंभजमाधवपादम् ॥ ४३ ॥

परे वर्णन करते हैं, और भक्त आपको मूर्तिमान् वर्णन करते हैं, मैंने आपके दोनों स्थान देखे वे क्षेमके तेजके स्थान हो, ईश्वर हो॥४०॥ फिर गन्धर्व स्तुति करने लगे, श्याम और गौर दोनों रूप अपने अपनेही तेजसे अपनीही इच्छासे राधा कृष्ण रूप धारण किये हैं, उन दोनों रूपोंसे नित्य विराजते हो, जैसे बिजली सहित श्याम घटा विराजती है, उनको हमारी नमस्कार है ॥ ४१ ॥ फिर अप्सराएँ बोलीं--जैसे तमालका वृक्ष सुनहरी लतामें लिपटा शोभित होता है, जैसे घन बिजलीसे लिपटा और खानमें सोनेका पर्वत शोभित होता है, वैसेही राधासे शोभित आप श्रीकृष्ण भगवान् हो, उनके लिये हमारी नमस्कार है ॥ ४२ ॥ तीनों ग्राम स्तुति करने लगे कि, जिनके चरण कमलके परागको शम्भु, पार्वती, लक्ष्मी और ज्ञानी तथा देवताओं सहित श्रीराधा चित्तमें धारण करती हैं, उन माधवको प्रणाम करो ॥ ४३ ॥

फिर ताल बोले, जिनसे राजा बलिने सत्का आचरण किया, उस बलिकोही छला, उन भगवान्के चरणकमलको भजो, चित्तका अंधकार दूर हो ।।४४।। फिर मान बोले--जिन भग-
वान्की शरण प्राप्त होकर संत संसार दुःखको बाहिर फेंकते हैं, उन राधा माधवके दिव्य चरणकमलको हम धारण करते हैं ॥ ४५ ॥ फिर स्वर बोले-शरद् ऋतुके प्रफुल्लित कमल की
शोभाको फीकी करनेवाले जो श्रीकृष्णके चरणकमल, जिनको मुनियोंने चाटा हैं, वज्र, अंकुश, कमल, इनसे जो चिह्नित हैं. देदीप्यमान स्वर्णके नूपुर जिनमें विराजमान हैं, दूर
किया है भक्तोंका तापत्रय जिन्होंने, चलायमान हे कान्ति जिनकी, ऐसे राधापतिके चरणद्वयको हम धारण करते हैं ॥४६॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजिखंडे भाषाटीकायां वेदादि
स्तुति वर्णनं नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४४ ॥ नारदजी कहते हैं-भैरवादिक जो रागगण हैं, वे हरि भगवान्के सामने आये,और रूपके अनुरूप हैं, अंग जिसमें उस तनुको देखकर
अत्यन्त हर्षित हुये ।।१॥ जहाँ २ हरिके अंगोंमें दृष्टि पडी, उन्हीं २ अंगोंमेंसे लावण्यताके मारे फंसी हुई दृष्टि फिर उनमेंसे निकल नहीं सकी ॥ २ ॥ अहो ! श्रीकृष्णचन्द्र हरिका बडा

॥ तालाऊचुः ॥ येनबलिःसद्धिहरेतद्बलिमेवहरेत ॥ तंभजपादंतुहरेश्वेतसितप्तेकुहरे ॥ ४४ ॥ मानाऊचुः ॥ उत्क्षिपंतिबहिर्दुः
खंसंतोयच्छरणंगताः ॥ राधामाधवयोर्दिव्यंदधामपदपंकजम् ॥ ४५ ॥ स्वराऊचुः ॥ शरद्विकचपंकजश्रियमतीवविद्वेषकंमिलिंदमुनि
लेढितंकुलिशकंजचिह्नावृतम् ॥ स्फुरत्कनकनूपुरंदलितभक्ततापत्रयंचलद्द्युतिपदद्वयंहृदिदधामिराधापतेः ॥४६॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्व-
जित्खंडेनारदबहुलाश्वसंवादेवेदादिस्तुतिवर्णनंनामचतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४४ ॥ नारदउवाच ॥ भैरवाद्यारागगणाःपुरःप्राप्ताहरेः
प्रभोः ॥ रूपानुरूपावयवांतनुंदृष्ट्वातिहर्षिताः ॥१॥ यत्रयत्रचतेपांवैदृष्टिःप्राप्ताहरेस्तनौ ॥ तत्रस्थितानिर्गतुंलावण्यान्नशशाकह ॥२॥ अहो
श्रीकृष्णचन्द्रस्यरूपमत्यद्भुतंहरेः ॥ दृष्ट्वोपवर्णनंतस्यचक्रुस्तेपिपृथक्पृथक् ॥ ३ ॥ भैरवउवाच ॥ भजहरिजानुद्वयमितिलक्ष्मीः ॥
भजेतिसदांकेकमलकराभ्याम् ॥ ४ ॥ मेघमल्लारउवाच ॥ ऊरूविष्णोरंभाखंडौहेमस्तंभौध्यायेवन्द्यौ ॥ ओज पूर्णौशोभायुक्तौवस्त्रापीतौ
कृष्णस्योभौ ॥ ५ ॥ दीपकउवाच ॥ सकलसुखकरंकनकरुचिधरम् ॥ प्रथितहरिपदंभजतकटितले ॥ ६ ॥ मालकोशउवाच ॥ कटीकेश-
वद्याहरेरस्तितत्रनृणांनेत्रयोर्दृष्टिमानंहरंति ॥ परंकंपितामंदगच्छत्समीरैः सुनम्रेणसासर्वचेतोहरेत्थम् ॥ ७ ॥

अद्भुत रूप है,उसको देखकर उन्होंने पृथक् २ वर्णन किया ॥ ३ ॥ भैरव बोला कि, हरिके जानुद्वयका भजन करो, जिनको लक्ष्मीजी गोदमें रखकर अपने करकमलोंसे दबाती
हैं ॥४॥ मेघ मल्लार बोला कि, विष्णुके दोनों ऊरू (जंघा) केलेके स्तम्भ व स्वर्णके स्तम्भ जैसे हैं, वंद्य हैं, मैं उनका ध्यान करता हूँ, जो ओजसे पूर्ण हैं, शोभासे युक्त हैं, और
पीताम्बरसे लिपटे हैं, ॥५॥ दीपकराग बोला कि, सम्पूर्ण सुखोंको करनेवाले, सुवर्णकी कान्तिके समान देदीप्यमान जो हरिके विख्यात दोनों चरण हैं,उनका कटि तटके नीचे ध्यान
करो ॥ ६ ॥ मालकोश बोला कि, भगवान्की जो केश जैसी पतली कटि (कमर) है, उसका मैं ध्यान करता हूं. जो कटि मनुष्योंके नेत्रोंके दृष्टिमानको हरती है, और जो केवल
मन्द पवनसेभी हिलती है, और अति नम्र होनेसे वह इस प्रकार सबके चित्त हरनेवाली है ॥ ७ ॥

श्रीराग बोला कि, भगवान् राधा पतिके नाभिरूप सरोवरका ध्यान करता हूँ, जो नाभिसर शोभित त्रिवली रूप हिलोरोंसे मनोहर है, और रोमावलिसे जिसने कामदेवके वनको परास्त किया है, उस नाभिसरका मैं ध्यान करता हूँ ॥८॥ हिंडोल बोला कि, जो पिप्पल पत्रमेंही बैठी भ्रमर पंक्तिके समान शोभित है, भगवान्की उस अक्षर पंक्ति (त्रिवली)का मैं ध्यान करता हूँ, जो कमलमें श्याम रेखा जैसी दीखती है ॥९॥ भैरवी बोली कि, कटिसे लिपटा जो हरिका पीत पट है, जिसकी इन्द्र धनुष जैसी शोभा है, स्वर्णके तारोंसे मनोहर कान्ति जिसकी है, सब दुखोंके हरनेवाले उस पीताम्बरका ध्यान करो॥१०॥भैरवके पुत्र बोले--श्रीकृष्णकी चार भुजाओंका ध्यान करो, जो चारभुजा समुद्रोंकी तरह विश्वको पूर्ण करनेवाली हैं, चतुष्पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष,) की तरह आनन्द देनेवाली है, लोककी चन्दोहाके दण्ड जैसी रक्षा करनेवाली हैं, और दिग्गजोंकी तरह भूमिकी रक्षा करनेवाली हैं॥११॥मेघ-

॥ श्रीरागउवाच ॥ नाभेःसरःपुष्करकुंडवच्चतल्लसत्त्रिवल्यूर्मिमनोहरंपदम् ॥ रोमावलिप्रोज्झितकामकाननंभजामिनित्यंह्नदिराधिकापतेः ॥ ८ ॥ हिण्डोलउवाच ॥ अक्षरपंक्तिःकिन्वलिपंक्तिःपिप्पलपत्रेमोहनमाला ॥ किंकमलेयच्छ्यामलरेखाकिंह्युदरेरोमावलिरेखा ॥९॥ भैरवरागिण्यऊचुः ॥ पीतपटंयत्कृष्णहरेरिंद्रधनुर्वादीप्तियुतम् ॥ काञ्चनशिल्पैश्चारुचितद्भजनृणांदुःखहरम् ॥१०॥ भैरवपुत्राऊचुः चतुःसमुद्राइवविश्वपूरकाआनन्ददाएवचतुःपदार्थवत् ॥ तेबाहवोलोकवितानदंडवज्जयंतिभूधारणदिग्गजाइव ॥११॥ मेघमल्लाररागिण्यऊचुः अरुणबिंबफलद्युतिमण्डितंभजहरेरधरंमधुरंमनः ॥ नवजपादलमल्लसुविग्रहंसकलवल्लभभूमिपतेःप्रभोः ॥ १२ ॥ मेघमल्लारपुत्राऊचुः ॥ कर्पूरकेतकसुमौक्तिकहीरकाणांश्रीखण्डचन्द्रचपलामृतमल्लिकानाम् ॥ तेषांरुचेश्चपरिभावमकारिपूर्वयादंतपंक्तिरमलास्मरतांपरस्य ॥ १३ ॥ दीपकरागिण्यऊचुः ॥ नयनयुगलजातंयातुनोहर्निशन्तेमदनशरपरीक्षंसर्वलावण्यदीक्षम् ॥ परिह्नतसुरवृक्षंकोटिशोलक्ष्यलक्षंनिजजनकृतरक्षंदानदक्षकटाक्षम् ॥ १४ ॥ दीपकपुत्राऊचुः ॥ किंवाकुलिंगयुगलंनवपद्ममध्येदुःखक्षयायवसतांनिशितासियुग्मम् ॥ जैत्रंधनुर्जयतिकिंमकरध्वजस्यभ्रूमण्डलंकिमथचन्द्रमुखेपरस्य ॥ १५ ॥

मल्लारकी रागिनियाँ बोलीं कि, अरे मन! पृथ्वीके पति प्रभु हरिके बिम्बफल जैसे लाल, दुपहरियाके फूल जैसी कान्तिवाले, अधरोंका ध्यान कर ॥ १२ ॥ मेघ मल्लारके पुत्र बोले कि, कपूर केतकी. मोती, हीरा, चन्दन, चन्द्रमा, बिजली, और अमर मल्लिकाओंकी कान्तिको फीकी करनेवाली है, कान्ति जिसकी, हरिकी उस दांतोंकी पंक्तिका स्मरण करो ॥१३॥ दीपककी रागिनियाँ बोलीं कि, श्रीकृष्णके नेत्रद्वय रात्रिदिन हमारी रक्षा करें, भगवान्के नेत्रद्वय कैसे हैं कि सब सुन्दरताके दीक्षित हैं, कामके मानों परोक्ष बाण हैं. दानमें चतुर कल्प वृक्षके न्यून करनेवाले हैं, करोडों लक्षके देखनवाले और अपने जनके रक्षक हैं ॥१४॥ दीपकके पुत्र बोले कि, नवीन कमलमें मानों खंजनका जोडा बैठा हो, ऐसे नेत्रद्वय चन्द्रमा जैसे श्रीकृष्णके मुखमें ऐसे दीखते हैं, मानो जगत्को जीतनेके लिये कामदेवने दो धनुष ताने हों, ऐसे भ्रुकुटिके मण्डलको हम स्मरण करते हैं ॥ १५ ॥

मालकोशकी रागिनियाँ बोलीं कि, भगवान्के कुण्डल कैसे हैं कि, मानो चन्द्रमण्डलमें काली सर्पिणी लहराती नाच रही हो, अथवा मकरन्दके भरे कमल जैसे कपोलमंडलमें भ्रमरोंकी पंक्ति हो ॥१६॥ मालकोशके पुत्र बोले कि श्याम सुन्दरके कानोंमें कुंडल कैसे झलक रहे हैं, मानों दो सूर्य उदय हुये हों, अथवा श्याम घटामें बिजलीकी दो रेखाएं हों, ऐसे सुनहरे कुंडल हैं ॥ १७ ॥ श्रीरागकी रागिनियाँ बोलीं--कि युगल कुलिंग और खंजन पक्षियोंकी पंक्तियोंमें भगवान्के नेत्रोंकी प्रति पक्षिताके लिये युद्ध हुआ, वे लडती हुई परास्त होकर गिर पडीं, किन्तु प्राति पक्षितामें नहीं, ठहर सकीं, भगवान्के उन नेत्रोंके मध्यमें प्रातःकालीन खिले हुये पद्म्में अरुण बिम्बफलके इच्छुक कीर(तोता) रूपी नासिका, शोभित हो रही हैं, भगवान्के ऐसे स्वरूपको हम स्मरण करती हैं, (इस रूपकमें भगवान्का मुख कमल है भगवान्के अधर(ओंठ), बिम्बफल हैं, अरुण बिम्बफलका इच्छुक कीर, भगवान्की नासिका है) ॥१८॥ श्रीरागके पुत्र बोले, कमरसे बांधा है पीताम्बर जिन्होंने, मोरपंखका मुकुट धरे, वेणु बजानेमें झुकाई है गर्दन जिन्होंने, ऐसे नट वेषधारी श्रीकृष्ण

॥ मालकोशरागिण्यऊचुः ॥ परिनृत्यतइन्दुमण्डलेफणिपत्न्याविवलोलकुण्डले ॥ कमलेमकरंदनिर्भरेभ्रमरालीवसुगण्डमण्डले ॥ १६ ॥
॥ मालकंसपुत्राऊचुः ॥ रविरेवखमण्डलेकिमुयदुभर्तुस्त्वथवाद्यतेतडित् ॥ अधितिष्ठतिगण्डमण्डलंद्युतिखंडंकलधौतकुण्डलम् ॥ १७ ॥
॥ श्रीरागिण्यऊचुः ॥ कुलिंगयोःखंजनयोःकिलारादापत्यतांयुद्धमभूदलीनाम् ॥ तेषांगतःकीरउपप्रफुल्लेचकास्तिपद्मेरुणविंबलिप्सुः ॥१८॥
॥ रागपुत्राऊचुः ॥ परिकरीकृतपीतपटंहरिंशिखिकिरीटनर्तीकृतकन्धरम् ॥ लगुडवेणुकरंचलकुण्डलंपटुतरंनटवेषधरंभजे ॥ १९ ॥
॥ हिण्डोलरागिण्यऊचुः ॥ अतसीकुसुमोपमेयकांतिर्यमुनाकूलकदम्बमध्यवर्ती ॥ नवगोपवधूविहारशालीवनमालीवितनोतुमङ्गलानि॥२०॥
॥ हिण्डोलपुत्राऊचुः ॥ हरेमत्समःपातकीनास्तिभूमौतथात्वत्समोनास्तिपापापहारी ॥ इतित्वांचमत्वाजगन्नाथदेवंयथेच्छाभवेत्ततथा
मांकुरुत्वम् ॥ २१ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इतिरागकृतंध्यानंयःशृणोतिपठेत्सदा ॥ तन्नेत्रगोचरोयातिभगवान्भक्तवत्सलः ॥ २२ ॥
इत्थंस्वदर्शनंदत्त्वावेदादिभ्योहरिःस्वयम्ः ॥ बभूवपश्यातांतेषांशार्ङ्गपाणिश्चतुर्भुजः ॥ २३॥ कृत्वातुदर्शनंविष्णोर्गतेदेवेगणैःसह ॥ सन्येसुतं
शंबरारिंस्थापयित्वायदूत्तमम् ॥ २४ ॥ द्वारकांस्वांपुरींगंतुंमनश्चक्रेपरात्परः ॥२५॥ मञ्जीरघण्टाकलकिंकिणीकलंसुकांस्यपात्रध्वनिनारथेन
॥ सुग्रीवमुख्यैःसचचंचलाश्वैर्नियोजितैर्मैथिलदारुकेण ॥ २६ ॥

को हम भजते हैं ॥१९॥ हिंडोल रागकी रागिनियाँ बोलीं--अलसीके कुसुम जैसी है कान्ति जिनकी, यमुनाके कूलके कदम्बोंमें खडे, नई गोपियोंके विहारमें विकल, ऐसे वनमाली हमारे मंगलोंको रचो ॥२०॥ हिंडोलके पुत्र बोले--हे हरे ! मेरे समान तो कोई पातकी नहीं है, आपके समान कोई पापहारी नहीं है, ऐसे मानकर जगत्के नाथ आपको नमस्कार है, जैसी आपकी इच्छा हो, वैसेही मुझको करिये ॥२१॥ नारदजी कहते हैं--यह रागोंका किया ध्यान है, इसको जो कोई पढे अथवा सुने. उसको भक्त वत्सल भगवान् दर्शन देते हैं ॥२२॥ ऐसे स्वयं हरि वेदादिकोंको अपना दर्शन देकर उनके देखते २ शार्ङ्गपाणि चतुर्भुज अन्तर्धान होगये॥ २३ ॥ ऐसे देवताओंके गणोंसहित सब राग जब विष्णुका दर्शन करके चले गये, तब सेनामें अपने पुत्र यदूत्तम प्रद्युम्नको स्थापित करके ॥ २४ ॥ भगवान् परात्परने द्वारका जानेके लिये मन किया ॥ २५ ॥ हे मैथिल ! मंजीर, घंटा, मनोहर किंकिणी झांझ, इनकी ध्वनि जिसमें, और कांस्यपात्रकी ध्वनिवाले और सुग्रीवादिक चंचल घोडे दारुक सारथीने जोडे हैं जिसमें ॥ २६ ॥

सुन्दर रत्न जिसमें जडे हैं, वेद ध्वनि जिसमें हो रही है, पवनसे फहरा रही गरुडकी ध्वजा है जिसमें, ऐसे रथमे बैठकर परमात्मा श्रीकृष्ण उस वेदपुरीको छोडकर यादवोंके नृत्यसे शोभित द्वारिकापुरीको आ गये ॥ २७ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां श्रीकृष्णध्यानवर्णनं नाम पंचचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४५ ॥ नारदजी कहते हैं कि, जब श्रीकृष्ण द्वारिकापुरीको चले गये, तब प्रद्युम्न सेनासहित कामदुघ नदको गये ॥१॥ वहाँ सौ योजनकी गन्धर्वोंकी पुरी है, रत्नोंकी जडी सोनेकी वसन्त मालती जिसका नाम है ॥ २ ॥ जिसमें लवंगकी लताओंसे, इलायची, केशर, जावित्री जायफल, चन्दन, कल्पवृक्ष ॥३॥ इनसे शोभित मतवाले भ्रमर जहाँ गुंजार रहे, चित्र विचित्र पक्षी जहाँ बोल रहे, भव्य गन्धर्वोंसे शोभित, जैसे नागोंसे भोगवती ॥ ४ ॥ जिसमें पतंग नामका गन्धर्वोंका राजा राज्य करता है, जिस सुकृतीका इन्द्र जैसा बल पुरुपार्थ है, ॥ ५ ॥ उसने प्रद्युम्न

युतेनसमुद्रत्नमताश्रुतिस्वनैःप्रभंजनैजद्गरुडध्वजेन॥विहायतांवेदपुरींपरात्माययौपुरींयादववृन्दमंडिताम्॥२७॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजि-
त्खंडेनारदबहुलाश्वसंवादेश्रीकृष्णध्यानवर्णनंनामपंचचत्वारिंशोऽध्यायः॥४५॥ नारदउवाच॥अथकृष्णेभगवतिपुरींद्वारावतींगते ॥ प्रद्युम्नः
सैनिकैःसार्द्धंनदंकामदुघंययौ ॥ १ ॥ शतयोजनविस्तीर्णागन्धर्वाणांमनोहरा॥वसन्तमालतीनाम्नाहेमरत्नमयीपुरी ॥२॥ लवंगलतिकाजालै
रेलाकाश्मीरदेशकैः ॥ जातीफलादिजावित्रीश्रीखण्डपारिजातकैः ॥३॥ मत्तालिनादिताभृंगैःशब्दिताचित्रपक्षिभिः॥गन्धर्वैराजिताभव्यैर्नागै-
र्भोगवतीयथा ॥ ४ ॥ पतंगोनामतत्रैवगन्धर्वेशोमहाबलः ॥ करोतिराज्यंसुकृतोशक्रवद्बलपौरुषम् ॥५॥ श्रुत्वाप्रद्युम्नमायातंदिग्जयार्थंविनिर्ग-
तम् ॥ गन्धर्वैरुद्भटैर्युक्तोयुद्धंकर्तुंमनोदधे ॥ ६ ॥ रथाश्वगजवीरैश्चगंधर्वैर्दशकोटिभिः ॥ पतंगआगतोयोद्धुंप्रद्युम्नस्यापिसंमुखे ॥७॥ गंधर्वैर्य-
दुभिःसार्द्धंघोरंयुद्धंबभूवह ॥ भल्लैर्गदाभिःपरिघैर्मुद्गरैस्तोमरर्ष्टिभिः ॥८॥ बाणांधकारेसंजातेपतंगोतिरथोबली ॥ धनुष्टंकारयन्प्राप्तोजगर्जघन-
वद्बली ॥ ९ ॥ गदोगदांसमादायबलदेवानुजोबली ॥ तद्बलंपोथयामासवज्रेणेंद्रोयथागिरीन् ॥ १० ॥ गदस्यगदयाकेचिद्गंधर्वाःपतितारणे॥
रथाश्चूर्णीकृताःसर्वेमातंगाभिन्नमस्तकाः ॥११॥ अश्वारूढाःकेपिवीराःपतितारणमूर्द्धनि ॥ अधोमुखाऊर्ध्वमुखागंधर्वाश्छिन्नबाहवः ॥१२॥

दिग्विजयके लिये निकला है'' ऐसे सुनकर उद्भट गन्धर्वोंको साथ लेकर युद्ध करनेका मन किया ॥ ६ ॥ हाथी, रथ, अश्व, और वीरोंके सहित दश करोड गन्धर्वोंको लेकर पतंग प्रद्युम्नके सामने युद्ध करनेके लिये आया ॥ ७ ॥ तब गन्धर्वोंका और यादवोंका भाले, गदा, तोमर, वेणे, मुद्गर, और ऋष्टियोंसे घोर युद्ध हुआ ॥८॥ जब बाणोंका अन्धकार हो गया, तब अतिरथी पतंग धनुष टंकारता हुआ आकर बडा बलवान् मेघकी तरह गर्जा ॥९॥ तब तो बलदेवका भाई गद गदा लेकर गन्धर्वोंकी सेनाको मारने लगा जैसे वज्र लेकर इन्द्र ॥ १० ॥ गदकी गदासे कितने ही गन्धर्व रणमें जा पडे, सब रथ चूर्ण हो गये, हाथियोंके मस्तक टूट गये ॥ ११ ॥ घोडोंके सवार कितने ही घोडोंपरसे रणमें गिर पडे, ऊंचेको मुख नीचेको मुख, और कट गई हैं भुजाऐं जिनकी ऐसे कितने ही गन्धर्व रणमें गिर पडे ॥ १२ ॥

क्षण मात्रमें रुधिरकी नदी बहने लगी,रुद्रकी मालाके लिये प्रथम शिरोंको लेने लगे ॥१३॥ सिंहपर चढीभद्रकाली सैकडों डाकनियोंको साथ लेकर खोपडीमें भर भरकर रुधिरका
पान करती हुई संग्राममें देखने लगी॥१४॥ऐसे गदके युद्धमें गन्धर्व जब भाग गये,तब लाख हाथियोंके बलवाला,पतंग गन्धर्व आया॥१५॥ हे मैथिल ! पतंगने बडे पराक्रमसे गदके
हृदयमें गदा मारी,गदने भी पतंगके हृदयमें गदा मारी ॥१६॥ ऐसे इन दोनोंका दो घडी तक गदायुद्ध हुआ,विस्फुलिंगों(अग्निकणों)को छोडती हुई दोनों गदाऐं चूर्ण हो गईं ॥१७॥
लाख भारकी बडी भारी गदा लेकर रणमें दुर्मद पतंगने गदके शिरमें मारी ॥१८॥ गदाके प्रहारसे गद क्षणभर मूर्च्छित हो गया,ऐसे महात्मा पतंगने जब घोर युद्ध किया ॥ १९ ॥
उसी समय द्वारिकापुरीका तेजपुञ्ज चला आया,जो करोड सूर्य जैसा है,उसको सब यादवोंने देखा॥२०॥उस तेजमेंसे गौरांग महाबली भगवान् भक्तवत्सल बलदेवजी अकस्मात् प्रकट

क्षणमात्रेणतत्सैन्येरुधिराणांनदीह्यभूत् ॥ प्रमथाहरमालार्थंशिरांसिजगृहुर्मृधे ॥ १३ ॥ सिंहारूढाभद्रकालीडाकिनीशतसंवृता ॥ कपाले
नापिरुधिरंपिबंतीदृश्यतेमृधे ॥ १४ ॥ एवंयुद्धेगदकृतेगन्धर्वाणांपलायताम् ॥ गंधर्वेशस्तदाप्राप्तोहस्तिलक्षबलान्वितः ॥ १५ ॥ गदंत
ताडगदयापतंगोहृदिमैथिल ॥ गदोपितंस्वगदयापतंगंहृदिचौजसा ॥ १६ ॥ तयोश्चगदयायुद्धंबभूवघटिकाद्वयम् ॥ विस्फुलिंगान्क्षरंत्यौद्वे
गदेचूर्णीबभूवतुः ॥ १७ ॥ लक्षभारमयींगुर्वींगदामादायसत्वरम् ॥ गदंतताडशिरसिपतंगोरणदुर्मदः ॥ १८ ॥ गदाप्रहारेणगदःक्षणंमूर्च्छाम-
वापह ॥ एवंकृतेघोरमृधेपतंगेनमहात्मना ॥ १९ ॥ तदैवद्वारकापुर्य्यास्तेजःसंघट्टमागतम् ॥ ददृशुर्यादवाःसर्वेकोटिमार्तण्डसन्निभम् ॥ २० ॥
तस्मिंस्तेजसिगौरांगोबलदेवोमहाबलः ॥ आविर्बभूवसहसाभगवान्भक्तवत्सलः ॥ २१ ॥ गंधर्वाणांबलंसर्वंसमाकृष्यहलेनवै ॥ तताडमु-
सलंक्रुद्धोबलोनीलांबरोबली ॥ २२ ॥ रथान्गजांस्तुरंगांश्चवीराःशस्त्रभृतांवराः ॥ निपेतुर्युगपत्सर्वेचूर्णिताश्चोपलाइव ॥ २३ ॥ पतंगोवि-
रथस्तस्माद्भीतभीतःपुरीययौ ॥ पुनर्योद्धुंयादवैश्चसेनाव्यूहंचकारह ॥ २४ ॥ शतयोजनविस्तीर्णांगंधर्वाणांमहापुरीम् ॥ वसंतमालतींसर्वा
मुद्धिदार्यहलेनवै ॥ २५ ॥ विचकर्षबलःक्रुद्धोनदेकामदुघेनृप ॥ हाहाकारस्तदैवासीन्नगर्य्यांपतितैर्गृहैः ॥ २६ ॥

हुये ॥ २१ ॥ नीलाम्बरधारी बडे बलवान् बलदेवने क्रोध करके गन्धर्वोंकी सब सेनाको हलसे खेंचकर मूसलसे मारा ॥२२॥ तब उस मूसलके मारे रथ, घोडे, हाथी और शस्त्रधारी
वीर सब एक साथ ऐसे जा पडे, जैसे चूर्ण होकर पत्थर जा पडे ॥ २३ ॥ तब भयभीत होकर रथहीन हुआ, पतंग पतंगपुरीको भाग गया, फिर उसने यादवोंसे युद्ध करनेके लिये
सेना का व्यूह रचा ॥ २४ ॥ तब गन्धर्वोंकी शत योजन लम्बी पुरी वसन्तमालतीको हलसे उखाडकर ॥ २५ ॥ बलदेवजी खेंचकर क्रोधसे कामदुध नदमें डालने लगे, तब
नगरीमें घरघरमें बडा हाहाकार शब्द मचा ॥ २६ ॥

जब नौकाकी तरह टेढी होकर पुरी चारों ओर घूमने लगी, तब उसको देखकर पतंग गन्धर्वोंको साथ लेकर आया और हाथ जोडकर खडा हुआ ॥२७॥ दो लाख विमान बलदेवजीकी भेंट किये,सुवर्णके जडे हुये,मोतियोंके तोरण जिनमें लगे रहे, चालीस २ कोसके विस्तारवाले, विश्वकर्माके बनाये हुये ॥२८॥ इच्छानुसार चलनेवाले,पताकाओं और एक एक करोड कलशोंसे युक्त,एक हजार सूर्यके समान प्रकाशवाले,वे विमान थे ॥२९॥और चार लाख गौएं, दश अरब घोडे, लवंग,इलायची,केशर और जायफलोंसे युक्त ॥३०॥ अमृत भरे करोडों पात्र, धर्षित होकर इतनी भेंट लाकरदी, और नमस्कार की ॥३१॥ हाथजोडकर बलभद्रके प्रसादको जाननेवाला स्तुति करने लगा कि, हे राम २ ! हे महावीर्य ! आपका पराक्रम मैंने नहीं जाना, जिन आपके शिरपर रखा हुआ भूमंडल तिलकी तरह माल्म पडता है ॥३२॥ आप देवताओंके अधिदेव काम पाल हो, हे भगवन् ! आप

तिर्यक्पोतमिवाघूर्णांनगरींवीक्ष्यसत्वरम् ॥ पतंगःसर्वगंधर्वैर्हर्षितःसन्कृतांजलिः ॥२७॥ खचिद्धेमसवर्णानांमुक्तातोरणशालिनाम् ॥ दशयोजनविस्तीर्णीकृतानांविश्वकर्मणा ॥२८॥ कामगानांपताकाभिर्युतानांकुंभकोटिभिः ॥ सहस्रार्कप्रकाशानांविमानानांद्विलक्षकम् ॥२९॥ चतुर्लक्षंगवांचैवतुरंगाणांदशार्बुदम् ॥ एलालवंगकाश्मीरजातीफलफलैःसह॥३०॥सुधाफलानांदिव्यानांकोटिशोभाजनानिच ॥ नीत्वाबलिंसमादायदत्त्वानत्वाप्रधर्षितः ॥ ३१ ॥ कृतांजलिःप्राहबलंबलभद्रप्रसादवित् ॥ पतंगउवाच ॥ रामराममहावीर्यनजानेतवविक्रमम् ॥ यस्यैकमूर्ध्नितिलवद्दृश्यतेभूमिमण्डलम् ॥ ३२ ॥ देवाधिदेवभगवन्कामपालनमोस्तुते ॥ नमोनंतायशेषासाक्षाद्रामायतेनमः ॥ ३३ ॥ जयजयाच्युतदेवपरात्परात्परस्वयमनंतदिगंतगतश्रुते ॥ सुरमुनींद्रफणींद्रवरायतेमुसलिनेबलिनेहलिनेनमः ॥ ३४ ॥ नारदउवाच ॥ एवंस्तुतःपतंगेनबलभद्रोमहाबलः ॥ प्रसन्नचेतागंधर्वंमाभैष्टेत्यभयंददौ॥३५॥स्थापयित्वाबलेकार्ष्णिंप्रणतंयादवेश्वरः॥यादवैःप्रस्तुतःशीघ्रंपुरींद्वारावतीं ययौ ॥ ३६ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेवसंतमालतीकर्षणंनामषट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४६ ॥ नारदउवाच ॥ प्रद्युम्नोथमहावीरोनादयञ्जयदुंदुभिम् ॥ यदुभिःसैनिकैःसार्द्धंमधुधारातटंययौ ॥ १ ॥

को नमस्कार है,आप साक्षात् अनन्त शष स्वरूप राम हो, आपको नमस्कार है ॥३३॥ हे अच्युत ! हे देव ! हे परात्पर ! आपकी जय हो जय हो, आप अनन्त हो, दिशाओंमें है यश जिनका,ऐसे देवताओंमें मुनीन्द्रोंमें,नागोंमें,श्रेष्ठ,हल मूसलधारी बलदेव आपको नमस्कार है ॥३४॥ नारदजी कहते हैं-ऐसे पतंगने जब महाबली बलदेवजीकी स्तुति की, तब प्रसन्न होकर उसको अभयदान किया कि,तुम मत डरो ॥३५॥ फिर यादवोंके स्वामी आप सेनामें अति नम्र प्रद्युम्नको स्थापित करके यादवोंसे स्तुति किये गये भगवान् बलदेवजी जल्दीही द्वारिकाको चले गये ॥ ३६ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खंडे भाषाटीकायां वसन्तमालतीकर्षणं नामषट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४६॥ नारदजी कहते हैं कि. महापराक्रमी प्रद्युम्न विजयके नगाडे बजाते सेनाके यादवोंको साथ लेकर मधुधारा नदीके तटपर गये ॥ १ ॥

सुमेरुके किनारेपर सुनहरे लताओं और सुनहरे हंसोंसे व्याप्त कुबेरके शुभवनमें ॥ २ ॥ हे मैथिल ! देवताओंकी दुर्गरूपा दानवोंके लिये अगम्या हेमावती गुफाओंमें, वेत्रवती गंगा जिनमें वहां गये ॥३॥ दानवोंके भयके मारे कभी स्वर्गसे भागकर आये आठों लोकपालोंकी निधियाँ जिनमें रहती हैं ॥ ४ ॥ वहाँ शक्रसख नामका देव राजा है, वह उनका रक्षक है, उसने प्रद्युम्नको आया हुआ, सुनकर युद्ध करनेका विचार किया ॥ ५ ॥ प्रद्युम्नके भेजे हुये बुद्धिमान् उद्धवजी मार्गके जाननेवाले जनोंसे पूछकर उस पुरमें गये ॥ ६ ॥ वहाँ जाकर सभामें शक्रसख नामके देवको नमस्कार करके मन्त्रियोंमें श्रेष्ठ प्रभु उद्धवजीने प्रद्युम्नके कथनको विस्तार पूर्वक कहा ॥७॥ उद्धवजी बोले--द्वारिकाके राजा यादवेन्द्र नृपेश्वर उग्रसेन जम्बूद्वीपके राजाओंको जीतकर राजसूय यज्ञ करेंगे ॥८॥ उन्होंने जगत्को जीतनेके लिये बली प्रद्युम्न वीरको भेजा है, वह रुक्मिणीका पुत्र अपने तेजसे भरतादिक खंडों

सुवर्णाद्रितटीभूतेवनेवैश्रवसेशुभे ॥ सुवर्णवर्णहंसाढचेकांचनीलतिकावृते ॥२॥ हेमावतीषुद्रोणीषुदेवदुर्गासुमैथिल॥ दानवानामगम्यासुगंगावेत्रवतीषुच ॥३॥ दानवेभ्यःप्रभीतानांक्वचित्स्वर्गात्पलायिनाम् ॥ अष्टानांलोकपालानांनिधयोयत्रसंतिहि॥४॥ तत्रशक्रसखोदेवआधिपत्याभिरक्षकः ॥ श्रुत्वागतंचप्रद्युम्नंयुद्धंकर्तुमनोदधे ॥५॥ प्रद्युम्नप्रेषितःसाक्षादुद्धवोबुद्धिसत्तमः ॥ पप्रच्छदृष्टमार्गैश्चजनैस्तस्यपुरंययौ ॥ ६ ॥ नत्वा देवंशक्रसखंसभायामुद्धवःप्रभुः ॥ प्रद्युम्नकथितंप्राहविस्तरान्मंत्रिणांवरः ॥ ७ ॥ उद्धवउवाच ॥ उग्रसेनोयादवेंद्रोद्वारकेशोनृपेश्वरः ॥ जंबूद्वीपनृपाञ्जित्वाराजसूयंकरिष्यति ॥ ८ ॥ तेनप्रणोदितोजेतुंरुक्मिणीनंदनोबली ॥ जित्वासभारतादीनिखण्डानिस्वस्यतेजसा॥९॥अद्यैवेलावृतंप्राप्तोजेतुंकार्ष्णिर्महाबलः ॥ तस्मैयच्छबलिंशीघ्रंकुलकौशलहेतवे ॥ १० ॥ नचयुद्धंहिभवताराजन्सर्वविदांवर ॥ शक्रसखउवाच ॥ ॥ शृणुदूतसदादेवैःपूजितोहंनरैःकिमु ॥ सिद्धोहंवैमहावीरोनागलक्षसमोबले॥११॥अष्टानांलोकपालानामाधिपत्याभिरक्षकः॥ कुबेरइवकोशाढचःपुरंदरइवोद्भटः ॥ १२ ॥ उग्रसेनेनदातव्यंमह्यंचोपायनंपरम् ॥ पुराकस्मैनदास्यामियदुराजायभूभृते ॥१३॥ उद्धवउवाच ॥ यथातिरस्कृतिंप्राप्तःकुबेरोयदुतेजसा ॥ यथाशृंगारतिलकश्चैत्रदेशाधिपोबली ॥ १४ ॥

को जीतकर ॥९॥ आज इलावृतखंडको जीतनेके लिये आया है, जो कृष्णका पुत्र महाबली है, उसको आपभी अपने कुलकी कुशलताके लिये भेंट दीजिये ॥ १० ॥ आप सब जाननेवालोंमें श्रेष्ठ हो, यदि आप भेंट नहीं देंगे तो युद्ध होगा, तब शक्रसख बोले कि, हे दूत! देवता भी मेरा सदा पूजन करते हैं, तब मनुष्योंकी बात तो ही क्या है मैं सिद्ध हूँ और एक लाख मत्त हाथियोंका मुझमें बल है ॥ ११ ॥ आठों लोकपालोंके राज्यका मैं रक्षक हूँ, मैं कुबेरकी तरह धनवान् हूँ, और इन्द्रकी तरह उद्भट हूँ ॥१२॥ उग्रसेनको मैं भेंट नहीं दूँगा, क्योंकि आजतक पहिले भी किसी राजाको मैंने भेंट नहीं दी है ॥ १३ ॥ तब उद्धवजी बोले कि, जैसे कुबेरने यादवोंके तेजसे तिरस्कारको प्राप्त होकर भेंट दी और जैसे चैत्र देशके राजा शृंगार तिलकने भेंट दी ॥ १४ ॥

हरिवर्षके राजा शुभाग, उत्तराखण्डके राजा गुणाकर, जैसे दैत्यसख लंकेश राक्षसेश्वर ॥१५॥ संवत्सर केतुमाल और भी शकुन्यादिक बडे२ असुरोंने तिरस्कारको प्राप्त होकर जैसे भेंट दी, वैसेही तुमभी भेंट दोगे ॥१६॥ ऐसे उद्धवका वचन सुनकर बली शक्रसख क्रोधित होकर उद्धवसे यह वचन बोला कि, हे भागवतोत्तम! तुम सुन लो ॥१७॥ जबतक मैं भेंट दूँ, तबतक तुम यहीं बैठे रहो, और तरह तुमको नहीं जाने दूँगा, यह सत्य है सत्य है॥१८॥ तब उद्धवजी बोले--हम तो मन्त्रियोंमें श्रेष्ठ हैं, पूर्ण ज्ञानके देनेवाले हैं, जो हमारी शिक्षा नहीं मानते हैं, उनका भला नहीं होता है॥१९॥ नारदजी कहते हैं कि हे राजन्! ऐसे उसने उद्धवजीको नजर बंदकर रखा, जब उद्धवजी नहीं आये, तब यादवोंको चिन्ता हुई॥२०॥ कितनेही दिन व्यतीत होगये, उद्धवजी नहीं दीखे, तब मेरे मुखसे सुनकर प्रद्युम्न भगवान्॥२१॥ शक्रसखको जीतनेके लिये गये, शिव जैसे त्रिपुरको जीतनेके लिये गये थे, यादवोंको

शुभांगोहरिवर्षेशउत्तरेशोगुणाकरः ॥ यथादैत्यसखोराजालंकेशोराक्षसेश्वरः ॥१५॥ संवत्सरःकेतुमालःशकुन्याद्यामहासुराः ॥ तथाभूतस्त्वं हिराजन्बलिंतस्मैप्रदास्यसि ॥ १६ ॥ नारदउवाच ॥ इत्युद्धववचःश्रुत्वाक्रुद्धःशक्रसखोबली ॥ उद्धवंप्रत्युवाचाथशृणुभावगतोत्तम ॥ १७ ॥ यावद्बलिंप्रदास्यामितावत्त्वंसंस्थितोभव ॥ अन्यथातेगतिर्नास्तिसत्यंसत्यंमहामते ॥ १८ ॥ उद्धवउवाच ॥ वयंतुमंत्रिप्रवराःपूर्णज्ञानप्रदावराः ॥ मच्छिक्षणंनमन्यंतेतेषांनोमंगलंभवेत् ॥ १९ ॥ नारदउवाच ॥ एवंसदृष्टरोधेनरोधयामासचोद्धवम् ॥ उद्धवंनागतंराजन्यदूनामनुशोचताम् ॥ २० ॥ दिनानिकतिचित्तत्रव्यतीयुस्तमपश्यताम् ॥ मन्मुखात्तदुपाकर्ण्यप्रद्युम्नोभगवान्हरिः ॥२१॥ जेतुंशक्रसखंप्रागात्त्रिपुरंत्र्यंबकोयथा ॥ यदुभिर्भ्रातृभिःसार्द्धंससैन्यपरिवारितः ॥२२॥ सुवर्णाद्रिगुहाद्द्वारात्संप्राप्तोमकरध्वजः ॥वीरकोदंडटङ्कारैर्दुंदुभिध्वनिमिश्रितैः ॥२३॥ अश्वह्रेषैर्हस्तिनादैर्विनेदुश्चदिशोदश ॥ सैन्यपादरजोभिश्चयुयुधेयादवैःसह ॥२४॥ बभूवतुमुलंयुद्धंछादितंव्योममण्डलम् ॥ वीक्ष्यसर्वेमेरुदेवाभयंप्रापुर्नृपेश्वर ॥२५॥ अथशक्रसखःक्रुद्धोरथारूढोमहाबलः ॥ अक्षौहिणीभिर्दशभिर्युयुधेयादवैःसह ॥ २६ ॥ बभूवतुमुलंयुद्धंदेवानांयदुभिःसह ॥ प्राकृतप्रलयेराजन्नुदधीनांध्वनिर्यथा ॥ २७ ॥ शस्त्रांधकारेसञ्जातेसारणोरोहिणीसुतः ॥ बलदेवानुजोवीरोदंशितोगजसंस्थितः ॥ २८ ॥

भाइयोंको साथ लेकर सेना सहित प्रद्युम्न गये ॥२२॥ सुमेरु पर्वतकी गुफाके द्वारसे मकरध्वज आये, वीरोंके धनुषोंकी टंकारोंसे दुन्दुभियोंकी ध्वनियोंसे ॥२३॥ घोडोंकी हिन हिनाहटोंसे, हाथियोंकी चीत्कारोंसे, दशों दिशाएं झंकार उठीं, सेनाकी चरण रजसे दशों दिशाएं भर गईं, तब यादवोंसे युद्ध हुआ ॥२४॥ तब आकाश मण्डल छागया, ऐसा भयंकर युद्ध हुआ, जिसको देखकर सुमेरुके देवता भयभीत होगये॥२५॥ उसके बाद महावली शक्रसखने क्रोधसे रथमें बैठकर दश अक्षौहिणियोंको साथ लेकर यादवोंके साथ युद्ध किया ॥२६॥ तब देवताओंका और यादवोंका बडा भयंकर युद्ध हुआ, प्राकृत प्रलयके समुद्र जैसी गर्जना हुई ॥२७॥ जब शस्त्रोंका अन्धकार होगया, तब बलदेवजीका छोटा भाई रोहिणीका पुत्र बडा वीर सारण कवच पहिन कर हाथीपर चढकर आया ॥ २८ ॥

सबके आगे आकर बार बार धनुषको टंकारता शक्रसखकी सेनाको धनुषसे निकले बाणोंसे मारने लगा ॥२९॥ सारणके बाणोंसे कितनेही वीरोंके तो दो दो टुकडे होगये, और तिरछे होकर रथ गिर पडे, जैसे वृक्ष गिर पडते हैं ॥ ३०॥ जब हाथियोंके कुम्भ स्थल फट गये, तब उनमेंसे मोती गिरे, वे बाणोंके अन्धकारमें ऐसे मालुम पडे, जैसे रातमें तारागण मालूम पडते हैं ॥३१ ॥ जब घोडे, हाथी, रथ, और वीर कट कटकर गिर पडे, तब वह युद्ध भूमि भूतगणोंसे युक्त, महादेवके खेलनेकी भूमि जैसी होगई ॥ ३२ ॥ सारणका बल देखकर छिन्न भिन्न हैं धनुष जिनके, और सब ओरसे शीर्षा होगये हैं कवच और कुरते जिनके, ऐसे सब देवता भाग गये ॥ ३३ ॥ अपनी सेनाको भगी देखकर बली शक्रसख धनुषको टंकार कर आया, और बडे बलसे गर्जा ॥३४॥ दश बाण तो अर्जुनके मारे,बीस बाण भानुके मारे,सौ बाण साम्बके मारे, और तीखे सौ बाण अनिरुद्धके मारे॥३५॥

सर्वेषामग्रतःप्राप्तोधनुष्टंकारयन्मुहुः ॥ तद्बलंपोथयामासबाणैःकोदंडनिर्गतैः ॥२९॥ श्रीसारणस्यबाणौघैःकेचिद्वीराद्विधाकृताः ॥ तिर्यग्भूता रथायुद्धेनिपेतुःपादपाइव ॥३०॥ गजानांभिन्नकुंभानांमौक्तिकान्यपतंस्तदा ॥ बाणांधकारेसंजातेरात्रौतारागणाइव ॥३१॥ संछिद्यमानैरश्वै-श्वर्वीरैर्नागैरणांगणम् ॥ बभौभूतगणैर्युक्तंयथाक्रीडमुमापतेः ॥३२॥ सारणस्यबलंदृष्ट्वासर्वेदेवाःपलायिताः ॥ संछिन्नभिन्नकोदंडाअभितःशीर्णकंचुकाः ॥ ३३ ॥ पलायमानंस्वबलंदृष्ट्वाशक्रसखोबली ॥ धनुष्टंकारयन्प्राप्तोजगर्जघनवद्बलात् ॥३४॥ अर्जुनंदशभिर्बाणैर्विंशत्याभानुमेवच ॥ सांबंबाणशतैर्युद्धेऽनिरुद्धंचशतैःशरैः ॥ ३५ ॥ द्विशतैश्चगदंवीरंसहस्रैःसारणंतथा ॥ तताडसमरेवीरोधन्वीशक्रसखोबली॥३६॥तद्बाणैःसरथावीरीबभ्रमुर्घटिकाद्वयम्॥ चक्रवत्कुंभकारस्यतदद्भुतमिवाभवत्॥३७॥ हयाश्चपंचतांप्राप्ताश्लथद्बंधारथाभ्रमात् ॥ रथिनःखिन्नमनसःसूतामूर्च्छांगतमृधे ॥३८॥ सचान्यंरथमारुह्यधनुष्टंकारयन्बलात् ॥ धनुःशक्रसखस्यापिचिच्छेददशभिःशरैः ॥३९॥ द्वाभ्यांसूतंशतैरश्वान्सहस्रैस्तद्रथंशरैः ॥ चूर्णयामासराजेंद्रसांबोजांबवतीसुतः ॥ ४० ॥ संछिन्नधन्वाविरथोहताश्वोहतसारथिः ॥ नागेंद्रंमत्तमारुह्यशूलंजग्राहरोषतः ॥ ४१ ॥ विव्याधसांबंशूलेनहृदिशक्रसखोबली ॥ तेनघातेनसांबोपिकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥ ४२ ॥

दो सौ बाण वीर गदके मारे, हजार बाण सारणके मारे, इस प्रकार धनुष धारी बली शक्रसखने सबके बाण मारे ॥३६॥उसके बाणोंसे रथ सहित सब वीर दो घडीतक कुम्भकार (कुम्हार) के चक्रकी तरह घूमते रहे,तब बडा आश्चर्य हुआ॥३७॥ घोडे तो मर,गये, रथोंके बंधन शिथिल होगये, रथियोंके मन दुखी होगये और उस संग्राममें सारथी मूर्च्छित होगये ॥३८॥ तब जाम्बवतीके पुत्र साम्बने दूसरे रथमें बैठकर बलसे धनुषको टंकारते दश बाणोंसे तो शक्रसखके धनुषको काट डाला ॥३९॥ और दो बाणोंसे सारथीको मार दिया, सौ बाणोंसे घोडोंको मार दिया और हजार बाणोंसे रथका चूर्ण कर डाला ॥४०॥ जब उसका धनुष कट गया, विरथ होगया, घोड़े मर गये, सारथि मर गया, तब मत्त हाथीपर चढकर क्रोधसे उसने त्रिशूल हाथमें लिया ॥४१॥ वह शूल शक्रसखने साम्बके हृदयमें मारा, उस शूलके मारे साम्ब कुछ व्याकुल होगया ॥ ४२ ॥

फिर शक्रसखने हाथीको प्रेरित किया, कज्जलगिरिके समान प्रभा वाले, चार योजन ऊँचा जिसका अंग, दो दो कोसके लम्बे जिसके दांत ॥ ४३ ॥ बडी चिक्कार करते, चार योजन लम्बी जिसकी तीन सूंडे, उनसे सांकलोंको तोडते ॥४४॥ हाथियोंको,वीरोंको रथोंको घोडोंको दांतोंसे, पांवोंसे, घायल करते, जैसे काल हो, यम हो, अथवा मृत्यु हो, ऐसे दीखते ॥४५॥ शत्रुके प्रेरित किये हुये ऐसे उस हाथीको आता देखकर, इधर उधर विचरता देखकर, उससे भयभीत हुई यदु सेना भागने लगी ॥ ४६ ॥ तब बलदेवजीके छोटे भाई गदने गदा लेकर वज्र जैसी गदासे कुम्भस्थलमें उस हाथीको मारा ॥४७॥उस गदाका मारा हुआ,फूट गया है कुम्भस्थल जिसका, ऐसा वह हाथी युद्धमें ऐसे जा पडा, जैसे कटे पंख का पर्वत, तब आश्चर्य हुआ ॥ ४८ ॥ उसके बाद जबतक शक्रसख क्रोधसे गदाको उठा ही रहा था कि तबतक गदने शक्रशखके हृदयमें गदा मारी ॥ ४९ ॥ उसके प्रहारसे

योजनेपादविक्षेपंकज्जलाद्रिसमप्रभम् ॥ चतुर्योजनमुच्चांगंयोजनार्द्धरदद्वयम् ॥४३॥महच्चीत्कारंकुर्वंतंत्रिशुण्डादण्डमण्डलैः ॥ शृंखलेपातयंतं तंचतुर्योजनविस्तृतैः ॥ ४४ ॥ गजान्वीरान्मर्दयंतंरथानश्वानितस्ततः ॥ दन्तैःपादैर्घातयंतंकालांतकयमोपमम् ॥४५॥ आगतंवीक्ष्यनागेंद्रं शत्रुणानोदितंपरम् ॥ विचरंतंमृधार्द्भीतायदुसेनाविदुद्रुवुः ॥ ४६ ॥ गदोगदांसमादायबलदेवानुजोबली ॥ जघानतद्गजंकुंभेगदयावज्रकल्पया ॥ ४७ ॥ तद्घातभिन्नकुम्भोहिगजोयुद्धेपपातह ॥ छिन्नपक्षोयथाशैलस्तदद्भुतमिवाभवत् ॥४८॥ अथशक्रसखोयावद्गदांजग्राहरोषतः॥तावत्त ताडगदयागदोशक्रसखंहृदि ॥४९॥ तेनघातेनसगजोपतितोमूर्च्छितोभवत् ॥ पुनरुत्थायसगदांभुजाभ्यांजगृहेमृधे ॥५०॥ गदशक्रसखौयुद्धे युयुधातेपरस्परम् ॥ रंगेमल्लाविववनेवन्यौतौवारणाविव ॥ ५१ ॥ भुजाभ्यांतंसमुत्थाप्यबलदेवानुजोबली ॥ चिक्षेपतत्पुरेवीरंबलात्तंशतयो-जनम् ॥ ५२ ॥ तदाजयजयारावोयदुसैन्येबभूवह ॥ जयदुन्दुभयोनेदुःप्रशशंसुर्मुहुर्जनाः ॥५३॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेशक्रसखयुद्धंनामसप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥ नारदउवाच ॥ स्वपुरेपतितोमूर्च्छांगतःशक्रसखोभृशम् ॥ उत्तस्थौचक्षणं तत्रकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥ १ ॥ अथकार्ष्णिपरंब्रह्मज्ञात्वाशक्रसखस्त्वरन् ॥ स्वसकाशाद्बलिंनीत्वायदूनांचबलंययौ ॥ २ ॥

गज और गदा सहित मूर्च्छित होकर गिर पडा, फिर उठकर दोनों हाथोंसे गदाको लिया॥५०॥तब वीर शक्रसख और गद ये दोनों ऐसे युद्ध करने लगे जैसे रंगभूमिमें मल्ल और वनमें हाथी ॥ ५१ ॥ तब बलदेवके छोटे भाई गदने भुजाओंसे वीर शक्रसखको उठाकर बडे बलसे सौ योजनपर उसके पुरमें फेंक दिया ॥ ५२ ॥ तब सेनामें जय जय शब्द हुआ, जन बार बार प्रशंसा करने लगे, और नगाडे बजने लगे, ॥ ५३ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डे भाषाटीकायां शक्रसख युद्धं नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४७॥ नारदजी कहते हैं कि अपने पुरमें जाकर गिरा शक्रसख मूर्च्छित हो गया, कुछ व्याकुल मन हुआ वह फिर क्षणभरमें ही उठ खडा हुआ॥ १ ॥ तब जल्दी करता हुआ शक्रसख प्रद्युम्नको परब्रह्म जानकर अपने घरसे भेंट लेकर यादवोंकी सेनामें आया ॥ २ ॥

ऐरावतके कुलके तीन २ सूंडोंके चार २ दांतोंके, श्वेत वर्णके मद बहाते हजारों हाथी लेकर ॥ ३ ॥ और हिमालय पर्वतके उत्पन्न हुये आठ २ कोसके देहवाले, पर्वत जैसे करोडों उन्मत्त हाथी उत्तम दिग्गजों जैसे लेकर ॥४॥ दिव्य मुखवाले, दिव्यगति वाले, ऐसे करोडों हाथी और सौ करोड सुनहरे रथ लेकर ॥ ५ ॥ दो दो योजनके दश हजार विमान लेकर हजार कल्पवृक्ष और एक लाख कामधेनु गौएँ लेकर ॥ ६ ॥ और हाथीदांतके स्तम्भोंवाली सुवर्ण रत्नोंसे जडे चरणोंवाली, मोतियोंकी झालरके चंदोहा, रेशमी कलाबूतके डोरोंसे कसे जिनमें मोतियोंके झब्बे तारोंकी तरह चमक रहे हैं ॥ ७ ॥ चमेलीके इत्रसे छिडकी हुई, दूधके फेन (झाग) जैसे बिछौने लग रहे जिनमें, सुन्दर गद्दे,तकिया लगे हैं जिनमें, ऐसी करोडों सेजें लेकर ॥८॥ विचित्र चंदोहे, करोडों पर्दे, कोमल स्पर्श वाले अनेक रंगके आसन ॥ ९ ॥ विश्वकर्माके बनाये हुये बडे २ तकिये, हजारों रत्नजडित मोतियोंके

ऐरावतकुलेभाश्चत्रिशुण्डादंडदंतिनः ॥ चतुर्दंताःश्वेतवर्णाःसहस्राणिमदच्युतः ॥३॥ हेमाद्रिप्रभवानागायोजनद्वयविग्रहाः॥कोटिशःपर्वताका-
राउन्मत्तादिग्गजाइव॥४॥दिव्यस्यादिव्यगतयःकोटिशःकोटिशोनृप।शतार्बुदारथादिव्याःशातकौंभमयाःपराः॥५॥अयुतानिविमानानांयोजन
द्वयशालिनाम ॥ नियुतंकामधेनूनांपारिजातसहस्रकम् ॥६॥ करिदंतखचित्स्तंभहेमरत्नखचितपदाः ॥ मुक्तास्तडागसंवृद्धागुणयंत्रस्फुरत्प्रभा
॥ ७ ॥ मल्लिकामकरंदार्द्राःशिरीषकुसुमाकुलाः ॥ पयःफेननिभाःशय्याःकोटिशःसोपबर्हणाः ॥ ८ ॥ वितानानिविचित्राणिभित्तिवस्त्राणि
कोटिशः ॥ आसनानिमृदुस्पर्शचित्रवर्णानिसर्वशः ॥ ९ ॥ दीर्घाणिचोपबर्हाणिविश्वकर्मकृतानिच ॥ मुक्तास्तबकहेमाद्यैःखचितानिसहस्रशः
॥ १० ॥ सहस्रशोजवनिकाःशिबिकाश्चैवकोटिशः ॥ छत्राणांचामराणांचदिव्यसिंहासनैःसह ॥ ११ ॥ व्यजनानांतथाक्रोटीराज्यश्रीभूषणा-
निच ॥ पीयूषाणांद्रोणकोटिःसुधर्माचसभातथा ॥१२॥ एवंचसर्वतोभद्रपद्मानीतिसहस्रकम् ॥ हीरकाणांचहरितांमुक्तानांचतथैवहि ॥१३॥
गोमेदानांकोटिभारानीलकानांतथैवच ॥ आदित्यचन्द्रकांतीनांवैडूर्याणांसहस्रशः॥१४॥स्यमंतकमणीनांचकोटिभाराःसमागताः॥तथावैपद्म-
रागाणांभाराविद्धयर्बुदंनृप ॥ १५ ॥ जांबूनदसुवर्णानांहाटकानांतथैवच ॥ सुवर्णाद्रिसुवर्णानांकोटिभाराश्चकोटिशः ॥१६॥ राज्यंनवनिधी
न्सर्वान्दैवानांमैथिलेश्वर ॥ अष्टानांलोकपालानामाधिपत्याधिरक्षकः ॥ १७ ॥

गुच्छे उनको और ॥ १० ॥ हजारों चिक (पर्दे)करोडों पालकियाँ,करोडों छत्र,चमर,सिंहासन सहित ॥ ११ ॥ राज्यलक्ष्मीके करोडों पंखे और भूषण,करोडों अमृतके घडे, और सुधर्मासभा,॥ १२ ॥ ऐसे ही सर्वतोभद्र सहस्रदलके कमल और हीरे,पन्ने मोती ॥ १३ ॥ करोडों भार गोमेद और नीलक मणियोंके, हजारों भार सूर्यकांत,चन्द्रकान्त और वैडूर्य मणियोंके ॥ १४ ॥ करोडों भार स्यमन्तक मणियोंके, और वैसे ही एक अरब भार पद्मराग मणियोंके ॥ १५ ॥ करोड मण जाम्बूनद सुवर्ण और सुवर्णादि सुन्दर वर्णोंकी करोडों वस्तुएं लेकर ॥ १६ ॥ राज्यकी नौ निधियाँ देवताओंकी सब निधियाँ लेकर आठों लोकपालोंके अधिपतिने ॥ १७ ॥

उद्धवजीको साथ ले जाकर इतनी अद्भुत वस्तुओंकी भेंट देकर प्रद्युम्नको प्रणाम किया ॥१८॥ तब प्रद्युम्नने प्रसन्न होकर रत्नोंकी मालादी, और उसको राज्यपर बैठाया, हे राजन्! सन्तोंकी ऐसेही प्रकृति है ॥ १९ ॥ ऐसे शक्रसखको जीता, तब प्रद्युम्नको भेंट दी, उस भेंटको लेकर अरुणोदा नदीके किनारे पर प्रद्युम्नके शिविर लगे ॥ २० ॥ बहुमूल्य जडाऊ सुनहरी जिनमें ध्वजा, पताकाएँ, ऐसे चार सौ कोशमें शिविर लगे, जिनमें विजयकी ध्वजाएँ फहरा रही हैं॥२१॥ शिविर व्यूहकी बडी शोभा हुई जैसे लहरियोंसे समुद्रकी होती है, वहाँ आकाशसे हाथीपर चढे इन्द्र देवता आये ॥२२॥ दुन्दुभियोंकी ध्वनि युक्त सेना सहित उनको देखकर सब यादव वीरोंने शस्त्र समूहले लिये ॥२३॥ फिर इन्द्रको जानकर राजा बडे हर्षित हुये, तब देवताओंने प्रद्युम्नकी सभामें जाकर बतलाया कि, हे युवराज ! इन्द्र देवता आये हैं, तब इन्द्र प्रद्युम्नसे मिले और यह बोले ॥ २४ ॥ कि, हे राजन् ! हे महाबाहो ! तुम सुनो, तुम परावरके जाननेवालेमें श्रेष्ठ हो, एक हेमाद्रिके शिखरपर लीलावती नामकी पुरी है ॥२५॥ वहाँ एक विद्याधरोंका राजा सुकृति राज्य करता है, उसकी एक सुन्दरी

नीत्वोद्धवंशक्रसखोदत्त्वैवंबलिमद्भुतम् ॥ कौशल्यहेतवेकार्ष्णिप्रणनामकृतांजलिः ॥१८॥ तस्मैतुष्टःशंबरारिःप्रददौरत्नमालिकाम् ॥ संस्थाप्यराज्येतंराजन्नेषाहिप्रकृतिःसताम् ॥ १९ ॥ इत्थंशक्रसखंजित्वाप्रद्युम्नायबलिंददौ ॥ शिबिराणांसमूहोभूदरुणोदानदीमनु ॥२०॥ महाधनखचिद्भिश्चवितानैःशतयोजनम् ॥ पतत्पताकैर्दिव्याभैर्भून्यस्तविजयध्वजैः ॥२१॥ विरेजेशिबिरव्यूहोलहरीभिःपयोदधिः ॥ आकाशादागतंतत्रगजारूढंपुरंदरम् ॥ २२ ॥ ससैन्यंसहसाराजन्दुन्दुभिध्वनिसंयुतम् ॥ संवीक्ष्यवेगतोवीराजगृहुःशस्त्रसंहतिम् ॥२३॥ पुनरिंद्रंचतंज्ञात्वाबभूवुर्हर्षितानृपाः ॥ श्रीप्रद्युम्नंसभामध्येकथयन्मघवातदा ॥२४॥ शृणुराजन्महाबाहोत्वंपरावरवित्तमः ॥ लीलावतीनामपुरीशुभाहेमाद्रिसानुषु ॥ २५ ॥ विद्याधरेशःसुकृतीतत्रराज्यंकरोतिहि ॥ तत्कन्यासुंदरीनामशतचन्द्रनिभाशुभा ॥ २६॥ आगतादेवताःसर्वास्तस्याराजन्स्वयंवरे॥ लोकपालास्तथासर्वेसंप्राप्तादिव्यविग्रहाः ॥२७॥ यंदृष्ट्वामूर्च्छिताहंस्यांसमेभर्ताभविष्यति ॥ गिरेत्येवंप्रजल्पंतीसुन्दरंवरमिच्छती ॥ २८ ॥ तत्रापिगच्छसहसाभ्रातृभिःसहकौतुके ॥ स्वयंवरंपश्यवरंदेवलोकैश्चमंडितम् ॥ २९ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तच्छ्रुत्वाभगवान्कार्ष्णिर्यादवैर्भ्रातृभिःसह ॥ पुरंदरेणसहसापुरींलीलावतींययौ ॥ ३० ॥ विशालाजिरसंयुक्तेखचिद्रत्नमनोहरे ॥ चंदनागुरुकस्तूरीकुंकुमद्रवचर्चिते ॥ ३१ ॥ मुक्तायुक्तैस्तोरणैश्चवितानैःसुमहाधनैः ॥ जांबूनदासनैःसाक्षादिंद्रलोकइवापरे ॥ ३२ ॥

नामकी कन्या है, शतचन्द्रानना है, बडी शुभा है ॥ २६ ॥ हे राजन् ! उसके स्वयम्वरमें सब देवता आये हैं, और दिव्य शरीर हैं जिनके ऐसे सब लोकपाल आये हैं ॥ २७ ॥ वह यह कहती है कि, जिसकी सुन्दरता देखकर मैं मोहित होजाऊँगी, वह मेरा भर्ता होगा, ऐसे कहती है, सुन्दर वरकी इच्छा करती है ॥२८॥ वहाँ तुम भाइयोंको साथ लेकर चलो, देवलोकसे मण्डित स्वयंवरको देखो ॥२९॥ उसको सुनकर प्रद्युम्न भाइयोंको और यादवोंको साथ लेकर इन्द्रके साथ लीलावती पुरीको गये ॥३०॥ विशाल आंगन युक्त, रत्नोंसे जडे हुये मनोहर, चन्दन, केशर, कस्तूरी, कपूर, और अगर इनसे चर्चित (लिपे हुये) ॥३१॥ मोतियोंकी झालर जिनमें ऐसे बहुमूल्य चन्दोहा जिसमें, सुनहरे आसनोंसे दूसरे इन्द्र लोककी तरह ॥३२॥

हे नृप ! उस स्वयंवरमें दिव्य आसनपर सभीके देखते २ प्रद्युम्न जाकर बैठे, पर्वतके शिखरपर जैसे सिंह बैठता है ॥ ३३ ॥ वहाँ व्रजेश मुनि आये बैठे थे, देवता ११ रुद्रगण बैठे थे, १२ सूर्यगण, ४९ मरुद्गण बैठे थे. ८ वसु, ३ अग्नि, २ अश्विनीकुमार, ॥ ३४ ॥ यमराज, वरुण, चन्द्रमा, कुबेर, इन्द्र, सिद्ध विद्याधर, गन्धर्व, किन्नर ॥३५॥ और भी रत्नोंके गहने पहिनकर आये बहुतसे बैठे थे, उन सबने प्रद्युम्नको देखकर विवाहकी आशा छोड दी ॥३६॥ उसी समय वह सुन्दरी रत्नोंकी माला लेकर रतिको, रम्भाको, फीकी करती हुई सी निकली, वाणी, लक्ष्मी और इन्द्राणीसी शोभित हुई ॥३७॥ उसको देखकर सारी सभा मोहको प्राप्त हुई, हे मैथिल ! सब लोकके देखते वह वरको ढूँढने लगी जैसे बिजली घनको ढूँढती है ॥३८॥ उस समय दिव्य वस्त्र पहिने, कमलसे जिसके नेत्र, नरलोकमें एकही सुन्दर साक्षात् कामदेवके अंश सुन्दर प्रद्युम्नको देखकर वह सुन्दरी विद्याधरी मूर्च्छाको प्राप्त हो गई, बडी देरमें उसको होश आया ॥ ३९ ॥ फिर भले प्रकारसे उठी हर्षमें विह्वल हुई खडी होगई, फिर उसने वह रत्नोंकी माला प्रद्युम्नके गलेमें डालदी, तब सुकृती

तस्मिन्स्वयंवरेतस्थौप्रद्युम्नोदिव्यआसने ॥ गिरिशृंगेयथासिंहः सर्वेषांपश्यतांनृप ॥३३॥ व्रजेशामुनयस्तत्रदेवारुद्रगणास्तथा ॥ मरुतोरवयश्चैव वसवोह्यग्नयोश्विनौ ॥३४॥ यमोथवरुणःसोमोधनदःशक्रएवहि ॥ सिद्धाविद्याधराश्चैवगंधर्वाःकिन्नरास्तथा ॥३५॥ अन्येतमागताःसर्वेरत्ना-भरणभूषिताः ॥ जहुर्वैवाहिकीमाशांप्रद्युम्नंवीक्ष्यमैथिल ॥३६॥ सासुन्दरीतत्रसुरत्नमालयारतिंचरंभांक्षिपतीवनिर्गता ॥ वाणींरमांरूपवतीं पुलोमजांविडंबयंतीवबभौवरांगना ॥३७॥ यांवीक्ष्यसर्वेषुसदःसुसर्वतोमोहंप्रयातेषुतथैवमैथिल ॥ श्रीसर्वलोकस्यचपश्यतोवरंविचिन्वतीसाच पलेवचांबुदम् ॥३८॥ दिव्यांबरंपद्मदलायतेक्षणंप्रद्युम्नवीरंनरलोकसुन्दरम् ॥ समेत्यमूर्च्छांसमवापसुंदरीविद्याधरीसापुनरापसंज्ञाम् ॥३९॥ समुत्थितासात्वतहर्षविह्वलातस्थौसुमालांविनिधायतद्गले ॥ विद्याधरेशःसुकृतीचसुंदरींसुतांददौमैथिलशंबरारये ॥४०॥ नदत्सुतुर्य्येषुतदैवनि-र्जरारानसेहिरेवीक्ष्यविवाहमंगलम् ॥ तंसर्वतःसंरुरुधुःस्वयंवरंप्रचंडमेघाइवभास्करंपरम् ॥४१॥ क्रोधावृतांस्तानमरान्धनुर्धरान्मदोद्धतान्वीक्ष्य हरेःस्वयंवरम् ॥ श्रीकृष्णदत्तंसशरंधनुःस्वयंवरंगृहीत्वायदुभिजगर्जह ॥४२॥ तच्चापमुक्तैर्विशिखैःस्फुरत्प्रभैश्छिन्नायुधामैथिलशीर्णकंचुकाः ॥ विदुद्रुवुस्तेचदिशोदशामरानीहारमेघाइवसूर्यरश्मिभिः ॥ ४३ ॥ प्रद्युम्नोभगवान्साक्षादित्थंजित्वास्वयंवरम् ॥ विजित्येलावृतंखंडंभारतंगंतु मुद्यतः ॥ ४४ ॥ भ्रातृभिर्यदुभिःसैन्यैःसर्वमंत्रिजनैःसह ॥ आययौभारतंखंडंनादयञ्जयदुंदुभीन् ॥ ४५ ॥

विद्याधरने अपनी सुन्दरी पुत्रीको प्रद्युम्नके लिये विवाह दिया ॥ ४० ॥ तभी तासे, तुरई, मृदंग, शंख बजने लगे, उस विवाह मंडलको देवता नहीं सह सके, तब देवताओंने चारों ओरसे स्वयंवरको घेर लिया, मेघ जैसे सूर्यको घेर लेते हैं ॥ ४१ ॥ धनुष चढाये हुये, क्रोधमें हुये, मदमें उद्धत देवताओंको देखकर श्रीकृष्णके दिये हुये धनुषको लेकर यादवोंके समूहमें गर्जा ॥४२॥ उसके धनुषमेंसे छूटे हुये चमकते बाणोंसे सब देवताओंके शस्त्र नष्ट होगये, उनके कवच, कुरते, दुपट्टे, कट गये और भयके मारे दशों दिशाओंमें भाग गये, सूर्योदयसे कुहरेके मेघ जैसे भाग जाते हैं ॥ ४३ ॥ ऐसे स्वयंवरको और इलावृतखण्डको जीतकर भरतखंडको आनेके लिये उद्यत हुये प्रद्युम्न भगवान् ॥४४॥ भाइयोंको, सेनाको, यादवोंको, सब मंत्रियोंको, साथ लेकर जीतके नगाडे बजाते हुये भरतखंडको आये ॥ ४५ ॥

जम्बूद्वीप विजयी बलवान् प्रद्युम्न अनेक देशोंको देखते आनर्त जो द्वारकाके देश हैं,उनमें आये ॥४६॥ प्रद्युम्नके भेजे बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ उद्धवने उग्रसेनकी सभामें जाकर उनको प्रणाम करके और सभामें बैठे श्रीकृष्ण बलदेवको नमस्कार करके॥४७॥प्रत्येक खण्डमें जो जो हुआ,वह सब कहा, जैसे समस्त जम्बूद्वीपकी विजय हुई, वह सब यथायोग्य उद्धवने वर्णन की ॥४८॥तब उग्रसेन श्रीकृष्ण बलदेवको साथ लेकर और वृद्ध जनोंको साथ लेकर प्रद्युम्नको लिवा लानेके लिये निकले॥४९॥बाजे बजते जारहे हैं, गीत गाये जा रहे हैं, वेदध्वनि होती जारही हैं,मोती फूल,और खील बरसती जारही हैं,अनेक मंगलके पाठ होते जारहे हैं॥५०॥ सजाये हुये हाथीको आगे करके सुवर्णके कलश भरकर उनपर पञ्चपल्लव रखकर,आगे चलते गन्धर्व गाते जारहे हैं,वेश्याएँ नृत्य करती जारही हैं,शंख दुन्दुभि,और वेणु आदि बाजे बजते जारहे हैं ॥५१॥सुवर्णके पात्रोंमें गन्ध, पुष्प, धूपदीप,हरे हरे जौके अंकुर रखकर,ऐसे माङ्गलिक प्रकारसे उग्रसेन प्रद्युम्नके सामने आये॥५२॥तब तो यादवों तथा अपने भाइयों सहित प्रद्युम्नने उग्रसेनके सामने खड्ग रखकर हाथ जोडकर प्रणाम किया॥५३॥

पश्यन्देशाननेकांश्चजंबूद्वीपजयोबली ॥ आनर्तान्द्वारकादेशान्प्राप्तोभूत्सहरेःसुतः ॥४६॥ प्रद्युम्नप्रेषितःसाक्षादुद्धवोबुद्धिसत्तमः॥ प्रणनामोग्रसेनंतंसभायांश्रीहरिंबली ॥४७॥ वर्षेवर्षेपियज्जातंजंबुद्वीपजयंतथा ॥ तत्सर्वंह्यियथायोग्यंकथयामासचोद्धवः ॥ ४८ ॥ श्रीकृष्णबलदेवाभ्यां सर्वैर्वृद्धजनैःसह ॥ प्रद्युम्नंतंसमानेतुमुग्रसेनोविनिर्गतः ॥ ४९ ॥ गीतवादित्रघोषेणब्रह्मघोषेणभूयसा ॥ मुक्तावर्षैर्लाजपुष्पैःपाठारावैःसुमंगलैः ॥५०॥ वारणेंद्रंपुरस्कृत्यसौवर्णैःकलशैर्नृप ॥ गंधर्वैर्वारमुख्याभिःशंखदुंदुभिवेणुभिः ॥५१॥ गंधाक्षतैर्हैमपात्रैःपुष्पधूपैर्यवांकुरैः ॥ उग्रसेनःशंबरारेःसंमुखंचाजगामह ॥ ५२ ॥ खड्गंनीत्वोग्रसेनस्यपुरोधृत्वाकृतांजलिः ॥ ननामकार्ष्णिर्यदुभिर्भ्रातृभिःसहमैथिल ॥५३॥ श्रीकृष्णंसबलंनत्वासर्वान्वृद्धान्प्रणम्यच ॥ गर्गाचार्यंननामाशुप्रद्युम्नोमीनकेतनः ॥५४॥ सश्लाघ्याभ्यर्च्यविधिवद्ब्राह्मणैर्वेदसूक्तिभिः ॥ आरोप्यवारणेकार्ष्णिमुग्रसेनःपुराययौ ॥५५॥ मंगलंद्वारकायांचसर्वत्राभूद्गृहेगृहे ॥ इत्थंनृपतेकथितंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥५६॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खंडेनारदबहुलाश्वसंवादेप्रद्युम्नद्वारकागमनंनामाष्टचत्वारिंशोऽध्यायः॥४८॥ बहुलाश्व उवाच ॥ कथंचकारविधिवद्राजसूयाध्वरं नृपः ॥ एतन्मेब्रूहिविप्रेन्द्रत्वंपरावरवित्तमः ॥ १ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ अथोग्रसेनोनृपतिःसर्वधर्मभृतांवरः ॥ श्रीकृष्णेनसहायेनक्रतुराजंचकारह ॥ २ ॥ गर्गाद्यदुकुलाचार्य्यान्मुहूर्तंबोध्ययत्नतः ॥ बंधुभ्यःप्रददौराजन्सुहृदोपिनिमंत्रयन् ॥ ३ ॥

श्रीकृष्णको बलदेवको और सब वृद्ध यादवोंको नमस्कार करके प्रद्युम्नने गर्गाचार्यको प्रणाम किया ॥५४॥ तब उग्रसेन प्रद्युम्नकी बडी प्रशंसा करके विधिपूर्वक ब्राह्मणोंकी वेद स्तुतिसे पूजन करके प्रद्युम्नको हथिनी पर बैठाकर द्वारकामें लाये ॥५५॥ तब द्वारकामें घर घरमें सर्वत्र मंगल हुये, हे नृपते ! यह प्रद्युम्नकी विजय मैंने कही, अब बताओ तुम और क्या सुनना चाहते हो॥५६॥इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डे भाषाटीकायां प्रद्युम्नद्वारकागमनं नामाष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४८॥ तब बहुलाश्व राजाने पूछा कि, हे विप्रेन्द्र ! आप परावरके जाननेवाले हो, इसलिये राजा उग्रसेनने किस प्रकारसे राजसूय यज्ञ किया, वह मुझको कहिये ॥१॥ तब नारदजी बोले कि, इसके बाद सब धर्मधारियोंमें श्रेष्ठ उग्रसेनने श्रीकृष्णकी सहायतासे राजसूय यज्ञ किया ॥ २ ॥ यदुकुलके आचार्य गर्गाचार्यसे यत्नसे मुहूर्त पूछकर अपने, भाई, बन्धु और इष्ट मित्रोंको निमन्त्रण दिया ॥ ३ ॥

बडी भक्तिसे ऋषि, मुनि और ब्राह्मणोंको बुलाया, तब अपने शिष्योंको, पुत्रोंको साथ लेकर सबही ऋषि आये ॥४॥ वेद व्यास आये, साक्षात् शुकदेव आये, और पराशर, मैत्रेय,
पैल, सुमन्तु, दुर्वासा, वैशम्पायन ये सब आये ॥५॥ जैमिनि, भार्गव, परशुराम, दत्तात्रेय, असित, अंगिरा, वामदेव, अत्रि, वशिष्ठ, कण्व ॥६॥ विश्वामित्र, शतानंद, भारद्वाज, गौतम,
कपिल, सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार, विभाण्ड, पतंजलि ये सब आये ॥७॥ द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, प्राड्विपाक, शाण्डिल्य, और और भी मुनिगण शिष्योंसहित आये ॥८॥
ब्रह्माजी, महादेव, इन्द्र, देवता, रुद्रगण, आदित्य, सब मरुद्गण, वसु, अग्नि, अश्विनीकुमार ॥ ९ ॥ यमराज, वरुण, कुबेर, चन्द्र, गणेश, सिद्ध, विद्याधर, गन्धर्व, किन्नर, आये
॥ १० ॥ गन्धर्वी, विद्याधरी, अप्सराएं आईं, वेताल, दानव, दैत्य, प्रह्लाद, बलि समेत ॥ ११ ॥ भयंकर राक्षसोंके साथ लंकेश विभीषण, सब बन्दरोंके साथ वायु नन्दन हनू-

भक्त्यापरमयाहूताऋषयोमुनयोद्विजाः॥ आजग्मुर्द्वारकांसर्वैंपुत्रशिष्यसमावृताः॥४॥ वेदव्यासःशुकःसाक्षान्मैत्रेयोथपराशरः ॥ पैलस्सुमंतु
दुर्वासावैशंपायनइत्यपि ॥ ५ ॥ जैमिनिर्भार्गवोरामोदत्तात्रेयोसितोमुनिः ॥ अंगिरावामदेवोत्रिर्वसिष्ठःकण्वएवच ॥ ६ ॥ विश्वामित्रःशतानं-
दोभारद्वाजोथगौतमः ॥ कपिलःसनकाद्याश्चविभांडश्चपतंजलिः ॥ ७ ॥ द्रोणःकृपःप्राड्विपाकःशांडिल्योमुनिसत्तमः॥अन्येचमुनयोराजन्स-
शिष्याश्चसमागताः ॥ ८ ॥ ब्रह्माशिवोजंभभेदीदेवारुद्रगणस्तथा ॥ आदित्यामरुतःसर्ववसवोह्यग्नयोश्विनौ ॥ ९ ॥ यमोथवरुणःसोकोध-
नदोगणनायकः ॥ सिद्धविद्याधराश्चैवगंधर्वाःकिन्नरादयः॥१०॥ गंधर्व्योप्सरसःसर्वाविद्याधर्य्यःसमागताः॥वेतालादानवादैत्याःप्रह्लादोबलि-
नासह॥११॥रक्षोभिर्भीषणैःसार्द्धलंकाधीशोविभीषणः॥सर्वैश्चवानरैःसार्द्धहनूमान्वायुनंदनः॥१२॥ऋक्षैश्चदंष्ट्रिभिःसार्द्धंजांबवानृक्षराड्बली॥
सर्वैश्चपक्षिभिसार्द्धंगरुडःपक्षिराड्बली ॥ १३ ॥ सर्वैःसरीसृपैःसार्द्धंवासुकिर्नागराड्बली ॥ गोरूपधारिणीपृथ्वीसर्वाभिःकामधेनुभिः ॥१४॥
सर्वैःशैलैर्मूर्तिमद्भिःसुमेरुश्चहिमाचलः ॥ गुल्मवृक्षलताभिश्चवटःसाक्षात्प्रयागराट् ॥१५॥ महानदीभिःसहिताश्रीगंगायमुनानदी॥पारावाराः
सप्ततथारत्नोपायनसंयुताः॥ १६ ॥ आजग्मुरुग्रसेनस्यराजसूयस्यचाध्वरे ॥ सप्तस्वरास्त्रयोग्रामानवारण्यानवोषराः ॥१७॥ चतुर्दशैवगुह्या-
निविख्यातानिमहीतले ॥ तीर्थराजःप्रयागश्चपुष्करंबद्रिकाश्रमः ॥ १८ ॥

मान् आये ॥ १२ ॥ भालुओंके साथ जाम्बवान् आया, और भी दंष्ट्री आये, सब पक्षियोंके साथ पक्षियोंके राजा गरुडजी आये ॥१३॥ सब सर्पोंको साथ लिये नागराज वासुकि
आये, सब कामधेनुओंके साथ गौ रूपधारिणी पृथ्वी आई ॥१४॥ सब पर्वतोंको लिये सुमेरु और हिमालय आये, वृक्ष, गुल्म, लताओंके साथ अक्षयवट आया॥१५॥सब नदियोंको
साथ लिये गंगा, यमुना आईं, रत्न लेकर सातों समुद्र आये ॥१६॥ राजाओंके सूर्य उग्रसेनके यज्ञमें आये, सातों स्वर, तीनों ग्राम, नौ अरण्य, नौ ऊपर ॥१७॥ चौदह गुह्य जो
पृथ्वीमें विख्यात हैं, तीर्थराज प्रयाग, पुष्कर, बदरिकाश्रम ॥ १८ ॥

सिद्धाश्रम, विनशनकुण्ड,सव सरोवरों सहित,और सब आश्रमों व उपवनों सहित दण्डकारण्यादिक वन आये ॥१९॥ सब विमल क्षेत्र आये,गिरिराज गोवर्धन पर्वत व्रजसे हरिके पास
आया ॥२०॥ व्रजजनों सहित,कुण्ड सरोवर सहित वृन्दावन आया,गोपिकेश्वरी कीर्तिरानी और यशोदारानी गोपिकाओंके साथ आईं ॥२१ ॥करोडों सखियोंको साथ लिये पाल-
कीमें बैठी श्रीराधिका आईं, गोपियोंके सौ यूथ द्वारकामें आये ॥२२॥ उनका जहाँ २ वास हुआ, वहाँ गोपीभूमि हो गई, उनके अंगरागसे गोपीचन्दन हुआ, ॥ २३ ॥ गोपी
चन्दनसे लिपे शरीरवाला मनुष्य, नारायणका रूप होता है, और चारों वर्ण भी उग्रसेनके यज्ञमें आये ॥२४॥ बुद्धिचक्षु (अंधा धृतराष्ट्र, कलिरूप दुर्योधन, शाल्व, भीष्म, कर्ण
कुन्तीके पुत्र युधिष्ठिर ॥ २५ ॥ भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, और भी दूसरे दमघोष, वृद्धशर्मा, जयसेन, महानृप, ये भी सब आये ॥ २६ ॥ धृष्टकेतु,भीष्मक,नाग्नजित, कोशले-

सिद्धाश्रमोविनशनंकुंडैः सर्वैः सरोवरैः॥ वनानिदंडकादीनिसर्वैश्चोपवनैः सह ॥ १९ ॥ क्षेत्रैःसमग्रैर्विमलैरेतेतत्रसमाययुः॥ श्रीमद्गोवर्द्धनोनाम
गिरिराजोव्रजाद्धरिम्॥२०॥वृंदावनंव्रजवनैःसरःकुंडःसमाययौ॥ कीर्तिर्यशोमतिःसाक्षाद्गोपीभिर्गोपिकेश्वरी॥२१॥ श्रीराधाशिबिकारूढासखी
संघैश्चकोटिभिः ॥ शतयूथश्चगोपीनांद्वारकांप्रययौमुदा ॥२२॥ तासांवासोयत्रगोपीभूमिर्यत्रसाभवत्॥तदंगरागसंजातंगोपीचंदनमेवहि॥२३॥
गोपीचंदनलिप्तांगोनरोनारायणोभवेत् ॥ चतुर्वर्णास्तथासर्वेआजग्मुस्तस्यचाध्वरे ॥२४॥ धृतराष्ट्रोबुद्धिचक्षुःसाक्षाद्दुर्योधनःकलिः ॥ शाल्वो
भीष्मश्चकर्णश्चकुंतीपुत्रोयुधिष्ठिरः ॥ २५ ॥ भीमोर्जुनोथलकुलःसहदेवस्तथापरे ॥ दमघोषोवृद्धशर्माजयसेनोमहानृपः॥२६॥ धृष्टकेतुर्भीष्म-
कश्चनाग्नजित्कोशलेश्वरः ॥ बृहत्सेनोधृतिःसाक्षान्मैथिलेशःपितामहः ॥२७॥ अन्येपितत्रराजानःसुहृत्संबंधिबान्धवाः॥सहस्त्रीभिस्तथापौत्रैः
पुत्रैराजग्मुरध्वरम् ॥२८॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादेस्वजननिमंत्रणंनामैकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥
॥श्रीनारदउवाच ॥ अर्थसिद्धेरिवद्वारेरैवताद्रिसमुद्रयोः ॥ मध्येपिंडारकेक्षेत्रेयज्ञारंभोबभूवह॥१॥ पंचयोजनविस्तीर्णः कुंडोभूद्यस्यचाध्वरे ॥
योजनंब्रह्मकुंडस्तुगव्यूतिःपंचकुंडकाः ॥ २ ॥ मेखलागर्त्तविस्तारवेदिभिर्निर्मिताःशुभाः ॥ सहस्रहस्तमुच्चांगोयज्ञस्तंभोबभौमहान् ॥ ३ ॥
पंचयोजनविस्तीर्णःसौवर्णोयज्ञमंडपः ॥ वितानतोरणैरेजेकदलीखंडमंडितः ॥ ४ ॥

श्वर,बृहत्सेन,धृति, मैथिलेश, पितामह, ॥ २७ ॥ और भी राजा, सुहृद्, संबंधी, बान्धव,स्त्रियों तथा पुत्र पौत्रों सहित यज्ञमें आये ॥ २८ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डे
भाषाटीकायां स्वजननिमन्त्रणं नामैकोन पंचशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥ नारदजी कहते हैं कि,मानों अर्थ सिद्धिके द्वारपर रैवत पर्वत और समुद्रके बीचमें पिण्डारक तीर्थमें यज्ञका
आरम्भ हुआ ॥ १ ॥ पांच योजनमें यज्ञका कुण्ड हुआ, एक योजनका ब्रह्म कुण्ड हुआ, और दो दो कोसके पांच कुण्ड हुये ॥ २ ॥ वे कुण्ड मेखलागर्तके विस्तारकी वेदियोसे
रचे गये, और हजार हाथ ऊँचा यज्ञस्तम्भ शोभित हुआ ॥ ३ ॥ पांच योजन विस्तारका सुनहरा यज्ञमण्डप बना, जो केलेके स्तम्भ चन्दोहा, और बन्दनवारोंसे शोभित था ॥४॥

भोज,वृष्णि,अंधक,मधु, शूरसेन, दशार्हक, और देवताओंके साथ राजा उग्रसेन यज्ञमें इन्द्रकी तरह शोभित हुये ॥ ५ ॥ यज्ञावतार परिपूर्णतम श्रीकृष्ण पुत्र पौत्रों सहित यज्ञमें ऐसे शोभित हुये,जैसे विभूतियोंसे परमात्मा ॥६॥ बहुत जिसमें सामग्रियाँ ऐसे उस राजसूय यज्ञमें गर्गाचार्यको गुरु करके यदुराजने दीक्षा ली ॥ ७ ॥ उस यज्ञमें दश लाख तो होता हुये, दश लाख दीक्षित हुये, पाँच लाख ऊध्वर्यु हुये और ऐसे ही उद्गाता हुये ॥ ८ ॥ हाथीकी सूंडकी बराबर घीकी धारा यज्ञमें गिरी, उस घीकी धारासे हे मैथिल ! अग्निको अजीर्ण हो गया, यह आश्चर्य हुआ ॥ ९ ॥ त्रिलोकीमें कोई जीव भूखा नहीं रहा,समस्त देवता सोमसे अजीर्ण को प्राप्त हो गये ॥ १० ॥ धर्मपत्नी रुचिमतीके साथ यदुराज उग्रसेनने पिंडारक तीर्थमें यज्ञान्त स्नान किया ॥ ११ ॥ व्यासादिक मुनियोंने विधिपूर्वक वेदसूक्तियोंसे स्नान कराया, जैसे दक्षिणाके साथ यज्ञ वैसे रुचिमतीके साथ उग्रसेन शोभित हुये

भोजवृष्ण्यंधकमधुशूरसेनदशार्हकैः ॥ देवैश्चसहितोराजाबभौशक्रइवाध्वरे ॥५॥ यज्ञावतारःश्रीकृष्णःपरिपूर्णतमोध्वरे ॥ बभौपुत्रैश्चपौत्रैश्चपर-
मात्मेवभूतिभिः ॥ ६ ॥ महासंभृतसंभारेराजसूयेध्वरेवरे ॥ गर्गाचार्यंगुरुंकृत्वायदुराजोहिदीक्षितः ॥७॥ होतारोदशलक्षाणिदशलक्षाणिदी-
क्षिताः ॥ अध्वर्य्यवःपंचलक्षमुद्गातारस्तथापरे ॥८॥ हस्तिशुंडासमाधाराभुक्ताज्यस्यहुताशनः ॥ अजीर्णप्रापतद्यज्ञेचित्रंविबुधमैथिल ॥९॥
केपिजीवास्त्रिलोक्यांतुनबभूवुर्बुभुक्षिताः ॥ सर्वेदेवास्तुसोमेनह्यजीर्णत्वमुपागताः ॥१०॥ रुचिमत्याधर्मपत्न्योग्रसेनोयदुराड्बली ॥ अध्वराव-
भृथस्नानंतीर्थेपिण्डारकेकरोत् ॥ ११ ॥ व्यासाद्यैर्मुनिभिःस्नातोविधिवद्वेदसूक्तिभिः ॥ यथादक्षिणयायज्ञोरुचिमत्याबभौनृपः ॥१२॥ देवदुंदु-
भयोनेदुर्नरदुंदुभयस्तदा॥उग्रसेनोपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे॥१३॥गजानांहेमभाराणांनियुतानिचतुर्दश ॥ शतार्बुदंहयानांतुयज्ञांतेदक्षिणांपराम्
॥१४॥ कोटिशोनवरत्नानांमहाहारांबरैःसह ॥ गर्गाचार्यायमुनयेगृहोपस्करसंयुताम् ॥१५॥ उग्रसेनोददौराजायादवेंद्रोमहामनाः ॥ गजानांतत्र
साहस्रंहयानामयुतंतथा॥१६॥विंशद्भारंसुवर्णानांब्राह्मणेददौ ॥ मरुत्तस्यमहायज्ञेत्यक्तपात्रायथाद्विजाः ॥१७॥ तथोग्रसेनस्यक्रतौसंतुष्टाहर्षि-
तागताः॥सन्तुष्टादेवताःसर्वाःप्राप्तभागादिवंगताः॥१८॥भूरिद्रव्याबंदिनश्चजयारावागृहंगताः॥रक्षोदैत्यावानराश्चदंष्ट्रिणःपक्षिणस्तथा॥१९॥

॥ १२ ॥ देवताओंकी और मनुष्योंकी दुन्दुभियाँ बजीं,, उग्रसेनके ऊपर देवताओंने पुष्पोंकी वर्षा की ॥ १३ ॥ उग्रसेनने सोनेकी मालाएं पहिना कर चौदह लाख हाथी दान किये, सौ करोड घोडोंकी यज्ञान्तमें दक्षिणा दी ॥ १४ ॥ करोडों नवरत्नोंकी माला, हार वस्त्र, दिये, गर्गाचार्य मुनिको सब गृह सामग्री सहित दक्षिणा ॥ १५ ॥ महामना उग्रसेनने दी, एक हजार हाथी, दश हजार घोडे और बीस भार स्वर्णके, एक २ ब्राह्मणको दिये ॥१६॥ जैसे मरुत्त राजाके यज्ञमें ब्राह्मणोंसे स्वर्ण नहीं चला, तब छोड छोडकर चले गये,वैसी ही गति उग्रसेनके यज्ञमें हुई ॥ १७ ॥ वैसे ही उग्रसेनके यज्ञमें सन्तुष्ट होकर हर्षित होकर गये, और देवता भी सब सन्तुष्ट हुये अपना भाग लेकर स्वर्गको गये ॥१८॥ और वन्दीजन भी जय जय शब्द बोलते अपने २ घरोंको गये, राक्षस, दैत्य, बन्दर, रीछ, वैसे ही दाढवाले और पक्षी प्रसन्न होकर गये ॥ १९ ॥

नागभी प्रसन्न होकर अपने २ घरोंको गये, गौ, पर्वत, वृक्ष, नदी, तीर्थ, समुद्र, ॥ २० ॥ सब अपना भाग प्राप्त कर करके प्रसन्न होकर अपने अपने घरोंको गये, जो राजा बुलाये थे, उनको बहुत भेंट दी ॥ २१ ॥ दान, मानसे सत्कार पाकर वे भी अपने अपने घरोंको गये, नन्दादिक गोपोंकी श्रीकृष्णने बहुत पूजाकी ॥ २२ ॥ प्रेमसे, दानसे, बडे हर्षित होकर वे भी व्रजको गये, यह महायज्ञका मंगल मैंने तुमसे कहा ॥ २३ ॥ जहाँ श्रीकृष्ण विराजते हैं,वह यज्ञ क्यों नहीं सफल होगा, जो मनुष्य इस कथाको निरंतर सुनेंगे, अथवा पढेंगे ॥२४॥ उनको, धर्म अर्थ, काम और मोक्ष चारों पदार्थ मिलेंगे ॥ २५ ॥ पूर्ण, परेश, परमेश्वर, पुराण पुरुष तुमको पवित्र करें, जिनकी विचित्र कथाको जो मनुष्य सुनते हैं

॥राजानोये नागाःसन्तुष्टमनसःसर्वेस्वंस्वंगृहंययुः ॥ गावःशैलावृक्षसंघानद्यस्तीर्थाश्चसिन्धवः ॥ २० ॥ सन्तुष्टाःप्राप्तभागायेसर्वेस्वंस्वंगृहंययुः ॥ पूजितादानमानाभ्यांतेपिस्वंस्वंगृहंगताः ॥ नन्दाद्यागोपमुख्यायेश्रीकृष्णेनप्रपूजिताः ॥२२॥ हर्षिताःप्रेसमाहूताःपारिबर्हेणभूयसा ॥२१॥ मदानाभ्यांतेपिसर्वेव्रजंययुः॥एतत्तेकथितंराजन्महायज्ञस्यमण्डलम् ॥ २३ ॥ यत्रश्रीकृष्णचन्द्रोस्तितत्रकिंसफलंनहि ॥ येशृण्वंतिकथामेतां पठंतिसततंनराः ॥२४॥ धर्मश्चार्थश्चकामश्चमोक्षस्तेषांप्रजायते ॥२५॥ पूर्णःपरेशःपरमेश्वरःप्रभुःपुनातुयोयःपुरुषःपुराणः॥ शृण्वंति ये तस्य कथांविचित्रांकुर्वंतितीर्थस्वकुलंनरास्ते ॥२६॥ छलेनयज्ञस्यहरिःपरेश्वरोभारंविदेहेशभुवोवतारयत् ॥ योभूचतुर्व्यूहधरोयदोःकुलेतस्मैनमोनंत गुणायभूभृते ॥ २७ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविश्वजित्खण्डेनारदबहुलाश्वसंवादउग्रसेनमहोदयेराजसूययज्ञोत्सववर्णनंनामपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥ श्रीगोपालकृष्णार्पणमस्तु ॥

वे अपने कुलको पवित्र करते हैं ॥ २६॥ ब्रह्मादिकोंके ईश्वर विदेहेश,जिन्होंने यज्ञके छलसे पृथ्वीका भार उतारा,जो चतुर्व्यूह रूप धारण कर यदुकुलमें प्रगट हुये, उन अनन्तगुण पृथ्वीपतिको मेरा नमस्कार है ॥ २७ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डे भाषाटीकायां नारदबहुलाश्वसंवाद उग्रसेनमहोदये राजसूय यज्ञोत्सव वर्णनं नाम पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥

इदं पुस्तकं मुम्बय्यां श्रीकृष्णदासात्मजेन खेमराजेन स्वकीये
"श्रीवेङ्कटेश्वर" मुद्रणयन्त्रालयेऽङ्कयित्वा प्रकाशितम् ।
संवत् २०३०, शकाब्दाः १८९५.

इति गर्गसंहितायां विश्वजित्खण्डं भाषाटीकासमेतं समाप्तम्

अथ गर्गसंहितायां बलभद्रखण्डं भाषाटीकासहितं प्रारभ्यते

(अष्टमखण्डम्)

श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ बलभद्र खण्डः प्रारभ्यते ॥ बहुलाश्व राजा नारदजीसे पूछते हैं कि, हे ब्रह्मन्! आपके मुखसे मैंने विश्वजित्खण्ड सुना, जो परम अद्भुत मंगलरूप है, और अमृत खण्डसे भी मधुर (मीठा) है ॥१॥ परिपूर्ण तम श्रीकृष्ण महात्माकी सोलह हजार स्त्रियोंमें एक एकके दश दश पुत्र हुये ॥२॥ हे ब्रह्मन ! उनके पुत्र, पौत्र करोडों हुये, चाहे कोई कवि पृथ्वीके कण गिन ले, किन्तु हरिके कुलकी गणना नहीं कर सकता है,॥३॥ श्रीराम महात्मा बलदेवजीकी स्त्री रेवतीमें पुत्रोंका उदय कैसे नहीं हुआ, वह विस्तार पूर्वक कहिये ॥४॥ तब नारदजी बोले कि, हे राजन् ! तुमने कहा सो ठीक है, भगवान् संकर्षण अच्युताग्रज बलभद्र कामपाल रामकी कथा सर्वथा तुम्हारे सामने कहूँगा, ॥५॥ किसी समय बडे योगीन्द्र प्राड्विपाक नामके एक मुनीश्वर जो दुर्योधनके गुरु थे, वे हस्तिनापुरमें आये ॥ ६ ॥ तब दुर्योधनने उनकी विधिपूर्वक पूजा करके परम आदरसे उनको

श्रीगणेशायनमः ॥ अथ बलभद्रखण्डः प्रारभ्यते ॥ बहुलाश्वउवाच॥श्रुतंतवमुखाद्ब्रह्मन्मंगलंपरमाद्भुतम् ॥सुधाखंडात्परंमिष्टंखंडंविश्वजितं परम् ॥१॥ परिपूर्णतमस्यापिश्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥ षोडशस्त्रीसहस्राणांपुत्रादशदशाभवन् ॥२॥ तेषांपुत्राश्चपौत्राश्चबभूवुःकोटिशोमुने ॥ रजांसिभूमेर्गणयेन्नकविश्चेद्धरेःकुलम् ॥ ३ ॥ रेवत्यांबलदेवस्यरामस्यापिमहात्मनः ॥ पुत्रोदयःकथंनासीदेतन्मेब्रूहितत्त्वतः ॥४॥ श्रीनारद उवाच ॥ बाढमुक्तंभगवतःसंकर्षणस्याच्युताग्रजस्यबलभद्रस्यरामस्यकामपालस्यकथांसर्वथातवाग्रेकथयिष्यामि ॥ ५ ॥ अथकदाचित्प्राड्विपाकोनाममुनींद्रोदुर्योधनगुरुर्गजाह्वयंनामपुरमाजगाम ॥ ६ ॥ सुयोधनेनसंपूजितःपरमादरेणसोपचारेणमहार्हसिंहासनेस्थितोभूत् ॥७॥ तंप्रदक्षिणीकृत्यप्रणिपत्यकृतांजलिःपुरःस्थितोमनःसंदेहंस्मृत्वाधार्तराष्ट्रइतिहोवाच॥८॥ संकर्षणःसाक्षाद्बलभद्रःकिंकारणात्कस्माल्लोकात्केन प्रार्थितोभूलोकानाजगामयेनेदंपुरंतिर्यग्भूतमभवत्तस्यममगुरोर्गदाशिक्षाकरस्याहोतत्प्रभावंनितरांवदतात् ॥ ९ ॥ प्राड्विपाक उवाच ॥ युवराजकुरूद्वहयदुवरस्यप्रभावंशृणुयच्छ्रवणेपापहानिःपरंभूयात् ॥ १० ॥ अस्मिन्द्वापरांतेनृपव्याजदैत्यानीककोटिभिर्भूरिभाराक्रांताभूर्गौर्भूत्वास्वयम्भुवंशरणंजगाम ॥ ११ ॥ तदुपरिचारीसुरश्रेष्ठःससर्वसुरगणःसमृडोवैकुंठनाथंपुरस्कृत्यश्रीवामनवामपादांगुष्ठनखनिर्भिन्नोर्द्ध्वांडकटाहविवरमार्गेणबहिर्निर्गत्यकोटिशोंडनिचयंब्रह्मद्रवेसंप्रेक्षन्विरजातीरंप्राप्तवान् ॥ १२ ॥

बहुमूल्य सिंहासन पर बैठाया ॥७॥ उनकी परिक्रमा देकर प्रणाम करके हाथ जोडकर सामने खडा होकर मनके संदेहको स्मरण करके सावधान होकर दुर्योधन यह बोला ॥ ८ ॥ कि हे ब्रह्मन् ! संकर्षण साक्षात् बलभद्र किस कारणसे किस लोकसे किसकी प्रार्थनासे भूलोकमें आये, जिन्होंने यह हस्तिनापुर टेढा कर दिया,जिन्होंने मुझको गदायुद्ध सिखाया, उनका प्रभाव विस्तारपूर्वक मेरे सामने कहिये ॥९॥ तब प्राड्विपाक बोले कि, हे युवराज! कुरूद्वह यदुवरका प्रभाव सुनो, जिसके सुननेसे पापकी हानि होती है ॥१०॥इस द्वापर के अंतमें राजाओंके मिष (बहाने) से हुये करोडों दैत्योंके बडे भारसे दबी हुई पृथ्वी गौ होकर ब्रह्माजीकी शरण गई॥११॥तब सबके ऊपर रहनेवाले ब्रह्माजी सब देवताओंको और महादेवजीको साथ लेकर वैकुण्ठनाथको आगे करके वामनजीके बायें चरणके नखसे फूटे अंडकटाहके छेदमें होकर ब्रह्माण्डके बाहर निकलकर ब्रह्मद्रवमें करोडों ब्रह्माण्डोंको

देखते हुये विरजानदीके तीरपर पहुँचे ॥१२॥ उसके आगे असंख्य करोड सूर्योदयके जैसे तेजमण्डलको देखकर ब्रह्माजीने नमस्कार करके ध्यान करके गुण लक्षणोंसे देखे जायँ ऐसे हजार मुखके संकर्षणको देखा ॥१३॥ उनकी शरीर कुण्डलीकी गोदमें वृन्दावन, कालिन्दी, गोवर्धन, कुंज, निकुञ्ज, लता, वृक्षपुंज, गौ, गोप और गोपियोंसे संकुल सर्वलोक नमस्कृत, मनोहर गोलोकको देखकर उसमें प्राप्त होकर वहाँ भगवान्‌की आज्ञासे भगवान्‌के कुञ्जमें जाकर साक्षात्परिपूर्ण स्वयम्, अखिल ब्रह्माण्डपति, श्यामसुन्दर, राधाके पति पीताम्बरधारी, वनमाला पहिने हुये वंशी बजाते बजते नूपुर, करधनी, बाजू, हार, कौस्तुभ, कंकण, और अंगूठियोंकी चमकसे चारों ओरसे करोड बालसूर्य मण्डल जैसी प्रभावाले मुकुट और कुण्डलोंसे शोभित हैं गण्डस्थल जिनके, अलकावलियोंसे शोभायमान है, मुखकमल जिनका, ऐसे गोविन्दको नमस्कार करके ब्रह्माजीने पृथ्वीके भारका सम्पूर्ण वृत्तान्त वर्णन

अथाग्रेऽसंख्यकोटिमार्तंडज्योतिषांमंडलमवेक्ष्यधातानत्वातत्रानंतंसहस्रवदनंसंकर्षणंगुणलक्षणलक्षितंदेवैःसहददर्श ॥ १३ ॥ तद्भोगकुंडली-भूतोत्संगेवृंदारण्यकालिंदीगोवर्द्धनाद्रिकुंजनिकुञ्जलतातरुपुंजगोपालगोपीगोकुलसंकुलंललितंगोलोकंसर्वलोकनमस्कृतंसमेत्यतत्रनिजकुंजे-निजाज्ञांनीत्वान्तःप्राप्यसाक्षात्परिपूर्णतमंस्वयंश्रीकृष्णचंद्रमसंख्यब्रह्मांडपतिंश्यामलच्छविपीतांबरवनमालावंशीधरंक्वणत्कनकनूपुरकिंकिणीकटकांगदहारस्फुरत्कौस्तुभांगुलीयकैःसर्वतःपरिस्फुरत्कोटिबालमार्तंडमंडलंकिरीटकुंडलमंडितगंडस्थलमलकालिभिर्विभ्राजमानमुखारविंदंनमस्कृत्यविधिःसर्वैःसर्वंभूभारवृत्तांतंकथयांबभूव ॥१४॥ तेषांविज्ञप्तिंविज्ञायभूमिभारहरणार्थंभगवान्स्वजनान्सर्वदेवान्यथायथमाज्ञांदत्त्वाऽनंतंसहस्रवदनमितिहोवाच ॥१५॥ अंगपुरात्वमपिवसुदेवस्यदेवक्यांभूत्वारोहिण्युदराद्आविर्भवपश्चाद्देवक्याःपुत्रतामहंप्राप्स्यामि ॥१६॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांबलभद्रखंडेदुर्योधनप्राड्विपाकसंवादेबलदेवावतारकारणंनामप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ प्राड्विपाक उवाच ॥ इत्युक्तःसहस्रवदनोगंतुमभ्युदितःस्वसभायांस्थितोभूत्तदैवसिद्धचारणगन्धर्वाःसर्वतस्तंनतकंधराबभूवुः ॥१॥ अथसुगतिःसारथिर्दिव्यंरथंतालांकंसाश्वंसमानीयसम्मुखंस्थितोऽभूत् ॥ २ ॥ परसैन्यविदारणंमुसलंदैत्यदमनंहलंतेतूर्णंपुरस्तादुपतस्थतुःब्रह्ममयंनामवर्मचोपतस्थे ॥ ३ ॥

किया ॥१४॥ उनके निवेदनको सुनकर भूमिका भार उतारनेके लिये भगवान् सब देवताओंको यथायोग्य आज्ञा देकर हजार मुखवाले अनन्तसे यह बोले ॥ १५ ॥ हे अंग ! पहिले तुम भी वसुदेवकी स्त्री देवकीके उदरमें रहकर रोहिणीके उदरसे जन्म लो, फिर मैं भी देवकीका पुत्र होऊँगा ॥ १६ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां बलभद्रखण्डे भाषाटीकायां दुर्योधन प्राड्विपाक मुनि संवादे बलदेवावतारकारणंनाम प्रथमोऽध्यायः ॥१॥ प्राड्विपाक बोले कि, ऐसे जब बलदेवजीने कहा, तब सहस्रमुख शेषजी चलनेको उद्यत हुये अपनी सभामें बैठे तभी सिद्धचारण, गन्धर्व, सब ओरसे उनके हाथ जोडकर नीची गर्दन करके खडे हो गये ॥ १ ॥ फिर सुगति सारथी तालध्वज रथमें घोडे जोतकर सजाकर सामने खडा हो गया ॥ २ ॥ शत्रुसेनाका विदारण मूसल और दैत्यदमन हल दोनों सामने आकर खडे हो गये, ब्रह्ममय कवच भी सामने आकर खडा हो गया ॥ ३ ॥

वहाँ श्रीबलभद्रको सभामें सभीके देखते २ रमा वैकुण्ठसे आये हुये, पाणिनि और पतञ्जलि मुनियोंसे स्तुति किये जा रहे, हजार फणोंके ऊपर धारण किये हुये मुकुटोंसे सुशोभित हो रहे शेषजी,जिनपर सिद्ध और चारण चामर कर रहे हैं,वे बलभद्रजीकी स्तुति करके उनके विग्रह(शरीर)में लीन होगये॥४॥उसके बाद अजित वैकुण्ठसे अजैकपात्,अहिर्बुध्न्य,बहुरूप, महदादिक और घोर प्रेत विनायकोंके साथ सहस्र मुख शेषजी सभामें आकर अनन्तकी स्तुति करके, उन्हींमें लीन होगये ॥ ५ ॥ उसके बाद श्वेतद्वीपसे और शेष आये, कुमुद कुमुदाक्षादि श्रेष्ठ पार्षदोंसे सेवित, सहस्र फणोंमें धारण किये हुये मुकुटोंसे विराजमान श्वेत पर्वत जैसे,नीलाम्बरधारी,नीलकुन्तलके जैसी आभा है जिनकी,भयंकर है प्रभा जिनकी, वे भी सभीके देखते २ अनन्तमें लीन होगये ॥ ६ ॥ और शेष इलावृतखण्डसे हजारों करोड स्त्रियोंको साथ लेकर आये, वे स्त्रियाँ भवानीकी दासियाँ हैं, उनके सहित हजार

अथतत्रश्रीबलभद्रसभायांसर्वेषांपश्यतांरमावैकुंठात्समागतःपाणिनिपतंजलिभिर्मुनिभिःस्तूयमानःसहस्रफणमौलिविराजमानःसिद्धचारणचामरसंसेव्यमानःशेषस्तमनंतंसंकर्षणंस्तुत्वातद्विग्रहेसंलीनोभूत्॥४॥अथाजिद्वैकुंठात्समागतोजैकपादहिर्बुध्न्यबहुरूपमहदाभिःसंवेष्टितोघोरैःप्रेतविनायकैःसंवेष्टितःशेषःसहस्रवदनःसमागत्यसभायामनंतंस्तुत्वातस्मिन्संलीनोभूत् ॥ ५ ॥ अथश्वेतद्वीपात्समागतःकुमुदाक्षादिभिःपार्षदप्रवरैःसंसेव्यमानःसहस्रफणमौलिविराजमानःसिताचलाभोनीलांबरोनीलकुंतलाभोभीमाभःसर्वेषांपश्यतामनंतविग्रहेसोपिसंलीनोभूत्।६।अथ तदैवेलावृतखंडात्समागतस्त्रीगणार्बुदसहस्रैर्भवानीनाथैःसमावृतःशेषःसहस्रवदनमौलिमंडलमंडितःप्रस्फुरत्किरीटकटकांगदःसभामेत्यानंतविग्रहेसंप्रलीनोभूत् ॥७॥ अथपातालस्याधस्ताद्द्वात्रिंशद्योजनसहस्रांतरात्समागतोभगवतस्तामसीकलःसाक्षात्सहस्रवदनकिरीटमार्तंडमंडलामंडितोवेदव्यासपराशरसनकसनंदनसनातनसनत्कुमारनारदसांख्यायनपुलस्त्यबृहस्पतिमैत्रेयादिमहर्षिभिःसंशोभितोवासुकिमहाशंखश्वेतधनंजयधृतराष्ट्रकुहककालियतक्षककंबलाश्वतरदेवदत्तादिभिर्नागेंद्रैश्चामरपाणिभिःसंसेव्यमानोमृगमदागुरुकुंकुमचन्दनपंकावलिप्यमानाभिर्नागकन्याभिःसिद्धचारणगन्धर्वविद्याधरगणैरुपगीयमानोहाटकेश्वरत्रिपुरबलकालकेयकलिनिवातकवचैरनुयायिभिःपुरःसरैरुद्रैकादशव्यूहैर्नाभिकामधेनुवरुणैः पश्चात्प्रयायिभिर्वीणावेणुमृदंगतालदुन्दुभिध्वनिशब्दायमानःफणींद्रोनागेंद्रइवतूर्णगतिर्विराजतेयस्यैकफणेचेदंक्षितिमण्डलंसिद्धार्थइवलक्ष्यतेसोऽप्यागत्यमहानंतविग्रहेसंलीनोभूत् ॥ ८ ॥

मुखोंपर हजार मुकुट धारण किये, देदीप्यमान हैं किरीट, कुंडल, कडे करधनी, बाजू जिनके, वे भी अनन्त भगवान्में लीन हो गये ॥७॥ फिर पातालके बत्तीस हजार योजनपर नीचे जो तामसी कला शेष हैं,वे साक्षात् सहस्र मुखोंपर हजार सूर्य जैसे किरीटोंसे शोभित आये,वेद, व्यास,पराशर,सनक,सनन्दन,सनातन,सनत्कुमार, नारद, सांख्यायन, बृहस्पति मैत्रेयादि महर्षियोंसे शोभित, और वासुकि, महाशंख, श्वेत, धनंजय, धृतराष्ट्र, कुहक,कालीय,तक्षक, कम्बलाश्वर देवदत्त,धनंजय,इनसे चमर किये जा रहे, कस्तूरी, अगर, केसर, चन्दन इनसे नागकन्याओंने लीपा है अंग जिनका, उन कन्याओं सहित, सिद्ध, चारण, गन्धर्व, और विद्याधरोंसे गाया जा रहा है, यश जिनका, हाटकेश्वर महादेव

और कालकेय निवात कवच दैत्य ये पीछे चल रहे हैं जिनके, आगे ग्यारह रुद्रगण और पीछे कामधेनु और वरुण चल रहे हैं जिनके वीणा.वेणु,मृदंग, ताल, और दुन्दुभियोंकी, ध्वनिसे शब्दायमान फणीन्द्र,नागेन्द्रवत्,शीघ्रगति शोभित हो रहे हैं,जिनके एक फणपर समस्त पृथ्वीमंडल सरसों जैसा धरा है,वे भी शेप आकर संकर्पणके विग्रहमें लीन होगये ॥८॥ उस आश्चर्यको देखकर उस सभाके सब पार्पद उनको परिपूर्णतम जानकर विस्मित होकर नम्र होगये ॥९॥ उसके वाद अनन्त मुखवाले महा अनन्त संकपर्ण भगवान् सिद्ध पार्पदोंसे बोले ॥ १० ॥ कि मैं भूमिका भार उतारनेके लिये भूमिमें जाऊँगा, तुम भी यादवोंमें जन्म लो ॥ ११ ॥ हे प्रबल उद्भट सारथी ! तुम यहीं रहो, शोच मतकरो, जब युद्धार्थी मैं तुम्हारा स्मरण करूँगा तब तुम तालांक रथको लेकर मेरे पास आ जाओगे ॥१२॥ हे हल मुसले ! मैं जब जब याद करूँगा, तब तब तुम मेरे पास आ जाना॥१३॥

तच्चित्रंदृष्ट्वातत्सभापार्षदाःसर्वेतंपरिपूर्णतमंज्ञात्वावनताविस्मिताबभूवुः ॥ ९ ॥ अथानंतवदनोमहानंतःसंकर्पणोभगवान्पार्षदान्सिद्धानुवाच ॥१०॥ अहंभूमिभारहरणार्थंभुविगमिष्यामितस्माद्यूयंयादवेषुभविष्यथ ॥११॥ भोःप्रबलोद्भटसुमतेसारथेभवतात्रैवस्थीयतांशोकम्माकुरुता-द्यदायुद्धार्थीत्वत्स्मरणंकरिष्यामितदात्वंदिव्यंतालांकंरथंनीत्वामत्समीपमागमिष्यसि॥१२॥ हेहलमुसलेयदायदायुवयोःस्मरणंकरिष्यामित-दातदामत्पुरआविर्भूतेभवतम्॥१३॥भोवर्मंत्वमपिचाविर्भवहेमुनयःपाणिन्यादयोहेव्यासादयोहेकुमुदादयोहेकोटिशोरुद्राहेभवानीनाथहेएकाद-शरुद्राहेगंधर्वाहेवासुक्यादिनागेंद्राहेनिवातकवचाहेकामधेनोभूम्यांभरतखण्डेयदुकुलेऽवतरंतंमांयूयंसर्वेसर्वदाएत्यमद्दर्शनंकुरुत ॥ १४ ॥ प्राड्विपाकउवाच ॥ इत्याज्ञप्ताःसर्वेस्वंस्वंधामसमाजग्मुस्तेषुगतेषुनागकन्यायूथम्भगवाननन्तःप्राहयुष्माकमभिप्रायोमयाज्ञातस्तपसागो-पालानांगृहेषुजन्मानिप्राप्यमद्दर्शनंकुरुत ॥ १५ ॥ कदाचित्कलिंदनंदिनीकूलेविहारमाधुर्य्यैमूलेयुष्माभिःसहरासमण्डलंकरिष्यामियुष्माकं-मनोरथःसफलोभविष्यति ॥१६॥ अथनिवातकवचानांराजाकलिःस्वामिपादकृतमस्तकांजलिःप्रदत्तपुष्पावलिःश्रीभगवन्तंप्रत्युवाच ॥१७॥

हे कवच ! तुम भी जब चाहूँ तब प्रकट होना, हे मुनियो ! पाणिन्यादय ! हे व्यासादय ! हे कुमुदादय ! हे करोडों रुद्रगण ! हे भवानीनाथ ! हे एकादश रुद्रो ! हे गन्धर्वों ! हे वासुक्यादि नागेन्द्रो ! हे निवात कवच ! हे वरुण ! हे कामधेनो ! भूमिमें भरतखंडमें यदुकुलमें अवतार ले रहा जो मैं, उसके दर्शन नित्य आ जाकर कर जाना ॥ १४ ॥ प्राड्विपाक कहते हैं, ऐसे सभीको जब आज्ञा दी,तब सब अपने २ धामको चले गये, जब वे सब चले गये, तब भगवान् अनन्त नाग कन्याओंके यूथसे बोले–तुम्हारा अभिप्राय मैंने जाना, तपसे गोपालोंके घरमें जन्म लेकर मेरे दर्शन करोगी ॥१५॥ कभी कालिंदीके कूलपर मधुर विहारोंके अनुकूल तुम्हारे संग रास करूँगा,तब तुम्हारा मनोरथ सफल होगा ॥१६॥ उसके वाद निवात कवचोंका राजा कालिस्वामीके चरणोंमें शिर रखकर पुष्पांजलि देकर भगवान्से बोला ॥ १७ ॥

हे भगवन् ! मैं क्या करूँ, मुझको आज्ञा करिये, जहाँ आप चलेंगे, वहाँ मुझकोभी ले चलिये, आपके वियोगमें मुझको बडा दुख होगा, हे भक्तवत्सल ! मुझको साथही ले चलिये ॥ १८ ॥ ऐसे जब भगवान् अनन्तकी प्रार्थना की, तब अपने भक्त कलि राजासे बोले–सुख पूर्वक तुम मेरे साथही चलो, तू भरत खण्डमें कौरवोंके कुलमें धृतराष्ट्रका पुत्र होकर दुर्योधन नामका चक्रवर्ती राजा होगा, मैं तेरी सहायता करूँगा, तुमको गदा युद्ध सिखाऊँगा ॥१९॥ ऐसे सुनकर कलिराजा प्रणाम करके अपने धामको चला गया, वही कलियुग तू पैदा हुआ है, विष्णुकी मायासे अपने स्वरूपको नहीं जानता है॥२०॥इति श्रीमद्गर्गसंहितायां बलभद्रखण्डे भाषाटीकायां प्राड्विपाक दुर्योधनसंवादे संकर्षणागमनतन्त्रं नामद्वितीयोऽध्यायः ॥२॥ प्राड्विपाक बोले–उसके बाद करोड शरदके चन्द्रमाओं जैसा प्रकाश जिसका वह नागलक्ष्मी बडे रथमें बैठी हुई करोड सखीमण्डलमें शोभिता अपने भर्ता अनन्त

अहंकिंकरिष्यामिमय्याज्ञांकुरुभगवन्यत्रत्वंगमिष्यसितत्राप्यहंगमिष्यामिहवावत्वद्वियोगेनमहान्खेदोभविष्यतिसहैवमांनयत्वंभक्तवत्सलोसि ॥१८॥एवंसंप्रार्थितोभगवाननन्तःकलिराजानंस्वभक्तंप्रसन्नःप्रत्युवाचसुखेनत्वंमत्सहैवागच्छभरतखण्डेकौरवेंद्राणांकुलेधृतराष्ट्रस्यपुत्रोभूत्वादुर्योधनोनामचक्रवर्तीभविष्यसित्वत्सहायमहंकरिष्यामिगदाशिक्षांदास्यामि ॥१९॥ इत्युक्तःकलिस्तंनमस्कृत्यस्वधामगतवान्सैषकलिस्त्वमेव जातोसिविष्णुमाययास्वात्मानंनस्मरसि ॥२०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांबलभद्रखण्डेप्राड्विपाकदुर्योधनसंवादेसंकर्षणागमनतंत्रंनामद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ प्राड्विपाकउवाच ॥ अथागताकोटिशरच्चंद्रमंडलप्रतीकाशानागलक्ष्मीर्महारथस्थासखीकोटिमण्डलमंडितासंकर्षणं महानंतंभर्तारंसभायांप्राह ॥ १ ॥ अहमपित्वयासहैवभगवन्भुवमागमिष्यामित्वद्वियोगातुराप्राणान्नधारयामि ॥ २ ॥ इतिबाष्पकण्ठींप्रियांसंप्रेक्ष्यभगवाननन्तःसर्वजगत्कारणकारणःसर्वभक्तदुःखनिवारणोमहेंद्रवारणइवभोगवारणइतिहोवाच॥३॥रंभोरुत्वंरेवतीविग्रहेसंलीनाभूत्वा भूलोकंभजतात्माशोकंकुरुतात् ॥ ४ ॥ तच्छ्रुत्वानागलक्ष्मीःप्रत्युवाचरेवतीकाकस्यसुताक्ववर्तमानानितरांवदैतत्तच्छ्रुत्वाभगवाननन्तःसस्मितःस्व प्रियांप्रत्युवाच ॥५॥ आदिसर्गेकश्यपस्यकद्रूसुतोह्यहंजातःश्रीकृष्णाज्ञयात्वखण्डंभूखंडमण्डलंगजराडिवचैकफणेकमंडलुमिवधृत्वा-सर्वतोधस्ताद्विराजमानोहंबभूव ॥ ६ ॥

संकर्षणसे सभामें यह वचन बोली ॥१॥ हे भगवन् ! आपके साथ पृथ्वीमें मैं भी चलूँगी, अन्यथा आपका वियोग होनेपर मैं प्राण नहीं धारण करूँगी ॥ २ ॥ ऐसे आंसुओंसे रुक गया है गला जिसका, उस प्रियाको देखकर अनंत भगवान् जगत्कारणके कारण, सब भक्तोंके दुख निवारक, इन्द्रके गजेन्द्र जैसा शरीर है जिनका, वे बोले ॥३॥ हे रंभोरू ! तुम रेवतीके शरीरमें लीन होकर भूलोकमें जाओ, शोच मत करो ॥४॥ यह सुनकर नागलक्ष्मी बोली–महाराज ! रेवती कौन है, किसकी पुत्री है, कहाँ पर है, सो कहिये, यह सुनकर भगवान् अनन्त हँसकर अपनी प्रियासे बोले ॥५॥ पहिले सर्गमें कश्यपकी स्त्री कद्रूमें मैंने जन्म लिया, और श्रीकृष्णकी आज्ञासे गजराजकी तरह एक फणपर समस्त भूमण्डलको धारण करके सबके नीचे स्थित हुआ ॥ ६ ॥

ऐसे जब मैं स्थित हुआ, तब चक्षुका पुत्र चाक्षुष मन्वन्तर, सप्त द्वीप खण्डमण्डलके मंडल पतियोंके अनवरत अभिवादनोंसे घिसे हैं चरणकमल जिसके, अपने बाहुबलसे खंडित किये हैं
शत्रु जिसने, ऐसा वह चाक्षुष भूमण्डलको शिक्षा देता हुआ, तीव्र आज्ञासे पृथ्वीका पालन करता हुआ, चक्रवर्ती हुआ ॥७॥ उस मनुके सुद्युम्नादि पुत्र हुये, और उसके यज्ञ कुंडसे एक
ज्योतिष्मती नामकी कन्या हुई॥८॥एक दिन स्नेहसे चाक्षुष पुत्रीसे पूछने लगा कि तुम कैसे वरको चाहती हो, यह मुझसे कहो, तब वह कन्या बोली कि, जो सबमें बलवान् हो, वह मेरा
पति हो॥९॥ऐसे सुनकर राजाने सबसे बलवान् जानकर इन्द्रको बुलाया, तब वह शीघ्रही आगया, तब राजा आगे खडे हुऐ इन्द्रको देखकर आदर सहित आसन देकर वह बोले ॥१०॥
कि, तुमसे भी अधिक बलवान् है कि नहीं ? वह मुझको सत्य कहो, झूठसे परे कोई पाप नहीं है, सत्यसे परे कोई धर्म नहीं है, क्योंकि पृथ्वी कहती है कि, मैं सबका बोझ सहन कर लेती

अथमयिस्थितेचक्षुषः पुत्रोऽतिबलश्चाक्षुषोनाममनुः सप्तद्वीपभूखंडमंडलेषुमंडलपतिभिर्घृष्टपादपुंडरीकः पुरंदरादिभिर्लंघितचंडशासनः प्रचंड-
दोर्दण्डविखंडितारिदोर्दण्डः सर्वगुणमंडितः सम्राड्बभूव॥७॥तस्यमनोः सुद्युम्नाद्याः पुत्राबभूवुःतस्ययज्ञकुंडसमुद्भवाकन्याज्योतिष्मतीजाता।८।
एकदास्नेहाच्चाक्षुषः पुत्रींपप्रच्छकीदृशंवरमिच्छसीतिवदसातदोवाचयः सर्वेषांबलवान्समेवरोभूयात् ॥ ९ ॥ तच्छ्रुत्वाराजाशक्रंबलवंतंज्ञात्वात-
माजुहावतदैवसद्यः समागतंवज्रिणंपुरःस्थितंसादरेणासनंदत्त्वामनुःप्राह॥ १०॥ त्वत्तःकोपिबलवान्वर्ततेनवातत्सत्यंवदनचेत्स्मृतिर्नहिसत्यात्प-
रोधर्मइतिहोवाचभूरियंसर्वंसोढुमलंमन्येऋतेलीकपरंनरम्॥ ११॥इंद्रउवाच॥अहंबलवान्नास्मिमत्तोबलवान्वायुरस्तियेनसहायेनकार्यंकारयिष्या-
मिइत्युक्त्वागतेशक्रेराजावायुमाजुहावाहचत्वत्तः कोपिबलवान्वर्ततेसत्यंवदतात्॥१२॥ वायुरुवाच ॥ मत्तोबलवंतःपर्वताःसंतिमद्वेगेननोड्डीय-
मानाइत्युक्त्वागतेवायौराजापर्वतानाजुहावाहचभवद्भ्यःकोपिकौबलवान्वर्ततेतत्सत्यंवदत ॥ १३ ॥ पर्वताःप्राहुरस्मद्धारणाद्भूखंडंबलवद्व-
र्ततेयत्रवयंस्थिताःस्मःपर्वतेषुगतेषुभूखंडमंडलंसमाहूयराजाप्राहत्वत्तःकोपिबलवान्वर्ततेनवासत्यंवद॥१४॥तच्छ्रुत्वाभूखंडउवाच॥मत्तो बल-
वान्संकर्षणोभगवान्वर्ततेसोयंसदानंतोनंतगुणार्णवआदिदेवोवासुदेवःसहस्रवदनोनागेंद्रइवभव्यवपुःकैलासइवशुक्लप्रकाशःकोटिसूर्यप्रतिभासः-
कोटिकंदर्पदर्पहारिलावण्येनविभ्राजमानःकमलपत्राक्षःकमलकर्णिकादिव्यविमलमालानिर्मलपरिमलपरिलोभितमधुकरनिकरसंगीयमानःसि-
द्धचारणगन्धर्वविद्याधरवरगणैरुपगीयमानःसुरासुरोरगमुनिगणैःसंध्यायमानःसर्वोपरिविराजमानआस्ते ॥ १५ ॥

हूँ, किन्तु झूंठ बोलनेवालेका बोझ नहीं सहा जाता है ॥११॥ तब इन्द्र बोला कि, मैं बलवान् नहीं हूँ, क्योंकि मुझसे अधिक बलवान् पवन है, मैं पवनके सहारेसे सब काम करता
हूँ, ऐसे कहकर जब इन्द्र चला गया, तब राजाने पवनको बुलाकर पूछा कि, तुमसे अधिक कोई और भी बलवान् है, अथवा नहीं ? सो सत्य कहो ॥१२॥ तब पवन बोला कि,
मुझसे तो बली पर्वत हैं मेरे उडाये नहीं उडते हैं, यह कहकर जब पवन चला गया, तब पर्वतोंको बुलाकर पूछा कि, तुमसे अधिक कोई पृथ्वीमें बलवान् है कि नहीं ? सत्य कहो
॥ १३ ॥ तब पर्वत बोले—हमसे बडा भूमण्डल है, जिसपर हम बैठे हैं, भूमंडलको बुलाकर पूछा कि, तुमसे कोई बडा है, अथवा नहीं ? यह सत्य कहो ॥ १४ ॥ तब भूमण्डल

बोला कि मुझसे बडे भगवान् संकर्षण हैं, वे सदा अनंत रूप हैं, अनंत गुणोंके समुद्र, आदि देव, सहस्त्र मुख, हाथी जैसी भव्य मूर्तिवाले, कैलास, जैसे सफेद, करोड सूर्यके समान प्रभावाले, कोटि कामके गर्वको हरनेवाले सौंदर्यसे प्रकाशमान, लोचन, कमल कलीकी दिव्य मालाकी निर्मल सुगन्धिके लोभी भ्रमरोंसे गान किये जारहे, सिद्ध, चारण और विद्याधरोंसे गान किया गया है, यश जिनका, सुर, असुर, मुनि और नागोंके गण जिनका ध्यान करते हैं, वे सर्वोपरि विराज मान हैं ॥ १५ ॥ जिनके एक शिरपर, पर्वत नदी, समुद्र, और वनोंसहित और करोडों जीवोंसे मंडित भूमण्डल रखा हुआ हम देखते हैं, जिनके नाम कीर्तनसे त्रिलोकीका मारनेवाला पापी भी मोक्षको प्राप्त होता है ॥ १६ ॥ ऐसे प्रभाववाले, सबसे बलवान्, कारणके कारण, सबके ईश्वर, पातालके नीचे बैठे हैं, उनसे अधिक कोई बलवान् नहीं है ॥ १७ ॥ महा अनन्त बोले कि, ऐसे कह-कर जब भूमंडल चला गया, तब चाक्षुष मनुकी ज्योतिष्मती कन्याने मेरे माधुर्य प्रभावको जानकर, पिताकी आज्ञा प्राप्त कर, विंध्याचलपर जा करके मेरी प्राप्तिके लिये एक

यस्यैकस्मिनन्मूर्ध्निसगिरिसरित्ससुद्रवनजीवकोटिमंडितंभूखंडमण्डलमहंदृश्येयन्नामानुकीर्तनात्रिलोक्यांत्रैलोक्यघात्यपिकैवल्यंप्राप्नोति।१६। एवंप्रभावोभगवान्सर्वतोबलवान्सर्वकारणकारणःसर्वेश्वरोदुरंतवीर्य्योमूलेरसायाःस्थितस्तस्मात्परःकोपिनास्ति ॥ १७ ॥ महानन्त उवाच॥ इत्युक्त्वागतेभूखण्डेचाक्षुषकन्याज्योतिष्मतीमममाधुर्यप्रभावंविज्ञायपित्राज्ञांगृहीत्वाविंध्याचलेमत्प्राप्त्यर्थंवर्षाणांलक्षाणिब्रह्मतपस्तेपे ॥ १८ ॥ ग्रीष्मेपंचाग्नितप्तावर्षासुसर्वासारिणीशिशिरआकण्ठमग्नाशीतोदकेभूत्वास्थंडिलशायिनीबभूव ॥१९॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांबलभद्रखण्डेज्योतिष्मत्युपाख्याननामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ श्रीमहानन्तउवाच ॥ अथज्योतिष्मतींशतचन्द्रप्रतीकाशांनवयौवनांसुन्दरींतपस्विनींवीक्ष्यशक्रयमधनदाग्निवरुणसोमसूर्यमङ्गलबुधबृहस्पतिशुक्रशनयः सर्वेतद्रूपोद्दीपितकामसंमोहितचित्तास्तदाश्रममेत्यताम्यूचुः ॥१॥ हेसुन्दरिरंभोरुधन्यासिकस्यार्थंतपः करोषितेवयस्तपोयोग्यंनास्तिमनोभिप्रायंस्वकमस्माकंवदेतितच्छ्रुत्वाज्योतिष्मत्युवाचभगवाननन्तः-सहस्त्रवदनोममभर्ताभूयादेतदर्थंतपस्तपामीतितद्वचःश्रुत्वासर्वेजहसुःपृथक्पृथक्तेषांपूर्वमिंद्रइदमाह ॥२॥ इंद्रउवाच ॥ सर्पराजंवरंकर्तुंकिंवृथातपसेशुभे ॥ देवराजंवरयमांस्वतःप्राप्तंशतक्रतुम् ॥ ३ ॥

लाख वर्षतक ब्रह्म तप किया ॥ १८ ॥ ग्रीष्ममें तो पञ्चाग्नि तपी, वर्षामें धारा सम्पात सहा, शिशिर (सर्दी) में जलके बीचमें कंठतक डूब रही, पृथ्वीमें सोनेवाली हुई ॥ १९ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां बलभद्रखंडे भाषाटीकायां ज्योतिष्मत्युपाख्यानं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥ महा अनन्त कहते हैं कि, उसके बाद सौ चन्द्रमाओं जैसे प्रकाश जिसका ऐसी, नये यौवनवाली सुन्दरी तप करती हुई ज्योतिष्मतीको देखकर इन्द्र, यमराज, कुबेर, अग्नि, वरुण, सोम, सूर्य, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि, ये सब उसके रूपसे उद्दीपित कामदेवसे मोहित चित्त होकर उसके आश्रममें जाकर ज्योतिष्मतीसे बोले ॥१॥ हे सुन्दरी ! हे रंभोरू ! तुम धन्य हो, किसके लिये तप कर रही हो ? तुम्हारी अवस्था तपके योग्य नहीं है, अपना अभिप्राय हमारे सामने कहो, उनके वचन सुनकर ज्योतिष्मती बोली—भगवान् अनन्त सहस्त्र मुख शेष मेरे पति हों, उनके लिये मैं तप करती हूँ, उसको सुनकर सब हँस पड़े, पृथक् २ उनमें पहिले इन्द्र बोला ॥ २ ॥ कि हे शुभे ! सर्पोंके राजाको वरनेके लिये तुम क्यों व्यर्थ तप कर रही हो, देवताओंके राजा मुझको वर लो, देखो मैं

स्वयम् अपने आप आया हूँ ॥३॥ फिर यमराज बोले कि, मैं यमराज हूँ सब जगत्को दण्ड देने वाला हूँ, तुम सर्वोत्तमा पितृलोकमें मेरी पत्नी होओगी ॥ ४ ॥ फिर कुबेर बोले कि, हे वरानने ! मैं राज राज कुबेर हूँ,मैं सब निधियोंका ईश हूँ, हे विशाल नेत्रोंवाली ! हे वरांगने ! तुम मुझको वरो, और संकर्षणमें जो अनुराग है, उसको छोड दो ॥ ५ ॥ अग्नि बोले कि, मैं सब देवताओंका मुख हूँ सब यज्ञोंमें प्रतिष्ठित हूं,सो हे विशालाक्षि ! सब वासनाओंको छोडकर मेरा भजन करो ॥६॥ वरुण बोले कि, मैं लोकपाल जल जीवोंका स्वामी पाशशस्त्रधारी हूँ, सो तुम मुझको वर लो,और सातों समुद्रोंका मेरा वैभव है,हे भामिनि ! उसको तुम देखो ॥७॥ सूर्य बोले कि, हे चाक्षुपकी पुत्री ! मैं जगत्का नेत्र हूँ प्रचण्ड मेरी किरणें हैं सो पातालकी गतिको छोड दो, मैं स्वर्गका भूषण हूँ मुझे वर लो,॥८॥ चन्द्रमा बोले कि, मैं द्विजराज औषधियोंका स्वामी, नेत्रोंका स्वामी, अमृतको करनेवाला मैं कामिनियोंको सुख देनेवाला हूँ, हे गजगामिनी ! मुझको भजो ॥ ९ ॥ मंगल बोले कि, यह पृथ्वी तो मेरी माता है, और वामनजी मेरे पिता हैं, मैं मंगल रूप हूँ,मुझसे बडे अर्थ होंगे,सो

॥ यमउवाच ॥ यमराजंवरयमांदंडनेतारमागतम् ॥ सर्वोत्तमात्वंमत्पत्नीपितृलोकेभविष्यसि ॥ ४ ॥ धनदउवाच ॥ राजराजंहिमांविद्धिनिधीशंहेवरांगने ॥ त्वंभजाशुविशालाक्षित्यजसंकर्षणेरतिम् ॥ ५ ॥ अग्निरुवाच ॥ सर्वदेवमुखंविद्धिसर्वयज्ञप्रतिष्ठितम् ॥ भजमांत्वंविशालाक्षिविहायान्यत्रवासनाम् ॥ ६ ॥ वरुणउवाच ॥ लोकपालंवरयमांपाशिनंयादसांपतिम् ॥ सप्तानांहिसमुद्राणांवैभवंपश्यभामिनि ॥ ७ ॥ सूर्यउवाच ॥ जगच्चक्षुःसदाहंवैचण्डांशुश्चाक्षुपात्मजे ॥ विहायपातालगतिंवरमांस्वर्गभूषणम् ॥ ८ ॥ सोमउवाच ॥ द्विजराजश्चौपधीशोनक्षत्रेशःसुधाकरः ॥ कामिनीबलदोहंवैभजमांगजगामिनि ॥ ९ ॥ मंगलउवाच ॥ इयंमहीहिमेमातापितासाक्षादुरुक्रमः ॥ मंगलंभजमांभद्रेभूत्वाभूरिभवार्थिनी ॥ १० ॥ बुधउवाच ॥ बुधोहंबुद्धिमान्वीरःकामिनीरसवर्द्धनः ॥ विसृज्यसर्वनाकेशान्भजस्वत्वंमयासह ॥ ११ ॥ बृहस्पतिरुवाच ॥ गीष्पतिर्धिषणोहंवैसुराचार्योबृहस्पतिः ॥ साक्षाद्देवगुरुर्लोकेभजमांमन्यसेशुभे ॥ १२ ॥ शुक्रउवाच ॥ साक्षाद्दैत्यगुरुःकाव्योभार्गवोहंमहामते ॥ स्वश्रेयस्तुविचार्य्यैवंभवमद्भामिनीभृशम् ॥ १३ ॥ शनिरुवाच ॥ सर्वेषांबलवान्भद्रेअहंदेवोपरिस्थितः ॥ त्यजशोकंवरयमांलोकभस्मकरंदृशा ॥ १४ ॥ महानन्तउवाच ॥ अथज्योतिष्मतीतेषांवचांसिश्रुत्वारुणनेत्रास्फुरदधराचलद्भ्रूभंगाप्रोद्यद्रोषाग्निप्रकर्षोच्छलच्छटामांपरंसस्मारपरंक्रोधंचचकार ॥ १५ ॥

हे भद्रे ! तुम बहुत वृद्धिकी चाहनेवाली हो,तो मेरा पाणिग्रहण करो ॥१०॥ बुध बोले–मैं बुद्धिमान् वीर हूँ, कामिनियोंके रसको बढानेवाला हूँ, ब्रह्मादि देवताओंको छोडकर तुम मुझको भजो ॥११॥ बृहस्पति बोले कि, वाणियोंका पति मैं बृहस्पति हूँ,सुरोंका आचार्य बृहस्पति हूँ,साक्षात् देवताओंका गुरु हूँ, यदि तुम्हारी इच्छा हो,तो मुझको वर लो॥१२॥ शुक्र बोले--मैं साक्षात् दैत्योंका गुरु काव्य भार्गव हूँ अपना कल्याण विचार करके मेरी स्त्री होजाओ॥१३॥ शनि बोले-सबमें बली मैं हूं, हे भद्रे ! मैं देवताओंके ऊपर रहता हूँ तुम शोकको छोडदो, और दृष्टिसेही लोकको भस्म करनेवाले मुझको वर लो ॥ १४ ॥ महाअनन्त कहते हैं कि, उनके वचन सुनकर ज्योतिष्मतीके नेत्र लाल होगये, ओंठ (होठ) फडकने लगे, भौंहें चढगईं,उद्यत हुई क्रोधाग्निके प्रकर्ष (आधिक्य) से उछली है छटा जिसकी,ऐसी उस ज्योतिष्मतीने केवल मेराही स्मरण किया,और फिर बडा क्रोध किया ॥१५॥

उसके क्रोधसे भूमण्डल और चौदहोंलोक सहित ब्रह्माण्डभी कांप उठा, चारों ओरसे बडा भय हुआ ॥१६॥ तभी इन्द्रादिक शापके भयसे भीत होगये, कांपने लगे, भेंट ले लेकर
हाथ जोडकर चरणोंमें जा पडे, त्राहि २ करने लगे, उन्होंने ऐसे शान्तिभी की, फिरभी ज्योतिष्मतीने सबको पृथक् २ शाप दिया ॥१७॥ अरे शनैश्चर ! तू मुझको छलनेके लिये
आया, इससे हे दुष्ट ! तू पंगु (लंगडा) होजा, और नीची दृष्टिवाला होजा, क्षीण शरीर वाला, काले रंगका, बुरी कान्तिवाला होजा, काले तिल, काले उडद, तेल, इनका भक्षी होजा
॥ १८ ॥ और हे शुक्र ! तू आंखसे काना होजा, और हे बृहस्पते ! तू स्त्री संज्ञक होजा, हे बुध ! तेरा वार दिन सूना होगा, तेरे वारको कोई कहीं नहीं जायगा ॥ १९ ॥ हे मंगल !
तेरा मुख बंदर जैसा हो जायगा, हे चन्द्रमा ! तुमको राज यक्ष्मा (क्षय) हो जायगा, हे सूर्य ! तेरे दांत टूटेंगे, हे वरुण ! तू जलंधर नामके रोगवाला होजा ॥२०॥ हे अग्नि ! तू सर्व-

तेनसखंडंमहीमण्डलंब्रह्मांडमपिरपरंचाब्रह्मलोकान्दृढमेजत्सर्वतोमहद्भयंबभूव।१६।तदैवशक्राद्याःशापभयभीताःप्रकंपिताःकृतबलिपाणयःपाद
पद्मेपरितोनिपेतुःपाहिपाहीतिजगुस्तैरित्थंशांतापिज्योतिष्मतीपृथक्पृथक्ताञ्छशाप ॥ १७ ॥ ज्योतिष्मत्युवाच ॥ छलयितुमिहमांसमा-
गतस्त्वंभवखलपंगुरधःसमीक्षणश्च ॥ कृशतनुरतिकृष्णकुत्सिताभोभवसहसासितमाषतैलभक्षी ॥१८॥ हेशुक्रअक्ष्णाभवकाणआशुस्त्रीसंज्ञक-
स्त्वंभवगीष्पतेत्र ॥ हेसौम्यतेवारदिनंहिशून्यंवदंतिगच्छंतिनकेकदाचित् ॥ १९ ॥ हेमंगलत्वंभववानराननोनिशाकरत्वंभवराजयक्ष्मवान् ॥
त्वंभग्नदंतोभवभोदिवाकरपाशिन्तुचिस्तेभवताज्जलंधरी॥२०॥ त्वंसर्वभक्षोभवतादुषर्बुधमनुष्यधर्मन्हृतपुष्पकोभव॥वैवस्वतत्वंबहुमानभंगोभ-
वाशुयुद्धेप्रबलेनरक्षसा ॥ २१ ॥ मांहर्तुमागत्यसुराधमस्थितःकरोषिनिंदांपरमात्मनोगिरा ॥ तवप्रियांकोपिनृपोहरिष्यतिकरिष्यतिस्वर्गसुखं-
गतेत्वयि ॥ २२ ॥ पाशेनबद्धंयुधिनिर्जितंत्वांबलाद्गृहीत्वाखलुकोपिराक्षसः ॥ लंकांपुरीमेत्यदिवस्पतेवैकारागृहेंधेकिलकारयिष्यति
॥ २३ ॥ श्रीमहानन्तउवाच ॥ अथहवावतयाशप्तानदेवानांमध्येकुपितःशक्रोपितांशशापकोपकारिणीसंकर्षणंवरमपिप्राप्यात्रजन्मन्यन्यत्र-
वाकदाचित्तवपुत्रोत्सवोमाभूत् ॥ एवमुक्त्वाशक्रोपितत्तेजसाधर्षितःसर्वदेवगणैःसहस्वर्गंजगामपुनःसातपस्तेपे ॥ २४ ॥

भक्षी होजा, हे कुबेर ! तू मनुष्यधर्मा होजा, तेरा विमान छिन जायगा, हे यमराज ! युद्धमें प्रबल राक्षस तेरा मान भंग करेगा ॥२१॥ हे सुराधम ! इन्द्र ! तू मुझको हरनेके लिये
आया, और जो तू सबकी निन्दा करता है, इससे तेरी स्त्रीको कोई राजा हरेगा, और तेरे जानेपर वही स्वर्गके सुखको भोगेगा ॥२२॥ और कोई राक्षस युद्धमें पाशसे बांधकर बल
पूर्वक लंकामें लाकर हे स्वर्गपते ! अंधेरे बन्दी घरमें तुमको कैद करके रखेगा ॥ २३ ॥ महा अनन्त कहते हैं कि, ऐसे जब सब देवताओंको शाप दिया, तब उन सब देवताओंके
बीचमें इन्द्र क्रोधित होकर शाप देने लगा कि, हे क्रोध करनेवाली ! संकर्षण वरको पाकरभी तुमको इस जन्ममें तथा और जन्ममें पुत्रका उत्सव नहीं होगा, ऐसे कहकर इंद्र उसके
तेजसे धर्षित होकर सब देवताओंको साथ लेकर स्वर्गको चला गया, और ज्योतिष्मती फिर तप करने लगी ॥ २४ ॥

उसके तपको देखकर, ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मणोंको साथ लेकर सब जगत्के कारण भूत ब्रह्मा अपने भवनसे हंसपर चढकर आये ॥ २५ ॥ आकाशमें खडे होकर बोले—हे ज्योतिष्मती ! चाक्षुषकी पुत्री ! तेरा तप सफल होगया मैं परम प्रसन्न हुआ हूँ, तेरी सिद्धि हुई, तू वर मांग ॥ २६ ॥ उसको सुनकर कण्ठतक जलमेंसे निकलकर ब्रह्माजीको प्रणाम करके हाथ जोडकर यह बोली—हे भगवन् ! यदि मुझपर प्रसन्न हुये हो तो संकर्षण भगवान् समस्त वदन भगवान् मेरे पति होवें, ऐसे सुनकर ब्रह्माजी बोले ॥२७॥ हे पुत्री ! तेरा मनोरथ तो बडा दुर्लभ है, तो भी मैं पूर्ण करूँगा, अभी वैवस्वत मन्वन्तर प्राप्त हुआ है, इसके जब २७ चतुर्युग हो जायँगे, तब संकर्षण भगवान् तुमको वर मिलेंगे ॥ २८ ॥ उसको सुनकर ज्योतिष्मती कन्या ब्रह्माजीसे बोली कि, हे देवदेव ! हे भगवन् ! इस बातको तो बहुत दिन हैं, मेरा मनोरथ तो जल्दी होना चाहिये, तुम सब काम करनेको समर्थ हो, यदि नहीं

अथतत्तपोदृष्ट्वाब्रह्माब्रह्मविद्भिर्ब्राह्मणैर्ब्राह्मचादिभिः संवृतः सर्वजगत्कारणभूतः स्वभवनाद्धंसयानेनागतवान्॥ २५॥ अंबरेस्थित्वातामाहहेज्योति-
ष्मतिचाक्षुषात्मजेत्वत्तपः सफलंजातंतेनसिद्धासिपरमहंप्रसन्नोस्मिवरंब्रूहीति॥२६॥तच्छ्रुत्वाकण्ठजलाद्विनिर्गत्यब्रह्माणंप्रणिपत्यस्तुत्वाकृतांज-
लिरित्यब्रवीत् ॥ हेभगवन्यदिप्रसन्नोसिकिलेहसंकर्षणोभगवान्सहस्रवदनोममवरोभूयादितश्रुत्वाहवावविबुधर्षभः प्रत्युवाच॥२७॥ हे पुत्रितव
मनोरथोदुर्लभोस्तितथापिपूर्णंकरिष्याम्यद्यैववैवस्वतमन्वंतरप्राप्तोस्त्यस्यत्रिनवचतुर्युगविकल्पितेकालेस तित त्रवरः संकर्षणोभगवान्भविष्यति
।२८। तच्छ्रुत्वाज्योतीष्मतिब्रह्माणमाहदेवदेवभगवन्महान्कालोवर्ततेमेमनोरथः शीघ्रंभूयात्त्वंसर्वकार्यंकर्तुंसमर्थोनचेत्तुभ्यंशापंदास्यामियथादेवे-
भ्योदत्तः ॥२९॥ इतिप्रोक्तोब्रह्माशापभीतः क्षणंविचार्यपुनराहहेराजपुत्रित्वमानर्तपतेरेवतस्यकुशस्थल्यांपुत्रीभवतस्मिञ्जन्मनित्रिनवचतुर्युगवि-
कल्पितः कालः केनचित्कारणेनक्षणवद्भविष्यतीतितस्यैवरंदत्त्वाब्रह्मातत्रैवांतरधीयत ॥ ३० ॥ अथसाप्यानर्तेषुकुशस्थलीपतेरेवतस्यभार्यायां-
जन्मलेभेतत्रज्योतिष्मतीरेवतीनामरूपौदार्य्यंगुणमंडितानवशरत्कंजनेत्राविवाहयोग्याबभूव ॥३१॥ तांरैवतः स्नेहेनांतः पुरेसभार्यउवाचकीदृशं-
वरमिच्छसीतिवचः श्रुत्वासातदोवाचसर्वेषांबलवान्समेवरोभूयात् ॥ ३२ ॥

करोगे, तो मैं आपको भी शाप देऊँगी, जैसे देवताओंको दिया है॥२९॥ ऐसे जब ब्रह्मासे कहा, तब ब्रह्माजी शापके डरके मारे कुछ क्षण विचार करके यह बोले—हे राज पुत्रि ! तू आनर्त देशके पति रैवत राजाकी द्वारकामें पुत्री हो, उसी जन्ममें किसी कारणसे एकही क्षणमें सत्ताईस चतुर्युग हो जायेंगे, तब तेरा मनोरथ जल्दीही हो जायगा, ऐसे वर देकर ब्रह्माजी वहीं अन्तर्धान होगये ॥ ३० ॥ उसके बाद उस ज्योतिष्मतीने आनर्त देशमें द्वारकामें रैवत राजाकी स्त्रीसे जन्म लिया, उसका नाम रेवती हुआ, रूप औदार्यतादि गुणोंसे मंडिता शरदके कमल जैसे नेत्रवाली रेवती जब विवाह योग्य हुई ॥ ३१ ॥ तब एक समय स्नेहसे स्त्री सहित राजा रैवत पुत्रीसे बोला--हे पुत्री ! कैसे वरको चाहती हो सो कहो, यह सुनकर रैवती बोली--जो सबमें बलवान् हो, वह मेरा पति हो ॥ ३२ ॥

ऐसे सुनकर रैवत राजा भार्या (स्त्री) सहित पुत्रीको लेकर दिव्यरथमें बैठकर बलवान्,दीर्घायु वरको ब्रह्माजीको पूछनेके लिये सब लोकोंको उल्लंघन करके ब्रह्मलोकमें गये॥३३॥
जो वहाँ एक क्षण बैठे, वैसेही यहाँ सत्ताईस चतुर्युग व्यतीत होगये. वह वहाँ ब्रह्मलोकमें है, उसमें तू आवेशावतारिणी लीन होकर हे रम्भोरु ! द्वारिकामें मेरे साथ रमण करो
॥ ३४ ॥ प्राड्विपाक कहते हैं कि ऐसे संकर्षणका वचन सुनकर नागलक्ष्मीने भर्ता संकर्षणसे आज्ञा मांगकर ब्रह्मलोकमें आकर रेवतीमें अपना आवेश किया ॥ ३५ ॥ इसके बाद
संकर्षण भगवान् भूमिका भार उतारनेके लिये लोकनमस्कृत गोलोकधामसे अवतीर्ण हुये, यह बलभद्र भगवान्का आगमन मैंने तुम्हारे सामने कहा, यह सब पापोंको हरनेवाला
और मंगलरूप है.हे युवराज कौरवेन्द्र !'अब तुम क्या सुननेकी इच्छा करते हो॥३६॥इति श्रीमद्गर्गसंहितायां बलभद्रखण्डे भाषाटीकायां ज्योतिष्मती रेवत्युपाख्याने चतुर्थोऽध्यायः

इतिश्रुत्वाराजारेवतःसभार्योपिसुतांनीत्वादिव्यंरथमारुह्यबलवंतंवरंदीर्घायुषंपरिप्रष्टुंलोकानुल्लंघ्यब्रह्मलोकंगतवान् ॥३३॥ तत्रक्षणमास्थितोभूत्ते
नक्षणेनभूलोकेऽद्यैवत्रिनवचतुर्युगविकल्पितःकालोजातःसाद्यैवब्रह्मलोकेवर्ततेरंभोरुतस्यांत्वंसंलीनाभूत्वाऽऽवेशावतारिणीद्वारकांप्राप्यरमस्व।३४।
प्राड्विपाकउवाच ॥ इत्थंतद्वाक्यंश्रुत्वानागलक्ष्मीःसंकर्षणंभर्तारमनुज्ञाप्यब्रह्मलोकमेत्यरेवतीविग्रहेस्वावेशंचकार ॥ ३५ ॥ अथसं-
कर्षणोभगवान्भूरिभूमिभारहरणार्थंलोकनमस्कृताद्गोलोकधामसकाशादवततारेदंबलभद्रस्यभगवतआगमनंमयातेकथितंसर्वदुरितापहरणंमंग-
लायनंयुवराजकौरवेंद्रकिंभूयःश्रोतुमिच्छसीति ॥ ३६ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीबलभद्रखंडेज्योतिष्मत्युपाख्यानेरेवत्युपाख्याननामचतु-
र्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ दुर्योधनउवाच ॥ मुनींद्राहोअहंधन्योस्मिपुरासंकर्षणस्यभक्तोस्मित्वयास्मारितोभगवतोवासुदेवस्यसप्रभावम्माहात्म्यं-
परमाद्भुतंश्रुतमत्रावतारौभूत्वाभूम्यांरामकृष्णौपितुःपुरात्कथंव्रजेगतवंतौव्रजवासिभिर्नज्ञातौगुप्तौकथमभूतांचतदुच्यताम् ॥ १ ॥ प्राड्विपा-
कउवाच ॥ अथैकदामथुरायांयदुपुर्य्यांसुग्रसेनाग्रजोदेवकोदेवकींसुतांवसुदेवायददावथवरबध्वोःप्रयाणकालेकंसउग्रसेनात्मजस्तयोःस्यंदनं-
नोदयामास।२।तदैवदेववाणीकंसमाहरेयांवहसेऽस्याश्चाष्टमोगर्भोहित्वांहनिष्यतीतिश्रुत्वासमहासुरःकालनेमिसुतःखड्गपाणिर्भगिनींहंतुंप्रवृत्तः ३।

॥ ४ ॥ दुर्योधन बोला कि, हे मुनीन्द्र ! अहो ! मैं धन्य हूँ, पहला संकर्षणका भक्त हूँ, आपने स्मरण कराया है, भगवान् वासुदेवका प्रभाव माहात्म्य अद्भुत मैंने सुना कि, राम
कृष्ण पृथ्वीमें अवतार लेकर पिताके घरसे व्रजको क्यों चले गये ? व्रजवासियोंने नहीं जाने और गुप्त क्यों रहे ? सो कहिये॥१॥ तब प्राड्विपाक बोले कि एक समय मथुरापुरीमें
उग्रसेनके बडे भाई देवकने अपनी देवकी नामकी पुत्रीको वसुदेवके लिये दिया,तब बिदाके समय उग्रसेनका पुत्र कंस उनका रथ हांकने लगा ॥२॥ उसी समय आकाशवाणी कंस
से बोली-अरे कंस जिसको तू लिये जाता है,उसका आठवाँ गर्भ तुमको मारेगा,ऐसे सुनकर कालनेमिका पुत्र महाअसुर कंस खड्ग लेकर बहिनको मारनेके लिये खडा होगया॥३॥

तभी वसुदेवजी उसको समझाकर बोले-हे कंस! इसको मत मारो, इसके पुत्रोंको मैं तुमको ही दे दूँगा, जिससे तुमको भय हुआ है, ऐसे सुनकर वसुदेवके वाक्यका सार जानकर कंस देवकी और वसुदेवको बंदीखानेमें देकर निश्चिंत हो गया ॥४॥ फिर देवकीके पहिला पुत्र हुआ, उसको वसुदेव कंसको दे आये, उसको सत्यवादी जानकर कंसने बालकको नहीं मारा ॥५ ॥ तब नारदजीने समझाया कि, अंकोंकी उलटी गति (चाल) है, पीछेसे गिननेसे पहिला ही आठवाँ होता है, और सब देवता और सब यादव तुम्हारे मरनेकी कामना करते हैं, ऐसे नारदजीके कहनेसे जो २ बालक हुये, वे वे सब कंसने मार डाले ॥ ६ ॥ अब कंसके भयसे यादवोंको बडा कष्ट हुआ, सो भाग गये, उसके बाद देवकीके सातवें गर्भमें भगवान् संकर्षण आये, उस तेजको श्रीभगवान् कृष्णकी आज्ञासे योगमायाने देवकीके गर्भमेंसे खेंचकर रोहिणीके गर्भमें रख दिया, जो कंसके भयसे नन्दके गोकुलमें रहती थी ॥७॥ वहाँ ये श्लोक हैं कि देवकीका सातवाँ गर्भ हर्ष और शोकको बढानेवाला हुआ, जिसको योगमायाने रोहिणीमें प्रवेश कर दिया, तब मथुरावासी सब जन यह कहने

तदैववसुदेवस्तंबोधयित्वाप्राहैनांमामारयअस्याःपुत्रान्समर्पयिष्येयतस्तेभयंजातंममापि।इतिश्रुत्वातद्वाक्यसारवित्कंसस्तौकारागारेकारयित्वा निश्चितोप्यभवत् ॥ ४ ॥ अथदेवक्याःप्रथमंजातंपुत्रंकंसायवसुदेवःप्रददौतंसत्यवादिनंज्ञात्वाकंसोर्भकंनजघान ॥५॥ अंकानांवामतोगतिस्त-थादेवानांतस्मादयंवाशत्रुःसर्वेयादवादेवाः संतितववधमिच्छंतीतिनारदवाक्यात्पुनर्जातंजातमपिनिर्जघान ॥६॥ अथकंसभयात्पलायितानां यदूनांमहान्कष्टोबभूवअथसप्तमोगर्भोदेवक्याभगवाननंतोह्यभवत्तत्तेजःश्रीकृष्णाज्ञयायोगमायादेवक्युदरात्संनिकृष्यवसुदेवस्यभार्यायांकंस-भयाद्गोकुलस्थितायांरोहिण्यामर्पयितुमाजगाम॥७॥तत्रैतेश्लोकाः॥देवक्याःसप्तमेगर्भेहर्षशोकविवर्द्धने॥व्रजंप्रणीतेरोहिण्यामनंतेयोगमायया ॥ अहोगर्भःक्वविगतइत्यूचुर्माथुराजनाः ॥८॥ अथव्रजेपंचदिनेषुभाद्रेस्वातौचषष्ठ्यांचसितेबुधेच ॥ उच्चैर्ग्रहैःपंचभिरावृतेचलग्नेतुलाख्येदिनमध्य देशे ॥९॥ सुरेषुवर्षत्सुचपुष्पवर्षंघनेषुमुंचत्सुचवारिबिंदून् ॥ बभूवदेवोवसुदेवपत्न्यांविभासयन्नंदगृहंस्वभासा ॥१०॥ नंदोपिकुर्वञ्छिशुजात कर्मददौद्विजेभ्योनियुतंगवांच ॥ गोपान्समाहूयसुगायकानांरावैर्महामंगलमाततान ॥११॥ अथाष्टमोदेवक्याःपरिपूर्णतमोभगवाञ्छ्रीकृष्णच-न्द्रोवततार ॥ तदैवतदाज्ञयानिशीथेतंप्रेंखेनिधायनंदपत्न्यांजातायांयोगनिद्रायांसंसुप्तेजगतिसतियमुनामुत्तीर्यमहावनमेत्ययशोदाशयनेसुतं-निधायतांसुतामादायपुनर्वसुदेवोगृहानाययौ ॥ १२ ॥

लगे, अहो ! गर्भ कहाँ गया ॥ ८ ॥ इसके बाद पांचदिन व्यतीत हो जानेपर भाद्रपद सुदी षष्ठी तिथि बुधवारको दोपहरमें, उच्चके पांच ग्रहोंसे युक्त तुला लग्नमें ॥९॥ जब देवता पुष्पोंकी वर्षा करने लगे, मेघोंकी फुहारें (छोटी बूंदें) गिरने लगीं, तब अपने तेजसे नन्दभवनमें प्रकाश करते हुये वसुदेवकी पत्नी रोहिणीमें प्रकट हुये ॥ १० ॥ नन्दजीने बालक का जात कर्म किया, ब्राह्मणोंको एक लाख गायें दीं, गोपोंको बुलाकर, गायकोंको बुलाकर बडा उत्सव मंगल किया ॥ ११ ॥ इसके बाद आठवें गर्भ परिपूर्णतम भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र अवतरित हुये, तब उन्हीं भगवान्की आज्ञासे आधीरातके समय जब नन्दकी पत्नी यशोदाके योगमाया जन्म ले चुकी और जगत् सब सो गया, तब वसुदेव श्रीकृष्णको लेकर यमुनाके पार उतरकर महावनमें जाकर कृष्णको यशोदाकी सेजपर सुलाकर माया कन्याको लेकर वसुदेव फिर अपने घरको चले आये ॥ १२ ॥

फिर कारागार (बन्दीखाना) में बालककी आवाज सुनकर शत्रुके भयसे कंसने आकर उसी समय उत्पन्न हुई कन्याको शिलापर पटक दिया ॥१३॥ तब उसी समय वह कन्या कंसके हाथोंसे छूटकर आकाशमें योगमाया होकर खडी हुई, वहाँ सिद्ध, चारण, विद्याधर, मुनि जिसकी स्तुति कर रहे, वह देवी कंससे यह बोली—हे दुष्ट ! तेरा पहिला शत्रु तो जहाँ कहीं जन्म ले चुका, तू व्यर्थ दीन देवकी और वसुदेवको क्यों मारता है ? ऐसे कहकर वह विंध्याचलको चली गई ॥१४॥ ऐसे सुनकर कंस बडा विस्मित होकर देवकी और वसुदेवको छुडाकर पूतनादिक दैत्योंको बुलाकर यह बोला कि, दश दिनसे कम व अधिक दिनके बालकोंको मारो, तब वे मरने लगे ॥१५॥ नन्दजीने पुत्रोत्सवको सुनकर बडा उत्सव किया, ऐसे कंसके भयके बहानेसे कृष्ण और राम दोनों व्रजमें गये अपनी मायासे दोनों अलक्षित रहे, व्रजवासियोंके ऊपर कृपा करनेके लिये अद्भुत बाललीला की, अब हे कौरवेन्द्र !

अथकारागारेबालध्वनिंश्रुत्वाशत्रुभीतःकंसःसमागत्यजातमात्रांकन्यांगृहीत्वाशिलापृष्ठेपातयामास॥१३॥ तदैवतद्धस्तात्समुत्पत्यांबरेयोगनिद्राभूत्वासिद्धचारणगंधर्वविद्याधरमुनिगणैःस्तूयमानाकंसमिदमाह हेखलतवपूर्वंशत्रुर्यत्रक्वजातोवृथादेवकीवसुदेवौदीनौदुनोषिइत्युक्त्वासाविंध्याचलंजगाम।१४।इत्युक्तोविस्मितःकंसोदेवकीवसुदेवंचविमुच्यपूतनादीन्दैत्यान्समाहूयचानिर्दशान्निर्दशान्बालान्हंतुमाज्ञांचकारतेपितथा चक्रुः ॥१५॥ अथनंदोपिपुत्रोत्सवंश्रुत्वामहोत्सवंचकार ॥ एवंकंसभयमिषेणव्रजंप्राप्तौरामकृष्णौस्वमाययालक्षितौव्रजवासिनांकृपांकर्तुंजातमात्रावद्भुतांबाललीलांचक्रतुःकौरवेंद्रभूयःश्रोतुमिच्छसिकिम्।१६।इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांबलभद्रखंडेश्रीकृष्णजन्मोत्सवोनामपंचमोऽध्यायः॥ ॥ ५ ॥ दुर्योधनउवाच ॥ मुनींद्ररामोऽनन्तोऽनंतलीलःश्रीकृष्णोपिचभूम्यांभूत्वारराजतस्यसंक्षेपेणचरित्रंवदव्रजेकिंमथुरायांकिंद्वारकायांकिमत्रकिमन्यत्रकिंचकार ॥ १ ॥ प्राड्विपाकउवाच ॥ अथह्वावश्रीकृष्णोजातमात्रोऽद्भुतांलीलांपूतनामोक्षशकटासुरतृणावर्तवधयुतांविश्वरूपदर्शनदधिचौर्य्यब्रह्मांडदर्शनयमलार्जुनद्रुमखंडभंगादिसंयुक्तांदुर्वाससोमायादर्शनवैभवां श्रीमद्गर्गाचार्यवर्णितराधाकृष्णनामौदार्म्यमाहात्म्ययुक्तांसुरज्येष्ठकारितवृषभानुवरनंदिनीविवाहरासमंडलकथामंडितांचकार ॥२॥ ततःश्रीवृंदावनागमनेसतिवत्सासुरबकासुराद्यसुराणांवधंकृत्वागोपालैःसहगोचारणेवृंदावनादिवनेषुविचचार ॥ ३ ॥

और क्या सुनना चाहते हो ? ॥१६॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां बलभद्रखण्डे भाषाटीकायांकृष्णजन्मोत्सवं नाम पंचमोऽध्यायः ॥५॥ फिर दुर्योधन बोला—हे मुनीन्द्र ! अनन्त लीलावाले राम और कृष्ण, अनन्त लीला है जिनकी वे भूमिमें विराजे, उनके चरित्र संक्षेपसे कहिये, व्रजमें क्या लीला की, मथुरामें क्या लीला की, और द्वारिकामें क्या लीला की और जगह क्या लीला की ? सो कहिये ॥१॥ तब प्राड्विपाक बोले—श्रीकृष्णने जन्म लेतेही अद्भुत लीला की, पूतनाकी मोक्ष, शकटासुर और तृणावर्तका वध, माताको विश्वरूपदर्शन, दहीकी चोरी, ब्रह्माण्डदर्शन, यमलार्जुनको उखाडना, दुर्वासाको माया दिखाना, गर्गाचार्य वर्णित राधाकृष्णके नामके माहात्म्य और ब्रह्माजीसे कराया राधाकृष्ण विवाह और फिर रासमण्डल, इतनी कथाओंसेयुक्त अद्भुत लीलाकी॥२॥उसके बाद जब वृन्दावनमें आये, तब वत्सासुर, बकासुरादि असुरोंका वध करके गोपालोंसहित गौचरानेकी लीलामें वृन्दावनादिवनोंमें विचरे॥३॥

फिर तालवनमें दुलत्ती फेंकते (अपने पावोंसे मारते) और गधेकी तरह रेंकते धेनुकासुरको भुजाओंसे पकडकर बलदेवजीने तालवृक्षपर मारकर फिर आया देखकर पृथ्वीमें मारा, तब उसका मस्तक फट गया, और मूर्च्छित होगया, फिर भी एक घूंसा मारा तब मरकर गिर पडा ॥ ४ ॥ फिर श्रीकृष्णने काली दमन किया, दावानलका पान किया, राधाकी प्रेम परीक्षा वृन्दावन विहार, दान लीला, मान लीला, हाव भाव युक्त, शंखचूडवध, शिवासुर उपाख्यान, इतनी कथाओंसे युक्त कहने लायक लीलाकी।।५।।फिर गिरिराजका पूजन होनेपर भग्न होगई है बलि(भेंट)जिसकी ऐसे इन्द्रने सांवर्तक मेघोंसे व्रजमण्डलमें वर्षा की, तब भयातुर व्रजको देखकर अभयदान देकर गोवर्धनको उखाडकर बालक जैसे छतोनाको उठा ले, वैसे धारण कर लिया, सात वर्षके श्रीकृष्ण सात दिनतक स्थिर खडे रहे ॥६॥ फिर देवगण सहित इन्द्र भयभीत होकर श्रीकृष्णके श्रीमत्पादारविन्दद्वयमें प्रणाम करके, स्तुति

अथतालवनेधेनुकासुरंखरस्वनंस्वपद्भ्यांताडयंतंभुजदंडाभ्यांगृहीत्वामहाबलोबलदेवस्तालवृक्षेतंपातयित्वापुनरापतंतंतंभूपृष्ठेपोथयामाससमू-
र्च्छितोभग्नमस्तकःसद्यस्तन्मुष्टिप्रहारेणनिधनंजगाम ॥ ४ ॥ अथश्रीकृष्णःकालियदमनदावाग्निपानादीनिचरित्राणिकृत्वाश्रीराधाप्रेमप्रका-
शप्रीतिपरीक्षणवृंदावनविहारदाममानलीलाहावभावयुक्ताशंखचूडबधादिशिवासुर्य्युपाख्यानकथांकथनीयांलीलांचकार ॥५॥ अथैकदागिरि-
राजपूजनेकृतेभग्नबलिरिंद्रः सांवर्तमेघमंडलैर्व्रजमंडलेववर्षतदाभगवान्भयातुरंव्रजंवीक्ष्यमाभैष्टेत्यभयंदत्त्वाएककरेणगिरिराजंसमुत्पाटचोच्छि-
लींध्रबालइवदधारहवावसप्तवर्षोयःसप्ताहंसुस्थिरंस्थितः ॥ ६ ॥ अथेंद्रःसर्वदेवगणैर्भयभीतःश्रीकृष्णचन्द्रश्रीमत्पादारविंदद्वयंप्रणम्यकिरीटे-
ननतःस्तुत्वातदभिषेकंकृत्वामहेंद्रात्सुरमुनिभिःसार्द्धस्वर्गंजगाम ॥७॥ तदद्भुतंनोगोवर्द्धनोद्धारणंदृष्ट्वागोपाविसिष्मुस्तेऽभ्योमुक्तारोपणादिवै-
भवंसंदर्शयामासुः॥८॥ अथश्रुतिरूपामैथिलाकौशलाऽयोध्यापुरवासिनीयज्ञसीतापुलिंदकारमावैकुण्ठश्वेतद्वीपोद्र्ध्वबैकुण्ठाजितपदश्रीलोका-
चलवासिनीसखीदिव्यादिव्यात्रिगुणवृत्तिभूमिगोपीजनदेवश्रीजालंधरीबर्हिष्मतीपुरंध्र्यप्सरासुतलवासिनीनागेंद्रकन्यादिभिर्गोपीयूथैःपृथक -
पृथक्छ्रीकृष्णोव्रजमण्डलेरासमण्डलंचकार ॥ ९ ॥ एकदागाश्चारयन्सबलःश्रीकृष्णोगोपालबालैर्भांडीरेबाललीलांवाह्यवाहकलक्षणांकृतवां-
स्तत्रप्रलंबोगोपरूपीदैत्योविहारेविहारविजयंरामंस्वपृष्ठेनिधायोवाह ॥ १० ॥

करके गोविन्दाभिषेक करके, सुरभिसहित सुरमुनियोंसहित स्वर्गको गये ॥ ७ ॥ वह अद्भुत गोवर्धनका धारण देखकर गोप आश्चर्य करने लगे, फिर मोती बोनेकी लीला करके दिखाई ॥८॥ इसके बाद श्रुतिरूपा, मुनिरूपा, मैथिला, कौशला, अयोध्यावासिनी, यज्ञसीता, पुलिंदका, रमा वैकुण्ठवासिनी, श्वेतद्वीपवासिनी, ऊर्द्ध्ववैकुण्ठवासिनी, अजितपदवासिनी, श्रीलोकाचल वासिनी सखी, दिव्या, अदिव्या, त्रिगुण वृत्ति, भूमि गोपीजन, देवश्री, जालंधरी, बर्हिष्मती, पुरंध्री, अप्सरा, सुतलवासिनी और नागेन्द्र कन्यादि सब गोपियोंके पृथक् पृथक् यूथके साथ व्रजमण्डलमें रासमण्डल किया ॥ ९ ॥ एक दिन गायोंको चराते हुये बलदेवजीके साथ बालकोंको लेकर भाण्डीरवनमें वाह्य वाहक लक्षणा (चड्डी चड्डा की) लीला कर रहे थे, वहाँ गोपरूपी दैत्य प्रलम्बासुर खेलमें जीते हुये बलरामजीको पीठपर चढाकर ले जाने लगा ॥ १० ॥

मथुराको ले जानेके लिये उद्यत हुये उसके पहाडके सदृश रूपको देखकर पीठपर चढे बलदेवने उसके शिरमें एक घूंसा मारा, जैसे पर्वतको इन्द्र मारता है, उस प्रहारसे उसका शिर फट गया, और जैसे इन्द्रके वज्रका मारा हुआ पर्वत गिर पडता है, वैसे मरकर गिर पडा॥ ११॥ एक समय ग्रीष्म ऋतुमें मूञ्जके वनमें गौएँ और गोपाल सब चले गये, वहाँ दावानल चारों ओरसे बढी, तब गोपोंने पुकारा हे कृष्ण! हे राम! रक्षा करिये रक्षा करिये, ऐसे शरण आये उनको देखकर सबकी आखें बंद करवाकर अभय देकर उस अग्निको पी गये ॥१२॥ फिर भाण्डीरवनमें यमुनाके तीरपर गौ और गोपोंको लाकर वहाँ फिर अशोक वनमें यज्ञपत्नीसे लाया हुआ भोजन किया॥ १३॥ फिर एक समय व्रजमें नन्दराजको वरुणके गण ले गये, तब वरुणका मान भंग करके नन्दजीको वरुणलोकसे लाये, फिर गोपोंको सर्वलोक नमस्कृत वैकुण्ठलोक दिखाया ॥१४॥ फिर अम्बिका वनमें सरस्वतीके किनारेपर नन्दको

अथहवावमथुरांगंतुमुद्यतंगिरींद्रस्यसदृशदेहंतमुद्वीक्ष्यपृष्ठगतोबलदेवोमहाबलोरुपामुष्टिनाशिरसिमहाद्रिंयथाद्रिभित्तताडतेनसद्योविशीर्णम - स्तकोवज्रहतोगिरिरिवसदैत्योभूम्यांनिपपात॥ ११॥एकदाग्रीष्मेमुञ्जारण्यगतासुगोषुगोपालेषुचसत्सुसद्यःसंभूतोदावाग्निःप्रलयाग्निरिववबृधेततः कृष्णरामेतिवदतःपाहिपाहीतिगोपालाञ्शरणंगतान्वीक्ष्यलोचनानिनिर्मीलयताशुमाभैष्टेत्युक्त्वातमग्निमपिबत् ॥ १२॥ अथहवावभांडीराद्य- मुनातीरेगोपालगोगणंनीत्वाप्राप्तोऽभूत्तत्राशोकवनेयज्ञपत्न्यानीतंभोजनंकृतवान् ॥१३॥अथचैकदाव्रजेनन्दराजेवरुणग्रस्तेवरुणस्यमानभंगंकृ- त्वानन्दादिभ्योपिसर्वलोकनमस्कृतंवैकुण्ठंदर्शयामास।१४।अथांबिकावनेश्रीकृष्णःसरस्वतीतीरेनन्दंग्रसन्तंसुदर्शनंसर्प्पंकिलाखिललोकपाल- वंदितेनश्रीमच्चरणारविन्देनस्पृष्ट्वासर्प्पदेहात्तंमोचयामास।१५।अथसबलःश्रीकृष्णोनिलायनक्रीडायांचोरपालकंलक्षणायांचोररूपंव्योमासुरंकं- ससखंभुजदण्डाभ्यांगृहीत्वादशदिशासुभ्रामयन्भूपृष्ठेपोथयामास।१६।तथारिष्टासुरंकंसप्रणोदितंवृषरूपंशृंगयोःसमृद्धृत्यपातयामासअथनार- दमुखाच्छ्रुतश्रीकृष्णकथेनकंसेनप्रणोदितंकेशिनंश्रीकृष्णस्तन्मुखस्वभुजप्रवेशेनसंममर्देत्थमनेकालीलाःसहसाव्रजमंडलेबलेनकारयामास।१७। इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीबलभद्रखंडेप्राड्विवपाकदुर्योधनसंवादेरामकृष्णव्रजलीलावर्णनंनामषष्ठोऽध्यायः।६॥प्राड्विपाकउवाच॥अथमथुरायां रामकृष्णौयानिचरित्राणिकृतवंतौतानिसंक्षेपेणयुवराजशृणुतात्।अथकालनेमिसुतेनकंसेनप्रयुक्तोऽक्रूरोरामकृष्णौसमानेतुंव्रजमंडलमागतवान्।१।

ग्रसते हुये सुदर्शन नामके सर्पको अखिल लोकपाल वन्दित निज चरणके स्पर्शसे सर्प देहसे छुडाया॥ १५॥ फिर बलदेवसहित श्रीकृष्णने चोर पालक लक्षणवाले आंख मिचौअल खेल में कंसके सखा व्योमासुरको भुजाओंसे पकडकर दशों दिशाओंमें घुमाकर भूमिमें गिराकर मार दिया ॥१६॥ वैसेंही कंसका भेजा हुआ अरिष्टासुर वृषरूपसे आया, उसके सींग पकड कर मारदिया, फिर नारदके मुखसे श्रीकृष्णकी कथा सुनकर कंसने केशीको भेजा, उसके मुखमें भुजा प्रवेश करके उसको मार दिया, ऐसे अनेक लीलाएं व्रजमण्डलमें बलदेवके साथ कीं ॥१७॥ इति श्रीमद्गर्गसं॰ बलभद्रखण्डे भाषाटी॰ रामकृष्ण लीलावर्णनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ प्राड्विपाक कहते हैं–इसके बाद मथुरामें रामकृष्णने जो चरित्र किये, हे युवराज ! उनको संक्षेपसे सुनो, कालनेमिके पुत्र कंसने जब अक्रूरको भेजा, तब रामकृष्णको लेनेके लिये व्रजमण्डलमें आये ॥ १ ॥

वहाँ चलनेके लिये उद्यत हुये नन्द नन्दनको देखकर गोप और गोपियोंके गण विरहातुर होगये, पृथक्‌ पृथक्‌ सबको समझाकर बलदेव सहित भगवान्‌ने अक्रूरके साथ मथुराको जाते हुये मार्गमें यमुना जलमें अक्रूरको अपना धाम दिखाया ॥२॥ तब पूर्वाह्णमें मथुराके बागमें ठहरकर अपराह्णमें मथुरा पुरीको चारों ओरसे देखने गये, लीलासे नटवर वेप धरे पुराण पुरुष रामकृष्ण देवके देखनेके लिये पुरको स्त्री पुरुष अपने २ कार्योंको छोडकर दौडे, जैसे नदियाँ समुद्रको दौडती हैं, उनको करोड कामदेव जैसे सुन्दर अपने रूपको दिखाते उनके चित्तको हरते विचरे ॥ ३ ॥ इसके बाद भगवान्‌ने राजमार्गमें रंगरेज (धोबी) से वस्त्र मांगे, तब उसने नहीं दिये, तब सभीके देखते २ कराग्र भारसे उसको मार दिया, फिर वस्त्रोंको शृंगारके बनानेवाले दर्जीको अपनी सारूप्यता दी ॥४॥ उसके बाद सैरन्ध्री त्रिवक्रा कुब्जाको चन्दन दानके बहानेसे सीधी त्रिलोक सुन्दरी करके, वैश्यजनोंसे बातें करते, मथुराके

तत्रगंतुमभ्युदितंनंदराजसूनुंवीक्ष्यगोपीगणाविरहातुराबभूवुःपृथक्पृथक्तानाश्वास्यभगवान्नरथमारुह्यसबलोऽक्रूरेणयदुपुरींगच्छन्मार्गेयमुनाजलेषु श्वाफल्कायस्वधामदर्शयामास॥२॥अथपूर्वाह्णेमथुरोपवनेस्थित्वाऽपराह्णेमथुरापुरींसर्वतोददर्श॥ अथरामकृष्णौदेवौपुराणौपुरुषौलीलयानट-वरवेषरौदिदृक्षवःपौराश्चपुरंध्र्यःकर्माणित्यक्त्वाभ्यधावन्नापगाउदधिमिवतौकोटिकंदर्पहरंसौंदर्यंस्वंसंदर्शयंतौचेतोहरंतौविचेरतुःस्म ॥३॥ अथ भगवान्राजमार्गेतद्याचितवस्त्राण्यदास्यंतंरजकंरंगकारंकराग्रेणसर्वेषांपश्यतांनिजंघानतथावस्त्रवेषंकुर्वंतेवायकायस्वसारूप्यंप्रादात् ।४। ततःसैरं-ध्रींकुब्जांत्रिवक्रांचंदनादानमिषेणर्व्वीत्रिलोकसुंदरींकृत्वाततोवैश्यजनान्समाभाष्यमथुरार्भकैःसहितोधनुःस्थलेविवेश।अथहेमचित्रंसप्ततालकंस-हस्रशःपुरुषैर्नैनंतुमंशक्यंबृहद्भारंचाष्टधातुमयंलक्षभारसमंयज्ञमंडपधृतंकंसायभार्गवेणदत्तंसाक्षाच्छेषमिवकुंडलीभूतंकोदंडंवैष्णवंवीक्ष्यप्रसह्यादृदे ॥५॥ तदैवपश्यतांलोकानांसज्यंकृत्वालीलयाकृष्यकर्णपर्यंतंदोर्दंडाभ्यांयथेक्षुदंडंवेतंडःशुंडादंडेनकोदंडंमध्यतोबभंज ॥६॥ भज्यमानधनुष टंकारेणसप्तलोकबिलैःसहसर्वब्रह्मांडंननादततस्ताराद्दिग्गजाश्चविचेलुःसर्वभूखंडमण्डलंस्थालीवघटिकाद्वयमात्रंप्रचकंपे।७॥ अथापराह्णेरंगभू-मिद्वारिद्विपंकुवलयापीडंसमेत्यक्षणंबाललीलयायुद्धंकृत्वाशुंडादंडेसंगृहीत्वात्वितस्ततोभ्रामयित्वाबालकःकमंडलुमिवभूपृष्ठेतंपातयामास।८।

बालकोंके साथ धनुस्थलमें गये, वहाँ सुवर्णके चिते हुये सात तालके हजार पुरुषोंसे भी नहीं उठा, अष्टधातुका लाखमन भारका यज्ञ मण्डपमें धरा जो परशुरामसे दिया हुआ शेषकी कुण्डली जैसा धनुष उसको देखकर बलपूर्वक उठा लिया ॥५॥ तभी सब लोकोंके देखते प्रत्यंचा चढाकर कानतक खेंचकर बीचसे तोड डाले, जैसे गन्नेको सूंडसे हाथी तोडे ॥ ६ ॥ जब धनुष टूटा, तब सातों लोक सातों पातालोंसहित ब्रह्माण्ड झंकार उठा, उस समय सब तारागण और दिग्गज चलायमान होगये, और पृथ्वीमण्डलभी दो घडीतक थालीकी तरह कांपता रहा ॥ ७ ॥ उसके बाद अपराह्णके समय रंग भूमिके द्वारपर कुवलयापीड हाथीसे बाण लीलाका युद्ध करके, सूंड पकडकर, इधर उधर घुमाकर भूमिमें दे मारा, जैसे बालक कमण्डलुको ॥ ८ ॥

उस हाथीको ऐसे मारकर रंग भूमिमें कंसकी सभामें जन समूहको यथा भाव रुचिके अनुसार दर्शन देकर मल्लयुद्ध करके चाणूर, मुष्टिक, कूट, शल, तोशल, इन सबको सबके देखते २ कंसके सामने मारकर धरतीमें गिरा दिये ॥ ९ ॥ तब कंस इनका कर्म देखकर दुर्वचन कहते हुये कंसके बडे ऊँचे मञ्चपर उछलकर मधुसूदन चढ गये॥१०॥उसके बाद जल्दीसे मानों मृत्युही आई,यह जानकर मञ्चपरसे उठकर उनको ललकारते हुये कंसने शीघ्रही ढाल,तलवार,ली,हरिने सहजमेंही ढाल तलवार सहित कंसको विषधारी सर्पको गरुड जैसे पकडते हैं,वैसे भगवान्ने पकड लिया ॥११॥ जैसे गरुडकी चोंचमेंसे सर्प निकल जाय, वैसेही कंस कृष्णकी भुजाओंमेंसे निकल कर ढाल, तलवार, लेकर, खडा होगया तब मञ्चपर युद्ध करते हुये दोनों ऐसे शोभित हुये,मानों पर्वत पर दो सिंह लडते हों॥१२॥तब बलसे उछलता कंस एक सौ हाथ ऊंचा उछला, उसको बाजकोंबाज जैसे वैसेही कृष्णने पकड लिया,फिर निकलते दैत्य पुंगवको अपने प्रचंड भुज दंडोंसे पकडकर त्रैलोक्याधार श्रीकृष्णने इधर उधर घुमाकर आकाशसे मञ्चपर मारा ॥१३॥ फिर बिजली गिरनेसे वृक्ष

तमित्थंनिहत्यरंगभूमौकंससभायांजनतायायथाभावंदर्शनंदत्त्वामल्लयुद्धंकृत्वाचाणूरमुष्टिककूटशलतोशलकान्कंसस्याग्रेसर्वेषांपश्यतांभूपृष्ठेरा-
मकृष्णौपातयामासतुः॥९॥अथतत्कर्मवीक्ष्यदुर्वचनानिविकत्थमानस्यकंसस्यमधुसूदनःसहसोत्पत्यमंचंमहोन्नतंसमारुरोह ॥१०॥ ततःसत्व
रंमृत्युमिवागतंवीक्ष्यमंचादुत्थायतंनिर्भर्त्सयन्नुन्मनाद्रुतंकंसःखड्गचर्मणीजगृहेहरिःसहसाचर्मासिसंयुक्तंकंसंसविषंफणीन्द्रमिवतुंडविभागाभ्यां-
विराडिवदोर्दंडाभ्यांबलात्समग्रहीत् ॥ ११ ॥ यथाताक्ष्यतुंडात्फणीवकंसोभुजबंधाद्बलाद्विनिर्गत्यपतत्खड्गचर्मापुनरुद्यतोभूत्पुनर्मंचेबलिनोवे-
गान्मर्दयंतौशैलेसिंहाविवशुशुभाते॥१२॥ततोबलादुत्पतंतंकंसंशतहस्तमंबरेकृष्णउत्पतञ्श्येनइवतंसमग्रहीत्पुनर्गच्छंतंदैत्यपुंगवंप्रचण्डभुजदं-
डाभ्यांगृहीत्वात्रैलोक्याधारइतस्ततोभ्रामयित्वामहांबरान्मंचोपरिपातयामास ॥१३॥ततस्तडित्पाताद्द्रुमखंडइवभग्नदंडोमंचोबभूवसवज्रांगःप-
तितोपिकिंचिद्व्याकुलःसहसोत्थायमहात्मनापुनर्युयुधेपुनस्तंभुजदंडाभ्यांभगवान्गृहीत्वामंचेक्षिप्त्वाहृदयमारुह्यतन्मौलिंगृहीत्वासद्यःकेशेषु-
प्रगृह्यमंचाद्रंगोपरिपातयित्वाशैलाद्बृंडशिलामिवतस्योपरिष्टात्सनातनःसर्वाधारोनंतोनंतविक्रमोवेगात्स्वयंनिपपाततयोर्निपातेननिम्नीभूतंभू-
खण्डमंडलं स्थालीवदंडत्रयंसहसाचकंपे ॥ १४ ॥ अथसंपरेतंभोजराजंयदुराजोभूमिगतंनागेन्द्रंमृगेंद्रइवसर्वेषांपश्यतांविचकर्षतदैवभूभुजांहा-
हाकारआसीदहो वैरभावेनयंभजन्कंसोपितस्यसारूप्यंभृंगिणःकीटकइवजगाम ॥ १५ ॥

खंडकी तरह शब्द कर मञ्चका दंड भग्न हो गया,वज्रांग कंस गिरभी पडा, किन्तु फिर कुछ व्याकुल हुआ उठकर श्रीकृष्णसे फिर युद्ध करने लगा, फिर भगवान् भुजाओंसे पकडकर मञ्चपर गिराकर उसकी छातीपर चढकर, उसका मुकुट उतारकर, केश पकडकर, मंचसे रंग भूमिमें गिराकर पर्वतसे शिलाखंडको जैसे वैसे विश्वके आधार, अनन्त पराक्रमी अनन्त भगवान् वेगसे आपभी उसके ऊपर जा गिरे, उन दोनोंके गिरनेसे पृथ्वी झुकगई,तीन घडीतक भूमंडल थालीकी तरह कांपता रहा ॥१४॥ जब कंस मरगया,तब मरे हाथीको सिंह जैसे,वैसे उसको सभीके देखते देखते खेंचा, तभी राजाओंका हाहाकार मचा, अहो ! शत्रु भावसे कृष्णको भजता हुआ कंसभी श्रीकृष्णकी सारूप्यताको प्राप्त होगया, जैसे भृंगीके भयसे कीडा भृंगीरूप हो जाता है ॥ १५ ॥

उसके बाद कंसको मरा हुआ देखकर उसके आठ छोटे भाई ढाल तलवार लेकर आये, उनको बलभद्रजीने मुद्गरसे मार डाला, तबही देवताओंके नगाडे बजने लगे, जयजय ध्वनि होने लगी, देवता पुष्पोंकी वर्षा करने लगे, विद्याधरियाँ नाचने लगीं, विद्याधर, किन्नर, गन्धर्व, गाने लगे॥ १६॥ फिर श्रीकृष्ण सबको समझाकर माता पिताको छुडाकर उग्रसेनको राज्य देकर, यज्ञोपवीत संस्कार कराकर, संदीपनसे विद्या पढकर, उनका मरा हुआ पुत्र दक्षिणामें देकर, शंखासुरको मारकर, मथुरामें आकर बसते हुये श्रीकृष्णने व्रजवासियोंकी शान्तिके लिये उद्धव को भेजा, फिर आप व्रजमें जाकर राधिका और गोपियोंको दर्शन देकर रासमें भू मोक्षको करके फिर मथुरामें मथुरेश शोभित हुये, राम भी कोलासुरको मारकर मथुरामें आगये, उन रामकृष्णने मथुरामें अनेकों चरित्र किये॥ १७॥ इतिश्रीम॰सं॰बलभद्रखण्डे भाषाटीकायां मथुरालीलावर्णनंनामसप्तमोऽध्यायः॥ ७॥ प्राड्विपाक बोलेकि, उसके बाद हे युवराज! धृतराष्ट्रके

ततःकंसंमृतंसहसावीक्ष्यसमागतांस्तस्यानुजान्खड्गचर्मधरान्दृष्ट्वाबलभद्रोमुद्गरंनीत्वासर्वतोभिजघानतदादेवदुंदुभयोनेदुर्जयध्वनिश्चाभूद्देवाः
पुष्पैर्ववृषुर्विद्याधर्योननृतुर्विद्याधरगंधर्वकिन्नराजगुः ॥ १६ ॥ अथसर्वानाश्वास्यपितरौविमोक्ष्योग्रसेनायराज्यंदत्त्वोपवीतंप्राप्यसंदीपनाद्वि-
द्याअधीत्यतस्मैमृतंसुतंदक्षिणांदत्त्वाशंखंहत्वामथुरामेत्यवसन्व्रजशांत्यैचोद्धवंप्रेषयित्वापुनःस्वयंव्रजंगत्वाराधायैगोपीभ्योदर्शनंदत्त्वारासम-
ध्येभूमोक्षंकृत्वापुनर्मथुरायांमाथुरेशोरराजरामोपिकोलवधंकृत्वातस्यांविरराजेतितयोर्मथुरायांसहस्रशः पवित्राणिविचित्राणिचिरित्राणि बभूवुः
॥ १७ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां श्रीबलभद्रखंडेमथुरालीलावर्णनंनामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ प्राड्विपाकउवाच ॥ अथयुवराजधार्तराष्ट्रत-
योर्द्वारकालीलांसंक्षेपेणशृणुतात ॥ ततःकंसस्यपारोक्ष्यंसौहृदंकुर्वंतंसमागतंजरासंधंजित्वाद्वारकाख्यंसमुद्रेदुर्गंनिर्मायतत्रैकरात्रेणज्ञातीन्समा-
धायमुचुकुंददृशाकालंघातयित्वापुनश्चरामकृष्णौप्रवर्षणाद्रिमेत्यतस्माद्द्वारकायांजग्मतुः ॥ १ ॥ अथब्रह्मलोकात्समागतोसुतांरत्नयुतांविधिव-
द्धलशालिनेबलभद्रायदत्त्वातपःकर्तुंबदर्याख्यंगतवान् ॥२॥ अथश्रीकृष्णःशत्रूणांपश्यतांकुंडिनपुराद्रुक्मिणींजहारतथाजांबवतींसत्यभामां-
कालिंदींमित्रविंदांनाग्निजितींभद्रां लक्ष्मणांचभौमंहत्वाषोडशसहस्रंशतंचराजकन्याउवाह ॥ ३ ॥

पुत्र! अब उनकी द्वारकाकी लीलाको संक्षेपसे सुनो, फिर कंसके मरनेके बादमें मित्रता करते हुये आये जरासंधको जीतकर समुद्रमें द्वारकापुरी दुर्गको रचकर, उसमें रात्रिमेंही जातिवालोंको बैठाकर मुचुकुन्दकी दृष्टिसे कालयवनको मरवाकर फिर प्रवर्षण पर्वतमें जाकर फिर द्वारकाको आये ॥ १ ॥ उसके बाद जब ब्रह्मलोकसे रैवत राजा आये तब विधिपूर्वक रत्नों-सहित रेवती कन्याको बली बलभद्रजीको देकर तप करनेके लिये बदरिकाश्रमको गये ॥ २ ॥ उसके बाद श्रीकृष्ण सब शत्रुओंके देखते २ कुण्डिनपुरसे रुक्मिणीको हर लाये, वैसेही जाम्बवती, सत्यभामा, कालिंदी, मित्रवृन्दा, नाग्नजिती, भद्रा, लक्ष्मणा, इनके साथ विवाह किया, फिर भौमासुरको मारकर सोलह हजार एकसौ कन्याएं विवाह लीं ॥ ३ ॥

भीष्मककी कन्या रुक्मिणीमें श्रीकृष्णका पुत्र कामदेवका अवतार प्रद्युम्न पिताके समान सुन्दर हुआ, उसके अनिरुद्ध हुआ, जो ब्रह्माका अवतार है ॥४॥ उसके बाद एक दिन उग्रसेनने राजसूय यज्ञका बीडा लेकर प्रद्युम्न यादवों और भाइयोंके साथ जम्बूद्वीपके नौखण्डकी विजय करते कामदुघ नदके किनारेपर रहनेवाले मालतीपुराधीश गन्धर्व राज पतंगके साथ युद्ध किया ॥ ५ ॥ वहाँ गदायुद्धमें बलदेवके भाई गदने गदा लेकर गदाधारी जो पतंग है, उसको मारा, पतंगने भी गदको छातीमें मारा, ऐसे दो घडी तक उनका गदायुद्ध हुआ बादमें पतंगकी गदाके प्रहारसे गद मूर्च्छित होकर गिर पडा ॥६॥ तब हाहाकार होने लगा, तब कोटिसूर्य प्रकाश वाले बलभद्र प्रगट हुये, तब हलसे गन्धर्वोंकी सब सेनाको खेंचकर मूसलसे मारने लगे, तब उस मूसलसे हाथी, घोडे, रथ और पैदल सैनिकों समेत सब सेनाका चूर्ण हो गया ॥७॥ तब विरथ (रथहीन) हुये भयभीत पतंगने वहाँ

राजन्भीष्मककन्यायांरुक्मिण्यांश्रीकृष्णस्यपुत्रः प्रथमंकामदेवावतारः पितृसमसुंदरआसीत्तस्मादनिरुद्धःसुरज्येष्ठावतारोभूत् ॥४॥ अथैकदो-
ग्रसेनराजसूयाध्वरेनागवल्लींगृहीत्वादिग्विजयार्थीनिर्गतःप्रद्युम्नोयादवैर्भ्रातृभिःसहजंबूद्वीपेनवखंडविजयंकुर्वन्कामदुघनदसमीपेवसंतमालतीपु-
राधीशेनपतंगेनगंधर्वराजेनयुयुधे॥५॥तत्रगदायुद्धेगदामादायगदेबलदेवानुजोगदाधरंस्वगदयापतंगंतताडसोपितंहृदिचौजसाजघानेत्थंतयोर्गदा-
युद्धंघटिकाद्वयंबभूवपतंगगदाप्रहारेणगदोयुद्धेक्षणंमूर्च्छांजगाम ॥६॥ तदाहाहाकारेजातेकोटिमार्तंडसन्निभोबलभद्रआविर्भूत्वागंधर्वाणांसर्वब-
लंहलाग्रेणसमाकृष्यतदुपरिक्लिष्टमुशलताडनंचकारतेनयुगपत्सर्वसैन्यंसभटद्विपरथंचूर्णीबभूव ॥७॥ अथपतंगोपिविरथोभयभीतस्तस्मात्पुरीं
गत्वापुनर्योद्धुंयादवैःसेनाव्यूहंचकारतच्छ्रुत्वाक्रुद्धोबलभद्रोगंधर्वाणांमहापुरींशतयोजनविस्तीर्णांवसंतमालतीनाम्नींसर्वांहलेनसंविदार्यसहसा-
काम दुघेनसंकर्षणोविचकर्ष ॥८॥ अथहवावपतितैर्गृहैर्हाहाकारेजातेतिर्यक्पोतमिवाघूर्णांसमस्तांनगरींवीक्ष्यगंधर्वैर्गंधर्वेशःपतंगःकृतांजलिर्ध-
र्षितो विश्वकर्मकृतानांवियानानांद्विलक्षंगजानांचतुर्लक्षंचाश्वशतार्बुदंचदिव्यानांरत्नानांभारंदशशतार्बुदंचबलिंनीत्वाबलशालिनेबलायद-
त्त्वाप्रदक्षिणीकृत्यप्रणनाम ॥ ९ ॥ अथतथासांबमोक्षार्थंबलभद्रइहागतोभवतांपश्यतांपुरमिदंहलाग्रेणसंविदार्यश्रीगंगांसाक्षात्संकर्षणो-
विचकर्षतथैवनागकन्याभिर्गोपीभिर्निर्मितेरासमंडलेकालिंदींहलाग्रेणविचकर्ष ॥ १० ॥

से पुरीमें जाकर फिर यादवोंके साथ लडनेके लिये सेनाका व्यूह बांधा, उसको सुनकर क्रोध करके बलभद्रजी उसकी सौ योजनकी मालतीपुरीको उखाडकर कामदुघ नदमें संकर्षण जी खेंचने लगे ॥ ८ ॥ जब घर गिरने लगे, हाहाकार मचा, तब टेढी नावकी तरह घूमती पुरी होगई, उसको घूमती हुई देखकर पतंग गन्धर्व गन्धर्वोंको साथ लेकर हाथ जोडकर धर्षित होकर आया, विश्वकर्माके बनाये हुये दो लाख विमान चार लाख हाथी, करोड घोडे, दस करोड भार दिव्यरत्न, सौ करोड मोहरें बलशाली बलभद्रको भेंट देकर परिक्रमा देकर प्रणाम की ॥ ९ ॥ फिर साम्बके छुडानेके लिये यहाँ आये बलदेव तुम्हारे देखते २ हलसे इस हस्तिनापुरको खेंचकर गंगामें डालने लगे, फिर नागकन्या गोपियोंके साथ रास मण्डलमें कालिन्दीको हलके अग्रभागसे खेंचा ॥ १० ॥

फिर एक समय द्विविद नामका बंदर सुग्रीवका मन्त्री, भौमासुरका सखा, नारदका भेजा हुआ, रैवत पर्वतमें युद्ध करनेके लिये आया, तब बलदेवजीके साथ चार घडी युद्ध किया, वृक्ष, पत्थर, शिला और घूंसोंसे युद्ध करते हुये द्विविदको मूसलसे शिरमें मारा, किन्तु जब मरा नहीं, तब घूंसेसे मारकर भागते हुये उसको भुजाओंसे पकडकर रैवतपर्वतपर गिराकर बलदेवजीने हृदयमें घूंसा मारा, तब उसके गिरनेसें तालवन सहित पर्वत घटकी तरह हिला ॥ ११ ॥ हे राजन्! फिर तुम्हारा और पाडण्वोंका युद्धका उद्यम सुनकर तीर्थयात्राके बहाने नगरके ब्राह्मणोंको साथ लेकर तीर्थयात्राके लिये निकले तब पुरके बाहर निकलकर द्वारिकाकी परिक्रमा करके सिद्धाश्रममें और प्रभासमें स्नान करके पश्चिम दिशामें सरस्वती प्रतिस्रोता, सैंधवारण्य, जम्बूमार्ग, उत्पलावर्त अर्बुद, हेमवंत, सिन्धुनदी, इनमें स्नान करके विन्दुसर, त्रितकूप, सुदर्शन, आत्रित, औशनस, आग्नेय, वायव, सौदास, गुहतीर्थ श्राद्धदेवादिक

अथैकदाद्विविदोनामवानरः सुग्रीवसचिवोभौमसखोनारदेनप्रेरितोहरियोद्धुकामोऽवतरद्रैवतकाचलमेत्यबलेनघटिकाचतुष्टयंयुयुधेद्रुमदंडशि-
लामुष्टिभिर्विनिघ्नंततंबलभद्रोमुसलेनमूर्ध्निनिर्जघानपुनर्नमृतंमुष्टिनाघातयित्वापलायंतंभुजदंडाभ्यांगृहीत्वारैवतकाचलपृष्ठेपातयित्वाच्युताग्र-
जोदृढेन मुष्टिनाहृदितंतताडतत्पतनेनसटंकः शैलेंद्रः कमंडलुरिवचकंपे। ११। अथहवावराजन्नद्यभवतांपांडवैः सहयुद्धोद्यमंश्रुत्वातीर्थाभिषेकव्याजे-
नब्राह्मणैर्नागरैः सहितः पुराद्विनिर्गतोद्वारकांप्रदक्षिणीकृत्यसिद्धाश्रमप्रभासयोः स्नात्वापश्चिमायांदिशिसरस्वतीप्रतिस्रोतः सैंधवारण्यजंबूमार्गो-
त्पलावर्तार्बुदहेमवंतसिन्धूनुपस्पृश्यपृथग्बिंदुसरस्त्रितकूपसुदर्शनत्रितौशनसाग्नेयवायवसौदासगुहतीर्थश्राद्धदेवादीनितीर्थानिस्नात्वोत्तरस्यां -
दिशिकैलासकरवीरमहायोगगणेशकौबेरप्राग्ज्योतिषरंगवल्लीसीतारामक्षेत्रचैत्रदेशवसन्ततिलकादशार्णभद्राकूर्मतीर्थपुष्पमालाचित्रवनचन्द्र -
कांतानैःश्रेयसमनुपर्वतचक्षुःकामशालिनीकामवनवेदक्षेत्रसीतापृथुतीर्थतपोभूमिलीलावतीवेदनगरगांधर्वशक्रभीमरथी श्रीजाह्नवीकालिंदीहरि-
द्वारकुरुक्षेत्रमथुरापुष्करेषुस्नात्वापुनस्तस्माच्छांभलंसौकरंप्राप्यचान्यानिकुर्वन्तीर्थानिसाक्षात्संकर्षणोनैमिषारण्यंजगाम ॥ १२ ॥ तंसमागतं-
वीक्ष्यशौनकादयोमुनयः समुत्थायववंदिरेचार्चयन् ॥१३॥ तत्रवेदव्यासशिष्यरोमहर्षणमप्रत्युत्थायिनंवीक्ष्यकरस्थेनकुशाग्रेणतंजघानेतितदा-
हाहेतिवादिनोमुनीन्वीक्ष्यलोकपावनोपिलोकसंग्रहार्थंद्वादशमासान्तीर्थस्नानेनविशुद्धयेमनोदधे ॥ १४ ॥

तीर्थोंमें स्नान करके फिर उत्तर दिशामें कैलास, करवीर महायोगगणेश, कौबेर प्राग्ज्योतिष, रंगवल्ली, सीताराम क्षेत्र चैत्रदेश, वसन्ततिलका, दशार्ण भद्रा, कूर्मतीर्थ पुष्पमाला चित्रवन, चन्द्रकांता नैश्रेयस, मनुपर्वत, चक्षुःकामशालिनी, कामवन, वेदक्षेत्र, सीतागंगा, पृथुतीर्थ, तपोभूमि, लीलावती, वेदनगर, गान्धर्व, शक्रतीर्थ, भीमरथी, जाह्नवी, कालिन्दी हरिद्वार, कुरुक्षेत्र, मथुरा, तीनों पुष्करोंमें स्नान करके फिर सांभल, सोरों, और भी तीर्थ करते २ साक्षात् संकर्षणजी नैमिषारण्यको गये ॥ १२ ॥ उनको शौनकादिक मुनि देखकर उठ खडे हुये, फिर पूजन करके प्रणाम किया ॥ १३ ॥ किन्तु वहाँ वेदव्यासजीका शिष्य रोमहर्षण नहीं उठा, उसको देखकर हाथमें जो कुशाका अग्रभाग था, उससे उसको मारा, तब हाहाकार करते मुनियोंको देखकर लोकके पवित्रकर्ता होकर भी लोकके सिखानेके लिये बारह महीनेतक तीर्थयात्रा करनी. यह मनमें निश्चय किया ॥ १४ ॥

वहाँ इल्वलका पुत्र वल्वल नामका दैत्य पर्व पर्वपर आकर प्रचंड पवनसे धूलकी वर्षा करता, रुधिर, राध (मवाद) विष्ठा, मूत्र मदिरा और मांसकी वर्षा करता हुआ दुर्गन्धि करता आया दीखा, तब जीभ लटक रही है जिसकी, वज्रसे अंगवाले, काजल जैसे काले, लाल मूंछोंवाले, भयंकर उस दैत्यको देखकर ब्राह्मणोंकी शान्तिके लिये बलदेवजीने आकाशमेंसे उसको हलसे खेंचकर मूसलसे मारा, तब मूसलका मारा हुआ वह दैत्य आकाशमेंसे घडेकी तरह फूटकर मरकर गिर पडा॥ १९॥ तब मुनीश्वरोंने प्रसन्न होकर, स्तुति करके बलदेवजीको सच्चे आशीर्वाद दियें, और जैसे देवता इन्द्रका अभिषेक करते हैं, वैसे उनका अभिषेक किया, फिर बलदेवजी उनसे आज्ञा लेकर सरयू, कौशिकी, मानसरोवर, गण्डकी, और गौतमी इनमें स्नान करके अयोध्या, नंदिग्राम, बर्हिष्मती, ब्रह्मवर्तादिकोंमें स्नान करके तीर्थ राज प्रयागमें आये, वहाँ दश हजार हाथियोंका दान किया ॥ १६ ॥ फिर चित्रकूट, विंध्याचल काशी, विपाशा, शोण, मिथिला, गयादिक तीर्थोंमें स्नान करके गङ्गासागर सङ्गममें गये, वहाँ सुवर्णके सींगोंवाली, वस्त्रों सहित, पृथक् पृथक् एक २ भार रत्न सहित सौ करोड गायें

तत्रेल्वलसुतोबल्वलोनामदैत्यउपावृत्तेपर्वणिपांसुवर्षणप्रचंडेनवायुनापूयशोणितविण्मूत्रसुरामांसदुर्गन्धनसमागतःखेदृष्टोभूदथललज्जिह्ववज्रांगंभिन्न
कज्जलांजनचयकृष्णंतप्तताम्रश्मश्रुभयंकरंब्रह्मशांतयेहलाग्रेणसमाकृष्यगगनान्मुसलेनमूर्ध्निबलभद्रस्तंतताडतत्ताडनेनाकाशात्सोपिकमंडलुरिवव्य
सुःपपात ॥ १९ ॥ अथप्रसन्नामुनयोपिरामंसंस्तुत्याऽवितथाशिषःप्रयुज्यवृत्रघ्नंविबुधाइवाभ्यषिंचन्तैरभ्यनुज्ञातःसरयूकौशिकीमानससरोवरग-
ण्डकीगौतमीषुस्नात्वाऽयोध्यानंदिग्रामबर्हिष्मतीब्रह्मावर्तादीन्युपस्पृश्यतीर्थराजंप्रयागंजगामयत्रायुतगजदानंचकार ॥ १६ ॥ ततश्चित्रकूटविंध्या-
चलकाशीविपाशाशोणमिथिलागयादिषुस्नात्वागंगासागरसंगमंजगामतत्रसुवर्णशृंगांबरसंयुक्तंपृथक्सुवर्णरत्नभारसहितंगवांकोटिशतंब्राह्मणेभ्यःप्रा
दात्ततःक्रमशोदक्षिणस्यांदिशिमहेन्द्राद्रिसप्तगोदावरीवेणीपंपाभीमरथीस्कंदक्षेत्रश्रीशैलवेंकटकांचीकावेरीश्रीरंगर्षभाद्रिसमुद्रसेतुकृतमालाताम्रपर्णीम
लयाचलकुलाचलदक्षिणसिंधुफाल्गुनपंचाप्सरोगोकर्णशूर्पारकतापीपयोष्णीनिर्विंध्यादण्डकरेवामाहिष्मत्यवंतिकादीनितीर्थानिसाक्षात्संकर्षणः
करिष्यतिस्मततस्त्वत्सहायार्थविशसनेचागमिष्यति ॥ १७ ॥ इदंबलभद्रचरित्रंपवित्रंसर्वपापाभिहरणंतीर्थयात्रावर्णनंनितरांमयावर्णितंसर्वमंगलक
रणंकौरवेंद्रकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि॥ १८ ॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीबलभद्रखण्डेप्राड्विपाकदुर्योधनसंवादेद्वारकालीलावर्णनंनामाष्टमोऽध्यायः॥ ८ ॥

ब्राह्मणोंको दानमें दीं, वहाँसे क्रमसे दक्षिण दिशामें महेन्द्राचल पर्वत, सप्त गोदावरी, वेणी, पम्पा, भीमरथी, स्कन्द क्षेत्र, श्रीशैल, वेंकट, कांचीपुर, कावेरी, रंगनाथ, ऋषभाद्रि, समुद्र सेतु, कृतमाला, ताम्रपर्णी, मलयाचल, कुलाचल दक्षिण सिन्धु, फाल्गुन तीर्थ, पंचाप्सर, गोकर्ण, सूर्पारक, तापी, पयोष्णी, निर्विंध्या, दंडक, रेवा, माहिष्मती, और अवन्तिका इतने तीर्थोंको साक्षात् संकर्षण भगवान् बलदेवजी करेंगे, फिर तुम्हारी सहायताके लिये आयेंगे ॥ १७ ॥ यह बलभद्रजीका पवित्र चरित्र सब पापोंको हरनेवाला तीर्थयात्राका वर्णन विस्तार पूर्वक मैंने वर्णन किया है, यह सब मंगलका करनेवाला है, हे कौरवेन्द्र ! अब तुम क्या सुनना चाहते हो ॥ १८ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां बलभद्रखंडे भाषाटीकायां द्वारका लीला वर्णनं नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

तब दुर्योधन बोला कि हे मुनि शार्दूल! भगवान् बलभद्रने नाग कन्या गोपियोंसे कालिन्दीके तीरपर कब विहार किया? वह कहिये ॥१॥ तब प्राड्विपाक बोले कि, एक समय द्वारिका नगरसे तालांक(तालकी ध्वजावाले)रथमें बैठकर सुहृदोंको देखनेके लिये उत्कंठित नन्दराज, गोकुल, गौ, गोपाल, और गोपियोंके गणोंमें संकुल संकर्पण आये, बहुत दिनोंसे उत्कंठित हुये नन्दराज, यशोदा, गोपाल, गोपी और गौओंके गणोंसे युक्त संकर्पण आये, तब सबसे मिले, और चैत्र और वैशाख दो महीने वहाँ रहे ॥ २ ॥ जो न नाग कन्याएं थीं, वे गोप कन्याएं होकर बलभद्रकी प्राप्तिके लिये गर्गाचार्यसे बलभद्र पंचांग लेकर सिद्ध होगईं, उन्हींके साथ प्रसन्न होकर बलभद्रने कालिन्दीके तटपर रासमंडल किया, तभी चैत्र पूर्णमासीके दिन लाल लाल पूर्ण चन्द्रमा सम्पूर्ण वनको रंगता हुआ शोभित हुआ ॥ ३ ॥ कमलकी सुगन्धि लिये शीतल, मन्द, पवन सब ओरसे चलीं, आनन्ददायिनी कालिंद

॥ दुर्योधनउवाच ॥ मुनिशार्दूलभगवान्बलभद्रोनागकन्याभिर्गोपीभिःकदाकालिंदीकूलेविजहार ॥ १ ॥ प्राड्विपाकउवाच ॥ एकदाद्वारका-
नगराद्धितालांकंरथमास्थायसुहृदोदिदृक्षुरुत्कठोनन्दराजगोकुलगोगोपालगोपीगणसंकुलःसंकर्पणआगतश्चिरोत्कण्ठाभ्यां नन्दराजयशोदाभ्यां
परिष्वक्तोगोपीगोपालगोभिर्मिलित्वातत्रद्वौमासौवासंतिकौचावात्सीत्॥२॥अथचयानागकन्याःपूर्वोक्तास्तागोपकन्याभूत्वाबल भद्रप्राप्त्यर्थं-
गर्गाचार्याद्बलभद्रपंचागंगृहीत्वातेनैवसिद्धाबभूवुःताभिर्बलदेवएकदाप्रसन्नःकालिंदीकूलेरासमंडलंसमारेभेतदैवचैत्रपूर्णचन्द्रोरुण, वर्णःसम्पूर्णव-
नंरंजयन्विरेजे॥३॥ शीतलामन्दयानाःकमलमकरंदरेणुवृन्दसंवृताःसर्वतोवायवःपरिवबुःकलिन्दगिरिनन्दिनीचललहरीभिरानं, ददायिनीपुलि-
नंविमलंव्याचितंचकार ॥ ४ ॥ तथाचकुञ्जप्रांगणनिकुञ्जपुञ्जैःस्फुरल्ललितपल्लवपुष्पपरागैर्मयूरकोकिलपुंस्कोकिलकूजितैर्मधुम, त्तमधुपमधुरध्व-
निभिर्व्रजभूमिर्विभ्राजमानाबभूव॥४॥तत्रक्वणद्वंटिकनूपुरः स्फुरन्मणिमयकटककटिसूत्रकेयूरहारकिरीटकुण्डलयोरुपरिकम लपत्रैर्नीलांबरोवि-
मलकमलपत्राक्षोयक्षीभिर्यक्षराडिवगोपीभिर्गोपराड्रासमण्डलेरेजे।५।अथवरुणप्रेषितावारुणीदेवीपुष्पभारगंधिलोभिमिलिन्दनादितवृक्षकोट-
रेभ्यःपतंतीसर्वतोवनंसुरभीचकारतत्पानमदविह्वलःकमलविशालताम्राक्षोमकरध्वजावेशचलद्भुय्यांगभङ्गोविहारखेदप्रस्वेदांबुकणैर्गलद्गंडस्थल-
पत्रभङ्गोगजेंद्रगतिर्गजेंद्रशुण्डादंडसमदोर्दंडमंडितोगजीभिर्गजराजेंद्रइवोन्मत्तःसिंहासनेन्यस्तहलोमुसलपाणिःकोटींदुपूर्णमण्डलसंकाशःप्रोद्य-
मद्रत्नमंजीरप्रचलनूपुरप्रक्वणत्कनककिंकिणीभिःकंकणस्फुरत्ताटंकपुरटहारश्रीकण्ठांगुलीयशिरोमणिभिःप्रविडंबिनीकृतसर्पिणीश्यामवेणीकु -
न्तललितगण्डस्थलपत्रात्रलिभिःसुन्दरीभिर्भगवान्भुवनेश्वरोविभ्राजमानोविरराजअथचरेमे ॥ ६ ॥

गिरि नंदिनी (यमुना) ने अपनी चञ्चल लहरोंसे निर्मल पुलिनको व्याप्त कर दिया, वैसेही कुञ्जके आंगन, और निकुञ्जके पुञ्जोंसे, खिले हुये मनोहर पल्लव पुष्परागोंसे, और कोकिल, मोर और पुंस्कोकिलोंके शब्दोंसे, और मधुके मतवाले भ्रमरोंकी गुंजारसे व्रजकी भूमि शोभायमान हुई ॥४॥ वहाँ बजती हुई घंटी, नूपुर, और देदीप्यमान मणिमय मुकुट, करधनी, बाजू, हार और किरीट, केयूर, कुंडल, उनके ऊपर कमल पत्तोंसे शोभित नील वस्त्रधारी, विमल कमल पत्र जैसे नेत्र हैं जिनके, वे बलभद्रजी रासमंडलमें गोपियोंसे शोभित हुये जैसे यक्षिणियोंसे कुबेर शोभित होते हैं ॥५॥ उसके बाद वरुणकी भेजी हुई वारुणी देवी (मदिरा)की पुष्पोंके भारसे सुगन्धिके लोभी भ्रमरोंसे नादित वृक्षोंके खोडरमेंसे पांच धाराएं गिरीं,

उस मदिराने समस्त वनको सुगन्धित कर दिया, उस मदिराको पीनेसे मदसे विह्वल हैं नेत्र जिनके, कमल पत्र जैसे बडे २ लाल २ नेत्र कामदेवके आवेशसे चलायमान हैं जिनके, विहारके परिश्रमसे पसीनेकी छोटी २ बूंदोंसे गलित हुई है पत्र भंगी रचना जिनकी, और गजराजकी चाल और हाथीकी सूंड जैसे भुज दंडोंसे शोभित, हथिनियोंके संगमत्त गजेन्द्र जैसे उन्मत्त, सिंहासनपर रखा है हल जिन्होंने, मूसलको हाथमें लिये, करोड चन्द्रमंडलके जैसे प्रकाशसे प्रकाशित, रत्नोंके घुंघुरु जिनमें ऐसे बज रहे नूपुरोंसे और सुवर्णकी, करधनी कंकण कुंडल सुवर्णके हार, श्रीकंठ, अंगूठी, शिरोमणि, सर्पिणीसी श्यामवेणी और अलकावलीसे शोभित कपोल और पत्रावलिसे अत्यन्त मनोहरा जो व्रज सुन्दरियाँ उनसे देदीप्यमान श्रीबलभद्र शोभित हुये और उन्हींके संग रमे॥६॥ फिर कालिंदीके किनारेके वनोंमें विहार करनेके परिश्रमसे आये पसीनेकी बूंदोंसे व्याप्त है, मुखारविन्द जिनका, उन बलभद्रजीने उस परिश्रमको दूर करनेके लिये स्नान जलविहारके लिये दूरसेही यमुनाको बुलाया, तब नहीं आई यमुना नदीको क्रोधित हुये हलसे खेंचकर यह बोले॥७॥ कि, हे यमुने! आज मेरी अवज्ञा करके मेरे बुलानेपर

अथवावकालिन्दीकूलकांतारपर्यटनविहारपरिश्रमोद्यत्स्वेदबिन्दुव्याप्तमुखारविंदः स्नानार्थंजलक्रीडार्थंयमुनांदूरात्सआजुहावततस्त्वनागतांतटिनींहलाग्रेणकुपितोविचकर्षइतिहोवाचच ॥७॥ अद्यमामवज्ञायनायासिमयाहूतापिमुसलेनत्वांकामचारिणींशतधानेष्यएवंनिर्भर्त्सितासाभूरिभीतायमुनाचकितातत्पादयोःपतितोवाच ॥८॥ रामरामसंकर्षणबलभद्रमहाबाहोतवपरंविक्रमंनजानेयस्यैकस्मिन्मूर्ध्निसर्षपवत्सर्वंभूरिखंडमंडलंदृश्यतेतस्यतवपरमनुभावमजानंतींप्रपन्नांमांमोक्तुंयोग्योसित्वंभक्तवत्सलोसि ॥ ९ ॥ इत्येवंयाचितोबलभद्रोयमुनांततोऽमुंचत् पुनःकरेणुभिःकरीवगोपीभिर्गोपराड्जलंविजगाहपुनर्जलाद्विनिर्गत्यतटस्थायबलभद्रायसहसायमुनाचोपायनंनीलांबराणिहेमरत्नमयभूषणानिदिव्यानिचददौहवावतानिगोपीयूथायपृथक्पृथग्विभज्यस्वयंनीलांबरेवसित्वाकांचनींमालांनवरत्नमयींधृत्वामहेंद्रोवारणेंद्रइवबलभद्रोविरेजे ॥ १० ॥

नहीं आई हो, इसलिये इच्छाचारिणी जो तू है, सो तेरे मूसलसे सौ टुकडे करूँगा, ऐसे यमुनाको ललकारा, तब भयभीत होकर यमुना उनके चरणोंमें गिर पडी और यह बोली॥८॥ हे राम! हे राम! हे संकर्षण! हे बलभद्र! हे महाबाहो! आपके परम पराक्रमको मैं नहीं जानती हूँ, जिन आपके हजार शिरोंके बीचमें एक शिरपर रखा हुआ भूमण्डल सरसोंकी बराबर दिखाई देता है, उन आपके प्रभावको मैंने नहीं जाना, सो अब मैं आपकी शरणमें आई हूँ, सो आप मुझको छोडनेके योग्य हो, आप भक्तवत्सल हो ॥ ९ ॥ ऐसे जब प्रार्थना की, तब यमुनाजीको छोड दिया, फिर जैसे हथिनियोंसे हाथी विहार करता है, वैसेही गोपियोंको संग लेकर गोपेश्वर बलभद्रजी यमुनाजलको विलोडने लगे, फिर जब जलसे बाहिर निकले, यमुनाके तटपर बैठे, बलभद्रजीके लिये नीलाम्बर, रत्नोंकी माला, दिव्य रत्नोंके गहने, यमुनाजीने भेंट किये, उनको गोपियोंके यूथके लिये पृथक् २ बांटकर आपने सबको धारण कराये, और आपने भी दोनों नीलवस्त्र पहिने, नव रत्नमयी सोनेकी माला धारणकी, तब इन्द्रके हाथी जैसी बलदेवजीकी बडी शोभा हुई ॥ १० ॥

हे कौरवेन्द्र ! इस प्रकार रमण करते हुये यादवेन्द्रको सम्पूर्ण वसन्त ऋतुकी रात्रियाँ बीत गईं, भगवान् बलभद्रके पराक्रमको अबतक हस्तिनापुरकी तरह श्रीयमुनाजी बलभद्रजीके
खेंचे हुये मार्गसे सूचित करती हैं, इस रामकी रास कथाको जो कोई सुनता है, वह सब पापोंके समूहको काटकर उन्हीके परमानन्दके पदको प्राप्त होता है, अब तुम क्या
सुनना चाहते हो, सो कहो ॥ ११ ॥ इति श्रीम० सं० बलभद्रखण्डे भाषाटीकायां बलभद्ररास क्रीडावर्णनं नाम नवमोध्यायः ॥९॥ तब दुर्योधनने पूछा कि, हे भगवन् ! गोपियोंको
गर्गाचार्यने बलभद्र पंचांग कैसा दिया,सो मेरे सामने कहिये ? आप तो सर्वज्ञ हैं ॥ १ ॥ तब प्राड्विपाक बोले कि,हे कौरवेन्द्र ! एक समय गर्गाचार्य गर्गाचलसे यमुनाके स्नान
करनेके लिये व्रजमण्डलमें आये, वहाँ एकान्तमें पवनसे हिलती हुई मनोहर लताओं,वृक्षोंके पत्तों और फूलोंकी सुगन्धिसे मतवाले भ्रमर जिनमें हैं,ऐसे कालिंदीके तटवर्ती निकुञ्जमें
बैठे रामकृष्णके ध्यानमें तत्पर गर्गाचार्यको नमस्कार करके "हम नागेन्द्रोंकी कन्याएँ थीं, वे ही अब यहाँ वृन्दावनमें आकर गोपियाँ हुई हैं" इस प्रकार जिनको अपने पूर्वजन्मका

इत्थंकौरवेंद्रयादवेंद्रस्यरमतःसर्वावासंतिकीर्निशाव्यतीताबभूवुर्भगवतोबलभद्रस्यहस्तिनापुरमिववीर्य्यंसूचयतीवह्यद्यापिचकृष्टवर्त्मनायमुना-
वहतिइमांरामस्यरासकथां यःशृणोतिश्रावयतिचससर्वपापपटलंछित्त्वातस्यपरस्परमानंदपदंप्रतियातिकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि।११।इतिश्रीमद्गर्ग-
संहितायांश्रीबलभद्रखंडेपाड्विपाकदुर्योधनसंवादेरासक्रीडावर्णनंनामनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ दुर्योधनउवाच ॥ भगवन्गर्गाचार्येणगोपीयूथा-
यकथंदत्तंबलभद्रपंचांगंतत्कृपयावदतात्त्वंसर्वज्ञोसि ॥ १ ॥ प्राड्विपाकउवाच ॥ कौरवेंद्रएकदागर्गःकलिंदनंदिनींस्नातुंगर्गाचलाद्व्रजमं-
डलंचाजगामतत्रैकांतेमरुल्लोलैजल्लिलतलतातरुपल्लवपुष्पगंधमत्तमिलिंदपुंजेकालिंदीकूलकलितनिकुंजेश्रीरामकृष्णध्यानतत्परंगर्गाचार्यंप्रण-
म्यनागेंद्रकन्याःस्मइतिजातिस्मरागोपकन्याःश्रीमद्बलभद्रप्राप्त्यर्थंसेवनंपप्रच्छुस्तासांपरमांभक्तिंवीक्ष्यपद्धतिपटलस्तोत्रकवचसहस्रनामानि-
गोपीयूथायसंप्रददौकिंभूयस्त्वंतद्ग्रहणंकर्तुमिच्छसिवदतात् ॥२॥ दुर्योधनउवाच ॥ रामस्यपद्धतिंब्रूहियया सिद्धिंव्रजाम्यहम् ॥ त्वंभक्तवत्स-
लोब्रह्मन्गुरुदेवनमोस्तुते ॥ ३ ॥ प्राड्विपाकउवाच ॥ राममार्गस्यनियमंशृणुपार्थिवसत्तम ॥ येनप्रसन्नोभवतिबलभद्रोमहाप्रभुः ॥ ४ ॥
सहस्रवदनोदेवोभगवान्भुवनेश्वरः ॥ नदानैर्नचतीर्थैश्चभक्त्यालभ्यस्त्वनन्यया ॥ ५ ॥

स्मरण हो आया है,ऐसी अपने पूर्वजन्मकी याद करनेवाली गोपकन्याओंनेभी श्रीमद्बलदेवजीकी प्राप्तिके लिये गर्गमुनिसे सेवन करनेकी विधि पूछी,तब श्रीगर्गाचार्यने उनकी परमाभक्ति
को देखकर श्रीबलदेवजीकी पद्धति,पटल,स्तोत्र,कवच और सहस्रनाम, ये गोपियोंके यूथको दे दिये, सो अब तुम उन्हीं पद्धति आदिकोंको फिर सुनना चाहते हो क्या ? यदि
सुनना चाहते हो तो कहो ? ॥२॥ तब दुर्योधनने कहा कि, हे प्राड्विपाकजी ! जिसके सुननेसे मैं सिद्धिको प्राप्त होऊँ,सो पहिले श्रीबलदेवजीकी पद्धतिको मुझसे कहिये, हे ब्रह्मन् !
हे गुरुदेव ! मैं आपको प्रणाम करता हूँ,आप भक्तवत्सल हो ॥ ३ ॥ तब प्राड्विपाक बोले कि,हे पार्थिवसत्तम ! तू श्रीबलदेवजीकी पद्धतिके नियमको सुन, जिसके सुननेसे महाप्रभु
बलदेवजी प्रसन्न होते हैं॥४॥हजार जिनके मुख हैं,ऐसे देव भगवान् भुवनोंके स्वामी बलदेवजी केवल अनन्याभक्तिसेंही मिलते हैं,न दान करनेसे और न तीर्थोंमें विचरनेसे मिलते हैं॥५॥

सत्संगको प्राप्त होकर श्रीहरि गुरुकी भक्तिको बहुत जल्दीसे सीखना चाहिये, जिसके प्रेम लक्षणा भक्तियोग उत्पन्न हो जाता है, वह सिद्ध कहा गया है ॥६॥ ब्राह्ममुहूर्तमें(चारघडी रात्रि शेष रहनेपर) उठकर "रामकृष्ण" ऐसे कहते हुये भूमिको और गुरुको प्रणाम करके पीछे भूमिका स्पर्श करे ॥७॥ फिर जलका स्पर्श करके एकान्तमें कुशके आशनपर बैठकर अपनी गोदमें दोनों हाथोंको रखकर अपनी नासिकाके अग्रभागको देखता रहे ॥८॥ फिर गौरवर्णवाले, नीलवस्त्रधारी, अत्यन्त प्रिय वनमालासे विभूपित, सनातनदेव हरि बलभद्रका ध्यान करे॥९॥ऐसे प्रभु बलदेवजीकी प्रसन्नताके लिये उनके ध्यानमें तत्पर तीनोंकालकी संध्या करनेवाला, शुद्ध, मौन रहकर क्रोधका परित्यागकर॥१०॥कामनाओंसे रहित, लोभको छोडकर, मोहरहित होकर सत्य बोलनेवाला हो, एकसमय भोजन करे, जल पीवे तो दो बारसे अधिक न पीवे॥११॥रेशमीवस्त्र पहिने, भूमिपर सोवे, खीरका भोजन करे, ऐसे षट् (छओं) इन्द्रियोंको जीतकर एकाग्र मन करे ॥१२॥ उसके ऊपर भगवान् हरि संकर्षण सदा प्रसन्न होते हैं, जो साक्षात् परिपूर्णतम सब कारणकेभी कारण आपही हैं ॥ १३ ॥ इस प्रकार

सत्संगमेत्याशुशिक्षेद्भक्तिंवैश्रीहरेर्गुरोः॥ससिद्धःकथितोजातंयस्यवैप्रेमलक्षणम् ॥६॥ ब्राह्मेमुहूर्तउत्थायरामकृष्णेतिचब्रुवन् ॥ नत्वागुरुंभुवंचैव ततोभूम्यांपदंन्यसेत् ॥७॥ वार्युपस्पृश्यरहसिस्थितोभूत्वाकुशासने॥ हस्तावुत्संगआधायस्वनासाग्रनिरीक्षणः ॥८॥ ध्यायेत्परंहरिंदेवंबलभद्रं सनातनम् ॥ गौरंनीलांबरंहृद्यंवनमालाविभूषितम् ॥९॥ एवंध्यानपरोनित्यंप्रीत्यर्थंहलिनःप्रभोः ॥ त्रिकालसंध्याकृच्छुद्धोमौनीक्रोधविवर्जितः ॥१०॥ अकामीगतलोभश्चनिर्मोहःसत्यवाग्भवेत् ॥ द्विवारंजपानार्थीएकभुक्तोजितेंद्रियः ॥११॥ क्षौमांबरोभूमिशायीभूत्वापायसभोजनः ॥ एवंनिर्जितषड्वर्गोभवेदकाग्रमानसः ॥१२॥ तस्यप्रसन्नोभवतिसदासंकर्षणोहरिः ॥ परिपूर्णतमःसाक्षात्सर्वकारणकारणः ॥१३॥ इत्थंश्रीबलभद्रस्यकथितापद्धतिर्मया ॥ कौरवेंद्रमहाबाहोकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ १४ ॥ दुर्योधनउवाच ॥ मुनींद्रदेवदेवस्यपटलंब्रूहिमेप्रभोः ॥ येन सेवांकरिष्यामितत्पदांबुजयोः सदा ॥ १५ ॥ प्राड्विपाकउवाच ॥ बलस्यगुह्यंपटलंविद्धिसिद्धिप्रदायकम् ॥ एकांतेब्रह्मणादत्तंनारदाय महात्मने ॥१६॥ प्रणवंपूर्वमुद्धृत्यकामबीजंततःपरम् ॥ कालिंदीभेदनपदंसंकर्षणमतःपरम् ॥१७॥ चतुर्थ्यंतंद्वयंकृत्वास्वाहापश्चाद्विधायच॥ मन्त्रराजमिमंराजन्ब्रह्मोक्तंषोडशाक्षरम् ॥ १८ ॥ जपेल्लक्षंव्रतीभूत्वासहस्राणिचषोडश ॥ इहामुत्रपरांसिद्धिंसंप्राप्नोतिनसंशयः ॥ १९ ॥

से श्रीबलभद्रजीकी पद्धति मैंने तुमको कही, अब हे कौरवेन्द्र ! हे महाबाहो ! तुम और क्या सुनना चाहते हो ॥१४॥ तब दुर्योधनने प्रश्न किया कि, हे मुनीन्द्र ! देवदेव प्रभुकापटल मुझको कहिये, जिससे उनके चरणकमलोंकी मैं सदा सेवा करूँगा ॥१५॥ तब प्राड्विपाक बोले कि, बलदेवजीके पटलको तुम सिद्धि देनेवाला जानो, जो पटल महात्मा नारदजीको एकान्तमें ब्रह्माजीने दिया था ॥१६॥ पहिले "ॐकार" कहे, फिर कामबीज (क्लीं) को पढे, उसके बाद कालिंदी भेदन, और संकर्षण ॥१७॥ इन पदोंको चतुर्थ्यन्त करके पीछे स्वाहा पदको पढे, "ॐ क्लीं कालिंदी भेदनाय संकर्षणाय स्वाहा" इस प्रकार ब्रह्माजीसे कहा हुआ यह सोलह अक्षरोंका मन्त्रराज है ॥ १८ ॥ यह मन्त्रराजका उद्धार है, व्रती होकर इस मंत्र के एक लाख सोलह हजार जप करे, वह इस लोकमें ओर परलोकमें परम सिद्धिको प्राप्त होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥ १९ ॥

फिर जपे हुये मन्त्रकी महा पूजा करे, बत्तीस दलका कर्णिका, केसर सहित, बडा उज्ज्वल॥२०॥पांच वर्णका भव्य कमल शुभ स्थण्डिलपर लिखकर उसपर सुवर्णका सिंहासन स्थापित करे,॥२१॥उसपर बलदेवजीकी प्रतिमा रखकर पूजन करे, ''ॐ नमो भगवते पुरुषोत्तमाय वासुदेवाय संकर्षणाय सहस्रवदनाय महानन्ताय स्वाहा''इस मन्त्रसे शिखा बांधकर नमस्कार करके उसके सन्मुख होकर पूजा करे, फिर आप नमस्कार करे, ''ॐ जयजय अनन्त बलभद्र कामपाल तालांक कालिंदी भञ्जन आविराविर्भूयमम सन्मुखोभव'' इस मन्त्रसे आवाहन करे--''ॐ नमस्तेऽस्तु सीरपाणे हल मूसलधर रौहिणेय नीलाम्बर राम रेवतीरमण नमस्तेऽस्तु''इस मन्त्रसे आसन, पाद्य, अर्घ्य, स्नान, मधुपर्क, धूप, दीप, यज्ञोपवीत, नैवेद्य, वस्त्र, भूषण, गन्ध,

अथजप्तस्यमन्त्रस्यमहापूजांसमाचरेत् ॥ द्वात्रिंशत्पत्रसंयुक्तंकर्णिकाकेसरोज्ज्वलम् ॥२०॥ भव्यंकंजंपंचवर्णंलिखित्वास्थंडिलेशुभे ॥ तस्यो परिन्यसेद्राजन्हेमसिंहासनंशुभम् ॥ २१ ॥ तस्मिञ्छ्रीबलदेवस्यपरामर्चांप्रपूजयेत् ॥ ॐनमोभागवतेपुरुषोत्तमायवासुदेवायसंकर्षणायसहस्र वदनायमहानंतायस्वाहा॥अनेनमन्त्रेणशिखाबंधनंकृत्वासर्वतस्तंप्रणम्यतत्संमुखोभूत्वास्वयंनतोभवेत् ॥ॐजयजयानंतबलभद्रकामपालतालां ककालिंदीभंजनआविराविर्भूयममसंमुखोभवेति ॥ अनेनमंत्रेणावाहनंकुर्यात्॥ ॐनमस्तेस्तुसीरपाणेहलमुसलधररौहिणेयनीलांबररामरेवतीर-मणनमस्तेस्तु।अनेनमंत्रेणासनपाद्यार्घ्यस्नानमधुपर्कधूपदीपयज्ञोपवीतनैवेद्यवस्त्रभूषणगन्धपुष्पांजलिनीराजनादीनुपचारान्प्रकल्पयेत्।ॐविष्ण-वेमधुसूदनायवामनायत्रिविक्रमायश्रीधरायहृषीकेशायपद्मनाभायदामोदरायसंकर्षणायवासुदेवायप्रद्युम्नायानिरुद्धायाधोक्षजायपुरुषोत्तमाय-श्रीकृष्णायनमः॥इतिपादगुल्फजानूरुकट्युदरपार्श्वपृष्ठभुजाकन्धरनेत्रशिरांसिपृथक्पृथक्पूजयामीतिमंत्रेणसर्वांगपूजांकुर्यात् ॥ अथशंख चक्रगदापद्मासिधनुर्बाणहलमुसलकौस्तुभवनमालाश्रीवत्सपीतांबरनीलांबरवंशीवेत्रगरुडांकतालांकरथदारुकसुमतिकुमुदाक्षश्रीदामादीन्प्रण-वपूर्वेणचतुर्थ्यंतेननमःसंयुक्तेननाममंत्रेणपृथक्पृथक्संपूज्यतथाविष्वक्सेनवेदव्यासदुर्गाविनायकदिक्पालग्रहादीन्कमलेसर्वतःस्वेस्वेस्थानेसं-पूजयेत्॥पुनःपरिसमूहनादिस्थालीपाकविधानेनवैश्वानरंसंपूज्यपूर्वोक्तेनमूलमन्त्रेणपंचविंशतिसहस्राण्याहुतीर्जुहुयात् ॥ तथाष्टौसहस्राणिद्वा-दशाक्षरेणतथाष्टौसहस्राणिचतुर्व्यूहमन्त्रेणाहुतीर्जुहुयात् ॥ ततोग्निंप्रदक्षिणीकृत्यनमस्कृत्याचार्यंमहार्हवस्त्रसुवर्णाभरणताम्रपात्रसवत्सगोसुव-र्णदक्षिणाभिःसंपूज्यतथाब्राह्मणान्भोजनाद्यैःसम्पूज्यनगरजनेभ्योभोजनंदत्त्वाचार्य्यान्प्रणमेत् ॥ इत्थंबलस्यपटलानुसारेणयोनुस्मरतिइहा-मुत्रसिद्धिसमृद्धिभिःसंवृतोभवति ॥ श्रीरामपटलंगुह्यंमयातेह्यनुवर्णितम् ॥ सर्वसिद्धिप्रदंराजन्किंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥२२॥ इतिश्रीमद्गर्गसं-हितायांश्रीबलभद्रखण्डेपद्धतिपटलवर्णनंनामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

पुष्प, अक्षत, पुष्पांजलि, आरती, पान, सुपारी, दक्षिणा, इत्यादिक सामग्रीको रखे, इसी मन्त्रसे अर्पित करे, ''ॐ विष्णवे मधुसूदनाय वामनाय त्रिविक्रमाय श्रीधराय हृषीकेशाय पद्मनाभाय दामोदराय संकर्षणाय वासुदेवाय प्रद्युम्नाय अनिरुद्धाय अधोक्षजाय पुरुषोत्तमाय श्रीकृष्णाय नमः''इस मंत्रसे चरण, टकुना, जानु, (घुटने), जांघ, कमर, पेट, पार्श्व, (बगल), पीठ, भुजा, ग्रीवा, वक्षस्थल, हृदय, कण्ठ, नेत्र, कर्ण, शिर, पृथक् पृथक् सब अंगोंका पूजन करे, फिर शंख, चक्र, गदा, पद्म, खड्ग, धनुष, बाण, हल, मूसल, कौस्तुभ, वनमाला, श्रीवत्स, पीताम्बर, नीलाम्बर

वेणु, वेत्र, गरुडध्वज, तालध्वज, रथ, दारुक, सुमति, कुमुद, कुमुदाक्ष, श्रीदामादिकोंको प्रणवपूर्वक चतुर्थ्यंत नमः युक्त नाम मंत्रसे पूजे–"ॐ विष्णवे नमः।ॐ मधुसूदनाय नमः" ऐसे सबको पूजे, वैसेही विष्वक्सेन, वेदव्यास, दुर्गा, विनायक, दिक्पाल, नवग्रहादिकोंको कमलके सब ओर अपने अपने स्थानपर पूजे ॥२२॥ फिर समूहनादि स्थालीपाकसे अग्निका पूजन कर पहिले कहे हुये मूल मंत्रसे पच्चीस हजार आहुतियाँ दे, वैसेही आठ हजार आहुतियाँ द्वादशाक्षर मंत्रसे, आठ हजार आहुतियाँ चतुर्व्यूह मंत्रसे दे, फिर अग्निकी परिक्रमा देकर नमस्कार करे, वैसेही बहुमूल्य वस्त्र, सुनहरे भूषण, ताम्रपात्र, बछडे सहित गौ, सुवर्ण दक्षिणा, इनसे आचार्यका पूजन करे, फिर ब्राह्मणोंका भोजनादिकोंसे पूजन करके नगरवासी जनोंको भोजनादिक देकर ऋत्विजोंको नमस्कार करे, इस प्रकार पटलकी रीतिसे जो बलभद्रका पूजन करे, वह इस लोकमें और परलोकमें सिद्धि समृद्धियोंसे युक्त होता है, यह गुप्त रामका पटल मैंने तुम्हारे सामने वर्णन किया, हे राजन्! यह सब सिद्धि देनेवाला है, अब और क्या सुननेकी इच्छा करते हो॥२३॥इति श्रीमद्गर्ग सं. बलभद्रखंडे भा. टी. पद्धति पटलवर्णनं नामदशमोऽध्यायः॥१०॥

॥ दुर्योधनउवाच ॥ स्तोत्रंश्रीबलदेवस्यप्राड्विपाकमहामुने ॥ वदमांकृपयासाक्षात्सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥ १ ॥ प्राड्विपाकउवाच ॥ ॥ स्तवराजंतुरामस्यवेदव्यासकृतंशुभम् ॥ सर्वसिद्धिप्रदंराजञ्छृणुकैवल्यदंनृणाम् ॥ २ ॥ देवादिदेवभगवन्कामपालनमोस्तुते ॥ नमोनन्तायशेषायसाक्षाद्रामायतेनमः ॥ ३ ॥ धराधरायपूर्णायस्वधाम्नेसीरपाणये ॥ सहस्रशिरसेनित्यंनमःसंकर्षणायते ॥ ४ ॥ रेवतीरमणत्वंवैबलदेवोच्युताग्रजः ॥ हलायुधप्रलंबघ्नपाहिमांपुरुषोत्तम ॥ ५ ॥ बलायबलभद्रायतालांकायनमोनमः ॥ नीलांबरायगौरायरौहिणेयायतेनमः ॥ ६ ॥ धेनुकारिर्मुष्टिकारिःकूटारिर्बल्वलांतकः ॥ रुक्म्यरिःकूपकर्णारिःकुभांडारिस्त्वमेवहि ॥७॥ कालिन्दीभेदनोसित्वंहस्तिनापुरकर्षकः ॥ द्विविदारिर्यादवेंद्रोव्रजमण्डलमण्डनः ॥ ८ ॥

तब दुर्योधनने पूछा कि, हे प्राड्विपाक ! हे महामुने ! सब सिद्धि देनेवाला, श्रीबलदेवजीका स्तोत्र, मुझको कहिये॥१॥ तब प्राड्विपाक बोले कि, वेदव्यासजीका किया हुआ श्रीरामका शुभ स्तवराज सब सिद्धियोंको देनेवाला और मनुष्योंको मोक्ष देनेवाला है, उसको सुनो ॥ २ ॥ हे देवाधिदेव ! हे भगवन् ! हे कामपाल ! आपको नमस्कार है, अनन्त हो, शेष हो, साक्षात् राम हो, उनको नमस्कार है ॥ ३ ॥ धराधर हो, स्वधामा हो, सीरपाणि हो, सहस्र शीर्षा हो, संकर्षण हो, उनको नमस्कार है॥ ४ ॥ रेवतीरमण हो, बलदेव हो, अच्युतके अग्रज हो, हलायुध हो, प्रलंबघ्न हो, हे पुरुषोत्तम ! मेरी रक्षा करिये ॥ ५ ॥ बल हो, बलभद्र हो, तालांक हो, नीलाम्बर हो, रौहिणेय हो, उनके लिये नमस्कार है ॥६॥ धेनुकके, मुष्टिकके, कूटके, बल्वलके, रुक्मीके, कुंभांड, कूपकर्णके शत्रु आपही हो ॥७॥ कालिंदी भेदन हो, हस्तिनापुरके खेंचनेवाले हो, द्विविदके शत्रु यादवेन्द्र व्रजमंडलके मंडन हो ॥ ८ ॥

हे दिगंतगत कंसके भाइयोंको मारनेवाले हो,तीर्थयात्रा करनेवाले हो,दुर्योधनके गुरु मेरी रक्षा करिये ॥ ९ ॥ हे अच्युत ! हे देव ! हे परात्पर ! आपकी जयहो जयहो, हे अनन्त ! हे दिगंतगत
बल यश ! हे सुर,मुनीन्द्र और फणीन्द्रोंमें श्रेष्ठ ! हलमूसलधारी आपको नमस्कार है ॥१०॥ जो निरन्तर इस स्तोत्रको पढेगा, वह परमपदको प्राप्त होगा,उसके जगत्में अरिमर्दन बल
होगा,और धन,स्वजन धन होगा॥११॥इति श्रीमद्गर्गसंहितायां बलभद्रखण्डे भाषाटीकायां बलभद्रस्तवराजवर्णनं नामैकादशोऽध्यायः ॥११॥ दुर्योधन बोला कि,बडे बुद्धिमान् गर्गा-
चार्यने गोपियोंको सर्व रक्षा करनेवाला कवच दिया था,वह कवच हे महामुने ! मुझको दीजिये॥१॥ तब प्राड्विपाक बोले कि,जलमें स्नानकर कुशके आशनपर बैठकर मंत्रमार्जन
कर पवित्री पहिनकर बलभद्रका स्मरणकर नमस्कारकर सावधानहोकर कवचको धारण करे॥२॥गोलोकपति परमेश्वर पवित्र कीर्तन भगवान् शत्रुओंसे मेरी रक्षा करें,जिनके शिरपर

कंसभ्रातृप्रहंतासितीर्थयात्राकरःप्रभुः ॥ दुर्योधनगुरुः साक्षात्पाहिपाहिप्रभोत्वतः ॥९॥ जयजयाच्युतदेवपरात्परस्वयमनंतदिगंतगतश्रुत ॥
मुरसुनींद्रफणींद्रवरायतेमुसलिनेबलिनेहलिनेनमः ॥१०॥ यःपठेत्सततंस्तवनंनरःसतुहरेःपरमंपदमाव्रजेत् ॥ जगतिसर्वबलंत्वरिमर्दनंभवतित-
स्यधनंस्वजनंधनम् ॥ ११ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांबलभद्रखंडेबलभद्रस्तवराजवर्णनंनामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ दुर्योधनउवाच ॥
गोपीभ्यःकवचंदत्तंगर्गाचार्येणधीमता ॥ सर्वरक्षाकरंदिव्यंदेहिमह्यंमहामुने ॥ १ ॥ प्राड्विपाकउवाच ॥ स्नात्वाजलेक्षौमधरःकुशासनः
पवित्रपाणिःकृतमंत्रमार्जनः ॥ स्मृत्वाथनत्वाबलमच्युताग्रजंसंधारयेद्वर्मसमाहितोभवेत् ॥ २ ॥ गोलोकधामाधिपतिःपरेश्वरःपरेषुमांपा-
तुपवित्रकीर्तनः ॥ भूमंडलंसर्षपवद्विलक्ष्यतेयन्मूर्ध्निमांपातुसभूमिमंडले ॥ ३ ॥ सेनासुमांरक्षतुसीरपाणिर्युद्धेसदारक्षतुमांहलीच ॥ दुर्गेषु-
चाव्यान्मुसलीसदामांवनेषुसंकर्षणआदिदेवः॥४॥कालिंदजावेगहरोजलेषुनीलांबरोरक्षतुमांसदाग्नौ॥ वायौचरामोवतुखेबलश्चमहार्णवेनंतवपु-
सदामाम् ॥ ५ ॥ श्रीवासुदेवोवतुपर्वतेषुसहस्रशीर्षाचमहाविवादे ॥ रोगेषुमांरक्षतुरौहिणेयोमांकामपालोवतुवाविपत्सु ॥ ६ ॥ कामात्सदा-
रक्षतुधेनुकारिःक्रोधात्सदामांद्विविदप्रहारी ॥ लोभात्सदारक्षतुबल्वलारिर्मोहात्सदामांकिलमागधारिः ॥ ७ ॥ प्रातःसदारक्षतुवृष्णिधुर्यः
प्राह्णेसदामांमथुरापुरेंद्रः ॥ मध्यंदिनेगोपसखःप्रपातुस्वराट्पराह्णेवतुमांसदैव ॥ ८ ॥

संक- भूमण्डल सरसों जैसा दीखता है, वे भगवान् भूमण्डलमें मेरी रक्षा करें ॥ ३ ॥ सेनामें हलधारी मेरी रक्षा करें, हलीयुद्ध रक्षा करें,और दुर्गस्थानमें मुसली मेरी रक्षा करे, संक-
र्षण आदिदेव वनमें मेरी रक्षा करें॥४॥कालिंदीके वेगहारी जलमें मेरी रक्षा करें,नीलाम्बर अग्निसे मेरी रक्षा करें, पवनसे राम रक्षा करें,आकाशमें बलदेव रक्षा करें, समुद्रमें अनन्त
वपु मेरी सदा रक्षा करें॥५॥ पर्वतोंमें वासुदेव रक्षा करें, महाविवादमें सहस्रशीर्षा रक्षा करें,रोगोंसे रौहिणेय रक्षा करें विपत्तिमें कामपाल रक्षा करें ॥६॥ धेनुकारी कामसे सदा रक्षा
करें,क्रोधसे मेरी द्विविदप्रहारी सदा रक्षा करें,बल्वलारि लोभसे सदा मेरी रक्षा करें,मागधारि सदा मोहसे मेरी रक्षा करें ॥७॥ वृष्णिधुर्य प्रातःकाल मेरी रक्षा करें, प्रहर दिन चढे
मथुरेन्द्र मेरी रक्षा करें, गोपसखा मध्याह्नमें रक्षा करें, स्वराट् भगवान् सदा पराह्णमें मेरी रक्षा करें ॥ ८ ॥

फणीन्द्र सायंकालमें रक्षा करें, प्रदोषमें परात्पर रक्षा करें,दुरंतवीर्य अर्द्धरात्रिमें और प्रत्यूषमें रक्षा करें ॥९॥ विदिशाओंमें रेवती पति मेरी रक्षा करें, दिशाओंमें प्रलम्बारि रक्षा करें, बलभद्र ऊपरसे रक्षा करें,नीचेसे यदूद्वह रक्षा करें, दूरसे अथवा पाससे, सब ओरसे बलदेव मेरी रक्षा करें ॥ १० ॥ भीतरसे पुरुषोत्तम,बाहिरसे नागेन्द्र जैसी लीलावाले महाबल मेरी रक्षा करें,और अन्तरात्मा हरिभगवान् पूर्ण परमेश्वर मेरी सदा रक्षा करें॥११॥देवता और असुरोंके भयका नाश करने वाला,पापरूपी ईंधनको अग्निरूप,विघ्नघटका विनाशन सिद्धासन-रूप यह बलदेवजीका कवच है ॥ १२ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां बलभद्रखण्डे भाषाटीकायां कवच वर्णनं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ दुर्योधन बोला कि, हे प्राड्विपाक ! हे महामुने ! बलदेवजीका सहस्रनाम मुझको कहिये, जो देवताओंको भी दुर्लभ है ॥ १ ॥ तब प्राड्विपाक बोले कि, धन्य है धन्य है, हे महाराज ! तुम्हारा निर्मल यश धन्य

सायंफणींद्रोवतुमांसदैवपरात्परोरक्षतुमांप्रदोषे॥पूर्णेनिशीथेचदुरंतवीर्यःप्रत्यूषकालेवतुमांसदैव।९। विदिक्षुमांरक्षतुरेवतीपतिर्दिक्षुप्रलंबारिरधोय दूद्वहः ॥ उद्ध्र्वंसदामांबलभद्रआरात्तथासमंताद्बलदेवएवहि॥१०॥ अंतःसदाव्यात्पुरुषोत्तमोबहिर्नागेंद्रलीलोवतुमांमहाबलः॥सदांतरात्माज वसन्हरिःस्वयंप्रपातुपूर्णःपरमेश्वरोमहान्॥११॥देवासुराणांभयनाशनंचहुताशनंपापचयैंधनानाम्॥विनाशनंविघ्नघटस्यविद्धिसिद्धासनंवर्मवरं बलस्य ॥१२॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीबलभद्रखंडेस्तोत्रकवचवर्णनंनामद्वादशोऽध्यायः॥१२॥ दुर्योधनउवाच ॥ बलभद्रस्यदेवस्यप्राड्वि-पाकमहामुने ॥ नाम्नांसहस्रंमेब्रूहिगुह्यंदेवगणैरपि ॥ १ ॥ प्राड्विपाकउवाच ॥ साधुसाधुमहाराजसाधुतेविमलंयशः ॥ यत्पृच्छसेपर-मिदंगर्गोक्तंदेवदुर्लभम् ॥ २ ॥ नाम्नांसहस्रंदिव्यानांवक्ष्यामितवचाग्रतः ॥ गर्गाचार्येणगोपीभ्योदत्तंकृष्णातटेशुभे ॥३॥ ॐ अस्यश्रीबलभ-द्रसहस्रनामस्तोत्रमंत्रस्यगर्गाचार्यऋषिःअनुष्टुप्छंदःसंकर्षणःपरमात्मादेवताबलभद्रइतिबीजंरेवतीतिशक्तिःअनंतइतिकीलकंबलभद्रप्रीत्यर्थे - जपेविनियोगः ॥ अथध्यानम् ॥ स्फुरदमलकिरीटंकिंकिणीकंकणार्हंचलदलककपोलंकुंडलश्रीमुखाब्जम् ॥ तुहिनगिरिमनोज्ञंनीलमेघांबरा-ढ्यंहलमुसलविशालंकामपालंसमीडे ॥ ४ ॥ ॐबलभद्रोरामभद्रोरामःसंकर्षणोच्युतः ॥ रेवतीरमणोदेवःकामपालोहलायुधः ॥ ५ ॥

है जो गर्गके कहे हुये देवताओंको भी दुर्लभ सहस्रनामको तुम पूछते हो ॥ २ ॥ दिव्यसहस्रनाम तुम्हारे आगे कहता हूँ जो गर्गाचार्यने गोपियोंको यमुनाके किनारेपर दिया था ॥३॥ ॐ अस्य श्रीबलभद्र सहस्रनाम मन्त्रस्य गर्गाचार्य ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः संकर्षणः परमात्मा देवता बलभद्रेति बीजं रेवती शक्तिः अनन्तेति कीलकं बलभद्र प्रीत्यर्थे जपे विनि-योग. इस विनियोगके बाद ऐसा ध्यान करे कि,देदीप्यमान है अमल कीरीट कुण्डल,करधनी,कंकण जिनके, चलायमान हैं अलक (घुंघुराले बाल) जिनमें ऐसे हैं कपोल जिनके कुण्डलसे शोभित है मुखकमल जिनका ऐसे हिमाचल जैसे मनोहर, नीले मेघ जैसा नील वस्त्र ओढे, हल मूसलधारी श्रीकामपालका मैं ध्यान करता हूँ ॥ ४ ॥ अब नामावली कहता हूँ-बलभद्र, रामभद्र, राम, संकर्षण, अच्युत, रेवतीरमण, देव, कामपाल हलायुध ॥ ५ ॥

नीलाम्बर, श्वेतवर्ण, बलदेव, अच्युताग्रज, प्रलंबघ्न, महावीर, रौहिणेय, प्रतापवान् ॥ ६ ॥ तालांक, मुसली, हली, हरि, यदुवर, बली, सीरपाणि, पद्मपाणि, लगुटी, वेणुवादक ॥७॥
कालिंदीभेदन, वीर, बल, प्रबल, उद्र्ध्वग, वासुदेवकला, अनन्त, सहस्रवदन, स्वराट् ॥ ८ ॥ वसु, वसुमतीभर्ता, वासुदेव, वसूत्तम, यदूत्तम, यादवेंद्र, माधव, वृष्णिवल्लभ ॥ ९ ॥
द्वारकेश, माथुरेश, दानी, मानी, महामना, पूर्ण, पुराण, पुरुष, परेश, परमेश्वर ॥ १० ॥ परिपूर्णतम, साक्षात्परम, पुरुषोत्तम, अनन्त, शाश्वत, शेष, भगवान्, प्रकृतिपर ॥११॥
जीवात्मा, परमात्मा, अन्तरात्मा ध्रुव, अव्यय, चतुर्व्यूह, चतुर्वेद, चतुर्मूर्ति, चतुष्पद ॥१२॥ प्रधान, प्रकृति, साक्षी, संघात, संघवान्, सखी, महामना, बुद्धिसख, चित्त, अहंकार,

नीलांबरःश्वेतवर्णोबलदेवोच्युताग्रजः प्रलंबघ्नोमहावीरोरौहिणेयःप्रतापवान् ॥ ६ ॥ तालांकोमुसलीहलीहरिर्यदुवरोबली ॥ सीरपाणिःपद्मपा-
णिर्लगुडीवेणुवादनः ॥७॥ कालिंदीभेदनोवीरोबलःप्रबलऊद्र्ध्वगः ॥ वासुदेवकलानंतःसहस्रवदनःस्वराट् ॥८॥ वसुर्वसुमतीभर्तावासुदेवोव-
सूत्तमः ॥ यदूत्तमोयादवेंद्रोमाधवोवृष्णिवल्लभः ॥ ९ ॥ द्वारकेशोमाथुरेशोदानीमानीमहामनाः ॥ पूर्णःपुराणःपुरुषःपरेशःपरमेश्वरः ॥१०॥
परिपूर्णतमःसाक्षात्परमःपुरुषोत्तम ॥ अनंतःशाश्वतःशेषोभगवान्प्रकृतेःपरः ॥११॥ जीवात्मापरमात्माचह्यंतरात्माध्रुवोव्ययः ॥ चतुर्व्यूह
श्चतुर्वेदश्चतुर्मूर्तिश्चतुष्पदः ॥ १२ ॥ प्रधानंप्रकृतिःसाक्षीसंघातःसंघवान्सखी ॥ महामनाबुद्धिसखश्चेतोहंकारआवृतः ॥ १३ ॥ इंद्रियेशोदेव
तात्माज्ञानंकर्मचशर्मच ॥ अद्वितीयोद्वितीयश्चनिराकारोनिरंजनः ॥१४॥ विराट्सम्राण्महौघश्चाधारःस्थानुश्चरिष्णुमान् ॥ फणींद्रःफणिराज
श्चसहस्रफणमंडित ॥१५॥ फणीश्वरःफणिस्फूर्तिःफूत्कारीचीत्करःप्रभुः ॥ मणिहारोमणिधरोवितलीसुतलीतली ॥ १६ ॥ अतलीसुतलेशश्च-
पातालश्चतलातलः ॥ रसातलोभोगितलःस्फुरद्दंतोमहातलः ॥ १७ ॥ वासुकिःशंखचूडाभोदेवदत्तोधनंजयः ॥ कंबलाश्वोवेगतरोधृतरा-
ष्ट्रोमहाभुजः ॥ १८ ॥ वारुणीमदमत्तांगोमदघूर्णितलोचनः ॥ पद्माक्षःपद्ममालीचवनमालीमधुश्रवाः ॥ १९ ॥ कोटिकंदर्पलावण्योनाग-
कन्यासमर्चितः ॥ नूपुरीकटिसूत्रीचकटकीकनकांगदी ॥ २० ॥

आवृत, ॥ १३ ॥ इंद्रियेश, देवतात्मा, ज्ञान, कर्म, शर्म, अद्वितीय, द्वितीय, निराकार, निरंजन, ॥ १४ ॥ विराट्, सम्राट्, महौघ, आधार, स्थाणु, चरिष्णु, फणीन्द्र, फणिराज, सहस्र
फणमण्डित ॥ १५ ॥ फणीश्वर, फणिस्फूर्ति, स्फूत्कारी, चीत्कर, प्रभु, मणिहार, मणिधर, वितली, सुतली, तली, ॥१६॥ अतली, सुतलेश, पाताल, तलातल, रसातल, भोगितल
स्फुरद्दंत, महातल, ॥ १७ ॥ वासुकी शंखचूडाभ, देवदत्त, धनंजय, कंबलाश्व, वेगतर, धृतराष्ट्र, महाभुज ॥ १८ ॥ वारुणीमदमत्तांग, मदघूर्णितलोचन, पद्माक्ष, पद्ममाली, वनमाली,
मधुस्रवा ॥ १९ ॥ कोटिकंदर्पलावण्य, नागकन्यासमर्चित नूपुरी, कटिसूत्री, कटकी कटकांगदी ॥ २० ॥

मुकुटी,कुंडली, दंडी, शिखंडी,खंडमंडली, कलि,कलिप्रिय,काल, निवातकवचेश्वर,॥ २१ ॥ संहारकद्रु, द्रवयु, कालाग्नि, प्रलय, लय, महाहि, पाणिनि, शास्त्र, भाष्यकार, पतंजलि ॥ २२ ॥ कात्यायन, पक्विमाभ, स्फोटायन,उरंगम, वैकुण्ठ, याज्ञिक, यज्ञ वामन, हरिण, हरि, ॥ २३ ॥ कृष्ण,विष्णु,महाविष्णु, प्रभविष्णु,विशेषवित,हंस योगेश्वर, कूर्म, वाराह, नारदमुनि ॥ २४ ॥ सनक, कपिल, मत्स्य, कमठ, देवमङ्गल, दत्तात्रेय, पृथु, वृद्ध, ऋषभ, भार्गवोत्तम ॥ २५ ॥ धन्वंतरि, नृसिंह, कल्कि, नारायण, नर,रामचन्द्र, राघवेंद्र, कोशलेन्द्र, रघूद्वह ॥ २६ ॥ काकुत्स्थ, करुणासिन्धु, राजेंद्र, सर्वलक्षण, शूर, दाशरथी, त्राता, कौशल्यानन्दवर्द्धन॥ २७ ॥सौमित्रि, भरत, धन्वी, शत्रुघ्न, शत्रुतापन, निषंगी, कवची, खड्गी शरी, ज्याहतकोष्ठक ॥ २८ ॥ बद्धगोधांगुलित्राण, शंभुकोदण्ड भंजन, यज्ञत्राता यज्ञभर्ता, मारीचवधकारक ॥ २९ ॥ असुरारि, ताडकारि, विभीषणसहायकृत्, पितृवाक्यकर, हर्षी,

मुकुटीकुंडलीदंडीशिखंडीखंडमंडली ॥ कलिःकलिप्रियःकालोनिवातकवचेश्वरः ॥२१॥ संहारकद्रुर्द्रवयुःकालाग्निःप्रलयोलयः ॥ महाहिःपा-
णिनिःशास्त्रोभाष्यकारःपतंजलिः ॥ २२ ॥ कात्यायनःपक्विमाभःस्फोटायनउरंगमः ॥ वैकुंठोयाज्ञिकोयज्ञोवामनोहरिणोहरिः ॥२३॥ कृष्णो
विष्णुर्महाविष्णुःप्रभविष्णुर्विशेषवित् ॥ हंसोयोगेश्वरःकूर्मोवाराहोनारदोमुनिः ॥२४॥ सनकःकपिलोमत्स्यःकमठोदेवमंगलः॥ दत्तात्रेयःपृ-
थुर्वृद्धऋषभोभार्गवोत्तमः ॥२५॥ धन्वंतरिर्नृसिंहश्चकल्किर्नारायणोनरः ॥ रामचंद्रोराघवेंद्रःकोशलेंद्रोरघूद्वहः॥२६॥काकुत्स्थःकरुणासिंधूरा-
जेंद्रःसर्वलक्षणः ॥ शूरोदाशरथिस्त्राताकौसल्यानंदवर्द्धनः॥२७॥सौमित्रिर्भरतोधन्वीशत्रुघ्नःशत्रुतापनः ॥ निषंगीकवचीखड्गीशरीज्याहतको-
ष्ठकः ॥२८॥ बद्धगोधांगुलित्राणःशंभुकोदंडभंजनः ॥ यज्ञत्रातायज्ञभर्तामारीचवधकारकः ॥२९॥ असुरारिस्ताटकारिर्विभीषणसहायकृत
॥ पितृवाक्यकरोहर्षीविराधारिर्वनेचरः ॥ ३० ॥ मुनिर्मुनिप्रियश्चित्रकूटारण्यनिवासकृत् ॥ कबंधहादंडकेशोरामोराजीवलोचनः ॥ ३१ ॥
मतंगवनसंचारीनेतापंचवटीपतिः ॥ सुग्रीवःसुग्रीवसखोहनुमत्प्रीतमानसः ॥३२॥ सेतुबंधोरावणारिर्लंकादहनतत्परः॥ रावण्यारिःपुष्पकस्थो
जानकीविरहातुरः ॥ ३३ ॥ अयोध्याधिपतिःश्रीमाँल्लवणारिःसुरार्चितः ॥ सूर्यवंशीचंद्रवंशीवंशीवाद्यविशारदः ॥३४॥ गोपतिर्गोपवृन्देशो
गोपोगोपीशतावृतः ॥ गोकुलेशोगोपपुत्रोगोपालोगोगणाश्रयः ॥ ३५ ॥ पूतनारिर्बकारिश्चतृणावर्तनिपातकः ॥ अघारिर्धेनुकारिश्चप्रलंबा-
रिर्व्रजेश्वरः ॥ ३६ ॥ अरिष्टहाकेशिशत्रुर्व्योमासुरविनाशकृत् ॥ अग्निपानोदुग्धपानोवृन्दावनलताश्रितः ॥ ३७ ॥

विराधारि, वनेचर, ॥ ३० ॥ मुनि,मुनिप्रिय,चित्रकूटारण्यनिवासकृत, कबंधहा, दण्डकेश, राम,राजीवलोचन ॥३१॥ मतंगवनसंचारी, नेता, पंचवटीपति, सुग्रीव,सुग्रीवसख, हनुमत्प्रीतिमानस, ॥ ३२ ॥ सेतुबंध, रावणारि, लंकादहनतत्पर, रावण्यारि, पुष्पकस्थ, जानकीविरहातुर, ॥ ३३ ॥ अयोध्यापति, श्रीमान्, लवणारि, सुरार्चित, सूर्यवंशी, चन्द्रवंशी, वंशीवाद्यविशारद ॥ ३४ ॥ गोपति, गोपवृंदेश, गोप, गोपीशतावृत, गोकुलेश, गोपपुत्र, गोपाल, गोगणाश्रय, ॥ ३५ ॥ पूतनारि, बकारि, तृणावर्तनिपातक अघारि, धेनुकारि, प्रलंबारि, व्रजेश्वर, ॥ ३६ ॥ अरिष्टहा, केशिशत्रु, व्योमासुरविनाशक, अग्निपान, दुग्धपान, वृंदावनलताश्रित ॥ ३७ ॥

यशोमतीसुत, भव्य, रोहिणीलालित, शिशु, रासमण्डलमध्यस्थ, रासमंडलमंडन ॥ ३८ ॥ गोपिकाशतयूथार्थी, शंखचूडवधोद्यत, गोवर्द्धन समुद्धर्ता, शक्रजित्, व्रजरक्षक ॥३९॥ वृषभानुवर, नंद, आनंद, नंदवर्द्धन, नंदराजसुत, श्रीश कंसारि कालियांतक ॥ ४० ॥ रजकारि, मुष्टिकारि, कंसकोदंडभंजन, चाणूरारि, कूटहंता, शलारि, तोशलांतक ॥४१॥ कंसभ्रातृनिहंता, मल्लयुद्धप्रवर्तक, गजहंता, कंसहंता, कालहंता कलंकहा॥४२॥ मागधारि यवनहा, पांडुपुत्रसहायकृत्, चतुर्भुज, श्यामलांग सौम्य, औपगविप्रिय,॥४३॥ युद्धभृत् उद्धवसखा मंत्री, मन्त्रविशारद, वीरहा, वीरमथन, शंखचक्रगदाधर, ॥ ४४ ॥ रेवतीचित्तहर्ता, रेवतीहर्षवर्द्धन, रेवतीप्राणनाथ, रेवतीप्रियकारक ॥ ४५ ॥ ज्योति, ज्योतिष्मतीभर्त्ता,

यशोमतीसुतोभव्योरोहिणीलालितःशिशुः ॥ रासमंडलमध्यस्तोरासमंडलमंडनः ॥३८॥ गोपिकाशतयूथार्थीशंखचूडवधोद्यतः ॥ गोवर्द्धनसमुद्धर्ताशक्रजिद्व्रजरक्षकः ॥ ३९ ॥ वृषभानुवरोनंदआनंदोनंदवर्धनः ॥ नंदराजसुतःश्रीशःकंसारिःकालियांतकः ॥४०॥ रजकारिर्मुष्टिकारिःकंसकोदंडभंजनः ॥ चाणूरारिःकूटहंताशलारिस्तोशलांतकः ॥ ४१ ॥ कंसभ्रातृनिहंताचमल्लयुद्धप्रवर्तकः ॥ गजहंताकंसहंताकालहंताकलंकहा ॥ ४२ ॥ मागधारिर्यवनहापांडुपुत्रसहायकृत् ॥ चतुर्भुजःश्यामलांगःसौम्यश्चौपगविप्रियः ॥४३॥ युद्धभृदुद्धवसखामंत्रीमंत्रविशारदः ॥ वीरहावीरमथनःशंखचक्रगदाधरः ॥४४॥ रेवतीचित्तहर्ताचरेवतीहर्षवर्द्धनः ॥ रेवतीप्राणनाथश्चरेवतीप्रियकारकः ॥४५॥ ज्योतिर्ज्योतिष्मतीभर्तारैवताद्रिविहारकृत् ॥ धृतिनाथोधनाध्यक्षोदानाध्यक्षोधनेश्वरः॥४६॥ मैथिलार्चितपादाब्जोमानदोभक्तवत्सलः ॥ दुर्योधनगुरुर्गुर्वी गदाशिक्षाकरःक्षमी ॥४७॥ मुरारिर्मदनोमंदोनिरुद्धोधन्विनांवरः ॥ कल्पवृक्षःकल्पवृक्षीकल्पवृक्षवनप्रभुः ॥४८॥ स्यमंतकमणिर्मान्योगांडीवीकौरवेश्वरः ॥ कुभांडखंडनकरःकूपकर्णप्रहारकृत् ॥ ४९ ॥ सेव्योरैवतजामातामधुमाधवसेवितः ॥ बलिष्ठःपुष्टसर्वांगोहृष्टःपुष्टःप्रहर्षितः ॥५०॥ वाराणसीगतःक्रुद्धःसर्वःपौंड्रकघातकः॥सुनंदीशिखरीशिल्पीद्विविदांगनिषूदनः॥५१॥ हस्तिनापुरसंकर्षीरथीकौरवपूजितः ॥ विश्वकर्माविश्वधर्मादेवशर्मादयानिधिः ॥ ५२ ॥ महाराजच्छत्रधरोमहाराजोपलक्षणः ॥ सिद्धगीतःसिद्धकथःशुक्लचामरवीजितः ॥ ५३ ॥

रैवताद्रिविहारकृत्, धृतिनाथ, धनाध्यक्ष, दानाध्यक्ष, धनेश्वर, ॥ ४६ ॥ मैथिलार्चितपादाब्ज, मानद, भक्तवत्सल, दुर्योधनगुरु, गुर्वी, गदाशिक्षाकर, क्षमी, ॥४७॥ मुरारि, मदन, मन्द अनिरुद्ध, धन्विनांवर, कल्पवृक्ष, कल्पवृक्षी, कल्पवृक्षवनप्रभु ॥ ४८ ॥ स्यमंतकमणि, मान्य, गांडीवी, कौरवेश्वर, कुंभांडखण्डनकर, कूपकर्णप्रहारकृत् ॥ ४९ ॥ सेव्य, रैवतजामाता-मधुमाधवसेवित, बलिष्ठ, पुष्टसर्वांग, हृष्ट, पुष्ट, प्रहर्षित ॥ ५० ॥ वाराणसीगत, क्रुद्ध, सर्व पौंड्रकघातक, सुनन्दी शिखरी, शिल्पी, द्विविदांगनिषूदन ॥ ५१ ॥ हस्तिनापुरसंकर्षी, रथी, कौरवपूजित, विश्वकर्मा, विश्वधर्मा देवशर्मा, दयानिधि ॥ ५२ ॥ महाराजछत्रधर, महाराजोपलक्षण, सिद्धिगीत, सिद्धकथ, शुक्लचामरवीजित ॥ ५३ ॥

सिद्धगीत, सिद्धकथ, शुक्लचामरवीजित ॥ ५३ ॥ तारांक्ष, कीरनास, बिंबोष्ठ, सुस्मितच्छवि, करीन्द्रकरदोर्दंड, प्रचंड, मेघमंडल ॥५४॥ कपाटवक्षा, पीनांस, पद्मपाद, स्फुरद्द्युति, महाविभूति, भूतेश, बंधमोक्षी, समीक्षण ॥ ५५ ॥ चैद्यशत्रु, शत्रुसंध, दन्तवक्त्रनिषूदक, अजातशत्रु पापघ्न, हरिदाससहायकृत, ॥५६॥ शाल्वबाहु, शाल्वहंता, तीर्थयायी, जनेश्वर, नैमिषारण्ययात्रार्थी, गोमतीतीरवासकृत, ॥ ५७ ॥ गंडकीस्नानवान्, स्रग्वी, वैजयन्तीविराजित, अम्लानपंकजधर, विपाशी, शोणसंप्लुत, प्रयागतीर्थराज, ॥५८॥ सरयूसेतुबंधन, गयाशिर, धनद, पौलस्त्य, पुलहाश्रम ॥५९॥ गंगासागरसंगार्थी, सप्तगोदावरीपति, वेणी, भीमरथी, गोदा, ताम्रपर्णी, वटोदका ॥६० कृतमाला, महापुण्या, कावेरी, पयस्विनी, प्रतीची, सुप्रभा, वेणी, त्रिवेणी, सरयूपमा, ॥६१॥ कृष्णा, पंपा, नर्मदा, गंगा, भागीरथी, नदी, सिद्धाश्रम प्रयास, बिंदु, बिंदुसरोवर ॥६२॥ पुष्कर, सैंधव, जम्बू, नरनारायणाश्रम, कुरुक्षेत्रपति,

ताराक्षःकीरनासश्चबिंबोष्ठःसुस्मितच्छविः ॥ करींद्रकरदोर्दंडःप्रचंडोमेघमंडलः ॥५४॥ कपाटवक्षाःपीनांसःपद्मपादस्फुरद्द्युतिः ॥ महाविभूतिर्भूतेशोबंधमोक्षीसमीक्षणः ॥ ५५ ॥ चैद्यशत्रुसंधोदंतवक्त्रनिषूदकः ॥ अजातशत्रुःपापघ्नोहरिदाससहायकृत ॥ ५६ ॥ शालबाहुःशाल्वहंता तीर्थयायीजनेश्वरः ॥ नैमिषारण्ययात्रार्थीगोमतीतीरवासकृत ॥५७॥ गंडकीस्नानवान्स्रग्वीवैजयंतीविराजितः ॥ अम्लानपंकजधरोविपाशी शोणसंप्लुतः॥५८॥ प्रयागतीर्थराजश्चसरयूःसेतुबंधनः॥गायाशिरश्चधनदःपौलस्त्यःपुलहाश्रमः ॥५९॥गंगासागरसंगार्थीसप्तगोदावरीपतिः॥ वेणीभीमरथीगोदाताम्रपर्णीवटोदका॥६०॥कृतमालामहापुण्याकाबेरीचपयस्विनी॥प्रतीचीसुप्रभावेणीत्रिवेणीसरयूपमा॥६१॥ कृष्णापंपानर्मदाचगंगाभागीरथीनदी ॥ सिद्धाश्रमःप्रभासश्चबिन्दुर्बिन्दुसरोवरः॥६२॥ पुष्करःसैंधवोजंबूनरनारायणाश्रमः ॥ कुरुक्षेत्रपतीरामोजामदग्न्यो महामुनिः ॥६३॥ इल्वलात्मजहंताचसुदामासौख्यदायकः ॥ विश्वजिद्विश्वनाथश्चत्रिलोकविजयीजयी ॥६४॥ वसन्तमालतीकर्षीगदोगद्यो गदाग्रजः ॥ गुणार्णवोगुणनिधिर्गुणपात्रीगुणाकरः ॥ ६५ ॥ रंगवल्लीजलाकारोनिर्गुणःसगुणोबृहत ॥ दृष्टःश्रुतोभवद्भूतोभविष्यच्चाल्पविग्रहः ॥६६॥ अनादिरादिरानंदःप्रत्यग्धामानिरंतरः ॥ गुणातीतःसमःसाम्यःसमदृङ्निर्विकल्पकः॥६७॥ गूढोव्यूढोगुणोगौणोगुणाभासोगुणावृतः ॥ नित्योक्षरोनिर्विकारःक्षरोजस्रसुखोऽमृतः ॥६८॥ सर्वगःसर्ववित्सार्थःसमबुद्धिःसमप्रभः ॥ अक्लेद्योच्छेद्यआपूर्णोशोष्योदाह्योनिवर्तकः ॥६९॥

राम, जामदग्न्य, महामुनि ॥ ६३ ॥ इल्वलात्मजहंता, सुदामासौख्यदायक, विश्वजित्, विश्वनाथ, त्रिलोकविजयी, जयी ॥ ६४ ॥ वसंतमालतीकर्षी, गद, गद्य, गदाधर, गुणार्णव, गुणनिधि, गुणपात्री, गुणाकर ॥ ६५ ॥ रंगवल्ली, जलाकार, निर्गुण, सगुण, बृहत्, दृष्ट, श्रुत, भक्त, भूत, भविष्य, अल्पविग्रह ॥६६॥ अनादि, आदि, आनन्द, प्रत्यग्धामा, निरन्तर, गुणातीत, सम, साम्य, समदृक्, निर्विकल्पक ॥ ६७ ॥ गूढ, व्यूढ. गुण, गौण, गुणाभास, गुणावृत, नित्य, अक्षर, निर्विकार, क्षर, असस्रसुख, अमृत ॥ ६८ ॥ सर्वग, सर्ववित्, सार्थ, समबुद्धि, समप्रभ, अक्लेद्य, अच्छेद्य, आपूर्ण अशोष्य, अदाह्य, अनिवर्तक ॥ ६९ ॥

ब्रह्म, ब्रह्मधर, ब्रह्मा, ज्ञापक, व्यापक, कवि, अध्यात्मक, अधिभूत, अधिदेव, स्वाश्रय, आश्रय ॥ ७० ॥ महावायु, महावारि, चेष्टारूप, तनुस्थित, प्रेरक, बोधक, बोधी, त्रयोविंशतिक, गण ॥ ७१ ॥ अंशांश, नरावेश, अवतार, भूपरिस्थित, मह, जन, तप, सत्य भूः, भुवः, स्वर, ॥ ७२ ॥ नैमित्तिक, प्राकृतिक, आत्यंतिक, सर्ग, विसर्ग, सर्गादि, निरोध, रोध, ऊतिमान् ॥ ७३ ॥ मन्वंतरावतार, मनु, मनुसुत, अनघ, स्वयंभू, शांभव, शंकु, स्वयंभु, सहायकृत् ॥ ७४ ॥ सुरालय, देवगिरि, मेरु, हेमार्चित, गिरि, गिरीश, गणनाथ, गौरीश, गिरिगह्वर ॥ ७५ ॥ विंध्य, त्रिकूट, मैनाक, सुवेल, पारिभद्रक, पतंग, शिशिर, कंक, जारुधि, शैलसत्तम ॥ ७६ ॥ कालंजर, बृहत्सानु, दरीभृत्, नंदिकेश्वर, संतान, तरुराज, मंदार, पारिजातक

ब्रह्मब्रह्मधरोब्रह्माज्ञापकोव्यापकःकविः ॥ अध्यात्मकोधिभूतश्चाधिदैवःस्वाश्रयाश्रयः ॥ ७० ॥ महावायुर्महावीरश्चेष्टारूपतनुस्थितः ॥ प्रेरको बोधकोबोधीत्रयोविंशतिकोगणः ॥ ७१ ॥ अंशांशश्चनरावेशोवतारोभूपरिस्थितः ॥ महर्जनस्तपःसत्यंभूर्भुवःस्वरितित्रिधा ॥ ७२ ॥ नैमित्तिकः प्राकृतिकआत्यंतिकमयोलयः॥सर्गोविसर्गःसर्गादिर्निरोधोरोधऊतिमान्॥७३॥मन्वंतरावतारश्चमनुर्मनुसुतोनघः॥स्वयंभूःशांभवःशङ्कुःस्वायं भुवसहायकृत् ॥ ७४ ॥ सुरालयोदेवगिरिर्मेरुर्हेमार्चितोगिरिः ॥ गिरीशोगणनाथश्चगौरीशोगिरिगह्वरः ॥ ७५ ॥ विंध्यस्त्रिकूटोमैनाकःसुवेलः पारिभद्रकः ॥ पतङ्गशिशिरःकंकोजारुधिःशैलसत्तमः ॥ ७६ ॥ कालंजरोबृहत्सानुर्दरीभृन्नंदिकेश्वरः ॥ सन्तानस्तरुराजश्चमंदारःपारिजातकः ॥ ७७ ॥ जयंतकृज्जयंतांगोजयंतीदिग्जयाकुलः ॥ वृत्रहादेवलोकश्चशशीकुमुदबांधवः ॥ ७८ ॥ नक्षत्रेशःसुधासिन्धुर्मृगःपुष्यःपुनर्वसुः ॥ हस्तोभिजिच्चश्रवणोवैधृतिर्भास्करोदयः ॥ ७९ ॥ ऐंद्रःसाध्यःशुभःशुक्लोव्यतीपातोध्रुवःसितः ॥ शिशुमारोदेवमयोब्रह्मलोकोविलक्षणः॥८०॥ रामोवैकुण्ठनाथश्चव्यापीवैकुण्ठनायकः॥श्वेतद्वीपोजितपदोलोकालोकाचलाश्रितः॥८१॥भूमिर्वैकुण्ठदेवश्चकोटिब्रह्मांडकारकः॥असंख्यब्रह्मांड पतिर्गोलोकेशोगवांपतिः ॥ ८२ ॥ गोलोकधामधिषणोगोपिकाकण्ठभूषणः ॥ श्रीधारःश्रीधरोलीलाधरोगिरिधरोधुरी ॥ ८३ ॥ कुंतधारीत्रिशू- लीचबीभत्सीघर्घरस्वनः शूलसूच्यर्पितगजोगजचर्मधरोगजी ॥ ८४ ॥

॥७७॥ जयंतकृत्, जयंतांग, जयंती, दिग्जयाकुल, वृत्रहा, देवलोक, शशि, कुमुदबांधव, ॥७८॥ नक्षत्रेश, सुधासिंधु, मृग, पुष्यपुनर्वसु, हस्त, अभिजित्, श्रवण, वैधृति, भास्करोदय ॥ ७९ ॥ ऐंद्र, साध्य, शुभ, शुक्ल, व्यतीपात, ध्रुव, सित, शिशुमार, देवमय, ब्रह्मलोक, विलक्षण ॥ ८० ॥ राम, वैकुण्ठनाथ, व्यापी, वैकुण्ठनायक, श्वेतद्वीप, अजितपद, लोकालोक चलाश्रित, ॥ ८१ ॥ भूमि, वैकुंठदेव, कोटिब्रह्मांडकारक, असंख्यब्रह्मांडपति, गोलोकेश, गवांपति ॥८२॥ गोलोकधामधिषण, गोपिकाकंठभूषण, श्रीधर, श्रीधार लीलाधर, गिरिधर, धुरी ॥ ८३ ॥ कुंतधारी, त्रिशूली, बीभत्सी, घर्घरस्वन, शूलसूच्यर्पितगज, गजचर्मधर, गजी ॥ ८४ ॥

अंत्रमाली, मुंडमाली, व्याली, दंडकमंडलु, वैतालभृत, भूतसंघ, कूष्मांडगणसंवृत ॥ ८५ ॥ प्रथमेश, पशुपति, मृडानीश, मृड, वृष, कृतांत, कालसंघारि, कूट, कल्पांतभरवे ॥८६॥ षडानन, वीरभद्र, दक्षयज्ञविघातक, खर्पराशी, विषाशी, शक्तिहस्त, शिवार्थद ॥८७॥ पिनाकटंकारकर, चलज्झंकारनूपुर, पंडित, तर्कविद्वान्, वेदपाठी, श्रुतिश्वर॥८८॥ वेदांतकृत, सांख्य शास्त्री, मीमांसी, कणनामभाक्, कणादि, गौतम, वादी, वाद, नैयायिक, नय ॥ ८९ ॥ वैशेषिक, धर्मशास्त्री, सर्वशास्त्रार्थतत्त्वग, वैयाकरणकृत्, छंद, वैयास, प्राकृति, वच, ॥९०॥ पाराशरीसंहितावित्, काव्यकृत्, नाटकप्रद, पौराणिक, स्मृतिकर, वैद्य, विद्याविशारद ॥ ९१ ॥ अलंकार, लक्षणार्थ, व्यंगवित्, ध्वनिवित्, धनी, वाक्यस्फोट, पदस्फोट, स्फोटवृत्ति, साथ

अंत्रमालीमुण्डमालीव्यालीदंडकमण्डलुः ॥ वेतालभृद्भूतसंघःकूष्मांडगणसंवृतः ॥८५॥ प्रथमेशः पशुपतिर्मृडानीशोमृडोवृषः॥कृतांतकालसंघा-
रिःकूटःकल्पांतभैरवः ॥८६॥ षडाननोवीरभद्रोदक्षयज्ञविघातकः ॥ खर्पराशीविषाशीचशक्तिहस्तःशिवार्थदः ॥८७॥ पिनाकटंकारकरश्चल-
ज्झंकारनूपुरः ॥ पंडितस्तर्कविद्वान्वैवेदपाठीश्रुतीश्वरः ॥८८॥ वेदांतकृत्सांख्यशास्त्रीमीमांसीकणनामभाक् ॥ कणादिर्गौतमोवादीवादोनैया-
यिकोनयः ॥८९॥ विशेषिकोधर्मशास्त्रीसर्वशास्त्रार्थतत्त्वगः ॥ वैयाकरणकृच्छदोवैयासःप्राकृतिर्वचः॥९०॥पाराशरीसंहितावित्काव्यकृन्नाटक
प्रदः॥पौराणिकःस्मृतिकरोवैद्योविद्याविशारदः॥९१॥अलंकारोलक्षणार्थोव्यंग्यविद्ध्वनिविद्ध्वनिः॥वाक्यस्फोटःपदस्फोटःस्फोटवृत्तिश्चसार्थ-
वित् ॥९२॥ शृंगारउज्ज्वलःस्वच्छोद्भुतोहास्योभयानकः ॥ अश्वत्थोयवभोजीचयवक्रीतोयवाशनः ॥९३॥ प्रह्लादरक्षकःस्निग्धऐलवंशविव-
र्द्धनः ॥ गताधिरंबरीषांगोविगाधिर्गाधिनांवरः ॥९४॥ नानामणिसमाकर्णोनानारत्नविभूषणः ॥ नानापुष्पधरःपुष्पीपुष्पधन्वाप्रपुष्पितः ॥
॥ ९५ ॥ नानाचन्दनगन्धाढ्योनानापुष्परसार्चितः ॥ नानावर्णमयोवर्णोनानावस्त्रधरःसदा ॥९६॥ नानापद्मकरःकौशीनानाकौशेयवेषधृक्
रत्नकंबलधारीचधौतवस्त्रसमावृतः ॥ ९७ ॥ उत्तरीयधरःपर्णोघनकंचुकसङ्घवान् ॥ पीतोष्णीषःसितोष्णीषोरक्तोष्णीषोदिगम्बरः ॥ ९८ ॥
दिव्यां गोदिव्यरचनोदिव्यलोकविलोकितः ॥ सर्वोपमोनिरुपमोगोलोकांकीवृतांगणः ॥ ९९ ॥

वित् ॥ ९२ ॥ शृंगार, उज्ज्वल, स्वच्छ, अद्भुत, हास्य, भयानक, अश्वत्थ, यवभोजी, यवक्रीत, यवाशन ॥९३॥ प्रह्लादरक्षक, स्निग्ध, ऐलवंशविवर्द्धन, गताधि, अंबरीषांग, विगाधि गाधिनांवर ॥ ९४ ॥ नानामणिसमाकीर्ण, नानारत्नविभूषण, नानापुष्पधर, पुष्पी, पुष्पधन्वा, प्रपुष्पित ॥ ९५ ॥ नानाचंदनगंधाढ्य, नानापुष्परसार्चित, नानावर्णमय, वर्ण, नानावस्त्रधर ॥ ९६ ॥ नानापद्मकर, कौशी, नानाकौशेयवेषधृक्, रत्नकंबलधारी, धौतवस्त्रसमावृत ॥ ९७ ॥ उत्तरीयधर, पर्ण, घनकंचूकसंघवान्, पीतोष्णीष, सितोष्णीष, रक्तोष्णीष, दिगंबर ॥ ९८ ॥ दिव्यांग, दिव्यरचन, दिव्यलोकविलोकित, सर्वोपम, निरुपम, गोलोकांकी, कृतांगण ॥ ९९ ॥

कृतस्वोत्संग, गोलोक, कुण्डलीभूत, आस्थित, माथुर, माथुरादर्शी, चलत्खंजनलोचन ॥ १०० ॥ दधिहर्ता, दुग्धहर, नवनीतसिताशन, तक्रभुक्, तक्रहारी, दधिचौर्यकृतश्रम ॥ १ ॥ प्रभावतीबद्धकर, दामी, दमोदर, दमी, सिकताभूमिचारी, बालकेलि, व्रजार्भक ॥ २ ॥ धूलधूसरसर्वांग, काकपक्षधर, सुधी, मुक्तकेशी, वत्सवृन्द, कालिंदीकूलवीक्षण ॥३॥जलकोलाहली, कूली, पंकप्रांगणलेपक, श्रीवृन्दावनसंचारी, वंशीवटतटस्थित ॥ ४ ॥ महावननिवासी, लोहार्गलवनाधिप, साधु, प्रियतम- साध्य, साध्वीश, गतसाध्वस ॥५॥ रंजनाथ,विठ्ठलेश, मुक्तिनाथ, अघनाशन, सुकीर्ति, सुयशा, स्फीत, यशस्वी, रंगरंजन ॥ ६ ॥ रागषट्क, रागपुत्र, रागिणीरमणोत्सुक, दीपक,मेघमल्लार,श्रीराग,मालकोशक ॥७॥ हिंडोल,भैरवाख्य, स्वरजातिस्मर, मृदु, ताल,मानप्रमाण, स्वरगम्य,कलाक्षर॥८॥शमी, श्यामी,शतानंद,शतायाम,शतक्रतु, जागर, सुप्त, आसुप्त, सुपुप्त, स्वप्न,ऊर्वर॥९॥ऊर्ज,स्फूर्ज,निर्जर, विज्वर, ज्वर

कृतस्वोत्संगगोलोकःकुण्डलीभूतआस्थितः ॥ माथुरोमाथुरादर्शीचलत्खञ्जनलोचनः॥१००॥दधिहर्तादुग्धहरोनवनीतसिताशनः ॥ तक्रभुक्तक्रहारीचदधिचौर्यकृतश्रमः ॥१॥ प्रभावतीबद्धकरोदामीदामोदरोदमी॥सिकताभूमिचारीचबालकेलिर्व्रजार्भकः ॥२॥ धूलिधूसरसर्वांगःकाकपक्षधरःसुधीः ॥ मुक्तकेशीवत्सवृंदःकालिन्दीकूलवीक्षणः ॥ ३ ॥ जलकोलाहलीकूलीपंकप्रांगणलेपकः ॥ श्रीवृन्दावनसंचारीवंशीवटतटस्थितः ॥४॥ महावननिवासीचलोहार्गलवनाधिपः॥ साधुःप्रियतमःसाध्यः साध्वीशोगतसाध्वसः॥५॥रंगनाथोविठ्ठलेशोमुक्तिनाथोऽघनाशकः॥ सुकीर्तिःसुयशाःस्फीतोयशस्वीरंगरंजनः ॥ ६ ॥ रागषट्कोरागपुत्रोरागिणीरमणोत्सुकः ॥ दीपकोमेघमल्हारःश्रीरागोमालकोशकः ॥ ७ ॥ हिन्दोलोभैरवाख्यश्चस्वरजातिस्मरोमृदुः ॥ तालोमानप्रमाणश्चस्वरगम्यःकलाक्षरः॥८॥शमीश्यामीशतानन्दःशतयामःशतक्रतुः॥जागरःसुप्तआसुप्तःसुषुप्तःस्वप्नऊर्वरः ॥९॥ ऊर्जःस्फूर्जोनिर्जरश्चविज्वरोज्वरवर्जितः ॥ ज्वरविज्ज्वरकर्ताचज्वरयुक्त्रिज्वरोज्वरः ॥११०॥ जांबवाञ्जंबुकाशंकीजंबूद्वीपोद्विपारिहा ॥ शाल्मलिःशाल्मलिद्वीपःप्लक्षःप्लक्षवनेश्वरः ॥११॥ कुशधारीकुशःकौशीकौशिकःकुशविग्रहः॥ कुशस्थलीपतिःकाशीनाथोभैरवशासनः ॥१२॥ दाशार्हःसात्त्वतोवृष्णिर्भोजोंधकनिवासकृत् ॥ अंधकोदुन्दुभिर्द्योतःप्रद्योतःसात्त्वतांपतिः ॥१३॥ शूरसेनोनुविषयोभोजवृष्ण्यंधकेश्वरः ॥ आहुकःसर्वनीतिज्ञउग्रसेनोमहोग्रवाक्॥१४॥ उग्रसेनप्रियःप्रार्थ्यःप्रार्थोयदुसभापतिः ॥ सुधर्माधिपतिःसत्त्वंवृष्णिचक्रावृतोभिषक् ॥ १५ ॥ सभाशीलःसभाद्वीपःसभाग्निश्चसभारविः ॥ सभाचन्द्रःसभाभासःसभादेवःसभापतिः ॥ १६ ॥

वर्जित, ज्वरजित्, ज्वरकर्ता, ज्वरयुग्,त्रिज्वर,अज्वर,॥११०॥जांबवान्,जंबुकाशंकी,जंबूद्वीप,द्विपारिहा,शाल्मलि,शाल्मलिद्वीप,प्लक्ष,प्लक्षवनेश्वर॥११॥कुशधारी, कुश, कौशी, कौशिक, कुशविग्रह, कुशस्थलीपति, काशीनाथ, भैरवशासन ॥ १२ ॥ दशार्ह, शाश्वत, वृष्णि, भोज, अन्धक, निवासकृत्, अन्धक, दुन्दुभि, द्योत, प्रद्योत, सात्त्वतांपति ॥१३॥ शूरसेन,अनुविषय, भोजनवृष्ण्यन्धकेश्वर, आहुक, सर्वनीतिज्ञ, उग्रसेन, महोग्रवाक् ॥ १४ ॥ उग्रसेनप्रिय, प्रार्थ, प्रार्थ्य, यदुसभापति, सुधर्मापति, सत्त्वं, वृष्णि, चक्रावृत, भिषक् ॥ १५ ॥ सभाशील, सभाद्वीप, सभाग्नि, सभारवि, सभाचन्द्र, सभाभास, सभादेव, सभापति, ॥ १६ ॥

प्रजार्थद, प्रजाभर्ता, प्रजापालनतत्पर, द्वारिकादुर्गसंचारी,द्वारिकाग्रहविग्रह ॥१७॥ द्वारिकादुःखसंहर्ता, द्वारिकाजनमंगल, जगन्माता, जगत्राता, जगद्भर्ता,जगत्पिता ॥१८॥ जगद्बन्धु जगद्धाता, जगन्मित्र, जगत्सख, ब्रह्मण्यदेव, ब्रह्मण्य, ब्रह्मपादरजोदधत् ॥ १९ ॥ ब्रह्मपादरजस्पर्शी, ब्रह्मपादनिसेवक, ब्रह्मांघ्रिजलपूतांग, विप्रसेवापरायण ॥१२०॥ विप्रमुख्य, विप्रहित, विप्रगीतमहाकथ, विप्रपादजलार्द्रांग, विप्रपादोदकप्रिय, ॥२१॥ विप्रभक्त, विप्रगुरु, विप्र, विप्रपदानुग, अक्षौहिणीवृत, योद्धा, प्रतिमापंचसंयुत, ॥ २२ ॥ चतुरोंगिरा, पद्मवर्ती, सामन्तोद्धृतपादुक, गजकोटिप्रयायी, रथकोटिजयध्वज ॥२३॥ महारथ, अतिरथ, जैत्रस्यंदनमास्थित, नारायणास्त्री, ब्रह्मास्त्री, रणश्लाघी, रणोद्भट ॥ २४ ॥ मदोत्कट, युद्धवीर, देवासुरभयंकर, करिकर्णमरुतत्प्रेज, कुन्तलव्यापकुण्डल,॥२५॥ अग्रग, वीरसम्मर्द, मर्द्दल, रणदुर्मद, भट, प्रतिभट, प्रोच्य, बाणवर्षी, इषुतोयद ॥२६॥ खड्गखंडितसर्वांग, पोडशाब्द

प्रजार्थदःप्रजाभर्ताप्रजापालनतत्परः ॥ द्वारकादुर्गसंचारीद्वारकाग्रहविग्रहविग्रहः॥१७॥ द्वारकादुःखसंहर्ताद्वारकाजनमंगलः ॥ जगन्माताजगत्राताजगद्भर्ताजगत्पिता ॥ १८ ॥ जगद्बंधुर्जगद्धाताजगन्मित्रोजगत्सखः ॥ ब्रह्मण्यदेवोब्रह्मण्योब्रह्मपादरजोदधत् ॥ १९ ॥ ब्रह्मपादरजःस्पर्शीब्रह्मपादनिषेवकः ॥ विप्रांघ्रिजलपूतांगोविप्रसेवापरायणः ॥ १२० ॥ विप्रमुख्योविप्रहितोविप्रगीतमहाकथाः ॥ विप्रपादजलार्द्रांगोविप्रपादोदकप्रियः ॥ २१ ॥ विप्रभक्तोविप्रगुरुर्विप्रोविप्रपदानुगः ॥ अक्षौहिणीवृतोयाद्धाप्रतिमापंचसंयुतः ॥ २२ ॥ चतुरोंगिराः पद्मवर्तीसामंतोद्धृतपादुकः ॥ गजकोटिप्रयायीचरथकोटिजयध्वजः ॥२३॥ महारथश्चातिरथोजैत्रस्यंदनमास्थितः ॥ नारायणास्त्रीब्रह्मास्त्रीरणश्लाघीरणोद्भटः ॥ २४ ॥ मदोत्कटोयुद्धवीरोदेवासुरभयंकरः ॥ करिकर्णमरुत्प्रेजत्कुन्तलव्याप्तकुण्डलः ॥२५॥ अग्रगोवीरसंमर्दोमर्दलोरणदुर्मदः ॥ भटःप्रतिभटःप्रोच्योबाणवर्षीषुतोयदः ॥२६॥ खड्गखंडितसर्वांगःपोडशाब्दःपडक्षरः ॥ वीरघोषःक्लिष्टवपुर्वज्रांगोवज्रभेदनः॥२७॥ रुग्णवज्रोभग्नदंडःशत्रुनिर्भर्त्सनोद्यतः ॥ अट्टहासः पट्टधरःपट्टराज्ञीपतिःपटुः॥२८॥ कलःपटहवादित्रोहुंकारोगर्जितस्वनः॥साधुभक्तपराधीनः स्वतंत्रःसाधुभूषणः ॥२९॥ अस्वतंत्रःसाधुमयःसाधुग्रस्तमनामनाक् ॥ साधुप्रियःसाधुधनःसाधुज्ञातिःसुधाधनः ॥१३०॥साधुचारीसाधुचित्तःसाधुवासीशुभास्पदः ॥ इतिनाम्नांसहस्रंतबलभद्रस्यकीर्तितम् ॥३१॥ सर्वसिद्धिप्रदंनृणांचतुर्वर्गफलप्रदम् ॥ शतवारंपठेद्यस्तुसविद्यावान्भवेदिह ॥ ३२ ॥ इंदिरांचविभूतिंचाभिजनंरूपमेवच ॥ बलमोजश्चपठनात्सर्वंप्राप्नोतिमानवः ॥ ३३ ॥

पडक्षर, वीरघोप, विलष्टवपु, वज्रांग, वज्रभेदन, ॥२७॥ रुग्णवज्र, भग्नदंत, शत्रुनिर्भर्त्सनोद्यत, अट्टहास, पट्टधर, पट्टराज्ञीपति, पटु, ॥ २८ ॥ कल पटहवादित्र, हुंकार, गर्जितस्वन, साधुभक्तपराधीन, स्वतंत्र, साधुभूषण, ॥२९॥ अस्वतंत्र, साधुमय, साधुग्रस्तमना, मनाक्, साधुप्रिय, साधुधन, साधुज्ञाति, सुधाधन ॥१३०॥ साधुचारी, साधुचित्त, साधुवासी, शुभास्पद, (१०००) इस प्रकारके बलभद्रके सहस्रनाम कीर्तन किये हैं ॥ ३१ ॥ मनुष्योंको सब सिद्धियोंके दाता हैं, और धर्म, अर्थ, काम और मोक्षके दाता हैं, जो मनुष्य इनका सौ बार पाठ करे वह विद्यावान् हो ॥३२॥ इनके नित्य पाठ करनेसे लक्ष्मीकी प्राप्ति हो, विभूति मिले, अभिजन बढे, और रूप बढे, देह बल, इन्द्रिय बल सब प्राप्त हो ॥३३॥

गंगाके किनारे पर या यमुनाके किनारेपर अथवा देवालयमें हजार पाठ करे, तो, बलसे, सिद्धि प्राप्त हो ॥३४॥ पुत्रकी चाहना वालेको पुत्र मिले, धन चाहनेवालेको धन मिले,बन्धन वाला हो, तो बन्धनसे छूटे, और रोगी हो तो रोगसे छूट जाये ॥३५॥ पुरश्चरणकी विधिसे दश हजार पाठ करे, होम तर्पण, गोदान, ब्राह्मणोंका पूजन करे, भोजन कराये ॥३६॥ पटल, पद्धति स्तोत्र, कवच विधानसे करे तो मंडलेश्वरोंसे शोभित सब पृथ्वीका चक्रवर्ती राजा हो ॥ ३७ ॥ मतवाले हाथियोंसे शोभित द्वार जिसके हों, जिन हाथियोंके मदसे मतवाले भ्रमर उसके द्वारपर गुञ्जन् करें ॥३८॥ जो निष्काम होकर रेवतीपतिकी प्रसन्नताके लिय इस सहस्रनामका पाठ कर, वह जीवन्मुक्त हो जाता है ॥३९॥ और उसके घरमें अच्युतके बड़ भाई बलदेवजी सदा निवास करते हैं महापापीभी जो जन यदि सहस्रनामका पाठ करे तो ॥४०॥ मेरुके समान पापको काटकर यहाँ जितने सुख है, उनको भोगकर हे महाराज !

गंगाकूलेथकालिंदीकूलेदेवालयेतथा ॥ सहस्रवर्तपाठेनबलात्सिद्धिःप्रजायते ॥ ३४ ॥ पुत्रार्थीलभतेपुत्रंधनार्थीलभतेधनम् ॥ बंधात्प्रमुच्यतेब-द्धोरोगीरोगान्निवर्तते ॥३५॥ अयुतावर्तपाठेचपुरश्चर्याविधानतः ॥ होमतर्पणगोदानविप्रार्चनकृतोद्यमात् ॥३६॥ पटलंपद्धतिंस्तोत्रंकवचंतुवि-धायच ॥ महामंडलभर्तास्यान्मंडितोमंडलेश्वरैः ॥ ३७ ॥ मत्तेभकर्णप्रहितामदगंधेनविह्वला ॥ अलंकरोतितद्द्वारंभ्रमद्भृङ्गावलीभृशम् ॥३८॥ निष्कारणःपठेद्यस्तुप्रीत्यर्थरेवतीपतेः ॥ नाम्नांसहस्रंराजेंद्रसजीवन्मुक्तउच्यते॥३९॥सदावसेत्तस्यगृहेबलभद्रोच्युताग्रजः ॥ महापातक्यपिजनः पठेन्नामसहस्रकम् ॥ ४० ॥ छित्त्वामेरुसमंपापंभुक्त्वासर्वसुखंत्विह ॥ परात्परंमहाराजगोलोकंधामयातिहि ॥ ४१ ॥ नारदउवाच ॥ गद्ये ॥ इतिश्रुत्वाच्युताग्रजस्यबलदेवस्यपंचांगंधृतिमान्धार्तराष्ट्रःसपर्ययासहितयापरयाभक्त्याप्राड्विपाकंपूजयामासतमनुज्ञाप्याशिषंदत्त्वाप्राड्वि-पाकोमुनींद्रोगजाह्वयात्स्वाश्रमंजगाम॥४२॥भगवतोनन्तस्यबलभद्रस्यपरब्रह्मणःकथांयःशृणुतेश्रावयतेतयानन्दमयोभवति॥४३॥इदंमयातेक-थितंनृपेंद्रसर्वार्थदंश्रीबलभद्रखण्डम् ॥ शृणोतियोधामहरेःसयातिविशोकआनन्दमखंडरूपम् ॥१४४॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीबलभद्रखण्डे प्राड्विपाकदुर्योधनसंवादेबलभद्रसहस्रनामवर्णनंनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ समाप्तश्चायंबलभद्रखण्डोष्टमः ॥ ८ ॥

वह परसे परे गोलोकधामको जाये ॥४१॥ नारदजी कहते हैं, धृतराष्ट्रके पुत्रने ऐसे बलदेवजीका पंचांग सुनकर, बड़ी भक्तिसे बडी भारी पूजा करके प्राड्विपाकका पूजन किया, तब प्राड्विपाक मुनि दुर्योधनसे आज्ञा मांगकर आशीर्वाद देकर अपन आश्रमको चले गये ॥४२॥ भगवान् अनन्त बलभद्र परब्रह्मकी कथाको जो सुने अथवा सुनाये, वह मनुष्य उस कथा जैसाही सदा आनन्दमय होता हैं ॥४३॥ हे नृपन्द्र ! यह मैंने सब अर्थोंको देनेवाला बलभद्रखंड तुम्हारे आगे कहा, इसको जो कोई सुनेगा, वह शोकरहित अखंडानन्द हरिके धामको जायगा ॥४४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां श्रीबलभद्रखंडे भाषाटीकायां प्राड्विपाक दुर्योधन संवादे बलभद्र सहस्र नाम वर्णनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अथ गर्गसंहितायां विज्ञानखण्डं भाषाटीकासहितं प्रारभ्यते

(नवमखण्डम्)

श्रीगणेशायनमः ॥ अथ विज्ञानखंडः ॥ बहुलाश्व राजाने नारदजीसे पूछा कि, हरि भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रका जो परम सर्वोत्तम भक्ति मार्ग है, हे मुनि ! मुझको कहिये जिससे मैं भक्त होऊँ ॥१॥ तव नारदजी बोले कि, मैं भक्तिमार्गको तुम्हारे सामने कहता हूँ, जो वेदव्यासके मुखसे मैंने सुना है, जिस भक्तिमार्गसे भक्तवत्सल भगवान् प्रसन्न होते हैं ॥२॥ भुजदण्डके बलसे उद्धत शंखासुरको मारकर श्रीकृष्णने जो समुद्रमें बारह योजनकी द्वारिका रची, हे मैथिल ! उसमें सुधर्मा नामकी दिव्य सभा रची ॥३॥ जिसके मण्डपके नीचे विश्वकर्माकी रची हुई वैदूर्यमणिके खम्भोंकी पंक्तियाँ करोडों शोभित हो रही हैं ॥४॥ जहाँ पुखराजकी जडी हुई भूमिमें मूंगोंकी श्रेणियाँ (नसेनी) लग रही हैं, और जिनमें चित्र, विचित्र, चँदोहा रंगे हैं, जिनमें मोतियोंकी झालर लटक रही हैं, ऐसे जहाँ सिंहासन बिछे हैं, बिजलीसहित घनके जैसी कान्ति जिनकी, ऐसी इन्द्रनीलमणिकी भीत जहाँ बन रही है

श्रीगणेशायनमः ॥ अथविज्ञानखण्डःप्रारभ्यते ॥ बहुलाश्वउवाच ॥ हरेःश्रीकृष्णचंद्रस्यभक्तिमार्गस्तुयःपरः ॥ तंवदाशुमुनेमह्यंयेनभक्तोभवाम्यहम् ॥ १ ॥ नारदउवाच ॥ भक्तिमार्गंवदिष्यामिवेदव्यासमुखाच्छ्रुतम् ॥ येनप्रसन्नोभवतिभगवान्भक्तवत्सलः ॥ २ ॥ शंखंविजित्यकृष्णेनभुजदंडबलोद्धतम् ॥ द्वारावत्यांसभादिव्यासुधर्मानाममैथिल ॥३॥ यत्रमंडपदेशस्यवैडूर्यस्तंभपंक्तयः ॥ राजंतेकोटिशोराजन्विश्वकर्मविनिर्मिताः ॥४॥ पद्मरागखचिद्भूमौश्रेण्योवैविद्रुमाचिताः ॥ यत्रचित्रवितानानिभ्राजंतेमौक्तिकालिभिः ॥५॥ सिंहासनानिकुड्यानिकालमेघतडिद्द्युभिः ॥ जांबूनदसुवर्णानांस्फुरत्कुण्डलकोटिभिः ॥६॥ बालार्करत्नकेयूरकांचीकंकणनूपुरैः ॥ शतचंद्रप्रतीकाशाःस्फुरत्कुण्डलमंडिताः ॥७॥ गायंतियत्रगंधर्व्योविद्याधर्योमुदान्विताः ॥ नृत्यंत्यःकलवादित्रैःस्पर्द्धावत्यःपरस्परम् ॥८॥ यस्याश्चतुःषुकोणेषुदेववृक्षैर्मनोरमैः ॥ नन्दनंसर्वतोभद्रंध्रौव्यंचैत्ररथंवनम् ॥९॥ लक्षाणियत्रराजेंद्रसरांसिविमलानिच ॥ सहस्रदलपद्मानिभ्रमरैःसंकुलानिच॥१०॥ दशयोजनविस्तीर्णापञ्चयोजनमूर्द्ध्वगा ॥ एतादृशीसुधर्मास्तेपताकाध्वजमंडिता ॥११॥ यत्रप्रविष्टःपुरुषआत्मानंमन्यतेपरम् ॥ यत्सिंहासनमासाद्यशक्रोहमितिमन्यते ॥ १२ ॥

॥ ५ ॥ वहाँ जाम्बूनद सुवर्णके देदीप्यमान कुण्डलोंसे ॥ ६ ॥ बाल सूर्य जैसी कान्तिवाले रत्नोंके बाजू, कंकणी, करधनी हैं जिनके, शत चन्द्र (एकसौ चन्द्रमा) जैसी है मुख कान्ति जिनकी, और कानोंमें झलकते कुण्डलोंसे मण्डित ॥७॥ ऐसी गन्धर्व स्त्रियाँ और विद्याधरियाँ जहाँ गा रही हैं, आनन्दसे नाच रही हैं मनोहर बाजों (बाद्यों) से आपसमें अपनी बडाई चाहती हैं ॥ ८ ॥ जिसके चारों कोणोंपर मनोहर देव वृक्षोंसे इन्द्र, वरुण, कुवेर, यमनन्दन, सर्वतोभद्र, ध्रौव्य और चैत्ररथ इनके वन लग रहे हैं ॥९॥ जहाँ लाखों निर्मल सरोवर हैं, जिनमें हजारों कमल खिल रहे हैं, उनपर भ्रमर गुंजार कर रहे हैं ॥१०॥ दश योजन चौडी, पांच योजन ऊँची, ऐसी सुधर्मा सभा ध्वजा पताकाओंसे मंडित है ॥ ११ ॥ जहाँ प्रवेश होकर पुरुष अपनेको उत्तम मानता है, जहाँ सिंहासनपर बैठकर पुरुष अपनेको "मैं इन्द्र हूँ" ऐसा मानता है ॥ १२ ॥

जो जो त्रिलोकीकी चतुराई हैं, वह सब उस पुरुषकी देहमें आजाती हैं, और जबतक उस सभामें रहे, तबतक जाडा गर्मी, भूख, प्यास, बुढापा, मृत्यु, ये, नहीं होते हैं ॥१३॥ हे नरोत्तम ! जितने मनुष्य उसमें प्रवेश होते हैं, उतनाही स्थान उसमें बढ जाता है ॥१४॥ कैसे कि, छप्पन करोड यादव जिसमें चाकरों सहित जाकर जब बैठते हैं, तब सब एकही कोनेमें समा जाते हैं ॥१५॥ परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण भगवान् स्वयम् जहाँ विराजते हैं, उसका कौन वर्णन कर सकता है ॥१६॥ जिस सुधर्मा सभामें करोड़ों यादवोंके साथ उग्रसेन, सूत, मागध, बन्दीजनोंसे गाये जारहे विराजते हैं ॥१७॥ एक दिन आकाश मार्गसे पाराशरके पुत्र, श्याम सुन्दर, महामुनि वेद व्यासजी, बिजली जैसी पीली जटाओंको धारण किये, आये ॥१८॥ उनको देखकर यादवोंका राजा उग्रसेन हाथ जोडकर खडा होगया, आसन देकर, विधिपूर्वक पूजन करके, सामने बैठकर यह बोला ॥१९॥ आज मेरा

यद्यत्रैलोक्यचातुर्यंतस्यदेहेप्रवर्तते ॥ यावत्तिष्ठेत्तत्रतावदूर्मिषट्कंनचैवहि ॥१३॥ यावंतश्चजनास्तत्रप्रविशंतिनरोत्तम॥स्वप्रभावेणसहसाताव-
तीसाप्रकाशते ॥१४॥ षट्पंचाशत्कोटिसंख्यायादवायत्रसानुगाः ॥ तच्चत्वरस्यैकदेशेदृश्यंतेतेचमैथिल ॥१५॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णो
भगवान्स्वयम् ॥ यत्रास्तेतस्यराजेंद्रवर्णनंकःकरोतिहि ॥१६॥ अथतस्यांसुधर्मायांयदुकोटिसमावृतः ॥ उग्रसेनोगीयमानःसूतमागधबंदिभिः
॥१७॥ आकाशादागतःसाक्षाद्वेदव्यासोमहामुनिः ॥ पाराशर्योघनश्यामस्तडित्पिंगजटाधरः॥१८॥ तंदृष्ट्वासहसोत्थाययदुराजःकृतांजलिः॥
नत्वासनंस्वोपचारंदत्त्वातत्संमुखोभवत् ॥ १९ ॥ उग्रसेनउवाच ॥ अद्यमेसफलंजन्मसफलंगेहमद्यमे ॥ अद्यमेसफलोधर्मोब्रह्मंस्त्वय्या
गतेसति॥२०॥सदानंदेषुकुशलंकृष्णेनेष्टंभवत्सुहि ॥ वदमेकुशलंदेवयेनस्वस्थोभवाम्यहम् ॥ २१ ॥ यत्रयत्रव्रजंतश्चत्वादृशाःसाधवःप्रभो ॥
तत्रतत्रभवेत्सिद्धिर्लौकिकीपारलौकिकी ॥ २२ ॥ यत्रक्षणंस्थिताःसंतस्तत्रसाक्षात्स्वयंहरिः ॥ किमुलोकगुणाब्रह्मन्पाराशर्यमहामुने॥ २३ ॥
मयातुपुण्यंयज्ञोवाकिंकृतंपूर्वजन्मनि ॥ येनवैद्वारकाराज्यंप्राप्तोहंमुनिपुंगव॥२४॥भवादृशाविप्रमुख्यागृहमायांतिनित्यशः॥तस्मात्परंहिसुकृ-
तंजानेस्वस्यनसंशयः ॥ २५ ॥ व्यासउवाच ॥ धन्योसिराजशार्दूलधन्यातेविमलामतिः ॥ परंकृतंत्वयाराजन्सुकृतंपूर्वजन्मनि ॥ २६ ॥

जन्म सफल होगया, आज मेरा घर सफल हुआ, आज मेरा धर्म सफल हुआ, हे ब्रह्मन् ! जो आप मेरे घर आये ॥२०॥ आप तो सदाही आनन्द रूप हैं, आपसे कुशल पूछना अयोग्य है, हे देव ! मेरी कुशल कहिये, जिससे मैं स्वस्थ होऊँ ॥२१॥ जहाँ २ आप जैसे सन्त महात्मा साधु जाते हैं, वहाँ २ इस लोककी और परलोककी सिद्धि होती है ॥२२॥ जहाँ एक क्षणके लिये सन्त (महात्मा साधु,) ठहरते हैं, वहाँ साक्षात् भगवान् आते हैं फिर हे पाराशर्य ! हे महामुने ! भूलोकके सब गुण वहाँ आयें, तो क्या आश्चर्य है ॥२३॥ मैंने कोई पुण्य अथवा यज्ञ पूर्व जन्ममें क्या किया है ? हे मुनि पुंगव ! जिससे मुझको द्वारिकाका राज्य प्राप्त हुआ है ॥ २४ ॥ आप जैसे ब्राह्मणोंमें मुख्य यदि नित्य घर आयें तो इससे अधिक मैं अपना सुकृत और नहीं मानता हूँ ॥२५॥ तब व्यासजी बोले–हे राजशार्दूल तुम धन्य हो, तुम्हारी बडी निर्मल बुद्धि है, तुमने पूर्वजन्ममें बहुत बडा सुकृत किया है ॥२६॥

पहले जन्ममें तुम मरुत नामके राजा थे, तुमने विश्वजित् नामका यज्ञ निष्काम होकर किया था, उससे भगवान् तुम पर प्रसन्न हुये ॥२७॥ निष्काम कर्मसे ही यह राज्य तुमको प्राप्त हुआ है, परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण अपने वशवर्ती तुमने वशमें कर लिये हैं ॥२८॥ जो असंख्य ब्रह्माण्डोंके पति, गोलोकके पति, परेसे परे भगवान् श्रीकृष्ण हैं, वे तुम्हारी भक्तिसे वशीभूत होकर तुम्हारे मन्दिरमें रहते हैं ॥ २९ ॥ अहो हे भोजपते ! भोजन करनेवालोंको भगवान् मुक्ति तो दे देते हैं, किन्तु भक्ति कभी नहीं देते हैं, हे नृप ! भक्तियोग ऐसा दुर्लभ है ॥३०॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विज्ञानखण्डे नारदबहुलाश्व संवादे भाषाटीकायां व्यासाऽगमनं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥१॥ उग्रसेन बोले कि मैं धन्य हूँ, मुझपर आपने अनुग्रह किया, आपके वर्णनसे मैं प्रसन्न हुआ, मनके संदेह दूर करनेके आपका ही सामर्थ्य है ॥१॥ सकाम कर्मोंसे कौनसी गति होती है, और उन कर्मोंका क्या लक्षण है, और कितने भेद हैं, हे ब्रह्मन् ! आप जैसा हो वैसा कहिये ॥ २ ॥ तब व्यासजी बोले–रजोगुण और तमोगुणसे सब सकाम कर्म होते हैं, यदि उनमें फलकी इच्छा न करे, तो वे ही

पुरात्वंमरुतोराजन्कृत्वायज्ञंजगज्जितम् ॥ निष्कारणोभूर्मनसाप्रसन्नोभूद्धरिस्तदा ॥२७॥ अनिमित्तेनभावेनप्राप्तंचेदंपरंतव ॥ परिपूर्णतमःसा-
क्षाच्छ्रीकृष्णोभगवान्हरिः॥२८॥असंख्यब्रह्मांडपतिर्गोलोकेशःपरात्परः॥सोयंभक्त्यावशीभूतःस्ववशस्तवमंदिरे॥२९॥अहोभोजपतेमुक्तिंददा-
तिभजतांहरिः ॥ नकर्हिचिद्भक्तियोगंदुर्लभंविद्धितंनृप॥३०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविज्ञानखंडेवेदव्यासोग्रसेनासंवादेव्यासागमनंनामप्रथमो-
ऽध्यायः ॥ १ ॥ उग्रसेनउवाच ॥ धन्योस्म्यनुगृहीतोस्मितववर्णननिर्वृतः ॥ हृद्गुद्भूतंचसंदेहंदूरीकर्तुंभवान्क्षमः ॥ १ ॥ कर्मणांसनिमित्ता-
नांकागतिःकिंचलक्षणम् ॥ कतिभेदाहितेषांवैवदब्रह्मन्यथातथा ॥ २ ॥ व्यासउवाच ॥ गुणैःसर्वाणिकर्माणिसनिमित्तानिसंतिहि ॥ तान्येव
चानिमित्तानिराजंस्त्यक्तफलानिहि ॥ ३ ॥ सनिमित्तंचयत्कर्मबंधनंविद्धियादव ॥ अनिमित्तंचयत्कर्ममोक्षदंपरमंशुभम् ॥४॥ सत्त्वरजस्तम
इतिगुणाःप्रकृतिसंभवाः ॥ तैर्व्याप्तंहिजगत्सर्वंसर्वार्थमिवविष्णुना॥५॥सत्त्वेप्रलीनाःस्वर्यांतिनरलोकंरजोलयाः॥ तमोलयास्तुनरकंयांतिकृष्णं-
हिनिर्गुणाः ॥ ६ ॥ पंचाग्नितप्ताअतपन्येराजन्व्रजवासिनः ॥ लोकंसप्तऋषीणांतुतेयांतिगतकल्मषाः ॥ ७ ॥ संन्यासाश्रमकर्तारस्त्रिदंडधृत-
पाणयः ॥ जितेंद्रियमानोधर्माःसत्यलोकंव्रजंतिहि ॥८॥ अष्टांगयोगयोगींद्रानिर्मलाऊर्ध्वरेतसः ॥ जनलोकंमहर्लोकंयांतितेनात्रसंशयः॥९॥

निष्काम होते हैं ॥३॥ हे यादव ! जो सकाम कर्म हैं, वह तो बन्धन है और जो निष्काम कर्म है, वह मोक्षका दाता है, इसीसे वह अति शुभ है ॥४॥ सत्वगुण, रजोगुण, तमोगुण, ये तीनों गुण प्रकृतिसे हुये हैं, उनसे ही सब जगत् व्याप्त हो रहा है, जैसे विष्णुसे जगत व्याप्त है ॥५॥ मरते समय जो सत्वगुणमें लीन होते हैं, वे स्वर्गको जाते हैं, जो रजोगुणमें लीन होते हैं, वे मनुष्य लोकमें आते हैं, और जो तमोगुणमें लीन होते हैं, वे नरकमें जाते हैं, जो निर्गुण (गुण सम्बन्ध रहित) हैं, वे श्रीकृष्णको प्राप्त होते हैं ॥६॥ हे राजन् ! जो व्रजवासी पञ्चाग्नि तपते हैं, वे निष्पाप होकर सप्तऋषियोंके लोकको जाते हैं ॥७॥ जो संन्यास आश्रमको धारण करते हैं, त्रिदण्ड धारण करते हैं, जीत ली हैं इन्द्रियाँ और मनके धर्म जिन्होंने, वे सत्यलोकको जाते हैं ॥८॥ जो योगीन्द्र अष्टांगयोगको धारणकर निर्मल हैं, ऊर्ध्वरेता हैं वे निःसन्देह जनलोक अथवा महर्लोकको जाते हैं ॥ ९ ॥

जो यज्ञकर्ता हैं, वे बहुत वर्षोंतक स्वर्गमें रहते हैं, जो दानी हैं, वे चन्द्रलोकको जाते हैं, और जो व्रती हैं, वे सूर्यलोकको जाते हैं ॥ १० ॥ तीर्थ करनेवाले: अग्निलोकको जाते हैं, सत्यवादी वरुण लोकको जाते हैं, विष्णुके भक्त वैकुण्ठलोकको जाते हैं, शिवके भक्त शिवलोकको जाते हैं ॥११॥ सुख ऐश्वर्य, और पुत्रकी इच्छा करनेवाले पितरोंको पूजते हैं, वे अर्य्यमाके दक्षिण मार्गमें होकर पितरोंके संग पितृलोकको जाते हैं ॥१२॥ गणेश, सूर्य, शिव, दुर्गा, विष्णु, इनके पूजक धर्मशास्त्री स्मार्तलोग स्वर्गलोकको जाते हैं, और प्रजापतियोंके पूजक दक्षादिक प्रजापतियोंके लोकको प्राप्त होते हैं ॥१३॥ भूतोंको पूजनेवाले भूतोंको प्राप्त होते हैं, यक्षोंके पूजक यक्षलोकको जाते हैं, जो जिनके भक्त हैं वे उन्हींको प्राप्त होते हैं, इसमें सन्देह नहीं ॥१४॥ वैसेही जो पापरत हैं, दुस्संगी हैं, वे दारुण नरक हैं जिसमें ऐसे यमलोकको जाते हैं, ॥१५॥ ब्रह्माके लोक तक जितने लोक हैं, उनमें प्राणी वार वार जाते हैं, और वार वार आते हैं, हे राजन्! ये पुनरावर्ती लोक हैं, ऐसा तुम जानो॥१६॥यह सकामोंका मार्ग मैंने कहा, जिसमें आना जाना है, जबतक पुण्य रहे तब तक

यक्षकर्ताशक्रलोकेवसतेशाश्वतीःसमाः ॥ दानीचांद्रमसंलोकंव्रतीसौरंव्रजत्यलम्॥१०॥ तीर्थयायीचाग्निलोकंसत्यसंधश्चवारुणम्॥वैष्णवाश्चा-
पिवैकुण्ठंशैवाःशैवंव्रजंतिहि॥११॥ पितॄन्यजंतियेनित्यंसुखैश्वर्यप्रजेप्सवः॥ दक्षिणेनपथार्य्यम्णापितृलोकंव्रजंतिते ॥१२॥ स्वर्लोकंवैतथास्मार्ता
पंचपूजनसंयुताः॥प्रजापतियजोयांतिदक्षादींश्चप्रजापतीन्॥१३॥ भूतानियांतिभूतेज्यायक्षान्यक्षयजस्तथा॥येयस्यभक्तास्तांल्लोकान्यांतिराजन्न
संशयः ॥ १४ ॥ तथापापरताराजनन्दुःसंगवशवर्तिनः ॥ यमलोकंचतेयांतिनिरयैर्दारुणैर्वृतम् ॥१५॥ पुनरावर्तिनोलोकाःसर्वेचाब्रह्मलोकतः
पुनरावर्तिलोकान्विद्धिराजन्महामते ॥ १६ ॥ कर्मणांसनिमित्तानांमार्गएषगतागतः ॥ तावत्प्रमोदतेस्वर्गेयावत्पुण्यंसमाप्यते ॥ १७ ॥
क्षीणपुण्यःपतत्यर्वागनिच्छन्कालचालितः ॥ यादवेंद्रमहाबाहोतस्मात्कर्मफलंत्यजेत् ॥ १८ ॥ भक्तोनिष्कारणोभूत्वाज्ञानवैराग्यसंयुतम् ॥
प्रेमलक्षणयावाचाहरिभक्तजनप्रियः ॥ १९ ॥ भजेच्छ्रीकृष्णपादाब्जमभयंहंससेवितम् ॥ योमृत्युःसर्वलोकानांबलात्संहारकारकः ॥ २० ॥
सयत्रभगवद्धाम्निगतःसन्मृत्युमाप्नुयात् ॥ २१ ॥ उग्रसेनउवाच ॥ सर्वेलाकाहिभगवन्पुनरावर्तिनःस्मृताः ॥ तेभ्योजातंचवैराग्यंमनसोमेन
संशयः ॥ २२ ॥ श्रीकृष्णधामपरमंयतोनावर्ततेगतः ॥ तल्लोकंवदमेब्रह्मन्क्वचास्तेसर्वतःपरम् ॥ २३ ॥

स्वर्गमें रहता है ॥१७॥ जब पुण्य क्षीण होजाते हैं, तब कालका प्रेरित किया हुआ, नीचे आगिरता है, इच्छा नहीं करे तो भी गिरता है, इससे हे यादवेंद्र ! हे महाबाहो ! कर्मोंके फलको छोडना ही ठीक है ॥१८॥ इससे निष्काम भक्त होकर, आज्ञान, वैराग्यसे संयुक्त, प्रेमलक्षण वाणीसे युक्त होकर, हरिके भक्तजनोंमें प्रीति करके ॥१९॥ श्रीकृष्णके चरण कमलको भजना चाहिये, परम हंसोंने सेवन किया है, और अभय है, जो सब लोकोंकी मृत्यु है, बलपूर्वक संहारकरनेवाला है ॥२०॥ वह काल जिसके धाममें जाकर मरजाता है ॥२१॥ तब उग्रसेनजी बोले कि हे भगवान् ! सब लोक पुनरावर्ती माने हैं इनसे तो मुझको निःसंदेह मनसे वैराग्य आगया है ॥२२॥ अब जो श्रीकृष्णका परमधाम है, जहाँ गया संसारमें नहीं आता है, हे ब्रह्मन् ! उस लोकको आप मुझसे कहिये, वह लोक सबसे दूर कहाँ है ॥ २३ ॥

॥३१२॥

तब व्यासजी बोले कि ब्रह्माण्डसे बाहिर श्रीकृष्ण महात्माका धाम है, जहाँका गया फिर नहीं आता है, उसको पर गोलोक कहते हैं ॥२४॥ यह ब्रह्माण्ड, जीवों समूह, पचास करोड योजनका चारों ओरसे विस्तृत है, और सौ करोड योजन लम्बा है ॥२५॥ वह ब्रह्माण्ड जिसके भीतर परमाणु जैसा दीखता है, और जिसके भीतर और भी करोडों ब्रह्माण्ड हैं ॥२६॥ जहाँ सूर्यका प्रकाश नहीं पहुँचता है, न चन्द्रमाका, न अग्निका प्रकाश है, और काम क्रोध, लोभ, मोहभी जहाँ नहीं पहुँचते हैं ॥ २७ ॥ और जहाँ शोक, जरा मृत्यु, पीडा, प्रकृति और काल नहीं है, फिर कहो तीनों गुण जहाँ नहीं पहुँचते हैं, तो क्या आश्चर्य है ॥२८॥ कहनेमें नहीं आता है, वेदभी जिसको नहीं कह सकते हैं, जहाँ श्रीकृष्णके तेजसे हुये पार्षदही हैं ॥२९॥ जो अकिंचन हैं, दान्त हैं, शांत हैं, समान चित्त हैं, श्रीकृष्ण चन्द्रके चरण कमलके मकरन्दमेंही घर है जिनका ॥३०॥ जो प्रेम लक्षणा भक्तिसे निष्काम चित्त

॥ श्रीव्यासउवाच ॥ ब्रह्मांडेभ्योबहिर्द्धामश्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥ यद्गताननिवर्तन्तेतद्गोलोकंविदुःपरम् ॥ २४ ॥ ब्रह्मांडोयंजीवसंघः पंचाशत्कोटियोजनैः ॥ विस्तृतःपरतोद्वाभ्यांशतकोटिविलंघितः ॥ २५ ॥ यदंतरगतोराजल्लँक्ष्यतेपरमाणुवत् ॥ तदंतरगताश्चान्येकोटिशोह्यंडराशयः ॥२६॥ नतद्भासयतेसूर्योनशशांकोनपावकः ॥ कामक्रोधश्चलोभश्चनमोहोयत्रयातिच ॥२७॥ नयत्रशोकोनजरानमृत्युर्नार्तिरेवच ॥ नप्रधानंनकालश्चविशंतेचगुणाःकुतः ॥२८॥ शब्दब्रह्माप्यनिर्वाच्यंतद्वर्णयितुमक्षमः ॥ श्रीकृष्णतेजःसंभूतास्तत्रसंतिचपार्षदाः ॥२९॥ अकिंचनाश्चयेदांताःशांतावैसमचेतसः ॥ श्रीकृष्णचन्द्रपादाब्जमकरंदरसालयाः॥३०॥प्रेमलक्षणयाभक्त्यासदानिष्कारणाःपराः ॥ लोकानुल्लंघ्य तद्धामयांतिराजन्नसंशयः ॥ ३१ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीविज्ञानखंडेश्रीव्यासोग्रसेनसंवादेलोकगतिनिरूपणंनामद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ ॥ उग्रसेनउवाच ॥ श्रुतंतवमुखाद्ब्रह्मन्गुणकर्मगतिर्मया ॥ पुनरावर्तिनोलोकास्तथासंतिविनिश्चिताः ॥ १ ॥ निष्कारणाद्धरेःसाक्षात्सेवनात्तद्धाममुत्तमम् ॥ लभंतेदुर्लभंदिव्यंभक्तानांतच्छ्रुतंमया ॥ २ ॥ भक्तियोगःकतिविधोवदमेवदतांवर ॥ येनप्रसन्नोभवतिभगवान्भक्तवत्सलः ॥ ॥ ३ ॥ श्रीव्यासउवाच ॥ द्वारावतीशधन्योसिश्रीकृष्णेष्टोहरिप्रियः पृच्छसेभक्तियोगंत्वंधन्यातेविमलामतिः ॥ ४ ॥

हैं, वे सब लोकोंका उल्लंघन करके उस लोकको जाते हैं, हे राजन् ! इसमें संशय नहीं है ॥३१॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विज्ञानखण्डे भाषाटीकायां व्यासोग्रसेनसंवादे लोकगतिनिरूपणं नामद्वितीयोऽध्यायः ॥२॥ फिर उग्रसेनने पूछा कि, हे ब्रह्मन् ! आपके मुखसे गुण और कर्मोंकी गति मैंने सुनी, और पुनरावृत्ति लोकभी निश्चय किये ॥ १ ॥ और निष्कारण भक्तिसे साक्षात् भगवान्के सेवनसे दुर्लभ जो दिव्य गोलोक वह भक्तोंको मिलता है, वह भी मैंने सुना ॥२॥ अब हे वक्ताओंमें श्रेष्ठ ! वह भक्ति योग कितने प्रकारका है, जिससे भक्तवत्सल भगवान् प्रसन्न होते हैं, वह कहिये ॥ ३ ॥ तब व्यासजी बोले कि, हे द्वारिकाके ईश ! तुम धन्य हो, श्रीकृष्णके इष्टी, हरिके प्रिय जो तुम भक्ति योगको पूछते हो, इससे तुम्हारी निर्मल बुद्धिको धन्य हो ॥ ४ ॥

जिसको सुनकर विश्वघातीभी पापी निर्मल होजाता है, हे यादव ! उस विशद भक्ति योगको मैं तुम्हारे सामने कहता हूँ ॥५॥ हे राजन् ! वह भक्तियोग दो प्रकारका है, एक सगुण और एक निर्गुण, उनमें सगुण भक्तियोग बहुत प्रकारका है, और निर्गुण एकही प्रकारका है ॥६॥ देहधारियोंके गुणोंके मार्गसे सगुण भक्तियोग बहुत प्रकारका है, उन्हीं गुणोंसे तीन प्रकारके भक्त होते हैं, उनको तुम पृथक् पृथक् सुनो ॥७॥ किसीकी हिंसा या दम्भ अथवा मत्सर (असहन शीलता) इनमेंसे किसी बातका अभिसंधान करके भिन्न दृष्टि होकर जो हरिमें भक्ति करे, वह क्रोधी भक्त तमोगुणी भक्त है ॥८॥ और यशके लिये, विषयके लिये, और ऐश्वर्यके लिये जो यत्नसे हरिका पूजन करे, वह रजोगुणी भक्त है ॥९॥ कर्म नाशके लिये पृथक् भावको छोडकर, एक दृष्टि होकर, मोक्षके लिये, जो भगवान्‌का भजन करे, वह सात्विक भक्त है ॥ १० ॥ हे महामते ! और भी प्रकारके भक्त हैं, एक आर्त जैसे द्रौपदी या गजराज, एक जिज्ञासु जैसे राजा परीक्षित् अथवा पृथु, एक अर्थार्थी जैसे कि देवता और एक ज्ञानी जैसे विदेह जनक, प्रह्लाद आदि ये सभी उत्तम हैं, जो कृत मंगल विष्णुको भजते हैं, किन्तु इनमें ज्ञानी महा उत्तम है, (यहाँ उदाहरण स्वरूप दिये भक्तोंके नाम मूल कथाके नहीं हैं, पाठकोंके समझनेके लिये दिये गये हैं) ॥११॥ ऐसे बहुत प्रकारके

यंश्रुत्वानिर्मलोभूयाद्विश्वघात्यपिपातकी ॥ तंभक्तियोगंविशदंतुभ्यंवक्ष्यामियादव ॥५॥ भक्तियोगोद्विधाराजन्सगुणश्चैवनिर्गुणः सगुणःस्याद्बहुविधोनिर्गुणश्चैकलक्षणः ॥६॥ सगुणःस्याद्बहुविधोगुणमार्गेणदेहिनाम् ॥ तैर्गुणैस्त्रिविधाभक्ताभवन्तिशृणुतान्पृथक् ॥७॥ हिंसांदंभंचमात्सर्य्यंचाभिसन्धायभिन्नदृक् ॥ कुर्याद्भावंहरौक्रोधीतामसः परिकीर्तितः ॥८॥ यशऐश्वर्यविषयानभिसंधाययत्नतः ॥ अर्चयेद्योहरिंराजन्राजसःपरिकीर्तितः ॥ ९ ॥ उद्दिश्यकर्मनिर्हारमपृथग्भावएववहि ॥ मोक्षार्थंभजतेविष्णुंसभक्तःसात्त्विकःस्मृतः ॥ १० ॥ जिज्ञासुरार्तोज्ञानीचतथार्थार्थीमहामते ॥ चतुर्विधाजनाविष्णुंभजंतेकृतमंगलाः ॥ ११ ॥ एवंबहुविधेनापिभक्तियोगेनमाधवम् ॥ भजंतिसनिमित्तास्तेजनाःसुकृतिनःपरे ॥१२॥ लक्षणंभक्तियोगस्यनिर्गुणस्यतथाशृणु ॥ तद्गुणश्रुतिमात्रेणश्रीकृष्णेपुरुषोत्तमे ॥ १३ ॥ परिपूर्णतमेसाक्षात्सर्वकारणकारणे ॥ मनोगतिरविच्छिन्नखंडिताहैतुकीचया ॥ १४ ॥ यथाब्धावंभसागंगासाभक्तिर्निर्गुणास्मृता ॥ निर्गुणानांचभक्तानांलक्षणंशृणुमानद ॥ १५ ॥ सार्वभौमंपारमेष्ठ्यंचशक्रधिष्ण्यंतथैवच ॥ रसाधिपत्यंयोगर्द्धिंनवांच्छंतिहरेर्जनाः ॥१६॥ हरिणादीयमानंवासालोक्यंयादवेश्वर ॥ नगृह्णंतिकदाचित्तेसत्संगानन्दनिर्वृताः ॥ १७ ॥ सामीप्यंतेनवांच्छंतिभगवद्विरहातुराः ॥ सन्निकृष्टेनतत्प्रेमयथादूरतरेभवेत् ॥ १८ ॥

भक्तियोगसे जो कृष्णको भजते हैं, वे सनिमित्त (सकाम) भक्त कहलाते हैं, इनसे जो पृथक् हैं, वे भक्त कहलाते हैं ॥१२॥ अब हे राजन् ! तुम निर्गुण भक्तियोगका लक्षण सुनो, जिनकी उसके गुण सुनने मात्रसेही परिपूर्णतम श्रीकृष्णमें ॥१३॥ सबके कारणके भी कारण परिपूर्णतममें अविच्छिन्न अखण्डित निष्काम मनकी गति चला करे, वे निर्गुण भक्त हैं ॥१४॥ जैसे समुद्रमें गङ्गाजीकी धारा चलती है, वैसे जिनकी मनोवृत्ति कभी रुकती नहीं हैं, वे निर्गुण भक्त हैं, हे मानद ! अब तुम निर्गुण भक्तोंके सुनो ॥ १५ ॥ जो निर्गुण भक्त हैं, वे चक्रवर्ती राज्य, रसातलके राज्य, इन्द्रलोकके राज्य, ब्रह्माकी पदवी, अणिमादिक सिद्धियाँ, किसीकी इच्छा नहीं करते हैं ॥१६॥ और तो क्या, हरि वैकुण्ठ भी उनको देते हैं, किन्तु वे कभी कुछ चाहना नहीं करते हैं, हे यादवेश्वर ! क्योंकि वे सदा सत्संगके आनन्दमें पूर्ण रहते हैं ॥१७॥ कोई २ सामीप्य मुक्तिको नहीं चाहते हैं, वे भगवान्‌के विरहातुर होकरही रहना चाहते हैं, क्योंकि पास रहनेसे वैसा स्नेह नहीं रहता है, जैसा दूरसे रहता है ॥ १८ ॥

कोई २ सारूप्य (भगवान्के जैसा रूप हो जाय) उसको भी ग्रहण नहीं करते हैं, केवल उसकी सेवा करनेमेंही उत्सुक हैं, भक्तजन बराबरीके अभिमानसे बचे हैं ॥ १९ ॥ कोई २ सायुज्य मुक्तिकी भी कभी इच्छा नहीं करते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि, इसमें स्वामी सेवक भावकी हानि होती है ॥२०॥ जो निरपेक्ष, शांत, निर्वैर, समदर्शी हैं वे मोक्ष से लेकर जितने लोक पदोंका ग्रहण है उसको कारण ही कहते हैं ॥२१॥ निरपेक्षता ही बडा आनन्द है, इस आनन्दको हरिके जो निरपेक्ष भक्त हैं, वेही जानते हैं, जैसे सुगन्धिको नाकही जानता है, नेत्र नहीं जानते हैं ॥ २२ ॥ सकामी भक्त उस आनन्दको नहीं जानते हैं, जैसे रसकर्ता हाथ है परन्तु रसके स्वादको नहीं जानता है ॥२३॥ इससे हे राजन् ! अत्यन्त पद तो भक्तयोगही है, ऐसे तुम जानो, अब निरपेक्ष भक्तोंकी पद्धति (मार्ग) को तुम्हारे सामने कहता हूँ ॥२४॥ श्रवण १, कीर्तन, २, स्मरण ३, पादसेवन ४, अर्चन ५, वंदन ६, दास्य ७, सख्य ८, आत्मनिवेदन ९ ये नवधाभक्ति हैं, (नवधाभक्तिके उदाहरण इस भांति हैं, श्रवण राजा परीक्षितने किया १, कीर्तन शुकदेवजीने २, स्मरण प्रह्लाद ३,

सारूप्यंदीयमानंवासमानत्वाभिमानिनः ॥ नैरपेक्ष्यान्नवांच्छंतिभक्तास्तत्सेवनोत्सुकाः ॥१९॥ एकत्वंचापिकैवल्यंनवांच्छंतिकदाचन॥एवंचे-त्तर्हिदासत्वंक्वस्वामित्वंपरस्यच ॥२०॥ निरपेक्षाश्चयेशांतानिर्वैराःसमदर्शिनः ॥ आकैवल्याल्लोकपदग्रहणंकारणंविदुः॥ २१ ॥ नैरपेक्ष्यंमहा-नन्दंनिरपेक्षाजनाहरेः ॥ जानातिहियथानासापुष्पामोदंनचक्षुषी ॥२२॥ सकामाश्चतदानन्दंजानंतिहिकथंचन ॥ रसकर्ताथाहस्तोरसास्वादं नवेत्तिहि ॥२३॥ तस्माद्राजन्भक्तियोगंविद्धिचात्यंतिकंपदम् ॥ भक्तानांनिरपेक्षाणांपद्धतिंकथयामिते ॥२४॥ स्मरणंकीर्तनंविष्णोःश्रवणंपा-दसेवनम् ॥ अर्चनंवंदनन्दास्यंसख्यमात्मनिवेदनम् ॥ २५ ॥ कुर्वंतिसततंराजन्भक्तिंयेप्रेमलक्षणाम् ॥ तेभक्तादुर्लभाभूमौभगवद्भावभावनाः ॥ २६ ॥ कुर्वंतोमहतोपेक्षांदयांहीनेषुसर्वतः ॥ समानेषुतथामैत्रींसर्वभूतदयापराः ॥ २७ ॥ कृष्णपादाब्जमधुपाःकृष्णदर्शनलालसाः॥कृष्णं स्मरंतिप्राणेशंयथाप्रोषितभर्तृकाः ॥२८॥ श्रीकृष्णस्मरणाद्येषांरोमहर्षःप्रजायते ॥ आनन्दाश्रुकलाश्चैववैवर्ण्यंतुक्वचिद्भवेत् ॥२९॥ श्रीकृष्ण गोविन्दहरेब्रुवंतःश्लक्ष्णयागिरा ॥ अहर्निशंहरौलग्नास्तेहिभागवतोत्तमाः ॥ ३० ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीविज्ञानखंडेश्रीवेदव्यासोग्रसेनसंवा-देनिर्गुणभक्तियोगवर्णनंनामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

पादसेवन लक्ष्मीजीने ४, अर्चन पृथुने ५, वन्दन अक्रूरने ६, दास्य हनूमान्ने ७, सख्य अर्जुन और उद्धवने ८, आत्मनिवेदन बलिने ९, और नौवीं भक्ति गोपियोंनेकी) ॥२५॥ हे राजन् ! जो निरन्तर प्रेम लक्षणा भक्ति करते हैं, वे भगवान्के भावकी भावनावाले भक्त भूमिमें दुर्लभ हैं ॥ २६ ॥ महान् पुरुषोंसे तो सुननकी इच्छा रखे, जो अपनेसे न्यून हों उनपर दया और बराबरवालोंसे मित्रता और सब दीनोंपर दया रखे ॥२७॥ कृष्ण चरणकमलके भ्रमर हैं, कृष्ण दर्शनकी जिनके लालसा है, और कृष्णकोही प्राणेश जानकर ऐसे भजते हैं जैसे प्रोषित भर्तृका पतिको ॥२८॥ जिनके श्रीकृष्णका स्मरण करते ही रोमांच हो आते हैं, आनन्दके आंसू आ जाते हैं, देहविवर्ण होजाता है ॥ २९ ॥ हे श्रीकृष्ण ! हे गोविन्द ! हे हरे ! ऐसे मधुरवाणीसे कहते रातदिन हरिमें लगे रहते हैं, वे भागवतोंमें उत्तम हैं ॥३०॥ इति श्रीम० सं० विज्ञानखंडे भाषाटीकायां निर्गुणभक्तियोगवर्णनंनामतृतीयोऽध्यायः ॥३॥

व्यासजी कहते हैं कि आकाशमें, पवनमें, जलमें, अग्निमें, पृथ्वीमें, सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह, नक्षत्र, तारागण, सबमें श्रीकृष्णकोही देखते हैं, बारबार हर्षित होकर रहते हैं ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण, राधिकानाथ, करोड कामदेवके मोह करनेवाले नन्द नन्दन बोलते हुये उनकी आंखोंके सामने आते हैं ॥२॥ तब वे उस सदा आनन्दको देखकर हर्षित होरहे हैं, कभी बोलते हैं, कभी भागते हैं, कभी प्रसन्न होते हैं ॥३॥ कभी गाते हैं, कभी नाचते हैं, कभी चुप हो जाते हैं, वे कृतार्थ वैष्णवोत्तम कृष्णचन्द्रके स्वरूप हैं ॥४॥ उन भक्तोंके दर्शनसेही नर कृतार्थ हो जाता है, न तो काल और न यमराज उनको दण्ड दे सकते हैं ॥५॥ बांई ओर तो कौमोदिकी गदा दाहिनी ओर सुदर्शन, आगेसे शार्ङ्गधनुष और पीछेसे गम्भीर शब्द वाला पाञ्चजन्य शंख ॥६॥ नन्दक नाम खड्ग और शतचन्द्र नामक ढाल, तीखे बाण, य सब आयुधों (शस्त्रास्त्रों) में मुख्य रातदिन उन भक्तोंकी रक्षा करते हैं ॥७॥ उनके ऊपर कमल छाया करता है, गरुडजी अपने पंखोंकी वायुसे उनके श्रमको हरते हैं ॥८॥ जहाँ २ सन्त जाते हैं, वहाँ २ हरि आप जाते हैं, अपने चरणकमलकी रजसे भूमिको पवित्र करते

॥ श्रीव्यासउवाच ॥ खेवायौसलिलेवह्नौमह्यांज्योतिर्गणेषुच ॥ श्रीकृष्णदेवंपश्यंतोहर्षिताश्चपुनःपुनः ॥ १ ॥ श्रीकृष्णोराधिकानाथः
कोटिकंदर्पमोहनः ॥ तन्नेत्रगोचरोयातिब्रुवञ्छ्रीनंदनंदनः ॥२॥ सदानंदंचतेदृष्ट्वाप्रहसंतिप्रहर्षिताः ॥ क्वचिद्वदंतिधावंतिनंदंतिचक्वचित्तथा॥३॥
क्वचिद्गायंतिनृत्यंतिक्वचित्तूष्णींभवंतिच ॥ कृष्णचंद्रस्वरूपास्तेकृतार्थावैष्णवोत्तमाः ॥४॥ तेषांदर्शनमात्रेणनरोयातिकृतार्थताम् ॥ नकालोन
यमस्तेषांदंडंदातुंनचक्षमः ॥ ५ ॥ गदाकौमोदकीवामेदक्षिणेचसुदर्शनम् ॥ अग्रेशार्ङ्गंधनुःपश्चात्पांचजन्योघनस्वनः ॥६॥ नंदकश्चमहाखड्गः
शतचंद्रेषवःशिताः ॥ एतान्यायुधमुख्यानितांश्चरक्षंत्यहर्निशम् ॥७॥ तथोपरिमहापद्मंछायांकर्तुंपुनःपुनः ॥ गरुडःपक्षवातेनश्रमहर्तासतामपि
॥ ८ ॥ यत्रयत्रगताःसंतस्तत्रतत्रस्वयंहरिः ॥ तीर्थीकुर्वन्भूमिभागंश्रीमत्पादाब्जरेणुभिः ॥९॥ क्षणंयत्रस्थिताःसंतस्तत्रतीर्थानिसंतिहि॥ तत्र
कोपिमृतःपापीयातिविष्णोःपरंपदम् ॥१०॥ दूरात्संप्रेक्ष्यकृष्णेष्टानाधयोव्याधयस्तथा ॥ भूतप्रेतपिशाचाश्चपलायंतेदिशोदश॥११॥ नद्यान-
दाःपर्वताश्चसमुद्राश्चतथापरे ॥ मार्गंददुश्चसाधुभ्योनपेक्षेभ्यःसमंततः ॥१२॥ साधूनांज्ञाननिष्ठानांविरक्तानांमहात्मनाम् ॥ अजातशत्रूणांतेषां
दुर्लभंपुण्यवर्जितैः ॥ १३ ॥ यस्मिन्कुलेकृष्णभक्तोजायतेब्रह्मलक्षणम् ॥ तत्कुलंविमलंविद्धिमलीमसमपिस्वतः ॥१४॥ राजञ्छ्रीकृष्णभक्त-
स्तुपितुर्दशकुलोद्धवान् ॥ प्रियापक्षेपिदशचमातृपक्षेतथादश ॥ १५ ॥

हुये उनके पीछे २ भगवान् घूमते हैं ॥९॥ एकभी क्षण जहाँ सन्त ठहरे वहाँही तीर्थ होता है, वहाँ कोई पापीभी मर जाये, तो विष्णुलोकको जाता है ॥१०॥ श्रीकृष्णके भक्तोंको दूरसेही देखकर मनके दुःख, रोग, भूत, प्रेत, पिशाच, दशों दिशाओंमें भाग जाते हैं ॥११॥ नद, नदी, पर्वत, समुद्र, ये सब अनपेक्ष्य साधुओंको चारों ओरसे मार्ग देते हैं ॥१२॥ जो सहनशील हैं, ज्ञाननिष्ठ विरक्त महात्मा अजातशत्रु हैं, उनका दर्शन पुण्यवान् पुरुषोंकोही होता है, पुण्यवर्जित पुरुषोंको उन भक्तोंका दर्शन दुर्लभ है ॥ १३ ॥ जिस कुलमें श्रीकृष्णका भक्तब्रह्मका लक्षण जन्म लेता है, वह कुल मलीन हो, तो भी उस कुलको निर्मल जानो, और जिसमें भक्त नहीं हो, उसको मलीन कुल समझो ॥१४॥ हे राजन् ! श्रीकृष्णका भक्त अपनी दश पीढियोंका उद्धार करता है, और दश पीढी माताके पक्षकी और दश पीढी स्त्रीके पक्षकी, इनका भी उद्धार करता है ॥ १५ ॥

जो हरिका भक्त है, वह भक्त-नरकके बंधनसे, पापके बंधनसे उद्धार करता है, साधुओंके सम्बन्धी हैं, चाकर हैं, दास हैं सुहृद् हैं ॥१६॥ शत्रु हैं, बोझा ढोनेवाले हैं, उनके घर के पक्षी हैं, चीटा, चींटी, भ्रमर, कीडे मकोडे, पतंग, मच्छर, उनको भी पवित्र करते हैं ॥१७॥ अब्रह्मण्य देश है जिसमें काला मृग नहीं है, जिसमें वीर नहीं हैं, अथवा सौवीर देश कीकट देश है, असंस्कृत देश है म्लेच्छ देश है, इनमें भी जो भक्त हैं, इन सब देशोंको वे पवित्र करते हैं ॥१८॥ ज्ञान विना, योग विना, यज्ञ किये विना, तीर्थ किये विना, जो साधुओंके साथ वाले हैं, वे हरि मंदिरको जाते हैं ॥१९॥ इस प्रकार श्रीकृष्णके भक्तोंका माहात्म्य मैंने तुम्हारे आगे वर्णन किया, जो धर्म, अर्थ, काम मोक्षको देनेवाला है, अब तुम क्या सुनना चाहते हो ? ॥२०॥ तब उग्रसेन बोला कि, परिपूर्णतम साक्षात् महात्मा श्रीकृष्णमें दन्तवक्र दुष्टकी ज्योति कैसे लीन हो गई ? ॥ २१ ॥ यह बडा आश्चर्य है, महापुरुषोंकी ज्योति कृष्णमें लीन हो जाय, तो योग्य है; किन्तु शत्रुकी कैसे लीन हो गई ॥ २२ ॥ व्यासजी बोले–"मैं ऐसा हूँ, मेरा वैभव है, जो यह वैषम्य विषमता है, वह

पुरुषानुद्धरेद्राजन्निरयात्पापबंधनात् ॥ साधुसंबंधिनश्चान्येभृत्यादासाःसुहृज्जनाः॥१६॥ शत्रवोभारवाहाश्चतद्गृहेपक्षिणस्तथा॥पिपीलिकाश्च मशकास्तथाकीटपतंगकाः॥१७॥ अब्रह्मण्येऽकृष्णसारेसौवीरेकीकटेतथा ॥ म्लेच्छदेशेपिदेवेशभक्तोलोकान्पुनातिहि ॥१८॥ सांख्ययोगंविनाराजंस्तीर्थधर्ममखैर्विना ॥ साधुसंसर्गिनस्तेपिप्रयांतिहरिमंदिरे ॥ १९ ॥ इत्थंश्रीकृष्णभक्तानांमाहात्म्यंकथितंमया ॥ चतुःपदार्थदंनृणांकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ २० ॥ उग्रसेनउवाच ॥ परिपूर्णतमेसाक्षाच्छ्रीकृष्णेपरमात्मनि ॥ दंतवक्रस्यदुष्टस्यज्योतिर्लीनंबभूवह ॥ २१ ॥ अहोमहदिदंचित्रंसायुज्यंमहतामपि ॥ योग्यंस्याद्विप्रमुख्येंद्रकथंचान्येनशत्रुणा ॥ २२ ॥ श्रीव्यासउवाच ॥ ममाहमितिवैषम्यंभूतानांत्रिगुणात्मनाम् ॥ क्रोधाद्येवर्ततेराजन्नहरौपरमात्मनि ॥ २३ ॥ हरौकेनापिभावेनमनोलग्नंकरोतियः ॥ यातितद्रूपतांसोपिभृंगिणःकीटकोयथा ॥२४॥ स्नेहंकामंभयंक्रोधमैक्यंसौहृदमेवच ॥ कृत्वातन्मयतांयांतिसांख्ययोगंविनाजनाः॥२५॥स्नेहान्नंदयशोदाद्यावसुदेवादयोऽपरे ॥ कामाद्गोप्योहरिंप्राप्तानतुब्रह्मतयानृप ॥ २६ ॥ तद्रूपगुणमाधुर्यभावसँल्लग्नमानसाः ॥ भयात्कंसस्तवसुतस्तत्सायुज्यंजगामह ॥ २७ ॥ क्रोधादयंदंतवक्रःशिशुपालादयोऽपरे ॥ ऐक्याच्चयादवायूयंसौहृदाच्चवयंतथा ॥ २८ ॥

त्रिगुणात्मा जो जीव है, उनको है, काम, क्रोध, लोभ, और मोह इनसे होती है. सो हे राजन् ! यह परमात्मामें नहीं है ॥ २३ ॥ जो कोई भाव करके हरिमें मन लगाता वह उन भगवान्के रूपको प्राप्त होता है, जैसे भृंगीके भयसे कीडा भृंगी हो जाता है ॥२४॥ स्नेहसे, कामसे, भयसे, क्रोधसे ऐक्यतासे और सुहृदतासे जिस किसी तरहसे भगवान्में मन लगाते हैं, वे ज्ञानके विना योगके विना भी तन्मयताको प्राप्त होते हैं ॥ २५ ॥ स्नेहसे तो नन्द यशोदादिक और भी कामसे गोपियाँ हरिके प्राप्त हो गईं, ब्रह्मता प्राप्त नहीं हुई है ॥२६॥ उसके रूप, गुण, माधुर्यके भावसे इनका मन लग गया, भयसे तुम्हारा पुत्र कंस सायुज्यको प्राप्त हो गया ॥ २७ ॥ क्रोधसे दन्तवक्र तथा और भी शिशुपालादिक प्राप्त हुये, ऐक्यतासे तुम यादव और सुहृदतासे हम प्राप्त हुये हैं ॥ २८ ॥

उससे किसी भी उपायसे मन कृष्णमें लगाये, रात दिन मन तो शत्रुका ही लगता है, दूसरेका नहीं ॥२९॥ इसीसे असुरादिक हरिसे शत्रुका ही भाव करते हैं ॥३०॥ इति श्रीमद्ग-
र्गसंहितायां विज्ञानखंडे भाषाटीकायां व्यासोपाख्याने भक्तमाहात्म्यं नामचतुर्थोऽध्यायः ॥४॥ व्यासजी कहते हैं–वत्सासुर, अघासुर, धेनुकासुर, बकासुर, पूतना, केशी, कालनेमि
अरिष्टासुर, प्रलंबासुर, द्विविद बंदर, बल्वल, शंख शालव, ये वैर (शत्रुता) से ही जब प्रकृति पुरुपसे परे हरिको प्राप्त हुये, कुछ भक्त नहीं हैं, फिर भक्तिके करनेवाले भक्त भगवान्को
प्राप्त हों, तो आश्चर्य क्या है ॥१॥ पहिले मधुकैटम अति बली हिरण्यकशिपु, हिरण्याक्ष, रावण कुम्भकर्ण सब वैरसे ही विष्णुके उस परमपदको प्राप्त हो गये ॥ २ ॥ और कौन २
नहीं विष्णुपदको प्राप्त हुये देखो प्रह्लाद, वाणासुर, शंखचूड, विभीषणादिक भगवान्के चरणकमलकी रजके लोभी ये सत्संगसे ही प्राप्त हो गये ॥३॥ और नारद बृहस्पति, वशिष्ठ

तस्मात्केनाप्युपायेनमनःकृष्णेनिवेशयेत् ॥ अहर्निशंहिस्मरणंभवेच्छत्रोर्नकर्हिचित् ॥ २९ ॥ शत्रुभावंहरौतस्मात्कुर्वंतिदनुजादयः ॥ ३० ॥
इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविज्ञानखण्डेश्रीव्यासोग्रसेनसंवादेभक्तमाहात्म्यंनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ श्रीवेदव्यासउवाच ॥ वत्साघधेनुकब-
कीबककेशिकालारिष्टप्रलंबकपिबल्वलशंखशाल्वाः॥ वैरेणयंकिमुतभक्तियुतानरेन्द्रप्रापुःपरंप्रकृतिपूरुषयोःपुमांसम् ॥१॥ पूर्वासुरावतिबलौम-
धुकैटभाख्यौस्वर्णाक्षहेमकशिपूचतथापरौच ॥ वैरंविधायनृपरावणकुंभकर्णौविष्णोःकिलापतुरलंपरमंपदंहि॥२॥ केकेनविष्णुपदमागतवंतआ-
दौप्रह्लादबाणबलियक्षविभीषणाद्याः ॥ सत्संगसंगनिरताबहुमानपात्रश्रीमत्पदाब्जमकरंदरजोविलुब्धाः ॥ ३ ॥ देवर्षिगीष्पतिवसिष्ठपराशरा-
द्याःसांख्यायनासितशुकाःसनकादयश्च॥निष्कारणाभुविचरंत्यरविंदनेत्रपादारविंदनेत्रपादारविंदमकरंदमिलिंदमुख्याः॥४॥यत्युत्कलांगभरता-
र्जुनमैथिलाश्वगाधिप्रियव्रतयदुप्रमुखांबरीषाः॥निष्कारणाःपरमहंसवराश्चरंतिश्रीकृष्णचन्द्रचरितामृतपानमत्ताः ॥५॥ मन्दोदरीचशबरीचमतं-
गशिष्यास्तारातथात्रिवनितानिपुणात्वहल्या॥कुन्तीतथाद्रुपदराजसुतासुभक्ताएताःपरंपरमहंससमाःप्रसिद्धाः॥६॥ सुग्रीववालिसुतवातसुतर्क्षरा-
जनागारिगृध्रवर काकभुशुंडिमुख्याः ॥ कुब्जादिवायकसुदामगुहादयोन्येतत्संगमेत्यहरिभक्तवराबभूवुः ॥ ७ ॥ कृष्णंनरोधयतिधर्मतपोनयोगः
सांख्यंनयज्ञउततीर्थयमव्रतानि ॥ छन्दांसिपूर्तनियमावथदक्षिणाचनेष्टंनदानमथभक्तिमृतेनकश्चित् ॥ ८ ॥

पराशर, सांख्यायन, अस्तित, शुकदेव सनकादिक जो निष्काम पृथ्वीमें विचरते हैं और जो कमलनेत्र श्रीकृष्णके चरणकमलकी सुगंधिके भ्रमर हैं ॥ ४ ॥ मति उत्कल अंग, भरत,
अर्जुन, जनक, गाधि, प्रियव्रत, यदु, अम्बरीप ये निष्काम भक्त हैं, श्रीकृष्णके चरितरूपी अमृतके पानसे मत्त हुये पृथ्वीपर विचरते हैं ॥ ५ ॥ और मन्दोदरी, शबरी, मतंगकी
शिष्या तारा, अत्रिकी स्त्री अनुसूया, अहिल्या कुन्ती, द्रौपदी, इतनी स्त्रियाँ परमहंसोंके समान प्रसिद्ध हैं ॥ ६ ॥ सुग्रीव, अंगद, हनुमान्, जाम्बवान्, गरुड, जटायु, काकभुशुण्डि,
कुब्जा, वामक, (इन्द्रपुत्र) सुदामा, गुह ये भक्तोंका संग पाकर हरि भक्तोंमें श्रेष्ठ हो गये ॥ ७ ॥ धर्म, तप, योग, साख्य, यज्ञ, तीर्थयात्रा, यम, नियम, चान्द्रायणादिक व्रत
वेदपाठ, बावडी, तलाव, बाग, प्याऊ, सदावर्त, अग्निहोत्र, दान, ये सब भक्ति विना श्रीकृष्णको कोई नहीं वशमें कर सकते हैं ॥ ८ ॥

यज्ञ, व्रत, वेदपाठ, तप, तीर्थयात्रा, योग, इष्ट, स्वधर्म नियमादिक सांख्य, योग, इनसे जो कुछ फल मिलता है, वह सब केवल एक भक्तिसे मिलता है, और जो भक्तिसे मिलता है, वह इनसे किसीसे नहीं मिलता है ॥९॥ भक्ति कैसी है, कि यमपुरसे उद्धार करनेवाली है, विश्वरूप महासमुद्रसे पार उतारनेवाली है, विषयोंसे संचित कर्मोंका नाश करनेवाली है; परात्पर भगवान्के पदको देनेवाली है ॥१०॥ श्रीकृष्णके दर्शनके रसमें उत्सुकका जो भाव उससे शोभित, जो उद्यत परमोत्सव, उसकी यह भक्तिवसन्त पञ्चमी है, कामदेवके मित्र वसन्तकी फल, फूल, पत्र, मंजरीके भारसे झुकी हुई यह भक्तिलता है ॥११॥ संमोहरूप काल घनके बीचमें चमकती हुई बिजली है; शास्त्रके अर्थको दिखानेवाले वचनोंकी दीपिका है, और जयरूप कार्तिककी दीपावली है, और तीनों गुणोंको जीतने के लिये आश्विनकी विजयादशमी है ॥१२॥ सांख्य और योग ये तो दोनों जिसके पार्श्वभाग (अगल,

यज्ञव्रताध्ययनतीर्थतपोनियोगैरिष्टस्वधर्मनियमादिकसांख्ययोगैः ॥ यत्प्राप्यतेतदखिलंभवतीहभक्त्याभक्तेःपदंहिकर्हिचिन्नभवेत्किलैभिः॥९॥
उद्धारिणीयमपुरस्यचविश्वरूपादुत्तारिणीभवमहार्णववारिवेगात् ॥ संहारिणीविषयसंचितकर्मणांचसत्कारिणीहरिपदस्यपरात्परस्य ॥ १० ॥
श्रीकृष्णदर्शनरसोत्सुकभावराजदुद्यद्वसंतपरमोत्सवपंचमीयम् ॥ दिव्यालतातिफलपल्लवभारनम्रासंराजतेहिसततंकुसुमाकरस्य ॥११॥ संमोह
कालघनमध्यतडित्स्फुरंतीशास्त्रार्थदर्शवचसांपददीपिकेयम् ॥ दीपावलिर्विजयतेजयकीर्तिकस्यजेतुंगुणान्विजयिनोदशमीजयस्य ॥ १२ ॥
सांख्यंचयोगइतिपार्श्वगतेहिदंडेकीलानिचात्रशतशोगुणभावभेदाः॥ अस्याःक्रमान्नवकथाश्रवणादयश्चश्रेणीयमस्तिसरलाभगवत्पदस्य॥१३॥
इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांश्रीविज्ञानखंडेव्यासोग्रसेनसंवादेभक्त्युत्कर्षवर्णनंनामपंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ उग्रसेनउवाच ॥ कर्मग्रहोगृहस्थोयंश्री
कृष्णस्यमहात्मनः ॥ सेवांवैकेनविधिनाकुर्यात्तद्ब्रूहिमेमुने ॥१॥ भक्त्यंकुरोयस्यनास्तिवास्तितस्यनवर्द्धते॥तस्यकेनप्रकारेणप्रसन्नःस्याद्धरिः
स्वयम् ॥ २ ॥ श्रीव्यासउवाच ॥ यदिभक्त्यंकुरोनस्यात्सत्संगेनचजायते ॥ ॥ बलाद्धिवर्द्धतेतस्मात्सतांसंगंसमाचरेत् ॥ ३ ॥ कृष्णसेवा
विधिंतुभ्यंवक्ष्यामिसुलभंपरम् ॥ ययागृहस्थोयंशीघ्रंश्रीकृष्णंप्राप्नुयान्नृप ॥ ४ ॥

बगल) के दण्ड हैं, गुणभावोंके सैंकडों भेद जिसके कीले हैं, और ये जो नवधा भक्तिके श्रवणसे आदि लेकर नवभेद हैं, वेही जिसके नौबीचके दण्ड हैं, वह यह गोलोकको जानेके लिये मानो नौ दण्डोंकी नसेनीही है ॥ १३ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विज्ञानखण्डे भाषाटीकायां भक्त्युत्कर्षणं नाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ उग्रसेनने फिर पूछा कि, कर्मरूपग्रह जिसको लगरहा ऐसा जो गृहस्थी वह हे मुने ! किस विधिसे भगवान्की पूजा करे, वह मुझसे कहिये ॥१॥ भक्तिका अंकुर जिसके नहीं है और है तो बढता नहीं है, उसपर भगवान् कैसे प्रसन्न हों ॥२॥ व्यासजी कहते हैं कि, यदि भक्तिका अंकुर नहीं हो तो सत्संगसे भक्तिका अंकुर होता है, फिर वह बलसे बढता है, इससे सत्संग करना चाहिये, सत्संगसे ही बढता है ॥३॥ अब कृष्ण सेवाकी परम सुलभ विधिको मैं तुम्हारे सामने कहता हूँ जिससे गृहस्थी जल्दीही श्रीकृष्णको प्राप्त होजाय ॥ ४ ॥

आचार्यके कुलमें उत्पन्न हुआ हो, श्रीकृष्णके ध्यानमें तत्पर हो, ऐसे गुरुको करके मनुष्य सिद्ध होता है ॥५॥ गुरुसे श्रीकृष्ण महात्माकी सेवाविधि सीखनी चाहिये ॥६॥ जिसको विष्णुकी दीक्षा नहीं है, उसका सब कर्तव्य निष्फल है विना गुरुवालेका दर्शन भी पुण्य नाश करता है ॥७॥ उत्तराभिमुख हरिका मन्दिर बनवाये वहाँ पीठ और कुशलयुक्त ऊंचा सिंहासन बनवाये ॥८॥ सच्चिदानन्द नाम जिसका उसमें तीन सोपान (सीढी) बनवाये, उस सिंहासनके तुल्य बहुमूल्य वस्त्र बिछाये, कोमल ॥९॥ तकिये, गेंडुये, सुनहरी कामके नाना चित्र जिसमें, अंतर्पट जिसमें, ऐसी भीत बनाये, ॥१०॥ सब ओरसे मण्डल, बंदनवार, जाली, झरोखे, फुहारे चतुःशाला और सुन्दर जाली ॥११॥ और सभामण्डपों के मण्डलसे बडा आंगन सुशोभित हो, उस आंगनमें सुन्दर तुलसीजीका मंदिर बनरहा हो, ॥१२॥ ऐसे मंदिरके बाहिर दो हाथी बनवाये, और वैसेही दो सिंहोंको बनवाकर स्थापित

आचार्य्यकुलसंभूतंश्रीकृष्णध्यानतत्परम् ॥ एतादृशंगुरुंकृत्वासिद्धोभवतिमानवः ॥ ५ ॥ गुरोःसेवाविधिंशिक्षेच्छ्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥६॥ विष्णुदीक्षाविहीनस्यसर्वंभवतिनिष्फलम् ॥ निर्गुरोर्दर्शनंकृत्वाहतपुण्योभवेन्नरः ॥ ७ ॥ उत्तराभिमुखंशश्वत्कारयेद्धरिमंदिरम् ॥ तत्रसिंहासनंप्रोच्चंसपीठंकुंभमंडितम् ॥८॥ सच्चिदानंदनामस्यात्सोपानत्रयभूषितम् ॥ महार्हवस्त्रैराच्छन्नंतत्रतुल्यासनंमृदु ॥ ९ ॥ पार्श्वोपबर्हणयुतंस्फुरद्धेमांबरावृतम् ॥ नानाचित्रयुतैःकुड्यैरंतःपटसमन्वितैः ॥१०॥ सर्वतोमंडलैस्तद्वत्तोरणैःसमलंकृतम् ॥ गवाक्षवारियंत्राढ्यंचतुःशालसुजालकैः ॥ ११ ॥ राजतेप्रांगणोद्देशःसभामंडपमंडलैः ॥ तत्रप्रांगणमध्येतुतुलसीमंदिरंशुभम् ॥१२॥ मंदिरस्यबहिर्द्वारिकारयेच्चद्विपद्वयम् ॥ तथावैकृत्रिमंराजन्सिंहद्वयमधिष्ठितम् ॥ १३ ॥ सुवर्णशिखरस्याधश्चक्रंचशिखरोपरि ॥ द्वारेपिहरिनामानिप्रालेख्यानिशुभानिच ॥ १४ ॥ शंखंपद्मंगदांशार्ङ्गमालेख्यंभित्तिपार्श्वयोः ॥ इषुधीचतथाबाणःसव्येदक्षिणएवच ॥१५॥ तथामंदिरपृष्ठेवैशतचंद्रंचनंदकम् ॥ हलंचमुसलंचैवलेखनीयंप्रयत्नतः ॥ १६ ॥ सिंहासनस्यपृष्ठेतुगोप्योगावस्तथैवच ॥ गोपालास्तत्रसोपानेकपाटेविजयोजयः ॥ १७ ॥ देहल्यांकल्पवृक्षश्चस्तंभेषुचलताःशुभाः ॥ यत्रतत्रचकुड्येषुश्रीगंगापापहारिणी ॥१८॥ वृंदावनंगोवर्धनंयमुनापुलिनानिच ॥ तथावैचीरहरणमालेख्यंरासमंडलम् ॥१९॥

करे ॥१३॥ फिर सुवर्णके शिखरके नीचे और शिखरके ऊपर एक चक्रको बनवाकर स्थापित करे और द्वारके दोनों ओर भगवानके शुभ नाम लिखे ॥ १४ ॥ उन नामोंके दोनों ओर दीवालोंमें शंख, कमल, गदा, और शार्ङ्ग इनको लिखे, बाईं ओर दो तर्कस और दाहिनी ओर बाणोंको लिखे ॥१५॥ वैसेही मंदिरके पीछे शतचन्द्र नामकी ढाल और नन्दक नामके खड्गको लिखें, उनके पास प्रयत्नसे हल, मूसलको भी लिखे ॥१६॥ और भगवान्‌के सिंहासनके पीछे गोपियोंको और गौओंको लिखे, और सिंहासनके सोपानमें गोपाल श्रीकृष्णके सखाओंको और दोनों किवाड़ोंमें जयविजय पार्षदोंको लिखे, ॥ १७ ॥ देहलीमें काच वृक्षको लिखे, खम्भोंमें सुन्दर लताओंको लिखे, और दीवालोंमें जहाँ तहाँ पापहारिणी गंगाको लिखे ॥ १८ ॥ और वृन्दावन, गोवर्धन और यमुनाजीके पुलिन, चीरहरणलीला और रासमंडलकोभी लिखना चाहिये ।) ॥ १९ ॥

और चित्रकूटको, पंचवटीको और राम रावणके युद्धको लिखे, किन्तु जानकी हरणलीलाको नहीं लिखे, ये सब पीछेके भागमें लिखे ॥२०॥ और दशों अवतारके चित्रोंको नर नारायणके आश्रमको, सातों पुरियोंको, तीनों ग्रामों (संभलग्राम, नंदिग्राम और कलापग्राम) और दण्डकारण्य आदि जो नौ वन हैं, उनको और नौ ऊपरोंको लिखे ॥२१॥ इस प्रकार चित्रोंको लिखकर फिर बुद्धिमान् पुरुष मंदिरको बनवाये, उस मंदिरमें भगवान्‌की मूर्तिकी स्थापना करे, वह मूर्ति वंशीको हाथमें लिये हो, दाहिना पांव जिसका टेढा हो॥२२॥ किशोर अवस्थाकी आकृतिकी कृष्णकी मूर्ति विशेष करके सेवाके योग्य मानी है उस मूर्तिकी गुरुके हाथसे प्रतिष्ठा कराकर मंदिरमें स्थापन कराये ॥२३॥ फिर भक्त होकर परम भक्तिसे प्रतिष्ठा कराकर उनके सेवनमें तत्पर हो, भगवान्‌के प्रसादमें अपनी जिह्वाको, उनके प्रसादके तुलसीदलकी गन्धमें अपनी नासिकाको लगावे, कानोंको भगवान्‌के कथा श्रवणमें

चित्रकूटःपंचवटीलेखनीयंप्रयत्नतः ॥ रामरावणयोर्युद्धंजानकीहरणंविना ॥२०॥ दशावतारचित्राणिनरनारायणाश्रमः ॥ सप्तपुर्यस्त्रयोग्रामानवारण्यंनवोपराः ॥२१॥ एवंलिखित्वाचित्राणिमंदिरंकारयेद्बुधः ॥ वंशीभावोद्यतकरंवक्रीभूतांघ्रिदक्षिणम् ॥२२॥ किशोराकृतिकृष्णस्यरूपंसेव्यतमंस्मृतम् ॥ तत्प्रतिष्ठांविधायाशुगुरुहस्तेनमंदिरे॥२३॥भक्तःपरमयाभक्त्यास्थापयेत्तत्परोभवेत् ॥ तत्प्रसादेचरसनांघ्राणंतत्तुलसीदले ॥ न्यसेत्कर्णौतच्छ्रवणेएवंसेवापरोभवेत् ॥२४॥ अहर्निशंकृष्णसेवांयःकरोतिचभाववित् ॥ तंप्रेमलक्षणंभक्तंविदुर्भागवतोत्तमम् ॥२५॥ अश्वमेधसहस्राणिराजसूयशतानिच ॥ राजञ्छ्रीकृष्णसेवायाकलांनार्हंतिपोडशीम् ॥ २६ ॥ श्रीकृष्णदेशिकस्यापियःकुर्याद्दर्शनंनरः ॥ कोटिजन्मकृतैःपापैर्मुच्यतेनात्रसंशयः ॥ २७ ॥ देहांतेतंसमानेतुंश्यामसुंदरविग्रहाः ॥ रथंनीत्वाप्रधावंतिगोलोकात्कृष्णपार्षदाः ॥२८॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविज्ञानखण्डेश्रीवेदव्यासोग्रसेनसंवादेसेवाविधिवर्णनंनामपष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ श्रीवेदव्यासउवाच ॥ ब्राह्मेमुहूर्तेचोत्थायकशिपोश्चसदानृप ॥ गुरोर्नामचगोविन्दनामानिप्रवदन्मुहुः ॥ १ ॥

लगाये, इस प्रकार भगवान्‌की सेवामें तत्पर हो ॥२४॥ जो भावको जाननेवाला भक्त श्रीकृष्णकी सेवामें अहर्निश तत्पर होता है, उसको भागवतोंमें उत्तम, प्रेम लक्षणा भक्तिका करनेवाला जानते हैं ॥२५॥ एक हजार अश्वमेध और एकसौ राजसूययज्ञ भी श्रीकृष्णकी सेवाकी सोलहवीं कलाको भी नहीं पाते हैं ॥२६॥ जो श्रीकृष्णके सेवनको बतानेवाला आचार्य है, उसका जो दर्शन करे, वह मनुष्य कोटिजन्मके पापोंसे छूट जाता है ॥२७॥ और उसके देहके अन्तमें उसको ले जानेके लिये श्यामसुन्दर मूर्तिवाले भगवत्पार्षद गोलोकसे दिव्य रथ लेकर आते हैं ॥ २८ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विज्ञानखंडे भाषाटीकायां पष्ठोऽध्यायः ॥६॥ श्रीवेदव्यासजी बोले कि बडे आनन्दसे शय्यापरसे ब्राह्ममुहूर्त (चार घडी रात्रि शेष रहनेपर) में उठे गुरुका नाम और गोविन्दका नाम उच्चारण करके बारम्बार अनेक भगवान्‌के नामोंको लेता हुआ ॥ १ ॥

भूमिको प्रणामकर चरणामृत पीकर बादमें धरतीपर पांव रखे, फिर आसनपर बैठकर सुखसे ॥ २ ॥ अपने दोनों हाथोंको गोदमें रखकर श्वासको जीतकर ध्यानमें स्थित हो, फिर स्वस्तिकासनसे बैठकर ज्ञानमुद्रासे बैठे हुये गुरुजीका ध्यान करे ॥३॥ फिर गुरुका ध्यान करके एकाग्रमनसे किशोर रूप, श्यामसुन्दर, वेत्र और वंशीसे विभूषित श्रीकृष्णका ध्यान करे ॥४॥ ऐसे ध्यान करके फिर शौचके लिये जाये, हे राजेन्द्र ! गृहस्थके लिये जो शौचविधि करनी चाहिये, उसको सुनो ॥५॥ प्रथम (अश्वक्रांते रथ क्रान्ते) इस मंत्रका उच्चारण करके मृत्तिका लाये, एक बार लिंगमें, तीनवार गुदामें, दशवार बायें हाथमें ॥ ६ ॥ दोनों हाथोंमें सातबार और दोनों पांवोंमें तीन बार मृत्तिका लगाकर धोयें, इससे दुगुना तो ब्रह्मचारी, तिगुना वानप्रस्थ ॥७॥ और यति इससे चौगुना शौच करे, इससे आधा रोगी तथा मार्गमें चलनेवाला और उससे आधा स्त्री व शूद्रजातिको करना चाहिये ॥८॥ शौच कर्म किये विना सब क्रिया (कर्म) निष्फल होती है, और मुख शुद्धिके विना जप करना फलको देनेवाला नहीं होता है, इससे फिर मुख शुद्धि करे,॥९॥ तव यह मन्त्र पढे कि, आयु-

भूमिंनत्वान्यसेत्पादंजलंस्पृष्ट्वाहरेर्जनः ॥ उपविश्यासनेशीघ्रंसकामोयोयथासुखम् ॥२॥ हस्तावुत्संगआधायश्वासजिद्ध्यानमास्थितः ॥ ज्ञान-मुद्राधरंशांतंश्रीगुरुंस्वस्तिकासनम् ॥ ३ ॥ ध्यात्त्वाकृष्णंपरंध्यायेद्भक्तएकाग्रमानसः ॥ किशोरंश्यामलंहृद्यंवंशीवेत्रविभूषितम् ॥४॥ एवंध्या-त्वाहरेर्ध्यानंपुनर्गच्छेद्बहिस्थलम् ॥ तच्छौचंशृणुराजेंद्रगृहस्थस्ययथातथम् ॥५॥ अश्वक्रांतेतिमन्त्रेणमृत्स्नयाचजलेनच॥एकांलिंगेगुदेतिस्रस्त-थावामकरेदश ॥ ६ ॥ उभयोर्हस्तयोःसप्ततिस्रःतिस्रःपदेपदे ॥ एतस्माद्द्विगुणंप्रोक्तंब्रह्मचारिवनस्थयोः ॥ ७ ॥ यतेश्चतुर्गुणंरात्रौतदर्धंशौचमा-चरेत् ॥ तदर्धंरोगिपांथानांस्त्रीशूद्राणांतदर्धकम् ॥ ८ ॥ शौचकर्मविहीनस्यसकलानिष्फलाःक्रियाः ॥ मुखशुद्धिविहीनस्यनमन्त्राःफलदाः स्मृताः ॥ ९ ॥ आयुर्बलंयशोवर्चःप्रजाःपशुवसूनिच ॥ ब्रह्मप्रज्ञांचमेधांचत्वन्नोदेहिवनस्पते ॥ १० ॥ इतिमन्त्रंसमुच्चार्यकुर्याद्वैदंतधावनम् ॥ कण्टकीक्षीरिकार्पासानगुडीब्रह्मवृक्षकान् ॥ ११ ॥ वटैरण्डविगन्धाढ्यान्वर्जयेद्दंतधावने ॥ हरितहर्यमन्त्रेणसूर्यंनत्वाकृतांजलिः ॥१२॥ प्रणमे-द्धरिभक्तांश्चप्रह्लादादीन्समाहितः ॥ तुलसीमृत्तिकांनीत्वाततःस्नानंसमाचरेत् ॥ पठितव्यंप्रयत्नेनश्रीगंगायमुनाष्टकम् ॥१३॥ अयोध्यामथुरामा-याकाशीकांचीअवन्तिका ॥ पुरीद्वारावर्तीचैवसप्तैतामोक्षदायिकाः ॥ शालिग्रामोमहायोगेशंभलोहरिमंदिरे ॥ १४ ॥

बल यश और तेज, प्रजा, पशुधन, ब्रह्म संबंधिकी बुद्धि और मेधा, इन सभीको हे वनस्पते ! तुम देओ ॥१०॥ इस प्रकार इस मन्त्रका उच्चारण करके दन्त धावन करे, किन्तु बबूल आदि कांटेके वृक्षकी, दूधके वृक्षकी, कपासके वृक्षकी, निगुंडीके वृक्षकी और ब्रह्माजीके वृक्ष की ॥११॥ बडके वृक्षकी, अरण्डके वृक्षकी, और जिसमें दुर्गन्धि आती हो उसकी दन्त धावन न करे, फिर (हरित हर्य) इस वेदके मन्त्रको पढकर हाथ जोडकर सूर्यको नमस्कार करे ॥१२॥ फिर हरिके भक्त प्रह्लादादिकोंको सावधान होकर प्रणाम करे, फिर तुलसी मृत्तिकाको लेकर अंगमें लगाकर स्नान करे, फिर प्रयत्नसे श्रीगङ्गाजीके अष्टकका और श्रीयमुनाके अष्टकका पाठ करे ॥१३॥ फिर अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कांची, अवन्तिका, और द्वारावती ये सातों पुरियाँ मोक्षकी देनेवाली हैं, इन सातों पुरियोंका स्मरण करे, फिर तीन ग्रामोंको स्मरण करे, शालिग्रामको महायोगमें, शम्भलको हरिमंदिरमें ॥ १४ ॥

नन्दिग्रामको कौशलमें स्मरण करे, ये तीन ग्राम कहे गये हैं, दण्डकारण्य, सैंधवारण्य, जम्बूमार्ग, पुष्कल ॥१५॥ उत्पलावर्त, नैमिषारण्य, कुरुजांगल, अर्बुद, हेमवन्त, ये नौ अरण्य हैं, उनका स्मरण करे ॥१६॥ इन तीर्थोंके नामोंका बारम्बार उच्चारण करे, फिर शुद्ध पीताम्बर पहिने ॥१७॥ बारह तिलक लगाकर आठ मुद्रा धरकर संध्या करके पवित्र होकर मौन लेकर हरिमंदिरमें जाये ॥ १८ ॥ घंटा बजाकर जयशब्द करके ताल बजाकर हे गोविन्द ! उठो २ योगनिद्राको छोडो ॥१९॥ इस स्मृतिको कहकर भक्त भगवान्को उठाये, मंगल आरतीको लेकर मुखके घुमाये, ॥२०॥ बारबार नमस्कार करके अनेक पक्वानका भोग लगाये, फिर स्नान कराये, देशकालके प्रभावको जाननेवाला ॥ २१ ॥ शृंगारके भावको जानकर वस्त्र, गहने, मंगल वस्तुओंसे शृंगार करके भोग्य अन्नको देकर आरती करे ॥२२॥ उसके बाद नाना रसमय महाभोग भगवान्के सामने रखकर, महाभोगकी

नंदिग्रामःकौशलेतुत्रयोग्रामाःप्रकीर्तिताः॥दंडकंसैंधवारण्यंजंबूमार्गंचपुष्कलम्॥१५॥उत्पलावर्तमारण्यंनैमिषंकुरुजांगलम्॥ अर्बुदंहेमवन्तंचनवारण्यानिवैविदुः ॥१६॥ एतानितीर्थनामानिसमुच्चार्यपुनःपुनः ॥ इत्थंस्नात्वाततोबिभ्रदंबरंक्षौमसुत्तमम् ॥१७॥ द्वादशतिलकान्बिभ्रदष्टमुद्राधरःपरः ॥ कृतसंध्यःशुचिर्मौनीगत्वाश्रीकृष्णमंदिरम् ॥१८॥ घण्टावाद्यंजयारावंतलशब्दंविधायच ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठगोविन्दयोगनिद्रांविहायच॥१९॥ उक्त्वापीमांस्मृतिंराजन्भक्तउत्थापयेद्धरिम् ॥ मंगलार्तिंसमादायभ्रामयंस्तन्मुखोपरि॥२०॥ निवेद्यबहुपक्वान्नंनत्वानत्वापुनःपुनः॥ ततःस्नानंकारयित्वादेशकालप्रभाववित् ॥२१॥ शृंगारंभाववित्कृत्वावस्त्रभूषणमंगलैः॥ आर्तिक्यंतुततःकृत्वाभोग्यान्नंचविधायच॥२२॥ ततोधृत्वामहाभोगंनानारसमयंपरम्॥ महाभोगार्तिकंकृत्वाकारयेच्छयनंहरेः॥२३॥ ततःप्रसादंपरमंतुलसीगन्धमिश्रितम्॥ भुञ्जीनयोहरेर्नित्यंसकृतार्थोनसंशयः ॥२४॥ राजभोगार्तिकंकृत्वाकारयेच्छयनंहरेः॥शंखनादेनविधिवद्भोगंधृत्वायथाविधि ॥२५॥ ततः सन्ध्यार्तिकंकृत्वादुग्धादीन्विनिवेद्यच ॥ ततः प्रदोषसमयेपुनरार्तिकमाचरेत् ॥२६॥ धृत्वाभोगंपरंमिष्टंकारयेच्छयनंहरेः ॥ राजसीचैवराजेन्द्रराजसेवेयमस्तिवै ॥२७॥ सर्वंश्रीकृष्णचन्द्रस्यसेवासंलग्नमानसः॥ तारयित्वाकुलशतंयातिचात्यंतिकंपदम्॥२८॥जन्माष्टमीचकृष्णस्यश्रीरामनवमीतथा ॥ राधाष्टम्यन्नकूटंचद्वादशीवामनस्यच ॥२९॥ चतुर्दशीनृसिंहस्यतथानन्तचतुर्दशी ॥ एषुकालेषुकृष्णस्यमहापूजांसमाचरेत् ॥३०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविज्ञानखंडेव्यासोग्रसेनसंवादेराजसेवावर्णनंनामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

आरती करके धीरेसे शयन कराये ॥ २३ ॥ उसके बाद परमप्रसाद तुलसीकी गंध मिला हुआ भोजन करे, वह कृतार्थ होता है ॥ २४ ॥ राज भोगकी आरती करके हरिको शयन कराये, शंख बजाकर विधिसे भोग लगाये ॥ २५ ॥ फिर सन्ध्याकी आरती करे, फिर दुग्धादिकका भोग लगाकर फिर प्रदोष समयमें (रातके पूर्व भागमें) आरती करे ॥२६॥ फिर शयनके समय मीठा भोग लगाकर आरती करके शयन करिये, हे राजेन्द्र ! यह राजसी सेवा वर्णन की है ॥२७॥ इस प्रकार श्रीकृष्णकी सेवा करनेवाला पुरुष अपने सौ कुलका उद्धार करके मोक्षको प्राप्त होता है ॥२८॥ जन्माष्टमी, रामनवमी, राधाष्टमी, अन्नकूट, वामनद्वादशी ॥ २९ ॥ नृसिंहचतुर्दशी, अनन्तचतुर्दशी, इन कालोंमें श्रीकृष्णकी महापूजा करे ॥३०॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विज्ञानखण्डे भाषाटीकायां राजसेवावर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

व्यासजी कहते हैं, इसके बाद स्नान करके नित्यक्रिया नैमित्तिकी क्रिया करके शुभ स्थण्डिल मण्डलमें पांच रंगका बत्तीस दलका कमल बनाये, वेदसूक्त विधिसे कली केसर, सब बनाये ॥ १ ॥ २ ॥ उस कमलकी कर्णिकामें श्रीकृष्णका सिंहासन रखे, वहाँ राधा, रमा, भूदेवी, विरजा इनकी स्थापना करके ॥३॥ उनके बीचमें पुरुषोत्तम श्रीकृष्णका स्थापन करे ॥४॥ अष्टदलमें अष्टसखी, षोडशदलमें षोडशसखी, बत्तीसदलमें बत्तीस सखियोंकी स्थापना करे॥५॥ कमलके पास शंख, चक्र, गदा, पद्म, नन्दक खड्ग, शार्ङ्ग, धनुष, बाण, हल, मूसल, इनका स्थापन करे ॥६॥ कौस्तुभ मणि, वनमाला, श्रीवत्स, पीताम्बर, नीलाम्बर, वेणु, वेत्र, इनका स्थापन करे ॥७॥ उनके पास तालध्वज, गरुडध्वज, दोनों रथों का स्थापन कर, सुमति और दारुक दोनों सारथियोंका स्थापन करे, गरुडका और कुमुदका स्थापन करे ॥८॥ चण्ड, प्रचण्ड, बल, महाबल, कुमुदाक्ष, बल, इनका यत्नसे स्थापन

॥ व्यासउवाच ॥ अथस्नात्वाचकृत्वाचनित्यंनैमित्तिकीं क्रियाम् ॥ पंचवर्णसमायुक्तंशुद्धेस्थंडिलमंडले ॥ १ ॥ द्वात्रिंशद्दलसंयुक्तंकर्णिकाकेसरोज्ज्वलम् ॥ विधायकमलंदिव्यंविधिवद्वेदसूक्तिभिः ॥ २ ॥ कर्णिकायांन्यसेद्राजन्हरेःसिंहासनंशुभम् ॥ तत्रराधांरमांस्थाप्यभूदेवींविरजांतथा ॥ ३ ॥ तन्मध्येस्थापयेत्साक्षाच्छ्रीकृष्णंपुरुषोत्तमम् ॥ तथाष्टदलमध्येतुराधिकाष्टसखीःशुभाः ॥४॥ ततोष्टदलमध्येतुश्रीकृष्णस्यतथासखीन् ॥ तथाषोडशपर्णेषुसखीनांचद्वयंद्वयम् ॥५॥ कमलस्यचपार्श्वेषुशंखंचक्रंगदांतथा ॥ पद्मंचनंदकंशार्ङ्गबाणांश्चमुसलंहलम् ॥६॥ कौस्तुभंवनमालांचश्रीवत्संनीलमंबरम् ॥ पीतांबरंतथावंशींवेत्रंचस्थापयेद्बुधः ॥ ७ ॥ ततःपार्श्वेषुतालांकंगरुडांकंरथंतथा ॥ सुमतिंदारुकंसूतंगरुडंकुमुदंतथा ॥ ८॥ चंडंचैवप्रचंडंचबलंचैवमहाबलम् ॥ कुमुदाक्षंबलंचैवस्थापयेद्यत्नतःसुधीः ॥ ९ ॥ तथादिक्षुचदिक्पालान्संस्थाप्यचपृथक्पृथक् ॥ विष्वक्सेनंशिवंमांचचविधिंदुर्गांविनायकम् ॥१०॥ नवग्रहांश्चवरुणंतथाषोडशमातृकाः ॥ तत्पश्चादग्रेंबिकांतेहोत्रेस्थंडिलेस्थापयेद्बुधः ॥११॥ आवाहनमासनंचपाद्यमर्घ्यंविशेषतः ॥ स्नानंचमधुपर्कंचधूपंदीपंतथैवच॥१२॥यज्ञोपवीतंवस्त्रंचभूषणंगंधमेवच ॥ पुष्पंतथाक्षतांश्चैवनैवेद्यंचमनोहरम् ॥१३॥ आचमनंप्रदातव्यंतांबूलंदक्षिणांतथा ॥ प्रदक्षिणांप्रार्थनांचतथानीराजनंस्मृतम् ॥१४॥ नमस्कारंततःकुर्यात्कर्मणाचपृथक्पृथक् ॥ आवाहनेतुपुष्पाणिआसनेतुकुशद्वयम् ॥ १५ ॥

करे ॥ ९ ॥ फिर दशों दिशाओंमें दश दिक्पालोंका पृथक् २ स्थापन करे, विष्वक्सेन, शिव, लक्ष्मी, ब्रह्मा, दुर्गा, विनायक, इनका स्थापन करे॥१०॥ नवग्रह वरुण, षोडशमातृकाओंकी स्थापना करे, फिर कमलके आगे स्थण्डिलपर अम्बिका स्थापन करे ॥११॥ आवाहन, पाद्य, आसन, अर्घ, आचमन, मधुपर्क, स्नान, धूप, दीप, ॥१२॥ यज्ञोपवीत, वस्त्र भूषण, गंध, पुष्प अक्षत, और मनोहर नैवेद्य अर्पण करे फिर ॥ १३ ॥ आचमन, ताम्बूल, दक्षिणा, प्रदक्षिणा, प्रार्थना, स्तुति, आरती ॥ १४ ॥ नमस्कार ये सब पृथक् २ करे, आवाहन कर्ममें पुष्प रखे, आसनमें दो कुशा रखे ॥ १५ ॥

पाद्यमें श्यामादूब विष्णु क्रान्ता और अर्घ्यमें सुगन्धवाले पुष्प रखे ॥ १६ ॥ हे राजन् ! हे महामते ! चन्दन, खस, कपूर, केशर अगरसे मिला जल स्नानमें चाहिये ॥ १७ ॥ मधुपर्कमें आँवले और कमल, धूपमें अष्ट गन्ध और दीपकमें कपूर ॥१८॥ पीला यज्ञोपवीत और वस्त्रमें, पीलावस्त्र, भूषणमें सुवर्ण गन्धमें केशर, चन्दन ॥१९॥ पुष्पोंमें तुलसीकी मञ्जरी, अक्षतोंमें तन्दुल, नैवेद्यमें छः रस, खट्टे, मीठे, फीके, चरपरे, मधुर, रसीले नाना प्रकारके भोग माने गये ॥२०॥ जलमें गंगाजल, यमुनाजल और हे नृप ! अन्तमें जायफल और कंकोल, आचमनमें डाले ॥२१॥ पानमें लौंग, इलायची, दक्षिणा सुवर्ण की, प्रदक्षिणामें भ्रमण, आरतीमें गौका घृत ॥२२॥ प्रार्थनामें प्रेमलक्षणा हरिकी भक्ति, नमस्कारमें आठ अंगोंसे नमन करना ॥२३॥ द्वादशाक्षर मन्त्रसे शिखा बांध पवित्र रहे, सामग्री सब सामने रखकर श्रीपतिके सामने बैठे ॥२४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विज्ञानखण्डे भाषाटी-

पाद्येश्यामांचदूर्वांचविष्णुक्रांतांतथैवच ॥ सौगंधिकानिपुष्पाणिअर्घ्येयोग्यानियादव ॥ १६ ॥ चंदनोशीरकर्पूरकुंकुमागुरुमिश्रितम् ॥ एतादृशंजलंयोग्यंस्नानेराजन्महामते ॥ १७ ॥ मधुपर्केह्यामलकमरविंदंतथामतम् ॥ धूपेगंधाष्टकंदेयंदीपेकर्पूरमेवच ॥ १८ ॥ यज्ञोपवीतंपीतंचवस्त्रेपीतांबरंमतम् ॥ भूषणेचैवसौवर्णंगंधेकुंकुमचंदने ॥ १९ ॥ तुलसीमंजरीपुष्पेक्षतेषुस्यात्तुतंडुलाः ॥ नैवेद्यतुरसाःषट्चभोगानानाविधामताः ॥ २० ॥ जलेगंगाजलंयोग्यंयमुनाजलमेवच ॥ जातीफलंचकंकोलमंतेआचमनेनृप ॥ २१ ॥ तांबूलेचोषणंत्वेलादक्षिणायांतुहाटकम् ॥ प्रदक्षिणायांभ्रमणंघृतंनीराजनेगवाम् ॥ २२ ॥ प्रार्थनायांहरेर्भक्तिःप्रेमलक्षणसंयुता ॥ नमस्कारेमहाराजसाष्टांगनतविग्रहः ॥ २३ ॥ द्वादशाक्षरमंत्रेणशिखांबद्ध्वाशुचिःपुमान् ॥ उपचारान्पुरस्कृत्यश्रीमुखेसंमुखोभवेत् ॥ २४ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविज्ञानखंडे व्यासोग्रसेनसंवादेमहापूजाविधिवर्णनंनामाष्टमोऽध्यायः ॥ २८ ॥ श्रीव्यासउवाच ॥ उपचारस्यमंत्राणिवेदोक्तानिशुभानिच ॥ तुभ्यंवक्ष्यामिराजेंद्रशृणुष्वैकाग्रमानसः ॥ १ ॥ अथावाहनम् ॥ गोलोकधामाधिपतेरमापतेगोविंददामोदरदीनवत्सल ॥ राधापतेमाधवसात्त्वतांपतेसिंहासनेस्मिन्ममसंमुखोभव ॥ २ ॥ अथासनम् ॥ श्रीपद्मरागस्यफुरदूर्ध्वपृष्ठंमहार्हवैडूर्यखचित्पदाब्जम् ॥ वैकुंठवैकुंठपतेगृहाणपीतंतडिद्धाटककुंभखंडम् ॥ ३ ॥

-कायां पूजाविधिवर्णनं नामाष्टमोऽध्यायः ॥८॥ व्यासजी बोले, अब जो षोडशोपचारके वेदोक्त मन्त्र हैं, उनको तुम्हारे सामने कहता हूँ, हे राजेन्द्र ! एकाग्रचित्त होकर सुनो ॥१॥ आवाहनम् ॥ हे गोलोक धामके पति ! हे लक्ष्मीके पति ! हे गोविन्द ! हे दामोदर ! हे दीनवत्सल ! हे राधापते ! हे माधव ! हे सात्वतांपते ! इस सिंहासनपर विराजमान मेरे सन्मुख होइये इति ॥ २ ॥ अथ आसनम् ॥ पुखराजकी जिसकी ऊपरकी पीठ, पद्मरागकी उर्द्ध पृष्ठ, बहुमूल्य वैदूर्यमणिका जडा हुआ कमल जिसमें, बिजली जैसे स्वर्णके कलश जिसमें उस सिंहासनको हे वैकुण्ठपते ! ग्रहण करिये ॥ ३ ॥

अथ पाद्यम् ! निर्मल स्वर्णके पात्रमें स्थित बिन्दू सरोवरसे लाये हुये इस पाद्यको हे लोकेश ! हे जगन्निवास ! ग्रहण करिये मैं आपके चरण कमलको नमस्कार करता हूँ ॥४॥ अथ स्नानम् ! केशर, चन्दन, मिले हुये चमेली, केसरके जलसे हे यदुदेव ! गोविन्द ! गोपाल ! हे तीर्थपाद ! आप स्नान करिये ॥५॥ अथ मधुपर्क स्नानम् । मध्याह्नमें सूर्यचन्द्रसे हुये, मलको दूर करनेवाले, मिश्रीके मिलनेसे परम मनोहर, इस मधुपर्कको, दर्शन योग्य है पीताम्बर जिनका हे भक्तोंके पति ! हे विष्णो ! आप ग्रहण करिये ॥६॥ अथ वस्त्रम् ! हे विभो ! सब ओरसे देदीप्यमान छूटी हैं किरणें जिसमें ऐसे अत्यन्त उज्ज्वल, परम दुर्लभ, आपहीके रचे हुये, कमलकी पराग (केशर) जैसा वर्ण जिसका, उस पीताम्बरको ग्रहण करिये ॥७॥ फिर यज्ञोपवीत ! सुवर्ण जैसी आभावाले पीतवर्ण, वेदमन्त्रोंसे छिडके और बनाये हुये नैमित्तिक पांच कार्योंमें शुभ यज्ञोपवीतका हे प्रभो ! हे यज्ञ ! ग्रहण करिये ॥८॥ फिर

॥ अथपाद्यम् ॥ परंस्थितंनिर्मलरोक्मपात्रेसमाहृतंबिंदुसरोवराद्धि ॥ योगेशदेवेशजगन्निवासगृहाणपाद्यंप्रणमामिपादौ ॥४॥ अथस्नानम् ॥ काश्मीरपाटीरविमिश्रितेनसुमल्लिकोशीरवताजलेन ॥ स्नानंकुरुत्वंयदुनाथदेवगोविन्दगोपालकतीर्थपाद ॥५॥ अथमधुपर्कस्नानम् ॥ मध्याह्न चंद्रार्कभवंमलापहंसितांगसंपर्कमनोहरंपरम् ॥ गृहाणविष्णोमधुपर्कमेनंसंदृश्यपीतांबरसात्त्वतांपते ॥ ६ ॥ अथवस्त्रम् ॥ विभोसर्वतःप्रस्फुर- त्प्रोज्ज्वलंचस्फुरद्रश्मिशून्यंपरंदुर्लभंच ॥ स्वतोनिर्मितंपद्मकिंजल्कवर्णंगृहाणांबरंदेवपीतांबराख्यम् ॥७॥ अथयज्ञोपवीतम् ॥ सुवर्णाभमापीत वर्णंसुमन्त्रैःपरंप्रोक्षितंवेदविन्निर्मितंच ॥ शुभंपंचकार्येषुनैमित्तिकेषुप्रभोयज्ञयज्ञोपवीतंगृहाण ॥ ८ ॥ अथभूषणम् ॥ कनकरत्नमयंमयनिर्मितं मदनरुक्कदनंसदनंरुचाम् ॥ उषसिपूषसुवर्णविभूषणंसकललोकविभूषणगृह्यताम् ॥ ९ ॥ अथगंधम् ॥ सन्ध्येंदुशोभंबहुमंगलंश्रीकाश्मीर पाटीरकपंकयुक्तम् ॥ स्वमण्डनंगन्धचयंगृहाणसमस्तभूमण्डलभारहारिन् ॥ १० ॥ अथाक्षतान् ॥ ब्रह्मावर्तेब्रह्मणापूर्वमुप्तान्ब्राह्मैस्तोयैः सिंचितान्विष्णुनाच ॥ रुद्रेणाराद्रक्षिताञ्राक्षसेभ्यःसाक्षाद्भूमन्नक्षतांस्त्वंगृहाण ॥ ११ ॥ अथपुष्पाणि ॥ मन्दारकंजातकपारिजातकल्प- द्रुमश्रीहरिचन्दनानाम् ॥ गृहाणपुष्पाणिहरेतुलस्यामिश्राणिसाक्षान्नवमंजरीभिः ॥ १२ ॥ अथधूपम् ॥ लवंगपाटीरजचूर्णमिश्रंमनुष्य देवासुरसौख्यदंच ॥ सद्यःसुगन्धीकृतहर्म्यदेशंद्वारावतीभूपगृहाणधूपम् ॥ १३ ॥

भूषण ! सुवर्ण, रत्नसे मयके रचे हुये, मदनकी कान्तिके नाश और शोभाके घर प्रातःकालीन सूर्य जैसा जिसका तेज, ऐसे विभूषणको हे सकल लोकके विभूषण ! आप ग्रहण करिये॥९॥अथ गन्ध॥संध्याके चन्द्रमा जैसी शोभा जिसकी, बहुमंगलरूप, केशर. चन्दन कपूरसे युक्त, अपना मण्डन. ऐसे गन्धके चयको हे समस्त भूमण्डल भारके खंडन करनेवाले ! ग्रहण करिये ॥१०॥ फिर अक्षत ! ब्रह्मावर्तमें पूर्व ब्रह्मासे बोये हुये, वेदमन्त्रोंसे विष्णु द्वारा सींचे हुये, रुद्र द्वारा राक्षसोंसे रक्षा किये हुये, साक्षात् अक्षतोंको हे भूमन् आप ग्रहण करिये ॥११॥ अथ पुष्प ! मंदार, जातक पारिजात, कल्पवृक्ष, हरिचन्दन, इनके पुष्प और तुलसीकी नई मञ्जरी जिनमें मिली, ऐसे पुष्पोंको ग्रहण करिये ॥ १२ ॥ अथ धूप ! लवंग और चंदनका चूर्ण मिला जिसमें, मनुष्य, देवता असुर, सबको सुखकारी, तत्कालही मंदिरको सुगंधित करनेवाले धूपको हे द्वारिकेश ! आप ग्रहण करिये ॥ १३ ॥

अथ दीप ! अंधकारको हरनेवाले, ज्ञानकी मूर्ति, मनोहर शोभित हैं, बत्ती, कपूर, गौका घृत जिसमें ऐसे देदीप्यमान ज्योतिवाले श्रेष्ठ दीपकको हे विश्वदीपक ! हे जगन्नाथ ! ग्रहण करिये ॥१४॥ अथ नैवेद्य ! छः रसोंसे युक्त, और रसोंसे रसीले, यशोदाजीसे बनाये हुये, गौके अमृतसे युक्त, और रुचिकारी नैवेद्यको हे नन्द नन्दन आप ग्रहण करिये ॥१५॥ अथ जल। हे राधाके वर ! हे भक्तवत्सल ! यह गंगोत्तरीका जल बडी कठिनतासे लाया गया, अमृत जैसा मीठा, सुवर्णपात्रमें हिम (बर्फ) जैसा शीतल है, उसको हे भक्तवत्सल ! आप ग्रहण करिये ॥ १६ ॥ अथ आचमन। हे राधापते ! हे विरजापते ! हे प्रभो ! हे लक्ष्मीपते ! हे पृथ्वीपते ! हे सर्वपते ! हे भूपते! हे दयानिधे ! कंकोल, जायफल, मिरच, इनसे सुगन्धित आचमनको ग्रहण करिये ॥१७॥ अथ ताम्बूल ! जायफल, इलायची लवंग, और सुपारीका चूर्ण जिसमें रखा, ऐसे मुक्तासुधा खैर सारयुक्त ताम्बूलको ग्रहण करिये ॥ १८ ॥ अथ दक्षिणा। नाक (स्वर्ग) पाल, और वसुपालोंके मुकुटोंसे वंदित है चरणकमल जिनके हे लोकदक्षवर हे दक्षिणापते ! हे प्रभो ! हे माधव ! यह दक्षिणा ग्रहण करिये

अथदीपम् ॥ तमोहारिणंज्ञानमूर्तिमनोज्ञंलसद्वर्तिकर्पूरपूरंगवाज्यम् ॥ जगन्नाथदेवप्रभोविश्वदीपस्फुरज्ज्योतिषंदीपमुख्यंगृहाण ॥१४॥ अथनैवेद्यम् ॥ रसैःशरैःभेदविधिव्यवस्थितंरसैरसाढ्यंचयशोमतीकृतम् ॥ गृहाणनैवेद्यमिदंसुरोचकंगव्यामृतंसुन्दरनन्दनन्दन ॥१५॥ अथजलम् ॥ गङ्गोत्तरीवेगबलात्समुद्धृतंसुवर्णपात्रेणहिमांशुशीतलम् ॥ सुनिर्मलामोह्यमृतोपमंजलंगृहाणराधावरभक्तवत्सल ॥ १६ ॥ अथाचमनम् ॥ पतेश्रीविरजापतेप्रभोश्रियःपतेसर्वपतेचभूपते ॥ कंकोलजातीफलपुष्पवासितंपरंगृहाणाचमनन्दयानिधे ॥१७॥ अथतांबूलम् ॥ जातीफलैलासुलवंगनागवल्लीदलैःपूगफलैश्चसंयुतम् ॥ मुक्तासुधाखादिरसारयुक्तंगृहाणतांबूलमिदंरमेश ॥१८॥ अथदक्षिणा ॥ नाकपालवसुपालमौलिभिर्वंदितांघ्रियुगलप्रभोहरे ॥ दक्षिणांपरिगृहाणमाधवलोकदक्षवरदक्षिणायते ॥१९॥ अथनीराजनम् ॥ प्रस्फुरत्परमदीप्तिमंगलंगोघृताक्तनवपंचवर्तिकम् ॥ आर्तिकंपरिगृहाणचार्तिहन्पुण्यकीर्तिविशदीकृतावने ॥ २० ॥ अथनमस्कारः ॥ नमोस्त्वनंतायसहस्रमूर्तयेसहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे ॥ सहस्रनाम्नेपुरुषायशाश्वतेसहस्रकोटीयुगधारिणेनमः ॥२१॥ अथप्रदक्षिणा ॥ समस्ततीर्थयज्ञदानपूर्तकादिजंफलम् ॥ लभेत्परस्यशाश्वतंकरोतियःप्रदक्षिणाम् ॥२२॥ अथ प्रार्थना ॥ हरेमत्समःपातकीनास्तिभूमौतथात्वत्समोनास्तिपापापहारी ॥ इतित्वंचमत्वाजगन्नाथदेव यथेच्छाभवेत्ततथामांकुरुत्वम् ॥ २३ ॥

॥१९॥ अथ आरती। प्रस्फुरत् है परम दीप्ति जिसकी और मंगल रूप, गौके घृतमें सनी हैं चौदह बत्तियां जिसमें, हे आर्तिहर ! हे विशदकीर्ते ! उस आरतीको ग्रहण करिये ॥२०॥ अथ नमस्कार। आप अनंत हो, हजारों हैं मूर्तियाँ जिनकी, हजारों हैं पांव, नेत्र, शिर, ऊरू, भुजा और नाम जिनके, आप पुरुष हो, शाश्वत हो हजारों करोड युगोंके धारण करनेवाले हो, हे प्रभो ! आपके लिये नमस्कार है ॥२१॥ अथ प्रदक्षिणा। जो आपकी प्रदक्षिणा करे, उसको सब तीर्थोंका, यज्ञ, दान, कुआ, बावडी, तलाव, प्याऊ, सदावर्त, आदि सबका फल प्राप्त होता है ॥ २२॥ अथ प्रार्थना। हे हरे ! मेरे समान तो इस पृथ्वीपर कोई पापी नहीं है, और आपके समान कोई पापहारी नहीं है. ऐसा आप मानकर हे देव ! हे जगन्नाथ ! जैसी इच्छा हो, वैसा मुझको करिये ॥ २३ ॥

अथ स्तुति । ज्ञानमात्र सत् असत्से परे, महत्, निरंतर, प्रशान्त, विभव, सम, परम दुर्गम दूर हुआ है छल जिनसे, उन पर ब्रह्मको मैं नमस्कार करता हूँ ॥२४॥ हे महामते ! इन मंत्रोंसे इस तरह देवेशका पूजन करे, फिर विष्णुको नमस्कार कर इन मन्त्रोंसे सर्वांग पूजा करे ॥ २५ ॥ ॐ नारायणाय नमः । आप पुरुष हो, महात्मा हो, विशुद्ध सत्त्वगुण के स्थान हो, महाहंस हो, उनका ध्यान करता हूँ ॥२६॥ इस मन्त्रसे प्राणायाम करे, फिर इन मन्त्रोंसे एक एक अंगकी पूजा करे. ॐ विष्णवे नमः चरणौ पूजयामि १ मधुसूदनायनमः गुल्फौ पूजयामि २, वामनाय नमः जंघे पूजयामि ३, त्रिविक्रमाय नमः ऊरू पूजयामि ४, श्रीधराय नमः कटिं पूजयामि ५, हृषीकेशाय नमः उदरं पूजयामि ६ पद्मनाभाय नमः पृष्ठं पूजयामि ७, दामोदराय नमः भुजौ पूजयामि ८, संकर्षणाय नमः कंधरा पूजयामि ९, वासुदेवाय नमः कर्णौ पूजयामि १०, प्रद्युम्नाय नमः नासिकां पूजयामि ११, अनिरु-

॥ अथस्तुतिः ॥ संज्ञानमात्रंसदसत्परंमहच्छश्वत्प्रशांतंविभवंसमंमहत् ॥ त्वांब्रह्मवंदेहिसुदुर्गमंपरंसदास्वधाम्नापरिभूतकैतवम् ॥२४॥ एवंसंपूज्यदेवेशमेभिर्मंत्रैर्महामते ॥ प्रणम्यविष्णुंसर्वांगपूजांकुर्यात्प्रयत्नतः ॥ २५ ॥ ॐ नमोनारायणायपुरुषायमहात्मने ॥ विशुद्धसत्त्वधीस्थाय महाहंसायधीमहि ॥ २६ ॥ इतिमंत्रेणप्राणायामंकृत्वा ॥ ॐ विष्णवेमधुसूदनायवामनायत्रिविक्रमायश्रीधरायहृषीकेशायपद्मनाभायदामोदरायसंकर्षणायवासुदेवायप्रद्युम्नायअनिरुद्धायअधोक्षजायपुरुषोत्तमायश्रीकृष्णायनमः ॥ इतिपादगुल्फजानूरुकट्युदरपृष्ठभुजाकंधरकर्णनासिकाधरनेत्रशिरस्सुपृथक्पृथक्पूजयामीतिसर्वांगपूजांकुर्यात् ॥ तथासखीसखशंखचक्रगदापद्मासिधनुर्बाणहलमुसलादीन्स्तथाकौस्तुभवनमलाश्रीवत्सपीतांबरनीलांबरवंशीवेत्रादीन्तथातालांकगरुडांकरथदारुकसुमतिसारथिगरुडकुमुदनंदसुनंदचंडमहाबलकुमुदाक्षादीन् ॥ प्रणवपूर्वेणचतुर्थ्यंतेननमःसंयुक्तेननाम्नातथाविष्वक्सेनशिवाविधिदुर्गाविनायकदिक्पालवरुणनवग्रहमातृकादीन्मंत्रैःपूजयेत् ॥ ॐ नमोवासुदेवायनमः संकर्षणायच ॥ प्रद्युम्नायानिरुद्धायसात्त्वतांपतयेनमः ॥ २७ ॥ इतिमंत्रेणशतमाहुतीर्जुहुयात् ॥ देवंप्रदक्षिणीकृत्यमहाभोगंनिधायच ॥ प्रणमेद्दंडवद्भूमौमंत्रमेतमुदीरयेत् ॥ २८ ॥

द्धाय नमः अधरोष्ठौ पूजयामि १२, अधोक्षजाय नमः कृष्णनेत्रौ पूजयामि १३, पुरुषोत्तमाय नमः कृष्णशिरः पूजयामि १४, श्रीकृष्णाय नमः सर्वांगानि पूजयामि १५, ऐसे सब अंगों की पूजाकर वैसे ही सखी, सखा, शंख, गदा, पद्म, खड्ग, धनुप, बाण, हल, मूसल, तर्कस, कौस्तुभ, वनमाला, श्रीवत्स, पीताम्बर, नीलाम्बर, तालांक, गरुडांक, रथ, दारुक, सुमति, सारथी, गरुड, कुमुद, कुमुदक्षण, नन्द, सुनन्द, चण्ड, प्रचण्ड, बल, महाबल, इन सबको, ॐ सखीभ्यो नमः सखाभ्यो नम ॐ: शंखाय नमः इस रीति पूजे, जय, विजय विष्वक्सेन, शिव, विधि, दुर्गा, विनायक, दिक्पाल, नवग्रह, मातृका आदिकोंको पूजे, ॐ नमो वासुदेवाय नमः संकर्षणाय च । प्रद्युम्नायानिरुद्धाय सात्त्वतांपतये नमः ॥२७॥ इस मन्त्रसे एक सौ आठ आहुतियाँ दे, फिर परिक्रमा कर महाभोग लगाये ॥ २८ ॥

"ध्येयं सदा" इत्यादि मन्त्रसे साष्टांग नमस्कार करे ॥ २९ ॥ फिर भक्तजनोंके संग आरती करे ॥३०॥ घडी, घंटा, वीणा,वेणु,अलगोजा, करताल, मृदंग इत्यादि बाजे बजाकर कीर्तन करे ॥३१॥ श्रीहरिके सामने भक्तजन प्रेममें विह्वल होकर नृत्य करें, कथा, सुनें, गान करें, जयजय शब्द करें ॥३२॥ फिर प्रभुको नमस्कार करके उज्ज्वल मंदिरमें महात्मा श्रीकृष्णको शयन करायें ॥ ३३ ॥ ऐसे मन लगाकर जो श्रीकृष्णकी सेवा करता है, उसको स्वर्गके देवता भी आकर नमस्कार करते हैं ॥३४॥ हे राजेन्द्र ! वह हरिका जन अन्त समय स्वर्गमें जाकर सब योगियोंको दुर्लभ गोलोकको प्राप्त होता है ॥३५॥ इस प्रकार कृष्ण सेवाकी विधि मैंने तुम्हारे सामने वर्णन की, यह चार पदार्थकी देनेवाली है, अब तुम और क्या सुनना चाहते हो ॥३६॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विज्ञानखंडे भाषाटीकायां व्यासोग्रसेनसंवादे कृष्णसेवाविधानवर्णनंनाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ तब उग्रसेन व्यासजीसे

ध्येयंसदापरिभवघ्नमभीष्टदोहंतीर्थास्पदंशिवविरंचिनुतंशरण्यम् ॥ भृत्यार्तिहन्प्रणतपालभवाब्धिपोतंवंदेमहापुरुषतेचरणारविंदम् ॥२९॥ इति नत्वाहरिंराजन्पुनर्नीराजनंहरेः ॥ कारयेद्विधिवद्भक्तोहरिभक्तजनैःसह ॥३०॥ घटीवाद्यरणद्घंटाकांस्यवीणादिकीचकैः ॥ करतालमृदंगाद्यैः कीर्तनंकारयेद्बुधः ॥ ३१ ॥ नृत्यंतिश्रीहरेरग्रेभक्तावैप्रेमविह्वलाः ॥ जयध्वनिसमायुक्ताःसत्कथागानतत्पराः ॥ ३२ ॥ पुनःप्रभुंनमस्कृत्यमंदिरेतपनोज्ज्वले ॥ शयनंकारयेत्सम्यक्श्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥ ३३ ॥ एवंकरोतिश्रीकृष्णसेवांयोलग्नमानसः ॥ प्रणमंतिचतंराजन्देवताःस्वर्गसंभवाः ॥ ३४ ॥ सोपिराजेंद्रनाकेपिपदंधृत्वाहरेर्जनः ॥ अंतेयातिपरंधामगोलोकंयोगिदुर्लभम् ॥ ३५ ॥ इतिश्रीकृष्णसेवायाविधानंवर्णितंमया ॥ चतुःपदार्थदंनृणांकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ ३६ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविज्ञानखंडेव्यासोग्रसेनसंवादेकृष्णसेवाविधानवर्णनंनामनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ उग्रसेनउवाच ॥ सिद्धोस्म्यनुगृहीतोस्मित्वयाश्रीकृष्णरूपिणा ॥ श्रीकृष्णपद्धतिःसाक्षाच्छ्रुतावैविधिवन्मया ॥ १ ॥ अहोलोकामहामूढालोभमोहमदान्विताः ॥ नाप्नुवंतिहिवैराग्यंभजंतिनहरिंक्वचित् ॥२॥ भगवन्नस्यजगतोमोहकारणमद्भुतम् ॥ कथंजातंवदविभो कथंमेतन्निवर्तते ॥ ३ ॥ व्यासउवाच ॥ यथांभसिप्रातमदोविधोश्चलंतत्प्रेक्षतेकेवलमेववेगतः ॥ तथाहिबिंबःपरमस्यमाययाममेत्यहंभागवतेप्रवर्तते ॥ ४ ॥

बोले कि, हे प्रभो कृष्ण रूप जो आप हैं, आपने मुझपर बडा अनुग्रह किया, जो श्रीकृष्णपद्धति मैंने आपके मुखसे सुनी उससे मैं कृतार्थ होगया,मेरा जन्म सफल होगया ॥१॥ अहो ! आश्चर्य है कि, महामूर्ख मनुष्य लोभ, मोह, मदके भरे हैं, जो न तो वैराग्यको प्राप्त होते हैं, और न हरिको भजते हैं ॥२॥ हे भगवन् ! इस जगत्के मोहका कारण बडा अद्भुत है, वह कैसे हुआ है, और इसकी निवृत्ति कैसे होती है, सो कहिये ॥ ३ ॥ तब व्यासजी बोले, जैसे जलमें चन्द्रका बिम्ब पडता है, वह हिलता हुआसा दिखाई देता है, वैसेही परमेश्वरका प्रतिबिम्ब अहंता, ममतासे संसारमें प्रवृत्त होता है॥ ४ ॥

माया, काल, अन्तःकरण और देहके जो गुण हैं. सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास, जरा, मरण, इनमें कुकर्म करता हुआ जन बंध जाता है, काचमें बालक जैसा, बालमें जल जैसा और रस्सीमें सर्पके जैसा, इन्द्रियोंसे विस्तार करता हैं ॥ ५. ॥ हे राजन्! रजोमय, तमोमय कभी सत्वमय भी यह जगत् मोहमय है, मनका खेल है और अनेक विकारमय है. चंचल है अलात चक्रकी तरह घूमता है ॥६॥ यह करूंगा, यह करता हूं. यह कर लिया है, यह मेरा है, मैं ऐसा हूं मैं जानता हूं मैं सुखी हूं, मैं दुखी हूं मैं पंडित हूं ऐसे यह अहंकारसे मोहित है ॥७॥ उग्रसेन बोला—हे ब्रह्मन्! परमात्माका लक्षण मेरे आगे कहिये, जपके मार्गमें भगवान् कृष्णको कितने प्रकारका वर्णन करते हैं ॥८॥ व्यासजी कहते हैं, सनातन भगवान्की न मृत्यु है, न जन्म है, न शोक है, न मोह है, न जरा है न मृत्यु है, न तरुणादिक अवस्था है, न अहंकार है, न मद है. न रोग, न भय है, न सुख है, न, दुःख है न भूख है, न प्यास है, न रति है, न व्याधि है. ऐसा है ॥९॥ आत्मा निरीह है, अदेह है, सर्वत्र है, अहंकारहीन है, शुद्ध बलवाला है गुणोंका आश्रय है. निष्फल है, स्वयं सिद्ध है सबसे

प्रधानकालाशयदेहजैर्गुणैः कुर्वन्विकर्माणिजनोविबद्ध्यते ॥ काचेर्भकंसैकतएवजीवनंगुणेचसर्पंप्रतनोतिसोक्षिभिः ॥५॥ राजञ्जगन्मोहमयंर-
जोमयंतमोमयंसत्त्वमयंतथाक्वचित् ॥ मनोविलासंविकृतंचविभ्रमंविद्ध्याश्चिदंलोलमलातचक्रवत् ॥६॥ इदंकरिष्यामिकरोम्यभूवंममेदमस्ती-
तिचवेदमाब्रुवन् ॥ अहंसुखीदुःखयुतःसुहृज्जनोलोकस्त्वहंकारविमोहितोमतः ॥ ७ ॥ उग्रसेनउवाच ॥ वदमेकृपयाब्रह्मँल्लक्षणंपरमात्मनः ॥
कतिधाकवयः कृष्णंवदंतिजपवर्त्मनि ॥ ८ ॥ व्यासउवाच ॥ सनातनस्यात्रनमृत्युजन्मनीनशोकमोहौनजरायुवादयः ॥ अहं-
मदोव्याधियुतोभयंसुखंक्षुच्चतृक्षुधेच्छानरतिर्नचाधयः ॥ ९ ॥ आत्मानिरीहोह्यतनुःससर्वगोनाहंकृतिःशुद्धबलोगुणाश्रयः ॥ स्वयंपरोनिष्फल-
आत्मसंगलोज्ञानात्मकोयोविदितोमुनीश्वरैः ॥ १० ॥ जागर्तियोस्मिञ्छयनंगतेसतिनायंजनोवेदसवेदतंहितम् ॥ पश्यंतमात्मानंपुरुषंहियंजनो-
नपश्यतिस्वच्छमलंचतंभजे ॥ ११ ॥ यथानभोग्निःपवनोनसज्जतेघटेनकाष्ठेनरजोभिरावृतः ॥ तथापुमान्सर्वगुणैश्चनिर्मलोवर्णैर्यथास्यात्स्फ-
टिकोपसोज्ज्वलः ॥ १२ ॥ व्यंग्येनवालक्षणयाचवाक्पथैरर्थैःपदस्फोटपरायणैःपरम् ॥ नज्ञायतेयद्गुणिनोत्तमेनसद्भाव्यंततोब्रह्मकुतस्तुलौ-
किकैः ॥ १३ ॥ वदंतिकेचिद्भुविकर्मकर्तृयत्कालंचकेचित्परमेवशोभनम् ॥ केचिद्विचारंप्रवदंतियच्चतद्ब्रह्मेतिवेदांतविदोवदंतिहि ॥ १४ ॥

परे है, स्वयं मंगल है, ज्ञानात्मा है, ऐसा मुनीश्वरोंने जाना है ॥ १० ॥ जगत् सोता है, तब आत्मा जगता है, यह जन उसको नहीं जानता है, वह इस जीवको जानता है. वह सबको देखता है, उसको कोई नहीं देखता है, और जो अतिस्वच्छ है, उस परमेश्वरको मैं भजता हूं ॥ ११ ॥ जैसे घटमें आकाश, काष्ठमें अग्नि, रजमें पवन, नहीं लिप्त होता है, वैसे ही निर्मल आत्मा गुणोंमें नहीं बंधता है, जैसे रंगोंमें स्फटिकमणि लिप्त नहीं होती है ॥१२॥ व्यंग्यसे, लक्षणासे, वाणियोंके मार्गोंसे अर्थोंसे. पदस्फोट परायण जो शब्द है, उनसे वह ब्रह्म जाननेमें नहीं आता है. और जो उत्तम ज्ञानसे भी जाननेमें नहीं आता है फिर, कहो वह लोकके वाक्योंसे तो जानाही कैसे जायगा ॥१३॥ कोई उसको पृथ्वीमें कर्म कहते हैं, कोई कर्ता कहते हैं, कोई काल कहते हैं कोई विचार कहते हैं, कोई जो वेदान्तवेत्ता हैं वे उसीको ब्रह्म कहते हैं ॥ १४ ॥

जिसको समयानुसार होनेवाले तीनों गुण स्पर्श नहीं करते हैं, और माया जिसको स्पर्श नहीं कर सकती है, इंद्रिय, चित्त मन, बुद्धि, महतत्त्व, ये भी सब जिसको नहीं जान सकते हैं, और वेदभी जिसको नहीं कह सकते हैं, जैसे अग्निके विस्फुलिंग (पतंग) अग्निमें प्रवेश होते हैं, ऐसेही यह सब उसी ब्रह्ममें प्रवेश होता है, वहही ब्रह्म है ॥ १९ ॥ हिरण्यगर्भ ब्रह्मा जिसको परम आत्मतत्त्व वर्णन करते हैं, संत जिसको वासुदेव वर्णन करते हैं, उस देववरके स्वरूपको विचारकर मोहको छोडकर, असंग होकर विचरना चाहिये ॥१६॥ जैसे एक चन्द्रमा अनेक पात्रोंमें प्रतिबिम्बरूपसे अनेक रूप दीखता है, और जैसे एक अग्निकाष्ठ समूहमें अनेक रूपा दिखाई देती है, वैसे ही आकर अपने रचे हुये देहधारियोंमें बाहिर भीतर एक है, किन्तु अनेक जैसा दीखता है ॥ १७ ॥ जैसे सूर्योदयसे अन्धकार नष्ट होजाता है, और मनुष्योंको घरकी वस्तु दीखने लगती है, ऐसे ज्ञानके उदय होनेपर अज्ञान का अंधकार नष्ट होजाता है, और शरीरमें ब्रह्म दीखने लगता है ॥१८॥ जैसे एक वस्तु इन्द्रियोंकी वृत्तिसे अनेक प्रकारकी दीखती है, (जैसे दही नेत्रोंसे सफेद, हाथोंसे शीतल

यंनस्पृशंतीहगुणानकालजामायेंद्रियंचित्तमनोनबुद्धयः ॥ महन्नवेदोवदतीतितत्परंविशंतिसर्वेंनलविस्फुलिंगवत् ॥१९॥ हिरण्यगर्भःपरमात्मतत्त्वंयद्वासुदेवंप्रवदंतिसंतः ॥ विचार्य्यतद्देववरस्वरूपंविसृज्यमोहंविचरेदसंगः ॥ १६ ॥ यथेंदुरेकोजलपात्रवृन्दगोयथाग्निरेकोविदितःसमिच्चये ॥ तथापरात्माभगवाननेकवदंतर्बहिःस्यात्स्वकृतेषुदेहिषु ॥१७॥ सूर्योदयेनैशतमोविलीयतेप्रदृश्यतेवस्तुगृहेयथाजनैः ॥ ज्ञानोदयेज्ञानतमःप्रलीयतेसंप्राप्यतेब्रह्मपरंतनौतथा ॥१८॥ यथेंद्रियाणांचपृथक्प्रवृत्तिभिर्नानेवतेर्थोतिगुणाश्रयःपरः ॥ एकंह्यनन्तस्यपरस्यधामतत्तथामुनीनांकिलशास्त्रधर्मिभिः॥१९॥साक्षाद्धरिर्यःपुरुषोत्तमोत्तमःश्रीकृष्णचन्द्रोनिजभक्तवत्सलः ॥ कैवल्यनाथोनृगमुज्जहारतंपूर्णस्वयंब्रह्मपरंनमाम्यहम् ॥ २० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ इत्युक्तातमनुज्ञाप्यभगवान्बादरायणः ॥ पश्यतांयादवानांचतत्रैवांतरधीयत ॥ २१ ॥ इदंमयातेकथितंहरिभक्तिविवर्द्धनम् ॥ विज्ञानखण्डंविशदंश्रोतॄणांमोक्षदंस्मृतम् ॥२२॥ गर्गाचार्येणकथितानाम्नेयंगर्गसंहिता ॥ सर्वदोषहरापुण्याचतुर्वर्गफलप्रदा ॥ २३ ॥ गोलोकवृंदावनयोर्गिरीश्वरमाधुर्ययोःश्रीमथुरापुरस्य च ॥ द्वारावतीविश्वजितोर्हलायुधविज्ञानयोःखण्डचयाःपृथङ्नव ॥ २४ ॥

गर्म जीभसे खट्टा, मीठा, नाकसे सुगन्धित, दुर्गन्धित मालूम देता है) वैसेही परम अनन्तका तेजस्वरूप मुनियोंने शास्त्रोंके मार्गसे अनेक प्रकारका कहा है ॥ १९ ॥ साक्षात् हरि पुरुषोत्तमोत्तम निजभक्तवत्सल कैवल्यनाथ स्वयं ब्रह्म श्रीकृष्णचन्द्रको हम नमस्कार करते हैं, जिन्होंने नृगराजाकी मुक्ति की है ॥२०॥ नारदजी बोले, ऐसे काल भगवान् उग्रसेन को उपदेश करके आज्ञा मांगकर सब यादवोंके देखते २ अन्तर्धान होगये ॥ २१ ॥ यह मैंने हरिकी भक्ति बढानेवाला विज्ञान खण्ड वर्णन किया, यह बडा विशद है, श्रोताओंके पापोंका नाश करके मोक्ष देनेवाला है ॥२२॥ गर्गाचार्यने यह कहा है, इससे इसका नाम गर्गसंहिता है, यह सब दोषोंकी हरनेवाली चतुर्वर्ग फलकी देनेवाली है ॥२३॥ गोलोक खण्ड १, वृन्दावन खण्ड २, गोवर्द्धन खण्ड ३, माधुर्य खण्ड ४, मथुरा खण्ड ५, द्वारका खण्ड ६, विश्वजित खण्ड ७, बलभद्र खण्ड ८, विज्ञान खण्ड ९ ये पृथक् पृथक् नौ खण्ड वर्णन किये हैं ॥ २४ ॥

श्रीकृष्णकी मूर्ति जैसे नौ रसोंसे शोभित है, जैसे भरतादि नौखंडोंसे भूमि, शोभित है वैसे ही नृपेश्वर ! नौ खंडोंसे गर्गसंहिता शोभित है ॥२५॥ जैसे देवताकी अंगूठी नौ रत्नोंसे शोभाको प्राप्त होती है, वैसेही चार वर्गके फलकी देनेवाली जो विधि है उसमें सर्गविसर्गोंसे गर्गसंहिता शोभित है ॥ २६ ॥ हे नरेन्द्र ! जो मनुष्य इस गर्गसंहिताको सुनते हैं, वे पवित्र हैं, भक्तजन हैं, वे इसीलोकमें परम सुखको प्राप्त करते हुये अन्तमें गोलोकधामको जाते हैं ॥२७॥ यदि वन्ध्या स्त्री पीताम्बर पहिनकर चन्दन लगाकर इसको अत्यन्त लालसासे सुने तो, थोडेही समयमें घरके आंगनमें बालकोंको खेलाती हुई विचरण करे ॥ २८ ॥ रोगी पुरुष इस कथाको सुने तो रोगसमूहसे छूट जाय, डरा हुआ मनुष्य भयसे छूटजाये, बंधनवाला सुने तो बन्धनसे मुक्त होजायें, निर्धन सुने तो उसके वैभव हो, और मूर्ख सुने तो शीघ्रही पंडित हो ॥२९॥ जो राजलक्ष्मीयुक्त राजा कार्तिकके महीने में मुनिकी गर्ग

श्रीकृष्णमूर्तिःपरमैरसैर्यथायथाचभूमिर्भरतादिभिर्भृशम् ॥ तथाहिशश्वन्मुनिगर्गसंहिताविभातिखण्डैर्नवभिर्नृपेश्वर ॥२५॥ यथाहिरत्नैर्नवभि-र्विराजतेदेवांगुलौतप्तसुवर्णमुद्रिका ॥ तथाचतुर्वर्गफलप्रदेविधौसर्गैर्विसर्गैर्मुनिगर्गसंहिता ॥२६॥ नरेन्द्रशश्वन्मुनिसंहितांयेशृण्वंतिभक्त्याहिज-नाःपुनीताः ॥ इहैवसौख्यंपरमाप्नुवन्तस्ततस्तुगोलोकपुरंप्रयांति ॥२७॥ कृत्वाथपीतांबरबन्धनंत्विमांशृणोतिवंध्याबहुलालसाभृशम् ॥ ह्रस्वेन कालेनगृहांगणेशिशून्संचारयन्तीविचरत्यहर्निशम् ॥२८॥ रोगीपुमान्रोगगणात्प्रमुच्यतेभीतोभयाद्बन्धगतश्चबन्धनात् ॥ श्रुत्वाकथांनिर्धनएति वैभवंमूर्खोभवेत्पंडितएवसत्वरम् ॥२९॥ यःकार्तिकेमासिनृपःश्रियायुतःशृणोतिशश्वन्मुनिगर्गसंहिताम् ॥ सचक्रवर्तीभवितानसंशयोनरेन्द्रहस्तो-द्धृतचारुपादुकः ॥ ३० ॥ मनोजवैःसिंधुतुरंगमैर्नवैर्द्विपैश्चविंध्याचलसंभवैःपरैः ॥ वैतालिकोद्गीतयशामहीतलेनिषेवितोवारवधूजनैःसह ॥३१॥ सुवर्णशृंगंवरताम्रपृष्ठंसभूषणंरौप्यखुरंसवत्सम् ॥ ददातिखंडंप्रतिगोद्वयंयःप्राप्नोतिसर्वंहिमनोरथं सः ॥३२॥ निष्कारणोसौशृणुतेविदेहराड् सर्वामिमांवैमुनिगर्गसंहिताम् ॥ हृत्पुण्डरीकेवमतेस्यसर्वदाश्रीकृष्णचन्द्रोनिजभक्तवत्सलः ॥३३॥ श्रीगर्गउवाच ॥ इत्युक्त्वातमनुज्ञाप्यनारदो देवदर्शनः ॥ सर्वेषांपश्यतांब्रह्मन्नंबरंगतवान्मुनिः ॥३४॥ बहुलाश्वोमहाराजःश्रीकृष्णेलग्नमानसः ॥ सर्वतस्तुकृतार्थोभूच्छ्रुत्वेमांसंहितांहरेः ॥३५॥

संहिताको सुने तो, वह चक्रवर्ती हो दूसरे राजा उसकी चरणपादुका उठाया करें ॥ ३० ॥ और मनके जैसे वेगवाले सिन्धुदेशके नये घोडे हों, और विन्ध्याचलके हाथी हों, ऐसा वैभव जिसके हो, वैताल जिसका यश गायें, वेश्याएं जिसके नृत्य करें, ऐसा राजा होता है ॥३१॥ जो एक एक खंडको सुनकर सोनेके सींगोंवाली चांदीके खुरोंवाली, ताम्बेकी पीठ वस्त्र ओढे, बछडा सहित ऐसी दो दो गोदान करें, उसके सब मनोरथ पूर्ण होते हैं ॥३२॥ और हे विदेहराज ! जो निष्काम (कामना-रहित) होकर इस गर्गसंहिताको सुने, उसके हृदयमें भक्तवत्सल श्रीकृष्ण सदाही निवास करते हैं ॥३३॥ गर्गजी शौनकादिक मुनियोंसे बोले कि, देवदर्शन नारदजी राजा बहुलाश्वसे ऐसे कहकर उसको पूछकर सबके देखते २ आकाश मार्गसे चले गये ॥३४॥ तब श्रीकृष्णमें लगा है, मन जिसका वह बहुलाश्व राजा इस गर्गसंहिताको सुनकर सब ओरसे कृतार्थ होगया ॥ ३५ ॥

हे ब्रह्मन् ! तुम्हारे प्रश्नसे मैंने यह गर्गसंहिता कही है, इसको जो कोई कहेगा अथवा सुनेगा उसको कोटि यज्ञका फल होगा ॥ ३६ ॥ तब शौनक ऋषि गर्गजीसे बोले—हे मुने ! हे गर्ग ! आपके प्रसंगसे मैं धन्य हुआ, कृतार्थ होगया, मेरी श्रीकृष्णमें प्रेम वर्द्धिनी भक्ति होगई ॥३७॥ मुनियोंके विशद हृदय सरके बीचमें जो राजहंस है, सकल सुखसे विराजता जो नाद माधुर्य्य ही जिसमें वंश है वंसी जिनकी जगत्में विकल दंश हैं शूरवंशके कुण्डल हैं, संत जिनकी प्रशंसा करते हैं, वे श्रीकृष्ण हमारी रक्षा करें ॥३८॥ ऐसे कहकर सब मुनियोंसे आज्ञा लेकर प्रसन्न मनवाले गर्गाचार्यजी चलनेके लिये उद्यत हुये ॥३९॥ नौ सर्गोंके विसर्गोंसे युक्त स्वर्गदात्री चतुर्वर्गदात्री संहिताको सुनाकर गर्गजी गर्गाचल पर्वतको

तवप्रश्नोपरिब्रह्मन्कथितासंहितामया ॥ श्रुतावापाठिताकैश्चित्कोटियज्ञफलप्रदा ॥ ३६ ॥ श्रीशौनकउवाच ॥ धन्योहंचकृतार्थोहंत्वत्संगेनमहामुने ॥ प्राप्नोमिपरमांभक्तिंश्रीकृष्णप्रेमवर्द्धिनीम् ॥३७॥ विशदहृदिमुनीनांमानसेराजहंसःसकलसुखविराजन्नादमाधुर्य्यवंशः ॥जगतिविकलदंशःशूरवंशावतंसःकरबलहतकंसःपातुवःसत्प्रशंसः ॥३८॥ इत्युक्त्वातान्मुनीन्सर्वान्गर्गाचार्योमहामुनिः ॥ अनुज्ञाप्यप्रसन्नात्मागंतुमभ्युद्यतोभवत् ॥३९॥ नवसर्गविसर्गाढ्यांस्वर्गभृद्गर्गसंहिताम् ॥ चतुर्वर्गप्रदांश्रुत्वागगर्गोगर्गाचलंययौ ॥४०॥ शरद्विकचपंकजश्रियमतीवविद्वेषकंमिलिंदमुनिलेढितंकुलिशकंजचिह्नावृतम् ॥ स्फुरत्कनकनूपुरंदलितभक्ततापत्रयंचलद्द्युतिपदद्वयंहृदिदधामिराधापतेः ॥४१॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांविज्ञानखण्डेश्रीनारदबहुलाश्वसंवादांतर्गतव्यासोग्रसेनसंवादेपरब्रह्मनिरूपणंनामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

चले गये ॥४०॥ चलते समय यह बोले कि, शरद ऋतुके फूले कमलकी शोभाको फीकी करनेवाले, मुनिरूप भ्रमरोंसे सेवन किये हुये, वज्र, कमल, यव, ध्वजा, चिह्नोंसे शोभित दूर किया है भक्तोंका तापत्रय जिन्होंने, बजते हैं सुवर्णके नूपुर जिनमें, चंचल है कान्ति जिनकी, ऐसे राधापतिके जो चरणद्वय हैं, उनका मैं ध्यान करता हूं ॥४१॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां विज्ञानखंडे भाषाटीकायां नारद बहुलाश्वसंवादे परब्रह्म निरूपणं नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

इदं पुस्तकं मुम्बय्यां श्रीकृष्णदासात्मजेन खेमराजेन स्वकीये
"श्रीवेङ्कटेश्वर" मुद्रणयन्त्रालयेऽङ्कयित्वा प्रकाशितम् ।
संवत् २०३०, शकाब्दाः १८९५.

इति गर्गसंहितायां विज्ञानखण्डं भाषाटीकासमेतं समाप्तम्

अथ गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डं भाषाटीकासहितं प्रारभ्यते

(दशमखण्डम्)

श्रीगणपतये नमः ॥ श्रीगोपीजनवल्लभाय नमः ॥अथाश्वमेध खण्डः ॥ श्रीनारायणको,तथा नरोत्तम नरावतार भगवान्को,देवी सरस्वतीको, और श्रीमुनि व्यासजीको नमस्कार करके संसारके जन्म मरणरूप दुःखोंके जीतनेवाले जय शास्त्रोंको निरूपण करे ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण चन्द्र भगवान्को नमस्कार है, संकर्षणजीको, देव प्रद्युम्नको, और अनिरुद्धको बारम्बार नमस्कार है, नमस्कार है ॥ २ ॥ श्रीगर्गजी बोले कि सभामें आये हुये रोम हर्षण नामके ऋषिके पुत्र उग्रश्रवा नामके सूतजीको देखकर, उन्हें प्रणाम करके शौनकजीने प्रश्न किया ॥ १ ॥ शौनक ऋषि बोले कि, हे महामते ! आपके मुखसे सब शास्त्र पुराण और श्रीहरिके अनेक प्रकारके निर्मल चरित्र मैंने सुने हैं ॥ २ ॥ और पहिले गर्ग ऋषिने मेरे आगे गर्गसंहिता कही है जिनमें श्रीराधा माधवजीकी बहुत महिमा वर्णन की गई है ॥ ३ ॥ हे सूतनन्दनजी ! अब आपके मुखसे सब दुःखोंको दूर करनेवाली श्रीकृष्ण कथाको फिर सुनना चाहता हूँ, सो विचार कर कहिये ॥४॥ गर्गजी बोले कि, जब अट्ठासी हजार मुनियोंसे रोम हर्षणके पुत्र (उग्रश्रवाजी) पूछे गये, तब कृष्णके चरण कमलका

श्रीगणपतयेनमः ॥ अथाश्वमेधखण्डःप्रारभ्यते ॥ नारायणंनमस्कृत्यनरंचैवनरोत्तमम् ॥ देवींसरस्वतींव्यासंततोजयमुदीरयेत् ॥ १ ॥ नमः श्रीकृष्णचन्द्रायनमःसंकर्षणायच ॥ नमःप्रद्युम्नदेवायानिरुद्धायनमोनमः ॥ २ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ सभायामागतंवीक्ष्यरोमहर्षणनन्दनम् ॥ शौनकःपरिपप्रच्छप्रणिपत्याभिवाद्यच ॥१॥ शौनकउवाच ॥ त्वन्मुखात्सर्वशास्त्राणिपुराणानिमहामते ॥ नानाहरिचरित्राणिश्रुतानिविमलानिमे ॥२॥ पुरागर्गेणकथितामममाग्रेगर्गसंहिता ॥ राधामाधवयोर्यस्यांमहिमाबहुवर्णितः ॥३॥ अथाहंश्रोतुमिच्छामित्वत्तःकृष्णकथांपुनः ॥ सर्वदुःखहरांसौतेकथयस्वविचार्यच ॥ ४ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ अष्टाशीतिसहस्रैश्चमुनिभीरोमहर्षणिः ॥ पृष्टःप्रोवाचकृष्णस्यस्मरन्पादांबुजंहरेः ॥ ५ ॥ सौतिरुवाच ॥ अहोशौनकधन्योसियस्यतेमतिरीदृशी ॥ कृष्णचंद्रपदद्वंद्वमकरंदस्पृहावती ॥ ६ ॥ संगमंवैष्णवानांचदेवाःश्रेष्ठंवदंतिहि ॥ पापक्षयकरीयस्माच्छ्रीकृष्णस्यकथाभवेत् ॥७॥ अनंतंकृष्णचंद्रस्यचरितंकल्मषापहम् ॥ किंचिज्जानातिब्रह्माचतथाकिंचिदुमापतिः ॥ ८ ॥ मशकोमादृशःकोपिवासुदेवकथार्णवे ॥ मोहितानवदिष्यन्तियत्रब्रह्मादयःसुराः ॥९॥ श्रीगर्गोयादवेंद्रस्यह्युग्रसेनस्यभूपतेः ॥ अश्वमेधंक्रतुवरंदृष्ट्वाप्रत्याहचैकदा ॥ १० ॥ धन्योराजायादवेंद्रोयश्चकारक्रतूत्तमम् ॥ श्रीकृष्णस्याज्ञयापुर्यांतेनाहंविस्मयंगतः ॥ ११ ॥

स्मरण करते हुये उग्रश्रवाजी बोले ॥५॥ सूत नन्दनजी बोले कि, हे शौनकजी ! आप धन्य हैं,जिन आपकी ऐसी बुद्धि है, जो श्रीकृष्ण चन्द्रके चरण कमलके मकरन्दकी इच्छा करनेवाली है ॥६॥ देवता भी श्रीकृष्णके भक्त वैष्णवोंके संगको श्रेष्ठ बताते हैं, क्योंकि जिन वैष्णवोंके समागममें पापोंका नाश करनेवाली श्रीकृष्णकी कथा होती है ॥७॥ पापोंके नाश करनेवाले कृष्ण चन्द्रके अनन्त चरित्र हैं, उनमेंसे कुछ चरित्रोंको ब्रह्माजी जानते हैं, और वैसेही कुछ चरित्रोंको उमापति शिवजी जानते हैं ॥८॥ फिर कहो, जिस वासुदेवके अश्वमेध समुद्रमें ब्रह्मादिक देवताभी मोहित होते हैं, उसको कह नहीं सकते हैं, तब मुझ जैसा मच्छर कोई कैसे कह सकता है ॥ ९ ॥ एक समय गर्गजी यादवोंके राजा उग्रसेनके अश्वमेध यज्ञको देखकर बोले ॥१०॥ कि यादवेंद्र राजा बडे धन्य हैं, जिन्होंने अश्वमेध नामका यज्ञ मथुरापुरीमें कृष्णकी आज्ञासे किया, इससे मैं बहुत आश्चर्यको प्राप्त हुआ ॥ ११ ॥

मैंने अपनी संहितामें कृष्णकी कथा कही है, जो कथा परिपूर्णतम की मैंने जैसी देखी और जैसी सुनी है ॥ १२ ॥ किन्तु उस संहितामें मैंने अश्वमेध यज्ञकी कथाको नहीं कही है, सो अब मैं उग्रसेनके अश्वमेधकी कथाको फिर कहूँगा ॥१३॥ जिस कथाके श्रवण मात्रसेही भगवान् मनुष्योंको कलियुगमें बहुत शीघ्रही भोग और मोक्ष देते हैं ॥१४॥ सूतजी बोले कि, गर्ग मुनिने ऐसे कहकर हे शौनकजी ! श्रीकृष्णकी बडी भक्तिसे उग्रसेनके यज्ञके वृत्तान्तको बनाकर निरूपण किया ॥१५॥ तब भगवान् गर्ग मुनि संहिताके सुमेरु रूपी अश्वमेध यज्ञके वृत्तान्तको बनाकर कृतकृत्य हुये ॥१६॥ यादवोंके गुरु गर्गजीने इस अश्वमेध यज्ञकी सब कथा आठ दिनमें बनाई फिर बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ गर्गजी वज्र नाभको देखनेके लिये श्रीभगवान्की मथुरापुरीमें आये ॥१७॥ तब ज्ञानियोंमें मुख्य श्रीगर्गजीको आकाशमेंसे आते देखकर वज्रनाभजीमे ब्राह्मणों सहित उठकर नमस्कार किया॥१८॥ गर्गजीके चरणोंको धोकर बैठनेके लिये स्वर्णका सिंहासन दिया, पुष्प मालाओंसे पूजकर मिष्टान्न भेंट किया ॥१९॥ फिर उनके चरणोंके जलको शिरपर रखकर श्यामसुन्दर कमल लोचन, श्रीवज्र नाभनें

मयावैसंहितायांचकथाःकृष्णस्यवर्णिताः ॥ परिपूर्णतमस्यापियथादृष्टायथाश्रुताः ॥ १२ ॥ तस्यांवैवाजिमेधस्यकथानकथितामया ॥
अद्याहंकथयिष्यामिहयमेधकथांपुनः ॥ १३ ॥ यस्याःश्रवणमात्रेणनराणांहिकलौयुगे ॥ भुक्तिंमुक्तिंचभगवाञ्छीघ्रमेवप्रयच्छति ॥ १४ ॥
इत्युक्त्वाश्रीमुनिर्गर्गोकृष्णभक्त्याचशौनक ॥ उग्रसेनस्ययज्ञस्यचरित्रंसह्यचीक्लपत् ॥ १५ ॥ हयमेधचरित्रस्यसुमेरुर्नामसुन्दरम् ॥ धृत्वागर्ग
स्तुभगवान्कृतकृत्योभवन्मुने ॥१६॥ कृत्वाकथामष्टदिनेनश्रीमुनिर्यदोर्गुरुर्बुद्धिमतांवरःपरः ॥ अथाययौवैमथुरांहरेःपुरींवज्रंनृपेंद्रंचनिरीक्षितुं
खलु ॥ १७ ॥ अंबरादागतंतत्रगर्गंज्ञानवतांवरम् ॥ वीक्ष्योत्थायनमश्चक्रेवज्रनाभोद्विजैःसह ॥ १८ ॥ स्वर्णसिंहासनंदत्त्वावनिज्यतत्पदां-
बुजे ॥ अर्चयित्वापुष्पस्रग्भिर्मिष्टान्नंचन्यवेदयत् ॥ १९ ॥ तत्पादसलिलंनीत्वाशीर्षेधृत्वाकृतांजलिः ॥ भूत्वाश्रीवज्रनाभस्तुश्यामःपंकज-
लोचनः ॥ २० ॥ पुष्टदेहोबृहद्बाहुर्वीरःषोडशवार्षिकः ॥ इतिहोवाचस्वगुरुंशतसिंहसमोद्भटः ॥ २१ ॥ वज्रनाभउवाच ॥ नम-
स्तुभ्यंस्वागतंतेब्रह्मन्किंकरवामते ॥ मन्येत्वांभगवद्रूपंब्रह्मर्षीणांवरंपरम् ॥ २२ ॥ गुरुर्विधिर्गुरूरुद्रोगुरुरेवबृहस्पतिः ॥ गुरुर्नारायणःसाक्षा
त्तस्मैश्रीगुरवेनमः ॥ २३ ॥ नराणांचमुनिश्रेष्ठदर्शनंतवदुर्लभम् ॥ अस्माकंनितरांदेवविषयासक्तचेतसाम् ॥ २४ ॥ गर्गाचार्यकुलाचार्यतेजस्वि
न्योगभास्कर ॥ त्वद्दर्शनादपिवयंपाविताःसकुटुंबकाः ॥ २५ ॥

दोनों हाथ जोडकर शिरपर रखे॥२०॥पुष्ट देहवाले, सोलह वर्षके, महाबाहु, सौ सिंहोंके बराबर बलवाले वज्रनाभ अपने गुरुजीसे यह बोले ॥२१॥ वज्रनाभजी स्तुति करने लगे कि, हे ब्रह्मन् ! आपको नमस्कार है, आपका स्वागत क्या करूँ, मैं तो आपको ब्रह्मर्षियोंमें श्रेष्ठ साक्षात् पर भगवान्का रूप मानताहूँ ॥२२॥ जिन गुरुको मैं ब्रह्मा, रुद्र विष्णु भगवान्का और बृहस्पतिका साक्षात् रूप मानता हूँ, उन गुरुको मेरा नमस्कार है ॥२३॥ हे मुनिवर ! मनुष्योंको आपका दर्शन होना अति दुर्लभ है, और हे देव ! निरन्तर विषयोंमें आसक्त है चित्त जिनका ऐसे हमको तो आपका दर्शन अत्यन्तही दुर्लभ है॥२४॥हे गर्गाचार्य ! हे कुलाचार्य! हे तेजस्विन् ! हे योग भास्कर ! आपके दर्शनसे हम कुटुम्ब सहित पवित्र हुये ॥२५॥

तब महात्मा मुनिश्रेष्ठ गर्गजी यदुश्रेष्ठ व्रजनाभके कहे वाक्यको सुनकर श्रीहरिके चरणारविन्दका स्मरण करते हुये राजेन्द्र व्रजनाभसे यह बोले ॥२६॥ हे युवराज ! हे महाराज ! हे यदुवंश शिरोमणे ! तुमने यह बहुत अच्छा किया, जो कि भूमिके जनोंका पालन किया ॥२७॥ और हे वत्स ! तुमने भूतलमें धर्मस्थापन किया, विष्णुरातराजा (परीक्षित्) तुम्हारे मित्र हैं और सब राजा तुम्हारे वशमें हैं ॥२८॥ हे राजशार्दूल ! तुम धन्य हो, और तुम्हारी मथुरापुरी धन्य है तुम्हारी सब प्रजा धन्य है, और तुम्हारी व्रजभूमि धन्य है ॥२९॥ कृष्णका भजन करते हुये, बलदेवजीका, प्रद्युम्नका, और अनिरुद्धका भजन करते हुये निशंक होकर हे नृप ! तुम राज्य करो ॥ ३० ॥ सूतजी बोले कि, नृपश्रेष्ठ व्रजनाभ गर्गके कहे हुये वचनको सुनकर संकर्षण, श्रीकृष्ण, पिता और पितामह ॥३१॥ इन सबका स्मरण कर विरहसे अश्रुपूर्ण मुख हो गये, तब राजाको दुखी हुये नीचेको धरतीमें मुख किये बैठे देखकर ॥ ३२ ॥ गर्गाचार्यजी बडे विस्मित होकर दुखका शमन करते हुये ये वचन बोले कि हे राजेन्द्र, तुम रुदन क्यों करते हो, मेरे विद्यमान होते तुमको कौनसा भय है

श्रुत्वायदूनामृषभस्यवाक्यंमुनीन्द्रवर्यस्तुमहान्महात्मा ॥ स्मरन्हरेःश्रीचरणारविंदंमुदानृपेंद्रंनिजगादसद्यः ॥२६॥ युवराजमहाराजयदुवंशशिरोमणे ॥ त्वयासाधुकृतंसर्वंपालिताःपृथिवीजनाः ॥२७॥ स्थापितश्चत्वयावत्सधर्मोवैपृथिवीतले ॥ विष्णुरातश्चतेमित्रंनृपाश्चान्येवशाःस्मृताः ॥ २८ ॥ धन्यस्त्वंराजशार्दूलधन्यातेमथुरापुरी ॥ धन्याश्चतेप्रजाःसर्वाधन्यावैव्रजभूश्चते ॥२९॥ भुंक्ष्वभोगान्भजन्कृष्णंबलंप्रद्युम्नमेवच ॥ अनिरुद्धंचनिःशंकोभूत्वाराज्यंकुरुनृप ॥ ३० ॥ सूतउवाच ॥ इतिवाक्यंसमाकर्ण्यगर्गस्यनृपसत्तमः ॥ संकर्षणंचश्रीकृष्णंपितरंचपितामहम् ॥३१॥ विरहेणस्मरन्राजाचाश्रुपूर्णमुखोभवत् ॥ तंनृपंदुःखितंदृष्ट्वास्थितंभूमावधोमुखम् ॥३२॥ गर्गस्तुविस्मितःप्राहदुःखंप्रशमयन्निव ॥ गर्गउवाच ॥ कस्माद्रोदिषिराजेंद्रभयंकिंतेमयिस्थिते ॥३३॥ कारणंस्वस्यदुःखस्यवदसर्वंममाग्रतः ॥ इतितद्वचनंश्रुत्वाराजानप्राहदुःखितो ॥३४॥ पुनःपृष्टश्चगुरुणाप्राहगद्गदयागिरा ॥ राजोवाच ॥ मांत्यक्त्वायादवाःसर्वेकृष्णसंकर्षणादयः ॥ ३५ ॥ गतादेवपरंलोकंतेनाहंदुःखितो भवम् ॥ स्वाम्यमात्यसुहृद्राष्ट्रकोशदुर्गबलानिच ॥ एकाकिनश्चसेप्रहाप्नेतेप्रीतिकरानहि ॥ ३६ ॥ मयाचरित्रंकृष्णस्यनदृष्टंनश्रुतंवद ॥ दृष्टोयादवसंहारःतस्माद्दुःखंनयातिमे ॥ ३७ ॥ चतुर्व्यूहेनहरिणायापुरीशोभितापुरा ॥ साप्यमग्नासमुद्रेतुकृष्णोभक्तेःपरंगतः ॥ ३८ ॥

॥ ३३ ॥ अपने दुखका कारण मेरे सामने सब बताओ, ऋषि गर्गजीके ऐसे वचनको सुनकर दुखी हुये राजा वज्रनाभने कुछ जवाब नहीं दिया ॥३४॥ जब गुरुजीने फिर पूछा, तब गद्गद होकर राजाने कहा कि, कृष्ण, संकर्षणादिक सब यादव मुझको छोडकरके ॥३५॥ हे देव ! परलोकको चले गये, इससे मैं दुखी हुआ हूं, स्वामी मंत्रीजन, सुहृद्वर्ग राष्ट्र, कोश (खजाना) किला और सैन्य अकेले ये सब मुझको प्रीति करनेवाले नहीं हैं ॥ ३६ ॥ मैंने कृष्णके चरित्र न तो सुने और न देखे, सो उनको मुझसे कहिये, मैंने तो केवल यादवोंका संहार मात्र आँखोंसे देखा है वह दुख मेरे मनसे जाता नहीं है ॥ ३७ ॥ चतुर्व्यूह मूर्तिवाले भगवान्से जो द्वारकापुरी पहिले शोभित थी, वह पुरी भी समुद्रमें डूब गई और कृष्णभी भक्तिसे पारंगत हो गये ॥ ३८ ॥

हे शिष्य वत्सल ! अब मैं किसके हेतुसे किसके लिये जीऊँ, इससे अब म वनमें जाँऊगा, अब राज्य करनेको मेरा मन नहीं है ॥३९॥ सूतजी बोले कि, उसके बादमें मुनियोंमें श्रेष्ठ बडे महात्मा गर्गजी यादवोंमें श्रेष्ठ वज्रनाभजीके कहे हुये वचनको सुनकर, उनकी प्रशंसा करके प्रसन्न होकर दुखका शमन करते हुये गर्गजी सन्त वज्रनाभसे यह बोले ॥४०॥ हे यदुश्रेष्ठ ! शोकके नाश करनेवाले सब पापोंके नाश करनेवाले बडे पवित्र मेरे वाक्यको तू सावधान होकर सुन, जो वाक्य सब तरह शुभ है ॥ ४१ ॥ जो भगवान् श्रीकृष्ण पहले द्वारकामें विराजमान् थे, वे ही भगवान् सर्वत्र विराजमान हैं, हे भूपते ! उनको तुम भक्तिसे देखो ॥ ४२ ॥ अब मैं तुम्हारे सामने भोग और मोक्षको देनेवाली कथाको कहूँगा, हे वसुधानाथ (भूपते) श्रीकृष्ण बलरामजीकी जो कथा है उसको सुनो ॥ ४३ ॥ सूतजी बोले कि, हे विप्रेन्द्र ! (शौनक) ! भगवान् गर्गजीने ऐसे वज्रनाभसे कहकर अपनी संहिताका नौ दिनमें निरूपण किया ॥ ४४ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां हयमेधखंडे भाषाटीकायां गर्गवज्रनाभ संवादे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

कस्यहेतोःकिमर्थंचजीवामिशिष्यवत्सल ॥ अद्ययास्यामिगहनंराज्यंकर्तुंनमेमनः ॥ ३९ ॥ सूतउवाच ॥ ततोमुनीनामृषभोमहात्माश्रुत्वा गिरंयादवसत्तमस्य ॥ संश्लाघ्यदुःखंशमयन्हितुष्टोगर्गोब्रवीद्भूपतिवज्रनाभम् ॥ ४० ॥ गर्गउवाच ॥ वृष्णिप्रवरमद्वाक्यंशृणुशोकविना-शनम् ॥ सर्वपापहरंपुण्यंसावधानतयाशुभम् ॥४१॥ योराजतेकुशस्थल्यांकृष्णचन्द्रोहरिःपुरा ॥ विराजतेससर्वत्रभक्त्यातंपश्यभूपते ॥४२॥ अद्यतेकथयिष्यामिभुक्तिमुक्तिप्रदांकथाम् ॥ शृणुत्वंवसुधानाथश्रीकृष्णबलयोःपराम् ॥ ४३ ॥ सूतउवाच ॥ इत्युक्त्वाभगवान्गर्गोवज्राय स्वांचसंहिताम् ॥ कथयामासविप्रेंद्रपुण्यांनवदिनैःकिल ॥४४॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधचरित्रसुमेरौगर्गवज्रनाभसंवादेप्रथमोऽध्यायः ॥ ॥ १ ॥ सूतउवाच ॥ इतिश्रुत्वावज्रनाभिर्मुनेःश्रीगर्गसंहिताम् ॥ भृशंप्रमोदाथगुरुंप्रत्युवाचप्रणम्यच ॥ १ ॥ अद्यश्रीकृष्णचन्द्रस्यचरित्रं तुश्रुतंमया ॥ त्वन्मुखान्मुनिशार्दूलतेनदुःखाश्चमेगताः ॥२॥ मेमनस्तुकृपानाथपुनःश्रोतुं हरेर्यशः ॥ अतृप्तस्यापिकृष्णस्यवदस्वचरितंपरम् ॥ ३ ॥ द्वारवत्यामुग्रसेनेनहयमेधःकृतःपुरा ॥ तच्चरित्रंवदमुनेकिंचित्पूर्वंश्रुतंमया ॥ ४ ॥ अनुव्रतानांशिष्याणांसुतानांचमुनीश्वर ॥ ब्रूयुर्गु-ह्यमनापृष्टंगुरवःकरुणामयाः ॥ ५ ॥

सूतजी बोले कि इस प्रकार वज्रनाभजी गर्गसंहिताको सुनकर बहुत प्रसन्न हुये, उसके बाद हे मुने ! गुरुको प्रणाम करके यह बोले ॥१॥ कि आज मैंने श्रीकृष्णका चरित्र सुना, आपके मुखसे सुनकर मेरे सब दुःख दूर हो गये ॥२॥ हे कृपानाथ ! अब भगवान्के यशको सुननेके लिये फिर मेरा मन करता है, क्योंकि मैं तृप्त नहीं हुआ, सो अब फिर श्रीकृष्णके चरित्रका निरूपण करिये ॥३॥ हे मुने ! उग्रसेन राजाने जो द्वारकामें पहिले अश्वमेध यज्ञ किया था, वह कुछ मैंने पहिले सुना था, ॥४॥ हे मुने ! उसी अश्वमेधके वृत्तान्तको कहिये जो दयालु गुरु होते हैं, वे अपने सेवक शिष्य और पुत्रोंके सामने बिना पूछे ही गुप्त बातको भी कहते हैं ॥ ५ ॥

सूतजी बोले कि, ऐसे यादवोंके गुरु मुनि गर्गजी वज्रनाभके कथनको सुनकर बडे प्रसन्न होकर हे राजेन्द्र ! हरिके चरणकमलका स्मरण करते हुये राजा वज्रनाभसे बोले ॥ ६ ॥ गर्गजी बोले कि, तुम धन्य हो, जो कृष्णके चरणोंमें तुम्हारी ऐसी भक्ति है, हे यादवश्रेष्ठ ! कृष्णमें मनुष्योंकी भक्ति होना अति कठिन है, वह भक्ति तुम्हारी हुई, यह बडे आनन्दकी बात हुई है ॥७॥ हे राजन् ! इस प्रसंगमें तुम्हारे सामने एक इतिहास मैं कहूँगा, जिसके सुननेहीसे सब पाप छूट जाते हैं ॥८॥ हे राजन् ! जब द्वापरयुगमें भूमि पापियोंके बोझसे पीडित हुई, तब भूमिने ब्रह्मासे प्रार्थना की, तब ब्रह्माजी सुनकर भगवान्‌की शरण गये ॥९॥ और भगवान्‌से भूमिकी प्रार्थना निवेदन की, तब श्रीराधिकापतिने सुनकर भूमिको आश्वासन देकर देवताओंको साथ लेकर भूमिका भार उतारनेके लिये मन किया ॥१०॥ उसके बाद यहां मथुरामें वसुदेवका विवाह हुआ, तब आकाशमेंसे शब्द हुआ कि, रे कंस ! इस देवकीका आठवाँ पुत्र तुमको मारेगा. तब कंसने देवकी वसुदेवकोको बन्दी बना करके देवकीके छः पुत्र मारे, और भयके मारे कंसको सर्वत्र कृष्ण दीखने लगे ॥११॥ फिर भगवान्‌ने योगमायाको आज्ञा दी, तब योगमायाने देवकीके गर्भको रोहिणीमें प्रवेशकर स्वयम् यशोदाके गर्भमें प्रवेश किया, तब भगवान्‌को देवकीके गर्भमें आया देखकर ब्रह्मादिकोंने

॥ सूतउवाच ॥ एवंभाषितमाकर्ण्ययादवानांगुरुर्मुनिः ॥ प्रीतःप्रत्याहराजेन्द्रंस्मरन्पादांबुजंहरेः ॥ ६ ॥ गर्गउवाच ॥ धन्यस्त्वं कृष्णचन्द्रस्यपादयोर्भक्तिरीदृशी ॥ जातातेयादवश्रेष्ठदिष्ट्यातुदुर्लभानृणाम् ॥७॥ कथयाम्यत्रतेराजन्नितिहासंशृणुष्ववै ॥ यस्य श्रवणमात्रेण सर्वपापैःप्रमुच्यते ॥ ८ ॥ द्वापरेपीडिताराजन्धराभारेणपापिनाम् ॥ ब्रह्माग्रेकथयामाससोपिश्रुत्वाहरिंययौ ॥ ९ ॥ गत्वाचकथयामासश्रुत्वा श्रीराधिकापतिः ॥ महीमाश्वास्यदेवैश्चभारंहर्तुंमनोदधे ॥ १० ॥ विवाहोवसुदेवस्यमधुपुर्यामभूत्ततः ॥ कंसबोधनषट्पुत्रवधः कंसभयंनृप ॥ ११ ॥ मायाज्ञामनुदेवादिस्तुतिःकृष्णसमुद्भवम् ॥ वर्णनंरूपकृष्णस्यवसुदेवस्यसंस्तुतिः ॥ १२ ॥ देवक्यादिपुराकृत्यकथनंजगदीशितुः ॥ गोकुलानयनंकन्यापातनंतद्विभाषणम् ॥ १३ ॥ सांत्वनंवसुदेवस्यमोचनंभार्ययासह ॥ कंसदुर्मंत्रदैत्येषुसाधुबालउपद्रवः ॥१४॥ प्रादुर्भूतेव्रजे कृष्णेव्रजराजमहोत्सवः ॥ मथुरागमनंनन्दवसुदेवसमागमः ॥ १५ ॥ पूतनासुपयःपानंनंदगोपादिविस्मयः ॥ शकटव्यत्ययेदैत्यचक्रवातवधः शिशोः ॥ १६ ॥ संलालनेमुखेधात्र्याजृंभणेविश्वदर्शनम् ॥ रामकेशवयोर्नाम्नोःकरणंकेलिरेतयोः ॥ १७ ॥

स्तुति की, फिर कृष्णचन्द्रको जन्म लिया देखकर वसुदेवजीने स्तुति की ॥ १२ ॥ फिर देवकी वसुदेवको पूर्वजन्मका वृत्तान्त कहना, उसके बाद जगदीशको गोकुलमें पहुँचाना, योगमायाको मथुरामें लाना कंसका योगमायाको गिराना, और योगमायाका कंसके प्रति वचन कि तुमको मारनेवाला जन्म ले चुका है ॥ १३ ॥ तब कंसका वसुदेवको सान्त्वन कर दोनोंको कारागारसे छोड़ना, फिर कंसका दुष्ट मन्त्रियोंसे सलाह करके बालवध करनेका उनको आदेश देना ॥१४॥ फिर व्रजमें कृष्णका नन्दके घरमें प्रादुर्भाव होना, और नन्दके घरमें पुत्र-जन्मके महोत्सवका निरूपण, फिर नन्दका मथुरामें कंसके कर देनेके लिये जाना और वसुदेवजीका नन्दके पास जाकर मिलना, और उनसे बातचीत करना ॥ १५ ॥ फिर पूतनाका प्राण सहित दूध पीना, यह देखकर नन्द गोपादिकका विस्मय करना, फिर बालक कृष्णका शकटासुरको गिराना, और तृणावर्तको मारना ॥ १६ ॥ फिर खेलनेमें दूध पीनेमें माताको मुखमें विश्वको दिखाना, और राम कृष्ण नामका रखना, और उनकी बालक्रीडाका निरूपण ॥ १७ ॥

गोपवधुओंके घरमें यही मक्खनकी चोरी आदि धूर्ततांका निरूपण, इसी प्रसंगमें मिट्टी खाना और माताको विश्व दिखाना, और नन्द यशोदाके पूर्वजन्मका वृत्तान्त कहना ॥१८॥ फिर मक्खन चोरीका निरूपण, उसमें दहींके पात्र फोड़नेके कारणसे कृष्णको रस्सियोंसे माताका बांधना, फिर यमलार्जुन वृक्षको उखाड़ना, और उनके नारदके शापका निरूपण, उनकी स्तुतिका निरूपण ॥१९॥ फिर बालक्रीडाका निरूपण, फिर उपनन्दादि गोपोंकी सलाहसे वृन्दावनको जाना, वृन्दावनको बसाना और अपने मित्र गोप बालकोंके साथ वृन्दावनमें वत्स चारण (बछड़ोंको चराना) क्रीडा करना ॥२०॥ फिर वत्सासुर और बकासुरादिकोंका वध, फिर यमुनाके तटपर मित्रोंके साथमें भोजन करना ॥ २१ ॥ फिर ब्रह्माका बालकोंको चुराकर ब्रह्म लोकमें लेजाना, फिर गोप बालकोंका कृष्ण बन जाना, फिर ब्रह्माजीका सब बालकोंका कृष्ण रूप देखकर स्तुति करना, फिर कृष्णका गोपबालकोंके सङ्ग रमण और वृन्दावनमें गमन ॥२२॥ फिर गोचारण रूप बड़ी भारी क्रीडामें धेनुकादिकोंका वध फिर श्रीकृष्णका व्रजमें आगमन और गोपियोंके नेत्रोंको दर्शनसे आनन्द देना ॥२३॥

धौर्त्यंगोपवधूगेहेप्रसंगान्मृदभक्षणम् ॥ दर्शनंविश्वरूपस्यनन्दभाग्यपुराकथा ॥१८॥ चौर्यैर्दधिगवस्याथबंधनन्दामभिर्बलात् ॥ यमलार्जुनयोः शापोभगश्चैवस्तुतिस्तयोः ॥ १९ ॥ बालक्रीडोपनन्दादिमंत्रणंगमनंततः ॥ वृन्दावनेतयोः क्रीडावयस्यैर्वत्सचारिणोः ॥२०॥ वत्सासुरस्यच वधोवकावासुरयोरपि ॥ भोजनंसखिभिस्तीरेयमुनायाहरेर्मुदा ॥ २१ ॥ वत्साद्याहरणंधात्राकृष्णत्वंवत्सपालयोः ॥ ब्रह्मणोगमनंपश्चात्स्तुतिः कृष्णरतिर्गतिः ॥ २२ ॥ गोचारणेमहाक्रीडाधेनुकादिवधस्तथा ॥ व्रजआगमनंकृष्णगोपीनेत्रमहोत्सवः ॥२३॥ मृतान्विषांभःपानेनगोपान्हरिर्जीवयत् ॥ कालीयदमनेस्तोत्रंतद्भार्याणांप्रलापनम् ॥२४॥ ह्रदेकालीयसंबंधकथनंवह्निमोचनम् ॥ क्रीडाप्रलंबनिधनंदावाग्निमोचनंगवाम् ॥ २५ ॥ वर्षाशरद्वर्णनंचगोपीनांवचनामृतम् ॥ व्रतंगोकुलकन्यानांवस्त्राणांहरणंमुदा ॥२६॥ वनभाग्यकथागोपप्रार्थनाप्रेषणंसखे ॥ विप्रभार्याप्रसादश्चपश्चात्तापोद्विजन्मनाम् ॥२७॥ यागभंगोमहेंद्रस्यधृतिर्गोवर्धनस्यच ॥ सुरेन्द्रगर्वहरणंगर्गजातकवर्णनम् ॥२८॥ गोपशंकापगमनमिंद्रधेन्वाभियाचितम् ॥ नंदस्यमोक्षणंगोपवैकुंठगमनंततः ॥ २९ ॥

फिर कालीदहके जलको पीकर मरे हुये गोप और गौओंको जिलाना, फिर कालीके दमन करनेमें नाग पत्नियोंकी स्तुति और उनका विलाप करना ॥२४॥ फिर कालीके यमुनामें रहनेका कारण कहना, फिर अग्निमेंसे सबको छुड़ाना, और क्रीडा (खेल) में प्रलम्बासुरको मारना, मुंजारण्यमें दावानलको पीकर गौ और गोपोंको जिलाना ॥ २५ ॥ फिर वर्षा ऋतु और शरद ऋतुका वर्णन, फिर गोपियोंके वचनामृतका निरूपण, फिर गोकुलकी कन्याओंका कात्यायनीका अर्चन व्रत और उनके वस्त्र चुराना ॥ २६ ॥ फिर वृन्दावनका सौभाग्य वर्णन फिर गोपोंको भोजन मांगनेके लिये भेजना और गोपोंका मांगना, यज्ञ पत्नियोंके ऊपर अनुग्रह करना, और मथुराके ब्राह्मणोंका पश्चाताप करना ॥२७॥ इन्द्रके यज्ञके मंत्र करके गोवर्द्धनके यज्ञको प्रवृत्त करना, फिर इन्द्रका कोप और गोवर्द्धनका धारण, इंद्रके गर्वका खण्डन और गोपोंके सामने गर्गके कहे हुये वचनोंका निरूपण करना ॥२८॥ उससे गोपोंकी शंकाको दूर करना, इंद्र और सुरभिका स्तुति करना, फिर नंद राजको वरुण लोकमेंसे छुडाकर लाना, फिर गोपोंको वैकुण्ठका दर्शन कराना ॥ २९ ॥

फिर पञ्चाध्यायीसे रासलीलाका करना, और नन्दको सदर्शन सुर्पसे छुड़ाना, फिर शंखचूडको मारना, गोपियोंके युगलगीतका वर्णन और वृषासुरका वध करना ॥ ३० ॥ फिर नारदजीका कंसके पास जाना और उनका संवाद, फिर कंसकी और अक्रूरकी बातचीत, फिर श्रीकृष्णसे केशीका वध होना फिर नारद ऋषिका श्रीकृष्णसे वार्तालाप करना ॥ ३१ ॥ उसके बाद व्योमासुरका वध फिर अक्रूरका वृन्दावनमें जाना, फिर नन्दकी और अक्रूरकी बातचीत और आनन्दसे रोमांचित होकर गद्गद होना, ॥ ३२ ॥ फिर अक्रूरका कृष्ण बलरामसे संवाद और कंसके व्यापारको कहना फिर रामकृष्णका प्रयाण और गोपियोंका विलाप ये, जब वर्णन किया ॥ ३३ ॥ फिर कृष्णका मथुरामें आना, मार्गमें यमुनाह्रदमें अक्रूरको कृष्णका दर्शन होना और अक्रूरकी स्तुति करना, फिर मथुरामें प्रवेश और मथुराकी सम्पत्तिका वर्णन ॥ ३४ ॥ फिर धोबीके शिरका छेदन और वायक (दरजी) को वर प्रदान तथा सुदामा मालीको वर प्रदान फिर कुब्जाको कृष्णका दर्शन ॥ ३५ ॥ फिर रंगभूमिमें धनुष तोडना, और कंसकी सेनाको मारना, कंसको अपशकुन दीखना, फिर रंगभूमिके उत्सवका वर्णन, फिर युद्धमें कुवलयापीडको मारना

पंचाध्यायनिशाक्रीडासर्पान्नंदस्यमोक्षणम् ॥ शंखचूडवधःपश्चाद्गोपीगीतंवृषार्दनम् ॥ ३० ॥ कंसनारदसंवादःकंसक्रूरकथाततः ॥ केशिनोनिधनं कृष्णान्नारदर्षिकथाततः ॥ ३१ ॥ व्योमासुरवधोक्रूरागमनंगोकुलेषुच ॥ दर्शनानंदहृष्टात्मारोमांचोगद्गदागिरः ॥ ३२ ॥ संवादोरामकृष्णाभ्यांवर्णितंकंसचेष्टितम् ॥ रामकृष्णप्रयाणंचतथागोपीप्रलापनम् ॥ ३३ ॥ मथुरागमनंमध्येह्रदेकृष्णस्यदर्शनम् ॥ स्तुति-पुरागतिःपश्चाद्दर्शनंपुरसंपदः ॥ ३४ ॥ रजकस्यशिरश्छेदोवायकस्यवरादयः ॥ सुदाम्नोवरदानंचकुब्जासंदर्शनंहरेः ॥ ३५ ॥ धनुर्भंगःसैन्यवधःकंसदुर्हेतुदर्शनम् ॥ रंगोत्सवःकुवलयापीडयुद्धविघातनम् ॥ ३६ ॥ दर्शनंरामकृष्णस्यपौराणांप्रेमवर्धनम् ॥ मल्लानांनिधनंरङ्गेकंसस्यसहबंधुभिः ॥ ३७ ॥ पित्रोश्चसांत्वनंसर्वसुहृदांचैवतोषणम् ॥ उग्रसेनाभिषेकंचनंदादिव्रजप्रेषणम् ॥ ३८ ॥ ईषद्विजातिसंस्कारंपठनंचगुरोर्गृहे ॥ मृतपुत्रप्रदानंच गुरोःपञ्चजनार्दनम् ॥ ३९ ॥ पुनरागमनंशौरेर्मधुपुर्यांमहोत्सवः ॥ उद्धवप्रेषणंगोपीविलापपरिसांत्वनम् ॥ ४० ॥ मेलनार्थंतुकृष्णस्यागमनंनंदगोकुले ॥ पुनर्वैकोलदैत्यस्यवधःपश्चात्प्रकीर्तितः ॥ ४१ ॥ कुब्जारतिस्तथाक्रूरप्रेषणंगजसाह्वये ॥ पांडवेषुचवैषम्यंधृतराष्ट्रस्यबोधनम् ॥ ४२ ॥

इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधचरित्रसुमेरौकृष्णलीलावर्णनंनामद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

॥ ३६ ॥ नगरवासियोंको कृष्णका दर्शन, उसके स्नेहका वर्णन, चाणूरादिक मल्लोंको मारना, और भाईयोंसहित कंसको मारना ॥ ३७ ॥ फिर देवकी वसुदेवको सान्त्वन और सब सुहृदों को सन्तुष्ट करना, फिर उग्रसेनका राज्याभिषेक और नन्दादिकोंको विदा करके व्रजमें भेजना ॥ ३८ ॥ कुछ द्विजाति संस्कार करना, फिर संदीपन गुरुके पास पढना, फिर पञ्चजनको मारकर गुरुके मृत पुत्रको लाकर भेंट करना ॥ ३९ ॥ फिर श्रीकृष्णका मथुरामें आना, और मथुरामें उत्सव होना, फिर उद्धवको नन्द ग्राममें भेजना, और गोपियोंका विलाप और उद्धवका उनको सान्त्वन ॥ ४० ॥ फिर मिलनेके लिये नन्द गोकुलमें कृष्णका आना, फिर कोल दैत्यका वध करना ॥ ४१ ॥ फिर कुब्जासे रमण, फिर अक्रूरको हस्तिनापुर भेजना, वहाँ धृतराष्ट्रको पाण्डवोंमें वैषम्य युक्त देखकर उनको अक्रूरका समझाना ॥ ४२ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधचरित्र सुमेरौ भाषाटीकायां कृष्णलीलावर्णनं नामद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

गर्गमुनि कहते हैं कि,फिर जमाता (जामाई) कंसके मरनेसे दुखी हुये जरासंधकी सेनाका वध निरूपण किया,उसके बाद जब अनेक बार युद्ध हुआ, तब द्वारकापुरी दुर्ग बनाया, वह भी कहा॥१॥फिर कालयवनको देखकर मुचुकुन्दकी स्तुति, फिर मुचुकुन्दको वर देकर कालयवनको मारकर जब उसके धनको लेकर चले ॥२॥ तब वनमें आये गर्वीले जरासंधके सामनेसे दोनों भाईयोंका भागकर द्वारकामें जाना, फिर रैवतका अपनी कन्या रेवतीको बलदेवजीको समर्पण करना ॥३॥ फिर रुक्मिणीके प्रिय संदेशको सुनकर अखिल राजाओंको जीतकर देवीके मठ परसे श्रीकृष्ण चन्द्रने रुक्मिणी हर लिया ॥४॥ फिर राजाओंका शिशुपालको समझाना, फिर रुक्मी, फिर और कृष्णका युद्ध, फिर कृष्णका रुक्मीका मुंडन करके विरूप करना॥५॥फिर बलदेवजीके वाक्योंसे रुक्मिणीको समझाकर दुख दूरकर रुक्मीको छुडाना, फिर द्वारकामें आकर विधिपूर्वक रुक्मिणीका विवाह ॥६॥ फिर प्रद्युम्नकी उत्पत्तिका कथन, फिर सूतिका घरसे प्रद्युम्नका हरण फिर मायावतीका कहा वृत्तान्त और शम्बरासुरका वध निरूपण ॥७॥ फिर मायावती सहित प्रद्युम्नका द्वारकामें आना और पुरवासियोंका

॥ गर्गउवाच ॥ जामातृवधसंतप्तजरासंधचमूवधः ॥ बहुशःसेनयोर्युद्धेद्वारकादुर्गकारणम् ॥ १ ॥ यवनस्यवधंदृष्ट्वामुचुकुंदस्यसंस्तुतिः ॥ वरंदत्त्वाततोम्लेच्छवधंकृत्वाधनेततः ॥ २ ॥ नीयमानेवनेदृप्तजरासंधात्पलायनम् ॥ रैवतोरेवतींकन्यांबलदेवसमर्पणम् ॥३॥ रुक्मिणीप्रियसंदेशश्रवणादखिलान्नृपान् ॥ निर्जित्यनिर्गमोगेहात् हृतवानंबिकागृहात् ॥४॥ नृपैःसांत्वनंचैद्यस्यततोरुक्मीसमागमः ॥ युद्धापेक्षापराधाद्वैमुंडनंतस्यकृष्णतः ॥ ५ ॥ रुक्मिणीदुःखशमनंरामवाक्याच्चमोक्षणम् ॥ ततोविवाहोरुक्मिण्याविधिवत्स्वपुरेमुदा ॥६॥ प्रद्युम्नोत्पत्तिकथनंहरणंसूतिकागृहात् ॥ मायावत्योक्तवृत्तांतंशंबरस्यवधस्ततः ॥७॥ पुनरागमनंगेहेसंतोषोद्वारकौकसाम् ॥ सूर्यात्स्यमंतकप्राप्तिर्याचनंतस्यवैहरेः ॥८॥ तत्संबन्धात्प्रसेनस्यवधःकीर्तिर्हरेस्तथा ॥ तन्मार्जनाच्चऋक्षस्यगृहेषुगमनंतयोः ॥ ९ ॥ युद्धंज्ञात्वालोकनाथंजांबवत्यासमर्पणम्॥ सत्राजितायचमणिःप्राप्ताश्रीहरिणाबिलात् ॥ १० ॥ विवाहःसत्यभामायाःपारिबर्हंतथामणिः ॥ रामेणसहकृष्णस्यगमनंहस्तिनापुरे ॥११॥ अक्रूरकृतवर्मभ्यांशतधन्वातुप्रेरितः ॥ सत्राजितंजघानाशुसोपिकृष्णेनमारितः ॥१२॥ रामस्तुमिथिलायांचगदाशिक्षासुयोधने ॥ अक्रूरेमणिदानंचशक्रप्रस्थेहरिर्गतः ॥ १३ ॥ कालिन्द्यासंगतिःशौरेर्विवाहःस्वपुरेततः ॥ विवाहोमित्रविन्दायाःसत्यायाश्चतथैवच ॥ १४ ॥

आनन्द,फिर सत्राजित्को सूर्यसे स्यमंतक मणिका मिलना, और उस मणिको कृष्णका मांगना ॥८॥ उस मणिके प्रसंगसे प्रसेनको मारना और कृष्णकी अकीर्ति, उसको दूर करनेके लिये जाम्बवान्के घरमें जाना ॥९॥ युद्धमें जाम्बवान्का कृष्णको जानकर जाम्बवतीको समर्पण करना, फिर बिलमेंसे मणि लाकर सत्राजित्को मणि देना ॥१०॥ फिर सत्यभामाका विवाह और दहेजमें उस मणिको कृष्णके लिये देना,फिर बलदेवजी सहित श्रीकृष्णका हस्तिनापुरमें गमन॥११॥तब अक्रूर और कृतवर्माके कहनेसे शतधन्वाके हाथसे सत्राजित्का वध और इसी पापसे कृष्णने शतधन्वाको मार दिया,यह सब निरूपण किया है॥१२॥फिर बलदेवजीका मिथिलागमन,और दुर्योधनको गदायुद्ध सिखाना, फिर भगवान्का अक्रूरकोही मणि देकर इन्द्रप्रस्थको जाना ॥ १३ ॥ और वहाँ श्रीकृष्णका और कालिन्दीका समागम और द्वारकामें जाकर कालिन्दीका विवाह, फिर मित्र विन्दा तथा सत्यभामाका विवाह ॥१४॥

फिर भद्राका और लक्ष्मणाका कृष्णके संग विवाह, फिर इन्द्रको जीतकर पारिजातका हरण कर सत्यभामाके घरमें लगाना॥१५॥ वज्रनाभने पूछा कि, इन्द्रको जीतकर सत्य भामा जीको कल्पवृक्ष भगवान्‌ने क्यों दिया, हे मुने ! यह सब मुझको विस्तारपूर्वक कहिये ॥१६॥ गर्गजी बोले कि, एक दिन नारदजीने एक पारिजातका फूल श्रीकृष्णको दिया, वह फूल श्रीकृष्णने रुक्मिणीजीको दे दिया, तब सत्यभामा दुःखी हुई ॥१७॥ तब सत्यभामाको कुपित होकर कोपागारमें गई देखकर भगवान्‌ने कहा कि तुम शोच मत करो, मैं तुम्हारे घर में पारिजातका वृक्ष लाकर लगा दूँगा ॥१८॥ श्रीगर्गमुनि बोले कि तभी इन्द्रने आकर भगवान्‌से भौमासुरका सब वृत्तान्त कहा, तब भगवान्‌ने सुनकर हाथ जोडकर खडे हुये इन्द्र से यह कहा कि वृत्रसूदन ! ॥१९॥ पारिजातके वृक्षके लिये रुदन करती हुई दुःखयुक्ता मेरी प्रियाको तुम देखो, कहो मैं क्या करूँ, हे इन्द्र ! जब इनके लिये तुम कल्पवृक्ष दोगे

भद्रायालक्ष्मणायाश्चविवाहोहरिणाततः ॥ पारिजातंतुसत्यायैशक्रंजित्वाददौहरिः ॥ १५ ॥ वज्रनाभिरुवाच ॥ प्रियायैदत्तवान्कस्मा-च्छक्रंजित्वासुरद्रुमम् ॥ श्रीकृष्णस्तत्कथांसर्वांमुनेमेब्रूहिविस्तरात् ॥ १६ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ पारिजातैककुसुमेचानीतेनारदात्कदा ॥ दत्तेसतिश्रीरुक्मिण्यैसत्यातुदुःखिताभवत् ॥ १७ ॥ तांदृष्ट्वाकुपितांप्राहकोपागारगतांहरिः ॥ माशोचंकुरुदास्यामिपारिजातद्रुमंचते ॥१८॥ ॥ गर्गउवाच ॥ तदैवकथितंसर्वंकृष्णाग्रेभौमचेष्टितम् ॥ शक्रेणश्रुत्वाभगवान्प्राहपश्यन्कृतांजलिम् ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ मत्प्रियांदुः-खितांपश्यरुदन्तींवृत्रसूदनः ॥ १९ पारिजातस्यवृक्षार्थेकिंकरिष्याम्यहंवद ॥ यदास्यैपारिजातस्यवृक्षंदास्यसित्वंहरे ॥ २० ॥ तदाभौमंससे न्यंचहनिष्यामिनसंशयः ॥ कृष्णभाषितमाकर्ण्यप्रहसन्प्राहवासवः ॥ २१ ॥ इन्द्रउवाच ॥ पारिजातद्रुमाःसर्वेवर्ततेनन्दनेचये ॥ गृहाण तान्स्वतःकृष्णस्त्वंहत्वानरकासुरम् ॥ २२ ॥ तथास्तुचोक्त्वाभगवान्सत्यभामासमन्वितः ॥ गरुडस्कंधमारूढःप्राग्ज्योतिषपुरंययौ ॥२३ ॥ सत्यभामाहरिंप्राहस्वर्गमिंद्रेगतेसति ॥ सत्योवाच ॥ पूर्वंगृहाणशक्रात्त्वंद्रुमराजंजगत्पते ॥ २४ ॥ कार्येभूतेसतिहरेनकरिस्यतित्व-त्प्रियम् ॥ प्रियावाक्यंसमाकर्ण्यप्रियः प्राहप्रियांवचः ॥ २५ ॥

॥२०॥ तब मैं सेना सहित भौमासुरको निःसंदेह मारूँगा, इस प्रकार श्रीकृष्णके कथनको सुनकर हँसता हुआ इन्द्र बोला ! ॥२१॥ कि हे महाराज ! मेरे नन्दन नामके बगीचेमें जितने कल्पवृक्ष हैं, उनको सबको आप भौमासुरको मारकर ले लीजिये ॥२२॥ तब भगवान्‌ने कहा कि बहुत ठीक है, फिर सत्यभामा सहित गरुडपर सवार होकर भगवान् श्री कृष्णचन्द्र प्राग्ज्योति नामके नगरमें जिसमें भौमासुर रहता था, वहाँ गये ॥२३॥ तब सत्यभामाने इन्द्रको स्वर्गमें गया देखकर भगवान्‌से कहा कि, हे प्रभो ! हे जगत्पते ! आप इन्द्रसे पहिले कल्पवृक्ष ले लीजिये, बादमें यह अपना काम हो जानेपर नहीं देगा, सत्यभामा प्रियाका वचन सुनकर श्रीकृष्णचन्द्र सत्यभामाजीसे यह वचन बोले ॥२४॥२५॥

श्रीकृष्ण बोले कि, यदि देवराज इन्द्र मेरे मांगनेपर कल्पवृक्षको नहीं देगा, तो मैं शचीके स्तनोंके चन्दनसे लिप्त इन्द्रकी छातीमें अपना गदा मारूँगा ॥ २६ ॥ इतनी बात कहकर भगवान् भौमासुरके पुरको गये, जो नगर, अग्नि, जल, वायु, और शस्त्रोंके बने पृथक् २ सात किलोंसे और चारों तरफ अनेक बडे बडे प्रतापी असुरोंसे रक्षित थी ॥२७॥ भगवान्ने जाकर अपने चक्र, गदा और बाणोंसे सब किले तोड डाले, और मुर नामके दैत्यको और अनेक प्रकारके शस्त्र लिये उसके पुत्रोंको भगवान्ने मार दिया, ॥ २८ ॥ फिर अस्त्र शस्त्रोंकी वर्षा करते हुये सेना सहित नरकासुरके चक्रसे दो टुकडे कर दिये, इतनेमें गरुडने उसकी सब सेना मार डाली ॥२९॥ ऐसे यदुनाथने भौमासुरको मारकर उत्तम २ रत्न सब ग्रहण कर लिये, और उसके घरमें गये तो, वहाँ कन्याओंको देखा ॥ ३०॥ तब उन दैत्य, सिद्ध, राजा आदिकोंकी सोलह हजार एक सौ कन्याओंको द्वारकामें भेज दिया

॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ सपारिजातंयदिनप्रदास्यतिप्रयाच्यमानस्तुमयामरेश्वरः ॥ ततःशचीव्यामुदितानुलेपनेगदांविमोक्ष्यामिपुरंदरोरसि ॥ २६ ॥ इत्युक्त्वाभगवान्कृष्णोभौमासुरपुरंगतः ॥ नानादुर्गैःसप्तभिश्चवेष्टितंचमहासुरैः ॥ २७ ॥ सर्वान्बिभेददुर्गान्वैगदाचक्रशरादिभिः॥ जघानमुरुदैत्यंचतत्पुत्रान्शस्त्रसंयुतान् ॥२८॥ शस्त्रास्त्रवर्षंमुंचंतंससैन्यंनरकंहरिः॥ क्षिप्त्वाचक्रंद्विधाचक्रेगरुडेनजघानच ॥ २९ ॥ हत्वाभौमञ्जगन्नाथोवररत्नानियादवः ॥ जग्राहतत्रकन्यानांसमूहंवैददर्शह ॥३०॥ दैत्यसिद्धनृपाणांचसहस्राणिचषोडश ॥ शताधिकानिकन्याश्चप्रेषयामासस्वांपुरीम् ॥ ३१ ॥ गृहीत्वाथमणिंछत्रंदेवमातुश्चकुण्डले ॥ पारिजातद्रुमार्थेवैययाविंद्रपुरींहरिः ॥३२॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधचरित्रसुमेरौकृष्णकथावर्णनंनामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ गर्गउवाच ॥ गत्वास्वर्गंतुशक्रायदत्त्वाछत्रंमणिंतथा ॥ अदित्यैकुण्डलेकृष्णोदत्त्वाभिप्रायमब्रवीत् ॥ १ ॥ अभिप्रायंहरेर्ज्ञात्वावासवोनददौद्रुमम् ॥ देवाञ्जित्वातदापारिजातंजग्राहमाधवः ॥ २ ॥ सूतउवाच ॥ इतिश्रुत्वाकथांराजायादवोविस्मयान्वितः ॥ पप्रच्छस्वगुरुंभूयःश्रद्दधानोहरेर्गुणे ॥ ३ ॥ ब्रह्मन्शक्रस्तु देवेंद्रोजानन्कृष्णंहरिंपरम् ॥ अपराधंतुकृतवान्सकथंब्रूहितत्त्वतः ॥ ४ ॥

॥ ३१ ॥ फिर इन्द्रके छत्र, मणि, और देवमाता अदितिके कुण्डलोंको लेकर फिर कल्पवृक्षको लेनेके लिये भगवान् कृष्ण इन्द्रकी पुरीको गये ॥३२॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधचरित्रसुमेरौ भाषाटीकायां कृष्णकथा वर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥ गर्ग मुनि बोले कि, ऐसे श्रीकृष्ण स्वर्गमें जाकर छत्र, मणि इन्द्रको देकर और अदितिके लिये कुण्डल देकर फिर इन्द्रसे अपना अभिप्राय कहा ॥१॥ तब कृष्णके अभिप्रायको जानकर इन्द्रने पारिजातका वृक्ष कृष्णको नहीं दिया, तब सब देवताओंको जीतकर श्रीकृष्ण कल्पवृक्षको उखाडकर द्वारकामें ले आये ॥२॥ सूतजी बोले कि, हे शौनकजी ! यादव वज्रनाभ इस कथाको सुनकर बडे विस्मित हुये, और कृष्णचरित्र सुननेमें श्रद्धालु होकर अपने गुरुजीसे प्रश्न किया॥३॥वज्रनाभजी बोले कि, हे ब्रह्मन् ! देवराजको इन्द्र तो श्रीकृष्णको परमेश्वर जानता था,फिर जानबूझकर उसने कृष्णका अपराध कैसे किया सो मुझको कहिये ॥ ४ ॥

कृष्णके सामने तो पहिलेही सत्यभामाजी इंद्रके उद्योगको कह चुकी थी, इससे इंद्रके और श्रीकृष्णके युद्धको विस्तार पूर्वक मेरे सामने कहिये ॥ ५ ॥ तब गर्गमुनि बोले कि, अदितिने कृष्णकी स्तुति की, और इंद्रने जब कहा, तब आप नंदन वनमें आगये, वहाँ आपने बहुतसे कल्पवृक्ष देखे ॥६॥ उनके बीचमें एक मञ्जरियोंके पुंजको धारण करनेवाला, क्षीर समुद्रके मंथनमें से उत्पन्न हुआ, कमलके जैसी गंधसे युक्त वृक्ष देखा॥७॥ देवताओंको सुख देनेवाला, लाल लाल पत्रोंवाले, नन्दन वनके भूषण, सुवर्णके छालवाले॥८॥ उस वृक्षको देखकर सत्यभामाजी श्रीकृष्णसे बोली कि, हे प्राणनाथ ! समस्त वनके भूषण इस वृक्षको मैं लूँगी ॥९॥ जब प्रियाने ऐसे कहा, तब भगवान्‌ने हँसकर वह वृक्ष उखाडकर गरुड पर रख लिया, और भगवान् आप हँसने लगे ॥१०॥ उसी समय सब बागके रखवाले कुपित होकर उठे, ओंठ (होठ) जिनके फड़कने लगे, धनुष बाणोंको लिये वे श्रीकृष्णसे बोले ॥११॥

कृष्णाग्रेकथितंसत्यभामयाशक्रचेष्टितम् ॥ तस्मान्मेविस्तराद्युद्धमिन्द्रमाधवयोर्वद ॥ ५ ॥ गर्गउवाच ॥ अदित्यासंस्तुतःकृष्णोशक्रवाक्याच्चनन्दनम् ॥ वनंगत्वापारिजातान्सददर्शबहून्द्रुमान् ॥६॥ तेषांमध्येमहावृक्षंमंजरीपुञ्जधारिणम् ॥ क्षीरोदमथनाज्जातंपद्मगंधसमन्वितम् ॥ ७ ॥ सुराणांसुखदंताम्रपल्लवैःपरिवेष्टितम् ॥ वनेविभूषणंदिव्यंवरंस्वर्णसमत्वचम् ॥८॥ तंदृष्ट्वामाधवंप्राहसत्यभामाचमानिनी ॥ एनंगृह्णाम्यहंकृष्णश्रेष्ठंसर्ववनेद्रुमम् ॥ ९ ॥ इत्युक्तःप्रिययोत्पाट्यपारिजातंगरुत्मति ॥ लीलयारोपयामासप्रहसञ्जगदीश्वरः ॥ १० ॥ तदैवकुपिताःसर्वेवनपालाःसमुत्थिताः ॥ धनुर्बाणधराःकृष्णमूचुःप्रस्फुरिताधराः॥११॥ इन्द्रप्रियायावृक्षश्चह्रतः कस्मात्त्वयानर॥ यदृच्छयाकिलास्माकंतृणीकृत्यक्वयास्यसि ॥ १२ ॥ इन्द्राणीप्रीतयेदेवैःपुराह्युदधिमंथने ॥ उत्पादितोयंनक्षेमीगृहीत्वेनंभविष्यसि ॥ १३ ॥ गिरीणांयेनसर्वेषांपक्षःपूर्वंनिपातितः ॥ तंकिंवृत्रहणंवीरंजित्वावृक्षंनयिष्यसि ॥१४॥ तस्माद्गच्छमहावीरपारिजातंविहायच ॥ नह्यस्यामोदुमंतुभ्यंशक्रस्यानुचरावयम् ॥ १५ ॥ यदादास्यतितुभ्यंवैपारिजातंपुरंदरः ॥ ननिषेधंकरिष्यामोवनपालावयंतदा ॥ १६ ॥ तेषांभाषितमाकर्ण्यसत्यभामारुषान्विता ॥ तूष्णींभूतेसतिहरावभीताप्राहतान्नृप ॥ १७ ॥

अरे मनुष्य ! तुमने यह इंद्रकी पत्नीका वृक्ष, कैसे चुराया है, अब तुम बताओ, अपनी इच्छासे बिना पूछे इस वृक्षको उखाडकर कहाँ जाओगे ? तुमने हमको कुछ नहीं समझा, एक तिनके बराबर समझा है ॥१२॥ देखो, यह वृक्ष इन्द्राणीकी प्रीतिके लिये पहले समुद्र मंथनके समय देवताओंने समुद्रमेंसे निकाला है, सो तुम इसको लेकर कुशल पूर्वक नहीं जा सकोगे ॥१३॥ जिस इंद्रने सब पर्वतोंके पंख पहिलेसे काटे हैं उस वृत्रासुरके मारनेवाले वीरको जीतकर तुम वृक्षको कहाँ ले जाओगे ॥१४॥ इससे महावीर ! पारिजातको छोडकर तुम चले जाओ, हम इंद्रके अनुचर हैं, इस पारिजातको तुमको हम नहीं देंगे ॥ १५ ॥ और जब तुमको इंद्र पारिजात वृक्ष देगा, तब इस वनके रखवाले हम तुमको निषेध नहीं करेंगे ॥ १६ ॥ उनके कथनको सुनकर कुपित हुई सत्यभामा कृष्ण भगवान्‌को चुप हुआ देखकर उन वनके रखवालोंसे यह बोलीं ॥ १७ ॥

सत्यभामाजी बोलीकि, अरे ! इस पारिजातकी शची कौन है,और इन्द्र कौन है ? क्योंकि यह पारिजात समुद्रमेंसे उत्पन्न हुआ है, यह तो सबके लिये सामान्य है॥ १८॥ फिर इसको लेनेका अकेले इन्द्रको क्या अधिकार है ? जैसे अमृत, चन्द्रमा, और लक्ष्मी सबकी है॥ १९॥ऐसेही यह पारिजात वृक्षभी सबका है, जो कोई अपना बताता है, वही मूर्ख है, केवल अपने पतिके बाहुबलके गर्वसे शची इस वृक्षको रोकती है, वह झूंठी है ॥२०॥ इसलिये तुम क्षमा मत करो, सत्यभामा इस वृक्षको लिये जारही है, इसके विषयमें इसी समय शचीसे जाकर मेरे कहे हुये वचन कह दो ॥ २१ ॥ कि ऐसे गर्वके भरे वचन सत्यभामा कह रही है, कि यदि तू पतिको प्यारी है, और यदि तेरा पति तेरे वशमें है तो ॥ २२ ॥ मेरा पति तेरे वृक्षको उखाडकर लिये जाता है, यदि तुमसे रुकवाया जाय, तो अपने पतिसे रुकवालो मैं तुमको और तुम्हारे पतिको अच्छी तरह जानती हूँ, तोभी देख, मनुष्य जाति होकर इस तेरे

॥ सत्योवाच ॥ काशचीपारिजातस्यकःशक्रोवासुरेश्वरः ॥ सामान्यःसर्वलोकानांयदीशोमृतमंथने ॥ १८ ॥ समुत्पन्नःसुरःकस्मा-
देकोगृह्णातिवासवः ॥ यथासुधायथैवेंदुर्यथाश्रीर्वनचारिणः ॥१९॥ सामान्यःसर्वलोकस्यपारिजातस्तथाद्रुमः॥भर्तृबाहुमहागर्वाद्रुणद्ध्येनंमृ-
षाशची ॥ २० ॥ तत्कथ्यतामलंक्षान्त्यासत्याहारमतिद्रुमम् ॥ कथ्यतांचद्रुतंगत्वापौलोम्यांवचनंमम॥२१॥ सत्यभामावदत्येतदतिगर्वोद्ध-
ताक्षरम् ॥ यदित्वंदयिताभर्तुर्यदिवश्यःपतिस्तव॥२२॥मद्भर्तुर्हरतोवृक्षंतत्कारयनिवारणम् ॥ जानामितेपतिंशक्रंशुष्माञानामितत्त्वतः॥२३॥
पारिजातंतथाप्येनंमानुषीहरयामिते ॥ गर्गउवाच ॥ कृष्णप्रियायावचनंवनपालानिशम्यच ॥ २४ ॥ इन्द्राणीनिकटंगत्वाप्रोचुःसर्वंयथो-
दितम् ॥ रक्षकाणांवचःश्रुत्वाशचीप्राहरुषान्विता ॥ २५ ॥ कृष्णंनिवारणार्थायनयास्यंतंपुरंदरम् ॥ शच्युवाच ॥ मदीयंपारिजातंवै
माधवेनबलीयसा ॥२६॥ गृहीतंस्वप्रियार्थेवैत्वांतृणीकृत्यवज्रिणम् ॥ तस्मान्मोचयवृक्षेशंपाकसूदनवृत्रहन् ॥२७॥ सत्यभामावशंकृष्णंविनिर्जि
त्यमहारणे॥त्वयावैपूर्वमद्रीणांपक्षावज्रेणनाशिताः॥२८॥भयंविसृज्ययुद्धायगच्छतस्मात्सुरैर्वृतः॥इतिश्रुत्वाशचीवाक्यंशक्रोनमुचिसूदनः॥२९।

पारिजातको लिवाकर लिये जाती हूँ, गर्गजी कहते हैं, कि ऐसे कृष्ण प्रियाके वचन सुनकर वे रखवाले ॥ २३ ॥ २४ ॥ उसी समय इन्द्राणीके पास गये और जो सत्यभामाने कहा था, वह सब जाकर इन्द्राणीके सामने कह दिया, तब बागके रक्षकोंकी कही बातको सुनकर कुपित होकर इन्द्राणी बोली ॥२५॥ जो कृष्णको रोकनेके लिये नहीं जा रहा था, उस इन्द्रसे जाकर यह बोली कि, ! हे स्वामिन् ! मेरे पारिजातको बलवान् कृष्णने ॥२६॥ अपनी प्रियाके लिये तुमको एक तिनकेकी बराबर समझकर लेलिया है, सो हे पाक सूदन ! हे वृत्रहन् ! आज उनसे मेरे वृक्षको बचाओ ॥२७॥ सत्यभामाके वशमें हुये कृष्णको जीतकर वृक्षको रोको, आपने तो पहिले अपने वज्रसे पर्वतोंके पंख काटे हैं ॥२८॥ जल्दी भयको छोडकर देवताओंको साथ लेकर युद्धके लिये जाओ ॥ नमुचिको मारनेवाले इन्द्रने शचीके वाक्यको सुनकर ॥ २९ ॥

भयभीत हो, कृष्णसे युद्ध करनेका मन नहीं किया, तब कुपित होकर इन्द्राणीने इन्द्रको बहुतही प्रेरित किया ॥३०॥ तब क्रोधसे मदमें आकर कृष्णकी निन्दा करता हुआ इन्द्र यह बोला कि, हे सुन्दरानने ! जिसने तुम्हारा पारिजात लिया है ॥३१॥ उसको आज मैं शतपर्व वाले वज्रसे गिराऊँगा, इतना कहकर हे राजन् ! इन्द्र ऐरावत हाथी पर बैठकर ॥३२॥ जो हाथी तीन शुण्डादण्डोंसे युक्त है, और लाल रंगके कम्बल (झूल) से शोभित है, और चार दाँतोंसे मंडित है, और जो कैलास पर्वतके समान दीखता है ॥ ३३ ॥ सुवर्णकी सांकल जिसके पाँवोंमें पडी है, उस हाथीपर बैठकर देवताओंसे घिरा हुआ इन्द्र अति शोभित हुआ, वैसेही सब मरुद्गण, यम, अग्नि, और वरुण आदिक ॥३४॥ देवता और ग्यारह रुद्र, बारह सूर्य, आठ वसु, कुबेर, आदिक गन्धर्व, विद्याधर, साध्यगण, पितृगणादिक ॥३५॥ तेंतीस करोड इन्द्रके अनुचर देवता सब अति क्रोधित होकर श्रीकृष्णके सामने युद्ध

नचकारतुयुद्धायमनोभयसमन्वितः ॥ ततश्चबहुशःपत्न्याप्रेरितःकोपयुक्तया ॥ ३० ॥ तदाकोपेनश्रीकृष्णंनिन्दन्प्राहमदान्वितः ॥ इन्द्र उवाच ॥ येनतेपारिजातंवैगृहीतंसुन्दरानने ॥ ३१ ॥ मृधेतंपातयिष्यामिवज्रेणशतपर्वणा ॥ इत्युक्त्वावासवोराजन्नारुह्यैरावतंगजम् ॥३२॥ शुण्डादंडैस्त्रिभिर्युक्तंरक्तकंबलमंडितम् ॥ चतुर्भिःशोभितंदन्तैर्हिमाद्रिसदृशंशुभम् ॥ ३३ ॥ स्वर्णशृंखलयाजुष्टंशुशुभेनिर्जरैर्वृतः ॥ तथामरुद्गणाःसर्वेयमाग्निवरुणादयः ॥३४॥ रुद्राश्चद्वादशात्मानोवसवोधनदादयः ॥ विद्याधराश्च गंधर्वाःसाध्याःपितृगणादयः ॥ ३५ ॥ त्रयस्त्रिंशत्कोटिसंख्याःशक्रस्यानुचराःसुराः ॥ एतेसमागताः क्रुद्धायोद्धुंश्रीकृष्णसंमुखे॥३६॥ आहूताःकेपिशक्रेणसहायार्थंतुस्वात्मनः ॥ तथातुनारदेनापिकेचिद्देवास्तुप्रेषिताः ॥ ३७ ॥ ततःपरिघनिस्त्रिंशगदाशूलपरश्वधैः ॥ बभूवुस्त्रिदशाःसज्जाःशक्रेवज्रकरेस्थिते ॥३८॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधचरित्रसुमेरौपारिजातहरणंनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ गर्गउवाच ॥ अथदृष्ट्वाकृष्णचन्द्रोगजेन्द्रोपरिशोभितम् ॥ इंद्रं देवपरीवारंयुद्धायसमुपस्थितम् ॥ १ ॥ शंखंदध्मौस्वयंकृष्णोशब्देनापूरयन्दिशः ॥ मुमोचचशरव्रातंसहस्रायुधसंमितम् ॥ २ ॥ ततोदिशश्च गगनंदृष्ट्वाबाणशतान्विम् ॥ मुमुचुर्विबुधाःसर्वेशरांश्चक्रायुधोपरि ॥ ३ ॥ एकैकमस्त्रंशस्त्रंचसुरैर्मुक्तंसहस्रधा ॥ स्वबाणैर्भगवान्कृष्णश्चिच्छेदनृपलीलया ॥ ४ ॥

करनेके लिय आये ॥३६॥ और कितनेही इन्द्रके बुलाये हुये, और कितनेही नारदजीके भेजे हुये देवता ॥ ३७ ॥ परिघ, निस्त्रिंश, गदा, त्रिशूल, परश्वध, फरसा, आदि शस्त्रोंको हाथोंमें लेकर सब देवता सावधान होकर युद्ध करनेक लिय आये, और वज्रको हाथमें लेकर इन्द्र खडा हुआ ॥३८॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधचरित्रसुमेरौ भाषाटीकायां पारिजात हरणं नामचतुर्थोऽध्याय ॥४॥ गर्गजी बोले कि, उसके बाद श्रीकृष्णचन्द्रने गजराजके ऊपर बैठे इन्द्रको और युद्धके लिये तैयार इन्द्रके परिवारको देखा॥१॥तब आप श्रीकृष्णजीने शब्दसे दिशाओंको पूर्ण करते हुये पाञ्चजन्यका शब्द किया, और वज्रके समान बाणोंका समूह चलाया ॥२॥ उसके बाद दिशाओं और आकाशको हजारों बाणोंसे व्याप्त देखकर सब देवताओंने चक्रायुध श्रीकृष्णके ऊपर हजारों बाण फेंके ॥३॥ हे नृप ! तब भगवान् श्रीकृष्णने देवताओंके चलाये हुये शस्त्रास्त्रोंको अनायासही अपने बाणोंसे छेदनकर दिया ॥४॥

और उस समय वरुणके चलाये नागपाशको गरुडजीने अपनी चोंचसे काट डाला, और यमराजके फेंके हुये लोक भयंकर दंडको ॥५॥ श्रीकृष्णने अपनी कौमोदकी गदासे काटकर भूमिमें गिरा दिया, और कुबेरकी पालकीको अपने चक्रसे अनायासही तिलकके बराबर टुकडे करके गिरा दिया ॥६॥ और श्रीकृष्णने अपनी कोपदृष्टिसे सूर्यका तेज नष्ट कर दिया, इतनेंमेंही महान् अग्निको सामने आया देखकर श्रीकृष्णचन्द्र मुखसे पीगये॥७॥ उसके बाद रुद्रगणोंके छोडे हुये त्रिशूलोंको चक्रसे काटकर फिर उन रुद्रगणोंको भुजाओंसे पृथ्वीपर गिरा दिया ॥८॥ उसके बाद मरुद्गण नामके देवता, साध्य देव और विद्याधरोंने श्रीकृष्णके ऊपर बाणोंके समूहकी वर्षा की ॥९॥ तब हे भूपते ! बाणोंकी वर्षा करती हुई चली आई देवसेनाको देखकर उस युद्धमें सत्यभामा डर गई ॥१०॥ तब डरी हुई सत्यभामाको देखकर भगवान्ने कहा कि, हे सत्ये ! डरो मत, मैं आई हुई इस इन्द्रकी सेनाको निःसन्देह मारूँगा ॥११॥ ऐसे कहकर कुपित होकर भगवान्ने शार्ङ्ग धनुषमेंसे निकले अपने बाणोंसे देवताओंको मारकर ऐसे भगाया, जैसे कुत्तोंको सिंह भगाता है ॥१२॥ तब कंसके मारने

पाशिनश्चाहिपाशंचचिच्छिदेपन्नगाशनः ॥ यमराजेनप्रहितंदंडंलोकभयंकरम् ॥ ५ ॥ गदयापातयामासभूमौकृष्णस्तुलीलया ॥ चक्रेणधनद
स्यापिशिबिकांतिलशोबहु ॥ ६ ॥ चकारकृष्णःसूर्यंचकोपदृष्ट्याहतौजसम् ॥ महाग्निमागतंवीक्ष्यमुखेनचपपौहरिः ॥७॥ ततोरुद्रगणैर्मुक्ता-
ञ्छूलांश्चिच्छेदवैरुषा ॥ चक्रेणचहरीरुद्रान्पातयामासबाहुना ॥८॥ ततोमरुद्गणादेवाःसाध्याविद्याधरास्तथा ॥ मुमुचुर्बाणपटलान्माधवोपरि
भूपते ॥९॥ शरवर्षंप्रमुंचंतींसेनांसर्वांसमागताम् ॥ विलोक्यसत्यभामातुभयंप्रापतदामृधे ॥ १० ॥ तांभीतांप्राहगोविंदोसत्येत्वंमाभयंकुरु ॥
आगतांशक्रसेनांवैहनिष्यामिनसंशयः ॥११॥ इत्युक्त्वाभगवान्क्रुद्धोबाणैःशार्ङ्गधनुश्च्युतैः॥ताडयामासविबुधान्क्रोष्टूर्न्सिहोनखैर्यथा ॥१२॥
ततःप्रत्याहगरुडंकंसहाकोपपूरितः ॥ वैनतेयत्वयायुद्धंनकृतंरणमंडले ॥ १३ ॥ तच्छ्रुत्वातुसभार्यंचस्कंधेसंधारयन्हरिम् ॥ कोपाद्विष्णुरथः
सद्यःपक्षाभ्यांनखरांकुरैः ॥ १४ ॥ तुंडेनभक्षयन्देवांस्ताडयन्विचचार वै ॥ ततश्चदुद्रुवुर्देवाहन्यमानागरुत्मता ॥ १५ ॥ अथबाणैर्महीपाल-
इंद्रोपेन्द्रौमहाबलौ ॥ परस्परंचवर्षंतौधाराभिरिवतोयदौ ॥ १६ ॥ ऐरावतेनराजेंद्रसुपर्णोयुयुधेतदा ॥ गजस्ताक्ष्र्यंतुदशनैर्जघानगरुडस्तथा
॥१७॥ गजंतुतुंडपक्षैश्चछिन्नंभिन्नंचकारह ॥ सुरैःसमस्तैर्युयुधेवज्रिणाचयदूत्तमः ॥ १८ ॥

वाले भगवान् क्रोधमें भरकर गरुडसे बोले कि, हे वैनतेय ! तुमने रणमंडलमें कुछ युद्ध नहीं किया ॥१३॥ तब यह बात सुनकर सत्यभामा सहित कृष्णको अपने कंधेपर बैठाकर गरुड उसी समय बडे क्रोधसे अपने पंख और नखोंसे देवताओंको मारता और अपनी चोंचसे भक्षण करता हुआ संग्राममें विचरने लगा, तब गरुडके मारे हुये सब देवता भाग गये ॥ १४ ॥ १५ ॥ तब तो महीपाल ! बडे बलवान् कृष्ण और इन्द्र दोनों बाणोंकी वर्षा करते हुये ऐसे विचरने लगे, जैसे बूँदोंको बरसाते हुये दो बादल विचरते हों ॥ १६ ॥ उस समय ऐरावतसे गरुड युद्ध करने लगा, तब ऐरावतने गरुडको दाँतोंसे मारा, वैसेही गरुडने ॥१७॥ अपनी चोंच और पंखोंके प्रहारसे उस ऐरावत हाथीको मारकर घायल कर दिया, और सब देवताओंसे और इन्द्रसे यदूत्तम श्रीकृष्ण युद्ध करने लगे ॥ १८ ॥

तब भगवान् तो इन्द्रके ऊपर और इन्द्र भगवान्के ऊपर क्रोध करके परस्पर जीतनेकी इच्छासे बाणोंकी वर्षा करने लगे ॥१९॥ जब सब बाण और शस्त्रास्त्र कट गये, तब इन्द्रने तो वज्र और भगवान्ने अपना चक्र हाथमें लिया ॥ २० ॥ तब चराचर इस त्रिलोकीमें वज्रको हाथमें लिये इन्द्र तथा चक्रको ग्रहण किये श्रीकृष्णको देखकर बडा हाहाकार हुआ, ॥ २१ ॥ तब इन्द्रके फेंके हुये वज्रको भगवान्ने बाँये हाथसे पकड लिया, और भगवान्ने चक्र छोडा नहीं, किन्तु खडा रह, खडा रह, ऐसे कहा ॥२२॥ तब वज्र जिसके पास रहा नहीं ऐसा वह इन्द्र बडा लज्जित हुआ, और गरुडने जिसके हाथीको घायल कर दिया और जो डरकर भगा चला जाता है, ऐसे उस इन्द्रको देखकर सत्यभामाजी बडी हँसी ॥२३॥ तब ऐसे भागते हुये इन्द्रको देखकर क्रोधसे पूर्ण होकर इन्द्राणी बोली कि हाय ! अकेले कृष्णने तुमको संग्राममें जीत लिया ॥२४॥ तुम इतनी देवसेनासहित हो, इससे

भगवान्मघवंतंवैमघवामधुसूदनम् ॥ बाणैर्ववृषतुःक्रुद्धावन्योन्यविजगीषिणौ ॥१९॥ छिन्नेष्वस्त्रेषुबाणेषुशस्त्रेष्वस्त्रेषुचत्वरम् ॥ वज्रंजग्राहमघ-
वाभगवाँश्चक्रमेवच ॥२०॥ हाहाकारस्तदैवासीत्रैलोक्येसचराचरे ॥ वज्रचक्रधरौवीक्ष्यसुरेश्वरनरेश्वरौ ॥२१॥ जग्राहवामेहस्तेनक्षिप्तंवज्रंसव-
ज्रिणा ॥ नमुमोचहरिश्चक्रंतिष्ठतिष्ठेत्युवाचच ॥२२॥ लज्जितंवज्रहीनंचताक्ष्यैणक्षतवाहनम् ॥ भीतंपलायमानंचालोक्यसत्याजहासवै ॥२३॥
शचीवीक्ष्यागतंशक्रंप्राहकोपेनपूरिता ॥ एकाकिनामाधवेनप्रधानेतुविनिर्जितः ॥२४॥ महासैन्ययुतस्त्वंवैतस्मात्तेधिग्बलंसुर ॥ अहंगत्वारणेकृष्णं-
विनिर्जित्यसुरद्रुमम् ॥ २५ ॥ मोचयामिनसंदेहःपश्यत्वंचसुराधम ॥ गर्गउवाच ॥ इत्युक्त्वाशिबिकांशीघ्रमारुह्यकुपिताशची ॥ २६ ॥
योद्धुकामाययौराजन्पुनःसुरगणैर्वृता ॥ तामागतांवीक्ष्यकृष्णोयुद्धायनदधेमनः ॥२७॥ ततःसत्याहरिंप्राहरुषाप्रस्फुरिताधरा ॥ अद्ययुद्धंकरि-
ष्यामिशच्यासार्द्धमहंप्रभो ॥ २८ ॥ तच्छ्रुत्वाप्रहसन्कृष्णोदत्त्वातस्यैसुदर्शनम् ॥ स्थापयित्वासुपर्णेचजग्राहद्युतरुंस्वयम् ॥२९॥ यदाहरिप्रि-
याक्रुद्धायुद्धंकर्तुंसमागता ॥ तदासर्वत्रब्रह्मांडेचासीत्कोलाहलोमहान् ॥ ३० ॥

हे देवराज ! तुम्हारे इस बलको धिक्कार है, अब मैं संग्राममें जाकर कृष्णको जीतकर कल्पवृक्षको छुडाकर लाऊँगी ॥२५॥ इसमें संदेह नहीं है, हे सुराधम ! इस मेरे पराक्रमको तू देख, श्रीगर्गजी कहते हैं कि, इतना कहकर अत्यन्त कुपित होकर शची (इन्द्राणी) बहुत जल्दी पालकीमें बैठकर ॥ २६ ॥ सब देवताओंको साथ लेकर युद्ध करनेकी इच्छासे आई, तब श्रीकृष्णने शचीको आई देखकर युद्ध करनेका मन नहीं किया ॥ २७ ॥ तब सत्यभामाके क्रोधसे ओंठ (होठ) फडकने लगे, और वह कृष्णसे बोली कि, महाराज ! शचीसे आज मैं युद्ध करूँगी ॥२८॥ यह सुनकर भगवान् हँसते २ अपना दिव्यरूप सुदर्शन देकर पारिजातको गरुडपर रखकर, आप वृक्षको पकडकर बैठ गये ॥ २९ ॥ ऐसे जब सत्यभामा कुपित होकर युद्ध करनेके लिये आई देखी तब ब्रह्माण्डमें सर्वत्र कोलाहल हुआ ॥ ३० ॥

और ब्रह्मा, इन्द्रादिक सब देवता भयभीत होगये, उसी समय इन्द्रके भेजे हुये श्रीबृहस्पतिजी आये ॥ ३१ ॥ आतेही युद्ध करनेकी इच्छावाली शचीको रोका, और बृहस्पतिजीने कहा कि, हे शचि ! तुम बहुत बुद्धि देनेवाले मेरे वचनको सुनो ॥३२॥ ये श्रीकृष्ण साक्षात् भगवान् हैं, और सत्यभामा लक्ष्मीजी हैं, हे इन्द्रप्रिये ! भला तुम इनसे कैसे युद्ध करोगी ॥३३॥ इससे इस अवज्ञाको छोडकर हे ऋभुक्षे ! इन्द्राणि ! तुम घरको जाओ, और पारिजातको सत्यभामाके लिये देकर सब देवताओंकी भयसे रक्षा करो ॥३४॥ जिनके भयसे पवन चलती है, जिनके भयसे अग्नि जलती है,जिनके भयसे मृत्यु मारती है, जिनके भयसे सूर्य प्रकाश करता है ॥ ३५ ॥ जिनसे ब्रह्मा, शिव, और इन्द्र डरते हैं, उन श्रीकृष्णको तुम नहीं जानती हो, जो अभीही भौमासुरको मारकर आये हैं॥३६॥ श्रीगर्गजी बोले कि इस प्रकार बृहस्पतिके कहे हुये वचनको सुनकर शची सत्यभामाको और कृष्णको नमस्कार करके लज्जित होकर अपनी निन्दा आपही करती हुई अपने घरको चली गई ॥ ३७ ॥ उसके बाद लज्जित होकर प्रणाम करते इन्द्रको देखकर भगवान् बोले कि हे इन्द्र ! वज्रके

भयंप्रापुःसुराःसर्वेविधिशक्रादयोनृप ॥ तदैवगीष्पतीराजन्नाययौशक्रचोदितः ॥३१॥ आगत्यवारयामासयोद्धुकामांपुलोमजाम् ॥ बृहस्पतिरुवाच ॥ शचिशृणुमदीयंवैवचनंबहुबुद्धिदम् ॥ ३२ ॥ कृष्णस्तुभगवान्साक्षात्सत्यभामाचधीमती ॥ तयासार्द्धंकथंयुद्धंकरिष्यसिहरिप्रिये ॥ ३३ ॥ तस्मादवज्ञांसंत्यज्यऋभुक्षेत्वंगृहंव्रज ॥ सत्यांवैपारिजातंचदत्त्वारक्षसुरान्भयात् ॥ ३४ ॥ यद्भयाद्वातिश्वसनोवह्निर्दहतियद्भयात्॥ भयाद्यन्मृत्युश्चरतिब्रध्नोव्रजतियद्भयात् ॥ ३५ ॥ यस्माद्बिभेतिब्रह्मावैकपर्दीचपुरंदरः ॥ तंनजानासिकृष्णंवैभौमंहत्वासमागतम् ॥ ३६ ॥ गर्गउवाच ॥ इतिश्रुत्वाशचीवाक्यंभामांकृष्णंचलज्जया ॥ नत्वाजगामसदनमात्मानंचविगर्हयन्॥३७॥ततःशक्रंनमंतंचव्रीडितंवीक्ष्यमाधवः॥ उवाचशुक्रमाव्रीडांगतेचभिदुरेकुरु॥३८॥ द्वंद्वयुद्धेहिचैकस्यभविष्यतिपराजयः ॥ इतिश्रुत्वाचप्रोवाचवचनंपाकशासनः ॥३९॥ इंद्रउवाच ॥ यस्मिञ्जगत्सकलमेतदनादिमध्येयस्माद्यतश्चनभविष्यतिसर्वभूतात्॥तेनोद्भवप्रलयपालनकारणेनव्रीडाकथंभवतिदेविनिराकृतस्य ॥४०॥ सकलभुवनसूतेमूर्तिरन्यातिसूक्ष्माविदितसकलवेद्यैर्ज्ञायतेयस्यनान्यैः॥ तमजमकृतमीशंशाश्वतंस्वेच्छयैनंजगदुपकृतिमर्त्यंकोविजेतुंसमर्थः ॥४१॥ इत्युक्त्वासत्यभामांवैशक्रस्तूष्णींबभूवच ॥ ततःप्रहस्यभगवान्प्राहगंभीरयागिरा ॥ ४२ ॥

जानेपर तुम लज्जा मत करो ॥ ३८ ॥ देखो, दोकी लडाईमें एककी तो पराजय होतीही है, यह सुनकर इन्द्र यह वचन बोला ॥ ३९ ॥ इन्द्र बोला कि जिसका न आदि न मध्य, और न जिसका अन्त है, और जिसमें सब जगत् है, और जिससे यह सब जगत् होता है, और जो सृष्टि, पालन और प्रलयके कारण हैं उससे हारनेकी मुझको भला लज्जा क्यों होगी ॥४०॥ जो सकल भुवनकी उत्पत्तिके स्थान हैं, जिनकी अति सूक्ष्मा मूर्ति और ही है, और जो जानने योग्यको जानते हैं, वही जिनकी मूर्तिको जान सकते हैं, अन्य कोई जिनकी मूर्तिको नहीं जान सकते हैं, और जगत्का उपकार करनेवाले हैं, उनको जीतनेको भला कौन समर्थ हो सकता है, जो अज हैं, स्वतः सिद्ध हैं, ईश्वर और अनादि सिद्ध हैं ॥४१॥ सत्यभामाको इतना कहकर इन्द्र चुप होगया, तब भगवान् हँसकर गम्भीर वाणीसे यह बोले ॥ ४२ ॥

भगवान् बोले कि, आप देवताओंके स्वामी इन्द्र हैं, और हम भूमिके रहनेवाले हैं, इससे हमारा यह अपराध क्षमा करने योग्य है, जो अपराध हमने आपका किया है।।४३।।हे इन्द्र ! इस पारिजातको उचित स्थानपर ले जाइये, इसको मैंने सत्यभामाके कहनेसे ग्रहण किया है।।४४।। और आपन मेरे ऊपर जो वज्र चलाया था, उसको ग्रहण करिये, हे शुनासीर ! यह आपका वज्र शत्रुओंका निवारण करनेवाला है ।।४५।। यह सुनकर इन्द्र बोला कि, हे कृष्ण ! "मैं मनुष्य हूँ" ऐसा कहकर आप मुझको मोह कर रहे हैं क्या ? हम सूक्ष्म बातके जाननेवाले हैं, किन्तु जगत्के नाथ आपको नहीं जानते हैं।।४६।। हे नाथ ! जो आप हैं, वह हैं, किन्तु इस जगत्की रक्षा करनके लिये आपकी स्थिति है, हे गरुडध्वज ! इस विश्वके कांटेके निकालनेको आपकी स्थिति है।।४७।। इस पारिजातको द्वारकामें ले जाइये, किन्तु जब आप मनुष्यलोकका त्याग करेंगे, तब यह वृक्ष वहाँ नहीं रहेगा ।।४८।। जिस दिन आप

भवान्देवाधिपःशक्रवयंभूमिनिवासिनः ॥ क्षंतव्यमपराधंतद्भवताचकृतंमया ॥४३॥ भोःशक्रपारिजातश्चनीयतामुचितास्पदम् ॥ गृहीतोयंम-
यासत्यभामावचनकारणात् ॥ ४४ ॥ गृहाणकुलिशंचेदंप्रहितंयत्त्वयामयि ॥ तवैवास्त्रंशुनासीरतद्वैरिषुनिवारणम् ॥ ४५ ॥ इन्द्रउवाच ॥
कृष्णकिंमोहयसिमांनरोहमितिकिंवद ॥ जानीमस्त्वांजगन्नाथंनतुसूक्ष्मविदोवयम् ॥ ४६ ॥ योसिसोसिजगत्त्राणप्रवृत्तौनाथसंस्थितिः ॥
विश्वस्यशल्यनिष्कर्षंकरोषिगरुडध्वज॥ ४७ ॥ अयंचनीयतांकृष्णपारिजातःकुशस्थलीम् ॥ नरलोकेत्वयात्यक्तेनायंसंस्थास्यतेभुवि ॥४८॥
आगमिष्यतिगोविन्दस्वयमेवत्रिविष्टपम् ॥ गर्गउवाच ॥ तच्छ्रुत्वावज्रिणेवज्रंदत्त्वासोप्याजगामकौ ॥ ४९ ॥ द्वारकांद्वारकानाथोस्तूय-
मानःसुरेश्वरैः ॥ उपाध्मायततःकंबुंसंस्थितोद्वारकोपरि॥ ५० ॥ उत्पादयामासमुदंद्वारकावासिनांनृप ॥ सुपर्णादवतीर्याथकृष्णोभामासम-
न्वितः ॥ ५१ ॥ पारिजातंचनिष्कूटेस्थापयामासलीलया ॥ जुष्टंसुरद्रुमंकृष्णोभ्रमरैःस्वर्गपक्षिभिः ॥५२॥ अथैकस्मिन्मुहूर्तेवैमाधवेमाधवः
स्वयम् ॥ उवाहराजकन्याश्चपृथग्गेहेषुधर्मतः ॥५३॥ षोडशस्त्रीसहस्राणिअष्टाधिकशतानिच ॥ तावंतिचक्रेरूपाणिपरिपूर्णतमोहरिः ॥५४॥

मनुष्यलोकका त्याग करेंगे, उसीदिन यह वृक्ष स्वर्गमें अपने आप आजायगा, गर्गजी बोले कि, ऐसे श्रीकृष्णचन्द्र इन्द्रके कथनको सुनकर इन्द्रको वज्र देकर आप द्वारकापुरीको चले आये ।।४९।। जब द्वारकानाथ द्वारकाको आये, तब देवताओंने स्तुतिकी, जब द्वारकाके ऊपर आये, तब शंख बजाकर ।।५०।। हे नृप ! तब द्वारकानिवासियोंके मनमें हर्षको उत्पन्न किया, उसके बाद सत्यभामाजीसहित श्रीकृष्ण गरुडपरसे उतरकर ॥ ५१ ॥ स्वर्गकेनिवासी पक्षियोंसे भ्रमरोंसे सेवित उस पारिजातके वृक्षको सत्यभामाके महलके बगीचेमें लगा दिया ।।५२।। उसके बाद वैशाखके महीनेमें एकदिन एकही उत्तम लग्नवाले शुभमुहूर्तमें स्वयम् श्रीकृष्णने पृथक् २ घरोंमें उन समग्र राजकन्याओंका पाणिग्रहण किया ॥ ५३ ॥ उस समय जो सोलहहजार एकसौ आठ कन्यायें थीं, उतनेही रूप परिपूर्णतम श्रीकृष्णने धारण किये ॥ ५४ ॥

अमोघ है गति जिनकी ऐसे ईश्वर श्रीकृष्णने अपनी जितनी स्त्रियाँ थीं, उनमें एक एकमें दश २ पुत्र उत्पन्न किये॥५५॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायांपारिजातानयनं नाम पंचमोऽध्यायः ॥५॥ गर्गजी बोले कि, अब मैं फिर तुम्हारे सामने संक्षेपसे कृष्णके यशको कहूँगा, जो श्रीकृष्णने रुक्मिणीके साथमें अद्भुत हास्य किया था ॥१॥ फिर अनिरुद्धके विवाहमें बलदेवजीके हाथसे रुक्मीका वध कराया, फिर ऊषाकी स्वप्नकथामें चित्रलेखासे कृष्णके पौत्रका हरना ॥ २ ॥ और बंधन, फिर बाणासुरका और यादवोंका संग्राम, फिर श्रीकृष्णका और शिवजीका संग्राम, उसमें ज्वरोंकी स्तुति ॥३॥ बाणासुरकी भुजाओंका छेदन, फिर बाणासुरकी रक्षाके लिये रुद्रकी स्तुति, फिर ऊषाकी प्राप्ति, और नृगका आख्यान, फिर बलदेवका व्रजमें आगमन ॥४॥ गोपियोंका विलाप, और गोपियोंसे बलदेवजीकी स्तुति, फिर यमुनाजीका खेंचना, और काशीपति तथा पौंड्रकको मरवाना

एकैकस्यांदशदशकृष्णोजीजनदात्मजान् ॥ यावत्यआत्मनोभार्याअमोघगतिरीश्वरः॥५५॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेपारिजातानयनंनामपञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ गर्गउवाच ॥ पुनस्तेकथयिष्यामियशःसंक्षेपतोहरेः ॥ चकारहास्यंभगवान्रुक्मिण्यासहचाद्भुतम् ॥ १ ॥ अनिरुद्धविवाहेचावधीद्भ्रात्रातुरुक्मिणम् ॥ ऊषास्वप्नकथाचित्रलेखयाहरणंहरेः ॥ २ ॥ पौत्रस्यबन्धनंचापिबाणयादवसंयुगः॥ कृष्णशंकरयोर्युद्धेज्वरसंस्तवनंततः ॥ ३ ॥ बाणबाहुच्छिदीरुद्रस्तुतिर्बाणस्यरक्षणे ॥ ऊषाप्राप्तिर्नृगाख्यानंबलस्यचव्रजागमम् ॥ ४ ॥ गोपीविलापोरामस्यस्तुतिर्गोपीभिरेवच ॥ यमुनाकर्षणंकाशीपतिपौंड्रकघातनम् ॥५॥ कृत्योत्पत्तिर्दाहनंचकाश्याःकपित्रधस्ततः ॥ सांबस्यबन्धनेरामविक्रमोगजसाह्वये ॥६॥ उग्रसेनराजसूयेजघानशकुनिंहरिः ॥ नारदेनहरेर्लीलादर्शनंगृहमेधिनाम् ॥७॥ आह्निकंवासुदेवस्यराजदूतेनवैस्तुतिः॥ इन्द्रप्रस्थेचगमनमुद्धवेनचयादवैः ॥ ८ ॥ जरासन्धंचभीमेननिजघानगिरिव्रजे ॥ सहदेवाभिषेकंचराजभिश्चकृतास्तुतिः ॥ ९ ॥ राजसूयेहरेःपूजाशिशुपालवधस्तथा ॥ दुर्योधनाभिमानस्यभंगःप्रद्युम्नशाल्वयोः ॥१०॥ युद्धंत्रिनवरात्रंचकृष्णस्यागमनंततः ॥ शाल्वस्यदन्तवक्रस्यतद्भ्रातुर्लीलयावधः ॥ ११ ॥ ततोगजाह्वयेराजन्दुर्द्यूतेनचकौरवैः ॥ विनिर्जितोभ्रातृयुक्तोसभार्यस्तुयुधिष्ठिरः ॥ १२ ॥

॥५॥ कृत्याकी उत्पत्ति, काशीपुरीका जलाना, द्विविद नामके बंदरका वध, उसके बाद शाम्बके बंधनमें हस्तिनापुरमें जाकर बलदेवजीका पराक्रम ॥६॥ फिर उग्रसेनके राजसूययज्ञमें कृष्णनं शकुनिको मारा वह, फिर नारदजीका हरिकी गृहस्थियोंकी लीलाको देखना ॥ ७ ॥ फिर श्रीकृष्णका आह्निक और सभामें आकर राजदूत द्वारा स्तुति उद्धवकी सलाहसे यादवोंको लेकर कृष्णका इन्द्रप्रस्थको आना ॥८॥ फिर भीमसेनके हाथोंसे गिरिव्रजमें जाकर जरासंधका वध करवाना और सहदेवको राज्य देना, और राजाओंकी स्तुति ॥९॥ फिर राजसूययज्ञमें कृष्णका पूजन और शिशुपालका वध, फिर दुर्योधनके अभिमानका खण्डन होना, फिर प्रद्युम्नका शाल्वके साथ सत्ताईस दिनतक युद्ध, फिर श्रीकृष्णका आना, आकर शाल्वका, दन्तवक्रका और विदूरथका लीलासे वध ॥ १० ॥ ११ ॥ उसके बाद हे राजन् ! हस्तिनापुरमें कौरवोंसे कपटके जुएमें स्त्री और भाइयोंसमेत युधिष्ठिर हार गये ॥ १२ ॥

तब विदुरके घरमें कुन्तीको रखकर वनमें गये, और वनमें जाकर बहुत दिनोंतक वनमें निवास किया ॥१३॥ तब दुर्योधन आनन्दसे राज्य करने लगा, किन्तु युधिष्ठिरके वन जाने पर प्रजाने उसका अभिनन्दन नहीं किया ॥ १४ ॥ फिर वनमें निवास किये.दुखमें कर्शित, पाण्डवोंसे मिलकर एकदिन अनन्त भगवान्ने आश्वासन किया ॥ १५ ॥ फिर पाण्डवोंको देखकर कृष्णचन्द्र द्वारकामें आगये, और उग्रसेनकी सुधर्मा सभामें वह सब वृत्तान्त कहा ॥ १६ ॥ उसको सुनकर सब यादव विस्मित होकर बोले कि, अहो धृतराष्ट्रने यह क्या किया ॥१७॥ जो कपटके जुएसे जीतकर अधर्मसे पाण्डवोंको घरसे निकाल दिया, राज्यके लोभी कौरव अपने अधर्मसे नाशको प्राप्त होगें ॥ १८॥ और सम्पत्तिको दुर्योधनसे लेकर भगवान् पाण्डवोंको देंगे, गर्गजी कहते हैं कि, इस प्रकार भगवान् यादवोंके वाक्यको सुनकर ॥१९॥ सायंकालके समय हे नृपेश्वर ! अपने घरको आये, देवकीजीको बडे आनन्द

वनंजगामसंस्थाप्यपृथांचविदुरगृहे ॥ गत्वारण्येनिवासंवैचकारबहुभिर्दिनैः ॥१३॥ ततश्चपालयामासमहींदुर्योधनोमुदा ॥ प्रजास्तंनाभ्यनन्द-
न्स्मपांडुपुत्रेगतेसति ॥१४॥ अरण्येवर्तमानान्वैपांडवान्दुःखकर्पितान् ॥ मिलित्वाश्वासयामासह्यनंतश्चैकदाहरिः ॥१५॥ दृष्ट्वाथपांडवान्कृ-
ष्णोह्याजगामकुशस्थलीम् ॥ उग्रसेनसुधर्मायांशशंसचेष्टितंचतत् ॥ १६ ॥ तच्चश्रुत्वायादवाश्चप्रोचुःसर्वेंहिविस्मिताः ॥ यादवाऊचुः ॥
किंकृतंधृतराष्ट्रेणदीनाभ्रातृसुताअहो ॥१७॥ दुर्द्यूतेनविनिर्जित्याधर्मान्निष्कासितागृहात् ॥ स्वाधर्मेणविनश्यंतिकौरवाराज्यलोलुपाः ॥१८॥
पांडवेभ्यस्तुभगवांस्तस्माद्दास्यतिसंपदम् ॥ गर्गउवाच ॥ इतिश्रुत्वायादवानांवाक्यंचमधुसूदनः ॥ १९ ॥ आययौवैस्वभवनंसायंकालेनृ-
पेश्वरः ॥ आगतंस्वात्मजंवीक्ष्यनमंतंदेवकीमुदा ॥२०॥ दत्त्वाशिषंभोजनंचकारयामासवैसती ॥२१॥ ततःसचाययौकृष्णःस्वस्त्रीणांमंदिरा-
णिच ॥ प्रियाभिपूजितस्तत्रचकारशयनंकिल ॥ २२ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेश्रीकृष्णचरित्रवर्णनंनामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥
गर्गउवाच ॥ देवर्षिश्चैकदाराजन्दृष्ट्वारामंचकेशवम् ॥ स्ववीणांवादयन्कृष्णगाथांगायन्समाययौ ॥ १ ॥ ब्रह्मलोकात्सर्वलोकान्पश्यन्भा-
स्करसन्निभः ॥ साकंतुंबुरुणार्पिंगजटाभारेणशोभितः ॥ २ ॥

से प्रणाम किया, तब देवकीजीने प्रणाम करते श्रीकृष्णको देखकर ॥२०॥ आशीर्वाद दिया, और सती देवकीने श्रीकृष्णको भोजन कराया ॥ २१ ॥ उसके बाद श्रीकृष्ण अपनी पत्नियोंके महलोंमें गये, तब पत्नियोंने पूजन किया, फिर भगवान्ने शयन किया ॥२२॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां श्रीकृष्णचरित्रवर्णनंनाम पष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ श्रीगर्गजी कहते हैं कि, हे राजन् ! एकदिन कृष्ण बलरामको देखकर नारदजी वीणा बजाते, कृष्णगुणानुवादकथाको गाते ॥ १ ॥ मार्गमें अनेक लोकोंको देखते हुये, सूर्यके समान जटाओंके भारसे शोभित नारदजी तुम्बुरुगन्धर्वको साथ लिये ब्रह्मलोकसे आये ॥ २ ॥

कुछ २ श्याम, मृगके जैसे जिनके नेत्र हैं,केशरियाचन्दनके तिलक जिसके लग रहे हैं,एक पीताम्बर पहिने हैं,और एक पीताम्बर ओढे हैं ॥ ३ ॥ रंगवल्ली और मालासे विराजमान हैं,ऐसे व्रजस्त्रियोंके चन्दनसे वृद्ध हुये पन्द्रह मेघोंसे मण्डित अति शोभित हुये ॥ ४ ॥ उन नारदजीको आये देखकर सुधर्मा सभामें इन्द्र सिंहासनपर बैठे हुये उग्रसेन राजाने उठकर उनको प्रणाम किया,और बैठनेके लिये सिंहासन दिया ॥५॥ फिर उनके दोनों चरणोंको धोकर,पूजनकर,चरणोंके धोये जलको मस्तकपर डालकर यह बोले ॥६॥ उग्रसेन बोलेकि, हे देवर्षे ! आपके आनसे आज मेरा जन्म सफल हुआ, मेरा घर और मेरा आत्मा आपके दर्शन करनेसे सफल हुआ ॥७॥ उन भगवान् महात्मा नारदजीको मेरा नमस्कार है, जो ऋषियोंमें श्रेष्ठ हैं, कामक्रोधसे रहित हैं ॥ ८ ॥ हे महाराज ! आपका आना कैसे हुआ है ? मुझको आज्ञा करिये, उग्रसेनके वचनको सुनकर देवताओंके जैसा जिनका दर्शन

किंचिच्छ्यामोमृगाक्षश्चकाश्मीरतिलकैर्वृतः ॥ पीतेनधौतवस्त्रेणतथापीतांबरेणच ॥३॥ रंगवल्लीमालयाचव्रजस्त्रीचंदनेनच ॥ वृद्धःपंचदशाब्दैश्चमंडितःशुशुभेबहु ॥४॥ दृष्ट्वातमागतंराजाशक्रसिंहासनेस्थितः ॥ सुधर्मायांसचोत्थायनत्वासिंहासनंददौ ॥५॥ तदंघ्रीचावनिज्याथकृत्वा पूजनमुत्तमम् ॥ तज्जलंमस्तकेधृत्वाचोग्रसेनस्तमब्रवीत् ॥ ६ ॥ उग्रसेनउवाच ॥ अद्यमेसफलंजन्मसफलंसदनंचमे ॥ अद्यमेसफलश्चात्मादेवर्षेतवदर्शनात् ॥७॥ नमस्तस्मैभगवतेनारदायमहात्मने ॥ कामक्रोधविहीनायऋषीणांप्रवरायच ॥ ८ ॥ किमर्थमागतोसित्वमाज्ञांकुरु ममोपरि ॥ निशम्यवचनंतस्यऋषिर्निर्जरदर्शनः ॥ ९ ॥ उवाचनृपशार्दूलंमनसानोदितोहरेः ॥ नारदउवाच ॥ यादवेंद्रमहाराजधन्यस्त्वं पृथिवीपते ॥ १० ॥ त्वद्भक्त्याकौनिवसतिबलेनसहकेशवः ॥ राजसूयःक्रतुवरःपुरामद्वचनात्त्वया ॥११॥ कृतःश्रीकृष्णकृपयाद्वारकायांसुखेनच ॥ येनत्रिलोकेतेकीर्तिर्नृपविस्तारिताभुवि ॥ १२ ॥ राजसूयाश्वमेधौचकठिनौमंडलेश्वरैः ॥ हरिभक्तस्यराजेंद्रसुलभौचक्रवर्तिनः ॥१३॥ द्वयोर्मध्येकृतश्चैकोराजसूयस्त्वयानृप ॥ तथायुधिष्ठिरेणापिकृतःकृष्णाज्ञयाततः ॥ १४ ॥ द्वापरांतेभारतेतुहयमेधःक्रतूत्तमः ॥ नकृतःकेन राज्ञापिमुक्तिदस्त्वघनाशनः ॥ १५ ॥

ऐसे ऋषि नारदजी ॥९॥ जिनको श्रीभगवान्ने मनसे प्रेरणा की वे राज शार्दूल उग्रसेनजीसे यह बोले कि, हे महाराज ! हे यादवन्द्र ! हे पृथिवीपते ! आप धन्य हैं ॥१०॥ आपकी ही भक्तिके वशमें हुये भगवान् भूतलमें निवास करते हैं,और पहिले मेरे कहनेसे आपने यज्ञोंमें मुख्य राजसूय नामका यज्ञ ॥११॥ श्रीकृष्णकी कृपासे सुखपूर्वक द्वारकामें किया है, हे नृप ! जिस यज्ञसे आपकी यह कीर्ति तीनों लोकोंमें भूमिमें फैली ॥१२॥ हे उग्रसेनजी ! राजसूय और अश्वमेध ये दोनों यज्ञ मण्डलेश्वर राजाओंके लिये कठिन हैं, ये दोनों यज्ञ हरिभक्त चक्रवर्ती राजाके लिये करने सुगम होते हैं ॥१३॥ सो इन दोनों यज्ञोंमेंसे राजसूययज्ञको तो,हे नृप ! आपकरही चुके हैं, और कृष्णकी आज्ञासे युधिष्ठिर भी कर चुका है ॥ १४ ॥ किन्तु किसीने द्वापरके अन्तमें इस भारतखण्डमें यज्ञोंमें उत्तम अश्वमेध नहीं किया है, यह अश्वमेध पापोंका नाशकरनेवाला और मोक्षका देनेवाला है ॥ १५ ॥

जो कोई द्विजको मारनेवाला, विश्वघाती और गौका मारनेवाला हो, वहभी अश्वमेध करनेंने पवित्र होता है, इससे सब यज्ञोंमें अश्वमेधका करना अत्युत्तम है, ऐसा कहते हैं ॥ १६ ॥ और हे नृपश्रेष्ठ ! जो कोई निष्काम होकर अश्वमेधको करता है, वह गरुडध्वजके लोकमें जाता है, जो लोक बडे बडे सिद्धोंको भी दुर्लभ है ॥१७॥ ऐसे नारदजीके कथनको सुन कर उग्रसेनने अश्वमेध यज्ञ करनेका मन किया ॥ १८ ॥ इतनेमें ही बलदेवजी सहित कृष्णको आया देखकर उनका पूजन कर, दोनोंको आसनपर बैठाकर नारदसहित उग्रसेनजी यह बोले ॥१९॥ उग्रसेन बोला कि, हे देव ! हे देव ! हे जगन्नाथ ! हे जगदीस जगन्मय ! हे वासुदेव ! हे त्रिलोकेश ! मेरे वचनको आप सुनिये॥२०॥ मेरे पुत्र कंसने विना अपराधके हजारों बालक असुरोंके हाथोंसे मरवाये॥२१॥ सो हे गोविन्द ! उस पापी मेरे पुत्र कंसकी मुक्ति कैसे हो, यह आप मुझको बतलाइये, और बालघाती मेरा पुत्र कंस किस लोकमें गया होगा, वह आप मुझको कहिये ॥२२॥ हे जगदीश्वर ! उस कंसके पापोंसे मैं भी भयभीत हूँ, क्योंकि पुत्रके पापसे पिताभी अवश्य नरकमें पडता है ॥२३॥ वैसे पिताके पापसे

द्विजहाविश्वहागोघ्नोवाजिमेधेनशुद्ध्यति ॥ तस्माद्वरंचयज्ञानांहयमेधंवदंतिहि ॥१६॥ निष्कारणंनृपश्रेष्ठवाजिमेधंकरोतियः॥व्रजेत्सुपर्णकेतोः ससदनंसिद्धदुर्लभम् ॥१७॥ इतिदेवर्षिवचनमुग्रसेनोनिशम्यच॥हयमेधंयज्ञवरंकर्तुंचक्रेमतिंनृप ॥ १८॥ तदैवसहरामेणकृष्णंवीक्ष्यागतंनृपः ॥ पूजयित्वासनेस्थाप्यसाकंचऋषिणाब्रवीत् ॥ १९ ॥ उग्रसेनउवाच ॥ देवदेवजगन्नाथजगदीशजगन्मय ॥ वासुदेवत्रिलोकेशशृणुष्ववचनंमम ॥ २० ॥ मत्पुत्रेणचकंसेनबालकाश्चसहस्रशः ॥ विनापराधेनहरेमारिताश्चमहासुरैः ॥ २१ ॥ तस्यमुक्तिश्चगोविंदकथंभवतिपापिनः ॥ कस्मिँल्लोकेगतः ॥ कंसोबालघातीवदस्वमे ॥२२॥ तस्यपापेनाहमपिभीतोस्मिजगदीश्वरः॥पुत्रस्यपापेनपितानरकेपततिध्रुवम् ॥२३॥ पितुः पापेनपततिनिरयेहितथासुतः ॥ तस्माच्चकिंकरिष्येहमुपायंवदमाधव ॥२४॥ कथितंनारदेनाद्यतच्छृणुष्वजगत्पते ॥ विप्रहाविश्वहागोघ्नोहयमेधेनशुध्यति ॥ २५ ॥ तस्मिन्यज्ञेमनोमेस्तियदिचाज्ञांप्रदास्यति ॥ गर्गउवाच ॥ इतितस्यवचःश्रुत्वाप्राहमदनमोहनः ॥ २६ ॥ मनसिप्राहसंपश्यन्धरांभारेनपीडिताम् ॥ अहोमयातुबहुशोधराभारोवतारितः ॥२७॥ तथादिसतिकौमध्येसोश्वमेधेननश्यति ॥ नाहंहनिष्येशत्रून्वैस्वहस्तेनमृधांगणे ॥ २८ ॥ इतिप्रतिज्ञातुकृताविदूरथवधेमया ॥ तस्माच्चप्रेषयिष्यामिस्वपुत्रान्यादवांस्तथा ॥ २९ ॥

पुत्र नरकमें जाता है, इससे हे माधव ! मैं क्या उपाय करूँ, वह कहिये ॥ २४ ॥ हे जगत्पते ! जो आज नारदजी मुझसे कहा है, वह सुनिये, विप्रहा, विश्वहा और जो कोई गौको मारनेवाला हो, वह अश्वमेधके करनेसे पवित्र होजाता है ॥२५॥ सो मेरी भी अश्वमेध यज्ञ करनेकी इच्छा है, यदि आप आज्ञा देवें तो, गर्गजी कहते हैं कि, ऐसे उग्रसेनके कथनको सुनकर मदनमोहन भगवान्ने बडे आनन्दसे ॥ २६ ॥ भूमिको बोझसे पीडित जानकर मनमें विचार किया कि, मैंने कईबार पृथ्वीका बोझ उतारा ॥ २७ ॥ तो भी भूमिमें भार है ही, वह भार अश्वमेध करनेसे नष्ट होगा, क्योंकि मैंने राजा विदूरथके मारनेके समय प्रतिज्ञा की है कि, अब मैं अपने हाथसे रणांगणमें शत्रुओंको नहीं मारूँगा इससे अपने पुत्रोंको और यादवोंको सब भूमिके जीतनेके लिये अश्वमेधके बहानेसे भेजूँगा, हे वज्रनाभे ! इस प्रकार विष्वक्सेन भगवान् विचार कर सुधर्म सभामें उग्रसेनसे बोले कि हे महाराज !

मेरे हाथसे मरा हुआ कंस मेरे अद्भुत वकुण्ठ मन्दिरको गया॥२८॥२९॥३०॥३१॥ वह अब मेरे समान रूप होकर नित्य वैकुण्ठमें निवास करता है, वैसेही हे राजेन्द्र ! आपभी मेरे दर्शनसे पाप रहित हो ॥३२॥ तथापि आप यज्ञके लिये हे भूपते ! अश्वमेध यज्ञको करिये, जिस यज्ञसे पृथ्वीमें आपकी बडी भारी कीर्ति होगी ॥३३॥ गर्गजी कहते हैं कि, हे नृप ! ऐसे अक्लिष्ट कर्म करनेवाले श्रीकृष्णके कथनको सुनकर उग्रसेन बडे प्रसन्न होकर यह बोले॥३४॥कि हे देव ! अब मैं यज्ञोंमें उत्तम अश्वमेधको करूँगा, और हे गोविन्द ! मेरा वह यज्ञ आपकी कृपासे शीघ्रही पूर्ण होगा ॥३५॥ परन्तु आप उस अश्वमेधकी सब विधिको विस्तारपूर्वक कहिये, उग्रसेनके इस कथनको सुनकर भगवान् विष्टरश्रवा आप बोले ॥३६॥ हे महाराज ! आप नारदजीसे अश्वमेधकी विधिको पूछिये, ये सब विधिको जानते हैं, सो ये सब विधिको बतायेंगे॥३७॥ कृष्णके ये वचन सुनकर उग्रसेन बडे प्रसन्न होकर

जेतुंवसुंधरांसर्वांहयमेधमिषेणच ॥ इतिवार्तांवज्रनाभेत्रिष्वक्सेनोविचार्यच ॥ ३० ॥ सुधर्मायांचप्रहसन्नुग्रसेनमुवाचवै ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ ॥ मयाहतोमहाराजकंसोवैकुंठमंदिरम् ॥ ३१ ॥ गतोभूत्वाममाकारःनित्यंवसतितत्रवै ॥ तथात्वमपिराजेंद्रविपापोदर्शनान्मम ॥३२॥ तथापिहयमेधंत्वंयशोर्थंकुरुभूपते ॥ यज्ञेनतेमहत्कीर्तिःपृथिव्यांचभविष्यति ॥३३॥ इतितत्कथितंश्रुत्वाकृष्णस्याक्लिष्टकर्मणः॥ उवाचपरमंवाक्यमुग्रसेनोमुदान्नृप ॥ ३४ ॥ राजोवाच ॥ अद्यदेवकरिष्येहमश्वमेधंक्रतूत्तमम् ॥ सभविष्यतिशीघ्रंवैगोविंदकृपयातव ॥ ३५ ॥ हयमेधस्यचविधिंसर्वंमेब्रूहिविस्तरात् ॥ इतिश्रुत्वाचतद्वाक्यमवोचद्विष्टरश्रवाः ॥३६॥हयमेधविधिंपृच्छदेवर्षिंनारदंप्रति ॥ सतवाग्रेचवदतिसर्वज्ञातायदूद्वह ॥३७॥ इतिवाक्यंहरेःश्रुत्वायदुराजोमुदान्वितः॥ सभायांसंस्थितंराजन्देवर्षिंनिजगौनृप॥३८॥तुरंगःकीदृशोभाव्यःकतिसंख्याद्विजोत्तमाः ॥ दक्षिणाकीदृशीब्रह्मन्वदमेकीदृशंव्रतम् ॥ ३९ ॥ उग्रसेनस्यवचनमाकर्ण्यदेवदर्शनः ॥ स्मयमानइवप्राहप्रीत्याकृष्णंविलोकयन् ॥ ४० ॥ श्रीनारदउवाच ॥ चंद्रवर्णरक्तमुखंपीतपुच्छंमनोहरम् ॥ सर्वांगसुंदरंदिव्यंश्यामकर्णंसुलोचनम् ॥ ४१ ॥ प्रवदंतिमहाराजयज्ञेस्मिन्हयमीदृशम् ॥ मधुमासेपूर्णिमायांमोच्योयंघोटकोनृप ॥ ४२ ॥

सभामें बैठे नारदजीसे हे नृप ! यह बोले ॥३८॥ उग्रसेनजी बोले कि हे ब्रह्मन् ! कैसा तो घोडा होना चाहिये, और कितने यज्ञ करनेवाले ब्राह्मण होना चाहिये, कैसी दक्षिणा होनी चाहिये, और किस प्रकारसे धारण करना चाहिये, सो कहिये ॥३९॥ उग्रसेनके इस वचनको सुनकर श्रीनारदजी मंद मुसकाते हुये और श्रीकृष्णका दर्शन करते यह बोले ॥४०॥ नारदजी बोले कि, हे महाराज ! चन्द्रमाके जैसा सफेद जिसका रंग, पीली, पूंछ, लाल मुख, श्यामवर्णके कान, सुन्दर नेत्र, और जिसके सब अंग सुन्दर हो, ऐसा घोडा अश्वमेध यज्ञके कामका होता है, ऐसे यज्ञके जाननेवालोंमें श्रेष्ठ जन कहते हैं, और चैत्र सुदि पूर्णिमाके दिन वह घोडा छोडना चाहिये ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

महावीर पुरुष उसकी एक वर्षतक रक्षा करे, जबतक वह घोडा अपने नगरमें लौटकर न आवे ॥ ४३ ॥ तबतक यज्ञ करनेवाला धैर्यसे युक्त बडे प्रयत्नसे रहे, और जहाँ २ वह घोडा मूत्र और लीद करे, वहाँ वहाँ ॥४४॥ ब्राह्मणोंके द्वारा अग्निमें हवन करे और एक हजार गोदान करे, और सुवर्णका पत्र लिखकर घोडेके माथेमें बांधे, उसमें अपना नाम अपने बलसे चिह्नित करके लिखे ॥४५॥ और उस पत्रमें यह लिखे कि, हे समस्त राजागण ! सुनिये कि "यह घोडा हमने छोडा है ॥ ४६ ॥ यदि कोई राजा बलवान् हो तो इस घोडेको पकडे," ऐसा लिखे, यदि कोई राजा उस श्यामकर्ण घोडेको पकडे, तो उसकी रक्षा करनेवाले उस राजाको बलपूर्वक जीतें ॥ ४७ ॥ और हे नृप ! बीस हजार ब्राह्मण इस यज्ञके आदिमें कहे हैं, वे ब्राह्मण वेदके जाननेवाले, सर्व शास्त्रके जाननेवाले, कुलीन, और तपके करनेवाले हों ॥ ४८ ॥ इसी सम्बन्धमें मैं तुम्हारे सामने कहूँगा, तुम समर्थ हो, सो सुनो कि हे महाराज ! अश्वमेधमें एक एक ब्राह्मणको बडी बडी दक्षिणा देनी चाहिये ॥ ४९ ॥ एक एक ब्राह्मणको एक एक हजार घोडे, सौ सौ हाथी, दो दो सौ रथ, एक एक हजार गौ, और बीस

महावीरैःपालनीयोवर्षमात्रंहयोत्तमः ॥ अश्वस्यागमनंयावद्भविष्यतिस्वकेपुरे ॥४३॥ निवसेद्धैर्यसंयुक्तस्तावत्कर्ताप्रयत्नतः॥ यत्रयत्रपुरीषंच मूत्रंचकुरुतेहयः ॥४४॥ कर्तव्यंहवनंविप्रैर्दातव्यंगोसहस्रकम् ॥ संलिख्यकांचनंपत्रंस्वनामबलचिह्नितम् ॥४५॥ हयस्यभालेबध्वाचकथनीय-मिदंवचः ॥ सर्वैःशृणुतराजानोविमुक्तोस्तिहयोमया ॥४६॥ कश्चिद्भूयःश्यामकर्णंप्रतिगृह्णातुचेद्बलम् ॥ गृह्णातियस्तंमानेनसजेतव्योबलात्स्व-यम् ॥ ४७ ॥ विप्राविंशतिसाहस्रायज्ञादौकीर्तितानृप ॥ वेदज्ञाःसर्वशास्त्रज्ञाःकुलीनाश्चतपस्विनः ॥४८॥ अत्रतेकथयिष्यामिसमर्थस्त्वंशृणु-ष्वच ॥ वाजिमेधेमहाराजविप्राणांदीर्घदक्षिणाम् ॥ ४९ ॥ तुरगाणांसहस्रंचगजानांशतमेवच ॥ द्विशतंस्यंदनानांचसहस्रंचगवांतथा ॥५०॥ विंशद्भारंसुवर्णानांप्रदातव्यंद्विजेद्विजे ॥ यज्ञस्यादौतथाचांतेईदृशीदक्षिणामता ॥५१॥ असिपत्रव्रतंकृत्वाब्रह्मचर्यसमन्वितः ॥ कौपत्न्यासार्द्ध-मेकत्रकुर्याच्चशयनंनिशि ॥ ५२ ॥ वर्षमात्रंमहाराजकर्तव्यंव्रतमीदृशम् ॥ दीनानांचप्रदातव्यमन्नंवाबहुशोधनम् ॥ ५३ ॥ विधिनानेनराजेंद्र क्रतुरेषोभविष्यति ॥ असिपत्रव्रतयुतोबहुपुत्रफलप्रदः ॥५४॥ भीष्मंविनाहिमदनंकोविजेतुंभवेन्नरः ॥ तस्माद्भीतानकुर्वंतिकठिनंचैनमद्भुतम् ॥ ५५ ॥ कामंप्रतिविजेतुंवैशक्तिस्तेविद्यतेयदि ॥ कुरुगर्गंसमाहूययज्ञारंभंनृपोत्तम ॥ ५६ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेयज्ञोद्योग वर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

भार सुवर्ण, इतनी दक्षिणा यज्ञके प्रारम्भमें और इतनीही दक्षिणा यज्ञके अन्तमें देनी चाहिये ॥५०॥५१॥ फिर असि पत्र नामका व्रत ब्रह्मचर्य सहित करे, और हे महाराज ! अपनी पत्नीको साथ लेकर भूमिमें शयन करे ॥५२॥ ऐसे हे महाराज ! एक वर्षतक व्रत करे दीन मनुष्योंको अन्न तथा बहुत धन दे, ॥५३॥ हे राजेन्द्र ! इस विधिसे यज्ञ होगा, असिपत्र व्रत सहित यह यज्ञ बहुपुत्र फलको देनेवाला है ॥ ५४ ॥ जैसे भीष्मजीके विनाकाम जीतनेको कोई समर्थ नहीं है, ऐसेही इसको करना कठिन है, इसी डरसे कोई मनुष्य इस कठिन अद्भुत व्रतको नहीं करता है ॥ ५५ ॥ यदि तुम्हारी जीतनेकी शक्ति है, तो, गर्गजीको बुलाकर हे नृपोत्तम ! तुम यज्ञारम्भ करो ॥ ५६ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां यज्ञोद्योगवर्णनं नामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

श्रीगर्गजी बोले कि,इस प्रकार उनके स्पष्ट अक्षर युक्त वाक्यको सुनकर राजर्षि उग्रसेन नारदजीसे मंद मुसकान करते बोले ॥१॥ कि हे मुने ! मैं यज्ञ करूँगा, यज्ञक योग्य घोडको मेरी अश्वशालासे लाइये ॥२॥ राजाके कथनको सुनकर नारदजीने कहा कि ठीक है, फिर श्रीकृष्णको साथ लेकर घोडेको देखनेके लिये अश्वशालामें गये ॥ ३ ॥ वहाँ जाकर नारदजीने धुऐंके रंगके मनोहर घोडे और कोई काले रंगके,कोई कमलके रंगके जो घोडे उनको देखा ॥ ४ ॥ फिर दूसरी अश्वशालामें गये, तो कोई दूधके रंगके, कोई जलके जैसे रंगके,कोई हलदीके रंगके कोई कुंकुमके रंगके, कोई ढाकके फूलके रंगके ॥ ५ ॥ वैसेही चित्र अंगवाले, कोई स्फटिकके जैसे अंगवाले मनके जैसे जिनके वेग कोई हरे रंगके कोई तामेके रंगके, कोई कसूमल रंगके, कोई तोतेके जैसे रंगके ॥ ६ ॥ कोई वीर बहूटीके रंगके, कोई गौर रंगके दिव्य और पूर्णमासीके चन्द्रमा जैसे कोई सिन्दूरिया रंगके, कोई

श्रीगर्गउवाच ॥ इतितद्वाक्यमाकर्ण्यस्पष्टाक्षरसमन्वितम् ॥ राजर्षिःप्राहदेवर्षिंविस्मितःप्रहसन्निव ॥ १ ॥ राजोवाच ॥ मुनेयज्ञंकरिष्येहंयज्ञयोग्यतुरंगमम् ॥ गत्वाममाश्वशालायांहयानांत्वंविलोकय ॥२॥ नृपस्यवचनंश्रुत्वातथेत्युक्त्वाचनारदः ॥ वाजिशालांययौतेन द्रष्टुंकृष्णेनघोटकम् ॥ ३ ॥ सगत्वातत्रतुरगान्धूम्रवर्णान्मनोहरान् ॥ श्यामवर्णान्कृष्णवर्णान्पद्मवर्णान्ददर्शवै ॥४॥ तथाचान्यत्रशालायां दुग्धाभाञ्जलसन्निभान् ॥ हरिद्राभान्कुंकुमाभान्पलाशकुसुमप्रभान् ॥५॥ तथाचित्रविचित्रांगान्स्फटिकांगान्मनोजवान्॥ हरिद्वर्णांस्ताम्रवर्णान्कौसुंभांगाञ्शुकप्रभान् ॥६॥ इंद्रगोपनिभान्गौरान्दिव्यान्पूर्णशशिप्रभान् ॥ सिंदूरांगानग्निवर्णान्बालसूर्यसमान्नृप ॥७॥ ईदृशांश्वहयान्दृष्ट्वानारदोविस्मयान्वितः ॥ उवाचकृष्णसहितमुग्रसेनंहसन्निव ॥ ८ ॥ नारदउवाच ॥ वाजिनस्तेमहाराजसर्वेह्यतिबहुसुंदराः ॥ ईदृशानैवस्वर्लोकेपृथिव्यांचरसातले ॥ ९ ॥ वर्ततेवाजिशालायांकृष्णस्यकृपयातव ॥ एकोपिश्यामकर्णस्तुतेषांमध्येनदृश्यते ॥ १० ॥ गर्गउवाच ॥ निशम्यवाक्यंदेवर्षेर्नृपस्तुदुःखितोभवत् ॥यज्ञोभविष्यतिकथंमनसीतिविचारयन् ॥११॥ उदासीनंनृपंदृष्ट्वाभगवान्मधुसूदनः ॥ अवोचत्प्रहसञ्शीघ्रंमेघगंभीरयागिरा ॥ १२ ॥ कृष्णउवाच ॥ शृणुमद्वचनंराजन्सर्वंशोकंविहायच ॥ गत्वाममाश्वशालांवैश्यामकर्णंविलोकय ॥१३॥

अग्निके रंगके और लालसूर्यके जैसे रंगके, हे नृप ! ॥७॥ ऐसे अनेकों रंगोंके घोडोंको देखकर नारद बडे विस्मयान्वित होकर श्रीकृष्णचन्द्र सहित उग्रसेनसे यह बोले ॥ ८ ॥ कि हे महाराज ! ये सब घोडे बहुतही सुन्दर हैं, ऐसे घोडे पृथ्वीमें,स्वर्गमें और रसातलमें कहीं भी नहीं हैं ॥९॥ ऐसे घोडे श्रीकृष्णकी कृपासे आपकी अश्वशालामें वर्तमान हैं, किन्तु इनमें श्यामकर्ण घोडा एकभी नहीं दीखता है ॥१०॥ गर्गजी कहते हैं, कि नारदजीके इस कथनको सुनकर राजा उग्रसेनको बडा दुःख हुआ,और विचारने लगे कि,अब यज्ञ कैसे होगा ॥११॥ तब मधु दैत्यके मारनेवाले भगवान् श्रीकृष्ण राजा उग्रसेनको उदास देखकर हँसकर मेघके समान गम्भीर वाणीसे यह बोले ॥ १२ ॥ कि हे राजन् ! सब शोकको छोडकर मेरा वचन सुनिये, मेरी अश्वशालामें चलकर वहाँ श्यामकर्ण घोडेको देखिये ॥ १३ ॥

भगवान् श्रीकृष्ण और नारदके कथनको सुनकर उसी समय राजाओंके शिरोमणि उग्रसेनजी श्रीकृष्णकी अश्वशालामें गये ॥१४॥उस अश्वशालामें जाकर हजारों घोडोंको देखा जो सब घोडे श्यामकर्ण थे,और यज्ञके योग्य थे, श्याम जिनके कर्ण, पीली जिनकी पूँछ, चन्द्रमाके जैसे जिनके वर्ण, और मनके समान जिनके वेग हैं ॥१५॥ सर्वांगसे सुन्दर, दिव्य और तप्त सुवर्णके जैसे जिनके मुख हैं, ऐसे उन बडे शुभ घोडोंको देखकर राजा उग्रसेनको बडा आश्चर्य हुआ ॥१६॥ बडे हर्षसे श्रीकृष्णको प्रणाम करके राजा उग्रसेन बोले कि,हे महाराज ! मैंने आज बहुतसे श्यामकर्ण घोडे देखे ॥१७॥ हे नाथ! आपके भक्तोंको इस भूमण्डलमें क्या दुर्लभ है ? अर्थात् कुछभी दुर्लभ नहीं है,हे कृष्ण ! जैसे प्रहलाद और ध्रुवका आपने मनोरथ पूरा किया ॥ १८ ॥ वैसेही आपकी कृपासे मेरा मनोरथ भी पूरा होगा, यह सुनकर हे राजन् ! शार्ङ्गधनुषधारी भगवान् यह बोले ॥ १९ ॥ कि, हे शार्दूल ! ये

इत्युदीरितमाकर्ण्यकृष्णेनचसुरर्षिणा ॥ हरेश्ववाजिशालांहिजगामनृपसत्तमः॥॥१४॥ददर्शतांसगत्वाचयज्ञयोग्यान्सहस्रशः॥श्यामकर्णान्पीतपुच्छांश्चन्द्रवर्णान्मनोजवान्॥१५॥ सर्वांगसुंदरान्दिव्याँस्तप्तहेममुखाञ्शुभान् ॥ एतान्दृष्ट्वाहयान्राजाविस्मयंपरमंगतः॥१६॥हर्षेणमहतायुक्तःकृष्णंनत्वाब्रवीद्वचः ॥ राजोवाच ॥ श्यामकर्णाश्वबहुशोमयाचाद्यनिरीक्षिताः ॥ १७ ॥ दुर्लभंकिंजगन्नाथत्वद्भक्तानांधरातले ॥ यथा मनोरथःपूर्वंप्रह्लादस्यध्रुवस्यच ॥ १८ ॥ आसीत्त्वत्कृपयाकृष्णतथाममममनोरथः ॥ इतिश्रुत्वाहरीराजञ्शार्ङ्गीभूपमवोचत ॥१९॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ एकंत्वंश्यामकर्णानामश्वानांचन्द्रवर्चसाम् ॥ गृहीत्वानृपशार्दूलकुरुयज्ञंममाज्ञया ॥ २० ॥ गर्गउवाच ॥ श्रुत्वावाक्यंहरिंप्राहकरिष्येहंक्रतूत्तमम् ॥ इत्युक्त्वातेनसहितोनारदेनसभां ययौ ॥२१॥ ततः कृष्णमनुज्ञाप्यनारदःसहतुंबुरुः ॥ राजानमाशिषंदत्त्वास्वयंभूसदनंययौ ॥ २२ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेतुरंगदर्शनंनामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ गर्गउवाच ॥ अथराजाकुशस्थल्यांगतेदेवर्षिसत्तमे ॥ स्वदूतान्प्रेषयामाससमामानेतुंनृपेश्वरः ॥ १ ॥ तऊचुरुग्रसेनस्यममाग्रेवचनंनराः ॥ दूताऊचुः ॥ देवदेवमुनेब्रह्मन्भूदेवानांशिरोमणे ॥ २ ॥ अस्माकंवचनंसर्वंकृपयाशृणु विस्तरात् ॥ कृष्णेच्छयाद्वारकायामुग्रसेनेनभोमुने ॥ ३ ॥

चन्द्रमाके समान तेजवाले श्यामकर्ण घोडे हैं,इनमेंसे एक घोडेको लेकर आप मेरी आज्ञासे यज्ञ करिये ॥ २० ॥ श्रीगर्गजी कहते हैं, कृष्णके इस कथनको सुनकर उग्रसेनने श्रीकृष्ण से कहा कि,मैं इस यज्ञोत्तमको करूँगा,यह कहकर कृष्णके साथ नारदजीको लेकर सभामें गये ॥२१॥ उसके बाद श्रीकृष्णसे आज्ञा लेकर तुम्बुरु गन्धर्व सहित नारदजी राजा उग्रसेनका मनोरथ पूर्ण कर ब्रह्मलोकको चले गये ॥२२॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे तुरंगदर्शनं नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ गर्गजी कहते हैं कि,नारदजीके चले जाने पर उग्रसेनने द्वारकामें मुझको बुलानेके लिये अपने दूत मेरे पास भेजे ॥१॥ तब वे दूत मेरे पास आकर मुझसे बोले कि, हे देवदेव ! हे मुने ! हे ब्राह्मणोंके मुकुटमणे ! ॥ २ ॥ कृपा करके हमारे वचनको विस्तार पूर्वक आप सुनिये, हे मुने ! आपके बुद्धिमान् शिष्य महाराज उग्रसेनने कृष्णकी इच्छासे द्वारकापुरीमें यज्ञोंमें उत्तम अश्वमेधयज्ञको प्रारम्भ किया है,

हे मुने ! उस यज्ञ महोत्सवमें आप बहुत शीघ्रतासे आइये ॥३॥४॥ हे नृप श्रेष्ठ ! मैं उनके कथनको सुनकर द्वारकापुरीको जाता हुआ गर्गाचल पर्वत से यज्ञका उत्सव देखनेके लिये आया ॥ ५ ॥ तब मैंने आनर्त नामके देशोंमें दूरसे अनेक प्रकारके वृक्षोंसे युक्त और बाग बगीचोंसे घिरी हुई द्वारकापुरी देखी ॥६॥ अनेक ताला व तथा वापी (बावडी) और अनेक पक्षियोंके समूहसे युक्त और नील रक्त, श्वेत और पीले रंगवाले कमलोंसे युक्त सरोवर जिसमें विद्यमान हैं ॥ ७ ॥ और हे नृपेश्वर ! कुमुद और शुक, पुष्प, बिल्व, कदम्ब वट, शाल, ताल, तमाल, मौलसरी, नागकेशर, केशर, कचनार, पीपल, जम्भीरी हारसिंगार, आम, आम्रातक ॥ ८ ॥ केतकी, दाख, केले, जामुन, नारियल, पिंडखजूर, खैर निम्बु, ॥ ९ ॥ अगर, तगर, चन्दन, रक्तचन्दन, ढाक, कपित्थ, पाकट, बेत, बांस ॥ १० ॥ मल्लिका, जुही, मेदिनी आदि वृक्ष, तथा मदन बाण ॥११॥ प्रियावास, गुलावाश,

निरूपितंक्रतुवरंतवशिष्येणधीमता ॥ त्वमागच्छमुनेशीघ्रंतस्मिन्यज्ञमहोत्सवे ॥४॥ तेषामहंवचःश्रुत्वाजग्मिवान्द्वारकांपुरीम् ॥ गर्गाचलान्नृ-
पश्रेष्ठयज्ञकौतुकसंयुतः ॥ ५ ॥ ततोदृष्टापुरीदूराद्यानर्तेद्वारकामया ॥ नानाद्रुमगणैर्जुष्टानानाचोपवनैर्युता ॥६॥ नाम्नातडागैर्वापीभिर्नानापक्षि-
गणैस्तथा ॥ नीलरक्तसिताम्भोजैःपीतपद्मैःसरोवरैः ॥ राजंतेकुमुदैश्चैवशुकपुष्पैर्नृपेश्वर ॥७॥ बिल्वैःकदंबैर्न्यग्रोधैःशालैस्तालैस्तमालकैः ॥
बकुलैर्नागपुन्नागैःकोविदारैश्चपिप्पलैः ॥ जम्बीरैर्हारसिंगारैराम्रैराम्रातकैरपि॥८॥केतकीभिर्गोस्तनीभिःकदलीभिश्चजंबुभिः॥श्रीफलैःपिंडखर्जू-
रैःखदिरैःपद्मबिंदुभिः ॥९॥ अगरैस्तगरैश्चैवचन्दनैरक्तचन्दनैः ॥ पलाशैश्चकपित्थैश्चपुक्षैर्वेत्रैश्चवेणुभिः ॥ १० ॥ मल्लिकाभिर्यूथिकाभिर्मेदि-
नीभिर्महीरुहैः ॥ तथामदनबाणैश्चसहस्रांशुसुखद्रुमैः ॥ ११ ॥ प्रियावंशैर्गुल्मवंशैःकर्णिकारैश्चपुष्पितैः ॥ सहस्राख्यैःकन्दुकैर्वैचागस्त्यैश्चसु-
दर्शनैः ॥१२॥ चन्द्रकाख्यैश्चकुन्दैश्चकर्णपुष्पैश्चदाडिमैः ॥ अनुजीरैर्नागरंगैराड्डुकीजानकीफलैः ॥१३॥ पूगीफलैर्बदामैश्चतूलैराजादनैर्द्रुमैः ॥
एलाभिःसेवतीभिश्चतथावैदेवदारुभिः ॥ १४ ॥ ईदृशैश्चमहावृक्षैःशोभितानगरीहरेः ॥ कूजंतियत्रराजेन्द्रमयूराःसारसाःशुकाः ॥१५॥ हंसाः
पारावताश्चैवकपोताःकोकिलास्तथा ॥ सारिकाश्चक्रवाकाश्चखंजनाश्चटकाःकिल ॥१६॥ एतेपक्षिगणाःसर्वेवैकुण्ठाच्चसमागताः ॥ कृष्णकृष्णे-
तिमधुरांवाणींगायंतियत्रहि ॥ १७ ॥ इत्थंपश्यन्व्रजन्राजन्ददर्शद्वारकामहम् ॥ ताम्ररौप्यसुवर्णैश्चत्रिभिर्दुर्गैश्चवेष्टिताम् ॥ १८ ॥

कर्णिकार, सहस्र कन्दुक, अगस्तिया सुदर्शन ॥ १२ ॥ चंद्रक, कुन्द, कर्णपुष्प, अनार, अञ्जीर, नारंगी, आड्डू, सीताफल, ॥ १३ ॥ सुपारी, बादाम, चिरोंजी, इलायची, सेंवती, देवदारु, ॥ १४ ॥ इस तरहके महावृक्षोंसे शोभित वह हरिकी नगरी है, और हे राजेन्द्र ! मोर, सारस, तथा शुक, (तोते) जहाँ बोल रहे हैं ॥१५॥ हंस, कबूतर, कपोत्त, कोकिल, मैंना, चकवा, खंजन, और चिडिया ॥१६॥ इत्यादिक सब पक्षी वैकुण्ठसे आये हुये जिस द्वारकामें हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! इस मधुरवाणीको गा रहे हैं ॥ १७ ॥ ऐसे देखते हुये मार्गमें-चलते हुये मैंने तांबा, चांदी और सुवर्णके तीन किलोंसे घिरी हुई द्वारकाको देखा ॥ १८ ॥

जो नगरी देवताओंके वृक्ष जिसमें लग रहे हैं, रैवत नामके पर्वतसे युक्त और खाई रूपावती गोमती नदी और समुद्रसे लिपटी है ॥१९॥ उत्सवके लिये लगी हुई बन्दन वारोंसे युक्त बडी रम्य,प्रसन्न मन मनुष्यों और सुवर्णके सुन्दर घरोंसे युक्त है ॥२०॥ और सोनेकी दुकानों तथा ध्वजा पताकाओंसे भूषित है, बडे बडे विष्णु मंदिर और शिवालयोंसे भर रही है ॥२१॥ बडे बडे शूरवीर यादव और हजारों विमान, सैकडों चौपडके बाजार, जिनमें सुवर्णके कलश, उनसे युक्त है ॥२२॥ अनेकों गली,और हाथियोंकी झूल, तथा हस्तिशाला, गोशाला, सभागृह और सुन्दर रजतमय मार्गोंसे युक्त है॥२३॥नौ लाख घर और सोलह हजार एक सौ आठ श्रीकृष्णके महलोंसे वेष्टित है ॥२४॥ जिस द्वारकाके एक एक द्वारपर कोटि २ शूरवीर,शस्त्रोंको लिये,कमर बांधे तैयार खडे चारों तरफसे रक्षा कर रहे हैं, ॥२५॥ और जिस द्वारकाके घर घरमें सब मनुष्य श्रीकृष्ण बलदेवके मंगल रूप नामोंका श्रवण

गिरिणारैवतेनापिदेववृक्षमयेनच ॥ रत्नाकरेणगोमत्यावृतांपरिखभूतया ॥१९॥ कृष्णस्यनगरींरम्यांकृतकौतुकतोरणाम् ॥ मुदायुक्तजनाकीर्णांसुवर्णभवनैर्युताम् ॥२०॥ तथाहाटकहट्टाभिःपताकाभिश्चमंडिताम् ॥ विष्णोश्चमंदिरैःप्रोच्चैर्महेशस्यालयैर्युताम् ॥२१॥ यदुभिश्चमहाशूरैर्विमानैश्चसहस्रशः ॥ शतशृंगाटकैश्चैवकलशैर्भर्मकर्बुरैः ॥२२॥ रथ्याभिर्मंदुराभिश्चदंतिशालाभिरेवच ॥ गोशालाभिश्च,शालाभिःसुरौप्यपथिभिर्युताम् ॥ २३ ॥ प्रासादैर्नवलक्षैश्चकृष्णस्यपरमात्मनः ॥ तथाषोडशसाहस्रैर्भवनैर्वेष्टितांपुरीम् ॥ २४ ॥ द्वारेद्वारेद्वारकायांशूरावीराश्चकोटिशः ॥ रक्षंत्यहर्निशंराजन्सर्वेशस्त्रधराःकिल ॥ २५ ॥ प्रगायंतिजनाःसर्वेश्रीकृष्णबलदेवयोः ॥ गृहेगृहेचनामानिशृण्वंतिचरितानिच ॥२६॥ इत्थंविलोकयन्सर्वान्सुधर्मांयामहंगतः ॥ कृष्णेतिपादुकारूढस्तुलसीमालयाजपन् ॥२७॥ अथोग्रसेनोराजर्षिर्दृष्ट्वामांचसमागतम् ॥ समुत्थायमुदायुक्तःशक्रसिंहासनात्किल ॥ २८ ॥ षट्पंचाशत्कोटिसंख्यैर्यादवैःसहभूपते ॥ नत्वासिंहासनेस्थाप्यपूजयामासचाहुकः ॥२९॥ मदंघ्रीचावनिज्याथयादवानांचसन्निधौ ॥ पादोदकंस्वशिरसिधृत्वाप्राहनृपेश्वरः ॥ ३० ॥ उग्रसेनउवाच ॥ विप्रेंद्रनारदमुखाच्छ्रुतंयस्यमहत्फलम् ॥ तंयज्ञमश्वमेधाख्यंकरिष्येहंतवाज्ञया ॥३१॥ यस्यांघ्रिसेवयापूर्वैमनोरथमहार्णवम् ॥ तेरुर्जगत्तृणीकृत्यसकृष्णश्चात्रवर्त्तते ॥३२॥

कर रहे हैं ॥२६॥ इस प्रकार सब द्वारकाकी शोभाको देखते २ पादुकाओंपर चढी हुई, तुलसीकी मालाको हाथमें लिये कृष्ण नामका जप करता मैं सुधर्मा सभामें गया ॥२७॥ तब उग्रसेन राजाने मुझको आया देखकर आनन्दसे युक्त होकर इन्द्रासनके समान अपने सिंहासनसे,हे भूपते ! छप्पन करोड यादवोंके सहित उठकर नमस्कार करके, सिंहासन पर बैठाकर पूजा की ॥ २८ ॥ २९ ॥ और मेरे चरणोंको यादवोंके सामने धोकर और पादोदकको अपने माथेपर रखकर ये वचन बोले ॥ ३० ॥ उग्रसेनजी बोले कि, हे महाराज ! ब्राह्मणोंके मुकुट नारदजीके मुखसे जिसका बडा फल मैंने सुना है, उस अश्वमेध यज्ञको आपकी आज्ञासे करूँगा ॥ ३१ ॥ जिनके चरणोंकी सेवासे पहिलेके राजा मनोरथ रूप बडे समुद्रको जगत्को तिनका बनाकर पार हो गये, वे कृष्ण यहाँ वर्तमान हैं ॥ ३२ ॥

परन्तु यह कहिये कि, इस
गर्गजी बोले कि, हे यादवेन्द्र!हे महाबाहो!आपका विचार बहुत ठीक है, अश्वमेध यज्ञके करनेसे त्रिलोकीमें आपकी बडी भारी कीर्ति होगी ॥ ३३ ॥ परन्तु यह कहिये कि, इस अश्वमेधके घोडेकी रक्षा करनेके लिये साथमें कौन जायगा, क्योंकि हे नृपेश्वर ! अपने शत्रु बहुत हैं, इससे घोडेकी रक्षा करनेके लिये साथ जानेवालेका निश्चय कर लेना चाहिये ॥ ३४ ॥ और आपको एक वर्षतक असिपत्र नामका व्रत करना चाहिये, तब यह यज्ञोत्तम निर्विघ्न होगा ॥३५॥ पहिले राजसूय यज्ञके समयमें प्रद्युम्नने सब राजाओंको जीता है, सो आज घोडेकी रक्षाके लिये फिर उनकोही नियुक्त करते हैं क्या ? ॥३६॥ गर्गजी कहते हैं कि,ऐसे मेरे वचनको सुनकर चिन्तामें मग्न हुये राजा उग्रसेनने मनुष्योंके सब दुःखों के दूर करनेवाले हरिको सामने खडे देखा॥३७॥तब श्रीकृष्णने उग्रसेनको शोकमें पूर्ण देखकर पानके बीडेको लेकर हँसते-हँसते कहा॥३८॥हे यादवों ! तुम सब शूरवीर हो, बडे

॥ श्रीगर्गउवाच ॥ यादवेंद्रमहाराजसम्यग्व्यवसितंत्वया ॥ हयमेधेनतेकीर्तिस्त्रिलोक्यांसंभविष्यति ॥३३॥ कःप्रयास्यतिरक्षार्थंतुरगस्यनृपेश्वर ॥ बहवःशत्रवःसंतितस्मात्तंनिश्चयंकुरु ॥ ३४ ॥ वर्षमात्रंप्रकर्त्तव्यमसिपत्रव्रतंत्वया ॥ तदातुकुशलेनापिभविष्यतिक्रतूत्तमः ॥ ३५ ॥ प्रद्युम्नेनराजसूयेजितासर्वामहीपुरा ॥ तुरंगस्याद्यरक्षार्थंतपुनःकिंनियोजसि ॥ ३६ ॥ इतिमद्वचनंश्रुत्वाराजाचिंतापरायणः ॥ ददर्शसंस्थितंनृणांसर्वदुःखहरंहरिम् ॥ ३७ ॥ तदैवभगवान्दृष्ट्वाशोकेनापूरितंनृपम् ॥ तांबूलवीटकंनीत्वाप्रहसन्निदमब्रवीत् ॥ ३८ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ भोःशूरायादवाःसर्वेबलिनोरणकोविदाः ॥ उग्रसेनस्यचाग्रेवैशृण्वंतुमम भाषितम् ॥३९॥ योमोचयतिराजभ्योहयमेधतुरंगमम् ॥ महारथीमनस्वीचसोयंगृह्णातुवीटकम् ॥ ४० ॥ इतिश्रुत्वाहरेर्वाक्यंयादवायुद्धकोविदाः ॥ परस्परंप्रपश्यन्तोगतमानाःपुनःपुनः ॥४१॥ संस्थितोघटिकामात्रंरेजेतांबूलवीटकः ॥ कृष्णस्यसुंदरेहस्तेयथातामरसेशुकः ॥ ४२ ॥ ततश्चसर्वेषुगतेषुतूष्णीमुषापतिश्चापधरोमहात्मा ॥ प्रगृह्यतांबूलचयंनृपेन्द्रंनत्वाचकृष्णंनिजगादसद्यः ॥ ४३ ॥ श्रीअनिरुद्धउवाच ॥ अहंहिश्यामकर्णस्यराजन्येभ्यश्चपालनम् ॥ करिष्यामिजगन्नाथतस्मान्मांत्वंनियोजय ॥ ४४ ॥

बलवान् और रण प्रवीण हो, सो तुम उग्रसेनके सामने मेरे कथनको सुनो ॥३९॥ जो कोई अश्वमेधके इस अश्वको राजाओंसे छुड़ावे, वह महारथी वीर पुरुष इस पानके बीड़ेको ग्रहण करे ॥४०॥ ऐसे कृष्णके वाक्यको सुनकर युद्धमें बड़े कोविद वार२परस्पर देखते वे समस्त यादव मानसे रहित होगये॥४१॥तब वह पानका बीड़ा एक घड़ीतक श्रीकृष्णके हाथमें धरा रहा, ऐसे शोभित हुआ,जैसे कमलमें बैठा तोता शोभित होता है॥४२॥ जब ऐसे सब यादव उ.र बीड़ेको देखकर चुप होगये, तब बड़े महात्मा, धनुर्धारी, ऊषाके पति, अनिरुद्ध उस पानके बीड़ेको उठाकर उग्रसेनको प्रमाण करके यह वचन बोले ॥४३॥ अनिरुद्ध बोले कि, मैं इस श्यामकर्ण घोडेकी राजाओंसे रक्षा करूँगा, इसलिये इस घोडेकी रक्षा करनेमें मुझको आप नियुक्त करिये ॥ ४४ ॥

और यदि मैं इस घोडेकी रक्षा न करूँ, तो हे गोविन्द ! मेरी दीनकी प्रतिज्ञाको सुनिये, हे दीनवत्सल ! ॥४५॥ जो कोई जातिका क्षत्रिय, वैश्य, अथवा शूद्र होकर ब्राह्मणीसे गमन करे, वह जिस गतिको प्राप्त हो, उस दुख देनेवाली गतिको मैं प्राप्त होऊँ ॥४६॥ और जो कोई पहिले ब्राह्मणको गुरु बनाकर फिर उसकी सेवा नहीं करे, वह मनुष्य जिस गतिको प्राप्त हो, उसी गतिको मैं प्राप्त होऊँ, यदि मैं इस घोडेकी रक्षा न कर सकूँ तो ॥४७॥ गर्गजी कहते हैं कि, सब यादव अनिरुद्धके कथनको सुनकर आश्चर्यमें मग्न हो गये, तब श्रीकृष्ण ने प्रसन्न होकर अनिरुद्धका हाथ पकडा ॥ ४८ ॥ और उस सुधर्मा सभामें हाथ जोडे खडे अनिरुद्धसे मेघके समान गम्भीरवाणीसे सभीके सुनते २ भगवान् यह बोले ॥४९॥ कि हे अनिरुद्ध ! तुम एक वर्षतक इस घोडेकी राजाओंसे रक्षा करके फिर यहाँ आ जाओ ॥५०॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखंडे भाषाटीकायां गर्गागमनादिवर्णनं नाम नवमोऽध्यायः

नकरिष्येघोटकस्यपालनंयदितच्छृणु॥प्रतिज्ञांममगोविंददीनस्यदीनवत्सल ॥ ४५ ॥ ब्राह्मणीगमनात्क्षत्रीवैश्यश्चशूद्रएवच ॥ यांगतिंप्राप्नुयान्नूनंतामहंदुःखदायिनीम् ॥ ४६ ॥ विप्रंकृत्वागुरुंपूर्वंपश्चात्तंयोनसेवते ॥ सयातियांगतिंदेवप्राप्नुयांतामहंध्रुवम् ॥ ४७ ॥ गर्गउवाच ॥ इतितद्वाक्यमाकर्ण्ययादवाविस्मयंगताः ॥ तदैवकृष्णःसंतुष्टोजग्राहपौत्रमेवच ॥ ४८ ॥ ततोहरिःसुधर्मायामनिरुद्धंकृतांजलिम् ॥ सर्वेषांशृण्वतांप्राहघननिर्ह्रादयागिरा ॥ ४९ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ अनिरुद्धतुरंगस्यवर्षमात्रंचपालनम् ॥ राजन्येभ्यश्चकृत्वात्वंपुनरागच्छचात्रवै ॥ ५० ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधचरित्रसुमेरौगर्गागमनंनामनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ इतिब्रुवति श्रीकृष्णेहंसस्थश्चतुराननः ॥ आजगामकुशस्थल्यामीश्वरेणसमन्वितः ॥ १ ॥ ततइन्द्रःकुबेरश्चयमोवरुणएवच ॥ वायुर्वायुसखश्चैवनैर्ऋतश्चनिशाकरः ॥२॥ एतेसमाययूराजन्कृष्णदर्शनकांक्षया ॥ ततश्चद्वादशादित्यावेतालाश्चमरुद्गणाः ॥३॥ विश्वेदेवाश्चसाध्याश्चगंधर्वाःकिन्नरास्तथा ॥ विद्याधराश्चमुनयःश्रीकृष्णंद्रष्टुमाययुः ॥४॥ तत्रागतानांदेवानामुग्रसेनेनमाधवः ॥ यथाविध्युपसंगम्यसर्वेषांमानमादधे ॥ ५ ॥ आसनेषूपविष्टेषुसभायांनिर्जरेष्वथ ॥ श्लाघांचकारसर्वेषांलीलानरवपुर्हरिः ॥ ६ ॥ अथब्रह्माहरेःपार्श्वेस्थितःशक्रेणनोदितः ॥ प्रत्युवाचजगन्नाथंबलभद्रसमन्वितम् ॥ ७ ॥

॥९॥ गर्गजी कहते हैं, ऐसे श्रीकृष्णजी कह रहे थे, तभी हंसपर बैठे ब्रह्माजी शिवजीको साथ लेकर आये ॥१॥ फिर इन्द्र कुबेर, यमराज, वरुण, पवन, अग्नि, निर्ऋति, चन्द्रमा ॥ २ ॥ ये सब श्रीकृष्णके दर्शनके लिये आये, उसके बाद बारह सूर्य, वेताल, मरुद्गण॥३॥विश्वेदेवा, साध्य, गन्धर्व, किन्नर, विद्याधर, मुनि, ये सभी कृष्णको देखनेके लिये आये ॥४॥ वहाँ आये देवताओंका उग्रसेनसहित श्रीकृष्णने विधिपूर्वक सन्मान किया ॥५॥ जब सब देवता अपने अपने आसनपर बैठ गये, तब लीलासे मनुष्य देह धारण जिन्होंने किया है, ऐसे भगवान्ने सबकी प्रशंसा की ॥६॥ तब भगवान्के पास बैठे, इन्द्रसे प्रेरित ब्रह्माजी बलदेवसहित श्रीकृष्णसे बोले ॥ ७ ॥

ब्रह्माजी बोले कि, हे कृष्ण ! यह आपका पौत्र अनिरुद्ध बालक है, हे हरे ! यह बडे २ राजाओंसे अश्वमेधके अश्वकी कैसे रक्षा करेगा ॥ ८ ॥ इससे आप इस बालकको घोड़े की रक्षा करनेके लिये मत भेजिये, क्योंकि इसमें बहुत विघ्न हैं, इसलिये प्रद्युम्नको भेजिये ॥ ९ ॥ अथवा बलदेवजीको भेजिये, अथवा आप जाइये, ब्रह्माजीके कथनको सुनकर श्रीकृष्णने हँसकर कहा कि ॥ १० ॥ मैं क्या करूँ, अनिरुद्ध अपने हठसे जाता है, मेरे किये निषेधको नहीं मानता है, इससे जिस किसीको निषेध करना हो, उसके पास जाकर निषेध करो ॥ ११॥ कृष्णके कथनको सुनकर ब्रह्माजी और चन्द्रमा दोनों प्रद्युम्नके पुत्र अनिरुद्धके पास गये ॥१२॥ और जब ब्रह्मा और चन्द्रमा ये दोनों अनिरुद्धके समीपमें गये तब सभीके देखते २ ही अनिरुद्धके शरीरमें लीन हो गये ॥१३॥ इस बातको देखकर सब इन्द्रादिक देवता उग्रसेनादिक राजा, यादव और सब मुनि विस्मयमें मग्न हो गये ॥१४॥

॥ ब्रह्मोवाच ॥ पौत्रस्तेबालकःकृष्णराजन्येभ्यश्चपालनम् ॥ कठिनंश्यामकर्णस्यकरिष्यतिकथंहरे॥८॥मातंप्रेषयतस्मात्त्वंरक्षणायहयस्यवै ॥ विघ्नाश्चबहवःसंतिप्रद्युम्नंप्रेषयस्वच ॥ ९ ॥ संकर्षणंवागोविन्दमथवारक्षत्वंहयम् ॥ इतितद्वचनंश्रुत्वानिजगौप्रहसन्हरिः ॥ १० ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अनिरुद्धोहठाद्यातिमन्निषेधंनमन्यते ॥ तस्मात्तन्निकटेगत्वानिषेधंकुरुयत्नतः ॥ ११ ॥ कृष्णस्यवाक्यमाकर्ण्यविधिश्चंद्रसमन्वितः ॥ ययौनिवारणार्थायानिरुद्धंकार्ष्णिनन्दनम् ॥ १२ ॥ यदागतौसमीपेतुसुरज्येष्ठकलानिधी ॥ विग्रहेह्यनिरुद्धस्यसद्यस्तौलीनतांगतौ ॥ १३ ॥बभूवुर्विस्मिताःसर्वेशिवशक्रादयःसुराः ॥ यादवामुनयश्चैवह्युग्रसेनादयोनृपाः ॥१४॥ वज्रनाभत्वत्पितरंसंस्तुवन्तिगणाःकिल॥परिपूर्णतमंतस्मादनिरुद्धंवदंतिहि ॥ १५ ॥ गर्गउवाच ॥ अथोग्रसेनोनृपतिःसभातलादुत्थायकृष्णंमनसाप्रणम्यच ॥ स्वांतःपुरंसुन्दररत्नवेष्टितंजगामराजन्क्रतुकौतुकावृतः ॥१६॥ गत्वाह्यंतःपुरेराजासुरेन्द्रसदनोपमे ॥ पर्यंकस्थांरुचिमतींशचीतुल्यांवराननाम् ॥१७॥ दासीभिःसेवितांराज्ञींवस्त्रालंकारवेष्टिताम् ॥ वीजितांचामरैःशुक्लैर्ददर्शनृपसत्तमः ॥१८॥ साविलोक्यागतंतत्रस्वपतिंयादवेश्वरम् ॥ उत्थायचादरंराजंश्चकारविधिनाकिल ॥१९॥ ततःस्थित्वासपर्यंकेवृष्णीशोस्वांप्रियांपराम् ॥ प्रोवाचप्रहसन्वाण्याघनशब्दगभीरया ॥२०॥ हयमेधंकरिष्येहंप्रियेकृष्णाज्ञयाह्यवै ॥ नरोयस्यप्रतापेनलभतेवाञ्छितंफलम् ॥ २१ ॥

गर्गजी कहते हैं कि हे वज्रनाभ ! समस्त मुनिगण तुम्हारे पिता अनिरुद्धको इसीसे साक्षात् परिपूर्णतम कहते हैं ॥ १५ ॥ इसके बाद राजा उग्रसेन सभासे उठकर मनसे कृष्णको प्रणाम करके, बडे आश्चर्यमें मग्न होकर, सुन्दर रत्नोंके बने, अपने दिव्य मन्दिरमें चले गये ॥ १६ ॥ वहाँ इन्द्रके घरके समान रनिवासमें पलंगपर बैठी, अनेक दासियाँ जिसकी सेवा कर रही हैं, वस्त्राभूषणसे श्रृंगार किये, श्वेतचमर जिसपर ढुल रहे, ऐसी शचीके समान दिव्य मुखवाली अपनी पत्नी रुचिमतीको देखा ॥१७॥१८॥ तब रानीने यादवेश्वर अपने पतिको देखकर हे राजन् ! उठकर विधिसे आदर किया ॥ १९ ॥ उसके बाद उग्रसेन पलंगपर बैठकर हँसते २ अपनी प्रिया रुचिमतीसे मेघके समान गम्भीरवाणीसे बोले ॥ २० ॥ कि हे प्रिये ! मैं कृष्णकी आज्ञासे आज अश्वमेधयज्ञ करूँगा, जिस यज्ञके प्रतापसे मनुष्य मनोवांछित फलको प्राप्त होता है ॥ २१ ॥

गर्गजी कहते हैं कि, उग्रसेनजीके इस कथनको सुनकर पुत्रके दुःखसे दुःखी कृपणा (दीन) रानी रुचिमती पुत्रोंकी याद करती हुई राजासे यह बोली ॥२२॥ कि हे राजन् ! पुत्रका मुख देखे विना मुझको देवता भी जिन्हें चाहते हैं ऐसी ये सब सम्पत्तियाँ नहीं अच्छी लगती हैं, आप भलेही यज्ञ करिये॥२३॥ यदि इस यज्ञके प्रतापसे मेरे सुन्दर पुत्र हों, तब तो हे नृपेश्वर ! मैं प्रसन्न होऊँगी ॥२४॥ तब इस वचनको सुनकर उग्रसेन बड़े दुखी हुये, और फिर रानीसे बोले, जैसे श्रद्धासे श्राद्धदेव मनु कहते हों ॥२५॥ उग्रसेन बोले कि हे भद्रे ! हे कल्याण रूपिणि ! पुत्रकी जो आशा है, वह दुख देनेवाली है, इससे इस पुत्रकी आशाको छोड़कर मोक्षके देनेवाले परात्पर कृष्णका सेवन करो ॥२६॥ देखो, मैं वृद्ध हूँ और तुमभी वृद्ध हो, कहो पुत्र कैसे होगा, इससे अज्ञानजन्य बंधनके कारण शोकको छोड़ो ॥२७॥ यादवेन्द्र उग्रसेनके कहे विज्ञान देनेवाले वचनको सुनकर रुचिमती रानी पतिसे बोली ॥२८॥ हे राजन् ! यज्ञके करनेसे वांछित फल मिलता है, मैं तो मरे हुये पुत्रोंको प्रत्यक्ष आये हुये देखना चाहती हूँ ॥२९॥ यदि आप ऐसा वाक्य मुझको कहेंगे कि, मरे हुये आदमियोंका

॥ गर्गउवाच ॥ इतितद्वचनंश्रुत्वापुत्रदुःखेनदुःखिता ॥ स्मरंतीकृपणापुत्रान्प्रत्युवाचनृपेश्वरम् ॥ २२ ॥ राज्ञ्युवाच ॥ पुत्रदर्शनहीनायारा-जन्मेसर्वेसंपदः ॥ नरोचंतेसुरैःप्राथ्र्याःसुखेनत्वंक्रतुंकुरु ॥२३॥ यदियज्ञप्रतापेनपुत्रोभवतिसुन्दरः॥तदाप्रसन्नचित्ताहंभविष्यामिनृपेश्वर॥२४॥ तस्यावाक्यंसमाकर्ण्यनृपःखिन्नमनाह्यभूत् ॥ पुनराहप्रियांतत्रश्रद्धांश्राद्धसुरोयथा ॥ २५ ॥ राजोवाच ॥ शृणुभद्रेप्रवक्ष्यामिपुत्राणांबहु दुःखदाम् ॥ त्यक्त्वाविमुक्तिदंसाक्षात्कृष्णंभजपरात्परम् ॥२६॥ अहंवृद्धस्तुत्वंवृद्धाकथंपुत्रोभविष्यति ॥ तस्मादज्ञानजंशोकंत्यजबंधनकार-णम्॥२७॥ श्रुत्वातुयादवेंद्रस्यवाक्यंविज्ञानदंपरम् ॥ राजन्रुचिमतीप्राहयदूनांप्रवरंपतिम् ॥ २८ ॥ रुचिमत्युवाच ॥ राजन्यज्ञप्रतापेन प्राप्यतेवाञ्छितंफलम् ॥ अहंतुकामयेद्रष्टुंहतपुत्रान्समागतान् ॥२९॥यदित्वमीदृशंवाक्यंमृतानांदर्शनंकुतः॥ वदिष्यसिमदग्रेहिततोन्यच्छृणु मन्मुखात् ॥ ३० ॥ कृष्णेनदत्तंतत्पुत्रंगुरवेगुरुदक्षिणाम् ॥ तद्वत्स्वपुत्रान्राजेंद्रकामयेद्रष्टुमागतान् ॥ ३१ ॥ गर्गउवाच ॥ इतिश्रुत्वाह्व-यामासमांचकृष्णंबृहच्छ्रवाः ॥ तयोःसपर्यामहतीमागताभ्यांचकारह ॥३२॥ तौपूजयित्वाभिप्रायंताभ्यांसर्वन्यवेदयत् ॥ उग्रसेनस्यवाक्यंवै श्रुत्वामद्वचनाद्धरिः ॥ ३३ ॥ उपशक्रोयथाशक्रंप्राहतद्वन्नृपेश्वर ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ शृणुराजँस्तवसुताः प्रधनेनिहताः पुरा ॥ ३४ ॥ तेसर्वेदिव्यदेहेनवर्ततेदिविदेववत् ॥ तस्मात्त्वंनृपशार्दूलपुत्रशोकंविहायच ॥ ३५ ॥

दर्शन कैसे हो सकता है ? तो आप मेरे इस कथनको सुनिये॥३०॥ श्रीकृष्णने मारा हुआ गुरुका पुत्र लाकर गुरु दक्षिणामें कैसे दिया, इसी तरहसे हे राजेन्द्र ! मैं भी अपने मरे हुये पुत्रोंको आये हुये देखना चाहती हूँ ॥३१॥ गर्गजी कहते हैं कि ऐसे रानीके कहे वचनको सुनकर उग्रसेनने श्रीकृष्णजीको और मुझको अपने पास बुलाकर आगतोंका जो सत्कार होता है, वह सब किया ॥३२॥ फिर पूजन करके अपना अभिप्राय कहा तब उग्रसेनके वाक्यको सुनकर श्रीकृष्ण मेरे कहनेसे ॥३३॥ जैसे इन्द्रसे उपेन्द्र कहे वैसेही हे राजन् ! भगवान् बोले कि, हे राजन् ! आप सुनियें, आपके जो पुत्र संग्राममें मरे हैं ॥ ३४ ॥ वे सब दिव्य देह होकर स्वर्गमें देवताओंकी तरह रहते हैं, वे अब नहीं आसकते हैं, इसलिये आप पुत्र शोकको छोड़कर ॥ ३५ ॥

धैर्य धारण कर अश्वमेध यज्ञको करिये, जो यज्ञ सब यज्ञोंमें श्रेष्ठ है हे नृपते! मैं यज्ञके अन्तमें आपके जो पुत्र मर गये हैं, उनको दिखा देऊँगा ॥३६॥ ऐसे राजा उग्रसेन कृष्णके कथनको सुनकर अपनी प्रिया (रानी) को समझाकर फिर अपने सुजन जनोंके साथ सभामें गये ॥३७॥ श्रीकृष्ण सहित उग्रसेनको सभामें आया देखकर सब दिक्पाल, देवताओं सहित बलदेवजी और शिवजीने प्रणाम किया ॥३८॥ हे वज्रनाभे! राजा उग्रसेनका तप मैं तुम्हारे सामने क्या वर्णन करूँ, जिनको श्रीकृष्ण चन्द्रादिक नमस्कार करते हैं ॥३९॥ तब उग्रसेनजी सब देवताओंको प्रणाम करके लज्जित होकर मनमें विचार करते दिव्य इन्द्रासनपर नहीं बैठे ॥४०॥ तब श्रीकृष्णने अपने हाथसे अपने भक्त उग्रसेनको पकडकर इन्द्रासनपर बैठाया ॥४१॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायामश्वमेधप्रारम्भोपक्रमवर्णनं नामदशमोऽध्यायः॥१०॥ गर्गजी बोले कि उसके बाद राजा उग्रसेनने कृष्णकी प्रेरणासे

अश्वमेधंक्रतुवरंकुरुधैर्येणभूपते ॥ दर्शयिष्याम्यहंसर्वान्यज्ञस्यांतेचतेसुतान् ॥३६॥ निशम्यकृष्णवचनमुर्वीशःस्वांप्रियांमुदा ॥ आश्वास्यच शुभैर्वाक्यैःसुधर्मांसुजनैर्ययौ ॥३७॥ आगतंतुनृपंवीक्ष्यश्रीकृष्णेनसमन्वितम् ॥ दिक्पालाश्चप्रणेमुर्वैरामेशानादयःसुराः ॥ ३८॥ उग्रसेनस्य भूपस्यवज्रनाभेतपःपरम् ॥ किंवर्णयामियंसर्वेश्रीकृष्णाद्यानमंतिहि ॥ ३९ ॥ यादवेंद्रस्तुसर्वान्वैदेवान्नत्वाविलज्जितः ॥ शक्रसिंहासनेदिव्ये नारुरोहविचारयन् ॥ ४० ॥ तदैवकृष्णोभगवान्गृहीत्वापाणिनानृपम् ॥ स्वभक्तंस्थापयामासतस्मिन्वैवासवासने ॥ ४१ ॥ इतिश्रीमद्गर्ग संहितायांहयमेधखंडेराजराज्ञीसंवादेदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ अथराजासुधर्मायांवासुदेवेननोदितः ॥ संस्थितान्नृपत्विजो वव्रेमूर्ध्नानम्यप्रसाद्यच ॥ १ ॥ पराशरश्चव्यासश्चदेवलश्च्यवनोऽसितः ॥ शतानन्दोगालवश्चयाज्ञवल्क्योबृहस्पति ॥ २ ॥ अगस्त्योवा-मदेवश्चमैत्रेयोलोमशःकविः ॥ अहंक्रतुर्जैमिनिश्चवैशंपायनएवच ॥ ३ ॥ पैलःसुमंतुःकण्वश्चभृगूरामोकृतव्रणः ॥ मधुच्छंदोवीतहोत्रोकव-षोधौम्यआसुरिः ॥ ४ ॥ जाबालिर्वीरसेनश्चपुलस्त्यःपुलहस्तथा ॥ दुर्वासाश्चमरीचिश्चह्येकतश्चद्वितस्त्रितः ॥ ५ ॥ अंगिरानारदश्चैवपर्व तःकपिलोमुनिः ॥ जातूकर्ण्योह्युतथ्यश्चसंवर्तश्चमृगीसुतः ॥ ६ ॥ शांडिल्यःप्राड्विपाकश्चकहोडःसुरतोमुनुः ॥ कचःस्थूलशिराश्चैवस्थू-लाक्षःप्रतिमर्दनः ॥ ७ ॥

सुधर्मा सभामें बैठे ऋत्विज ब्राह्मणोंको मस्तकसे प्रणाम करके प्रसन्न करके वरण किया ॥१॥ पराशर, व्यास, देवल, च्यवन, असित, शतानन्द, गावल, याज्ञवल्क्य, बृहस्पति ॥२॥ अगस्त्य, वामदेव. मैत्रेय, लोमश, कवि, मैं गर्ग, जैमिनि, वैशम्पायन ॥ ३ ॥ पैल, सुमन्तु, कण्व, भृगु, परशुराम, अकृतव्रण, मधुच्छंदा वीतिहोत्र, कवष, धौम्य, आसुरि ॥४॥ जाबालि, वीरसेन पुलस्त्य, पुलह दुर्वासा, मरीचि, एकत, द्वित त्रित ॥५॥ अंगिरा, नारद, पर्वत, कपिल, जातूकर्ण्य, उतथ्य, संवर्त, ऋष्यशृंग, ॥६॥ शांडिल्य, प्राड्विपाक, कहोड़ सुरत, मुनु, कच, स्थूलशिरा स्थूलाक्ष, प्रतिमर्दन ॥ ७ ॥

बकदाल्भ्य, कौंडिन्य रैभ्य,द्रोण, कृप, प्रकटाक्ष, यवक्रीत,वसुधन्वा, मित्रभू॥८॥अपान्तरतमा, दत्तात्रेय, मार्कण्डेय, जमदग्नि, कश्यप, भरद्वाज, गौतम ॥९॥ अत्रि, वसिष्ठ, विश्वामित्र, पतंजलि,कात्यायन, पाणिनि, और वाल्मीकि, आदिक, सब ऋषियोंको ऋत्विज वरण किये,हे नृप ! यादवेन्द्र उग्रसेनसे पूजे गये वे सब ऋषिलोग प्रसन्न हुये, उसके बाद उग्रसेनसे निमन्त्रिण किये हुये वे ऋत्विज राजा उग्रसेनसे बोले॥१०॥११॥ कि हे उग्रसेन ! हे महाराज ! हे सुरासुर नमस्कृत ! तुम यज्ञ करो,तुम्हारा यज्ञ श्रीकृष्णकी कृपासे पूर्ण होगा ॥१२॥ ऐसे उनके कथनको सुनकर सर्वेन्द्रियों सहित प्रसन्न होकर उग्रसेनने सब यज्ञकी सामग्री तय्यार की ॥ १३ ॥ तब ब्राह्मणोंने स्वर्णके हलसे यज्ञभूमि जोती, फिर पिण्डारक नामके तीर्थमें विधिपूर्वक राजाको दीक्षा दी ॥१४॥ तब चार योजनतक बहुतसी पृथ्वीको जोतकर यज्ञके लिये मण्डप रचे ॥ १५ ॥ उनके मध्यमें योनि और मेखला सहित कुण्ड बनाकर उसमें

बकदाल्भ्यश्चकौंडिन्योरैभ्योद्रोणःकृपस्तथा॥प्रकटाक्षोयवक्रीतोवसुधन्वाचमित्रभूः ॥८॥ अपांतरतमोदत्तोमार्कंडेयोमहामुनिः॥जमदग्निःक-
श्यपश्चभरद्वाजश्चगौतमः ॥९॥ अत्रिर्मुनिर्वसिष्ठश्चविश्वामित्रःपतंजलिः॥कात्यायनिःपाणिनिश्चवाल्मीक्याद्याश्चऋत्विजः॥१०॥पूजिता
यादवेंद्रेणप्रसन्नास्तेभवन्नृप ॥ ततःसर्वेऋत्विजश्चनृपमूचुर्निमंत्रिताः ॥ ११ ॥ मुनयऊचुः ॥ उग्रसेनमहाराजसुरासुरनमस्कृत ॥ यज्ञं
कृष्णस्यकृपयाकुरुसोपिभविष्यति ॥ १२ ॥ इतितेषांवचःश्रुत्वापरितुष्टाखिलेंद्रियः ॥ सर्वान्वैक्रतुसंभारानाजहारांधकेश्वरः ॥ १३ ॥
ततःकृष्ट्वायज्ञभूमिंविप्राःकनकलांगलैः ॥ पिंडारकेयथान्यायंदीक्षायांचक्रिरेनृपम् ॥१४॥ चतुर्योजनपर्यंतंविलिख्यबहुशोमहीम् ॥ यज्ञस्यार्थे
नृपस्तत्ररचयामासमंडपान् ॥ १५ ॥ योनिमेखलयायुक्तंमध्यकुंडंविधायच ॥ तस्मिन्वैस्थापयामासविधिनाजातवेदसम् ॥ १६ ॥ रत्नानेकै
र्विरचितांपताकाभिर्युतांसभाम् ॥ ममवाक्याद्वज्रनाभेरचयामासचाहुकः ॥१७॥ अथदृष्ट्वासभांकृष्णोनिजगौस्वसुतंप्रति ॥ श्रीकृष्णउवाच॥
प्रद्युम्नशृणुमद्वाक्यंतन्निशम्यकुरुत्वरम् ॥ १८ ॥ गत्वाशस्त्रधरैःशूरैर्यत्नेनहयमानय ॥ गर्गउवाच ॥ इतिश्रुत्वाहरेर्वाक्यंप्रद्युम्नोधन्वि-
नांवरः ॥ १९ ॥ तथेत्युक्त्वाहयंनेतुंवाजिशालांजगामह ॥ ततःकृष्णेनरक्षार्थंस्वपुत्राश्चहयस्यवै ॥ २० ॥ प्रेपितावाजिशालायांभानुसांबादयो
नृप ॥ सगत्वावाजिशालांरुक्मिणीनन्दनोबली ॥ २१ ॥

विधिपूर्वक अग्नि स्थापन कराया ॥१६॥ फिर गर्गजी कहते हैं कि,हे वज्रनाभे ! मेरे कहनेसे उग्रसेनने उसी भूमिमें अनेक ध्वजापताकाओंसे युक्त सभा बनवाई ॥१७॥ तब उस सभाको देखकर श्रीकृष्ण अपने पुत्रसे बोले कि, हे प्रद्युम्न ! तुम मेरे कथनको सुनो, और उसे जल्दीसे करो ॥ १८ ॥ शस्त्रधारी वीरोंको साथ लेकर पहिले जाकर घोडेको लेआओ, तब श्रीकृष्णके वचनको सुनकर धनुर्धरोंमें मुख्य प्रद्युम्न ॥ १९ ॥ "बहुत ठीक है" ऐसे कहकर घोडेको लेनेके लिये पहिले अश्वशाला (घुडसाल) में गये, तब श्रीकृष्णने अश्वकी रक्षाके लिये भानु,साम्ब,आदिक अपने पुत्र भेजे कि,जाओ,बड़ी सावधानीसे घोडेको लेआओ ॥२०॥ तब हे नृप ! बड़े बली रुक्मिणी नन्दन प्रद्युम्नने अश्वशालामें जाकर, स्वर्णकी

सांकलोंमें बन्धे हजारों घोडे देखे, उनमेंसे यज्ञके योग्य एक घोडेको देखकर हँसते हुये प्रद्युम्नने खेल करके बंधनसे खोलकर छोड़ दिया,वह छोड़ा हुआ घोड़ा धीरे २ शालाके बाहिर आया ॥२१॥२२॥२३॥ लाल जिसका मुख है, पीली जिसकी पूंछ है, श्याम जिसका एक कर्ण (कान) है, मोतियोंकी मालासे शोभित है, और बड़ा दिव्य जिसका दर्शन है ॥२४॥ श्वेत छत्रसे युक्त है,शृंगार जिसका होरहा है, और आगे पीछे तथा बीचमें कृष्णके पुत्रोंसे अच्छी तरहसे रक्षित है ॥२५॥ जैसे भगवान्‌की देवता सेवा करते हैं, ऐसे जिनकी सेवा कर रहे हैं,और अनेक खण्ड मण्डलेश्वर राजाओंसे वह घोड़ा रक्षित है ॥२६॥ वह अश्व अपने खुरोंसे भूतलको विदीर्ण करता हुआ आया,तब प्रसन्न हुये राजा उग्रसेनने श्याम जिसका कान है,उस घोडेको आया देखकर ॥२७॥ उसकी करने योग्य विधिके लिये मुझको आज्ञा दी कि, महाराज ! इसकी कर्तव्य विधिको करिये,तब मैंने रुचिमती रानीसहित

स्वर्णशृंखलयाबद्धाञ्छ्यामकर्णान्सहस्रशः॥ विलोक्यैकंस्वहस्तेनयज्ञयोग्यंतुरंगमम्॥२२॥प्रहसन्मोचयामासबंधनान्नृपलीलया॥सहयोनिर्य-
यौमुक्तोशालायाश्चशनैःशनैः ॥२३॥ रत्नाननोपीतपुच्छःश्यामकर्णोमनोहरः ॥ स्रग्भिर्मुक्ताफलानाञ्चशोभितोदिव्यदर्शनः ॥२४॥ श्वेतात
पत्रेणयुतोचामरैःसमलंकृतः ॥ अग्रतोमध्यतश्चैवपृष्ठतश्चहरेसुताः ॥२५॥ सेवंतेहरिराजंवैसुरासर्वेहरिंयथा ॥ तथान्यैरक्षमाणस्तुमण्डलेशैस्तु-
रंगमः ॥२६॥ प्राप्तोर्थमंडपंकुर्वन्खुरक्षततलांमहीम् ॥ नृपोवीक्ष्यागतंतत्रश्यामकर्णंमुदान्वितः॥२७॥प्रेषयामाससमांराजन्क्रियाकर्तव्यतांप्रति॥
सोहंनृपंचसंस्थाप्यरुचिमत्यासमन्वितम् ॥२८॥पिंडारकेप्रयोगंवैकारयामासधर्मतः॥नृपश्चैत्रपूर्णिमायांदीक्षितोजिनसंवृतः॥२९॥ असिपत्र-
व्रतंराजन्सचकारमदाज्ञया॥अहंतुयादवेन्द्रस्यकुलपूर्वंगुरुर्मुनिः॥३०॥सर्वेषांचैवविप्राणामाचार्योह्यभवन्नृप॥ अथविप्राब्रह्मघोषैःश्रीकृष्णस्या-
ज्ञयास्थिताः ॥३१॥ सर्वेप्रपूजयामासुर्हेरंबादीन्सुरान्पृथक्॥ ततःसर्वेमुनिगणाःसंस्थाप्यतुरगंनृप ॥ काश्मीरचन्दनेनापिपुष्पस्रग्भिश्चतंदुलैः
॥ ३२ ॥ नीराजनादिभिर्धूपैःसुधाकुण्डलकादिभिः ॥ पूजयित्वाहयंभूपंदानार्थंतुह्यनोदयन् ॥३३॥ ततःश्रुत्वाहुकःशीघ्रंपूर्वंमह्यंददौधनम् ॥
एकलक्षंतुरंगाणांसहस्रंहस्तिनांतथा ॥ ३४ ॥ द्विसहस्रंरथानांचधेनूनांलक्षमेवच ॥ शतभारंसुवर्णानामीदृशींदक्षिणांनृपः ॥३५॥ निमंत्रितेभ्यो
विप्रेभ्यउग्रसेनोनृपस्ततः ॥ यथोक्तांदक्षिणांराजन्प्रददौतांचत्वंशृणु ॥ ३६ ॥

उग्रसेनजीको स्थापन कराया ॥२८॥ तब उग्रसेनने चैत्र शुक्लापूर्णिमाके दिन काला मृगचर्म पहिना,और दीक्षा ली ॥२९॥ और मेरी आज्ञासे असिपत्र नामका व्रत किया, हे नृप ! यादवेन्द्र उग्रसेनका कुल पूज्य गुरु होनेके कारण॥३०॥सब ब्राह्मणोंका आचार्य मैं ही हुआ,तब सब ब्राह्मण श्रीकृष्णकी आज्ञासे वेदध्वनि करनेको प्रवृत्त हुये॥३१॥और गणपत्यादिक देवताओंकी पूजा कराई,उसके बाद सब मुनिगणोंने उस घोडेको खड़ा करके केसर,चन्दन,फूलमाला और चावल॥३२॥ आरती, धूप और कुण्डलादिकोंसे घोडेका पूजनकर शृंगार करके राजासे कहा कि, आप दान करिये॥३३॥तब राजा उग्रसेनने इस वाक्यको सुनकर शीघ्र सबके पहिले मेरे लिये दान दिये,एक लाख तो घोड़े, एक हजार हाथी॥३४॥ दो हजार रथ,एक लाख गौ सौ भार स्वर्णकी मेरे लिये दक्षिणा दी ॥३५॥ उसके बाद निमन्त्रित किये हुये ब्राह्मणोंको पूजकर यथोक्त विधिसे दक्षिणा दी,वह तुम सुनो ॥ ३६ ॥

एक हजार घोड़े, दोसौ हाथी, दोसौ रथ, एक हजार गौ ॥ ३७ ॥ और बीस भार स्वर्णके, इतनी दक्षिणा एक २ ब्राह्मणको दी, बाकी और जो बिना निमन्त्रणके आये थे, उन एक २ को विधि विधानसे प्रणाम करके ॥ ३८ ॥ एक एक हाथी, एक २ गौ, एक २ रथ, एक २ घोड़ा, एक २ भार सुवर्ण उग्रसेन राजाने दक्षिणा दी ॥३९॥ इस प्रकार दान करके फिर घोडेके ललाटमें केसरिया चन्दनका तिलक लगाकर स्वर्णका एक पत्र माथेमें बांधा ॥४०॥ उस पत्रमें सब यादवोंके सामने उग्रसेन राजाका उत्कट प्रताप मैंने लिखा ॥४१॥ कि चन्द्रवंशमें यदुराजाके वंशमें एक उग्रसेन नामके राजा हैं, इन्द्रादिक देवता जिनकी आज्ञाके अनुसार आचरण करते हैं ॥ ४२ ॥ और श्रीकृष्ण भगवान् जिनके सहायक हैं, जो भक्तोंके पालन करनेवाले उग्रसेनके स्नेहसे द्वारकामें निवास करते हैं ॥४३॥ उन श्रीकृष्णकी आज्ञासे राजाधिराज राजा उग्रसेन चक्रवर्ती अपने यज्ञके लिये हठसे अश्वमेधयज्ञको कर रहे हैं ॥ ४४ ॥ उन्होंने बड़ा उत्तम यह श्यामकर्ण घोड़ा अश्वमेधका छोड़ा है, इस घोड़का रक्षक श्रीकृष्णका पौत्र अनिरुद्ध इस घोड़के संगमें हैं ॥ ४५ ॥ गज, अश्व, रथोंपर बैठे वीरोंकी सेनाके समूहसे युक्त जो कोई राजा अपने आपको शूरवीर माननेवाले भूमिमें हैं ॥४६॥ वे राजा सुवर्णपत्र जिसके माथेपर बंधा है, ऐसे अश्वमेधके घोड़े को अपने बलसे पकड़ें, तब राजाओंके पकड़े इस घोड़को धर्मात्मा अनिरुद्ध अपनी भुजाओंके बल वीर्यसे बड़े हठसे छुडायेगा, और जो राजा घोडेको न पकड़े,वह राजा अनिरुद्धके चरणोंमें आकर गिरो॥४७॥४८॥ ऐसे लिखकर सुवर्णपत्र जब घोड़के माथेमें बांधा, तब यादवोंने शंख बजाये, और कांस्यताल, मृदंगादिक, तथा भेरी और गोमुखा बजे ॥ ४९ ॥ श्रीकृष्ण और बलदेव दोनोंके चरित्रोंको गन्धर्व गाने लगे, और अप्सराएं बड़े आनन्दसे नृत्य करने लगीं ॥ ९० ॥

घोटकानांसहस्रंचद्विपानांशतमेवच ॥ रथानांद्विशतंचैवसहस्रंचगवांतथा ॥ ३७॥ विंशद्भारंचहेमानामीदृशींदक्षिणांपुनः ॥ अथागतेभ्योविप्रेभ्योनत्वाराजाविधानतः ॥ ३८ ॥ गजमेकंरथंगांचस्वर्णभारंचघोटकम् ॥ एकैकस्मैचविप्रायदक्षिणांप्रददौनृपः ॥ ३९ ॥ एवंकृत्वातुदानंवैललाटेतुरगस्यच ॥ कमनीयेकुंकुमाद्यैःस्वर्णपत्रंबबंधह ॥४०॥ तत्राहमुग्रसेनस्यप्रतापंवीर्यमूर्जितम् ॥ ततोऽलिखंसभायांवैयादवानांचपश्यताम् ॥४१॥ चन्द्रवंशेयदुकुलउग्रसेनोविराजते ॥ इन्द्रादयस्सुरगणायस्यादेशानुवर्तिनः ॥४२ सहायोयस्यभगवाञ्श्रीकृष्णोभक्तपालकः ॥ अस्तिवैद्वारकापुर्यांतद्भक्त्यानिवसन्हरिः ॥४३॥ तद्वाक्याद्धयमेधंसउग्रसेनोनृपेश्वरः ॥ चक्रवर्तीहठाद्यज्ञंस्वयशोर्थेकरोतिहि ॥४४॥ मोचितस्तेनतुरगोहयानांप्रवरःशुभः ॥ तद्रक्षकःकृष्णपौत्रोऽनिरुद्धोवृकदैत्यहा ॥४५॥ गजाश्वरथवीराणांसेनासंघसमन्वितः॥ राजानोयेकरिष्यंतिराज्यंकौशूरमानिनः ॥ ४६ ॥ तेगृह्णंतुयज्ञहयंस्वबलात्पत्रशोभितम् ॥ तम्मोचयतिधर्म्मात्मागृहीतंचहयंनृपैः ॥४७॥ स्वबाहुबलवीर्येणानिरुद्धोलीलयाहठात् ॥ तस्यान्यथाचपदयोःपतित्वायांतुधन्विनः ॥४८॥ इतिपत्रेचलिखितेदध्मुःशंखान्यदूत्तमा ॥ कांस्यतालमृदंगाद्यानेदुर्भेर्यश्चगोमुखाः ॥ ४९ ॥ मंगलानिचरित्राणिश्रीकृष्णबलदेवयोः ॥ गंधर्वास्तत्रगायंतिननृतुरप्सरसोमुदा ॥ ५० ॥

उसके वाद बड़े प्रसन्न होकर उग्रसेनने सब यादवोंके देखते हुये प्रद्युम्नके पुत्र अनिरुद्धको उस घोड़ेकी रक्षा करनेका आदेश दिया, कि यह कहीं जाने न पावे, तुम वशमें रखो ॥९१॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां हयपूजनं नामैकादशोऽध्यायः ॥११॥ गर्गजी कहते हैं कि, फिर द्वारकामें उग्र सेनने उस अश्वका पूजन कर, विधिपूर्वक चमर बांधकर, वेदध्वनिके साथ उसको छोड़ा ॥१॥ तब वह अश्वराट् भी सुधा कुण्डलकोंको खाकर स्वर्णकी मालाओंसे शोभित निकला ॥२॥ उस अश्वकी रक्षाके लिये उग्रसेनने बड़े आदरसे वृकासुरके मारनेवाले अनिरुद्धको आज्ञा देकर यह कहा ॥ ३ ॥ उग्रसेन बोले कि हे श्रीकृष्णपौत्र प्राद्युम्ने (प्रद्युम्न पुत्र) ! जो तुमने वचन कहा कि हम घोड़ेकी रक्षा करेंगे, वह अपनी इच्छासे जल्दीसे करो ॥ ४ ॥ मेरे राजसूययज्ञमें पहिले प्रद्युम्नने भूमिकी रक्षा की थी, तुम भी तो उन्हींके बड़े पुत्र हो, धनुर्धारी और शूरवीर बड़े बलवान् हो ॥ ५ ॥ शकुनिका भाई वृकनामका बड़ा बली दैत्य तुमने मारा, सब राजा संग्राममें जीते और भीष्मको भी संग्राममें प्रसन्न किया ॥ ६ ॥ चन्द्रमा और ब्रह्मा ये दोनों तुम्हारेमें

अथानिरुद्धंतुरगस्यपालनेभूत्वाप्रसन्नकिलकार्ष्णिनन्दनम् ॥ समादिदेशाच्युतयेवसंस्थितंयदूत्तमानामधिपस्यपश्यतः ॥९१॥ इतिश्रीमद्गर्ग संहितायांहयमेधचरित्रसुमेरौहयपूजनंनामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ गर्गउवाच ॥ अथराजाकुशस्थल्यांपूजयित्वातुरंगमम् ॥ मुमोचब्रह्म-घोषेणविधिनाबद्धचामरम् ॥१॥ सुधाकुण्डलकाःसोपिभुक्त्वातुरगराट्ततः ॥ निर्ययौस्वर्णमालाभिःशोभितःकुंकुमेनच ॥ २ ॥ रक्षणार्थंहय-स्यार्थंचादरेणनृपेश्वरः ॥ अनिरुद्धंवृकहणमूचेरक्षार्थमुद्यतम् ॥ ३ ॥ उग्रसेनउवाच ॥ श्रीकृष्णपौत्रप्राद्युम्नेत्वयायत्कथितंवचः ॥ पाल-नार्थंतुरंगस्यस्वेच्छयातत्कुरुत्वरम् ॥४॥ मद्राजसूयेपूर्ववैप्रद्युम्नेनजितामही ॥ त्वंतुशूरोसिबलवान्धन्वीतस्यात्मजोमहान् ॥५॥ वृकस्तुश-कुनेर्भ्रातामहादैत्योहतस्त्वया ॥ राजानश्चजितास्सर्वेभीष्मोयुद्धेहितोषितः॥६॥अहोमृगांकलोकेशौयस्मिन्संलीनतांगतौ॥तस्मात्त्वामृषयःसर्वे परिपूर्णंवदंतिहि ॥ ७ ॥ तस्मात्पालयत्वंवीरसेनयाचपरीवृतः ॥ राजन्येभ्यश्चसर्वेभ्योहयमेधतुरंगमम् ॥८॥ अर्भकान्विरथान्भीतान्प्रपन्ना-न्दीनमानसान् ॥ सुप्तान्प्रमत्तानुन्मत्तान्रणेतान्मानिपातयः ॥९॥ श्रीकृष्णस्यप्रतापेननिर्विघ्नंतेस्तुकार्ष्णिज ॥ साश्वस्त्वंपुनरागच्छकुशलीसे-नयान्वितः ॥ १० ॥ गर्गउवाच ॥ ततःश्रुत्वानिरुद्धस्तुनृपस्यवचनंशुभम् ॥ तथेत्युक्त्वाहयस्यापिपालनार्थंमनोदधे ॥ ११ ॥ अथानि-रुद्धंतेविप्राःकृष्णचन्द्राज्ञयात्वरम् ॥ तंमंत्रैःस्नापयित्वाचपूजांचक्रुर्मुदान्विताः ॥ १२ ॥

लीन हो गये, इसीसे आपको सब ऋषिजन परिपूर्ण कहते हैं ॥ ७ ॥ इससे हे वीर ! सेनासे युक्त हुये आप सब राजाओंसे इस अश्वमेधके घोड़ेकी रक्षा कर ॥ ८ ॥ बालकोंको, विरथों (रथहीनों) को, डरे हुओंको, शरणमें आये हुओंको, जिनके दीन मन हैं उनको, सोते हुये जनोंको और प्रमत्त पुरुषोंको, उन्मत्त पुरुषोंको संग्राममें मत मारना ॥ ९ ॥ हे प्रद्युम्न पुत्र ! श्रीकृष्णके प्रतापसे तुम सर्वत्र निर्विघ्न होओ, और सब सेना सहित अश्वको साथ लेकर कुशल पूर्वक तुम लौट आओ ॥ १० ॥ गर्गजी कहते हैं कि इस प्रकार अनिरुद्धजीने श्री उग्रसेन राजाके कहे वचनको सुनकर "बहुत ठीक है" ऐसे कहकर उस अश्वकी रक्षा करनेका मन किया ॥११॥ तब उन ब्राह्मणोंने बहुत शीघ्रतासे श्रीकृष्णकी आज्ञासे अनिरुद्धका मन्त्रोंसे पूजन कराया, और बड़े प्रसन्न हुये ॥ १२ ॥

फिर उग्रसेनने विधानसे अनिरुद्धका तिलक करके और भेंट देकर एक खड्ग दिया, उनके बाद ॥१३॥ शूरसेनजीने रत्नमाला और वसुदेवजीने कुण्डल, बलदेवजीने कवच श्रीकृष्णने चक्र, और प्रद्युम्नने कृष्णका दिया हुआ धनुष और अक्षय बाणोंके भरे अपने दो तरकस अनिरुद्धको दिये॥१४॥१५॥ तब शिवजीने अपने त्रिशूलमेंसे निकालकर त्रिशूल दिया, उद्धवजीने किरीट दिया, और देवकजीने पीला वस्त्र दिया॥१६॥ वरुण देवताने नागपाश दिया, स्वामि कार्तिकेयजीने शक्ति दी, पवन देवने दो पंखे दिये. और यमराजने दण्ड दिया ॥१७॥ कुबेरने हीरोंका हार, अर्जुनने परिघ, भद्रकालीने बड़ी भारी गदा और सूर्यने भाला दिया ॥१८॥ भूमिने योगयमी पादुकाऐं (खड़ाऊँ) दीं गणपतिने दिव्य कमल और अक्रूरजीने विजयको देनेवाला दक्षिणावर्त दिया ॥ १९ ॥ विश्वकर्माका बनाया हुआ, एक हजार जिसमें घोडे जुते, एक हजार पहिये जिसमें लगे, ब्रह्माण्डके बाहिर भीतर गतिवाला, स्वर्ण

अनिरुद्धस्यतिलकंकृत्वाराजाविधानतः ॥ बलिंदत्त्वाचयुद्धायकरवालंददौततः ॥ १३ ॥ शूरोददौरत्नमालांतस्मैशौरिश्चकुंडले ॥ बलदेवश्च कवचंस्वचक्रंहरिरेवच ॥१४॥ प्रद्युम्नश्चानिरुद्धायकृष्णदत्तंधनुर्ददौ ॥ तथास्वतूणौराजेंद्रतस्मैचाक्षयसायकौ ॥ १५ ॥ स्वत्रिशूलात्समुत्पाटयत्रिशूलंप्रमथाधिपः ॥ उद्धवश्चकिरीटंवैपीतवस्त्रंचदेवकः ॥१६॥ प्रचेतानागपाशंचशक्तिंशक्तिधरःकिल ॥ श्वसनोव्यजनेदिव्येस्वदंडंयमराट्पुनः ॥१७॥ हीरहारंराजराजोपरिघंतुधनंजयः ॥ भद्रकालीगदांगुर्वींददौकुंतंदिवाकरः ॥१८॥ भूःपादुकेयोगमय्यौपद्मंदिव्यंगणाधिपः ॥ शंखंचदक्षिणावर्त्तमक्रूरोविजयप्रदम् ॥ १९ ॥ सहस्रवाजिसंयुक्तंविश्वकर्मविनिर्मितम् ॥ सहस्रचक्रंस्वर्णाढ्यंब्रह्मांडांतर्बहिर्गतिम् ॥ २० ॥ छत्रेणशतकुंभैश्चपताकाभिःशतैरपि ॥ शोभितंमेघनिर्घोषघंटामंजीरनादितम् ॥२१॥ मनोवेगंमहादिव्यंजैत्रंरत्नमयंरथम् ॥ अनिरुद्धायप्रददौ द्वारकायांपुरंदरः ॥२२॥ कंबुदुन्दुभयोनेदुःकांस्यवीणादयस्तदा ॥ मृदंगवेणवोरागैर्जयध्वनिसमाकुलैः ॥ २३ ॥ ब्रह्मघोषैर्लाजपुष्पैर्मुक्तावर्षसमन्वितैः ॥ अनिरुद्धोपरिसुराःपुष्पवर्षप्रचक्रिरे ॥२४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेऽनिरुद्धविजयाभिषेकोनामद्वादशोऽध्यायः ॥१२॥ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ अथनत्वागुरून्सोपिप्रायात्प्रष्टुंचदेवकीम् ॥ रोहिणींरुक्मिणींभामामन्याःसर्वाहरिप्रियाः ॥ १ ॥

का बना हुआ ॥२०॥ स्वर्णका जिसमें छत्र लगा, और स्वर्णकीही जिसमें पताकाएं लगीं, उनसे शोभित, मेघके समान शब्दवाले घण्टा, मजीरे इनसे शब्दित ॥२१॥ मनके समान वेगवाला, महादिव्य जीतने वाला, ऐसा रत्नमय रथ अनिरुद्धके लिये इन्द्रने दिया ॥ २२ ॥ अनिरुद्धके चलनेके समय शंख, दुन्दुभि, कास्य, मृदंग, वेणु, आदि बाजे बजने लगे और सभीने जय हो, जय हो, ऐसी ध्वनि सब ओरसे की॥२३॥ ब्राह्मणोंने वेद ध्वनिकी, नगर, वधुओंने धानकी खील और मोती वर्षाये, और देवताओंने आकाशमेंसे अनिरुद्धके ऊपर फूलोंकी वर्षा की॥२४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषटीकायां विजयाभिषेको नाम द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥ गर्गजी कहते हैं कि, उसके बाद अनिरुद्ध भी गुरुजनोंको प्रणाम करके, देवकीजीको रोहिणीजीको और रुक्मिणी, सत्यसभामा आदि सब हरिप्रियाओंको प्रणाम करके ॥ १ ॥

और रति तथा रुक्मिवतीको प्रणाम करके बोले कि यादवोंके सहित मुझको घोड़ेकी रक्षा करनेका राजाने आदेश दिया है, सो मैं घोड़ेकी रक्षा करनेको जाता हूँ मुझ को आज्ञा दीजिये ॥ २ ॥ तब वे सब गद्गद होगईं, अनिरुद्धको छातीसे लगाकर प्रणाम करते हुयेको आशीर्वाद दिये ॥३॥ तब उनको प्रणाम कर फिर अपने महलोंमें पत्नियोंसे आज्ञा लेनेको गये, तब तीनों पत्नियोंने अपने प्राणपतिको आया देखकर ॥४॥ बड़ा आदर किया, और विरहसे अत्यन्त खेद युक्त होगईं, तब उन सभीको आश्वासन देकरके फिर अनिरुद्धजी सभामें आये ॥५॥ गर्गजी कहते हैं कि, उसके बाद सब पूज्य यादवोंको, ऋषियोंको, गुरुजनोंको, उग्रसेनको, शूरसेनको ॥६॥ वासुदेवजीको, बलदेवजीको, कृष्णको, प्रद्युम्नको, और सब यादवोंको अनिरुद्धने प्रणाम किया, तब इन सभीने आशीर्वाद दिये, और ब्राह्मणोंने मङ्गल किया ॥७॥ हे राजन्! सब नगरवासियोंने सत्कार जिनका किया ऐसे अनिरुद्धने

नत्वारतिंरुक्मिवतीमहंगच्छाम्युवाचह ॥ राज्ञादिष्टःपालनार्थंहयस्यसहयादवैः ॥२॥ ताश्चगद्गदभाषिण्योतंपरिष्वज्यकार्ष्णिजम् ॥ आशिषं प्रददूराजंस्तस्मैचप्रणतायवै ॥३॥ नत्वाताश्चययौसोपिभार्याणांभवनानिच ॥ तमागतंस्वभर्तारंतिस्रःपत्न्योविलोक्यच ॥४॥ आदरंतस्यता-श्चक्रुर्विरहात्खिन्नमानसाः ॥ आश्वासयित्वाताःसोपिचाजगामसभांकिल ॥ ५ ॥ गर्गउवाच ॥ अथाध्वरार्थेराजेंद्रमुनिभिःकृतमंगलः ॥ सर्वान्नृषीन्गुरूंश्चैवनृपेन्द्रंशूरमेवच ॥६॥ वसुदेवंचहलिनंकृष्णंस्वपितरंतथा ॥ अन्यांश्चयादवान्पूज्यानिरुद्धःप्रणम्यच ॥ ७ ॥ पूजितोना-गरैःसर्वैर्धनुष्पाणिःशरीनृप ॥ बद्धगोधांगुलित्राणःकवचीकुण्डलावृतः ॥८॥ उपानद्गूढपादश्चपंचास्यसमविक्रमः ॥ करवालधरश्चर्मीकिरीटीश-क्तिहस्तकः ॥९॥ महावीरःसुवर्णस्यह्यलंकारैरलंकृतः ॥ पुरंदररथेनापिनिर्ययौस्वपुराद्बहिः ॥१०॥ गीतवादित्रघोषेणब्रह्मघोषेणकार्ष्णिजम् ॥ यास्यंतंचामरैर्युक्तंददृशुःपुरवासिनः ॥११॥ ततःश्रीकृष्णचंद्रेणप्रेषिताउद्धवादयः ॥ भोजवृष्ण्यंधकमधुशूरसेनदशार्हकाः ॥१२॥ अथराजा यदून्प्राहानिरुद्धस्यचयादवाः ॥ सहायार्थंतुप्रधनेवदतात्कःप्रयास्यति ॥ १३ ॥ उग्रसेनवचःश्रुत्वा सांबोजांबवतीसुतः ॥ सर्वेषांपश्यतां नत्वानृपंवचनमब्रवीत् ॥ १४ ॥

धनुष बाण हाथमें लेकर, दस्ताने चढ़ाकर, कवचको पहिनकर कुण्डल धारण किये ॥८॥ पाँवोंमें जूते पहिनकर, सिंहके समान है पराक्रम जिसका ऐसे अनिरुद्धने ढाल तलवार लेकर शक्तिको रथमें रखकर किरीटको धारण किया ॥ ९ ॥ वीरोंमें महावीर, सुवर्णके अलंकारोंसे अलंकृत इन्द्रके दिये रथमें बैठकर नगरके बाहिर निकले ॥ १० ॥ गीत और बाजोंके घोषसे और वेद ध्वनिके शब्दसे युक्त, चमर जिन पर ढुलते जारहे हैं, उन अनिरुद्धजीको पुरवासी देखने लगे ॥११॥ तब श्रीकृष्ण चन्द्रके भेजे उद्धवादिक सब भोज, वृष्णि, अन्धक, मधु, शूरसेन, दशार्ह, अनिरुद्धकी रक्षाके लिये तैय्यार हुये ॥१२॥ तब राजा उग्रसेन बोले कि, हे यादवो ! संग्राममें अनिरुद्धकी रक्षाके लिये कौन जायगा ॥ १३ ॥ उग्रसेनके कथनको सुनकर जाम्बवतीके पुत्र साम्ब सभीके देखते २ उग्रसेनको प्रणाम करके बोले ॥ १४ ॥

कि हे राजेन्द्र ! महायुद्धमें अनिरुद्धकी सहायता करनेके लिये मैं जाऊँगा, और सब शत्रुओंसे मैं रक्षा करूँगा ॥ १९ ॥ और यदि मैं युद्धभूमिमें अनिरुद्धकी रक्षा न करूँ, तो सत्यवादी मुझ साम्बकी प्रतिज्ञाको सुनिये ॥ १६ ॥ जो कोई मनुष्य दशमी विद्धा एकादशीका नहीं व्रत करने योग्यका व्रत करता है, वह मनुष्य जिस गतिको प्राप्त होता है, मैं भी अवश्य उसी गतिको प्राप्त होऊँ ॥१७॥ जो गति गोवध करनेवालोंकी, जो गति ब्रह्मवध करनेवालोंकी होती है, वह गति मेरी हो, यदि मैं यह काम न करूँ ॥१८॥ गर्गजी कहते हैं, ऐसे कहकर साम्ब महलके भीतर गये, फिर वहाँ माताको नमस्कार करके अपना सब अभिप्राय निवेदन किया ॥१९॥ उस बातको माता जाम्बवतीने सुनकर साम्बको आलिंगन कर विरहवश होकर आशीर्वाद दिया उसके बाद सब माताओंको नमस्कार करके अपनी पत्नीके महलमें गया ॥ २० ॥ तब लक्ष्मणाजीने पतिको आया देखकर उत्तम लक्षण वाले पति साम्बको आसन देकर आंसुओंसे गला जिसका रुक गया है, ऐसी वह कुछ नहीं बोली ॥२१॥ तब साम्बने उसको आश्वासन देकर अपना अभिप्राय कहा, तब पतिके

॥ सांबउवाच ॥ अनिरुद्धस्यराजेन्द्रसहायमहमेवच ॥ महारणेचशत्रुभ्यःकरिष्येसर्वदाकिल ॥ १९ ॥ यद्यहंतस्यरक्षांवैनकरिष्येरणांगणे ॥ प्रतिज्ञांममराजेंद्रशृणुष्वसत्यवादिनः ॥१६॥ त्याज्यांतुदशमीविद्धांयःकृत्वैकादशींनरः ॥ प्रयातियांगतिंराजंस्तामहंप्राप्नुयांध्रुवम् ॥ १७ ॥ गोहंतॄणांगतिर्यातुयागतिर्ब्रह्मघातिनाम् ॥ सागतिर्ममभूयाद्वैनकुर्य्यांकर्मचेदिदम् ॥ १८ ॥ गर्गउवाच ॥ इत्युक्त्वावचनंसोपियथौचांतःपुरंततः ॥ नत्वाचमातरंसर्वंमभिप्रायंन्यवेदयत् ॥ १९ ॥ श्रुत्वासातंपरिष्वज्यविरहादाशिषंददौ ॥ ततोमातॄस्तुताःसर्वानत्वापत्नीगृहंगतः ॥ २० ॥ सातमायांतमालोक्यलक्ष्मणावरलक्षणा ॥ दत्त्वासनंबाष्पकंठीनतुकिंचिदुवाचह ॥२१॥ आश्वासयित्वातांसांबोह्यभिप्रायमवर्णयत् ॥ इतिश्रुत्वापतिंप्राहविरहात्खिन्नमानसा ॥ २२ ॥ लक्ष्मणोवाच ॥ अनिरुद्धस्यतुरगोरक्षणीयस्त्वयापते ॥ युद्धंहिसंमुखंकार्यंविमुखंनकदाचन ॥२३॥ त्वद्भ्रातॄणांस्त्रियःसंतिमानवत्यःसहस्रशः ॥ संग्रामेयदितेनाथनिशम्यचपराजयम् ॥२४॥ स्मिताननाभविष्यंतिदृष्ट्वामांचतवप्रियाम् ॥ तदादुःखतमेनाथमरणंतुभविष्यति ॥ २५ ॥ श्रुत्वैतद्वचनंसांबोप्रत्युवाचप्रियांहसन् ॥ सांबउवाच ॥ प्रधनेममसंप्राप्तंत्रैलोक्यंसंमुखंकिल ॥ २६ ॥ श्रोष्यसेत्वंमयाभद्रेसर्वंचविदलीकृतम् ॥ यदिसांबोरणाच्छूरोविमुखोजायतेशुभे ॥२७॥ तदासोस्तुस्वपापेनब्रह्मविप्रविनिंदकः ॥ पुनस्त्वहंनपश्यामिचन्द्राकारंतवाननम् ॥ २८ ॥

कथनको सुनकर विरह खेदयुक्त मन जिसका ऐसी होकर पतिसे यह वचन बोली ॥ २२ ॥ लक्ष्मणा बोली कि, हे प्राणपतिजी ! आपको अनिरुद्धकी रक्षा करना उचित है, और सम्मुख होकर युद्ध करियेगा, कभी विमुख नहीं होइयेगा ॥ २३ ॥ आपके भाइयोंकी बडी मानवती हजारों स्त्रियाँ हैं, हे नाथ ! यदि कहीं संग्राममें आप विमुख होंगे, या हारेंगे, तो वे सब मेरी हँसी करेंगी ॥२४॥ तब आपकी प्रियाका मेरा हे नाथ ! अवश्य इस दुखसे मरण होगा ॥२५॥ तब साम्ब इस कथनको सुनकर प्रियासे हँसते २ यह वचन बोले ॥२६॥ साम्बने कहा कि हे प्रिये ! आजतक मैं संग्राममें सदा सन्मुख ही हुआ हूँ ॥ २७ ॥ और हे प्रिये ! यही सुनोगी कि संग्राममें दिग्विजय की, और हे शुभे ! मैं शूरवीर साम्ब यदि संग्राममें विमुख होऊँ, तब वेद और ब्राह्मणकी निन्दा करनेवाले पापसे लिप्त होऊँ, और फिर तुम्हारे चन्द्राकार मुखको नहीं देखूँ ॥ २८ ॥

गर्गजी कहते हैं कि, इसी प्रकार साम्ब अपनी दूसरी प्रियाको भी आश्वासित करके और अभिमन्युसे तथा सुभद्रासे मिलकर घरमेंसे निकले ॥२९॥ धनुषको हाथमें लेकर, खड्ग धारण किये हुये साम्ब तैयार हुये रथमें बैठकर यादवोंको साथ लेकर उपवनमें गये, जहाँ अनिरुद्धजी थे ॥३०॥ तब श्रीकृष्णने गद आदि अपने सब भाई और भानु, दीप्तिमान् आदि पुत्र भेजे ॥३१॥ वे सब धनुषोंको लिये हुये बड़े शूरवीर सिंहकी ध्वजावाले और दिव्य सुवर्णाभरणोंको पहिने हुये घोड़ोंसे जुते रथोंमें बैठकर आये ॥३२॥ वे भी धनुर्धारी बड़े शूर कवंचको पहिने, युद्धमें प्रवीण और दिव्य चतुरंग सेनाको लिये, तालहंस और मत्स्यकी जिनके ध्वजाऐं हैं ॥३३॥ जिनके देवताओंके विमान जैसे ऊँचे रथ, छत्र, चामर, जिनमें लगे, सूर्यकी जैसी जिनकी कान्ति, सुवर्णके कलश जिनमें विद्यमान, और जालीदार जिनमें तोरण हैं, ऐसे रथोंमें बैठकर श्रीकृष्णके पुत्र द्वारकासे निकले, उसके बाद हे राजन् ! सुवर्ण

॥ श्रीगर्गउवाच ॥ इत्याश्वास्यप्रियांसांबोद्वितीयांचप्रयत्नतः ॥ अभिमन्युंसुभद्रांचमिलित्वानिर्ययौगृहात् ॥ २९ ॥ चापीनैस्त्रिंशकः सज्जोस्यंदनीयादवैर्वृतः ॥ प्राप्तश्चोपवनेसांबोनिरुद्धोयत्रवर्त्तते ॥३०॥ ततःस्वभ्रातरःसर्वेश्रीकृष्णेनगदादयः ॥ प्रेषिताआत्मजाश्चैवभानुदीप्तिमदादयः ॥ ३१ ॥ सर्वेहिधन्विनःशूरादंशितायुद्धकोविदाः ॥ चतुरंगबलोपेतानिर्जग्मुःकोटिशःपुरात् ॥३२॥ तालहंसमीनबर्हिमृगराजध्वजैरथैः ॥ दिव्यैश्चकनकांगैश्चचतुर्वाजिसमन्वितैः ॥ ३३ ॥ महोच्चैर्देवधिष्ण्याभैश्छत्रचामरसंयुतैः ॥ सूर्याभैश्चसुवर्णस्यकुम्भैर्जालकतोरणैः ॥ ३४ ॥ रेजुःसर्वेकृष्णसुताःकुशस्थल्याविनिर्गताः ॥ ततश्चनिर्ययूराजन्हेमनीडाश्चहस्तिनः ॥३५॥ गोमूत्रचयसिंदूरकस्तूरीपत्रभृन्मुखाः॥ अंजनाभाःकज्जलाभाघनश्यामामदच्युताः ॥ ३६ ॥ राजीवमूलसदृशाःशुक्लदंतामृगद्विपाः ॥ महोच्चाःपर्वताकाराघंटामहोद्भटाः ॥३७॥ ऐरावतकुलेभाश्चतिस्रश्शुण्डाश्चपांडुराः ॥ चतुर्दंतास्तुकृष्णेनभौमान्नीताश्चनिर्ययुः ॥ ३८ ॥ ध्वजयुक्तालक्षगजालक्षदुंदुभिसंयुताः॥ लक्षाःशून्यामहामात्यैःस्वर्णकंबलमंडिताः ॥ ३९ ॥ ततःशूरैःश्चसंयुक्तागजेंद्राएककोटयः ॥ इतस्ततोविरेजुस्तेबलेऽब्धौमकरायथा ॥४०॥ उत्पाटचगुल्मान्छुंडैश्चक्षेपयंतोनभस्तले ॥ महींपादैःकपयंतआद्रींकृत्वामदैरपि ॥ ४१ ॥

मय अम्बारी (हौदे) जिनपर ऐसे हाथी निकले॥३४॥३५॥ गोमूत्र, सिंदूर, और कस्तूरीकी पत्र रचनावाले जिनके मुख, अंजनके जैसे जिनके रंग, कज्जलके जैसे श्यामवर्ण, मद जिनके चू रहा॥३६॥कमलकी जड़के समान सफेद जिनके दांत मृगद्विजजातिवाले, बड़े ऊँचे पर्वतके जैसे आकार, घंटा जिनके बंधे।३७ऐरावतके कुलके, तीन२जिनके सूंड़, चार२जिनके दांत भौमासुरको जीतकर जिनको भगवान् लाये थे, ध्वजा जिनके विद्यमान, ऐसे एकलाखहाथी, और दुन्दुभियोंसे युक्त, एकलाख हाथी, और बिना दुन्दुभियोंके एक लाख हाथी, सुवर्णमय झूलजिनपर पड़ी, शूरवीर जिनपर बैठे, ऐसे एक करोड़हाथी इधर उधर सेनामें सुशोभित हुये, जैसे समुद्रमें मकर सुशोभित होत हैं॥३८॥३९॥४०॥लतावृक्षोंके शुंडादंडोंसे आकाशमें फेंकते, अपने मद

जलसे पृथ्वीको गीली करते और पावोंसे कम्पाते हुये और अपने गण्ड स्थलसे प्रासाद, दुर्ग (किले), और पर्वतोंको फेंकते और शत्रु सैन्यका खण्डन करते, श्याम पील, काले सफेद, और लाल रंगकी झूल जिनके ऊपर पड़ी, सुवर्णकी सांकल जिनके पांवोंमें पड़ी, ऐसे हाथी निकले ॥४१॥४२॥४३॥ उनके पीछे नारदके देखे हुये, स्वर्णके हारोंको पहिने हुये घोड़े निकले ॥४४॥ कोई तो चञ्चल अंगवाले, कोई धूम्रवर्णवाले, कोई श्यामवर्णके कोई कमलके रंगके, कोई कृष्णवर्णके सुन्दर जिनकी ग्रीवा, कोई दूधके रंगके, कोई मांसके रंगके, कोई हलदीके रंगके, कोई केशरिया, कोई केसूके रंगके, कोई अनेक रंगके कोई स्फटिक रंगके, मनकेसे जिनके वेग, कोई तोतके रंगके, कोई ताम्रवर्णके, कोई कसूमके रंगके, कोई वीर वहूटीके रंगके, कोई गौरवर्णके, कोई पूर्ण चन्द्रमा जैसे, कोई सिन्दूरिया, कोई अग्निवर्णके कोई बालसूर्यके समान रंगवाले, हे राजन् ! इतने प्रकारके घोड़े सब देशोंसे आये, ये

प्रासाददुर्गशैलांगान्पातयंतःशिरस्थलैः ॥ रिपूणांचबलंसर्वंखण्डयंतोमहाबलाः॥४२॥ श्यामपीतकृष्णशुक्लरक्तवर्णैश्चकंबलैः ॥ सुवर्णशृंखलैर्युक्तारेजुरेतादृशागजाः ॥४३॥ ततस्तुरंगमायेवैनारदेनविलोकिताः ॥ तेसर्वेनिर्गताराजन्स्वर्णहारैश्चसंयुताः ॥ ४४ ॥ केचिद्वैचंचलांगाश्चधूम्रवर्णामनोहराः॥श्यामवर्णाःपद्मवर्णाःकृष्णवर्णाःसुकंधराः॥४५॥दुग्धाभाघोटकाःकेचित्तथार्कीलालसन्निभाः॥हरिद्राभाःकुंकुमाभापालाशकुसुमप्रभाः ॥४६॥ केचिच्चित्रविचित्रांगाःस्फटिकांगामनोजवाः ॥ हरिद्वर्णास्ताम्रवर्णाःकौसुंभाभाःशुकप्रभाः ॥४७॥ इन्द्रगोपनिभागौरादिव्याःपूर्णेंदुसन्निभाः ॥ सिन्दूरांगाश्चाग्निवर्णारविबालसमप्रभाः ॥ ४८ ॥ एतेतुरंगाराजन्सर्वदेशात्समागताः ॥ पुर्यांकृष्णप्रतापेनतेतुसर्वेविनिर्गताः ॥ ४९ ॥ कृष्णस्यवाजिशालासुयेवर्ततेचतेहयाः ॥ वैकुण्ठवासिनश्चैवश्वेतद्वीपनिवासिनः ॥ ५० ॥ केचिन्मयूरवर्णाश्चनीलकण्ठनिभास्तथा ॥ विद्युद्वर्णास्तार्क्ष्यवर्णाःसर्वेपक्षैरलंकृताः ॥ ५१ ॥ शिखामणिधराःशुक्लचामरैःसमलंकृताः ॥ स्रग्भिर्मुक्ताफलानांचरक्तवस्त्रैर्विभूषिताः ॥ ५२ ॥ स्वर्णेनमंडिताःपुच्छमुखपट्टस्फुरत्प्रभाः ॥ सर्वांगसुन्दरादिव्यानिर्गतास्तेसहस्रशः ॥ ५३ ॥ नस्पृशंन्तःपदैर्भूमिंह्येतेकृष्णहयानृप ॥ चंचलावायुवेगाश्चमनोवेगामनोहराः ॥५४॥ बुद्बुदेष्वतिगाश्चैवपक्वसूत्रेषुभूपते ॥ लूताजालेषुकेचिद्वैचलंतःपारदेष्वनु ॥ ५५ ॥ स्फारावारिषु दृश्यंतेनिराधारानृपेश्वर ॥ अन्येपिनिर्गताराजन्म्लेच्छदेशभवाहयाः ॥ ५६ ॥

सब कृष्णके प्रतापसे आये. ये सब द्वारकासे निकले ॥४५॥४६॥४७॥४८॥४९॥ जो घोड़े कृष्णकी अश्वशाला (घुड़साल) के वे और वैकुण्ठवासी और श्वेत द्वीपवासी, कोई मोरके रंगके, कोई नीलकण्ठके समान रंगवाले, कोई बिजलीके रंगके, कोई गरुड़के रंगके, ये सब पंखवाले दिव्य घोड़े निकले ॥५०॥५१॥ शिखामें जिनके मणि. और श्वेत चामरोंसे शृंगार किये हुये मोतियोंकी माला और रक्त वस्त्रोंसे भूषित ॥५२॥ स्वर्णसे भूषित पुच्छ और मुखपर पड़ी झूमरसे युक्त, ऐसे सर्वांग सुन्दर दिव्य हजारों घोड़े निकले ॥५३॥ जो पांवोंसे भूमिका स्पर्श नहीं करते हैं, बड़े चञ्चल मनके समान, पवनके समान जिनका वेग है, ऐसे मनको हरनवाले कच्चे सूतपर और पानीके बबूलोंपर चलनेवाले, जलती हुई अग्निमें और पारेके ऊपर चलनेवाले जिनके खुर, समुद्रमें नहीं डूबनेवाले, निराधार गतिवाले, म्लेच्छ देशोंमें उत्पन्न हुये और भी घोड़े निकले ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥

और करोड़ों घोड़े ऐसे जो सौ सौ योजन चलनेवाले, बड़े २ गर्त (गड्ढे) दुर्ग स्थान, नदी, परकोटा और पर्वतोंका उल्लंघनकर वीरोंके समेत चलने वाले, ॥ ५७ ॥ उसके बाद सब पदाति (पैदल सैनिक) द्वारकासे निकले, जिन्होंने हाथोंमें धनुष ले रखे हैं, कवच पहिन रखे हैं, बड़े शूरवीर हैं, और महाबली हैं, और पराक्रमी हैं ॥५८॥ खड्ग और चर्मको धारण किये हुये हैं लोहेके कवचोंको धारण किये हैं, संग्राममें शत्रुओंको जीतनेवाले हैं॥५९॥इस प्रकार निकली यादवोंकी सेनाको देखकर देव, दैत्य, और सब मनुष्य अत्यन्त आश्चर्यको प्राप्त हुये ॥६०॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायांत्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥ गर्गजी कहते हैं कि, उसके बाद अनिरुद्धके मिलनेके लिये उग्रसेनकी आज्ञासे हे नृप! वसुदेव, बलदेवजी, श्रीकृष्ण प्रद्युम्न ॥१॥ और सब यादव, हे राजन्! रथोंमें बैठकर निकले, इन्होंने सेनासे युक्त अनिरुद्धको देखा ॥२॥ जो नीति पहिले श्रीकृष्णने राजसूय यज्ञमें

शतयोजनगाश्चैवकोटिशःकोटिशोनृप ॥ गर्तदुर्गनदीसौधशैलादींश्चहरेर्हयाः ॥ उल्लंघयंतोनृपतेसवीरास्तेतुरंगमाः ॥५७॥ ततश्चनिर्ययुःसर्वे द्वारकायाःपदातिनः ॥ धन्विनोदंशिताश्शूरामहाबलपराक्रमाः ॥५८॥ खड्गचर्मधराउच्चालोहकंचुकमंडिताः ॥ संग्रामेबहुशत्रूणांजेतारोगजसन्निभाः ॥५९॥ इत्थंविनिर्गतंसैन्यंयादवानांनिरीक्ष्यच ॥ देवदैत्यनराःसर्वेविस्मयंपरमंगताः ॥६०॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेयदुसैन्यनिर्गमनंनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ अथतन्मिलनार्थंवैउग्रसेनाज्ञयानृप ॥ वसुदेवःकामपालःश्रीकृष्णःकार्ष्णिरेवच ॥१॥ अन्येपियादवाराजन्रथैःसर्वेविनिर्ययुः ॥ गत्वानिरुद्धंददृशुःसेनयातुपरीवृतम् ॥ २ ॥ प्रद्युम्नायराजसूयेयानीतिःकथितापुरा ॥ तांसर्वामनिरुद्धायकथयामासमाधवः ॥३॥ इतिश्रुत्वाचकृष्णस्यशासनंसर्वयादवाः ॥ शिरसाजगृहूराजन्ननिरुद्धादयोमुदा ॥४॥ अथगर्गमुनींश्चैववसुदेवंहलायुधम् ॥ श्रीकृष्णचन्द्रंकार्ष्णिंचप्राद्युम्निःप्रणनामह ॥५॥ वसुदेवरामकृष्णप्रद्युम्नाद्याः शुभाशिषम्॥अनिरुद्धायदत्त्वाचप्रविष्टास्तेपुरींरथैः ॥ ६ ॥ अथानिरुद्धस्यहयोदेशेदेशेगतोनृप ॥ नकेपिजगृहुस्तंवैभयात्कृष्णस्यभूमिपाः ॥७॥ यत्रयत्रगतोवाजीतत्रतत्रससैनिकः ॥ कार्ष्णिजःपृष्ठतस्तस्यजेतुंशत्रून्गतःकिल ॥८॥ इत्थंविलोकयन्राज्यान्यनिरुद्धतुरंगमः॥राजितांनर्मदातीरेययौमाहिष्मतींपुरीम् ॥९॥ चातुर्वर्ण्यसमाकीर्णामश्मदुर्गेणमंडिताम् ॥ सदनैर्गगनस्पर्शैर्महेशस्यालयैर्वृताम् ॥ १० ॥

प्रद्युम्नके आगे कही थी, उसी सब नीतिको अनिरुद्धके आगे कहा ॥३॥ हे राजन् ! तब अनिरुद्धादिक सब यादवोंने श्रीकृष्णकी आज्ञाको सुनकर शिरसे ग्रहण किया ॥४॥ तब मुझ गर्गको और अन्य मुनियोंको, वसुदेव, बलदेव, श्रीकृष्ण तथा प्रद्युम्नको अनिरुद्धने प्रणाम किया ॥५॥ तब वसुदेवजी बलदेवजी, श्रीकृष्णचन्द्र और प्रद्युम्न सब अनिरुद्धको आशीर्वाद देकर रथोंमें बैठकर द्वारकामें प्रवेश कर गये ॥६॥उसके बाद हे राजन् ! अनिरुद्धका घोड़ा देश देशमें गया, किंतु श्रीकृष्णके भयसे किसीने नहीं पकड़ा ॥७॥ जहाँ जहाँ वह घोडा,गया,वहाँ वहाँ सेनासहित अनिरुद्ध भी पीछे पीछे शत्रुओंको जीतनेके लिये गये॥८॥इस प्रकार वह घोड़ा अनेक राज्योंको देखता,फिरता २ नर्मदाके तटपर विराजमान माहिष्मती पुरीमें गया ॥ ९ ॥ जिस नगरीमें चारों वर्ण रहते हैं, पाषाण (पत्थर) का जिसमें किला है, आकाशके स्पर्श करनेवाले घर और शिवालय जिसमें बने हुये हैं ॥१०॥

इन्द्रनील नामके राजासे शासित, पांच योजनके विस्तारवाली शाल, ताल, तमाल, वट और बेल तथा पीपलके वनोंसे अत्यन्त सुशोभित, और तालाव, वापी (बावड़ी) इनसे शोभित अनेक जातिके पक्षी गण जिसमें शब्द कर रहे, ऐसी नगरीको उस नगरीके एक उपवन (बाग) में गये घोड़ेने देखा ॥ ११ ॥१२ ॥ उसी समय नीलध्वज नामक इन्द्रनीलका पुत्र शिकार (आखेट) के लिये हजारों वीरोंके साथ पुरीसे निकला ॥ १३ ॥ उसने वह घोड़ा देखा, जिसके मस्तकपर सुवर्णके अक्षरोंका लिखा पत्र बँध रहा था, खिले हुये कदम्बके वृक्षके नीचे वह घोड़ा खड़ा था ॥ १४ ॥ इधर उधरमें हरी दूबको चर रहे, चमर दोनों तरफ जिसके बंध रहे हैं, गौके दूधके समान श्वेत हैं, स्त्रियोंके हाथके केसरके थापे जिसके लग रहे हैं, मोतियोंके हारोंको पहिने हुये है ॥१५॥ तब उस घोडेको राजकुमार देखकर अपने घोडेपरसे उतरकर बड़े हर्षसे हे नृप ! उस राजकुमारने खेलहीसे वह घोड़ा पकड़ लिया ॥ १६ ॥ उस पत्रको पढ़ा, तो उग्रसेनजीने जो किया है, वह लिखा है कि, द्वारकापुरीका राजा शूरवीरोंका शिरोमणि ॥१७॥ जिसके समान और कोई नहीं है, जिसका

इन्द्रनीलेनराज्ञापिपालितांपञ्चयोजनाम् ॥ शालैस्तालैस्तमालैश्चवटैर्बिल्वैश्चपिप्पलैः॥११॥ तडागैश्चैववापीभिर्घुष्टांपक्षिगणैस्तथा ॥ ईदृशींनगरीमश्वोददर्शोपवनेगतः ॥१२॥ इंद्रनीलस्यतनयोनाम्नानीलध्वजोबली ॥ पुर्य्याःसहस्रवीरैश्चमृगयार्थीविनिर्गतः ॥ १३ ॥ ततोददर्शतुरगंसपत्रंनृपनंदनः ॥ प्रफुल्लितेचोपवनेकदंबस्यतलेस्थितम् ॥ १४ ॥ चरंतंचामरैर्युक्तंसौरभेयीपयःप्रभम् ॥ स्त्रीणांकुंकुमहस्तैश्चमुक्ताहारैरलंकृतम् ॥ १५ ॥ हयंदृष्ट्वाराजसुतोस्ववाहादवतीर्यच ॥ केशेषुतंनिजग्राहहर्षेणनृपलीलया ॥१६॥ तत्पत्रंवाचयामासयादवेंद्रेणयत्कृतम् ॥ द्वारकाधिपतीराजासर्वशूरशिरोमणिः ॥ १७ ॥ नान्योस्तितत्समःकोपिचक्रवर्तीबृहच्छ्रवाः ॥ विमोचितस्तुरगराट्तेनासौपत्रसंयुतः ॥१८॥ पाल्यमानोनिरुद्धेनगृह्णंतुसबलानृपाः ॥ तस्यान्यथाप्रपदयोःपतित्वायांतुक्षत्रियाः ॥१९॥ इत्यभिप्रायमालोक्यकोपेनाहनृपात्मजः॥ अनिरुद्धोधनुर्द्धारीधन्विनोनवयंस्मृताः ॥ २० ॥ मत्पितरिस्थितेमह्यांकस्तुगर्वंसमाचरेत् ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ इत्युक्त्वासहयंनीत्वाप्रययौनृपसन्निधौ ॥ २१ ॥ कथयामासवृत्तांतंपितुरग्रेहयस्यच ॥ श्रुत्वापुत्रस्यवचनमिंद्रनीलोमहीश्वरः ॥ २२ ॥ शिवभक्तोमहामानीपुत्रंप्राहमहाबलः ॥ इंद्रनीलउवाच ॥ समर्थेनपुरादत्तंराजसूयेक्रतूत्तमे ॥२३॥ प्रद्युम्नायबलिंकिंचित्कुमंत्रिवचनान्मया ॥ अद्यानिरुद्धस्तुहयंपालयन्पुनरागतः॥२४॥

बड़ा भारी यश है, उस चक्रवर्ती उग्रसेनने यह घोड़ा पत्र सहित छोड़ा है॥१८॥अनिरुद्ध इसके रक्षक हैं, सो जो कोई बली हो, वह इसको पकड़े, अन्यथा अनिरुद्धके पांवोंमें आकर पड़ जाओ ॥१९॥ इस अभिप्रायको बांचकर वह राजकुमार कुपित होकर बोला कि क्या धनुर्धारी एक अनिरुद्धही हैं? क्या हम कोई नहीं हैं ? ॥ २० ॥ इस भूमिमें मेरे पिताके होते वीरताका अभिमान करनेवाला कौन है, गर्गजी कहते हैं कि वह राजकुमार इतना कहकर घोड़ेको लेकर राजा अपने पिताके पास गया ॥ २१ ॥ और उसने जाकर पिताके सामने सब वृत्तान्त कहा, तब इन्द्रनील राजा पुत्रके कथनको सुनकर ॥ २२ ॥ शिवजीका भक्त, बड़ा मानी, और बलवान् वह राजा अपने पुत्रसे बोला इन्द्रनील बोला कि, मैंने पहिले कुमन्त्रियोंके कहनेसे समर्थ होकर भी राजसूययज्ञमें प्रद्युम्नको भेंट देदी थी, आज फिरभी अनिरुद्ध इस घोड़ेका पालन करता हुआ फिर यहाँ आया है ॥ २३ ॥ २४ ॥

अहो ! दैव बल प्रबल है जो कुछ विपरीत न हो जाय, वही थोड़ा है, थोड़े दिनोंमेंही यादव द्वारकामें कैसे बढ़े हैं ॥ २५ ॥ इससे मैं अनिरुद्धादिक सब यादवोंको जीतूँगा, परन्तु उस अभिमानी अनिरुद्धको श्यामकर्ण नहीं दूँगा ॥२६॥ भक्तिसे जिनको सन्तुष्ट किया है, वह शंकरजी मेरा पालन करेंगे, इतना कहकर उस बड़े वीर माहिष्मतीके पतिने सेनासहित ॥ २७ ॥ स्वर्णकी रस्सीसे घोड़ेको बांधकर युद्ध करनेका मन किया, तब अनिरुद्ध घोड़ेको देखते २ आये ॥ २८ ॥ सौ अक्षौहिणीको लिये हुये नर्मदाके तटपर आये, हे नृप ! साम्ब, मधु, बृहद्बाहु, चित्रभानु, वृक, अरुण ॥ २९ ॥ संग्रामजित्, सुमित्र, दीप्तिमान्, भानु, वेदबाहु, पुस्कर, श्रुतदेव, सुनन्दन ॥३०॥ विरूप, चित्रबाहु, न्यग्रोध और कवि, हे राजन् ! ये सब अनिरुद्धके सहायक आये ॥ ३१ ॥ और गद, सारण, अक्रूर,कृतवर्मा, उद्धव, युयुधान और सात्यकि ये सब यादव॥३२॥अनिरुद्धकी सहायता करनेके लिये आये

अहोदैवबलंयेनकिन्नभूयाद्विपर्य्ययः ॥ गतावृद्धिंद्वारकायामल्पकालेनवृष्णयः ॥ २५ ॥ तस्मात्सर्वान्विजेष्यामिकार्ष्णिजप्रमुखान्यदून् ॥ श्यामकर्णंनदास्यामितस्मैमानवृतायच ॥ २६ ॥ पालयिष्यतिमांयुद्धेभक्त्यासंतोषितःशिवः ॥ इत्युक्त्वासेनयायुक्तोवीरोमाहिष्मतीपतिः ॥ २७ ॥ स्वर्णदाम्नाहयंबद्ध्वायुद्धंकर्तुमनोदधे ॥ ततोनिरुद्धःसंप्राप्तोतुरगंचविलोकयन् ॥ २८ ॥ अक्षौहिणीशतयुतोनर्मदायास्तटेनृप ॥ सांबोमधुबृहद्बाहुश्चित्रभानुर्वृकोरुणः ॥ २९ ॥ संग्रामजित्सुमित्रश्चदीप्तिमान्भानुरेवच ॥ वेदबाहुःपुष्करश्चश्रुतदेवःसुनंदनः ॥३०॥विरूपश्चित्रबाहुश्चन्यग्रोधश्चकविस्तथा ॥ एतेसमाययूराजन्ननिरुद्धसहायिनः ॥३१॥ गदश्चसारणोक्रूरःकृतवर्माहिचोद्धवः ॥ युयुधानःसात्यकिश्चशूराएतेचवृष्णयः ॥३२॥ सहायमनिरुद्धस्यकर्तुंसर्वेसमागताः ॥स्थित्वातेनर्मदातीरेभोजवृष्ण्यंधकादयः ॥३३॥ श्यामकर्णमपश्यंतोत्वब्रुवन्विस्मयान्विताः ॥ केननीतःसपत्राश्वउग्रसेनस्यभूपतेः॥३४॥तस्मान्मित्राणिसोप्यत्रश्यामकर्णोनदृश्यते ॥ राजसूयेपुरायस्मैनरदैत्यसुरादयः ॥३५॥ नवखंडाधिपाश्चैवनिर्जिताश्चबलिंददुः ॥ यस्यवैशासनंचंडंतिरस्कृत्यकुधीर्नृपः॥३६॥ तुरगंहृतवान्मानात्सस्तेनोदंडमर्हति॥सर्वेषामितिवाक्यंतुश्रुत्वादृष्ट्वापुरींपुरः ॥३७॥ उद्धवंमंत्रिणांश्रेष्ठं प्राहरुक्मवतीसुतः ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ नगरीयंनदीतीरेकस्यभूपस्यराजते॥३८॥

वे सब भोज, वृष्णि, अंधकादिक आये ॥ ३३ ॥ वे सब श्यामकर्ण घोड़ेको नहीं देखकर बड़े भारी विस्मयमें मग्न होकर बोले कि, भाइयो ! न जाने राजा उग्रसेनके पत्रसहित घोड़ेको कौन ले गया ॥ ३४ ॥ हे मित्रो ! वह श्यामकर्ण घोड़ा यहाँ नहीं दीखता है, पहिले राजसूय यज्ञमें जिन उग्रसेनको मनुष्य, दैत्य, देवता॥३५॥ और नव (नौ) खण्ड के पतियोंने हारकर भेंट दी थी, उन्हींके प्रचण्ड शासनको तिरस्कृत करके कुत्सित बुद्धिवाला वह राजा ॥ ३६ ॥ जो घोड़को ले गया है, इसलिये वह अभिमानी चोर दण्ड पानेके योग्य है, इस प्रकारसे सभीके कथनको सुनकर आगे नगरीको देखकर ॥ ३७ ॥ मन्त्रियोंमें श्रेष्ठ उद्धवसे रुक्मवतीके पुत्र अनिरुद्ध यह वचन बोले, कि, हे उद्धवजी ! यह नदीके किनारेपर नगरी किस राजाकी है ॥ ३८ ॥

मुझको ऐसा मालूम पड़ता है कि, हमारा घोड़ा इसी नगरीमें गया है, अनिरुद्धके कथनको सुनकर कृष्णके मित्र उद्धव प्रसन्न होकर बोले ॥ ३९ ॥ हे महाराज ! यह नगरी इन्द्रनील नामके राजा की है, माहिष्मती इसका नाम है, इस पुरीमें शिवजीके भक्त चारों वर्ण निवास करते हैं ॥ ४० ॥ हे यदुराज ! इस राजाने पहिले नर्मदा नदीके तटपर बारह वर्षतक नर्मदेश्वर महादेवजीका पूजन किया था ॥४१॥ तब षोड़शोपचार पूजन करनेसे प्रसन्न होकर शिवजीने दर्शन दिये,और राजाको वरके लिये प्रेरणा की, कि वर मांग ॥४२॥ तब महादेवजीके कथनको सुनकर माहिष्मतीका पति राजा इन्द्रनील हाथ जोड़कर गद्गदवाणीसे बोला ॥ ४३ ॥ कि हे ईशान ! नर्मदाके स्वामी, जगत्के गुरु आपको नमस्कार है, आप सकाम पुरुषोंके काम पूर्ण करनेको कल्पवृक्ष हैं॥ ४४ ॥ सो हे महेश्वर ! वर देनेवाले आपसे वरदान मांगता हूँ कि देव, दैत्य, और मनुष्योंसे जो भय है, उससे मेरी सर्वदा

तुरंगमोगतोस्त्यस्यामितिमन्येत्वहंकिल ॥ इतितद्वाक्यमाकर्ण्यप्राहकृष्णसखोमुदा ॥३९॥ उद्धवउवाच ॥ इंद्रनीलस्यनगरीनाम्नामाहिष्मती-
शुभा ॥ महेशपूजनरतावर्णायस्यांवसंतिहि ॥४०॥ नृपेणानेनवृष्णीशनर्मदायास्तटेपुरा ॥ द्वादशवर्षपर्यंतंपूजितोनर्मदेश्वरः ॥ ४१ ॥ ततः-
शिवःप्रसन्नोभूदुपचारैश्चषोडशैः ॥ तस्मैस्वदर्शनंदत्त्वावरार्थंतमनोदयत् ॥४२॥ महेशस्यवचःश्रुत्वा नृपोमाहिष्मतीपतिः॥ भूत्वाकृतांजली
रुद्रंप्राहगद्गदयागिरा ॥ ४३ ॥ ईशानत्वांनमस्येहंनर्मदेशंजगद्गुरुम् ॥ पुरुषाणांसकामानांकामरूपसुरद्रुमम् ॥ ४४ ॥ त्वत्तःप्रदातुःकांक्षेहंवर-
मेतन्महेश्वर ॥ देवदैत्यनरेभ्यस्त्वंरक्षमांसर्वदाभयात् ॥४५॥ इतितद्वाक्यमाकर्ण्यकृत्तिवासामुदान्वितः ॥ तथास्तुचोक्काराजेंद्रततश्चांतरधी-
यत ॥ ४६ ॥ तस्मादेषनृपःशूरोहयंतुभ्यंनदास्यति ॥ विनायुद्धेनरुद्रस्यवरात्कंदर्पनंदन ॥ ४७ ॥ इत्थमौपगवेर्वाक्यमनिरुद्धोनिशम्यच ॥
बलीधैर्येणप्रत्याहयादवानांचशृण्वताम् ॥ ४८॥ अनिरुद्धउवाच ॥ नृपस्यैतस्यरुद्रस्तुसहायस्तेह्युदाहृतः ॥ तथाकृष्णस्तुभगवाञ्छृणुमंत्रि-
न्ममोपरि ॥ ४९ ॥ इत्युक्त्वायादवैःसार्द्धंवीरोरुक्मवतीसुतः॥ हयस्यमोचनार्थंवैनृपंजेतुंमनोदधे ॥५०॥ ततःपरिघनिस्त्रिंशगदाचापपरश्वधैः॥
बभूवुर्यादवाःसज्जाःप्राद्युम्नौदंशितेस्थिते ॥ ५१ ॥ श्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेअनिरुद्धप्रयाणंनामचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

रक्षा करें ॥ ४५ ॥ ऐसे राजाके वचनको सुनकर शिवजी बड़े प्रसन्न होकर बोले कि, ''तथास्तु'' (जैसा चाहते हो, वैसा ही हो) ऐसे कहकर अन्तर्धान होगये ॥४६॥ इससे यह राजा बड़ा शूरवीर है, वह तुमको घोड़ा नहीं देगा, हे कन्दर्पनन्दन ! वह युद्ध किये विना नहीं देगा ॥४७॥ इस प्रकार उद्धवके कथनको सुनकर बड़े बली अनिरुद्धजी धीरज धर कर यादवोंके सुनते २ बोले ॥ ४८ ॥ अनिरुद्धने कहा कि, हे उद्धवजी ! आपने इस राज्यके सहायक महादेवजी बताये हैं, तो देखिये मेरे भी सहायक श्रीकृष्ण भगवान् हैं ॥ ४९ ॥ इतना वचन कहकर अनिरुद्धजीने यादवोंसहित घोड़ेके छुड़ानेका और राजाको जीतनेका मन किया ॥५०॥ उसके बाद परिघ, खड्ग, गदा, धनुष, और फरसा इनको हाथोंमें ले लेकर सब यादव तैयार होकर खड़े हुये, तब अनिरुद्धजी भी कवच पहिनकर लड़नेके लिये तैयार हुये ॥ ५१ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

गर्गजी कहते हैं कि, उसके बाद इन्द्र नील राजाका पुत्र बड़ा बलवान् तीन अक्षौहिणी सेनासहित यादवोंके जीतनेके लिये बड़े क्रोधसे पिताकी आज्ञासे पुरीके बाहिर निकला ॥१॥ तब श्रीकृष्णका पौत्र अनिरुद्ध राजकुमारको आया देखकर धनुषको हाथमें लेकर अकेलाही युद्ध करनेको प्रवृत्त हुआ, जैसे वृत्रासुरको मारनेके लिये इंद्र प्रवृत्त हुआ हो ॥२॥ इस प्रकार संग्राममें अनिरुद्धने आकर शत्रुओंके ऊपर बाणोंके समूह छोड़े, तब सभीके मनमें भारी त्रास पैदा हुआ॥३॥तब नील केतुके सैनिक सब डरकर भाग गये, तब अनिरुद्धजीने अपना दिग्विजयका शंख बजाया, तब नीलने अपनी सेनाको भगी हुई देखकर धनुषकी टंकारकी ॥ ४ ॥ ५ ॥ फिर अपनी सेनाको धनुषकी टंकारसे प्रेरणा की, शत्रुओंके मध्यमें अनिरुद्धको देखकर अत्यन्त क्रोधित हुये साम्ब एक अक्षौहिणी सेनासहित धनुषकी टंकार करते हुये आये, और उन्होंने बीस बाण तो नील केतुके मारे, और पांच बाण पांच रथियोंके मारे ॥ ६ ॥७ ॥ हाथी, घोड़ और मनुष्योंको बाणोंसे मारा, तब वे सब सांबके मारे अति पीड़ित होकर भूमिपर गिर पड़े ॥ ८ ॥ हाथियोंके ऊपर हाथी, रथोंपर

॥ गर्गउवाच ॥ अथेन्द्रनीलस्यसुतोमहाबलोह्यक्षौहिणीभिस्त्रिभिरेवसंयुतः ॥ यदून्विजेतुंस्वपुराद्विनिर्गतोपितुश्चवाक्याद्बहुरोषपूरितः ॥१॥ तमागतंवीक्ष्यनृपस्यपुत्रंश्रीकृष्णपौत्रस्तुधनुर्गृहीत्वा ॥ युद्धंप्रकर्तुंप्रययौसएकोवृत्रंविजेतुंचयथाबिडौजाः ॥२॥ गत्वानिरुद्धःसंग्रामेशत्रूणामुपरित्वरम् ॥ मुमोचबाणपटलान्सर्वेषांत्रासयन्मनः ॥ ३ ॥ ततश्चदुद्रुवुःसर्वेनीलकेतोश्चसैनिकाः ॥ रणाद्भीताःस्वशंखंचदध्मौप्रद्युम्ननंदनः ॥ ४ ॥ पलायमानांस्वांसेनांदृष्ट्वानीलध्वजोबली ॥ चापटंकारयन्छांभ्रमाययौरणमंडले ॥ ५ ॥ सेनांस्वांनोदयामासपुनःसोपिधनुर्ज्यया ॥ द्विषांमध्येनिरुद्धंतंदृष्ट्वासांबोत्यमर्षितः ॥ ६ ॥ धनुष्टंकारयन्प्राप्तोह्यक्षौहिण्यावृतोरुषा ॥ विंशद्बाणैर्नीलकेतुंपंचभिःपंचभीरथान् ॥७॥ अताडयद्गजांश्चैवतथासतुरगान्नरान् ॥ भूम्यांनिपेतुस्तेसर्वेसांबबाणैःप्रताडिताः ॥८॥ गजोपरिगजाःकेचिद्रथोपरिरथास्तथा ॥ हयोपरिहयाश्चैवनरोपरिनराश्चवै ॥९॥ तत्क्षणेनाप्यभूद्भूमीरुधिरौघपरिप्लुता ॥ पतितैश्छिन्नभिन्नैश्चद्विपाश्वरथपत्तिभिः ॥१०॥ ततःप्रभग्नंस्वबलंविलोक्यनीलध्वजोभूपधनुर्गृहीत्वा ॥ बाणान्विमुंचन्किलयादवानांजेतुंमनोयस्यसचागमद्वै ॥११॥ सगत्वाप्रधनेराजन्दशबाणैरुषान्वितः ॥ चापंसांबस्यचिच्छेदप्रेमदुर्वचनैरिव ॥ १२ ॥ चतुर्भिश्चतुरोवाहान्द्वाभ्यांकेतुंरथंशतैः ॥ एकेनजघ्नेसूतंसइन्द्रनीलसुतोबली ॥१३॥ एवंकृत्वाचविरथंसांबंवैनृपनंदनः ॥ पुनःसमागतांतस्यसेनांबाणैर्जघानह ॥ १४ ॥

रथ, घोड़ोंपर घोड़े, और आदमियोंके ऊपर आदमी गिरने लगे ॥९॥ एक क्षणमात्रमेंही भूमि रुधिरसे भर गई, गिरे और छिदे भिदे हुये पड़े हाथी, घोड़े रथ और पैदलोंके रुधिरसे भर गई ॥१०॥ तब नील ध्वज राजाने नष्ट हुई अपनी सेनाको देखकर हाथमें धनुष लेकर बाणोंको मारते हुये उसने यादवोंको जीतनेका मन किया ॥११॥ तब उसने संग्राममें क्रोधसे दश बाणोंसे सांबका धनुष छेदन कर ऐसे गिरा दिया, जैसे दुर्वाक्योंसे प्रेमको ॥१२॥ तब बड़े बली इंद्र नीलके पुत्रने चार बाणोंसे तो चारों घोड़े मार दिये, दो बाणोंसे ध्वजापताका काट डाली, सौ बाणोंसे रथ तोड़ डाला, और एक बाणसे साम्बका सारथी मार डाला ॥ १३ ॥ इस प्रकार नीलके पुत्रने साम्बको विरथ (रथहीन) करके फिर सामने आई साम्बकी सेनाके ऊपर बाण बरसाये ॥ १४ ॥

इतनेमें ही नीलध्वजकी भी सब सेना आगई, वह यादवोंकी सेनाके ऊपर बड़े तीखे बाणोंकी वर्षा करने लगी ॥१५॥ तब दोनों सेनाओंका परस्पर खड्ग, परिघ, गदा, शक्ति और बाणोंसे संग्राम होने लगा ॥ १६ ॥ तब साम्बने दूसरे रथमें बैठकर दृढ़ धनुषके ऊपर प्रत्यंचा चढ़ाकर एक सौ बाण मारकर उनसे नीलध्वजका रथ चूर्ण कर दिया ॥ १७॥ तब धनुष जिसका कट गया और रथ जिसका टूट गया ऐसा वह राजकुमार बड़ा कुपित होकर हे मानद ! साम्बके ऊपर दौड़ा ॥ १८ ॥ तब उसी समय साम्ब तत्कालही रथमेंसे कूद कर गदाको हाथमें लेकर बड़े क्रोधसे नीलध्वजके सन्मुख दौड़ा ॥१९॥ तब राजा नीलध्वजने साम्बको सामने आता देखकर एक गदा मारी, किन्तु उसकी गदाके प्रहारसे फूलों की मालासे मारे हुये हाथीकी तरह साम्ब बिलकुल भी नहीं घबराया ॥२०॥ तब साम्बने नीलध्वजके एक गदा मारी, उस गदाके प्रहारसे वह मूर्च्छित होकर गिर पड़ा ॥ २१ ॥ तब उसकी सब सेना भाग गई, और बड़ा हाहाकार हुआ, तब क्रोधित होकर इन्द्रनील राजा युद्ध करनेके लिये आया ॥२२॥ दो अक्षौहिणी सेना उसके साथमें आई, बाणोंको

अथनीलध्वजस्यापिसेनासर्वासमागता ॥ यादवानांबलंसंख्येजघाननिशितैःशरैः ॥ १५॥ ततःसमभवद्युद्धमुभयोःसेनयोर्मृधे॥ निस्त्रिंशैःपरिघैर्बाणैर्गदापरुषशक्तिभिः ॥१६॥ सांबोन्यंरथमारुह्यसज्जंकृत्वाधनुर्दृढम् ॥ तद्रथंचूर्णयामासशतबाणैरणेबली ॥१७॥ संच्छिन्नधन्वाविरथो गदामुद्यम्यवेगवान् ॥ अभ्यधावद्रणेक्रुद्धोसांबस्योपरिमानद ॥ १८ ॥ तदैवसांबःसहसावतीर्याथरथाद्गदाम् ॥ नीत्वानीलध्वजस्यापिसंमुखे वाद्रुषा ॥ १९ ॥ तताडगदयासांबमागतंवीक्ष्यभूपजः ॥ नचचालप्रहारेणमालाहतगजोयथा ॥२०॥ ततःसांबस्तुगदयाताडनृपनन्दनम् ॥ तत्प्रहारेणपतितोमूर्च्छांप्राप्तोरणेतुसः ॥ २१ ॥ सैनिकादुद्रुवुस्तस्यहाहाकारंसमुच्चरन् ॥ ततोयुद्धायसंक्रुद्धइन्द्रनीलःसमागतः ॥२२॥साकमक्षौहिणीभ्यांचविमुंचन्धनुषाशरान् ॥ तमागतंविलोक्याथमधुःकृष्णसुतोबली ॥२३॥ धानुष्कोविरथंचक्रइन्द्रनीलंशिलीमुखैः ॥ सेनांसमागतांतस्ययुयुधानोर्जुनप्रियः ॥ २४ ॥ शरैर्विव्याधसमरेमैत्रींदुर्वचनैरिव ॥ ततश्चयादवैर्मुक्तोनृपोमाहिष्मतीं ययौ ॥२५॥ गत्वापुर्यांचदुःखार्तःसस्मारस्वपतिंशिवम् ॥ अथतस्मैशिवःसाक्षाद्दत्त्वादर्शनमुत्तमम् ॥२६॥ पप्रच्छसर्ववृत्तांतंश्रुत्वासतुन्यवेदयत्॥ इत्थंनिशम्यवचनंप्रत्याह प्रमथेश्वरः ॥ २७ ॥ शिवउवाच ॥ शोकंमाकुरुराजेंद्रमद्वरोपिमृषानहि ॥ देवदैत्यनराःसर्वेत्वांविजेतुंनचक्षमाः ॥ २८ ॥

मारते हुये आये इन्द्रनीलको देखकर बड़े बली मधु नामके कृष्णके पुत्रने॥२३॥ धनुष लेकर बाणोंके मारे इन्द्रनीलको विरथ(रथहीन) कर दिया, और आई हुई उसकी सेनाका अर्जुनके प्रिय सात्यकिने "जैसे दुर्वाक्योंसे मित्रताका नाश करते हैं" वैसेही बाणोंसे सेनाका नाश कर दिया, तब यादवोंने जिसको छोड़ दिया ऐसा वह इन्द्रनील राजा माहिष्मतीको भाग कर चला गया ॥ २४ ॥ २५ ॥ पुरीमें जाकर दुखमें आर्त होकर अपने स्वामी शिवको स्मरण किया, तब साक्षात् शिवने दर्शन दिया ॥ २६ ॥ और सब वृत्तान्त पूछा, तब राजाने सब वृत्तान्त शिवजीसे निवेदन किया, तब प्रमथोंके स्वामी शिवजी राजासे बोले ॥२७॥ शिवजी बोले हे राजेन्द्र ! तू शोक मतकर, मेरा वर मिथ्या नहीं है, सब देव, दैत्य, और मनुष्य तुमको जीतनेको समर्थ नहीं है ॥ २८ ॥

हे राजन् ! ये जो श्रीकृष्णके पुत्र हैं ये सब श्रीकृष्णके वंशसे उत्पन्न हुये हैं, ये न तो देवता हैं, न दैत्य हैं, और न मनुष्य हैं ॥२९॥ इन्होंने जो तुमको जीता है, सो तुम मनको मत बिगाड़ो, और हे भूपते ! तुम कृष्णके अपराध करनेके योग्य नहीं हो ॥३०॥ इसलिये हे नृप ! आये हुये उनको विधिसे अश्व मेधयज्ञका घोड़ा देदेओ, विलम्ब मत करो॥३१॥ यह कह-कर रुद्र भगवान् अन्तर्धान हो गये, तब राजाभी जगत्पतिके माहात्म्यको जानकर प्रसन्न होकर, अश्वमेधके घोड़ेको लेकर॥३२॥नीलध्वजको साथ लेकर और बहुतसे रत्नोंको लेकर और एक सौ भार सुवर्ण लेकर और एक हजार मत्त हाथियोंको लेकर ॥३३॥ और दश लाख घोड़े, दश हजार रथ, ये सब लेकर जहाँ अनिरुद्ध थे, वहाँ सब मनुष्योंको साथ लेकर नमस्कार करनेको आया ॥३४॥ वह राजा इन्द्रनील विधि विधानसे अनिरुद्धके पास जाकर सब वृत्तान्त निवेदन कर फिर प्रणामकर यह वचन बोला ॥ ३५ ॥ इन्द्रनील बोला कि, कृष्णचन्द्रके लिये प्रणाम है, बलरामके लिये, महात्मा प्रद्युम्नके लिये, यादवोंमें मुख्य अनिरुद्धजीके लिये नमस्कार है नमस्कार है ॥३६॥ हे असुरार्दन ! मैं क्या करूँ ? मुझको

एतेकृष्णसुताराजञ्छ्रीकृष्णस्यांशसंभवाः॥नदेवायेमहाराजनदैत्यानचमानुषाः ॥२९॥ एतैर्विनिर्जितस्त्वंतुदुर्मनाभवमानृप॥ अपराधंतुकृष्ण-
स्यकर्तुंनार्हसिभूपते॥३०॥समागतेभ्यएतेभ्यस्तस्मात्त्वंविधिनानृप॥शीघ्रंप्रयच्छभद्रंतेहयमेधतुरंगमम्॥३१॥इत्युक्त्वांतर्दधेरुद्रोनृपोज्ञात्वाजग-
त्पतेः ॥ माहात्म्यंचमुदायुक्तोगृहीत्वाक्रतुवाहनम् ॥३२॥ नीलध्वजेनसहितोरत्नान्यादायभूरिशः ॥ स्वर्णभारशतंचैवमतंगजसहस्रकम् ॥३३॥
नियुतंघोटकानांचह्यादायस्यंदनायुतम् ॥ यत्रानिरुद्धःप्रययौनमस्कर्तुंजनैर्वृतः ॥३४॥ अनिरुद्धस्यनिकटेगत्वाराजाविधानतः ॥सर्वंनिवेदया-
मासनत्वावचनमब्रवीत् ॥ ३५ ॥ इन्द्रनीलउवाच ॥ नमःकृष्णायरामायप्रद्युम्नायमहात्मने ॥ नमोनमोनिरुद्धायसात्वतांप्रवरायच
॥ ३६ ॥ आदेशोदीयतांमह्यंकिंकरोम्यसुरार्दन ॥ अनिरुद्धस्तुतंप्राहमयासहनृपोत्तम ॥ ३७ ॥ शत्रुभ्यश्चमित्रहयंपालयत्वंहिमामकम्
॥ गर्गउवाच ॥ इतितस्य वचश्श्रुत्वातथेत्युक्त्वानृपोनृप ॥ ३८ ॥ नीलध्वजायराज्यंतुदत्त्वागंतुंमनोदधे ॥ ३९॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां हय-
मेधखण्डे विजयवर्णननामपंचदशोऽध्यायः ॥१५॥ गर्गउवाच ॥ अथमुक्तस्तुतुरगोदेशान्सर्वान्विलोकयन् ॥ उशीनरेचविषयेप्राप्तश्चंपावतीं-
पुरीम् ॥१॥ राज्ञाहेमांगदेनापिपालितांदुर्गमंडिताम् ॥ चातुर्वर्ण्यजनाकीर्णांप्रासादैःपरिवेष्टिताम् ॥ २ ॥ यत्रहेमांगदोराजापुत्रेणहंसकेतुना ॥
राज्यंकरोतिसुकृतिर्महाशूरजनैर्वृतः ॥ ३ ॥

आज्ञा दीजिये, तब अनिरुद्धने इन्द्रनील राजासे कहा कि हे राजन् ! हे मित्र ! मेरे सहित तुम मेरे इस घोड़ेकी रक्षा करो, कोई शत्रु बाधा न करे, गर्गजी कहते हैं, हे नृप ! इस प्रकार अनिरुद्धजीके वचन सुनकर इन्द्रनीलने कहा कि हे महाराज ! मैं ऐसाही करूँगा ॥३७॥३८॥ और अपने पुत्र नीलध्वजको राज्य देकर साथ चलनेको तैयार हो गया ॥३९॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखंडे भाषाटीकायां पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ गर्गजी कहने लगे कि उसके बाद वहाँसे छूटकर वह अश्व सब देशोंको देखता हुआ उष्णी नामके देशोंमें चम्पावती नामकी पुरीमें पहुँचा ॥ १ ॥ बड़े भारी किलेसे शोभित हेमांगद नामके राजासे पालित, चारों वर्णके मनुष्य निवास करते हैं, और जो चारों ओरसे पटकोटा और राजमहलोंसे घिरी हुई है ॥ २ ॥ जिस पुरीमें हंसध्वज पुत्रसहित हेमांगद नामका राजा राज्य करता था, जो राजा बड़े २ शूरवीर मनुष्योंसे रक्षित था ॥ ३ ॥

तब उस हेमांगद राजाने महात्मा अनिरुद्धका घोड़ा पकड़ लिया, उसने यादवोंकी कोई चिन्ता नहीं की, और घोड़ेको पकड़कर अपनी नगरीमें ले गया ॥४॥ घोड़ेको स्वर्णकी रस्सीसे बांधकर हेमांगद राजा क्रोधसे पूर्ण होकर पुरीमें अन्दर ले गया, और पुरीके द्वार बन्द कराकर ॥५॥ यादवोंके विनाशके लिये किलेकी दीवारोंपर दो लाख तोपें रखवाकर युद्धके लिये तैयार होगया ॥६॥ उसके बाद पीछेसे घोड़ेको देखते हुये अनिरुद्धजी आये हे, राजन् ! अनिरुद्धकी सब सेनाके शिविर चम्पावतीके बाहिर लग गये ॥७॥ तब जब अनिरुद्धजीने घोड़ा नहीं देखा, तब श्रीकृष्णचन्द्रके मित्र उद्धवजीसे यह वचन बोले ॥८॥ अनिरुद्धजी बोले, हे मन्त्रिन् ! यह पुरी किसकी है, हमारे घोड़ेको कौन ले गया ? हे महाबुद्धे ! आप जानते हैं, सो विचार कर कहिये ॥९॥ तब बड़े बुद्धिमान् उद्धवजी यह सुनकर शत्रुओंकी बातको जानकर यह वचन बोले ॥ १० ॥ उद्धवजी बोले—हे द्वारकानाथ !

गृहीतस्तेनतुरगोऽनिरुद्धस्यमहात्मनः ॥ स्वपुर्यांलीलयाराजन्यादवानगणय्यच ॥४॥ बद्धाहेमांगदोराजास्वर्णदाम्नाचवाजिनम् ॥ द्वारेषुचकपाटादीन्दत्त्वाक्रोधेनपूरितः ॥५॥ यादवानांविनाशायदुर्गभित्तिषुमानद ॥ शतघ्न्यश्चद्विलक्षाणिधृत्वायुद्धायवैभनः ॥६॥ ततःप्राप्तोनिरुद्धस्तुससैन्योश्वंविलोकयन् ॥ चंपावत्याह्युपवनेशिबिरोभूत्तस्यवै ॥७॥ अथप्रद्युम्नतनयस्तत्राहृष्ट्वातुरंगमम् ॥ उद्धवंकृष्णचन्द्रस्यसखायमिदमब्रवीत् ॥ ८ ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ कस्येयंनगरीमंत्रिन्केननीतोहयोमम ॥ त्वंजानासिमहाबुद्धेकथयस्वविचार्यच ॥ ९ ॥ इत्थंनिशम्यतद्वाक्यमुद्धवोबुद्धिसत्तमः ॥ ज्ञात्वावार्ताचशत्रूणामिदंवचनमब्रवीत् ॥ १० ॥ उद्धवउवाच ॥ इयंचंपावतीनाम्नानगरीद्वारकेश्वर ॥ हंसध्वजेनपुत्रेणयत्रहेमांगदोनृपः ॥ ११ ॥ करोतिराज्यंतेनापिगृहीतस्तुरगस्तव ॥ एषराजामहाशूरोयज्ञस्याश्वंनदास्यति ॥१२॥ पुर्यांस्थित्वाभुशुण्डीभिर्बहुयुद्धंकरिष्यति ॥ ननिर्गमिष्यतिबहिर्युद्धायसनृपःपुरात् ॥१३॥ तस्मात्तवेच्छानृपतेयथाभूयात्तथाकुरु ॥ इतितद्वचनंश्रुत्वासउवाचरुषान्वितः ॥ १४ ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ अहंसर्वान्हनिष्यामिदुर्गयुक्तान्बहून्द्विषः ॥ लोहशक्तिसमैर्बाणैःप्रहरार्द्धेनसत्तम ॥ १५ ॥ इत्थंतद्वाक्यमाकर्ण्ययादवःक्रोधपूरितः ॥ पुरींहंतुंययौशीघ्रंमुमोचेषूंश्चकोटिशः ॥ १६ ॥

यह चम्पावती पुरी है, इस नगरीमें हंसध्वज नामके पुत्रको लेकर हेमांगद नामका राजा राज्य करता है ॥११॥ हे महाराज ! इसी हेमांगदने आपके अश्वको पकड़ा है,यह राजा बड़ा वीर है, यह आपके यज्ञके घोड़ेको नहीं देगा ॥१२॥ नगरीमें भीतर रहकर बड़ा भारी युद्ध करेगा, यह राजा युद्ध करनेके लिये नगरके बाहिर नहीं निकलेगा ॥१३॥ इससे हे राजन् ! जैसी आपकी इच्छा हो, वैसा करिये, तब उद्धवजीके कथनको सुनकर बड़े क्रोधित होकर अनिरुद्धजी बोले ॥१४॥ हे उद्धवजी । मैं किलेके भीतर जो हैं, उन सबको मारूँगा, लोहकी शक्तिके समान बाणोंसे चार घड़ी (आधे प्रहर) मेंही सबको मार डालूँगा ॥ १५ ॥ तब इस प्रकार उनके वाक्यको सुनकर क्रोधमें भरे हुये यादव पुरीको नष्ट करनेके लिये करोड़ों बाण चलाने लगे ॥ १६ ॥

तब यादवोंके बाणोंके मारे नगरीमें बड़ा कोलाहल हुआ, जिससे हंसध्वज आदिक सब वीर शंकित हो उठे॥१७॥ तब राजाके कहनेसे उन वीरोंने बड़े साहससे किलेकी दीवारोंपर चढ़
कर पुरीके बाहर यादवोंको देखा ॥१८॥ तब वे सन्नद्ध हुये यादवोंको देखकर भयको प्राप्त हुये, जो यादव शस्त्रोंकी वर्षा कर रहे थे, और सब ओरसे युद्धके शृंगार किये हुये थे॥१९॥ ऐसे
यादवों पर वे तोपें चलाने लगे, जिनसे चारों तरफ अग्निसी लग गई, और "सभीको मारेंगे, किन्तु घोड़ा नहीं देंगे" ऐसा कहने लगे॥२०॥ उसके बाद अनिरुद्धजीकी सेनामें हाहाकार
हुआ, और तोपोंकी मारसे समस्त यादव अत्यन्त पीड़ित हुये॥२१॥ संछिन्न भिन्न हो गये हैं सर्वाङ्ग जिनके ऐसे बहुतसे तो संग्राममेंसे भाग गये, और हे राजन् ! कितनेही मूर्च्छित हो
गये॥२२॥कितनेही मर गये, और कितनेही अग्निके ज्वालाओंके मारे भस्मीभूत होगये, कितनेही पादहीन हो गये,कितनोंहीकी भुजाएँ और कितनोंहीके हाथ कट गये॥२३॥कितनोंहीके

अंधकानांबाणौघैःपुर्यांकोलाहलोप्यभूत् ॥ शत्रवःशंकिताःसर्वेवीराहंसध्वजादयः ॥ १७ ॥ ततोनृपस्यवचनाद्वीरास्तेसाहसेनवै ॥ दुर्गभित्ति
ष्वथारुह्ययादवान्ददृशुर्बहिः ॥ १८ ॥ दृष्ट्वातेचभयंप्रापुःसन्नद्धान्यदुपुंगवान् ॥ शस्त्रवर्षंप्रकुर्वन्तःसर्वतःपरिमंडितान् ॥ १९ ॥ तेभ्यःशतघ्नी
र्व्यसृजंश्चतुर्दिक्षुचवह्निना ॥ सर्वानेवहनिष्यामोनदास्यामोहयंवयम् ॥२०॥ अथानिरुद्धसेनायांहाहाकारोमहानभूत् ॥ विह्वलावृष्णयःसर्वेश-
तघ्नीभिःप्रताडिताः ॥ २१ ॥ संछिन्नभिन्नसर्वांगाःकेचिद्युद्धात्पलायिताः ॥ केचिन्मूर्च्छांगताराजन्केचिद्वैनिधनंगताः ॥२२॥ केचित्प्रज्वलि-
तायुद्धेभस्मीभूतास्तथापरे ॥ केचिद्वैपादहीनाश्चकरहीनाविबाहवः ॥२३॥ निःशस्त्राःपतिताश्चैवकेचिज्ज्वलितकंचुकाः ॥ हाहेतिवादिनःकेचि-
द्रामकृष्णेतिवादिनः ॥२४॥ शतघ्नीभिर्विशीर्णांगागजाःकेचिन्मृधांगणे ॥ दुद्रुवंतश्चपतितामूर्च्छितानिधनंगताः ॥२५॥ उत्पतन्तोदुद्रुवंत-
श्छिन्नदेहास्तुरंगमाः ॥ मृधेमृत्युंगताःकेचिद्विशीर्णाःपतितारथाः ॥२६॥ अग्निनापूरितंसर्वंयदुसैन्यंभयानकम् ॥ दृष्ट्वानिरुद्धःसंग्रामेशुशोचसं-
स्मरन्हरिम् ॥२७॥ ततःकृष्णस्यकृपयाबुद्धिंप्राप्तउषापतिः॥प्रतिशार्ङ्गंगृहीत्वावैनिषंगाच्छरमेवच॥२८॥ नीत्वानिधायकोदंडेपर्जन्यास्त्रंसमादधे
॥ २९ ॥ बाणेप्रमुक्तेसतिवैबलाहकःसमागतोवैयदुसैन्यमण्डले ॥ जलंववर्षाथयदून्प्रपालयन्कृपीटयोनिंकिलशांतयन्नृप ॥ ३० ॥

कवच जल गये, हाथोंसे शस्त्र छूट गये, कितनेही हाय-हाय पुकारते और कितनेही हे राम ! हे कृष्ण ! ऐसे पुकारने लगे॥२४॥ कितनेही हाथियोंके अङ्ग तोपोंके मारे बिखर गये, और वे
हाथी उस युद्धभूमिमें भागते२गिर पड़े, सो मूर्च्छित होकर संग्राममें गिरे, वे मारे गये॥२५॥कितनेही घोड़े उछलते, अंग जिनके कटगये,वे संग्राममें भागते मरगये,कितनेही रथ चूरचूर
होकर गिर पड़े॥२६॥यादवोंकी सब सेना अति भयानक अग्निसे पूर्ण होगई, यह देखकर अनिरुद्धजी भगवान् कृष्णका स्मरण करते हुये बड़ा शोक करने लगे॥२७॥ तब श्रीकृष्णकी
प्रेरणासे उषापति अनिरुद्धको यह बुद्धि उत्पन्न हुई कि शार्ङ्ग धनुषको लेकर तरकसमेंसे बाण निकालकर ॥२८॥ धनुषमें लगाकर पर्जन्यास्त्रका प्रयोग किया ॥ २९ ॥ उस बाणके
चलतेही एक साथ चारों ओरसे मेघमाला उठी, गर्जना होने लगी, और हे राजन् ! अग्निको शान्त करते हुये यादवोंकी सेनापर मुसलाधार पानी गिरने लगा ॥ ३० ॥

तब वे सब यादव अग्निके भयसे छूट गये, शीतल जिनके अंग ऐसे वे सब अनिरुद्धकी बड़ाई करते हुये लड़नेके लिये उठकर तैयार होगये ॥३१॥ तब अनिरुद्धजीने उनसे कहा कि मैं नगरीमें अपने शत्रु इस राजाको जीतनेके लिये पंखवाले घोड़ेपर बैठकर भीतर जाऊँगा ॥३२॥ गर्गजी कहते हैं कि, हे राजन् ! इस प्रकार सब साम्ब आदिक कृष्णके पुत्र अनिरुद्धके कथनको सुनकर ये अट्ठारहों महारथी अनिरुद्धसे बोले॥३३॥श्रीकृष्णके पुत्र बोले कि हे राजन् ! आप शत्रुओंकी नगरीके भीतर मत जाइये,हम सब उन आततायियोंको मारनेको नगरीके भीतर जायँगे ॥३४॥ सब इस प्रकार कहकर पंखवाले घोड़ोंपर सवार होकर वे वीर धनुषधारी, कवच पहिनकर युद्ध करनेमें बड़े प्रवीण ॥३५॥ परकोटेको उलांघकर भगवान् कृष्णके वे पुत्र भीतर घुस गये, और सर्पाकार बाणोंसे सब शत्रुओंको मारने लगे ॥३६॥ उस समय राजाके कथनको सुनकर वे एक करोड़ शत्रु धनुषोंको लिये, क्रोधित होकर बड़े

ततस्तेग्निभयान्मुक्ताश्शीतलांगाश्चवृष्णयः ॥ श्लाघांकृत्वानिरुद्धस्ययुद्धंकर्तुंसमुत्थिताः ॥ ३१ ॥ तान्प्रत्याहानिरुद्धस्तुह्यहंयास्येपुरींप्रति॥
अश्वेनपक्षयुक्तेनैकोविजेतुंद्विषांपतिम् ॥ ३२ ॥ गर्गउवाच ॥ इतिश्रुत्वावचस्तस्यसांबाद्याःकृष्णनन्दनाः ॥ प्रोचुःसर्वेचतंराजन्नष्टादशमहा-
रथाः ॥ ३३ ॥ हरिपुत्राऊचुः ॥ गंतुंनार्हसित्वंराजञ्छत्रूणांनगरींप्रति ॥ प्रयास्यामोवयंसर्वेविजेतुंचाततायिनम् ॥ ३४ ॥ इत्युक्त्वाकु-
पिताःसर्वेसहसारुह्यघोटकान् ॥ सपक्षान्धन्विनोवीरादंशितायुद्धकोविदाः॥३५॥उल्लंघयित्वाप्राकारंपुर्यांप्राप्ताहरेःसुताः॥गत्वाजघ्नुर्द्विषःस-
र्वान्बाणैरुरगसन्निभैः ॥३६॥ तेशत्रवस्तुसहसानृपस्यवचनान्नृप॥ युद्धार्थंधन्विनःक्रुद्धाआगताएककोटयः॥३७॥तानागतान्बहून्वीरान्कुपि-
तानुद्यतायुधान् ॥ सांबोमधुर्बृहद्भानुश्चित्रभानुर्वृकोरुणः ॥ ३८ ॥ संग्रामजित्सुमित्रश्चदीप्तिमान्भानुरेवच॥वेदबाहुःपुष्करश्चश्रुतदेवः सुनं-
दनः ॥ ३९ ॥ विरूपश्चित्रबाहुश्चन्यग्रोधश्चकविस्तथा ॥ एतेकृष्णसुताःसर्वेजघ्नुर्बाणैर्निरीक्ष्यच ॥४०॥ ततःपुर्यांचवीराणांरुधिरेणभयं-
करा ॥ नदीबभूवराजेंद्रपुरद्वाराद्विनिःसृता ॥ ४१ ॥ तामागतांनदींघोरामनिरुद्धस्तुशंकितः ॥ प्रत्युवाचरुषाराजन्मुखेनपरिशुष्यता॥४२॥
मत्पितृभ्रातरःसर्वेरणेकिंनिहताअहो ॥ तस्मादस्मान्प्लावयितुंनदीघोरासमागता ॥ ४३ ॥ एतामग्निमयैर्बाणैःशोषयिष्येनसंशयः ॥
पातयिष्यामिनगरीमहंगिरिसमैर्गजैः ॥ ४४ ॥

वेगसे युद्ध करनेके लिये आये ॥३७॥ कुपित हुये उन वीरोंको हाथोंमें शस्त्र लिये आते देखकर साम्ब, मधु, बृहद्भानु, चित्रभानु, वृक, अरुण ॥३८॥ संग्रामजित, सुमित्र, दीप्तिमान्, भानु वेदबाहु, पुष्कर, श्रुतदेव, सुनन्दन ॥३९॥ विरूप, चित्रबाहु, न्यग्रोध और कवि ये अट्ठारहों कृष्णके पुत्र सब सेनाको देखकर बाणोंसे प्रहार करने लगे ॥४०॥ तब नगरीके भीतर वीरोंके रुधिरकी सब बड़ी भयंकर धारा निकली, ऐसी घोर नदी बहने लगी ॥४१॥ उस घोर नदीको निकली देखकर अनिरुद्धके मनमें बड़ी शंका उत्पन्न हुई,मुख सूख गया, हे राजन् ! बड़े क्रोधसे यह वाक्य बोले ॥४२॥ हाय ! क्यों मेरे पिताके भाई सब भीतर गये, वे संग्राममें मारे गये क्या ? उनके रुधिरकी यह नदी हमको बहानेके लिये निकली है क्या ! ॥४३॥ मैं अपने अग्निमय बाणोंसे आज इस नदीको सुखाऊँगा, और आज निःसन्देह पर्वतके समान हाथियोंसे नगरीको भर दूँगा ॥ ४४ ॥

तब तो अनिरुद्धके कहनेसे महावतोंसे प्रेरणा किये, मदमें मत्त, बड़े ऊँचे, काजलके पर्वतके समान ॥४५॥ अपनी सूंड़ोंसे वृक्षोंको उखाड़कर फेंकते, पांवोंसे धरतीको कम्पाते हुये, एक लाख हाथी नगरीमें घुसे ॥४६॥ हेमांगद राजाकी नगरीमें घुसे वे हाथी भीतर जाकर अपने गण्डस्थलोंकी टक्करसे नगरीको चारों ओरसे गिराने लगे॥४७॥और द्वारों(दरवाजों) की बड़ी २ सांकलों समेत किवाड़ तोड़कर फेंक दिये, और किलेकी दीवारें उखाड़कर हाथियोंने फेंक दीं, इस प्रकार भगवान्के ये हाथी किवाड़ोंको और किलेको गिराकर शत्रुओंके घरोंको गिराते हुये पुरीमें घुस गये.॥४८॥४९॥ उस समय चम्पावती पुरीमें हाहाकार मच गया,और राजा आदिक सब पुरवासी मनुष्य भयभीत होकर विस्मयको प्राप्त हुये॥५०॥ तब तो राजा हाथियोंके किये हुये पुरीके विध्वंसको देखकर मालासे अपने दोनों हाथोंको बांधकर "मेरी रक्षा करो" ऐसे पुकारता हुआ भगवान्के पुत्रोंके सामने आया॥५१॥

ततोनिरुद्धवचनाद्धस्तिपैर्लक्षहस्तिनः ॥ महोच्चाश्चमदोन्मत्ताःकज्जलाद्रिसमप्रभाः॥४५॥करैर्गुल्मान्समुत्पाटचक्षेपयंतश्चतत्पुरे॥कंपयंतोभु-
वंपादैःपुरोपरिसमागताः ॥४६॥ गत्वातेकुंजराःसर्वे हेमांगदपुरींरुषा ॥ सर्वतःपातयामासुःशीघ्रंकुम्भस्थलैर्नृप॥४७॥कपाटाःपतिताःसर्वेद्वा-
राणांदृढशृंखलाः ॥ दुर्गस्यपातिताःपुर्यांगजैःपाषाणभित्तयः॥४८॥पातयित्वाकपाटादीन्दुर्गंचैवहरेर्गजाः ॥ पुर्यांप्राप्तानृपश्रेष्ठरिपुगेहान्यपा-
तयन् ॥ ४९ ॥ हाहाकारोमहानासीच्चंपावत्यांतदैवहि ॥ भयभीताजनाःसर्वेनृपाद्याविस्मयंगताः ॥५०॥ तदातुधर्षितोराजास्रजाबद्ध्वाकरद्व-
यम् ॥ संमुखेहरिपुत्राणामाययौपाहिमांब्रुवन्॥५१॥तमागतंनृपंवीक्ष्यरणेसांबस्तुधर्मवित् ॥ भ्रातॄन्निवारयामासदीनहंतॄंश्चहस्तिपान् ॥५२॥
निवारयित्वासर्वान्सराजानमिदमब्रवीत् ॥ सांबउवाच ॥ आगच्छराजन्भद्रंतेनीत्वाममतुरंगमम् ॥ ५३ ॥ गच्छानिरुद्धनिकटेततःश्रेयो
भविष्यति॥इतिश्रुत्वासतद्वाक्यंनीत्वायज्ञतुरंगमम् ॥ हरिपुत्रैर्युतोराजानिश्चक्रामपुराद्बहिः ॥ ५४ ॥ गत्वानिरुद्धनिकटेसाकंपुत्रेणभूपतिः ॥
हयंनिवेदयामासस्वर्णकोटिंचमानद ॥ ५५ ॥ अनिरुद्धस्तुराजेन्द्रनीतिविद्दीनवत्सलः ॥ तत्करौमालयाबद्धौमोचयित्वेदमब्रवीत् ॥ ५६ ॥
मयासहनृपश्रेष्ठपालयैनंतुरंगमम् ॥ राजन्येभ्यश्चशत्रुभ्यःकृष्णस्यप्रीतिहेतवे ॥ ५७ ॥

तब धर्मके जाननेवाले साम्बने रणमें आये हुये राजाको देखकर दीन मनुष्योंको मार रहे अपने भाइयोंको और हाथियोंको मारनेसे रोका ॥५२॥ इस प्रकार सबको रोककर राजासे साम्ब बोले कि, हे राजन् ! आओ, तुम्हारा कल्याण हो, तुम मेरे घोड़ेको लेकर ॥५३॥ अनिरुद्धके पास जाओ, तब तुम्हारा कल्याण होगा, साम्बके इस कथनको सुनकर यज्ञके घोड़ेको लेकर राजा भगवान्के पुत्रोंके साथ नगरके बाहिर निकला ॥५४॥ भूमिका पति राजा हेमांगद अपने पुत्र समेत अनिरुद्धके पास गया, और जाकर एक करोड़ मोहर और यज्ञका घोड़ा भेंट किया ॥ ५५ ॥ तब नीतिके जाननेवाले अनिरुद्धजी मालासे बन्धे राजाके हाथ खोलकर यह वाक्य बोले कि ॥ ५६ ॥ हे नृपश्रेष्ठ ! आप अब मेरे साथ चलिये, और हमारे शत्रु राजा लोग हैं, उनसे कृष्णकी प्रसन्नताके लिये इस घोड़ेकी रक्षा करिये ॥ ५७ ॥

अनिरुद्धका वचन सुनकर बड़ा बुद्धिमान् हेमांगद राजा उसी समय पुत्रको राज्य देकर अनिरुद्धके साथ बड़ी प्रसन्नतापूर्वक चलनेके लिये तैयार होगया ॥ ५८ ॥ इति श्रीमद्गर्ग-संहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ गर्गजी कहते हैं कि, उसके बाद यदुप्रवीरोंसे छोड़ा हुआ, बड़े उज्ज्वल अंगवाला अनिरुद्धके यज्ञका घोड़ा बड़े २ वीरवरोंको देखता २ धीरे २ उशीनर देशोंके बाहिर २ निकला ॥१॥ हे राजन् ! इस प्रकार वह अत्युत्तम अश्व अनेक देशोंमें विचरता विचरता अनेक राजा लोगोंसे पकड़ा गया, और छोड़ा गया ॥ २ ॥ इन्द्रनील और हेमांगद राजाओंको हारे गये सुनकर और भी खण्ड मण्डलेश्वर राजाओंने किसीने भी आये हुये घोड़ेको नहीं पकड़ा॥३॥वह घोड़ोंमें उत्तम घोड़ा वीरोंसे हीन बहुतसे देशोंको देखकर हे नृपश्रेष्ठ ! अकस्मात् एक स्त्रीके राज्यमें गया॥४॥वहाँ राजाकी कन्या कोई सुरूपा नामकी राज्य करती थी,वहाँ राजा नहीं जीता है॥५॥

श्रुत्वानिरुद्धस्यवचोमहात्माहेमांगदोबुद्धिमतांवरिष्ठः ॥ दत्त्वाचराज्यंस्वसुतायप्रीत्यागंतुमनस्तत्रचकारतेन॥५८॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहय-मेधखण्डेचंपावतीविजयवर्णनंनामषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ अथानिरुद्धस्यहयोविमुक्तोयदुप्रवीरैश्चमहोज्ज्वलांगः ॥ उसीनराद्वीरवरान्प्रपश्यन्विनिर्गतःसोपिशनैःशनैश्च ॥ १ ॥ एवंसविचरन्राजन्राधूराष्ट्रेहयोत्तमः॥नृपैश्चबहुभीराजन्गृहीतश्चविमोचितः॥२॥ इंद्रनीलंजितंश्रुत्वातथाहेमांगदंनृपम्॥ नृपश्चान्येमण्डलेशाःप्राप्तंनजगृहुर्हयम् ॥३॥ वीरहीनान्बहून्देशान्विलोक्यतुरगोत्तमः ॥ यदृच्छयानृ-पश्रेष्ठस्त्रीराज्यंतुजगामह ॥ ४ ॥ राजन्यकन्याकाचिद्वैसुरूपानामसुन्दरी ॥ यथापिराज्यंकुरुतेराजातत्रनजीवति ॥ ५ ॥ यत्रदेशेस्त्रियंप्रा-प्ययस्तांभजतिकामतः ॥ उर्द्ध्वंसंवत्सराद्राजन्कदाचित्सनजीवति॥६॥तत्पुरेतुरगोगत्वाह्युद्यानेपुष्पसंकुले ॥ लवंगलतिकावृन्देत्वेलागंधसमा-कुले ॥ ७ ॥ पक्षिभिर्मधुपैर्घुष्टेस्थितोभूच्चिंचिणीतले ॥ ददृशुःस्त्रीजनाःसर्वेश्यामकर्णमनोहरम् ॥ ८ ॥ ब्राह्मणाःक्षत्रियावैश्याःशूद्राद्रष्टुंसमा-गताः॥हयंदृष्ट्वास्त्रियोगत्वास्वामिनीमवदन्नृप ॥९॥ श्रुत्वाराज्ञीरथेस्थित्वाच्छत्रचामरवीजिता॥नारीकोटिसमायुक्ताहयंद्रष्टुंसमाययौ ॥१०॥ अश्वंदृष्ट्वाचतत्पत्रंवाचयित्वारुषान्विता ॥ पुनःपुरेहयंबद्ध्वायुद्धंकर्तुंमनोदधे ॥११॥ काश्चिन्नार्योगजारूढारथारूढाःसमाययुः॥हयारूढास्त-थाकाश्चिद्दंशिताःशस्त्रसंयुताः ॥ १२ ॥

जिस देशमें स्त्रीको प्राप्तकर जो पुरुष उसका कामसे सेवन करता है,वह वर्षभरसे ऊपर कैसे भी नहीं जीता है ॥६॥ उस पुरमें वह घोड़ा जाकर, पुष्प जिसमें खिल रहे, लवंगकी बेलोंके झुण्ड हैं जिसमें, इलायचियोंकी सुगंधि जिसमें, आरही, पक्षियोंके और भ्रमरोंके जिसमें शब्द होरहे, ऐसे बगीचेमें इमलीके वृक्षके नीचे वह घोड़ा ठहरा, मनोहर उस श्याम कर्ण घोड़ेको सब स्त्री पुरुषोंने देखा ॥७॥८॥ ब्राह्मण,क्षत्रिय,वैश्य,और शूद्र सब देखनेके लिये आये,हे नृप उस घोड़ेको देखकर स्त्रियोंने अपनी स्वामिनीसे जाकर कही ॥९॥ रानी सुनकर अपने रथमें बैठकर,छत्र चामरोंसे वीजित,करोड़ों स्त्रियोंको साथ लिये घोड़ेको देखनेके लिये आई॥१०॥ घोड़ेको देखकर और उस पत्रको पढ़कर क्रोध जिसको आगया, ऐसी उस रानीने अपने पुरमें घोड़ेको बांधकरयुद्ध करनेका मन किया॥११॥कई स्त्रियाँ हाथियोंपर बैठकर आईं, और कई स्त्रियाँ रथोंमें बैठकर आईं, कई घोड़ोंपर बैठी कवच पहिने हुये,शस्त्रलिये आईं१२

बाणोंकी वर्षा करती हुई,क्रोधमें डूब रहीं,सन्मुख आईं उन स्त्रियोंको देखकर अनिरुद्धजी हेमांगद राजासे बोले ॥१३॥ अनिरुद्ध बोले कि,हे राजन् ! ये स्त्रियाँ होकर युद्ध करनेके
लिये आई हैं,और लड़नेको तैयार हैं,सो ये कौन हैं,आप विस्तारपूर्वक मेरे सामने कहिये, जिसमें मेरा कल्याण हो, वह कहो, कि अब क्या करना चाहिये ॥१४॥ तब हेमांगद ने
कहा कि हे नृपेश्वर महाराज ! इस देशमें रानीही राज्य करती है,महाराज ! कोई ऐसा कारण है कि,यहाँ राजा कोई जीता नहीं है,इस कारणसे यहाँ स्त्रीही राज्य करती है, सो
यह रानी स्त्रीजनोंको साथ लेकर युद्धके लिये आई है॥१५॥आपका घोड़ा रानीनेही पकड़ा है,यह सुनकर अनिरुद्धजी राजासे बोले ॥१६॥ अनिरुद्ध बोले-हे महाराज ! यहाँ स्त्री
क्यों राज्य करती है,राजा इस देशमें क्यों नहीं जीता है,यदि आप जानते हों,तो इसका कारण विस्तारपूर्वक मुझको कहिये॥१७॥ अनिरुद्धजीके इस कथनको सुनकर राजा हेमां-
गदजी बोले कि, अपने गुरु याज्ञवल्क्य ऋषिके चरणकमलका स्मरण करते हुये ॥ १८ ॥ हे यदुनाथ अनिरुद्धजी ! याज्ञवल्क्य ऋषिके मुखसे यह वृत्तान्त पहिले मैंने सुना है,वह

ताःसर्वाःकुपितावीक्ष्यशस्त्रवर्षंप्रकुर्वतीः ॥ आगताअनिरुद्धस्तुहेमांगदमुवाचह ॥ १३ ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ राजन्नेताश्चकानार्योयुद्धंकर्तुं
समागताः ॥ विस्तरेणापिकथययेनमेस्याच्छिवंत्विह ॥ १४ ॥ हेमांगदउवाच ॥ अत्रदेशेचकुरुतेराज्ञीराज्यंनृपेश्वर ॥ नजीवतिनृपोरा-
ज्येतस्मात्स्त्रीभिःसमन्विता ॥ १५ ॥ इयंगृहीत्वातेसाचसंग्रामंकर्तुमागता ॥ इतिश्रुत्वानिरुद्धस्तुराजानमिदमब्रवीत् ॥ १६ ॥ अनिरुद्ध
उवाच ॥ कस्मात्स्त्रीकुरुतेराज्यंराजाकस्मान्नजीवति ॥ एतांविस्तरतोवार्तांयत्त्वंजानासितद्वद ॥ १७ ॥ इतितद्वाक्यमाकर्ण्यराजाहेमांगदो-
ब्रवीत् ॥ संस्मरन्याज्ञवल्क्यस्यस्वगुरोश्चपदांबुजम्॥१८॥यादवेंद्रपुरावृत्तंयाज्ञवल्क्यमुखाच्छ्रुतम् ॥ चंपकायांमयापूर्वंकथयिष्यामितच्छृणु
॥ १९ ॥ पुराकृतयुगेराजन्नत्रदेशेबभूवह ॥ नारीपालइतिख्यातोराजातुमंडलेश्वरः ॥२०॥ तस्यासीन्मोहिनीभार्यासिंहलद्वीपसंभवा ॥ पद्मि-
नीहंसगमनापूर्णचंद्रनिभानना ॥ २१ ॥ तस्याःसौंदर्यजलधौमग्नोभूत्वामहीपतिः ॥ अहर्निशमविज्ञायरेमेतांशतवत्सरैः ॥ २२ ॥ नचकारप्र-
जानांवैन्यायंकामेनमोहितः ॥ तदासर्वाःप्रजाराजन्बभूवुर्दुःखपीडिताः ॥२३॥ प्रजानांकदनंवीक्ष्यमोहिनीनृपवल्लभा ॥ न्यायंचकारसर्वासां
स्वशक्त्यायादवेश्वर ॥ २४ ॥

आपसे कहता हूँ,आप उस वृत्तान्तको सुनिये ॥१९॥ हे राजन् ! पहिले सतयुगमें इस देशमें एक नारीपाल नामका राजा खण्डमण्डलेश्वर हुआ था ॥२०॥ उस नारीपाल राजाकी
सिंहलद्वीपमें जन्मी हुई मोहिनी नामकी भार्या थी,वह पद्मिनी,हंसकीसी गतिवाली, और चन्द्रमाके समान मुखवाली थी ॥२१॥ अपनी स्त्रीके सौंदर्य समुद्रमें डूबे हुये,उस रानीके
साथ सौ वर्षतक रातदिन रमण करते हुये, राजाने यह नहीं जानाकि, कब दिन होता है, और कब रात होती है ॥ २२ ॥ काम मोहित राजा प्रजाकी राज्यकी सब सुधि भूल
गया, तब तो प्रजाके न्याय होने सब बंद होगये, तब हे राजन् ! सब प्रजा बहुत दुखी होगई ॥ २३ ॥ जब मोहिनी नामकी रानीने प्रजाजनोंको नाश होते देखा, तब वह रानी
प्रजाके जितने झगड़े आते थे, उनका रानी स्वयम् न्याय करने लगी ॥ २४ ॥

एक दिन ऐसा हुआ कि अष्टावक्र मुनि राजासे मिलनेके लिये आये, वे राजाके महलोंमें चले गये ॥२५॥ उन अष्टावक्र ऋषिको आये हुये देखकर स्त्रीमें आसक्त मन जिसका ऐसा वह राजा ऋषिको देखकर हँसा और विचारने लगा कि यह कैसा कुरूप है, कहाँसे आया है ? ऐसे कहने लगा ॥२६॥ तब तो कुपित होकर अष्टावक्रजी बोले कि रे मूढ़ ! अरे नपुंसक स्त्रीजित होकर तू महात्माजनोंका अपराध क्या करता है ॥ २७ ॥ तुम्हारे इस देशमें अब सर्वदा स्त्रीजनका ही राज्य होगा, वे ही राज्य करेंगी, आज पीछे इस देशमें राजा नहीं जियेगा,इससे जा तू इसी समय निकल जा॥२८॥और आज पीछे जो कोई राजा अथवा राजपुरुष इस देशमें आकर जो स्त्रीका सेवन करेगा,वह एक वर्षके भीतर २ मर जायगा. इसमें संदेह नहीं है ॥२९॥ गर्गजी कहते हैं कि, ऐसे कहकर वह मुनि अष्टावक्रजी अपने आश्रमको चले गये, मुनिके चले जानेपर उनके शापसे वह नारीपाल राजा नपुंसक होगया

एकदातंनृपंद्रष्टुमष्टावक्रोमहामुनिः ॥ आजगामनृपस्यापिप्रासश्चांतःपुरोकिल ॥२५॥ तमागतंमुनिंदृष्ट्वानृपःस्त्रीलग्नमानसः॥विजहासकुरूपो- यंकस्मात्प्राप्तइतिब्रुवन् ॥२६॥ ततोरुषामुनिःप्राहशृणुमूढनपुंसक ॥ मुनीनांस्त्रीजितोभूत्वापमानंकिंकरिष्यसि ॥ २७ ॥ त्वद्देशेचसदाराज्यं नार्यःकुर्वंतिनित्यशः॥नजीवतिनृपोराज्येतस्माद्गच्छत्वमालयात् ॥२८॥ अत्रदेशेस्त्रियंप्राप्ययस्तांभजतिनित्यशः ॥ सतुसंवत्सरांतेवैनजीव- तिनसंशयः ॥ २९ ॥ गर्गउवाच ॥ इत्युक्त्वास्वाश्रमंसोपिप्रययौमुनिसत्तमः ॥ गतेमुनौनृपस्तत्रक्लीबोभूत्तस्यशापतः ॥ ३० ॥ सर्वंमुनि कृतंज्ञात्वागर्हयामासभूपतिः ॥ आत्मानमात्मनाचैवसदीनोदुःखदुखितः ॥ ३१ ॥ नारीपालउवाच ॥ किंकृतंमंदभाग्येनस्त्रीजितेनमया ह्यहो ॥ मुनीनांपूजनंत्यक्त्वातथानिरययायिनम् ॥३२॥ अद्यमांपापिनंदुष्टंयमदूतैर्विलोकितम्॥दृष्ट्वावैतरणीयोग्यंकःस्वतेजात्प्रमोचति॥३३॥ इत्युक्त्वासगृहंत्यक्त्वाविचचारवनेवने ॥ भजन्विमुक्तिदंविष्णुंलेभेचांतेहरेःपदम् ॥३४॥ अत्रदेशेचराजानोराज्यंशापभयान्विताः॥नकरिष्यंति नार्य्यश्चकरिष्यंतिनसंशयः ॥ ३५ ॥ गर्गउवाच ॥ एवंतयोःकथयतोर्नार्यःक्रुद्धाःसमागताः ॥ व्यमुंचन्धनुषैर्बाणान्पुंश्चल्यःक्रोधपूरिताः ॥ ३६ ॥ ताःस्त्रीर्वीक्ष्याऽनिरुद्धस्तुविस्मितोभूद्भयान्वितः ॥ कथंकरिष्येयुद्धंवैस्त्रीभिःसार्द्धमितिब्रुवन् ॥ ३७ ॥

॥३०॥ मुनिके किये हुये सब वृत्तान्तको जानकर अपने आपकी स्वयम् ही निंदा करने लगा, और बड़ा दीन होकर अत्यन्त दुखी होगया ॥३१॥ और बोला कि, हाय स्त्रीजित बड़े मन्दभाग्य मैंने यह क्या किया, जो मुनियोंका पूजन छोडकर मैं कुपथगामी हुआ ॥३२॥ आज बड़ा पापी यमदूतोंसे देखा गया वैतरणी जानेके योग्य जो मैं हूँ, उस मुझको इस पापसे कौन छुड़ावेगा ॥३३॥ ऐसे कहकर घरमें जाकर फिर उसी समय घरको छोड़कर वन वनमें विचरता हुआ मुकुन्दके चरणोंका भजन करता हुआ, अन्तमें भगवद्धामको प्राप्त हुआ ॥३४॥ सो हे महाराज ! इस देशमें शापके भयसे कोई राजा राज्य नहीं करते हैं, और न करेंगे, केवल स्त्रियाँही करती हैं, और करेंगी॥३५॥गर्गजी कहते हैं कि इस प्रकार दोनों बातें कर रहे थे कि, वे बड़ी कुपित हुईं, बाणोंकी वर्षा करती हुईं स्त्रियाँ आईं ॥३६॥ उन स्त्रियोंको देखकर अनिरुद्धजी बड़े विस्मित हुये, और यह भी विचार करने लगे कि, मैं स्त्रियोंके साथ युद्ध कैसे

करूँगा, यह कहते भयभीत हो गये ॥३७॥ उसी समय एक बड़ी रूपवती स्त्री सबकी मण्डलेश्वरी और बहुतसी स्त्रियोंको साथ लेकर आई, वह अनिरुद्धको देखकर यह वचन बोली ॥३८॥ रानी बोली कि हे वीर ! रणमें आकर मेरे सामने खड़े होओ, मेरे साथ संग्राम करो, अपनी सब सेनाको साथ लेकर मुझसे लड़ो संग्राममें आकर व्यर्थ शोक क्या करते हो ॥३९॥ बड़े अभिमानी तुमको सब यादवों सहित संग्राममें जीतकर कामज्वरसे पीड़ित हुई मैं तुमको अपना क्रीड़ामृग (खेलनेका खिलौना) बनाऊँगी ॥४०॥ तब स्त्रीके वचनको सुनकर भयविह्वल होकर दीनवाणीसे सब बातको जाननेवाले अनिरुद्ध उस मंडलकी ईश्वरीसे अपनी प्रसन्नतासे यह बोले ॥४१॥ हे राज्ञि ! सब देवोंके स्वामी श्रीकृष्णचन्द्रके इस घोड़को यज्ञकी पूर्तिके लिये हमको दीजिये ॥४२॥ हे वरानने ! मैं तुमसे युद्ध नहीं करना चाहता हूँ, और मेरे कहनेसे तुम श्रीकृष्णके दर्शनके लिये द्वारकाको चली जाओ ॥४३॥ हे भद्रे ! जिनके नामके ही स्मरण मात्रसे मनुष्य कृतार्थ हो जाता है, उनके दर्शनके फलको मैं तुम्हारे आगे क्या कहूँ ॥४४॥ इस प्रकार अनिरुद्धसे अच्छी तरह समझाई गई वह

तदैवतस्यनिकटेसुरूपामंडलेश्वरी ॥ स्त्रीभिःप्राप्ताचानिरुद्धंदृष्ट्वावचनमब्रवीत् ॥ ३८ ॥ राज्ञ्युवाच ॥ तिष्ठतिष्ठरणेवीरकुरुयुद्धंमयासह ॥ सेनायुक्तस्तथापित्वंकिंशोचसिवृथारणे ॥ ३९ ॥ अहंत्वांमानिनंजित्वाप्रधनेवृष्णिभिर्युतम् ॥ क्रीडामृगंकरिष्यामिमदनज्वरपीडिता ॥ ४० ॥ इतितस्यावचःश्रुत्वानिरुद्धोभयविह्वलः ॥ प्रत्याहदीनयावाचासर्वविन्मंडलेश्वरीम् ॥ ४१ ॥ तुरगंकृष्णचंद्रस्यसर्वदेवेश्वरस्यच ॥ मह्यंप्रयच्छहेराज्ञिक्रतोरर्थेतुस्वेच्छया ॥ ४२ ॥ नाहंकरिष्येयुद्धंवैत्वयासार्द्धंवरानने ॥ गच्छद्वारवतींतस्माद्दर्शनार्थंहरेश्चवै॥४३॥यन्नामस्म-रणाद्भद्रेनरोयातिकृतार्थताम् ॥ तस्यवैदर्शनस्यापिफलंकिंकथयामिते॥४४॥इतिसाचानिरुद्धेनबोधितानिपुणेनवै ॥ पूर्ववार्तांस्मरन्त्याहब्रह्मा-णंमोहिनीयथा ॥ ४५ ॥ सुरूपोवाच ॥ अहंपुराऽभवंदेवस्ववैंश्यापूर्वजन्मनि ॥ मोहिनीनामविख्याताकंजांगाकंजलोचना ॥ ४६ ॥ एकदाहंसयानेनव्रजंतंपद्मसंभवम् ॥ दृष्ट्वातन्निकटेगत्वाभजमामित्युवाचह ॥४७॥ यदानजगृहेब्रह्माशापंदत्त्वातदाह्यहम्॥गत्वाककुद्मतीतीरेच-कारदुष्करंतपः ॥४८॥ तपसातोषितोब्रह्मातपोंतेचसमागतः ॥ तपस्विनींप्रसन्नात्मावरंब्रूहीत्युवाचह॥४९॥ तच्छ्रुत्वामोहिनीप्राहदेवदेवनमो-स्तुते ॥ वरंवरयलोकेशदीनांमांतपसिस्थिताम् ॥ ५० ॥

रानी पहिली बातको स्मरण करती हुई बोली, जैसे ब्रह्माजीको मोहिनी बोली थी॥४५॥ सुरूपा बोली हे देव ! मैं पहिले जन्ममें स्वर्गकी अप्सरा थी, मोहिनी मेरा नाम था, कमलके जैसा मेरा अंग कमलके जैसे मेरे नेत्र थे ॥४६॥ एक दिन हंसके विमानमें बैठ चले जा रहे ब्रह्माजीको देखकर उनके पास जाकर मैंने कहा कि आप मेरे साथ रमण कीजिये ॥४७॥ जब ब्रह्माने मेरा कथन स्वीकार नहीं किया, तब मैंने ब्रह्माको शाप देकर ककुद्मती गंगाके किनारे जाकर दुष्कर तप किया ॥४८॥ तपसे प्रसन्न हुये ब्रह्माजी मेरे तपके अन्तमें आये, और मुझ तपस्विनीसे प्रसन्न होकर कहा कि तू वर मांगले ॥ ४९ ॥ तब ब्रह्माजीके कथनको सुनकर मोहिनी बोली कि, हे देव ! हे देव ! हे लोकेश ! आपको नमस्कार है, मैं आपसे यही वर मांगती हूँ कि, तपमें स्थित हुई जो मैं हूँ, उसका मेरा आप पाणिग्रहण कीजिये ॥ ५० ॥

और यदि आप दुखिताका मेरा पाणिग्रहण नहीं करेंगे, तब क्रोधसे, तप करनेसे, दुर्लभ हुये शरीरका मैं त्याग कर दूँगी, यह सुनकर ब्रह्माजीने कहा कि, हे भामिनी ! तुम शोच मत करो, हे भद्रे ! दूसरे जन्ममें तुम्हारा यह मनोरथ पूर्ण होगा ॥५१॥५२॥ मैं द्वारिकामें कृष्णका पौत्र होऊँगा, तब मेरा अनिरुद्ध नाम होगा,और मेरा दिव्य वर्ण होगा,और तू राज्य करनेवाली स्त्री होगी ॥ ५३ ॥ तब हे भद्रे ! मैं अनिरुद्ध होकर तुम्हारा पाणिग्रहण करूँगा, मेरा कथन झूंठ नहीं होगा,ब्रह्माजीके इस कथनको सुनकर हे अनिरुद्धजी ! मैंने भूमिमें जन्म लिया है ॥५४॥ और हे यादवश्रेष्ठ ! मेरे लिये आपनेभी मनुष्यलोकमें आकर जन्म लिया है,आप ब्रह्माजीके अवतार हैं ॥ ५५ ॥ गर्गजी कहते हैं कि,ऐसे उसके कथनको सुनकर समस्त यादव विस्मयको प्राप्त होगये,तब धर्मात्मा अनिरुद्धजी उस रानीसे यह बोले कि,हे भद्रे ! यदि ऐसा है,तो तुम द्वारिकाको चली जाओ,मैं दिग्विजय करके द्वारिकामें आऊंगा,तब तुम्हारा पाणिग्रहण करके तुमको अपनी पत्नी बनाऊंगा,अब तो मैं राजाओंसे घोड़ेकी रक्षा करनेको जाऊंगा॥५६॥अब अनिरुद्धके कथनको सुनकर अपनी

यदिमांत्वंनगृह्णासिदुःखितांशरणागताम् ॥ तदारोषेणत्यक्ष्यामितपसाचकृशांतनुम्॥५१॥इतिश्रुत्वाविधिःप्राहशोकंमाकुरुभामिनी ॥ अन्य जन्मनितेभद्रेभविष्यतिमनोरथः ॥ ५२ ॥ अहंपौत्रोभविष्यामिद्वारकायांहरेश्चवै ॥ सुवर्णश्चानिरुद्धाख्यःस्त्रीराज्येत्वंभविष्यसि॥५३॥ ततो गृह्णामित्वांभद्रेनानृतंवचनंमम ॥ इति श्रुत्वाचतद्वाक्यंजाताहंपृथिवीतले ॥५४॥ ब्रह्मात्वंयादवश्रेष्ठमदर्थेचसमागतः ॥ गर्गउवाच ॥ वाक्यं तस्याःसमाकर्ण्ययादवाविस्मयंययुः ॥ ५५ ॥ अनिरुद्धस्तुधर्मात्माप्रत्याहविमलंवचः ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ गच्छश्रीद्वारकांभद्रेतत्रगृह्णा मित्वांप्रियाम् ॥ अद्ययास्यामितुरगंराजन्येभ्यश्चपालयन् ॥५६॥ ततःसातस्यवाक्येनप्रमिलांमंत्रिणींवराम् ॥ राज्येकृत्वातुरंगंचदत्त्वाद्वार- वतींययौ ॥ ५७ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेस्त्रीराज्यविजयोनामसप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ गर्गउवाच ॥ अथमुक्तोऽनिरु- द्धेनक्रतोर्वाजीपयःप्रभः ॥ सिंहलद्वीपनिकटेविचचारयदृच्छया॥१॥तृषार्तस्तुरगस्तत्रदृष्ट्वावापींजलान्विताम् ॥ वृक्षैश्चबहुभिर्गुप्तांदृष्ट्वातोयंप- पौस्त्रयम् ॥ २ ॥ वाप्यामश्वंविलोक्याथभीषणोनामराक्षसः ॥ वाचयित्वाचतत्पत्रंजग्राहतुरगंमुदा ॥३॥ तदैवयादवाःसर्वेतंपश्यन्तःसमा- गताः ॥ राक्षसेनगृहीतंवैदद्दशुःक्रतुवाजिनम् ॥ ४ ॥

प्रमिला नामकी श्रेष्ठा मंत्रिणीको राज्यमें रखकर और घोड़ा इनको देकर वह उसी समय द्वारकाको चली गई ॥५७॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां हयमेधखण्डे भाषाटीकायां सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥गर्गजी कहते हैं कि, उसके बादमें दूधके समान वर्णवाला वह यज्ञका घोड़ा अनिरुद्धसे छोड़ा हुआ सिंहलद्वीपमें पहुँचा, वहाँ अपनी इच्छासे विचरने लगा ॥ १ ॥ वहाँ उस घोड़ेको प्यास लगी, तब उसने एक वापी (बावली) देखी, स्वच्छ जल जिसमें भर रहा, चारों तरफ अनेक वृक्ष जिसके लग रहे,ऐसी उस बावलीको देखकर घोड़ेने पानी पिया ॥ २ ॥ उसमें एक भीषण राक्षस रहता था, उसने देखकर घोड़ेके माथेपर बंधे हुये पत्रको बांचकर उस भीषण नामके राक्षसने घोड़ेको पकड़ लिया ॥ ३ ॥ उसी समय सब यादव घोड़ेको ढूंढ़ते २ आ गये, और उन्होंने राक्षससे पकडे हुये यज्ञके घोड़को देखा ॥ ४ ॥

तब वे यादव उस राशससे बोले कि, रे तू कौन है, यादवोंके स्वामी राजा उग्रसेन महाराजके यज्ञके घोड़ेको जैसे सिंहकी वस्तुको गीदड़ चाहता है कि,मैं लेजाऊँ ॥ ऐसे तू लेकर कहाँ जायगा ॥५॥ हे धूर्त ! खड़ा रह खड़ा रह धैर्य धारणकर हमसे संग्राम कर॥६॥हम घोड़ेको छुड़ायेंगे,और तुमको संग्राममें मारेंगे,शकुन, शकुनिके भाई, नरकासुर,वाणासुर, ॥७॥ और कलंक ये सब हमने मारे हैं, इससे हम एक तृणकी बराबरभी तुमको संग्राममें नहीं गिनते हैं॥८॥इसलिये तुम घोड़ेको देकर चले जाओ, अन्यथा तुमको मार डालेंगे, तब देवताओंको भय देनेवाला भीषण नामका राक्षस यादवोंके कथनको सुनकर ॥९॥ शूल,गदा और खड्गको हाथमें लिये क्रोध युक्त होकर बोला कि,रे यादवो ! तुम मेरे भक्ष्य मनुष्य हो,मुझसे क्या लड़ोगे ॥ १० ॥ और भला तुम राक्षसोंके सामने क्या पुरुषार्थ करोगे,और जो उग्रसेनने विश्वजित नामका यज्ञ पहिले किया था ॥११॥ तब मैं राक्षसोंको बुलानेके लिय लंकामें गया था,फिर जब राक्षसोंको लेकर अपनी नगरीमें आया ॥ १२ ॥ तब मैंने नारदजीके मुखसे सुना कि यज्ञ पूर्ण होगया, फिर यह अश्वमेधका परिश्रम व्यर्थ

ततस्तेकौणपंप्राहुर्यादवायुद्धशालिनः ॥ यादवाऊचुः ॥ कस्त्वंश्रीयादवेंद्रस्यह्युग्रसेनस्यभूपतेः ॥ ५ ॥ सिंहस्यवस्तुक्रोष्टेवहयंनीत्वाक्व यास्यसि ॥ तिष्ठतिष्ठरणंधूर्तअस्माभिःकुरुधैर्यतः ॥ ६ ॥ तुरगंमोचयिष्यामोवधिष्यामोरणेचत्वाम् ॥ शकुनिर्भ्रातृसहितोनरकोबाणएवच ॥७॥ कलंकश्चैवराजानएतेस्माभिर्विनाशिताः ॥ तस्मान्नगणयिष्यामोयुद्धेत्वांचतृणोपमम् ॥८॥ गच्छागच्छहयंदत्त्वाघातयामोनचेत्खलु ॥ तेषांभाषितमाकर्ण्यभीषणःसुरभीषणः ॥ ९ ॥ शूलीगदाधरःखड्गीतान्प्रत्याहरुषान्वितः ॥ भीषणउवाच ॥ केयूयंप्रतियोद्धारोममभक्ष्या नराःस्मृताः ॥ १० ॥ संमुखेराक्षसानांतेकिंकरिष्यंतिपौरुषम् ॥ यदाविश्वजितंयज्ञंयादवेनकृतंपुरा ॥ ११ ॥ तदाहंकौणपान्नेतुंलंकायांचगतः किल ॥ यदाहंराक्षसान्नीत्वास्वपुर्यांचसमागतः ॥ १२ ॥ तदाशृणोन्नारदाद्धैयज्ञंपूर्णंबभूवह॥ पुनर्वैहयमेधस्यप्रयासंचवृथाकृतम्॥१३॥युष्मत्सुमद्गृहीतंचतुरगंमोचयंतिके ॥ तस्माद्धयाशांत्यक्त्वातुयूयंगच्छतगच्छत ॥१४॥नचेत्सर्वान्प्रभक्षंतिचतुर्लक्षाममानुगाः ॥ अत्रस्थानात्समुद्रेतुपुरींद्वादशयोजने ॥ १५ ॥ उपलंकाचनाम्नावैवर्त्ततेममनिर्मिता ॥ निशाचरगणैर्युक्तासर्पैर्भोगवतीयथा ॥१६॥ इत्युक्त्वासहयंनीत्वासहसा स्वपुरींययौ ॥ आकाशमार्गेणनृपशोकंचक्रुश्चयादवाः ॥१७॥ अनिरुद्धस्ततःप्राहभोजराजतुरंगमम् ॥ निशाचरेणनीतंवैमोचयामोवयंकथम् ॥ १८ ॥ इतिश्रुत्वाचसांबाद्याःप्रत्याहुर्नयकोविदाः ॥ शोकंमाकुरुतेराजन्स्थितेष्वस्मासुकिंभयम् ॥ १९ ॥

किया है ॥१३॥ तुम्हारेमें ऐसा कौन है, जो मेरे पकड़े हुये घोड़ेको छुड़ायेगा,इससे घोड़की आशाको छोड़कर तुम चले जाओ ॥१४॥ अन्यथा चार लाख मेरे सेवक रासक्ष हैं, वे तुम सबको खाजायेंगे, यहाँसे बारह योजन पर समुद्रके भीतर मेरी पुरी है ॥ १५ ॥ जिसका नाम उपलंका है, वह मेरी बनाई हुई है, जिसमें अनेक राक्षसोंके गण निवास करते हैं,जैसे भोगवतीमें सर्प निवास करते हैं ॥ १६ ॥ ऐसे कहकर वह भीषण राक्षस घोड़ेको लेकर आकाश मार्गसे अपनी पुरीको चला गया, तब सब यादव शोच करने लगे ॥ १७ ॥ तब अनिरुद्ध बोले कि,जिसको राक्षस ले गया है,उस राजा उग्रसेनके घोड़ेको अब हम कैसे छुड़ायेंगे ॥ १८ ॥ तब साम्ब आदिक सब यादव नीतिमें चतुर कहने लगे कि हे राजन्! तुम शोच मत करो, हमारे रहते आपको किसका भय है ॥ १९ ॥

हे महाराज ! आपकी सेनामें जो पंखवाले घोड़े हैं, वे ही मानो विमान हैं, और जो दोनों लोकोंके जीतनेवाले महान् शूरवीर योद्धा आपकी सेनामें हैं ॥२०॥ वे हम सब अश्व विमानोंमें बैठकर अथवा बाणोंसे समुद्रपर पुल बांधकर अथवा विष्णुके दिये हुये विमानोंमें बैठकर शत्रुओंकी नगरीमें जायेंगे और घोड़ेको जीतकर लायेंगे॥२१॥उन सभीके कथन को सुनकर धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ अनिरुद्ध मन्त्रिमुख्य उद्धवको बुलाकर यह बोले ॥२२॥हे मन्त्रीजी ! मैं क्या करूँगा,श्यामकर्ण घोड़ा न जाने कहाँ गया, आप कहो, वैसा ही मैं करूँ, भगवान्‌ने मुझसे कहा था, कि उद्धवजी जो कहें, वही करना, सो बोलिये आप क्या कहते हैं, जो आप कहें वही करें ॥२३॥ मेरे पिताके भाई उपाय बतलायेंगे, परन्तु आप जो कुछ आज्ञा देंगे,वही मैं करूँगा ॥२४॥ तब उद्धवजी यह सुनकर लज्जित होकर बोले, मैं तो विशेष करके कृष्णके पुत्र पौत्रोंका ॥२५॥ सदा दास हूँ, उनकी आज्ञामें वर्तमान हूँ, मैं क्या कहूँ, जो आपकी और इनकी इच्छा हो, वैसा ही करो, और वैसाही होगा ॥२६॥ तब अनिरुद्ध बोले कि हे यादवो ! मैं दश अक्षौहिणी सेना लेकर दैत्योंके नगर

हयाःसपक्षास्त्वत्सैन्येविमानानिशरास्तथा ॥ शूराःसंतिमहावीराःलोकद्वयजिगीषवः ॥२०॥ अश्वैर्वयंगमिष्यामःसेतुंकृत्वाथवाशरैः॥विष्णुदत्तेनवाराजञ्छत्रूणांनगरींप्रति ॥ २१ ॥ सर्वेषांवचनंश्रुत्वानिरुद्धोधन्विनांवरः ॥ उद्धवंमंत्रिणांश्रेष्ठंसमाहूयेदमब्रवीत् ॥ २२ ॥ अनिरुद्ध उवाच ॥ किंकरिष्याम्यहंमंत्रिञ्छ्यामकर्णेगतेसति ॥ त्वच्छासनेभगवताप्रेरितोहंवदस्वतत् ॥ २३ ॥ मत्पितृभ्रातरःसर्वे उपायंप्रवदंतिहि॥ यदिदास्यसित्वंचाज्ञांतदासर्वंकरोम्यहम् ॥२४॥ उद्धवस्तद्वचःश्रुत्वाप्रत्युवाचविलज्जितः ॥ अहंकृष्णस्यपुत्राणांपौत्राणांचविशेषतः ॥२५॥ सदादासोऽस्मिनितरामाज्ञावर्तीवदामिकिम् ॥ यदिच्छातवचैतेषांकुरुसाचभविष्यति ॥२६॥ ततःप्राहानिरुद्धस्तुयास्येहंदैत्यपत्तनम्॥अक्षौहिणीदशयुतोविष्णुदत्तेनयादवाः ॥ २७ ॥ सारणःकृतवर्माचयुयुधानश्चसात्यकिः ॥ अक्रूरसहिताएतेसेनांरक्षंतुचात्रहि॥२८॥इत्युक्त्वासविमानंत्वारुरोहसहसेनया॥अष्टादशैर्हरेःपुत्रैरुद्धवेनगदेनच॥२९॥रेजेततोभास्करबिंबतुल्यंधनेशयानंस्वबलेननीतम्॥श्रीकृष्णपौत्रेणयदुप्रवीरैर्यथाचरामेणपुराकपीन्द्रैः ॥३०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेविमानारोहणंनामाऽष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥ गर्गउवाच ॥ अथरुक्मवतीपुत्रो महत्यासेनयावृतः ॥ उपलंकांविमानेनप्रययौधनदोयथा॥१॥यदुभिस्तत्रगत्वासशरैराशीविषोपमैः॥बभंजनगरींराजन्वनान्युपवनानिच ॥२॥

को जाऊँगा ॥२७॥ सारण, कृतवर्मा, सात्यकि, अक्रूर ये सब यहाँ सेनाकी रक्षा करेंगे ॥२८॥ यह कहकर सब सेना समेत अनिरुद्धजी विमानमें बैठकर अट्ठारह भगवान्‌के पुत्र, उद्धव और गद इन सभीको साथ लेकर गये ॥२९॥ तब अपने बलसे लाया हुआ सूर्यके बिम्बके समान वह कुबेरका विमान श्रीकृष्णके पौत्र और यादव वीरोंसे ऐसे शोभित हुआ, जैसे पहले वन्दरोंको साथ लेकर गये रामचन्द्रसे शोभित हुआ था ॥३०॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखंडे भाषाटीकायामष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥ गर्गजी बोले हे राजन् ! इस प्रकार रुक्मवतीका पुत्र अनिरुद्ध बड़ी भारी सेनासे आवृत्त उस विमानमें बैठकर उपलंका नामकी पुरीमें उड़कर गया जैसे विमानपर बैठा कुबेर जाता हो, ॥१॥ सब यादवोंने उपलंकामें जाकर हे राजन् ! सर्पके समान बाणोंसे पुरीके बाग बगीचे सब उजाड़ दिये ॥ २ ॥

मूसल, शक्ति, परिघ, बाण, और शिला ये
क्रीडाके स्थान, महल, मन्दिर और गोपुर सब तोड़ फोड़कर मैदान कर दिये, और विमानके अग्र भागसे शस्त्रोंकी वर्षा होने लगी ॥३॥
सब वर्षने लगे, हे राजन् !जिसके वेगसे धूलसे दशों दिशायें भर गई, ऐसा प्रचण्ड पवन चलने लगा॥४॥इस प्रकार भीषण राक्षसकी पुरी उपलंकाको यदुवंशियोंने पीड़ित किया, तब
किसी प्रकारसे कल्याण प्राप्त नहीं हुआ, जैसे शाल्वदेशियोंने द्वारकाको बेहाल कर दिया था, वैसेही यादवोंने उपलंकाको कर दिया॥५॥हे नृप श्रेष्ठ ! उस समय नगरीमें बड़ा हाहा-
कार मचा, और भीषण आदिक सब राक्षस भयके कारणसे विह्वल होगये ॥६॥ तब राक्षसोंमें मुख्य भीषण अति पीड़ित नगरीको देखकर "भय मत करो" ऐसे राक्षसोंको अभय
देकर राक्षसोंके साथ नगरीके बाहिर निकला ॥७॥ तब तो उस पुरीमें राक्षसोंका और यादवोंका ऐसा भयंकर युद्ध हुआ, हे राजन् ! जैसा युद्ध वन्दरोंका और राक्षसोंका लंकापुरीमें

मुसलाःशक्तयश्चैवपरिघाश्चशराःशिलाः॥चण्ड-
क्रीडास्थानानिद्वाराणिसदनाट्टालतोलकाः ॥ गोपुराणिविमानाग्रान्निपेतुःशस्त्रवृष्टयः ॥३॥
वायुरभूद्राजन्रजसाच्छादितादिशः ॥ ४ ॥ इत्यर्द्यमानायदुभिर्भीषणस्यपुरीभृशम् ॥ नाभ्यपद्यतकल्याणंयथाशाल्वैश्चद्वारिका॥५॥हाहा-
कारस्तदैवासीन्नगर्यांनृपसत्तम॥असुराभीषणाद्याश्चबभूवुर्भयविह्वलाः ॥६॥ बाध्यमानांचनगरींदृष्ट्वाराक्षसपुंगवः ॥ माभैष्टेत्यभयंदत्त्वाराक्षसैः
सहनिर्ययौ ॥७॥ ततःप्रववृतेयुद्धंयादवानांनिशाचरैः ॥ तत्पुर्य्यांचैवलंकायांकपिभीरक्षसांयथा ॥ ८ ॥ वृष्णीनांचैवबाणौघैराक्षसाश्छिन्नकं-
धगः ॥ निपेतुस्तेसमुद्रेवैवृक्षावातहताइव ॥९॥ केचित्पृथिव्यांपतिताःकेचित्पुर्य्यामधोमुखाः॥केचिदूर्ध्वमुखाराजन्केचिद्वैपंचतांगताः॥१०॥
तत्रतेषांशोणितेनदुर्नदीचभयंकरा ॥ बभूवसाचदुष्पारामहावैतरणीयथा ॥११॥ तत्रतेषांबलंवीक्ष्यभीषणोविस्मयंगतः॥तिरश्चीनेननेत्रेणदृष्ट्वा
प्राहयदूनिदम् ॥ १२ ॥ भवद्भिश्चकृतंयुद्धमाकाशान्निर्बलैरिव ॥ अश्लाघनीयंचवृथायूयंमानंकरिष्यथ॥१३॥युष्माकंयदिदेहेषुशक्तिश्चेद्वियते
शृणु ॥ महीतलेतदागत्यमयाकुरुतवैरणम् ॥ १४ ॥

हुआ था ॥८॥ उस समय यादवोंके बाणोंसे वे राक्षस कटकट कर समुद्रमें ऐसे गिरने लगे, जैसे वायुके उखाड़े वृक्ष गिरते हैं ॥९॥ कितनेही तो भूमिमें गिर पड़े, कितनेही नीचेको
मुख किये पुरीमें भीतर मरकर गिर पड़े, और कितनेही ऊपरको मुख किये गिर पड़े, और कितने ही तो बिलकुलही प्राण जिनके मर गये ऐसे भूमिमें गिर पड़े ॥१०॥ तब उनके
रुधिरकी बड़ी भयंकर वैतरणी जैसी जिसका पार दिखाई नहीं दे, ऐसी नदी बहने लगी ॥११॥ तब तो वह भीषण नामका राक्षस यादवोंके बलको देखकर बड़े विस्मयको प्राप्त हुआ,
और वह वक्रदृष्टिसे यादवोंको देखकर यह बोला ॥ १२ ॥ कि जो तुमने यह निर्बल पुरुषोंकी तरह आकाशमेंसे युद्ध किया है, यह कुछ प्रशंसा करने योग्य नहीं है,यह तुम्हारा युद्ध
निन्दा करने योग्य है, यह जो तुम अभिमान करते हो, सो व्यर्थ है ॥१३॥ यदि तुम्हारे शरीरमें शक्ति हो तो सुनो, कि भूमिमें आकर मेरे साथ युद्ध करो ॥ १४ ॥

तब उस भीषण नामके राक्षसके कथनको सुनकर बडे दयालु अनिरुद्धने आकाशमेंसे विमानको पृथ्वीमें खडाकर उन महासुरको कहा कि ॥१५॥ हे भीषण ! अब तुम आओ मुझसे संग्राम करो, हे महासुर ! झूठे विचार करनेसे क्या होगा,सो अब भय छोडकर संग्राम करो ॥ १६ ॥ तब वह भयंकर पराक्रमवाले भीषण नामके राक्षसने धनुषमें खेंचकर पांच बाण मारे ॥ १७ ॥ अनिरुद्धने आते हुये उन बाणोंके अपने बाणोंसे दो २ टुकड़े कर दिये, और अनायासही एक बाणसे उसका धनुष काट डाला ॥१८॥ तब सब राक्षस ने भी दूसरा धनुष लेकर प्रत्यंचा लगाकर सर्पाकार सौ बाण अनिरुद्धके मारे ॥१९॥ उन बाणोंसे अनिरुद्धका रथ चूर्ण होगया, सारथी मारा गया, घोड़े मारे गये, और अनिरुद्ध मूर्च्छित होकर गिर पड़े ॥२०॥ तब तो अपने स्वामीको मूर्च्छित देखकर क्रोधके मारे ओंठ (होठ) जिनके फड़क रहें, ऐसे वे सब यादव बाणोंको चलाते हुये आये ॥२१॥ तब उनको (सब यादवोंको) देखकर उस असुरने धनुपको हाथमें लेकर "जैसे दाढ़से सिंह मृगोंको मारे" इस प्रकारसे उसने गदासे मारकर यादवोंको बिछा दिये ॥ २२ ॥ उसकी

इत्याकर्ण्यवचःसोपिकार्ष्णिजःकरुणामयः ॥ विमानंभूतलेकृत्वाप्रत्युवाचमहासुरम् ॥ १५ ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ सहसात्वंमयासार्द्धंरणं कुरुमहारणे ॥ किंविचारेणभवतिभयंत्यक्त्वामहासुर ॥ १६ ॥ इतिद्वाक्यमाकर्ण्यभीषणोभीमविक्रमः ॥ धनुषापंचनाराचांस्तस्योपरिमुमोचह ॥ १७ ॥ अनिरुद्धोनिरीक्ष्याथस्वबाणैस्तान्द्विधाकरोत् ॥ चिच्छेदचधनुस्तस्यशरेणैकेनलीलया ॥ १८ ॥ सोप्यन्यं धनुरादायसज्जं कृत्वानिशाचरः ॥ सर्पाकारैःशतशरैर्जघानकार्ष्णिनंदनम् ॥१९॥ रथस्तुतस्यभग्नोभूत्सारथीपंचतांगतः ॥ हयाम्ृत्युंगताःसर्वेप्राद्युम्निर्मूर्च्छितोऽभवत् ॥२०॥ तदैववृष्णयःसर्वेस्फुरिताधरपल्लवाः॥स्वनाथंपतितंदृष्ट्वेषून्मुंचन्तःसमागताः॥२१॥तानागतान्बद्दृष्ट्वाचापंधृत्वाऽसुरोरुषा ॥ गदयापोथयामासदंष्ट्रयैवमृगान्हरिः ॥ २२ ॥ गदाप्रहारव्यथितायादवाःपतिताभुवि ॥ संभिन्नच्छिन्नसर्वांगाः केचिन्निपतितारणे ॥ २३ ॥ ततोगृहीत्वास्वगदांगदःसंकर्षणानुजः ॥ ताडयामाससमरेभीषणस्यचमूर्द्धनि ॥ २४ ॥ गदाप्रहारव्यथितो सपपातमहीतले ॥ चालयन्वसुधां राजन्यथावज्रहतोगिरिः ॥ २५ ॥ भीषणंपतितंदृष्ट्वामूर्च्छितंभग्नशीर्षकम् ॥ असुरास्तेगदंहंतुंप्राप्ताः शस्त्रधराः किल ॥ २६ ॥ तान्सर्वान्पोथयामासगदयावज्रकल्पया ॥ रामानुजोयथाराजन्नृसिंहोदंष्ट्रयागजान् ॥ २७ ॥ अथोत्थितोनिरुद्धस्तुब्रुवन्धन्वीक्षणेनवै॥ भीषणोममशत्रुर्वैक्वगतःक्वगतःखलः ॥ २८ ॥

गदाके प्रहारसे व्यथित होकर अंग भंग जिनके कर गये ऐसे यादव भूमिमें गिर पड़े॥२३॥तब बलदेवजीके छोटे भाई गदने अपनी गदा लेकर उस भीषण नामके राक्षसके शिरमें मारी ॥ २४ ॥ तब वह भीषण गदाके प्रहारसे व्यथित होकर भूमिमें गिर पड़ा, उसके गिरनेसे भूमि हिलने लगी, जैसे वज्रके मारे पर्वत गिरता है, वैसेही गदकी गदाके मारे गिर पड़ा ॥ २५ ॥ तब गदाके मारे फट गया है मस्तक जिसका ऐसे उस भीषणको मूर्च्छित हुआ देखकर सब असुर अनेक शस्त्रोंको लेकर गदको मारनेके लिये आये॥२६॥उन सभीको गदने अपनी वज्रके समान गदासे ऐसे मारकर गिरा दिया, जैसे सिंहराज दाढ़से हाथियोंको मारकर गिरा देता है ॥ २७ ॥ उसके बाद एकक्षणमेंही अनिरुद्ध उठे, उठतेही धनुषको हाथमें लेकर अरे ! मेरा शत्रु कहाँ है ? कहाँ गया ऐसे कहते चारों ओर देखने लगे ॥ २८ ॥

तभी सब यादवोंने अनिरुद्धको उठे हुये देखकर जयजय शब्द किया,और आकाशमें स्थित सब देवता भी प्रसन्न हुये ॥२९॥ इतनेमेंही भीषणका पिता बक नामका राक्षस जो वनमें था,वह नारदजीके मुखसे इस युद्धका वृत्तान्त सुनकर वनमेंसे बड़ा क्रोधित होकर आया ॥३०॥ कज्जल पर्वतके समान,दश तालके समान लम्बा, जीभको लपलपाता हुआ,त्रिशूल और गदाको लिये हुये ॥३१॥ बायें हाथमें एक हाथीको पकड़कर मुखसे उस हाथीको खाता हुआ, रुधिरसे भीग रहा, बड़े भारी पिशाचके समान ॥३२॥ तालकी बराबर पांवों से पृथ्वीको कम्पाता हुआ, देवताओंको भी भय देनेवाला वह आया,मनुष्योंके लिये तो मानों साक्षात् काल है ॥३३॥ उसको आते हुये देखकर सब यादव शंकित होगये, और श्रीकृष्णके चरणोंका स्मरण करते हुये यह बोले ॥३४॥ कि हे मित्रो ! यह कौन है, समीप आगया, बड़ा भयंकर इसका रूप है, और कालके समान निर्भय है ॥३५॥ जबतक

उत्थितंचहरेःपौत्रंदृष्ट्वायादवपुंगवाः ॥ चक्रुर्जयजयारावंदेवाःसर्वेंचहर्षिताः ॥ २९ ॥ ततोनारदवाक्याद्वैबकोनामनिशाचरः ॥ भीषणस्य पिताऽरण्यात्क्रुद्धस्तत्राजगामह ॥ ३० ॥ कज्जलाद्रिसमोराजन्तालवृक्षदशोत्थितः ॥ ललज्जिह्वश्चदुर्नेत्रस्त्रिशूलीचगदाधरः ॥ ३१ ॥ हस्ति- नंवामहस्तेनगृहीत्वाचमुखेनवै ॥ प्रभक्षन्रुधिराक्रांतःपिशाचसदृशोमहान्॥३२॥ पद्भ्यांतालप्रमाणाभ्यांकंपयन्पृथिवीतलम्॥भयप्रदश्चदेवानां जनकालोव्यदृश्यत ॥ ३३ ॥ तमायांतंविलोक्याथशंकितास्तत्रयादवाः ॥ प्रोचुःपरस्परंसर्वेंस्मृत्वाकृष्णपदांबुजम् ॥ ३४ ॥ यादवाऊचुः ॥ कोयंमित्राणिगदतनिकटेचसमागतः ॥ महाबीभत्सरूपीवैकृतांतइवनिर्भयः ॥ ३५ ॥ इतिब्रुवत्सुसर्वेषुआसीत्कोलाहलोमहान् ॥ प्रसन्नास्तंनिरीक्ष्याथबभूवुस्तेनिशाचराः ॥ ३६ ॥ भीषणंमूर्च्छितंदृष्ट्वाबकोराक्षसपुंगवः ॥ शुशोचराजन्संग्रामेहादैवेतिमुहुर्वदन् ॥ ३७ ॥ ततोमूर्च्छांमुहुर्तेनविहायभीषणोनृप ॥ उत्थितस्तुब्रुवन्वाक्यंगदःकुत्रगतोभयात् ॥ ३८ ॥ स्वपुत्रमुत्थितंदृष्ट्वापुरुषादस्तुहर्षितः ॥ आलिंग्याऽऽश्वासयामाससुवाक्यैर्वाक्यकोविदः ॥३९॥ भीषणःपितरंदृष्ट्वासहायार्थंसमागतम् ॥ नमश्चक्रेमहाराजभूत्वासचप्रसन्नधीः ॥४०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेबकागमननामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ गर्गउवाच ॥ अथाऽसुराणांमध्येवैस्थित्वाराजन्रुषान्वितः ॥ अभिप्रायंभीषणंचबकःपप्रच्छराक्षसः ॥ १ ॥

यादव ऐसे कह रहे थे कि बडा भारी कोलाहल हुआ,तब वे सब निशाचर बकासुरको देखकर प्रसन्न हुये ॥३६॥ तब राक्षसोंमें श्रेष्ठ बकासुर अपने पुत्र भीषणको युद्धमें मूर्च्छित देखकर हा दैव ! ऐसे कहता हे राजन् ! शोच करने लगा ॥३७॥ उसके दो घडी बादमें हे नृप ! वह भीषण मूर्च्छा दूर होनेपर उठा, और कहने लगा कि हे राक्षसो ! गद कहां है ? ॥ ३८ ॥ तब वह बक राक्षस अपने पुत्रको उठा हुआ, देखकर हर्षित हुआ, और पुत्रको आलिंगन करके वाक्य कहनेमें बडा कोविद यह बोला ॥ ३९ ॥ तब भीषणने पिता को सहायता करनेके लिये आया देखकर बडा प्रसन्न होकर हे महाराज ! नमस्कार किया ॥ ४० ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायामेकोनविंशोऽध्यायः ॥१९॥ गर्गजी कहते हैं कि, हे राजन् ! तब असुरोंके मध्यमें खडे होकर क्रोधसे युक्त उस बकासुरने अपने पुत्र भीषणसे अभिप्राय पूछा ॥ १ ॥

अरे पुत्र ! तिनकेकी बराबरके यादवोंके साथ तुम्हारा युद्ध क्यों हुआ, जिस युद्धमें तुमको मूर्च्छा होगई, और ये सब राक्षस मारे गये, सो बतलाओ यह क्या बात है ॥२॥ तब पिताके इस कथनको सुनकर हे राजन् ! भीषणने नीचेको अपना मुख करके कहा, जो कुछ अश्वमेधके घोड़के कारणका वृत्तान्त था, वह सब कहा ॥३॥ तब वह बक पुत्रके कथनको सुनकर अपनी गदाको हाथमें लेकर जैसे वनमें दावानल प्रवेश करे, ऐसेही यादवोंकी सेनामें प्रवेश कर गया ॥४॥ तब वह बक सामने आये यादवोंको पंखोंसे, हाथोंसे, और गदासे मर्दन करने लगा, जैसे सोये हुये मृगोंको सिंह मर्दन करता है ॥५॥ और हाथी, घोड़े, तथा रथ जो उसके सामने आये उनको आकाशमें फेंक दिया, और मनुष्योंको भक्षण करते हुये उस बलीने युद्धमें बड़ी गर्जना की ॥ ६ ॥ उस अपनी गर्जनासे लोकों समेत समग्र विश्वको उसने शब्दायमान कर दिया, सब मनुष्य पृथ्वीमें बधिर (बहरे) होगये ॥ ७ ॥ तब तो बकासुरके विपरीत युद्धसे हाहाशब्द करते हुये सब यादव खिन्न मन हो गये ॥८॥ तब जाम्बवती माताका पुत्र साम्ब उस दुष्ट राक्षससे पीड़ित की गई अपनी सेनाको देखकर

किमर्थंयादवैःसार्द्धयुद्धमासीत्तृणोपमैः ॥ त्वंतुयत्रगतोमूर्च्छांराक्षसानिहताअहो ॥२॥ इत्युक्तःसबकेनापिभूत्वाराजन्नवाङ्मुखः॥हयमेधतुरंगस्यवार्तांसर्वामवर्णयत् ॥३॥ श्रुत्वापुत्रस्यवचनंगृहीत्वास्वगदांबकः ॥ विवेशयदुसैन्येवैज्वलनस्तुयथावने ॥४॥ पद्भ्यांममर्दपाणिभ्यांयादवान्संमुखेगतान् ॥ भुजाभ्यांगदयासिंहोप्रसुप्तांश्चमृगान्यथा ॥५॥ हयाँश्चिक्षेपगगनेगजाँश्चैवरथाँस्तथा ॥ नराँश्चभक्षयन्युद्धेशब्दंचक्रेबको बली ॥ ६ ॥ ननादतेनलोकैश्चविश्वंशब्देनयादव ॥ जाताचबधिरीभूतापृथिव्यांजनमण्डली॥७॥अथतस्यापियुद्धेनविपरीतेनयादवाः॥हाहेतिवादिनस्सर्वेबभूवुःखिन्नमानसाः ॥८॥ बाध्यमानांचस्वांसेनांराक्षसेनदुरात्मना ॥ भृशंनिरीक्ष्यतप्तोभूत्सांबोजांबवतीसुतः ॥९॥ गृहीत्वापंच नाराचान्कोदंडेचण्डविक्रमः ॥ निधायाशुमुमोचाथबकस्योपरिमानद ॥ १० ॥ तेबाणास्तच्छरीरंवैभित्त्वाराजन्महीतलम् ॥ विविशुस्तेतु गत्वावैपपुर्भोगवतीजलम् ॥ ११ ॥ सहतस्तुशरैराजन्पपातचालयन्महीम् ॥ पुनरुत्थायचबकोननादजलदस्वनः ॥१२॥ पुनर्जांबवतीपुत्रो जघ्नेतंपंचभिःशरैः ॥ तैर्बाणैर्विभ्रमन्सोपिलंकायांनिपपातह ॥१३॥ आगत्यत्रिशिखंरक्षस्त्रिशूलंज्वलनप्रभम् ॥ राजन्सांबायचिक्षेपप्रसूनमिवहस्तिने ॥ १४ ॥ त्रिशूलमागतंदृष्ट्वासांबोबाणेनलीलया ॥ चिच्छेदप्रधनेशीघ्रंनागंनागांतकोयथा ॥ १५ ॥

ताप युक्त हो उठा ॥९॥ और अपने धनुषमें पांच बाण लगाकर हे मानद ! बकासुरके मारे ॥१०॥ ये बाण बकासुरके शरीरको फोड़कर धरतीमें समा गये, और उन्होंने भोगवतीके जलको पिया, अर्थात् नागोंकी भोगवती पुरीमें वे बाण पहुँचे ॥११॥ हे महाराज ! उन पांच बाणोंसे ताड़न किया बकासुर पृथ्वीमें गिर पड़ा, जिसके गिरनेसे पृथ्वी कांपने लगी, फिर उठकर उसने मेघके समान गर्जना की ॥१२॥ तब फिर जाम्बवती नन्दन साम्बने उसके पाँच बाण मारे, उन बाणोंके मारे उड़कर वह लंकामें जाकर पड़ा ॥ १३ ॥ लंकामें जाकर उस राक्षसने एक तीन शिखाका त्रिशूल अग्निके समान कान्तिवाला साम्बके ऊपर फेंका, जैसे हाथीके ऊपर कोई फूल फेंके ॥ १४ ॥ तब उस त्रिशूलको आया देखकर साम्बने अनायासही ऐसे काट डाला जैसे गरुड सर्पको काट डालता है ॥ १५ ॥

तब रणमें बड़े दुर्मद बकासुरने गदासे साम्बके चारों घोड़े और सारथी मार डाले॥१६॥और ध्वजा काटकर रथको चूर चूरकर साम्बसे बोला कि,अरे साम्ब ! दूसरे रथमें बैठकर मुझसे संग्राम कर ॥ १७ ॥ रथहीन हुये तुमको मैं अधर्मसे संग्राममें नहीं मारूँगा, दैत्यके कथनको सुनकर कुछ क्रोधित होकर हँसते २ साम्बने ॥ १८ ॥ उसके हृदयमें एक गदा मारी, उस गदाके प्रहारसे बकासुर कुछ व्याकुल होकर ॥१९॥ साम्बको कुछ नहीं समझकर यदु सैन्यमें घुस पड़ा, और गदासे हाथी. घोड़े, रथ और पैदल सैनिकोंको मारकर फेंकने लगा ॥२०॥ जैसे सिंह हाथियोंको फेंक देता है, तब तो हे राजन् ! यादवोंकी सेनामें हाहाकार मचा ॥२१॥ उसको देखकर रुक्मवतीका पुत्र अनिरुद्ध बड़े क्रोधसे रथमें बैठकर अक्षौहिणी सेनाको साथ लेकर अभयको उत्पन्न करता आया॥२२॥और यह बोला कि, हे मूढ ! वीरके सामनेको छोड़कर क्या करेगा, हे असुर ! इन डरे हुओंको मारनेमें

ततोनीत्वागदांगुर्वींबकस्तुरणदुर्मदः ॥ सांबस्यतुरगान्राजञ्जघानसारथिंतथा ॥१६॥ रथंचैवपताकांचहत्वासांबमुवाचह॥रथमन्यंसमारुह्ययु-
द्धंकुरुमयासह ॥१७॥ विरथंत्वामधर्मेणनहनिष्याम्यहंरणे ॥ इतीरितोसौदैत्येनहसन्किंचिद्रुषान्वितः ॥१८॥ शीघ्रंजघानगदयाहृत्कपाटे
बकस्यच ॥ गदाहतोबकोयुद्धेकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥१९॥ अगणय्यततःसांबंयदुसैन्येविवेशह ॥ सगत्वातत्रगदयागजवाजिरथान्नरान्
॥ २० ॥ कौणपःपोथयामासमृगेंद्रस्तुयथामृगान् ॥ हाहाकारस्तदैवासीद्यदुसैन्येनृपेश्वर ॥ २१ ॥ ततोविलोक्यरोषेणराजन्रुक्मवतीसुतः ॥
तत्रागतोऽभयंकुर्वन्रथेनाऽक्षौहिणीयुतः ॥ २२ ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ किंकरिष्यसिहेमूढत्यक्त्वावीरस्यसंमुखम् ॥ भीतानांमारणेश्लाघान
भविष्यतितेऽसुर ॥२३॥ यदिशक्तिश्चत्वद्देहेविद्यतेशृणुमद्वचः ॥ मत्संमुखेसमागत्यकुरुयुद्धंप्रयत्नतः॥२४॥इतिश्रुत्वाऽनिरुद्धस्यवाक्यंरा-
जन्बकासुरः ॥ रुषास्फुरत्सर्पइवयुद्धार्थंशीघ्रमाययौ॥२५॥आगतंतंविलोक्याथाऽनिरुद्धोधन्विनांवरः॥ नाराचैर्दशभीराजञ्जघानप्रधनेरुषा
॥ २६ ॥ तेशरास्तच्छरीरंवैशीघ्रंभित्त्वाबहिर्गताः ॥ पुनस्तेभीषणंभित्त्वाविविशुर्वैमहीतलम् ॥ २७ ॥ ततःपपातसबकोभीषणेनसमन्वितः ॥
पृथिव्यांमूर्च्छितोभूत्वायथावज्रहतोगिरिः ॥२८॥ तदाजयजयारावोयदुसैन्येबभूवह ॥ नेदुर्दुंदुभयश्चैवभेर्य्यःशंखाश्चगोमुखाः॥२९॥ततश्चरा-
क्षसाःसर्वेक्रोधपूरितमानसाः ॥ स्वनाथौपतितौदृष्ट्वायदून्हंतुंसमाययुः ॥ ३० ॥

तुम्हारी प्रशंसा नहीं होगी ॥ २३ ॥ यदि तेरे शरीरमें सामर्थ्य हो, तो तू मेरे कथनको सुन, मेरे सामने आकर बड़े यत्नसे संग्राम कर॥२४॥हे राजन् ! इस प्रकार अनिरुद्धके कथनको सुनकर वह बकासुर क्रोधसे सर्पकी तरह फुंकार मारता हुआ युद्ध करनेको बहुत शीघ्र आया ॥२५॥ तब धनुर्धरोंमें मुख्य अनिरुद्धने सामने आये राक्षसको देखकर संग्राममें बड़े क्रोधसे दश बाण मारे ॥२६॥ अनिरुद्धके वे बाण उसके शरीरको फोड़कर पार होगये, और पहिलेकी तरह फिर भी वे बाण भूमिमें समा गये ॥२७॥ तब वह बक दैत्य अपने भीषण पुत्र सहित मूर्च्छित होकर पृथ्वीमें गिर पड़ा, जैसे वज्रका मारा पर्वत गिर पड़ता है ॥२८॥ तब तो जयजय शब्द होने लगा, यादवोंकी सेनामें दुन्दुभि, भेरी,शंख, और गोमुखा बजने लगे ॥२९॥ तब तो क्रोधसे पूर्ण हैं मन जिनका ऐसे सब राक्षस अपने दोनों स्वामियोंको मरे हुये देखकर यादवोंको मारनेके लिये आये ॥ ३० ॥

तब दोनों सेनाओंका युद्ध हुआ, बाण, खड्ग, गदा, शक्ति और भिंदिपाल चलने लगे ॥३१॥ तब हे राजन् ! राक्षसोंके बड़े तीव्र बलको देखकर साम्बादिक श्रीकृष्णके अठारहों पुत्र तीखे बाणोंसे राक्षसोंको मारने लगे ॥३२॥ तब इन अठारहोंके बाणोंके मारे कितने ही तो राक्षस मारे गये, और बहुतसे मूर्च्छित होकर गिर पड़े ॥३३॥ हे राजन्! फिर एक क्षणमें बक नामका राक्षस उठा, और शत्रु अनिरुद्धके सामने गया ॥ ३४ ॥ और वहाँ जाकर "तू मरा" ऐसे बोलते हुये उस बक राक्षसने अनिरुद्धके शिरके ऊपर गदाका प्रहार किया॥३५॥ वह गदा प्रद्युम्नने कुवाक्यसे मित्रताकी तरह यमदण्डसे काट डाली ॥३६॥ तब तो बकको बड़ा क्रोध आया, वह युद्धमें मुख फाड़कर अनिरुद्धको खानेके लिये ऐसे दौड़ा जैसे चन्द्रमाको खानेके लिये राहु दौड़ता है॥३७॥ तब उसको आते हुये देखकर धनुषधारियोंमें शिरोमणि अनिरुद्धने यमदण्डको लेकर उससे बकासुरके ऊपर प्रहार किया ॥ ३८ ॥

ततःसमभवद्युद्धमुभयोःसेनयोर्मृधे ॥ बाणैःखड्गैर्गदाभिश्चशक्तिभिर्भिंदिपालकैः ॥३१॥ राक्षसानांबलंतीव्रंदृष्ट्वाराजन्हरेःसुताः॥अष्टादश च सांबाद्यानिजघ्नुर्निशितैःशरैः ॥ ३२ ॥ तत्रतेषांचबाणौघैःकौणपाःपतितामृधे॥ केचिन्मृत्युंगताःकेचिद्दुद्रुवुर्जीवितैषिणः ॥३३॥ अथोत्थितो मुहूर्त्तेनबकोराजन्भयंकरः ॥ त्वरंजगामशत्रोश्चाऽनिरुद्धस्यतुसंमुखः ॥३४॥ तत्रगत्वागदांगुर्वींचिक्षेपतच्छिरोपरि ॥ बाहुनाचबकोराजन्हतो सीतिब्रुवन्वचः ॥३५॥ तामागतांविलोक्याथयमदंडेनमाधवः ॥ चिच्छेदसहसाराजन्कुवाक्येनेवमित्रताम्॥३६॥ततःक्रुद्धोबकोयुद्धेप्रसार्य मुखमण्डलम् ॥ दुद्रावतंभक्षयितुंराहुश्चन्द्रमिवक्वचित्॥३७॥आगतंतंनिरीक्ष्याथानिरुद्धोधन्विनांवरः॥यमदंडंपुनर्नीत्वाताडयामासतेनतम् ॥ ३८॥ ततोभग्नशिराभूत्वाह्युद्वमन्रुधिरंमुखात् ॥ चालयन्वसुधांराजन्पतितोमूर्च्छितोऽभवत्॥३९॥ततश्चभीषणोरोषात्पितरंवीक्ष्यमूर्च्छि-तम् ॥ परिघेणरणेराजन्निजघानतुयादवान् ॥ ४० ॥ ततोनिरुद्धोबलवान्नागपाशेनरोषतः ॥ चकर्षभीषणंबद्ध्वानागंविष्णुरथोयथा ॥४१॥ तंबद्धंपाशिनःपाशैर्भग्नमानमधोमुखम् ॥ विनिर्जितंहीनबलंसांबोवचनमब्रवीत् ॥४२॥ असुरेन्द्राऽनिरुद्धस्यहयमेधतुरंगमम्॥शीघ्रंप्रयच्छभ-द्रंतेपुरींगत्वाविधानतः ॥४३॥ अनिरुद्धंहरेःपौत्रंश्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥ नृणांप्रदर्शयन्रूपंविचरंतंमिषेणच ॥४४॥ यंनमंतिसमागत्यदेवदै-त्यनराःसुराः ॥ तंविद्धिकृष्णसदृशंनृणांपापप्रणाशनम् ॥ ४५ ॥

उससे बकासुरका मस्तक फूट गया, और मुखसे रुधिरका वमन करता हुआ बकासुर पृथ्वीको कम्पाता हुआ मूर्च्छित होकर गिर पड़ा॥३९॥ तब तो हे राजन् ! उसके भीषण नाम के पुत्रने अपने पिताको मूर्च्छित देखकर बड़े क्रोधसे संग्राममें अनिरुद्धको तथा यादवोंको परिघसे मारा ॥४०॥ तब बली अनिरुद्धने भीषणको नागपाशमें बांधकर ऐसे घसीटा, जैसे सर्पको गरुड़ घसीटते हैं ॥ ४१ ॥ तब वरुणपाससे बँधा हुआ, मान जिसका भंग हो गया, नीचेको मुख किये हुये, जिसका बल हीन हो गया, ऐसे उस हारे हुये भीषणको देख कर साम्बने कहा ॥४२॥ कि हे असुरेन्द्र ! अनिरुद्धके अश्वमेधके घोड़ेको पुरीमें जाकर तुम जल्दी लाकर दे दो ॥४३॥ महात्मा श्रीकृष्णके पौत्र ये अनिरुद्ध मनुष्योंको दर्शन देते हुये मनुष्यका रूप बनाकर विचरते हैं ॥४४॥ जिनको देव, दैत्य मनुष्यादिक सब नमस्कार करते हैं, इनको तुम साक्षात् कृष्णके समान समझो, ये मनुष्योंके पापोंका नाश करनेवाले हैं ॥४५॥

उन्होंने तुमको जीता है, सो हे राक्षस ! तुम मनमें दुखी मत होओ,हमारे साथ श्रीकृष्णके दर्शन करनेको चलो ॥४६॥ गर्गजी कहते हैं कि,इस प्रकार जब साम्बने समझाया,और उसका वरुणपाश खोल दिया, तब उसी समय पुरीमें जाकर बहुत द्रव्य समेत घोड़को लाकर अनिरुद्धको दे दिया ॥४७॥ उसके बाद अनिरुद्धने भीषणको अश्वकी रक्षा करनेका आदेश दिया, तब भीषण यह बोला ॥४८॥ कि हे सुरपालक ! जब मेरा पिता चैतन्य हो जायगा, तब मैं पिताकी आज्ञा लेकर निःसन्देह आऊँगा ॥४९॥ जब भीषणने यह कहा तब प्रद्युम्नके पुत्र अनिरुद्धजी यदुसेना सहित घोड़को लेकर विमानमें बैठाकर आपभी उसी विमानमें बैठकर आकाशमें उड़ गये ॥ ५० ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायांविंशोऽध्यायः ॥२०॥ गर्गजी कहने लगे कि, हे राजन् ! तब इस प्रकार उषापति अनिरुद्ध सब यादवों सहित विमानमें बैठकर आकाश मार्गसे विजयके नगाडे बजाते

तेनत्वंनिर्जितोयुद्धेदुःखंमाकुरुराक्षस ॥ अस्माभिःसहितोगच्छकर्तुंकृष्णस्यदर्शनम् ॥ ४६ ॥ गर्गउवाच ॥ बोधितःसोपिसांबेनमुक्तः
पाशैश्चवारुणैः ॥ पुरींगत्वाददौतस्मैद्रव्ययुक्तंतुरंगमम् ॥४७॥ततःसोप्यनिरुद्धेनतुरंगस्यतुपालने ॥ प्रार्थितोभीषणोराजन्प्रत्युवाचविचार्य
तम् ॥ ४८ ॥ भीषणउवाच ॥ यदाभवतिचैतन्योमत्पितासुरपालक ॥ तदाहंतस्यवचनादागमिष्येनसंशयः ॥ ४९ ॥ इतीरितोसौकिल
भीषणेनप्रद्युम्नपुत्रःक्रतुवाहनं च ॥ कृत्वाविमानेयदुसेनयावैस्वयंसमारुह्यजगामखंहि ॥५०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखंडउपलंकाविज-
योनामविंशतितमोऽध्यायः ॥ २० ॥ गर्गउवाच ॥ ततःप्राप्तःस्वसेनायांविमानस्थउषापतिः ॥ शीघ्रंचाकाशमार्गेणनादयञ्जयदुन्दुभीन्
॥१॥ दृष्ट्वातानागतान्सर्वेह्यक्रूराद्याश्चयादवाः ॥ मिलित्वाकुशलंसर्वेपप्रच्छुस्तेन्यवेदयन् ॥२॥ततस्त्यक्त्वाविमूर्च्छांवैबकस्तुसहसोत्थितः ॥
अदृष्ट्वायादवांस्तत्रपुत्रंपप्रच्छरोषतः ॥ ३ ॥ ततःपित्रेभीषणोवैवार्तांसर्वामवर्णयत् ॥ श्रुत्वावचःप्राहबकोरुषाप्रस्फुरिताधरः॥४॥अहंजानामि
यदवोविमानेनकुशस्थलीम् ॥ मद्भयाच्चगताःपुत्रयथासिंहभयान्मृगाः॥५॥तस्मादयादवींपृथ्वींकरिष्येहंनसंशयः ॥ हनिष्यामियदून्सर्वान्ग-
त्वाकृष्णस्यद्वारकाम् ॥ ६ ॥ भीषणउवाच ॥ मन्युंनियच्छभोराजन्नस्माकंसमयोनहि ॥ प्रसीदतियदादेवोतदाजेष्यामयादवान् ॥ ७ ॥

हुये अपनी सेनामें आये ॥१॥ इनको आये हुये देखकर अक्रूरादि सब यादवोंने इनसे मिलकर कुशल पूछी, तब उन्होंने सब वृत्तान्त अपनी कुशल सहित कहा ॥२॥ उसके बाद बकासुरकी भी वहाँ मूर्च्छा खुली,और वह उठकर बैठ गया,तब उसको वहाँ कोई यादव नहीं दिखाई दिया,तब बड़े क्रोधमें मग्न होकर अपने पुत्र भीषणसे पूछा कि, अनिरुद्धादिक सब यादव कहाँ गये ?॥३॥तब भीषणने पिताके सामने सब वृत्तान्त कहा,तब पुत्रके कथनको सुनकर बकासुरके ओंठ(होठ)फड़कने लगे,और वह बोला कि॥४॥मैं जानता हूँ कि सब यादव मेरे भयसे विमानमें बैठकर द्वारकाको चले गये,जैसे सिंहके भयसे हिरण भाग जाते हैं,॥५॥सो अब मैं सब भूमिको यादवोंसे रहित करूँगा,इसमें संदेह नहीं है,मैं कृष्णकी द्वार-कामें जाकर सब यादवोंको मारूँगा॥६॥तब भीषणने कहाकि हे राजन् ! क्रोधको रोकिये,इस समय हमारा भाग्य अच्छा नहीं है,जब भाग्य दया करेगा तब हम फिरसे यादवोंको जीतेंगे॥७॥

गर्गजी कहते हैं कि हे राजन् ! जब ऐसे पुत्र भीषणने समझाया, तब बकासुर चुप होकर वनके जन्तुओंको भक्षण करता हुआ वनमें फिरने लगा ॥८॥ तब विधिपूर्वक ब्राह्मणोंको दान देकर और अश्वको पूजकर अभिषेक करके विजयी अनिरुद्धने फिर घोड़ेको छोड़ा ॥ ९ ॥ तब हे राजन् ! अनिरुद्धसे जयके लिये छोड़ा गया वह घोड़ा धैवत स्वर (शब्द) करता हुआ अनेक वीर पुरुषोंसे युक्त देशोंको देखता २ भद्रावती नामकी पुरीमें गया ॥१०॥ जिस पुरीके चारों तरफ अनेक प्रकारके बाग बगीचे हैं, जिसमें चारों ओर पर्वतोंका किला है, जिसमें चांदीके महल मन्दिर हैं ॥११॥ महावीर मनुष्य जिसमें निवास करते हैं, और बड़े मजबूत केवल लोहेके किवाड़ हैं, उस पुरीमें जाकर वह घोड़ा उस पुरीके राजा यौवनाश्वके सामने जाकर खड़ा हो गया ॥१२॥ तब नृपेश्वर यौवनाश्वने उसको पकड़ लिया, और अति कुपति होकर सेनाको साथ लेकर युद्ध करनेके लिये नगरके बाहिर आया ॥१३॥ तब महाबल यौवनाश्वको सेना समेत आया हुआ देखकर अनिरुद्धने कृष्णके भक्त मन्त्री उद्धवको बुलाकर पूछा ॥१४॥ कि हे मंत्रिन् ! यह सेनाको साथ लिये हुये सामने

॥ गर्गउवाच ॥ बोधितःसोपिपुत्रेणतूष्णींभूत्वाबकासुरः ॥ विचचारवनेराजन्वनजंतून्प्रभक्षयन् ॥ ८ ॥ ततस्तुरंगंविधिनाभिषिच्यदानानि दत्त्वाद्विजपुंगवेभ्यः ॥ विमोचयामासपुनर्जयायप्रद्युम्नपुत्रोविजयीनृपेन्द्र॥९॥हयस्तुमुक्तःकिलकार्ष्णिजेनस्वरंप्रकुर्वन्नृपधैवतंच ॥ पश्यन्सदेशान्बहुवीरयुक्तान्भद्रावतींनामपुरींजगाम ॥ १० ॥ तत्रभद्रावतीमश्वोनानाचोपवनैर्वृताम् ॥ गिरिर्दुर्गैणराजेंद्रतथारजतमंदिरैः ॥११॥ महावीरजनैर्युक्तांयौवनाश्वेनपालिताम् ॥ दृढांलोहकपाटैश्चनृपस्याग्रेस्थितोऽभवत्॥१२॥ तंगृहीत्वातुतस्यापिवार्तांज्ञात्वानृपेश्वरः॥ युद्धंकर्तुंचकुपितःससैन्योनिर्ययौपुरात् ॥ १३ ॥ ससैन्यमागतंदृष्ट्वायौवनाश्वंमहाबलम् ॥ आहूयमंत्रिणंप्राहकृष्णभक्तंहिकार्ष्णिजः ॥ १४ ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ कोयंसमागतोमंत्रिन्संमुखेसहसेनया ॥ हयहर्त्ताशत्रुमुख्योतत्सर्वंकथयस्वच ॥ १५ ॥ उद्धवउवाच ॥ नृपोयंयौवनाश्वाख्योमरुधन्वपतेःसुतः ॥ अत्रराज्यंचकुरुतेमृतेपितरिसत्तम ॥ १६ ॥ अयंषोडशवर्षीयोकुमंत्रिवचनाद्रणम्॥करिष्यतिमहाराजमारणीयःस न त्वया ॥१७॥ इतिश्रुत्वाथेत्युक्त्वायौवनाश्वेनकार्ष्णिजः॥ युद्धंचकारप्रधनेयथानागेननागहा॥१८॥तंतुवैविरथंचक्रेहत्वाचाक्षौहिणीत्रयम्॥प्रत्याहविमलंवाक्यंयौवनाश्वमुपापतिः॥१९॥ अनिरुद्धउवाच॥राजन्प्रयच्छतुरगंयुद्धंकुरुनचेन्मया॥वाक्यंश्रुत्वाहरेःपौत्रंज्ञात्वाराजाभयान्वितः॥२०॥

से कौन आता है, यदि इसने हमारा घोड़ा बांधा है, तो यह हमारा मुख्य शत्रु है,सो सब वृत्तान्त कहिये ॥१५॥ तब उद्धवजी बोले हे राजकुमार ! यह मरुदेशके स्वामीका पुत्र है,यह यहाँ पिताके मरनेपर राज्य करता है ॥१६॥ इसकी सोलहवर्षकी अवस्था है,सो दुष्ट मन्त्रिजनोंके कहनेसे संग्राम करेगा, सो महाराज ! मेरी तो यही सम्मति है, कि इसको मारना नहीं चाहिये ॥१७॥ उद्धवजीके इस कथनको सुनकर "बहुत ठीक है" ऐसे कहकर अनिरुद्ध उसी समय यौवनाश्व राजाके साथ युद्ध करने लगे ॥१८॥ तब अनिरुद्धने यौवनाश्वको रथहीन करके और उसकी तीन अक्षौहिणी सेनाको मारकर बड़े उत्तम वाक्य कहे ॥ १९ ॥ अनिरुद्ध बोले—हे राजन् ! या तो अश्व (घोड़ा) देदो, नहीं तो हमारे साथ युद्ध करो, ये वाक्य सुनकर राजा यौवनाश्व इनको कृष्णका पौत्र सुनकर भयान्वित हो गया ॥ २० ॥

उसी समय उस राजा यौवनाश्वने अनिरुद्धको यज्ञका घोड़ा सौंप दिया, और हाथ जोड़कर यह बोला ॥२१॥ कि हे नृपेश्वर! जब द्वारकामें यज्ञ होगा, तब मैं श्रीकृष्णके दर्शनके लिये आऊँगा॥२२॥ तब तो अनिरुद्धने यौवनाश्वको राज्यमें स्थापित कर उनकी पूजा लेकर विजयी होकर फिर घोड़ेको विजयके लिये छोड़ा॥२३॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायां हयमेधखण्डे भाषाटीकायामेकविंशोऽध्यायः ॥२१॥ गर्गजी कहते हैं कि हे राजन् ! फिर वहाँसे उग्रसेनका वह घोड़ा अनेक देशोंको देखता२ राजपुर नामके नगरमें गया, मार्गमें सफरा नामकी नदीको देखकर अवन्तिकाके वनमें जाकर खड़ा होगया ॥ १ ॥ उसी समय वहाँ बड़े महात्मा श्रीकृष्णके गुरु ब्राह्मणोंमें मुकुटमणि तुलसीकी मालाको कण्ठमें पहिने हुये वस्त्रोंको धारण किये हुये स्नान करनेके लिये ऋषि सांदीपनि आये ॥ २ ॥ उन्होंने वहाँ पत्र जिसके मस्तकपर बंध रहा ऐसे जलको पीते हुये सफेद घोड़ेको देखा, और पूछने लगे कि, यह

अर्पयामासविधिनातस्मैयज्ञतुरंगमम् ॥ ॥ भूत्वाकृतांजलीराजाप्रार्थितस्तेनचाऽब्रवीत् ॥ २१ ॥ यौवनाश्वउवाच ॥ द्वारकायांयदायज्ञोभविष्यतिनृपेश्वर ॥ तदाहंचागमिष्यामिकृष्णस्यांघ्रीविलोकितुम् ॥२२॥ ततश्चकृत्वातंराज्येवंदितस्तेनकार्ष्णिजः ॥ मुमुचेवाजिनंश्रेष्ठंविजयीविजयायच ॥ २३ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डे भद्रावतीविजयोनामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ गर्गउवाच ॥ यदुप्रवीरस्यतुरंगमोवैविलोकयन्राजपुरंजगाम ॥ निरीक्ष्यमार्गेसफरांनदींचह्यवंतिकायांविपिनेस्थितोभूत् ॥१॥ तदैवतत्रागतवान्महात्मासांदीपनिः कृष्णगुरुर्द्विजेन्द्रः ॥ स्नातुंगृहाच्छ्रीतुलसीस्रजाढ्यःसधौतवस्त्रःप्रजपन्हिकृष्णम् ॥२॥ ददर्शतत्रापिजलंपिबंतंतुरंगमंवैधवलंसपत्रम् ॥ वाक्यंब्रुवन्नेषकुतोश्चवाजीविमोचितःकेननृपेश्वरेण ॥३॥ तत्रस्नानंप्रकुर्वंतंदृष्ट्वाबिंदुंनृपात्मजम् ॥ हयस्यार्थेमुनिर्गत्वानोदयामासतंनृप ॥४॥ ततःसवीरैर्बहुभिश्चराजन्राजाधिदेवीतनयश्चशूरः ॥ जग्राहवाहंसहसानिरीक्ष्यनत्वागुरुंतद्वचसाप्रसन्नः ॥५॥ हयंगृहीत्वागुरवेदर्शयामासहर्षितः ॥ सपत्रंवाचयित्वाऽहनृपंसांदीपनिर्मुदा ॥ ६ ॥ सांदीपनिरुवाच ॥ उग्रसेनस्यतुरगंविद्धिप्राद्युम्निपालितम् ॥ यदृच्छयागतंराजन्कार्ष्णिजोत्रागमिष्यति ॥ ७ ॥ आगमिष्यंतिबहवोयादवायुद्धशालिनः ॥ मित्रविंदात्मजाश्चैवपश्यंतस्तेतुरंगमम् ॥ ८ ॥

अश्वमेध यज्ञका घोड़ा किसका है, और कौनसे राजाधिराजने छोड़ा है॥३॥ तब नदी स्नान कर रहे बिन्दु नामक राजकुमारको देखकर सांदीपनिने पास जाकर राजकुमार बिन्दुको घोड़ेको पकडनेके लिये प्रेरणा की ॥ ४ ॥ तब वह राजाधि देवीका पुत्र बड़ा शूरवीर अपने बहुतसे वीरोंको साथ लिये हुये उस राजकुमारने उस घोड़ेको देखकर सांदीपनिको प्रणाम कर इनके कहनेसे उस घोड़ेको पकड़ लिया ॥५॥ घोड़ेको पकड़कर बड़ा प्रसन्न होकर गुरुको लाकर दिखाया, तब पत्रको बाँचकर सांदीपनिजी बड़े प्रसन्न होकर बोले॥६॥ हे राजकुमार ! यह अश्व उग्रसेनका है, अनिरुद्ध इसके पालक हैं, यह अश्व यहाँ अकस्मात् आगया है, सो पीछेसे अनिरुद्धजीभी अवश्य आयेंगे ॥ ७ ॥ और युद्ध शाली बहुतसे यादव भी आयेंगे और घोड़के देखनेवाले मित्र बिन्दाके पुत्रभी आयेंगे ॥ ८ ॥

वे सब कृष्णके पुत्र आपके पूजनीय हैं, सो मेरे कहनेसे तुम युद्धकी बुद्धिको छोड़कर यह अश्व उनको दे दो ॥९॥ यह गुरुका वचन सुनकर धनुषधारी बड़े शूरवीर राजकुमारने अश्वको ले जानेका विचार छोड़ दिया और चुप होगया॥१०॥उसी समय लोकका मान दूर करनेवाला यदुसेनाका बड़ा शब्द हुआ,और धनुषोंकी टंकार सहित दुन्दुभियोंका भी बड़ा भारी शब्द हुआ ॥११॥ हाथियोंकी चिंग्घाड़ घोड़ोंकी हिनहिनाहट, रथोंकी खनखनाहट, और वीरपुरुषोंकी गर्जना हुई ॥१२॥ लोकोंको भय देनेवाला तोपोंका शब्द पृथक् हुआ,ये सब सुनकर राजकुमार विन्दुके मनमें बड़ा आश्चर्य हुआ ॥१३॥ तब तो सब रथी और हाथी घोड़ोंकी सेनाको लिये हुये मधुभोज और दशार्ह वंशके और शूरसेन वंशके राजा आये॥१४॥जिनके पांवोंकी रजसे आकाश भर गया, और भूमि हिलने लगी,अरे!कौन घोड़ेको ले गया?घोड़ा कहाँ गया?ऐसे कहते हुये आये॥१५॥उसके बाद इन सभी

पूजनीयास्त्वयासर्वेकृष्णचन्द्रस्यनन्दनाः ॥ मद्वाक्याद्युद्धबुद्धिंत्वंत्यक्त्वादेहितुरंगमम् ॥९॥ इतिश्रुत्वागुरोर्वाक्यंधन्वीशूरोनृपात्मजः॥हयंने- तुंमनोयस्यतत्रतूष्णींबभूवह ॥ १० ॥ तदैवयदुसेनायाःशब्दोभूल्लोकमानहा ॥ महानादंदुंदुभीनांटंकारंधनुषांतथा ॥११॥ चीत्कारंदंतिनांचैव हयानांहेषणंतथा ॥ झणत्कारंरथानांचवीराणांगर्जनंतथा ॥१२॥ शतघ्नीनांमहाशब्दंलोकानांभयदायकम् ॥ श्रुत्वाराजकुमारस्तुविस्मयंपरमं गतः ॥१३॥ ततः समागताःसर्वेरथिभिश्चगजैर्हयैः ॥ भोजवृष्ण्यंधकमधुशूरसेनदशार्हकाः॥१४॥ रेजोभिश्चनभोव्याप्तंकुर्वंतश्चलितांमहीम् ॥ केननीतःकुत्रगतोहयःसर्वेब्रुवन्वचः ॥१५॥ ततश्चददृशुःसर्वेघोटकंबद्धचामरम् ॥ महाद्भुतेचोपवनेपुष्पितद्रुमसंकुले ॥१६॥ गृहीतंलीलयात- त्रनृपपुत्रेणबिंदुना ॥ दृष्ट्वानिरुद्धंनिकटेगत्वासर्वेह्यवर्णयन् ॥१७॥ इतिश्रुत्वानिरुद्धस्तुविस्मितःप्रहसन्नृप ॥ उद्धवंप्रेषयामासबिन्दोःपार्श्वेचध- र्मवित् ॥ १८ ॥ ततःपुर्यांमहाराजचासीत्कोलाहलोमहान् ॥ भयभीताजनाःसर्वेसेनांवीक्ष्यभयंकराम् ॥१९॥ अथवैभ्रातरंद्रष्टुंह्यनुबिंदुर्भया- न्वितः ॥ कोटिवीरगणैःसार्द्धस्वपुर्य्यानिर्ययौबहिः ॥ २० ॥ दृष्ट्वायज्ञहयंतत्रसपत्रंचपयःप्रभम् ॥ भ्रातागृहीतंचभयान्निषेधंसचकारह ॥२१॥ ॥ अनुबिंदुरुवाच ॥ यदूनांकृष्णदेवानांभ्रातर्मोचयघोटकम् ॥ सम्बन्धस्यमिषेणापिकुलकौशलहेतवे ॥ २२ ॥

ने चामर जिसके बंध रहे बड़े अद्भुत खिले हुये पुष्पोंके वृक्षोंके बीचमें खड़े घोड़ेको देखा ॥१६॥ और अनायासही राजकुमार विन्दुने जिसको पकड़ रखा है, उसको देखकर अनिरुद्धके पास जाकर सभीने कहा ॥१७॥ ये सब बातसुनकर विस्मित होकर हँसते हुये अनिरुद्धने उद्धवको विन्दुके पास भेजा॥१८॥तब तो हे महाराज ! पुरीमें बड़ा भारी कोलाहल हुआ,उस भयंकर सेनाको देखकर सब मनुष्य भयभीत होगये॥१९॥उसके बाद भाईको देखनेके लिये अनुविन्दु भययुक्त होकर एक करोड़ वीरगणोंको साथलेकर अपनी पुरीके बाहिर निकले ॥ २० ॥ तब भाईने जिसको पकड़ रखा है,ऐसे उस दूधके समान सफेद रंगवाले, पत्रसहित यज्ञके घोड़ेको देखकर अनुविंदुने भयसे घोड़ेको पकड़नेके लिये मना किया ॥२१॥ अनुबिन्दु बोले कि हे भाई ! कृष्ण देवता हैं जिनके ऐसे यादवोंका यह घोड़ा है, उसको तुम सम्बन्धके बहानेसे और कुलकी कुशलताके लिये छोड़ दो ॥ २२ ॥

तुम यादवोंके बलको तो देखो, हे भाई जिन यादवोंने पहिले राजसूय यज्ञमें देव, दैत्य, मनुष्य सब जीत लिये हैं ॥२३॥ अनुबिन्दुके इस कथनको सुनकर बड़ा भाई बिन्दु घोड़े पर चढ़ कर आये हुये उद्धवजीसे बोला कि ॥२४॥ हे महाराज! मैंने मित्रोंके मिलनेके लिये घोड़ा पकड़ा है, इससे मैंने आप सबका निमन्त्रण किया है, सो आप सब यहीं ठहरिये ॥२५॥ बिन्दुके कथनको सुनकर उद्धवजी बिन्दुकी बहुत प्रशंसाकर फिर बड़े हर्षित होकर अनिरुद्धके पास जाकर सब वृत्तान्त कहा ॥२६॥ तब हे राजन्! उद्धवके कथनको सुनकर बड़े प्रसन्न होकर अनिरुद्धने अवंतिकामें नदीके किनारेपर निवास किया ॥२७॥ हे राजन्! वहाँ नदीके तटपर दश योजनके बीचमें अनेक प्रकारके स्वर्णके कलशों समेत अद्भुत बड़े शुभ शिविर लग गये ॥२८॥ भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चोष्य सब प्रकारके भोजन बिन्दुने आये हुये यादवोंकी भेंट किये ॥२९॥ वैसे ही उनकी सेनाके पशुओंको तृण अन्नादिक दिये,

यादवानांबलंपश्यदेवदैत्यनरासुराः ॥ पुरायज्ञेराजसूयेसर्वैर्भ्रातर्विनिर्जिताः॥२३॥इतितद्वाक्यमाकर्ण्यबिन्दुर्ज्येष्ठोऽवधर्षितः ॥ आगतंह्युद्धवं
दृष्ट्वाहयस्थंप्रत्युवाचह ॥ २४ ॥ बिंदुरुवाच ॥ मयागृहीतस्तुरगोमित्राणांमिलनायच ॥ तस्मान्निमंत्रिताःसर्वेस्थितिंकुरुतचात्रवै ॥ २५ ॥
इतिश्रुत्वोद्धवोराजन्बिंदुंसंश्लाघ्यहर्षितः॥अनिरुद्धस्यनिकटेगत्वासर्वमुवाचह॥२६॥श्रुत्वाऽनिरुद्धस्तद्वाक्यंभूत्वाराजन्प्रसन्नधीः॥सेनयाऽवंति-
कायांचनदीतीरेऽवसत्किल ॥ २७ ॥ अनेकेशिबिराजंस्तत्रवैदशयोजने ॥ नानावर्णाःसकलशाह्यभूवन्नद्भुताःशुभाः ॥२८॥ भक्ष्यंभोज्यंचले-
ह्यंचचोष्यमेतैश्चभोजनैः ॥ आगतेभ्यश्चसर्वेभ्योबिंदुरर्हणमाहरत् ॥२९॥ तथाचैवतृणान्नादीन्पशुभ्योदत्तवान्नृपः॥ईदृग्विधंचसत्कारंवृष्णी-
नांसचकारह ॥ ३० ॥ नृपोराजाधिदेवीचद्वौतथानृपनंदनौ ॥ भृशंमुमुदिरेसर्वेवीक्ष्यसर्वान्हरेःसुतान्॥३१॥ ततोनिशायांकिलकार्ष्णिपुत्रोवि-
द्यागुरुंतुस्वपितामहस्य ॥ आहूयनत्वाऽऽसनमेवदत्त्वाप्रत्याहकृत्वावरपूजनंच ॥३२॥ भगवन्द्वारकायांचकृष्णवाक्यात्क्रतूत्तमम्॥ करोतिह-
यमेधाख्यंचक्रवर्तीयदूत्तमः ॥३३॥ तस्मिन्क्रतुवरेब्रह्मन्कृपांकृत्वागमोपरि ॥ त्वंतुगच्छमुनिश्रेष्ठपुत्रेणचसमन्वितः ॥३४॥ अनिरुद्धस्यवच-
नंश्रुत्वासांदीपनिर्मुनिः ॥ कृष्णदर्शनकांक्षीचचलितुंसमनोदधे॥३५॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेअवंतिकागमनंनामद्वाविंशोऽध्यायः
॥ २२ ॥ गर्गउवाच ॥ अथसांदीपनिंतत्रकृष्णपौत्रोब्रवीद्वचः ॥ स्मृत्वातुकिंचित्संदेहंगुरुंवृद्धश्रवाइव ॥ १ ॥

इस प्रकार बिन्दुने सब यादवोंका सत्कार किया ॥३०॥ तब राजाधिदेवी तथा दोनों राजकुमार कृष्णके सब पुत्रोंको देखकर बहुत आनन्दयुक्त हुये ॥ ३१ ॥ तब रात्रिके समय अनिरुद्ध अपने पितामहके विद्यागुरुको बुलाकर प्रणामकर आसन देकर पूजनकर यह बोले कि ॥३२॥ हे भगवन्! द्वारकामें श्रीकृष्णके कहनेसे यादवोंमें उत्तम चक्रवर्ती राजा उग्रसेन अश्वमेध नामका यज्ञ कर रहे हैं ॥३३॥ हे ब्रह्मन्! इस यज्ञमें मेरे ऊपर कृपा करके हे मुनिश्रेष्ठ! अपने पुत्रको साथ लेकर आप जाइये ॥३४॥ अनिरुद्धके कथनको सुनकर कृष्णदर्शनकी इच्छावाले मुनि सांदीपनिने चलनेका मन किया ॥३५॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखंडे भाषाटीकायां द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥ गर्गजी कहते हैं कि, फिर अनिरुद्ध सांदीपनिजीसे मनके कुछ संदेह स्मरण करके पूछने लगे, जैसे इन्द्र बृहस्पतिजीसे पूछते हों ॥ १ ॥

अनिरुद्ध बोले–हे भगवन् ! मेरे सामने आप तत्वको कहिये जिससे मैं आनन्दमें रमण करूँ, और संसारके सब सुखोंको स्वप्नके समान मिथ्या जानकर उसका परित्याग कर दूँ, ऐसा उपदेश आप दीजिये ॥२॥ हे राजन् ! इस प्रकार जब अनिरुद्धने प्रार्थना की, तब सांदीपनि नामके गुरु हँसकर यह बोले जैसे राजा पृथुके प्रश्नको सुनकर सनत्कुमार बोले थे॥३॥ सांदीपनि बोले कि, अनिरुद्धजी आप साक्षात् ब्रह्माजीके अवतार हैं, आप पहिले भगवान्के नाभिकमलसे उत्पन्न हुये हैं, इससे हे लोकेश ! मैं अवश्य आपके सामने कहूँगा, ॥४॥ तब भी हे राजन् ! आपके वाक्यके गौरवसे कहूँगा, सब दीन चित्तवाले मनुष्योंके कल्याणके लिये ॥५॥ हे राजन् ! आपने जो प्रश्न किया है, उसको मेरे मुखसे सुनिये, सार तो केवल कृष्णके चरणोंका सेवनही है ॥६॥ जिन चरणोंके पूजनमात्रसे ध्रुवजीको ध्रुवपद मिल गया, और प्रह्लाद,अम्बरीप, गयराजा और यदुको भी ध्रुवपद मिल गया ॥७॥ इससे

॥ अनिरुद्धउवाच ॥ भगवन्ब्रूहिमेसारंयेनानंदेरमाम्यहम् ॥ विहायचास्यजगतःसुखान्स्वप्नोपमान्मुने ॥ २ ॥ इतीरितोनिरुद्धेनराजन्सांदीपनिर्मुनिः ॥ प्रत्याहप्रहसन्प्रीत्याकुमारःपृथुनायथा ॥ ३ ॥ सांदीपनिरुवाच ॥ आदिदेवस्त्वमेवासीच्छ्रीहरेर्नाभिपंकजात् ॥ तस्मात्तवाग्रेलोकेशकथयिष्यामिकिंत्वहम् ॥४॥ तथापिवर्णयिष्यामिराजंस्त्वद्वाक्यगौरवात् ॥ कल्याणार्थंनराणांचसर्वेषांदीनचेतसाम्॥५॥ त्वयापृष्टंचयद्राजँस्तच्छृणुष्वमुखान्मम ॥ कृष्णचंद्रस्यपदयोःसारमस्तिहिसेवनम् ॥६॥ ययोःपूजनमात्रेणध्रुवोध्रुवपदंव्रजेत् ॥ प्रह्लादश्चांबरीषश्चगयश्चैवयदुस्तथा ॥ ७ ॥ तस्मात्त्वमपिराजेंद्रश्रीकृष्णस्यचसेवनम्॥ सर्वेषांसाररूपंयन्मनसाकुरुयत्नतः ॥८॥ यूयंलोकेभूरिभागाःश्रीकृष्णस्यचवंशजाः ॥ ज्ञातिसंबंधिनश्चैवजीवन्मुक्ताहरिप्रियाः ॥९॥ केचिज्जानंतिश्रीकृष्णंतनयंकेपिभ्रातरम् ॥ पितरंकेपिमित्रंचकिंकर्त्तव्यंपरंचतैः ॥ १० ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ कःकर्ताचास्यजगतआदिरूपःसनातनः ॥ यस्मादासीत्पूर्वमिदंतन्मेवर्णयविस्तरात् ॥ ११ ॥ केनकेनापिरूपेणभगवाञ्जगदीश्वरः ॥ युगेयुगेमुनेधर्मंकरोतीतिवदस्वनः ॥ १२ ॥ सांदीपनिरुवाच ॥ उत्पत्तिश्चनिरोधश्चयस्मादासीद्यदूद्वह ॥ सईश्वरःपरब्रह्मभगवानेकएवच ॥ १३ ॥

हे राजन् ! श्रीकृष्णका सेवनही सबका सार है, तुम श्रीकृष्णका सेवन यत्नपूर्वक मनसे करो ॥८॥ तुम तो कृष्णके वंशमें हुये हो, इससे तुम तो बड़भागी हो, और जो श्रीकृष्ण की जातिके या सम्बन्धी हैं, वे सब जीवन्मुक्त हैं, और श्रीकृष्णके प्यारे हैं ॥९॥ जो तुम कोई तो, कृष्णको पुत्र, कोई भाई कोई पिता, और कोई मित्र मानते हो, फिर बताओ इससे अधिक और उनका क्या कर्तव्य है ॥१०॥ तब अनिरुद्धने प्रश्न किया कि, हे महाराज ! इस जगत्का कर्ता कौन है ? जो आदि रूप सनातन है, वह कौन है ? जिससे पहिले यह जगत् उत्पन्न हुआ है, उसका मेरे सामने विस्तारपूर्वक वर्णन करिये ॥११॥ और हे मुने ! जगदीश्वर भगवान् किस २ रूपसे युग २ में धर्मको करते हैं, ये मुझसे कहिये॥१२॥ तब सांदीपनि बोले कि, हे यदूद्वह ! जिससे इस जगत्की उत्पत्ति और प्रलय होती है वह परब्रह्म भगवान् ईश्वर एकही है ॥ १३ ॥

हे नृपश्रेष्ठ दक्षादिक सब प्रत्येक युगमें उत्पन्न होते हैं,और फिर लय हो जाते हैं, विद्वान् पुरुष इसमें कभी मोहित नहीं होते हैं ॥१४॥ हे राजन् ! ये कृष्णही परब्रह्म हैं, जिनसे यह जगत् उत्पन्न हुआ जो जगद्रूप हैं, और जिनमें जगत् है, अन्तमें भी यह जगत् इनमेंही लीन हो जायगा ॥१५॥ वह ब्रह्म परंधाम परंपद कार्य कारणसे परे है, और यह सब चराचर जगत् जिनसे पृथक् नहीं है ॥१६॥ वही मूल प्रकृति है, वही व्यक्त (प्रत्यक्ष) रूप जगत् है, उसीमें सब लय होकर स्थित रहते हैं, ॥१७॥ प्रकृति पुरुष जिनसे उत्पन्न हुये हैं, जिनसे यह चराचर जगत् हुआ है, जो इन सबके कारण हैं वे कृष्ण मुझपर प्रसन्न होवें ॥१८॥ स्थिति रूप व्यापारको करनेवाले चारों युगोंमें विष्णुही हैं, और हे राजेन्द्र ! वे जैसे युग व्यवस्था करते हैं, उसको तुम सुनो ॥१९॥ सत युगमें कपिलादिक स्वरूपको धारण कर सब प्राणियोंके हितमें रत प्राणियोंकी आत्मा भगवान् विष्णु परम ज्ञानको देते हैं ॥२०॥

युगेयुगेभवंत्येतेदक्षाद्यानृपसत्तम ॥ पुनश्चैवनिरुद्ध्यंतेविद्वाँस्तत्रनमुह्यति ॥१४॥ राजन्कृष्णः परंब्रह्मयतःसर्वमिदंजगत्॥जगच्चयोयत्रचेदंयस्मिँश्चलयमेष्यति ॥ १५ ॥ तद्ब्रह्मपरमंधामसदसत्परमंपदम् ॥ यस्यसर्वमभेदेनजगदेतच्चराचरम् ॥१६॥सएवमूलप्रकृतिर्व्यक्तरूपीजगच्चसः ॥ तस्मिन्नेवलयंसर्वंयातितत्रैवतिष्ठति ॥१७॥ यतः प्रधानपुरुषौयतश्चैतच्चराचरम् ॥ कारणंसकलस्यास्यसमेकृष्णःप्रसीदतु॥१८॥ चतुर्युगेप्यसौविष्णुःस्थितिव्यापारलक्षणः ॥ युगव्यवस्थांकुरुतेयथाराजेन्द्रतच्छृणु ॥१९॥कृतेयुगेपरंज्ञानंकपिलादिस्वरूपधृक्॥ददातिसर्वभूतात्मासर्वभूतहितेरतः ॥ २० ॥ चक्रवर्त्तिस्वरूपेणत्रेतायामपिसप्रभुः ॥ दुष्टानांनिग्रहंकुर्वन्परिपातिजगत्त्रयम् ॥२१॥ वेदमेकंचतुर्भेदंकृत्वासशतधाविभुः ॥ करोतिबहुलंभूयोवेदव्यासस्वरूपधृक् ॥२२॥ वेदाश्चद्वापरेन्यस्यकलेरंतेपुनर्हरिः ॥ कल्किस्वरूपीदुर्वृत्तान्मार्गेस्थापयतिप्रभुः॥२३॥ एवंकृष्णोजगत्सर्वंजगत्पातिकरोतिच ॥ हंतिचांतेष्वनंतात्मानान्यस्माद्व्यतिरेकतः ॥२४॥ नमोस्तुहरयेतस्मैयस्माद्भिन्नमिदंजगत् ॥ ध्येयःसजगतामाद्यःसप्रसीदतुमेव्ययः ॥२५॥ तस्मान्नृपेंद्रहरिपौत्रमनोमयंचसर्वंविहायजगतश्चसुखंचदुःखम् ॥ मोक्षप्रदंसुरवरंकिलसर्वदंत्वंद्वारावतीनरपतिंभजकृष्णचंद्रम् ॥ २६ ॥

वेही चक्रवर्ती स्वरूपसे त्रेता युगमें दुष्टोंका निग्रह करते हुये तीनों लोकोंका पालन करते हैं ॥२१॥ वेही विभु एक वेदके चार भाग करके फिर शतभेद करते हैं, तब वेदव्यासका रूप धारण करते हैं॥२२॥फिर द्वापर युगमें वेदोंका विभाग करते हैं, उसके बाद कलियुगके अन्तमें फिर वेही भगवान् कल्किरूप धारण करके दुष्टता करनेवाले मनुष्योंको सन्मार्ग पर स्थापित करते हैं ॥२३॥ इस प्रकारसे कृष्णही सब जगत्को बनाते हैं फिर वेही पालन करते हैं, फिर अन्तकालमें अनन्तात्मा वेही सबको मारते हैं,वास्तवमें वे सबसे पृथक् हैं ॥२४॥ उन भगवान्को नमस्कार है, जिनसे ये सब जगत् भिन्न हैं, वेही सब लोकोंकी आत्मा हैं वेही ध्यान करने योग्य हैं वे अव्यय भगवान् मुझ पर प्रसन्न होवें ॥२५॥ हे नृपेन्द्र ! हे हरि पौत्र ! इससे मनोमय इस जगत्के सुख दुःखको छोड़कर मोक्षके देनेवाले देव श्रेष्ठ सब वस्तुके देनेवाले द्वारिकेश श्रीकृष्ण चन्द्रकाही केवल तुम भजन करो ॥ २६ ॥

सांदीपनिके कहे हुये हरि श्रीकृष्णके इस वृत्तसारको जो कोई मनुष्य कहता या सुनता है, वह निर्मल बुद्धि मनुष्य भक्तियुक्त होकर कभी आत्म विषयक मोहको नहीं प्राप्त होता है, और वह स्मरण करनेमें भक्तियोग्य होता है ॥२७॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ गर्गजी कहते हैं कि, सांदीपनिके इस कथन को सुनकर आनन्दमें मग्न हुये अनिरुद्धजी अपने मनको श्रीकृष्णके चरणोंमें लगाकर उन मुनिजीसे यह वचन बोले ॥ १ ॥ कि हे विभो ! आपके वाक्योंसे मेरा मोहरूपी शत्रु नष्ट होगया,अब आप अपने पुत्रसहित द्वारिकाको पधारिये ॥ २ ॥ अनिरुद्धजीके वाक्यको सुनकर सांदीपनि मुनि कृष्णके दिये हुये पुत्रको साथ लेकर रथमें बैठकर द्वारिकाको गये ॥३॥तब कृष्णचन्द्र तथा बलरामजीने सांदीपनि मुनिको बड़े आदरसे निवास दिया,और सब यादवोंने तथा उग्रसेनने विधिपूर्वक पूजन किया॥४॥उसके बाद अनिरुद्धने ऋषिके गये

इतिकृष्णस्यहरेश्चवृत्तसारंकथयतियश्चशृणोतिभक्तियुक्तः ॥ सविमलमतिरेतिनात्ममोहंभवतिचसंस्मरणेषुभक्तियोग्यः॥२७॥इतिश्रीमद्गर्गसं-
हितायांहयमेधखंडेवैराग्यकथनंनामत्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ गर्गउवाचः॥ इतीदंवचनंश्रुत्वानिरुद्धस्तुमुदान्वितः ॥ निवेश्यकृष्णपदयोः
स्वमनःप्राहतंमुनिम् ॥ १ ॥ गतःशत्रुश्चमेमोहस्त्वद्वाक्येनासिनाविभो ॥ अद्यत्वंगच्छकृष्णस्यपुरींपुत्रेणसंयुतः ॥ २ ॥ तस्यवाक्यंसमाकर्ण्य
मुदासांदीपनिर्मुनिः ॥ कृष्णदत्तेनपुत्रेणरथस्थोद्वारकांययौ ॥३॥ सपुर्य्यांरामकृष्णाभ्यामादरेणनिवासितः ॥ पूजितोयादवैःसर्वैर्भोजेंद्रेणवि-
धानतः ॥ ४ ॥ अथप्रद्युम्नतनयःश्यामकर्णमहोज्ज्वलम् ॥ स्वर्णशृंखलयाबद्धंमुमोचविजयायच ॥५॥ हयश्चशीघ्रंप्रव्रजन्नृपेंद्रसुरंब्रुवन्राजपुरे
गतःसः ॥ यत्रानुशाल्वोनृपतिश्चराज्यंशाल्वस्यभ्राताकुरुतेचनित्यम् ॥६॥ तत्रैवतुरगंप्राप्तमनुशाल्वोयदृच्छया॥गृहीत्वावाचयामासतत्पत्रंच
प्रहर्षितः ॥ ७ ॥ अभिप्रायंनिरीक्ष्यैवतिरश्चीनेनचक्षुषा ॥ स्वसैनिकान्प्रत्युवाचरुषाप्रस्फुरिताधरः ॥८॥ दिष्ट्यादिष्ट्याशत्रवोमेसर्वेचात्रस-
मागताः ॥ घातयिष्यामितान्सर्वान्यैर्मेभ्राताचमारितः॥९॥ इत्युक्त्वासेनयायुक्तोनिश्चक्रामपुराद्बहिः॥अक्षौहिणीभिर्दशभिस्तृणीकृत्यतुयाद-
वान् ॥ १० ॥ तदैववृष्णयःसर्वेदृष्ट्वासेनांसमागताम् ॥ बाणवर्षांप्रमुंचंतींमुमुचुस्तेशरांश्चवै ॥ ११ ॥

पीछे सोनेकी सांकलोंसे बंधे हुये महोज्ज्वल श्यामकर्ण अश्वको फिर छोड़ा ॥५॥ तब हे नृपेन्द्र ! वह अश्व चलता २ राजेन्द्र उग्रसेनके प्रतापको कहता २ राजपुरमें गया,जहाँ शाल्व राजाका भाई अनुशाल्व नामक राजा राज्य करता था॥६॥तब वहाँ गये हुये अश्वको अनुशाल्वने पकड़कर प्रसन्न होकर उसने अश्वके माथेमें जो पत्र लिखा था,उसको पढ़वाया ॥७॥ तब अभिप्राय समझकर क्रोधसे उसके होठ (ओंठ) फड़कने लगे,और वह अपनी सेनाके वीर पुरुषोंसे बोला ॥ ८ ॥ कि आज बड़े सौभाग्यकी बात है,कि जो मेरे शत्रु हैं,वे अपने आपही यहाँ आगये हैं, इन सभीको जिन्होंने मेरा भाई मरवा डाला था, आज मैं मारूँगा ॥ ९ ॥ ऐसे कहकर अपनी दश अक्षौहिणी सेनाको साथ लेकर यादवोंको एक तिनकेकी बराबर समझकर नगरके बाहिर निकला ॥ १० ॥ उसी समय सब यादव भी बाणोंकी वर्षा करती आई हुई उसकी सेनाको देखकर उसके ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगे॥११॥

तब दोनों सेनाओंका खङ्ग, बाण, गदा, शक्ति, और भिंदिपालोंसे संग्राम होने लगा ॥१२॥ तब महाबली राजा अनुशाल्व भगती हुई अपनी सेनाको रोककर गर्जता हुआ रथमें बैठकर आया ॥१३॥ अनुशाल्वको आया हुआ देखकर श्रीकृष्णका पुत्र दीप्तिमान् उससे युद्ध करनेके लिये सामने आया ॥ १४ ॥ तब दीप्तिमानको सामने आया हुआ देखकर अनुशाल्वने कुपित होकर उसके दश बाण मारे, जैसे द्वीपी अपने नखोंसे हाथीको मारता है ॥ १५ ॥ उन बाणोंसे ताडन किये हुये दीप्तिमान्ने उसी समय अपनी रुधिराक्षत बाहुसे धनुषको लेकर क्रोधसे बाण ग्रहण किये ॥ १६ ॥ उन बाणोंको धनुषमें लगाकर छोड़े, तब वे बाण अनुशाल्वके शरीरको भेदन करके हे राजन् ! ऐसे निकल गये ॥ १७ ॥ जैसे तृणगृह (वल्मीक) में सहसा गरुड़ प्रवेश करे, उन बाणोंसे युद्धमें अनुशाल्व मूर्च्छित होगया ॥ १८ ॥ तब जिनके क्रोधसे होठ (ओंठ) फड़कने लगे ऐसे उसके सब सैनिकों

उभयोःसेनयोर्युद्धंततःसमभवन्मृधे॥ खड्गैर्बाणैर्गदाभिश्चशक्तिभिर्भिंदिपालकैः॥१२॥पलायमानांस्वांसेनामनुशाल्वोमहाबलः ॥ वारयित्वा नदन्युद्धेचाजगामरथेनवै ॥१३॥ तमागतंविलोक्याथदीप्तिमान्कृष्णनन्दनः ॥ तेनसार्द्धंरणंकर्त्तुंतदैवसंमुखेऽभवत् ॥१४॥ दीप्तिमंतंरणेवीक्ष्य धनुषादशभिःशरैः ॥ तताडामर्षितःसोपिद्विपंद्वीपीनखैरिव ॥१५॥ ताडितस्तैःशरौघैस्तुरुधिराक्षतबाहुना ॥ नीत्वाशरासनंसद्योबाणाञ्जग्राह रोषतः ॥ १६ ॥ निधायकिलकोदंडेदशबाणान्सुमोचह ॥ तेशरास्तच्छरीरंवैभित्त्वाराजन्बहिर्गताः ॥ १७ ॥ यथातृणगृहंराजन्सहसापन्नगाशनाः॥तैर्बाणैर्निहतोयुद्धेनुशाल्वोमूर्च्छितोभवत् ॥ १८ ॥ ततस्तत्सैनिकाःसर्वेरुषाप्रस्फुरिताधराः ॥ दीप्तिमंतंरणेजघ्नुश्चित्रशस्त्रैःशरैरपि ॥ १९ ॥ तत्रागत्यहरेःपुत्रोभानुःसर्वान्त्रिपून्छरैः ॥ नीहाराभ्रान्भानुरिवछिन्नभिन्नांश्चकारह ॥२०॥ ततश्चदुद्रुवुःसर्वेऽनुशाल्वस्यतुसैनिकाः ॥ तदैवतस्यमंत्रीवैप्रचण्डोनामरोषतः ॥ २१ ॥ शक्त्याजघानसमरेसत्यभामात्मजंनृप ॥ भानोश्चहृदयंभित्त्वासाविवेशमहीतले॥२२॥सचापि मूर्च्छितोभूत्वानिपपातरथाद्रणे ॥ सएवंकौतुकंवीक्ष्यसांबस्तत्ररुषाज्वलन् ॥२३॥ शीघ्रंगृहीत्वाकोदंडमाजगामरथेनवै ॥ प्रचण्डस्यरथंसांबः सतुरंगंससारथिम् ॥ २४ ॥ सध्वजंशतबाणैश्चसर्वंचूर्णंचकारह ॥ रथेभग्नेगदांनीत्वाप्रचण्डोरणदुर्मदः ॥ २५ ॥

ने अनेक प्रकारके बाण मारे ॥ १९ ॥ तब तो भगवान्‌के पुत्र भानुने आकर सब शत्रुओंको बाणोंके मारे ऐसे उड़ा दिया, जैसे मेघ समूहको पश्चिमका पवन उड़ा देता है॥२०॥ तब तो अनुशाल्वके सब सेनाके मनुष्य भाग गये, तब अनुशाल्वके प्रचण्ड नामक मन्त्रीने बड़े क्रोधसे ॥ २१ ॥ भानुके ऊपर शक्तिसे प्रहार किया, वह शक्ति भानुके हृदयके पार होकर प्रवेश कर गई ॥ २२ ॥ तब भानु मूर्च्छित होकर रथसे पृथ्वीमें गिर गया, तब उस कौतुकको देखकर साम्ब अग्निकी तरह जलने लगा ॥ २३ ॥ और शीघ्रतासे धनुषको लेकर रथमें बैठकर आया, और आकर घोड़े और सारथीसहित प्रचण्डके रथको ॥ २४ ॥ ध्वजसहित सौ बाणोंसे चूर्ण करके गिरा दिया, तब रणमें बड़ा दुर्मद प्रचण्ड रथको चूर्ण हुआ देखकर गदाको लेकर ॥ २५ ॥

अपने शत्रु साम्बको मारनेके लिये आया,जैसे पतंग अग्निके सन्मुख आता है,तब प्रचण्डको आते हुये देखकर चन्द्रमा तथा सूर्यके समान जिसका तेज ॥ २६ ॥ ऐसे एकही बाणसे साम्बने प्रचण्डका मस्तक काट डाला,हे नृपेश्वर! तब प्रचण्डकी सेनामें बड़ा भारी हाहाकार मचा ॥ २७ ॥ इतनेमेंही अनुशाल्व एक मुहूर्त पीछे मूर्च्छाको छोड़कर जब उठा, तब अपने प्रचण्ड मन्त्रीको मरा हुआ देखा,जिसको साम्बने युद्धमें मारकर गिरा दिया था॥२८॥उसको देखकर रथमें बैठकर धनुषको उठा कर खड्ग जिसके परतलेमें ऐसे उस अनुशाल्वने कवच पहिनकर चार बाणोंसे साम्बके चारों घोड़े ॥ २९ ॥ दो बाणोंसे ध्वजापताका,तीन बाणसे सारथी,पांच बाणोंसे धनुष,और तीस बाणोंसे रथ,इनको मारकर चूर चूरकर डाले ॥३०॥ तब जाम्बवती सुत साम्ब जिसका धनुष कट गया,रथ जिसका चूर होगया,घोड़े जिसके मर गये,सारथी जिसका मर गया ऐसा वह दूसरे रथमें बैठकर शोभित हुआ ॥३१॥ तब फिर धनुष हाथमें लेकर क्रोधित साम्बने सौ बाण शत्रुके मारे, जैसे सर्पके ऊपर गरुड़ प्रहार करता है॥३२॥तब अनुशाल्वके रथकाभी चूर्ण होगया,घोड़े भी मर गये,

आजगामरिपुंहंतुंपतंगइवपावकम् ॥ आगतंतंविलोक्याथचन्द्रार्काकारवर्चसा ॥ २६ ॥ शरेणैकेनसांबस्तुजहारतच्छिरोमृधे ॥ हाहाकारस्तदैवासीत्तत्सेनायांनृपेश्वर ॥ २७ ॥ अथोत्थितोनुशाल्वस्तुमूर्च्छांत्यक्त्वामुहूर्ततः ॥ ददर्शमंत्रिणंतत्रसांबेननिहतंमृधे ॥२८॥ निरीक्ष्यरथमारुह्यधन्वीखड्गीचदंशितः॥शिलीमुखैश्चतुर्भिश्चसांबस्यचतुरोहयान्॥२९॥द्वाभ्यांकेतुंत्रिभिःसूतंपंचभिश्चशरासनम्॥ त्रिंशद्भिश्चशरैर्यानंजघानसमरेनृपः ॥ ३० ॥ सच्छिन्नधन्वाविरथोहताश्वोहतसारथिः ॥ रथंचान्यंसमारुह्यरेजेजांबवतीसुतः ॥३१॥ ततोगृहीत्वाकोदंडंशतबाणैरमर्षितः ॥ तताडसरिपुंयुद्धेसर्पंपक्षेर्यथाविराट् ॥ ३२ ॥ यानस्तस्यापिभग्नोभूत्तुरगाःपंचतांगताः ॥ सूतोमृत्युंगतोयुद्धेनुशाल्वोमूर्च्छितोभवत् ॥३३॥ ततस्तत्सैनिकाःसर्वैंगृध्रपक्षैःस्फुरत्प्रभैः ॥ आशीविषसमैर्बाणैःसांबंजघ्नूरुषान्विताः ॥३४॥ सांबमेकंरणेवीक्ष्यमधुःकृष्णसुतोरुषा॥ पारावतसमेनापिहयेनागतवान्मृधे ॥ ३५ ॥ साकंसांबेनतान्सर्वान्निस्त्रिंशेनरिपून्खलान् ॥ प्रहरार्द्धेनराजेन्द्रमारयन्विचचारह ॥ ३६ ॥ ततोनुशाल्वउत्थायदृष्ट्वास्वस्यपराजयम् ॥ सलिलेनशुचिर्भूत्वाहंतुंसर्वान्मनोदधे ॥ ३७ ॥ ब्रह्मास्त्रंसंदधेरोषान्मयदैत्येनशिक्षितम् ॥ अजानन्तस्तुनाशंचसंप्राप्तेप्राणसंकटे ॥ ३८ ॥

और सारथी मर गया, उसके बाद शाल्व मूर्च्छित हो गया॥३३॥तब तो अनुशाल्वकी सेनाके सभी सैनिक बड़े तीखे गृध्रके पंखके, प्रकाश वाले, सर्पके जैसे जिनके आकार ऐसे बाणोंसे साम्बको मारने लगे ॥३४॥ तब रणमें अकेले साम्बको देखकर कृष्णका पुत्र मधु क्रोधित होकर कबूतरके रंगके घोड़ेपर सवार होकर संग्राममें आया ॥ ३५ ॥ साम्बके साथमें वह उन सब दुष्टोंको आधे प्रहर (पौने चार घड़ी) से खड्गसे मारता हुआ विचरने लगा ॥ ३६ ॥ तब अनुशाल्व मूर्च्छासे उठा, और अपनी पराजय देखकर जलको स्पर्श करके अपने आपको पवित्र करके यह विचार किया कि मैं सबको मारूँगा ॥ ३७ ॥ यह विचार कर मय दैत्यसे सीखे हुये ब्रह्मास्त्रको क्रोधके मारे धनुषमें लगाया, परन्तु वह उस अस्त्रकी शान्तिको नहीं जानता था, केवल अपने प्राण बचानेके लिये धनुषमें संधान किया ॥ ३८ ॥

तब तो ब्रह्मास्त्रका वह दारुण तेज तीनों लोकोंको नाश करता हुआ बारह सूर्यके समान अन्तरिक्षमें फैल गया ॥३९॥ उस शस्त्रके तेजसे सब यादव भस्म होने लगे,तब भयभीत होकर पुकारते हुये अनिरुद्धके पास आये,कि हे नृहरे ! हे महात्मन् ! इस प्राणान्त कष्टसे हमारी रक्षा करिये॥४०॥तब हे राजन् ! उस वीर रुक्मवती सुत अनिरुद्धने अभय देकर अपने ब्रह्मास्त्रसे उस ब्रह्मास्त्रको संग्राममें कुपित होकर शान्तकर दिया॥४१॥तब ऐसे अनिरुद्धके ब्रह्मास्त्रको शान्तकर देनेके बाद अनुशाल्वने अपना आग्नेयास्त्र छोड़ा,जिससे आकाश अग्निसे व्याप्त होगया,और खाण्डव वनकी तरह ज्वालाओंसे पृथ्वी जलने लगी ॥४२॥तब बलवान् अनिरुद्धने वारुणास्त्रका प्रयोग किया,जिससे प्रचण्ड मूसलाधार पानी वर्षने लगा, और सब अग्नि शान्त होगई ॥४३॥ तब मेघोंके गर्जनेसे पानीके वर्षनेसे मोर, मेंडक, कोकिल, और सारसादिक वर्षा ऋतुको आई हुई जानकर बड़े आनंदित हुये ॥ ४४ ॥ तब

तस्यापिदारुणंतेजोत्रीँल्लोकान्प्रदहन्महत् ॥ चचारह्यंतरिक्षेचद्वादशादित्यसन्निभम् ॥३९॥ तत्तेजसादुर्विषहेणसर्वेसंदह्यमानायदवश्चभीताः ॥
प्राद्युम्निपार्श्वंप्रययुर्ब्रुवन्तोरक्षस्वदुःखान्नृहरेमहात्मन् ॥ ४० ॥ ततःकृत्वाऽभयंराजन्वीरोरुक्मवतीसुतः ॥ ब्रह्मास्त्रेणतुब्रह्मास्त्रंजहारप्रधनेरुषा
॥ ४१ ॥ वह्न्यस्त्रंसोपिचिक्षेपवह्निनापूरितंनभः ॥ दह्यमानाचभूस्तत्रज्वालाभिरिवखांडवम् ॥ ४२ ॥ ततोनिरुद्धोबलवान्वारुणास्त्रंपुनर्दधे॥
प्रचंडमेघधाराभिर्वह्निःशीतलतांगतः ॥ ४३ ॥ मण्डूकाःकोकिलाश्चैवमयूराःसारसादयः ॥ प्रत्यनंदन्महामेघैर्वर्षाज्ञात्वापुनःपुनः॥४४॥ततो
नुशाल्वोमायावीपवनास्त्रंसमादधे ॥ दृष्ट्वानिरुद्धोयुयुधेपर्वतास्त्रेणसर्वतः ॥४५॥ ततोभारसहस्राढ्यांनीत्वासोपिगदांमृधे ॥ अनिरुद्धंशूरमणिं
क्रुद्धोवचनमब्रवीत् ॥ ४६ ॥ त्वत्सैन्येनास्तिराजेंद्रगदायुद्धविशारदः ॥ यदिचास्तितर्हिमह्यंतंतुशीघ्रंप्रदर्शय ॥४७॥ इतितद्वाक्यमाकर्ण्यग-
दाधारीगदोमहान् ॥ उवाचचाग्रतोभूत्वानिरुद्धस्यप्रपश्यतः ॥ ४८ ॥ अत्रैवबहवःसंतिसर्वशस्त्रविशारदाः ॥ मानंमाकुरुदैत्येंद्रत्वमेकाकी
रणेऽसिहि ॥ ४९ ॥ नमन्यसेत्वंमद्वाक्यंमयासाकंरणेऽसुर ॥ कुरुपूर्वंगदायुद्धंततोन्यान्द्रष्टुमर्हसि॥५०॥इत्युक्त्वासगदांनीत्वालक्षभारम-
यींदृढाम् ॥ तथाऽनुशाल्वंजघ्नेतुमूर्ध्निवक्षस्थलेनृप ॥ ५१ ॥

तो मायावी अनुशाल्वने पवनास्त्रको (वायुके अस्त्रको) चलाया, उसको देखकर अनिरुद्धने पर्वतास्त्रका प्रयोग किया ॥ ४५ ॥ तब अनुशाल्व एक हजार भारकी गदाको लेकर शूर शिरोमणि अनिरुद्धके सामने आकर यह बोला ॥ ४६ ॥ हे राजेन्द्र ! तुम्हारी सेनामें गदायुद्धमें निपुण कोई नहीं है,यदि कोई हो,तो उसको मुझे दिखाओ ॥४७॥ अनुशाल्वके इस कथनको सुनकर गदाको लिये हुये गद नामक बलदेवजीका छोटा भाई अनिरुद्धके देखतेर अनुशाल्वके सामने आकर यह वचन बोला॥४८॥कि अरे मूर्ख ! हमारी सेनामें गदा युद्धादि सब शस्त्र युद्धके ज्ञाता बहुतसे हैं, तू यह अभिमान मत कर कि मैं एकही हूँ ॥ ४९ ॥ यदि हे असुर ! मेरे कथनको नहीं मानता है, तो आज मेरे साथ पहिले गदायुद्ध कर, फिर दूसरोंसे युद्ध करना ॥ ५० ॥ ऐसे कहकर गदने एक लक्ष भारकी बड़ी दृढ़ गदाको लेकर अनुशाल्वके शिरमें और वक्षस्थलमें प्रहार किया ॥ ५१ ॥

फिर अनुशाल्वने संग्राममें गदको गदा मारी, इस तरह ये दोनों क्रोधमूर्च्छित होकर परस्पर प्रहार करने लगे ॥ ५२ ॥ तब गदने अनुशाल्वको उठाकर आकाशमें फेंक दिया, फिर सौ बार घुमाकर अनुशाल्वको पृथ्वीमें गिरा दिया ॥५३॥ तब तो अनुशाल्वने उठकर गदको पकड़कर हे राजेन्द्र ! पृथ्वीमें मारा, यह एक आश्चर्यकी तरह हुआ ॥५४॥ तब गदने एक हाथीको उठाकर अनुशाल्वके ऊपर फेंका, तब अनुशाल्वने उसी हाथीको पकड़कर गदके ऊपर फेंककर मारा ॥ ५५ ॥ फिर घुटनोंसे, भयंकर घूंसोंसे, दोनों आपसमें प्रहार करने लगे, और मर्दित हुये वे दोनों मूर्च्छित होकर पृथ्वीमें गिर पड़े ॥ ५६ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखंडे भाषाटीकायां चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥ गर्गजी कहते हैं कि, इस प्रकार दोनोंके युद्धको देखकर यादव और शत्रुसैन्यके योधा आपसमें कहने लगे कि, गद और अनुशाल्व दोनों ही धन्य हैं ॥ १ ॥ इस तरह सब कोई कह रहे थे कि इतनेमें ही

अनुशाल्वस्तुगदयाजघानसमरेगदम् ॥ ततोन्योन्यंगदाभ्यांचजघ्नतुःक्रोधमूर्च्छितौ ॥ ५२ ॥ ततोगदःसमुत्थाप्यानुशाल्वंगगनेऽक्षिपत् ॥ भ्रामयित्वाशतगुणंनिपपातमहीतले ॥ ५३ ॥ ततोनुशाल्वउत्थायगृहीत्वारोहिणीसुतम् ॥ भूमौममर्दराजेंद्रतदद्भुतमिवाभवत् ॥ ५४ ॥ गदो गजंगृहीत्वैकमनुशाल्वोपरिचाक्षिपत् ॥ तमायांतंगजंनात्वाचिक्षेपसबलानुजे ॥५५॥ जानुभिर्मुष्टिभिर्घोरैःप्रहारैस्तौचजघ्नतुः ॥ मर्दितौताबुभौमह्यांपतितौमूर्च्छनांगतौ ॥ ५६ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेराजपुरविजयोनामचतुर्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २४ ॥ गर्गउवाच ॥ ॥ एवंदृष्ट्वातयोर्युद्धंयादवाःपरसैनिकाः ॥ ऊचुःपरस्परंधन्योनुशाल्वस्तुगदोमहान् ॥१॥ इतिब्रुवत्सुसर्वेषुगदस्तत्रैवचोत्थितः ॥ क्वगतःक्वगतः शत्रुर्हत्वामांचब्रुवन्रणात् ॥ २ ॥ ततोनुशाल्वंहस्तेनगृहीत्वाकृष्यरोषतः ॥ अनिरुद्धस्यनिकटेपातयामासवेगतः ॥३॥ पतितंमूर्च्छितंदृष्ट्वाह्य- निरुद्धस्त्वधोमुखम् ॥ कारयामासचैतन्यंव्यजनैःसलिलेनच ॥४॥ तदैवसप्रबुद्धोभूदनुशाल्वोऽसुरेश्वरः ॥ दृष्ट्वाग्रेसुन्दरंसोपिकृष्णपौत्रंघनप्र- भम् ॥५॥ नत्वाप्रत्याहवचनंत्वंतुमेप्राणरक्षकः ॥ अनिरुद्धहरेः पौत्रअपराधंक्षमस्वतत् ॥६॥ ॐ नमोवासुदेवायनमःसंकर्षणायच ॥ प्रद्युम्ना- यनमस्तुभ्यमनिरुद्धायतेनमः ॥ ७ ॥ गृहाणवैतुरंगंतमहंयास्यामिपालयन् ॥ इत्युक्त्वास्वपुरंगत्वाददौतस्मैतुरंगमम् ॥८॥ अयुतंहस्तिनांचैव हयानांनियुतं तथा ॥ अर्द्धलक्षंरथानांचशिबिकानांसहस्रकम् ॥९॥

पहिले गद "मुझको मारकर युद्धमेंसे मेरा शत्रु कहाँ गया ? कहाँ गया ? ऐसे कहते हुए उठ बैठे ॥ २ ॥ उसके बाद अनुशाल्वको हाथसे पकड़कर क्रोधपूर्वक खेंचकर अनिरुद्धके पास वेगसे डाल दिया ॥ ३ ॥ तब मूर्च्छित होकर पृथ्वीमें गिरे हुये नीचेको मुख हुये अनुशाल्वको पंखेसे वायु करके आंखोंमें जल लगाकर अनिरुद्धने सावधान किया ॥ ४ ॥ तब वह असुरेश्वर सावधान हुआ, और सामने मेघके समान सुन्दर अनिरुद्धको देखकर ॥ ५ ॥ प्रणाम करके बोला कि, आप तो मेरे प्राणोंके रक्षक हैं, हे अनिरुद्ध ! हे कृष्णके पौत्र ! मेरे अपराधको क्षमा करिये ॥६॥ वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, और आप अनिरुद्ध इन चतुर्मूर्ति आपको नमस्कार है, नमस्कार है, नमस्कार है ॥७॥ हे महाराज ! आप घोड़ेको ग्रहण करिये मैं घोड़ेकी रक्षा करता हुआ आपके साथ चलूँगा, ऐसे अपने नगरमें जाकर घोड़ा भेंट किया ॥८॥ और दश हजार हाथी, दश लाख घोड़े, पचास हजार रथ, एक हजार पालकी ॥९॥

एक हजार ऊँट, एक हजार वनगाय (रोज), और पिजड़ेमें बन्द दो हजार सिंह ॥ १० ॥ एक हजार शिकारी कुत्ते, एक हजार शिविर (तम्बूकनात) दश हजार बाजे ॥११॥ दश हजार चिक (पर्दे) एक लाख गौ, हजार भार सुवर्ण, चार हजार भार चांदी ॥१२॥ और एक भार मोती, ये सब राजाने अनिरुद्धको भेंट किये, और अनिरुद्धने उसको प्रसन्नतासे एक मणिहार दिया ॥१३॥ तब वह अनुशाल्व भी अपने श्रेष्ठ मन्त्रीको राज्य भार देकर यादवोंके साथ दूसरे देशोंको गया ॥ १४ ॥ उसके बाद मणि और सुवर्णसे शृंगार किया हुआ वह अश्व आगे बढ़ा, और वह बडे वीरोंसे युक्त दूसरे अनेक देशोंको देखता हुआ पृथ्वीमें भ्रमण करने लगा ॥ १५ ॥ तब अनुशाल्व, यौवनाश्व और भीषण राक्षस इन तीनोंको पराजित हुये सुनकर जितने और खण्ड मण्डलेश्वर राजा थे, उन्होंने किसीने भी घोडेको नहीं पकडा ॥१६॥ हे विशांपते ! इस प्रकार घूमते हुये उस अश्वको छः महीने

ऊष्ट्राणांहिसहस्रंचगवयानांसहस्रकम् ॥ पंजरेसंस्थितानांचसिंहानांद्विसहस्रकम् ॥१०॥ मृगयासारमेयाणांसहस्रंनृपसत्तम ॥ शिबिराणांसहस्रंचशिञ्जिनांनियुतंतथा ॥ ११ ॥ जवनिकानामयुतंधेनूनांलक्षमेवच ॥ सहस्रभारंस्वर्णानांरजतानांचतुर्गुणम्॥१२॥मुक्तानांभारमेकंचानिरुद्धायददौनृपः ॥ अनिरुद्धस्ततस्तस्मैमणिहारंददौमुदा ॥१३॥ अनुशाल्वःस्वराज्येतुकृत्वावैसचिवंवरम् ॥ यादवैःसहितःसोपिदेशानन्याञ्जगामह ॥ १४ ॥ ततोविमुक्तस्तुरगोमणिकांचनभूषितः ॥ देशानन्यान्वीरयुक्तान्पश्यन्बभ्रामभूपते ॥१५॥ अनुशाल्वंजितंश्रुत्वायौवनाश्वंच भीषणम् ॥ राजानोऽन्येमंडलेशाःप्राप्तंनजगृहुर्हयम् ॥१६॥ इत्येवंभ्रमतस्तस्यतुरगस्यविशांपते ॥ मासाश्चप्रगताःषड्वैताहशाश्चावशेषिताः ॥ १७ ॥ हयोमणिपुरेशेनगृहीतश्चविमोचितः ॥ तथारत्नपुरेशेनह्यनिरुद्धभयान्नृप॥१८॥राष्ट्रान्सर्वान्शूरांश्चविहायतुरगोत्तमः ॥ ययौप्राचींदिशंराजन्बल्वलोयत्रदैत्यराट् ॥१९॥ सोपिदैत्योहयस्यापिवार्तांश्रुत्वाचनारदात् ॥ यज्ञंशीघ्रंनाशयित्वानैमिषाच्चाजगामह॥२०॥स्थितंत्रिवेण्यांसलिलंपिबंतंप्रयागतीर्थेक्रतुवाहनंच ॥ विलोक्यराजन्किलबल्वलाख्योजग्राहशीघ्रंह्यगणय्यकृष्णम् ॥ २१ ॥ तदैववृष्णयःसर्वेदंडकंचव्यलोकयन् ॥ चर्मण्वतींसमुत्तीर्यचित्रकूटंसमाययुः ॥२२॥ रामक्षेत्रेचदानानिकृत्वाश्वंचावलोकयन् ॥तस्यापिपृष्ठतोलग्नाआजग्मुस्तीर्थंवासवम् ॥ २३ ॥ ददृशुस्तत्रतुरगंसपत्रंयदुसत्तमाः ॥ गृहीतंस्वबलाद्राजन्नसुरेणदुरात्मना ॥ २४ ॥

बीत गये और छः ही बाकी रहे ॥१७॥ उसके बाद मणिपुर पतिने अश्वको पकड़ा और फिर छोड़ दिया, वैसे ही रत्नपुरके राजाने घोड़ेको पकड़कर अनिरुद्धके भयसे छोड़ दिया ॥१८॥ऐसे शूरवीरोंसे रहित सब देशोंको छोड़कर वह अश्वोत्तम पश्चिम दिशामें पहुँचा, जहाँ बल्वल नामक दैत्यराज निवास करता था ॥१९॥ तब वह दैत्य घोड़ेकी बातको नारदसे सुनकर शीघ्रही यज्ञको नष्ट करके नैमिषारण्यसे आया ॥२०॥ और त्रिवेणीके जलको पीते हुये यज्ञके घोडेको देखकर बल्वल दैत्यने श्रीकृष्णकी कोई चिन्ता नहीं करके घोड़ेको पकड़ लिया ॥ २१ ॥ तब सब यादव दण्डकारण्यको देखते हुये चम्बल नदीको पार करके चित्रकूटको गये ॥ २२ ॥ तब रणक्षेत्रमें दान करके अश्वको देखते हुये घोड़ेके पीछे पीछे लगे इन्द्रतीर्थमें आये ॥ २३ ॥ वहाँ यदुश्रेष्ठोंने पत्रसहित अश्वको देखा, जिसको दुष्ट अन्तःकरण वाले बल्वल नामके असुरने पकड़ रखा था ॥ २४ ॥

तब वे यादव बल्वलको देखकर नील अञ्जनके समान, दो योजन ऊँचे शरीरवाले, और अंगारके समान नेत्रवाले ॥२५॥ तपे हुये ताम्रके जैसी चोटी व दाढ़ीवाले, दंष्ट्रा (दाढ़) से उग्र भृकुटी और मुखवाले, ब्राह्मणोंके द्रोही, लपलपाती हुई जीभ और दश हजार हाथियोंके समान बलवाले ॥२६॥ उस बल्वलको क्रोधसे जिनके ओंठ(होठ) फड़क रहे ऐसे यादव बोले कि रे ! तू कौन है. हमारे यज्ञके घोड़ेको लेकर तूं कहाँ जायगा ॥२७॥ इससे घोड़ेको छोड़ दे, नहीं तो तुमको हम मार डालेंगे, यह सुनकर असुरने कहा कि, हे मनुष्यो ! मेरे कथनको सुनो ॥२८॥ बल्वल बोला कि, मैं देवताओंको दुःख देनेवाला बल्वल नामक दैत्य हूँ, जिसके सामने सब मनुष्य भय विह्वल रहते हैं ॥२९॥ इतना सुनकर यादव बल्वलको बाणोंसे मारने लगे, तब यादवोंके प्रहारके मारे वह बल्वल घोड़ेके समेत अन्तर्धान होगया ॥३०॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां पंचविंशोऽध्यायः ॥२५॥ गर्गजी कहते हैं कि,तब सब यादवगण यज्ञके अश्वको गया हुआ देखकर शोकमें मग्न होगये कि, कहाँ जायँ ? और क्या करें ? ॥ १ ॥ जब अनिरुद्धादिक सभी

ततस्तेबल्वलंदृष्ट्वानीलांजनचयोपमम् ॥ योजनद्वयमुच्चांगमुग्रमंगारलोचनम् ॥२५॥ तप्तताम्रशिखाश्मश्रुदंष्ट्रोग्रभ्रुकुटीमुखम् ॥ ब्रह्मद्रुहंललज्जिह्वंगजायुतसमंबलम् ॥ २६ ॥ तमूचुर्यादवारोषात्स्फुरिताधरपल्लवाः ॥ कस्त्वंयज्ञपशुंनीत्वाह्यस्माकंचक्वयास्यसि ॥२७॥ तस्मान्मोचय तंशीघ्रंनचेद्धन्मोरणेचत्वाम् ॥ इतिश्रुत्वासुरश्चाहवचः शृणुतमेनराः ॥ २८ ॥ बल्वलउवाच ॥ अहंतुबल्वलोदैत्योदेवानांदुःखदायकः ॥ यस्याग्रेमानुपाःसर्वेभवंतिभयविह्वलाः ॥ २९ ॥ इतिश्रुत्वाचयदवोजघ्नुर्बाणैश्चबल्वलम् ॥ सहतस्तैश्चसहसासहयोंतर्दधेनृप ॥ ३० ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेबल्वलेनतुरंगहरणंनामपंचविंशतितमोऽध्यायः ॥ २५ ॥ गर्गउवाच ॥ अथसर्वेयदुर्गणागतेक्रतुपशौनृप ॥ शोकंचक्रुःक्वगच्छामःकरिष्यामश्चकिंभुवि ॥ १ ॥ नतत्प्रतिविधिंसर्वेनिरुद्धाद्याविदुस्ततः ॥ तदानारदरूपीवैभगवानागमन्नृप ॥२॥तमागतंमुनिंदृष्ट्वानिरुद्धोयादवैर्वृतः ॥ पूजयित्वासनेस्थाप्यप्रीतःप्राहमुनीश्वरम् ॥ ३ ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ भगवन्यज्ञतुरगोबल्वलेनदुरात्मना ॥ नीतःकुत्रगतःसर्ववदमेवदतांवर ॥ ४ ॥ त्वंपर्यटन्नर्कइवत्रिलोकींदिव्यदर्शनः ॥ अन्तश्चरोवायुरिवह्यात्मसाक्षीचसर्ववित् ॥ तस्मात्कथयसर्वंमेश्रुत्वासोप्याहमाधवम् ॥ ५ ॥ नारदउवाच ॥ राजंस्तवतुरंगोवैबल्वलेननिवेशितः ॥ ६ ॥ उपद्वीपेपांचजन्येसिंधुमध्येनृपेश्वर ॥ मृतेमित्रेचशकुनौयादवानांवधायच ॥ ७ ॥

यादवोंको कोई उपाय नहीं दीखा,तब नारदरूपी भगवान् आये ॥२॥ तब नारद मुनिको आया हुआ देखकर यादवोंसहित अनिरुद्धने नारदजीका पूजन कर, आसनपर विराजमान कर, प्रसन्न होकर नारदजीसे पूछा कि ॥३॥ हे भगवन् ! हमारे यज्ञके घोड़ेको दुष्ट दैत्य बल्वल न जाने कहाँ ले गया, सो हे वदतांवर ! आप मुझको सब बतलाइये ॥४॥ आप दिव्य दर्शन हो सूर्यकी तरह तीनों लोकोंमें विचरते हुये अन्तश्चर वायुकी तरह आत्माके साक्षी हो, सब कुछ जाननेवाले हो, सो आप मुझसे कहिये, यह सुनकर नारदजी भगवान् अनिरुद्धसे बोले ॥ ५ ॥ नारदजी बोले कि हे राजन्! तुम्हारा घोड़ा बल्वलने समुद्रके भीतर पांचजन्य नामके उपद्वीपमें रखा है, शकुनि नामका दैत्य इसका भाई था, जिसको यादवोंने मार डाला था, इससे उसका बदला लेनेके लिये इसने यह काम किया है ॥ ६ ॥ ७ ॥

वह बल्वल सुतललोकसे दैत्योंको बुलाकर शिवजीके वरदानसे दर्पयुक्त होकर वहाँ राज्य करता है ॥८॥ तब यह वचन सुनकर अनिरुद्धजी शंकित होकर बोले हे महाराज ! शिवजीने बल्वलको क्या वर दिया है ? और हे देवर्षे ! बल्वलने शिवजीको कैसे प्रसन्न किया ? सो आप मुझसे कहिये, तब नारदजी बोले कि, हे राजन् ! आप मेरे वचनको सुनिये ॥९॥१०॥ एक समय वह दैत्य कैलास पर्वतमें जाकर एक पांवसे खड़ा होकर तप करने लगा, सो बारह वर्षतक बड़ा दारुण तप किया ॥११॥ तब शिवजीने प्रसन्न होकर कहा कि वर मांग, यह सुनकर उस दैत्यने कहा कि हे सदाशिव ! आपको प्रणाम है ॥ १२ ॥ हे कृपानिधे ! हे देव ! आप संग्राममें मेरी सदा रक्षा करें, वही वर मांगता हूँ, तब शिवजी ''तथास्तु'' (जैसा तुम कहते हो, वैसाही हो) कहकर अन्तर्धान हो गये, हे नृप ! ॥१३॥ उसके बाद वह दैत्य पांचजन्य उपद्वीपमें बलपूर्वक राज्य करने लगा, सो वह युद्ध किये विना

सुतलाच्चसमाहूयदैत्यवृन्दान्महासुरः ॥ राज्यंकरोतितत्रापिशिवस्यवरदर्पितः ॥८॥ इतिश्रुत्वानिरुद्धस्तुवचःप्रोवाचशंकितः ॥ अनिरुद्ध-उवाच ॥ तस्मैचन्द्रललामेनकिंदत्तंप्रवरंवरम् ॥ ९ ॥ तन्ममाख्याहिदेवर्षेकस्मात्संतोषितोभवत् ॥ ततोबभाषेसमुनिःशृणुराजन्वचोमम ॥ १० ॥ कैलासेचैकदादैत्योह्येकपादेनसंस्थितः ॥ वर्षद्वादशपर्यंतंतपश्चक्रेसुदारुणम् ॥११॥ ततश्चतोषितोदेवोवरंब्रूहीत्युवाचह ॥ तच्छ्रुत्वा सउवाचाथसदाशिवनमोस्तुते ॥ १२ ॥ महामृधेचमांदेवपालयस्वकृपानिधे ॥ तथास्तुचोक्त्वादेवस्तुतत्रैवांतर्दधेनृप॥१३॥सदैत्योपांचजन्यो वैराज्यंचक्रेबलात्ततः ॥ स्वतस्तुभ्यंनतुरगंविनायुद्धेनदास्यति ॥१४॥ अनिरुद्धस्तुप्रोवाचहत्वादुष्टंचबल्वलम् ॥ ससैन्यंचमुनिश्रेष्ठमोचयिष्ये तुरंगमम् ॥१५॥ सशिवस्यवरेणापियदियुद्धंकरिष्यति ॥ नपालयिष्यतिमृधेशिवःकृष्णद्विषंखलम् ॥ १६ ॥ इत्युक्त्वाचानिरुद्धोवैप्रयाणार्थं जयायच ॥ यादवेभ्यश्चसर्वेभ्योसहसाज्ञांचकारह ॥ १७ ॥ ततोनुज्ञाप्यदेवर्षिःयुद्धकौतुकसंयुतः॥ययौचाकाशमार्गेणतत्रस्थानंनृपेश्वर॥१८॥ तदैवयादवाःसर्वेसज्जीभूतारुषान्विताः ॥ स्नात्वाकृत्वाचदानानितीर्थराजेविधानतः ॥ १९ ॥ उपद्वीपंययूराजन्रथिभिश्चगजैर्हयैः ॥ द्विल-क्षामार्गकाराश्चमार्गंचक्रुर्दिनेदिने ॥ २० ॥

अपने आप तुमको यज्ञके घोड़ेको नहीं देगा ॥१४॥ तब अनिरुद्धने कहा कि, दुष्ट बल्वलको सेनासमेत मारूँगा, और अपने घोड़ेको छुड़ाकर लाऊँगा ॥१५॥ यदि वह शिवजीके वरदानसे भी युद्ध करेगा, तब भी कृष्ण द्वेषी इस दुष्टकी शिवजी कभी रक्षा नहीं करेंगे ॥१६॥ इतना कहकर अनिरुद्धने चलनेकी तैयारीकी, और सब यादवोंके लिये बल्वलको जय करनेकी आज्ञा दी ॥१७॥ तब नारदजी इनकी आज्ञा लेकर आकाशमार्गसे युद्धके कौतुक देखनेके लिये हे नृपेश्वर ! युद्ध होनेके स्थानपर गये ॥१८॥ उसी समय सब यादव कुपित होकर तैयार हो गये, और तीर्थराज प्रयागमें स्नान करके और विधानपूर्वक अनेक प्रकारके दान करके॥१९॥हे राजन् ! फिर रथी,हाथीवाले और घुड़सवार सबको लेकर उपद्वीप को गये उस समय दो लाख मार्ग बनानेवाले मजदूर दिन २ मार्ग बनाने लगे ॥ २० ॥

जिस निष्कण्टक मार्गमें हाथी, घोड़े, रथ और मनुष्य सब कोई आनन्दसे चले जायं, ऐसे उपद्वीपके जानेके लिये मार्ग बनाकर इन्होंने पहिलेही तैयार किया, जिस समय यादवोंकी सेना चली, उस समय उसके भारसे पीड़ित हुये शेषजीने अपने मनमें विचार किया ॥ २१ ॥ २२ ॥ कि आज भूमिमें न जाने क्या होगया, हे नृप ! तब सबके आगे अलक्षित होकर अनिरुद्धजीने गमन किया ॥ २३ ॥ उस यज्ञके घोड़ेकी रक्षाके मिष (बहाने) से मानो आजही सब पापियोंका नाश कर देंगे, हे राजन् ! इस प्रकार जहाँ घोड़ेकी रक्षाके लिये अनिरुद्धजी गये ॥२४॥ वहाँ वहाँ सर्वत्र उन्होंने श्रीकृष्णके समग्र यशको सुना, जिन्होंने श्रीकृष्ण और बलरामके यशका निरूपण किया ॥२५॥ उनके लिये अनिरुद्धजीने अनेक रत्न, वस्त्र और आभूषण दिये, जो कुछ और भी अनिरुद्धजीकी सेनामें द्रव्य था ॥२६॥ वह सब अनिरुद्धजीने प्रसन्न होकर दिया, और श्रीकृष्णकी कथाको सुनकर इनका अन्तःकरण बहुत

भिंदिपालैश्चसर्वत्रसेनायाःपूर्वमेवहि ॥ सुखेनयत्रगच्छंतिगजवाजितुरंगमाः ॥२१॥ पदातयश्चराजेंद्रमार्गैनिष्कण्टकेत्वरम् ॥इत्थंतुयदुसेना-याःशेषोभारेणपीडितः ॥२२॥ इतिहोवाचमनसिकिंबभूवधरातले ॥ अनिरुद्धोऽग्रतोभूत्वाऽलक्षितःप्रययौनृप ॥२३॥ हयरक्षापदेशाद्वैनाशय-न्निवपापिनः ॥ यत्रयत्रगतोराजन्हयस्यार्थेचकार्ष्णिजः ॥२४॥ तत्रतत्रोपशृण्वानःश्रीकृष्णस्ययशोखिलम् ॥ श्लाघांयेवैकरिष्यंतिगोविंदबल-देवयोः ॥ २५ ॥ ददौतेभ्यश्चरत्नानिवस्त्राण्याभरणानिच ॥ यत्किंचित्तस्यसैन्येषुवसुमात्रमनुत्तमम् ॥२६॥तत्सर्वमददात्प्रीतःकृष्णगाथाहृ-ताशयः ॥ इत्थंशृण्वन्हरेर्गाथांकाशींपश्यन्गयांतथा ॥२७॥कुर्वन्दानानिराजेन्द्रकाष्ठांप्राचींजगामसः॥इत्थंभयंकरांसेनांयादवानांविलोक्यच ॥ २८ ॥ गिरिव्रजपुराधीशोसहदेवस्तुशंकितः ॥ भूत्वाकृतांजलिर्नीत्वारत्नानिविविधानिच ॥२९॥ अनिरुद्धस्यपदयोःपपातभयविह्वलः ॥ अनिरुद्धस्ततस्तस्मैरत्नमालांददौमुदा ॥ ३० ॥ राज्येकृत्वाचतंशीघ्रंशरणागतवत्सलः ॥ समन्वितोवृष्णिवरैर्जगामकपिलाश्रमम् ॥ ३१ ॥ स्नात्वाचतत्रैवयदुप्रवीरोभागीरथीसागरसंगमेच ॥ विलोक्यसिद्धंकपिलंमुनींद्रंससेनयासोपिनमश्चकार॥३२॥तत्रस्थानाद्दक्षिणस्यांसिंधुतीरेच तस्यवै ॥ बभूवुःशिबिराराजन्नुच्चाःप्रासादसन्निभाः ॥ ३३ ॥

प्रसन्न हुआ, इस प्रकार कृष्णकी कथाको सुनते २ काशीपुरी तथा गयाको देखते हुये ॥२७॥ हे राजन् ! अनेक दानोंको देते देते पूर्व दिशाको गये, तब यादवोंकी उस भयंकर सेनाको देखकर ॥२८॥ गिरिव्रज (गया) के राजा, जरासंधके पुत्र सहदेवको बड़ी शंका हुई, तब वह सहदेव हाथ जोड़कर अनेक प्रकारके रत्नोंको लेकर ॥२९॥ भयभीत होकर अनिरुद्धके पांवोंमें जाकर गिरा, तब अनिरुद्धने बड़ी प्रसन्नतासे रत्नोंकी माला सहदेवको दी ॥ ३० ॥ और उसीको उसके राज्य पर बैठाकर शरणागत वत्सल अनिरुद्ध यादवों सहित कपिल देवके आश्रमको गये ॥ ३१ ॥ तथा गंगा सागर संगममें स्नान करके बड़े सिद्ध मुनीन्द्र कपिलजीके दर्शन करके सब सैन्य सहित उनको नमस्कार किया ॥ ३२ ॥ फिर हे राजन् ! गङ्गासागरके दक्षिणमें समुद्रके तटपर बड़े ऊँचे २ महल मंदिर जैसे हों, ऐसे शिविर लग गये ॥ ३३ ॥

उन शिविरोंमें अनिरुद्धादिक सब यादव अपने भृत्य वर्ग सहित हे राजेन्द्र ! सब वीर जयकी इच्छा करते निवास करने लगे ॥३४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां षड्विंशोऽध्यायः ॥२६॥ गर्गजी कहते हैं कि, उसके बाद यदुराज अनिरुद्धने प्रातःकालके समय उद्धवको बुलाकर हे विशांपते ! बड़ी गम्भीर वाणीसे कहा ॥ १ ॥ हे उद्धवजी!अब बताइये,पांचजन्य यहाँसे कितनी दूर है,जिसमें मेरे यज्ञके घोड़ेको बल्वल दैत्य लेगया है ॥ २ ॥ अनिरुद्धके कथनको सुनकर श्रीकृष्णके प्रिय सखा मन्त्री उद्धवजी मनसे कृष्णके चरणोंका स्मरण करके बोले ॥३॥ कि हे प्रभो ! आप सर्वज्ञ हो,हे भगवन् ! मैं आपके कथनको बड़ा जानकर जो कुछ मार्ग मैंने सुना है,वह आपसे कहता हूँ ॥४॥ तीस योजनके विस्तीर्ण इस सागरके पार दक्षिण दिशामें हे नृपेश्वर ! पांचजन्य नामक उपद्वीप है ॥५॥ उद्धवके कथनको सुनकर धनुष धारियोंमें श्रेष्ठ,बड़े बली धैर्यको धारण करनेवाले अनिरुद्ध

शिबिरेष्वनिरुद्धाद्यायादवास्तत्रसानुगाः ॥ चक्रुर्निवासंराजेन्द्रशूराःसर्वेजयैषिणः ॥३४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेतुरगार्थमुपद्वीपगमनंनामषड्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २६ ॥ गर्गउवाच ॥ अथानिरुद्धोयदुराट्प्रातःकालेविशांपते ॥ उद्धवंतुसमाहूयप्राहगंभीरयागिरा ॥१॥ कतिदूरंपांचजन्यंतन्ममाख्याहिसत्तम ॥ यस्मिन्मदीयोतुरगोनीतोदैत्येनवर्त्तते ॥२॥ इत्युदाहृतमाकर्ण्यमंत्रीकृष्णसुहृत्सखः ॥ मनसाकृष्णपादाब्जंस्मृत्वाप्रोवाचमाधवम् ॥ ३ ॥ प्रभोसर्वज्ञभगवन्नहंत्वद्वाक्यगौरवात् ॥ कथयिष्यामिलोकेशयथामार्गंश्रुतंतथा ॥४॥ त्रिंशद्योजनविस्तीर्णात्सागरात्पारमेवच ॥ उपद्वीपंपांचजन्यंदक्षिणेस्तिनृपेश्वर ॥५॥ उद्धवस्यवचःश्रुत्वानिरुद्धोधन्विनांवरः ॥ बलीधैर्यधरःक्रुद्धोप्राहेदंयदुपुङ्गवान् ॥ ६ ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ अहंयास्यामिपारंवैतस्माद्यादवसत्तमाः ॥ सेतुंकुरुतशीघ्रंतुसागरस्यशरैरपि ॥ ७ ॥ इतितद्वचनंश्रुत्वायादवायुद्धकोविदाः ॥ सागरेमुमुचुर्बाणान्प्रहसंतःपरस्परम् ॥८॥ ततःसर्वेजलचरास्तीक्ष्णबाणैःप्रताडिताः॥कोलाहलंप्रकुर्वंतोदुद्रुवुस्तेचतुर्दिशम् ॥९॥ नकेषांप्रगताबाणाःपारंवैसागरस्यच ॥ इतिवैकथितंवाक्यंखस्थेनचसुरर्षिणा ॥१०॥तदाक्रूरोहृदीकश्चसात्यकिश्चोद्धवोबली ॥ कृतवर्मासारणश्चयुयुधानादयोनृप ॥ ११ ॥ हेमांगदइंद्रलीलोऽनुशाल्वाद्याश्चभूपते ॥ गतमानाबभूवुर्वैनारदोक्तंनिशम्यच ॥ १२॥

क्रोधित होकर यदुश्रेष्ठोंसे बोले ॥ ६ ॥ अनिरुद्धजी बोले कि, हे यादव श्रेष्ठो ! मैं इस समुद्रके पार अवश्य ही जाऊँगा, सो तुम समुद्र पर बाणोंसे सेतु (पुल) बांधो ॥ ७ ॥ अनिरुद्धके इस वचनको सुनकर युद्धमें बड़े चतुर यादव आपसमें हँसते हँसते समुद्रके ऊपर पुल बांधनेके लिये बाण छोडने लगे ॥ ८ ॥ तब इनके तीखे बाणोंसे पीडित हुये सब जलके जीव बड़ा कोलाहल शब्द करते हुये चारों दिशाओंमें भागने लगे ॥ ९ ॥ किन्तु किसीके बाण समुद्रके पार नहीं गये, यह बात आकाशमें खड़े नारदजीने कही कि, अभी तुम्हारे बाण समुद्र पार नहीं गये हैं ॥ १० ॥ तब अक्रूर, हृदीक, सात्यकि, बली उद्धव, कृतवर्मा, सरण और युयुधानादिक ॥ ११ ॥ हे भूपते ! हेमांगद, इन्द्र लील और अनुशाल्व आदि सभीके मान नारदके कथनको सुनकर नष्ट होगये ॥ १२ ॥

उसके बाद बली अनिरुद्धने कृष्णके चरणकमलका स्मरण करते हुये शार्ङ्गधनुषके समान धनुषको लेकर दिव्य बाण चलाये ॥ १३ ॥ तब उन बाणोंको देखकर नारदजी बोले कि हे अनिरुद्ध ! ये तुम्हारे चलाये हुये बाण समुद्रके पार जाकर उस पारके तटमें प्रविष्ट होगये हैं॥१४॥ नारदजीके इस कथनको सुनकर साम्ब और दीप्तिमान् आदिक सब यादवों ने बाण छोड़े, वे सब बाण समुद्रके पार पहुँच गये ॥ १५ ॥ हे राजन् ! करोड़ों बाणोंमें बाण प्रवेश कर गये, इस बातको देखकर सबके मनमें आश्चर्य हुआ ॥१६॥ इस प्रकार यादवोंने तीस योजन लम्बा और एक योजन चौड़ा बड़ा मजबूत जलके ऊपर अधर (आकाश) में पुल बांधकर तैयार किया ॥ १७ ॥ इस प्रकार अनिरुद्धादिक सब यादव चार प्रहरमें पुल बांधकर रातमें सोये ॥१८॥ इससे जिन्होंने जलके ऊपर अधरमें बाणको बाणमें छेदकर पुल बांध दिया ऐसे बड़े धीर कृष्णके बिम्बके (देहके) प्रतिबिम्ब परमात्मा

ततोनिरुद्धोबलवान्स्मरन्कृष्णपदांबुजम् ॥ प्रतिशार्ङ्गंगृहीत्वावैदिव्यान्बाणान्मुमोचह ॥ १३ ॥ ततोदृष्ट्वाऋषिःप्राहह्यनिरुद्धशिलीमुखाः ॥ पारंगत्वासमुद्रस्यविविशुस्तेचतत्तटम् ॥ १४ ॥ इतिश्रुत्वाऋषेर्वाक्यंसांबदीप्तिमतादयः ॥ मुमुचुस्तेशरान्राजंस्तेषांपारंगताःशराः ॥ १५ ॥ शरेषुचशरारान्कोटिशःकोटिशःकिल ॥ विविशुर्वीक्ष्यसर्वेऽपिधन्विनोविस्मयंगताः ॥ १६ ॥ चक्रुःसेतुंचतेसर्वेत्रिंशद्योजनलंबितम् ॥ दृढंजलाच्चांतरिक्षमेकयोजनविस्तृतम् ॥ १७ ॥ बद्ध्वाततश्चतेसेतुंचतुर्भिःप्रहरैरपि ॥ अनिरुद्धादयोरात्रौसुषुपुःशिबिरेषुवै ॥१८॥ तस्माद्वैपुत्रपौत्राणांकृष्णस्यपरमात्मनः ॥ शूराणांकृष्णबिंबानांबलंकिंकथयाम्यहम् ॥ १९ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेसेतुबंधनंनामसप्तविंशतितमोऽध्यायः ॥२७॥ श्रीगर्गउवाच ॥ कृत्वातुशौचादिकमेवकर्मप्रभातकालेयदुनन्दनश्च ॥ जगामपारंयदुभिश्चसिंधोरामायथावैकपिभिर्नृपेन्द्र ॥ १ ॥ ददृशुस्तत्रतेगत्वानिरुद्धाद्याश्चयादवाः ॥ उपद्वीपंपांचजन्यंशतयोजनविस्तृतम् ॥२॥ राजतेतत्रराजेन्द्रनाम्नावैचासुरीपुरी॥विंशद्योजनविस्तीर्णादैत्यवृन्दसमाकुला ॥३॥ पुन्नागैर्नागचंपैश्चतिलकैर्देवदारुभिः॥अशोकैःपाटलैराम्रैर्मंदारैःकोविदारकैः॥४॥निंबुजंबूकदंबैश्चप्रियालपनसैस्तथा॥सालैस्तालैस्तमालैश्चमल्लिकाजातियूथिकैः॥५॥नीपैःकदंबैर्बकुलैश्चंपकैर्मदनाभिधैः॥शोभितानगरीरम्यारत्नप्रासादसंयुता॥६॥

श्रीकृष्णके पुत्र पौत्रोंके बलका निरूपण मैं क्या करूँ ॥१९॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां सप्तविंशोऽध्यायः॥२७॥गर्गजी कहते हैं कि तब यदुनन्दन अनिरुद्ध जी प्रातःकालके समय अपने शौचादिक कर्मोंको करके यादवोंसहित समुद्रके पार गये, जैसे बानरोंको साथ लेकर रामचन्द्रजी गये थे ॥१॥ तब उन यादवोंने समुद्रके पार जाकर अनिरुद्धादिकोंने सौ योजनके प्रमाणका पांचजन्य नामक उपद्वीप देखा ॥ २ ॥ हे राजेन्द्र ! जिस द्वीपमें बीस योजनके विस्तारवाली, दैत्यवृन्दसे पूर्ण आसुरी नामकी पुरी है ॥३॥ जो पुंनाग, नाग, चम्पा, तिलक, देवदारु, अशोक, पाटल, आम्र, मंदार, कोविदार, (कचनार) ॥४॥ नीबू, जामुन, कटहर, शाल, ताल, मल्लिका, चमेली, जुही ॥ ५ ॥ नीप, कदम्ब, मौलश्री, चम्पक, मदन, इन नामोंके वृक्षोंसे शोभित बड़ी रमणीया है, रत्नोंके महलोंसे सुशोभित है ॥ ६ ॥

तब उस दुष्ट दैत्यने यादवोंको आये हुये देखकर यादवोंकी गिनती करनेके लिये मायावी मय दैत्यको भेजा ॥ ७ ॥ तब वह मय दैत्य तोता बनकर गया, और यादवोंको देखकर और उनको गिनकर फिर पुरीमें आकर विस्मित होकर बल्वलसे बोला ॥८॥ मय बोला कि, हे महाराज ! सुनिये, बली यादवोंकी गणना कौन कर सकता है?अर्थात् कोई नहीं कर सकता, नियुत (एक लाख) संख्याको नियुत संख्यासे गुण्य करे फि' उसको करोड गुणा करे, इतने यादव अनिरुद्धके साथ हैं ॥ ९ ॥ वे सब यादव बाणोंका पुल बनाकर समुद्रके इस पार आपके ऊपर चढ़ाई करके आगये हैं, हे राजन् ! देवताओंको आश्चर्य करनेवाली उनकी सेनाको आप देखिये॥१०॥आजतक बाणोंसे समुद्रपर पुल बांधना वृद्ध मैंने न कहीं देखा, और न सुना हे राजन् ! जो आज आपके सामने देखा है, ॥ ११ ॥ पहिले रामचन्द्रजीने वृक्ष युक्त पर्वतोंसे अपने नामके प्रतापसे लंकाके समीपमें समुद्रपर पुल बांधा था ॥ १२ ॥वह तो पुल समुद्रमें बांधा हुआ हमने सुना था, किन्तु आज तो अपनी आँखोंसे प्रत्यक्ष हमने देख लिया, और हे राजन् ! श्रीकृष्णने पहिले कंस और बकासुर आदिक

यदून्समागताञ्छ्रुत्वामयंमायाविनंखलः ॥ प्रेषयामासगणितुंयादवानांमहात्मनाम् ॥७॥ सचापिशुकरूपेणगत्वादृष्ट्वायदूत्तमान् ॥ आगत्य स्वपुरीमध्येबल्वलंविस्मितोब्रवीत् ॥८॥ मयउवाच॥ कःकरिष्यतिसंख्यांवैवृष्णीनांबलिनांनृप ॥ नियुतानांचनियुतकोटिनास्तेसकार्ष्णिजः ॥ ९ ॥ सेतुंकृत्वाशरैःसिन्धोःप्राप्ताःसर्वेतवोपरि ॥ तेषांपश्यबलंराजन्देवविस्मयकारकम् ॥ १० ॥ सागरस्यशरैःसेतुंनदृष्टंनश्रुतंकृतम् ॥ वृद्धेनचमयाराजंस्त्वदग्रेद्यविलोकितम् ॥ ११ ॥ राघवेणपुरासेतुंपाषाणैर्द्रुमवेष्टितम् ॥ स्वनाम्नश्चप्रतापेनलंकायानिकटेकृतम् ॥१२॥तत्सर्वं चमयादृष्टमद्यदृष्टंहिचाद्भुतम् ॥ श्रीकृष्णेनपुराराजन्कंसाद्याःशकुनादयः ॥१३॥ मारिताःसंगरेदैत्यानृपाःसर्वेविनिर्जिताः॥कृष्णस्तुभगवान्साक्षाद्ब्रह्मणाप्रार्थितःपुरा ॥१४॥ गोलोकादागतोभूमौभक्तानांरक्षणायच ॥ अकृतानांचनाशायकुशस्थल्यांविराजते॥१५॥तस्माद्यदूत्तमाः सर्वेऽनिरुद्धाद्यामहाबलाः ॥ भीषणंचबकंजित्वाह्यन्याञ्जित्वात्रचागताः॥१६॥पुत्राःपौत्राश्चकृष्णस्यज्ञातयश्चयदूत्तमाः॥आकाशंजेतुमिच्छंतिकावार्ताभूतलस्यच ॥ १७ ॥ अनिरुद्धायतस्माद्वैतुरगंदेहिबल्वल ॥ दैत्यानांहतशेषाणांकुलकौशल्यहेतवे ॥१८॥ ततोनिरुद्धायहयंचदत्त्वासुरद्विषांवैसुखहेतवेच ॥ श्रीकृष्णचंद्रंप्रभजंश्चभुंक्ष्वराज्यंस्वकीयंतपसानुलब्धम् ॥ १९ ॥

राक्षस युद्धमें मारे हैं, और सब राजाभी संग्राममें उन्होंने जीते हैं, वे साक्षात् भगवान् ब्रह्म हैं, ब्रह्माजीकी प्रार्थनासे॥१३॥१४॥भक्तोंकी रक्षा करनेके लिये गोलोकसे आकर भूमिमें जन्मे हैं, और अभक्त दुष्टोंके मारनेके लिये द्वारकामें विराजते हैं॥१५॥उसीसे अनिरुद्धादिक ये यादव बडे बलवान् हैं, भीषण दैत्यको और बक नामक दैत्यको तथा अन्य भी राजाओं को जीतकर ये तुम्हारी नगरीमें आये हैं ॥१६॥ कृष्णके पुत्र पौत्र और जातिके यदूत्तम ये आज आकाशको भी जीत सकते हैं, फिर भूलोकको जीतना इनके लिये क्या बड़ी बात है ॥ १७ ॥ इससे हे बल्वलजी ! सुनिये, आप हमारा कहना मानें, और बाकी रहे दैत्य कुलकी कुशल चाहें तो अनिरुद्धजीको यह घोड़ा दे दीजिये ॥ १८ ॥ हे बल्वल ! आप मेरे कहनेको सुनकर देवताओंके द्वेषी दैत्य कुलके सुखके लिये अनिरुद्धको घोडा देकर श्रीकृष्णका भजन करते हुये तपसे प्राप्त हुये अपने राज्यकी रक्षा करिये ॥ १९ ॥

ऐसे मयने शुभ वचनोंसे बल्वलको बहुत कुछ समझाया, तो श्रीकृष्णसे पराङ्मुख वह बल्वल क्रोधसे लम्बी २ श्वास लेकर मयसे बोला ॥२०॥ बल्वल बोला कि हे दैत्य ! विना युद्ध किये ही क्यों डरते हो, वीर पुरुषोंके हँसी करने योग्य वचनोंको कैसे मेरे सामने कहते हो ॥२१॥ तुम बुद्धिबलहीन हो, और वृद्ध होनेसे तुम्हारी बुद्धि नष्ट होगई है, साठी बुद्धि नाठी होगई है, इससे मैं तेरे कहने को नहीं मानता हूँ॥२२॥यदि कृष्ण साक्षात् हरि हैं, तब ये कृष्णके वंशज मुझ महादेवजीके भक्तके सामने क्या पुरुषार्थ करेंगे॥२३॥इससे तुम भय मत करो, तुम्हारी सब माया कहाँ गई, मैं तो तुम्हारे आश्रयसेही युद्ध करनेको जाता हूँ ॥२४॥ अनिरुद्ध बड़ा शूर है, क्या हम शूर नहीं हैं ! इस भूमिमें मेरे रहते हुये ऐसा कौन है, जो शूरताका अभिमान करे ॥ २५ ॥ वह मेरे चलाये हुये बाणोंसे शूरताके गर्वके फलको प्राप्त करे, आज मेरे तीखे बाण शूराभिमानी अनिरुद्धको॥२६॥हे दैत्य !

एवंशुभैश्चवचनैर्बोध्यमानोपिबल्वलः ॥ निश्वस्योवाचरोषेणमयंकृष्णपराङ्मुखः ॥ २० ॥ बल्वलउवाच ॥ विनायुद्धेनत्वंदैत्यकथंभीतोभविष्यसि ॥ वदिष्यसिममाग्रेत्वंशूरहास्यकरंवचः॥२१॥त्वंबुद्धिबलहीनश्चवृद्धत्वाच्छठतांगतः ॥ तस्मात्त्वदीयंवचनंनाहंगृह्णामिसांप्रतम् ॥ २२ ॥ यदिकृष्णोहरिः साक्षादेतेकृष्णस्यवंशजाः ॥ ममाग्रेशिवभक्तस्यकिंकरिष्यंतिपौरुषम् ॥२३॥ भयंमाकुरुतस्मात्त्वंमायाःकुत्रगतास्तव ॥ अहंतवाश्रयेनापियुद्धंकर्तुंव्रजामिवै ॥ २४ ॥ अनिरुद्धोमहाशूरःशूराःकिंनवयंस्मृताः ॥ स्थितेमयिमहीमध्येकोयंगर्वोऽभवन्महत् ॥ २५ ॥ फलंगर्वस्यप्राप्नोतुममनिर्मुक्तसायकैः ॥ अद्यमेनिशिताबाणाअनिरुद्धंचमानिनम् ॥ २६ ॥ प्रकुर्वंतिरणेदैत्यरक्तांगंच्छिन्नकंचुकम्॥ यथाकिंशुकवृक्षंवैवसंतदिवसाःकिल ॥ २७ ॥ दारयंतुकपोलानिनाराचाममहस्तिनाम् ॥ हयान्पश्यंतुशतशोरुधिरौघपरिप्लुतान् ॥ २८ ॥ पिबंतुयोगिनीवृंदारुधिराणिनृमस्तकैः ॥ कालीभवतुसंतुष्टायद्वैरिक्रव्यभक्षणैः ॥२९॥ ममबाहुबलंसर्वेपश्यंतुसुभटाःकिल ॥ महाकोदंडनिर्मुक्तभल्लकोटींविमुंचतः ॥ ३० ॥ इतितद्वाक्यमाकर्ण्यमयोमायीमहामतिः ॥ जानन्कृष्णस्यमाहात्म्यंमदांधंचेदमब्रवीत् ॥३१॥ मयउवाच ॥ ॥ यदाविजेष्यसिरणेकृष्णपुत्रांश्चयादवान् ॥ आगमिष्यतिश्रीकृष्णोजेतुंत्वांवाबलश्चवै ॥ ३२ ॥

कवच काटकर घायल कर ऐसा रक्तांग (लोहू लुहान) करेंगे, जैसे वसन्तऋतुके दिन टेसूके वृक्षको लाल करते हैं ॥२७॥ आज मेरे नाराच (लोहेके तीर) हाथियोंके गण्डस्थलों को फाड़ेंगे और रुधिरसे भीगे हुये घोड़ोंको देखेंगे ॥२८॥ और मनुष्योंकी खोपड़ियोंमें रुधिरको भर भरकरके योगिनियोंके झुण्ड पीयेंगे, और मेरे शत्रुओंके मांसको भक्षण कर करके काली संतुष्ट होगी ॥ २९ ॥ आज वीर योद्धा धनुषमेंसे करोड़ों भल्लाकार बाण चलाते हुये मुझ बल्वलका बाहुबल देखेंगे ॥ ३० ॥ इस प्रकार बड़ा बुद्धिमान् मायावीमय बल्वलके कथनको सुनकर कृष्णके माहात्म्यको जानता हुआ मदसे अंधे बल्वलसे बोला ॥ ३१ ॥ मय बोला कि हे बल्वल ! देखो अभी इन्हींसे जीतना कठिन है, और यदि कहीं बलवान् कृष्णके पुत्रोंसे जीत भी गये, तो तुमको जीतनेके लिये श्रीकृष्ण अथवा बलराम अवश्य आयेंगे ॥ ३२ ॥

तब इस सत्य और हित करनेवाले मयके वचनको सुनकर भी कालकी फांसीसे बंधे हुये, क्रोधसे जलते हुये उस महादैत्यने मयके कथनको ग्रहण नहीं किया ॥३३॥ बल्वल बोला कि, हे मय ! सुनो, राम और कृष्ण मेरे शत्रु हैं, और सब यादव भी मेरे शत्रु हैं, सो जिन्होंने मेरे मित्र मारे हैं, उन यादवोंको तथा कृष्ण बलरामको मैं मारूँगा ॥३४॥ पहिले यादवोंको मारकर बादमें यज्ञ करूँगा, उस यज्ञके दिग्विजयमें द्वारकापुरीको जीतूँगा ॥३५॥ यह सुनकर मयने कहा कि हे दैत्येन्द्र ! तुम अभिमान मत करो, यह घोड़ा नहीं है, यह कालरूप है, और बाकी रहे राक्षसोंको मरवानेके लिये यहाँ आया है ॥ ३६ ॥ हे नृप ! अनिरुद्धके बाण तुम्हारी इस नगरीको शूरवीरोंसे रहित करेंगे, इसमें सन्देह नहीं है ॥ ३७ ॥ हिरण्याक्षादिक दैत्य और रावणादिक राक्षस जिन्होंने मारे हैं, वे ही भगवान् कृष्णरूप बनकर यदुकुलमें जन्मे हैं, यह बात ऐसेही सुनी है ॥ ३८ ॥ सो हे बल्वल ! तुम इस राज्यके अभिमानके मारे कुछ नहीं जानते हो, सो देखो, यह घोड़ा अनिरुद्धको दे दो, यह युद्धका समय नहीं है ॥३९॥ यह सुनकर बल्वल बोला कि,हे मय ! मैं तेरी बातको

इतिश्रुत्वामहादैत्योसत्यंहितकरंवचः ॥ कालपाशेनसंबद्धोनजग्राहरुषाज्वलन् ॥ ३३ ॥ बल्वलउवाच ॥ ममारीरामकृष्णौचशत्रवोवृ-ष्णयश्चमे ॥ तान्सर्वान्मारयिष्यामियैर्मेमित्राश्चमारिताः ॥३४॥ हत्वाचयादवानन्नपश्चाद्यज्ञंकरोम्यहम् ॥ तस्यदिग्विजयेनापिविजेष्यामि हरेःपुरीम् ॥ ३५ ॥ मयउवाच ॥ मानंमाकुरुदैत्येन्द्रकालरूपस्तुरंगमः ॥ प्राप्तस्तवपुरेहंतुंहतशेषान्महासुरान् ॥ ३६ ॥ अनिरुद्धशराः सर्वेसद्यस्तवपुरींनृप ॥ छिन्नभिन्नांशूरहीनांकरिष्यंतिनसंशयः ॥ ३७ ॥ हिरण्याक्षादयोदैत्यारावणाद्यानिशाचराः ॥ मारितायेनसःकृष्णो जातोयदुकुलेश्रुतम् ॥ ३८ ॥ किंचिद्राज्यस्यमानेनत्वंनजानासिबल्वल ॥ प्रयच्छतुरगंतस्मैनयुद्धसमयोऽस्तिहि ॥ ३९ ॥ बल्वलउवाच ॥ अहंजानामित्वद्वार्त्तांयुद्धंतेनैनकरिष्यसि ॥ अनिरुद्धंगच्छतस्मात्त्वंविभीषणवत्किल ॥ ४० ॥ गर्गउवाच ॥ बल्वलस्यवचःश्रुत्वामयोमाया-विदांवरः ॥ प्रतिव्योढुंतत्रदुःखमिदमेवान्वपद्यत ॥ ४१ ॥ वैरभावेनपूर्वेवैवैकुण्ठंबहवोगताः ॥ निशाचराश्चदैत्याश्चतंभावंयःकरोतिहि ॥ ४२ ॥ इत्थंविचार्यसहसासउवाचमहासुरम् ॥ मयउवाच ॥ अद्यत्वांचमहावीरंननिषेधंकरोम्यहम् ॥ ४३ ॥ युद्धंकुरुरणेगत्वायदून्मार-यसायकैः ॥ अहमेवकरिष्यामियुद्धंत्वद्वाक्यतोमृधे ॥ इत्युक्त्वावचनंसोपिविररामप्रहर्षयन् ॥ ४४ ॥ उर्द्धकेशनदःसिंहःकुशांबाद्याश्चमंत्रिणः ॥ ऊचुःप्रकुपिताःसर्वेचत्वारोबल्वलंनृप ॥ ४५ ॥

जानता हूँ, तू इनसे युद्ध नहीं करेगा, सो तू निश्चय रावणके भाई विभीषणकी तरह उनके पास चला जा ॥ ४० ॥ गर्गजी कहते हैं कि इस प्रकार बल्वलके कथनको सुनकर माया के जाननेवालोंमें मुख्य मयदैत्यने उस दुःखको दूर हटानेके लिये यह विचार किया ॥ ४१ ॥ कि आजतक बहुतसे दैत्य और बहुतसे राक्षस वैरभावके करनेसे ही वैकुण्ठको गये हैं, इससे जो कोई वैरभाव करता है, वह सद्गतिको प्राप्त होता है ॥४२॥ ऐसे मनमें विचार करके मयदैत्य बल्वलसे बोला कि, हे बल्वल ! तुम तो महावीर हो, इससे मैं तुमको निषेध नहीं करता हूँ ॥ ४३ ॥ जाओ तुम युद्ध करो, बाणोंसे यादवोंको मारो, और मैं भी तुम्हारे कहनेसे युद्ध ही करूँगा ॥ ४४ ॥ इतना कहकर बल्वलको प्रसन्न करता हुआ मय चुप हो गया, तब उद्‌र्ध्वकेश, नद, सिंह और कुशाम्ब य चारों मंत्री कुपित होकर बल्वलसे बोले ॥ ४५ ॥

कि महाराज ! आप शोच मत करिये, सब यादवोंको मारनेके लिये पहिले हम चारों युद्धके लिये जायेंगे, क्योंकि हमने बहुत दिनोंसे संग्राम नहीं किया है ॥ ४६ ॥ सो हे राजेन्द्र ! आप चिन्ता मत करिये, हम मय दैत्यको साथ लेकर करोड़ों मनुष्योंको मारेंगे ॥४७॥ गर्गजी कहते हैं, ऐसे इन चारों मन्त्रियोंके कहनेको सुनकर प्रसन्न होकर युद्ध करनेमें चतुर बल्वलने युद्ध करनेको आज्ञा दी ॥४८॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायामष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८॥ गर्गजी कहते हैं कि, हे राजेन्द्र! उसके बाद बल्वलके चारों मन्त्री एक करोड़ दैत्योंको साथ लेकर कवचोंको पहिनकर युद्ध करनेको नगरके बाहिर निकले ॥ १ ॥ धनुषधारी, विद्याधरोंके समान, वे सब खड्ग, त्रिशूल, परिघ, और मुद्गरोंको हाथोंमें लेकर और कुन्त, भिंदीपाल, चक्र, बाण, शक्ति और अनेक शस्त्रोंको लेकर कवच धारण किये हुये वे रथ, हाथी, घोड़, रोज, भैंसे, मृग, ऊँट, गधे, सूकर, सियार, सिंह

॥ मंत्रिणऊचुः ॥ पूर्ववयंगमिष्यामोहंतुसर्वान्यदूत्तमान् ॥ बहुभिर्दिवसैराजन्संग्रामंनकृतंयतः ॥४६॥ चिन्तांमाकुरुराजेंद्रमयदैत्येनसंयुतः॥ क्षणेनमारयिष्यामोकोटिशःकोटिशोनरान् ॥ ४७ ॥ गर्गउवाच ॥ तेषांभाषितमाकर्ण्यबल्वलस्तुमुदान्वितः ॥ चकाराज्ञांनृपश्रेष्ठरणार्थेरण-कोविदः ॥ ४८ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेदैत्यमन्त्रवर्णननामाऽष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥ गर्गउवाच ॥ अथयुद्धायराजेंद्र-चत्वारःकिलमंत्रिणः ॥ दैत्यकोटिसमायुक्तानिर्जग्मुर्दंशिताःपुरात् ॥ १ ॥ सर्वेहिधन्विनःशूराविद्याधरसमाःकिल ॥ खड्गैःशूलैर्गदा-भिश्चपरिघैर्मुद्गरैर्नृप ॥ २ ॥ एकघ्नीभिर्दशघ्नीभिःशतघ्नीभिर्भुशुण्डिभिः ॥ कुंतैश्चभिंदिपालैश्चचक्रसायकशक्तिभिः ॥३॥ संयुताःसर्वशस्त्रैश्च लोहकंचुकमंडिताः ॥ रथैर्गजैस्तुरंगैश्चगवयैर्महिषैर्मृगैः ॥ ४ ॥ उष्ट्रैःखरैःसूकरैश्चवृकैःसिंहैश्चक्रोष्टुभिः ॥ महागृध्रैःशंखचिल्लैर्मकरैश्चतिमिङ्गिलैः ॥ ५ ॥ एतैश्चवाहनैराजन्संयुक्तारणकर्कशाः ॥ शंखदुंदुभिनादेनवीराणांगर्जनेनच ॥६॥ शतघ्नीनांचशब्देनचचालवसुधाभृशम् ॥ इत्थंभयं करांसेनामसुराणांविलोक्यच ॥७॥ भयंप्रापुःसुराःसर्वेमहेन्द्रधनदादयः ॥ यादवास्तेपिबलिनोनिर्जितायैश्चभूःपुरा ॥८॥ विषण्णमनसोऽभूव-न्दैत्यसेनांनिरीक्ष्यच॥प्रद्युम्नेनराजसूयेचंद्रावत्यांपुरानृप॥९॥यादवेभ्यःप्रकथितंयन्नीतिर्धैर्यवर्द्धनम्॥तत्सर्वंकथयामासयदुभ्यःकार्ष्णिजःपुनः ॥ १० गर्गउवाच ॥ इति श्रुत्वाचयदवःशस्त्राणिजगृहुस्त्वरम् ॥ मृत्युंवरंमन्यमाना विजयाच्चपलायनात् ॥ ११ ॥

कुत्ते, गीध, शंख, चील, मगर और तिमिंगिलोंपर बैठकर रणमें बड़े कर्कश शंख और दुन्दुभियोंके शब्दको करते हुये ॥ २॥ ३॥ ४ ॥५॥६॥ और तोपोंके शब्दसे पृथ्वीको कम्पाते हुये जब निकले, तब पृथ्वी बहुत हिलने लगी, इस तरहसे भयको करनेवाली राक्षसी सेनाको देखकर इन्द्रादिक सब देवगणोंको बड़ा भारी भय हुआ, और जिन बलवान् यादवोंने पूर्व समयमें भूमि जीत ली थी, वेभी सब दैत्य सेनाको देखकर विषाद युक्त होगये ॥७॥८॥ और जो नीति पहिले प्रद्युम्नने चन्द्रावती नगरीमें राजसूय यज्ञमें यादवोंके सामने धैर्यको बढ़ानेवाली कही थी, वह सब नीति अनिरुद्धने फिर यादवोंके सामने कही ॥ ९॥ १० ॥ गर्गजी कहते हैं कि उसको सुनकर जीतनेसे और भागनेसेही मृत्युकोही श्रेष्ठ मानते हुये सब यादवोंने शीघ्रही शस्त्र ग्रहण कर लिये ॥ ११ ॥

तब तो पांचजन्यमें यादवोंके साथ दैत्योंका संग्राम हुआ, जैसा लंकामें वानरोंके साथ राक्षसोंका हुआ था ॥ १२ ॥ रथियोंका रथियोंसे, पत्तियोंका पत्तियोंसे, घोड़ोंका घोड़ोंसे और हाथियोंका हाथियोंसे संग्राम होने लगा ॥१३॥ कितनेही हाथी अपने शुण्डा दंडों (सूंडों) से राजन् ! उस संग्राममें घोड़ोंको और वीरोंको मारने लगे, तथा रथोंको तोड़ने लगे ॥१४॥ अपने शुण्डा दण्डोंसे अश्व और सारथियों समेत रथोंको उठा उठाकर हाथियोंने पृथ्वीमें डाल दिया ॥ १५ ॥ घायल होकर रणसे भागे हुये हाथियोंने कितनेही लोगोंको अपने दृढ शुण्डा दण्डोंसे चीरकर पांवोंसे मसल डाले ॥१६॥ और हे राजन् ! सवारों समेत घोडे रथोंको उलाँघते हुये हाथियोंमें उछलकर पड़े ॥१७॥ महावतोंको और हाथियोंके सवारोंको सिंहकी तरह मर्दन करते हुये वे महा बलवान् घोड़े उछलते हुये हाथियोंपर दौड़े॥१८॥वे घुडसवार तलवारोंसे प्रहार करते हुये बहुतसे शत्रुओंको काटते हुये और हाथियोंके सवारोंको दिखाई नहीं देते हैं, वें नटोंकी तरह दीखते हैं ॥१९॥ और कितनेही वीर तलवारोंसे घोड़ोंको काटते हुये दीखते हैं, और कितनेही वीर दाँतोंको पकड़कर हाथियोंके गण्डस्थलोंपर

ततःसमभवद्युद्धंदैत्यानांयदुभिःसह ॥ पांचजन्येचलंकायांरक्षसांकपिभिर्यथा ॥ १२ ॥ रथिनोरथिभिस्तत्रपत्तिभिःपत्तयोमृधे॥हयाहयैरिभा-
श्चेभैर्युयुधुस्तेपरस्परम् ॥ १३ ॥ केचिद्वैदंतिनोमत्ताःशुण्डादण्डैरितस्ततः ॥ जघ्नूरथांस्तुरंगांश्चवीरान्राजन्महामृधे॥१४॥ शुण्डादंडैःसंगृही-
त्वारथान्साश्वान्ससारथीन् ॥ निपात्यभूमावुत्थाप्यगगनेचिक्षिपुर्बलात् ॥१५॥ कांश्चिन्ममर्दुःपादाभ्यांसंविदार्यकरैर्दृढैः॥सक्षताश्चगजाराज-
न्प्रधावंतोरणांगणात् ॥१६॥ तुरगास्तत्रधावंतःसवीरास्तेनृपेश्वरः ॥ उल्लंघयंतश्चरथान्प्रोत्पतंतोगजान्प्रति ॥१७॥ अंबष्ठंगजिनंयुद्धेमर्दयंतश्च
सिंहवत् ॥ उत्पतंतश्चतुरगाःगजवृंदंमहाबलाः ॥ १८ ॥ असिप्रहारंकुर्वंतोविदार्यचरिपून्बहून् ॥ वाजिपृष्ठेनदृश्यंतेतेदृश्यंतेनटाइव ॥ १९ ॥
केचिद्वीरास्तुखड्गैश्चद्विधाकुर्वंस्तुरंगमान् ॥ केचिद्दंतान्संगृहीत्वाकुम्भेषुकरिणांगताः ॥ २० ॥ तुरगस्थाः केपिबलंसंविदार्यविनिर्गताः॥खड्ग-
वेगैःकंजवनंलीलाभिर्वायवोयथा ॥ २१ ॥ बभूवतुमुलंयुद्धमद्भुतंरोमहर्षणम् ॥ बाणैर्गदाभिःपरिघैःखड्गैःशूलैश्चशक्तिभिः ॥२२॥ युद्धेगजा-
श्चगर्जंतिहर्षंतितुरगाभृशम् ॥ हाहावीराःप्रकुर्वंतिनदंतिरथनेमयः ॥२३॥ सैन्यपादरजोवृन्दैरंधीभूतंनभोभवत् ॥ तत्रस्वीयोनपारक्योदृश्यतेच
मृधांगणे ॥२४॥ परस्परंचबाणौघैःकेचिद्वीराद्विधाकृताः ॥ तिर्यग्भूतारथायुद्धेनिपेतुःपादपाइव ॥ वीरोपरिगतावीराहयोपरिहयाश्चवै ॥२५॥

चढ गये ॥२०॥ और कितनेही वीर घोड़ोंपर बैठे हुये सैन्य दलको विदीर्ण करके ऐसे निकले, जैसे वायु कमल वनको विदीर्ण करके निकलता हो ॥ २१ ॥ उस समय बड़ा घोर जिसको देखकर रोंगटे खडे होजायें, ऐसा युद्ध हुआ, बाणोंसे गदाओंसे, परिघा खड्ग, त्रिशूल, और शक्तियोंसे वह संग्राम हुआ ॥२२॥ उस युद्धमें हाथी चिग्घाडने लगे, घोड़े हिनहिनाने लगे, रथोंके पहिये खन खनाने लगे, और बहुतसे मनुष्य हाय हाय करने लगे ॥ २३ ॥ सेनाके पांवोंसे उडी हुई रज (धूल) से आकाश अंधी भूत होगया, जिससे कोई अपना पराया मालूम नहीं पड़ता था ॥ २४ ॥ कितनेही वीर आपसमें बाणोंसे दो दो टूक होगये, और कितनेही रथ उस युद्धमें वृक्षोंकी तरह तिरछे होकर गिर पड़े, कहीं वीरोंके ऊपर वीर और कहीं घोड़ोंके ऊपर घोड़े गिर पड़े ॥ २५ ॥

यहाँ वीरोंके कबन्ध (शिर रहित शरीर) हाथोंमें खड्ग लिये बड़े भयंकर उठकर खड़े होगये, वे कबन्ध युद्धमें वीरोंको और घोड़ोंको काटते हुये विचरने लगे ॥२६॥ कुम्भ स्थल जिनके फट गये ऐसे हाथियोंके माथेमेंसे मोती बरसने लगे, जैसे रात्रिमें आकाशमेंसे तारागण गिरते हों ॥२७॥ उस समय दोनों सेनाओंमें रुधिरकी नदी बहने लगी, और बड़े २ वीरोंके मुंडोंको शिवजीकी मुंडमालामें लगानेके लिये वेताल ग्रहण करने लगे॥२८॥और डाकिनियोंको साथ लिये महाकाली दुर्गा सिंह पर बैठी हुई आई, और हे राजन् ! वह खोपड़ीमें रुधिर भरकर पीती हुई संग्राममें दिखाई देने लगी ॥२९॥ और डाकिनियाँ अपने पुत्रोंको तप्त रुधिर पान करती हुई औरअरे पुत्रों ! रुदन मत करो, ऐसे उनके आँसुओंको पोंछती हुई दिखाई देने लगी ॥३०॥ और आकाशमें खड़ी विद्याधरी, गन्धर्वी, और अप्सराएं देवरूप हुये क्षत्रधर्ममें स्थित रहे वीरोंके गलेमें जयमाला डालने लगी ॥३१॥ उन विद्याधरी

उत्पेतुस्तत्रशूराणांकबंधाश्चभयंकराः ॥ पातयंतोखड्गहस्ताह्यान्वीरान्महारणे ॥२६॥ हस्तिनांभिन्नकुम्भानांमौक्तिकानिपतंतिखात्॥शस्त्रांधकारेप्रधनेरात्रौतारागणाइव ॥ २७ ॥ ततश्चसेनयोर्मध्येरुधिराणांनदीह्यभूत् ॥ वेतालाःशिवमालार्थंजगृहुस्तेशिरांसिच ॥२८॥ मृगेंद्रस्था महाकालीडाकिनीभिःसमागता ॥ कपालेनापिरुधिरंपिबतीदृश्यतेमृधे ॥ २९ ॥ डाकिन्योरुधिरंतप्तंपाययंत्यःसुतान्मृधे ॥ मारोदीरिति वादिन्योनेत्राण्यर्पितदामृजन् ॥३०॥ विद्याधर्यस्त्वंवरस्थागंधर्व्योऽप्सरसस्तथा ॥ क्षतधर्मस्थिताञ्छूरान्वव्रिरेदेवरूपिणः ॥३१॥ परस्परंकलिरभूत्तासांपत्यर्थमंबरे ॥ ममानुरूपोनायंवइतिविह्वलचेतसाम् ॥३२॥ केपिशूराधर्मपराराणाद्राजन्नचालिताः॥जग्मुस्तेवैष्णवंलोकंभित्वातपनमंडलम् ॥ ३३ ॥ केचिद्वीरा महायुद्धंदृष्ट्वायुद्धात्पलायिताः ॥ तप्तवालुकमार्गेणजग्मुस्तेनिरयंनृप ॥३४॥ एवंदैत्यान्महावीराञ्जघ्नुःसर्वे यदूत्तमाः ॥ तथायदून्महायुद्धेनानाशस्त्रैश्चदानवाः ॥३५॥ रणेमृत्युंगताःसर्वेराजन्दैत्याश्चकोटिशः ॥ तथामृत्युंगतायुद्धेयादवाश्चसहस्रशः ॥ ३६ ॥ बाणांधकारेसंजातेऽनिरुद्धोधन्विनांवरः ॥ उद्धर्केशेनयुयुधेयथावृत्रेणवासवः ॥ ३७ ॥

आदिकोंका उन वीरोंके लिये आपसमें कलह होने लगा, यह मेरे अनुरूपपति है, तेरे अनुरूप नहीं है, मैंही इसको वरूँगी, इस प्रकार उनके चित्त विह्वल होगये ॥३२॥ और हे राजन् ! कितनेही क्षात्र धर्ममें तत्पर हुये वीर जो संग्राममें विचलित नहीं हुये, वे सूर्य मण्डलको भेदन करके सीधे विष्णु लोकमें गये ॥३३॥ और कितनेही वीर उस महा युद्धको देखकर युद्धमेंसे भाग गये, वे तप्त बालुकाके मार्गसे नरकमें गये ॥३४॥ इस प्रकार उन महावीर दैत्योंको सब यदूत्तम मारने लगे, ऐसेही उस महा युद्धमें यादवोंको अनेक शस्त्रोंसे दैत्य मारते लगे ॥३५॥ हे राजन् ! इस प्रकार करोड़ों दैत्य रणमें मारे गये, उसी प्रकार हजारों यादव भी मारे गये ॥३६॥ जब बाणोंका अंधकार होगया, तब धनुष धारियोंमें श्रेष्ठ अतिरुद्ध उद्धर्वकेश नामके दैत्यसे ऐसे युद्ध करने लगे, जैसे वृत्रासुरसे इन्द्रने संग्राम किया था ॥ ३७ ॥

और नंददैत्यसे गद, सिंह नामके दैत्यसे वृक, और कुशाम्ब नामके दैत्यसे साम्ब संग्राम करने लगे ॥३८॥ ऐसे आपसमें बड़ा घोर युद्ध हुआ, तब हे राजन् ! उद्‌र्ध्वकेश नामके दैत्यने बारबार धनुषको टंकारते हुये ॥ ३९ ॥ संग्राममें अनिरुद्धके दश बाण मारे, उन बाणोंको धनुषधारी रुक्मवतीके पुत्र अनिरुद्धने काट डाले॥४०॥ फिर उद्‌र्ध्वकेशने अनिरुद्धके कवचमें दश बाण मारे, वे बाण अनिरुद्धके कवचको तोड़कर शरीरमें घुस गये॥४१॥और चार बाणोंसे अनिरुद्धके चारों घोड़े मार डाले, और बीस बाणोंसे अनिरुद्धका प्रत्यंचा सहित धनुष काट डाला ॥४२॥ तब अनिरुद्ध उस रथको छोड़कर दूसरे रथमें बैठे ॥ ४३ ॥ और इन्द्रके दिये हुये प्रतिशार्ङ्ग नामके धनुषको धारण करनेवाले अनिरुद्धने कृष्णके दिये हुये धनुषमें एक बाण लगाकर ॥४४॥ क्रोधमें भरकर हाथके लाघवसे उस दैत्यके रथमें वह बाण मारा, उस बाणने उस रथको उड़ाकर दो घड़ीतक घुमाकर ॥४५॥

नंदेनचगदोराजन्सिंहेनवृकएवच ॥ कुशांबेनचसांबोवैयुयुधेरणमण्डले ॥३८॥ एवंपरस्परंयुद्धंबभूवतुमुलंमहत् ॥ ऊद्‌र्ध्वकेशस्तदाराजन्धनुष्टंकारयन्मुहुः ॥३९॥ कार्ष्णिजंताडयामासनाराचैर्दशभिर्मृधे ॥ तान्प्रचिच्छेदभगवान्धन्वीरुक्मवतीसुतः ॥४०॥ ऊद्‌र्ध्वकेशः पुनस्तस्यकवचेसायकान्दश ॥ निचखानस्वर्णपुंखान्भित्त्वावर्मतनौगान् ॥४१॥ चतुर्भिश्चशरैस्तस्यजघानचतुरोहयान् ॥ चिच्छेदबाणैर्विंशद्भिःकोदंडंसगुणंपरम् ॥ ४२ ॥ अनिरुद्धस्यराजेंद्रबलवलस्यानुगोबली ॥ अनिरुद्धस्तुतंत्यक्त्वारथंचान्यंसमारुहत् ॥४३॥ शक्रदत्तंनृपश्रेष्ठप्रतिशार्ङ्गधरोमहान् ॥ कृष्णदत्तेचकोदंडेशरमेकंनिधायच ॥ ४४ ॥ तद्रथेनिचखानाथरुषाढ्योहस्तलाघवात् ॥ सायकस्तद्रथंनीत्वाभ्रामयित्वाघटीद्वयम् ॥ ४५ ॥ गगनात्पातयामासकाचपात्रंयथार्भकः ॥ अंगारवद्रथस्तस्यविशीर्णोभूद्धयाश्चवै ॥४६॥ ससूतांश्चनृपश्रेष्ठपंचतांप्रापुरग्रतः॥ऊद्‌र्ध्वकेशस्तुपतनान्मूर्च्छितोभूद्रणांगणे ॥ ४७ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखंडेयादवासुरसंग्रामवर्णननामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥२९ ॥ गर्ग उवाच ॥ तदोत्थितश्चोद्‌र्ध्वकेशोरथंचान्यंसमाश्रितः ॥ अनिरुद्धस्यसंग्रामेयावदायातिसंमुखम् ॥ १ ॥ तावद्बभञ्जनिशितैर्नाराचैस्तद्रथं पुनः ॥ सभग्नंस्यंदनंदृष्ट्वापुनरन्यंसमाश्रितः ॥ २ ॥ सोपिभग्नःशरैराशुकार्ष्णिजेनरणेनृप ॥ एवंनवरथाभग्नाऊद्‌र्ध्वकेशस्यवैरणे ॥३॥ ततः क्रुद्धोरणेदैत्यःशक्तिंचिक्षेपसत्वरम् ॥ दृष्ट्वातामागतांवीरोनाराचैर्दशधाच्छिनत् ॥ ४ ॥

ऐसे आकाशमेंसे गिराया, जैसे काँचके पात्रको बालक फेंकता हो, तब वह अंगारकी तरह चूर्ण होकर गिरा, और घोड़े भी ॥४६॥ सारथीसहित चूर्ण होगये, और हे नृपश्रेष्ठ ! उद्‌र्ध्वकेश भी गिरनेसे युद्धभूमिमें मूर्च्छित होगया ॥ ४७ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥ गर्गजी कहते हैं कि, फिर उद्‌र्ध्वकेश थोड़ी देरमें उठा, और दूसरे रथमें बैठकर अनिरुद्धके सामने आया ॥१॥ वैसेही तीक्ष्ण नाराचों (लोहेके बाणों) से फिर अनिरुद्धने उसके रथको तोड़ डाला तब वह उस रथको भी टूटा हुआ देखकर दूसरे रथमें बैठा ॥ २ ॥ तब हे नृप ! वह रथ भी फिर अनिरुद्धने युद्धमें तोड़ डाला, इस प्रकारसे उद्‌र्ध्वकेशके नौ रथ अनिरुद्धने तोड़ डाले ॥३॥ तब उस दैत्यने क्रोधित होकर एक शक्ति मारी, तब उस आती हुई शक्तिको देखकर वीर अनिरुद्धने बाणोंसे उसके दश टुकड़े कर डाले ॥ ४ ॥

तब उद्र्ध्वकेश सुवर्णके रथमें बैठकर बड़े वेगसे अनिरुद्धके सामने युद्ध करनेको आया ॥५॥ और हर्षित होकर उसने पांच बाण अनिरुद्धके मारे, उन बाणोंके प्रहारसे अनिरुद्धको बड़ा खेद हुआ ॥ ६ ॥ फिर अनिरुद्धने सावधान होकर धनुषको लेकर पंखवाले दश बाण हाथकी सफाईसे मारे ॥ ७ ॥ अनिरुद्धके वे दारुण बाण उद्र्ध्वकेशका रुधिर पीकर गिरे, जैसे झूंठी साक्षी (गवाही) देनेवालेके पूर्वज गिरते हैं ॥ ८ ॥ फिर उद्र्ध्वकेशने कुपित होकर "खड़ा रह खडा रह" ऐसे कहकर अनिरुद्धके शिरमें दश बाण मारे ॥ ९ ॥ वे बाण अनिरुद्धके मुकुटमें गड़ गये, और ऐसे मालूम हुये मानो वृक्षमें शाखा निकली हो ॥१०॥ तब हे नृपश्रेष्ठ ! इन बाणोंसे रुक्मवती नन्दन अनिरुद्ध बिलकुल व्यथित नहीं हुये जैसे पुष्पोंसे हाथी॥११॥तब अनिरुद्धने बाजके चित्रवाले सुवर्णके पंखके अनेक बाण क्रोधित होकर मारे॥१२॥ वे बाण उद्र्ध्वकेशके सब अंगोंको भेदकर रुधिरके भीगे हुये नीचे

ऊर्द्ध्वकेशस्तदासंख्येस्थित्वारुक्ममयेरथे ॥ आजगामसवेगेनानिरुद्धंप्रतियोधितुम्॥५॥कार्ष्णिजंपंचभिर्बाणैस्ताडयामासहर्षितः॥शरैस्तैर्निह-
तःसोपिकश्मलंपरमंगतः ॥६॥ संक्रुद्धोधनुरुद्यम्यचित्रवाजाञ्छरादश ॥ मुमोचहृदयेतस्यसहसाहस्तलाघवात्॥७॥शरास्तेपपुरेतस्यरुधि-
रंबहुदारुणाः ॥ पीत्वापेतुर्यथाभूमौकूटसाक्ष्यस्यपूर्वजाः ॥ ८॥ ऊर्द्ध्वकेशःपुनःक्रुद्धोतिष्ठतिष्ठेतिचाब्रुवन् ॥ बाणैस्तुदशसंख्यैश्चतताडतस्य
मूर्द्धनि ॥ ९ ॥ सायकास्तेनिरुद्धस्यह्युष्णीषेपरिनिष्ठिताः ॥ विराजंतेस्मराजेंद्रदशशाखास्तरोरिव ॥ १० ॥ नविव्यथेसतैर्बाणैर्युद्धेरुक्मव-
तीसुतः ॥ यथापुष्पैश्चप्रहतोद्विरदोनृपसत्तम ॥११॥ बाणाञ्छतंस्वधनुषिनिधायाकृष्यमाधवः ॥ चित्रवाजान्स्वर्णपुंखान्मुमोचबहुरोषतः
॥ १२ ॥ तेबाणास्तस्यसर्वांगंभित्त्वाशीघ्रमधोगताः ॥ रुधिराक्तायथाराजन्कृष्णभक्तिपराङ्मुखाः ॥ १३ ॥ शरसंघैश्चसहतोपंचतांप्रधने
गतः ॥ हाहाकारश्चतत्सैन्येबभूवनृपसत्तम ॥ १४ ॥ तदाजयजयारावोयादवानांबभूवह ॥ अनिरुद्धोपरिसुराःपुष्पवर्षांप्रचक्रिरे ॥ १५ ॥
ऊर्द्ध्वकेशस्तुप्रधनाद्दिव्यदेहेनयादव ॥ ययौविमानमारुह्यस्वर्गसुकृतिनांपदम् ॥ १६ ॥ भ्रातरंनिहतंदृष्ट्वानदःशोकेनपूरितः ॥ कुञ्जरस्थोगदं
बाणैःकुञ्जरस्थंजघानह ॥ १७ ॥ आगतान्सायकान्दृष्ट्वाधनुर्द्धारीगदोमहान् ॥ तान्प्रचिच्छेदबाणेनानिरुद्धस्यप्रपश्यतः ॥ १८ ॥ नदस्तदै-
वसंक्रुद्धोभ्रातृशोकपरिप्लुतः ॥ अकरोद्विगजंबाणैःसंग्रामेरौहणीसुतम् ॥ १९ ॥

गिरे, हे राजन् ! जैसे कृष्ण भक्तिसे पराङ्मुख मनुष्य नरकोंमें गिरते हैं ॥१३॥ उन अनिरुद्धके बाणोंसे ताडित उद्र्ध्वकेश संग्राममें मर गया,तब हे नृपश्रेष्ठ ! उसकी सेनामें बड़ा हाहाकार हुआ ॥ १४ ॥ और यादवोंकी सेनामें जयजय शब्द हुआ, और अनिरुद्धके ऊपर देवताओंने पुष्पोंकी वर्षा की ॥१५॥और उद्र्ध्वकेश देहको त्यागकर दिव्य देह होकर विमानमें बैठकर पुण्य करनेवालोंके स्थान स्वर्गको गया ॥ १६ ॥ तब नद नामक दैत्य भाईको मरा हुआ देखकर शोकमें भरकर हाथीपर बैठा हुआ गदके ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥ १७ ॥ गदने उसके बाणोंको आते देखकर धनुषको धारणकर अपने बाणोंसे नदके सब बाण अनिरुद्धके देखते २ काट डाले ॥१८॥ तब भाईके शोकमें डूबे हुये नदने क्रोधित होकर बाणोंके प्रहारसे गदके हाथीको मार डाला ॥ १९ ॥

गदका हाथी नदके सौ बाणोंसे मर गया, और गद पृथ्वीमें खड़ा होगया,यह बड़ा आश्चर्य हुआ ॥ २० ॥ तब क्रोधित हुये गदाको हाथमें लेकर गद जैसे सिंहके मारनेके लिये सिंह आता है, ऐसेही नदके मारनेके लिये आया ॥२१॥तब आये हुये गदको नदके हाथीने सूँड़से पकड़कर सौ योजन ऊपर आकाशमें फेंक दिया॥२२॥तब आकाशमेंसे गिरकर गदने उठकर सूंडको पकड़कर और घुमाकर हाथीको पृथ्वीमें गिरा दिया ॥२३॥ तब वह नदका हाथी मर गया,जिससे नदको बड़ा आश्चर्य हुआ,और गदकी बहुत कुछ प्रशंसा करके नदने अपनी गदा हाथमें ली॥२४॥और गदाधारी गदको बहुत शीघ्र बुलाया और नदने गदको ललकारा॥२५॥तब नदने कहा कि,हे यादव ! तू मनुष्य है, इससे मुझको लज्जा आती है, कि तू मुझसे कैसे संग्राम करेगा ॥२६॥ पहिले तू प्रहार कर, फिर मैं तुझको मार डालूँगा, यह सुनकर गदने ऐसे कहा जैसे वृत्रासुरसे इन्द्रने कहा था ॥२७॥ गद बोला कि,जो मुखसे कहते हैं,वे कुछ करते नहीं हैं,और जो शूरवीर होते हैं वे कहते नहीं हैं,किन्तु पराक्रमको प्रत्यक्ष करके दिखाते हैं ॥२८॥ यह सुनकर नदको बड़ा क्रोध आया,

गजस्तुशतबाणैश्चभिन्नांगःपंचतांगतः ॥ निपपातगदोभूमौतदद्भुतमिवाभवत् ॥ २० ॥ ततःक्रुद्धोगदांनीत्वाहंतुंशत्रुंरणेगदः ॥ आजगामज्वलन्छीघ्रंसिंहःसिंहंवनेयथा ॥ २१ ॥ आगतंतंगृहीत्वातुशुण्डादण्डेनतद्गजः ॥ चिक्षेपसगदंराजन्नाकाशेशतयोजनम् ॥ २२ ॥ पतितःखात्समुत्थायशुण्डादंडंप्रगृह्यसः ॥ पातयामासभूपृष्ठेभ्रामयित्वागजंगदः ॥२३॥ गजोमृत्युंगतोयुद्धेविस्मितोभून्महासुरः ॥ जग्राहस्वगदांगुर्वींश्लाघांकृत्वागदस्यच ॥ २४ ॥ शीघ्रंतमाह्वयामासगदंवीरंगदाधरम् ॥ तथासोपिनदंदैत्यंसंग्रामार्थेविशांपते ॥ २५ ॥ नदःप्रत्याहवचनंत्वंमनुष्योसियादव ॥ तस्माल्लज्जांकरिष्यामिकथंयुद्धंकरिष्यसि ॥ २६ ॥ पूर्वंप्रहारंकुरुमेपश्चात्त्वंतुनजीवसि ॥ इतिश्रुत्वागदःप्राहयथावृत्रंपुरंदरः ॥ २७ ॥ गदउवाच ॥ नकिंचित्तेप्रकुर्वंतियेवदन्तिमुखेनवै ॥ नवदंतिरणेशूरादर्शयंतिपराक्रमम् ॥ २८ ॥ इतिश्रुत्वानदःक्रुद्धोगदस्यहृदयेनदन् ॥ ताडयामासराजेन्द्रगरिष्ठांमहतींगदाम् ॥ २९ ॥ गदयाताडितोवीरोनचचालमृधेगदः ॥ मदोन्मत्तोयथाहस्तीबालेनमालयाहतः ॥ ३० ॥ कथयामासवीराग्र्योदानवंवीक्ष्यलज्जितम् ॥ सहस्वैकंप्रहारंमेयदिवीरःपरंतप ॥ ३१ ॥ इत्युक्त्वानिजघानाथललाटेगदयाभृशम् ॥ सचापितंरुषास्कंधेताडयामासधर्मवित् ॥ ३२ ॥ एवंभृशंप्रकुर्वंतौगदायुद्धविशारदौ ॥ गदायुद्धंप्रकुर्वाणौपरस्परवधैषिणौ ॥३३॥ अन्योन्यघातविमतौक्रोधयुक्तौजयोद्यतौ ॥ नकोवैतत्रजीयेतनप्रहीयेतकोपितु ॥ ३४ ॥

और गर्जना करते हुये उसने गदकी छातीमें एक बड़ी भारी गदामारी ॥२९॥ तब उसकी गदाके प्रहारसे वीर गद युद्धमें थोड़ा भी विचलित नहीं हुआ,जैसे मदोन्मत्त हाथीको बालक फूलोंकी मालासे मारे, और वह विचलित नहीं होता है ॥३०॥ तब वीरोंमें मुख्य गदने उस दैत्यको लज्जित देखकर कहा कि,यदि तू वीर है,तो अब मेरे एक प्रहारको सहन कर ले ॥३१॥ यह कहकर नदके ललाटमें गदने एक गदा मारी, हे धर्मके जाननेवाले ! तब क्रोधित होकर नदने गदके कंधेमें मारी ॥ ३२ ॥ ऐसे गदा युद्धमें बड़े विशारद दोनों गदा युद्ध करते हुये परस्पर मारनेकी इच्छा करते हुये गदायुद्ध करने लगे ॥ ३३ ॥ परस्परके प्रहारोंसे विमन हुये क्रोधसे युक्त, जयके लिये उद्यत हुये दोनोंमेंसे न तो कोई हारा और न कोई जीता ॥ ३४ ॥

ललाटमें, कंधेमें, मस्तकमें, हृदयमें और सब अंगोंमें रुधिरसे भीगे हुये वे दोनों खिले हुये पलाशके वृक्षोंके समान दिखाई देने लगे ॥३५॥ हे महाराज ! उन दोनोंका गदाओंसे महायुद्ध हुआ, जिसमें दोनोंकी गदाएं परस्परकी चोटसे चूर्ण होकर गिर पड़ी ॥३६॥ तब फिर गदका और दैत्यका द्वन्द्व युद्ध हुआ, तब तो गदने उसको दोनों हाथोंसे पकड़कर क्रोधित होकर ऐसे पृथ्वीमें डाल दिया, जैसे सिंह महिषको डाल देता है, तब दैत्यने गदकी छातीमें एक घूंसा मारा, तब गदने भी घूंसा बांधकर दैत्यके शिरमें मारा, इस प्रकार घूंसोंसे, घुटनोंसे, पांवोंसे, और थप्पडोंसे तथा बाहुओंसे परस्पर दोनों प्रहार करने लगे ॥३७॥ ३८॥ ॥३९॥ क्रोधसे ओंठोंको काटकर क्रोधित होकर दैत्यने बलपूर्वक गदके दोनों पांवोंको पकड़कर घुमाकर पृथ्वीमें मारा, तब गदने भी उठकर दैत्यके पांवोंको पकड़कर घुमाकर क्रोधित होकर हाथीपर मारा ॥४०॥ ॥४१॥ ४२ ॥ फिर दैत्यने उठकर गदको

भालेस्कंधेतथामूर्ध्निहृदिगात्रेषुसर्वतः ॥ रुधिरौघप्लुतौक्लिन्नौकिंशुकाविवपुष्पितौ ॥३५॥ तयोरासीन्महायुद्धंगदाभ्यामेवसंयुगे॥विस्फुलिंगान्क्षरंत्योर्द्वेगदेचूर्णीबभूवतुः ॥३६॥ तयोर्युद्धमभूद्घोरंबाहुभ्यांगददैत्ययोः ॥ तदारामानुजःक्रुद्धोभुजाभ्यामुपगृह्यतम् ॥ ३७ ॥ पातयामासभूपृष्ठेमहिषंहरिराडिवथा ॥ तदादैत्यस्तुतस्यापिहृदिजघ्नेप्रमुष्टिना ॥३८॥ तदासोपिशिरस्येकंमुष्टिंबद्ध्वाजघानह ॥ मुष्टिभिर्जानुभिःपादैस्तालस्फोटैश्चबाहुभिः ॥ ३९ ॥ परस्परंजघ्नतुस्तौसंदष्टाधरपल्लवौ ॥ ततःक्रुद्धोरणेदैत्योगदस्यचरणंबलात् ॥४०॥ गृहीत्वाभ्रामयित्वाचपातयामासभूतले ॥ तदागदःसमुत्थायगृहीत्वाचरणंरिपोः ॥४१॥ भ्रामयित्वागजोपस्थेनिजघानरुषाज्वलन्॥पुनर्दैत्यःसमुत्थायगृहीत्वारोहिणीसुतम् ॥ ४२ ॥ चिक्षेपचौजसाराजन्गगनेशतयोजनम् ॥ पतितोपिसवज्रांगःकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥४३॥ चिक्षेपगगनेदैत्यंयोजनानांसहस्रकम् ॥ पतितोपिसमुत्थायपुनर्युद्धंचकारसः ॥ ४४ ॥ गदोनदंनदोगदंनिजघ्नतुःपरस्परम् ॥ प्रमुष्टिभिश्चदारुणैर्महद्रणेनृपेश्वर ॥ ४५ ॥ दंडादंडिमुष्टामुष्टिकेशाकेशिनखानखि ॥ दंतादंत्युभयोर्युद्धंघोरमेवंबभूवह ॥४६॥ इत्थंनियुद्ध्यमानौतौप्रकुर्वंतौरणंपुनः ॥ पादपादंहृदिहृदंकरेकरंमुखेमुखम् ॥४७॥ अन्योन्यमित्थंसंलग्नौपरस्परवधैषिणौ ॥ बलाक्रांतावुभौतौद्वौपतितौचमुमूर्च्छतुः ॥४८॥ इत्थंदृष्ट्वातयोर्युद्धंयादवाश्चैव दानवाः ॥ गदोधन्योनदोधन्यःप्रोचुर्वाक्यमिदंनृप ॥ ४९ ॥

पकड़कर हे राजन् ! पुरुषार्थसे आकाशमें सौ योजन ऊँचा फेंक दिया ॥ ४३ ॥ हे राजन् ! गिरे हुये भी वज्रके समान अंगवाले गदने कुछ व्याकुल मन होकर दैत्यको पकड़कर आकाशमें एक हजार योजन ऊपर उछालकर फेंका, तब वह दैत्य इतने ऊपरसे गिरकर भी फिर युद्ध करने लगा ॥४४॥४५॥४६॥ इस प्रकार परस्पर दोनों दारुण घूंसोंसे प्रहार करने लगे, हे महाराज ! इस प्रकार दोनोंका दंडा, दंडि, दंता दंति, मुष्टा मुष्टि. नखा नखि, और केशा केशि, अनेक प्रकारसे भयंकर युद्ध हुआ ॥४७॥ इस प्रकार युद्ध करते हुये वे दोनों पांवपर पांवको छातीपर छांती, हाथमें हाथ, और मुखमें मुखको परस्पर लगाये हुये बलसे भरे हुये लड़ते लड़ते पृथ्वीमें गिरकर मूर्च्छित होगये॥४८॥ऐसे उनके युद्धको देखकर यादवोंने तो गदको और दानवोंने दैत्यको धन्यवाद दिया ॥ ४९ ॥

तब गदको पृथ्वीमें पड़ा हुआ देखकर अनिरुद्धजीने शोकमें पूर्ण होकर जलसे और पंखेकी हवासे गदको चैतन्य कराया ॥५०॥ तब तो एकक्षणमेंही गद उठ बैठा, और नद कहाँ है ? नद कहाँ है ? मेरे भयसे संग्रामको छोड़कर कहाँ गया ? ऐसे कहने लगा ॥५१॥ तब रणमें मरे हुये गिरे नदको देखकर देवताओंने और यादवोंने जयजय शब्द किया॥५२॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां त्रिंशोऽध्यायः ॥३०॥ गर्गजी कहते हैं कि, उसके बाद सिंह नामक दैत्य गधेपर बैठा हुआ अपनी पराजयको देखकर क्रोधसे युक्त होकर रथमें बैठे हुये वृकको बाणोंसे मारा ॥१॥ कृष्णके पुत्र वृकने आते हुये उसके बाणोंको देखकर अनायासही अपने बाणोंसे उन बाणोंको काट डाला ॥२॥ तब सिंहने फिर बाण मारे, वृकने वे बाण भी काट डाले, तब हे राजन् ! सिंहको संग्राममें बड़ा क्रोध आया ॥३॥ और उसने अपने धनुषमें आठ बाण लगाये, उनमेंसे चार बाणोंसे तो वृकके चार घोड़े

गदंनिपतितंदृष्ट्वानिरुद्धःशोकपूरितः ॥ चैतन्यंकारयामासजलेनव्यजनेनच ॥५०॥ तदैवसोपिराजेन्द्रउत्थितःक्षणमात्रतः ॥ क्वनदःक्वनदोया-
तोत्यक्त्वायुद्धंभयान्मम ॥५१॥ निरीक्ष्यदानवंतत्रमूर्च्छितंपंचतांगतम्॥चक्रुर्जयजयारावंयादवाश्चैवदेवताः ॥५२॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां
हयमेधखण्डेऊर्द्ध्वकेशनदवधोनामत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥ गर्गउवाच ॥ स्वस्याःपराजयंदृष्ट्वासिंहोदैत्योरुषान्वितः ॥ निजघानवृकंबाणै
रथस्थंखरवाहनः ॥१॥ दृष्ट्वासमागतान्बाणान्वृकोवैकृष्णनन्दनः ॥ चिच्छेदतान्स्वबाणैश्चलीलयाप्रधनेनृप ॥२॥ पुनश्चिक्षेपबाणान्वैतांश्च
चिच्छेदकृष्णजः ॥ ततःक्रुद्धोरणेराजन्सिंहनामाऽसुरेश्वरः ॥३॥ शरासनेसमाधत्तवसुसंख्याञ्छिलीमुखान्॥चतुर्भिस्तुरगान्वीरोवृकस्यह्यन-
यत्क्षयम् ॥४॥ एकेनध्वजमत्युग्रंचिच्छेदतरसाहसन् ॥ एकेनसारथेःकायाच्छिरोभूमावपातयत् ॥५॥ एकेनसगुणंचापमच्छिनत्प्रधनेरुषा ॥
एकेनहृदिविव्याधवृकस्यवेगवान्नृपः ॥६॥ तस्यकर्माद्भुतंदृष्ट्वावीराविस्मयमागताः ॥ वृकस्तदैवसहसादैत्यंशक्त्याजघानह ॥७॥ साशक्तिस्त-
त्तनुंभित्त्वाखरंभित्त्वाविनिर्गता ॥ विवेशभूतलेराजन्विवरंपन्नगोयथा ॥ ८ ॥ खरोमृत्युंगतस्तत्रदैत्यःशीघ्रंपपातह ॥ जगर्जपुनरुत्थायसिंहः
सिंहइवस्फुटम् ॥ ९ ॥ गृहीत्वाविशिखंशूलंचिक्षेपसवृकोपरि ॥ तमापतंतंजग्राहवृकोवामकरेणवै ॥१०॥ तेनैवशत्रुंनिजघानराजन्कृष्णस्यपु-
त्रोबहुरोषयुक्तः ॥ निर्भिन्नदेहोनिपपातभूमौहाहाप्रकुर्वन्सजगाममृत्युम् ॥ ११ ॥

मार डाले ॥ ४ ॥ और हँसते हुये उसने एक बाणसे वृककी ध्वजा काट डाली, और एक बाणसे सारथीको मार डाला ॥५॥ और एक बाणसे प्रत्यंचासहित धनुष काट डाला, और एक बाण वृककी छातीमें मारा ॥ ६ ॥ सिंहके इस अद्भुत कर्मको देखकर सब वीर बड़े विस्मित हुये, तब वृकने सिंहके ऊपर शक्तिका प्रहार किया ॥ ७ ॥ तब वह शक्ति सिंहदैत्यको और उसके गधेको भेदन करके हे राजन् ! बिलमें सर्पकी तरह पृथ्वीमें प्रविष्ट हो गई ॥८॥ तब वह गधा तो मर गया और दैत्य पृथ्वीमें गिर पड़ा, और फिर उठकर उसने सिंहके समान गर्जना की ॥९॥ तब सिंहने वृकके त्रिशूल मारा, उस त्रिशूलको वृकने बायें हाथसे पकड़ लिया ॥१०॥ और हे राजन् ! उसी त्रिशूलको कृष्णके पुत्र वृकने बहुत क्रोधित होकर शत्रु सिंह दैत्यके ऊपर फेंका, तब वह सिंह दैत्य हाहाकार करता हुआ भिन्नदेह होकर मरकर गिर पड़ा ॥ ११ ॥

उसी समय संग्राममें दानवोंका हाहाकार शब्द हुआ, देवताओंने पुष्प बरसाये और यादवोंने जयजय शब्द किया ॥१२॥ तब तो कुशाम्बको क्रोध आया, और वह रथमें बैठकर शीघ्र आकर साम्बादिक यादवोंको बाणोंसे बेधने लगा ॥१३॥ कुशाम्बके बाणोंसे बहुतसे हाथी कटकर गिर पड़े, और टेढ़े होकर रथ और कंधे कटकर घोड़े रणमें गिर पड़े ॥१४॥ और इसी प्रकार शिर और भुजाएं जिनकी कट गई ऐसी पैदल सैनिक गिर पड़े, इस तरह अनेकोंको मारता हुआ कुशाम्ब विचरने लगा ॥१५॥ ऐसे कुशाम्बके पराक्रमको देख कर युद्धमें विशारद जाम्बवतीके पुत्र साम्बने उसको ललकारा ॥१६॥ साम्बने कहा कि, हे वीर ! मेरे सामने आकर संग्राम करो, और अन्य विचारे करोड़ों मनुष्योंको मारनेसे क्या लाभ है ? ॥१७॥ ऐसे कहते हुये साम्बको देखकर हँसते हुये कुशाम्बने साम्बके हृदयमें आठ बाण मारे ॥ १८ ॥ तब उन बाणोंको नहीं सहते हुये साम्बने धनुषमें लगाकर

हाहाकारस्तदैवासीद्दानवानांरणांगणे ॥ पुष्पवर्षंसुराश्चक्रुः जयारावंययूत्तमाः॥१२॥तदाकुशांबःसंक्रुद्धोसांबादीन्यादवान्मृधे॥रथस्थःशीघ्र-मागत्यसर्वान्विव्याधसायकैः ॥१३॥ तस्यबाणैश्चबहवःपेतुश्छिन्नामहागजाः ॥ तिर्यग्भूतारथायुद्धेतुरगाश्छिन्नकंधराः ॥१४॥ तथापदात-यस्तत्रशिरोहीनाविबाहवः ॥ इत्थंसमारयन्राजन्ननेकान्विचचारह ॥१५॥ एवंपराक्रमंदृष्ट्वासांबोजांबवतीसुतः॥कुशांबंचाह्वयामासयुद्धार्थंयुद्ध-कोविदः ॥ १६ ॥ सांबउवाच ॥ आगच्छवीरसहसामयासहरणंकुरु ॥ किमन्यैस्त्रासितैर्दीनैर्निहतैःकोटिभिर्नरैः ॥ १७ ॥ इत्युक्तवन्त-मालोक्यकुशांबःप्रहसन्बली ॥ जघानहृदयेतस्यवसुसंख्याञ्छिलीमुखान् ॥१८॥ तदमृष्यन्हरेःपुत्रःस्वकोदंडेदधञ्छरान् ॥ तताडसप्तभिः शत्रुदानवंबक्षसोंतरे ॥ १९ ॥ उभौसमरसंरब्धावुभावपिजयैपिणौ ॥ रेजातेतौहिसंग्रामेयथापण्मुखतारकौ ॥२०॥ सांबःकुशांबंप्रधनेकुशांबः सांबमेवच ॥ अन्योन्यंसर्पसदृशैर्बाणैरपिववर्षतुः॥२१॥बाणान्धनुषिसंधायशतसंख्यान्स्फुरत्प्रभान् ॥ अकरोद्विरथंतैश्चसांबंछिन्नशरासनम् ॥ २२ ॥ सच्छिन्नधन्वाविरथोहताश्वोहतसारथिः ॥ आरुरोहरथंचान्यंकुपितश्चापसंयुतः ॥ २३ ॥ सांबउवाच ॥ कुत्रयास्यसित्वंदैत्य कृत्वादीर्घपराक्रमम् ॥ क्षणमात्रंरणेस्थित्वापश्यमेविक्रमंपरम् ॥२४॥ इत्युक्त्वासायकंचाग्र्यंस्वकोदंडेनिधायच॥ मंत्रयित्वाचमंत्रेणतद्रथेनिच-खानह ॥ २५ ॥ अलातचक्रवद्भ्रमौतेनबाणेनतद्रथः ॥ बभ्रामयोजनेशीघ्रंससूतःसतुरंगमः ॥ २६ ॥

सात बाण दैत्यकी छातीमें मारे ॥ १९ ॥ विजयकी इच्छावाले दोनों संग्राम करते हुये ऐसे शोभित हुये, जैसे स्वामिकार्तिकेय और तारकासुर लड़ रहे हों ॥२०॥ तब साम्ब और कुशाम्ब दोनों सर्प सदृश बाणोंसे आपसमें प्रहार करने लगे ॥२१॥ तब कुशाम्बने धनुषमें सौ बाण लगाकर उन बाणोंसे साम्बका धनुष काटकर रथ तोड़ डाला ॥ २२ ॥ तब धनुष कट जानेपर, रथ टूट जानेपर और घोड़े तथा सारथीके मर जानेपर साम्ब दूसरा धनुष लेकर दूसरे रथमें बैठा ॥२३॥ और यह बोला कि, इस बड़े पराक्रमको करके रे दैत्य ! अब तू कहाँ जायगा ? एक क्षणभर मेरे सामने ठहरकर मेरे पराक्रमको देख ॥२४॥ इतना कहकर एक बाणको अपने धनुषमें लगाकर उस बाणको मन्त्रसे अभिमन्त्रित करके दैत्य के रथमें वह बाण मारा ॥ २५ ॥ तब उस बाणके प्रहारसे अलात चक्रकी तरह कुशाम्बका रथ पृथ्वीमें एक योजनतक सारथी और घोड़ोंसमेत घूमने लगा ॥ २६ ॥

तब रथ सहित घूम रहे कुशाम्बको देखकर बाणको धनुषमें लगाकर हँसते हुये साम्बने कहा ॥२७॥ कि अरे ओ दैत्य ! तेरे समान महावीर इन्द्रके बराबर पराक्रमी पृथ्वीमें रहने योग्य नहीं है, किन्तु स्वर्गके रहने योग्य है ॥ २८ ॥ इस लिये मेरे इस दूसरे बाणसे तू स्वर्गमें जा हे असुरेश्वर ! रथ समेत और देह सहित मेरी कृपासे स्वर्गको जायगा ॥२९॥ क्योंकि देख, यह मेरा अस्त्र आकाशमें प्राप्त करनेवाला है ऐसे कहकर वह बाण छोड़ा, तब हे नृप ! उस बाणसे रथ समेत पृथ्वीसे भ्रमण करता हुआ कुशाम्ब बहुतसे लोकोंको अति क्रमण करता हुआ रविमण्डलको गया ॥३०॥ वहाँ सूर्य लोकमें सूर्यकी ज्वालासे घोड़ों सहित वह रथ जल गया, और जिसका शरीर जल गया ऐसा वह दैत्य पुरीमें बल्वलके पास जाकर पड़ा ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ तब पापी दैत्यको मारकर गिरा हुआ देखकर सब दैत्य हाहाकार करने लगे ॥३३॥ और उसके बाद यादवोंकी सेनामें दुन्दुभियाँ बजने लगीं और आकाशमेंसे देवताओंने पुष्प बरसाये ॥३४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायामेकत्रिंशोऽध्यायः ॥३१॥ उसके बाद शोच करते हुये, सुवर्णके आसनपर बैठे

भ्रमंतंसरथंदैत्यंदृष्ट्वाप्राहहसन्मुखः ॥ सांबोजांबवतीपुत्रोबाणंकृत्वाशरासने ॥ २७ ॥ सांबउवाच ॥ त्वादृशाश्चमहावीराःस्वर्गयोग्याभवं-
तिहि ॥ नराजंतेमहीमध्येशक्रतुल्यपराक्रमाः ॥ २८ ॥ तस्माच्चममबाणेनद्वितीयेनदिवंव्रज ॥ सरथस्त्वंसदेहश्चमत्कृपातोऽसुरेश्वर ॥२९॥ गग-
नप्रापकंचास्त्रमित्युक्त्वाविमुमोचसः ॥ शरेणतेनसरथोविभ्रमन्भूतलान्नृप ॥३०॥ लोकान्बहूनतिक्रम्यजगामरविमंडलम् ॥ सहयःसूतसहित-
स्तत्रसूर्यस्यज्वालया ॥ ३१ ॥ दग्धोभूत्तद्रथःसद्योदैत्योदग्धकलेवरः ॥ पपातभूतलेपुर्यांबल्वलस्यचसन्निधौ ॥३२॥ तस्मिन्निपतितेपापेगते
मृत्युंचदानवे ॥ हाहाकारंततश्चक्रुर्दैत्याःसर्वेभयान्विताः ॥३३॥ यादवानांततःसैन्येनेदुर्दुंदुभयोमुहुः ॥ पुष्पवर्षंमुदाचक्रुःसांबस्योपरिनिर्जराः
॥ ३४ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेसिंहकुशांबवधोनामैकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥ गर्गउवाच ॥ अथवैबल्वलंदैत्यंशोचंतंकां-
चनासने ॥ मयःप्रत्याहवचनंज्येष्ठंकुंभश्रुतिर्यथा ॥१॥ अद्यदृष्टंत्वयाराजन्यदूनांबलमेवहि ॥ दैत्यवृन्दैश्चनिहताश्चत्वारोमंत्रिणस्तव ॥२॥
अवशेषस्त्वमेवासिद्वयथावाहंचत्वत्पुरे ॥ तस्मात्तवेच्छादैत्येंद्रयथाभूयात्तथाकुरु ॥३॥ बल्वलःप्राहवचनमद्ययास्याम्यहंरणे ॥ शीघ्रंहंतुंयदून्स-
र्वांस्त्वंगुप्तोभवमन्दिरे ॥४॥ हरिःकृष्णस्तुनंदस्यपुरापुत्रःप्रकीर्तितः ॥ वसुदेवोमन्यतेतंमत्पुत्रोयंगतत्रपः ॥५॥ हैयंगवीनदुग्धाज्यदधितक्रा-
दिकंतुसः ॥ चोरयामासगोपीनांरसिकोरासमण्डले ॥६॥ जरासुतभयात्सोपिससमुद्रंशरणंगतः ॥ मारितोमातुलोयेनकिंकरिष्यति पौरुषम् ॥७॥

हुये अपने बडे भाई बल्वल दैत्यसे मय बोला ॥१॥ कि हे राजन् ! आज तुमने यादवोंके बलको देखा जो यादवोंने आपके चार मंत्री दैत्यवृन्द सहित मार डाले ॥२॥ अब आपके पुरमें या तो आप अथवा मैं दोही मरनेसे बाकी रहे हैं, सो हे दैत्येन्द्र ! जैसी आपकी इच्छा हो, वैसा करिये ॥३॥ यह सुनकर बल्वल बोला कि, अब आज मैं सब यादवोंके मारनेके लिये युद्धमें जाऊँगा, और तुम नगरमें छुपकर रहो ॥४॥ हरि श्रीकृष्ण पहिले तो नन्दका पुत्र कहा गया, उसको यह निर्लज्ज वसुदेव अपना पुत्र मानता है ॥५॥ मक्खन, दूध, घी, दही और छाँछ आदि वस्तुएँ जिसने चुराई हैं, और जो रास मंडलमें गोपियोंका रसिक है ॥ ६ ॥ जो श्रीकृष्ण जरासंधके भयसे अपनी पुरी मथुराको छोडकर समुद्रकी शरणमें चला गया, और जिसने अपना मामा मारडाला है, वह क्या पुरुषार्थ करेगा ॥ ७ ॥

बल्वलके ये वचन सुनकर क्रोधित होकर फिर मय बोला कि अरे ! जिनसे ब्रह्मा, शिव, पार्वती और इन्द्र डरते हैं, ऐसे सबको भयको देनेवाले और स्वयम् निर्भय जो कृष्ण हैं, हे निंदक ! तू भगवान् कृष्णकी निन्दा करता है, जो कृष्णकी निन्दा करता है, वह अज्ञानसे और कुसंगसे करता है, वह महामूढ है ॥ ८ ॥९ ॥ और वह ब्रह्माकी आयु पर्यन्त कुम्भीपाक नरकमें गिरता है ॥१०॥ बड़े बड़े चण्डपाल और शिशुपालकी मण्डलीको खण्डन करनेवाले दैत्योंके दर्पको नष्ट करनेवाले, लक्ष्मीके, पति, कामदेवको मोह करनेवाले भगवान् श्रीकृष्णका अपने कुलके कौशलके लिये भजन करो ॥ ११ ॥ हे राजन् ! मयके इस कथनको सुनकर ज्ञानको प्राप्त हुआ बल्वल क्षणभर विचार करके मन्द हँसता हुआ बोला कि ॥१२॥ मैं विश्व पति कृष्णको, शेष भगवान्के रूप साक्षात् बलदेवजीको, कामदेवके रूप प्रद्युम्नजीको, और ब्रह्माके रूप अनिरुद्धको जानता हूँ और इनकेही हाथसे मेरी मृत्यु है, यह समझकरही मैंने घोड़ेको पकडा है ॥१३॥ जब मैं इनके बाणोंसे ताडन किया हुआ मरूँगा, तब सुखसे शीघ्रही विष्णुके परम पदको जाऊँगा ॥ १४ ॥ पहिले बहुतसे

इतितद्वाक्यमाकर्ण्यमयःप्रकुपितोऽब्रवीत् ॥ मयउवाच ॥ यस्माद्बिभेतिब्रह्माचशिवोमायापुरंदरः ॥ ८ ॥ भयदंनिर्भयंकृष्णंतं विनिंदसिनिंदक ॥ कृष्णंनिंदतियोमूढोह्यज्ञानाच्चकुसंगतः ॥९॥ कुम्भीपाकेसपततियावद्वैब्रह्मणोवयः ॥१०॥ चण्डपालशिशुपालमण्डलीभञ्जनंदनुजदर्पखण्डनम् ॥ माधवंमदनमोहनंपरंत्वंभजस्वकुलकौशलायच ॥११॥ मयस्यवचनंश्रुत्वाज्ञानंप्राप्तोपिबल्वलः ॥ क्षणंविचार्यराजेंद्रप्रोवाचप्रहसन्निव ॥ १२ ॥ बल्वलउवाच ॥ जानाम्यहंविश्वपतिंचकृष्णंशेषंबलंवैमदनंचकार्ष्णिम् ॥ अत्रागतंपद्मभवंहिचैषांवध्यावयंतेनहयोहृतोयम् ॥१३॥ एषांबाणैश्चनिहतोयदाहंनिधनंगतः ॥ तदासुखेनयास्यामिशीघ्रंविष्णोःपरंपदम् ॥१४॥ पुराचवैरभावेनवैकुण्ठंबहवोगताः ॥ दानवाराक्षसाश्चैवतंचभावंकरोम्यहम् ॥ १५ ॥ इत्युक्त्वादंशितोभूत्वादानवानांशिरोमणिः ॥ स्वसैन्यपालकंतूर्णंसमाहूयेदमब्रवीत् ॥ १६ ॥ पटहेनममाज्ञांत्वंपुर्यांदेहिप्रयत्नतः ॥ अनिरुद्धेनयुद्धायवीरेषुसैन्यपालक ॥१७॥ येममाज्ञांनमन्यन्तेतेवधार्हारणंविना ॥ आत्मजावाभ्रातरोवाह्यन्येषांचैवकाकथा ॥ १८ ॥ इतिश्रुत्वासतद्वाक्यंरथ्यांरथ्यांगृहेगृहे ॥ पटहेनापितस्याज्ञांघोषयामासवेगतः ॥ १९ ॥

दैत्य राक्षस भगवान्से वैर (शत्रुता) करनेसे वैकुण्ठ भवनको जा चुके हैं, मैं भी उसी वैर भावको करता हूँ ॥१५॥ दैत्योंका मुकुट मणि वह बल्वल दैत्य इतना कहकर कवच पहिन कर अपने सेनापतिको बुलाकर यह वचन बोला ॥ १६ ॥ हे सेनापते ! तुम प्रयत्न पूर्वक डिण्डौरे (नगाडेके शब्द) के द्वारा मेरी इस आज्ञाको नगरमें प्रसारित कर दो, कि सब योद्धाओंको अनिरुद्धसे संग्राम करना पडेगा, सो तैयार होजाओ ॥ १७ ॥ जो कोई मेरी इस आज्ञाको न माने, उनको चाहे वे पुत्र हों अथवा भाई विनाही संग्रामके मार डालो, फिर औरोंकी तो बातही क्या है ? ॥ १८ ॥ तब सेन तिन राजा बल्वलके कथनको सुनकर गली गली और घर घरमें बड़ी शीघ्रतासे डिण्डौरा पिटवाकर राजाकी आज्ञा घोषित कर दी ॥ १९ ॥

उस ढिण्डोरेकी आज्ञाको सुनकर भयसे आतुर सब दैत्य शस्त्रोंको लेकरही बड़ी जल्दी सभामें आगये ॥२०॥ तब सेनापति सबसे पहिले एक लाख दैत्योंको साथ लेकर रथमें बैठकर कवच पहिनकर नगरके बाहिर निकला ॥ २१ ॥ उस सेनापतिके साथ दुर्नेत्र, दुर्मुख, दुःख भाव और दुर्मद ये चार मन्त्रियोंके पुत्र निकले ॥२२॥ मत्त गज और चञ्चल घोड़, विमान के जैसे रथ, तथा विद्याधरोंके समान सैनिकोंको साथ लेकर ॥२३॥ बहुत शीघ्र इच्छानुसार चलनेवाले, मयके दिये हुए रथमें बैठकर चार लाख दैत्योंको साथ लेकर बल्वल निकला ॥२४॥ उस समय सेनापतिका पुत्र भूखा था, सो वह भोजन करता हुआ घरमें रह गया, युद्धके लिये नहीं निकला ॥ २५ ॥ तब सेनापतिके पुत्रको नहीं आया देखकर सेनामें बल्वलके जो सेनापति थे,उन्होंने बल्वलसे कहा कि,महाराज ! सेनापतिका पुत्र नहीं आया ॥२६॥ तब बल्वलने आज्ञा दी कि जाओ, बाँधकर ले आओ,तब राजाकी आज्ञाको सुनते ही वीर सैनिक गये और सेनापतिके पुत्रको रस्सियोंसे बाँधकर,प्रसन्न हैं मुख और नेत्र जिनके ऐसे वे सैनिक उसको राजाके सामने ले आये ॥२७॥ तब प्रचण्ड शासनवाले बल्वलने

श्रुत्वापटहनिर्घोषंदैत्याःशीघ्रंभयातुराः॥गृहीत्वासर्वशस्त्राणिह्याजग्मुस्तेसभातलम् ॥२०॥ सैन्यपालस्ततःपूर्वंलक्षदैत्यैःपरिवृतः ॥ रथेनकवचीधन्वीनिर्जगामपुराद्बहिः ॥ २१ ॥ दुर्नेत्रोदुर्मुखश्चैवदुःखभावश्चदुर्मदः ॥ एतेवैमंत्रिणांपुत्राश्चत्वारस्तेविनिर्ययुः॥२२॥मतंगजैर्महामत्तैश्चंचलांगैस्तुरंगमैः ॥ रथैश्चदेवधिष्ण्याभैर्विद्याधरसमैर्नरैः ॥ २३ ॥ सद्यः कामगयानेनमयदत्तेनबल्वलः ॥ स्वयंजगामयुद्धार्थेचतुर्लक्षैर्महासुरैः ॥ २४ ॥ सैन्यपालस्यपुत्रस्तुभोजनंकुरुतेगृहे ॥ बुभुक्षितश्चयुद्धायशीघ्रंसोपिननिर्गतः ॥२५॥ नागतंतंविलोक्याथसैन्येबल्वलसैनिकाः ॥ नृपायकथयामासुस्तस्यवार्ताचशंकिताः ॥२६॥ ततस्तद्वचनाद्वीराबद्ध्वातंदामभीरुषा ॥ नृपाग्रेचानयामासुःप्रफुल्लवदनेक्षणाः ॥२७॥ तंदृष्ट्वा भर्त्सयित्वाचबल्वलश्चण्डशासनः ॥ भुशुण्डींवदनेचापिमारयामासवेगतः॥२८॥दैत्याःसर्वेभयंप्रापुर्वधंतस्यनिरीक्ष्यच॥सैन्यपालस्तुसंग्रामेमृतंपुत्रंनिशम्यच ॥ २९ ॥ रथात्पपातदुःखार्तस्ताडयन्मस्तकंकरैः ॥ विललापभृशंसोपिपुत्रदुःखेनदुःखितः ॥३०॥ हापुत्रवीरपितरंत्यक्त्वामांजरठंरणे ॥ गतःशतघ्नीमार्गेणस्वर्गेमामविलोक्यच ॥३१॥ विना युद्धेनहेपुत्रक्वगतोनृपशासनात् ॥ इत्येवंविलपंस्तत्ररुरोदरणमण्डले ॥ ३२ ॥ ततश्चमंत्रिणांपुत्राःशोचंतंप्रोचुरग्रतः ॥ मंत्रिपुत्राऊचुः ॥ रोदनंमाकुरुरणेशूरोसित्वंतुपालक ॥ ३३ ॥

सेनापतिके पुत्रको फटकारा, और उसके मुखमें वेगसे बल्वलने एक भुशुण्डि (बंदूक) मारी ॥ २८ ॥ तब उसके वधको देखकर सब दैत्य भयभीत होगये, और सेनापति भी अपने पुत्रको मरा हुआ सुनकर ॥ २९ ॥ अपने हाथोंसे शिरको पीटता हुआ दुखसे पीड़ित होकर रथमेंसे गिर पड़ा, और पुत्रके दुःखसे बहुत दुखी होकर विलाप करने लगा ॥ ३० ॥ हायवीर ! हा पुत्र ! वृद्ध मुझ पिताको रणमें छोड़कर बिना देखेही शतघ्नीके मार्गसे तू स्वर्गको चला गया ॥ ३१ ॥ हाय बिना युद्ध कियेही राजाकी आज्ञासे तू कहाँ गया ? ऐसे रण भूमिमें सेनापतिने बहुत रुदन किया ॥ ३२ ॥ तब पुत्र शोकसे विलाप कर रहे सेनापतिको सामने आकर मंत्रियोंके पुत्रोंने समझाया, वे बोले कि हे सेनापतिजी ! आप रुदन मत करिये, हे पालक ! आप तो वीर हैं ॥ ३३ ॥

देखिये, दुःख करनेसे आपका मरा हुआ पुत्र अब आपके पास नहीं आयेगा, जन्म लेनेवालेकी मृत्यु अवश्यही होती है ॥ ३४ ॥ उसके विषयमें धीर पुरुष चिन्ता नहीं करते हैं, मूर्खही नित्य चिन्ता करते हैं, कोई तो गर्भमेंही और कोई जन्म लेतेही मर जाते हैं, कोई बाल्यावस्थामें, कोई युवावस्थामें, कोई वृद्धावस्थामें, कोई शस्त्रसे कोई रोगसे, कोई दुःखसे, कोई गिरनेसे, दैवसे बलसे कर्मोंके वशीभूत सब मरेंगे, कौन किसका पुत्र और कौन किसका पिता है ? कौन किसका प्रिय और कौन किसकी माता है ? अर्थात् कोई किसीका नहीं है, विधाता सबका संयोग और वियोग करता है, संयोगमें आनन्द और वियोगमें सबको दुख होता है ॥३५॥३६॥३७॥३८॥ किन्तु, ये सुख दुःख मूर्ख मनुष्यकोही होते हैं, आत्मारामको नहीं होते हैं, इसलिये दुखित हुये तुम आत्मघाती बनकर प्राणोंको छोड़ोगे ॥३९॥ तो पुनर्जन्म तथा नरकको निःसन्देह प्राप्त होवोगे, इससे इस महायुद्धमें यदूत्तमोंके साथ युद्ध करो ॥ ४० ॥ क्षत्रियके लिये धर्म युद्धसे अधिक कल्याणकारी मार्ग दूसरा नहीं है, जो शत्रुके सामने धर्म युद्ध करके संग्राममें मरते हैं ॥४१॥ वे सब लोकोंको उल्लंघन

दुःखेकृतेचत्वत्पार्श्वेनागमिष्यतिवैमृतः ॥ आजन्मतश्चजंतूनांमृत्युर्भवतिसांप्रतम् ॥ ३४ ॥ धीरास्तत्रनशोचंतिमूर्खाःशोचंतिनित्यशः ॥ गर्भेपिचमृताःकेचित्केचिद्वैजन्ममात्रतः ॥३५॥ बालत्वेयौवनत्वेचवृद्धत्वेकेचिदेवहि ॥ केचिच्छस्त्रेणरोगेणदुःखेनपतनेनच॥३६॥सर्वैमृत्युंग- मिष्यंतिदैवात्कर्मवशानराः ॥ कोवाकस्यपितापुत्रःकोवाकस्यप्रियाप्रसूः ॥३७॥ संयुनक्तिविधातावैवियुनक्तिचकर्मणा ॥ संयोगेपरमानन्दो वियोगेप्राणसंकटम् ॥३८॥ शश्वद्भवतिमूढस्यनात्मारामस्यनिश्चितम् ॥ आत्मघातीयदाभूत्वाप्राणांस्त्यजसिदुःखितः॥३९॥पुनर्जन्मचनि- रयंव्रजिष्यसिनसंशयः ॥ तस्माद्यदूत्तमैःसार्द्धंयुद्धंकुरुमहारणे ॥४०॥ क्षत्रियस्यपरंश्रेयोधर्मयुद्धान्नविद्यते॥ धर्मयुद्धेनसंग्रामेयेहताःशत्रुसंमुखे ॥ ४१ ॥ व्रजंतितेविष्णुपदंलोकान्सर्वान्विहायच ॥ गर्गउवाच ॥ एवंसंबोधितोदैत्यैःशोकंसर्वंविहायच ॥ ४२ ॥ सर्वान्वीरानागतांश्च ददर्शरोषपूरितः॥दृष्ट्वासर्वान्ससंग्रामेशीघ्रंप्राहरुषाज्वलन् ॥ ४३ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेसैन्यपालसुतवधोनामद्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥ सैन्यपालउवाच ॥ अत्रागताश्चसर्वेपिधन्विनोयुद्धदुर्मदाः ॥ युवराजोनृपसुतोरणेचात्रनदृश्यते ॥१॥ सकिंकरिष्यतिगृहेमार- यित्वाचमत्सुतम् ॥ सभुशुण्डीमुखेनापितन्मार्गंकिंनयास्यति ॥ २ ॥ इत्युक्त्वारोषताम्राक्षोग्रहीतुंनृपनन्दनम् ॥ जगामनगरींशीघ्रंसैन्यपालः प्रहर्षितः ॥ ३ ॥ सराजपुत्रोमदिरांपीत्वावैभोजनांतरे ॥ चकारशयनंरात्रौविस्मृतोमदविह्वलः ॥ ४ ॥

करके विष्णुके पदको जाते हैं, गर्गजी कहते हैं कि, इस प्रकार दैत्योंने समझाया, तब शोकोंको छोडकर ॥ ४२ ॥ आये हुये सब वीरोंको क्रोधसे पूर्ण होकर देखा, सभीको संग्राममें देखकर शीघ्रही क्रोधसे जलता हुआ वह बोला ॥४३॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥३२॥ सेनापति बोला कि, सब दुर्मद धनुषधारी युद्ध करनेके लिये यहाँ आये हैं, किन्तु राजकुमार युवराज संग्राममें दिखाई नहीं देते हैं ॥१॥ वह राजकुमार घरमें क्या करता है ? मेरे पुत्रको मरवाकर आप घरमेंही बैठा है, सो क्या भुशुण्डी (बंदूक) के मुखसे मेरे पुत्रके मार्गको नहीं जायगा ? ॥२॥ इतना कहकर क्रोधसे लाल नेत्र करके राजकुमारको पकड़नेके लिये बड़ा प्रसन्न होकर सेनापति शीघ्रतासे नगरीमें गया ॥३॥ उस समय भोजन करके मदिरा पीकर वह राजकुमार रात्रिमें मदिरा मदमें विह्वल हुआ पलंगपर बेहोश पड़ा था ॥ ४ ॥

सो पटहका शब्द सुनकर रोती हुई भयसे विह्वल होकर उसकी पत्नीने अपने पति राजकुमारको जगाया ॥५॥ कि हे वीर ! उठिये प्रातःकाल होगया, भेरीके शब्दसे आपके पिताकी
आज्ञा नगरीमें सुनाई पड़ रही है ॥६॥ कि जो कोई आज युद्ध करनेको नहीं जायँगे, वे वध करनेके योग्य हैं,इससे आप बहुत जल्दी संग्राममें जाइये, और पिताजीसे जल्दी जाकर
मिलिये ॥७॥ ऐसे राजकुमारको उसकी पत्नीने जगाया भी,किन्तु जगा नहीं, तब उसकी पत्नीने सेना समेत बल्वलको गया हुआ जानकर अपने पतिको फिर सावधान किया॥८॥
तब वह राजकुमार निद्राको त्यागकर उठा, और बाणोंसहित धनुषको लेकर गणपति और शिवजीका मनमें स्मरण करता हुआ रथमें बैठकर युद्ध करनेके लिये गया॥९॥तब राज-
कुमारको आया हुआ देखकर सेनापति क्रोधसे बोला कि तुमने दैत्यराजकी आज्ञाको किसके बलसे लुप्त किया, सो मुझको कहो ॥१०॥ हे राजकुमार ! ऐसेही मेरा पुत्र संग्राममें

तत्पत्नीबोधयामासभर्तारंनृपनन्दनम् ॥ श्रुत्वापटहनिर्घोषंरुदतीभयविह्वला ॥५॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठहेवीरप्रातःकालोबभूवह॥त्वत्पितुःशासनंपुर्य्यां
भेरीघोषेणश्रूयते ॥ ६ ॥ येनयास्यंतियुद्धार्थंतेवधार्हाःसुतादयः ॥ तस्मात्प्रयाहिशीघ्रंत्वंगत्वातातंविलोकय ॥ ७ ॥ प्रिययाबोधितःसोपिचै-
तन्योनबभूवह ॥ पुनःसाबोधयामाससंसैन्येबल्वलेगते ॥८॥ ततःसनिद्रांचविहायचोत्थितःसद्योगृहीत्वासशरंधनुःकिल ॥ शिवंगणेशंमनसा
चसंस्मरञ्जगामयुद्धायरथेनभूपजः॥९॥तमागतंवीक्ष्यनृपस्यनन्दनमुवाचरोषेणतुसैन्यपालकः ॥ कथंत्वयादैत्यवरस्यशासनंविलोपितंकेनबले-
नमांवद ॥१०॥ मत्सुतस्त्वादृशोभूत्वाशीघ्रंनागतवान्मृधे ॥ समारितोबल्वलेनशतघ्नीप्रमुखेनच ॥११॥ तस्माद्गच्छपितुःपार्श्वंसत्यवादीपिता
तव ॥ मारयिष्यतिशीघ्रंवैनेतुंत्वांप्रेषितोस्म्यहम् ॥१२॥ वचस्तीक्ष्णंसमाकर्ण्यभयाच्छुष्कमुखस्तुसः ॥ पितुःपार्श्वंययौतेनसुधन्वादुःखितो
यथा ॥ १३ ॥ ददर्शपितरंगत्वादैत्यवृंदैःपरिवृतम् ॥ रथस्थंकुपितंतत्रह्यनिरुद्धजयोत्सुकम् ॥१४॥ दृष्ट्वातातंनमस्कृत्यव्रीडितोभयविह्वलः॥
अधोमुखस्थितोभूमौदानवेंद्रस्यपश्यतः ॥१५॥ बल्वलःकुपितःप्राहदंतान्दंतैर्विनिष्पिपन् ॥ आज्ञाभंगस्त्वयाकेनकृतस्स्वात्मविघातने॥१६॥

नहीं आया था, सो उसको बुलवाकर तुम्हारे पिताने शतघ्नीसे मार डाला ॥११॥ इससे तुम अपने पिताके पास जाओ, तुम्हारा पिता सत्यवादी है, सो तुमको मेरे पुत्रकी तरह शीघ्रही
शतघ्नीसे मारेगा, इसीलिये तुमको बुलानेके लिये मुझको भेजा है ॥ १२ ॥ ये वचन सुनतेही राजकुमारका मुख सूख गया, तब वह सुधन्वामंत्रि पुत्रकी तरह दुःखी होकर पिताके
पास गया ॥१३॥ तब उस राजकुमारने दैत्योंके झुण्डमें खड़े रथमें बैठे हुये, क्रोधित और अनिरुद्धके जय करनेको उत्कण्ठित अपने पिताको देखा ॥१४॥ पिताको देखकर नमस्कार
करके लज्जित और भय विह्वल हुआ नीचा मुख करके दानवेन्द्रके देखते २ खड़ा हुआ ॥ १५ ॥ तब बल्वल क्रोधित होकर और दाँतोंको पीसकर बोला कि क्यों रे कुपुत्र ! तुमने
मेरी आज्ञा भंग कैसे की ? क्या तू नहीं जानता है, कि जो कोई लड़नेको नहीं निकलेगा, उसको मैं अपने हाथसे मारूँगा ? ॥ १६ ॥

सो तेरे इस अपराधसे युद्ध मंण्डलसे डरे हुये, अपने प्राण बचानेके लिये घरमें रहे हुये, तुझ कुपुत्रको शत्रुके समान तोपके मुखसे मरवाऊँगा ॥ १७ ॥ वीर बल्वल पुत्रसे यह कहकर दुखसे पसीने जिसके आगय ऐसा वह मनमें विचार करने लगा कि मैंने यह क्या प्रतिज्ञाकी ॥ १८ ॥ हाय ! बिना अपराधके मैंने सेनापतिके पुत्रको मारडाला, उसी पापसे मेरा पुत्र मरेगा, इसमें संदेह नहीं ॥ १९ ॥ यदि मैं बलपूर्वक मृत्युके मुखसे वीर पुत्रको बचाऊँगा, तो मेरे सब सैनिक मेरा हास्य करेंगे, और गाली देंगे ॥ २० ॥ इस प्रकार शोकमें डूबे हुये,दुःखमें मग्न पुत्रके शोकसे खिन्न मन हुये, राजाको देखकर क्रोधसे हँसता हुआ,अमर्षित हुआ सेनापति बोला ॥२१॥ कि हे राजन् ! आप अपने इस पुत्रको शीघ्रही मरवा डालिये,उसके बाद दानवोंका हमारा यादवोंसे संग्राम होगा॥२२॥हे दैत्येन्द्र ! आप सत्यवादी हैं,और यह कर्म बड़ा दारुण है,यदि दुःखसे नहीं करेंगे,तो आपके लिये नरक होगा ॥ २३ ॥ देखिये, सत्यके कारण राजा दशरथने रामचन्द्र जैसे पुत्रको वनवास देदिया, और सत्यके पीछे राजा हरिश्चन्द्रने अपनी स्त्री, पुत्र, और अपने आपकाभी परित्याग

तस्माद्विभीतंकिलयुद्धमण्डलाद्गृहेगतंप्राणपरीप्सयासुतम् ॥ कुनन्दनंशत्रुसमंमलीमसंहित्वाशतघ्नीवदनेनहन्म्यहम्॥ १७॥इत्युक्त्वास्वसुतंवीरोदुःखादश्रुपरिप्लुतः ॥ खिन्नःप्रत्याहमनसिप्रतिज्ञाकिंकृतामया ॥१८॥ अहोविनापराधेनसैन्यपालसुतोहतः॥तेनपापेनमत्पुत्रोमरिष्यतिनसंशयः ॥१९॥ मोचयिष्येयदिसुतंवी मृत्युमुखाद्बलात् ॥ तदामत्सैनिकाःसर्वेमांशपंतिहसंतिच ॥२०॥ शोचंतमित्थंनृपतिंचदुःखितंस्वपुत्रशोकेनतुखिन्नमानसम् ॥ विलोक्यरोषेणहसन्नमर्षितोह्युवाचवाक्यंकिलसैन्यपालकः ॥ २१ ॥ सैन्यपालउवाच ॥ एनंमारयशीघ्रंत्वंस्वपुत्रंचकुनंदनम् ॥ पश्चाद्भवसतिसंग्रामोयादवानांचदानवैः ॥२२॥ त्वंसत्यवादीदैत्येंद्रइदंकर्मचदारुणम् ॥ नकरिष्यसिदुःखेननिरयस्तेभविष्यति ॥ २३ ॥ सत्याद्रामसमंपुत्रंतत्याजकोशलेश्वरः ॥ हरिश्चंद्रःप्रियांपुत्रंस्वात्मानंचैवभूपते ॥ २४ ॥ बलिश्चैवमहींसर्वांजीवनंचविरोचनः ॥ अकीर्तिंचशिबिश्चैवदधीचःस्वतनुंयथा ॥ २५ ॥ पृषध्रंतुगुरुश्चैवरंतिदेवश्चभोजनम् ॥ आज्ञाभंगकरंपुत्रंतथामारयत्वंनृप ॥ २६ ॥ त्वयापूर्वंचयत्प्रोक्तंस्वपुत्रमपिभ्रातरम् ॥ आज्ञाभंगकरंहन्मिशीघ्रमन्यस्यकाकथा ॥ २७ ॥ तस्मिन्देशेचवस्तव्यंयस्मिन्भूपश्चसत्यवाक् ॥ तस्मिन्देशेनवस्तव्यंयस्मिन्भूपोह्यसत्यवाक् ॥ २८ ॥ गर्गउवाच ॥ इतितद्वाक्यमाकर्ण्यबल्वलःखिन्नमानसः ॥ मारणार्थंतुतस्यापितस्मैचाज्ञांचकारह ॥ २९ ॥

कर दिया ॥२४॥ सत्यके लिये राजा बलोने सब भूमिको, और विरोचन दैत्यने अपने जीवनको, राजा शिबिने अकीर्तिको तथा ऋषि दधीचिने अपने शरीरको त्याग दिया ॥२५॥ और इसी सत्यके पीछे गुरुने पृषध्रको, राजा रंतिदेवने भोजनको त्याग दिया था, वैसेही हे नृप ! आज्ञा भंग करनेवाले पुत्रको आपभी मरवा डालिये ॥ २६ ॥ जो आप पहिले कह ही चुके हैं कि, जो मेरी आज्ञाको नहीं मानेगा, वह पुत्र होगा अथवा भाई होगा तो उसको भी मरवा डालूँगा, दूसरेकी तो बातही क्या है ? ॥२७॥ उसी देशमें रहना चाहिये जिस देशमें सत्यावादी राजा हो, जिस देशमें मिथ्यावादी राजा हो, उस देशमें नहीं रहना चाहिये ॥ २८ ॥ गर्गजी कहते हैं कि, सेनापतिके इस कथनको सुनकर खिन्न मन हुये बल्वलने अपने पुत्रको भी मारनेकी सेनापतिके लिये आज्ञा दी ॥ २९ ॥

फिर दुःख मग्न होकर यादवोंके सामने गया, तब सेनापतिने जाकर उसकी आज्ञा उसके पुत्रके आगे निवेदन की ॥३०॥ तब पिताके कथनको सुनकर कुनन्दन राजकुमारने कहा कि, इसमें आपका कोई दोष नहीं है, पराधीन आपको राजाकी आज्ञाका पालन करना चाहिये ॥ ३१ ॥ देखिये परशुरामने पिताकी आज्ञासे माताका शिर काटा था, सो हे सैन्यपाल ! मैं भी तैयार हूँ, मैं अपनी करने योग्य धर्म क्रियाको कर चुका हूँ ॥ ३२ ॥ मुझको मरनेसे भय नहीं है, भलेही तोपके मुखसे बाँध दीजिये, इतना कहकर अपना स्वर्ण और मोतियोंका मुकुट तथा हार, बाजू भूषण कुण्डल, कड़े सब उतार कर ब्राह्मणोंको देदिये, तब ब्राह्मणोंने दुःख पाकर आशीर्वाद दिये ॥३३॥३४॥ तब फिर स्नान करके, तीर्थकी मृत्तिका (मिट्टी) को शरीरमें लगाकर, तुलसीकी मालाको कण्ठमें डालकर, और तुलसी दलको मुखमें रखकर ॥ ३५ ॥ श्रीकृष्णके नामको मुखसे उच्चारण करता हुआ मनमें हरिका स्मरण करने

ततोजगामदुःखाढ्योयदूनांसंमुखेतुसः ॥ सैन्यपालस्तुतस्याज्ञांतत्पुत्राग्रेन्यवेदयत् ॥३०॥ श्रुत्वाप्रत्याहवचनंशीघ्रंतस्मैकुनंदनः ॥ राजपुत्रउवाच ॥ कर्त्तव्याचनृपस्याज्ञात्वयापरवशेनवै ॥ ३१ ॥ रामेणतुहृतंशीर्षंस्वमातुःपितुराज्ञया ॥ सैन्यपालप्रतीतोहंकृताधर्मक्रियामया ॥३२॥ मरणान्नभयंमह्यंशतघ्न्यांचनिवेशय ॥ इत्युक्त्वाराजपुत्रस्तुस्वकिरीटंतथांगदम् ॥३३॥ मुक्ताहारंस्वर्णहारंकुण्डलेकटकानिच ॥ ब्राह्मणेभ्योददौसर्वंतेदुःखादाशिषंददुः ॥३४॥ ततःस्नात्वासतीर्थस्यलेपयित्वाचमृत्तिकाम् ॥ तुलसीपल्लवंमालांमुखेकण्ठेनिधायच॥३५॥ब्रुवंश्चश्रीकृष्णरामेतिचकारस्मरणंहरेः ॥ सैन्यपालस्तुतंशीघ्रंगृहीत्वाभुजयोर्बलात् ॥३६॥ कारयामासराजेंद्रशतघ्नीवदनेरुषा ॥हाहाकारस्तदैवासीत्सैनिकारुरुदुर्भृशम् ॥ ३७ ॥ रुरोदबल्वलस्तत्ररुरुदुस्तेद्विजातयः ॥ दृष्ट्वाशतघ्नींतत्रापिप्रतप्तांमदपूरिताम् ॥३८॥ताम्रगोलकसंयुक्तामग्नियुक्तांभयंकराम् ॥ सराजपुत्रःश्रीकृष्णंसर्वव्यापिनमीश्वरम् ॥३९॥ अश्रुपूर्णमुखोभूत्वाप्रत्याहविमलंवचः ॥४०॥ कृष्णंमुकुन्दमरविंददलायताक्षंशंखेन्दुकुंददशनंनरनाथवेषम् ॥ इंद्रादिदेवगणवंदितपादपद्मंप्राणप्रयाणसमयेचहरिंस्मरामि॥४१॥श्रीकृष्णगोविंदहरेमुरारेश्रीकृष्णगोविंदकुशस्थलीश ॥ श्रीकृष्णगोविंदव्रजेशभूपश्रीकृष्णगोविंदभयात्प्रपाहि ॥ ४२ ॥

लगा, तब सेनापतिने राजकुमारके दोनों हाथ पकड़कर बलपूर्वक ॥ ३६ ॥ क्रोधित होकर उसको तोपके मुखसे बाँध दिया, तब बड़ा हाहाकार हुआ, सैनिक बहुत रोने लगे॥३७॥ तब बल्वलभी रोने लगा, और द्विजातिभी रोने लगे, वहाँ मद (बारूद) से भरी हुई, ताम्र (ताम्बे) गोलेसे भरी हुई, अग्निसे युक्त, अति भयंकर तोपको देखकर उस राज कुमारने सर्व व्यापी ईश्वर कृष्णका ध्यान करते हुये ये वचन कहे ॥३८॥३९॥४०॥ मुकुन्द कमल दलके समान जिनके नेत्र हैं, शंख कुन्द और चन्द्रके समान श्वेत जिनके दाँत हैं, इन्द्रादिक देवताओंसे वन्दित जिनके चरण कमल हैं, ऐसे हरि श्रीकृष्णको प्राण प्रयाणके समय मैं प्रणाम करता हूँ, हे श्रीकृष्ण ? हे गोविन्द ! हे हरे ! हे मुरारे ! हे श्रीकृष्ण ! हे गोविन्द ! हे द्वारिकेश ! हे श्रीकृष्ण ! हे गोविन्द ! हे व्रजेश भूप ! हे श्रीकृष्ण ! हे गोविन्द ! इस भयसे मेरी रक्षा करिये ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

हे गोविन्द ! आपके स्मरणसे ग्राहके भयसे गजराज छूट गया, स्वायम्भू मनु, प्रह्लाद, अम्बरीष, ध्रुव, आनर्तराज, कक्षीवान्, रैवत, चन्द्रहास, इन्होंने जैसे आपकी शरण ली थी, वैसेही मैंने भी आपकी शरण ली है ॥ ४३ ॥४४ ॥ अहो प्रभो ! मैंने अनिरुद्धको संग्राममें प्रसन्न नहीं किया, बिना संग्राम किये पहिलेही मैं मर रहा हूँ ॥४५॥ मैंने यादव तुष्ट नहीं किये, कृष्णके पुत्रोंकी मैंने आकृति भी नहीं देखी, शार्ङ्गके बाणोंसे मैंने अपना शरीर घायल नहीं कराया ॥४६॥ मुझ कुपुत्र शूरवीरकी चोर जैसी गति हुई, आपके भक्तकी मेरी सब हंसी करते हैं ॥४७॥ जिसको देखकर यमराज भी चपलके समान आचरण करते हैं, और जिसके भयसे विघ्न करनेवाले भी अपने आप मरते हैं, उस पूजा करने योग्य मुझ कृष्ण भक्तको यह तोप कैसे मारेगी ॥४८॥ गर्गजी कहते हैं कि, इस प्रकार यह कुपुत्र कहही रहा था कि, सेनापतिकी आज्ञासे किसीने तोपपर बती रखकर चला दी, तोपके चलतेही एक साथ

स्मरणात्तवगोविन्दग्राहान्मुक्तोमतंगजः ॥ स्वायंभुवश्चप्रह्लादोह्यंबरीषोध्रुवस्तथा ॥४३॥ आनर्त्तश्चैवकक्षीवान्मृगेंद्राद्बहुलातथा ॥ रैवतश्चंद्रहासश्चतथाहंशरणंगतः॥ ४४॥ पूर्वंभवतिमेमृत्युःसंग्रामंचविनाह्यहो ॥ नतोषितश्चप्रधनेऽनिरुद्धोविशिखैर्मया ॥४५॥ नतोषितायादवाश्चनदृष्टाः कृष्णनंदनाः ॥ शार्ङ्गमुक्तैश्चविशिखैर्नदहःशकलीकृतः ॥४६॥ कुनंदनस्यशूरस्यस्तेनस्येवाभवद्गतिः ॥ त्वद्भक्तंमांचपापिष्ठास्तस्मात्सर्वेहसंतिहि ॥ ४७ ॥ यंवीक्ष्यभूमौचपलायतेवैयमोमरिष्यंतिविनायकाश्च ॥ निरंकुशंकृष्णजनंचपूज्यंकथंशतघ्नीकिलमांहनिष्यति ॥ ४८ ॥ गर्गउवाच ॥ इत्थंवदतिशूरेवैसैन्यपालस्यचाज्ञया ॥ शतघ्नींमुमुचेकश्चिद्धाहाशब्दस्तदाभवत् ॥ ४९ ॥ स्मरणात्कृष्णचंद्रस्यचित्रमेकंबभूवह ॥ शतघ्नीशीतलाजाताज्वालाशांतिंगतानृप ॥५०॥ दृष्ट्वाश्चर्यंचतत्रापिजनाःसर्वेनृपादयः ॥ विसिष्मूराजशार्दूलसैन्यपालस्तदाब्रवीत् ॥५१॥ शतघ्न्यांशुष्कमदिरागोलकेनसमन्विता ॥ नविद्यतेत्वसौतस्मान्नमृतोरणमण्डले ॥५२॥ इतितस्यवचःश्रुत्वाप्रोचुर्वीरारुषान्विताः ॥ अयंनिष्किल्बिषःशूरःकृष्णभक्तोमहामतिः ॥ ५३ ॥ रक्षितस्तेनदुःखाद्वैपुनर्हंतुंचनार्हसि ॥ तेषांवाक्यंसमाकर्ण्यसैन्यपालोरुषान्वितः॥५४॥ ददर्शराजपुत्रंवैशतघ्नीवदनेस्थितम् ॥ जपंतंकृष्णकृष्णेतिस्रजामीलितलोचनम् ॥ ५५ ॥

हाहाकार मचा ॥ ४९ ॥ तब श्रीकृष्णके स्मरणसे एक बड़ा आश्चर्य हुआ, हे नृप ! वह तोप ठंडी होगई, और वह ज्वाला शान्त होगई ॥५०॥ हे नृप ! तब उस आश्चर्यको देखकर राजा तथा अन्य सब मनुष्य बड़े विस्मित हुये, तब वह सेनापति फिर बोला ॥ ५१ ॥ कि तोपमें सूखी मदिरा (बारूद) नहीं है, इससे यह तोप नहीं चली, और इसीसे राज कुमार नहीं मरा, इस लिये फिर गोला सहित बारूद रखकर तोप चलाओ ॥ ५२ ॥ सेनापतिका यह वचन सुनकर वीर पुरुष क्रोधित होकर बोले कि, श्रीकृष्णचन्द्रका भक्त बडा बुद्धिमान्, यह राज कुमार निर्दोष है ॥५३॥ श्रीकृष्ण द्वाराही रक्षा किया गया है, इसलिये अब दूसरी बार इसको मारना उचित नहीं है उनके कथनको सुनकर सेनापति क्रोधित होगया ॥ ५४ ॥ और उसने तोपके मुखपर खडे हुये, कृष्ण कृष्ण ऐसे जपते हुये, आँसुओंसे बन्द हैं आँखे जिसकी ऐसे राजकुमारको देखा ॥ ५५ ॥

तब उस दुष्टने अपने हाथसे तोप छोड़ी,तब तो उस तोपके टुकडे होगये,और वज्र गिरनेके समान शब्द हुआ॥५६॥तोपका गोला कटकर उड़ा,तोपके पास खड़े हुये सेनापतिके ही लगा, जिससे वह सेनापति मर गया, और जितने उसके अनुचर थे,वे सब उसकी आगसे जल गये ॥५७॥ और हाय हाय शब्दको करते हुये कितनेही भाग गये,और कितनेही तोपकी गर्जनासे बधिर (बहरे) होगये,कितनेही तो धूएंसेही विह्वल होगये॥ ५८ ॥ तब सभीने राजकुमारको निर्भय देखा,तब बल्वल सहित सब कोई "जयजय" करने लगे, हे नृपेश्वर! ॥ ५९ ॥ और सब दैत्य यह बोले कि, जिसकी श्रीकृष्ण रक्षा करते हैं, उसको कौन मार सकता है ! जो भक्तको मारनेको आता है वह आपही मर जाता है ॥ ६० ॥ इससे भाइयो! कृष्णके समान कोई नहीं है,जिन कृष्णने राजकुमारकी मृत्यु भयसे रक्षाकी है, उन्हीं भक्तवत्सल कृष्णको हम नमस्कार करते हैं॥६१॥इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखंडे

दृष्ट्वातंहिपुनर्हंतुंशतघ्नींमुमुचेखलः ॥ साशतघ्नीतदाभिन्नाशब्दोवज्रनिपातवत् ॥५६॥ बभूवसैन्यपालस्तुगोलकेनमृतोभवत्॥ तथातदनुगास्तस्यज्वालयाज्वलिताःकिल ॥५७॥ हाहाशब्दंप्रकुर्वंतोदुद्रुवुः केचिदेवहि ॥ केचिद्बधिरीभूताःकेचिद्धूमेनविह्वलाः ॥५८॥ ततश्चददृशुः सर्वेंनृपपुत्रंचनिर्भयम् ॥ चक्रुर्जयजयारावंबल्वलाद्यानृपेश्वर ॥ ५९ ॥ दैत्याऊचुः ॥ यंचरक्षतिश्रीकृष्णस्तंकोभक्षतिमानवः ॥ भक्तंहंतुंचागतोयःसविनश्यतिदैवतः ॥ ६० ॥ तस्मात्कृष्णसमोनास्तियेनायंरक्षितोभयात् ॥ सर्वेवयंनमस्यामस्तंकृष्णंभक्तवत्सलम् ॥६१॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेराजपुत्रजीवनंनामत्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥ गर्गउवाच ॥ अथवैबल्वलःपुत्रंरोहयित्वारथेमुदा ॥ तेनसार्द्धससैन्यस्तुयुद्धार्थंप्रययौत्वरम् ॥१॥ नानाशस्त्रधराःसर्वेनानावाहनसंस्थिताः ॥ नानाकंचुकसंयुक्तानानारूपाभयंकराः ॥२॥ गजेंद्रसदृशाःपुष्टामृगेंद्रसमविक्रमाः ॥ कंपयंतश्चपृथिवींवृष्णीनांसंमुखेययुः ॥३॥ तानागतान्बहून्दैत्याननिरुद्धस्तुशंकितः॥रक्षणार्थंचसर्वेषांचक्रव्यूहमकल्पयत् ॥४॥ सर्वतोयादवाःशूराःसर्वशस्त्रधराःकिल ॥ गजैरथैस्तुरंगैश्चबभूवुःपरिमंडिताः ॥५॥ तेषांमध्येस्थिताराजन्निंद्रनीलादयोनृपाः॥ अक्रूरकृतवर्माद्यास्तेषांमध्येस्थिताःशुभाः ॥ ६ ॥ तेषांमध्येचराजेंद्रगदाद्याःकृष्णभ्रातरः ॥ तेषांमध्येमहावीराःसांबदीप्तिमदादयः ॥ ७ ॥

भाषाटीकायां त्रियस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३३॥ उसके बाद वह बल्वल दैत्य पुत्रको रथमें बैठाकर साथमें लेकर सेना सहित बहुत शीघ्रतासे युद्धके लिये निकला ॥ १ ॥ अनेक प्रकारके शस्त्रोंको हाथोंमें लिये हुये,अनेक सवारियोंपर सवार हुये,अनेक कवचोंको धारण किये हुये, अनेक प्रकारके भयंकर रूपवाले॥२॥हाथियोंके समान पुष्ट और सिंहोंके समान पराक्रमवाले वे दैत्य भूमिको कम्पाते हुये यादवोंके सामने आये ॥३॥ उन दैत्योंको आये हुये देखकर अनिरुद्ध शंकित हुये, और तब यादवोंकी रक्षाके लिये चक्रव्यूह बनाया ॥ ४ ॥ सब ओरसे शूरवीर यादव सब शस्त्रोंको धारण किये,हाथी,रथ और घोड़ोंसे परिमंडित हुये ॥५॥ उनके बीचमें इन्द्र नीलादिक राजा स्थित हुये,और उनके मध्यमें अक्रूर कृतवर्मा आदिक स्थित हुये॥६॥और हे राजेन्द्र ! फिर उनके बीचमें गद आदिक कृष्णके भाई स्थित हुये,और उनके भी बीचमें साम्ब, और दीप्तिमान्,आदिक बड़े वीर स्थित हुये ॥७॥

हे राजन् ! ऐसे चक्रव्यूहका निर्माण करके सबके बीचमें अनिरुद्धजी स्थित हुए ॥८॥ तब वहाँ समुद्रके तटपर घोर युद्ध हुआ, हे नृप ! दानवोंके साथ यादवोंका ऐसा युद्ध हुआ मानों आपसमें दो समुद्र लड़ रहे हों ॥९॥ वहाँ रथियोंसे रथियोंका, हाथीवालोंसे हाथीवालोंका, घुड़सवारोंसे घुड़सवारोंका, पैदल सैनिकोंका पैदल सैनिकोंसे संग्राम हुआ ॥१०॥ तब तीक्ष्ण बाण, खड्ग, चर्म, गदा, पोलादी, फाँसी और फरसा बंदूक और तोप इनसे संग्राम हुआ ॥११॥ यादवोंके मारे हुए बल्वलके सैनिक भयभीत होकर अपने अपने रणको छोडकर भाग गये ॥१२॥ उस समय सेनाके पावोंसे उडी हुई धूलने सूर्य और आकाशको ढक लिया, उस अन्धकारमें सब दैत्य युद्धसे पराङ्मुख होगये ॥१३॥ भागते हुए कई तो गड्ढोंमें जागिरे, और कई कुओंमें जागिरे कई तालाबोंमें और कई बावलियोंमें जागिरे॥१४॥तब तो क्रोधित हुआ बल्वल भग्न हुई अपनी सेनाको देखकर चार तो मन्त्रियोंके

चक्रव्यूहंविनिर्मायचेदृशंतत्रभूपते ॥ तन्मध्येकार्ष्णिपुत्रस्तुदंशितःसंस्थितोभवत् ॥ ८ ॥ बभूवतुमुलंयुद्धंतत्रसिंधुतटेनृप ॥ यदुभिर्दानवानां चह्यब्धीनामब्धिभिर्यथा ॥ ९ ॥ रथिनोरथिभिस्तत्रगजवाहागजैःसह ॥ अश्ववाहैरश्ववाहावीरावीरैःपरस्परम् ॥१०॥ युयुधुस्तीक्ष्णबाणैश्च खड्गचर्मगदर्ष्टिभिः ॥ पाशैःपरश्वधैराजन्छतघ्नीभिर्भुशुण्डिभिः ॥११॥ हन्यमानाश्चयदुभिर्बल्वलस्यचसैनिकाः ॥ सर्वेस्वंस्वंरणंत्यक्त्वादुद्रुवुस्तेभयान्विताः ॥ १२ ॥ रुरोधगगनंसूर्यंसैन्यपादरजोभृशम् ॥ अंधकारेमहादैत्यारणात्सर्वेपराङ्मुखाः ॥१३॥ केचिन्निपतिताःकूपेकेचिद्गर्तेह्यधोमुखाः ॥ केचित्तडागेवाप्यांवैयदूनांसायकैर्हताः ॥ १४ ॥ ततोदृष्ट्वाबलंभग्नंबल्वलोरोषपूरितः ॥ चतुर्भिर्मंत्रिणांपुत्रैःस्वपुत्रेणाजगामह ॥ १५ ॥ अनिरुद्धोबल्वलेनतत्रायुद्धचन्महामृधे ॥ दुर्नेत्रेणबृहद्बाहुर्दुर्मुखेणाऽरुणोबली ॥ १६ ॥ न्यग्रोधोदुःस्वभावेनदुर्मदेनकविस्तथा॥कुनन्दनेनसंग्रामेकृष्णपुत्रःसुनंदनः ॥ १७ ॥ एवंबभूवसंग्रामोदेवविस्मयकारकः ॥ प्रगतास्तत्रराजेंद्रसर्वेकार्तिकवासराः ॥१८॥ बल्वलःकुपितो राजन्धनुष्टंकारयन्मुहुः ॥ इंद्रनीलंत्रिभिर्बाणैःषड्भिर्हेमांगदंमृधे ॥१९॥ अनुशाल्वंचदशभिरक्रूरंदशभिस्तथा ॥ गदंद्वादशभिर्बाणैर्युयुधानंच पंचभिः ॥ २० ॥ पंचभिःकृतवर्माणमुद्धवंदशभिःशरैः ॥ कार्ष्णिजंशतबाणैश्चाविंव्याधसमरेऽसुरः ॥२१॥ तच्छरैःसरथाःसर्वेबभ्रमुर्घटिकाद्वयम् ॥ तुरगाःपंचतांप्राप्ताश्चूर्णीभूतारथारणे ॥ २२ ॥

पुत्र और एक अपना पुत्र, इनको लेकर आया ॥१५॥ तब उस संग्राममें बल्वलसे तो अनिरुद्ध, दुर्नेत्रसे बृहद् बाहु, दुर्मुखसे अरुणः ॥ १६ ॥ दुःस्वभावसे न्यग्रोध, दुर्मदसे कवि और कुनन्दनसे कृष्ण पुत्र सुनन्दन लड़ने लगे ॥ १७ ॥ हे राजेन्द्र ! इस प्रकारसे देवताओंको विस्मय करनेवाला संग्राम हुआ, लड़ते २ कार्तिकके सब दिन बीत गये ॥१८॥ तब बारबार धनुषको टंकारते हुए बल्वलने क्रोधित होकर इन्द्रनीलके तीन बाण और हेमांगदके छः बाण मारे ॥१९॥ अनुशाल्वके दश बाण, अक्रूरके दश बाण, गदके बारह बाण, सात्यकिके पाँच बाण, कृतवर्माके पाँच बाण, उद्धवके दश बाण और अनिरुद्धके एक सौ बाण उस असुर बल्वलने युद्धमें मारे ॥ २० ॥ २१ ॥ तब उस दैत्यके मारे बाण जिनको लगे थे वे सब अपने २ रथों सहित दो घड़ीतक घूमते रहे, उनके रथ चूर्णित होगये, और घोड़े मर गये ॥ २२ ॥

तब उस दैत्यके चातुर्य्यको देखकर सब यादव विस्मित हुये, और हे मानद ! अनिरुद्ध आदिक दूसरे रथोंमें बैठे ॥ २३ ॥ हे राजन् ! तब बल्वल दैत्यभी अन्य वीरोंको देखनेको गया, तब नेत्रोंको अरुण करके, बड़े क्रोधमें मग्न होकर अनिरुद्ध बोले ॥२४॥ आज अपने पराक्रमको दिखाकर मेरे सामने खड़ा होजा, हे दैत्य ! अब कहाँ जायगा, मेरे तीक्ष्ण बाणोंको देख ॥ २५ ॥ तब कुनन्दन नामक युवराज उसके कथनको सुनकर बड़ी शीघ्रतासे बल्वलके देखते हुए यह बोला॥२६॥कि हे अनिरुद्ध ! संग्राममें दैत्येन्द्रके देखनेको तू योग्य नहीं है, इससे इस युद्ध भूमिमें पहिले मेरे बलको देख ॥ २७ ॥ यह सुनकर अनिरुद्धजी बोले कि, हे दैत्य पुत्र ! तू अभी बालक है इससे अपने घरमें जाकर खिलोनोंसे खेल, तू अभी युद्ध करनेके योग्य नहीं है ॥२८॥ तब राजकुमार कुनन्दन बोला कि, हे अनिरुद्ध ! आज मुझ बालकका बड़े २ वीरोंके साथ खेलना देख, यदि मैं घरमें खेलूँगा,

तद्धस्तलाघवंदृष्ट्वायादवाविस्मयंगताः ॥ रथानारुरुहुःसर्वेनिरुद्धाद्याश्चमानद॥२३॥ बल्वलोपिययौराजन्नन्यान्वीरान्विलोकितुम् ॥ अनिरुद्धस्ततःप्राहक्रोधादरुणलोचनः ॥ २४ ॥ तिष्ठतिष्ठममाग्रेत्वंदर्शयित्वापराक्रमम् ॥ कुत्रयास्यसिहेदैत्यपश्यमन्निशिताञ्छरान् ॥२५॥ इतितस्यवचःश्रुत्वायुवराजःकुनन्दनः ॥ उवाचवचनंशीघ्रंबल्वलस्यचपश्यतः ॥ २६ ॥ राजपुत्रउवाच ॥ दैत्येंद्रंचरणेद्रष्टुंत्वंतुनार्हसिकार्ष्णिज ॥ तस्मान्मदीयंचबलंपूर्वंपश्यमृधांगणे ॥ २७ ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ त्वंबालोसिदैत्यपुत्रयुद्धंकर्तुंचनार्हसि ॥ तस्माच्चस्वगृहंगत्वाक्रीडनंकुरुकृत्रिमैः ॥ २८ ॥ राजपुत्रउवाच ॥ अत्रपश्यमहावीरैर्बालस्यममक्रीडनम् ॥ गृहेयदिकरिष्यामितत्रकोपिनपश्यति ॥ २९ ॥ इत्युक्त्वाचण्डकोदण्डेदधारशतसायकान् ॥ तताडकार्ष्णिजंतैश्वरथस्थंदर्शयन्बलम् ॥३०॥तैर्बाणैःसरथःसोपिससूतःसतुरंगमः ॥ विभ्रमन्नभमार्गेणपपातकपिलाश्रमे ॥३१॥ हाहाकारस्तदैवासीदनिरुद्धेगतेसति ॥ ततःक्रुद्धाश्चतंहंतुंसांबाद्याआययुर्मृधे ॥३२॥ आगतांस्तान्बहून्दृष्ट्वायुवराजःप्रहर्षितः ॥ सांबंचदशभिर्बाणैःपंचभिश्चमधुंतथा ॥३३॥ बृहद्बाहुंत्रिभिर्बाणैश्चित्रभानुंचपंचभिः ॥ वृकंचदशभिर्युद्धेसप्तभिश्चारुणंशरैः॥३४॥ पंचभिःसंग्रामजितंसुमित्रंचत्रिभिःशरैः ॥ दीप्तिमंतंत्रिभिर्बाणैर्भानुंचदशभिर्मृधे ॥ ३५ ॥ वेदबाहुंपंचभिश्चपुष्करंसप्तभिःशरैः ॥ अष्टभिः श्रुतदेवंचसंमुखस्थंसुनन्दनम् ॥ ३६ ॥

तो मेरे खेलको, कौन देखेगा ? ॥२९॥ ऐसे कहकर अपने प्रचण्ड धनुषमें एक सौ बाण लगाये, उन्हीं बाणोंसे रथमें बैठे हुए अनिरुद्धको मारा ॥३०॥ उन बाणोंसे रथ, सारथि और घोड़ों सहित अनिरुद्ध आकाश मार्गमें घूमता हुआ कपिलाश्रममें जाकर गिरा ॥ ३१ ॥ तब अनिरुद्धके जानेपर हाहाकार मचा, और उस राजकुमारको, मारनेको साम्ब आदिक आये ॥ ३२ ॥ उनको आये हुए देखकर युवराज बड़ा हर्षित हुआ और दश बाण साम्बके और पांच बाण मधुके मारे ॥ ३३ ॥ तीन बाणोंसे बृहद्बाहुको पाँच बाणोंसे चित्रभानुको, दश बाणोंसे वृकको, सात बाणोंसे अरुणको, पाँच बाणोंसे संग्रामजित्को, तीन बाणोंसे सुमित्रको, तीन बाणोंसे दीप्तिमान्को दश बाणोंसे भानुको पांच बाणोंसे वेदबाहुको, सात बाणोंसे पुष्करको, आठ बाणोंसे श्रुतदेवको, बीस बाणोंसे सुनन्दनको, दश बड़े तीक्ष्ण बाणोंसे

विरूपको, नौ बाणोंसे चित्रबाहुको, दश बाणोंसे न्यग्रोधको, और नौ बाणोंसे कविको, राजकुमारने मारा, इस प्रकार गर्जना करते हुये उस बड़े अभिमानी कुनन्दनने शङ्ख नाद किया ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ तब उस कुनन्दनके बाणोंसे घूमते हुये, वे सब रथ और घोड़ों सहित कोई एक योजनपर कोई दो योजनपर और कोई पांच कोशपर जाकर गिरे ॥३९॥ हे नृपश्रेष्ठ ! तब तो सेनामें बड़ा हाहाकार हुआ, हे राम ! हे कृष्ण ! ऐसे कहते हुये सब यादव रोने लगे ॥४०॥ तब गदादिक सब तीक्ष्ण बाणोंको छोड़ते हुए इन्द्र नीलादिक सब क्रोधमें भरकर आये ॥ ४१ ॥ वीरोंको आये हुये देखकर उस महाबली राज पुत्रने ऐसे बाण मारे, जिनसे वे सब मूर्च्छित होकर गिर पड़े ॥ ४२ ॥ उसके बाद उस बल्वलके पुत्रने बाणोंके समूह सब शूरवीर यादवोंको ताड़न किया, तब उसके बाणोंसे बहुतसे तो मर गये ॥ ४३ ॥ और उसके बाणोंके मारे उस युद्धमें रुधिरकी

विंशत्यासायकैस्तीक्ष्णैर्विरूपंदशभिस्तथा ॥ चित्रबाहुंचनवभिर्न्यग्रोधंदशभिःशरैः ॥३७॥ कविंचनवभिर्बाणैस्तताडप्रधनेबली॥शंखंदध्मौमुदायुक्तोनदन्मानीकुनन्दनः ॥ ३८ ॥ तद्बाणैर्विभ्रमंतश्चसरथाःसतुरंगमाः ॥ पेतुःकेचिद्योजनेचपंचक्रोशेद्वियोजने ॥३९॥ हाहाकारेतदाजाते सेनायांनृपसत्तम ॥ रुरुदुर्यादवाःसर्वेरामकृष्णेतिवादिनः ॥४०॥ तदागदादयःसर्वेमुंचंतोनिशिताञ्छरान् ॥इन्द्रनीलादयश्चैवह्याजग्मुःक्रोधपूरिताः ॥४१॥ दृष्ट्वासमागतान्वीरान्राजपुत्रोमहाबलः ॥ विव्याधसायकैःसर्वेह्यभूवन्मूर्च्छितारणे ॥ ४२ ॥ तत्पश्चाद्यादवाञ्छूरान्बाणौघैर्बल्वलात्मजः ॥ तताडतच्छरैराजन्बहवःपंचतांगताः ॥४३॥ संग्रामेतस्यबाणौघैरुधिराणांनदीह्यभूत् ॥ हस्तिनोयत्रमग्नाश्चसजीवास्तेम्रियंतिच ॥ ४४ ॥ हाहाकारस्तदैवासीत्सेनायांचनभस्तले ॥ महेन्द्रवरुणाद्याश्चभयंप्रापुश्चविस्मिताः ॥४५॥ जयंदृष्ट्वाऽसुराःसर्वेबभूवुर्मुदिताननाः॥ गर्गउवाच ॥ अथवैमूर्च्छितंदृष्ट्वानिरुद्धंकपिलोमुनिः ॥ ४६ ॥ हतयानंनिपतितंशरनिर्भिन्नवक्षसम् ॥ चकारतंतुचैतन्यंहस्तेनतपसामुनिः ॥ ४७ ॥ ततःसोपिसमुत्थायसिद्धंनत्वायदूत्तमः ॥ सेतुमार्गेणाजगामयदून्सर्वान्प्रहर्षयन् ॥४८॥ अथान्यंरथमारुह्यप्रतिशार्ङ्गधरोबली ॥ निचखानशरंचैकंराजपुत्ररथेरुषा ॥ ४९ ॥ सशरस्तद्रथंनीत्वासस्सूतंसतुरंगमम् ॥ चतुर्मुहूर्त्तपर्यंतंभ्रामयामासह्यंबरे ॥ ५० ॥

नदी बहने लगी, जिसमें जीवित हाथी, डूबने लगे, और सजीव मरने लगे॥४४॥तब सेनामें तथा आकाशमें बड़ा हाहाकार मचा, और इन्द्र, वरुण, आदिक देवता सब विस्मित होकर भयको प्राप्त हुये ॥ ४५ ॥ और असुर अपनी जयको देखकर प्रसन्न मुख हुये, गर्गजी कहते हैं कि उसके बाद कपिल देव नामक मुनिने अनिरुद्धको मूर्च्छित हुआ देखकर ॥ ४६ ॥ घोड़े जिसके मर गये, धरतीमें पड़े हुये, बाणोंसे हृदय जिसका विदीर्ण होगया, ऐसे उस अनिरुद्धको अपने तपके प्रभावसे और हाथसे चैतन्य कराया ॥४७॥ तब यदूत्तम अनिरुद्ध उठकर सिद्धको प्रणाम करके उसी सेतु (पुल) के मार्गसे सबको आनन्द देते हुये आगये ॥ ४८ ॥ उसके बाद अनिरुद्धने प्रति शार्ङ्ग नामक धनुषको अपने हाथमें लेकर दूसरे रथमें बैठकर बड़े क्रोधसे उस राजकुमारके रथमें एक बाण मारा ॥ ४९ ॥ तब उस बाणने सारथी और घोडों सहित उसके रथको चार मुहूर्ततक आकाशमें घुमाया॥५०॥

तब सब दानवोंने और यादवोंने आकाशमें घूमते हुए कुनन्दनको देखा ॥९१॥तब तो साम्बादिक और अनुशाल्वादिक सब वीर धनुषको धारण किये हुए बड़े वेगसे रथोंमें बैठकर आये ॥९२॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां चतुस्त्रिंशोऽध्यायः॥३४॥गर्गजी कहते हैं कि उसके बाद उस संग्राममें दुर्मुखके साथ अनुशाल्व,दुष्टांतः करण दुर्नेत्र के साथ इन्द्रनील,दुर्मदके साथ हेमांगद और दुःस्वभावके साथ सारण युद्ध करने लगे ॥१॥ २ ॥ तब सारणने दुःस्वभावके गदा मारी, और हेमांगदने दुर्मदके तीन बाण मारे ॥ ३ ॥ तब दुर्मदने हेमांगदके अपने बाण मारे, तब हेमांगदने शक्तिका प्रहार किया,इन्द्रनीलने लीला करके दुर्नेत्रके बाण मारे ॥ ४ ॥ तब अनुशाल्वने दुर्मुखको बाणोंसे विरथ कर दिया,तब दुर्मुखने दूसरे रथमें बैठकर अनुशाल्वको बाणोंसे रथ रहित कर दिया ॥५॥ फिर रथमें अनुशाल्वने एक परिघसे दुर्मुखको मारकर गिरा दिया, जब दुर्नेत्र, दुःस्वभाव,

ततश्चददृशुःसर्वेदानवाश्चैववृष्णयः ॥ गगनेविभ्रमंतंवैसरथंचकुनंदनम्॥९१॥अथसांबादयोवीरारथानारुह्यवेगतः ॥ अनुशाल्वादयश्चैवाज-
ग्मुःसर्वेधनुर्धराः ॥ ९२ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेदैत्ययादवयुद्धवर्णनंनामचतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥ गर्गउवाच ॥ अथ
वैतत्रसंग्रामेऽनुशाल्वोदुर्मुखेनच ॥ युयुधेचेन्द्रनीलस्तुदुर्नेत्रेणदुरात्मना ॥१॥ हेमांगदोदुर्मदेनदुःस्वभावेनसारणः॥एवंपरस्परंयुद्धंबभूवरणम-
ण्डले ॥२॥ सारणोगदयादैत्यंमारयामासवेगतः ॥ हेमांगदस्त्रिभिर्बाणैस्तताडदुर्मदंमृधे ॥३॥ सस्वबाणैर्मृधेतंतुसोपिशक्त्याजघानतम्॥इन्द्र
नीलश्चदुर्नेत्रंजघानलीलयाशरैः ॥४॥ दुर्मुखंचानुशाल्वोवैचकारविरथंशरैः ॥ सचान्यंरथमारुह्यचक्रेतंविरथंशरैः ॥५॥ परिघेणानुशाल्वस्तु
जघानदुर्मुखंमृधे ॥ दुर्नेत्रेदुःस्वभावेचदुर्मुखेदुर्मदेहते ॥ ६ ॥ अवशेषादुद्रुवुर्वैदैत्याःप्राणपरीप्सया ॥ ततःपपातचाकाशाद्राजपुत्रश्चविभ्रमन्
॥७॥ मूर्च्छितोभूद्रणेराजन्नुद्वमन्रुधिरंमुखात् ॥ रथश्चांगारवत्तस्यभग्नोभूत्तुरगाहताः ॥८॥ ततश्चबल्वलःक्रुद्धःपुत्रंदृष्ट्वाचमूर्च्छितम्॥मुमोच
धनुषाबाणाननिरुद्धायवेगतः ॥ ९ ॥ तानागतान्दशशरान्दृष्ट्वारुक्मवतीसुतः ॥स्वबाणैस्तीक्ष्णधारैश्चचिच्छेदस्वर्णभूषितैः॥१०॥ततोदैत्यो
रुषाविष्टश्चापेधृत्वापुनःशरम् ॥ उवाचमाधवंयुद्धेप्रद्युम्नंशकुनिर्यथा ॥ ११ ॥ बल्वलउवाच ॥ अनेनबाणेनयदुप्रवीरधनुर्द्धरंत्वांरणमानि-
नंच ॥ मृधेहनिष्येनवदाम्यसत्यंरक्षस्वप्राणान्यदिजीवितेच्छा ॥ १२ ॥

दुर्मुख और दुर्मद मर गये ॥६॥ तब बाकी रहे दैत्य प्राण बचानेकी इच्छासे भाग गये, तब वह कुनन्दन घूमता हुआ आकाशसे गिरा ॥ ७ ॥ और हे राजन् ! मुखसे रुधिर वमन करता हुआ रणमें मूर्च्छित होगया, और अंगारकी तरह उसका रथ भी टूट गया,और घोड़े मारे गये॥८॥तब बहुत क्रोधित हुए बल्वलने पुत्रको मूर्च्छित हुआ देखकर अनिरुद्धके लिये बड़े वेगसे बाण मारे ॥९॥ तब रुक्मवती सुतने उन दश बाणोंको तीखी धारवाले स्वर्ण भूषित अपने बाणोंसे छेदन कर दिया ॥ १० ॥ तब वह दैत्य क्रोधित होकर अपने धनुषमें फिर बाण लगाकर युद्धमें अनिरुद्धसे बोला, जैसे शकुनि प्रद्युम्नसे बोला था ॥ ११ ॥ बल्वल बोला कि, हे यदु प्रवीर ! धर्नुधर और रणमें मानी तुमको बाणसे युद्धमें मारूँगा झूठ नहीं कहता हूँ, सो यदि तुम्हारी जीनेकी इच्छा हो, तो अपने प्राणोंकी रक्षा करो ॥ १२ ॥

तब यह सुनकर अपने धनुषमें एक बाण लगाकर हँसते हुये अनिरुद्धने यह वाक्य कहा, जैसे प्रद्युम्नने शकुनिसे कहा था ॥१३॥ अनिरुद्धने कहा कि, रे मूर्ख ! कौन किसको मारता है ! और कौन किसकी रक्षा करता हैं ! कालही तो मारता है, और कालही सबकी रक्षा करता है ॥१४॥ मैं करता हूँ, करनेवाला हूँ, मैं पालक हूँ, और मैं मारनेवाला हूँ, ऐसे जो कहते हैं, वे कालके निमित्तसे नष्ट होते हैं ॥१५॥ न तो मैं तुमको जीतूँगा, न मुझको तू जीतेगा, किन्तु विश्वात्मा जो कालरूपी जगत्पति भगवान् हैं, वे ही मुझको और तुमको जीतेंगे ॥ १६ ॥ मैं यह नहीं जानता हूँ, कि वह किसकी जय और किसकी पराजय करता है, हे बल्वल ! उस कालको विजयके लिये मैं मनसे प्रणाम करता हूँ ॥१७॥ इससे हे दानव ! कालकोही तू सबसे बलवान् समझ कर, मेरे वाक्यसे इस महा अज्ञानको छोड़ कर संग्राम कर ॥१८॥ ऐसे अनिरुद्धके कथनको सुनकर बल्वल बड़ा आश्चर्य युक्त हुआ, और प्रसन्न

सोपिश्रुत्वास्वकोदंडेशरमेकंनिधायच ॥ प्रत्याहप्रहसन्वाक्यंप्रद्युम्नःशकुनिं यथा ॥ १३ ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ कःकेनहन्यतेजंतुस्तथाकःकेनरक्ष्यते ॥ हनिष्यतिसदाकालस्तथारक्षतिदुःखतः॥१४॥अहंकरोमिकर्त्ताहंहर्त्ताहंपालकोप्यहम्॥योवदेच्चेदृशंवाक्यंसविनश्यतिकालतः॥१५॥ नाहंत्वांतुविजेष्यामिनविजेष्यसित्वंतुमाम् ॥ त्वांमांजेष्यतिविश्वात्माकालरूपोजगत्पतिः ॥ १६ ॥ नजानेकस्यकुरुतेजयंवाचपराजयम् ॥ कालस्तंमनसावंदेविजयार्थंचदानव ॥ १७ ॥ तस्मादेवहिमनसाकालंहिबलिनांवरम् ॥ मद्वाक्याच्चमहाऽज्ञानंविहायत्वंरणंकुरु ॥ १८ ॥ इतितस्यवचःश्रुत्वाबल्वलोविस्मयान्वितः ॥ तमाहतोपितःप्रीतोयथात्वाष्ट्रोमरुत्पतिम् ॥ १९ ॥ बल्वलउवाच ॥ कर्मप्रधानंभूमध्येकर्मैवगुरुरीश्वरः ॥ उच्चावचत्वंभवतिकर्मणावैयदूत्तम ॥२०॥ सहस्रेषुगवांवत्सःयथाविंदतिमातरम् ॥ तथाशुभाशुभंयेनकृतंतिष्ठत्सुपश्यति ॥२१॥ ततोजेष्यामिसंग्रामेभवतंदृढकर्मणा ॥ मयाकृतश्चशपथःप्रतीकारंकुरुत्वरम् ॥ २२ ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ प्रधानंमन्यसेकर्मविनाकालेनतत्फलम् ॥ नविद्यतेयथापाकेकृतेस्याद्विघ्नताक्वचित् ॥२३॥ पाकप्रकारेपाकश्चविनाकर्त्रानजायते॥तस्माद्वदंतिकर्त्तारंकर्मकालात्परंवरम्॥२४॥

होकर ऐसे बोला, जैसे वृत्रासुर इन्द्रसे बोला था ॥१९॥ बल्वल बोला कि, हे अनिरुद्ध ! इस भूमिमें कर्मही मुख्य है, कर्मही गुरु और कर्मही ईश्वर है, हे यदूत्तम ! कर्महीसे उच्चता और नीचता प्राप्त होती है ॥२०॥ हजार गायोंमें जैसे गायका बछड़ा अपनी माताकोही प्राप्त होता है, वैसेही करनेवालेकोही शुभाशुभ कर्म प्राप्त होते हैं ॥२१॥ इससे अपने दृढ़ कर्मसे तुमको संग्राममें जीतूँगा, मैंने यह शपथ की है, तुमसे जो उपाय होसके, वह करो ॥ २२ ॥ तब अनिरुद्धने कहा कि, रे दैत्य ! तू कर्मको यदि प्रधान मानता है तो, देखकर वह कर्म कालके बिना फल देनेको समर्थ नहीं होता है, जसे पाक (भोजन) बना लेने परभी कभी विघ्नता होजाती है, ॥२३॥ भोजन बनानेमें बिना कर्ताके भोजन नहीं बनता है, इसलिये कालसे और कर्मसे कर्ताकोही प्रधान कहते हैं ॥ २४ ॥

गोलोकके नियंन्ता, परसे परे श्रीकृष्णही कर्ता हैं, जिन्होंने, ब्रह्मा, विष्णु, शिवादिक सब बनाये हैं ॥२५॥ तब बल्वलने कहा कि तुम श्रीकृष्णके पौत्र हो इससे तुम धन्य हो, तुम वाक्योंसे ऋषियोंकी भी विडम्बना करते हो, तुम तीनों गुणोंसे रहित हो, देखो, मनुष्यका स्वभाव बड़ा दुस्त्यज है ॥२६॥ सो तुम सावधान होकर आज प्राण हरनेवाले मेरे बाणको देखो, हे यादव श्रेष्ठ ! अपने मनको युद्धमें लगाकर मेरे बाणको रोको ॥२७॥ यह कहकर उसने अपने बाणके साथ मयकी माया प्रगट की, तब एक साथ तीव्र अन्धकार होगया, उस अन्धकारमें कोई मालूम नहीं पड़ता था॥२८॥बहुतसे लोगोंको यह मालूम नहीं हुआ कि कौन अपना है, कौन पराया है,शिला और पर्वतोंके समान बड़े बड़े सुभट ऊपरसे गिरने लगे ॥२९॥ ऊपरसे जलकी वर्षाके मारे सब अत्यन्त व्याकुल होगये, बिजली चमकने लगी,और मेघ गर्जने लगे॥३०॥वे मेघ रुधिरकी वर्षा करने लगे, बारम्बार जलकी वर्षा करने लगे,

सकर्त्ताकृष्णचंद्रस्तुगोलोकेशःपरात्परः ॥ येनवैनिर्मिताःसर्वेब्रह्मविष्णुशिवादयः ॥ २५ ॥ बल्वलउवाच ॥ श्रीकृष्णपौत्रधन्यस्त्वमृषीन्वाक्यैर्विडंबयन्॥त्रिभिर्गुणैःपृथग्भूतःस्वभावोदुस्त्यजोनृणाम्॥२६॥सावधानतयाचाद्यपश्यप्राणहरंशरम्॥संप्राप्तंयादवश्रेष्ठकृत्वायुद्धेमनःस्वकम् ॥ २७ ॥ इत्युक्त्वाव्यसृजन्मायांस्वबाणेनमयस्यच ॥ तदाभवत्तमस्तीव्रंतत्रकेपिनलक्ष्यते ॥२८॥ नचस्वीयोनपारक्योविदामासजनान्बहून्॥ शिलाःपर्वततुंगाभाःपतंतिसुभटोपरि ॥ २९ ॥ वार्भिर्हताश्चसर्वेपिव्याकुलाश्चसमंततः ॥ विद्युतोविलसंत्यत्रगर्जंतिवारिदाभृशम् ॥ ३० ॥ वर्षंतिरुधिरंचोष्णंमुंचंतिसशकृज्जलम्॥गगनात्पतमानानिकबंधानिशिरांसिच॥३१॥तदाव्याकुलिताःसर्वेपरस्परभयातुराः॥पलायनपराजाताः संग्रामेचयदूत्तमाः ॥ ३२ ॥ तदानिरुद्धःप्रधनेस्मृत्वाकृष्णपदद्वयम् ॥ मायांतांसविधूयाथमोहनास्त्रेणलीलया ॥३३॥ तदादिशःप्रसेदुस्ताः सूर्यस्त्वपरिवेषवान् ॥ मेघायथागतंयाताश्चपलाःशांतिमागताः॥३४॥तदादैत्यश्चपुरतोदृश्यतेदानवैर्युतः॥नानायुधधरोराजन्मायावीचण्डविक्रमः ॥३५॥ ब्रह्मास्त्रंसंदधेक्रुद्धोयादवानांवधायच ॥ ब्रह्मास्त्रेणतुब्रह्मास्त्रंजहारमाधवःपुनः॥३६॥ततश्चबल्वलःक्रुद्धोगांधर्वींमोहनींपराम् ॥ विजयार्थंचसंग्रामेमायांसोपिचकारह ॥ ३७ ॥ गंधर्वनगरंयत्रदृश्यतेनृपसत्तम ॥ नदृश्यतेचसंग्रामःस्वर्णसौधानिकोटिशः ॥ ३८ ॥

और बहुतसे रुंड सामने गिरने लगे॥३१॥तब परस्पर भयातुर और व्याकुल हुये सब यादव श्रेष्ठ भागने लगे ॥३२॥तब अनिरुद्धने श्रीकृष्णके चरण कमलका ध्यान करके मोहनास्त्रसे उस मायाको शान्तकर दिया॥३३॥ तब दिशाएं निर्मल होगईं सूर्य ऊपरके मण्डलसे रहित होगया, मेघ जैसे आये थे वैसेही चले गये, और बिजलीका चमकना बन्द होगया ॥३४॥ तब दानवोंसहित वह दैत्य दिखाई पड़ा, अनेक शस्त्रोंको हाथमें लिये हुये महामायावी, प्रचण्ड पराक्रमी उस बल्वलने॥३५॥क्रोधित होकर यादवोंको मारनेके लिये ब्रह्मास्त्रको चलाया,तब अनिरुद्धने ब्रह्मास्त्रसे ही उसके ब्रह्मास्त्रको शान्त कर दिया॥३६॥तब क्रोधित हुये बल्वलने बड़ी प्रबल अत्यन्त मोह करनेवाली गान्धर्वी मायाको विजयके लिये प्रगट किया,॥३७॥ हे नृप श्रेष्ठ ! जिस मायामें गन्धर्व नगर दीखता हैं,करोड़ों सुवर्णके महल मंदिर दीखते हैं, संग्राम कहीं दिखाई नहीं देता है ॥ ३८ ॥

सो उस मायासे वहाँ नाचती और गान करती हुई गन्धर्व स्त्रियाँ देखने लगीं, वीणा, ताल, मृदंग बजने लगे, और मधुर ध्वानियोंमें, कन्दुक (गेंद) क्रीड़ासे ॥ ३९ ॥ हाव भाव कटाक्षोंसे और कमर तथा वेणीके प्रदर्शनसे, कमल जैसे नेत्रोंवाली सुन्दरियाँ मनुष्योंको संतुष्ट करने लगीं ॥४०॥ सौंदर्यको देखकर कामदेवसे विह्वल हुए यादव शस्त्रोंको पृथ्वीमें रखकर परस्पर कहने लगे ॥४१॥ अरे ! हम सब कहाँ आगये यह स्वर्ग लोक है, अथवा कोई अन्य देव लोक है, जहाँ ये कलकण्ठ वाली, मनको हरनेवाली सुन्दरियाँ नृत्य कर रहीहैं ॥४२॥ सो कामदेवसे पीड़ित हुये हम इनके सौंदर्य समुद्रमें मग्न होगये,हैं और संग्राम तो यहाँ कहीं दीखता ही नहीं है, फिर जय कैसे होगी ! ॥ ४३ ॥ इस प्रकार सब यादव कह रहे थे कि, क्रोधमें मूर्च्छित हुआ बल्वल शीघ्र ही खड्गको हाथमें लेकर सभीको मारनेके लिये आया ॥ ४४ ॥ उसने आकर खड्गसे मोहित हुये हजारों यादव वीरोंको युद्धमें मार दिया जब उनको गिरे हुये देखा, तब क्रोधित होकर अनिरुद्धने कहा कि, ॥ ४५ ॥ अरे ! देख, सत्यपुरुषोंसे निन्दित इस अधर्मको क्यों करता है, ये आप ही

बभूवुस्तत्रगंधर्व्योनृत्यंत्योगानतत्पराः ॥ वीणातालमृदंगैश्चकलकंठैश्चकंदुकैः ॥३९॥ हावभावकटाक्षैश्चटिवेणीनिदर्शनैः॥ तोषयन्त्योजना-न्सर्वान्सुन्दर्यःकञ्जलोचनाः ॥ ४० ॥ तासांदृष्ट्वाचसौंदर्यंयादवाःस्मरविह्वलाः ॥ ऊचुःपरस्परंसर्वेधृत्वाशस्त्राणिभूतले ॥४१॥ वयंकुत्रागताः सर्वेस्वर्लोकेकिंतुदैवतः ॥ यत्रनृत्यंतिसुन्दर्यःकलकण्ठचोमनोहराः ॥४२॥ आसांलावण्यजलधौवयंमग्नाःस्मरातुराः ॥ कथंभविष्यतिजयोर-णंचात्रनदृश्यते ॥ ४३ ॥ इतिब्रुवत्सुसर्वेषुबल्वलःक्रोधपूरितः ॥ शीघ्रंनिस्त्रिंशमादायहंतुंसर्वान्समाययौ ॥ ४४ ॥ आगत्यखड्गेयदुप्रवीरा-न्विमोहितान्सोपिसहस्रशश्च ॥ जघानयुद्धेयदितेनिपेतुर्दृष्ट्वानिरुद्धस्तुरुषातमूचे ॥४५॥ किंकरिष्यसिसंग्रामेऽधर्मंसद्भिर्विगर्हितम् ॥ मोहिता नांमारणेचनश्लाघातेभविष्यति ॥४६॥ यदिशक्तिःशरीरेस्तिमयासार्धंरणंकुरु ॥ इतितद्वाक्यमाकर्ण्यबल्वलोबलदर्पितः ॥ आजगामपदातिर्वै खड्गचर्मधरोनदन् ॥ ४७ ॥ तमापतंतंसनिरीक्ष्यरोषाद्रथादवप्लुत्यमनोजपुत्रः ॥ कृतांतदण्डेनजघानदैत्यंयथामहेन्द्रोभिदुरेणशैलम् ॥४८॥ निर्भिन्नहृदयोदैत्यःपपातचालयन्महीम् ॥ चतुर्वासरपर्यंतंमूर्च्छितोभूद्रणांगणे ॥४९॥ तदानिपतितेदैत्येमायाशांतिंगतास्वतः ॥ युद्धंप्रदृश्यते तत्रयादवाविस्मयंगताः ॥ ५० ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेऽनिरुद्धजयोनामपंचत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥ गर्गउवाच ॥ कुनन्द-नोपिसंमूर्च्छांत्यक्त्वागाद्रणमण्डले ॥ रथस्थःक्रोधसंयुक्तःप्रवर्षन्धनुषाशरान् ॥ १ ॥

मोहित हुये हैं, इनको मारनेमें तुम्हारी क्या बड़ाई होगी ॥ ४६ ॥ यदि तुम्हारे शरीरमें है तो मेरे साथ युद्धकर, तब बलमें दर्पित हुआ बल्वल उसके कथनको सुनकर पैदलही ढाल, तलवारोंको लिये हुये गर्जना करता हुआ, आया ॥ ४७ ॥ तब उसको बड़े क्रोधसे आये हुये देखकर कामदेवके पुत्र अनिरुद्धने रथसे ही उतरकर उस दैत्यके ऊपर काल-दंडसे प्रहार किया, जैसे पर्वतके ऊपर इन्द्र वज्र मारता हो ॥ ४८ ॥ तब हृदय जिसका फट गया ऐसा वह दैत्य भूमिको कम्पाता हुआ गिरा, और युद्धमें चार दिन तक मूर्च्छित हुआ पडा रहा ॥ ४९ ॥ तब उस दैत्यके गिरनेपर सब माया शान्त होगई,युद्धभूमि दीखने लगी, और सब यादव विस्मयको प्राप्त हुये ॥५०॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥ गर्गजी कहते हैं कि इतनेमें कुनन्दन भी मूर्च्छा छोड़ कर उठा, फिर रथमें बैठकर क्रोधसे धनुषसे बाण बर्षाता हुआ युद्धमें आया ॥१॥

तव वीर अनिरुद्धने उसको देखकर क्रोधित होकर उसकी बातको सेवकोंसे पूछा ॥ २ ॥ तब ये सेवक बोले कि महाराज ! यह बल्वलका पुत्र आपसे युद्ध करनेके लिये आया है ॥ ३ ॥ यह सुनकर अनिरुद्धने कहा कि मैं इस कुनन्दनको मारूँगा, तब कृष्णके पुत्र सुनन्दन अनिरुद्धसे बोले ॥ ४ ॥ सुनन्दनजी बोले कि हे राजन् ! यह दैत्य पुत्र कौन है ? और परिमित बल क्या बात है ? हे प्रभो ! आपकी कृपासे मैं जीतूँगा, इस लिये मैं जाता हूँ ॥ ५ ॥ हे राजन् ! आपको आनन्द देनेवाली मेरी प्रतिज्ञाको सुनिये, यदि मैं आज युद्ध करनेमें प्रवीण इस कुन्दनको नहीं जीत लऊँ तो ॥ ६ ॥ कृष्ण चरण कमल मकरन्दके आस्वादके वियोगियोंको जो पाप होता है, वह पाप मुझको हो, यदि इसको मैं नहीं जीत लेऊँ तो ॥७॥ और संसारके निवृत्त करनेवाले पिता और गुरुकी सेवा नहीं करे, उसको जो पाप होता है वह पाप मुझको हो, यदि मैं आज कुनन्दनको नहीं जीतूँ तो ॥८॥ उसकी इस प्रतिज्ञाको सुनकर हे भूपते ! अनिरुद्ध प्रसन्न हुये, और उस वीर सुनन्दनको युद्धके लिये जानेकी आज्ञा दी ॥९॥ अनिरुद्धकी आज्ञाको सुनकर कृष्णका नन्दन कवच

दृष्ट्वासमागतंवीरोनिरुद्धःपरवीरहा ॥ पप्रच्छसेवकांस्तस्यवार्तांरोषेणदीपितः ॥२॥ सेवकास्तेततःप्रोचुरेषबल्वलनन्दनः ॥ त्वयासार्द्धंमहाराज युद्धंकर्तुंसमागतः ॥ ३ ॥ श्रुत्वानिरुद्धःप्रोवाचहनिष्येहंकुनन्दनम् ॥ तदैवतमुवाचाथकृष्णपुत्रःसुनन्दनः ॥ ४ ॥ सुनन्दनउवाच ॥ राजन्कोयंदैत्यपुत्रःक्वेदंपरिमितंबलम् ॥ जेष्येहंत्वत्प्रतापेनतस्माद्गच्छाम्यहंप्रभो॥५॥राजच्छृणुप्रतिज्ञांमेतवानंदप्रदायिनीम् ॥ नचेत्कुनन्दनंजेष्येत्रद्धुसंग्रामकोविदम् ॥ ६ ॥ कृष्णस्यचरणांभोजमध्वास्वादवियोगिनाम् ॥ यत्पापंचभवेत्तन्मेनजयेयदिदानवम्॥७॥योगुरुंभवहर्त्तारंपितरंचनसेवते ॥ यदघंतुभवेत्तस्यतन्मेभूयाज्जयेनवै ॥ ८ ॥ इतिप्रतिज्ञामाकर्ण्यानिरुद्धस्तस्यभूपते ॥ जहर्षचित्तेतंवीरंनिर्दिदेशरणंप्रति ॥९॥ इत्याज्ञप्तोनिरुद्धेनचैकाकीकृष्णनन्दनः ॥ जगामदंशितस्तत्रयत्रास्तेबल्वलात्मजः॥१०॥कुनन्दनस्तमाज्ञायत्रागतंप्रधनेरुषा ॥ प्रत्युज्जगाम वीराग्र्योरथीशूरशिरोमणिः ॥११॥ अन्योन्यंतौसंमिलितौरथस्थौचापधारिणौ ॥ रेजातेराजशार्दूलयथादमनपुष्कलौ ॥१२॥ उभौसायकभिन्नांगावुभौरुधिरविप्लुतौ ॥ मुञ्चंतौशरकोटीश्चसंधंतौतरसाशरान्॥१३॥आदानंनैवसन्धानंमोचनंचनभूपते॥दृश्येतेतौमहाशूरौकुण्डलीकृतकार्मुकौ ॥ १४ ॥ तद्रथंराजपुत्रस्तुभ्रामकास्त्रेणशोभिना ॥ भूतलेभ्रामयामासकुंभकारस्यचक्रवत् ॥ १५ ॥

पहनकर अकेला ही जहाँ बल्वलका पुत्र था, वहाँ आया ॥ १० ॥ तब कुनन्दन ने संग्राममें आया हुआ जानकर बड़े क्रोधसे वीरोंमें मुख्य शूरवीरोंका शिरोमणि वह रथमें बैठकर आया ॥ ११ ॥ तब रथमें बैठे हुये, धनुष धारण किये हुये परस्पर मिले थे हे राज शार्दूल ! दमन और पुष्कलकी तरह सुशोभित हुये ॥ १२ ॥ बाणोंसे घायल अंगवाले रुधिरसे भीगे हुये दोनों करोंड़ो बाणोंको चलाते हुये और धनुषमें संधान करते हुये ॥१३॥ कुण्डलीके आकार किये हैं धनुष्य जिन्होंने ऐसे उन दोनों महायोद्धाओंका बाणोंका लेना, लगाना, खैंचना और छोड़ना हे भूपते ! किसीको मालूम नहीं होता था ॥ १४ ॥ तब राज कुमारने भ्रामक नामके अस्त्रसे उसके रथको पृथ्वीमें कुम्भकार (कुह्मार) के चक्रकी तरह घुमाया ॥ १५ ॥

फिर दो घड़ीतक चक्कर खाकर जब वह रथ ठहरा, तब कृष्णके पुत्रने अश्व सहित उसके रथमें एक बाण मारा ॥१६॥ तब बाणके प्रहारसे मत्त हाथीकी तरह वह रथ आकाशमें घूमा, फिर कांचके पात्रकी तरह टूटकर भूमिमें गिरा ॥ १७॥ फिर रथके टूटने पर सारथी और घोड़ोंके समेत रथके नष्ट होनेपर वह उठा, और दूसरे रथमें बैठकर सामने आया ॥ १८ ॥ तब कृष्ण पुत्रने वह रथभी तोड़ डाला, इस प्रकार उस दैत्य पुत्रके सात रथ कृष्ण पुत्रने तोड़ डाले ॥१९॥ तब वह कुनन्दन विचित्र विमानमें बैठकर वेगसे कृष्णके पुत्रसे लड़नेके लिये आया ॥२०॥ युद्धमें आतेही उसने दश बाण मारे, उन बाणोंके मारे वह बड़े खेदको प्राप्त हुआ ॥ २१ ॥ तब कृष्णके पुत्रने क्रोधित होकर धनुष लेकर उसकी छातीमें दश बाण मारे ॥ २२ ॥ वे बाण उसके रुधिरको पीकर पृथ्वीमें गिरे, जैसे झूठी गवाहीके देनेवालेके पितृगण नरकमें पड़ते हैं ॥२३॥ कुनन्दनने सुनन्दनके और सुनन्दनने

भ्रांत्वामुहूर्त्तमात्रंतुतद्रथोवाजिसंयुतः ॥ स्थितिंलेभेततःकार्ष्णिर्जघानतद्रथेशरम् ॥१६॥ सयानस्तेनबाणेनखेबभ्राममतंगवत् ॥ पपातकौविशी-
र्णोभूद्यथावैकाचभाजनम् ॥१७॥ उत्थितःसोपिविरथोहताश्वोहतसारथिः ॥ अन्यंरथंसमारुह्ययावदायातिसंमुखम् ॥१८॥ बभंजतावद्बा-
णैश्चतद्रथंकृष्णनन्दनः ॥ एवंसप्तरथाभग्नादैत्यपुत्रस्यवैरणे॥१९॥ तदाकुनन्दनःसंख्येस्थित्वायानेविचित्रिते ॥ आययौनृपवेगेनकृष्णपुत्रंनि-
योधितुम् ॥२०॥ आगत्यदशभिर्बाणैस्ताडयामासतंमृधे ॥ शरैस्तैःसोपिनिहतःपरंकश्मलतांगतः॥२१॥ततः सधनुरुद्यम्यगृहीत्वादशसाय-
कान् ॥ मुमोचतस्यहृदयेक्रुद्धःकृष्णात्मजोबली ॥ २२ ॥ तेशरारुधिरंपीत्वानिपेतुर्वैमहीतले ॥ यथाहिपितरोराजन्नरकेकूटसाक्षिणः ॥२३॥
कुनंदनःसुनन्दनंसुनन्दनःकुनन्दनम् ॥ महद्रणेमहच्छरैर्निजघ्नतुःपरस्परम् ॥ २४ ॥ एवंहितौद्वौशरभिन्नगात्रौरक्ताप्लुतौचापधरौरुषाढ्यौ ॥
प्रचक्रतुर्युद्धवरंशरैश्चकुशांबसांबाविवसंयुगेवै ॥२५॥ ततःकृष्णात्मजोवीरःकोदंडेस्वर्णनिर्मिते ॥ मृगांकार्द्धसुखंबाणंधृत्वाशीघ्रंतमब्रवीत् ॥२६॥
॥ सुनन्दनउवाच ॥ शृणुमद्वचनंवीरबाणेनानेनत्वच्छिरः ॥ सद्यश्छिन्नंकरिष्येहंशिरोरक्षबलीयदि ॥ २७ ॥ यदिमद्वचनंसत्यंप्रधनेत्वंन
मन्यसे ॥ तदाशृणुप्रतिज्ञांमेतवमृत्युविषूचिकाम् ॥२८॥ सतींचगुरुपत्नींचयोदूषयतिकामतः॥सयातियातनायांवैयमराजस्यसन्निधौ॥२९॥
सायातनाचमेभूयात्सत्यंममप्रतिश्रुतम् ॥ यःसमर्थश्चस्वगुरुंपितरंचनपालयेत् ॥ ३० ॥

कुनन्दनके उस महा युद्धमें परस्पर प्रहार किये ॥ २४ ॥ ऐसे बाणोंसे भिन्न होगये अङ्ग जिनके, रुधिरसे भरे हुये, धनुषको लिये हुये, क्रोधमें भरे वे दोनों कुशाम्ब और साम्बकी तरह बाणोंसे युद्ध करने लगे ॥२५॥ तब कृष्णके पुत्र सुनन्दन सुवर्णके धनुषमें अर्द्ध चन्द्राकार बाण लगाकर यह बोले ॥२६॥ कि हे वीर ! मेरे सत्य वचनको सुनो, इस बाणसे अभी मैं तेरे शिरको काटता हूँ, यदि तू बली है, तो रक्षा कर ले ॥२७॥ यदि मेरे इस सत्य वचनको संग्राममें तू नहीं मानेगा, तो तेरी मृत्युकी सूचना करनेवाले मेरे वचनको सुन ॥२८॥ जो पुरुष कामके वशमें होकर सती गुरु पत्नीको दूषित करता है, उस पुरुषको जो यातना मिले, वह यातना मुझको प्राप्त हो, यह मेरी सत्य प्रतिज्ञा है, जो पुरुष समर्थ होकर अपने

माता पिता और गुरुका पालन नहीं करता है, उसका पाप मुझको हो, यदि मैं तुमको नहीं मार डालूँ तो, ऐसे उसके वचनको सुनकर क्रोधसे जलता हुआ दैत्य बोला ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ राजकुमार बोला कि, मैं शत्रुके सामने मरनेसे नहीं डरता हूँ, क्योंकि ऐसा कोई प्राणी नहीं है, जो मरता न हो, अर्थात् मरते सब हैं फिर मरनेसे क्यों डरना ॥ ३२ ॥ यदि तू मेरे मारनेको महा बाणको छोड़ता है, तो मैं अपने बाणसे तेरे इस बाणको निःसन्देह छेदन करूँगा ॥ ३३ ॥ जो पुरुष एकादशीके दिन अन्नको खाते हैं, उनको और, माता, भ्रातृ-पत्नी बहिन और पुत्री इनसे पाप करने वाले मनुष्योंको जो पाप लगता है, वह पाप मुझको लगे, यदि तेरे इस बाणको मैं नहीं काट डालूँ तो ॥३४॥ ऐसे उसके कहे हुये स्पष्ट वचनको सुनकर सुनन्दन भी श्रीकृष्णको स्मरण करता हुआ फिर बोला ॥ ३५ ॥ सुनन्दन बोला कि, यदि मैंने निष्कपट भावसे कृष्णके चरण कमलका स्मरण

तस्यपापंममैवास्तुनहनिष्येचत्वांरणे ॥ इतिश्रुत्वाचदद्वाक्यंदैत्यआहरुषाज्वलन् ॥ ३१ ॥ राजपुत्रउवाच ॥ बिभेमिनाहंमरणात्संग्रामे शत्रुसम्मुखे ॥ प्राणिनांचैवसर्वेषांमृत्युर्भवतिसांप्रतम् ॥ ३२ ॥ यदिमुंचसिसंग्रामेमद्वधार्थंमहाशरम् ॥ तदाहंस्वशरेणापिशीघ्रंछेत्स्येनसंशयः ॥ ३३ ॥ एकादश्यांचयेमानादन्नंभुंजंतिभूतले ॥ मातरंभ्रातृपत्नींचभगिनींचसुतांतथा ॥ पापंतेषांममैवास्तुनछेत्स्येयदित्वच्छरम् ॥३४॥ इति तस्यवचःस्पष्टंश्रुत्वाशंकितमानसः ॥ प्रत्युवाचपुनर्वाक्यंश्रीकृष्णंसोपिसंस्मरन् ॥ ३५ ॥ सुनन्दनउवाच ॥ मयाकृष्णांघ्रियुगुलंसेवितं मनसायदि ॥ कपटेनविनातर्हिसत्यंभूयाद्वचोमम ॥ ३६ ॥ स्वपत्नींचविनावीरनान्यांपश्यामिकामतः ॥ तेनसत्येनसंग्रामेवाक्यंभूयादृतंमम ॥३७॥ इत्युक्त्वासायकंतीक्ष्णंविमुमोचसुनन्दनः ॥ मंत्रयित्वाचमंत्रेणमहाकालानलोपमम् ॥३८॥ प्रमुक्तंवीक्ष्यविशिखंस्वबाणेननृपात्मजः ॥ सद्यश्चिच्छेदहियथासर्पंपक्षेणपक्षिराट् ॥ ३९ ॥ छिन्नेतस्मिञ्छरेराजन्हाहाकारस्तदाभवत् ॥ चचालपृथिवीलोकैर्देवास्तेविस्मयंगताः ॥४०॥ परार्द्धःपतितोबाणःपूर्वार्द्धःफलसंयुतः ॥ शिरश्चिच्छेददैत्यस्यतरोःस्कंधंयथागजः ॥ ४१ ॥

किया है, तो मेरा यह वचन सत्य होगा ॥३६॥ हे वीर ! मैं अपनी पत्नीके सिवाय दूसरी किसी स्त्रीको काम दृष्टिसे नहीं देखता हूँ, इस सत्यसे अर्थात् यदि यह सत्य है, तो मेरा कहा हुआ वाक्यभी सत्य होगा ॥३७॥ ऐसे कहकर सुनन्दनने बडे तीक्ष्ण, महाकालाग्निके समान बाणको मन्त्रसे अभिमन्त्रित करके छोडा ॥३८॥ आते हुये उस बाणको कुनन्दनने काटकर गिरा दिया, जैसे सर्पको गरुड काटकर गिरा देता है ॥३९॥ हे राजन् ! उस समय उस बाणके कटने पर बडा हाहाकार मचा, और सब लोकों सहित भूमि हिलने लगी, और सब देवता विस्मयको प्राप्त हुये ॥४०॥ तब हे राजन् ! कटे हुये उस बाणका नीचेका भाग तो कटकर पृथ्वीमें गिर पडा, और आगेके कटे हुये फल सहित आके भागते दैत्यके शिरको काट डाला, जैसे हाथी वृक्षके अंशको काट डालता है ॥ ४१ ॥

तब किरीट (मुकुट) और कुण्डलके सहित-पृथ्वीमें कटे हुये पड़े उसके शिरको देखकर सब दैत्योंने हाहाकार किया॥४२॥तब शीघ्रही कुनन्दनके कबन्धने उठकर उस संग्राममें खड्गों से, घूंसोंसे, और पांवोंसे बहुतसे शत्रु मारे ॥ ४३ ॥ उसके बाद यदु सेनामें नगाड़े बजे और देवताओंने सुनन्दनके ऊपर फूल बरसाये ॥४४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेध खण्डे भाषाटीकायां षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥३६॥ सूतजी कहते हैं कि यह सब वृत्तान्त सुना, तब वज्रनाभने प्रश्न किया कि हे ब्रह्मन्! कुनन्दनके मर जानेपर और बल्वलके मूर्च्छित होनेपर भी दयालु शिवजीने रक्षा क्यों नहीं की ? शिवजी क्यों नहीं आये, और दैत्योंने घोड़ा कैसे छोड़ा और फिर यज्ञ पूर्ण कैसे हुआ, यह सब वृत्तान्त मुझको कहिये ॥ १ ॥ ॥ २ ॥ सूतजी कहते हैं कि वज्रनाभके प्रश्नको सुनकर बड़े ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ श्रीगर्गजी सब कथाको स्मरण करके वज्रनाभसे बोले कि, हे राजन् ! बल्वल जब मूर्च्छित होगया,

किरीटकुण्डलैर्युक्तंपतितंतस्यमस्तकम् ॥ निरीक्ष्यहाहाशब्दंवैचक्रुर्दैत्याश्चदुःखिताः ॥ ४२ ॥ कुनंदनकबंधस्तुशीघ्रमुत्थायसंयुगे ॥ खड्गेनमुष्टिभिःपादैर्बहून्छत्रूञ्जघानह ॥४३॥ ततश्चयदुसेनायांनेदुर्दुंदुभयोमुहुः ॥ सुनंदनोपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥ ४४ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायां हयमेधखण्डेदैत्यपुत्रवधवर्णनंनामषट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥ वज्रनाभिरुवाच ॥ कुनंदनेहतेब्रह्मन्बल्वलेमूर्च्छितेरणे ॥ नकृतंतुसहायंवैरुद्रेणकरुणात्मना ॥ १ ॥ कस्मान्नचागतोरुद्रोयज्ञःपूर्णःकथंभवेत् ॥ कथंविमुक्तस्तुरगस्तन्मेव्याख्यातुमर्हसि ॥ २ ॥ सौतिरुवाच ॥ इति तस्यवचःश्रुत्वागर्गोज्ञानवतांवरः ॥ स्मृत्वासर्वांकथांब्रह्मन्नुवाचयदुसत्तमम् ॥ ३ ॥ गर्गउवाच ॥ बल्वलेमूर्च्छितेराजन्हतेशूरेकुनन्दने ॥ महत्कोपंशिवश्चक्रेप्रेरितस्तुसुरर्षिणा ॥ ४ ॥ आरुह्यनंदिनंक्रुद्धोभक्तरक्षाकरःशिवः ॥ चन्द्ररेखांवहन्मूर्ध्निजटाजूटांतरेनृप ॥५॥ सर्पहारैर्मुण्डहारैर्भस्मालिप्तोभयंकरः ॥ दशबाहुःपञ्चमुखोनेत्रैःपञ्चदशैर्वृतः ॥ ६ ॥ सिंहचर्मांबरधरोमदमत्तोभयंकरः ॥ त्रिशूलपट्टिशधरोधनुर्बाणधरःपरः ॥७॥ कुठारपाशपरिघभिंदिपालैर्विभूषितः ॥ सहस्रार्कसंकाशःसर्वभूतगणावृतः ॥८॥ हंतुंसर्वान्वृष्णिवरान्कार्ष्णिजप्रमुखान्मृधे ॥ कैलासादाययौशीघ्रंचालयन्पृथिवीतलम् ॥ ९ ॥ कोलाहलोमहानासीदाकाशेभूतलेनृप ॥ देवदैत्यनराःसर्वेभयंप्रापुश्चविस्मिताः ॥ १० ॥

और सुनन्दन जब मर गया तब नारदजीने शिवजीसे सब वृत्तान्त कहा, तब नारदजीकी प्रेरणासे शिवजीको बड़ा क्रोध आया ॥ ३ ॥ ४ ॥ और भक्तोंकी रक्षा करनेवाले शिवजी नन्दीश्वरपर बैठकर चन्द्रमाके चिह्नको जटाजूटके मध्यमें शिरपर धारण किये हुये ॥ ५ ॥ सर्पोंके हार और मुण्डमाल पहिने हुये भस्मसे लिप्त अंगवाले, दशभुजाएं, पांच मुख और पन्द्रह नेत्रोंसे युक्त ॥ ६ ॥ बाघम्बरको ओढ़े हुये, मदमें मत्तप्रलयके करनेवाले, त्रिशूल पट्टिशको धारण किये हुये, धनुषबाणको लिये हुये ॥७॥ कुठार, पाश, परिघ और भिंदिपाल, इनसे विभूषित, हजार सूर्यके समान, सब भूतगणोंको साथ लिये हुये ॥ ८ ॥ संग्राममें अनिरुद्धादिक सब यादवोंके मारनेको भूतलको कम्पाते हुये कैलाससे आये ॥ ९ ॥ तब हे नृप ! आकाशमें और भूमिमें बड़ा कोलाहल हुआ, और सब देव, दैत्य, और मनुष्य विस्मित होकर भयको प्राप्त हुये ॥ १० ॥

गण और परिवार सहित, क्रोधित हो रहे, प्रलयके करनेवाले शिवजीको आये हुये देखकर सब यादव भयभीत होगये ॥११॥ और भयसे अनिरुद्धका मुख तेजरहित होगया, और दुखित हुये उसका हृदय युद्धमें कांपने लगा ॥ १२ ॥ तब शिवजी सब यादवोंसे ये निठुर वचन बोले, शूलको हाथमें लेकर क्रोधमें मूर्च्छित हुये ॥ १३ ॥ शिवजी बोले कि, अनिरुद्ध कहाँ गया ? सुनन्दन कहाँ है ? और मेरे भक्त कुनन्दनको मारकर सांबादिक कहाँ गये ? ॥ १४ ॥ और मेरे भक्तश्रेष्ठ बल्वलको मूर्च्छित करके और उसके भक्तोंसे मारकर आज देखता हूँ यादव कहाँ जायंगे ॥ १५ ॥ इससे मैं जो मेरे भक्तोंके शत्रु हैं, उन सभीको मारूँगा, मैं विष्णु और ब्रह्मा, ये तीनों अपने भक्तकी दुःखसे रक्षा करते हैं ॥१६॥ गर्गजी कहते हैं कि इतना कहकर शिवजीनें अपने भैरव नामके गणको आज्ञा दी कि, हे शूर ! तू युद्धमें जीतनेवाले कृष्णके पौत्र अनिरुद्धको मारनेको जा ॥ १७ ॥ और नन्दी नामके गणको सुनन्दनको मारनेको भेजा, और बड़े क्रोधसे गदको जीतनेको वीरभद्रको, साम्बको जीतनेको स्वामी कार्तिकेयको, भानुको जीतनेके लिये भृंगीगणको और सब

सगणंसपरीवारमागतंवीक्ष्यशङ्करम् ॥ क्रुद्धंप्रलयकर्तारंभयंप्रापुर्यदूत्तमाः ॥११॥ अनिरुद्धस्यचमुखंनिस्तेजस्कमभूद्भयात्॥चकंपेहृदयंतस्य
दुःखितस्यरणांगणे ॥ १२ ॥ ततःप्रत्याहवचनंनिष्ठुरंसर्वयादवान् ॥ शूलंगृहीत्वाहस्तेनगिरीशःक्रोधपूरितः ॥ १३ ॥ शंकरउवाच ॥
अनिरुद्धःकुत्रगतोगतःकुत्रसुनन्दनः ॥ सांबादयःकुत्रगताभक्तंहत्वाकुनन्दनम् ॥१४॥ बल्वलंमूर्च्छितंकृत्वामद्भक्तंदैत्यसत्तमम् ॥ तस्यानुगा-
न्मृधेहत्वाकुत्रयास्यंतिवृष्णयः ॥ १५ ॥ तस्मात्सर्वान्हनिष्यामिमद्भक्तानांरिपून्मृधे ॥ अहंविष्णुर्विधिश्चैतेभक्तंरक्षंतिदुःखतः ॥ १६ ॥ गर्ग
उवाच ॥ इत्युदीर्य्यानिरुद्धंसप्रेषयामासभैरवम् ॥ त्वंहियोद्धुंगच्छशूरकार्ष्णिजंजयिनंमृधे ॥१७॥ सुनंदनंनंदिनंचप्रेषयामासरोषतः ॥ गदं-
चवीरभद्रंवैसांबंचशिखिवाहनम् ॥ १८ ॥ भानुश्चभृङ्गिणंयुद्धेविरूपाक्षःसमादिशत् ॥ यदूंश्चप्रेषयामासभूतप्रेतांस्ततः शिवः ॥ १९ ॥ततस्ते
रुद्रवचनाद्भूतप्रेतविनायकाः ॥ भैरवाःप्रमथाश्चैववेतालाब्रह्मराक्षसाः ॥२०॥ उन्मादाश्चैवकूष्मांडाआजग्मुः कोटिशोमृधे॥भूतानिजघ्नुश्चां-
गारैर्यादवाश्चविनायकाः ॥२१॥ पट्टिशैर्भैरवाःशूलैःखट्वांगैःप्रमथाःकिल ॥ जनानश्वान्गृहीत्वातुभक्ष्यंतिब्रह्मराक्षसाः॥२२॥ यातुधानाश्च-
र्वयंतोमनुष्याणांशिरांसिच ॥ कपालैस्तत्रवेतालाःपिबंतोरुधिरंरणे ॥२३॥ पिशाचास्तत्रनृत्यंतःप्रेतागायंतिएवहि॥ शिरांसिकंदुकानीवक्षेपयं-
तोमुहुर्मुहुः ॥ २४ ॥ अट्टहासंप्रकुर्वंतःप्रधावंतइतस्ततः ॥ गजान्रथांश्चर्वयंतोदृश्यन्तेरणमंडले ॥ २५ ॥

यादवोंको जीतनेके लिये भूतप्रेतोंको शिवजीने भेजा ॥ १८ ॥ १९ ॥ तब वे सब रुद्रकी आज्ञासे भूत, प्रेत, विनायक, भैरव, प्रमथ, बेताल और ब्रह्म राक्षस, उन्माद और कूष्मांड शिवजीके भेजे हुये करोड़ों आये, तब भूतगण तो अङ्गारोंसे यादवोंको मारने लगे, विनायक पट्टिशोंसे, भैरव त्रिशूलोंसे और प्रमथ गण खट्वांगोंसे यादवोंको मारने लगे, और ब्रह्मराक्षस मनुष्योंको और घोड़ोंको खाने लगे ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ और राक्षस मनुष्योंके शिरोंको चबाने लगे, और बेताल कपालोंमें भरभर करके रुधिर पीने लगे ॥२३॥ वहाँ पिशाच नाचने लगे, प्रेत गाने लगे, और मुंडोंको गेंद बनाकर उड़ाने लगे, ॥ २४ ॥ अट्टहास करते हुये, इधर उधर दौड़ने युद्धभूमिमें हाथियोंको और रथोंको चबाते हुये दिखाई देने लगे ॥ २५ ॥

और पिशाचिनियाँ तथा डाकिनियाँ उस संग्राममें अपने पुत्रोंको रक्त पान कराती हुई, "मत रोओ" ऐसे कहती हुई उनके नेत्रोंको साफ करने लगीं ॥२६॥ उन्माद और कूष्माण्ड स्वर्ग जानेवाले वीरोंके मुण्डोंकी माला बनाकर श्रीमहादेवजीको निवेदन करने लगे ॥२७॥ हे नृपेश्वर ! उस समय यादवोंकी सेनामें हाहाकार मचा, घोड़े और हाथी चारों तरफ भागने लगे ॥२८॥ संग्राममें हजारों वीर मरकर गिर पड़े, इस प्रकार महादेवजीके गणोंके पराक्रमको देखकर कृष्णका पुत्र दीप्तिमान् ॥२९॥ धनुषमें परम अद्भुत् बाणोंको लगा कर चलाने लगा, वे बाण भूत, प्रेत और विनायकोंके शरीरमें प्रवेश करने लगे ॥ ३० ॥ जैसे वनमें मयूर प्रवेश करते हैं, तब उन करोड़ों बाणोंके मारे सब भूतगण भागने लगे ॥३१॥ कितनेही भूतगण संग्राममें गिर पड़े, और कितनेही मर गये, और कितनेही तो विना बाणोंके मारेही गिर पड़े ॥३२॥ जब सब प्रेतोंके गण भागगये, तब भैरवजी क्रोधसे

रक्तंपिशाच्योडाकिन्यःपातयंत्यःसुतान्मृधे ॥ मारोदीरितिवादिन्यअक्ष्णिचतदामृजत्॥२६॥ उन्मादश्चैवकूष्मांडानिर्मायमुण्डभिःस्रजः ॥ संयच्छंतिमहेशायशूराणांस्वर्गगामिनाम् ॥ २७ ॥ हाहाकारस्तदैवासीद्यदुसैन्येनृपेश्वर ॥ दुद्रुवंतोभयादश्वाधावंतस्तत्रदंतिनः ॥२८॥ वीराः प्रपतितायुद्धेगतामृत्युंसहस्रशः ॥ दृष्ट्वाचेत्थंगणबलंदीप्तिमान्माधवात्मजः ॥२९॥ चापेनिधायविशिखान्मुमुचेपरमाद्भुतान् ॥ तेशराविविशुस्तिग्माभूतप्रेतविनायकान् ॥३०॥ कोटिशःकोटिशोराजन्यथारण्यंशिखण्डिनः ॥ ततश्चदुद्रुवुर्भिन्नाःसर्वेभूतगणाःशरैः ॥३१॥ केचिन्निपतितायुद्धेकेचिद्वैनिधनंगताः ॥ नहताश्चशरैःकेपिपतिताःपूर्वमेवच ॥ ३२ ॥ पलायितेप्रेतगणेभैरवःक्रोधपूरितः ॥ त्रिशूलीसारमेयस्थआजगाम कृतांतवत् ॥३३॥ तंदृष्ट्वाकालरूपंचभैरवंतुभयंकरम् ॥ नकोपियुयुधेतेनानिरुद्धोयुयुधेनृप॥३४॥अनिरुद्धःपंचशरैस्तताडभैरवंमृधे॥सचापिपरिघेणापिबभञ्जतद्रथंवरम्॥३५॥सोप्यन्यंरथमारुह्यसज्जंकृत्वाधनुर्दृढम्॥तताडदशभिर्बाणैरौद्रंमायाविनंमृधे ॥३६॥ तैर्बाणैर्निहतःसोपिकिंचित्कश्मलतांगतः ॥ त्रिशूलंत्रिशिखंतस्मैचिक्षेपज्वलनप्रभम् ॥३७॥ शूलंसमागतंदृष्ट्वाबाणैश्चिच्छेदकार्ष्णिजः ॥ छिन्नंस्वीयंत्रिशूलंवैदृष्ट्वारुद्रसुतो बली ॥ ३८ ॥ ससृजेमाययातत्रमुखादलनमेवच ॥ तेनाग्निनाजज्वलुश्चमहीवृक्षादिशोदश ॥ ३९ ॥

पूर्ण होगये, और त्रिशूलको हाथमें लिये हुये कुत्तेपर सवार होकर यमराजकी तरह आये ॥ ३३ ॥ कालके समान विकराल उनको देखकर जब उनसे कोई नहीं लड़ा, तब उनसे अनिरुद्धने संग्राम किया ॥ ३४ ॥ अनिरुद्धने भैरवके पाँच बाण मारे, तब भैरवजीने एक परिघसे अनिरुद्धजीका रथ तोड़ डाला ॥ ३५ ॥ तब अनिरुद्धजीने दूसरे रथमें बैठकर और दृढ धनुष्यको खैंचकर मायावी भैरवके दश बाण मारे ॥ ३६ ॥ उन बाणोंसे ताड़न किये हुये भैरव कुछ खेदको प्राप्त हुये, फिर तीन शिखावाला अग्निके समान प्रकाशवाला त्रिशूल अनिरुद्धके मारा ॥ ३७ ॥ तब अनिरुद्धने उस त्रिशूलको आया हुआ देखकर बाणोंसे काट डाला, तब भैरवने अपने त्रिशूलको कटा हुआ देखकर ॥ ३८ ॥ मायासे अपने मुखसे अग्नि पैदाकी, उस अग्निसे भूमि, वृक्ष और दशों दिशाएँ जलने लगीं ॥ ३९ ॥

और पैदल सैनिक, रथ घोड़े और हाथियोंके शरीर उस अग्निमें सेंमरकी रुईकी तरह जलने लगे ॥ ४० ॥ कितनेही वीर तो जलने लगे, और कितनेही जलकर विलकुल भस्म हो गये, सब सेनामें आग लगगई, उस समय कितनेही कृष्णको स्मरण करने लगे ॥ ४१ ॥ इस प्रकार सेनाको डरी हुई देखकर और रची हुई मायाको जानकर धनुषधारियोंमें मुख्य अनिरुद्धने अपने धनुषमें बाण लगाया ॥४२॥ और उस बाणको पार्जन्यास्त्र मंत्रसे अभिमन्त्रित करके श्रीकृष्णके चरणकमलको स्मरण करते हुये अनिरुद्धने छोड़ा ॥४३॥ उस बाणके छूटतेही मेघ आकर जलकी वर्षा करने लगे, अग्नि शान्त होगई और यह मालूम पड़ने लगा, मानों वर्षाऋतु आगई ॥ ४४ ॥ मोर, कोयल पपीहा और सारसादिक तथा मेंढक बोलने लगे, और इन्द्रगोप (वीरबहूटी) सुशोभित हुई ॥४५॥ इन्द्रधनुष और बिजलीसे आकाश सुशोभित होगया, तब तो भैरवने अपने परिश्रमको व्यर्थ हुआ देख

पदातीनांरथानांचहयानांदंतिनांतथा ॥ जज्वलुश्चशरीराणिमंजुपुष्पप्रतूलवत् ॥४०॥ केचित्प्रज्वलितावीराःकेचिद्भस्मतांगताः ॥ अग्निना
पूरितंसैन्यंकृष्णंकेचित्स्मरंतिहि ॥४१॥ सेनांभयातुरांदृष्ट्वानिरुद्धोधन्विनांवरः ॥ दधारविशिखंचापेज्ञात्वामायांविनिर्मिताम् ॥४२॥मंत्रयि-
त्वाचमंत्रेणपर्जन्यास्त्रेणसायकम् ॥ मुमोचगगनेशीघ्रंस्मरन्कृष्णपदांबुजम् ॥४३॥ शरेमुक्तेसमागत्यमेघाःप्रववृषुर्जलम् ॥ अग्निःशांतिंगतोरा-
जन्यथाप्रावृट्तथाबभौ ॥४४॥ शिखंडिनःकोकिलाश्चचातकाःसारसादयः ॥ मण्डूकाद्याश्चप्रजगुरिंद्रगोपाविरेजरे ॥४५॥ पुरंदरस्यचापेन
सौदामिन्याबभौनभः ॥ प्रयासंनिष्फलंदृष्ट्वाभैरवोभैरवंरवम् ॥४६॥ चकारस्वमुखेनापिसर्वेषांत्रासयन्मनः ॥ ननादतेनब्रह्मांडंसप्तलोकैर्बिलैः
सह ॥४७॥ विचेलुर्दिग्गजास्ताराराजद्भूखण्डमण्डलम् ॥ तदैवबधिरीभूताबभूवुःपतितानराः ॥४८॥ पुनश्चभैरवःक्रुद्धोहस्तंहस्तेनपीडयन् ॥
निष्पिषन्नधरंदंतैर्लेलिहानःस्वजिह्वया ॥ ४९ ॥ नेत्राभ्यांरक्तवर्णाभ्यांपश्यन्सर्पैर्विभूषितः ॥ जग्राहपरशुंतीक्ष्णंतृणीकृत्ययदूत्तमम् ॥ ५० ॥
तदैवजृंभणास्त्रेणानिरुद्धोरणकोविदः ॥ भैरवंमोहयामासश्रीकृष्णइवशंकरम् ॥ ५१ ॥ तेनास्त्रेणरणेराजन्ननिरुद्धस्यपश्यतः ॥ पपातभूतले-
रौद्रोजृंभितोनिद्रितोऽभवत् ॥ ५२ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेभैरवमोहनंनामसप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

कर एक भयंकर शब्द किया ॥ ४६ ॥ सभीको त्रास उत्पन्न करनेवाले उस शब्दसे सातों लोक और अतलादिक सातों बिलसहित ब्रह्माण्ड गूंज उठा ॥४७॥ भूखण्डमण्डलसहित तारागण चलायमान होगये, दिग्गज विचलित होगये, और उस समय हजारों मनुष्य बधिर (बहरे) होकर गिर पड़े ॥४८॥ फिर क्रोधित हुये भैरवने दोनों हाथोंको मसलते हुये दांतोंसे होठों को चबाते हुये, जीभको लपलपाते हुये ॥४९॥ रक्तवर्ण नेत्रोंसे देखते, सर्पोंके भूषणोंसे भूषित, उसने यदूत्तमोंको तृणके बराबर समझ कर एक फरसेको हाथमें लिया ॥५०॥ तब उसी समय रणकोविद अनिरुद्धने जृंभणास्त्रसे भैरवको ऐसे जृंभित कर दिया जैसे बाण युद्धमें श्रीकृष्णने शिवजीको जृंभित कर दिया था ॥ ५१ ॥ हे राजन् ? उस जृंभणास्त्रसे अनिरुद्धके देखते देखते जँभाई लेता हुआ भैरव मोहित होकर गिर पड़ा ॥ ५२ ॥ इति श्रीमद्गर्ग संहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

गर्गजी कहते हैं कि,जब भैरवको निद्रित (सोया हुआ) देखा,तब तो मृत्युञ्जयको बड़ा क्रोध आया,और बड़े शूर मानी वृषभको अनिरुद्धके सामने चलाया ॥१॥ तबसे सींगोंसे यादवोंको मारता हुआ वह वृषभ दांतोंसे और पीछेके पांवोंसे सेनामें विचरने लगा॥२॥और शीघ्रतासे अपने सींगोंसे सामने खडे सुनन्दनके ऊपर प्रहार किया, तब उसके सींगोंके प्रहारसे सुनन्दनकी छाती फटगई और वह मर गया॥३॥तब अनिरुद्ध कुपित होकर हाथीपर बैठे हुये,धनुषको लिये हुये, कवच पहिने हुये, "मत डरो" "मत डरो" ऐसे कहते हुये आये ॥ ४ ॥ आकर उस संग्राममें कृष्णके पुत्र सुनन्दनको मरा हुआ देखा, तो बडे दुखको प्राप्त हुये, अत्यंत कंपित होकर शोकसे भर गये ॥५॥ वीर सुनन्दनके मरनेसे शोकमें डूब रहे अनिरुद्धसे शिवजी बोले कि, हे अनिरुद्ध ! हे महाबल ! ॥६॥ वीरोंका रणमें मरना कीर्तिके लिये होता है, इससे तुमभी मेरेसे युद्ध करो,बडे यत्नसे॥७॥ मेरे सामने युद्ध

॥ गर्गउवाच ॥ तदामृत्युंजयःक्रुद्धोभैरवंवीक्ष्यनिद्रितम् ॥ वृषभंप्रेरयामासकार्ष्णिजंशूरमानिनम् ॥ १ ॥ तदैववृषभःकोपाच्छृंगाभ्यांमारयन्यदून् ॥ दंतैःपश्चिमपादाभ्यांसेनायांविचचारह ॥ २ ॥ त्वरंजघानशृंगेणसंमुखस्थंसुनन्दनम् ॥ शृंगेणभिन्नहृदयःपपातपंचतांगतः ॥३॥ तदाऽजगामसंक्रुद्धोऽनिरुद्धोगजसंस्थितः॥ धनुर्धरोदंशितश्चमाभैर्माभैरितिब्रुवन्॥४॥ दृष्ट्वातत्रहतंवीरंकृष्णपुत्रंसुनन्दनम् ॥ प्राप्तोदुःखंभृशंधैत्यंतंकंपितःशोकपूरितः ॥५॥ हतेतस्मिन्महावीरेशोचंतंतंशिवोब्रवीत् ॥ माकृथास्त्वंरणेशोकमनिरुद्धमहाबल ॥६॥ रणमध्येपातनंचशूराणांकीर्तयेस्मृतम् ॥ तस्मात्त्वमपिसंग्रामेमयायुद्धचस्वयत्नतः ॥ ७ ॥ प्रयातात्रक्षस्वप्राणान्ममाग्रेयुद्धकांक्षया ॥ गर्गउवाच ॥ इतितस्यवचःश्रुत्वाशोकंत्यक्त्वायदूत्तमः ॥ ८ ॥ निचखानपंचबाणैःशिवस्यशिरसिनृप ॥ नाराचास्तेमहेशस्यजटाजूटेषुनिष्ठिताः ॥ ९ ॥ दृश्यंतेगृध्रपक्षाढ्याःशाखाइववनस्पतेः ॥ ततोरुद्रःस्वकोदंडेबाणमेकंनिधायच ॥१०॥ चिच्छेदतेनसहसातस्यचापस्यशिंजिनीम् ॥ अनिरुद्धःपुनःशीघ्रंसज्यंकृत्वाधनुर्दृढम् ॥ ११ ॥ उग्रचापस्यचिच्छेदशिंजिनींसायकेनच ॥ ततःश्रुत्वातयोर्युद्धमद्भुतंरोमहर्षणम् ॥ १२ ॥ विमानस्थाश्चशक्राद्याआजग्मुः कौतुकान्विताः ॥ ऊचुःपरस्परंखस्थानिरीक्ष्यभयविह्वलाः ॥ १३ ॥ देवाऊचुः ॥ अमूलोकत्रयस्यापिह्युत्पत्तिलयकारकौ ॥ एतयोश्चरणंतस्माद्विफलंरणमण्डले ॥ १४ ॥

करनेको आये हुये अपने प्राणोंकी रक्षा करो,गर्गजी कहते हैं,ऐसे शिवजीके कथनको सुनकर यदूत्तम अनिरुद्धने शोकको छोडकर ॥८॥ शिवजीके शिरमें पाँच वाण मारे, वे पांचों वाण शिवजीके जटाजूटमें उलझ गये ॥९॥ और ऐसे सुशोभित हुये,जैसे वृक्षमें उलझे हुये गीध पक्षीके पंख हों, तब महादेवजीने अपने धनुषमें एक वाण लगाया ॥ १० ॥ और उस वाणसे शिवजीने अनिरुद्धके धनुषकी प्रत्यंचा काट डाली फिर अनिरुद्धने दूसरी प्रत्यंचा चढाकर शिवजीके धनुषकी प्रत्यंचा काट डाली, तब उन दोनोंके अद्भुत और रोमहर्षण संग्रामको सुनकर ॥ ११ ॥ १२ ॥ विमानोंमें बैठे इन्द्रादिक देवता बडा कौतुक समझकर आये, आकाशमें खडे होकर युद्धको देखकर भयभीत होकर बोले ॥ १३ ॥ देवता बोले कि ये दोनोंही तीनों लोकोंकी उत्पत्ति और लयके करनेवाले हैं, इससे रणभूमिमें इनका युद्ध करना निष्फल है ॥ १४ ॥

इनमेंसे कौन संग्रामको जीतेगा और किसकी पराजय होगी ? गर्गजी कहते हैं कि, उसके बाद तीन दिन तक उनका युद्ध हुआ ॥ १९ ॥ शिवजीने कुपित होकर धनुषको खेंचकर लोकके प्रलय करनेवाले ब्रह्मास्त्रको चलाया ॥ १६ ॥ तब अनिरुद्धने ब्रह्मास्त्रसे उनके ब्रह्मास्त्रको शान्त कर दिया, फिर शिवजीने पार्वतास्त्र चलाया, उसको अनिरुद्धने वज्रास्त्रसे शांत कर दिया, तब शिवजीने आग्नेयास्त्र चलाया, उसको अनिरुद्धने पर्जन्यास्त्र चलाकर शान्त कर दिया॥१७॥तब शिवजीने कुपित होकर त्रिशिख त्रिशूलको अविरुद्धके ऊपर चलाया॥१८॥ वह त्रिशूल अनिरुद्धको और हाथीको भेदन करके पार निकल गया, दोनोंके बीचमें ऊपर पूंछ और नीचेको मुख स्थित हुआ ॥१९॥ उस युद्धमें हाथी तो मर गया और अनिरुद्ध मूर्च्छित होगये, दोनोंकी छाती फट गई और रणभूमिमें गिर पडे॥२०॥तब तो बड़ा भारी हाहाकार शब्द हुआ, सब यादव शिवजीके सामने रोने लगे, जैसे यमराजके सामने पापीजन

कोविजेष्यतिसंग्रामंप्राप्स्यतेकः पराजयम् ॥ गर्गउवाच ॥ ततस्त्रिदिनपर्यंतंयुद्धमासीत्तयोर्भृशम् ॥ १५ ॥ पुनः शरासनंरुद्रः सज्जंकृत्वारु-
षान्वितः ॥ ब्रह्मास्त्रंसंदधेतत्रलोकप्रलयकारकम् ॥१६॥ ब्रह्मास्त्रेणतुब्रह्मास्त्रंभिदुरास्त्रेणपार्वतम् ॥ पर्ज्जन्यास्त्रेणचाग्नेयमनिरुद्धोजहारह॥१७॥
तदाप्रकुपितोऽत्यंतंपिनाकीप्रज्वलन्निव ॥ त्रिशिखेनत्रिशूलेनजघानकार्ष्णिनन्दनम् ॥१८॥ सत्रिशूलश्चतंभित्त्वागजंभित्त्वाविनिर्गतः ॥ स्थितो
भूत्वतयोर्मध्येऊर्द्ध्वपुंखअधोमुखः ॥१९॥ गजोमृत्युंगतोयुद्धेनिरुद्धोमूर्च्छितोऽभवत् ॥ पेततुस्तौचसंलग्नौभिन्नवक्षस्थलौमृधे ॥२०॥ हाहा-
कारस्तदैवासीद्रुरुदुः सर्वयादवाः ॥ रुद्रस्याग्रेयथाभीतायमस्याग्रेचपापिनः ॥२१॥ अनिरुद्धंनिपतितंमृततुल्यविमूर्च्छितम् ॥ श्रुत्वाययौशंकि-
तश्चसांबः स्कंदंविहायच ॥२२॥ मूर्च्छितंयदुवीरंतुवीक्ष्यक्रोधपरिप्लुतः ॥ अश्रुपूर्णमुखः सांबः शर्वंप्राहधनुर्द्धरः ॥ २३ ॥ कस्मात्करिष्यसेरु-
द्रदानवानांहिपालनम् ॥ हत्वानिरुद्धंसंग्रामेवीरंचैवसुनन्दनम् ॥२४॥ वेदेभागवतेशास्त्रेपुराविप्रैः श्रुतंमया ॥ श्रीकृष्णाख्यंपरंनित्यंशिवः सेवति
वैष्णवः ॥ २५ ॥ मृषाजातंहितत्सर्वंकार्ष्णिजेपतितेसति ॥ सुनन्दनः कृष्णसुतोसोपियुद्धेत्वयाहतः ॥२६॥ वृथाकरिष्यसेयुद्धंधिक्त्वांतस्मा-
न्महेश्वर ॥ अहंत्वांपातयिष्यामिरणेकृष्णपराङ्मुखम् ॥ २७ ॥

रोते हैं॥२१॥ इतनेमें मरे हुयेके समान मूर्च्छित हुये पडे अनिरुद्धको सुनकर शंकित हुये साम्ब स्वामि कार्तिकको छोडकर आये॥२२॥तब यदुवीर अनिरुद्धको मूर्च्छित पड़ा हुआ देखकर क्रोधमें पूर्ण होकर आँखोंमें जिनके आँसू आगये, ऐसा साम्ब शिवजीसे बोले कि॥२३॥हे रुद्र! आज संग्राममें अनिरुद्धको और सुनन्दनको गिराकर फिर बताओ दैत्योंका पालन कैसे करोगे? ॥२४॥ मैंने पहिले वेदमें, भागवतमें, और शास्त्रमें ब्राह्मणोंके मुखसे सुना है, कि शिवजी नित्य परब्रह्म श्रीकृष्णको ही भजते हैं, इसीसे शिवजी अनन्य वैष्णव कहे जाते हैं ॥२५॥ आज अनिरुद्धके गिरनेपर यह बात (वैष्णव होना) झूंठी होगई, जो तुमने कृष्णके पुत्र सुनन्दनको मारडाला, इससे तुम्हारा वैष्णव होना चला गया॥२६॥ इससे हे महेश्वर ! अब तुम्हारा युद्ध करना व्यर्थ है, तुमको धिक्कार है, जो अब तुम कृष्णसे विमुख होगये, अब कृष्णसे विमुख हुये तुमको मैं संग्राममें पाटकर गिराऊँगा ॥ २७ ॥

॥३८४॥

ठहर, ठहर, इन क्षुरप्र बाणोंसे संग्राममें तुझको मारकर गिराऊँगा, यह सुनकर प्रसन्न होकर शिवजी बोले ॥ २८ ॥ कि यादव श्रेष्ठ ! तुम धन्य हो, तुम जो हमसे कहते हो, यह सब सत्य है, ये देव और दानव जिनकी वन्दना करते हैं ये ही कृष्ण मेरे नाथ हैं ॥ २९ ॥ कुनन्दनके मरने पर और बल्वलके मूर्च्छित होनेपर हे वीर ! सहायक बनकर भक्त की रक्षा करनेके लिये ही मैं आया हूँ ॥ ३० ॥ कुछ क्रोधसे पूर्ण हुआ, अपने वचनको सत्य करनेके लिये आया हुआ मैं फिर युद्धभूमिमें अपने भक्तको प्यार करनेकी इच्छासे युद्ध करूँगा ॥३१॥ शिवजीके इस प्रकार कहनेपर क्रोधसे पूर्ण हुये साम्बने बड़ी शीघ्रतासे धनुषमें क्षुरप्रानामके बाणोंसे शिवजीके ऊपर प्रहार किया ॥३२॥ उन बाणोंसे शिवजीको कुछ भी पीड़ा नहीं हुई, जैसे मत्त गजके फूलोंकी माला मारनेसे पीड़ा नहीं होती है ॥ ३३ ॥ तब शिवजीने अपना धनुष हाथमें लिया और बड़े तीक्ष्ण बाण लगाकर साम्बके मारे, इस प्रकार साम्ब शिवजीके ऊपर और शिवजी साम्बके ऊपर आपसमें बाण चलाने लगे ॥३४॥ हे राजन् ! तब इनके युद्धको देखकर सब प्रजाने लोकोंका संहार माना, हे राजन् !

क्षुरप्रैःसायकैःशीघ्रंतिष्ठतिष्ठरणेशिव ॥ एतद्वचःसमाकर्ण्यप्रसन्नःशंकरोब्रवीत् ॥ २८ ॥ शिवउवाच ॥ धन्यस्त्वयादवश्रेष्ठसत्यंवदतिनो भवान् ॥ मन्नाथःकृष्णचन्द्रोयंदेवदानववंदितः ॥२९॥ कुनंदनेचनिहतेबल्वलेमूर्च्छितेरणे ॥ सहायार्थमहंवीरभक्तरक्षार्थमागतः ॥३०॥ सत्यं कर्तुंस्ववचनंकिंचित्कोपेनपूरितः ॥ करोमिप्रधनेयुद्धंभक्तप्रियचिकीर्षया ॥३१॥ इत्थंवदतिभूतेशेसांबोरोषप्रपूरितः ॥ तताडशीघ्रंचापेनक्षुरप्रैः सायकैर्मृडम् ॥ ३२ ॥ तैर्बाणैर्निहतोरुद्रोनकिंचित्कश्मलंगतः ॥ यथामतंगजःपुष्पैर्जग्राहस्वधनुःशिवः ॥३३॥ तताडनिशितैर्बाणैर्युद्धेजांबवतीसुतम् ॥ सांबःशिवंशिवःसांबंजघ्नतुस्तौपरस्परम् ॥ ३४ ॥ दृष्ट्वायुद्धंतयोर्लोकसंहारंमेनिरेऽमराः ॥ भूतलेगगनेराजन्महान्कोलाहलोऽभवत् ॥३५॥ भीताश्चवृष्णयस्तत्रनाथंकृष्णंस्मरंतिहि ॥ ३६ ॥ तदाहरिःश्रीयदुपालकश्चज्ञात्वायदूनांचमहाविपत्तिम् ॥ रथेनतत्रागतवान्त्रिपुघ्नोद्युवतेनवैसूततुरंगमैश्च ॥३७॥ श्यामःकिरीटीनवकंजनेत्रोनवार्ककोटिद्युतिमादधानः॥कौमोदकीशंखरथांगपद्मकोदंडबाणैर्नियुतोसिधारी॥३८॥ श्रीवत्सचिह्नेनतुकौस्तुभेनपीतांबरेणापिचमालयाढ्यः ॥ नीलालकैःकुण्डलकङ्कणाद्यैर्विभूषितःकोटिमनोजतुल्यः ॥३९॥समुद्गलद्भिःसितफेनशीकरान्मुक्ताफलानीवचराजहंसकैः ॥ सुग्रीवमुख्यैरतिवेगवत्तरैर्हयैर्युतःसुन्दरसामगायनैः ॥ ४० ॥

उस समय बड़ा भारी कोलाहल हुआ ॥३५॥ भयभीत होकर सब यादव श्रीकृष्णका स्मरण करने लगे ॥३६॥ तब यदुवंशियोंकी विपत्तिको जानकर शत्रुओंके मारनेवाले, भगवान् शैब्य उसके अश्व जिसमें जुतरहे, दारुण युक्त रथमें बैठकर आप आये ॥३७॥ श्यामसुन्दर, मुकुटको पहिने हुये, नवीन कमलके जैसे जिनके नेत्र, उदयकालीन कोटि सूर्यके समान तेज को धारण करनेवाले, कौमोदकी गदा, शंख, चक्र कमल, धनुष, बाण, और ढाल, तलवार ॥३८॥ श्रीवत्सका चिह्न, कौस्तुभ मणि, पीतांम्बर और वनमालाको धारण कर रहे, नील अलक और कुण्डल, कंकणसे विभूषित, करोड़ों कामदेवके समान सुन्दर ॥३९॥ जैसे राजहंस मोतियोंको उगले वैसे श्वेत फेनके कणोंको मुखसे उगले रहे, सामवेदकी ऋचाओंके गानेवाले, सुग्रीव आदिके घोड़ोंके जुते रथमें विराजमान ऐसे ॥ ४० ॥

अपने नाथ भगवान् श्रीकृष्णको आया हुआ देखकर हर्षसे विह्वल यादवोंने स्वागत किया, और सुखी हुये जैसे शीतके मारे मनुष्य सूर्यको देखकर प्रसन्न होते हैं ॥४१॥ तब यदु सैन्यमें जयजय शब्द हुआ और आकाशमें स्थित देवताओंने पुष्प बरसाये ॥४२॥ तब सहायता करनेको आये हुये कृष्णको देखकर बड़े हर्षित होकर साम्ब धनुषको छोड़कर भगवान्के चरणोंमें गिर पड़े ॥४३॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेध खण्डे भाषाटीकायामष्टात्रिंशोऽध्यायः ॥३८॥ गर्गजी कहते हैं कि तब श्रीकृष्णको देखकर शंकित हुआ मन जिनका ऐसे भयभीत हुये शिवजी अपने धनुष त्रिशूलादिकों को छोड़कर बड़ी भक्तिसे श्रीकृष्णसे बोले ॥१॥ शिवजी बोले, हे विष्णो ! मेरे अविनयको दूर करिये, मेरे मनको दमन करिये, विषय मृगतृष्णाको शान्त करिये, प्राणियोंपर दयाका विस्तार करिये, और संसार सागरसे मुझको पार लगाइये ॥२॥ दिव्यधुनी (नदी) के मकरंद और परिमल (गंध) के परिभोगके सार, सत् चित् जिनमें आनन्द संसारके भयके खेदको छेदन करनेवाले श्रीपतिके चरणकमलको मैं प्रणाम करता हूँ ॥३॥ हे नाथ ! भेदकी निवृत्तिमें भी मैं तो आपका हूँ

दृष्ट्वास्वनाथंयादवोस्वागतंहर्षविह्वलाः ॥ बभूवुःसुखिनःसर्वेशीतभीतारविंयथा ॥४१॥ तदाजयजयारावोयदुसैन्येबभूवह ॥ प्रचक्रिरेपुष्पवर्षं गगनस्थाश्चदेवताः ॥ ४२ ॥ दृष्ट्वासांबस्तुश्रीकृष्णंसहायार्थंकृष्णंसहायार्थंसमागतम् ॥ पपातपदयोस्तस्यचापंत्यक्त्वाप्रहर्षतः ॥ ४३ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेनिरुद्धादिसाहाय्यार्थंकृष्णगमनंनामाऽष्टात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥ गर्गउवाच ॥ कृष्णंदृष्ट्वाहरस्तत्रभीतः शङ्कितमानसः ॥ त्यक्त्वाचापत्रिशूलादीन्भक्त्याश्रीनाथमब्रवीत् ॥ १ ॥ शंकरउवाच ॥ ॐअविनयमपनयविष्णोदमयमनः शमयविषयमृगतृष्णाम् ॥ भूतदयांविस्तारयतारयसंसारसागरतः ॥ २ ॥ दिव्यधुनीमकरंदेपरिमलपरिभोगसच्चिदानंदे ॥ श्रीपतिपदारविंदेभवभयखेदच्छिदेवंदे ॥ ३ ॥ सत्यपिभेदापगमेनाथतवाहंननमामकीनस्त्वम् ॥ सामुद्रोहितरंगःक्वचनसमुद्रोनतारंगः ॥ ४ ॥ उद्धृतनगनगभिदनुजदनुजकुलामित्रमित्रशशिदृष्टे ॥ दृष्टेभवतिप्रभवतिनभवतिकिंभवतिरस्कारः ॥ ५ ॥ मत्स्यादिभिरवतारैरवतारवतावतावसुधाम्॥ परमेश्वरपरिपाल्योभवताभवतापभीतोहम् ॥ ६ ॥

किन्तु आप मेरे नहीं हो, जैसे तरंग समुद्रकी है, किन्तु तरंगोंका समुद्र नहीं है, ऐसे ही आपके हम हैं, आपके बनाये हुये हम सब ब्रह्मा, रुद्रादिक हैं, किन्तु आप हमारे बनाये हुये नहीं हैं, किन्तु आप स्वतः सिद्ध हैं ॥४॥ उखाड़े हैं नग (पर्वत) जिसने ऐसे नगभित् (इन्द्र) के अनुज अर्थात् हे इन्द्रानुज! हे दैत्योंके कुलके शत्रु अर्थात् हे दैत्यारे ! और सूर्य-चन्द्रमा हैं नेत्र जिनके ऐसे मित्र शशि दृष्ट ! जब आपके दर्शन करनेसे ही संसारका प्रभाव नहीं होता है; तब फिर आपमें इस संसार का प्रभाव कैसे हो सकता है ॥५॥ और हे परमेश्वर ! मत्स्य आदिक अवतारोंसे अवतार लेनेवाले भूमिका पालन करनेवाले आपके मैं पालन करने योग्य हूँ, हे प्रभो ! मैं संसारके तापसे भयभीत हूँ, आपकी शरण हूँ, आप रक्षा करिये ॥ ६ ॥

हे दामोदर ! हे गुण मंदिर ! (हे गुणालय !) हे सुन्दर वदन कमल जिनका ! हे गोविन्द ! आप संसार समुद्रके मंथर करनेके मंदराचल औरं पर है मंथन स्थान (वैकुण्ठ) जिनका ऐसे हे प्रभो ! मेरे दोषोंको दूर करिये ॥७॥ हे नारायण ! हे करुणामय ! मैंने आपके चरणोंकी शरण ली है, वह पट्पदी मेरे मुख कमलमें सदा निवास करें ॥८॥ इस प्रकार शिवजीने जिनकी स्तुति की ऐसे संकर्षणके अनुज श्रीभगवान्ने प्रणाम कर रहे श्रीशिवजीसे सब अभिप्राय पूछा॥९॥ भगवान्ने कहा कि हे शिवजी ! मेरे कुबुद्धि पुत्रने आपका क्या अपराध किया था ? जो आपने मेरे पुत्रको तो मार डाला और अनिरुद्धको मूर्च्छित कर दिया ॥ १० ॥ और यादवोंकी सेना आपने क्यों मारी ? और आप लड़नेके क्यों आये ? और आपने युद्ध क्यों किया ? ये सब मुझको कहिये ॥ ११ ॥ ऐसे श्रीकृष्णके कथनको शिवजी सुनकर बड़े लज्जित होकर और बहुत कुछ विचार करके बोले ॥ १२ ॥ शिवजी बोले-हे

दामोदरगुणमंदिरसुन्दरवदनारविंदगोविन्द ॥ भवजलधिमथनमंदरपरमंदरमपनयत्वंमे ॥ ७ ॥ नारायणकरुणामयशरणंकरवाणितावकौच-
रणौ ॥ इतिषट्पदीमदीयेवदनसरोजेसदावसतु ॥ ८ ॥ इतिस्तुतःशङ्करेणप्रीतःसंकर्षणानुजः ॥ पप्रच्छसर्वाभिप्रायंनमन्तंचन्द्रशेखरम्
॥ ९ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ किंकृतस्तेऽपराधोवैमत्पुत्रेणकुबुद्धिना ॥ यतस्त्वयाहतःसंख्येनिरुद्धोमूर्च्छितः कृतः ॥ १० ॥ हतंयदु-
बलंकस्मात्कस्मात्त्वंचागतोरणे ॥ कस्माद्युद्धंचकृतवांस्तन्मेव्याख्यातुमर्हसि ॥ ११ ॥ इत्थंश्रीकृष्णवचनंनिशम्यप्रमथेश्वरः ॥ उवाच
लज्जितोभूत्वाविचार्यमधुसूदनम् ॥ १२ ॥ शंकरउवाच ॥ देवदेवजगन्नाथराधिकेशजगन्मय ॥ पाहिपाहिकृपाकारिन्निस्त्रपंमांकृतागसम्
॥ १३ ॥ त्वंनजानासिकिंदेवकथयिष्यामिकिंत्वहम् ॥ भक्तस्यपालनंकर्तुमाययातवमोहितः ॥ १४ ॥ अहमागतवान्देवत्वंसर्वंक्षंतुमर्हसि ॥
शास्ताहंसर्वलोकस्यमानादितिमयाहरे ॥ १५ ॥ मारितासंगरेशूरावृष्णयःकृष्णदेवताः ॥ तस्मात्संतःस्वयंत्यक्त्वापरमैश्वर्यमीप्सितम्
॥ १६ ॥ ध्यायंतेसततंकृष्णपादाब्जंतेनिरापदम् ॥ सुखंदुःखंनृणांतावद्यावत्कृष्णेनमानसम् ॥ १७ ॥ कृष्णेमनसिसञ्जातोभक्तिखड्गोदुर-
त्ययः ॥ नराणांकर्मवृक्षाणांमूलच्छेदंकरोतियः ॥ १८ ॥

देवदेव ! हे जगन्नाथ ! हे राधिकेश ! हे जगन्मय ! हे कृपाकारिन् ! अपराध करनेवाले निर्लज्जकी मेरी रक्षा करियें रक्षा करिये ॥ १३ ॥ हे महाराज ! आप नहीं जानते हैं क्या भला मैं क्या कहूँ ? मैं आपकी मायासे मोहित हुआ भक्तके पालन करनेको आया था ॥ १४ ॥ सो हे देव ! उस मेरे सब अपराधको क्षमा करिये कि मैं सब लोकका शासनकरनेवाला हूँ इस मेरे मानको दूर करिये ॥ १५ ॥ कृष्ण जिनके देवता ऐसे बड़े शूर यादवोंको जो मैंने मारे हैं, मेरे इस अपराधको भी क्षमा करियें, इसीसे सन्तजन वांछित परमैश्वर्यको त्यागकर निरंतर कृष्णके चरण कमलका जो ध्यान धरते हैं, उनको कभी आपत्ति नहीं आती है, जबतक ये जीव कृष्णमें मन नहीं लगाते हैं, तभीतक अनेक सुख दुख प्राप्त होते हैं ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ जब मनमें कृष्ण विषयक भक्ति योग खड्ग उत्पन्न होता है, तब तो भक्तियोग मनुष्योंके कर्मरूप वृक्षोंकी जड़को छेदन करता है ॥ १८ ॥

मेरी भक्तिके बलसे अभिमानी हुये जो पापी मनुष्य हैं वे मेरे स्वामी यदूत्तम जो आप हैं,उनको नहीं मानते हैं,वे सब अवश्य नरकोंमें जाते हैं॥१९॥ इतनी प्रार्थना करके श्रीशंकर चुप होकर कृष्णके चरणोंमें दण्डकी तरह गिर पड़े, और व्याकुल होकर आँखोंमें आँसू भर लाये ॥२०॥ तब चरणोंमें पड़े शिवजीको उठाकर आश्वासन किया, फिर भगवान् मिलकर कृपामृत भरी दृष्टिसे देखने लगे ॥ २१ ॥ फिर भगवान् बोले कि हे शिवजी ! सभी देवता अपने भक्तोंका पालन करते हैं, तब फिर जो तुमने भक्तोंका पालन किया है, सो तुमने कोई बुरा काम नहीं किया है ॥ २२ ॥ मेरे हृदयमें तुम हो, और तुम्हारे हृदयमें मैं हूँ, मेरा तुम्हारा भेद नहीं है, जो मंदबुद्धि हैं, वे मेरा तुम्हारा भेद देखते हैं ॥ २३ ॥ हे शिव ! जो मेरे भक्त हैं वे मेरा तुमको प्रणाम करते हैं, और तुम्हारे भक्त सदा मुझको प्रणाम करते हैं, जो कोई मेरे इस वाक्यको नहीं मानते हैं वे मनुष्य अवश्य नरकमें जाते हैं ॥२४॥ ऐसे कहकर गर्गजी कहते हैं कि श्रीकृष्ण भगवान्ने ऐसे कहकर मरे हुये पुत्र सुनन्दनको अपनी कृपामृत दृष्टिसे उस संग्राममें जिला दिया ॥२५॥ फिर पीछे भगवान्ने अनिरुद्धके हृदयमेंसे धीरे २ त्रिशूल खेंचकर निकाला, तब अनिरुद्ध

मद्भक्तिबलदर्पिष्ठामत्प्रभुंत्वांयदूत्तमम् ॥ नमन्यंतेचतेसर्वेयास्यंतिनिरयंध्रुवम् ॥१९॥ इत्युक्त्वाशंकरस्तूष्णींभूत्वाकृष्णस्यपादयोः ॥ पपात दंडवद्भक्त्याह्यश्रुपूर्णाकुलेक्षणः ॥ २० ॥ उत्थाप्याश्वास्यतंरुद्रंपार्श्वतस्तत्प्रदर्शनात् ॥ मिलित्वाभगवान्कृष्णआलुलोकसुधार्द्रहक् ॥२१॥ आहकृष्णःसुराःसर्वेकुर्वंतिभक्तपालनम् ॥ त्वयाजुगुप्सितंकर्मकिंकृतंभक्तपालने ॥२२॥ ममासिहृदयेत्वंतुभवतोहृदयेह्यहम् ॥ आवयोरंतरंनास्तिमूढाःपश्यंतिदुर्धियः ॥२३॥ त्वांनमंतिचमद्भक्तास्त्वद्भक्तामांसदाशिव ॥ येनमन्यंतिमद्वाक्यंयास्यंतिनरकंचते ॥२४॥ इत्युक्त्वाभगवान्कृष्णोहतंपुत्रंसुनन्दनम् ॥ दृष्ट्यापीयूषवर्षिण्याजीवयामाससंयुगे ॥२५॥ तत्पश्चादनिरुद्धस्यहृदयाच्छूलमेवच ॥ शनैःशनैःसमाकृष्यजीवयामासतंहरिः ॥२६॥ तत्पश्चाद्यादवान्सर्वान्निहतान्संयुगेभृशम् ॥ अजीवयत्सुधादृष्ट्याकृष्णस्तुप्रभुरीश्वरः ॥२७॥ तावत्सुदुंदुभिरवंपुष्पवृष्टिं दिवौकसः ॥ उत्साहलक्षणांचक्रुःप्रासाद्यगरुडध्वजम् ॥२८॥ सर्वेत्रैलोक्यनेतारंकृष्णंदृष्ट्वायदूत्तमाः ॥ उत्थायसंभ्रमाच्चक्रुर्जयारावंमुदान्विताः ॥ २९ ॥ अथोत्थितोबल्वलस्तुमहादेवेनरक्षितः ॥ क्वगतश्चानिरुद्धोवैब्रुवन्वाक्यंरुषान्वितः ॥ ३० ॥ ततःशर्वेणदैत्यस्तुबोधितोवचनैःशुभैः ॥ ज्ञात्वाकृष्णस्यमाहात्म्यंमुदितोऽभून्महामनाः ॥३१॥ ततःप्रणम्यगोविंदंस्तुत्वादैत्यस्तुबल्वलः ॥ तुरगंप्रददौराजन्बहुद्रव्येणसंयुतम् ॥३२॥

भी सजीव होकर उठ बैठा ॥ २६ ॥ उसके बाद जितने यादव संग्राममें मरे पड़े थे, उनको श्रीकृष्णने अपनी अमृत वर्षिणी दृष्टिसे सजीव कर दिया, इसमें कोई आश्चर्य नहीं है, क्योंकि आप ईश्वर हैं ॥२७॥ तब आकाशमें देवताओंने नगाड़े बजाये, पुष्पोंकी वर्षाकी, और बड़े उत्साहसे गरुडध्वज भगवान्को प्रसन्न किया ॥२८॥ तब सब लोकोंके नेता श्रीकृष्णको सब यादव देखकर बड़े संग्रामसे उठकर बैठ गये, और बड़े आनन्दित होकर जयध्वनि करने लगे ॥ २९ ॥ तब शिवजीने जिसकी रक्षा की वह बल्वल दैत्यभी क्रोधित होकर अरे ! अनिरुद्ध कहाँ गया ? यह वाक्य कहता हुआ उठ बैठा, ॥३०॥ तब शिवजीने शुभ वचनोंसे दैत्यको समझाया, तब वह महामना दैत्य श्रीकृष्णके माहात्म्यको जान कर प्रसन्न हुआ ॥ ३१ ॥ और उस बल्वल दैत्यने गोविन्द श्रीकृष्णको प्रणाम करके हे राजन् ! बहुत द्रव्य समेत घोड़ेको लाकर भेंट किया ॥ ३२ ॥

तब यज्ञके घोड़ेको लेकर पुत्रपौत्रसंहित श्रीकृष्णसेतुके मार्गसे पश्चिम दिशाको गये ॥३३॥ कृष्ण भगवान्‌के जानेपर श्रीशिवजी भी बल्वलको राज्यपर बैठाकर भैरवको साथ लेकर कैलासको चले गये ॥३४॥ इस श्रीकृष्णके चरित्रको जो मनुष्य घरमें सुनते हैं, उनकी सहायता श्रीकृष्ण भगवान् सदा करेंगे ॥ ३५ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषा टीकायामेकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥३९॥ गर्गजी कहते हैं कि उसके बाद कृष्णका छोड़ा हुआ अश्व पत्र जिसके माथेमें बँधा है, और दोनों ओरसे चमरसे भूषित वह अनेक देशों को नेत्रोंसे देखता हुआ आगे चला ॥ १ ॥ तब बल्वल दैत्यको जीता हुआ सुनकर अनेक देशोंके स्वामी राजाओंने श्रीकृष्णके भयसे किसीने नहीं पकड़ा हे नृप ! ॥ २ ॥ इस प्रकार वह घोड़ा इस भरतखण्डमें विचरता २ हे राजेन्द्र ! एक महीनेमें व्रजमण्डलमें आकर पहुँचा ॥ ३ ॥ तब श्रीयमुनाजीके पार उतरकर वृन्दावनको देखकर वह अश्व रत्न एक तमाल वृक्षकी छायामें जाकर ठहर गया ॥ ४ ॥ वहाँ हरी २ दूबको चरते हुये घोड़ेको देखकर गौओंको चरानेवाले गोप बालक गौओंको छोड़कर ताली बजाते हुये बड़े खेलसे

ततोयज्ञहयंनीत्वापुत्रपौत्रपरिवृतः ॥ सेतुमार्गेणकृष्णस्तुप्रययौपश्चिमांदिशम् ॥३३॥ कृष्णेगतेभगवतिराज्येसंस्थाप्यबल्वलम् ॥ कैलासंप्रययःरुद्रःसगणस्तुसभैरवः ॥३४॥ एतत्कृष्णचरित्रंतुयेशृण्वंतिगृहेजनाः ॥ तेषांसहायंभगवान्करिष्यतिसदाहरिः ॥३५॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेऽनिरुद्धविजयवर्णनंनामैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥ गर्गउवाच ॥ मुक्तस्तुरंगःकृष्णेनपत्रचामरभूषितः ॥ प्रययौसबहून्देशान्नेत्राभ्यांचविलोकयन् ॥१॥ बल्वलंनिर्जितंश्रुत्वानानादेशाधिपानृपाः ॥ हयंनजगृहुःप्राप्तंश्रीकृष्णस्यभयान्नृप ॥२॥ इत्थंव्रजन्भारतेवैयदुवीरतुरंगमः ॥ एकमासेनराजेंद्रप्राप्तोभूद्व्रजमण्डले ॥३॥ ततःकृष्णांसमुत्तीर्यदृष्ट्वावृन्दावनंवनम् ॥ तमालस्यतलेराजन्स्थितोभूद्धयसत्तमः ॥४॥ दूर्वांचरंतंतुरगंतुरगंविलोक्यविहायगास्तेकिलगोपबालाः ॥ समाययुस्तेनृपकौतुकेनहयस्यपार्श्वेकरताडनैश्च ॥५॥ इतिपश्यत्सुसर्वेषुश्रीदामागोपनायकः ॥ जग्राहलीलयाराश्चरंतंचंचलंहयम् ॥६॥ गोपाशेनहयंबद्ध्वागलेगोपैःपरिवृतः ॥ केनोत्सृष्टोवदन्वाक्यंनन्दस्यनिकटंययौ ॥७॥ आगतंवाजिनंदृष्ट्वानन्दोपिहर्षपूरितः ॥ तत्पत्रंवाचयित्वाऽऽहसर्वान्गद्गदयागिरा ॥८॥ उग्रसेनहयश्चैषपुरेममसमागतः ॥ पालितोह्यनिरुद्धेनमत्प्रपौत्रेणसर्वतः ॥ ९ ॥ गृह्णामियज्ञतुरगंमित्राणांमिलनायच ॥ ततःप्रपौत्रंपश्यामिकृष्णाकारंप्रियंकरम् ॥ १० ॥ इत्युक्त्वानन्दराजस्तुद्रष्टुंगोपैःपरिवृतः ॥ कथयित्वायशोदाग्रेऽभिप्रायंनिर्ययौपुरात् ॥ ११ ॥

घोड़ेके पास आये ॥५॥ इस प्रकार सब गोप देख रहे थे कि श्रीदामा नामक गोपेश्वरने चरते हुये उस चंचल घोड़ेको आकर पकड़ लिया ॥६॥ गौओंको बांधनेके रस्सेसे घोड़े को गलेमें बांधकर गोपोंसे परिवृत्त अरे भाइयों ! यह घोड़ा किसका है ? ऐसे वाक्योंको कहते २ घोड़ेको लिये हुये नन्दरायके पास गये ॥७॥ तब आये हुये उस घोड़ेको देखकर नन्दराय भी हर्षमें भरकर उस पत्रको बँचवाकर बड़ी गद्गद वाणीसे यह बोले ॥ ८ ॥ कि भाइयो ! यह उग्रसेनका घोड़ा मेरे नगरमें आया है, मेरा प्रपौत्र अनिरुद्ध इसके साथमें रखवाला है ॥९॥ सो मैं मित्रोंसे मिलनेके लिये इस यज्ञके घोड़ेको पकड़ता हूँ, तब कृष्णके जैसे आकारवाले प्रिय करनेवाले प्रपौत्रको देखूँगा ॥१०॥ इतनी बातको नन्दराय कहकर गोपोंसहित देखनेको यशोदाके आगे अभिप्रायको कहकर नगरके बाहर निकले ॥ ११ ॥

उसी समय घोड़ेके पीछे लगे हुये भोज, वृष्णि और अंधकवंशी सब यादव हे नृपेश्वर! वहीं आ पहुँचे ॥१२॥ वे यादव नेपाल तीर्थ, मिथिलापुरी, अयोध्यापुरीको देखते हुये, बर्हिष्मतीपुरी और कन्नौजमें होते हुये, संकर्षण श्रीबलदेवजीके निवासस्थान श्रीगोकुलमें होते हुये हे राजन्! ॥१३॥ जहाँ श्रीयमुनाजी, मथुरापुरी विराजमान हैं, जो श्रीकेशवकी पुरी है, वहाँ वृन्दावनमें नन्दपुरमें हे भूपेन्द्र! श्रीकृष्णसहित सब यादव आये ॥ १४ ॥ तब रथमें बैठे हुये श्रीनन्द नन्दन नन्दग्रामको देखकर सब यादवोंके आगे होकर भगवान् श्रीकृष्ण नन्दग्राममें आये ॥१५॥ वहाँ आकर सब गोपोंके आगे नन्दरायको देखा, और बड़े भारी शृङ्गार किये हुये हाथीको आगे खड़ा देखा ॥१६॥ हे नृपेश्वर! अनेक बाजे बज रहे हैं, जयजय शब्द हो रहे हैं, पुष्पोंके आभूषण, मंगल कलश और धानकी खीलसे भूषित है ॥१७॥ तब सब यादवोंने नन्दजीको देखकर प्रणाम किया, और हे राजन्!

तदैवयादवाःसर्वैभोजवृष्ण्यंधकादयः ॥ हयस्यपृष्ठतोलग्नास्तत्राजग्मुर्नृपेश्वर॥१२॥विलोकयंतोनयपालतीर्थैतथाचमार्गेमिथिलामयोध्याम् ॥ बर्हिष्मतींचैवहिकान्यकुब्जंसांकर्षणंगोकुलमेवराजन् ॥१३॥ मार्त्तंडकन्यांमथुरांपुरींचविराजतेयत्रतुकेशवश्च ॥ वृंदावनेनन्दपुरेनृपेंद्रसमागताः कृष्णयुताश्चसर्वे ॥१४॥ नन्दग्रामंतत्रदृष्ट्वारथस्थोनन्दनंदनः ॥ सर्वेषामग्रतोभूत्वाह्यायय़ौयादवैर्वृतः ॥ १५ ॥ ददर्शतत्रपुरतोगोपालैःपितरं हरिः ॥ संस्थितंतुपुरस्कृत्यवारणेन्द्रमलंकृतम् ॥ १६ ॥ वादित्रैःशंखशब्दैश्चजयशब्दैर्नृपेश्वर ॥ पुष्पालंकारकलशलाजाद्यैःपरिभूषितम् ॥ १७ ॥ ततश्चयादवाःसर्वेनेमुर्नंदंनिरीक्ष्यच ॥ हर्षाश्रुविप्लुताराजन्नुद्धवाद्याश्चतत्रवै ॥१८॥ तदैवनन्दराजस्यदक्षिणांगमथास्फुरत् ॥ उवाचदृष्ट्वामनसिह्युत्तमंशकुनंनृप ॥ १९ ॥ अद्यपश्यामिनेत्राभ्यांकृष्णंकिंप्रियवादिनम् ॥ यस्मान्ममाक्षःस्फुरतिदक्षिणश्चप्रियंकरः॥२०॥ मन्नेत्रगोचरःकृष्णोयदाभूयात्तदाह्यहम् ॥ गवांलक्षंप्रदास्यामिब्राह्मणेभ्योह्यलंकृतम् ॥२१॥ इत्युक्त्वावचनंनंदोविरराम्यदानृप ॥ तदाशृणोत्स्वपुत्रस्यागमनंव्रजवासिभिः ॥ २२ ॥ श्रीकृष्णागमनंश्रुत्वानन्दोविरहविप्लुतः ॥ पश्यन्हरिंचसर्वेषांविचचाररुदन्निव ॥ २३ ॥ वदन्कृष्णेति कृष्णेतिगिरा गद्गदयाभृशम् ॥ हेकृष्णचन्द्रक्वगतोदुःखितंमांनपश्यसि ॥ २४ ॥

उद्धवादिक सब आनन्दके सागरमें डूब गये ॥१८॥ उसी समय नन्दजीका दाहिना अंग फड़कने लगा, तब हे नृप! उस उत्तम शकुनको देखकर नन्दजी मनमें विचार करने लगे कि ॥१९॥ क्या मैं आज प्रियवादी कृष्णको देखूँगा? जो आज प्यारी बातको करनेवाला मेरा दाहिना अंग फड़क रहा है ॥२०॥ आज जब श्रीकृष्ण मेरे नेत्रगोचर होंगे, तब मैं शृंगारकी हुई एक लाख गायें ब्राह्मणोंको देऊँगा ॥ २१ ॥ इतनी बात कहकर जब नन्दजी चुप गये, तब हे नृप! व्रजवासियोंके मुखसे श्रीकृष्णका आगमन सुना ॥ २२ ॥ जब श्रीकृष्णके आगमनको सुनकर विरहमें डूबे हुये नन्दजी हरिको देखनेके लिये सबके आगे रोते हुये विचरने लगे ॥२३॥ गद्गदवाणीसे हे कृष्ण! हे कृष्ण! ऐसे कहते हुये गद्गद वाणी करके बोले कि हे कृष्णचन्द्र! कहाँ गये? दुखी मुझको नहीं देखते हो क्या? ॥ २४ ॥

तब पितृवत्सल श्रीकृष्ण पिता (नन्दजी) को देखकर रथमेंसे उतरकर नन्द राजके चरणोंमें गिर पड़े ॥२५॥ तब बहुत दिनमें आये हुये पुत्र श्रीकृष्णको उठाकर छातीसे लगाकर नेत्रोंके जलसे स्नान कराकर आनन्दम मग्न होगये ॥२६॥ तब श्रीकृष्णके नेत्रोंसे आंसुओंकी धारा बहने लगी, फिर प्रेममें डूबे हुये श्रीदामादिक अपने मित्रोंको देखा ॥२७॥ तब स्नेहके प्रभावमें डूबे हुये श्रीकृष्ण अपने एक एक मित्रसे पृथक् २ मिले, अहो? भूमण्डलमें भक्तोंके माहात्म्य कहनेको कौन समर्थ हो सकता है? अर्थात् कोई नहीं हो सकता ॥२८॥ तब नन्दादिक गोप और कृष्णादिक यादव रुदन करने लगे, वे सब विरहमें विक्लव होकर बोलनेको भी समर्थ नहीं हुये ॥२९॥ तब नेत्रोंमें आंसू भरकर भगवान् श्रीकृष्ण गद्गद वाणीसे प्रेमानन्दमें आकुल सब गोपोंको आश्वासन देने लगे ॥ ३० ॥ इस समय गोपोंने परिपूर्णतम साक्षात् जगदीश्वर श्रीकृष्णको वैसेही देखा, जैसे कि, जब व्रजसे मथुरा गये थे, तब जैसे थे ॥३१॥ नवीन मेघके समान श्याम, किशोर अवस्थाके बालक जैसे, शरत् कालीन कमलको लज्जित करनेवाले जिनके नेत्र ॥ ३२ ॥ शरद ऋतुके चन्द्रमाकी शोभाको

ततोनिरीक्ष्यपितरंश्रीकृष्णःपितृवत्सलः ॥ अवप्लुत्यरथात्तूर्णंपपातचरणौपितुः ॥२५॥ श्रीनन्दराजस्तनयंसमुत्थाप्यचिरागतम्॥स्नापयामा-
ससलिलैःकृत्वावक्षसिनेत्रयोः ॥ २६ ॥अक्षिभ्यांकृष्णचन्द्रस्तुमुमोचाश्रुघृणातुरः ॥ श्रीदामादीन्सखीन्दृष्ट्वापश्चात्प्रेमपरिप्लुतान् ॥ २७ ॥
पृथक्पृथक्परिरेभेकृष्णप्रेमपरिप्लुतः॥भक्तानांकोस्तिमाहात्म्यमहोवक्तुंधरातले॥२८॥नन्दाद्यारुरुदुर्गोपाःश्रीकृष्णाद्याश्चयादवाः॥प्रवक्तुंन
समर्थास्तेसर्वेविरहविक्लवाः ॥२९॥ अश्रुपूर्णमुखःकृष्णोगोपान्गद्गदयागिरा ॥ सर्वानाश्वासयामासप्रेमानंदसमाकुलान् ॥ ३० ॥ परिपूर्णतमं
साक्षाच्छ्रीकृष्णंजगदीश्वरम्॥तादृशंददृशुःसर्वे यादृशोमथुरांगतः॥३१॥नवीननीरदश्यामंकिशोरवयसंशिशुम्॥शरत्प्रभातकमलकांतिमोचन-
लोचनम्॥३२॥शरत्पूर्णेंदुशोभाढ्यंशोभास्वाच्छादनाननम्॥ कोटिमन्मथलावण्यंलीलानंदितसुन्दरम् ॥३३॥ सस्मितंमुरलीहस्तंद्विभुजंह्यति
सुन्दरम् ॥ तडिद्वस्त्रधरंदेवंमत्स्यकुण्डलिनंहरिम् ॥३४॥ चन्दनोक्षितसर्वांगंकौस्तुभेनविराजितम्॥ आजानुमालतीमालावनमालाविभूषितम्
॥ ३५ ॥ मयूरपिच्छचूडंचसद्रत्नमुकुटोज्ज्वलम् ॥ पक्वबिंबाधिकोष्ठंचनासिकोन्नतशोभनम् ॥३६॥ एवंकृष्णस्यराजेन्द्ररूपंनेत्रैर्व्रजौकसः ॥
पपुरानन्दसंमग्नाःपीयूषंमानवाइव ॥ ३७ ॥

आच्छादन करनेवाला जिनका मुख, कोटि कामदेवके सौंदर्यको तिरस्कृत करनेवाला सौंदर्य, जिससे आनन्दित किये हैं सन्त और सुर जिन्होंने॥३३॥ मन्द मुसकान कर रहे मुरलीको हाथमें लिये हुये, दो भुजाओंवाले, अति सुन्दर, तड़ित (बिजली) के जैसे वस्त्रोंको धारण किये हुये, मकरके आकारके कुण्डल पहिने हुये ॥३४॥ केशरिया चन्दनसे सर्वांग जिनका लिपा हुआ है, कौस्तुभसे शोभित जिनका कण्ठ, जानुतक लम्बे जिनके भुजदण्ड, मालतीकी माला और वनमालासे शोभित ॥३५॥ मोरपंखोंके मुकुट और उत्तम रत्नोंके मुकुटसे उज्ज्वल, पके हुये बिम्बफल जैसे जिनके ओंठ (होठ) ऊँची नासिकासे अति शोभित ॥ ३६ ॥ हे राजेन्द्र ! ऐसे श्रीकृष्णके रूपको व्रजवासियोंने आनन्दमें मग्न होकर ऐसे पिया, जैसे मनुष्य अमृतको पीते हैं ॥ ३७ ॥

तब प्रेममें डूबे हुये नन्दजीने परम प्रसन्न होकर अनिरुद्ध और साम्बादिक यादवोंको अनेक आशीर्वाद दिये ॥३८॥ उसके बाद सब दुखोंसे रहित हुये महामति नन्दने अपने पुत्र पौत्र और यादवों सहित अपने नगरमें प्रवेश किया ॥३९॥ तब साम्बादिक पुत्रोंसे शोभित श्रीकृष्ण रथमेंसे उतरकर माता (यशोदा) के घरमें आनन्द देते हुये गये ॥ ४० ॥ तब श्रीकृष्णने घरके द्वारपर आई हुई यशोदाको देखा,रुदन करती हुई,आसुओंसे गला जिसका भरा हुआ है,ऐसी माताको देखकर श्रीकृष्णने प्रणाम किया ॥४१॥तब माता यशोदा ने प्राणोंसे प्यारे अपने पुत्रको आलिंगन करके गद्गद होकर आशीर्वाद दिये ॥४२॥ तब नन्द,उपनन्द, और छः वृषभानु और वृषभानुवर ये सब श्रीकृष्णके दर्शन करनेको आये ॥४३॥और वहाँ आई हुई सभी गोपियोंका यादवों सहित श्रीकृष्णने यथोचित सन्मान किया ॥४४॥ तब इन सभीने प्रसन्न मुख होकर श्रीकृष्णका कुशल मंगल पूछा,और भगवान्

अनिरुद्धंततोनन्दःसांबादींश्चैवयादवान्॥आशिषंप्रददौराजन्प्रीतःप्रेमपरिप्लुतः॥३८॥ततःसर्वैश्चयदुभिःपुत्रपौत्रपरिवृतः॥ विवेशस्वपुरंनन्दो गतदुःखोमहामतिः॥३९॥ अवप्लुत्यरथात्कृष्णःसांबाद्यैःपरिभूषितः ॥ त्वरंस्वमातुर्भवनमानंदंप्रददन्ययौ॥४०॥दृष्ट्वास्वमातरंकृष्णोगृहद्वारे समागताम् ॥ रुदतींबाष्पकण्ठींतांननामप्ररुदन्हरिः॥४१॥ यशोदातस्यजननीस्वप्राणेभ्यः प्रियंसुतम् ॥ उपगूह्यददौतस्मैगिरागद्गदयाशिषः ॥४२॥नन्दस्तथोपनंदश्चतथाषड्वृषभानवः॥वृषभानुवरश्चैवह्येतेद्रष्टुंसमाययुः॥४३॥ तत्रागतानांगोपानां श्रीकृष्णोयादवैर्वृतः॥यथाविध्युप-संगम्यसर्वेषांमानमादधे ॥४४॥ तेतुकृष्णस्यकुशलंपप्रच्छुर्मुदिताननाः॥तेषांकृष्णस्तुभगवान्पप्रच्छकुशलंपरम्॥४५॥ततश्चयमुनातीरेवृंदा-रण्येनृपेश्वर ॥ बभूवुःशिबिराःसर्वेऽनिरुद्धस्यमहात्मनः ॥४६॥ शिबिरेष्वनिरुद्धाद्याःसांबाद्याश्चोद्धवादयः ॥ निवासंचक्रिरेकृष्णःस्थितोभून्नंद पत्तने ॥४७॥ आगतेभ्यश्चसर्वेभ्योनंदकृष्णेनसंयुतः ॥ भोजनंप्रददौराजन्पशुभ्यश्चतृणानिच ॥ ४८॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डे व्रजप्रवेशोनामचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४०॥ गर्गउवाच ॥ आहूतोराधयाकृष्णःसन्ध्यायांनंदनंदनः॥जगामशश्वदेकांतेशीतलंकदलीवनम्॥१॥ रंभादलैश्चंदनस्यपंकयुक्तंमनोहरम् ॥ स्फारास्फुरन्नभ्रगेहंयमुनावायुशीकरम् ॥ २ ॥

श्रीकृष्णने उनका कुशल पूछा॥४५॥तब तो हे नृपेश्वर ! यमुनाजीके तीरपर वृन्दावनमें अनिरुद्धकी सेनाके शिविर लग गये ॥ ४६ ॥ उन शिविरोंमें अनिरुद्धादिक और साम्बादिक सब यादवोंने तथा उद्धवादिकोंने निवास किया,और श्रीकृष्णचन्द्रने उस रात्रिमें नन्द महलमें ही निवास किया ॥४७॥ भगवान् कृष्णके साथ आये हुये सभीको नन्दरायने भोजन दिया,और हाथी घोड़े आदि पशुओंको अन्न, घास फूस आदि उनके खानेकी सामग्री दी ॥ ४८ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥ गर्गजी कहते हैं कि, संध्याके समय जब श्रीराधाजीने श्रीकृष्णको बुलवाया, तब एकान्त शीतल कदलीवनमें श्रीराधाके पास गये ॥ १ ॥ जिस वनमें केलेके पत्तोंका एक घर बना हुआ था, जिसमें चन्दनादिक छिड़के हुये थे, जलकण जिसमें चारों ओरसे झर रहे थे, और यमुनाजीका शीतल जल सम्बन्धी पवन जिसमें चल रहा था ॥ २ ॥

ऐसा अति सुन्दर श्रीराधिकाजीका मंदिर था, परन्तु वह सब राधिकाजीको विरहकी अग्निसे भस्मके समान मालूम पड़ता था ॥ ३ ॥ हे नृप ! उस मंदिरमें श्रीवृषभानु नन्दिनी श्रीदामाके शापसे श्रीकृष्णके आगमनके लिये अपने शरीरकी रक्षा करती थीं ॥४॥ तब श्रीराधाजी सखियोंके मुखसे श्रीकृष्णको अपने वनमें आये हुये सुनकर अपने आसनसे उठकर सब सखियोंको साथ लेकर बडी शीघ्रतासे अपने मंदिर के द्वारपर स्वागत करनेके लिये आई ॥५॥ श्रीकृष्णके लिये व्रजेश्वरीने अर्घ्य, पाद्य, आसन आदिक उपचार भेंट किये, और व्रजेश्वरके लिये कुशल प्रश्नवाले वचन कहे ॥६॥ परिपूर्णतम कृष्णको देखकर परिपूर्णतमा राधिकाजीने विरह व्यथा दूर की, और समागमके हर्षसे पूर्ण हुई ॥७॥ फिर वस्त्राभूषणोंसे अपना श्रृंगार किया, जबसे भगवान् द्वारिकाको गये, तबसे सब श्रृंगार छोड दिये थे, वे सब श्रृंगार किये ॥८॥ जबसे भगवान् गये, उसी दिनसे राधिकाने ताम्बूलादिक

एतादृशंराधिकायाःसुन्दरंमेघमंदिरम् ॥ सर्वंदुःखाग्निनानित्यंभस्मीभूतंबभूवहः ॥३॥ श्रीदामशापेननृपदुःखेनवृषभानुजा ॥ तनुंरक्षतितत्रापि कृष्णागमनहेतवे॥४॥निशम्यकृष्णंस्ववनेसमागतंसखीमुखाच्छ्रीवृषभानुनंदिनी॥आनेतुमुत्थायवरासनात्त्वरंद्वारेसखीभिर्नृपसाजगामह॥५॥ ददौह्यासनपाद्याद्यानुपचारान्व्रजेश्वरी ॥ वदंतीकुशलंवाक्यंकृष्णाकृष्णंव्रजेश्वरम् ॥६॥ परिपूर्णतमंदृष्ट्वापरिपूर्णतमानृप ॥ जहौविरहजंदुःखं संयोगेहर्षपूरिता ॥ ७ ॥ चकारस्वस्याःशृंगारंवस्त्रालंकारचंदनैः ॥ कुशस्थल्यांगतेनाथेशृंगारोनकृतस्तया ॥८॥ पुरातयानभुक्तंचतांबूलंमिष्टभोजनम् ॥ कृतंनशय्याशयनंकस्मिद्धास्यंनवाकृतम् ॥९॥ सिंहासनेस्थितंराधादेवंमदनमोहनम् ॥ हर्षाश्रूणिप्रमुंचंतीजगौगद्गदयागिरा ॥१०॥ ॥ राधोवाच ॥ गोकुलंमथुरांत्यक्त्वागतःकस्मात्कुशस्थलीम् ॥ वदतन्मेहृषीकेशत्वंसाक्षाद्गोकुलेश्वरः ॥ ११ ॥ क्षणंयुगसमंनाथजानामित्वद्वियोगतः ॥ घटींमन्वंतरसमांद्विपरार्द्धसमंदिनम् ॥ १२ ॥ कस्मिन्कुकालेविरहोमेबभूवचदुःखदः ॥ येनत्वच्चरणौदेवनद्रक्ष्यामिसुखप्रदौ ॥ १३ ॥ यथारामंतुसीतेवमानसंवरटेवच ॥ तथारासेश्वरंत्वांतुमानदंहिसमुत्सहे ॥१४॥ सर्वंजानासिसर्वज्ञःकिंदुःखंकथयाम्यहम् ॥ शतवर्षं गतंनाथवियोगोनगतोमम ॥ १५ ॥

मिष्ट भोजन शय्यापर शयन, किसीसे हँसना ये सब छोड़ दिये थे ॥ ९ ॥ तब सिंहासनपर बैठे हुये देव मदनमोहनको देखकर हर्षके आँसू बहाती हुई गद्गदवाणीसे बोली ॥१०॥ राधाजी बोली—हे महाराज ! गोकुलको और मथुराको छोडकर आप द्वारिकाको क्यों गये ? हे हृषीकेश आप तो साक्षात् गोकुलेश्वर हैं, यह आप मुझको बताइये ॥११॥ हे नाथ ! आपके वियोगमें मैं एकक्षणको एक युग जानती हूँ, एक घड़ीको एक मन्वन्तरके समान और एक दिनको द्विपरार्धके समान मानती हूँ ॥१२॥ हाय ! वह कौनसी बुरी घड़ी थी, जिसमें मेरा आपसे वियोग हुआ था, जिससे फिर आपके सुख देनेवाले चरण नहीं दीखे ॥ १३ ॥ श्रीरामको सीताकी तरह और मानससरोवरको हंसिनीकी तरह मान देनेवाले रासेश्वर आपको मैं चाहती हूँ ॥ १४ ॥ आप सर्वज्ञ हैं, सब कुछ जानते हैं, मैं अपना क्या दुख कहूं, सौ वर्ष बीत गये हैं, किन्तु मेरा वियोग निवृत्त नहीं हुआ ॥ १५ ॥

हे राजन् ! स्वामिनी राधा स्वामी भगवान् श्रीकृष्णको इतने वचन कहकर वियोगके दुखमें डूबी हुई दुखोंको स्मरण करती रोने लगी ॥१६॥ तब रुदन करती हुई राधिकाजीको देख
कर भगवान् प्रिय वचन बोले, अपने वचनोंसे प्यारीके दुखोंको शान्त करने लगे ॥ १७ ॥ श्रीकृष्ण बोले कि हे राधे ! शरीरको सुखानेवाला शोक तुमको नहीं करना चाहिये, हे
प्रिये, मेरा और तुम्हारा तेज एकही हो गया है, वास्तवमें पृथक्‌ नहीं है ॥ १८ ॥ इस बातको ऋषिमुनि जानते हैं, जहाँ तू है, वहाँ मैं हूँ जहाँ मैं, वहाँ तू है मेरा तुम्हारा वियोग
नहीं है, जैसे प्रकृति पुरुषका वियोग नहीं है ॥ १९ ॥ और जो कोई हम दोनोंमें भेद देखते हैं, वे नराधम हैं, हे राधे ! वे मनुष्य देहके अन्तमें नरकोंमें गिरते हैं ॥२०॥ अब आगे
तुम मुझको अपने पासही देखोगी, जैसे प्रातःकालमें चकवी अपने चकवेको अपने समीपमें देखती है ॥२१॥ हे:प्रिये ! कुछ समय बीत जानेके बाद गोपगोपियोंको साथ लेकर साक्षात्
अक्षर ब्रह्मस्थान गोलोकको मैं जाऊँगा ॥२२॥ गर्गजी कहते हैं कि, श्रीकृष्णके इस कथनको सुनकर श्रीराधिकाने सब सखियोंसहित प्रसन्न होकर रमेशको रमाकी तरह भगवान्

इत्युक्त्वावचनंराजन्स्वामिनीस्वामिनीपरम् ॥ वियोगखिन्नादुःखानिस्मरंतीसारुरोदह॥१६॥ दृष्ट्वाप्रियांरुदंतींतांप्रियःप्राहप्रियंवचः॥तस्या-
श्चशमयन्वाक्यैःकृष्णःकश्मलमेवच ॥ १७ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ नकर्त्तव्यस्त्वयाराधेशोकश्चतनुशोषकः ॥ तेजश्चैकंद्विधाभूतमावयोर्ऋष-
योविदुः ॥ १८ ॥ यत्राहंत्वंसदातत्रयत्रत्वंह्यहमेवच ॥ वियोगआवयोर्नास्तिमायापुरुषयोर्यथा ॥ १९ ॥ भेदंहिचावयोर्मध्येयेपश्यंतिनरा-
धमाः ॥ देहांतेनरकान्राधेतेप्रयांतिस्वदोषतः ॥ २० ॥ अथातस्त्वंतुमांराधेनित्यंद्रक्ष्यसिचांतिके ॥ प्रभातेचक्रवाकीवचक्रवाकंप्रियंकरम्
॥ २१ ॥ किंचित्कालेनदयितेगोपगोपीभिरेवच ॥ साकंत्वयाऽक्षरंब्रह्मश्रीगोलोकंव्रजाम्यहम् ॥ २२ ॥ गर्गउवाच ॥ माधवस्यवचःश्रुत्वा-
गोपीभिःसहराधिका ॥ प्रसन्नापूजयामासरमेशंचरमायथा ॥ २३ ॥ श्रीराधयापुनःकृष्णोरासार्थंप्रार्थितोनृप ॥ प्रसन्नोवृंदकारण्येरासंकर्तुं
मनोदधे ॥ २४ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेराधाकृष्णमेलननामैकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥ गर्गउवाच ॥ हेमंतेमासिपूर्व-
स्मिन्राकायांराधिकेश्वरः ॥ वंशींवशकरींदध्मौयथावृन्दावनेपुरा ॥१॥ ध्वनिर्बभूवतस्याश्चसर्वेषामाहरेन्मनः॥ निशम्यगोप्यःसंखिन्नाःकामखे
देनतत्रसुः ॥ २ ॥ रुधन्नंबुभृतश्चमत्कृतिपरंकुर्वन्मृहुस्त्वंबरंध्यानाद्धंतनयन्सनंदनमुखान्विस्मेरयन्वेधसम् ॥ औत्सुक्याद्बलिभिर्बलिंचटुल-
यन्भोगेंद्रमाघूर्णयन्भिदन्नंडकटाहभित्तिमभितोबभ्रामवंशीध्वनिः ॥ ३ ॥

श्रीकृष्णको पूजा ॥२३॥ तब श्रीराधासे श्रीकृष्ण रासके लिये प्रार्थना किये गये, हे नृप ! तब प्रसन्न होकर वृन्दावनमें रास करनेको तैयार हुये ॥२४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमे-
धखण्डे भाषाटीकायामेकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४१ ॥ गर्गजी कहते हैं कि, हे राजन् ! हेमन्तऋतु में पहिले महीनेमें पूर्णिमामें राधिकानाथने वृन्दावनमें जैसे पहिले बजाई थी, उसी
प्रकार की वशकरी बंशी बजाई ॥१॥ उस समय सभीके मनको हरनेवाली उस वंशीकी ध्वनिको सुनकर कामदेवके खेदसे सभी गोपियाँ त्रासयुक्त होगईं ॥२॥ समुद्रके वेग रुकगये
अर्थात् जलमें लहर आना बंद होकर जल स्थिर होगया, आकाशमें अनेक चमत्कार दीखने लगे, सनन्दनादिक योगियोंके ध्यान टूट गये ब्रह्माजीको भी बडा भारी विस्मय हुआ,
बड़ी भारी उत्कण्ठासे अनेक प्रकार बलि (भेंट) बलि राजा चंचल होगये, शेषजी कांपने लगे, और जब बंशी बजी, तब सब जगत् सब ओर ब्रह्माण्ड फूटने लगे ॥ ३ ॥

इतनेमें विरही जनोंके शोचोंको धोता हुआ चन्द्रमा उदय हुआ, हे राजेन्द्र ! जैसे परदेशसे आया हुआ पति अपनी प्रियाके शोचको दूर करता है ॥ ४ ॥ हे राजन् ! उस समय यमुनाजीने दिव्य तनु धारण किया, वृन्दावन तथा गोवर्धन और व्रजकी भूमिने अपना अपना दिव्यरूप धारण किया ॥५॥ उन्हीके दिव्य रूपोंका वर्णन करते हैं कि,श्रीयमुनाजी मणीन्द्र, मोती, माणिक, हीरा,पन्ना,इनके ऊपर कोटासे और वैदूर्य नीलक,पीतमणि, हीरा,पन्ना,इनके सोपान जिनमें ऐसे मणि मण्डपोंसे प्रकाश करती हुई अत्यन्त शोभित हुई ॥६॥ अपनी इच्छासे चलनेवाले मत्स्योंके समूहसे युक्त अपने निर्मल अंगसे पापोंका नाश करती हुई बहने लगी ॥ ७ ॥ फिर कहते हैं कि उस गोवर्धन पर्वतका भजन करो, जिसमें शतचन्द्र प्रकाश करते हैं,जिसमें मन्दार और चन्दनकी लताओंसे लिपटे कल्प वृक्षोंके वन हैं,रास मण्डल जिसमें बन रहा है,जो मणियोंके मण्डपसे युक्त है, सुवर्णमय सुन्दर करोड़ों

अथोदगाच्चंद्रमास्तुचर्षणीनांशुचोमृजन् ॥ यथाप्रियायाराजेंद्रविदेशादागतःप्रियः ॥४॥ तदैवयमुनाराजंस्तनुंदिव्यंदधारह ॥वृन्दावनंगिरीं-द्रश्चव्रजभूमिश्चमानद॥५॥कृष्णानदीजयतियत्रमणींद्रमुक्तामाणिक्यशुभ्रहरिताकरतोलिकाभिः॥वैडूर्यनीलकहरिद्धरिवज्रपीतसोपानमण्डपयुताभिरतिस्फुरंती ॥ ६ ॥ स्वच्छंदसूत्पतितमत्स्यगणैर्वहंतीसच्छयामलेनवपुपाऽघगणंहरंती ॥ उत्तुङ्गलोललहरीकमलैर्लसंतीकृष्णानदीजयतिकृ-ष्णगृहेलुठंती ॥७॥ गोवर्द्धनंभजगिरिंशतचंद्रयुक्तंमंदारचन्दनलतावृतकल्पवृक्षम् ॥ श्रीरासमण्डलयुतंमणिमंडपाढ्यंकोटीरमंजुलनिकुंजकुटीर-कोटिम् ॥ ८ ॥ वृंदावनंचयमुनातटनीरतीरसंपृक्तमंदगमनैरतिगंधवातैः ॥ तत्कंपितंचसुरभीकृतसर्वदेशंश्रीखंडकुंकुमभृदागुरुचर्चितंशम् ॥९॥ जुष्टंवसंतनवपल्लवपुष्परंगैर्मंदारचंदनसुचंपकनीपनिंबैः ॥ आम्रातकाम्रपनसागुरुनागरंगैःश्रीतालपिप्पलवटैर्नवनारिकेरैः ॥१०॥ खर्जूरश्रीफल-लवंगविराजमानमंजीरशालकतमालकदंबयुक्तम् ॥ सन्तानकुंदबदरीकदलीसिताढ्यंश्रीशाल्मलीबकुलकेतकिसच्छिरीषम् ॥११॥ सन्मोदिनीजलजवृन्दमनोहराभंवृन्दारकंवरवनंतुलसीलताढ्यम् ॥ श्रीमल्लिकाऽमृतलतामधुमाधवीभिःसंराजितंस्मरनृपेंद्रव्रजस्यमध्ये ॥ १२ ॥

निकुंजकुटी जिसमें बन रही हैं ॥ ८ ॥ यमुनाजीके तटपर जलसे मिला हुआ, मंदगति जिसकी और अति सुगन्धित जो पवन, जिसकी सुगन्धिसे सम्पूर्ण स्थल सुगन्धित होरहा है उससे और चन्दनके शरकी मृत्तिका और अगरसे सब देश अति सुशोभित है जिसका ॥९॥ वसन्तके नवीन कोमल पल्लव और पुष्पोंसे मन्दार चन्दनके,चम्पाके पुष्पोंसे, कदम्ब, नीम, आम्रातक, आम्र, कटहर, नारंगी, ताल, पीपल, वर, नारियल, ॥ १० ॥ खर्जूर, बेल, लवंग, इनसे सुशोभित, अंजीर, शाल, तमाल, और कदम्बोंसे युक्त कल्पवृक्ष, कुन्दबेर, केला, सेमर, मौलश्री,केतकी और शिरस हैं जिसमें ऐसा वृन्दावन है ॥११॥ सन्तोंके मनको आनन्द देनेवाले कमलके वनसे मनोहर कान्ति जिसकी तुलसीकी लताओंसे युक्त; श्रीमल्लिका, अमृतलता, वासंती लता और माधवीकी लताओंसे जो वृन्दावन अति सुशोभित है, ऐसे व्रजके मध्यमें ॥ १२ ॥

कोकिल आदि पक्षियोंसे युक्त वंशीवट है, और यमुनाके तटपर शीतल वालुकासे युक्त कोमल पुलिन है, श्रीपाटल, महुआ, किंशुक, प्रियाल, गूलर, सुपारी, दाख, कैंथ, इनसे युक्त ॥१३॥ कचनार, नीम अर्जुन, पाकर, अशोक, सरों, देवदारु, जामुन, नेत्र, नरसल, कुब्जक, स्वर्ण यूथी, पुन्नाग, नाग, गुडहर, और बकके वृक्षोंसे युक्त ॥१४॥ और चकवा, चकवी, सारस, तोत, श्वेत, हंसोंके बच्चे, कारंडव और जलमुर्गोंसे कूजित ॥१५॥ पपीहा, कोयल, कपोत, नीलकण्ठ और नृत्य करते हुये मयूरोंके कलरव (शोर) जिसमें ऐसे वृन्दावनको तू स्मरण कर ॥१६॥ जो श्यामा चिड़िया, चकोर, खंजन, मैना, कबूतर, भ्रमर, तीतर, तीतरी, कनकवेलि, मधु, लता, जुही, इनसे युक्त, और हरिण, वानर, वानरी, इनसे युक्त है ॥ १७ ॥ और जिसमें पुखराजके शिखायेंवाला निकुञ्जगेह बना है, जो कौस्तुभमणि, इन्द्र नीलमणियोंके समूहसे सुशोभित है, और करोड़ों चन्द्रमण्डलके समान चन्दोवाओंसे और

वंशीवटंचकलकंठविहंगमैश्चकृष्णातटेचपुलिनंकिलवालुकाढ्यम् ॥ श्रीपाटलैर्मधुककिंशुकसत्प्रियालैरौदुंबरैःक्रमुकद्राक्षकपित्थयुक्तम् ॥१३॥
श्रीकोविदारपिचुमंदलतार्जुनैश्चप्लक्षैरशोकसरलैःसुरदारुभिश्च ॥ जंबूसुवेत्रनलकुब्जकस्वर्णयूथीपुन्नागनागकुटजैःकुरबैर्वृतंच ॥१४॥ चक्राह्वसा-
रसशुकःसितराजहंसैः कारंडवैश्चजलकुक्कुटकूजितंच ॥ १५ ॥ दात्यूहकोकिलकपोतकनीलकण्ठैर्नृत्यन्मयूरकलराववृतंस्मरत्वम् ॥ १६ ॥
श्यामाचकोरकलरवंजनसारिकाभिःपारावतैर्भ्रमरतित्तिरतित्तिरीभिः ॥ श्रीकांचनीमधुलतामधुयूथिकाभिःसंवेष्टितंहरिणमर्कटमर्कटीभिः
॥१७॥ श्रीपद्मरागशिखरंचनिकुंजगेहंश्रीकौस्तुभेंद्रमणिराजविराजमानम् ॥ कोटींदुमंडलवितानगणैश्चहैमैःश्रीपट्टसूत्ररचितैर्मणितोरणाढ्यम्
॥ १८ ॥ मुक्तावृतैः कनकपीतपतत्पताकैःपारावतैःसितपतत्रिभिरावृतञ्च ॥ मंदारकुन्दकरवीरकयूथिकानांमालाविचित्ररचितंनवचंपकानाम्
॥१९॥ नागेशपद्महरिचंदनपल्लवानांश्रीमालतीकुरबकांचनयूथिकानाम् ॥ मालाभिरावृतमनंगहरंगृहंतत्सद्रत्नदर्पणवृतंसितचामरैश्च ॥ २० ॥
सिंहासनैश्चनव पल्लवपुष्पयुक्तैःशय्यासनैःकनकविद्रुमपादवृन्दैः ॥ श्रीचंदनागुरुजलैर्मकरंदसंघैःकस्तूरिकामुदितकुंकुमचर्चितंतत् ॥ २१ ॥

सुवर्णमय पट्ट सूत्रोंसे रचे हुये मणियोंके तोरणोंसे अति सुशोभित है ॥१८॥ मोतियोंके झालर जिनमें लगीं ऐसी सुवर्णके समान पीली पताकाएं फहरा रही हैं जिसमें, और अनेक जातिके कबूतर, और हंसोंसे जो आवृत है, और मन्दार, कुन्द, करवीर, जुही, और नवीन चम्पाकी मालाओंसे विचित्र रीतिसे रचा हुआ है ॥१९॥ और नागेश (नागदमन) कमल, और चन्दनके दल, मालती, कुरवक, और कांचन जुहीकी मालाओंसे जो सुशोभित है, और अनेक मालाओंसे आवृत है, कामदेवके भी मनको हरनेवाला, उत्तम रत्नजटित दर्पण जिसमें विद्यमान ऐसा चामरोंसे युक्त वह भवन है ॥ २० ॥ और नवीन कोमल पुष्पोंके बनाये हुये सिंहासन हैं जिनमें जिनके मूंगाके पांव लगे हुये हैं, और ऐसेही जिसमें शय्यासन हैं, और श्रीचन्दनजल और अगरके जल और मकरंद कस्तूरी, और केशरके जलका जिसमें सब जगह छिड़काव हो रहा है ॥ २१ ॥

हिल रहे वसन्तके वृक्षोंके कोमल पत्तोंके शीतल सुगन्धित मंद मंद पवनसे सुगन्धित किये हैं अंग जिसके भगवान्‌के ऐसे अत्यन्त नम्र शाखावाले वृक्षोंके पुष्पोंसे युक्त निकुंजको स्मरण करो ॥२२॥ उस वृन्दावनमें भगवान्‌ने आकर जब बंशी बजाई, तब वे सब व्रजकी बालाएं भगवान्‌के वेणुगीतको सुनकर हे नृप ! श्रीकृष्णकान्तने हरलिये हैं मन जिनके ऐसी वे भगवान्‌के पास सब कामोंको छोडकर आईं ॥२३॥ हे राजन् ! अपने पतियोंसे रोकी हुईं भी कृष्णने हर लिये हैं मन जिनके ऐसी वे अपने स्थूल शरीरको त्यागकर बड़ी शीघ्रतासे श्रीकृष्णके पास आईं ॥ २४ ॥ तब सुवर्णमय दिव्य सिंहासनपर विराजे हुये सुन्दर नन्दनन्दन, श्रीसुन्दरी राधिका सहित गलेमें मालतीकी माला धारण कर रहे ॥२५॥ श्यामसुन्दर, प्रातःकालीन सूर्यके समान किरीटको पहिने हुये, देदीप्यमान कान्ति जिनकी, सुशोभित मुरलीको हाथमें लिये, मनके हरनेवाले पीताम्बर पहिने हुये, अनेक मन्मथोंके मन मथनेवाले, भगवान् कृष्णको उन्होंने आकर देखा ॥ २६ ॥ तब मत्स्यके आकारके कुण्डलोंको पहिने हुये प्रियतम हरिको देखकर हे नृप ! अलक्षित जिनके उद्यम ऐसी वे

एजद्वसंततरुपल्लवमेववातैःशीतैर्गजेंद्रगमनैःसुरभीकृतांगम् ॥ एतादृशंहरिनिकुंजगृहंस्मरत्वंसन्नम्रशाखतरुयुक्तमतीवपुष्पैः ॥२२॥ श्रीवेणुगीतंबहुकामवर्द्धनंनिशम्यसर्वाव्रजयोषितोनृप ॥ श्रीकृष्णकांतेनगृहीतमानसाविसृज्यकर्माणिसमाययुर्वने ॥ २३ ॥ रुद्धायाःपतिभीराजन्कृष्णेनहृतमानसाः ॥ स्थूलंशरीरंतास्त्यक्त्वात्वरंकृष्णांतिकंययुः ॥ २४ ॥ सिंहासनेहेमदुकूलसंयुतेमध्येस्थितंसुन्दरनन्दनन्दनम् ॥ श्रीसुन्दरीराधिकयासमंपरंगलेदधानंमधुमालतीस्रजम् ॥ २५ ॥ श्यामंप्रभातार्ककिरीटिनंहरिंस्फुरत्प्रभंश्रीमुरलीमनोहरम् ॥ पीतांबरंमन्मथराशिमोहनंव्रजस्त्रियस्तंददृशुःसमागताः ॥ २६ ॥ दृष्ट्वाप्रियाप्रियतमंमत्स्यकुण्डलिनंहरिम् ॥ गोप्योमूर्च्छांगताःसद्योभूपचालक्षितोद्यमाः ॥ २७ ॥ सांत्वयामासताःकृष्णोमिष्टवाक्यैःसुधासमैः ॥ तदागाप्योवनोद्देशेसर्वाश्चैतन्यतांगताः ॥२८॥ कृष्णंगद्गदयावाचास्तुत्वाभीतास्त्रियोवराः ॥ त्यक्त्वाविरहजंदुःखंगोविंदंददृशुःप्रियम् ॥२९॥ वृन्दावनेभ्राजमानेमालतीवनसंकुले ॥ दिव्यद्रुमलताजालेमधुपध्वनिनादिते ॥ ३० ॥ विचचारहरिःसाक्षाद्देवोमदनमोहनः ॥ पद्माभंपद्महस्तेनगृहीत्वाराधिकाकरम् ॥ ३१ ॥ प्रहसन्भगवान्साक्षादाययौयमुनातटम् ॥ कृष्णातीरेनिकुंजेवैश्रीकृष्णोनिषसादह ॥ ३२ ॥ तस्मिन्गृहेमधुपतेःशृणुगोपिकानांश्रीकृष्णचन्द्रचरणस्मरणावृतानाम् ॥ झंकारनूपुरझणत्करकंकणानांमंजीररत्नविचलत्कटिकिंकिणीनाम् ॥ ३३ ॥

गोपियाँ मूर्च्छाको प्राप्त हो गईं ॥ २७ ॥ उनको भगवान्‌ने मीठे वचनोंसे सान्त्वना दी, तब वे गोपियाँ उस वनमें सब चैतन्यको प्राप्त हुईं ॥ २८ ॥ तब गद्गदवाणीसे स्तुति कर वे, स्त्रियाँ विरहजन्य दुखको त्यागकर प्यारे गोविन्दको देखने लगीं ॥ २९ ॥ मालतीके वनोंसे व्याप्त वृन्दावनमें दिव्य वृक्ष लताओंके समूह जिनमें भ्रमर ध्वनिसे शब्दित उस वनमें ॥ ३० ॥ साक्षात् हरि मदनमोहन देव अपने हस्तकमलसे प्रियाके हस्तकमलको धारण कर ॥ ३१ ॥ मन्दमन्द हँसते हुये साक्षात् प्रभु यमुनातटपर पधारे, तब यमुनातटपर निकुञ्जमें उतरकर बिराजे ॥ ३२ ॥ मधुपतिके उस गृहमें उन गोपियोंके भेद करता हूँ, उसको सुनो, वे कैसी हैं कि, श्रीकृष्णचन्द्रके चरणोंको स्मरण करनेवाली, आकारयुक्त नूपुरोंकी झणत्कार और कंकणोंकी झणत्कार मनोहर रत्नोंकी करधनीको कमरमें धारण किये ॥ ३३ ॥

मंद मंद हंसनेकी द्युतिके साथ चमकते कपोंलोसे और शोभायुक्त दंतपंक्तिसे सुशोभित, बिजलीके समान सखियोंके वेषोंसे और सुवर्णके हार और बाजुओंसे भूषित और प्रातः कालीन सूर्यमण्डलके समान कुण्डलोंसे भूषित ॥ ३४ ॥ हे राजन्! उन गोपियोंमें कोई तो मुग्धा, कोई तरुणी, कोई मध्याभी, कोई सखी वृक्षको हटाती हुई, कोई हँसती हुई सखी मदयुता वनमें विचरने लगी ॥ ३५ ॥ कोई सखी मदमाती किसी सखीके हाथ मारकर भगी, और जलमें स्नान करतीको पकडकर कमलोंसे मारने लगी, किसीने किसीके ढीले हुये हारको लेलिया, कोई सखी विरहमें मस्त अपनी कबरीको भी नहीं सम्हालती थी ॥३६॥ श्रीजान्हवी (गंगा) यमुना, मधुमाधवी, शीला, रमा, शशिमुखी, विरजा, सुशीला, चन्द्रानना, ललिता, अचला, विशाखा, माया, चन्द्रावती, श्यामा, और रमा आदि असंख्य गोपियाँ ॥ ३७ ॥ कोई लीला छत्रको हाथमें लिये, कोई मोतियोंके हारको लिये, उस

स्मेरद्युतिस्फुटचमत्कृतगंडदेशैःश्रीदंतपंक्तिविलसत्तडितालिवेशैः ॥ कोटीरहारहरितांगदभूषितानांबालार्कमंडलविकुंडलमंडितानाम् ॥ ३४॥
तासांतुकापियुवतीकथिताचमुग्धामध्यापिकापितरुणीरुचिराप्रगल्भा ॥ काचित्तरुंविनयतीमधुरंहसंतीकाचित्सखीमदयुतासुवनेव्रजंती॥ ३५॥
संताडचतामपिकरेणतुकाप्यधावत्संगृह्यकापिसुवनेकमलैर्जघान ॥ काचिच्छ्लथत्कनकहारमुपाजहारकाचित्प्रमुक्तकबरीतुविहारमत्ता॥ ३६॥
श्रीजाह्नवीचयमुनामधुमाधवीचशीलारमाशशिमुखीविरजासुशीला ॥ चन्द्राननाचललितात्वचलाविशाखामायाऽऽलपएवकथिताभवनेत्वसं-
ख्याः॥ ३७॥ लीलातपत्रमतिमौक्तिकदामजालंनीत्वाचलंतिमणिभूमिषुतत्रकाश्चित् ॥ श्रीचामरव्यजनदंडधरावयस्यःकाश्चिद्व्रजंतिधृतपीतप-
तत्पताकाः ॥३८॥ नृत्यंतितत्रहरिवेषधरास्तुकाश्चिद्वीणाकरामधुरतालमृदंगहस्ताः ॥ वंशीधराश्चवृषभानुसुतासुवेषाःकेयूरकुण्डलयुतामणि-
वेत्रहस्ताः॥३९॥सद्भावभावरसतालयुतस्मिताक्तैर्झंकारनूपुरयुतैर्विशदैःकटाक्षैः॥ संगीतनृत्यविदितैर्भ्रुकुटीविभंगैराधांहरिंचसततंपरितोषयंत्यः
॥ ४० ॥ तस्मिन्निकुञ्जभवनेयमुनातटेपिवंशीवटेवनधरानिकटेहरिंतम् ॥ श्रीराधयाचगिरिराजतटंव्रजंतंनंदात्मजंचनटवेषधरंस्मरत्वम्॥४१॥

मणिमय भूमिमें चलने लगी कोई चमरदण्डको हाथमें लिये, कोई पीली पताकाको हाथमें लिये ॥ ३८ ॥ कोई कृष्णका रूप बनकर नाचने लगी, कोई वीणाको लिये, कोई मधुर तालको लिये हुये, कोई मृदंग लिये थीं, उनमें शृंगार किये, केयूरकुण्डल पहिने हुये वृषभानु नन्दिनीने हाथमें वंशी लरखी थी, किसीने मणिमय बेंत हाथमें लरखा था ॥ ३९ ॥ उत्तम अपने २ हावभावोंसे रसताल युत मंद मुसकानसे और झंकारयुत नूपुरोंसे और विशद कटाक्षोंसे और संगीत नृत्यसे और अपने भ्रुकुटि विलासोंसे सब. समय श्रीप्रियाप्रीतम को परितोष करती हुई रास करने लगीं ॥४०॥ हे राजन्! उस यमुनातीर धीर समीर कुटीरमें विहार करते हुये, श्यामसुन्दर वंशीवटमें पर्वतके समीप श्रीराधिकाजीके साथमें गोवर्धन पर विचर रहे, नटवेषको धारण कर रहे, श्रीनन्दनन्दनको तुम स्मरण करो ॥ ४१ ॥

पुखराजके जैसे नख जिनमें ऐसे हैं पदारविंद जिनके,झंकार युत नूपुरोंको धारण कर रहे हैं,प्रकाश युक्त अंग अंग जिनके अपने चरणसे भूमि प्रदेशको अरुण करते श्रीमत्स्यरागकी कान्तिसे अति शोभित इधर उधर विचरने लगे ॥४२॥ लक्ष्मीके हस्त कमलसे ललित है, जानु प्रदेश जिनका कदलीके समान जंघा, पीताम्बर पहिने हुये, बहुत सूक्ष्म उदर, पतली जिनकी कमर,रोमावलिकी भ्रमरी जिसमें विराजमान ऐसा जिनका अंग,नाभि है सरोवरके समान जिसमें ऐसा सुशोभित उदर जिनका,क्षुद्र घंटिकाको पहिने हुये और छातीमें जिनके भृगुलताका चिह्न, कण्ठमें कौस्तुभसे सुशोभित ॥ ४३ ॥ श्रीवत्स और हारसे मनोहर, नवीन सजल मेघके समान नील पीताम्बर पहिने हुये, शुण्डा दण्ड जैसे भुज दण्ड, रत्नोंके बाजू और मणिमय कंकण धारण किये हस्त कमल,श्रीराज हंसके समान उत्तम ग्रीवासे अति सुशोभित ॥ ४४ ॥ शंखके समान कंठसे ललित, सुन्दर कपोल, निम्न (गढ़े) जिसमें पड़े, ऐसी ठोढी, कुन्द कलीसे शिखरी दंत,बिम्ब जैसे होठ,मन्द मुसकान युक्त,शुककी चोंच जैसी नासिका,अमृत जैसी बोली,और चञ्चल हैं कटाक्ष जिनके ॥ ४५ ॥ कमल जैसे

श्रीपद्मरागनखदीप्तिपदारविन्दंझंकारनूपुरधरंस्फुरदंगदेशम् ॥ कुर्वंतमेवतुपदारुणभूमिदेशंश्रीमत्परागसुरुचालमितस्ततस्तु॥४२॥लक्ष्मीकराब्जपरिलालितजानुदेशंरंभोरुपीतवसनंतुकृशोदराभम् ॥ रोमावलिभ्रमरनाभिसरस्त्रिरेखंकांचीधरंभृगुपदंमणिकौस्तुभाढचम् ॥४३॥ श्रीवत्सहाररुचिरंनवमेघनीलंपीतांबरंकरिकरस्फुटबाहुदण्डम् ॥ रत्नांगदंचमणिकंकणपद्महस्तंश्रीराजहंसवरकंधरशोभमानम्॥४४॥श्रीकम्बुकण्ठललितंविलसत्कपोलंमध्यंतुनिम्नचिबुकंकिलकुन्ददंतम् ॥ बिंबाधरंस्मितलसच्छुकचंचुनासंपीयूषकल्पवचनंप्रचलत्कटाक्षम् ॥ ४५ ॥ श्रीपुण्डरीकदलनेत्रमनंगलीलंभ्रूमण्डलस्मितगुणावृतकामचापम् ॥ विद्युच्छटोच्छलितरत्नकिरीटकोटिमार्तंडमंडलविकुण्डलमंडिताभम् ॥४६॥ वंशीधरंत्वहिविलोलगुडालकाढचंराधापतिंसजलपद्ममुखंचलंतम् ॥ कंदर्पकोटिघनमानहरंकृशांगंवंशीवटेनटवरंभजसर्वथात्वम् ॥४७॥ आरक्तरक्तनखचन्द्रपदाब्जशोभांमञ्जीरनूपुररणत्कटिकिंकिणीकाम् ॥ श्रीघंटिकाकनककंकणशब्दयुक्तांराधांदधामितरुपुञ्जनिकुञ्जमध्ये ॥४८॥ नीलांबरैःकनकरश्मितटस्फुरद्भिःश्रीभानुजातटमरुद्धृतिचञ्चलांगैः ॥ सूक्ष्मस्वरूपललितैरतिगौरवर्णांरासेश्वरींभजमनोहरमंदहासाम् ॥४९॥ बालार्कमंडलमहांगदरत्नहारांताटंकतोरणमणींद्रमनोहराभाम् ॥ श्रीकण्ठभालसुमनोनवपंचदाम्नींरत्नांगुलीयललितांव्रजराजपत्नीम् ॥५०॥

जिनके नेत्र, कामदेव जैसी जिनकी लीला, मन्द मुसकान युत काम धनुषके जैसी भृकुटि, बिजलीके जैसी छटायुक्त रत्नमय किरीट, करोड़ सूर्य बिम्बके जैसा जिनका प्रकाश, कुण्डलोंसे सुशोभित ॥ ४६ ॥ वंशीको लिये काली घुँघराली अलकोंसे युक्त, राधाके पति, सजल कमलके समान मुख, कोटि कामके सौन्दर्यको हरनेवाले, वंशीवटमें विराजमान, नटवरका तुम सर्वथा भजन करो ॥ ४७ ॥ महावरके जैसे नखयुक्त जिनके चरण कमल, मंजीर नूपुर सहित बजनी करधनीको पहिने हुये, श्रीघंटिका और सुवर्णके कंकण शब्दसे युक्त,वृक्षोंके मध्यमें निकुञ्जमें विराजमान,श्रीराधिकाजीको मैं अपने हृदयमें धारण करता हूँ ॥ ४८ ॥ फिर श्रीराधाजीका तो११श्लोकोंसे वर्णन करते हैं कि, सुवर्ण द्युति व जमुना जल सम्बन्धी वायुसे कम्पित व सूक्ष्म नीलाम्बरसे युत, गौरवर्णा,मन्द हासा, रासेश्वरी (राधिका) को भजे ॥४९॥ उदय कालीन सूर्य मण्डलके समान बाजूबन्द और हार धारण किये हुये, ताटंक और तोरण मणीन्द्र जैसी है कान्ति जिनकी,कंठ तथा ललाटमें बेनी, बन्दी,झूमर आदि मणीन्द्रोंको धारण कर रही,रत्नमयी अंगूठी पहिने हुई, श्रीव्रजराजकी

पत्नी श्रीराधिकाजीको भजो ॥ ९० ॥ अर्द्ध चन्द्रकी कान्तियुत प्रकाशित चूड़ामणि तथा अनेक कण्ठाभरणोंसे विचित्र है रूप जिनका, श्रीपट्टसूत्र मणि पट्टसे चलती हुई दुलरीको पहिने हुये,प्रकाशित सहस्रदल कमलको धारण कर रही,श्रीराधिकाजीको भजो॥९१॥श्रीयुत भुजाओंमें सुशोभित हैं, कंकण जिनके, स्तनोंपर रत्नोंके प्रकाश तथा नासिकामें नकवे-सरसे सुशोभित हैं कपोल जिनके,उत्तम यौवनसे अलस जिनकी गति,मनोहर काली नागिनके समान वेणी और सायंकालीन चन्द्रके समान जिनका मुख और नवीन खिले चम्पाके पुष्पोंके समान अंग कान्तिसे सुशोभित श्रीराधाजीको भजो ॥ ९२ ॥ उत्तम हाव भाव संहित नव कमलके समान नेत्र प्रकाशित, मन्द मुसकान, अत्यन्त चलते हैं कटाक्ष जिनके, कृष्णकी,ललित कुन्तलोंकी कान्ति और मन्दार हारमें मधुर भ्रमरियोंके शब्दसे युक्त श्रीराधिकाजीको भजो ॥९३॥ श्रीकुंकुम चन्दनकी मृद और उगरुके जलसे सींची हुई ललाट पर बन्दी तथा कपोलोंपर पत्र रचना जिनके होरही, और कल्पवृक्षोंके पत्तोंकी तरह अमल,नेत्रोंमें अंजनसे विराजित,अमल कान्तिकेसी श्रीरासेश्वरी गजगामिनी, पद्मिनी, नायिका

चूडामणिद्युतिलसत्स्फुरदर्द्धचंद्रांग्रैवेयकालपनपत्रविचित्ररूपाम् ॥ श्रीपट्टसूत्रमणिपट्टचलद्विदाम्नीं स्फूर्ज्जत्सहस्रदलपद्मधरां भजस्व ॥ ९१ ॥
श्रीबाहुकंकणलसत्कुचरत्नदीप्तिश्रीनासिकाभरणभूषितगण्डदेशाम् ॥ सद्यौवनालसगतिकलसर्पवेणींमध्येंदुकोटिवदनांस्फुटचंपकाभाम् ॥९२॥
सद्भावभावसहितांनवपद्मनेत्रांस्फूर्ज्जत्स्मितद्युतिकलांप्रचलत्कटाक्षाम् ॥ कृष्णप्रियांललितकुन्तलपुंतलाभांमंदारहारमधुरभ्रमरीरवाढ्याम्
॥९३॥ श्रीखंडकुंकुममृदागुरुवारिसिक्तांश्रीबिंदुकीरुचिरपत्रविचित्रचित्राम् ॥ संतानपत्ररुचिरामलमंजनाभांरासेश्वरींगजगतिंभजपद्मिनींताम्
॥९४॥ एतादृशींरतिवरांतुसमेत्यकृष्णोगच्छन्निकुञ्जवनजालविलोकनाय ॥ धावंतितत्रमणिछत्रधराश्चगोप्योनीत्वातथाचमरचारुपतत्पताकाः
॥९५॥ षड्रागमेववरधैवतमध्यमाद्यैर्गायंतमादिपुरुषंभजनन्दपुत्रम् ॥ षट्त्रिंशतस्तदनुवर्त्तितरागिणीनांवंशीरवेणललितेनवरंव्रजंतम् ॥ ९६ ॥
शृंगारवीरकरुणाद्भुतहास्यरौद्रबीभत्सशांतकभयानकनित्ययुक्तम् ॥ भक्तप्रियंव्रजवधूमुखपद्मभृंगंयोगीन्द्रहृत्कमलविस्फुरदंघ्रियुग्मम् ॥९७॥
क्षेत्रज्ञमादिपुरुषंस्वधियज्ञरूपंसर्वेश्वरंसकलकारणकारणेशम् ॥ कृष्णंहरिंप्रकृतिपूरुषयाःपुमांसंसर्वंनिरस्तकपटंनिजतेजसेह ॥ ९८ ॥

श्रीवृषभानु नन्दिनीका भजन करो ॥ ९४ ॥ ऐसी रासेश्वरीके श्रीकृष्ण समीप जाकर उनको अपने साथमें लेकर निकुंज वनके समूहको देखनेके लिये गये, वहाँ उस समय मणिमय छत्रोंको हाथोंमें लिये गोपियाँ साथमें आकर दौड़ीं,हाथोंमें चमरोंको और फहरा रही पताकाओंको हाथोंमें लिये गोपियाँ दौड़ीं ॥९५॥ धैवत और मध्यम आदि छः रागी के गान करनेवाले आदि पुरुष नन्दलालका सेवन करो,जो अपनी वंशीके मार्गसे छः राग और छत्तीसों रागिनियोंको गाते हैं,और वृन्दावनमें विचरते हैं,उनका भजन करो ॥९६॥ शृंगार, वीर, करुणा, अद्भुत, हास्य, रौद्र, बीभत्स, शांति और भयानक इन रागोंके गाने करते भक्तोंके प्यारे, व्रज वधुओंके मुख कमलके मकरंदको पान करनेवाले, भ्रमर और योगियोंके हृदय कमलमें निवास करनेवाले राजहंस ॥ ९७ ॥ क्षेत्रज्ञ, आदि पुरुष, अधियज्ञ स्वरूप, सर्वेश्वर,सब जगत्के कारणके भी कारण, कृष्ण और हरि जिनका नाम प्रकृति, पुरुष, दोनोंमें पुरुष रूप अपने तेजसे सब तेजोंको निराश करनेवाले ॥ ९८ ॥

जिनको शिवजी, धर्मराज, इन्द्र, शेष, लोकपाल, सिद्धि देनेवाले गणेश और सब देवतामात्र और राधा, रमा प्रकृति, भूदेवी, लीलादेवी, विरजा और सरस्वती और सब वेद जिनका सेवन करते हैं, उन्हीं कृष्णका हम भी सेवन करते हैं ॥५९॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४२॥ गर्गजी कहते हैं कि हे राजन् ! उस वृन्दावनमें अनेक प्रकारके वृक्ष, लता, भ्रमरोंकी गुंजारसे संकुल, शीतल, मन्द, सुगन्धित जिसमें पवन उसमें श्रीकृष्णचन्द्रजी अपने मुख मारुतसे वंशीके छिद्रोंको भरते बारबार देवताओंके भी मनको चुराने लगे ॥१॥ तब कीर्तिरानीकी राजदुलारी श्रीराधाने काममें विह्वल होकर श्रीकृष्णको अपनी दोनों भुजाओंसे आलिंगन किया ॥२॥ श्रीगोकुलकी चकोरी राधाको श्रीगोकुलके चन्द्रमा श्रीकृष्णको देखकर प्रियाके मनको हरते हुये पुष्पोंकी शय्यापर प्यारीके मनको हरते रमण करने लगे ॥३॥ श्रीकृष्णके साथ विहार करके स्वामिनी राधिका

यंवैस्तुवंतिशिवधर्मसुरेशशेषलोकेशसिद्धिदगणेशसुरादयोपि ॥ राधारमाप्रकृतिभूविरजास्वराद्यावेदाभजंतिसततंतमहंभजामि ॥ ५९ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेरासक्रीडायांद्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४२ ॥ गर्गउवाच ॥ वृंदावनेवृक्षलतालिसंकुलेमंदानिलेवीजितिशीतलेनृपे ॥ रंध्राणिवेणोःकिलपूरयन्हरिर्मुहुर्हरत्येवदिवौकसांमनः ॥ १ ॥ वेणुगीतंततःश्रुत्वाश्रीराधाकीर्तिनंदिनी ॥ भुजाभ्यांनन्दसूनुं वैजग्राहानंगविह्वला ॥ २ ॥ गोकुलस्यचकोरींतांकृष्णोगोकुलचन्द्रमाः ॥ दृष्ट्वाकुसुमपर्यंकेतयारेमेहरन्मनः ॥ ३ ॥ श्रीकृष्णस्यविहारेणब्रह्मानन्देनस्वामिनी ॥ मुदंलेभेमहात्यंततथास्वामीवशीकृतः ॥ ४ ॥ रमणीयंरतिकरंरासेरामारमेश्वरम् ॥ जगृहुःसर्वतोराजञ्छतयूथाश्चयोषितः ॥ ५ ॥ ताभिःसार्द्धंहरीरम्योरेमेवैरासमण्डले ॥ तावद्रूपधरोराजन्यावत्योव्रजयोषितः ॥६॥ विरहिण्यश्चताःसर्वाविरहेणविहारिणः ॥ ब्रह्मानंदेनसन्मर्त्याआनन्दंलेभिरेयथा ॥ ७ ॥ श्रीकराभ्यांश्रीकराभ्यांश्रीशः श्रीश्यामसुन्दरः ॥ दधारहृदयेसर्वास्ताभिर्भक्त्यावशीकृतः ॥ ८ ॥ स्वेदयुक्तान्याननानितासांप्रीत्याव्रजेश्वरः ॥ प्रामृजत्पीतवस्त्रेणकिंवदामितपःफलम् ॥९॥ विनासांख्येनयोगेनतपसाश्रवणेनच ॥ विनातीर्थैर्नदानेनप्राप्ताःकामेनताहरिम् ॥ १० ॥

ब्रह्मानन्दके समान आनन्दित हुई वैसे ही प्रियाके वश किये श्रीकृष्णचन्द्र स्वामी आनन्दित हुये ॥ ४ ॥ रति करनेवाले कृष्णको रमा श्रीराधाजीने रासमें लक्ष्मीकान्तको रमण कराया, हे राजन् ! शत यूथ गोपियोंने सब ओरसे श्रीकृष्णको ग्रहण कर लिया ॥५॥ उनके साथ रम्य भगवान् रासमण्डलमें रमण करने लगे, हे राजन् ! जितनी गोपियाँ थीं, उतने ही रूप भगवान्ने बनाये ॥ ६ ॥ तब विहार करनेवाली वे गोपियाँ विहारीके विहारसे ऐसे आनन्दको प्राप्त हुईं, जैसे ब्रह्मानन्दको प्राप्त होकर मनुष्यको आनन्द प्राप्त होता है ॥७॥ तब श्रीश श्रीकृष्णने उन गोपियोंको अपने शोभायुक्त हाथोंसे अपने हृदयमें स्थापन किया, उन गोपियोंने भी आपको अपनी भक्तिसे वशमें किया ॥ ८ ॥ तब व्रजेश्वर कृष्णने प्रीतिसे उनके पसीने भीगेसे हुये मुख अपने पीताम्बरसे साफ किये॥९॥ सांख्य, योग, तप, श्रवण, और तीर्थ दानादि किये बिनाही केवल कामभावसेही वे हरिको प्राप्त होगईं ॥१०॥

तब वे आपसमें मानती हुई सब गोपियाँ कृष्णके विहारसे तृप्त हुई कुवाक्य कहने लगीं ॥११॥ पहिले श्रीकृष्ण हमको छोड़कर मूर्तिमती सुन्दरी स्त्रियोंको देखनेके लिये मथुराको गये ॥१२॥ जब उन्होंने वे सुन्दरियाँ नहीं देखी, तब फिर द्वारिकाको चले गये, जब द्वारिकामें भी नहीं देखी, तब फिर विवाह करने लगे ॥१३॥ पहिले भीष्मककी कन्या रुक्मिणी के साथ विवाह किया, फिर उसको रूपिणी नहीं मानकर फिर आपने सोलह हजार विवाह और किये॥१४॥उनको भी रूपवती नहीं मानकर बार२ शोच करते, हे सखियो ! फिर हमको देखनेको व्रजमें आये हैं ॥१५॥ तब सबको देखनेवाले महेश्वर श्रीकृष्ण रामेश्वर ऐसे राजी हुये, जैसे पहिले रासमें प्रसन्न हुये थे ॥१६॥ इससे हमहीं सब सुन्दरियोंमें श्रेष्ठ हैं, सुन्दर जिनके नेत्र, सुन्दर जिनके मुख, और निरन्तर स्थिर जिनका यौवन ॥१७॥ ऐसी हमारे जैसी सुन्दरी आकाशमें देवांगनाएं भी नहीं हैं, जिन्होंने अपने कटाक्षोंसे कामी

ततोगोपीजनाःसर्वामानवत्यःपरस्परम् ॥ कुवाक्यंकथयामासुःकृष्णतृप्ताविहारतः ॥ ११ ॥ अस्माँस्त्यक्त्वापुराकृष्णोगतःश्रीमथुरांपुरीम् ॥
विलोकितुंरूपिणीश्चसुन्दरीःस्त्रीश्चसुन्दरः ॥ १२ ॥ नदृष्टास्तेनसुंदर्योजगामद्वारकांपुनः ॥ नदृष्टास्तेनतास्तत्रविवाहंकृतवान्पुनः ॥ १३ ॥
रुक्मिणींभीष्मकसुतांनमत्वातांतुरूपिणीम् ॥ पुनर्विवाहान्कृतवान्सहस्राणिचषोडश ॥ १४ ॥ नमत्वारूपिणीस्ताश्चशोकंकुर्वन्पुनःपुनः ॥
व्रजमागतवान्सख्यःश्रीकृष्णोऽस्मान्विलोकितुम् ॥ १५ ॥ दृष्ट्वारूपाणिचास्माकंसर्वद्रष्टारमेश्वरः ॥ प्रसन्नोभूत्तथासख्योयथारासेहरिःपुरा
॥ १६ ॥ तस्माद्वयंचसर्वासांसुन्दरीणांवराःस्मृताः ॥ सुनेत्राश्चंद्रवदनाःशश्वत्सुस्थिरयौवनाः ॥ १७ ॥ अस्मत्तुल्याश्चरूपिण्योनैवदेवांगना-
श्चखे ॥ याभिःशीघ्रंकटाक्षैश्चकृष्णःकामीवशीकृतः ॥ १८ ॥ अहोवैयेनहंसेनमुक्ताःपूर्वंप्रभक्षिताः ॥ सएवान्यत्कथंवस्तुभक्षयिष्यतिदुःखतः
॥ १९ ॥ नसंतिमुक्ताःसर्वत्रसंतिमानसरोवरे ॥ तथावरस्त्रियोभूमौनसंतिसंतिचात्रहि ॥ २० ॥ गर्गउवाच ॥ इतिमानवतीनांचस्वात्मारामो
जगत्पतिः ॥ वचःशृण्वन्राधयाचतत्रैवांतरधीयत ॥ २१ ॥ निर्द्धनोपिधनंलब्ध्वामानंप्रकुरुतेनृप ॥ यस्यनारायणःप्राप्तोतस्यकिंकथयाम्यहम्
॥ २२ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखंडेरासक्रीडायांत्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४३ ॥ वज्रनाभिरुवाच ॥ अद्भुतंकृष्णचरितंमयात्व-
न्मुखतःश्रुतम् ॥ किंचक्रुर्गोपिकास्तासांसकथंदर्शनंददौ ॥ १ ॥

कृष्णको भी वशीभूत किया ॥१८॥ अहो ! जिस हंसने केवल मोती ही चुगे हैं वह चाहे जैसा दुखी क्यों न हो फिर भी मोती विना दूसरी चीज कैसे खा सकता है ॥१९॥ जैसे सर्वत्र मोती नहीं हैं, किन्तु मानसरोवरमें ही हैं, वैसे ही सुन्दरियाँ दूसरी जगह नहीं हैं, इस व्रजमें ही हैं ॥२०॥ गर्गजी कहते हैं कि मानवती हुई उन गोपियोंके कथनको सुनकर जगत्पति भगवान् राधाजी सहित अन्तर्धान होगये ॥ २१ ॥ हे नृप ! निर्धन भी धनको प्राप्त होकर मान करता है, फिर, जिसको स्वयम् नारायण प्राप्त हुये, उसके अभिमानको कोई कहाँ तक कह सकता है ॥ २२ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४३॥ यह सुनकर वज्रनाभने प्रश्न किया कि हे महाराज ! मैंने आपके मुखसे यह बड़ा अद्भुत कृष्ण चरित्र सुना, फिर यह कहिये कि कृष्णके अन्तर्धान होनेपर गोपियोंने क्या किया ? और उनको भगवान्ने कैसे दर्शन दिया ॥ १ ॥

इस सब वृत्तान्तको श्रद्धालु जो मैं हूँ, उस मेरेआगे निरूपण करिये, वेही मनुष्य धन्य है जो सदा कानोंसे कृष्णकथाको सुनते हैं ॥२॥ और मुखसे श्रीकृष्ण चन्द्रके नामोंको जपते हैं, हाथोंसे उनकी सेवा करते हैं ॥३॥ और नित्य कृष्णका ध्यान तथा दर्शन करते हैं, और जो पादोदक (चरणामृत) नित्य पीते हैं, और प्रसादको खाते हैं ॥४॥ ऐसे भावसे श्रम करके जो जगदीश्वरका भजन करते हैं,वे हरिके परमपदको जाते हैं ॥५॥ और जो संसारमें अनेक प्रकारके भोगोंको भोगते हैं, और श्रवणकीर्तनादि साधनको नहीं करते हैं, और देहसुखसे जो दुर्मद हैं ॥ ६ ॥ वे मनुष्य भयानक यमदूतों द्वारा पकडे जाकर जबतक सूर्य्य, चन्द्रमा, हैं, तबतक कालसूत्र नरकमें पडते हैं ॥ ७ ॥ सूतजी बोले कि, ऐसे कह रहे राजासे मुनीश्वर बडी गद्गदवाणीसे भगवान्‌के चरित्रकी प्रशंसा करते हुये बोले, ॥ ८ ॥ गर्गजी बोले, हे राजन् ! कृष्णके अन्तर्धान होने पर सब गोपियाँ जल्दी करती कृष्णको नहीं देखकर ऐसे दुखी हुईं कि हरिणके देखे विना हरिणी जैसी ॥९॥ सब गोपियाँ हरिको अन्तर्हित जानकर पहिलेकी तरह इकट्ठी होकर वनवनमें श्रीकृष्णको ढूँढने लगीं ॥१०॥ वे सब

तत्सर्वंमुनिशार्दूलमह्यंश्रद्धालवेवद ॥ धन्यास्तेयेहिशृण्वंतिकर्णैःकृष्णकथांसदा ॥२॥ मुखेनकृष्णचन्द्रस्यनामानिप्रजपंतिहि ॥ हस्तैःश्रीकृष्णसेवांवैयेप्रकुर्वंतिनित्यशः ॥ ३ ॥ नित्यंकुर्वंतिकृष्णस्यध्यानंदर्शनमेवच ॥ पादोदकंप्रसादंचयेप्रभुञ्जंतिनित्यशः ॥४॥ इतीदृशेनभावेनश्रमेण जगदीश्वरम् ॥ येभजंतिमुनिश्रेष्ठतेप्रयांतिहरेःपदम् ॥५॥ संसारेयेप्रभुञ्जंतिभोगान्नानाविधान्मुने ॥ श्रवणादीन्नकुर्वंतिदेहसौख्येनदुर्मदाः॥६॥ तेचांतेयमदूतैश्चगृहीताश्चभयानकैः ॥ पतिताःकालसूत्रेवैयावद्रविनिशाकरौ ॥७॥ सूतउवाच ॥ इत्युक्तवंतंराजानंप्रत्युवाचमुनीश्वरः ॥ गद्गदस्वरयावाण्याप्रशंस्यचरितंहरेः ॥ ८ ॥ गर्गउवाच ॥ कृष्णेचांतर्हितेराजंस्त्वरंसर्वाश्चगोपिकाः ॥ आचक्षाणाश्चतंतप्ताःहरिण्योहरिणंयथा ॥ ९ ॥ अन्तर्हितंहरिंज्ञात्वागोप्यःसर्वाश्चपूर्ववत् ॥ यूथीभूताविचिक्युर्वैसर्वतस्तंवनेवने ॥ १० ॥ पप्रच्छुर्भूरुहान्सर्वान्मिलित्वातुपरस्परम् ॥ हत्वाह्यस्मान्कटाक्षेणक्वगतोनंदनन्दनः ॥ ११ ॥ तदस्माकंचवदतयूयंसर्वेवनेश्वराः ॥ मार्तंडकन्येत्वजिरेगोपालोगाश्चचारयन् ॥१२॥नित्यं चकारलीलांतुसगतःकुत्रनोवद ॥ शतशृंगगिरींद्रस्त्वंश्रीनाथेनधृतःपुरा ॥ १३ ॥ वामहस्तेरक्षणार्थंवासवाद्व्रजवासिनाम् ॥ नजहातिहरिस्त्वांतु स्वपुत्रंहृदयोद्भवम् ॥ १४ ॥ सगतोवदकुत्रास्तेविहायविपिनेचनः ॥ हेमयूराश्चहरिणाहेगावोहेमृगाःखगाः ॥ १५ ॥ किरीटीह्यलकीकृष्णो युष्माभिःकिंविलोकितः ॥ वदतसोपिकुत्रास्तेवनेकस्मिन्मनोहरः ॥ १६ ॥

परस्पर इकट्ठी होकर सब वृक्षोंसे पूछने लगीं कि, कटाक्षसे हम सभीको मारकर नन्दनन्दन कहाँ गये ॥ ११ ॥ सो हे वनदेवताओ ! तुम हम सभी से कहो, जो यमुनाके पुलिनमें गौओंको चराता था, नित्य लीला करता था वह कहाँ गया ? यह हमसे कहो हे गिरिराजजी ! तुम सैंकड़ों शिखिरवाले हो, तुमको श्रीकृष्णने धारण भी किया है ॥१२॥१३॥ बाँये हाथमें व्रजवासियोंकी इन्द्रसे रक्षा करनेको आपसे उठाया है, अपने निजपुत्रकी तरह भगवान् तुमको कभी नहीं छोड़ते हैं ॥ १४ ॥ सो कहो, वनमें हमको छोड़कर कृष्ण कहाँ गये ! हे मयूरो ! हे हरिणो ? हे गावः ! हे खगो ! हे मृगो ! ॥ १५ ॥ किरीटको पहिने हुये, अलकें जिसकी बिखर रहीं, वह कृष्ण कहीं तुमने देखा है क्या ? यह कहो कि, हमारे मनको हरनेवाला इस वनमें कहाँ है ? ॥ १६ ॥

इन वाक्योंसे पूछे गये बड़े कठोर तीर्थवासियोंने मोहित हुये उन्होंने उत्तर नहीं दिये ॥ १७ ॥ गर्गजी कहते हैं कि, इस प्रकार वे सब व्रजबालाएं वनवनमें कृष्णको पूछती पूछती और हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! ऐसे कहती हुई तन्मय होगई ॥ १८ ॥ तब उस वृन्दावनमें तन्मय हुई सब गोपियाँ कृष्णचरित्रको कहने लगीं, फिर यमुनाजीकी बालुका में उन्होंने कृष्णके चरण देखे ॥ १९ ॥ जो वज्र, ध्वज और अंकुश आदि चिह्नोंसे चिह्नित हैं, तब उन महात्माके उन्हीं चरणोंके अनुसार ढूँढ़ती २ आगे आईं ॥ २० ॥ तब उन व्रज स्त्रियोंने उस चरणरजको माथेपर धरकर दूसरे चिह्नोंसे युक्त वहाँही दूसरे और भी चिह्न देखे ॥२१॥ तब उन दूसरे चरणोंको देखकर बोलीं,री सखियो प्रियतम तो प्रियाको साथ लेकर गया है; अकेला नहीं गया है,ऐसे देखती २ वे गोपियाँ तालवनमें गईं ॥ २२ ॥.हे नृप ! तब व्रजेश्वरीसहित वन जारहे श्रीव्रजेन्द्रजी पीछेसे.वनमें गोपियोंके उस कोलाहलको

एतैस्तुवाक्यैःसंतुष्टाःकठिनास्तीर्थवासिनः ॥ उत्तरंनैवदास्यंतिसर्वेतेमोहिताः किल ॥ १७ ॥ गर्गउवाच ॥ एवंसर्वाहिपृच्छन्त्यःकृष्ण-चन्द्रंवनेवने ॥ वदंत्यःकृष्णकृष्णेतिबभूवुस्तन्मयास्ततः ॥१८॥ चक्रुःकृष्णचरित्राणितत्रकृष्णमयाःस्त्रियः ॥ यमुनावालुकायांचपदानिदद्दृशुर्हरेः ॥१९॥ वज्रध्वजांकुशाद्यैश्चचिह्नितानिमहात्मनः ॥ तत्पदान्यनुसारेणपश्यन्त्यःप्रययुस्त्वरम् ॥२०॥ कृष्णांघ्रिरेणवोनीत्वामूर्ध्निधृत्वा व्रजस्त्रियः ॥ पदान्यन्यानिदद्दृशुश्चान्यचिह्नयुतानिहि ॥२१॥ निरीक्ष्याहुःप्रियासार्द्धंगतःप्रियतमोह्यसौ ॥ एवंवदंत्यःपश्यन्त्योगोप्यस्ताल वनंगताः ॥ २२ ॥ व्रजन्नग्रेव्रजेंद्रस्तुव्रजेश्वर्याव्रजेनृप ॥ कोलाहलंचगोपीनांश्रुत्वाप्रत्याहस्वामिनीम् ॥ २३ ॥ शीघ्रंगच्छप्रियेत्वंतुकोटिचन्द्र समप्रभे ॥ आगताव्रजनार्योहिनेतुंत्वांमांचसर्वतः ॥२४॥ ततःप्रियाहरेःपूर्वंशृंगारंकुसुमैर्नृप ॥ चकारसुंदरंदिव्यंवृन्दारण्येचपूर्ववत् ॥ २५ ॥ नंदसूनुःप्रियायाश्चदिव्यंशृंगारमेवच ॥ चकारबहुभिःपुष्पैर्भांडीरेचयथापुरा ॥२६॥ केशप्रसाधनाद्यैश्चस्रक्तांबूलानुलेपनैः ॥ सुंदरीसुंदरेणापि बभूवात्यंतसुन्दरीं ॥२७॥ ततःकृष्णस्तुमुदितःपुष्पवृक्षतलेनृप ॥ शय्यांपुष्पमयींकृत्वातयारेमेरमेश्वरः ॥२८॥ वृन्दावनेगोवर्द्धनेकृष्णायाः पुलिनेतथा ॥ नंदीश्वरेबृहत्सानौतथारोहितपर्वते ॥ २९ ॥

सुनकर श्रीस्वामिनी राधासे भगवान् कृष्ण यह बोले ॥२३॥ कि हे प्रिये ! हे करोड़ चन्द्रमाके समान प्रभावती ! तुम शीघ्र जाओ, देखो प्रिये ! ये गोपियाँ तुमको और मुझको लेनेके लिये पास आगईं ॥ २४ ॥ तब प्रियाने पहिले पुष्पोंसे श्रीकृष्णका शृंगार किया, जैसे कि पहिले भाण्डीर वनमें कर चुकी थी ॥ २५ ॥ और नन्दनन्दनने अनेक प्रकारके पुष्पोंसे प्रियाका शृंगार किया, जैसा भाण्डीर वनमें पहिले किये थे ॥ २६ ॥ केशप्रसाधनादि और माला, ताम्बूल, अनुलेपनादियोंसे शृंगारकी हुई सुन्दरी सुन्दरके साथमें अत्यन्त ही सुन्दर हुई ॥ २७ ॥ तब प्रसन्न हुये श्रीकृष्ण पुष्पमय एक वृक्षके नीचे पुष्पमयी शय्याको बनाकर रमेश्वर श्रीकृष्ण प्रियाके साथ उस सेजपर रमण करने लगे ॥२८॥ वृन्दावनमें गोवर्धनमें और यमुनाजीके पुलिनमें नन्दीश्वरकी बड़ी शिखिरमें वैसेही रोहिणी पर्वतपर ॥ २९ ॥

ऐसेही बारहों बनोंमें सब व्रजमण्डलमें प्यारीके साथ विचरते २ वंशीवटके नीचे बिराजे ॥३०॥ तब उस जगह बैठकर श्रीकृष्णने बोलरही गोपियोंका शब्द सुना, तब हे राजेन्द्र! स्वामिनीके साथ श्रीगोपिजनवल्लभ श्रीकृष्ण ॥३१॥ प्रिया राधिकाजीसे बड़े प्रेमसे बोले कि हे प्रिये ! जल्दी चलो, जल्दी चलो, कृष्णके वचनको सुनकर प्रियाजी मानिनी होकर बोली ॥३२॥ राधा बोलीं कि, हे दीनवत्सल ! मैं कभी घरसे बाहर नहीं निकली हूँ, इससे मेरी चलनेकी सामर्थ्य नहीं है. मैं दुर्बला हूँ, सो जहाँ आपका मन हो वहाँ ले चलो ॥३३॥ इस प्रकार प्रियाके कथनको सुनकर बलदेवजीके अनुज श्रीकृष्ण प्रियाके पसीना आये देखकर अपने वस्त्रसे पंखा करने लगे ॥३४॥ और हाथसे पकड़कर बोले कि राज्ञि ! जैसे तुम्हारी इच्छा हो—वैसेही चलो, इस प्रकार कृष्णके वचनको सुनकर अपनेको सर्वोत्तमा मानकर ॥३५॥ कि देखो यह मेरे प्रिय इस रात्रिमें अन्य स्त्रीजनोंको छोड़कर एक मुझकोही एकान्त स्थानमें सेवन करते हैं, ऐसे मनमें मानकर व्रजेश्वरी चुप होगई और ॥३६॥ वस्त्रसे मुखको ढँककर पीठ घुमाकर बैठ गई, तब फिर श्रीकृष्णने कहा कि हे प्रिये ! मेरे

अरण्येषुद्वादशसुसर्वत्रव्रजमंडले ॥ कांतयाविचरन्कांतोवंशीवटतलेस्थितः ॥ ३० ॥ तत्रशुश्रावगोपीनांवदन्तीनांरवंपरम् ॥ स्वामिन्यासह राजेंद्रश्रीगोपीजनवल्लभः ॥ ३१ ॥ पुनःप्राहप्रियांप्रेम्णागच्छगच्छप्रियेत्वरम् ॥ कृष्णवाक्यंततःश्रुत्वाप्राहभूत्वाचमानिनी ॥ ३२ ॥ राधोवाच ॥ नसमर्थाप्रचलितुंक्वचिद्गेहान्ननिर्गता ॥ नयमांतेमनोयत्रदुर्बलांदीनवत्सल ॥ ३३ ॥ इतितद्वाक्यमाकर्ण्यरामांरामानुजस्ततः ॥ स्वेनपीतांबरेणापिवीजयामासस्वेदतः ॥ ३४ ॥ प्रगृह्यपाणिनाप्राहसर्पराज्ञियथासुखम् ॥ इतिसाहरिणाप्रोक्तामत्वात्मानंवरंपरम् ॥ ३५ ॥ हित्वासौस्त्रीजनान्रात्रौभजतेमांरहःस्थले ॥ इतिमत्वातुहरयेभूत्वातूष्णींव्रजेश्वरी ॥ ३६ ॥ वस्त्रेणाननमाच्छाद्यपृष्ठंदत्त्वास्थिताभवत् ॥ पुनराहहरिस्तांतुप्रियेगच्छमयासह ॥ ३७ ॥ भजामित्वामहंभद्रेवियोगार्तांतुशापतः ॥ विहायगोपीःसर्वाश्चलश्नास्त्वांतुभजाम्यहम् ॥ ३८ ॥ त्वंतुमेस्कंधमारुह्यसुखंव्रजरहःस्थले ॥ इत्युक्त्वामानिनींमानीस्कंधयानमभीप्सतीम् ॥ ३९ ॥ त्यक्त्वाह्यंतर्दधेराजन्स्वात्मारामःस्वलीलया ॥ अन्तर्हितेभगवतिसहसासावधूर्नृप ॥ ४० ॥ अन्वतप्यतदुःखार्त्तागतमानारुरोदह ॥ ततस्तद्रोदनंश्रुत्वावंशीवटतटेत्वरम् ॥ ४१ ॥ आजग्मुर्गोपिकाःसर्वादद्दशुस्तांचदुःखिताम् ॥ चक्रुःस्त्रियस्तदंगेषुवायुंव्यजनचामरैः ॥ ४२ ॥ स्नापयित्वातुतांप्रेम्णाकाश्मीरसलिलेनच ॥ सिषिचुर्मकरंदैस्तांचन्दनद्रवशीकरैः ॥ ४३ ॥

साथ चलो ॥३७॥ हे भद्रे ! शापके कारणसे वियोगसे आर्त हुईका मैं सेवन करता हूँ, देखो सब गोपियोंको छोड़कर मैं तुमको सेवन करता हूँ ॥३८॥ यदि तुम्हारेसे नहीं चला जाय तो, तुम मेरे कंधापर बैठकर चलो, मैं तुमको एकान्त स्थलमें ले चलूँगा, तब कंधामें बैठकर चलना चाहती मानिनीसे मानी श्रीकृष्ण ऐसे कहकर ॥३९॥ उसको छोड़कर आत्माराम भगवान् अपनी लीलासे अन्तर्धान हो गये, तब प्रभुके अन्तर्धान होनेपर हे नृप ! वह वधू ॥४०॥ दुख तप्त होकर सब मान जिसका नष्ट हो गया ऐसी वह वनमें रुदन करने लगी तब प्रियाके रुदनको सुनकर वंशीवटके समीप बड़ी जल्दीसे ॥४१॥ सब गोपियाँ आ गईं और वहाँ दुखी होरही प्यारीको देखकर वे सब गोपियाँ प्रियाजीको पवन करने लगीं ॥४२॥ और केशरके जलसे स्नान कराया, और चन्दनादि छिड़कने लगीं ॥ ४३ ॥

फिर सेवाकर्ममें बड़ी चतुर वे गोपियाँ सुन्दर वाक्योंसे आश्वासन कर फिर उनके मुखसे मानके कारणसे श्रीकृष्णका अन्तर्धान होना सुनकर ॥४४॥ मानिनी वे सब गोपियाँ बड़े विस्मयमें मग्न हो गईं, फिर वे सब मानको छोड़कर हे नृप ! पुलिनमें आकर श्रीकृष्णके आनेको बड़े स्वरसे श्रीकृष्णके गुणोंका गान करने लगी ॥४५॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखंड भाषाटीकायां चतुश्चत्वारिंशोध्यायः ॥४४॥ गोपियाँ गान करने लगीं कि, अपने होठोंकी लालीसे मूंगेको लज्जित करनेवाले, मधुर वेणुके शब्दसे विनोद करनेवाले, नीलोत्पलकी शोभाको निन्दित करनेवाला जिनका मुख ऐसे गोपकिशोरकी हम उपासना करती हैं ॥१॥ श्यामल शरीरवाले, वनकी केलि करनेमें आसक्त, अति कोमल कमलदलके जैसे जिनके नेत्र, व्रज विलासिनियोंके नेत्रोंके आनन्ददायक, अतिशीतल और बुद्धिके हरनेवाले प्राणेश्वरको हम भजती हैं ॥२॥ विशेपकर चञ्चल है पलक जिनके, अतिप्रिय कमल कलिकाके समान कोमल अधर जिनके, अंगुलियाँ जिनके छिद्रोंपर धरी उस वंशीसे युक्त है मुख जिनका, वेणु बजानेमें रसिक प्राणेश्वरका हम भजन करती हैं ॥३॥ छोटे २ निकले कुन्द

पुनर्वाक्यैःसमाश्वास्यगोप्यःकर्मसुकोविदाः ॥ निशम्यतन्मुखाद्यानंगोविंदस्यचमानतः ॥ ४४ ॥ मानिन्योगोपिकाःसर्वाविस्मयंपरमंययुः ॥ विहायमानंताःसर्वाआगत्यपुलिनंनृप ॥ स्वरैर्जगुःकृष्णगुणाँस्तदागमनहेतवे ॥४५॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेरासक्रीडायांचतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४४ ॥ गोप्यऊचुः ॥ अधरबिम्बविडंबितविद्रुमंमधुरवेणुनिनादविनोदितम् ॥ कमलकोमलनीलमुखांबुजंतमपिगोपिकुमारमुपास्महे ॥ १ ॥ श्यामलंविपिनकेलिलम्पटंकोमलंकमलपत्रलोचनम् ॥ कामदंव्रजविलासिनीदृशांशीतलंमतिहरंभजामहे ॥ २ ॥ तंविसंचलितलोचनांचलंसामिकुड्मलितकोमलाधरम् ॥ वंशवलिगतकरांगुलीमुखंवेणुनादरसिकंभजामहे ॥ ३ ॥ ईपदंकुरितदंतकुंडलंभूपणंभुवनमंगलश्रियम् ॥ घोषसौरभमनोहरंहरेवेंषमेवमृगयामहेवयम् ॥ ४ ॥ अस्तुनित्यमरविंदलोचनःश्रेयसेहितुसुरार्चिताकृतिः ॥ यस्यपादसरसीरुहामृतंसेव्यमानमनिशंमुनीश्वरैः ॥ ५ ॥ गोपकैरचितमल्लसंगरंसंगरेजितविदग्धयौवनम् ॥ चिंतयामिमनसासदैवतंदैवतंनिखिलयोगिनामपि ॥६॥ उल्लसन्नवपयोदमेवतंफुल्लतामरसलोचनांचलम् ॥ बल्लवीहृदयपश्यतोहरंपल्लवाधरमुपास्महेवयम् ॥७॥ यद्धनंजयरथस्यमण्डनंखंडनंतदपिसञ्चितैनसाम् ॥ जीवनंश्रुतिगिरांसदामलंश्यामलंमनसिमेस्तुतन्महः ॥ ८ ॥

कलीके शिखर जैसे दन्त जिनके कानोंमें कुण्डलाभरणको पहिने, भुवनमें मंगल जिनकी शोभा, घोप सौरभसे मनोहर हे हरे ! तेरे उस शृंगारको हम ढूँढती हैं ॥४॥ कमलसे जिनके नेत्र, देवता भी जिनकी आकृतिका पूजन करते हैं, वे सदा हमारे मंगलके लिये हों, जिनका चरणारविन्द मकरंदरूप अमृत निरंतर मुनीश्वरोंसे सेवन किया गया है, वह हमको दर्शन देवें ॥५॥ गोपोंसे रचा है मल्लयुद्ध जिन्होंने और संग्राममें जय किया है चतुर यौवन जिन्होंने, उनका हम सदैव मनसे चिन्तन करती हैं, जो सब योगियोंके परम इष्ट देवता हैं, वे हमको दर्शन देवें ॥ ६ ॥ अतिशय सुशोभित, नवीन मेघके समान सुन्दर खिले कमलके समान जिनके पलक, वल्लवी हृदयोंके चुरानेवाले और नवीन आम्रदलके समान अधर जिनके उनकी हम उपासना करती हैं ॥७॥ जो अर्जुनके रथ भूपण हैं, संचित पापोंके खण्ड करनेवाले, वेद श्रीवाणियोंके जीवन, श्यामसुन्दर कृष्णरूप तेजपुञ्ज हमारे मनमें प्रकाश करो ॥८॥

गोपिकाओंके स्तन तथा चञ्चल नेत्र प्रान्तोंमें नेत्रोंकी परम्परासे आवृत और बाल क्रीडा रसमें है लालसाका भ्रम जिनका उन माधव भगवान्‌की हम रातदिन भावना करती हैं ॥९॥ मयूर पिच्छका जिनका मुकुट और नील मेघके सदृस हैं अंग सौदर्न्य जिनका,नील कमलके समान जिनके नेत्र और नील अलकको धारणकर रहे ऐसे भगवान्‌का हम ध्यान करती हैं॥१०॥गोपियों द्वारा गान किया है वैभव जिनका, कोमल है स्वरित वेणुका निस्वन जिनका और अभिराम सम्पदाओंके धाम,कमलके समान नेत्र जिनके उनका हम भजन करती हैं ॥११॥ शार्ङ्ग धनुषके धारण करनेवाले,मनके मोहन,माननियोंको छोड़कर जानेवाले,नारदादिक मुनियोंसे सेवित,नन्दके तनयका हम मनमें भजन करती हैं ॥१२॥ रमणी जिनके मध्यमें विराजमान जो कृष्ण रासमण्डलमें सर्वोत्कर्ष वर्तते हैं, उसी प्राण प्रिय कृष्णको राधिका सहित दुखिता हुई हम ढूँढती हैं॥१३॥ हे देव ! हे देव!हे व्रजराज नन्दन ! हे हरे ! हमें दर्शन दीजिये,और पूर्ववत् हमारे सब दुखोंको दूर करिये, कृपा दृष्टिसे देखिये, हम आपकी बिना शुल्क (मोल) की दासियाँ हैं ॥ १४ ॥ जिन्होंने सकल भूमण्डलके उद्धार लिये यज्ञ

गोपिकास्तनविलोललोचनप्रांतलोचनपरंपरावृतम् ॥ बालकेलिरसलालसंभ्रमंमाधवंतमनिशंविभावये ॥९॥ नीलकण्ठकृतपिच्छशेखरंनीलमेघतुलितांगवैभवम् ॥ नीलपंकजपलाशलोचनंनीलकुंतलधरंभजामहे ॥१०॥ घोषयोषिदनुगीतवैभवंकोमलस्वरितवेणुनिस्वनम्॥सारभूतमभिरामसंपदांधामतामरसलोचनंभजे ॥११॥ मोहनंमनसिशार्ङ्गिणंपरंनिर्गतंकिलविहायमानिनीः ॥ नारदादिमुनिभिश्चसेवितंनंदगोपतनयंभजामहे ॥१२॥ श्रीहरिस्तुरमणीभिरावृतोयस्तुवैजयतिरासमण्डले ॥ राधयासहवनेचदुःखितास्तंप्रियंहिमृगयामहेवयम् ॥१३॥ देवदेवव्रजराजनन्दन देहिदर्शनमलंचनोहरे ॥ सर्वदुःखहरणंचपूर्ववत्संनिरीक्ष्यतवशुल्कदासिकाः ॥ १४ ॥ क्षितितलोद्धरणायदधारयःसकलयज्ञवराहवपुःपरम् ॥ दितिसुतंविददारचदंष्ट्र्यासतुसदोद्धरणायक्षमोस्तुनः ॥१५॥ मनुमताद्रुचिजोदिविजैःसहवसुदुदोहधरामपियःपृथुः ॥ श्रुतिमपाद्धृतमत्स्यवपुःपरंसशरणंकिलनोस्त्वशुभक्षणे ॥ १६ ॥ अवहदब्धिमहोगिरिमूर्जितंकमठरूपधरःपरमस्तुयः ॥ असुहरंनृहरिःसमदंडयत्सचहरिःपरमंशरणंचनः ॥ १७ ॥ नृपबलिंछलयन्दलयन्नरीन्मुनिजनाननुगृह्यचचारयः ॥ कुरुपुरंचहलेनविकर्षयन्यदुवरःसगतिर्ममसर्वथा ॥ १८ ॥ व्रजपशून्गिरिराजमथोद्धरन्व्रजपगोजनंचजुगोपयः ॥ द्रुपदराजसुतांकुरुकश्मलाद्रवतुतच्चरणाब्जरतिश्चनः ॥ १९ ॥

वाराहरूप धारण किया, जिन्होंने हिण्याक्षको खेल करके जैसे हो, ऐसेही मारडाला, वेही भगवान् हमारा इस दुख समुद्रसे उद्धार करो ॥ १५ ॥ और जिन्होंने रुचिके घरमें आकूति माताके गर्भद्वारसे जन्म लेकर स्वयंभू मनुकी रक्षाकी, और पृथुरूप बनकर सब देवताओंको साथ लेकर अनेक प्रकारकी औषधि रूप दूध लेनेको भूमिको गौ बनाकर दुही, मत्स्य शरीर धारणकर जिन्होंने वेदोंकी रक्षा की, वेही आज हमारे इस क्लेशके समय रक्षाकरें ॥१६॥ और कच्छप बनकर जिन्होंने मन्दर पर्वत पीठपर धारण किया, और नृसिंह बनकर जिन्होंने हिरण्याक्षको चीरकरके मारा, वेही परमेश्वर हमारे रक्षक हों ॥ १७ ॥ और जिन्होंने बलि राजाको छलनेके लिये वामन रूप बनाया, शत्रुओंका जिन्होंने नाश किया और मुनि जनोंपर अनुग्रह किया, कुरु पुरको जिन्होंने खेंचकर डालना विचारा, वे यदुपति भगवान् हमारीभी रक्षा करें ॥ १८ ॥ और जिन्होंने गोवर्धन उठाकर व्रजके गोपी, ग्वाल, बाल, वृद्ध, इन सबकी इन्द्रकोपसे रक्षा की, और कुरुसभामें जिन्होंने द्रौपदीकी लज्जा रखी, वेही भगवान् हमारी लज्जा रखें, और वेही हमारी रक्षा करें ॥ १९ ॥

और जिन्होंने विषके लड्डुओंसे, दावानलसे, महान् अस्त्ररूप विपत्तिके गणसे सब पाण्डु पुत्रोंकी रक्षा की, यदुकुलके मणिरूप जिन्होंने ये सब काम किये, वेही द्वारिकेश हमारी रक्षा करें ॥ २० ॥ पाँच रंगके वनके पुष्प जिनमें लगे ऐसी वनमालाको पहिने, मयूरोंको धारण किये, केशर, कस्तूरी, अगरु मिले चन्दनके तिलकको धारण किये, सब समय मनकी हरनेवाली लीलासे युक्त जो वेणु शब्दरूप अमृत उसकाही है एक रस जिसके साक्षात् सौंदर्य रूप और बाल तमालके समान है शरीर जिसका उस देवताकी हम वंदना करती हैं ॥२१॥ गर्गजी कहते हैं कि, इस प्रकार जब गोप स्त्रियाँ स्तुति कर रही थीं, तब बलदेवजीके भाई श्रीकृष्ण भगवान् भक्तिसे बुलाये गये उन्हीं गोपियोंके बीचमें प्रगट हुये ॥ २२ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां पंचचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४५॥ श्रीगर्गजी कहते हैं कि, कृष्णको आये हुये देखकर वे सब हर्षित होकर उठीं, और अपने दुखोंको त्याग

विषमहाग्निमहास्त्रविपद्गणात्सकलपांडुसुताःपरिरक्षिताः ॥ यदुवरेणपरेणचयेनवैभवतुतच्चरणःशरणंचनः ॥२०॥ मालांबर्हिमनोज्ञकुन्तलभरांवन्यप्रसूनोषितांशैलेयागुरुक्लृप्तचित्रतिलकांशश्वन्मनोहारिणीम् ॥लीलावेणुरवामृतैकरसिकांलावण्यलक्ष्मीमयींबालांबालतमालनीलवपुषंवंदामहेदेवताम् ॥ २१ ॥ गर्गउवाच ॥ इतिस्त्रीभीरुदंतीभीरेवतीरमणानुजः ॥ आविर्बभूवचाहूतोतासांमध्येचभक्तितः ॥ २२ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखंडेरासक्रीडायांकृष्णागमनंनामपंचचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४५ ॥ गर्गउवाच ॥ कृष्णंसमागतंदृष्ट्वाताःसमुत्थायहर्षिताः ॥ चक्रुर्जयजयारावंगोप्योदुःखंविसृज्यच ॥ १ ॥ दृष्ट्वासंमूर्च्छितांराधांगोपीभिःप्रार्थितोहरिः ॥ चैतन्यार्थंव्रजेतत्रचकारमुरलीरवम् ॥२॥ नोत्थितांराधिकांदृष्ट्वाश्रीराधावल्लभोहरिः ॥ तस्यैसंश्रावयामासवेणुगीतंपुनःपुनः ॥ ३ ॥ ततःसमुत्थिताराधास्मृत्वादुःखंवियोगजम् ॥ बभूवमूर्च्छिताराजन्माधवस्यप्रपश्यतः ॥ ४ ॥ ततःकृष्णस्यवचनात्सद्यश्चन्द्राननासखी ॥ चन्द्रावलींप्रत्युवाचप्रसन्नाकृष्णवेणुना ॥ ५ ॥ चन्द्राननोवाच ॥ कृष्णचन्द्रःपुरानिर्गतोमानतोह्यागतःसोपिराधेयुगांतेपुनः ॥ नाशयन्सर्वदुःखानितेसन्निधौसंजगौवेणुनादेवकीनंदनः ॥ ६ ॥ छुंगछुंगेनिनादंमृदंगेकलंवाद्यमानेसुरस्त्रीजनैःसेवितः ॥ रासरम्यांगणेनृत्यकृन्माधवःसंजगौवेणुनादेवकीनंदनः ॥ ७ ॥

कर जय जय शब्द करने लगीं ॥ १ ॥ गोपियोंसे प्रार्थना किये गये भगवान्ने श्रीराधाजीको मूर्च्छित देखकर उनके चेतन करनेको मुरली बजाई ॥ २ ॥ राधा वल्लभ भगवान्ने राधिका को नहीं उठी देखी, तब भगवान्ने राधिकाको वेणुगीत सुनाया ॥ ३ ॥ तब राधाजी उठीं, और दुःख जन्य वियोगको स्मरणकर श्रीमाधवके देखते २ मूर्च्छित होगई ॥ ४ ॥ तब श्रीकृष्णके कहनेसे उसी समय चन्द्रानना नामकी सखी कृष्णकी वंशीके शब्दसे प्रसन्न होकर चन्द्रावतीसे बोली ॥ ५ ॥ चन्द्रानना बोली कि, हे राधे ! जो श्रीकृष्ण चन्द्र पहिले तुम्हारे मानको देखकर चले गये थे, वे फिर आगये हैं, सब दुखोंका नाश करते उन्हीं देवकी नन्दनने तुम्हारे पासमें वंशी बजाई है ॥ ६ ॥ छुंग छुंग, (यह मृदंग शब्दका अनुकरण है,) ऐसे मृदंगका कल शब्द होरहा है, उस रासके रम्य आँगनमें देवांगनाओंसे सेवित देवकी नन्दनने वंशी बजाई है ॥ ७ ॥

सुवर्णके समान पीताम्वर पहिने, वैजयन्तीकी कान्तिसे प्रकाशित जिनका वक्षस्थल है ऐसे भगवान्ने नन्दके वृन्दावनमें गोपियोंके बीचमें वेणुसे गान किया है ॥ ८ ॥ चन्द्रावलीके नेत्रोंसे चुम्बन किये गोपगोपियोंके वृन्दके और गौओंके प्यारे और कंसके वंशरूप वनको भस्म करनेवाले देवकी नन्दनने वेणुसे गान किया है ॥ ९ ॥ बालिकाओंकी तालियोंके तालीलालयमें आसक्त करके भलीभाँति दिखाया है भ्रूलताका विभ्रम जिन्होंने और गोपियोंके गीतमें जिनका अवधान ऐसे देवकी नन्दनने वेणुसे गान किया है ॥ १० ॥ किरीट, माला और बाजू, किंकिणी, कुण्डल, इनसे भूपित नन्द रायको प्रसन्न करनेवाले नन्दनन्दन देवकी नन्दनने हे देवि ! तुम्हारी प्रसन्नताके लिये वेणुसे गान किया ॥ ११ ॥ जिन राधा रमणने पारिजातको उखाड़कर सत्यभामाके आंगनमें स्थापित किया, वल्लवी वृन्द और देवांगनाओं के मनोरथ पूरकदेवकी नन्दनने वेणुसे गान किया है ॥ १२ ॥ जिन्होंने ऋक्ष-

चारुचामीकराभासिवासाविभुर्वैजयंतीभराभासितोरस्थलः ॥ नंदवृन्दावनेगोपिकामध्यगःसंजगौवेणुनादेवकीनंदनः ॥८॥ चारुचंद्रावलीलोचनाचुंबितोगोपगोवृन्दगोपालिकावल्लभः ॥ कंसवंशाटवीदाहदावानलःसंजगौवेणुनादेवकीनंदनः ॥९॥ बालिकातालिकाताललीलालयासंगसंदर्शितभ्रूलताविभ्रमः ॥ गोपिकागीतदत्तावधानःस्वयंसंजगौवेणुनादेवकीनंदनः ॥ १० ॥ मौलिमालांगदैःकिंकिणीकुण्डलैर्भूषितोनंदनोनंदराजस्यच ॥ प्रीतिकृत्सुन्दरोदेविप्रीत्यतवसंजगौवेणुनादेवकीनंदनः ॥११॥ पारिजातंसमुद्धृत्यराधावरोरोपयामासभामाभयादंगणे ॥ वल्लवीवृन्दवृन्दारिकाकामुकःसंजगौवेणुनादेवकीनंदनः ॥१२॥ ऋक्षराजंविनिर्जित्यनीत्वामणिंसंददौभीतवद्भूमिनाथायच ॥ सोपिरासेसमागत्यरासेश्वरोसंजगौवेणुनादेवकीनंदनः ॥ १३ ॥ गर्गउवाच ॥ इतिश्रुत्वाराधिकातुमहिमांवेणुवादिनः ॥ प्रसन्नाहिसमुत्थायपरिरेभेप्रियंप्रिया ॥ १४ ॥ वृन्दावनेशोगोविंदोरेमेवृन्दावनेवने ॥ वृन्दावननिवासिन्यापश्यन्वृन्दावनद्रुमान् ॥ १५ ॥ ततःकृष्णंचजगृहुःसर्वतोव्रजयोषितः ॥ वर्षाकालेनृपश्रेष्ठसौदामिन्योयथाघनम् ॥ १६ ॥ यावतीस्तत्रगोप्यश्चतावद्रूपधरोहरिः ॥ यमुनापुलिनंराजंस्ताभिःसाकंसमाययौ ॥ १७ ॥ बभूवुर्मुदितानार्योयथाचश्रुतयःपुराः ॥ स्ववस्त्रैःकृष्णचन्द्रायह्यासनंताअचीक्लृपन् ॥ १८ ॥ श्रीराधारमणस्तस्मिन्नासनेसहराधया ॥ निषसादह्यहोराजंस्ताभिर्भक्त्यावशीकृतः ॥ १९ ॥

राजाको जीतकर मणि लाकर भयभीतकी तरह उस मणिको उग्रसेनको दिया, उन देवकी नन्दनने वेणुसे गान किया है ॥ १३ ॥ गर्गजी कहते हैं कि इस प्रकार वेणुके बजानेकी महिमा सुनकर बड़ी प्रसन्न होकर राधिकाजी उठीं, और प्यारीने प्रियाको आलिंगन किया ॥ १४ ॥ तब वृन्दावनेश गोविन्दने वृन्दावनमें रमण किया, श्रीवृन्दावनवासिनीके साथ वृन्दावनके वृक्षोंको देखते हुये विचरे ॥ १५ ॥ तब सब व्रजकी बालाओंने कृष्णको पकड़ लिया, जैसे हे नृपश्रेष्ठ ! वर्षाऋतुमें बिजली घनको ॥ १६ ॥ तब जितनी गोपियाँ थीं, उतनेही रूप भगवान्ने अपने बनाये, और फिर उनको साथ लेकर यमुनाजीके पुलिनमें गये ॥ १७ ॥ तब सब गोपियाँ बड़ी प्रसन्न हुईं, जैसे पहिले श्रुतियां वैसे ही कृष्ण चन्द्रके सभीने अपने वस्त्रोंसे बैठनेके लिये आसन बनाया ॥ १८ ॥ तब उनकी भक्तिसे वशमें किये गये राधारमण राधाजीके सहित उस आसनपर बैठे ॥ १९ ॥

तब भगवान्ने अपना गोलोकका रूप दिखाया, जो रूप तीनों लोकोंको मोहनेवाला है, वही रूप सब गोपियोंको दिखाया ॥२०॥ तब वे सब गोकुल चन्द्रमाके उस परम अद्भुत रूपको देखकर ब्रह्मानन्दमें मग्न होगईं, उन सबने अपने आपको नहीं जाना कि हम कौन हैं ॥२१॥ इसप्रकार पहले स्थलमें विहार किया, फिर उनकी भक्तिसे वशीभूत हुये भगवान् कृष्णने राधिकाजी तथा अन्य गोपियोंके साथ जलविहार करनेके लिये यमुनाजलमें प्रवेश किया ॥२२॥ वहाँ भगवान्ने सब गोपियोंके साथ जलविहार किया, जैसे अप्सरागणको साथ लेकर इन्द्र स्वर्गमें मंदाकिनी नामकी नदीमें विहार करता है ॥२३॥ ऐसेही गोपियोंके साथ यमुनामें भगवान्ने विहार किया, हे राजन् ! माधव तो माधवीके और माधवी माधवको जलमें परस्पर शीघ्रतासे सींचने लगे ॥२४॥ प्रियाकी कवरीसे और प्यारेके केशपाशसे गिरे हुये अनेक रंगके पुष्पोंसे बँधी हुई जैसी पगड़ी शोभित हो, ऐसे श्रीयमुनाजी शोभित

गोलोकेयादृशंरूपंदर्शयामासतादृशम् ॥ गोपीनांराधयासार्द्धंकृष्णंत्रैलोक्यमोहनम् ॥२०॥ दृष्ट्वागोकुलचन्द्रस्यसुरूपंपरमाद्भुतम् ॥स्वात्मानं नाविदन्गोप्योब्रह्मानन्देननिर्वृताः ॥२१॥ स्थलेकृत्वाविहारंतुविवेशयमुनाजलम् ॥ ताभिर्भक्त्यावशीभूतोगोपीभिःसहराधया ॥२२॥ वारां-विहारंभगवान्स्त्रीभिःसार्द्धंचकारह ॥ मन्दाकिन्यांयथाशक्रोह्यप्सरोभिर्वृतोदिव ॥२३॥ माधवोमाधवींराजन्माधवीमाधवंजले ॥ अन्योन्यं तौसिसिचितुःसलिलैःसलिलैस्त्वरम् ॥ २४ ॥ कबरीकेशपाशाभ्यांप्रच्युतैःकुसुमैर्बभौ ॥ यमुनाचित्रवर्णैश्चयथोष्णिङ्मुद्रितानृप ॥२५॥ विद्या-धर्योदेवपत्न्यःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥ प्रश्लथद्वस्त्रनीव्यस्तामोहंप्राप्ताःस्मरातुराः ॥२६॥ अथकृष्णोवारिलीलांकृत्वावैलीलयायुतः ॥ जलान्निष्क्र-म्यराजेंद्रगिरिंगोवर्द्धनंययौ ॥ २७ ॥ अनुजग्मुर्गोपिकास्तंसहचर्योनृपेश्वर ॥ काश्चिद्व्यजनहस्ताश्चकाश्चिच्चामरवाहकाः ॥२८॥ काश्चित्तांबू-लहस्ताश्चकाश्चिद्दर्पणवाहकाः ॥ काश्चिद्भूषणहस्ताश्चकाश्चित्कुसुमवाहकाः ॥२९॥ काश्चिच्चंदनहस्ताश्चकाश्चिद्भाजनवाहकाः ॥ काश्चिद्यावक हस्ताश्चकाश्चिदंबरवाहकाः ॥ ३० ॥ काश्चिन्मृदंगहस्ताश्चकाश्चित्कांस्यधराश्चवै ॥ मुरयष्टिधराःकाश्चित्काश्चिद्वीणाधराःपराः ॥ ३१ ॥ करतालकराःकाश्चित्काश्चिद्गानपरायणाः ॥ षट्त्रिंशद्रागरागिण्योव्रजस्त्रीरूपधारकाः ॥ ३२ ॥

हुईं ॥ २५ ॥ तब विद्याधरी और देवांगनाओंने पुष्पवर्षा की, कटिबंधन जिनके खुलगये ऐसी वे कामातुर होकर मोहको प्राप्त हुईं ॥२६॥ उसके बाद हे राजन्! श्रीकृष्ण जलविहार करके लीलासे युक्त जलमेंसे निकलकर गोवर्धन पर्वतपर गये ॥२७॥ तब हे नृपेश्वर ! सहचरी गोपी सब कृष्णके पीछे गईं, कोई पंखेको हाथमें लिये; और कोई चामर लिये ॥२८॥ कोई ताम्बूलको कोई दर्पणको, कोई भूषणोंको और कोई पुष्पोंको हाथोंमें लिये ॥२९॥ कोई चन्दनको, कोई पात्रोंको, कोई महावरको और कोई वस्त्रोंको हाथोंमें लिये ॥३०॥ कोई मृदंगको, कोई कांस्य (वाद्यविशेष) को, कोई मुरजको और कोई वीणाको हाथमें लिये ॥ ३१ ॥ कोई करतालको लिये, और कोई गान करनेमें परायण और छत्तीस राग रागिणी व्रजस्त्रीरूपकी धारण करनेवाली होगईं ॥ ३२ ॥

वे सब पहिले गोलोकसे राधाजीके साथ भारतमें आई थीं, उन्होंने श्रीकृष्णकी सन्निधिमें नृत्यगान किया ॥ ३३ ॥ उनके बीचमें मदनमोहनने नृत्य किया, वेणुसे गीतगाते तीनों लोकोंको मोहित करने लगे ॥ ३४ ॥ बाजे किंकिणी, कंकण, नूपुर इनसे मिला हुआ शब्द रासमण्डलमें हुआ ॥ ३५ ॥ तब देवता और देवांगनाएं हरिके उस रासको देखकर काम पीड़ित होकर मूर्च्छित होगईं ॥ ३६ ॥ तब चन्द्रमाकी चांदनीमें चंचल श्रीकृष्ण चन्द्रावतीके साथ चलते बिजलीसहित मेघके समान सुशोभित हुए ॥ ३७ ॥ तब गोवर्धनमें श्रीकृष्ण ने माला,महावर,काजल और कमलदलोंसे राधाजीका शृंगार किया ॥३८॥ फिर राधाने कुंकुम,अगर,कस्तूरी, चन्दन और कमलोंसे श्रीकृष्णका शृंगार किया॥३९॥ तब मंद हासयुक्त कृष्णके मुखको देखती हुई हँसती राधिकाने पानका बीड़ा भगवान्के मुखमें दिया ॥४०॥ तब प्रियाके दिये हुये पानको भगवान्ने चबाया, ऐसेही कृष्णका दिया हुआ

गोलोकाद्भारतेपूर्वमागताराधयासह ॥ जगुस्ताननृतुस्तत्रश्रीराधेश्वरसन्निधौ॥३३॥ननर्त्तमध्येतासांचकृष्णोमदनमोहनः ॥ प्रगायन्वेणुनागीतं त्रिलोकींमोहयन्हरिः ॥३४॥ वादित्रैःकिंकिणीभिश्चवलयनूपुरकंकणैः ॥ गीतैर्मिश्रितशब्दोभूत्तुमुलोरासमंडले॥३५॥देवाश्चदेवपत्न्यश्चग-संदृष्ट्वाहरेरपि ॥ बभूवुर्मूर्च्छिताराजन्गगनेस्मरपीडिताः ॥३६॥ चंद्रिकायांतुचंद्रस्यचतुरश्चंचलश्चलन्॥चंद्रावल्याबभौचैवघनश्चंचलएवच ॥ ३७ ॥ राधायास्तत्रशृंगारंस्रग्भिर्यावककज्जलैः ॥ चक्रेकमलपत्राद्यैर्गिरौगिरिधरोमहान् ॥३८॥ कुंकुमागुरुकस्तूरीचन्दनाद्यैश्चराधिका ॥ चक्रेकमलपत्रैवैश्रीकृष्णस्याननेवरम् ॥ ३९ ॥ ततश्चसस्मिताराधासस्मितंभगवन्मुखम् ॥ पश्यन्तीनागवल्ल्याश्चवीटकंप्रददौमुदा ॥४०॥ प्रियाप्रदत्तंतांबूलंबुभुजेनंदनंदनः ॥ कृष्णदत्तंचतांबूलंचखादराधिकामुदा ॥४१॥ कृष्णचर्विततांबूलंनीत्वाराधाबलात्पुनः ॥ जघासभक्त्या साशीघ्रंसतीपतिपरायणा ॥४२॥ प्रियाचर्विततांबूलंययाचेभगवान्हरिः ॥ राधाददौनतंभीतापपाततत्पदांबुजे ॥४३॥ पद्मापद्मावतीनंदीआ-नन्दीसुखदायिनी ॥ चंद्रावलीचंद्रकलावंध्याह्येताहरिप्रियाः ॥४४॥ वृन्दावनेहरिस्ताभिर्वसंततुप्रपूरिते ॥ नानाप्रकारंशृंगारंसचकारमनोजवत् ॥४५॥ काश्चित्पिबंतिगोप्यस्तुश्रीकृष्णस्याधरामृतम् ॥ काश्चिद्धालिंगनंचक्रुःकृष्णस्यपरमात्मनः ॥४६॥ ततःकृष्णस्तुभगवान्गोपीनांकुचकुंकुमैः ॥ सुवर्णवर्णोभूत्वावैरेजेमदनमोहनः ॥ ४७ ॥ पुनर्गोपीजनैःसार्द्धंश्रीगोपीजनवल्लभः ॥ रासंचकारराजेंद्रसुन्दरेकदलीवने ॥ ४८ ॥

पान राधिकाने चबाया ॥४१॥ फिर कृष्णके चबाये हुये पानको लेकर पतिव्रताधर्ममें परायण प्रियाने आप चबाया ॥४२॥ जब भगवान्ने प्रियाका चबाया हुआ पान मांगा, तब राधिकाने नहीं दिया, और डरी हुई भगवान्के चरणोंमें गिर पड़ीं ॥४३॥ फिर पद्मा, पद्मवती, नंदी, आनन्दी, चन्द्रावती, सुखदायिनी चन्द्रकान्ता और वंध्या इत्यादिक हरिप्रियाओंके ॥४४॥ साथमें वसंतऋतुपूर्ण वृन्दावनमें कामदेवके समान आपने अनेक प्रकारके शृंगार किये॥४५॥ किसी गोपीने तो श्रीकृष्णके अधरामृतका पान किया,और किसी गोपीने आलिंगन किया ॥ ४६ ॥ तब श्रीकृष्ण भगवान् गोपियोंके कुच कुंकुमसे सुवर्ण वर्ण होकर सुशोभित हुये ॥ ४७ ॥ हे राजेन्द्र ! फिर गोपीजन बल्लभने कदली वनमें गोपियोंके साथमें रास किया ॥ ४८ ॥

इस प्रकार हेमन्त ऋतुकी रात्रि गोपियोंके रासमें हे राजन् ! आनन्दमें वहाँ क्षणकी तरह बीत गई ॥ ४९ ॥ फिर कृष्ण भगवान् नन्दके घरमें गये, और रास करके राधा वृषभानुके घरको गई, और सब गोपियाँ अपने २ घरोंको चली गई ॥ ५० ॥ गोपोंको इस रासकी खबर भी नहीं हुई, क्योंकि उन गोपोंने अपनी २ पत्नियोंको अपने २ पास सोती हुई समझा ॥५१॥ श्रीराधा माधवके इस शृंगार चरितको जो सुनते हैं अथवा पढते हैं, वे अक्षय धामको जायँगे ॥५२॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां षट्चत्वारिंशोऽध्यायः॥४६॥गर्गजी कहते हैं कि,यह कृष्णका चरित्र शास्त्रमें गुप्त कहा है, मैंने तेरे आगे निरूपण किया, अब और चरित्रको कहता हूँ,सो विस्तारसे सुनो ॥१॥ ऐसे आठ दिन तक श्रीकृष्णने नन्द नगरमें निवास किया,जिससे नन्द नगरवासियोंको परमानन्द हुआ, फिर आपने वहाँसे जानेका विचार किया ॥२॥ श्रीकृष्णकी माता यशोदाने प्राणसे प्यारे

एवंहेमन्तरजनीगोपीनांरासमण्डले ॥ व्यतीताक्षणवद्राजन्नित्यानंदेनतत्रवै ॥४९॥ अथनंदस्यसदनंरासंकृत्वाययौहरिः ॥ वृषभानुपुरंराधातथा गोप्योगृहान्ययुः ॥५०॥ नजानंतिव्रजेगोपारासवार्ताहरेरपि ॥ स्वान्स्वान्दारान्स्वपार्श्वस्थान्मन्यमानानृपेश्वर ॥५१॥ इदंशृंगारचरितंराधा-माधवयोःपरम् ॥ येपठंतिचशृण्वन्तितेव्रजिष्यंतिचाक्षरम् ॥५२॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेरासक्रीडासंपूर्तिर्नामषट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४६ ॥ गर्गउवाच ॥ इदंकृष्णस्यचरितंगुप्तंशास्त्रेषुवर्णितम् ॥ मयातवाग्रेराजेंद्रअथान्यच्छृणुविस्तरात् ॥ १ ॥ एवंस्थित्वादिनान्यष्टौश्रीकृष्णोनंदपत्तने ॥ आनंदंप्रददन्नृणांपुनर्गंतुमनोदधे ॥२॥ यशोमतीकृष्णमाताप्राणेभ्योपिप्रियंसुतम् ॥ गन्तुमभ्युदितंदृष्ट्वारुरोदोच्चैर्यथापुरा ॥३॥ रुरुदुस्तत्रगोप्यश्चबाष्पपर्याकुलेक्षणाः ॥ स्मरंत्यःपूर्वदुःखानिगेहेगेहेनृपेश्वर ॥४॥ यावत्योव्रजनार्यश्चतावद्रूपधरोहरिः ॥ पृथमाश्वासयामासतथाराधांसकोविदः ॥५॥ मातरंप्राहभगवान्मातःशोकंतुमाकुरु ॥ शीघ्रमत्रागमिष्यामिकारयित्वाक्रतूत्तमम् ॥६॥ त्वंनमन्य-सेचेन्मातर्नित्यंद्रक्ष्यसिचांतिके ॥ पुत्ररूपंचमांभक्त्याकृतांतभयभंजनम् ॥७॥ एवंतांतुसमाश्वास्यनिष्क्रम्यसदनाद्धरिः ॥ गोपैर्युक्तोश्रुपूर्णाक्षःपौत्रसेनांजगामह ॥ ८ ॥ गत्वानिरुद्धसेनायांयादवान्हयमोचने ॥ ददावाज्ञांनृपश्रेष्ठसाक्षान्नारायणोहरिः ॥ ९ ॥

पुत्रको जानेके लिये तैयार देखकर जैसे पहिले रुदन किया था, वैसे ही ऊँचे स्वरसे रुदन किया ॥ ३ ॥ तब सब गोपियोंके आंसू बहने लगे, हे नृपेश्वर ! कृष्णके पहिले वियोगका स्मरण हो आया ॥ ४ ॥ तब जितनी गोपियाँ थीं, उतनेही रूप बनाकर कृष्णने सबको समझाया,और ऐसेही राधाजीको आपने समझाया ॥५॥ फिर भगवान्ने मातासे कहाकि, हे मातः ! तू शोच मत कर, मैं इस यज्ञको समाप्त करवाकर जल्दी आऊँगा ॥ ६ ॥ हे मातः ! यदि तुम नहीं मानती हो,तो कालके भयको भञ्जन करनेवाले पुत्ररूप हमको तुम नित्य अपने पास देखोगी ॥ ७ ॥ इस प्रकार माताको समझा करके भगवान् घरसे निकले, गोपों सहित आँखोंमें आंसू भरते हुये आप अनिरुद्धकी सेनामें आगये ॥ ८ ॥ अनिरुद्धकी सेनामें आकर कृष्णने यादवोंको घोड़ेको छोड़नेकी आज्ञा दी ॥ ९ ॥

कृष्णकी आज्ञासे घोड़ेकी यत्नसे पूजाकर पहिलेकी तरह फिर घोड़ा छोड़ दिया ॥१०॥ तब अनिरुद्धादिक सब यादव अश्रुसहित होकर नन्दादिकोंको प्रणाम कर बड़ी कठिनतासे फिर सब वाहनोंपर सवार हुए ॥११॥ तब कृष्णके जैसे आकारवाले कृष्णके पुत्र पौत्रोंको कृष्णसहित जानेको तैयार हुए सुन्दर सब यादवोंको देखकर वे सब गोविन्दके विरहमें आतुर हुए, पहिलेके दुःखोंको स्मरण कर सूख गये हैं कंठ, ओष्ट, तालु जिनके ऐसे वे रोने लगे और आँसुओंसे व्याकुल नेत्र होकर नन्दराजभी रोने लगे, मुख जिनका सूख गया, दुखमें मग्न हुये कुछ नहीं बोले ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ तब श्रीकृष्णने भी आंसू भरकर सभीको समझाया, एक एकसे मिलकर आपने कहा कि मैं आऊँगा, घबराओ मत ॥१५॥ और चैत्रमें यज्ञ होगा, तब हे गोपालो ! मैं निःसन्देह सभीको द्वारकामें बुलाऊँगा ॥१६॥ और हे गोपालो ! नित्य मुझको गोकुलमें देखोगे, सो तुम यहीं व्रजमण्डलमें निवास करो ॥१७॥

नोदितःकृष्णचन्द्रेणहयंसंपूज्ययत्नतः ॥ पुनर्मुमोचतत्पौत्रोविजयार्थेहिपूर्ववत् ॥१०॥ यादवाश्चानिरुद्धाद्यानंदंनत्वाश्रुपूरिताः ॥ गंतुमारुरुहुः स्सर्वेवाहनानिचकृच्छ्रतः ॥११॥ कृष्णाकारान्कृष्णपुत्रान्कृष्णपौत्राँश्चसुन्दरान् ॥ गंतुमभ्युदितान्सर्वान्कृष्णेनसहितान्यदून् ॥ १२ ॥ दृष्ट्वा तेरुरुदुर्गोपागोविंदविरहातुराः ॥ स्मरंतःपूर्वदुःखानिशुष्ककंठौष्ठतालुकाः ॥ १३ ॥ रुरोदनंदराजोपिबाष्पव्याकुललोचनः ॥ नकिंचिदूचेदुःखार्त्तोमुखेनपरिशुष्यता ॥ १४ ॥ सर्वानाश्वासयामासकृष्णोप्यश्रुपरिप्लुतः ॥ आयास्यइतिवाक्यैश्चमिलित्वातुपृथक्पृथक् ॥१५॥ चैत्रमासेयदायज्ञोद्वारकायांभविष्यति ॥ आह्वयिष्यामिगोपालायुष्मान्सर्वान्नसंशयः ॥१६॥ गोपालागोकुलेनित्यंगोपालंमांहिद्रक्ष्यथ ॥ तस्मान्निवासंकुरुतअत्रैवव्रजमण्डले ॥१७॥ एवमाश्वास्यतैर्दत्तंपारिवर्हंप्रगृह्यच ॥ नंदंनत्वारथेस्थित्वाप्रायाद्वृष्णिवरैर्हरिः ॥१८॥ नन्दाद्यादुःखितागोपाः कृष्णस्यचरणांबुजे ॥ क्षिप्तंमनःपुनर्हर्तुमनीशागोकुलंययुः ॥ १९ ॥ गोपागोप्यश्चश्रीकृष्णंप्रेममग्नाश्चनित्यशः ॥ समीपेनृपपश्यंतियोगिनामपिदुर्लभम् ॥ २० ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेव्रजादन्यत्रगमनंनामसप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥ गर्गउवाच ॥ कृष्णां समुत्तीर्यततःप्रपश्यन्नगामवाजीकुरुपत्तनञ्च ॥ करोतिराज्यंनृपचक्रवर्त्तीवैचित्रवीर्योबलवान्हियत्र ॥ १ ॥ ततोददर्शतुरगःकौरवाणांपुरंवरम् ॥ तंनानोपवनैर्युक्तंतडागैश्चसरोवरैः ॥ २ ॥ दुर्गेणगंगयायुक्तंतथापरिखयानृप ॥ सुवर्णरौप्यसदनैर्महाशूरजनैर्वृतम् ॥ ३ ॥

ऐसे सभीको समझाकर उनके दिये पारिवर्हको लेकर नन्दको प्रणाम कर रथमें बैठकर यादवोंको साथ लेकर भगवान् कृष्ण वहांसे चले ॥ १८ ॥ तब नन्दादिक सब गोप कृष्णके चरणमें लगे मनके निकालनेको असमर्थ होकर गोकुलमें आये ॥१९॥ तब प्रेममें डूबे हुए सब गोप और गोपियाँ नित्यही श्रीकृष्णको अपने पास देखने लगीं, जो कृष्ण गोपियोंको भी दुर्लभ है, उनको नित्य समीपवर्ती देखने लगे॥२०॥ इति श्रीगर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः॥४७॥ गर्गजी कहते हैं कि उसके बाद वह घोड़ा यमुनाके पास उतरकर कुरुपत्तनमें गया, जहाँ बड़ा बली विचित्रवीर्यका पुत्र राज्य करता था ॥१॥ तब उस घोड़ेने वह कौरवोंका श्रेष्ठपुर देखा, जो अनेक बाग और सरोवरोंसे सुशोभित था ॥२॥ बड़ा किला और गंगाजी जिसकी खाई, सोनेचांदीके जिसमें घर और बड़े शूर जन जिसमें रहते हैं ऐसे उस पुरको देखा ॥ ३ ॥

वहाँ उस दिन वनमें शिकार खेलनेको निकले हुए रथमें बैठे हुए, बहुत वीरजनोंसे विभूषित दुर्योधनने पत्र सहित उस यज्ञके घोड़ेको देखा ॥ ४ ॥ तब घोड़ेको देखकर रथमेंसे उतरा और हे राजन् ! बड़े अभिमानी उसने प्रसन्न होकर घोड़ेको पकड़ लिया ॥५॥ कर्ण, भीष्म, कृपाचार्य, द्रोण, भूरि, और दुःशासनादिक सहित दुर्योधनने घोड़ेको पकड़ लिया, और घोड़ेके माथेपर लिखे हुये पत्रको उसने बँचवाया ॥६॥ कि आज चन्द्रवंशी, यदुकुलोत्पन्न एक राजा उग्रेसन विराजमान हैं, इन्द्रादिक देवताभी जिनकी आज्ञाका पालन करते हैं ॥७॥ और भक्तोंके पालक श्रीकृष्ण जिसके सहायक हैं, उसी उग्रसेनकी भक्तिसे भगवान् द्वारकामें निवास करते हैं ॥ ८ ॥ उन्हीं भगवान्के कहनेसे चक्रवर्ती राजा उग्रसेन हठसे अपने यशके लिये अश्वमेध यज्ञ कर रहे हैं ॥ ९ ॥ उन्होंने अश्वोंमें मुख्य बड़ा शुभ घोड़ा छोड़ा है, जिसका रक्षक कृष्णका पौत्र वृकदैत्यको मारनेवाला अनिरुद्ध है ॥ १० ॥

सुयोधनस्तत्रपुराद्विनिर्गतोहंतुंमृगान्वैवनगोचरान्नृप॥ददर्शयज्ञस्यहयंसपत्रंकंरथस्थितोवीरजनैर्विभूषितः ॥४॥ दृष्ट्वातुरंगमंप्रीतःस्वरथादवतीर्यच ॥ मानीदुर्योधनोराजंस्त्वरंजग्राहलीलया ॥ ५ ॥ कर्णभीष्मकृपद्रोणभूरिदुःशासनादिभिः ॥ युक्तस्तद्भालपत्रंचवाचयामासहर्षितः ॥६॥ अस्तिवैद्वारकाचंद्रवंशेयदुकुलउग्रसेनोविराजते ॥ इन्द्रादयःसुरगणायस्यादेशानुवर्तिनः ॥७॥ सहायोयस्यभगवाञ्छ्रीकृष्णोभक्तपालकः ॥ अस्तिवैद्वारकापुर्य्यांतद्भक्त्यानिवसन्हरिः ॥८॥ तद्वाक्याद्धयमेधंसउग्रसेनोनृपेश्वरः ॥ चक्रवर्तीहठाद्यज्ञंस्वयशोर्थंकरोतिहि ॥ ९ ॥ मोचितस्तेनतुरगोहयानांप्रवरःशुभः ॥ तद्रक्षकःकृष्णपौत्रोऽनिरुद्धोवृकदैत्यहा ॥१०॥ गजाश्वरथवीराणांसेनासंघसमन्वितः॥ राजानोयेकरिष्यंतिराज्यंकौशूरमानिनः ॥ ११ ॥ तेगृह्णंतुयज्ञहयंस्वबलात्पत्रशोभितम् ॥ तंमोचयतिधर्म्मात्मागृहीतंचहयंनृपैः ॥ १२ ॥ स्वबाहुबलवीर्येणानिरुद्धोलीलयाहठात् ॥ तस्यान्यथाचपदयोःपतित्वायांतुधन्विनः ॥ १३ ॥ गर्गउवाच ॥ तत्पत्रंवाचयित्वैवंकौरवाम्तेतुशत्रवः ॥ ऊचुःपरस्परंक्रुद्धामानिनोरक्तलोचनाः ॥ १४ ॥ कौरवाऊचुः ॥ अहोकिंलिखितंधृष्टैर्भालपत्रेहयस्यच ॥ नसंतिकिंहिराजनोयादवानांचसंमुखे ॥ १५ ॥ राजसूयेपुरास्माभिर्यादवायेविनिर्जिताः ॥ हयमेधंकरिष्यंतिपुनस्तेगतबुद्धयः ॥ १६ ॥

वह गज, अश्व, रथ और पैदलोंकी सेना:समूहसे युक्त है, सो जो कोई राजा इस भूमिमें अपनेको वीर माननेवाले राज्य करते हैं, वे इस पत्रसे शोभित घोडेको अपने बलसे पकड़े, तब उस घोड़ेको धर्मात्मा अनिनद्ध हठसे अपने बलवीर्यके प्रतापसे छुड़ायेंगे, यातो धनुपधारी राजा अनिरुद्धके चरणोंमें गिरो और भेंट दो, अथवा अनिरुद्धसे संग्राम करो॥११॥ ॥१२॥१३ गर्गजी कहते हैं कि ऐसे लिखे उस पत्रको बाँचकर वे शत्रु कौरव बड़े मानी लालनेत्र करके बड़े कुपित होकर आपसमें बोले ॥ १४ ॥ अरे देखो ! इन निर्लज्ज यादवोंने घोड़ेके माथेके पत्रमें क्या लिख दिया है ? क्या यादवोंकी बराबरीमें आज कोई राजा नहीं है ? जो उन्होंने ऐसा लिख दिया है ॥ १५ ॥ जिन यादवोंको पहिले राजसूय यज्ञमें हमने जीता है, वे गतबुद्धि यादव फिर अश्वमेध यज्ञ करेंगे ॥ १६ ॥

से हम सब यादवोंको जीतेंगे और इस घोड़ेको हम किसी प्रकार नहीं देंगे, और फिर हमभी यज्ञोंमें उत्तम जो अश्वमेधयज्ञ है, उसको करेंगे ॥१७॥ कौन उग्रसेन ? कौन कृष्ण ? और घोड़ेकी रक्षा करनेवाला कौन होता है ? और यह सब मिलकर यादवोंसहित हमारा क्या करेंगे ? ॥ १८ ॥ कृष्णादिक यादव तो वे ही हैं, जो जरासंधके डरसे अपनी पुरी मथुराको छोड़कर समुद्रकी शरण गये हैं, हमारे भयसे जिन यादवोंने युद्धका परित्याग किया,वे आज किस बलसे लड़ेंगे ? ॥ १९ ॥ दयालु हमनेही पहिले इन यादवोंको राज्य दे दिया, वे ही कृतघ्न यादव अपने आपको चक्रवर्ती मानते हैं ॥२०॥ केवल पाण्डवोंके सम्बन्धको देखकर हमने नहीं मारे हैं, वे पाण्डव भी तो हमारे पूरे २ शत्रु हैं, जिन पाण्डवों को हम देश निकाला दे चुके हैं, फिर हमको पाण्डवोंके सम्बन्धसे क्या प्रयोजन है ॥२१॥ संग्राममें जो भाग गये उन्हीं यादवोंको आज जीतकर इस यादव उग्रसेनको चक्रवर्ती-पन दिखायेंगे ॥२२॥ हे राजन् ! इस प्रकारसे राजलक्ष्मी और राजविभूतिके गर्वसे वे कौरव श्रीकृष्णके विमुख होकर कहने लगे ॥ २३ ॥ और बड़े वेगसे उन्होंने अनेक अस्त्र

तस्मात्सर्वान्विजेष्यामोनदास्यामस्तुरंगमम् ॥ पश्चाद्वयंकरिष्यामोहयमेधंक्रतूत्तमम् ॥१७॥ कउग्रसेनःकःकृष्णःहयरक्षाकरस्तुकः ॥यादवैः सहिताह्येतेकिंकरिष्यंतिपौरुषम् ॥ १८ ॥ कृष्णाद्यायादवाःसर्वेविहायमथुरांपुरीम् ॥ गताःसमुद्रंशरणंयुद्धंत्यक्त्वाभयाच्चनः ॥१९॥ राज्यंदत्तं पुराह्येषामस्माभिश्चकृपान्वितैः ॥ कृतघ्नास्तेचमन्यंतेस्वात्मानंचक्रवर्त्तिनम् ॥२०॥ पांडवानांचसन्मानाद्योदवानहिमारिताः॥निष्कासिता-श्चतेस्माभिःपांडवाःशत्रवःकिल ॥२१॥ यदूनद्यविनिर्जित्यसंग्रामेचपलायितान् ॥ दर्शयामश्चाहुकायसहसाचक्रवर्तिताम्॥२२॥एवंश्रीकृष्ण-विमुखावाचःसर्वेवदंतिहि ॥ दृप्तास्तेकौरवाराजञ्छ्रियाराजविभूतिभिः ॥२३॥ ततश्चजगृहुःसर्वेनानाशस्त्राणिवेगतः॥हयंप्रवेशयामासुःपुरेत-त्रतुसंस्थिाः ॥ २४ ॥ गतेचतुरगेदूरंसांबःकृष्णेननोदितः ॥ त्वरंकृष्णांसमुत्तीर्यगंभीरांमार्गदायिनीम् ॥२५॥ अक्षौहिणीभिर्दशभिःपृष्ठतोदं-शितोरुषा ॥ हस्तिनापुरमक्रूरयुयुधानादिभिर्ययौ ॥२६॥ एवंतेयादवाःसर्वेहस्तिनापुरसन्निधौ ॥ आयाताहयहर्तृंश्चकौरवान्ददृशुःस्थितान् ॥२७॥ ऊचुस्तेवीक्ष्यबलिनोलोकद्वयजिगीषवः ॥ तान्सर्वांश्चतृणीकृत्ययादवाःकृष्णदेवताः ॥ २८ ॥ अहोबबंधकश्चाश्वंकस्यहृष्टःकृतांत-राट् ॥ प्राप्स्यतेकस्तुसंग्रामेनाराचैःपरमांव्यथाम् ॥ २९ ॥

शस्त्र हाथोंमें ले लिये, और घोड़ेको नगरको भेज दिया, और वे सब कौरव लड़नेको खड़े होगये ॥ २४ ॥ इधर जब घोड़ा बहुत दूर चला गया, तब श्रीकृष्णचन्द्रने साम्बको आज्ञा दी,तब साम्ब बहुत जल्दी उसी समय गम्भीरा यमुनाजीके पार उतरकर ॥२५॥ दश अक्षौहिणी सेनाको साथ लेकर कवच पहिन कुपित होकर अक्रूर और सात्यकी आदि-कोंको साथ लेकर साम्ब हस्तिनापुरको गये ॥ २६ ॥ इस प्रकार वे यादव सब हस्तिनापुरके पास आये, तब घोड़ेके पकड़नेवाले कौरवोंको लड़नेके लिये तैयार खड़े देखा ॥२७॥ तब ये बड़े बलवान् दोनों लोकोंको जीतना चाहे ऐसे यादव सब कौरवोंको तिनकेके बराबर समझकर बोले ॥ २८ ॥ कि अरे यह घोड़ा किसने पकड़ा है, अरे ! यमराज किसपर प्रसन्न हुये हैं, आज नाराच नामके बाणोंसे कौन परम व्यथाका अधिकारी होगा ॥ २९ ॥

बड़े आश्चर्यकी बात है ? देव दानवों द्वारा वंदित राजाओंके राजा चक्रवर्ती उग्रसेनको क्या कौरव नहीं जानते हैं ? ॥३०॥ राजसूय यज्ञके करनेवाले जो उग्रसेन अद्वितीय राजाधिराज हैं, उनके घोड़ेको जिन्होंने पकड़ा है, उन्होंने अपने मरनेको पकड़ा है ॥३१॥ राजा हेमांगद, राजा इन्द्रनील, बंक, भीषण, बल्वल, आदिक अनेक राजा हमने संग्राममें जीत लिये हैं ॥३२॥ यह सुनकर क्रोधसे जिनके होंठ फड़कने लगे ऐसे वे कौरव यादवोंको तिरछी दृष्टिसे देखते हुये बोले ॥ ३३ ॥ अरे ! घोड़ेको हमने पकड़ा है, हमारा तुम क्या करोगे, तुम सभीको बाणोंके मारे हम अभी यमपुरके अतिथि बनायेंगे ॥ ३४ ॥ अरे ! उग्रसेन कितने दिनका राजा है, कृष्णके द्वारा राज्य पाकर अभिमान मानता है, उस उग्रसेनको बांधकर हम आज अवश्य राज्य करेंगे ॥ ३५ ॥ जो हमारे भयसे भागकर गया, वह अनिरुद्ध कहाँ है ? हमको बताओ, आज उसको हम बाणोंसे पूजेंगे ॥३६॥ गर्गजी

अहोवैकिंनजानंतिवृष्णीन्द्रंचक्रवर्तिनम् ॥ उग्रसेनंराजराजंदेवदानववंदितम् ॥३०॥ राजसूयस्यकर्त्तारमद्वितीयंनृपेश्वरम्॥ नृपाःस्वात्मविनाशायगृह्णंतितुरगंततः ॥ ३१ ॥ हेमांगदश्चेंद्रनीलोबकोभीषणएवच ॥ बल्वलश्चनृपाःसर्वेरणेऽस्माभिर्विनिर्जिताः ॥३२॥ इतिश्रुत्वाकौरवास्ते क्रोधप्रस्फुरिताधराः ॥ प्रत्यूचुस्तान्हिपश्यंतस्तिरश्चीनैश्चचक्षुभिः ॥ ३३ ॥ कौरवानुगाऊचुः ॥ गृहीतस्तुरगोऽस्माभिर्यूयंकिंनुकरिष्यथ ॥ युष्मान्सर्वान्नयिष्यामःसायकैर्यमसादनम् ॥ ३४ ॥ उग्रसेनःकतिदिनैराज्यंलब्ध्वातुकृष्णतः ॥ मानंकरोतितंबद्ध्वाराज्यंकुर्मोवयंकिल॥३५॥ अनिरुद्धस्तुकुत्रास्तेह्यस्माकंचभयाद्गतः ॥ वदतैनंशरैर्युद्धेपूजयामोनसंशयः ॥३६॥गर्गउवाच ॥ इतितेषांवचःश्रुत्वायादवाःक्रोधमूर्च्छिताः॥ चिक्षिपुःसायकांश्चापैःकौरवाणांमुखेषुच ॥ ३७ ॥ केचिद्बभूवुर्बाणैश्चच्छिन्नजिह्वाश्चकौरवाः ॥ भग्नदंताश्छिन्नमुखावमंतोरुधिरंबहु ॥ ३८ ॥ दुर्योधनंछिन्नमुखानिहतास्तेययुर्द्रुतम् ॥ पृष्टास्तेकथयामासुर्यादवैःप्रकृतंचतत् ॥३९॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेकौरवैःश्यामकर्णग्रहणंनामाऽष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥ गर्गउवाच ॥ दुर्योधनःस्ववीराणांभीष्मद्रोणकृपादिभिः ॥ दृष्ट्वामुखानिभग्नानिकोपंकृत्वेदमब्रवीत् ॥ १ ॥ अहोवैयादवास्तुच्छाआगतामृत्युसंमुखे ॥ किंनजानंतितेमूढाधृतराष्ट्रबलंमहत् ॥ २ ॥

कहते हैं कि, तब कौरवोंके कथनको सुनकर यादव क्रोधसे मूर्च्छित हो गये, और उसी समय कौरवोंके ऊपर बाण चलाने लगे ॥३७॥ सो यादवोंके बाणोंके मारे कितनेही कौरवोंकी जिह्वाएं कट गईं, कितनेहीके दाँत टूट गये, और कितनेहीके मुख घायल हो गये ॥ ३८ ॥ तब वे जीभ कटे, दाँत टूटे, मुखसे रुधिर उगलते कटे हैं मुख जिनके वे भागकर दुर्योधनके पास गये, तब उनसे दुर्योधनने पूछा कि, अरे ! यह क्या हुआ, तब उन सभीने "यादवोंका पराक्रम है" ऐसे कहा ॥ ३९ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायामष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥ गर्गजी कहते हैं कि, तब भीष्म, द्रोण और कृपादिकके सहित दुर्योधन अपने सब वीरोंके मुखोंको भग्न हुये देखकर कोप करके बोला ॥१॥ कि बड़े आश्चर्यकी बात है कि, ये तुच्छ यादव मृत्युके सामने आये हैं, क्या ये मूढ़ धृतराष्ट्रके महद्बलको नहीं जानते हैं ? ॥ २ ॥

इतने वचन कहकर गज, अश्व, रथ और वीरोंसे युक्त अपनी चतुरंगिणी सेनाको यादवोंसे युद्ध करनेको भेजा ॥३॥ तब धरतीको कम्पाती हुई सेना चली, दश अक्षौहिणी सहित बलसे शत्रुओंको त्रास देती हुई आई ॥ ४ ॥ तब उस सेनाको आती हुई देखकर हर्षसे वीरोंसे भूषित साम्बने अपनी सेनाको आज्ञा दी ॥५॥ तब सब कौरवोंने अपनी रक्षाके लिए क्रौंचव्यूह बनाया, उस क्रौंचके मुख, पक्ष, अंग बनकर खडे हुये ॥६॥ उस क्रौंचके मुख स्थानमें तो भीष्म और ग्रीवामें द्रोण, दोनों तरफ पंखोंके स्थानमें कर्ण और शकुनि, और पुच्छ स्थानमें दुर्योधन खडे हुये ॥७॥ और बीचमें सब चतुरंगिणी सेना खड़ी हुई, इस प्रकार शत्रुओं द्वारा रचे हुये दुर्जय उस क्रौंचव्यूहको यादवोंने देखा ॥८॥ तब युद्धसे शंकित हुए सब यादव उस क्रौंचव्यूहको देखकर बोले कि, हे साम्ब ! तुम भी अपनी व्यूह रचना करो ॥ ९ ॥ यादवोंके कथनको सुनकर कौरवोंको कुछ नहीं समझ कर साम्बने व्यूह

इत्युक्काप्रेषयामासुःस्वांसेनांचतुरंगिणीम् ॥ गजाश्वरथवीरैश्चयुक्तांयुद्धेचयादवान्॥३॥साचचालमहासेनाकंपयंतीमहीतलम्॥अक्षौहिणीभिर्द-
शभिस्त्रासयंतीबलाद्रिपून् ॥४॥ आयांतींतांततोदृष्ट्वासांबोजांबवतीसुतः ॥ स्वांसेनांनोदयामास हर्षाद्वीरैर्विभूषितः ॥५॥ ततश्चकौरवाःसर्वे
रक्षणार्थंतुस्वात्मनः ॥ क्रौंचव्यूहंविनिर्मायतत्रसर्वेहिसंस्थिताः ॥ ६ ॥ आसीत्तस्यमुखेभीष्मोग्रीवायांद्रोणएवच ॥ पक्षयोःकर्णशकुनीतस्य
पुच्छेसुयोधनः ॥७॥ मध्येतस्यमहासेनाचतुरंगबलैर्युता ॥ कृतंहिददृशुर्व्यूहंक्रौंचंवैशत्रुदुर्जयम् ॥८॥ क्रौंचव्यूहंतत्रदृष्ट्वायादवोयुद्धशंकिताः॥
ऊचुर्हेसांबत्वमपिकुरुव्यूहंप्रयत्नतः॥९॥ इतितेषांवचः श्रुत्वा सांबःसंग्रामकोविदः ॥ नचकाररणेव्यूहंकौरवानगणय्यच ॥१०॥ युद्धंकर्तुंप्रच-
लितेतेद्वेसेनेयदानृप ॥ तदामुहूर्तपर्यंतंचकंपेवसुधाभृशम्॥११॥जघ्नुर्भेर्य्यश्चशंखाश्चह्युभयोःसेनयोस्तदा॥टंकाराश्चैवचापानांश्रूयंतेतत्रतत्रह॥
॥ १२ ॥ गर्जंतिदन्तिनस्तत्रहयाह्रेषंतितत्रह ॥ शब्दंशूराःप्रकुर्वंतिनदंतिरथनेमयः ॥ १३ ॥ सैन्यपादगजोभिश्चह्यंधकारोभवद्रणे॥ मलिनं
गगनंभूत्वासूर्य्यस्तत्रनदृश्यते ॥१४॥ उभयोःसेनयोर्युद्धंततःसमभवद्भृशम्॥ बाणैर्गदाभिःपरिघैःशतघ्नीभिश्चशक्तिभिः ॥१५॥ परस्परंतेयु-
युधुराहवेनिशितैःशरैः ॥ गजागजैरथारथैर्हयाहयैर्नरानरैः॥१६॥शरांधकारेसंजातेसांबोबाणैर्धनुर्द्धरः॥रणेभीष्मेणयुयुधेऽक्रूरःकर्णेनतत्रच॥१७॥

रचना नहीं की ॥१०॥ हे नृप जब ये दोनों सेनाएं युद्ध करनेको चलीं, तब दोघडी तक पृथ्वी बहुत कांपी ॥११॥ तब दोनों सेनाओंके भेरी और शंख बजने लगे, और स्थान स्थानपर वीरोंके धनुषोंकी टंकार सुनाई पड़ने लगी ॥१२॥ हाथियोंकी गर्जना, घोड़ोंकी हिनहिनाहट, रथोंकी खन खनाहट और शूर वीरोंकी गर्जनाके शब्द होने लगे॥१३॥सेनाके पाँवोंकी रजका अंधकार होगया, आकाशके मलिन होनेसे सूर्यका दीखना बन्द होगया ॥१४॥ तब दोनों सेनाओंका घोर युद्ध हुआ, बाण, गदा, परिघ, शतघ्नी, और शक्ति आदिक अस्त्र शस्त्र दोनों ओरसे चलने लगे ॥ १५ ॥ उस संग्राममें परस्पर हाथियोंसे हाथी, रथियोंसे रथी, घोड़ोंसे घोड़े, और पैदलोंसे पैदल लड़ने लगे ॥ १६ ॥ बाणोंका अंधकार जब होगया, तब सांब धनुषको लेकर बाणोंसे भीष्मके साथ संग्राम करने लगे, और कर्णके साथ अक्रूर लड़ने लगे ॥ १७ ॥

शकुनिके साथ युयुधानका द्रोणके साथ सारणका और दुर्योधनके साथ सात्यकिका संग्राम होने लगा ॥ १८ ॥ दुःशासनके साथ बलाकीका और भूरिके साथ कृतवर्माका संग्राम
होने लगा, इस तरहसे परस्पर भयकारक संग्राम होने लगा ॥१९॥ तब साम्बने कुपित होकर दृढ धनुषको हाथमें लेकर वीरोंके हृदयमें कम्प पैदा करते हुये धनुषको टंकारा ॥२०॥
प्रथम श्रीकृष्णको प्रणाम करके साम्बने दश बाण मारे, आये हुए उन बाणोंको भीष्मजीने अपने बाणोंसे काट डाला ॥२१॥फिर साम्बने सिंहकी तरह गर्जना करके स्वर्णमय और
दश बाण भीष्मजीके कवचमें मारे ॥२२॥ और चार बाणोंसे उनके घोडे मार डाले, और दश बाणोंसे उनका प्रत्यंचा सहित धनुष काट डाला ॥२३॥ तब भीष्मने धनुषको कटा
हुआ, तथा सारथीको और घोड़ोंको मरे हुये देखकर बड़े क्रोधसे उठकर हाथमें गदा ली॥२४॥तब साम्बने कहा कि मैं तुम्हारे पैदलके साथ कैसे युद्ध करूँगा,इसलिये लो संग्राममें,

युयुधानःशकुनिनाद्रोणाचार्य्येणसारणः ॥ दुर्योधनेनसंग्रामेसात्यकिःशीघ्रमेवच ॥१८॥ बलीदुःशासनेनापिकृतवर्मातुभूरिणा॥एवंपरस्परंह्या-
सीत्संग्रामोभयकारकः ॥ १९ ॥ ततःसांबस्तुसंक्रुद्धःसज्जंकृत्वाधनुर्दृढम् ॥ टंकारयामासतदाशूराणांकंपयन्हृदि ॥२०॥श्रीकृष्णं प्रथमंनत्वा
मुमुचेसायकान्दश ॥ तानागतान्छरान्भीष्मश्चिच्छेदस्वशरैरपि ॥२१॥ रणेसांबपुनस्तस्यकवचेसायकान्दश ॥ निचखानस्वर्णमयान्नादंकृ-
त्वातुसिंहवत् ॥२२॥ चतुर्भिःसायकैस्तस्यनिजघ्नेचतुरोहयान् ॥ चिच्छेदबाणैर्दशभिस्तत्कोदंडंगुणान्वितम् ॥ २३ ॥ सच्छिन्नधन्वाविरथो
हताश्वोहतसारथिः ॥ उत्थायभीष्मःसहसागदांजग्राहरोषतः ॥२४॥ सांबःप्राहत्वयासार्द्धंकथंयुद्धंकरोम्यहम् ॥ पदातिनारथंचान्यंतुभ्यंदा-
स्यामिसंयुगे ॥ २५ ॥ सशस्त्रंस्यंदनंयुद्धेत्वंगृहाणकुरूद्वह ॥ जयमांनिस्त्रपंमूढंवृद्धस्त्वंपूज्यएवच॥२६॥सउवाच ततःसांबं क्रोधात्प्रस्फुरिता-
धरः ॥ दंतान्दंतैर्लिहन्नोष्ठंजिह्वयारक्तलोचनः ॥२७॥ त्वद्दत्तेस्यंदनेस्थित्वायदायुद्धंकरोम्यहम् ॥ तदाभवतिमेऽकीर्तिःपापंनिरयमेवच॥२८॥
प्रतिग्रहपराविप्रादातारश्चवयंस्मृताः ॥ दत्तंराज्यंयदुभ्यश्चपुरास्माभिःकृपालुभिः ॥२९॥ श्रुत्वातद्वचनंसांबःप्रत्युवाचरुषान्वितः ॥ भयाद्रा-
ज्यंप्रदास्यंतिराजानोमंडलेश्वगः ॥ ३० ॥ निरीक्ष्यभूमौशास्तारंसंस्थितंचक्रवर्तिनम् ॥ इत्येवं वाक्यमाकर्ण्यभीष्मःशूरशिरोमणिः ॥३१॥

तुम्हारे लिये रथ देता हूँ, इसमें बैठो ॥ २५ ॥ शस्त्र सहित मेरे दिये हुए इस रथको तुम ग्रहण करो, और हे कुरूद्वह ! संग्राममें निर्लज्ज मूढ मुझको जीतो, तुम वृद्ध हो, इससे पूजा
करनेके योग्य हो ॥२६॥ तब भीष्मके क्रोधसे होठ फड़कने लगे, दाँतोंसे दाँतोंको बजाकर जीभसे होठोंको चाटते हुए लाल नेत्र करके भीष्मजी बोले ॥२७॥ कि हे साम्ब! सुनो
आज जो तुम्हारे दिये हुये रथमें बैठकर लड़ूँ, तो मेरी अपकीर्ति होगी, और पाप होनेसे घोर नरक मिलेगा ॥२८॥ अरे ! हम तो देनेवाले हैं, दान लेना तो ब्राह्मणोंका कार्य है,
दयालुओंने हमनेही तो यादवोंको यह राज्य दिया है ॥२९॥ इस प्रकार भीष्मके वचनको सुनकर क्रोधित हुआ साम्ब बोला कि, हे भीष्मजी ! भयके विना मण्डलेश्वर राजा कहीं
राज्य देते होंगे ? ये तो जब देखते हैं कि, यह हमको मारेगा,यह चक्रवर्ती है,प्रबल है,हमको शासन करेगा,तब कोई किसीको देते हैं,यह सुनकर वीरोंमें शिरोमणि भीष्मने ॥३०॥३१॥

एक बड़ी भारी गदासे हे नृप ! साम्बके वक्षस्थल (छाती) में प्रहार किया, गदाके प्रहारसे साम्ब मूर्च्छित हो गया ॥ ३२ ॥ तब साम्बका सारथि रथमें गिरे हुए साम्बको शंकासे रणमेंसे भगाकर ले गया, तब हे नृपेश्वर ! यादवोंकी सेनामें बड़ा कोलाहल हुआ ॥ ३३ ॥ और भीष्मजी दूसरे रथमें बैठकर कवच पहिनकर धनुषबाणको लेकर मार्गमें यादवोंको मारते हुए दुर्योधनके पास गये ॥ ३४ ॥ तब हे राजेन्द्र ! उस संग्राममें सात्यकिने गीधके पंखोंवाले बाणोंसे विरथ कर दिया ॥ ३५ ॥ तब विरथ (रथरहित) हुए दुर्योधनने जल्दीसे दूसरे रथमें बैठकर सर्पाकार बाणोंसे सात्यकिको विरथ कर दिया ॥ ३६ ॥ तब शीघ्र पराक्रमवाले सात्यकिने भी दूसरे रथमें बैठकर हे नृप ! एक बाणसे उसके रथको एक योजनपर उड़ाकर फेंक दिया ॥३७॥ तब सारथि तथा घोड़ोंसहित रथ भूमिमें पड़ा और अंगारकी तरह चूर चूर होगया, और दुर्योधन मूर्च्छित होगया ॥३८॥

जघानगदयागुर्व्यासांबवक्षस्थलेनृप ॥ गदाप्रहारव्यथितःसांबःसंमूर्च्छितोभवत् ॥३२॥ सारथिस्तंरथेकृत्वाऽपोवाहशंकितोरणात् ॥ कोलाहलस्तदैवासीद्यदुसैन्येनृपेश्वर ॥ ३३ ॥ भीष्मोन्यंरथमारुह्यदंशितःसशराशनः ॥ ययौसुयोधनंशीघ्रंयादवान्मारयन्पथि ॥ ३४ ॥ संग्रामे तत्रराजेंद्रसात्यकिश्चसुयोधनम् ॥ चक्रेबाणैश्चविरथंगृध्रपक्षैस्फुरत्प्रभैः ॥ ३५ ॥ विरथोपिरथंचान्यंससमारुह्यवेगतः ॥ तंशत्रुंविरथंचक्रेशरैराशीविषोपमैः ॥ ३६ ॥ सचान्यंरथमारुह्यसात्यकिःशीघ्रविक्रमः ॥ बाणेनैकेनतद्यानंचिक्षेपनृपयोजनम् ॥ ३७ ॥ रथःपपातभूमध्येससूतःसतुरंगमः ॥ अंगारवद्विशीर्णोऽभूत्मूर्च्छितोभूत्सुयोधनः ॥३८॥ तदाद्रोणस्तुसंक्रुद्धोबाणेनाग्निमयेनच ॥ जघानसात्यकिंयुद्धेस्वशत्रुंतुविहायवै ॥ ३९ ॥ रथस्तुतस्यदग्धोभूत्सतुरंगःससारथिः ॥ अभवन्मूर्च्छितःसोपिदग्धांगोबाणज्वालया ॥ ४० ॥ कृतवर्माततःक्रुद्धोभूरिंजित्वा रणांगणे ॥ आजगामनदन्राजन्द्रोणःपरिरुषान्वितः ॥ ४१ ॥ सगत्वाप्रधनेरोषाद्द्रोणाचार्य्यंशरैरपि ॥ चक्रेपदातिनंवीरोनिःशस्त्रंछिन्नकंचुकम् ॥ ४२ ॥ ततःकर्णस्तुसंक्रुद्धस्त्यक्त्वाक्रूरंरणांगणे ॥ तताडकृतवर्माणंशक्त्याशक्तीवतारकम् ॥ ४३ ॥ साशक्तिस्तत्तनुंभित्त्वाविवेश धरणीतले ॥ निर्भिन्नहृदयोभूत्वाकृतवर्मापपातह ॥ ४४ ॥

तब द्रोणाचार्यने कुपित होकर अपने शत्रुको छोड़कर एक अग्निमय बाणसे सात्यकिको मारा ॥३९॥ तब सारथि तथा घोड़ोंसहित सात्यकिका रथ जल गया, और बाणकी ज्वालासे जल गया है अंग जिसका ऐसा वहीं मूर्च्छित होकर गिर पड़ा ॥ ४० ॥ तब कृतवर्मा कुपित होकर युद्धभूमिमें भूरिको जीतकर नाद करते हुये हे राजन् ! क्रोधित हुए द्रोणाचार्यके पास आये ॥ ४१ ॥ तब कृतवर्माने संग्राममें आकर बड़े क्रोधसे बाण मारे, द्रोणाचार्यको शस्त्रोंसे रहित करके उसका कवच काटकर पैदल कर दिया ॥ ४२ ॥ तब तो कर्णने कुपित होकर युद्धमें अक्रूरको छोड़कर कृतवर्माके ऊपर एक शक्तिका प्रहार किया, जैसे स्वामीकार्तिकने तारकासुरके ऊपर किया था ॥ ४३ ॥ वह शक्ति कृतवर्माके शरीरके पार होकर पृथ्वीमें समा गई, और छाती जिसकी फटगई ऐसा कृतवर्मा भूमिमें गिर पड़ा ॥ ४४ ॥

तब युयुधान शकुनिको जीतकर बड़ा कुपित होकर हे राजेन्द्र ! रथमें बैठकर कर्णके ऊपर आया ॥४५॥ उसने आकर धनुष लगाकर कर्णके दश बाण मारे, कर्णने उन बाणोंको अपने बाणोंसे काटकर गिरा दिया ॥४६॥ तब उन दोनोंके बाण आपसमें घिसे, और पतंगोंको छोड़ते हुए अलात चक्रकी तरह घूमने लगे ॥ ४७ ॥ तब हे पृथ्वीपते ! युयुधानने कर्णके कवचमें काकपक्ष नामके बाणोंका प्रहार किया ॥४८॥ बाण कर्णके कवचमें नहीं लगे और पृथ्वीमें गिर पड़े, जैसे पापी पुरुष स्वर्गमें नहा जाकर नरकोंमें गिरते हैं ॥४९॥ तब कर्णने हँसकर विस्मित हुए युयुधानको अस्त्र युक्त अनेक बाणोंसे विरथ (रथरहित) कर दिया ॥५०॥ तब युद्धमें दुःशासनको मूर्च्छित करके बली वायु वेगवाले रथमें बैठकर कर्णके ऊपर आया ॥ ५१ ॥ तब सूर्य पुत्र कर्णने बलीको आया हुआ देखकर वायव्यास्त्रसे रथ समेत दूर फेंक दिया ॥५२॥ तब वह एक योजन पर जाकर गिरा, तब वहाँ युद्धमें

युयुधानस्ततःकोपान्निर्जित्यशकुनिंमृधे ॥ कर्णस्योपरिराजेन्द्रह्याजगामरथेनच ॥ ४५ ॥ गत्वाशरासनेनापिमुमुचेसायकान्दश ॥ वीक्ष्य
तानागतान्कर्णोनिजघानस्वसायकैः ॥ ४६ ॥ संघृष्टास्तत्रसंग्रामेतयोर्वाणाःपरस्परम् ॥ विस्फुलिंगान्क्षरंतस्तैभ्रमन्तेऽलातचक्रवत् ॥ ४७ ॥
युयुधानस्ततःकोपात्कर्णस्यजगतीपते ॥ जघानकवचेबाणान्काकपक्षयुताञ्छितान् ॥४८॥ तेशराःकर्णकवचेनलग्नाःपतिताभुवि ॥ राजन्पाप-
स्यकर्तारोनस्वर्गेनिरयेयथा ॥ ४९ ॥ ततःप्रहस्यकर्णस्तुयुयुधानंतुविस्मितम् ॥ चकारविरथंयुद्धेशरैर्नानास्त्रयोजितैः ॥५०॥ दुःशासनंबलि
चैवकृत्वायुद्धेविमूर्च्छितम् ॥ आययौसंयुगेकर्णंरथेनानलवर्चसा ॥५१॥ आगतंबलिनंदृष्ट्वाकर्णोभास्करनंदनः ॥ पवनास्त्रेणवाणेनतंचिक्षेपस
वाहनम् ॥५२॥ पपातयोजनेसोपिसांबस्तत्रागमत्पुनः ॥ अंधकारंशरैःकुर्वन्कौरवान्मारयन्नुषा ॥५३॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे
यदुकुरुसंग्रामवर्णनंनामैकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥ गर्गउवाच ॥ तदैववृष्णयःसर्वेभोजवृष्ण्यंधकादयः ॥ माथुराःशूरसेनाद्याःसमु-
त्तीर्य्ययमस्वसाम् ॥१॥ रजोभिश्चनभोव्याप्तंकुर्वंतश्चमहीतलम् ॥ चालयंतश्चबलिनोमहासंग्रामकर्कशाः ॥ २॥ विलोकयंतस्तुरगंसर्वतस्ते
महाबलाः॥आजग्मुश्चानिरुद्धाद्याःश्रीकृष्णाद्यानृपेश्वर॥३॥वृष्णयस्तत्रयुद्धस्यमहाघोषंभयंकरम् ॥ शरासनानांटंकारंशतघ्नीनांरवंतथा॥४॥
शूराणांगर्जनंचैवशस्त्राणांचट्चटंतथा ॥ कोलाहलंचहाःकारंश्रुत्वातेविस्मयंययुः ॥ ५ ॥

साम्ब आया, और बड़े क्रोधसे बाणोंसे कौरवोंको मारते हुए बाणोंके मारे अन्धकार कर दिया ॥ ५३ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायामेकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥४९॥ गर्गजी कहते हैं कि, तब सब यादव भोज, वृष्णि, और अंधकादिक और शूरसेनादिक यमुनाजीके पार होकर ॥ १ ॥ धूलिके आकाशको व्याप्त करते हुए और भूमिको कम्पाते हुए बड़े बली संग्राममें कर्कश वे बड़े बलवान् सब तरफसे घोड़ेको देखते हुए अनिरुद्धादिक और श्रीकृष्णादिक आये ॥ २ ॥ ३ ॥ तब वे यादव उस युद्धके महाभयंकर घोषको धनुषोंकी टंकारको, तोपोंके शब्दको, शूर वीरोंकी गर्जनाको, शस्त्रोंके चट चट शब्दको, और हाहाकारके कोलाहलको सुनकर बड़े विस्मित हुए ॥ ४ ॥ ५ ॥

जब यह जान पड़ा कि यादवोंका कौरवोंसे संग्राम हो रहा है, तब शंकित होकर अनिरुद्धादिक और कृष्णादिक बहुत शीघ्रतासे आये ॥६॥ तब कृष्णसहित अनिरुद्धादिकोंको आये हुए देखकर अपनी सब सेनासहित सांबादिकोंने प्रणाम कर सहायताके लिये प्रार्थना की ॥७॥ श्रीकृष्ण चन्द्रके आगमनको देखकर भेरी, शंख, गोमुखा आदि बजने लगे, और देवताओंने पुष्प वर्षा कर जयजय शब्द किया ॥८॥ एकसौ अक्षौहिणी सेनाको साथ लेकर धरती हिलाते हुए आये बडे बली अनिरुद्धको देखकर भयभीत होकर सब कौरव भाग गये ॥ ९ ॥ उस समय प्रलयके समुद्रकी तरह उमड़ी चली आरही अंधकोंकी सेनाको देखकर सब वैश्य भाग गये, और सभीने अपने अपने घरोंके दरवाजे बंद कर लिये ॥१०॥ ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र तथा सब स्त्रीजन दुर्योधनको गाली देते हुए घरोंसे निकल गये और सब रुदन करने लगे ॥११॥ तब संग्राममें दुःशासनके बडे भाईकी मूर्च्छा

मत्वातेयुद्धमासीद्वैयादवानांचकौरवैः ॥ शंकिताअनिरुद्धाद्याःकृष्णाद्याआययुर्द्रुतम् ॥६॥ श्रीकृष्णमागतंदृष्ट्वानिरुद्धाद्यैःसमन्वितम्॥ससैन्यं चसहायार्थनेमुःसांबादयोनृप ॥७॥ कृष्णेसमागतेनेदुर्भेर्य्यःशंखाश्चगोमुखाः ॥ पुष्पवर्षंजयारावंदेवाश्चक्रुश्चयादवाः॥८॥दृष्ट्वानिरुद्धंप्रधनेस-मागतंह्यक्षौहिणीभिःशतभिःपरीवृतम् ॥ प्रचालयंतंवसुधांमहाबलंविदुद्रुवुस्तेतुभयाच्चकौरवाः॥९॥प्रलयाब्धिसमंसैन्यमंधकानांविलोक्यच ॥ भीताश्चदुद्रुवुर्वैश्यागेहेगेहेकृतार्गलाः ॥ १० ॥ ब्राह्मणाःक्षत्रियावैश्यावृषलाःस्त्रीजनास्तथा॥दुर्योधनंशपंतश्चरुरुदुर्निर्गतागृहात्॥ ११ ॥ततोवि-हायमूर्च्छांवैमृधेदुःशासनाग्रजः ॥ सद्यःसुप्तइवोत्तस्थौयदुसैन्यंददर्शह॥१२॥दृष्ट्वाभयंकरांसेनांयादवानांसुयोधनः॥स्वपुरंशंकितोभूत्वापद्भ्यां भीतस्त्वरंययौ ॥ १३ ॥ कर्णभीष्मकृपद्रोणभूरिदुर्योधनादयः ॥ सभायांधृतराष्ट्रंवैनत्वासर्वमवर्णयन् ॥१४॥ स्वानांपराजयंश्रुत्वायादवानां जयंतथा ॥ कृष्णस्यागमनंचैवनृपोविदुरमब्रवीत् ॥ १५ ॥ धृतराष्ट्रउवाच ॥ अक्षौहिणीशतयुतेवासुदेवेसमागते ॥ कुपितेद्यवयंवीरकरि-ष्यामश्चकिंवद ॥ १६ ॥ नृपस्यवचनंश्रुत्वाप्रहस्यविदुरोब्रवीत् ॥ विदुरउवाच ॥ पुरारामेणचैकेनकुपितेनगजाह्वयम् ॥ १७ ॥ विकर्षितंच-गंगायांतस्यभ्राताहिचागतः ॥ हृत्कंजकोशाद्देवक्यांजातोयःसहरिर्नृप ॥ १८ ॥

जगी, उसने सोकर उठे की तरह यादवोंकी सेना देखी ॥ १२ ॥ यादवोंकी उस भयंकर सेनाको देखकर दुर्योधन भयभीत होकर पांवोंसे भागता हुआ शंका जिसके मनमें उत्पन्न हुई ऐसा वह अपने पुरको भागकर चला गया ॥१३॥ तब कर्ण, भीष्म, कृप, द्रोण, भूरि और दुर्योधनादिकने धृतराष्ट्र की सभामें जाकर प्रणाम करके सब वृत्तान्त कहा ॥१४॥ तब यादवोंकी जय, और अपनी पराजय तथा कृष्णका आगमन सुनकर धृतराष्ट्र विदुरजीसे बोले ॥१५॥ धृतराष्ट्र बोले कि हे विदुर ! एक सौ अक्षौहिणी सेनाको लेकर कुपित होकर कृष्ण आये हैं, अब हमको क्या करना चाहिये ? यह कहो ॥ १६ ॥ धृतराष्ट्रके इस कथनको सुनकर विदुरजी हँसकर बोले कि, पहिले कुपित हुये अकेले ही बलरामजीने गंगामें डालनेके लिये हस्तिनापुरको खेंचा था, उन्हींके भाई कृष्ण आये हैं, जिन्होंने देवकीके उदरकमलमें जन्म लिया है, हे नृप ! ये कृष्ण साक्षात् परमेश्वर हैं ॥ १७ ॥ १८ ॥

और जिन्होंने युद्धमें हे राजन् ! कंस और शकुनि आदि बहुतसे दैत्य मार डाले हैं, और जिन्होंने देवता तथा राजा जीत लिये हैं ॥१९॥ हे राजन् ! आप देख लीजिये, यह समय युद्धका नहीं है, इस लिये सब कौरवोंके द्वारा श्यामकर्ण घोड़ेको कृष्णको दे दीजिये॥२०॥ कौरवोंका और यादवोंका नाश करनेवाला परस्पर कलह होना अच्छा नहीं है, ऐसे जब भाई विदुरने समझाया ॥२१॥ तब बडे बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र देशकालके योग्य वचन बोले, धृतराष्ट्र बोले कि, तुम सब जाओ, और यह घोड़ा कृष्णको जाकर निवेदन करो ॥२२॥ देवताओंके देवता श्रीकृष्णसे युद्ध करने योग्य तुम नहीं हो, यादवोंकी सहायता करनेको कृष्ण आये हैं ॥२३॥ सो उनके पास जाकर तुम सब जैसे बने वैसे प्रसन्न करो, तब कौरवेन्द्र राजा धृतराष्ट्रके कहे हुए वचनको सब कौरव सुनकर ॥२४॥ अनेक उपचार गंधाक्षतादिसहित लेकर दिव्य वस्त्र और उनके रत्नोंको लेकर ॥२५॥ बड़े आनन्दसे कृष्ण

येनवैसंयुगेराजन्कंसाद्याःशकुनादयः ॥ मारिताबहवोदैत्यानिर्जिताश्चनृपाःसुराः ॥१९॥ तस्माद्युद्धस्यसमयोनास्तिराजन्विलोकय ॥ कौरवैः श्यामकर्णंतुकृष्णायदातुमर्हसि ॥२०॥ माभूत्कुरूणांवृष्णीनांकलहोनाशकारकः ॥ एवंराजाबोधितस्तुविदुरेणानुजेनवै ॥२१॥ उवाचकौरवान्प्राज्ञोदेशकालोचितंवचः ॥ धृतराष्ट्रउवाच ॥ गत्वाकृष्णस्यनिकटेतुरगंदातुमर्हथ ॥ २२ ॥ संमुखेदेवदेवस्ययुद्धंकर्त्तुंचनार्हथ ॥ यादवानांसहायार्थमागतंकुपितंहरिम् ॥२३॥ यूयंप्रसन्नंकुरुतगत्वातन्निकटंशनैः ॥ कौरवेंद्रस्यवचनंकौरवास्तेनिशम्यच ॥ २४ ॥ विविधानुपचारांश्चगंधाक्षतयुतान्किल ॥ गृहीत्वादिव्यवस्त्राणिरत्नानिविविधानिच ॥२५॥ वदंतःपुण्यनामानिरामकेशवयोर्मुदा ॥ पद्भिर्विनिर्ययुःसर्वेकृष्णं द्रष्टुंभयान्विताः ॥ २६ ॥ आगतान्कौरवान्दृष्ट्वायादवाःक्रोधपूरिताः ॥ नानाशस्त्राणिजगृहुस्तत्रयुद्धायवेगतः ॥२७॥ ऊचुस्तान्कौरवाःसर्वे वयंयुद्धायनागताः ॥ करिष्यामश्चकृष्णस्यदर्शनंदुःखनाशनम् ॥२८॥ इतितेषांवचःश्रुत्वायादवाविस्मयंगताः॥कृष्णायकथयामासुःकौरवाणांविचेष्टितम् ॥२९॥ ततःकृष्णस्यवचसाकौरवान्यदुसत्तमाः ॥ आह्वयामासुस्तेप्रीतानिःशस्त्रानागतान्नृप ॥ ३० ॥ आहूतास्तेतुहरिणागत्वाश्रीकृष्णसन्निधौ ॥ लज्जयावाङ्मुखाःसर्वेप्रणम्योचुःपृथक्पृथक् ॥३१॥ पूर्वंद्रोणउवाचाथकृष्णभद्रजगत्पते॥रक्षमांकौरवान्रक्षमाययातव मोहितान् ॥ ३२ ॥

बलरामके पवित्र नामोंको लेते हुए भयभीत होकर पैदल ही कृष्णके पास दर्शन करनेको आये ॥२६॥ तब कौरवोंको आये हुए देखकर यादवोंने क्रोधमें पूर्ण होकर अनेक शस्त्रोंको युद्धके लिये हाथोंमें ले लिया ॥२७॥ तब कौरवोंने कहा कि, हम लड़नेको नहीं आये हैं, हम तो दुःखोंके नाश करनेवाले कृष्णके दर्शन करनेको आये हैं ॥२८॥ कौरवोंके इस कथनको सुनकर यादव बड़े विस्मयमें मग्न होगये, और कौरवोंका अभिप्राय कृष्णसे कहा ॥२९॥ तब कृष्णके वचनसे यादवोंने सब कौरवोंको बुलाया, वे कौरव उस समय निःशस्त्र होकर आये ॥ ३० ॥ कृष्णके बुलानेसे सब कौरव कृष्णके पासमें जाकर लज्जासे नीचा मुख करके पृथक् २ प्रणाम करके बोले ॥ ३१ ॥ पहिले द्रोणाचार्यने कहा कि हे श्रीकृष्णभद्र ! हे जगत्पते ! मेरी रक्षा करो, और कौरवोंकी रक्षा करो, हम आपकी मायामें मोहित हैं ॥ ३२ ॥

फिर कृपाचार्यजी बोले कि, हे मधु कैटभके मारनेवाले ! मेरे जन्मका यही फल है, मेरे ऊपर अनुग्रह करिये, यही मुझको प्रार्थनीय है,हे लोकनाथ ! मैं आपके भृत्योंके जो भृत्य उनके परिचारकोंके भृत्योंके भृत्योंका भृत्य हूँ,ऐसे मेरा स्मरण करिये ॥३३॥ फिर कर्ण बोला कि,हे प्रभो ! मेरी यही प्रार्थना है कि,मेरा धन भक्तके लियेही क्षीण हो, और पत्नी के लियेही यौवन क्षीण हो, और स्वामीके लिये मेरे प्राण जायँ, अन्तमें येही तीनों मुझको अभीष्ट हैं॥३४॥फिर भूरिने कहा कि हे अनन्योंके नाथ ! हे वरद ! मैं यही मांगता हूँ, यदि आपकी सुमुखी दिव्यदृष्टि है,तो मेरे ऊपर प्रसन्न होइये,मैंने परवश होकर आपके लिये यह अञ्जलिकी है,यही मुझको जन्मजन्मान्तरमें भी प्राप्त हो ॥ ३५ ॥ फिर दुर्योधनने कहा कि हे प्रभो ! मैं धर्मको जानता हूँ, परन्तु मेरी प्रवृत्ति नहीं है, और मैं यह जानता हूँ कि यह पाप है, किन्तु मेरी पापसे निवृत्ति नहीं है,कोई देव मेरे हृदयमें विराजमान है, जो कुछ वह कराता है,मैं वही करता हूँ ॥३६॥ यंत्रके गुण,दोष करके हे मधुसूदन ! क्षमा करिये,मैं तो यंत्र हूँ,आप यंत्रीहो, सो मेरे लिये गुण-दोष मत दीजिये ॥३७॥ फिर भीष्मजी

॥ कृपाचार्यउवाच ॥ मज्जन्मनःफलमिदंमधुकैटभारेमत्प्रार्थनीयमदनुग्रहएपएव ॥ त्वद्भृत्यभृत्यपरिचारकभृत्यभृत्यभृत्यस्यभृत्यइतिमां स्मरलोकनाथ ॥ ३३ ॥ कर्णउवाच ॥ भक्तस्यार्थैधनंक्षीणंस्वदारगतयौवनम् ॥ स्वामिकार्येगताःप्राणाअंतेतिष्ठतुमाधव ॥ ३४ ॥ भूरिरुवाच॥ याचामहेवरदकिंचिदनन्यलभ्यंनाथप्रसीदसुमुखीयदिदिव्यदृष्टिः ॥ अस्माभिरंजलिरयंविवशैर्निबद्धएषैवमेभवतुदेवभवांतरेपि ॥३५॥ ॥ दुर्योधनउवाच ॥ जानामिधर्मनचैमेप्रवृत्तिर्जानामिपापंनचमेनिवृत्तिः ॥ केनापिदेवेनहृदिस्थितेनयथानियुक्तोस्मितथाकरोमि ॥ ३६ ॥ यंत्रस्यगुणदोषेणक्षम्यतांमधुसूदन ॥ अहंयन्त्रोभवान्यंत्रीममदोषोनदीयताम् ॥ ३७ ॥ भीष्मउवाच ॥ रागांधगोपीजनचुंबिताभ्यांयोगीन्द्रयोगींद्रनिवेशिताभ्याम् ॥ आताम्रपंकेरुहकोमलाभ्यांचाभ्यांपदाभ्यामयमञ्जलिर्मे ॥ ३८ ॥ विदुरउवाच ॥ आस्तेतिविक्रयकृतांसुकृतानितानियेब्रह्मबालमिवतत्परिपालयंति ॥ यद्दैत्यदेवमुनिभिर्मनसाप्यगम्यंयन्नेतिनेतिचवदन्नहिवेद वेदः ॥ ३९ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ एवंसंप्रार्थितःकृष्णःकौरवैःशरणागतैः ॥ प्रीतःप्रत्याहताब्राजन्मेघनिर्ह्रादयागिरा ॥ ४० ॥

कहने लगे कि,रागमें अन्धी हुई गोपियोंने चुम्बन किया है,और बड़े २ योगीन्द्र और भोगीन्द्र (शेप) ने जिनका सेवन किया है, किंचित् ताम्रकमलके समान तेरे चरणोंके लिये मेरी यह अञ्जलि है ॥३८॥ विदुरजी बोले--जो कोई बालककी तरह तेरे ब्रह्मरूपका पालन करते हैं,अर्थात् जैसे बालककी सदैव याद रहती है,.ऐसेही जो निरन्तर ब्रह्मविचारमें मग्न रहते हैं, उनके किये हुये सुकृत दुष्कृत हैं, वे विक्रय कियेके समान होती हैं,अर्थात् जैसे विक्रयकी हुई वस्तुमें स्वत्व नहीं रहता है, ऐसेही ब्रह्मनिष्ठोंका किये हुये कर्मोंमें स्वत्व नहीं रहता है, अर्थात् किये हुये कर्म उनके किये नहीं गिने जाते हैं, जो ब्रह्म देव, दैत्य और मुनिजनोंकोभी मनसे अगम्य है, और जिसको''न इति न इति''ऐसे कहते हुये वेदभी नहीं जानता है, उस ब्रह्मके विचारमग्न पुरुषके शुभाशुभ कर्म बंधक नहीं होते हैं वह ब्रह्मरूप आपहो ॥ ३९ ॥ श्रीगर्गजी कहते हैं कि, जब शरणागत हुये सब कौरवोंसे इस प्रकार प्रार्थना किये गये, तब हे राजन् ! मेघके समान गम्भीरवाणीसे प्रसन्न होकर भगवान् बोले ॥ ४० ॥

श्रीकृष्णजी बोले-हे आर्यो ! मेरे वाक्यको सुनो, जिस कारणसे मैं तुम्हारे पास इस समय यहाँ आया हूँ, मुझसे नारदने जाकर इस युद्धका वृत्तान्त कहा, सो तुम्हारे युद्धको रोकनेको मैं यहाँ आया हूँ ॥४१॥ मेरे ये पुत्र, पौत्र निरंकुश हो गये हैं, मेरी आज्ञाको नहीं मानते हैं, खेद है कि, ये बड़ोंका अपराध करते हैं,इनका यही बड़ा दूषण है ॥४२॥ हे वीरो ! तुम धन्य हो, मान्य हो,मिलनेके लिये आये हो सो जो कुछ मेरे पुत्र पौत्रादिकोंने किया है,उसको क्षमा करो ॥४३॥ और इस यज्ञके घोड़ेको जल्दी छोड़ दो,तुम भी इस यज्ञके पालन करनेको साथ जाओ ॥ ४४ ॥ यादव और कौरव तो मित्र हैं, सो तुम आपसमें कलह करनेके योग्य नहीं हो, अपने पहिले के स्नेहको देख लो कि, पहिले तुम्हारा हमारा कैसा प्यार है ॥४५॥ इस प्रकार जब श्रीकृष्णचन्द्रने मीठे वाक्योंसे कौरवोंको समझाया, तब कौरवोंने वह अश्वभी देदिया और उसके साथमें बहुतसी भेंटभी दी ॥४६॥

॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ आर्याःशृणुतमद्वाक्यमहमागतवान्यतः ॥ युद्धंवारयितुंचात्रनारदेनप्रचोदितः ॥ ४१ ॥ नमन्यंतिममाज्ञां वैमत्पुत्राश्चनिरंकुशाः ॥ दीर्घाणांचप्रकुर्वंतिहापराधंचदूषणम् ॥४२॥ यूयंधन्याश्चमान्याश्चमिलनार्थंसमागताः॥मत्पुत्रैश्चकृतंयद्वैतत्सर्वं क्षंतुमर्हथ ॥४३॥ उग्रसेनहयंवीराःकृपयाचविमुच्यताम् ॥ पालनार्थंतुतस्यापियूयंगच्छतगच्छत ॥४४॥ यादवाःकौरवामित्राःकलहंतुपरस्परम् ॥ प्रकर्तुंनैवचार्हंतिपूर्वंप्रेमविलोक्यच ॥४५॥ एवंतेकृष्णदेवेनमिष्टवाक्यैश्चतोषिताः ॥ तुरगंचददुःप्रीताःपारिबर्हेणसंयुतम् ॥४६॥ दत्त्वातुरंगमंसर्वेकौरवाःखिन्नमानसाः ॥ स्वपुरंविविशूराजन्भीष्मोगंतुंमनोदधे ॥ ४७ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेहस्तिनापुरविजयोनाम पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥ गर्गउवाच ॥ अथकृष्णस्तुभगवान्यादवानांचपालनम् ॥ कृत्वामिलित्वाप्रययौरथेनापिकुशस्थलीम् ॥१॥ कृष्णेगतेऽनिरुद्धस्तुहयंसंपूज्ययत्नतः ॥ बंधनान्मोचयामासविजयार्थंनृपेश्वर ॥२॥ मुक्तस्तुरंगःप्रययौदेशान्देशान्विलोकयन् ॥ पृष्ठतस्तस्यराजेंद्रत्वरंजग्मुश्चवृष्णयः ॥३॥ दुर्योधनंजितंश्रुत्वाभूपभूपास्तुरंगमम् ॥ प्राप्तंनजगृहूराष्ट्रेकृष्णस्यबलिनोभयात् ॥ ४ ॥ अथात्रजत्तुरंगोयंशृण्वन्पश्यन्नितस्ततः ॥ संप्राप्तोभूद्वैतवनेयत्रराजायुधिष्ठिरः ॥ ५ ॥

अश्वको देकर कौरव बड़े खेदित हुये, और हे राजन् ! सब अपने नगरको चले गये, और भीष्मजीने भी जानेका मन किया ॥४७॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायांपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥५०॥ श्रीगर्गजी कहते हैं कि अनन्त श्रीकृष्णभगवान् यादवोंका पालनकर कौरवोंसे मिल भेंटकर रथमें विराजमान होकर द्वारिकाको चले गये ॥ १ ॥ श्रीकृष्ण भगवान्के जाने पर अनिरुद्धने घोड़ेका पूजन किया, और हे नृपेश्वर ! विजयके लिये फिर वह घोड़ा बन्धनसे खोल दिया ॥ २ ॥ छोड़तेही वह अश्व फिर देश देशान्तरोंको देखता हुआ चला, परन्तु बली कृष्णके भयसे उसको फिर किसीने नहीं पकड़ा ॥ ३ ॥ हे राजन् ! जब राजाओंने सुना कि, दुर्योधनकोभी यादवोंने जीत लिया, तब फिर किसीने घोड़ेको नहीं पकड़ा, और सब यादव उसके पीछे पीछे गये, इस प्रकारसे वह अश्व चलता २ देखता सुनता द्वैतवनमें पहुँचा, जहाँ राजा युधिष्ठिर थे ॥ ४ ॥ ५ ॥

जहाँ भाइयों सहित द्रौपदीको साथ लेकर निवास करते थे, तब उस वनमें भीमसेन वनके हाथियोंके साथ ॥ ६ ॥ नित्य क्रीडा करता था, जैसे बालक खिलौनोंसे खेलता है, वहाँ बड़े सघन वनमें उस घोड़को भीमने देखा ॥७॥ वह वन वट, पीपल, बेल, खिजूर कटहर, मोरसरी, सप्तवर्ण, तिंदुक, तिलक, शाल, ताल, तमाल, बेर, लोध, पाकर, बबूर, सेमर, बाँस, ढाक आदि वृक्षोंसे सघन होरहा था ॥ ८ ॥९॥ वहाँ आये हुये उस घोड़को देखकर उस दुर्जन निर्जन वनमें जीवन वराह, मृग, शार्दूल स्यारी और सर्पोंसे युक्त था ॥१०॥ झीगरोंके झंकारसे युक्त, और गीध तथा चील जिसमें बोल रहे ऐसे ॥ ११ ॥ सियार, बंदर भैंसे, रोज, नीलगाय, हाथी, रीछ, बनबिलाव और वन मानुष ॥ १२ ॥ इनके होनेसे अति भयंकर ऐसे उस घोर वनमें भीम है पराक्रम जिसका ऐसे भीमसेनने देखकर उस यज्ञके घोडेको पकड लिया, पत्र जिसके माथेमें बंधा था ऐसा उस अश्वको लीला करके बाँध

भ्रातृभिर्भार्ययासार्द्धंवनवासंकरोतिहि ॥ तस्मिन्वनेभीमसेनोवनद्वीपगणैःसह ॥६॥ नित्यंकरोतिक्रीडावैबालःक्रीडनकैरिव ॥ ददर्शतुरगंतत्रतं
वनंगह्वरमहत् ॥ ७ ॥ न्यग्रोधाश्वत्थबिल्वैश्चखर्जूरपनसैस्तथा ॥ वकुलैःसप्तपर्णैश्चतिंदुकैस्तिलकैरपि ॥८॥ शालैस्तालैस्तमालैश्चबदरीलो-
ध्रपाटलैः ॥ बबूरशाल्मलीवेणुपलाशादिभिरन्वितम् ॥ ९ ॥ आगतंघोटकंदृष्ट्वादुर्जरेनिर्जनेवने ॥ वराहमृगशार्दूलवृकसर्पगणैर्युते ॥ १० ॥
झिल्लीझंकारसंयुक्तेगृध्रचिल्लादिभिर्युते ॥ वृतेतथाभुजंगैश्चवल्मीकादर्द्धनिःसृतैः ॥ ११ ॥ शृगालमर्कमहिषगवयादिभिरन्विते ॥ नीलगोगजभ-
ल्लूकमार्जारैर्वनमानुषैः ॥ १२ ॥ युक्तेभयंकरेराजन्भीमोभीमपराक्रमः ॥ अश्वंजग्राहकेशेषुसपत्रंनृपलीलया ॥ १३ ॥ केनोत्सृष्टंवदन्वाक्यंस्वा-
श्रमंप्रययौशनैः ॥ तदैवचानिरुद्धाद्याआजग्मुःसर्वयादवाः ॥१४॥ पश्यंतोयज्ञगन्धर्वमरण्येनृपकृच्छ्रतः ॥ दृष्ट्वागृहीतंतुरगमूचुस्तेतुपरस्परम्
॥ १५ ॥ अहोवनचरोह्येषदृश्यतेभीमसेनवत् ॥ बृहद्बाहुर्महापुष्टोमहोच्चोरक्तलोचनः ॥ १६ ॥ महागौरःकृच्छ्रधरोधूलिलिप्तोगदाधरः ॥ इत्थं
ब्रुवंतस्तेसर्वेपुनरूचुश्चतंजनम् ॥ १७ ॥ कस्त्वंश्रीराजराजन्यहयंनीत्वाक्वयास्यसि ॥ तस्मान्मोचयशीघ्रंत्वांनचेद्धन्मोशिलीमुखैः ॥ १८ ॥
इतितद्वाक्यमाकर्ण्यहयंबद्ध्वाचगह्वरे ॥ जगामस्वगदांगुर्वींभारायुतसमन्विताम् ॥ १९ ॥

लिया ॥१३॥ यह घोडा किसका है ? किसने छोडा है ? ऐसे कहता धीरे २ अपने आश्रमको चला, उसी समय अनिरुद्ध आदिक सब यादव आगये ॥१४॥ उस यज्ञके अश्वको देखते देखते हे नृप ! बडी कठिनाईसे वे आये, तब घोडेको पकडा हुआ देखकर वे यादव परस्पर बोले ॥१५॥ अहो ! बड़ा आश्चर्य है, यह कोई बनचर है, किन्तु यह तो भीमसेन जैसा दीखता है, लम्बे इसके भुजदण्ड हैं, यह महापुष्ट है, बड़ा ऊँचा है, और लाल इसके नेत्र हैं॥१६॥ अति गौर है, खन्ती, पिटारीको लिये हुये है, धूलिमें लिपटा है; और गदाको हाथमें लिये हुये है, ऐसे कहते वे सब यादव फिर परस्पर बोले॥१७॥ अरे भाई ! तू कौन है ? राजाओंके राजा उग्रसेनके इस अश्वको पकडकर तू कहाँ जायगा ? इससे तू घोडेको जल्दीसे छोड़ दे, नहीं तो हम तुमको बाणोंसे मार डालेंगे ॥१८॥ इस प्रकार उनके कथनको सुनकर घोडेको गहरमें बांधकर अपनी दशहजार भारकी गदा भीमसेनने हाथमें लेली ॥१९॥

फिर भीम जिसका पराक्रम ऐसा भीमसेन गदाके प्रहारसे यादवोंको मारने लगा, तब भीमसेनके मारे वे यादव संग्राममें गिर पडे ॥२०॥ तब उसके पराक्रमको देखकर अनिरुद्धको बडा क्रोध आया, और एक हजार मत्त गजराज भीमसेनके ऊपर छोडे॥२१॥ तब पर्वतोंके शिखरके समान उन हाथियोंने चारों तरफसे घेर लिया, और दांतोंके मारे धरतीमें पटक दिया ॥ २२ ॥ तब क्रोधसे होठ जिसके फडकने लगे ऐसे भीमसेनने उन मत्त हाथियोंको गदासे मारकर गिरा दिये ॥ २३ ॥ कितनेही तो धरतीमें गिरा दिये, और कितने पकड़ कर आकाशमें फेंक दिये, कितनेही पांवोंसे मसल डाले, और कितनेही हाथियोंको हाथियोंसेही फिराकर मार डाले ॥२४॥ तब तो सब हाथी भयसे विह्वल होकर भगे, तब अतिकुपित होकर गदाको हाथमें लेकर गद आया ॥२५॥ जब भीमसेनके सामने गद आया, तब तो भीमसेनको समझकर गदके मनमें शंका हुई, तब तो प्रणाम करके गदने कहा कि, हे

तथाजघानसंग्रामेयादवान्भीमविक्रमः॥ निपेतुर्वृष्णयस्तत्रभीमेननिहताश्चये॥२०॥ अनिरुद्धस्ततःक्रुद्धोदृष्ट्वातस्यपराक्रमम् ॥ सहस्रवारणान्मत्तान्नोदयामासशत्रवे ॥ २१ ॥ ततःसदिग्गजैःसोपिभूभृच्छिखरसन्निभैः ॥ पातितोधरिणीपृष्ठेविषाणैरवपीडयते ॥ २२॥ ततोभीमःसमुत्थायक्रोधात्प्रस्फुरिताधरः॥ मत्तान्गजाञ्जघानाथगदयावज्रकल्पया॥२३॥ कांश्चिच्चिक्षेपगगनेकाँश्चिद्भूमौव्यपोथयत् ॥ काँश्चिन्ममर्दपादाभ्यां गजान्काँश्चिद्गजेषुच॥२४॥ ततश्चदुद्रुवुःसर्वेवारणाभयविह्वलाः ॥ तदाजगामसंक्रुद्धोगदस्तत्रगदाधरः ॥२५॥ गत्वातत्सन्निधौसोपिज्ञात्वा भीमंतुशंकितः ॥ उवाचनत्वाहेवीरकस्त्वंवदममाग्रतः॥ २६ ॥ सोब्रवीद्भीमसेनोहंजित्वाद्यूतेनहेगद ॥ दुर्योधनेनरिपुणापुरान्निष्कासितावयम् ॥ २७ ॥ अत्रस्थानाद्योजनेतुभ्रातृभिश्चयुधिष्ठिरः ॥ करोतिवनवासंवैह्यहोदेवस्यमायया ॥२८॥ वनेवर्षागताश्चाष्टौचत्वारस्त्ववशेषिताः॥ वर्षमात्रंकरिष्यामोऽज्ञातवासंवयंपुनः ॥२९॥ अर्जुनस्तुगतःस्वर्गमाहूतोवासवेनच ॥ अहंनजानेतुकदाऽऽगमिष्यतिमहीतले ॥ ३० ॥ गदत्वं तुयदूनांचकुशलंकथयस्वनः ॥ तुरगःकस्यभूपस्यकिमर्थंयूयमागताः ॥ ३१ ॥ इत्युक्त्वाभीमसेनस्तुरुरोदाश्रुपरिप्लुतः ॥ दुर्योधनकृतान्क्लेशान्संस्मरन्दुःखपूरितः ॥ ३२ ॥

वीर ! तुम कौन हो, यह मेरे आगे कहो ॥२६॥ तब उसने कहा कि मैं भीमसेन हूँ, हे गद ! छलसे जुएमें जीतकर शत्रु दुर्योधनने हमको नगरमेंसे निकाल दिया है, सो यहाँसे एक योजनपर भाइयों सहित युधिष्ठिर वनमें निवास करते हैं, देखो, यह देवकी माया बलवती है ॥२७॥ २८ ॥ वनमें निवास करते हुये हमको आठ वर्ष तो बीत गये, और चार वर्ष बाकी रहे हैं, फिर एक वर्ष अज्ञात वास करेंगे ॥ २९ ॥ और हमारा भाई अर्जुन इन्द्रके बुलानेसे स्वर्गमें गया है, सो मैं नहीं जानता हूँ कि, अर्जुन भूमिमें कब आयेगा ॥३०॥ हे गद ! तुम अच्छे मिले, यादवोंकी कुशल तो कहो, और यह अश्व किसका है ? और इस अश्वके साथमें तुम कैसे आये हो ? यह कहो ॥३१॥ ऐसे कहते हुये भीमसेनके आँसू आगये, और दुर्योधनके दिये क्लेशोंको स्मरण करके दुःखसे पूर्ण होगया ॥ ३२ ॥

इस प्रकार भीमसेनके कहे वाक्यको सुनकर दुखित हुये गदने भीमसेनको समझाकर अपना सब वृत्तान्त विस्तारसे कहा ॥ ३३ ॥ जिसको सुनकर प्रसन्न हुआ भीमसेन अनिरुद्धादिक यदूत्तमोंके साथ युधिष्ठिरके पास गये ॥ ३४ ॥ तब यादवोंको आये हुये देखकर राजा युधिष्ठिर प्रसन्न हुए, और हे राजन् ! नकुलादिकोंको साथ लेकर यादवोंके स्वागतके लिये आये ॥ ३५ ॥ तब सब यादवोंने युधिष्ठिरको प्रणाम किया, और युधिष्ठिरजीने सबको आशीर्वाद दिये, फिर सभीको लिवाकर द्वैतवनमें आये ॥३६॥ तब तो आये सभी यादवोंका यथायोग्य यथारुचिसे सूर्यकी दीहुई थालीके प्रतापसे आतिथ्य सत्कार किया ॥३७॥ तब वहाँ एक रात्रि द्वैतवनमें रहकर प्रातःकालही अनिरुद्ध यज्ञका निमन्त्रण पांडवोंको देकर शत्रुके ताप देनेवाले ॥३८॥ यादवोंसहित बहुत शीघ्रतासे घोडेको छुड़ाकर घोड़ेके पीछे सरस्वतीके तटके देशोंको गये ॥ ३९ ॥ तब बहुतसे देशोंको जिनमें कोई शूर

इतिश्रुत्वासतद्वाक्यंतंसमाश्वास्यदुःखितः ॥ भीमायकथयामासवार्तांसर्वांचविस्तरात् ॥ ३३ ॥ श्रुत्वाभीमस्तुमुदितोनिरुद्धाद्यैर्यदूत्तमैः ॥ समन्वितस्तुप्रययौधर्मपुत्रस्यसन्निधौ ॥३४॥ आगतान्यादवाञ्छ्रुत्वाजातशत्रुःप्रहर्षितः ॥ आनेतुंनिर्ययौराजन्नकुलाद्यैःसमन्वितः ॥ ३५ ॥ नेमुस्तंयादवाःसर्वेसोपिदत्त्वावराऽशिषम् ॥ निवासयामासमुदासर्वान्द्वैतवनेनृप ॥ ३६ ॥ आगतेभ्यश्चसर्वेभ्योयथायोग्यंयथारुचि ॥ प्रददौभोजनंराजास्थाल्याभास्करदत्तया ॥३७॥ उषित्वारजनीमेकांप्रभातेकार्ष्णिनंदनः ॥ कृतोनिमंत्रणंदत्त्वापांडवेभ्यःपरंतप ॥ ३८ ॥ यादवैःसहितःशीघ्रंमोचयित्वातुरंगमम् ॥ ययौसारस्वतान्देशान्तुरगस्यचपृष्ठतः ॥ ३९ ॥ अशूराँश्चबहून्देशांस्त्यक्त्वातुगराट्ततः ॥ स्वेच्छयाविचरन्राजन्ययौकौंतलकंपुरम् ॥४०॥ तस्मिन्पुरेमहाराजचंद्रहासश्चवैष्णवः ॥ पालितोयःकुलिन्देनकेरलाधिपतेःसुतः ॥ ४१ ॥ कृष्णदेवप्रसादेनराज्यंतत्रकरोतिहि ॥ कथास्तस्यापिभक्तस्यराजञ्जैमिनिभारते ॥ ४२ ॥ अर्जुनाग्रेविस्तराद्वैनारदेनतुवर्णिता ॥ तस्मिन्पुरेनराःसर्वेकृष्णभक्तावसंतिहि ॥४३॥ ब्रह्मण्याःपुण्यकर्त्तारःपरदारपराङ्मुखाः ॥ स्वदारनिरताःसर्वेकृष्णपूजनतत्पराः ॥४४॥ गोविंदगाथांशृण्वंतिपुराणानितथैवच ॥ जपंतितत्र नामानिराधामाधवयोर्मुदा ॥ ४५ ॥ तुलसीमालिकाभिश्चह्यूर्ध्वपुंड्रधराद्विजाः ॥ गोपीचन्दनकाश्मीरैर्हरिमंदिरचर्चिताः ॥ ४६ ॥

नहीं है, उनको छोडकर अपनी इच्छासे विचरता २ वह अश्व कौंतल नामके नगरमें पहुँचा ॥४०॥ उस नगरमें राजा चन्द्रहास नामका परम वैष्णव रहता था, जो कुलिंदसे पालित और केरलाधिपतिका पुत्र था ॥४१॥ जो श्रीकृष्णदेवजीके अनुग्रहसे वहाँ राज्य करता था, जिस चन्द्रहासकी कथा जैमिनी भारतमें लिखी है ॥ ४२ ॥ जो कथा अर्जुनके आगे नारदजीने कही थी, जिसपर केवल कृष्णके भक्तही सब मनुष्य निवास करते हैं ॥ ४३ ॥ और पुण्य करनेवाले, परस्त्रीको नहीं देखनेवाले, बडे ब्रह्मण्य अपनी पत्नीमें स्नेही और कृष्णपूजनमें तत्पर मनुष्य रहते हैं ॥४४॥ गोविन्दकी कथाओंको और पुराणोंको सुनते हैं, और बडे आनन्दसे राधामाधवके नामोंका जप करते हैं ॥ ४५ ॥ और जिसमें ब्राह्मण तुलसीकी माला और तिलकको धारण करते हैं, गोपीचन्दन और केसरसे जिनके अंगलिप्त हैं ॥ ४६ ॥

कोई तो श्यामबिन्दुको और कोई श्रीको धारण करते हैं, बारह तिलक आठ मुद्राओंको लगाते हैं ॥ ४७ ॥ और जहाँ गृहस्थ लोग गोपीचन्दनकी शीतल मुद्राओंको ब्राह्मणादिक चारों वर्ण नित्य लगाते हैं ॥४८॥ और जहाँ कितनेही विरक्त अति अग्नि संस्कारके लिये तप्त मुद्राओंको लगाते हैं ॥ ४९ ॥ ऐसे उस नगरमें देखता २ वह अश्व राजमंदिरमें पहुँचा, जिसमें चन्द्रहास नामका राजा चन्द्रमाके समान प्रकाश करता है ॥५०॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेध खण्डे भाषाटीकायामेकपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥५१॥ गर्गजी कहते हैं कि, तब श्रीव्रजचन्द्रके दास राजा चन्द्रहासने आये हुये यज्ञके घोड़ेको देखकर घोडेको पकडकर पत्र पढवाया, तब सुनकर बडा प्रसन्न हुआ ॥१॥ हे नृप ! महा भागवत चन्द्रहास उस पत्रको पढवाकर मनमें विचारने लगा कि, मैं आज धन्य हूँ, जो नेत्रोंसे परमात्माके पौत्रको देखूँगा ॥ २ ॥ न जाने, कौनसे पूर्व पुण्यसे कृष्णक तुल्य यदूत्तमोंको देखूंगा, मैंने मायासे मनुष्य देहधारी श्रीकृष्णको नहीं देखा है ॥३॥ और न अनिरुद्धको देखा है, इससे मैं द्वारकाको जाऊँगा, और वहाँ श्रीकृष्णको, बलदेवजीको और प्रद्युम्नको देखूँगा

श्यामबिंदुधराःसर्वेश्रीधराःकेचिदेवहि ॥ तिलकैर्द्वादशैर्युक्ताष्टमुद्राधराःपराः॥४७॥गृहस्थाःशीतलांमुद्रांगोपीचन्दनसंयुताम् ॥नित्यंविप्रादयो वर्णाःप्रभातेधारयंतिहि ॥ ४८ ॥ अग्निसंस्कारणार्थंतुविरक्ताःकेचिदेवहि ॥ तप्तमुद्रांधारयंतिकेचित्संन्यासिनस्तथा ॥ ४९ ॥ तस्मिन्पुरेहयः पश्यन्प्राप्तोभूद्राजमंदिरे ॥ यत्रराजतिराजातुचन्द्रहासश्चचन्द्रवत् ॥ ५० ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेकौंतलपुरगमनंनामैकपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥ गर्गउवाच ॥ समागतंयज्ञहयंविलोक्यश्रीचन्द्रहासोव्रजचन्द्रदासः ॥ सद्योगृहीत्वाकिलतस्यपत्रंसवाचयामासतदैवहृष्टः ॥१॥ तत्पत्रंवाचयित्वाहमहाभागवतोनृप ॥ अहोपश्यामिनेत्राभ्यांपौत्रंश्रीपरमात्मनः ॥ २ ॥ केनपुण्येनपूर्वेणकृष्णतुल्यंयदूत्तमम् ॥ मयानदृष्टःश्रीकृष्णोमायामानुषविग्रहः ॥३॥ सहितःकार्ष्णिजेनाहंतस्माद्गच्छामिद्वारकाम् ॥ तत्रपश्यामिश्रीकृष्णंबलंप्रद्युम्नमेवच॥४॥ उग्रसेनंमहाराजंश्रीकृष्णेनापिपूजितम् ॥ इत्युक्त्वानिर्ययौराजाह्यनिरुद्धंविलोकितुम् ॥५॥ गृहीत्वाचोपचारांश्चगंधपुष्पाक्षतादिकान्॥दिव्यवस्त्राणिरत्नानिगृहीत्वातुरगंचसः ॥६॥ सर्वैःपुरजनैःसार्द्धमालातिलकशोभितैः ॥ गीतावादित्रघोषैश्चपद्भ्यांराजाजगामह ॥७॥ आगततंनृपंदृष्ट्वानागरैःसहितंनृप ॥ अनिरुद्धोमुदायुक्तोमंत्रिणंचेदमब्रवीत् ॥ ८ ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ कोयंराजमहामंत्रिन्सर्वैःपुरजनैःसह ॥ आगतो मिलनार्थं वातस्यवार्तांवदस्वनः ॥ ९ ॥ उद्धवउवाच ॥ नृपोयंचंद्रहासाख्योकेरलाधिपतेःसुतः ॥ मृतयोर्मातापित्रोश्चकुलिंदेनानुपालितः ॥ १० ॥

॥ ४ ॥ महाराज उग्रसेनको भी जिनका श्रीकृष्ण मान करते हैं देखूँगा, यह कहकर चन्द्रहास राजा अनिरुद्धके दर्शनको नगरमेंसे निकला ॥५॥ गन्ध, पुष्प, अक्षत, दिव्यवस्त्र और रत्न,इस प्रकार सर्वोपचारोंको लेकर निकला,॥६॥माला और तिलकसे शोभित, सब नगर निवासियोंको साथ लेकर गीत और बाजोंके साथ पाँवोंसे राजा आया॥७॥नगरवासियोंके सहित आये हुये राजाको देखकर अनिरुद्धने मन्त्रीसे कहा कि ॥८॥ कि हे मंत्रीजी ! यह राजा कौन है ? जो अपने सब नगरवासियोंको साथ लेकर आया है, यह मिलनेके लिये आया है, अथवा किसी अन्य प्रयोजनसे आया है ! सो सब बात मुझसे कहिये ॥९॥ तब मंत्री उद्धवजीने उत्तर दिया कि महाराज ! यह राजा चन्द्रहास है, जो केरलाधिपतिका पुत्र है, मातापिताके मर जानेके कारण जिसका कुलिन्दने पालन किया है ॥ १० ॥

जिसको बालकपनसें श्रीकृष्णचन्द्रनेंही बचाया, जो श्रीकृष्णका पूर्ण भक्त है, और जिसने दुष्टबुद्धि नामके प्रधानकी पुत्रीसे विवाह किया है ॥ ११ ॥ जिसके लिये कुन्तल राजा राज्य देकर वनमें गया है, इस चन्द्रहासका वृत्तान्त मैंने द्वारकामें सुना है, श्रीकृष्णनेंही सब वृत्तान्त मुझसें कहा था ॥ १२ ॥ जिसको दर्शन देनेके लिये द्वारकानाथ स्वयम् यहाँ आयेंगे, उद्धवजीके कथनको सुनकर अनिरुद्धको बड़ा विस्मय हुआ ॥१३॥ इतनेमेंही चन्द्रहासने जाकर अपने सब मनुष्योंसहित यज्ञके घोड़को भेंटकर प्रणाम किया, और बहुतसे पदार्थ और द्रव्य भेंट किया ॥१४॥ पचास हजार तो हाथी, एक लाख रथ, एक करोड़ घोडे, एक हजार स्वर्ण मुद्राएँ, एक हजार रोज, एक हजार पालकियाँ, दश लाख गौएं दश, हजार शिञ्ज, एक करोड भार सुवर्ण, और चार करोड भार चांदी, तथा एक लाख आभूषण ये सब वस्तुएं चन्द्रहासने अनिरुद्धको निवेदन की ॥१५॥१६॥१७॥ ये सब भेंटकर

आबाल्यात्कृष्णचन्द्रस्यभक्तस्तेनापिरक्षितः ॥ दुष्टबुद्धेःप्रधानस्यसुतांयःपरिणीतवान् ॥११॥ यस्मैकुंतलकोराजाराज्यंदत्त्वावनंययौ ॥ तस्या-ख्यानंद्वारकायांमयाकृष्णमुखाच्छ्रुतम् ॥ १२ ॥ यस्मैस्वदर्शनंदातुंश्रीकृष्णोत्रागमिष्यति ॥ उद्धवस्यवचःश्रुत्वाविस्मितोभूद्यदूत्तमः ॥१३॥ गत्वानिरुद्धनिकटेचन्द्रहासोजनैर्वृतः ॥ श्यामकर्णंददौप्रीतोधनानिबहुशस्तथा ॥१४॥ गजानामर्द्धलक्षंचरथानांलक्षमेवच ॥ तुरगाणामेकको-टिंमुद्राणांहिसहस्रकम् ॥ १५ ॥ गवयानांसहस्रंचशिबिकानांसहस्रकम् ॥ धेनूनांदशलक्षंचशिञ्जानामयुतंतथा ॥१६॥ एककोटिंसुवर्णानांरौ-प्याणांचचतुर्गुणम् ॥ लक्षमाभरणानांचमाधवायददौनृपः ॥ १७ ॥ चन्द्रहासउवाच ॥ नमोऽनिरुद्धायसुरोत्तमायश्रीकृष्णपौत्रायजनेश्व-राय ॥ प्रद्युम्नपुत्राययदूत्तमायदेवायपूर्णायनमःपराय ॥१८॥ इतिभक्तवचःश्रुत्वाप्रसन्नोमदनात्मजः ॥ संश्लाघ्यप्रददौतस्मैप्रदीप्तांरत्नमालिकाम् ॥१९॥ चन्द्रहासस्तुराजेन्द्रराज्येकृत्वातुमंत्रिणम् ॥ स्वपुराद्यादवैःसार्द्धंगंतुंचालंमनोऽकरोत् ॥२०॥ उषित्वातत्पुरेसर्वैर्ह्येकरात्रंयदूत्तमाः ॥ प्रातःकालेययूराजंश्चन्द्रहासेनसंयुताः ॥ २१ ॥ जगामह्यग्रतस्तेभ्योतुरगःपत्रशोभितः ॥ ततःसप्तवतींदृष्ट्वाह्यावर्त्तशतसंकुलाम् ॥ २२ ॥ तटं तरंगैर्निघ्नतींदीर्घवेगांदुरत्ययाम् ॥ नौकाभिःसंयुतांदृष्ट्वावीरःप्रद्युम्ननन्दनः ॥ २३ ॥

हाथ जोड़कर स्तुति करने लगा, कि देवताओंमें उत्तम अनिरुद्धके लिये, श्रीकृष्णचन्द्रके पौत्रके लिये, मनुष्योंके स्वामीके लिये मेरा प्रणाम है, प्रद्युम्नके पुत्र यादवोंमें उत्तम पूर्णदेव परको मेरा प्रणाम है ॥१८॥ ऐसे, भक्त चन्द्रहासके कथनको सुनकर अनिरुद्ध प्रसन्न हुये, और चन्द्रहासकी बहुत प्रशंसा की, और बड़ी प्रदीप्त एक रत्नोंकी माला उसके कंठमें पहिना दी ॥ १९ ॥ तब उस चन्द्रहासने राज्य कार्य मंत्रीको देकर अपने नगरसें यादवोंके साथ चलनेका निश्चय किया ॥२०॥ तब सब यादवश्रेष्ठ एक रात्रि वहीं रहे, फिर प्रातः कालही चन्द्रहासको साथ लेकर प्रयाण किया ॥२१॥ उनके आगे पत्रसें शोभित अश्व चला, उसके बाद सैकड़ों भँवर पड़े ऐसी सप्तवती नदीको देखकर ॥२२॥ जो नदी अपनी तरंगोंसे किनारेको तोड़ती है, दीर्घ वेगके कारण उल्लंघन करने योग्य नहीं है, ऐसी उस नदीको बड़े वीर प्रद्युम्न नन्दनने देखकर ॥ २३ ॥

जिसमें अनेक बड़ी २ नौकाऐं हैं, ऐसी उस नदीके सौ अक्षौहिणी पार जानेके लिये विचार किया, तब अनिरुद्धने हाथीपर बैठकर साम्बादिकसहित ॥ २४ ॥ हे नृपश्रेष्ठ ! नावको छोड़कर नदीके जलमें प्रवेश किया, तब पहिले जल गँदला होगया ॥२५॥ फिर कीचड़ जिसमें बहे ऐसी भूमि होगई, यह बड़ा आश्चर्य हुआ, तब सब यादव हँसते २ विस्मययुक्त होगये ॥२६॥ उसके बाद वह अश्व धीरे २ चला, और वह चलते २ जहाँ सिन्धु नदी और समुद्रके बीचमें नारायणसर हैं, वहाँ गया ॥२७॥ उस स्थानपर प्याससे व्याकुल हुये उसने तीर्थका जल पिया, इतनेमेंही अनिरुद्धादिक सब यादव आगये ॥२८॥ धर्मके द्वेषी नीच म्लेच्छोंको युद्धमें जीतकर आये हुये यादवोंने वहाँ घोडेको देखकर सभीने सरोवरमें स्नान किया ॥२९॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां द्विपश्चाशत्तमोध्यायः ॥५२॥ गर्गजी कहते हैं कि वह उग्रसेनके यज्ञका घोड़ा बड़े २ वीर राजाओंको देखता हुआ भरतखण्डमें विचरता हुआ और दूसरे देशोंको गया ॥१॥ हे विशांपते ! ऐसे उस घोड़ेके विचरते हुये फाल्गुन मास आगया, जो मास सभीको घरकी याद दिलानेवाला है ॥२॥

अक्षौहिणीशतयुतोपारंगंतुंमनोदधे ॥ सपूर्वंगजमारुह्यसांबाद्यैःपरिवेष्टितः ॥२४॥ नावंत्यक्त्वानृपश्रेष्ठप्रविवेशनदीजले ॥ प्रथमंसलिलंतस्यांस मलंचबभूवह ॥२५॥ ततःपंकद्रवाभूमिश्चित्रमेतद्बभूवह ॥ हसंतोयादवाःसर्वेविस्मयंपरमंययुः ॥२६॥ अथव्रजंस्तुरंगस्तुसजगामशनैःशनैः ॥ नारायणसरोयत्रमध्येसिंधुसमुद्रयोः ॥ २७ ॥ पपौतीर्थजलंतत्रतुरगश्चतृषातुरः ॥ ततस्तत्राययुःसर्वेऽनिरुद्धाद्यायदूत्तमाः ॥२८॥ धर्मद्वेषकरा- न्नीचान्म्लेच्छाञ्जित्वामृधांगणे ॥ दृष्ट्वातुरंगमंतत्रस्नानंचक्रुःसरोवरे ॥२९॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेद्विपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥५२॥ ॥ गर्गउवाच ॥ पश्यन्नृपान्महावीरानुग्रसेनतुरंगमः ॥ विचरन्भारतेवर्षेदेशानन्याञ्जगामह ॥ १ ॥ एवंविचरतस्तस्यहयस्यचविशांपते ॥ आगतःफाल्गुनोमासःसर्वेषांगृहदर्शिकः ॥ २ ॥ आगतंफाल्गुनंदृष्ट्वाचानिरुद्धस्तुशंकितः ॥ उवाचमंत्रिप्रवरमुद्धवंबुद्धिसत्तमम् ॥ ३॥ अनि- रुद्धउवाच ॥ चैत्रेश्रीयादवेंद्रस्तुमंत्रिन्यज्ञंकरिष्यति ॥ वयंतुकिंकरिष्यामोदिवसाबहवोनहि ॥ ४ ॥ भूमौतुरंगहर्त्तारोनृपाःकेतेवशेषिताः ॥ तेषांचवदनामानिमह्यंशुश्रूषवेत्वरम् ॥५॥ उद्धवउवाच ॥ नसंतिभूतलेशूरागगनेसंतिवाहरे ॥ तस्माद्यदुपुरींगच्छस्वर्णहारांचद्वारकाम् ॥ ६ ॥ इतितस्यवचःश्रुत्वाह्यनिरुद्धःप्रहर्षितः ॥ तस्यापिवचनंराजन्नश्वाग्रेपुनरब्रवीत् ॥७॥ एवंतद्वाक्यमाकर्ण्यसर्वज्ञातातुरंगमः॥ प्रययौद्वारकांशी- घ्रंकिष्किंधांहनुमानिव ॥ ८ ॥

तब फाल्गुनको आया देखकर अनिरुद्धजी शंकित होकर बुद्धिमें उत्कृष्ट मंत्रिमुख्य उद्धवजीसे बोले ॥३॥ अनिरुद्धजी बोले कि, हे मंत्रिन् ! इस चैत्र महीनेमें उग्रसेनजी यज्ञ करेंगे, अब हमको क्या करना चाहिये ? दिन तो बहुत थोड़े रह गये हैं ॥४॥ अब भूमिपर अश्वके पकड़नेवाले कितने राजा बाकी हैं, उन राजाओंके नाम कहो, मैं जल्दी सुनना चाहता हूँ ॥५॥ तब उद्धवजी बोले कि, अब भूमिमें तो घोड़ेको पकडनेवाला राजा कोई नहीं है, आकाशमें हों तो भलेही हों, अब आप स्वर्णके द्वारवाली द्वारकाको चलिये॥६॥ उद्धवकी कही हुई इस बातको सुनकर अनिरुद्धजी हर्षित हुये, और उद्धवकी कही हुई बात घोडेके सामने कही कि, हे वाजिन् ! अब कोई वीर हो, तो वहाँ चलो, नहीं तो अपनी द्वारिकाको चलो ॥७॥ अनिरुद्धके इस कथनको सुनकर वह सर्वज्ञाता अश्व शीघ्रतासे द्वारकाजीकोही चला, जैसे हनुमान् किष्किन्धाको ॥ ८ ॥

तब उस घोड़के पीछे घोडोंपर बैठे राजा लोग चले, जिन घोडोंके पवनके और मनके जैसे वेग हैं, उन घोड़ोंपर सवार होकर भानु और साम्बादिक सब घोड़के पीछे चले ॥९॥ वे सब स्वर्णकी रस्सियोंसे घोंडेको बाँधकर हाथसे पकड कर सेनाके बीचमें करके शंकित होकर द्वारकाको चले ॥१०॥ गीत गाते हुये, बाजे बजाते हुये, दुन्दुभियोंके शब्द करते हुये, भूमिको कम्पाते हुये, सब शत्रुओंको त्रास उत्पन्न करते हुये ॥ ११ ॥ यादवोंके साथ जाते हुये घोडेको देखकर नारदजी दूतकी तरह लड़ाई करानेके लिये इन्द्रके पास गये ॥१२॥ इन्द्रके सामने उस घोडेका सब वृत्तान्त विस्तार पूर्वक कहा, तब नारदके कथनको सुनकर इन्द्रने घोडेके हरनेका विचार किया ॥१३॥ तब इन्द्र छुप कर घोडेको देखनेके लिये मनुष्य लोकमें आया, आश्चर्य है कि विष्णुकी मायासे देवताभी मोहित होजाते हैं ॥१४॥ तो जब कुबेर, ब्रह्मा, और इन्द्रादिक भी भगवान्की मायामें मोहित होते हैं, तब और

तस्यापिपृष्ठतःशूराद्रुद्रुवुस्तेतुरंगमैः ॥ वायुवेगैर्मनोवेगैर्भानुसांबादयोनृप ॥९॥ गृहीत्वातुरंगसर्वैंबद्धातंस्वर्णदामभिः ॥ सेनायामन्तरेकृत्वा शंकिताःस्वपुरींययुः ॥ १० ॥ गीतवादित्रघोषैश्चनादयंतश्चदुंदुभीन् ॥ चालयंतश्चपृथिवींत्रासयन्तःखलान्रिपून् ॥ ११ ॥ व्रजंतंयादवैःसार्द्धंतुरगंवीक्ष्यनारदः ॥ दूतवत्कलहार्थायप्रययौशक्रसन्निधिम् ॥१२॥ तस्याग्रेकथयामासवाजिवार्तांसविस्तरात् ॥ श्रुत्वाशक्रस्तुराजेंद्र हयंहर्तुं मनोदधे ॥१३॥ आययौभूतलेशीघ्रंद्रष्टुंभूत्वातिरोहितः ॥ अहोविष्णोर्मायया चसर्वैंमुह्यंतिदेवताः ॥ १४ ॥ कुबेरब्रह्मशक्राद्याभूजनानांतुका कथा॥सगत्वातत्रवृष्णीनांसेनांसर्वांददर्शह॥१५॥प्रलयाब्धिसमांरौद्रांवृतांशूरैश्चकोटिभिः ॥ यादवानांमहासेनाशुद्धटांवीक्ष्य शंकितः ॥१६॥ ययौकृष्णभयाद्राजञ्छीघ्रंशक्रोमरावतीम् ॥ कृष्णदेवस्यकृपयायुद्धस्याशांविसृज्यच॥१७॥ अथव्रजंतीचतुरंगणीभिः सेनानिरुद्धस्यमहात्मनश्च ॥ गजैरथैर्वैतुरगैर्नरैश्चरेजेमघोनःपृतनेवस्वर्गे ॥ १८ ॥ गजाःसर्वेंपृथग्भूताःपृथग्भूतारथाःस्तथा ॥ पृथग्भूतास्तुरंगाश्चपृथग्भूतापदातयः ॥ १९ ॥ अनुजग्मुर्द्वारकांतेहर्षिताःकृष्णपोतकाः ॥ जंबूद्वीपस्यजेतारोलोकद्वयजिगीषवः ॥ २० ॥ अग्रेवाहंपुरस्कृत्य वादित्रैर्विविधैरपि ॥ गीतनृत्यादिभीराजन्संयुक्तास्तेयदूत्तमाः ॥ २१ ॥

साधारण मनुष्योंकी तो बातही क्या है ॥१५॥ तब प्रलयके समुद्रके समान बड़ी भयंकर ? करोड़ों वीरोंसे युक्त यादवोंकी उस प्रचण्ड सेनाको देखकर इन्द्र शंकित होगया ॥१६॥ हे राजन् ! तब कृष्णके भयसे शंकित होकर कृष्णदेवकी कृपासे युद्धकी आशाको छोड़कर इन्द्र अमरावतीको चला गया ॥ १७॥ उसके बाद चतुरंगिणी सहित महात्मा अनिरुद्धकी चली जारही, हाथी, रथ, अश्व और पदाति (पैदल सैनिक) सहित वह सेना स्वर्गमें इन्द्रकी सेनाकी तरह सुशोभित हुई ॥१८॥ जिसमें सब हाथी अलग थे, रथ अलग थे, घोड़े जिसमें पृथक् थे, और पैदल सैनिक पृथक् थे ॥१९॥ तब वे कृष्णके बालक जम्बू द्वीपके जीतनेवाले और दोनों लोकोंको जीतना चाहें ऐसे वे बडे हर्षित होकर घोडेके पीछे पीछे चले ॥२०॥ घोड़ेको आगे करके अनेक प्रकारके बाजे बजाते हुये, गीत, नृत्यादिकोंके सहित वे सब यदूत्तम द्वारकाको गये ॥ २१ ॥

तब साम्बादिकोंके सहित और इन्द्र नीलादिक तथा चन्द्रहासादिक हजारों राजाओंसे भूषित अनिरुद्धने ॥२२॥ साम्बकी अनुमतिसे आनर्त देशमें प्रवेश करके दो योजनसे द्वारकामें सूचना देनेके लिये उद्धवजीको भेजा ॥२३॥ इस प्रकार प्रेरित किये हुये उद्धवजी अनिरुद्धको नमस्कार करके शीघ्रतासे पालकीमें बैठकर हर्षित हुये द्वारकाको गये ॥ २४ ॥ जहाँ मुनि मंडलीमें उग्रसेनजी श्रेष्ठ पिंडारक नामके क्षेत्रमें बैठे थे जो सभा मण्डपसे भूषित था ॥२५॥ और वसुदेवादिक और रामकृष्णादिक तथा बडे बली प्रद्युम्नादिक सब बैठे हुये यज्ञकी रक्षा कर रहे थे ॥२६॥ उस यदु सभामें जाकर यदुराज महाराज उग्रसेनजीको प्रणाम करके और वसुदेवजीको, कृष्ण बलरामको, और प्रद्युम्नादिक सब यदूत्तमोंको ॥२७॥ यथोचित सबको प्रणाम कर सामने खडे होकर प्रसन्न हुये वसुदेवादिकोंके पूछनेपर उद्धवने सब वृत्तान्त कहा ॥ २८ ॥ उद्धवजी बोले कि, हे राजेन्द्र ! आपका घोड़ा निर्विघ्नतासे

अनिरुद्धस्तुसांबाद्यैरिंद्रनीलादिभिर्नृप ॥ चन्द्रहासादिभिर्भूपैःसहस्रैरभिभूषितः ॥२२॥ सांबस्यानुमतेनापिचानर्त्तंसंप्रविश्यच ॥ उद्धवंप्रेषयामा सद्वारकांयोजनद्वयात् ॥२३॥ एवंप्रणोदितःसोपिनत्वारुक्मवतीसुतम् ॥ शिबिकांशीघ्रमारुह्यहर्षितःप्रययौपुरीम् ॥२४॥ यत्रास्तेह्युग्रसेनस्तु मुनिभिःपरिवारितः ॥श्रेष्ठेपिंडारकक्षेत्रेसभामंडपभूषिते॥२५॥ वसुदेवादयोयत्ररामकृष्णादयोनृप ॥ प्रद्युम्नाद्याश्चबलिनो यज्ञंरक्षन्तिनित्यशः ॥ २६ ॥ गत्वानृपसभांतत्रयादवेंद्रंप्रणम्यच ॥ वसुदेवंबलंकृष्णंप्रद्युम्नादीन्यदूत्तमान् ॥ २७ ॥ सर्वान्नत्वायथायोग्यंतेषामग्रेससंस्थितः ॥ कथयामासवृत्तांतंपृष्टस्तैर्हृष्टमानसैः ॥ २८ ॥ उद्धवउवाच ॥ आगतस्तवराजेंद्रनिर्विघ्नेनतुरंगमः ॥ आगताश्चानिरुद्धाद्याःकुशलेनयदूत्तमाः ॥२९॥ गोविंदस्यापिकृपयाचेंद्रनीलःसमागतः ॥ हेमांगदःसुरूपाचह्यागतामण्डलेश्वरी ॥३०॥ निर्जितस्तुवृकोयुद्धेभीषणेनसमन्वितः ॥ बिंदुश्चैवानुशाल्वश्चस्वपुराद्द्वौसमागतौ ॥३१॥ उपद्वीपेपांचजन्यबल्वलोनिर्जितोऽसुरैः ॥ तस्मिन्युद्धेमहदेशेनह्यनिरुद्धसुनन्दनौ ॥ ३२ ॥ निहतौचरुषाढचेनयादवाश्चैवमारिताः॥तत्रगत्वात्वसौकृष्णोजीवयामासयादवान्॥३३॥ तस्मात्कृष्णस्यकृपयावयंसर्वेसमागताः ॥ निर्जिताःकौरवाःसर्वेभीष्मोह्यत्रसमागतः ॥ ३४ ॥ दृष्टाद्वैतवनेस्माभिःपांडवादुःखकर्शिताः ॥ व्रजेगोपगणाश्चैवकृष्णविक्षेपविह्वलाः ॥ ३५ ॥

अखिल भूमण्डल पर घूमकर आगया है, और अनिरुद्धादिक सब यदुश्रेष्ठ भी कुशल पूर्वक विजय करके आगये हैं ॥ २९ ॥ और गोविन्दकी कृपासे इन्द्र नील राजाभी आया है, और हेमांगद तथा मंडलेश्वरी सुरूपाभी आई है ॥३०॥ और भीषण सहित वृकासुरको भी जीत लिया है, और विन्दु तथा अनुशाल्व दोनों अपने नगरसे साथ आये हैं ॥३१॥ और पाञ्चजन्य उपद्वीपमें जाकर असुरों सहित बल्वलको जीत लिया है, उस युद्धमें क्रोधमें मग्न हुये महादेवने अनिरुद्ध और सुनन्दनको मार डाला था ॥३२॥ और सब यादवोंको मार डाला था, वहाँ जाकर श्रीकृष्णने सब यादवोंको जिला दिया ॥३३॥ इससे श्रीकृष्णकी कृपासे हम सब यहाँ आये हैं, और सब कौरव हमने जीत लिये, जिनमें भीष्मजीभी यहाँ आये हैं ॥३४॥ और फिर द्वैत वनमें जाकर दुखमें कर्शित सब पाण्डव हमने देखे, और कृष्णके वियोगमें विह्वल हुये सब गोप गोपियोंके गणभी हमने देखे ॥ ३५ ॥

और बालकपनसेही कृष्णका भक्त चन्द्रहास आया है, और आपके भयसे भीत हुये अनेकों राजा आये हैं ॥ ३६ ॥ गर्गजी कहते हैं, इस प्रकार उद्धवके मुखसे उग्रसेनजी कृष्णके गुणोंको सुनकर प्रेमके मारे आनन्दके समुद्रमें मग्न होकर कुछ भी नहीं बोले ॥३७॥ फिर प्रसन्न होकर उद्धवजीको मणियोंका हार, अनेकों रत्न, वस्त्र पालकी, हाथी, रथ, और घोड़े दिये ॥३८॥ उसके बाद श्रीभगवान् कृष्णने बड़े हर्षसे जल्दीसे उठकर उस सभामें उद्धवको छातीसे लगाकर आलिंगन किया ॥३९॥ तब हर्षमें पूर्ण हुए श्रीउग्रसेन श्रीभगवान्से बोले कि हे श्रीकृष्ण ! तुम अनिरुद्धको लिवालानेको जाओ ॥ ४० ॥ श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेध खण्डे भाषाटीकायां त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥ गर्गजी कहते हैं कि तब उग्रसेनके कहनेसे वसुदेवादिक सब यादव, हे नृप ! दिग्विजय करके आये हुये अनिरुद्धको लिवानेको गये ॥ १ ॥ हे नृपेश्वर ! हाथी, रथ, घोड़े और पालकियोंमें बैठ बैठ-

आबाल्यात्कृष्णभक्तस्तुचंद्रहासःसमागतः ॥ भीताश्चबहवोभूपाआगतास्तेभयात्तव ॥ ३६ ॥ गर्गउवाच ॥ इतिकृष्णगुणाञ्छ्रुत्वाह्युद्धवाद्यादवेश्वरः॥नकिंचिदूचेप्रेम्णातुमग्नश्चानन्दसागरे॥३७॥मणिहारंददौतस्मैरत्नानिचांबराणिच॥शिबिकावारणरथहयादीनुद्धवायसः॥३८॥ ततः कृष्णस्तुभगवाञ्छीघ्रमुत्थायहर्षितः ॥ सख्यासार्द्धंसभायांचचकारपरिरंभणम् ॥३९॥ उग्रसेनउवाचाथगोविंदंहर्षपूरितः॥ आनेतुंचानिरुद्धंवैगच्छश्रीकृष्णयादवैः ॥ ४० ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेउद्धवागमनंनामत्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥ गर्गउवाच ॥ अथोग्रसेनवचनाद्वसुदेवादयोनृप ॥ नेतुंविनिर्ययुः सर्वेह्यनिरुद्धंसमागतम्॥१॥ गजैरथैस्तुरंगैश्चशिबिकाभिर्यदूत्तमाः ॥ श्रीकृष्णबलदेवाद्याःप्रद्युम्नाद्यानृपेश्वर॥२॥ उद्धवाद्यागजस्थाश्चहयंद्रष्टुंविनिर्गताः॥देवकीप्रमुखानार्योमातरःकृष्णरामयोः॥३॥ शिबिकाभिर्विचित्राभिर्निर्ययुर्नृपसत्तम ॥ रुक्मिणीसत्यभामाद्यानार्य्यःकृष्णस्यएवहि ॥ ४ ॥ शिबिकाभिर्ययुःसर्वाःसहस्राणिचषोडशः ॥ लाजानांमौक्तिकानांचकुसुमानांनृपेश्वर ॥ वर्षंकर्त्तुंययुःशीघ्रंगजस्थाश्चकुमारिकाः ॥ ५ ॥ कलशैर्जलहारिण्योनिर्ययुर्जलपूरितैः ॥ सौभाग्यवत्योब्राह्मण्योगंधपुष्पाक्षतांकुरैः ॥ ६ ॥ वारांगनाश्चरूपिण्योनृत्यंकर्त्तुंविनिर्ययुः ॥ शोभिताःसर्वशृंगारैर्गायंत्यश्चगुणान्हरेः ॥ ७ ॥

कर श्रीकृष्ण बलदेवादिक और प्रद्युम्नादिक सब यादव द्वारकामेंसे निकले ॥ २ ॥ उस समय उद्धवादिक सब हाथियोंपर बैठकर घोड़ेको देखनेके लिये निकले, श्रीकृष्ण बलदेवकी माताएं देवकी आदिक स्त्रियाँ विचित्र पालकियोंमें बैठकर अश्वमेधके अश्वको देखनेको निकलीं, और रुक्मिणी तथा सत्यभामादि श्रीकृष्णकी सोलह हजार स्त्रियाँ भी पालकियोंमें बैठकर उस यज्ञके घोड़ेके दर्शनके लिये निकलीं ॥३॥४॥ और हे नृपेश्वर ! हाथियोंपर बैठकर कुमारिकाएं धानकी खील, मोती और पुष्पोंकी वर्षा करनेको आईं ॥ ५ ॥ और हे राजन् ! सौभाग्यवती ब्राह्मणियाँ जलके भरे गन्ध, अक्षत पुष्प जिनमें पड़े ऐसे सुवर्णके कलशोंको माथेपर रखे मंगल कलशोंको लेकर आईं ॥ ६ ॥ और ऐसेही रूपवती वेश्याएं अपने २ शृंगार किये हरिके गुणोंका गान करनेको नृत्य करती हुई निकलीं ॥ ७ ॥

और सभी यादव शंख, दुन्दुभियोंके शब्द और बेद ध्वनिके शब्दोंसे वारणेन्द्रको आगे करके गर्गादि मुनियोंको साथ लेकर निकले ॥८॥ बहुतसी पताकाओंसे सुशोभित अपनी पुरीको देखते हैं सुगन्धित जलोंसे मार्ग जिसके छिडके हुये हैं, ऐसे केलेके स्तम्भ और बन्दन वारोंसे सुशोभित मणिके दीपकोंसे प्रकाशिता, अनेक चन्दोहाओंसे मण्डिता, सुन्दर नरनारियोंसे भरी हुई सुवर्णके कलशोंसे झलमला रही, पक्षियोंके मनोहर शब्द जिसमें होरहे, अगुरुके धुऐंके गुब्बारे जिसमें उठ रहे, जिनसे सुशोभिता, दूसरी इन्द्रकी अमरावतीकी तरह लग रही है ॥९॥१०॥११॥ ऐसी अपनी पुरीको देखते २ वे यादव जहाँ सेना सहित घोड़ेको लिये हुए अनिरुद्धजी थे, वहाँ पहुँचे ॥ १२ ॥ तब उनको सामनेसे आते हुए देखकर अनिरुद्धजी रथमेंसे कूदकर अश्वको सामने करके अपने साथी सब राजाओंको साथ लेकर आगे आये ॥१३॥ और पहिले कुलाचार्य गर्गको प्रणाम किया, फिर वसुदेवजीको, बलदेवजीको श्रीकृष्णको फिर पिता प्रद्युम्नको, पृथक् पृथक् प्रणाम कर फिर उनको यज्ञका घोड़ा भेंट किया ॥ १४ ॥ तब सबने प्रसन्न होकर आशीर्वाद दिये, और प्रेममें मग्न होकर बोले, हे

शंखदुंदुभिनादेनब्रह्मघोषेणयादवाः ॥ वारणेंद्रंपुरस्कृत्यगर्गाद्यैर्मुनिभिर्युताः ॥ ८ ॥ विलोकयंतःस्वपुरींपताकाभिश्चमंडिताम् ॥ सिक्तमार्गां
गंधजलैरंभातोरणशोभिताम् ॥ ९ ॥ प्रदीप्तांमणिदीपैश्चवितानैर्विविधैरपि ॥ दिव्यनारीनरैर्युक्तांसुवर्णसवनैर्वृताम् ॥१०॥ पक्षिणांकलशब्देनं
धूम्रेणागुरुगंधिना ॥ शोभितांकृष्णनगरींशक्रस्येवामरावतीम् ॥११॥ इत्थंविलोकयंतस्तेप्राप्ताःशीघ्रंचयादवाः ॥ यत्रानिरुद्धःसहयोवर्त्ततेसेन-
यावृतः ॥ १२ ॥ तान्दृष्ट्वाचानिरुद्धस्तुस्वरथादवतीर्यच ॥ पुरस्कृत्यहयंचाग्रेनृपैःसार्द्धंसमाययौ ॥१३॥ पूर्वंनत्वाकुलाचार्यंवसुदेवंबलंतथा ॥
श्रीकृष्णंपितरंचैवतेभ्यश्चाश्वंददौपुनः ॥ १४ ॥ शुभाशिषोददुस्तेतुप्रीताःप्रेमपरिप्लुताः ॥ त्वयासाधुकृतंवत्ससर्वाञ्जित्वारिपून्नृपान् ॥१५॥
आनयामासतुरगंमध्येसंवत्सरस्यच ॥ इतितद्वचनंश्रुत्वानिरुद्धःप्राहमांपुनः ॥१६॥ कृपयातवविप्रेंद्रमार्गेमार्गेमृधेमृधे ॥ बहुभिःशत्रुभिश्चाश्वो
गृहीतोपिविमोचितः ॥ १७ गुरोरनुग्रहेणैवसुखीभवतिमानवः ॥ तस्माद्गुरुंचविधिनायथाशक्त्याप्रपूजयेत् ॥ १८ ॥ भूपास्ततःसमागत्यस-
मीपेरामकृष्णयोः ॥ नेमुःपृथक्पृथक्सर्वेप्रीताःप्रेमपरिप्लुताः ॥१९॥ सर्वान्दृष्ट्वानतान्भूपाञ्छ्रीकृष्णोबलसंयुतः ॥ चंद्रहासंचगांगेयंबिन्दुंचै-
वानुशाल्वकम् ॥ २० हेमांगदंचेंद्रनीलंपरिरेभेहरिर्मुदा ॥ कृष्णभक्तात्परःकोपितस्माद्भूमौनविद्यते ॥ २१ ॥

वत्स ! तुमने बड़ा अच्छा किया, जो अपने शत्रुओंको जीतकर ॥१५॥ वर्षके अन्दरही घोडेको ले आये हो, उनके इस कथनको सुनकर अनिरुद्धजीने मुझसे यह कहा कि, हे प्रभो ! हे विप्रेन्द्र ! मार्ग मार्गमें और संग्राम संग्राममें बहुत २ शत्रुओंने अश्वको पकड़ा, किन्तु आपकी कृपासे सब जगहसे छुड़ा लिया ॥१६॥१७॥ सो हे महाराज ! यह बात सत्य है कि, गुरुकी कृपासे ही मनुष्य सुखी होता है, इसलिये गुरुकाही यथाशक्ति विधिसे पूजन करना चाहिये ॥ १८ ॥ उसके बाद सब राजाओंने आकर श्रीराम और कृष्णको प्रणाम किया, पृथक् २ प्रणाम कर सब राजा प्रेममें मग्न होगये ॥१९॥ तब श्रीकृष्ण बलरामने सब राजाओंको नम्र हुये देखकर चन्द्रहास, भीष्म, बिंदु अनुशाल्व, हेमांगद, इन्द्रनील इन सभीसे बड़ी प्रसन्नता पूर्वक भगवान्ने एकएकसे आलिंगन किया, इससे देखो, कृष्ण भक्तसे अधिक इस जगत्में कोई नहीं है ॥ २० ॥ २१ ॥

उसके बाद जीतकर आये अनिरुद्धको हाथीपर बैठाकर द्वारकामें ले गये,फिर हर्षित हुए सब यादवों और पुत्र पौत्रोंसहित वसुदेव प्रसन्न हुए,हे नृपेश्वर !॥२२॥ मकरंदसहित पुष्पोंकी तो देवांगनाओंने और मोतियोंकी तथा धानकी खीलोंकी हाथियोंपर बैठी हुई नगरकी कुमारिकाओंने भी वर्षाकी ॥२३॥ नृत्य, बाजे और गीतसे और वेदध्वनिसे शोभित छिड़के हुए मार्ग जिसके ऐसी पुरीको देखते पिण्डारक तीर्थको गये ॥२४॥ तब यादवोंके उस दुर्लभ वैभवको देखकर सब राजा लोग अपने अपने वैभवको विस्मित होकर निन्दा करने लगे ॥२५॥ तब उन राजाओंने वह यज्ञस्थल देखा, जिसमें घृतके गन्धका धुआँ छा रहा था, और वेदध्वनि हो रही थी,और असिपत्रव्रतसे युक्त था॥२६॥तब यदूत्तम राजा उग्रसेनको देखकर इन्द्रियोंके दमन करनेवाले इन्द्रके समान प्रतापी पुष्टांग और गौर जिनका अंग, बड़े तेजस्वी ॥२७॥ कुशासनपर विराजमान, नियमके निमित्तसे भूषणरहित मृगके सींगको

ततोनिरुद्धंजयिनंसमागतंगजेसमारोप्यकुशस्थलीं ययौ ॥ शौरिःप्रसन्नःकिलसर्वयादवैःपुत्रैश्चपौत्रैर्मुदितैर्नृपेश्वर ॥२२॥ पुष्पाणांमकरंदानांवर्षं चक्रुःसुरस्त्रियः॥लाजानांमौक्तिकानांचकुञ्जरस्थाःकुमारिकाः॥२३॥नृत्यवादित्रगीतेनब्रह्मघोषेणशोभिताः ॥ पश्यंतांसिक्तमार्गांतःपुरींपिंडारकं ययुः ॥ २४ ॥ नृपाःसर्वेयदूनांचवैभवंदेवदुर्लभम् ॥ विलोक्यवैभवंस्वंस्वंगर्हयंतिचविस्मिताः ॥ २५ ॥ यज्ञस्थलंतेददृशुर्धूम्रेणघृतगंधिना ॥ व्याप्तंब्राह्मणघोषेणह्यसिपत्रव्रतेनच ॥२६॥ निरीक्ष्यतत्रभूपालमुग्रसेनंयदूत्तमम् ॥ पुरंदरसमंदांतंपुष्टंगौरंस्फुरत्प्रभम् ॥ २७ ॥ कुशासनस्थं सुभगंनियमेन्यस्तभूषणम् ॥ संयुक्तंमृगशृङ्गेणमृगचर्मणिभार्यया ॥२८॥ कुर्वंतंपूजनंचाग्नेर्घृतगंधाक्षतादिभिः ॥ मण्डपेमुनिभिर्युक्तंधूम्रेणारुणलोचनम् ॥२९॥ तंसर्वेचानिरुद्धाद्याःकृत्वाग्रेयज्ञघोटकम् ॥ वाहनेभ्यःसमुत्तीर्यनेमुःप्रीताःपृथक्पृथक् ॥३०॥ ततःश्रीयदुराजस्तुसर्वान्दृष्ट्वा नृपान्यदून् ॥ सर्वेषामादधेमानंयथायोग्यंयथाबलम् ॥३१॥ अनिरुद्धस्ततोनत्वाशीघ्रंभूत्वाकृतांजलिः ॥ सर्वेषांशृण्वतांप्राहजंबूद्वीपपतिंनृपम् ॥ ३२ ॥ अनिरुद्धउवाच ॥ एनंपश्यमहाराजइन्द्रनीलनृपोत्तमम् ॥ पादयोःपतितंप्रेम्णासमुत्थापयदेववत ॥ ३३ ॥ हेमांगदंचानुशाल्वं विन्दुंश्रीचन्द्रहासकम् ॥ एनंदेवव्रतंपश्यचागतंतवसन्निधौ ॥ ३४ ॥

हाथमें लिये हुए भार्यासहित मृगचर्मपर बैठे हुए ॥ २८ ॥ अग्नि पूजन कर रहे घृत गन्धाक्षतादिको लिये, मुनि मण्डलीमें बैठे लाल नेत्र हो रहे ॥ २९ ॥ उस उग्रसेनको सब अनिरुद्धादिकोंने यज्ञके अश्वको आगे करके अपने २ वाहनोंपरसे उतरकर प्रसन्नतापूर्वक सभीने पृथक् २ प्रणाम किया ॥३०॥ तब श्रीयदुराज उग्रसेनजीने सब राजाओंको और यादवोंको देखकर सभीका आपने मान किया, जैसा जिसका बल था, और जैसा जिसको योग्य था, वैसा सम्मान किया ॥३१॥ तब अनिरुद्धजी शीघ्रतासे हाथ जोड़कर नमस्कार कर सबके सुनते २ जम्बूद्वीपपति राजाको यह बोले ॥ ३२ ॥ अनिरुद्धजी बोले कि हे महाराज ! राजाओंमें उत्तम इस इन्द्रनीलको आप देखिये, यह आपके चरणोंमें पड़ा है, हे देव ! इसको उठाइये ॥३३॥ फिर हेमांगदको, अनुशाल्वको, बिन्दुको, श्रीचन्द्रहासको और देवव्रतको जो आपके आगे खडे हैं इनको आप देखिये ॥ ३४ ॥

और ये मेरी रक्षा करनेवाले जाम्बवतीके पुत्र साम्ब हैं, और मुझको शिवजीने मार डाला था, तब फिर श्रीकृष्णने जिलाया था, उन श्रीकृष्णको आप देखिये ॥३५॥ और ऐसेही इस सुनन्दनको देखिये इसको भी शिवजीने मार डाला था, फिर श्रीकृष्णने जिलाया था, और इन सभीको देखिये जो कृष्णकी कृपासे आये हैं ॥३६॥ और कुशलपूर्वक आये हुए इस यज्ञके अश्वको ग्रहण करिये, और युद्धके लिये दिये हुए इस खड्गको ग्रहण करिये, आपको नमस्कार है ॥३७॥ इस प्रकार अनिरुद्धके कथनको सुनकर यदुराज बडे प्रसन्न हुए, और अनिरुद्धकी तथा और सब राजाओंकी प्रशंसा करके यथायोग्य आशीर्वाद दिये॥३८॥सब राजाओंका सत्कार करके भीष्मजीसे बोले कि हे भीष्मजी ! आइये, आप मुझसे एक वार आलिंगन करिये॥३९॥इतना कहकर भीष्मजीसे आलिंगन किया,उसके बाद दानमानसे सत्कार किये हुये वे राजा बड़ी प्रसन्नतासे रहने लगे,उस द्वारकाके घर घरमें साम्बादिक

ममरक्षाकरंपश्यसांबजांबवतीसुतम्॥रुद्रेणनिहतंमांचपश्यकृष्णेनजीवितम्॥३५॥तथारुद्रहतंपश्यजीवितंचसुनन्दनम्॥अन्यान्पश्ययदून्सर्वा-
न्कृष्णस्यकृपयाऽऽगतान् ॥३६॥ गृहाणयज्ञतुरगंनिर्विघ्नेनसमागतम् ॥ दत्तंयुद्धार्थनिस्त्रिंशंतंगृहाणनमोस्तुते ॥ ३७ ॥ इतितद्वाक्यमाकर्ण्य
यदुराजःप्रहर्षितः॥ संश्लाघ्यतंनृपाँश्चैवयथायोग्याशिषंददौ॥३८॥ पूजयित्वानृपान्सर्वांस्ततोभीष्ममुवाचह ॥ एहिभीष्ममयासार्द्धंकुरुत्वंपरि-
रंभणम् ॥३९॥ इत्युक्त्वातंसमुत्थायपरिरेभेयदूत्तमः ॥ ततस्तेदानमानाभ्यांपूजितायदवोनृपाः ॥४०॥ निवासंचक्रिरेप्रीताद्वारकायांगृहेगृहे ॥
ततोदृष्ट्वानिरुद्धंवैप्राप्तंसांबादिभिर्नृप ॥४१॥ देवकीरोहणीचैवरुक्मिमण्याद्याःस्त्रियोवराः ॥ अन्याश्चरुक्मवत्याद्याःपरिष्वज्यमुदंययुः ॥४२॥
सुरूपारोचनाद्यूषाराजन्नेतामुदंगताः॥सांबश्लाघांततःश्रुत्वासुयोधनसुताभृशम्।४३।मुदंययौस्वनेत्राभ्यांमुंचंतीहर्षजंजलम्॥बभूवमंगलंराजन्द्वा
रकायांगृहेगृहे॥ससैन्येनृपशार्दूलह्यनिरुद्धेसमागते॥४॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेद्वारकायांतुरगागमनंनामचतुष्पंचाशत्तमोऽध्यायः
॥ ५४ ॥ गर्गउवाच ॥ अथवैमण्डपेरम्येद्वारैरष्टभिरन्विते ॥ पतत्पताकेकुण्डाढ्येयाज्ञिकैरष्टकैर्युते ॥ १ ॥ पलाशजैर्बिल्वजैश्चतथाश्लेष्मा-
तकैर्नृप ॥ वेदिकाभिस्तथायूपैश्चपालैरपिभूषिते ॥२॥ स्रुक्चर्मकुशमुसलोलूखलाद्यैर्विशांपते ॥ अन्यैःसंभृतसंभारैर्नानानावस्तुभिरन्विते॥३॥

सहित अनिरुद्धको आया देखकर आनन्द हुआ ॥४१॥ तब देवकी, रोहिणी, और रुक्मिणी आदिक तथा अन्य भी रुक्मवती आदि स्त्रियाँ आलिंगन करके प्रसन्न हुईं ॥ ४२ ॥ और हे राजन् ! सुरूपा, रोचना, ऊषा, ये सभी प्रसन्न हुईं, तब दुर्योधनकी पुत्री लक्ष्मणा साम्बकी प्रशंसा सुनकर नेत्रोंमेंसे आनन्दके आँसू बहाती हुई बहुत आनन्दित हुई ॥४३॥ हे राजन् ! उस समय द्वारकामें घर घरमें अनिरुद्धके आनेका परमानन्द हुआ ॥४४॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां चतुष्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥५४॥ गर्गजी कहते हैं कि उसके बाद उस आठ द्वारके मण्डपमें, पताकाएं जिसमें लग रही, कुण्डल जिसमें बन रहे, और अष्टक पढ़नेवाले याज्ञिकोंसे युक्त ॥१॥ और ढाक, बेल, और निषोड़ोंके यज्ञ स्तम्भसे, और वेदिका तथा चषाल (यज्ञस्तम्भोंके ऊपर लगे काष्ठकंटक) इनसे भूषित ॥२॥ और स्रुवा, कुश, मूसल, उलूखल, इनसे तथा और भी बहुतसी सामग्रियोंसे युक्त ॥३॥

उस मण्डलमें राजा उग्रसेन वेद पारग ऋषियोंसे ऐसे शोभित हुये, जैसे अमरावतीमें देवताओंसे इन्द्र शोभित होते हैं ॥ ४ ॥ तब श्रीकृष्णके बुलानेसे नंदादिक और वृषभानु आदिक और श्रीदामादिक सब गोप आये ॥ ५ ॥ ऐसेही यशोदादिक और राधिकाजी सब व्रजकी स्त्रियाँ पालकियों तथा रथोंमें बैठकर बड़ी प्रसन्न होकर द्वारकामें आईं ॥ ६ ॥ फिर बुलानेसे पुत्रोंको साथ लेकर धृतराष्ट्र सब कौरवों समेत द्वारकामें आये, ऐसेही और भी सब राजा आये ॥७॥ और युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव, ये सब द्रौपदी सहित वनमेंसे आये ॥८॥ और नारदको भेजकर श्रीकृष्ण द्वारा बुलाये गये इन्द्रादिक आठों दिक्पाल,आठों वसु, और बारहों सूर्य,ग्यारहों रुद्र, मरुद्गण, वेताल, गन्धर्व, किन्नर, विश्वेदेव, साध्य देवता, सब विद्याधर, किन्नर, देवता और देव पत्नियाँ, गन्धर्व, अप्सराएं, ये सब हे राजन् ! श्रीकृष्णके दर्शनकी इच्छासे आये, और कैलाससे बुलाये गये शिवजी सर्व

उग्रसेनस्तुराजर्षिर्ऋषिभिर्वेदपारगैः ॥ यादवैश्चामरावत्यांरेजेशक्रइवामरैः ॥४॥ आहूताःकृष्णचन्द्रेणगोपानन्दादयस्ततः ॥ वृषभानुवराद्यांश्च श्रीदामाद्याःसमाययुः ॥ ५ ॥ यशोमतीराधिकाचह्यन्याःसर्वाव्रजस्त्रियः ॥ द्वारकामाययुःप्रीताःशिबिकाभीरथैरपि ॥६॥ आहूतोधृतराष्ट्रस्तु कौरवैश्चसुतैर्युतः ॥ आजगामकुशस्थल्यांनृपाश्चान्येसमागताः ॥७॥ युधिष्ठिरोभीमसेनश्चार्जुनोनकुलस्तथा ॥ सह देवोवनादेतेह्याजग्मुर्भार्ययासह ॥ ८ ॥ श्रीकृष्णेनसमाहूताःप्रेषयित्वाचनारदम् ॥ शक्रादयोष्टौदिक्पालावसवोरवयस्तथा ॥ ९॥ यज्ञसनत्कुमाराश्चरुद्राश्चैकादशापिहि ॥ मरुद्गणाश्चवेतालागंधर्वाःकिन्नरास्तथा ॥१०॥ विश्वेदेवाश्चसाध्याश्चसर्वेविद्याधरास्तथा॥ देवाश्चदेवपत्न्यश्चगंधर्व्योप्सरसस्तथा ॥११॥ आजग्मुर्द्वारकांराजन्कृष्णदर्शनकांक्षया ॥ कैलासाच्चसमाहूतःसर्वमंगलयाशिवः ॥१२॥ सुतलाद्दैत्यवृन्दैश्चप्रह्लादोबलिरेवच॥ विभीषणोभीषणश्चमयोबल्वलएवच ॥ १३ ॥ जांबवान्दंष्ट्रिभिःसार्द्धंहनूमान्वानरैर्युतः॥ पक्षिभिःपक्षिराट्तत्रतथासर्पैश्चवासुकिः ॥१४॥ धेनुभिः सहिताराजन्धेनुरूपधराधरा ॥ मेरुःशैलैर्हिमगिरिर्वटःसाक्षाद्द्रुमैर्वृतः॥१५॥ रत्नाकरारत्नयुतानदीभिःस्वर्धुनीतथा॥तीर्थैःसर्वैश्चराजेंद्रतीर्थराजश्चपुष्करः ॥ १६ ॥ एतेसर्वेसमाहूताआजग्मुर्मुदिताःक्रतौ ॥ ततःकृष्णेनचाहूताव्रजभूमिःसमागता॥ १७॥ कृष्णयज्ञोत्सवंद्रष्टुंयमुनाशमनस्वसा ॥ सर्वान्दृष्ट्वाऽगतान्प्रीतोवासयामासचाहुकः ॥ १८ ॥

मङ्गलाको साथ लेकर आये ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ और सुतल लोकमेंसे दैत्योंके वृन्द, प्रह्लाद, बलि, विभीषण भीषण, मय, बल्वल ॥ १३ ॥ और सब दाढवालोंको साथ लेकर जाम्बवान्, वानरोंको साथ लेकर हनुमान्, पक्षियोंको साथ लेकर गरुड, सर्पोंको साथ लेकर वासुकि ॥ १४ ॥ सब गौओंको साथ लेकर गोरूपा बनकर भूमि, पर्वतोंको साथ लेकर हिमालय और सब वृक्षोंके साथ वट वृक्ष ॥१५॥ रत्नों सहित सब समुद्र, नदियोंको साथ लेकर गङ्गा, और सब तीर्थोंको साथ लेकर पुष्करजी ॥ १६ ॥ ये सब उग्रसेनके यज्ञमें बुलानेसे आये, तब श्रीकृष्णकी बुलाई हुई व्रज भूमि आई ॥ १७ ॥ और कृष्णके यज्ञोत्सवको देखनेको यमराजकी बहिन यमुनाजी भी आई, सभीको आये हुये देखकर प्रसन्न होकर उग्रसेनने सभीको निवास दिये ॥ १८ ॥

शिविरोंमें, मन्दिरोंमें. विमानोंमें, और बगीचोंमें निवास करने लगे, उस यज्ञमें व्यासजी, ब्रह्माजी और बकदाल्भ्यजी आचार्य बने ॥१९॥ और जिनको पहिले निमन्त्रित किया था, वे सब ऋषि वरण किये, तब हे नृप ! श्रीकृष्णकी इच्छासे अनिरुद्धने तीन रूप बनाये, एक ब्रह्माजीका, और एक चन्द्रमाका और एक अपना,इन तीन रूपोंको धारण करके शोभित हुए, तब अनिरुद्धजीकी इस लीलाको देखकर सब देवता और यादव ॥ २० ॥ २१ ॥ परस्पर कान कानमें कहने लगे, तब श्रीवेदव्यास उग्रसेनसे बोले कि हे यादव श्रेष्ठ ! आप सुनिये ॥ २२ ॥ सब राजा तथा ब्राह्मण अपने २ स्थानमें यथावत् बैठे हैं, इनमेंसे चौसठ दम्पति गोमतीके तटपर जायँ ॥ २३ ॥ वे मेरे कहनेके अनुसार गोमतीके जलको लायें अदिति सहित कश्यप, अरुंधती सहित वशिष्ठ ॥२४॥ कृपी सहित द्रोण, अनुसूया सहित अत्रि, रुक्मिणी सहित कृष्ण, रेवती सहित बलदेवजी ॥ २५ ॥ मायावती सहित प्रद्युम्न,

शिबिरेषुमंदिरेषुविमानेषुवनेषुच ॥ अथाचार्यःकृतोव्यासोबकदाल्भ्योविधिर्मया ॥ १९ ॥ ऋत्विजश्चकृतादिव्यायेवैपूर्वंनिमंत्रिताः॥अथयज्ञे ऽनिरुद्धस्तुश्रीकृष्णस्येच्छयानृप॥२०॥ विधेर्विधोश्चस्वस्यापिकृत्वारूपत्रयंबभौ ॥ दृष्ट्वालीलांकार्ष्णिजस्यदेवाश्चयदवोनृपाः॥२१॥ विस्मिताःकथयामासुःकर्णेकर्णेपरस्परम् ॥ व्यासःप्रत्याहराजानंशृणुयादवसत्तम ॥२२॥ उपविष्टानृपाविप्रायथास्थानेविभागशः ॥ चतुष्षष्टिर्दंपतीनांयांतुवैगोमतीतटे ॥२३॥ आहर्तुंसलिलंतस्यामयादिष्टंयथोचितम् ॥ आदित्याकश्यपश्चैववसिष्ठोरुंधतीयुतः ॥२४॥ द्रोणाचार्यस्तुकृप्याचह्यत्रिश्चैवानसूयया ॥ रुक्मिण्याकृष्णचन्द्रस्तुरेवत्यारामएवच ॥२५॥ मायावत्याचप्रद्युम्नउषयाकार्ष्णिजस्तथा ॥ सुभद्रयार्जुनश्चैव सांबोलक्ष्मणयातथा ॥ २६ ॥ तथाहेमांगदाद्याश्चयांतुवैस्वस्वभार्यया ॥ गर्गउवाच ॥ एवंतेव्यासवचनात्सपत्नीकाद्विजानृपाः ॥ २७ ॥ आनेतुंगोमतीतोयंप्रययुर्बद्धपल्लवाः ॥ देवकींरोहिणींकुन्तींगांधारींचयशोमतीम् ॥२८॥ पुरस्कृत्यनिजश्राहकुंभोभैष्म्यायुतोहरिः॥ तथारामस्तुरेवत्यासस्त्रीकायेपिभूमिपाः ॥२९॥ सुवर्णरौप्यकलशैःसपुष्पैश्चसपल्लवैः ॥ रुक्मिण्यासहितंयांतंकृष्णंदृष्ट्वासमागमे ॥३०॥ नारदःकलहं कर्तुंसत्यभामागृहंययौ ॥ दृष्ट्वाचैकांहरेर्भार्यांसंपृष्टःसतयाब्रवीत् ॥ ३१ ॥

ऊषा सहित अनिरुद्ध, सुभद्रा सहित अर्जुन, लक्ष्मणा सहित साम्ब ॥ २६ ॥ ऐसेही हेमांगदादिक सब अपनी अपनी पत्नियोंको साथ लेकर चौसठ मनुष्य जल भरनेको जाओ, गर्गजी कहते हैं, ऐसे व्यासजीके कहनेसे सब सपत्नीक ब्राह्मण ॥२७॥ गोमतीका जल लानेको पञ्च पल्लवोंको बांधकर गये, देवकीको, रोहिणीको, कुन्तीको, गान्धारीको और यशोमतीको आगे करके रुक्मिणीजी सहित भगवान्ने सुवर्णके कलश जल भरनेको लिये, ऐसेही रेवती सहित बलदेवजीने कलश लिये वैसेही अन्य सब राजाओंने जल भरनेको अपनी अपनी पत्नी सहित सभीने कलश लिये ॥२८॥२९॥ पंचपल्लव सहित चाँदी, सोनेके कलश लिये सबके आगे रुक्मिणी सहित श्रीकृष्णको जाता देखकर ॥३०॥ नारदजी कलह करानेको घरमें अकेलीही सत्यभामाको देखकर सत्यभामाके घरको गये, सत्यभामाने नारदजीसे पूछा, तब नारदजीने कहा कि ॥ ३१ ॥

हे सत्यभामे ! तुम्हारा तो घरमें कुछ आदर नहीं है, देखो ! गोमतीका जल भरनेको कृष्ण गये, जो रुक्मिणीको साथ लेकर गये हैं, तुमको साथ नहीं ले गये ॥ ३२ ॥ बहुतसे लोगोंद्वारा याचना की गई, पारिजातकी हरनेवाली, कृष्णसंकल्पकी करनेवाली, मणियुक्ता मालिनी ॥३३॥ऐसी वरारोहा तुमको छोडकर रुक्मिणीसहित श्रीकृष्ण शोभा देखनेको गये ॥३४॥ सो हे माताजी ! जिसका प्रद्युम्न पुत्र है, और अनिरुद्ध पौत्र है, वह रुक्मिणी अपनी बातको और अपने मानको दिखाती है ॥ ३५ ॥ गर्गजी कहते हैं कि इस प्रकार रुक्मिणी सहित प्राणनाथको जल भरनेको गये सुनकर सत्यभामाजी क्रोधमें भरगईं,और रोने लगी तब तो भगवान् सुनकर और यह नारदका कर्म है,ऐसा जानकर॥३६॥ ॥३७॥ उसी समय एक रूपसे सत्यभामाके पास पधारे, और सब बातको जाननेवाले भगवान् बोले कि ॥ ३८ ॥ हे प्रिये ! मैं तुम्हारे विना समाजमें रुक्मिणीके साथ नहीं गया भोजन करनेको आया हूँ, भाई बलदेवजी अपनी पत्नीसहित गए हैं ॥३९॥ यह बात सुनकर सत्यभामा प्रसन्न हुई, और डरके मारे नारद उठकर दूसरे घरमें चले गये ॥४०॥ सो

नारदउवाच ॥ आदरंसदनेनास्तिसत्राजितसुतेतव ॥ गतःकृष्णस्तुरुक्मिण्याचाहर्तुंगोमतीजलम् ॥ ३२ ॥ बहुभिर्याचितात्वंतुपारिजातकहारिणी ॥ कृष्णसंकल्पकरिणीमणियुक्ताचमानिनी ॥३३॥ ईदृशींत्वांवरारोहांगरुडोपरिगामिनीम् ॥ विहायभैष्म्याश्रीकृष्णःशोभांद्रष्टुंजगामह ॥ ३४ ॥ यस्याःपुत्रश्चप्रद्युम्नोयस्याःपौत्रोनिरुद्धकः ॥ सादर्शयतिभोमातर्वार्तांमानंचगौरवम् ॥ ३५ ॥ गर्गउवाच ॥ इतिश्रुत्वाप्राणनाथंरुक्मिण्यासहितंगतम् ॥३६॥ रुरोदद्दुःखिताराजन्सत्यभामारुषान्विता ॥ तदैवकृष्णोभगवाञ्ज्ञात्वानारदचेष्टितम् ॥ ३७ ॥ सत्यभामागृहंशीघ्रंरूपेणैकेनचागमत् ॥ गत्वाप्रत्याहवचनंसर्वज्ञातारमेश्वरः ॥३८॥ नगतोहंसमाजेवैरुक्मिण्यासहितःप्रिये ॥ आगतोभोजनंकर्तुंगतोरामश्चभार्यया ॥३९॥ इतितद्वाक्यमाकर्ण्यसत्यभामामुदंगता ॥ भीतोनारदउत्थायगेहंचान्यंजगामह ॥ ४० ॥ गत्वाजांबवतीगेहंतस्याग्रेसर्वमब्रवीत् ॥ श्रुत्वाहसंतीसाप्राहमृषामावदहेमुने ॥४१॥ करोतिशयनंगेहेश्रीनाथोभोजनांतरे ॥ इतिश्रुत्वाशंकितस्तुत्वरंनिर्गत्यनारदः ॥ ४२ ॥ मित्रविंदागृहेगत्वाप्रत्युवाचविलोकयन् ॥ नारदउवाच ॥ नगतासिनृपस्थानंमातर्गेहेस्थितासिकिम् ॥ ४३ ॥ आहर्तुंगोमतीतोयंप्रयातियत्रमाधवः ॥ भैष्मींसत्यांजांबवतींसहनेष्यतितत्रवै ॥ ४४ ॥ मित्रविंदोवाच ॥ केशवस्यप्रियाःसर्वागंतासौयांविहायच ॥ सानजीवतिकृष्णस्तुपौत्रंलालयतिगृहे ॥ ४५ ॥

जाम्बवतीके पास जाकर वही बात कही, तब हँसकर जाम्बवतीने कहा कि हे मुने ! मिथ्या मत बोलो॥४१॥हे नारदजी ! देखो, भगवान् तो अभी भोजन करके सोगए हैं यह सुनकर नारद बड़े शंकित हुए, और बड़ी जल्दी घरके बाहिर निकले ॥४२॥ फिर मित्रविंदाके घरमें गए, चारों तरफ देखकर बोले मित्र बिन्दाजी ! तुम राज्यस्थानमें नहीं गई हो तुम तो घरमें ही बैठी हो, देखो, रुक्मिणी, सत्यभामा और जाम्बवती ये तो तीनों कृष्णके साथ गोमतीजीका पानी भरनेको गई हैं तुमको नहीं ले गए हैं ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ तब मित्रविन्दाने कहा कि, हे मुने ! कहीं पागल तो नहीं हो गए हो,देखो, कृष्णके सब स्त्रियाँ प्यारी हैं, जिनको छोडकर कभी नहीं जाते हैं, जिसको छोडकर जायँ,वही नहीं जीवे, सो देखो प्राणनाथ तो पौत्रको खेला रहे हैं ॥ ४५ ॥

तब तो मुनि उठकर सब रानियोंके घरमें गये, किन्तु सभीने यही कहा कि कृष्ण तो घरमें ही हैं॥४६॥फिर नारदजी विचार कर गोपियोंके पास गये, पहिले ही बात कहनेको राधिकाजी
के पास गए ॥ ४७ ॥ तो सब गोपियों सहित राधिकाजीके साथ चौपड खेलते भगवान्को देखकर वहाँसे दूसरे स्थानमें जानेका विचार किया ॥ ४८ ॥ उसी समय भगवान् उठे
और नारदका हाथ पकडकर वहीं बैठाकर यथाविधि पूजन किया ॥ ४९ ॥ औरं भगवान् बोले कि हे विप्रेन्द्र ! क्या करोगे ? मोहके वशमें होकर क्यों भ्रमण करते हो, मैंने पत्नि-
योंके घरघरमें तुमको देखा, सो तुम पागल तो नहीं हो गए हो ? ॥५०॥ हे ऋषिसत्तम ! मैंने तुम्हारे डरके मारे रूप धारण किये हे विप्र ! मैं आपको दण्ड तो दे नहीं सकता हूँ,
क्योंकि तुम ब्राह्मण हो, इससे मैं प्रार्थना करता हूँ ॥५१॥ सबका देवता तो मैं हूँ, और मेरे देवता ब्राह्मण हैं जो कोई मूर्ख ब्राह्मणोंसे द्रोह करते हैं, मेरे शत्रु हैं ॥५२॥ जो मनुष्य

ततोमुनिःसमुत्थायसर्वाणिमंदिराणिच ॥ बभ्रामकृष्णभार्याणांसकृष्णानीत्यमन्यत ॥४६॥ पुनर्विचार्यदेवर्षिर्गोपीनांमंदिराणिच ॥ प्रययौ
कथितुंवार्तांराधिकायैचमानद ॥ ४७ ॥ तत्रदीव्यंतमक्षैश्चराधयानंदनन्दनम् ॥ गोपीभिःसहितंवीक्ष्यऋषिर्गंतुमनोदधे ॥ ४८ ॥ तदैवकृष्ण
उत्थायगृहीत्वापाणिनामुनिम् ॥ तत्रैवस्थापयामासपूजयित्वायथाविधि ॥ ४९ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ किंकरिष्यसिविप्रेंद्रवृथाभ्रमसि
मोहितः ॥ गेहेगेहेस्वपत्नीनांमयात्वंतुविलोकितः ॥५०॥ मयाधृतानिरूपाणित्वद्भयादृषिसत्तम ॥ नाहंदास्येदमन्तुभ्यंविप्रत्वात्प्रार्थयाम्यहम्
॥५१॥ सर्वेषांचैवदेवोहंममदेवाश्चब्राह्मणाः ॥ येद्रुह्यंतिद्विजान्मूढाःसंतितेममशत्रवः ॥ ५२ ॥ येपूजयंतिविप्राँश्चममभावेनभूजनाः॥ तेभुञ्जं-
तिसुखंचात्रह्यंतेयास्यंतितत्पदम् ॥ ५३ ॥ माययाममपुर्यांत्वंमोहितश्चापिमाखिदः ॥ सर्वेमुह्यंतिदेवर्षेब्रह्मरुद्रादयःसुराः ॥ ५४ ॥ इतितद्वा-
क्यमाकर्ण्यसंस्तुतःसमहामुनिः ॥ आययौमण्डपेतूष्णींभूत्वाऋत्विग्जनैर्वृते ॥५५॥ अथतेगोमतीतीरंजग्मुःकृष्णादयोनृपाः॥ रुक्मिण्याद्या-
स्त्रियश्चैववादित्रैर्विविधैरपि ॥५६॥ नारीणांचैववृन्देनगायंतीनांहरेर्यशः ॥ वलयानांनूपुराणांशब्दोऽभून्मधुरध्वनिः ॥ ५७ ॥ पूजयित्वाजल-
सुरान्व्यासःसार्द्धमयामुनिः ॥ कलशंतोयसंयुक्तमनसूयाकरेददौ ॥ ५८ ॥

मेरी भावनासे पूजन करते हैं, वे मनुष्य इस लोकमें सुख भोगते हैं, और अन्तमें मेरे पदको जाते हैं ॥ ५३ ॥ हे देवर्षे ! तुम मेरी पुरीमें आकर मेरी मायामें मोहित होगए हो, सो
खेदको मत प्राप्त हो, मेरी मायामें सब ब्रह्मा, रुद्रादिक देवता भी मोहित होते हैं ॥ ५४ ॥ इस प्रकार भगवान्के कथनको सुनकर सम्यक् स्तुति किये हुए महामुनि चुप होकर
ऋत्विक् जनोंसे युक्त मण्डपमें आये ॥ ५५ ॥ उसके बाद अनेक बाजोंके बजते हुए कृष्णादिक सब राजा गोमतीके किनारेपर आये, और रुक्मिणी आदिक सब स्त्रियाँ भी आईं
॥ ५६ ॥ भगवद्गुणोंका गान करती हुई नारियोंके कंकणोंकी तथा नूपुरोंकी मधुर ध्वनि होने लगी ॥५७॥ तब श्रीवेदव्यासजीने मेरे साथ जलके देवताओंका पूजन करके जलके
भरे हुए कलशको अनुसूयाके हाथमें दिया ॥ ५८ ॥

तब रेवत्यादिक सब स्त्रियोंने जलके घड़े हाथोंमें लिये, किन्तु उनके कोमल हाथोंसे कलश उठे नहीं ॥५९॥ जिनको पुष्पमालाओंका भी बोझ लगता हो, वे जलपूर्ण कलशोंको कैसे उठा सकती हैं ? तब तो सब राजाओंकी रानियाँ आपसमें हँसी करने लगीं ॥६०॥ कि कलशोंके बिना यज्ञस्थानमें कैसे जायेंगी, ऐसे वे सब रुक्मिणी आदिक स्त्रियाँ अपने मनमें भगवान्से प्रार्थना करने लगीं ॥ ६१ ॥ हे श्रीकृष्ण ! हे जगन्नाथ ! हे भक्तोंके कष्टके नाश करनेवाले ! आप बड़े बलवान् चक्रके धरनेवाले हो, सो आप इस समय हमारे इस कष्ट को दूर करिये, हमको ऐसा बल दीजिये कि हम इन जलके कलशोंको उठा लेवें ॥ ६२ ॥ ऐसे कहकर जब उन्होंने कलश उठाये, तब न जाने उनका बोझ कहाँ गया ? तब भार सहित उन कलशोंको उठाकर मणियोंके और मोतियोंके आभूषण जिनमें लग रहे ऐसे अपने मस्तकोंपर कलशोंको धरकर यज्ञस्थानको गईं ॥६३॥ इस प्रकार वे स्त्रियाँ अपने पतियों के साथ यज्ञस्थानको गईं, जहाँ भेरी, शंख, और पणव आदि बाजे बज रहे थे ॥६४॥ हे नृप ! गोमतीके जलको लेकर यज्ञस्थानमें आईं, श्यामकर्ण अश्व जिनके साथ है, वे सब

ततश्चजगृहुःकुम्भान्रेवत्याद्याश्चयोषितः॥ नोत्थिताःकलशाःसर्वेकोमलैश्चकरैरपि ॥५९॥ धारयंतिकथंकुम्भम्पुष्पभारेणपीडिताः॥ततश्चजहसूराज्ञ्योनृपाणांचपरस्परम् ॥ ६० ॥ कथंयामोयज्ञवाटमित्यूचुःकलशैर्विना ॥ रुक्मिण्याद्यास्त्रियःसर्वास्ताऊचुर्मनसाहरिम् ॥६१॥ हेश्रीकृष्णजगन्नाथभक्तकष्टविनाशनः ॥ सबलस्त्वंचक्रधारीह्यस्मान्पालयसंकटे ॥६२॥ एवंब्रुवंत्योजगृहुःसकलान्भारवर्जितान् ॥ स्वेस्वेशिरसिसंधायसंयुक्तेमणिमौक्तिकैः ॥ ६३ ॥ यज्ञवाटंसमाजग्मुर्नार्य्यःशीघ्रंसभर्तृका ॥ यत्रभेर्यश्चशंखाद्यावाद्यंतेपणवादयः ॥६४॥ आनीयगोमतीतोयंप्रापितास्तत्रतेनृप ॥ श्यामकर्णेनसहितायत्रवैयादवेश्वरः ॥६५॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेगोमतीजलानयनंनामपंचपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५५ ॥ गर्गउवाच ॥ उग्रसेनस्ययज्ञेवैहयमेधेमहात्मनः ॥ तस्यासन्परिचर्यायांबांधवाप्रेमबंधनाः ॥ १ ॥ ततश्चकारयदुराण्नानाकर्मसुबांधवान् ॥ भीमंमहानसाध्यक्षंधर्मेधर्मस्यपालने ॥ २ ॥ शुश्रूषणेसतांजिष्णुंनकुलंद्रव्यसाधने ॥ पूजनेसहदेवंचधनाध्यक्षंसुयोधनम् ॥ ३ ॥ दानेचदानिनंकर्णंद्रौपदींपरिवेषणे ॥ रक्षायांकृष्णपुत्रान्वैह्यष्टादशमहारथान् ॥४॥ युयुधानंविकर्णंचहृदीकंविदुरंतथा ॥ अक्रूरमुद्धवंचैवनानाकर्मसुभूपतिः ॥ ५ ॥ कृत्वाप्रत्याहश्रीकृष्णंदेवत्वंकिंकरिष्यसि ॥ श्रुत्वाकृष्णउवाचाथब्राह्मणानांकरोम्यहम् ॥ ६ ॥

जहाँ उग्रसेन थे, वहाँ आईं ॥६५॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां पञ्चपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥५५॥ गर्गजी कहते हैं कि श्रीमहात्मा उग्रसेनके अश्वमेधयज्ञमें उस महात्मा उग्रसेनके बांधव यज्ञकी परिचर्यामें लगे ॥ १ ॥ तब उग्रसेनजीने यज्ञके सब काम अपने भाइयोंसेही करवाये, पाकशालाका अध्यक्ष भीमसेनको और धर्मके पालनमें धर्मराज युधिष्ठिरको नियत किया ॥२॥ सत्पुरुषोंके सत्कार करनेमें अर्जुनको, और द्रव्यके साधनमें नकुलको नियत किया, पूजन करनेमें सहदेवको, और धनाध्यक्षके कामपर दुर्योधनको नियत किया ॥३॥ दानके काममें दानी कर्णको नियत किया, और परोसनके काममें द्रौपदी नियत की, रक्षाके काममें कृष्णके अठारह महारथी पुत्रोंको नियुक्त किया॥४॥ और सात्यकि, विकर्ण, अक्रूर विदुर, कृतवर्मा, उद्धव इत्यादिकोंको अनेक कामोंमें नियुक्त किया ॥५॥ फिर उग्रसेनने श्रीकृष्णसे कहा कि हे देव ! तुम क्या करोगे ! तब भगवान्ने

कहा कि महाराज ! मैं तो ब्राह्मणोंके चरणोंके धोने पर रहूँगा, यही काम मैंने पहले युधिष्ठिरके राजसूयमें इन्द्रप्रस्थमें भी किया था, यह सुनकर ब्रह्मादिक और सब मनुष्य हँसने लगे ॥ ६ ॥ ७ ॥ गर्गजी कहते हैं कि, ऐसे कहकर श्रीकृष्ण सब ऋषिजनोंके और तपस्वियोंके चरणोंको धो धोकर सबको आसनोंपर बैठाने लगे ॥ ८ ॥ तब वे वस्त्रोंको पहिनकर बैठे हुए वे बारह२ तिलक लगाकर आसनोंपर दिव्याभूषणोंसे भूषित हुए॥९॥अनेक मतोंकी मालाओंको पहिने कर्पूरयुक्त पानके बीड़ोंको खाकर विराजमान हुए वे ब्राह्मण ऐसे दीखने लगे, जैसे देवता बैठे हों ॥१०॥ उसके बाद अर्थी, भिक्षु, विरक्त और बुभुक्षित जो दूर २ देशोंसे आये थे, वे सब याचना करने लगे कि॥११॥ हे नरेश्वर ! अन्न दो, अन्न दो, अन्न दो, और उपानह, पात्र और वस्त्र दो, कम्बल दो ॥१२॥ मुनिवृन्दोंसे युक्त उग्रसेनके यज्ञमें उन भिक्षुकोंकी वाणीको सुनकर यदूत्तम उग्रसेनजीने ॥१३॥ सुवर्ण, चांदी, वस्त्र, आभूषण,

पादप्रक्षालनंराजन्निंद्रप्रस्थेकृतंमया ॥ इतिश्रुत्वाचब्रह्माद्याजहसुर्भूजनास्तथा ॥ ७ ॥ गर्गउवाच ॥ इत्युक्त्वाभगवान्साक्षादृषीणांचतपस्वि-
नाम् ॥ पादप्रक्षालनंकृत्वास्थापयामासतान्नृप ॥८॥ आसनेषूपविष्टास्तेवासांसिपरिधायच ॥ तिलकैर्द्वादशैर्युक्तादिव्याभरणभूषिताः॥९॥
नानामतानांमालाभिर्युक्ताःकर्पूरवीटकान् ॥ भुक्त्वातेरेजिरेयज्ञेदेवाइवमहीसुराः॥१०॥ ततोर्थिनोभिक्षवश्चविरक्ताश्चबुभुक्षिताः॥कुर्वंतियाचनां
सर्वेंदूरदेशात्समागताः ॥ ११ ॥ ददस्वान्नंददस्वान्नंददस्वान्नंनरेश्वर ॥ उपानहश्चपात्राणिवस्त्राणिकंबलानिच॥१२॥ उग्रसेनस्ययज्ञेवैमुनि-
वृंदैर्नृपैर्वृते ॥ तेषांतांकरुणांवाचंनिशम्ययदुसत्तमः ॥ १३ ॥ सुवर्णरजतंचैववस्त्राणिभाजनानिच ॥ गजाश्वरथगोछत्रशिबिकादीनिहर्षितः
॥१४॥ येषांयेषांप्रियंयद्वैतेभ्यस्तेभ्योददौनृपः ॥ उग्रसेनःकृतस्नानःक्रतुकर्मणिदीक्षितः ॥१५॥ असिपत्रव्रतधरोरुचिमत्याबभौततः ॥ विप्रा-
विंशतिसाहस्रावेदशास्त्रविशारदाः ॥ १६ ॥ व्यासगर्गादयश्चैवकारयंतिक्रतूत्तमम् ॥ हस्तिशुण्डासमाधाराह्यग्निकुंडेपपातह ॥१७॥ घृतस्यच
नृपश्रेष्ठमुनिभिर्ब्रह्मवादिभिः॥तद्यज्ञेकृष्णकृपयाह्यनलोर्जीर्णतांययौ॥१८॥ततःप्रोवाचवह्निस्तुसर्वेषांशृण्वतांनृपम् ॥ प्रसन्नोहंप्रसन्नोहंपशुंममप्र-
यच्छवै ॥ १९ ॥ निशम्यचाग्नेर्वचनंसभायांश्रीयादवेन्द्रोमुनिभिःसमंच ॥ बद्धंतुरंगंतपनीययूपेहिरण्यदाम्नाचतमाहभूपः ॥ २० ॥

पात्र, हाथी, घोड़े, रथ, गौ, छत्र और पालकी आदि जो जो मांगे, वे सब दिये ॥१४॥ और जिनको २ जो जो प्रिय पदार्थ था, उनको वही वही वस्तु दी, फिर उग्रसेनजीने स्नान किया, और यज्ञ कर्ममें दीक्षा ली ॥१५॥ तब रुचिमती रानीसहित असिपत्र व्रत धरा, उस समय वेद, शास्त्रमें विशारद बीस हजार ब्राह्मण ॥ १६ ॥ व्यास गर्गादिक उस यज्ञोत्तमको कराने लगे, हे नृपश्रेष्ठ ! उस अग्निकुण्डमें हाथीके सूंडके बराबरकी मोटी घीकी धारा ब्रह्मवादी मुनिने गिरवाई, यह सब श्रीकृष्णकी कृपा थी, जिस घीकी धाराके पानसे अग्निको अजीर्ण होगया ॥१७॥१८॥ तब सबके सुनते २ अग्निदेवने उग्रसेनसे कहा कि, हे महाराज ! मैं प्रसन्न हूँ, प्रसन्न हूँ, अब मेरे लिये पशु भेंट करो ॥ १९ ॥ तब सब ऋषिमण्डलीसहित श्रीयादवेंन्द्र उग्रसेनने अग्नि देवताके कहे हुए वचनको सुनकर सुवर्णके यज्ञस्तम्भमें सुवर्णके रस्सेसे बँधे हुए घोड़ेको देखकर कहा ॥ २० ॥

कि हे अश्व ! तुम अग्निके कथनको सुनो, यज्ञ शुद्ध पशु तुमको घीकी धारासे तृप्त हुआभी अग्नि देवता भक्षण करेगा ॥ २१ ॥ तब उग्रसेनके कथनको सुनकर प्रसन्न होकर श्रीकृष्णका
दर्शन करते हुए उस श्यामकर्ण घोड़े ने अपने मुखको हिलाया ॥२२॥ तब अश्वके अभिप्रायको जानकर गर्गजी कहते हैं कि मेरे सहित वेदव्यासजीने, मुनियों सहित और श्रीकृष्णा
दिक राजाओं सहित उस यज्ञ मण्डपमें ॥ २३ ॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और यज्ञको देखनेकी इच्छावाले शूद्रों सहित और स्त्रियों सहित उस यज्ञस्थलमें वेद व्यासजीने बलदेवजीसे
कहा कि ॥ २४ ॥ हे बलभद्रजी ! आप खड्गको लेकर उठो, और अग्निकी प्रसन्नताके लिये बहुत शीघ्रतासे इस घोड़ेकी ग्रीवाको छेदन करो ॥२५॥ हे राम ! इस घोड़ेके वध होने
पर और बादमें हवन होनेपर इस यज्ञमें यज्ञावतारी कृष्ण प्रसन्न होंगे ॥ २६ ॥ गर्गजी बोले इस प्रकार व्यासजीके कथनको सुनकर बलदेवजीने खड्गसे उस यज्ञके घोड़को छेदन

उग्रसेनउवाच ॥ अग्नेर्वाक्यंशृणुहयशुद्धंत्वांचपशुंकृतोः ॥ भक्षयिष्यतिवह्निस्तुघृतैस्तृप्तोपिचाध्वरे ॥ २१ ॥ नृपस्यवचनंश्रुत्वाश्याम-
कर्णस्तुरंगमः ॥ कृष्णंविलोकयन्प्रीतोकंपयामासस्वाननम् ॥२२॥ ततोहयमतंज्ञात्वावेदव्यासःसमंमया ॥ मण्डपेमुनिभिर्युक्तेश्रीकृष्णाद्यैर्नृ-
पैर्वृते ॥ २३ ॥ ब्राह्मणैःक्षत्रियैर्वैश्यैःशूद्रैर्यज्ञदिदृक्षुभिः ॥ स्त्रीभिर्युतेप्रलंबघ्नंप्राहद्वैपायनोमुनिः ॥ २४ ॥ व्यासउवाच ॥ उत्तिष्ठबलभद्र
त्वंकरवालंप्रगृह्यच ॥ छिंधिकंवाजिनश्चाग्नेःप्रीतयेह्यधुनात्वरम् ॥२५॥ निहतेतुरगेरामहवनेचकृतेसति ॥ यज्ञावतारःकृष्णस्तुप्रसन्नोभवति
क्रतौ ॥ २६ ॥ गर्गउवाच ॥ एवंव्यासवचःश्रुत्वाबलःखड्गेनसत्वरम् ॥ शिरोहयस्यचिच्छेदतच्छिरोगगनंययौ ॥ २७ ॥ गत्वार्कंनृपशा-
र्दूललीनंतद्रविमंडले ॥ देवदैत्यनराःसर्वेतद्दृष्ट्वाविस्मयंगताः ॥२८॥ हयस्यहृदयेशूलंनिजघानहसन्हरिः ॥ मकरंदसमाधारारांजस्तत्रविनिर्गता
॥२९॥ ततश्चनिर्गताज्योतिस्तुरगस्यकलेवरात् ॥ पश्यतांचैवसर्वेषांविवेशमधुसूदने ॥३०॥ पश्चाद्भूत्वाचकर्पूरंशरीरंपतितंपशोः ॥ गात्रा-
च्युतायथाराजन्विभूतिःशंकरस्यच ॥ ३१ ॥ दृष्ट्वाचकर्पूरसमूहमद्भुतंसभांसुगंधेनवृतांचद्वारकाम् ॥ व्यासादयस्तेमुनयःप्रहर्षिताऊचुर्नृपंवैक्र-
तुकर्मणिस्थितम् ॥३२॥ दिष्ट्यातेनृपशार्दूलसफलोभूत्क्रतूत्तमः ॥ कर्पूरेणापिहवनंकरिष्यामश्चत्वंकुरु ॥ ३३ ॥

किया, और उसका शिर कटतेही उडकर आकाशको चला गया ॥ २७ ॥ और हे राज शार्दूल ! वह शिर सूर्य मण्डलमें लय होगया, इस बातको देखकर सब देव, दैत्य और
मनुष्योंके मनमें बड़ा भारी आश्चर्य हुआ ॥२८॥ तब भगवान्ने घोडेके हृदयमें एक त्रिशूल मारा, तब उसके हृदयमेंसे मकरन्दके समान धारा निकली ॥२९॥फिर घोडेके शरीरमें
से एक ज्योति निकली, वह सभीके देखते देखते मधुसूदनमें प्रविष्ट होगई ॥३०॥ फिर उस घोडेका शरीर कपूर होकर गिर पड़ा, जैसे शरीरसे छूटी शंकरके शरीरकी भस्म गिरे ॥३१॥
तब कपूरके समान उसके शरीरको और कपूरके गन्धसे भर गई सभाको और द्वारकाको देखकर व्यासादिक मुनियोंने प्रसन्न होकर यज्ञमें बैठे हुए राजासे कहा कि ॥३२॥ हे नृप !
आज बडा मंगल है, तुम्हारा यह यज्ञ सफल हुआ, अब इस कपूरसे हम हवन करेंगे और तुम भी हवन करो ॥ ३३ ॥

इतने वचन कहकर सब ऋत्विक् जनोंने उसी समय उस यज्ञ कुण्डमें उस कपूरको लेकर पहिले यज्ञेश्वरके नामसे हवन किया॥३४॥हे नृप ! जिस यज्ञमें श्रीमूर्तिमान् भगवान् यज्ञेश्वर चतुर्व्यूह रूपके धारण करनेवाले पुत्रपौत्रों सहित स्वयम् विराजे, वहाँ कौनसी बात दुर्लभ है ॥ ३५ ॥ उस यज्ञमें मैंने इन्द्रसे कहा कि हे शक्र ! इस यज्ञमें इस कपूरकी आहुतिको तुम ग्रहण करो ॥३६॥ तुम आओ, और उग्रसेनकी अर्पण की हुई इस कपूरकी आहुतिको ग्रहण करो, अब आगे कलियुगमें यह कठिनतासे प्राप्त होगी, यह सुनकर इन्द्रने मन्द मन्द हँसकर कहा ॥३७॥ कि हे मुनिजन ! मैं तुम्हारेही आगे राजा युधिष्ठिरके अश्वमेधमें इसी कर्पूराहुतीको फिर पिऊँगा, हस्तिनापुरमें कुलक्षय होनेके बादमें ब्राह्मण जो कर्पूराहुति देंगे उस कर्पूराहुतिका पान करूँगा ॥३८॥ इन्द्रके कथनको सुनकर सब मुनिवरोंने सत्य मानकर उस यज्ञमें हे महाराज ! सब देवताओंको आहुतियाँ दीं॥३९॥ और किसीने नहीं जाना कि इन्द्रने क्या कहा, " अग्नये स्वाहा " इत्यादि मन्त्रोंसे सब देवताओंको जो आहुतियाँ दी थीं ॥४०॥ और जो उस कपूरके हवन करनेसे सब चराचर जगत् प्रसन्न हुआ

इत्युक्त्वाऋत्विजःसर्वेयज्ञकुंडेचतत्क्षणात् ॥ घनसारंहिजुहुवुःपूर्वयज्ञेश्वरायच ॥ ३४ ॥ यत्रयज्ञेश्वरःकृष्णश्चतुर्व्यूहधरःपरः ॥ रेजेपुत्रैश्चपौत्रैश्चतत्रकिंदुर्लभंनृप ॥ ३५ ॥ तस्मिन्यज्ञेमहेन्द्रायवचःप्रकथितंमया ॥ गृहाणशक्रयज्ञेस्मिन्कर्पूरस्याहुतिंविभो ॥ ३६ ॥ एहिराज्ञार्पितांचैनां कलावग्रेहिदुर्लभाम् ॥ इतिश्रुत्वाचवचनंशक्रःप्रोवाचसस्मितम् ॥३७॥ पुनर्गृह्णामिमुनयोधर्मराजक्रतूत्तमे ॥ कुलक्षयेगजपुरेप्रदत्तामाहुतिंद्विजैः ॥ ३८ ॥ इतिश्रुत्वाहरेर्वाक्यंसत्यंमत्वामुनीश्वराः ॥ सर्वान्देवान्नृपश्रेष्ठह्यध्वरेचाहुतिंददुः ॥ ३९ ॥ अन्येकेपिनजानंतिवज्रिणाकथितंच किम् ॥ अग्नयेस्वाहेतिमन्त्रैश्चसर्वानेवाहुतीर्ददुः ॥४०॥ कर्पूरहवनेनापिप्रीतंविश्वंचराचरम् ॥ उग्रसेनस्तुराजावैनिर्ऋणोभून्महाध्वरे ॥४१॥ यज्ञांतेऽवभृथस्नानमुग्रसेनोद्विजोत्तमैः ॥ कृष्णाद्यैर्यादवैर्भूपैस्तीर्थेपिण्डारकेकरोत् ॥४२॥ भार्ययासहितःस्नात्वावेदोक्तविधिनानृपः॥ धृत्वाक्षौमांबरंरेजेयज्ञोदक्षिणयायथा ॥ ४३ ॥ देवदुंदुभयोनेदुर्नरदुंदुभयस्तदा ॥ उग्रसेनोपरिसुराःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥४४॥ कारयित्वास्वधापानंप्राशयित्वायथाक्रमम् ॥ सर्वेभ्यश्चपुरोडाशंदत्त्वाशेषमथासृजत् ॥ ४५ ॥ उग्रसेनंचवादित्रैस्तुष्टुवुर्वंदिनोमुदा ॥ ततोनीराजनंचक्रुर्देवक्याद्याश्चयोषितः ॥ ४६ ॥

उसको भी किसीने नहीं जाना, तब उग्रसेन राजा उस यज्ञको करके ऋण रहित होगये ॥४१॥ फिर उग्रसेनने द्विजोत्तमोंके साथ यज्ञान्त स्नान किया, कृष्णादिक यादवों और सब राजाओंको साथ लेकर पिण्डारक नामके तीर्थमें यज्ञान्त स्नान किया ॥४२॥ वेदमें कही विधिसे भार्या सहित स्नान करके अपनी पत्नी सहित ऐसे शोभित हुए, जैसे दक्षिणा पत्नी सहित क्षौमाम्बर (रेशमी वस्त्र) धारण किये हुए मूर्तिमान् यज्ञ शोभित होते हैं ॥ ४३ ॥ आकाशमें देवताओंके और पृथ्वीमें मनुष्योंके नगाडे बजने लगे, और सब देवताओंने उग्रसेनके ऊपर पुष्प बरसाये ॥४४॥ तब स्वधापान कराकर और पुरोडाश प्राशन कराकर यज्ञके शेपको सबको क्रमानुसार दिया ॥ ४५ ॥ तब बन्दी जनोंने अनेक बाजे बजाये, उग्रसेनकी स्तुति की, और देवकी आदि सौभाग्यवती स्त्रियोंने उग्रसेनकी आरती उतारी ॥ ४६ ॥

तब आरती करनेके बादमें प्रसन्न हुए उग्रसेनने उनको रत्न, आभूषण और अनेक प्रकारके वस्त्रादिक दिये ॥ ४७ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां षट्पंचाशत्तमोऽध्यायः ॥५६॥ गर्गजी कहते हैं कि, तब कृष्णने और भीमसेनने सब राजाओंको अनेक प्रकारके पदार्थोंसे सत्कार पूर्वक भोजन कराया ॥ १ ॥ उसके बाद सब ब्राह्मणोंको निमन्त्रित करके, इमरती, जलेबी, खीर, मालपुये, दाल, कढी, अत्युत्तम फेणी, घेवर, आदि पदार्थोंसे बडे सत्कारसे सभीको भोजन कराया ॥२॥ शिखरिणी, घेवर सुशक्तिका, सुपटिनी, दधिपूप, लस्सी, उत्तम पात्रमें चन्द्रसुहालिका, बडा लड्डू, पापड, इत्यादिक पदार्थोंसे सभीको तृप्त किये ॥ ३ ॥ उनमें कोई कोई फल खानेवाले, कोई सूखे पत्ते खानेवाले, कोई जलमात्र पीकर रहनेवाले और कोई केवल दूबके रसको पीकर रहनेवाले ॥ ४ ॥ कोई पवन मात्र पीकर रहनेवाले, कोई जन्मसे ही तप करनेवाले, कोई ऐसे जो भोजनके नामको

अलंकाराश्चरत्नानिवस्त्राणिविविधानिच ॥ नीराजनांतेप्रददौताभ्यःप्रीतोनृपेश्वरः ॥ ४७ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेयज्ञपूर्तौनृपस्याभिषेकोनामषट्पंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५६ ॥ गर्गउवाच ॥ ततःकृष्णेनभीमेनप्रार्थयित्वाद्विजान्नृपान् ॥ भोजयामासयदुराड्भोजनैर्विविधैरपि ॥ १ ॥ सच्छष्कुलीपायसतण्डुलाभैःसंयावकापूपसुसूपकाद्यैः ॥ सत्फेणिकाद्यैस्तुनिमन्त्र्यविप्रान्संभोजयामासविशेषमन्नम् ॥२॥ शिखरिणीघृतपूरसुशक्तिकाःसुपटिनीदधिपूपकलप्सिकाः ॥ सुवृत्तसुंदरचन्द्रसुहालिकाबटुकमोदकपर्पटकैरदात् ॥३॥ केचित्फलाशनास्तत्रशुष्कपर्णाशनास्तथा॥केचिज्जलाशनाविप्राःकेचिद्दूर्वारसाशनाः॥४॥केचिद्वाताशनाराजञ्जन्मतश्चतपस्विनः॥भोजनानांचनामानितेनजानंतिविस्मिताः ॥५॥ भक्तंचमेनिरेकेचिन्मालत्याःकुसुमानिच ॥ मोदकाँश्चद्विजाःकेचिदुदुंबरफलानिच ॥६॥ पायसंफेणिकांदृष्ट्वाचंद्रबिम्बंचमेनिरे ॥ पर्पटान्फेणिकादृष्ट्वापत्राणिकिंशुकस्यवै ॥ ७ ॥ मेनिरेऽर्कफलानीतिदृष्ट्वाचमधुशीर्षकान् ॥ प्रलेहिकांलप्सिकांचऋषयश्चंदनद्रवम् ॥८॥ दृष्ट्वा तेमिष्टचूर्णंवैवालुकांमुनिसत्तमाः ॥ इतिमत्वाद्विजाःसर्वेबुभुजुर्भोजनानिच ॥९॥ केचित्पिबंतिदुग्धंवैकेचिद्द्राक्षारसंतथा॥ केचिदाम्ररसंविप्राः प्रहसंतिलुठंतिवै ॥ १० ॥ ततःकृष्णस्तुभगवान्भीमेनप्रहसन्मुदा ॥ चकारहास्यंविप्राणांसंस्थितानांतपस्विनाम् ॥ ११ ॥

भी नहीं जानते थे ॥५॥ ऐसे उन ब्राह्मणोंके सामने जब भात रखे गए, तो उन्होंने मालतीके फूल समझे, और लड्डुओंको गूलरके फल समझे ॥ ६ ॥ और खीरको तथा फेणीको देखकर चन्द्रमाका बिम्ब समझा, पापड तथा फेणीको देखकर उन ब्राह्मणोंने टेसूके पत्ते समझे ॥७॥ और मधुशीर्ष (व्यञ्जन विशेष) को देखकर आकके फल समझे, और कढी तथा लस्सीको परोसी हुई देखकर वनवासी ब्राह्मणोंने चन्दनका द्रव समझा ॥८॥ और उन ब्राह्मणोंने मीठे चूर्णको देखकर वनकी रेत समझी, इस प्रकार उन ब्राह्मणोंने समझकर भोजन किये ॥९॥ कोई दूध पीने लगे, कोई दाखका रस, और कोई आमका रस पीने लगे, कोई हँसने और कोई लोटने लगे ॥ १० ॥ तब कृष्ण भगवान् भीमसेन सहित हँसे, और बैठे हुये तपस्वी ब्राह्मणोंकी हँसी करने लगे ॥ ११ ॥

भगवान्ने कहा कि हे मुनियो ! इनका नाम बताओ, तब तुमको देंगे ॥ १२ ॥ तब श्रीकृष्ण और भीमके कथनको सुनकर उन मुनियोंने कुछ जवाब नहीं दिया आपसमें देखने लगे ॥१३॥ तब उग्रसेनजीने तैलंगी, कर्नाटकी, गुजराती, गौड, सनाढच आदि अनेक ब्राह्मणोंको सुवर्ण, वस्त्र और रत्नोंसे पूजकर उन विप्रवरोंको नमस्कार किया ॥१४॥ गर्गजी कहते हैं कि, यज्ञके अन्तमें एक लाख तो घोड़े, एक हजार हाथी, दो हजार रथ, एक लाख गौ ॥१५॥ और सौभार सुवर्ण इतनी दक्षिणा तो पहिले मेरे लिये दी, और मेरी दक्षिणासे आधी दक्षिणा बकदाल्भ्य और व्यासजीको दी, फिर एक हजार घोड़े, सौ हाथी ॥१६॥१७॥ दो सौ रथ और एक हजार गौएं और बीसभार सुवर्ण इतनी दक्षिणा सब निमन्त्रित ब्राह्मणोंको एक एकको दी, और एक हाथी, एक रथ, एक गौ, एक भार सुवर्ण, एक घोड़ा॥१८॥१९॥दोभार चांदी, इतनी इतनी दक्षिणा एक एक ब्राह्मण मात्रको

भोजनानांचनामानिसुनयोवदतत्वरम् ॥ तान्प्रयच्छामियुष्मभ्यंभीमेनसहितोप्यहम् ॥ १२ ॥ श्रीकृष्णभीमयोर्वाक्यंनिशम्यमुनिसत्तमाः ॥ नकिंचिदूचुर्मुदिताःप्रपश्यन्तःपरस्परम् ॥ १३ ॥ तैलंगकर्णाटकगुर्ज्जराद्यानन्यान्द्विजान्गौडसनाढचकादीन् ॥ संपूज्यहेमांबररत्नवृन्दैर्नृपेश्वरोविप्रवरान्ननामह ॥ १४ ॥ एकलक्षंहयानांचगजानांचसहस्रकम् ॥ द्विसहस्रंरथानांचगवांलक्षंविधानतः ॥ १५ ॥ शत भारंसुवर्णानामीदृशीं दक्षिणांनृप ॥ उग्रसेनस्तुयज्ञांतेपूर्वमह्यंददौकिल ॥ १६ ॥ मदर्द्धंबकदाल्भ्यायददौव्यासायवैतथा ॥ तुरगाणांसहस्रंचगजानांशतमेवच ॥१७॥ द्विशतंस्यंदनानांचधेनूनांचसहस्रकम् ॥ विंशद्भारंसुवर्णानामीदृशींदक्षिणांपुनः ॥१८॥ निमंत्रितेभ्योविप्रेभ्यउग्रसेनोददौमुदा ॥ गजमेकं रथं गांचस्वर्णभारंचघोटकम् ॥ १९ ॥ द्विभारंरजतंचैवयादवेंद्रःप्रहर्षितः ॥ ईदृशींदक्षिणांराजन्ब्राह्मणेब्राह्मणेददौ ॥ २० ॥ महाध्वरेकृष्णपुरीयदाबभौमहीतलेस्वेह्यमरावतीयथा ॥ तदागतामागधसूतकादयोबंदीजनागायकवारयोषितः ॥ २१ ॥ तदानृपद्वारिमहोत्सवोभून्मृदंगवीणामुरयष्टिवेणुभिः ॥ सुतालशंखानकदुंदुभिस्वनैःसंगीतनृत्यादिकवाद्यगीतकैः ॥ २२ ॥ जगुःसुकण्ठैर्ननृतुःसुतालैःसंगीतगीताक्षरसामगीतैः ॥ कौसुंभवस्त्राणिविचालयन्त्यःसंगीतनृत्येनपरिस्फुरंत्यः ॥२३॥ बन्दीजनामागधगायकाश्चयेचागतास्तेभ्यउपागतेभ्यः ॥ प्रादाद्धिरण्यंबहुरत्नवृन्दंतथाऽगताह्यप्सरसश्चताभ्यः ॥ २४ ॥

यादवेन्द्रने हर्षित होकर सबको जो यज्ञमें आये थे, उनको दी ॥२०॥ उस महान् यज्ञमें कृष्णकी पुरी द्वारका स्वर्गमें जैसी अमरावती हो, उसी प्रकार सुशोभित हुई, उसके बाद मागध, सूत, बन्दीजन, गानेवाले और वेश्याएं आईं ॥२१॥ तब राजद्वारमें बड़ा उत्सव हुआ, मृदंग, वीणा, मुरज, वेणु, ताल, शंख, नगाड़े, दुन्दुभि, आदि बाजे बजने लगे, और संगीत, नृत्य, वाद्य, और गीतोंका आनन्द हुआ ॥२२॥ उस समय सुन्दरी वेश्याओंने मधुर कण्ठोंसे गान किया, तालबन्धनसे नृत्य किया, और संगीतके अनुसार साममें गान किया, और कसूमके रंगके वस्त्रोंको उडाती हुई संगीतके नृत्यसे प्रकाश करने लगी ॥ २३ ॥ उस समय बंदीजन, मागध, गायकादिक जो आये थे, उनको सबको सुवर्ण और अनेक रत्न दिये, और जो अप्सराएं आईं थीं, उनको भी यही दिये ॥ २४ ॥

और सूत, मागध, बन्दी, सभीके लिये बहुत धन ऐसे बरसाया, जैसे मेघ बरसते हों,और बडे हर्षित हुये॥२५॥उसके बाद उग्रसेननें राजाओंके विदाके समय दो दो लाख तो घोडे एक एक हजार हाथी, सौ २ पालकियाँ, कुण्डल, कडे और तीस २ भार सुवर्ण ये प्रत्येक राजाको दिये ॥२६॥ २७॥ और इससे दुगुना सब यादवोंको तथा नन्दादिक गोपोंको दिया, और यशोदादि गोपियोंको, देवकी आदि यदु स्त्रियोंको,रुक्मिणी आदिक कृष्णपत्नियोंको, और राधिकाजी आदिक सब गोपियोंको दिव्य वस्त्रों और अलंकारोंसे उग्रसेनजी ने सबको संतुष्ट किया ॥ २८ ॥ २९ ॥ उसके बाद बडी प्रसन्नतासे गर्गजीको उग्रसेनने सौ गाँव फिर दिये, तब गर्गजीने वह सब धन सब ब्राह्मणोंको क्रमसे यथोक्त दे दिया ॥ ३० ॥ उसके बाद बलदेवसहित श्रीकृष्णका भी वस्त्र, अलंकार,तिलक, माला और नीराजनादिकसे सत्कार किया ॥३१॥ तब श्रीकृष्णने कहा कि, हे राजन् ! तुम सब प्रकार

सूतेभ्योमागधेभ्यश्चसर्वेभ्योबहुलंधनम् ॥ ववर्षघनवद्राजाहयमेधप्रहर्षितः ॥२५॥ तत्पश्चाद्यादवेंद्रस्तुह्युग्रसेनोमहीश्वरः॥नियुतंतुरगाणांचस-
हस्रंहस्तिनांतथा ॥ २६ ॥ शिबिकानांशतंचैवकुण्डलेकटकानिच ॥ त्रिंशद्भारंसुवर्णानांभूपेभूपेददौमुदा॥ २७ ॥ द्विगुणेनयदून्सर्वान्नंदादींश्चै-
वभूपतिः ॥ यशोदाद्याश्चगोप्यश्चदेवक्याद्यायदुस्त्रियः ॥२८॥ रुक्मिण्याद्याराधिकाद्याःपट्टराइयोहरेरपि॥ दिव्यांबरैरलंकारैराज्ञासर्वाश्चतो-
षिताः ॥२९॥ पुनर्ददौचगर्गायराजाग्रामशतंमुदा ॥ ससर्गोब्राह्मणेभ्यश्चप्रददौह्रिक्रमाद्दषिः ॥३०॥ ततःसंपूजयामासकृष्णंसंकर्षणान्वितम्
वस्त्रालंकारतिलकैःस्रग्भिर्नीराजनादिभिः ॥३१॥ उवाचकृष्णःप्रहसन्मह्यंराजन्महाध्वरे ॥ समर्थेनत्वयाह्यत्रनदत्तंकिंचिदेवहि ॥ ३२ ॥ इति
श्रुत्वानृपःप्राहरामेणसहमाधवः ॥ यथोक्तांदक्षिणांशीघ्रंगृहाणजगदीश्वर ॥ ३३ ॥ युक्त्वाप्रददौराजाहर्षितःप्रेमविह्वलः ॥ फलंसर्वंकृष्णकरे-
राजसूयाश्वमेधयोः ॥ ३४ ॥ तदाजयजयारावोद्वारकायांबभूवह ॥ सद्यःसुराश्चसंतुष्टाःपुष्पवर्षंप्रचक्रिरे ॥ ३५ ॥ सर्वाश्चदेवता-
स्तुष्टाःप्राप्तभावादिवंगताः ॥ रक्षोदैत्यादंष्ट्रिणश्चखगामर्काबिलेशयाः ॥३६॥ शैलागावोवृक्षसंघानद्यस्तीर्थानिसिन्धवः ॥ संतुष्टाःप्राप्तभागाये
सर्वेस्वंस्वंगृहंगताः ॥३७॥ पूजितादानमानाभ्यांराजानोयेसमागताः ॥ जग्मुःस्वंस्वंगृहंसैन्यैःकंपयन्तोमहीतलम् ॥ ३८ ॥

से समर्थ हो, किन्तु अपने इस इतने बड़े भारी यज्ञमें मेरे योग्य मुझको कुछ भी नहीं दिया ॥३२॥ तब उग्रसेनजी श्रीकृष्णके कथनको सुनकर बोले कि, हे जगदीश्वर ! बलरामजी सहित आप कही हुई दक्षिणाको ग्रहण करिये ॥३३॥ गर्गजी कहते हैं कि इतना कहकर प्रेममें विह्वल हुये उग्रसेनजी बड़े हर्षित हुये, और राजसूय और अश्वमेधयज्ञका समग्र फल श्रीकृष्णके हाथमें भेंट किया ॥३४॥ तब द्वारकामें जयजय शब्द हुआ, और प्रसन्न हुये देवताओंने फूल बरसाये॥३५॥फिर सब देवता प्रसन्न होकर अपने २ भागको लेकर स्वर्गको गये, फिर राक्षस, दैत्य, दाढ़वाले, पशु, पक्षी बंदर, बिलमें रहनेवाले ॥ ३६ ॥ पर्वत, गौऐं, वृक्ष समूह, नदियाँ, तीर्थ और समुद्र सब संतुष्ट होकर अपने भागोंको लेकर अपने २ स्थानोंको गये ॥३७॥ और जो राजा आये थे वे भी दान मानसे पूजन किये गये, सैन्योंसे भूमिको कम्पाते हुये अपने २ स्थानोंको गये ॥ ३८ ॥

फिर सब नन्दादिक गोप और यशोदा आदिक व्रजकी स्त्रियाँ हे राजन् ! कृष्णने जिनका पूजन किया, वे सब विरहमें आर्त होकर व्रजको गईं ॥ ३९ ॥ इस प्रकार यादवेन्द्र राजा उग्रसेन अपने मनोरथ रूप दुस्तर समुद्रके पार उतरकर श्रीकृष्णके प्रभावसे गई है व्यथा जिनकी ऐसे हुये ॥४०॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां सप्तपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥५७॥ गर्गजी कहते हैं कि उसके बाद श्रीकृष्ण महात्माने कंसादिक नौ भाइयोंका आह्वाहन किया, सो वे सब वैकुण्ठसे आये ॥१॥ तब उन सभीको आये हुये देखकर सभीको बड़ा आश्चर्य हुआ, तब उन सभीने श्रीकृष्णसे बलदेवजीसे प्रद्युम्नसे और अनिरुद्धसे मिलकर कंसादिकोंने सबको प्रणाम किया, तब हे नृप ! उग्रसेनने सुधर्मा सभामें उन सभीको देखा ॥२॥३॥ रुचिमती पत्नीसहित इन्द्रासनपर बैठे प्रसन्न हुये उग्रसेनने कृष्णके जैसे जिनके आकार ऐसे चतुर्भुज अपने पुत्रोंको बुलाया ॥४॥ शंख,चक्र,गदा,और पद्म

सर्वैगोपाश्चनन्दाद्यायशोदाद्याव्रजस्त्रियः ॥ कृष्णेनपूजिताराजन्विरहार्त्तान्व्रजंययुः ॥३९॥ एवंराजायादवेंद्रोमनोरथमहार्णवम् ॥ दुस्तरंचसमुत्तीर्यहरिणासीद्गतव्यथः ॥ ४० ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेविश्वभोज्यदक्षिणावर्णनंनामसप्तपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥ गर्ग उवाच ॥ ततःसर्वेसमाहूताःश्रीकृष्णेनमहात्मना ॥ वैकुण्ठादाययुःशीघ्रंकंसाद्यानवभ्रातरः ॥ १ ॥ दृष्ट्वातानागतान्सर्वेविस्मयंपरमंययुः॥ तेसमागत्यश्रीकृष्णंबलंप्रद्युम्नमेवच ॥२॥ अनिरुद्धंचकंसाद्यानेमुःसर्वेपृथक्पृथक् ॥ ददर्शचोग्रसेनस्तुसुधर्मायांसुतान्नृप ॥३॥ शक्रसिंहासनस्थोवैरुचिमत्यासमन्वितः॥कंसादीन्स्वसुताप्रीतोकृष्णाकारांश्चतुर्भुजान् ॥४॥ शंखचक्रगदापद्मैर्भूषितान्पीतवाससः ॥ कृष्णपार्श्वेस्थितान्पुत्रानाह्वयामासभूपतिः ॥५॥ ततःकृष्णस्तुभगवान्कंसादीन्प्राहसस्मितः ॥ पश्यस्वमातापितरौयुष्माकंदर्शनोत्सुकौ ॥ ६॥ गत्वासमीपेहेवीरायूयंनमतभक्तितः ॥ इतिकृष्णस्यवचनंकृष्णभृत्यानिशम्यच ॥ ७ ॥ ऊचुःप्रहर्षिताःसर्वेकंकन्यग्रोधकादयः ॥ कंसाद्याऊचुः ॥ ईदृशाःपितरोऽस्माकमीदृश्योमातरश्चवै ॥८॥ बहवश्चाभवन्नाथभ्रमतांतवमायया ॥ हरिःपितातुजीवस्यश्रुतिरेषासनातनी ॥ ९ ॥ तस्माच्चान्यंन पश्यामोवयंत्वन्निकटेस्थिताः ॥ पुराविलोकितस्त्वंवैसंग्रामेबलसंयुतः ॥१०॥ पश्चाज्जातौद्वारकायांनदृष्टौकार्ष्णिकार्ष्णिजौ ॥ तस्माद्द्रष्टुंचतुर्व्यूहंवयमत्रसमागताः ॥ ११ ॥

इनसे भूषित, पीताम्बर पहिने हुये, कृष्णके पास खड़े हुये पुत्रोंको उग्रसेनने बुलाया ॥ ५ ॥ तब भगवान् हँसकर कंसादिकोंसे बोले, ये तुम्हारे दर्शनमें उत्कण्ठित तुम्हारे माता पिता हैं, इनको देखो ॥६॥ हे वीरो ! इनके पास जाकर नमस्कार करो, श्रीकृष्णके कथनको सुनकर ॥ ७ ॥ वे कंस न्यग्रोधादिक प्रसन्न होकर बोले कि, हे नाथ ! कर्मोके मारे इस संसारमें भ्रमण करते हुये ऐसे हमारे न जाने कितनेही माता पिता हो गये हैं ॥८॥ आपकी माया बड़ी बलवती है, इस जीवके पिता हरि (भगवान्) हैं, यह सनातनी श्रुति है ॥ ९ ॥ इससे अन्यको नहीं जानते हैं, हम तो आपके पासमेंही खड़े हैं, पहिले हमने आपको बलदेवसहित संग्राममें देखा था ॥ १० ॥ हमारे जानेके बादमें प्रद्युम्न और अनिरुद्ध दोनों उत्पन्न हुये हैं, उनको हमने देखा नहीं, सो अब हम आपकी चतुर्व्यूह मूर्तिको देखनेको आये हैं ॥ ११ ॥

श्रीकृष्ण, बलभद्र, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध ये सब परिपूर्णतम आज हमने देखे ॥१२॥ सो हम नहीं जानते हैं कि हमारा कौनसा पूर्वपुण्य है, जो हमने आपका दर्शन किया, आपका दर्शन सन्तोंको भी दुर्लभ है, आप परिपूर्ण चतुर्व्यूह हो, हम आपको नहीं जानते हैं ॥१३॥ हे संकर्षण ! हे कृष्ण ! हे अनिरुद्ध ! हे प्रद्युम्न ! मूढ़ कुबुद्धि हमारे अपराधको क्षमा करिये ॥१४॥ हे गोविन्द ! आप वैकुण्ठको जाइये, आपका सुन्दर धाम सूना है, यह द्वारका धन्य है, जो आपने वैकुंठसे भी अधिक बनाई है ॥१५॥ जो आपके चरण ब्रह्मा, इन्द्र, अग्नि, सूर्य, शिव, मरुत, यमादिक, कुबेर, चन्द्रमा, वरुण, इनसे पूजित हैं, उन्हीं चरणोंको हम निरन्तर भजते हैं॥१६॥बड़े २ मुनीन्द्र, लक्ष्मी, देवता और भक्तोंद्वारा चन्दन, पुष्प, धूप दीप, धानकी खील. अक्षत, दूर्वा और सुपारीसे पूजे गये आपके चरणोंको हम निरन्तर भजते हैं ॥ १७ ॥ गर्गजी कहते हैं कि ऐसे कहकर वे कंसादिक सबके देखते २ वैकुंठको गये तब भार्यासहित राजा उग्रसेन बड़े विस्मित हुए॥१८॥इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायामष्टपंचाशत्तमोऽध्यायः॥५८॥गर्गजी कहते हैं कि उसकेबाद उग्रसेनजी पुत्रकी आज्ञाको

श्रीकृष्णोबलभद्रश्चश्रीप्रद्युम्नउषापतिः ॥ परिपूर्णतमाएतेह्यद्योस्माभिर्विलोकिताः ॥१२॥ केनपूर्वेणपुण्येनदृष्टोयोदुर्लभःसताम् ॥ परिपूर्णश्चतुर्व्यूहोनजानीमोवयंकिल ॥ १३॥ हेसंकर्षणहेकृष्णहेप्रद्युम्नउषापते ॥ मूढानांनःकुबुद्धीनामपराधंक्षमस्वच ॥१४॥ गच्छगोविंदवैकुण्ठंशून्यंते धामसुन्दरम् ॥ धन्यात्वयाद्वारकातुवैकुण्ठाच्चकृताधिका ॥१५॥ यदर्चितंब्रह्मशचीशवह्निभिरादित्यगौरीशमरुद्यमादिभिः॥पौलस्त्यतारेश जलेशपूजितंपादारविंदंसततंभजामहे॥१६॥ मुनींद्रलक्ष्मीसुरभक्तसात्वतैःसुपूजितंचंदनगंडधूपकैः॥ लाजाक्षतैश्चांकुरपूगचर्चितंपादारविंदंसततंभजामहे ॥ १७ ॥ गर्गउवाच ॥ इत्युक्त्वातेचकंसाद्यावैकुण्ठंप्रययुर्नृप ॥ सर्वेषांपश्यतांराजाविस्मितोभूत्सभार्यया ॥ १८ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायांहयमेधखण्डेकंसादिदर्शनंनामाष्टपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५८ ॥ गर्गउवाच ॥ अथोग्रसेनोनृपतिःपुत्रस्याज्ञांविसृज्यच ॥ व्यासंपप्रच्छसंदेहंज्ञात्वाविश्वंमनोमयम् ॥ १ ॥ उग्रसेनउवाच ॥ ब्रह्मन्केनप्रकारेणहित्वाचजगतःसुखम् ॥ भजेत्कृष्णंपरंब्रह्मतन्मेव्याख्यातुमर्हसि ॥ २ ॥ व्यासउवाच ॥ त्वदग्रेकथयिष्यामिसत्यंहितकरंवचः ॥ उग्रसेनमहाराजशृणुष्वैकाग्रमानसः ॥ ३ ॥ सेवनंकुरुराजेंद्रराधाश्रीकृष्णयोःपरम् ॥ नित्यंसहस्रनामभ्यामुभयोर्भक्तितःकिल ॥ ४ ॥ सहस्रनामराधायाविधिर्जानातिभूपते ॥ शंकरोनारदश्चैवकेचिद्वैचास्मदादयः ॥ ५ ॥ उग्रसेनउवाच ॥ राधिकानामसाहस्रंनारदाच्चपुराश्रुतम् ॥ एकांतेदिव्यशिबिरेकुरुक्षेत्रेरविग्रहे ॥ ६ ॥

छोड़कर श्रीकृष्णके अनुग्रहसे इस विश्वको मनोमय जानकर व्यासजीसे सन्देह पूछने लगे॥१॥उग्रसेनजी बोले कि हे ब्रह्मन् ! इस जगत्के सुखको छोड़कर परब्रह्म कृष्णको किस प्रकारसे भजना चाहिये,यह मुझको विस्तारसे कहिये॥२॥तब वेद व्यासजी बोले कि,मैं तुम्हारे सामने सत्य और हितकारी वचन कहूँगा, हे उग्रसेन ! हे महाराज ! तुम एकाग्र मन होकर सुनो ॥३॥ हे राजेन्द्र ! केवल तुम राधा कृष्णकाही भक्तिसे दोनोंके सहस्र नामोंसे आराधन करो ॥४॥ हे भूपते ! राधाजीके सहस्र नाम ब्रह्माजी जानते हैं, या शंकरजी, या नारदजी, अथवा कोई मेरे जैसे हैं, वे जानते हैं, और कोई नहीं जानते हैं ॥ ५ ॥ तब उग्रसेनजीने कहा कि, हे महाराज ! मैंने राधिकाजीके तो सहस्र नाम कुरुक्षेत्रमें दिव्य शिबिरमें सूर्यग्रहणके समय एकान्त स्थानमें नारदजीके मुखसे सुने हैं ॥ ६ ॥

परन्तु अक्लिष्टकर्मा श्रीकृष्णके सहस्र नाम नहीं सुने हैं, सो उनके सहस्र नामको कृपा करके कहिये, जिससे मैं कल्याणको प्राप्त होऊँ ॥७॥ तब गर्गजी बोले कि इस प्रकार उग्रसेनजी के कथनको सुनकर महामुनि श्रीवेद व्यासजी श्रीकृष्णका ध्यान कर और साक्षात् कृष्णका नेत्रोंसे दर्शन करते हुए हँसकर प्रसन्न होकर उग्रसेनजीसे बोले ॥ ८ ॥ व्यासजी बोले कि, हे राजन् ! मैं उत्तमोत्तम श्रीराधिका नाथके हजार नामोंको कहता हूँ, उनको तुम सुनो, जो नाम अपने निजधाम गोलोकमें श्रीकृष्णचन्द्रने राधाके आगे कहे हैं, उनको तुम सुनो ॥९॥ श्रीभगवान् बोले ये रहस्य हैं, निश्चय छुपाने योग्य हैं, प्रत्येकके सामने कहे तो कहनेवालेको निरन्तर हानि होनेके कारण हैं, ये मोक्षके देनेवाले, सुखके देनेवाले परम कल्याण रूप और सर्वोत्कृष्ट पुरुषार्थ देनेवाले हैं ॥१०॥ यह कृष्ण सहस्र नाम मेरा रूप है, इसका जो कोई मनुष्य पाठ करे, वह पुरुष मेरा प्रसिद्ध रूप है, यह सहस्र नाम शठ मनुष्य और दम्भी मनुष्यको बताने योग्य नहीं है ॥११॥ जिसके हृदयमें दया हो, जिसकी गुरु चरणमें भक्ति हो, जो श्रीकृष्ण भक्त हो, सन्तोंका सेवक हो, क्रोध और मदसे

नश्रुतंनामसाहस्रंकृष्णस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ वदतन्मेचकृपयायेनश्रेयोऽहमाप्नुयाम् ॥ ७ ॥ गर्गउवाच ॥ श्रुत्वोग्रसेनवचनंवेदव्यासोमहामुनिः ॥ प्रशस्यतंप्रीतमनाप्राहकृष्णंविलोकयन् ॥ ८ ॥ व्यासउवाच ॥ शृणुराजन्प्रवक्ष्यामिसहस्रंनामसुन्दरम् ॥ पुरास्वधाम्निराधायैकृष्णेनानेननिर्मितम् ॥ ९ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ इदंरहस्यंकिलगोपनीयंदत्तेचहानिःसततंभवेद्धि ॥ मोक्षप्रदंसर्वसुखप्रदंशंपरंपरार्थंपुरुषार्थदंच ॥ १० ॥ रूपंचमेकृष्णसहस्रनामपठेत्तुमद्रूपइवप्रसिद्धः ॥ दातव्यमेवंनशठायकुत्रनदांभिकायोपदिशेत्कदापि ॥ ११ ॥ दातव्यमेवंकरुणावृतायगुर्वंघ्रिभक्तिप्रपरायणाय ॥ श्रीकृष्णभक्तायसतांपरायतथामदक्रोधविवर्जिताय ॥ १२ ॥ ॐ अस्यश्रीकृष्णसहस्रनामस्तोत्रमंत्रस्य नारायणऋषिर्भुजंगप्रयातंछंदः श्रीकृष्णचन्द्रोदेवता वासुदेवोबीजं श्रीराधाशक्तिःमन्मथःकीलकं श्रीपूर्णब्रह्मकृष्णचन्द्रभक्तिजन्मफलप्राप्तयेजपे विनियोगः ॥ अथ ध्यानम् ॥ शिखिमुकुटविशेषंनीलपद्मांगदेशंविधुमुखकृतकेशंकौस्तुभापीतवेशम् ॥ मधुररवकलेशंशंभजेभ्रातृशेषंव्रजजनवनितेशंमाधवंराधिकेशम् ॥ १३ ॥ इतिध्यानम् ॥ हरिर्देवकीनन्दनःकंसहंतापरात्माचपीतांबरःपूर्णदेवः ॥ रमेशस्तुकृष्णःपरेशःपुराणः सुरेशोच्युतोवासुदेवश्चदेवः ॥ १४ ॥

विवर्जित हो, उसके सामने कहना चाहिये, दूसरेके सामने नहीं कहना चाहिये ॥ १२ ॥ पहिले हाथमें जल लेकर विनियोग करे कि, इस श्रीकृष्ण नामरूप मन्त्रके नारायण ऋषि हैं, भुजंग प्रयात छन्द हैं, श्रीकृष्णचन्द्र देवता हैं, वासुदेव बीज हैं, श्रीराधा शक्ति हैं, इसमें मन्मथ कीलक, पूर्ण ब्रह्म श्रीकृष्णचन्द्र भक्ति फल प्राप्ति कामनासे जप करनेका विनियोग है, विनियोग जलको पात्रमें डाल दे, फिर ध्यान करे, माथेपर मोर मुकुट है जिनके, नील उत्पलके समान जिनका अंग, चन्द्रवत् मुखपर अलकोंकीहै शोभा जिनके, कण्ठमें कौस्तुभ मणि और कटि पीताम्बरसे सुशोभित, वंशीके मधुर शब्दको कर रहे, शेषजी जिनके भाई, गोपीगणोंके पति, ऐसे माधव भगवान् राधिकाके स्वामीका मैं भजन करता हूँ ॥ १३ ॥ इस प्रकार ध्यान करके हाथ जोडकर इन नामोंसे प्रार्थना करे, हरि, देवकीके नन्दन, कंसके मारनेवाले पर सर्वोत्कृष्टा आत्मा, पीत वस्त्रको पहिननेवाले, पूर्ण देव, रमाके स्वामी, सबके मनको खेंचनेवाले, ब्रह्मादिकोंके नियन्ता, पुराण(अनादिसिद्ध) रुद्रादि देवताओंको वशमें करनेवाले, अच्युत(सब समय एकाकार) वसुदेवनन्दन अथवा शुद्ध अन्तःकरणमें निवास करनेवाले, प्रकाशरूप ॥ १४ ॥

भूमिका बोझ उतारनेवाले, कृती राधिकाके स्वामी, पर पृथ्वीके पति, दिव्य गोलोकके नाथ, सुदामा गोप और राधिकाके शापके हेतु, दयालु, मानिनियोंको मानके देनेवाले, और दिव्य लोक स्वरूप ॥ १९ ॥ सुन्दर गोप वेशधारी, जन्म रहित, राधिकाके आत्मा, हिल रहें हैं कुण्डल जिनके, सुन्दर अलकोंवाले, अलकोंमें माला जिनके, राधासहित रथमें विराजमान, श्वेतमहल भूमिमें विचरनेवाले, दिव्य वस्त्रके धारण करनेवाले ॥१६॥ कभी अपने लोकमें वृन्दावनमें विचरनेवाले, महारत्नोंके सिंहासनपर विराजमान, अत्यन्त शान्त स्वरूप हंसकी तरह सफेद चमर डुल रहे जिनपर, चलते हुए छत्र और मुक्तावलीसे शोभायमान ॥१७॥ सुखरूप कोटिकामदेवकी लीलासे सुन्दर, शब्दयुक्त नूपुरोंसे अलंकृत जिनके चरण, शुभचरणवाले सुन्दर जिनके जानु, केलेके समान सुन्दर जिनके ऊरु, कृश जिनके अंग बड़े प्रतापी हाथीकी सूंडके समान जिनके भुजदण्ड ॥१८॥ जपा, (गुड़हर) के पुष्पके

धराभारहर्त्ताकृतीराधिकेशः परोभूवरोदिव्यगोलोकनाथः॥सुदाम्नस्तथाराधिकाशापहेतुर्घृणीमानिनीमानदोदिव्यलोकः।१९।लसद्गोपवेषोह्यजो-
राधिकात्माचलत्कुंडलःकुंतलीकुंतलस्रक्॥ रथस्थःकदाराधयादिव्यरत्नःसुधासौधभूचारणोदिव्यवासाः॥१६॥ कदावृन्दकारण्यचारीस्वलोके
महारत्नसिंहासनस्थःप्रशांतः ॥ महाहंसभैश्चामरैर्वीज्यमानश्चलच्छत्रमुक्तावलीशोभमानः॥ १७ ॥ सुखीकोटिकंदर्पलीलाभिरामःक्वणन्नूपुरा-
ऽलंकृतांघ्रिःशुभांघ्रिः ॥ सुजानुश्चरंभाशुभोरुःकृशांगःप्रतापीभुशुंडासुदोर्दंडखंडः॥१८॥ जपापुष्पहस्तश्चशातोदरश्रीर्महापद्मवक्षस्थलश्चन्द्र-
हासः ॥ लसत्कुन्ददंतश्चबिंबाधरश्रीःशरत्पद्मनेत्रःकिरीटोज्ज्वलाभः ॥ १९ ॥ सखीकोटिभिर्वर्त्तमानोनिकुंजेप्रियाराधयारासक्तोनवांगः ॥
धराब्रह्मरुद्रादिभिःप्रार्थितःसद्धराभारदूरीकृतोर्थप्रजातः ॥ २० ॥ यदुर्देवकीसौख्यदोबंधनच्छित्सशेषोविभुर्योगमायीचविष्णुः॥ व्रजेनन्दपुत्रो
यशोदासुताख्योमहासौख्यदोबालरूपःशुभांगः॥२१॥ तथा पूतनामोक्षदःश्यामरूपोदयालुस्त्वनोभञ्जनःपल्लवांघ्रिः ॥ तृणावर्त्तसंहारकारीच
गोपोयशोदायशोविश्वरूपप्रदर्शी ॥ २२ ॥

समान जिनकी हथेली, पतली जिनकी कमर, महापद्मके समान जिनका वक्षस्थल, चन्द्रकी तरह जिनका हास्य, शोभित कुन्दकलीके समान जिनके दाँत, बिम्ब जैसे जिनके होंठ, शरद्के कमल जैसे जिनके नेत्र, किरीटसे उज्ज्वल जिनकी कान्ति॥१९॥कोटि सखियोंको साथ लिये, निकुञ्जमें विराजमान, प्यारी राधिकाको साथ लिए रासमें आसक्त, नवीन जिनका अंग, भूमि तथा ब्रह्म रुद्रादिकी प्रार्थनासे पृथ्वीका बोझ उतारनेको जिन्होंने जन्म लिया ॥२०॥ यदुकुलके आभूषण, देवकी तथा वसुदेवके बंधनछेत्ता सुख देनेवाले, शेषजीसहित समर्थ, योगमाया जिनकी शक्ति, विष्णु, व्रजमें नन्दसुत और यशोदानन्दन नामसे विख्यात, महासुखको देनेवाले बालरूप और सुभग जिनका अंग ॥२१॥ पूतनाको मोक्ष देनेवाले श्याम जिनका रूप दयालु, शकटको बिखेरनेवाले, आम्रदलके जैसे कोमल जिनके चरण, तृणावर्त्तका संहार करनेवाले, यशोदाके यश, विश्वरूप दिखानेवाले ॥ २२ ॥

गर्गके कथनानुसार सुन्दर भाग्ययुक्त, सुन्दर, बालक्रीडा करनेवाले, बलसहित सुन्दर जिनकी वाणी, नूपुरोंके शब्दयुक्त नन्दके आंगनमें क्रीडा करनेवाले, नन्दके आंगनमें घुटनों पर हाथ रखकर घूमनेवाले॥२३॥दहीको स्पर्श करनेवाले, मक्खनके खानेवाले, दूधके भोक्ता, दहीके चोर, दुग्धभुक् दहीके पात्रको फोडनेवाले, मिट्टी खानेवाले, नन्द पुत्र, विश्वरूप सूर्यकी कान्तिसे मंडित जिनका अंग॥२४॥यशोदाके हाथोंसे बंधनेवाले, सबके आदि, रस्सीमें बंधेहुयेने जिसने मणिग्रीवका बंधन छुड़ाया,गोपियोंके साथमें व्रजमें नृत्य करनेवाले और नन्दसनन्दसे लालन किये गये॥२५॥नन्दगोपकी गोदमें बालक रूपसे विराजमान, यमुनाके पुलिनमें विहार करनेवाले, और धन तथा पवनसे व्याप्त भाण्डीर वनमें नन्दके हाथसे राधिकाका पाणि ग्रहण करनेवाले ॥२६॥ जो गोलोक नामके लोकसे आये और महारत्न समूह तथा कदम्ब लताओंसे आवृत निकुञ्जमें राधिकाके साथ उत्तम विवाहमें ब्रह्माजीके गाये साममंत्रसे जो प्रतिष्ठाको प्राप्त हुए ॥२७॥ नवरस जिसमें विद्यान्, मालती लताओंके वनमें प्रिया राधासहित राधिकाके लिये रासके करनेवाले, धराके नाथ, नन्दको आनन्द

तथागर्गदिष्टश्चभाग्योदयश्रीर्लसद्बालकेलिःसरामःसुवाचः ॥ क्वणन्नूपुरैःशब्दयुग्रिंगमाणस्तथाजानुहस्तैर्व्रजेशांगणेवा ॥ २३ ॥ दधिस्पृक्च हैयंगवीदुग्धभोक्तादधिस्तेयकृद्दुग्धभुग्भांडभेत्ता ॥ मृदंभुक्तवान्गोपजोविश्वरूपःप्रचण्डांशुचण्डप्रभामंडितांगः ॥२४॥ यशोदाकरैर्बंधनंप्राप्त आद्योमणिग्रीवमुक्तिप्रदोदामबद्धः ॥ कदानृत्यमानोव्रजेगोपिकाभिःकदानंदसन्नंदकैर्लाल्यमानः ॥२५॥ कदागोपनन्दांकगोपालरूपीकलिंदांगजाकूलगोवर्त्तमानः ॥ घनैर्मारुतैश्छिन्नभांडीरदेशेगृहीतोवरोराधयानन्दहस्तात् ॥ २६ ॥ निकुञ्जेचगोलोकलोकागतेपिमहारत्नसंघैःकदंबावृतेपि ॥ तदाब्रह्मणाराधिकासद्विवाहेप्रतिष्ठांगतःपूजितःसाममन्त्रैः ॥ २७ ॥ रसीरासयुङ्मालतीनांवनेप्रियाराधयाराधिकार्थैरमेशः ॥ धरानाथआनन्ददःश्रीनिकेतोवनेशोधनीसुंदरोगोपिकेशः॥ २८ ॥ कदाराधयाप्रापितोनंदगेहेयशोदाकरैर्लालितोमंदहासः ॥भयीक्वापिवृन्दारकारण्यवासीमहामंदिरेवासकृद्देवपूज्यः ॥ २९ ॥ वनेवत्सचारीमहावत्सहारीबकारिःसुरैःपूजितोऽघारिनामा ॥ वनेवत्सकृद्गोपकृद्गोपवेषःकदाब्रह्मणासंस्तुतःपद्मनाभः ॥ ३० ॥ विहारीतथातालभुग्धेनुकारीसदारक्षकोगोविषार्त्तिप्रणाशी ॥ कलिंदांगजाकूलगःकालियस्यदमीनृत्यकारीफणेष्वप्रसिद्धः ॥ ३१ ॥

देनेवाले, श्रीके निकेत वनके स्वामी धनवान् अति सुन्दर गोपियोंके नाथ ॥ २८ ॥ नन्दके घरमें कभी राधासे पहुँचाये गये, यशोदाके हाथोंसे लाड लडाये गये मंद हास्यवाले, डरे, हुए की तरह कभी वृन्दावनको निवास करनेवाले, महा मंदिरमें विराजमान. देवताओंसे पूजनीय ॥२९॥ वनमें गौओंके बछडे चरानेवाले, महावत्सासुरको मारनेवाले, बकासुर के शत्रु, देवताओंसे पूजित अघासुरके शत्रु, वनमें वासकृद् और गोपोंके जैसा जिनका वेष, ब्रह्माजीसे स्तुति किये गए और जिनकी नाभिमेंसे कमल उत्पन्न हुआ ॥३०॥ तालफलके भोक्ता, धेनुकासुरके शत्रु, तालवनके बिहारी, सब समय रक्षक, गौओंकी विषकी पीडाको दूर करनेवाले, यमुनाके कूलमें क्रीडा करनेवाले, कालियका दमन करनेवाले, और कालियके फणोंपर नृत्य करनेवाले ॥ ३१ ॥

लीलासहित शम जिनके विद्यमान्, ज्ञानको देनेवाले, कामोंके पूरक, गोपोंसे युक्त, गोपोंके आनन्दसे युक्त, अतिस्थैर्ययुक्त, दावानलका पान करनेवाले, बालकके जैसी जिनकी लीला वंशीमें सुन्दर राग गानेवाले, पुष्प धारण करनेवाले ॥३२॥ प्रलम्बासुरकी प्रभाके नाशक, और जिनका वर्ण, बलदेव जिनका नाम, रोहिणीके पुत्र रामनाम शेषावतार बलवान् कमल के जैसे जिनके नेत्र, कृष्णके बड़े भाई धरणीधर नागराज, नीलाम्बर पहिननेवाले ॥३३॥ अतिसुख देनेवाले, अग्निहार व्रजके स्वामी, शरद् ग्रीष्म वर्षा करनेवाले कृष्ण जिनका वर्ण व्रजमें गोपियोंसे पूजित, चीरोंके चोर, कदम्बपर बैठे चीर देनेवाले, व्रजसुन्दरियोंके स्वामी ॥३४॥ गोपोंके क्षुधाके नाशक, यज्ञपत्नियोंके चित्त चोर, कृपा करनेवाले भूमिके स्वामी, व्रजमें इन्द्र यज्ञको हटानेवाले, मितभोजी, इन्द्रको जिन्होंने व्यामोह उत्पन्न किया, बाल जिनका रूप ॥३५॥ गोवर्धनकी पूजा करनेवाले, नन्दके पुत्र गिरधारी, कृपालु, गोवर्द्धनधारी, भूमिके स्वामी, आँधी और वर्षाको दूर करनेवाले, व्रजके रखवाले, व्रजके अधीस, गोपांगनाओंसे शंकित ॥३६॥ गोवर्धनके ऊपर जिनकी इन्द्रने पूजा की, और स्तुति की, नन्दादिकों

सलीलःशमीज्ञानदःकामपूरस्तथागोपयुग्गोपआनन्दकारी ॥ स्थिरीह्यग्निभुक्पालकोबाललीलःसुरागश्चवंशीधरःपुष्पशीलः ॥ ३२ ॥ प्रलंब-प्रभानाशकोगौरवर्णोबलोरोहिणीजश्चरामश्चशेषः ॥ बलीपद्मनेत्रश्चकृष्णाग्रजश्चधरेशःफणीशस्तुनीलांबराभः ॥३३॥ महासौख्यदोह्यग्निहार-व्रजेशःशरद्ग्रीष्मवर्षाकरःकृष्णवर्णः ॥ व्रजेगोपिकापूजितश्चीरहर्त्ताकदंबोस्थितश्चीरदःसुंदरीशः ॥३४॥ क्षुधानाशकृद्यज्ञपत्नीमनस्पृक्कृपाकार-कःकेलिकर्त्तावनीशः ॥ व्रजेशक्रयागप्रणाशीमिताशीशुनासीरमोहप्रदोबालरूपी ॥ ३५ ॥ गिरेःपूजकोनन्दपुत्रोह्यगध्रःकृपाकृच्चगोवर्द्धनोद्धारि नामा ॥ तथावातवर्षाहरोरक्षकश्चव्रजाधीशगोपांगनाशंकितःसन् ॥ ३६ ॥ अगेन्द्रोपरिशक्रपूज्यःस्तुतःप्राङ्मृषाशिक्षकोदेवगोविंदनामा व्रजाधीशरक्षाकरःपाशिपूज्योऽनुजैर्गोपजैर्दिव्यवैकुण्ठदर्शी ॥३७॥ चलच्चारुवंशीक्वणःकामिनीशोव्रजेकामिनीमोहदःकामरूपः ॥ रसाक्तोरसी रासकृद्राधिकेशोमहामोहदोमानिनीमानहारी ॥ ३८ ॥ विहारीवरोमानहृद्राधिकांगोधराद्वीपगःखण्डचारीवनस्थः ॥ प्रियोह्यष्टवक्रर्षिद्रष्टासरा-धोमहामोक्षदःपद्महारीप्रियार्थः ॥ ३९ ॥ वटस्थःसुरश्चन्दनाक्तःप्रसक्तोव्रजंह्यागतोराधयामोहिनीषु ॥ महामोहकृद्गोपिकागीत कीर्त्तीरसस्थः पटीदुःखिताकामिनीशः॥ ४० ॥

को झूंठा उपदेश देनेवाले, गोविन्द देव, नन्दकी रक्षा करनेवाले, वरुणने जिनकी पूजा की, अनुज और गोपोंको वैकुण्ठ दिखानेवाले ॥३७॥ चञ्चल मनोहर जिन्होंने वंशी बजाई, कामिनियोंके स्वामी, कामिनियोंके मोह करनेवाले, साक्षात् कामरूप, रससे लिप्त रस जिनके विद्यमान रासविहारी, राधिकानाथ, महामोहके उत्पादक, मानिनियोंके मानके निवर्तक ॥३८॥ विहार करनेवालोंमें श्रेष्ठ मानहारी, राधिकाके अंग, भूमिद्वीपमें जन्म लेनेवाले, खण्डचारी, वनमें स्थित रहनेवाले प्रिय, अष्टावक्र ऋषिके द्रष्टा और राधासहित जाकर अष्टावक्रको मोक्ष देनेवाले, प्रियाके लिये कमल चुरानेवाले ॥ ३९ ॥ वटपर विराजमान, चन्दनसे लिप्त प्रसन्न होकर राधायुत व्रजमें आये, मोहनियोंमें महामोह करनेवाले, गोपियोंने जिनकी कीर्ति गाई, रसमें स्थित, पटी और दुखिता, कामिनियोंके स्वामी ॥ ४० ॥

वनमें गोपियोंका त्याग करनेवाले, चरण चिह्नको दिखानेवाले, कलाओंको करनेवाले, कामदेवको मोहनेवाले, वशी, गोपियोंके बीचमें विराजमान, मनोहर वाणीवाले, प्रियाकी प्रीति करनेवाले, रासमें रंगे, सर्व कलाओंके स्वामी ॥४१॥ रसमें रंगा जिनका चित्त, अनन्त जिनका रूप, वनमाला पहिने हुए, गोपियोंके मध्यमें स्थित, सुन्दर भुजाओंवाले, सुन्दर पाद और सुन्दर वेशवाले, और सुन्दर केशवाले, प्रजाके स्वामी, सखा, बल्लभेश, सुदेश ॥४२॥ शब्द युक्त किंकिणीको पहिने, चरणोंमें जिनके नूपुर शोभित जिनके कंकण बाजू जिनके विद्यमान, कण्ठमें जिनके हारका भार किरीट, और चञ्चल कुण्डल और अंगूठी स्फुरत्कौस्तुभ मणि और मालतीसे मण्डित है अंग जिनका ॥४३॥ रासरंगमें मग्न महानृत्य करनेवाले, कलाओंसे पूर्ण चंचल हारके जैसी जिनकी कान्ति, भामिनियोंके नृत्यसे युक्त, यमुना जलमें विहारी, कुंकुमकी जिनकी शोभा, और देवनायिका और नायक जिनका गान करें ॥ ४४ ॥ राधाके पति सुखसे पूर्ण, जिनका बोध, कटाक्षसे मुसकान करनेवाले, चंचल भ्रूविलासी, सुरम्य, भ्रमर युत जिनकी अलकें सुन्दर मोर मुकुट और कुन्दकी मालासे

वनेगोपिकात्यागकृत्पादचिह्नप्रदर्शीकलाकारकःकाममोही ॥ वशीगोपिकामध्यगःपेशवाचःप्रियाप्रीतिकृद्रासरक्तःकलेशः ॥ ४१ ॥ रसारक्तचित्तोह्यनन्तस्वरूपःस्रजासंवृतोबल्लवीमध्यसंस्थः ॥ सुबाहुःसुपादःसुवेशःसुकेशोव्रजेशःसखावल्लभेशःसुदेशः ॥ ४२ ॥ क्वणत्किंकिणीजालभृन्नूपुराढ्योलसत्कँकणोह्यंगदीहारभारः ॥ किरीटीचलत्कुण्डलश्चाङ्गुलीयस्फुरत्कौस्तुभोमालतीमंडितांगः ॥ ४३ ॥ महानृत्यकृद्रासरंगः कलाड्यश्चलद्धारभोमामिनीनृत्ययुक्तः ॥ कलिंदांगजाकेलिकृत्कुंकुमश्रीःसुरैर्नायिकानायकैर्गीयमानः ॥४४॥ सुखाढ्यस्तुराधापतिःपूर्णबोधः कटाक्षस्मितीवल्गितभ्रूविलासः ॥ सुरम्योऽलिभिःकुन्तलालोलकेशःस्फुरद्बर्हकुन्दस्रजाचारुवेषः ॥४५॥ महासर्पतोनन्दरक्षापरांघ्रिःसदामोक्षदःशंखचूडप्रणाशी ॥ प्रजारक्षकोगोपिकागीयमानःककुद्मिप्रणाशप्रयासःसुरेज्यः ॥४६॥ कलिःक्रोधकृत्कंसमंत्रोपदेष्टातथा क्रूरमन्त्रोपदेशी सुरार्थः ॥ बलीकेशिहापुष्पवर्षोऽमलश्रीस्तथानारदादर्शितोव्योमहंता ॥ ४७ ॥ तथाक्रूरसेवापरःसर्वदर्शीव्रजेगोपिकामोहदःकूलवर्त्ती ॥ सती राधिकाबोधदःस्वप्नकर्त्ताविलासीमहामोहनाशीस्वबोधः ॥ ४८ ॥ व्रजेशापतस्त्यक्तराधासकाशोमहामोहदावाग्निदग्धापतिश्च ॥ सखीबन्धनान्मोचिताक्रूरआरात्सखीकंकणैस्ताडिताक्रूररक्षी ॥ ४९ ॥

सुन्दर जिनका वेष ॥४५॥ महा अजगरसे नन्दके प्राण बचानवाले, सदा मोक्षके दाता शंख चूडके नाशक, प्रजाके रक्षक, गोपियोंसे गान किये गये, ककुद्मीके प्रकाशमें जिनका प्रयास देव देव जिनका पूजन करें ॥४६॥ कलिरूप, क्रोध कृत् कंसको मन्त्रोपदेश करनेवाले तथा देव कार्य साधक अक्रूरको यन्त्रका उपदेश देनेवाले, बलवान् केशीके मारनेवाले, पुष्प वर्षासे अमल जिनकी शोभा और नारदके कहनेसे व्योमासुरके मारनेवाला ॥ ४७ ॥ और अक्रूरकी सेवामें तत्पर सबके द्रष्टा, व्रजमें गोपियोंके मोहक तटस्थ होकर रहनेवाले सती राधिकाको बोध देनेवाले, स्वप्न करनेवाले, विलासी महा मोहके नाश कर्ता, अपने ज्ञानसे युक्त ॥ ४८ ॥ शापके कारणसे जिन्होंने राधिकाजीको व्रजमें समीप छोड़ा, तब परस्पर महामोह दावानलसे दोनों तापित हुये, अक्रूरने सखियोंके बन्धनसे छुडाये, तब सखियोंके कंकणोंकी मारसे अक्रूरको बचानेवाले ॥ ४९ ॥

जब कृष्णचन्द्र रथमें विराजे और जानेके लिये तैयार हुए तब राधाजीने और गोप गोपगोपी मण्डलीने जिनको रोका, मनोहर है लीला जिनकी, तब मार्गमें अक्रूरके संदेह दूर करनेको जलमें जिन्होंने अक्रूरको दिव्य रूप दिखाया, मथुराके देखनेकी जिनकी इच्छा हुई, तब पुरीकी मोहिनियोंके चित्तके मोहन करनेवाले ॥ ५० ॥ वैसे ही कंसके धोबीको जिन्होंने मारा और सुवस्त्र पहिने माली सुदामाकी मालाओंको पहिननेवाले दरजीकी प्रीति करनेवाले, और मालीने जिनकी पूजाकी, महाकीर्तिके देनेवाले कुब्जासे प्रीति करनेवाले कंसके स्फुरच्चंडकोदण्डको खण्डन करनेवाले ॥ ५१ ॥ कंसके वीरोंको पीड़ा जिन्होंने दी, फिर कंसको दुस्वप्न दिखाये, महामल्लों जैसा जिनका वेष, कुवलयापीडको मारनेवाले, महामात्यको मारनेवाले, रंग भूमिमें प्रवेश करनेवाले, नव रस (शृंगारादिक) संपूर्ण, यशस्वी, बलवान् वाक्पटु, शोभासे परिपूर्ण ॥५२॥ महामल्ल चाणूरादिकोंको मारनेवाले स्त्रियोंकी वाणियोकों सुनकर युद्ध करनेवाले, भूमिके स्वामी, कंसको मारनेवाले, और जो पहिले पूजित यदु उग्रसेन नामसे प्रसिद्ध था, उसको जिन्होंने भूमिका राज्य दिया यादवोंने

रथस्थोव्रजेराधयाकृष्णचन्द्रःसुगुप्तोगमीगोपकैश्चारुलीलः ॥ जलेक्रूरसंदर्शितोदिव्यरूपोदिदृक्षुःपुरीमोहिनीचित्तमोही ॥५०॥ तथारंगकारप्रणाशीसुवस्त्रःस्रजीवायकप्रीतिकृन्मालिपूज्यः ॥ महाकीर्तिदश्चापिकुब्जाविनोदीस्फुरच्चण्डकोदंडरुग्णप्रचंडः ॥५१॥ भटार्त्तिप्रदःकंसदुःस्वप्नकारीमहामल्लवेषःकरींद्रप्रहारी ॥ महामात्यहारंगभूमिप्रवेशीरसाढ्योयशःस्पृग्बलीवाक्पटुश्रीः ॥ ५२ ॥ महामल्लहायुद्धकृत्स्त्रीवचोर्थीधरानायकःकंसहंतायदुःप्राक् ॥ सदापूजितोह्युग्रसेनप्रसिद्धोधराराज्यदोयादवैर्मंडितांगः ॥५३॥ गुरोःपुत्रदोब्रह्मविद्ब्रह्मपाठीमहाशंखहादंडधृक्पूज्य एव ॥ व्रजेह्युद्धवप्रेषितोगोपमोहीयशोदाघृणीगोपिकाज्ञानदेशी ॥५४॥ सदास्नेहकृत्कुब्जयापूजितांगस्तथाक्रूरगेहंगमीमंत्रवेत्ता ॥ तथापांडवप्रेषिताक्रूरएवसुखीसर्वदर्शीनृपानंदकारी ॥५५॥ महाक्षौहिणीहाजरासंधमानीनृपोद्धारकाकारकोमोक्षकर्त्ता ॥ रणीसार्वभौमस्तुतोज्ञानदाताजरासंधसंकल्पकृद्धावदंघ्रिः ॥ ५६ ॥ नगादुत्पतद्वारिकामध्यवर्त्तीतथारेवतीभूषणस्तालचिह्नः ॥ यदूरुक्मिणीहारकश्चैद्यवेद्यस्तथारुक्मिरूपप्रणाशीसुखाशी ॥ ५७ ॥

जिनका पूजन किया ॥ ५३ ॥ गुरुका पुत्र लाकर देनेवाले, ब्रह्मको जाननेवाले, वेद पाठी, महाशंखको मारनेवाले, दण्डधारी, पूज्य, व्रजमें उद्धवको भेजनेवाले, गोपोंके मोहक यशोदा घृणी, गोपिकाओंको ज्ञानका उपदेश करनेवाले ॥ ५४ ॥ सदा स्नेह युक्त, कुब्जासे पूजित, अक्रूरके, घरमें जानेवाले, मंत्रके वेत्ता, अक्रूरको पाण्डवोंके पासमें भेजनेवाले अत्यन्त सुखी, सर्वज्ञ, और उग्रसेनको जिन्होंने आनन्द युक्त किया ॥ ५५ ॥ तेईस अक्षौहिणी सहित अनेक वार जरासंधको जीतकर जिन्होंने द्वारका बनाई, मुचुकुन्दका मोक्ष करनेवाले, चक्रवर्ती राजाओं द्वारा स्तुति किये गये, ज्ञानके दाता, जरासंधकी मनोरथ पूर्तिके लिये मथुराको छोडकर आनेवाले ॥ ५६ ॥ प्रवर्षण गिरिसे कूदकर द्वारिकामें जानेवाले, रेवतीके भूषण, ताल चिह्नवाले, यदू, रुक्मिणीका हरण करनेवाले, चैद्यवेद्य, रुक्मीको विरूप करनेवाले, और सुखाशी ॥ ५७ ॥

अनन्त, मार, कार्ष्णि, काम, मनोज, शाम्बरारि, रतीश, रथी मन्मथ मीनकेतु, शरी, स्मर, दर्भक, मानहा और पंचवाण (ये सब प्रद्युम्नके नाम हैं) ॥ ५८ ॥ सबको प्रिय, सत्यभामाके पति यादवोंके स्वामी सत्राजितके प्रेमके पूर्ण, प्रहास, महारत्न (स्यमन्त) को देनेवाले, जाम्बवान्से जिन्होंने युद्ध किया, महाचक्रधारी, खड्गधृक्, रामसंधि ॥ ५९ ॥ विहारमें स्थित पाण्डवोंसे प्रेम करनेवाले, कालिन्दी मोहन, खाण्डव वनके लिये मित्र अर्जुनकी प्रीति करनेवाले, उग्र कर्ता, क्रीडनार्थी, तथा मित्र विन्दाके पति ॥ ६० ॥ नग्नजित् राजाके प्रेमकृत्, सात रूप बनकर सात वृषोंका जिन्होंने दमन किया, सत्याके पति परिबर्ह ग्रहण करनेवाले, यथेष्ट राजाओंसे संवृत, भद्राके पति, मधुके विलासी, मानिनियोंके और जनोंके स्वामी ॥६१॥ इन्द्रके मोहसे आवृत सत्यभामा भार्या सहित गरुडपर बैठकर मुर दैत्यको मारनेवाले, पुरीसंघके भेत्ता, सुधीर शिर खण्डन दैत्य नाशी, चण्ड बेगवाले, अति प्रवीर, बाणधारी, भौमासुरको मारनेवाले ॥ ६२ ॥ भूमिने जिनकी स्तुति की, कुण्डल छत्रको लाने वाले महारत्नसे युक्त, राजकन्याओंमें सुन्दर, स्त्रीसे पूजित,

अनंतश्चमारश्चकार्ष्णिश्चकामोमनोजस्तथाशंबरारीरतीशः॥रथीमन्मथोमीनकेतुःशरीचस्मरोदर्पकोमानहापंचबाणः॥५८॥प्रियःसत्यभामापतिर्यादवेशोऽथसत्राजितप्रेमपूरःप्रहासः ॥ महारत्नदोजांबवद्युद्धकारीमहाचक्रधृक्खड्गधृग्रामसंधिः॥५९॥ विहारस्थितःपांडवप्रेमकारीकलिंदांगजामोहनःखांडवार्थी ॥ सखाफाल्गुनप्रीतिकृन्नग्रकर्त्तातथामित्रविंदापतिःक्रीडनार्थी ॥६०॥ नृपप्रेमकृन्नग्नजितःसप्तरूपोऽथसत्यापतिःपारिबर्हीयथेष्टः॥नृपैःसंवृतश्चापिभद्रापतिस्तुविलासीमधोर्मानिनीशोजनेशः ॥६१॥शुनासीरमोहावृतःसत्सभार्यःसताक्ष्योंमुरारिःपुरीसंघभेत्ता ॥ सुवीरःशिरःखण्डनोदैत्यनाशीशरीभौमहाचंडवेगःप्रवीरः ॥ ६२ ॥ धरासंस्तुतःकुंडलच्छत्रहर्त्तामहारत्नयुङ्राजकन्याभिरामः ॥ शचीपूजितःशक्रजिन्मानहर्त्तातथापारिजातोपहारीरमेशः ॥६३॥ गृहीचामरैःशोभितोभीष्मकन्यापतिर्हास्यकृन्मानिनीमानकारी॥तथारुक्मिणीवाक्पटुःप्रेमगेहःसतीमोहनःकामदेवापरश्रीः॥६४॥सुदेष्णःसुचारुस्तथाचारुदेष्णोपरश्चारुदेहोबलीचारुगुप्तः॥सुतीभद्रचारुस्तथाचारुचन्द्रोविचारुश्चचारूरथीपुत्ररूपः॥६५॥सुभानुःप्रभानुस्तथाचन्द्रभानुर्बृहद्भानुरेवाऽष्टभानुश्चसांबः॥सुमित्रःक्रतुश्चित्रकेतुस्तुवीरोश्वसेनोवृषश्चित्रगुश्चंद्रबिंबः ॥६६॥ विशंकुर्वसुश्चश्रुतोभद्रएकःसुबाहुर्वृषःपूर्णमासस्तुसोमः॥ वरःशांतिरेवप्रघोषोथसिंहोबलोह्यूर्ध्वगोवर्द्धनोन्नादएव ॥ ६७ ॥ महाशोवृकःपावनोवह्निमित्रःक्षुधिर्हर्षकश्चानिलोऽमित्रजिच्च ॥ सुभद्रोजयःसत्यकोवामआयुर्यदुःकोटिशःपुत्रपौत्रप्रसिद्धः ॥ ६८ ॥

इन्द्रके मानको हरनेवाले. पारिजात वृक्षको हरकर लाने वाले, रमाके स्वामी ॥ ६३ ॥ गृहस्थी, चामरोंसे शोभित, रुक्मिणीके पति, हँसी करनेवाले, मानिनियोंके मान करनेवाले प्रेमके घर, रुक्मिणीके वाक्योंके ज्ञाता, सतियोंके मोहन, कामदेवके समान जिनकी शोभा ॥ ६४ ॥ सुदेष्ण, सुचारु, चारुदेष्ण, चारुदेह, बली, चारु गुप्त, भद्रचारु, चारुचन्द्र, विचारु, चारुरथी, पुत्ररूप ॥ ६५ ॥ सुभानु, प्रभानु, चन्द्रभानु, बृहद्भानु अष्टभानु, साम्ब, सुमित्र, क्रतु चित्रकेतु, वीर, अश्वसेन, वृष, चित्रगु, चन्द्रबिम्ब, ॥६६॥ विशंकु, वसु, श्रुत, भद्र, एक, सुवाहु, वृष, पूर्ण मास, सोम, वर, शान्ति प्रघोष, सिंह, बल, ऊर्ध्वग, वर्धन, उन्नाद ॥ ६७ ॥ महाश, वृक, पावन वह्नि, मित्र, क्षुधि, हर्षक अनिल अमित्रजित्, सुभद्र, जय, सायक, वाम, आयु, और यदु, करोडों पुत्र पौत्रोंवाले ॥ ६८ ॥

हली, दण्डधृक्, रुक्मिहा, अनिरुद्ध, राजाओंसे हँसी गोद्यूत करनेवाले, मधु, ब्रह्मसू, बाणपुत्रीके पति, महासुन्दर, कामपुत्र, बलीश ॥६९॥ महादैत्यसे संग्राम करनेवाले, यादवेश पुरीभंजन, भूतोंको संत्रासकारी, संग्राममें रुद्रको जीतनेवाले, और रुद्रको मोहनेवाले, संग्राम करनेको तैयार स्वामी कार्तिकको जीतनेवाले, कूपकर्णको मारनेवाले ॥७०॥ धनुषके भंजक, बाणासुरके मानको खण्डन करनेवाले, और ज्वरको उत्पन्न करनेवाले, ज्वरद्वारा स्तुति किये गये, बाणकी भुजाओंको छेदन करनेवाले, महाशिवद्वारा स्तुति किये गये, युद्धकर्ता और भूमिके भर्ता ॥७१॥ नृगका उद्धार करनेवाले, यादवोंके ज्ञानदाता, रथमें स्थित व्रजस्थ प्रेमके रक्षक, गोपोंमें मुख्य, महासुन्दरियोंके साथ जिन्होंने क्रीडा की, पुष्पमालाधारी, यमुनाका भेदन करनेवाले, हलको हाथमें धारण करनेवाले ॥७२॥ महादम्भियोंको मारनेवाले, पौण्ड्रकके अभिमानको दूर करनेवाले, और शिरको काटनेवाले, काशिराजको मारनेवाले, महा अक्षौहिणियोंका ध्वंस करनेवाले, चक्रधारी, काशीको जलानेवाले, राक्षसी मायाके नाशक ॥७३॥ अनन्त, द्विविद वानरके शत्रु. गौर वर्णवाले, कमलदलके समान जिनके

हलीदंडधृग्रुक्मिहाचानिरुद्धस्तथाराजभिर्हास्यगोद्यूतकर्ता ॥ मधुर्ब्रह्मसूर्बाणपुत्रीपतिश्चमहासुन्दरःकामपुत्रोबलीशः ॥६९ ॥ महादैत्यसंग्राम
कृद्यादवेशःपुरीभंजनोभूतसंत्रासकारी ॥ मृधीरुद्रजिद्रुद्रमोहीमृधार्थीतथास्कंदजित्कूपकर्णप्रहारी॥७०॥ धनुर्भंजनोबाणमानप्रहारीज्वरोत्पत्ति-
कृत्संस्तुतस्तुज्वरेण ॥ भुजाछेदकृद्बाणसंत्रासकर्तामृडप्रस्तुतोयुद्धकृद्भूमिभर्त्ता॥७१॥ नृगंमुक्तिदोज्ञानदोयादवानांरथस्थोव्रजप्रेमपोगोपमुख्यः
महासुन्दरोक्रीडितःपुष्पमालीकलिंदांगजाभेदनःसीरिपाणिः ॥७२॥ महादंभिहापौंड्रमानप्रहारीशिरश्छेदकःकाशिराजप्रणाशी॥महाक्षौहिणी
ध्वंसकृच्चक्रहस्तःपुरीदीपकोराक्षसीनाशकर्त्ता ॥७३॥ अनंतोमहीध्रःफणीवानरारिःस्फुरद्गौरवर्णोमहापद्मनेत्रः ॥ कुरुग्रामतिर्य्यग्गतोगौरवार्थः
स्तुतःकौरवैःपारिबर्हीससांबः॥७४॥ महावैभवीद्वारकेशोह्यनेकश्चलन्नारदःश्रीप्रभादर्शकस्तु ॥ महर्षिस्तुतोब्रह्मदेवःपुराणःसदाषोडशस्त्रीसहस्र-
स्थितश्च ॥ ७५ ॥ गृहीलोकरक्षापरोलोकरीतिःप्रभुर्ह्युग्रसेनावृतोदुर्गयुक्तः ॥ तथाराजदूतंस्ततोबंधभेत्तास्थितोनारदप्रस्तुतःपांडवार्थी ॥७६॥
नृपैर्मंत्रकृद्ध्युद्धवप्रीतिपूर्णोवृतःपुत्रपौत्रैःकुरुग्रामगंता ॥ घृणीधर्मराजस्तुतोभीमयुक्तः परानंददोमंत्रकृद्धर्मजेन ॥ ७७ ॥ दिशाजिद्बलीराज-
सूयार्थकारीजरासंधहाभीमसेनस्वरूपः ॥ तथाविप्ररूपोगदायुद्धकर्त्ताकृपालुर्महाबंधनच्छेदकारी ॥ ७८ ॥

नेत्र, हस्तिनापुरको खेंचकर जिन्होंने नदीमें डालना विचारा था, तब कौरवोंसे जिनकी स्तुति की गई, फिर साम्बसहित जिन्होंने पारिबर्ह ग्रहण किया ॥ ७४ ॥ महान् वैभव वाले, द्वारकाके स्वामी, अनेक रूप चलन्नारद श्री प्रभा दर्शक, महर्षियोंद्वारा स्तुति किये गये, ब्रह्मदेव, पुराण सब समय सोलह हजार स्त्रियोंमें स्थित ॥७५॥ गृहस्थी लोक दशामें तत्पर, लोक रीति प्रभु उग्रसेनावृत्त दुर्गयुक्त राजदूतोंने जिनकी स्तुति की, बंधनके छेत्ता, नारदने जिनके गुणगाये, और पांडवोंके कार्यकरनेवाले ॥७६॥ राजाओंसे सलाह करनेवाले, उद्धवकी प्रीतिसे पूर्ण, पुत्रपौत्रोंसहित, कुरुग्रामके जानेवाले, दयालु; धर्मराजसे स्तुति किये गये, भीमसेन सहित परानन्द देनेवाले, युधिष्ठिरसे सलाह करनेवाले ॥७७॥ दिशाओंको जीतनेवाले बलवान्, राजसूयके कार्यसाधक, भीमसेनके द्वारा जरासंधके प्राणोंका नाश करनेवाले, ब्राह्मणका रूप धरकर गदायुद्धकारी दयालु, बड़े बड़े बंधनोंको काटनेवाले ॥ ७८ ॥

राजाओंने जिनकी स्तुति की, फिर इन्द्रप्रस्थमें आये फिर ब्राह्मणोंसहित धर्मराजके यज्ञकी सामग्री तैयार की, जनोंने जिनकी पूजा की, शिशुपालके दुर्वाक्य जिन्होंने सहे शिरछेदन करके शिशुपालको मोक्ष दी ॥७९॥ युधिष्ठिरके महायज्ञकी शोभा करनेवाले, चक्रवर्ती राजाओंके आनन्द करनेवाले, विहारी, सुहारी, सभासे सवृत्त मानको हरनेवाले, दुर्योधनको जलमें स्थलादिक दिखानेवाले, शाल्वका संहार करनेवाले, सौभ विमानको तोड़नेवाले ॥८०॥ कृतवर्मा सहित वृष्णि, मधुशूरसेन, दर्शाह यदु, अंधक, लोकजित, द्युमान्के मानके निवर्तक, कवच धारण करनेवाले, दिव्य शस्त्रोंवाले, ज्ञानघन, सदा रक्षक, दैत्योंको मारनेवाने॥८१॥दन्तवक्रको मारनेवाले, गदाधारी,जगत्की तीर्थयात्राको करनेवाले, कमलका जिनके हार कुशलकारक, सूतका वध करनेवाले, परम दयालु स्मृतियोंके नियन्ता, अमल वल्वअंग प्रभाखण्डकारी ॥ ८२ ॥ भीम और दुर्योधनको ज्ञान देनेवाले, रोहिणीको सुखदेनेवाले

नृपैःसंस्तुतोह्यागतोधर्मगेहंद्विजैःसंवृतोयज्ञसंभारकर्त्ता ॥ जनैःपूजितश्चैद्यदुर्वाक्क्षमश्चमहामोक्षदोऽरेःशिरश्छेदकारी ॥ ७९ ॥ महायज्ञशो-
भाकरश्चक्रवर्तीनृपानंदकारीविहारीसुहारी ॥ सभासंवृतोमानहृत्कौरवस्यतथाशाल्वसंहारकोयानहन्ता ॥८०॥ सभोजश्चवृष्णिर्मधुःशूरसेनो
दशार्होयदुर्ह्यंधकोलोकजिच्च॥द्युमन्मानहावर्मधृग्दिव्यशस्त्रीस्वबोधःसदारक्षकोदैत्यहंता॥८१॥ तथादंतवक्रप्रणाशीगदधृग्जगत्तीर्थयात्राकरः
पद्महारः॥कुशीसूतहंताकृपाकृत्स्मृतीशोऽमलोबल्वलांगप्रभाखंडकारी॥८२॥तथाभीमदुर्योधनज्ञानदाताऽपरोरोहिणीसौख्यदोरेवतीशः॥ महा-
दानकृद्विप्रदारिद्र्यहाचसदाप्रेमयुक्छ्रीसुदाम्नःसहायः ॥ ८३ ॥ तथाभार्गवक्षेत्रगंतासरामोऽथसूर्योपरागश्रुतः सर्वदर्शी ॥ महासेनया
चास्थितःस्नानयुक्तोमहादानकृन्मित्रसंमेलनार्थी ॥ ८४ ॥ तथापांडवप्रीतिदःकुंतिजार्थीविशालाक्षमोहप्रदःशांतिदश्च ॥ वटेराधिकारा-
धनोगोपिकाभिःसखीकोटिभीराधिकाप्राणनाथः ॥ ८५ ॥ सखीमोहदावाग्निहावैभवेशःस्फुरत्कोटिकंदर्पलीलाविशेषः ॥ सखीराधि-
कादुःखनाशीविलासीसखीमध्यगःशापहामाधवीशः ॥ ॥८६॥ शतंवर्षविक्षेपहृन्नंदपुत्रस्तथानन्दवक्षोगतःशीतलांगः ॥ यशोदाशुचःस्नानकृ-
दुःखहंतासदागोपिकानेत्रलग्नोव्रजेशः ॥ ८७ ॥

रेवतीके रमण, महादानके कर्ता, विप्रके दारिद्र्यके हंता, सदा प्रेमयुक्त सुदामाके सहायक ॥८३॥ परशुरामके क्षेत्रके जानेवाले, फिर सूर्यपर्वमें सबसे मिले भेंटे, और सेनासहित स्नानके लिये स्थित हुए मित्रोंसे मिलकर जिन्होंने अनेक प्रकारके दान किए ॥ ८४ ॥ पाण्डवोंको प्रीति देनेवाले, पाण्डवोंके काम करनेवाले, विशाल नेत्रोंवाले, मोहशान्ति करनेवाले, वटमें राधिकाके आराधन करनेवाले, और करोडों गोपियोंसहित राधिकाके प्राणनाथ ॥ ८५ ॥ सखियोंकी मोहदावाग्निका नाश करनेवाले, अनेक वैभव देनेमें समर्थ, कामदेवकी जैसी लीलावाले, सखियों और राधिकाके दुखोंका नाश करनेवाले, सखियोंके मध्यमें वर्तमान, शापके नाशक, माधवीके स्वामी ॥ ८६ ॥ नन्दके पुत्र, सौवर्षके वियोगको हरनेवाले, नन्दके कण्ठका आलिंगन करनेवाले, यशोदाके आनन्दाश्रुओंसे स्नान करनेवाले, सदा दुखको हरनेवाले, और गोपियोंके नेत्रोंमें निवास करनेवाले, व्रजेश ॥ ८७ ॥

एकान्तमें देवकी और रोहिणी द्वारा स्तुति किये गये गोपियोंको ज्ञान और मान देनेवाले, पटरानियों द्वारा स्तुति किये गये, और लक्ष्मणाके सदा प्राणनाथ ॥ ८८ ॥ और सोलह हजार स्त्रियों द्वारा स्तुति किये गये, शुक, व्यासदेव, सुमंतु सित, भरद्वाज गौतम, आसुरि, वसिष्ठ, शतानन्द परशुराम ॥८९॥ पर्वतमुनि, नारद, धौम्य, इन्द्र,असित.अत्रि, विभांड प्रचेता, कृप, कुमार, सनंद, याज्ञवल्क्य, ऋभु, अंगिरा, देवल, श्रीमृकण्ड ॥९०॥ मरीचि,क्रतु,और्व, लोमश,पुलस्त्य, भृगु, ब्रह्मरात, वसिष्ठ, नर, नारायण, दत्त, पाणिनि, पिंगल, भाष्यकार ॥९१॥ कात्यायन, पतञ्जलि, गर्ग, बृहस्पति, गौतमीश, जाजलि, कश्यप, गालव, शौभरि, ऋष्यशृङ्ग, कण्व ॥९२॥ द्वित, एकत,जातूकर्ण्य, घन,कर्दमपुत्र, (कपिल) और कर्दम, भार्गव, कौत्स, आरुण, शुचि, पिप्पलाद, मार्कण्डेय ॥९३॥ पैल, जैमिनि, सुमन्तु,गांगल, स्पोटगह,फलाद,सदा पूजे गये ब्राह्मण रूप, सर्वरूपी, मुनीश, प्रथम सबके मोह

स्तुतोदेवकीरोहिणीभ्यांसुरेंद्रोरहोगोपिकाज्ञानदोमानदश्च ॥ तथासंस्तुतःपट्टराज्ञीभिराराद्धनीलक्ष्मणाप्राणनाथःसदाहि ॥ ८८ ॥ त्रिभिष्षोडशस्त्रीसहस्रस्तुतांगःशुकोव्यासदेवःसुमन्तुःसितश्च ॥ भरद्वाजकोगौतमोह्यासुरिःसद्वसिष्ठःशतानन्दआद्यःसरामः ॥८९॥ मुनिःपर्वतोनारदोधौम्यइन्द्रोऽसितोऽत्रिर्विभांडःप्रचेताःकृपश्च॥कुमारःसनंदस्तथायाज्ञवल्क्यऋभुर्ह्यंगिरादेवलःश्रीमृकण्डः ॥९०॥ मरीचिःक्रतुश्चौर्वकोलोमशश्चपुलस्त्योभृगुर्ब्रह्मरातोवसिष्ठः ॥ नरश्चापिनारायणोदत्तएवतथापाणिनिःपिंगलोभाष्यकारः ॥९१॥ सकात्यायनोविप्रपातञ्जलिश्चाऽथगर्गोगुरुर्गीष्पतिर्गौतमीशः ॥ मुनिर्जाजलिःकश्यपोगालवश्चद्विजःसौरभिश्चर्ष्यशृंगश्चकण्वः॥९२॥द्वितश्चैकतश्चापिजातूकर्ण्यश्चघनःकर्दमस्यात्मजःकर्दमश्च ॥ तथाभार्गवःकौत्सकश्चारुणस्तुशुचिःपिप्पलादोमृकंडस्यपुत्रः ॥९३॥ सपैलस्तथाजैमिनीःसत्सुमन्तुर्वरोगांगलःस्फोटगेहःफलादः ॥ सदापूजितोब्राह्मणःसर्वरूपीसुनीशोमहामोहनाशोऽमरःप्राक् ॥ ९४ ॥ मुनीशस्तुतःशौरिविज्ञानदातामहायज्ञकृच्चाभृतस्नानपूज्यः ॥ सदादक्षिणादोनृपैःपारिबर्हीव्रजानंददोद्वारिकागेहदर्शी ॥ ९५ ॥ महाज्ञानदोदेवकीपुत्रदश्चाऽसुरैःपूजितोहींद्रसेनाहतश्च ॥ सदाफाल्गुनप्रीतिकृत्सत्सुभद्राविवाहेद्विपाश्वप्रदोमानयानः ॥९६॥ श्रुवंदर्शकोमैथिलेनप्रयुक्तोद्विजेनाशुराज्ञास्थितोब्राह्मणैश्च ॥ कृतीमैथिलेलोकवेदोपदेशीसदावेदवाक्यैःस्तुतःशेषशायी ॥ ९७ ॥

के नाशक ॥९४॥ मुनियों द्वारा स्तुति किये गये,वसुदेवको ज्ञानका उपदेश देनेवाले महायज्ञके कर्ता,यज्ञान्त स्नानसे पूजनीय,सब समय दक्षिणा देनेवाले, राजाओंसे, भेंट लेनेवाले व्रजको आनन्द देनेवाले,द्वारिका गेहदर्शी ॥९५॥ महाज्ञानदाता. देवकीके मरे हुए पुत्रोंको दिखानेवाले, असुरों द्वारा पूजित, इन्द्रसेन (बलि) ने जिनका आदर किया, सदा अर्जुन की प्रीति करनेवाले, सुभद्राके विवाहमें हाथी, घोड़े, आदि जिन्होंने अर्जुनको दिये ॥९६॥ मैथिल ब्राह्मण श्रुतदेवके लिये ज्ञानोपदेष्टा, ब्राह्मणोंसहित बहुलाश्वके मनोरथ पूर्ण करनेवाले और बहुलाश्वको लोक और वेदका उपदेश देनेवाले, वेदवाक्योंसे स्तुति किये गये, शेषपर शयन करनेवाले ॥ ९७ ॥

और सब देवताओंमेंसे परीक्षा करके भृगु आदि ब्राह्मणोंने जिनका स्मरण कीर्तन निश्चय किया, भस्मासुरको भस्म कराकर जिन्होंने शिवजीकी रक्षा की, सखा अर्जुन भी मान खण्डन करनेवाले, अपने निजधामसे जिन्होंने ब्राह्मणोंके मरे हुये पुत्र लाकर दिये ॥९८॥ माधवियोंसे विहारमें स्थित, कलारूप, महामोह दावाग्नि दग्धाभिराम, यदु, उग्रसेन राजा अक्रूर, उद्धव, शूरसेन, शूर ॥९९॥ हृदीक, सत्राजित, अप्रमेय, गद, सारण, सात्यकि, देवभाग, मानस, संजय, श्यामक, वृक, वत्सक, देवक, भद्रसेन ॥ १०० ॥ युधिष्ठिर, जय (अर्जुन) नकुल, सहदेव, भीष्म, कृपाचार्य, धृतराष्ट्र, पांडु, शन्तनु बाह्लीक, भूरिश्रवा, चित्रवीर्य, विचित्र ॥ १०१ ॥ शल, दुर्योधन, कर्ण, अभिमन्यु, परीक्षित, जनमेजय और सब कौरव पाण्डव और सर्वतेजा सर्वरूपी भगवान् श्रीकृष्ण ॥१०२॥ इन सभीको साथ लेकर पूर्णदेव भगवान् व्रजमें आये, राधासहित रथमें विराजे, दिव्यरूप भगवान् रासलीलामें

परीक्षावृतोब्राह्मणैश्चामरेषुभृगुप्रार्थितोदैत्यहाचेशरक्षी॥ सखाचार्जुनस्यापिमानप्रहारीतथाविप्रपुत्रप्रदोधामगंता ॥ ९८ ॥ विहारस्थितोमाधवीभिःकलांगोमहामोहदावाग्निदग्धाभिरामः ॥ यदुरुग्रसेनोनृपोऽक्रूरएवतथाचोद्धवःशूरसेनश्चशूरः ॥९९॥ हृदीकश्चसत्राजितश्चाप्रमेयोगदःसारणःसात्यकिर्देवभागः ॥ तथामानसःसंजयःश्यामकश्चवृकोवत्सकोदेवकोभद्रसेनः॥१००॥नृपोऽजातशत्रुर्जयोमाद्रिपुत्रोऽथभीष्मःकृपोबुद्धिचक्षुश्चपांडुः ॥ तथाशंतनुर्देवबाह्लीकएवाथभूरिश्रवाश्चित्रवीर्योविचित्रः ॥ १०१ ॥ शलश्चापिदुर्योधनःकर्णएवसुभद्रासुतोविष्णुरातःप्रसिद्धः ॥ सजन्मेजयःपांडवःकौरवश्चतथासर्वतेजाहरिःसर्वरूपी ॥१०२॥ व्रजंह्यागतोराधयापूर्णदेवोवरोरासलीलापरोदिव्यरूपी ॥ रथस्थोनवद्वीपखण्डप्रदर्शीमहामानदोगोपजोविश्वरूपः॥१०३॥ सनन्दश्चनंदोवृषोवल्लभेशःसुदामार्जुनःसौबलस्तोकएव ॥ सकृष्णोंशुकःसद्विशालर्षभाख्यःसुतेजस्विकःकृष्णमित्रोवरूथः ॥१०४॥ कुशेशोवनेशस्तुवृंदावनेशस्तथामाथुरेशाधिपोगोकुलेशः॥ सदागोगणोगोपतिर्गोपिकेशोऽथगोवर्द्धनोगोपतिःकन्यकेशः ॥ १०५ ॥ अनादिस्तुचात्माहरिःपूरुषश्चपरोनिर्गुणोज्योतिरूपोनिरीहः॥सदानिर्विकारःप्रपञ्चात्परश्चससत्यस्तुपूर्णःपरेशस्तुसूक्ष्मः ॥ १०६ ॥ द्वारकायांतथाचाऽश्वमेधस्यकर्त्तानृपेणापिपौत्रेणभूभारहर्त्ता ॥ पुनःश्रीव्रजेरासरंगस्यकर्त्ताहरीराधयागोपिकानांचभर्ता ॥ १०७ ॥

तत्पर, रथमें बैठकर प्रियाको नवखण्ड दिखानेवाले, महामान देनेवाले गोपज, विश्वरूपी ॥ १०३ ॥ सनंद, नन्द, वृषभानु, सुदामा, अर्जुन, सुबल, तोक, वेदव्यास, शुक, विशाल, ऋषभ, तेजस्वी वरूथक ॥ १०४ ॥ ये सब कृष्णके, मित्र और कुशेश, वनेश, वृन्दावनेश, और माथुरेश, गोकुलेश, और गोगणेश, गोपिकेश, गोवर्धन गोपति, और कन्यकेश ॥ १०५ ॥ अनादि, आत्मा, हरि, पुरुष, पर, निर्गुण, ज्योतिरूप, निरीह, निर्विकार, प्रपंचसे दूर, सत्यपूर्ण, परेश, सूक्ष्म ॥ १०६ ॥ द्वारकामें अश्वमेधके कर्ता, राजारूपसे और पौत्ररूपसे पृथ्वीका बोझ उतारनेवाले, और फिर व्रजमें आकर रासरंगके करनेवाले, राधासहित गोपियोंके भर्ता ॥ १०७ ॥

सदा एक होते हुए भी जो अनेक हैं, प्रभासे पूरित है अंग जिनका योग मायाको करनेवाले, कालको भी जीतनेवाले,सुदृष्टि महत्तत्वरूप, निर्विकार,सकूटस्थ जगत वृक्ष रूप आदि अंकुर रूप ॥ १०८ ॥ विकारोंमें स्थित वैकारिक तैजस, तामस अहंकार रूप, दिक्, वायु, सूर्य,वरुण, अश्विनी, कुमार, अग्नि, इन्द्र, उपेन्द्र, मित्र ॥ १०९ ॥ श्रवण, त्वचा, नेत्र, नासिका, जिह्वा, वाणी, भुजा, मेढ्रक, पायु, अंघ्रि,भूमि, आकाश, जल, पवन, तेज, त्वक्, रस, गंध और शब्द, स्पर्श, ॥११०॥ चित्त, बुद्धि, विराट्, कालरूप, वासुदेव, जगत्को करनेवाले, इस अंडमें जो शयन करते हैं, सहस्र रूप शेष, लक्ष्मीके नाथ, आद्यावतार ॥ १११ ॥ सब समय उत्पत्ति करनेवाले,ब्रह्मारूप कर्मकर्ता. नाभिकमलसे उत्पन्न हुआ दिव्य वर्ण जिनका, कवि, लोकको रचनेवाले, कालको बनानेवाले, सूर्यरूप, निमेष, रहित जन्म रहित, वत्सरांत स्वरूप अति महान् ॥ ११२ ॥ तिथि, वार, नक्षत्र,योग, लग्न, मास घटी,

सदैकस्त्वनेकःप्रभापूरितांगस्तथायोगमायाकरःकालजिच्च ॥ सुदृष्टिर्महत्तत्त्वरूपःप्रजातःसकूटस्थआद्यांकुरोवृक्षरूपः॥ १०८ ॥ विकारस्थितश्चह्यहंकारएवसवैकारिकस्तैजसस्तामसश्च॥नमोदिक्समीरस्तुसूर्यःप्रचेतोविश्ववह्निश्चशक्रोह्युपेंद्रस्तुमित्रः।१०९।श्रुतिस्त्वक्चदृग्घ्राणजिह्वागिरश्चभुजामेढ्रकःपायुरंघ्रिःसचेष्टः ॥ धराव्योमवार्मारुतश्चैवतेजोथरूपंरसोगन्धशब्दस्पृशश्च॥११०॥सचित्तश्चबुद्धिर्विराट्कालरूपस्तथा वासुदेवोजगत्कृद्धतांगः ॥ तथांडेशयानःसशेषःसहस्रस्वरूपोरमानाथआद्योवतारः ॥ १११ ॥ सदासर्गकृत्पद्मजःकर्मकर्तातथानाभिपद्मोद्भवोदिव्यवर्णः ॥ कविर्लोककृत्कालकृत्सूर्यरूपोनिमेषोभवोवत्सरांतोमहीयान् ॥ ११२ ॥ तिथिर्वारनक्षत्रयोगाश्चलग्नोथमासोघटीचक्षणःकाष्ठिकाच ॥ मुहूर्त्तस्तुयामोग्रहायामिनीचदिनंचर्क्षमासालागतोदेवपुत्रः ॥ ११३ ॥ कृतोद्वापरस्तुत्रितस्तत्कलिस्तुसहस्रंयुगस्तत्रमन्वंतरश्च ॥ लयःपालनंसत्कृतिस्तत्परार्द्धसदोत्पत्तिकृद्यच्चक्षरोब्रह्मरूपः ॥ ११४॥ तथारुद्रसर्गस्तुकौमारसर्गोमुनेःसर्गकृद्देवकृत्प्राकृतस्तु ॥ श्रुतिस्तुस्मृतिःस्तोत्रमेवंपुराणंधनुर्वेदइज्याथगांधर्ववेदः ॥ ११५ ॥ विधाताचनारायणःसत्कुमारोवराहस्तथानारदोधर्मपुत्रः ॥ मुनिःकर्दमस्यात्मजोदत्तएव सयज्ञोऽमरोनाभिजःश्रीपृथुश्च॥११६॥सुमत्स्यश्चकूर्मश्चधन्वंतरिश्चतथामोहिनीनारसिंहःप्रतापी॥ द्विजोवामनोरेणुकापुत्ररूपोमुनिर्व्यासदेवःश्रुतिस्तोत्रकर्त्ता॥११७॥ धनुर्वेदभाग्रामचन्द्रावतारःससीतापतिर्भारहृद्रावणारिः॥नृपःसेतुकृद्वानरेंद्रप्रहारीमहायज्ञकृद्राघवेंद्रःप्रचण्डः॥११८॥ बलःकृष्णचन्द्रस्तुकलिकःकलेशस्तुबुद्धप्रसिद्धस्तुहंसस्तथाश्वः ॥ ऋषींद्रोऽजितोदेववैकुण्ठनाथोह्यमूर्तिश्चमन्वन्तरस्यावतारः ॥ ११९ ॥

क्षण, काष्ठा, मुहूत, याम, ग्रह, रात्रि, नक्षत्रमालामें गत सूर्य ॥ ११३ ॥ सतयुग, द्वापर, त्रेता, कलि, सहस्र युग, मन्वन्तर, लय, पालन, सत्कृति, परार्द्ध सदा उत्पत्ति करनेवाले अक्षर ब्रह्मरूप ॥११४॥ रुद्रसर्ग, कौमारसर्ग,मुनिसर्ग,देवसर्ग और प्राकृतसर्ग, श्रुति, स्मृति, स्तोत्र, पुराण, धनुर्वेद, गान्धर्व वेद ॥ ११५ ॥ विधाता, नारायण, सनत्कुमार, वराह, नारद, धर्मपुत्र,(नरनारायण) कर्दमके पुत्र, कपिल सुयज्ञ, ऋषभदेव, पृथु ॥ ११६ ॥ मत्स्य, कूर्म, धन्वन्तरि, मोहिनी, नृसिंह, वामन, परशुराम, व्यासदेव, श्रुतिस्तोत्र करनेवाले ॥ ११७ ॥ और धनुर्वेदके जाननेवाले, रामचन्द्र, सीताके पति, पृथ्वीका बोझ उतारनेवाले, रावणके शत्रु,मनुष्योंका पालन करनेवाले,बालीको मारनेवाला,महायज्ञ कर्ता, राघवेन्द्र बड़े प्रचण्ड ॥११८॥ बलदेव, कृष्णचन्द्र, कल्कि, कलाओंके स्वामी प्रसिद्ध बुद्ध, हंस, हयग्रीव ऋषीन्द्र, दत्त, अजित, वैकुण्ठनाथ अमूर्ति इनसे पृथक् तत्तन्मन्वन्तरावतार ॥११९॥

गजोद्धारण, ब्रह्मा, मनु, दुष्यंतज (भरत) बड़े दानशील जो देखा, सुना, भूत,भविष्यत्,स्थावर,जंगम, छोटा बड़ा है, सब कृष्णरूप ही है,॥१२०॥ गर्गजी कहते हैं कि ये भुजंग प्रयात छन्दसे भगवान् श्रीराधिकेशजीके हजार नाम कहे हैं, जो द्विज भक्तियुक्त होकर इनका पाठ करे, वह कृतार्थ और साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्र स्वरूप हो जाता है ॥१२१॥ यह सुननेसे महापाप समूहको भेदन करता है, यह सदा वैष्णवोंका प्यारा मंगलरूप है, इस स्तोत्रका, आश्विन सुदी पूर्णिमाको पाठ करे, अथवा कृष्ण जन्माष्टमीके दिन पाठ करे ॥१२२॥अथवा चैत सुदी पूर्णिमाके दिन अथवा भाद्रपदकी बुदि सुदी अष्टमीके दिन पुस्तककी पूजन करके पाठ करे, उस पुरुषको चार प्रकारका मोक्ष मिलता है ॥१२३॥ और मथुरा, वृन्दावन, व्रज,तथा गोकुलमें अथवा वंशीवट, अक्षयवट तथा यमुनातटपर जो पाठ करे वह भक्त गोलोकधामको जाता है ॥ १२४ ॥ अथवा भक्तिभावसे कहीं भी भूमिमें

गजोद्धारणःश्रीमनुर्ब्रह्मपुत्रोनृपेन्द्रस्तुदुष्यंतजोदानशीलः ॥सदृष्टःश्रुतोभूतएवंभविष्यद्भवत्स्था वरोजंगमोल्पंमहच्च॥१२०॥इतिश्रीभुजङ्गप्रयाते नचोक्तंहरेराधिकेशस्यनाम्नांसहस्रम् ॥ पठेद्भक्तियुक्तोद्विजःसर्वदाहिकृतार्थोभवेत्कृष्णचन्द्रस्वरूपः ॥१२१॥ महापापराशिंभिनत्तिश्रुतंयत्सदा वैष्णवानांप्रियंमंगलंच ॥ इदंरासराकादिनेचाश्विनस्यतथाकृष्णजन्माष्टमीमध्यएव ॥१२२॥ तथाचैत्ररासस्यराकादिनेवाथभाद्रेचराधाष्टमी सद्दिनेवा ॥ पठेद्भक्तियुक्तस्त्विदंपूजयित्वाचतुर्धासुमुक्तिंतनोतिप्रशस्तः ॥ १२३ ॥ पठेत्कृष्णपुर्यांचवृन्दावनेवाव्रजेगोकुलेवापिवंशीवटेवा ॥ वटेवाक्षयेवातटेसूर्य्यपुत्र्याःसभक्तोथगोलोकधामप्रयाति ॥१२४॥ भजेद्भक्तिभावाच्चसर्वत्रभूमौहरिंकुत्रजानेनगेहेवनेवा ॥ जहातिक्षणंनोहरिस्तं चभक्तंसुवश्योभवेन्माधवःकृष्णचन्द्रः॥१२५॥ सदागोपनीयंसदागोपनीयंसदागोपनीयंप्रयत्नेनभक्तैः ॥ प्रकाश्यंननाम्नांसहस्रंहरेश्चनदातव्य- मेवंकदालंपटाय ॥ १२६ ॥ इदंपुस्तकंयत्रगेहेपितिष्ठेद्वसेद्राधिकानाथआद्यस्तुतत्र ॥ तथाषड्गुणाःसिद्धयोद्वादशापिगुणैस्त्रिंशतैर्लक्षणैस्तु प्रयांति ॥ १२७ ॥ इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेश्रीकृष्णसहस्रनामवर्णनंनामैकोनषष्टितमोऽध्यायः ॥ ५९ ॥ गर्गउवाच ॥ इति श्रुत्वाव्याससुखात्कृष्णनाम्नांसहस्रकम् ॥ संपूज्यतंयादवेन्द्रोभक्त्याकृष्णेमनोदधे ॥ १ ॥ ततःसमिथिलायांचबहुलाश्वश्रुतदेवयोः ॥ दत्त्वास्वदर्शनंकृष्णआययौद्वारकांपुरीम् ॥ २ ॥

वनमें या घरमें इस स्तोत्रका पाठ करे, उस भक्तका भगवान् एक क्षणभर भी साथ नहीं छोड़ते हैं और माधव कृष्णचन्द्र उस भक्तके वशमें हो जाते हैं ॥ १२५ ॥ यह सदा गोपनीय सदा गोपनीय सदा गोपनीय है, यह सहस्रनाम कभी कहने योग्य नहीं है, और लम्पट मनुष्योंके सामने कहने योग्य नहीं है, ॥१२६॥ इस सहस्रनामकी पुस्तक जिस घरमें रहती है, वहाँ आद्य राधिकानाथ सदा निवास करते हैं, और छहों गुण, बारह सिद्धियाँ और तीस लक्षण वहाँ निवास करते हैं ॥१२७॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखंडे भाषा टीकायामैकोनषष्टितमोऽध्यायः ॥५९॥ गर्गजी कहते हैं कि व्यासजीके मुखसे श्रीकृष्णके सहस्रनामको सुनकर उग्रसेनने व्यासदेवजीका पूजन करके भक्तिसे कृष्णमें मन लगाया॥ ॥ १ ॥ उसके बाद मिथिलापुरीमें बहुलाश्व और श्रुतदेवको दर्शन देकर श्रीकृष्ण द्वारकाको पधारे ॥ २ ॥

उसके बाद द्रौपदी सहित सब पाण्डव द्वारकासे निकलकर वनवनमें विचरने लगे ॥ ३ ॥ फिर वनवास अज्ञात वासके दिनोंको बिताकर सेना सहित सब विराट नगरमें एकत्रित हुये ॥ ४ ॥ उसके बाद श्रीकृष्ण द्वारा प्रार्थना किये गये भी कौरवोंने आधे राज्यके आधेसे भी आधा राज्य पाण्डवोंको नहीं दिया ॥ ५ ॥ तब भगवान् कौरव और पाण्डवोंके युद्धको समझकर कि, इनका युद्ध अवश्य ही होगा यह निश्चय करके स्वयम् निरायुध होकर स्थित हुये कि अब मैं शस्त्रको हाथमें लूँगा, और बलदेवजी तीर्थ यात्राको गये, सो यात्रामें उन्होंने सूत और बल्वलको मार दिये ॥ ६ ॥ तब धर्मके क्षेत्र कुरु क्षेत्रमें कौरव और पाण्डव आकर परस्पर युद्ध करने लगे ॥ ७ ॥ उसमें कृष्णकी कृपासे पाण्डवोंकी जीत हुई, और पाप करनेवाले सब कौरव मारे गये ॥ ८ ॥ उसके बाद राजा युधिष्ठिरने नौ वर्ष राज्य किया, उसमें तीन अश्वमेध यज्ञ किये, उनसे राजा पवित्र हुये ॥९॥ उसके बाद हे राजन् ! कृष्णकी इच्छासे एक दिन द्वारकामें सब यादवोंका ब्राह्मणोंका महान् शाप हुआ ॥ १० ॥ तब भगवान् कृष्णन अपने शरणागत उद्धवके लिये पीपलके नीचे

ततश्चपांडवासर्वेद्रौपद्यासहभार्यया ॥ द्वारकायाविनिर्गत्यविचेरुस्तेवनेवने॥ ३॥भुक्त्वाचवनवासंतेऽज्ञातवासंतथैवच॥विराटनगरेसर्वेससैन्यास्तेभवन्नृप ॥४॥ ततश्चकौरवाःसर्वेश्रीकृष्णेनापिप्रार्थिताः ॥ नतेपांप्रददूराज्यमर्धार्द्धंचतदर्धकम् ॥५॥ पांडवानांकौरवाणांज्ञात्वायुद्धंजनार्दनः ॥ निरायुधोभूद्यात्रायांबलोऽहन्सूतबल्वलौ ॥६॥ ततःसर्वेकुरुक्षेत्रेधर्मक्षेत्रेप्रविश्यच ॥ कौरवाःपांडवाश्चैवयुद्धंचक्रुःपरस्परम् ॥७॥ जयः कृष्णस्यकृपयापांडवानांवभूवह ॥ भारतेचमृताःसर्वेकौरवाकृतकिल्बिषाः॥८॥ततश्चनवर्षाणिधर्मोराज्यंचकारह ॥ हयमेधत्रयंचक्रेतेनशुद्धोऽभवन्नृप ॥९॥ ततःकृष्णेच्छयाराजन्द्वारकायांकिलैकदा ॥ यादवेभ्यश्चसर्वेभ्योविप्रशापोऽभवन्महान् ॥१०॥ ततःकृष्णस्तुभगवान्प्रपन्नायोद्धावायच ॥ अश्वत्थेकथयामासश्रीमद्भागवतंपरम् ॥ ११ ॥ ततोबभूवसंग्रामोयादवानांपरस्परम् ॥ निहतास्तेप्रभासेवैशस्त्रैर्णानाविधैरपि ॥ १२ ॥ बलःशरीरंमानुष्यंत्यक्त्वाधामजगामह ॥ देवाँस्तत्रागतान्दृष्ट्वाहरिरंतरधीयत ॥ १३ ॥ व्रजेगत्वाहरिर्नंदंयशोदांराधिकांतथा॥गोपान्गोपीर्मिलित्वाऽहप्रेम्णाप्रेमीप्रियान्स्वकान् ॥ १४ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ गच्छनंदयशोदेत्वंपुत्रबुद्धिंविहायच ॥ गोलोकंपरमंधामसार्द्धं गोकुलवासिभिः ॥१५॥ अग्रेकलियुगोघोरश्चगमिष्यतिदुःखदः ॥ यस्मिन्वैपापिनोमर्त्याभविष्यंतिनसंशयः ॥१६॥ स्त्रीपुंसोर्नियमोनास्ति वर्णानांचतथैवच ॥ तस्माद्गच्छाशुमद्धामजरामृत्युहरंपरम् ॥ १७ ॥

बैठकर भागवत उपदेश किया ॥ ११ ॥ तब यादवोंका आपसमें संग्राम हुआ, तब अनेक शस्त्रोंसे सब मर गये ॥१२॥ तब श्रीबलदेवजी मनुष्य देहको छोडकर धामको गये फिर वहाँ सब देवताओंको गये हुये देखकर हरि अन्तर्धान हो गये ॥१३॥ भगवान् व्रजमें जाकर यशोदा राधिका, गोप, गोपियोंको मिलकर प्रेमी भगवान् बड़े प्रेमसे सब अपने प्यारोंको बोले ॥१४॥ श्रीकृष्णजी बोले हे नन्द ! हे यशोदे ! तुम ! जाओ, अब पुत्रबुद्धिको छोड़कर सब गोकुलवासियोंके साथ मेरे धाम गोलोकको जाओ ॥ १५ ॥ आगे प्रजाको दुख देनेवाला घोर कलियुग आयेगा, जिसमें पापी मनुष्य होंगे इसमें संदेह नहीं है ॥१६॥ इस कलियुगमें स्त्री पुरुषके कोई नियम नहीं हैं, और वर्णोंके भी कोई नियम नहीं हैं, इस लिये तुम शीघ्रही जरा और मरणको हरनेवाले मेरे धामको जाओ ॥ १७ ॥

इस प्रकार श्रीकृष्णके कहनेपर एक पांच योजन विस्तीर्ण और पांच योजन ऊँचा रथ आया ॥१८॥ जो केवल हीरोंका वना हुआ मोती और रत्नोंसे विभूषित था,और नौ लाख मन्दिरोंसे और मणिमय दीपोंसे युक्त था ॥१९॥ और दो हजार जिसमें पहिये,और दो हजार ही घोड़े जिसमें जुते रहे सूक्ष्म वस्त्रसे ढका हुआ और एक कोटि सखियोंसे आवृत था ॥ २० ॥ तब गोलोकसे आये हुये उस रथको गोप देखकर बड़े प्रसन्न हुये, इतनेमें ही वहाँ श्रीकृष्णके शरीरमेंसे एक देवता निकले ॥ २१ ॥ जिनके चार भुजाएं थीं. और कोटि कामदेवके जैसे सुन्दर, शंख चक्रको धारण किये हुये, जगत्के पति, लक्ष्मी जिनके साथमें थी ॥२२॥ ऐसे वे देवता सुन्दर रथमें बैठकर शीघ्रतासे क्षीर समुद्रको चले गये, वैसेही श्रीकृष्ण भगवान् हरि विष्णुरूप होकर ॥२३॥ लक्ष्मीसहित गरुड़पर विराजमान होकर हरि भगवान् हे नृप ! वैकुण्ठको चले गये, उसके बाद श्रीहरि नर नारायणरूप होकर ॥२४॥

इति ब्रुवतिश्रीष्कृणेरथंचपरमाद्भुतम् ॥ पञ्चयोजनविस्तीर्णपञ्चयोजनमूर्ध्वगम्॥१८॥वज्रनिर्मलसंकाशंमुक्तारत्नविभूषितम् ॥ मन्दिरैर्नवलक्षै-श्चदीपैर्मणिमयैर्युतम् ॥१९॥ सहस्रद्वयचक्रंचसहस्रद्वयघोटकम् ॥ सूक्ष्मवस्त्राच्छादितंचसखीकोटिभिरावृतम् ॥२०॥ गोलोकादागतंगोपाद-दृशुस्तेमुदान्विताः ॥ एतस्मिन्नंतरेतत्रकृष्णदेहाद्विनिर्गतः ॥ २१ ॥ देवश्चतुर्भुजोराजन्कोटिमन्मथसन्निभः ॥ शंखचक्रधरःश्रीमाँल्लक्ष्म्यासार्द्धं जगत्पतिः ॥ २२ ॥ क्षीरोदंप्रययौशीघ्रंरथमारुह्यसुंदरम् ॥ तथाचविष्णुरूपेणश्रीकृष्णोभगवान्हरिः ॥२३॥ लक्ष्म्यागरुडमारुह्यवैकुण्ठंप्रय-यौनृप ॥ ततोभूत्वाहरिःकृष्णोनरनारायणावृषी ॥२४॥ कल्याणार्थंनराणांचप्रययौबद्रिकाश्रमम् ॥ परिपूर्णतमःसाक्षाच्छ्रीकृष्णोराधयायुतः ॥२५॥गोलोकादागतंयानमारुरोहजगत्पतिः॥सर्वेगोपाश्चनन्दाद्यायशोदाद्याव्रजस्त्रियः।२६।त्यक्त्वातत्रशरीराणिदिव्यदेहाश्चतेऽभवन्॥स्थाप-यित्वारथेदिव्येनंदादीन्भगवान्हरिः ॥ २७ ॥ गोलोकंप्रययौशीघ्रंगोपालोगोकुलान्वितः ॥ ब्रह्मांडेभ्योबहिर्गत्वाददर्शविरजांनदीम् ॥ २८ ॥ शेषोत्संगेमहालोकंसुखदंदुःखनाशनम् ॥ दृष्ट्वारथात्समुत्तीर्यसार्द्धंगोकुलवासिभिः॥२९॥विवेशराधयाकृष्णःपश्यन्न्यग्रोधमक्षयम् ॥ शतशृं-गंगिरिवरंतथाश्रीरासमण्डलम् ॥ ३० ॥ ततोययौकियद्दूरंश्रीमद्वृंदावनंवनम् ॥ वनैर्द्वादशभिर्युक्तंद्रुमैःकामदुघैर्वृतम् ॥ ३१ ॥

मनुष्योंके कल्याणके लिये बदरिकाश्रमको चले गये, फिर परिपूर्णतम साक्षात् श्रीकृष्ण श्रीराधाके साथ ॥२५॥ गोलोकसे आये रथमें विराजमान होकर गोलोकको पधारे, तब सब नन्दादिक गोप और यशोदादिक व्रजकी स्त्रियाँ ॥२६॥ अपने २ शरीरोंको छोड़कर वे सब दिव्यदेह हो गये, तब नन्दादिकोंको भगवान् दिव्यरथमें बैठाकर ॥२७॥ गोपाल भगवान् सब गोकुलको साथ लेकर गोलोकको चले गये, तब सब ब्रह्माण्डोंके बाहर जाकर विरजा नामकी नदी देखी ॥२८॥ शेषराजजीकी गोदमें सुखदेनेवाला और दुखोंका नाशकरने वाला एक महालोक देखा, तब देखकर रथसे उतरकर सब गोकुलवासियोंसमेत ॥२९॥ राधाजीसहित श्रीकृष्ण अक्षयवटको देखते, शतशृंग पर्वतको और रासमण्डलको देखते हुये श्रीकृष्ण उस महालोकको प्रवेशकर गये ॥३०॥ उसके बाद कुछही दूर जाकर श्रीमद्वृन्दावन नामके वनको देखा,जो बारहवनोंसे युक्त और कल्पवृक्षके समान वृक्षोंसे युक्त है॥३१॥

यमुना नदीसे युक्त है,वसन्तके पवनसे सुशोभित है,पुष्पोंकी कुञ्ज और निकुञ्ज और गोप गोपीजनोंसे युक्त है॥३२॥तब गोलोकमें जयजय शब्द हुआ,जो गोलोकधाम श्रीकृष्णके पधारनेसे पहिले शून्य था ॥ ३३ ॥ उसके बाद दुखसे यादवोंकी स्त्रियाँ चितामें आरोहण करके देवकी आदि यादवोंकी सब पत्नियाँ परलोकको गईं ॥३४॥ फिर नष्ट गोत्र हुये यादवोंका सांपरायिक कृत्य अर्जुनने गीताके ज्ञान द्वारा दुखसे अपनी आत्माको शान्त करके किया ॥३५॥ अर्जुनने अपने पुरको जाकर युधिष्ठिरको सब बात कही, तब युधिष्ठिर भाइयोंको साथ लेकर स्त्रीसहित स्वर्गको गये ॥३६॥ श्रीकृष्णके चले जानेपर समुद्रने एक श्रीरुक्मिणी पतिके निज महलको छोड़कर रैवतपर्वत सहित द्वारिकाको डुबा दिया ॥३७॥ हरिकी जिस द्वारावतीमें आजतक समुद्रमें ये शब्द सुनाई पड़ते हैं कि, चाहे पढ़ा हुआ हो, अथवा अनपढ़ हो, किन्तु ब्राह्मण तो मेरा ही शरीर है ॥ ३८ ॥ कलियुगके आदिमें एक

नद्यायमुनयायुक्तंवसंतानिलमंडितम् ॥ पुष्पकुञ्जनिकुंजंचगोपीगोपजनैर्वृतम् ॥३२॥ तदाजयजयारावःश्रीगोलोकेबभूवह ॥ शून्यीभूतेपुराधाम्निश्रीकृष्णेचसमागते ॥३३॥ ततश्चयदुपत्न्यश्चचितामारुह्यदुःखतः ॥ पतिलोकंययुःसर्वादेवक्याद्याश्चयोषितः ॥३४॥ बंधूनांनष्टगोत्राणां चकारसांपरायिकम् ॥ गीताज्ञानेनस्वात्मानंशांतयित्वासदुःखतः ॥३५॥ अर्जुनःस्वपुरंगत्वातमुवाचयुधिष्ठिरम् ॥ सराजाभ्रातृभिःसार्द्धं ययौ स्वर्गंचभार्यया ॥ ३६ ॥ प्लावयद्वारकांसिन्धूरैवतेनसमन्विताम् ॥ विहायनृपशार्दूलगेहंश्रीरुक्मिणीपतेः ॥३७॥ अद्यापिश्रूयतेघोषोद्वारावत्यामर्णवेहरेः ॥ अविद्योवासविद्योवाब्राह्मणोमामकीतनुः ॥ ३८ ॥ विष्णुस्वामीरवेरंशःकलेरादौमहार्णवे ॥ गत्वानीत्वाहरेरर्चांद्वारावत्यांस्थापयिष्यति ॥ ३९ ॥ तंद्वारकेशंपश्यंतिमनुजायेकलौयुगे ॥ सर्वेकृतार्थतांयांतितत्रगत्वानृपेश्वर ॥ ४० ॥ यःशृणोतिचरित्रंवैगोलोकारोहणंहरेः ॥ मुक्तिंयदूनांगोपानांसर्वपापैःप्रमुच्यते ॥४१॥. इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेराधाकृष्णयोर्गोलोकारोहणंनामषष्टितमोऽध्यायः ॥६०॥ ॥ वज्रनाभिरुवाच ॥ ब्रह्मन्नारायणः कृष्णोभगवान्प्रकृतेःपरः ॥ तस्यरूपंकथंश्यामंतन्मेव्याख्यातुमर्हसि ॥ १ ॥ त्वादृशामुनयोब्रह्मञ्जानंतिचरितंहरे ॥ तथाकृष्णस्यदेवस्यनवयंकर्ममोहिताः ॥ २ ॥ सूतउवाच ॥ इत्याकर्ण्यवचस्तेनसंस्तुतःसमुनिर्मुने ॥ तत्त्वज्ञानायतत्त्वज्ञः करुणःप्रत्यभाषत ॥ ३ ॥

हरिका अंश होगा, वह उस समुद्रमें जाकर भगवान्की प्रतिमाको लाकर द्वारिकामें उस मूर्तिको स्थापित करेगा ॥३९॥ सो जो कोई मनुष्य कलियुगमें उन द्वारिकेशके दर्शन करेंगे, हे नृपेश्वर ! वे कृतार्थ होंगे ॥ ४० ॥ जो कोई हरिके इस गोलोकगमनको सुनेंगे और यादवोंकी और गोपोंकी मुक्तिको सुनेंगे वे सब पापोंसे छूट जायेंगे ॥ ४१ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखंडे भाषाटीकायांषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६० ॥ व्रजनाभजीने पूछा कि हे ब्रह्मन् ! मायासे दूर भगवान् श्रीकृष्ण नारायणका श्याम रूप क्यों था ? यह कारण आप मेरे सामने कहिये ॥ १ ॥ हे ब्रह्मन् ! आपके जैसे मुनिजन ही हरिके चरित्रको जानते हैं, जो हमारे जैसे कर्मोंको मोहित हैं, वे नहीं जानते हैं ॥ २ ॥ सूतजी कहते हैं कि हे मुने ! इस प्रकार व्रजनाभ द्वारा स्तुति किये गये वचनोंको सुनकर तत्वके जाननेवाले बड़े दयालु गर्गजी तत्वज्ञानके लिये यह बोले ॥ ३ ॥

गर्गजी बोले कि हे राजन् ! श्यामरूप शृंगार रसका है,और शृंगार रसके देवता श्रीकृष्ण ही हैं,इसलिये लावण्यके समूहसे और उज्ज्वल रसके होनेसे हरिका श्याम रूप है ॥४॥ जैसे घटका दूरसे श्याम रूप दीखता है, और जैसे नदका गड्ढेमें श्याम रूप दीखता है, और जैसे आकाशका श्यामरूप दीखता है, किन्तु आकाशका श्यामरूप नहीं है, किन्तु उज्ज्वल है ॥ ५ ॥ और जैसे श्वेतवस्त्रमें श्यामल छवि दिखाई देती है, वैसे ही कोटिकन्दर्प की लीला होनेसे सन्तजन हरिको श्यामरूप कहते हैं ॥ ६ ॥ तब वज्रनाभजी बोले कि हे मुनिश्रेष्ठ ! आपके वाक्यसे मेरा संदेह दूर हो गया, किन्तु हे ब्रह्मन् ! आगे घोर कलियुग आयेगा ॥ ७ ॥ उसमें कैसे मनुष्य होंगे, यह आप मुझसे कहिये, आप भविष्यको जानते हैं, इससे मैं आपको प्रणाम करता हूँ ॥ ८ ॥ तब श्रीगर्गजी बोले कि, हे राजन् ! कलियुगमें दश हजार वर्षतक जगन्नाथजी मनुष्यलोकमें स्थित होंगे. उनसे आधे समय

॥ गर्गउवाच ॥ श्यामन्तुशृंगाररसस्यरूपंश्रीकृष्णदैवंकथितंमुनीन्द्रैः ॥ लावण्यसंघाच्चतथोज्ज्वलत्वाच्छ्यामंसुरूपंहितथाहरेश्च ॥ ४ ॥
यथादूरतोदृश्यतेश्यामरूपंघटायास्तथेदंनदस्यापिगर्तं॥ यथाकाशरूपंमहच्छ्यामलंवाजलंचाबरंचोज्ज्वलंनापिकृष्णम् ॥५॥ यथाधौतवस्त्रेपरे-
श्यामलाहिच्छविर्दृश्यतेचैवभावैःपरस्य ॥ तथाकोटिकंदर्पलीलाशयत्वाद्धरेःश्यामरूपंतुसंतोवदंति ॥६॥ वज्रनाभिरुवाच ॥ तववाक्यान्मु-
निश्रेष्ठसंदेहश्चगतोमम ॥ अग्रेब्रह्मन्कलिर्घोरआगमिष्यतिभूतले ॥७॥ तस्मिन्मर्त्याःकीदृशाश्चभविष्यन्तिमुनेवद ॥ त्वंजानासिभविष्यंचत-
स्मात्त्वाप्रणमाम्यहम् ॥ ८ ॥ श्रीगर्गउवाच ॥ कलेर्दशसहस्राणिजगन्नाथस्तुतिष्ठति ॥ तदर्द्धंजाह्नवीतोयंतदर्द्धंग्रामदेवताः ॥ ९ ॥ ततःसर्वे
भविष्यन्तिपापिनःकलिमोहिताः ॥ नरकास्तेप्रयास्यंतिसर्वेचाल्पायुषोनराः ॥१०॥ विप्राःस्वकन्यांदास्यन्तिब्राह्मणायचमौल्यतः॥ क्षत्रिया-
श्चैवपुत्रींस्वांमारयिष्यंतिलोलुपाः ॥ ११ ॥ मृषाकुर्वंतिवाणिज्यंवैश्याब्रह्मस्वतत्पराः ॥ शूद्राश्चम्लेच्छसंगेनदूषयिष्यंतिब्राह्मणान् ॥ १२ ॥
ब्राह्मणाःशास्त्रहीनाश्चराज्यहीनाश्चक्षत्रियाः॥ वैश्याश्चद्रव्यहीनावैशूद्रानाथस्यदुःखदाः ॥१३॥ दिनेव्यवायनिरताविरताधर्मकर्मणि॥ स्त्रियः
स्वच्छन्दगामिन्यःपुरुषायोनिलम्पटाः ॥१४॥ पितृणामर्चनंचैववेदानामृत्विजांतथा ॥ विष्णोश्चवैष्णवानांचतुलस्याश्चगवां तथा ॥१५॥
नप्रायेणकरिष्यंतिमानवाःकलिमोहिताः ॥ गणिकासुपरस्त्रीषुपरवित्तेषुमोहिताः ॥ १६ ॥

गङ्गाजी और उनसे आधे समय ग्राम देवता मनुष्य लोकमें रहेंगे ॥९॥ उसके बाद सब मनुष्य कलियुगसे मोहित हुये पापी हो जायेंगे, वे सब थोडी आयुवाले होंगे, और वे सब नरकोंको जायेंगे ॥१०॥ और ब्राह्मण अपनी कन्याओंका मूल्य ले लेकर ब्राह्मणोंको देंगे, और अत्यंत लोलुप होनेसे क्षत्रिय लोग पुत्रियोंको मारेंगे ॥११॥ और वैश्य लोग ब्रह्मस्वमें तत्पर हुये झूंठे व्यापार करनेवाले होंगे, और शूद्र लोग म्लेच्छोंके संगसे ब्राह्मणोंको दूषण लगायेंगे ॥१२॥ शास्त्रसे हीन ब्राह्मण,राज्यसे हीन क्षत्रिय द्रव्यसे हीन वैश्य और अपने स्वामियोंको दुख देनेवाले शूद्र होंगे॥१३॥दिनमें मैथुन करनेवाले धर्मकर्मसे भ्रष्ट होंगे, स्वेच्छासे विचरनेवाली स्त्रियाँ और योनिलम्पट पुरुष होंगे॥१४॥ और पितरोंका, वेदोंका, और ऋत्विजोंका, विष्णुका, वैष्णव, तुलसी तथा गौओंका पूजन कोई नहीं करेंगे ॥१५॥ क्योंकि कलियुगसे मोहित वे मनुष्य वेश्याओंमें, परस्त्रियोंमें तथा पर द्रव्योंमें मोहित होंगे ॥१६॥

और महाशूद्रके समान सब एक वर्ण होजायेंगे, और ओलोंकी वर्षासे पृथ्वी बिना सस्य की हो जायगी॥१७॥और वृक्ष फलहीन होंगे, नदियोंके जल सूख जायेंगे, राजा प्रजासे ताड़ित होंगे, और राजा प्रजाको मारेंगे ॥ १८ ॥ तब राजाने प्रश्न किया कि हे महाराज ! कलियुगमें उत्पन्न हुये मनुष्योंकी किस उपायसे मुक्ति होगी, हे विप्रेन्द्र ! वह आप मेरे आगे कहिये, क्योंकि हे महाराज ! तुम परावरवित्तम हो ॥१९॥ तब गर्गजी बोले कि हे राजन् ! युधिष्ठिर विक्रम, और शालिवाहन, विजयाभिनन्दन तथा नागार्जुन ॥ २० ॥ और कल्कि भगवान् ये छः कलियुगमें धर्मकी स्थापना करेंगे ॥ २१ ॥ इन छटोंमेंसे युधिष्ठिर हो गया, और बाकि पाँच आगे होंगे, ये चक्रवर्ती होकर अधर्मका नाश करेंगे ॥ २२ ॥ और वामन, विधि, शेष और सनक ये विष्णु भगवान्के वाक्यसे धर्मार्थ स्थापन करनेको कलियुगमें ब्राह्मण होगें ॥२३॥ वामनजीके अंशसे तो विष्णुस्वामी ब्रह्माके अंशसे माध्व,

एकवर्णाभविष्यंतिमहाशूद्रसमाःकिलः ॥ सस्यहीनाभवेत्पृथ्वीशिलावृष्ट्यानिरंतरम् ॥१७॥ फलहीनोपिवृक्षश्चजलहीनासरित्तथा ॥ प्रजाभिस्ताडितोभूपोभूपेनताडिताःप्रजाः ॥ १८ ॥ राजोवाच ॥ केनोपायेनजीवानांकलौमुक्तिर्भविष्यति ॥ तन्ममाख्याहिविप्रेन्द्रत्वंपरावरवित्तमः ॥ १९ ॥ गर्गउवाच ॥ युधिष्ठिरोविक्रमश्चतथावैशालिवाहनः ॥ विजयाभिनन्दनश्चैवतथानागार्जुनोनृपः ॥ २० ॥ तथाकल्किश्च भगवानेतेवैशकबंधिनः ॥ करिष्यंतिकलौभूपाधर्मस्थापनमेवच ॥२१॥ अभूद्युधिष्ठिरोराजाभविष्यंतिनृपाश्चते॥ अधर्मनाशयिष्यंतिभूत्वावै चक्रवर्त्तिनः ॥ २२ ॥ वामनश्चविधिःशेषःसनकोविष्णुवाक्यतः ॥ धर्मार्थहेतवेचैतेभविष्यंतिद्विजाःकलौ ॥२३॥ विष्णुस्वामीवामनांशस्तथामाध्वस्तुब्रह्मणः ॥ रामानुजस्तुशेषांशोनिंबार्कःसनकस्यच ॥२४॥ एतेकलौयुगेभाव्याःसंप्रदायप्रवर्त्तकाः ॥ संवत्सरेविक्रमस्यचत्वारःक्षितिपावनाः ॥ २५ ॥ संप्रदायविहीनायेमन्त्रास्तेनिष्फलाःस्मृताः ॥ तस्माच्चगमनंह्यस्तिसंप्रदायेनरैरपि ॥२६॥ पापक्षयकरायत्रश्रीकृष्णस्यकथाभवेत् ॥ वैष्णवैर्विप्रमुख्यैश्चनारायणपरायणैः ॥२७॥ कृतेतुलिप्यतेदेशोत्रेतायांग्रामएवच ॥ द्वापरेचकुलंप्रोक्तंकलौकर्त्तैवलिप्यते ॥२८॥ ध्यायन्कृतेयजन्यज्ञैस्त्रेतायांद्वापरेर्चयन् ॥ यदाप्नोतितदाप्नोतिकलौसंकीर्त्यकेशवम् ॥ २९ ॥

शेषजीके अंशसे रामानुज और सनत्कुमारके अंशसे निम्बार्क होंगे, ॥ २४ ॥ ये चारों कलियुगमें संप्रदायके प्रवर्तक होंगे, और ये विक्रम सम्वत्सरमें ही होंगे, और चारों भूमिके पावन होंगे ॥२५॥ क्योंकि जो सम्प्रदाय विहीन मन्त्र हैं, वे निष्फल माने गये हैं, इससे सब मनुष्योंको सम्प्रदायके मार्गसेही चलना चाहिये ॥ २६ ॥ जहाँ पापोंको क्षय करने वाली श्रीकृष्णकी कथा होती हैं, वैष्णव और नारायणपरायण ब्राह्मण प्रवृत्त करते हैं ॥२७॥ सतयुगमें पाप कियेका दोष देशभरको लगता है, त्रेतामें पाप कियेका फल ग्रामभरको लगता है, द्वारपरमें पाप कियेका दोष कुलभरको होता है, और कलियुगमें तो केवल करनेवालेकोही पाप कियेका दोष होता है, दूसरेको नहीं ॥ २८ ॥ सतयुगमें ध्यान करनेसे त्रेतामें यज्ञोंके करनेसे द्वापरमें पूजन करनेसे जो फल मिलता है, वह कलियुगमें केवल नामकीर्तन करनेसे ही हो जाता है ॥ २९ ॥

और सतयुगमें जो सिद्धि दशवर्षमें होती है, त्रेतामें एकवर्षमें होती हैं, और द्वापरमें एक महिनेमें होती है, वह सिद्धि कलियुगमें एक दिन रातमें ही होजाती है ॥३०॥ यह कलियुग सब धर्मोंसे बहिष्कृत बडा घोर है, इसमें जो वासुदेव परायण हैं, वे ही मनुष्य कृतार्थ हैं, और नहीं ॥३१॥ हे नृप ! वेही तो भाग्यशील हैं, और वेही मनुष्योंमें कृतार्थ हैं, जो कोई इस कलियुमें आप स्मरण कीर्तन करते हैं, और दूसरोंसे करांते हैं, ॥३२॥ कृष्ण जो नाम है, उसमें कृषि जो पद है वह सबका बोधक है, और णकार आत्माका है बोधक है जो कोई सर्वात्मा परब्रह्म सबको आनन्द देनेवाला हो, उसको कृष्ण कहते हैं॥३३॥सब वेदोंके सार दूरसे दूर और जिससे दूर कोई नहीं हैं, ऐसे कृष्ण ये दो अक्षर ही परब्रह्म है, इनको जपकर मुक्त होजाता है॥३४॥गर्भमें तभीतक बसता है, और कामीको यमयातना तभीतक होती है तभी तक गृही और भोगार्थी होता है, जबतक कृष्णका सेवन नहीं करता है ॥३५॥ संसारके विषय भोग और भाई बन्धु ये सब नष्ट होनेवाले हैं, इसीसे सत्य नहीं है, जब यह आपही त्याग दिए जायें, तब तो सुख देनेवाले होते हैं नहीं तो ये दुख देनेवाले होते हैं ॥३६॥ देवकी इच्छासे

कृतेयद्दशभिर्वर्षैस्त्रेतायांहायनेनच द्वापरेचैकमासेनह्यहोरात्रेणतत्कलौ ॥३०॥ घोरेकलियुगेप्राप्तेसर्वधर्मविवर्जिते ॥ वासुदेवपरामर्त्यास्तेकृता-
र्थानसंशयः ॥ ३१ ॥ तेसभाग्यामनुष्येषुकृतार्थानृपनिश्चितम् ॥ स्मरंतिस्मारयंतेयेहरेर्नामानिवैकलौ॥३२॥ कृषिश्चसर्ववचनोणकारश्चा-
त्मवाचकः ॥ सर्वात्माचपरंब्रह्मतेनकृष्णःप्रकीर्त्तितः ॥ ३३ ॥ संजप्यब्रह्मपरमंवेदसारंपरात्परम् ॥ परंनास्तीतिनास्तीतिकृष्णइत्यक्षरद्वयम्॥
॥ ३४ ॥ तावद्गर्भेवसेत्कामीतावतीयमयातना ॥ तावद्गृहीचभोगार्थीयावत्कृष्णंनसेवते ॥ ३५ ॥ नश्वरोविषमःसत्यंभोगश्चबन्धवोभुवि ॥
स्वयंत्यक्तासुखायैवदुःखायत्याजिताःपरैः ॥३६॥ श्रुत्वादेवान्महन्निंदांश्रीकृष्णस्मरणाद्बुधः॥मुच्यतेसर्वपापेभ्योनान्यथारौरवंव्रजेत्॥३७॥
नकाष्ठेविद्यतेदेवोनशिलायांनकांचने ॥ यत्रभावस्तत्रहरिस्तस्माद्भावंहिकारयेत् ॥ ३८ ॥ सकृदुच्चरितंयेनकृष्णइत्यक्षरद्वयम् ॥ बद्धःपरिकरस्ते
नमोक्षायगमनंप्रति ॥ ३९ ॥ सरोगतासाधुजनेषुवैरंपरोपतापोद्विजवेदनिंदा ॥ अत्यन्तकोपःकटुकाचवाणीनरस्यचिह्नंनरकेगतस्य ॥ ४० ॥
स्वर्गागतानामिहजीवलोकेचत्वारिचिह्नानिसदावसन्ति ॥ दानप्रसंगोमधुराचवाणीदेवार्चनंब्राह्मणपूजनंच ॥ ४१ ॥ राजोवाच ॥ व्रतेषुकिं
वरंब्रह्मन्सत्सुतीर्थेषुकिंमहत् ॥ देवेषुपूजनीयेषुकोमुख्यःकथयस्वनः ॥ ४२ ॥

महन्निंदाको सुनकर बुध पुरुष श्रीकृष्णके स्मरण करनेसे सब पापोंसे छूट जाता है, अन्यथा रौरव नरकमें जाता है ॥३७॥ काष्ठमें, शिलामें और सुवर्णादिकोंमें देवता नहीं है किंतु जहाँ भाव है, वहीं देवता है, इस लिए भावको करना ही मुख्य है, इससे भाव करे ॥३८॥ जिस किसीने एक बार "कृष्ण" इन दोनों अक्षरका उच्चारण किया, उस पुरुषने मानो मोक्षके जानेको कमर बांध ली है ॥३९॥ शरीरमें रोग सहित होना, दूसरेको दुख देना, साधुजनोंमें वैर करना ब्राह्मणोंकी तथा वेदकी निन्दा करना, अत्यन्त कोप करना और कटु वचन बोलना ये सब नरकमें जानेके चिह्न होते हैं ॥४०॥ और इस लोकमें स्वर्गमेंसे आये मनुष्योंके ये चार चिह्न होते हैं, दान करनेमें तो प्रसन्न होना, मीठा बोलना, देवपूजन करना और ब्राह्मणों का पूजन करना॥४१॥फिर राजाने प्रश्न किये कि, हे ब्रह्मन्! व्रतोंमें मुख्य कौनसा व्रत है, सत्तीर्थोंमें बड़ा कौनसा है और पूजनीय देवोंमें मुख्य कौन है, आप हमको कहिये ॥४२॥

तब गर्गजी बोले कि, व्रतोंमें तो एकादशीका व्रत मुख्य है, तीर्थोंमें गंगा नदी और देवभक्तोंमें वैष्णव मुख्य है ॥४३॥ देवताओंमें विष्णु भगवान् मुख्य हैं, और पूजनीयोंमें गुरु मुख्य हैं, जो इस बातको नहीं मानते हैं, वे कुम्भीपाकमें गिरते हैं ॥४४॥ तब राजा बोले कि हे मुने ! एकादशीके माहात्म्यको तथा औरोंके भी माहात्म्यको कहिये, हे गुरुदेव ! अनुग्रह करिये, मैं आपको नमस्कार करता हूँ ॥४५॥ तब गर्गजी बोले कि हे यदुनन्दन ! मैं आपके सामने सब कहूँगा, आप सुनिये, एकादशीके दिन फल तथा अन्न नहीं खाना चाहिये ॥४६॥ प्रसन्न होकर यथोक्त विधिसे एकादशीका व्रत करे,तब वह एकादशी उस मनुष्यको फल देनेवाली होती है ॥४७॥ हे महाराज ! जो मनुष्य हरिवासरके दिन फलाहार करते हैं, उन मनुष्योंकी कौन गति होती है ? यह सब हमसे विस्तारपूर्वक कहिये ॥ ४८ ॥ तब गर्ग ऋषि बोले कि, जो यथोक्त व्रत करते हैं, उनको समस्त फल मिलता है, और जो

॥ गर्गउवाच ॥ एकादशीवराह्यस्तिव्रतेषुयदुनन्दन ॥ भागीरथीचतीर्थेषुदेवभक्तेषुवैष्णवः ॥ ४३ ॥ सुरेषुविष्णुर्भगवान्पूजनीयेषुश्रीगुरुः ॥ इमांवार्तांनमन्यंतेकुंभीपाकेपतंतिते ॥ ४४ ॥ राजोवाच ॥ एकादश्यास्तुमाहात्म्यमन्येषांचैवमेमुने ॥ कथयस्वप्रसादेनगुरुदेवनमोस्तुते ॥४५॥ गर्गउवाच ॥ कथयिष्याम्यहंसर्वंशृणुष्वयदुनन्दन ॥ एकादश्यांनभोक्तव्यमन्नंचैवफलंतथा ॥ ४६ ॥ यथोक्तविधिनाकुर्य्यादेका-दशींमुदानरः ॥ तदासातस्यफलदाभवतिनृपसत्तम ॥ ४७ ॥ वज्रनाभिरुवाच ॥ फलाहारंचकुर्वंति ये नराहरिवासरे ॥ तेषांगतिःकाभवति तन्नोवर्णयविस्तरात् ॥ ४८ ॥ ऋषिरुवाच ॥ समस्तंचोपवासेनयथोक्तंलभतेफलम् ॥ फलाहारेणचार्द्धंस्यात्किंचिन्न्यूनंजलेनच ॥ ४९ ॥ अन्नान्सर्वान्वर्ज्जयित्वागोधूमाद्यान्नृपेश्वर ॥ एकादश्यांप्रकुर्वीतफलाहारंमुदानरः ॥५०॥ अन्नंभुनक्तियोराजन्नेकादश्यांनराधमः ॥ इहलोके सचांडालोमृतःप्राप्नोतिदुर्गतिम् ॥ ५१ ॥ दधिदुग्धंतथामिष्टंकूटंकर्कटिकांतथा ॥ वास्तूकंपद्ममूलंचरसालंजानकीफलम् ॥५२॥ गंगाफलंप-त्रंनिंबुन्दाडिमश्चविशेषतः ॥ शृंगाटकंनागरंगंसैंधवंकदलीफलम् ॥५३॥ अम्रातकमार्द्रकंचतूलंचबदरीफलम् ॥ जंबूफलमामलकंपटोलंत्रिकु-शंतथा ॥ ५४ ॥ रतालूंशर्कराकंदमिक्षुदंडंतथैवच ॥ द्राक्षादीनिहिचान्यानिपवित्रंचफलंतथा ॥ ५५ ॥

फलाहार करते हैं उनको आधा फल मिलता है, और जलमात्र ग्रहण करे तो कुछ कम फल मिलता है ॥४९॥ और हे नृपेश्वर ! जो गोधूमादिक सब अन्नोंको छोड़कर आनन्दसे केवल फलाहारही करे, उस मनुष्यको आधा फल मिलता है ॥५०॥ और हे राजन् ! जो मनुष्य एकादशीके दिन अन्न खाते हैं, जो इस लोकमें चाण्डाल हैं, और मरनेपर दुर्गति को पाते हैं ॥५१॥ दही, दूध, मिष्टान्न, कूट ककड़ी, बथुवा, कमलकन्द अथवा रसाल आम्र, जानकीफल ॥ ५२ ॥ गंगाके फल, पत्र, निम्न, अनार-सिंघाड़े, (सोंठ) सैंधव अथवा केलाके फल ॥५३॥ आम्रातक, अदरख, तूल या बदरीफल (बेर) जामुन, आमले, परवर त्रिकुश ॥ ५४ ॥ रताळू, सकरकन्द, गाढा और दाख इत्यादि फल पवित्र हैं, इनको फलाहारमें ग्रहण करना चाहिये ॥ ५५ ॥

और हे राजेन्द्र हरिवासरके दिन एकवार भोजन करे, परन्तु तीसरे प्रहरमें थोड़ा बहुत फलाहार करना चाहिये ॥ ५६ ॥ जो कुछ फलाहार करे, उसमें आधा तो ब्राह्मणको देना
चाहिये, और आधा स्वयं खा लेना चाहिये, जल दो बारसे अधिक नहीं पीना चाहिये, और फलादिक एकबारही खाने चाहिये ॥ ५७ ॥ जनार्दनका पूजन करके रात्रिमें जाग-
रण करे, और यदि कोई व्रत रखकर दोवार अथवा तीनवार फल खाये, उसको व्रत करनेका कुछ भी फल नहीं मिलता है ॥ ५८ ॥ और जो पंद्रह दिन अन्न खानेमें जितना पाप
होता है ॥५९॥ वह सब एकादशीका उपवास करनेसे दूर हो जाता है, ब्राह्मणको भोजन दो, और आप उपवास करे ॥ ६० ॥ और एकादशीके माहात्म्यको सुने, वह सब पापों
से छूट जाता है, द्रव्यकी इच्छावालेको द्रव्य, पुत्रकी इच्छावालेको पुत्र, और मोक्षकी इच्छावालेको मोक्ष मिलता है, एकादशीका व्रत करनेसे ॥६१॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेध
खण्डे भाषाटीकायामेकषष्टितमोऽध्यायः ॥६१॥ गर्गजी कहते हैं कि जिस मनुष्यने पूर्वजन्ममें दुर्जर तप किया हो, उस मनुष्यकी इस लोकमें गुरुमें भक्ति होती है ॥१॥ जो मनुष्य

एकवारंचराजेंद्रभोक्तव्यंहरिवासरे ॥ तृतीयेप्रहरेतीतेप्रस्थस्यचपलस्यच ॥ ५६ ॥ द्विजायचार्द्धंदातव्यमर्द्धमात्मनिभोजनम् ॥ द्विवारंजल-
मश्नीयादेकवारंफलंतथा॥५७॥समाचरेज्जागरणंपूजयित्वाजनार्दनम्॥ द्विवारंवात्रिवारंवायोनरोहरिवासरे ॥५८॥ करोतिचफलाहारंतस्यकिं-
चित्फलंनहि ॥ अन्नभुक्तेनयत्पापंजातंपंचदशैर्दिनैः ॥ ५९ ॥ एकादश्युपवासेनतत्सर्वंविलयंभवेत् ॥ भोजनंब्राह्मणेदत्त्वाह्युपवासंसमाचरेत्
॥६०॥ श्रुत्वातस्याश्चमाहात्म्यंसर्वपापैःप्रमुच्यते ॥ द्रव्यार्थीलभतेद्रव्यंसुतार्थीलभतेसुतम् ॥ मोक्षार्थीलभतेमोक्षमेकादश्याव्रतेनवै ॥ ६१ ॥
इतिश्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेएकादशीमाहात्म्यंनामैकषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६१ ॥ गर्गउवाच ॥ तपःकृतंपुरायेनदुर्ज्जरंपूर्वजन्मनि ॥
इहलोकेचतस्याशुगुरोर्भक्तिर्हिजायते ॥ १ ॥ गुरोःसेवांनकुरुतेस्वगुरुंयोनमन्यते ॥ यःसमर्थश्चपततिकुंभीपाकेचसर्वदा ॥२॥ गुरोरभक्तंप्रगतं
दृष्ट्वागोघ्नोभवेन्नरः ॥ स्नात्वागंगांचयमुनांतदाभवतिनिर्मलः ॥ ३ ॥ द्रव्यलाभस्तुशिष्यस्यभवेद्वैयत्रयत्रच ॥ दशांशंचगुरोस्तस्मिन्गृहद्रव्ये
तथाहिनः ॥४॥ तंभुंजतिबलाच्छिष्योनदास्यतिगुरुंपृथक् ॥ समहारौरवंयातिहीनःसर्वसुखैरिह ॥५॥ हरौकुर्वंतियेनित्यंभक्तिंचनवलक्षणाम्
संसारसागरंराजंस्तेतरंतिसुखेनवै ॥ ६ ॥ ज्ञातिविद्यांमहत्त्वंचरूपंयौवनमेवच ॥ यत्नेनपरिवर्ज्जेतःपंचैतेभक्तिकंटकाः ॥ ७ ॥ भक्त्याकृष्णस्य
राजेन्द्रप्रसादंचरणोदकम् ॥ ये गृह्णंतिभवेयुर्भूपावनानात्रसंशयः ॥ ८ ॥

समर्थ होकर गुरुकी सेवा नहीं करता है, और जो मनुष्य गुरुको नहीं मानता है, वह मनुष्य सर्वदा कुम्भीपाक नरकमें गिरता है ॥ २ ॥ जो मनुष्य गुरुके अभक्तको सामनेसे
आता हुआ देखे, उस मनुष्यको गोवधका पाप लगता है, फिर वह मनुष्य गंगामें अथवा यमुनामें स्नान करे तब निर्मल होता है ॥३॥ शिष्यको कहीं द्रव्यका लाभ हो, उसमेंसे
और जो द्रव्य घरमें हो उसमेंसे दशांश द्रव्य गुरुका समझना चाहिये ॥४॥ उस दशांश द्रव्यको यदि शिष्य स्वयम् खा ले, और गुरुको नहीं दे, तो वह मनुष्य महारौरव नरकको
जाता है, और सब सुखोंसे हीन होता है ॥५॥ जो मनुष्य भगवान् कृष्णमें नवलक्षणाभक्ति करते हैं, वे मनुष्य सुखसे संसार सागरको तरते हैं॥६॥ ज्ञाति, विद्या, महत्त्व, रूप और यौवन
इनका यत्नपूर्वक परित्याग करे, ये पांच भक्तिके कंटक हैं॥७॥ हे राजेन्द्र! जो मनुष्य भक्तिसे श्रीकृष्णके प्रसादको और चरणोदकको ग्रहण करते हैं, वे निःसंदेह भूमिके पावन होते हैं॥८॥

गंगा तो पापको हरती है, चन्द्रमा तापको हरता है, कल्पवृक्ष दीनताको दूर करता है, और साधुओंका समागम तीनों तापोंको दूर करता है ॥९॥ तबतक इस संसारमें मनुष्यके पितृगण पिण्डकी इच्छा करते घूमते हैं जबतक वंशमें कोई पुत्र पुत्रादि कृष्णका भक्त नहीं होता है ॥ १० ॥ वह गुरु ही क्या, वह पिता क्या वह पुत्र क्या, वह सखा क्या, वह राजा क्या और वह बन्धु क्या जो हरिमें मन नहीं दे अर्थात् ये कोई कामके नहीं है, यदि हरिमें मत नहीं दे तो॥११॥जो मनुष्य विद्याके, धनके, घरके, कलाओंके अभिमानी हैं, और रूपादि स्त्री और पुत्र इनमें नित्य बुद्धि माननेवाले हैं, और जो अन्य देवताओंको देखकर फलकी इच्छा करनेवाले हैं, और केशव भगवान्का भजन नहीं करते हैं, वे मनुष्य जीवन्मृतक कहे जाते हैं ॥१२॥ हे नृपसत्तम ! यह सब वृत्तान्त मैंने आपके सामने अश्वमेधपर्वका सुमेरु कहा है, जो यह कृष्णके चरित्रसे व्याप्त है ॥१३॥ जिसके श्रवण मात्रसे ही कृष्णमें भक्ति होगी, हे नृप शार्दूल! जो भक्ति मनुष्योंके शोक, मोह और भयको दूर करनेवाली है ॥१४॥ हे नृपसत्तम ! इस चरित्रके सुननेसे ही मनुष्यको वाञ्छित फल मिलता

गंगापापंशशीतापंदैन्यंकल्पतरुर्हरेत् ॥ पापंतापंतथादैन्यंसद्यःसाधुसमागमः ॥९॥ तावद्भ्रमंतिसंसारेपितरःपिंडतत्पराः ॥ यावद्वंशेसुतःकृष्णभक्तियुक्तोनजायते ॥ १० ॥ सकिंगुरुःसकितातःसकिपुत्रःसकिंसखा ॥ संकिंराजासकिंबंधुर्नदद्याद्योहरौमतिम् ॥११॥ विद्याधनागारकलाभिमानिनोरूपादिदारासुतनित्यबुद्धयः ॥ दृष्ट्वान्यदेवान्फलकामिनश्चजीवन्मृतास्तेनभजंतिकेशवम् ॥१२॥हयमेधचरित्रस्यसुमेरुःकथितोमया ॥ व्याप्तःकृष्णचरित्रैश्चतवाग्रेनृपसत्तम ॥ १३ ॥ यस्यश्रवणमात्रेणकृष्णभक्तिर्भविष्यति ॥ नराणांनृपशार्दूलशोकमोहभयापहा ॥ १४ ॥ अनेनचरितेनापिलभतेवांछितंफलम् ॥ धनंधान्यंसुतंभक्तिंतथाशत्रुक्षयंनरः ॥ १५ ॥ तस्माद्भजाशुराजेन्द्रश्रीकृष्णंजगदीश्वरम् ॥ भक्त्यागृहेवाविपिनेज्ञात्वाविश्वंमनोमयम् ॥१६॥आयुस्तेनरवीरवर्द्धतुसदाहेमंतरात्रिर्यथालोकानांप्रियदर्शनोभवसदाहेमंतसूर्योयथा॥शत्रूणामतिदुःसहोभवसदाहेमंततोयंयथानाशंयांतुतवारयोपिसततंहेमंतपद्मंयथा ॥ १७ ॥ सूतउवाच ॥ इतिश्रुत्वावज्रनाभिर्हर्षितःप्रेमविह्वलः ॥ स्मरन्कृष्णस्यमाहात्म्यंनत्वागुरुमथाब्रवीत् ॥ १८ ॥ राजोवाच ॥ धन्योहंचकृतार्थोहंभवताकरुणात्मना ॥ श्रुत्वाकृष्णस्यमाहात्म्यंलग्नःकृष्णेचनोमनः ॥ १९ ॥

है, और धन धान्य, पुत्र और भक्ति होती है, तथा शत्रुओंका नाश होता है ॥१५॥ इससे हे राजेन्द्र ! श्रीकृष्ण जगदीश्वरका ही भजन करो, घरमें अथवा वनमें इस विश्वको मनोमय जानकर भक्तिसे कृष्णका ही भजन करो ॥१६॥ हे नरवीर ! हेमन्तकी रात्रिकी तरह तो तुम्हारी आयु बढ़े, हेमन्तके सूर्यकी तरह तुम लोकोंके प्रियदर्शन होओ, और हेमन्तका जल जैसे दुखदायी और असह्य होता है, वैसे ही आप अपने शत्रुओंके दुखदायी और असह्य हों, और जैसे हेमन्तमें कमलोंका नाश होता है, वैसे ही आपके शत्रुओंका नाश हो ॥ १७ ॥ सूतजी कहते हैं कि वज्रनाभ इस वृत्तान्तको सुनकर प्रेममें विह्वल होकर बड़े हर्षित हुये, फिर श्रीकृष्णके माहात्म्यको सुनते हुये गुरुको प्रणाम करके यह बोले ॥१८॥ राजा बोले कि, हे महाराज ! दयालु आपने मुझको कृतार्थ कर दिया है, अब मैं धन्य हुआ हूँ, श्रीकृष्णके माहात्म्यको सुनकर अब मेरा भी मन श्रीकृष्णमें ही लग गया है ॥१९॥

सूतजी बोले कि, यह कहकर राजसत्तमने गर्गगुरुका गंध, पुष्प अक्षत, और रत्नोंकी मालासे पूजन किया ॥२०॥ और गज, रथ, अश्व, पालकी, मंदिर, चांदीके भार, सुवर्णके भार, रत्न, ग्राम, प्रदक्षिणा, और प्रणाम तथा नीराजनादिकोंसे हर्षपूरित राजाने सब प्रकारसे पूजन करके गुरुको प्रसन्न किया ॥२१॥२२॥ सूतजी कहते हैं कि उसके बाद गर्गजी उठे, और वज्रनाभको आशीर्वाद देकर राजाने जिनको प्राणम किया वे गर्गजी दक्षिणाको ग्रहण करके पधारे॥२३॥तब श्रीगर्गमुनिने यमुनाके तटपर श्रीविश्रान्त नामक तीर्थमें जाकर वह सब धन माथुर ब्राह्मणोंको दे दिया ॥२४॥ तब गर्गजीके कहनेसे वज्रनाभने मुनीश्वरोंसहित मथुरामें फिर अश्वमेध किया, जैसे पहिले हस्तिनापुरके स्वामीने किया था ॥२५॥ फिर वज्रनाभने मथुरामें दीर्घविष्णु तथा केशवदेवकी, वृन्दावनमें गोविन्द देवकी, और गिरिराजमें हरदेवजीकी, गोकुलमें गोकुलेशकी,और गोकुलसे एक योजन बलदेवजी,भगवान्

॥ सूतउवाच ॥ इत्युक्तापूजयामासगर्गाचार्य्यंनृपोत्तमः ॥ गन्धाक्षतैःपुष्पहारैस्तथाजालकमालया ॥ २० ॥ गजैरथैस्तुरंगैश्वशिबिकाभिश्च
मंदिरैः॥रौप्याणांचैवभारैश्चस्वर्णभारैश्चशौनक।२१।तथारत्नैश्चग्रामैश्चह्यात्मनाहर्षपूरितः॥प्रदक्षिणाप्रणामैश्चतथानीराजनादिभिः॥२२॥
॥ सूतउवाच ॥ ततश्चगर्गउत्थायदत्त्वावज्रायचाशिषम् ॥ भूपेनवंदितःसोपियर्यौदक्षिणयायुतः ॥ २३ ॥ सगत्वायमुनातीरेतीर्थेविश्रांति
संज्ञके ॥ माथुरेभ्यश्चविप्रेभ्योमुनिःसर्वंधनंददौ ॥ २४ ॥ गर्गवाक्यात्ततोवज्रोमथुरायांमुनीश्वरैः ॥ चकारहयमेधंवयथानागपुरेश्वरः ॥ २५ ॥
ततःसमथुरायांचदीर्घविष्णुंचकेशवम् ॥ वृन्दावनेचगोविंदंहरिदेवंगिरीश्वरे ॥ २६ ॥ गोकुलेगोकुलेशंचगोकुलाद्योजनेबलम् ॥ स्थापयामास
वज्रस्तुहरेश्चप्रतिमाश्चषट् ॥ २७ ॥ बलस्यप्रतिमाश्चान्याःपञ्चवैव्रजमण्डले ॥ नृणांशुभायवज्रस्तुस्थापयामासहर्षितः ॥२८॥ अब्दाश्चतुः
सहस्राणिकलौपञ्चशतानिच ॥ गतेगिरिवरेहिश्रीनाथःप्रादुर्भविष्यति ॥२९॥ तंपूजयिष्यतिव्रजेविष्णुस्वामीरवेस्तनुः॥ वल्लभाद्याश्चतच्छिष्या-
श्चान्येगोकुलस्वामिनः ॥३०॥ श्रीमद्भागवतान्मुक्तिंदृष्ट्वावज्रःपरीक्षितः ॥ वैराग्येणापिमुनयोराज्यंत्यक्तुंमनोदधे ॥३१॥ तदाऽऽययौचौपग-
विर्नरनारायणाश्रमात् ॥ पादुकांमस्तकेबिभ्रत्कृष्णचन्द्रस्यवैष्णवः ॥ ३२ ॥ भूपेनवंदितःसोपिप्रत्युत्थानासनादिभिः ॥ कथयामासवज्राग्रे
श्रीमद्भागवतंमुदा ॥ ३३ ॥

की इन छः प्रतिमाओंकी स्थापना की॥२६॥२७॥ उसके बाद वज्रनाभजीने व्रजमण्डलमें बलदेवजीकी पांच प्रतिमाएँ और भी मनुष्योंके कल्याणके लिये की ॥२८॥ फिर कलियुग के चार हजार पांच सौ वर्ष बीतनेके बाद श्रीगिरिराजमें श्री श्रीनाथजी प्रगट होंगे ॥२९॥ सूर्यके अवतार श्रीविष्णु स्वामी उन श्रीनाथजीकी पूजा करेंगे, उसके बाद वल्लभादि उनके जो शिष्य होंगे वे और उनके बादमें और भी गोकुलवासी श्रीनाथजीकी मूर्तिका पूजन करेंगे ॥३०॥ तब वज्रनाभजीने श्रीभागवतके प्रभावसे परीक्षित्की मुक्तिको देखकर हे मुनियो ! वैराग्य लेकर राज्य त्यागनेका मन किया ॥३१॥ तब विष्णु भगवान्के भक्त उद्धव श्रीकृष्णभगवान्की पादुकाओंको माथेपर रखकर बदरिकाश्रमसे आये ॥ ३२ ॥ उनको वज्रनाभने खड़े होकर प्रणाम किया, और आसन दिया तब उद्धवजीने आनन्दसे वज्रनाभके आगे श्रीभागवतका निरूपण किया ॥ ३३ ॥

तब वज्रनाभजीने उद्धवके मुखसे आनन्दसे श्रीभागवत सुनकर यह कहा कि हे तात ! पहिले मैंने राजा परीक्षित् की सभामें यह कथा सुनी थी ॥३४॥ जो भागवत श्रीव्यासकी समाधि भाषा श्रीशुकदेवजीने वर्णन की थी, वह अब आपने कही, अब मैं कृतार्थ होगया ॥३५॥ फिर वज्रनाभजी प्रतिबाहु नामके अपने पुत्रको राज्य देकर विमानमें बैठकर और उद्धवजीको भी अपने साथ विमानमें बैठाकर गोलोकको चले गये ॥ ३६ ॥ उसके बाद प्रतिबाहुने मथुराके दक्षिणमें और जनमेजयने मथुराके उत्तरमें राज्य किया ॥ ३७ ॥ हे राजन् ! आगे अत्यन्त घोर कलियुग आयेगा, किन्तु पापोंका नाशकरनेवाला एक निर्वाह दीखता है ॥ ३८ ॥ जबतक यहाँ श्रीभागवत शास्त्र है, और जबतक गोकुलके स्वामी हैं, और जबतक गोवर्धन पर्वत और गंगानदी है, तबतक कलियुग नहीं है ॥ ३९ ॥ हे मुने ! जैसे जम्बू दीपके भारतादि खण्डोंके बीचमें सोनेका सुमेरु कमल पुष्पकी तरह विराजता है ॥ ४० ॥

श्रुत्वोद्धवाद्भागवतंवज्रःप्रोवाचहर्षितः ॥ श्रुतामयापुरातातसुसभायांपरीक्षितः ॥ ३४ ॥ समाधिभाषाव्यासस्यशुकदेवेनवर्णिता ॥ पुनस्त्वयापिकथिताकृतार्थोहंबभूवह ॥ ३५ ॥ इत्युक्त्वावज्रनाभिस्तुस्वराज्यंप्रतिबाहवे ॥ दत्त्वाजगामगोलोकंविमानेनापिचोद्धवः ॥ ३६ ॥ चकार राज्यंधर्मेणमथुरायांचदक्षिणे ॥ प्रतिबाहुःसुतस्तस्यचोत्तरेजनमेजयः ॥ ३७ ॥ अग्रेकलियुगोब्रह्मन्नागमिष्यतिदारुणः ॥ परंतुचैकंनिर्वाहं दृश्यतेपापनाशनम् ॥ ३८ ॥ यावद्भागवतंशास्त्रंयावद्गोकुलस्वामिनः ॥ यावद्गोवर्द्धनोगंगातावत्कलियुगंनहि ॥ ३९ ॥ भारतानांचखंडानां जंबूद्वीपेयथामुने ॥ मध्येसंराजतेमेरुःसौवर्णःपद्मपुष्पवत् ॥ ४० ॥ तथागोलोकखण्डानांसंहितायांमहामुनेः ॥ हयमेधचरित्रस्यमध्येमेरुर्विराजते ॥ ४१ ॥ अस्यश्रवणमात्रेणविप्रहागुरुतल्पगः ॥ स्त्रीराजपितृगोहन्तामुच्यतेसर्वपातकैः ॥ ४२ ॥ विप्रस्तुलभतेविद्यांराज्यंराजन्य एवच ॥ श्रवणाच्चधनंवैश्योधर्मंशूद्रस्तथैवच ॥ ४३ ॥ नदीषुचयथागंगादेवेषुभगवान्यथा ॥ तीर्थेषुवैतीर्थराजइयंवैसंहितामुच ॥ ४४ ॥ अस्याःश्रवणमात्रेणतृप्तिंयातिनरोत्तमः ॥ नसज्जेतान्यशास्त्रेषुयथाभागवतान्मुने ॥४५॥ तस्माद्भजतपादाब्जंश्रीकृष्णस्यमहात्मनः ॥ कल्याणार्थंचमुनयोभक्तदुःखहरस्यच ॥४६॥ श्रीगर्गउवाच ॥ इतिश्रुत्वाशौनकाद्यामुनयश्चरितंहरेः ॥ श्लाघांवैसूतपुत्रस्यचक्रुर्हर्षितमानसाः ॥४७॥

वैसेही इस गर्गसंहिताके गोलोकादि खण्डोंके बीचमें अश्वमेधखण्ड सुमेरु पर्वतकी तरह विराजमान है, ॥४१॥ इस अश्वमेधके सुनने मात्रसे ब्रह्मा, गुरुतल्पग, स्त्री, राजा, पिता, गौ, इनको मारनेवाला हो, वह भी सब पापोंसे छूट जाता है ॥४२॥ ब्राह्मणको विद्या, राजाको राज्य, वैश्यको धन, और शूद्रको धर्म, इसके सुननेसे प्राप्त होता है ॥ ४३ ॥ नदियोंमें जैसे गंगा, देवोंमें जैसे भगवान्, तीर्थोंमें जैसे तीर्थराज, ऐसेही संहिताओंमें गर्गसंहिता है ॥ ४४ ॥ इसके सुननेहीसे नरोत्तम तृप्त होता है । इसलिये अन्य शास्त्रोंमें आसक्त नहीं होना चाहिये, जैसे भागवतके सुननेसे तृप्ति होती है, ऐसे ही इसके सुननेसे तृप्ति होती है ॥४५॥ इसलिये महात्मा श्रीकृष्णका भजन करो, हे मुनियो ! यदि कल्याण चाहते, हो, तो भक्तोंके दुखोंके हरनेवाले भगवान्का ही भजन करो ॥४६॥ श्रीगर्गजी बोले कि इस प्रकार शौनकादिक मुनियोंने हरिके चरित्रको सुनकर हर्षित होकर सूतजीकी प्रशंसा की॥४७॥

हे करुणानिधे ! संसार सागरमें डूबे हुए दीन मेरी जिसको कालरूप ग्राहने पकड़ रखा है, उसकी हे विष्णो ! रक्षा करिये, आपको मेरी नमस्कार हो ॥४८॥ हे साधो तुम अनाथोंके प्यारे हो, सो हमारे ऊपर अनुग्रह करो, जैसे स्वामी त्रैलोक्यको अभय दे, वैसेही करो ॥४९॥ श्री गुरुकी कृपासे और श्रीमदन मोहनकी सेवासे हे हरे ! मेरी वाणी आपके गुणानुवादका गान करनेवाली हो, ऐसी करिये ॥५०॥ वाल्मीकादिक और व्यासादिक जो महाकवि हैं मेरी इस लघुक्ता कविताको देखें और आप लोग देखकर मेरे अपराधको क्षमा करें ॥ ५१ ॥ श्रीमाधव व्रजके पति नव मेघके समान जिनका अंग ऐसे राधाके पति देवताओंके पति मुरलीको धारण करनेवाले भक्तजनोंकी पीडाको धारण करनेवाले परमार्थ रूप अनन्त

संसारसागरेमग्नंदीनंमांकरुणानिधे॥ कालग्रहगृहीतांगंत्राहिविष्णोनमोस्तुते ॥ ४८ ॥ अनुगृह्णीष्वनःसाधोत्वंह्यनाथस्यवल्लभः॥त्रैलोक्यस्याभयंदद्याद्यथास्वामीतथाकुरु ॥ ४९ ॥ श्रीगुरोःकृपयाहिश्रीमदनमोहनसेवया ॥ बभूववाङ्ममहरेस्तयाचरितमीरितम् ॥५०॥ बाल्मीक्याद्याश्चव्यासाद्यालघूक्तांकवितांमम ॥ पश्यन्तुदृष्ट्वायूयंचाऽपराधंक्षंतुमर्हथ ॥५१॥ श्रीमाधवंव्रजपतिंनवमेघगात्रंराधापतिंसुरपतिंमुरलीधरञ्च ॥ भक्तार्त्तिहञ्चपरमार्थमनन्तदेवंकृष्णंनमामिशिरसामनसाचभक्त्या ॥५२॥ षड्विंशच्चशतारामापिसप्ताशीतिसुप्रियाः ॥ श्लोकाश्चरित्रमेरोर्वैश्रीकृष्णस्यममात्मनः ॥ ५३ ॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डेसुमेरुसंपूर्त्तिर्नामद्विषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६२ ॥ समाप्तोऽयंग्रन्थः ॥

देव श्रीकृष्णको भक्तिपूर्वक मनसे तथा शिरसे प्रणाम करता हूँ ॥५२॥ इस सुमेरु भूत अश्वमेध खण्डमें अत्यन्त प्रिय सत्ताईस सौ सत्तासी श्लोक हैं, जिनमें श्रीकृष्णजीका चरित्र गान किया है ॥५३॥ इति श्रीमद्गर्गसंहितायामश्वमेधखण्डे भाषाटीकायां द्विषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६२ ॥

समाप्ता चेयं गर्गसंहिता ॥ शुभम्भूयात् ॥

॥ इति श्रीमद्गर्गसंहिता भाषाटीकासहिता समाप्तः ॥

विदुषामभ्यर्थना ।

अत्रास्माकं मुद्रणालये ऋगादयो वेदा उपनिषदो वेदान्तग्रन्था महाभारतादीतिहासाः श्रीमद्भागवतादिमहापुराणोपपुराणानि धर्मशास्त्र-कर्मकाण्ड-व्याकरण-न्याय-योग-सांख्य-मीमांसादिशास्त्रीयग्रन्थाः काव्य-नाटक-चम्पू-प्रभृतयो ग्रन्थाः सहस्रनामाद्यनेकस्तोत्रग्रन्था विविधभाषाग्रन्थाश्च सीसकोत्तममहल्लघ्वक्षरैर्मनोहरं मुद्रिता योग्यमूल्येन क्रय्याः सन्ति, तांश्च ग्राहका यथापुस्तकसूचीपत्रं मूल्यप्रेषणेन प्राप्नुयुः ।

क्षेमराज-श्रीकृष्णदासः " श्रीवेङ्कटेश्वर " स्टीम्-मुद्रणालयाध्यक्षः, मुंबईस्थः ।

मुद्रक और प्रकाशक-

क्षेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष-"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस.-बम्बई.

हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान :

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बँक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३.
दूरभाष-०२०-२६८७१०२५,
फैक्स -०२०-२६८७४९०७.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१.
दूरभाष/फैक्स- ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८.

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन बम्बई-४